

1.
2.



हिन्दी विश्वकोष

बंगला विश्वकोषके सम्पादक
श्रीनगेन्द्रनाथ वसु प्राच्यविद्यामहार्णव,
सिद्धान्त-वारिधि, शब्दरत्नाकर, एम, आर, ए, एस्,
तथा हिन्दीके विद्वानों द्वारा सङ्कलित ।

द्वितीय भाग

[अभिप्रेषित—आह्वति]

REFERENCE

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA VOL. II.

COMPILED WITH THE HELP OF HINDI EXPERTS

BY

NAGENDRANATH VASU, *Prāchyavidyāmahārṇava*,

Siddhānta-vāridhi, *Sabda-ratnākara*, M. R. A. S.,

Compiler of the Bengali Encyclopædia ; the late Editor of *Bangiya Sāhitya Parishad*
and *Kāyastha Patrikā* ; author of *Castes & Sects of Bengal*, *Mayura-*
bhanja Archaeological Survey Reports and *Modern Buddhism* ;
Hony. Archaeological Secretary, Indian Research Society ;
Member of the Philological Committee, Asiatic
Society of Bengal ; &c. &c. &c.

Printed by R. C. Mitra, at the Visvakosha Press

Published by

Nagendranath Vasu and Visvanath Vasu
9, Visvakosha Lane, Baghbazar, Calcutta.

1917

विष्णु पुराण

12;N
152E5-2

SRI JAGADGURU VISHWARADHYA
JNANA SIMHASAN JNANAMANDIR
LIBRARY

Jangamwadi Math, Varanasi
Acc. No.2843.....

~~ACC NO - 199~~

To
His Excellency
THE RIGHT HON'BLE FREDERIC JOHN NAPIER,
BARON CHELMSFORD.

P. C., G. M. S. I., G. C. M. G., G. M. I. E.,

VICEROY

AND

GOVERNOR-GENERAL OF INDIA

THIS VOLUME OF THE

HINDI VISVAKOSHA

OR

THE ENCYCLOPÆDIA INDICA

BY KIND PERMISSION OF HIS EXCELLENCY

IS

most respectfully dedicated

by his humble servant

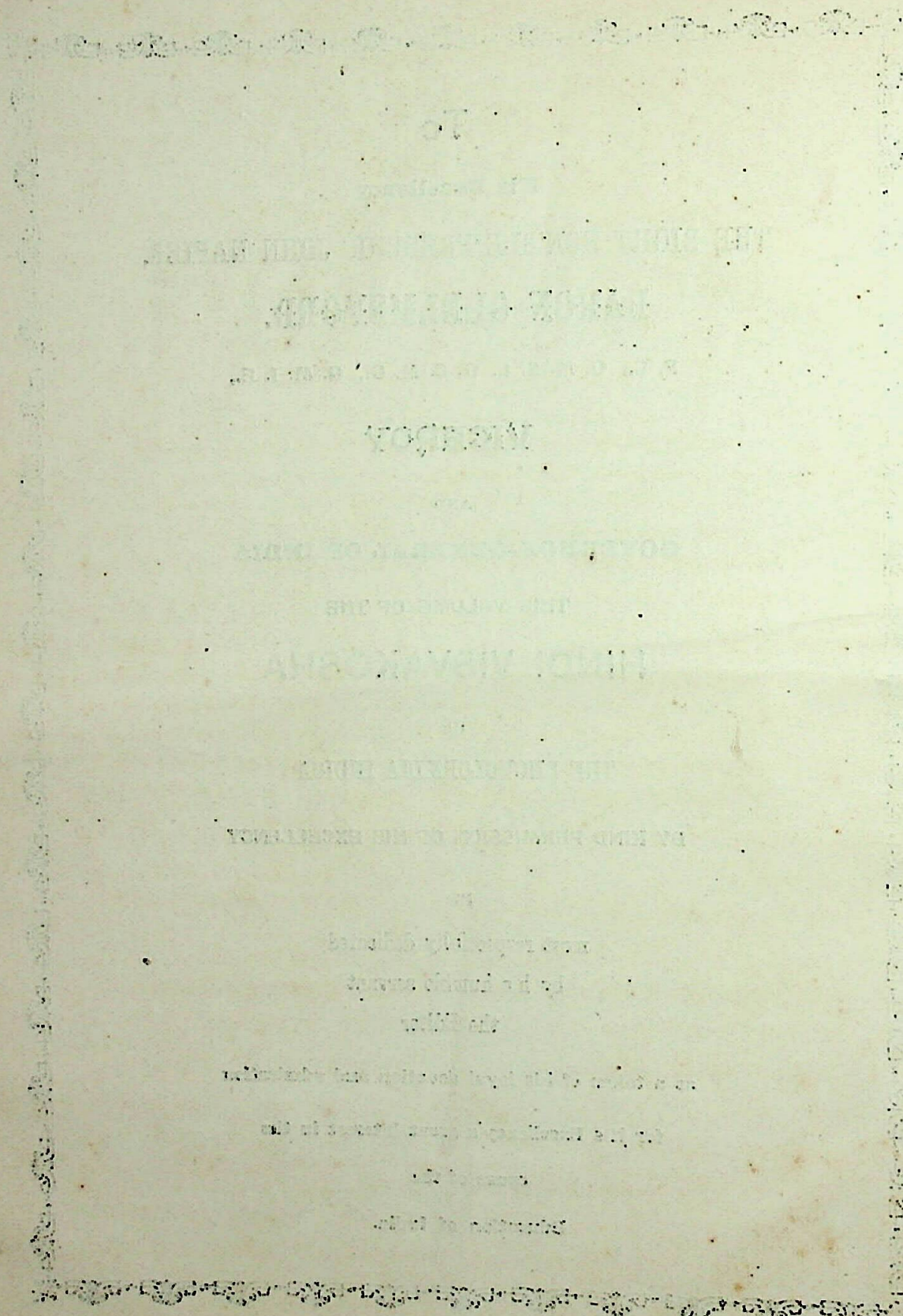
the Editor.

as a token of his loyal devotion and admiration

for His Excellency's great interest in the

cause of the

Education of India.



THE JOURNAL OF THE

AMERICAN MATHEMATICAL SOCIETY

PUBLISHED BY THE SOCIETY

1900

VOLUME 1

NUMBER 1

1900

THE JOURNAL OF THE

AMERICAN MATHEMATICAL SOCIETY

1900

NUMBER 1

1900

THE JOURNAL OF THE

AMERICAN MATHEMATICAL SOCIETY

1900

NUMBER 1

हिन्दी

विश्वकोष

(द्वितीय भाग)

अभिप्रहत (सं० त्रि०) अभि-प्र-हन्-क्त। आहत, जख्मो, घायल, मार खाये हुआ, मारा गया।
अभिप्राणन (सं० क्ली०) अभि-प्र-अन-ल्युट्। निश्वास, उच्छ्वास, निर्गम, उद्गमन, तबखीर, भाप।
अभिप्रातर (सं० अव्य०) अतिशयं प्रातः। अतिशय प्रत्युष, अतिप्रभात, बहुत सवेरे, ज्योदा तड़के।
अभिप्राप्त (सं० त्रि०) आगत, हस्तगत, उपस्थित, आया हुआ, दस्तयाब, जो आ पहुँचा हो।
अभिप्राप्ति (सं० स्त्री०) अभिसुख्येन प्राप्तिः, प्रादि-समास। अभिसुख-प्राप्ति, सम्मुख प्राप्ति, पहुँच, आमद।
अभिप्राय (सं० पु०) अभिप्रैति अभिगच्छति कार्य-सिद्धिर्मानेन, अभि-प्र-इण करणे अच्। १ आशय, भाव, मतलब, गरज। २ छन्द। ३ आशय, मकसद, इरादा। ४ विष्णु। (त्रि०) ५ अभिगामी, पास पहुँचनेवाला।
अभिप्री (सं० त्रि०) अभिप्रीणाति, अभि-प्री-क्लिप्। सकल प्रकार तर्पण करनेवाला, जो हर सूरतसे खुश रहता हो।
अभिप्रीति (सं० स्त्री०) १ उत्साह, आनन्द, प्रसन्नता, हँसला, खुशी, रज़ामन्दी। २ अभिलाष, इच्छा, खाहिश, मर्जी।
अभिप्रेक्ष्य (सं० अव्य०) दृष्टि डालिकर, निगाह डालकर।

अभिप्रेत (सं० त्रि०) अभिप्रेयते स्म, अभि-प्र-इण-क्त। १ अभीष्ट, इरादा किया हुआ। २ अभिलषित, चाहा गया। ३ खोक्त, सम्मानित, मञ्जूरशुदा, पसन्द किया हुआ। ४ इच्छुक, खाहिशमन्द, चाहने-वाला।
अभिप्रत्य (सं० त्रि०) अभिप्रेयते, अभि-प्र-इण-क्यप्-तुगागमः। १ अभिप्रेतव्य, अभिप्रायणीय, अभिलष-णीय, खाहिश रखने काबिल, जो चाहने लायक हो।
अभिप्रेप्सु (सं० त्रि०) अभिप्राप्तिमिच्छुः, अभि-प्र-आप्-सन्-उ। पानेके निमित्त इच्छुक, जो मिलनेका खाहिशमन्द हो।
अभिप्रेयमाण (सं० त्रि०) खदेरा जाते हुआ, जो हटाया जा रहा हो।
अभिप्रोक्षण (सं० क्ली०) अभि सर्वतः प्रोक्षणं संस्कार-विशेषः। सकल दिक् जलादि द्वारा सेकरूप वैध-संस्कार, छिड़काव।
अभिप्रव (सं० पु०) अभिप्रवन्ते खलोकमभिगच्छन्ति, अभि-प्र-गती अच्। १ प्राजापत्य नामक आदित्य सकल। २ वर्षसाध्य गवामयन यज्ञवाले प्रतिमासीय चौबीस दिनके मध्यस्थित चार-संख्यक छः दिन; अर्थात् चौबीसको चारसे भाग देनेपर प्रत्येक भागमें जो छः दिन आते, उनके एक-एक अंशका छः दिन-

वाला समय । ३ छः दिन साध्य स्तोमादि पाठसाधक गवामयनाङ्ग याग विशेष । भावे अप् । ४ उपप्लव, उपद्रव, सकल दिक् लम्फन, सकल दिक् गमन, भगड़ा, बखेड़ा, चारो ओरकी दौड़-धूप ।

अभिभूत (सं० त्रि०) सम्यक् भूतम्, अभि-भू-क्त । १ सकल दिक् व्याप्त, चारो ओर भरा हुआ । २ सकल प्रकार सिक्त, सब तरह लबरेज । ३ अभिभूत, अधोन, मातहत्योमें पड़ा हुआ ।

अभिवल (सं० क्ली०) गुप्तवेशमें स्थानविशेष पर मिलनेकी स्वीकृति, छिप कर किसी अखाड़ेमें आनेका इक्कार ।

अभिवुद्धि (सं० स्त्री०) बुद्धीन्द्रिय, रुक्ता, अक्ता, समझका औजार ।

अभिभङ्ग (सं० त्रि०) अभितो भङ्गो यस्मात्, ५-बहुव्री० । १ भङ्ग करनेवाला, जो तोड़ डालता हो । २ भङ्गशील, टूटा हुआ । (पु०) ३ भङ्गकरनेवाला व्यक्ति, जो शस्त्र से तोड़नेवाला हो ।

अभिभञ्जत् (सं० त्रि०) तोड़ डालनेवाला, जो तोड़ रहा हो ।

अभिभर्तृ (सं० अव्य०) प्रेमोके प्रति, स्वामीके सम्मुख, आशककी तर्फ, खाविन्दके सामने ।

अभिभव (सं० पु०) अभि-भू-अप् । १ पराजय, हार । २ तिरस्कार, अनादर, बेइज्जती । ३ रोगादि द्वारा जड़ोभाव, बीमारी वगैरहसे संखूत पड़ जाना । ४ योग, जोड़ । (त्रि०) ५ शक्तिसम्पन्न, गालिब, हावी ।

अभिभवन (सं० क्ली०) अभि-भू-लुट् । अभिभव, पराजय, रोगादि द्वारा ज्ञानरोध, शिकस्त, हार, बीमारी वगैरहसे होशका न रहना ।

अभिभवनीय (सं० त्रि०) अभिभूत होनेवाला, जिसे शिकस्त दें ।

अभिभा (सं० स्त्री०) अभि-भा-अङ् । १ प्रेत, साया । २ पराजय, अभिभव, शिकस्त, हार । ३ सकल दिक् दीप्ति, चारो ओर रोशनी, उत्कर्ष, सबकृत, बढ़ाई ।

अभिभायतन (सं० क्ली०) १ उत्कर्षका स्थान,

सबकृतकी जगह । २ बौद्ध उत्कर्षके आठ स्रोतका नाम ।

अभिभार (सं० पु०) अभि-भू-घञ्, अभि अति-शयितो भारो यस्य, प्रादि-बहुव्री० । अतिभारयुक्त, निहायत वज्रनो ।

अभिभावक (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि-भू-ण्वल् । अभिभवकारी, पराजयकारी, तिरस्कारकारी, जड़ो-भावकारी, सबकृत ले जानेवाला, जो हरा देता हो, बेइज्जत करनेवाला । २ आत्मीय स्वजन, तत्त्वा-वधायक, सुरब्बी ।

अभिभावन (सं० क्ली०) विजय, जीत ।

अभिभाविन् (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि भू-णिनि । तिरस्कारकारी, पराजयकारी, बेइज्जत करनेवाला, जो हरा देता हो । 'सर्वतेशोभिभाविना ।' (रघु १।१४)

अभिभावी (सं० पु०) अभिभाविन् देखो ।

अभिभावुक (सं० त्रि०) अभि-भू-उकञ् । तिरस्कार-कारी, पराजयकारी, जड़भावकारी, बेइज्जत करने-वाला, जो हरा देता हो, होश उड़ानेवाला ।

अभिभाषण (सं० क्ली०) अभितो भाषणम्, प्रादि सं० । आभिमुख्य कथन, सम्मुखका बोलना, सामनेकी गुफ्तगू, जो बात रूबरू हो ।

अभिभाषमाण (सं० त्रि०) बोल देनेवाला, जो बात कह उठता हो ।

अभिभाषित (सं० त्रि०) कथित, निवेदित, कहा गया, जिससे कह चुके ।

अभिभाषिन् (सं० त्रि०) आभिमुख्येन भाषते, अभि-भाष-णिनि । आभिमुख्य कथक, जो सम्मुख बोलता हो, सामने कहनेवाला, जो बात कर रहा हो ।

अभिभाष्य (सं० त्रि०) कथनीय, कहा जानेवाला, जिससे बात की जाये ।

अभिभाष्यमाण (सं० त्रि०) कहा जाते हुआ, जिससे बात करते हैं ।

अभिभू (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि-भू-क्तिप् ।

अभिभावक, पराजयकारी, तिरस्कारक, सबकृत ले जानेवाला, जो हरा देता हो, इज्जत बिगाड़नेवाला ।

अभिभूत (सं० त्रि०) अभिभवति, अभि-भू-क्त । १ किंकर्तव्य-

विमूढ़, जो घबरा गया हो। २ पराभूत, मगलब्ध, हारा हुआ। ३ व्याकुल, तकलीफ़ज़दह।

अभिभूति (सं० स्त्री०) अभि-भू-क्तिन्। १ पराभव, पराजय, शिकस्त, हार। २ अवज्ञा, वैद्वज्जती। (त्रि०) ३ अभिभावक, पराजयकारी, गालिब आने-वाला, जो जीत लेता हो।

अभिभूत्योजस् (वे० स्त्री०) १ उत्कृष्ट शक्ति, जंचो ताकत। (त्रि०) २ उत्कृष्ट शक्तिसम्पन्न, जंचो ताकत रखनेवाला।

अभिभूय (सं० स्त्री०) अभि-भू भावे क्यप्। सकल दिक् प्रसार, सकल प्रकार स्थिति, उत्कर्ष, चारो ओर फैलाव, सब तरह गुज़ारा, सबकत।

अभिभूवन् (सं० त्रि०) अभि-भवति, अभि-भू-कर्तृरि बाहुलकात्, ड्वनिप्। अभिभावक, तिरस्कारक, पराजयकारी, हरानेवाला, जो गालिब आता हो, भिड़की देनेवाला। (स्त्री०) डीप्। अभिभूवरी।

अभिमण्डन (सं० स्त्री०) १ शृङ्गार, सजावट, बनाव-चुनाव। २ प्रतिपादन, समर्थन, अपनी बातका रखना।

अभिमण्डित (सं० त्रि०) विभूषित, अलङ्कृत, सजा हुआ, जो संवारा गया हो।

अभिमत (सं० त्रि०) अभिमन्यते स्म, अभि मन-क्त। १ अभिमानका विषयीभूत, जिसके लिये घमण्ड करें। २ सम्मत, मञ्जूर, माना हुआ। ३ आदृत, इज्जत किया गया। ४ अभोष्ट, खाहिश किया हुआ। (स्त्री०) भावे क्त। ५ अभिमान, घमण्ड। ६ मिथ्या-ज्ञान, झूठी समझ। ७ अभिलाष, इच्छा, खाहिश, मर्जी।

अभिमतता (सं० स्त्री०) १ अनुरूपता, काम्यता, शबाहत, खाहिशमन्दी। २ प्रेम, उत्कण्ठा, इशक, चाह।

अभिमति (सं० स्त्री०) अभि-मन्-क्तिन्। १ अभिमान, गुरुर। २ मिथ्याज्ञान, झूठी समझ। ३ आदर, सम्मान, तवक्का, इज्जत। ४ अभिलाष, खाहिश।

अभिमनस् (सं० त्रि०) अभिमुखं सम्पादनोन्मुखं मनो यस्य, बहुव्री०। १ कार्य करनेमें उत्सुख वा लयित,

काममें मन लगानेवाला। २ दृप्त, तुष्ट, आसूदा, सेर, छका हुआ। ३ उत्कण्ठित, खाहिशमन्द।

अभिमन्तव्य (सं० त्रि०) अभिमन्यते, अभि-मन्-कर्मणि तव्य। ज्ञातव्य, खयाल करने काबिल। २ स्पृहनीय, चाहने लायक। ३ अधिक मान किया जानेवाला, जिसकी ज्यादा इज्जत की जाये।

अभिमन्तु (सं० स्त्री०) चोटका चलाना, नाशका करना।

अभिमन्तृ (सं० त्रि०) इच्छुक, उत्कण्ठित, स्पृह-युक्त, लालची, खाहिशमन्द।

अभिमन्तोस् (वे० अव्य०) हानि पहुंचानेको, नुक-सान करनेके लिये।

अभिमन्त्र (सं० स्त्री०) अभि-मन्त्र चुरा० अच्। मौमांसकोक्त मन्त्रपाठपूर्वक दर्शनादि संस्कारविशेष।

अभिमन्त्रण (सं० स्त्री०) अभि-मन्त्र चुरा० ल्युट्।

१ मौमांसकोक्त मन्त्रपाठपूर्वक दर्शनादि संस्कारविशेष। २ सम्बोधन, आमन्त्रण, बुलाहट, पुकार। ३ अभि-प्रणयन, सलाहका लेना। ४ जादू, टोना।

अभिमन्त्रित (सं० त्रि०) जादू किया हुआ, जिसपर टोना पड़ चुके।

अभिमन्त्र्य (सं० त्रि०) अभि-मन्त्र चुरा० यत्। १ अभिमन्त्रणीय, गोपनमें परामर्शणीय, समझाने-काबिल, जो चुपकेसे सिखाने लायक हो। (अव्य०)

२ अभिमन्त्र-ल्यप्। २ मन्त्रणा करके, मन्त्र पढ़के।

अभिमन्य, अधिमन्य (सं० पु०) अभि अधि वा मथ्याति नेत्रम्। १ नेत्ररोगविशेष, आंखकी कोई बीमारी। भावे घञ्। २ अतिशय मन्यन, हटसे ज्यादा मथाई। (अव्य०) मन्यस्वामिसुख्यम्, अव्ययी०।

३ मन्यनदण्डके सम्मुख, मन्यनदण्डके समीप, मथानीके सामने या पास।

अभिमन्यु (सं० पु०) अभिगतः प्राप्तः युद्धसमये मन्युः क्रोधो यस्य, प्रादि २-बहुव्री०; अथवा अभिलक्ष्यो-क्त्य अतियोजारमिति शेषः मन्युः क्रोधो यस्य, ६-बहुव्री०; अथवा अभि अतिशयो मन्युः शोको यस्मात्, ५-बहुव्री०। १ अर्जुनके पुत्र। कृष्णकी भगिनी सुभद्राके गर्भसे इनका जन्म हुआ था। विराटकन्या उत्तरासे

इन्होंने विवाह किया। इनके पुत्रका नाम परीक्षित रहा। कुरुक्षेत्रयुद्धमें अभिमन्युने असाधारण वीरत्व देखाया था। अर्जुन नारायणी सेनाके साथ दूर लड़ते रहे, इधर अभिमन्यु व्यूहमें घुस पड़े। महाभारतमें लिखा है, कि उसी दिनके युद्धमें इनके हाथ दुर्योधनके भ्राता वृचारक, मगधराजपुत्र श्वेतकेतु, अश्वकेतु एवं कुञ्जरकेतु, कोशलके राजा वृहद्वल, दुःशासनके पुत्र उलूक प्रभृति अनेक वीर मारे गये थे। शेषमें कर्ण प्रभृति छः रथियोंने मिल अभिमन्युको वध किया। शापमुक्त हो अभिमन्यु चन्द्रलोक पहुँचे थे।

२ विष्णुपुराणमें लिखा है, कि चाक्षुष मनुके पुत्रका नाम अभिमन्यु रहा। इन्होंने नवलाके गर्भसे जन्म लिया था। ३ राधिकाके स्वामी आयानको भी पहले लोग अभिमन्यु कहते रहे।

४ कश्मीरमें दो अभिमन्यु नृपति थे। प्रथम अभिमन्यु नृपतिके समय वहां बौद्धधर्म अतिशय प्रबल रहा। किन्तु महाराज अभिमन्यु शिवलिङ्गको प्रतिष्ठित कर पूजते थे। प्रसिद्ध वैयाकरण चन्द्राचार्य इन्हींकी सभामें विद्यमान रहे। चन्द्रव्याकरण उन्होंने ही उद्धार किया था। नागार्जुन प्रभृति बौद्ध राजसभामें पहुँच सबदा ही पण्डितोंके साथ तर्क-वितर्क और नील-पुराणकी कुत्सा करते रहे। उससे नागजातिने क्रुद्ध हो अनेक बौद्धोंको मार डाला। कहते हैं, कि अन्तमें कश्यपवंशके चन्द्रदेव नामक किसी ब्राह्मणने महादेवकी आराधना लगा यह सकल उपद्रव मिटाया था। इन्होंने कश्मीरमें अभिमन्युपुर नामक नगरको स्थापन किया।

५ द्वितीय अभिमन्यु ८८० शकाब्दमें प्रादुर्भूत हुए थे। यह चेमगुप्तके पुत्र रहे। इन्होंने बाल्यकालमें ही राज्यका भार उठा लिया था। ४८ लौकिकाब्दमें यक्ष्मारोगसे इन्होंने प्राणत्याग किया। कश्मीर देखो।

अभिमर (सं० पु०) अभिमुख्येन स्त्रियन्ते सैन्या यत्र, अभि-मृ अधिकरणे अप्। १ युद्ध, जङ्ग, लड़ाई। २ युद्धस्थान, रणक्षेत्र, मैदान-जङ्ग, खेत, जिस जगह लड़ाई रहे। करणे अप्। ३ भय, खौफ, डर। ४ अपने सैन्यपक्षसे विश्वासघातकी आशङ्का, अपने सिपाहियोंसे

धोका खानेकी शक। अभिस्त्रियते यस्मात्, अपादाने अप्। ५ मरणव्यापार, वध, कत्ल, जानका लेना। अभिसुखीभूय स्त्रियते, कर्तरि अच्। ६ स्वसैन्य, सिपाही, धनलोभसे प्राणकी आशा छोड़ व्याघ्र वा हस्तीके समुख युद्ध करनेको उद्यत व्यक्ति, जो शस्त्र-सौलतके लालच जानकी उन्मीद न रख शेर या हाथीसे लड़नेको तैयार हो। ७ बन्धन, कैद।

अभिमर्द (सं० पु०) अभि-मृद भावे घञ्। १ अव-मर्द, रगड़। २ निष्पीड़न, जुल्म, दुश्मनके ज़रिया मुल्ककी बरबादी। अधिकरणे घञ्। ३ युद्ध, जङ्ग, लड़ाई। ४ मद्य, शराब। (त्रि०) ५ मर्दनकर्ता, मलने या रगड़नेवाला।

अभिमर्दन (सं० लौ०) अभि-मृद भावे लृट्। पीड़न, चर्चन, जुल्म, किसीको सताना।

अभिमर्दिन् (सं० त्रि०) पीड़ा पहुँचानेवाला, जो तकलीफ़ देता हो।

अभिमर्श, अभिमर्ष (सं० पु०) अभि-मृश वा मृष-भावे घञ्। स्पर्श, घर्षण, छूत, मिलाव।

अभिमर्शक, अभिमर्षक (सं० त्रि०) अभि-मृश वा मृष-ण्वल्। १ स्पर्श करनेवाला, जो छू लेता हो। २ पराभवकारी, नीचा देखानेवाला।

अभिमर्शन, अभिमर्षण (सं० लौ०) अभि-मृश वा मृष-लुगट्। १ स्पर्श, छूत। २ घर्षण, पराभव। ३ यक्ष-पिशाचादि भूतकृत पीड़ा, जो बीमारी साये वगैरहसे पैदा हो।

अभिमाति (सं० त्रि०) अभिमयते, अभि-मिड कर्तरि क्तिन् न इत्वम्। १ घातक, मारनेकी कोशिश करते हुआ, चोट देनेवाला, जो दुश्मनी रखता हो। (पु०)

२ शत्रु, दुश्मन। ३ पाप, इजाब।

अभिमातिजित् (सं० त्रि०) शत्रुको जीतनेवाला, जो दुश्मनको हरा देता हो।

अभिमातिन् (सं० पु०) अभि-मिड भावे क्त। १ शत्रु, दुश्मन। २ आघात, चोट।

अभिमातिषाह् (सं० त्रि०) अभिमातिं शत्रुं सहते, अभिमाति सह-ण्वि पत्वम्। शत्रुजित्, दुश्मनको जीतनेवाला।

अभिमातिषाह, अभिमातिषाह देखो।

अभिमातिहन् (सं० पु०) शत्रुसंहारकर्ता, जो शत्रुस दुश्मनको कत्ल करता हो।

अभिमाद (सं० पु०) मद, लीवता, नशा, खुमार।

अभिमाद्यत् (सं० त्रि०) उन्मत्त होनेवाला, जो नशा पी रहा हो।

अभिमाद्यत्क (सं० त्रि०) कुछ-कुछ उन्मत्त, जो बहुत नशेमें न हो।

अभिमान (सं० पु०) अभि-मन्-घञ्। १ ऐश्वर्य प्रभृतिके निमित्त गर्व, दर्प, अहङ्कार, फख्र, घमण्ड। २ प्रणय, स्नेह प्रभृति स्थलमें मनका दुःख हेतुक आदर-सहित क्रोध, मुहब्बत, प्यार वगैरहको जगह दिलको दुखानेवाली इज्जतसे मिली-गुस्सा। ३ प्रणय, प्रेमप्राप्तेना, शादी, मुहब्बतका इज्जत। ४ अवलेप, दावेदारी। ५ मिथ्याज्ञान, भूठी समझ। ६ शृङ्गार-रसकी अवस्थाविशेष, मान, नखरा। ७ हिंसा, हनन, कत्ल, मारकाट।

अभिमानता (सं० स्त्री०) दर्प, घृष्टता, गुरुर, गुस्साखी।

अभिमानवत् (सं० त्रि०) १ मानी, नखरेबाज।

२ दर्पित, मगूर, गुस्साख।

अभिमानशून्य (सं० त्रि०) दर्परहित, गर्वविहीन, वेफख्र, गुरुरसे खाली, जिसे घमण्ड न रहे।

अभिमानित (सं० त्रि०) अभिमानो गर्वः सञ्जातोऽस्य, अभि-मान-इतच्। १ जातगर्व, जाताभिमान, जिसे घमण्ड आ जाये। (क्ती०) अभि-मान णिच् भावे क्त। २ मैथुन, हमबिस्तरी। ३ गर्व, गुरुर।

अभिमानिता (सं० त्रि०) दृप्त रहनेकी दशा, जिस हालतमें घमण्ड घेरे रहे।

अभिमानित्व (सं० क्ली०) अभिमानिता देखो।

अभिमानिन् (सं० त्रि०) अभि-मन्-णिनि। १ गर्व-युक्त, दृप्त, अभिमानविशिष्ट, मगूर, गुस्साख, घमण्डी। २ प्रणयकोपयुक्त, नखरेबाज। ३ मिथ्या-ज्ञानयुक्त, भूठी समझवाला। (पु०) ४ भौत्य मनुके दश पुत्रोंमें पञ्चम पुत्र।

अभिमानौ, अभिमानिन् देखो।

अभिमानुक (सं० त्रि०) अभि-मन्-बाहुल्यकात्-उक्त्वा

१ अभिमानविशिष्ट, मगूर। २ वध करनेमें शक्त, जो चोट पड़चा सकता हो।

अभिमाय (सं० त्रि०) मायां अविद्यां अभिगतम्, अतिक्रा०-तत् गौणे ऋक्षः। इतिकर्तव्यताशून्य, अभि-भूत, घबराया हुआ, जो मौचक रह गया हो, अह-मक, नादान।

अभिमिह्य (सं० त्रि०) अभिमिह्यते सिच्यते। जिसके सम्मुख मलमूत्रादि त्याग किया जाये, पेशाब किया जानेवाला, जिसपर पेशाब करें।

अभिमीलित (सं० त्रि०) अवरुद्ध, बन्द, जो आंखकी तरह झपका हो।

अभिमुख (सं० त्रि०) अभिगतं मुखम्, अतिक्रा०-तत्। १ अभिमुखप्राप्त, सामने चेहरा किये हुआ। २ सम्मुख, समक्ष, घूमा हुआ, जो सामने आ गया हो। ३ कर्म करनेमें उद्यत, काममें लगा हुआ। ४ उपस्थित होनेवाला, जो नजदीक जा या पड़च रहा हो। ५ इच्छा रखनेवाला, जो इरादा बांधे हो। (अव्य०) मुखमभिलक्षित्य, अव्ययी०। ६ अभिमुख, सम्मुख, सामने, रुबरु। ७ सम्मुख जाकर, सामने पड़चके।

अभिमुखता (सं० स्त्री०) उपस्थिति, सामीप्य, हाजिरी, नजदीक रहनेकी हालत।

अभिमुखी (सं० स्त्री०) बौद्धमतसे—दश पृथिवीमें एक पृथिवी।

अभिमुखीकरण (सं० क्ली०) अभिमुखः क्रियते अनेन, अभिमुख-चि-क्त करणे लुट्। सम्बोधन, बुलाहट, पुकार। सम्बोधन उच्चारण करनेसे ओता सुनकर अभिमुख होता, इसीसे अभिमुखीकरण शब्द सम्बोधन बताता है।

अभिमुखीभाव (सं० पु०) अनभिमुखस्य अभिमुख-रूपो भावः भवनम्, अभिमुख-चि-भू भावे घञ्। १ आभिमुख्य, सामना। २ कार्यकी अनुकूलता, कामकी सुवाफिकत। ३ अभिमुखका होना, सामनेका पड़ना।

अभिमुखीभूत (सं० त्रि०) सम्मुखगत, उपस्थित, सामने पड़ा हुआ, जिसका मुंह सामने रहे।

अभिमुखित (सं० त्रि०) विक्षिप्त, मोहित, व्यग्र, विधुर, आकुल, मूढ़, विह्वल, संतुब्ध, क्लान्त, उन्मत्त, बेहोश, फरेफ़ूता, थकामांदा, मतवाला।

अभिमृष्ट (सं० त्रि०) अभि-मृष्ट-क्त। १ मृष्ट, जो स्पर्श किया गया हो, कूया हुआ। २ पराभूत, पराजित, धर्षित, शिकस्त खाये हुआ, जो हार चुका हो। २ मिलित, संमृष्ट, मिला हुआ, जो निकाला गया हो। (त्रि०) ४ मार्जनायुक्त, शुद्ध, दला-मला, पाकौजा।

अभिनेयक (सं० पु०) अभि-मिथू-खुल्। सर्व-प्राप्तिसाधन वाक्यविशेष, जिस वाक्यके कहनेसे सकल ही मिल जाये, सारा मतलब पूरा करनेवाली बात। अभिनेयिका (सं० स्त्री०) १ वाण-सदृश वाक्य, तीर जैसी बात। २ अश्लील वचन, फोहवश गुफ्तगू। ३ शाप, बददुवा।

अभिनेह्य, अभिमिह्य देखो।

अभिन्नात, अभिज्ञान देखो।

अभिज्ञान (सं० त्रि०) अभितो ज्ञानम्, अभि-ज्ञै-क्त। १ अतिमलिन, अप्रसन्न, निहायत अफसुर्दा, नाखुश, कुम्हिलाया हुआ। २ विशेषण, सड़ा-गला।

अभियज्ञगाथा (सं० स्त्री०) यज्ञ-सम्बन्धीय भजन। अभिया (सं० पु०-स्त्री०) आक्रमण, हमला, धावा, चढ़ाई।

अभियाचन (सं० स्त्री०) अभि-याच-लुपट्। अभि-मुख प्रार्थना, जो प्रार्थना सम्मुख होकर की जाती हो, आर्जू-मिन्नत, सामनेकी मांग यांच।

अभियाचित (सं० त्रि०) सम्मुख प्रार्थना किया गया, सामने मांगा हुआ।

अभियात् (सं० त्रि०) अग्रगामी, आक्रमणकारी, हमलावर, जो धावा मार रहा हो।

अभियात (सं० त्रि०) आक्रमण किया गया, जिसपर हमला पड़ चुके।

अभियाति (सं० पु०) अभिमुख्येन याति: युद्धार्थं गतिः, अभि या बाहुलकात् अति। रिपु, शत्रु, दुश्मन। (स्त्री०) भावे क्तिन्। २ युद्धार्थं गमन, लड़ाईकी चढ़ाई।

अभियातिन् (सं० पु०) अभियातमनेन; अभि-या भावे क्त, तत इष्टादि० इन्। शत्रु, दुश्मन।

अभियात् (सं० पु०) अभिमुखं युद्धार्थं याति, अभि-या-त्-च्। १ शत्रु, दुश्मन। (त्रि०) २ अभिमुख-गमनकारी, सामने धावा लगानेवाला।

अभियान (सं० स्त्री०) अभि-या-लुपट्। युद्धयात्रा, अभिगमन, मुहीम, हमला, चढ़ाई।

अभियायिन् (सं० त्रि०) अभिमुख्येन याति, अभि-या-णिनि। अभिमुख-गमनकारी, सामने जानेवाला, जो हमला मारता हो, पास पहुँचते हुआ।

अभियुक्त (सं० त्रि०) अभि-युज्यते क्त, अभि युज्-क्त। १ अन्य कर्तृक रुद्ध, तत्पर, आसक्त, लगाया हुआ, मुखेद, खयालमें डूबा हुआ। २ प्रतिष्ठित, सुकरर किया हुआ। ३ कथित, उक्त, कहा हुआ, जिसके बारेमें बात हो चुके। ४ आक्रमण किया हुआ, जिसपर दुश्मनका हमला पड़ चुके। ५ निन्दित, बदनाम। ६ कानूनमें—प्रतिवादी, मुद्दालह, जिसपर नालिश हो चुके।

अभियुग्वन्, अभियुज्वन् (वै० त्रि०) अभि-युज्-डुनिप्, वेदे पृ० कुत्वम्। १ अभियोक्ता, अभियोगकारी, अभियोग लगानेवाला, हमलावर, मुद्दई। (पु०) २ आघात, आक्रमण, चोट, हमला। ३ शत्रु, दुश्मन। (स्त्री०) डीप्। अभियुज्वरी।

अभियुज् (सं० त्रि०) अभिमुखं युनक्ति, अभि-युज्-क्तिप्। अभियोक्ता, अभियोगकारी, मुद्दई, नालिश करनेवाला। (स्त्री०) २ आक्रमण, हमला। ३ शत्रु, दुश्मन।

अभियुज्यमान (सं० त्रि०) अभियोग लगाया जाते हुआ, जिसपर नालिश की जा रही हो।

अभियोक्तव्य (सं० त्रि०) अभियोक्तं शक्यम्, अभि-युज्-तव्य। १ अभियोग लगाने योग्य, जिसपर इलजाम लगाया जा सके। २ अभिमुख योजनीय, सामने धावा मारने काबिल। ३ निषेध्य, रोकने काबिल।

अभियोक्ता, अभियोक्ता देखो।

अभियोक्तृ (सं० पु०) अभिमुखं युनक्ति, अभि-युज्-क्तृ। अभियोक्तृ, वादी, नालिश करनेवाला,

सुदई। २ युद्धार्थ आक्रमणकर्ता, लड़ाईकी चढ़ाई करनेवाला।

अभियोग (सं० पु०) अभितो राजसमीपे योगः योजनम्, अभि-युज्-घञ्। १ अन्य कर्त्तक अपकार निवारण वा क्षतिपूरण करनेको राजाके निकट प्रार्थना, दूसरेका किया हुआ नुकसान मिटानेको हाकिमसे अर्ज। २ युद्धार्थ आक्रमण, लड़ाईकी चढ़ाई। ३ शपथ, कस्म। ४ उद्योग, तदुद्योग। ५ आग्रह, जिद। ६ अभिनिवेश, खटका। ६ दोषारोप, ऐबजोयी। ७ नियुक्ति, लगाव।

अभियोगपत्र (सं० स्त्री०) अर्जीदावा, जिस कागज पर लिखकर नालिश की जाये।

अभियोगिन् (सं० त्रि०) अभितो राजादि समीपे युनक्ति स्वदुःखमावेदयति अभि-युज् बाहुलकात् घिणुन्। १ अभियोगकर्ता, वादो, नालिश करनेवाला, सुदयी। २ आक्रमणकर्ता, हमलावर। ३ आग्रहयुक्त, जिद्दी। ४ अभिनिविष्ट, मनोयोगी, दिल लगानेवाला। ५ योजनकर्ता, जो मिला देता हो।

अभियोगी, अभियोगिन् देखो।

अभियोग्य (सं० त्रि०) आक्रमण किये जाने योग्य, जो धावा लगाये जाने काविल हो।

अभियोजन (सं० स्त्री०) अभि पुनःपुनर्योजनम्। योजित पदार्थकी दृढ़ताके लिये पुनर्बार योजन, लुढ़ो हुई चीजकी मजबूतीके लिये दोबारा जोड़ाई।

अभियोज्य, अभियोज्य देखो।

अभिरक्षण (सं० स्त्री०) अभितो रक्षणम्। सकल दिक् रक्षा, पचादि द्वारा सकल दिक् सरसों आदि फेंक राक्षसादिसे वैध कर्मकी रक्षा, दुनियावी हिफाजत। पूर्वकाल यज्ञादि कार्य उपस्थित होनेपर राक्षसादि आकर घृत प्रभृति यज्ञीय द्रव्य खा जाते और यज्ञ बिगाड़ देते थे। उसके लिये ऋषि मन्त्रपाठपूर्वक सफेद सरसों आदि फेंक उन्हें निवारण करते रहे। आजकल भी चुड़ैल और भूत भाड़ते समय लोग सफेद सरसों फेंकते हैं।

अभिरक्षा (सं० स्त्री०) अभि-रक्ष्-अ टाप्। मन्त्रादि द्वारा यज्ञ प्रभृतिकी रक्षा।

अभिरक्षित (सं० त्रि०) अभितो रक्षितम्, प्रादि-स०। सकल दिक् रक्षित, चारो ओर महफूज।

अभिरक्षित (सं० त्रि०) अभितो रक्षितम्, अभि-रक्ष्-टच्। सकल दिक् रक्षाकर्ता, सर्वप्रकार रक्षाकर्ता, चारो ओर हिफाजत रखनेवाला, जो सब तरह हिफाजत रखता हो।

अभिरक्ष्य (सं० त्रि०) रक्षा वा शासन किया जानेवाला, जो हिफाजत रखे या हुक्मत किये जाने काविल हो।

अभिरक्षित (सं० त्रि०) रागरङ्गयुक्त, अरुणित, रक्त, लोहित, अनुराजित, रंगा हुआ, सुख, जिसपर सुहृद्वत्ता जोश चढ़ चुके।

अभिरत (सं० त्रि०) आभिमुख्येन अतिशयं रतम्, अभि-रम्-क्त। १ आरक्त, फरेफ़ता। २ प्रीतियुक्त, आसूदा, खुश। ३ नियुक्त, मसरूफ़, लगा हुआ। ४ ध्यान देनेवाला, जो खयाल लड़ाता हो।

अभिरति (सं० स्त्री०) अभितो रतिः, प्रादि-स०, अभि-रम्-क्तिन्। १ अतिशय आसक्ति, हृदसे ज्यादा फंसाव। २ प्रसन्नता, खुशी।

अभिरत्य (सं० अव्य०) अभिरत्य देखो।

अभिरना (हिं० क्ति०) १ सामना करना, गुस्सामें लपटना, लड़ना-भिड़ना।

अभिरमण (सं० स्त्री०) अनुराग, हृष, खुशी।

अभिरमणीय (सं० त्रि०) अभिरम्य देखो।

अभिरम्य (सं० त्रि०) अभिरम्यते, अभि-रम् कर्मणि यत्। १ रमणीय, मनोरम, मजेदार, दिलको खुश करनेवाला। (अव्य०) २ रमण वा क्रीड़ा करके, मजा उड़ा या खेलकर।

अभिराज् (सं० त्रि०) सर्वत्र राज्य करते हुआ, जो सब जगह हुक्मत चला रहा हो।

अभिराज् (सं० त्रि०) अभितो राजम्, अभि-राज्-क्त। १ सर्वथा सिद्ध, सकल प्रकार निष्पन्न, हर सूरतसे साबित, सबतरह तैयार। २ सेवित, तावेदारी किया गया।

अभिराम (सं० त्रि०) अभिरम्यते अनेन अस्मिन् वा, अभि-रम् कर्मणि अधिकरणे वा घञ्। सुन्दर, प्रिय,

मनोज्ञ, खुश करनेवाला, गवारा, खूबसूरत । (अव्य०)

२ रामके प्रति, रामकी ।

अभिरामता (सं० स्त्री०) अभिरामत्व, सौन्दर्य, प्रियता, मनोज्ञता, सुथरापन, खूबसूरती, चमक-दमक ।

अभिरामी (सं० त्रि०) अभिरमणकर्ता, मज़ा उड़ानेवाला ।

अभिराष्ट्र (सं० त्रि०) राज्य पानेवाला, जिसे बाद-शाही मिल जाये ।

अभिरुचि, अभिरुचौ (सं० स्त्री०) अभिरुचि-इन् ।

१ अतिशय रुचि, अतिशय दीप्ति, हृदसे ज्यादा रौनक, हृदसे ज्यादा होसिला । २ इच्छा, हर्ष, स्वाद, खादिश, खुशी, मज़ा ।

अभिरुचित (सं० त्रि०) हर्षित, प्रसन्न, खुश, बर्शास ।

अभिरुचिर (सं० चि०) अतिशय मनोरम, सुन्दर, निहायत खूबसूरत, खूबसूरत ।

अभिरुत (सं० त्रि०) १ सुखरित, जिससे आवाज निकल चुके । २ कूजित, सुखर, मधुर, कूका हुआ, सुरीला, मौठा ।

अभिरुता (सं० स्त्री०) १ सङ्गीतकी कोई मूर्खना । २ कूक, सुरीलापन ।

अभिरूप (सं० त्रि०) अभिरूपयति सर्वे रूपविशिष्टं करोति, अभि चुरा० रूप-णिच्-अच् । १ मनोहर, प्रिय, दिलकश, प्यारा । २ पण्डित, दाना । “अभिरूपसूचिष्ठा परिपत् ।” (शकु०) ३ सदृश, मिलते हुआ । ४ उचित, वाजिब । ५ यथेष्ट, काफी । (पु०) ६ कन्दर्प, काम-देव । ७ चन्द्र, चांद । ८ विष्णु । ९ शिव ।

प्राप्तरूपस्वरूपामिरूपा बुधमनोज्ञयोः । (अमर)

अभिरूपक (सं० त्रि०) अभिरूप देखो ।

अभिरूपपति (सं० पु०) सुन्दर स्वामी, अच्छासा खाविन्द ।

अभिरोग (सं० पु०) जिह्ममें कृमि पड़नेकी पीड़ा, जिस बीमारीसे जीभमें कौड़ा पड़ जाये । यह रोग पशुको अधिक लगता है ।

अभिरोध (सं० पु०) अभिरुध-घञ् । पीड़न, बीमारी, तकलोफ़ ।

अभिरोरुद्ध (वै० त्रि०) रलानेवाला, जिसे देख कर आंसू टपकते रहें ।

अभिलकपित्य (सं० पु०) आन्नातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़ ।

अभिलक्षित (सं० त्रि०) चिह्नित, निशानदार ।

अभिलक्ष्य (सं० त्रि०) अभिलक्ष्यते शरादि वेधार्थं अतिशयेन दृश्यते ; अभि चुरा० लक्ष्-णिच्-यत्, णिच् लोपः । १ शरव्य, तीरसे मारा जानेवाला । २ चिह्न-योग्य, निशाना जमाने काबिल । (अव्य०) लक्ष्यस्यः

शरव्यस्य अभिसुख्यम्, अव्ययी० । ३ शरव्यके समीप, लक्ष्यके समुख, निशानेके पास, शिकारके सामने ।

४ लक्ष्य लगाकर, शिष्ट जमाके ।

अभिलङ्घन (सं० क्लौ०) अभि लघि भावे लुगट् । उल्लङ्घन, कूद फांद ।

अभिलषण (सं० क्लौ०) उत्काण्ठा, सृष्टा, लालच, खादिश ।

अभिलषणीय (सं० त्रि०) अभि-लष् कर्मणि अनौयर् । वाञ्छनीय, चाहने काबिल ।

अभिलषिकरोग (सं० पु०) वातव्याधिविशेष, वातकी-कोई बीमारी ।

अभिलषित (सं० त्रि०) अभिलक्ष्यते स्म, अभि-लष् कर्मणि क्त । १ इष्ट, वाञ्छित, मकबूल, चाहा हुआ । (क्लौ०) भावे क्त । २ अभिलाष, इच्छा, खादिश, मर्जी ।

अभिलषितव्य (सं० त्रि०) अभि-लष-तव्य । अभिलष-णीय, काम्य, चाहने काबिल ।

अभिलाख (हिं०) अभिलाष देखो ।

अभिलाखना (हिं० क्ति०) उत्कण्ठित होना, खादिश-करना ।

अभिलाखा (हिं० स्त्री०) अभिलाष देखो ।

अभिलाखी (हिं०) अभिलाषिन् देखो ।

अभिलाप (सं० पु०) अभिलप्यते मानसं कर्म अनेन । अभि-लप् करणे घञ् । १ सङ्कल्पवाक्य । भावे घञ् । २ कथन, बातचीत ।

अभिलाव (सं० पु०) अभिलूयते, अभि-लू भावे घञ् । छेदन, चीरफाड़ ।

अभिलाष (सं० पु०) अभि-लष-घञ् । १ इच्छा, खादिश । २ लोभ, लालच । ३ अनुराग, मुहब्बत ।

अभिलाषक (सं० त्रि०) अभि-लष-ण्वल् । अभिलाष-कारी, खादिशमन्द । (स्त्री०) अभिलाषिका ।

अभिलाषा (सं० स्त्री०) अभिलाष देखो।

अभिलाषिन् (सं० त्रि०) अभिलषति, अभिलष-
णिनि। अभिलाषशील, अभिलाषकारी, खाद्दिशमन्द,
लालची। (स्त्री०) डीप्। अभिलाषिणी।

अभिलाषुक (सं० त्रि०) अभिलषितुं शीलमस्य
अभिलषति वा, अभिलष बाहुलकात् उक्त्वा। अभि-
लाषयुक्त, खाद्दिशमन्द।

अभिलास, अभिलाष देखो।

अभिलासा, अभिलाष देखो।

अभिलिखित (सं० त्रि०) पत्रारूढ, न्यस्ताक्षर, लेख्या-
रोपित, हफ्ते में खोदा हुआ, जो तहरीरमें ठला हो।

अभिलीन (सं० त्रि०) १ संलग्न, चिपक जानेवाला।

२ हृदयसे लगाया हुआ, जिसे छातीसे लिपटा चुके।

३ हृदयसे लगते हुआ, जो छातीसे लिपटा रहा हो।

अभिलुप्त (सं० त्रि०) उद्भिन्न, ताड़ित, घबराया
हुआ, जिसके चोट लग चुके।

अभिलुलित (सं० त्रि०) १ क्रीड़ाशील, चञ्चल,
खेलाड़ी, चुलबुला। २ उत्तेजित, उद्भिन्न, आहत,
जोश खाये हुआ, जो घबरा गया हो।

अभिलूता (सं० स्त्री०) कीटविशेष, किसी किस्मकी
मकड़ी।

अभिलेखन (सं० स्त्री०) न्यस्ताक्षरता, पाषाण या
शिलालेख, हफ्ते की खोदाई, जो तहरीर पत्थर वगै-
रह पर का जाती हो।

अभिवचन (सं० स्त्री०) सत्यवचन, प्रतिज्ञा, कौल,
इकरार।

अभिवक्षित (सं० त्रि०) प्रतारित, अभिसम्मानित,
धोका खाये हुआ, जो ठगा गया हो।

अभिवत् (सं० त्रि०) अभि शब्दसंयुक्त, जिसमें अभि
लफ्ज शामिल रहे।

अभिवन्दन (सं० स्त्री०) अभि अनुकूल वन्दनं कथनम्,
प्रादि-तत्। १ अनुकूल वाक्य, सुवाफिक बातचीत।

(त्रि०) अभि अनुकूल वन्दनं वाक्यं सुखं वा यस्य,
प्रादि-बहुव्री०। २ अनुकूलवादी, प्रसन्नमुख, सुवाफिक
बात करनेवाला, खुशदिल। (अव्य०) वन्दनस्य सुख-

स्याभिसुखम्, अव्ययी०। ३ मुखके सामने, चेहरेके पास।

अभिवन्दन (सं० स्त्री०) अभितः सर्वतः अभिसुखेन
वा वन्दनम्, प्रादि-तत्। सकल दिक्प्रणति, सम्मुख-
प्रणाम, साहब-सलामत।

अभिवयस् (सं० त्रि०) अभिमतं वयः, प्रादि-तत्।

१ अभिमत वयस, ठीक उमरवाला। विवाहादिके समय
वयस अधिक वा न्यून न होनेसे वर अभिमतवयस
कहा जा सकता है। अभिमतं सन्मतं वयो यस्य,
प्रादि-बहुव्री०। २ प्रकष्ट वयस्क, नौ जवान्।

अभिवर्तिन् (सं० त्रि०) अभितः अभिसुखेन वा वर्तते,
अभि-व्रत-णिनि। सम्मुखवर्ती, सम्मुखस्थायी, सामने
जानेवाला, जो पास पहुँच रहा हो, हमलावर।

अभिवर्षण (सं० स्त्री०) अभितो वर्षणम्, प्रादि-तत्।

१ सकल दिक् वर्षण, भौषण वृष्टि, गहरी बारिश।

२ सिंचायी, पानीका दिया जाना।

अभिवर्षिन् (सं० त्रि०) अभितो वर्षति, अभि-वृष-
णिनि। सकल दिक् वर्षणकारी, सब तर्फ बरसने-
वाला। (स्त्री०) डीप्। अभिवर्षिणी।

अभिवह (सं० त्रि०) निकट या सम्मुख ले जाने-
वाला, जो हाँकते जा रहा हो।

अभिवहन (सं० स्त्री०) निकट वा सम्मुखका पहुँ-
चाना, नजदीक या सामनेका ले जाना।

अभिवाञ्छित (सं० त्रि०) इच्छा किया हुआ, जो
चाहा गया हो।

अभिवात् (सं० त्रि०) अभिसुखेन वाति गच्छति,
अभि वा-शब्द। भृत्य, दास, नौकर, गुलाम।

अभिवात (सं० अव्य०) वायुकी ओर, हवाकी तर्फ,
जिस रुखको हवा चले।

अभिवाद (सं० पु०) अभितो वादः आशीर्वादरूपं
वाक्यम् येन, प्रादि-बहुव्री०। अभि-वद करणे घञ्।

१ सम्मुख प्रणाम, साहब सलामत। अभिवर्षको वादः
वाक्यम्, प्रादि-तत्। २ पुरुष वाक्य, कठिन वचन,
कड़ी बात, गालीगलौज। 'पारुष्यमभिवादः स्यात्।' (अमर)

अभिवादक (सं० त्रि०) अभितो वदति, अभि-चुरा०
वद-खुल्। १ सम्मुख प्रणतिकारो, वन्दार, वन्दगो
करनेवाला। 'वन्दारमभिवादकः।' (अमर)

अभिवादन (सं० स्त्री०) अभि पूजाई वादनं त्वामहं

अभिवादये इत्यादिरूपं कथनम्, प्रादि-तत्; अभि-
चुरा० वद-णिच्-लुगट् । १ पूजार्थं वाक्य, गौरवार्ह
वाक्य, जो बात किसोको इज्जत बढ़ानेके लिये कही
गयी हो। यद्वा अभिः सौम्ये सौम्यं आशीर्वादरूपं
वाक्यते प्रत्यभिवादयित्वा कथ्यते येन । २ नामग्रहण-
पूर्वक प्रणामं, नाम लेकर बन्दगीका बजाना । जिसके
हाथमें समिध्, जल, जलका कलस, फूल, अन्न, कुश,
अग्नि, दत्तन और भक्ष्यवस्तु रहे, उसे अभिवादन न
देना चाहिये । किंवा जो जप वा यज्ञ करता या
जलमें खड़ा हो, उसे भी अभिवादन करनेका निषेध
है । वयःकनिष्ठ श्वशुर, पित्रव्य, मातुल एवं पुरोहित
को खड़े ही खड़े अभिवादन दिया जाता अर्थात्
पैर न छूना चाहिये ।

अभिवादयिता (सं० पु०) अभिवादयित देखो ।

अभिवादयितृ (सि० त्रि०) सगौरव प्रणतिकारी,
अदबके साथ सलाम करनेवाला ।

अभिवादयित्री (सं० स्त्री०) अभिवादयित देखो ।

अभिवादित (सं० त्रि०) सगौरव प्रणाम किया
हुआ, जिसकी अदबके साथ बन्दगी हो चुके ।

अभिवाद्य (सं० त्रि०) अभिवादयितुमर्हम्, अभि-
चुरा० वद-णिच्-यत् । १ अभिवादनके योग्य, जिसे
प्रणाम करना कर्तव्य ठहरे, अदबसे बन्दगी बजाने
काबिल । पिता, गुरु, स्वर्ण वयोज्येष्ठ, राजा, पुरो-
हित, ओत्रिय, अधर्मनिवारक, अध्यापक, पित्रव्य,
मातामह, मातुल, श्वशुर, ज्येष्ठभ्राता, सम्बन्धिव्यक्ति,
इनकी स्त्री सकल वयोज्येष्ठा, मौसी, पित्रव्यसा,
ज्येष्ठा भगिनी आदि अभिवाद्य हैं । युवती गुरुपत्नीके
पैर न छूना चाहिये । किसी-किसीके मतमें गुरुके
पैर छूकर प्रणाम करना निषिद्ध है । (अव्य०) ल्यप् ।
प्रणाम करके, आदाब बजाकर ।

अभिवाद्य (सं० त्रि०) अभि-वन सम्भक्तौ कर्मणि
ल्यत् । सम्भञ्जनीय, सम्यक् भजनाके योग्य ।

अभिवाद्यवत्सा, अभिवाद्या देखो ।

अभिवाद्या (सं० त्रि०) दूसरेके बच्चेको दूध
पिलानेवाली गाय, जो गाय दूसरी गायके बच्चेको
अपना सम्भकर दूध पिलाती हो ।

अभिवास (सं० पु०) आच्छादन, आवरण, पोशिश,
ओढ़ना, चादर, गिलाफ ।

अभिवासन (सं० स्त्री०) अभिवास देखो ।

अभिवासस् (सं० अव्य०) वासस् उपरि, अव्ययो० ।
परिहित वस्त्रके उपरिभाग, कपड़े पर ।

अभिवाह्य (सं० त्रि०) अभ्युह्यते, अभि-वह कर्मणि
ल्यत् । १ सकल दिक् वा, सकल प्रकार वहनीय,
नजदीक पहुँचाया जानेवाला । (स्त्री०) भावे ल्यत् ।
३ नयन, प्रापण, इन्तिकाल, तकवील, ले जाना ।
३ समर्पण, नज़र ।

अभिविख्यात (सं० त्रि०) लोकप्रसिद्ध, खूब मशहूर,
जिसे सब लोग जानें ।

अभिविज्ञप्त (सं० त्रि०) विघोषित, सूचित, सुश्रुत,
जो लोगोंको बता दिया गया हो ।

अभिविधि (सं० पु०) अभि समन्तात् विधि व्यापनम्,
अभि-वि-धा-कि । व्याप्ति, इन्दिराज, समायी ।

अभिविनीत (सं० त्रि०) १ भली भाँति बरताव
करनेवाला, जो अच्छीतरह पेश आता हो । २ सुशौल,
सुअहव । ३ साधु, पाकौज़ा ।

अभिविमान (सं० पु०) अभितः विशेषेण मानं
हादशाङ्गलरूपपरिमाणं यस्य, प्रादि बहुव्री० । १ पर-
मात्मा, परमेश्वर । (त्रि०) २ अपरिमित परिमाण-
वाला, जिसकी असामत बेहद रहे ।

अभिविशङ्गिन् (सं० त्रि०) भयभीत, डरनेवाला ।

अभिविश्रुत (सं० त्रि०) सुप्रसिद्ध, खूब मशहूर ।

अभिवीक्षित (सं० त्रि०) संदृष्ट, देखा हुआ, जो
मालूम पड़ गया हो ।

अभिवीक्ष्य (सं० अव्य०) देख या समझकर ।

अभिवीर (सं० पु०) पुरुषों वा वीरोंसे आवेष्टित
व्यक्ति, जिस शस्त्रको आदमी या बहादुर घेरे रहें ।

अभिवृत्त (सं० त्रि०) व्यावृत्त, उद्धृत, चुना हुआ,
जो छांट कर निकाला गया हो ।

अभिवृत्त (सं० त्रि०) १ गया हुआ, जो खाना हो
चुका हो । २ घूम जानेवाला, जो रुख बदल रहा हो ।

अभिवृत्ति (सं० स्त्री०) अभि-वृत्-क्तिन् । सर्वथा

अभिवृद्ध (सं० त्रि०) विस्तारित, समृद्ध, बढ़ा हुआ,
जो फैल गया हो।

अभिवृद्धि (सं० स्त्री०) समृद्धि, संयोग, सफलता,
बढ़ती, मेल, कामयाबी।

अभिवृष्ट (सं० त्रि०) १ सिद्धित, सींचा हुआ,
जिसमें पानी दे चुके। २ बरसा हुआ, जो बरस
चुका हो।

अभिवेग (सं० पु०) विचार, अभीष्ट, खयाल, इरादा।

अभिव्यक्त (सं० त्रि०) अभि-वि-अच्ञ कर्मणि क्त।
१ फलोन्मुखीकृत, जाहिर, साफ़। “तत्र देवमभिव्यक्तं पौरुषं
पौर्वदेहिकम्।” (याज्ञवल्क्य) २ अभिव्यक्तियुक्त, प्रकाशित,
जाहिर किया हुआ, जो बताया गया हो।
३ सांख्यादि मतसिद्ध आविर्भावयुक्त। (अव्य०)
४ प्रकाशभावसे, साफ-साफ़।

अभिव्यक्ति (सं० स्त्री०) अभि-वि-अच्ञ-क्तिन्।
१ प्रकाश, जहूर। २ घोषणा, डिंढोरा। ३ सांख्यादि
मतसिद्ध सूक्ष्मरूपस्थित कारणका कार्यरूप आविर्भाव।
४ एकरूप स्थित पदार्थका अन्यरूप प्रकाश।

अभिव्यङ्ग्य (सं० त्रि०) प्रकाशित किया जानेवाला,
जो साफ-साफ़ बताने काबिल हो।

अभिव्यज्यमान (सं० त्रि०) प्रकाशित किया जाते
हुआ, जो साफ-साफ़ बताया जा रहा हो।

अभिव्यञ्जक (सं० त्रि०) अभिव्यञ्जयति प्रकाशयति,
अभि-वि-अच्ञ-णिच्-ण्वल्। १ प्रकाशक, जाहिर
करनेवाला। २ निर्देशक, जो बताता हो। ३ अल-
ङ्कारमतसे व्यञ्जनावृत्ति द्वारा प्रकाशक।

अभिव्यञ्जन (सं० क्लो०) प्रकाशन, जाहिर करनेकी
हालत।

अभिव्यादान (सं० क्लो०) १ नियन्त्रित शब्द, दबी
हुयी आवाज़। २ अभिन्न शब्दकी पुनरावृत्ति, उसी
आवाज़का दोहराव।

अभिव्याधिन् (सं० त्रि०) आघातकारी, अतिकष्टदायक,
मार डालनेवाला, जो गहरी चोट लगाता हो।

अभिव्यापक (सं० त्रि०) अभितो व्याप्नोति, अभि-
वि-आप्-ण्वल्। सकल दिक् व्यापक, जो सकल
अवयवमें व्याप्त हो, सब ओर भरा हुआ, जो सब

अङ्गमें समा रहा हो,। ३ व्याकरणमतसे—सकल
अवयव व्याप्त आधार अभिव्यापक होता है।

“औपदेशिको वेषयिकोऽभिव्यापकश्चेत्याधारस्त्रिधा।” (सिद्धान्तकोसदी)
अभिव्याप्त (सं० त्रि०) सम्मिलित, शामिल, मिला
हुआ।

अभिव्याप्ति (सं० स्त्री०) अभि-वि-आप् भावे क्तिन्।
सकल दिक् व्यापन, सर्वत्र अवस्थान, सकल अवयव
व्याप्ति, सब तर्फ समायो, सब जगह रहायिश, सब
अङ्गकी पेठ।

अभिव्याप्य (सं० त्रि०) अभिव्याप्यते, अभि-वि-आप्
कर्मणि ण्यत्। १ सकल अवयव व्यापनीय, सब
अङ्गमें समा जानेवाला। (अव्य०) ल्यप्। २ सकल
अवयवमें व्याप्त होकर, सब अङ्गमें समाके।

अभिव्याहारण (सं० क्लो०) अभिव्याहार देखो।

अभिव्याहार (सं० पु०) अभि सौम्यः व्याहार उक्तिः,
अभि-वि-आ-हृ-घञ्। १ प्रशस्त उक्ति, भली बात।
२ उच्चारण, तलफ़्फुज।

अभिव्याहारिन् (सं० त्रि०) उच्चारण करनेवाला,
जो कह रहा हो।

अभिव्याहृत (सं० त्रि०) उच्चारित, कहा हुआ, जो
मुंहसे निकल गया हो।

अभिवृद्ध (वै० पु०) आक्रमण, हमला, चढ़ाई।

अभिशंसक (सं० त्रि०) १ अभियोग लगानेवाला,
जो इलजाम लगाता हो। २ अपमान करनेवाला, जो
इज्जत उतारता हो। ३ अपशब्द कहनेवाला, जो
गाली देता हो।

अभिशंसन (सं० क्लो०) अभितः शंसनं क्रोधवचनं
आरोप्यापवादो वा, अभि-शन्स-लुट्। १ अपवाद, इल-
जाम। २ परुष वाक्यप्रयोग, कड़ी बातका कहना।
३ आक्रोश, बद्दुवा।

अभिशंसिन्, अभिशंसक देखो।

अभिशङ्क (सं० त्रि०) अभितः शङ्का यस्य, प्रादि-बहुप्रो०।
सर्वथा शङ्कायुक्त, जिसे सब तरह शक बना रहे।

अभिशङ्का (सं० स्त्री०) अभितः शङ्का; प्रादि-तत्,
अभि-शङ्क-भावे अ-टाप्। १ सर्वथा शङ्का, सकल प्रकार
आशङ्का, शंसा, अम, शक।

अभिज्ञित (सं० त्रि०) शङ्कायुक्त, भयभीत, शक करनेवाला, खौफज, दह, जिसे डर लग चुके।

अभिज्ञपन (सं० क्ली०) अभिज्ञाप देखो।

अभिज्ञप्त (सं० त्रि०) अभिज्ञप्यते स्म, अभि-ज्ञप कर्मणि क्त। १ अभिज्ञापयस्त, शापित, जिसे बददुवा दी जा चुके। २ अभियोग लगाया हुआ, जिसपर इलज, अम लग चुके। ३ निन्दित, बदनाम।

अभिज्ञदित (सं० त्रि०) अभिमुख्येन शब्दितम्। सम्मुख आहत, सम्मुख कथित, सामने सुनाया हुआ, जो मुंहपर कहा गया हो।

अभिज्ञस् (सं० त्रि०) अभि-ज्ञन्स-क्तिप्। १ सर्वथा आक्रोशकारी, सबतरह बददुवा देनेवाला। २ सर्वथा अपवादकारी, सब तरह इलज, अम लगानेवाला। (द्वै० स्त्री०) ३ अभियोग, इलज, अम।

अभिज्ञस्त (सं० त्रि०) अभिज्ञस्यते स्म, अभि-ज्ञन्स-क्त। १ मिथ्यापवादित, झूठ मूठ बदनाम। अभि-वधे क्त। २ हिंसित, आक्रान्त, मारा हुआ, जो चोट खा चुका हो। (कौ०) जन्स शस् वा भावे क्त। ३ आक्रोश, अभिज्ञाप, अपवाद, हिंसन, बददुवा, बदनामी, मारपीट।

अभिज्ञस्तक (सं० त्रि०) १ मिथ्यापवादित, झूठ-मूठ बदनाम। २ शापित, जिसको बददुवा दी गयी हो। ३ अभिज्ञापसे उत्पन्न, जो बददुवासे पैदा हुआ हो। (स्त्री०) अभिज्ञस्तिका।

अभिज्ञस्ता, अभिज्ञस्तु देखो।

अभिज्ञस्ति (सं० स्त्री०) अभि-ज्ञन्स-क्तिन्। १ अभि-ज्ञाप, बददुवा। २ अपवाद, बदनामी। ३ हिंसा, कत्ल। अभिमुख्येन शस्तिर्याचनम्। ४ प्रार्थना, अर्ज।

‘अभिज्ञस्तिः पुनर्लोकापवादे श्राद्धेनेऽपि च।’ (ह्रस्व)

अभिज्ञस्तिचातन (द्वै० पु०) अभिज्ञाप निवारण, बददुवाका दूर रखना।

अभिज्ञस्तिपा (वै० पु०) अपवाद वा अभिज्ञापसे बचानेवाला व्यक्ति, जो शस्स्स बदनामी या बददुवासे बचाता हो।

अभिज्ञस्तृ (सं० पु०) शत्रु, हानिकर्ता, दुश्मन, नुकसान पहुंचानेवाला।

अभिज्ञस्तृ (सं० त्रि०) अभिज्ञस्तिं अभिज्ञापं अर्हति यत्। अभिज्ञापार्ह, हिंसाके योग्य, बददुवा देने काबिल, जो मारा जाने लायक हो।

अभिज्ञान्त्व (सं० क्लौ०) अनुग्रह, क्षमा, मेहरबानी, नेवाजिश।

अभिज्ञाप (सं० पु०) अभि-ज्ञप-घञ् वा दीर्घः। १ अभिसम्पात, आक्रोशवाक्य, बददुवा, कोसनेकी बात। २ मिथ्यापवाद, झूठी बदनामी।

अभिज्ञापज्वर (सं० पु०) अभिज्ञापके कारण आया हुआ ज्वर, जो बुखार बददुवाके सबब चढ़ आता हो। अभिज्ञापित (सं० त्रि०) अभिज्ञाप दिया हुआ, जिसको बददुवा दी गयी हो।

अभिज्ञीरोघ (सं० त्रि०) शिरसोऽभिमुखं अग्रमस्थ, बहुव्री०। ऊर्ध्वदिक् मूल एवं निम्नदिक् शाखावाला, जिसको जड़ ऊपर और डाल नीचे जाये।

अभिज्ञीत (सं० त्रि०) बहुत ठण्डा, निहायत सर्द। अभिज्ञोन (सं० त्रि०) घनोभूत, जो गाढ़ा हो गया हो।

अभिज्ञोक (सं० पु०) अभिलक्ष्योक्त्य कमपि शोकः, प्रादि-तत्। १ किसीको लक्ष्यकर शोक करनेवाला व्यक्ति, जो शस्स्स किसीको देख अफसोस करता हो। (कौ०) शुच-लुपट्। २ अभिज्ञोचन, पछतावा।

अभिज्ञोच (सं० त्रि०) चमत्कृत, प्रदीप्त, चमकीला, जो गर्मीसे चमक रहा हो।

अभिज्ञोचयिष्णु, अभिज्ञोच देखो।

अभिज्ञौरि (सं० अव्य०) शौरिकी ओर, कृष्णकी तरफ।

अभिज्ञान, अभिज्ञोन देखो।

अभिज्ञव (वै० पु०) अभि-ञ्च-अप् वेदे घञ्। सर्वथा श्रवण, सकल दिक् श्रवण, सबतरह सुनायी, चारो ओरका सुनना।

अभिज्ञवण (वै० क्ली०) वेदके मन्त्रविशेषका पुनः पुनः उच्चारण, आद्व करनेको बैठना।

अभिज्ञाव, अभिज्ञव देखो।

अभिज्ञी (वै० पु०-स्त्री०) १ संयोजक, जोड़नेवाला, जो मिलानेवाला हो। २ नियमसे रखनेवाला, जो

तरतौब लगाता हो। ३ शरणापन्न, पनाह पा जाने काबिल। ४ सम्मानित, इज्जतदार। ५ प्रदीप्त, चमकते हुआ। ६ शक्तिशाली, ताकतवर।

अभिषेक (सं० स्त्री०) बन्धन, वेष्टन, रज्जु, पट्टी बांधनेकी चिट।

अभिष्वस् (सं० त्रि०) ऊपर सांस लेनेवाला, जो किसौकी तर्फ सांस चलाता हो।

अभिश्वास (वै० पु०) उद्गार, उद्गम, उद्गमन, सांसका छोड़ देना।

अभिष्वेत्य (सं० त्रि०) अभि अपगतं श्वेत्यं स्वभावस्य शुचित्वं यस्य, प्रादि-बहुव्री०। शुद्धचरित्र, जिसका स्वभाव पवित्र रहे, नेकचलन, पाकौजा मिजाजवाला।

अभिषक्त (सं० त्रि०) दलित, पराजित, अभिशप्त, निन्दित, पायमाल, शिकस्त, जिसको बददुवा दी-गयी हो, बदनाम।

अभिषङ्ग (सं० पु०) अभितः सङ्गो मिलनम् आसक्तिर्वा येन; प्रादि-बहुव्री०, अभि-सङ्ग-घञ्। १ शपथ, कस्म। २ आक्रोश, बददुवा। ३ पराभव, हार। 'अभिषङ्गश्च शपथे स्वादाक्रोशे पराभवे।' (विश्व) ४ आसक्ति, फंसाव। ५ व्यसन, दुःख, आदत, तकलीफ। 'नवविधमाभिषङ्गात्।' (साध अ६) 'नवविषङ्गां नूतनदुःखान्।' (मल्लिनाथ) ६ पूर्ण संयोग, पूरा मेल। ७ सङ्गति, सोहबत। ८ आलिङ्गन, छातीसे छातीका प्रेमसे मिलाना। ९ प्रेतवाधा, शैतान्का साया।

अभिषङ्गज्वर (सं० पु०) भूतादिके आवेशसे आया हुआ ज्वर, जो बुखार शैतान्के साये सबब चढ़ता हो। यह छः प्रकारका होगा। वैद्यकमें लिखा है,—

“अभिघाताभिचाराभ्यामभिषङ्गामिश्रपतः।

आगनुर्जायते दीर्घं यथास्त्वन् विभावयेत् ॥” (माधव निदान)

पुनश्च,—

“कामशोकभयक्रोधैरभिषक्तस्य यो ज्वरः।

सोऽभिषङ्गज्वरो ज्ञेयः यस्य सूताभिषङ्गजः ॥” (चरक नि०)

अभिषङ्गा (वै० स्त्री०) वेदका वाक्य विशेष।

अभिषव (सं० पु०) अभि-सु-अप्। १ यज्ञीय स्नान, मज्जहवौ गुसल। २ निष्पीडन, सोमलताका निचोड़।

३ मद्यसन्धान, आवकारी। ४ सुखसङ्ग, काशीचर, नरकाया गया हो। प्रतिमाकी प्रतिष्ठा और राजाके

खमीर। ५ सोमलताका रसपान। वदिक समयमें ऋषि शकटपर सोमको लाद लाते थे। उसके बाद वही लता प्रस्तरपर रख अन्य प्रस्तर द्वारा दवा देते रहे। अच्छौतरह दव जानेसे मेड़के चमड़ेको मसकमें उसे भरते और कूट-कूट कर रस निकालते थे। मसकका रोयेंदार चमड़ा भीतरकी ओर रहता था। पीछे वही रस पुनर्बार चर्मके आधारसे छान लेनेपर परिष्कार होते रहा। ऋषि कुम्भके भीतर रख सोमरसमें यव, चीनी प्रभृति नानाप्रकार द्रव्य मिला देते थे। उसीमें अन्तरत्सित्त होकर मद्य प्रसृत होते रहा।

सूयते स्नायते अस्मिन्, अधिकरणे अप्। ६ यज्ञ।

७ जैनशास्त्रके मतसे सौवीरादि द्रव वा द्रव्य द्रव्य।

“द्रवो ह्यर्थं वा ऽभिषवः।”

‘द्रवः सौवीरादिकः ह्यर्थं वा द्रव्यमभिषवः द्रव्यमिधीयते ॥’

(अकलङ्करचित तन्त्रार्थराजवार्तिक अ१५।१)

अभिवषण (सं० स्त्री०) अभि-सु-लुपट्। अभिषव देखो।

अभिषवणी (सं० स्त्री०) सोम-निष्पीडनका यन्त्र, जिस चौड़ेसे सोम दबाया जाये।

अभिषवणीय (सं० त्रि०) सोमरसकी भांति निचोड़ जाने योग्य, जो खूब दवाने काबिल हो।

अभिषद्वा (सं० त्रि०) अभितः सोढुं शक्यम्, अभि-सङ्-यत्। १ सङ्गन करने योग्य, जो बरदाश्त करने काबिल हो। (अव्य०) २ वलपूर्वक, जोरसे।

अभिषाच् (सं० त्रि०) अभि-सच् स्वार्थे णिच्-क्षिप्। सम्मुख बन्धन करनेमें समर्थ, अभिभावक, सामने बांध सकनेवाला, जो जड़वत् कर सकता हो।

अभिषावक (सं० पु०) सोमरस निचोड़नेवाला व्यक्ति।

अभिषावकौय (सं० त्रि०) अभिषावक-सम्बन्धीय, जो सोम निचोड़नेवाले शख् ससे तात्तूक रखता हो।

अभिषाह, अभीषाह (सं० त्रि०) अभि-सङ्-खि स्वार्थे णिच्-क्षिप् वा। १ शत्रुजयकारी, दुश्मन्को जीतने-वाला। २ सङ्गनकारी, जो बरदाश्त कर लेता हो।

अभिषिक्त (सं० त्रि०) अभिषिच्यते स्म, अभि-सिच्-क्त। १ विधिपूर्वक स्थापित, जो महजबी तौरपर

नरकाया गया हो। प्रतिमाकी प्रतिष्ठा और राजाके

राज्यभार पाने इत्यादि शुभकार्यमें तोर्यजलादि द्वारा विधिपूर्वक लोग नहाते हैं।

अभिषिषिक्तत् (स० त्रि०) अभिषेक करनेका इच्छुक, जिसे तेल चढ़ानेकी खाहिश लगी रहै।

अभिषुक्त (स० पु०) काबुल वगैरहका मशहर मेवा, पिस्ता।

अभिषुत (स० त्रि०) अभिष्यते स्म, अभि-सु-क्त।
१ निष्पीडित, सोमरसकी भांति निचोड़ा हुआ। (कौ०)
२ काजी।

अभिषुविक्रान्त (स० पु०) माधवीसुरा, महुवेकी शराब।

अभिषेक (स० पु०) अभिषेचनं अभि-सिच-भावे घञ्। विधान अनुसार शान्तिके लिये सेचन, अधिकार पानेके लिये स्नान, मन्त्रसे शिरपर जल छिड़ककर मार्जन, कर्तव्य कर्मके अन्तमें शान्तिस्नान, पुरस्चरणके अन्तर्गत मन्त्रद्वारा शिरपर जल छिड़कनेका तीसरा काम। इष्टमन्त्रग्रहण करते समय दश प्रकारके संस्कारमें पांचवां संस्कार विशेष। यथा गौतमीये

“जननं जीवनं पञ्चात्ताडनं बोधनं तथा।

अथाभिषेको विमलीकरणाय्याये पुनः।

तर्पणं दीपनं गुप्तिदं शैवा मन्त्रसंक्षिप्ताः॥”

जनन, जीवन, ताड़न, बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, अप्यायन, तर्पण, दीपन, गोपन, मन्त्रका यही दश प्रकार संस्कार है।

मन्त्राभिषेककी प्रणाली इस तरह लिखी हुई है,—स्वर्ण अथवा ताम्बादिके पात्रपर पहले स्वरव्यञ्जन-मेदसे कुङ्कुमद्वारा मन्त्रको लिखना चाहिये। फिर उसके ऊपर तालपत्रादि रखकर पंक्ति पंक्ति मन्त्र लिखे। अन्तमें,—“अमुकवर्णमभिषिञ्चामि नमः”—यह मन्त्र सौ, बीस या आठ बार उच्चारण कर कुङ्कुमसे लिखे हुए मन्त्र द्वारा प्रत्येक वर्णको पौपलकी पल्लवसे अभिषेक कराना पड़ेगा।

शक्तिमन्त्र द्वारा दीक्षा देते समय मधुसे अभिषेक करना होता है। विष्णुमन्त्रमें कर्पूरयुक्त जल प्रशस्त है। शिवमन्त्रमें घी अथवा दूध देना चाहिये।

शिवलिङ्गादि प्रतिष्ठा एवं दोलयात्रादि उत्सवमें भी अभिषेककी पद्धति है। किन्तु सब क्रियाका अभिषेक द्रव्य समान नहीं होता।

दोलयात्रा अभिषेकके द्रव्य यह हैं,—शोतल जल, गायका गोबर, गोमूत्र, दूध, दही, घी, कुशका जल, शङ्खका जल, चन्दनका जल, कुङ्कुमका जल, फूलका जल, फलका जल, चन्दन और अंवरा—इन सबको एक साथ पीस कर उसका प्रलेपन और सुगन्धि जल। इन सब वस्तुओंसे आठ बार स्नान कराना चाहिये। दूसरी बार स्नानके समय अभिषेक-द्रव्योंके साथ दूध मिलाते हैं। पांचवीं बारके समय घी और आठवीं बारके समय उसमें मधु मिला देना आवश्यक है। अन्तमें अन्यान्य द्रव्योंके साथ गङ्गोदक, तोर्यजल, गङ्गाजल, वल्मीक जल, सर्वौषधि-जल, सहस्रधारा-जल, घड़ेका जल—इन सब द्रव्योंसे अभिषेक करते हैं।

दुर्गापूजाके अभिषेकमें यह सब द्रव्य व्यवहृत होते हैं,—पिसे हुए अंवरेमें हलदी मिलाकर उसका प्रलेपन, शुद्धजल, शङ्खका जल, गङ्गाजल, गन्धोदक, पद्मगवा, कुशका जल, पञ्चामृत, शिशिरका जल, मधु, फूलका जल, इक्षुरस, सागरका जल, सर्वौषधि-महौषधि-जल, पञ्चकषायका जल, अष्ट मृत्तिका, फलका जल, उष्ण जल, सहस्रधारा-जल, वृष्टि-मन्दाकिनी-सरस्वती-सागर-पद्मरेणुमिश्रित-निर्भर-सर्वतीर्थ-शुद्धजल, इन आठ प्रकारके जलोंसे पूर्ण आठ घड़े रखे। फिर इन आठ प्रकार घड़ेके जलोंसे स्नान कराते समय आठ प्रकारके बाजे बजाने और राग आलापनेका विधि है। बृहन्नन्दिकेश्वर, देवीपुराण और कालिकापुराणमें भिन्न भिन्न बाजों और रागरागिणियोंके नाम पाये जाते हैं।

बृहन्नन्दिकेश्वरके मतसे इन सब राग रागिणियोंमें यह गीत होना चाहिये,—१ मालव्य, २ देवकीरो, ३ बराड़ी, ४ देशाख्य, ५ घनाश्री, ६ भैरवी, ७ गुर्जरौ, ८ वसन्त। देवीपुराणके मतसे,—१ बराड़ी, २ मालव-गोड़, ३ मालव, ४ देशाख्य, ५ मालव्य, ६ भैरवी, ७ वसन्त, ८ गोड़, ९ कालिकापुराणके मतसे,—

१ मालव, २ ललिता, ३ विभाषा, ४ भैरवी, ५ कोड़ा, ६ वराही, ७ वसन्त, ८ धनाश्री ।

बाजे के विषयमें यह लिखा है । वृहन्नन्दिकेश्वरके मतसे,—१ मङ्गलोत्सव, २ भुवनविजय, ३ विजय, ५ राजाभिषेक, ५ मधुरी, ६ करताल, ७ वंशी, ८ पञ्चशब्द । देवीपुराणके मतसे—१ इन्द्रविजय, २ मङ्गलविजय, ३ देवोत्सव, ४ घनताल, ५ मधुकर, ६ ठक्का, ७ शंख, ८ मृदङ्ग । कालिकापुराणके मतसे,— १ विजय, २ विजयदुन्दुभि, ३ दुन्दुभि, ४ वंशी, ५ इन्द्राभिषेक, ६ शङ्ख, ७ पञ्चशब्द ।

राज्याभिषेकके लिये यह सब द्रव्य कहे गये हैं,— मृगचर्मास्त्रीर्ण अलङ्कृत स्वर्ण, भद्रासन, गङ्गा और यमुनाके सङ्गमस्थलका जल, सब पुनीत नदियोंका जल, पूर्वमुखकी नदीका जल, पश्चिममुखकी नदीका जल, तिर्यङ्मुख नदीका जल, सब द्रव्योंका जल, क्षीरिह्व प्रवाल पद्म नीलपद्म प्रभृति मिश्रित काञ्चन, कुम्भपूर्ण जल, रुचक, रोचना, घृत, मधु, दुग्ध, दधि, पुण्यतीर्थमृत्तिका, पुण्यतीर्थजल, मङ्गलद्रव्य, मणि-दण्डयुक्त श्वेतचामर-वराजन, मातृभूषित श्वेतच्छत्र, श्वेतवृष, श्वेतश्व, वृहत् हस्तौ, उत्तम अलङ्कारभूषित अष्ट कन्या, सब तरहके बाजे, सुसज्जित बन्दो ।

अभिषेकके एक दिन पहले गणेश और मातृकादिकी पूजा करके नान्दीकार्य ससन्न करना होता है । राजा और राणी उपवास करेंगी । दूसरे दिन पुरोहित, अमात्य और सामन्तोंको लेकर स्नानादिके बाद जब राजा और राणी मणि, काञ्चन, पृथिवी, पुष्प प्रभृति स्पर्श कर लें, तब उन्हें वराघ्नचर्म आच्छादित आसनपर बैठाना चाहिये । उसके बाद अग्नि स्थापनकर पला-शादि समिधद्वारा घृतकी आहुति देना होगा । अन्तमें ऋत्विगण अमात्य प्रभृति सबको लेकर अष्टकन्या-परिवृत राणीसहित राजाको अभिषेक करेंगी । अभिषेक हो जानेपर सब कोई राजा और राणीके क्षपालमें कुङ्कुम, अगुरु, कस्तूरी प्रभृतिका तिलक देंगे ।

राज्याभिषेक देखो ।

अभिषेकशाला (सं० स्त्री०) राज्याभिलषका भवन, जिस महलमें बादशाहकी ताजपोशी की जाय ।

अभिषेकार्द्रशिरस् (सं० त्रि०) अभिषेकसे शिर भिगोये हुआ, अभिषिक्त, जिसका सर मजहबी गुसलसे तर रहे । अभिषेकाह (सं० पु०) अभिषेकका दिन, जिस रोज, मजहबी गुसल बने ।

अभिषेक्त्व (सं० त्रि०) अभिसिञ्चति, अभि-षिच्-त्वच् । अभिषेककर्ता, मजहबी गुसल करनेवाला । (स्त्री०) डोप । अभिषेक्त्री ।

अभिषेक्य (सं० त्रि०) अभिषेक्तुमर्हम्, अभि-सिच्-ण्यत् कुत्वम् । अभिषेकके योग्य ।

अभिषेचन (सं० क्तो०) अभि-सिच भावे लुगट् ।

१ अभिषेक, धार्मिक स्नान, मजहबी गुसल । अभिषेक देखो ।

करणे लुगट् । २ अभिषेक-द्रव्य जल घृतादि ।

अभिषेचनीय (सं० त्रि०) अभि-सिच कर्मणि अनो-यर् । अभिषेकके योग्य, जिसको अभिषेक देना उचित हो ।

अभिषेचनीयस् (सं० पु०) यज्ञविशेष, यह राजाका अभिषेक होते समय किया जाता है ।

अभिषेचित (सं० त्रि०) अभिषिक्त, अभिषेक कराया हुआ, जिसका अभिषेक हो चुके ।

अभिषेच्य, अभिषेक्य देखो ।

अभिषेण (सं० पु०) अभिषेचन देखो ।

अभिषेचन (सं० क्तो०) इणः राजा पतिर्वा तेन सह वर्तते सेना तथा अभिमुखं याति शत्रोः, अभि-सेना-णिच्-लुगट् पत्वं णत्वच् । १ युद्धनिमित्त जयेच्छु व्यक्तिका सेनाको साथ लेकर शत्रुके सम्मुख गमन, लड़ाईको फौज लेकर दुश्मनके सामनेकी पहुंच । २ अभिमुख वाणसन्धान, सामनेकी तीरन्दाजी ।

अभिषेणयिषु (सं० त्रि०) सेना लेकर पहुंचनेका उत्सुक, जो फौज लेकर दुश्मनके सामने पहुंचनेका खांदिशमन्द हो ।

अभिष्टन (सं० पु०) अभितः स्तनः, अभि-स्तन-अच् । सिंहनाद, उद्घोषण, गरज, दहाड़, शोर-गुल ।

अभिष्टव (सं० पु०) प्रशंसा, तारोफ़ ।

अभिष्टि, अभीष्टि (वै० त्रि०) इज्यते इज्यते वा अनया

अभि-यज् वा इष्-तिन् वेदे पृषो० एका० । १ अभि-यष्ट्य, जिसका धाम कर्तव्य ठहरे । (पु०) २ सहा-

यक, रक्षक, मददगार, सुहायिण। ३ रक्षा रखने कारण पूज्य वरक्ति, जिस शत्रुसकी तारोफ़ हिफाजत करनेसे रहे। ४ आक्रमणकारी, हमला करनेवाला। ५ शत्रु-पराजयकारी, दुश्मनको शिकस्त देनेवाला। ६ अभिलाष, चाहिश। (स्त्री०) ७ साहाय्य, रक्षा, मदद, हिफाजत। ८ यज्ञ। ९ यज्ञीय गीत। १० साहाय्यार्थ उपस्थिति, मददके लिये पहुंचना।

अभिष्टिक्तत् (सं० त्रि०) सहायक, मददगार।

अभिष्टिदुःख (सं० त्रि०) आनन्ददायक, आराम देनेवाला।

अभिष्टिपा (वै० पु०) शत्रुसे रक्षा करनेवाला, निवारणकारी, जो दुश्मनसे हिफाजत करता हो, दुश्मनको दूर रखनेवाला।

अभिष्टिमत् (सं० त्रि०) अभिलषणीय, उत्कण्ठा योग्य, मरगूब, काबिल-तमन्ना, पसन्दीदा, अच्छा।

अभिष्टिशवस् (सं० त्रि०) सहायक वरक्ति, मददगार शत्रुस, जो आदमी दुश्मनको जीतने काबिल हो।

अभिष्टुत (सं० त्रि०) अभितः स्तुतम्, अभि-स्तु-क्त। प्रशस्त, प्रशंसित, वर्णित, स्तुत, तारोफ़ किया हुआ।

अभिष्ट्वत् (सं० त्रि०) प्रशंसापरायण, जो तारोफ़ कर रहा हो।

अभिष्यत् (सं० त्रि०) विनाशक, हिंसक, बरबाद करनेवाला, जो कत्ल कर रहा हो।

अभिष्यन्द, अभिष्यन्द (सं० पु०) अभि-ष्यन्द भावे घञ्, अप्राणि-कर्तरि वा षत्वम्। १ अतिवृद्धि, अधिक वृद्धि वा फूलना, बहाव, जल आदिका निकास, जलका गिरना। आधारे घञ्। २ नेत्ररोगविशेष। 'अभिष्यन्द्य आखावनेत्ररोगातिवृद्धिषु।' (हेम) नेत्रके भीतर धूल, कीड़ा, पसीना, आदि बाहरकी कोई वस्तु उड़कर पड़ने; उग्र बाष्पादिका तेज, प्रखर रौद्र, धूम, पूर्व वा उत्तर दिशाका वायु अथवा अति शीतल वायु प्रभृति लगने, सर्वदा सूक्ष्म वस्तुकी ओर देखते रहने, वर्षा और शीतकालकी रात्रिका वायु छूने; अतिशय मद्यपान, अतिमैथुन, अत्यन्त मानसिक उद्वेग, अधिक वमन, कोष्ठवृद्धता, शिरोरोग, अतिशय क्रोध प्रभृति कारण विद्यमान रहनेसे अभिष्यन्द रोग हो सकता है।

Ophthalmia, Suppurative inflammation of the eye—प्रभृति रोग यहां एक ही साथ गृहीत हुए हैं।

वैद्यक पुस्तकोंमें अभिष्यन्दरोग चार श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है,—वातजनित, पित्तजनित, कफ-जनित और रक्तजनित। फलतः यह रोग कहीं सहज और कहीं अतिशय कठिन हो जाता है। नेत्र थोड़े या बहुत लाल हो जाते और जैसे उनमें धूल पड़ गई हो, वैसे करकराया करते हैं। इसे 'आंख उठना' (Conjunctivitis, simple ophthalmia) कहते हैं। वैद्यशास्त्रका यह वातजनित अभिष्यन्द है।

कफजनित अभिष्यन्द (Ophthalmiacum catarrho, catarrhal ophthalmia) पहलेसे कुछ विभिन्न है। इस रोगमें आंखके भीतर मानो तेज़ सूईकी तरह सदैव कुछ चुभा करता है। पलकके भीतर बालू प्रभृति पड़ जानेसे जिस तरह आंख करकराती, उसी तरहकी पीड़ा उठती है। सदैव अत्यन्त जल और कीचड़ बहा करता है; रातको नेत्रकी मलसे दोनों पलकों सटतीं, कोवे अत्यन्त लाल हो उठते और आंखें फूल जाती हैं। उस ललाईमें पतली-पतली रेखायें दिखाई देती हैं। इस श्रेणीका रोग कुछ संक्रामक होता है।

पित्त और रक्तजनित अभिष्यन्द—पूयजनक प्रदाह है (Ophthalmia purulenta, purulent ophthalmia)। यह रोग अतिशय कठिन और कष्टकर होता है। पहले आंख कुछ कुछ खुजलाती, उसके बाद बहुत करकराती और भीतर पीड़ा मालूम पड़ती है। ऐसा जाननेमें आता, मानो हठात् आंखके भीतर कहीं कीड़ा पड़ गया और दुःसह यन्त्रणा होती है। दोनों पलक अत्यन्त फूल जाते हैं। पहले केवल जल, फिर मलमिश्रित जल गिरने लगता है। कोवे लाल हो जाते हैं। शिरमें पीड़ा होती, शरीर गर्म पड़ता और नाड़ी तेज़ हो जाती है। बीच बीचमें वमन और वमनोद्देग हुआ करता है।

नेत्ररोगमें मादक द्रव्य-सेवन, अधिक मानसिक चिन्ता, रात्रिजागरण, धूप, धूम, शीतल वायु, पूर्व और उत्तर दिशाके वायुका लगना, अधिक मैथुन, मत्स्य-

शाक, अन्न, कटु, गुरुपाकद्रव्य प्रभृतिका व्यवहार करना निषेध किया गया है।

शाठी चावल, यव, गेहूं, चना, मूंग, मांस, अण्डा, दूध, घृतपक्क द्रव्य, तिक्त रस प्रभृति पथ्य नेत्र-रोगके लिये प्रशस्त है। जिससे कोष्ठशुद्धि हो, रोगीको सर्वांश वही यत्न करना चाहिये। केश, नेत्र, शरीर, पहननेके कपड़े और शय्यादिको सब तरहसे साफ सुथरा रखना उचित है।

चिकित्सा—सामान्य पीड़ा हो, तो प्रथमावस्थामें नेत्रके ऊपर उष्ण जलका स्वेद अथवा जलमें पोश्तेकी ढेढ़ी सिद्धकर उसका स्वेद देनेसे विशेष उपकार होता है। स्नानदुग्धके साथ लज्जालूका रस मिलाकर आंखके भीतर डालनेसे भलाई होती है। देयलोग रसवत और स्नानदुग्ध मिलाकर आंखमें डालते हैं। संन्यासी लोग तांबेके बरतनमें दूध और दाहहल्दी; अथवा हर, कामिनीकाष्ठ और विशुद्ध गायका घी घसकर आंखके भीतर प्रयोग करनेको बताते हैं। एलोपैथीके मतसे आधा छटांक गुलाबजल, ढाई रत्ती फिटकिरी और ढाई रत्ती सलफेट अव जिङ्ग मिलाकर आंखके भीतर डालना चाहिये। होमियोपैथीके चिकित्सक एकोनाइट १२ डा०, किंवा बेलेडोना १२ डा० २।१ बूंद जलके साथ मिलाकर सेवन करनेको देते हैं। फलतः कोई औषध क्यों न हो, विना कुछ देर लगे रोग अच्छा नहीं होता।

पूयजनक प्रदाहकी प्रथमावस्थामें ही नेत्रके भीतर और ऊपर काष्ठिक प्रयोग करना चाहिये। नेत्रके भीतर प्रयोग करनेको आधा छटांक गुलाबजल और आधा ग्रैन काष्ठिक एक साथ मिलाकर प्रतिदिन चार पांच बार आंखके भीतर डालना होगा। गुलाबजल आधा छटांक और काष्ठिक पन्द्रह ग्रैन एक साथ मिलाकर पलकके ऊपर अच्छी तरह लगा देते हैं और रुई तथा कपड़ेसे आंखको बांधते हैं। सेवनके लिये कुइनाइन, लीह एवं पार्थिवान्न प्रशस्त है। उपदंश और प्रमेहके रोगी तथा शिशुको भी यह रोग सताता है। नेत्रमें चाहे जो रोग हो, शीघ्र ही सुचिकित्सकका परामर्श लेना उचित है।

अभिष्यन्दनगर (सं० क्ली०) अभिष्यन्देन प्रधाननगरातिवृद्ध्या कृतं नगरम्। शाखानगर, छोटा शहर, प्रधान नगरमें अधिक मनुष्य हो जानेसे उद्वृत्त लोगोंसे बसाया हुआ नूतन नगर।

अभिष्यन्दरमण (सं० क्ली०) ६-तत्। रतिज्ञान।

अभिष्यन्दवमन (सं० क्ली०) ६-तत्। नगरके अतिरिक्त लोगोंका निःसारण, शहरके फालतू आदमियोंका निकास।

अभिष्यन्दिन्, अभिष्यन्दिन् (सं० त्रि०) अभिष्यन्दते, अभिष्यन्द-णिनि; अप्राणि कर्तरि वा षत्वम्। १ चरण-शील, सवयुक्त, चूनेवाला, जो टपका रहा हो। २ सारक, रेचक, सुलथन, रफाक, जो बदहजमी मिटाता हो। ३ निष्यन्दक, चरणकारी, सवणविधायक, चुवानेवाला, जो टपका रहा हो।

अभिष्यन्दिरमण (सं० क्ली०) १ परिसर, उप-कण्ठ, नवाह-शहर, शहरके आस-पासवाला गांव। २ उपनगर, जो छोटा शहर बड़े शहरके लगेंसे बसा हो।

अभिष्वङ्ग (सं० पु०) अभिष्वज्यते, अभिष्वज्-घञ्। उत्कट राग, अतिशय अनुराग, शरीर रिफाकृत, निहायत मुहब्बत, गहरा मेल, जिस प्यारका ठिकाना न लगे।

अभिसंयोग (सं० पु०) उत्कट ऐक्य, निकटस्थ संपर्क, शरीर इत्तिफाक, गहरा इत्तिसाल, जिस मेल-मिलापकी कोई हद न रहे।

अभिसंख्य (सं० त्रि०) अभिसंख्यते स्म, अभि-सम्-रभ-क्त। क्रुद्ध, गुस्सेसे भरा हुआ।

अभिसंवृत (सं० त्रि०) आच्छादित, परिच्छदविशिष्ट, ढका हुआ, जो कपड़ा पहन चुका हो।

अभिसंवृत्ति (सं० स्त्री०) अभि-सम्-वृत्-क्तिन्। १ व्यवहार, बरताव। २ अभिनिष्पत्ति, कमालियत।

अभिसंश्रान, अभिसंशीन (सं० त्रि०) घनीभूत, जो गाढ़ा पड़ गया हो।

अभिसंश्रय (सं० पु०) अभितः संश्रयः, प्रादि-सं०, अभि-सम्-श्रिञ्-ञच्। सर्वथा आश्रय, पूरी पनाह।

अभिसंसार (सं० पु०) अभितः सम् सस्यक् सरति

गच्छति, अभि-सम्-सृ-घञ् । १ जगत्, जहान् ।
२ दलरूप आगमन, झुण्ड बांधकर पड़चना । (अव्य०)
संसारस्याभिमुख्यम्, अव्ययी० । ३ संसारके अभिमुख,
दुनियाके सामने । ४ अभिगमन करके, रवाना
होकर ।

अभिसंस्कार (सं० त्रि०) भावना, भावन, कल्पना,
कल्पन, सङ्कल्प, वासना, मनःकल्पना, कुञ्जत मुतखैयल,
बन्दिश-खयाल, सोच-विचार ।

अभिसंस्तव (सं० पु०) उत्कट प्रशंसा, गहरी तारीफ ।
अभिसंस्तुत (सं० त्रि०) अतिशय प्रशंसित, निहा-
यत तारीफ किया हुआ ।

अभिसंहत (सं० त्रि०) नियोजित, संगठित, जोड़ा
हुआ, जो मिल गया हो ।

अभिसंहित (सं० त्रि०) अभि-सम् धा कर्मणि
कर्तरि वा क्त । १ किसी फलके उद्देश्यसे कृत, जो
किसी नतीजेके लिये किया गया हो । २ अभिसन्धिका
विषयीभूत, लगा हुआ । ३ अभिसन्धिकर्ता, राजी,
जो मञ्जूर कर चुका हो ।

अभिसंक्रुद्ध (सं० त्रि०) जातामर्ष, रुष्ट, सामर्ष,
सरोष, कुपित, समन्थ, नाराज गुस्सावर, जिसको
गुस्सा आ गया हो ।

अभिसंक्रुद्धयत् (सं० त्रि०) कुपित होनेवाला, जो
नाराज हो रहा हो ।

अभिसङ्क्षिप्त (सं० त्रि०) १ फेंका हुआ, जो डाल
दिया गया हो । २ फेंकने, गोली मारने या निशाना
लगानेवाला । ३ जिसपर निशाना लग चुके ।

अभिसङ्क्षेप (सं० पु०) ग्रहण, बोध, धी, मति, बुद्धि,
अवधारण, मेधा, समझ, अल्ल, हाफिजा ।

अभिसङ्ग्रह (सं० त्रि०) अनुमेय, आनुमानिक, निरूप-
णीय, निर्णययोग्य, अन्दाजी, बतलने काबिन्न ।

अभिसङ्गुप्त (सं० त्रि०) सूचित, बात, हिफाजत
किया हुआ ।

अभिसङ्घारिन् (सं० त्रि०) अस्थिर, अटढ़, चल,
तरल, लोलमति, चलचित्त, सुतलब्विन, वेवफा,
सुतगेयर, सुतबहिल, जो ठहरता न हो ।

अभिसङ्घात (सं० त्रि०) उत्पन्न, उत्पन्न, निर्मित

घटित, सृष्ट, जनित, जात, उद्भूत, पैदा होनेवाला,
जो पैदा हुआ हो ।

अभिसन्तत (सं० त्रि०) विस्तृत, दीर्घकृत, प्रसारित,
फैल जानेवाला, जो खूब बढ़ गया हो ।

अभिसत्त्वन् (वै० त्रि०) वीर पुरुषोंसे आवेष्टित, जो
बहादुर लोगोंसे घिरा हो ।

अभिसन्तप्त (सं० त्रि०) अतिशय आतङ्कित, व्यथित,
पीड़ित, दुःखित, प्रमथित, अजाब या अजीयत दिया
हुआ, जिसको तकलौफ पड़ची हो ।

अभिसन्ताप (सं० पु०) अभि-सम्-तप् भावे घञ्
अभिसन्ताप्यतेऽस्मिन् अधिकरणे वा घञ् । १ युद्ध, जङ्ग,
लड़ाई । अभिसन्ताप्यतेऽनेन । अभि सम्-तप्-णिच्
करणे अच् । २ अभिशाप, बददुवा ।

अभिसन्धस्त (सं० त्रि०) अतिशय भयभीत, जो बहुत
डर गया हो ।

अभिसन्दष्ट (सं० त्रि०) सङ्कोचित, सम्पीड़ित,
दबाया हुआ, जो बांधा गया हो ।

अभिसन्देह (सं० पु०) १ विनिमय, परीवर्त, परि-
वृत्ति, परिदान, व्यतिहार, सुबादला, अलटा-पलटा,
अदला-बदला । २ जननेन्द्रिय, पैदा करनेका आला ।
इस अर्थमें अभिसन्देह भी लिखते हैं ।

अभिसन्ध, अभिसन्धक देखो ।

अभिसन्धक (सं० त्रि०) अभिघर्षणं सन्धन्ते, अभि-सम्-
धा-क स्वार्थे कन् । दूसरेका गुण न सह सकनेपर
आक्षेपकारी, परगुणासहिष्णु, दूसरेका वस्त्र, न देख
सकनेपर ताना मारनेवाला, जो झलजाम लगाता हो ।

अभिसन्धा (सं० स्त्री०) अभि-सम्-धा भावे अङ् ।
१ वचन, फरेब, धोका । २ फलोद्देश, खास राजी-
नामा । ३ अभिसन्धि, लगाव, फायदा । ४ वचन,
कथन, बातचीत, इज्हार ।

अभिसन्धान (सं० स्त्री०) अभि-सम्-धा-लुपट् । १ पर-
वचन, धोखेबाजी, होलासाजी । २ फलोद्देश, आखिरी
मतलब । ३ अभिसन्धि, लगाव, मुहब्बत ।

“सा हि सन्धाभिसन्धाना ।” (रामायण ३१.१.२१)

अभिसन्धाय (सं० पु०) अभि-सम्-धा-बाहुलकात्
अभिसन्धि, लगाव । २ फलोद्देश,

आखिरी मतलब । (अव्य०) ल्यप् । फलादिका उद्देश करके, नतीजे वगैरहके मतलबसे ।

अभिसन्धि (सं० पु०) अभि-सम्-धा भावे कि । फलादिका उद्देश्य, अभिसन्धान, मतलब, गुरज, इरादा ।

अभिसन्धिकृत (वे० त्रि०) प्रयोजनानुसार किया हुआ, जो मतलबसे किया गया हो ।

अभिसन्धित (सं० त्रि०) अभिसन्धा जाता अस्त्र, तारकादि इतत् । उद्देश-विशिष्ट, अभिसन्धिविषयक, मतलबसे भरा हुआ, जिससे मतलब निकले ।

अभिसन्धिता (सं० स्त्री०) नायिकाविशेष, कल-हान्तरिता । यह अपने आप प्रियसे लड़ पकृताया करती है ।

अभिसन्न (सं० त्रि०) १ अलङ्कृत, भूषित, सुसज्जित, आरास्ता, सजा हुआ ।

अभिसमवाय (सं० पु०) सम्बन्ध, सङ्गति, मेल-जोल, साथ ।

अभिसम्पत्ति (सं० स्त्री०) अभितः सम्पत्तिः, प्रादि-सं०, अभि-सम्-पद-क्तिन् । १ सकल दिक् सम्पत्ति, पूरे तीरपर असरका पड़ना । २ संक्रान्ति, परिवर्त, विकार, स्थित्यन्तर, अवस्थान्तर, तबदील, तगेयुर, तबहल ।

अभिसम्पद (सं० स्त्री०) अभि अतिशय सम्पत्, प्रादि-सं० । १ अधिक सम्पत्ति, अधिक धन, ज्यादा दौलत, बहुत रुपया-पैसा । २ पूर्ण होनेकी स्थिति, जिस हालतमें पूरा पड़े ।

अभिसम्पद (सं० अव्य०) सम्पदमभिलक्षीकृत्य, टजन्त अव्ययी० । सम्पदको अभिलक्ष्य करके, दौलत-की ओर इशारा निकालकर ।

अभिसम्पन्न (सं० त्रि०) परिपूर्ण, पूर्णरूपसे सफल, जिसपर पूरे तीरसे असर पड़े ।

अभिसम्प्राय (सं० पु०) भावि उत्तर-काल, भविष्य, आगामि-काल, उज्जवा, आकित, आलम-गेव, इन्दि-क्रवाल, होनी, होनहार ।

अभिसम्पात (सं० पु०) अभि सामुख्येन सम्पतन्ति सङ्कलनेऽस्मिन्, आधारे घञ् । १ युवक, लड़की । भावे

घञ् । २ पतन, ज.वाल । सम्पतन्ति विनश्यन्ति अनेन कारणे घञ् । ३ अभिशाप, बददुवा ।

अभिसम्बन्ध (सं० त्रि०) १ सम्मिलित, मिला हुआ । २ प्रमाणयुक्त, जो हवाला देता हो ।

अभिसम्बन्ध (सं० पु०) अभितः सम्बन्ध्यते, अभि-सम्-बन्ध-घञ्, प्रादि-सं० । १ अधिक सम्बन्ध, ज्यादा रिश्ता । २ स्पर्श, संस्पर्श, सम्पर्क, संसर्ग, संयोग, आसङ्ग, व्यतिकार, परामर्श, इत्तिसाल, लम्स, कुवाव, लगाव । ३ दाम्पत्य सम्पर्क, औरत-मर्दका रिश्ता ।

अभिसम्बाध (सं० त्रि०) अतिशय संयत, निरुद्ध वा निबद्ध, निहायत सुकैयद, जो खूब अटका हो ।

अभिसम्मुख (सं० त्रि०) १ प्रत्यक्ष, समक्ष, सम्मुख, मुंह सामने किये हुआ, जिसका चेहरा सामने रहे । २ आदरपूर्वक देखते हुआ, जो इज्जतके साथ निगाह डाल रहा हो ।

अभिसर (सं० पु०) अभितः सरति, अभि-स-घञ् । सहाय, अनुचर, मददगार, नौकर ।

अभिसरण (सं० स्त्री०) अभितः सरणम्, प्रादि-सं० । १ अभिगमन, सम्मुख गमन, पहुँच, मुलाकात, मिलनेको रवानगी । २ नायकके अनुरागहेतु नायिकाका अन्य सङ्केतस्थानको गमन, आशुकीको खुश करनेके लिये माशुकीका दूसरी जगह पहुँचना, अनुसरण, अभिसार ।

अभिसरत् (सं० त्रि०) अभिसुख्यार्थ गमनकर्ता, आक्रमणकारी, मिलनेको जानेवाला, हमलावर, जो धावा मार रहा हो ।

अभिसरना (हिं० क्ति०) १ गमन करना, चला जाना । २ अभीष्ट स्थानको रवाना होना, वादेकी जगह पहुँचना । ३ नायक वा नायिकाका प्रियतमसे मिलनेको सङ्केतस्थानके प्रति गमन, आशुकी या माशुकीका अपने प्यारेसे मुलाकात करने किसी सुकरर जगहको जाना ।

अभिसर्ग (सं० पु०) छटि, खिलकत ।

अभिसर्जन (सं० स्त्री०) अभि-स-घञ् भावे लुपट् ।

१ कान्त, स्वतः, ब्रह्मविशिष्ट, देना । २ वध, कत्ल ।

अभिसर्त (सं० त्रि०) आक्रमणकारी, हमलावर, जो धावा मार रहा हो ।

अभिसार (सं० पु०) अभिसरन्ति गच्छन्ति अस्मिन्, अभि-सृ-घञ् । १ युद्ध, लड़ाई । २ सम्मिलन, जमघट । ३ आक्रमण, हमला । ४ संस्कार विशेष । ५ बल, ओर । ६ सहाय, सहारा । ७ नायकका अनुरागसे नायिकाके लिये सङ्केतस्थानको गमन, आशकका सुहृद्घतसे माशुकके लिये मिलनेकी जगहको जाना । कर्तरि घञ् । ८ अनुचर, साथी । ९ शकुलौ मत्स्य ।

अभिसार—पौराणिक जनपद और उसमें रहनेवाली क्षत्रिय-जातिविशेष । (महाभारत, भीष्म० २।५२, मार्कण्डेयपु० ५८४६, ब्रह्मरहस्य १४।२६) भारतीय उत्तरपश्चिमप्रान्तमें मरी और मर्गला गिरिसङ्घटके मध्य अवस्थित यह एक पार्वत्य राज्य है । यूनानी ऐतिहासिकोंने इस जगहके नृपतिको भी Abisares नामसे ही परिचित किया है । महावीर सिकन्दरने अपने विजित सिन्धुनदके पूर्वांशमें अवस्थित भारतखण्डका शासनकाल तब जिन कई नृपतियोंपर छोड़ा था, उनमें अभिसार भी एक राजा रहे ।

अभिसारना (हिं० क्ति०) चल देना, राह पकड़ना, प्रियसे किसी सङ्केतस्थानमें मिलनेको रवाना होना ।

अभिसारिका (सं० स्त्री०) अभिसरति अभिसारयति वा सङ्केतस्थानम्, अभि-सृ-णुल्, णिच्-णुल् वा । स्त्रीयादिं सोलह प्रकार नायिकामें अष्टावस्था विशिष्ट अष्टनायिकान्तर्गत नायिका विशेष, नायकके साथ परामर्श करके जो नायिका सङ्केतस्थलमें गमन करे, जो नायिका नायकको सङ्केतस्थानमें भेज दे ।

“अभिसारयते कान्तं वा मन्मथवशम् ।

स्वयं वाभिसरत्येवा धीरैरुक्ताभिसारिका ॥” (साहित्यदर्पण)

जो स्त्री कामपीडित होकर कान्तको सङ्केतस्थलमें भेज दे अथवा स्वयं वहां गमन करे, पण्डितलोग उसे अभिसारिका नायिका कहते हैं ।

अभिसारिका नायिकाकी चेष्टा चार प्रकार होती है । यथा—समयानुरूप वस्त्राभरण, शृङ्गा, बुद्धिकी निपुणता और कपट साहसादि । रसमञ्जरीमें तीन प्रकारकी अभिसारिकाका उल्लेख है । यथा—दिवाभिसारिका, श्योत्स्नाभिसारिका एवं अन्धकाराभिसारिका ।

हिन्दीके कवियोंने भी तीन प्रकारकी अभिसारिका कही है । यथा—दिवाभिसारिका, शृङ्गाभिसारिका और कृष्णाभिसारिका । इनके उदाहरण नीचे दिये जाते हैं,—

दिवाभिसारिका—

पगनिमें ओस करि हीस धौस हो को चली
पिय मधुवृष मिलने की बनी घाति है ।
घेरदार जामा पायजामापै प्रबोन बनी
अति ही सकामा वामा सुख अरुनाति है ॥
बांधे बखतरी परो कांधे समसे रफारी
लखी ना परी है काहु सखि न सकाति है ।
केस कर पगरोमें बवरी बनाय बाल
मुगलबचा ली एकपेचो सजे जाति है ॥

शृङ्गाभिसारिका—

सजि ब्रजचन्दपे चली यो सुखचन्द जाको
चंद चाँदनीको दुति मन्द सौ करत जात ।
कहै पदमाकर लो सज्ज सुगन्धहोके
पुंज बन कुंजनमें कंजसे भरत जात ॥
घरत जहाँ जहाँ पग है सुधारी तहाँ
मंजुल मजीठहोके माठसे दुरत जात ।
हारनते हीरे सँत सारीके किनारनते
बारन ते सुकता हजारन भरत जात ॥

कृष्णाभिसारिका—

उमड़ि धुमड़ि दिगमंडलनि मंडि रहै
कूनि भ मि बादर कुङ्कुमी निशि कारी में ।
भंगन में कीनो सगमद अन्नराग तैचे
पानन उदाय लीन्हो सामरंग सारी में ।
मतिराम सुकवि मेचका रुचि राजि रहै
आभरण साजि सरकत मनिवारी में ।
मोहन कबौलीकी मिलन चली ऐसी रुचि
छाँह ली कबौली रुचि छाजत बांधारी में ॥

अभिसारिन् (सं० त्रि०) अभि साम्मुख्येन सरति गच्छति, अभि सृ-णिनि । १ सम्मुख-गमन करनेवाला, आक्रमणकारी, जो मिलने जा रहा हो, सामने जानेवाला, हमलावर, जो मुलाकात करता हो । २ अनुचर, नौकर ।

अभिसारिणी (सं० स्त्री०) १ अनुसारिणी, अनुचरी, नौकरनी, जो मुख्याधिक काम करती हो । २ अपने

प्रियसे मिलने जानेवाली स्त्री । ३ वैदिक छन्दोविशेष । इस छन्दके दो पाद वैराज और दो पाद जगतौ रहेंगे ।

अभिसारो, अभिसारिन् देखो ।

अभिसार्पमाण (सं० त्रि०) जिसके पास पहुँचें, जिससे मुलाकात हो जाये ।

अभिसृज्य (सं० अव्य०) निकट उपस्थित होके, पास पहुँचकर ।

अभिसृष्ट (सं० त्रि०) अभिसृज्यते स्म, अभि-सृज-क्त । दत्त, उत्सृष्ट, दिया हुआ, जो छोड़ा जा चुका हो ।

अभिसेख (हिं० पु०) अभिषेक, धार्मिक स्नान ।

अभिसेवन (सं० क्लौ०) सम्यक् अभ्यास, उत्कृष्ट सेवा, खासी महारत, बड़ी खिदमत ।

अभिस्कन्द (वै० पु०) १ आक्रमण, धावा । २ आक्रमण करनेवाला व्यक्ति, जो शस्त्रस हमला करता हो । (अव्य०) ३ आक्रमण द्वारा, धावेसे ।

अभिस्थिर (सं० अव्य०) अतिशय दृढ़तापूर्वक, निहायत मजबूतीसे ।

अभिस्नेह (सं० पु०) अनुराग, प्रेम, उत्कण्ठा, मुहब्बत, प्यार, खाहिश ।

अभिस्फुरित (सं० त्रि०) पूर्णरूप प्रसारित, अच्छी तरह खिली हुयो ।

अभिस्थन्द, अभिस्थन्द देखो ।

अभिस्वयमादृक्षम् (वै० अव्य०) यज्ञीय ईंटपर ।

अभिस्वर (वै० क्लौ०) अभितः स्वः स्वरणं शब्दो वा यस्य, अभि-स्व भावे विच् । १ अतिशय स्वरयुक्त स्तोत्र विशेष, अधिक शब्दयुक्त स्तव । २ आह्वान, नामग्रहण, प्रार्थना, बुलावा, पुकार, अर्ज । ३ सम्मुख आह्वान, सामनेका बुलाना ।

अभिस्वर (सं० पु०) अभि-स्व-अप् । सम्मुख भोजना, सामने पहुँचाना ।

अभिस्वर्तु (सं० पु०) आमन्त्रणकारी, प्रशंसापरायण, आह्वान करनेवाला, जो पुकारता हो, तारीफ करनेवाला ।

अभिहत (सं० त्रि०) अभि-हन्-क्त । १ अभिघात

संयोगयुक्त, जिसमें मारका खटका लग चुके । २ ताड़ित, मारा या पीटा हुआ । ३ सन्तप्त, जला हुआ । ४ अभिभूत, तोड़ा हुआ । ५ अवलंब, रुका हुआ । ६ गुणित, जो जर्ब किया गया हो ।

अभिहति (सं० स्त्री०) १ ताड़न, मारपोट । २ गुणन, जर्ब ।

अभिहन्यमान (सं० त्रि०) वध्यमान, निहत, मारा जानेवाला, जो मार डाला गया हो ।

अभिहर (सं० त्रि०) उठा ले जानेवाला, जो गुम कर देता हो ।

अभिहरण (सं० क्लौ०) अभि-हृ-ल्युट् । १ सम्मुख आहरण, सामनेसे उठा ले जाना । २ विवाहादिका यौतुक दान, जो दहेज शादीमें लड़कीको दिया जाता हो ।

अभिहरणीय (सं० त्रि०) निकट लाने योग्य, जो नज्दोक लाने काबिल हो ।

अभिहर्तव्य, अभिहरणाय देखो ।

अभिहर्तु (सं० पु०) अभिहरणकर्ता, उठा ले जानेवाला, आक्रमणकारी । २ धर्षक ।

अभिहव (सं० पु०) अभिह्वयते, अभि-ह्वे-अप् । १ सम्मुख आह्वान, सामने बुलाना । २ यज्ञ ।

अभिहस्य (सं० त्रि०) अभिहस्यते, अभि-हस्-यत् । उपहसनीय, उपहासकी योग्य, काबिल-तज्जीक, हंसने लायक ।

अभिहार (सं० पु०) अभि-हृ-घञ् । १ अपकार पहुंचानेकी इच्छासे सम्मुख आक्रमण, रुकसान करनेकी इरादेसे सामने जा हमला मारना । २ सम्मुख हरणा, सामनेसे उठा ले जाना । ३ आलिङ्गन, हमागोशी । ४ मेलन, मुलाकात । ५ चौर्य, चोरी । ६ अभियोग, इलजाम । ७ बन्धन, कैद । ८ कंवच-धारण, बख्तरकी पोशिश ।

अभिहारोऽभियोगे च । चौर्यं सन्नहनेऽपि च । (भरविश्वी)

अभिहार्य, अभिहरणीय देखो ।

अभिहास (सं० पु०) हास्य, विनोदोक्ति, प्रहसन, विनोदभाषण, परिहासोक्ति, नर्मालाप, हँसो, दिहगी, मजाक, मोड़ी-मोड़ी, छेड़छाड़ ।

अभिहित (सं० त्रि०) अभि-धा-क्त। १ भाषित, उदित, जल्पित, आख्यात, लपित, कहा हुआ।

‘उक्तं भाषितमुदितं जल्पितमाख्यातमभिहितं लपितम्।’ (अमर)

२ इच्छा किये हुआ, जो इरादा बांध चुका हो। (लौ०) ३ नाम, वर्णन, शब्द, इच्छा, बयान, लफ्ज।

अभिहितत्व (सं० लौ०) कथित होनेकी स्थिति, कहे जानेकी हालत। २ घोषणा, पुकार। ३ प्रमाण, आत्मवचन, निदर्शन, हवाला, सुवृत्त, पक्की बात।

अभिहिता (सं० स्त्री०) जलपिप्पली, पानौपिपरी।

अभिहितान्वय (सं० पु०) अभिहितानां अभिधया लक्षणया वा पदोपस्थापितानां अर्थानां अन्वयः सम्बन्धः, मध्यपदलोपी ६-तत्। सकल पदार्थ बोध होने पर वाक्यार्थका अन्वय। प्राचीन नैयायिकोंके मतसे किसी वाक्यके प्रथम प्रत्येक पदका अर्थ समझ सकनेपर वाक्यार्थका अन्वय लगता, किन्तु यह भी तात्पर्याख्य वृत्तिसापेक्ष है। आजकलके नैयायिक इसे संसर्गमर्यादा कहेंगे। मौमांसकोंके मतसे प्रथम क्रिया और कारकका अन्वय लगता, पीछे अर्थ समझ पड़ता है।

अभिहितान्वयवादिन् (सं० पु०) अभिहितानां अभिधया लक्षणया वा पदोपस्थापितानां अर्थानां अन्वयं परस्परसम्बन्धं वदति; अभिहितान्वय-वद-णिनि, उप०स०। प्राचीन नैयायिक, प्रथम प्रत्येक पदका अर्थबोध मान पीछे वाक्यार्थका अन्वयबोध स्वीकार करनेवाला।

अभिहिति (सं० स्त्री०) कथन, वर्णन, उपाधि, बात, बयान, खिताब।

अभिहित्ति (सं० स्त्री०) अभि-ह्वे-क्तिन्, सम्प्रसारणं दीर्घश्च। १ सम्मुख आह्वान, पुकार। अभि-ह्वे-क्तिन् पृषो० साधुः। २ कुटिल स्वभाव, टेढ़ा मिजाज।

अभिहृत् (वे० त्रि०) अभि-हृ, कर्मणि अति, वेदे पृषो० न गुणः। १ सम्मुख हरण किया जानेवाला, जिसे समानेसे उठा ले जायें। २ वक्र, टेढ़ा, बेइन्साफ़ी-से काम करनेवाला। (स्त्री०) ३ पतन, पराजय, हानि, जवाल, शिकार, नुकसान।

अभिहृति (वे० स्त्री०) १ निपात, गिराव। २ पराजय, हानि, अपराध, शिकार, नुकसान, जुर्म।

अभिहृत् (सं० त्रि०) अभि-हृ-विच्। कुटिल गमनकारी, टेढ़ा चलनेवाला।

अभिहृत् (सं० स्त्री०) १ निपतन, जवाल। २ वक्रता, पाप, टेढ़ाई, गुनाह।

अभिहृत्, अभिहृत् देखो।

अभिहृत्तु (सं० त्रि०) हृ, कौटिल्ये कर्तरि अति। सम्मुख कुटिल कर्मकारी, सामने बुरा काम करनेवाला।

अभी (सं० त्रि०) नास्ति भौर्भयं यस्य, बहुव्री०। १ निर्भय, भयशून्य, बेखौफ, निडर। (हिं० क्ति०-वि०) २ इसी समय, इसी वक्त। ३ शीघ्र, फौरन्।

अभीक (सं० त्रि०) अभि-कन् दीर्घश्च। १ कामयमान, कामुक, खाहिशमन्द, चाहनेवाला। २ उत्सुक, नफ़सपरस्त। ३ चिन्तायुक्त, फ़िक्रमन्द। ४ क्रूर, बदमिजाज। नास्ति भी र्यस्य, अभी-कप्। ५ निर्भीक, भयशून्य, भयहीन, बेखौफ, जिसे डर न लगे।

(पु०) अभि-इण्-कक्। ६ कवि, शायर। ७ स्वामी, खाविन्द। (लौ०) ८ सम्मेलन, सामीप्य, मिलजोल, कुर्ब, नजदोकी। ९ संघट्ट, समाघात, प्रतिघात, संमर्द, संघर्षण, ठोकर, लड़ाई, दुश्मनी। (अव्य०)

१० सन्निधिमें, उसी स्थान वा समयपर, उपयुक्त समय, कुर्बमें, उसी जगह या वक्तपर, ठीक मौक़ेसे। ११ एक ही क्षणमें, शीघ्र, एक लमहेमें, फौरन्।

अभीक्ष्ण (सं० त्रि०) अभि-क्ष्ण तेजने बाहुलकात् उ दीर्घश्च, अभिगतं क्षणं वा पृषो० साधुः। १ सन्तत, निरन्तर, सुदामी, लगातार। २ अश्र, अकसर-अधिकात्, जो बार-बार आता हो। (अव्य०) ३ पुनःपुनः, बारबार। ४ सदा, हमेशा। ५ अतिशय, बहुत, निहायत। ६ शीघ्र, फौरन्।

अभीक्ष्णम् (सं० अव्य०) अभि-क्ष्ण बाहुलकात् उमु पृषो० दीर्घः। १ पुनःपुनः, सुहुः, बारबार, लगातार। २ शब्वत्, असन्नत्, फौरन्, उसी वक्त। ३ नित्य, रोज़।

अभीक्ष्णश्च, अभीक्ष्ण देखो।

अभीघात, अभीघात देखो।

अभौच्छत् (सं० त्रि०) उत्कण्ठित, खाद्दिशमन्द ।
(स्त्री०) अभौच्छती ।

अभौज्य (सं० त्रि०) १ वलि दिया जानेवाला, जिसे वलि चढ़ायें । (पु०) २ देवता ।

अभौत (सं० त्रि०) अभि-इण्-क्त । १ अभिगत, प्राप्त, आया हुआ, जो हाथ लग गया हो । न भौतम्, नञ्-तत् । २ निर्भय, उत्साहान्वित, बेखौफ, हौसलेमन्द ।

अभौतवत् (सं० अर्थ०) निर्भय व्यक्तिकी भांति, भयका छोड़कर, बेखौफ शख्सकी तरह, निडर बनके ।

अभौति (सं० त्रि०) नास्ति भौतिर्यस्य, नञ्-बहु-त्री० । १ निर्भय, भयशून्य, बेखौफ । (स्त्री०) अभवि नञ्-तत् । २ भयका अभाव, खौफकी अदममौजूदगी । ३ अभयदायक सुद्राविशेष । अभि-इण्-क्तिन् । ४ अभि-गमन, बढ़ावढ़ी । अभि-इण् कर्मणि-क्तिन् । ५ समीप, कुर्ब, पास ।

अभौत्वन् (सं० पु०-स्त्री०) १ अग्रगमन, आक्रमण, धावा, हमला ।

अभौत्वर, अभौत्वन् देखो ।

अभौह (सं० त्रि०) प्रज्वलित, द्युतिमान्, भभकते हुआ, चमकीला ।

अभौपत् (सं० त्रि०) अभि-पत्-क्तिप् पृषो० दीर्घः । अभिगमनकर्ता, धावा मारनेवाला । (वे० पु०) २ जिस तड़ाक या स्थानमें जल एकत्र हो जाये । ३ कृपा, मेहरबानी ।

अभौषित (सं० त्रि०) अभि-आप्-सन्-क्त । अभौष्ट, अभिलषित, वाञ्छित, खाद्दिश किया हुआ, जो चाहा गया हो ।

अभौषिन् (सं० त्रि०) उत्कण्ठित, अभिलाषयुक्त, चाहनेवाला, खाद्दिशमन्द ।

अभौष्णु (सं० त्रि०) अभि-आप्-सन्-उ । अभिलाषुक, खाद्दिशमन्द, जिसको चाह लगौ हो ।

अभौम (सं० त्रि०) विभेत्यस्मात्, भौ-मक् ततो नञ्-तत् । १ अर्जुनका अग्रज न होनेवाला, जो अर्जुनसे पहले पैदा न हुआ हो । २ जो भयानक या भयङ्कर न हो, जिससे डर न लगे ।

अभौमान (सं० पु०) अभि-मन-घञ् वा दीर्घः ।

अभिमान देखो ।

अभौमोद (सं० पु०) आनन्द, प्रसन्नता, खुशौ ।

अभौर (सं० पु०) आभिमुख्येन इरयति प्रेरयति गाः, अभि-ईर्-अच् । १ गोप, ग्वाला, अहीर । पहले कृष्णा और गोदावरीके तीर विस्तार अभौर रहते थे । सिन्धु नदके कूलमें भी इनका वास था । पौराणिक मतमें इन्हें असभ्य बन्ध जाति समझते हैं । सिन्धु-नदके तटवर्ती अभौर कृष्णकी सोलह सौ रमणों चुरा ले गये थे । आजकल इस जातिको हम अहीर कहते हैं । कृष्णानदीके निकट गोवर्द्धन नामक पर्वत विद्यमान है । देवराज इन्द्रने यह पर्वत बनाया था । वनवासके समय रामचन्द्रने निकट पड़ुंच गोवर्द्धन पर्वतको पवित्र किया, उससे वह स्वर्गतुल्य स्थान हो गया । भरद्वाजने वहाँ एक नगर बसाया था । वह नगर उद्यान और सरोवरसे सुशोभित रहा । ब्रह्माण्ड-पुराणके मतसे उस देशको अभौर देश भी कहते हैं । सुननेमें आता, कि अत्रि और भरद्वाजवंशकी कोई-कोई जाति आज भी उस स्थानमें बसती है । मालूम होता, कि इस जातिके लोगोंने अनार्य स्त्रीके गर्भसे जन्म लिया था । अभौरको खांदेशमें बल्लिक, और बल्ल, नामसे भी पुकारते हैं । बाटघान, कालतोक, अपरौत, शूद्र, पङ्कव, चर्मचन्द्रक, कम्बोज, दरद, वर्धर प्रभृति दूसरे नाम पुराणमें मिलेंगे । आभोर देखो । २ चार पादयुक्त छन्दोविशेष । इसके प्रतिपादमें ग्यारह मात्रा लगती है । अभौरणी (सं० स्त्री०) दुन्दुभ सर्प, पनिहा सांप । यह जहरीली नहीं होती ।

अभौराजी (सं० स्त्री०) विषाक्त कीटविशेष, कोई जहरीला कीड़ा ।

अभौराम—सौगन्धिका-विवरण-व्याख्याकार ।

अभिराम देखो ।

अभौराम (अभिराम), एक गोस्वामो । यह अभिराम-गोपाल नामसे भी परिचित रहे । श्रीचैतन्यावतारमें श्रीदामके अवतार और द्वादशगोपालके अन्यतम होनेसे गौडीय वैष्णवसमाज इन्हें पूजता है । बङ्गाल-वाले हुगली जिलेके खानाकूल-कृष्णनगरमें इन

अभिराम गोखामौकी गद्दी मौजूद है। अभिराम-
लीलामृतमें इनकी चरिताख्यायिका विवृत हुई है।

अमीरामभट्ट—अभिज्ञानशकुन्तलके टीकाकार।

अमीरामविद्यालङ्कार—गयीचन्द्ररचित संक्षिप्तसारनामक
व्याकरणकौ कौमुदी नाम्नी टीकाके रचयिता।

अमीरी (सं० स्त्री०) अमीर भाषा, अहीरोंकी बोली,
जिस जवानको अहीर बोलें।

अमीर (सं० त्रि०) विभेति, भौ-क्रु। १ अभय-
शील, जो डरावना न हो। २ निर्भय, बेखौफ।
(पु०) ३ भैरव। ४ शिव। (स्त्री०) ५ शतमूली,
सतावर। 'शतमूली बहुसुता भौरिन्दोवरीवरी।' (अमर)

अमीरक, अमीर देखो।

अमीरुण (सं० त्रि०) अभि-रु-उनन् दीर्घः। १ निर्भय,
जो डरावना न हो, बेखौफ, बेगुनाह। २ सम्मुख।

अमीरुपत्रिका, अमीरुपत्री देखो।

अमीरुपत्री (सं० त्रि०) न भीरुणि भीरुवत् न
सङ्कुचितानि पत्राण्यस्याः, नञ्-बहुव्री०, जातित्वात्
ङीप्। शतमूली, सतावर।

अमील (सं० स्त्री०) अभितः इरयति प्रेरयति, अभि-
ईर्-अच् रस्य लत्वम्; यद्वा अभि इतस्ततः एलयति
गमयति, अभि-चुरा० इल-क। १ कष्ट, तकलीफ।
२ भय, खौफ। (त्रि०) अभि इतस्ततः ईलं कष्टं
गमनं वा यस्य। ३ क्लेशयुक्त, तकलीफमें पड़ा हुआ।
४ भययुक्त, खौफज्जदह।

अमीलाप (सं० पु०) अभि-लप् भावे घञ् वा दीर्घः।
अभिमुख कथन-रूप शब्द, सामन कहने जैसी
लफ्ज।

अमीलापलप् (वै० पु० बहु०) अतिशय कथन, हृदसे
ज्यादा गुफ्तगू।

अमीलु, अमीर देखो।

अमीलुक, अमीर देखो।

अमीवर्ग (सं० पु०) अभि-वृज अधिकरणे घञ्।

अभिमुखसमूह, अभिमुख बहुव्यक्ति, चक्र, दौर।

अमीवर्त (सं० पु०) अभि-वर्तन्ते तिष्ठन्ति ब्रह्म
साम्यतया अनेन, अभि-वृत्त करणे घञ् उपसर्ग दीर्घः।

१ ब्रह्मसाम, ब्रह्मस्तोत्रविशेष। २ शत्रुघ्न आक्रमण

करते समय पढ़ते हैं। अभिवर्तयति सर्वाणि भूतानि
द्वादश मासान् षड्विंशन् वा परिवर्तयति, अभि-वृत्त-
कर्तरि घञ् उपसर्ग दीर्घः। २ संवत्सर। ३ सूक्त-
विशेष। ४ अभिवृत्तिसाधन वृत्तादि। ५ सर्वव्यापकत्व,
हर जगहकी मौजूदगी। ६ यात्रा, रवानगी।
७ आक्रमण, हमला। ८ विजय, फतेहमन्दी।

अमीवृत् (वै० त्रि०) सर्वव्यापौ, सब जगह रहनेवाला।

अमीवृत्त (सं० त्रि०) आच्छादित, आवेष्टित, ढंका
हुआ, जो घिरा हो।

अमीशाप, अभिशाप देखो।

अमीशु (सं० पु०) अभि-अशु व्याप्तौ बाहुलकात् उ,
धात्ववयवस्य आकारस्येकारश्च; अथवा अभि-ईश
ऐश्वर्ये उ, यद्वा अभि-अश-उ। १ रश्मि, शुवा। २ बाहु,
बाजू। ३ अङ्गुलि, उंगली। ४ प्रग्रह, लगाम।

अमीशुमत् (सं० पु०) अमी-श्वः किरणाः सन्त्यस्य,
बाहुलकार्थे मतुप्। १ सूर्य, आफताब। (त्रि०)
२ द्युतिमान्, प्रदीप्त, चमकीला, रौशन।

अमीषङ्ग (सं० पु०) अभि-सञ्च-घञ् उपसर्ग दीर्घः।
१ पराभव, शिकस्त। २ शपथ, कसम। ३ व्यसन,
आदत। ४ आसक्ति, फंसाव। ५ भूतादिका आवेश;
शैतान्का साया। ६ आक्रोश, बददुवा।

'आक्रोशनममीषङ्गः।' (अमर)

अमीषया (सं० अव्य०) निर्भय हो कर, बेखौफीसे।

अमीषाह् (सं० त्रि०) १ पराभवकारी, जो दबा देता
हो। (स्त्री०) २ प्रभूत शक्ति, बड़ी ताकत।

अमीषु (सं० पु०) अभि इष्यते व्यञ्जते, अभि-इष कर्मणि
कु। १ किरण, शुवा। २ अश्वरज्जु, बागडोर।
३ प्रग्रह, लगाम। ४ काम, खाद्दिश। ५ अनुराग,
सुहृद्भाव।

अमीषुमत् (सं० त्रि०) अनुरक्त, आसक्त, फरेफूता।

अमीष्ट (सं० त्रि०) अभि इष्यते स्म, अभि-इष-क्त।
१ वाञ्छित, दयित, वक्ष्य, हृद्य, प्रिय, अमीप्सित,
खाद्दिश किया हुआ, प्यारा, दिलदार। 'अमीष्टोऽमीप्सितं
इयं दयितं वक्ष्यमं प्रियम्।' (अमर) अभि-यज-क्त। २ पूजित,
परस्तिश किया हुआ। (पु०) ३ तिलकचुप, तिलका
पेड़।

अभौष्टगन्धक (सं० त्रि०) माधवीलता, महुवेका पेड़।

अभौष्टता (सं० स्त्री०) हृद्यता, प्रियता, स्वादिष्टमन्दो, दिलदारी।

अभौष्टदेवता (सं० स्त्री०) ईप्सित देवी।

अभौष्टलाभ (सं० पु०) प्रिय पदार्थकी प्राप्ति, प्यारी चीज का मिलना।

अभौष्टसिद्धि (सं० स्त्री०) अभौष्टलाभ देखो।

अभौष्टा (सं० स्त्री०) १ रेणुक गन्धद्रव्य, खुशबूदार खाक। २ ताम्बूल, पान। ३ गृहस्वामिनी, बीबी।

अभुञ्जाना (हिं० क्ति०) १ अतिशय चेष्टा करना, बहुत कोशिश लगाना। २ धैर्यच्युत होना, बेसब्र पड़ना।

अभुक्त (सं० त्रि०) भज-क्त, ततो नञ्-तत्। १ अभक्षित, भोजन न किया हुआ, जो खाया न गया हो। २ फलभोगविहीन, मज्जा न लिया हुआ, जो काममें न आया हो। ३ न खाये हुआ, जिसको मज्जा न मिला हो।

“अभुक्तस्य दिवानिद्रा पाषाणमपि जीर्यति।” (वैद्यकनिघण्टु)

अभुक्तमूल (सं० स्त्री०) अभुक्तं मूलं पितृधनं यस्मिन् येन वा। ज्येष्ठाके शेष एवं मूलाके आदि दो दण्ड। इस कालमें जन्म लेनेसे सन्तान पितृधन भोग नहीं कर सकता।

“ज्येष्ठानो घटिके हे च मूलायघटिकावयम्

अभुक्तमूलमित्याहुः ज्ञातं तत्र विवर्जयेत्॥” (वशिष्ठ)

अभुक्तवत् (सं० त्रि०) भोजन न करनेवाला, जो खा न चुका हो।

अभुग्न् (सं० त्रि०) १ अवक्र, सीधा, जो टेढ़ा न हो। २ स्वस्थ, नीरोग, तन्दुरुस्त, जो बीमारीसे अलग हो।

अभुज् (सं० त्रि०) न भुक्ते, भुज-क्तिप्, नञ्-तत्। अभक्षक, न खानेवाला, जो खाता न हो।

अभुज (सं० त्रि०) बाहुविहीन, बेबाजू, लला, जिसका हाथ टूट जाये।

अभुजिथ (सं० पु०-स्त्री०) जो वपुः दास वा मृत्यु न हो, नौकर या गुलाम न होनेवाला शब्द।

अभू (सं० पु०) १ विष्णु, नारायण। अजन्मा होनेसे विष्णुको अभू कहते हैं। (हिं० क्ति०-वि०) अभू देखो।

अभूखन (हिं० पु०) आसूषण देखो।

अभूत (सं० त्रि०) न भूतम्, नञ्-तत्। १ अनतीत, जो बीता न हो। २ चित्तपादि पञ्चभूत भिन्न, जो दुनियाकी चीजसे अलग हो। ३ पिशाचादि न होनेवाला, जो शयतान न हो। ४ जन्तु-भिन्न, जो जानदार न हो। ५ मिथ्याभूत, झूठा साबित होनेवाला। ६ अविद्यमान, गैरहाजिर।

अभूततद्भाव (सं० पु०) अभूतस्य यथा भावाप्राप्तस्य तेन रूपेण भावः उत्पत्तिः, इ-तत्। पूर्व न रहनेवाले भावकी प्राप्ति, जो हासिल पहले न रहनेवाली बात हो। जैसे दूध पहले पतला रहता, गर्म करनेसे गाढ़ा पड़ जाता है। ऐसी जगह दूधका गाढ़ा पड़ना अभूततद्भाव होगा।

अभूतपूर्व (सं० त्रि०) न पूर्वं भूतम्, नञ्-तत्। पूर्व न होनेवाला, जो पहले न हुआ हो।

अभूतप्रादुर्भाव (सं० पु०) पूर्व न होनेवाले विषयका विकास, जो जड़र पहले न रहनेवाली बातका हो।

अभूतरजस् (सं० पु०) पञ्चम मन्वन्तरके देवता-विशेष।

अभूतशत्रु (सं० त्रि०) रिपुरहित, जिसके दुश्मन न रह।

अभूताभिनिवेश (सं० पु०) अभूते असत्ये वस्तुनि अभिनिवेशः सत्यताकल्पनम्, ७-तत्। मिथ्या-वस्तुकी सत्यकल्पना, मिथ्या वस्तुमें सत्य वस्तुका आरोप, झूठ चीजको सच मान लेना, झूठेको सच्चा समझना।

अभूति (सं० स्त्री०) भू-क्तिन्, अभावे नञ्-तत्। १ उत्पत्तिका अभाव, पैदायशकी अदममीजुदगौ। २ सम्पत्तिका अभाव, गरीबी, सुफुलसी। ३ शक्तिका अभाव, नाताकृती, कमजोरी। (त्रि०) नास्ति भूतिर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ जन्मशून्य, नापैद, जो पैदा न हो। ५ सम्पत्तिविहीन, निर्धन, गरीब,

सुफुलसी

अभूतोपमा (सं० स्त्री०) दश उपमाका कोई भेद । इसमें उपमानका गुण नहीं बताते ।

अभूमन् (सं० पु०) बहु-इमनिच्; इकारलोपः भूरादेशश्च, नञ्-तत् । अनधिक, अल्प, थोड़ा, कम ।

अभूमि (सं० पु०) भू-मि, ततो नञ्-तत् । १ अनाश्रय, अपात्र, अविषय, गैरवाजिब बात, नाकाबिल जगह । २ भूमिसे अतिरिक्त द्रव्य, जो चीज जमीन न हो । (त्रि०) नास्ति भूमिर्यस्य, नञ्-बहुव्री० । ३ भूमिशून्य, स्थानशून्य, वेजगह, वेजमीन ।

अभूमिज (सं० त्रि०) भूमौ भूम्या वा जायते; भूमि-जन-ङ, नञ्-तत् । १ अभूमिजात, जो जमीनसे पैदा न हुआ हो । २ आकाशादि जात, आसमानसे निकला हुआ । ३ अप्रशस्त भूमिसे उत्पन्न, नाकाबिल जमीनसे पैदा हुआ ।

अभूयिष्ठ (सं० त्रि०) बहु-इष्टन्, नञ्-तत् । अनधिक, न्यून, कम, जो ज्यादा न हो ।

अभूरि (सं० त्रि०) कतिपय, कुछ, थोड़ा ।

अभूष (सं० त्रि०) वेशभूषारहित, सजा न हुआ ।

अभृत (सं० त्रि०) भाटक न पानेवाला, जिसको किराया दिया न गया हो ।

अभृश (सं० त्रि०) अनधिक, न्यून, किञ्चित्, थोड़ा, कम, जो ज्यादा न हो ।

अभेड़ा, अभेरा देखो ।

अभेद (सं० पु०) अभावे नञ्-तत् । १ भेदका अभाव, फर्कका न पड़ना । २ ऐक्य, बराबरी । ३ सङ्गठन, मिलावट । (त्रि०) बहुव्री० । ४ अभिन्न, निर्विशेष, बांटा न हुआ, मिलता-जुलता, बराबर ।

अभेदक (सं० त्रि०) अभिन्न, निर्विशेष, न बांटने-वाला, जो फर्क न डालता हो ।

अभेदनौय, अभेद्य देखो ।

अभेदवादी (सं० पु०) भेद न माननेवाला व्यक्ति, जो शब्द-स जीवात्मा और परमात्मामें कोई फर्क न देखता हो ।

अभेद्य (सं० त्रि०) न भेत्तुं शक्यम्; भेद शक्याय नञ्-तत् । १ भेद किये जानेको अशक्य, जो छेदा न जाता हो । २ विभक्त न होनेवाला, जिससे

तकसीम न कर सकें । (स्त्री०) ३ हीरक, हीरा । किसी धातुसे न छिदने कारण हीरेको अभेद्य कहते हैं ।

अभेद्यता (सं० स्त्री०) अविभाज्यता, अविच्छेद्यता, अविभेद्यता, अदमइनकिसाम, गैर काबिलियत-इनकिसाम, टुकड़े न उड़ सकनेकी हालत ।

अभेय (हिं०) अभेद देखो ।

अभेरा (हिं० पु०) युद्ध, विग्रह, लड़ाई, भगड़ा, सामना, सुकाबिला ।

अभेव (हिं०) अभेद देखो ।

अभेषज (सं० स्त्री०) विपरीत औषध, उलटी दवा ।

“अभेषजमिति ज्ञेयं विपरीतं यदौषधम् ।” (चरक चिकित्सास्थान)

अभै (हिं०) अभय और अभी देखो ।

अभैर (हिं० पु०) कलवांसा, दढ़ेरी, जिस लकड़ीमें रस्सी कस करघेकी कच्ची लटकायी जाये ।

अभोक्तव्य (सं० त्रि०) आनन्द लेने वा काममें लानेके अयोग्य, जो मज्जा उड़ाने या इस्तेमाल करने लायक न हो ।

अभोक्ता (सं० पु०) अभोक्त देखो ।

अभोक्तृ (सं० त्रि०) आनन्द न लेनेवाला, जो काममें न आता हो, पृथक् रहनेवाला, मज्जा न लूटनेवाला, जो इस्तेमाल न करता हो, परहेजगार ।

अभोग (सं० पु०) आनन्दका अभाव, काममें न लानेकी स्थिति, बेसुत्पत्तौ, इस्तेमालमें न आनेकी हालत ।

अभोगिन्, अभोक्तृ देखो ।

अभोगी, अभोक्तृ देखो ।

अभोग्य, अभोक्तव्य देखो ।

अभोज (वे० पु०) आनन्दनिग्रह, खुशोका न बख्शना । देवताको वलि न देना अभोज कहाता है । (हिं०) अभोक्तव्य देखो ।

अभोजन (सं० स्त्री०) भोजनका अभाव, उपवास, निवृत्ति, न खानेकी बात, फाका, परहेज ।

“अजीर्णं भोजनं येषां जीर्णं येषामभोजनम् ।

रावापभोजनं येषां तेषां नश्यन्ति धातवः ।” (संग्रह)

अभोजित (सं० त्रि०) खिलाया न हुआ, जो

भोजनसे दत्त न किया गया हो, खाना न लिखाया हुआ, जो खानेसे आसूदा न किया गया हो।

अभोजिन् (सं० त्रि०) भोजन न पाते हुआ, जो उपवास कर रहा हो, न खानेवाला, फाकेमस्त।

अभोज्य (सं० त्रि०) न भोक्तुं शक्यं शास्त्रनिषिद्धत्वात्, भुज-यत् निपातनात् न कुत्वम्। भोजनके अयोग्य, जो भोजनके लिये निषिद्ध हो, अमेध्य, अभक्ष्य, खानेके नाकाबिल, जिसको खाना मना हो, नापाक।

अभोज्यान्न (सं० त्रि०) जिसका अन्न भोजन करना निषिद्ध रहे, जिसका अनाज खाया न जाये।

अभौतिक (सं० त्रि०) पञ्चभूतसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जिसका तत्त्व, दुनियावी चीज, से न रहे।

अभौम (सं० त्रि०) न भूमौ भवम्, नज्-तत्। १ भूमिसे न उत्पन्न होनेवाला, जो ज.मोनसे पैदा न हुआ हो। २ आकाशादि जात, अस्मान् वगैरहसे पैदा हुआ। ३ जैनशास्त्रमतमें शूद्र, हीनजाति।

अभ्यक्त (सं० त्रि०) अभि-अञ्ज-क्त। आपादमस्तक तैलाक्त, सरसे पैरतक तेल लगाये हुआ।

अभ्यक्ष्ण (सं० क्लौ०) अभि-अशू-क्क्ष्ण; अभितः अक्ष्णम्, प्रादिसं०। १ सर्वथा अखण्ड, जो चीज हर-तरह साबित हो। २ तिलकल्क, तिलकी खली।

अभ्यग्नि (सं० पु०) १ ऐतषकी कोई पुत्र। (अव्य०) २ अग्निकी ओर, आतिशकी तर्फ।

अभ्यग्र (सं० त्रि०) अभिमुख मग्नं यस्य। १ निकट, अन्तिक, नजदीक, पास। २ नूतन, नव, नया, ताज।

अभ्यङ्ग (सं० त्रि०) अचिर चिह्नित, हालमें निशान लगाया हुआ।

अभ्यङ्ग (सं० पु०) अभ्यजते अङ्गं दौष्यते येन, अभि-अञ्ज-करणे घञ् कुत्वच्च। १ आपादमस्तक तैलादि मर्दन, सरसे पैरतक तेलकी मालिश।

“सृष्टिं दत्तं यदा तेलं भवेत् सर्वाङ्गसङ्गतम्।

सोतोमिलपर्यवेदाह अभ्यङ्गः स उदाहृतः।”

(चक्रपाणिदत्तव सं० गृह)

इसका गुण यह है,—

“जलसिक्तस्य वर्षने यथासुखेऽङ्गुरालरीः।

तथा चातुर्विहङ्गि चोदसिक्तस्य जायते।

शिरासुखेरोमवृषैर्धर्मौमिभ्य तर्पणम् (१-सुहृत्)

मदनपालके मतमें—

“अभ्यङ्गो वातरोगघ्नः घातुसार्यं वलं सुखम्।

निद्रावर्णैश्चदुलानि कुरुते दृष्टिपुष्टिनात्।

शिरोग्मघ्नः शिरःकुम्भिकेशदाह्यांचिपुष्टिनात्।

केशप्रसाधनः केशः रजोजन्ममलापहा।” (मदनपालनिघण्ट

करणे ल्युट्। २ तैलादि, तेल वगैरह।

अभ्यञ्जन (सं० क्लौ०) अभि-अञ्ज-भावे ल्युट्। १ तेल-मर्दन, तेलकी मालिश। २ तैल, तेल। ३ नेत्रमें कज्जल या सुरमेका लगाना। ४ आभूषण, जेवर। ५ वेश, आकल्प, जेबायश, आरास्तगौ, बनावट, सजावट।

अभ्यञ्जनीय (सं० त्रि०) अभि-अञ्ज कर्मणि अनौयर्। मर्दनके योग्य, लगाने काबिल।

अभ्यतोत (सं० त्रि०) मृत, निर्गत, मुर्दा, गया-गुजरा।

अभ्यधिक (सं० त्रि०) अभि अतिशयं अधिकम्, प्रादि-सं०। १ अधिकपरिमाण, ज्यादा मिक्दारवाला। २ उत्कृष्टतम, सबसे बड़ा। ३ अति उत्कृष्ट, निहायत उम्दा। (अव्य०) ४ अतिशय, निहायत, ज्यादातर।

अभ्यध्व (सं० अव्य०) अध्वन आभिमुख्यम्, टजन्त-अव्ययी०। १ पथके अभिमुख, राहको ओर, सड़कपर। अभ्यनुज्ञा (सं० स्त्री०) अभि-अनु-ज्ञा-लुट्। १ अनु-मति, रज.। २ पृथक्करण, बरतरफौ। ३ आज्ञा, हुक्म।

अभ्यनुज्ञात (सं० त्रि०) अभि-अनु-ज्ञा-क्त। नियोजित, रज.। पाये हुआ, जिसे हुक्म मिल चुके।

अभ्यनुज्ञान (सं० क्लौ०) अभि-अनु-ज्ञा-लुट्। अनुज्ञा, रज.।

अभ्यनुक्त (सं० त्रि०) अभि-अनु-व्र-वच वा क्त। प्रकाशरूपसे न कहा हुआ, जो साफ तौरपर बताया न गया हो।

अभ्यन्त (सं० त्रि०) आतुर, तकलोफज्दह, घबराया हुआ।

अभ्यन्तर (सं० क्लौ०) अभिगतं प्राप्तं अन्तरं अवकाशं मध्यदेशं वा, प्रादि-सं०। १ अन्तराल, मध्यस्थान,

अन्तर्लोक, अन्तर्लोक, अन्तर्लोक जगह। ‘अभ्यन्तरम् अन्तरालम्’ (१-सुहृत्)

२ उभयका मध्य, दोनोका बीच। ३ अन्तःकरण, कलेजा। (त्रि०) ४ अन्तस्थ, भीतरी, हार्दिक, दिली। (अव्य०) ५ अन्तर्भागमें, भीतर-भीतर।

अभ्यन्तरक (सं० पु०) हार्दिक मित्र, दिली दोस्त।

अभ्यन्तरकरण, अन्तःकरण देखो।

अभ्यन्तरकला (सं० स्त्री०) गुप्त वा विलास-सम्बन्धीय विद्या, जो इनर घोशीदा या ऐश-इशरतसे तन्मय रहनेवाला हो।

अभ्यन्तरायाम (सं० पु०) धनुस्तम्भ रोगविशेष, पृष्ठास्थिका सङ्कोच द्वारा वक्रीभाव, रौढका सिक्कुड़का टेढ़ा पड़ना। इस रोगमें कुपित बलवान् वायु अङ्गुलि, वक्ष, हृदय, और गलदेशादिक पर दौड़ छाडू समूहको खेंचता और मनुष्यको झुका देता है। यह अचिन्तितता और हनुस्तम्भादिको उत्पन्न करेगा इसका लक्षण इसतरह लिखा है,—

“अङ्गुलीगुरुफज्जदरहृदयगलसंश्रितः।

आयुप्रतानमल्लो यदा चिपति वेगवान्।

विष्टम्भाकम्बुहनुर्भ्रमार्थः कफं वमन्।

अभ्यन्तरं धनुरिव यदा नमति मानवः।

तदास्थान्तराशमं कुरुते मारुतो बली।” (साधव निदान)

अभ्यन्तराराम (सं० त्रि०) अभ्यन्तरे परमात्मनि आरमति, रम कर्तरि घञ्। आत्माराम, आत्मज्ञ, योगी, जो भगवान्का भजन करता हो।

अभ्यन्तरीकरण (सं० स्त्री०) १ अभिषेक, प्रतिष्ठा, अच्छे कामका अदाय-रसूम। २ हार्दिक मित्र बनाना, दिली दोस्त पैदा करना।

अभ्यन्तरीकृत (सं० त्रि०) मध्यस्थापित, अन्तस्थ, बनाया हुआ। २ अभिषिक्त, जिसकी रसम अदा हो जाये। ३ हार्दिक रूपसे किया हुआ, जो दिलसे किया गया हो।

अभ्यमन (सं० स्त्री०) अभितः अभ्यमनम्, अभ्यमन्यादी भावे लुट्। १ अभिगमन, हमला, धावा। २ रोग, बीमारी।

अभ्यमनवत् (सं० अव्य०) १ आक्रमणसे, धावेमें, हमला करके। २ रोगसे, बीमारीमें।

अभ्यमित (सं० त्रि०) अभ्यस्यते, अभि-अम कर्मणि क्त। रोज, पौड़ित, आतुर, बीमार

अभ्यमित (सं० अव्य०) अभ्य इत् अभितः शतुः तस्याभिसुख्यम्, अभिसुख्ये अव्ययी०। अभ्यमिताच्छ च। पा ३।१।७। शत्रुके अभिसुख्य, रिपुके सम्मुख, दुश्मनके सामने।

अभ्यमित्रीण (सं० पु०) वीरतापूर्वक शत्रुसे सम्मुखीन होनेवाला योद्धा, जो सिपाही दिलेरीसे दुश्मनका सामना पकड़ता हो।

अभ्यमित्रीय, अभ्यमित्रीण देखो।

अभ्यमित्र, अभ्यमित्रीण देखो।

अभ्यमिन् (सं० त्रि०) अभि-अम कर्तरि णिनि। १ रोगशुक्त, बीमार। २ सम्मुखवर्ती हो पौड़नकर्ता, जो सामने तकलीफ पड़चाता हो।

अभ्यय (सं० पु०) अभितः सर्वथा अयः गमनम्, प्रादि-स०। १ निकट गमन, समापकी उपस्थिति, पासका पहुँचना। २ प्रवेश, दाखिला। ३ अस्तमय, गुरुब, सूर्यका बैठना।

अभ्ययि (सं० अव्य०) शत्रुके प्रति, अरिके विरुद्ध, दुश्मनके खिलाफ।

अभ्ययविम्ब (सं० अव्य०) सूर्यके मण्डलकी ओर, आफताबके घेरेकी तर्फ।

अभ्यर्चत् (सं० त्रि०) पूजा करते हुआ, जो परस्तिश कर रहा हो।

अभ्यर्चन (सं० स्त्री०) अभि-अर्च-ल्युट्। सकल प्रकार पूजा, जो पूजा अनुकूल बनानेकी की जाती हो, हरतरहकी परस्तिश, जो परस्तिश सुवाफिक करनेकी हो।

अभ्यर्चनीय, अभ्यर्च देखो।

अभ्यर्चा (सं० स्त्री०) अभ्यर्चन देखो।

अभ्यर्चित (सं० त्रि०) सुप्रशंसित, सकल प्रकार पूजित, खूब तारीफ किया हुआ, जिसकी परस्तिश सब तरह हो जाये।

अभ्यर्च्य (सं० त्रि०) अभ्यर्चते, अभि-अर्च कर्मणि ल्यत्। १ सर्वथा पूजनीय, सब तरह परस्तिश करने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। पूजा करके, परस्तिश पड़चाके।

अभ्यर्च्य (सं० त्रि०) अभि-अर्च कर्मणि क्त, अद्वैतार्थ

इङ्गभावः । १ समीप, अन्तिक, निकट, नजदीक, करीब, पास ।

‘अभ्यर्थं नातिदूरं आसन्नं वा ।’ (सिद्धान्तकौमुदी)

(स्त्री०) २ सामीप्य, अन्तिकता, नैक्य, कुर्ब, नजदीकी ।

अभ्यर्थन (सं० स्त्री०) अभ्यर्थना देखो ।

अभ्यर्थना (सं० स्त्री०) अभि-अदन्त-चुरा०-अर्थ भावे युच् । सर्वथा प्रार्थना, खुली अर्जी, दरखास्त । हिन्दी भाषामें समादर देनेको अभ्यर्थना कहते हैं । जैसे—उन्होंने समागत व्यक्तिको यथेष्ट अभ्यर्थना की थी ।

अभ्यर्थनीय (सं० त्रि०) अभि-अदन्त-चुरा०-अर्थ गौणे कर्मणि अनौयर् । १ सर्वथा प्रार्थनीय, सब तरह अर्ज करने काबिल । २ अगवानी करने योग्य, जिसकी ताजीम बजायी जाये ।

अभ्यर्थित (सं० त्रि०) अभि-अदन्त-चुरा०-अर्थ गौणे कर्मणि क्त । १ प्रार्थित, याचित, अर्ज किया हुआ, जिससे मांग चुके । २ अगवानी किया हुआ । (स्त्री०) भावे क्त । ३ सर्वथा प्रार्थना, दरखास्त ।

अभ्यर्थिन् (सं० त्रि०) सर्वथा प्रार्थना करनेवाला, जो हरतरह अर्ज कर रहा हो । २ अगवानी या ताजीम देनेवाला ।

अभ्यर्थ्य (सं० त्रि०) अभि-अदन्त-चुरा०-अर्थ कर्मणि क्त । १ प्रार्थनीय, अर्ज करने लायक । २ आगवानी करने योग्य, जो ताजीम पाने काबिल हो । (अव्य०) ल्यप् । ३ आगवानी करके, ताजीम बजाकर । ४ सर्वथा प्रार्थना करके, सबतरह अर्ज सुनाकर । अभ्यर्तित (सं० त्रि०) अभि-अर्द-क्त । अतिशय पीड़ित, निहायत तकलीफ उठाये हुआ ।

अभ्यर्थ (सं० त्रि०) अभि-ऋष्णु ह्रस्वा णिच्-अच् । इस पार्श्वपर रहनेवाला, जो इस तर्फ रहता हो । १ समीप, निकट, पास, करीब । ३ उचितशौल, बढ़नेवाला । (स्त्री०) ४ सामीप्य, नैक्य, कुर्ब, नजदीकी । ५ इस पार्श्वको स्थिति, इस तर्फकी रहायश ।

अभ्यर्थयज्जन् (वै० त्रि०) अभ्यर्थ-यज्-ङनिप् । १ दान करनेवाला, जो बख्श रहा हो । २ मुजारीकी

सम्पत्ति बढ़ानेवाला, जो परस्तिश करनेवालेकी जाय-दाद बढ़ा रहा हो । ३ रसको आहरण कर बरसनेवाला, जो अर्क खींच कर बरसाता हो ।

अभ्यर्थ (सं० पु०) अभि-ऋष्ण गतो श । अभ्येषण, अरदास, मांग ।

अभ्यर्हण (सं० स्त्री०) अभि-अर्ह भावे लुट् । १ सर्वथा पूजा, हरतरहकी परस्तिश ।

अभ्यर्हणा (सं० स्त्री०) अभ्यर्हण देखो ।

अभ्यर्हणीय (सं० त्रि०) अभि-अर्ह पूजायां अनौयर् । पूजनीय, परस्तिशके काबिल ।

अभ्यर्हणीयता (सं० स्त्री०) सुप्रसिद्धि, श्लाघ्यता, इज्जतदारा, रास्ती, मार्ग, लियत ।

अभ्यर्हित (सं० त्रि०) अभि-अर्ह पूजायां क्त । १ पूजित, इज्जत पाये हुआ । २ उचित, वाजिब ।

अभ्यर्लङ्घत (सं० त्रि०) सर्वप्रकार मण्डित, सम्यक् रूप भूषित, सजा हुआ, जो संवारा गया हो ।

अभ्यवकर्षण (सं० स्त्री०) अभि-अव-कर्ष भावे लुट् । १ निर्हार, निकाल, निचोड़, खींच । २ श्ल्याद्युत्पाटन, कांटे बगैरहका निकालना ।

‘निर्हारोऽभ्यवकर्षणम् ।’ (अमर)

अभ्यवकाश (सं० पु०) असंवृत स्थान, खुली जगह । अभ्यवदान्य (वै० त्रि०) १ अनुदार, कृपण, कञ्चूस, बखील, जो दान न करता हो ।

अभ्यवस्कन्द (सं० पु०) अभि-अव-स्कन्द-घञ् । १ शत्रुका आक्रमण, दुश्मनका हमला । २ दुर्बल बनानेको शत्रु-पर प्रहारका करना, कमजोर करनेके लिये दुश्मनको मारना । ३ प्रहार, मार । ४ प्रपात, धावा । ५ आक्रमण, हमला । ६ अवरोध, रोक ।

अभ्यवस्कन्दन (सं० स्त्री०) अभ्यवस्कन्द देखो ।

अभ्यवहरण (सं० स्त्री०) अभि-अव-ह-लुट् । भोजनका करना, खाना, निगलना । २ आहार, खुराक ।

अभ्यवहार (सं० पु०) अभि-अव-ह-घञ् ।

अभ्यवहरण देखो ।

अभ्यवहार्य (सं० त्रि०) अभ्यवहयते, अभि-अव-ह-ल्यप् । १ भोजनयोग्य, भोजनीय, खाने काबिल ।

(स्त्री०) २ आहार, खाना ।

अभ्यवहित (सं० त्रि०) प्रशमित, निर्वापित, ठण्डा किया हुआ, जो बुझा दिया गया हो।

अभ्यवहृत (सं० त्रि०) अभ्यवहृत्यते स्म, अभि-अव-हृत। भक्षित, भुक्त, खादित, खाया हुआ, जो खा डाला गया हो।

अभ्यवायन (सं० क्ली०) अभि-अव इण-अप् वा लुट्।

१ अभिसुख्य अपयान, नीचेकी ओरका गिराव।

२ अपगमन, बुरी चाल। ३ पलायन, फरारी, भगोड़ापन।

अभ्यवेत (सं० त्रि०) मग्न, निविष्ट, अभिनिविष्ट, व्याप्त, लीन, आसक्त, डूबा हुआ।

अभ्ययन (सं० क्ली०) प्राप्ति, उपस्थिति, हासिल, पहुँच।

अभ्यसन (सं० क्ली०) अभ्य-अस-लुट्। १ अभ्यास, महावरा, कसरत। २ पुनः पुनः एकरूप क्रियाका करना, बार-बार वैसे ही कामका चलाना। ३ बार-बार आवृत्ति, सुतालह, पढ़ाई।

अभ्यसनीय (सं० त्रि०) १ अभ्यास करने योग्य, महावरा डालने काबिल। २ बार-बार पढ़ने योग्य, जो सुतालह करने काबिल हो।

अभ्यसित, अभ्यास देखो।

अभ्यसितव्य, अभ्यासनीय देखो।

अभ्यस्य, अभ्यास्यक देखो।

अभ्यस्यक (सं० त्रि०) अभ्यस्यति अभ्यस्यति अभ्यस्यते वा, अभि-अस उपतापे अस् असृज् वा कणादि० यक्-खल्। १ अत्यन्त असूयाकर्ता, निहायत बुगूज रखनेवाला, जो बहुत ज्यादा डाह करता हो। २ साधुव्यक्तिके गुणमें दोष आरोपक, जो भले आदमीके इनरमें ऐव लगाता हो। (स्त्री०) अभ्यस्यिका।

अभ्यसूया (सं० स्त्री०) अभि-अस्य उपतापे अस् असृज् वा कणादि० यक् प्रत्ययान्तात् अ टाप्। परगुणमें दोषारोप, अर्धा, दूसरेके इनरकी ऐबजोई, बुगूज, डाह।

अभ्यस्त (सं० त्रि०) अभ्यस्यते स्म, अभि-अस-क्त।

१ बारम्बार एकरूप कार्यकी आवृत्तिसे युक्त, बार-बार एक ही जैसा काम करनेवाला। २ शिथिल,

तालीमयाफूता, पढ़ा-लिखा। ३ व्याकरणमें द्विगुणित, दुचन्द किया हुआ। (स्त्री०) ४ मूलका द्विगुणित आधार, जड़की दुचन्द बुनियाद।

अभ्यस्य, अभ्यासनीय देखो।

अभ्यस्यत् (सं० त्रि०) अभ्यास करने या पढ़नेवाला, जो महावरा डाल या पढ़ रहा हो।

अभ्यस्तमय (सं० पु०) सूर्यास्तकाल, गुरुब-आफूताव। किसीके अनुसार सूर्यका अस्त होना अभ्यस्तमय कहलाता है।

अभ्यस्तमित (सं० त्रि०) सूर्यास्तके समय सोनेवाला, जो आफूतावके गुरुब होते वक्त सोता हो।

अभ्याकर्ष (सं० पु०) तालका ठोंकना, ललकार।

अभ्याकाङ्क्षित (सं० त्रि०) अभ्याकाङ्क्ष्यते स्म, अभि-आ-काङ्क्ष कर्मणि क्त। १ ईप्सित, वाञ्छित, खाहिश किया हुआ, जो चाहा गया हो। (स्त्री०) भावे क्त।

२ मिथ्या अभियोग, बनावटौ नालिश, झूठा दावा।

अभ्याक्राम (सं० अव्य०) निकट पढ़ापण करके, पाससे निकलकर।

अभ्याख्यात (सं० त्रि०) मिथ्यारूप अभियुक्त, जिसपर झूठा जुर्म लग चुके।

अभ्याख्यान (सं० क्ली०) अभि-आ ख्या-लुट्। मिथ्या अभियोग, झूठा जुर्म। 'मिथ्याभियोनोऽभ्याख्यानम्।' (अमर)

अभ्यागत (सं० पु०) अभि-आ-गम कर्तरि क्त। १ अतिथि, अन्यत्रसे आगत वरक्ति, मेहमान, दूसरी जगहसे आया हुआ आदमी। (त्रि०) २ सम्मुखगत, सामने आया हुआ, जो आ पहुँचा हो।

अभ्यागम (सं० पु०) अभिसुखतया गच्छति यत्न, अभि-आ-गम आधारे अप्। १ युद्ध, लड़ाई। २ रणस्थल, मैदान-जङ्ग, लड़ाईका खेत। कर्मणि अप्। ३ अन्तिक, समीप, कुर्ब, पड़ोस। करणे अप्। ४ विरोध, दुश्मनी। भावे अप्। ५ अभ्याख्यान, बदाव, उठान। ६ अभिघात, मार। ७ सम्मुखगमन, पहुँच, मुलाकात।

'अभ्यागमोऽनिके घाते विरोधाभ्युद्गमादिषु।' (विश्व)

अभ्यागमन (सं० क्ली०) अभि-आ-गम-लुट्।

अभ्यागम देखो।

अभ्यागारिक (सं० पु०) अभ्यागारे गृहगतपुत्रादि-
पोषण-कर्मणि नियुक्तः ठन् । १ गृहगत पुत्रादि पोषण-
कार्यमें नियुक्त, जो घरके बाल-बच्चे पालनेमें लगा
हो । २ पुत्रादिके पालन निमित्त यत्नवान्, जो
बाल-बच्चोंके खिलाने-पिलानेकी तद्वीर लड़ा
रहा हो ।

अभ्याघात (सं० पु०) अभि-आ-हन-घञ् । १ आघात,
ताड़न, जर्ब, मार । करणे घञ् । २ आघातका
उपदेश, मारनेकी सलाह ।

अभ्याघातिन् (सं० त्रि०) अभ्यहन्ति, अभि-आ-हन-
ताच्छिष्ये घिनुण् । हिंसाशील, आघातकारो, हमला
मारनेवाला, जो धावा कर रहा हो ।

अभ्याचार (सं० पु०) अभि-आ-चर-घञ् । १ सर्वतो-
भाव आचरण, सब तर्फोंकी चाल । २ आक्रमण, बाधा,
हमला, दस्तन्दाजी ।

अभ्याज्ञाय (सं० पु०) अभि-आ-ज्ञा-घञ् युक् च ।
१ अभिज्ञान, पूर्वज्ञात विषयका बिलकुल अनुरूप
ज्ञान, समझदारो, पहले जानी हुयी बातकी ठीक-
ठीक वैसी ही समझ । (वे० पु०) २ आज्ञा, आदेश,
हुक्म, फर्मान् ।

अभ्यातान (सं० पु०) अभि-आ-तन-घञ् । अत्यन्त
विस्तार, बहुत ज्यादा फैलाव ।

अभ्यात्त (सं० पु०) अभ्यातति सातत्यं व्याप्नोति,
अभि-अत सातत्ये कर्तरि क्त । १ सर्वव्यापक परमेश्वर ।
(त्रि०) अभ्यादीयतेस्म, अभि-आ-दा-क्त । २ गृहीत,
पाया हुआ ।

अभ्यात्म (सं० त्रि०) १ अपनी ओर निर्देश किया
हुआ, जो अपनी तर्फ भुकाया गया हो । (अव्य०)
२ अपनी ओरको, अपनी तर्फ ।

अभ्यात्मतर (सं० अव्य०) अधिक अपनी ओरको,
ज्यादातर अपनी तर्फ ।

अभ्यादान (सं० क्ली०) अभिमुख्येन आदानम्,
प्रादि-स० ; अभि-आ-दा-लुट् । भोग्यादाने । पा ८१८० ।
१ ग्रहण, पकड़ । २ आरम्भ, शुरू ।

अभ्याधान (सं० क्ली०) अभीत आधानम्, प्रादि-स० ;
अभि-आ-धा-लुट् । १ सर्वथा सत्तादि द्वारा अभ्या-

दिका आधान, यथाविधान अभ्यादि स्थापन ।
२ संस्थापन, प्रतिष्ठा, जमावट ।

अभ्यान्त (सं० पु०) अभि-अम-क्त । रोगयुक्त,
निष्पेड़ित, बमार, तकलीफ उठानेवाला ।

अभ्यापत्ति (सं० स्त्री०) अभि-आ-पद्-क्तिन् । अभिमुख
आगमन, सम्मुखका आना, आक्रमण, धावा, हमला,
चढ़ाई ।

अभ्यापात (सं० पु०) विपद्, विघ्न, बाधा, आफत,
बदबख्तो ।

अभ्यामर्द (सं० पु०) मृद्यते निष्पीड्यते अस्मिन् ;
अभि-आ आधारे घञ् । १ युद्ध, रण, जङ्ग, लड़ाई ।
भावे घञ् । २ निष्पीड़न, तकलीफ़दिहो, दुःखका
देना ।

अभ्यायसेन्य (सं० त्रि०) अभि-आ-यम बाहु० सेन्य ।
१ अभितो नियन्तव्य, रोका जानेवाला । २ अधोन
बनाने योग्य, जो मातहत बनाने लायक हो ।

अभ्यारम्भ (सं० पु०) अभि-आ-रम-घञ्-नुम् । प्रथम
आरम्भ, पहला अगाज, शुरू ।

अभ्यारूढ (सं० त्रि०) अभि-आ-रूह-क्त । १ अति
आरूढ़, खूब चढ़ा हुआ । २ वृद्ध, बुढ़ा । ३ आगे
निकला हुआ, जो सबक़त ले गया हो ।

अभ्यारोह (सं० पु०) अभि-आ-रूह-घञ् । १ अभि-
मुख आरोहण, ऊपरका चढ़ाव । २ एक स्थानसे
दूसरे स्थानको परिवर्त, एक जगहसे दूसरी जगहको
तबादिला । ३ उन्नति, तरक्की । अभिमुख्येनारुह्यते,
देवभावोऽनेन, करणे घञ् । ४ मन्त्रजपविशेष ।

अभ्यारोहण (सं० क्ली०) अभ्यारोह देखो ।

अभ्यारोहणौय (सं० त्रि०) अभ्यारोढुं शक्यम्, अभि-
आ-रूह-अनीयर् । १ अभिमुख्य आरोहणौय, चढ़
जाने लायक । (पु०) २ यज्ञ विशेष ।

अभ्यारोह्य (सं० त्रि०) आरोहणके योग्य, चढ़ जाने
काबिल ।

अभ्यावर्त (सं० त्रि०) अभ्यावर्तते, अभि-आ-वृत् कर्तरि
अच् । १ पुनः पुनः आवर्तमान, बार-बार वापस आने-

वाला । २ अभि-आ-वृत्-णिच् कर्मणि अच् । ३ बार-
बार आवर्तनीय, बार-बार वापस आने काबिल ।

(पु०) भावे घञ् । ४ अतिशय आहृति, हृदसे ज्योत्स्ना दोहराव । (अव्य०) ५ पुनः पुनः आहृति करके, बार-बार दोहराकर ।

अभ्यावर्तिन् (सं० त्रि०) अभ्यावर्तते, अभि-आ-वृत्-णिनि । १ सर्वदा स्थितिशील, बार-बार आनेवाला । (पु०) २ वेदोक्त चयमान राजपुत्र ।

अभ्यावृत्त (सं० पु०) अभि-आ-वृत् उपसृष्टत्वात् क्त । १ अभिमुख्य आनीत होमशेष द्रव्य, होमकी जो बची हुयी चीज, सामने लायी गयी हो । (त्रि०) २ बार-बार अभ्यास, बार-बार आहृतियुक्त, बार-बार महावरा डाला हुआ, जो बार-बार दोहराया गया हो ।

अभ्यावृत्ति (सं० स्त्री०) अभि-आ-वृत्-क्तिन् । बार-बार अभ्यास, पुनः पुनः आहृति, दोहराव, बार-बारका महावरा ।

अभ्याश (सं० पु०) अभिमुखं आश्रयते व्याप्यतेऽनेन, अभि-आ-अशू व्याप्तौ करणे घञ् । १ निकट, कुर्ब, पड़ोस । २ अभिव्यापन, अभिव्याप्ति, पहुँच । ३ फल, नतीजा । (अव्य०) ४ समीप, नजदीक ।

अभ्याशादागत (सं० त्रि०) निकट स्थानसे आगत, जो नजदीकसे आया हो ।

अभ्याशे (सं० अव्य०) समीप, नजदीक ।

अभ्यास (सं० पु०) अभिमुख्येन आस्यते क्षिप्यते पदादि यत्र, अभि-आ-असु क्षेपे आधारे घञ् । १ निकट, समीप, कुर्ब, पड़ोस, नजदीक पास । २ पुनः पुनः अनुशीलन, बार-बारका काम । ३ पुनराहृति, दोहराव । ४ साधन, सामरिक अनुशीलन, सदाका व्रायाम, प्रयोग, स्वभाव, प्रथा, महावरा, जङ्गल कसरत, मुदामो मेहनत, इस्तेमाल, आदत, रिवाज । ५ वेदादिकी आहृति, कण्ठाग्र पठन, ज़बानी याददाश । ६ शिक्षा, तालीम । ७ धनुर्विद्याका अनुशीलन, तीर चलानेका महावरा । कर्मणि घञ् । ८ वराकरणोक्त द्विरुक्त धातु भागद्वय, दोबारका दोहराव, तशदीद । ९ काव्यमें—अन्तिम चरणका दोहराव, गुजलके आखिरी मिलते-मिसरेका बार-बार कहा जाना । १० गणित शास्त्रमें—गुणन ।

अभ्यासकला (सं० स्त्री०) आसन और प्राणा-

यामकी एकता । योगमें जो चार कला होतीं, उनमें इसका भी नाम पाते हैं । यह विविध साधनके संयोगसे निकलेगी ।

अभ्यासता (सं० स्त्री०) अनवरत अनुशीलन, प्रयोग, व्रसन, लगातार महावरा, इस्तेमाल, आदत ।

अभ्यासनिमित्त (सं० स्त्री०) वराकरणके हित्वाकारण, नहवकी तशदीदका सबब ।

अभ्यासपरिवर्तिन् (सं० त्रि०) समीप वा निकट भ्रमणकारी, पास या करीब घूमनेवाला ।

अभ्यासयोग (सं० पु०) अभ्यासेन सर्वदालोचनया योगः, ३-तत् । सर्वदा एक विषयकी चिन्ता द्वारा जात समाधि, जीवात्मा और परमात्माका संयोग, अभ्यास द्वारा किसी कार्यका मनःसंयोग, बार-बार यादका आना ।

अभ्यासव्रवाय (सं० पु०) हित्वाक्षरसे उत्पन्न अवकाश, जो वक्फा तशदीदसे निकलता हो ।

अभ्यासादन (सं० स्त्री०) अभि-आ-सद-णिच्-लुगट् । शस्त्रादि द्वारा शत्रुको निर्बल बनानेका काम, शत्रु-पक्षपर आक्रमण, शत्रुके सम्मुखगमन, निकट स्थापन, हथियार वगैरहसे दुश्मनको कमजोर करना, अदूपर हमला मारना, दुश्मनका सामना पकड़ना, नजदीक जा पहुँचना ।

अभ्यासी (सं० पु०) अभ्यास उठानेवाला, जो महावरा डालता हो ।

अभ्याहत (सं० त्रि०) आहत, स्तम्भित, ज़ख्मी, चोट खाये हुआ ।

अभ्याहनन (सं० स्त्री०) आघात, वध, स्तम्भन, मार-पौट, कत्ल, फटकार ।

अभ्याहार (सं० पु०) अभिमुख्येन आहारः आहरणम्, प्रादि-सं० । १ अपकारकी इच्छासे सम्मुखका आक्रमण, साक्षात् चौर्य, डाका, दिन-दहाड़ेको लूट-मार । २ अभियोग, नालिश । ३ कवचादि धारण, बख्तर वगैरहका पहनना । ४ आलिङ्गन, हमा-गाथी । ५ मेलन, मेल-जोल । ६ अभिमुख्य आनयन, सामनेका लाना । ७ भक्षण, खाना । यह चर्च, चोख, लोख और धेय-मिदखे चार प्रकारका होता है ।

अभ्याहार्य (सं० त्रि०) भोजन कर लेने योग्य, जो खा डालनेके लायक हो।

अभ्याहित (सं० त्रि०) अभि-आ-धा-क्त। मन्त्रादि द्वारा यथाविधान संस्कार किया हुआ, जो रख दिया गया हो।

अभ्युक्त (सं० त्रि०) अभिमुख्येन उक्तम्, प्रादि-स०। समक्ष उक्त, साक्षात् उक्त, प्रकाशित, सामने जाहिर किया हुआ, जो रूबरू कह दिया गया हो।

अभ्युक्षण (सं० क्ली०) अभिमुख्येन उक्षणम्, प्रादि-स०; अभि-उक्ष सेचने लुप्त। सेचन, अधोमुख हस्त द्वारा सेचनरूप संस्कार विशेष, सिंचाई, छिड़काव, आबपाशी। “मूलेनाभ्युक्षणं कुर्यात्।” (तन्त्र) मूलमन्त्र पद निम्नमुख हस्त द्वारा स्थण्डिलमें जल छिड़क देना चाहिये। इस बातके प्रमाणमें लिखा है,—

“उत्तानेनैव हस्तेन प्रोक्षणं परिकीर्तितम्।

अधिताभ्युक्षणं प्रोक्तं तिर्यगोक्षणं व्युत्तम्॥” (वृत्ति)

वैध कार्यमें हाथ सीधा रख जो जलसेक किया जाता, वह प्रोक्षण कहलाता है। फिर उलटे हाथसे किये जानेवाले जलसेकको अभ्युक्षण कहेंगे। इसी-तरह हाथ झुमा जो जलसेक होता, उसका नाम अवोक्षण पड़ा है। मीमांसक द्रव्यनिष्ठ अभ्युक्षणादि संस्कारको अष्टविशेष रूप बतायेगा।

अभ्युक्षित (सं० त्रि०) अभि-उक्ष-क्त। अभ्युक्षण किया हुआ, जो छिड़का गया हो।

अभ्युक्ष्य (सं० त्रि०) अभ्युक्षितुं योग्यम्, अभि-उक्ष अर्हार्थे ण्यत्। अभ्युक्षणके योग्य, छिड़कने काबिल। (अव्य०) उलटे हाथसे जलका छौटा देकर, ऊपर छिड़कके।

अभ्युक्षित (सं० त्रि०) साधारण, रीतिमत, मामूली, जो रिवाजमें आ गया हो।

अभ्युक्षगामिन् (सं० त्रि०) १ अतिशय उच्च गमन करते हुआ, जो निहायत ऊँचे चढ़ा जाता हो। (पु०) २ बुद्ध विशेष।

अभ्युक्षय (सं० पु०) अभि-उक्ष-चि-अच्। वृद्धि, बढ़ती। “सरित्पुं खभ्युक्षयसादधानम्।” (भट्टि ४८)

अभ्युक्षित (सं० त्रि०) अधिरोपित, उच्चोत्त, उपरि-

नियुक्त, ऊपर चढ़ाया हुआ, जो बढ़ा दिया गया हो।

अभ्युक्षितकर (सं० त्रि०) उच्चोत्तहस्त, जो हाथ उठाये हो।

अभ्युत्क्रष्ट (सं० त्रि०) उच्चैर्घोष द्वारा प्रशंसित, जिसको तारोफ बुलन्द आवाजोंसे हो चुके।

अभ्युत्क्रोशन (सं० क्ली०) उच्चैर्घोष, बुलन्द-आवाज, जोर को चिल्लाहट।

अभ्युत्क्रोशनमन्त्र (सं० पु०) प्रशंसाका गीत, जो गाना किसीको तारीफके बारेमें हो।

अभ्युत्थान (सं० क्ली०) अभितः उत्थानम्, प्रादि-स०; अभि-उद्-स्था-लुप्त। १ किसीका आदर करनेके लिये आसन छोड़ खड़ा हो जाना, ताज्जीम। २ प्रत्युद्-गमन, अग्रसर हो किसीका आदरपूर्वक आनयन, अगवानौ। ३ उद्यम, उद्भव, उच्चपदप्राप्ति, अधिकार-प्राप्ति, तरक्की, उठान, ऊँचो जगहका पाना।

अभ्युत्थायिन् (सं० त्रि०) अभ्युत्तिष्ठति, अभि-उद्-स्था-णिनि-युक्। उत्तिष्ठति, दण्डायमान, उठनेवाला, जो खड़ा हो। (स्त्री०) डौप। अभ्युत्थायिनी।

अभ्युत्थायौ, अभ्युत्थायिन् देखो।

अभ्युत्थायत (सं० त्रि०) अभि-उद्-स्था-क्त। अभि-वादनके निमित्त खड़ा हुआ, पूज्य व्यक्तिको सम्मान-रक्षाके लिये आसनसे उत्थित, अभिमुख्य उद्गत, उठा हुआ, जो उठकर खड़ा हो गया हो।

अभ्युत्थिताम्बु—दशरथसे उत्पन्न हुये कोई वृषति-विशेष।

अभ्युत्थेय (सं० त्रि०) अभ्युत्थातुं अर्हम्, अभि-उद्-स्था उपसृष्टत्वात् यत्। अभिवाद्य, जिसके अभिवादन-को आसनादिसे उठना पड़े, ताज्जीमके लायक, जो अगवानौ किये जाने काबिल हो।

अभ्युत्पतन (सं० क्ली०) अभिमुख्येनोत्पतनम्, प्रादि-स०; अभि-उद्-पत-लुप्त। सम्मुख भाव ऊर्ध्व-गमन, उल्लंघन, उद्गमन, झपटा-झपटी, कूद-फांद, किसीके ऊपर जाकर पड़ना।

अभ्युदय (सं० पु०) अभितः उदयः, प्रादि-स०;

अभि-उद्-उप-लुप्त। १ समौष्ट कार्यका प्रादुर्भाव,

खाद्विश की हुयी बातका हो जाना । २ वृद्धि, उन्नति, बढ़ती, तरकी। 'अभुप्रदये चना।' (हितोपदेश) अभितः उदयः मङ्गलम्, प्रादि-सं । ३ विवाह और पुत्र-जन्मादि रूप इष्टलाभ, शादीका हो जाना । ४ ग्रहका उत्थान, सितारिका निकलना । ५ आरम्भ, आगाज । ६ आनन्द, खुशी । ७ शुभफल, अच्छा नतीजा । ८ उत्सव, जलसा । ९ समापत्ति, देवयोग, देवगति, देवघटन, हादिसा, वाकिया, माजरा ।

अभुप्रदयार्थक (सं० त्रि०) अभुप्रदयः इष्टलाभः अर्थो निमित्तं यस्य, बहुव्री० कप् । अभुप्रदयके निमित्त किया जानेवाला, जो अभुप्रदयके लिये हो । अभुप्रदयिक आह, विवाहादि सकल मङ्गल कार्यसे पहले ही करना चाहिये । किन्तु पुत्रजन्म प्रायश्चित्त प्रभृति कर्मके बाद भी अभुप्रदयिक आहका विधान पाया जाता है ।

अभुप्रदयिन् (सं० त्रि०) उठते हुआ, जो निकल रहा हो ।

अभुप्रदयेष्टि (सं० स्त्री०) अघसर्पण यागविशेष ।
अभुप्रदानयन (सं० स्त्री०) अभि-उद्-आ-नौ-लुपट् ।
अम्बिके अभिमुख आनयन, आगके सामने पहुँचाना ।
अभुप्रदाहरण (सं० स्त्री०) अभि-उद्-आ-ह-लुपट् ।
१ अभिमुख कथन, सामनेकी बातचीत । २ अभिमुख उत्क्षेपण, सामनेकी उछाल । ३ किसी पदार्थका विपरीत भावसे निदर्शन, जो मिसाल किसी चीज़ पर उलटे तौरसे पड़ती हो ।

अभुप्रदित (सं० त्रि०) अभितः सम्यक् उदितं उत्क्रान्तं वा प्रातर्विहितं वैधकर्मनिद्रादिवशात् येन यस्य वा, प्रादि बहुव्री० ; अभि-उद्-इण-क्त । १ निद्रावशतः प्रातःकालका वैधकर्म न करनेवाला, जो नींदके सबब सवेरेका मुनासिब काम न करता हो ।

‘सुप्ते यश्चिन्नस्मिन्ति सुप्ते यश्चिनुदिति च ।

अ’शमानमिनिमुक्तामुप्रदितौ तौ यथाक्रमम् ॥’ (अमर)

२ सर्वांश उदित, पूरे तौरसे निकला हुआ ।
३ कथित, कहा हुआ । ४ प्रादुर्भूत, जो हुआ हो ।
५ वर्धित, बढ़ा हुआ । ६ उत्सवकी भांति प्रसिद्ध किया हुआ, जो जलसेकी तरह मगझर किया गया

हो । (स्त्री०) ७ सूर्योदय, आफताबका निकलना ।
८ उद्गम, उठान ।

अभुप्रदोरित (सं० त्रि०) अभि-उद्-ईर्-क्त । १ सम्मुख कथित, सामने कहा हुआ । २ ऊपर फेंका हुआ, जो चला दिया गया हो । (स्त्री०) भावे क्त । ३ कथन, कलाम ।

अभुप्रद् (सं० त्रि०) उठते हुआ, जो निकल रहा हो ।

अभुप्रन्नत (सं० त्रि०) १ विस्तृत, फैला हुआ । २ अभ्यर्थनायें प्रस्थानित, जो ताजौमके लिये बाहर मया हो ।
३ उत्थित, उठा हुआ ।

अभुप्रन्नतराज (सं० पु०) बौद्ध कल्प विशेष ।

अभुप्रन्नम (सं० पु०) अभि-उद्-गम-अप् । १ अभ्युत्थान, उन्नति, उद्भव, उठान, बढ़ती, होती । २ अभ्यर्थनायें उठना, ताजौम बजानेको खड़ा हो जाना ।

अभुप्रन्नमन (सं० स्त्री०) अभितः उन्नमनम्, प्रादि-सं ; अभि-उद्-गम-लुपट् । अभुप्रन्न देखो ।

अभुप्रहृष्ट (सं० स्त्री०) दृग्गोचर होना, देखाई देना, उदय, उठान ।

अभुप्रहृष्टा (सं० स्त्री०) संस्कार विशेष, कोई रस्म ।

अभुप्रवृत्त (सं० त्रि०) अभि-उद्-वृ-क्त । १ याज्ञा विना आनौत, बेमांगी लाया हुआ । २ अभ्यर्थना करके प्रदत्त, जो ताजौमके साथ दिया गया हो ।
अभि-उद्-धृत । ३ अभिमुख होकर उत्तोलन द्वारा धृत, जो सामने उछालकर पकड़ा गया हो ।

अभुप्रव्यत (सं० त्रि०) अभितः सम्यक् उद्यतम्, प्रादि-सं ; अभि-उद्-यम-क्त । १ अयाचित अथच किसी व्यक्तिकहेक आनौत, बेमांगी लाया या दिया हुआ । २ उद्य क्त, उपक्रम-विशिष्ट, कार्य करनेमें प्रवृत्त, बिलकुल तैयार, उठा हुआ, जो काम कर रहा हो ।

अभुप्रन्दत् (वे० त्रि०) भिद्योति हुआ, जो तर कर रहा हो । २ बह जानेवाला, जो बहते जा रहा हो ।
(स्त्री०) अभुप्रन्दती ।

अभुप्रन्नत (सं० त्रि०) अभितः सम्यक् उन्नतम्, अभि-

उद्-नम कर्तरि क्त । १ सम्यक् उन्नत, चढ़ा-बढ़ा, जो जं चा हो चुका हो । २ समधिक उच्च, ऊपरको उठा हुआ, जो निहायत जं चा या भरा हो ।

अभ्युन्नति (सं० स्त्री०) सम्यक् समृद्धि वा उन्नति,
बड़ी तरकी या खुश-खुरमो।

अभ्युपगता (सं० त्रि०) अभि-उप-गम क्त म लोपः ।
 १ स्वीकृत, अङ्गीकृत, मञ्जूरशदा, जो मान लिया गया
 हो । २ निकट गत, पास पहुँचा हुआ । ३ प्रमाणित,
 सम्भव, हवाला दिया हुआ, जो सुमंजिस हो ।
 ४ विवक्षित, प्रतीत, उपलब्धित, सूचित, मफहम,
 सुतसव्वर, मानी रखते हुआ । ५ सम, समान, तुल्य,
 अनुगुण, अनुरूप, सधर्मेन, सुताविक, मिस्र, वैसा ही,
 मानिन्द, हमशक्त, सुतशावेह, मिलता-जुलता । (स्त्री०)
 अभ्युपगता ।

अभ्युपगन्तव्य (सं० स्त्री०) निकट जाने योग्य, जो पास पहुँचने लायक हो ।

अभ्युपगन्ता (सं० पु०) अभ्युपगन्तु देखा ।

अभ्युपगन्तु (सं० त्रि०) सम्मुख उपस्थित होने या
स्वीकार करनेवाला, जो पास पहुँचता या मञ्जूर कर
लेता हो ।

अभुपगन्वी (सं० स्त्री०) अभुपगन् देखो ।

अभ्युपगम (सं० पु०) अभि-उप-गम-अप् । १ समीप-
गमन, पासका पहुँचना । २ प्रतिज्ञा, स्वीकार, अङ्गी-
कार, इकरार, राजीनामा, ठेका, कौल-करार ।
३ नियम, कायदा । ४ विश्वास, एतबार । ५ सम्बिद्ध ।
यह न्यायशास्त्रके चार सिद्धान्तमें सम्मिलित है । जब
बेदेखे-सुने कोई मानी हुई बात काटो जाती, तब
उसको विशेष परीक्षा अभ्युपगम-सिद्धान्त कहलाती
है । 'अभ्युपगमः समीपानगने स्वीकृतावपि ।' (हेम)

अभ्युपगमसिद्धान्त (सं० पु०) अङ्गोक्त तत्त्व, माना
द्वारा उल्लेख-मुतावरण ।

अभ्युपगमित (सं० त्रि०) १ अङ्गीकार कराया हुआ, सम्पत्तिसे प्राप्त, मरजौसे मिला हुआ, जो मना लिया गया हो। (पु०) २ नियत अवधिका दास, जो मुलाम सुकरर वक्तूके लिये हो।

अभ्युपपत्ति (सं० स्त्री०) अभिप्रतिषेधा उपपत्तिः । असंगतौ (सं० वि०)

प्रादि-स० ; अभि-उप-पद-क्तिन् । १ अनिष्ट निवारण
और इष्ट सम्पादन रूप अनुग्रह, मेहरबानो, प्यार ।
'अनुग्रहपत्रिनुग्रहः' (अमर) २ सान्त्वना, हिफाजत, बचाव ।
३ सम्मति, रज़ा । ४ किसी स्त्रीका गर्भाधान, औरतका
हमल ।

अभ्युपपत्तुम् (सं० अव्य०) अभितः उपपत्तुम्, प्रादि-
स० ; अभि-उप-पद्-तुमुन् । सान्त्वनाके निमित्त, अनु-
ग्रहार्थ, हिफाजतके लिये, मेहरबानौके वास्ते ।

अभिरुपपन्न (सं० त्रि०) अभि-उप-पद-न्त तस्य न ।
अनुगृह्येत, बचाया हुआ ।

अभ्युपयुक्त (सं० त्रि०) नियुक्त, व्यवहृत, काममें लगा हुआ, जो इस्तेमाल किया गया हो ।

अभ्युपशान्त (स० त्रि०) निर्वापित, प्रशमित, ठण्डा
 किया हुआ, जो कम कर दिया गया हो ।

अभ्युपस्थित (सं० त्रि०) संहित, अनुपत्त, समेत,
परिवृत, साथ, हाजिरी दिया हुआ, जिसको मदद
मिली हो।

अभ्युपगन्त (स० त्रि०) भाग ग्रहण करनेको आइत,
जो हिस्सा लेनेको बुझाया गया हो ।

अमुखाय (सं० पु०) अभितः उपायः, प्रादि-सं ;
अभि-उप-इण्-अच् । १ स्त्रोकार, रजा, इकारार ।
२ अधिक उपाय, कल्प, साधन, जरिया, वसौला,
तवस्स ल, चारा, इलाज, मड़क ।

अभ्युपयन (सं० ल्ही०) उत्कोच, पारितोषिक,
रिशवत, इनाम ।

अमुप्रपादत्त (सं० द्वि०) समीपागत, आया हुआ,
जो पहुँच गया हो ।

अभ्युपेत (सं० त्रि०) अभि समीपं उपेतम्, प्रादि-
स०; अभि-उप-इष्-त्त। १ अभिमुखसे समीपगत,
पङ्चा इत्या। २ अङ्गीकृत, स्वीकृत, मञ्जूर किया
इत्या, जो मान लिया गया हो।

अभुग्रपेतव्य, अभुग्रपेव देखो ।

असुरपेतायंक्षत्र (सं० द्वि०) अभिलषित अङ्गके सम्पा-
दनार्थं विहित, जो खाद्विष किये हुये तमाशेकी तस-
नौफ़के लिये मरझन् हो ।

अभ्युपेत्य (सं. वि.) अभि-उप-इण्-क्वप् तुमागमः ।

१ अभिगमनीय, पास जाने काबिल। (अव्य०)
ल्यप्। २ स्त्रीकार करके, समीप पहुँचकर।

अभ्रपेत्ता (सं० स्त्री०) अभि-उप-इष् भावे ल्यप्।
सेवा, खिदमत, टहल।

अभ्रपेत्ताशुश्रूषा (सं० स्त्री०) अभ्रपेत्य स्त्रीकृत्य
अशुश्रूषा सेवनाभावः। दासत्व करनेमें स्त्रीकृत होनेसे
उसका अकरण रूप विवाद विशेष, मृत्युके कर्तव्य
कर्ममें त्रुटि डालनेपर उसी कार्यकी अवहेलाके
निमित्त प्रभु और मृत्युका परस्पर विवाद, मालिक
और नौकरकी शर्तका बिगाड़।

अभ्रपेय (सं० त्रि०) अङ्गीकार किया जानेवाला,
जो मञ्जूर करने काबिल हो।

अभ्रप (सं० पु०) अभित उच्यते ऊच्यते वा अग्निना
दह्यते, अभि-उष ऊष वा बाहुलकात् कर्मणि क्त।
१ पौलिका, रोटी। उष भावे कर्मणि वा घञ्।
२ अल्प दग्ध अन्न, कुछ जला हुआ अनाज। भावे
घञ्। कलायादिका अल्प दहन, दानेकी थोड़ी
भुंजाई। अभि-उष भावे घञ्। ३ भुना हुआ अनाज,
बहुरी, भूंगड़ा। चना मटर वगैरह भूनेपर चट-
चटानेसे अभ्रप कहलाता है।

राजनिघण्टुमें अभ्रपका इस तरह गुण लिखा
गया है,—यह मधुर, गुरु, रोचक एवं बलकारी होता
और श्लेष्मा, रक्त तथा पित्तकी बढ़ाता है; फिर
अङ्गारपर भूनेसे आग्नेय, वायुवृष्टिकर, लघु और
बलकारक हो जायेगा।

अभ्रपित (सं० त्रि०) अभि-वस-क्त। सम्बन्ध रहने-
वाला, जो एकत्र वास करता हो, नजदीक कयाम
करनेवाला, जो साथ ही ठहरा हो।

अभ्रप्रीय (सं० त्रि०) अभ्रप-सम्बन्धीय, बहुरी
या भूंगड़ेसे तअल्लुक् रखनेवाला।

अभ्रपथ, अभ्रप्रीय देखो।

अभ्रपद्य (सं० अव्य०) १ प्रतिफल निकालकर, नतीजा
पैदा करके। २ कृदन्त लगाकर, तक्दौर-कलाम
मिलाके।

अभ्रपट्ट (सं० त्रि०) १ निकट आनीत, नजदीक
लाया हुआ। २ प्रतिफलित, नतीजा निकाला हुआ।

अभ्रप, अभ्रप देखो।

अभ्रपण्य, अभ्रप्रीय देखो।

अभ्रपथ, अभ्रप्रीय देखो।

अभ्रपह (सं० पु०) अभि-ऊह-घञ्। १ वितर्क,
बहस। २ कृदन्त साधन, तक्दौर-कलामका बहस
पहुँचाना। ३ बुद्धि, समझ।

अभ्रपहन्य (सं० त्रि०) अभितः ऊहनोय ऊह्यं का
अभि-ऊह-अनीयर् यत् वा। तर्कनीय, बहस करने
काबिल।

अभ्रपहितव्य, अभ्रपहन्य देखो।

अभ्रपह्य, अभ्रपहन्य देखो।

अभ्रपेत् (सं० अव्य०) समीप उपस्थित होके, पास
पहुँचकर।

अभ्रपेय (सं० क्लौ०) १ इच्छा, खाद्विश, चाह।
२ आक्रमण, हमला, धावा।

अभ्रपेण्य (सं० त्रि०) अभिलाष किया जानेवाला,
जिसकी चाह लगी रहे।

अभ्रपेय, अभ्रप देखो।

अभ्रपेयीय, अभ्रप्रीय देखो।

अभ्रपेय्य, अभ्रप्रीय देखो।

अभ्र १ (सं० क्लौ०) अक्र-अच्। अश्रक, अवरक।
अन्यान्य विवरण अव्यय शब्दमें देखो।

भारतवर्ष, सायबेरिया, पेरू, मेक्सिको, नारवे,
सुइडेन प्रभृति नाना स्थानके पार्वतीय प्रदेशमें यह उप-
धातु उत्पन्न होता और सचराचर देखनेमें कांच-जैसा
परिष्कार और श्वेतवर्ण रहता है। किसी किसी
जातिके अभ्रमें सिलिका ४६-६३ भाग, मैग्नेशिया
३०-३५ भाग एवं जल २-६ भाग मिलता है। तन्निष्ठ
अन्यान्य जातीय अभ्रमें लौह, मैङ्गेनिज्, क्रोम, फ़ोरिन्
प्रभृति पदार्थ भी विद्यमान रहते हैं। इन सब
पदार्थोंके गुणसे श्वेत, धूसर, सब्ज, लाल, धंधला, कृष्ण
वर्ण एवं क्वचित् पौतवर्ण अभ्र देखनेमें आता है। कोई
कोई अभ्र चट-चटा, कोई विलक्षण स्थितिस्थापक
एवं कितना ही अभ्र तोड़नेपर परत-परत अलग
होजानेवाला रहता है। अभ्र बहुत पतला होता है।
सर्वत्र ३-४-५ इंचसे अधिक मोटा नहीं पड़ता।

अनेक खानिमें दो हाथ व्याससे भी बड़ा-बड़ा अभ्र पाया जाता है। अणुवोचणयन्त्रकी परीक्षासे द्रव्य निर्दिष्ट करनेके लिये अभ्र यथेष्ट व्यवहृत होता है। साइबेरिया, पेरू, मेक्सिको प्रभृति स्थानमें खिड़कौपर कांचकी जगह अभ्र ही लगाया जाता है। अभ्रधातुके गुणमें शीतोष्णता बदलनेसे कुछ भी व्रतिक्रम नहीं पड़ता, परन्तु कांचके गुणमें बहुत व्रतिक्रम होता है। इसीसे लालटेनमें भी अच्छा अभ्र लगाया जा सकता है। दीवार खूब साफ, और सुन्दर दिखाई देनेसे अनेक देशके राजमिस्त्री अभ्रचूर्ण देकर मन्दिरको रंगते हैं। भारतवर्षके अजमेर आदि नाना स्थानीय अट्टालिकाकी भीतरी छतमें लाल, सज, प्रभृति अनेक प्रकारके ताम्रपर अभ्र चढ़ा है। इससे राजप्रासादका सौन्दर्य बहुत बढ़ता है। तोप वगैरहको गहरी आवाज के धक्केसे कांच तड़क जाता, परन्तु अभ्र नहीं टूटता; इसलिये यह रणपोतमें भी लगता है। इस देशके माली रास, दोल, विवाह आदि अनेक प्रकार उत्सवमें अभ्रके भाड़, ग्लास, फानूस और दूसरे भी कितने ही खिलौने बनाते हैं। अबीरके साथ कोई कोई अभ्र मिलाते हैं। वैद्य लोग अनेक रोगमें औषधके साथ अभ्र प्रयोग करते हैं।

वेद्यमतसे अभ्र चार प्रकार है। यथा,—पिनाक, दर्दुर, नाग और वज्र। कहते हैं, कि पूर्वकालमें वृत्रासुरको वध करनेके लिये इन्द्रने वज्र उत्पन्न किया था। उस वज्रसे स्फुल्लिङ्ग भर कर पर्वतोंपर जा गिरा। उसीसे अभ्रकी उत्पत्ति हुई है। इसीसे आज भी लोग कहा करते, कि मेघ गरजनसे अभ्र उत्पन्न होता है। फिर सुनते हैं कि मेघ हस्तिरूपसे सालको पत्ती खाता है। सालको पत्ती खाते समय उसके मुँहसे लार टपकती, उसी स्रव्य लारसे अभ्र उत्पन्न होता है। 'रसेश्वर'में लिखा, कि गौरीके रजसे अभ्रक धातुकी उत्पत्ति हुई है।

शास्त्रकार कहते हैं,—श्वेतवर्ण अभ्र जातिमें ब्राह्मण, रक्तवर्ण—क्षत्रिय, पीत—वैश्य और कृष्णवर्ण शूद्र रहता है। इनमें रौप्य सुकादिप्रकार के अभ्र

विहित है। रसायनमें रक्तवर्ण, सुवर्णादिमें पीतवर्ण एवं रोगादिमें कृष्णवर्ण अभ्र प्रयुक्त होता है।

आगमें डालनेसे पिनाक अभ्रका सब परत खुल जाता है। इसके खानेसे कुष्ठरोग उत्पन्न होता है। दर्दुर अभ्रको आगमें डालनेसे गोल गोल कुण्डली पड़ती और एक प्रकारका शब्द निकलता है। इस अभ्रके खानेसे मृत्यु हो सकती है। नागाभ्रको आगमें छोड़नेसे सांपकी फुसकार-जैसा शब्द होता है। इसके खानेसे भगन्दर रोग लगता है। वज्राभ्र देखनेमें काला होता है। आगमें डालनेसे यह जैसाका तैसा ही रहता, कोई भावान्तर नहीं पड़ता; इसीसे यह सब अभ्रमें श्रेष्ठ है। उत्तर पर्वतमें जो काला अभ्र होता, वही विशेष गुणकर होता है। दक्षिण पर्वतका अभ्र उतना गुणकर नहीं ठहरता। कृष्णाभ्रसे सब व्राधि और जरा मिट जातौ, और इसका सेवन करनेसे अकालमृत्यु कम होती है। किन्तु अन्यान्य धातुकी तरह बिना शोधित किये अभ्र भी सेवन न करना चाहिये। जिस पार्वतीय प्रदेश या पथरीले स्थानमें अभ्रकी खानि होती, वहांका जल पीना उचित नहीं; पीनेसे अनेक प्रकारका उत्काट रोग लग जाता है।

अभ्र शोधनेकी प्रणाली—पहले कृष्णवर्ण अभ्रको आगमें जलाकर गायका कच्चा दूध छोड़ देते हैं। इस प्रक्रियाको कोई कोई एकबार और कोई कोई पांच सात बार करते हैं। फिर अभ्रको अच्छी तरह धोकर उसके सब तह खोल डालते हैं। सब तह अलग अलग हो जानेसे उसे कागजों नीबू और चोलाई शाकके रसमें आठ दिन तक भिगो रखते हैं।

उसके बाद एक गुण उक्त शोधित अभ्र और उसका चतुर्थांश शाठी चावल एक साथ कम्बलसे लपेटकर तीन दिन जलमें भिगो रखना चाहिये। फिर उसको हाथसे मलनेपर विशुद्ध अभ्रकणा कम्बलके छेदसे बाहर गिर पड़ेगी। उसे ही संग्रह कर लेते और धान्याभ्र कहते हैं।

धान्याभ्रको मन्दारवाले आटेके साथ पथरीले खलमें मलकर सड़क के टिकिया बना लेते हैं। फिर

टिकियेको मन्दारके पत्तेमें लपेटकर गजपुटसे पकाना चाहिये। इस तरह सातबार मन्दारके आटेसे मर्दन और सात बार पकाकर अन्तमें वटकी बीके रसमें फिर मर्दन करना पड़ेगा। पीछे तीन बार पहले ही की तरह गजपुटसे पकाते हैं। इस तरह पक जानेपर यह जारित अभ्र कहा जाता है।

जारित अभ्र और उसीके बराबर गायके घों दोनोको एक साथ मिला कर लौह-पात्रमें पकाना चाहिये। जब घों जल जाय, तब पात्रको उतार ले। इसे अमृतीकरण कहते हैं। इस प्रकारसे प्रस्तुत किया हुआ अभ्र कषाय, मधुर, शीतवीर्य, आयुष्कर एवं धातुपोषक होता और त्रिदोष, व्रण, मेह, कुष्ठ, झींझा, उदरी, ग्रन्थि रोग तथा कृमिको नष्ट करता है। मात्रा ३-६ रत्ती रहेगी। इसे मधुके साथ सेवन करना पड़ता है। वेदलोग जारित अभ्रसे नाना प्रकारके औषध प्रस्तुत करते हैं।

मिष्टर जी वाट अपनी "Dictionary of the Economic Products of India" में लिखते हैं :—

अभ्र चार प्रकारका होता है। यथा—Muscovite (लाल), Boitite (काला), Lepidolite (सीसेके रङ्गका) और Lepidomelane।

हिन्दुस्थानके अनेक स्थानोंमें अभ्रककी खानि हैं, जिनका व्यवहारयोग्य अभ्रक थोड़े ही स्थलोंमें पाया जाता है। यह प्रायः बेटङ्गे पत्थरोंके दर्रेमें मिलता है। मन्द्राजवाले विजगापट्टम जिलेके अन्तर्गत कोलरमें जितने बड़े बड़े पत्र कामके योग्य चाहिये, उतने ही बड़े बड़े मिल जाते हैं; परन्तु वह अच्छे नहीं होते। क्योंकि रुपयेके प्रायः बारह सेर मिलते हैं। प्रधानतः इसकी भामदनी विहारके हजारीबाग जिलेसे होती है। वहां घम्बी, कुदरमा, धूब और जामताराकी खानोंसे अभ्रक निकाला जाता है। पास ही गया और सुंगेर जिलेके रजाऊमें भी नौ इंच लम्बे और उतने ही चौड़े अभ्रके पत्र मिलते हैं। हजारीबाग जिलेके उत्तरी अंशमें एक फुट या उससे अधिक आसवाले मसकोवाइट (Muscovite) के पत्र निकलते हैं। मैलेट कहता है, मैंने २०×१० और २२×१२

इंचके पत्र भी देखे; फिर खानि खोदनेवालोंको कभी कभी इससे भी बहुत बड़े पत्र मिले हैं। इस जिलेका अभ्रक धूआं-जैसे भूरे या लाल-भूरे रङ्गका होता है। यह सामान्य मोटाईके पत्रांसे मिलता और बहुत स्वच्छ रहता है। व्यापारका यही लाल अभ्रक है। जब-तब यह पीले या जैतून-जैसे सब्ज रङ्गका भी पाया जाता है। मैलेटके कथनानुसार इसी जिलेमें कभी कभी Boitite और सीसे-जैसे भूरे या गहरे नीले रङ्गका Lepidolite अभ्रक मिलता है। मडिसूरमें मसकोवाइट (Muscovite) अभ्रके एक एक फुट लम्बे पत्र निकलते हैं। वह चित्रकारोंके काममें आते हैं। पश्चिमघाट पर्वतश्रेणी और उसकी पूर्व ओरवाली जमीनमें लालटेन बनाने और खिड़कियोंमें लगाने लायक बड़े बड़े पत्र मिलते हैं। मिष्टर ब्राउथका कथन है, कि बाइनादकी रङ्ग बदनेवाली चट्टानोंके दर्रेमें भी बड़े बड़े पत्र पाये जाते हैं। इरवाइनका कहना है, कि राजपूतानेमें बड़े बड़े पत्र खानिसे निकाले जा सकते हैं। मैलेटका मत है, कि टोंकके उत्तर-पूर्व चतुर्भुज पहाड़ी और जयपुरमें भी अच्छे कदके पत्र मिलते हैं, परन्तु वह हजारीबागके अभ्रक-जैसे अच्छे नहीं होते। सतलज नदीवाली बाङ्गू पुलके पास पत्थरके दर्रेसे भी बड़े बड़े टुकड़े निकलते हैं। मि० वेडेन पौयेल लिखते हैं, कि गुड़गांवमें बहुत अच्छे और बड़े बड़े पत्र मिले थे, जो सन् १८६४ ई० को लाहोरकी प्रदर्शिनौमें देखाये गये।

अभ्रकका चूर्ण कपड़ा छापनेके काममें व्यवहार किया जाता है, फिर धोबीलोग चमक देनेके लिये उसे कपड़ेमें भी लगा देते हैं।

संस्कृत लेखकोंके मतानुसार अभ्रक चार प्रकारका होता है। यथा—सफेद, लाल, पोला और काला। सफेद लालटेन बनानेके काम और काला औषधमें व्यवहार किया जाता है। व्यवहारमें लानेसे पहले इसे शोध लेते हैं। पहले गर्म करके यह दूधमें भिगोया जाता है। उसके बाद तब अलग अलग कर लेते, फिर चौलाई शाकके रस और

काष्ठिकमें आठ दिन तक उन्हें भिगो रखते हैं। पीछे उन्हें मोटे कपड़ेके टुकड़ोंमें रख और थोड़े से धान मिला कर मलते हैं। मलनेसे कपड़ेके छेदोंसे अभ्रकका चूर्ण नीचे गिर पड़ता है। उसे उठा कर इकट्ठा कर लेते हैं। यह धान्याभ्रक कहा जाता है। इस धान्याभ्रकको गोमूत्रमें मिला एक मट्टोके बरतनमें रख उसका मुंह बन्द कर देते हैं। फिर उसे सौ बार आगमें फंकाते हैं। कोई कोई सहस्र बार भी फंकाते हैं। इसे सहस्रपुटित अभ्र कहते हैं। यह आठ रूपये तोला बिकता है। इस अभ्रका रंग ईंटके चूर-जैसा लाल होता, खानेमें नमकीन और सांघा मालूम देता है। यह उच्छेजक और पुष्टिकारक होता है। यह लोहेके साथ रक्ताल्पता, कंवल, संघर्षणी, अतोसार, आंव, पुराने ज्वर, प्लीहा, मूत्ररोग और नामर्दी आदि रोगोंमें काम आता है। लोहेके साथ देनेसे इसका गुण बढ़ जाता है। मात्रा इसे १२ ग्रैन तक रहेगी। चोना लोग इसे जीवनवर्द्धक समझते हैं।

अभ्रककी लालटेन, दरवाजे, और खिड़कियां बनाई जाती हैं। यह चित्रोंमें चमक देनेके काम आता और दर्पणोंके पीछे लगाया जाता है। हिन्दु-स्थानमें यह मन्दिर, राजभवन, भण्डे और कपड़े आदिके सजानेमें लगेगा। अभ्रकका चूर्ण मट्टोके बरतनों और साधारण कपड़ोंमें भी दिया जाता है। चित्रकार इसे चित्रकारोंके काममें लाते हैं।

अभ्रंलिह (सं० पु०) अभ्रं गगनं लेदि स्पृशति, अभ्रं-लिह-खश्-मुम्। १ वायु, हवा। (त्रि०) २ अतिशय उच्च, गगनस्पर्शी, निहायत ऊंचा, आसमानको चूमनेवाला।

अभ्रक, अब देखो।

अभ्रकभस्मन् (सं० स्त्री०) अवरककी खाक।

अभ्रकसत्त्व (सं० पु०) ईस्यात, लोहा।

अभ्रहृष, अब्रहृष देखो।

अभ्रज, अब्रज देखो।

अभ्रनाग (सं० पु०) अभ्रस्य मेघस्य नागः इक्षी,

इ-तत्। ऐरावत, इन्द्रका हाथी।

अभ्रनामक (सं० पु०) सुस्ता, मोथा।

अभ्रपटल (सं०-पु०-स्त्री०) अभ्रक, अवरक।

अभ्रपथ (सं० पु०) अभ्र गगने पन्था, ७-यत्।

गगनमार्ग, विमान, शून्यपथ, आसमानको राह।

अभ्रपिशाच, अब्रपिशाच देखो।

अभ्रपिशाचक, अब्रपिशाच देखो।

अभ्रपुष्प, अब्रपुष्प देखो।

अभ्रप्रुष् (वे० स्त्री०) बादलको छोट, बूँदाबांदो।

अभ्रम (सं० पु०) भ्रमा भ्रमणं मिथ्याज्ञानञ्च, अभाव नञ्-तत्। १ भ्रमका अभाव, भ्रमण न लगना, शककी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति भ्रमो यस्य यत्र वा, बहुव्री०। २ अभ्रान्त, भ्रमशून्य, न भूलने-वाला, जिसमें कोई शक न रहे।

अभ्रमती (सं० स्त्री०) आनर्त्त या काठिवारप्रान्तकी एक प्राचीन नदी। (स्तान्दे नागरखण्ड ११८४४)

अभ्रमांसी (सं० स्त्री०) अभ्रमिव जटाया मांसो यस्य, बहुव्री०। आकाशमांसीलता, जटामांसी।

अभ्रमातङ्ग, अब्रमातङ्ग देखो।

अभ्रमाला (सं० स्त्री०) अभ्राणां मेघानां माला श्रेणो, इ-तत्। मेघसमूह, मेघश्रेणो, घटा, बादलका जमघट।

अभ्ररोहस्, अब्ररोहस् देखो।

अभ्रलित (सं० त्रि०) मेघसे आच्छादित, बादलसे भरा हुआ।

अभ्रलिप्ती (सं० स्त्री०) अभ्रेण लिप्तम्, स्त्रीत्वात् ङीप्; इ-तत्। अल्प मेघयुक्त आकाश, जिस आकाशमें थोड़ा बादल रहे।

अभ्रवटिका (सं० स्त्री०) अवरककी गोली। यह रसविशेष ज्वरातिसार रोगमें देना और मटर-बराबर गोली रखना चाहिये। इसके बनानेका विधि यह है,—

‘अथ सूतस्य शुद्धस्य गन्धकसामुकास्य च।

प्रत्येकं कर्षंमेकानु यास्त्रां रसगुणैर्विवा।

ततः कज्जलिका कृत्वा व्योषचूर्णं प्रदापयेत्।

केशराजस्य शङ्खस्य निगुणश्राविकस्य च।

यीशसुन्दरकसाय जयन्त्याः खरसं तथा।

सप्तशतैः कर्षैः कृतं यथागन्धस्य च।

चेतापराजितायाश्च क्षरसं पणंसम्भवम् ।
दापयेत्तत्तुल्यं विधिभिः कुशलो भिषक् ।
रसतुल्यं प्रदातव्यं चूर्णं सरिचसम्भवम् ।
देयं रसाध्मानेन चूर्णं टङ्गणसम्भवम् ॥” (रसरत्नाकर)

ग्रहणोपर चलनेवाली अभ्रवटिका इसतरह बनेगी,—

“पक्वे टकाहरिद्राभ्यामगारधूमकेन च ।
शोधितं पारदश्चैव कर्षाधं तुलया घृतम् ॥
शङ्कराजरसेः शुद्धं गन्धकं रससंयुतम् ।
हाम्यां कण्डलिकां कृत्वा भावयेत्तु मेघजैः ॥
सिन्दुवारदजरसे मण्डूकपर्णिकारसे ।
केशराजरसे चैव शीघ्रसुन्दरजे रसे ॥
रसेऽपराजितायाश्च सोमराजौरसे तथा ।
रक्तचित्रकपलोत्थे रसे च परिभावितम् ।
रसमानसमानेन कायायां शोधयेद्भिषक् ॥” (राजनिषण्ड)

अभ्रवर्ष (सं० पु०) अभ्रैर्मेघैर्घृथ्यते, वृष कर्मणि घञ् । १ मेघ कर्तृक सिध्यमान स्थान, जो जगह बादलसे सीँची जाती हो । भावे घञ् । २ मेघवर्षण, बादलका बरसना ।

अभ्रवाटक (सं० पु०) अभ्रातक वृक्ष, अमड़ा ।
अभ्रवाटिक (सं० पु०) अभ्रेण शून्येन वाटो वेष्टनं यस्य, बहुव्री० । आभ्रातक वृक्ष, अमड़ा । अमड़ेकी पत्ती भड़ जानेसे वृक्ष केवल शून्य द्वारा वेष्टित रहता, इसीसे इसका नाम अभ्रवाटिक पड़ा है ।

अभ्रवाटिका (सं० स्त्री०) अमवाटिक देखो ।
अभ्रशिरस् (सं० स्त्री०) आकाशका बना हुआ शिर, जो सर आसमानसे बना हो ।

अभ्रसार (सं० पु०) भीमसेनौ कर्पूर, काफूर ।
अभ्राज (सं० त्रि०) न भ्राजते, भ्राज-अच्; नञ्-तत् । अनुज्वल, मैला, जो अच्छा न मालूम हो ।
अभ्राता (सं० पु०) अभाट देखो ।
अभ्राट (सं० त्रि०) नास्ति भ्राता यस्य, बहुव्री० । भ्राटशून्य, जिसके भाई न रहे ।

अभ्राटक, अभाट देखो ।

अभ्राटमत्, अभाट देखो ।

अभ्राटमती (सं० स्त्री०) अभाट देखो ।

अभ्राटमान् (सं० पु०) अभाट देखो ।

अभ्राटव्य (सं० त्रि०) नास्ति भ्राटव्यः भ्रातृष्युत्रः शतृवा यस्य, नञ्-बहुव्री० । १ भ्रातृष्युत्रहीन, जिसके भतौजा न रहे । २ शत्रुरहित, जिसके दुश्मन् न रहे ।

अभ्रात्री (सं० स्त्री०) अभाट देखो ।

अभ्रान्त (सं० त्रि०) अभ्रम-क्त, ततो नञ्-तत् । भ्रान्तिशून्य, प्रमादरहित, न घबराया हुआ, जो गलतीमें न हो, साफ, ठहरा हुआ ।

अभ्रान्तबुद्धि (सं० त्रि०) विशुद्ध प्रज्ञा-सम्पन्न, जिसकी अक्ल, बिगड़ी न रहे ।

अभ्रान्ति (सं० स्त्री०) अभ्रम-क्तिन्, नञ्-तत् । १ भ्रान्तिका अभाव, प्रमादका न पड़ना, भ्रमणकी शून्यता, घबराहट या गलतीका न होना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ भ्रान्तिशून्य, जो घबराहट या गलतीमें न पड़ता हो ।

अभ्रावकाश (सं० पु०) अभ्र आकाशमेव अवकाशः अवसरः । मेघका शरण, बादलकी पनाह ।

अभ्रावकाशिक (सं० त्रि०) अभ्रावकाशः अस्यस्य, इति स्वार्थे कन् वा । केवल आकाशावरणयुक्त, जो आकाश भिन्न अन्य आवरणसे विशिष्ट न हो, बारिशकी-तरीं खुला हुआ ।

अभ्रावकाशिन्, अभावकाशिक देखो ।

अभ्राह्म (सं० स्त्री०) कुङ्कुम, केसर ।

अभ्रि, अर्ध देखो ।

अभ्रिखात (सं० त्रि०) लकड़ीके फावड़ेसे खोदा हुआ ।

अभ्रित (सं० त्रि०) मेघाच्छन्न, बादलसे भरा हुआ ।

अभ्रिय (सं० त्रि०) १ मेघ-सम्बन्धीय, बादलसे पैदा हुआ । (पु०) २ विद्युत्, बिजली । (स्त्री०) ३ सौदामिनौयुक्त मेघसमूह, जिस घटामें बिजली भरी रहे ।

अभ्रूष (सं० पु०) तालुरोगविशेष, तालूकी कोई बीमारी । इसमें स्तब्धलोहित एवं शोणितोत्थ शोथ, ज्वरकी-तौत्र वेदनासे युक्त रहता है ।

अभ्रेष (सं० पु०) अभ्रेष चलने घञ्, ततो नञ्-तत् । १ शुकता, शीथता, चमता, पात्रता, उपयोगिता,

तेलो, व्याध, नपुंसक, संपेरे प्रभृतिका देख पड़ना विस्तर अमाङ्गलिक लक्षण माना गया है।

अमङ्गल्य (सं० त्रि०) मङ्गलाय हितं यत्, नञ्-तत्।

अमङ्गलजनक, अशुभ, बदशिगून, बुरा, खराब।

अमचूर (हिं० पु०) सूखे आमकी बुकनौ, जो अमहर पीस ली गयी हो।

अमजद अलीशाह—मुहम्मद-अली शाहके लड़के। सन् १८४२ ई० की १७ वीं मईको यह अपने बापकी जगह लखनऊके राजसिंहासनपर बैठे और अवधके नवाब बने थे। उसी उत्सवके उपलक्ष्यमें इन्हें सूरिया शाहकी उपाधि मिली। सन् १८४७ ई० की १६ वीं मार्चको इनकी मृत्यु हुयी थी। फिर इनके लड़के वाजिद-अली शाहकी राज्यका भार दिया गया। सन् १८५६ ई० की ७ वीं फरवरीको अंगरेज-सरकारने वाजिद-अली शाहसे लखनऊकी नवाबी छीन अपने राज्यमें मिला ली थी।

अमजेर—गुजरातका एक राज्य। सन् १८५७ ई० की मजमें सिपाहियोंके बलवा करनेपर यहांके राजाने भोपावारके पोलिटिकल एजण्ट कप्तान हचिनसनपर आक्रमण किया था।

अमण्ड (सं० त्रि०) मन-ड; नास्ति मण्डो यस्य, बहुव्री०। १ मण्डरहित, माड़से खाली, जिसमें माड़ न रहे। २ भूषणहीन, बेसाज। (पु०) ३ एरण्ड-वृक्ष, रेंडका पेड़।

अमण्डित (सं० त्रि०) भूषित न किया हुआ, जो संवारा न गया हो।

अमड़ा (हिं० पु०) आम्रातक, अमारी। (Spondias mangifera) यह वृक्ष छोटा और पतझरा होता है। इसे भारतवर्षके इस सिरेसे उस सिरेतक वन्य अवस्थामें पायें या लगायेंगे। सिन्धुनदसे पूर्व एवं दक्षिण, मलाक्का और सिंहल तक इसका अधिक प्रसार देखते हैं। हिमालय पर यह ५००० फीटसे ऊंचे न ऊगेगा। प्रकृतिने इसे अनयनवृत्त एशियामें विभाजित किया है।

इसके बकलेसे मृदु-निःसार निर्यास टपकता, जो कुछ-कुछ अरबी-निर्यास जैसा होता है, किन्तु

रङ्गमें ज्यादा काला निकलता है। वह वृक्षके लटकते हुये कुछ-कुछ पौले या लाल-जैसे भूरे रङ्गवाले भागमें रहे और उसका चिकना-चमकीला तल चमका करेगा। अधिक जलके साथ यह लसदार गोंद बनाता, जो सीसेके नमकसे जम जाता; फिर बुनियादी नमक और लाहेकी हरी भापसे चिपचिपाने लगता है। किन्तु इसमें सोहागेका कोई काम नहीं देखते।

इसके फलवाले गूदेको संस्कृत लेखकोंने खट्टा, कसेला और पित्त-सम्बन्धय अजीर्ण रोगमें लाभदायक बताया है। इसीसे कभी-कभी अमड़ेको पित्तवृक्ष कह देते हैं। हमलोग खटाईके लिये इसे तरकारीमें डालें और इसका अचार बनायेंगे। पत्ता और बकला कसेला-खुशबूदार रहता और पेचिशकी दवाके काम आता है। इसका गोंद शामक होगा। पत्तीका अर्क कहीं-कहीं कानमें दर्द होनेसे छोड़ा जाता है। ब्रह्मदेशकी शान जाति इस फलको जहरीले वाणसे हुये घावके लिये जहिरमोहरा समझती और आवश्यकता आनेसे हरा या सूखा हो खा लेती है।

इसका फल अक्तोबरमें पके और सबसे बड़ा होने-पर हंसके अण्डे-जैसा निकलेगा। रङ्गमें वह खूब जैतूनी-हरा रहता और पौला-काला धब्बा पड़ जाता है। उसमें कोई गन्ध नहीं होता। बकलेके पासका भाग बहुत खट्टा लगता, किन्तु उसे निकाल डालनेसे गुठलीके पास फल मीठा और खाने लायक आता है। पकने पर उसे कभी-कभी सूखा भी खाते, किन्तु प्रायः तरकारीमें खटाई देनेको हरा हो छोड़ देते हैं। तेल, नमक और लाल मिर्च मिलाके फलकी चटनी भी बनायेंगे। गो और हिरण फलको बड़े चावसे खाते हैं।

इसको लकड़ी मुलायम और कुछ-कुछ भूरी होती है। प्रति घन फूटमें लकड़ीका वजन कोई छत्तोस सेर रहेगा। लकड़ी सिर्फ जलानेके ही काम आती है।

अमत् (सं० पु०) अम-अतच्। १ रोग, बीमारी। २ मृत्यु, मीत। ३ काल, समय। (त्रि०) मन-क्त,

नञ्-तत् । ४ असम्मत, अज्ञात, मालूम न होनेवाला, जो दमागसे समझ न पड़ता हो ।

अमृतपरार्थ (सं० त्रि०) प्रधान विषयसे असम्बद्ध, खास मज्जमूनसे लगाव न रखनेवाला ।

अमति (सं० पु०) अम-अति । १ काल, वक्त । २ चन्द्र, चांद । ३ दण्ड, सजा । (स्त्री०) ४ दौति, चमक । ५ रूप, सूरत । ६ ज्ञानाभाव, वेवकफ़ी । ७ अप्रशस्तबुद्धि, ओछी समझ । (त्रि०) ८ दुष्ट, बदमाश । ९ ज्ञानहीन, बेसमझ । १० दरिद्र, गरीब । अमतिपूर्व (सं० त्रि०) अचेतन, अज्ञात, बेहोश, बेइरादा, जिसे पहलेका खयाल न रहे ।

अमतीवन् (सं० त्रि०) अमतिरप्रशस्ता बुद्धिस्तय वनुते, वन-क्विप् दीर्घः । १ अप्रशस्त बुद्धियुक्त, ओछी समझवाला । २ दरिद्र, निर्धन, गरीब, जिसके पास दौलत न रहे ।

अमत्त (सं० त्रि०) न मत्तम्, नञ्-तत् । अचीव, निर्मद, बाहोश, जो मतवाला न हो ।

अमत्त (सं० क्लो०) १ भोजनपात्र, भाजन, बरतन । २ बल, ताकत । (त्रि०) ३ अहिंसित, ताकतवर । ४ अपरिमित, हृदसे ज्यादा ।

अमत्तिन् (सं० त्रि०) १ शक्तिशाली, बलवान, ताकतवर, जोरदार । २ भाजन लिये हुआ, जिसके पास बरतन मौजूद रहे ।

अमत्सर (सं० पु०) मद-सरन्, ततो नञ्-तत् । १ अन्यके मङ्गलमें हिंसाका अभाव, दूसरेकी भलाईमें हसदका न करना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ मात्सर्यरहित, अन्यके प्रति द्वेषशून्य, हसद न रखनेवाला, फ़याज, जो किसीसे डाह न करता हो ।

अमद (सं० त्रि०) विषय, निरानन्द, वैचैन, गमजदह, सच्चीदह, जो उदास रहता हो ।

अमदन (अ०-क्रि०-वि०) इच्छापूर्वक, सरासर, जान-बूझकर ।

अमधव्य (सं० त्रि०) सोममाधुर्यके अयोग्य, जो सोमकी मिठाईके काबिल न हो ।

अमधुपर्क (सं० त्रि०) मधुपर्कके अयोग्य, जो शहद, दूध और घी मिलाकर दिया जानेवाला न हो ।

अमधुर (सं० त्रि०) १ कटु, कड़वा, जो मीठा न हो । (पु०) २ वंशीके छः दोषमें एक दोष ।

अमध्यम (सं० त्रि०) अमध्यस्थ, बीचमें न पड़नेवाला । अमध्यस्थ (सं० त्रि०) असामान्य, असमबुद्धि, जो बेखबर न हो ।

अमध्यस्थधर्मिणो (सं० स्त्री०) चेतनजड़ोभय धर्मवर्तिनौ न होनेवाली, जो जानदार और बेजान दोनों सिफतके बीच न रहती हो ।

अमन (अ० पु०) आनन्द, शान्ति, चैन, बचाव ।

अमननौय, अमनन्य देखो ।

अमनस् (सं० त्रि०) नास्ति प्रशस्तत्वात् कार्यचमं मनो यस्य । १ कार्यचम मनोहीन, काम करने लायक तबोयत न रखनेवाला । २ मनोवृत्तिशून्य, जिसका मन मर जाये । (क्लो०) ३ जो इन्द्रिय इच्छाका न हो, ज्ञानका अभाव, जो औजार अक्लका न हो ।

अमनस्क (सं० त्रि०) १ इच्छाके इन्द्रियसे रहित, जिसे ज्ञान न रहे, खाहिशका आला न रखनेवाला, जिसे मालूम न पड़े । २ अचेतन, बेहोश ।

अमनस्त्रिन् (सं० त्रि०) अज्ञान, अमनुष्यधर्मा, बेसमझ, आदमखोर-जैसा ।

अमनाक् (सं० अव्य०) अधिक, अन्यून रूपसे, ज्यादा, बहुत, खूब ।

अमनि (सं० स्त्री०) १ गति, चाल । 'अमनिर्गतिः' (उज्ज्वलदत्त) २ पथ, राह ।

अमनिया (हिं० वि०) विशुद्ध, स्वच्छ, पवित्र, پاک, साफ़, जो कूबा न गया हो ।

अमनुष्य (सं० पु०) अभावे नञ्-तत् । १ मनुष्य भिन्न पशु, देवता, वृक्षादि, आदमीको छोड़ जानवर, फ़रिश्ता, दरख्त वगैरह । (त्रि०) अप्राशस्त्ये नञ्-तत् । २ मनुष्योचित गुणशून्य, आदमीके काबिल सिफत न रखनेवाला, जो इन्सान न हो ।

अमनुष्यता (सं० स्त्री०) क्लीबत्व, पौरुषहीनता, पुरुषानर्हता, नामरदानगी, जनानापन ।

अमनुष्यनिषेवित (सं० त्रि०) मनुष्यशून्य, जहाँ मनुष्य न रहे, आदमीसे खाला, जिस जगह आदमी न लसे ।

अमनैक (हिं० पु०) कृषकविशेष, कोई खास काश्त-
कार। यह अवधमें रहता और मालगुजारी देनेमें
अपना खास हक रखता है। २ सरदार, अधिकार-
प्राप्त व्यक्ति। (वि०) ३ साहसी, जबरदस्त।

अमनोगत (सं० त्रि०) न मनोगतम्, नञ्-तत्।
अनभिप्रेत, खयाल न किया हुआ, नामालूम।

अमनोन्न (सं० त्रि०) चित्तको अप्रिय, अनिष्ट,
अनौषित, दिलको खुश न आनेवाला, नागवार,
नापसन्द।

अमनोनीत (सं० त्रि०) न मनोनीतम्, नञ्-तत्।
१ जो मनःपूत न हो, खराब-खस्ता, मरदूद, गया-
गुजरा। २ अनौषित, अनभिप्रेत, नापसन्द।

अमनोयोग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ मनो-
योगका अभाव, अवधारणका न रहना, कमतवज्जोहौ।
(वि०) नञ्-बहुव्री०। २ अन्यमनस्क, मनोयोग-
शून्य, दिल न लगानेवाला, जिसका खयाल दूसरी
जगह लगा रहै।

अमनोयोगिन् (सं० त्रि०) अनवधान, निरपेक्ष,
अनासक्त, उपेक्षक, मन्दादर, प्रमत्त, प्रमादिन्, अन-
वहित, अनिर्विष्टचित्त, शून्यहृदय, बेपरवा।

अमनोरम्य, अमनोहर देखो।

अमनोहर (सं० त्रि०) अनभिप्रेत, अनौषित, नाग-
वार, नापसन्द, जो दिलको न खींचता हो।

अमन्तव्य (सं० त्रि०) ध्यान न दिया जानेवाला,
जिसपर खयाल न दौड़े।

अमन्तु (सं० त्रि०) मन-तुन्, ततो नञ्-तत्।
१ अज्ञान, नासमझ। २ निरपराध, बेगुनाह।

अमन्त्र (सं० त्रि०) नास्ति मन्त्रो वेदपाठो यस्मिन्
कर्मणि, बहुव्री०। १ वेदपाठशून्य, जिसमें वेदमन्त्र
न पढ़ा जाय। २ वेदमन्त्र न जाननेवाला, जिसे वेद
पढ़नेका अधिकार न रहे। (पु०) ३ अवैदिक मन्त्र,
मन्त्रशून्य कर्मादि।

अमन्त्रक, अमन्त्र देखो।

अमन्त्रविद् (सं० त्रि०) वेदविधि न जाननेवाला,
जिसे वेदका सूत्र मालूम न रहे।

अमन्त्रिका (सं० स्त्री०) अमन्त्र देखो।

अमन्द (सं० त्रि०) १ पट, होशियार। २ उत्कृष्ट,
बढ़िया। ३ तीव्र, चालाक, जो सुस्त न हो। ४ अधिक,
प्रधान, ज़रूरी, ज्यादा। (पु०) ५ वृक्षविशेष, किसी
दरखतका नाम।

अमन्यमान (सं० त्रि०) १ न माननेवाला, जो
इज्जत न करता हो। २ आशा न रखते हुआ, जिसे
आगाहो न रहे।

अमन्युत (सं० त्रि०) गुप्त क्रोध न रखनेवाला, जो
किसी शख्ससे डाह न करता हो।

अमम (सं० पु०) १ भावी उत्सर्पिणीके द्वादश जिन-
विशेष। (त्रि०) नास्ति मम इत्यभिमानः गृहादिषु
यस्य, बहुव्री०। २ ममताशून्य, गृहादिके प्रति माया
न रखनेवाला, खुदसनायीसे खाली, जिसे बिलकुल
दुनियावो मुहब्बत न रहे।

अममता (सं० स्त्री०) निरीहता, निःसङ्गता, बेतमयी,
बेगूरजी, बेपरवायी।

अममत्व (सं० क्लौ०) अममता देखो।

अमस्त्रि (वै० त्रि०) अस्त्र, अमर, जो कभी मिटता
न हो।

अमर (सं० पु०) मृ-अच्, ततो नञ्-तत्। १ देवता,
फ़रिश्ता। २ कुलिशवृक्ष, सेहड़। ३ अस्थिसंहार
वृक्ष, हरजोड़। ४ पारद, पारा। ५ सनोवर।
६ मरुदगुण विशेष, उच्चासमें एक पवन। ७ विवाह-
जोटक नक्षत्रविशेष। इसमें अश्विनी, मृगशिरा,
पुनर्वसु, पुष्या, हस्ता, स्वाती, अनुराधा, अवणा और
रेवती नक्षत्र रहता है। ८ सुवर्ण, सोना। ९ रुद्राक्ष।
१० हस्ती, हाथी। ११ अमरकोष अभिधानकी रच-
यिता। लोग इन्हें अमरसिंह कहते हैं। यह
बौद्धधर्मावलम्बी रहे और विक्रमादित्यकी सभाको
सुशोभित करते थे। १२ गिरिविशेष, किसी पहाड़का
नाम। १३ सोमगिरिके अन्तर्गत सरोवरविशेष, सोम
पहाड़का कोई तालाब। इसे देवसरोवर भी कहते हैं।

१४ उकार अक्षरका गूढ़ अर्थ। १५ तैंतीस संख्या।
१६ अमरकोष। १७ बम्बईके कच्छ जिलेका स्थान
विशेष। यह भुजसे कोई चौबीस कोस पश्चिम अवस्थित
है। प्रति वर्ष यहां भुजनोंके समीर कारवासिमकी

स्मृतिरक्षाको मेला लगता है। सन् ई०के १४वें शताब्द वह पश्चिमभारतमें भ्रमण करते समय कच्छमें राज्य करनेवाले सम्भा राजपूतों द्वारा मार डाले गये थे। चैत्र कृष्णपक्षमें जो पहला सोमवार पड़ता, उससे मेला शुरू होता और पांच दिनतक रहता है। मन्दरेके पीर शाह मुराद मेलेका प्रबन्ध करते हैं। प्रति वर्ष हज्जारी मुसलमान और नीच जातिके हिन्दू यात्री इस जगह आते और रुपया-पैसा, नारियल, कपड़ा, बकरा, भेड़, मिठाई तथा छोहारा कन्नपर चढ़ाते हैं। यहां चावल, छोहारे, रङ्गीन कपड़े, बैल, जूट और मिठाईका रोजगार चलता है।

अमरकणा (सं० स्त्री०) १ गजपिप्पली, बड़ी पीपल। अमरकण्टक—पर्वतविशेष, एक पहाड़। यह पर्वत बुंदेलखण्डके रोवा राज्यमें समुद्रतलसे ३४८३ फ़ीट ऊँचे अवस्थित है। इससे शोण और नर्मदा नदी निकली है। यह विन्ध्याचलके सातपुरा पर्वतका एक भाग है और इसकी चौटोपर सुविस्तृत अधित्यका पड़ो है। यहां नर्मदा नदीकी चारो ओर सुन्दर मन्दिर बने और कितने ही निर्भर पानीका फौवारा छोड़ा करते हैं। अमरकण्टक हिन्दुओंका एक तीर्थ है और प्रति वर्ष महादेवका मेला लगता है।

अमरकण्टिका (सं० स्त्री०) शतावरी, सतावर।

अमरकन्द (सं० पु०) कन्दविशेष।

अमरकण्ड—महिम्नस्तोत्रके टीकाकार।

अमरका, आमरका—बम्बईके सूरत जिलेकी कोई पुरानी छावनी। तैकूटक महाराज दृढ़सेनने यहां विजय पाकर जो दानपत्र लिखा, उसमें अज्ञात संवत् २०७ पड़ा है।

अमरकान्त—संस्कृत एकाक्षर-नाममालाके रचयिता।

अमरकालिक (सं० पु०) वृश्चिकाली, बढन्ता।

अमरकाष्ठ (सं० स्त्री०) देवकाष्ठ, देवदार।

अमरकुसुम (सं० स्त्री०) लवङ्ग, लौंग।

अमरकोट—सिन्धुनदके परपारका स्थान विशेष। पहले यह किसी राजपूतराज्यकी राजधानी रहा। इसी स्थानमें प्रसिद्ध बादशाह अकबरका जन्म हुआ था।

अमरकोष (सं० पु०) अमरसिंहप्रणीत अभिधान-विशेष। अमरसिंह देखो।

अमरख (हिं०) अमर्ष देखो।

अमरखो (हिं० वि०) क्रोधी, गुस्सावर, बुरा माननेवाला।

अमरगङ्गा—बम्बईके धारवाड़ जिलेवाले देवगिरि स्थानके कोई यादव-नृपति। यह सेवनके पौत्र, मल्लुगीके पुत्र और कर्णके भ्राता रहे। कर्ण-पुत्र भिल्लम महाराज सन् ११८१ ई०में देवगिरिके सिंहासन पर प्रतिष्ठित थे।

अमरगढ़ (अमरार गढ़)—वर्तमानके गोपभूम प्रान्तका एक प्राचीन नगर। पहले यह सदगोपवंशके नृपति महेन्द्रनाथ महाराजकी राजधानी रहा। इसकी चारो ओर सुदीर्घ दुर्गभेण्वी बनी थी। आज भी उसका भग्नावशेष देखनेमें आता है।

अमरगण (सं० पु०) देवतासमाज, फरिश्तोंका मजमा।

अमरगोल—बम्बईवाले धारवाड़ जिलेके डुबली परगनेका कोई गांव। यहां जो पत्र-लेख मिला था, उसमें महामण्डलेश्वर जयकृष्ण द्वितीयका उल्लेख रहा। उन्होंने सन् १११८ ई० से ११२५ ई० तक राज्य किया था। इस ग्रामके मध्य शङ्करलिङ्गका मन्दिर बना, जो कुछ-कुछ गिरने लगा है। मन्दिरकी दीवारों और खम्भोंपर देवदेवीकी मूर्ति खचित है।

अमरचन्द्र—१ परिमलनामक संस्कृतव्याकरणरचयिता। २ वायडगच्छीय जिनदत्तसूरिके शिष्य। इन्होंने कला-कलाप, काव्यकल्पलता, छन्दोरत्नावली, बालभारत प्रभृति संस्कृत ग्रन्थ बनाये थे। ३ विवेकविलास-रचयिता। यह सन् ई०के १३वें शताब्दमें विद्यमान थे।

अमरज (सं० पु०) अमरः दुर्मर इव जायते, अमर-जन-ड। १ दुष्खदिरवृक्ष, लजालू। २ देवदार। ३ नदीवट।

अमरजौ—राजपूतानेके एक कवि। 'राजस्थान'में टाडने इनका उल्लेख किया है।

अमरण (सं० स्त्री०) अमरता, अमरत्व, अनश्वरता, अजान्त्य, नित्यता, ज्ञात-अवदी, ज्ञात-जाविदानी, बका, कभी न मरनेकी शक्ति।

अमरणीय (सं० त्रि०) अमर, अनश्वर, नित्य, लाज-
वाल, जो कभी मरता न हो।

अमरणीयता (सं० स्त्री०) अमरण देखो।

अमरतटिनी (सं० स्त्री०) देवताओंकी नदी, गङ्गा।

अमरतरु (सं० पु०) १ देवदारु। २ अर्कादि, अकोड़ा
वगैरह।

अमरता (सं० स्त्री०) १ अनश्वरता, कभी न मरनेकी
हालत। २ देवत्व, देवताका भाव।

अमरत्व (सं० लो०) अमरता देखो।

अमरदत्त—१ बम्बईवाले खम्भात प्रान्तके नृपतिविशेष।

यह राजपूताने—जयपुरके रणस्तम्भगढ़वाले धंधल
पंवारकी २६ वीं पीढीमें उत्पन्न हुये थे। सन् ई०के
१३वें शताब्द अलाउद्दीन खिलजीने जब रणस्तम्भगढ़को
लूटपाट अपने हाथ किया, तब धंधलको वहांसे
भाग खम्भातमें जा बसना पड़ा। सन् ई०के १६वें
शताब्दमें अमरदत्तने शाहजहांको कोई हीरा नजर
दिया था। उससे उन्होंने अत्यन्त प्रसन्न हो इन्हें रायकी
उपाधि प्रदान की और अपने साथ ही दिल्ली ले
जाकर दरबारका मुसाहब बना लिया। यह एक
लड़का छोड़कर मरे थे, जिसने मुरशिदाबादके सेठ
मानिकचन्दको लड़कासे अपना विवाह किया।

२ एक प्राचीन संस्कृत-शब्दकोषकार।

अमरदारु (सं० पु०-लो०) अमराणां प्रियं दारु,
शाक०-तत्। देवदारु।

अमरदास—नानकपन्थियोंके दश गुरुमें एक। सिखोंके
'ग्रन्थ'में इनके बनाये भजन मिलते हैं।

अमरदेव—१ मालव देशवाले किसी विक्रमादित्य
नृपतिकी राजसभाके रत्न-विशेष। कहते हैं, जब
महादेवने स्वप्न देखाया, तब बोध-गयामें अशोकका
कोई विहार खोदवा इन्होंने एक शिवमन्दिर बनवाया
था। बोधगयासे आविष्कृत १००५ संवत्की शिला-
लिपिसे उपरोक्त विषय प्रमाणित होता है।

अमरदु (सं० पु०) विट्खदिरवृक्ष, लजालू।

अमरदिज (सं० पु०) अमराणां देवानां पूजकः
दिजः, शाक०-तत्। देवल ब्राह्मण, पुजारी ब्राह्मण,
जो ब्राह्मण देवताका पूजन करता हो।

अमरनाथ (सं० पु०) १ इन्द्र, देवताओंके मालिक।
२ काश्मीरका एक प्रसिद्ध तीर्थ। यहां महादेवका
जो स्वयम्भू तुषारलिङ्ग है, उसीका नाम अमरनाथ
वा अमरेश्वर पड़ा है। प्रति वर्ष श्रावण मासकी
राखी पूर्णिमाको भारतवर्षके नाना-देशवाले यात्री
यहां आते हैं।

अमरनाथ काश्मीरकी पूर्व दिशामें अवस्थित है।
इसके उत्तर तिब्बत देश है। यहांकी पर्वतमाला
बहुत ऊंची-नीची है। उंचाई प्रायः १५०००-१६०००
फीट होगी। क्या शीत, क्या शीश—बारहो महीने
चारो ओर तुषार ही तुषार दिखाई देता है। पथ
दुर्गम, प्राणशून्य और तृणशून्य है। सहस्र सहस्र
प्रस्तरखण्ड और हिमशिला पतनोन्मुख हो रही हैं।
चलते समय यात्रीके उच्चस्वरमें बोलने अथवा जोरमें
पैर फटकने पर उसको धमकसे सारी शिला उसके
शिरपर गिर पड़ेंगी। इधर भाद्रमास रातदिन वृष्टि
हुआ करती, कभी कभी बर्फ भी पड़ जाती है।
इतनी विघ्नवाधा रहते भी प्रायः दो हजार यात्री
प्रति वर्ष इस स्वयम्भूलिङ्गका दर्शन करने अमरनाथ
पहुंचते हैं।

पथ ऐसा दुर्गम रहनेके कारण काश्मीराधिपति
यात्रियोंको विशेष सहायता देते हैं। इस महा-
तीर्थका दर्शन करनेको भारतवर्षके सुदूर स्थानोंसे
यात्री आते हैं। उनमें धनी दरिद्र, योगी संन्यासी,
सभी सम्प्रदायके मनुष्य पाये जाते हैं। दरिद्रोंको
काश्मीरराज स्वयं राहखर्च देते हैं।

राखी-पूर्णिमासे चौदह पन्द्रह दिन पहले श्री-
नगरके निकट रामबागमें सरकारी भण्डा उड़ा दिया
जाता है। इसीको देखकर यात्री क्रमशः एकत्र
होते हैं। फिर पूर्णिमासे आठ दिन पहले ही सब
यात्री श्रीनगरसे यात्रा करते हैं। अनन्तनागमें
भण्डा पड़ने पर यात्री एकत्र हो जाते हैं, आगे
पीछे कोई भी नहीं रहता। वहांसे अमरनाथ २८
क्रोस रह जाता है। बीचमें पांच पड़ाव पड़ते हैं,
फिर तीर्थस्थान मिलता है। पथमें कुछ भी नहीं
पाते। अमरनाथमें भी न तो हाट-बाजार और

न मनुष्योंकी बस्ती ही है। इसीसे यात्री अनन्त-नागमें ही आवश्यकीय वस्तु खरीद लेते हैं।

राज-पताका आगे आगे और उसके पीछे पोछे हाथमें प्राण लिये यात्री चलते हैं। अमरनाथके पथमें सब मिलाकर इक्कीस तीर्थोंमें स्नान किया जाता है। पहले वितस्ता नदीके उस पार कश्यपमुनिका शौर्य वा श्रीस्नान मिलता है। वहां कोई देवमूर्ति नहीं। कहते हैं, वहां जो कोई स्नान करता, वह शौर्य एवं श्रीसम्पन्न होता है।

दूसरा तीर्थ पाण्डृतन है, यह 'पुराणाधिष्ठान' शब्दका अपभ्रंश जान पड़ता है। भगवती भागती यों और महादेव उनका पौछा कर रहे थे। उसी स्थानमें महादेवने भगवतीका पदचिह्न देख पाया। बहुत समय पहले वहां काश्मीरकी राजधानी रही। महाराज अशोक किसी दिन उस नगरमें राजत्व करते थे। उनके प्रतिष्ठित एक मन्दिरमें बुद्धदेवका दांत रखा था। उसके बाद काश्मीरके राजा अभिमन्युने आग लगवाकर समस्त नगरको जला डाला। उसमें देवालयादि भी भस्म हो गये थे। कोई कोई कहते हैं, कि सन् ८१३ ई०की पाथं राजाने वह नगर वसाया था। अभिमन्युने जो नगर ध्वंस किया, वह पाण्डृतनके निकट हो रहा। अन्तकी जब शहाबुद्दीन सिकन्दरने काश्मीरमें उत्पात मचाया, उस समय भी पाण्डृतन विनष्ट न हुआ था। वहां अस्सी हाथ चतुष्कोण एक शिवकुण्ड है। अमरनाथ जाते समय यात्री उसी कुण्डमें स्नान करते हैं। पाण्डृतनमें अब भी कितने ही देवालयाँ और अट्टालिकाओंके भग्नावशेष वर्तमान हैं।

तीसरे तीर्थस्थानका नाम पदिनापुर वा पाम्पुर है। वह 'पद्मपुर' शब्दका अपभ्रंश है। पद्म नामक किसी राजाने उसे निर्माण कराया था। अब जगह-जगह केवल बड़े बड़े स्तम्भ और अट्टालिकाके भग्नावशेष देखनेमें आते हैं।

उसके बाद यात्री जहां स्नान करता, उसका नाम यन्तुर है। वहां महादेवका एक लिङ्ग विद्यमान है।

यन्तुरसे आगे बढ़ने पर अवन्तीपुर मिलता है।

महाराज अवन्तीवर्माने उस नगरको प्रतिष्ठित किया

था। कहते हैं, महादेवके वरसे वह जलके ऊपर चल सकते रहे। उस समय एकवार महाजलप्रावणमें काश्मीर डूब गया था। परन्तु अपने साधनबलसे अवन्तीवर्माको कोई कष्ट न भोगना पड़ा। अवन्तीपुरमें अभी अनेक देवालयादिके भग्नावशेष पड़े हैं। उसके बाद वाग्दसु उत्स आयेगा। ८ हस्ती-कि-नर-कुन्-नर्गम, ९ चक्रधर, १० देवकीस्थान, ११ विजये-श्वर, १२ हरिचन्द्रराज, १३ तेजोवर, १४ सुस्ति-गुफर (सौर-गङ्गा), १५ सुकर गाँ, १६ वद्रुह, १७ सलर, १८ गणेश बुल, १९ नीलगङ्गा, २० स्थानेश्वर, सबके अन्तमें पञ्चतरङ्गिणी है। इस भरनेकी पाँच शाखायें हैं, इसीसे पञ्चतरङ्गिणी कहते हैं। यात्री उस स्थानमें स्नान करेंगे। स्नानके उपरान्त वस्त्र त्याग कर भूर्जपत्रका वस्त्र पहनते हैं। कोई कोई नङ्गे ही मनके उल्लाससे हर हर जय-जय कहते हुए आगे बढ़ते हैं। पञ्चतरङ्गिणी अमरेश्वरसे एक कोसपर है। यात्री अपनी अपनी खाद्यसामग्री प्रभृति वहाँ रख देते हैं।

अब अमरेश्वरकी गुहा मिलेगी। इसका प्रवेशपथ प्रायः ३२ हाथ प्रशस्त है। गुहामें प्रवेश करनेपर पहले कोई ५० हाथ सरल पथ आता है। उसके बाद दक्षिण ओर थोड़ा घूमकर प्रायः १६ हाथ आगे बढ़ना पड़ता है। गुहाके भीतर अत्यन्त शीत लगता है। ऊपरसे सदेव टप टप जल चूवा करता है। महादेवका स्वयम्भू तुषारलिङ्ग यहीं निर्मल स्फटिककी भांति चमकते रहता है। कहते हैं, शायद चन्द्रमाकी तरह इस शिवलिङ्गको भी झलझलि झलझल करती है। पूर्णिमाके दिन महादेवकी पूर्णमूर्तिका दर्शन होता है। फिर प्रतिपत्से एक एक कला घटने लगती है। अमावस्याके दिन तुषारलिङ्गका कोई चिह्न बाकी नहीं रहता, सब अवयव अदृश्य हो जाता है। फिर शुक्लपक्षको प्रतिपत्से यह लिङ्ग प्रतिदिन एक एक कला बढ़ने लगता है। स्नान जनशून्य और अत्यन्त भयानक है। बारह महीने वहां मनुष्य नहीं रह सकता। योगी-संन्यासियोंमें कोई कोई तीन चार महीने वास करते हैं। वही लोग कहते

हैं, कि चन्द्रमाकी झासवृद्धि के साथ अमरनाथको भी झासवृद्धि हुआ करती है। महाराज गुलाब सिंहने यहां एक रात वास किया था। कहते हैं, किसी समय उन्हें सर्परूपमें दर्शन दे कर महादेव अन्तर्हित हुये। दूसरा भी प्रवाद है, कि यह स्वयम्भू लिङ्ग कदाचित् कपोतरूप धारण करता है। फलतः यह बात मिथ्या है। अमरनाथ जाते समय पण्डे कबूतरोको कपड़ेमें छिपा लेते, और अन्तमें अमरनाथको गुफाके पास पहुंचकर उन को छोड़ देते हैं। यात्री कपोतरूपी महादेवको देखकर भक्ति करते हैं। अमरनाथमें दूसरी भी कई देवदेवी और बैलकी पाषाणमय मूर्ति है।

उज्जैनमें भी अमरनाथ वा अमरेश्वर नामक एक शिवलिङ्ग प्रतिष्ठित था।

३ बम्बई प्रान्तके थाना जिलेका एक गांव। यहांसे आध क्रोस दूर एक सुन्दर उपत्यकामें महादेवका प्राचीन मन्दिर बना है। मन्दिरमें हिन्दुओंकी असली कारीगरी देख पड़ेगी। सम्भवतः मन्दिर सन् ई०के ११ वें शताब्दमें तैयार हुआ था। इस मन्दिरमें जो शिला-लेख मिला, उसमें ८८२ शक अङ्कित है। कल्याणवाले चालुक्योंके अधीनस्थ महामण्डलेश्वर चित्रराजदेव-पुत्र मामवनौराज कदाचित् मन्दिरके बनवानेवाले रहे। इसमें शिव-पार्वती, विमान और कालीकी मूर्ति बहुत अच्छी गढ़ी गयी है।

४ हिन्दुस्थानके भिक्षुओंका सम्प्रदाय विशेष।

अमरपख (हिं० पु०) अमरपक्ष, पितृपक्ष।

अमरपति (सं० पु०) देवताओंके प्रभु, इन्द्र।

अमरपद (सं० पु०) १ देवताओंका स्थान, स्वर्ग।

२ मोक्ष, निर्वाण।

अमरपाल—पालवंशीय नृपतिविशेष। भविष्य ब्रह्म-खण्डके मतसे यह देवपालके पुत्र रहे।

(भविष्यब्रह्म० २०।४०)

अमरपुर (सं० स्त्री०) १ देवताओंका नगर, स्वर्ग, अमरावती।

२ ब्रह्मदेशकी प्राचीन राजधानी। यह ऐरावती नदीके पूर्व तटपर अवस्थित है। अनेक मनुष्योंका

अनुमान है, कि अमरपुर सन् १७८३ ई०में प्रतिष्ठित हुआ था। इसमें एक मन्दिर ही विशेष प्रसिद्ध है। उसकी चारो ओर सुलझेदार लकड़ीके २५० खम्भे सुशोभित हैं। मन्दिरके भीतर बुद्धकी बड़ी भारी धातुमयी मूर्ति है। पहले अमरपुरकी चारो ओर २० फीट ऊंची और ७००० फीट लम्बी शहरपनाह बनी थी। सन् १८१० ई०में आग लगनेसे नगर विनष्ट हो गया। फिर १८३८ ई०में भूकम्पसे भी इसे बहुत हानि पहुंची थी। ब्रह्मदेशवाले प्राचीन राजाओंके राजप्रासादका भग्नावशेष अभीतक नगरके मध्य स्तूपाकार पड़ा हुआ है।

कोई कोई कहते हैं, कि अमरपुर नगर आधुनिक नहीं ठहरता। यह राजधानी अतिप्राचीन है। सन् १६८३ ई०में केवल इसका नाम बदल दिया गया था। तलेमिने आवा नदकी दो शाखाओं और उसके निकटवर्ती दो नगरोंका विषय लिखा है। उन दो नगरोंके नाम उरथेना और नर्दन हैं। उरथेन शब्द राधन शब्दका अपभ्रंश है। यही अमर-पुरका प्राचीन नाम है। इसे पहले आवा और रन्दामरकोट कहते थे। प्रकृत आवा नगर एवं अमरपुरमें प्रमेद है। ब्रह्मदेशमें यह रीति प्रचलित रही,—जब कोई नया राजा होता, तब वह पूर्व राजधानीको त्याग किसौ दूसरे नगरमें अपनी राजधानी स्थापित करता था। इसी प्रथाके अनुसार राजधानी आवासे अमरपुर स्थानान्तरित हो गई।

अमरपुष्प (सं० पु०-स्त्री०) १ कल्पवृक्ष। २ पूगफल, सुपारीका पौधा। ३ कासटण। ४ आम्र, आम। ५ केतकी। ६ तालमखाना। ७ गोखरू।

अमरपुष्पक, अमरपुष्प देखो।

अमरपुष्पिका (सं० स्त्री०) १ सोया। २ कांस।

अमरपुष्पी, अमरपुष्पिका देखो।

अमरप्रख्य (सं० त्रि०) देवता-जैसा, जो देवताको तरह हो।

अमरप्रभ, अमरप्रख्य देखो।

अमरप्रभा-सूरि—एक प्रसिद्ध जैनाचार्य।

अमरप्रभु (सं० पु०) १ इन्द्र। २ विष्णु।

अमरप्रसादसूरि—एक प्रसिद्ध जैनाचार्य ।

अमरवेल (हिं० पु०) अमरवल्ली, कोई पीलीलता, पवेर । इसमें जड़ और पत्ती नहीं पाते । यह जिस वृक्षपर फैलता, उसके रससे अपना पेट भरता और उसे निर्बल बना देता है । इसमें खेत पुष्प निकलेंगे । वैद्यकमतसे—यह मीठा होता, पित्तको दबाता और वीर्य बढ़ाता है ।

अमरभर्ता, अमरभट्ट, देखो ।

अमरभट्ट (सं० पु०) इन्द्र, देवताओंके स्वामी ।

अमरमल्ल—नैपालके एक प्रसिद्ध राजा । यह सूर्यमल्लके पुत्र और शिवसिंहके पितामह रहे ।

अमरमल्लगौ—दक्षिणके मल्लगौ नृपतिके एक पुत्र । यह गोविन्दराजके मरनेपर सिंहासनारुढ़ हुये थे । जब यह भी मर गये, तब राजसिंहासन इनके पुत्र कालीय-बल्लालको मिला ।

अमररत्न, अमलरत्न (सं० स्त्री०) स्फटिक, बिल्वीर ।

अमरराज (सं० पु०) देवताओंके राजा, इन्द्र ।

अमरराजशत्रु (सं० पु०) देवताओंके नृपतिका शत्रु, वृत्रासुर, रावण ।

अमरलोक (सं० पु०) देवताओंका स्थान, स्वर्ग, बिहिस्त ।

अमरलोकता (सं० स्त्री०) स्वर्गका प्रहर्ष, बिहिस्तका मजा ।

अमरवत् (सं० अव्य०) देवताकी भांति, फुरिष्ठेकी तरह ।

अमरवर (सं० पु०) इन्द्र, जो व्यक्ति देवताओंमें श्रेष्ठ हो ।

अमरवल्ली, अमरवल्ली, देखो ।

अमरवल्ली (सं० स्त्री०) १ आकाशवल्ली, अमरवेल । २ सालसा । इसका गुण यों लिखा है,—

“हृष्यवल्ली बलवती, परं हृष्या स्थायिनी ।

सुवृक्षत्वे दक्षिणे पुष्टिदा काष्ठं वारिणी ॥

शीपदं शिकरोगांश्च रक्तदोषं हरेदियम् ॥” (वैद्यक)

अमरवार—मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़े जिलेका एक गांव । यह नरसिंहपुरकी गयी, सड़कपर बसा और इसमें गवर्नमेण्ट-स्कूल एंव पुलिसका थाना बना है ।

अमरविजय—राजपूतानेवाले कोड़ागढ़के एक विख्यात राठौर राजा । ठाड़के राजस्थानमें लिखा है, कि इन्होंने सोलह हजार परमारोंको वधकर उक्त राज्य अधिकार किया था । इनके वंशधर कोड़ा कामध्वजकी उपाधि व्यवहारमें करते रहे ।

अमरस (हिं० पु०) आमका रस, अमावट । आमका रस निचोड़ कर थाली या कपड़ेपर फैला धूपमें सुखा लेते हैं । वही पीछे अमरस या अमावट कहलाता है ।

अमरसरित् (सं० स्त्री०) देवनदी, गङ्गा ।

अमरसर्षप (सं० पु०) देवसर्षप, राई ।

अमरसिंह—१ सुप्रसिद्ध संस्कृत शब्दकोषकार । प्रवाद-मतसे यह विक्रमादित्यवाले नवरत्नके एक जन और बौद्धधर्मावलम्बी व्यक्ति रहे । बोपदेवने अपने कवि-कल्पद्रुममें इन्हें अन्यतम शाब्दिक या वैयाकरणके मध्य बताया है । सदुक्तिकर्णामृतमें अमरसिंहकी कितनी ही कविता उद्धृत हुयी । इनके नामानुसार ही कीर्तिस्तम्भस्वरूप ‘अमरकोष’ प्रसिद्ध पड़ा है । संस्कृत भाषामें जितना प्राचीन शब्दकोष विद्यमान है, उसमें अमरकोष सबसे श्रेष्ठ समझा जाता है । इसीलिये इस कोषकी जितनी टीका बनी, उतनी किसी दूसरे संस्कृत कोषकी नहीं देख पड़ती । अमर-कोषकी टीकाओंमें अच्युतउपाध्यायका व्याख्याप्रदीप, अण्णदीक्षितकी अमरवृत्ति, आशाधरका क्रिया-कलाप, काशीनाथकी काशिका, चोरखामीका अमर-कोषोद्घाटन, गोखामि-रचित बालबोधिनी, नयनानन्द एवं रामचन्द्रशर्माकी अमरकौमुदी, नारायणशर्माकी अमरकोषपञ्चिका, नारायणविद्याविनोदकी शब्दार्थ-संदोषिका, नीलकण्ठकी सुबोधिनी, परमानन्दकी अमरकोषमाला, बृहस्पतिकी अमरकोषपञ्चिका, भरतभट्टिककी सुग्धबोधिनी, भानुजीदीक्षितकी व्याख्यासुधा, मञ्जुभट्टकी गुरुबालप्रबोधिनी, मथुरेश-विद्यालङ्कारकी सारसुन्दरी, मल्लिनाथका अमरपद-पारिजात, महादेवतीर्थकी बुधमनोहरा, महेश्वरका अमरकोषविवेक, मुकुन्दशर्माकी अमरबोधिनी, रघुनाथ चक्रवर्तीकी त्रिकाण्डचिन्तामणि, राघवेन्द्रकी अमर-कोषव्याख्या, रामनाथका त्रिकाण्डविवेक, रामप्रसादकी

वैषम्यकौमुदो, रामशर्माकौ अमरकोषव्याख्या, राम-
स्वामीकौ अमरविहति, रामाश्रमकौ अमरकोष-
टीका, रामेश्वरशर्माकौ प्रदापमञ्जरी, रायमुकुटकौ
पदचन्द्रिका, लक्ष्मणशास्त्रीकौ अमरकोषव्याख्या,
लिङ्गभट्टकौ अमरबोधिनी, लोकनाथकौ पदमञ्जरी,
श्रीकराचार्यका व्याख्यानृत, श्रीधरकौ अमरटीका और
सर्वानन्दका टीकासर्वस्व उल्लेखयोग्य है।

रायमुकुट और भानुजीदीक्षितने अपनी-अपनी
टीकामें बृहदमरकोषकी बात भी कही है।

२ राजपूत-वीरकेशरी राणा प्रतापसिंहके ज्येष्ठ-
पुत्र। राणा प्रतापके जो सत्रह लड़के रहे, उनमें
अमरसिंह सबसे बड़े थे। पिताकी मृत्यु होनेसे
उन्होंने मेवाड़का राजसिंहासन पाया। आठ वर्षकी
अवस्थासे राणा प्रतापके मृत्युकालतक वह सुख-दुःख,
सम्पद-विपदमें सभी समय अपने पिताके पास ही
रहे। राणा प्रतापने मरनेसे पहले अमरसिंहको अपने
कठोर व्रतमें दीक्षित कर दिया था। प्रतापने जैसे
स्वाधीनताके लिये आज्ञा युद्ध चलाया, वैसे ही अपने
राणा अमरसिंहसे भी चिरवैरी मुगलोंके विपक्षमें युद्ध
करने और स्वदेशकी स्वाधीनता अक्षुण्ण रखनेकी
शपथ ले लिया। अमरके सिंहासनारूढ़ होनेके बाद
आठ वर्षतक मुगल-सम्राट् अकबर जीवित रहे और
उन्होंने कई वर्ष मेवाड़के विरुद्ध अस्त्रधारण न
किया। इससे राणा अमर एक तरह युद्धविद्या भूल
बहुत विलासी बन गये थे। उन्होंने पिताके आदेश
और उपदेशपर ध्यान न दे और क्लेशकर कुटीरवास
छोड़ उदयसागरके पास कोई सुरम्ह प्रासाद बनवाया,
फिर वहां विलास-व्यसनमें समय बिताने लगे। उसी
समय बादशाह जहांगीरने उनके विरुद्ध युद्धघोषणा
की। राणाको बड़ा सङ्कट पड़ गया। उन्होंने
मन ही मन स्थिर किया,—यह सुखभोग और विलास
व्यसन छोड़ हम अशान्तिकार युद्धमें प्रवृत्त न होंगे,
बादशाहके साथ सन्धि कर लेंगे। किन्तु अन्तमें
अमर सन्धि करनेमें समर्थ न हुये। मेवाड़के जिन
सैकड़ों राजपूतों और सरदारोंने राणा प्रतापके साथ
खड़े हो कई बार मुसलमानोंसे युद्ध किया, वे

अपना-अपना कर्तव्य न भूले थे। सालुग्बरेके सरदार
गोविन्दसिंह-प्रमुख वीरगणकी उत्तेजना और
अनुरोधसे अमरसिंह युद्ध करनेपर बाध्य बने।
देवीर नामक स्थानमें भीषण युद्ध हुआ था। बादशाहके
भाई हारकर भाग गये। किन्तु बादशाह उसपर
भी सङ्कल्पच्युत न हुये, थोड़े दिन बाद ही अब्दुल्ला
नामक सेनापतिकी अधिनायकतामें मेवाड़के विरुद्ध
बहुत मुसलमान-फौज भेजी थी। संवत् १६६६में
रणपुर नामक पार्वत्य प्रदेशपर फिर राजपूतोंके साथ
मुगलोंका युद्ध हुआ। अब्दुल्ला अपनी फौजके साथ
हार गये थे।

बार-बार हार होनेसे जहांगीरका क्रोध और
विधेयवक्त्रि प्रचण्ड वेगसे प्रज्वलित हुआ; राजपूतोंमें
घराज भगड़ा डालनेके लिये उन्होंने एक उपाय
निकाला। राणा प्रतापके किसी भाई सगरसिंहने
प्रतापका पक्ष छोड़ मुसलमानोंका पक्ष ले लिया था।
बादशाहने उन्हें बृहत् सगरको राणा बना अरण्यपूर्ण
और भग्न चित्तौरगढ़में अभिषिक्त किया। किन्तु
चित्तौरके अमशानमय दुर्गमें राणा बननेसे बृहत् सगरके
मनमें दारुण अनुताप उपस्थित हो गया था। उन्होंने
अनुतापसे जर्जरित हो, अमरसिंहको चित्तौरगढ़
प्रत्यर्पणकर, बादशाहके निकट पहुंच और अपनी
छातोंमें कुरी घुसेड़ पापका प्रायश्चित्त किया। बाद-
शाहका उद्देश्य उलट पड़ा था। अन्तको सन्
१६०८ ई०में जहांगीरने अपने लड़के परवीजको
सेनापति बना उनके अधीन बहुत बड़ी फौज मेवाड़
भेजी। खेमनेरकी विशाल रणभूमिमें राजपूत और
मुसलमान फिर भिड़ गये। इस बारके युद्धमें भी
प्रायः सारे मुगल मृत्युमुखमें पड़े थे। शाहजादे
परवीज हारकर भाग खड़े हुये। मुसलमान-
ऐतिहासिक इस युद्धका वर्णन अच्छे तरह कर गये
हैं। अमरसिंहको राजा होने बाद मुगलोंसे सत्रह
बार लड़ना पड़ा। सकल ही युद्धमें उन्होंने जयलाभ
किया था।

किन्तु विधिलिपि अखण्डनीया होती है। अन्तमें
जहांगीरने अपनी रणनिपुण सुदृढ तनय खुरमको

(भावी शाहजहान्) सुगल-सेनापति बना और बड़ा भारी फौज साथकर राणासे लड़ने भेजा। इधर क्रमागत युद्ध करनेसे कितने ही राजपूतवीर धराशायी हो गये थे। अतिकष्टसे थोड़ी फौज इकट्ठा कर राणाके ज्येष्ठपुत्र कर्ण खुरमकी विशाल वाहिनीसे लड़नेको खड़े हुये। किन्तु इस बार सुगलोंका आक्रमण कोई व्यर्थ कर न सका था। सुगलोंकी जयपताका मेवाड़में उड़ने लगी, मेवाड़ने चिरतरकी स्वाधीनता खोयी और राणा सन्धि करनेपर बाध्य हुये। शाहजादे खुरमने अमरकी समधिक सम्बर्धना कर उन्हें फिर राज्यग्रहण करनेका आदेश दिया था। किन्तु उन्होंने अपने पुत्र कर्णके शिर राज्यभार डाल और वाणप्रस्थ अवलम्बन कर शेष जीवनको अति-वाहित किया।

३ जोधपुरवाले राजा गजसिंहके ज्येष्ठपुत्र और नागौरके सामन्तराज। बाल्यकालसे यह अत्यन्त दुर्धर्ष, साहसी और महावीर रहे। दाक्षिणात्यके सकल युद्धमें यह पिताके साथ गये और समर-प्राङ्गणमें इन्होंने सर्वाग्र ही अवस्थान किया। यह उग्र स्वभाव होने कारण प्रजाको सदा सताते और वह इनके विरुद्ध अभियोग लेकर राजा गजसिंहसे परित्राण पानेकी प्रार्थना करते रहते। अवशेषमें राजा गजसिंहने राजधर्मानुसार प्रजारञ्जनके लिये ज्येष्ठपुत्र अमरसिंहको उत्तराधिकारसे वञ्चित रखा। सन् १६३४ ई०के वैशाख मास अमरसिंहको 'देशभाटा' अर्थात् चिरनिर्वासनका दण्ड दिया गया था। निर्वासित अमरसिंहने अपने अनुचरोंके साथ दिल्ली पहुँच बादशाहका आश्रय लिया। इन्हें बादशाहने 'राव'की उपाधि दे तीन हजार सवारका मनसब और नागौरका स्वाधीन शासक बना दिया था। अवाध्यता और उग्र-स्वभावने ही इनके जीवनका शोचनीय परिणाम देखाया। कुछ दिन यह दिल्लीसे शिकारके बहाने नागौरमें जाकर रहे थे। कई दिन दिल्लीमें इन्हें न देख शाहजहां नाराज हुये और अर्थदण्डका भय देखाया। उग्रतेज अमरसिंहने अपना अपराध न माना, वरं

कटार देखा कहा था,—'यही हमारी सम्पत्ति है।' बादशाहने उससे विरक्त बन जुर्माना वसूल करने सलावत् खान्को इनके मकान् भेजा। बादशाहको आज्ञासे सलावत् खान्ने पौरन् अमरसिंहके घर पहुँच जुर्माना देनेकी बात कहो। अमरसिंह जुर्माना देनेपर राजी न हुये और उसी समय सलावत खान्को घरसे निकाल दिया। शाहजहान्ने इनका यह हाल सुन अपना अपमान समझा और उसकी सजा देनेकी सभामें बुला भेजा। अमरसिंह खबर पाते ही आम्खास दरबारमें जा पहुँचे थे। इन्होंने जाकर देखा,—बादशाह आग-बबूला हो और सलावत् खान् उनको समझा रहे हैं। यह सत्रह हजार सवारके मनसबदार उमराको लांघते हुये बादशाहके सिंहासनकी ओर झपट पड़े। इन्होंने अपनी कमरमें कटार छिपा रखी थी, सलावत खान्के पास पहुँचते ही उसकी छातीमें घुसेड़ दी। देखते-देखते सलावत खान् सम्राट्के सामने धराशायी हुये थे। फिर इन्होंने सिंहासनपर बैठे शाहजहान्को तलवार फेंक कर मारा, किन्तु सौभाग्यक्रमपर वह स्वर्णसे टकरा टुकड़े-टुकड़े हुयी और बादशाह बाल-बाल बच गये। अमरसिंहके घरसे शाहजहान् ज़नानेमें जाकर छिपे थे। इन्होंने क्रोधसे तलवार निकाल ली और पाँच सुगल सरदारोंको आम्खासमें ही मार गिराया। किसी सुसलमान्-सरदारने अमरसिंहको पकड़नेको हिम्मत न देखायो थी। अन्तमें अर्जुन गौड़ नामक एक आत्मीयने सान्त्वना देनेके बहाने इनपर दारुण अस्त्राघात किया और यह मारते-काटते सभास्थलमें ही अनन्त निद्रासे अभिभूत हुये। अमरसिंहके मरनेकी बात सुनते ही राठौरीने लाल-किलेमें पहुँच फिर हत्याभिनय मचा दिया था।

अमरसिंहका विवाह बूंदो-नरेशकी कन्यासे हुआ था। वह आम्खासमें पहुँच इनका शव उठा लायीं और उसीके साथ जबकि स्वर्गधामकी गयीं। किसी प्राचीन कविने अमरसिंहकी प्रशंसामें कहा है,—

अमरसिंह वरं शाहजहांको मारा, वरं
JAGADGURU VISHWARADHYA
LIBRARY

अमरसिंह ठापा—एक गोर्खा सेनापति। सन् १८१५ ई०में इनकी अधीनस्थ गोर्खा सेनाने पञ्जाबके मलावन किलेमें घुस कर शरण लिया, जिसे जनरल आक्टर-लोनीने पश्चिम-पर्वतोंके समग्र स्थानोंसे खदेर दिया था। अन्तमें इन्होंने अपने पुत्रके साथ अंगरेजोंके हाथ आत्मसमर्पण किया। पीछे जो सन्धि हुयी, उसके अनुसार इन्हें नेपाल चले जानेकी आज्ञा दी गयी थी। सन् १८१६ ई०में इनका परलोक हुआ।

अमरसौ (हिं० वि०) आमके रस-जैसा, जो अमा-वटकी तरह पौला हो, सुनहला। एक छटांक हलदीमें आठ माशे चूना डालनेसे अमरसौ रङ्ग बन जाता है।

अमरसुन्दरी (सं० स्त्री०) ज्वराधिकारका औषधविशेष। इसके बनानेका विधान यह है,—

“द्विकट द्विफला चैव त्र्यम्बकं रेणुकानलम्।

चातुर्जातं चतुर्बोहं पारदो विषगन्धकम्॥

सप्तभागमिदं पूर्णं तत्पात्रं द्विगुणो गुडः।

कोलप्रमाणं गुडिकां प्रातरुत्थाय सेवेयम्॥” (प्रयोगावली)

अमरस्त्री (सं० स्त्री०) स्वर्गकी अप्सरा, बिहिश्तकी परी।

अमरा (सं० स्त्री०) अमर-टाप। १ दूर्वा, दूब। २ गुडूची, गुर्च। ३ इन्द्रवारुणीलता, इन्द्रायण। ४ नीलदूर्वा, काली दूब। ५ गृहकन्या, घीकार। ६ नीलीवृक्ष, बड़े नीलका पेड़। ७ मेषशृङ्गी, बरियारी। ८ वृश्चिकाली, बड़न्ता। ९ नदीवट। १० जरायु। ११ गभंजाड़ी। १२ अमरावती, इन्द्रके रहनेकी पुरी। १३ नाभिनाली। (पु०) १४ अमड़ा।

अमराई (हिं० स्त्री०) आमका बाग, जिस बारीमें आमका ही पेड़ रहे।

अमराङ्गना (सं० स्त्री०) इन्द्रपुरीकी अप्सरा, बिहिश्तकी परी।

अमराचार्य (सं० पु०) देवताओंके गुरु, ब्रह्मसूति।

अमराद्रि (सं० पु०) देवताओंका पर्वत, सुमेरु।

अमराधिप (सं० पु०) देवताओंके प्रभु, इन्द्र।

अमरापगा (सं० स्त्री०) देवताओंकी नदी, गङ्गा।

अमरौलय (सं० पु०) देवताओंका भवन, स्वर्ग।

अमराव (हिं० पु०) अमराई देखो।

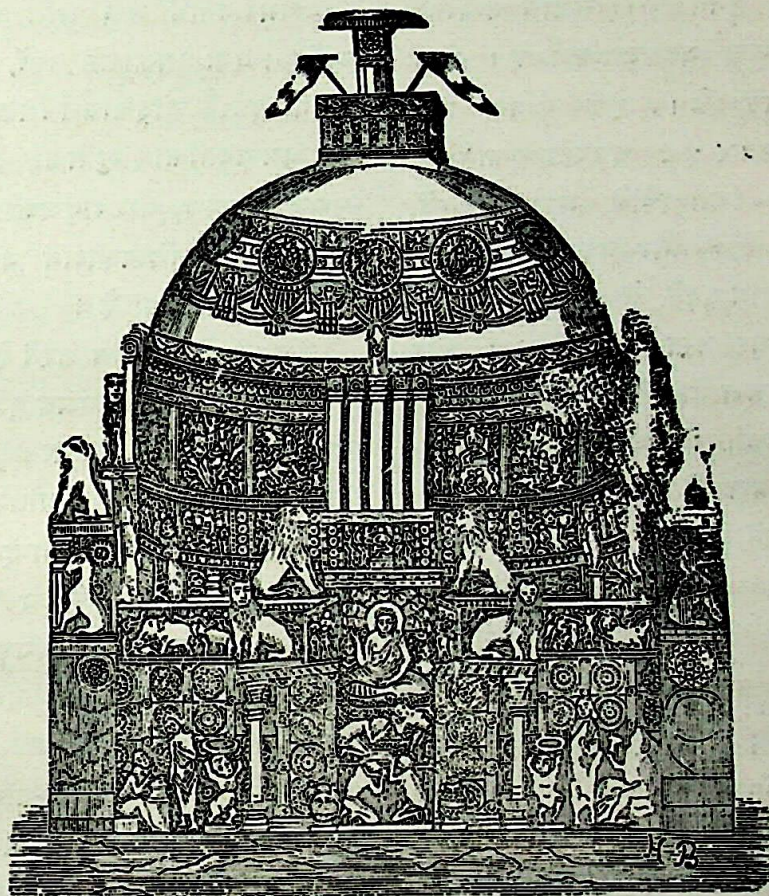
अमरावती (सं० स्त्री०) अमरा देवा विद्यन्ते यस्याम्, अस्त्यर्थे मनुष्य मस्य वकारः मती दीर्घः। १ इन्द्रालय। इस नगरको विश्वकर्माने निर्माण किया था। यह सुमेरु पर्वतपर अधिष्ठित है। यहां जरा मृत्यु, शोक-ताप कुछ भी नहीं होता। इसके सुरभि धेनु, ऐरावत हस्ती, उच्चैःश्रवा अश्व, अप्सरा और नन्दन-काननवाले मन्दार, पारिजात, सन्तान, कल्पवृक्ष एवं हरिचन्दन—यह पांच वृक्ष ही विशेष प्रसिद्ध हैं। अलकानन्दा इन्द्रपुरीके भीतर होकर बहती है। देवराज इन्द्र यहांके अधीश्वर हैं। बोखारि वगैरहके पास ‘इन्द्रालय’ नामक एक स्थान है। किसी किसीका अनुमान है, कि वही प्राचीन इन्द्रालय वा अमरावती होता और अलकानन्दाका ही आधुनिक नाम अक्सस् है। वेद और पुराणमें देखा जाता है, कि पहले असुरोंने इन्द्रसे कई बार विरोध किया था। मालूम होता है, इन्द्रसे राजधानी आदि छीन लेनेके लिये ही वह सब बार बार युद्ध करते रहे।

२ मन्द्राजवाले गुण्डूर जिलेका एक सुप्राचीन नगर, जो अक्षां १६° ३५' ७" और द्राघि० ८०° २४' पू० क्षणा नदीके दक्षिण-तटपर अवस्थित है। अमरावतीके स्तूप और मरमर पत्थरवाले रेलिङ्गकी मूर्ति प्राचीन-भारतीय शिल्पका अच्छा आदर्श है। इसे देखकर २००० वर्ष पहलेके धरणिमिह नगरका स्मरण आयेगा। कोई सुचारुरूप खचित स्तम्भ नगरके दक्षिण खड़ा था, जिसका आदर सन् ई०के १२वें शताब्द तक होते रहा। किन्तु सन् ई०का १८वां शताब्द लगते समय किसी स्थानीय जमीन्दारने अपना गृह बनवानेको सस्ता मसाला पानेके लालच उसे तोड़वा डाला। कितने ही पुरातत्त्वानु-सन्धायियोंने इसकी मूर्तियोंका नक्शा उतारा, जिनका अब चिह्नितक मिट गया है। फिर भी अनेक स्तूपकी सुन्दर मूर्तियां ब्रिटिशमिडजिअम् और मन्द्राजके अजायब घरमें रखी हैं।

शिलालेखके अनुसार अमरावतीके प्रथम स्तूप सन् ई०के ३०० वर्ष पहले बनाये गये थे। किन्तु अधिकांश

स्तूप पीछे अर्थात् कुषाणोंके समय तैयार हुये। कुषाणोंका राज्य अमरावतीमें न रहा, यहां अश्ववंश अपना आधिपत्य जमाये था। अश्ववंशके जो दो शिलालेख मिले, उनसे समझते हैं—स्तूप और उसका सुखचित रेलिङ्ग सन् १५० और २०० ई० के बीच बना था। सर्वोत्तम रेलिङ्ग या कटहरेका व्यास ६४ गज, परिधि २०० गज और उच्चता कोई ५ गज रही।

उसके अङ्गप्रत्यङ्गमें सुखचित फलक लगे, जिनमें फूलोंके गुच्छे लिये मनुष्य बने और दूसरे नाना प्रकार आकार खिंचे थे। स्तम्भतलमें हास्यप्रद बालक और पशुका चित्र रहा। भीतरकी और सजावट ज्यादा थी, बौद्ध पुराणका प्रत्येक विषय खचित था। इसीतरह १६८०० वर्गफीट तलके संस्थानका प्रत्येक भाग खचित नाना-साधनसे भरा रहा।



अमरावतीस्तूपकी एक चूड़ाका चित्र

यहां अमरावतीस्तूपकी एक चूड़ाका चित्र दिया गया है। चित्रके मध्यस्थलमें एक मूर्ति है। उसके मस्तक पर नागफणा सुशोभित है। सामने चार भक्त प्रणाम कर रहे हैं। नीचे दोनों ओर कई मनुष्य शिरपर कुछ रख लिये जाते हैं। ऊपर दोनों ओर सिंह तथा और भी कई मूर्ति हैं। चूड़ाके शिखरपर चक्र विद्यमान है।

अमरावतीके दूसरे भी कई स्थानमें नाग, चक्र और वृक्षकी प्रतिमूर्ति देखनेमें आती है। किसी स्थानपर

पत्थरके मध्यस्थलमें एक नाग, उसकी दाहिनी ओर एक वृक्ष एवं ऊपर और बाईं ओर चक्र बना है।

साक्षात्के रेल या कटहरे भी बुरे नहीं लगते। किन्तु अमरावतीके कटहरे सबसे बड़े और सुचित्रित हैं। देवालयकी नीवपर बालक और नाना प्रकारके पशुकी मूर्ति खुदी है। स्तम्भके नीचे-ऊपर अर्धचन्द्र और मध्यमें पूर्णचन्द्रकी आकृति है। समग्र स्थान नाना प्रकार चित्र विचित्र बना है। द्वारके निकटवर्ती स्तम्भका चित्र अन्य प्रकार है। एक

स्थानमें कोई राजा सिंहासन पर बैठे हैं। कटिमें कपड़ा लिपटा, शिरपर पगड़ी बंधी और पगड़ीके ऊपर मणिमय चन्द्रमा लगा है। दोनों हाथोंमें सोनेके कड़े हैं। शरीरमें सिवा कटिके और कहीं भी वस्त्र नहीं देखते। दाहनी ओर और पीछे सभासदगण हैं। उनका वस्त्राभरण भी राजाके सदृश ही है। एक मन्त्री हाथ जोड़कर राजासे कुछ कह रहे हैं। राजा मन लगाकर उनकी बात सुनते हैं। सामने अस्त्रधारी प्रहरी हैं। उनके सम्मुख युद्धसज्जा लगी है। पैदल सिपाही अस्त्र उठाये हैं। कोई सैनिक घोड़े और कोई हाथीपर सवार है। अजगुटा गुफामें जो मूर्ति खुदीं, उनमें कितनोंहीके शरीर कुरते, चपकन आदि वस्त्रसे ढंके और वह यूनान और ईरानके आदमी-जैसे जान पड़ते हैं। परन्तु अमरावतीमें किसीके शरीरपर वस्त्र नहीं मिलता और न कोई विदेशी ही मालूम देता है।

इसमें सन्देह नहीं, कि वैभव-समय अमरावतीके स्तूप आकार-प्रकारमें अपूर्व थे। पुराकीर्ति-वेत्तावोंने इसके सम्बन्धमें लिखा है,—

“Study of Plate XXXIII, reproducing the best preserved of such slabs, will dispense with the necessity for detailed description, and at the same time give a good notion of what the appearance of *Amaravatī stūpa* must have been in the days of its glory. When fresh and perfect the structure must have produced an effect *unrivalled in the world*”. *

भारतीय शिल्पकारोंने रेलिङ्गका अङ्गुल भर स्थान भी खाली नहीं छोड़ा। दिनको सूर्यकी प्रभा और रातको शुम्बदवाले सैकड़ों प्रदीपके प्रकाशसे जब मरमर चमकता, तब उसे देख कर लोगोंकी आंखमें चकाचौंध लग जाती थी। चन्द्रकान्तमणिका आकार सिंहलके आदर्श-जैसा रहा। सिंह और कुछ दूसरे खचित आकार भगवत्काले समयके असुरीय और ईरानीय

नमूनेसे मिलते थे। वास्तवमें इस शिल्पको देखकर शिल्पकार और चित्रकारकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा करना पड़ेगी। पूजाके स्तम्भका ११ फीट व्यासवाला दुन्दुभि कुछ दिन हुये अमरावतीसे खोदकर निकाला गया था। उसके आधार पर जो स्त्री-पुरुष खड़ा, उसकी मूर्ति अतीव सुन्दर आयी और कमलके फूलकी आकृति भी खूब ही बनी है।

अमरावतीमें कुछ मूर्ति पृथक् भी मिली थी। मूर्तिका वस्त्र गुप्तकालसे नहीं, गन्धार और अजगुटेकी १० वीं गुहाके कारुकार्यसे मिलता है।

अमरावतीकी मूर्तिको देखते ही पशुजीवन, अलङ्कार-धारण और मनुष्यकी गतिका चित्र सामने आ जायेगा। शिल्पकारोंने बड़ी ही स्वतन्त्रता और पटुतासे काम किया है।

कितने ही अनुमान करते हैं, कि सन् ३१८ ई०में दन्तपुरीसे लङ्का जाते समय बुद्धका दांत अमरावतीके भीतर होकर निकला था। उसी समय यहांका बाहरवाला रेलिङ्ग बना। भीतरवाला रेलिङ्ग सम्भवतः सन् ई०के पहले दूसरे शताब्द सम्पूर्ण हुआ होगा। उसके कई पत्थरमें पहले न मालूम और क्या क्या खोदा था। इसीसे जान पड़ता, किसी पुरातन अट्टालिकाको तोड़कर यह नवौन देवालय निर्मित हुआ है।

सन् ६३८ ई०में चीन-परिव्राजक यूयङ्-चुयाङ्ग यहां आये। उससे प्रायः सौ वर्ष पूर्व यह स्थान जनशून्य हो गया था। फिर भी उन्होंने अमरावतीकी बड़ी प्रशंसा की है।

अमरावतीकी प्राचीनकीर्तिके सम्बन्धपर निम्न-लिखित ग्रन्थमें विस्तृत विवरण दिया गया है,—

Fergusson's *Tree and Serpent Worship*, 2nd ed. (1873); Fergusson's *History of Indian and Eastern Architecture* (2nd ed. by Burgess, 1910), Vol. I, p. 119ff; *Annual Report of the Archaeological Survey of India*, 1905-6; Vincent A. Smith's *History of Fine Art in India & Ceylon* (1911), pp. 148-156.

* Vincent A. Smith's *History of Fine Art in India and Ceylon*, (1911), p. 150.

३ बरार प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० २०° २५' एवं २१° ३६' ४५" उ० और द्रावि० ७७° १५' ३०" तथा ७८° १८' ३०" पू०के मध्य अवस्थित है। अमरावतीसे उत्तर बैतूल जिला, पूर्व वर्धा नदी, दक्षिण वासिम एवं जन जिला और पश्चिम अकोला तथा एलिचपुर जिला पड़ेगा। इसका क्षेत्रफल २७७८ वर्गमील होता है।

अमरावती जिला समुद्रतलसे ८०० फीट ऊँचे समान भूमिपर बसा है। इसकी भूमि उत्तरसे दक्षिणको ढलौ है। अमरावती और चांदपुरके बीच जा पहाड़ पड़ता, उसमें वृक्षादि बहुत कम उपजता है। इस जिलेकी चिकनी और काली मट्टी निहायत ज़रखे, ज निकलेगी। पूर्णा नदी अमरावतीके पश्चिम बहती है। जङ्गलमें शिकारकी कोई कमी नहीं देखते।

इतिहास—पुराणमतसे कितने ही वरहारी रुक्मिणीका गान्धर्व विवाह देखने अमरावती आये थे। वह अन्तमें यहीं बसे और देशको बरार कहने लगे। यहां कई शताब्द राजपूतोंका राज्य रहा था। सन् १२८४ ई०में दिल्लीवाले बादशाह फ़ीरोज़शाह ग़िलजायीके दामाद अलाउद्दीनने बरार सहित अमरावतीपर अपना अधिकार जमाया। औरङ्गज़ीबके मरने बाद दक्षिणके अधिनायक चीनकलौच खानने निज़ाम-उल-मुल्ककी उपाधि ग्रहणकर सन् १७२४ ई०में महाराष्ट्रसे बरार छीन लिया था। सन् १८५३ और १८६१ ई०के सन्धिपत्रानुसार अंगरेजोंने हैदराबादके निज़ामको समग्र बरार सौंप अमरावती और कुछ दूसरे जिले अपने अधोन किये।

वृषि—रुयी ही यहां अधिक उपजती है। वह दो किस्मकी होती,—बन्नी और गारी। बन्नीको जूनके अन्त बोते और नवम्बरमें चुनते हैं। किन्तु गारी बन्नीसे दो सप्ताह पीछे पूर्ण उपत्यका की गहरी काली मट्टीमें बोयो जायेगी। वह १५ वीं दिसम्बरसे पहले प्रायः तैयार नहीं होती। सब्जोंमें आलू खराब, किन्तु रतालू अच्छी निकलती है।

शिल्पिकार्य—सिवा मोटे कपड़े और घराऊ

कामको लकड़ी की चीजके और कुछ यहां नहीं बनता। पुराने समय शोलापुरमें रेशमका व्यवसाय होता था।

व्यापार—प्राचीन समय अमरावतीसे बैल गाड़ोपर रुयी ढाई-सौ कोस दूर मिर्जापुर विकने भेजी जाती थी। आजकल रेलवे द्वारा वह बम्बई पहुंचती और अमरावती नगरमें कपास साफ़ करनेकी कितनी ही कल चलती है। इस नगरमें नागपुरसे मसाला, नमक, विलायती कपड़ा, बढ़िया सूत, दिल्लीसे चीनी, गुड़, पगड़ी और बनारससे सोनेकी गोटा-किनारी मंगायी जाती है। जिलेका भोतरी कारवार, कुन्दनपुर, भीलटेक, अमरावती नगर, मोरसी, चांदपुर, मुर्तजापुर और बदनेरेमें साप्ताहिक बाज़ार लगनेसे चलता है।

४ अमरावती जिलेका एक तअसुक। इसका क्षेत्रफल ६७२ वर्गमील लगता है।

५ अमरावती जिलेका मुनिसिपल नगर और हेड क्वार्टर। यह नगर अक्षा० २०° ५५' ४५" उ० और द्रावि० ७७° ४७' ३०" पूर्वपर अवस्थित है। बदनेरेसे निकल तीन कोसकी शाखा-रेल इसे ग्रेट इण्डियन पेनिनसुला-रेलवेके साथ मिला देती है। इसको चारो ओर पत्थरकी चहारदीवार बनी जो २०से २६ फीट ऊँची और सवा दो मील घेरेमें पड़ती है। उसमें पांच फाटक और चार खिड़की लगी हैं। सन् १८०७ ई०में निज़ाम सरकारने पेन्धारियोंसे धनो सौदागरोंको बचानेके लिये वह दीवार बनवायी रही। एक खिड़की खूखारी इसलिये कहलायी, कि उसके पास सन् १८१८ ई०में सात-सौ आदमी कट मरे थे। शहरका पानी ठोक नहीं, बहुतसे कुयें खारी पड़े हैं। यहां भवानी वा अम्बा-मन्दिर बहुत अच्छा बना है। लोग कहते, कि उस मन्दिरको बने हजार वर्ष बीते हैं। यह अपने रुईवाले व्यापारके लिये प्रसिद्ध है। सन् १८४२ ई०में किसी व्यापारीने एक लाख गाड़ी रुयी अमरावतीसे कलकत्ते पैदल भेजी थी।

अमराह (सं० ली०) देवदार।

अमरिष्णु (वै० त्रि०) अमर, न मरनेवाला ।

अमरी, अमरा देखो ।

अमरु (सं० पु०) १ अमरुशतक-रचयिता । यह कोई राजा रहे । शहराचार्य देखो ।

अमरुत (सं० त्रि०) वायुरहित, निष्कम्प, बेहवा, खमोश ।

अमरुफल (सं० क्ली०) उत्तरदेशप्रसिद्ध फल, जो फल शिमाली मुल्कमें मशहूर हो । इसका गुण इसतरह लिखा है,—

“अमरोय फलं शीतं मलद्रवकरं मतम् ।

सारं दाहं रक्तपित्तं कामलो मूलकच्छुकम् ॥

सूनाशरीरं हनोति ऋषिभिः परिकीर्तितम् ॥” (वैद्यक-निघण्टु)

अमरुत (हिं० पु०) अमरुद, सफरी । इसे मध्य-भारत एवं मध्यप्रदेशमें जाम या बिही, बङ्गालमें प्यारा, दक्षिणमें पेरूफल या पेरूक, नेपाल-तराईमें रुन्नी और तिर्हुतमें लताम कहते हैं । (Psidium Guyava) इसका तना कमजोर, टहनी पतली और पत्ती पांच-छः अङ्गुल लम्बी होगी । फल कच्चा रहनेसे कसेला और पकनेपर मौठा लगता है । उसमें छोटे-छोटे कड़े वीज रहेंगे । फलका गुण रेचक है । अमरुतकी पत्ती, बकला चमड़ा रंगने और सिम्नानेमें लगेगा । पत्तीके काढ़ेसे कुल्ला करनेपर दांतका दर्द और वह अफीमके साथ मदकमें भी पड़ती है । इलाहाबादका अमरुत भारतमें प्रसिद्ध है ।

अमरुद, अमरुत देखो ।

अमरेज्य (सं० पु०) देवगुरु ब्रह्मसति ।

अमरेन्द्रतक (सं० पु०) १ देवदारुवृक्ष । २ निर्गुण्डी धूप ।

अमरेश (सं० पु०) १ शिव । २ इन्द्र ।

अमरेश्वर, अमरेश देखो ।

अमरैया, अमराई देखो ।

अमरोत्तम (सं० त्रि०) देवताओंमें सबसे अच्छा, जोः फरिश्तोंमें सबसे बड़कर हो ।

अमरोपम (सं० चि०) देवताके सदृश, फरिश्ते-जैसा ।

अमर्त (वै० त्रि०) अमर, जो कभी मरता न हो ।
अमर्त्य (सं० त्रि०) मर्त स्वार्थे यत्, नञ्-तत् । मरण-शून्य, जो मर न सकता हो ।

अमर्त्यभुवन (सं० क्ली०) देवताओंका लोक, स्वर्ग, बिहिश्त ।

अमर्दित (सं० त्रि०) अनिष्टतुषित, अनभिभूत, जो दला-मला न गया हो, मातहत न बनाया हुआ, जो पैरसे कुचला न गया हो ।

अमर्धत् (वै० त्रि०) अर्धिसक, जो चोट न चलाता हो ।

अमर्मजात (सं० त्रि०) दृढ अङ्गसे अजात, जो मज्ज-बूत अजोसे न पैदा हुआ हो ।

अमर्मन् (वै० त्रि०) शरीरमें अप्रधान, अन्यिरहित, जो जिस्ममें खास न हो, बेगांठ ।

अमर्मवेधिन् (सं० त्रि०) प्रधान अङ्गका अर्धिसक, मृदु, खास अजोमें चोट न देनेवाला, मुलव्यन ।

अमर्याद (सं० त्रि०) नास्ति मर्यादा सीमा सम्मानो यस्य यत्र वा, बहुव्री० गौणे ऋस्वः । सीमारहित, सम्मानविहीन, बेहद, बेइज्जत ।

अमर्यादा (सं० स्त्री०) १ सीमाराहित्य, वाजिव हदका लांघ जाना । २ सम्मानशून्यता, बेइज्जती । ३ उचित अर्चनाका उल्लङ्घन, वाजिव परस्तिशका न करना । ४ प्रागल्भ्य, निर्लज्जता, अतिप्रसङ्ग, अविनय, बेशर्मी, गुस्साखी ।

अमर्ष (सं० पु०) मृष चान्तौ घञ्-तत् । १ क्रोध, अक्षमा, गुस्सा । ‘कोपक्रोधानर्षरौघप्रतिष्ठा’ (अमर) २ अधैर्य, बेसबरी । ३ सहनशीलताका अभाव, बरदाश्तका न होना । ४ साहस, हिम्मत । ५ अलङ्कारमतसे व्यभिचारी भाव विशेष । (त्रि०) ६ असहिष्णु, बरदाश्त न करनेवाला ।

अमर्षज (सं० त्रि०) अधैर्य वा घृणासे उत्पन्न, जो बेसबरी या नफरतसे पैदा हुआ हो ।

अमर्षण (सं० त्रि०) मृष-लुप, ततो नञ्-तत् । १ क्रोध, गुस्सावर । २ असहन, बरदाश्त न करनेवाला । (क्ली०) भावे लुपट् । ३ क्रोध, गुस्सा । ४ अक्षमा, नाराजी ।

अमर्षवत्, अमर्षित देखो।

अमर्षहास (सं० पु०) क्रोधका हास्य, गुस्सेकी हंसी।

अमर्षित (सं० त्रि०) मृष-क्त, ततो नञ्-तत्। क्रुद्ध, क्षमारहित, गुस्सावर, माफ न करनेवाला।

अमर्षिन् (सं० त्रि०) मृष-णिनि, ततो नञ्-तत्। क्रोधो, गुस्सावर।

अमर्षी, अमर्षिन् देखो।

अमल (सं० स्त्री०) मृज्यते शोध्यते, मृजूष शुद्धो कल, ततो नञ्-तत्। अथवा अम-कलच्। १ अभ्र, अवरक। २ समुद्रफेन। ३ कर्पूर, कपूर। ४ रौप्य माक्षिक, रूपामाखी। ५ कतकवृक्ष, निर्मली। ६ गन्धद्रव्यविशेष। ७ पवित्रता, पाकौजगी। ८ परमात्मा। (त्रि०) नास्ति मलमस्य, नञ्-बहुव्री०। ९ निर्मल, साफ़। १० दोषरहित, बेऐब। (अ० पु०) ११ व्यवहार, बरताव। १२ शासन, हुकूमत। १३ उन्माद, नशा। १४ व्यसन, आदत। १५ प्रभाव, असर। १६ समय, वक्त।

अमलगर्भ (सं० पु०) बोधिसत्त्वविशेष, किसी बोधिसत्त्वका नाम।

अमलता (सं० स्त्री०) १ निर्मलता, सफाई। २ दोषरहित्य, बेऐबी।

अमलतास (हिं० पु०) आरग्वध, गिरिमाला, राजवृक्ष, कितवाली, करकच, भावा, कथ-उल-हिन्द, खियार-चंवर। (Cassia Fistula)

यह वृक्ष हिमालयकी निम्न भागमें उपजता, मध्यम परिमाण-विशिष्ट एवं पतनशील होता, और भारत तथा ब्रह्मदेशके भीतर-बाहर ३००० फीटकी उच्चता-पर बढ़ता है। खासिया पहाड़से पेशावर तक हिमालयके अञ्चलमें निम्न पार्वत्य प्रदेशपर इसे अधिक देखें और छोटा-नागपुर तथा मध्यभारतसे बम्बईतक फैला पायेंगे। यह प्रधानतः छोटा और फैलनेवाला वृक्ष रहता, उंचाईमें २० फीटसे अधिक नहीं पड़ता, मार्चमें पत्ती भड़ जाती और चमकीला पीला फूल, ताजी हरी पत्तीके लम्बे हिलनेवाले गुच्छे साथ ही अप्रैलमें निकलता है। किन्तु कभी-कभी दुबारा शरत्में फूल खिल जायेगा। इसकी लम्बी, मूड़ी

हिलनेवाली फली या छिया लम्बाईमें एक या डेढ़ फीट पड़ती और जाड़ेमें पकती है।

डालसे जो लाल अर्क टपकता, वह कड़ा पड़नेसे गोंद-जैसा बन जाता है। उसे साधारणतः कमर-कस कहेंगे। उसका असुक्तहस्त प्रयोग मामूली लोग नहीं जानते, किन्तु उसे सङ्कोचनशील बताया करते हैं।

अमलतासका बकला नमड़ा रंगनेके काम आता है। बङ्गालके लोहारडागे जिलेमें बकलेसे हलका-लाल रङ्ग बनाते और टिकाऊ रखनेके लिये उसमें फिटकरी डाल देते हैं। दो छटांक बकलेको दो तोले फिटकरीके साथ उबालेंगे। रङ्ग अनारकी छाल डालनेसे गहरा पड़ जाता है। युक्तप्रदेशसे अमलतासका बकला कुछ बाहर भेजा जाता है।

फलका सार या गूदा और जड़का बकला दवामें पड़ता है। घराऊ दवामें गूदेको सबसे साधारण और लाभदायक विरेचन समझेंगे। वह मृदु रेचनकी भांति भी व्यवहृत होता है। फलीको उबालकर गूदा निकालने और बादामवाले तेलके साथ शरीर पर मलनेसे वह शिशु और गर्भवती स्त्रीके लिये निराबाध विरेचन ठहरेगा। स्वल्प मात्रामें रेचक और अधिक मात्रामें उसे विरेचक देखते हैं। वह मृदु-रेचक और वक्षःस्थलका प्रतिबन्ध मिटानेकी लाभदायक होगा। वह प्रायः इमलीके साथ मिलाया और उस दशामें शुष्क पित्तके लिये उत्तम विरेचन समझा जाता है। बाहरसे उसको गठिये और चिनक-बाईपर लगायेंगे। कड़वेके जीह्रमें भी वह पड़ता है। फूलका गुलकन्द बनाया और वह बुखार छोड़ानेवाला समझा जायेगा। छाल और पत्ती दोनों को कूट-पीस और तेल डालकर फोड़ेपर लगाते हैं। चर्मरोग—प्रधानतः दद्रुपर भी उसे बाहरसे रखेंगे। सन्ताल इसकी पत्तीका काढ़ा रेचककी भांति व्यवहार करता है। मूल प्रवल विरेचक होगा। सिंहलवासी वृक्षके प्रत्येक भागको विरेचन बताता है। पञ्जाबमें इसका मूल धातु पुष्ट करने और बुखार छोड़ाने की खिलायेंगे। इसके बीजसे वमन भी कराते हैं।

सन् ई०के १३वें शताब्द सेविल्लेवाले अबुल अब्बासने इसका गुण लोगोंकी समझा-बुझा दिया था, उसी समय फलके औषधमें व्यवहृत होनेकी बात उठी।

भुनी हुयी पत्ती भोजनके साथ मृदु-रेचककी भांति खायी जाती है। सन्ताल फूलकी अधिकतर खाद्य-द्रव्यकी भांति व्यवहार करेगा। फलीका गूदा बङ्गालमें तम्बाकूकी जायकेदार बनानेके काम आता है। सारकाष्ठ विस्तीर्ण और अभ्यन्तर-काष्ठ धूसर वा हरिद्राभ रक्तवर्णसे दृष्टकर-रक्तवर्ण बदलते रहता है। काष्ठ अधिक स्थायी हो, किन्तु साधारणतः यथेष्ट विस्तीर्ण परिमाणका न पड़ेगा। इससे उत्तम स्तम्भ बनता और शकट, कृषियन्त्र एवं शालिमुसलके लिये भी प्रशस्त ठहरता है।

अमलतासिया (हिं० वि०) अमलतासके फूल-जसा, हलके-पीले रङ्गवाला, गन्धकी, जिसका रङ्ग अमलतासके फूल-जैसा चमके।

अमलदारी (फा० स्त्री०) १ इकूमत, दखूल, शासन, अधिकार। २ कनकूत, मालगुजारी। रुहेलखण्डमें कोई क्षत्रिणी ऐसी होती, जिसमें क्षत्रिकको उपजके तुल्य कर देना पड़ता है।

अमलदीप्ति (सं० पु०) कपूर, काफूर।

अमलपट्टा (हिं० पु०) कर्मचारीकी कार्यमें नियुक्त करनेके लिये दिया जानेवाला अधिकारपत्र, जो दस्तावेज कारिन्देकी काममें लगानेके लिये दी जाती हो।

अमलपतत्रिणी (सं० स्त्री०) अमलपतत्रिन् देखो।

अमलपतत्रिन् (सं० पु०) पश्चात् पतनात् पतत्रः पत्रः सोऽस्यास्तीति; अमलशासी पतत्री चेति, कर्मधा०। वन्यकुकुट, जङ्गली हंस। वन्यकुकुटका पर देखनेमें अतिसुन्दर लगता, उसीसे यह नाम पड़ा है।

अमलपतत्री, अमलपतत्रिन् देखो।

अमलपत्री (सं० पु०) हंस।

अमलवेत (हिं० पु०) अमलवेतस, चूक, अम्बरी, चूकपालक, सलूनी, इमाज़, तुर्ग्रह। (Rumex Vesicarius) यह वृक्ष प्रतिवर्ष फलता, पीछे सर जाता और छःसे बारह इञ्चतक जंचा होता है। इसे

प्रधानतः पश्चिम-पञ्जाब, लवणपर्वत और सिन्धुके उस पारवाले पहाड़ पर उपजते देखेंगे। भारतके दूसरे प्रदेशमें भी यह मिलता, किन्तु वहां बो दिया जाता है। लताके रसकी भारतवासी शीतल, रेचक और कुछ-कुछ मूत्रवर्द्धक समझते हैं। यह दन्तपीड़ा-निवारणके काम आये और अपने रेचक गुणसे वमनको रोकेगा। पूर्ण मात्रामें अमलवेतस कोष्ठप्रदाह, रोकने और बुभुक्षा बढ़ानेकी खिलाया जाता है। विषाक्त कृमि और वृश्चिकाका दंश दूर करनेके लिये कुचली हुयी पत्तीकी लेयी चमड़ेपर लगायेंगे। बीजमें भी वैसा ही गुण रहता, फिर संग्रहणीमें भूनकर दिया जाता है। मूलसे भी औषध बनेगा। लता भारतके भीतर-बाहर सबजी की तरह लगायी और कच्ची-पक्की दोनों तरह खायी जाती है। प्रायः यह कूपके समीप ढेरका ढेर जग और साल भर बराबर मिल सकता है। इसकी सूखी टहनौ हाटमें बिकेगी। वह खड़ी रहती और पाचक पूर्णमें पड़ती है। अमलवेतस देखो।

अमलमणि (सं० पु०) १ स्फटिक, बिलौर। २ कपूर-मणि, कपूरगन्धमणिविशेष, जिस जवाहरमें काफूर-जैसी सुशब्द आये।

अमलरत्न (सं० स्त्री०) स्फटिक, बिलौर।

अमला (सं० स्त्री०) नास्ति मलं दोषः कोऽपि यस्याः, बहुव्री०। १ लक्ष्मी। २ भूम्यामलकी, पाताल-आंवला। ३ सातलावृक्ष, कोई भाड़ो। ४ नाभिनाली, तोंदीकी डोरी। ५ आमलकी, आंवला। (अ० पु०) ६ राजकर्मचारी, सरकारो नौकर। प्रधानतः न्यायालयके कर्मचारियोंको अमला कहते हैं।

अमलाकृष्ण (सं० स्त्री०) भूधात्री, पाताल-आंवला।

अमलाकम् (सं० पु०) अमलो दोषरहितः आत्मा यस्य, बहुव्री०। १ विशुद्धान्तःकरण योगी, जिस फकीरका दिल साफ रहे। (त्रि) २ विशुद्धान्तःकरण, साफ दिलवाला।

अमलानक (सं० स्त्री०) अमलानपुष्प, सदा-बहार, गुल-शादब।

अमलिन (सं० त्रि०) निष्कलङ्क, निर्मल, शुद्ध, वेदाग्र, वैमल, साफ।

अमली (हिं० स्त्री०) १ अम्लिका, इमली। २ कर्मई, गौरुवटी। यह भाड़दार पेड़ हिमालयके दक्षिण गढ़वालसे आसामतक उत्पन्न होता है। (अ० वि०) ३ अमलसे तअल्लुक रखनेवाला, जो व्यवहारमें आता हो। ४ अमल करनेवाला, कर्मशील। ५ नशेबाज, जो मादक द्रव्य खाता हो।

अमलूक (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोई पेड़। यह अफगानस्थान, बलूचिस्थान, कश्मीर और पञ्जाबसे उत्तर हिमालयकी पहाड़ीपर उपजैगा। इससे जो कितना ही रस टपकता, वह जमकर गोंद-जैसा बन जाता है। फलको कच्चा-पका दोनों तरह खायेंगे। सूखा फल काबुली लाया करते हैं। इसे मलूक भी कहेंगे।

अमलीनी (हिं० स्त्री०) लोनिया, नोनी। यह एक तरहकी घास है। पत्तों छोटी, मोटी और खड़ी रहेंगी। इसकी जो तरकारी बनती, उससे भूख बढ़ती है। रसको निचोड़ कर पीनेसे धतूरेका जहर उतर जायेगा। बड़ी पत्तोंकी अमलीनी कुलफा कहलाती है।

अमलक (हिं० वि०) सुतलक, समूचा।

अमवत् (सं० वि०) अमा सहार्था व्ययम् मतुप् ऋस्। १ असहाय, वैमदद। अथवा अम रोगस्ततो मतुप्। २ रोगवान्, बीमार। अथवा आत्म-शब्दस्य वा अमभावः। ३ यत्नवान्, तदुबौर लड़नेवाला। ४ भौषण, खूँखार। ५ शक्तिशाली, ताकतवर। (अव्य०) ६ भौषणरूपसे, जोरमें।

अमवती (सं० स्त्री०) अमवत् देखो।

अमवा—युक्तप्रदेशके गोरखपुर जिलेका एक ग्राम। यह गोरखपुर शहरसे ३४ कोस दूर पड़ेगा। इसमें प्रधानतः नीच जातिके हिन्दू किसान रहते हैं। बड़ी गण्डक नदीके किनारे यह बसा है। नदी अपनी जगह छोड़ कुछ मील दूर पूर्वकी ओर बहने लगी है। किन्तु ग्राम और नदीके बीचकी जगह कभी-कभी बाढ़ आनेसे उपजाऊ बन जाती है।

अमवान् (सं०-पु०-क्लो०) अमवत् देखो।

अमविष्णु (सं० त्रि०) विभिन्नदिक् गमनशील, निम्नोच्च, सुखतलिफ्त तर्फको जानेवाला, ऊँचा-नीचा।

अमस (सं० पु०) अम-असच्। १ काल, वक्त। २ रोग, बीमारी। ३ निर्बोध, बेवकूफी। ४ अज्ञानी व्यक्ति, जिस शख्सको अल्ल न रहे।

अमसूल (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, कोई दरखत। यह पतला होता और डाल नौचेकी झुक जाती है। इसे दक्षिणकी ओर कोकण, कनाड़े और कुर्गके जिलेमें उत्पन्न होते देखेंगे। नोलगिरिपर इसकी अतिवृद्धि रहती है। फलको 'ब्रिन्दाव' कहें और खायेंगे। इसके बोजका तेल बहुत प्रसिद्ध है। बाजारमें वह जमो हुयो सफेद लम्बो पत्ती या टिकिये-जैसा बिके और थोड़ी ही गर्मी पड़नेसे पिघल जायेगा। उसका गुण वर्धक और सङ्कोचक होता है। सूजन वगैरहपर वह मला जाता है। उससे मरहम भी बनता है।

अमसृण (सं० त्रि०) कठोर, कठिन, सख्त, कड़ा, जो मुलायम न हो।

अमस्तक (सं० त्रि०) मस्तकहोन, अधिरस्, बेसर, जिसके सर न रहे।

अमस्तु (सं० क्लो०) दधि, दही।

अमहत (सं० त्रि०) रोगादिसे पोड़ित, जिसको बीमारो वगैरहसे चोट पड़ चुकी हो।

अमहन् (सं० त्रि०) रोगादि निवारक, जो बीमारो वगैरहको मिटता हो।

अमहर (हिं० पु०) कच्चे और छिले हुये आमकी सूखी फांक। इसे दाल और तरकारीमें डालते हैं।

अमहल (हिं० वि०) १ भवन-विहोन, वैमकान्, जिसके पास घर न रहे। २ व्यापक, समाया हुआ।

अमा (सं० अव्य०) मा-का मा, न मा। १ सह, साथ। २ निकट, नजदीक। ३ भवनमें, मकानपर। (स्त्री०) ४ अमावस्या, अमावस। ५ चन्द्रकी सोलह कला। ६ महाकला। (पु०) ७ आत्मा, रुह। ८ गृह, मकान, घर। ९ इहलोक। १० पशुकी नेत्रकी तोरी। इसे अग्रभ समझते हैं। (त्रि०) ११ परि-

माणशून्य, बेमिकदार। १२ अपक्व, कच्चा, जो पका न हो। १२ दुर्भाग्य, कमबख्त।

अमांस (सं० त्रि०) नास्ति मांसं यस्य, बड़व्री०।

१ दुर्बल, लागर, जिसके जिस्मपर गोश्व न रहे। (क्ली०)

२ मांस भिन्न अन्य वस्तु, जो चीज गोश्व न हो।

अमांसोदनिक (सं० त्रि०) मांसविशिष्ट शालि-भोजनसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो गोश्व मिले भातसे तअक्षुक न रखता हो।

अमाक्त (वे० त्रि०) मिलित, सहागत, मिला हुआ, जो साथ-साथ आया हो।

अमाघीत (हिं० पु०) शालिविशेष, किसी किस्मका चावल। यह अग्रहायणमें प्रस्तुत हो जाता है।

अमाजूर, अमाजूर (वे० स्त्री०) १ यावज्जीवन गृहनिवास, मकानमें ही बुढ़ हो जानेकी हालत। २ माता-पिताके साथ गृहमें रहते हुये पतिका वियोग, अपने मा-बापके साथ एक ही मकानमें रहते हुये खाविन्दकी जुदायी।

अमात् (सं० त्रि०) १ अमित, अपरिमित, अप्रती-मान, बेअन्दाज, बेतौल, जिसको पैमायश न हो सके। (अव्य०) २ निकटमें, पड़ोससे।

अमातना (हिं० क्रि०) निमन्त्रण देना, बुला भोजना, तलब करना।

अमातापुत्र (सं० पु०) माता और पुत्र दोनोंका अनस्तित्व, मा और लड़के दोनोंका न रहना।

अमाढक (सं० त्रि०) हीनमाढक, सृतमाढक, बेमादर, जिसके मा न रहे।

अमाढभोगीण (सं० त्रि०) माताके व्यवहारमें न आने योग्य, जो माके काम आने काबिल न हो।

अमात्य (सं० पु०) अमा सह विद्यते अस्य त्वप्। १ अभिन्न गृहका परिजन, हमखाना, हमससकन, जो आदमी एक ही मकानमें रहता हो। २ मन्त्री, सचिव, वजीर, दीवान्। जो धर्मज्ञ, प्राज्ञ, जितेन्द्रिय, सत्कुलीन, और कार्यकुशल रहता, शास्त्रकार उसीको राजाके अमात्य योग्य कहता है।

“अमात्यसुखं धर्मज्ञं प्राक्तं दानं कुबोद्धतम्।

स्थापयेदासने तस्मिन् विद्वः कार्यचये यथाम्॥” (मनु ७।११)

अमात्र (सं० पु०) मा-उण्-त्रन्-टाप्; नास्ति मात्रां मानं परिच्छेदो वा यस्य, नञ्-बड़व्री० गौणे ऋस्त्वाः।

१ तुरीय ब्रह्म, परमात्मा, जिसा चीजकी कोई माप न पड़े। (त्रि०) २ असौम, बेहद, जिसका छोर न मिले। ३ असम्पूर्ण, जो समूचा न हो। ४ अप्रारम्भक, जो असली न हो। ५ अकार-मात्रा-विशिष्ट, जो अलिफूकी मिकदार रखता हो।

अमात्रवत्त्व (सं० स्त्री०) १ न्यूनता, दोष, कमौ, ऐब। २ प्राण, आत्मा, आध्यात्मिक सार, जान्, रुह, रुहानी माहियत, जानकी जड़।

अमान (सं० त्रि०) १ मानरहित, बेमाप, जिसका कोई ठिकाना न लगे। २ निरभिमान, बेफखूर, जिसे घमण्ड न घेरे। ३ अप्रतिष्ठित, बेइज्जत। (अ० पु०) ४ रक्षण, हिफाजत। ५ शरण, पनाह।

अमानत (अ० स्त्री०) न्यास, निक्षेप, आधि, उप-निधि, तहवील, वदीयत, ज़र अमानत, धरोहर, किसी चीजका किसीके पास कुछ वस्तुके लिये रखना, सुपुर्द किया हुआ माल।

अमानतदार (अ० पु०) अमानत रखनेवाला शख्स, जिस व्यक्तिके पास उपनिधि रहे।

अमानन (सं० स्त्री०) अमानना देखो।

अमानना (सं० स्त्री०) मान चुरा० पूजायां युच् टाप्, अभावे नञ्-तत्। १ आदरका अभाव, सम्मानकी शून्यता, बेइज्जती, इज्जतका न रहना। (त्रि०) नञ्-बड़व्री०। २ मानशून्य, गौरवहीन, बेइज्जत।

अमानव (सं० त्रि०) १ अपौरुषेय, अमानुष, गेर इन्सानी, जो आदमी न हो। २ अतिमर्त्य, मानुषातिग, खारिज अज ताकत-बशरी, आसमानी, जो आदमीकी पहुँचका न हो।

अमाननीय, अमान्य देखो।

अमानस्य (सं० स्त्री०) मानसे मनसि साधु मानस-यत् ततो नञ्-तत्। १ दुःख, तकलीफ़। २ पीड़ा, दर्द।

“पीडाभाषाव्यथादुःखममानस्यं प्रवृत्तिजम्।” (अमर)

अमाना (हिं० क्रि०) १ पूरे तौरपर भर जाना, समाना, किसी चीजके भीतर किसी चीजका आ जाना। २ प्रफुल्लित होना, बह चलना, अभिमान

देखाना। (पु०) २ अन्नभवनका द्वार, बखारका दरवाजा, आना।

अमानितव्य, अमान्य देखो।

अमानिता (सं० स्त्री०) लज्जाशीलता, नम्रता, आजिजी, खाकसारी, गरीबी, तावेदारी।

अमानित्व (सं० स्त्री०) अमानिता देखो।

अमानिन् (सं० त्रि०) १ लज्जाशील, नम्र, आजिज, खाकसार, तावेदार, गरीब। (पु०-स्त्री०) अमानौ। (स्त्री०) अमानिनी।

अमानौ (हिं० स्त्री०) १ भूमिविशेष, कोई खास जमीन, जिस जमीनका सरकार ही जमीन्दार रता है और उसको ओरसे कलेक्टर इन्तिजाम करता है। २ भूमिका कार्य विशेष, जमीनका कोई खास काम। इसका प्रबन्ध अपने ही हाथमें रखते हैं, ठेके पर कभी नहीं छोड़ते। ३ भूमिकरकी प्राप्ति, मालगुजारी का वसूल। इसमें खराब हुई फसलको देख कुछ छोड़ देते हैं। ४ इच्छानुसारिणी क्रिया, जो कारवाई अपनी तबीयतके मुवाफिक की जाती हो।

अमानुष, अमानव देखो।

अमानुषी (हिं०) अमानव देखो।

अमानुष्य, अमानव देखो।

अमाप (सं० त्रि०) अमान, असीम, वेहद, जिसको कोई नाप न रहे।

अमामसी (सं० स्त्री०) अमा सह सूर्येण माः मासो वा चन्द्रो यस्याम्, बहुव्री० गौरादि० ङीप्। सूर्य और चन्द्रके एक साथ रहनेकी तिथि, अमावस्या।

अमामासौ (सं० स्त्री०) मास इति माः एव इति, मस् स्वार्थे अण्। अमामसी देखो।

‘अमावस्यायामासौ’ (शब्दार्णव)

अमाय (सं० त्रि०) नास्ति माया यस्य, नञ्-बहुव्री०।

१ मायाशून्य, कपटारहित, सादिक, सच्चा।

२ अविद्याहीन, जानकार। ‘स्नान्मायशाल्वरी कृपा। दशो वृक्षिः’ (हम) मायो पीताम्बरं अम्बरं वा तन्नास्ति यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ पीताम्बरशून्य, वस्त्रशून्य, पीताम्बर न पहने हुआ, जिसके पास कपड़ा न रहे। ‘मायः पीताम्बरं रेखरे’ (विश्व) मायो मानं स नास्ति यस्य। ४ परि-

माणशून्य, इत्यत्तारहित, वैमिकदार, वेहद, जिसको कोई नाप न रहे। (स्त्री०) ५ ब्रह्म, परमेश्वर।

अमायत् (सं० त्रि०) माः मानं तां यन् प्राप्नुवन्; मा-इण्-शब्द, ततो नञ्-तत्। अपरिमित, वेहद, जिसको कोई नापजोख न रहे।

अमाया (सं० स्त्री०) १ स्वप्नका अभाव, सुगलतेकी अदम-मौजूदगी। २ सत्यका ज्ञान, रास्तीका इल्म। ३ शीघ्र, आर्जव, रास्तबाजी सदाकत, सचायी। (हिं० वि०) अमाय देखो।

अमार (सं० पु०) १ जीवन, जिन्दगी, न मरनेकी हालत। (हिं० पु०) २ अम्बार, अनाज रखनेकी जगह। यह अरहरके सरकण्डोंकी टट्टीसे घेर छाया और नीचे ऊपर भुस डाल बीचमें अनाजसे भरा जाता है। ३ अमड़ा।

अमारग (हिं०) अमार्ग देखो।

अमारी (अ० स्त्री०) हाथीका हीदा। इसपर छायाके लिये मण्डप बंधा रहता है।

अमार्ग (सं० पु०) मार्गका अभाव, राहकी अदम-मौजूदगी। (त्रि०) २ मार्गरहित, बेराह, जहाँ चलनेको जगह न मिले।

अमार्गित (सं० त्रि०) अनिरोक्षित, जो आखेट न किया गया हो, तलाश न किया हुआ, जिसके पीछे शिकार करनेको न पड़ चुके।

अमार्जित (सं० त्रि०) मृज-क्त-इट् वृद्धिः, ततो नञ्-तत्। अशुद्ध, अपरिष्कृत, नापाक, मैला, जो साफ न किया गया हो।

अमाल (अ० पु०) शासक, अधिकारी, हाकिम।

अमालनामा (अ० पु०) १ कर्मचारीके उत्तम-अधम कार्य लिखनेका पुस्तक, जिस किताब या रजिष्टरमें नौकरीके भले-बुरे काम लिखे जायें।

अमावट (हिं० स्त्री०) अमरस, आमका सूखा रस। आम अच्छीतरह पक जानेपर रसको निचोड़ते और कपड़ेपर फैलाकर सुखा लेते हैं। यह खानेमें मजेदार लगता और चटनी वगैरहके काम आता है।

अमावना, अमाना देखो।

अभावस (हिं०) अभावसा देखो।

अमावसी (सं० स्त्री०) अमा सह वसतोऽस्यां चन्द्राकौ ; अमा-वस-अप्-घञ् वा षष्ठो० साधु०, ततो गौरा० ङीप् । अमावस्या ।

अमावसु (सं० पु०) १ उर्वशी-गर्भसे उत्पन्न इय पुरुरवाके पुत्र । यह सात भाई रहे । यथा—आयु, अमावसु, विभायु, दृढायु, वनायु एवं शतायु । (हरिवंश)
२ चन्द्रवंशीय कुशके चतुर्थ पुत्र । यह वसु एवं कुशिक नामसे भी प्रसिद्ध रहे । (विष्णुपुराण)

अमावस्या, अमावास्या (सं० स्त्री०) अमा सह वसतोऽस्यां चन्द्राकौ, अमा-वस अधिकरणे ण्यत् निपातनात् ङस्त्वोपि । कृष्णपक्षको पन्द्रहवीं तिथि । शास्त्रकारगण कहते हैं, कि अमावस्याके दिन एकही राशिमें सूर्य ऊपर और चन्द्रमा नीचे रहता है । वह लोग यह भी कहते हैं, कि अमावस्या तिथिको चन्द्र सूर्यकी किरणसे आच्छन्न रहता है, इसीसे उसे कोई देख नहीं सकता ।

‘अमावस्यालमावास्या दर्शः सूर्यन्दुसङ्गमः ।’ (अमर)

‘सूर्याचन्द्रमसोर्ध परः सन्निकर्षः सामावासेति ।’ (गोभिल०)

‘परः सन्निकर्षः उपर्यधोभावापन्न-समसूत्रपातन्यायेनैकराष्ट्रवच्छेदेन महावस्थानरूपः ।’ (आर्त०)

विष्णुपुराणके दूसरे अंशके बारहवें अध्यायमें लिखा है, कि कृष्णपक्षमें देवगण और पित्रगण चन्द्रका सुधा पान करते हैं । अन्तमें जब एक कला बाकी रह जाती है, तब सूर्य सुषुम्ना नान्दी रश्मिद्वारा उन्हे फिर परिपुष्ट कर देते हैं ।

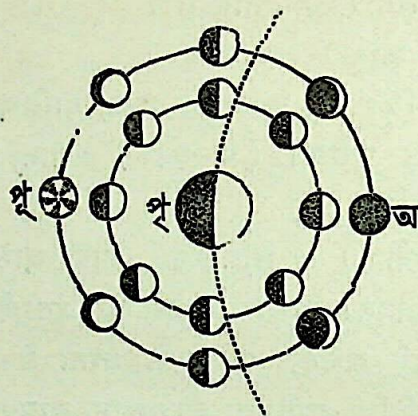
जब दो कला बाकी रह जाती हैं, उस समय चन्द्र-अमा नान्दी सूर्यरश्मिमें प्रवेश करता है, इसीसे उस दिनको अमावस्या कहते हैं ।

‘अमाख्या रश्मी वसति अमावस्या ततः श्रुता ।’ (विष्णुपुराण)

अमावस्याके दिन अहोरात्र चन्द्र पहले जलमें, उसके बाद लतामें, फिर अन्तको सूर्यमण्डलमें प्रवेश करता है ; इसीसे लता वा लता-पत्र आदि तोड़नेसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है ।

अमावस्या तिथिमें चन्द्र और सूर्य किस तरह अवस्थान करते हैं, उसे ऊपरके गोभिल-सूत्रमें, आर्तने

खण्ड भावसे प्रकाश नहीं किया । चन्द्र, सूर्य और पृथिवी इन तीनोंका समसूत्रपात पड़नेसे उस समय चन्द्र यदि पृथिवी और सूर्यका मध्यवर्ती रहे, तो उसी दिन अमावस्या होती है । इस चित्रमें गू-से सूर्यमण्डल,



अ-से अमावस्याका चन्द्र, गू-से पूर्णिमाका चन्द्र और गू-से पृथिवी समझना चाहिये । विन्दु-विन्दु रेखाद्वारा वृत्तका जो कुछ अंश दिखाया गया है, उस पथद्वारा पृथिवी सूर्यके चारों ओर घूमती है । इधर चन्द्रमण्डल फिर उसीके साथ साथ पृथिवीके चारों ओर घूमता है । इसीसे सूर्य, पृथिवी एवं चन्द्र—तीनों प्रति मास दो बार समसूत्रमें अवस्थान करते हैं । उसमें जिस दिन सूर्य और पृथिवीके मध्यस्थलमें चन्द्र आ पड़ता है, उस दिन अमावस्या होती है, एवं जिस दिन सूर्य और चन्द्रके मध्यस्थलमें पृथिवी आ पड़ती है, उस दिन पूर्णिमा होती है । ऐसा होनेका कारण यही है, कि चन्द्र स्वयं ज्योतिर्मय ग्रह नहीं है । उसमें सूर्यकिरण प्रतिबिम्बित होनेसे ही प्रकाश पंडुचता है । इसीलिये चन्द्रमाकी जो दिक् सूर्यकी ओर घूमती है, केवल उसी ओर धूप जाती है, दूसरी ओर अन्धकारमें छिपी रहती है । अतएव चन्द्रमण्डलका जो अंश पृथिवी और सूर्य इन दोनोंकी ओर घूमता रहता है, केवल उसी अंशको हमलोग देखते हैं । इस चित्रमें अ-अमावस्याका चन्द्र है । वह सूर्य एवं पृथिवीका मध्यवर्ती हो गया है, इसीसे उसका जो अंश पृथिवीकी ओर फिरा हुआ है उसमें सूर्यका किरण नहीं लगती, और हम लोग

चन्द्रको देख नहीं सकते। इसके अतिरिक्त अमा-
वस्याको चन्द्रमण्डल पृथिवी-निकटसे और कहीं
अन्तर्हित तो नहीं हो जाता। सूर्यग्रहण लगते
समय चन्द्रमण्डल ठीक पृथिवी और सूर्यके मध्यस्थलमें
रहता है। इसलिये चन्द्रकी छाया पड़नेसे हमलोग
सूर्यके कुछ अंशको थोड़ी देरतक नहीं देख सकते।
फिर जब चन्द्रमा हट जाता, हैं तब सूर्यमण्डल
दिखाई पड़ने लगता है। इस तरह चन्द्रका छाया-
पतन ही सूर्यग्रहणका कारण है। अमावस्याके दिन
सूर्य, चन्द्र और पृथिवी समसूत्रमें रहते हैं, और
चन्द्रमण्डल दोनोंके बीचमें आ जाता है, इसीसे
सूर्यग्रहण होता है, तदभिन्न दूसरी तिथिमें सूर्यग्रहण
नहीं पड़ सकता।

इस जगह प्रश्न हो सकता है, कि प्रति अमा-
वस्याको ही सूर्य, चन्द्र और पृथिवी समसूत्रमें
रहती है और चन्द्रमण्डल भी दोनोंके मध्यस्थलमें
आ पड़ता है, फिर प्रत्येक अमावस्याके दिन सूर्य-
ग्रहण क्यों नहीं होता? उसका कारण यह है, कि
इस चित्रपर पृथिवी और चन्द्रका भ्रमणपथ जिस
प्रकार समतल क्षेत्रमें दिखाया गया है, वस्तुतः आकाशमें
वैसा समतल नहीं आता। यदि वह समतल
होता, तो प्रतिमास ही एक बार सूर्यग्रहण पड़ता।
चन्द्रका भ्रमणपथ पृथिवीके भ्रमणपथकी ओर कुछ
झुका हुआ है। बारीक हिसाब लगानेसे इस वक्रताके
कोणका परिमाण $5^{\circ} 17'$ होता है; और चन्द्र-
मण्डल घूमते घूमते कभी पृथिवीवाले भ्रमणपथके
ऊपर और कभी नीचे आ जाता है, इसीसे जिस समय
चन्द्र पृथिवीवाले भ्रमणपथके ऊपर आ तिरछे पार
होता है, उस दिन अमावस्या होनेसे सूर्यग्रहण लगता
है।

चन्द्रके आकर्षणसे समुद्रका जल स्फोट हो जाता
है, इसीसे गङ्गा आदि नदियोंमें उस समय जुआर
उठता है। अमावस्या एवं पूर्णिमाके समय समुद्र-
का जल अत्यन्त स्फोट होता, इसीसे उस समय
बाढ़ आती है। किसी स्थानकी द्राघिमाके ऊपर
जब चन्द्र उपस्थित होता है, तब उसके तीन घण्टे

बाद जुआर आता है। चन्द्रको ओर वाली द्राघिमा
एवं उसकी विपरीत दिशामें भी जुआर होता है।
चन्द्रको एक बार घूमकर फिर अपनी द्राघिमाको पड़-
नेमें २४ घण्टे ५० मिनट लगते हैं, सुतरां १२ घण्टे
२५ मिनट बाद अहोरात्रमें दो बार जुआर
आता है।

अमावस्यादन्तरस्याम् । पा० १।१।२२। अमा इस उपपदके
परस्थित वस धातुसे उत्तर अधिकरण वाच्यमें ख्यत् प्रत्यय
होता है। वृद्धि होनेपर निपातनमें विकल्पसे झ्रस्व
भी होता है। “हृषी सत्यां पाचिकी झ्रस्व निपात्यते। अमा
सह वसतोऽस्याचन्द्राकीं अमावास्या अमावस्या ।” (सि० कौ०)।

“अमावस्या गुरुं हन्ति शिवं हन्ति चतुर्दशी ।” (मनु ४।१।२४)

अमावस्याके दिन पड़नेसे गुरु और चतुर्दशीके
दिन पड़नेसे छात्र मर जाता है।

शास्त्रकारोंने विशेष कर्तव्य कर्मके लिये अमा-
वस्याको कई प्रकारसे विभक्त किया है। चतुर्दशी-
युक्त अमावस्याका नाम सिनीवाली और त्रययुक्त अमा-
वस्याका नाम कुड्ड है। अमावस्याके दिन तेल लगाना,
बाल बनवाना, मांस-मछली खाना और स्त्रीसंभोग
करना मना है। इस दिन धान्य और वृणादि काटना
न चाहिये। पुष्या नक्षत्र वा जन्म नक्षत्रमें; व्यतीपात
वा वैधृति योगमें अमावस्या होनेसे उस दिन नदी-
स्नान करनेसे सात कुल पवित्र हो जाते हैं। मङ्गल-
वारकी अमावस्याको नदी स्नान करनेसे सहस्र गोदान-
का फल मिलता है। सोमवारको सिनीवाली वा कुड्ड
अमावस्या हो, तो मौन रह स्नान करनेसे सहस्र
गोदानका फल होता है। मुख्य चान्द्र पौषको अमा-
वस्याको यदि रविवार एवं व्यतीपात योग और श्रवणा
नक्षत्र हो, तो उसका नाम अर्धोदययोग है। यह
योग कभी कभी आता है। अर्धोदय देखो।

अमावस्या ही आषाढाका प्रशस्त काल है, इसलिये
प्रतिमासका कृष्णपक्षनिमित्तक पार्वणश्राद्ध अमा-
वस्याके दिन हो करना होता है। अमावस्याके
आषाढाका प्रशस्तकाल अपराह्न है। दिनको पांच
भाग करनेसे उसके चतुर्थ भागका नाम अपराह्न है।
उसी समय पार्वणश्राद्ध करना उचित है। दोनों

दिनों मुख्य अपराह्न न मिलनेसे दूसरे दिन अष्टम एवं नवम सुहृतरूप गौण अपराह्नमें भी आहका विधान मिलता है। सौर आश्विन मासकी अमावस्या-को महालया कहते हैं। महालयामें आह करनेसे उन्नीस पिण्ड देना पड़ता है। उसका नाम षोडश पिण्डदान है। कार्तिक मासकी अमावस्याका नाम दीपान्विता है। दीपान्विताको आहके बाद उत्का-दान करना पड़ता है। प्रति मासमें अमावस्याका एक-एक व्रत भी प्रचलित है।

अमावासी, अमावस्या देखो।

अमावास्याक (सं० त्रि०) अमावस्याकी रात्रिको उत्पन्न हुआ, जो अमावसकी रातको पैदा हुआ हो।

अमावास्या, अमावस्या देखो।

अमाष (सं० त्रि०) मुद्गविहीन, शिम्बिकशून्य, लोबियाकी फली न रखनेवाला, जिसमें लोबियाकी छिया न रहे।

अमाह (हिं० पु०) नेत्ररोगविशेष, नाखूना। इससे आंखमें लाल मांस उभर आता है।

अमाही (हिं० वि०) नेत्ररोग सम्बन्धीय, जो नाखू-नेसे तन्मूलक रखता हो।

अमिट (हिं० वि०) १ न मिटनेवाला, जो टिका रहता हो। २ अवश्यभावी, जिसके होनेमें फर्क न पड़े।

अमित (सं० त्रि०) न मितम्, नञ्-तत्। १ अपरि-मित, इत्यन्तारहित, बेहद, जिसको कोई नाप-जोख न रहे। २ अज्ञात, नादान। ३ अनवधारित, भूला हुआ। ४ अपरिष्कृत, जो साफ न किया गया हो। ५ अल-ङ्कार-विशेष। केशवके मतानुसार साधन जब साधककी सिद्धिका फल उठाता, तब अमितालङ्कार लगता है।

अमितक्रतु (वै० पु०) १ असीम प्रज्ञा-सम्पन्न व्यक्ति, जिस शरणाकी अलङ्कार ठिकाना न लगे। २ असीम शक्तिशाली, बेहद ताकत रखनेवाला।

अमितगतिसूरि (सं० पु०) एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। विक्रमसंवत् १०२५के कुछ पहले श्रीअमितगतिसूरिका जन्म हुआ था।

आचार्यवर्य अमितगति बड़े भारी विद्वान् और कवि थे। इनकी असाधारण विद्वत्ताका परिचय पानेको इनके ग्रन्थोंका भलीभांति मनन करना चाहिये। रचना सरल और सुखसाध्य होने पर भी बड़ी गंभीर और मधुर है। संस्कृत भाषापर इनका अच्छा अधिकार था। इन्होंने अपने धर्मपरोक्षा नामक ग्रन्थको केवल दो महीनेमें रचके तयार किया जिसे वांचकर लोग मुग्ध हो जाते हैं। यथा :—

“अमितगतिरिवेदं खलु मासद्येन

प्रथितविशदकीर्तिः काव्यमुद्धतदोषम्।”

धर्मपरोक्षाके अतिरिक्त अमितगतिके बनाये हुए निम्नलिखित ग्रन्थोंका भी उल्लेख मिलता है—
१ सुभाषितरत्नसन्दोह, २ आवकाचार, ३ भावना-हात्रिंशति, ४ पञ्चसंग्रह, ५ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति, ६ चन्द्र-द्वीप प्रज्ञप्ति, ७ सार्द्धद्वयद्वीपप्रज्ञप्ति, ८ व्याख्याप्रज्ञप्ति, ९ योगसारप्राप्त्यत।

पञ्चसंग्रहमें अमितगतिकी प्रशस्ति इस प्रकार लिखी है—

“श्रीमाधुराणामनवद्युतीनां संघोऽभवदहत्तित्विभूषितानाम्।

हारो मयीनामिव तापहारी सुवानुसारी शशिरश्मिशुभः ॥ १ ॥

माधवसेन गणो गणनीयः शुद्धतमोऽजनि तत्र जनीयः।

भूयसि सत्यवतीव शशङ्कः श्रीमति सिन्धुपतावकनङ्गा ॥ २ ॥

शिष्यस्तस्य महात्मनोऽमितगतिर्माँचार्यार्थनामयधि-

रितच्छास्त्रमशेषकारं समितिप्रख्यापनायाहृत।

वीरसेव जिनेश्वरस्य गणपद्व्यात्मनां व्यापको-

दुर्गारम्भरदनिदारुणहरिः श्रीगौतमः सत्तमः ॥ ३ ॥

यदत्र सिद्धान्तविरोधि वद्धं याद्वं निराकृत्य तदेतदर्थैः।

गृह्णन्ति लोका स्तुपकारि यवात्सर्वं निराकृत्य फलं विनयम् ॥ ४ ॥

अनीश्वरो केवलमर्थनौधं (यावद्विरं) तिष्ठति सुक्तिशक्ती।

तावद्वरायामिदमत्र शास्त्रं सुयाच्युभं कर्मनिराशकारि ॥ ५ ॥”

(पञ्चसंग्रह)

इसका सारांश यह है—जिस समय महाराज सिन्धुपति (भोजके पिता) पृथ्वीका पालन करते थे, उस समय कीर्तिशाली माधुरसंग्रहमें एक माधवसेन नामके आचार्य हुए, जिनके गौतमगणधरके समान विद्वान् शिष्य अमितगतिने यह पञ्चसंग्रह ग्रन्थ सम्पूर्ण कर्मसमितियोंको प्रख्यापनाके लिये बनाया।

अमितगतिने संवत् १०५०में सुभाषितरत्नसन्दोह बनाते समय सुज्ञका राज्यकाल बताया और

अपने गुरुके समयमें सिंधुल महाराजका राज्य बत-
लाया है। इससे यह निश्चय होता है कि, मुञ्जके
पहले भी सिंधुल राज्य कर चुके थे। फिर उनके पीछे
भी उनका राजा होना सिद्ध होता है।

धर्मपरीक्षाको प्रशस्तिके कुल श्लोक उद्धृत करते हैं—

“सिद्धान्तपाथोनिधिपारगामी

श्रीवीरसेनोऽनि सूरिवर्यः ।

श्रीमायुराणां यमिनां वरिष्ठः

कषायविध्वंसविधौ पटिष्ठः ॥ १ ॥

असाशेषध्वान्तवर्त्मनस्वी

तस्मात्सूरिर्देवसेनोऽजनिष्ठः ।

लोकोद्योती पूर्वशैलादिबार्कः

शिष्टाभीष्टः स्थेयसोऽपास्तदोषः ॥ २ ॥

भासिताखिलउदार्थसमूहो

निर्मलोऽमतिगतिर्गणनाथः ।

वासरो—दिनसंघेतिव—तस्मा

ज्वायतेऽथ कामलाकरवोधी ॥ ३ ॥

नेमिषेणगणनाथकस्तः

पावनं वृषमधिष्ठितो विभुः ।

पार्वतीपतिरिवाकमन्मथो

योगगोपनपरो गणार्धितः ॥ ४ ॥

कोपनिवारी शमदमधारी माधवसेनः प्रणतरसेनः ।

सोऽमवदत्ताङ्गलितमदोक्षा यो यतिसारः प्रशमितसारः ॥

धर्मपरीक्षामकृतवरिष्ठां धर्मपरीक्षामखिलशरण्याम् ।

शिष्टवरिष्ठोऽमितगतिनामा तस्य पटिष्ठोऽनघगतिधाम्ना ॥”

इसका सारांश यह है कि माथुरसंघके सुनियोंमें

श्रीवीरसेन नामके एक श्रेष्ठ आचार्य हुए और उनके
शिष्योंमें क्रमसे देवसेन, अमितगति (प्रथम) नेमि-
षेण, और माधवसेन नामके सुनि हुए। अमितगति
इन्हीं माधवसेनके शिष्य थे।

अमिततेजस् (सं० त्रि०) असीम तेज सम्पन्न, वेहद
रौशनी रखनेवाला, जिसकी महिमा या शान्का
झोर न मिले।

अमितद्युति (सं० त्रि०) असीम प्रभान्वित, वेहद
चमक-दमक रखनेवाला।

अमितध्वज (हिं० पु०) चन्द्रवंशीय धर्मध्वजके पुत्र।

अमितविक्रम (सं० पु०) अमिता अपरिच्छिन्ना

विक्रमास्त्रयः पादनिःक्षेपरूपा यस्मिन् अमितः विक्रमः शौर्यं होनेकी शक्त

मस्येति वा, बहुव्री०। १. विष्णु। (त्रि०) २ बहु विक्रम-
शाली, अधिक शौर्य-सम्पन्न, जो निहायत बहादुर हो।
अमितवीर्य (सं० पु०) असीम शक्तिसम्पन्न, वेहद
कुवत रखनेवाला।

अमिताचर (सं० त्रि०) अनियत अचर-विशिष्ट,
जिसमें गैर सुकरर हफ़ा रहे।

अमिताभ (सं० पु०) १ सावर्णि मन्वन्तरकी द्वितीय
और धैवत मन्वन्तरकी प्रथम त्रेणीके देवता। २ कोई
ध्यानी बुद्ध। (त्रि०) ३ असीम प्रभासम्पन्न, जिसकी
चमक दमक वेहद रहे।

अमितायुस् (सं० पु०) कोई ध्यानी बुद्ध।

अमिताशन (सं० पु०) अमितं अश्नाति प्रलय समये
अमित-अश-लुप्त। १ सर्वभक्षक परमेश्वर। २ विष्णु।
(त्रि०) अमितं अशनं यस्य, बहुव्री०। ३ अपरिमित-
भोजी, अतिभोजी, वेहद खानेवाला, जिसके खानेका
ठिकाना न लगे।

अमितौजस् (सं० त्रि०) अदन्त चुरा०, औज-असुन्
ततो नज-बहुव्री०। अपरिमित बलशाली, वेहद
कुवत रखनेवाला।

अमित्र (सं० स्त्री०) अम-उष्-इत्। असुहृत्, शत्रु,
दुश्मन्, अद्रू।

अमित्रखाद (सं० पु०) शत्रुको चबा जानेवाले इन्द्र।

अमित्रगणसूदन (सं० त्रि०) शत्रुका दल नष्ट करने-

वाला, जो दुश्मन्का गिरोह बरबाद कर डालता हो।

अमित्रघात (वै० त्रि०) १ शत्रुको नष्ट करनेवाला,
जो दुश्मन्को कत्ल कर रहा हो। (पु०) २ मौर्य-
वंशीय एक राजाका नाम (Amitrachates)।

अमित्रघातिन् (सं० त्रि०) अमित्रघात देखो।

अमित्रघ्न (सं० त्रि०) अमित्रघात देखो।

अमित्रजित् (सं० पु०) अमित्रं शत्रुं जयति, जि-
क्विप्। १ शत्रुपराजयकारी, दुश्मन्को जीतनेवाला।

२ इक्ष्वाकुवंशवाले सुवर्णराजके पुत्र। मत्स्यपुराणमें
इनका नाम अमन्त्रजित् लिखा, किन्तु विष्णुपुराणमें
'अमित्रजित्' ही मिला है।

अमित्रता (सं० स्त्री०) शत्रुता, दुश्मनी, दोस्द न

अमित्रदमन (वै० त्रि०) शत्रुको हानि पहुंचाने-
वाला, जो दुश्मनको चोट दे रहा हो।
अमित्रसह (सं० त्रि०) अमित्रं शत्रुं सहते, अमित्र-
सह-अच्। रिपुजयशील, बलवान्, दुश्मनको जोतने-
वाला, जोरदार।
अमित्रसाह (सं० त्रि०) अमित्रं सहते, अमित्रसह-
अण्। अमित्रसह देखो।
अमित्रसेना (सं० स्त्री०) शत्रुसेना, दुश्मनकी फौज।
(अर्थसं० ३।१।१)
अमित्रहन् (वै० पु०) शत्रुको नष्ट करनेवाला, जो
दुश्मनको कत्ल कर रहा हो।
अमित्रायुध (वै० त्रि०) शत्रुको अभिभूत करते हुआ,
जो दुश्मनको दबा रहा हो।
अमित्रिन् (सं० त्रि०) विपक्षी, विद्वेषी, दुश्मनी
रखनेवाला। (स्त्री०) अमित्रिणी।
अमित्रिय (सं० त्रि०) प्रतिकूल, खिलाफ।
अमित्रयः अमित्रिय देखो।
अमिथित (वै० त्रि०) १ अप्रकाशित, जो जाहिर
न हो। २ अप्रकोपित, जो नाराज न हो।
अमिथ्या (सं० अव्य०) सत्य-सत्य, सच-सच, सच्चे-
पनसे।
अमिन् (सं० त्रि०) अम अस्यास्ति, अम-इनि।
१ गमनशील, चलनेवाला। २ रोगी, पीड़ित, बीमार,
जिसके दंढे रहे।
अमिन (सं० त्रि०) मि हिंसा वधकर्षं वा, बाहुल्य-
कात् औणादिक नक्-मिनम् ततो नञ्-तत्।
१ अहिंसित, जो विनष्ट न हो, न मारा हुआ,
जो बरबाद न हो। २ भीषण, खूंखार।
३ अपरिमाण, बेमिकदार, जिसकी कोई नाप-जोख
न रहे।
अमिनत् (वै० त्रि०) १ आघात न करनेवाला,
जो चोट न पहुंचा रहा हो। २ अविदारित, जो
चोट न खाये हो।
अमिय (हिं० पु०) अमृत, आब-हयात।
अमिय-मूरि (हिं० स्त्री०) अमृतमूल, सज्जोवनी
बूटी, जिस जड़को खाकर सुर्दा जो उठे।

अमिरतो, इमरती देखो।
अमिल (हिं० त्रि०) १ न मिलनेवाला, जो दख-
याब न हो। २ पृथक्, बेमेल।
अमिलतास, अमिलतास देखो।
अमिलपट्टो (हिं० स्त्री०) चौड़ी तुरपन, किसी
किस्मकी सिलाई।
अमिलातक (सं० स्त्री०) बेलोका फूल।
अमिलातका (सं० स्त्री०) महाराजतरुणीपुष्पवृक्ष,
चमेली।
अमिलित (सं० त्रि०) पृथक्, न मिला हुआ।
अमिलिया पाट (हिं० पु०) एक प्रकारका पटसन।
अमिलो, इमली देखो।
अमित्र (सं० त्रि०) १ संयोगशून्य, न मिला हुआ।
२ दूसरेकी अभिसन्धिसे रहित, जिसमें दूसरेकी
शिरकत न रहे।
अमिश्रण (सं० स्त्री०) मिश्रणका अभाव, मिला-
वटकी अदम मौजूदगी।
अमिश्रराशि (सं० पु०) एकाईसे हो पृथक्
पृथक् किया जानेवाला राशि, जिस जिनसमें कुछ
मिला न रहे। गणितशास्त्रमें एकसे नौ तक संख्या
अमिश्र राशि कहलाती है।
अमिश्रणौय (सं० त्रि०) मिश्रणके अयोग्य, मिला-
नेके नाकामिल, जो मिल न सकता हो।
अमिश्रित (सं० त्रि०) मिश्रणशून्य, बेमिलावट,
जिसमें कोई दूसरी चीज मिली न रहे।
अमिष सं० स्त्री०) अम भोगे कर्मणि टिषच्।
१ लौकिक सुख, दुनियाकी आराम। २ भोग्य वस्तु,
मजा लेने लायक चीज। ३ अकपट, सत्य, ईमान-
दारो, सादालोही। ४ असत्य, बेईमानी। (त्रि०)
नास्ति मिषच्छलं यस्य यत्र वा, नञ्-बहुव्री० ५ छल-
शून्य, धोका न देनेवाला।
अमो (हिं० पु०) अमृत, आब-हयात।
“अमो पियावत मान विन
रहिमन हमें न सुहाय।” (रहीम)
अमोकर (हिं० पु०) अमृत बरसानेवाला, चन्द्रमा।
अमोत (सं० त्रि०) १ अमो वधे कर्मणि क्त, ततो नञ्-

तत् । १ अहिंसित, जो मारा न गया हो । (हिं० पु०) २ शत्रु, दुश्मन्, जो मित्र न हो ।
 अमीतवर्ण (दै० त्रि०) १ अपरिमित वर्षविशिष्ट, जिसमें बेहद रङ्ग रहें । २ अस्नानवर्णयुक्त, जिसका रङ्ग फीका न पड़े ।
 अमीन (अ० पु०) न्यायालयके वाद्व्यवहारीकर्मका अधिकारी, जिस कचहरीवाले हाकिमके हाथ बाहरी इन्तजाम रहे । घटनास्थल विशेषका अनुसन्धान लेना, भूमि नापना, विच्छेद कराना, कुरकौकी चोज नौलामपर चढ़ाना आदि अमीनका काम है ।
 अमीमांसा (सं० स्त्री०) अध्याहार वा अनुसन्धानका अभाव, बहस या तलाशकी अदम-मौजूदगी ।
 अमीमांस्थ (सं० त्रि०) अध्याहार वा अनुसन्धान लगानेके अयोग्य, जो तलाश या बहस करने काबिल न हो ।
 अमीर (अ० पु०) १ अधिकारी, हाकिम । २ धनवान्, दौलतमन्द, जिसके पास खूब रुपया-पैसा रहे । ३ अक्षपण, सखी । ४ अफगानस्थानके बादशाहकी उपाधि । अफगानस्थानके समग्र नृपति अमीर हों कहलाते हैं ।
 अमीराना (अ० वि०) अमीर-जैसा, जिससे दौलत-मन्दो भलके ।
 अमीरी (अ० स्त्री०) १ धनाढ्यता, ऐश्वर्य, दौलत-मन्दी । २ उदारता, सखावत । (वि०) ३ अमीर-जैसा, अमीराना, जो धनाढ्यके योग्य हो ।
 अमीव (सं० स्त्री०) अम रोगी ईव । 'अमीरवः' ईव प्रत्ययः । (निरुक्त) १ रोग, बीमारी । २ हिंसित, कत्ल । ३ पाप, इजाब । ४ दुःख, तकलीफ । ५ प्रेत, शैतान् ।
 अमीवचातन (सं० त्रि०) अमीव रोगं चातयति, चत पाचने णिच्-लुप् । १ रोगनाशक, बीमारो मिटाने-वाला । २ शत्रुघातक, दुश्मनको मारनेवाला । (स्त्री०) गौरादि० डीप् । अमीवचातनौ ।
 अमीवहन् । अमीवचातन देखो ।
 अमीवा (सं० स्त्री०) अमीव देखो ।
 अमुक (सं० त्रि०) अदस्-टेरक्च उः मश्च । अदस् शब्दके अर्थवाला, फलान्, कोई ।

या चीजका नाम नहीं लिया जाता, तब उसको जगह अमुक शब्द आता है ।
 अमुक्त (सं० त्रि०) १ सम्बद्ध, बंधा हुआ, जो खुला न हो । २ जन्ममरणसे आबद्ध, जिसे पैदा होने और मरनेसे कुटकारा न मिला हो । (स्त्री०) ३ अस्त्र, हथियार । जिसे हाथमें पकड़ रखते और मारते समय भी नहीं छोड़ते, उस हथियारको अमुक्त कहते हैं । जैसे—कुतो, कटारी, तजवार ।
 अमुक्ति (सं० स्त्री०) १ मोक्षका अभाव, कुटकारिका न मिलना । २ स्वतन्त्रताका अभाव, आज्ञादौकी अदम-मौजूदगी ।
 अमुख (सं० त्रि०) मुखरहित, वेदहन, जिसके मुंह न रहे ।
 अमुख्य (सं० त्रि०) अप्रधान, अधोन, मातहत, जो बड़ा न हो ।
 अमुग्ध (सं० त्रि०) अनाकुल, अव्यग्र, घबराया न हुआ, जो फरेफूता न हो ।
 अमुच् (वे० स्त्री०) अमुक्ति देखो ।
 अमुचौ (वे० स्त्री०) चुड़ैल, डाइन ।
 अमुतस् (सं० अथ०) अमुभात्, अदस्-तसिल् उः मश्च । १ वहांसे, दूसरी दुनियासे, बिहिश्तसे । ३ इस-पर, इससे । ४ यहांसे, आगे ।
 अमुत्र (सं० अथ०) अमुष्मिन्, अदस्-त्रल् उः मश्च । १ वहां, उस स्थानपर । २ परकालमें, आकितपर । ३ यहां, इस जगह ।
 अमुत्रत्य (सं० त्रि०) परकालोन, आयन्दा हालतसे तयत्तक, रखनेवाला, जो दूसरी दुनियाका हो ।
 अमुत्रभूय (सं० स्त्री०) अमुत्रस्य भावः, अमुत्र-भू भावे क्यप् । १ परकालका धर्म, उक्तेका फज । २ मृत्यु, मौत ।
 अमुथा (सं० अथ०) अमुना प्रकारेण, अदस्-थाल् । १ इस प्रकार, इसतरह । २ उस प्रकार, उस तरीकेसे, वैसे ।
 अमुद्रच् (सं० त्रि०) अमुमश्चति, अदस्-अच् गतो क्तिप् न लोपः, अद्रादेशः उः मश्च । अदस् शब्दका अर्थवाला, फलान्, कोई । (स्त्री०) अमुद्रौचौ ।

अमुद्रञ्च (सं० त्रि०) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्चु पूजायां क्तिप्, न लोपाभावः अद्रादेशश्च। उसका पूजक, जो उसकी परस्तिश करता हो।

अमुमुयच् (सं० त्रि०) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्चु गती क्तिप् न लोपः अद्रादेशः अद्रेरपि उत्त्वमत्वे। अदस् शब्दका अर्थप्राप्त, वैसा, ऐसा। (स्त्री०) अमुमुयीचौ।

अमुमुयच्च (सं० त्रि०) अमुमञ्चति, अदस्-अञ्चु पूजायां क्तिप्, न लोपाभावः अद्रादेशः अद्रेरपि उत्त्वं मत्वञ्च। उसका पूजक, जो उसकी परस्तिश करता हो। (स्त्री०) डीप्। अमुमुयच्चौ।

अमुया (सं० अथ०) उस मार्गसे, उस तरीकेपर।

अमुहिं (सं० अथ०) उस समय, उस वक्त, तब।

अमुवत्, अदोवत् (सं० अथ०) अमुथेव, अदस्-वति। उसकी भाँति, फलां शख्स या चीज़की तरह।

अमुषिन् (सं० अथ०) परलोकमें, आक़िबतपर।

अमुथ (सं० त्रि०) प्रसिद्ध, मशहूर, जिसका नाम फैल पड़े।

अमुथकुल (सं० स्त्री०) पृषो० अलुक्, ६-तत्। १ प्रसिद्धकुल, मशहूर खान्दान्। (त्रि०) २ प्रसिद्ध कुलमें उत्पन्न, जो मशहूर खान्दान्में पैदा हो।

अमुथपुत्र (सं० पु०) पृषो० अलुक्, ६-तत्। प्रसिद्ध-वंश, कुलीन, खान्दानी शख्स।

अमुथायण, आमुथायण (सं० पु०) विख्यात वंशोत्पन्न अपत्य, मशहूर शख्सका बेटा।

अमूक (सं० त्रि०) १ जो मूक न हो, गूंगा न होनेवाला। २ वक्ता, जो बोल रहा हो। ३ वाचाल, बहुत बात करनेवाला। ४ प्रवीण, होशियार।

अमूढ (सं० त्रि०) १ अलुप्तसंज्ञ, बुद्धिमान, होशियार, जिसकी अक्ल गुम न पड़े। २ अकातर, जो घबराया न हो।

अमूढञ्च (सं० त्रि०) अमूमिव पश्यति असाविव दृश्यते वा, अदस्-दृञ्च अथवा दृश्-क्स सर्वनाम्नः आ अन्तादेशस्तु तो आकारस्य उत्त्वं दस्य मकारः। इसकी भाँति, ऐसा, इस तरहका, ऐसी शक्ल या किस्मवाला। (स्त्री०) अमूढ्यौ।

अमूढश्च, अमूढच देखो।

अमूढश्च, अमूढच देखो।

अमूर (सं० त्रि०) मूर्च्छ-क्तिप् मूः मूर्च्छा तस्या अभावः अमूः, अमूरस्तस्य कुञ्जादि र। १ अमूढ, जो बेवकूफ न हो। २ मोहशून्य, जो फरेफूता न हो।

अमूर्त (सं० त्रि०) मूर्च्छ-क्त छ लोपः, ततो नञ्-तत्। १ अवयवशून्य, आकार-रहित, अपरिच्छिन्न, परिमाणशून्य, बेअजो, बेशक्ल, बेमिकदार, जिसकी कोई सूरत न रहे। (पु०) २ शिव।

अमूर्तगुण (सं० पु०) अमूर्तस्य गुणाः, ६-तत्। अमूर्त आकाशादिका गुण विशेष, जो खास वस्त्वं बेशक्ल आसमान् वगैरहमें हो।

अमूर्तरजस्, अमूर्तरजस, कुशके कोई पुत्र। यह वैदर्भीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे।

अमूर्ति (सं० त्रि०) मूर्च्छ-क्तिन्, ततो नञ्-बहुव्री०। १ मूर्तिशून्य, आकृतिहीन, बेशक्ल, जिसकी कोई सूरत न रहे। (पु०) २ विष्णु। ३ गगनादि, आसमान् वगैरह। (स्त्री०) ४ आकार वा अवयवका अभाव, शक्ल या अजोकी अदम-मौजूदगी।

अमूर्तिमत् (सं० त्रि०) मूर्ति-मतुप्, ततो नञ्-तत्। मूर्तिरहित, बेशक्ल।

अमूर्तिमती (सं० स्त्री०) अमूर्तिमत् देखो।

अमूर्तिमान् (सं० पु०) अमूर्तिमत् देखो।

अमूल (सं० त्रि०) नास्ति मूलं यस्य, नञ्-बहुव्री०। आदिकारणशून्य, मूलरहित, असली सबब न रखनेवाला, जिसकी जड़ न रहे।

अमूलक (सं० त्रि०) नास्ति मूलं यस्य, कप्-बहुव्री०। अमूल देखो।

अमूला (सं० स्त्री०) अग्निशिखावृक्ष, करियारी।

अमूल्य (सं० त्रि०) मूल्यरहित, क्लायके अयोग्य, बेबहा, खरीदके नाकाबिल, जिसकी कोई कीमत न रहे।

अमृत्त (सं० त्रि०) मृज्यते स्म, मृज शुद्धी क्त, ततो नञ्-तत्। १ अशोधित, अप्रक्षालित, पाक न किया हुआ, जो धोया न गया हो। २ अपीड़ित, तकलीफ न दिया हुआ, महफूज, जिसे नुकसान न पहुँचा हो।

अमृतपाल (सं० स्त्री०) श्वेत उशीर, सफेद खस।

अमृत ((सं० त्रि०) मृद् मरणे निष्ठा-क्त अथवा औषादिक तन्, ततो नञ्-तत्। १ जीवित, जिन्दा, जो मरा न हो। २ मरणशून्य, जो मर न सकता हो। ३ सुन्दर, प्रिय, अभिलषित, खूबसूरत, प्यारा, पसन्दीदा। (पु०) ४ देवता, फरिश्ता। ५ इन्द्र। ६ सूर्य। ७ प्रजापति। ८ आत्मा, रुह। ९ विष्णु। १० शिव। ११ धन्वन्तरि। १२ पारद, पारा। १३ वनसुह, उड़द। १४ वाराहो नाम महाकन्द-शाक, जमीकन्द, सूरन। (स्त्री०) भावे क्त। १५ जल, पानी। १६ समुद्र नवनौतक यज्ञशेष द्रव्य। १७ स्वर्ण, सोना। १८ घृत, घी। १९ दुग्ध, दूध। २० अन्न, अनाज। २१ स्वादु द्रव्य, जायकेदार चीज। २२ रोगनाशक औषध, बीमारी मिटानेवाली दवा। २३ विष, जहर। २४ वत्सनाभ, बच्छनाग। २५ धन, दौलत। २६ मुक्ति, निजात। २७ अमरत्व, बका। २८ देवगण। २९ वैकुण्ठ, बिहिश्त। ३० सोमरस। ३१ जहरमोहरा। ३२ अयाचित दान, बेमांगी बख्शिष। ३३ भोजन, खुराक। ३४ मिठाई। ३५ भात। ३६ चमत्कार, चमक-दमक। ३७ वार और तिथि-घटित योग विशेष। ३८ वार और नक्षत्र-घटित योग विशेष। ३९ माहेन्द्र प्रभृति योगके अन्तर्गत योग विशेष। अमृतयोग देखो। ४० ब्रह्मा। ४१ पीयूष, आब-हयात। कहते हैं, कि पृथुराजके भयसे पृथिवीने गोरूप धारण किया था। उस समय देवतावोंने इन्द्रको वत्स बनाकर सुवर्ण-पात्रमें उसी गोरूपा पृथिवीको दूहा। उसमें पृथिवीके स्तनसे अमृत निकला था। पीछे दुर्वासाके शापसे वही अमृत समुद्रमें जा गिरा। शेषको देवासुरके क्षीरोदसागर मथनेपर अमृत पुनर्वार उत्थित हुआ था। लोगोंमें ऐसा प्रवाद पड़ गया है, कि अमृत पीनेसे जरा, मृत्यु प्रभृति कुछ भी नहीं होता।

‘अमृतं यज्ञशेषे स्वात् पीयूषे सन्निवि दते।’ (मंदिनी)

अमृतक (सं० स्त्री०) पीयूष, आब-हयात।

अमृतकान्दा (सं० स्त्री०) कन्दगुड़ची, कन्दगुर्व।

अमृतकर (सं० पु०) चन्द्र, चांद, जिस चीजकी किरणमें अमृत रहे।

अमृतकल्परस (सं० पु०) अजीर्णाधिकारका रस, जो रस बदहज्मीपर दिया जाता हो।

‘यद्यौ पारदगन्धौ च समानी कञ्जलीकृतौ।

तयोरसं विषं गृह्यं तत्समं टङ्गणं भवेत्।

भङ्गराजद्रवैर्भाव्यं त्रिदिनं यवतः पुनः ॥” (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अमृतकुण्ड (सं० स्त्री०) अमृतपात्र, जिस बरतनमें आब-हयात रहे।

अमृतकुण्डली (सं० स्त्री०) १ छन्दोविशेष। चान्द्रा-यणके अन्तमें हरिगीतिकावाले दो पद मिलनेसे यह छन्द बन जाता है। २ वाद्यविशेष, कोई बाजा।

अमृतकेशव (सं० पु०) अमृतप्रभाका बनवाया हुआ कोई मन्दिर। (राजतरङ्गिणी)

अमृतचार (सं० स्त्री०) नौसादर।

अमृतगति (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। इसके प्रत्येक चरणमें एक नगण, एक जगण; पुनः एक नगण और अन्तमें गुरु अक्षर रहेगा।

अमृतगर्भ (सं० पु०) अमृतं ब्रह्म गर्भे अभ्यन्तरे यस्य, बहुव्री०। १ जीव, जान। २ ब्रह्मा। ३ निद्रा, नींद। (त्रि०) ४ अमृतपूरित, आब-हयातसे भरा हुआ।

अमृतगुड़िका (सं० स्त्री०) अजीर्ण रोगकी वटी, जो गोली बदहज्मीपर दी जाती हो।

‘कुर्वाद्भस्विष्योषत्रिफलापारदः समैः।

भङ्गाम्बुमर्दि तैसुं द्रमात्रासतवटीं शुभाम् ॥” (रसेन्द्रचिन्तामणि)

अमृतचिति (सं० स्त्री०) अमरत्व प्रदान करनेवाली यज्ञीय ईंटका सच्चय।

अमृतज (सं० त्रि०) पीयूषसे उत्पन्न, जो आब-हयातसे पैदा हो।

अमृतजटा (सं० स्त्री०) अमृतमिव रोगनाशिनौ जटा यस्याः, बहुव्री०। जटामांसी, जटामासी।

अमृतजा (सं० स्त्री०) हरीतकी, हर।

अमृततरङ्गिणी (वै० स्त्री०) चन्द्रज्योत्स्ना, चांदनी, जिस चीजकी लहर आब-हयात-जैसी रहे।

अमृतता (सं० स्त्री०) अमृतत्व देखा

अमृतत्व (सं० स्त्री०) अमृतस्य भावः त्व । सुक्ति, निजात ।

अमृतदान (हिं० पु०) खाद्यवस्तु रखनेका पात्रविशेष, जिस बरतनमें खानेकी चीज़ रखें । यह ठकनेदार रहता है ।

अमृतदोधिति (सं० पु०) अमृतमिव दूधिकरौ दोधितिः किरणोऽस्य, बहुव्री० । चन्द्र, चांद, जिस चीज़का किरण अमृतकी तरह तबीयतको आसुदा करे ।

अमृतद्युति (सं० पु०) अमृतमिव दूधिकरौ द्युतिर्दीप्तिरस्य, बहुव्री० । चन्द्र, चांद ।

अमृतद्रव (सं० त्रि०) अमृत बरसानेवाला, जिससे अमृत टपके ।

अमृतधार (सं० त्रि०) अमृत बहानेवाला, जिससे अमृत बहे ।

अमृतधारा (सं० स्त्री०) अमृतस्य धारा इ-तत् । १ अमृतविस्तार, आब-हयातका फैलाव । २ छन्दो-विशेष । इसके प्रथम पादमें आठ और द्वितीय पादमें दश अक्षर रहते हैं ।

अमृतधुनि (हिं०) अमृतध्वनि देखो ।

अमृतध्वनि (वै० स्त्री०) छन्दोविशेष । इसमें २४ मात्रा और प्रथम एक दोहा लगायेंगे । इसतरह यह छः चरण रखता है । फिर प्रत्येक चरणमें तीन-तीन यमक पड़े, जिसपर द्वित्व वर्णका प्रयोग या भटका बैठेगा । प्रायः इसे वीररसपर ही अधिक लिखते हैं ।

अमृतनाद (सं० पु०) अमृतमिव आप्यायकः नादः स्वरो यस्य, बहुव्री० । कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत उपनिषद् विशेष ।

अमृतनादोपनिषत्, अमृतनाद देखो ।

अमृतनालिका (सं० स्त्री०) अमृतस्य स्वादुरसस्य नालीव, इ-तत् । १ कर्पूरनालिका विशेष । २ पक्वान्न-विशेष ।

अमृतप (सं० पु०) अमृतं समुद्रमन्यनोद्भूतं पाति रक्षति असुरेभ्यः, पा रक्षणे क । १ विष्णु । समुद्रमन्यन-से अमृत निकलनेपर देखीने लेना चाहा था । किन्तु विष्णुने मोहिनीमूर्ति बना उसी अमृतको

देवतावोंके लिये बचाया । इसीलिये विष्णुका नाम अमृतप अर्थात् अमृतके रक्षाकर्ता पड़ा है ।

अमृतं पिबति, अमृत-पा पाने क । २ देवता, जो अमृत पीता हो । (त्रि०) अमृततुल्य मधु प्रभृति पानकर्ता, जो आब-हयात जैसा शहद वगैरह पीता हो ।

अमृतपत्र (सं० पु०) अमृतस्य सुवर्णस्य पत्रः, अवि-नाशकत्वात् आत्मोय इव । १ अग्नि, आग । अग्नि सकल वस्तुको दग्ध और विनष्ट कर डालता, किन्तु स्वर्ण को कोई हानि नहीं पहुँचा सकता ; वरं उसका गुणागुण देखा देता है । इसीलिये अग्निको अमृतपत्र कहेंगे । २ स्वर्णवत् वर्णके पत्रसे युक्त पत्नी, जिस चिड़ियेके पर सोने-जैसे चमकें ।

अमृतप्राशघृत (सं० स्त्री०) काश प्रभृति नाना प्रकार रोगोंका मद्योपकारो घृत विशेष । चार सेर गायके घीको थोड़ी सी हल्दीके साथ मिला और मूर्च्छा करके पन्द्रह दिन रख दे । फिर काथके लिये सुपक्व आम-लकौका रस, भूमिकुष्माण्डका रस, जखका रस, वधिया बकरेके मांसका काथ और बकरीका दूध चार चार सेर ले । सात सात दिन बाद एक एक वस्तुको घीके साथ पाक करे ।

कल्कार्थ—जीवक, ऋषभक, वेणाका मूल, जीवन्ती, सोंठ, शठी, शालपर्णी, चक्रकुल्या, माषपर्णी, मुद्गपर्णी, मेद, महामेद, कङ्गोल, चौरकाकोली, कण्टकारी, वृहती, श्वेतपुनर्णवा, रक्तपुनर्णवा, ज्येष्ठीमधु, कोंचका बीज, शतमूल, ऋद्धि, परुषफल, ब्राह्मणयष्टिका मूल, मुनक्का, सिंघाड़ा, भूम्यामलकी, भूमिकुष्माण्ड, पीपल, बहेड़ा, कुलके बीजका गूदा, अखरोट, बादाम, पिण्डखजूर, फालसा—प्रत्येक दो दो तोला रहे ।

पाक सिद्ध हो जाने पर कल्कद्रव्य छानकर शीतल घृतमें मधु दो सेर, चीनी सवा छः सेर ; मरौचचूर्ण, दारचीनीचूर्ण, बड़ी इलायचीका चूर्ण, तेजपत्र चूर्ण, और नागकेशरका फूल प्रत्येक आधा आधा पल लेकर एक साथ मिला दे ।

“जीवकर्षभकौ वीरां जीवन्तीं नागरं शटीम् ।

चतस्रः पर्णितोमैर्दे काकोलीं च निदग्धिकां ॥

पुनर्धने हे मधुकामान्गुतां शतावरीम् ।
 ऋद्धिं पश्यकां भार्गो स्त्रीकां हृदनीं तथा ॥
 शृङ्गाटकमामलकीं पयसां पिप्पलीं वलाम् ।
 वशराचोडवातादखजूरामिषुकाणि च ।
 फलानि चैवमर्दूनि कल्कान् कुर्वीत कार्षिकान् ।
 धात्रीफलविदारौचुकागमांसरसान् पयः ॥
 दत्त्वा प्रस्थान्मितान् भागान् घृतप्रस्थं विपाचयेत् ।
 प्रसृतिं मधुनः शीते शर्कराहृतुलां तथा ॥
 पञ्चाङ्गकच मरिचत्वगीलापवकेशरम् ।
 विनीय चूर्णयेत्तस्मान्निष्ठान्मात्रां यथावलम् ॥
 अमृतप्राश इत्येव नराणाममृतोपमः ।
 सुराघृतमथं पथ्यं चौरमांसरसाग्निः ॥
 नष्टशुक्रचतचोषदुर्बलव्याधिपीडितान् ।
 स्त्रीप्रसक्तानकुशलान् स्वरहीनांश्च हृदयेत् ॥
 कासाहिक्काज्वरान्सासदाश्लेष्मणश्चपिचनुत् ।
 पुनरो हृदि.....दाहगुलचयापहः ॥” (प्रयोगामृत)

प्रकारान्तर—गायका घी ४ सेर लाये । काथायं
 बधिया बकरीका भांस १२ सेर, ६४ सेर जलमें सिद्ध
 करे । जब १६ सेर रह जाय, तब उतार ले ; अश्वगन्धा
 काथायं ऐसा है,—बकरीका दूध १६ सेर मंगाये ।
 सात सात दिन बाद एक एक द्रव्य घृतके साथ पाक
 करे । कल्कार्थं श्वेत खरेटाका मूल, गेहूं, अश्वगन्धा,
 गुलच, गोक्षुर, कशेरु, त्रिकटु, धनिया, तालाङ्गुर,
 त्रिफला, मृगनाभि, कौचका वीज, मेद, महामेद,
 केजकी सूखी जड़, जीवक, ऋषभक, शटी, दारुहरिद्रा,
 प्रियङ्गु, मञ्जिष्ठा, तगरपादुका, तालीशपत्र, इलायची,
 तेजपत्र, दारुचीनी, नागकेकर, जातीपुष्प, रेणुक,
 सरलकाष्ठ, जैत्री, छाटी इलायची, उत्पल, अनन्तमूल,
 तैलाकुचाका मूल, जावन्ती, ऋद्धि, वृद्धि, उडुम्बर—
 प्रत्येक दो दो तोला डाले । पाक सिद्ध हो जाने पर
 कल्क द्रव्यका छानकर शीतल घृतमें एक सेर चीनी
 मिला-दे । मात्रा दो तोला होगी ।

यह सब घी थोड़े गर्म दूधके साथ सेवन करना
 पड़ता है । इससे सब तरहके कासरोग, ध्वजभङ्ग,
 देहिक दुर्बलता आदि नष्ट हो जाते, शरीर पुष्ट और
 बुद्धिकी तेजोवृद्धि होती है । फिर कलेवर कन्दर्पकी
 तरह हो जाता है ।

“छागमांसं वलाच्चैव वाजिगन्धां तथैव च ।
 जलद्राघे विपक्वत् कुर्यात् पादावशेषितम् ॥
 घृतप्रस्थं पचेत्तेन अजाचौरं चतुर्गुणम् ।
 सूक्ष्मं नाथं प्रदातव्यं कुडुमच विकारिणम् ॥
 वलामूलच गोधूमं चाश्वगन्धा तथासृता ।
 गोक्षुरच कशेरुच त्रिकटु च सधान्यकः ॥
 तालाङ्गुरस्त्रेफलच कस्तुरीबीजवानरी ।
 मेदे हे च तथा कुष्ठं जीवकं भकौ शटी ॥
 दार्वीं प्रियङ्गु मञ्जिष्ठा नतं तालीशपत्रकम् ।
 एलापत्रच नागं जातीकुसुमरेणुकम् ॥
 सरलं जातिकोषच सूक्ष्मं लोतपलसारिवे ।
 मूलं विषवस्त्र जीवन्ती ऋद्धिवृद्धौ उडुम्बरम् ॥
 प्रत्येकं कर्षमावन्तु पेषयित्वा विनिक्षिपेत् ।
 वस्त्रपूते सुशीते च सिताद्वयाच्छरावकम् ॥” (मेवज्वरनावली)

यह अमृतप्राश ध्वजभङ्गाधिकारपर दिया
 जाता है ।

अमृतप्राशावलेह (सं० पु०) राजयक्ष्माका अवलेह,
 जो ढीला पाक क्षयरोगपर दिया जाता हो ।

“चौर धात्री च मञ्जिष्ठा चोरिणाश्च तथा रसैः ।
 पचेत् समेष्टं तप्रस्थं मधुरं कषं सन्धितैः ॥
 द्राक्षादिचन्दनोशीरैः शर्करोत्पलपत्रकैः ।
 मधुककुसुमानन्ता काश्मरीदणसंज्ञकैः ॥
 प्रस्थाङ्गं मधुनः शीते शर्कराहृतुलां तथा ।
 पलाङ्गिकांश्च संचूर्ण्य लगीलापवकेशरान् ॥
 विनीय तत्र संचूर्ण्य लिप्तान्मात्रां निर्व्यं सुयन्त्रितः ।
 अमृतप्राशमित्येतद्विभ्यां परिकीर्तितम् ॥” (भावप्रकाश मध्यभाग)

काङ्गोल, चौरकाङ्गोल, धात्री, मञ्जिष्ठा यह सब
 द्रव्य एक एक पैसे भर और वट, अश्वत्थ, उडुम्बर,
 पाकर इन वृक्षोंकी त्वच् (छाल) एक एक पैसे भर
 इन सब वस्तुओंका काथ बनाकर फिर मुनक्का, किश-
 मिश, चन्दन, खस, नीलकमल, पद्मकाठ, सुलहटी,
 लौंग, अनन्तमूल, काश्मरी गन्धदण इन द्रव्योंका
 कल्क तैयार करके चार सेर घृतमें पाक करना होता
 है । पाक सिद्ध हो जाने पर दो सेर मधु (शहद)
 दो सेर चीनी, तथा दालचीनी एलायची छोटी, तेज-
 पत्र, केशर इन वस्तुओंका प्रत्येक आधा आधा पल
 चूर्ण मिलाना चाहिये । इसका नाम अमृतप्राशावलेह

है। इसको प्रतिदिन सेवन करनेसे राजरक्षारोग निर्मूल हो जाता है।

अमृतफल (सं० स्त्री०) अमृतमिव स्वादु फलम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। १ रुचिफल, नास्पाती।

“शुभ वातघ्नं स्वादुघ्नं रुचिघ्नं शुक्रघ्नम्।” (मदनपाल)

“अमृतस्य फलं धातुवर्धकं मधुरं शुभम्।

रुच्यन्नान्नं वातघ्नं विदोषस्य च शमकम्॥” (देयकनिबन्धु)

(पु०) अमृतमिव फलं यस्य, बहुव्री०।

२ परवल। ३ पारद, पारा। ४ वृद्धिनामक औषध। ५ धातुवृद्धि, आंवलेका पेड़।

अमृतफला (सं० स्त्री०) १ दाक्षा, दाख। २ किश-मिश। ३ आमलकी, आंवला। ४ लघुखर्जूरी, खिन्नी।

अमृतबन्धु (सं० पु०) अमृतस्य बन्धुः सोदरः एक समुद्रोत्पन्नत्वात्। १ चन्द्र, चांद। २ अश्व, घोड़ा।

चन्द्र और अश्व दोनों समुद्रसे अमृतके साथ पैदा होनेसे अमृतबन्धु कहते हैं। ३ देवता, परिष्ठा।

अमृतबाजार (पूर्वनाम मागुरा)—बङ्गालके यशोर जिलेका एक गांव। इस ग्रामके जमीन्दार स्वर्गीय शिशिरकुमार घोष और उनके भाइयोंने इसे अपनी माता अमृतमयीके नाम पर बसाया था। अमृतबाजार अक्षा० २३° ८' ३०" और द्रावि० ८६° ६' ५०" पर अवस्थित है। पहले यहां १८६८ ई०में बङ्गालियोंका सुप्रसिद्ध अंगरेजी साप्ताहिक समाचारपत्र अमृत-बाजारपत्रिका छपते रहा। अब वह कलकत्तेसे दैनिक रूपमें निकलता है।

अमृतबान (हिं० पु०) रोगनी बरतन, जो मट्टीकी हांडी लाहके रोगनसे बनती हो। इसमें गुलकन्द, मुरब्बा, अचार, घी, मक्खन वगैरह रखा जाता है।

अमृतभस्मातकघृत, (सं० स्त्री०) भिलावे प्रभृति द्रव्य-द्वारा प्रस्तुत कुष्ठादि रोगका उपयोगी घृत-विशेष। आठ सेर सुपक भिलावेको ईंटकी सुखीमें डालकर एक दूसरी ईंटसे अच्छी तरह घिसे। घिसनेके समय खूब सावधान रहे। हाथमें सुबाब लग जानेसे सदाईमें काण्डु निकल आ सकते हैं, फिर सारा शरीर भी फूल जाता है।

घिसना अच्छी तरह हो जानेपर टोकरी अथवा बरतनमें रखकर जलसे बारबार धोये। फिर धूपमें सुखाकर सब भिलावेको सरीतसे दो दो टुकड़े कर डाले। उसके बाद ६४ सेर जलमें सिद्ध करे; जब १६ सेर रह जाय, तब उतार ले। ठण्डा हो जानेपर उस काथको छानकर ८ सेर गायके दूधके साथ सिद्ध करे। दो सेर रह जानेपर उतारकर चौरका अंश छानकर बाकी काथको ८ सेर गायके घीके साथ पाक करे। पाक शेष हो जानेपर उतार कर रख दे। जब ठण्डा हो जाय, तब ४ सेर साफ चोनी मिलाकर अच्छी तरह हिला दे। इसको मात्रा १ तोलासे १॥ तोलातक वा उससे भी अधिक होगी। थोड़ेसे दूधमें मिलाकर सेवन करे। इससे खुराब खून साफ होता और शरीर बलिष्ठ पड़ जाता है।

अमृतभस्मातकावलेह (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका अवलेह, जो ढीला पाक कोढ़पर खिलाया जाता हो। अमृतभस्मातकघृत देखो। इसको इसतरह बनाते हैं,—

“भस्मातकप्रस्थयुगं क्षिला द्रोणजले चिपेत्।

प्रस्थद्वयं शुद्धाश्व चूषं तवाभसि चिपेत्॥

शरावमावकं सर्पिः दुग्धं स्वादादकं तथा।

क्षितां प्रस्थमितां दद्यात्प्रस्थार्धं साक्षिकं चिपेत्॥

सर्वाण्येकत्र भाण्डे तु पचेन्मृद्वग्निना शनैः।

सर्वद्रव्ये घनौभूते पावकादवतारयेत्॥

तत्र चेष्याणि चूर्णानि वृमो विन्मविषामृताः।

वाङ्गुची चाथ दद्रुघ्नः पिचुमर्दी हरीतकी॥

अचो घात्री च सक्षिष्ठा मरिचं नागरं कषा।

यमानी सैन्धवं मुक्तं त्वगेला नागकेशरम्॥

पपैटं पक्कं वाचमुशीरं चन्दनं तथा।

गोक्षरस्य च बीजानि कचूरी रक्तचन्दनम्॥

पृथक् पलायं मानानां चूर्णमेषामिह चिपेत्।

पलमात्रमिदं प्रातः समश्रयीयाञ्जलेन हि॥” (भावप्रकाश-सम्भभाग)।

दो पसेरी यानी १० सेर भिलावेकी त्वचा निकाल-
कर १) मन यानी ४० सेर पानीमें डाले और उसी जलमें दो पसेरी (१०) गुडूचीकी कूटकर छोड़ दे। फिर १-सेर घृत, आधा मन (२० सेर) दूध १-पसेरी (५ सेर) जीरे और आधा पसेरी (२५ सेर) शहद-

मिला इन सब द्रव्योंको एक पात्रमें रख शनैः शनैः घीमी आंचसे पकाना चाहिये। जब सब द्रव्य मिल कर एक हो जाय, तब विषा, गुडूची, वाङ्गुची, ददुघ्न, निम्बकौ त्वचा, हर, बड़ेरा, आंवला, मञ्जिष्ट, कालौ मिर्च, नागरमोथा, कणा, यमाइन, सैन्धव, सुस्ता, दालचीनी, इलायची, नागकेशर, पर्पट, तेजपत्र, बाल अथवा जटामांसी—खसू, चन्दन, इन सब वस्तुओंका पृथक् पृथक् आधा आधा पल चूर्ण मिलाया जाता है। इसको अमृतभस्मातक कहते हैं। प्रतिदिन जलके साथ एकपल मात्रा खानेसे सब प्रकारका कीट निर्मूल होता है।

अमृतभस्मातकी (सं० स्त्री०) रसायनका योग-विशेष। पका हुआ जितना भिलावां हो, उतना ही ईंटका चूर्ण मिलाकर अच्छीतरह रगड़ कर जलसे धोकर हवामें सुखाना चाहिये। फिर सूखे हुये भिलावेंको छीलकर पृथक् कर चागुण जलमें पाक करे। जब चौथाई शेष रहे, तब उतार कर फिर बराबर दूधमें पाक करे। जब चौथाई शेष हो, तब पुनः उतार कर शीतल हो जानेपर तुल्य घृतमें पाक करे। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब सब द्रव्यसे आधी चीनी मिलाके खूब मथ (घोंट)के-एक पात्रमें रखके ७ दिनतक रहने दे। फिर इसे कायमें लाना चाहिये। दूसरी इसतरह बनायेंगे—

पकेहुये भिलावेंको हिधा विदीर्ण कर चौगुण जलमें पाक करके चतुर्थांश शेष रहने पर उतार कर पुनः चतुर्गुण दूधमें पाक करके पुनः तुल्य घृतमें पाक करना चाहिये, जब गाढ़ा हो जाय, तब १६ पल मिश्री या चीनी मिलाकर किसी पात्रमें ७ दिनतक रख छोड़ना चाहिये। पश्चात् इसे सेवन करना होता है।

अमृतभुज् (सं० पु०) अमृतं भुङ्क्ते; अमृत-भुज-क्तिप्, ६-तत्। १ देवता, फुरिष्ठा। (त्रि०) अमृतमयाचितं यज्ञशिष्टान्नं वा भुङ्क्ते। अयाचित अथच अन्य-कट्टक अन्नाहेतु आनीत वस्तुका भक्षक, यज्ञके शेषान्नका भोक्ता, वैमांगी और इज्जतसे लायी हुयी चीजको खानेवाला, जो यज्ञका बचा हुआ भक्ष खाता हो।

अमृतभू (सं० त्रि०) जन्ममरणशून्य, जो न तो पैदा होता और न मरता हो।

अमृतमञ्जरी (सं० स्त्री०) १ गोरचदुग्धीक्षुप, गोरखमुखी। २ सामान्यज्वरका रस विशेष, मामुलौ बुखारपर दिया जानेवाला कोई रस। इसे खांसीपर भी दें और मात्रा दो या तीन गुञ्जा रखेंगे।

“हिङ्गुलं मरिचं टङ्गं पिप्पलीं विषमेव च।

जातीकोषं समं सर्वं जम्बोरान्निर्विमर्दयेत् ॥” (रसेन्द्रसारसंग्रह)

हिङ्गु, मरिच, पिप्पल, विष, जयित्री यह सब वस्तु सम भाग कूटकर नीबुके रसमें घोंटना होता है।

अमृतमण्डुर (सं० पु०) परिणामशूलका रस विशेष, पेटके दर्दको कोई दवा। इसे इसतरह बनायेंगे,—

“मण्डुरस्य पलान्घटी शतावरी रसं तथा।

चौराज्यं दधि प्रत्येकं पिष्टा चतुःपलं पचेत् ॥” (रसरत्नाकर)

शुद्धलोहा ८ पल शतावरी का रस, दूध, घृत, दधि, यह सब प्रत्येक चार चार पल एक साथ पचाना होता है।

अमृतमति (सं० स्त्री०) अमृतगति नामक छन्दो-विशेष।

अमृतमन्य (सं० पु०) दुग्धादिपरिगोक्षित मन्य, दूध वगैरहका मथा जाना।

अमृतमन्यन (सं० स्त्री०) अमृतमन्य देखो।

अमृतमय (सं० त्रि०) १ अमर, न मरनेवाला २ अमृतसे परिपूर्ण, जिसमें आब-हयात भरा रहे।

अमृतमहल (हिं० स्त्री०) महिसूर प्रान्तको कोई भैस।

अमृतमालिनी (सं० स्त्री०) दुर्गा देवी।

अमृतयोग (सं० पु०) अमृतनामा योगः, मध्य-पदलोपी बहुव्री०। वार और नचत्र या वार और तिथि घटित योग विशेष। रवि एवं सोमवारको पूर्णा, मङ्गलवारको भद्रा, बुध एवं शनिवारको नन्दा, वृहस्पतिवारको जया और शुक्रवारको रिक्ता तिथि होनेसे तिथ्यामृतयोग कहायेगा। फिर रविवारको इस्ता, सोमवारको अवषा, मङ्गलवारको रेवती, बुध

वारको अनुराधा, वृहस्पतिवारको पुष्या, शुक्रवारको रेवती और शनिवारको रोहिणी पड़नेसे नक्षत्रामृत-योग होता है। इस योगमें भद्रा, व्यतीपात प्रभृतिका अशुभ प्रभाव न पड़ेगा।

“दिनकरकरयुक्तः सोमसीधेन वापि

तुरगसहितभौमः सोमपुत्रोऽनुराधा ।

सुरगुरपि पुष्ये रेवती शुक्रवारे

दिनकरसुतयुक्ता रोहिणी सौख्यहेतुः ॥” (अत्रिसंहिता)

अमृततरश्मि (सं० पु०) चन्द्र, चांद।

अमृतसर (सं० पु०) अमृतस्य रस इव रसो यस्य, मध्यपदलोपी बहुव्री०। १ अमृत-जैसा सुखादु वस्तु, जो चीज आब-हयातकी तरह जायकेदार हो। अमृतस्य रसः सारः, ६-तत्। २ सुधारस, अर्क, आब-हयात। अमृतं निर्वाणं रस इव यस्य बहुव्री०। ३ परमात्मा।

अमृतरसा (सं० स्त्री०) अमृतस्य रस इव रसो यस्याः, मध्यपदलोपी बहुव्री०। कपिला द्राक्षा, काला अङ्गूर।

अमृतलता (सं० स्त्री०) अमृता चासौ लता चेति; कर्मधा; पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। गुडूची, गुचं।

अमृतलतादिघृत (सं० स्त्री०) पाण्डुरोगके अधिकारका घृतविशेष, जो घौ यरकान् या कंवल बाईपर दिया जाता हो।

“अमृतलतारसकल्कं प्रसाधितं तुरगविद्धिषः सर्पिः ।

चौरं चतुर्गुणमेतदितरेषु हलीमकार्तेभ्यः ॥” (भावप्रकाश मध्यभाग)

गुडूचीका रसकल्क, भैंस का घृत और चौगुणा दूध एकत्र मिलाकर हलीमक रोगसे पीड़ित मनुष्यको देना चाहिये। यह औषध शीघ्र गुण दिखानेवाला है।

अमृतलतिका, अमृतलता देखो।

अमृतलोक (सं० पु०) स्वर्ग, बिहिश्त।

अमृतवटक (सं० पु०) अमृतका लड्डू, जो लड्डू खानेसे अमृतकी तरह गुण करता हो। इसे सन्निपातातिसार पर देते हैं।

अमृतवटी (सं० स्त्री०) अग्निमान्द्यका रसविशेष, जो रस भूख न लगनेपर खिलाया जाता हो।

“अमृतवटाटकमरिचैः क्षिप्यन्वमग्निकैः क्रमशः ।” (भैषज्यरत्नावली)

२ तोले विष, ५ तोले कड़ि और ८ तोले मरिचको कूट-पोस मठर-जैसी गोली बनाना चाहिये।

अमृतवपु, अमृतवपुस् देखो।

अमृतवपुस् (सं० पु०) अमृतमयं अमृतेन वर्धितं वा वपुः शरीरं यस्य, मध्यपदलोपी बहुव्री०। चन्द्र, चांद। सूर्य अपने किरण द्वारा चन्द्रमें सुधारूप अमृत पड़ुं-चाता, इसीसे कृष्णपक्षके बाद चन्द्र बढ़ा करता है। कहा जाता कि चन्द्रका शरीर अमृतमय है। वह अपने देहकी अमृतमय शीतल जलीय कणा द्वारा उद्भिद्गुणको बढ़ाया करता है। अविनश्वर परमात्मा और विष्णुको भी अमृतवपुः कहेंगे।

अमृतवर्तिका (सं० स्त्री०) अमृतकी वर्तिका। यह औषध मृत्युञ्जयतन्त्रमें लिखा है—त्रिकटु, त्रिफला, ब्राह्मी, गुडूची, चित्रक, नागकेशर, शुण्ठी, भृङ्गराज, निगुण्डी, हरिद्रा, दारुहरिद्रा, शक्रासन, त्वक् एला, गाम्भारौत्वक्, विडङ्ग और वचका दो-दो पल चूर्ण पचास पल कामरूपदेशीय गुडमें मिला ३६० बत्ती बनाते हैं। एक बत्ती भोजनसे पहले या सन्ध्याको शीतल जलके साथ खाना चाहिये। इसके सेवनसे शरीरका समग्र रोग दूर हो जाता है।

अमृतवर्ष (सं० पु०) सुधावृष्टि, आब-हयातकी बारिश।

अमृतवल्ली (सं० स्त्री०) १ गुडूची, गुचं। २ बड़ी पोय।

अमृतवल्लिका अमृतवल्ली देखो।

अमृतवल्ली (सं० स्त्री०) अमृतावल्ली लता, कर्मधा०। चित्रकूटप्रसिद्ध गुडूची, चित्रकूटकी मशहर गुचं। इसके गुण लिखा है,—

“अमृतस्य च बल्लो सा हितकारी विषापहा ।

किञ्चित्तिक्ता जराव्याधिहरी कुष्ठामनाशिनो ।

कामलव्रणशोथघ्नी क्षयिभिः परिकीर्तिता ॥” (वैद्यकनिघण्टु)

अमृतवल्लीको ऋषियोंकी हितकारी, विषापहा, किञ्चित्तिक्ता, जराव्याधिहरी, कुष्ठामनाशिनो, और कामलव्रण-शोथघ्नी बताया है।

अमृतवाका (सं० स्त्री०) पक्षीविशेष, किसी किसमकी चिड़िया।

अमृतविन्दूपनिषद्—अथर्ववेदका उपनिषत्विशेष ।

अमृतसंयाव (सं० स्त्री०) अमृतमिव संयावम्, मध्यपदलोपी कर्मधा० । घृतपक्क यवचूर्ण प्रस्तुत पक्कान्न-विशेष, यवके आटेका धीमें पकाकर बनाया हुआ भोजन । इसके प्रस्तुत करनेकी प्रणाली यह है,—पहले यवका चूर्ण घृतमें पकाकर नये पात्रमें रख लेना चाहिये । फिर उसमें कालीमिर्च, चीनी और कपूर मिलायेंगे । यह विलक्षण सुखादु और पित्तघ्न होता है ।

अमृतसङ्गम (सं० पु०) खपरिका, खपरिया ।

अमृतसञ्जौवनी (सं० स्त्री०) गोरचदुग्धो नामक्षुप, गोरखमुखी ।

अमृतसम्भवा (सं० स्त्री०) अमृता इव सम्भवति, सम्-भू-अच् । गुडूची, गुर्च ।

अमृतसर—१ पञ्जाबका एक डिविज़न या कमिशनरी । यह कमिशनरी अक्षा० ३१° १०' एवं ३३° ५०' ३०' उ० और द्रावि० ७४° १४' ४५" तथा ७५° ४४' ३०" पू०के मध्य अवस्थित है । इसका क्षेत्रफल ५३५४ वर्गमील निकलेगा ।

२ पञ्जाब प्रान्तका एक जिला । यह जिला अक्षा० ३१° १०' एवं ३२° १३' उ० और द्रावि० ७४° २४' तथा ७५° २७' पू०के बीच पड़ता है । इसका क्षेत्रफल १५७४ वर्गमील लगेगा । जिलेसे उत्तर-पश्चिम रावी नदी बहती, जो इसे स्यालकोट जिलेसे अलग करती है । अमृतसरके उत्तर-पूर्व गुरुदासपुर जिला आता है । दक्षिण-पूर्व व्यास नदी इसे कपूरथला राज्यसे पृथक् करती है । इसके दक्षिण-पश्चिम लाहौर जिला लगता है ।

३ पञ्जाबवाले अमृतसर जिलेकी एक तहसील । यह तहसील अक्षा० ३१° २८' १५' एवं ३१° ५१' उ०, और द्रावि० ७४° ४४' ३०" तथा ७५° २६' १५" पू०के मध्य लगती है । इसका क्षेत्रफल ५५० वर्गमील पड़ेगा ।

४ पञ्जाबमें सिखोंका प्रधान पवित्र स्थान । यह नगर लाहौरसे १६ क्रोस दूर, अक्षा० ३१° ३७' १५' उ० और द्रावि० ७४° ५५' पू० पर अवस्थित, तथा बाणिज्य-

के लिये विशेष प्रसिद्ध है । हमलोग काशी, वृन्दावन आदि तीर्थस्थानोंको जिस तरह भक्ति करते हैं, मुसलमान जिस तरह मक्काको पवित्र समझते हैं, बौद्धोंके लिये बोधगया जिस भांति पुण्यक्षेत्र है और यहूदी तथा ईसायियोंके लिये जरुसेलम जैसी पवित्र भूमि है, सिखोंको दृष्टिमें अमृतसर भी ठोक वैसा ही है । यहां 'अमृतसर' नामक एक बड़ा भारी सरोवर है, इसीसे सिख लोग इस नगरको भी 'अमृतसर' कहते हैं ।

चार सौ वर्ष पहले यहां एक छोटेसे गांवके सिवा और कुछ भी न था । उस वक्त लोग इसे 'बाग़ार' कहते थे । पीछे अकबर बादशाहके राजत्वकाल सन् १५७४ ई०में सिखोंके चतुर्थ गुरु रामदाससिंहने वर्तमान सरोवरको खुदवाकर उसको चारो ओर छोटे छोटे मन्दिर बनवा दिये । उस समय इस नगरका नाम रामदासपुर हुआ । अन्तमें गुरु रामदासके सन्तान अर्जुन सिंहने यहां सिखोंकी राजधानी प्रतिष्ठित करके इसका नाम 'अमृतसर' रख दिया । वही नाम अबतक चला आता है । यहां सिख, हिन्दू और मुसलमान सभी लोग वास करते हैं । सब समेत लोकसंख्या प्रायः डेढ़ लाख होगी ।

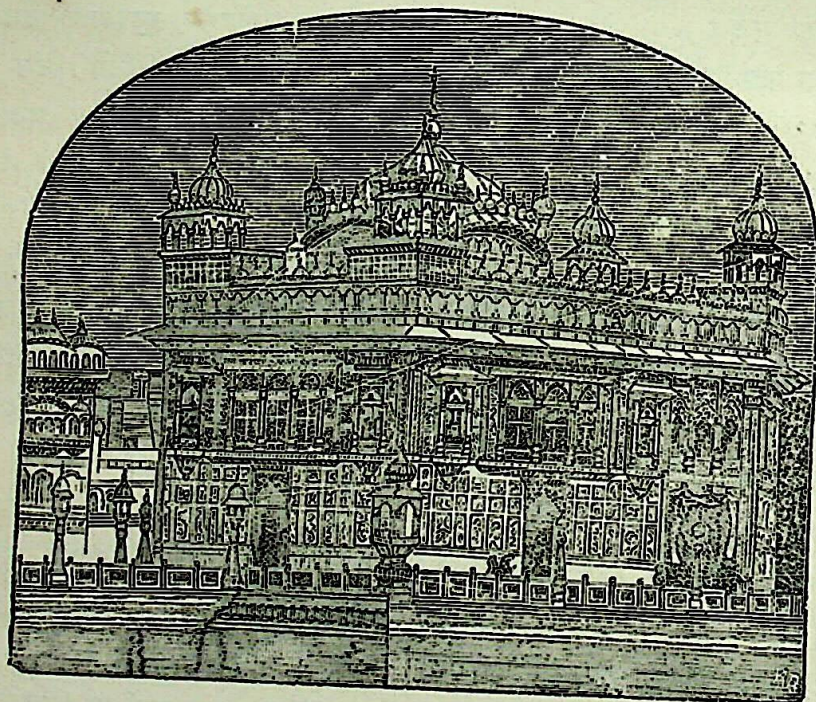
अमृतसरकी चारो ओर शहरपनाह बनी हुई है । उसमें तेरह फाटक हैं । पहले इसको चारो ओर खाई रहो । इसके अतिरिक्त आक्रमणसे नगरकी रक्षा करनेके निमित्त सिखोंने यहां किला भी बनवाया था । परन्तु अब वह किला नहीं रहा और उत्तर ओर किलेकी खाई भी भर दी गई है । सन् १८०८ ई०में महाराज रणजित् सिंहने गोविन्दगढ़ नामक परिखावेष्ठित एक दुर्ग बनवाया था ; केवल वही अब तक खड़ा है ।

सन् १७६२ ई०में अहमदशाहके पुत्र तेमूरने अमृतसरके प्रधान-प्रधान मन्दिरोंको तोड़ डाला था । सिखोंने उन्हीं मन्दिरोंको फिर बनवाया । उसके बाद अहमदशाहने स्वयं आकर नये मन्दिरोंको फिर तोड़वा दिया । परन्तु केवल मन्दिरोंको ही तोड़ कर उनके मनका चोभ न मिटा था । उन सब देवा-

लथीके ऊपर गोहत्या करके उन्होंने स्थानको अपवित्र भी कर दिया। उसी समय अमृतसरमें जगह-जगह मसजिदें भी बनवायी गई थीं। अहमदशाहके चले जाने पर उन मसजिदोंको तोड़कर सिखलोग वहां सूअर काटने लगे अन्तमें वर्तमान मन्दिर बना।

अमृतसर बड़ा भारी सरोवर है। क्या ग्रीष्म और क्या वर्षा बारहो महीने उसमें जल भरा रहता है। सरोवरके ठीक वक्खलपर सिखोंका देवालय है। यहां रात दिन सिखोंके ग्रन्थसाहबका पाठ हुआ करता है। सरोवरकी चारो ओर राजा, राजमन्त्री, प्रधान प्रधान सरदार एवं ग्रन्थान्ध धनाढ्योंकी अष्टालिकायें सुशोभित हैं।

अमृतसरके इस मन्दिरका नाम 'दरबार साहब' है। यह सफेद पत्थरका बना हुआ है। देखनेमें बहुत बड़ा नहीं है। मन्दिरका गुम्बद ताँबेके पत्रका है, उसपर सोनेका पानी चढ़ा है। इसीसे लोग इसे सुवर्णमन्दिर कहते हैं। सोनेके पानी चढ़ाने में महाराज रणजित्ने बहुत धन व्यय किया था। इसके अतिरिक्त सिखोंने जहांगीर प्रभृति बादशाहोंकी कब्रोंसे बहुमूल्य प्रस्तरादि लाकर भीतर लगा दिये हैं। सरोवरके किनारे किनारे सफेद पत्थर लगा हुआ है। घाटसे मन्दिरमें जानेके लिये सफेद पत्थरका सुन्दर पथ बना है। मन्दिरको चारो ओर बरामदा है। प्रायः पांच सौ अकाली पुरोहित इस देवालयकी परिचर्यामें नियुक्त हैं।



दरबार साहब

सिंहद्वारसे प्रवेश करनेपर सामने अकालियोंका 'भुङ्ग' प्रासाद दिखाई देता है। यहां सिख गुरुओंके अस्त्र रखे हुए हैं। यहां अनेक गाने बजानेवाले बैठे रहते हैं। प्रतिदिन धार्मिक गीत गानेके लिये ही वे लोग नियुक्त हैं। मन्दिरके भीतर प्रसिद्ध ग्रन्थ साहब विराजमान हैं। पुरोहित लोग पुष्पादि द्वारा प्रतिदिन ग्रन्थ साहबकी पूजा करते हैं। सब मिलाकर सिखोंके दश गुरु हैं—नानक, अङ्गद, अमरदास,

रामदास, अर्जुन, हरगोविन्द, हरराय, हरकृष्ण, तेज-बहादुर और गुरु गोविन्द सिंह। ग्रन्थसाहबवा आदि-ग्रन्थ नानकका रचा हुआ है। देवालयमें जाकर भक्तिपूर्वक ग्रन्थसाहबको प्रणाम करनेसे पुरोहित लोग दर्शकोंको एक एक आशीर्वादात्मक फूल देते हैं।

मन्दिरकी चारो ओर कहीं यात्री लोग स्नान करते हैं; कहीं साधु संन्यासी बैठे दिखाई देते हैं; कहीं भक्तिभावसे बैठकर सिख लोग धर्मपुस्तककी नकल

करते हैं ; कहीं दुकानदार कपड़े, कंघी और लोहेके अलङ्कार आदि नाना प्रकार वस्तु बेचते हैं। सरोवरकी पूर्व ओर दो बड़े बड़े स्तम्भ हैं। उनके ऊपर जानीसे चारो ओरका दृश्य अति मनोहर दिखाई देता है। “बाबा अतल” नामकी एक सभा है, उसकी गठनप्रणाली बहुत ही विचित्र है। बाबा अतलकी बगलमें कौलसर है। गुरुगोविन्द सिंहकी स्त्रीका नाम कौल था ; वे वध्या थीं। उन्होंने नामसे कौलसर प्रतिष्ठित है। मन्दिरमें जानीके पहले यात्री इसी सरोवरमें स्नान करते हैं। सरोवर किनारेके सुरम्य वृक्षोंकी शाखायें जलपर झुकी हुई हैं। उनपर सैकड़ों पंखदार गिलहरी झूला करती हैं। एक वृक्षके नीचे सुनहला ताम्रफलक है। गुरुगोविन्द सिंह किस तरह अपनी पत्नी कौलको लाहोरसे ले आये थे, इस ताम्रफलकपर उसी समयका दृश्य खुदा हुआ है। अमृतसरका ‘सन्तोषसर’ भी अति मनोहर स्थान है।

अमृतसरसे सात कोस दक्षिण ‘तरण-तारण’ नामक और एक प्रसिद्ध स्थान है। वहां भी एक पुष्पसरोवर है। वह प्रायः ४८४ हाथ लम्बा, ४८० हाथ चौड़ा और चारो ओर पत्थरसे बंधा हुआ है। महाराज रणजित् सिंहके पौत्र नवनिहाल सिंहने सरोवरके ईशानकोणपर एक स्तम्भ बनवा दिया था। वह अब तक विद्यमान है। उसके किनारे कोढ़ी लोग रहते और नित्य पुष्पसरोवरमें स्नान करते हैं। गुरु अर्जुनसिंहके शायद कुष्ठरोग था। वही इस सरोवरकी प्रतिष्ठा कर गये हैं। कहते हैं, कि व्याधिग्रस्त लोग तैरकर इस सरोवरके पार जानीसे नीरोग हो जाते हैं। प्रति मास कृष्णपक्षकी त्रयोदशीको वहां अमावस्या नामका मेला लगता है। मेलेके दिन यात्री लोग आकर तरणतारणके जलमें स्नान और सरोवरको प्रदक्षिण करते हैं। मेलेमें द्रव्यादिका क्रयविक्रय होता है।

अमृतसरके निकटकी भूमि बहुत उपजाऊ है। किसान बड़े दोआबकी भौल, व्यास और रावी नदीसे जल लाकर भूमिको सींचते हैं। गेहूं, यव आदि

नाना प्रकारके शस्य, कपास, ऊख, शन, केशर, तम्बाकू, अफीम एवं और और कितनी ही चीजें यहां पैदा होती हैं। यहां तिब्बत प्रभृति स्थानोंकी बकरियोंकी रोयेंका बहुत बढ़िया शाल बनता है। अमृतसरमें कमसे कम ५००० करघे चलते हैं। काश्मीरके आदमी यहांकी मन्हाजनोंके पास आकर उन सब करघोंमें शाल तय्यार करते हैं। इसके सिवा अमृतसरमें उत्तम रेशम भी उत्पन्न होता है। नाना स्थानोंके व्यवसायी यहां आकर अनेक प्रकारकी चीजें बेचते और खरीदते हैं। कहते हैं, प्रतिवर्ष प्रायः चार करोड़ रुपये चीजकी आमदनी और रफ्तानी होती है। अमृतसहोदर (सं० पु०) घोटक, घोड़ा।

अमृतसार (सं० पु०) अमृतस्य दुग्धस्य सारः, ६-तत् । १ घृत, घी। २ नवनीत, मक्खन। ३ लौहपाक-विशेष।

अमृतसारज (सं० पु०) अमृतमिव सारः तस्मात् जायते ; जन-ड, ६-तत् । गुड़।

अमृतसारजा (सं० स्त्री०) शर्करा, शकर, चीनी, खांड।

अमृतसू (सं० पु०) अमृतं किरणरूपं सूते विकिरति, सु-क्लिप् । १ चन्द्र, चांद। अमृतानां देवानां सूः प्रभृतिः, ६-तत् । २ देवमाता, अदिति।

अमृतसोदर (सं० पु०) अमृतस्य पीयूषस्य सोदरः एकस्थानोत्पन्नत्वात्, ६-तत् । १ उच्चैःश्रवा अश्व। समुद्रमन्थनके समय अमृतके साथ यह घोड़ा निकला था, उसीसे इसका नाम अमृतसोदर पड़ा। २ घोटक-मात्र, घोड़ा।

अमृतस्रवा (सं० स्त्री०) अमृतमिव स्रवति, सु पचाद्यच् टाप् । १ रुदन्तीलता। २ त्रायमाणा। (पु०) भावे अप्, ६-तत् । ३ अमृतचरण, आव-हयातका टपकना।

अमृतस्रुत् (सं० लि०) अमृत टपकाते हुआ, जिससे आवहयात चूये।

अमृतहरीतकी (सं० स्त्री०) पीयूषकी हरीतकी, आवहयातकी हर। यह अजीर्णपर चलती और इस-तरह बनती है,—

“धान्यकं जीरकञ्चे व सुस्तकं पटु पञ्चकम्
यमान्यामठपत्रञ्च लवङ्गं त्रिकटुं तथा ॥”
प्रत्येकं समभागान् शुष्कचूर्णानि कारयेत्
सर्वं चूर्णं समं दद्यादभयचूर्णं संस्कृतम् ॥” (सारकौमुदी)

धान्यक (धनिया), जीरा, सुस्ता, पञ्चलवण, यमानी (यमार्दन), आमठपत्र, लवङ्ग, त्रिकटु, (सोंठ, पीपल, मरिच) इन सबके प्रत्येक समभागका चूर्ण करके सब चूर्णके बराबर हरीतकीका चूर्ण मिलाना चाहिये।

“वक्त्रे समुत्प्लिन्नशिवाश्रयानि तद्वीजमुद्धृत्य च कौशलेन।

यूष्णं पञ्चपटूनि हिङ्गुचारवज्जीमज्जमोदकञ्च।

पुष्पेण सन्ध्याय लघ्वा समानं चिपेत् शिवावीजनिवासमध्ये ॥”

(प्रयोगावत)

दूसरा—१०० हरीतकीका तक्रमें डाल दे।

जब वह फूल जाय, तो बीजको निकाल कर षड्वर्ण, पीपल, पीपलमूल, चाव्य, चित्रकमूल, सोंठ, मरिच, यह सब समभाग; पञ्चलवण, हिङ्गु, यवचार, जीरा, कालाजीरा, वनयमानी समभाग—इन सब वस्तुओंका चूर्ण तय्यार करके एकमें मिलाकर हरीतकीके बीज-स्थानमें भर देना चाहिये। इसे अमृत-हरीतकी कहते हैं। यह अजीर्णमें बहुत लाभदायक होती है।

अमृता (सं० स्त्री०) न मृतं मरणमनया, टाप्।

१ गुलच्छ, गुर्च। २ आमलकी, आंवला। ३ स्थूलमांस हरीतकी, बड़ी हर। ४ तुलसी। ५ काष्ठधात्रौ, अतीस। ६ मदिरा, शराब। ७ इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण। ८ पारावतपद्मे, ज्योतिष्मती। ९ गोरक्षदुग्धा, दूधी। १० कृष्णातिविषा, काली सींगिया। ११ रक्तत्रिहता, लाल निसोत। १२ दूर्वा, दूब। १३ पिप्पली, पीपल। १४ लिङ्गिनी, मालकंगनी। १५ नीलदूर्वा, काली दूब। १६ श्वेतदूर्वा, सफेद दूब। १७ नागवल्ली, पान। १८ रास्ना, रसोत। १९ गरुड़वल्ली। २० सूर्यप्रभा, खरबूजा। २१ कन्दगुडूची। २२ स्फटिकारिका, फिटकरी। २३ परीचिर्तुकी माता।

अमृताशु (सं० पु०) अमृतमिव तृप्तिकराः अंशवो यस्य, बहुव्री०। चन्द्र, जिसका किरण अमृत-जैसा तृप्तिकर रहे।

अमृताक्षर (सं० त्रि०) अजर-अमर, जो कभी मरता और गिरता न हो।

अमृताख्यगुग्गुलु (सं० पु०) वातरक्त रोगपर दिया जानेवाला अमृत नामक गुग्गुलु। चक्रपाणिदत्तकृत-संग्रहमें इसके बनानेका विधान इसतरह लिखा है,—

गुडूची २ शरावक, गुग्गुलु १ शरावक और त्रिफला प्रत्येक २ शरावकको ६४ शरावक जलमें डालकर पाक करे। जब चतुर्थांश शेष रह जाय, तब आग-परसे उतार कर उसे फिर पाक करना चाहिये। गाढ़ा हो जानेपर थोड़ा उष्ण रहते दन्त्यादिका चूर्ण प्रत्येक ४ तोलक और त्रिवृत् चूर्ण २ तोलक डाल अच्छी-तरह घोटकर मिला दे। मात्रा बलाबल देख कर देना होगी।

अमृताख्यलौह (सं० पु०-लौ०) रक्तपित्ताधिकारका लौह, जो लौह रक्तपित्तपर दिया जाता हो। इसके बनानेकी रीति यह है,—गुडूची, त्रिवृता, दन्ती, सुण्डितिका (सुण्डी), खदिर, वृष, चित्रक, भृङ्गराज, तालमखाना, कमलकन्द, पुनर्णवा, बरियार, सहिज्जन, जखका मूल, वृषदारक, गोरक्षककंटी, शतावरी, कन्द, चाव्य, पिपलामूल, कुष्ठ, और ब्राह्मणयष्टिका यह सब द्रव्य प्रत्येक एक पल, १६ सेर जलमें डालकर पाक करे। जब अष्टांश (२ सेर काथ) रह जाय, तब आग परसे उतार ले। फिर १ सेर त्रिफलाको २ सेर जलमें पचाये। जब १ सेर काथ बाकी रहे, तब आगसे उतार शुद्ध लौह १६ पल, शुद्ध अभ्रक ४ पल, शुद्ध गन्धक ४ पल, गुड ८ पल, गुग्गुलु २ पल, घृत १ सेर इन सबको मिला पाक करना चाहिये। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब आगसे नीचे उतारे। शीतल होनेसे शहद ८ पल, शुद्धस्वर्ण-माक्षिकचूर्ण २ पल, शिलाजतु ४ तोलक इन सब द्रव्योंको मिलाना चाहिये।

अमृतागुग्गुलु (सं० पु०) राजयक्ष्मापर दिया जानेवाला गुग्गुलु। इसके बनानेका विधान नीचे लिखते हैं, १ सेर गुडूची और त्रिफला प्रत्येक आध सेरको १६ सेर जलमें काथ करे। जब काथ गाढ़ा हो जाय, तब आगसे नीचे उतार थोड़ा उष्ण रहते दन्ती, गुडूची,

व्योष (सोंठ मिर्च पीपल), विडङ्ग, त्रिफला—इन सब वस्तुओंका चूर्ण प्रत्येक आध पल मिला देना होगा।

(रसरवाकर)

द्वितीय प्रकार—गुडूची २ सेर, गुग्गुलु १ सेर, आमलकी १ सेर, विभीतक १ सेर, पुनर्णवा १ सेर, हरीतकी १ सेर, इन सबको एकत्र कूट ३२ सेर जलमें पाक करे। चतुर्थांश यानों ८ सेर काथ तैयार करना चाहिये। जब काथ सिद्ध हो जाय, तब छान कर पुनः पाक करे। जब बड़ गाढ़ा हो जाय, तब आगसे नीचे उतार कर थोड़ा गर्म रहते, दन्तों, गुडूची, व्योष, विडङ्ग, त्रिफला प्रभृतिका प्रत्येक ४ तोलक चूर्ण और २ तोलक त्रिष्टु चूर्ण मिलाना होता है। मात्रा बलाग्नि देखकर दी जाती है। (चक्रपाणिदत्तसंग्रह)

अमृताङ्गुरलौह (सं० पु०-ल्लो०) उपदंशका लौह विशेष, जो लौह आतशकको खास दवा हो। यह रस कुष्ठपर भी चलता, और इस तरह बनता है,—शुद्धपारद, शुद्धगन्धक, शुद्धलौह, शुद्धअभ्रक, शुद्धताम्र, शुद्ध गुग्गुलु, शुद्ध भस्मातक (भिलावां) यह सब प्रत्येक एकपल, आमलकी चूर्ण ६ पैसे भर, हर और विभीतक (बहेरा) का चूर्ण प्रत्येक दो पैसे भर घृत १६ पल—यह सब द्रव्य १ सेर त्रिफलाके काथसे लौहपात्रमें पाक करे। जब पाक सुसिद्ध हो जाय, तब किसी पात्रमें रख लेना चाहिये। फिर मधु और घृत मिलाकर प्रतिदिन एक रत्तीसे क्रमशः बढ़ाते हुये दूध या नारियलके जल साथ खाना होता है।

(प्रयोगामृत)

अमृतादि (सं० पु०) कषायद्रव्यसमूह, कोई काढ़ा। यह विसर्प विस्फोटकपर दिया जाता है,—

गुडूची, वृष, पटोल, सुस्ता, सप्तपर्ण, खदिर, असितवेर (श्यामालता), निम्ब, हल्दी, दारुहल्दी, इन सबका कल्क पीना होता है। (रसरवाकर)

द्वितीय प्रकार—अमृतादि मूत्रक्षत्र-हितकारक है। गुडूची, नागरमोथा, धात्री, वाजिगन्धा, त्रिकण्टक, इन सब द्रव्योंको उबालकर पीनेसे सशूल मूत्रक्षत्र निर्मूल होता है। (मेघनरवावली)

अमृतादिवटी (सं० ल्लो०) अमृतादि नामकी गोली।

यह कफ, त्रिदोष और अग्निमान्दपर खिलायी जाती है,—विष २ भाग, कपर्दभस्म ५ भाग और मरिच ८ भाग एक साथ पीसकर पानीसे मटर-जैसी गोली बांध लेना चाहिये। (भावप्रकाश मध्यभाग)

अमृताद्यगुग्गुलु (सं० पु०) मेदरोगपर दिया जानेवाला गुग्गुलु। इसके तैयार करनेकी रीति यह है, गुडूची, छोटीएलायची, विडङ्ग, वत्सक, कुटजत्वक्, विभातक, हर, आवला, गुग्गुलु यह सब क्रमसे बढ़ाकर—यथा गुडूची १ पल हो, तो छोटी एलायची २ पल, विडङ्ग ३ पल—इसतरह परिमाण वृद्धिसे सब द्रव्योंको चूर्ण करके मधुमें मिलाना चाहिये।

(मेघनरवावली)

अमृताद्यघृत (सं० ल्लो०) वातरक्तका घृत, जो घी वातरक्त रोगपर लगता हो। इसके बनानेका विधान यों लिखा गया है,—घृत ४ शरावक एवं आरग्वध, श्वेतपुनर्णवा, कोकिलाचमूल, एरण्डमूल और घनमुस्ताका कल्कद्रव्य १ शरावक किसी हांडीमें रखे। फिर उसमें आमलकीरस ४ शरावक और जल १२ शरावक डालकर खूब पकाना और घो निकाल लेना चाहिये। (चक्रपाणिदत्तसंग्रह)

अमृताद्यचूर्ण (सं० ल्लो०) आमवातका चूर्ण, जो चूर्ण आमवात रोगपर खिलाया जाता हो। इसके तैयार करनेकी रीति यह है,—गुडूची, नागर, मुष्टिका और वरुणको बराबर-बराबर रखते और पीसकर चूर्ण बना लेते हैं। (भावप्रकाश मध्यभाग)

अमृताद्यतैल (सं० ल्लो०) गलगण्डादिका तैल विशेष, जो तैल गलगण्डादि रोगपर लगता हो। इसके बनानेका विधान नीचे लिखते हैं,

मूर्च्छित तिलका तैल ४ शरावक, गुडूची, नीमकी छाल, कुटजत्वक्, वत्सक, पीपल, देवदारु, काकमारी, बला इन सबका कल्क १ शरावक तैयार करना चाहिये। पहले १०० पल गुडूचादिको ६४ शरावक जलसे काथ बनाये। जब १६ शरावक शेष रहे, तब आगसे नीचे उतार उक्त कल्क और तैलको मिला कर तैल पाककी विधिसे पकाना होता है।

(मेघनरवावली)

अमृताम्रस (सं० त्रि०) अमृतं अम्रः अन्नमिव
दृष्टिकारं येषाम्। सकल देवता।

अमृताफल (सं० त्रि०) अमृतायाः फलम्, ६-तत्।
१ परवल। २ रुचिफल, नास्याती।

अमृतायमान (सं० त्रि०) अमृतमिव आचरति,
अमृत-कण्ड-शानच्। अमृततुल्य, पीयूष-जैसा, जो
आवह्यातके बराबर हो।

अमृतारिष्ट (सं० त्रि०) विषमज्वरादिका अरिष्ट,
जो अरिष्ट विषमज्वरादिपर दिया जाता हो। गुड़ूची
पलशत और दशमूल पलशतको द्रोणचतुष्टय जलमें
डाल पकाना और चौथाई बाकी रह जानेसे उतार
लेना चाहिये। पीछे इस क्वाथमें गुड़ तुलाद्वय मिला,
कृष्णजौरा १६ पल, पपैट २ पल तथा सप्तपर्ण, त्रिकटु,
मुस्तक, नागकेशर, कटुकी, अतिविषा और इन्द्रियव
प्रत्येकका १ पल चूर्ण छोड़ते हैं। उसके बाद आठत-
पात्रमें इसे भर तीन मास रखेंगे। (ईषज्वरबावली)

अमृतार्णव (सं० पु०) अतिसार और ज्वरातिसार
पर दिया जानेवाला रस। इसकी मात्रा १ माषा
रहेगी। अनुपानमें धान्य, जीरक वा शालिवीज
पड़ता है। इसके बनानेका विधान यह होगा,—हिङ्गु-
लोत्थरस, लौह, गन्धक, टङ्गण, शठो, धान्यक, क्रीवर,
मुस्तक, अम्बठा, जीरक और अतिविषाको बकरीके
दूधमें डालकर घोटनेसे अमृतार्णव तैयार हो जाता
है। (ईषज्वरबावली)

अमृतार्णवरस (सं० पु०) कासहर रसविशेष, जो
रस खांसोको मिटाता हो। गुड़ूची और पञ्चकाष्ठसे
ही यह तैयार हो जायेगा। (रसरत्नाकर) वाजीकरण-
पर चलनेवाले अमृतार्णवरसमें सूतभस्म यानी रस-
सिन्दूर मिलाया जाता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह) कासपर
दिया जानेवाला अमृतार्णवरस इसतरह बने और
मात्रामें २ गुञ्जा पड़ेगा। रास्ना, विडङ्ग, त्रिफला,
रसगन्ध, कटुत्रिक, अमृता, पन्नक, क्षौद्र और विष-
तुल्यको पौस चूर्ण कर लेते हैं। रसेन्द्रसारधृतके
रसायनाधिकार पर भी अमृतार्णव रस चलता और
मात्रामें निष्ककी बराबर रहता है।

अमृतार्णवलौह (सं० पु०) कुष्ठाधिकारका लौह,

जो लौह कुष्ठपर खिलाया जाता हो। इसे एक माषा
मधुके साथ चाट लेना चाहिये।

अमृतावटिका (सं० स्त्री०) सद्योव्रणघ्नो वटिका,
जो गोल्ली फौरन् फोड़ा-फुन्सी मिटा देती हो। यह
व्रण शोथपर भी चलती है। इसे यों बनायेंगे,—

गुड़ूची, पटोलमूल, त्रिफला, त्रिकटु, (सोठ मिर्च
पीपल), कृमिघ्न, इन सबका चूर्ण बराबर बराबर और
सब चर्णके बराबर गुग्गुलु मिला गुटिका बना प्रति-
दिन सेवन करना होता है। (रसरत्नाकर)

दूसरी, अमृतावटिका बृहदभिधाना होती,
व्रणको फायदा पहुँचाती और मात्रामें ८ माषा रहती
है। बनानेका विधान यह होगा,—

गुड़ूची १०० पल, दशमूल १०० पल, पाठा, मूर्वा,
बला (बरियार), श्वेत बरियारकामूल, एरण्डमूल यह
सब प्रत्येक १० पल, हरीतकी १०० पल, बहेड़ा
२०० पल, आमलकी ४०० पल, इन सब द्रव्योंको
दो द्रोण (१२७ शरावक) जलमें एकरात्र फुलाना
और १ प्रस्थ गुग्गुलुकी पोटकी बांधकर उसमें डाल देना
चाहिये। पश्चात् दूसरे दिन गुग्गुलुके साथ उक्त द्रव्योंको
पाक करे। जब चतुर्थांश क्वाथ शेष रह जाय, तब
उतार उसके गुग्गुलुको खूब पचाना चाहिये। पुनः
इन सब द्रव्योंको लोहके पात्रमें पाक करे। जब
गाढ़ा हो जाय, तब आगसे उतार कर शीतल होनेपर
त्रिफला, त्रिवृता, दन्ती, व्योष (सोठ मिर्च पीपल),
गुड़ूची, अश्वगन्धा, विडङ्ग, चित्रक, तेजपत्र, छोटी
एलायची, नागकेशर, इन सबका चूर्ण प्रत्येक एक
एक पल मिलाना होता है। (प्रयोगामृत)

फिर तीसरी अमृतावटिका कुष्ठरोग और वात-
रक्तको नाश करती है। यह इसतरह बनेगी,—

गुड़ूची १०० पल, दशमूल, १०० पल, पाठा, मूर्वा,
वरियार, पटोलकी पत्ती, दार्वी, एरण्डमूल, यह सब
प्रत्येक १० पल, विभीतक १०० पल, हरीतकी २०० पल,
आमलकी १०० पल—सबको ३ द्रोण (१८२ शरावक)
जलमें क्वाथ बनाये, अष्टांश शेष रहने पर उतार कर
छान ले। पश्चात् गुग्गुलु १ प्रस्थ, घृत आधा प्रस्थ मिला
पुनः पाक करे। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब गुड़ूचीका

सत्व २ पल, सोंठ और पीपलका चूर्ण प्रत्येक २ पल देना होता है। (मैथन्यरत्नावली)

अमृताश (सं० पु०) अमृते जले आ-सम्यक्-रूपेण शेते प्रलयकाले, अमृत-आ-शी-ड। १ प्रलय-कालमें जलपर सोनेवाले विष्णु भगवान्। अमृतं अश्नाति, अमृत-अश्-अण्। २ अमृत पानेवाला देवता, जो फरिश्ता आब-हयात पीता हो।

अमृताशन (सं० पु०) अमृतं अश्नाति अमृतं अशनं यस्य इति वा, अमृत-अश्-ल्यु। देवता, फरिश्ता।

अमृताशिन् (सं० पु०) अमृताशन देखो।

अमृताशम् (सं० पु०) अमृतो जीवितः अश्मा, टजन्त कर्मधा०। प्रस्तरविशेष, जीवित प्रस्तर, जानू-दार सङ्ग, जीता-जागता पत्थर। ऐसा भो पत्थर होता जो प्राणीकी भांति जलमें तैरते फिरता है।

अमृताष्टक ((सं० पु०) अमृतां गुड़चो प्रमृतोना-मष्टकं यत्र, बहुव्री०। पाचन विशेष, बदहजमीकी कोई दवा। यह कषाय गुड़चो आदि आठ द्रव्यसे बनता है,—गुलच्छ, इन्द्रियव, नौमका बकला, परवलकी पत्ती, कटुकी, सोंठ, रक्तचन्दन और नागरमोथा यह सब दो तोले ले सोलह गुण जलमें धोमी आंचसे पकाना चाहिये। कोई चौथाई जल रह जानेसे हांडीको नीचे उतार उसमें आध तोले पीपलका चूर्ण छोड़ देते हैं। इस कषायको पौनेसे पित्तश्लेष्मज्वर, हृत्तास, अरुचि, वमि, पिपासा और दाह मिट जायेगा। (सारकौमुदी)

अमृतासङ्ग (सं० स्त्री०) अमृतस्य विषयेव आसङ्गो यत्र, बहुव्री०। खपरिकातुल्य, खपरियेका सुर्मा।

अमृतासङ्गम (सं० पु०) अमृतासङ्ग देखो।

अमृतासु (सं० त्रि०) अमृता वियोगरहिता असवः प्राणा यस्य, बहुव्री०। दीर्घजीवी, बहुत दिन जीने-वाला, जो जल्द न मरता हो।

अमृताहरण (सं० पु०) अमृतं पीयूषं आहरति अमृतस्य आहरणं येन वा, अमृत आ-ह-लुट्। अमृतको हरण-करनेवाले गरुड़। गरुड़के अमृताहरणका विवरण अधि-जिह्न शब्दमें देखो।

अमृताह्न (सं० स्त्री०) अमृतं आह्रयते तुल्यसाद-

फलत्वेन स्रज्वते, अमृत-आ-ह्वे-क। १ अमृतफल, नासपाती। यह गुरु, वातघ्न, खादु और त्रिदोष-नाशक होता है। सुङ्गैरप्रान्तमें इसे प्रचुर पायेंगे। २ खरबूजा।

अमृताह्वयतैल (सं० स्त्री०) वातरक्तका तैल, जो तैल वातरक्त रोगपर लगता हो। इसके बनानेका विधान नीचे लिखते हैं,—

गुड़चो, मधुक, क्लृप्तपञ्चमूल, वृहती, कण्टकारी, पृश्निपर्णी, गोक्षुर, पुनर्णवा, रास्ना, एरण्डमूल, जीवनीय, यह सब प्रत्येक १०० पल, बला ५०० पल, कोल, विल्व, यव, माष, कुलथी, यह सब १ आठक, शुद्ध काश्मर्या (गन्धार) १ द्रोण, इन सबका १०० द्रोण जलमें काय बनाकर जब ४ द्रोण शेष रहे, तब नीचे उतार कर छान ले, पीछे १ द्रोण तैल और पञ्चगुण दूध मिलाकर पचाना चाहिये, पुनः चन्दन, खसू, केसर, पत्र, एलायची, गुरु, कुष्ठ, तगर, मधुयष्टिका, यह सब प्रत्येक ३ पल और मस्तिष्क आधा पल चूर्ण करके मिलाया जाता है। (भावप्रकाश मध्यभाग)

अमृतेश (सं० पु०) अमृतके ईश, शिव।

अमृतेशय (सं० पु०) अमृते जले शेते; अमृत-शी-अच्, अलुक्-स०। विष्णु। प्रलयकालमें जलपर सोनेसे विष्णुका नाम अमृतेशय पड़ा है।

अमृतेश्वर, अमृतेश देखो।

अमृतेश्वररस (सं० पु०) यक्ष्मारोगका रसविशेष। इसके तैयार करनेकी रीति यह है—पारतमस, गुड़चका सत्व, लौह, मधु (शहद), घृत, इन सब द्रव्योंको एकत्र मिलाकर यह औषध बनाया जाता है। मात्रा इसकी ३ रत्ती होती है। (प्रयोगावत)

अमृतेष्टका (सं० स्त्री०) यज्ञीय इष्टकाविशेष, यज्ञकी खास ईंट। यह मनुष्य, पशु, पक्षी प्रभृतिके शिरजैसो स्पर्शसे बनायी जाती है।

अमृतोत्था (सं० स्त्री०) साधुमूला, सालममिसरी। अमृतोत्पत्ति (सं० स्त्री०) पीयूषका प्रादुर्भाव, आब-हयातकी पैदायश।

अमृतोत्पन्न (सं० स्त्री०) अमृतं विषमिव उत्पन्नम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। खपरौतुल्य, खपरिया।

अमृतोत्पन्ना (सं० स्त्री०) अमृतमिव स्वादु मधु उत्पन्न यस्याः, ५-बहुव्री०। मच्चिका, ममाखी। मच्चिका पुष्पसे मकरन्दको ले कृत्तेमें मधुसञ्चय करती, इसीसे उसका नाम अमृतोत्पन्ना पड़ा है।

अमृतोदन—सिंहहनुके पुत्रविशेष।

अमृतोज्ज्व (सं० स्त्री०) अमृतं विषमिव उज्ज्वति, अमृत-उद्-भू-अच्। १ खर्परीतुल्य, खपरिया। २ आमलकी, आंवला। (पु०) अमृतं मृतुरञ्जयं शिवमिति यावत् उज्ज्वते प्राप्नोति भक्तदेयत्वेन। ३ विष्वक्छ, वेलका पेड़। ४ धन्वन्तरि।

अमृतोज्जवा (सं० स्त्री०) १ आमलकी, आंवला। २ नागरवल्ली, पान।

अमृतोपम (सं० स्त्री०) खर्परीतुल्य, खपरिया।

अमृतोपहिता (सं० स्त्री०) चोपचीनौ।

अमृतुर (सं० पु०) १ मृत्युका अभाव, अमरत्व, मौतकी अदममौजूदगी, बक्का। (त्रि०) २ अमर, कभी न मरनेवाला। ३ अमरत्व प्रदान करनेवाला। जो बक्का बहुश देता हो।

अमृघ्न (सं० त्रि०) मृष्टु उन्दने बाहुलकात् रक्, ततो नञ्-तत्। १ अहिंसित, न मारा हुआ, जिसे कोई चोट न दे सके।

अमृषा (सं० अव्य०) १ सत्य, सच-सुच, बेशक, असलमें। २ शुद्ध रीतिपर, ठीक तौरसे।

अमृषाभाषिन् (सं० त्रि०) संत्यवक्ता, सच बोलने वाला, जो झूठ न कहता हो।

अमृष्टमृज (सं० त्रि०) विषुष, निहायत पकीजा, जिसको सफ़ाईमें दाग न लगे।

अमृथ (सं० त्रि०) सहन करनेके अयोग्य, जो बर-दाश न हो।

अमृथमाण (सं० त्रि०) सहन न करनेवाला, जो बरदाशत न करता हो।

अमेक्षण (सं० त्रि०) मेक्षणशून्य, बेचमच, जिसमें चलानेको चमच न रहे।

अमेघ (सं० त्रि०) मेघरहित, बेबादल, साफ़, खुला।

अमेजना (हिं० क्ति०) १ अमेजिश रहना, मिलावट होना, मिल जाना। २ अमेजिश करना, मिला देना।

अमेठना, उमेठना देखो।

अमेदस्क (सं० त्रि०) मेदरहित, बेचर्बी, लागूर, दुबला।

अमेधस् (सं० त्रि०) नास्ति मेधा धारणवती धीर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ अल्प धारणाशक्तिसम्पन्न, कुछ भी स्मरण न रखनेवाला, बेहाफ़िजा, जिसे कुछ भी याद न रहे। २ मूर्ख, बेवकूफ़। ३ क्षिप्त, पागल।

अमेध्य (सं० त्रि०) न मेध्यं पवित्रम्, विरोधे नञ्-तत्। १ अपवित्र, अशुद्ध, नापाक। “यदमेध्यमशुद्धम्” (अ०ति) (स्त्री०) २ विष्ठा, मैला। “अमच्छाणि विजातीनाममेध्यप्रभवानि च।” (मनु ५।५) ३ अपशकुन, बुरा शिगून्।

अमेध्यकुणपाशिन् (सं० त्रि०) १ कुणपभक्षक, सुर्दा-खोर। २ अखाद्यमांसभोजी, सड़ागला गोश्त खाने-वाला।

अमेध्यता (सं० स्त्री०) अपवित्रता, अशुद्धता, नापा-कौजगी, मैलापन।

अमेध्यत्व (सं० स्त्री०) अमेध्यता देखो।

अमेध्ययुक्त (सं० त्रि०) मलिन, कलुष, मैला, नापाक।

अमेध्यलेप (सं० पु०) पुरीषका लेपन, गोबरकी लेपायी।

अमेध्याक्त (सं० त्रि०) पुरीषसे कलुषित, मैलेसे भरा हुआ, जिसमें गोबरकी खाद पड़ जाये।

अमेन (वै० पु०) मृतपत्नीक, गतभायं, बेज़न, रंझुवा, जिस शख्सकी बीबी मर जाये।

अमेनि (वै० त्रि०) मि-नि, ततो नञ्-तत्। परि-च्छेदशून्य, द्वयत्तारहित, बेबाज, बेमिकदार। २ आघात न करनेवाला, जो चोट न पहुँचा रहा हो।

अमेय (सं० त्रि०) न मेयम्, नञ्-तत्। १ द्वयत्ता लेनेके अयोग्य, जिसको मिकदार मालुम न हो सके। २ जाननेके अयोग्य, समझमें आ न सकनेवाला।

अमेयात्मन् (सं० त्रि०) महानुभाव, उदारचेता, महाशय।

अमेरिका—एक महाद्वीप। यह उत्तर, मध्य और दक्षिण—तीन भागमें विभक्त है, किन्तु सचराचर उत्तर और दक्षिण—दो ही भाग प्रधान हैं।

उत्तर-अमेरिकासे उत्तर उत्तर-महासागर, पूर्व आटलाण्टिक महासागर और पश्चिम एवं दक्षिण प्रशान्त-महासागर विद्यमान है। उत्तरसे दक्षिण दिक् पर्यन्त इसका दैर्घ्य ४६०० मील और पूर्वसे पश्चिम पर्यन्त प्रस्थ ३१२० मील पड़ेगा। इसमें भूमिका परिमाण प्रायः ८३१८७११ वर्ग-मील आता है।

उत्तर-अमेरिकाके विभाग नीचे लिखेंगे,—

विभागका नाम	परिमाण (वर्गमील)
१ ग्रीनलैण्ड	३८००००
२ फ्रान्सीसी अधिकार	११३
३ रूस अधिकृत अमेरिका	३८४०००
४ निउ ब्रटेन	१४८००००
५ पश्चिम कानाडा	१४७८३२
६ पूर्व-कानाडा	२०१८८८
७ निउ ब्रन्सविक	२७७००
८ नोवा स्कोशिया	१८७४६
९ प्रिन्स एडवर्ड द्वीप	२१३४
१० निउ फाउण्डलैण्ड	५७१००
११ ब्रिटिश कलम्बिया	२१३५००
१२ युनाइटेड स्टेट या युक्तराज (अमेरिका)	३३०६८३४
२३ मेक्सिकोका मिश्रराज्य	१०३८८६५

ब्रिटिश अधिकार ।

प्रधान द्वीप—उत्तर-महासागरमें ग्रीनलैण्ड, साउद-मटन, कम्बरलैण्ड, कक्वरन, विक्टोरिया, बैङ्कस-लैण्ड; ब्रिटिश अमेरिकासे पश्चिम सिटका, प्रिन्स ऑफ वेल्स, व्हीन शालेंट, वङ्गुवर; बर्मुदास, केपब्रटेन, प्रिन्स एडवर्ड, निउ फाउण्डलैण्ड, एवं वेष्ट इण्डिज द्वीपपुञ्ज।

उपसागर—कालिफोर्निया, मेक्सिको, कम्प्योची, हण्डू-रास, हडसन, बेफिन, सेण्ट लरेन्स, चीसापोक, कारीव सागर।

प्रणाली—वेरिङ्ग, हडसन, डेविस।

चक्रोप—प्रिन्स ऑफ वेल्स, सेण्ट लूकस्, सेवल, रे चार्ल्स, जुडलेघ, फेशरोवेल, रेस।

उपद्वीप—कालिफोर्निया, आलस्का, लाब्राडर, फ्लोरिडा, नोवास्कोशिया, युकेटन।

पर्वत—राकी गिरिश्चणी (उच्च-पर्वत गिरि)।

आलिघानी गिरिश्चणीवाली मेक्सिकोकी गिरिश्चणी (उच्च शृङ्ख पोपोकाटिपेटल, १७७८३ फीट), कालिफोर्नियाकी गिरिश्चणी, सेण्ट इलियस, सेण्ट वेदर।

नद-नदी—ग्रेटफिस, मेकलजी, वोरगन, निउ कोलोरडो, मिसिसिपि, जेमस्, सेण्ट लारेन्स।

झर—ग्रेटवियर, ग्रेटक्लेभ, अथावीस्का, युनिपेग, सुपिरियर, ह्विडरन, निकारागोया, चपला।

उत्तर-अमेरिका अतिशय शीतप्रधान स्थान है। इसमें कितनी ही जगह अधिक शीत-पड़नेसे न तो कोई ठहर और न गेहूं वगैरह प्रस्थ ही उपज सकेगा। इस सकल स्थानमें शिकारी वन्य जन्तुका चर्म लेने आता है। सुविधा-मत स्थान वास्तवमें रिउ-ब्रडेल नटर्नसे कालिफोर्नियावाले उपद्वीपके निम्नस्थान पर्यन्त ही मिलेगा।

शीतप्रधान स्थान रहते भी अंगरेजोंके हाथ जा उत्तर-अमेरिकाकी पूर्व दुरवस्था बदलो, अब अनेक स्थान समृद्धिशाली सभ्यताकी वासमूमि बन गया है।

देश और उसकी

राजधानी एवं नगर।

देनिश अमेरिका—१ लिक्टेन केल्स, जूलियेन, सहाव।

फ्रान्सीसी अधिकार—२ सेण्ट पापर।

रूसी अधिकार—३ उत्तर-आर्कैञ्जल।

ब्रिटिश अमेरिका—४ योर्क फेक्टरी, ५ टोरेण्टो-हामिल्टन, ६ क्विवेक, ओटोवा, ७ प्रोडरिक्टन, सेण्ट जान, ८ हालिफ़क्स, ९ साल्टन, १० सेण्टजोन्स, ११ निउ वेस्टमिनिस्टर।

युनाइटेडस्टेट—१२ वाशिंग्टन, बोस्टन, निउ यार्क, फिलाडेल्फिया, बल्तिमोर, रिचमण्ड, चारल्टन, निउ आर्लीन्स, सेण्टलूयो, सिन्सिनाटो, पिट्सबर्ग, चिकागो।

मेक्सिको—वेराक्रूज, म्यूलवा, मेरिडा।

ओटावा नगरमें चुम्बक पत्थरकी खानि निकली है। टोरेण्टो विश्वविद्यालय और क्विवेक वाणिज्यका स्थान होनेसे प्रसिद्ध है। वाशिंग्टनमें राज्यके प्रधान कर्ता रहते हैं। वहां जातीय समिति लगती है। निउ यार्कमें वाणिज्य-व्यवसाय अधिक चलता और नाना

शास्त्र एवं नाना भाषा सीखनेको विश्वविद्यालय बना है। चिकागोसे शस्त्र मेजा और मंगाया जाता है।

मध्य-अमेरिकामें निम्नलिखित देश विद्यमान हैं,—

देशका नाम	परिमाण वर्गमील	राजधानी
सानसालवेडर	८५००	कजुतेपेक।
निकारागोया	४४०००	ग्रानाडा।
हण्डुरास	५३०००	कीमागागोया।
गोयाटेमाला	५८०००	निउगोयाटेमाला।
कष्टारिका	२५०००	सञ्चोशे।
मसकितो		ब्लूफील्डस।
ब्रिटिश हण्डुरास		विलिज।

मध्य-अमेरिका उत्तर अमेरिकामें ही गिना जाता है। किन्तु कोई-कोई इसे स्वतन्त्र भी बना लेगा।

दक्षिण-अमेरिकाकी उत्तर-सीमापर कारीव सागर एवं आटलाण्टिक महासागर, दक्षिण तथा पूर्व दक्षिण-महासागर और पश्चिम प्रशान्त महासागर विद्यमान है। उत्तरसे दक्षिण पर्यन्त दैर्घ्य ४५०० मील, पूर्वसे पश्चिम पर्यन्त प्रस्थ ३००० मील और भूमि-परिमाण प्रायः ७८८०००० वर्ग-मील है। इसके देशादिका विवरण नीचे देखिये,—

देश	शासनप्रणाली	परिमाण	राजधानी।
१ वेनजुयेला	साधारणतन्त्र	४१६६००	काराकास।
२ बोलिविया	„	३७४४८०	सुकुयीशाका।
३ इक्वडोर	„	३२५०००	क्विटो।
४ पेरू	„	५८००००	लिमा।
५ चिलि	„	१७००००	सेण्टियागो।
६ कलम्बिया ब्रिटिश		१२००००	बोगोटा।
७ पाटागोनिया		३८००००	पण्डायेरिन्स।
८ बुयेन आयार	साधारणतन्त्र	६००००	बुयेन आयार।
९ उरुगुया	„	१२०००	मण्डुभिडो।
१० पारागोया	„	७४०००	आसनशन।
११ लाप्लाटा		८२७०००	पेराना।
१२ ब्रेजिल		२३००००	रिउडेजोनवरो।
१३ गायना (ब्रिटिश)		७६०००	जार्जटाउन।
१४ „ (हालेण्ड-अधिकार)		३४५००	पारामारिबो।
१५ „ (फान्सीसी)		२१५००	कैयेन।

१६ फकलैण्ड द्वीपपुञ्ज

१६०००

पोर्टलूथो।

प्रधान सागर और उपसागर—डेरियान, पनामा, मार-कायिवो, गोयाक्विल।

प्रणाली—मेगिलेन।

द्वीप—ट्रिनिडाड, गालापेगन, चिच्चा, जुयान, फार्ना-रुडेज, चिलो, वेलिङ्गटन, शेटन, अबोरा, जर्जिया, मरुद्वीप, टेण्डेलफिउगो, फकलैण्ड, मराजो।

पर्वत—एण्डिस् (उच्चशृङ्ग एकोनकागुया), पेरिम।

आग्नेयगिरि—कोटापेक्सी।

ऋद—मारोकायिवो, टिटिकाका, सिलवेरो, गुयानकेक।

नदी—ओरिनोको, एसेक्विबो, मागडेलाना, कलरेडो, लाप्लाटा, पारागुया, फ्रान्सिस्की, टोकाण्टिन, अमे-ज़ान।

योजक—पनामा। इसी योजक द्वारा अमेरिका उत्तर और दक्षिण भागमें विभक्त हुआ। अब यह खोदकर लहर बनाया गया है।

वेष्ट-इण्डिज अमेरिकाका एक विभाग है। इसमें कितने ही देश और नगर विद्यमान हैं,—

देशका नाम	वर्गमील परिमाण	राजधानी।
हेटी	११०००	हेटी।
डोमिनिका	१८०००	सानडोमिनिगो।
केउवा	४२३८३	हावाना।
पोर्टोरिका	३८६५	सानजयेन।
जामेका	५४६८	सनिश टाउन।
ट्रिनीडाड	२०००	स्पूरटा।
विण्डवर्ड द्वीपपुञ्ज		ब्रिजटाउन।
बबंङो	१६६	„
सेण्ट विनसेण्ट	१३१	किङ्गस्टन।
टोरेगो	१८७	स्कारवेरो।
सेण्ट लूसिया	२२५	केड्रिस।
एण्टीगुया	१६८	सेण्टजान्स।
मण्डसेरेट	४८	„
सेण्ट क्रिस्टोफर	१०३	वेसेटीर।
एङ्गुयेला		
नेविस		

देशका नाम	वर्गमील परिमाण	राजधानी
वेर्जिन द्वीपपुञ्च	१३७	
डोमिनिका	२८१	रोसू।
बाहामा द्वीपपुञ्च	५४२२	नसू।
गोयेडेलूप	५०४	वेसेटर।
मार्टिनिक्	३३२	पोर्टोरायेल।
सेण्टमार्टिन उत्तर	२१	
सेण्टमार्टिन दक्षिण	२१	
क्यूरेसोया	५८०	विलमस्टेड।
साण्टाक्रूज	८१	क्रिस्टनस्टेड।
सेण्टटोमस	३७	
सेण्टवार्थेलमुय	७२	
सेण्टजान	२५	लासेरेनेज।
तुर्क द्वीपपुञ्च	४००	
मर्मूडा द्वीपपुञ्च	४७	हेमिलटन।

वेष्ट-इण्डिज द्वीपकी भूमिका परिमाण—प्रायः ८१८१० वर्गमील पड़ता है।

जाति—अमेरिकाका आदिम निवासी ताम्रवर्ण होता है। यह जाति अमेरिकामें प्रायः सर्वत्र ही देख पड़ेगी। आदिम-निवासी कुछ-कुछ बीना रहता है। उसका हीठ और गाल बड़ा-मोटा, बाल काला-लम्बा लगेगा। कोई-कोई अनुमान करता है, कि वह मुगल जातिसे उत्पन्न हुआ था। उसका आदि निवास दक्षिण एशिया रहा, वेरिङ्ग-प्रणाली पारकर अमेरिका जा पहुँचा। अमेरिका जब स्वेनवासीको दृष्टि आया, तब वह सिर्फ शिकार ढूँढते फिरता था। कोलम्बस बड़ा कष्ट बाद भारतवर्ष समझ अमेरिकामें घुसा और आदिमनिवासीको जा देखा। वह उलझ फिरता, केशराशि पृष्ठदेश पर्यन्त लटकता, दाढ़ीका नाम न मिलता और देह सुचिक्कण रहता है। सुखभी समान पड़े, देखनेमें मन्द न मालूम देगौ। हावभाव नम्र अथवा भययुक्त होता है। शरीर लम्बा न लगे, और रूप सुन्दर देख पड़ेगा। उसका बदन कोमल होता है। वह अपने देहका कोई-कोई अंश चित्र-विचित्र बनाये, फिर उसपर जब सूर्यका किरण पड़े, तब सुन्दरताका ठिकाना न लगेगा। वास्तवमें वह प्रकृतिका प्रकृष्टमात्र

शिशु ठहरता और नहीं जानता, भला-बुरा किसे कहा जाता है। उसे सदा ही प्रफुल्ल और अपने ही आप सश्रद्धित पायेंगे। उसके पास लौहास्त्र कुछ भी न रहा और न वह जानता ही था लौहास्त्र कैसे बनता है। वह बेतके सिरेपर मछलीका कांटा लगा तीर और लकड़ीको जलाकर सुखकी और धार निकाल तलवार बनाता था। युरोपीय उसे रेड इण्डियन कहते हैं। वह सूर्योपासक होता है। पहले जब कोलम्बस अमेरिकाके कूलपर उतरा, तब आदिम निवासीने कोलम्बस और उसके साथीको सूर्यलोका-प्रेरित देवदूत समझ भय और भक्ति देखायो थी। उस समय अमेरिकाके स्थान-स्थानमें वह राज्य भी चलाते रहा। यद्यपि आदिम निवासी उलझप्राय घूमता, तथापि उसके अङ्गपर सोना भी चमका करता था। अब सभ्यजातिके सहवाससे वह भी क्रमसे सभ्य बनते जाता है।

उत्तर-अमेरिकाको प्राचीन जाति इण्डियन, आज-तेक, और एस्किमो, इन तीन भागमें बंटी है। कोई प्राचीन इतिहास न मिलते भी आजतेक बहुत पुरानी जाति ठहरती है। किन्तु प्रवाद सुनें,—तेरह सौ वर्ष पहले तोलतेक नामक कोई सुसभ्य जाति उत्तराञ्चलसे आ अनाङ्गयाकमें बसी थी। (अनाङ्गयाकको अब मेक्सिको कहते हैं) उसको निर्मित विचित्र अट्टालिकाका ध्वंसावशेष आज भी स्थान-स्थानमें पड़ा है। महामारी, दुर्भिक्ष प्रभृति नाना कारणसे उस जातिके लोग मेक्सिको छोड़कर चले गये थे। सन् ई०के १२वें शताब्दमें चिचेमेक नामक किसी जातिने अनाङ्गयाक या मेक्सिको पहुँच अपना राज्य जमाया। उसके १३ वर्ष बाद ही आकलङ्गयान जातिने आ चिचेमेकको यहाँसे भगा दिया था।

फिर उत्तर-पश्चिमाञ्चलसे आजतेक जातिने पदा-पंथकर अपना राज्य फैलाया। उस जातिवाले लोग अमेरिकाके सकल अधिवासोंसे ओष्ठ रहे। शौर्य, वीर्य और सभ्यतावाले गुणसे वह सन् ई०के १४वें शताब्दमें प्रसिद्ध हो गये थे। उस समय अङ्गविद्या, ज्योतिर्विद्या, गणित, राजनीति और युद्ध-विद्यादिमें वही अमेरिका-

के मध्य प्रधान रहे। वह व्यवहारके लिये वस्त्र, अलङ्कार, धातुमय अस्त्रादि और बड़ी-बड़ी अट्टालिका बनाते थे। उनका उपास्य देवता तेलकातल-पोका है। आजतेक कहे, कि वह देवता पृथिवीके आत्माका स्वरूप एवं सृष्टिकर्ता ठहरे और मनोहर दिव्यपुरुष समझ उसका ध्यान लगाना पड़ेगा। आजतेक जातिमें नरवलिकौ प्रथा प्रचलित रही। उपरोक्त देवताके उपलक्ष्यमें विपक्षपक्षीय किसी सुलक्षण पुरुषको पकड़ वलि चढ़ायी जाती थी। वलिदानके समय महा-समारोह होते रहा। चार स्थिरयौवना मनोहरा सुन्दरी युवती तेजकातल-पोकेका सेवा किया करती थी। सुविज्ञ लोग नैवेद्य, एवं गन्धद्रव्यादि लाते रहे। पांच आदमी वध्य व्यक्तिका हाथ-पैर पकड़ते, षष्ठ व्यक्ति लाल कपड़े पहन और पत्थरकी कुरी उठा हत्यारेका काम करता था। कुरीसे हृत्पद्म छिदनेपर प्राणवायु निकलता या न निकलता, किन्तु वह हृत्-पद्म सूर्यदेवको देखा देवताके सम्मुख रख दिया जाते रहा। उसके बाद जो आदमी युद्धसे निहत व्यक्तिको पकड़ लाता, वह महामांससे व्यञ्जनादि बनवा स्त्रीपुत्रपरिजनके साथ महासमारोहसे खाता था। कहते हैं, कि सन् १५४२ ई०में 'क्लोडजिलो पोटेक्ली' देवतावाले मन्दिरकी प्रतिष्ठाके समय ७२३४४ व्यक्ति पूर्वोक्तरूपसे एकबारगी ही वलि चढ़ाये गये थे। तेजकातलपोकेके अधीन दूसरी भी कितनी ही देव-देवी रहती, जिसकी पूजा आजतेक जाति करती है। सन् १६५३ ई०को लन्दन शहरमें आजतेक-वंशीय कोई १७ वर्षका बालक और ११ वर्षकी एक बालिका जा पहुँची थी। बालक और बालिका देखनेमें दोनो खर्व रहे। उनके ले जानेवाले व्यक्तिने बताया था,—'यक्षिमागा नामक प्राचीन नगरके लोग इस बालक और बालिकाको, देवताकी तरह पूजते रहे।' कोई-कोई कहता, कि आजतेक अस्वाभाविक जाति है।

एस्किमा या एस्किमो जाति उत्तर-अमेरिकामें प्रायः सर्वत्र ही मिलेगी। अनेक कहते, इस जातिके लोग सुगन्ध जातिसे उत्पन्न हुये हैं। फिर दूसरे

बतायें, कि अमेरिकाके रेडइण्डियनसे एस्किमोका सादृश्य रहते वह भी उसी जातिके लोग होंगे। लेथम साहबके मतानुसार यही एकमात्र जाति उभय महा-द्वीपमें देख पड़ती है। एस्किमो शब्दका अर्थ आमिषाशी निकलेगा। मालूम देता, कि लोगोंने कच्चा मांस खानेसे ही वह नाम पाया है। अपनेको यह इन्विट अर्थात् लोक कहेंगे। सन् ई०के दशम शताब्दवाले स्कन्दनाम उन्हें क्लोलिस्जर अर्थात् धूर्त कहकर पुकारते थे। इस जातिवाले युवकके छोटी-छोटी दाढ़ी होती है, मूँछ नहीं देख पड़ती। पुराने लोग घनी दाढ़ी और कटी मूँछ रखते थे। किन्तु इण्डियनकी दशा ऐसी नहीं रहती। वह दाढ़ी-मूँछ कुछ भी न रखे, निकलते ही जड़से उखाड़ डालेगा। इसीसे वह जनाना-जैसा जान पड़ता है। एस्किमो जातिका आदमी पांच साढ़े पांच फीट पर्यन्त बढ़ेगा। पुरुष शिकार मारते धूमता और स्त्री घरका काम चलाती है। मांस खानेके सम्बन्धमें वह प्रायः कुछ सोच-विचार न करेगा। अनेकस्थलमें उसे बे-पकाये ही पेटमें डाल लेता है। जिस जन्तुको खाये, पहले उसका निर्गत रक्त वह चूस लेगा। रक्त प्रायः टटका ही पिया जाता है। वह अतिशय अपरिष्कार और उग्र रहेगा। मृग, पशु, पक्षी और मत्स्यके चर्मसे आच्छादन बनता, जो स्त्रीपुरुषके देहका कपड़ा होता है। उसमें अनेक कुसंस्कार मिलेगा। उपास्य देवता दो रहते हैं। सन् १७२१ ई०में हानिगेड नामक किसी व्यक्तिने ग्रीनलैण्ड जा इस जातिके कितने हो लोगोकी ईशायी बना डाला था। एस्किमो निहत पशुका सद्य रक्त तेल और चर्बीसे मिला एक प्रकार अङ्गार बनाता, जो स्वास्थ्यके लिये विशेष उपकारी ठहरता है।

अब उत्तर-अमेरिकामें नाना सभ्य जाति आ बसी है। यूनायिटेड स्टेट्सके सभ्य अंगरेजगणने पृथिवी पर नाना विषयमें उच्च आसन पाया। पहले वह इङ्गलैण्ड राज्यके अधिकारमें रहे, मध्यमें इङ्गलैण्डवासो अंगरेजसे लड़ खाधोन बन गये हैं। उनके देशमें राजा न हो, राज्यके मध्य किसी विज्ञ व्यक्तिको सकल

द्वारा निर्वाचनकर राज्यका प्रधान पद दिया जायेगा। उस प्रधान व्यक्तिको अधिवासीके मतानुसार काम करना पड़ता है।*

दक्षिण-अमेरिकाका अति प्राचीन कालसे भारत-वर्षके साथ संश्व रहता। यहां आदिम अधिवासीके मध्य राम-सीताका उत्सव प्रचलित है। (Asiatic Researches, Vol. XI.) इस स्थानकी कितने ही लोग पुराणोक्त पाताल लोक समझते हैं। दक्षिण अमेरिकाका पेरू देश बहुकाल पूर्व भो समृद्धिशाली रहा। पाश्चात्य पण्डित उसी समयको इङ्ग-पूर्वकाल कहा करते हैं। इङ्गपूर्व जाति सभ्यता, भाषा, और धर्माचरणमें, दक्षिण-अमेरिकाकी दूसरी जातिसे श्रेष्ठ थी। उसकी शिल्प, और भास्करविद्याका परिचय, प्राचीन मन्दिरादिके ध्वंसावशेषसे पायेंगे। सकल भग्न मन्दिर पेरूदेशके स्थान-स्थानमें आज भी पड़ा है। टिटिकाका झरदके तीर टिया-हुनाकुका ध्वंसावशेष देखेंगे। उसका हरेक दरवाजा पत्थरसे बना, दश फीट जंचा और तेरह फीट चौड़ा है। किसी प्रस्तर-स्तम्भकी उंचाई, कोई बाईस फीट निकलेगी। मन्दिरकी चारो ओर खोदी हुयी देवमूर्ति तीस फीट लम्बी लगती है। टियाहुनाकुका इतिहास नहीं मिलता। यह बात आज भी ठीक न हुयी, किस समय टिया-हुनाकु नाम रखा गया था। कोई-कोई अनुमान बांधते हैं, कि इङ्गने वह नाम रखा होगा। यह स्थान सागरसे १२८३० फीट जंचा पड़ता है। यहां वायु प्रबल न लगी। मालूम होता है, कि इङ्ग-पूर्वने इस जगह राजधानी बनायी थी। लिमा शहरसे साढ़े बारह क्रोस दूर पचाकमाक नामक कोई प्राचीन स्थान है। वहां बड़े-बड़े मन्दिरका ध्वंसावशेष देखनेसे समझ पड़ेगा, कि इङ्ग-पूर्व जाति आस्तिक रहो। 'पचा'का पृथिवी और 'कमाक'का अर्थ

बनानेवाला है। मतलब यह, कि पृथिवी-निर्माणकारी परमेश्वर उसके उपास्य देवता थे, जिनके नाम-पर उपरोक्त स्थान प्रतिष्ठित हुआ। पचाकमाकके मन्दिरमें कोई मूर्ति न रहते अनेक लोगोंका अनुमान है, कि वह निराकार और अव्यक्त परमेश्वरको मानती थी।

इङ्गकी उत्पत्तिके सम्बन्धमें कुछ निश्चय नहीं ठहरता। इण्डियनका कहना है, कि मङ्को नामक प्रथम इङ्ग टोटीकाका झरदके तीर आये, उनके साथ उनकी स्त्री और मामा ओल्लो भी रहे। मङ्गोके परिचयसे वह इङ्ग अर्थात् सूर्यके आदेशपर असभ्य-जातिको परिचाण देने पड़चुं थे। उनके हाथमें कोई पतली सोनेकी छड़ी रही। उस छड़ीके छूते ही जमीन् फट और वह अन्तर्हित हो जाते थे। मङ्गोने उस समय असभ्योंको खेती करना सिखाया एवं विशुद्ध धर्म और समाजनीतिका प्रचार किया। मामा ओल्लोने लड़कियोंको सिलाई और बुनाईका काम बताया था। उसी समय कुजका नगर भी बसा रहा। मङ्गो पहले * इङ्ग हुये : वह केवल शासनकर्ता ही नहीं, सबके पितास्वरूप प्रधान पुरोहित भी रहे। सब लोग उनके सुनियमसे बह रहे और असभ्य सभ्य बन गये थे। अन्तको मङ्गो सूर्यके निकट जा पड़चुं। यह घटना सन् १०६२ ई०की है। मङ्गोने चालीस वत्सर राजत्व किया था।

उसी समयसे पेरूवासो क्रम-क्रम उन्नतिलाभ करने लगे, उन्नतिके साथ ही निकटस्थ लोगोंके राज्य-पर भी उन्होंने हाथ मारा।

तुपक इङ्ग युपनक्की (११५ इङ्ग)ने अपना राज्य बहुत दूरतक फैलाया और सन् १४५४ ई०में चिलि राज्यको अतिक्रम कर मौल नदी पर्यन्त पेरू राज्यकी सीमा पड़चायी थी। उनके पुत्र हुयना कपक्ने आमेज़ान नदी पार हो क्विटो राज्यपर अपना अधिकार जमाया। उन्हें सन् १४७३ ई०में राज्यपद मिला था।

* नाथिटेड जेट्सके जाति प्रवृत्ति विवरणको Historical and Statistical Information respecting the History, Condition and Prospects of the Indian Tribes of the United States, by H. R. Schoolcraft L. L. D. Philadelphia 1, 2, 3rd pt. देखो।

* इङ्ग पेरूवीय शब्द है, इसका प्रवृत्त अर्थ सूर्य लगेगा। प्राचीन सभ्य राजाको इङ्ग कहते थे।

अमेरिकाका आविष्कार—सन् ई०के १०वें शताब्द स्कन्द-नाभगणने मेसाचुसेट्स पर्यन्त आविष्कार किया था। कोई कोई कहता है,—सन् ११७० ई०में वेल्स युव-राज माडक पश्चिम दिक् घूमने निकले और सात दिन बाद उनका जहाज वर्जिनियाके उपकूलमें जा पहुँचा।

सन् ४८२ ई०की ३री अगस्त शुक्रवारको कोलम्बसने भारतवर्ष आनेके लिये यात्रा की। वह नाना स्थान अतिक्रम कर और नाना विपद् उठा अन्तको अमेरिकाके उपकूलमें आ पहुँचे थे। सन् १४८२ ई०की ११वीं अक्तोबरको उन्होंने पहले-पहल अमेरिकामें पैर रखा। उनका प्रथम आविष्कार बाहामा द्वीपपुञ्ज रहा, वह स्वर्णलोभसे अमेरिकाके अनेक स्थान घूमें और उनको आविष्कार भी किया। वह स्वेन देशसे चार बार अमेरिका आये थे। चार बारमें उन्होंने हिस्पानियोयाला, किउबा, जामेका, हण्डुरास-के दक्षिणसे वेशगुयाके उपकूल पर्यन्त मध्य-अमेरिका और ओरिनोकोसे मारगरिटो तक दक्षिण-अमेरिकाको आविष्कार किया। दक्षिण-अमेरिका आते समय उनके साथ अमेरिगो-वेस्पुचि विद्यमान रहे। वेस्पुचिके पोतचालन (नावचलाना) विषयसे सन्तुष्ट हो कोलम्बसने उनके नामानुसार इस नूतन महाद्वीपको अमेरिका कहकर पुकारा था।

कोलम्बसके अमेरिका-आविष्कारसे पन्द्रह वत्सर बाद पोन्स डी ल्यून नामक किसी व्यक्तिने फोरिडाको आ खोजा। सन् ई०के १५वें शताब्दमें इस्लेण्ड-राज सप्तम हेनरीने वेनिस-निवासी गियोवन्नी कोवट और उसके पुत्रको अटलाण्टिक-आविष्कारके लिये नियुक्त किया था। सन् १४८७ ई०में उन्होंने निडफाउण्डलेण्डको ढूँढ निकाला। फिर सन् १५१८ ई०में मागेलन पृथिवी घूमते-घूमते अमेरिकाकी किसी प्रणालीमें आ पहुँचे थे। उनके प्रथम वहाँ पहुँचनेसे ही उसका नाम मागेलन-प्रणाली पड़ा है। सन् १६१० ई०में स्कुटेन नामक किसी हालेण्डवासीने केप हर्नको आविष्कार किया। उसके छः वर्ष बाद लेमियार एटेन और टेराडेल फिउगोके मध्यसे जाते

समय किसी झड़पर पहुँच गये थे, उन्हींके नामानुसार वह झड़ भी लेमियार कहा गया। फिर थोड़े दिन पीछे मागेलनके कुछ साथी युरोप वापस गये थे। उनमें वेन्नाजनी भी रहे। फ्रान्स-राज प्रथम फ्रान्सिसने उन्हें यूनाइटेड स्टेटके सीमान्तपर अटलाण्टिक उपकूलका पथ आविष्कार करने भेजा। दश वत्सर बाद उक्त राजाके आदेशसे फिर जेक्स कर्टर जलभ्रमणको निकल पड़े थे। उन्होंने सेण्ट-लरेन्स नामक उपसागर और झड़को आविष्कार किया। सन् १५७८ ई०में डेक साहबने कालिफोर्नियाका उत्तर भाग ढूँढा था। सन् १६८२ ई०में फ्रान्सुसीसी सर्वप्रथम मिसिसिपिमें आ उतरे। सन् १७१८ और १७३८ ई०के मध्य अलक-सन्दर मेकेंजी वर्तमान हटिश कलम्बियाके मध्यसे मेकेंजी नदीपर पहुँचे और वहाँसे प्रशान्त महासागरके उपकूल पर्यन्त समग्र स्थानको आविष्कार किया था। सिवा उसके डेविस, वेफिन, लाङ्गेशार, हडसन् प्रभृति, अंगरेजोंने भी अनेक स्थान ढूँढ निकाले। अभी सकल स्थान आविष्कार नहीं हुये अनुसन्धान लगा रहे हैं।

उपनिवेश—युरोपीयोंके मध्य स्वेनवासियोंने सर्वप्रथम अमेरिकामें उपनिवेश किया। उपनिवेश स्थापन करनेमें उन्हें आदिम अधिवासियोंसे अनेक बार लड़ना पड़ा था। उसमें मेक्सिको और पेरूका ही युद्ध प्रधान रहा। सन् १५८४ ई०को मेक्सिको स्वेनके अधिकारमें चला गया था। सन् १७६८ ई०में स्वेनके अधीन फ्रान्सिस्कानोंने अपर कालिफोर्नियाको अधिकार किया। सन् १८१८ ई०को ४२^० अक्षान्तर पर्यन्त उत्तर-अमेरिकामें स्वेनका शासन फैल चुका था। पोर्तुगालवासी उपनिवेश स्थापनमें उतने यत्नवान् न रहे, उनका लक्ष्य एशिया-खण्डपर ही लग गया। सन् १५०० ई०में ब्रेजिल आविष्कार हुआ था। उसके तीस वर्ष बाद पोर्तुगीजोंने वहाँ उपनिवेश जमाया। सन् १६५० ई०में पोर्तुगालके साथ ब्रेजिल भी स्वेनके अधिकारमें पड़ गया था। कुछ दिन पीछे फ्रान्सराजके आक्रोशमें ब्रागिचेवासी सामन्त आये और ब्रेजिल पहुँचकर आश्रय लिया। पचास वर्ष

बाद ब्रेजिल दक्षिण-अमेरिकाके मध्य प्रबल और स्वाधीन राज्य बन गया था।

फ्रान्सीसियोंने सेण्टलरेन्स और मिसिसिपिका उपकूल अधिकार किया; उन्हें उपनिवेशके संस्थापनकी अधिक इच्छा न रही, अंगरेजोंसे लड़ना ही उनका उद्देश्य था। फ्रान्सीसी अधिकारके मध्य शासनकर्ता ही सर्वसर्वा होता और राजनीतिका चक्र नाना भावसे चलता है। किसीको उसपर हस्तक्षेप करनेका अधिकार न रहेगा। सन् १७६२ ई०में फ्रान्सने इङ्ग्लैण्डको कानाडा दे दिया था।

अंगरेज उपनिवेश—स्थापन करनेमें सकल जातिकी अपेक्षा तत्पर होते हैं। किन्तु वही सबसे पीछे अमेरिका पहुँचे थे। सन् १६०७ ई०को निउफाउण्डलैण्ड और वरजिनियामें सर्वप्रथम अंगरेजों उपनिवेश स्थापित हुआ।

सन् १६२० ई०में पूरिटानोंने मेसाचुसेट्सको अधिकार किया था। सन् १६३४से १६३६ ई०के मध्य निउ हामसायर और कनेकटिकटमें अंगरेज आकर टिकते रहे। सन् १६६४ ई०में उन्होंने निउयार्क, निउजर्सी और डेलावर-वेको हालैण्डवालोंसे ले लिया। सन् १६७० ई०को साउथ-केरोलिनामें अंगरेजी राज्य स्थापित हुआ था। सन् १७३३ ई०को जर्जिया भी अंगरेजोंके अधिकारमें आया।

अमेरिकाके अंगरेज स्वाधीनता-प्रयासी होते हैं। वह किसीके अधिकारमें रहना नहीं चाहते। आजकल युनाइटेड-स्टेट्सके अंगरेज सर्वप्रकार स्वाधीन हैं। वहाँ दूसरेका शासन नहीं चलता।

उद्भिद और जन्तु—अमेरिकाका उद्भिद और मत्स्यादि पुरातन महाद्वीपसे भिन्न निकलेगा। वहाँ नाना जातीय वृक्ष उपजता, जिसमें देवदारु, ओक, विलो प्रभृति ही अधिक रहता है। चूड़ाखर जातीय वृक्ष हिमालय पर्वतपर भी देख पड़ेगा। चावल, यव, राई, गेहूँ प्रभृति शस्य उत्पन्न होता है। यहाँ ज्वार ज्यादा मिलेगी। स्थान-स्थानमें सन और तीसो बोयी जाती है। ३८° अक्षांतरके मध्य तम्बाकू बहुत लगायेंगे। ३७° अक्षांतरमें क्यी उपजती है। नील भी बोया

जाये, किन्तु वङ्गदेशकी तरह अधिक न होगा। यहाँ केले बहुत बढ़ते और लोगोंको खानेमें भी अच्छे लगते हैं। आलू ढेरका ढेर निकलेगा। मानिवोक नामक कोई लता होती है। उसकी रेशेदार जड़ सुखाकर बुकनी बना लेनेसे आटे-जैसी आयेगी। अमेरिकन या मार्किन उसी आटेकी रोटी पकाकर खाता है। चिलि देशमें आरारोट उपजता। स्थान-स्थानमें नारियल, गन्ना, बादाम और गुलतुरह मिलता है। आजकल युरोपीय सभ्य जातिके उत्पादसे अमेरिकामें नाना जातीय फल-फूलका पेड़ लगाया जाता है।

जन्तु नाना प्रकारका होता है। उसमें हरिण, मछिष (बाइसन), भेड़, शशक, विडाल, छछूंदर चूहा, चमगीदड़, शजारू, भालू और लोमड़ी प्रायः देखनेमें आयेगी। अमेरिकाका मांसाशी जन्तु बहुत भयानक लगता है। लगड़भग्ना और जागुयार नामक व्याघ्र ही अधिक पायेंगे। हाथी, गैंडा, और घोड़ा पुरातन महाद्वीपकी तरह रहता है। चिचि और पेरू देशमें लामा एवं अलपका मिलेगा। उत्तर अमेरिका-में अपोजम होता है। उष्ण-प्रधान देशमें वानर वसेगा, वह कितना ही एशियाके बन्दर-जैसा होता है।

यहाँ बड़े-बड़े बाजूवाला गध्र, चील, उल्लू, जङ्गली कौवा, कौवा, पपीहा, मक्खीखोरा, चिड़ा, नाना जातीय कबूतर प्रभृति खेचर पक्षी उड़ेगा। हंस, राजहंस, सारस प्रभृति जलचर पक्षी भी तैरते फिरता है। अमेरिकाके टुकन पक्षीकी कौन प्रशंसा न करेगा!

अमेरिकाकी सर्पमें विष अधिक होता है। वह नाना जातीय रहेगा। कच्छप भी अनेक प्रकारका होता है। नदोंमें छोटी-बड़ी नाना प्रकारकी मछली तैरती है। निउफाउण्डलैण्डके किनारे बड़ी-बड़ी मछली पकड़ेंगे।

मधुमक्षिका बड़ा-बड़ा छत्ता लगाती, जिससे प्रचुर मधु निकलता है। यहाँ नाना जातीय पिपीलिका होगी। किन्तु उसमें दीमक ही अधिक देख पड़ती है।

अमेली (हिं० स्त्री०) अमेलन, मिश्रणका अभाव, अमेलिगणका न होना, सफाई ।

अमेव (हिं०) अमेय देखो ।

अमेष्ट (वे० त्रि०) गृहमें वलिदान किया हुआ, जो घरमें कुरबान किया गया हो ।

अमोक्व (वै० त्रि०) बांधनेके अयोग्य, जो बांधा न जा सकता हो ।

अमोच (सं० त्रि०) १ अमुक्त, आवद्ध, निजात न पाये हुआ, जो खुला न हो । (पु०) २ स्वतन्त्रताका अभाव, बन्धन, आजादीकी अदम-मौजूदगी, कैद । ३ सुक्तिका अभाव, निजातकी अदम-मौजूदगी भूठी जिन्दगीसे कुटकारिका न मिलना ।

अमोघ (सं० त्रि०) न मोघं निष्फलम्, न जतम् । १ सफल, उत्पादक, मेवादर, ज़रखेज, सेरहासिल, जो पैदा करनेवाला हो । २ अव्यर्थ, न निकनेवाला, जो निशानेपर लग जाता हो । (पु०) ३ नदविशेष, कोई खास दरया । ४ विष्णु । ५ शिव । ६ व्यर्थ न जानेका भाव, जिस हालतमें फर्क न पड़े ।

अमोघदण्ड (सं० पु०) दण्ड देनेमें न भूलनेवाले शिव ।

अमोघदर्शिन (सं० पु०) बोधिसत्वविशेष ।

अमोघदृष्टि (सं० त्रि०) अव्यर्थमत, जिसकी सुआयिनेमें फर्क न पड़े ।

अमोघदेव—कोई प्राचीन संस्कृत कवि । इनका नाम शक्तिमुक्तावलीमें आया है ।

अमोघबल (सं० त्रि०) अव्यर्थशक्तिशाली, जिसका जोर कभी कम न पड़े ।

अमोघराज (सं० पु०) भिक्षु-विशेष ।

अमोघवर्ष—राष्ट्रकूटवंशीय प्रसिद्ध नृपति । राष्ट्रकूट शब्दमें विसृत विवरण देखो ।

अमोघवाक् (सं० स्त्री०) अव्यर्थ शब्द, खाली न जानेवाली लफ्ज, जो बात कभी बिगड़ती न हो ।

अमोघवाञ्छित (सं० त्रि०) अनवरत आशान्वित, कभी दिलगीर न होनेवाला ।

अमोघविक्रम (सं० त्रि०) १ अव्यर्थवीर्य, जिसकी बहादुरीमें कभी फर्क न आये । (पु०) २ शिव ।

अमोघसिद्ध (सं० पु०) पञ्चम ध्यानी बुद्ध ।

अमोघा (सं० स्त्री०) १ परबल । २ हरीतकी, हर । ३ विड़ङ्ग ।

अमोचन (सं० स्त्री०) १ सुक्तिका अभाव, निजातकी अदम-मौजूदगी । २ बन्धन, कैद, छूटने न पाना ।

अमोचनीय (सं० त्रि०) स्वतन्त्र करनेके अयोग्य, कुटकारा न पाने काबिल ।

अमोचित (सं० त्रि०) आवद्ध, बंधा हुआ, जिसको कुटकारा न मिला हो ।

अमोत (सं० स्त्री०) अमा सह जतम्, अमा-व्ये-क्त । १ अच्छिन्न सदृश वस्त्रयुग्म, जिस कपड़ेके जोड़ेका किनारा फटा न रहे । (त्रि०) २ गृहसे जत, जो मकानमें बुना गया हो ।

अमोतक (सं० पु०) १ गृहपालित शिशु, मकानमें परवरिश पाया हुआ बच्चा । २ पटकारक, जुलाहा, जो कपड़ा बुनता हो ।

अमोतपुत्रका (वै० स्त्री०) गृहपालिता बालिका, जो लड़की मकानमें पली हो ।

अमोद (हिं०) आमोद देखो ।

अमोद—बम्बईके भड़ोच जिलेका एक प्रधान नगर । यह धाधर नदीसे आध कोस दक्षिण, भड़ोचसे साढ़े दश कोस उत्तर, बड़ोदेसे पन्द्रह कोस दक्षिण पूर्व और अक्षा० २१° ५८' ३०" उ० एवं द्राघि० ७२° ५६' १५" पू० पर अवस्थित है । यहां लोहेका चाकू, कुरा अच्छा बनता और कुछ-कुछ रुयीका रोज़गार चलता है ।

अमोनिया (अं० पु०) १ नौसादर । २ मूर्च्छा छोड़ानेका औषध, जिस दवासे होश आ जाये । (Ammonium chloride) इसे बंगलामें निशादल, गुजरातीमें नवसार, मारवाड़ीमें नवसागर, कनरीमें नवासगर, तामिलमें नवचरम, तेलगुमें नवासागरम्, मलयमें नवसारम्, अरबीमें मिलहुन्नार, फारसीमें नौसादर, भूटानीमें जियतसा, सिंधालीमें नवाचारम् और ब्रह्मीमें ज़रस कहते हैं ।

नौसादर पञ्जाबमें बहुत बनता, फिर जमे हुये अर्ककी शक्तसे धातु गलाने और रंगनेके काम आता है । कहते हैं, कि पञ्जाबवाले करनाल जिलेके गुमतल्लह गांवमें कुम्हार बहुत पुराने समयसे ढेरक

ढेर नौसादर तैयार करते रहे हैं। इसे मिश्र और भारतमें निम्नलिखित रीतिसे बनायेंगे,—

तालाबकी गन्दी मट्टीसे पन्द्रह या बीस हजार ईंट तैयार करते और उसे पजावेकी बाहरी ओर रख आग लगा देते हैं। जब ईंट आधी जले, तब उससे पेड़के बकले-जैसी कोई भूरी चीज़ निकलेगी। यह चीज़ दो किस्मकी होती है—खुराब और अच्छी। खुराब चीज़ नौसादरकी खाम मट्टी कहाये, पजावे पीछे बीस-तीस मन निकले और आठ आने मन विकेगी। अच्छी चीज़को पपरी कहते, पजावे पीछे एक या दो मनसे ज्यादा नहीं पाते और दो-सवा दो रुपये मन बेचते हैं।

खाम मट्टीको चलनीसे साफ़ कर पानीमें धो लें और कलम बना लेंगे। इसका सारा मेल निकालनेकी उपरोक्त क्रिया चार बार की जाती है। फिर जो खालिस चीज़ रहे, वह नौ घण्टेतक आगपर रख उबाली जायेगी। पनीला हिस्सा उड़नेपर कच्ची शकर-जैसा नमक तैयार होता है। उसके बाद पपरीको उठा कूटें और पहले नुसखेमें मिला देंगे। अन्तमें सबको काले शीशेकी बोतलमें भर मुंह बन्द करते हैं। फिर बोतलपर चिकनी मट्टीके सात तह चढ़ाये और उसे नौसादरके मेलमें रख छोड़ेंगे। पीछे बोतलका मुंह दूसरे शीशेके ढक्कनके ढाँका और उसमें हवा न एडुचनेको चिकनी मट्टीका चौदह तह चढ़ाया जाता है। ऐसा होनेपर इसे किसी बरतनमें भर तीन रात और तीन दिनसे जलती रहनेवाली भट्टीपर चढ़ा देते हैं। बारह घण्टे पीछे ढक्कनको निकाल डालेंगे। इससे उड़े हुये नौसादरकी जगह ताज़ा नौसादर आ जमता है। तीन दिन, तीन रातके बाद भट्टीसे बरतन उतारें, ठण्डा पड़नेसे मुंहको तोड़ें और बाकी बरतनको फूंक देंगे। खाली नलीमें बरतनसे नमकका जीहर उड़नेपर कोई चीज़ निकलती, वह फाली कहलाती है। फाली दो तरहकी होगी, बढ़िया और घटिया। बढ़िया फाली सिर्फ दो दिन और दो रात ही आगपर नौसादर चढ़ा रहनेसे बन जाती है। इस हालतपर नली कुछ-कुछ जीहरसे भरी और

निकासी पांच-छः सेर रहेंगी। यह जीहर सोलह रुपये मन बिकता है। घटिया फाली तीन दिन और तीन रात नौसादर आगपर चढ़ा रहनेसे निकलेगी। इस हालतमें बरतनकी नली पूरे तौरपर फालीसे भर जातो, दश-बारह सेर निकासी पड़ती और तेरह रुपये मन बिकती होती है।

जो चीज़—नलीमें नहीं—बरतनके मुंहमें उड़के लगे, वह फूल कहायेगी। यह सुर्मा बनानेके काम आता और चालीस रुपये मन बिकता है।

करनालमें हर साल २३०० मन नौसादर बने, जो ३४५०० रुपयेका पड़ेगा। व्यवसायी इसे कारखानेमें ही आठ रुपये मन और सतके हिसाबसे खरौद लेते और दूसरे शहर भेज पन्द्रह रुपये मन बेचते हैं। पञ्जाबके दूसरे जिलेमें भी पजावेसे नौसादर निकले, किन्तु बहुतायतसे हाथ न लगेगा।

औषधकी भांति नौसादर यकृत और ग्रीवाके शोथपर दिया जाता है। भारतीय वैद्य किसी रोगमें इसे खानेको न कहेंगे। रक्ताक्त यकृत, फेफड़ेकी सूजन और गिलटी निकल आनेपर नौसादर जपरसे लगता है। पन्द्रह या बीस रत्ती मात्रामें खिलानेसे यह आधाशीशीको पीड़ा मिटा देगा। हलको शिरः-पीड़ा पर तोस रत्ती मात्रामें यह लाभदायक होता है। श्लेष्मा और कासको भी नौसादर फायदा पहुँचायेगा।

अमोरी (हिं० स्त्री०) १ आम्रका अपक्व फल, आमको कच्ची केरी, अंबिया । २ अमड़ा ।

अमोल (हिं०) अमूल्य देखो ।

अमोलक (हिं०) अमूल्य देखो ।

अमोला (हिं० पुं०) आम्रका सबजात वृक्ष, जो आमका पौधा हालमें ही जमीनसे निकल रहा हो। हिन्दुस्थानी लड़का इसे पपोहरा कहता और उखाड़कर इसकी गुठलीका बकला छील डालता है। फिर वह छिली हुयी गुठलीके सिरको पत्थर या किसी लकड़ीपर रगड़ेगा। जब सिरकी एक तह घिस जाती और दूसरी देखायी देने लगती, तब लड़का गुठलीको मुंहमें डाल सौटीको तरह फूंकने और

बजाने लगता है। किन्तु गुठलीका मुंह बिगड़ जानेसे आवाज न निकलेगी। इसीलिये लड़का गुठली रगड़ते समय विघ्न-वाधा दूर रखनेको नीचे लिखा लटका पढ़ते जाता है,—

“नोर पपीहरा आविका—ताविका।

करिया बं बुरेका कैसे बाजे पौं धपौं ॥”

अमोसी—युक्तप्रदेशके लखनऊ जिलेका एक नगर। यह लखनऊसे कोई चार कोस दूर पड़ेगा। यहां चौहान राजपूतोंका अड्डा बना है। सन् ई०के १५वें शताब्द मध्य उन्होंने भारीसे इसको छीन लिया था। अमोसीकी चारो ओर ऊसर मिलेगा।

अमोही (हिं० वि०) अमोह, विरक्त, जो किसीसे सहज्जत न रखता हो। २ कठोरहृदय, सख्तदिल, जिसे रहम न आवे।

अमोआ (हिं० पु०) १ आम्बके रसतुल्य वर्ण, जो रङ्ग आमके अर्क-जैसा हो। यह तरह-तरहका रहता है। २ आम्बरसतुल्य वर्णविशिष्ट वस्त्र, जिस कपड़ेका रङ्ग आमके रस-जैसा रहे। (वि०) ३ आम्बरसतुल्यवर्णविशिष्ट, जो आमके रस-जैसा रङ्ग रखता हो। अमोत्रधौत (सं० त्रि०) रजक द्वारा अप्रक्षालित, जिसको धोबीने न धोया हो।

अमीन (सं० क्लौ०) १ निःशब्दताका अभाव, खमोशीको अदम-मौजूदगी, बोलचाल। २ आत्मज्ञान, रुहका इल्म।

अमीलिक (सं० त्रि०) १ मूलशून्य, बेबुनियाद, जिसकी कोई जड़ न रहे। २ मिथ्या, झूठ। ३ अय-धार्थ्य, गैरवाजिब।

अमीवा, अमीवा देखो।

अम्दपुर—बरारके बुलडाना जिलेका कोई गांव। यह बुलडानेसे दक्षिण-पूर्व दश कोस लगता है। गांवसे दक्षिण कोई पाव कोस एक छोटा पहाड़ है, जिसके दक्षिण और दक्षिण-पूर्व किनारे गहरी-खूबसूरत खाड़ी पड़ी है। पहाड़की चोटीपर एक नया भवानौका मन्दिर देखेंगे। मन्दिरमें ऊपरसे इसतरह प्रकाश पड़ता है, कि वह पूर्ण रीतिसे मूर्तिपर ही पड़ता और मण्डपमें अन्धकार बना रहता है। मन्दिरके

निकट किसी बहुत बड़ी मूर्तिका ध्वंसावशेष मिलेगा। नाखनसे एड़ीतक जो हिस्सा टूटा, वह साढ़े छः फीट नया है। यह मूर्ति पूर्ण परिमाणमें पचास-साठ फीट रही होगी। इसका अङ्ग-प्रत्यङ्ग अलग अलग गढ़ा गया है।

अम्बस् (वै० अव्य०) १ अज्ञात दशमें, शीघ्र, बेसमझे-बूझि, झटपट। २ वर्तमान समय, अभी। ३ लघु-रूपसे, कुछ-कुछ।

अम्बर—बरारके अमरावती जिलेका एक शहर। यह मोरसी तहसीलसे लगता, जाम तथा वर्धा नदीके सङ्गम पर बसता और निवासियोंमें विशेषतः सुसलमान रखता है। यहां जागीरदार और निजामसे किसी समय घोर युद्ध हुआ था। सात हजार सिपाहियोंकी कब्जे आज भी देखनेमें आयेंगी। नदी किनारे एक पुराना महादेवका मन्दिर बना और उसके नीचे अद्भुत कुण्ड भरा है। २ बरारवाले एलिचपुर जिलेके मेलघाटका किला। यह अक्षा० २१° ३१' ४५" उ०, द्राघि० ७६° ४८' ३०" पू० पर अवस्थित है। गार्गा और तापती नदीने मिलकर जो त्रिकोण बनाया, उसकी शिखापर इसे लोगोंने खड़ा किया था। सिवा उत्तर-पश्चिम ओरके किसी राह शत्रु इसपर आक्रमण कर नहीं सकता। फिर तापतीके बायें किनारेकी भूमि ढालू और जंची भी पड़ेगी। किला एक एकड़ भूमिपर विस्तृत, आकृतिमें चतुष्कोण, ईंटसे उठा और अपने इधर उधर चार बुर्ज रखता है। इसके पश्चिम कोणकी मीनारदार मसजिद देखनेमें सुन्दर और उत्कृष्ट मालूम होगी। सन् १८५८ ई०में इसका सामान उतारा और तोप हटायी गयी थी।

अम्ब (सं० पु०) अम्ब-घञ् अच् वा। १ सम्बोधन, पुकार। २ गमन, रवानगी। ३ पिता, बाप। ४ शब्द, वेद, शब्द सुनानेवाला, आवाज, जो आवाज लगाता हो। (क्लौ०) ५ नेत्र, आंख। ६ जल, पानी। (अव्य०) ७ सुष्ठु, साधु, सम्यक्, खूब, क्या खूब, भला।

अम्बक (सं० क्लौ०) अम्बति दूरस्थमपि वस्तु आप्रोति, अम्ब-खुल्। १ नेत्र, चक्षु। 'त्रियम्बकं संयमिनं ददशं' (उपनिषद् १।४४) अम्बति स्नेहात् धावति, घञ् स्तार्थ

क। २ पिता, बाप। ३ ताम्र, तांबा। (पु०)
४ वकुलवृक्ष, मौलसिरी।

अम्बया (वै० स्त्री०) १ माता, मा। २ उत्तमा स्त्री,
अच्छी औरत, ३ जल ले जानेवाली, जो पानी ले
जाती हो।

अम्बर (स० स्त्री०) अम्बन्ते शब्दायन्तेऽस्मिन् मेघाः,
अविड्-अरच् प्रत्ययान्तो निपात्यते। १ आकाश,
आस्मान्। २ अन्तिक, पड़ोस। ३ वस्त्र, कपड़ा।
४ अम्भ धातु, अम्बरक। ५ कार्पास, कपास। ६ ओष्ठ,
होंठ। ७ पाप, इजाब। ८ गन्धद्रव्यविशेष, इसी
नामकी कोई खुशबूदार चीज। ९ कुङ्कुम, केशर।
१० परिधि, दीर-मुहौत-दायरा, घेरा। ११ नगर
विशेष, एक शहर। अम्बर या आमेर जयपुरकी
प्राचीन राजधानी रहा। यह वर्तमान जयपुर नगरसे
प्रायः तीन कोस उत्तर अरवली पर्वतके मध्यमें
अक्षा० २६° ५८' ४५" उ० और द्रावि० ७५° ५२' ५०"
पू० पर अवस्थित है। महाराज मानसिंहने इस
नगरको सुरम्य प्रस्तरकी अट्टालिकाओंसे सुशोभित
किया था।

अम्बर शहरका चलता हुआ नाम आमेर है।
कोई कोई इसे धुन्नुवर और अम्बकेश्वर भी कहते हैं।
इस नगरको पहले किसने स्थापित किया था, इसका
ठीक पता नहीं लगता। आमेर और उसके निकट-
वर्ती स्थानमें मौना नामकी एक असभ्य जाती रहती
है। मेवाड़के भौलोंके साथ मौना जातिका बहुत
साटुश्य देखा जाता है। पहले यहांके अनेक स्थानोंमें
मौनाओंका एक एक छोटा राज्य था। संभवतः
अम्बर भी मौनाओंकी राजधानी रहा होगा। उसके
बाद यह किस तरह मानसिंहके पूर्वपुरुषोंके हाथ आ
गया, यह इत्तान्त खूब स्पष्ट नहीं है।

जयपुरके राजे सूर्यवंशी चत्रौ हैं। ये लोग
श्रीरामचन्द्रके द्वितीयपुत्र कुशके सन्तान हैं। कुशसे
गणना करनेसे इस समय १३८ वीं पीढ़ी चलती है।
पहले कुशवंशके एक राजाने अयोध्यासे आकर शोन
नदके निकट एक पर्वतके ऊपर रोहतासगढ़ नामक
दुर्ग बनाया। यहां कुशवंशके राजाओंने कुछ समय

तक राज्य किया था। फिर यहांसे जाकर उन लोगोंने
लाहौरके निकट सिन्धु एवं पड़ुज नदके समीप कहुया-
गढ़में कुछ कालतक राज्य चलाया। उसके बाद २७५
ई०में यहांसे २५ कोस पश्चिम गवालियरका राज्य
संस्थापन हुआ। अन्तमें २८५ ई०में नल नामक जनैक
राजाने बुन्देलखण्ड जाकर नरवर राज्य संस्थापन किया।

कुशराजासे बत्तीस पीढ़ी बीत गई। उसके बाद
सौधासिंह नरवरके राजा हुए। उनके पुत्रका नाम
दूल्हा राव था। सौधासिंहकी मृत्युके बाद उनकी छोटे
भाईने अपने भतीजेको राज्य नहीं दिया। उन्हें नर-
वरसे निकाल दिया। दूल्हा राव उस समय एकदम
लड़के थे। सन् ८६७ ई०में वे अपनी माताके साथ
जयपुरसे ढाई कोस दक्षिण मौनावींके खो-नगरमें
जा पहुंचे।

समय अधिक हो गया, भूख और पथश्रमसे
शिशुका शरीर क्षान्त था। हतभाग्या जननी पुत्रको
एक निर्जन स्थानमें रख आप आहार खोजने गईं।
लौट कर देखा, कि बच्चा धूलमें पड़ा सो रहा और
उसके शिरपर फण पसारे एक बड़ा भारी सांप बैठा
था। देखते ही उनका कलेजा कांप उठा। एक दिन
जो राजरानी थीं, आज वे पथकी भिखारिनी बनीं।
अम्बेकी लाठीकी तरह एकही शिशु सन्तान सम्बल
था, भाग्यदोषसे शायद वह भी जाना चाहते रहा।
दुर्भाग्या जननी रोती रोती पुत्रकी ओर दौड़ी। शब्द
पाकर सांप चला गया। दूरसे एक ब्राह्मणने यह
व्यापार देखकर रानीसे कहा,—'डरो मत। देखना,
शीघ्र ही तुम्हारा यह पुत्र राज्येश्वर होगा।' दुःखिता
जननी अपनी सन्तानको लेकर नगरमें गईं और एक
मौना-सरदारकी परिचारिका हुईं। कहते हैं, कि
अन्तमें दूल्हा राव, शायद मौना-सरदारका प्राण नष्टकर
आप राजा बन बैठे थे। किसी किसीके मतानुसार—
जयपुरसे १७ कोस दक्षिणपूर्वकी ओर दोसा नगरके
सरदारकी कन्याके साथ उन्होंने अपना विवाह किया
था। दोसाराज निःसन्तान थे, इसीसे उनकी मृत्युके
अनन्तर दूल्हा राव राज्यके उत्तराधिकारी हुए। इस
तरह इस विषयमें अनेक मतान्तर हैं।

प्रवाद है, कि दूल्हा रावने मीना प्रभृति जातियोंके साथ भयङ्कर युद्ध किया था। उसी युद्धमें वे ससैन्य खेत आयी। उसके बाद रातमें अम्बा अर्थात् माता भगवतीने दयाकर दूल्हा रावको जिला दिया। इस अद्भुत व्यापारको देखकर मीनाओंने उन्हें राज्यपदपर अभिषिक्त किया। देवीके वरपुत्र दूल्हा राव अम्बरमें अम्बा देवीकी मूर्ति प्रतिष्ठित कर उनकी पूजा करने लगे। कोई कोई कहते हैं, कि दूल्हा रावके पुत्र कङ्कल रावने अम्बर जय किया था। फिर किसीके मतानुसार मैदल राव नामक उन्हींके किसी पुत्रने अम्बरको जीता। मैदल रावको अष्टारह पीढ़ी बाद विहारी वा बहारमल्लका जन्म हुआ। बहारमल्ल बाबरके प्रियपात्र थे। हुमायूँने भी उन्हें मनसब अर्थात् पांच हजार सैन्यका सेनापति बना दिया। मानसिंह इन्हीं विहारीमल्लके सन्तान रहे। इन्हींने ही अम्बर नगरको सुरम्य अट्टालिका प्रभृतिसे सुसज्जित किया था।

कोई कोई कहते हैं, 'अम्बा' देवीके नामसे ही लोग इस शहरको अम्बर कहते हैं। फिर आमेर अम्बरका अपभ्रंश है। अम्बरमें अम्बकेश्वर नामक एक शिवलिङ्ग है। इसलिये अनेक यह बात भी कहते हैं, कि अम्बकेश्वरसे ही इस नगरका नाम अम्बर हुआ है। धुसुर वा धुसुवर नामका कारण लोग यह बताते हैं, कि पहले गल्ता पहाड़में धुसु नामक एक देव रहता था। उसीके नामके अनुसार सब कोई इस प्रदेशको धुसुर वा धुसुवर कहते हैं। जयपुर शब्दमें अम्बर राजवंशका विवरण देखो।

अब अम्बर शहरका वर्णन किया जाता है। निर्जन निश्चित स्थानमें दोनों ओर पर्वतकी गोदमें यह सुरम्य स्थान मानो अमरावतीके समस्त सौन्दर्यसे सुशोभित किया गया है। जयपुरके ईशान कोणवाले फाटकसे निकलकर उत्तर सुंह जाना पड़ता है। बराबर सुन्दर पक्षी सड़क बनी हुई है। इसी राहसे पहले लोग दिखी जाते आते थे। फाटकके बाहर कुछ बाईं ओर जयपुरके प्रथम प्रधान मन्त्री चमोर ठाकुरका प्रासाद है। पथकी दोनों ओर पर्वतमाला

विस्तीर्ण शरीर फैलाकर पड़ी हुई है। औषकालमें यहांके पहाड़ी लता-गुल्म सूख जाते, परन्तु वर्षाका जल पाकर फिर मञ्जरित होते हैं। उस समय नगरकी शोभाके साथ तब-लता हंसती रहती हैं।

दोनों ओर पर्वतके नीचे स्थान स्थानपर गहरे तालाब हैं। उनमें कच्छप, कुम्भीर, मत्स्य प्रभृति जलजन्तु कभी ऊपर आते, कभी नीचे जाते, और कभी तैर-तैर सैर करते हैं। दक्षिण ओर मान-सागर है। औषकालमें यह स्थान सुशोभित और मनोहर हो जाता है, परन्तु आजकल इसमें बारहो महीने जल नहीं रहता। उससे कुछ दूर बाईं ओर चन्द्रबाग है। पथकी दोनों ओर देशी और नाना प्रकारके विलायती वृक्ष शाखा फैलाये छाया किये रहते हैं। दक्षिण ओर रानियोंकी छत्रियां और बाईं ओर और और लोगोंकी समाधियां हैं। रानियोंकी छत्रियां कुछ बनीं और कुछ नहीं बनीं; छत अधूरी और ऊपर चूड़ा नहीं है। राजाओंने रानियोंकी छत्रियोंको सम्पूर्ण नहीं किया। सड़कके किनारे एक एक छोटा देवालय और पथिकोंके विश्रामका स्थान बना हुआ है। अम्बरके बाहर घाटके नीचे प्रसिद्ध 'काले महा-देव'का मन्दिर है। प्रवाद है, कि महाराज मानसिंह इस शिवलिङ्गको यशोहरसे ले आये थे।

क्रमसे दो कोस राह खतम हो जानेपर एक कोस और बाकी रह जातो है। परन्तु इस कोसमें चार कोससे भी अधिक अम होता है। सीधा ढालू पथ क्रम क्रमसे ऊपर उठता गया है। डोलो आदिले जानेसे कहार पसीने पसीने हो जाते हैं। चार कहार डोलीको कन्धेपर लिये रहते हैं; दो सामनेका डण्डा पकड़कर खींचते और दो दोनों ओर थांभे रहते हैं, तब ऊपर जाया जाता है। उतरनेके समय भी ऐसा ही कष्ट होता है। जूँट, हाथी, घोड़ा, बैल आदि बलवान पशु भी धीरे धीरे जाते और आते हैं।

ऐसे दुरारोह पथसे कुछ कम आध कोस ऊपर जाकर फिर नीचे उतरना पड़ता है। उसके बाद अम्बर शहर है। पहले बाईं ओर 'दिलाराम' बाग मिलाता है। इसमें नाना प्रकारके फल फूलके पेड़

हैं। बीचमें जलकी कई फव्वारे हैं, पश्चिम ओर अष्टालिका है। बागमें झण्डके झण्ड मोर चरते फिरते हैं। कोई वृक्षपर बैठा और लम्बी पूछ लटकाये देख रहा है, कोई जमीनपर छायेमें सो रहा है, कोई पूछ फैलाये और उठाये आनन्दसे नाच रहा है; उनके पास जानेमें तनिक भी न डरेंगे। जयपुर-नरेशकी आज्ञासे इस प्रदेशमें मयूरको कोई नहीं मार सकता। दिलाराम बागकी बाईं ओर एक बड़ा भारी सरोवर है।

इस उद्यानसे निकलकर एक सड़क उत्तरकी ओर भग्न नगरमें चली गई है और एक सड़क कुछ दूर पश्चिममें राजप्रासादकी ओर आई है। शहरमें और कुछ भी नहीं है। कितने दिनोंकी धूमधामके बाद शहर अब सो रहा है। हाट बाजार टूट फूट गया है। पहले यहाँ बहुत अच्छी बन्दूक और नाना प्रकारके अस्त्र शस्त्र प्रस्तुत होते थे। वह सब अस्त्र अब भी जयपुरके राजभवनमें रखे हुए हैं। उनके सामने विलायती अस्त्र तुच्छ मालूम होते हैं। महाराज मानसिंहके हाथकी लाठी यहीं बनाई गई थी। विधाताके हाथका नैपुण्य सन्ध्याके आकाश तथा मयूर-पुच्छमें और मनुष्यके हाथका नैपुण्य मानसिंहकी सामान्य एक लाठीमें दिखाई देता है। संसारमें ऐसा सुन्दर और कुछ भी नहीं है। लाठीके ऊपर मुलम्मा किया हुआ है। उसमें कितने ही रङ्ग और विचित्र चित्र हैं। प्रायः तीन सौ वर्ष हो चला, परन्तु आज भी वह नई और ऊपरसे नीचे तक सुन्दरतासे भरो हुई है। अब भी कैसे चमकती है। उस समय इस नगरमें और भी अनेक शिल्पकार्योंकी उन्नति हुई थी।

अब अम्बरके शिल्ली जयपुर चले गये हैं। अब यहां धनी आदमी नहीं है। केवल सामान्य अवस्थाकी प्रजा कष्टसे दिन बिताती है। दुकानोंमें खानेकी अच्छी चीजें नहीं मिलती, केवल भुना हुआ चना, गेहूं, यव और सत्तू, आदि सामान्य चीजें ही पाते हैं। किसी किसी दुकानमें मावेकी मिठाई भी मिलती है।

अम्बरका राजप्रासाद जंचे पहाड़के नीचे एक

उन्नत स्थानपर बना हुआ है। इसकी पूर्व ओर एक बृहत् सरोवर है। इसी सरोवरके समीप दिलाराम बाग और उसके बाद राजपथ है। राजपथको पूर्व ओर और एक पर्वतमाला है। राजभवनसे दक्षिण जंचे पहाड़के ऊपर प्रसिद्ध जयगढ़ है। मानसिंहके भ्राता जगत्सिंहके पौत्र महाराज मिर्जा जयसिंहने इस दुर्गको सम्पूर्ण किया था। जयगढ़में मानसिंहकी बहुमूल्य सम्पत्ति भाण्डारमें बन्द है। दरवाजे पर सुहर लगी हुई है। उस भाण्डारको खोलनेकी आज्ञा किसीको नहीं है। स्वयं जयपुरके महाराज भी उसे आंखसे नहीं देखने पाते। मोना लोग अम्बर राजवंशकी परम विश्वासी प्रजा हैं। पहले वह लोग चारो ओर राजपूतानेमें चोरी-डकैती करते फिरते थे, परन्तु यहांके राजाकी कभी कोई हानि न करते थे। अम्बरका समस्त राजभाण्डार अब भी मोना जातिके हाथमें है। वह लोग आठो पहर वहां पहरा दिया करते हैं। बङ्गाल जय करनेके बाद महाराज मानसिंहने जयगढ़में एक बहुत जंचा विजयस्तम्भ स्थापित किया था। वह कोत्तिस्तम्भ आज भी विनष्ट नहीं हुआ।

राजप्रासादसे पश्चिम कुछ दूर जंचे पहाड़के ऊपर प्राचीन कुन्तलगढ़ है। यह गढ़ हजार वर्षसे भी पहलेका है। अब टूट फूट गया है, चारो ओर जङ्गल लग गया है। इसमें बाघ और बनेले सूअर छिपे रहते हैं। कुन्तलगढ़से और भी ऊपर भूतेश्वर महादेवका मन्दिर है। यह भी अतिशय प्राचीन है। उत्तर ओरकी दीवारके पास एक बड़ा भारी मसजिद है। अजमेरसे गमनागमनके समय किसी सुसलमान बादशाहने इस मसजिदको बनवाया था।

नीचेके पथसे राजप्रासाद बहुत जंचेपर है। परन्तु ऊपर जानेके लिये अच्छे राह बनी हुई है। हाथी, घोड़ा, अथवा पालकी प्रभृतिपर चढ़कर सुखसे ऊपर जा सकते हैं। पहले ही पूर्वमुख प्रशस्त दोर्घ सिंहद्वार है। उसके ऊपर अंगरेजी घड़ी लगी हुई है। सिपाही लोग रात दिन वहां पहरा दिया करते हैं। उस द्वारसे पश्चिम मुख प्रवेश करने पर राज-

भवनके पहले महलका बड़ा भारी आंगन मिलता है। पहले यहां हाथीकी लड़ाई और अनेक प्रकारकी धूमधाम हुआ करती थी। उसके बाद दक्षिण पश्चिमकी ओर जानेसे कुछ ऊपर चढ़ना होता है। चढ़ते ही सामने यशोहरेश्वरी कालीके मन्दिरका प्रवेशद्वार दिखाई देता है। बाईं ओर महाराजका दीवानखाना है।

२४ परगनाके अन्तर्गत टाकीसे प्रायः दश कोस दक्षिण प्राचीन यशोहर नगर है। वहां प्रतापादित्य राजाकी राजधानी थी। अब यशोहरका नाम निशान भी नहीं है। नगर ध्वंश हो गया है, कई स्थानोंमें जङ्गल भर गया है। इसके निकटवर्ती स्थानमें राजा चन्द्रनाथ रायके वंशके अनेक यशस्वी कायस्थ अब भी वास करते हैं। प्रतापादित्य दिल्लीके बादशाहको न मानते थे। इसलिये उन्हें दमन करनेके लिये बादशाहके प्रधान सेनापति ससैन्य बङ्गाल पहुंचे। वहांसे भवानन्द मजुमदारको लेकर यशोहर गये। घोर युद्ध हुआ; अन्तमें प्रतापादित्य परास्त हुए।

स्वदेश जानेके समय मानसिंह यशोहरकी शिला-देवीको अपने साथ ले गये और अम्बरमें उन्हें प्रतिष्ठित किया। वह शिलादेवी अब भी विद्यमान हैं। देवीकी सेवाके लिये महाराज कितने ही पुजारी भी ले गये थे। वह सब वैदिक श्रेणियोंके ब्राह्मण हैं। इस समय भी उनके वंशधर यशोहरेश्वरीकी पूजा करते हैं। इन ब्राह्मणोंके अनेक आत्मीय व्यक्ति अच्छे कृत-विद्य हो गये थे। उनका नाम विद्याधर था। वर्तमान जयपुर नगर निर्माण करनेके समय उन्होंने ही नक्शा तय्यार कर दिया था। उसी नक्शेके अनुसार यह अपूर्व शहर बना है। मानसिंहके शिलादेवीके ले आनेपर कछूरायने और एक प्रतिमा बनवाकर यशोहरमें प्रतिष्ठित की। धूमघाटके देवालयमें आज भी वही शिलादेवी वर्तमान हैं।

यहां यशोहरेश्वरीका एक चित्र दिया गया है। देवी अष्टभुजी—महिषमर्दिनी मूर्ति हैं। कटिदेशसे पद-तल तक घाघरेसे छिपा हुआ है। इसीसे सिंह प्रभृति-की मूर्ति दिखाई नहीं देती। देवी बाईं ओरके

हाथोंसे ढाल, धनु और महिषासुरकी जिह्वा पकड़े हुये हैं। फिर एक हाथमें ब्राह्मण लोग फूलोंका छोटासा गुच्छा रख रहे हैं। मालूम होता है, पहले इसमें चक्र था। दाहिने हाथोंमें खड्ग, तीर और त्रिशूल है; फिर एक हाथमें न मालूम कौन अस्त्र है, जो ठीक पहचाना नहीं जाता। मालूम होता है, देवी इस हाथसे वर और अभय देती हैं। किन्तु लोगोंने किस तरह गोक्षमाल करके बायें हाथका अस्त्र दाहिने हाथमें दे रखा है। प्रतापादित्य, मानसिंह और शिलादेवी देखो।

देवीके मस्तकके ऊपर पीछेकी ओर गणेश, ब्रह्मा, विष्णु, शिव और कार्तिकेयकी मूर्ति है। यह प्रतिमा पाषाणमयी और उज्ज्वल लक्षणवर्ण है। न मालूम क्यों बाईं ओर मुख कुछ वक्र किये हुए हैं। इस वारमें बहुत सी गल्प हैं। कोई कोई कहते हैं, कि मानसिंहके साथ युद्धके समय प्रतापादित्यने शङ्कटमें पड़कर देवीकी स्तुति की थी, परन्तु यशोहरेश्वरीने उसे नहीं सुना; रुठकर मुख फेर लिया। उसीसे देवीका मुख बाईं ओर कुछ वक्र हो गया है।

यह तो हुआ एक मत। और एक प्रवाद है, पहले मानसिंहके समयमें शिलादेवीके निकट प्रतिदिन नरवलि होता था। कुछ दिनोंके बाद यह कुप्रथा बन्द हो गई, इसीसे रुष्ट देवीने मुंह फेर लिया था। अन्तमें जब महाराजको स्वप्नमें यह सब बातें मालूम हुईं, तब प्रत्यह वह एक बकरेका वलि देने लगे। अब तक वह नियम चला आता है। केवल आश्विन मासकी महाष्टमी और वासन्ती पूजाके समय अधिक धूम होती है। प्रधान प्रधान सरदार और अनेक कर्मचारियोंको साथ लेकर जयपुरके महाराज स्वयं पूजा देखने आते हैं।

वलिदान मन्दिरके ठीक सामने नहीं होता। देवीका मुंह बाईं ओर कुछ वक्र है, इसलिये वलिदान भी मन्दिरकी बाईं ओर होता है। मीना लोग ही प्रतिदिन वलिदान देते हैं। किन्तु महाष्टमी और वासन्तीपूजाके अवसरों पर भैंसों और बकरीका वलिदान

दिया जाता है। उस समय खुद सरदार लोग ही तलवारसे वलि देते हैं।

शिलादेवीके मन्दिरसे निकलकर बाईं ओर जाने-से और एक सिंहद्वार मिलता है। इसके कपाटमें पीतलके पत्र जड़े हैं। यहां भी पहरा पड़ता है। विना महाराजका आज्ञापत्र दिखाये पहरेवाले भीतर जाने नहीं देते।

इस पथसे प्रवेश करनेपर सामने पोखूता आंगन दिखाई देता है। उसकी चारो ओर प्रसिद्ध दीवान-खाना है। इसमें लाल पत्थरके चालीस खम्भे हैं। खम्भोंमें सफेद पलस्तर किया हुआ है। ऊपरकी छत मेहराबदार है, महाराज मानसिंह यहीं दरबार करते थे। पहले खम्भोंमें पलस्तर नहीं था। कहा जाता है, कि यह दीवानखाना अकबरके दीवान-आमकी नकल बनाया गया था। यह समाचार पाते ही—सम्राट्ने आमेरमें कुछ सेना भेज दी। इधर दो पहरेके पहले मानसिंहको भी खबर लग गई। बस चटपट उन्होंने सब खम्भोंमें सफेद पलस्तर लगवा दिया। इसलिये आनेपर सम्राट्के लोग और कोई आपत्ति न कर सके। दीवानखानेकी बगलमें पूर्व ओर कई छोटी छोटी कोठरियां हैं।

उसके बाद दक्षिण ओर और एक पीतलका दरवाजा है। इस दरवाजेसे मकानके अन्दर जाना होता है। बीचमें बड़ा भारी आंगन है। उसमें मनोहर उपवन है। उस उपवनमें कहीं फल लगे हैं, कहीं फूल खिले हैं। हवाके भींकेसे पेड़ोंकी डालियां डोल रही हैं। इसकी पूर्व ओर और एक बड़ा भारी दालान है। इस दालानके पत्थरोंमें ताजमहलके निपुण कारीगरोंका शिल्पकौशल है। इसकी कारी-गरोंपर नजर अटक जाती है, वहांसे टलना नहीं चाहती। खम्भे सफेद पत्थरके बने हैं। उनपर फूल कटे हुए हैं। फूलोंपर तितलियां उड़ उड़कर बैठ रहीं हैं। छत मेहराबदार है। मेहराबके नीचे खिड़कियोंके सिरेपर भी अनेक प्रकारके चित्रविचित्र रङ्ग हैं। उनके ऊपर कांच जड़ा हुआ है। एक मनुष्यके नीचे खड़े होनेसे ऊपर कितने ही मनुष्य दिखाई देते हैं।

हाथ डोलानेसे ऊपर कितने ही हाथ डोलने लगते हैं।

इस दालानकी उत्तर ओर एक छोटे द्वारसे जाने-पर मानसिंहके स्नान करनेका हम्माम मिलता है; उसके बाद पश्चिम ओर सुरङ्गकी राह जानेसे देवार्चनका कमरा है। हम्माममें सफेद पत्थरका हीजा बना है, उसके किनारे किनारे मोरियां लगी हैं। स्नानके बाद सहसा शीतल वायु न लगे, इसलिये हम्मामसे निकल अति अप्रशस्त सुरङ्गके पथसे पूजाके घरमें जाना होता है।

पश्चिम ओर नीचेकी मंजिलमें ग्रीष्मकालमें रानियां आकर बैठती थीं। यहां फव्वारा और जलकी प्रणाली है। उत्तर ओर नीचेसे ऊपर जानेके लिये सीढ़ी नहीं है। नीचेसे ऊपर तक प्रशस्त ढालू पथ है। उसपर जानेमें कोई कष्ट नहीं होता। ऊपरी कमरोंमें अनेक प्रकारके चित्र बने हैं, एक जगह मथुरा, वृन्दावन प्रभृति नगर अङ्कित हैं। गङ्गा-यमुनाके जलमें मछलियां क्रीड़ा करती फिरती हैं। मन्दिरमें देव-मूर्ति प्रतिष्ठित है। विचारालयमें विचारपति बैठे हुए विचार कर रहे हैं। चित्रोंमें इसी तरहके कितने ही विवरण देखनेमें आते हैं। शिलादेवीकी पूजाके समय रानियां ऊपरसे उत्सव देखती थीं, इसलिये दीवारमें झरोखे कटे हुए हैं। उसके बाद पूर्व ओर नीचेवाले दालानके ऊपर और एक छोटा दालान है। यह सफेद पत्थरका बना और अति सुन्दर है। यहांके कमरोंमें किसीका नाम 'जय-मन्दिर', किसीका 'सोहागमन्दिर', किसीका 'यशो-मन्दिर' और किसीका 'सुखमन्दिर' है। ऊपरके दालानमें रानियां दरबार करती थीं।

ऊपरकी छतपर जाकर खड़े होनेसे सभी मनोहर दिखाई देता है। जिधर आंख उठाकर देखिये, उधर ही अपूर्व दृश्य झलकता है। मकानके नीचे पूर्व ओर सरोवर है। उसके मध्यस्थलमें हीप है। उसके ऊपर मनोहर उद्यान है। उत्तरकी ओर भग्न नगर है। बीच बीचमें देवालय हैं। दक्षिण दिशामें बहुत दूर-पर सुरम्य जयपुर शहर है, पूर्व पश्चिममें पहाड़ है।

मन होता है, कि दिन-रात वहां दृष्टिभर चारो ओरकी अपूर्व शोभा ही देखा करें।

फिर आंगनमें उतर कर दक्षिण ओर जाओ, तो रानियोंका अन्तःपुर है। किन्तु रानियोंका घर होनेसे यहां सुन्दर अङ्गको यत्नसे रखनेके लिये मणिकी अट्टालिका नहीं है। ऊपर नीचे पंक्तिकी पंक्ति छोटी छोटी सामान्य कोठरियां हैं। उन्हींमें रानियां रहती थीं। आंगनमें एक नाट्यमन्दिर जलक्रीड़ाके लिये एक हीज, और कई फव्वारे हैं। उत्तरके किनारेके नीचे एक कोठरीमें गौरीदेवीका मन्दिर था। वहाँ रानियां गौरीकी पूजा करती थीं। रानियोंकी गौरी-पूजाका नियम अब भी प्रचलित है।

आमिरके राजभवनका सौन्दर्य आज भी नष्ट नहीं हुआ। देखनेसे मालूम होता है, मानो अट्टालिका आज ही बनाई गई है। मकानके भीतरी दरवाजोंमें हाथी-दांत जड़े हुए थे। अब सब टूट फूट गये हैं। कहीं किसी कपाटमें कुछ कुछ निदर्शन देखा जाता है। सौभाग्यलक्ष्मीकी पूर्णदृष्टिके समय मानसिंहने इस सुरम्य अट्टालिकाको बनवाया था। इसके पहले वे जिस मकानमें रहते थे, वह अति सामान्य है। सदर मकानके पश्चिमद्वारसे उतरकर उस पुराने मकानमें जाना होता है।

सदर मकानके पश्चिम दरवाजे से बहुत नीचे उतरना पड़ता है। नीचे अप्रशस्त पथ है। पहले पश्चिम तरफ़के पहाड़पर नगरनिवासियोंके छोटे छोटे घर थे। अब सब मकान गिर पड़े हैं। कहीं गिरी हुई दो एक दीवार खड़ी है, कहीं दीवारके सब पत्थर गिरकर सड़कपर ढेर हो गये हैं। उस समय सब घर कच्चे बनते थे। सिर्फ़ मट्टीके गारेसे पत्थर जोड़ जोड़कर दीवार उठा दी जाती थी। राजप्रासादके पीछेकी ओर भी कच्ची बनावट देख पड़ती है। परन्तु यह कच्ची जोड़ाई भी बहुत दिनतक रहती है। तीन सौ वर्षके मकान आज भी वैसे ही खड़े हैं।

नीचेकी राह उत्तर मुंह जानेसे दक्षिण भागमें विश्रहका एक ऊंचा मन्दिर मिलता है। उसके बाद कुछ और उत्तर रत्नाकरका वासस्थान है। रत्नाकर

अम्बरराजके कुलगुरु थे। इस मकानमें अब कोई नहीं रहता। कई जगह यह गिर भी पड़ा है। बांम भागके ऊंचे पहाड़की दक्षिण दिशामें रत्नाकरकी छत्री, खड़ाऊं और रत्नाकरसागर है। देखनेमें रत्नाकरसागर अति सुरम्य सरोवर है। स्थान भी अति मनोहर है। गुरुकी मृत्यु होनेपर उनकी अन्त्येष्टिक्रिया हो जानेके बाद इसी सरोवरके किनारे उनका भस्म समाहित किया गया था। यह छत्री वही समाधिस्थान है।

और कुछ उत्तर जाकर बाईं ओर चढ़ना पड़ता है। यहांकी राह बहुत ऊंची-नीची है। बाईं ओर कुछ दूर जानेसे सामने नृसिंहदेवका मन्दिर दिखाई देता है। इस मन्दिरके आंगनसे पश्चिमकी ओर 'हिन्दोला' मञ्च है। महाराज जयसिंहकी महिषी सौदामिनी रानीने इस हिण्डोला मञ्चको श्रीकृष्णके प्रीत्यर्थ उत्सर्ग कर दिया था। मञ्चके एक सफेद पत्थरपर उत्सर्गका संवत् दिन आदि खुदा हुआ है।

आंगनसे पूर्व शूरसिंहका गृह है। शूरसिंहके साथ अम्बरराजका कैसा सम्बन्ध था, बहुत कुछ अनुसन्धान करनेपर भी कुछ निश्चित न हो सका। वे मीनाओंके सरदार थे अथवा मानसिंहके किसी पूर्वपुरुषके दो तीन नाम रहे इसीसे इस नामका गोलमाल होता है। इन सब बातोंकी ठीक मीमांसा करना अत्यन्त कठिन है। किन्तु शूरसिंह मानसिंहके कोई विशेष आत्मीय थे, और उन्हींके अभ्युदयसे अम्बरराजकी श्रीवृद्धि हुई थी, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। कारण, इन शूरसिंहके मकानमें ही अबतक जयपुर राजवंशका राजतिलक होता है और उस समय राजाओंके शिरपर शूरसिंहका छत्र रखा जाता है।

शूरसिंहका गृह अति सामान्य है। आंगन छोटा और ऊपर नीचेके कमरे भी बहुत छोटे हैं। ऊपर जानेमें विपदकी शङ्का होती है, — सौड़ी एकदम छोटी और सीधी है। महाराज जिस कमरेमें बैठकर सभा करते थे, उसके पश्चिम दक्षिण कोणमें एक वेदी है। वही वेदी शूरसिंहका राजसिंहासन है। इस कमरेकी

उत्तर ओरकी दिवारमें ब्राह्मण पुजारियोंने अनेक छोटी छोटी देवमूर्तियां रख दी हैं। उन मूर्तियोंको नित्य पूजा होती है।

राजभवनकी दक्षिण ओर रानी बालाबाईका मन्दिर है। बालाबाई शूरसिंहकी महिषी थीं। प्रवाद है, कि शूरसिंह और बालाबाई दोनों आदमी गुटिकासिद्ध थे। सन्ध्या समय विमानपर चढ़कर दोनों आदमी शून्यपथसे पुरीमें श्रीजगन्नाथका दर्शन करने जाते थे। परन्तु महाराजने इस बातको रानीसे कभी न कहा और रानीने भी इसे उनसे छिपा रखा था। इसलिये एक दूसरेकी बात कोई न जानता था। एक दिन रानीने जगन्नाथजीके मन्दिरके द्वारपर राजाको देखा। देखते ही लज्जा और भयसे सज्जुका गईं। परन्तु रानीका सुंह घूँघटमें छिपा था, इससे अपनी महिषीको न पहचान राजाने शिष्टाचार करके कहा,—“डरो मत, बेटी! लजाती क्यों हो? तुम कन्याके समान हो, स्वच्छन्द प्रतिमाका दर्शन करो।” जगन्नाथ देवका दर्शन करके रानी घर आईं, परन्तु राजाने उन्हें कन्या कह सम्बोधन किया था, इसलिये उस दिनसे उन्हें फिर कभी अपने शयन-गृहमें न घुसने दिया। बाला शब्दका अर्थ कन्या और बाईका स्त्री है, इसीसे इस मन्दिरका नाम बालाबाई हुआ है।

शूरसिंहकी मकानसे पूर्व महाराज मानसिंहका पूर्व वासस्थान है। यह राजभवन सामान्य धनियोंके मकान जैसा है। इसमें कोई कारीगरी नहीं, कुछ औसीन्द्ये नहीं। अब कई जगह यह गिर पड़ा है। बादशाहके निकट दिन दिन मानसिंहकी प्रतिपत्ति बढ़ने लगी, सौभाग्य लक्ष्मी दिन दिन प्रसन्न होने लगीं; उसी समय अम्बरका प्रसिद्ध राजभवन बनवाया गया।

राजभवनसे बाहर निकल फिर पूर्वके पथसे कुछ उत्तर पश्चिम सुंह जानसे बाईं ओर खेत प्रस्तरके ‘अम्बकीश्वर’ महादेव मिलते हैं। किसी किसीके मतानुसार इन महादेवके नामसे ही शहरका नाम अम्बर हुआ है। उसके बाद छवटकी शाखाके नीचे

और कुछ उत्तर जानेपर एक बड़ा भारी हीज दिखाई देता है। इसके कुछ दूर पश्चिम ओर भैरवनाथका मनोहर पीठस्थान है। ग्रीष्मकालमें यह स्थान अतिशय मनोहर हो जाता है। चारो ओर वटपत्र छाया किये हुए हैं, नीचे तनिक भी धूप नहीं आती। जमीनके भीतर एक पत्थरकी भैरवनाथकी मूर्ति खोदकर बनाई गई है, इसीसे लोग इन्हें अनादि लिङ्ग कहते हैं। भैरवनाथके सब अङ्गोंमें सिन्दूर पोता हुआ है। यहांसे फिर पूर्व पथ नगरके भीतर जानेपर जयपुरका राजपथ मिलता है।

अम्बरखाना—भवन-विशेष, कोई मकान। सन् १६३६ ई०को शाहजीने पूनावाले किलेसे दक्षिण यह भवन अपनी धर्मपत्नी जीजी बाई और वीरपुत्र शिवजीके लिये बनवाया था। इसे लालमहल भी कहते हैं। यह बहुत ही मजबूत बना रहा। आज भी कुछ तहखाने देखनेमें आयेंगे। शिवाजीने अपनी माताके साथ कितने ही वर्ष इसमें निवास किया। शाहजीके तत्त्वावधायक दादाजी कोंडदेव शिवजीकी शिष्टाको देखते और मकानकी भी खबर लेते थे। पेशवा-वोंने आकर इसमें हाथियोंके हौदे रखना शुरू किया। इसीसे लोग इसे अम्बर या अम्बरीखाना कहते हैं।

अम्बरग (सं० त्रि०) आकाशगामो, आसमानपर चलनेवाला।

अम्बरद (सं० पु०) कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़।

अम्बरनाथ—बम्बईके थाना जिलेका एक गांव। इसमें सन् १०६० ई०को अम्बरनाथका बहुत अच्छा मन्दिर बना था। यद्यपि मन्दिर छोटा, तथापि नक्काशी देखकर दिल खुश हो जाता है। शिवरात्रको यहां बड़ा उत्सव रहेगा। मन्दिरमें शिलाहारवंशके शिलालेखपर ८८२ शक खुदा है। गुम्बदपर कितनी ही अच्छी तस्वीरें देख पड़ेंगी। दोवारों खम्बों और छतोंकी कारीगरी देख सभी प्राचीन भारतीय शिल्पियोंकी प्रशंसा करते हैं। गांवका सुखिया ही महादेवको पूजे और दान-दक्षिणा लेगा। लोग कहते हैं, कि इस मन्दिरको देवतावोंने एक रातमें बनाया था।

अम्बरयुग (सं० स्त्री०) लहंगा-लुगरा, धोती-पिछौरी, चंघरिया-ओढ़निया।

अम्बरशैल (सं० पु०) गगनस्पर्शी पर्वत, जो पहाड़ अपनी उंचाईसे आस्मानको चूमता हो।

अम्बरस्थली (सं० स्त्री०) भूमि, जमीन।

अम्बरा (सं० स्त्री०) कार्पासवृक्ष, कपासका पेड़।

अम्बरातक (सं० पु०) आम्नातक वृक्ष, अमड़ा।

अम्बरान्त (सं० पु०) १ वस्त्रका अवशेष, कपड़ेका सिरा। २ क्षितिज, उफक, जो जमीनका किनारा आस्मानसे लगा मालूम हो।

अम्बरिया—विहारके ब्राह्मणोंका समाज विशेष।

अम्बरिष, अम्बरीष देखो।

अम्बरीष, अम्बरातक देखो।

अम्बरीष (सं० पु०-स्त्री०) अम्बराते भर्जनकाले शब्दायतेऽच, अवि-ईधन् रकारागमो निपात्यते। अम्बरीषः। उण् ४।२८। १ भर्जनपात्र, कड़ाही, जिस बरतनमें कोई चीज तले। २ आम्नातक वृक्ष, अमड़ा। ३ सूर्य। ४ विष्णु। ५ शिव। ६ युद्ध, लड़ाई। ७ नरकविशेष। ८ किशोर, बछेड़ा। ९ अनुताप, पछतावा। १० पुलह नामक ब्रह्मर्षिके पुत्र। ११ मान्धाताके एक पुत्र। यह विन्दुमतीके गर्भसे उत्पन्न हुये थे। १२ सूर्यवंशीय वृषति-विशेष। यह सुश्रुतके पुत्र रहे। किसी समय इन्होंने यज्ञका अनुष्ठान किया, किन्तु कार्य सम्यक् होनेसे पहले ही इन्द्र जाकर यज्ञीय पशु चोरा लाये थे। इसीसे अम्बरीषने ऋचिक मुनिके सन्तान शुनः-शेफको वधार्थ खरीदा।

भागवतमें लिखा है,—अम्बरीष नामाके पुत्र रहे। इनके परम विष्णुभक्त होनेमें कोई त्रुटि न थी। इसीसे विष्णुने इन्हें बचानेके लिये अपना चक्र सौंप दिया। विपद् पड़नेसे चक्र आकर अम्बरीषकी रक्षा करता था।

एक बार कार्तिक मासकी हादशीको व्रत-पारणके दिन दुर्वासा मुनि इनके मकानपर जा पहुँचे थे। महाराजने यथोचित समादरके बाद अपने गृहमें भोजन करनेको मुनिसे अनुरोध किया। दुर्वासा सन्त होकर स्नान करने चले गये थे। कितना ही

विलम्ब होते भी वह वापस न आये। इसीसे अम्बरीषने पुरोहितकी अनुमति ले भोजन कर लिया, अधिकक्षण फिर दुर्वासाकी राह न देखी थी। अन्तको दुर्वासाने पहुँच यह बात सुनी, क्रोधसे उनका सर्वाङ्ग जलने लगा। उन्होंने महाराजको वध करनेके लिये जटासे कोई उग्रदेवता निकाला था। उसी समय विष्णुके सुदर्शन चक्रने धावा मार उन उग्रदेवताको नष्ट किया और दुर्वासाके पोछे-पोछे दौड़ने लगा। किसी जगह निस्तार न पा अन्तमें दुर्वासा अम्बरीषकी हो शरणापन्न हुये थे।

अम्बरीकस् (सं० पु०) अम्बर आकाश ओकः स्थानं यस्य, बहुव्री०। १ वैकुण्ठमें रहनेवाला, जो विहिंस्रमें रहता हो। २ देवता, फरिश्ता।

अम्बष्ठ (सं० पु०) अम्बायां मातृगृहे तिष्ठति, अम्बा-स्था-क षत्वं आकारलोपश्च। १ वैश्वकन्याके गर्भ और ब्राह्मणके औरससे जात सङ्घौर्ण जाति विशेष। २ वैद्यजाति, हकीम। ३ देशविशेष, एक सुक्त। ४ युक्तप्रदेशको प्रसिद्ध एक कायस्थ जाति।

।*। हमारे धर्मशास्त्रमें अम्बष्ठ जातिपर निम्नलिखित मीमांसा दी गयी है,—

“अनुलोमा अन्तरैकान्तरह्यन्तरासु जाताः सवर्णान्वद्योय-निषाददौष्यन्तपारशवाः।” (गौतमधर्मसूत्र ४।१६)

अर्थात् अनन्तरज, एकान्तरज, और द्व्यन्तरज, क्रमसे जात अनुलोमगण ही सवर्ण, उग्र, अम्बष्ठ, निषाद, दौष्यन्त और पारशव जाति है।

बौधायन-धर्मसूत्रसे भी उक्तमत समर्थित है। ब्राह्मणात् क्षत्रियाणां ब्राह्मणो वैश्यायामम्बष्ठः शूद्राणां निषादः। (२।१) अर्थात् ब्राह्मणके औरस एवं विवाहिता क्षत्रियकन्याके गर्भसे ब्राह्मण, ब्राह्मण और वैश्वकन्यासे अम्बष्ठ एवं शूद्रासे निषाद उत्पन्न होता है।

भगवान् मनुने भी धर्म-सूत्रके अनुसार ही लिखा है। यथा—

“ब्राह्मणात् वैश्वकन्यायामम्बष्ठो नाम जायते।” (१०।८)

अर्थात् ब्राह्मणसे वैश्वकन्याके गर्भमें अम्बष्ठ जाति हुयी है।

महर्षि याज्ञवल्क्यने लिखा है—

“विप्रां सूक्षावसिक्तो हि चतुर्यायां विशः स्त्रियाम् ।

अम्बष्ठः यद्वा निषादो जातः पारशवोऽपि वा ॥” (१।२१)

अर्थात् ब्राह्मणसे चतुर्याके गर्भमें सूक्षावसिक्त, ब्राह्मणसे वैश्याके गर्भमें अम्बष्ठ* एवं ब्राह्मणसे शूद्राके गर्भमें निषाद वा पारशव उत्पन्न हुआ है ।

औशनस धर्मशास्त्रमें कहा है—

“वैश्यायां विधिना विप्रात् जातो ह्यम्बष्ठ उच्यते ।

क्षत्र्याजीवो भवेत् तस्य तथैवाग्नेयवृत्तिकः ॥

ध्वजिनी जीविका वापि ह्यम्बष्ठाः शस्त्रजीविनः ।”

ब्राह्मणसे विधिपूर्वक वैश्यामें जो उत्पन्न होता, उसको अम्बष्ठ कहा जाता है। वह क्षत्रिजीवो रहता और आग्नेयवृत्तिक एवं ध्वजधारी होता है। अम्बष्ठ शस्त्रजीवो ठहरेगा। महर्षि नारदका मत है—

“उग्रः पारशवश्चैव निषादयानुलोमतः ।

अम्बष्ठो मागधश्चैव चत्ता च चतुर्यात्मजः ॥”

उग्र, पारशव, और निषादकी अनुलोमक्रमसे उत्पत्ति है। अम्बष्ठ, मागध और चत्ता कितनी ही जाति चतुरिय कन्यासे उत्पन्न हैं। नारदने ही आगे फिर लिखा है,—

“अम्बष्ठोऽग्नौ तथा पुत्रावेव चतुरियवैश्वयोः ।

एकान्तरस्तु चाम्बष्ठः वैश्यायां ब्राह्मणात् सुतः ॥

यद्वायां चतुरियात् तद्वत् निषादो नाम जायते ।

यद्वा पारशवः सुते ब्राह्मणादुत्तरः सुतम् ॥” (१।२।०७।१०८)

चतुरिय और वैश्यसे अम्बष्ठ और उग्रजाति हुयी है। ब्राह्मण और वैश्यासे एकान्तर अम्बष्ठ, चतुरिय और शूद्रासे निषाद नामक जाति एवं ब्राह्मण और शूद्रासे पारशव की उत्पत्ति है।

मनु-टीकाकार रामचन्द्रने एक स्थान पर लिखा है—“वृषकन्यायां वैश्ये उत्पन्ने यद्वै उत्पन्ने सति उभौ अम्बष्ठौ भवतः ।” (मनुटीका १।०।७) वैश्यके औरस और चतुरिय-कन्याके गर्भसे एवं शूद्रके औरस और चतुरियकन्याके गर्भसे दोनों ही तरह अम्बष्ठ उत्पन्न होता है।

स्मार्त रामचन्द्रने फिर ‘अम्बष्ठानां चिकित्सितम्’ इस श्लोक को टीकामें कहा है—‘अम्बष्ठानां यद्वा दम्बष्ठा जाताः चिकित्सितं शास्त्रं वैद्यकम् ।’ (मनुटीका १।०।४७) अर्थात् अम्बष्ठादिकी

चिकित्सा यानी वैद्यकशास्त्र ही उपजीविका होती है। अम्बष्ठ शूद्रसे उत्पन्न हैं।

मनुसंहिता और महाभारतके प्रधान-प्रधान टीकाकारने अधिकांश अम्बष्ठको अपसद वा अपध्वंसज भावसे ही ग्रहण किया है,—

“ये द्विजानामपसदा ये चापध्वंसजाः स्यूताः ।

ते निन्दितैव तैरेषु हिंजानामेव कर्मभिः ॥

स्यूतानामश्वसारथ्यम्वष्ठानां चिकित्सितम् ॥” (मनु १।०।४६)

द्विजातिमें जो अपसद और अपध्वंसज रहे, वह द्विजगणके निन्दित कर्म द्वारा जीविका चलायेगा। (उसमें) सूतजातिकी वृत्ति अश्वसारथ्य और अम्बष्ठकी चिकित्सा होती है।

“चैत्यद्वुसश्मशाने पु शैलेषूपवनेषु च ।

वसिष्ठेति विज्ञाना वर्तयन्तः स्वकर्मभिः ॥” (मनु १।०।५०)

सूतादि सकल अपसद और अपध्वंसज जाति अपनी-अपनी जातीय वृत्ति उठा चैत्यवृक्षके नौचे, श्मशान, पर्वत या उपवनमें रहती है। मनुटीकाकारगणकी तरह नीलकण्ठने भी अनुशासनपर्वके ४८ वें अध्यायको टीकामें लिखा है,—‘पञ्चदश वाद्या उक्ताः’ अर्थात् उक्त पन्द्रह जाति ही समाजवाह्य कही गयी है।* वेदव्यासने महाभारत अनुशासनपर्वके ४८ वें अध्यायमें अम्बष्ठको अपध्वंसज बताया है। मिताचराकार विज्ञानेश्वरने ‘अपध्वंसज’ शब्दका ‘व्यभिचार-जात’ अर्थ लगाया। (याज्ञवल्क्यटीका १।२०)

मनुटीकामें सर्वज्ञनारायणने भी लिखा है,—

“विप्रावैश्यायां यथा अम्बष्ठो यथा वा चतुरियाश्चूद्रायास्तथाः पुत्रं शत्रु-लोभेन जातोऽप्यनन्तरस्त्रीजातपुत्रापेक्षया निन्दितस्तथा वैश्याविप्रायां जातो वेदेहः यद्वा चतुरियायां जातश्च चत्ता। अनन्तर प्रतिलोमजातापेक्षया कर्तव्यजातत्वान्निन्दित इत्यर्थः। यथा स्यूतौ निन्दितौ विधिः ।”

(मनुटीका १।०।१२)

ब्राह्मणसे वैश्याका गर्भज अम्बष्ठ एवं चतुरियसे शूद्राका गर्भज उग्रपुत्र अनन्तर-स्त्रीजात पुत्रकी अपेक्षा निन्दित ठहरता है। इसीतरह वैश्यसे ब्राह्मणीका जात वेदेह और शूद्रसे चतुरियाका जात चत्ता भी

* मिताचराकार विज्ञानेश्वरने यहां ‘विशः स्त्रियाम्’ का अर्थ विवाहित-वैश्यकन्या लिखा है।

निन्दित होता है। अनन्तर-प्रतिलोमकी अपक्षा एकान्तर-प्रतिलोमकी भी बुरा समझते हैं। कारण स्मृतिमें लिखा कि अम्बष्ठ और उग्र दोनो ही अनुलोम जाति निन्दित होती है।

प्रसिद्ध टीकाकार सर्वज्ञनारायणने मनुके १०।५० श्लोककी टीकामें बताया है,—‘एते सूतादय विज्ञाताचिह्निता’ अर्थात् सूत और अम्बष्ठसे वेण पर्यन्त चिह्नित जाति सकल मानना होगा। मतलब, उनके मतमें यह सकल ही जाति समाजवाह्य ठहरती है। उक्त श्लोककी टीकामें रामचन्द्रने भी कहा है,—‘सकमं भि-
वर्तयन्तो विज्ञाता एते पौण्ड्रकादयः वसेयुः’ अर्थात् पौण्ड्रक, द्राविड़, कम्बोज, यवन, शक, पारद, पङ्गव, चीन, किरात, दरद, खस, हिज और शूद्रके मध्य जो वाह्य जाति वा दस्यु कहाये तथा अपसद और अपध्वंसज निर्दिष्ट हो, वह निन्दित कर्म द्वारा ही जीविका चलाता है।

मनुक्त पौण्ड्रकादि क्षत्रियजातिने क्रम-क्रम जैसे क्रियालोप और ब्राह्मणादर्शन हेतु वृषलत्व पाया, वैसे ही निन्दित कर्म द्वारा अम्बष्ठादि और क्रिया-लोप हेतु पौण्ड्रकादिक भी वृषलत्वप्राप्त और वाह्य-जाति कहाया था। वास्तविक अद्यापि दक्षिणात्यके तिरुवाङ्कोड़ राज्यमें ऐसे समाजवाह्य अम्बष्ठ वैद्यका वास रहा है। इस जातिके सम्बन्धमें तिरुवाङ्कोड़ महाराजके दीवानूपेश्वर सुब्रह्मण्य-अय्यरने लिखा था,

“In their dresses, ornaments and festivals they do not differ from the Malayal Sudras, of whom according to the Keralotpatti, they form one of the lowest subdivisions. The niece is the rightful wife of the son and the daughter that of the nephew.....Among the Ampattans (Ambastham) fraternal polyandry seems to be common.”*

अर्थात् वेशभूषा और उत्सवादिमें मलयाल शूद्र-गणसे वहाँके रहनेवाले अम्बष्ठगणका कोई पाथ्यक्ष नहीं पाते। केरलोत्पत्तिके मतसे यह जाति नीचतम शूद्रके

मध्य गण्य होती है। भागिनीयौ ही उपयुक्त पुत्रवधू और कन्या हो उपयुक्त भागिनीयवधू ठहरती है। इस अम्बष्ठ जातिके मध्य बहुतसे भ्राता मिलित हो साधारणतः एक पत्नी रखेंगे।

सम्भवतः ऐसी निम्नष्ट अम्बष्ठ जाति देखकर ही रघुनन्दन, वाचस्पतिमिश्र प्रभृति स्मार्तगणने ‘एवमम्बष्ठा-दीनामपि कलौ यद्रत्नम्’ लिख डाला है। सिवा इसके महाराष्ट्र और कर्णाट अञ्चलकी बैदु और वेद जातिको भी आलोचना करनेसे द्राविड़की अम्पट्ट जातिकी तरह हीन समझना पड़ेगा। बैदु देखो।

उशनाने जिस अम्बष्ठकी बात लिखी, वह अम्बष्ठ जाति हस्तिपकरूप बतायी गयी है,—

“अम्बष्ठाऽम्बष्ठमार्गे नौ दिक्षपम्बमसाचिरम्।

नौ चैत् सकुञ्जरं लाय नयामि यमसादनम्।” (भागवत १०।४३।४)

‘अम्बष्ठो हस्तिपः।’ (गीवरस्वामी)

हिन्दुओंके राजत्वकालमें हस्तिपक खेती-बारी करता, हाथीपर पताका बांधके चलता, रणक्षेत्रमें अस्त्र उठाता और नाना उत्सवके समय हाथीपर आगे-आगे जा अग्निक्रीड़ा देखाता था। भागवत-वाला निषादी अम्बष्ठही उशनका शस्त्रजीवी अम्बष्ठ होगा।

अम्बष्ठ क्षत्रिय—मकटूनियाके वीर सिकन्दर जब पञ्जाब पहुँचे, तब पञ्जाबके दक्षिणमें अम्बष्ठ नामक वीर जाति राजत्व चलाती, जो यूनानी नृपतिसे बहुत लड़ी थी।† पुराणकार और पाणिनिने भी इस क्षत्रिय जातिकी बात कही है। सुतरां इस जातिकी अति-शय अप्राचीन कैसे समझेंगे। इसको अधूषित वास-भूमि पुराणमें ‘अम्बष्ठ’ बताया गयी है।

अम्बष्ठ ब्राह्मण—शाक्य बुद्धके आविर्भाव कालमें अम्बष्ठ नामक कोई ब्राह्मण कपिलवास्तु अञ्चलमें रहते थे। दो सहस्र वर्ष पूर्वर्चित दीघनिकायके अन्तर्गत ‘अम्बष्ठसूत’ नामक पालियग्रन्थ उन्ही अम्बष्ठ ब्राह्मणका बनाया ठहरता और उसमें तत्कालीन ब्राह्मणगणकी सामाजिक अवस्थाका खासा परिचय मिलता है। नौचे हम उसका कुछ अनुवाद उद्धृत करेंगे,—

* Census Report of Travancore by N. Subrahmanya Aiyar, M. A., M. B. C. M. Part 1, p. 27.

† Arrian और Quintin Curtius द्रष्टव्य है।

‘एकदा भगवान् बुद्धदेव कोशल राज्यके इच्छा-
नकल नामक वनमें विहार करते थे। उसी समय
वहां पुष्करसारी नामक कोई ब्राह्मण भी वसते रहे।
उनका अश्वत्थ नामक कोई पण्डित और त्रिवेदज्ञ
शिष्य था। बुद्धदेवके आगमन बाद उन्होंने सुना,
कि द्वात्रिंश-लक्षणाक्रान्त कोई महापुरुष वहां जा
पहुंचा रहा। उन महापुरुषको देखनेके लिये अश्वत्थ
प्रभृति पण्डित उपस्थित हुये। नानाविध वादानु-
बाद अश्वत्थ नानारूप पुरुषवाक्यसे बुद्धदेवको संबोधन
करने लगे थे। उससे भगवान्ने अश्वत्थको पापपरायण
बताया। उन्होंने अत्यन्त असन्तुष्ट हो कहा था,—
हे अमण गोतम ! तुम पापी और तुम्हारा वंश क्रूर-
स्वभाव एवं निष्ठुर निकलेगा। शाक्यगण नीच और
ब्राह्मणके प्रति भक्तिशून्य रहता, ब्राह्मणके प्रति यथो-
चित सम्मान नहीं देखाता; ब्राह्मणसे शाक्यगणका
ईदृश व्यवहार अनुचित लगता है।

‘बुद्धदेवने कहा, हे अश्वत्थ ! शाक्यगणने तुम्हारा
क्या अपराध किया है ? (इसपर उन्होंने उत्तर दिया)
किसी दिन मैं अपने आचार्य पुष्करसारीके कामसे
शाक्यगणके विश्रामागार गया था ; उस समय शाक्य-
कुमारगण उच्च आसनपर बैठ परस्पर कौतुक करते
रहा, मुझे देख किसीने बैठनेको न कहा। बुद्धदेवने
उत्तर दिया, शकुन जैसे अपने आसन पर बैठ यथेच्छा
आचरण करता, वैसे ही शाक्यगण भी अपने कपिल-
वास्तु नगरमें यथेच्छा व्यवहार बना सकता है। ऐसे
सामान्य कारणसे आपको कष्ट पहुंचना उचित नहीं
ठहरता।

‘अश्वत्थने कहा,—हे गोतम ! वर्ष चार होता
है—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। उसमें क्षत्रिय,
वैश्य और शूद्र ब्राह्मणका परिचारक रहता है। इसीसे
शाक्यगण ब्राह्मणसे हीन होता और उसका वैसा व्यव-
हार अनुचित ठहरता है। यह बात सुन भगवान्
मन ही मन ऐसी चिन्ता करने लगे,—तरुण अश्वत्थ
अति मूर्ख है, इसीकारण वह शाक्यगणको नीच बताता
और निन्दा करता है। उन्होंने प्रकट भावमें
पूछा,—हे अश्वत्थ ! आपका कौन गोत्र है ? अश्वत्थने

कहा,—मैं क्षत्र गोत्रसे उत्पन्न हुआ हूं। बुद्धदेव
फिर बोल उठे,—आपके माट और पिटकुलकी वंश-
परम्परावाले नाम और गोत्रको देखते प्रतीयमान
होता, कि शाक्यगण आपका प्रभुस्थानीय और
आप उसके दासीपुत्र हैं। शाक्यगणके पूर्वपुरुष
इच्छाकु रहे। उन्होंने अपनी प्रियतमा महिषीके
पुत्रको अधिकार देनेकी इच्छासे ज्येष्ठ कुमारगणको
राज्यसे निकाल दिया था। वह राज्यसे वहिष्कृत
हो हिमवन्त प्रदेशके शाक्यवनमें जा रहने लगा और
जातीय पवित्रताकी रक्षाके निमित्त यथोचित विवा-
हादि सम्बन्धसे आवद्ध हुआ। कुछ काल बाद राजाने
अमात्यगणसे पूछा था,—अब कुमारगण कहां रहता
है ? उसपर अमात्यगणने कुमारोंकी अवस्था यथा-
यथ बता दी। राजा आप ही आप कहने लगे, कि
कुमारगणका आचरण शक्य अर्थात् धर्मसङ्गत रहा।
उसीसे शाक्य नाम निकला और वही शाक्यगणके
पूर्वपुरुष रहे। इच्छापुराजके ‘दिसा’ नाम्नी कोई
दासी थी, उसीने क्षत्रको प्रसव किया था। उस नव-
जात शिशुने जन्म मात्रसे माताको पांच प्रकार गर्भमल
परिष्कार करने और उससे अनेक उपकार पहुंचानेको
कहा। हे अश्वत्थ ! इस समय मनुष्य जैसे पिशाचको
पिशाच बताता, वैसे ही ‘क्षत्र’ को सब लोग पिशाच
समझते थे। इसीसे कार्णायण गोत्रको उत्पत्ति
हुयी है। वही शिशु क्षत्रगोत्रका आदिपुरुष रहा।

‘इसीतरह हे अश्वत्थ ! आपके पिट-माटकुलवाले
पूर्वपुरुषगणका नाम और गोत्र सुननेसे मालूम पड़ता,
कि आप लोग शाक्यगणके दासीपुत्र लगते हैं। अश्वत्थसे
ऐसी बात होनेपर समागत जनवृन्दने कहा,—हे
भगवन् गोतम ! आप अश्वत्थको बालक, मूर्ख और
दासीपुत्र बता गौरव न घटायें। अश्वत्थ सदैव शजात
और कुलपुत्र हैं। भगवान् बोले,—आप यदि अश्वत्थ-
को नीचकुलजात, दासीपुत्र और मेरे साथ वाद
प्रतिवादके अयोग्य समझें, तो उनके बदले आप ही
मेरे साथ उत्तर प्रत्युत्तर करें। फिर यदि आप
अश्वत्थको उच्चकुलजात ठहरायें, तो मेरे साथ उन्हें
उत्तर प्रत्युत्तर करनेको कहें। भगवान्ने अश्वत्थसे

कहा,—इसबार आप मेरे प्रश्नका यथायथ उत्तर दीजियेगा। कार्णायण गोत्रकी उत्पत्ति और उसके पूर्वपुरुषका कौन हाल आपने आचार्य, महत्लोक या वृद्ध ब्राह्मणसे सुना है ?

उसपर अम्बष्ठने तुष्णीभाव अवलम्बन कर कियत्-क्षण बाद कहा,—हे गोतम। आपने जैसा बताया, मैंने भी वैसा ही सुना है। इसपर समवेत जनवृन्द नाना प्रकार निन्दा करने और कहने लगा,—यह कुलपुत्र नहीं ठहरता, नीच वंशोत्पन्न और दासोपुत्र लगता है। उपस्थित जनवृन्दका वैसा मनोभाव देख बुद्धदेवने अम्बष्ठके आदिपुरुष 'क्षत्र' ऋषिका एक उपाख्यान सुनाया और उसी प्रसङ्गमें राजा इक्ष्वाकुके उन्हें कन्या देनेकी बात भी कह डाली।

बुद्धके समय अम्बष्ठ और ब्राह्मणसमाज। भगवान्ने पूछा,—हे अम्बष्ठ ! यदि क्षत्रियकुमार ब्राह्मण-कन्यासे सहवास करे और उसके सहवाससे पुत्र उत्पन्न हो, तो उस पुत्रको ब्राह्मणगणके मध्य जल वा आसन मिलेगा या नहीं ? अम्बष्ठने उत्तर दिया,—उसे मिलेगा। भगवान्ने फिर पूछा,—यज्ञ, आहुति और अन्यान्य क्रिया-कलापमें वह पुत्र निमन्त्रित होता है या नहीं ? अम्बष्ठने कहा,—वैसा ही हुआ करता है। भगवान् बोले,—ब्राह्मणगण उसे वेदमन्त्र देता है या नहीं ? अम्बष्ठने बताया,—वेदमन्त्र उसे दिया जाता है। भगवान्ने प्रश्न किया,—ब्राह्मणकन्याके साथ उसका विवाहादि होता है या नहीं ? अम्बष्ठने बताया,—होता है। भगवान्ने पूछा,—वह राज्यपर अभिषिक्त किया जाता या नहीं ? अम्बष्ठने जवाब दिया,—यह कैसे होगा, क्योंकि उसका मातृकुल क्षत्रिय नहीं ठहरता।

बुद्धदेवने फिर पूछा,—इसीतरह किसी क्षत्रिय-कन्या साथ ब्राह्मण कुमारके सहवास फलसे पुत्र होने-पर वह भी पूर्वोक्तरूपसे सकल विषयका अधिकारी बन राजसिंहासनके योग्य समझा जाता है या नहीं ? अम्बष्ठने उत्तर दिया,—यह कैसे होगा, कारण उसका पिता क्षत्रिय नहीं ठहरता। बुद्धदेवने बताया,—सुतरां क्षत्रिय ही श्रेष्ठ समझ पड़ता, ब्राह्मण उसकी अपेक्षा हीन है।

बुद्धदेवने फिर पूछा,—यदि कोई ब्राह्मण किसी अपराधसे मस्तक मुड़वा देशसे निकाला जाये, तो वह ब्राह्मणगणके मध्य जल और आसन पानेका अधिकारी होता या नहीं ? अम्बष्ठने उत्तर दिया,—नहीं होता। बुद्धदेवने कहा,—यज्ञ, आहुति और अन्यान्य क्रिया-कलापमें उसे भोजन देते हैं या नहीं ? अम्बष्ठने कहा,—नहीं देते। बुद्धदेवने पूछा, ब्राह्मण-कन्याके साथ उसका विवाहादि होता है या नहीं ? अम्बष्ठने बताया, वह भी नहीं होता।

बुद्धदेव फिर बोले, क्षत्रियगण यदि कारणवश किसी क्षत्रियको मस्तक मुड़वा निकाल बाहर करे, तो वह ब्राह्मणगणके मध्य जल वा आसन पाता है या नहीं ? अम्बष्ठने उत्तर दिया, पाता है। बुद्धदेवने पूछा, यज्ञ और आहुतिमें उसे भोजन देते हैं या नहीं ? अम्बष्ठने कहा, देते हैं। बुद्धदेवने दूसरा प्रश्न उठाया, ब्राह्मणगण उसे मन्त्र देगा या नहीं और ब्राह्मण-कन्याके मध्य उसका विवाहादि होगा या नहीं ? अम्बष्ठने कहा, ऐसा ही होते रहता है। भगवान् बोल उठे, कोई क्षत्रिय जब इसतरह मुण्डितमस्तक देशसे निकाला जाता, तब वह अत्यन्त हीन अवस्थाको प्राप्त होता; किन्तु वैसी हीन अवस्थामें भी क्षत्रिय ब्राह्मणकी अपेक्षा श्रेष्ठ ठहरता है।

उक्त विवरणसे भी अच्छीतरह समझ पड़ता है, कि बुद्धदेवके अभ्युदयकालमें क्षत्रियप्राधान्य ही रहा। अम्बष्ठ ब्राह्मण होते भी उनके वंशमें क्षत्रियादिके संश्रवका अभाव न था और ब्राह्मण क्षत्रियसे हीन गिना जाता था। अम्बष्ठ सूक्तके उक्त 'अम्बष्ठ' शब्दको कोई कोई रूपक और जातिवाचक बतायेंगे। उनके मतसे अम्बष्ठ और क्षत्रिय जातिके मध्य सामाजिकता पर कुछ गड़बड़ रहा, बुद्धदेवने उसीकी मोमांसा लगा दी थी। किन्तु दीघनिकायकी टीका एवं भोट देशके दुर्लभ ग्रन्थमें अम्बष्ठ सूक्तका तिब्बतीय अनुवाद विद्यमान है। उसमें अम्बष्ठ शब्दको स्पष्टरूपसे व्यक्ति विशेषका नाम ही बताया है।

अम्बष्ठ कायस्थ—युक्तप्रदेशीय कायस्थगणके कुलग्रन्थ-धृत पञ्चपुराणीय तत्त्वनेसे समझ पड़ता, कि क्षत्रियगणके

पुत्र हिमवानसे अम्बष्ठ नामक कायस्थत्रेणीकी उत्पत्ति हुयी है। इस जातिके मध्य भी बहुतसे लोग चिकित्साशास्त्रमें पाण्डित्य देखा गये हैं। अद्यापि उनका आचार-व्यवहार ब्राह्मण-क्षत्रियके तुल्य ही निकलेगा। युक्तप्रदेशके कायस्थ-समाजमें प्रवाद है कि अम्बष्ठ कायस्थके पूर्वपुरुषोंने गिरनारपर रहने और अम्बा देवीकी पूजा करनेसे अम्बष्ठ नाम पाया।* गरुड-पुराणके ५५वें अध्यायमें अम्बष्ठ प्रान्तका वर्णन कर्णाट, लाट, कम्बोज और आनर्तके साथ आया है।† सिकन्दरकी चटार्द्धका हाल लिखते अरियनने (Arrian) पञ्जाबके दक्षिण सुराष्ट्र वा गुजरात हो अम्बष्ठ बताया। इन कायस्थोंने अम्बष्ठ नाम इसी स्थानके कारण पाया है। आजकल युक्तप्रदेशमें अम्बष्ठ कायस्थ न मिलेगा। कितनों हीके मतानुसार बङ्गालमें इन कायस्थोंको अम्बष्ठ या वैद्य कहते हैं।* किन्तु बङ्गालका अम्बष्ठ अपनेको सेनराजवंशका स्वजातीय बतायेगा। परन्तु सेनवंश-शिरोमणि विजयसेनके शिलालेखमें उन्होंने अपनेको “ब्रह्म-क्षत्रिय” और उनके पौत्र लक्ष्मणसेनबाले ताम्रफलकमें “कर्णाट-क्षत्रिय” लिखा है। कर्णाटकमें आज भी ब्रह्मक्षत्रिय मिलते, जो कायस्थ की तरह लेखकका व्यवसाय चलाते हैं। सेनोंके पूर्वपुरुष कर्णाटकमें रहते थे। सम्भव है, कि उनके साथ अम्बष्ठ भी बङ्गाल गये और सम्बन्ध-सूत्रमें बंधे होंगे। बंगला अम्बष्ठ-जातिके कुलग्रन्थमें लिखा है, कि अम्बष्ठोंके स्वजाति नन्दादि महाराष्ट्र देशमें रहते थे—

“नन्दादयः महाराष्ट्रे निवसन्ति ये केचन।” (भरतमल्लिक)

अम्बष्ठका, अम्बष्ठको देखो।

अम्बष्ठको (सं० स्त्री०) अम्बष्ठं कायति रोगविनाशाय ग्रहणार्थमाह्वयति, अम्बष्ठ-कै-क। १ लताविशेष, पाठा, हरजेवरो। *Stephania hernondifolia*. इसके पर्याय हैं—पाठा, अम्बष्ठा, कुचेली, पायचेलिका, एक-

* W. Crooke's Tribes and Castes of N. W. P and Oudh, Vol. III. p. 190.

† “कर्णाटा कम्बोजघट्टा दक्षिणापयवासिनः ॥

“अम्बष्ठा द्रविडा लाटाः कम्बोजाः क्षीमुखः शकाः।

आनर्तवासिनश्च ये श्रेया दक्षिणपदि ॥” (महाराष्ट्र-पुराण)

चीला, रवा, तित्ता, प्राचीना, एकोशिका, ठका, ठक्कर्णी, स्थापनी, श्रेयसी, रसा, वनतित्तिका, अविहकर्णी, अविहकर्णी, अम्बष्ठका, यूथिका, विहकर्णिका, दीपनी, तित्तपुष्पा, ठक्त्तित्ता, शिशिरा, ठकी, मालती, देवा, ठक्त्तपर्णा। यह लता देखनेमें विलकुल गुर्च-जैसी होती है। गुर्चकी बनिस्वत इसकी पत्ती छोटी और डाल सीधी रहेगी। किन्तु गठनमें कोई प्रभेद नहीं पड़ता। बङ्गालके जङ्गलों और बागोंमें यह बहुत उत्पन्न होती है।

२ भार्गी, भारङ्गी। ३ लक्ष्णामूल, बीमारीके निशानकी जड़। ४ अम्बलोषी, लोनिया। ५ यूथिका, जूही। ६ मयूरशिखा, कोकन। ७ आम्नातक, अमड़ा। ८ माचिका, साकुरण्ड, पुदोना।

अम्बष्ठा (सं० स्त्री०) अम्बा-स्था-क। अम्बष्ठको देखो।

अम्बष्ठादि (सं० पुं०) पाठादिगण विशेष। इसमें निम्नलिखित द्रव्य रहेंगे,—अम्बष्ठा, धातकी, कुसुम, समझा, कटुङ्ग, मधुक, विस्व, पेशी, रोध्र, सावरोध्र, पलाश, नन्दीवृक्ष और पद्मकेशर। यह पक्कातीसार-नाशक, सन्धानोय, पित्तमें हितकर और व्रणमें रोपण होता है।

“गणौ प्रियङ्गुम्बष्ठादौ पक्कातीसारनाशनी।

सन्धानोयौ हितौ पित्ते व्रणानाद्यापि रोपणी ॥” (सुसुत)

अम्बष्ठिका, अम्बष्ठको देखो।

अम्बष्ठौ (सं० स्त्री०) कटुकामेद, किसी किसकी कुटकी।

“रक्तकाष्ठेरुहाम्बष्ठौ कटुका चापरा अृता।” (द्रव्याभिधान)

अम्बष्ठ—युक्तप्रदेशके सहारनपुर जिलेका एक शहर।

यह सहारनपुरसे दक्षिण-पश्चिम आठ कोस अक्षा० २८° ५०' १५" उ० और द्रवि० ७७° २२' ३५" पू० पर अवस्थित है। इसका रकबा कोई ५५ एकर पड़ेगा। यहां सेयदोंका पीरजादा खान-दान रहता है। शहरके बीच शाह अबुल मसलीकी कब्र बनो, सन् ई०के १७वें शताब्द जिनका नाम खूब बढ़ गया था। पीरजादे आज भी माफी पाते और अपना एक प्रतिनिधि किलेमें रखते हैं। वास्तविक यह मुगल फौजकी कानूनी रहा।

अम्बहता—उड़ीसाके बालेश्वर जिलेका एक जनपद।
यहां एक किला बना हुआ है।

अम्बा (सं० स्त्री०) अम्बति स्नेहात् गच्छति, अम्ब-
अच् स्त्रीत्वादाकारः। १ माता, मा। २ अम्बठा,
पुदीना। ३ पाठा, हरजीवरी। ४ दुर्गा। ५ अपसरस
विशेष, किसी परीका नाम। ६ काशिराजकी जेठठा
कन्या। भीष्म अपने सौतेले भाई चित्रवीर्यके लिये अम्बा
और इनकी दो बहनको स्वयंवर-सभासे चोरा लाये थे;
किन्तु पहले मनही मन उनके शास्त्रराजपर आसक्त हो
जानेसे उन्हें वापस भेजा। शास्त्रके अपहृता कन्यासे
विवाह करनेमें असम्यक्त होनेपर अम्बाने कठोर
तपस्याकर देहकी छोड़ दिया। भीष्म ही अम्बाके
उतने कष्टका कारण बने थे। इसीसे महादेवके
वरसे परजन्ममें अम्बाने शिखण्डीका अवतार लिया।
शिखण्डीके पीछे ही महाभारतमें भीष्म मारे गये थे।
७ पाण्डुमाताकी भगिनौ। ८ ज्योतिषमें चतुर्थ भाव-
वाचक शब्द विशेष।

भारतवर्षके दक्षिण अञ्चल प्रायः प्रत्येक ग्राममें
अम्बा देवीकी पूजा होती है। देवीकी कोई विशेष
मूर्ति न रहेगी। पुरोहित पत्थरके टुकड़े पर तेल
और सिन्दूर चढ़ा पुष्पादिसे अम्बाको पूजते और छाग-
मेषादिको बलि देते हैं। गांवमें हैजा, चेचक, महा-
मारी प्रभृति उपद्रव उठनेसे अम्बाकी पूजा धूमधामसे
की जायेगी।

अम्बागङ्गा (सं० स्त्री०) सिंहालकी कोई नदी।

अम्बागढ़ चौकी—मध्यप्रदेशके चांदा जिलेकी जमी-
न्दारी। यह अक्षा० २०° ३५' तथा २०° ५१' २०"
उ० और द्रावि० ८०° ३१' १५" एवं ८०° ५२' पू०के
मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २०८ वर्ग-मील
लगेगा। इसमें जङ्गल और पहाड़ बहुत पड़ता, किन्तु
रायपुरकी ओर खेती भी अच्छीतरह होती है। कच्चा
लोहा यहां खूब निकलता है।

अम्बाजन्मन् (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष।

अम्बाजो-दुर्ग—महिसुर राज्यके कोलार जिलेका एक
पहाड़। यह समुद्रतलसे ४३८८ फीट उच्च और
अक्षा० १३° २३' ४०" उ० एवं द्रावि० ७८° ३' २५"

पू० पर अवस्थित है। टीपू सुलतानने पहले यहां
किलेबन्दी की थी। इसका जलवायु महिसुरमें
अतिशय स्वास्थ्यकर है।

अम्बाड़ा, अम्बाला (सं० स्त्री०) माता, मा।

अम्बाद—दक्षिण-हैदराबादका कोई तालुक। यह
हैदराबादके उत्तर-पश्चिम अवस्थित है। रकबा ८६०
वर्गमील पड़ेगा। इसमें अम्बाद, जामखेर, रोहिलगढ़,
बोहामण्डव, गुनसोंगी और एकतूनी प्रधान नगर हैं।
महाराष्ट्र-पराभवके पश्चात् यह अंगरेजोंके हाथ लगा
था, किन्तु थोड़े ही दिन बाद निजामको सौंपा गया।
अम्बापाटक—गुजरात प्रान्तका एक ग्राम। दुर्गाभट्टके
पुत्र और राष्ट्रकूट-नृपति कर्कके समर-सचिव नारा-
यणने नागरिकावाले जैनमन्दिरमें इस ग्रामका कुछ
क्षेत्र उत्सर्ग किया था।

अम्बापु, आम्बा देखो।

अम्बापेट—मद्राज प्रान्तके गोदावरी जिलेका एक
राज्य। इसका राजस्व कोई २४२१० रु० देना
पड़ता है।

अम्बाप्रसाद—सुप्रसिद्ध हिन्दी कवि पद्माकरके एक पुत्र।

अम्बाभोना—बेहार और उड़ीशाप्रान्तके सम्बलपुर
जिलेका एक गांव। यह बड़गढ़से उत्तर दश कोस
पड़ता है। सम्बलपुरी राजावोंके समय यहां किले-
बन्दी रहो। किसी प्राचीन दुर्गका ध्वंसावशेष आज
देखनेमें आयिगा। केदारनाथ महादेवका प्राचीन
प्रस्तरमन्दिर कोई सौ वर्ष हुये सम्बलपुर-नरेश राजा
जैतसिंहके दीवान् रखनी रायने बनवाया था।

अम्बाला (सं० स्त्री०) अम्बति शब्द लाति धत्ते
अम्बाला-क। १ माता। २ पञ्जाब प्रान्तका एक
जिला। चौदहवीं शताब्दीमें अम्बा नामक जनैक
राजपूतने इस नगरको वसाया था। इसीसे लोग इसे
अम्बाला कहते हैं। यह जिला अक्षा० २८° ४८' एवं
३१° १२' उ० और द्रावि० ७६° २२' तथा ७७° ३८'
पू०के मध्य अवस्थित है। रकबा कोई २५७० वर्गमील
लगेगा। इससे उत्तर-पूर्व हिमालय, उत्तर सतलज,
पश्चिम पटियाला राज्य एवं लुधियाना जिला और
दक्षिण कर्नाल जिला तथा यमुना नदी पड़ती है।

इस जिलेकी भूमि सतलज और सिन्धुके बीच समान बैठेगी। किन्तु पूर्वकी ओर घना जङ्गल और पहाड़ मिलता है। उसी पहाड़से घाघरा नदी निकली थी। मोरनीके जङ्गलमें दो अच्छे भौल हैं। लोगोंने उन्हें पूज्य एवं पवित्र माना है। बड़े भौलपर श्रीकृष्णचन्द्रका मन्दिर मिलता, जिसमें प्रतिवर्ष धूमधामसे मेला लगता है। दक्षिण-पश्चिम ओर इसकी भूमि ढल गयी है। जिलेमें चारो ओर छोटे-छोटे असंख्य नदी नाले देख पड़ते हैं। घाघरा नदीके पानीसे खेत सींचे जाते हैं। वर्षामें नदी उमड़नेसे डाक हाथीपर आती-जाती है। दक्षिणमें ग्राम बहुत होता है। कलसरके १३८१७ एकर जङ्गलमें सालका वृक्ष भरा रहता है। छोटे-छोटे पहाड़ी नालोंकी बालूमें थोड़ा बहुत सोना भी हाथ लग जाता है। किन्तु चूनेका कंकड़ ढेरका ढेर मिलेगा। जङ्गलमें शिकार की कोई कमौ नहीं देखते, हिंसक जन्तु भी घूमते फिरते हैं।

इतिहास—अम्बाला भारतीयों का आदि स्थान है। सरस्वती और घाघराके बीचकी भूमि पवित्र मानी जायगी। सरस्वती नहाने दूर-दूरसे लोग आते हैं। किनारे-किनारे सुन्दर मन्दिर अपनी शोभा देखायेंगे। थानेश्वर और पेहेवा नगर हृदयको अपनी ओर खींच लेता है। थानेश्वरके सरस्वती कुण्डमें प्रति वर्ष कोई तीन लाख मनुष्य नहाने हैं। चीना परित्राजक यूअन चुअङ्ग सन् ई०के७वें शताब्द यहाँ आये थे। उन्होंने इस प्रदेशको सम्य एवं सुसम्पन्न पाया। उस समय राजधानी शुभ्रमें प्रतिष्ठित थी। कितनीही आविष्कृत मुद्रासे प्रमाणित होता है, कि सुसल्लानों के भारतविजय तक शुभ्रमें राजधानीका ठाट-बाट रहा।

अम्बालाके आसपासकी भूमि गुज़नवी और गोरी सुसल्लानोंके हाथ चली गयी थी। सन् ई० के १४ वें शताब्द फ़ीरोज़शाह बादशाहने हिंसारमें पानी पड़ु-चानेकी एक नहर बनवायी। सन् ई० के १८ वें शताब्दान्त सतलजसे दक्षिण सिख-राज्य प्रतिष्ठित हो गये थे। जब महाराष्ट्रों और अफगानोंने सुसल्लान

साम्राज्यको विच्छिन्न किया, तब कितने ही सिख-सरदार सतलज और यमुनाके बीच राजा बन बैठे। सन् १८०३ ई० में महाराष्ट्र अंगरेजोंसे हारे थे। उस समय यह सारी भूमि पटियाला, भौन्द, नाभा आदि राज्यों में बांटी गयी। किन्तु सन् १८०८ ई० में रणजित् सिंहने पञ्जाबसे कितनी ही सिख फौज ले सतलजकी पार किया और उस ओरके नृपतियोंसे राजस्व मांगा था। उस पर सिख-नृपतियोंने विगड़ कर अंगरेजोंसे साहाय्य-प्रार्थना की। अंगरेजोंने बीचमें पड़ भगड़ा मिटा दिया था। सन् १८०८ ई० में अंगरेजोंसे जो सन्धि हुयी, उसके अनुसार रणजित् सिंहने छोटे राज्यों पर आक्रमण न करने का वचन सुनाया। सन् १८११ ई० की घोषणाने आभ्यन्तरिक युद्ध भी रोक रखा था। किन्तु राजा पूर्ण रूपसे स्वतन्त्र रहे। उन्हें किसी प्रकारका कर देना पड़ता न था। सन् १८४५ ई०में प्रथम सिख-युद्ध हुआ। उस समय सिख-राजावोंका अधिकार घटाया और अम्बालेमें पोलिटिकल एजण्टकी जगह कमिशनर बैठाया गया था। सन् १८४८ ई०में जब दूसरा सिख-युद्ध हुआ और पञ्जाब अंगरेजी राज्यमें मिला, तब राजाओंका बचा-बचाया स्वत्व (स्वतन्त्रता) भी जाते रहा। सन् १८५७ ई०को बलवेके समय अम्बालेमें कितनी ही आग लगी और गड़बड़ पड़ी थी, किन्तु उससे कोई गहरी क्षति न हुयी और न इसके प्रबन्धमें ही विशेष असुविधा आयी।

बाणिज्य व्यवसाय—की धूम क्षत्रिप्राधान्यके कारण अम्बाले जिलेमें बहुत कम देख पड़ेगी। रूपरमें लोहेकी छोटी-छोटी चीज, अम्बालेमें कालीन और प्रत्येक ग्राममें मोटा कपड़ा बनता है। बाणिज्यका मुख्य स्थान अम्बाला, रूपर, जगाधरी, खिजराबाद, बूरिया और खरार है। इस जिलेमें सिन्धु-पञ्जाब और दिल्लीसे रेल आती है। जगाधरीसे कुछ मील दक्षिण यमुना और अम्बालेसे कुछ मील घाघरा पर लोहेका अंगरेजी पुल बंधा पायेंगे। कर्नालसे पक्की सड़क इस जिलेमें होकर पटियाला राज्यको चली गयी है। दूसरी पक्की सड़क अम्बालेसे कालका जायेगी। रेल और सड़कके किनारे तार लगा है।

३ इस जिलेकी एक तहसील। इसका क्षेत्रफल ३६६ वर्गमील पड़ेगा।

४ इसी जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० ३०° २१' २५" उ० और द्राघि० ७६° ५२' १४" पू० पर अवस्थित है। इसकी भूमि घाघरा नदीके तीन मील पूर्व समुद्रतलसे १०४० फीट उच्च बैठेगी। यहां अंगरेजी फौजकी छावनी और जिलेकी कचहरी बनी है। किसी अम्बा राजपूतने इसे सन ई०के १४वें शताब्द बसाया था, जिसके अनुसार इसका नाम भी चल पड़ा। सन १८०८ ई०में जब सतलजके उस पारवाला राज्य अंगरेजोंके अधिकारमें आया, तब अम्बाला राज्यपर सरदार गुरुबख्श सिंहजाकी विधवा पत्नी दया कुंवर आधिपत्य चला रही थीं। सन १८२३ ई०में दया कुंवरके मरनेपर सतलजके उस पारवाले राज्यका प्रबन्ध बांधनेको अम्बालेमें पोलिटिकल एजण्ट बैठाया गया। सन १८४३ ई०में नगरसे दक्षिण छावनी पड़ी थी। सन १८४८ ई०को पञ्जाबके अंगरेजी राज्यसे मिलनेपर अम्बालेमें जिलेका हेड-क्वार्टर आया। अम्बाला नगर नये और पुराने दो भागमें विभक्त है। पुरानेकी राह खराब और नयेकी जगह अच्छी निकलेगी। सन १८६८ ई०को अफगानस्थानके भूतपूर्व अमीर शेर अली जब भारत आये, तब अम्बालेमें आलीशान दरबार लगा था। नगरमें अन्नका बड़ा बाजार जमता है। अदरक और हलदी भी ढेरकी ढेर बिकती है। यहांसे सूती कपड़ा, अनाज और कालीन चालान किया तथा विलायती कपड़ा, लोहा, नमक, जूना एवं रेशम मंगाया जाता है।

अम्बाला शहरकी चारो ओर शहर पनाह है। अब यह जङ्गी छावनीके नामसे विशेष प्रसिद्ध है। अम्बाला प्रदेशके अन्तर्गत कोटाहा नामक एक स्थान है। वहांकी मरणी नामक जङ्गलके दो ढ़द विख्यात हैं। उन तालाबोंका जल कभी नहीं सूखता। उनके किनारे किनारे अनेक देवालय हैं। इस प्रदेशके अनेक स्थानोंमें पहाड़के भरनोंमें वांसके नल लगे रहते हैं। नलके अन्दरसे पानी गिरता है। जाड़े

और गर्मीके दिनोंमें स्त्रियां अपने अपने बच्चोंको घासके तकियेके सहारे उन्ही नलोंके नीचे सुत्ता देती हैं। ब्रह्मतालुपर भरभर पानी गिरता रहता है। कहा जाता है, कि रोग हो चाहे न हो, बच्चोंको ऐसी चिकित्सा न करने से कितने ही बचपनमें ही प्राणत्याग देते हैं। किन्तु इस प्रक्रिया द्वारा सर्दी, खांसो, ज्वर, शीतला प्रभृति कोई रोग नहीं होता।

अम्बाला शहर से प्रायः १७ कोस पर ईशान कोणमें श्रीमूर वा नाहन राज्य है। यहां राजा वाणका बन है। इस प्रदेशमें तांबा, सीसा, लोहा, और नमक पैदा होता है। अम्बालासे शिमला पहाड़ ४० कोस है।

अम्बालापुले—मन्द्राज प्रान्तके तिरुवांकोर राज्यका एक तक्षक। इसका क्षेत्रफल १२१ वर्गमील लगता है। अम्बालिका (सं० स्त्री०) अम्बालैव, अम्बाला स्वार्थे कन् ऋस्वः इत्वम्। १ माता, मा। २ काशिराजकी कनिष्ठा कन्या। स्वयम्बर-सभासे भीषने इन्हें चोरा अपन सौतेले भाई चित्रवीर्यको व्याह दिया था। चित्रवीर्यके मरनेपर इन्होंने गर्भ और व्यासके औरससे पाण्डुराजने जन्म लिया। ३ अम्बष्ठा, पुदीना। ४ पाठा, हरजीवरी।

अम्बाली—बड़ोदा राज्यके सिनोर सबडिविजनका एक गांव। यहां दत्तात्रेयकी माता अनुसूयाका पवित्र मन्दिर बना है। कहते हैं, कि इस मन्दिरके नीचेकी मट्टी या देवीके स्नानका जल लगानेसे कुष्ठरोग मिट जायेगा। कितने ही कोढ़ी इस ग्राममें टिके रहते हैं। श्रीमान् गायकवाड़ने कोढ़ियोंके लिये अस्पताल और भिक्षुकोंके लिये अन्नक्षेत्र चला रखा है।

अम्बासमुद्रम्—मन्द्राज प्रान्तवाले तिनेवली जिलेके अपने तक्षकका हेड क्वार्टर और नगर। यह अक्षा० ८° ४२' ४६" उ० एवं द्राघि० ७७° २८' १५" पू० पर अवस्थित है। इसमें सबडिविजनल आफिसर वास करते हैं।

अम्बि (वै० स्त्री०) १ जल, पानी। २ स्त्री, माता, धात्री, औरत, मा, धाया।

अम्बिका (सं० स्त्री०) अम्बैव, अम्बा स्वार्थे कन्

ऋषः इत्थम् । १ माता, मा । २ दुर्गा । ३ श्वेतांबर जैनकी शासन-अधिष्ठात्री देवी । इसका एक मन्दिर गिरनार पर्वतपर है, इसको जैन, अजैन सब पूजते हैं । अजैन लोग इसको अम्बाका मन्दिर कहते हैं । ४ कटुकी, कुटुकी । ५ अम्बष्ठा, पुदीना । ६ मायाफलवृक्ष, मैनफल । ७ काशिराजकी मध्यमा कन्या । स्वयम्बर-सभासे बलपूर्वक हरणकर भोजने इन्हें चित्रवीर्यसे व्याह दिया था । चित्रवीर्यके मरनेपर इनके गर्भ और व्यासके औरससे अम्बराज धृतराष्ट्रने जन्म लिया ।

अम्बिका—१ बंबई प्रान्तके सूरत जिलेकी एक नदी । यह बांसदा पहाड़से निकल बड़ोदा राज्यमें बहती है । फिर पश्चिम ओर दो धारामें बंट इसे सूरत जिलेमें पहुँचते पायेंगे । वहाँसे यह चिखली और जलालपुरके बीच धूम-धूम चलती और पूर्णसे दक्षिण साठे सात कोस पर समुद्रमें गिरती है । मुँहानेसे कोई छः कोस गण्डवी नगर तक इसकी लहर जायगी । समुद्रसे कोई तीन कोस इस नदी पर ८७५ फीट लंबा और २८ फीट जंचा रेलवेका पुल बना है । अम्बिकामें कावेरी और खरेरा दो नदी जा मिली है । सङ्गमके नीचे यह फैलकर चौड़ी खाड़ी बनती है । बिलगोरे तक बड़ा जहाज जा सकेगा । २ बङ्गालके वर्तमान जिलेका एक गांव । कालना देखो ।

अम्बिकादत्तव्यास—इनका निवासस्थान श्रीकाशीधाम रहा । सन् १८८८ ई०में यह जीवित थे । इन्होंने हिन्दी लेखकी बड़ी उन्नति की । कितने ही हिन्दी नाटक इनकी लेखनीसे अङ्कित हुये हैं । स्वर्गीया महाराजी विक्टोरियाकी जुबिलीपर इन्होंने 'भारत-सीमाग्य' नामक नाटकग्रन्थ लिखा था । बङ्गला उपन्यास 'मधुमत'का इन्होंने बहुत अच्छा हिन्दी अनुवाद उतारा है ।

अम्बिकापति (सं० पु०) अम्बिकाके स्वामी, शिव ।
अम्बिकापुत्र (सं० पु०) धृतराष्ट्र ।

अम्बिकाप्रसाद—विहारप्रान्तके शाहाबाद जिलेके कोई कवि । इन्होंने भोजपुरी भाषामें कितने ही गीत बनाये

हैं । गीत, बहुत उम्दा न ठहरते भी रचयिताकी मातृभाषाके खासे आदर्श है ।

अम्बिकाप्रसाद मिश्र—गयादत्तके पुत्र तथा बहोरन मिश्रके पौत्र थे । इन्होंने ही वेतियाके महाराज श्रीराजेन्द्रकिशोरसिंहको आज्ञानुसार, १८५४ ई०में 'वैधर्हि'साधतिमिरमार्तण्डोदय' नामक संस्कृत ग्रन्थ रचना किये थे ।

अम्बिकेय, अम्बिकेय (सं० पु०) अम्बिकाया अपत्यम्, अम्बिका-ठ ठक् । १ गणेश । २ कार्तिकेय । ३ धृतराष्ट्र ।
अम्बिकेयक, अम्बिकेय देखो ।

अम्बिवाली—बंबई प्रान्तके थाना जिलेका एक गांव । इस ग्रामसे कोई आध मौल दूर जमब्रुगके पास इसी नामक एक गुहाभी वर्तमान है । इसे लोगोंने एक पहाड़ी खोदकर बनाया था । गुहासे नदी किनारे तक एक ढालू चट्टान चली गयी है । इसमें एक बड़ासा चौखुण्डा दालान देखेंगे । वह ४२ फीट दैर्घ्य, ३८ फीट चौड़ा और १० फीट जंचा है । उसकी तीन ओर चार-चार कोठरी पायेंगे । तीनों ओरके आसपास एक नीचा तख्ता लगा है । सामने और दाहने दो दरवाजे देखेंगे । दरवाजोंसे राह बरामदेकी जाती, जो ३१ फीट पड़ता है । बड़ी दीवारकी बाहरी ओर नासिकवाली द्वतीय गुहा—जैसी सजावट रही, वन्दनवार लटकता और फूल भूमता था । किन्तु अब टूट फुट जानेसे कुछ देख न पड़ेगा ।

खम्भा भी नासिकके ही नमूनेका है । चोटी पर चपटा खपरा अश्वरी हालतमें देखेंगे । बीचके जोड़े खम्भेमें अठखुण्डा और बाकी दोमें सोलह पङ्खुका शहतीर लगा है । राहमें पुरानेकी जगह नक्काशीदार दरवाजा लग जानेसे यह गुहा ब्राह्मणोंका मन्दिर हो गया । बरामदेके दूसरे खम्भे पर दरवाजेकी बायीं ओर ऊपरसे नीचेको पाली भाषामें कोई लेख लिखा है । खम्भेके बीचवाले जोड़े पर भी अच्छरका चिन्ह देखेंगे । किन्तु वह पढ़नेमें बिलकुल नहीं आता ।

अम्बिवोख—बङ्गालदेशान्तर्गत दार्जिलिङ्ग नगरके प्रेम-

अम्बीर—बंबईप्रान्तकी कर्णाटक जिलेके कोल्हापुर राज्यकी एक छोटी नदी। यह चारणके पास वार्ना नदसे जा मिलती है।

अम्बु (सं० स्त्री०) अमति गच्छति देशान्तरं अम्यते गम्यते वा प्राणिभिः, अम-उ बुगागमश्च। १ जल, पानी। २ बाला, रूसा घास। ३ लग्नसे चतुर्थ स्थान। ४ चार संख्या। ५ छन्दोविशेष। ६ बालक, बच्चा। ७ पुनर्णवा तैल।

अम्बुक (सं० पु०) १ खेताकमन्दार, सफेद अकोड़ा। २ रक्तैरण्ड, लाल रेंड।

अम्बुकण (सं० पु०) अम्बुनः कणः, ६-तत्। जलकणा, पानीका बुंद। अम्बुकणा-जैसी रूप भी होता है।

अम्बुकण्टक (सं० पु०) अम्बुनि जले कण्टकः शत्रुः ७-६ वा तत्। कुम्भीर, नक्र, शेर-आवी, मगर, घड़ियाल, जो पानीका कांटा हो।

अम्बुकन्द (सं० पु०) अम्बुकाटक, सिंघाड़ा।

अम्बुकिराट, अम्बुकिरात देखो।

अम्बुकिरात (सं० पु०) अम्बुनि जले किरात इव हिंस्रः। कुम्भीर, नाकू, घड़ियाल, जो पानीमें शिकारीकी तरह निशाना लगाता हो।

अम्बुकोश (सं० पु०) अम्बु नि अम्बुनो वा कौशो वानर इव। १ शिशुमार, सङ्ग-माही, गङ्गाका सूस। २ गोधा, गोह।

अम्बुकुक्कुटिक, अम्बुकुक्कुटो देखो।

अम्बुकुक्कुटो (सं० स्त्री०) जलकुक्कुटो, पनडुब्बो।

अम्बुकूर्म (सं० पु०) अम्बुनि कूर्म इव। शिशुमार, गङ्गामें रहनेवाला सूस।

अम्बुकृत (सं० त्रि०) अस्मष्ट रूपसे उच्चारण किया हुआ जो साफ़ साफ़ न बोला गया हो। व्यर्थ-जल्पित, जो बेहृदा बका गया हो।

अम्बुकृष्ण (सं० स्त्री०) जलपिप्पली, पानीकी पीपल।

अम्बुकेशर (सं० पु०) अम्बुनि जातः केशरो यस्य, बहुव्री०। डोलङ्ग नीबू।

अम्बुक्रिया (सं० स्त्री०) अन्तेष्टिसंस्कार, जो काम किसीके लिये मरनेपर किया जाता है।

अम्बुग (सं० त्रि०) जलमें गमन करनेवाला, जो पानीमें रहता हो।

अम्बुघन (सं० पु०) वर्षशिला, ओला, आसमानसे गिरनेवाला पत्थर।

अम्बुचर (सं० त्रि०) अम्बुनि जले चरति, अम्बु-चर-ट। जलचर, पानीमें फिरनेवाला, दरयायी। (पु०) २ कच्छट, जलपिपरी। ३ कनशुर।

अम्बुचामर (सं० स्त्री०) अम्बुनः चामरमिव। शेवाल, सेवार जो चीज पानीपर पड़ेकी तरह फैल जाती हो।

अम्बुचारिणी (सं० स्त्री०) स्थलपद्मिनी, स्थलकमल, गुल-अजायब।

अम्बुचारिन् (सं० त्रि०) अम्बुनि चरति, अम्बु-चर-णिनि, ७-तत्। जलचर, पानीमें घूमनेवाला।

अम्बुज (सं० स्त्री०) अम्बु नि जले जायते; जन-उ, ७-तत्। १ पद्म, कमल। २ सारसपक्षी। ३ चन्द्र, चांद। ४ कर्पूर, काफूर। ५ हिज्जलवृक्ष, समुद्रफल, पनियारी। (पु०-स्त्री०) ६ शङ्ख। ७ वच्च। (त्रि०) ८ जलजात, पानीमें पैदा हुआ, दरयायी।

अम्बुज—एक कवि, कोई शायर। इनका जन्म सन १८१८ ई०में हुआ था। इन्होंने नीति और नखसिख पर अच्छी कविता बनायी है।

अम्बुजन्मन् (सं० स्त्री०) अम्बुनो जन्म अस्य, बहुव्री०। १ पद्म। २ सारसपक्षी। (पु०-स्त्री०) ३ शङ्ख।

अम्बुजभू (सं० पु०) ब्रह्मा, जो कमलसे उत्पन्न हो।

अम्बुजस्थ (सं० त्रि०) कमलपर बैठनेवाला, जो कमलपर बैठता हो।

अम्बुजामलकी (सं० स्त्री०) पानीयामलकी, भूइं आवला।

अम्बुजासन (सं० पु०) अम्बुजं पद्मं आसने यस्य बहुव्री०। १ ब्रह्मा। २ सूर्य। कर्मधा०। ३ योगका आसन विशेष, पद्मासन।

अम्बुट (सं० पु०) अस्मशकवृक्ष, पहाड़ी शिरीष।

अम्बुतस्कार (सं० पु०) सूर्य, आफ़ताब, जो पानीको चोराता हो।

अम्बुताल (सं० पु०) अम्बुनि तालयति तिष्ठति

चरा० तल० प्रतिष्ठायां अच्। शेवाल, सेवार।

अम्बु तिया—बङ्गाल प्रान्तके दार्जिलिङ्ग जिलेका एक गांव । सन् १८६० और १८६४ ई०के बीच दार्जिलिङ्ग-टी-कम्पनीने यहां चाहका बाग लगाया था । इसका मदान ऐसा उम्दा देख पड़ता, मानो प्रकृतिने उसे बुड़दौड़के लिये बना रखा है ।

अम्बुद (सं० पु०) अम्बु ददाति, अम्बु-दा-क ।
१ मेघ, बादल । २ सुस्ता, मोथा । (त्रि०) ३ जल-दाता, पानी पहुँचानेवाला ।

अम्बुधर (सं० पु०) अम्बुनि धरति, अम्बु-धृ-अच् ।
१ मेघ, बादल । २ नागर-सुस्ता, नागर-मोथा ।
३ भद्रसुस्ता ।

अम्बुधि (सं० पु०) अम्बु नि धीयन्ते ऽत्र, अम्बु-धा अधिकरणे कि । १ समुद्र, सागर । २ जलपोत्र, पानी रखनेका बरतन । ३ चारसंख्या ।

अम्बुधिप्रसवा (सं० स्त्री०) अम्बुधिमिव प्रभूतं प्रसूते,
अम्बुधि-प्र-सू-अच् टाप् । घृतकुमारी, घीकुमार ।

अम्बुधिफेन (सं० पु०) समुद्रफेन ।

अम्बुधिश्रवा (सं० स्त्री०) गृहकन्या, घृतकुमारी,
घीकुवार ।

अम्बुनाम (सं० स्त्री०) १ ज़ीवर, रुसा घास ।

अम्बुनिधि (सं० पु०) अंबुनः निधिः, इ तत् । समुद्र,
जलका भाण्डार, सागर, पानीका खजाना ।

अम्बुप (सं० पु०) अंबुनि पाति रक्षति पिवति वा,
अम्बु-पा-क । ३ जलाधिप वरुण । २ समुद्र । २ चकुन्दा,
पानेवार । (त्रि०) ४ जल पीनेवाला, जो पानी पीता हो ।

अम्बुपत्ना (सं० स्त्री०) अंबुनि श्रीकराः पत्ने यस्याः,
बहुव्री० । उच्छटाहच, मुलहटी, मौरैठौ ।

अम्बुपत्रिका, अम्बुपत्ता देखो ।

अम्बुपत्नी, अम्बुपत्ता देखो ।

अम्बुपहति (सं० स्त्री०) धारा, पानीका बहाव, चक्षा ।

अम्बुपात (सं० पु०) अम्बुपहति देखो ।

अम्बुप्रसाद (सं० पु०) अम्बुनि प्रसादयति ; अम्बु-प्र-सद-णिच्-अण्, उप-स० । कतकवृक्ष, निर्मलौका पेंड ।
इसका फल घिस कर डान्नेसे मैला जल साफ हो जाता है ।

अम्बुप्रसादन (सं० स्त्री०) अम्बुप्रसाद देखो ।

अम्बुप्रसादनफल (सं० स्त्री०) कतकफल, निर्मलौका फल ।

अम्बुभृत् (सं० पु०) अंबुनि विभर्ति, अंबु-भृ-क्लिप् तुगागमः । १ मेघ, बादल । 'वारिदोऽम्बुभृत्' (अमर)

२ सुस्तक, मोथा । ३ समुद्र, सागर । ४ अम्बक । (त्रि०)
५ जल ले जानेवाला, जिसमें पानी भरकर ले जायें ।

अम्बुमत् (सं० त्रि०) अंबुनि सन्तपस्मिन्, अंबु बाहुल्ये मतुप् । बहुजलयुक्त, जिसमें पानी बहुत रहे ।

अम्बुमती (सं० स्त्री०) अम्बुमत् देखो ।

अम्बुमयूरक (सं० पु०) जलापामार्ग, पानीका लटजौरा ।

अम्बुमात्रज (सं० पु०) अंबुमात्रे अल्पजले जायते ;
अंबुमात्र-जन-ड, ७-तत् । १ शंबुक, दुफड़की कौड़ी ।
(त्रि०) २ केवल जलमें उत्पन्न होनेवाला, जो सिर्फ पानीमें ही पैदा हो ।

अम्बुमुच् (सं० पु०) अंबुनि मुञ्चति ; मुच्-क्लिप्, इ-तत् । १ मेघ, बादल । २ सुस्तक, मोथा ।

अम्बुयष्टिका (सं० स्त्री०) भार्गी, भारङ्गी ।

अम्बुर (सं० पु०) अंबु बाहुलकात् उरण् । द्वारका अधःकाष्ठ, दहलीज, देहली, चौखटके नीचेकी लकड़ी ।

अम्बुराज (सं० पु०) १ समुद्र, सागर । २ वरुण, जलके स्वामी ।

अम्बुराशि (सं० पु०) अंबुनां राशयो यत्र, बहुव्री० ।
समुद्र, पानीका जखीरा ।

"नेतव्रभोमण्डलमम्बुराशिः ।" (साहित्यदर्पण)

अम्बुरुह (सं० स्त्री०) अंबुनि जले रोहति, अंबु-रह-क्लिप् । पद्म ।

अम्बुरुह (सं० पु०-स्त्री०) अंबु-रह-क । पद्म ।

अम्बुरुहा (सं० स्त्री०) अंबुरुहमिव पुष्पमख्यस्याः,
अंबुरुह अर्श आदि० अच्-टाप् । १ पद्मिनी । २ खल-पद्मिनी ।

अम्बुरुहिणी (सं० स्त्री०) अंबुरुहमख्यस्याः ; अंबु-रह मत्वर्थे इनि, ऋन्नेभ्यो ङोप् । पद्मलता, कमलकी वेल । अंबुरुहाणां समूहः । २ पद्मसमूह, कमलका

टेर। अम्बुरहाणां सन्निकष्टदेशः। ३ पद्मयुक्त देश,
जिस मुल्लमें कमल रहे।

अम्बुरोहिणी (सं० स्त्री०) पद्मिनी।

अम्बुरोहिन् (सं० स्त्री०) अम्बुनि जले रोहति, अम्बु-
रुह-णिनि। १ पद्म। २ सारस पक्षी।

अम्बुवह्नि (सं० पु०) कृमिशङ्ख, कोई पौधा।

अम्बुवह्निका (सं० स्त्री०) कारवेल्ली, करेला।

अम्बुवल्ली (सं० स्त्री०) १ छुट्टाकारवल्ली, करेली।

२ जलपिप्पली, पानीपिपरी।

अम्बुवाची (सं० स्त्री०) अम्बु वाचयति तद्वर्णं सूचयति
अम्बु-चुरां वच-णिच्-अण् णिच् लोपः। उप-सं डोप्।

जिस समय सूर्य आर्द्रा नक्षत्रके प्रथम चरणमें रहता
है, उस स्थितिकालका नाम अम्बुवाची है। सूर्यके
शुक्रशिरा नक्षत्र भोगके बाद तीन दिन बीस दण्ड
मात्र यह स्थितिकाल है। इसी समय पृथिवी शायद
भीतर ही भीतर रजस्वला होती है। यथा राज-

मार्तण्डमें—‘धृगशिरसि निवसे रौद्रपादे अम्बुवाची ऋतुमति खलु
प्रयु’। (ऋतुमतीति ऋतुत्वमात्रं। काशी) सूर्य मासमें दो
नक्षत्र और एक चरण भोग करते हैं। इसीसे
वैशाख मासमें अश्विनी और भरणी ये दो नक्षत्र
और कृत्तिकाका एक चरण सूर्यका भोग होता
है। ज्येष्ठ मासमें कृत्तिकाके शेष तीन पाद,
सम्पूर्ण रोहिणी और शुक्रशिराके दो पादोंको सूर्य
भोग करते हैं। फिर आषाढ़ मासके पहले छः
दिन चालीस दण्डोंमें शुक्रशिराके शेष दो पाद
सूर्यके भोग होते हैं। उसके बाद जिन तीन
दिन बीस दण्ड तक सूर्य आर्द्राके प्रथम चरणमें रहते
हैं, उसीका नाम अम्बुवाची है। उसी समयसे वर्षा
की सूचना होती है। इसीसे लोग इसे अम्बुवाची
कहते हैं। रुद्रयामलमें लिखा है,—

“ग्राहकाले समायाति रौद्र ऋचगते रवौ।

नाडीवैषम्याद्योमे जलयोगं वदाम्यहम् ॥”

सूर्यके आर्द्रा नक्षत्रमें गमन करनेसे वर्षा उपस्थित
होगी। उसी समय नाडीवैध होनेसे मैं जलयोग
अर्थात् वर्षाकालका योग कहूँगा।

ज्योतिषमें लिखा है, जिस दिनके जिस समय

सूर्य मिथुन (आषाढ़) में गमन करते हैं, फिर उसी
बारके उसी समयमें प्रायः ही अम्बुवाची होता है।
अम्बुवाचीमें वेद वेदाङ्गका अध्ययन निषिद्ध है। उसमें
भूमि जोतना न चाहिये। शौचके निमित्त कितने ही
खुदी हुई मट्टी व्यवहार करते हैं। यति, विधवा और
व्रतस्थ ब्राह्मण इनमें कोई भी स्वपाक व परपाक
भक्षण नहीं करते। भक्षण करनेसे चण्डालान्न भोजन
का पाप होता है। अम्बुवाचीके मध्यमें विधवाको
अग्नि स्पर्श न करना चाहिये, इसीसे वे लोग प्रदीप
प्रभृति स्पर्श नहीं करतीं। अम्बुवाची पड़नेके पहले
धानका लावा भून रखती हैं और अम्बुवाचीके तीनों
दिनोंमें उसीको खाती हैं। कितनीही फल मूल
खाकर रहती हैं। (नाहिमीर्दुग्धपानतः। अति) अम्बु
वाचीमें दूध पीनेसे सर्पभय नहीं रहता।

अम्बुवाचीत्याग (सं० पु०) आषाढ़ कृष्णका तेरहवां
दिवस।

अम्बुवाचीप्रद (सं० स्त्री०) आषाढ़ कृष्णका दशवां दिवस।

अम्बुवारिणी (सं० स्त्री०) स्थलकमलिनौ, गुलाब।

अम्बुवासिन् (सं० त्रि०) अम्बुनि जलप्रधाने देशे वसति;
अम्बुवस णिनि, मध्यपदलोपी ७-तत्। जलवासी,
पानीमें रहनेवाला।

अम्बुवासिनी, अम्बुवासिन् देखो।

अम्बुवासी (सं० पु०-स्त्री०) अम्बुनि जलप्रधाने देशे
वासी यस्याः, डोप्। रक्तपाटल, पुन्नागका पेड़।

अम्बुवाह, अम्बुवाह देखो।

अम्बुवाह (सं० पु०) अम्बुनि वहति; अम्बु-वह-अण्,
उप-सं०। १ मेघ, बादल। २ सुस्तक, मोथा। ३ कहार,
पानी भरनेवाला। ४ अम्भ, अबरक। ५ सप्त संख्या,
सात नम्बर।

अम्बुवाहिन् (सं० त्रि०) अम्बुनि वहति दधाति;
अम्बु-वह-णिनि, ६-तत्। १ जलको रखनेवाला, जिसमें
पानी रहे। २ जल ले जानेवाला, जो पानी ले जाये।
(पु०) ३ जलपात्र, पानी भरनेका बरतन। ४ मेघ,
बादल। ५ सुस्तक, मोथा।

अम्बुवाहिनी (सं० स्त्री०) पुनःपुनः अम्बुनि वहति
स्थानांतरं नद्यति; अम्बु-वह-णिनि, ६-तत्। द्रोणी,

शस्त्रक्षेत्रमें जल पहुँचानेका पात्रविशेष, कुंडो, जिस बरतनसे खेत सिंचे।

अम्बुविहार (सं० पु०) अम्बुनि जले विहारः; अम्बु-वि-ह-घञ्, ७-तत्। १ जलक्रीड़ा, सन्तरणादि, पानीका खेल, तैरना वगैरह।

अम्बुविस्रवा (सं० स्त्री०) अम्बुनः विस्रवा, अम्बु-वि-स्र-अच्। घृतकुमारी, घीकार। इसके पत्तेसे जल निकलता है।

अम्बुवेतस (सं० पु०) अम्बुजातो वेतः, शाक० तत्। जलवेतस, पानीका बेंत।

हो परिव्याध-विदुलौ नादेशी चाप्त्वेतसे। (अमर)

अम्बुशिरीषिका (सं० स्त्री०) अम्बुजातः अल्पः शिरीषः, अल्पार्थे कन्, स्त्रीत्वात् इत्वम्। जल-शिरीषिका, पानीका कलसीस। इससे त्रिदोष, विष, कुष्ठ एवं अर्श नष्ट होता है।

अम्बुशिरीषी, अम्बुशिरीषिका देखो।

अम्बुशुक्ति (सं० स्त्री०) १ जलशुक्ति, घोंगा। २ अड़ाहा, घास-फूस।

अम्बुसंरोध (सं० पु०) अम्बुनि संरुध्यन्तेऽस्मिन्, अम्बु-सम्-रुध आधारे घञ्। समुद्र, सागर।

अम्बुसरण (सं० स्त्री०) अम्बु-सृ-लुट्। जलप्रवाह, पानीका बहाव।

अम्बुसर्पिणी (सं० स्त्री०) अम्बुनि जले सर्पति गच्छति, अम्बु-सृप-णिनि, ७-तत्। जलौका, जोंक।

अम्बुसादन (सं० स्त्री०) निर्मली वीज, निर्मलीका तुख्म।

अम्बुसारा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका दरखूत।

अम्बुसाह्व (सं० पु०) कुन्द पुष्पक्षुप, कुन्दके फूलका भाड़।

अम्बुसेचनी (सं० स्त्री०) अम्बुनि सिच्यन्ते नौकानः अनया; अम्बु-सिच करणे लुट्, ६-तत्। नौकासे जल निकालकर फेंकनेको काष्ठमय पात्र, नावसे पानी उल्टीचनेको लकड़ीका बरतन।

अम्बुक्षत (सं० स्त्री०) अनम्बु अम्बुक्षतम्, अम्बु-क्षि-क्ष-क्त। १ निष्ठीवन-युक्त वाक्य, युत्कारी हुयी बात। (त्रि०) २ बका हुआ, जो जल्द कहा गया हो।

३ थूका हुआ, जिसपर लुबाव गिरा हो।

अम्बूर—मन्द्राज प्रान्तवाले उत्तर-अरकाट जिलेके वेल्नूर तालुकका एक नगर। यह अक्षा० १२° ५०' २५" उ० और द्राघि० ७८° ४४' ३०" पू० तथा वेल्नूरसे ३०, बङ्गलोरसे ७८ और मन्द्राजसे ११२ मील दूर, कदपनाथम् घाटीके नीचे पालार नदीके दक्षिण अवस्थित है। यहांसे वेल्नूर और सलेमको बढ़िया सड़क गयी है। रेलवे स्टेशन नगरसे कोई पाव कोस दूर पड़ेगा। अम्बूरदुर्ग पर्वतकी चोटी पर नगर विराजमान है। यहां तेल, घी और नौलका व्यापार बड़े जोरसे चलते देखेंगे। सन् १८६० ई०में रेलवेके चल जानेसे नदीकी राह माल नहीं भेजते। अम्बूर-दुर्ग पर्वतपर किला खड़ा है। सन् १७५० ई०में इस किलेके पास जो भयानक युद्ध हुआ, उसमें मुजफ्फरजङ्गने अरकाटके नवाब अन्वर-उद्दौनको हरा दिया था। सन् १७६८ ई०में मन्द्राजकी १०वीं पैदल फौजने इस किलेको बड़ी बहादुरीके साथ बचाया। बीस वर्ष बाद हैदरअलीने हमला मार इसे ले लिया था, किन्तु बङ्गलोरकी सन्धिके अनुसार वापस दिया। सन् १७८२ और १७८८ ई०में जब महिसूरपर चढ़ाई हुयी, तब इस किलेमें खबर लेने-देनेकी फौज रखी गयी थी।

अम्बूरपेट—मन्द्राज प्रान्तके सलेम जिलेका एक नगर। यह अक्षा० १२° ४७' १५" उ० एवं द्राघि० ७८° ४५' १५" पू० पर अवस्थित है। वनियमबाड़ीके सहरतली है।

अम्बूली—बंबई प्रान्तके पूना जिलेकी एक छोटी घाटी। इस राह लोग अम्बूलीसे पालु आते जाते हैं। किन्तु यह व्यापारका मार्ग नहीं ठहरती। लुन्नरसे कल्याण जाना सीधा पड़नेसे इसमें बहुत मुसाफिर देखेंगे। यह मीना उपत्यकाकी चोटीपर पड़ती है।

अम्बूलुपाली—मन्द्राज प्रान्तवाले तिरुवाङ्कोड़ राज्यके इसनाम तालुकका एक नगर। यह अक्षा० ८° २३' उ० और द्राघि० ७६° २४' ३०" पू० पर अवस्थित है। इसे एक नहर अल्लेपीसे मिलाती और अग्रेल मासका मेला स्थानीय व्यापारको बढ़ाता है। सन् १७५४ ई०तक यहां चेम्बगचारी नृपतियोंकी राजधानी रही थी।

अम्बेगांव—बंबईके नासिक जिलेका ग्राम विशेष। यह डिंडोरीसे पश्चिम साढ़े छः कोस पड़ेगा। इस गांवमें हेमाडपन्थियोंके महादेवका एक बहुत बड़िया नक़्शे-श्रीदार मन्दिर बना था। मन्दिर चालीस फीट लम्बा और छत्तीस फीट चौड़ा रहा। अब छत और दीवार गिर गयी है।

अम्बोल—पञ्जाबके पेशावर जिलेसे उत्तरपूर्व ठीक अंगरेजी राज्यकी उस ओर अवस्थित एक पहाड़ी घाटी। इसी घाटीकी राह कई बार अंगरेजी फौजने उदण्ड पार्वतीय जातियों पर आक्रमण किया था। सन् १८६३ ई०की सुहीम पड़ी रही। स्वात प्रदेशके सितान स्थानमें जो वहाबी मुसलमान रहते, वह पञ्जाबके अंगरेजी राज्यमें मिलते समयसे उपद्रव उठाते आये थे। सन् १८५० से १८६३ ई० तक इन्ही मुसलमानोंके कारण सीमान्तकी प्रजाने अंगरेजोंसे शत्रुता रखी। किन्तु यह कभी अंगरेजोंका सामना पकड़ते न थे। सन् १८५७ ई०में इन्होंने अंगरेजी राज्यमें घुस किसी अफसरके डेरे पर धावा मारा। इसीलिये सन् १८५८ ई०में अम्बोल घाटीकी राह पांच हजार अंगरेजी फौज इनके विरुद्ध भेजी गयी थी। थोड़ीसी असुविधाके बाद अंगरेजी फौज ने इनके सहायकोंका गांव फूंक, दो किला उड़ा और सितानको मिटा दिया। अन्तमें सन्धि होने पर सितान किसी सरदारको सौंपा गया था। किन्तु दो वर्ष बाद ही फिर उपद्रव उठने और अंगरेजी राज्य पर आक्रमण पड़ने लगा। सन् १८६३ ई०के सितम्बर मासमें अंगरेजी निगहवान फौज पर बड़े जोरसे धावा हुआ था। उसी सालकी १८वीं अक्तोबरको सात हजार अंगरेजी फौज पञ्जाबसे चल अम्बोल घाटी पर जा पहुँची। २०वीं अक्तोबरको वहाबी मुसलमान इतने जोरसे लड़े, कि अंगरेजी फौजको रुकना और कुमक मंगाना पड़ा था। १५वीं दिसम्बरकी रातको अंगरेजी फौजने दुश्मनकी जगह छापा मारा और १६वीं को अप्रैल गांव जला डाला। अन्तको बुनेर खोग अंगरेजोंसे मिले और वहाबियोंको नाश करने पर उद्यत हुये थे। कोई एक ही सप्ताह बीच अंगरेजी

फौजने बुनेरोंके साथ बलवाइयोंका स्थान भस्म किया। २३वीं दिसम्बरको अंगरेजी फौज, शत्रुको परास्त कर अम्बोल घाटी वापस पहुँची थी। इस युद्धमें अंगरेजोंके ८४७ और शत्रुके ३००० वीर हताहत हुये।

अम्बोलगढ़—बम्बईके रत्नागिरि जिलेका एक किला। यह राजापुर नदीके मुँहाने खाड़ीपर खड़ा और समुद्रतलसे बहुत कम ऊँचे उठा था, उत्तर और पश्चिम ओर गड्ढा बना रहा। इसका क्षेत्रफल पाव एकर निकलता था। सन् १८१८ ई०में किलेने कर्नल इमलकके हाथ आत्मसमर्पण किया। फिर सन् १८६२ ई०में यह बिलकुल टूट-फूट गया, मकान, दीवार या दुर्गका कहीं नाम भी न रहा।

अम्बोली—बंबईवाले थाने जिलेकी सलसीट तहसीलका एक गांव। इस ग्राममें शिला-मन्दिर प्रतिष्ठित है।

अम्ब्र (वै० पु०) गायक, गवैया, गानेवाला।

अम्बू (सं० पु०) १ अम्बरस, कार्कश्य, तुर्शी, खटाई।

अम्भः (सं० क्ली०) आप्नोति विश्वं व्याप्नोति; आप-असुन्, क्खः लुम् भश्च। १ जल, पानी। २ वकार अक्षर। ३ बाला नामक औषध। ४ लग्नसे चतुर्थ राशि। ५ वैदिक छन्दोविशेष। ६ आकाश, आसमान।

अम्भःपा (सं० पु०) चातकःपक्षी, पपीहा।

अम्भःसार (सं० क्ली०) अम्भसां सारं श्रेष्ठम्, ६-तत्। सुक्ता, मोती।

अम्भःसू (सं० पु०) अम्भांसि जलानि सूते, अम्भस्-सू-क्लिप्। १ धूम, धूवां। २ साभ्रता, बदली। धूवांसे बादल बनता और बादलसे पानी बरसता, इसीसे धूवां अम्भःसू अर्थात् पानी बरसानेवाला कहाता है। फलतः धूम दग्ध पदार्थके जलीयांश भिन्न दूसरा कुछ नहीं ठहरता।

‘धूमःसादायुवाहोऽग्नि-वाहो दहनको तनम्।

अम्भःसूः कार्मालय सती जीसूतवाह्यपि ॥’ (हिम)

अम्भःस्थ (सं० त्रि०) १ जलयुक्त, पानीसे भरा हुआ। २ जलमें स्थिति रखनेवाला, जो पानीमें ठहरा हो।

अम्भस्, अम्भः दीप्ति

अभ्यसनिधि (सं० पु०) अभ्यसां जलानां निधिः, अलुक् ६-तत्। समुद्र, बहर।

अभ्यसाकृत (सं० त्रि०) जलसे किया हुआ, जो पानीसे बना हो।

अभ्यस्सार, अभ्यःसार देखो।

अभ्यिनी (वै० स्त्री०) शिचिका विशेष। इन्होंने शुक्ल यजुर्वेदको वाचमें परिणत किया था।

अभ्यण (सं० पु०) अभ्य क्तिप्-भ्य बाहुलकात् न। १ महत्, बड़ा आदमी। २ भयङ्कर शब्दकारक, खीफनाक आवाज देनेवाला। ३ सोमरस बनानेका पात्र। ऋषिविशेष। यहवाचकी पिता रही। (त्रि०) ४ शक्तिशाली, ताकतवर।

अभ्योज (सं० स्त्री०) अभ्यसि जले जायते; अभ्यसजन-ड, ७-तत्। १ पद्म। २ सारसपक्षी। ३ वारिवेतस, पानीका बेंत। ४ चन्द्र, चांद। (पु० स्त्री०) ५ शङ्ख। (त्रि०) ६ जलजात, पानीसे पैदा हुआ।

अभ्योजखण्ड (सं० पु०) अभ्योजानां शण्डः खण्डो वा। पद्मसमूह।

“कुमुदवनमपथि श्रीमदभ्योजखण्डम्।” (माघ १।१६४)

अभ्योजजनि, अभ्योजजन्मन् देखो।

अभ्योजजन्मन् (सं० पु०) अभ्योजे पद्मे जन्म यस्य बहुव्री०। चतुर्मुख, हरिनाभिपद्मजात ब्रह्मा।

अभ्योजनाल (सं० पु०) पद्मनाल, कमलकी डण्डी।

अभ्योजयोनि, अभ्योजजन्मन् देखो।

अभ्योजशण्ड, अभ्योजखण्ड देखो।

अभ्योजषण्ड, अभ्योजखण्ड देखो।

अभ्योजा (सं० स्त्री०) वल्ली यष्टीमधु, वेलकी डण्डलका शब्द।

अभ्योजिनी (सं० स्त्री०) अभ्योजानां समूहः। १ पद्मसमूह। २ पद्मलता, कमलकी वेल। ३ पद्मयुक्त देश, जिस सुल्कमें कमल खूब मिले।

अभ्योद (सं० पु०) अभ्यो जलं ददाति, अभ्यस्-दाक। १ मेघ, बादल। २ सुस्तक, मोथा। (त्रि०) ३ जलदानकर्ता, पानी देनेवाला।

अभ्योधर (सं० वि०) अभ्यो जलं धरति, अभ्यस्-

धृ-अच्। १ मेघ, बादल। २ सुस्तक, मोथा। ३ समुद्र, बहर।

अभ्योधि (सं० पु०) अभ्यासि धीयन्तेऽस्मिन्, अभ्यसधा आधारि कि। समुद्र, बहर।

अभ्योधिपल्लव (सं० पु०) प्रवाल, मूंगा।

अभ्योधिवल्लभ (सं० पु०) ६-तत्। प्रवाल, मूंगा।

अभ्योनिधि (सं० पु०) अभ्यसः निधिः, ६-तत्। समुद्र, बहर।

अभ्योराशि, अभ्योनिधि देखो।

अभ्योरुह, अभ्योरुह देखो।

अभ्योरुह (सं० स्त्री०) अभ्योसि रोहति; अभ्योरुह-क, ७-तत्। १ पद्म। २ सारसपक्षी। (पु०) ३ वेतस, बेंत। (त्रि०) ४ जलजात, पानीसे पैदा हुआ।

अभ्योरुहकेशर (सं० स्त्री०) पद्मकेशर, कमलका रेशा। अभ्यकुदग—गुजरातकी कावेरी नदीके पासका स्थानीय पुरोहित-समाज। पहले लोगोंने इस समाजको ब्राह्मण समझ रखा था, किन्तु पीछे वह बात जाते रही।

अभ्यणदेव—बम्बईवाले कनाड़ी जिलेके मालखेडा राष्ट्रकूट नृपति अर्जुनके लड़के। चेदीके महाराज कोछले इनके बाबा रहे। इनकी कन्या महाराजाधिराज द्वितीय कृष्णसे व्याही गयी थी। नौसरौ ताम्रफलकके अनुसार,—सन् ८१५ ई०की २४ वीं फरवरीको द्वितीय कृष्ण सिंहासनारुढ़ हुये।

अभ्यपेट—मन्द्राज प्रान्तके सलेम जिलेका एक नगर। यह सलेम नगरके समीप अक्षा० १२° ८' १५" उ० एवं द्राघि० ७८° ४१' पू० पर अवस्थित है।

अभ्यय (सं० त्रि०) अप-मयट्, प स्थाने मः। जल-मय, आवदार, पानीसे भरा हुआ।

अभ्यरस (हिं० पु०) अभ्यतसरका कपोत, जो कबूतर अभ्यतसरमें पैदा हुआ हो। इसका समग्र शरीर श्वेत और कण्ठ काला होता है।

अभ्या, अभ्यां (हिं० स्त्री०) माता, मां, महतारी।

अभ्यामा (अ० पु०) साफा, सुरैठा। इस निराळे साफेको सुसलमान बांधते हैं।

अभ्यायानायकनुर—मन्द्राज प्रान्तवाले मदुरा जिलेके डिप्लिगल तहसीलका एक राज्य। सन् १७४१ ई०में

यहां जो लड़ाई हुयी थी, उसमें डिण्डिगल चांदा साहबके हाथ लगा। सन् १७५७ ई०में हैदरअलीके हमला मारते समय भी इस राज्यने बड़ा काम किया था। अंगरेजोंने अपने अधिकारके समय इस राज्यको कोई इक्कीस हजार रुपये वार्षिक कर लगा छोड़ दिया। अम्मायानायकनुर नगरमें दक्षिण-भारत-रेल-वेका स्टेशन बना है

अमारी, अमारी देखो।

अमाल—वेदान्त-विलास नाटक-रचयिता।

अम्बुगी—बम्बई प्रान्तवाले कल्याण राज्यके कोई काल-चुर्य नृपति। यह सिन्धुराजके पुत्र थे। महिसुरके हरिहर स्थानमें जो शिलालेख मिला उसमें लिखा है,—इस राजको कृष्णने प्रतिष्ठित किया था। वह शिवके अवतार थे। उनका जन्म किसी ब्राह्मणीसे हुआ था। वह नापितका काम करते रहे। कालञ्जर-में उन्होंने एक राजाको मारा, जो नरमांस खाता था। इस तरह कृष्णको मध्य-भारतके ड्राइल-प्रान्तका राज्य मिला। उनके वंशके कितने ही राजावोंने शासन किया था। अन्तमें कन्नम नामक कोई नृपति हुये, उनके दो पुत्र रहे,—विज्जल और सिन्धुराज। ज्येष्ठ-भ्राता विज्जल सिंहासनारुढ़ हुये थे। सिन्धुराजके चार पुत्रका नाम है,—अम्बुगी, शङ्खवर्मन, कन्नर और जोगम। इनमें सबसे पहले, अम्बुगीको ही राज्यका अधिकार दिया गया था। अम्बुगीके बाद जोगम गद्दीपर बैठे। जोगमके पुत्रका नाम परमाद्रि रहा। परमाद्रिके पुत्र विज्जल जब सिंहासनारुढ़ हुये, तब यह शिलालेख बनाया गया। सन ११७३ ई०को विज्जलके ज्येष्ठपुत्र सोवीदेवका जो शिलालेख पड़ा, वह उपरोक्त शिलालेखसे नहीं मिलता।

अम्बक् (वै० अव्य०) ओर, तर्फ।

अम्र (सं० पु०) अम्रते सौरभेन दूरात् ज्ञायते अम्र-रक्। आम्र वृक्ष। आमका फल, पत्ता बोध होनेसे क्लौव-लिङ्ग होता है।

अम्र वा आम्रका (Mangifera indica) चलता नाम आम या आम है। छोटा नागपुर और भारतवर्षके दक्षिणमें यह पहले आप ही आप लगता

था। अब भारतवर्षके सब स्थानोंमें इसके पेड़ लगाये गये और फल भी खूब होते हैं।

आम्र शब्दके ये कई पर्याय देखे जाते हैं—अम्र, आम्र, चूत, रसाल, सहकार, कामशर, कामवल्लभ, कीरेष्ट, माधवद्रम, भङ्गाभीष्ट, सौधुरस, मधूला, कोकिलोत्सव, वसन्तदूत, अम्लफल, मोदाख्य, मन्मथालय, मध्वावास, सुभदन, पिकराग, नृपप्रिय, प्रियाम्बु, कोकिलावास, माकन्द, षट्पदातिथि, मधुव्रत, वसन्तद्व, पिकप्रिय, स्त्रीप्रिय, गन्धवन्धु, अलिप्रिय, मदिरासख।

वैद्यशास्त्रके मतानुसार कच्चा आम कषाय, रुचिकर, कुछ अम्ल और सुगन्धित होता; इसके खानेसे वायु, पित्त और रक्त बढ़ता है। परन्तु और इससे कफ कई प्रकारका रोग भी नष्ट होता है। अपक्व बड़ा अम्ल पित्तकर होता है।

पके आममें कई गुण होते हैं। लोग कहा करते हैं,—‘पके आमकी रसी खाई न खाई देहे धसी’ सुमिष्ट पका हुआ आम सुखाद और पुष्टिकर होता है। इससे त्रिदोष नष्ट होता है। इसके खानेसे वर्ण, रुचि, शरीरकी कान्ति, बल एवं मांस बढ़ता है। चीनीके साथ पका आम खानेसे क्षयरोग, झीहा, वात, श्लेष्मा प्रभृति अनेक प्रकारके रोगोंमें उपकार दिखाई देता है। घृतके साथ मिलाकर खानेसे वात और पित्त नष्ट होता एवं अग्नि, वर्ण और बल बढ़ता है। दूधके साथ आम शीतल, सुखादु, स्निग्ध, किञ्चित् गुरुपाक और अल्प विरेचक होता है। वात पित्तादि रोगमें यह हितकर रहता है। इससे शुक्र, रक्त और बल बढ़ता है।

पके आमका प्रधान गुण यह है, कि इससे विलक्षण कोष्ठशुद्धि होती है। इसलिये अनेक रोगोंमें यह हितकर है। गृहस्थ लोग क्लिष्टका सहित कच्चे आमको सुखाकर रखते हैं। बच्चोंके उदरामय होने पर उसका काथ खिलानेसे दो ही तीन दिनमें फायदा मालूम होता है। आमका हरा पत्ता, मूल और गुंठली सङ्कोचक है। इसीसे जलमें सिद्धकर खिलाने से उदरामय रोग नष्ट हो जाता है। पश्चिमके गरीब आदमी पके आमकी अंठली आगमें भुनकर खाते हैं।

अंठलीके चूर्णको अच्छी तरह धोकर कितनेही उसकी रोटी बनाते हैं। युरोपीय चिकित्सक आमकी अंठली, सोंठ और कच्चे वेलको एक साथ सिद्ध करके रक्तामाशय एवं उदरामय रोगमें देनेसे विलक्षण उपकार देखते हैं। नाकसे खून गिरनेमें अंठलीका रस सुड़कनेसे खून बन्द हो जाता है। इण्डियन फार्मेकोपियामें लिखा है, कि आमकी अंठली में खूब गैलिक-एसिड है। इससे कर्मि नष्ट और बाधक तथा अर्श रोगमें इसका काथ खानेसे रोगी सुस्थ हो जाता है। वैद्यराजवल्लभके मतमें इससे दृष्ट्या, हृदि, मेह एवं अतिसार नष्ट होता है। आमका मञ्जर रुचिकर और अग्निदीपक है।

युरोपीय चिकित्सक कहते हैं, कि कच्चा आम और कच्चे आमकी अंठली नेत्रप्रदाह, खुजली और श्वासकासमें विशेष उपकार करती है। हरे पत्तेको सुखाकर तम्बाकूकी तरह उसका धुआं हुक्केमें पीनेसे श्वासकष्ट और कण्ठरोगका प्रतिकार होता है। डाक्टर ऐन्सली कहते हैं, कि आमके पेड़का चूर्ण नीबूके रस या तेलके साथ मिलाकर लगानेसे चर्मरोग अच्छा हो जाता है। आमका तख्ता ज्यादा कठिन और स्थायी न होती भी साधारण आदमी उसके किवाड़ आदि बनाते हैं। कपड़ा रंगनेसे पहले अनेक आदमी आमके पत्ते और छिलकेको व्यवहार करते हैं।

हम लोगोंके देशमें कितने ही आदमी कच्चे आम को सुखाकर रखते हैं। उसे अमरा, अमचूर या अमूसी, कहते हैं। पक्के आमके रसको पतला करके सुखा लेते और उसे अमावट कहते हैं। सर्वदा धूप दिखाकर यत्नसे रखनेपर अमचूर और अमावट बारह महीने रहता है, उसमें कौड़े नहीं लगते। परन्तु अमचूरमें हल्दी और नमक न मिलानेसे बरसातके दिनों उसमें कौड़ा लग और वह खराब हो जाता है। स्वभावतः जिसका धातु कोष्ठवद्द हो, यदि वह नित्य अमचूर या अमावट खावे, तो पेटका उद्वेग कम पड़ता है।

वैद्यशास्त्रोक्त अम्रखण्ड अति उपादेय सामग्री है। इससे नेत्ररोग, वायुरोग, अम्रपित्तजनितरोग, अम्र-

वृद्धि, मेहप्रवृत्ति अनेक प्रकारके रोग दूर हो जाते और देहको कान्ति तथा बलवृद्धि होतो है। इसके प्रस्तुत करनेकी रीति यह है,—खूब मीठे आमका रस कपड़ेसे छान ले। छाना रस १२ सेर, साफ चीनो ८ सेर, गायका घी ४ सेर, सोंठका चूर्ण १ सेर, मिर्च का चूर्ण आध सेर, पोपलका चूर्ण पाव भर, दूध आठ सेर, सब द्रव्योंको मूर्च्छित घोंमें पकाये। पक जाने पर पिपरामूल, मुनक्क, चाव्य, धनियां, जीरा, काला-जीरा, सोंठ, बड़ी इलायची, दारुचीनी, तालिशपत्र, इन सबको खूब बारीक पीस और कपड़ेसे छान कर हरेक चोज आध आध सेर लेना चाहिये। तरबूजके बीज, लवङ्ग और नाग केशरको चूर्णकर प्रत्येक द्रव्य चौबीस चौबीस तोले और असली मधु चार सेर डाले। इन सब चीजोंको अच्छी तरह एक साथ मिलाकर इस खण्डको घोंके बरतनमें रख दे। बीच बीचमें धूप देखाना अति आवश्यक है। मात्रा दो तोले थोड़े गर्म दूधके साथ सेवन करना।

आमका सुरब्बा भी खानेमें जायके दार होता है। यह कोठेको खूब साफ रखता है। जिस आममें एकदम रेशा न हो और पकने पर कड़ा रहे, उसके बड़े बड़े टुकड़े करके घोंमें भून ले। फिर उन्हें मिश्रोंके रस-जैसी गाढ़ी चीनीमें छोड़ भांड़में रख दे। आमका सुरब्बा बहुत दिन नहीं रहता।

वङ्गदेशके अनेक स्थानोंमें जो आमका अचार बनता है, उसे कासुन्दी कहते हैं। इसके बनानेकी रीति यह है,—पहले सरसों और हल्दीको अच्छी तरह धोकर सुखा लेना। सुख जाने पर दोनोंको खूब महीन पीस लेना। उसके बाद दश सेर आमकी, छील और अंठली निकाल कर टुकड़े टुकड़े करे। पकी हुई ३ सेर इमलीका भी चियां निकाल डाले। फिर दो सेर सरसोंके चूर्ण और आध सेर हल्दीको आम और इमलीके साथ ढेंकीमें कूटना चाहिये। एक सप्ताह बाद फिर उसके साथ पूर्ववत् १० सेर आम और ३ सेर इमली कूटे। एक सप्ताहके बाद फिर उसके साथ पहले हीकी तरह १० सेर आम, ३ सेर इमली और २१ सेर नमक कूट

अम्रात (सं० पु०) अम्रवत् सर्वत्र अत्यन्त प्राप्यते ;
अम्र अत-घञ्, शाक० तत् । अमड़ा, अमड़ेका पेड़ ।
अम्रातक, अम्रात देखो ।

अम्ल (सं० स्त्री०) अम-वाङ्ल० क्त्वा । तक्र, माठा ।
(पु०) रसविशेष, खटारस । (त्रि०) अम्लरसयुक्त,
खट्टा ।

अम्ल दो प्रकारका है—पार्थिवाम्ल और औद्भिज्जाम्ल ।
लवण, गन्धक, यवचार प्रभृति खनिज द्रव्यसे जो अम्ल
प्रसृत होता है । उसे पार्थिवाम्ल कहते हैं । इसका
दूसरा नाम द्रावक है । उद्भिजसे जो अम्ल संगृहीत
होता, उसका नाम औद्भिज्जाम्ल है । उद्भिदके
नीलवर्ण साथ अम्लरस मिलनेसे रक्तवर्ण हो जाता है ।
इसीसे कपड़े या कागजपर जवाफूल घिसकर उसमें
नीबूका रस देनेसे लाल रङ्ग निकलता है । कितने
ही ठग पहलेसे ही कुरीमें जवाफूल घिस रखते हैं ।
फिर जब कोई धोहाका रोगी आता है, तब उस
कुरीको नीबूमें घुसेड़कर दाबते हैं ; उससे लाल
रंगका रस टपकता है । वे लोग गंवारीको समझा
देते हैं, कि धोहा कटा, इसीसे खून टपकता है ।
अम्लमें कौड़ी हड्डी, रूपा या सोना डाल देनेसे
जल जाता है । अङ्गार वाष्पयुक्त चारद्रव्यके साथ
अम्ल मिला देनेसे, वह बाहर निकल आता है ।
अधिक वा तेजस्कर अम्लरस दांतमें लग जानेसे दांत
गोठिल हो जाते हैं । उस समय कोई वस्तु चबानेसे
कष्ट होता है । यदि दांत गोठिल हो जाय, तो कोई
कड़ो मीठो चीज चबाना चाहिये । अनेक आदमी
कहते हैं, कि जो लोग अङ्गार प्रभृति चार द्रव्यसे
दांत मांजते, थोड़े ही अम्लरससे उनके दांत गोठिल
हो जाते हैं ।

विना जल मिलाये द्रावक, सेवन न करना
चाहिये । सेवन करनेसे अम्लनाली जल जाती और
उससे प्राणनाश हो सकता है । थोड़ासा अम्लरस
सेवन करनेसे पाचक और बलकर होता है । हम
लोग आहारके बाद अम्लका व्यञ्जन खाते हैं, वह परि-
पाकके लिये उपकारी है । परन्तु दुर्बल व्यक्तिको प्रति-
दिन वा बहुत उद्भिज्जाम्ल न खाना चाहिये ।

रक्तके कण नष्ट होते और शरीर और भी दुर्बल हो
जाता है । एकदम कुछ भी अम्लरस न खानेसे स्तर्भि
और अजीर्ण रोग होता है । सुपथ्यमें नीबू या आम
हो प्रशस्त है । किसी किसी दिन चालता और
पुरानी इमली भी खा सकते हैं । नये ज्वरमें अम्ल
खानेसे प्यास, रक्तकी उष्णता और ज्वरका तेज कम
हो जाता है । पुराने ज्वर प्रभृति रोगमें, पार्थिवाम्ल
हितकर है ।

वैद्यशास्त्रके मतसे अम्ल—हृद्य, शीतल, वायुनाशक
एवं स्निग्ध है । कड़ु वस्तुओंसे यह अधिक तेजस्कर
है । इससे जिह्वा एवं दन्तका उद्देग उत्पन्न होता
है । पण्डितोंने शाक एवं अम्लमें एक प्रकारका दोष
बताया है । अर्थात् इससे शरीर, रक्त, नेत्र सब दूषित
होता, प्रज्ञा और स्मरणशक्ति नष्ट हो जाती है ।
अम्ल सब रोगोंका घर है, इसलिये इसे परित्याग कर
देना चाहिये ।

अम्लक (सं० पु०) अल्पोद्भूतः, अल्पार्थे कन् ।
१ मन्दार वृक्ष, अकोड़ेका पेड़ । २ लकुचवृक्ष, बड़हर ।
अम्लकरञ्ज (सं० पु०) करञ्जविशेष, खट्टा किरमाल ।
इसके फलका गुण पिपासानाशक, गुरु, रुचिकर और
पित्तकर है । (राजवल्लभ)

अम्लका (सं० स्त्री०) १ पालङ्कशाक, खट्टा पालक ।
२ पलाशी लता, खट्टी खिरनी ।

अम्लकाञ्चिक (सं० स्त्री०) काञ्चिक, खट्टी कांजी ।
अम्लकाण्ड (सं० स्त्री०) अम्लं अम्लरस-विशिष्टं काण्डं
नालं यस्य, बहुव्री० । १ लवणवृक्ष, लोनिया । (पु०)
शुक्लरसोन, सफेद गन्दन ।

अम्लकूचि (सं० पु०) वृक्षविशेष, कोई दरखत ।
अम्लकेशर (सं० पु०) अम्लः केशरो यस्य, बहुव्री० ।
१ मातुलुङ्ग, बिजोरा नीबू । २ दाड़िमवृक्ष, अनारका
पेड़ ।

अम्लकेसरी (सं० पु०) अम्लरसनिम्बुक वृक्ष, खट्टे
नीबूका दरखत ।

अम्लकोश (सं० पु०) तित्तिडी वृक्ष, इमलीका दरखत ।
अम्लकोशाक, अम्लकोश देखो ।

अम्लगोरस (सं० स्त्री०) अम्लतक्र, खट्टा मठा ।

अम्लचाङ्गेरी (सं० स्त्री०) चाङ्गेरीमेद, खट्टी अम्बोती या सेह ।

अम्लचुक्रिका (सं० स्त्री०) कर्मधा० । चिञ्चाम्ल, खट्टा पालक ।

अम्लचुड़ (सं० पु०) अम्लचुक्रिका देखो ।

अम्लजम्बीर (सं० पु०) अम्लरसनम्बुकवृक्ष, खट्टे नीबूका दरखत ।

अम्लतक (सं० पु०) अम्लन्तक वृक्ष, इसके रेशेसे ब्राह्मणकी मेखला बन सकती है ।

अम्लता (सं० स्त्री०) कार्कश्य, खटाई, तुर्शी ।

अम्लत्वक् (सं० पु०) प्रियालवृक्ष, चिरौजीका पेड़ ।

अम्लदोलक (सं० पु०) चुक्र, खट्टा पालक ।

अम्लद्रव (सं० पु०) वीजपूरादिरस, बिजौरे नीबू वगैरहका अर्क ।

अम्लद्रव्य (सं० स्त्री०) वीजपूरादि, बिजौरा नीबू वगैरह ।

अम्लनायक (सं० पु०) अम्ल रस नयति, अम्ल-नी-खुल । अम्लवेतस, चूक ।

अम्लनिम्बुक (सं० पु०) महाम्ल निम्बुक, खट्टा नीबू ।

अम्लनिशा (सं० स्त्री०) अम्ल निशा, कर्मधा० । शठीवृक्ष, आंघाहरदो ।

अम्लपञ्चक, अम्लपञ्चफल देखो ।

अम्लपञ्चफल (सं० स्त्री०) पांच खट्टे फल । कोल, दाड़िम, वृञ्चाम्ल, चुक्रिका एवं अम्लवेतस अथवा जम्बीर, नारङ्गा, अम्लवेतस, तिलिङ्गी एवं वीजपुरसे मिलाकर अम्लपञ्चक बनता है ।

अम्लपत्र (सं० पु०) अम्ल पत्रं यस्य, बहुव्री० । १ अम्लन्तक वृक्ष । २ दण्डालुक, खाम । ३ लुद्रपत्रतुलसीवृक्ष, जिस तुलसीके पेड़को पत्ती छोटी रहे । (स्त्री०) ४ चुक्रशाक, खट्टा पालक ।

अम्लपत्रक (सं० पु०) १ मेण्डा, मेडा । २ अम्लन्तक वृक्ष । ३ अम्ललोणिका, लोनिया ।

अम्लपत्रा (सं० स्त्री०) शुकला, भिण्डो ।

अम्लपत्रिका (सं० स्त्री०) चाङ्गेरी, सेह ।

अम्लपत्री (सं० स्त्री०) अम्ल पत्रं यस्याः । १ पला-शीलता, गूलर । २ चाङ्गेरी, सेह । ३ लुद्राश्लिका, छोटी लोनिया ।

अम्लपनस (सं० पु०) अम्लः तद्रसः पनसः, कर्मधा० । लिङ्गुचवृक्ष, मन्दार ।

अम्लपर्णिका (सं० स्त्री०) १ वृक्षविशेष, कोई दरखत २ सुरपर्णी, गूलर इसका गुण—वात, कफ और शूलरोगनाशक है । (वैद्यकनिघण्टु)

अम्लपर्णी, अम्लपर्णिका देखो ।

अम्लपादप (सं० पु०) वृञ्चाम्ल, इमली ।

अम्लपित्त (सं० स्त्री०) अम्लत् अजीर्णात् जातं पित्तम् । रोगविशेष, कोई बीमारी । इस रोगसे आहारके बाद उदरमें अम्ल मालूम पड़ेगा । कारण, खाया हुआ पदार्थ पित्तके दोषसे खट्टा हो जाता है । खट्ट, अम्ल, कटु और उष्ण वस्तुका भोजन ही इसका उपादान निकलेगा । लक्षणमें लिखा है,—

“ विरुद्धदुष्टान्मविदाहपित्तप्रकोपि पानान्नभुजोविदग्धम् ।

पित्तं खड्गैरूपचितं पुरा यस्तदमुपित्तं प्रवदन्ति सन्तः ॥

अविपाकः कृमोत्क्षेपः तिक्ताग्नीझारगौरवौ ।

हृत्कण्ठदाहार्चचिभिरस्त्रपित्तं वदेदभिषक् ॥

तच्चिधा—अधोगसूर्ध्वगच्छ ।” (साधवनिदान)

सारांश यह, कि अविपाक, अरुचि, हृदय एवं कण्ठके दाह, तिक्त अम्लके उद्गार आदिसे अम्लपित्तकी पहचानेंगे । शल देखो ।

अम्लपित्तान्तकमोदक (सं० पु०) अम्लपित्तका योग-विशेष, जो लड्डू अम्लपित्तको मिटाता हो । इस मोदक के बनानेका विधान यह है,—८ पल शुण्ठी, ८ पल, पिप्पली और ८ पल गुवाकचर्णको ४ शरावक घृतमें डाल एकत्र भूनेंगे । फिर उसमें दो-दो तोले लवङ्गचूर्ण, बचाचूर्ण, कुष्ठचूर्ण, नागकेशरचूर्ण, यमानौचूर्ण, रक्तचन्दनचूर्ण, रास्नाचूर्ण, क्षणजौरकचूर्ण, यष्टिमधुचूर्ण, तेजपत्रत्वगीलाचूर्ण, सैन्धव, हवुषाकलचूर्ण, शठीमदन-फलचूर्ण, जटामांसीचूर्ण, अम्र, रङ्ग, रौप्य, तालीश-चूर्ण, पञ्चकाष्ठचूर्ण, मूर्वाचूर्ण, वराहक्रान्ताचूर्ण, वंश-लोचन, पिप्पलीमूलचूर्ण, शतावरीचूर्ण, शतपुष्पाचूर्ण, पीतभिण्डीमूलचूर्ण, जातीकोषचूर्ण, जातीफलचूर्ण, काकोलोमुस्तकपिप्पलीकपूरविडङ्ग-वनयमानीका चूर्ण, लौह और एक तोले स्वर्ण मिलाकर लड्डू बांधते हैं ।

(मेघनरवाली)

अम्लपित्तान्तकरस (सं० पु०) अम्लपित्तघ्नरस, जो रस अम्लपित्तको दूर करता हो। यथा,—

“यत्तत्तार्कलौहानां गुण्यां पण्यां निमर्दयेत्।

माषमात्रं लिहेत् चौद्रेरक्षपित्तप्रशानये ॥” (मेषन्यव्रावली)

फुँके हुये सूत, अक और लौहके बराबर हरको रखकर रगड़ लेना चाहिये। इस रसको माषमात्र खानेसे अम्लपित्त दबता है।

अम्लपुर (सं० स्त्री०) वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लपुष्पिका (सं० स्त्री०) आरख्यशणवृक्ष, जङ्गली सनका पेड़।

अम्लपूर (सं० स्त्री०) अम्लेन पूर्यते; अम्ल-पूर कर्मणि घञ्, ६-तत्। तिन्तिड़ी, इमली।

अम्लफल (सं० पु०) अम्लं फलं यस्य, बहुव्री०। १ तिन्तिड़ी वृक्ष, इमलीका पेड़। (स्त्री०) २ वृक्षाम्ल, इमली।

अम्लफला (सं० स्त्री०) कथारिका, कैथा।

अम्लबन्ध्या (सं० स्त्री०) अम्लं रसं बध्नाति; अम्लबन्ध-उण्यक्, स्त्रीत्वात् टाप्। अम्लरसस्कन्ध।

अम्लभेदन (सं० पु०) अम्लार्थं अम्लरसप्राप्तार्थं भिद्यतेऽसौ, अम्ल-भिद कर्मणि ल्युट्। १ अम्लवेतस, चूक।

२ चुक्र, खट्टा पालक।

अम्लमारौष (सं० पु०) अम्लशाकविशेष, खट्टी चौराई।

“अम्लमारौषको दोषकोपनी मधुरः पटुः।” (वैद्यकनिघण्टु)

अम्लमूलक (सं० स्त्री०) व्युषितकाञ्चिकपक्कमूलक, पुरानी कांजीकी पक्की जड़।

“काञ्चिकं व्युषितं पक्कं मूलकं लक्ष्ममूलकम्।” (परिभाषाप्रदीप)

अम्लमेह (सं० पु०) पित्तजन्यमेहरोगमेह, जो पेशाब की बीमारी सफ़रा बिगड़नेसे पैदा हो।

अम्लरस (सं० पु०) अम्लस्यासौ रसश्चेति, कर्मधा०।

१ अम्लरस, तुर्शी, खटाई। (त्रि०) २ अम्लरसविशिष्ट, तुर्श, खट्टा।

अम्लरुहा (सं० स्त्री०) अम्लाय रोहति, अम्ल-रुह-क-टाप्। मालवदेशप्रसिद्धनागवल्लीभेद, मालवेका पान।

इसका गुण यों लिखा है,—

“रुचिकरी दाहघ्नी गुणघ्नी पापानहरी च।” (राजनिघण्टु)

अर्थात् अम्लरुहा उष्ण, मधुरा एवं रुचिकरा होती। अम्लवाटा, अम्लवाटिका देखो।

है। यह दाह, पित्त और गुल्मको मिटायेगी। इसके सेवनसे अग्नि और बल बढ़ता है।

अम्ललोणिका (सं० स्त्री०) अम्लं रसं लाति गृह्णाति, अम्ल-ला-क; चुरा० खुल, स्त्रीत्वात् टाप्। पृषो० वा णत्वम्। अमरुल, सेह।

चाङ्गेरी चुक्रिका दन्तशटास्यादम्ललोणिका। (भर)

वस्त्रादिमें लौह या अन्य कषायका चिह्न पड़नेपर इससे छुट जायगा। इसके गुणमें बताया है,—यह क्षुधावर्धक, रुचिकर, कफ वायु और ग्रहणीरोगनाशक, पित्तकार अर्श, कुष्ठ एवं अतिसार प्रभृति रोग निवारक है। (भावप्रकाश)

अम्ललोणी, अम्ललोणिका देखो।

अम्ललोणिका, अम्ललोणिका देखो।

अम्लवती (सं० स्त्री०) अम्लं रसं अस्तरस्याम्; अम्ल रसादि० मतुप्, मस्य वत्वम्। आमरुललता, सेह।

अम्लवर्ग (सं० पु०) अम्लानां तद्रसवतां वर्गः समूहः, ६-तत्। अम्लरस प्रधान द्रव्यसमूह, खट्टी चीज़का जखीरा। इसमें निम्न लिखित द्रव्य सम्मिलित हैं,—

“अम्लवेतसजम्बीरलुङ्गाक्षचणकाक्षकाः।

नागरज्जं तिन्तिड़ी च चिन्ताफलं च निम्बुकम्।

चाङ्गेरी दाडिमर्षं च करमर्दं तथैव च।

एष चाक्षगणः प्रोक्तो वेतसाक्षसमायुतः ॥” (रसेन्द्रसारसंग्रह)

कोई कोई दाडिम, आमलकी, मातुलङ्ग, आम्रातक, कपित्थ, करमर्द, वदर, तिन्तिड़ी, कोशाग्र, भव्य, परावत, वेतफल, लकुच, अम्लवेतस, दन्तशठ, दधि, तक्र, सुरा, शुक्र, सौवीरक, तुषोदक एवं धान्याम्लको भी अम्लवर्ग समझता है। वस्तुतः जितना अम्ल द्रव्य हो, वह सब इसमें आ जायेगा।

अम्लवस्त्रिका, अम्लवल्ली देखो।

अम्लवल्ली (सं० स्त्री०) अम्ल तद्रसवती वल्ली यस्याः, पूर्वपदस्य पुंवद्भावः। त्रिपर्णीकन्द, जवासा। इसके ग्रन्थिविशिष्ट मूलसे अम्लरस लता निकलती है।

अम्लवाटक (सं० पु०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़।

अम्लवाटा, अम्लवाटिका देखो।

अम्लवाटिका (सं० स्त्री०) वाटी एव वाटिका; स्वार्थं कन्-टाप्, झस् इत्वम्। अम्लस्य वाटिका स्थानमिव, इ-तत्। नागवल्लीभेद, किसी किसका खट्टा पान।

अम्लवाटी, अम्लवाटिका देखो।

अम्लवाटक, अम्लवातक देखो।

अम्लवातक (सं० पु०) आम्रातक वृक्ष, अमड़ेका पेड़।

अम्लवासुक (सं० पु०) चाङ्गेरी, अमरुल।

अम्लवास्तुक, अम्लवालूक देखो।

अम्लवास्तूक (सं० पु०) अम्लरसान्वितो वास्तूकः, कर्मधा०। चुक्रनाम पत्रशाक, खट्टा पालक।

अम्लविदुल (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलवेत, चूका।

अम्लवोज (सं० स्त्री०) अम्लस्य वोजं कारणम्, इ-तत्। वृक्षान्न, इमली।

अम्लवृक्ष (सं० स्त्री०) अम्लरसो वृक्षे यस्य, बहुव्री०। वृक्षान्न, इमली।

अम्लवेत, अम्लवेतस और अमलवेत देखो।

अम्लवेतस (सं० पु०) अम्लं रसं वयति सर्वपत्रेषु वहति; वेज्-उष्-असच्-तुट्, बाहुलकात् न आत्वम्। चुक्र, अमलवेत, तुर्गह, खट्टा शाक। अमलवेत देखो। अम्लवेतसका गुण कषाय, उष्ण और वात, कफ, अर्श, गुल्म, अरोचक प्रभृति रोगनाशक कहा गया है। “भोटदेशे प्रसिद्धः।” (राजनिघण्टु)

यह लघु, दीपन, भेदन और हृद्रोग, शूल, गुल्म प्रभृति रोगनाशक, पित्तकर, रोमहर्षण, रुचिविद्, सूत्र, श्लेष्मा, उदावर्त, हिक्का, अरुचि, श्वास, कास, अजीर्ण, वमन, वात, कफ प्रभृति रोगनाशक होता है। (भावप्रकाश)

इसके पक्के फलमें निम्नलिखित गुण रहेंगे,—

“दोषघ्नं गुरु दारकञ्च।” (राजवल्लभ)

अम्लशाक (सं० पु०) अम्लोऽम्लः शाको यस्य, बहुव्री०।

१ चुक्र, चूका। यह अत्यन्त होता और वात, दाह एवं श्लेष्माका दूर करता है। शकर या चीनो मिलाकर खानेपर इससे दाह, पित्त और कफ मिट जायेगा। (राजनिघण्टु)

अम्लशाकाख्य (सं० स्त्री०) चुक्रनामकपत्रशाक, चूका।

अम्लश (सं० स्त्री०) चाङ्गेरी, सेहू।

अम्लसरा (सं० स्त्री०) नागवल्लीभेद, किसी किसका पान।

अम्लसार (सं० पु०) अम्लरस एव सारः प्रधानं यस्य। १ चुक्र, चूका। २ निम्बुक, नीबू। ३ हिन्ताल वृक्ष। (स्त्री०) ४ काष्ठीक, कांजी। ५ चुक्रनामक काष्ठीकभेद, किसी किसकी कांजी। ६ भातका माँड़।

अम्लसारक (सं० स्त्री०) १ काष्ठीक, कांजी। २ चुक्रनामक काष्ठीकभेद, किसी किसकी कांजी।

अम्लस्तम्भनिका (सं० स्त्री०) तित्तिड़ी, इमली।

अम्लहरिद्रा (सं० स्त्री०) अम्ल अम्लरसाधिका हरिद्रा, कर्मधा०। शठीवृक्ष, आंवाहलदी।

अम्ल (सं० स्त्री०) अम-उष्-लृत्; अम्लरसोऽस्यस्याम्, अर्श आदि०-अच्-तत् टाप्। १ चाङ्गेरी, आमरुल। २ वनमातुलुङ्ग, बिजोरा। ३ ओवल्लीवृक्ष। ४ तित्तिड़ी, इमली।

अम्लान्न (सं० त्रि०) अम्लीकृत, खट्टा किया हुआ, जो तुर्ष हो गया हो।

अम्लान्नुश (सं० पु०) अम्लं अङ्गुशः अङ्गुशाकाराग्रं यस्य बहुव्री०। चुक्र, अम्लवेतस, चूका।

अम्लान्न (सं० पु०) १ महासहावृक्ष, कीर्द भाङ्गी, कटसरैया। यह कषाय, मधुर, तिक्त, उष्णवीर्य और स्निग्ध होता है। (भावप्रकाश) २ गर्भवेदनाहर योग, हमलका दर्द मिटानेवाली दवा। (चिकित्साक्रमकाल्यवल्ली)

अम्लान्न (सं० पु०) अरुणनिम्बुक, नारङ्गौका दरखूत। अम्लान्न, अम्लान्नक देखो।

अम्लान्नक (सं० पु०) अम्लं रसं अतति गच्छति प्राप्नोति; अम्ल-अत-ण्वल्, इ-तत्। अम्लवेतस, चुक्र, अमलवेत, चूका।

अम्लान्नकी (सं० स्त्री०) पलाशीलता, सेह।

अम्लान्न (सं० पु०) आद्यते, अद कर्मणि लुट्; अम्लं अदनं भक्ष्यम्, कर्मधा०। कुरण्टकवृक्ष, पीली लोनिया।

अम्लान्नान, अम्लान्न देखो।

अम्लान्नि (सं० पु०) १ तित्तिड़ी, इमली। २ चुक्रनामक पत्रशाक, चूकीकी भाजी।

अम्लान्नधुषित (सं० पु०-स्त्री०) १ सर्वगताक्षिरोग,

आंखकी कोई बीमारी। इससे आंख पकती, लाल पड़ती, जला करती और पानी देती है। (माधवनिदान)
२ अरुणनिम्बूक, नारङ्गी।

अम्लान (सं० पु०) स्नेह एदात्वं तस्य नत्वच्च, ततो नञ्-तत्। १ बन्धुजीवकवृक्ष, दोपहरिया। २ महा-सहा, कोई भाड़ी। 'अम्लानस्तु महासहा।' (अमर) ३ क्षिण्टिका भेद, किसी किष्मकी भाड़ी। 'अम्लानस्तु क्षिण्टिकाभेदे।' (हिम) 'अम्लानो क्षिण्टिकाभेदे।' (विश्व) ४ महाराजतरङ्गिणी-वृक्ष। (क्षौ०) ५ पद्म। (त्रि०) ६ प्रफुल्ल, फूला हुआ, जो सुरभाया न हो। ७ प्रकाशमान, मेघरहित, खुला हुआ, बादलसे खाली।

अम्लाना (सं० स्त्री०) महासेवतीपुष्पवृक्ष, बड़ी सेव-तीके फूलका दरखत।

अम्लानि (सं० स्त्री०) १ बल, रफूर्ति, गुरुता, कु.वत. ताजगी, रौनक। (त्रि०) २ बलवान् प्रफुल्ल, ताकत-वर, शिगुफूता, खिला हुआ, जो सुरभाता न हो।

अम्लानिन् (सं० त्रि०) स्वच्छ, प्रकाशमान, साफ, चमकीला।

अम्लानिनी (सं० स्त्री०) अम्लानानां समूहः, इनि। १ पद्मसमूह। २ पद्मिनी।

अम्लान्मा (सं० स्त्री०) चाङ्गेरी, आमरुलकी भाजी।

अम्लायनी (सं० स्त्री०) मल्लिकाभेद।

अम्लिका (सं० स्त्री०) अम्लेव स्वार्थे कन् टाप् अतो ङस्त्व-इत्वच्च-। १ तिलिङ्गीवृक्ष, इमलीका दरखत। 'तिलिङ्गी चिचाम्लिका।' (अमर) २ आम्र, आमका फल। ३ पलाशी लता, टाक, टेसूका पेड़। ४ माचिका, पुदीना। ५ खेताम्लिका, कोई भाड़ी। ६ चाङ्गेरी, चोलाईकी भाजी। ७ अम्लोद्धार, खट्टी डकार।

'अम्लिका तिलिङ्गिकाम्लोद्धारचार्त्तिकासु च।' (विश्व)

अम्लिकापान (सं० स्त्री०) तिलिङ्गीपानक, इमली-का पना। पकी इमलीको पानीमें अच्छीतरह मलके रस निचोड़ लेंगे। पीछे शकर, कालीमिर्चकी बुकनी, लौंग और कपूर मिलाकर उसे पौनेपर वातरोग छूट जाता है। (भावप्रकाश पूर्वभाग)

अम्लिकावटक (सं० पु०) वटकविशेष, इमलीका बड़ा। इमलीको अच्छीतरह पहले पानीमें भिगी

देना चाहिये। जब वह फूल जाये, तब खूब जलसे मलकर उसका रस निचोड़ लीजिये। फिर उसमें ठीक तौरपर नमक, मिर्च और मसाला मिलाकर बड़ेको डुबो देंगे। यही बड़ा अम्लिकावटक कह-लाता, खानेमें अच्छा लगता और मूखको बढ़ाता है।

(भावप्रकाश)

अम्लिमन् (सं० पु०) अम्लता, तुर्शी, खटाई।

अम्ली (सं० स्त्री०) अम्लो रसोऽस्यस्याम्, अम्ल-अर्थ आदि-अच्-ङीप्। १ चाङ्गेरी, आमरुल, चोलाईकी भाजी। 'अम्ली चाङ्गेरी।' (हिम) २ जलवेतस, पानीका बेंत। ३ चुक्रिका, लोनिया। ४ तिलिङ्गी, इमली।

अम्लीका, अम्लिका देखो।

अम्लीकाफल (सं० स्त्री०) तिलिङ्गीफल, इमली। यह शुष्क, उद्दीपन, भेदन, तृष्णाघ्न, लघु और कफ-वातरोगका पथ्य होता है। (वाग्भट सूत्रस्थान) कच्ची इमली खानेसे अस, पित्त तथा आम बढ़ता और दाह होने लगता है। किन्तु पक्की इमली वात, आम और शूलको मिटाती तथा हृदयको शीतल कर देती है।

(चक्रवर्तिना)

अम्लीय (सं० पु०) अम्लवेतस, अमलवेत, चूका।

अम्लोटक (सं० पु०) अम्लं उटं पत्रं यस्य। अम्ल-न्तकवृक्ष, सेह।

अम्लोटज (सं० पु०) चाङ्गेरी, चोलाईकी भाजी।

अम्लोत्तम (सं० पु०) दाडिम, अनार।

अम्लोद्धार (सं० पु०) अम्ल-उद्-गृ-घञ्; अम्लस्य उद्धारः, इ-तत्। अम्लरससंयुक्त उद्गार, खट्टा डकार। अम्लोरी (हिं० स्त्री०) अंधोरी, छोटो-छोटी फुन्सी। यह ग्रीष्म ऋतुमें पसोनेसे लोगोंके शरीरपर उभर आयेगी।

अय (सं० पु०) ईयते प्राप्यते शुभमनेन, इण् करणे अच्। १ पूर्वजन्मकृत शुभकर्म, शुभदायक दैव, पहले जन्मका किया हुआ अच्छा काम, नेकवखूती, खुश-किस्मती। 'अयः शुभावहो विधिः।' (अमर) २ विधान, कायदा। एति जयमनेन, इण् करणे अच्। ३ पासा। यन्ति शावाः द्यूतसाधनोपकरणानि अस्मिन्, आधारे अच्। ४ शरीरको दाहनी-धोरवालो चाल।

५ प्रजापतिविशेष । ६ गमन, रवानगी । (त्रि०)

७ गमनकर्ता, जानेवाला । (हिं० पु०) ८ लोहा ।

९ अग्नि, आग । (सम्बो०) १० हे, अरे ।

अयं (सं० सर्व०) यह, इसने ।

अयःपान (सं० स्त्री०) अयो द्रवीभूतं तस्य लोहं पीयते अत्र, अधिकरणे लुप्त । नरकविशेष, किसी दोष, खका नाम । इस नरकमें जानेसे यमदूत पापीको तरल और अग्निवर्ण लोह पिला देते हैं ।

अयःप्रतिमा (सं० स्त्री०) अयसः प्रतिमा, इ-तत् । लोहप्रतिमा, स्मृति, स्थूणा, बुत-आहनी, लोहेकी मूर्ति । 'सर्वे स्थूणाऽयःप्रतिमा' (अमर)

अयःशूल (सं० स्त्री०) रन्ध्रादि करणे अयसः शूलमिव, इ-तत् । अयःशूलदण्डाजिनाम्नां ठकठकी । पा ३।२।७६ । १ लोहनिर्मित तीक्ष्ण अस्त्रविशेष, लोहेका कोई तेज हथियार । २ अपराधीके प्राणदण्ड निमित्त लोहकीलक, फांसी चढ़नेकी सूली । २ तीक्ष्ण उपाय, कड़ी तदवीर । अयसः शूलमिव सन्तापकम् । ४ शूलरोग, दर्द-शिकम्, पेटकी पीड़ा ।

अयक्ष्म (वै० त्रि०) नास्ति यक्ष्मा यस्य, वेदे अच-समा० । १ रोगशून्य, नीरोग, तनदुरुस्त, भला-चङ्गा । नास्ति यक्ष्मा रोगविशेषो यस्य । २ अयक्ष्मा, क्षयरोग-शून्य, गैरमदकूक, जिसे छईकी बीमारी न रहे । ३ स्वास्थ्यकर, सेहतबखूश । (स्त्री०) ४ स्वास्थ्य, तन-दुरुस्ती ।

अयक्ष्मकरण (सं० त्रि०) स्वास्थ्यकर, सेहतबखूश ।

अयक्ष्मताति (वै० स्त्री०) १ क्षयरोगकी शून्यता, छईकी बीमारीका न होना । २ स्वास्थ्य, तनदुरुस्ती ।

अयक्ष्मत्व (वै० स्त्री०) अयक्ष्मताति देखो ।

अयक्ष्ममाण (सं० पु०) वलिदानकी अनिच्छा, कुर्बानी करनेकी खाहिशका न होना ।

अयजनीय (सं० त्रि०) १ यज्ञमें आदर पानेके अयोग्य । २ निन्दित, बदनाम ।

अयजुष्क (वै० त्रि०) यज्ञीय पदसे रहित ।

अयज्ञ (सं० त्रि०) नास्ति यज्ञो अस्य, नञ्-बहुव्री० ।

१ अक्षतयज्ञ, यज्ञ न करनेवाला । (पु०) २ यज्ञका अभाव । ३ अनुत्तम यज्ञ ।

अयज्ञक (सं० त्रि०) यज्ञके अयोग्य, जो यज्ञके काबिल न हो ।

अयज्ञदत्त (सं० पु०) न यज्ञदत्त, दुष्ट यज्ञदत्त, जो यज्ञदत्त हकीर हो ।

अयज्ञसाच् (वै० त्रि०) यज्ञ न करनेवाला, जो तुच्छ यज्ञ करता हो ।

अयज्ञिय (सं० त्रि०) यज्ञं अर्हति; यज्ञ-घ, ततो नञ्-तत् । यज्ञमें देनेको अयोग्य, जो यज्ञमें देने काबिल न हो ।

अयज्य (सं० त्रि०) यजति; यज-युच्, ततो नञ्-तत् । यज्ञ न करनेवाला, जो अध्वर्यु न हो, खराब ।

अयज्वन् (सं० पु०) विधिना इष्टवान्; यज-क्वनिप्, ततो नञ्-तत् । अक्षतयज्ञ, यज्ञ न करनेवाला ।

अयणाचार्यसूनु—विष्णुमाहात्म्यप्रवृत्ति-रचयिता ।

अयत् (सं० त्रि०) निश्चेष्ट, चेष्टा न करनेवाला, जो कोशिश कर न रहा हो ।

अयत (सं० त्रि०) यम-क्त, ततो नञ्-तत् । १ अक्षत-यम, नियमहीन, जो इन्द्रियके दमनमें अशक्त हो, परहेज न रखनेवाला, बेकायदा, जो इन्द्रियको रोक न सकता हो । यतते; यत-अच्, नञ्-तत् । २ यत्न-शून्य, बेतदवीर, कोशिश न करनेवाला ।

अयतेन्द्रिय (सं० त्रि०) इन्द्रियको यममें न रखने-वाला, जिसकी इन्द्रिय चलायमान रहे ।

अयत्न (सं० पु०) न यत्नः, अभावे नञ्-तत् । १ यत्न-का अभाव, आयासाभाव, बेतदवीरी । (त्रि०) नास्ति यत्नो यस्य, बहुव्री० । २ यत्नशून्य, बेतदवीर, कोशिश न करनेवाला ।

अयत्नकारिन् (सं० त्रि०) आयासशून्य, चिन्तारहित, शिथिल, तदवीर न लड़नेवाला, बेपरवा, सुस्त, काहिल ।

अयत्नकृत (सं० त्रि०) सरल अथवा प्रस्तुत रूपसे उत्पन्न किया हुआ, स्वतःप्रवर्तित, जो आसानीसे या फीरन् निकल आया हो ।

अयत्नज, अयत्नकृत देखो ।

अयत्नतस् (सं० अव्य०) विना चेष्टा, बेतदवीर लड़ाई, खदे-ब-खुद, आप ही आप ।

अयनवत् (सं० त्रि०) अकर्षण, निषेष्ट, शिथिल, नाकाम, वैपरवा, सुस्त, जो तद्वीर न लड़ाता हो।
 अथवा (सं० अव्य०) न यथा तुल्ययोग्यत्वे, नञ्-तत्।
 १ विमृङ्गल वा अनुपयुक्त रूपसे, नामुवाफिक, या नाकाबिल तौरपर। (त्रि०) नास्ति यथा तुल्य योग्यता यस्य यत्र वा, बहुव्री०। २ अयोग्य, नालायक। अयन, वेतद्वीर, दौड़-धूप न लगानेवाला। ४ मिथ्या, भूठ। (पु०) ५ अयोग्य कर्म, नाकाबिल काम।
 अयथातथ्य (सं० त्रि०) यथा योग्यं तथा न भवति, नञ्-तत्। १ अथवा, नामुनासिव। २ निष्प्रयोजन, निरर्थक, वेकाम, वेफायदा, फजूल। (अव्य०) ३ निरर्थक रूपसे, नाकाबिल तौर पर। (क्लो०) ४ अयथातथ्य, अयथार्थका भाव, नामुनासिवत।
 अयथातथ्य (सं० क्लो०) अनुरूपताका अभाव, अयुक्तता, अनौचित्य, अयोग्यता, असदृशता, नामुवाफिकत, नामुनासिवत।
 अयथाद्योतन (सं० क्लो०) अनपेक्षित विषयकी सूचना, गैरमुतरक्किब बातकी खबर।
 अयथापूर्व (सं० त्रि०) अभूतपूर्व, अदृष्टप्रतिम, गैर-मामूल, जिसकी नज़ीर न मिले।
 अयथाबल (सं० अव्य०) अपने बलके विपरीत, अपनी ताकतकी खिलाफ।
 अयथामात्र (सं० त्रि०) मापसे उलटा, नापसे खिलाफ।
 अयथामुखीन (सं० त्रि०) मुंह फेरे हुआ, जो चेहरा झुमाये हो।
 अयथार्थ (सं० त्रि०) नास्ति यथा अर्थो यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ मिथ्याभूत, मानी या मतलबके मुवाफिक, न रहनेवाला, वेमानो। २ अयोग्य, नामुनासिव, नाकाबिल।
 अयथार्थज्ञान (सं० क्लो०) मिथ्या आभास, भूठी समझ।
 अयथार्थबुद्धि (सं० क्लो०) अर्थव्यभिचारो अप्रमाण जन्य ज्ञान। (तत्कभाषा)
 अयथार्थानुभव (सं० पु०) अप्रमावत् अर्थानुसन्धेय।
 (विशान्वचनद्वय)
 अयथावत् (सं० अव्य०) यथा योग्यं रूपमर्थानि

अर्हार्थं वति, ततो नञ्-तत्। अनुरूप, गुलतीसे, नादुरुस्तीमें।
 अयथाशास्त्रकारिन् (सं० त्रि०) शास्त्रके अनुसार काम न करनेवाला, अधार्मिक, बुरा, खराब।
 अयथेष्ट (सं० अव्य०) इष्टमनतिक्रम्य, यथेष्टम्, ततो नञ्-तत्। १ इच्छाके विरुद्ध, मर्जीके खिलाफ। (त्रि०) अर्थ आदि० अच्। २ अल्प, थोड़ा, कम।
 अयथोचित (सं० त्रि०) अनुपयुक्त, नाकाबिल, जो सुनासिव न हो।
 अयन (सं० क्लो०) अय-इण् वा भावे ल्युट्। १ गमन। २ सूर्य एवं चन्द्रमाका दक्षिणसे उत्तर और उत्तरसे दक्षिण गमन। ३ पथ। ४ गृह, आश्रय। ५ स्थान।
 ६ अयननाम्नी संक्रान्ति। “अयने विप्रवे चैव संक्रान्ताम्।” (भृति) ७ उक्त अयनसाधन शास्त्र। ८ सैन्यनिवेश रूप व्यूह-प्रवेशका पथ। ९ राशिचक्रका क्रान्तिवृत्तारम्भ स्थान विशेष। १० अंश। ११ अयनाभिमानो देवताका याग विशेष। १२ सूर्यके उत्तर और दक्षिण दिशामें जानिका काल।
 तीन ऋतुका एक अयन और दो अयन का एक वर्ष होता है।
 ‘ही ही माघादिमाघीसाहसुरयनं त्रिभिः।
 अयने द्वे गतिरुदय दक्षिणार्कस्य वत्सरः ॥’ (भरर)
 पहले सब देशके मनुष्योंका ऐसाही विश्वास था, कि पृथिवी समतल भूमि है। सूर्य, चन्द्र प्रभृति ग्रहगण इस पृथिवीको घेष्टन कर घूमते फिरते हैं। आखिर हमारे देशके आर्यभट्टने लोगोंका यह भ्रम दूर कर दिया, तो भी वह सूर्यकी ठीक गति स्थिर कर न सके। आजकल युरोपमें ही ज्योतिष शास्त्रकी विशेष उन्नति हुई है। सूर्य एक स्थानमें है, परन्तु स्थिर नहीं है। यह अपने ही स्थानोंमें पच्चीस दिनमें एक बार घूम आता है। पृथिवी चन्द्र एवं और भी अनेक ग्रह सूर्यकी चारो ओर घूमते हैं। इन सब विषयोंको युरोपीय पण्डितोंने सुचारुरूपसे निश्चित किया है।
 पृथिवी वर्ष भरमें एक बार सूर्यकी चारो ओर घूम आती है। फिर अहोरात्रमें आप भी एक बार घूमती

है। किन्तु सहज विवेचनामें पृथिवीकी गति ठीक सूर्यकीही गति जान पड़ती है। इसके अतिरिक्त पृथिवी पश्चिम दिशासे पूर्व दिशामें घूमकर आती है। सहज दृष्टिमें यह भी ठीक विपरीत दिखाई देता है।

राशिचक्र ३६० अंशोंमें विभक्त है। राशिचक्रमें,—
मेष, वृष, मिथुन, कर्कट, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन यही बारह राशि हैं। अतएव एक एक राशिका परिमाण ३० अंश है। राशिचक्रमें २७ नक्षत्र हैं। इसलिये दो पूर्ण नक्षत्र और एक का एक चरण लेकर एक राशि होता है। अर्थात् प्रत्येक नक्षत्रका परिमाण १३ अंश २० कला है। पृथिवीकी मध्यरेखा एवं भूचक्रकी मध्यरेखा जहां समसूत्रपातमें मिली उसका नाम क्रान्तिपात है। इस क्रान्तिपातके ऊपरसे उत्तर दक्षिणकी ओर लम्बी जिस एक रेखाकी कल्पना की जाती है, उसे विषुवरेखा कहते हैं। इस देशके ज्योतिषानुसार इस तरहकी गणना की जाती है, कि सूर्य इस रेखासे २७ अंश उत्तर और २७ अंश दक्षिणमें गमनागमन करता है। उसी गतिका नाम अयनगति और उसके एक एक अंशका नाम अयनांश है। किसी किसीके मतसे ६६ वर्ष ८ मासमें एक एक अयनांशकी गति समाप्त होती है। इसलिये ५४ अंश जानेमें ३६०० वर्ष लगते हैं। किन्तु एक एक अयनांश बीतते ७२ वर्ष लगते यही अनेक मनुष्य स्वीकार करते हैं। अयनांश गति द्वारा दिवारात्रका व्यतिक्रम होता है। संप्रति अयनांश २०।४६।१० है, इसलिये इस समय १० आश्विन और १० चैत्रको दिवारात्रि समान होती है। जिस बार अयनांश शून्यमें आ पड़ेगा, उस वर्ष ३० आश्विन और ३० चैत्र को दिवारात्रि समान होगी। कारण, उस दिन सूर्य क्रान्तिपातमें आ उपस्थित होता है। उसके बाद अयनांश जितना बढ़ता है, उतना ही पीछे आकर दिवारात्रि समान होती है। अयन, अयनांश अयनसंक्रान्ति इत्यादिका विशेष विवरण एवं चित्र प्रकृति,—चन्द्र, पृथिवी और सूर्य ग्रहमें देखो। आयन-अयनसाध्य, अयनसम्बन्धीय, आयनिक, अयनजात। (स्त्री०) आयनिकी।

अयनकाल (सं० पु०) अयनाधारः कालः, मध्यपदलोपी ६-तत्। अयनांशस्थित काल, येतिदाल-लैलो-निहारवाले नुक्तोंके बीचका वक्त।

अयनचलन (सं० स्त्री०) अयनस्य चलनं चलनं वा, ६-तत्। अयनांशका पूर्व वा पश्चिमके स्थानान्तरको चलन, नुक्तायेतिदाल-लैलोनिहारकी मशारिक, या मगरिब किसी दूसरी जगहको रवानगी।

अयनज (सं० पु०) अयनात् राशीनां स्वस्थानचलनात् जायते, जन-ड। अयनांशजात मासादि, नुक्तायेतिदाल-लैलोनिहारसे निकला महीना वगैरह।

अयनदेवता (सं० स्त्री०) मार्गके निकट रखी हुयी देवी वा मूर्ति।

अयनभाग (सं० पु०) अयनस्य बोधको भागः शाक०-तत्। अयनांश, सुकरर भिन्तकत-उजबुरुज या हमलवाले पहले नुक्तेके शुरू और बहारी मोतदिल-उल-नहारके मुत-अक्षिक नुक्तेके बीचका कमान।

अयनमण्डल (सं० स्त्री०) ६-तत्। राशिचक्र और राशिचक्रस्य सूर्यके गमनका पथ, भिन्तकत-उल-बुरुज। (Ecliptic)

अयनमास (सं० पु०) अयन-निरूपितो मासः, शाक०-तत्। अयनांशानुसार दिनमानादिके ज्ञानार्थ कल्पित मास, जो महीना नुक्ते-येतिदाल-लैलोनिहारके सुवो-फ़िक दिनका मिकदार वगैरह जाननेको फर्ज़ कर लिया जाता हो।

अयनवलन, अयनचलन देखो।

अयनवृत्त, अयनमण्डल देखो।

अयनसंक्रम (सं० पु०) अयनांशानुसारिण संक्रमः, शाक०-तत्। मेषादि राशिके अयनांशमें ग्रहगणका सञ्चार।

अयनसंक्रान्ति (सं० स्त्री०) अयनघटिता संक्रान्तिः, शाक०-तत्। १ सूर्यकी दक्षिणायनघटित संक्रान्ति, कर्कट-संक्रान्ति। २ सूर्यकी उत्तरायणघटित संक्रान्ति, मकरसंक्रान्ति। ३ चल-संक्रान्ति।

अयनसंपात (सं० पु०) अयनांशका पतन, नुक्ता-येतिदाल-लैलोनिहारका गिराव।

अयनांश (सं० पु०) सूर्यगति विशेषका भाग, जो हिस्सा आफ़ताबको किसी चालका हो।

अयनांशज (सं० पु०) अयनांशात् जायते, अयनांश-जन-ड। प्रथम क्रान्तिवृत्तान्तर स्थानको अतिक्रमकर उत्पन्न होनेवाला मास, जो महीना नुक्ता-येतिदाल-लैलोनिहारको लांघकर निकला हो।

अयनान्त (सं० पु०) अयनकी सोमा, नुक्ता-येति-दाल-लैलोनिहारका खातिमा।

अयन्त (वै० क्लो०) १ अवाध्यता, मनमानी। २ अस्त्र-विशेष, कोई हथियार। यह अस्त्र अतिशय भौषण होता और शत्रुको रोक रखता है।

अयन्तित (सं० त्रि०) अवाध्य, स्वतन्त्र, खुद-इच्छा-यार, मनमौजी, जो रोक-टोक न मानता हो।

अयःपान (सं० क्लो०) नरक विशेष, कोई दो जूड़। इसमें यमदूत पापीको तप्त-तरल लौह पिलाते हैं।

अयःप्रतिमा (सं० क्लो०) लौहमूर्ति, लोहेका बुत।

अयम—सुप्रसिद्ध चतुर्षु नृपति नहपानके मन्त्री। बम्बई-के जुन्नरगढमें जो शिलालेख मिला, उसपर लिखा है,—इन्होंने एक तालाब खुदवाया और एक भवन बनवाया था। इनका जन्म वत्सगोत्रमें हुआ रहा।

अयमित (सं० त्रि०) प्रतिबन्धरहित, अनिवारित, रोक न हुआ, जो कटा न हो।

अयव (सं० पु०) अयो यवः सदृशो वा, नञ्-तत्। १ विष्ठाजात कृमिविशेष, गोबरौला कौड़ा। (क्लो०) यु-मिश्रणे-कर्तरि-अच्, ततो नञ्-तत्। २ चन्द्र और सूर्यका वियोजक कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख। (त्रि०) नास्ति यवो यज्ञसाधनत्वात् यत्र। ३ यवहीन, जिसमें यव न लगे। पिढकृत्यादि तिलसाध्य होता, उसमें यवका प्रयोजन नहीं पड़ता।

अयवक (सं० त्रि०) यवरहित, दुष्टयवसंयुक्त, जिसमें यव न रहे, बुरे यववाला।

अयवन् (सं० क्लो०) कृष्णपक्ष, अंधेरा पाख।

अयवस् (सं० पु०) न युतः मिलितः चन्द्रसूर्यो यत्र, यु-आधारे-असुन्। अर्धमास, पक्ष। हमारे शास्त्र-कारोंके मतसे अर्धमास अर्थात् पूर्णिमाको चन्द्र एवं सूर्य अति दूरवर्ती सप्तम राशिमें रहता किसी तरह

मिलन नहीं होता; इससे अर्धमास अयव कह-लाता है।

अयविका (सं० स्त्री०) अयवक देखो।

अयव्य (सं० त्रि०) यवके अयोग्य, जो यवके काबिल न हो।

अयःशय (वै० त्रि०) लौहमें लेटनेवाला, लोहेका बना हुआ।

अयःशिप्र (वै० त्रि०) लौह हनु वा नासा विशिष्ट, जिसका जबड़ा या नाक आहनी रहे।

अयःशीर्षन् (वै० त्रि०) लौह-शिरस्-विशिष्ट, जिसका सर आहनी रहे।

अयःशूल (सं० क्लो०) १ लोहप्रास, लोहेका भाला। २ सव्याज उपाय, धोकेकी तद्वोर।

अयःस्थुण (सं० त्रि०) १ लौहस्तम्भ-विशिष्ट, जिसमें आहनी खम्भे लगे। (पु०) २ ऋषिविशेष।

अयश (हिं०) अयशस् देखो।

अयशस् सं० क्लो०) अशयते स्तुयते; अशु-असुन् युद् च, विरोधे नञ्-तत्। १ यशका विरोधो अपवाद, अकीर्ति, बदनामी। (त्रि०) नास्ति यशो यस्म, नञ्-बहुव्री०। कीर्तिशून्य, बदनाम, नागवार।

अयशस्कर (सं० त्रि०) यशस्-कृ-ताच्छिन्नादौ-ट, ततो नञ्-तत्। अकीर्तिकर, अपवादजनक, बदनाम करनेवाला, जिससे हिकारत रहे।

अयशस्य (सं० त्रि०) अयशो हितम् : हितार्थं यत्, विरोधे नञ्-तत्। कीर्तिशून्य बदनाम।

अयशस्त्री (सं० त्रि०) कीर्तिशून्य बदनाम।

अयशी, अयशस्त्री देखो।

अयशूर्ण (सं० क्लो०) लौहकिट्ट, लौहज, लोहेका बुरादा या रेत।

अयस् (सं० क्लो०) एति आगच्छति अयस्कान्त-मणि-कर्षणात्। १ लौहमात्र, लोहा। २ कान्तलौहसुम्बक, खेड़ौका लोहा। एति गच्छति अङ्गुलीयकादिरूपेण शरीरं ऋक्षत्रय-सम्बिभागादिना वा-पुरुषात् पुरुषान्तरं गच्छत्यनेन धर्मदानादिना वा। ४ हिरण्य, सोना। भावे असुन्। ५ गमन, रवानगी। अयसा निर्मितम्, अण्। ५ आयस, लोहेका छत्ता वगैरह। (पु०) ७ अग्नि, पाग।

अयस, अयस् देखो।

अयस्कंस (सं० पु०-स्त्री०) अयो विकारः कंसः अयसो वा कंसः पात्रं सत्वम्। लौहनिर्मित पानपात्र, लोहेका कटोरा या आबखोरा।

अयस्कणी (सं० स्त्री०) अय इव कर्णविस्थाः, सत्वं ङीष्। लौहतुल्य कठिन कर्णयुक्त स्त्री, जिस औरतके कान लोहे-जैसे कड़े रहें।

अयस्काण्ड (सं० पु०-स्त्री०) लौहवाण, लोहेका तीर।

अयस्कान्त (सं० पु०) अयस्सु मध्ये कान्तः रमणीयः, ७-तत्; कस्कादित्वात् सत्वम्। १ कान्तिलौह नामक लौहविशेष, खेड़ैका लोहा। अयसां कान्तः प्रियः, नैक्यमात्रेण। २ कान्तपाषाण, चुम्बकपत्थर। यह लेखन, शीत और मेदोविषन्न होता है चुम्बक देखो। ३ शल्य उद्धार चिकित्सा, जिस इलाजमें चुम्बे हुये हथियारके निकालनेका काम रहे।

अयस्कान्तशिला (सं० स्त्री०) लौहचुम्बक, चुम्बक पत्थर।

अयस्काम (सं० त्रि०) अयो लौहं कामयते; अयस्कम् अण्-उपस० सत्वम्। लौहाभिलाषी, जिसे लोहा पानेकी खाहिश रहे।

अयस्कार (सं० पु०) अयो विकारः करोति; अयस्क अण्, उप-स० सत्वम्। १ लौहकार, लोहार। २ जङ्घाका ऊर्ध्वभाग, टांगका ऊपरी हिस्सा।

अयस्कीट (सं० पु०) लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग।

अयस्कुम्भ (सं० पु०) अयो विकारः कुम्भः सत्वम्, शाक०-तत्। लौहनिर्मित घट, लोहेका घड़ा।

अयस्कुशा (सं० स्त्री०) अयः सहिता कुशा, शाक०-तत्। लौह-सहित वस्त्रा, जिस रस्सीमें कुछ-कुछ लोहा लगा रहे।

अयस्कृति (सं० स्त्री०) अयसा कृतिः चिकित्सा मेदः, ३-तत्। महाकुष्ठका चिकित्साविशेष।

अयस्ताप (सं० त्रि०) लौहको उष्ण रक्तवर्ण बनाने-वाला, जो लोहेको तपा लाल कर डालता हो।

अयस्थूणा (सं० स्त्री०) अयो निर्मिता स्थूणा, शाक०-तत् वा विसर्गलोपः। १ लौहमय गृहस्तम्भ, लोहेका खम्भा। 'स्थूणा गृहस्तम्भः' (उज्ज्वलेश्वर) २ लौहप्रतिमा,

लोहेका बुत। (पु०) अयो निर्मिता स्थूणा यस्य; ६-बहुव्री०, गौणे ऋस्। ३ लौहस्थूणायुक्त गृहस्थ, जिस आदमीके घरमें आहनी खम्भा लगा रहे। ३ ऋषिविशेष। (त्रि०) ७-बहुव्री०। ४ अयोमय अक्षयुत, लोहेकी धुरीवाली। अयस्थूण शब्द शिवादि-गणके मध्य आया है।

अयस्यात्र (सं० स्त्री०) अयोमयं पात्रम्, मध्यपदलोपी कर्मधा०। लौहमय पात्र, लोहेका बरतन।

अयस्मय (सं० त्रि०) अयो विकारः, अयस्-मयट्। अयस्मयादीनि छन्दसि। पा १।४।२०। १ लौहमय आहनी, लोहेका। (पु०) २ मनु स्वारोचिषके पुत्रविशेष।

अयस्मयी (सं० स्त्री०) असुरभूके तीन निवास-स्थानमें एक।

अया (वै० अव्य०) इस रीतिसे, ऐसे, इसतरह, यों। अयां (अ० वि०) १ प्रकाशित, खुला हुआ। २ साफ़, जो भ्रमात्मक न हो।

अयाचक (सं० त्रि०) याच्ना न करनेवाला, जो मांगता न हो। (स्त्री०) अयाचिका।

अयाचित (सं० स्त्री०) याच-क्त याचितम्, नञ्-तत्। १ अमृताख्य वृत्ति, न मांगनेकी हालत। (पु०) २ उपवर्ष ऋषिका नाम विशेष। (त्रि०) ३ अप्रार्थित, न मांगा हुआ, जिससे कोई चीज मांगी न जाये। (अव्य०) ४ विना याच्ना, बेमांगी।

अयाचितवृत्ति (सं० स्त्री०) याच्ना हीन भैक्षपर निर्वाह, बेमांगी खैरातपर गुजरका करना।

अयाचितव्रत (सं० स्त्री०) अयाचितवृत्ति देखो।

अयाचिन् (सं० त्रि०) याच्ना न करते हुआ, जो मांगता न हो।

अयाची, अयाचिन् देखो।

अयाच्य (सं० त्रि०) याच्नाके अयोग्य, जो मांगने-काबिल न हो।

अयाज्य (सं० त्रि०) न याजयितुमर्हः; यज-णिच्-यत्, नञ्-तत्। १ वलिदानके अयोग्य, जिसके लिये कुरबानी करना मुनासिब न ठहरे। २ पतित, गिरा हुआ। ३ यज्ञ करनेके अयोग्य। ४ धार्मिक अनुष्ठानमें प्रवेश पानेके अयोग्य।

अयाज्यत्व (सं० स्त्री०) पतित होनेका भाव, गिर जानेकी हालत।

अयाज्ययाजक (सं० पु०) पतित व्यक्तिको यज्ञ करानेवाला पुरुष।

अयाज्ययाजन (सं० स्त्री०) अयाज्यानां याजनम्, क्ष-तत्। अयाज्य पतितादिका याजन, पतितादिका यागपूजादि करना, पतितादिगणको याग किंवा पूजादि कराना।

अयाज्यसंयाज्य (सं० स्त्री०) अयाज्यस्य पतितादेः सम् सम्यक् याज्यम्, क्ष-तत्; अयाज्य-सम्-यज-णिच्-यत्। अयाज्ययाजन देखो।

अयातपूर्व (सं० त्रि०) अनुग, अनुयायी, अगस्ता, दूसरा, आयन्दा।

अयातयाम (सं० त्रि०) यातो गतः यामः प्रहर-कालो यस्य, नञ्-तत्। १ बलिष्ठ, जो कमजोर न हो। २ प्रयोग करनेसे न बिगड़ा हुआ, जो इस्तेमाल करनेसे खराब न हुआ हो। ३ नूतन, टटका। ४ एक प्रहर न वितायि हुआ, जिसको एक पहर न लगा हो। ५ विगतदोष, वैश्व। ६ जिसका काल वीत न जाये, मौकेका। ७ परिशुक्त न होनेवाला, जो खाया न गया हो। (स्त्री०) ८ याज्ञवल्क्य द्वारा आविष्कृत यजुर्वेदका अंश विशेष।

अयातयामता (वै० स्त्री०) अनभिभूत बल, नवीनता, ताजगी, जो ताकत बिगड़ी न हो।

अयातयामन् (वै० त्रि०) बलिष्ठ, नूतन, ताजा, जो कमजोर न हो।

अयातु (वै० त्रि०) या-तु, नञ्-तत्। १ राक्षसभिन्न, अहिंसक, न मारनेवाला, जो शैतान् न हो। (पु०) २ देवता, राक्षस न होनेवाला व्यक्ति।

अयाथातथ्य, आयथातथ्य (सं० स्त्री०) न यथातथा-भावः, अज्, नञ्-तत्। १ मिथ्यात्व, नारास्त्य, भूठा-पन। २ अयथायत्वं, गैर-मुनासिबत, जो बात ठीक न हो।

अयाथार्थिक (सं० त्रि०) १ अनुचित, अयोग्य, गैर मुनासिब, जो ठीक न हो। २ कृत्रिम, कल्पित, बनावटो, मसनूयी, जो असली न हो।

अयाथार्थ (सं० स्त्री०) अनौचित्य, अयोग्यता, गैर-मुनासिबत, नाकामिबलियत।

अयान (सं० स्त्री०) नास्ति यानं चलनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ स्वरूप, प्रकृति, स्वभाव, स्वरत, कुदरत, तबीयत। २ यज्ञ। नञ्-तत्। ३ गमनाभाव, ठहराव, सुकाम। (त्रि०) नास्ति यानं वाहनं गतिर्वा यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ वाहनहीन, वेसवारी। ५ गतिहीन, न चलनेवाला, जो जाता न हो।

अयानत (अ० स्त्री०) साहाय्य, सहाारा।

अयानप (हिं० पु०) १ ज्ञानका अभाव, वैशक्ती, समझ न आनेकी हालत। २ सादालौहो, भोलापन, टेढ़े न पढ़नेकी हालत।

अयानपन अयानप देखो।

अयानय (सं० पु०) अयः प्रदक्षिणम्, अनयः प्रसव्यम्; प्रदक्षिण प्रसव्यगामिनां शाराणां यस्मिन् परशारैः पदानामसमावेशः। अयुपद सर्वत्रायानयं वच्चा मचयति नेयेषु। पा ३।२।६। १ पाशक्रीड़ाका शीर्षस्थान, जिस स्थानमें गोटेके जानेसे विपक्षको गोटे कोई अनिष्ट कर न सके। (स्त्री०) २ पाशक्रीड़ा विशेष।

अयानयीन (सं० पु०) शीर्षस्थानप्राप्त पांसा, जो गोटे जंची जगह पहुँच गयी हो।

अयानी (हिं० स्त्री०) अन्नानी, जिस औरतको समझ न रहे।

अयाल (फा० पु०) १ केशर, घोड़े और शेरके गलेका बाल। (अ०) २ सन्तान-सन्तति, बाल-बच्चा।

अयावक (सं० त्रि०) यावकविहीन, मझावरसे खाली, प्रकृत रक्तवर्ण, जो कुदरतन् लाल हो।

अयावन (सं० स्त्री०) योग करानेका अभाव, जिस हालतमें मिला न सके।

अयाशु (वै० त्रि०) अयं अश्रुति, अय-अश-उष्। राक्षस, सम्पर्कके अयोग्य, जो साथ रहने काबिल न हो।

अयास् (वै० अव्य०) एति गच्छति सर्वत्र, इण्-आसि। अग्निमें, आगपर। 'अयाः वज्रः। खरादि पाठादव्ययम्।' (उज्ज्वलदशः)

अयास्य (वै० त्रि०) यस्-णिच्-यत्, नञ्-तत्।

१ क्षेपण करानेको अशक्य, जो फेंकवा न सकता हो।
 २ यापन करनेको अशक्य, जो बिताया न जा सकता हो।
 ३ क्षेपण न किया जानेवाला, जिसे फेंक न सकें।
 ४ युद्ध द्वारा वश किये जानेको अशक्य, जिसे लड़कर मातहत न बना सकें। (पु०) आस्थात् मुखादयते वहिर्गच्छति; इण्-अय वा अच्; ततः षष्ठो० पदव्यत्ययः। ५ मुखसे वहिर्गामौ वायु, जो हवा मुंहसे बाहर निकलती हो। ६ अङ्गिरा वंशके मुनिविशेष। यह सकल लोकके बन्धु-स्वरूप रहे।

अथासोमीय (वै० स्त्री०) सामवेदका मन्त्र विशेष।
 अथाहव (सं० स्त्री०) कान्तर धातु, कांसा।
 अयि (सं० अव्य०) १ क्या, क्यों। २ अच्छा, खूब।
 ३ ए, ओ। ४ प्यारी, प्यारे। ५ आयिये, पधारिये।
 यह अव्यय प्रश्न, अनुनय, सम्बोधन, अनुराग एवं सन्नेह आमन्त्रणमें आता है।

‘अयि प्रिये प्रीतिवतां मुरारी’ (लोलिम्बरज)

अयुक्छद (सं० पु०) न युज्यन्ते समतया असमाः छदाः पत्राण्यस्य। सप्तपर्णं वृक्ष, सतनौ। सतनौ पेड़की हरेक डालमें अलग अलग सात पत्ते रहते, इसीसे उसे अयुक्छद कहते हैं।

अयुक्त (सं० त्रि०) युज-क्त, नञ्-तत्। १ अन्य विषयमें मनोयोग हेतु कर्तव्य विषयसे अनवहित, जो दूसरी बातमें दिल लग जानेपर फर्जसे अलाहिदा हो। २ असंयुक्त, छुदा, जो मिला न हो। ३ अनियोजित, जो लगा न हो। ४ कसा न हुआ, जिस पर काठी वगैरह न चढ़े। ५ अयोग्य, नालायक। ६ वहिर्मुख, भगा हुआ। ७ युक्तिशून्य, गंवार। ८ आपदगत, मुसीबतमें पड़ा हुआ।

अयुक्तकृत् (सं० त्रि०) कुकर्म करनेवाला, जो बुरा काम करता हो।

अयुक्तचार (सं० पु०) गुप्तपुरुषको नियुक्त न करने वाला, जो जासूस न रखता हो, राजा, बादशाह।

अयुक्तता (सं० स्त्री०) अप्रयोग, अनियुक्ति, कामसे दूरका रहना।

अयुक्तत्व (सं० स्त्री०) अयुक्तता देखो।

अयुक्तपदार्थ (सं० पु०) सञ्चय किया जानेवाला शब्दार्थ, लफ्ज़का जो मानी मुहैया किया जाता हो।
 अयुक्तरूप (सं० त्रि०) अनुचित, अयोग्य, नाकाबिल, गैरमुनासिब, नालायक।

अयुक्ति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ युक्तिका अभाव, जुदायी, मेलका न मिलना। २ अन्याय, गैर-मुन्सिफी। ३ अयोग्यता, नाकाबिलियत। ४ वंशो बजानेकी चाल।

अयुक्पलाश (सं० पु०) वृक्षविशेष, किसी दर-खतका नाम।

अयुक्पादयमक (सं० स्त्री०) अर्धाक्षर अलङ्कार, तजनीस। छन्दके प्रथम और तृतीय पादमें एक ही शब्द विभिन्न अर्थका द्योतक रहनेसे यह अलङ्कार होता है।

अयुक्शक्ति (सं० पु०) शिव, महादेव।

अयुग (सं० त्रि०) युग्म-भिन्न, विषम, ताक, अकेला।

अयुगच्छ, अयुग्मनेव देखो।

अयुगपद (सं० अव्य०) न युगपत्, नञ्-तत्। क्रम-क्रम, एक-एक, धीरे-धीरे।

अयुगपदग्रहण (सं० स्त्री०) क्रमागत आसेध, जो समझ धीरे-धीरे आती हो।

अयुगपदभाव (सं० पु०) अनुपूर्वता, क्रमानुसारिता, सिलसिलेबन्दी।

अयुगिष्ठ (सं० पु०) पञ्चवाण, कामदेव।

अयुगू (सं० स्त्री०) अयुजमद्वितीयम् एकसन्तानमिति यावत् अवति गर्भे धारयति, अव-क्तिप्-ऊठ्। काक-वन्ध्या, सिवा एककी दूसरा सन्तान न उत्पन्न करने-वाली स्त्री, जो औरत एक ही बच्चा पैदा करती हो।

अयुग्धातु (सं० त्रि०) वीजकी विषम संख्यासे विशिष्ट, जिसमें जुड़-आजमका शुमार ताक रहे।

अयुग्म (सं० स्त्री०) युज्यते समतया; युज्-मक्-कुञ्च, नञ्-तत्। १ युग्म न होनेवाला द्रव्य, विषम, ताक, जो चीज बेजोड़ हो। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ एकादि संख्या-विशिष्ट, एक वगैरह अदद रखने-वाला, जो पूरा न हो।

अयुग्मक (सं० पु०) सप्तपर्णवृक्ष, सतनौ।

अयुग्मच्छद (सं० पु०) सप्तपर्ण वृक्ष, सतनो।
अयुग्मनेत्र (सं० पु०) अयुग्मानि युग्मभिन्नानि नेत्रा
यस्य, बहुव्री०। १ शिव। शिवके ललाटपर अति-
रिक्त एक नेत्र विद्यमान है, इसीसे उनका नाम
अयुग्मनेत्र पड़ा। (क्ली०) युग्मश्च तत् नेत्रश्च त्रि,
कर्मधा०। २ युग्मभिन्न नेत्र, कपालनेत्र।

अयुग्मपत्र, अयुग्मच्छद देखो।

अयुग्मपर्ण, अयुग्मच्छद देखो।

अयुग्मवाण (सं० पु०) कामदेव।

अयुग्मवाह (सं० पु०) अयुग्माः विषमा सप्त वाहा
यस्य, बहुव्री०। समाश्व, सूर्य।

अयुग्मशर (सं० पु०) अयुग्मा विषमाः पञ्चशरा
यस्य, बहुव्री०। पञ्चशर विशिष्ट, कामदेव।

अयुग्वाण, अयुग्मशर देखो

अयुक् (वै० त्रि०) विषम, ताक, वेजोड़।

अयुज् (सं० त्रि०) न युज्यते समतया; युज-क्तिन्,
नज्-तत्। अयुग्म, विषम, ताक, वेजोड़, जो पूरा
न हो।

अयुज, अयुज् देखो।

अयुत (सं० त्रि०) यु-क्त, नज्-तत्। १ असंयुक्त,
असम्बद्ध, मिला न हुआ, जो सिलसिलेमें न हो।
(वै० त्रि०) २ अविमर्दित, विच्छेदशून्य, दखल न
दिया हुआ, जो परेशान किया न गया हो। (पु०)
३ राधिकके पुत्रविशेष। (क्ली०) ४ दश सहस्र संख्या,
दश हजारका शुमार।

अयुतजित्—भजमानके पुत्रविशेष।

अयुतनायिन् (सं० पु०) अयुतं पुरुष-मेधानाम् अयुतं
नयति स्म, नो-भूते-णिनि। पुरुषवंशके नृपतिविशेष।
इन्होंने प्रासेनजित्की कन्या सुयज्ञाके गर्भ एवं महा
भौमके औरससे जन्मग्रहण किया था। अयुत
संख्यक नरवेध करनेसे इनका नाम अयुतनायौ
पड़ा। पृथुश्रवाकी कन्या कामाके साथ इनका
विवाह हुआ था। कामाके गर्भसे अक्रोधन नामक एक
पुत्रने जन्म लिया। (महाभारत सभाषण २४ अध्याय)

अयुतशस् (सं० अव्य०) अयुतं अयुतं ददाति, वीर्यायं
कारकात् शस्। अयुत-अयुत, दश-दश हजार।

अयुतसिद्ध (सं० त्रि०) यत् अष्टयगभूतं सत् सिद्धं
युतसिद्धम्। न यत्तसिद्धम्—नज्-तत्। उपादान अर्थात्
समवायौ कारण परित्यागकर जिसका उपादान वा
ज्ञान न किया जाय। जैसे कपाल परित्याग कर देनेसे
घटकी उत्पत्ति नहीं हो सकती एवं घट कैसी
वस्तु है, यह भी हमलोग समझ नहीं सकते। इसीसे
घट और कपालको 'अयुतसिद्ध' अथवा अष्टयक्सिद्ध
कहते हैं। (जिन दो भागोंको पहले बना और
जोड़कर कुम्हार घट प्रसृत कर लेते, उन्ही दोनों
खण्डोंको कपाल कहते हैं)।

इसका स्थूल तात्पर्य यह है, जहां कुछ अङ्ग प्रत्यङ्ग
एकत्र कर लेनेसे एक विशेष वस्तुकी उत्पत्ति और
उसका गुण तथा क्रियादि प्रकाश हो; परन्तु उसी अङ्ग
प्रत्यङ्गको परित्याग करनेसे फिर उस वस्तुकी उत्पत्ति
नहीं होती और न उसके गुण वा क्रियादिका ही
प्रकाश होता है। यथा,—वृक्ष कैसा होता है, यह
समझनेके लिये पत्र, शाखा, पल्लव, मूल, घड़, काठ
इन सबको एकत्र ग्रहण करना पड़ता है। इन सबको
एकत्र ग्रहण करनेसे समझमें आता, वृक्ष कैसा
पदार्थ है। किन्तु पत्र पल्लवादिको परित्याग करनेसे
हम लोग नहीं समझ सकते, वृक्ष कैसा होता है।

ऊपर 'उपादान कारण' कहा गया है। इस
बातके कहनेका तात्पर्य यह है, कि कुम्हारकारका दण्ड
घटका निमित्त कारण है। क्यों कि, जब कुम्हार-
कार दण्डसे चाकको घुमाता, तब घट निर्माण
किया जाता है। किन्तु घट निर्माण कर लिये जाने
पर फिर दण्डके साथ घटका कोई सम्पर्क नहीं,
दण्ड एक जगह और घट दूसरी जगह पड़ा रहता
है। घटके कपाल साथ घटका वैसा सम्बन्ध नहीं
है। उसके पृथक् हो जानेपर फिर घटका अवयव
नहीं रहता एवं घट न रहनेसे, शक्तवर्ण या कृष्णवर्ण
इत्यादि गुण भी नहीं रहता। घटका हिलना डोलना
—किसी प्रकारकी क्रिया भी असम्भव हो जाती है।
इस लिये गुण भी घटका अयुतसिद्ध है। किन्तु
वैदान्तिक इस बातको स्वीकार नहीं करते।

अयुतसिद्धि (सं० क्ली०) यु अमिश्रणे-क्त युतम्;

युतयोः अपृथग्रूपेण स्थितयोः सिद्धिः, अभावे न ज-
तत्। पृथक् रूपसे असिद्धि। जैसे, अवयव और अवयवीकी
पृथक् पृथक् रूपसे सिद्धि नहीं होती। अर्थात् हस्त-
पदादि अवयव एवं मनुष्य अवयवो है, यहां अवयव
एवं अवयवीको पृथग्रूपसे सिद्धि होनी असम्भव है।
फिर द्रव्य और गुण एवं द्रव्य और क्रियाकी पृथग्-
रूपसे सिद्धि नहीं हो सकती। अर्थात् द्रव्य न रहनेसे
उसका गुण किम्बा क्रिया भी नहीं रह सकती।

अयुतहोम (सं० पु०) यज्ञविशेष।

अयुताध्यापक (सं० पु०) उत्तम शिक्षक, अच्छा उस्ताद।

अयुतायुस् (सं० पु०) १ जयसेन आराविनके पुत्र-
विशेष। २ श्रुतवत्के पुत्रविशेष।

अयुताश्व (सं० पु०) सिन्धुद्वीपके पुत्रविशेष।

अयुध (सं० स्त्री०) १ शान्ति, अविरोध, सुलह,
मेल, लड़ाईका न रहना। (त्रि०) २ अपराजित,
जो जीता न गया हो। ३ युद्ध न करते हुआ, जो लड़
न रहा हो।

अयुधसेन (वै० पु०) अपराजित सैन्यसे सम्पन्न वीर,
जिस बहादुरकी फौजको जीत न सके।

अयुध्वी (वै० अव्य०) विना युद्ध, वे लड़े-भिड़े, सीधे
तौरपर।

अयुध (सं० पु०) १ युद्ध न करनेवाला व्यक्ति, जो
शस्त्र लड़ता न हो। (हिं०) २ आयुध, हथियार।

अयुध्य (सं० त्रि०) अपराजित, जिसे जीत न सके।

अयुध्विन् (वै० पु०) विजय न पानेवाला वीर, जो
लड़नेवाला जोरदार न हो।

अयुक्तेन (सं० पु०) शिव।

अयुव (वै० त्रि०) न यौति, यु बाहु० क। असंस्पृष्ट,
संसर्गशून्य, परेशान न किया हुआ, जो हिला न हो।

अयूप, अयूप देखो।

अयूप्य (सं० त्रि०) यूपे साधु यत्, नज्-तत्। यूप
प्रस्तुत करनेके अयोग्य, जो यज्ञीय पशुसम्बन्धके काबिल
न हो। नीम, नीबू वगैरहकी लकड़ीसे यूप नहीं
बनाते, इसीसे उसे अयूप्य कहते हैं। फिर पलाश,
खदिर, विष्व प्रभृतिके काष्ठसे यूप बनता, इसीसे वह
यूप्यकाष्ठ ठहरता है।

अये (सं० अव्य०) इण्-एच्। १ सावधान, होशियार,
खबरदार। २ दुःख, हाय, अफसोस। ३ अरे, क्या,
कहां, क्यों, भला। ४ प्रिये, प्यारे, हां। ५ सुनिये,
देखिये, इधर, इज्जूर, सरकार। कोप, विषाद, संभ्रम,
स्मरण, सम्बोधन प्रभृति स्थलमें यह अव्यय आता है।
(हिं० पु०) ६ जन्तुविशेष, कोई जानवर। यह जन्तु
अये-अये बोलनेसे ही 'अये' कहलाता है।

अयोग (सं० पु०) युज-घञ्, अभावे नज्-तत्।

१ योगका अभाव अर्थात् विश्लेष, जुदायी, सु-फारकत,
फर्क। २ ध्यानका अभाव, खयालकी अदममौजूदगी।

३ औषधका अभाव, दवाका न मिलना। ४ रोग-
निदानके विरुद्ध चिकित्सा, जो हकीमी मर्जके

आसारसे खिलाफ रहे। ५ ज्योतिषोक्त तिथिवारादि
जात दुष्ट योग। ६ दो नक्षत्रका योग। ७ कोई

मछली। ८ कठिनोद्यम, जान्फिशानी, कड़ी दौड़-
धूप। ९ वमन द्वारा उपशमनीय रोग, जो बीमारी

को करानेसे छूट सकती हो। १० कूट, सुभ्रम्हा, जिस
बातका मतलब आसानीसे समझ न पड़े। ११ स्वर्ण-

कारकी हथौड़ी। १२ विक्षेप, वक्फा, फर्क।
१३ अयोग्यता, नाकाबिलियत। १४ अनुपस्थित-

स्वामी, गैरहाजिर खाविन्द, रंडुवा। १४ अकाल,
बुरा वक्त। १६ सङ्कट, मुसीबत, तकलीफ। १७ अप्राप्ति,

गैरहासिली; (त्रि०) १८ असंयुक्त, जो मिला न
हो। १९ स्पष्टरीतिसे असम्बद्ध, जो साफ साफ जोड़ा

न हो। २० प्राणपणसे चेष्टा करते हुआ, जो दिलो-
जानसे कोशिश कर रहा हो। २१ अप्रशस्त, खराब,

जो भला न हो। (हिं०) २२ अयोग्य, नाकाबिल।
अयोग्यगुड़ (सं० पु०) लोहगुड़िका, लोहेकी गोली।

अयोगव (सं० पु०) अय इव कठिना गौर्वाणी यस्य,
निपातने अच्। वैश्य कन्याके गर्भ और शूद्रके औरससे

जो शङ्कर जाति उत्पन्न होती है, उसे अयोगव कहते
हैं। शास्त्रकार कहते हैं, कि प्रतिलोम जातिमें एक

वर्णका व्यवधान रहनेसे उस जातिको स्पर्श कर सकते
हैं। वैश्य एवं शूद्रमें केवल एक वर्णका व्यवधान है,

इसलिये अयोगव जातिको स्पर्श कर सकते हैं। इस
समय प्रकृत अयोगव जाति निर्धारित करना बहुत

कठिन है। पश्चिम देशमें यह नाना वर्णोंके साथ मिल गये हैं। यह सब कृषिकार्य और पशुपालन करते हैं।

अयोगवाह (सं० पु०) नास्ति योग उल्लेखरूपः सम्बन्धोऽक्षरसमाप्तायस्त्रेषु येषां ते अयोगाः, अयोगा-उल्लेखरूप-सम्बन्धरहिता अपि वाहयन्ति णत्वषत्वकार्यं निर्वाहयन्ति इति वह-णिच्-अच् वाहाः; अयोगाश्च ते वाहाश्चेति कर्मधा० । १ अनुस्वार और विसर्ग एवं जिह्वामूलीय और उपध्मानीय। पाणिनिने स्वर एवं व्यञ्जन वर्णकी अ इ उण्, ऋ ॠ क् इत्यादि जो समाहार संज्ञा की है, उसमें अनुस्वार विसर्ग, जिह्वामूलीय और उपध्मानीय इन कईका योग अर्थात् उल्लेख नहीं है। इसीसे इन सबको अयोग कहते हैं; किन्तु योग अर्थात् उल्लेख न रहते भी यह सब णत्वादि कार्य निर्वाह करते हैं, इसलिये वाह नाम हुआ है। जिसमें अयोग और वाह यह दोनों धर्म रहते, उस वर्णको अयोगवाह कहते हैं।

अथवा, योगः आश्रयस्थानं तदव्यतिरेकेन न ऊह्यते उच्चार्यते अयोग-वह-घञ्, शाक०-तत् । २ जो वर्ण आश्रयस्थानके योग भिन्न उच्चारित न हो।

‘अयोगवाहा विज्ञेया आश्रयस्थानमागिनः’ (शिवायम्)

विसर्गके जिह्वामूलीय और उपध्मानीय यह दो रूप और भी हैं। ककार खकारके पूर्व अर्द्ध विसर्ग सट्ठ जो चिह्न होता, उसे जिह्वामूलीय कहते हैं। जैसे, +क+ख। फिर पकार फकारके पूर्व जो अर्द्ध विसर्गके तुल्य चिह्न पड़ता, उसे उपध्मानीय कहते हैं। जैसे, <प>फ। अच्के बाद एक विन्दु रहनेसे उसे अनुस्वार और दो विन्दु रहनेसे विसर्ग कहते हैं। अच् भिन्न हलन्त वर्णके बाद यह प्रयुक्त नहीं होते। जैसे अं वं, अः वः । ‘+क+ख इति कखाभ्यां प्रागर्द्धविसर्गसदृशो जिह्वामूलीयः । <प>फ इति पफाभ्यां प्रागर्द्धविसर्गसदृश उपध्मानीयः; अं अः इत्यत्रः परावनुस्वारविसर्गौ ।

“तुवी पूर्वेण सम्बन्धः, सूची तु परगमिनी ।

चलारो योगवाहाऽस्याः, णत्वकर्मण्यो मताः ॥”

नु अर्थात् अनुस्वार, वि अर्थात् विसर्ग, इनका पूर्व वर्णके साथ सम्बन्ध रहता है, अर्थात् यह पूर्व

वर्णके साथ उच्चारित होते हैं। नू अर्थात् जिह्वामूलीय और नी अर्थात् उपध्मानीयका पर वर्णके साथ उच्चारण होता है। इन चार वर्णोंका नाम अयोगवाह है। णत्वकार्यमें यह सब अच्की तरह व्यवहृत होते हैं—अर्थात् मूर्द्धन्य षकार, रेफ, ऋवर्ण एवं नकारके मध्य अच् व्यवधान रहनेसे जिस तरह णत्वमें कोई व्याघात नहीं लगता, उसी तरह अनुस्वारादि व्यवधान रहते भी णत्वकार्यमें कोई व्याघात नहीं पड़ता।

अयोगस् (सं० स्त्री०) युज्-असुन्-कुत्वम्, नञ्-तत् ।

१ असमाधि, दुनियादारो। (त्रि०) नञ्-बहुव्री० ।

२ योगहीन, समाधिरहित, जो योग न जानता हो।

अयोगी (सं० पु०) योग न जाननेवाला, जिसे साधन-भजन मालूम न रहे।

अयोगुड़ (सं० पु०) अयसा निर्मितो गुड़ः गुटिका, शाक०-तत् । लौहमय गुटिका, फौलादकी गोली।

“वरमाश्रीविषविषं कथितं वाचसेव वा ।

यौतमल्यप्रिसन्नसो मचितो वाप्ययोगुड़ः ॥” (चरकसंहिता)

अयोगुल, अयोगुड़ देखो।

अयोगू (सं० पु०) अयो लौहविकारं गच्छति, अयस्-गम-ऊङ्-मलोपः । कर्मकार, अयस्कार, लोहार, जो लोहेका काम करता हो।

अयोग्य (सं० त्रि०) युज्-ण्यत्, नञ्-तत् । १ अक्षम, निष्प्रयोजन, नाकाबिल, नादुरुस्त, बेकार, जो किसी लायक न हो। २ अनुचित, गैरवाजिब। ३ अमूर्त, निरवयव, वेशल, जिसके अजो न रहे। ४ अनिरूप्य, जो काबिल तहकीक न हो, पहचानमें न आनेवाला।

अयोग्यता (सं० स्त्री०) अक्षमता, नाकाबिलियत, नादुरुस्ती, लायक न होनेकी हालत।

अयोग्य (सं० पु०) अयोऽग्रे मुखे यस्य । मुषल, मूसर। मुषलके मुखमें लौह लगता, इसीसे वह अयोग्य कहलाता है। ‘अयोग्यं मुषलोऽस्त्री स्यात् ।’ (धनर)

अयोग्यक, अयोग्य देखो।

अयोग्यन (सं० पु०) अयो हन्यतेऽनेन, अयस्-हन् करणे अप् घनादेशश्च । लौहमुद्गर, हथौड़ा।

अयोच्छिष्ट (सं० स्त्री०) लौहकिट, लोहेका जड़।

अयोजन (सं० स्त्री०) वियोग, विक्षेप, जुदायी, अलाहदगी, मेलका न मिलना।

अयोजाल (सं० स्त्री०) अयोविकारः जालम्, मध्य-पदलोपी कर्मधा०। १ लौहनिर्मित जाल, लोहेका फन्दा। (त्रि०) अय इव दुर्भेद्यं जालं माया यस्य, बहुव्री०। २ दुर्भेद्य-कपट, जिसकी चालाकी समझ न पड़े। ३ लौहजाल-विशिष्ट, जिसमें लोहेका फन्दा पड़ा रहे।

अयोदंष्ट्र (सं० त्रि०) अयोमयी दंष्ट्राः अग्रधारा यस्य, बहुव्री० गौणे क्लृप्तः। लौहमय दंष्ट्राविशिष्ट, लोहेकी दाढ़वाला, जिसका अग्रभाग लौहमय रहे।

अयोदत्, अयोदंष्ट्र देखो।

अयोदती (वै० स्त्री०) अयोदंष्ट्र देखो।

अयोदाह (सं० पु०) लौहके जलनेका गुण, जो वस्त्र, लोहेके जलनेमें हो।

अयोध (सं० त्रि०) योद्धुं शक्यम्; युध-ख्यत्, नञ्-तत्। युद्ध किये जानेकी शक्यता, जिससे कोई लड़ न सके।

अयोध्या (सं० स्त्री०) सूर्यवंशी राजाओंकी राजधानी। यह अक्षा० २६° ४८' २०" उ० और द्रवि० ८२° १४' ४०" पू० पर अवस्थित है। यहांके राजाओंकी युद्धमें कोई परास्त न कर सकता था, इसीसे उनकी राजधानीको लोग अयोध्या कहते हैं।

अयोध्या वा अवध प्रदेश पहले कोशल नामसे प्रसिद्ध था। इसके उत्तर-पूर्वमें नेपाल राज्य, उत्तर-पश्चिममें रुहेलखण्ड, दक्षिणप—पश्चिममें गङ्गा, पूर्वमें बस्ती और दक्षिण-पूर्वमें वाराणसी विभाग है। अयोध्यापुरी कोशलकी प्राचीन राजधानी है। मुसलमानोंके समयमें लखनऊ नगर राजधानी था।

अयोध्या प्रदेशके चार प्रधान विभाग हैं। यथा,—लखनऊ, सीतापुर, फैजाबाद और रायबरेली। लखनऊ विभागके अन्तर्गत लखनऊ, उनाव और बाराबंकी; सीतापुरके अन्तर्गत सीतापुर, हर्दोई और खेरी; रायबरेलीके अन्तर्गत रायबरेली, सुलतानपुर और प्रतापगढ़—यह तीन-तोन उपविभाग हैं।

अति प्राचीनकाल ही भारतवर्षमें अयोध्या सुप्रसिद्ध स्थान हो गयी थी। सूर्यवंशी नृपति यहाँ

राज्य करते थे। रामायणमें लिखा है, कि स्वयं मनुने अयोध्यापुरी निर्माण की थी। इसकी लम्बाई बारह योजन और चौड़ाई दो योजन रही। महाकवि वाल्मीकिने इस नगरीका जैसा वर्णन किया, उसके पढ़नेसे मालूम होता है, कि उस समय अयोध्या राजधानी विशेष समृद्धशालिनी थी। ब्राह्मण एवं ऋषि शिष्योंको विद्या पढ़ाते; शिल्पी नाना प्रकारके शिल्पकार्य चलाते; और नाना देशोंसे आकर वणिक्गण पण्यद्रव्य क्रय-विक्रय करते थे। कलकत्ता आदि नगरोंकी तरह उस समय अयोध्यापुरीमें भी सड़कोंपर पानी छिड़का जाता था। मनुसे लगा ११२ पीढ़ियोंने यहां राज्य किया था। उसके बाद राजा सुमित्रने अयोध्यापुरीको त्याग दिया। उनके परित्याग करनेके बाद सब अट्टालिकायें गिर पड़ीं और धीरे धीरे चारो ओर जङ्गल हो गया।

सूर्यवंशियोंके अयोध्या परित्याग कर देने पर बहुत दिनोंतक यहां बौद्ध धर्मका विशेष प्रादुर्भाव हुआ था। उसके बाद विक्रमाजित् नामक एक राजा यहांके जङ्गलको कटवाकर रामायणकी लुप्तकीर्त्तिका उद्धार करने लगे। हमारे शास्त्रोंमें अयोध्याको मोक्षदायिका-पुरी लिखा है। “अयोध्या मथुरा माया काशी अवन्तिका। पुरी वारावती चैव सर्वता मोक्षदायिकाः॥” अयोध्याका ऐसा माहात्म्य देखकर ही शायद विक्रमाजित्ने इस पुरी पर विशेष दृष्टि रखी थी। पहले उन्होंने सरयू नदीका स्थान सुधारा, उसके बाद नागेश्वर महादेवके मन्दिरका उद्धार किया। बौद्ध विप्लवके समय यह मन्दिर विनष्ट न हुआ था।

कहते हैं, कि राजा विक्रमाजित्ने अयोध्यामें ३६० देवालय बनवाये थे। परन्तु इस समय ४२ से अधिक मन्दिर विद्यमान नहीं हैं। अयोध्याके वृद्ध मनुष्य ऐसा कहते हैं, कि मुसलमान सम्राटोंके राजत्वकालमें यहां तीनसे अधिक मन्दिर प्रसिद्ध न थे; इसीसे मालूम होता है, कि अन्यान्य मन्दिर अधिक प्राचीन नहीं हैं।

अयोध्यामें रामकोट विशेष प्रसिद्ध स्थान है। कहते हैं, श्रीरामचन्द्रने इसी स्थानमें दुर्ग निर्माण किया था। इस दुर्गकी चारो ओर दश बुर्ज थे। हनुमान्,

सुग्रीव, जाम्बवान् प्रभृति सेनापति-उन्हों बुजों पर रह नगरकी रक्षा करते थे। दुर्गके भीतर आठ राज-प्रासाद थे।

अयोध्या जानेसे रामलीलाके अनेक विवरण देखने में आते हैं। पण्डे यात्रियोंके साथ साथ जाकर उन विवरणोंको समझा देते हैं। भूभार हरण करनेके लिये श्रीराम पृथिवी पर अवतीर्ण हुये थे। उनका जन्म स्थान अब भी वर्तमान है। यहां कोई मूर्ति नहीं है। केवल श्रीरामचन्द्रके ध्वजवज्राङ्गुश-अङ्कित पादपद्मका चिह्न पड़ा हुआ है।

जन्मस्थानके निकट ही मुसलमान सम्राट्की एक मसजिद है। सन् १५२८ ई०में आखेटके लिये आकर बाबर यहां कुछ दिन रहे थे, उसी समय यह मसजिद बनी। मसजिदके दो पत्थरोंमें सन् ८३५ हिजरी (१५२८ ई०) खुदा हुआ है। अनेक मन्दिरोंसे पत्थर निकाल निकाल कर यह मसजिद बनाई गई थी। जन्मस्थानका मन्दिर कसौटीके पत्थरका बना था। बाबरकी मसजिदमें अभीतक उसके कई स्तम्भ विद्यमान हैं। मसजिद बननेपर कुछ दिनों तक हिन्दुवों और मुसलमानोंमें खूब विरोध चला था। उसके बाद अयोध्या अंगरेजोंके अधिकारमें आयी, तभीसे जन्मस्थान और मसजिदके बीचमें लोहेका वेड़ा लगा दिया गया है। सुतरां हिन्दुवों और मुसलमानोंमें फिर विरोध होनेकी सम्भावना न रही।

स्वर्गद्वार और राम-सीताके स्थानमें भी दो मसजिद हैं। स्वर्गद्वारकी मसजिद औरङ्गजेबकी बनवाई हुई है; परन्तु यह नहीं कहा जा सकता, राम सीताके स्थानकी मसजिद कब बनी थी। इस समय स्वर्गद्वारकी भग्नावस्था है। दो सौ वर्ष हुए कालूके राजाने रामसीताके मन्दिरका संस्कार करा दिया था; उसके बाद अहल्याबाईकी दृष्टि इसपर पड़ी। अहल्याबाई इन्दोरके होल्कर यशवन्त रावकी पत्नी थीं। सन् १७८४ ई०में रामसीताके निकटका घाट उन्होंने ही बनवाया था। इस समय भी इस देवालयका व्यय निर्वाह करनेके लिये इन्दोर से प्रति वर्ष २३१ रुपयेकी वृत्ति मिलती है।

रामचरितकी अन्यान्य स्मृतियां अनेक स्थानोंमें गठित हैं। कहीं तपोवनसे विश्वामित्र ऋषि आकर खड़े; कहीं रम्यनशालामें सोताजी रोटी बनातो, जिसके वेलन आदि अब भी पड़े हुए हैं। कहीं दशरथसे रूठकर कैकेयी सोती और रामको वन भेजकर प्राणप्रिय पुत्र भरतको राजगद्दी दिलानेके लिये दो वर मांगनेकी आंखोंमें अंस भरती हैं। प्रतिस्मृतियोंकी बनावट खराब है; उनमें शिल्पनैपुण्य नहीं, फिर भी इन कठिन स्थानोंमें जानेसे अयोध्याके उस पूर्व शोककी स्मृति आज भी जाग उठती है। अश्वमेधयज्ञका अनुष्ठान तो हुआ, परन्तु सीताजी उस समय बनवासमें थीं। विना सख्त्रोक हुए यज्ञका संकल्प नहीं होता, इसीसे कनकसीता बनवाकर रामचन्द्रजीने यज्ञ किया था। पण्डे अब भी त्रेता-युगकी उन कनकसीताको देखा देते हैं। पहले कहीं हुई मसजिद इसी स्थानमें है।

राम स्वयं राजा हुए। किन्तु उनके प्रधान अनुचर हनुमान्ने प्राण अर्पणकर सीताका उद्धार किया था, इसलिये भक्तवत्सल रामने महावीर हनुमान्को भी राजा बना दिया। एक स्थानमें वह अपूर्व दृश्य आज भी विद्यमान है। हनुमान् राजवेशमें बैठे हैं, शिरपर सुकुट सुशोभित है, पार्श्वमें चमर चल रहा है।

अयोध्यामें प्रवेश करनेपर निकट ही मणिपर्वत मिलता है। शक्तिशैल लगनेसे जब लक्ष्मणजी मूर्छित हुये, तब हनुमान्जी विशल्यकरणी लाने गये थे। परन्तु बानरकी जाति, क्या जाने विशल्यकरणी कैसी होती है, इसलिये समस्त गन्धमादन पर्वतको ही उठाये वह शून्यमार्गसे चले जाते थे। जब वे अयोध्याके ऊपर पहुँचे, तब भरतने अनजानमें उनके वाण मार दिया। तीक्ष्ण शरके लगते ही व्यथित होकर हनुमान्जी भूमिपर गिर पड़े। उससे शायद गन्धमादनका कुछ अंश टूट गया था। यह मणिपर्वत वही भग्नांश है।

मणिपर्वत ४४ हाथ ऊँचा तथा टूटी फूटी ईंटों और काँकड़ोंसे परिपूर्ण है। इसीसे मालम होता

कि अट्टालिकाओंके ईंटपत्थरों और कंकड़ोंको फेंक फेंककर यह पर्वत बना दिया गया है। इस स्तूपके नीचे किसी समय एक फलक मिला था। उसमें यह खुदा रहा,—मगध-राजवंशके नन्दवर्द्धन नामक जनैक राजाने मणिपर्वत निर्माण कराया था।

सुग्रीवपर्वत एवं कुवेरपर्वत नामके और भी दो स्तूप हैं। सुग्रीवपर्वत प्रायः ६ हाथ और कुवेर पर्वत प्रायः १४ हाथ ऊँचा है। कोई कोई अनुमान करते, कि ये सब बौद्धोंके स्तूप हैं।

सरयूके किनारे अनेक घाट हैं, परन्तु सब बंधे हुए नहीं हैं। रामघाट, भरतघाट, लक्ष्मणघाट, भट्टघाट—इसतरह एक एक घाटका एक एक नाम है। इन सब घाटोंमें पूर्वकीर्ति कुछ भी नहीं है। रामघाट पर अब धोबी लोग कपड़े धोते हैं। गुप्तघाटमें एक सुरङ्ग है। पण्डे कहते हैं, कि इसी सुरङ्गसे रामचन्द्रजीने सरयूजलमें प्रवेश किया था। स्वर्गघाट पक्का बंधा हुआ है। ऊपर मनोहर वृक्षश्रेणी है। यात्रीलोग यहां स्नान, दान और भोज्यादि उत्सर्ग करते हैं। घघरासे कुछ उत्तर कर्णालगङ्गके पास अगस्त्य मुनिका समाधिस्थान है।

अयोध्यामें वैष्णवोंकी सात सम्प्रदायोंके सात मठ हैं। प्रत्येक मठमें एक एक महन्त और उनके चेले रहते हैं।

हनुमान्गढ़ीमें निर्वाणी सम्प्रदायका मठ है। इस सम्प्रदायके वैष्णव चार श्रेणियोंमें विभक्त हैं; यथा—कृष्णदासी, तुलसीदासी, मणिरामी और जानकीशरणदासी। निर्वाणी अखाड़ेमें प्रायः छः सौ चेले हैं; उनमें प्रायः तीन सौ सर्वदा उपस्थित रहते हैं।

रामघाट एवं गुप्तघाटपर निर्मोही सम्प्रदायके वैष्णवोंका अखाड़ा है। कहते हैं, प्रायः दो सौ वर्ष हुए गोविन्ददास नामक एक वैरागीने जयपुरसे कुछ निष्कर भूमि पाकर अयोध्याके रामघाटपर एक मन्दिरकी प्रतिष्ठा की थी। उसके बाद गुप्तघाटपर और एक अखाड़ा स्थापित हुआ। बस्ती, मनकापुर और खुर्दाबादमें इस सम्प्रदायके वैष्णवोंकी निष्कर भूमि है।

दिगम्बरी और एक सम्प्रदायके वैष्णव हैं। प्रायः दो सौ वर्ष हुए श्रीबलरामदासने अयोध्या आकर यह मठ स्थापन किया था। इस अखाड़ेमें १४।१५ चेलेसे अधिक नहीं रहते। इन लोगोंके भी निष्कर भूमि है।

शुजाउद्दौलाके शासनकालमें चित्रकूटसे दयाराम नामक एक व्यक्तिने आकर खाकी सम्प्रदायके वैष्णवोंका अखाड़ा जमाया था। प्रवाद है, कि वन जाते समय लक्ष्मण सर्वाङ्गमें भस्म लगाकर रामचन्द्रके साथ हुये, इसीसे खाकी वैष्णव सर्वाङ्गमें भस्म पोते रहते हैं। इस अखाड़ेमें प्रायः १८० चेले हैं। उनमें से प्रायः ५० चेले सर्वदा उपस्थित रहते हैं।

महानिर्वाणी सम्प्रदायका अखाड़ा भी शुजाउद्दौलाके शासनकालमें स्थापित हुआ था। पुरुषोत्तमदास महन्तने कोटाबंदीसे आकर इस अखाड़ेको लगाया। इस अखाड़ेमें प्रायः २५ चेले हैं। सभी प्रायः तीर्थाटन किया करते हैं।

मन्सूर अलीखान्के शासनकालमें रतिराम नामक एक महन्तने जयपुरसे आकर सन्तोषी सम्प्रदायका मठ स्थापन किया था। किन्तु दो महन्तोंके बाद बैरागी लोग इस स्थानको त्याग कर चलते बने, अखाड़ा भी टूट-फूट गया। उसके बाद निधिसिंह नामक एक धनवान् पुरुषने पुराने मठका स्थापन निर्दिष्ट कर वहां एक मन्दिर बनवा दिया था। अन्तमें कुशलदास नामक सन्तोषी सम्प्रदायके कोई वैष्णव आकर एक अशोक वृक्षके तले रहने लगे। वहीं उनकी मृत्यु हुई थी। महन्तकी मृत्युके बाद रामकृष्णने वहां वर्तमान मन्दिर बनवा दिया।

शुजाउद्दौलाके ही शासनकालमें श्रीवीरमलदासने कोटेसे आकर निरालम्बी सम्प्रदायका मठ स्थापन किया था। किन्तु कुछ दिनोंके बाद यह अखाड़ा छोड़ दिया गया, उसके बाद नृसिंहदास नामक और एक वैरागीने आकर वर्तमान मन्दिर बनवाया।

अयोध्यापुरी स्थापित होनेके बाद यहां अनेक राजविप्लव और धर्मविप्लव हो गये हैं। ऊपर विक्रमाजित् राजाकी बात कहो जा चुकी है। सुननेमें आता है, कि उन्होंने शायद अस्सी वर्ष अयोध्यामें राज्य किया

था। फिर समुद्रपाल नामक एक योगीने अभिचार मंत्र द्वारा उनके प्राणको उड़ा दिया। प्राणवायुके देह छोड़ जाने पर सिद्ध योगीने उस मृत शरीरमें प्रवेश किया था। इस योगीको सात पीढ़ीने शायद अयोध्या में राजत्व चलाया। परन्तु उन लोगोंका राजत्वकाल जिस तरह निर्दिष्ट हुआ है, उसपर एक दम विश्वास नहीं किया जा सकता। प्रवाद है, ६४३ वर्ष तक अयोध्यामें समुद्रपालोंका आधिपत्य रहा। अतएव हिसाब करनेसे प्रत्येक राजाका राजत्वकाल ८१ वर्षसे भी अधिक हो जाता है।

कोशलमें आवस्ती नामक और एक प्राचीन प्रसिद्ध स्थान है। इच्छाकुसे आठवीं पीढ़ीके बाद युवनाश्वके पुत्र आवस्त राजाने इस नगरको बसाया था। अनेक दिनों तक यहां बौद्ध धर्मका अनुशीलन चला।

कपिलवस्तुमें शाक्यमुनिने जन्म ग्रहण किया था। उसके बाद अयोध्यामें आकर वे धर्मप्रचार करने लगे। सन् ई०से ५५० वर्ष पहले कुशीनगरमें उन्होंने निर्वाण मुक्तिको लाभ किया था।

सन् ४०० ई०में चीनपरिव्राजक फाहियान आवस्ती आये। उस समय शहरपनाह टूट गई थी, उसके भीतर मन्दिर और अट्टालिकाका भग्नावशेष पड़ा हुआ था। कई दरिद्र संन्यासियोंके अतिरिक्त नगरमें और कोई भी न रहा। उसके बाद सातवीं शताब्दीमें युञ्ज-चुयाङ् अयोध्या आये थे। आकर उन्होंने उस समय भी बीस बौद्ध मन्दिर देखे। उन मन्दिरमें प्रायः तीन हजार बौद्ध महन्त रहते थे। उस समय ब्राह्मणोंके भी प्रायः बीस मन्दिर विद्यमान रहे। युञ्ज-चुयाङ्ने अयोध्याको अ-यु-त लिखा है।

अयोध्यामें छः जैन मन्दिर हैं। आदिनाथ जैनियों के प्रथम तीर्थङ्कर हैं। यही अयोध्या नगरी उनका जन्मस्थान है। उन्होंने आबू पर्वत पर प्राणत्याग किया था। अयोध्यावाले खगंधारके समीप मुराई टोलेमें एक स्तूपपर उनका मन्दिर बना है। मन्दिरके निकट मुसलमानोंकी कितनी ही कब्र और एक मसजिद भी है। द्वितीय तीर्थङ्कर अजितनाथ हैं। इन्होंने भी अयोध्यामें जन्म ले समेतशेखरपर प्राणत्याग किया

था। इटोरा सरोवरके पश्चिम किनारे इनका मन्दिर स्थापित है। अभिनन्दननाथ जैनियोंके चतुर्थ तीर्थङ्कर हैं। इन्होंने भी अयोध्यामें जन्म ले समेतशेखरमें प्राणत्याग किया। अयोध्याकी सरायके समीप इनका मन्दिर बना है। षष्ठ तीर्थङ्करका नाम सुमन्तनाथ और चतुर्दशका अनन्तनाथ है। इन सबने अयोध्यामें जन्म लिया और समेतशेखर या पारसनाथ पहाड़पर प्राणत्याग किया था। रामकोटके भीतर सुमन्तनाथका मन्दिर है। अनन्तनाथका मन्दिर गोलाघाटके नाले किनारे है। ये पांच दिग्गम्बर जैनियोंके मन्दिर हैं। इनके अतिरिक्त खेताम्बर जैनियोंका भी एक मन्दिर है। जैनियोंके मन्दिर अधिक प्राचीन नहीं हैं।

दर्शनसिंहके मन्दिरमें लाल पत्थरके एक महादेव हैं। नर्मदा नदीके पत्थरको गढ़कर यह देवमूर्ति तैयार हुई है। मन्दिर चुनारके पत्थरका बना है। यहां एक बड़ा भारी घण्टा है। उस घण्टेको बजानेसे चारो ओर गभीर नाद गूँज उठता है। ऐसा बड़ा भारी घण्टा बनानेके लिये दर्शनसिंहने नेपाली कारीगरोंके पास अपना आदमी भेजा था। घण्टा बनकर तय्यार तो हुआ, परन्तु नेपालसे अयोध्या लाते समय राहमें टूट गया। सुतरां नेपालका नमूना देखकर अयोध्यामें ही वर्तमान घण्टा ठेला था।

मणिपर्वतके समीप दो कब्र हैं। मुसलमान कहते, कि इन कब्रोंमें शेख और पैगम्बर गड़े हैं। पहले यहां गणेशकुण्ड नामक एक कूप था, अब सोमगिरि नामक दो छोटे-छोटे स्तूप हैं। सोमगिरि क्या हैं, इसका विशेष वृत्तान्त जाननेको कोई उपाय नहीं। यहांसे आध कोस दूर और एक कब्र देखनेमें आती है। वहां एक दरवेश या संन्यासी रहते थे। वे कहते रहे, कि वही बाइबल-उल्लिखित नोहाका समाधिस्थान है। रुमी महावीर सिकन्दर (अलेक्-सन्दर) ने इस कब्रको बनवा दिया था।

बड़ वेगमकी कब्र भी एक उत्तम स्थान है। बड़ वेगम और अवधके नवाबने गवर्नमेण्टके साथ ऐसा प्रबन्ध किया था, कि उनकी सम्पत्तिमेंसे तीन लाख रुपये कब्र बनानेके लिये अलग रख दिये जाते;

उसके सिवा कन्नखानमें जो दाई नौकर रहती और अतिथि फकीर आता, उसके खर्चको उनको जमीन्दारीसे वार्षिक दश हजार रुपये निर्दिष्ट होते। सन् १८१६ ई०में बेगमकी मृत्यु हुई थी। पीछे कन्नका काम चला। किन्तु बीच बीचमें अनेक वाधाविघ्न उपस्थित हुए थे। अन्तमें सन् १८५७ ई०के सिपाही-विद्रोह बाद कन्न तय्यार हुई। इस समय यहांके व्यय निर्वाहको गवर्नमेण्ट वार्षिक ४८३३) रुपये देती और कन्नके संस्कारको (१०००) रुपये अमानत रखती है।

इस समय अयोध्यामें सब मिलाकर ८६ मन्दिर हैं। उनमें ६३ विष्णुमन्दिर और ३३ शिवमन्दिर हैं। इसके अतिरिक्त सुसलमानोंकी ३६ मसजिदें हैं। प्रतिवर्ष रामनवमीके उपलक्ष्यमें यहां मेला लगता है। मेलेमें कमसे कम ५००००० आदमी आते हैं।

प्राचीन कालके अनेक राष्ट्रविप्लवों बाद सन् १८५६ ई०को अयोध्या अंगरेजोंके अधिकारमें आयी। सबसे पहले सूर्यवंशीय राजा यहां राज्य करते थे। उसके बाद आवस्तीके राजाओंने बहुत दिनतक यहां राजत्व चलाया। बौद्धधर्मके प्रादुर्भाव समय राजा अशोकका यहां विशेष आधिपत्य था। काश्मीरके राजा मेघवाहनके समय अयोध्या उनके अधीन थी, ऐसे अनेक जनप्रवाद हैं। विक्रमाजित्ने मेघवाहनको युद्धमें परास्तकर रामचरितकी लुप्तकीर्तिका उद्धार किया था। विक्रमाजित्के बाद गुप्त और पालवंशियोंने ६४३ वर्ष यहां राजत्व चलाया। किन्तु अयोध्या नगरी फिर जङ्गलसे परिपूर्ण हो गई थी।

सन् ई०की आठवीं शताब्दीमें थारू नामकी एक असभ्य जाति हिमालय पर्वतसे आ अयोध्याका जङ्गल साफ करने लगी। परन्तु मालूम होता है, कि किसानोंके सिवा उसका और कोई उद्देश्य न था। इसीसे उसने राज्य फैलानेका कभी यत्न न किया। पीछे उत्तर-पश्चिमसे सोमवंशके राजाओंने पहुँच थारू लोगोंको मार भगाया। सोमवंशी राजा जैनमत-वलम्बी थे। ग्यारहवीं शताब्दीके अन्तमें कनौजके राजा चन्द्रदेवने चन्द्रवंशीय राजाओंको दूरकर अयोध्या और उत्तर कोशलपर अपना अधिकार जमा दिया।

उसके बाद अयोध्यापुरी भड़ नाम्नी एक असभ्य जातिके हाथमें पड़ गई। भड़ लोग भी जैन मता-वलम्बी थे।

सन् ११८४ ई०में शहाबुद्दीन् गोरोने कनौज जीत अयोध्याको लूटा था। उसी समयसे बहुत दिनकी प्राचीन आर्य राजधानी सुसलमानोंके अधिकारमें चली गई। अबको सुसलमान बादशाहोंका विवरण लखनऊ शब्दमें देखो।

अयोध्या प्रदेशमें गङ्गा, गोमती, घघरा एवं राप्ती यही चार नदियां प्रसिद्ध हैं। यहां अनेक छोटे-छोटे सरोवर हैं। यहांकी भूमि बहुत उपजाऊ है। परन्तु आजकल बहुत भूमि ऊसर हो गई है। यव, गेहूं, चना, मकई, तिल, सरसों, बाजरा, अनेक प्रकारकी दाल, ऊख, तम्बाकू, नील, कपास, शोरा और आम प्रभृति नानाप्रकारका फल यहां यथेष्ट परिमाणमें उत्पन्न होता है। पहले यहां अपर्याप्त लवण बनता था। अब गवर्नमेण्टने उसे बन्द कर दिया है। पहले यहां वनहस्ती, भैंस, बाघ, शूकर प्रभृति वन्य पशु भी बहुत उपद्रव करते थे। अब वे प्रायः दिखाई नहीं देते। परन्तु नीलगाय, हरिण और मोर झुण्डके झुण्ड ऊसर भूमिमें चरते फिरते और बीच बीच किसानोंके खेतमें जाकर उपद्रव मचाते हैं। वृन्दावनकी तरह अयोध्यापुरीमें भी असंख्य वानर भरे हुए हैं। यात्री लोग उन्हें चना और लड्डू खिलाते हैं।

अयोध्याके अन्तर्गत खैरागढ़के सालकी लकड़ी अत्यन्त विख्यात है। यह सालवन गवर्नमेण्टके अधिकारमें है। गवर्नमेण्टके आदमी सालके पेड़ोंको काट काट घघरा नदीमें बेड़ा बांधते और उसे बहाकर बहरामघाट ले जाते हैं। यह सब लकड़ियां कलसे चिरती हैं। अयोध्यामें महुवे और शीशमके पेड़ भी बहुत होते हैं।

अयोध्याकाण्ड (सं० स्त्री०) अयोध्यायास्तत्रगरी-वृत्तान्तविवृते: काण्डं वर्गः, ६-तत्; तादृश्याः काण्डं वर्गो यस्मिन् पुस्तके, बहुव्री० वा। सप्तकाण्ड रामायणका द्वितीय काण्ड। इस काण्डमें रामके राज्याभिषेक प्रस्तावसे अत्रिमुनिके आश्रममें जानेतक

अयोध्याधिपति (सं० पु०) अयोध्याके नृपति, अयोध्याके बादशाह।

अयोध्याप्रसाद—१ रसतरङ्गिणीटीका एवं वृत्त-रत्नाकरकी नौका नाम्नी टीका रचयिता। २ भुवनदीपकके टीका-रचयिता।

अयोध्याप्रसाद बाजपेयी—युक्तप्रदेशवाले रायबरेली जिले-के सातनपुरवा ग्रामवासी कोई प्राचीन कवि। यह सन् १८८३ ई० में जीवित रहे। इन्हें संस्कृत और हिन्दी भाषाका अच्छा ज्ञान था। इन्होंने सुखादु और चमत्कृत कविता बनायी है। छन्दानन्द, साहित्य-सुधासागर और रामकवित्तावली इनके रचित ग्रन्थमें उल्लेखयोग्य है। शिवसिंहके कथनानुसार यह महन्त रघुनाथदास या चन्द्रपुरमें राजा जगमोहन सिंहके साथ रहते थे। इन्होंने अपना उपनाम अवध लिखा है।

अयोध्याराम (आजूगोसाँई) गोस्वामी विशेष। अयोध्या-राम गोस्वामीका निवासस्थान बङ्गालका हालीशहर और पिताका नाम रामराम गोस्वामी रहा, जो संस्कृत शास्त्रके विलक्षण पण्डित थे। आजू गोसाँई दैसे प्रसिद्ध पुरुष नहीं, परन्तु चरित्र कुछ कौतूकावह रहा। यह पागल जैसे थे। परन्तु उस पागलपनके भीतर कुछ कवित्वशक्ति छिपी हुई थी। कविरत्न रामप्रसाद सेन भी हाली शहरके निवासी रहे। अतएव दोनों एक ही जगहके आदमी हुये। जब राजा कृष्णचन्द्र हालीशहर जाते, तब दोनों आदमियोंको बुलाकर कौतुक देखते और रामप्रसाद जब कोई गीत बनाते, तब आजू गोसाँई दिक्कगी उड़ाकर उस गीतका उत्तर देते थे। अयोध्याराम नामक और एक व्यक्तिने सत्यनारायणकी कथा बनायी थी, परन्तु वे उतने प्रसिद्ध नहीं।

अयोध्यावासिन् (सं० त्रि०) अयोध्याका रहनेवाला, जो अयोध्यामें रहता हो।

अयोध्यावासी—युक्तप्रदेशका वैश्य-समाजविशेष। यह समाज आगरा और इलाहाबादके जिलों तथा अवधमें मिलता है।

अयोनि (सं० स्त्री०) ययते मिश्रते शक्रशेषितादि-

कारणसामग्री अनया, नञ्-तत्। १ योनिभिन्न ग्रन्थ-स्थान। २ जो मन्त्र सामवेदका न हो। (त्रि०) नास्ति योनिस्तत्पत्तिस्त्वनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ अजन्य, योनिसे उत्पन्न न होनेवाला। ४ नित्य, उत्पत्ति और नाशसे रहित। (पु०) ५ ब्रह्मा। ६ शिव।

७ सुषल, कुटना।

अयोनिक (सं० त्रि०) न आन्नाता योनिर्यस्य, नञ्-बहुव्री० कप्। १ योनि शब्दयुक्त श्लोक न रखने-वाला। २ जिसकी उत्पत्तिका कारण कहा न गया हो।

अयोनिज (सं० त्रि०) न योनिर्जायते, ५-तत्। योनिसे अजात, जो योनिसे उत्पन्न न हुआ हो। (स्त्री०) २ तीर्थविशेष।

अयोनिजत्व (सं० स्त्री०) योनिसे उत्पन्न न होनेकी स्थिति।

अयोनिजेश (सं० पु०) शिव।

अयोनिजेश्वर, अयोनिजेश्वरतीर्थके महादेव।

अयोनिजेश्वरतीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष।

अयोनिसम्भव, अयोनिज देखो।

अयोपाष्टि (वै० त्रि०) लौहखविशिष्ट, लौहेके नाखून रखनेवाला।

अयोमय (सं० त्रि०) अयसो विकारः, विकारे मयट्।

लौहविकार-जात, लोहेसे बना हुआ।

अयोमल (सं० स्त्री०) अयसो मलमिव, ६-तत्।

लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग। 'अयोमलग्न सन्तप्तम्।' (चिद्विशेष)

लोहेको जलानेसे शोशको ईंट—जैसी जो चीज निकलती, वह अयोमल कहलाती है। इसका गुण लोहे-जैसा ही है। सौ वर्षका अयोमल उत्तम, अस्त्रीका मधुरम और साठका अधम होता है।

अयोमुख (सं० स्त्री०) अयो विकाररूपं मुखं यस्य।

१ लाङ्गलादि, हल वगैरह। (पु०) २ वाण, तीर।

३ दानव विशेष। ४ पर्वतविशेष। (त्रि०) ५ लौह-

मुखविशिष्ट, लोहेके मुँहवाला, लोहेकी नोक रखने

वाला, जिसकी नोक लोहेसे निकले।

अयोरज, अयोरजस् देखो।

अयोरजस् (सं० स्त्री०) लौहकिट्ट, लोहेका जङ्ग।

अयोरस (सं० पु०) अयोमल देखो।

अयोवस्ति (सं० पु०-स्त्री०) वस्तिकर्म विशेष।

“एरण्डमूलं निःक्वाथं मधुतेलं सर्वैश्चम् ।

एष युक्त अयोवस्तिः सवचापिप्लीफलः ॥” (भावप्रकाश)

मधु, तैल, सैन्धव, वच एवं पिप्पलीके साथ एरण्ड-

मूलका काढ़ा बनानेसे अयोवस्ति तैयार होता है।

अयोविकार (सं० पु०) लौहव्यापार, अयोनिर्माण, लोहेका काम, जो चीज़ लोहेसे बनी हो।

अयोहत (वै० त्रि०) लोहेकी नक्काशीवाला, जिस-पर लोहेके बेलबूटे बने हों।

अयोहनु (वै० त्रि०) लौहहनुविशिष्ट, लोहेके जबड़े रखनेवाला।

अयोहृदय (सं० त्रि०) अयोवत् कठिनं हृदयं मनो यस्य, बहुव्री०। कठिनचित्त, निदयचित्त, दयाशून्य, लोहे-जैसे दिलवाला, सख्त, अफसोस न करने-वाला।

अयौक्तिक (सं० त्रि०) अननुरूप, असमान, अयोग्य, जो ठीक न हो।

अयौगपथ्य (सं० स्त्री०) असमकालीन अस्तित्व, जो मौजूदगी एक वक्तपर न रहे।

अयौगिक (सं० त्रि०) नियमित व्युत्पत्ति-विहीन, जिसकी जड़ ठीक न रह।

अयौधिक (सं० पु०) १ युद्ध न करनेवाला व्यक्ति, बुरे तौरसे लड़नेवाला, जो शख्स लड़ाई न करता हो। २ दूसरोंसे समता न किया जानेवाला योद्धा, जिस सिपाहीसे लड़नेमें दूसरा बराबरी न कर सके।

अय्मान् (सं० त्रि०) अयते गच्छति, अय—कर्तरि मनिन्। १ गमनकर्ता, चलनेवाला। अय्यते गम्यते-नेन, करणे मनिन्। २ गमनमें सहायता देनेवाला, जो चलनेमें मदद देता हो।

अय्याजी भट्ट—ज्ञानानन्दके शिष्य और रामगीता एवं शिवगीताके सुबोधिनी टीका-रचयिता।

अर (सं० पु०) अर्यते गम्यते-नेन इयते ऋच्छते-र्वा, अप्। १ जैनियोंकी वर्तमान अवसर्पिणीके अष्टादश तीर्थंकर। अरण्य देखो। २ जैनियोंके कालचक्रका द्वाद-शांश। यह अवसर्पिणी कालका षष्ठभाग होता है। ३ ब्रह्मलोकका कोई समुद्र। (स्त्री०) ४ चक्रकी जेमि

और नाभिके मध्यका काष्ठ, आरौ। ५ कोण, कोना। ६ शैवाल, सेवार। (हिं०) ७ हठ, जिद्द। (त्रि०) ८ शीघ्रग, तेज। ९ न्यून, कम।

‘अर’ शीघ्रे च चक्राङ्गे शीघ्रमे पुनरन्ववत् । (मेदिनी)

अरंग (हिं० पु०) सुगन्ध, खुशबू, महक।

अरंड (हिं० पु०) एरण्ड, रेंड, अंडा। इसे बंगलामें भेरेंडा, आसामीमें एरी, नेपालीमें अरेटा, विहारमें अण्डौ, उड़ियामें गब, नागपुरीमें अंडी, कानपुरीमें रेड़ी, पञ्जाबीमें हरनौली, अफगानीमें बुज़-अंजीर, सिन्धुवीमें हेरां, दक्षिणीमें रुंड, बम्बेयमें एरण्डी, मारवाड़ीमें पुरंडीच, गुजरातीमें दिवेली, अरबीमें खिरवा और फ़ारसीमें बेदअंजीर कहते हैं। (Ricinus communis)

आधुनिक औषधिशास्त्रज्ञ इस वृक्षकी अफ़रौकाका अधिवासी बताते हैं। वहीं से यह भारतमें आया और वहीं जङ्गली तौरपर मिला भी है। इसे भारतमें सब जगह बोते और गांवके पास प्रायः लगा देते हैं। संस्कृतके प्राचीन पुस्तकमें इसका वर्णन मिलनेसे कोई-कोई इसे भारतका अधिवासी भी बताता है। हिमालयके निजंन वनमें यह जङ्गली तौरपर जगता है। इसके बीजसे जो तेल निकलता, वह खूब धूम-धामसे बिकता है। बीज दो प्रकारका होता है, बड़ा और छोटा। बड़ेका चिराग़ वगैरह जलाने और छोटेका तेल दवाके काम आता है। कलपुरजेमें भी अण्डीका तेल ही लगता है। इस तेलकी रोशनी सबसे अच्छी होती है। यह बहुत धीरे-धीरे जलता है, आग लगनेका कोई डर नहीं रहता। भारतकी सारी रेलवे अण्डीका ही तेल जलाती है। इससे धुंवां कम निकलता है। दूसरे तेलमें यह गुण नहीं देखते। साबुन, बत्ती, फुलेल और अतर बनानेमें इसे सबसे अच्छा और सस्ता पायेंगे। लन्दन और पेरिसका गन्धी इसीसे शिरमें लगानेको बढ़िया तेल बनाता है। यह हलका जुलाब देनेमें बहुत काम आयगा। बीजके बकला छोड़ाने और साफ़ करनेमें ज्यादा खर्च लगता है। इस तेलका बना वार्निश गाड़ी, तख्तोंके पीछे, चमड़े, नक़्शे और कपड़े पर खूब

चढ़ता है। गाड़ी ओगनेमें अण्डोका ही तेल पड़ता है।

इसकी खली हिन्दुस्थानमें गाय-भैंसको भिगोकर भूसेके साथ दी जाती है, जिससे दूध ज्यादा और गाढ़ा उतरता है। सिवाय खादके खलीसे एक गैस भी बनती है, जिसकी रोशनी बहुत बढ़िया होती है। इलाहाबादके रेलवे स्टेशनपर इस गैससे चिराग जलाया जाता है।

खलीकी खाद गन्ने, गेहूं और आलूके खेतमें डालनेसे उपज बढ़ जाती है।

सिवा जुलाबके अण्डोका तेल फोड़े-फुन्सीपर लगानेसे भी बहुत फायदा पहुंचाता है। तम्बाकू और लाल मिर्च मिलाकर इसकी जड़के बकलेसे गाली बनती और पेचिश होनेपर घोड़ेको खिलाते हैं। भारतवासी इसकी पत्ती कूटकर बालप्रसविनी स्त्रीके दुग्धका स्नायु रोकनेको स्तनपर लगाते हैं। सुश्रुतमें इसकी जड़ और तेलसे कितने ही औषध बनानेकी बात लिखी है। यह अजौर्ण, उदराग्निमान, ज्वर और शोथपर भी चलता है। वातरोगके लिये यह अतिशय लाभदायक है। कमरका दर्द, फेफड़ेकी सूजन और फूल रह जानेकी बीमारी इससे दूर हो जाती है।

मुसलमान-हकीमोंका मत है,—यह दो तरहका होता,—लाल और सफेद। किन्तु लाल बड़े ही कामकी चीज होती है। यह शोथहृत् एवं विरेचक होता है और पक्षाघात, श्वास, शैत्य, शूल, अन्वाग्निमान, वातव्याधि तथा जलोदर पर दिया जाता है। शहदके साथ इसके दश बीजकी मीगी मलकर खानेसे खासा जुलाब उतरता है। बीरदानके समय इसके बीजका पुलटिस वातग्रस्त छातोंकी सूजन मिटानेको चढ़ाते हैं। पत्तीमें यह गुण न्यून परिमाणसे मिलता है। अफीम वगैरह नशा ज्यादा चढ़नेसे इसका ताजा अर्क को करानेको पिलाते हैं। यवके आटेके साथ इसकी पत्तीका पुलटिस आंख आनेपर बांधते हैं।

किन्तु बीजकी मीगी खानेसे प्राणजानेका डर रहता है। दो-एक आदमी इसी तरह मर भी गये हैं।

इसकी पत्ती चरनेसे गाय-भैंसका दूध बढ़ जाता है। बीजका बकला ऊखके रसको गर्म करनेमें जलाते हैं। लकड़ी काटकर सुखा लेनेसे छानीछप्परमें लगाते हैं। इसकी लकड़ीमें कीड़ा नहीं पड़ता। मधुमक्षिका इसे बहुत चाहती और प्रायः इसपर अपना छत्ता बनाती है।

युक्तप्रदेशके आजमगढ़ जिलेमें यह दो तरहका होता है—रेड़ी और भटरेड़ी। रेड़ी भटरेड़ीसे कुछ लम्बी रहती और एक सालमें ही काट जाती है। किन्तु भटरेड़ीको दो-तीन साल तक खड़ी रखते हैं। इससे तेल भी बहुत अच्छा निकलता है। अण्डोको इस प्रदेशमें प्रायः खेतकी चारो ओर बो देते हैं। इसकी खेती अलग नहीं की जाती। सिर्फ इलाहाबादमें यमुना किनारे बारह-तेरह हजार एकर भूमिपर यह बोया जाता है। मकानके पास सेमकी बेल चढ़ानेको प्रायः इसे लगाते हैं।

यह औषधके अन्त या वर्षाके आरम्भमें बोया जाता है। खेतमें अठारह इंचके फासलेपर इसका बीज बोते हैं। पौधेके चारो ओर पानी इकट्ठा न होनेको जड़पर मट्टी चढ़ा देते हैं। मार्च और अप्रैल मासमें बीज पकने पर, तोड़कर धूपमें सुखाकर उसका छिलका निकाल डालते हैं।

बीजको उबाल कर भुरजी तेल निकलता है। तेलो यह काम कभी नहीं करता। पहले बीजको कुछ भून, फिर ओखलीमें कूटकर पीछे पानीमें डाल उबालेंते हैं। ऐसा करनेसे तेल ऊपर उठ आता है। साधारणतः बीजसे आधा तेल निकलता है।

अरंभ, (हिं०) आरम्भ देखो।

अरंभना (हिं० क्रि०) १ शब्द निकालना, आवाज देना। २ शुरू करना, आरम्भ करना।

अरइल (हिं० वि०) १ ठिठक जानेवाला, जो रुकता हो। (पु०) २ वृत्तविशेष, कोई दरखूत।

अरई (हिं० स्त्री०) गाड़ी हांकनेकी छोटी छड़ी। इसके सिरेपर लोहेकी कील लगी रहती है। नट-खट्टी देखाने या भागी न बढ़नेपर अरई लगा बेलको चलाते हैं।

अरक (सं० पु०-कौ०) १ शैवाल, सेवार। २ जैन समय-विभाग, जैनियोंका पृथक् किया हुआ समय। ३ चक्रका सक्थि, पहियेका अर। (अ० पु०) ४ आसव, भभकेसे उतारा हुआ रस। ५ रस, निचोड़। ६ खद, पसीना।

अरकगौर (फा० पु०) नमदेका कोई टुकड़ा। इसे घोड़ेकी पीठपर लगा जीन खींचते हैं।

अरकट (अरकटु)—१ मन्द्राज प्रान्तके उत्तर अरकट जिलेका एक तालुक। इसका क्षेत्रफल ४३२ वर्गमील है। इसको लम्बाई पूर्वसे पश्चिम ३२ और चौड़ाई १२ मील है। जमीन उपजाऊ नहीं है और सिवा चूनेवाले कच्चेके दूसरा धातु भी नहीं मिलता। मकान बनानेको पत्थर मुश्किलसे पाया जाता है। मामन्दूर और कलवायी तालाबों से ढेरको ढेर मछली पकड़ते हैं। प्रधान व्यवसाय खेतो, बुनाई और चमड़ेकी रंगाईका रहता है।

२ मन्द्राज प्रान्तके उत्तर अरकट जिलेका प्रधान नगर। यह शब्द तामिल भाषाका है। अरका छः और कटूका अर्थ किला है। इसतरह अरकट माने छः किलेका शहर होता है।

यह नगर पालार नद किनारे मन्द्राजसे साढ़े बत्तीस कोस दूर अक्षा० १२° ५५' २३" उ० और द्रावि० ७८° २४' १४" पू० पर बसा है। इसमें अरकट जिलेका हेडक्वार्टर है। पहिले यहां कर्णाटक प्रान्तके नवाबकी राजधानी प्रतिष्ठित थी। सिवा पश्चिमतटको कुछ चावल भेजे जानेके इस नगरमें दूसरा व्यवसाय नहीं चलता और न सिवा चूड़ियां बनानेके दूसरा काम ही होता है। यद्यपि कुछ वर्ष यहां सुनहली गोटा-किनारी और छोट बगतो-बिकतो थी, परन्तु अब इससे डेढ़ कोस दूर वालाजापेट नगरने अपनी समृद्धि फैला इसका शिल्प-व्यवसाय बिगाड़ दिया है।

ऐतिहासिक दृष्टिसे अरकट बड़े महत्त्वकी सामग्री है। किन्तु पूर्व समयका अधिक चिह्न देख नहीं पड़ता। सन् १७१२ ई०में महिषुरके विरुद्ध-युद्ध चलानेको दिल्लीवाली फौजके अधिनायक शम्शादतउल्ला-खान अपना डेरा यहीं उठा लाये थे। उनके अधिकार-समय

बीस वर्ष और उनके उत्तराधिकारी दोस्त अलीके सिंहासनारुढ़ होनेपर यह सरकारी राजधानी रहा। युद्धमें दोस्तअलीके मारे जानेपर यहां भगड़ेकी जड़ जमी। सन् १७४२ ई०में दोस्तअलीके उत्तराधिकारी सब्दरअली और सन् १७४४ ई०में सब्दरअलीके उत्तराधिकारी सैयदमुहम्मदकी इसी नगरमें हत्या हुयी थी। कितनी ही बार दूसरे-दूसरेके अधिकारमें जा अन्तको सन् १७५१ ई०में इस नगरका किला अंगरेजी फौजके हाथ लगा। सन् १७५१ ई०की २५वीं अगस्तको लार्ड क्लाइव मन्द्राजसे २०० युरोपीय और ३०० भारतीय सिपाही ८ मैदानी तोपोंको साथ ले आगे बढ़े और पांच दिन बाद इस नगरसे पांच कोस दूर अपना डेरा आडाला। अंगरेजी फौजका साहस देख अरकट किलेकी फौज आंख मूंदकर भाग खड़ी हुयी। दूसरे दिन क्लाइवने बेलड़ेभिड़े किलेको ले लिया। किला छूटनेकी खबर पा कर्णाटकके नवाब चांदा साहबने अपने पुत्र राजा साहबके अधीन ४००० देशी और १५० फ्रान्सीसी सिपाही किला जीतनेकी भेजे थे। २३ वीं सितम्बरको राजा साहबने कितनी ही पैदल फौज और सवारके साथ किलेको आ घेरा। किलेमें सिर्फ ६० दिनका सामान बचा, किन्तु पानी बहुत भरापड़ा था। ५० दिन तक किलेमें तोपका गोला लगनेसे जो छेद होता, वह रातको भर दिया जाता रहा। किलेमें कोई बड़ी भारी तोप थी, जो ३१ सेरका गोला फेंकती थी। क्लाइवने वही तोप किसीतरह किलेके बड़े बुर्जपर चढ़ा नवाबके महलमें रोज एक गोला फेंकना शुरू किया। चौथे दिन तोप फटी और उससे नवाबकी हिम्मत बढ़ गयी। उन्होंने किलेकी दीवारसे थोड़ी दूर एक पोश्ता बना उसपर तोपखाना रखा। किन्तु क्लाइवने तय्यार होनेपर उसपर ऐसे गोले मारे, कि घण्टे भरमें ही वह टूट-फूट कर ढेर हो गया और उसके ५० आदमी काम आये। फिर मुरारि राव महाराष्ट्र अपने सवारोंके साथ क्लाइवको साहाय्य देनेपर राजा हुये। राजा साहबने ऐसा देख क्लाइवसे आत्मसमर्पण करनेको कहा, किन्तु उन्होंने उसे

साफ़ अस्वीकार किया। रुपये लेनेकी बात भी खुलतीरपर टाल दी गयी। आत्मसमर्पणको आशा न पा राजा साहबने १४वीं नवम्बरको हमला मारा। एक घण्टे लड़ाई चली। राजा साहबके चार सौ और किलेके पांच-छः आदमी मरे। किन्तु अन्तमें राजा साहबकी फौज हारकर पीछे हटी। किलेमें रात बड़ी चिन्तासे कटी थी। किन्तु सवेरे घेरनेवाले कहीं देख न पड़े।

सन् १७५८ ई०में अरकटका किला फ्रान्सीसियोंके हाथ चला गया। दूसरे वर्ष दो बार उसके लेनेकी अंगरेजोंने कोशिश की, लेकिन कोई काम न निकला। सन् १७६० ई०में अंगरेजोंने किलेको घेर सात रोज़को गोलेबारोसे उसे पा लिया था। फिर बीस वर्षतक अरकटका किला अंगरेजोंके दोस्त नवाब सुहम्मद अलीके हाथ रहा। किन्तु सन् १७८० ई०में महिसुरके इस जिलेतक बढ़ आनेपर अरकट हैदर-अलीको सौंपा गया, जिन्होंने सन १७८३ ई०तक अपने हाथ रक्खा। टीपू सुलतानने किलेबन्दीको तोड़ शहर छोड़ा था। सन १८०१ ई०में नवाबने कर्णाटकके साथ अरकट भी अंगरेजोंको दे दिया। नगरके समीप नवाबके वंशजोंकी आज भी सम्पत्ति विद्यमान है। नवाबका महल तो ढेर हो गया और न किलेका ही कोई निशान रहा। महल और किलेके बीच नवाब शम्शादत उल्लाकी कब्र बनो है, जिसके लिये सरकारकी तर्फसे माहवार खर्च मिलता है। कब्रके पास ही बड़ी जामा मसजिद है।

अरकट-उत्तर—मन्द्राज प्रान्तका एक जिला। यह अक्षा० १२° २०' एवं १३° ५४' उ० और द्राघि० ७८° १५' तथा ८०° ४' पू०के बीच अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ७२५६ वर्गमील है। इससे पश्चिम महिसुर राज्य, उत्तर कडापा एवं नेल्लोर, दक्षिण सलेम तथा दक्षिण अरकट और पूर्व चिङ्गलपट है।

इस जिलेका उत्तर एवं पश्चिम भाग पार्वत्य तथा सुन्दर और दक्षिण एवं पूर्व अंश समान तथा अप्रधान है। पूर्वघाटकी पर्वतश्रेणी अपनी दक्षिण और शाखा फैलाती हुयी इससे दक्षिण-पश्चिमसे उत्तर-पूर्व

है और नागरी उत्तर-पूर्व कोणको पार करती है। पूर्वघाट पर्वत बालाघाट और पाचनघाटके बीचमें है। इस जगह पहाड़की मामूली उंचाई समुद्र-तलसे २५०० फीट ऊपर है। दक्षिण-पश्चिम जो जवादी पहाड़ पड़ता है, उसकी चोटी कहीं-कहीं समुद्रतलसे ३००० फीट ऊंची है। वनो-वम्बदी या पालारकी विस्तृत उपत्यका इस पहाड़को पूर्वघाट पर्वतसे अलग करती है। अम्बूरके पास जवादी और पूर्व-घाट दोनो पर्वत बिल्कुल मिले हुये हैं। उस पर्वतमें लोहा और तांबा ढेरका ढेर पाया जाता है। महिसुर राज्यमें जिलेकी सीमाके पास सोना मिलनेसे उसके इस जिलेमें भीरहनेको सम्भावना है। कोयलेका कहीं पता नहीं चलता, किन्तु चूना और मकान बनानेका बढिया पत्थर बहुत मिलता है। पालार सबसे बड़ी नदी है। वह जिलेके दक्षिण-पश्चिम आ उत्तर और बहती हुई जवादी पर्वतसे पूर्व जा समुद्रमें मिली है। राहमें उससे दो बड़ी नदो चेयर और पाइनो मिल जाती हैं। अम्बूर और गुदियातम पालारकी छोटी सहायक नदी है। जिलेके पूर्व केन्द्रमें नारयणवन और कोर्त्तलयार प्रवाहित हैं। प्रायः बारहो महीने नदो सूखी रहती है। पानी उसकी गहरी बालूमें डूब जाता है। फिर भी नहरें काट नीचेके पानीसे खेत सींचते हैं। इससे पानीकी कमी कभी नहीं होती। १८०० वर्गमीलपर जङ्गल फैला है, जिसमें तिहाई प्रजाका है। लाल सन्दरकी लकड़ी बहुत उम्दा होती है। दीमक न लगनेके कारण लोग इससे गाड़ीका ढांचा और दरवाजेका खम्भा बनाते हैं। लाल रङ्ग निकालनेको यह युरोप भी भेजी जाती है। जङ्गलमें हाथी, भैंसा, चीता, भेंड़िया भालू, तरह-तरहका हिरण, स्याही और सूअर घूमते फिरते हैं।

इतिहास—उत्तर अरकट प्राचीन द्राविड़ देशका अञ्चल है। इसके आदिम निवासो करम्ब थे, जो किसी राजाको न रखते थे। सबसे पहले पल्लव-वंशके कमण्डु करम्बप्रभु राजा बनाये गये। पल्लव-नृपतियोंका किला पूरलूरमें रहा और काञ्चीवरम

सबसे बड़ा नगर था। सन् ई०के ७वें शताब्दमें पल्लव-राजवंशका पराभव होनेसे कोङ्क और चोल नृपति प्रधान बने। सन् ई०के ८वें या ९वें शताब्द चोलोंने करम्बोंको यहाँसे निकाल बाहर किया।

काञ्चीपुर चोल-नृपतियोंकी राजधानी हुआ और गोदावरीतक फैला। किन्तु तैलङ्ग और विजयनगरके राजाओंसे युद्ध होनेपर चोलोंका जोर घट गया। सन् ई०के १७वें शताब्दके मध्य महाराष्ट्रोंका अभ्युदय होनेसे विजयनगरवालोंका भी प्रभाव कम हो गया। शिवाजीने दक्षिण-भारतमें अपना अधिकार फैला रखा था। वेङ्गाजी शिवाजीके सौतेले भाई और वर्तमान चावनकोर राजवंशके प्रतिष्ठाता थे। बीजापुर-राज्यकी ओरसे कर्णाटकमें उन्हें जागीर मिली थी। सन् १६६४ ई०में अपने बाप शाहाजीके मरनेपर वेङ्गाजी वह जागीर पा गये। सन् १६७६ ई०में शिवाजी जागीर लेनेके लालचसे उत्तर-अरकटकी कल्लूर घाटीसे कर्णाटक जा पहुँचे थे। वेङ्गूर, अरनी और दूसरी जगहका क़िला तोड़ वह अपने भाईकी सारी जागीर दबा बैठे। कर्णाटक जाते समय शिवाजी अपने राजपूतका उत्तरप्रान्त गोलकुण्डाके नवाबको सौंप आये थे। वहाँ उपद्रव उठनेकी खबर पा उन्हें झटपट वापस जाना पड़ा। शिवाजी जीती हुई जागीर दूसरे सौतेले भाई सन्ताजीको दे चले थे, जिन्हें वेङ्गाजीने धीरे-धीरे दबा लिया। अन्तमें वेङ्गाजीसे आधी आमदनी लेनेपर शिवाजीने जागीर छोड़ दी। इसी बीचमें बादशाह औरङ्गजेबने दक्षिणकी अराजकता मिटानेपर कामर बांधी। सन् १६८८ ई०में औरङ्गजेबके सिपहसालार जुलफ़कार खान्ने जञ्जी ले दाउदखान्को अरकटका हाकिम बना दिया। सन् १७१२ ई०तक मुसलमान हाकिम जञ्जीमें रहा और पञ्चमांश देनेवाले मुसलमान छपकको खाने-कमानेके लिये भूमि देता गया। सन् १७१२ ई०में ही सआदतउल्ला खान्ने कर्णाटकका नवाब बन अरकटको अपनी राजधानी बना लिया।

सन् १७८२ ई०में महिसुरका द्वितीय युद्ध समाप्त

होते ही वर्तमान जिलेवाले घाटका ऊपरी भाग अंगरेज सरकारको दिया गया। सन् १८०१ ई०में नवाबके कर्णाटक अंगरेजोंको सौंपनेपर अरकटका उत्तर-भाग नामक एक जिला खुला। सन् १८०३ ई०में नारागन्ती, कल्लूर, करकमवादी, कृष्णपुर, तम्बा, वङ्गारी, पुलिचेरला, पोलूर, मोगराल, पकाल और गेद्रगूंट राज्यके बलवा मचानेपर अंगरेजी फौज उन्हें दबानेको भेजा गयी। इस जिलेके अरकट, वेङ्गूर और चन्द्रगिरि आदि नगरमें ऐतिहासिक समिति वर्तमान है। सन् १६४० ई०में बीजापुरनरेशसे अंगरेजोंने उनके राज्यवाले 'मन्द्राजपटम्' नगरमें एक कारखाना खोलनेकी आज्ञा मांगी थी।

इस जिलेमें तामिल और तेलगु भाषा चलती है। दक्षिण तमिलुकुमें जैन अधिक देख पड़ते हैं। वह जमौन्दारी करते और आनन्दसे रहते हैं। बनजारा वगेरह घूमते रहते हैं। जङ्गल और पहाड़में इरुला, येदिकालो, यानादो और मलयाली नामक आदिम-निवासी रहते हैं। वे शहद, मोम, छाल, जड़, सुपारी वगेरह जङ्गली चीजको मैदानी आदमीयोंके हाथ बदलसे, जो उनसे अधिक सभ्य मालूम होते हैं। किसान सिवा धार्मिक उत्सवके दूसरी जगह अपना गांव छोड़कर बहुत कम जाते हैं। भैंस सस्ती मिलती है। इस जिलेमें नहर निकालनेका सुभौता नहीं पड़ता।

यहाँसे चावल और सीरा बाहर बिकने जाता है। नमक, लोहा, कपड़ा और रुई अपने खर्चको मंगाया करते हैं। आमदनीकी बनिस्खत रफ्तानी ज्यादा होती है। कपड़ेकी बुनाईका ही काम अधिक होता है। किन्तु वालाजापेटका कालौन, बन्देवकी चटाई, तीरूपतिकी पीतलवाला चीज और लकड़ीकी नक्काशी, पुङ्गनूरका लोहेवाला सामान, गुड़ियातमका मट्टीवाला बरतन और कलस्त्रीवालो शीशेकी पोत देखने लायक होते हैं। जिलेमें रेलवे और सड़ककी कोई कमी नहीं है। सन् १८२६ ई०में पहले पहल सरकारी मदरसा खुला था।

यहाँ मलेरिया ज्वरका प्रकोप अधिक फैला रहता-

हैं। वर्षा समाप्त होते ही उसका चमत्कार बढ़ जाता है। कुष्ठरोग साधारणतः फेल और फरवरीसे मई तक चेचक चिपट जाता है। मवेशी पैर और मुंहकी बीमारीसे मरती है।

दक्षिण-अरकट—मन्द्राजप्रान्तका एक जिला है। यह अक्षा० ११° १०' एवं १२° २५' ३०" उ० और द्रावि० ७८° ४१' ३०" तथा ८०° ३' १५" पू०के मध्य अवस्थित है। इस जिलेका रकबा ४८७३ वर्गमील है। दक्षिण अरकटसे उत्तर चिज़लपट एवं उत्तर-अरकट, पूर्व बङ्गालकी खाड़ी, दक्षिण त्रिचनापली तथा तञ्जोर और पश्चिम सलेम जिला है। यह जिला आठ तालुकोंमें बंटा है। फ्रान्सीसी बसती पुंदिचेरी इसीके भीतर है। पश्चिममें सिवा कलरायन पर्वतके दूसरी जगह पत्थर नहीं देखायी देता। समुद्र किनारे और पुंदिचेरी तथा कूडलूरके पास भी कुछ पहाड़ आ गया है। इसमें तिरुनमलय पर्वतपर कोई सवारी जा न सकती। उसकी बगल ठालू और जङ्गलसे हरीभरी रहती है। पोर्टे-नोवोसे डेढ़ कोस दक्षिण कोलरुन नदी इस जिलेकी दक्षिण-पूर्व सीमापर अठ्ठारह कोसके चक्कर लगा, बङ्गालकी खाड़ीमें गिरती है। वेल्तार भी इकतालीस कोस जिलेके भीतर बह और मणिसुत्तानदीको ले पोर्टे-नोवोके पास समुद्रसे मिलती है। दोनो नदीमें कोई तीन कोस तक समुद्रकी लहर चढ़ती है। गड्डिलम् या गरुडनदी येगल भीलसे निकल और ५६ मीलका चक्कर मार कूडलूरसे आध कोस उत्तर बङ्गालकी खाड़ीमें गिरती है। पोम्बैयार महिसुरकी समस्थलीसे चलती और ७५ मीलका धावा लगा कूडलूरसे डेढ़ कोस उत्तर खाड़ीमें मिलती है। सेञ्जी नारायणमङ्गलम् भीलसे निकलती और तोण्डैयार तथा पाम्बैयारको साथ ले अरियानकूपम् तथा चिन्नविरामपटनम्के पास दो मुहाने समुद्रसे मिलती है। सिवा सरकारीके कितना ही अच्छत जङ्गल भी देखेंजाते, जिसमें तञ्जोर जिलेसे मवेशी चरने आती है। हाथी, चीता और भालू तो कम, किन्तु लकड़बग्घा, हिरण, जङ्गली कुत्ता, सुघर और सेह बहुत देख पड़ता है।

सन् १६७४ ई०में जिञ्जि(सेञ्जि)-नृपतिके बसनेको बुलानेपर अंगरेजोंका सम्बन्ध इस जिलेसे लगा था। बातचीत तो चलती रही, किन्तु सन् १६८२ ई० तक कोई काम न बना, तब अंगरेजोंने कूडलूरमें कारवार करनेको एक कोठी खोली। इसमें सफलता न होनेपर कुछ ही महीने बाद पुंदिचेरीसे पांच कोस उत्तर कुजीमेडूमें अंगरेजी बसती हुई थी। सेञ्जि-शासक हरजो राजाके भूमि देनेपर सन् १६८३ ई० में कूडलूरकी कोठी फिर खुली, और पोर्टे-नोवोमें कोई छोटी बसती बनायी गयी। चार वर्ष पीछे अंगरेजोंने महाराष्ट्रोंसे सेण्ट-डेविड दुर्गकी जगह खरोदो और कुनिमेडूकी बसती छोड़ दो। कर्णाटकके युद्धमें कूडलूरने बड़ा काम बनाया था। सन् १७५८ ई०में फ्रान्सीसियोंने सेण्ट डेविड दुर्ग और कूडलूरको अधिकार कर किला तोड़-फोड़ डाला। किन्तु दो वर्ष बाद बन्दिवासका युद्ध समाप्त होते सर एयार-कूटने फिर कूडलूरको अधिकार किया, उनके पहुँचनेको खबर पा फ्रान्सीसी दल सेण्ट-डेविड दुर्गसे भाग खड़ा हुआ था। सन् १७८२ ई०में फ्रान्सीसी सेनापति और टीपू सुलतानने नगरको फिर जीत तीन वर्ष अपने हाथ रखा। अन्तमें कूडलूर अंगरेजों और पुंदिचेरी नगर फ्रान्सीसियोंको सन्धिके अनुसार मिला था। सन् १८०१ ई० में अरकटप्रान्त अंगरेजोंके हाथ आनेसे 'अरकटका दक्षिण विभाग' (The Southern Division of Arcot) नामक एक जिला बना।

दक्षिण अरकटके अधिवासी तामिल भाषा बोलते हैं। चेटी या सेठों लोग धनवान् होते हैं। ब्राह्मण जमीन्दारी और सरकारो नौकरी करते हैं। कोरवारको चोर बताते। पहाड़ी जमीनमें मलयाली, इरुलार और विन्नियार मिलता। तिरुवान-नल्लूरके सुसलमानोंमें बह्दाबी उपनिवेश प्रतिष्ठित है। इस जिलेके प्रधान नगरोंका नाम—चिदम्बरम्, कूडलूर, पणरुट्टि, पोर्टे नोवो, तिण्डिवनम्, तिरुवसमलय, वलवनूर, विल्लपुरम् और वृदाचलम् है। इस जिलेमें सौ आदमीमें पचाससे ज्यादा काम करनेवाले

न निकलेंगे। यहां पचास तरहका चावल होता है।
प्रायः तूफान समुद्र तटपर जोरशोरसे चलता रहता है।

यहां नील, चीनी, गुड़, नमक, चटाई, मट्टीका
बरतन, तेल तथा रुई एवं रेशमका धागा और
कपड़ा बनता है। नमक सरकारी देख भालसे
तैयार होता है। महिसुरसे रेशम रंगा कुम्भकीनमें
रंगा और चिदम्बरमें बुना जाता है। सन् ई०के
१८वें शताब्द ईष्ट इण्डिया कम्पनीने कई जगह
कपड़ेका काम खोला था, जो अब बिगड़ गया।
जिलेके भीतर अनाज, मट्टीके बरतन, शराब, तेल, नील,
चीनी, गुड़, नमक, चटाई और कपड़ेका काम चलता
है। तिरुनमलय, चिदम्बरम्, वृद्धाचलम्, कूडलूर,
कैल्लै, श्रीमुण्ण, कुवागम्, मयलम् और मलया-
नूरमें हरसाल मेला लगता है। इरुलार शहद,
मोम, माकूफल और रंगनेकी छाल बेच अपना काम
निकालता है। कल्लकूरिची, तिरुनमलय और तिरुको-
इलूर तअल्लुकमें बहुत कच्चा लोहा मिलता है। 'खान
साहब' नहर कोलरुन तथा वड़वार नदीको वेल्तारसे
जोड़ता है। किन्तु नहर तङ्ग रहनेसे बड़ा जद्वाज
चल नहीं सकता। जिलेमें आठ तअल्लुक हैं,—
चिदम्बरम्, कूडलूर, कल्लकूरिची, तिण्डिवनम्, तिरु-
कोइलूर, तिरुवन्मलय, विन्नपुरम् और वृद्धाचलम्।
पहले यहां डाका बहुत पड़ता था, किन्तु अब सर-
कारी इन्तजाम होनेसे रुक गया।

अरकटी (हिं० पु०) पतवार घुमानेवाला मांझी।
अरकना (हिं० क्रि०) १ टक्करखाना। २ तड़का
खाना, फट जाना।

अरकनाना (अ० पु०) पुदीने और सिरकेका अरक।
अरकना-बरकना (हिं० क्रि०) टालम टोललंगाना,
मुंह फेर चल देना, खैचतान मचाना, ध्यान न
जमाना।

अरकवादियान (अ० पु०) सौफ़का अर्क।

अरकला (हिं० पु०) अर्गल, रोक, ठहराव।

अरकान (अ० पु०) राजाके प्रधान कर्मचारी,
रियासतके खास कामदार। यह रुक्न शब्दका
बहुवचन होता है।

अरकासार (हिं० पु०) तड़ाग, तालाब।

अरकोल (हिं० पु०) कौलीरा, लाखर। यह वृक्ष
हिमालय पर्वतपर होता और मैदानसे आसामतक
२०००से ८००० फीट ऊंचे मिलता है। इसके गोंदको
ककरासिंगो कहते हैं।

अरक्त (सं० पु०) लाक्षा, लाख।

अरक्षणी (सं० स्त्री०) न रक्षते न रक्षितुं शक्या
वा; रक्ष-लुप्त अनौयट् वा, नञ्-तत्। अविवाहिता
एवं दशम वत्सरसे अधिक वयस्का बालिका, जो
कारी लड़की दश सालसे उम्रमें ज़रादा हो।

अरक्षम् (सं० त्रि०) नास्ति रक्षो रक्षसुख्यं बाधकं
यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ बाधकरहित, जिसपर शैतान्-
का साया न रहे। २ अहिंसित, सत्यव्रत, नुकसान
न पहुँचानेवाला, ईमानदार।

अरक्षित (सं० त्रि०) १ अपरिपोषित, अशरण,
अनाश्रय, बेहिफ्जाजत, बेपनाह, जिसको देखभाल
रखी न जाये।

अरग (हिं० पु०) अरगजा। यह द्रव्य पीत एवं
सुगन्धित होता है। देवतापर चढ़ा लोग इसे माथेमें
लगाते हैं।

अरगजा (हिं० पु०) सुगन्धित द्रव्य विशेष, कोई
खुशबुदार चीज। इसे केशर, चन्दन एवं कपूरदि
मिलाकर बनाते और शरीरमें लगाते हैं।

अरगजी (हिं० वि०) १ अरगजेके रङ्ग-जैसा, जिसका
रङ्ग अरगजेकी तरह रहे। २ अरगजेके सुगन्ध-जैसा,
जिसकी खुशबू अरगजेकी तरह रहे। (पु०) ३ अर-
गजे-जैसा रङ्ग, जो रङ्ग अरगजेकी तरह हो।

अरगट (हिं० वि०) पृथक्, भिन्न, जुदा, अलग।

अरगण्ट (वै० प्र०) उपत्यका, घाटी, दरह, दो
पहाड़के बीचकी राह।

अरगन (अ० पु०) वाद्यविशेष, कोई बाजा।
(Organ) इस बाजेको धौकनीसे बजाते। स्वर
आनेको इसमें नली लगती है।

अरगनी (हिं० स्त्री०) वस्त्रादि लटकानेकी लकड़ी
या रस्सी। इसे कपड़े वगैरह टांगनेको घरमें
बांधते हैं।

अरगल, अरगल देखो।

अरगवानी (फ० पु०) १ रक्त, लाल। (वि०) २ गहिरा लाल रङ्गका।

अरगाना (हिं० क्ति०) १ पृथक् पड़ना, जुदा होना, अलग रहना। २ चुपचाप बैठना, बात न कहना, मौन-धारण करना। ३ निर्वाचन निकालना, चुनना, छांटना।

अरग्वध (सं० पु०) पृथ्वी आकार ऋक्षः। १ आर-ग्वधवृक्ष, अमलतास, गिरमालह, राजवृक्ष।

यह अतिमधुर, शीतल और शूलघ्न होता है। इसकी सेवनसे ज्वर, कण्डू, कुष्ठ, मेह, कफ और विष्टम्भ दूर हो जाता। (रात्रनिघण्टु)

यह संसन, गुरु और हृद्रोग एवं उदावर्त नाश करता है। इसका फल संसनगुणयुक्त, रुच्य, कोष्ठ-शुद्धिकर और कुष्ठ, कफ, एवं ज्वरघ्न होता है।

इसका पत्ता रैचक और कफ एवं मेदको मिटाने-वाला होता। पुष्प स्वादु, शीतल, तिक्त, ग्राहक और तुवर होता। पाकमें मज्जा मधुर, स्निग्ध, अग्निविवर्धन, रैचक और पित्तवातकी नाश करती है।

(क्ती०) २ स्वर्णालुफल, किसी किस्मका आलू।

अरघ, अरघ देखो।
अरघट्ट (सं० पु०) अरघककाष्ठवत् घटादि घट्यते चल्थते यत्र येन वा। १ महाकूप, बड़ी गचका कुवाँ। अरं शीघ्रं घट्यते, अर-घट्ट कर्मणि घञ् वा। कूपसे जल निकालनेका काष्ठविशेष, रहट।

अरघटक, अरघट्ट देखो।

अरघा (हिं० पु०) अर्घदेनेका ताम्रपात्र विशेष, जिस ताँदिके बरतनसे अर्घ दे। २ जलहरी, शिव-लिङ्ग स्थापित करनेका पात्र। ३ चंवना, कुयेको गचका पानी निकालनेवाली राइ।

अरघान, आधरण देखो।

अरङ्गुत (वै० त्रि०) १ सन्तोषप्रदरूपसे कार्य चलाने-वाला, जिसके कामसे जो खुश रहे। २ प्रसुत हो जानेवाला, जो पूजारीकी तरह काम करता हो।

अरङ्गुत (वै० त्रि०) १ सन्नद्ध, सज्जीभूत, तैयार। २ सन्तुष्ट, ढस, आसूदा, छका हुआ।

अरङ्गुति (वै० स्त्री०) सेवा, आराधन, खिदमत, परस्तिथ।

अरङ्ग (सं० पु०) १ मत्स्यविशेष, कोई मछली। २ शजना, सेगवा।

अरङ्गम (वै० त्रि०) १ समोप आनेवाला, जो देखाई दे रहा हो। (पु०) २ गति, चाल। ३ परि-मित गमन, थोरा चलना।

अरङ्गर (सं० पु०) कृत्रिम विष, बनाया हुआ जहर।

अरङ्गा (सं० स्त्री०) अरङ्ग देखो।

अरङ्गिन् (सं० त्रि०) विरक्त, शान्तराग, धीमा।

अरङ्गिसत्त्व (सं० पु०) बौद्धोंके देवविशेष।

अरङ्गी (सं० स्त्री०) अरङ्ग देखो।

अरङ्गुदी (सं० त्रि०) माधवीलता, महुवेका पेड़।

अरङ्गुष (वै० त्रि०) सोत्साह प्रशंसा करनेवाला, प्रकाण्ड शब्द सुनानेवाला, जो हौसलेके साथ तारीफ करता हो, बुलन्द आवाज देते हुआ।

अरचन, अरचन देखो।

अरचना (हिं० क्ति०) पूजना, परस्तिथ करना।

अरचल (हिं० स्त्री०) अड़चन, भ्रमेल, रोक, भगड़।

अरचि, अरचि देखो।

अरज, अरजन् और अरज देखो।

अरजल (अ० पु०) १ अश्वविशेष, कोई घोड़ा।

इसका दोनो पिछला और एक दाहना पैर सफेद या किसी एक रङ्गका होता है। इसको ऐसी समझते।

२ पतित जातिका पुरुष, जो शङ्खुस कमीनी कीमका हो। ३ वर्णसङ्कर। (वि०) ४ नीच, कमीना।

अरजस् (सं० त्रि०) रञ्ज-असुन् न लोपः, नास्ति रजोगुणो यस्य। १ रजोगुणके कार्य कामक्रोधादिसे शून्य। २ रेणुरहित, जिसमें धूलो न रहे। ३ स्वच्छ, शुद्ध, पाक, साफ। ४ मासिक धर्मविहीन स्त्री, जिसे महीना न होवे।

अरजस्क, अरजस् देखो।

अरजा (सं० स्त्री०) १ घृतकुमारो, घीकार। २ भार्गव ऋषिकी कन्या।

अरजास् (सं० स्त्री०) नवयौवना बालिका, नौजवान लड़की।

अरजो, अर्जो देखो।

अरजुन, अर्जुन देखो।

अरज्जु (सं० स्त्री०) नास्ति रज्जुः बन्धनसाधनं यत्र।

१ बन्धनागार, बांधनेकी जगह। इस जगहसे रस्सी न रहते भी जानवर भाग नहीं सकते। (त्रि०) २ रज्जु-रहित, जिसमें रस्सी न लगे।

अरभना (हिं० क्रि०) लिपट जाना, फंसना।

अरट (सं० पु०) न रटति गुप्तमन्त्राणां प्रकाशयति, रट-वन्, नञ्-तत्। पृथुश्चवा नृपतिके मन्त्रि-विशेष।

अरटु (सं० पु०) अरं शीघ्रं अटति, अट-अल्, वा, उण् प्रथो० साधु। श्लोना वृक्ष।

अरटू (सं० त्रि०) १ अरटुकाष्ठसे निर्मित, जो श्लोनेका लकड़ीका बना हो। (पु०) २ पुरुष विशेष, किसी आदमीका नाम।

अरडींग (हिं० वि०) शक्तिशाली, ताकतवर।

अरण (सं० त्रि०) रण्यते गर्जतेऽस्मिन्, रण्यशब्दे आधारे घ, नास्ति रण्यो युद्धं यस्य, नञ्-बहुव्री०।

१ युद्धशून्य, जिसमें लड़ाई न रहे। नास्ति रण्यः शब्दो येन। २ रिपु देखकर जिसका वाक्य भयसे न फटे, दुश्मनको देखकर खौफसे न बोलनेवाला। ३ क्रीड़ाहीन, जो खेलता न हो। ४ दुःखित, रञ्जीदह। ५ विगत, गया-गुजरा। ६ अपरिचित, अजनबी। ७ दूरस्थित, फासलेपर रहनेवाला। (स्त्री०) ८ गमन, उपस्थिति, चाल, दाखिला। ९ निवेश, निधान, इन्दिराज, इदखात्। १० शरण, पनाह। (पु०) ११ चित्रकवृक्ष, चौतका पेड़।

अरणि (सं० पु०-स्त्री०) रिच्छति गच्छति, ऋ-अणि। १ अग्न्युत्पादक मन्थनकाष्ठ, जिस लकड़ीको घिसनेसे आग निकले। २ लकड़ीके जिन दो टुकड़ोंको घिसकर आग बनाये। (पु०) ३ सूर्य। ४ अग्नि। ५ क्षुद्राग्निमन्थवृक्ष, गनियार, अंगेथु। ६ श्लोनाकवृक्ष। ७ चित्रकवृक्ष। (स्त्री०) ८ मार्ग, राह। ९ कृपणता, बखिली।

अरणिर्वाग्निमयेऽपि अतृतो निर्मल्यं दास्यति। (विश्व)

अरणि यन्त्रसे यन्त्रमें आग बनाते हैं। यह दो

भागमें विभक्त होता—अधरारणि और उत्तरारणि। इसे शमीगर्भ अश्वत्थसे तैयार करते हैं। उत्तरारणिको अधरारणिके छेदमें डाल, रस्सीसे मथानीकी तरह घुमानेसे छेदके नीचे रखा हुआ कुश जल उठता है। अरणि मन्थनके समय वेद पढ़ा जाता है। यज्ञमें प्रायः अरणिमन्थनसे निकली हुई ही आग काम देती है।

अरणिक (सं० पु०) अरण्ये अग्निमन्थनाय साधुः ठन्। अग्निमन्थन वृक्ष।

अरणिका (सं० स्त्री०) अरणिक देखो।

अरणिमत् (सं० त्रि०) १ दोनों अरणिसे सम्बन्ध रखनेवाला। २ अरणिसे उत्पन्न किया जानेवाला।

अरणी, अरणि देखो।

अरण्योकेतु (सं० पु०) अरणी केतुरस्य। महाग्निमन्थ वृक्ष, बड़ा गनियार।

अरणीसुत (सं० पु०) अरणीद्वय-घर्षणेन सुतः जातः। ३ शाक० तत्। शुकदेव। महाभारतमें लिखा है, कि वेदव्यास देवताके निकट वर पा अरण्यो-द्वय घर्षण द्वारा अग्न्युत्पादनको चेष्टामें रहे, उसी समय रूपवती धृताची अप्सरा देख पड़ी। उसको देखनेसे ही ऋषिके मनमें विकार आ गया। धृताचीने उसे समझ शुक की पत्नीका रूप बनाया था। व्यास-देवने इन्द्रिय दमनके निमित्त अनेक यत्न लगाया, किन्तु किसीतरह कृतकार्य हो न सके। हस्तस्थित अरण्योपर शुक गिरते भी उन्होंने अरणीमन्थन न छोड़ा। उसीसे शुकदेवका जन्म हुआ और अरणी-सुत नाम पड़ा।

अरण्य (सं० स्त्री०) अर्यते गम्यते पञ्चाशत् वर्षात् परं तदनन्तरं वा यत्र। १ वन, जङ्गल।

‘अट्यरण्यं विपिनम्।’ (अमर)

शास्त्रकारोंके पचास वत्सर वयःक्रम बाद वन जानेकी व्यवस्था देनेसे उसका नाम अरण्य पड़ा है। यह उद्यान, महावन, उपवन और प्रमोदवनके भेदसे चार प्रकारका होता है। उद्यानमें रागी क्रीड़ा करते और महावनमें सिंहादि पशु रहते हैं। उप-वन गांवके पासमें और प्रमोदवन राजाके घरमें

रहता है। (पु०) २ रेवत मनुके पुत्र। ३ कटुफल, कायफल। ४ साध्यविशेष। ५ रामायणका एक काण्ड। रामायण देखो।

अरण्यक (सं० पु०) १ महानिम्ब, बकौन। २ वन, जङ्गल।

अरण्यकणा (अ० स्त्री०) १ कटुजीरक, जङ्गली जीरा। २ वनपिपली, जङ्गली पीपल।

अरण्यकदली (सं० स्त्री०) अरण्यस्यैव कदली, इतत्। गिरिकदली, पहाड़ी केला। शास्त्रमें लिखा है—यह शीतल, मधुर, वल्य, वीर्यवर्धन, रुच्य, दुर्गर एवं गुरु होती और दाह, शोष तथा पित्तको मिटाती है। इसका फल तुवर, मधुर और गुरु रहता। (वेद्यनिघण्टु)

अरण्यककंटी (सं० स्त्री०) वनजात-ककंटो, जङ्गली ककड़ो। यह उष्ण, तिक्तारस, भेदक तथा पाकमें कटु रहती और कफ, कृमि, पित्त, कण्डू एवं ज्वरको मिटाती है।

अरण्यकाक (सं० पु०) वनकाक, जङ्गली कौवा।

अरण्यकाण्ड (सं० स्त्री०) अरण्यस्य काण्डो यत्र बहुव्री०। रामायणान्तर्गत रामके वन व्यापारका वर्णित ग्रन्थ।

अरण्यकार्पासी (सं० स्त्री०) अरण्ये अरण्यस्य वा कार्पासी, ७ वा इ-तत्। वनकार्पास, जङ्गली कपास। यह रुच्य होती और व्रण तथा शस्त्रक्षतको मिटाती है।

अरण्यकुक्कुट (सं० पु०) वनकुक्कुट, जङ्गली सुर्गा। इसका मांस हृद्य, लघु, और श्लेष्महर होता है। (राजनिघण्टु)। मतान्तर अरण्यकुक्कुटका मांस वृंहण, स्निग्ध, वीर्योष्ण, वातघ्न और गुरु रहता है। (भावप्रकाश)

अरण्यकुलत्थी, अरण्यकुलत्थिका देखो।

अरण्यकुलत्थिका (सं० स्त्री०) अरण्यस्य कुलत्थिका, इ-तत्। १ वनकुलत्थिका, जङ्गली कुलथी। कुलत्थास्त्रन, काला सूमा।

अरण्यकुसुम्भ (सं० पु०) इ-तत्। वनकुसुम्भ, जङ्गली कुसुम। यह पाकमें कटु, श्लेष्मघ्न और दीपन होता है। (राजनिघण्टु)

अरण्यकुलत्थी, अरण्यकुलत्थिका देखो।

अरण्यकोलि (सं० स्त्री०) वनवदर, जङ्गली वेर।

अरण्यगज (सं० पु०) अरण्यस्थो गजः, कर्मधा०। वनहस्ती, जङ्गली हाथी।

अरण्यगत (सं० त्रि०) वनमें पहुँचा हुआ, जो जङ्गलको चला गया हो।

अरण्यगवय (सं० पु०) वनगवय, जङ्गली गाय, सुरा-गाय।

अरण्यगान (सं० स्त्री०) अरण्ये गीयते, अरण्य-गे कर्मणि ल्युट्। सामवेदके अन्तर्गत अरण्यमें गाने योग्य गान विशेष। सामवेद देखो।

अरण्यघोलिका, अरण्यघोली देखो।

अरण्यघोली (सं० स्त्री०) १ वनघोली, कोई सज्जो। २ मन्यनदण्ड, मथानी।

अरण्यचटक (सं० पु०) वनचटक, जङ्गली कबूतर। इसका मांस लघु, हितावह और चटकके समान गुण रखनेवाला होता है।

अरण्यभ्रम (सं० त्रि०) अरण्ये भवति; अरण्य-भू-अच्, ७-तत्। वनजात, वनोत्पन्न, जङ्गलमें पैदा होनेवाला।

अरण्यमच्छिका (सं० स्त्री०) इ-तत्। दंश, डांस, मच्छर।

अरण्यमार्जार (सं० पु०) इ वा ७-तत्। वनविड़ाल, जङ्गली बिलाव।

अरण्यमुद्ग (सं० पु०) इ-तत्। १ वनमुद्ग, जङ्गली मूँग, मोट। यह कषाय, मधुर, रक्तपित्तघ्न, ज्वर-दाहघ्न, पथ्य, रुचिकृद् और त्रिदोषहर होता है।

(राजनिघण्टु) इसे रक्तपित्तकफवातहर, उष्ण, कषाय, मधुर, प्रदिष्ट, ग्राही, सुशीतल और सर्वरोगनाशक कहते हैं। (चरित्रहिता) इसकी दाल अल्पबल, पाचन, दीपन, लघु, चक्षुष्य, वृंहण, वृष्य और पित्त, श्लेष्म, तथा अस्त्रका रोग मिटानेवाला होती है। (द्रव्यगुण) २ मुद्गपर्णी, उड़द।

अरण्यमुद्गा (सं० स्त्री०) मुद्गपर्णी, उड़द।

अरण्यमेथी (सं० स्त्री०) वनमेथिका, जङ्गली मेथी।

अरण्ययान (सं० पु०) अरण्ये यायते येन, अरण्य-

या करणे लुप्त। १ वन जानिका वाहन विशेष, जिस सवारीमें बैठे जङ्गल पहुँचें। (क्षी०) भावे लुप्त।
२ वनगमन, जङ्गलकी रवानगी।

अरण्यरत्नक (सं० पु०) अरण्ये रत्नति; अरण्य-
रत्न-शुक्ल, ६-तत्। वनरत्नक, जङ्गलका सुहाफिज।
अरण्यरजनौ (सं० स्त्री०) वनहरिद्रा, जङ्गली
हलदी।

अरण्यराज (सं० पु०) वननृपति, जङ्गलका बाद-
शाह। यह शब्द सिंहके लिये विशेषणरूपसे आता है।
अरण्यराज्य (सं० स्त्री०) वनसाम्राज्य, जङ्गलकी
बादशाहत।

अरण्यराशि (सं० पु०) अरण्यजातः राशिः, मध्य-
पदलोपौ कर्मधा०। १ वन्यपशुजातीय राशि, जङ्गली
जानवरका कृण्ड। ज्योतिषशास्त्रोक्त सिंहादि राशि।
अरण्यरुदित (सं० स्त्री०) अरण्ये रुदितं रोदनम्,
सप्तमी वा अलुक्। अरण्यरोदन, वृथा आक्षेप, बेफा-
यदा रलायौ।

अरण्यरोदन, अरण्यरुदित देखो।

अरण्यवत् (सं० अव्य०) वनकी भांति, जङ्गलकी तरह।
अरण्यवायस (सं० पु०) अरण्यस्य वायसः। वनकाक,
जङ्गली कौवा।

अरण्यवास (सं० पु०) अरण्ये वासः वसतिः।
वनवास, जङ्गलमें रहना।

अरण्यवासिन् (सं० त्रि०) अरण्ये वसति, अरण्य-
वस-णिनि। १ वनवासी, जङ्गलका रहनेवाला। (पु०)
मुनि प्रभृति।

अरण्यवासिनो (सं० स्त्री०) अत्यन्तपणी लता,
अमरवेल।

अरण्यवास्तुक, अरण्यवास्तुक देखो।

अरण्यवास्तुक (सं० पु०) ६-तत्। कृण्वर, जङ्गली
बथुवा। यह मधुर, रुच्य, दोपन और पाचन होता
है। इसका शाक त्रिदोषघ्न, मधुर, रुच्य, दीपन, ईषत्
कषाय, संघाही और लघु होता है। (राजनिघण्टु,)

अरण्यशालि (सं० पु०) अरण्यजातः शालिः, मध्य-
पदलोपौ कर्मधा०। नौवारधान्य, जङ्गली चावल।

अरण्यशुन (सं० पु०) वनशुकर, लकड़बग्घा।

अरण्यशुकर (सं० पु०) अरण्यस्थः शुकरः, मध्य-
पदलोपौ कर्मधा०। वनवराह, जङ्गली सूअर।

अरण्यशूरण (सं० पु०) अरण्यजातः शूरणः, शाक०
तत्। वनज शूरण, जङ्गली जमीकन्द।

अरण्यश्वन् (सं० प्र०) १ वृक, भेड़िया। २ कपि,
बन्दर।

अरण्यषष्ठी (सं० स्त्री०) अरण्ये पूजनाय षष्ठी,
शाक०-तत्। १ ज्येष्ठमासकी शुक्लषष्ठी, अरण्ये पूजा
षष्ठी। ज्येष्ठशुक्लषष्ठोकी उपास्य देवी।

“ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे षष्ठी चारण्यसंज्ञिता।

व्यजनैककरासस्यमटन्ति विपिने स्त्रियः॥

तां विन्ध्यावासिनीं स्नान्दषष्ठीमाराधयन्ति च।

कन्दमूलफलाहारा लभन्ते सन्ततीं शुभाम्॥” (राजमार्तण्ड)

ज्येष्ठमासकी शुक्लपक्षकी षष्ठीको अरण्यषष्ठी कहते
हैं। उस दिन स्त्रियां हाथमें एक-एक चामर ले वनमें
जातीं और विन्ध्याचलवासिनी षष्ठी देवीको मनाती हैं।
कन्द, मूल और फल खाकर व्रत रहनेसे शुभ सन्तान
मिलता है।

स्थान-स्थानमें इस तिथिको षष्ठीकी प्रतिमा बना-
कर भी पूजा की जाती है। षष्ठी देवीके ध्यानका मन्त्र
नीचे लिखते हैं,—

“विभुजां गौरवर्णाभां पङ्कजोपशोभिताम्।

वराभयप्रदां षष्ठीं रत्नाभरणभूषिताम्॥

गन्धर्वैः संस्तुतां देवीं क्रोडं चार्पितपुत्रिकाम्॥”

अरण्यसभा (सं० स्त्री०) वनसभा, जङ्गली अदालत।

अरण्यसम्भूत (सं० पु०) कर्कटक, गोलकंकर।

अरण्यहरिद्रा (सं० स्त्री०) वनहरिद्रा, जङ्गली हलदी।

यह कुछ और वातरक्तको मिटाती है। (भावप्रकाश)

मतान्तर यह कटु, मधुर, रुच्य, अग्निदोपन, तिक्त

एवं कुछवातनाशक होती और रक्तदोष, विष, श्वास,

कास तथा हिक्काको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्टु,)

अरण्यहलदोकन्द (सं० पु०) अरण्यहरिद्रा देखो।

अरण्या (सं० स्त्री०) ओषधि विशेष, कोई जड़ी-
बूटी।

अरण्याध्यक्ष (सं० पु०) अरण्ये रक्षणादौ नियुक्तो-

ध्यक्षः, शाक०-तत्। वनरत्नक, जङ्गलका कोई हाकिम

जिसी सरकार अरण्याधीन जमीनकी रक्षाके लिये जङ्गलमें रखे।

अरण्यानि, अरण्यानी देखो।

अरण्यानी (सं० स्त्री०) महदरण्यम्, अरण्य-डोष आनुक् च। १ महदरण्य, वृहत् वन, बहुत बड़ा जङ्गल। २ अरण्यपालयित्री अग्निदेवता, जङ्गलकी देवी। प्राचीन समयमें ऋषि वनदेवीका स्तव करते थे,—

“अरण्यान्वरण्यान्वसौ या प्रेव नश्यति।

कथा शानं न पृच्छति न स्ना भौरिव विंदति ॥

वृषारवाय वदते यदुपयाति चिच्छिकः।

आवाटिभिरिव धावन्नरण्यानिर्महीयते ॥

उत गाव इवादुत वेष्टे व दृश्यते।

उतो अरण्यानिः सायं शकटोरिव सर्जति ॥

गामंगेष आ ह्वयति दार्वगेषो अपावधौत्।

वसन्नरण्यान्वां सायमक्रुचदिति मन्यते ॥

न वा अरण्यानिं हन्त्यान्यथे न्नाभिगच्छति।

स्वादीः फलस्य जग्धाय यथाकामं नि पयते ॥

आञ्जनगन्धिं सुरभिं वस्त्रामकषीवलां।

प्राहं सगाणां मातरमरण्यानिमसंसिधं ॥” (ऋक्ष१०।१४६।१-६)

अरण्यानि, अरण्यानि। आप मानो मिटो जा रही हैं। आप ग्रामका पथ क्यों पूछ नहीं लेतीं? क्या आप निर्भय रहती हैं? वृषकी पुकारके साथ जब चिच्छिकपक्षी वाघकी भांति बोलते-बोलते उड़ता तब अरण्यानीको बड़ा आनन्द आता है। गाय-भैंस चरने और मनुष्यका गृह देख पड़नेसे सायंकालकी अरण्यानी मानो गाड़ी हांकीती हैं। अरण्यमें रहनेसे गाय भैंसको पुकारने और वृक्ष काटनेपर मालूम देता, मानो वह चीत्कार कर रही हैं। अरण्यानी किसीको नहीं मारतीं। फिर भी कोई दूसरा (वनका पशु प्रभृति) चोट कर सकता है। सुस्वादु फल खा लोग उनके राजमें यथाभिलाष रहते हैं। हम अरण्यानीका स्तव करते, वह सृगादिकी माता हैं। वह आञ्जनगन्धि, सुरभि और अकष्टचेत्रसे प्रभुर अन्न पहुंचाती हैं।

अरण्यचन्द्रिका (सं० स्त्री०) अरण्ये पतिता चन्द्रिका ज्योत्स्नेव, ७-तत्। निष्फल वेशभूषा, वेफायदा सजावट। ग्रामकी ज्योत्स्नाका आनन्द सब कोई लेता, किन्तु निर्जन वनकी चन्द्रिका किसी काम नहीं

आती, इसीसे वह निष्फल है। जिस वेशभूषाको देख पतिका मन भूल न जाये, वह भी निष्फल और अरण्यचन्द्रिका कहाती है।

अरण्यचम्पक (सं० पु०) वनचम्पक, जङ्गली चम्पा। यह शीतल, लघु, और दीर्घ एवं बल बढ़ानेवाला होता है।

अरण्यचर (सं० त्रि०) अरण्ये चरति, अरण्य-चर-ट, ७-तत् वा अलुक् सं०। वनचर, जङ्गली, जो जङ्गलमें रहता हो।

अरण्यकाग (सं० पु०) वनकाग, जङ्गली बकरा।

अरण्यज (सं० त्रि०) १ वनमें उत्पन्न, जो जङ्गलमें पैदा हुआ हो। (पु०) २ तिलकक्षुप, तिलका पेड़।

अरण्यजार्द्रक (सं० स्त्री०) अरण्यजार्द्रका देखो।

अरण्यजार्द्रका (सं० स्त्री०) अरण्यजा आर्द्रका, कर्मधा०। जङ्गली आदरक। यह कटु, अम्ल, रुचिकर, बल्य और आग्नेय होती है। (राजनिघण्टु)

अरण्यजीर (सं० पु०) अरण्यस्य जीरः, ६-तत्। कटुजीरक, जङ्गली जीरा।

अरण्यजीर उष्ण, तुवर एवं कटुक होता, वात रोकता और कफ तथा व्रणको मिटाता है।

अरण्यजीरक, अरण्यजीर देखो।

अरण्यजीव (सं० त्रि०) आरण्येन अरण्यजेन फलादिना जीवति, अरण्य-जीव इगुपधत्वात् क। वनोद्भव फलादि द्वारा जीवित, जो वनमें पैदा हुए फल वगैरह खाकर जीता हो। वानप्रस्थादि आचारवान् जन वनमें रहते और कन्दमूत्रफल खाकर अपना निर्वाह करते हैं।

अरण्यदमन (सं० पु०) देवनेका दरखत।

अरण्यद्वादशी (सं० स्त्री०) मार्गशीर्षको शुक्ला द्वादशी। इस तिथिकी लोग व्रताचरण करते हैं।

अरण्यद्वादशीव्रत (सं० स्त्री०) अरण्यद्वादशी देखो।

अरण्यतुलसी (सं० स्त्री०) वनतुलसी, कृष्णवर्चरो, जङ्गली तुलसी। यह झूलदोर्घ भेदसे दो प्रकारकी होती है।

बड़ी अरण्यतुलसी उष्ण, कटु, एवं सुगन्धि

होती और वात, त्वग्दोष, विसर्प तथा विषको दूर करती है। छोटी अरण्यत्रपुसकी कटु, उष्ण, तिक्त, रुच्य, अग्निदीपन, हृद्य, विदाह, लघुपित्तल, तथा रुच्य रहती और कण्डू, विष, छर्दि, कुष्ठ, ज्वर, वात, कृमि, कफ, दद्रु तथा रक्तदोषको मिटाती है। इसका बीज दाह और शोषमें लाभदायक होता है।

अरण्यत्रपुसक (सं० पु०) वन्यत्रपुष, जङ्गली ककड़ी।

अरण्यत्रपुसी (सं० स्त्री०) इन्द्रवारुणी, इन्द्रायण।

२ महाकाल लता, लाल इन्द्रायण।

अरण्यधर्म ((सं० पु०-स्त्री०) अरण्ये आचरणीयो धर्मः, ७-तत्वाशाक०-तत्। वानप्रस्थ धर्म। वानप्रस्थ देखो।

अरण्यधान्य (सं० स्त्री०) प्राणान् दधाति, धा इति यत् नुटी धान्यम्, अरण्ये जातं धान्यम् शाक० तत् ७-तत्वा। नौवारादि वनधान्य, जङ्गली चावल।

अरण्यधेनु (सं० पु०) वनजात गो, जङ्गली गाय।

अरण्यनृपति, अरण्यपति देखो।

अरण्यपति (सं० पु०) अरण्यगानां लक्षणया तत्रस्थ चौराणां पतिः वा, अलुक्-सं०, ६-तत्। १ वनका राजा, जङ्गलका मालिक। २ अरण्यप्रचर व्याधका पति, जङ्गलमें घूमनेवाला शिकारीका मालिक। ३ रुद्र।

रुद्रही लीलाक्रमसे चौररूप बनाते अथवा विश्व-मय कहते हैं। इसलिये चौरादिको रुद्ररूप समझना चाहिये। दूसरे, चौरादि शरीरमें जीव और ईश्वर—दो रूपसे रुद्र रहते हैं। इसमें जीवका ही पर्याय चौरादि होता और वही जीव ईश्वररूप रुद्रको बताता है। (माधव)।

अरण्यपलाण्डु (सं० पु०) वनजात पलाण्डु, जङ्गली प्याज। यह मूत्रविरेचक, श्लेष्महर और अत्युग्र रहता है। मात्रासे अधिक हो जानेपर इसे वान्तिस्तत् और मलभेदन पाते। शोथ, श्वास, कास और मूत्रसङ्गमें यह काम आता है। (अविस्मिता)।

अरण्यप्रिप्यली (सं० स्त्री०) वनप्रिप्यलीनाम क्षुप, जङ्गली पीपलका पेड़।

अरण्यप्रयन (सं० स्त्री०) अरण्ये अयनं वानप्रस्थधर्म अस्तप्रश्निन् अर्श-आदि अच्। ब्रह्मचर्य, ब्रह्मचारिका धर्मविशेष।

अरण्यपीय (सं० त्रि०) वनयुक्त, जङ्गली।

अरण्येतिलक (सं० पु०) सप्तम्या अलुक्, ७-तत्। वनतिल, जङ्गली तिल। जङ्गली तिलसे तेल नहीं निकलता। इसलिये जो द्रव्य रूपवान् रह गुणरहित हो, वह भी इसी नामसे पुकारा जाता है।

अरण्येऽनूच (वै० त्रि०) अरण्ये वने अनूचः नियत-पाठ्यो मन्त्रो यस्य, अलुक् बहुव्री०। १ अरण्य पात्रके पाठ्य मन्त्र द्वारा संस्कृत। यह शब्द पुरोडासादिका विशेषण होता है। (पु०) २ अरण्यका पाठ्य मन्त्र विशेष।

अरण्यौकस् (सं० पु०) अरण्य ओकः स्थानं यस्य, बहुव्री०। मुनि, वानप्रस्थ, जङ्गलमें रहनेवाला फकीर।

अरत (सं० त्रि०) न रतम्, नञ्-तत्। १ विरत, दुनियाकी चीजसे दूर रहनेवाला। २ मन्द, धीमा। (स्त्री०) ३ अमैथुन, सोहबतदारीकी अदम मौजूदगी। अरतत्रप (सं० त्रि०) अरता विरता त्रपा लज्जा यस्य, बहुव्री०। १ मैथुनमें लज्जा न करनेवाला, जिसे सोहबत दारीमें शर्म न लगे। (पु०) २ श्वान, कुत्ता।

अरति (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति, ऋ गतौ इत्यतिः। १ उद्देग, तेज्ररफ्तारी, झपट। 'अरतिरुद्देगः'। (उज्ज्वलदत्त) २ क्रोध, गुस्सा, ३ गमन, रवानगी। ४ अधिकार, दखल। ५ आक्रमण, हमला। ६ सेवक, नौकर। ७ स्वामी, मालिक। ८ चिन्ता, फिक्र। ९ बुद्धिमान् व्यक्ति, दाना शस्त्र। (स्त्री०) रम-क्तिन्, नञ्-तत्। १० अस्थिरचित्त, डावांडोल तबीयत। ११ रागका अभाव, अनिच्छा, तबीयतपर रङ्गका न चढ़ना। १२ रतिविरह, जुदाई। १३ इष्टवियोग, दिलचाही चीज़का न मिलना। १४ असन्तोष, लालच। १५ नायककी कन्दर्प-जनित दशा। १६ पित्तरोग, सफ़देकी बीमारी। (त्रि०) नास्ति रतियस्य, नञ्-बहुव्री०। १७ अनुरागहीन, धीमा, सुस्त। १८ असन्तुष्ट, नाखुश। १९ जैन शास्त्रोक्त कर्मविशेष। इसके उदयसे चित्त चञ्चल रहता और किसी बातमें न लगता है।

अरतिस, अरतीस (हिं० वि०) तीन दहायी और आठ एकायीसे मिलकर बननेवाली। यह शब्द संख्या-वाचक विशेषण होता है।

अरन्नि (सं० पु०) क्रादि० ऋ गती कन्निच्यण् च, नञ्-तत्। १ कनिष्ठाङ्गुलि भिन्न बंधो मुट्ठो।

‘वत्ससृष्टिः करो रत्निः सोऽरत्निः प्रसृताङ्गुलिः’। (उज्ज्वलदत्त)

२ कुर्पर, कुहनी, कोना। ३ वाहु, हाथ। ४ कुहनासे कनिष्ठाङ्गुलि पर्यन्त परिमाण। इस मापसे प्राचीनकाल यज्ञकी वेदी बनती थी।

अरान्निक (सं० पु०) स्वार्थ कन्। कुर्पर, कुहनी। अरान्नमात्र (सं० त्रि०) हाथभर, जो मापमें एक हाथसे ज्यादा न हो।

अरथ (सं० त्रि०) १ रथरहित, बेगाड़ी, जो रथपर चढ़ा न हो। (हिं०) २ अर्थ देखो।

अरथात, (हिं०) अर्थात् देखो।

अरथाना (हिं० क्ति०) अर्थ लगाना, मानो बताना।

अरथिन् (सं० पु०) रथविहीन योद्धा, जिस सिपाहीके पास लड़नेका रथ न रहे।

अरथी (वै० पु०) न रथिः सारथिः, नञ्-तत्, वेदे दौघः। १ सारथि भिन्न, जो शस्त्रस गाड़ी न हांकता हो। (हिं० स्त्री०) २ विमान, जनाजा, टिखटो। इसे लकड़ीसे सिट्ठी जैसी बनाते और सुर्दा ढोनेके काममें लाते हैं।

अरद (सं० त्रि०) न सन्ति रदा दन्ता यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ दन्तविहीन बालक, जिस बच्चेके दांत न निकला हो। २ भग्नदन्त, वृद्ध, पोपला, जिसका दांत गिर गया हो।

अरदण्ड (हिं० पु०) किसी किसीका करील। यह गङ्गा किनारे उपजता है।

अरदन, अरद और अर्दन देखो।

अरदना (हिं० क्ति०) १ लातसे मारना, रौंदना, कुचलना। २ मार डालना, कत्ल करना।

अरदल (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, कोई दरख्त। यह मन्द्राज प्रान्तके पश्चिम-घाट और सिंहलद्वीपमें उपजता है। इसका पीला गोंद पानीमें नहीं शराबमें घुलता है। उससे पोले रङ्गका बहिया कानिब बनता

है। बीजका तेल औषधमें दिया जाता है। इसकी लकड़ी भूरी होती और उसपर नीली धारी रहती है।

अरदली (हिं० पु० = Orderly) चपरासी, हाजिरवाश। यह किसी हाकिमके पास रहता और उससे आकर मिलनेवाले आदमोंकी खबर कहता है।

अरदावा (हिं० पु०) दलामला अन्न, जो अनाज कुचल डाला गया हो।

अरदास (हिं० स्त्री०) १ अर्जुदाश्व, निवेदनयुक्त उपहार, जो भेंट विनतीके साथ चढ़ती हो। २ ईश्वर-प्रार्थना। नानकपन्थी प्रत्येक शुभ कार्यके आरम्भमें अरदास लगाते हैं।

अरध, अर्ध देखो।

अरध (सं० त्रि०) राध हिंसने कर्मणि रन् ऋस्वश्च, नञ्-तत्। १ शत्रु-कर्तृक अहिंस्य, जिसे दुश्मन् मार न सके। २ कर्मशील, जो सुस्त न हो। ३ समृद्ध, खुश-खुरम।

अरन (हिं० पु०) १ किसी किसीकी निहाई। यह नोकदार होता है। २ अरण देखो।

अरना (हिं० पु०) १ जङ्गली भैंसा। यह जङ्गलमें रहता और मामूली भैंसेसे मजबूत होता है। इसके सुडोल शरीर पर बड़ाबड़ा बाल रहता है। सींग लम्बा, मोटा और पंजा होता है। यह बहुत जोरदार होता और शेरसे भी लड़ता है। (क्ति०) २ चटना देखो।

अरनाथ—अष्टादश तीर्थङ्कर। बलभद्र रामचन्द्र और नारायण लक्ष्मणके समयमें होनेवाले बीसवें मुनि सुव्रत तीर्थंकरसे पहिले हुए थे। इनके पिताका नाम सुदर्शन और माता का नाम मित्रसेना था। ये काश्यपगोत्री सोमवंशज राजा थे। फाल्गुन शुक्ला द्वितीया को रेवती नक्षत्रमें जिस समय इन (अरनाथ) का जीव जयन्त विमान नामा स्वर्गसे चलकर रानी मित्रसेनाके गर्भमें आया, उस समय रानीने सोलह शुभ स्वप्न देखे और उनका फल पतिसे पूछा। उत्तरमें महाराजने उन स्वप्नोंका फल तीर्थङ्कर पुत्र रत्नको प्राप्ति होना बतलाया। गर्भके दिन पूरे होनेपर मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशीको पुष्पनक्षत्रमें इनका जन्म हुआ। युवा होनेपर राजा सिंहासनपर विराजे।

इकतीस हजार वर्ष पर्यन्त तो ये मण्डलेश्वर राजा रहे, बाद इनके चक्रवर्तिके चिह्नस्वरूप सुदर्शन-चक्रादि नव निधि चतुर्दश रत्नोंका प्रादुर्भाव हुआ। जैनियोंके भूगोलानुसार जम्बुद्वीपस्थ भरत-क्षेत्र सम्बन्धो एक आर्य और पांच स्नेच्छ खण्डोंके संपूर्ण राजाओंको जीतकर छह खण्ड पृथ्वीके राजा-धिराज बननेवालेको चक्रवर्ती कहते हैं। इनके नवनिधि और १४ रत्नोंके सिवा ८६ हजार स्त्रियां, १८ करोड़ घोड़े, ८४ लाख हाथी, ८४ लाख रथ, तीन करोड़ गौवं थीं। ३२ हजार मुकुटधारी राजा चरणोंमें नमते थे। इन्होंने इस विभूतिको २१ हजार वर्ष तक भोगा। एकदिन शरद् ऋतुके मेघोंको अकस्मात् नष्ट होते देख इनको वैराग्य उत्पन्न हुआ, सांसारिक भोग विलास उसी समान अनुभवमें आने लगे। तत्काल ही अपने पुत्र अरविन्दकुमारको राजपू सौंप आप सहेतुक नामा वनको वैजयन्तिका नामक देवीद्वारा वाहित पालकीमें विराजमान होकर गये। वहां मार्गशीर्ष शुक्ला दशमीके दिन सन्ध्या समय रैवती-नक्षत्रमें एक हजार राजाओंके साथ नग्न बालकके समान हो तपधारण कर मुनि हुए। उसी समय इनको चौथा मनःपर्यय ज्ञान (सबके मनस्थ पदार्थोंका जाननेवाला ज्ञान) उत्पन्न हुआ। तप ग्रहण करनेके पश्चात् प्रथमपारणा (आहार) चक्रपुर नगरके स्वामी अपराजितके यहां किया। इस प्रकार सोलह वर्षतक भगवान्‌के तप करनेपर उसी सहेतुक वनमें कार्तिक शुक्ला द्वादशीके दिन अपराजित काल रैवती नक्षत्रमें शमवृक्षके नीचे ६ उपवास करनेके पश्चात् ४ घातिया कर्मोंका नाश और इनके केवलज्ञान (संसारके भूत भविष्यत् वर्तमानके सम्पूर्ण पदार्थोंको युगपत् जाननेवाला ज्ञान)का प्रादुर्भाव हुआ। उस समय चारों प्रकारके देव उत्सवके लिये आये। भगवान्‌का समवशरण (सभामण्डप) रचा गया। इनके समवशरणमें कुम्भायं प्रभृति ३० गणधर (भगवान्‌ दिव्यध्वनिका विशेषार्थ करनेवाले) और पूर्वाङ्गके ज्ञाता ६१० मुनि, सूक्ष्म बुद्धिके धारक शिचक मुनि ३५८३५, अवधिज्ञानके धारक २८००, केवलज्ञान-

नेत्रके धारक २८००, विक्रिया ऋद्धिके धारक ४३००, मनःपर्यय-ज्ञानके धारक २०५५, अनुत्तरवादी सोलह सौ, कुल पचास हजार मुनि और याचिला आदि साठ हजार आर्यिका (साध्वी), एकलाख साठ हजार आवक, तीन लाख आविका, असंख्यात देवदेवी और तिर्यञ्च सभासद् रहते थे। इन सबको समवशरणमें विराजमान हा धर्मोपदेश देते थे। जिस समय आयुमें एकमास शेष था, उस समय भगवान्‌ समेतशिखर पर्वत (पार्श्वनाथ पहाड़) पर एक हजार मुनीश्वरोंके साथ प्रतिमा योगसे विराजे और चैत्र-क्ष्ण अमावस्याके दिन रैवती नक्षत्रमें पूर्वं रात्रिके समय मोक्षको प्राप्त हुए।

अरना (हिं० स्त्री०) अरणी, वृक्ष विशेष। यह हिमालयपर होता है। इसका फल लोग खाते और गुठलोको भी काममें लाते हैं। काश्मीर और काबुलमें उपजनेवाली अरनी बहुत उम्दा होती, इसकी लकड़ीसे चरखेको कितनी ही सचोब बनतो है। यह माघ-फाल्गुन फूलतौ-फलतौ और आवण-भाद्र मासमें पकती है। अरणि देखो।

अरन्तुक (सं० स्त्री०) तार्थविशेष। यह कुश्चेतकके अन्तर्गत और स्यमन्तपञ्चकका सीमाभूत-स्थान है।

अरन्धन (सं० स्त्री०) न-रन्धनं अभावे नञ्-तत्। पाकका अभाव, भोजनका न बनना, चूल्हेका न जलना। भाद्र और आश्विन मासको संक्रान्तिको अरन्धनकी व्यवस्था दी गयी है। अरन्धनके पूर्व दिन स्त्रियां अन्न-व्यञ्जन पका रखती हैं। चूल्हेको लीप-पोतकर पूजा होती है। गांवमें लोग एक दूसरे को निमन्त्रण देंगे। बालक-बालिका न्योता खाकर घूमते फिरती हैं। लोगोंको यहौ संस्कार है,—अरन्धनके दिन चूल्हा जलाने और भोजन बनानेसे सांप काटता है।

अरन्ध्र (सं० त्रि०) नास्ति रन्ध्रं छिद्रं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ निविड़, घना। २ छिद्रशून्य, बेसूराख। ३ निर्दोष, बेऐब।

अरप (वै० त्रि०) १ अहिंसित, चोट न खाये हुआ। २ पांपरहित, शुद्ध, बेगुनाह, पाकीजा।

अरपचन (सं० पु०) बहुपञ्चक, पांच बुझोंका नाम ।

इस शब्दका प्रत्येक अक्षर एक-एक बुझको बताता है ।

अरपन, अपण देखो ।

अरपन-गण्डा (हिं० वि०) असंख्य, वेशुमार ।

अरपना (हिं० क्रि०) देना, बख्शना, भेंट चढ़ाना ।

अरपस् (वै० त्रि०) रप्यते क्षयार्थं सर्व समक्षं कथ्यते, रप कर्मणि असन्; नास्ति पापं यस्य, नञ्-बहुव्री० । पापशून्य, वेगुनाह ।

अरपा (हिं० पु०) १ कोई मसाला । (वि०) २ दिया, बख्श ।

अरब (हिं० वि०) १ अबुद, सौ करोड़ । (पु०) २ सौ करोड़की संख्या । ३ घोटक, घोड़ा । ४ इन्द्र । (अ० पु०) देशविशेष, एक मुल्क । (Arabia)

यह प्रायोद्वीप दक्षिण-पश्चिम एशियामें अक्षा० ३४° ३०' एवं १२° १५' उ० और द्राघि० ३२° ३०' तथा ६०° पू०के मध्य अवस्थित है । इससे पश्चिम लोहित-सागर, दक्षिण अदनकी खाड़ी तथा भारतसागर, पूर्व ओमन तथा ईरानकी खाड़ी और उत्तर सौरियाकी मरुभूमि है । आकारमें यह प्रायोद्वीप अतुल्य लम्बक-जैसा है । इसका क्षेत्रफल १२००००० वर्गमील होता है ।

भूगोल—साधारणतः अरब जं'चौ अधित्यका ठहरता, जो दक्षिण-पश्चिमसे उत्तर-पूर्वको ढलता और दक्षिण-पश्चिमके अन्त खूब जं'चा पड़ता है । पश्चिममें यह ४०००से ८००० फीट तक जं'चे उठता और समुद्रकूल एवं पर्वतके बीचकी ३०मील भूमि नीची छोड़ता है । पूर्वके अन्तमें जबील-अख्दर पहाड़ है । इसका भूमितल प्रधानतः खाली और सूखा रहता है । इसमें एक-तिहाई रेगस्तान और बाकी बसनेके योग्य जमोन् है । यहां पानीको कमो रहती और वर्षा भी कम होती है । इसके पहाड़ बहुत कम जं'चे हैं ।

अरब शब्द हिब्रू भाषाका है । इसका अर्थ 'अस्त होना' है । मतलब यह, कि जो जाति सूर्यास्त होनेकी ओर रहती, वह अरब कहलाती है । कोई-कोई इस शब्दको हिब्रूके 'अराबा' शब्दसे निकला बतलाते हैं । अराबाका अर्थ 'मरुभूमि' है ।

प्राचीन भूगोलवेत्ताने अरबको सीमा कुक सभिक

निकाली थी । प्लिनीके मतमें मेसोपोटेमियाके कुछ अंश और आरमेनियाकी सोमातक अरबदेश रहा । (Hist. Nat. 5-24) जिनोफनने यूफ्रेटिस उपकूलके वालुकामय स्थान और अरक्सेस नदीके दक्षिण तीर पर्यन्त इसकी सीमा रखी थी । प्राचीन पाश्चात्य भूगोल-वेत्ताके मतसे अरब देश पांच प्रदेशमें विभक्त है,— १ यमन, २ हेजाज, ३ तिहामा, ४ नेजद और ५ ऐमामा । इस देशके कितने ही स्वाधीन राज्योंमें निम्नलिखित प्रधान हैं,—

१ यमन—यह प्रदेश लोहितसागरके उपकूल एवं हेजाज, नेजद और हद्रामौतकी सीमातक माना जाता है । इसमें साना, मोखा, जेविद, वाइट-डल-फकौ, होदेदा और लोहिया नगर विद्यमान हैं ।

२ अदन—इसमें मशहर अदन बन्दर मौजूद है ।

३ कोकैवान् राज्य ।

४ बेलौद-उल-कोबायल ।

५ अबू आरिख । यह लोहितसागरके किनारे बसता और जेजान नामक नगर रखता है ।

६ खोलान् ।

७ शाहान् । इस राज्यमें वेदुयिन लोग रहते हैं ।

८ नेजरान । यह प्रदेश अधिक उर्वर होता, जं'ट और घोड़ासे विख्यात है ।

९ ओमन । यहां मस्कटके सुलतान्का अधिकार है । यहां यव, गेहूं, ज्वार, उड़द, अजूर और खजूर उपजता है । जस्ते और तांबेकी खानि भी मौजूद है । रोस्तक नगरमें इमामका मकान् है ।

१० हेजाज । यह मुल्क मुसलमानोंकी पुण्यभूमि है । मक्का और मदीना इसीके अन्तर्गत है । मुहम्मदके मरने बाद यहां कोनष्टण्टिनोपलके मालिकका अधिकार हुआ था । वह इस पुण्यस्थानकी रक्षाके लिये कोई कर्मचारी रख देते रहे । उसके बाद वहहाबियोंने सर उठाया और यहांके शरीफने स्वाधीन बननेको चेष्टा की । उसी समय तुर्कस्थानके पाशा और मक्केके प्रधान शरीफसे झगड़ा भी हो गया था । शरीफने पाशाका जिहानगरस्थ किला तोड़ और उन्हें विजय देकर मार डाला । वहहाबियोंने उससे

विगड़ शीघ्र ही उनका निपात किया था। फिर मिश्रके शासनकर्ता सुहस्रद अली प्रधान बने और वहहाबियोंको हरा हेजाजपर अपना दखल जमा बैठे। कुछ दिन हेजाज मिश्रकी दृष्टिमें रहा था। सन् १८४० ई०को मिश्र और तुर्कस्थानमें युद्ध छिड़नेसे हेजाज तुर्कस्थान सुलतानके हाथ लगा। इस प्रदेशका प्रधान नगर मक्का, मदीना और जद्दा है। मक्का देखो।

११ सिनायी पर्वतका मरुस्थल। यह अरबकी उत्तर-पश्चिम दिक् पर अवस्थित है। सिवा दो-एक शहरके यहां दूसरो जगह जसर और पहाड़ ही मिलता है। स्वाधीन बद्धूयिन राज्य चलाते हैं। सूज, टोर वगैरह बन्दर इसी प्रदेशमें है। सिनाई पहाड़में गोल पत्थर बहुत होता, ज्यादा जंजी जगह कहीं-कहीं कीमती पत्थर भी मिल जाता है। जंजी अधित्यका-पर जिवेलमूसा और उसीके पास बाइबिलोक्त सिनाई गिरि वर्तमान है। इसी जगह सेण्ट कैथरिनका मनो-हर आश्रम बना है। जिवेल मूसाके खच्छ सलिलमें प्रसवण पाया जाता है। उसे देखते ही आंख ठण्डी होती है। यहां अमरुद, खजूर और अनार वगैरह सुखाद्य फल उपजता है।

१२ नेजद। इस प्रदेशसे उत्तर सीरियाकी मरु-भूमि, दक्षिण यमन तथा हद्रामौत, पूर्व इराक-अरबी और पश्चिम हेजाज एवं लासा है। अरबके बीच यह प्रदेश सबसे बड़ा है। यहां बद्धूयिन जाति रहती है। बड़ी गर्मी पड़ते भी बीच-बीच साफ और ठण्डी हवा लोगोंको तर-ताज़ा बनाती है। यह राज्य धर्मोन्मत्त वहहाबियोंके अधिकारमें है। डेरायिया प्रधान नगर है। सन् १८१८ ई०में इब्नाहीम पाशाने इस नगरको जीता था। उस समय यहां बड़ा-बड़ा बाईस मठ और तौस विद्यालय था। यह नगर अधिक उर्वर है। यव, गेहूं प्रभृति शस्य और खजूर, अनार, आड़ू, अज़ूर, तरबूज, खर-बूजा वगैरह मेवा खूब पैदा होता है।

१३ लासा या हजारा। यह प्रदेश ईरान-खाड़ीके पश्चिम किनारे अवस्थित है। यहां अधिकांश बद्धू-

यिन ही बसे हैं। इसका प्रधान नगर लासा है। यहांके लोग समुद्रसे मोती निकाल और पिण्ड-खजूरको ले-दे अपनी जीविका चलाते हैं।

१४ हद्रामौत। इस प्रदेशसे दक्षिण-पूर्व भारत-महासागर, उत्तर-पूर्व ओमन, उत्तर नेजद और पश्चिम यमन पड़ता है। यहां नमकका कारबार बहुत है। कितनी ही जगह बद्धूयिन बसता है। इसका अधिकांश मस्कट-इमामके अधिकारमें था। दफर और केशिन प्रधान बन्दर है। सको-तरा द्वीपपर भी इसी राज्यका अधिकार है। यह स्थान अगर-चन्दनके लिये प्रसिद्ध है।

अरबमें कोई बड़ी नदी नहीं है। छोटी नदी अधिकांश गर्मीमें सूख जाती है। किसी-किसी प्रदेश-पर वर्षमें एकबार भी पानी नहीं बरसता।

पृथिवीके मध्य अरब देश अत्यन्त उष्णप्रधान है। भारतवर्षके युक्तप्रदेशमें जो लू लगती, उससे भी ज्यादा गर्म और आग-जैसी हवा ग्रीष्मकालमें यहां चलती है। उसके सामने जानसे फौरन् मौत आती और थोड़ी ही देरमें देह सड़-गल जाती है। लू चलते समय गन्धक-जैसी खुशबू निकलती है। गर्म हवा जिस ओरसे आती, उस ओरकी लाली देख अरब-अधिवासीकी पहले ही आंख खुलती है। उसी समय वह जमीन्-पर उलटे लेट जाता और जंट वगैरह जानवर भी माथा झुका रक्षा पाता है। लू जमीन्से कुछ ऊपर रहतो, इसलिये ऊपर कहीं हुई तरकौबसे सुसाफ़िर बचता है। मामूली तौरपर बीच-बीचमें ठहरकर तीन दिनतक लू चलती है।

उक्त प्रदेशको छोड़ ईरान खाड़ीका कितना ही द्वीप भी अरब जातिके अधिकारमें है। फिर इन द्वीपमें प्रत्येक स्वाधीन है, जिनमें आवोयाल, हर-मूज, करेक वगैरह प्रसिद्ध है। इस स्थानके अधि-वासीका प्रधान जीवनोपाय मोती निकालना, नाव चलाना और मछली पकड़ना है। खजूर, सांवेकी रोटी और समुद्रकी मछली यहांके लोगोंका एकमात्र खाद्य है।

अरबमें उत्पन्न द्रव्य—सुसम्बर, गूगुल और मुर वगैरह

खशबूदार चीज मिलनेसे बहु प्राचीन कालावधि अरब सर्वत्र प्रसिद्ध है। यहां अकीक, मरकत, वैद्युत, इन्द्र-नील प्रभृति मणिमाणिक्य भी पाया जाता है। मोखेमें जैसा कहवा होता, वैसा दुनियामें किसी जगह नहीं देख पड़ता। वट, खजूर, नारियल, ताड़, केला, बादाम, खूबानी, सेब, नास्यती, बिहीदाना, पपीता, इमली, नारङ्गी और बबूल भी खूब उपजता है। जवासेसे तुरन्तबोन् नामक जो अर्क निकलता, वह अरब जातिके बहुत काम आता है। जगह-जगह गेहूं, यव, ज्वार, उड़द, मसूर और तम्बाकू बोयी जाती है। रुई बहुत अच्छी होती है। यहांकी सोनामाखी बड़े ही फायदेकी चीज है। जेविद प्रदेशमें नौल होता है। सिवा इसके रेड़, अमलतास, गन्ना, जायफल, तिल, पान, तरह-तरहका खरबूजा, सब्जी, और जड़ी-बूटी भी देखनेमें आता है। जगह-जगह जस्ता और लोहा मिलता है।

जानवरमें ऊंट अरब जातिका पूरा साथी है। लड़कपनसे अरब जाति जैसे भूषण्यास मारती, उसके ऊंटकी भी देसे ही चाल होती है। यह जानवर १५।१६ दिन बे-खाये-पिये काम कर सकता है। अरब जाति इस जानवरका दूध गायके दूधकी तरह पीती है।

अरबी घोड़ा दुनियामें मशहूर है। यहांका खच्चर गधा भी खूब तेज होता, जिसपर चढ़कर सिपाही दुश्मन्से लड़ता है। जगह-जगह जङ्गली बैल, मृग-नाभि-हरिण, हरिण, पहाड़ी बकरा, भेड़िया, हायना और शेर घूमते फिरता है। यमन और अदन प्रदेशमें झण्डों वेदुमका बन्दर उछलते देखेंगे। उकाब, बाज, चील वगैरह तरह-तरहकी चिड़िया भी उड़ती है।

अरबदेशका लोकतरव—अरब लोग सेमतिक जातिसे उत्पन्न हुए हैं। इनका प्राचीन इतिहास ज्यादा न मिलेगा। प्राचीन अरब जातिके साथ भारतवर्षका बाणिज्य-संस्पर्ध रहा। पुरातन इतिहासलेखक हेरोदोतास्ने लिखा है,—ईरान्के बादशाहने दरा-यास् हैस्तस्त्रिस् एशियाखण्डसे पश्चिम सब देशों लोगोंको जीत लिया था, किन्तु अरब उस समय

भी स्वाधीन थे। जब कम्बायिसिस् मित्र जीतने चले, तब उन्होंने अरब जातिका सहारा लिया था। अलकसन्दर अरब देशको अधिकार करनेके लिये तैयार हुये थे, किन्तु मर जानेसे उनको आशा पूरी न पड़ी। दिओरोदासने कहा है,—यह जाति प्रबल पराक्रान्त और इनकी जन्मभूमि मरुप्रदेश होती है; फिर इसीको मालूम रहता, मरुमें कहां पानी मिलता है। रोमक कई बार इस देशपर चढ़ आये, किन्तु खानेकी चीज मौजूद न रहनेसे वापस गये। अगस्तस्के राजत्वकालमें ईरियान्गलास नामक कोई व्यक्ति अरब जीतने आया और ओरोदास नामक किसी अरब-अधिवासीने उसे साहाय्य दिया, किन्तु खानेकी चीज हाथ न आनेसे उसको भी अरब छोड़ना पड़ा था।

अरब जातिका जो प्राचीन इतिहास मिलता, उससे हमें पूर्वतन अधिपतियोंका नाम ही मालूम देता है। इसका उल्लेख नहीं मिलता—किसने कौन समय कितने दिन राजत्व किया था। सेमतिक जातीय जोक्तनके पौत्र शैम प्रथम अरब आये थे, उसके बाद इसी जातिके इब्राहीम नामक दूसरे व्यक्तिने अरबमें घर बनाया।

प्रसिद्ध सुसलमान इतिहास-लेखक अबुलफजूलने अरब जातिको दो भागमें बांटा है—प्राचीन और वर्तमान। प्राचीन भागमें आद, यमूद, तस्म, जादिस, जोहीम, आमलेक प्रभृति नामक कई शाखा है। इस जातिके यत्सामान्य प्रवाद भिन्न दूसरा कोई हाल नहीं मिलता। आद जादिके शहाद नामक किसी व्यक्तिने इरम शहर और उसका बाग लगाया था।

वर्तमान अरब जातिका दो दल होता है, खातो और असलो। प्रथम दल खातन या जोखूतन और द्वितीय दल इब्राहीमके पुत्र इस्माइलके वंशसे उत्पन्न हुआ है। खातन अरबकी दक्षिण अञ्चल और इस्माइल वंश हेजाजमें रहता है।

खातनके लड़केका नाम यारब था। कोई-कोई कहता, इसी यारब शब्दसे इस देशका नाम अरब हुआ है। यारबके यशाव, यशावके अब्दुल साम और

अब्दुल सामके लड़के कलान् तथा हिम्यार थे। खातन-वंशमें हिम्यार सर्वप्रथम राजा हुए। उन्होंने खम्मूद जातिको यमनसे निकाल राजमुकुट पहना था। पचास वर्षके राजत्व बाद हिम्यार मर गये। उनकी मृत्यु पीछे किसीके मतसे तत्पुत्र बोखिल और किसीके मतसे भ्राता कलान् सिंहासनपर बैठे थे। अनेक पुरुष अतीत होनेपर आक्रान नामक कोई व्यक्ति यमनका राजा बना और एक बड़ा काम कर देशको उपकार पहुँचाया था। उससे पहले हिम्यार शस्य उत्पादनके लिये नहर निकाल समुद्रका पानी लाये थे। इस नहरसे यमनका विशेष उपकार होता, किन्तु मध्य-मध्य पार्वतीय प्रबल वायुसे जल उछल उछल समस्त यमनको डूबा बड़ा अनिष्ट करता था। यह क्लेश मिटानेको आक्रानने मारेबके बीच दो पहाड़से एक बड़ा बांध बंधवा दिया। सन् ई०के तोसरे शताब्द यह बांध टूट जानेसे यमन प्रदेश जलमें डूब गया था। उस समय उम्र-बीन अमीर ओरके मोसाकिया यमनके शासनकर्ता थे। उन्होंने भावी विपद् आते देख पहले ही यमन प्रदेशस्थ समस्त पैटक सम्पत्ति बेच डाली और आक प्रदेशमें जाकर रहने लगे। उम्रके मरनेपर उनके वंश-धर नाना स्थानमें फैल गये थे। उम्र-पुत्र जेकनेका परिवारवर्ग सीरिया पहुँचा और दामस्कससे दक्षिण-पूर्व घसनी राज्य जा जमाया। कालक्रमसे इस वंशके सकल लोग ईसायो बन गये थे। उम्रके अपर पुत्र तालिबसे आउस और खूशरोज नामक दो दल हुए, जो यात्रेव (मदीने)में जाकर रहने लगे। उम्रके पौत्र रबिया मक्के गये और उनके सन्तान ख़ाजा कहलाये थे। मक्केवाला काबा अतिप्राचीन कालसे अरब जातिका पवित्र तीर्थ समझा जाता है। ख़ाजा वंशके अमरुने बीन लोहिया बेकर और यमनसे आये दूसरे लोगोंकी मददसे काबा जीत लिया। बेकरके दलवालोंने देखा, कि अपरिचित विदेशीयके काबा जीतनेसे उनकी हिंसा हुई थी। उन्होने कोराइसवाले इस्माइलको मिला ख़ाजावोंकी शासनाधिकारसे निकाल दिया। सन्

४६४ ई०को काबा कोराइस जातिके अधिकारमें पहुँचा था। मक्का देखो।

कोराइस-राज कोसायीके पौत्र हसन बड़े ही दयालु रहे। एकबार दुभिंच पड़ा, उसमें उन्होंने अपना सञ्चित रत्न सकल प्रसन्नतापूर्वक बांटा था। उनके पुत्र अब्दुल मतालिव थे। अब्दुल मतालिवके समय आब्राहाम नामक कोई युरोपीय और एक ईसाई कितनी ही फौज ले काबा जीतने आया था। किन्तु उन्होंने उसे युद्धमें हरा काबा तीर्थको बचा लिया। उसी समय दूसरी भी अद्भुत घटना हुई,—आब्राहाम-की फौज मक्केमें घुस तो गई, किन्तु वह जिस हाथी-पर चढ़कर आये, उसको हिम्मत आगे बढ़नेको किसी तरह न पड़ी। उसी बोच हसन-पौत्र अब्दुल्लाके एक पुत्र सन्तान भूमिष्ठ हुआ, जिसका नाम सुहम्माद रखा गया। (सन् ५७१ ई०) सुहम्माद देखो।

उपासक—सुहम्मादके जन्म लेनेसे पहले अरब नक्षत्रोंकी उपासना करते और लम्बे-चौड़े मैदानमें पश्चादि चराते घूमते थे। अनन्त सुनोल आकाश उनके शिरपर शोभा देखाता और नक्षत्रोंका किरण उन्हें आमोद देता था। सूर्य, चन्द्र प्रभृति ग्रहगण प्रतिदिन नव-नव भावसे निकल उनके मनमें भय, भक्ति और प्रेमकी आभा डालते रहा। उसीके साथ-साथ उन्होंने नक्षत्रोंका पूजना सीखा। उनके मध्य हिम्यार जाति प्रधानतः सूर्य, केनाना जाति चन्द्र, तापी जाति अगस्त्य और मिसाम जाति वृषको उपासना करती थी। यमन प्रदेशके सवा शहरमें शुक्रका कोई मन्दिर रहा। कहते हैं, पहले मक्केवाली मसजिद में भी शनिकौ पूजा होती थी। कुरानमें भी अल्लाह, अलउज्जा और मेनाट-तीन देवीका नाम मिलता है। नखले नगरमें अल्लाह देवीका मन्दिर रहा, जिन्हें थाकेफ जाति पूजती थी। मोगरोंने यह मन्दिर तोड़-फोड़ डाला। कोराइस और केनाना जाति अलउज्जा देवीको वृक्षमूर्तिसे पूजा करते रहीं। हुद-सायलों और ख़ाजावोंकी उपास्य देवी मेनाट थीं। कोरायस आसेब देव और नैला देवीको भी पूजते रहे। ईरान खाड़ीके होपकी तिमिस नामक अरबजाति

सूर्योपासना करतो, जो उसने प्राचीन पारसियोंसे सीखी थी। भूत, प्रेत, पिशाच, अस्सुरी, किन्नरी प्रभृतिको भी प्राचीन अरब जाति मानते रही। अरब-के पुराने लोग सामुद्रिक, इन्द्रजाल, फलितज्योतिष और भौतिक विद्याको बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते थे। नक्षत्रादिकी गति समझनेको उनके पास मान-यन्त्रादि विद्यमान रहा। कन्या सन्तानपर वह बहुत विमुख थे। कहते हैं, किसीके कन्या होनेपर जीते जी ही उसे जला डालते रहे। (प्राचीन अरब जातिके अपरापर विवरणको Journal of the Bombay Branch, Royal Asiatic Society, Vol. XII देखो।)

प्राचीन अरब जातिके साथ भारतवासो और अपरापर जातिका वाणिज्य होता था। (J. A. S. Bengal, VII. 519) रामायणादिमें लोहित-सागरका उल्लेख भी मिलता है।

सन् ई०के सप्तम शताब्द अरबका उत्तरांश यूनानियों, यूफ्रेतिस नदीका तटस्थान ईरानियों और दक्षिण भाग इथियोपियोंके अधिकारमें था; सिवा इसके अपर सकल स्थान स्वाधीन रहा। सन् ५७० या ५७१ ई०में मुहम्मदने जन्म लिया था। चालीस बत्सरके वयःक्रमकालपर उन्होंने अपना धर्ममत व्यक्त किया। यह धर्म फेलानेमें बारह वर्ष बीता और मक्केमें घोर विद्रोहानल भड़का था। मुहम्मदके विपक्षगणने उनका प्राण लेना चाहा। मुहम्मद मक्केसे यात्रेव भाग गये। उसी समय यात्रेव मदीना या मदीनात अल् नबी (अर्थात् भविष्यवक्ताका नगर) कहलाया और उनके शिष्यगणने सन् हिजरीकी गणना लगायी। फिर मक्का अधिकृत हुआ और अरब लोगोंकी समझाने लगा,—सिवा अल्लाके दूसरा कोई ईश्वर नहीं, मुहम्मद उनके पैगम्बर हैं। मुहम्मदने अरब वालोंकी जगत्में अपना धर्म फेलानेका आदेश दिया था। उस समय यह वाहुबल और अस्त्रके साहाय्यसे चारो ओर नव धर्मको धूम उठाने लगे। इनका पूर्वमत और आचार-व्यवहार एककाल ही समय-स्रोतमें डूबा, जिसका कुछ दिन बाद अस्तित्व तक न रहा।

उसी समय ईरान देश हीनतेजः हो गया। जर-थुस्तका मत इतना शिथिल पड़ा, कि नव-नव धर्म उसपर अपना आधिपत्य जमाने लगा था। फिर मुहम्मदका मत ईरानमें फैला, जहां अरबोंकी संख्या बढ़ते गयी। सन् ई०के सप्तम शताब्द अब्बास नवधर्मके प्रधान रक्षक बने। खलीफा मोयावियरके स्त्रेन देश भाग जानेसे कर्दोबेमें उमैयद खलीफाने अपना राज्य जमाया। क्रोट, कर्शिका, सरदनिया और सिसिली हीप अरबोंके हाथ जा पड़ा था।

अब्बास वंशके राजगणने बगदादको अपनी राजधानी बनाया। इस वंशमें कितने ही विद्योत्साही राजा हुए थे। उनमें खलीफा मन्सूर हारुन-अल्-रसौद और मामून् मशहूर हैं। इनके समय नानादेशीय विचक्षण पण्डित बगदादकी राजसभामें उपस्थित रहे। उनमें भारतवर्षीय शास्त्रविद् पण्डित-गणका भी नाम मिलता है। वेन-अल्-अन्वा फितल कातुल अतवा नामक ग्रन्थमें देखेंगे,—इन नृप-तियोंकी बगदाद राजधानीमें भारतवर्षीय गणित, ज्योतिष और चिकित्साशास्त्र प्रभृति पढ़ाया जाता था।

अरबोंने बाणिज्यमें विशेष उन्नति पायी थी। ईरान, सीरिया, मौरितनिया और स्त्रेन देश जीतने बाद यह नाना देशोंमें पहुंच व्यवसाय-वाणिज्य चलाने लगे। सन् ई०के अष्टम शताब्द इन्होंने भारत-वर्षमें घेर रखा था। उसी समय कितने ही हिन्दू नरपतियोंको इसलाम धर्मको दीक्षा दी गयी। इति-हास-रचयिता गिबन साहबने लिखा है,—अरबोंके द्वारा ही रोमक साम्राज्यका अधःपतन हुआ। कोई-कोई कहता,—सन् ई०के एकादश शताब्द अरबोंने ही सर्वप्रथम अमेरिकाका ठूंठ निकाला था।

अरबमें बद्रूयिन नामक जाति रहती है। कोई-कोई इसे अरबका आदिम अधिवासी बताते हैं। इसका धर्म दस्युवृत्ति है। इसमें सभी योद्धा और सभी शेषपालक रहते हैं। मरुभूमि इसका वास-स्थान है। पहले यह अरबके प्राचीन धर्मको मानती

थी, मुहम्मदके धर्मप्रचार बाद कितने ही लोगोंने इस-लाम धर्मको ग्रहण किया। अब यह जाति कालदिया, मेसोपोटेमिया, सौरिया, बर्बरी, न्यूबिया और सोदान-के उत्तरांशमें भी रहती है। बद्रूयिन लोग धनजन और सुखसम्भोगकी अपेक्षा स्वाधीनताको अच्छा समझते हैं। इस जातिमें नानादल विद्यमान है। किसी को सावेक आचार व्यवहार भला मालूम होता और कोई अरबी रीति-नैतिका अनुयायी है। जिन लोगोंमें सावेक प्रथा चलती, उनमें एक कर्ता होता है। इस कर्ताको शेख कहते हैं। शेख अपने परिवार और दास-दासोंके मध्य स्वयं राजा होता है। विपद्-आपद् पड़नेसे दूसरे शेखका साहाय्य लिया जाता है। किसी प्रबल शत्रुसे लड़नेमें नाना दलके शेख एकमें मिल आगे बढ़ते हैं। शेख प्रायः घोड़ेपर चढ़ कर्मचारियोंका कार्यादि देखते घूमता और शिकार करनेको बहुत अच्छा समझता है। बद्रूयिन किसीको आते



अरबी डाकू।

देख उसके पास पहुंचता, और मुसाफिरसे कहता है,—नङ्गे हो जावो और तुम्हारे पास जो कुछ हो उसे रख दो। यदि वह देना असोकार करता, तो जबरन उसका माल-असबाब ले लेता; किन्तु जानसे किसीको नहीं मारता। दूसरे ऐसा भी देखते,—जब कोई पथिक मरुभूमिमें पहुंच क्लान्त हो और राह भूल जाता, तब बद्रूयिन बड़ी उदारताका काम करता है। दसु होते भी वह भ्रान्त पथिकको राह दिखाता, आहारादि दे प्राण बचाता और कभी यथासाध्य साहाय्य करनेसे

भी नहीं हिचकता। बद्रूयिन जाति तम्बूमें रहती और काले रङ्गका कपड़ा पहनती है। इसके बड़े-बड़े तम्बूमें दो तीन कमरे होते, जिनसे एक-एकमें स्त्री-पुरुष और पालित उष्ट्र, मेघादि रहते हैं। बद्रूयिन घासकी चटाईपर सोता है। उसका आहारादि अतिनिम्न है। मरुस्थानके बड़े-बड़े शेख सिर्फ भात खाकर अपना काम चलाते हैं।

४ अरब देशका घोटका, अरबी घोड़ा। ५ अरबका अधिवासी, जो अरबमें रहता हो।

अरबर (हिं० वि०) क्रमरहित, बेसिलसिला, जिसका कोई ओर-छोर न रहे। २ असाधारण, गैरमामूली, सख्त।

अरबराना (हिं० क्रि०) १ भयभीत होना, डिगना।

२ डावांडोल होना, इधर-उधर करना।

अरबरी (हिं० स्त्री०) भय, दहशत, घबराहट।

अरविस्तान (फ़ा० पु०) अरब देश, अरबोंका मुल्क। अरब देखो।

अरबी (फ़ा० वि०) १ अरब देशीय, अरबके मुल्कका।

(पु०) २ अरब देशका घोड़ा। यह निहयत ताकत-वर, मेहनती, तकलीफ उठाने और हुकम माननेवाला होता है। इसका माथा चौड़ा, आंख बड़ी, कान हलका, गाल-जबड़ा मोटा, पुछा ऊंचा, पूंछ ऊपरको चढ़ी, और अयाल चमकीला रहता है। अरबीकी बराबरी दूसरा घोड़ा नहीं कर सकता। ३ अरबी जंट। यह बहुत मजबूत; तकलीफ उठाने और बेखाये-पिये रेगस्तानमें चलनेवाला है। ४ ताशा, किसी किसका बाजा। ५ अरबकी भाषा।

अरबी सेमितिक भाषासे निकली है। मुहम्मदने कुरान इसी भाषामें बनायी थी। इसकी लेखनप्रणाली हिब्रू भाषासे ली गयी है। सभी समझदार मुसलमान इस भाषाका आदर करते हैं। आजकल यह अरब, सौरिया, मिसर और उत्तर-अफ़्रीकामें चलती है। उसे छोड़ समस्त तुर्कस्थान, ईरान और हिन्दु-स्थानके मुसलमान इसे धर्मभाषा मानते हैं। इस भाषामें अच्छे-अच्छे मुसलमान-शास्त्र लिख गये हैं। इसकी कितनी ही बात युरोपीयोंने अपने साहित्य-

भाण्डारमें मातृभाषाके तौरपर लेकर रखी है। हिन्दी भाषामें भी अरबीके कितने ही शब्द चलते हैं।

अरबीला (हिं० वि०) साधारण, मामूली, बेसमझ।
अरभक, अरभक देखो।

अरम् (वै० अव्य०) १ शीघ्र, जल्द, फौरन्। २ योग्यता-पूर्वक, माकूलियतके साथ। ३ पर्याप्तरूपसे, काफी।

अरम (सं० त्रि०) न रम्यतेऽनेनात्र वा; रम करणे अधिकरणे वा अच्, नञ्-तत्। १ अधम, खराब। २ निक्षुब्ध, हकीर। (पु०) ३ नेचरोग विशेष, आंखकी कोई बीमारी।

अरमण (सं० त्रि०) आनन्द न देनेवाला, नागवार, जो खुश न करता हो।

अरमणीय (सं० त्रि०) आनन्दशून्य, नागवार।

अरमणीयता (सं० स्त्री०) अप्रियता, नागवारपन।

अरमति (सं० स्त्री०) अरा अत्यर्था मतिः, कर्मधा० पूर्वपदस्य पुं वद्भावः। १ पर्याप्तबुद्धि, दानायी, सम-भदारौ। २ दौलति, चमक। ३ पृथिवी, जमीन। ४ धन, दौलत। ५ पर्याप्तस्तुति, काफी तारीफ़। ६ सर्वत्रगामिनी, सब जगह जानेवाली।

ऋग्वेदके अनेक स्थानमें यह शब्द आया और सायणाचार्यने इसका नाना प्रकार अर्थ लगाया है,—
अरमतिः सविता देव आगात्। (ऋक् २।३८) इसके भाष्यमें सायणाचार्यने लिखा था, 'अरमतिः, अनूपरतिः'। मतलब यह, कि सुस्थिर न रहनेवाला अरमति कहाता है। आ नो नहीमरमतिः। (ऋक् ५।४१।६) भाष्यमें 'आ समन्तात् रममाणं सर्वत्र गन्ती वा' सर्वत्र रममाणा, सब जगह जानेवाली ग्ना देवता। प्र नो नहीमरमतिः। (ऋक् ७।३६।८) 'उपरतिरहिताम्' अर्थात् स्थिर न रहनेवाली। अथ आ नो अरमति (ऋक् ५।४१।६) भाष्यमें 'अरममाणं धनादिकम्' यानी भोग करनेका धनादि। [प्रति नः लोभं लब्धा लुपेत स्वादम् अरमतिर्दस्युः। (ऋक् ७।३१।२)] भाष्यमें 'पर्याप्तबुद्धिः' अर्थात् जिसकी बुद्धि पर्याप्त रहे। अरमतिरनर्षो विप्रो देवस्य मनसा। (ऋक् ८।३४।२) भाष्यमें 'अरमतिः पर्याप्तस्तुतिः' यानी काफी तारीफ़ पानेवाला। इसी तरह अन्यान्य ऋक्में भी 'अरमति' शब्दका प्रयोग देखा जाता है।

अरममाण (सं० त्रि०) १ अप्रिय, नागवार। (वै०) २ चलित, बन्द न होनेवाला।

अरमपिट (सं० त्रि०) अप्रिय, नागवार।

अरमनी (फ़ा० पु०) आरमेनिया प्रदेशका अधि-
वासी, जो शख्स आरमेनिया मुल्कका वाशिन्दा हो।
यह अतिशय रूपवान् होता है।

अरमान (तु० पु०) अभिप्रेत, हौसला, खाद्दिश।

अरयी, अरई देखो।

अरर (सं० क्ली०) ऋच्छति प्राप्नोति द्वारम्, ऋ गतौ अर। कपाट, किवाड़। 'अरर' कपाटम्। (उज्ज्वलदश) २ आच्छादन, ढक्कन। (पु०) ३ ऋषिविशेष। ४ वंश-कोष। ५ उल्लूक, उल्लू। ६ यज्ञका भाग विशेष। ७ युद्ध, लड़ाई। (हिं० अव्य०) ८ आशय, तअज्जुव। होलीमें जो कबौर गाते, उसके आदिमें इसे लगाते हैं।
अररना दररना (हिं० क्रि०) पीसना, दलना, टुकड़े-टुकड़े करना।

अरराज—विहारप्रान्तके चम्पारन जिलेका एक गांव। यह अक्षा० २६° ३३' ३०" उ० और द्राघि० ८४° ४२' १५" पू० पर बसा है। इससे दक्षिण-पश्चिम कोई आध कोस भुरभुरे पत्थरका अशोक-स्तम्भ है। उसपर सुन्दर अक्षरमें उनका कुछ शासन अङ्कित है। प्रस्तरस्तम्भ ३६॥ फीट ऊँचा होगा। व्यास आधार पर ४२ और शीर्ष पर ३८ इंच पड़ता है। लोग इस स्तम्भको 'लौर' कहते हैं। इसीके नामपर पास ही लौरिया गांव बसता, जहां प्रति वर्ष महादेवका मेला लगता है। प्रतिमा किसी गहरे और सूखे कुयेंमें मिलेगी। उसी पर विशाल मन्दिर बना है।

अरराना (हिं० क्रि०) १ शब्दके साथ पतित होना, जोरसे गिर पड़ना। २ चिन्ताना, जोर-जोर आवाज निकालना। ३ टूट पड़ना, एकाएक गिरना।

अररि (सं० क्ली०) रा दाने कि, नञ्-बहुव्री०। १ सुख, आराम। २ कपाट, किवाड़। ३ द्वार, दरवाजा।

अररिन्द (वै० क्ली०) अररि अने: अदत्तं सुखमिति शेषः ददाति दा-क। १ जल, आव। २ सोमरस प्रस्तुत करनेका पात्रविशेष।

अररिया—१ विहारके पुरनिया जिलेकी एक तहसील। यह अक्षा० २५° ५६' १५" से २६° २७' उ० और

द्राघि० ८७° १' ३०" से ८७° ४४' ४५" पू० की मध्य अवस्थित है। रकबा १०४४ वर्गमोल है। २ इसी नामकी तहसील का गांव। यह पनार नदी किनारे अक्षा० ३६° ८' १५" उ०, और द्राघि० ८७° ३२' ५६ पू० पर बसा और पुरनिया नगरसे पन्द्रह कोस उत्तर है।

अररिवस् (वै० स्त्री०) रा दाने कसु, नञ्-तत्। १ दान न करनेवाला व्यक्ति, जो देता न हो। २ शत्रु, दुश्मन्।

अररु (सं० पु०) ऋच्छति प्राप्नोति अरि भावम्। १ शत्रु, दुश्मन्। २ आयुध, हथियार। ३ असुर विशेष। (त्रि०) ४ गमनस्वभाव, चलनेकी आदत रखनेवाला।

अररुस् (सं० पु०) ऋ बाहु० अरुस्। उपद्रव उठानेकी आनेवाला शत्रु, जो दुश्मन धूम मचानेकी आया हो।

अररे (सं० अव्य०) अरं शीघ्रं राति, रा-डे। अरर, अरे। यह सम्बोधन वाक्य मान्य व्यक्तिके लिये नहीं, स्नेहपात्र या नौचके लिये आता है।

अरल (सं० पु०) १ श्लोणाक वृक्ष, सोना। २ सिन्धु प्रान्तकी एक नदी। कराची जिलेका मंछर भील इसी नदी द्वारा अपना जल सिन्धु नदमें पहुँचाता है। यह अक्षा० २६° २२' से २६° २७' उ० और द्राघि० ६७° ४७' से ६७° ५३' पू० पर अवस्थित है। नारा और मंछर भीलके साथ सिन्धुसे समानान्तर इसको पचास कोस तक बहते पायेंगे। सेहवानमें इसके किनारे रेलवेका बन्दर स्टेशन बना है।

अरला (सं० स्त्री०) हंसपत्नी, हंसिनी।

अरलु (सं० पु०) अरं लायते गृह्यते। १ श्लोणाक वृक्ष, टैटूका पेड़। २ गङ्गाधरचूर्ण। ३ गर्भज्वर। ४ वेतस वृक्ष।

अरलुक, अरु देखो।

अरलुपुटपाक (सं० पु०) श्लोणाकत्वक्कृत पुटपाक, टैटूके बकलेसे बनाया गया पुटपाक। जो पुटपाक अरलुकी त्वक्से बनता, वह अग्निदीपन और मधु एवं मोचरस मिलानेसे सर्व अतिसारकी जोतने वाला निकलता है।

अरलेखर—बम्बई-प्रान्तके धारवाड़ जिलेका एक तहसीलक। यह हजलसे उत्तर-पूर्व पांच मौल पर बसा और इसमें कदम्बेश्वरका प्रस्तर-मन्दिर बना है। मन्दिरमें मूर्तिकी दक्षिण ओर एक स्तम्भ पर शक ८८८, मकरतोरणपर शक १०१० और प्रधान द्वारके सम्मुख एक स्तम्भपर खर संवत्सर अङ्कित है।

अरव (सं० पु०) रु-अ-यण, नञ्-तत्। १ रवका अभाव, आवाजकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ रवशून्य, वे आवाज, शोर-गुल न करने वाला।

अरवन (हिं० पु०) १ कच्ची कटनेवाली फसल। २ सबसे पहले काटो और खलिहानमें न लगा घरमें लायो हुई फसल, अवासी, कवारो। इस अन्नसे देवताकी पूजते और ब्राह्मणको खिलाते हैं।

अरवल (हिं० पु०) घोड़ेके कानकी जड़में गर्दनकी ओर रहनेवाली भौरी। यह एक ओर रहनेसे अशुभ और दोनों ओर रहनेसे शुभ होती है।

अरवा (हिं० पु०) १ वे उवाले या भूने धानसे निकाला हुआ चावल। २ आला।

अरवा-कूरिचौ—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बतोर जिलेका एक गांव। यह अक्षा० १०° ४६' ३०" उ० और द्राघि० ७७° ५७' पू० पर बसा है। यहां चमड़े और कपड़ेका खासा रोजगार चलते देखेंगे। महि-सूर-नृपतिने इस ग्राममें 'विजयमङ्गल' नामक जो किला बनवाया, उसे अंगरेजों फौजने तीन बार सन् १७६८, १७८३ और १७८० ई०में जबरन छीन लिया था।

अरवाती (हिं० स्त्री०) ओलती, छज्जेके जिस किनारेसे पानी नीचे गिरे।

अरवाह (हिं० स्त्री०) लड़ाई, भगड़ा।

अरवाही (हिं० वि०) भगड़ालू, लड़ाका।

अरविन्द (सं० स्त्री०) अराः चक्रस्य नाभिनेत्योरन्त-रालस्थकाष्ठानि तादृशानि दलानि विद्यन्ते, अर-विट्-श। गवादिषु विन्देः संज्ञायाम्। पा ३।१।३८ वा. च० क। ततः—श्रे सुचादीनाम्। पा ७।१।२। १ पद्म, कमल। २ नीलोत्पल, नीले रङ्गका कमल। ३ रक्तकमल, लाल कमल। ४ सारसपद्मी। ५ ताम्र, तांबा।

अरविन्द-दलप्रभ (सं० स्त्री०) ताम्र, ताँबा।

अरविन्दनयन (सं० पु०) कमल जैसी आंखवाले विष्णु।

अरविन्दनाभ (सं० पु०) अरविन्द नामो यस्य, बहुव्री० अच् समा०। नाभिमें कमल रखनेवाले विष्णु

अरविन्दनाभि (सं० पु०) विष्णु। "प्रजापतिनामः" (माघ १।६५)

अरविन्दबन्धु (सं० पु०) कमलके साथी, सूर्य।

अरविन्दयोनि (सं० पु०) कमलसे निकलनेवाले ब्रह्मा।

अरविन्दलोचन, अरविन्दनयन देखो।

अरविन्दान्न, अरविन्दनयन देखो।

अरविन्दसदृ (सं० पु०) कमलपर बैठनेवाले ब्रह्मा।

अरविन्दिनी (सं० स्त्री०) अरविन्दस्य निकटस्थ देशादिः, इनि-ङोप्। १ पद्मयुक्त देश, जिस मुल्कमें कमल रहे। २ पद्मसमूह, कमलका ढेर। ३ पद्म लता। ४ पद्मिनी।

अरवी (हिं० स्त्री०) आलू, कन्द विशेष। यह दो तरहकी होती है,—सफेद और काली। इसको जड़से मिला डण्डल निकलता और उसके नीचे पत्ता लगता, जो पान जैसा रहता है। खानेमें इसे जायके, दार, लसदार और कनकनाइट लिये पाते हैं। इसके पत्ते-की लोग तरकारी बनाते हैं। यह वैशाख-ज्येष्ठ बोयी और श्रावणमासमें खोदी जाती है।

अरश्मन् (वे० त्रि०) नास्ति रश्मिरस्य, वेदे बाहु० अन् समा०। रज्जुरहित, वे-बागडोर, जिसमें रस्सी न रहे। यह शब्द रथादिका विशेषण होता है।

अरस (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ आस्वादका अभाव, जायकेकी अदम-मौजूदगी। रस्यते आस्वाद्यते। २ मधुरादि रस भिन्न, जो चीज़ मौठा अर्क वगैरह न हो। ३ निवृत्त रस, खराब अर्क। (त्रि०) नास्ति रसो यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ रसशून्य, वे अर्क, बद-मज़ा। ५ असार, कमजोर। ६ नौरस, धीमा। (अ० पु०) ७ कृत। ८ प्रासाद, महल।

अरसठ, अरसठ देखो।

अरसथ (हिं० पु०) माहवार आमद और खर्च लिखनेका खाता।

अरसन-परसन, अरस-परस देखो।

अरसना परसना (हिं० क्रि०) मिला-भेंटो करना।

अरस-परस (हिं० पु०) १ दर्शन-स्पर्शन, देखा-भालो। २ क्रीड़ा विशेष, कोई खेल, आंखमिचौनो, कुवा-कुवो। इस खेलमें पहले किसी लड़केको चोर बना उसकी आंख मूंदते और फिर सब लड़के भागते हैं। वह आंख खोलकर दूसरे लड़केको छूने दौड़ता है। जो लड़का छू जाता, उसे ही दांव देना पड़ता है।

अरसा (अ० पु०) १ समय, वक्त। २ विलम्ब, देर। अरसात (हिं० पु०) छन्दोविशेष। यह चौबीस अक्षरका होता और सात भगण एवं एक रगण रखता है।

अरसाना (हिं० क्रि०) आलस्य आना, सुस्तो दौड़ना, नींद लगना।

अरसाश (वे० स्त्री०) रसशून्य पदार्थका भोजन, वेशोरवे चीज़की खुरिश्। २ शरीर साधन, जिस्मका रियाज।

अरसाशिन (सं० त्रि०) १ रसशून्य द्रव्य खानेवाला, जो वेशोरवा चीज़ खाता हो। २ शरीरको साधने-वाला, जो जिस्मपर रियाज उठाता हो।

अरसिक (सं० त्रि०) रसं वेत्ति; रस-ठन्, नञ्-तत्। १ अरसज्ञ, मजेको न समझनेवाला। २ रस-बोधरहित, जिसे कविताका लुत्फ न आये। ३ फीका, बेज्वायका।

अरसी (हिं० स्त्री०) अलसी, तीसी।

अरसोला (हिं० वि०) अलस, काहिल, सुस्त।

अरसोंहां, अरसोला देखो।

अरस्सी ठकुर—कोई प्राचीन संस्कृत कवि।

अरहट (हिं० पु०) अरहट देखो।

अरहन (हिं० पु०) तरकारीमें पड़नेवाला बेसन या आटा।

अरहना (हिं० स्त्री०) अर्हण, पूजा, परस्तिश।

अरहर (हिं० स्त्री०) आढ़की, तुवर। (Cajanus indicus) यह अनाज भारतमें अधिक बोया जाता है। इसे कोई भारत और कोई अफ्रीकाका पौधा बताता है। यह चार-पांच हाथ लंबी रहती और

हरेक सीकमें तीन-तीन पत्ता रखती, जो एक ओर भूरी और दूसरी ओर हरी होती है। खानमें पत्ती कसैली निकलती है। इसका बीज बरसातमें बोया जाता है। अग्रहायण-पौष मास इसमें पीला फूल लगता, जिसके भड़नेसे डेढ़ दो इंच और चार-पांच दानेवाली फली आती है। इसके बीजमें दो दाल होती है। यह फाल्गुनमें पकती और चैत्रमें कटती है।

अरहर दो तरहकी रहती,—छोटी और बड़ी। बड़ीका 'अरहरा' और छोटीका नाम 'रसमुनिया' है। पानी मिलनेसे इसका पौधा कई वर्ष हराभरा बना रहता है। देशभेदसे इसका नाम भेद भी पड़ जाता है। मध्यप्रदेशमें हरोना मिह्री, बङ्गालमें मधवा, चैती और आसाममें इसे पलवा, देव या नली कहते हैं।

सुंहमें छाला पड़नेसे लोग इसकी पत्ती चबाते और फोड़ा-फुन्सीपर भी पीसकर लगाते हैं। लकड़ी जलायी जाती और छप्पर छानेमें काम आती है। ठहनी और पतले डण्डलसे खांचा, दौरी वगैरह बुनते हैं। इसकी दाल जल्द हजम होती और बीमारको बड़ा फायदा पहुँचाती है। गुणमें इसे गर्म और सूखी पायेंगे। हिन्दुस्थानवासी प्रायः इसी दालको खाता है। अरहस (सं० पु०) गोपनका अभाव, पोशीदगीकी अदम-मौजूदगी।

अरहित (सं० त्रि०) सम्पन्न, भरा-पूरा।

अरहेड़ (हिं० स्त्री०) पशुदल, चौपायेका झुण्ड।

अरा, आरा देखो।

अराअरी (हिं० स्त्री०) बढ़ाचढ़ी, बाजी, होड़।

अराक (अ० पु०) १ अरब देशका प्रान्त विशेष।

२ अराक प्रान्तका घोड़ा।

अराकान—१ ब्रिटिश ब्रह्मदेशका प्रान्त विशेष। इसमें चार जिले हैं,—अकयाब, उत्तर-अराकान, क्यौकप्यु और सण्डोवे। जङ्गलको छोड़ इसका क्षेत्रफल १४५२६ वर्गमील है। सन् १८२६ ई०को यह अंगरेजी राज्यमें मिला। हिन्दुओंके निकट पूर्व यह स्थान 'रसाङ्ग' वा 'रभाङ्ग' नामसे परिचित था।

२ अराकान प्रान्तकी प्राचीन राजधानी।

अराकान और बङ्गालवाले टिपराके राजा बीच चटगांवकी सीमापर युद्ध हुआ और कई बार उन्होंने उसे अधिकार भी किया था। सन् ई०के १६वें शताब्दीमें अराकान-नृपतिने फिर चटगांवको जीत अपने राज्यमें मिला लिया। यह गोवा, कोंचिन, मलक्का वगैरहके साहसी और भगोड़े पोर्तुगीजोंको नौकर रख, अपनी चालाकी और हिम्मतकी जोरसे जहाजी वेड़ेके हाकिम बन लूट-मार करते थे। सुन्दरवन उनके घोर आक्रमणसे विनष्ट हुआ। डाकासे मुसलमानोंके जहाज चल-फिर न सकते थे। पोर्तुगीज, मघ या अराकानवासियोंके सहारे कितनी ही बार बङ्गालसे आदिमियोंको गुलाम बनाकर पकड़ ले गये। कहते हैं, मघोंके उपद्रवसे बाकरगञ्जके इधर-उधर लोगोंने रहना ही छोड़ दिया; किन्तु सन् १६३८ ई०में चटगांवके मघ-शासन-कर्ता सुकुटारायने अराकान राजासे लड़ अपना प्रान्त बङ्गालके शासक इसलाम खान् मुसद्दीको सौंपा था।

सन् १६६४-६५ ई०में नवाब शायस्ता खान् बङ्गालके शासक बने। उसी वर्ष उन्होंने डाकेमें कितनी ही नाव और तेरह हजार फौज इकट्ठेकर मघ-लुटेरोंको मार भगानेका प्रबन्ध बांधा। हुसेनबेग तीन हजार सिपाही नाव पर चढ़ा समुद्रकी राह आगे बढे और शायस्ता खान्की लड़की बुजुर्ग उम्मेदखान् दश हजार फौज ले खुशकीकी राह उन्हें मदद देने चले। हुसेनबेगने मघना नदी पड़च आलमगीर नगरकी किले पर एकाएक आक्रमण किया और अराकान-नृपतिकी फौजको हरा उसे अपने हाथ लिया था। वहांसे वह सन्धाप टापूकी रवाना हुए और बातकी बातमें धोकेसे मघोंका जहाजी वेड़ा जा जीता। हुसेनबेगने पोर्तुगीजोंसे अराकान-नृपतिकी नौकरी छोड़ बङ्गालमें जाकर बसनेको कहा और वैसा न करनेपर प्राणदण्ड देनेको धमकाया था। पोर्तुगीजोंके राजी होनेपर अराकान-नृपति उन्हें नष्ट कर बदला लेनेपर उत्थत हुए। उन्हें रातों रात अपना माल-असबाब छोड़ चटगांवसे भागना पड़ा था।

उम्मेदखान्की फौजने फेनी नदीपर पडुंच अराकानियोंको युद्धके लिये तैयार पाया था। किन्तु मुगल सवारोंको देख उनके छक्के छूट गये और पोछे पैरों चटगांवको भागना पड़ा। हुसेन-वेगने उम्मेदखान्की फौज आयी सुन अपना जहाजी वेड़ा सन्धीप से आगे बढ़ाया था। कुमरिया नामक स्थानके समीप अराकानियोंने तीन सौ हथियार बन्द नाव ले हुसेन वेगपर आक्रमण किया। यद्यपि हुसेनवेग पोतुंगीजोंके सहारे शत्रुको पश्चात्पद करनेपर कृतकार्य हुए, किन्तु नावकी नयी लड़ाई देख उनके होश उड़ गये थे। उन्होंने अपना वेड़ा जल्द-जल्द किनारे लगा उम्मेदखान्की फौजका सहारा लिया। दूसरे दिन अराकानियोंके युद्ध आरम्भ करने पर उम्मेदखान्ने ऐसा गोला मारा, कि उन्हें पीछे ही हटना पड़ा। उसके बाद दोनों फौज चटगांवको रवाना हुई। चटगांवके अराकानों अपने जहाजी वेड़ेको हार देख रातको किला छोड़ भागे जा रहे थे। उसी समय मुगल सवारोंने उनके दो हजार आदमों कैद कर गुलामके तौरपर बेच डाले। अराकानियोंका आक्रमण रोकनेको उम्मेदखान् चटगांवमें कितनी ही फौज छोड़ गये थे।

अराकान योमा—पर्वत श्रेणीविशेष। यह नागादेश और मणिपुरके पर्वतसे पश्चिम त्रिपुरा, चटग्राम और उत्तर-अराकान तक बङ्गालकी पूर्वसीमा निर्धारित करता है। उत्तर-अराकानमें इसकी जो शाखा आती, वह नीलपर्वत कहाती और समुद्रतलसे ७१०० फीट ऊंची है। उत्तरकी दलितघाटी नीची ऊंची रहनेसे चलने-फिरनेके काम नहीं आती। आनकी घाटी अच्छी है। यहां पानी कम मिलता और तरी ज्यादा रहती है।

अराग (सं० त्रि०) विरक्त, रागहीन, धीमा, ठण्डा, जिसे शौक न रहे।

अराज (हिं० वि०) १ नृपतिरहित, राजाको न रखनेवाला। (पु०) २ अराजकता, बलवा।

अराजक (सं० त्रि०) नास्ति राजा यस्मिन्, नञ्-बहुव्री० कप्। राजशून्य, बेबादशाह।

अराजकता (सं० स्त्री०) राजा न रहनेकी स्थिति, जिस हालतमें बादशाह न रहे।

अराजन् (वै० पु०) राजा न होनेवाला व्यक्ति, जो शत्रुस बादशाह न हो।

अराजभोगिन् (सं० त्रि०) राजाके व्यवहार अयोग्य, जो बादशाहके काम आने काबिल न हो।

अराजस्थापित (सं० त्रि०) राजाकी आज्ञासे अग्र-तिष्ठित, जिसको सरकारी लैसन न मिला हो।

अराजिन् (वै० त्रि०) न राजते; राज-णिनि, नञ्-तत्। १ दौमिशून्य, धुंधला, रौशनी न रखनेवाला। २ अनभिभूत, जो रुका न हो। राजा अधिष्ठात्वलेना-स्तरस्मिन्, ब्रौह्मदि० इनि, ततो नञ्-तत्। ३ राज-शून्य, बेबादशाह।

अराजीव (सं० पु०) अरं रथाङ्गं तद् प्रस्तुतेन आसम्यक् जीवति, अर-आ-जीव-अच्। १ रथकार, गाड़ी बनानेवाला, बढ़ई। (त्रि०) नास्ति राजीवं यत्र, नञ्-बहुव्री०। २ पद्मशून्य, कमलसे खाली।

अराटकी (वै० स्त्री०) अजशुद्धी, मेढ़ासिंगी।

अराड़ जाना (हिं० क्ति०) गर्भपात होना, हमल गिरना। यह शब्द पशुके गर्भपातका ही द्योतक है।

अराति (सं० पु०) न राति ददाति किमपि कुशलं वा। १ शत्रु, दुश्मन। रिपौ इत्यादि शमिधाति पराराति। (अनर) २ ज्योतिषोक्त षष्ठस्थान। ३ कामादि छः रिपु। ४ छः संख्या। (वै० स्त्री०) ५ दानाभाव, बख्शिशकी अदममौजूदगी। ६ अप्रसन्नता, नाराजगी। ७ द्रोह, दुश्मनी। ८ असफलता, नाकामयाबी। ९ दुर्दिन, बुरा वक्त। (त्रि०) अतिगमनशील, खूब चलनेवाला।

अरातिदूषण (वै० त्रि०) शत्रु वा दुर्दिननाशक, दुश्मन या बुरे वक्तको दूर करनेवाला।

अरातिदूषी, अरातिदूषण देखो।

अरातिभङ्ग (सं० पु०) शत्रुका पराभव, दुश्मनकी हार। अरातिह, अरातिदूषण देखो।

अरातीयत् (वै० त्रि०) १ विद्रोही, कपण, हसदी, बखील। २ शत्रुवत् आचरण-करनेवाला, जो तक-लीफ देनेकी फिक्कमें लगा हो।

अरातीय (वै० त्रि०) अरातिरिवाचरति, अराति-
व्यच्-उ। शत्रुतुल्य आचरणशील, दुश्मनकी तरह
काम करनेवाला।

अरातीवन, अरातीवन् देखो।

अराधि (वै० स्त्री०) अपराध, दोष, पाप, गुनाह,
इजाब, ऐब।

अराधन, आराधन देखो।

अराधना (हिं० स्त्री०) १ आराधन लगाना, उपा-
सना करना। २ पूजना, अरचना। ३ जप करना,
ध्यान साधना।

अराधसू (वै० त्रि०) राधा धनं तन्नास्ति यस्य,
बहुव्री०। १ धनरहित, बेदौलत। २ कृपारहित,
नामिहरवान।

अराधी, आराधी देखो।

अराना, अराना देखो।

अराबा (अ० पु०) १ रथ, गाड़ी, बहल। २ तोप
रखनेकी गाड़ी। ३ जहाजी तोपोंका साथ-साथ एक
औरको दागा जाना।

अराम, आराम देखो।

अराय (वै० त्रि०) रायते यज्ञादौ दीयते दक्षिणा
दित्वेन वा, रा कर्मणि घञ् युक् च, नञ् बहुव्री०।
धनशून्य, दानहीन, गरीब, बखील।

अरायचयण (वै० त्रि०) १ पिशाचादिकी नाश
करनेवाला, जो शैतानको नापैद कर देता हो।
(स्त्री०) २ पिशाचादिका नाश, शैतानका मटियामिट।

अरायचातन, अरायचयण देखो।

अरायल—युक्तप्रदेशके इलाहाबाद जिलेका एक ग्राम।
यह यमुनाके दक्षिण किनारे गङ्गाके सङ्गमपर बसा है।
यहां हिन्दुओंका कोई बहुत पुराना शहर रहा, जिसके
बसनेकी तारीख, गुम हो गयी। अकबर बादशाहने
फिरसे बनवा इसका नाम जलालाबाद रखा था।

अरायी (वै० पु०-स्त्री०) पिशाचादि, शैतान।

अराफ्ट, अराफ्ट देखो।

अरारोट (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, तीखुर। (Ar-
rowroot, *Maranta arundinacea*) यह पहले
अमेरिकाके डोमिनिका, बारबडोस और जामेका प्रान्त-

में मिला था। कहते हैं, सन् १७५६ ई०में लोग
इसे जामेकाके बागमें बोते और इसकी जड़से खासा
भोजन बनाते रहे। सबसे पहले यह सिलहटमें
लगाया गया था। भारतमें तीखुर उत्पन्न होते भी
कितने ही लोग इसे अमेरिकाका ही वृक्ष बताते हैं।
किन्तु पूर्व समय भारतका तीखुर युरोपमें प्रसिद्ध था।

मई मास इसकी जड़ जमीनमें गाड़ी जाती है।
ब्यारी तीन-चार इंच गहरी दो फीटके फर्क पर
रहती, जिसमें डेढ़-डेढ़ फुट दूर जड़ गड़ती और उस
पर टांकनेको मट्टी चढ़ती है। दोमट और बलुई
जमीन इसके लिये फायदेमन्द है। पौधेको जगने
पर आलूकी तरह निराते हैं। इसको पानीको बड़ी
जरूरत रहती है। यह अगस्तमें फूलता और जनवरी
फरवरीमें काम लायक होता है। किन्तु फसल तैयार
होनेसे एक या दो महीने पहले इसमें पानो नहीं देते।
क्योंकि उस समय सींचनेसे इसकी जड़ कच्ची रह
जाती है। पत्ती भड़नेसे जड़को खोदकर निकालते हैं।

इसके बनानेकी तरकीब बहुत सीधी है। जड़को
अच्छी तरह धो और लकड़ीकी बड़ी ओखलीमें कूट-
कर लेयी बना लेते हैं। फिर वही लेयी पानीसे भरे
बरतनमें रखी जाती है। ऐसा करनेसे रेशा पानीपर
तैरने लगता, जो फिर कूटा और उसी बर्तनमें डाला
जाता है। रेशेको गाद अच्छी तरह निकल आनेसे
फेंक देते हैं। अन्तको बर्तनका पाना दूध-जैसा
देख पड़ता है। उस पानीको मोटे कपड़ेसे दूसरे बर्तन-
में छान लेना चाहिये। गाद नीचे बैठ जानेसे मैला
पानी फेंक साफ पानी भरते हैं। जब गाद अच्छी
तरह जम जातो, तब बर्तनका पानी धीरेसे ढाल देते
हैं। उसके बाद वही गाद कागज पर धूपमें सुखानेसे
अरारोट बनता है।

यह रोगी और शिशुके लिये महोपकारी खाद्य है।
इसके हजम होनेमें कोई खट-खट नहीं। भारतवर्षके
हलवायी इससे तरह-तरहकी मिठाई बनाते, जिसे
लोग व्रतके दिन खाया करते हैं।

अराल (सं० पु०) अरं शीघ्रं आलाति गृह्णाति मनः,
अर-आ-ला-क। १ मदसावी हस्ती, मतवाला हाथी।

२ सर्जरस, राल, धूना। ३ शालवृक्ष। (चि०) ४ वक्र, टेढ़ा। ५ पहियेके आरों-जैसा फैला हुआ। 'अरालः समद्विपे। वक्रं सर्जरसे च।' (हेम)

अरालपद्मनयन (वे० द्वि०) टेढ़ी पलकवाला।

अरालय—बम्बई कोल्हापुर राज्यवाले चमारोंके पूर्व-पुरुष। कहते हैं, कि इन्होंने अपनी खालका जता बना महादेवजीको पहननेके लिये दिया था। उसीसे नाराज हो महादेवजीने इन्हें जन्म भरके लिये मोची बना डाला।

अराला (सं० स्त्री०) १ अपवित्र स्त्री, नापाक औरत। २ सरल स्त्री, हलीम औरत।

अरावन् (वे० द्वि०) रा-वनिप्, नञ्-तत्। अदाता, कृपण, बखील, बखूशिश न करनेवाला।

अरावल, हरावल देखो।

अरावली—पर्वतश्रेणी विशेष, एक लम्बा पहाड़। यह अक्षा० २५° एवं २६° ३०' उ० और द्राघि० ७३° २०' तथा ७५° पू०के मध्य अवस्थित है। इसका अङ्ग तीन सौ मील राजपूताने राज्य और अजमेर जिलेके बीच फैला है। इसमें कितनी ही खड़ी चटानें और चोटियां मौजूद हैं। उनकी चौड़ाई छःसे साठ मील और उंचाई एक हजारसे तीन हजार फीट तक है। सबसे बड़ा पहाड़ आबू ५६५३ फीट उंचा है। अरावलीमें भुरभुरा, ठोस काला नीला, बिल्लीरौ और रंगदार पत्थर मिलता है। इसको चोटी शीशे-जैसी चमका करती है। उत्तर ओरसे लूनी और सखी नदी निकल कछके रत्नमें जा गिरती है। दक्षिण ओर भी कितनी ही नदी बहती, जिसमें चम्बल यमुनाकी बड़ी सहायक है। इस पर्वतमें कृषि क्षेत्र वा वन अधिक नहीं मिलता। कितनी ही जगह ढेरका ढेर पत्थर और रेत पड़ा, फिर कितनी ही चमकीला पत्थर भी भरा है। चटानदार पहाड़के बीचकी उपत्यका रेतोला जङ्गल है। कहीं-कहीं तर जगह पर खेती भी होती है। अजमेर नगरके निकटकी भूमि अतिशय उर्वरा है। पर्वत पर मेर लोग दूर-दूर बसते हैं। यह पर्वतश्रेणी कुछ-कुछ दिक्की तक चली आयी है।

अरास—गुजरात प्रान्तका स्थान विशेष। यह आनन्द और महीके बीच जो मैदान पड़ता, उसपर अवस्थित है। सन् १७२३ ई० को यहां हमीद खान और सूरतके सूबेदार रुस्तम अली खानसे घमासान लड़ाई हुई थी। अन्तको पीलाजी गायकवाड़के साहाय्यसे रुस्तम अलीने हमीद खानको मार भगाया।

अरासलार—मन्द्राज प्रान्तके तच्चोर जिलेको कावेरी नदीका मुहाना। यह प्रधान धाराके दक्षिण तट अक्षा० १०° ५६' उ० एवं द्राघि० ७८° २२' पू०से फैलता और पूर्वकी ओर बीस कोस बह करिकालपर समुद्रमें जा गिरता है। इस मुहानेसे हजारों एकर भूमि सिंचती और लाखों रुपया आता है।

अरि (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति अनिष्ठार्थम्। १ शत्रु, दुश्मन। २ रथाङ्ग, गाड़ीका हिस्सा। ३ चक्र, पहिया। ४ विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर, अरिमेद। यह कषाय, कटु, तिक्त और रक्तपित्तघ्न होता है। (रात्रनिघण्टु) ५ काम, क्रोध, लोभ, मद, मात्सर्य—यह छः वृत्ति। ६ छः संख्या। ७ ज्योतिषोक्त लग्नसे छठा स्थान। ८ ईश्वर। ईश्वर अपराधीको शास्ति देनेसे इस नाम पर पुकारा जाता है। ९ ज्योतिष शास्त्रोक्त परस्पर अरिग्रह। रविका शुक्र एवं शनि, मङ्गलका बुध, बुधका चन्द्र, वृहस्पतिका बुध तथा शुक्र, शुक्रका रवि एवं चन्द्र और शनिका अरि रवि, चन्द्र तथा मङ्गल होता है। चन्द्रका कोई भी ग्रह अरि नहीं। सिवा इसके कोई राशिग्रह ग्रह अन्य राशिग्रहसे प्रथम, पञ्चम, षष्ठ, सप्तम, अष्टम और नवम स्थानमें रहनेसे उसका तत्कालीन अरि बनता है। अकथह और अकड़म चक्रके चतुर्थ कोष्ठ एवं चतुर्थ कोष्ठस्थ मन्त्रको भी अरि कहते हैं।

अरिआ कांध—उड़ीसा प्रान्तके अङ्गुल जिलेकी एक जाति। इसने अपनी प्राचीन पंडित नहीं छोड़ी। इस जाति के लोग भैंसेको बलि चढ़ाते, विवाहमें सूअरका मांस खाते और हरिण एवं पक्षीको भी मार अपना पेट भरते हैं। बौद्धकांधने अपना सम्पूर्ण सामाजिक व्यवहार इस जातिसे बन्द कर रखा है।

अरिंद (हि० पु०) इन्द्र-जैसा प्रबल शत्रु, जो दुश्मन निहायत जोरदार हो।

अरिकर्षण (सं० पु०) शत्रुको खींचनेवाला व्यक्ति, जो शत्रुस दुश्मनको सुती बना लेता हो।

अरिकुल (सं० स्त्री०) शत्रुका वंश, दुश्मनका खान्दान्।

अरिकेशरी—१ बम्बई प्रान्तवाले उत्तर कोङ्कन जिलेके शिलाहारवंशज नृपति विशेष। सन् १०१७ ई०को यह समग्र कोङ्कनमें अपना राजत्व फैलाये थे। इनका दूसरा नाम केशोदेव रहा। २ सपादलक्षवाले चालुक्य नृपति प्रथम युद्धमल्लके पुत्र। यह जोलेमें राजत्व चलाते रहे। वह प्रान्त अब धारवाड़ जिलेमें मिल गया है। इन्होंने शक ८६३ में पम्पा नामक जन कविसे कनाड़ी भाषामें 'विक्रमार्जुनविजय' वा 'पम्पा-भारत' लिखाया था। इनके पुत्रका नरसिंह और पौत्रका नाम दुग्धमल्ल रहा।

अरिकेशी—केशीके शत्रु श्रीकृष्ण।

अरिकोद—मन्द्राज प्रान्तके मलवार जिलेका एक नगर।

यह अक्षा० ११° १४' १०" उ० और द्राघि० ७६° ३' २१" पू० पर अवस्थित और वेपुर नगरसे दश कोस पूर्व वेपुर नदीके ही दक्षिण किनारे बसा है। अरि-कोद अपनी लकड़ीवाले व्यवसायके लिये प्रसिद्ध है।

अरिक्त (सं० त्रि०) पूर्ण, भरा-पूरा, जो खाली न हो।

अरिक्थभाज् (सं० त्रि०) ऋक्थं पितृपैतामहादि क्रमागतधनं भजते पतितादिना न लभते; अरिक्थ-भज्-शिव, असुर्यम्पश्या इति वदसमर्थसमा०। अनंश, लावारिस, जो बुराकाम करनेसे अपने बाप-दादेकी जायदाद पा न सकता हो।

अरिक्थीय, अरिक्थभाज् देखो।

अरिक्षिप—श्वफल्कके एक पुत्र।

अरिगूर्ण, अरिगूर्त देखो।

अरिगूर्त (वै० पु०) अरये तद्दधाय गूर्तं उद्यतः, शाक० तत्। शत्रुको मारनेपर उद्यत, जो दुश्मनका कत्ल करनेको तैयार हो।

अरिघ्न (सं० पु०) शत्रुको नाश करनेवाला व्यक्ति, जो शत्रुस दुश्मनको मार डालता हो।

अरिचिन्तन (सं० स्त्री०) १ शत्रुके विरुद्ध किया हुआ षड्यन्त्र, जो साजिश दुश्मनके खिलाफ की गयी हो। २ परराष्ट्र-प्रबन्ध, गैरमुल्की मामलेका इन्तजाम।

अरिचिन्ता (सं० स्त्री०) अरिचिन्तन देखो।

अरिता (सं० स्त्री०) अरिर्भावाः, तल् टाप। शत्रुता, दुश्मनी।

अरित् (वै० पु०) ऋच्छति गमयति पारान्तरम्। नाविक, कर्णधार, मलाह, केवट, मांभी।

अरित्र (वै० स्त्री०) अर्यतेऽनेन, ऋ करणे इत्र। नौका चलानेका डण्डा, डांड,। केनिपातक, पतवार, सुक्कान। 'अरित्र' केनिपातकम् (अमर) ३ जहाज, नाव। ४ सोमपात्र। ५ गमनसाधन वाहनादि, चढ़नेकी सवारी। (पु०) ६ व्यक्तिविशेष, किसी शत्रुसका नाम। (त्रि०) ७ जाता हुआ, जो हांक रहा हो। ८ शत्रुसे बचानेवाला, जो दुश्मनसे हिफाजत रखता हो।

अरित्व (सं० स्त्री०) अरिता देखो।

अरिदमन (सं० त्रि०) १ शत्रुको दमन करनेवाला, जो दुश्मनको दवा देता हो। (पु०) २ दशरथके पुत्र और लक्ष्मणके लघुभ्राता शत्रुघ्न।

अरिदान्त (वै० पु०) अरिः शत्रुः दान्तः दमितो येन, बहुव्री०। शत्रुको अभिभूत करनेवाला, जो दुश्मनको हराता हो। २ यदुवंशीय क्षत्रियविशेष।

अरिद्विद्वादश (सं० पु०) अरीणां ग्रहाणां परस्परं द्वाभ्यां द्वादश ग्रहाः यत्र। डजन्त बहुव्री०। विवाहका निषिद्ध योगविशेष। धनु मकर, कुम्भ मीन, मेष वृष, मिथुन कर्कट, सिंह कन्या, तुला वृश्चिक—इन सबके परस्पर मिलनेसे अरिद्विद्वादश योग होता है। अर्थात् वरका राशि यदि धनु और कन्याका मकर हो, तो विवाह निषिद्ध है। इसीतरह कुम्भ मीनादि भी निषिद्ध हैं। द्विद्वादश कहनेका तात्पर्य किसी राशिसे दूसरे राशिका बारहवें स्थानमें पड़ना है।

अरिधायस् (वै० त्रि०) अरिभिरोश्वरेर्धायते, अरि-धा-असुन्। १ ईश्वरधार्य। २ प्रसन्नतासे दुग्ध प्रदान करनेवाला, जो राजासे दूध देता हो। ३ बहुमूल्य, कीमती।

अरिन् (सं० स्त्री०) चक्र, पहिया ।

अरिनिन्दन (सं० त्रि०) अरीन् शत्रून् नन्दयति तोषयति ; अरि-नन्द-णिच्-लुट्, उप-समा० । १ शत्रुको सन्तुष्ट करनेवाला, जो दुश्मन्को खुश करता हो । २ इन्द्रियासक्त, नफसपरस्त । ३ व्यसनासक्त, बद् आदत ।

अरिनिपात (सं० पु०) शत्रुका आक्रमण, जो हमला दुश्मन्ने मारा हो ।

अरिनुत (सं० त्रि०) शत्रु द्वारा भी प्रशंसाप्राप्त, जिसको तारीफ दुश्मन् भी करे ।

अरिन्दम (सं० त्रि०) अरीन् शत्रून् दाम्यति शमयति दमयति वा, दमि शमनायां खच् सुम् च । १ पराभिभावक, दुश्मन्को जीतनेवाला । २ काम-क्रोधका निवारक । (पु०) ३ व्यक्तिविशेष, किसी शत्रुसका नाम । ४ सुनिविशेष ।

अरिपु—नल राजाके पिता ।

अरिपुर (सं० स्त्री०) शत्रुका नगर वा देश, दुश्मन्का शहर या मुल्क ।

अरिपूरिम (सं० पु०) विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर ।

अरिप्र (सं० त्रि०) रिप्रं पापं तन्नास्ति यस्य, नञ्-बहुव्री० । १ पापरहित, बेगुनाह । (स्त्री०) रिप्रं कुत्सितं, ततो नञ्-तत् । २ कुत्सित न होनेवाला, जो खराब न हो ।

अरिफित (सं० त्रि०) रीफ न बननेवाला, जो बदल कर 'र' न हो । यह विसर्गका विशेषण है ।

अरिम (सं० पु०) अरिपूरिम देखो ।

अरिमर्द (सं० पु०) अरिं अनिष्टकारित्वात् रोग-विशेषरूपं मृदुनाति नाशयति ; अरि-मृद-अण्, उप-समा० । १ कासमर्द हृत्, कसौदी । इसका पत्र रुचिकर, वृथ्, विषकासरक्त, मधुर, वातकफघ्न, पाचक एवं कण्ठशोधन होता, विशेषतः कास तथा विषको दूर करता और धारक एवं लघु रहता है । (भावप्रकाश) (त्रि०) २ शत्रुको दमन करनेवाला, जो दुश्मन्को कुचल डालता हो ।

अरिमर्दन (सं० त्रि०) अरीन् मृदुनाति, मृद-लुट् । १ शत्रुको मर्दन करनेवाला, जो दुश्मन्को कुचल

डालता हो । (पु०) २ अक्रूरके सहोदर । यह खफ-कके औरस और गान्दिनीके गर्भसे उत्पन्न रहे । ३ कैकय नरेश भानुप्रभातके भाई । यही शाप-वश कुम्भकर्ण हुए थे ।

अरिमित्र (सं० पु०) शत्रुका सहायक, दुश्मन्का दोस्त ।

अरिमेजय (सं० पु०) अरीनेजयति कम्पयति ; अरि-एज-णिच्-खश् सुम्च, उप-समा० । १ शत्रुको कंपाने-वाला शत्रुस, जिससे दुश्मन् कांपे । २ अक्रूरके सहो-दर ।

अरिमेद (सं० प्र०) अरिं रोगरूपं मेदति हिनस्ति मिद-अच् । १ विट्खदिर, दुर्गन्ध खैर । अरिमेदोषद खदिर (अमर) यह कषाय, उष्ण, तिक्त, भूतघ्न, शोफाति-सार-कासनाशक और विसर्पघ्न होता है । (राजनिघण्टु) इसके व्यवहारसे मुख एवं दन्तरोग, कण्ठ विष, स्नेहा, कृमि, कुष्ठ और व्रण मिट जाता है । (मदनपाल) २ कृमिविशेष, कोई कीड़ा ।

अरिमेदक, अरिमेद देखो ।

अरिमेदाद्यतैल (सं० स्त्री०) तैलौषधमेद । यह मुख-रोगको हितकर है । मूर्च्छित तिलका तैल ८ शराव, अरिमेद (विट्खदिर)की त्वचा १२॥ शराव, ६४ शराव जलमें काय करे । जब १६ शराव शेष रहे, तब भाग परसे उतार और कपड़ेसे छान मस्तिष्कादिका कल्क द्रव्य प्रत्येक [दो तोला और तैल यह सब तैल-पाककी विधिसे पचाना चाहिये । (चक्रपाणिदत्तसंग्रह)

अरियनकाज—मन्द्राज प्रान्तवाले तिरुवाङ्कोड़ राज्यके शङ्कोट्टो जिलेका एक गांव, घाटी और पुण्यस्थान । यह घाटीको चोटीसे आध कोस वृत्ताकार उपत्यकामें अक्षा० ८° ५८' ४५" उ० और द्राघि० ७७° ११' १५" पू० पर अवस्थित है । अस्सेम्बुमें कूहवेका कारवार खुलनेपर तिनेवेलीसे त्रिवन्दरम् जाने-आनेको यह घाटी बड़ी राह बन गयी है ।

अरियाकूपम्—मन्द्राज प्रान्तके दक्षिण-अरकाट जिलेका एक किला और मुहाना । यह पुंदिचेरीसे डेढ़ मील दक्षिण-पश्चिम प्रान्सीसी अधिकारके अन्तर्गत अक्षा० ११° ५५" उ० और द्राघि० ७८° ४२' पू० पर

अवस्थित है। सन् १७४६-६० ई०को पुंदिचेरीमें जो युद्ध हुआ, उसमें इस किले और मुहानेने बड़ा काम किया दिया था।

अरियाना (हिं० क्रि०) अवे-तवे करना, तू-तड़ाक निकालना, तिरस्कारयुक्त वाक्यसे सम्बोधन लगाना।

अरियापाद—मन्द्राज प्रान्तके तिरुवाङ्कोड़ राज्यका पवित्र देवायतन। यह अक्षा० ८° १७' उ० और द्राघि० ७६° ३८' ५१" पू० पर अवस्थित है। इसका भवन उल्लेख-योग्य है। दूसरे जो कमरे आराम लेने वगैरह को बने, उनके सबब भी कितने ही लोग यहां आ पहुंचते हैं। अप्रैल मासमें बड़े समारोहसे वार्षिकोत्सव होता है। राज्यसे कितना ही धन मन्दिरके व्ययनिर्वाहार्थ दिया जाता है।

अरियाल खान्—निम्न बङ्गालदेशका नदिविशेष। यह अक्षा० २२° ३७' ३०" एवं २३° २६' उ० और द्राघि० ८०° ७' ३०" तथा ८०° ३३' ४५" पू०के मध्य अवस्थित है। इसे फरीदपुर नगरके पास पद्मासे निकल फरीदपुर और बाकरगञ्ज जिलेमें बहते पायेंगे। ग्रीष्ममें इसकी चौड़ाई १७०० और वर्षामें ३००० गज रहती है। अपनी कितनी ही शाखा फैला यह मीरगञ्जके पास मेघना नदीमें जा मिला है। इसमें हर जगह बड़ी नाव चल सकती है।

अरिराष्ट्र (सं० क्ली०) शत्रुका देश, दुश्मनका मुल्क।

अरिला (सं० स्त्री०) अरिरपि लायते गृह्यते गमना-निवार्यते यया, अरि-ला करणे क्तिप्। मात्रावृत्त विशेष। इसमें सोलह मात्रा रहती है। अन्तमें दो लघु वर्ण या एक यगण लगता है। जगण इसके बीच नहीं पड़ता। इस वृत्तको कहनेसे शत्रुका मन भी पिघल जाता है।

अरिलोक (सं० पु०) विद्रोही जन वा शत्रुका देश, दुश्मनो रखनेवाली कौम या दुश्मनका मुल्क।

अरिल्ल (हिं० पु०) अरिला देखो।

अरिवन (हिं० पु०) उबका, फांसरी, रस्सीके अगले छोरका फन्दा। इसमें लोटे या घड़ेको फांस कुयेंसे पानी निकालते हैं।

अरिष (सं० पु०) नास्ति रिषो मलस्य बाधको यस्मात्; रिष हिंसाया क, नञ्-बहुव्री०। १ अपान-

मांसज रोग विशेष, जो बीमारी दस्तको रोक देती हो। (क्ली०) न रिष्यते केनापि प्रकारेण बाध्यते; रिष कर्मणि क, नञ्-तत्। २ अविच्छिन्न धारावर्षण, जो बारिश रुकती न हो।

अरिषडष्टक (सं० क्ली०) षट् च अष्टकञ्च द्वन्द्व० ततः अरिभूतं, मध्यपदलोपी कर्मधा० बहुव्री० वा। विवाहनिषिद्ध योग विशेष। वर एवं कन्या उभयका राशि गणनासे षष्ठ वा अष्टम होनेको षडष्टक कहते हैं। इस योगमें विवाह करनेसे दम्पतीका मृत्यु या कलह होता है। ज्योतिषमें दो प्रकार का षडष्टक लगता है,—अरिषडष्टक और मित्रषडष्टक। उसमें सिंह-मकर, कन्या-मेघ, मीन-तुला, कर्कट-कुम्भ, वृष-धनु और मिथुन-वृश्चिकवालेका नाम अरिषडष्टक है।

अरिषड्वर्ग (सं० पु०) अरीणां अन्तः शत्रूणां कामक्रोधादीनां षड्वर्गः, शिवभागवतवत् समासः। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य नामक छः अन्तः शत्रु।

अरिषण्य (वै० त्रि०) न रिष्यति हिनस्ति, रिष हिंसायां अन्त्यक्, नञ्-तत्। अहिंसक, जो किसीको तकलीफ न पहुंचाता हो।

अरिषण्यत् (वै० त्रि०) हिंसा न किया जानेवाला जिसको तकलीफ न पहुंचायी जाती हो।

अरिष्ट (सं० पु०) रिष हिंसायां त्त, नञ्-तत्।

१ रीठेका वृक्ष। इसका गुण यह है—कटु, तीक्ष्ण, उष्ण, लेखन, गर्भपातकर, स्निग्ध, त्रिदोषनाशक और ग्रहपीडा-दाह-शूलनाशक। (वैद्यकनिघण्टु) २ लसुन। ३ निम्बवृक्ष। ४ गुडूची। ५ काक। ६ कड़। ७ वृषभासुर। इसे वाष्पाने मार डाला था। ८ वलिका पुत्र दैत्य विशेष। ९ अनिष्टसूचक भूकम्पादि उत्पात। १० अनिष्ट सानका रवि प्रभृति ग्रह। ११ औषध विशेष।

औषधोंसे बने हुए मद्यको आसव और काथको अरिष्ट कहते हैं। गुडूची, अभया, चित्रक, दन्तो, पिप्पलादि अनेक औषधियोंसे बना हुआ काथ भी अरिष्ट कहाता है। इसका गुण अर्श, शोथ, ग्रहणो, श्लेष्मादि रोग नाशक है।

अनेक द्रव्य सात दिन तक पानीमें फुला करके रसको वस्त्रसे छान लिया जाता है। उसको चिकित्सक लोग अरिष्ट एवं ओषधि जलमें पकाकर सिद्ध हुये मद्यको भी अरिष्ट कहते हैं। यह त्रिदोष नाशक, और गर्भसावक होता है। (स्त्री०) १२ सूतिका गार। नास्ति रिष्टं यस्मात्, नज्-बहुव्री०। १३ मरण चिह्न। १४ शुभदायक विधान। १५ सुखावस्थान, मजेकी बैठक। १६ शुभ, भलाई। १७ अशुभ चिह्न, बुरे आसार। १८ तक्र, मठा। (त्रि०) १९ अविनाशी, लज्जाल।

अरिष्टक (सं० पु०) १ फेनिल वृक्ष, रीठका पेड़। २ निम्बवृक्ष, नौमका दरख्त। ३ रीठाकरञ्ज, बड़ा रीठा। ४ सरलद्रुम, चौड़का पेड़। (स्त्री०) ५ मद्य, शराब।

अरिष्टकर्मन्—अश्वत्थकर्मके नृपति विशेष। इनका वर्णन विष्णुपुराणमें विद्यमान है। अश्वत्थकर्म देखो।

अरिष्टगात (वै० त्रि०) अरिष्टं अहिंसितं गच्छति, गम तु निपातनात् आकारादेशः। अहिंसित-गमन, मजेसे चलने या रहनेवाला।

अरिष्टगु (वै० त्रि०) अहिंसित पशु रखनेवाला, जिसके मवेशी चोट खाये न रहें।

अरिष्टगृह (सं० स्त्री०) पड़ा हुआ कमरा।

अरिष्टग्राम (वै० पु०) पर्याप्त संख्यक सैन्य-सम्पन्न, जिसकी फौज शमारमें पूरी रहे। यह शब्द मरुतस्का विशेषण है।

अरिष्टताति (वै० स्त्री०) अरिष्टस्य भावः, अरिष्ट-तसिन्। सुखका भाव, रक्षा, हिफाजत। (त्रि०)

२ शुभ, अच्छा, भलाई करने या आराम देनेवाला।

अरिष्टत्रय (सं० स्त्री०) तीन अरिष्ट। यह तीन प्रकारका होता है—स्वस्थारिष्ट, वेधारिष्ट, कीटारिष्ट। उसमें स्वस्थारिष्ट पांच प्रकारका है—भोजनारिष्ट, छायाद्यरिष्ट, दशनेन्द्रियाद्यरिष्ट, श्रवणेन्द्रियाद्यरिष्ट, रसनेन्द्रियाद्यरिष्ट। प्रथम भोजनारिष्टमें रोगके बिना ही हीन-वर्णता, दुर्मनस्कता, और भोजनमें अनिच्छा होती है। दूसरेमें छायाप्राङ्मुखता (दो मालूम होना) और छाया छिद्रयुक्तता जान पड़ती है। तृतीयादिमें नाक,

मेढ, नेत्र, पायु इन स्थानोंसे भ्रूकक्षात् रक्तसाव होने (खून चूने) लगता तथा रोगी कर्णवधिर, जिह्वा-कठिन और स्तब्ध हो जाता है। शरद् ऋतु सूर्यके ताप और वर्षाकाल मकानसे बाहर कहीं खुली जगहमें रहनेसे वेधारिष्ट उत्पन्न होता है। उसके होनेसे मनुष्योंको ज्वर, नीचे मुख रहना, खास-कास, अङ्ग जकड़ना, याने सर्वाङ्गमें पीड़ा रोग लगता है। कीटारिष्टसे वाजियोंके पेटमें कीटका गुच्छा हो जाता, जिससे वह कष्ट पाने लगते हैं। (जयदत्त अश्ववै० २३-२५-५०)

अरिष्टदुष्टधौ (सं० त्रि०) अरिष्टन मरणसूचकनिमित्तेन दुष्टा असाध्वी धौर्बुद्धिर्यस्य, बहुव्री०। १ आसन्न मरणसूचकनिमित्त दुष्ट बुद्धियुक्त, मौतसे खोफ खाने-वाला। २ आसन्नकालमें विपरीत बुद्धियुक्त, जिसको समझ मौकेपर बिगड़ जाये।

अरिष्टनेमि—१ विनताके गर्भ और कश्यपके औरससे उत्पन्न पुत्रविशेष। २ जिनविशेष। यह वर्तमान अव-सर्पिणीके चौबीस तीर्थङ्करमें बाईसवें थे। सोमनाथ देखो।

अरिष्टफल (सं० पु०) कटुनिम्बवृक्ष, किसी किसीकी कड़वी नौम।

अरिष्टभर्मन् (वै० त्रि०) संरक्षक, हिफाजत करने-वाला।

अरिष्टमथन (सं० पु०) असुरनाशन विष्णु।

अरिष्टरथ (वै० त्रि०) अहिंसित रथयुक्त, जिसके रथ बिगड़ा न रहे।

अरिष्टलक्षण (सं० स्त्री०) मृत्युलक्षण, मौतका निशान।

अरिष्टवीर (वै० त्रि०) अप्रताड़ित वीर रखनेवाला, जिसके घायल सिपाही न रहे।

अरिष्टशय्या (सं० स्त्री०) पड़ा हुआ पलंग।

अरिष्टसूदन, अरिष्टमथन देखो।

अरिष्टहन्, अरिष्टमथन देखो।

अरिष्टा (सं० स्त्री०) १ कटुकी। २ पटोलादि।

३ नागबला, गुलशकरी। ४ मद्य, शराब। ५ पट्ट, पट्टी। ६ दक्षकी कन्या। यह कश्यपकी व्याही थीं।

अरिष्टासु (वै० त्रि०) अहिंसित शक्तिसम्पन्न, जिसकी असली ताकतमें बल न पड़े।

अरिष्टाह (सं० पु०) रीठाकरञ्ज, बड़ा रीठा।
 अरिष्टि (सं० स्त्री०) रिष-क्तिन्, अभावे नञ्-तत्।
 रिष्टि वा हिंसाका अभाव, चोटकी अदम-मौजूदगी।
 अरिष्टिका (सं० स्त्री०) १ रीठी। २ कटुकी।
 अरिष्ठ (वै० त्रि०) अरये अरौ वा तिष्ठति, अरि-
 स्था-क वेदे षत्वम्। शत्रुनाशके निमित्त स्थित, जो
 दुश्मनको मारने खुड़ा हो।
 अरिसिंह—काव्यकल्पलतासूत्र-रचयिता।
 अरिह (सं० पु०) पुरुषंशोय नृप विशेष।
 अरिहन (हिं० पु०) १ शत्रुघ्न। २ वीतराग।
 ३ रेहन।
 अरिहा (सं० त्रि०) १ शत्रुसंहारक, दुश्मनको
 कत्ल करनेवाला। (पु०) २ शत्रुघ्न, लक्ष्मणके छोटे
 भाई।
 अरी (हिं० अव्य०) अयि, एरौ, ओरौ, । (स्त्री०)
 २ अड़ौ, मौका, जिस वक्त कोई काम अटक रहे।
 (वि०) ३ अटकी हुई।
 अरोठा (हिं० पु०) अरिष्ठ, रीठा।
 अरोढ़ (सं० त्रि०) लिङ् आस्वादे क्त, नञ्-तत्।
 १ शत्रु द्वारा अनभिभूत, जो दुश्मनसे दबा न हो।
 २ अनास्वादित, जो चखा न गया हो।
 अरीत (हिं० स्त्री०) १ रीतिका अभाव, चालके
 खिलाफ काम। २ कुरीति, बुरी चाल।
 अरीरुह (वै० त्रि०) चाटान हुआ, जो चाटा न
 गया हो।
 अरोहण (सं० पु०) राजा विशेष, कोई बादशाह।
 अरीहणादि (सं० पु०) अरीहण आदिर्यस्य, बहुव्री०।
 निर्वृत अर्थवाले बुज् प्रत्ययके निमित्त पाणिन्युक्त
 शब्दसमूह। इसमें निम्नलिखित शब्द होते हैं,—
 अरीहण, द्रुघण, द्रुहण, भगल, उलन्द, किरण, साम्य-
 रायण, क्रोद्वायण, ओद्वायण, त्रैगर्तायण, मैत्रायण,
 भास्त्रायण, वैमतायन, गौमतायन, सौमतायन, घौम-
 तायन, सौमायन, ऐन्द्रायण, कौन्द्रायण, खाडायन,
 शाण्डिल्यायन, रायस्योष, विपथ, विशाय, सहृण्ड,
 उदघ्नन, खाण्डवीरण, कीरण, काशकृत्त, जास्ववन्त,
 शिशपा, रैवत, वैल्व, सुयज्ञ, शिरीष, वधिर, जम्बु,

खदिर, सुशर्मन्, दलद, भलन्दन, खण्ड, कनल,
 यज्ञदत्त और सार।
 अरु (सं० पु०) १ आरग्वध वृक्ष, लटजीरा।
 २ रक्तखदिर, लाल खैर। ३ चतत्रण, चोटका जख्म।
 ४ मर्म, जिसकी नाजुक जगह। ५ सम्बिस्थान, गाँठ,
 जोड़। ६ सूर्य, आफताब। (हिं० अव्य०) ७ और।
 अरुषिका (सं० स्त्री०) अरुषि मर्मस्थानान्यधि-
 कृत्य जाता, ठन् पृषो० सुम्। छुद्ररोगविशेष, कोई
 बीमारी। इससे माथेपर कई सुंहवाले फोड़े उभर
 आते हैं।
 अरुई, अरवी देखो।
 अरुक् (सं० त्रि०) सुस्थ, जिसे बीमारौ न रहे।
 अरुकटि, अरुकाट देखो।
 अरुगण, अरुक् देखो।
 अरुङ्निमेष (सं० स्त्री०) नेत्ररोग विशेष, आंखको
 कोई बीमारी।
 अरुच् (वै० त्रि०) नास्ति रुक् दोषिर्यस्य, बहुव्री०।
 दीप्तिहीन, बेरोशनी, जिसमें चमक न रहे।
 अरुचि (सं० स्त्री०) नास्ति रुचिर्भोजनाभिलाषो
 यत्र; रुच्-इनि, नञ्-बहुव्री०। भोजनानिच्छा, खाने
 को जीका न चाहना। २ सुखपीड़ाविशेष, सुंहकी
 कोई बीमारी। इसमें खानेसे कोई चीज अच्छी नहीं
 लगती। ३ घृणा, नफरत। (त्रि०) नञ्-इ-तत्।
 ४ निराभिलाष, बेखाहिश। ५ निस्पृह, लापरवा।
 ६ इच्छाहीन, बेतवीयत। ७ आसक्तिहीन, शौक् न
 रखनेवाला। ८ दीप्तिहीन, बेरोशनी। अरोचक देखो।
 अरुचिकर (सं० त्रि०) अरुचि उत्पन्न करनेवाला,
 जिसे खानेको जो न चहे।
 अरुचिर (सं० त्रि०) अथाह, घृणित, नागवार,
 नफरत अङ्ग्रेज।
 अरुच्य, अरुचिर देखो।
 अरुज् (सं० त्रि०) १ न पकनेवाला, जो पौप न
 देता हो। २ सुस्थ, तन्दुरुस्त।
 अरुज (सं० पु०) न रुजति; रुज-क, नञ्-तत्।
 १ आरग्वध वृक्ष, लटजीरा। २ दानव विशेष। (स्त्री०)
 ३ कुङ्कुम, केशर। ४ सिन्दूर। (त्रि०) नास्ति रु-

जो रोगो येन यस्माद्वा, नञ् ३।५-बहुव्री० । ५-रोग-
नाशकारी वस्तु, बौमारी मिटानेवाली चीज । नास्ति
रुजो रोगो यस्य, नञ् ६-बहुव्री० गौणे ऋक्षः । ६ रोग-
शून्य, तन्दुरुस्त ।

अरुभना (हिं० क्रि०) १ उलभना, मिलकर एकमें
हो जाना । २ ठिठकना, चलते-चलते रुक जाना ।
३ भगड़ा डालना, बहस करना ।

अरुभाना (हिं० क्रि०) १ उलभाना, फन्दा लगा
देना । २ लपट-भपट करना ।

अरुण (सं० पु०) ऋच्छति इत्यति वा सततं गच्छति,
ऋ-उनन् । १ सूर्य, आपताव । “अरुण उदय अवलोकिय ताता”
(तुलसी) । २ सूर्यका सारथि । ३ गरुड़ । ४ सन्ध्या-
राग, शामकी लाली । ५ निःशब्द, वैशावाजी । ६ दानव
विशेष । ७ कुष्ठरोग विशेष, किसी किस्मका कोढ़ ।
८ अव्यक्तराग, पोथीदा रङ्ग । ९ कृष्णमिश्रित रक्त वर्ण,
स्याही-मायल सुख रङ्ग । १० आदित्यविशेष, बारहमें
कोई सूर्य । माघमासके सूर्यको अरुण कहते हैं । “अरुणो
माघमासे वै” (आदित्यहृदय) ११ ऋषिविशेष । यह लोग
प्रजापतिके मांससे उत्पन्न हुए थे । “ततोऽरुणाः केतवो वात-
रश्ना ऋषय उदतिष्ठन् ।” (तैत्तिरीय आरण्यक १।२।२) १२ देश
विशेष, कोई सुलक । १३ अरुण वर्ण, लाल रङ्ग ।
१४ प्रातःकाल, तड़का । १५ विषयुक्त कृमि विशेष,
कोई जहरीला कीड़ा । यह छोटासा होता है ।
१६ गुड़ । १७ नदविशेष, कोई दरया । १८ कोकि-
लाक्षभेद, किसी किस्मका तालमखाना । १९ अतिविषा ।
२० श्लोणाकवृक्ष । २१ मच्छिष्ठा, मजीठ । २२ अकं
वृक्ष, अकोड़ेका पौधा । २३ पुत्रागवृक्ष, किसी किस्मके
चम्येका पेड़ । २४ चित्रकक्षुप, चीतका पौधा ।
२५ रक्तापांमार्ग, लाल लटजौरा । २६ रक्तकरवीर,
लाल कनेर । (स्त्री०) २७ अहिफेन, अफीम ।
२८ रक्तोत्पल, लाल कमल । २९ रक्तविवृता, लाल
हिरनपद्मी । ३० कुङ्कुम, केसर । ३१ सिन्दूर ।
३२ माणिक्यभेद, लाल । ३३ त्रैलोक्यचिन्तामणि-रस ।
यह क्षय रोगपर दिया जाता है । ३४ पुच्छल तारा ।
इसको शिखा चामरवत् होती है । रङ्गमें यह स्याही
लिये सुख नज़र आता है । इसका फल अच्छा नहीं ।

संख्यामें यह ७७ होता है । इसे वायुपुत्र भी कहते हैं ।
३५ मन्दारपर्वतस्थ सरोवर ।

अरुण—एक प्राचीन संस्कृत वैयाकरण ।

अरुणकपिश (सं० पु०) द्राक्षामेद, किसी किस्मका
किशमिश्र ।

अरुणकमल (सं० स्त्री०) कृष्णसर्पवत् नित्य-कर्मधा० ।
रक्तोत्पल, लाल कमल ।

अरुणगिरिनाथ—संस्कृतभाषामें योगानन्दप्रहसन-रच-
यिता ।

अरुणचूड़ (सं० पु०) ताम्रचूड़ पक्षी, मुर्गा ।

अरुणज्योतिस् (सं० पु०) शिव ।

अरुणतण्डुलीय (सं० स्त्री०) रक्ततण्डुलीय शाक,
लाल चोलाईकी भाजी ।

अरुणता (सं० स्त्री०) सुर्खी, ललाई, लाल रङ्ग ।

अरुणदत्त—१ प्राचीन संस्कृत वैयाकरण और कोष-
कार । उज्ज्वलदत्त और रायमुकुटने इनका उल्लेख
किया है । २ मनुष्यालयचन्द्रिकारचयिता ।

अरुणदांगी—मन्द्राज प्रान्तके तञ्जोर जिलेका एक किला
और जनपद । प्राचीन समय इस किलेकी मन्द्राज
प्रान्तमें बड़ी धूम रह्यो । सन् ई०के १५वें शताब्द
पाण्ड्या नृपतिके सेनापति सेतुपतिने इसे छीन अपने
राज्यमें मिला लिया था । सन् ई०के १७वें शताब्द
यह तञ्जोरके अधिकारभुक्त हुआ, जिसे सन् १६४६ ई०
में रघुनाथ राव तैवानने अपने हाथ किया । सन्धिके
अनुसार तञ्जोर राज्यको दुबारा मिलनेपर सन् १६८८
ई०में युद्ध छिड़नेसे फिर यह छिन गया था । सन्
ई०के १८वें शताब्द रामनादवाले ‘किलावन’ के
लड़केका यह जनपद सूबा बना । फिर इसे कई
बार विभिन्न नृपतियोंने अधिकार किया था ।
अन्तको सन् १७४८ ई०में तञ्जोरके राजाने इसे
पाया ।

अरुणदूर्वा (सं० स्त्री०) कृष्णसर्पवत् नित्यकर्मधा० ।
रक्त दूर्वा, लाल दूब ।

अरुणनाग (सं० पु०) मुद्राशङ्ख, मुरदासंख ।

अरुणनेत्र (सं० पु०) १ पारावत, कबूतर । २ कोकिल,
कोयल ।

अरुणपुष्पी (सं० स्त्री०) बन्सुजीवक वृक्ष, लाल दुप-
हरीका पेड़।

अरुणप्रिया (सं० स्त्री०) अरुणस्य प्रिया, ६-तत्।
१ सूर्यकौ भार्या। संज्ञा, और छाया सूर्यकी भार्या मानी
गयी है। २ अप्सरा।

अरुणपुष्प (वै० त्रि०) अरुणः रक्तवर्णः पुष्पः रूपं
यस्य, बहुव्री०। रक्तवर्णविशिष्ट, लाल रङ्गवाला।

अरुणबभ्रु (वै० त्रि०) अरुणताविशिष्ट पीतवर्ण,
सुर्खी लिये पीला।

अरुणमच्चिका (सं० त्रि०) रक्तमच्चिका, लाल माछी।

अरुणमल्लार (सं० पु०) मल्लार विशेष। इसकी
समग्र स्वर शब्द रहते हैं।

अरुणयुज् (वै० त्रि०) रक्तकिरणभाविशिष्ट, जिस
पर लाल किरणकी रोशनी पड़े।

अरुणलोचन (सं० पु०) अरुणे रक्ते लोचने यस्य,
बहुव्री०। १ पारावत, कबूतर। २ कोकिल, कोयल।

(त्रि०) १ रक्तवर्ण चक्षुयुक्त, सुख्ख आंखवाला।

अरुणशिखा (सं० पु०) कुक्कुट, सुर्गा। “उठे लखन
निशि विगत सुनि अरुणशिखा धुनि कान।” (तुलसी)

अरुणसर्प (सं० पु०) तच्चक सर्प, जहरीला सांप।

अरुणसार (सं० पु०) हिङ्गुल, हींग।

अरुणसारथि (सं० पु०) सूर्य, जिसका गाड़ीवान्
अरुण रहे।

अरुणा (सं० स्त्री०) ऋ-उनन् टाप्। १ अति-
विषा। २ गुड़। ३ प्रदरारिरस। ४ मञ्जिष्ठा,
मंजीठ। ५ लाक्षातेल। ६ प्रपीण्डरीक, पाण्डरी।
७ त्रिवृता, लाल चोलाई। ८ जवा, कदम्बका फूल।
९ श्यामालता। १० इन्द्रवारुणी लता, लाल इन्द्रा-
यण। ११ गुञ्जा लता, मुँघची। १२ पुनर्णवा।
१३ मुण्डीरी, गोरखमुण्डी। १४ रक्तवर्णा गो, लाल
गाय। १५ नदी विशेष।

अरुणाई (हिं० स्त्री०) अरुणता, सुर्खी, लाली।

अरुणाग्रज (सं० पु०) गरुड़, विष्णुका वाहन।

अरुणात्मज (सं० पु०) अरुणस्य आत्मजः, ६-तत्।
सूर्यपुत्र शनि, सावर्णमनु, कर्ण, सुग्रीव, यम, अश्विनी
कुमारद्वय और जटायुकी लोग सूर्यका पुत्र मानते हैं।

अरुणात्मजा (सं० स्त्री०) अरुणस्य आत्मना स्वरू-
पेण जायते, जन-ड-टाप्, ६-तत्। सूर्यकन्या। यमुना
और तपतीकी सूर्यकन्या कहते हैं।

अरुणात्मिका (सं० स्त्री०) कुमरिच, लाल मिर्च।

अरुणानुज (सं० पु०) सूर्यके भाई गरुड़।

अरुणाभ (सं० स्त्री०) वज्रलोह, खेड़ोका लोहा।

अरुणार, अरुणार देखो

अरुणार्क (सं० पु०) रक्तार्क, लाल अकोड़ा। यह
वात, कुष्ठ, कण्डू, विष, व्रण, झींझा, गुल्म, अर्श, कफ,
उदरमल, कृमि, मेद शोथ, एवं विसर्पको मिटाता
और कटु, तिक्त तथा उष्ण होता है। इसका पुष्प
कृमि, कुष्ठ, कफ, अर्श, विष, रक्तपित्त, गुल्म तथा
शोथको दूर करता और मधुर, तिक्त एवं धारक
रहता है। (भावप्रकाश)

अरुणार्चिस् (सं० पु०) सूर्य, आफ़ताव।

अरुणावरज (सं० पु०) अरुणस्य अवरजः। गरुड़।

अरुणाश्व वै० त्रि०) लाल घोड़े जोतनेवाला। यह
मरुत्सका विशेषण है।

अरुणित (सं० त्रि०) अरुण क्रियते स्म; अरुण
कृत्यर्थे णिच्, कर्मणि क्त तारकादि० इतच् वा।

१ लाल रंगा हुआ, जो रङ्गकर सुख्ख बनाया गया हो।

२ रक्तवर्ण, सुख्ख, लाल।

अरुणिमन् (सं० पु०) अरुणता, सुर्खी, लाली।

अरुणिमा, अरुणिमन् देखो।

अरुणीकृत, अरुणित देखो।

अरुणीय—अथर्ववेदका पचीसवां उपनिषत्।

अरुणीययोग, अरुणीय देखो।

अरुणोक्षण, अरुणलोचन देखो।

अरुणोद (सं० स्त्री०) अरुणं रक्तवर्णं उदकं जलं
यस्य, बहुव्री० उदकस्योदादेशः। १ सरोवरविशेष,
कोई तालाब। २ मन्दरपर्वतसे निःसृत नदी विशेष।
३ समुद्रविशेष। जैन इस समुद्र द्वारा पृथिवीको
आवेष्टित मानते हैं। ४ लोहितसागर।

अरुणोदक (सं० स्त्री०) अरुणं रक्तवर्णं उदकं यस्य,
बहुव्री० समासविधेरनित्यत्वान्नोदादेशः। मन्दर पर्वत-
स्थित सरोवर।

अरुणोदधि (सं० पु०) लोहित सागर। (Red Sea) यह मिस्र और अरबके बीच अवस्थित है। सुएज डमरूमध्य रहने पर पहले यह रुमके सागरसे अलग था, किन्तु उसके टूट जानेसे अब दोनों एक हो गये। इङ्ग्लेण्ड और भारतके बीच जहाज इसी राह आते-जाते हैं।

अरुणोदय (सं० पु०) अरुणस्य सूर्यसम्बन्धात् तत्किरणस्य उदयः आकाशे यत्र, बहुव्री०। सूर्योदयसे पूर्व चार दण्ड समय, तड़का।

“चतस्रो षटिकाः प्रातःअरुणोदय उच्यते।” (अ० ति)

“अरुणोदय सकृचे कुसुद उषग्न ग्योति मलीन।” (तुषसी)

अरुणोदयविज्ञा (सं० स्त्री०) अरुणोदयात् सूर्योदयात् प्राक् वक्त्रावलोकनसमये विज्ञा, ७-तत्। अरुणोदयके समय दशमीसे विज्ञा एकादशौ।

“दशम्याः शेषसंयुक्तौ यदि सादरुणोदयः।

नैवोपोथं वैष्णवेण तद्दिनेकादशोव्रतम्।” (गरुडपुराण)

यदि सूर्योदयके अव्यवहित पूर्व हो दशमी सहित एकादशौका योग हो, तो उस दिन वैष्णवकी व्रत रहना न चाहिये। किन्तु उपरोक्त निषेध शुक्लपक्षके लिये ही किया गया है,—

“एकादशौ दशविज्ञां वर्षमाने विवर्जयेत्।

पक्षहानी स्थिते सोमे लङ्घयेद्दशमीयुताम्॥ (अ० ति)

अर्थात् शुक्लपक्षमें यदि एकादशौ दशमीविज्ञा पड़े, तो उस दिन वैष्णव व्रत न रहे; किन्तु कृष्णपक्षमें दशमी विज्ञा एकादशौका व्रत करना चाहिये।

अरुणोदयसप्तमी (सं० स्त्री०) अरुणोदयकालमें पुण्यविशेषसाधना सप्तमी। माघमासके शुक्ल पक्षकी सप्तमी; माकरी सप्तमी। भविष्यपुराणमें लिखा है कि अरुणोदय सप्तमीमें गङ्गास्नान कर अर्घ्यादि दान करनेसे आयु, आरोग्य, सम्पत् एवं कोटि सूर्यग्रहण-कालीन गंगास्नानका फल होता है।

अरुणोन्मुखयति (वै० पु०) ब्राह्मणवेषधारी असुर विशेष, जो राक्षस ब्राह्मण बनकर घूमता हो। ऐतरेय ब्राह्मणमें लिखा, कि इन्द्रने इन राक्षसोंको शृगालादिसे भक्षण कराया था।

अरुणोपल (सं० पु०) अरुणः रक्ताभमध्यः उपलः

प्रस्तरः। १ प्रस्तरविशेष, कोई पत्थर। २ अरुणवर्णमणि विशेष, चुन्नी। ३ पद्मराग, लाल।

अरुतद्वन्तु (वै० त्रि०) जिसके गाल या जबड़े टूट न सकें।

अरुह (सं० त्रि०) अनिवारित, रोका न हुआ।

अरुन, (हिं०) अरुण देखो।

अरुनाना (हिं० त्रि०) १ सुख पड़ना, लाल निकलना। २ सुख बनाना, लाली चढ़ाना।

अरुनायी, (हिं०) अरुणा देखो।

अरुनारा (हिं० वि०) अरुण, सुख, लाल।

अरुनोदय, (हिं०) अरुणोदय देखो।

अरुन्तुद (सं० त्रि०) अरुः मर्म तूदति, अरुस्-तुद-खश्-सुम् अन्तलोपस्य। १ दुःखकर, तकलीफ़दिह। २ मर्मवेदना देनेवाला, जो गहरी चोट पहुँचाता हो। ३ तीक्ष्ण, तेज।

अरुन्तुदत्व (सं० स्त्री०) १ दुःख देनेकी स्थिति, तकलीफ़दिही। २ तीक्ष्णता, तेजी।

अरुन्धती (सं० स्त्री०) न कमपि रुन्धति रुध्-शब्-डोप्। नञ्-तत्। १ जिह्वाग्र, जीभकी नोक। २ जो स्त्री किसीको रोध नहीं करती। ३ वशिष्ठपत्नी, कर्दम मुनिकी कन्या; नक्षत्रविशेष। कहते हैं, परमायु श्रेष्ठ हो जानेपर अरुन्धती नक्षत्र दिखाई नहीं पड़ता।

“दीपनिर्वाणगन्धं सुहृदाकमरुन्धतीम्।

न जिघ्रन्ति न शृण्वन्ति न पश्यन्ति गतायुषः॥”

जिनकी आयु श्रेष्ठ हो आई है, उनकी नासिकामें दीपनिर्वाणका गन्ध नहीं लगता, वे लोग बन्धुवोंकी बात नहीं सुनते और अरुन्धती नक्षत्र भी नहीं देख सकते।

अक्षमाला भी वशिष्ठकी पत्नीका नाम है। वे शूद्र-कन्या थीं, पतिके सङ्गगुण और अपनी पतिपरायणताके लिये सबमें पूजित हुईं। मालूम होता है, अक्षमाला और अरुन्धती एक ही स्त्रीका नाम है। आकाशमें सप्तर्षिमण्डलमें वशिष्ठके निकट अरुन्धती वास करती हैं। विवाहमें सप्तपदी गमनके बाद जामाता बधूको अरुन्धती नक्षत्र दिखाया जाता है।

महाभारतमें लिखा है, वशिष्ठ अतिशय सच्चरित्र

थे। किन्तु अरुन्धती मन ही मन जानती, कि वशिष्ठके मनमें व्यभिचारका दोष उत्पन्न हुआ; इसीलिये वे पतिकी अवज्ञा करती थीं। उसी पापसे उनकी प्रभा धूमारुणकी तरह मलिन हो गई है; उनके श्मि नहीं है; कभी वे दिखाई देती हैं और कभी अलक्ष्य होकर दुर्निमित्तकी भांति लोगोंके दृष्टिगोचर होती हैं। (आदिप० २२४ अ०)।

४ दक्षकन्या धर्मकी पत्नी। दक्षके पचास कन्यायें थीं। उनमेंसे दश धर्मको, तेरह कश्यपको और सत्ताईस चन्द्रको प्रदान की गयीं।

धर्मको जो कन्यायें व्याही गई थीं, उनके नाम ये हैं,—अरुन्धती, वसु, यामी, लज्जा, भानु, मरुत्वती, सङ्ख्या, सुहृता, साध्या, विश्वा और जिह्वा। अरुन्धती का पारिभाषिक नाम जिह्वा है। मृत्युकाल निकट आनेपर लोगोंको जिह्वाका अग्रभाग नहीं दिखाई देता। अतएव मृत्युके पूर्व अरुन्धती दिखाई नहीं देती। यह बात नक्षत्र और जिह्वाके अग्रभाग दोनोंमें घटती है।

अरुन्धतीजानि (सं० पु०) अरुन्धती जाया यस्य, निङ् सम०। अरुन्धतीके स्वामी वशिष्ठ मुनि।

अरुन्धतीदर्शनन्याय (सं० पु०) अरुन्धत्या दर्शनमिव न्यायः, शाक० तत्। अरुन्धतीके देखने जैसी चाल। अरुन्धती नक्षत्र देखनेमें पहले स्थूल दर्शन द्वारा स्थानको ठहरा, पीछे सूक्ष्म दर्शन द्वारा उसपर दृष्टि डालते हैं। इसीतरह प्रथम स्थूल दर्शन द्वारा किसी चीज़को देख पीछे सूक्ष्म दर्शन द्वारा उसके रूपमें मग्न होना अरुन्धतीदर्शनन्याय कहाता है।

अरुन्धतीनाथ, अरुन्धतीजानि देखो।

अरुणकोट्यी—मन्द्राज प्रान्तवाले मदुरा जिलेके रामनाद राज्यका एक गाँव। इसमें बल्लालीकी अनोखी जाति अरुणकूटन् रहती है, जो दूसरी बल्लाल जातिसे नहीं मिलती। इस जातिके लोग किसी किसानकी नौकरी चाकरी करनेसे दूर रहते हैं। दूसरों लोगोंसे विवाह करना भी इनमें निषिद्ध है।

अरुणध, अरुणु खर्यति देखो।

अरुवा (हिं० पु०) अरु, सताविशेष। इसका पत्ता

पान-जैसा होता और जड़में कन्द बैठता है। लताकी गाँठसे जो सूत निकलता, वह चार पाँच अङ्गुल बढ़कर मोटा हो कन्द बन जाता है। कन्दकी तरकारी बनाते हैं। खानेसे यह कनकना लगता है। बरयी पानके साथ इसे बोता है। २ उल्लू चिड़िया।

अरुणहन् (वै० पु०) रक्तवर्ण मेघको नाशकरनेवाले इन्द्र।

अरुष् (सं० त्रि०) नास्ति रुट् यस्य; रुष्-क्लिप्। अक्रोध, गुस्सा न करनेवाला, जिसका मिज़ाज सुलायम रहे।

अरुष (सं० त्रि०) १ रक्तवर्ण, सुख, लाल। (पु०) २ ज्वाला, लपट। ३ सूर्य, दिन। ४ रक्तवर्ण मेघ, लाल बादल। यह तूफान् आते समय देख पड़ता है।

अरुषा (सं० त्रि०) भूम्यामलकी।

अरुषौ (सं० त्रि०) इयति गच्छति वादित्त्वाद्येनान्तं प्रतिदिनं प्रापयति वा स्तोत्रहन् ऐश्वर्यादि; ऋ-उषन्, पिप्पलादेराकृतिगणत्वादीकारः अथवा आ-रुच् दौमौ दुषच्, टिलोपः आडो ह्रस्वश्च; अरोचते अरुषौ अथवा अरुषमिति रूपनाम सामर्थ्यादत्र शक्तविषयं, शक्तवर्णा अरुषौ। १ उषा, तड़का। २ रक्तवर्ण अश्व, लाल घोड़ी। ३ ज्वाला, लपट। ४ मनुकी कन्या और और्वकी माता। महाभारतमें लिखा है, कि मनुकौ कन्याका नाम अरुषौ रहा। भृगुपुत्र च्यवनके साथ इनका विवाह हुआ था। अरुषौके पुत्रको और्व कहते रहे। वह जननीका जरुदेश तोड़ कर निकले थे।

“अरुषौ तु मनोः कन्या तस्य पत्नी यशस्विनी।

श्रीवत्सलां समभवद्गुरुं भिला महायशः।” (आदिप० २११०)

अरुष्क (सं० स्त्री०) अरुमर्मस्थानपर्यन्तं कायति व्यथयति, अरुस्के-क षत्वम्। भस्मातक वृक्ष, भिलावेका दरख्त। भिलावेका चूर गात्रमें लगनेसे क्षत पड़ जाता, इसीसे वह अरुष्क यानी दुःख देनेवाला कहाता है।

अरुष्कार (सं० पु०) अरुः व्रणं पीडां वा करोति; अरुस्-क-ट, उपसमा० षत्वम्। १ भस्मातक वृक्ष

भिलावेंका पेड़। 'वीरवृचोऽरुक्करोऽग्निमुखी भज्जातकी विष्'। (अमर) २ पीड़ादायक वस्तु, तकलीफ़दिह चीज़। वृष कावों ऽप्यरुक्कारः। (अमर) ३ अरुषिका, माथेकी फुनसी। (क्ली०) ४ भज्जातक फल, भिलावां। ५ पञ्चतिक्त घृत। ६ चतुःसम लौह।

अरुष्कृत (सं० त्रि०) आहत, जख्मी, घायल, जो चोट खा गया हो।

अरुःसाण (वे० क्ली०) व्रणका औषध विशेष, जख्मकी कोई दवा।

अरुस् (सं० पु०) ऋच्छति सततं गच्छति, ऋ-उस्। १ सूर्य, आफ़ताब। २ रक्तखदिर, लाल खैर। (क्ली०) ३ मर्मस्थान, नाज़क जगह। ४ व्रण, घाव, चोट। ५ क्षत, जख्म। ६ नेत्र, आंख। (वि०) ७ आहत, जख्मी।

अरुसिका (सं० स्त्री०) मस्तककी त्वक्का दुःखदायी व्रण, खोपड़ेवाली खालकी तकलीफ़दिह फुनसी।

अरुहा (सं० स्त्री०) न किमपि रोहित, रुह-क। भूमि आमलकी, भुयिंआवला।

अरुक्ष (वे० त्रि०) न रुक्षम्, विरोधे नञ्-तत्। स्निग्ध, मसृण, चिकना, मुलायम, जो रुखा न हो।

अरुक्षता (वे० स्त्री०) स्निग्धता, चिकनायी, मुलायमियत।

अरुक्षित, अरुक्ष देखो।

अरुक्ष्ण, अरुक्ष देखो।

अरुढ, आरुढ़ देखो।

अरुप (सं० त्रि०) नास्ति रूपं यस्य, बहुव्री०। १ रूपशून्य, वेशल, जिसके सूरत न रहे। २ कुरूप, बदशल, जिसके अच्छी सूरत न रहे। (क्ली०) ३ सांख्योक्त प्रधान। ४ वेदान्तोक्त ब्रह्म। कुत्सितार्थे नञ्-तत्। ५ कुत्सित रूप, खराब शल।

अरुपक (सं० त्रि०) १ अलङ्कार-रहित, वे इस्तेयार। यह शब्द कविताका विशेषण है। (पु०) बौद्ध योगीकी भूमि वा अवस्था। यह चार प्रकारका होता है,—आकाशायतन, विज्ञानायतन, अविज्ञानायतन और नैवसंज्ञा संज्ञायतन।

अरूपता (सं० स्त्री०) १ रूपशून्यता, वेशल्ली। २ असमानता, नाहमवारो।

अरूपवत् (सं० त्रि०) अरूप देखो।

अरूपहार्य (सं० त्रि०) रूपेण ह्रियते; रूप-ह-रूप-तत्, ततो नञ्-तत्; यद्वा रूपेण न हार्यम्, असमर्थ समा०। सौन्दर्यादि द्वारा वश न होनेवाला, जो खूबसूरती वगैरहसे कावूमें न आता हो।

अरूपावचर (सं० पु०) बौद्ध दर्शनानुसार चित्तवृत्ति विशेष। इससे अरूपलोक देख पड़ता है। यह कुशल, विपाक एवं क्रियाकी चार-चार प्रकार वृत्तिमेदसे बारह तरहका होता है।

अरूपिन (सं० त्रि०) अरूप देखो।

अरुरना (हिं० क्ति०) क्लेश उठाना, पौड़ा पड़ना।

अरुलना (हिं० क्ति०) विदारत होना, लग जाना, घुसना।

अरुष (सं० पु०) ऋच्छति गच्छति, ऋ-ऊषन्। १ सूर्य, आफ़ताब। 'अरुषः सूर्यः'। (उज्ज्वलदत्त) २ सर्प, सांप।

अरुस, अरुसा देखो।

अरे (सं० अव्य०) १ ए, ओ, देख, सुन। २ आश्चर्य, तअज्जुब, ओह, भगवान्। यह अव्यय सम्बोधन वाक्य विशेष होता है। क्रोध या आश्चर्यके समय और नीच व्यक्तिसे बोलते इस शब्द द्वारा सम्बोधन किया जाता है।

अरेणु (वे० त्रि०) १ रेणुरहित, वेधूल। (क्ली०) २ रेणुरहित वस्तु, धूलसे खाली चीज़, आकाश, आसमान।

अरेतस् (सं० स्त्रि०) वीजविहीन, बीज न रखनेवाला, वेतुख्म, जिसमें तुख्म न रहे।

अरेपस् (सं० स्त्रि०) रेपः पापं तच्चास्ति यस्य, नञ्-बहुव्री०। निष्पाप, पापशून्य, निर्मल, बेगुनाह, पाकौज़ा।

अरेरना (हिं० क्ति०) मलना, घिसना।

अरेरे (सं० अव्य०) अरे वीप्सायां हिर्भावः। अवे, ओवे। यह नीचकी बुलाने और क्रोध देखानेमें आता है।

अरैन—पञ्जाबके भेलम जिलेको एक जाति। इस जातिके संख्यामें कोई साढ़े पन्द्रह हजार लोग खेती-बारीका काम बहुत अच्छी तरह करते हैं। अरोक (सं० स्त्री०) रुच् दीप्तौ घञ्; रोकश्छिद्रं दीप्तिश्च, नञ्-बहुव्री० । १ छिद्रशून्य, बेसूराख। २ दीप्तिशून्या बेरौशनौ। (हिं० वि०) ३ रोक न रखनेवाला, जो रुकता न हो।

अरोकदत् (सं० त्रि०) अरोका निश्छिद्रा दन्ता अस्थ, बहुव्री० वा दन्तादेशः । १ सटे हुए दांत रखनेवाला, जिसके दांत सटा हुआ रहे। २ दीप्तिशून्य दन्त विशिष्ट, जिसके दांत काला रहे।

अरोकदन्त, अरोकदत् देखो।

अरोख, अरोष देखो।

अरोग (सं० त्रि०) नास्ति रोगोऽस्य, नञ्-बहुव्री० ।

१ रोगशून्य, लामज, जिसे बीमारी न रहे। (स्त्री०)

अरोगस्य भावः, अञ् । ३ आरोग्य, रोगका अभाव, तन्दुरुस्ती, बीमारीकी अदम मौजूदगी।

अरोगण (वे० त्रि०) अरोग देखो।

अरोगना, आरोगना देखो।

अरोगिता (सं० त्री०) खास्थ्य, तन्दुरुस्ती।

अरोगिन्, (सं० त्रि०) अरोग देखो।

अरोगी, अरोग देखो।

अरोग्य (सं० त्रि०) अरोग देखो।

अरोग्यता, अरोगिता देखो।

अरोच (हिं० पु०) अरुचि, नापसन्दी, बेखाहिशौ।

अरोचक (सं० पु०) न रोचयति प्रीणयति रुचिं-शुक्लं, नञ्-तत् । रोगविशेष, जिस रोगमें चूषा और इच्छा रहनेपर भी खाया न जाय, अरुचि, जिसमें खानेकी वस्तु सुस्वाद न लगे।

अरोचक अर्थात् अरुचि रोग खुद कोई स्वतन्त्र बीमारी नहीं है। यह दूसरे रोगका उपसर्ग मात्र है। स्त्रियोंको गर्भावस्थामें अरुचि होती है। नवज्वर, पुरातनज्वर, अजीर्णरोग, कास, कृमि प्रभृति अनेक रोगोंमें अरुचि घुसो है। क्रोध, शोक, मानसिक चिन्ता और आलसी स्वभाव ये भी अरुचिके प्रधान कारण हैं।

अरुचि होनेका कारण रोग प्रभृतिसे पाकयन्त्रमें व्यतिक्रम पड़ना है। पाकयन्त्रमें व्यतिक्रम होनेसे जिह्वा और मुखग्रन्थिका रस नहीं निकलता। भीतर आमरस, पैक्रियाटिक रस, पित्त एवं आंतका रस भी यथानियम बाहर नहीं होता। इसीसे कोई वस्तु खानेसे उसका परिपाक होना कठिन हो जाता है। वैद्यकग्रन्थमें अरोचक रोग प्रधानतः तीन श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है। यथा—वातिक, पैत्तिक और श्लेष्मिक। इसके सिवा आगन्तुक और त्रिदोष जनित अरुचि भी होती है।

सचराचर देखनेमें आता है, कि अरुचि होनेपर किसीके सुंहसे अन्न, किसीके सुंहसे लवणाक्त और किसीके सुंहसे तिक्तजल निकलता, शरीर दुर्बल और मन सर्वदा उद्विग्न बना रहता है। कोई काम करनेकी इच्छा नहीं होती। खानेको चीजमें या तो किसी प्रकारका दुर्गन्ध मालूम होता है या कोई स्वाद ही नहीं आता। किन्तु यह उपसर्ग होनेपर हमारे देशमें प्रायः सभी रोगी अमूल खाना पसन्द करते हैं।

अरोचकको चिकित्सा करनेमें पहली मूल रोगका प्रतीकार होना आवश्यक है। मूल रोग बना रहनेपर केवल आग्नेय औषध प्रयोग करनेसे कोई फल नहीं होता। अतएव जिस रोगके साथ अरुचि हो, उसकी उपयुक्त चिकित्सा करना कर्तव्य है। औषधोंमें एलोपैथीमतसे पेप्सिन् विशेष हितकर है। भोजनके पहले इसे तीन चार घेन खाकर पीछे आहार करना चाहिये। कुनैन ४ घेन, इपिकाक चूर्ण १ घेन, जैन्सपानका सार ८ घेन—इसकी चार गोलियां बना भोजनके पहले एक एक गोली खानेसे आहारमें रुचि उत्पन्न होती है।

वैद्यशास्त्रके मतानुसार वायुजनित अरुचिमें वस्त्रिक्रिया, पैत्तिक अरुचिमें विरेचन और श्लेष्माजनित अरुचिमें वमन करानेकी व्यवस्था है। अजवायिन, इमली, सोंठ, अमूलवेतस, दाड़िम, अमूलकुल, प्रत्येक दो दो तोला; धनिया, लवण, जीरा, दारुचीनी, प्रत्येक एक एक तोला; पीपल १००, मिर्च १००,

चीना चार पल—सब चीजोंको एक साथ पीसे। फिर थोड़ा थोड़ा चूर्ण भुँहमें रख धीरे धीरे निगलनेसे अरुचि रोग नष्ट होता है।

अरोचक रोग होनेपर रोगीको यथासम्भव व्यायाम और निर्मल वायुसेवन करना चाहिये। परन्तु ज्वर और कासादि रोग रहनेपर व्यायाम मना है। सहज ही परिपाक होनेवाला और पुष्टिकर द्रव्य भोजन करना उचित है। शरीर दुर्बल होनेके डर ज़बर्दस्ती अधिक भोजन करना कर्त्तव्य नहीं, कारण उससे उदरामय उठ सकता है।

अरोचकिन् (सं० त्रि०) अरुचि रोगसे पीड़ित, जिसे भूख न लगनेको बोमारो रहै।

अरोचमान (सं० त्रि०) दोसिगून्थ, धुंधला, जो चमकता न हो।

अरोचिष्णु, अरोचमान देखो।

अरोड़ (हं० वि०) वीर, बहादुर, कठुर।

अरोड़ा—पञ्चावकी कोई जाति। यह अपनेको खत्रीके बराबर समझती है।

अरोदन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ रोदनका अभाव, अशक्वारोकी अदममौजूदगी, जिस हालतमें न रोये। (त्रि०) नास्ति रोदनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ रोदनशून्य, जो रोता न हो।

अरोधन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ रोधाभाव, रोककी अदममौजूदगी। (त्रि०) २ आवरण रहित, बेपर्दा, जो खुला हो।

अरोध्य (सं० त्रि०) न रोध्यम्, नञ्-तत्। अवाध्य, वैरोक्य, मनमाना, जिसे कोई रोक न सके।

अरोपण (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ रोपणका अभाव, लगाये न जानेकी हालत। (त्रि०) नास्ति रोपणं यस्य, नञ्-बहुव्री०। रोपणशून्य, लगाया न जानेवाला।

अरोपन, अरोपण देखो।

अंरोर—सिन्धु प्रान्तके शिकारपुर जिलेकी रोहरी तहसीलका एक टूटा-फूटा गांव। यह रोहरीसे पूर्व ठाई कोस अक्षा० २७° ३८' उ० और द्राघि० ६८° ५८' पू० पर अवस्थित है। पहले यहां सिन्धुके हिन्दू नृप-

तियोंकी राजधानी थी, सन् ७११ ई०में मुसलमानोंने इसको उनसे छीन लिया। यह पहले सिन्धु नदके किनारे बसा था। ध्वंसावशेषमें आन्तम गोरकी मसजिद है। कालिका देवीको गुहाको हिन्दू पवित्र मानते और प्रति वर्ष धूमधामसे उसका मेला लगाते हैं।

अरोष (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ क्रोधाभाव, गुस्सेकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ क्रोधशून्य, वेगुस्सा, जिसे गुस्सा न हो।

अरोहन, आरोहण देखो।

अरोहना (हिं० क्ति०) आरोहण करना, चढ़ना।

अरोही, आरोही देखो।

अरौद्र (सं० त्रि०) न रौद्रम्, विरोधे नञ्-तत्।

१ भौषणभित्त, जो भयङ्कर न हो। २ सुन्दर आकृति, खूबसूरत। ३ रागद्वेषादिशून्य, खटखटसे बाहर। (पु०) ४ विष्णु।

अरौन—मध्य-भारतवाले ग्वालियर राज्यके गूना सूबेका एक परगना। यह परगना जागौरमें लगा है।

अर्क (सं० पु०) अर्च्यते असौ, अर्चं कर्मणि कः यद्वा अर्कयति उपतापयति, चुरा० अर्क कर्तरि अच्; अर्क्यते स्तूयते वा, कर्मणि घञ्। १ सूर्य, आफ़ताब। २ इन्द्र। ३ विष्णु। ४ पण्डित, इल्मदार शख्स। ५ काथ, काढ़ा। ६ ज्येष्ठ, बड़ा। ७ रविवार। ८ अन्न, अनाज। ९ वज्र। १० मन्द। ११ वृक्ष, दरखत। १२ सप्तमी तिथि। १३ उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र। १४ द्वादश संख्या। १५ त्रैलोक्यडम्बर रस। १६ किरण, विद्युत्प्रभा। १७ अग्नि, आग। १८ वृक्ष विशेष, आक, मन्दार। यह श्वेत और रक्त भेदसे दो प्रकारका होता है। इसका गुण कटु, उष्ण, वातजित्, दीपनीय, शोक, व्रण, कण्डू, कुष्ठ, कृमि, कफ, अर्श, विष, रक्त, पित्त, गुल्म, शोथादि रोगका नाशक है। १९ ताम्र। २० चिन्तामणिरस। २१ स्फटिक। २२ रक्त पुष्प। (हिं०) २३ अरक, रस। (त्रि०) २४ अर्चनीय, परस्तिथ किये जाने काबिल।

अर्ककला (सं० स्त्री०) शारदातिलक ग्रन्थोक्त कला

विशेष । इसका प्रयोजन सूर्यकी उपासनामें पड़ता है । संख्यामें यह बाहर रहती है । इसका रूप पोत और अङ्ग ककारादिसे डकार पर्यन्त वर्णभूषित है । बारहो कलाका नाम तपिनी, तापिनी धूम्रा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, बोधिनी, धारिणी और चमा है ।

अर्ककान्ता (सं० स्त्री०) अर्कः सूर्यः सूर्यकिरणो वा कान्तः प्रियो यस्याः, बहुव्री० । १ आदित्यभक्ता, कनफटी, हुलहुल । २ सूर्यप्रिया । ३ संज्ञा, नाम । ४ छाया, साया । ५ पद्म, कमल ।

अर्ककीर्ति—जैन गुरु विशेष । बम्बई प्रान्तवाले कनारौ जिलेके मालखेड़ा-राष्ट्रकूट नृपति तृतीय गोविन्दने विमलादित्यके शनिग्रहको शान्तिको कुछ भूमि जैन मन्दिर बनवानेके लिये ताम्रफलकपर लिख इनके नाम उत्सर्गकी थी । ताम्रफलकपर शक संवत्के ज्येष्ठ शुक्लपक्षकी दशमी तिथि तथा सोमवार अङ्कित है ।

अर्कचौर (सं० स्त्री०) आकका दूध, मन्दारका दूध । यह कृमि और व्रण नाशक तथा कुष्ठ, अर्श, उदर-रोगादिमें हितकर है । (राजनिषण्ड)

यह तिक्त, लवण, उष्णवीर्य (गर्म) लघु, स्निग्ध, गुल्म, उदर, कुष्ठ हरण करनेवाला तथा विरेचनमें हितकारक है । (चक्रपाणिदत्तकृत संहिता)

अर्कचेत्र (सं० स्त्री०) अर्कस्य चेत्रम्, ६-तत् । १ सिंहराशि । २ भाद्र मास । ३ उड़ीसा प्रान्तका तीर्थ विशेष ।

अर्कगन्धिका (सं० स्त्री०) चौरविदारौ, कृष्ण भूमि कूषाण्ड, काला बिलारीकन्द ।

अर्कचन्दन (सं० पु०-स्त्री०) अर्कस्य प्रियः प्रियं वा चन्दनः चन्दनं वा, शाक० तत् । रक्त चन्दन, लाल चन्दन ।

अर्कच्छन्द (सं० स्त्री०) अर्कमूल, आककी जड़ ।

अर्कज (सं० पु०) अर्कज्जायते, अर्क-जन-ड, ५-तत् । १ यम । २ शनि । ३ अश्विनीकुमारद्वय । ४ सुग्रीव, ५ कर्ण । उपरोक्त व्यक्ति सूर्यके पुत्र होनेसे अर्कज कहते हैं ।

अर्कजा (सं० स्त्री०) १ यमुना । २ तपती । उप-रोक्त नदी सूर्यकी कन्या होनेसे अर्कजा कहाती हैं ।

अर्कतनय (सं० पु०) ६-तत् । १ कर्ण । २ वैव-श्वतमनु । ३ सावर्णिमनु ।

अर्कतनया, अर्कजा देखो ।

अर्कतैल (सं० स्त्री०) कुष्ठाधिकारका तैल विशेष, कोढ़का कोई तैल । ८ पल कड़वा तैल, ८ पल आकके पत्तेका रस, १ पल निशा और १ पल मनःशिला एकमें घोटनेसे यह तैल बनता है । (सारकौमुदी)

अर्कत्व (सं० स्त्री०) दौमि, चमक ।

अर्कत्विष् (सं० स्त्री०) प्रकाशका किरण, सूर्यकी दौमि, आफताबकी रोशनी ।

अर्कदल (सं० पु०) १ आदित्यपत्र चुप, कनफ-टिया । २ अर्कवृक्ष, आकका पेड़ ।

अर्कदिन (सं० स्त्री०) सौर वार, सूर्यका दिन ।

अर्कदुग्ध (सं० स्त्री०) अर्कस्य तन्नामक वृक्षस्य दुग्धं दुग्धवत् शुभ्रत्वात् निर्यासः, ६-तत् । मन्दारका रस, अकोड़ेका दूध ।

अर्कनन्दन, अर्कज देखो ।

अर्कनयन (सं० पु०) अर्कः सूर्यो नयनं यस्य, बहुव्री० । विराट् पुरुष । पुराणमें लिखते, कि विराट् पुरुषके सूर्य, चन्द्र और अग्नि यह तीन नेत्र हैं ।

अर्कनामन् (सं० पु०) अर्क इति नाम यस्य, बहुव्री० । रक्ताक, लाल अकोड़ेका पेड़ ।

अर्कनामा, अर्कनामन् देखो ।

अर्कपत्र (सं० पु०) अर्कवत् प्रशस्तं पत्रं यस्य, बहुव्री० । १ अर्क वृक्ष, अकोड़ेका पेड़ । २ आदि-त्यपत्रचुप, कनफटिया । (स्त्री०) अर्कस्य पत्रम्, ६-तत् । ३ अर्क वृक्षका पत्र, अकोड़ेका पत्ता ।

अर्कपत्रा (सं० स्त्री०) १ ईश्वरमूल वृक्ष, लता विशेष । यह विषका औषध होती है । २ सुनन्दा । ३ अर्कमूल ।

अर्कपत्रिका, अर्कपत्रा देखो ।

अर्कपत्री, अर्कपत्रा देखो ।

अर्कपर्ण, अर्कपत्र देखो ।

अर्कपर्णिका (सं० स्त्री०) माषपर्णी ।
 अर्कपाद (सं० पु०) १ सूर्यकान्तमणि, आतशी
 शीशा । २ निम्बवृक्ष, नीमका पेड़ ।
 अर्कपादप (सं० पु०) पादैर्मूलैः पिबति पादेभ्यः
 सूर्यकिरणेभ्यः पाति रक्षति वा, पा-क पादपः, अर्कः
 अर्कवृक्ष इव उग्ररसः पादपः, शाक० तत् । १ निम्ब-
 वृक्ष, नीमका पेड़ । कर्मधा० । २ अर्कवृक्ष, अर्को-
 ढेका पेड़ ।
 अर्कपुत्र, अर्कज देखो ।
 अर्कपुष्पा (सं० स्त्री०) चौरकाकोली, दूधदार
 कन्द । यह हिमालय पर्वतपर उत्पन्न होती है ।
 अर्कपुष्पिका (सं० स्त्री०) १ सूर्यवक्त्रो, अड़डुल ।
 २ चौरवृक्ष, चौरकाकोली, रक्तापराजिता ।
 अर्कपुष्पी, अर्कपुष्पिका देखो ।
 अर्कप्रभागुटिका (सं० स्त्री०) रसायनाधिकारमे
 रसको कोई गोली । इसका विधान इस तरह लिखा
 है—शुद्ध पारा २ निष्क, शुद्ध ताम्रचूर्ण १ निष्क—
 इसको चिन्तामूल वा फलके काथमे १ ग्रहर तक
 अच्छेतरह खल्लमें विगड़ान कर, गोलाकार बनाकर,
 तक्र और चिन्ताफलके साथ दोलायन्त्रमें चार
 ग्रहर पर्यन्त पाक कर, पीछे वाटिका बनानी चाहिये ।
 इसको १ पैसे भर पलाशबीजका तैल और गौका
 दूध मिलाकर एक वर्ष सेवनकरनेसे मनुष्य दश
 हस्तीके समान बलयुक्त बन सूर्य-जैसा प्रभाशाली हो
 जाता है । (प्रयोगावली)
 अर्कप्रिया (सं० स्त्री०) अर्क प्रीणाति, अर्क-प्री-क ।
 १ आदित्यभक्ता, कनफटिया । २ जवापुष्प, जवांसेका
 फूल । ३ सूर्यप्रिया संज्ञा, छाया प्रभृति ।
 अर्कबन्धु (सं० पु०) अर्कस्य बन्धुः स्ववंशीयत्वात्
 विद्यावत्त्वाद्वा, अर्क-बन्धु-उ । १ गीतम । यह इच्छाकु-
 कुलोद्भव शाक्यवंशीय बुद्ध रहे । 'गीतमथाका' बन्धु-य' ।
 (अमर) अर्को बन्धुरस्य, बहुव्री० । २ पद्म । कवि
 कहता, कि सूर्यको देखनेसे पद्म फूलता इसीसे
 अर्कबन्धु पद्मका नाम है ।
 अर्कबान्धव, अर्कबन्धु देखो ।
 अर्कभ (सं० स्त्री०) अर्कस्य पुत्रो, अर्कभ-पुत्र ।

नक्षत्रम्, शाक० तत् । १ सूर्याक्रान्त नक्षत्र, सूर्यके
 साथ एक ही राशिमें पड़ा हुआ नक्षत्र । ६-तत् ।
 २ सूर्यस्वामिक सिंहराशि । ३ उत्तरफल्गुनी नक्षत्र ।
 (चि०) अर्कस्येव भा दीप्तिर्यस्य, बहुव्री० ।
 ४ तेजस्वी, चमकदार । ५ रक्तवर्ण, सुद्ध, लाल ।
 अर्कभक्ता (सं० स्त्री०) अर्कस्य अर्कं वा भक्ता आसक्ता
 अर्ककिरणसम्बन्धेन स्वसौन्दर्यात् । १ कनफटिया
 लता । २ ब्राह्मी । ३ सूर्यकी उपासना करनेवाली स्त्री ।
 अर्कभूति (सं० स्त्री०) १ ताम्रभस्म, ताँविका कुश्ता ।
 यह कृमि, कफ, मेह, पित्त, और मनोविकारादिका
 नाशक होती है । २ चौर, ताम्ररस ।
 अर्कमण्डल (सं० स्त्री०) सूर्यका वृत्त, आपताबका
 दायरा ।
 अर्कमूर्तिरस (सं० पु०) रसविशेष, यह रस सान्निपातिक
 ज्वरपर प्रयोग किया जाता है । इसमें इतने द्रव्य
 दिये जाते हैं,—लोहा ८ भाग, पारा २ भाग, गन्धक
 द्विगुण, षोडशांश विष, यह सब द्रव्य एकत्र खूब
 घोंट कर अर्कमूर्तिरस बनाया जाता है । इसको
 त्रिदोषदावानल भी कहते, जब उक्त द्रव्य ताम्र-
 पात्रमें रखते और कागजी नौबू पित्तवर्ग (मत्स्य,
 महिष, मयूर, मृग, अश्व इन सबका पित्त पित्तवर्ग
 कहाता है), कण्टकारी, एवं आद्रकके रसमें हल
 करके बनाते हैं । (मेषन्यरवावली)
 अर्कमूल (सं० पु०) अर्कं सर्पनिवारणे प्रशस्तं मूलं
 यस्य, बहुव्री० । ईश्वरमूल, अहिगन्ध । इसका मूल सर्प
 एवं वृश्चिकदंश पर उपकार करता है । उसे कूट पीस
 कर पिलाते और चत पर भी लगाते हैं । उसके
 सेवनसे स्त्रीका मासिक धर्म खुल जाता है । विशू-
 चिका, अतीसार प्रभृति रोगमें भी उसे कालो मिर्चके
 साथ पीसकर पिला देते हैं । पत्तीके रसमें कुछ नशा
 रहता है । पेटकी बीमारीमें अर्कमूलकी छाल
 बहुत फायदा पहुँचाती है । इसका रस तौससे सौ
 बूँद तक देना चाहिये । (स्त्री०) अर्कमूला ।
 अर्करेतोज (सं० पु०) अर्कस्य रेतसः जायते, अर्क-
 रेतस्-जन-उ । सूर्यके पुत्र विशेष । इनका दूसरा
 नाम वैवस्वत, भवण और सूर्यवाहन है ।

अर्कलवण (सं० स्त्री०) अर्कचार, किसी किस्मका नमक।

अर्कलूष (सं० पु०) लूषयति यच्चे पशून् हिनस्ति, अर्कः पण्डितस्यासौ लूषयेति कर्मधा०। ऋषिविशेष।

अर्कवत् (सं० त्रि०) विद्युत् प्रभाविशिष्ट, जिससे बिजलीकी चमक निकले।

अर्कवर्ष (सं० पु०) सौर वत्सर।

अर्कवल्लभ (सं० पु०) अर्कस्य वल्लभः प्रियः अर्क-पूजाप्रशस्तरत्नवर्णपुष्पत्वात्। १ बन्धुक वृक्ष, अड़-हुलका पेड़। (पु० स्त्री०) अर्को वल्लभो यस्य, बहुव्री०। २ पद्म।

अर्कवल्लो (सं० स्त्री०) आदित्यभक्ता, अड़हुल।

अर्कविवाह (सं० पु०) अर्कस्य कन्यात्वेन कल्पितस्य विवाहः, ६-तत्। द्वितीय विवाह सिद्धिके निमित्त अर्क वृक्षकी कन्या मानकर विवाह। तीसरा विवाह करनेसे पहले अर्कोड़ेके साथ विवाह करना चाहिये।

(विधानपारिजात)

अर्कवेद, अर्कवेध देखो।

अर्कवेध (सं० पु०) अर्कस्य अर्कवृक्षस्येव वेधो वेधनं यत्र। तालीशपत्र वृक्ष। जिस मकानका सहन पूर्व-पश्चिम लम्बा पड़ता, वह भी अर्कवेध कहा जाता है।

अर्कव्रत (सं० पु०-स्त्री०) अर्कोपासनार्थं व्रतं व्रतो वा, ६-तत्। १ माघ मासको शुक्ल-सप्तमीको किया जाने-वाला व्रतविशेष। २ आरोग्यसप्तम्यादि सूर्यव्रत।

अर्को यथा पृथिव्या रसं गृह्णाति तद्वत् राज्ञः करग्रहण-रूपं व्रतम्। ३ करग्रहण, राजस्वग्रहण, खिराजका लेना। सूर्यकी तरह जलरूपी धन लेकर पीछे उसे मेघरूपी दानसे दे देना राजाका अर्कव्रत कहा जाता है।

अर्कशोक (वै० पु०) किरणकी दीप्ति, शुवाकी चमक।

अर्कसाति (वै० स्त्री०) पद्याविष्कार, कविताकी उत्तेजना, शायरीका ज़ोर।

अर्कसुता (सं० स्त्री०) १ कृष्णापराजिता, काली-विष्णुकान्ता। २ यमुना।

अर्कसुधा (सं० स्त्री०) अर्कोत्पसुधा, अर्कोड़ेका दूध। यह गुल्मरोगको मिटाती है। (वेद्यकनिषधु)

अर्कसूनु, अर्कज देखो।

अर्कसोदर (सं० पु०) अर्कस्य इन्द्रस्य सोदरभ्रातेव उपकारकत्वाद्। १ ऐरावतहस्तौ। २ भयानक व्यक्ति, खौफनाक शख्स, जिसे देखनेसे डर लगे।

अर्कहिता (सं० स्त्री०) ६-तत्। १ अर्कभक्ता, अड़हुल। (त्रि०) २ सूर्यकी हितकार, आफताबको फायदा पहुँचानेवाली।

अर्कादिगण (सं० पु०) गणविशेष। अर्क, अलर्क, नाग-दन्ती, विशल्या, भार्गी, रास्ना, इन्द्रपुष्पी, वृश्चिकालो, करञ्ज, प्रत्यक्पुष्पी, अलवणा, तापसवृक्ष, इस सबको अर्कादिगण कहते हैं। यह कफ, मेद, विष, कुष्ठ, व्रण प्रभृति रोगोंको शोधन तथा दमन करनेवाला है।

अर्काश्मन् (सं० पु०) अश्नोति व्याप्नोति संहन्ति वा; अर्क-अश-मनिन्, शाक० तत्। १ सूर्यकान्तमणि, आतशी शीशा। यह पत्थर सूर्यका किरण पड़नेसे जलने लगता है। अर्क इव रक्ता अश्मा, शाक० तत्। २ अरुणोपल, लाल, चुन्नी।

अर्काश्मा, अर्काश्मन् देखो।

अर्काक्ष (सं० पु०) १ तालीशपत्र। २ सूर्यकान्तमणि, आतशी शीशा। ३ अर्कवृक्ष, अर्कोड़ेका पेड़। अर्किन् (वै० त्रि०) अर्चतेऽनेन मन्त्रेण, अर्च करणे घञ् सोऽस्यास्ति इति। अर्चनसाधन मन्त्रयुक्त, जिसमें अर्चनसाधन मन्त्र रहे।

अर्को (सं० पु०) मयूर, मोर।

अर्कोय (सं० त्रि०) अर्कसम्बन्धीय, आफताबसे तात्तुक रखनेवाला।

अर्कोन्दसङ्गम (सं० पु०) अर्कश्च इन्दुश्च तयोः सङ्गमो मेलनं यत्र, बहुव्री०। अमावस्या तिथि, सूर्य और चन्द्रका मिलन।

अर्केश्वररस (सं० पु०) रस विशेष। यह वात-व्याधिके उपशमनार्थ दो प्रकारका होता, द्वितीय रक्त-पित्त और चतुर्थ कुष्ठको शमन करता है। पहला इस प्रकार बनाया जाता है—पारा ४ भाग और गन्धक १० भाग ताँवेके पात्रमें निम्नाभिमुख बन्दकरके ऊपर भस्मसे भरा हुआ १ मट्टीका बर्तन रखे। फिर

अच्छो तरह यत्नपूर्वक १ प्रहर तक उसे आगमें जलाना चाहिये । आगसे निकालने और शीतल होने पर ताँबिका बर्तन खोल पारे और गन्धकको खूब चूर्ण करे । पीछे मन्दारके दूधका पुट दे दे कर १० बार खल्लमें घोंटनेसे अर्कोश्वररस तैयार होता है । (रसेन्द्रसारसंग्रह)

दूसरा प्रकार यह है ।—पारेसे द्विगुण गन्धकको खुद तपाये हुए ताम्रचक्रसे रगड़ और चक्रमें लगी हुएको भी ले एकत्र करे । पीछे सबको चूर्ण बना मन्दारके दूध और त्रिफलाके जलका पुट दे दे १२ बार खल्लमें घोंटनेसे यह तय्यार होता है । इसकी मात्रा २ रत्ती है ।

तीसरा प्रकार—पारद, मृतताम्र, मृत-अश्वक, माक्षिक इन सबको गुडूचीके रसमें घोंट, पुट बना, और आगमें डालकर २१ बार पकानेसे यह तैयार होता है । इसको वासाके दूध और विदारोकन्दके साथ ४ रत्ती प्रमाण प्रतिदिन सेवन करना चाहिये ।

(रसेन्द्रसारसंग्रह)

चौथा प्रकार—पारा ४ पल, गन्धक १२ पल ताम्रको चक्रिका रसके ऊपर एक शरावक दे, मट्टीके पात्रमें रख, भस्मसे भर, उक्त पात्रको खूब दृढ़ बन्द और आगमें दो प्रहर पकाकर निकाल ले । पीछे ठण्डा होनेपर सबको चूर्ण बना, १२ बार मन्दारके दूधमें सान और पुटमें बन्द करके पकाना चाहिये । पुनः त्रिफला, चित्रक, और भृङ्गराजके रसमें तीन बार घोंटनेसे यह तय्यार होता है । इसका नाम अर्कोश्वररस है । यह रक्तमण्डल कुष्ठका विघातक होता है । (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अर्कोत्तमा (सं० स्त्री०) ववैरी, बबई ।

अर्कोपल, अर्काश्वन् देखो ।

अर्क्य (सं० त्रि०) अर्क कर्मणि वा यत् । अर्चनौय, परस्तिशक काविल । २ स्तवनीय, तारीफ करने लायक ।

अर्गजा, अरगजा देखो ।

अर्गड, अर्गल देखो ।

अर्गट (सं० पु०) कण्टकवृक्षविशेष, आर्तगल,

कोई कंटोली भाड़ी । यह तुवर, शीतवीर्य, व्रण-विशोधन तथा व्रणरोपण होता और इसका फूल तिक्त, ज्वरपित्तघ्न एवं कफरक्तके रोग नाशकरनेवाला है । (वैद्यकनिघण्टु)

अर्गल (सं० स्त्री०) अर्जते ऋजुतया तिष्ठति, ऋज-अलच् न्यङ्गादित्वात् कुत्वम् । १ कपाट बन्द करनेका काष्ठदण्ड, किवाड़ लगानेको लकड़ीका डण्डा, बेंड़का । २ प्रतिबन्ध, रोक । ३ कपाट । ४ चिटखनी । ५ कल्लोल । ६ रंगदार बादल । यह सुबह-शाम देख पड़ता है । ७ मांस, गोश्त । ८ देवीमाहात्म्य पाठके पहलेका स्तोत्र विशेष । मार्कण्डेयने ब्रह्मासे पूछा था—

“ब्रह्मन् केन प्रकारेण दुर्गामाहात्म्यमुत्तमम् ।

शीघ्रं सिध्यति तत् सर्वं कथयस्व महाप्रभो ॥”

हे महाप्रभो ! दुर्गामाहात्म्य किसतरह पाठ करनेसे शीघ्र फलप्रद होता है ? ब्रह्माने कहा,—

“अर्गलं कीलकचादी पठित्वा कवचं पठेत् ।

जपेत् सप्तसतीं पश्चात् क्रम एव शिवोदितः ॥”

शिवने बतया है, पहले अर्गल एवं कीलक और पीछे कवच पढ़के सप्तसतीको पाठ करना चाहिये । (स्त्री०) अर्गला, अर्गलो ।

अर्गलिका (सं० स्त्री०) चिटखनी, बिह्ला, दरवाजा बन्द करनेका छोटा खटका ।

अर्गलित (सं० स्त्री०) अवरोधसे आवद्ध, चिटखनी-से बंधा हुआ ।

अर्गलो (हिं० स्त्री०) मिश्र, श्याम प्रकृति देशकी भेड़ । (सं०) अर्गल देखो ।

अर्गलीय (सं० त्रि०) प्रतिबन्धन-सम्बन्धीय, खटके-से तालुक रखने वाला ।

अर्गल्य, अर्गलीय देखो ।

अर्गवध (सं० पु०) पृषो० साधुः । आरम्बध वृच, लटजीरेका पेड़ ।

अर्घ (सं० पु०) अर्घ्यते क्रयवस्तुनः मूल्यत्वेन दौयते अर्घं कर्मणि घञ् । (रंजायामर्घोऽर्घ्येण । पा ७।३।३ स्व वातिका) १ मूल्य, दाम, जो रुपया-पैसा कोई

चौख खरीदनेको दिया जाता हो । अर्घ पूजायां

करणे घञ् न्यङ्गादित्वात् कुत्वम् । २ पूजाका उपचार
दूर्वा, तण्डुल प्रभृति । ३ पूजनोपचार अर्पण ।
इसमें जल, दुग्ध, कुशाग्र, दधि, सर्पप, तण्डुल और यव
पड़ता है । ४ जलदान, सामने पानीका छोड़ना ।
५ हस्तप्रक्षालनार्थ जल प्रदान, हाथ धोनेको पानीका
दिया जाना । ६ हस्तप्रक्षालन-जल, हाथ धोनेका
पानी । ७ मुक्ताविशेष, कोई मोती । ८ उपहार,
भेंट, चढ़ावा ।

अर्घट (सं० क्ली०) भस्म, कुशता ।

अर्घटान (सं० क्ली०) अर्घ समर्पण, भेंटका चढ़ावा ।

अर्घपात्र (सं० पु०) अर्घ देनेका बरतन, अर्घा ।

यह ताँबेका होता और देवताको जल देनेके काम
आता है ।

अर्घवलाजल (सं० क्ली०) मूल्य निर्धारण, दामका
निर्द्ध, वाजिव कीमत, भावको घटा-बढ़ो ।

अर्घसंख्यापन (सं० क्ली०) वस्तु-मूल्य निर्धारण,
चौजके दामका निर्द्ध । सौदागरसे चौजका दाम
बँधना राजाका काम है । यह सप्ताह वा पक्षके
मध्यमें एक बार अवश्य होना चाहिये ।

अर्घा (हिं० पु०) १ जलहरी । २ अर्घपात्र ।

अर्घाहं (सं० त्रि०) अर्घ देने योग्य ।

अर्घाश (सं० पु०) अर्घः पूजोपचार विशेषोऽस्त्यस्य
भक्तदेयत्वेन, अर्घ-इनि-ईश, कर्मधा० । सकल देव-
ताके मध्य पूज्यतम महादेव ।

अर्घ्य (सं० त्रि०) अर्घ्यते पूज्यते अर्घ-यत् न्यङ्गादि
कुत्वम्-अर्घमर्हति अर्घ-यत् वा । १ पूजनीय । अर्घाय देयं
यत् । २ पूजा करनेको दूर्वा जल प्रभृति उपकरण ।
देवताकी पूजा करनेके समय पाद्य अर्घ्य देकर
पूजा होती है । उस समय घरमें अतिथि वा पूजनीय
व्यक्तिके आनेसे गृहस्थ लोग पाद्य अर्घ्य देकर उसकी
पूजा करते हैं ।

(क्ली०) अर्घं मूल्यमधिक मर्हति यत् । ३ जरत्कारु
तपोवनका वृक्षजात मधु । अतिशय मूल्यवान् होनेके
कारण इसे अर्घ्य कहते हैं ।

अर्घ्यके लिये जलदानकी व्यवस्था सामान्य और
विशेष भेदसे दो प्रकार है । सामान्य अर्घ्यका नियम

यह है,—प्रोक्षणी पात्रको बाईं ओर पहले एक
त्रिकोणवृत्त बनाये । पीछे उसमें आधारशक्तिकी
पूजा करनी होती है । आधारशक्तिकी पूजा हो जाने
पर पात्रको अस्त्रमन्त्रसे धो डाले । धोनेके बाद प्रण-
वादि मन्त्र उच्चारण-पूर्वक उस पात्रमें जल भरना
आवश्यक है । उसके अनन्तर अङ्गुशमुद्राद्वारा
'गङ्गा च यमुने' इत्यादि मन्त्रपाठ करते करते सूर्यमण्डलसे
तीर्थको आवाहन करे । अन्तमें प्रणवमन्त्र द्वारा गन्ध-
पुष्पादिसे पूजा करके धेनुमुद्रा दिखाना और आठ वा
दश बार प्रणव पाठ करना चाहिये । यही सामान्य
अर्घ्य है ।

विशेष अर्घ्यका नियम यह है,—कोषिकी बाईं
ओर त्रिकोणमण्डल बनाकर उसके ऊपर त्रिपदिका-
को रखे । उसके बाद शङ्खको अस्त्रमन्त्रसे धोकर उस
त्रिपदिकाके ऊपर रख एवं उलटी ओर मातृका
मन्त्र पढ़ और गन्धपुष्पादि डाल शङ्खमें जल भर दे ।
इन सब प्रक्रियायोंके समाप्त हो जाने पर त्रिपदिकासे
अग्निमण्डलकी, शङ्खसे सूर्यमण्डलकी एवं जलसे
सोममण्डलकी पूजा करनी पड़ती है । उसके बाद
अङ्गुशमुद्रा द्वारा सूर्यमण्डलसे गङ्गा प्रभृति तीर्थका
आवाहन करे । गङ्गादि तीर्थका आवाहन हो जाने
पर मन्त्रपाठपूर्वक हृदयसे देवताका आवाहन करना
पड़ता है । कूर्चमन्त्र द्वारा अवगुणहन कर अस्त्रमन्त्र
द्वारा गालिनोमुद्रा दिखा एकबार उस जलको देखे ।
अन्तमें अङ्गन्यास मन्त्र द्वारा विभक्तकर गन्धपुष्पादिसे
देवताको पूजा करनी होती है । देवताकी पूजा
समाप्त हो जाने पर मत्स्यमुद्राद्वारा उस पर हाथ
ढक दे एवं आठ बार मूलमन्त्र जपे । सबके अन्तमें
धेनुमुद्रा दिखाकर शङ्खसे थोड़ासा जल कोषमें डाल
देना चाहिये ।

अर्घ्यतस् (सं० अव्य०) उचित मूल्यपर, वाजिव-
दामसे ।

अर्घ्याट (सं० पु०) शुक्रला, तालमखाना ।

अर्घ्याति, अर्घ्याट देखो ।

अर्घ्याल, अर्घ्याट देखो ।

अर्घ्याहं (सं० पु०) मुमुक्षुन् वृक्ष ।

अर्चक (सं० त्रि०) अर्चति अर्चयति वा, अर्च-खुल्।
पूजक, परस्तिश करनेवाला। (स्त्री०) टाप्-इत्वम्।
अर्चिका।

अर्चत्रि (वै० त्रि०) शब्दकर, आवाज निकालने-
वाला, जो गरज रहा हो।

अर्चत्रय (वै० त्रि०) अर्चनमर्हति यत्, अर्च भावे
अत्रि। पूजनोय, पूजने योग्य, जो परस्तिश किये
जानेके काबिल हो।

अर्चद्भूम (वै० त्रि०) दौसिमान धूमविशिष्ट, जिसके
धुवां चमकदार रहे।

अर्चन (सं० स्त्री०) अर्च भावे ल्युट्। पूजन,
परस्तिश।

अर्चना (सं० स्त्री०) चुरा० अर्च-युच्, टाप्। पूजा,
परस्तिश।

अर्चनानम् (वै० पु०) ऋषि विशेष।

अर्चनीय (सं० त्रि०) अर्चते, अर्च-अनीयर्। पूज-
नीय, परस्तिश पाने काबिल।

अर्चमान, अर्चनीय देखो।

अर्चा (सं० स्त्री०) अर्च आधारे अ। १ प्रतिमा,
मूर्ति। 'अर्चा प्रतिमा'। (आर्त) भावे अ। २ पूजा,
परस्तिश। 'अर्चा पूजाप्रतिमयोः'। (विभ)

अर्चावत् (सं० त्रि०) पूजित, जो परस्तिश किया
गया हो।

अर्चाविडम्बन (सं० स्त्री०) मिथ्या पूजा, झूठी
परस्तिश।

अर्चि (सं० स्त्री०) अर्च-इन्। १ अग्निशिखा,
आगकी लपट। २ कान्ति, चमक।

अर्चित (सं० त्रि०) अर्चि-क्त। १ पूजित, परस्तिश
पाया हुआ। २ भक्तिसे प्रदत्त, जो इज्जतसे दिया
गया हो।

अर्चितिन् (सं० चि०) सम्मान देता हुआ, जो
इज्जत कर रहा हो।

अर्चिष्ठ (सं० पु०) पूजक, परस्तिश करनेवाला
शख्स।

अर्चिन् (वै० त्रि०) पूजा करता हुआ, जो परस्तिश
कर रहा हो। २ दौसिमान, चमकदार।

अर्चिनी (सं० पु०) १ प्रकाशका किरण, रोशनीकी
शुवा। २ व्यक्तिविशेष, किसी शख्सका नाम।

अर्चिनेत्राधिपति (सं० पु०) यक्ष विशेष।

अर्चिमत् (सं० त्रि०) दौसिमान, चमकदार।

अर्चिमान् (सं० पु०) व्यक्तिविशेष। (त्रि०)
अर्चिमत् देखो।

अर्चिमाख्य (सं० पु०) महर्षि मरीचिके पुत्र।
वाल्मीकिने इन्हें बन्दर बताया है।

अर्चिरादिमार्ग (सं० पु०) अर्चिरादिभिस्तदभि-
मानिदेवैः उपलक्षितो मार्गः, शाक० तत्। देवतादिके
गमनागमनका उत्तर पथ, उत्तरकी जिस राह
देवता आये-जायें।

अर्चिवत् (वै० त्रि०) दौसिमान, भमकते हुआ।

अर्चिषत् (सं० पु०) अर्चिरस्य मतुप्। १ सूर्य।
२ अग्नि। ३ अग्निदेव। (त्रि०) ४ दौस, चम
कीला।

अर्चिषती (सं० स्त्री०) १ अग्निपुरी। २ बौद्ध
मतानुसार—दशमें एक पृथिवी।

अर्चिषान्, अर्चिषत् देखो।

अर्चिस् (सं० स्त्री०) अर्चते अर्च्यते, अर्च-इसि।
१ शिखा, चोटो। 'अर्चिर्हेतिः शिखा स्त्रियाम्।' (अमर)
२ कृशाश्वकी पत्नी और धूमकेतुकी माता। (पु०)
३ मयूख, किरण। 'अर्चिमयूखशिखयोः।' (हम) ४ अग्नि,
आग। (स्त्री०) ५ दौसिमान, चमक-दमक।
'ज्वालाभासोर्नपुंसर्चिः।' (अमर)

अर्च्य (सं० त्रि०) अर्चितुमर्हम्, भादि अर्च-खत्,
चुरा० अर्च यत्, ऋच स्तुती खत्, वा। १ पूजनोय
अर्चनीय, स्तुत्य, परस्तिशके काबिल, जो तारीफ़के
काबिल हो। 'तमर्च्यभारादभिवर्तमानम्।' (ख२।१०)
(अव्य०) २ पूजकर, परस्तिशके साथ।

अर्ज (अ० स्त्री०) १ प्रार्थना, निवेदन। २ आयतन,
चौड़ाई।

अर्ज-हरसाल (अ० स्त्री०) राजकोषमें धन पहुचाने-
का आज्ञापत्र, जिस कागज़के जरिये रुपया सरकारी
खजानेमें दाखिल करें।

अर्जक (सं० पु०) अर्जयति निष्पादयति सूत्राणि

वस्त्राणि वा स्वजाततूलेन, अर्ज—णिच्-खुल् ।
१ कार्पास वृक्ष, कपासका पेड़ । २ क्षुद्र तुलसीवृक्ष-
भेद, बबयी । ३ श्वेत वर्वरौ, सादी बबयी । ४ श्वेत
पलाश वृक्ष, सफेद टेसूका पेड़ । (त्रि०) अर्जति
अर्थान्, अर्ज-कर्तरि-खुल् । ५ उपार्जक, पैदा करने-
वाला, जो रुपया कमाता हो ।

अर्जकर्म (सं० पु०) असन वृक्ष, सज, असना ।

अर्जदायक (अ० स्त्री०) निवेदनपत्र, दरखास्त ।

अर्जन (सं० स्त्री०) अर्ज भावे ल्युट् । १ स्वहेतुभूत
व्यापार विशेष, उपार्जन, अपने अपने कामकी
पैदायश । २ संग्रह, धरोहर । मनुने सात प्रकारके
धनलाभको धर्मसङ्गत अर्जन बताया है,—

“सप्तविधागन्ताधन्या दायी लाभः क्रयो जयः ।

प्रयोगः कर्मयोगश्च सत्प्रतिग्रह एव च ॥” (मनु १०।११५)

पेढक धन, गच्छित धन, (जो धरोहर कोई रखके
मर जाये और जिसका दूसरा दावेदार न हो) बन्धु-
बान्धव कर्तृक दत्त धन और मूल्य द्वारा क्रीत वस्तु
ब्राह्मण प्रभृति चार वर्णके पक्षमें धर्मसङ्गत अर्जन है ।
दूसरेको जीत जो धन मिलता, चतुरियके पक्षमें वह भी
धर्मसङ्गत अर्जन होता है । व्याज, कृषि, बाणिज्य
प्रभृतिसे जो धन आता, वह वैश्यके ही पक्षमें धर्मानुगत
अर्जन कहा जाता है । सत्प्रतिग्रह ब्राह्मणके पक्षमें धर्म-
सङ्गत अर्जन है । फिर ब्राह्मण याजन और अध्यापनसे
जो धन पाता, वह भी धर्मसङ्गत अर्जन ही कहा जाता है ।
शूद्र एवं सङ्कर जातिके पक्षमें दास्यवृत्ति द्वारा प्राप्त
धन धर्मसङ्गत अर्जन होता है ।

अर्जनीय (सं० त्रि०) १ प्राप्तव्य, हासिल करने
काबिल । २ संग्रहणीय, इकट्ठा करने लायक ।

अर्जमा (हिं०) अर्जना देखो ।

अर्जित (सं० त्रि०) १ उपार्जन किया हुआ, जो
कमाया गया हो । २ संगृहीत, इकट्ठा किया
हुआ ।

अर्जी, अर्जदायक देखो ।

अर्जी दावा (अ० स्त्री०) दावेकी अर्जी, जो दरखास्त
दौवानीमें नालिश करनेको दी जाती हो ।

अर्जी मरम्मत (अ० स्त्री०) शोधनका आवेदनपत्र,

जो दरखास्त पहली दरखास्तकी बिगड़ी बात बनाने-
को दी जाती हो ।

अर्जुन (सं० पु०) अर्जयति यशः अर्ज-णिच् ।
१ पार्थ, पाण्डुपुत्र । २ अजन घास । ३ हैहय कान्त-
वीर्य । ४ करबीर । ५ मयूर । ६ श्वेत वर्ण । ७ रूप ।
८ नेत्ररोग विशेष । ९ इन्द्र पुत्र । १० अर्जुन वृक्ष ।
(त्रि०) ११ शुभ्रगुणविशिष्ट ।

अर्जुन पाण्डु राजकी तृतीय पुत्र रहे । इन्द्रके
औरससे कुन्तीके गर्भमें इनका जन्म हुआ था । यह
पहले एक इन्द्र थे । पीछे राज्यभ्रष्ट एवं हीनबल
होकर हिमालयकी एक गुफामें रहने लगे । अन्तमें
महादेवकी आज्ञाके अनुसार मर्त्यलोकमें आकर
इन्होंने जन्म ग्रहण किया ।

अर्जुन द्रोणाचार्यके प्रिय शिष्य रहे । यह महा-
धनुर्धर और महायोद्धा थे । इनके पास अक्षय तूणीर,
गाण्डीव धनुष एवं कपिध्वज रथ विद्यमान रहा । स्वयं
श्रीकृष्ण इनके सारथी थे । अर्जुनका वीरत्व पृथिवीमें
विख्यात है । इन्होंने लक्ष्य वेधकर द्रौपदीको प्राप्त
और खाण्डववन जलाकर अग्निको तुष्ट किया था ।
कुरुक्षेत्रके युद्धमें इन्होंने अपरिमौल वीरत्व दिखाया ।
इन्होंने द्रौपदी, सुभद्रा और चित्राङ्गदाका पाणि-
ग्रहण किया था । अभिमन्यु अर्जुनके पुत्र एवं
परोक्षित पौत्र थे ।

महाभारतके विराटपर्वमें अर्जुनके दश नाम लिखे
हैं । यथा—अर्जुन, फाल्गुन, जिष्णु, किरीटी, श्वेत-
वाहन, वीभत्सु, विजय, कृष्ण, सव्यसाची और धन-
क्षय । इसके अतिरिक्त इनके और भी कई नाम
प्रचलित हैं । यथा—पार्थ, शत्रुनन्दन, गाण्डीवी,
मध्यमपाण्डव, श्वेतबाजी, कपिध्वज, राधाभेदी, सुभ-
द्रेश, गुडाकेश और वृहन्नल ।

अर्जुन प्रभृति दश नाम क्यों पड़े थे, यह
बात इन्होंने विराटपुत्र उत्तरसे स्वयं कही थी—
पृथिवी भरमें मेरे जैसा रङ्ग और किसीका
नहीं है और मैं सर्वदा विशुद्ध कर्मका अनु-
ष्ठान किया करता हूँ, इसीसे लोग मुझे अर्जुन
कहते हैं ।

“पृथिव्यां चतुरन्गायां वर्षो मे दुर्लभः समः ।

करोमि कर्म शुक्लं तस्मान्मामर्जुनः विदुः ॥”

(विराटप० ४४ अ० २० श्लो० ।)

नीलकण्ठने इसकी टीकामें लिखा है,—अर्जुन इति ऋज गतिस्थानार्जुनोपाजनेषु इत्यत उन्नन् प्रत्यये भवति वर्षो दौसिः सम ऋजुः दौसिमत्वात् समत्वात् शुद्धकर्मकरत्वाच्च अर्जुन इत्यर्थः ।

यह समस्त देशको जीत केवल धनग्रहण करते हुए उसीमें रहते थे, इससे इनका नाम धनञ्जय हुआ । युद्धमें जाकर बिना जय किये, यह कभी लौटते न थे, इसलिये इनका नाम विजय पड़ा । रणक्षेत्रपर अर्जुनके रथमें सफेद रंगके घोड़े जुते रहते थे, इसीसे लोग इन्हें श्वन्ताहन कहने लगे । हिमालयपृष्ठपर दिनके समय उत्तरफाल्गुनी एवं पूर्वफाल्गुनी नक्षत्रोंके सन्धिस्थानमें इनका जन्म हुआ था, इसीसे यह फाल्गुन नामसे विख्यात हुये । दानव-युद्धके समय इन्द्रने इन्हें उज्ज्वल रत्नकिरीट पहना दिया था, इसलिये लोग इन्हें किरीटी कहकर पुकारने लगे । अर्जुनने युद्धस्थलमें कभी घृणितकर्म नहीं किया, इसीसे वीभत्स नाम पाया था । यह दाहने हाथकी तरह सव्य अर्थात् बांये हाथसे गाण्डीवको चढ़ाकर बाण छोड़ सकते थे, इससे इनका दूसरा नाम सव्यसाचौ रहा । (सव्येन वामेनापि हस्तेन सचितुं व्याकर्षणादिक्रियायां सम्बन्धं शीलमस्येति सव्यसाचौ इत्यर्थः) । अर्जुनको कोई हरा न सकता था, इसीसे इन्होंने जिष्णु नाम पाया । देखनेमें अर्जुन उज्ज्वल कृष्ण वर्णके रहे, इसलिये बचपनमें या पाण्डुराज इन्हें प्यारसे कृष्ण कहकर पुकारा करते थे ।

अर्जुनक (सं० त्रि०) १ अर्जुनसम्बन्धीय, अर्जुनसे तात्तुक् रखनेवाला । (पु०) २ अर्जुनपूजक, जो अर्जुनको पूजता हो ।

अर्जुनकाण्ड (वे० त्रि०) श्वेतानुबन्ध-विशिष्ट, सफेद ज़मीमवाला, जिसके सफेद तितम्बा रहे ।

अर्जुनघृत (सं० स्त्री०) घृतौषध मेद । यह हृद्दरोगमें हित है । इसके बनानेका विधान इस प्रकार है—

अर्जुनका त्वक् ६४ पल, जल ६४ शरावक, एकत्र ले

पाक करे । जब चतुर्थांश यानी १६ शरावक शेष रहे तो उतारकर कपड़से छान ले । पीछे इसमें अर्जुनकी छालका कल्क १ शराव, सूक्ष्मित घृत ४ शराव मिलाकर एकत्र पचाडाले ।

(चक्रपाण्डित्यसंज्ञक संग्रह)

दूसरा प्रकार—घृत ४ शराव, अर्जुनखरस ४ शराव, कल्कार्थ अर्जुनत्वक् १ शराव छोड़ते हैं । बना-नेकी रीति पूर्ववत् ही समझना चाहिये ।

(मेघनन्तरवाक्ये)

तीसरा प्रकार—सूक्ष्मित गायका घौ ४ सेर, काथार्थ अर्जुनको छाल ८ सेर, जल ६४ सेर, किसी वरतनमें डाल पकाना चाहिये । शेष १६ सेर रह जानेसे उतार लेते हैं । कल्कार्थ अर्जुनको छाल १ सेर, यह सब रख घौके साथ पकाये । मात्रा १ से २ तोले तक है । सब तरहके हृद्दरोगमें यह विशेष उपकार करता है ।

अर्जुनछवि (सं० त्रि०) श्वेत, सफेद ।

अर्जुनतस् (सं० अव्य०) अर्जुनको ओरसे ।

अर्जुनत्वक् (सं० स्त्री०) अर्जुनबल्कल, अर्जुन पेड़का बकला ।

अर्जुनध्वज (सं० पु०) ६-तत् । अर्जुनके रथ-ध्वज हनुमान् ।

अर्जुननामाख्य (सं० पु०) अर्जुन वृक्ष ।

अर्जुनपाकी (सं० स्त्री०) अर्जुनः शुभ्रः पाकः फलादिर्यस्याः गौणे जातित्वात् डीप् । श्वेतपाकी, लता विशेष । इसका फल सफेद होता है ।

अर्जुनरोग (सं० पु०) नेत्ररोगमेद, (Stye or hardeolum) बिलनी । यह सामान्य स्फोटक रोग भिन्न और कुछ भी नहीं, दुर्बल मनुष्यके पलक किनारे एक फोड़ा निकलता है । उष्ण जलका स्नेह और अलसीका प्रलेप देनेसे फोड़ा पक जाता है । फिर उसका ऊपरी भाग कुछ काट डालनेसे पीय निकलती है । हिन्दुस्थानमें अर्जुन होनेसे लोग पुरानी दीवारका कोयला घिसकर लगा देते हैं । एक फोड़ा होनेसे और तीन चार फोड़े निकल सकते हैं ।

अर्जुनवृक्ष (सं०) वृक्षभेद । (Terminalia Arjuna)
पाण्डुपुत्र अर्जुनके नामका पर्याय भी अर्जुनवृक्षमें प्रयुक्त होता है। पर्याय हैं—नदीसर्ज, वीरतरु, इन्द्रद्रु, ककुभ, शम्बर, पाथ, चित्रयोधो, धनञ्जय, वैरातद्रु, किरीटी, गाण्डीवी, शिवमल्लक, सव्यसाची, कर्णारि, करवीरक, कौन्तेय, इन्द्रसूनु, वीरद्रु, क्षणसारथि, पृथाज, फाल्गुन, धन्वी। यह अवध, बंगाल, मध्यभारत और दक्षिणाञ्चलमें बहुत होता है। इसका पेड़ अमरुदके पेड़ जैसा देख पड़ता है। पत्ती और छाल भी प्रायः अमरुद ही जैसी होती है। यह अमरुदके वृक्षसे भी बहुत बड़ा बैठता है। वर्षाकाल इसमें फल लगते हैं। फूल छोटे और कुछ सफेद होते हैं। उनसे बहुत ही कड़ा मौठा गन्ध निकलता है।

इसकी छाल रक्तवर्ण, अत्यन्त सङ्कोचक और बल-करी होती है। चमड़ेको चिकना करने और कपड़ा रंगनेमें वह व्यवहारकी जाती है। वैद्यकशास्त्रके मतानुसार यह हृदरोगका महीषध है। हृत्पिण्डके सब रोगोंमें वैद्य लोग इसे व्यवहार करते हैं। इसके काथसे घावको धो डालनेसे पीप और (मवाद) नहीं निकलता, घाव शीघ्र ही सूख जाता है। हड्डी टूट जानेसे इसका काथ वा चूर्ण सेवन करना पड़ता है। उससे दर्द कम पड़ता और हड्डी जुड़ जाती है।

अर्जुनस (सं० त्रि०) अर्जुनवृक्षसे अतिशय पूर्ण, जिसमें अर्जुनके पेड़ हृदसे ज्यादा रहें।

अर्जुनसुधा (सं० स्त्री०) अर्जुनोत्पन्न सुधा, अर्जुनके पेड़से निकला रस। यह कफको काटती है।

(वैद्यकनिघण्टु)

अर्जुनाख्य (सं० पु०) १ कासटण। २ अर्जुन वृक्ष।

अर्जुनाद (सं० त्रि०) दर्भकाशखादक।

अर्जुनाद्यघृत (सं० स्त्री०) घृतौषधविशेष। इसके प्रसुत करनेकी रीति यह है—अर्जुन, पटोल, निम्ब, वच, दीप्यक, मञ्जिष्ठ, भस्मातक, अशुरु, घन, गदा, अनल, चन्दन, खसू, गोचुरक, सोमवल्क, हरिद्रा, त्रिफला, इतने द्रव्योंका काथ तय्यार करके, पीछे अशमन्तक और अजण, दीप्यक और लोभ्र, मञ्जिष्ठ और अतिविषा

इन पृथक् पृथक् दो दो द्रव्योंका कल्क कषाय तय्यार करना चाहिये। यदि कफ वातसे मेह उत्पन्न हुआ हो। तो तैल, और पित्तसे मेह उत्पन्न हुआ हो, तो घृतको इन सब द्रव्योंके साथ पकाते हैं।

(भावप्रकाश)

अर्जुनायन (सं० स्त्री०) उत्तरप्रान्तका देश विशेष, कोई शिमाली सुल्क। वराहमिहिरने इसका उल्लेख किया है।

अर्जुनारिष्टसञ्चनं (सं० त्रि०) अर्जुन एवं निम्ब वृक्षसे आवृत, जो अर्जुन और नीमके पेड़से भरा हो।
अर्जुनी (सं० स्त्री०) अर्जुन-अन्यतो ङोष्। १ उषा, अनिरुद्धकी स्त्री। अर्जुनमिति रूप नाम, तच्चात्रा-दित्यरश्मिसम्बन्धात् श्वेतम्, अर्जुनी श्वेता; यद्वा अर्जुन्यो गावः ता अस्याः सन्ति, वाहनत्वेन मत्वर्थीय-ईकारः व्यत्ययेन हल्ङादिलोपः। २ वाहुदा नदी, करतोया नदी। यह हिमालयसे उत्पन्न हो गङ्गामें जा गिरी है। ३ गो, सफेद गाय। ४ दूती, कुटनी। 'अर्जुनी गवि। उषायां करतोयायां कुडन्यामपि च क्वचित्।' (विश)

अर्जुनोपम (सं० पु०) अर्जुनः वृक्षभेदः उपमा यस्य, गोणे ऋक्षः। शाकद्रुम, साखूका दरखूत।

अर्ण (सं० पु०) तनादि० ऋण-अच्। अकारादि वर्ण, अक्षर, हर्फ। "साधकार्णाः"। (तन्त्र) २ शाकवृक्ष, साखूका पेड़। ३ तरङ्ग, लहर। ४ छन्दोविशेष, यह दण्डकका भेद है। (स्त्री०) ५ युद्धकोलाहल, लड़ाईका शोर। (त्रि०) ६ गमनस्वभाव, चलने-फिरने-वाला। ७ फेन देता हुआ, जिससे फेन निकले। ८ निरानन्द, बेचैन।

अर्णभव (सं० पु०) शङ्ख।

अर्णव (सं० पु०) अर्णांसि जलानि दाहत्वेन सन्त्यस्य वा सलोपः। १ जलदाता, जो पानी पड़ुं चाता हो। २ सूर्य। ३ इन्द्र। ४ समुद्र। ५ तरङ्ग, लहर। ६ वायुमण्डल। ७ छन्दोविशेष। (त्रि०) ८ व्याकुल, जोश खाया हुआ। ९ फेन देता हुआ, जो खोल रहा हो। ९ निरानन्द, बेचैन। १० चार संख्या।

अर्णवज (सं० पु०) अर्णवात् जायते; अर्णव-जन-ड-

५-तत् । १ समुद्रफेन । २ मत्स्य विशेष । (त्रि०)
 ३ समुद्रजात, बहरसे पैदा ।
 अर्णवजमल (स० पु०) समुद्रफेन ।
 अर्णवपोत (स० पु०) जहाज, नाव ।
 अर्णवफेन, अर्णवजमल देखो ।
 अर्णवमन्दिर (स० पु०) अर्णवः मन्दिरमिव यस्य
 अर्णवे मन्दिरं यस्य वा, बहुव्री० । वरुण, जिसके
 समुद्र ही घर रहें ।
 अर्णवमल, अर्णवजमल देखो ।
 अर्णवयान (स० स्त्री०) जहाज, नाव, समुद्रपर
 चलनको सवारी ।
 अर्णवान्त (स० पु०) समुद्रका छोर, बहरका
 सिरा ।
 अर्णवोद्भव (स० पु०) अर्णवः उद्भवः उत्पत्तिस्थानं
 यस्य, बहुव्री० । १ अग्निजार वृक्ष । २ चन्द्र, चांद ।
 (स्त्री०) ३ अमृत, आबहयात ।
 अर्णवोद्भवा (स० स्त्री०) औ, समुद्रसे निकली
 हुई लक्ष्मी ।
 अर्णवस् (स० स्त्री०) ऋच्छति गच्छति, ऋ-अमुन्
 नुट् च । १ जल, पानी । २ तरङ्ग, लहर । ३ समुद्र,
 बहर । ४ वायुमण्डल । ५ नदी, दरया ।
 अर्णवस (स० पु०) अर्णोऽस्त्यस्य, अर्णवस्-अर्थ
 आदि० अच् । १ समुद्र, बहर । (त्रि०) २ जल-
 विशिष्ट, पानीदार ।
 अर्णवस्वत् (वै०) अर्णव देखो ।
 अर्णा (स० स्त्री०) नदी दरया ।
 अर्णास्वन् (सं० पु०) अर्णासि सन्त्यस्मिन्, अर्णवस्-विनि ।
 अर्णव देखो ।
 अर्णोद (स० पु०) अर्णासि ददाति, अर्ण-दा-क ।
 १ मेघ, बादल । २ सुस्तक, मोथा । (त्रि०)
 ३ जलदाता, पानी पहुंचानेवाला ।
 अर्णोद्भव (स० पु०) अर्णसि भवति ; अर्णवस्-भू-अच् ।
 ७-तत् । १ शङ्ख । (त्रि०) २ जलजात, पानीसे पैदा ।
 अर्णोदित (वै० त्रि०) जलविशिष्ट, पानीदार ।
 अर्तगल, आर्तगल (स० पु०) आर्तस्य पीडितस्य
 इव गलः गलनं पत्रपुष्पादेः यस्मात्, यद्वा आर्ता इव

गला क्षीणकण्ठभागो यस्य ; बहुव्री० पृषो० वा ह्रस्वः ।
 नीलभिण्टी, नीली भाड़ी ।
 अर्तन (स० स्त्री०) ऋतव्युद पक्षे इयङ्भावः ।
 १ निन्दा, हिकारत, बुराई । (त्रि०) २ निन्दक,
 हिकारत करनेवाला ।
 अर्ति (स० स्त्री०) अर्द-क्तिन् । १ पोड़ा, दर्द ।
 अर्दति येन, करणे क्तिन् । २ धनुष्कोटी, कमानका
 सिरा । 'अर्तिः पीडाधनुष्कोट्योः ।' (अमर)
 अर्तिका (स० स्त्री०) ऋत-खुल्-टाप् । नाव्योक्त
 ज्येष्ठ भगिनो, खेलको बड़ी बहन ।
 अर्तुक (स० त्रि०) ऋत बाहु० उकञ् । संधक,
 संधाकारी, हसदी, भगड़ालू ।
 अर्थ (स० पु०) अर्थते ऋ- (उवि-कुलि-गार्तिम्यस्यन् । उष् २।४)
 इति थन् । यद्वा अर्थते अर्थ-भावे कर्मणि वा अच् ।
 अभिधेय, वाच्य, मानो । शब्दको शक्ति द्वारा बोध्य
 पदार्थ अर्थात् 'घट' ऐसा शब्द उच्चारण करनेसे जो
 वस्तु समझो जाते, वही घट शब्दका अर्थ है । अल-
 हारिकोंके मतसे अर्थ तीन प्रकारमें विभक्त है—
 वाच्यार्थ, लक्ष्यार्थ और व्यङ्ग्यार्थ । जिस शब्दसे जो अर्थ
 प्रतिपन्न होता है, उसे वाच्यार्थ कहते हैं । जैसे 'गृह'
 कहनेसे घर समझा गया । लक्षण द्वारा जो अर्थ
 समझते, उसे लक्ष्यार्थ कहते हैं । जैसे, गङ्गामें
 गोपगण वास करते हैं । गङ्गाके जलमें मनुष्य वास
 नहीं कर सकते, अतएव लक्षण द्वारा गङ्गाके कूलवर्ती
 गोपगण समझ पड़ते हैं । काव्यमें व्यञ्जना शक्तिद्वारा
 जिस अर्थका बोध होता है, उसे व्यङ्ग्यार्थ कहते हैं ।
 २ धन, दौलत । सब कोई धनकी प्रार्थना करता
 इससे धनका नाम अर्थ हुआ है । अर्थ तीन प्रकारका
 है—शुक्त वर्ण, श्रवण वर्ण एवं कृष्ण वर्ण । शुक्त वर्ण
 अर्थद्वारा ऐहिक कार्य करनेसे देवत्व, श्रवण वर्ण
 अर्थद्वारा मनुष्यत्व और कृष्णवर्ण अर्थद्वारा तिर्यक्
 योनित्व लाभ होता है । चतुर्वर्णके निज निज वृत्ति-
 द्वारा उपाजित अर्थका नाम शुक्त है । जैसे ब्राह्मणका
 याजन अध्यापनादिद्वारा अर्जित, क्षत्रियका जयलब्ध,
 वैश्यका कृषि वाणिज्यादि लब्ध और शूद्रका दास्या-
 पाजित धन है ।

अनन्तर वृत्तिद्वारा उपार्जित धनको श्रवण कहते हैं। अर्थात् अपनेसे नीचे जातिकी वृत्तिद्वारा जो धन उपार्जन किया जाता, उसका नाम श्रवण है। जैसे ब्राह्मणका क्षत्रिय वृत्तिद्वारा उपार्जित और क्षत्रियका वैश्य वृत्तिद्वारा उपार्जित धन इत्यादि। अन्तरित वृत्ति द्वारा उपार्जित धनका नाम कृष्ण है। अर्थात् नीचेके एक वर्णको अतिक्रम कर उसके बादके वर्णकी वृत्ति द्वारा जो अर्थ उपार्जन किया जाता है, उसे कृष्ण कहते हैं। जैसे ब्राह्मणका वैश्यवृत्ति द्वारा और क्षत्रियका शूद्र वृत्ति द्वारा उपार्जित अर्थ। सब वर्णोंके पक्षमें पैटक किंवा बन्धु बान्धव प्रदत्त अथवा विवाहके समय प्राप्त धन शुक्ल होता है। फिर उत्कोच, शुल्क एवं निषेध वस्तुकी विक्रीसे प्राप्त अथवा परोपकारके बदले मिला हुआ धन श्रवण कहा जाता है।

पाशा प्रभृति जुवा खेलने एवं नाच, गान, चोरौ, परपीड़न, ठगपने तथा दुस्साहसके कामसे जो धन लाभ होता है, हमारे शास्त्रकार उसे कृष्ण कहते हैं।

३ प्रयोजन, मतलब अर्थ शब्दसे प्रयोजन भी समझा जाता है। प्रयोजन दो प्रकारका है,—मुख्य एवं गौण। जो दूसरेकी इच्छाके अधीन नहीं है, उसे मुख्य अर्थ कहते हैं। 'सुखे जिसमें सुख हो कभी दुःख न मिले'। यहां दो इच्छाओंका विषय सुख और दुःखका अभाव ही मुख्य प्रयोजन है। फिर जो अन्य इच्छाके अधीन है, उसे गौण अर्थ कहते हैं। जैसे भोजन करनेसे छुधा निवृत्ति होती है। यहां छुधानिवृत्ति भोजनकी इच्छाके अधीन रहनेसे गौण है। यद्यपि प्रयोजन नाना प्रकारका है, तथापि शास्त्रकार प्राधान्यके हेतु धर्म अर्थ काम मोक्ष यहौ चार प्रकारका अर्थ स्वीकार करते हैं। क्योंकि अन्यान्य प्रयोजन इन्हींमें आ जाता है। साङ्गप्रवादी सर्ग और अपवर्ग—यही दो प्रकारका पुरुषार्थ मानता है। दुःखकी अत्यन्त निवृत्ति अर्थात् मोक्षरूप प्रयोजन अन्य इच्छाके अधीन न रहनेसे प्रधान है, धर्म अर्थ काम उसके साधन हैं। उनमें भी धर्म अर्थका एवं अर्थ कामका साधन है। अर्थात् धर्म करनेसे

अर्थ होता एवं अर्थ होनेसे काम्य कार्य अनायास ही हो जाता है।

४ निमित्त, वास्ता। कर्मणि अच्। ५ विषय। ६ शब्दादि। ७ ज्ञेयवस्तु; जाननेका विषय। ८ तन्त्र आवापादि। अर्थविना शब्द देखो। ९ यथार्थ। १० वस्तु-स्वभाव। ११ निवृत्ति। १२ ज्योतिषोक्त लग्नसे दूसरा गृह। १३ प्रकार। भावे अच्। १४ अभिलाष। १५ प्रार्थना। कर्मणि अच्। १६ अर्चनीय विष्णु। १७ फल।

अर्थकर (सं० त्रि०) अर्थकरोति, अर्थ कहेत्वादौ ट। १ धनका साधन, रुपया देनेवाला। २ उपयोगी, मुफीद। (स्त्री) अर्थ करी।

'अर्थ करी च वयम्।' (द्वितीयदेश)

अर्थकर्मन् (सं० क्ली०) प्रधान कार्य, खास काम। अर्थकाम (सं० पु०) १ उपयुक्तता एवं इच्छा, धन तथा अभिलाष, दौलत और खुशी। (त्रि०) २ धनसृष्ट, दौलतका चाहिशमन्द।

अर्थकिल्बिषिन् (सं० त्रि०) धनका पापी, दौलतका बेयीमान, जो रुपया लेने-देनेमें साफ़ न हो।

अर्थकच्छ (सं० क्ली०) अर्थ अर्थस्य वा कच्छ, ७ वा ६ तत्। १ धनका कष्ट, दौलतको तकलीफ़। २ कष्टसाध्य प्रयोजन, मुश्किलसे निकालनेवाला काम।

अर्थकृत् (सं० त्रि०) अर्थ करोति, अर्थ-कृ-क्तिप् तुक्। अर्थकर, दौलत देनेवाला।

अर्थकृत्या (सं० स्त्री०) लाभका कार्य, जो काम फायदेके लिये किया जाता हो।

अर्थक्रम (सं० पु०) अर्थस्य क्रमः, ६-तत्। जैमि-न्युक्त छः के अन्तर्गत क्रमविशेष। छः प्रकारका क्रम यह है—शब्दक्रम, अर्थक्रम, पाठक्रम, स्थानक्रम, मुख्यक्रम और प्रवृत्तिक्रम। शब्दक्रम और अर्थक्रम साथ ही आनेपर अर्थक्रम बलवान् होनेसे उसीके अनुसार कार्यका अनुष्ठान करते हैं। यथा,—

'अग्निहोत्रं जुहोति यवागूं पचति'। (श्रुति)

अर्थात् अग्निहोत्र करता और यवागूं पकाता है। किन्तु यवागूं पकाकर ही अग्निहोत्रयाग होता

है। इसलिये श्रुतिका शब्दक्रम छोड़ अर्थक्रमसे पहले यवागूको ही पकाते हैं।

अर्थगत (सं० त्रि०) अर्थगतम्, २-तत्। १ गताय, वेफायदा, वेमतलब। (पु०) २ अलङ्कार शास्त्रोक्त अर्थोचित दोष विशेष, शायरीमें मानो बिगड़ जानेका ऐव।

अर्थगरीयस् (सं० त्रि०) अर्थान्वित, अभिप्रायगर्भ, मानोदार, जिसमें मतलब खूब भरा रहे।

अर्थगौरव (सं० स्त्री०) ६-तत्। अल्प कथामें अर्थका आधिक्य, थोड़ी बातका बड़ा मतलब। इसी प्रकारका शब्द प्रशंसनीय होता है। भारवि कविकी रचना प्रायः अर्थगौरवसे भरी है, जिससे जनसमाजमें उनका बनाया किरातार्जुनीय अति आदरकी सामग्री ठहरा है।

अर्थज्ञ (सं० त्रि०) अर्थं हन्ति, ताच्छील्यादौ ट।

अर्थनाशक, रुपया बरबाद करनेवाला, फूजूलखर्च।

अर्थचम्पिका (सं० स्त्री०) कर्कटशृङ्गी, ककरा-सिंगी।

अर्थचिन्तक (सं० पु०) राज्यके आय-व्ययकी चिन्ता रखनेवाला मन्त्री, जो वजीर बादशाहीके आमद-खर्चका खयाल रखता हो।

अर्थचिन्ता (सं० स्त्री०) अर्थानां मन्त्रिकर्तव्य तन्त्रायव्यादीनां चिन्ता, ६-तत्। मन्त्रीके कर्तव्य राजाङ्ग-तन्त्र और आयव्ययादिकी चिन्ता, अपनी और दूसरेकी बादशाहीमें किये जानेवाले कामका खयाल।

अर्थजात (सं० स्त्री०) अर्थानां जातम्, ६-तत्। १ अथसमूह, दौलतका ढेर। (त्रि०) अर्थः जातो यस्य, बहुव्री०। २ धनसम्पन्न, दौलतमन्द। ३ अभिप्रायगर्भ, मानोदार।

अर्थज्ञ (सं० त्रि०) अर्थं जानाति, अर्थ-ज्ञा-क। प्रयोजनज्ञ, मानो समझनेवाला, जो मतलब निकाल लेता हो।

अर्थतत्त्व (सं० स्त्री०) १ सत्य, मूल विषय, रास्ती, असली मतलब। २ किसी विषयको सच्ची दशा, मामलेकी जो हालत असलमें रहे।

अर्थतत् (सं० अव्य०) अर्थ—तत्सिद्ध। १ किसी प्रधान

विषयपर, खास मतलबसे। २ अर्थानुसार, मानीके मुवाफिक। ३ वस्तुतः, असलमें सच-सच। ४ अर्थात्, यानी।

अर्थद (सं० त्रि०) अर्थान् धनानि ददाति, अर्थ-दा-क १ धनद, दौलत देनेवाला। २ उपयोगी, फायदेमन्द। ३ उदार, सखी। (पु०) ४ धनदान द्वारा सन्तोष-कारी शिष्य वा छात्र, जो शागिर्द या तालब-इत्ला दौलत दे खुश करता हो। ५ कुवेर।

अर्थदण्ड (सं० पु०-स्त्री०) जुर्माना, दौलतकी सजा, जो रुपया किसी मुजरिमसे सजाके तौरपर वसूल हो।

अर्थदूषण (सं० स्त्री०) अर्थानां दूषणम्, ६-तत्। अन्यके धनका अपहार, दूसरेकी दौलतका बिगाड़। सम्पत्तिका अनुचित ग्रसन, दौलतकी गेरवाजब गिरफ्तारी। ३ अनुचित व्यय, फूजूलखर्ची। ४ वाक्यार्थ में दोषारोपण, फिकरेके मानोमें ऐबजोयो।

अर्थना (सं० स्त्री०) अर्थ-युच्-टाप्। याच्ना, मांग। २ भिन्ना, भौख। ३ अर्दना, तकलीफदिही।

“याच्ना भिचार्यनादना।” (चमर)

अर्थनिबन्धन (सं० त्रि०) धनसे प्रयोजन रखनेवाला, जिसका सबब दौलतमें रहे।

अर्थनिश्चय (सं० पु०) अभिप्रायका निर्णय, इरादाको फैसला।

अर्थनौय (सं० त्रि०) याच्नाके योग्य, मांगने काबिल।

अर्थपति (सं० पु०) अर्थानां पतिः, ६-तत्। १ राजा, बादशाह। २ कुवेर। ३ अधीश्वर, दौलतमन्द शख्स।

अर्थपर (सं० त्रि०) १ धनोपार्जनपर कटिबद्ध, जो दौलत कमानेमें लगा हो। २ व्ययपराङ्मुख, कञ्चूस, जो खर्च करनेसे मुंह चोराता हो।

अर्थपिशाच (सं० त्रि०) धनका प्रेत, दौलतका शेतान्, जो रुपयेके लिये शेतानी करनेसे चूकता न हो।

अर्थप्रकृति (सं० स्त्री०) अर्थानां प्रयोजनानां प्रकृतिः कारणम्, ६-तत्। प्रयोजतहेतु नाटकाङ्ग कार्यका कारण पञ्चक।

अर्थप्रयोग (सं० पु०) अर्थानां धनानां तन्त्रायव्याया-

दीनाच्च प्रयोगः नियोगः । १ ऋणदान बाणिज्यादि रूप धनवृद्धिकर वृत्ति वा व्यवहार, दौलतका इस्तेमाल, जो काम रुपया बढ़ानेका हो । २ वृद्धिजीविका, सूद-खोरी । ३ मन्त्रके कर्तव्य तन्त्र और आवापादिका यथाक्रम नियोग, अपनी और दूसरेकी बादशाहीके आमद-खर्चका काम । इसे मन्त्री करता है ।

अर्थप्रसादनौ (सं० स्त्री०) धामनवृद्ध ।

अर्थप्राप्त (सं० पु०) शब्दं विना केवलेनार्थेन प्राप्तः, ३-तत् । अर्थप्रकाश करनेको शब्द न रहते भी तात्पर्य द्वारा समझा जानेवाला विषय, जो बात मानीदार लफ्ज न मिलते भी मतलबसे ही समझ ला जाती हो ।

अर्थप्राप्ति (सं० स्त्री०) १ धनका आगम, रुपयेकी कमायी । २ अभिप्राय सिद्धि, मतलबका निकास ।

अर्थबन्ध (सं० पु०) अर्थैः विषयैः शब्दादिभिः बन्धः ।

१ शब्दादि द्वारा बन्ध, लफ्ज, वगैरहकी बन्दिश ।

२ धनवृद्धतबन्धन, दौलतकी जकड़ । ३ मूलपंक्ति, अक्ष ।

अर्थवृद्धि (सं० त्रि०) स्वार्थी, खुदगर्ज, जो अपना ही मतलब देखता हो ।

अर्थबोध (सं० पु०) मुख्य आशयका अभिज्ञान, असली मतलबका जाहिरा ।

अर्थभाज् (सं० त्रि०) सम्पत्तिविभागका अधिकारी, जो रुपये-पैसेके बंटवारेका हकदार हो ।

अर्थभावना (सं० स्त्री०) अर्थानां भावना, ६-तत् ।

१ सर्वजनक याग-साधन भावना । २ अर्थचिन्ता, दौलतकी फिक्र ।

अर्थभूत (सं० पु०) अधिक वेतन पानेवाला, जिसकी तनखाह वड़ी रहे ।

अर्थभेद (सं० पु०) विभिन्नता, अर्थका अन्तर, फर्क, मानीकी जुदायी ।

अर्थमर्यादा (सं० स्त्री०) अर्थस्य कारणस्य मर्यादा, सकल कारण वस्तुका मेलन, पूरे मतलबकी चीजका मिलान ।

अर्थमात्र (सं० स्त्री०) अर्थ एव मयूर व्यंसकादित्वात् चिदेव चिन्मात्रमितिवत् अवधारणार्थमात्र शब्देन नित्य सम्पत्ति, धन, जायदाद, दौलत, रुपया-पैसा ।

अर्थमात्रा (सं० स्त्री०) अर्थस्य मात्रा, ६-तत् ।

१ अल्पधन, थोड़ी दौलत । २ धनांश, दौलतका हिस्सा ।

३ बहुधन, बड़ी दौलत । ४ धन बाहुल्य, दौलतकी बढ़ती । ५ धनका परिमाण, दौलतका मिकदार ।

अर्थलाभ (सं० पु०) धनकी प्राप्ति, दौलतकी कमायी ।

अर्थलुब्ध (सं० त्रि०) धनलोलुप, दौलतका खाहिश-मन्द, लालची कञ्जूस ।

अर्थलेश (अ० पु०) धनकी अल्पता, दौलतकी कमी ।

अर्थलोभ (सं० पु०) धनका अभिलाष, दौलतकी खाहिश, लालच ।

अर्थवत् (सं० त्रि०) अर्थोऽस्तस्य, आर्थ-मतुप मस्य वः । १ अर्थयुक्त, दौलतमन्द । २ सार्थक, मानीदार ।

(अव्य०) अर्थेन तुल्यं क्रिया अर्थे इव अर्थस्येव अर्थ-मर्हति वा वति । अर्थके न्याय, मतलबका तरह, मानोके मुवाफिक ।

अर्थवत्त्व (सं० स्त्री०) सार्थकता, मानोखेजी ।

अर्थवर्गीय (सं० त्रि०) द्रव्याधिकरण युक्त, चीजकी मद रखनेवाला ।

अर्थवाद (सं० पु०) अर्थस्य लक्षणया स्तुत्यर्थस्य निन्दार्थस्य वा वादः, वद-करणे-घञ्; ६-तत् ।

१ प्रशंसनीय गुणवाचक शब्द, प्रशंसनीय वाक्य ।

२ निन्दनीय दोषवाचक शब्द, निन्दनीय वाक्य । भावे घञ् । ३ स्तुत्यर्थ कथन । ४ निन्दार्थ कथन ।

गौतमसूत्रके मतसे वेदका दो विभाग है—मन्त्र एवं ब्राह्मण । उसमें “आत्मण न रजसा” इत्यादिको ब्राह्मण और सन्ध्यावन्दनादिको मन्त्रभाग कहते हैं ।

वेदका ब्राह्मणभाग तौन भागोंमें विभक्त है ।

यथा—विधि, अर्थवाद एवं अनुवाद । “विध्यर्थ वादानुवाद-वचनविनियोगात् ।” (गौ० सू० २।६१)

जिस वाक्यद्वारा कोई व्यवस्था की जाती, उस विधायक वाक्यका नाम विधि है । “विधिविधायकः ।”

(गौ० सू० २।६२) जैसे, ‘जो मनुष्य स्वर्गलाभकी इच्छा रखे, वह अग्निहोत्र याग करे ।’ यहां स्वर्ग-लाभेच्छुक मनुष्यके लिये अग्निहोत्र यागकी विधि की गई ।

अर्थवाद और प्रकारका है,—स्तुत्यर्थवाद, निन्दार्थ-

वाद, परकृत्यर्थवाद एवं पुराकल्पार्थवाद। “सुविनिन्द्य
परकृतिः पुराकल्प इत्यर्थवादः।” (गौ० सू० २।६२)

जिस कार्यकी विधि की गई है, उसी विहित
कार्यका फल दिखाकर प्रशंसा करनेको सुत्यर्थवाद
कहते हैं। जैसे, सन्ध्यावन्दनादि करनेसे दैनिक
पापक्षय एवं निरापद ब्रह्मलोक प्राप्त होता है।

किसी कार्यमें अनिष्ट दिखाकर विहित कार्यमें
प्रवृत्त करनेको निन्दा कहते हैं। जैसे, ‘अमावस्या
प्रभृति पर्वदिनमें स्त्री तैलादि व्यवहार करनेसे लोग
नरकगामी होते हैं।’ यहां पर्वदिनमें स्त्री तैलादि
व्यवहारकी निन्दासे उसके निवारणकी विधि की गई।

जो किसी व्यक्तिके लिये कर्तव्य और किसीके
लिये अकर्तव्य हो, वैसे परस्पर विरुद्ध वाक्यका नाम
परकृति है। जैसे, शाक्तके लिये मद्यमांस द्वारा
पूजा करनेकी व्यवस्था है, परन्तु वैष्णवके लिये वह
मना है।

पूर्वके आचरित वाक्यका नाम पुराकल्प है।

स्मार्तने लिखा, विधिवाक्य भी किसी किसी जगह
अवसन्न हो जाता है। वैसे स्थलमें सुत्यर्थवाद
द्वारा कार्य करना पड़ता है। फिर किसी किसी
स्थलमें विधि वाक्यके साथ एकत्र पाठ रहनेसे अर्थ-
वाद प्रामाण्य भी होता है। श्रीकृष्ण तर्कालङ्कार कहते
हैं, विधिके साथ असमभिव्याहृत वाक्यका नाम अर्थ-
वाद है। अनुवाद देखो।

अर्थविज्ञान (सं० लौ०) अर्थस्य विज्ञानम्, ६-तत् ।
अर्थग्राहिता, मानौकी समझदारो। यह बुद्धिके आठमें
एक गुण होता है,—

“श्रुत्या अवयवैश्च ग्रहणं धारणं तथा।

कहोऽप्योहास्यं विज्ञानं तत्तज्ज्ञानञ्च धौगुणाः ॥” (हेम)

गुरुकी सेवा, शास्त्रीपदेशका श्रवण, ग्रहण तथा
धारण, तर्क छोड़ समझदारो और निश्चित करण
बुद्धिके यह आठ गुण होते हैं।

अर्थविदु (सं० चि०) अर्थ कार्यप्रयोजनादि वा
वेत्ति, अर्थ-विदु क्तिप्। कार्याभिज्ञ, मतलब समझने-
वाला, होशियार।

अर्थविप्रकर्ष (सं० पु०) अर्थस्य अर्थबोधस्य विप्रकर्षः

दूरत्वं विलम्ब इति यावत्, ६-तत् । विलम्बमें अर्थ-
बोध, शीघ्र अर्थबोध न होना, पूर्वपूर्वको अपेक्षा उत्तर
उत्तरका विलम्बमें अर्थबोध, मानौका जल्द समझ
न पड़ना।

वाक्यमें जो सब पद रहते हैं, स्थलविशेषमें उनके
बीच पहले कारक पौछे लिङ्गादिका अर्थबोध होता,
इसीसे कारककी अपेक्षा लिङ्ग और वाक्यादिका अर्थ
समझनेमें विलम्ब लगता है।

आहविवेककी टोकामें श्रीकृष्ण तर्कालङ्कारने
लिखा है,—“अत्र जैमिनिस्त्व’ श्रुतिलिङ्ग-वाक्य-प्रकरण-स्थान-समा-
ख्यानं समवाये पारदौर्बल्यमर्थविप्रकर्षात् ।” श्रुति, लिङ्ग, वाक्य,
प्रकरण, स्थान, समाख्या, ये सब न्याय यदि एक ही
स्थानमें उपस्थित हों, तो क्रम-क्रमसे न्यायका दौर्बल्य
होता है। इसके भाष्यमें कहा है—

“श्रुतिद्वितीया चमता च लिङ्ग’

वाक्यं पदान्येव च संज्ञितानि।

सा प्रक्रिया या कथमित्यपेक्षा

स्थानं क्रमो योगवत् समाख्या ॥”

द्वितीय प्रकृति कारकका नाम श्रुति है। अनेक
स्थलोंमें प्रकृत भाव प्रकाश करनेके लिये विशेष शब्दका
प्रयोजन नहीं पड़ता, केवल द्वितीयादि विभक्तिसे ही
वह उद्देश्य सिद्ध हो जाता है। जैसे ‘अन्न’ पचति।’
भात पक रहा है। यहां अन्न शब्दमें केवल द्वितीया
विभक्ति देखकर ही पच घातुका कर्मबोध होता है।
इस कर्मको समझनेके लिये दूसरे पदका प्रयोजन
नहीं है।

फिर उपपदमें भी द्वितीयासे ऐसे अर्थका बोध
होता है। जैसे,—‘मासमधीते’—एक मास काल
पढ़ते हैं। यहां सब बात ठीक प्रकाश करके बोलने-
में,—‘मासव्याप्य अधीते’ एक महीनेसे पढ़ते हैं,
इस तरह खोलकर कहना चाहिये। अतएव ‘वे एक
महीनेसे पढ़ते हैं’ ऐसी बात कहनेसे ‘एक महीनेसे’
इसमें अन्यपदको अपेक्षा रहती, इसलिये विलम्बमें
यथार्थ बोध होता है। इसके रोकनेके लिये ही
कारककी बात कही गई है।

ऊपरके भाष्यमें केवल द्वितीयाकी बात लिखी

है। वस्तुतः उससे सब कारकोंको ही समझना होगा। कारण, कारकोंमें जो विभक्ति रहती है, वही सब प्रकृतिके साथ अन्वित होकर अपना अपना अर्थ प्रकाश करती है। एवं अर्थ प्रकाश करते समय वे अन्य पदोंकी अपेक्षा नहीं करतीं। वाचस्पतिमिश्रने वेदान्तकी टीकामें इन बातोंको लिखा और तर्कालङ्कारने यों उदाहरण दिया है,—‘व्रीहीन् वहन्ति’। आशुधान्य अवधान करेगा अर्थात् कूटेगा। यहां ‘व्रीहि’ शब्दमें द्वितिया विभक्ति रहनेसे धानको कूटकर भूसी रहित करना होगा, ऐसा धात्वर्थ प्रकाश होता है। यहां इस अर्थके प्रकाशनको अन्य पदकी आवश्यकता नहीं पड़ी।

भाषा में लिङ्ग शब्दका अर्थ क्षमता बताया गया है। क्षमता शब्दसे अर्थका सामर्थ्य समझ पड़ता है। जैसे,—‘हविर्देवसदनं दामि’। इस मन्त्रको कहां नियोग करना चाहिये, यह लिखा न रहनेपर भी—‘दाप् लवणे’—इस छेदनार्थ दा धातुसे निष्पन्न दामि पदके हविश्छेद सामर्थ्य हेतु हविश्छेदनमें ही इसका विनियोग समझा जाता है।

परस्पर अन्वययुक्त तिङन्त और सुबन्त पदसमूहका नाम वाक्य है। कौन काम किसतरह करना होता, इस अपेक्षाका नाम प्रक्रिया वा प्रकरण है। समान देश वा क्रमको स्थान कहते हैं। योगबल वा यौगिकका नाम समाख्या है।

लिङ्गकी अपेक्षा श्रुतिका अर्थ बलवत् है। जैसे,—‘पायसेन दध्ना जुहोति’। (श्रुति)। पायस (पयः प्रकाशक मन्त्र, पयः पृथिव्या इत्यादि) और दधि द्वारा होम करे। यहां दधि द्वारा ही होम करना श्रुतिसम्मत है। उसमें अन्य किसी पदकी अपेक्षा न रहनेसे पहले उसीका अर्थबोध होता, अतएव वही प्रधान कहा जाता है। पीछे पयः पृथिव्या इत्यादि मन्त्र द्वारा होम करनेका बोध, मन्त्रके सामर्थ्य हेतु विलम्बमें होता है। इसलिये श्रुतिकी अपेक्षा इसे दुर्बल कहते हैं। इस तरह लिङ्ग वाक्यादिकी अपेक्षा बलवान् है।

अर्थवृद्धि (सं० स्त्री०) धन सञ्चय, दौलतका प्रसार

अर्थवेद (सं० पु०) शिल्पशास्त्र, कारौगरीका इत्थम्।
अर्थवैकल्य (सं० स्त्री०) १ सत्यातिक्रम, बातको पोशीदगी। २ वाक्छल, वक्रोक्ति, खिलाफ बयानो।
अर्थव्यपाश्रय (सं० पु०) अर्थस्य प्रयोजनस्य व्यपाश्रयः स्थानम्, ई-तत्। १ प्रयोजन सम्बन्ध, अभिधेयका आश्रय, मतलबकी जगह, मानौका ठिकाना (त्रि०) २ सप्रयोजन, मतलबी।

अर्थव्यय (सं० पु०) धनोत्सर्ग, दौलतका खर्च।
अर्थव्ययज्ञ (सं० त्रि०) अर्थस्य धनस्य व्ययप्रणाली जानाति; अर्थव्यय-ज्ञा-क, ई-तत्। न्यायव्ययो, कायदेसे खर्च करनेवाला।

अर्थव्ययसह (सं० त्रि०) मितव्ययो, किफायती।
अर्थशास्त्र (सं० स्त्री०) अर्थस्य मन्वादिप्रणीत राज-नीत्यादि दृष्टविषयस्य शास्त्रम्, ई-तत्; तत्प्रतिपादक शास्त्रम्, शाक० तत् वा। अर्थनोतिविषयका शास्त्र, जिस इत्थामें दौलतका बयान रहे। यह रूपये कमाने, बचाने और बंटानेकी बात बताता है।

सम्प्रति चाणक्य वा कौटिल्यका अर्थशास्त्र प्रकाशित हुआ है। उसे देखकर हम समझ सकते हैं, सन् ई०से चार-पांच शताब्द पहले हिन्दुओंकी राजनीति कैसी रही। अर्थशास्त्रमें जिस प्राचीन धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विषयकी आलोचना निकली, उसकी सूची नीचे लिखी है,—प्रथम विनयाधिकारमें राजवृत्ति, विद्यासमुद्देश, आन्वौक्षिकी-स्थापना, त्रयीस्थापना, वार्तास्थापना, दण्डनीति-स्थापना, वृद्धसंयोग, इन्द्रियजय, अरिषड्वर्गत्याग, राजर्षिवृत्त, अमात्योत्पत्ति, मन्त्रिपुरोहितोत्पत्ति, उपधासे अमात्यका शौचाशौचज्ञान, गूढपुरुषोत्पत्ति, संस्थोत्पत्ति, गूढपुरुषप्रणिधि, सच्चारोत्पत्ति, स्वविषयमें कल्याणकृत्यके पक्षका रक्षण, परविषयमें कल्याणकृत्यके पक्षका उपग्रह, मन्त्राधिकार, दूतप्रणिधि, राजपुत्ररक्षण, अवरुद्ध वृत्त, अवरुद्ध अवस्थाकी वृत्ति, राजप्रणिधि, निशान्त प्रणिधि, आत्मरक्षितक। दूसरे अध्याय प्रचाराधिकारमें—जनपदका निवेश, भूमिके छिद्रका विधान, दुर्गका विधान, दुर्गका निवेश, सन्नि-
धत्ताका चयन, समाहृत समुदयका प्रस्थापन,

अक्षपटलका गणनिक्य अधिकार, युक्तसे अपहृत समु-
 दयका प्रत्यायन, उपयुक्तपरीक्षा, शासनका अधिकार,
 कोशमें रखने योग्य रत्नोंकी परीक्षा, आकर कर्मान्तका
 प्रवर्तन, अक्षशालामें सुवर्णका अध्यक्ष, विशिखामें
 सीवर्णिक प्रचार, कोष्ठके आगारका अध्यक्ष, पण्य
 (वाजी)का अध्यक्ष, कुप्यका अध्यक्ष, आयुधके आगारका
 अध्यक्ष, तुलाके मानका पौतव, देशकालका मान,
 शुल्कका अध्यक्ष, शुल्कका व्यवहार, सूत्रका अध्यक्ष,
 सीताका (चोनो) अध्यक्ष, सुराका अध्यक्ष, सूनका
 अध्यक्ष, गणिकाका अध्यक्ष, नौकाका अध्यक्ष, गायका
 अध्यक्ष, अश्वका अध्यक्ष, हस्तोका अध्यक्ष, हस्ताका
 प्रचार, रथका अध्यक्ष, पतिका अध्यक्ष, सेनापतिका
 प्रचार, मुद्राका अध्यक्ष, विवौतका अध्यक्ष, समाहर्ताका
 प्रचार, गृहपति वेदेहक-तापसका व्यञ्जन प्रणिधि,
 नागरक प्रणिधि। तौसरे धर्मस्थीयाधिकारमें—व्यव-
 हारको स्थापना, विवादके पदका निबन्ध, विवाहका
 संयुक्त, विवाहका धर्म, स्त्रीके धनका कल्प, आधि-
 वेदनिक, शुश्रूषा, भर्म, पारुष्य, द्वेष, अतिचार,
 उपकार, व्यवहारका प्रतिषेध, निष्पतन, पथनुसरण,
 झुलप्रवास, दीर्घप्रवास, दायका विभाग, पुत्रका
 विभाग, दायका क्रम, अंशका विभाग, वासुक,
 गृहका वासुक, वासुका विक्रय, सीमाका विवाद,
 मर्यादाका स्थापन, बाधाका बाधिक, विवौत क्षेत्रके
 पथकी हिंसा, समयका अनपाकर्म, ऋणका
 आदान, औपनिधिक, दास-कर्मकरका कल्प, स्वामीका
 अधिकार, मृतकका अधिकार, सम्भय-समुत्थापन,
 विक्रीत क्रीतका अनुशय, दत्तका अनपाकर्म, अस्त्रामिक
 विक्रय, स्वस्वामीका सम्बन्ध, साहस, वाक्-पारुष्य,
 दण्डपारुष्य, द्यूतका समाह्वय, प्रकीर्णक। चौथे
 कण्टक शोधनाधिकारमें—कारकका रक्षण, वैदे-
 हकका रक्षण, उपनिपातका प्रतीकार, गूढाजीवोको
 रक्षा, सिद्ध व्यञ्जनसे माणव प्रकाश, शङ्कारूप
 कर्मका अभिग्रह, आशु मृतककी परीक्षा, वाक्कर्मका
 अनुयोग, सर्वाधिकरणका रक्षण, एकाङ्गके वधका
 निष्कृय, शुद्ध-चित्र (अनेक) दण्डकल्प, कन्याका
 प्रकम, अतिचारका दण्ड

कारमें—दाण्डकार्मिक, कोशका अभिसंहरण, मृत्युका
 भरणीय, अनुजोवीका वृत्त, समयका आचारिक,
 राज्यका प्रतिसन्धान, एकैख्यं। छठें मण्डल योन्याधि-
 कारमें—प्रकृतिकी सम्पत्, श्रमका व्यायामिक। सातवें
 पाङ्गुण्याधिकारमें—पाङ्गुण्य समुद्देश, चयके स्थानकी
 वृद्धिका निश्चय, संशयकी वृत्ति, समहीन न्यायस्में
 गुणका अभिनिवेश, हीनसन्धि, विगृह्यासन, सन्धा-
 यसन, विगृह्य यान, सन्धाय यान, सम्भय प्रयाण,
 यातव्य और अभित्रके अभिग्रहको चिन्ता, चय-लोभ-
 विराग हेतु प्रकृतियोंका सामवायक विपरिमर्श, संहित
 प्रयाणिक, परिपणित, अपरिपणित, अपमृत, सन्धि;
 द्वेधौभाविक, सन्धि-विक्रम, यातव्य वृत्ति, अनुग्राह्य
 मित्रविशेष, मित्रसन्धि, हिरण्यसन्धि, भूमिसन्धि,
 अनवसित सन्धि, कर्मसन्धि, पाणिग्राहचिन्ता,
 हीनशक्ति-पूरण, बलवानसे विग्रह करके उपरोध हेतुक
 दण्डोपनत वृत्त, दण्डका उपनायी वृत्त, सन्धिका कर्म,
 सन्धिका मोक्ष, मध्यम चरित, उदासीन चरित, मण्डल
 चरित। आठवें व्यसनाधिकारमें—प्रकृतिके व्यसनका
 वर्ग, राजा और राज्यके व्यसनकी चिन्ता, पुरुषके
 व्यसनका वर्ग, पौडनका वर्ग, कोशके सङ्गका वर्ग,
 स्तम्भका वर्ग, बलके व्यसनका वर्ग, मित्रके व्यसनका
 वर्ग। नवें अभियास्यत्कर्माधिकारमें—शक्ति, देश
 और कालके बलाबलका ज्ञान, यात्राका काल, बलके
 उपादानका काल, सन्नाहका गुण, प्रतिबल कर्मके
 पश्चात् कोपकी चिन्ता, वाह्य और अभ्यन्तरको प्रकृतिके
 कोपका प्रतिकार, चय, व्यय और लाभका विपरिमर्श,
 वाह्य और अभ्यन्तरको आपत्, दूष्य शत्रुका संयुक्त,
 अर्थ, अनर्थ एवं संशयसे युक्त और उपाय तथा
 विकल्पसे उत्पन्न सिद्धि। दशवें संग्रामाधिकारमें—
 स्कन्धावारका निवेश, स्कन्धावारका प्रयाण, बल-
 व्यसनके अवस्कन्दकालका रक्षण, कूट युद्धका विकल्प,
 स्वसेन्यका उत्साहन, स्वबल और अन्य बलका
 योग, युद्धको भूमि, पत्ति-अश्व-रथ और हस्तोका
 कर्म, पक्षकक्षरोका बलाग्रसे व्यूह विभाग, सार-
 गुल्फका बलविभाग, पति-अश्व-रथ और हस्तोका युद्ध,
 दण्डभोगके मण्डलका असंज्ञत व्यूहन, उसके प्रति

व्यूहका स्थापन। ग्यारहवें सङ्घटताधिकारमें भेदका उपादान, उपांशुका दण्ड। बारहवें आबलौयसाधिकारमें दूतका कर्म, मन्त्रका युद्ध, सेनाके मुख्यका वध, मण्डलका प्रोत्साहन, शस्त्र-अग्नि और रसका प्रणिधि, वीवधासारका प्रसारवध, योगका अतिसन्धान, दण्डका अतिसन्धान, एक विजय। तेरहवें दुर्गलभोपायाधिकारमें—उपजाप, योगका वामन, असर्पका प्रणिधि, पर्युपासनका कर्म, अवमर्द, लब्धप्रशमन। चौदहवें औपनिषदिकाधिकारमें—परघातका प्रयोग, प्रलम्भन, अद्भुत उत्पादन, भैषज्य और मन्त्रका प्रयोग, खबलके उपघातका प्रतीकार। पन्द्रहवें तन्त्रयुक्त्याधिकारमें—तन्त्रकौ युक्ति।

अर्थ शौच (सं० क्ली०) अर्थानां अर्थोपार्जनानां शौचं शुचित्वम्, ६-तत्। अर्थार्जनकौ शुद्धि, दौलत कमानेकी पाकीजगौ। मनुने सकल प्रकारके शौच मध्य न्यायार्जनको ही प्रधान माना है।

अर्थसंग्रह (सं० पु०) अर्थानां संग्रहः, ६-तत्। धन-सञ्चय, दौलतका इकट्ठा करना।

अर्थसंस्थान (सं० क्ली०) अर्थानां संस्थानं स्थिति र्यस्मात् येन वा, अर्थ-सम्-स्था अपादाने करणे वा लुपट्। १ धनोपार्जनसाधन प्रतिग्रहादि, दौलत कमानेका काम। भावे लुपट्, ६-तत्। धनकी स्थिति, दौलतकी हालत, खजाना।

अर्थसञ्चय (सं० पु०) अर्थानां धनानां सञ्चयः समुच्चयः समूहश्च, ६-तत्। धनसंग्रह, धनसमूह, दौलतका अम्बार, रुपये पैसेका ढेर।

अर्थसमाज (सं० पु०) अर्थानां धनानां अभिधेयानां कारणानां वा समाजः समूहः, ६-तत्। धनसमूह; अभिधेयसमूह; कारणसमूह।

न्यायशास्त्रके मतसे, जहाँ द्रव्यका कोई विशेष धर्म अर्थात् गुण उत्पादन करनेको अन्यान्य कारणोंके साथ दूसरे भी किसी विशेष कारणकी आवश्यकता होती है, वहाँ उस कारणसमूहको अर्थसमाज कहते हैं। एवं वे सब कारण मिलकर जिस धर्मविशिष्टको उत्पादन करते हैं, उसका नाम अर्थसमाजग्रस्त है।

जैसे, कपड़ा बुननेके लिये नाल, करघा और

सूतकी आवश्यकता होती है। नीले रङ्गका कपड़ा बुननेमें नाल आदि चाहिये, लाल कपड़ा बुननेके लिये भी विना नाल वगैरह काम नहीं चल सकता। अतएव नाल, करघा और सूत कपड़े मात्रके ही सामान्य कारण हैं—सभी कपड़ेके बुननेमें इन कई उपकरणोंकी आवश्यकता पड़ती है।

जो कारण, सब तरहके कपड़ोंकी उत्पत्तिसे पहले विद्यमान रहता, वह वस्त्रमात्रका प्रतिकारण कहा जाता है। नाल, सूत प्रभृति यदि नील वस्त्रके ही प्रति कारण होते, तो लाल रङ्गका कपड़ा बुनते समय इन सबकी आवश्यकता न पड़ती। इससे नाल प्रभृति वस्त्रमात्रके सामान्य कारण हैं सही, परन्तु वर्णके सामान्य कारण नहीं हैं। अतएव नील प्रभृति वर्णोंके उत्पन्न करनेको अन्य कारणका विद्यमान रहना आवश्यक है।

देखा जाता है, कि सूत नीलवर्ण होनेसे वस्त्र भी नीलवर्ण होता है। परन्तु केवल सूत नील वर्णका होनेसे वस्त्र नील वर्णका नहीं बनता। सूत, सूतका नीला रङ्ग, नाल और करघा ये सब कारण एकत्र मिलनेसे नील वस्त्र उत्पन्न होता है। अतएव नील वस्त्रका कोई पृथक् कारण न रहते भी दोनों कारणोंके मिल जानेसे वह बन जाता है, इसलिये नीलवस्त्रत्व अर्थसमाजग्रस्त हुआ। इसीसे जा धर्म पृथक् कारणका कार्यतावच्छेदक न ठहर सामान्य दोनों कारणोंके मिलनेसे सिद्ध होता है, उस धर्मको अर्थसमाजग्रस्त कहते हैं।

अर्थसमाहार (सं० पु०) अर्थानां धनानां समाहारः सम्यक् आहरणम्, ६-तत्। १ धनार्जन, धनसंग्रह, रुपयेका पैदा करना, दौलतका अम्बार। अर्थानां अभिधेयानां समाहारः संचेपः, ६-तत्। २ अर्थका संचेप करना, मानीका मुख्तसिर।

अर्थसम्बन्ध (सं० पु०) अर्थानां धनानां सम्बन्धः संसवः, ६-तत्। १ धनसम्बन्ध, अर्थसंसर्ग, दौलतका तात्तुक। शास्त्रकारोंने कहा है,—जिसके साथ विशेष प्रणय रखनेकी इच्छा हो, उससे किसी प्रकारका अर्थ-सम्बन्ध रखना चाहिये।

“धनेच्छेदपुलां प्रीतिं तेन साधनमिन्दम ।

न कुर्यादर्थसम्बन्धं स्त्रियाः सन्दर्शनं तथा ।” (अ.ति)

२ धनसम्बन्धके प्रयोजक शास्त्रीय अपतित पुत्र-
त्वादि । ३ लौकिक क्रयादि, दुनियावी खरीद वगै-
रह । अर्थस्य वाचाद्यर्थस्य सम्बन्धः, ६-तत् ।

४ वाचादि अर्थका सम्बन्ध, मानोका तालुक ।

अर्थसाधक (सं० पु०) १ विषयके प्रतिफलका
आनयन, बातके मतलबका निकास । २ दशरथके
मन्त्रिविशेष । ३ पुत्रजीव वृद्ध, जियापूत । इसके
फलकी माला बनाकर लड़कोंको पहनायी जाती है ।
लोग कहते, कि उससे वह नीरोग और भूत-प्रेतकी
वाधासे दूर रहते हैं ।

अर्थसाधन (सं० पु०) १ पुत्रजीव वृद्ध, जियापूत ।
२ रौठकरछ, बड़ा रौठा ।

अर्थसार (सं० पु०) अधिक सम्पत्ति, ज्यादा
दौलत ।

अर्थसिद्ध (सं० त्रि०) अर्थेन अर्थयोग्यताविशेषणैव
सिद्धम्, ३-तत् । विना शब्द योग्यतासे ही सिद्ध
होनेवाला, जो बेलफुज मतलबसे ही साबित हो । जैसे
'पानी भरनेको घड़ा लावो' कहनेसे वही घड़ा लाना
पड़ेगा, जिसमें छेद न हो । क्योंकि फूटे घड़ेमें पानी
नहीं ठहरता । यह मत मीमांसकका है । (पु०)
२ पुत्रजीव वृद्ध, जियापूतका पेड़ । ३ श्वेतनिगुण्डी,
सफेद संभालू । ४ कृष्णनिगुण्डी, स्याह संभालू ।

अर्थसिद्धक, अर्थसिद्ध देखो ।

अर्थसिद्धि (सं० स्त्री०) अर्थेन तात्पर्येण योग्यता-
विशेषण वा सिद्धिः, ३-तत् । १ तात्पर्य द्वारा सिद्धि,
मतलबसे कामयाबी । ६-तत् । २ धनकी सिद्धि,
दौलतकी कामयाबी ।

अर्थहर (सं० त्रि०) अर्थान् धनानि हरति अन्यायेन,
ताच्छिलादौ । १ परका धन हरण करनेवाला, जो
दूसरेकी दौलत चोरा लेता हो । (पु०) २ चोर ।

अर्थहीन (सं० त्रि०) अर्थेन हीनः, ३-तत् ।
१ धनहीन, दरिद्र । बेदौलत, गरीब । २ अभिप्राय-
शून्य, बेमानी । ३ असफल, नाकामयाब ।

अर्थगम (सं० पु०) अर्थान्तरन्यासः, ६-तत् ।

१ आय, आमदनी । २ धनार्जन, रुपयेकी कमायी ।
अर्थ आगम्यतेऽनेन, करणे घञ् । ३ धनके उपार्जनका
हेतु क्रयविक्रयादि, रुपया पैदा करनेको खरीद-
फरोख्त वगैरह । ४ शब्दार्थकी उपस्थिति, लफ्जकी
मानोकी मौजूदगी ।

अर्थात् (सं० अव्य०) १ कार्यकी दशाके अनुसार,
मामलेके मुवाफिक । २ वस्तुतः, दरइकौकत, अस-
लमें । ३ यानी ।

अर्थाधिकार (सं० पु०) कोषाध्यक्षका कार्य, धन
वा सम्पत्तिका रक्षण, खज़ाचीका काम, दौलत या
जायदादकी रखवाली ।

अर्थाधिकारिन् (सं० पु०) कोषाध्यक्ष, वेतनाध्यक्ष,
खज़ाची, तनखाह बांटनेवाला ।

अर्थाना (हिं० क्ति०) अर्थ लगाना, मानी बताना,
समझाना ।

अर्थानुवाद (सं० पु०) मानोका तर्जुमा, किसी
मतलबको बार बार कहना ।

अर्थान्तर (सं० स्त्री०) अन्योऽर्थं अर्थान्तरम्, राजा
राजान्तरवत् मयूरव्यं० तत् । १ अन्य अर्थ, दूसरा
मतलब । न्याय मतमें उद्देश्यसिद्धिको प्रयुक्त वाक्य
अनुद्देश्य सिद्धिके अनुकूल पढ़नेसे अर्थान्तर होता है ।
२ निष्प्रयोजन वाक्य, बेमतलब बात । ३ प्रकृतिके
अनुपयुक्त वाक्य, जो बात कुदरतके मुवाफिक न हो ।
४ बार्देसके अन्तर्गत निग्रह स्थान विशेष । इसके
कहनेसे प्रतिवादी द्वारा वादीका निग्रह होता है ।

५ अन्य कारण, दूसरा सबब ।

अर्थान्तरन्यास (सं० पु०) अर्थान्तरं न्यस्यतेऽत्र,
अर्थान्तर-नि अस् आधारे घञ्; अर्थान्तरस्य न्यासो
यत्र वा । अर्थालङ्कार विशेष । एक प्रकारके अर्थ-
द्वारा अन्य प्रकारका अर्थ समर्थन करनेको अर्थान्तर-
न्यास कहते हैं । अलङ्कारिकोंने इसे आठ प्रकारमें
विभक्त किया है । यथा,—

“सामान्यं वा विशेषणं विशेषणं वा यदि ।

कार्यस्य कारणेनेदं कार्येण च समर्थते

साधय्येतेतराण्यर्थान्तरन्यासोऽप्युच्यते ।”

विशेष अर्थद्वारा सामान्य अर्थका समर्थन ; सामान्य

अर्थद्वारा विशेषार्थका समर्थन; कारण द्वारा कार्यका समर्थन एवं कार्य द्वारा कारणका समर्थन। फिर ये आठ प्रकार समान धर्म और विधर्म द्वारा दो भागोंमें विभक्त किये गये हैं।

विशेष द्वारा सामान्यका समर्थन, यथा—

“वृहत्सहायः कार्यार्थं चोदीयानपि गच्छति।

सम्भूयात्त्वोधिमध्येति महानद्या नगापगा ॥”

अति चूद्रतर व्यक्ति भी महत्की सहायतासे कार्यका पार पा जाता, इसीसे गिरि-निर्भरिणौ, महा-नदी गङ्गाके साथ मिलकर समुद्रको प्राप्त होती है।

यहां श्लोकके दूसरे पादमें—गिरि-निर्भरिणौ, वृहत् सहाय गङ्गाके साथ मिल समुद्रको प्राप्त होती,—इस विशेषद्वारा, चूद्रतर व्यक्ति महत्का आश्रय पानेसे कार्य उद्धार कर सकता, यह सामान्य समर्थन किया गया।

सामान्यद्वारा विशेषका समर्थन, यथा—

“यावदर्थपदां वाचनवमादाय माधवः।

विरराम महीयांसः प्रकृत्वा मितभाषिणः।”

महत् व्यक्ति स्वभावसे ही अल्पभाषी होते हैं। इसीसे माधव ऐसी अर्थयुक्त एक बात कहकर चुप हो गये।

यहां श्लोकके दूसरे पादमें,—महत् व्यक्ति अधिक नहीं बोलते,—इस सामान्यद्वारा श्लोकके प्रथमपादमें माधवने सारवान् अल्प बात कही—यह विशेष समर्थन किया गया।

कारण साधर्म्यद्वारा कार्यका समर्थन, यथा—

“यच्च स्थिरा भव भुजङ्गम धारयेनां

त्वं कूर्मराज तदिदं हितं दधीषाः।

दिक्कुक्षराः कुक्षत तत्त्वितये दिधीषां

माथेः करोति हरकालुं कमाततम्यम् ॥”

जनकालयमें जब रामचन्द्र शिवधनु भङ्ग करनेको उठे, तब लक्ष्मणने पृथिवी आदिसे कहा—हे पृथिवी! तुम स्थिर हो! अनन्त! तुम इसे धारण करो। कूर्मराज! तुम पृथिवी और नागराज दोनोंको साधो। हे अष्टदिग्गज! तुम लोग पृथिवी, अनन्त और कूर्मराज इन तीनोंको ही धारण

करनेकी इच्छा करो। क्योंकि आर्य रामचन्द्र धनुषको चढ़ा रहे हैं।

यहां, रामचन्द्र धनुषको चढ़ा रहे हैं—इस कारण द्वारा पृथिवी प्रभृतिके स्थिर होने इत्यादि कार्यका समर्थन किया गया।

कार्यसाधर्म्यद्वारा कारणका समर्थन, यथा—

“सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदात्पदं।

वृणते हि विमृशकारिणं गुणलुब्धः स्वयमेव सम्पदः।”

सहसा कोई काम न करे। कारण, अविवेचना ही परम आपदका स्थान है। गुणानुरागिणी लक्ष्मी विवेचक मनुष्यको आपही वरण करती है।

यहां, लक्ष्मी आप ही वरण करती हैं—इस कार्यद्वारा, सहसा कोई काम न करे—इस विवेचना रूप कारणका समर्थन किया गया।

ऊपरके सब श्लोक समान धर्मविशिष्टके उदाहरण हैं। वैधर्म्यविशिष्ट यथा,—

“इत्यमाराध्यमानोपि क्तिन्नाति भुवनवयम्।

शम्येत् प्रत्युपकारेण नोपकारेण दुर्जनः ॥”

तारकासुर इस तरह पूज्य होनेपर भी त्रिभुवनको कष्ट देता है। कारण, दुर्जन अपकार करनेसे शान्त होता है।

यहां, दुर्जन अपकार करनेसे शान्त होता—इस वैधर्म्य द्वारा, दुर्जन सदयाधरण करनेसे शान्त नहीं होता, यही समर्थित हुआ। इस श्लोकमें, दुर्जनका अपकार करनेसे शान्त होना सामान्य एवं दुर्जनका अनुकूलाचरण करनेसे शान्त न होना विशेष है। और पूर्व श्लोकमें,—सहसा कार्य न करना आपदकर नहीं है, यह कार्य वैधर्म्यका समर्थन करता है।

अर्थान्वित (सं० त्रि०) १ धनसम्पन्न, दौलतमन्द, जिसके पास रुपया रहे। २ अभिप्रायगर्भ, मानीदार।

अर्थापत्ति (सं० स्त्री०) अर्थस्य अनुक्तार्थस्य आपत्तिः प्राप्तिः सिद्धिरिति यावत्। मौमांसकके मतसे, जो विषय प्रकाश करके नहीं कहा गया, किसी शब्दद्वारा उसी विषयकी सिद्धि। यथा,—‘स्थूलकाय देवदत्त दिनमें भोजन नहीं करता’। देवदत्त दिनमें भोजन

नहीं करता, तो भी उसका शरीर स्थूल है। सुतरां स्थूलत्व देख यह समझा जाता, कि वह रातमें भोजन करता है। कारण, एकदम अनाहार रहनेसे वह क्षय हो जाता। देवदत्त क्षय हो जाता—यह अनुपपत्तिज्ञान, देवदत्त रातमें भोजन करता है, इस ज्ञानका जनक हुआ। इसलिये देवदत्त रातमें भोजन करता है, यह ज्ञान अर्थापत्ति कहा जाता है। नैयायिक व्यतिरेक व्याप्तिज्ञानसे इसे अनुमानका अन्तर्भूत बताते हैं, अतिरिक्त प्रमाण नहीं ठहराते। जो आदमी रात और दिनको भोजन नहीं करता, उसका शरीर भोजन नहीं रह सकता—इसे ही वे लोग व्यतिरेकव्याप्ति कहते हैं।

अर्थस्थापत्तिर्यस्मात्, ५-बहुव्री०। अर्थापत्तिका साधन; उपपाद्य ज्ञान। जिसके बिना किसी द्रव्य आदिकी उत्पत्ति नहीं होती, उसका नाम उपपाद्य है। रातको बिना भोजन किये स्थूलता नहीं रह सकती, इसलिये स्थूलता उपपाद्य है। फिर जिसके अभावमें किसी वस्तुकी अस्तित्व होती है, उसे उस वस्तुका उपपादक कहते हैं। रात्रिभोजनके अभावमें स्थूलता नहीं रह सकती, अतएव रात्रिभोजन ही उपपादक है। रात्रिभोजन कल्पनारूप प्रतीति ज्ञानका विषय है।

३ अर्थालङ्कार विशेष ।

“दण्डापूर्पिकन्यायार्थगोष्ठापत्तिरित्ये। (साहित्यदर्पण)

दण्डापूर्पन्यायद्वारा जिस अर्थकी सिद्धि हो, उसे अर्थापत्ति कहते हैं। जैसे, किसी जगह कुछ पूवा और एक लठ रख था। सबेर सबने देखा, कि पूवा नहीं और लठमें चूहेके दांतका चिह्न बना था। इसलिये लठमें चूहेके दांतका चिह्न देखकर यह स्थिर हुआ, कि पूवाको चूहा खा गया। इसीका नाम दण्डापूर्पन्याय है। ऐसे न्याय द्वारा जो ज्ञान सिद्ध होता है, अर्थापत्ति वही है। इससे कभी प्रस्तावित अर्थद्वारा अप्रस्तावित अर्थकी और कभी अप्रस्तावित अर्थद्वारा प्रस्तावित अर्थकी उपस्थिति होती है।

प्रस्तावित अर्थसे अप्रस्तावित अर्थकी उपस्थिति,

यथा—

“हारोऽयं हरिणाचौषां लुठति लनमखले।

मुक्तानामप्यवखेयं के वयं अरकिङ्कराः।” (साहित्यदर्पण)

यह हार रमणीके स्तनपर लोट रहा है। मुक्तावली हीकी जब यह दशा है, तब हमलोग तो कन्दर्पके दास हैं, हमारी बात कौन चलाये; अर्थात् हम लोग तो उसपर लोट ही जा सकते हैं।

इस श्लोकमें ‘मुक्तानां’ इस पदके दो अर्थ हैं। पहला—मुक्ता अर्थात् रत्नसमूहका और दूसरा—मुक्त अर्थात् मुक्तिपानेवालेका। मुक्तावली अचेतन पदार्थ है। उससे रमणीका आलिङ्गन असम्भव है। किन्तु असम्भव होनेपर भी वह जब स्त्रीको आलिङ्गन करता, तब हम लोगोंके लिये तो यह नितान्त सम्भवपर है। इसीको अर्थापत्ति कहते हैं। यहां मुक्तावली वर्णनीय होनेसे प्रस्तावित और कामपीड़ित व्यक्तिकी बात अप्रस्तावित विषय है।

अप्रस्तावित अर्थद्वारा प्रस्तावितकी उपस्थिति यथा,—

“विलाप सवायगदगदं सहजामप्यपहाय धोरताम्।

अतितप्तमयीऽपि माद्वं भजते कैव कथा शरीरिणाम्॥” (रघु)

स्वाभाविक धैर्य परित्यागकर अजराजने वाय्वगदगद स्वरसे विलाप किया था। अति तप्त होनेसे लोहा ही जब गल जाता, तब शरीरधारीकी कौन बात; अर्थात् वह तो अवश्य चञ्चल हो सकता है। अति तप्त लोहा ही जब गलकर चञ्चल हो जाता, तब प्राणी तो चञ्चल होगा ही—यहां यही अर्थापत्ति है। वर्णनका विषय न होनेसे लोहा अप्रस्तावित और शरीरधारी प्रस्तावित है। (तल्लोहदी)

अविधीयमान (बिना कहे हुये) अर्थमें जो दूसरा अर्थ सहसा प्राप्त हो जाता, वह भी अर्थापत्ति कहा जाता है। जैसे,—मेघ न रहनेसे वृष्टि कैसे होगी। ऐसा बोलनेपर स्पष्ट मालूम पड़ता कि, मेघ रहनेसे वृष्टि होती है। इसमें, रहनेसे यह अर्थ प्रसज्य ठहरता है। (वातसाधन-न्यायभाष्य १११।)

कोई कोई मीमांसक अर्थापत्तिकी दूसरा प्रमाण मानते हैं। नैयायिक और वैशेषिक कहते हैं, कि

अर्थापत्ति अनुमान ही के अन्तर्गत है ; दूसरा कोई प्रमाण नहीं ।

अर्थापत्ति, दो प्रकारकी होती है—दृष्टार्थापत्ति, और श्रुतार्थापत्ति । इसमें, देवदत्त दिनको नहीं खाता—ऐसा देखनेपर दृष्टार्थापत्ति और विदित होनेपर श्रुतार्थापत्ति होती है । दृष्टार्थापत्तिका उदाहरण, यथा—जीवित देवदत्तका निजालय (गृह) में रहना न देखकर बाहर रहना कल्पना किया जाता है । यदि घरमें न रहनेसे बाहर रहना भी न माना जाय, तो जीवित रहनेकी उपपत्ति (विश्वास) नहीं हो सकती, इसलिये बाहर रहनेकी कल्पना होती है । श्रुतार्थापत्ति, यथा—स्थूल देवदत्त दिनको भोजन नहीं करता यहां दिनके भोजन न करने-वालेकी, रात्रिमें भी भोजन न पानेसे स्थूलत्व कैसे हो सकता, इसलिये रात्रिमें भोजन करनेकी कल्पना होती है । श्रुतार्थापत्ति भी अनुमितानुमान है । जैसे, स्थूल देवदत्त इत्यादि वाक्यके द्वारा स्थूलत्वका अनुमान लगा उसी चिह्नसे रात्रिको भोजनका अनुमान किया जाता है ।

अर्थापत्तिसम (सं० पु०) जाति । अर्थापत्तिसे प्रतिपक्ष (अन्यपक्ष) की सिद्धिको अर्थापत्तिसम कहते हैं । (गौतमसूत्र ५।२१)

शब्द प्रयत्नान्तरीयक अर्थात् प्रयत्नसे उत्पन्न होने कारण, घटके सदृश अनित्य होता है । ऐसा पक्ष स्थापित करनेपर, अर्थापत्तिके द्वारा प्रतिपक्ष (नित्य) की साधन करनेवाला अर्थापत्तिसम कहा जाता है । यदि प्रयत्नान्तरीयकत्व और अनित्य साधर्म्यके हेतु शब्द अनित्य होता, तो नित्य साधर्म्य रहनेसे वह नित्य भी हो सकता है । क्योंकि इसके नित्यत्वमें अस्थायत्व साधर्म्य है । (वात्स्यायन ५।१।२१)

अर्थापत्तिके आभाससे, प्रतिपक्ष साधनको प्रत्यवस्थान अर्थापत्तिसम होता है । अर्थापत्ति ही उक्तसे अनुक्तको आक्षेप करती अर्थात् लाती है । यह शब्द अनित्य ठहरता, ऐसा कहने ही से विदित होता, कि अन्य नित्य है । एवं दृष्टान्तकी असिद्धि और विरोध भी होता है । कलकल (यात्री

प्रकृतिप्रत्ययसे निष्पन्न होने) के कारण शब्द अनित्य है—ऐसा कहनेपर अर्थात् उत्पन्न हुए दूसरे हेतुसे बोध या सत्प्रतिपक्ष पड़ जाता है । फिर यदि अनुमानसे अनित्य कहा जाय, तो प्रत्यक्षसे नित्य बोध होता है । (गौतमवृत्ति ५।२१)

अर्थाय (सं० अव्य०) कारण वश, बसबब ।

अर्थायिन् (सं० त्रि०) धनका मान करने वा विषय प्राप्तिकी इच्छा रखनेवाला, जो दौलतकी इज्जत करता या कोई मतलब निकालना चाहता हो ।

अर्थालङ्कार (सं० पु०) अलङ्कार विशेष । इसमें अर्थका गौरव रहता है ।

अर्थिक (सं० पु०) अर्थयति ; अदन्त चुरा० अर्थ-णिच्-णिनि कुत्सितार्थे कन् । प्रातःकाल निद्रित राजाको स्तुति पाठकर जगानेवाला, जो सवेरे सोते हुए बादशाहको तारीफ़ करके जगाता हो ।

अर्थित (सं० त्रि०) अदन्त चुरा० अर्थ-णिच् गौणे कर्मणि क्त । १ याचित, जिससे कुछ मांगा जा चुके । (क्ली०) २ इच्छा, खाद्दिश, दरखास्त ।

अर्थितव्य (सं० त्रि०) याच्चा किये जाने योग्य, जो मांगे जाने काबिल हो ।

अर्थिता (सं० स्त्री०) १ याच्चा, कामना । २ भिक्षुक-को दशा, मांगनेवालेकी हालत ।

अर्थित्व (सं० क्ली०) अर्थिता देखो ।

अर्थिन् (सं० पु०) अर्थयति ; अदन्त चुरा० अर्थ-णिच्-णिनि, णिच्-लोपः । १ याचक, मांगनेवाला । २ सेवक, खिदमतगार । ३ अनुजीवी, मातहत ।

‘सेवकार्यानुजीविनः’ (अमर) अर्थो धनमस्यास्ति, अस्त्यर्थे इति । ४ धनशाली, दौलतमन्द । ५ धनस्वामी, दौलतका मालिक । ६ कार्याकाङ्क्षी, गर्जमन्द । ७ वादी, मुद्दई ।

अर्थिन्सात् (सं० अव्य०) अर्थिभ्यो देयमधीनं करोति, अर्थिन्सात् । याचककी ओरसे, मांगनेवालेकी तर्फ । अर्थि, अर्थिन् देखो ।

अर्थी (सं० अव्य०) कारण वश, बसबब ।

अर्थात् (वै० त्रि०) १ कार्यरत, परिश्रमी, काम करनेवाला, मिहनती । २ आशकारी, जल्दबाज ।

अर्थेप्सु (सं० त्रि०) धनाभिलाषयुक्त, दौलतका
खादिशमन्द ।

अर्थेप्सुता (सं० स्त्री०) धनाभिलाष, दौलतकी
खादिश ।

अर्थेहा, अर्थेप्सुता देखो ।

अर्थोपक्षेपक (सं० पु०) अर्थान् प्रयोजनानि उप-
क्षिपति, अर्थ-उप-क्षिप-ण्युल् । नाटकका अङ्ग
विशेष, खेलका कोई हिस्सा । विष्कम्भक, प्रवेशक,
चूलिका, अङ्गावतार और अङ्गमुखको नाट्यशास्त्रमें
अर्थोपक्षेपक कहते हैं ।

अर्थोपमा (सं० स्त्री०) अर्थोपमा देखो ।

अर्थोपमा (सं० स्त्री०) अर्थोनेव उपमा न तु शब्दे-
नोक्ता । उपमालङ्कार विशेष ।

“आर्थोतुल्यसमानायास्तुल्यार्थो वन वा वतिः ।” (साहित्यदर्पण)

यदि तुल्य वा समानादि शब्द रहे अथवा
तेन तुल्य क्रिया च वतिः । पा ५।१।११५—इस सूत्रके अनुसार
तुल्यार्थमें वति रहनेगी, तो उसका नाम अर्थोपमा वा
आर्थी उपमा होगा । तुल्य समानादि शब्द रहनेसे
‘कमलके तुल्य मुख,’ यह बात कहनेपर उपमेय
मुखमें कमलका, ‘कमल मुखके तुल्य’ यह बात कहने-
पर उपमान कमलमें मुखका और ‘कमल एवं’ मुख
तुल्य’ इस बातके कहनेपर दोनोंमें दोनोंका सादृश्य
समझा जाता है । ऐसे अर्थके अनुसन्धान हेतुसे ही
सादृश्य भलकता, इसीसे उसका नाम आर्थी उपमा वा
अर्थोपमा है । तुल्यार्थमें विहित वति रहनेपर
भी ऐसे अर्थानुसन्धानसे सादृश्यका बोध होता है,
अतएव वहां भी आर्थी वा अर्थोपमा कहना होगा ।
विशेष वचन उपमा शब्दमें देखो ।

अर्थोपार्जन (सं० पु०) धन वा सम्पत्तिकी प्राप्ति,
दौलत या जायदादकी कमायी ।

अर्थोपान् (सं० स्त्री०) धन, धनाभिमान, धनिकता,
दौलत, दौलतका गरूर, दौलतमन्दी ।

अर्थोष (सं० पु०) कोषाध्यक्ष, खज़ांची ।

अर्थ्य (सं० त्रि०) अर्थात् प्रयोजनात् अनपेतम्,
अर्थ-यत् । १ न्याय्य, वाजिव । २ सार्थक, बामानी ।

३ सप्रयोजन, मतलबी । ४ धनवान्, दौलतमन्द ।

५ पण्डित, इल्मदार । अर्थ कर्मणि यत् । ६ याच्य,
मांगा जाने काबिल । ७ प्रार्थनीय, अर्जु किये जाने
लायक । अर्थाय साधु यत् । ८ अर्थसाधन, दौलत
देनेवाला । (स्त्री०) ९ शिलाजतु । १० गेरू, लाल
मटो ।

अर्दन (सं० स्त्री०) अर्द-ल्युट् । १ याचन, अर्ज ।
२ पौड़न, तकलीफदिहो । ३ इनन, कत्ल । ४ गमन,
रवानगी । (त्रि०) ५ विचलित, गमनशील, जो
वेचैन घूमता हो । ६ पौड़क, तकलीफदिह ।

अर्दना (सं० स्त्री०) अर्द-चुरा० भावे युच् ।
१ भिक्षा, भोख । २ धध, हिंसा, कत्ल, तकलीफ-
दिहो । (हिं० क्रि०) ३ पौड़ा पड़चाना, मारना-
कूटना, तकलीफ देना ।

अर्दनि (सं० पु०) १ अग्निरोग, हाजमेकी बीमारी ।
२ याच्ना, मांग । ३ अग्नि, आग ।

अर्दलौ, अर्दलौ देखो ।

अर्दित (सं० त्रि०) अर्द-क्त । १ याचित । २ गत ।
३ पौड़ित । (स्त्री०) ४ वायुव्याधिविशेष, मुखमण्डलका
पक्षाघात (Facial paralysis), शिरके अर्धभागका
अवश हो जाना ।

मुखमण्डलका दो प्रकारके स्नायुद्वारा सन्दन कार्य
सम्पन्न होता है । यथा,—पोर्शियो डिउरा (Portio
dura) वा सप्तमयुगल स्नायुकी मुखमण्डलस्थित शाखा
एवं पञ्चम युगलस्नायुकी तृतीयांशकी गलगण्डविहीन
(Non ganlionic) शाखा । पञ्चमयुगल स्नायुकी प्रथम
एवं द्वितीयांश और तृतीयांशकी गलगण्डयुक्त शाखा
द्वारा यहाँका स्पर्शानुभावकता कार्य निकलता है ।

पोर्शियो डिउरा एवं पञ्चम युगलकी तृतीयांशकी
सन्दनकारी शाखाके ऊपर कोई आघात लगने अथवा
दूसरा कारण पड़नेसे इस स्थानका व्यतिक्रम बढ़नेपर
मुखमण्डलमें पक्षाघात होता है । सचराचर मुख-
मण्डलकी एक हो और पक्षाघात पड़ता है । जिस
ओर पक्षाघात लगता है, रोगी उस ओरकी आंखको
सूँद नहीं सकता । मुखको दोनों ओरका भाव
मिलानेसे बड़ो विलक्षणता दिखाई देती है । असुख
ओरकी नासिकाका सन्दन नहीं होता, रोगी उस

ओरको सिकोड़ भी नहीं सकता। हनु अर्थात् गालकी हड्डो कुछ लटक आती और मुखके शेषभागसे लार और खाद्यद्रव्य गिर पड़ता है। रोगीके हंसने पर असुख और कुछ टेढ़ी हो जाती और बहुत खराब दिखाई देती है। रोगी साफ बोल और ओष्ठवर्णका उच्चारण कर नहीं सकता। किन्तु मुखका ऐसा व्रतिक्रम होनेपर भी रोगी अनायास खाद्य द्रव्यको चबा सकता है। इससे समझा जाता है, कि असुख और चैतन्य न रहता सही, परन्तु पञ्चम युगल स्नायुमें कोई वेलक्षण नहीं पड़ता। प्रायः मुखको दोनो ओर पचाघात देखनेमें नहीं आता। फिर भी किसी किसी आदमीके वैसे हो सकता है। उस दशामें आंख और नाकके ऊपर विशेष दृष्टि रखनेसे रोग समझ पड़ता है।

शारीरिक दुर्बलता बढ़ने एवं दुर्बल मनुष्यके सोते समय मुखमें शीतल वायु लगनेसे यह रोग हो जाता है। सड़े दांत, स्नायुशूल, खोपड़ीके भीतरी ध्रुवद, कानके निकटवर्ती शङ्कास्थिस्थित प्रस्तरांशोय रोग प्रभृति एवं अन्यान्य नाना कारणोंसे मुख-मण्डलमें पचाघात लग सकता है। यह रोग प्रायः सांघातिक नहीं होता, परन्तु मस्तिष्कमें पीड़ा रहनेसे विपद् आ सकती है।

चिकित्सा—यदि कोई मूल रोग हो, तो उसका प्रतीकार करना नितान्त आवश्यक है। लौहघटित वलकर औषध, हलका जुलाब, आयोडिड-अव पोटाश प्रभृति औषधोंसे विशेष उपकार पहुँचता है। रोगियोंको बिजलीका जोर देने और घिसनेसे भी ज्यादा आराम मिलता है।

अवधीत मतसे मालिश करनेका बी—नेवलेकी चर्बी, सूवरकी चर्बी, बकरेकी चर्बी, सैन्धव नमक, अश्वगन्धाकी छालका रस पांच पुराना बी—आधा आधा पाव और कुचिलाका बीज लाये। पहले सब बी और चर्बीको किसी पत्थरके बरतनपर मिला धूपमें हाथसे रगड़े। दूसरे दिन धूपमें सेंधा नमक देकर सब चर्बी ऐसे घिसे, कि नमकका नाम मात्र भी न रहे। उसके बाद कुचिलेके एक एक बीजसे चर्बीको रगड़ना चाहिये।

घिसते घिसते जब बीज चुक जाये, तब अश्वगन्धाका रस देकर चर्बीको धूपमें फिर रगड़े। इसतरह हर रोज पहर भर घिसकर चर्बीको धूपमें रख दे। अश्वगन्धा-रसके जलका अंश सूख जाने पर औषध व्यवहारके योग्य होता है। इसे पचाघात पर मालिश करनेसे शीघ्र प्रतीकार पहुँचता है।

होमियोपैथिक चिकित्सक मुखके पचाघातमें वेल्लेडोना, एकोनायिट, वारायिटो कार्बोनिंका और काष्टिक वगैरह दवा देते हैं। आंखकी ऊपरी पलकके स्पन्दनशून्य हो जानेका महौषध जेल-सिमिनम है।

वैद्यशास्त्रमतसे—स्नेह, अभ्यङ्ग, शिरोवस्त्रि, पान, नस्य और भोजनके अनन्तर घृतपान करनेसे अर्दित रोग दूर हो जाता है।

मुखके पचाघातमें साधारणतः वैद्यलोग कटु तैल मर्दन, अश्वगन्धाका प्रलेप, घृत मर्दन एवं मांस-भोजनकी व्यवस्था करते हैं। अन्यान्य विस्तारित विवरण पचाघात शब्दमें देखो।

अर्दितिन् (सं० पु०) अर्दितमस्ति अस्य इति। मुखके पचाघातका रोगी, जिसके मुँहमें लकवा लग गया हो।

अर्दीयमान (सं० त्रि०) दुःखित, पीड़ित, आजुर्दा, थका-माँदा।

अर्देशौर—ईरानी शहर सीस्तानवासी बहमानके लड़के। सन् ११८४ ई०में इन्होंने पारसी धर्मग्रन्थ बन्दिदादकी एक नकल उतारी थी। हरबद महयार भारतसे सीस्तान जा उस नकलको ले आये। सन् १३२३ ई०को कम्बे नगरमें ईरानवासी कौ खशरू और रुस्लम मेहरबानने उसे देख दूसरी भी नकल उतारी थीं।

अर्देशौर नौशेर्वान्—ईरानी शहर किरमान्के पुरोहित। सन् १५७८ ई०में अकबर बादशाहके प्रार्थना करने पर पारसी धर्मोपदेशकोनि इन्हें भारत अपना मत फैलानेको भेजा था। इन्होंने यहां आ अकबरको अपने धर्मका सम्पूर्ण कर्मकाण्ड सिखाया और मौज्जा-मेखला भी पहनायी। अकबरने इन्हींके उपदेशानुसार अपने ज्ञानखानेमें अग्निदेवका मन्दिर बनाया और

अबुलफज़लको उसे सौंप कहा था,—क्या रात का दिन, किसी समय इस मन्दिरकी पवित्र अग्नि बुझने न पावे।

अर्देशौर पपकान—प्राचीन समयके कोई मिश्रवासी व्यापारी। यह मिश्रसे जहाज़पर चोजें लाद प्राचीन समयमें भारत वेचने आते रहें। कुशानोंसे मिल कर्ण-पल्लवोंने एक बार इनपर सिन्धुनदके समीप घोर आक्रमण किया था।

अर्दीयी—काठियावाड़के गोंडल-नरेशकी प्राचीन राजधानी। इसे गोंडलसे उत्तर-पूर्व और राजकोटसे दक्षिण दूरी कोस दूर पायेंगे। इसकी पूर्व ओर एक बुरज बना है। सन् १६५४-५५ ई०में कोटरा सङ्गानी राज्यके प्रतिष्ठाता सांगोजीको यह जागौरमें दे दी गयी थी। यहां की ज़मीन् बहुत अच्छी और पास ही गोंडल नदीमें गिरनेवाला नाला बहता है।

अर्धमान (सं० त्रि०) पीड़ित, आजुर्दा, जिसको तकलीफ़ मिल रही हो।

अर्ध (सं० पु०) ऋध वृद्धौ भावे घञ्। १ वृद्धि, बढ़ती। आधारि घञ्। २ गृह प्रभृति, मकान वगैरह। करणे घञ्। ३ एकदेश, खण्ड, टुकड़ा, हिस्सा। ४ वृद्धि-प्राप्तिका आधार, बढ़नेकी बुनियाद। ५ वायु, हवा। ६ समीप, पास। (त्रि०) ऋध-णिच् कर्मणि अच्। ७ खण्डित, टटा-फूटा। (क्ली०) अर्धं नपुंसकम्। पा २।२। ८ समानांश, दो बराबर टुकड़ोंमें एक।

अर्धक (सं० पु०) जलसर्प, पनिहा सांप।

अर्धकघातिन् (सं० पु०) रुद्र।

अर्धकपाटसन्धिक (सं० पु०) वाह्यदीर्घकपालीत-राज्यपालिकर्णबन्धनाकृति विशेष।

अर्धकाल (सं० पु०) शिव।

अर्धकूट, अर्धकाल देखो।

अर्धकृत (सं० पु०) अर्धं कृतम्। असम्पूर्ण सम्पादित, पूरा न किया हुआ, जो अधूरा बना हो।

अर्धकोतु (सं० पु०) रुद्र विशेष।

अर्धकैशिकी (सं० पु०) छेदनार्थं शस्त्रधारा विशेष, काटनेके लिये हथियारकी खास शान।

अर्धकोटी (सं० स्त्री०) आधा करोड़, पचास लाख।

अर्धकोश (सं० पु०) आधा खजाना।

अर्धकौड़विक, आर्धकौड़विक (सं० त्रि०) अर्ध-कुड़व-परिमाणमर्हति, अर्ध-कुड़व-ठञ्। अधकुड़वके परिमाणयोग्य, जो सोलह तोलेके बराबर हो।

अर्धकोश (सं० पु०) आध कोस, एक मील।

अर्धखार (सं० स्त्री०) अर्धं खार्याः, एकदेशो टच् समा०। खारीमानार्ध, आधी खारी, आठ द्रोण। (स्त्री०) अर्धखारी।

अर्धगङ्गा (सं० स्त्री०) अर्धं गङ्गायाः, एकदेशी तत्। कावेरी नदी। कावेरी नहानेसे गङ्गास्नानका आधा फल मिलता है।

अर्धगर्भ (सं० त्रि०) अर्धं वत्सरस्यार्धे अग्रहायणादौ पौषादौ वा ब्रह्माण्डस्यार्धे गगने वा गर्भं गर्भस्थानीय-मुद्रकं येन। सूर्यके किरण विशेषसे सम्बन्ध रखने-वाला। अग्रहायण एवं पौषादि मास सूर्य अपने किरणसे पृथिवीका जल खींच आकाशके गर्भरूप मध्यस्थलमें धूमादि सञ्चार लगाता है। इसीसे ज्योतिषमें उक्त किरणको अर्धगर्भ कहते हैं।

अर्धगुच्छ (सं० पु०) अर्धः चन्द्रसमः गुच्छः, कर्मधा०। चतुर्विंशति गुच्छक हार, चौबीस लड़ीकी माला।

अर्धगुच्छा (सं० स्त्री०) अर्धं गुच्छायाः, एकदेशी तत्। आधी रत्ती।

अर्धगोल (सं० पु०) वृत्तका अर्ध भाग, दायरेका आधा टुकड़ा, निस्फ़.दुनिया।

अर्धचक्रवर्तिन् (सं० पु०) नौ काले वासुदेव और विष्णुके नौ शत्रुका नाम। (जैनशास्त्र) वासुदेव देखो।

अर्धचक्रिन्, अर्धचक्रवर्तिन् देखो।

अर्धचन्द्र (सं० पु०) अर्ध चन्द्रस्य, एकदेशी तत्।

१ चन्द्रका अर्ध भाग, चांदका निस्फ़. टुकड़ा।

२ नखका चतचिह्न, नाखूनका दाग। ३ गलहस्त, हाथसे गलेकी टीप। किसीका गला दबाते समय अङ्गुलीमें अर्धचन्द्रकी आकृति देख पड़ती है। ४ वाण विशेष, कोई तीर। यह अर्धचन्द्र जैसा बनता है।

५ अठनी। चलती बोलीमें सङ्केतके समय अठनीको

भी अर्धचन्द्र कहते हैं। ६ मयूरपिच्छ, मोर-
पङ्ककी आंख। ७ त्रिपुण्ड्र, विशेष। यह अर्धचन्द्र
जैसा लगाता है।

अर्धचन्द्रक (सं० पु०) अर्धचन्द्र इव मयूरस्य,
सुप्सु० समा०। मयूरपिच्छका चन्द्र, मोरपङ्कका
चंदोवा।

अर्धचन्द्रा (सं० स्त्री०) १ त्रिवृता, निसोत।
२ कृष्णत्रिवृता, कालानिसोत।

अर्धचन्द्राकार (सं० पु०) अर्धचन्द्राकृति देखो।

अर्धचन्द्राकृति (सं० स्त्री०) अर्धचन्द्रस्य आकृतिरिव
आकृतिर्यस्य। १ अर्धचन्द्राकार काच, निस्फ, चांद-
जैसा शीशा। (त्रि०) २ अर्धचन्द्राकार, निस्फ
चांद-जैसा।

अर्धचन्द्रिका (सं० स्त्री०) १ कर्णस्फोट लता, कन-
फोड़ा। २ कृष्णत्रिवृता, कालानिसोत।

अर्धचोलक (सं० स्त्री०) अर्ध चोलस्य, एकदेशी
तत्, संज्ञायां कन्। आधी अंगिया, छोटी चोली।

अर्धजरतीयन्याय (सं० पु०) लौकिकन्यायभेद।
इसका तात्पर्य यह है, कि एक वस्तु एक ही समयमें
दो विपरीत धर्मयुक्त नहीं हो सकता। जो वृद्ध है,
उसीका फिर तरुण होना असम्भव लगता है।
सुर्गका कोई अंश पकाया जाता, फिर वही सुर्ग
किसी अंशसे अण्डे दे रही है—ऐसा कभी हो नहीं
सकता।

अर्धजरतीयन्याय—इस वाक्यकी व्युत्पत्तिके
विषयमें एक दृष्टान्त है। किसी वृद्ध नैयायिकके पास
एक गाय थी। वे उस गायको बेचनेके लिये हाटमें
ले गये। खरीदार लोग आकर उनसे पूछने लगे,
गाय कितने वर्षकी है। ब्राह्मणने मन ही मन
सोचा,—“वृद्धका ही अधिक आदर होता है।
निमन्त्रणको जानेसे सभामें सब कोई मेरा सम्मान
करता और सर्वत्र ही मुझे अधिक विदायो भी
मिलती है।” यही समझकर उन्होंने कहा,—इसको
उम्र बहुत है। बुढ़ी गाय किस कामकी! सुतरां
किसीने उसे न खरीदा।

नैयायिकने गायके साथ घर लौट ब्राह्मणीसे

सब हाल कहा था। उस पर ब्राह्मणी भुंभुलाकर
बोल उठी,—“तुम्हारी कैसी बुद्धि है, तुमने ऐसी
गायको बुढ़ी क्यों बताया? वृद्ध कहनेसे उसे कौन
मोल लेगा!”

दूसरे दिन ब्राह्मण फिर उस गायको बाजार
ले गये। खरीदारोंने जब गायकी उम्र पूछी, तब
उत्तरमें उन्होंने कहा—“बाबू! यह तो अभी
कुछ ही दिनकी और सिर्फ पहली बार वियानी
है।” यह सुन वे लोग हंसकर कहने लगे,—कल
आपने इसे वृद्ध और आज तरुण बताया, ऐसा कभी
हो सकता है! इसपर ब्राह्मणने उत्तर दिया,—“यह
बात असम्भव नहीं है। मेरी गाय वृद्ध और तरुण
भो है। शास्त्रकार आत्माको पुरातन कहते हैं।
अतएव इस गायके नवीन शरीरमें पुरातन आत्मा
विद्यमान है। सुतरां गो शब्द कहनेसे गोदेहावच्छिन्न
पुरातन आत्मा एवं तरुण गाय समझी जाती है।”
किन्तु चना चवाना और ग्रहनायीका बजाना एक हो
साथ नहीं हो सकता,—

“एकसाध नहिं होहि सुवालू।

हंसवु ठठाव वजाववु गालू ॥” (तुलसी)

अर्धजल (सं० स्त्री०) जलक्रिया विशेष, मुर्देका
नहलाना। चितापर पहुंचानेसे पहले शवको जो
नहलाते और आधा पानी आधा जमीनमें रखते, उसे
अर्धजल कहते हैं।

अर्धजाङ्गवी (सं० स्त्री०) अर्ध जाङ्गव्याः, एकदेशी
तत्। अर्धगङ्गा, कावेरी नदी।

अर्धन्योतिका (हिं० स्त्री०) ताल विशेष।

अर्धतनु (सं० स्त्री०) अर्ध शरीर, निस्फ, जिस्म।

अर्धतित्त (सं० पु०) असम्पूर्णः तित्तः। निम्बवृक्ष
विशेष, नेपाली नामका पेड़।

अर्धतूर (सं० पु०) वादित्त विशेष, किसी किस्मका
बाजा।

अर्धदग्ध (सं० त्रि०) अधजल, आधा जला, भुलसा
हुआ।

“अर्धदग्ध कइ नरनको विधि इ न रिम्भवन योग।” (तुलसी)

अर्धदिन (सं० स्त्री०) अर्ध दिनस्य, एकदेशी

तत् । १ आधा दिन, दोपहर । २ बारह घण्टेका दिन ।

अर्ध दिवस (सं० पु०) अर्धदिन देखो ।

अर्ध देव (वै० पु०) अर्ध समोप देवानाम् । देवताके समोप वर्तमान व्यक्ति, फुरिश्तेके पास रहनेवाला शख्स ।

अर्ध द्रौणिक, आर्ध द्रौणिक (सं० त्रि०) अर्ध द्रौणेन क्रीतम्, ठज् । आधे द्रोणसे खरौदा हुआ ।

अर्ध धार (सं० क्ली०) अर्ध धारा अस्य । वैद्यशास्त्रोक्त अस्त्रविशेष, किसी किसिमका नश्वर ।

अर्ध धारक, अर्ध धार देखो ।

अर्ध नयन (सं० क्ली०) तृतीय नेत्र, ज्ञानचक्षु, तीसरी आंख । यह ललाटमें रहता और बड़े पुण्यसे खुलता है ।

अर्ध नाराच (सं० पु०) १ बाण विशेष । २ मर्कट-बन्ध और कौलक पाशसे आवद्ध अस्थि । जैनशास्त्रमें इस हड्डीका उल्लेख है ।

अर्ध नारायण (सं० क्ली०) अर्ध अर्धपरिमितं स्थानं यस्य तादृशो नारायणो यत्र । १ गङ्गा प्रवाहसे चार हाथ दूर नारायणस्वामिक स्थानविशेष । २ विष्णु विशेष ।

अर्ध नारीश (सं० पु०) अर्धाङ्गे या नारी तस्या ईशः स्वामी । महादेव, आधे पुरुष और आधी स्त्रीकी आकृतिवाले शङ्कर । इनका निवासस्थान कण्ठदेशवर्ती विशुद्धपद्म माना गया है । ध्यान धरनेका मन्त्र नीचे लिखा है—

“नीलप्रवालवचिरं विलसन्निवेनं

पाशावणीतपलकपालकयलहस्तम् ।

अर्धाङ्गिकेशमनिशं प्रविभक्तभूषं

बालेन्दुवदमुकुटं प्रणमामि वपम् ।” (तन्त्रसार)

अर्ध नारीश्वर, अर्ध नारीश देखो ।

अर्ध-नारीश्वर-रस (सं० पु०) औषधमेद । यह रस सान्निपातिक ज्वरपर गुञ्जामात्र नस्यकर्ममें दिया जाता है । कोई कोई जीर्ण विषमज्वरमें भी यह नस्य हितकर बताते हैं । इससे तत्क्षणमें ही वामाङ्गज्वर नाश होता है । इसके प्रस्तुत करनेका विधान यह है—पारद

गन्धक, विष, टङ्गण, यह सब द्रव्य समभाग यानी बराबर बराबर ले एकत्र कज्जबी बनाकर क्षण सर्पके मुखमें रख दे और उसके मुखको मट्टीसे बन्दकर किसी मट्टीके ही पात्रमें नीचे ऊपर लवण डाल बीचोबीच स्थापित करे । पीछे उक्त पात्रको भी खूब बन्दकर तीव्र अग्निपर ४ ग्रहर पर्यन्त जलानेसे यह तैयार होता है । (मैय्यरवावली)

दूसरा प्रकार—पारा और गन्धक, यह दोनों समभाग, इन दोनोंके बराबर शुद्ध विष एवं जैपाल और मिर्च चतुर्गुण लाये । इन द्रव्योंको एकत्र कर त्रिफला रसके साथ घोटना चाहिये । रसकी भावना पांच दो जाती है । (रसेन्द्रसारसंग्रह)

तीसरा—शुद्ध पारा, शुद्ध गन्धक, विष, ताम्रका भस्म, समभाग ग्रहण कर जलके साथ खूब पीसे । पीछे सब को चक्राकार बना सर्पके मुखमें भर दे । मुखको लेपन कर, एक मट्टीके पात्रमें नीचे ऊपर लवण और बीचमें उक्त सर्प रख सिकता-(बालू, रेत)से परिपूर्ण करना चाहिये । ४ ग्रहरतक मन्द मन्द आंचसे पाक करके पात्र उतार ले । जब शीतल हो जाय, तब उससे गोलक को निकाल, लेपन हटा, भस्म उठा यत्रसे खलमें विमर्दन करना होता है । यवमात्र यह चूर्ण नस्यमें मिलाकर दिया जाता है । (प्रयोगावली ज्वरचिकित्सा)

अर्ध नाव (सं० क्ली०) अर्ध नावः, एकदेशी तत्

टजन्तः । नौकाका अर्धांश, किश्तीका निष्प, हिस्सा ।

अर्ध निशा (सं० स्त्री०) अर्ध निशायाः, एकदेशी तत् । अर्ध रात्र, आधीरात ।

अर्ध पञ्चाशत् (सं० स्त्री०) पञ्चविंशति, पचीस, पचासका अर्ध ।

अर्ध पण (सं० क्ली०) अर्ध पणस्य, एकदेशी तत् । पणका अर्ध, काकिनीद्वय, दश गण्डा ।

अर्ध पथ (सं० क्ली०) अर्ध पथः, एकदेशी तत् । अजन्तः । पथका अर्धांश, आधी राह । (अव्य०)

राहमें, बीचोबीच ।

अर्ध पल (सं० क्ली०) कर्षद्वय, चार तोला ।

अर्ध पाञ्चालक (सं० त्रि०) अर्ध पञ्चाले भवः, कुज ।

अर्धपञ्चाल-देशजात, जो अर्धपञ्चाल देशमें पैदा हुआ हो।

अर्धपादा (सं० स्त्री०) भूस्थालकी, भुरी आंवला।

अर्धपादिक, आर्धपादिक (सं० त्रि०) अर्धपादं तच्छेदमर्हति, ठज्। अर्धपादच्छेद योग, अर्धपाद परिमाण, दमड़ी भर।

अर्धपारावत (सं० पु०) अर्धेन अङ्गेन पारावत इव। १ वनकुक्कुट, जङ्गलकी मुर्गा। २ तित्तिर पक्षी, तीतर।

अर्धपुलायित (सं० स्त्री०) अश्वकी एक गति, मोठा पोयिया।

अर्धपुष्पा (सं० स्त्री०) महाबला, कोई पौधा।

अर्धपूर्ण (सं० त्रि०) आधा भरा, निस्क, खाली।

अर्धपोहल (हिं० पु०) वृक्ष विशेष, कोई पौधा। इसकी पत्ती मोटी होती है।

अर्धप्रस्थिक, आर्धप्रस्थिक (सं० त्रि०) अर्धप्रस्थेन क्रीतम् ठज्। अर्धप्रस्थ-परिमित द्रव्य द्वारा क्रीत, जो आधे प्रस्थमें खुरीदा गया हो।

अर्धप्रहर (सं० त्रि०) आधा पहर, डेढ़ घण्टा।

अर्धप्रादेश (सं० पु०) १ आधा बिन्ता। २ आधा सेतु। ३ आधा मुल्क।

अर्धभाग (सं० पु०) अर्ध भागस्य एकदेशी तत्। १ आधा हिस्सा। २ खण्ड, टुकड़ा।

अर्धभागिक, अर्धभाग देखो।

अर्धभागिन्, अर्धभाज् देखो।

अर्धभाज् (सं० त्रि०) अर्धं भजति, भज-णि, उप० समा०। अर्धांशका अधिकारी, आधेका हिस्सेदार।

अर्धभास्कर (सं० पु०) दोपहर।

अर्धभोजन (सं० स्त्री०) अर्धाशन, आधे पेटका खाना।

अर्धभोटिका (सं० स्त्री०) किसी किसमकी रोटी।

अर्धभ्रम (सं० स्त्री०) अर्धं चरणार्धपर्यन्तं भ्रमो वर्णसाजात्यात् पाठक्रमेण आवर्तनं यत्र, बहुव्री०। जिस श्लोकमें आधे चरणके पक्षर एक एक करके बायों ओरसे दाहिनी अथवा दाहिनी ओरसे बायों किंवा

ऊपरसे नीचे या नीचेसे ऊपरको पढ़नेपर एक ही जैसा पाते, उसे अर्धभ्रम कहते हैं,—

“बाहुरर्धभ्रमं नाम श्लोकार्धभ्रमणं यदि।” (सरस्वतीकण्ठाभरण)

यह शब्दालङ्कार विशेष है। इसमें शब्द गूँथनेके सिवा कोई अर्थवैचित्र्य नहीं होता। ऐसे श्लोकमें ऊपर लिखे हुए मतके अनुसार नाना ओरसे अक्षर गिरनेपर भी अर्थ जैसा तैसा ही बना रहता है।

अ भी क म ति के ने ह
भी ता न न्द स्य ना श ने
क न त्स का म से ना के
म न्द का म क म स्य ति

(माघ १८७९)

इस श्लोकमें प्रथम चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायों ओरसे दाहिनी ओर पढ़ जानेपर ‘अभीकम’ होता है। फिर प्रत्येक चरणका पहला अक्षर ऊपरसे नीचेकी ओर पढ़नेपर भी “अभीकम” ही आता है। द्वितीय चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायों ओरसे दक्षिणको पढ़नेपर ‘भीतानन्द’ और प्रत्येक चरणके प्रथमार्धका दूसरा अक्षर ऊपरसे नीचेको पढ़ जाते भी ‘भीतानन्द’ ही पड़ता है। तीसरे चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायों ओरसे दाहिनी ओर को पढ़ जानेपर ‘कनत्सका’ और प्रत्येक चरणके प्रथमार्धका तीसरा अक्षर ऊपरसे नीचेको पढ़नेपर भी ‘कनत्सका’ ही बैठता है।

चतुर्थ चरणके प्रथमार्धका चार अक्षर बायों ओरसे दाहिनी ओर पढ़ जानेपर ‘मन्दकाम’ और प्रत्येक चरणके चौथे अक्षरको ऊपरसे नीचेकी ओर पढ़नेपर भी ‘मन्दकाम’ ही बनता है।

सब चरणके प्रथमार्धका अक्षर इसीतरह बायेंसे दाहिने और ऊपरसे नीचेको पढ़ जाते भी एक ही जैसा रूप होता है।

दूसरे प्रथम चरणके शेषार्धका चार अक्षर बायेंसे दाहिनी ओरको पढ़ जानेपर ‘तिकेनेह’ और प्रत्येक चरणके शेषार्धका अवशिष्ट अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी ‘तिकेनेह’ ही लगता है।

द्वितीय चरणके शेषार्धका चार अक्षर बायें

ओरसे दाहिनी ओरकी पढ़ जानेपर 'स्यनाशने' और प्रत्येक चरणके शेषार्धकी उल्टी ओरका दूसरा अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'स्यनाशने' ही मिलता है।

तृतीय चरणके शेषार्धका चार अक्षर बाईंसे दाहिनी ओर पढ़ जानेपर 'मसेनाके' और प्रत्येक चरणके शेषार्धकी उल्टी ओरका तीसरा अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'मसेनाके' ही गंठता है।

चतुर्थ चरणके शेषार्धका चार अक्षर बाईंसे दाहिनी ओर पढ़ जानेसे 'कमस्यति' और प्रत्येक चरणके शेषार्धकी उल्टी ओरका चौथा अक्षर नीचेसे ऊपरको पढ़ते भी 'कमस्यति' ही निकलता है।

अर्ध अर्ध चरणमें अक्षरका इस रीतिसे भ्रम अर्थात् भ्रमण वा आवर्तन होनेपर श्लोकको अर्धभ्रम कहते हैं। अग्निपुराणमें अर्धभ्रम श्लोक 'अर्धभ्रमक' कहा गया है। अर्धभ्रम वा अर्धभ्रमक श्लोक अनुष्टुप् भिन्न और किसी छन्दमें नहीं रचा जाता।

अ	भी	क	म	ति	के	ने	हे
भी	ता	न	न्द	स्य	ना	श	ने
क	न	त्स	का	म	से	ना	के
म	न्द	का	म	क	म	स्य	ति

अग्निपुराणमें इस तरह लम्बी पांच और तिरछी नौ रेखा खींचकर बत्तीस कोष्ठ बनानेकी व्यवस्था है। एक एक कोष्ठमें श्लोकके अक्षरोंको यथाक्रम रखकर ऊपर कही हुई रीतिसे पढ़ना पड़ता है। परन्तु माघ और भारविमें इस तरह रेखा खींचकर कोष्ठ बनानेकी व्यवस्था नहीं है।

अर्धमागधी (सं० स्त्री०) प्राकृत भाषा विशेष, कोई पुरानी जवान। पहले यह मथुरा और पटनाके बीच चलती थी। मागधी देखो।

अर्धमाणव, अर्धमाणवक देखो।

अर्धमाणवक (सं० पुं०) अर्धमाणवकस्य, एक-

देशी तत्। द्वादश यष्टिका माला, बारह लड़ीका हार। अर्धमात्रा (सं० स्त्री०) अर्धमात्रायाः, एकदेशी तत्। १ विन्ध्वे-चन्द्राकार ब्रह्म। २ अर्धपरिमाण, आधा वजन। ३ सङ्गीतशास्त्र और पद्यकी अर्धमात्राका उच्चारण काल। (त्रि०) ४ हल् वर्ण, व्यञ्जन।

अर्धमात्रिक (सं० पुं०) निरुहणाधिकारका वस्त्र विशेष, पिचकारीसे दिया जानेवाला कोई जुलाब। दशमूलौय कषायसे शताह्वाचको पोस डाले। फिर दो-दो पल सैन्धवाच्च एवं मधु और एक पल तेल मिलानेसे यह तैयार होता है। इसके सेवनसे सर्वरोग मिटता है। (चक्रपाण्डित्यसंग्रह संयह)

अर्धमार्ग (सं० अव्य०) आधी राहमें।

अर्धमास (सं० पुं०) अर्ध मासस्य, एकदेशी तत्। एक पक्ष, पन्द्रह दिन, आधा महौना।

अर्धमासतम (सं० त्रि०) १ प्रति पक्ष किया जाने वा होनेवाला, जो हर पखवारे हो। २ एक पक्ष रहनेवाला, जो एक पखवारे टिकता हो।

अर्धमासशस् (सं० अव्य०) प्रतिपक्ष, पन्द्रह दिनमें, पखवारे-पखवारे।

अर्धमासीक, अर्धमासतम देखो।

अर्धमासूरी (सं० स्त्री०) लेखनार्थ अस्त्रधारा विशेष।

अर्धमुष्टि (सं० पुं० स्त्री०) आधी मुठ्ठी, जो मुठ्ठी आधी बन्द और आधी खुली हो।

अर्धयाम (सं० पुं०) अर्ध यामस्य प्रहरस्य, एकदेशी तत्। दिवा तथा रात्रिका अष्टांश, दिन और रातका आठवां हिस्सा, डेढ़ घण्टा।

अर्धरथ (सं० पुं०) अर्धः असम्पूर्णः रथः। असम्पूर्ण रथी, अधूरा सिपाही। जो वीर रथपर बैठ युद्ध करनेमें दूसरे रथीकी अपेक्षा रखता, वह अर्धरथ कहता है।

अर्धरात्र (सं० पुं०) अर्ध रात्रेः, एकदेशी अजन्तः।

१ रात्रिका अर्धभाग, दो प्रहर रात्रि, आधी रात।

२ निशीथ, महानिश, अवसरालय, निसम्पात, सुप्तजन, चौबीस घण्टेकी रात।

“अर्धरात्र गद कपि नहिं आवा ।” (तुलसी)

अर्धरात्रसमय (सं० पु०) रात्रिके अर्ध भागका समय,
आधौरातका वक्त ।

अर्धरात्रार्धदिवस (सं० क्लौ०) विषुव, विषुवत्,
दिनरात बराबर होनेको समय ।

अर्धर्च (सं० पु०-क्लौ०) अर्ध ऋचः, एकदेशी अर्च
समा० । ऋक्का अर्धभाग ।

अर्धर्चशस् (सं० अव्य०) प्रत्येक पदपर, हरेक
मिसरेमें ।

अर्धर्चादि (सं० पु०) अर्धर्च इति शब्द आदौ
येषाम् । अर्धर्चाः पुंसिच । पा० २।११ । पाणिनिका कहा

हुआ शब्द गणभेद । इस गणमें निम्नलिखित शब्द
रहता, जो पुंलिङ्ग एवं क्लौवलिङ्ग भी होता है,—

अर्धर्च, गोमय, कषाय, कार्षापण, कुतप, कपाट,
शङ्ख, चक्र, गूथ, यूथ, ध्वज, कबन्ध, पद्म, गृह, सरक,

कंस, दिवस, युष, अन्धकार, दण्ड, कमण्डलु, मण्ड,
भूत, द्वीप, द्यूत, धर्म, कर्मन्, मोदक, शतमान, यान,

नख, नखर, चरण, पुच्छ, दाडिम, हिम, रजत, सक्तु,
पिधान, सार, पात्र, घृत, सैन्धव, औषध, आदक, चषक,

द्रोण, खलीन, पात्रीव, यष्टिक, वार, बाण, प्रोथ, कपित्थ,
शृङ्ग, शील, शल्व, सीधु, कवच, रेणु, कपट, सौकर,

मुसल, सुवर्ण, टूप, चमस, वर्ण, क्षौर, कर्ष, आकाश,
अष्टापद, मङ्गल, निधन, निर्यास, जृम्भ, वृत्त, पुस्त,

खेडित, शृङ्ग, शृङ्गल, मधु, मूल, मूलक, शराव, शाल,
वप्र, विमान, मुख, प्रथीव, शूल, वज्र, कर्पट, शिखर,

कल्क, नाट, मस्तक, वलय, कुसुम, दण, पङ्क, कुण्डल,
किरीट, अबुंद, अङ्गुश, तिमिर, आश्रम, भूषण,

इस्कस, मुकुल, वसन्त, तडाग, पिटक, विटङ्क, माघ,
कोश, फल, दिन, दैवत, पिनाक, समर, स्थाणु, अनीक,

उपवास, शाक, कर्पास, चषाल, खण्ड, दर, विटप,
रण, बल, मल, मृणाल, हस्त, सूत्र, ताण्डव, गाण्डीव,

मण्डप, पटह, सीध, पार्श्व, शरीर, छल, पुर,
राष्ट्र, विश्व, अन्वर, कुट्टिम, मण्डल, ककुद, तोमर,

तोरण, मञ्चक, पुङ्क, मध्य, बाल, बल्लौक, वर्ष, वस्त्र,
देह, उद्यान, उद्योग, रनेह, खर, सङ्गम, निष्ठ, चेम,

शूक, छत्र, पवित्र, योवन, पालक, भूषिक, वज्रल

कुञ्ज, विहार, लोहित, विषाण, भवन, अरण्य, पुलिन,
दृढ, आसन, ऐरावत, शूर्प, तीर्थ, लोमश, तमाल

लोहदण्डक, शपथ, प्रतिसर, दारु, धनुस्, मान, शुङ्ग,
वितङ्क, मव, सहस्र, ओदन, प्रवाल, शकट, अपराह्न,

नीड, शकल, कुणप, ऋण, पूर्व, वुस्त, निगड, स्थल,
नाल, कटक, कण्टक, कुमुद, इष्वास, विडङ्क, पिण्याक,

विशाल आर्द्र, हन, योध कुक्कुट, कुडव, खण्डल, पञ्चक,
काल, वसु, स्तेन, स्तन, चत्र, कलह, वर्चङ्क, तण्डक,

तण्डल ।

अर्धलक्ष्मीहरि (सं० पु०) अर्धलक्ष्म्या आकारे
यस्य तादृशी हरिः । लक्ष्मी सहित मिलित विष्णु ।

“ऋषिः प्रजापति ऊन्दो गायत्री देवता पुनः ।

अर्धलक्ष्मीहरि प्रोक्तः श्रीवैजिन षडङ्गकम् ।” (गौतमीयतन्त्र)

इनके ध्यानका मन्त्र यह है,—

“उद्यत्प्रद्योतनशतर्चिं तमहेमावदातं

पार्श्वदग्धो जलधिसुतया विश्वधात्रा च जुष्टम् ।

नानारजोऽक्षितविविधाकल्पमापीतवस्त्रम्

विष्णुं वन्दे दरकमलकौमोदकौ चक्रपाणिम् ॥”

अर्धवस्त्रसंवीत (सं० चि०) अर्धपरिच्छदविशिष्ट,
आधे कपड़े पहने हुआ ।

अर्धविसर्ग (सं० पु०) अर्धविसर्गस्य एकदेशी तत् ।

आधे विसर्ग—जैसा जिह्वामूलीय और उपध्मानीय ।

अर्धवोक्षण (सं० क्लौ०) अर्धवोक्षणस्य, एकदेशी-
तत् । अपाङ्ग दर्शन, तिरछा नजारा ।

अर्धवीरच्छा (सं० स्त्री०) कृष्णा दूर्वा, काली दूब ।

अर्धवृत्त (सं० क्लौ०) १ वृत्तका अर्धांश, दायरेका
आधा हिस्सा । २ वृत्तके परिधिका अर्धांश, दायरेके
धेरेका आधा हिस्सा ।

अर्धवृद्ध (सं० त्रि०) आधा बुढ़ा, दरमियानी उन्म-
वाला ।

अर्धवृहती (वै० स्त्री०) अर्धश्वास, आधौ सांस ।

अर्धवैनाशिक (सं० पु०) अर्ध असम्पूर्णः वैना-
शिकः बौद्ध विशेषः । वैशेषिक शास्त्र-प्रणेता ।

अर्धवैशस (सं० क्लौ०) अर्धस्य वैशसः वधः । अर्ध
विनाश, निष्फ, कत्तल ।

अर्धव्यास (सं० पु०) वृत्तकी त्रिज्या, दायरेका
त्रिज्या, कर्ता ।

अर्धशत (सं० क्ली०) १ पञ्चाशत, पचास। २ शत एवं पञ्चाशत, डेढ़ सौ।
 अर्धशन (सं० क्ली०) अर्धं अशनस्य, एकदेशी तत्, नि० साधु। अर्धभोजन, आधी खुराक।
 अर्धशफर (सं० पु०) अर्धः असम्पूर्णः शफरः।
 अर्धमत्स्य विशेष, दण्डपाल, कोई छोटी मछली।
 अर्धशब्द (सं० त्रि०) मन्द शब्दविशिष्ट, धीमी आवाजवाला।
 अर्धशराव (सं० पु०) प्रसृति द्वय, बत्तीस तोला।
 अर्धशरावक, अर्धशराव देखो।
 अर्धशेष (सं० त्रि०) आधा बाकौ, जो सिर्फ आधा बच गया हो।
 अर्धश्याम (सं० त्रि०) आधा बदरीला, जो बादल से निस्फ, घिरा हो।
 अर्धश्लोक (सं० पु०) अर्धं श्लोकस्य, एकदेशी तत्।
 श्लोकका अर्धभाग, प्रथम पादद्वय।
 अर्धसञ्ज्ञात (सं० त्रि०) आधा जगा हुआ, जिसमें आधी फसल पैदा हो चुके।
 अर्धसफर, अर्धशफर देखो।
 अर्धसम (सं० त्रि०) अर्धेन समः। अर्धके समान, आधेके बराबर।
 अर्धसमवृत्त (सं० क्ली०) वृत्तविशेष, सोरठा। इसमें प्रथम द्वितीय और द्वितीय चतुर्थ पाद समान रहता है।
 अर्धसह (सं० पु०) पेचक, उल्लू चिड़िया।
 अर्धसौरिन् (सं० पु०) अर्धसौरस्य हलकृष्टशस्यादिफलस्य अस्ति अस्य, अस्त्यर्थे इति। अन्यके क्षेत्रमें खेती कर उपजका अर्ध भाग पानेवाला कृषक, जो किसान दूसरेका खेत कमाता और फसलका आधा हिस्सा पाता हो।
 अर्धहार (सं० पु०) अर्धः हारः। चौंसठ या चालीस लड़ीका हार।
 अर्धह्रस्व (सं० क्ली०) अर्धाक्षर, आधा ह्रस्व।
 अर्धांश (सं० पु०) अर्धं अंशस्य, एकदेशी तत्।
 अर्धभाग, आधा हिस्सा।
 अर्धांशिन् (सं० त्रि०) अर्धभागका अधिकारी, निस्फ हिस्सा पानेवाला।

अर्धांशोनजल (सं० क्ली०) अर्धांशहोन पक्क जल, जो पानी जलकर आधा रह गया हो। यह वातपित्त को मिटाता है। (राजनिघण्टु)
 अर्धाकार (सं० पु०) १ अक्षरका अर्ध भाग।
 २ अवग्रह, समासके पदका विभाग।
 अर्धाङ्ग (सं० क्ली०) १ शरीरका अर्ध भाग, निस्फ, जिस्म। २ पक्षाघात, फालिज, लकवा। इस रोगमें आधा अङ्ग मारे पड़ता है। ३ शिव।
 अर्धाङ्गिनी (सं० स्त्री०) पत्नी, बीबी।
 अर्धाङ्गी (सं० पु०) शिव।
 अर्धाध (सं० पु०) अर्धे अर्धस्य तुल्यांशस्य, एक० तत्। समान भागका अर्धांश, चतुर्थांश, आधेका आधा, चौथायी।
 अर्धालखिया—विहारके बनोधिया और जैसवार कलवारकी एक शाखा।
 अर्धालिग (सं० पु०) जलसर्प, पनिहा सांप।
 अर्धावमेदक (सं० पु०) शिरोरोग विशेष, अर्ध-कपाली, आधाशोथी। इसको उत्पत्ति और लक्षण इस प्रकार लिखे हैं—रुद्धवस्तु खाने, अनशन प्राग्वातावश्याय, मैथुन, वेगसन्धारण (मूत्रादिक अवरोध करने), अधिक परिश्रम, व्यायाम प्रभृति कारणोंसे वायु कुपित हो केवल या कफसे मिल, शिर, भ्रू, नेत्र, कर्ण, ललाटके अर्धभागमें जो शस्त्र ताड़न सदृश तीव्र वेदना (पीड़ा) उत्पन्न करता, उसको अर्धावमेदक कहा जाता है। (माधवनिदान)
 २ समान अंशमें विभाजन, बराबर हिस्सेका तकसीम।
 अर्धावशेष, अर्धशेष देखो।
 अर्धाशन, अर्धशन देखो।
 अर्धाष्टम—गुजरात प्रान्तका कोई प्राचीन जिला। सन् ११४३-११७४ ई०में पण्डितप्रवर हेमचन्द्र जैन चालुक्यनृपति कुमारपालके मन्त्री रहे। कहते हैं, कि विक्रमीय संवत् ११४५ की कार्तिकपूर्णिमासीको हेमचन्द्रने इस जिलेके धन्धुक गांवमें चाचिग नामक किसी मोदी बनियेके घर जन्म लिया था। माता पाङ्गिनी नामकी मोदीकी रहीं। हेमचन्द्रको लकड़पनमें लोग

चङ्गोदेव कहते थे। सन् १०७८-११७० ई०में जैनाचार्य देवचन्द्र पाटनसे धन्युक गये, जिन्हें देख चङ्गोदेव पीछे जा बैठे। लड़केंको होनहार पा देवचन्द्र चकराये और लोगोंको अपने साथ ले चाचिगके मकान् पहुँचे थे। उस समय चाचिग घरमें न रहा, किन्तु उसकी पत्नीने आदरके साथ आचार्यका स्वागत किया और माँगने पर अपना पुत्र चङ्गोदेव उन्हें सौंप दिया। जैनाचार्यने पुत्रको कर्णावती पहुँचाया और उदयन मन्त्रीके लड़कों साथ जा रखा था। चाचिग मकान्में लड़केको न पा बहुत घबराया और विना देखे अन्नजल ग्रहण न करनेका प्रपथ उठाया। कर्णावती पहुँच उसने घुड़ककर आचार्यसे लड़केको वापस माँगा था। किन्तु उदयनके कहनेसे वह उन्हें देवचन्द्रके पास ही छोड़नेपर राजी हो गया। सन् १०८७ ई०में चाचिगने पुत्रको आठ वर्षको अवस्थापर दीक्षा दिला सोमचन्द्र नाम रखा था। जब वह पढ़-लिखकर धुरन्धर विद्वान् हुए, तब देवचन्द्र उन्हें हेमचन्द्र कहने लगे। सन् १११० ई०में कोई इक्कीस वर्षकी अवस्थापर हेमचन्द्रने अपनी प्रकर्ष विद्याके कारण 'सूरि' उपाधि पायी थी। सिद्धराजने उनको बात सुनते ही आश्चर्यमें आ विद्वह्वर कहके सम्मानित किया। सिद्धराजके साथ हेमचन्द्र सोमनाथपाटन पहुँचे और शिवलिङ्गके सामने पूज्य दृष्टिसे झुके थे। उन्होंने 'सिद्धहेमचन्द्र' नामक व्याकरण ग्रन्थ अपने और महाराजके नामपर बहुत ही अच्छा बनाया है। 'अभिधान-चिन्तामणि' और 'अनेकार्थनाममाला' पुस्तक भी उन्होका लिखा है। उन्होंने कुमारपाल नृपतिसे अहिंसा रखनेकी प्रतिज्ञा करा ली थी। जब कुमारपालने धर्मका सबसे बड़ा काम करनेको पूछा, तब हेमचन्द्रने सोमनाथके मन्दिरका जीर्णोद्धार ही बता दिया। उनके कहनेसे कुमारपालने मध्य-मांसका व्यवहार छोड़ा और अपने राज्यमें जीवहिंसा न होनेका टिंडोरा पिटाया था। कहते हैं, भनहिलवाड़के किसी बनिधेकी कुल जाय-दाद एक जू मारनेके कारण जूब्त हुई रही। कुमारपालके समय उन्होंने अच्छे-अच्छे साहित्यिक और धार्मिक ग्रन्थ लिखे। उनमें अर्धाष्टम—अर्धात्त

योगशास्त्र, त्रिषष्टिशलाकापुरुष-चरित, परिशिष्ट-पर्व, प्राकृत शब्दानुशासन, लिङ्गानुशासन, द्वात्रिंश, छन्दोनुशासन, देशीनाममाला और अलङ्कार-चूडा-मणि उल्लेख-योग्य है। सन् ११७२ ई०में ८४ वर्षको अवस्थापर हेमचन्द्र मरे थे। कुमारपाल नृपति उनको मृत्युपर फूट-फूट रोये और लाखों आदमी चिताकी भस्म मस्तकपर लगानेको ले गये।

अर्धासन (सं० स्त्री०) अर्ध आसनस्य, एक० तत्।
१ आसनका अर्ध भाग। अर्धं सम्पन्नं असन्नं त्यागः।
२ स्नेहदान, इज्जतका सलाम। ३ अकुत्सन, इल-जामकी सुवाफो।

अर्धिक (सं० त्रि०) अर्धमर्हति, टिठन्। अर्धभाग-विशिष्ट, निष्क, हिस्सेसे तालुक रखनेवाला।

अर्धिन् (सं० त्रि०) अर्धं अहीदत्वेन अस्तस्य, इति। अर्ध भाग लेनेवाला, निष्कका हिस्सेदार।

अर्धीकरण (सं० स्त्री०) अर्ध भाग बनानेकी क्रिया, आधा हिस्सा निकालनेका काम।

अर्धुक (वै० त्रि०) ऋध बाहु० उक्त्वा। वृद्धिशील, सम्पन्न, कामयाब।

अर्धेन्दु (सं० पु०) अर्ध इन्द्रोः, एक० तत्।

१ चन्द्रका अर्ध भाग, आधा चांद। २ नख चिह्न, नाखूनका निशान। ३ अर्धचन्द्र बाण। ४ गलहस्त, गल बहियां। ५ अतिप्रौढ़ स्त्रीको योनिमें अङ्गुलि प्रयोग।

अर्धेन्दुमौलि (सं० पु०) अर्धेन्दुः मौली मस्तके यस्य। चन्द्रचूड़ शिव।

अर्धेन्दुशकला (सं० स्त्री०) १ नासारोग विशेष, नाकको कोई बीमारो। २ कपालरोगमेद, खोपड़े का कोई आजार। ३ ओष्ठ रोग, होंठकी बीमारी। ४ अर्बुदरोग, फोड़ा-फुन्सी। ५ गलरोग, गर्दनका आजार। ६ कर्णरोग, कानकी बीमारी।

अर्धेन्द्र (सं० त्रि०) जिसमें आधा हिस्सा इन्द्र का रहे।

अर्धात्त (सं० स्त्री०) अर्धं उत्तम्। १ अर्ध, कथन, निष्क, कलाम। (त्रि०) २ आधा कहा हुआ,

जो समझाया न गया हो।

अर्धोक्ति (सं० स्त्री०) अर्धकथन, निष्क कलाम ।

अर्धोदक (सं० स्त्री०) अर्धदेहव्यापक उदकम्, शाक०-तत् । देहके निम्नार्धभाग पर्यन्त जल, जो पानी जिसके आधे हिस्से तक पहुँचता हो ।

अर्धोदकचौर (सं० स्त्री०) अर्धोदकशृत दुग्ध, आधे पानीमें पका हुआ दूध ।

अर्धोदय (सं० पु०) अर्धस्य समृद्धस्य पुण्यस्य उदयो यत्र, बहुव्री० । योग विशेष । साधमासकी अमा-वस्याको रविवार, व्यतीपात और श्रवण नक्षत्र पड़नेसे यह योग लगता है । इसमें स्नान करनेसे परम पुण्य मिलता है । अर्धोदय दिनमें ही होता, रात्रिको कभी नहीं पड़ता ।

अर्धोदयासन (सं० स्त्री०) अर्धस्य उदयेन ऊर्ध्व-क्षेपेण आसनम् । साधनकालका आसनविशेष ।

अर्धोदित (सं० त्रि०) १ आधा निकला हुआ, जो आधा उठा हो । २ आधा कहा हुआ, जो पूरा न बताया गया हो ।

अर्धोरुक (सं० स्त्री०) अर्धोरु तत्र काशते, काश-ड । १ छोटा घाँघरा । (त्रि०) २ उरुके मध्य भागतक पहुँचनेवाला ।

अर्ध्य (सं० त्रि०) अर्धस्य इदं तत्र भव वा, अर्ध-यत् । १ अर्धसम्बन्धी, निष्कसे तालुक रखनेवाला । २ पूरा किया जानेवाला । ३ प्राप्त्य, जो हासिल किये जानेको हो ।

अर्नायी—बम्बईके सूरत प्रान्तका एक ग्राम । यह धर्मपुरसे कोई साढ़े चार कोस दूर है । यहां गर्म पानीका एक झरना चलता, जिसपर प्रतिवर्ष चैत्र शुक्ला पौर्णमासीको मेला लगता है ।

अर्नाल—बम्बई प्रान्तीय थाना जिलेकी वसाइन तह-सीलके अगाशी गांवका एक किला । सुसलमानोंके राज्यकाल पोतंगीजोंने इसे बनाया था । यह वैतरण नदके मुँहानेपर अवस्थित है । गुस्बद, मेहराब और कमरा वगैरह सुसलमानों ठहका रहते भी इसके भीतर हिन्दू अधिकारका चिह्न देखेंगे ।

अर्नेज—बम्बईके अहमदाबाद जिलेकी धोल्का तह-सीलका एक गांव । इसका सालाना आमदनी

दामाजो गायकवाड़के प्रबन्धानुसार अंगरेज-सरकार भूत-भवानी मन्दिरके सञ्चालकोंको हो दे देतो है । प्रतिदिन प्रातःकाल साधुओंको सदाव्रत मिलता है ।

अर्नीराज—गुजरातवाले सांभर प्रान्तके नृपति विशेष । चालुक्य नृपति कुमारपालको इन्होंने युद्धमें परास्त किया था । अन्तको कुमारपालने अपनी कन्या इन्हें व्याह दी । इनके नातो वीरधवल भीम नरेशके उत्तराधिकारी बने थे । भीम नरेशके विरुद्ध बलवा होनेपर इन्होंने शत्रुका मुँह तोड़ अपना प्राण छोड़ा ।

अर्पण (सं० स्त्री०) ऋ-णिच्-पुक्-लुगट् । १ प्रदान, बख्शिश, सुपुदंगो, निकास । २ निक्षेप, ढाल, फेंक-फांक । ३ स्थापन, जमाव, लगाव । ४ त्याग, छूट । कर्मणि लुगट् । ५ हरि प्रभृति । अधिकरणे ल्युट् । ६ अग्नि प्रभृति । सम्प्रदाने ल्युट् । ७ देवता प्रभृति । अर्पण्यौय (सं० त्रि०) प्रदान वा स्थापन किया जानेवाला, जो देने या रखनेको हो ।

अर्पना, अरपना देखो ।

अर्पल्ली—मध्यप्रदेशके चांदा जिलेका एक परगना । यह अक्षा० १८° २८' १५" एवं १८° ४८' ४५" उ० और द्राधि० ७८° ४८' १५" तथा ८०° ११' ३०" पू०के मध्य अवस्थित है । इसके कितने ही गांवमें घोट सबसे बड़ा निकलेगा । जङ्गल और पहाड़ बहुत मिलता है । किन्तु जगह-जगह तालाब भरे और नाले बहा करते हैं ।

अर्पित (सं० त्रि०) ऋ-णिच्-पुक्-लृत् । १ प्रदत्त, दिया हुआ । २ स्थापित, जो रखा गया हो । ३ गच्छित, गया हुआ ।

अर्पितकर (सं० त्रि०) १ हाथ फैलाते या बढ़ाते हुआ । २ विवाहित, जिसकी शादी हो चुके ।

अर्पिस (सं० पु०) ऋ-णिच्-पुक्-इसन् । १ अग्र-मांस, आगेका गोشت । २ हृदय, दिल ।

अर्प्य (सं० त्रि०) ऋ-णिच्-पुक्-यत् । १ त्याग्य, छोड़ने काबिल । २ निवेशनीय, लगाने लायक ।

अर्बुदब (हिं० पु०) द्रव्य, सम्पत्ति, दोलत, माल टाल ।

अर्बुद (सं० स्त्री०) अर्ध-विच् तस्मै उदेति उद्-इण-ड । दश कोटि संख्या, १०,०००,०००

“विंशतिर्दशतः शतं दशदशतः सहस्रं, सहस्रादशतं नियुतं प्रयुतं तप्तदशसप्तसुदो मेघो भवत्यरणसम्, तद्दोऽम्बु वदोऽम्बु मदभातीति वाम्बु-सहस्रवतीति वा स यथा महान् बहुर्भवति वर्षं तदिवावर्द्धम्”। (निबन्त नैचण्ट, ककाष् १।२।४)

इसकी टीकामें इस तरह लिखा गया है,—

‘अरणशीलम् ‘अम्बु’ तस्य दाता मेघः, सः ‘अम्बुदः’ तस्य; ‘स यथा’ उदकभावमापयमानः ‘महान् बहुर्भवति वर्षं न तदिवावर्द्धम्’, तदिव वर्षं न, बद्ध वज्रद्रव्यजातं भवति, तदवर्द्धमित्युच्यते।’ (देवराज)

अम्बुनि ददाति अम्बु-दा-क, मकारस्य रेफः। २ मेघ। ३ पर्वत विशेष। आर् देखो। ४ असुर विशेष। (पु०) ५ कट्टुका सन्तान सर्पविशेष। ६ रोगमेद। ऊपरी चमड़े के नीचे मांस, नस, नाड़ी एवं हड्डी आदि नाना स्थानोंमें जो गूमड़े निकल आते और स्वतन्त्र भावसे बढ़ते रहते उनको अर्बुद (tumor) कहते हैं।

यह रोग अनेक प्रकारका होता है। उसमें एक सामान्य अर्बुद है। सामान्य अर्बुद रोगमें प्राण नष्ट नहीं होता। फिर कोई सांघातिक भी है। जैसे कर्कट प्रभृति रोग। रक्तमें कोई विशेष दोष लगनेसे इस जातिका गूमड़ा निकलता है। देहमें कर्कट आदि जातिके गूमड़े निकलनेपर प्राण रक्षाका कोई उपाय नहीं। इसके अतिरिक्त दूसरे प्रकारका भी गूमड़ा होता है। पहले उत्कट नहीं मालूम पड़ता, परन्तु अन्तमें सांघातिक ठहरता है।

सचराचर गूमड़ेके भीतर एक गोलाकार कोष रहता, जिसे काट डालनेपर अन्दरसे कुछ रस निकलता है। किसी किसी जगह बाल, दांत, हाड़, रक्त, मेद और एक प्रकारका काला गलित पदार्थ भी निकल आता है।

वक्षस्थल, मूत्राशय, मस्तिष्क, कान, नाक, यकृत, जिह्वा, अण्डाधार, योनि एवं जरायु प्रभृति शरीरके नाना स्थानोंमें अर्बुद उठता है।

उपदंश रोगकी शेष अवस्था अथवा कौलिक उपदंश रोगमें हाड़पर गूमड़ा पड़ता है। दांतकी जड़का हाड़ भी कभी कभी बढ़ जाता और उसमें एक प्रकारका आव्र निकल आता है। अंगरेजीमें इसे एपिडलिस कहते हैं। बिना हाड़ निकाले ऐसा

गूमड़ा दूर नहीं होता। परन्तु यह चिकित्सा अतिशय उत्कट है। बड़ी बड़ी धमनियोंमेंसे भी गूमड़ा फूटता है। अंगरेजीमें इसे एनुरिजम् कहते हैं। यह रोग बहुत कठिन है। पुरुषके अण्डकोषमें जो गूमड़ा निकलता है, उसे हम लोग जल दोष वा कोषवृद्धि कहते हैं। किसी किसी किस्मका गूमड़ा पहले एक जगह उठता है, फिर धीरे धीरे दूसरी जगह खिसक जाता है। जहरोला गूमड़ा अस्त्रसे काट देनेपर बार बार उसी जगह अथवा शरीरके किसी दूसरे स्थानमें फूट पड़ता है। वह फिर अस्त्रसे काट न दिया जानेपर क्रमशः गलकर रोगीका प्राण ले लेता है।

सामान्य गूमड़ा निकलनेपर भी अस्त्र चिकित्सा भिन्न प्रायः दूसरे कोई प्रतीकार नहीं। गूमड़ा फूटनेपर सुचिकित्सकका परामर्श लेना उचित है। अव्यवसायी गूमड़ेपर अनेक प्रकारकी दवा लगाकर जखम बना डालता, परन्तु स्थलविशेषमें उससे विपद पड़ सकती है।

६ मस्सा भी एक प्रकारका अर्बुद रोग है। किसी किसीके सारे शरीरमें फुलीरी जैसा बड़ा बड़ा काला मस्सा निकलता है। किसी किसी मनुष्यकी पीठका ऊपरी भाग काला पड़ता, उस लखेरीपर कीड़ेके छते जैसा जंघा नीचा और कहीं कहीं फुलीरीके माफिक मस्सा उतरता है। इसे पेशिक अर्बुद कहते हैं। किसी किसी मनुष्यके कपाल एवं शरीरके अन्यान्य स्थानमें पर्त पर्त पर एपिथिलियम् जमकर भेड़के छोटे सींग जैसा अर्बुद उठता है।

अर्बुदाकार (सं० पु०) बहुवार वृद्ध, चालतेका पेड़।

अर्बुदाद्रिज (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढासींगी।

अर्बुदि (सं० पु०) अर्बुद इवाचरति, अर्बुद-क्षिप-इन्। १ सर्वव्यापक ईशान। २ असुर विशेष।

यह आकारमें सांप-जैसा रहा। इन्द्रने इसे मार डाला था।

अर्बुदिन् (सं० त्रि०) अर्बुदप्रसूत, जो सूज गया हो।

अर्बुर (सं० स्त्री०) १ आडुल्या नामधूप, तगरका पेड़।

अर्भ (सं० पु०) नृच्छति गच्छति स्वल्पं प्राप्नोति।

सुखं वा, ऋ-भन् । १ बालक, बच्चा । २ कुश ।
३ पञ्चजात शिशु, पन्द्रह दिनका बच्चा । (त्रि०)
४ अल्प, थोड़ा, कम ।

अर्भक (सं० पु०) ऋध्यति वर्धते, ऋधु-बुन् भकार-
श्चान्तादेशः । अर्भकपृष्ठक पाका वयसि । उष् ५ । ५२ ।
१ बालक, बच्चा ।

“गर्भकके अर्भक दलन परग्न सौर अति घोर ।” (तुलसी)

२ सुखं, विक्षिप्त, देवकूप, दीवाना । (त्रि०)

३ सूक्ष्म, वारीक । ४ कृश, कमजोर । ५ सदृश,
बराबर ।

अर्भक—कोई प्राचीन संस्कृत कवि । सुभाषितावलीमें
इनका उल्लेख है ।

अर्भग (वै० त्रि०) अर्भ अल्प गायति, गैशब्दे टक् ।
बालक, बच्चा ।

अर्भा (सं० स्त्री०) गुग्गुल ।

अर्भावी—बम्बई प्रान्तके वेलगांव जिलेका एक छोटा
गांव । यह गोकाकसे उत्तर दो कोस रायबागकी
सड़कपर बसा है । कहते हैं, सन् १७८१ ई०के समय
यहां एक सुन्दर भवन बना, जिसकी चारो ओर
आमका बाग लगा था । कप्तान मूरने सङ्ग-तराशीकी
बड़ी तारीफ की है ।

अर्म (सं० पु०-स्त्री०) ऋच्छति चक्षुषम् ऋ-भन् ।
अर्भिलसुहृद् सृष्टि चामाया वापदि यक्षिणीभ्यो मन् । उष् १।१३० ।

१ नेत्ररोगविशेष ।

अर्मरोग (Pterygium) पांच प्रकारका होता
है । यथा,—प्रस्तारी अर्म, शुक्ल अर्म, रक्त अर्म, मांस
अर्म एवं स्नायु अर्म ।

आंखकी सफेद जगह पर एक तरहका पतला
चमड़ा चढ़ जाता है । साधारण बोलचालमें इसे
नाखूना कहते हैं । यह चमड़ा नाकके निकटवर्ती
चक्षुकोणसे लेकर प्रायः सब जगह निकलता देखा
जाता है । एलोपाथीमतसे भिन्नो जैसे पतले नाखूने
को प्रस्तारी अर्म (membranous) कहते हैं ।
परन्तु यही नाखूना मोटा हो जानेपर मांस अर्म
(fleshy) कहाता है । ऊपर लिखे अनुसार
वैद्योंने इसे पांच प्रकारमें विभक्त किया है ।

१ । नाखूना यदि पतला, फैला हुआ, हलका
नीला और कुछ लाली लिये होता, तो उसे प्रस्तार्यर्म
कहते हैं ।

२ । नाखूना यदि कुछ सफेद और कोमल रहता,
तो वह शुक्लार्म कहा जाता है ।

३ । नाखूना यदि कमलके फूलकी पखड़ी
तरह कुछ लाल और कोमल होता, तो उसका नाम
रक्तार्म है ।

४ । खूब कोमल, पतले तथा यक्षत्की तरह
वर्णयुक्त नाखूनेको मांसार्म कहते हैं ।

५ । कठिन, शुक्लवर्ण, बहुमांसयुक्त एवं प्रस्तारी
अर्मसे उत्पन्न नाखूनेका नाम स्नायु अर्म है ।

इस रोगपर वैद्य लोग आंखमें लगानेके लिये चन्द्र-
प्रभावर्ती, नयनसुखावर्ती आदि औषधकी व्यवस्था
करते एवं त्रिफलाष्टत खानेको देते हैं ।

एलोपाथीमतसे प्रथमावस्थापर नेत्रमें लगानेके
लिये सङ्कोचक औषध उत्तम है । ६ बूंद
टिंक्चर आयोडिन और ४ ड्राम गुलाब-जल एक
साथ मिलाकर आंखमें डालनेसे बहुत लाभ होता है ।
मांस बढ़कर आंखकी पुतली पर आनेकी सम्भावना
होनेसे नश्वर देकर उसे निकाल डालना पड़ता है ।

(स्त्री०) २ बहुकालके ग्राम एवं नगरादि ।

अर्मक (सं० त्रि०) १ सङ्कीर्ण, सूक्ष्म, तङ्ग, पतला ।

(स्त्री०) २ सङ्कीर्णता, तङ्गी ।

अर्मगांव—मन्द्राज प्रान्तके नेल्लूर जिलेका डेवू और
चिरागघर । (Light House) यह अक्षा० १३° ५३'
उ० और द्राघि० ८०° १७' पू० पर अवस्थित है ।
चिरागघरसे पूर्व उत्तङ्ग जल-चिह्नके ७५ फीट ऊपर
डेवू पड़ता, जो पांच-छः कोससे देखनेमें आता है ।
सन् १६२८ ई०को कोरोमण्डल सागरतट पर पहली
अंगरेजी बसती पड़नेमें अरुमूगाम मूदलथरने बड़ा
साहाय्य दिया था, उन्हींके नामपर यह स्थान अभि-
हित किया गया ।

अर्मण (सं० पु०) ऋ बाहु० मन् । १ द्रोण
परिमाण, ३२ सेर । २ कुटजावलेह । यह अती-
साधको साधता है । (चक्रपाणित्त ज्ञतसंग्रह)

अर्मन् (सं० स्त्री०) ऋच्छति चक्षुषम्, ऋ-मनिन् ।
चक्षुरोग विशेष, आंखका कोई आजार, बिलनो ।
यह पांच प्रकारका होता है,—प्रस्तार्यर्म, शुक्लार्म
रक्तार्म, मांसार्म, स्नायुर्म । अर्म देखो ।

अर्मनी, अर्मनी देखो ।

अर्मोरी—मध्यप्रदेशके चांदा जिलेका एक नगर । यह
चांदा शहरसे उत्तर-पूर्व कोई ४० कोस वाणगङ्गा
नदीके वाम तटपर अवस्थित है । यहां बढ़िया मोटा
कपड़ा, तसर, गाड़ी तैयार होती और लकड़ों
मवेशी, लोहेकी बड़ी हाट लगती है ।

अर्य (सं० पुं०-स्त्री०) अर्यते गम्यते धनलोभाय रोग-
नाशाय वा, ऋ गती कर्मणि यत् । अर्यः स्वामिवेश्योः । पा
३।१।१०३। १ स्वामी, मालिक । २ वैश्य, बनिया ।
(त्रि०) ३ अष्ट, बढ़िया, अच्छा । ४ पूजनीय, पर-
स्तिशय पाने काबिल । ५ सत्य, प्रिय, सच्चा, प्यारा ।

६ कपालु, मेहरबान् । अर्य देखो ।

अर्यजारा (वै० स्त्री०) आर्यकी पत्नी ।

अर्यपत्नी, अर्यजारा देखो ।

अर्यमयदेवा (सं० स्त्री०) बारहवीं विष्णुप्रिया ।

अर्यमन् (वै० पुं०) अर्यं अष्टं माति भिमौते वा,
अर्य-मा-कनिन् । १ सूर्य, आफताब । २ उत्तर
फाल्गुनी नक्षत्र । ३ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़ ।
४ पिष्टगणके राजा । ५ यम । ६ बारहके मध्य
आदित्य विशेष । इनका आवाहन वरुण और मित्रके
साथ प्रायः होता है । ७ हार्दिक मित्र, दिली दोस्त,
लंगोटीहा यार ।

अर्यमा, अर्यमन् देखो ।

अर्यम्य (वै० पुं०) अर्यमेव, स्वार्थे वेदे यत् ।
१ सूर्य । २ हार्दिक मित्र, दिली दोस्त । (त्रि०)
३ हार्दिक, दिली, निहायत प्यारा ।

अर्ययाणो (सं० स्त्री०) वैश्यस्त्री समूह, बनियेकी
औरतका भुण्ड ।

अर्यलूर—मन्द्राज प्रान्तके त्रिचनापली जिलेका एक
नगर । यह अक्षा० ११° ८' २०" उ० और द्रवि०
७८° ६' ४०" पू०पर अवस्थित है । यहां पेराम्बलूर
एवं उदियरपत्नीमके डिपटी-कलक्टरका हेडक्वार्टर,
डाकघर और दवाखाना बना, हफ्तावार बाजार
लगता और पेराम्बलूर तथा केलघलूरको पक्की
सड़क गयी है ।

अर्याणी (सं० स्त्री०) १ स्वामिनी, मालिकान ।
२ वैश्यस्त्री, बनियेकी औरत ।

अर्लेकत्ती—बम्बईके धारवाड़ जिलेका छोटासा गांव ।
यह कोड़से ढायी कोस उत्तर पड़ता है । इसमें
प्राचीन कनाड़ियोंके तीन शिला-लेख विद्यमान हैं ।

अर्लेश्वर—बम्बईके धारवाड़ जिलेका छोटासा गांव ।
यह हांगलसे ढायी कोस उत्तर-पूर्व लगता है ।
कदम्बेश्वरके मन्दिरमें तीन पाषाण-लेख मिले हैं ।
पहले स्मृतिसे दक्षिण स्तम्भपर सन् १०७६ ई०
लिखा है । मन्दिरको घड़ियाल-मेहराबपर दूसरेमें
सन् १०८८ ई० अङ्कित है । प्रधान द्वारके सामने
स्तम्भपर जो तीसरा लेख है, उसकी तारीखका
कोई ठिकाना नहीं ।

अर्वट (सं० स्त्री०) भस्म, खाक ।

अर्वण, अर्वन् देखो ।

अर्वती (सं० स्त्री०) १ बड़वा, घोड़ी । २ कुम्भदासी,
कुटनी ।

अर्वन् (सं० पुं०) ऋच्छति गच्छति अध्वानं प्रापयति
अध्वनः पारमिति वा, ऋ-वनिप् । १ घोटक, घोड़ा ।
२ गोकर्ण परिमाण, छोटा बालिश । 'अर्वा तुरङ्गवर्त्तयोः ।
(उच्चलदत्त) ३ गति, चाल, दौड़ । ४ चन्द्रके दशमें
एक घोड़ा । ५ इन्द्र । (त्रि०) ६ गमनशील, तेज-
रफ्तार । ७ अधम, खराब ।

अर्वनस् (सं० त्रि०) घोटक सदृश नासिकायुक्त,
जिसके घोड़े-जैसी नाक रहे ।

अर्ववसु (सं० पुं०) सूर्यके प्रधान सातमें एक किरण ।

अर्वश (वै० त्रि०) शीघ्रग, तेजरफ्तार, जल्द-
जल्द चलनेवाला ।

अर्वा, अर्वन् देखो ।

अर्वाक् (सं० अव्य०) आ-अर्व-आक् । १ इतः, इस
और । २ इस पार्श्वपर, इस बगलमें । ३ लक्ष्य
विशेषसे, किसी नुकतेसे । ४ पूर्व, पहले । ५ पश्चात्,
पीछे । ६ निम्न भागमें, नीचे । ७ समीप, नज़दीक ।

अर्वाकि (वै० अव्य०) समीप, पास ।

अर्वाक्काल (सं० पु०) अर्वाक् अवरः कालः, कर्मधा० । १ अवरकाल, पश्चात् काल, पिछला वक्त । (त्रि०) २ पश्चात्कालजात, पोछे पैदा हुआ ।

अर्वाक्कालिक (सं० त्रि०) आसन्न काल सम्बन्धीय,, नव, हालके जमानेसे तात्तुक रखनेवाला, नया ।

अर्वाक्कालिकता (सं० स्त्री०) नवीनता, नयापन, वक्तको तात्कीर ।

अर्वाक्कूल (सं० स्त्री०) नदीका आसन्न तट, दरि-येका नजदीक किनारा ।

अर्वाक्सामन् (वै० पु०) सोमयाग करनेका तीन दिन ।

अर्वाक्स्रोतस् (सं० पु०) अर्वाक् अधोगामिस्रोतो रेतः स्रावो यस्य, बहुव्री० । १ ऊर्ध्वरेता न होनेवाला व्यक्ति, जिसके वीर्य निकल पड़े । अर्वाक् निचगामी स्रोतः प्रवाहो यस्य । २ नद, दरया । (त्रि०) अर्वाक् अधोगामिस्रोतो रेतः स्रावो येन । ३ नीचेकी ओर वायं छोड़नेवाला । यह शब्द लिङ्ग एवं योनिका विशेषण होता है ।

अर्वाग्विल (वै० पु०) अर्वाग्विलो यस्य, बहुव्री० । १ चमस । २ यज्ञका पात्रविशेष । (त्रि०) ३ निम्ना-भिमुख, जिसके नीचेकी ओर मुंह रहते ।

अर्वाग्वसु (वै० पु०) अर्वाक् मध्ये वसु जलरूपं धनं यस्य, बहुव्री० । १ मेघ, बादल । (त्रि०) २ धन प्रदान करनेवाला, जो दौलत दे रहा हो ।

अर्वाच् (सं० त्रि०) अर्वान्तं अधमं अञ्चति प्राप्नोति, अर्वान्-अञ्च-क्तिन् अस्ताति; तस्य लुक् । १ पश्चात् कालवर्त्ती, पिछले वक्तवाला । २ आधुनिक, नूतन, नया । ३ अन्न, नादान् । (अव्य०) अर्वाग्देशे देशात् देशो अर्वाक् काले कालात् कालो वा, अस्तातिः तस्य लुक् । ४ पश्चाद् देशसे, पिछले सुल्कसे । ५ पश्चात् कालसे, पिछले वक्त । ६ मध्यसे, बीचसे । (स्त्री०) डीप् । अर्वाक्तनी ।

अर्वाचीन (सं० त्रि०) अर्वान्तमञ्चति, ख । १ पश्चात् काल जात, जो पिछले वक्त, पैदा हो । २ आधुनिक, नूतन, नया । ३ अन्न, नादान् । (अव्य०) ४ इस पार्श्वसे, इस ओर । ५ वहांसे, आगे ।

अर्वाचीनता (सं० स्त्री०) नूतनत्व, नयापन ।

अर्वाचीनत्व (सं० लो०) अर्वाचीनता देखो ।

अर्वावत् (वै० त्रि०) अर्वा अधम उत्तर इति यावत् काल; अस्तस्य जन्मकालत्वेन; अर्वान्-मतुप्, मस्य वः न लोपः पू० दीर्घश्च । १ अर्वाचीन, नया । (स्त्री०) २ अर्वाचीनता, नयापन ।

अर्वावसु (वै० पु०) अर्वा लक्षणया अर्वाणा क्रिय-माणोऽश्वमेधयागादिरस्मिन् आ सम्यग्रूपेण वसति, अर्वान्-वस-उ । १ देवताका होदविशेष । २ होम-कर्ता ।

अर्वी—१ मध्यप्रदेशके वर्धा जिलेकी तहसील । यह अक्षा० २०° ४५' एवं २१° ३१' १५" उ० और द्राघि० ७८° १०' ३०" तथा ७८° ४०' पू०के मध्य अवस्थित है । क्षेत्रफल ८७७ वर्गमील निकलेगा । २ मध्य प्रदेशके वर्धा जिलेका शहर । यह अक्षा० २०° ५८' ४५" उ० तथा द्राघि० ७८° १६' १६" पू०पर अवस्थित और वर्धा नगरसे उत्तर-पश्चिम सत्रह कोस दूर है । महाराष्ट्र शासन-समयमें यहां अस्सी परगनेके हाकिम-ने अपनी कचहरी लगायी । कहते हैं, सवा तीन सौ वर्ष पहले तैलङ्ग राव वालीने यह शहर बसाया था । तैलङ्गरावको कोई हिन्दू और कोई सुसलमान बताते हैं । किन्तु उनकी कन्नको हिन्दू और सुसलमान दोनों ही पूजते हैं । व्यापारका खासा धूम-धड़ाका देख पड़ता है ।

अर्वुक (सं० पु०) अर्वति हिनस्ति शत्रून्, अर्वं हिंसने बाहु० उक्त्वा । आटविक दक्षिण देशस्य नृपविशेष । सहदेवने दिग्विजयको जा इन्हें जीत लिया था ।

अर्श (सं० त्रि०) अर्शति गच्छति प्रायं सौत्रम्, ऋश-अच् । १ अस्त्रोल, फुहश । २ पापिष्ठ, गुनह-गार । (स्त्री०) ३ हानि, नुकसान् । ४ अर्शरोग, बवासीरकी बीमारी ।

(अ० पु०) ५ आकाश, आसमान् । ६ स्वर्ग, जन्नत ।

अर्शःकुठाररस (सं० पु०) रसमेद । यह रस अर्श यानी बवासीर रोगमें हितकर है । इसके बनानेकी

रोति यह है—शुद्ध पारा १ पल, शुद्ध गन्धक २ पल, मृत ताम्र, मृतलोह प्रत्येक ३ पल, त्रिकटु, (सोंठ, मिर्च, पीपल) लाङ्गली, दन्ती, चित्रक, पुष्कर, प्रत्येक २ पल, यवचार, टङ्गण, सैन्धव, प्रत्येक ५ पल, गौका मूत्र २२ पल, थूहरका दूध ११ पल, इन सब द्रव्योंकी एकत्र करके मृदु-अग्निसे जब तक पिण्ड न हो पकाना चाहिये। मात्रामें दो माष दिया जाता है। (प्रयोगसूत्र)

दूसरा—शुद्धपारा १ पल, शुद्ध गन्धक २ पल, मृतलोह २ पल, मृत ताम्र २ पल, दन्ती, चुषण (सोंठ, मिर्च-पीपल) शूरण, वंशलोचन, टङ्गण, यवचार, सैन्धव, प्रत्येक ५ पल, थूहरका दूध ८ पल, गोमूत्र ३२ पल, इन सब द्रव्योंकी पूर्ववत् पाक करके दो माष बराबर प्रति दिन सेवन करना चाहिये। (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अर्शः सूदन (सं० पु०) सूरण, जमीकन्द।

अर्शआदि (सं० पु०) अर्शस् इति शब्द आदिर्येषाम्, बहुव्री०। अर्श आदिभ्योऽच्। पा५।२।१२६ अस्त्यर्थके अच् प्रत्यय निमित्त शब्दसमूह। इसमें निम्नलिखित शब्द सम्मिलित हैं,—अर्शस्, उपस्, तुन्द, चतुर, पलित, जटा, याटा, अघ, कर्दम, अन्त, लवण, स्त्रीय, अङ्गाङ्गी, भाव, वर्ण, आकृतिगण।

अर्शआद्य (सं० पु०) अर्शः गुदव्याधिः आद्यो येषाम्, बहुव्री०। अतिपापोद्भव रोग समूह, बड़े पापसे पैदा होनेवाली बवासीर वर्गैरहकी बीमारी।

अर्शस्, अर्शस् (सं० स्त्री०) ऋच्छति प्राप्नोति गुदम् ऋ व्याधौऽच्। उण् ४।१८५। इत्यसुन् शट् च सट्दन्त्यादिरित्यन्ते। गुह्यरोगविशेष। अर्श रोगके प्रायः-चित्तमें ३८४०० कौड़ी किम्बा उनके दाम बराबर चांदी या सोना दान करना पड़ता है।

अर्शरोग (Haemorrhoids) सरलान्त्रसे नीचे मल-द्वारके बाहर और भीतर भी होता है। इसमें भेड़के स्तन जैसी छोटी छोटी कलियां निकलती हैं। इन कलियोंको चलती बोलियोंमें मस्सा कहते हैं। किसीके यह मस्सा मलद्वारसे बाहर, किसीके भीतर तथा किसीके बाहर और भीतर दोनों जगह निकलता

है। बीच बीचमें अर्शसे अल्प वा अधिक रुधिर गिरा करता है। कभी कभी जलन होनेसे मस्सा खूब फूलता और उससे दूषित रस तथा पीब पड़ता है। उस समय रोग कठिन हो जाता है।

बालककाल वा यौवनावस्थामें यह रोग प्रायः किसीको नहीं होता। यौवनकाल बीत जानेपर ही अर्शरोग पैदा होता है। पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियोंकी यह रोग अधिक सताता है। स्वभावतः जिसका कोठा साफ नहीं रहता और जो शारीरिक परिश्रम नहीं करता, उसीके अर्शरोग होनेकी अधिक सम्भावना है। फिर माता पिताके रहनेसे सन्तानको भी लग सकता है। अतिविरेचक औषध सेवन करने, नाना प्रकारका मसाला देकर मत्स्य, मांस, व्यञ्जन आदि खाने और सर्वदा शौकमें रहनेसे अर्शरोग होता है। जिन रोगोंमें यक्षत्की क्रिया शिथिल पड़ जाती, अथवा मलद्वारसे सुचारुरूप रक्त सञ्चालित नहीं होता, उनमें यह रोग लगनेकी आशङ्का है। पेटमें आंव पड़ने और गर्भावस्था आनेसे किसी किसी स्त्रीके अर्श हो जाता है।

असलमें अर्श कोई स्वतन्त्र नहीं, दूसरे रोगका उपसर्ग मात्र है। सुतरां इसका मूल कारण दूर करना ही चिकित्साका प्रधान उद्देश्य है। जो लोग स्वभावसे ही आलसी हैं, उन्हें प्रातः काल एवं सन्ध्या समय निर्मल वायुमें बहुत देरतक टहलना चाहिये। उपर्युक्त व्यायाम भी इस रोगके लिये बहुत ही अच्छा है। कितने ही भले आदमी घरके भीतर कन्धेपर बोझ ढोया करते हैं। ऐसा प्रवाद है, कि बहंगीपर बोझ ढोनेसे अत्यन्त कठिन अर्श रोग भी अच्छा हो जाता है। विश्वास आता, कि व्ययामादिसे यह उद्देश्य सिद्ध हो सकता है। उससे यक्षत् और अन्धका रक्ताधिक्य मिटता, उत्तमरूपसे रक्त सञ्चालित होता रहता, मूत्राशयकी उग्रता कम पड़ जाती और परिपाक शक्ति बढ़ती है, सुतरां अर्श रोगका मूल कारण फिर नहीं रह सकता।

और एक बात पर ध्यान रखना आवश्यक है।

ऐसा उपाय करना चाहिये जिससे हर रोज सहज हो कोठा साफ हो जाया करे। मलत्याग करनेके समय जोर देकर न कांखना और सुपथ द्वारा रोगीको कोठा साफ रखना चाहिये। बारबार जुलाब लेनेसे आंत तेजहीन हो जाती है। हिन्दुस्थानमें खूब पका हुआ नारियल, पपीता, पालक शाक, मूंगकी दाल, आम एवं दूध आदि सुपथ खानेसे हर रोज कोठा साफ हो सकता है। विशेष आवश्यक होनेसे बीच बीचमें हलका जुलाब ले लेना चाहिये। वैद्य शास्त्रके मतमें जमीकन्दसे अर्श रोग दूर हो जाता है।

अवधौत औषधमें काली घुगियाके मूल अथवा अशोककी जड़को ताँबेके यन्त्रमें रख कर कमरसे बांध लेनेपर कितनों ही का अर्श रोग अच्छा होता देखा गया है। थूहरके दूध साथ थोड़ीसी हल्दी मिलाकर लगाने अथवा घोषाफलका चूर्ण मलनेसे मससा गिर जाता है। कोड़ेका दूध, थूहरका दूध, कड़वे कड़का पत्ता, पनीहा करोंदिका फल, सब बराबर बराबर ले बकरोके दूध साथ पीसकर मससेपर लेप चढ़ानेसे उपकार होता है। परन्तु जब किसी तरहके उपायसे फायदा न हो, तब अच्छे डाक्टरसे मससेको कटवा डालना चाहिये।

अर्शस (सं० त्रि०) अर्शो गुदव्याधिरस्तस्य, अर्शस अस्त्यर्थे अच्। अर्शोरोगयुक्त, जिसे बवासीरकी बीमारौ रहे। 'अर्शोरोगयुतोऽर्शसः।' (अमर) अर्शरोग होनेपर जो व्यक्ति प्रायश्चित्त करनेसे दूर रहता है, उसे किसी वैध धर्म कार्यका अधिकार नहीं होता।

अर्शसान (वे० पु०) ऋच्छति नाशयित्वा गच्छति, ऋ-असानच् गुणः शुट् च। १ अग्नि, आतिश। 'अर्शसानोऽग्निः।' (उज्ज्वलदत्त) २ मन्देह नामक असुर। (त्रि०) ३ बाधक, हिंसक, चोट पड़ानेकी कोशिश करनेवाला।

अर्शिन् (सं० त्रि०) अर्शमस्तस्य इति। अर्शस देखो। अर्शी, अर्शस देखो।

अर्शीद वेग—टीपू सुलतानके माली हाकिम। सन् १७८४ ई०को इन्होंने मद्राजके मलबार प्रान्तमें

रैयतवारी नियम चलाया, जिसपर काश्तकारको अपनी पैदायशका आधेसे कुछ ज्यादा हिस्सा सरकारको देना पड़ता था।

अर्शोघ्न (सं० पु०) अर्शो गुदव्याधिं हन्ति; अर्शस-हन्-क्, उप० समा०। १ सूरण, जमीकन्द। २ भल्लातक, भेलावां। ३ सर्जिचार, सज्जी मट्टी। ४ तेजवल। ५ श्वेतसर्षप, सफेद सरसों। ६ कटु सूरण, कड़वा जमीकन्द। ७ तक्र विशेष, किसी किस्मका मठा। इसमें तीन हिस्से पानी और एक हिस्से मठा रहता है। (त्रि०) ८ अर्शोरोगहर, बवासीर मिटानेवाला।

अर्शोघ्नवर्ग (सं० पु०) वर्ग विशेष, दवाका कोई जखीरा। इसमें निम्नलिखित द्रव्य रहते हैं,—कुटज, विल्व, नागरा, अतिविषा, धन्वयासक, दारुहरिद्रा, वचा और चव्य। यह वर्ग बवासीरको दूर करता है।

अर्शोघ्नवल्कला (सं० स्त्री०) तेजवल।

अर्शोघ्नी (सं० स्त्री०) १ तालमूली, काली मूसर। २ भल्लातक, भेलावां।

'अर्शोघ्नी तालमूल्यां स्यादर्शोघ्नः सूरणोऽपि च।' (विश)

अर्शोज (सं० पु०) भगन्दर रोग।

अर्शोयन्त्र (सं० क्लो०) यन्त्रविशेष, कोई आला। यह गोखनाकार होता और अर्शरोग देखनेके काम आता है।

अर्शोयुज्, अर्शस देखो।

अर्शोरोग (सं० पु०) अर्शस देखो।

अर्शोरोगयुत, अर्शस देखो।

अर्शोवर्त्मन् (सं० क्लो०) नेत्रवर्त्मगत रोग विशेष, आंखकी पलकका कोई रोग। इसमें आंखकी पलक पर ककड़ीके बीज-जैसी, कुछ कुछ दर्द करनेवाली, चिकनी और गर्म फुन्सी पड़ जाती है। यह रोग सन्निपातसे उत्पन्न होता है। (माधव निदान)

अर्शोहररस (सं० पु०) रसविशेष। यह बवासीरको दबा देता है। शुद्धाभ्र, कान्तभस्म एवं गन्धकको बराबर ले और ताँजे, अनारके अकामें घोट इसे तैयार करते हैं। एक माषा मात्रा खानेसे अर्शरोग दूर

अर्शीहित (सं० पु०) अर्शसि तद्गोहि हितः तन्नाशक-
त्वात्, ७-तत् । १ भक्षातक, भेलावां । २ सूरण,
जमीकन्द । (त्रि०) ३ अर्शीहितकर, बबासीरमें
फायदा पहुँचानेवाला । अर्शसि अर्हितम्, ७-तत् ।
४ अर्शीरोग बढ़ानेवाला, जिससे बबासीरकी बीमारी
बढ़े ।

अर्षण (सं० क्ली०) ऋष गतौ भावे ल्युट् । १ गमन,
रफ्तार । ऋष्यतेऽनेन, करणे ल्यट् । २ गमनसाधन
शकटादि, गाड़ौ वगैरह सवारी । (त्रि०) ३ गमन-
शील, चलने फिरनेवाला ।

अर्षणो (वे० स्त्री०) भौषण पीड़ा, गहरा दर्द ।

अर्षस, अर्शस देखो ।

अर्सा, अरसा देखो ।

अर्सी, अलसी देखो ।

अर्सीकीर—महिसुर राज्यके हसन जिलेका गांव । यह
अक्षा० १३° १८' ३८" उ० और द्राघि० ७६° १७'
४१" पूर्व पर अवस्थित है । यहां पाषाण-लेखसे
अर्द्धित मन्दिर बने, जिनमें चालुक्य-शिल्पके चिह्न वर्त-
मान हैं । होयसल बल्लाल नृपतियोंके भी कितने ही
स्मारक देख पड़ते ।

अर्ह (सं० पु०) अर्हते पूज्यते; अर्हं चुरा०
कर्मणि घञ् । १ स्तुति एवं नमस्कार प्रभृति द्वारा
आराधनीय ईश्वर । २ विष्णु । ३ इन्द्र । ४ पूजा,
परस्तिश । ५ गति, चाल । ६ योग्यत्व, काबिलियत ।
७ मूल्य, दाम । ८ सुवर्ण, सोना । (त्रि०)
९ पूजनीय, परस्तिश पाने लायक । १० योग्य,
काबिल । ११ मूल्यवान्, कीमती ।

अर्हण (सं० क्ली०) अर्हं भावे ल्यट् । १ पूजा,
परस्तिश । अर्हतेऽनेन, करणे ल्युट् । २ सम्मान
साधन द्रव्य, इज्जत बनानेका सामान ।

अर्हणा (सं० स्त्री०) १ पूजा, परस्तिश । 'पूजा-
नमस्कारचितिः सपर्याचाङ्गणाः समाः ।' (अनर) (सं० अव्य०)
२ योग्यताके अनुसार, ठीक-ठीक । ३ साधनके
अनुसार, हैसियतके मुवाफ़िक ।

अर्हणीय (सं० त्रि०) अर्हते, अर्हं कर्मणि अर्णीयर् ।
१ पूजनीय, परस्तिशके काबिल । अर्हतेऽनेन, करणे

अर्णीयर् अर्हणे साधू छ वा । २ पूजासाधन, जिससे
किसीकी परस्तिश करें ।

अर्हत (सं० त्रि०) अर्हं प्रशंसायां शट् । १ पूज्य,
पूजने लायक । २ योग्य, काबिल । ३ प्रशंसित, मश-
हूर । (पु०) ४ जिनदेव, जैनियोंके देवता ।

जैनमतसे—जीवको इस संसारमें दुःख देनेवाले
ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अन्तराय, वेदनीय,
आशु, नाम, गोत्र ये आठकर्म हैं । इनमेंसे पहिले चार
कर्मोंको घातिया (आत्माके अनन्तज्ञान, सर्वज्ञत्व,
अनन्तदर्शन, अनन्तसुख, अनन्तवोर्यको आवृत करने-
वाले) और शेष चारको अघातिया कर्म कहते हैं ।
तपके प्रभावसे जिस समय यह आत्मा घातिया
कर्मोंको नष्ट कर देता, उस समय इसके पूर्वोक्त
चारो गुणोंका आविर्भाव होता है । उससे वर्त-
मान, भूत, भविष्यत् कालके सम्पूर्ण पदार्थोंको
आत्मा युगपत् जानता और रागद्वेषविहीन (वीत-
राग) हो जाता है । ऐसे आत्माको अर्हत (अर्हन्त)
केवली, सर्वज्ञ, वीतराग आदि नामोंसे पुकारते हैं ।
अर्हत (केवली) दो प्रकारके होते हैं—एक सामान्य,
दूसरे तीर्थङ्कर । तीर्थङ्कर केवलियोंके केवलज्ञान
होनेसे पहिले गर्भ, जन्म, और तपके समय देवता
स्वर्गसे आकर उत्सव किया करते हैं । फिर
सामान्य केवलियोंके केवलज्ञान होते समय ही देवता
उत्सव करते हैं । जिस समय केवलज्ञान होता है, उस
समय कुबेर इन्द्रकी आज्ञासे समवशरण (धर्मसभा)
की रचना बनाते हैं । उसमें १२ अ्रेणी (दर्जा) होते,
जिनमेंसे एकमें मुनि, एकमें आर्यिका, एकमें आविका,
एकमें आवक, एकमें पशुपक्षी, ४में चारो तरहके (भवन-
वासी, व्यन्तर, ज्योतिषी, वैमानिक) देव, और चारमें
चारो प्रकारकी देवाङ्गनायें बैठकर भगवान्का पवित्र
उपदेश सुनती हैं । भगवान्के विराजनेका एक
खास स्थान होता, जिसे गन्धकुटी कहते हैं । कुबेर
रत्नमय सिंहासनपर सुवर्णके कमल रचता है, भगवान्
उसपर भी चार अङ्गुल अन्तरिक्ष विराजते हैं । देव
उनपर चंवर दुरते हैं, कल्पवृक्षोंके फूलोंकी वर्षा
होती है, देवोंद्वारा बजाये गये दुन्दुभि बाजोंके

त्रिकालवित्, क्षीणाष्टकर्मा, परमेष्ठो, अधीश्वर, शम्भु,
स्वयम्भू, भगवान्, जगत्प्रभु, तीर्थङ्कर, तीर्थकर, जिने-
श्वर, वादी, अभयद, सार्ध, सर्वज्ञ, सर्वदेशी, केवली,
देवाधिदेव, बोधद, पुरुषोत्तम, वीतरागात् ।

अर्हत् आचार—काठियावाड़के वमभी या वालोह नगरनिवासी प्राचीन महापुरुष । सन ६३० ई०को इन्होंने वालोह नगरसे थोड़ी दूर बौद्धविहार बनाया था, जिसमें बोधिसत्व गुणमति और स्थिरमतिने अपने भ्रमणके समय ठहर सुप्रशंसित निबन्ध लिखा ।

अर्हन्त (सं० पु०) अर्ह बाहु० भ। १ जैन देव,
अर्हत्। २ बुद्धविशेष। ३ बौद्ध साधु। ४ शिव। (त्रि०)

अर्द्धरिष्यणि (वै० त्रि०) शत्रुको रुलानेवाला, जो दुश्मनको रुला देता हो ।

अर्हित (सं० त्रि०) अर्ह-क्त। पूजित, परस्तिथ पाये
हुआ।

अल (सं० लौ०) अलति भूषयति वारयति पर्या-
 प्रोति वा, अल-अच् । १ वृश्चिकपुच्छकण्टक, बिच्छूकी
 पूंछका कांटा, डङ्ग । २ हरिताल । ३ मनःशिलादि
 घूमपान । ४ कङ्गोल । ५ काक, जुल्फ ।

फलक (सं० पु०-क्षी०) अलति भूषयति सुखम्,
फल-कृन् । १ काक, जुल्फ ।

२ चिम श्वान्, पागल कुत्ता ।

३ एक प्राचीन संस्कृत ग्रन्थकार । यह जयानकके
रहे । अलङ्कारसर्वस्वमें रत्नकएहने इनका उल्लेख
पा है । इन्होंने काव्यप्रकाशको परिकर अध्यायसे

पूरे उतारा था। विषमपदोद्योत और हरविजयटीका नामक ग्रन्थ इन्हींके लिखे हैं।

अलकतरा (अ० पु०) पदार्थविशेष, कोई चीज़। यह पत्थरका कोयला गलाकर तैयार किया जाता है। पत्थरके कोयलेका गैस जब भभकेसे खिंचता, तब जो गाढ़ी चीज़ बचती, वही अलकतरा होती है। इससे लकड़ीको अकसर रंगते हैं। कारण, यह कौड़ेके लिये ज़हर है; दौमक, घुन वगैरह फिर लग नहीं सकता। इससे कितने ही क्षमिनाशक औषध और रङ्ग बनाये जाते हैं।

अलकत्व (सं० स्त्री०) काक केशत्व, जुल्फ़, रख-नेकी हालत।

अलकनन्दा (सं० स्त्री०) नन्दति ज्वादेते; नन्द-अच्-टाप्, अलका कुवेरपुरी नन्दा आनन्दिता यया, बहुव्री० पूर्वपदस्य पुं वद्भावः यद्वा अलके शिवकेश-कपाले नन्दते; अच्-टाप्, ७-तत्। १ भारतवर्षीय गङ्गा।

२ युक्तप्रदेशके गढ़वाल जिलेकी नदी। गङ्गाकी यह प्रधान शाखा हिमालयसे निकल गढ़वाल जिलेके ऊपरी भागमें बहती और भारतकी पवित्र नदियोंमें किसीसे भी कम नहीं ठहरती। बदरी-नाथ जाते समय यात्री जगह-जगह इसके किनारे विराम लेते हैं। धौली तथा सरस्वती नदी मिलनेसे यह बनती और राहमें पिन्दर, नन्दाकिनी एवं मन्दा-किनीका जल पी लेती है। देवप्रयागमें भागौरथीके संयोगसे इसको ही गङ्गा कहने लगते हैं। इसके किनारे गढ़वालमें श्रीनगर सुशोभित है। पहले इसको बालूसे सोना निकाला जाता था, किन्तु व्यय अधिक लगनेसे लोगोंने छोड़ दिया। ३ कुमारी, आठ-दश वर्षकी लड़की।

अलकप्रभा (सं० स्त्री०) अलका पर्याप्ता प्रभा यस्याः, बहुव्री०। कुवेरपुरी, अलका।

अलकप्रिय (सं० पु०) अलकानां चूर्णकुन्तलानां प्रियः, ६-तत्। १ कृष्णभस्मातक, काला भिलावां। २ वीजकवृक्ष, विजयसारका पेड़। ३ पीतशाल वृक्ष, पियासालका दरख्त।

अलकम् (वै० अथ०) निष्प्रयोजन, बेफायदे।

अलकलड़ैतो (हिं० वि०) प्रिय, प्यारा, दुलारा, लाडला।

अलकसंहति (सं० स्त्री०) काककेश पंक्ति, जुल्फ़का लच्छा।

अलकसलोरा, अलकलड़ैतो देखो।

अलका (सं० स्त्री०) १ कुवेरपुरी। यह हिमालय पर अवस्थित है। इसमें शिव भी रहते हैं। २ कुमारी, आठ-दश वर्षकी लड़की। २ वसा, चर्बी।

अलकाधिप (सं० पु०) अलकाया अधिपः स्वामी, ६-तत्। कुवेर।

अलकाधिपति, अलकाधिप देखो।

अलकानन्दा—बङ्गालके नवहीपाधिपति राजा कृष्णचन्द्र रायका स्थापित कुण्ड विशेष। यह नवहीपसे कोई एक कोस दूर गङ्गाके नीचे बना है। पहले इसके पास गङ्गा रही, इसीसे कृष्णचन्द्र राजाने कुण्ड किनारे एक कुटीर और कितनी ही देवमूर्ति स्थापित करायी थी। यहांकी हरिहर मूर्ति अति मनोहर है। इसका एक भाग सादे पत्थर और दूसरा कसीटीसे तैयार हुआ है। अलकानन्दा कुण्डके जलमें रहनेवाले शिवका नाम हंसवाहन है। कोई-कोई उन्हें हंसवदन भी कहता है। शिवमूर्ति बारह महीने जलके भीतर ही रहती, केवल चड़कपूजाके समय सन्यासी बाहर निकालता है। चड़क-पूजा पूरी होते वैशाख मासके पहले ही दिन फिर शिव-मूर्ति जलमें डुबा दी जाती है।

अलकान्त (सं० पु०) काककेशकी सीमा, जुल्फ़का सिरा।

अलकापति, अलकाधिप देखो।

अलकापुरी—उड़ीसा प्रान्तस्थ पुरीके जगन्नाथ मन्दिरकी एक गुहा। यह दो मंजिलो बनो है। ऊपर एक बड़ा और नीचे दो छोटा कमरा मिलता है। सब कमरेमें जम्दा मेहराबदार छत और बरामदा खिंचा है। अलमारी देखकर मन मोहित हो जाता है। चतुष्कोण स्तम्भको चूड़ापर पत्थरके परदार शेर और आदमीके मुंहवाले जानवर बैठे हैं। किसी खम्भेकी दौलतगोपीपर हाथियोंका राजा भी देख

पड़ता। उसके शिरपर दूसरा हाथी छाता तान और तीसरा पङ्खा झूल रहा है।

अलकायम—बरबरीकी फातिमा जातिके २२ खलीफा। सन् ८२४ ई०में इन्होंने अपने पिता अबीदुल्लाहका उत्तराधिकार पाया था। इनके शासनाधिकार समय यज़ीद इब्न कौदतने ही सिर्फ बलवा उठाया। यह बीस वर्ष राज्य चला सन् ८४५ ई०को खर्गवासी हुए थे। अन्तको इनके पुत्र इस्माइल अल मन्सूर खलीफा बने।

अलकायम बिलह—अब्बास वंशके २८वें खलीफा। इनका उपनाम अबूजफर अबदुल्लाह रहा। सन् १०३१ ई०को बग़दादमें इन्होंने अपने पिता कादिर-बिलहका उत्तराधिकार पाया और ४४ चान्द्र वत्सर ८ मास तक राज्य किया। सन् १०७५ ई०को इनके गतायु होने पर सुलतान मलिक शाह सल्जूकी सिंहासनारुढ़ हुए थे। उन्होंने अपने प्रधान मन्त्री निजामुलमुल्कका लड़का बग़दाद भेज अलकायमके पौत्र अल्मुक्तदीकी राज्यका उत्तराधिकारी बना दिया।

अलकाहिर बिलह—ईरानी अब्बासी जातिके १८वें खलीफा। यह मोतजिद बिलहके लड़के रहे, सन् ८३२ ई०के अक्तोबर मास अपने भाई अल्मुक्तदिरकी जगह बग़दादमें सिंहासनारुढ़ हुए। इन्होंने सिर्फ एक वर्ष पाँच महीने और इक्कीस रोज़ ही हुकूमत की थी, कि इबन मल्ल, वज़ीरने सन् ८२४ ई०की २३ वीं अप्रैल-बुधवारको जलते लोहेकी सलाईसे इनकी आँखें फोड़ मुक्तदिरके लड़के अलराजी बिलहको गद्दीपर बैठा दिया। कहते हैं, फिर उस भर इन्हें बग़दादकी मसजिदमें भीख मांग दिन काटना पड़ा था।

अलकाहय (सं० पु०) कटुनिम्ब, कड़वी नीम।

अलक्त (सं० पु०) नास्ति रक्तः लोहितवर्णी यस्मात्, श्वेतवर्णी। लाक्षा, लाख, लाह। यहां रंके स्थानमें विकल्पसे लकार हो गया है, पक्षमें अरक्त रूप भी होता है।

पौपल, पाकर, पलाश प्रभृति नाना प्रकारके वृक्षोंकी पतली पतली डालियोंके अग्रभागमें एक किस्मके पराङ्गपुष्ट कीड़े पैदा होते हैं। इस

जातिके कीड़ोंका अग्रभाग सूक्ष्म रहता, उसीसे वे सब पेड़का रस चूस लेते हैं। प्रौढ़ावस्थामें नरोंके चार पंख निकलते हैं। दो पंख शरीरकी दाहिनी ओर रहते और दो बाईं ओर। दोनों ओरके आगेके पर पतले और खच्छ रहते हैं। फिर पीछेके सोधे और मोटे होते हैं। मादीनोंके पर नहीं होते। मादीनसे नर प्रायः दूना बड़ा होता है। अनेक मनुष्योंने विशेष परीक्षा करके देखा है, कि एक एक नरके पास कमसे कम पाँच हजार मादीन रहती हैं। इसलिये नरोंकी संख्या बहुत ही कम होती है।

यह कीड़ा पेड़की कोमल छालको छेद कर उसमें घुस जाता, फिर उसी छेदसे पेड़का रस और दूध निकलता है। उसी रसको कीड़े खाते हैं। धीरे धीरे यह दूध फूल और भोजकर जंचा हो जाता है। तब सब उसमें वास करते हैं। मादीन अण्डा देनेकी वाद मर जाती है। अण्डोंके फूट जानिपर नन्हें नन्हें बच्चे मरे हुए कीड़ोंके शरीरोंके कोषोंमें वास करते हैं। ऐसे ही समय लाक्षाकोषके भीतर लाल रङ्ग पैदा होता है। किसी पेड़में एकबार लाह लगनेसे धीरे धीरे वह सारे पेड़ोंमें फैल जाती है। लामिदानाकी तरह लाह कीड़ेके शरीरका रङ्ग नहीं होती। रासायनिक परीक्षा द्वारा यह निश्चित हुआ है, कि लाहके कीड़े पेड़के रससे ऐसे रङ्गका द्रव्य उत्पन्न करते हैं। इसके सिवा यह भी देखा जाता है, कि पेड़का रस लाहके कीड़ोंके खानेकी सामग्री है। कारण लाह निकालकर शीघ्र ही सब कीड़ोंको मार न डालनेसे वे भीतरके रसको खा डालते हैं, इसलिये अच्छा रङ्ग पैदा नहीं होता। अनेक ही कहते हैं, कि मादीनकी देहसे एक किस्मके गुलाबी रङ्गका रस निकलता है। पेड़के दूधके साथ मिलकर वही लाचारस हो जाता है।

श्याम, आसाम और वङ्गदेशमें ही अधिक लाह पैदा होती है। वङ्गदेशमें सालभरमें दो बार लाह उत्पन्न होती है; एक बार वैशाख और ज्येष्ठमें और एकबार कार्तिक और अग्रहायणमें। जिन पतली

पतली डालियामें लाह लगती, पहले उन्हें पेड़से काट लेना पड़ता है। फिर डालियोंके जिन जिन अंशोंमें लाह रहती है, उन उन अंशोंको छोटे छोटे टुकड़े करके धूपमें सुखा लेनेसे कौड़े मर जाते हैं। इसे खोपड़ा लाह कहते हैं। फिर किसी बड़े बरतनमें इस लाहको भरकर पकानेसे लाल रङ्ग अलग निकल आता है। अन्तमें उन पतली पतली डालियोंको ऊपर रखनेसे सब लाह नौचे टपक पड़ती है। किसी किसी स्थलमें खोपड़ा लाहको पहले चूरकर पानीमें घो डालनेसे वर्णक द्रव्य निकल आता है। उसके बाद लाह टपका ली जाती है।

समस्त लाह और लाहके रङ्गको संस्कृत भाषामें अलक्त, लाक्षा, याव प्रभृति कहते हैं। लाहके रसको पहले भागपर चढ़ाकर कुछ गाढ़ा करना पड़ता है। कोई कोई उसमें थोड़ीसी फिटकिरी मिला देते हैं। फिर सनकी गोली बनाकर उसपर उस रङ्गको ढाल देनेसे महावर तय्यार हो जाता है। यह महावर स्त्रियोंके लिये परम मङ्गलमयी सामग्री है। सधवा स्त्रियां शृङ्गार करनेके पहले पैरमें महावर दिलाती हैं। पहले इस देशके पुस्तक एवं मन्त्रादि महावरसे ही लिखे जाते थे। अब पहननेके यन्त्र आदि लिखनेमें महावर व्यवहार किया जाता है। लगानेके महावर भिन्न लाक्षारस वैद्यके तैल और औषधके अनुपानमें व्यवहृत होता है। इससे वस्त्र और चमड़ा भी रङ्गा जाता है। प्रति वर्ष कई हजार मन लाह इङ्ग्लैण्ड जाती है। वहां सैनिक विभागके वस्त्र रङ्गनेके काम आती है। अब कृमिदानेका चलन हो जानेसे लाक्षारसका आदर दिन दिन कम होता जाता है।

लाक्षाका अपभ्रंश लाह है। संस्कृत भाषामें लाहके ये कई पर्याय पाये जाते हैं,—अलक्त, लाक्षा, जतु, याव, द्रुमामय, रक्षा, अरक्त, जतुक, यावक, अलक्तक, रक्त, पलङ्घा, कृमि, वरवर्णिनी।

महावर अर्थात् लाक्षारसके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—अलक्तक, जतुरस, राग, निर्भत्सन, जननी, जनकरी, सम्पद्या, शक्रवर्तिनी।

वैद्यशास्त्रके मतसे लाक्षारस तिक्त एवं उष्ण है।

इससे कफ, वायुरोग, रक्तवमन, व्रण, कण्ठरोग प्रभृति नष्ट हो जाते हैं।

अलक्तक (सं० पु०) अलक्त स्वार्थे कन्। १ लाक्षा, लाख। यह तिक्त, उष्ण, रुच्य एवं कफ, बात, आम और व्रण मिटानेवाला होता है। (राजनिषण्ड) यह वर्णकर, हिम, बल्य, स्निग्ध, लघु, तुवर तथा अनुष्ण रहता एवं कफ, पित्त, रक्त, हिक्का, कास, ज्वर, व्रण, उरक्षत, वीसपै, कृमि, कुष्ठ और विशेषतः व्यङ्गको दूर करता है। (भावप्रकाश) यह रजोरोधी और रक्त-पित्त, चय, प्रदर एवं सरक्त अतीसारका विघातक है। (अविषङ्गिता) २ महावर। यह लाखसे बनता और सौभाग्यवती स्त्रीके पैरमें लगता है।

अलक्तकनगरी—बम्बई-प्रान्तके कनाड़ा जिलेका गांव। सन् ४८८-८९ ई०को यह किसी जैन-मन्दिरकी जागीरमें लगा था।

अलक्तरस (सं० पु०) लाखका रस, लाहका रंग। अलक्षण (सं० स्त्री०) लक्ष्यते दृश्यते, चुरा० लक्ष-न अङ्गागमश्च; न लक्षणम्, नञ्-तत्। १ अशुभ चिह्न, दुर्निमित्त, बुरे आसार। (त्रि०) नास्ति लक्षणं सुचिह्नं यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ लक्षणशून्य, बेनिशान। ३ अशुभ-सूचक, बदशिगून, खराब।

अलक्षणीय, अलक्ष्य देखो।

अलक्षित (सं० त्रि०) न लक्षितम्, नञ्-तत्। १ अज्ञात, जो देखा न गया हो। २ लक्षण द्वारा अनुमित, जिसे चिह्नसे पहचान न सके। ३ अज्ञात-चिह्न, बेनिशान।

अलक्षितान्तक (सं० त्रि०) अकस्मात् मृत्युप्राप्त, जो अचानक मर गया हो।

अलक्षितोपस्थित (सं० त्रि०) अज्ञातरूपसे उपस्थित होनेवाला, जो चुपके-चुपके आ पहुंचा हो।

अलक्ष्मी (सं० स्त्री०) लक्ष्यते चुरा० लक्ष-लच् मुट् च। उण्। ३।१६०। इति ईं मुट् च। ततो विरोधे नञ्-तत् लक्ष्मीके विरुद्ध, निवर्तति। अलक्ष्मी शब्दके स्थानमें आलक्ष्मी शब्दका व्यवहार है।

अलक्ष्मी शब्दके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—
तरुदेवता, कालकर्षी, कालकर्णिका, ज्येष्ठादेवी।

पद्मपुराणके उत्तरखण्डमें अलक्ष्मीकी उत्पत्तिके बारेमें यों लिखा है—पहले एकवार समुद्रमन्थन हो गया। फिर दूसरी बार महादेवको प्रणामकर देवगण चौर-सागर मथने लगे। इस बार समुद्रसे ज्येष्ठा देवी निकलीं। उनके गलेमें लाल माला थी और वे वस्त्र धारण किये थीं। समुद्रसे निकलकर अलक्ष्मीदेवीने देवताओंसे पूछा,—कहो, अब मुझे क्या करना होगा ? इसपर देवताओंने कहा,—“जिस घरमें हमेशा कलह होता, जिसके घरमें खपड़ा, भूसी, अङ्गार, हाड़, भस्म, बाल आदि गिरा करता, जो मिथ्यावादी सदैव कर्कश वचन कहता, जो दुष्ट सन्ध्या समय सोता, जो विना पैर धोये ही आचमन कर लिया करता, जो नराधम दृष्ट अङ्गार खपड़े, पत्थर, बालू, लोहे या चमड़ेसे मुह धोता, जो तिलकी मिठाई, नक्त, ककड़ी, शजना, लहसुन, छत्रक, सूवर, वेल, भौंगी, कद्दू, एवं श्रीफल खिलाता या खाता है,—हे देवि ! तुम उसी नराधमके यहां जाकर वास करो।”

दीपान्विता अमावस्याकी रातमें अलक्ष्मी देवीकी पूजा होती है। सन्ध्याके उपरान्त पहले आचारके अनुसार गृहमें लक्ष्मीकी पूजा होती है। उसके बाद पुजारी मकानके बाहर जा और गोबरकी पुतली बनाकर काले फूलसे अलक्ष्मीकी पूजा करता है। अलक्ष्मीका ध्यान इस तरह है—

“अलक्ष्मीं कृष्णवर्णां द्विभुजां कृष्णवस्त्रपरिधानां
लौहामरणभूषितां शर्कराचन्दनचर्चितां
गृहसम्पार्जनीहस्तां गर्दभादुदा कलहप्रियां।”

अन्तमें पूजाके बाद मुंह फेरकर कृष्णवर्ण पुष्पद्वारा प्रणाम करके—

“अलक्ष्मीस्त्वं कुरुपासि कुक्षितस्थानवासिनी।
सुखरात्री संया दत्तां गृह्य पूजाञ्च शान्तिं।
दारिद्र्यकलहप्रिये देवी त्वं धननाशिनी।
याहि शनोर्गृहे नित्यं स्थिरा तव भविष्यसि।
गच्छ त्वं मन्दिरं शनोर्गृहीला वाश्रमं सम।
मदाश्रयं परित्यज्य स्थिता तव भविष्यसि॥”

इसके बाद ताली बजा करके बालक कहते हैं,—
“अलक्ष्मी दूर हो, मा लक्ष्मी घरमें आओ।”

अलक्ष्य (सं० त्रि०) लक्ष्यते; लक्ष कर्मणि-यत्, नञ्-तत्। १ अज्ञेय, गायब, जो देख न पड़ता हो। २ अचिह्नित, निशान् न किया हुआ। ३ लक्षण-रहित, जिसके खास आसार न रहे। (पु०) ४ अस्त्रविशेष, कोई हथियार।

अलक्ष्यगति (सं० त्रि०) अदृश्य रूपसे गमनशील, जिसकी चाल देख न पड़े।

अलक्ष्यलिङ्ग (सं० त्रि०) रूप बदले हुआ, जो अपनी शक्त छिपाये हो।

अलक्ष्यस्वामिन्—धर्मप्रचारक पुरुषविशेष। सन् १८६२। ६३ ई०में ये हिमालयके नीचे नेपाल, अवध आदि देशोंमें भ्रमण करते फिरते थे। इनकी कमरमें कोपीन और हाथमें एक चौमटा रहता था। इसके सिवा पास और कुछ भी न था। कठिन जाड़ेमें भी ये कुछ पहनते ओढ़ते न थे। साधनमें सर्वदा अकाशकी ओर देखकर ‘अलख’ ‘अलख’ कहा करते थे। अन्तमें अलक्ष्यस्वामी कटकके निकटवर्ती कुम्भपत्नी नाम्नी असभ्य पहाड़ी जातिके बीचमें जाकर रहने लगे। अलेखिया और कुम्भपट्टिया देखो।

अलख (हिं० वि०) अलक्ष्य, जो देख न पड़ता हो। अलख जगाना (हिं० क्रि०) उच्चैःस्वरसे ईश्वरका नाम लेना। २ ईश्वरके नामसे भीख मांगना।

अलखधारी (हिं० पु०) साधुविशेष, किसी किसीके फकीर। यह गोरखपन्थी होते हैं। इनके बड़ी-बड़ी जटा रहती है। यह गेरुहा कपड़ा पहनते, भस्म रमाते और ऊनी सेलीमें घण्टी लगा लेते हैं। हाथमें दरयायी नारियलका खप्पर रहता है। भीख मांगनेमें यह अलख अलख पुकारते हैं। इन्हें किसी जगह ठहरते न पायेंगे।

अलखनामी, अलखधारी देखो।

अलखान—गुर्जर प्रान्तके प्राचीन नृपति विशेष।

अलखित—(हिं०) अलक्षित देखो।

अलग (हिं० वि०) अलग्न, जुदा, जो मिला हो।

अलगगौर, अलगगौर देखो।

अलगण (सं० पु०) नेत्ररोग विशेष, आंखका कोई आजार।

अलगनी (हि० स्त्री) कपड़ा टांगनेकी डोरी ।

अलगरज (अ० वि०) निहन्हा, बेपरवा, जिसे कोई फिक्र न रहे ।

अलगरजी (अ० स्त्री०) १ निहन्हाता, बेपरवायी, बेखटके रहनेकी हालत । (वि०) २ अलगरज, बेपरवा ।

अलगर्द (सं० पु०) न लजते लज्जते कुत्रापि बसने ; लज-क्लिप्-लक्, ततो नज् तत्—अलक्भेक-स्मर्दयति पर्दति वा, अलज्पर्द-अच् । सर्पविशेष, किसी किस्मका सांप ।

अलगर्दा (सं० स्त्री०) सविष जलौका, जहरीली जीक ।

अलगर्घ, अलगर्द देखो ।

अलगाना (हि० क्रि०) अलग करना, जुदा रखना, साथमें न मिलाना, हटा देना ।

अलगाय (हि० पु०) पृथक्त्व, जुदायी, फर्क ।

अलगाय, अलगव देखो ।

अलगोजा (अ० पु०) वंशी विशेष, किसी किस्मकी छोटी बांसुरी ।

अलग्न (सं० वि०) लसज लज वा क्त, ततो नज्-तत् । १ असंछष्ट, जुदा । (स्त्री०) २ ज्योतिषोक्त पापग्रहयुक्त लग्न । ३ अप्रशस्त लग्न ।

अलगरल (सं० वि०) असम्बन्ध सम्भाषण करते हुआ, जो बेसिर पेरकी बात उड़ा रहा हो । २ खलत्-वादी, साफ़ न बोलनेवाला, जो तोतला रहा हो ।

अलघु (सं० वि०) न लघुः, विरोधे नज्-तत् । १ लघु न होनेवाला, गुरु, वजनी, जो हलका न हो ।

“बलारो यत्र वर्षाः प्रथममलघवः ।” (श्रुतबोध) २ दीर्घ, लम्बा, जो छोटा न हो । ३ गौरवयुक्त, घमण्डी । ४ भौषण, झोफनाक । (स्त्री०) विकल्यो डोप । अलघ्वी, अलघु ।

अलघुप्रतिघ्न (सं० वि०) गौरवयुक्त प्रतिज्ञा-सम्पन्न, जो सच्चीदा तौरपर ठहराया गया हो ।

अलघूपल (सं० पु०) शिला, चट्टान, बड़ा पत्थर ।

अलघूयन् (सं० पु०) भौषण उपाता, कड़ो गर्मी ।

अलङ्करण (सं० स्त्री०) अलम्-क्त-भावे-ल्युट् ।

१ भूषण, जेवर, गहना । करणे ल्युट् । २ कङ्कणादि भूषण द्रव्य, जिस चीजसे गहना बने । ३ शृङ्गार, सजावट ।

अलङ्करिण्यु (सं० त्रि०) अलङ्कृतुं शीलमस्य, अलम्-क्त-इण्युच् । १ भूषणकारी, सजानेवाला । २ भूषणशील, जेवरका शौकीन, जिसे साज-बाज अच्छा लगे । ३ अलङ्कारयुक्त, मण्डित, भूषित, जेवर पहने हुआ, सजा-बजा । ४ परिष्कृत, साफ़, सुथरा । (पु०) ५ शिव ।

अलङ्कर्तृ (सं० त्रि०) अलम्-क्त-टच् । भूषणकर्ता, सजानेवाला, जो गहना पहनाता हो ।

‘अलङ्कर्तृलङ्करिण्यु ।’ (अमर)

अलङ्कर्मिण्यु (सं० त्रि०) कर्मणे क्रियायै अलं समर्थः, ख । कर्मचम, कार्यदक्ष, होशियार, जो काम बनानेमें चालाक हो ।

अलङ्कार (सं० पु०) अलम्-क्त-भावे घञ् । १ भूषा, अलङ्किया । अलंक्रियतेऽनेन अलम्-क्त-करणे घञ् । २ भूषण, आभरण, हार, केयूर प्रभृति । ‘अलङ्कारसत्त्वाभरणं परिष्कारो विभूषणं । मण्डनश्च ।’ (अमर) ।

मनुष्य जातिकी यह स्वाभाविक इच्छा रहती है, किस तरह सुन्दर दिखाई पड़े और किस तरह बात सुननेमें अच्छी लगे । पशु पक्षियोंमें भी यह साध-एकदम कम नहीं है । मयूरीका मन लुभानेके लिये मयूर पूंछ फैलाकर उसके सामने नाचता फिरता है । पक्षिणीका चित्त आकर्षण होनेके लिये अनेक पक्षियोंका कण्ठस्वर सुमिष्ट होता है ।

मनुष्य सजधज देखना पसन्द करता है । इसलिये क्या धनी क्या दरिद्र, क्या सम्यक्का असम्यक्—सभी अपनी अपनी रुचि सम्भावना एवं निपुणताके अनुसार नगर गृह एवं देहको सजाया करते हैं । असम्यक् जातिके पास धन नहीं, रुचि भी मार्जित नहीं है, वैसी शिल्पनिपुणता भी नहीं है, इसीसे वे लोग सामान्य द्रव्यसे अपना अपना घर और देह सजा रखते हैं । अनेक असम्यक् जातियोंके घरकी सजावट केवल मृत् देहकी अस्थि रहती है । उनके भङ्गके भूषण भी सामान्य ही होते हैं । कौड़ी, फलके बीज, स्मर-

के दाँत, पक्षों के पर, पशुकी पूँछ, उन लोगोंकी सभा-
वना है। फिर सभ्य लोग काठ, कांच, पत्थर, वस्त्र
आदि नाना प्रकारके द्रव्योंसे घरको सजते हैं। उन
सब द्रव्योंमें कितनी ही प्रकारकी विचित्र चित्रकारी
रहती है। उनके अङ्गके अलङ्कार भी मनोहर होते
हैं। सोना, चाँदी, मोती, मणि, विचित्र वस्त्र प्रभृतिसे
वे लोग अङ्गको सजते हैं।

अति प्राचीन काल ही भारतवर्षमें नाना प्रकारके
बहुमुख्य अलङ्कारोंका चलन हुआ था। यह देश
उष्णप्रधान है, इसलिये सर्वाङ्गकी वस्त्रसे ढक रखने-
की आवश्यकता नहीं होती, सर्वाङ्गमें आभरण
पहननेका खूब सुभौता पड़ता है। पुरातन देवमन्दिरों-
में जो सब मूर्तियाँ खुदी हुई हैं, उनमें अनेक प्रकारके
अलङ्कार देखे जाते हैं। उँगलीमें अंगूठी, गलेमें
मोतीकी माला, हाथमें कङ्कण, कानमें कुण्डल—और
कितने नाम लें। प्राचीन संस्कृत पुस्तकोंमें अनेक
प्रकार अलङ्कारके नाम हैं। दैत्यवधके समय देवता-
ओंने नाना प्रकारके अलङ्कारोंसे देवीको विभूषित
किया था। शकुन्तलाको पतिगृह जानेके समय
अच्छे अच्छे वस्त्र आभूषण पहनने थे। परन्तु
अनसूया और प्रियम्बदा वनवासिनी थीं। वे चिर-
कालसे वनमें रहीं, अतएव भूषण पहनाना जानती
न थीं। तथापि चित्रपटमें यह देखकर, कहां
कौन अलङ्कार था, उन लोगोंने सखी शकुन्तलाको
साज दिया। संस्कृत भाषाके मानसोद्भास, अमर,
हेमचन्द्र प्रभृति पुस्तकोंमें भी अलङ्कारका विशेष
विवरण है। इसीसे मालूम होता है, कि अति-
प्राचीन काल भी इस देशमें बहुमुख्य वस्त्रालङ्कारका
विशेष चलन था। संस्कृत पुस्तकोंमें इन सब अल-
ङ्कारोंका विवरण है,—

१। मस्तकके अलङ्कार—माल्य, गर्भक, ललामक,
आपीड़, बालपाशा, पारितथ्या, हंसतिलक, दण्डक,
चूड़ामण्डन, च्छिदिकालम्बन, मुकुट।

माल्य—इसका दूसरा नाम माला वा माल है।
स्त्रियाँ फूलोंकी माला गूँथकर जूड़ेमें बांधती हैं।

गर्भक—इसका दूसरा नाम प्रभृष्टक है। कोई

कोई कहता, कि यह जूड़ेकी माला विशेष है। किसी-
के मतानुसार यह आजकलकी घुण्डीदार सूई-जैसा
एक प्रकारका कांटा होता है। स्त्रियाँ इसे जूड़ेमें खोस
देती थीं। अमरकी टीकामें महेश्वरने लिखा है, कि
बालोंके बीचमें जो माला पहनी जाती, उसका
नाम गर्भक और शिखासे जो माला लटकती रहती
है, उसे प्रभृष्टक कहते हैं। “केशमय्ये धृता माला गर्भक
इत्युच्यते। यन्माल्यं शिखायां लम्बमानं तत् प्रभृष्टकम्”।

ललामक—अमरकोषमें यह अलङ्कार भी एक
प्रकारकी मालामें गिना गया है। इसकी जमीनपर
तीन धारी सीधे सोनेके पत्ते, बीचमें मणिमय चांद,
जिसकी दोनों ओर जड़े हुए रत्न और नौचे मोतीकी
भालर रहती है। देखनेमें यह ज्यादातर बेंदी जैसा
होता है। स्त्रियाँ इसे मस्तकके सामने पहनती हैं। इस
अलङ्कारकी दोनों ओर और मध्यस्थलके चांदका ऊपरी
भाग जूड़ेमें लगा रहता है। इसके मोतीकी भालर
ललाटपर लटकती, इसीसे इसे ललामक या भ्रमङ्क
कहते हैं।

“पुरोन्मसं ललाटपर्यन्तं चित्रं ललामकम् ।” (महेश्वर)

आपीड़—इसका दूसरा नाम शिखर है। शिखामें
पहननेकी मालाको आपीड़ वा शिखर कहते हैं।

बालपाशा—महेश्वरके मतसे यह भी मांगका
अलङ्कार है। परन्तु स्वामी बालमें लगानेकी मोती
मालाकी बालपाशा कहते हैं।

“स्वामी तु प्रथमं बालं वन्दनं मुक्तावलीनामित्याह ।” (महेश्वर)

पारितथ्या—यह अलङ्कार आजकलकी बेंदी है।
यह सोनेकी होती। और इसमें रत्न जड़े रहते
हैं। अमरसिंहके मतसे बालपाशा एवं पारितथ्या
दोनों एक ही अलङ्कार है।

हंसतिलक—यह सोनाका और देखनेमें पीपलके
पत्ते जैसा होता है। इसके बीचमें मणिमुक्ता जड़े
रहते हैं। स्त्रियाँ इसे ललाटके ऊपर पहनती हैं।

दण्डक—यह अलङ्कार बाला जैसा होता है।
यह सोनेके पत्तरका बनता और इसपर मोती जड़ा
जाता है। इससे भ्रुन्भ्रुन् शब्द निकलता है।

चूड़ामण्डन—दण्डके ऊपरी भागकी शोभाके लिये

प्राचीन समयमें चूड़ामण्डनका चलन था। इस अलङ्कार की आकृति केतकीदलकी तरह होती है। यह सोनेका बनता है।

चूड़िका—यह सोनेकी बनती और इसकी आकृति कमल जैसी होती है। यह जूड़ेके पीछे पहनी जाती है।

लम्बन—यह अलङ्कार चूड़िकामें लटका रहता, इसीसे इसका नाम लम्बन पड़ा है। इस समय इसे पश्चिमाञ्चलमें भालर कहते हैं। छोटे छोटे सोनेके फूलोंकी दोनों ओर मोती झूलते एवं मध्यस्थलमें इन्द्रनील आदि मणि जड़े रहते हैं। यह अलङ्कार आजकल कई तरहका हो गया है।

मुकुट—यह सोने और मणिमुक्ताका बनता है। इसकी दोनों कंगूरे और बीचमें जूंची चूड़ा रहती है। चूड़ेमें पत्तीके सुन्दर पर रहते हैं। मुकुट अनेक प्रकारका होता है। पहले इस देशके राजा और रानियां ही मुकुट पहनती थीं। इस समय भी ब्रह्म प्रभृति देशोंके बड़े बड़े घरानेकी प्रायः सभी स्त्रियां मुकुट पहनती हैं।

२। मुक्ताकण्ठक, द्विराजिक, त्रिराजिक, स्वर्णमध्य, वज्रगर्भ, भूरिमण्डल, कुण्डल, कर्णपूर, कर्णिका, शृङ्खल एवं कर्णेन्दु—ये सब कानके गहने हैं।

मुक्ताकण्ठक—समान आकारके मोतियोंको पतले तारमें गूँथ और गोलाकार बनाकर स्त्रीपुरुष दोनों ही पहनते थे। अनेक स्थानोंमें अब भी इसका चलन है।

द्विराजिक—इसका वर्तमान नाम गोखुरु है। सोनेके बाला जैसी दोनों धेरोंका बगलमें मोती और बीचमें नीलमणि जड़ा रहता है।

त्रिराजिक—गोखुरु जैसा होता है। बीचमें मोती जड़े रहनेके कारण यह त्रिराजिक कहा जाता है।

स्वर्णमध्य—गोखुरुका मध्यस्थल यदि सोनेका बना हो, तो उसे स्वर्णमध्य कहते हैं।

वज्रगर्भ—इसके मध्यस्थलमें माणिक, दोनों किनारे मोती और मोतीके मध्यभागसे नीचे रत्नका बुलाक लटकता रहता है।

भूरिमण्डन—यह भी प्रायः वज्रगर्भ जैसा ही अलङ्कार है। इसके किनारे मोती, बीचमें हीरा और उसके मध्यमें माणिक जड़ा रहता है।

कुण्डल—यह सिन्धीकी तरह चढ़ा उतार बनता है। इसमें पंक्तिसे हीरे जड़े और उसमें छः या आठ धेरे रहते हैं। आजकल राज पूताना, पञ्जाब और गुजरात प्रभृति स्थानोंमें स्त्री-पुरुष सभी कुण्डल पहनते हैं। कुण्डलका दूसरा नाम कर्णवेष्टन है।

कर्णपूर—फूल जंसे कानके गहनेका नाम कर्णपूर है। इस समय कर्णफूल, भूमका, चम्पा, फुंदना प्रभृति कई तरहके कर्णपूरका चलन है।

कर्णिका—इसका दूसरा नाम तालपत्र वा ताड़पत्र है। हिन्दीमें इसे पतीला कहते हैं।

शृङ्खल—यह कानमें पहननेको एक प्रकारकी भालर है और विशुद्ध सोनेका बनता है। संयुक्त-प्रान्तादि स्थानोंमें स्त्रियां इस समय भी इस गहनेको पहनती हैं।

कर्णेन्दु—स्त्रियां इस अलङ्कारको कानके पीछे पहनती थीं।

ललाटिका—इसका दूसरा नाम पत्रपाश्या है। सोनेका चांद या चौकोन-अठकोन पत्तेपर रत्न जड़े रहते हैं। हिन्दुस्थानकी स्त्रियां अब भी इस अलङ्कारको पहनती हैं।

३। प्रालम्बिका, उरःसूत्रिका, देवच्छन्द, गुच्छ, गुच्छार्ध, गोस्तन, अर्द्धहार, माणवक, एकावली, नक्षत्रमाला, सरिका, भ्रामर, नीललवणिका, वर्णसर, वज्रमङ्गलिका, वैकक्षिक—ये सब कण्ठके अलङ्कार हैं।

प्रालम्बिका—नाभीतक लटकती हुई सोनेकी मालाका नाम प्रालम्बिका है। नाभीतक लटकते हुए हारका साधारण नाम ललन्तिका वा लम्बन है। भ्रामरने इसे एक प्रकारको मालामें गिना है।

उरःसूत्रिका—नाभीतक लटकते हुए मुक्ताहारका नाम उरःसूत्रिका है।

देवच्छन्द—एक सौ लङ्गीके हारको देवच्छन्द कहते हैं।

गुच्छ—वत्तीस लड़ीकी मोती-मालाको गुच्छ कहते हैं। “दाविंशदशटिको गुच्छः।” (महेश्वर)

गुच्छार्ध—चौबीस लड़ीके मुक्ताहारका नाम गुच्छार्ध वा अर्धगुच्छ है। “चतुर्विंशतिशटिको गुच्छार्धः।” (महेश्वर)

गोस्तन—चौलड़े मुक्ताहारका नाम गोस्तन है। “चतुर्थशटिको गोस्तनः।” (महेश्वर)

अर्धहार—बारह लड़ीके मुक्ताहारको अर्धहार कहते हैं। “द्वादशशटिकोऽर्धहारः।” (महेश्वर) किन्तु मतान्तरमें ६५ लड़ीके हारको अर्धहार कहते हैं।

माणवक—बीस लड़ीके मुक्ताहारका नाम माणवक है। “विंशतिशटिको माणवकः।” (महेश्वर) परन्तु मतान्तरमें २४ लड़ीके मुक्ताहारका माणवक और १२ लड़ीके हारका नाम अर्धमाणवक है।

एकावली—एक लड़ीकी मोती मालाका नाम एकावली है।

नक्षत्रमाला—२७ मोतियोंके एकावली हारका नाम नक्षत्रमाला है। “सर्वैकावली सप्तविंशतिमौक्तिकैः कृता नक्षत्रमाला स्यात्।”

भ्रामर—बड़े बड़े मोतियोंका सुन्दर एकावली हार बनाया जाता, मध्यमाकार मोतियाँकी माला भ्रामर है।

“स्थूलमुक्ताफलैः कार्या कण्ठे लोकावली वरा।

मध्यमुक्ताफलैः कुर्याद्भ्रामरं सुविचक्षणम्।” (मानवीजस)

नीललवणिका—यह पाँच, सात अथवा नौ लड़का मुक्ताहार है। इसके उपान्तमें मनोहर नीलमणि जड़ा रहता है। इसके दाने सोनेके तारमें गूँथे जाते हैं। फिर एकके बाद दूसरे दानेको क्रमशः छोटा रख सब तारोंके अग्रभागोंको एक जगह मिलाकर बांध देना होता है। बांधकर उसपर इन्द्रनील मणि जड़ा जाता है। इसकी प्रत्येक लड़ीके मध्यमें नीलकान्त मणिकी धुकधुकी लटकती रहती है। ऐसे हारका नाम नीललवणिका है।

वर्णसर—नीललवणिका जैसा मुक्ताहार गूँथकर उसमें हरिन्मणि एवं नीलमणि लगा देनेसे उसे वर्णसर कहते हैं।

सरिका—गलेमें ठीक अंठने लायक नौ वा दश मोतीके हारको सरिका कहते हैं।

वक्षसङ्कलिका—सरिका-हारके बाहर नीलकान्तमणिका गुच्छा लगानेसे उसे वक्षसङ्कलिका कहते हैं।

वैकचिक—गलेसे जो माला यज्ञोपवीतकी तरह टेढ़ी होकर वक्षस्थलके ऊपर आ पड़ती है, उसे वैकचिक कहते हैं।

४। पदक एवं बन्धूक ये दोनों वक्षस्थलके अलङ्कार हैं। पदक कई तरहका होता है। इस अलङ्कारका आज भी सब जगह चलन है। यह सोनेके छकोने या अठकोने फूल वा पत्रके आधारका बनता है। बहुमूल्य पदक देखनेमें पत्र जैसा होता है। उसके किनारे किनारे और बीचमें हीरकादि जड़े रहते हैं। रत्नरज्जुमें लटकाकर वक्षस्थलपर जो पदक धारण किया जाता है, उसे बन्धूक कहते हैं।

५। केयर, पञ्चका, कटक, वलय, चूड़ एवं कङ्कण—ये सब बाहुके अलङ्कार हैं।

केयर—अनन्त जैसे रत्नखचित बाघमुँह कड़ेकी केयर कहते हैं। यह बाहुमें पहना जाता है। हिन्दुस्थानमें इसे बाजूबन्द कहते हैं। केयरका दूसरा नाम अङ्गद है। मतान्तरसे केयरमें भुज्वा न रहनेसे उसे ही अङ्गद कहते हैं।

‘सुवर्णमणिविन्यस्तमुक्ताजालकमङ्गदम्’। (रत्नरहस्य)

पञ्चका—सोने आदिके बने हुए विविध आकारके अलग अलग दानोंको एकत्र गूँथ देनेसे उसे पञ्चका कहते हैं। इसका हिन्दुस्थानी नाम पङ्चुची है।

कटक—रत्नखचित सोनेके पत्रका नाम कटक है।

वलय—हिन्दुस्थानमें इसे कड़ा कहते हैं। यह अनेक प्रकारका होता है। गरीब आदमी सीसे, पीतल और चांदीके कड़े पहनते हैं। मध्यम श्रेणीवाले सोनेका कड़ा बनाते और धनी लोग उसमें मीनाकारों कराकर अनेक प्रकारके हीरकादि जड़ाते हैं। हाथके कड़ोंमें कड़ा पहना जाता है। वङ्गदेशमें इसे केवल स्त्रियाँ, परन्तु संयुक्तप्रान्त, पञ्जाब आदिमें स्त्रीपुरुष दोनों ही पहनते हैं। यह गहना गोल होता है। अच्छे कड़ेकी दोनों ओर बाघ, सिंह या साँपके मुँह बने रहते हैं।

चूड़—ऐसे परिमाणका गोलाकार अलङ्कार जो कड़ेकी तरह आसानीसे पहनाया न जा सके और बहुत ठोला भी न हो। यह सोनेकी पतली पतली शलाकाओंका बनाया जाता है। इसमें दोनों ओर कील लगाना पड़ता है। ऐसे करभूषणको चूड़ कहते हैं। अब यह अनेक प्रकारका हो गया है।

अर्धचूड़—चूड़के अर्धपरिमाण अलङ्कारका नाम अर्धचूड़ है। आजकलकी लहरिया चूड़ी जैसे वलयको आवापक कहते हैं। रत्नसूचित वलयाकृति अलङ्कारका नाम परिहार्य है।

कङ्कण—यह सोनेका होता और ठीक कण्ठके घेरेके उपयोगी रहता है। इसके किनारे किनारे कङ्कड़ जैसे दाने पड़ते हैं। कङ्कण कई तरहका होता है।

६। उङ्गलीमें जो अलङ्कार पहना जाता है, उसे अङ्गुरीयक या अंगूठी कहते हैं। अति प्राचीन काल ही इस देशमें आजकल जैसी नामाङ्कित 'सील अंगूठी' का चलन हुआ था। इसका विवरण अङ्गुरि शब्दमें देखो। अंगूठीमें नाम खुदा रहनेपर उसे मुद्रा, मुद्रिका एवं अङ्गुलिमुद्रा कहते हैं। "साचराद्गुलिमुद्रा सात् ।" (अमर)

आजकलकी तरह पहले इस देशमें हीराकादि सूचित नाना प्रकारकी अंगूठियां थीं और उनके अलग अलग नाम भी थे। जिस अंगूठीके दोनों ओर दो हीरे और बीचमें हरिश्मणि वा नीलमणि जड़ा रहता, उसे 'द्विहीरक' कहते हैं। त्रिकोण अंगूठीके बीचमें यदि हीरा और तीनों कोनोंपर दूसरे दूसरे मणि जड़े हों, तो वैसी अंगूठीका नाम 'वज्र' है। गोलाकार अंगूठीकी चारों ओर यदि हीरा और मध्यमें मणि जड़ा हो, तो उसका नाम 'रविमण्डल' है। ऋषु अथवा आयत, चौकोन एवं क्रमशः जो उन्नत रहे, और मध्यस्थलमें हीरा जड़ा हो, तो वह 'नन्द्यावर्त' कहा जाती है। जिस अंगूठीमें चमकीला माणिक, उत्तम मुक्ता, सुरम्य प्रवाल, मरकत, पुष्पराग, हीरक, इन्द्रनील, पीतमणि एवं वैदूर्य जड़ा हो, उसका नाम 'नवरत्न' वा 'नवग्रह' है। अंगूठीका घेरा यदि हीरो से घिरा हुआ हो, तो उसे 'वज्रवेष्टक' कहते हैं। जिस अंगूठीकी दोनों ओर छोटे हीरे और बीचमें बड़ा हीरा जड़ा हो, उसका नाम 'त्रिहीरक' है। जो अंगूठी देखनेमें सांपके फन जैसी हो, जिसके गोल घेरेमें हीरे जड़े हों और जो अनेक रत्नोंसे सुशोभित हो, उसे 'शुक्तिमुद्रिका' कहते हैं।

७। काच्ची, मेखला, रसना, कलाप, काच्चीदाम एवं शृङ्खल ये सब कमरके अलङ्कार हैं।

काच्ची—आजकलके जञ्जीर जैसे एकहरे अलङ्कारको काच्ची कहते हैं।

मेखला—अठलड़ी काच्चीका नाम मेखला है। मालूम होता है, आजकलका चन्द्रहार और सूर्यहार पहले मेखलाके नामसे प्रसिद्ध था।

रसना—सोलह लड़ीकी काच्चीका नाम रसना है।

कलाप—पच्चीस लड़ीकी काच्चीका नाम कलाप है।

काच्चीदाम—जो चार अङ्गुल चौड़े सोनेका बना हो, जिसमें भालर और घुंघुलू लगे हों और जो नितम्बके नीचे तक आ जाय, उस अलङ्कारका नाम काच्चीदाम है। चाबीदार जञ्जीरको नाईं पहले शृङ्खल अलङ्कार बनता था।

८। पादचूड़, पादकण्टक, पादपद्म, किङ्किणी, पादकण्टक, मुद्रिका—ये पैरके अलङ्कार हैं।

पादचूड़—यह हाथके चूड़ेकी तरह सोनेकी शलाकाका बनता है। इसका घेरा पांवके घेरे जैसा और उसमें अनेक प्रकारके हीरकादि जड़े रहते हैं। ऐसे अलङ्कारको पादचूड़ कहते हैं।

पादकण्टक—सोनेके बने हुये, तीन त्रिकोण, जोड़के स्थानोंमें कीलोंसे बंधे हुये, चौकोन, छकोन या अठकोन, ऊपर सोनेके छोटे छोटे दाने उभरे हुए, भुज् भुज् शब्दयुक्त, अलङ्कारका नाम पादकण्टक है। इस समय यह हिन्दुस्थानमें पाजेबके नामसे प्रसिद्ध है।

पादपद्म—यह इस समय चरणचाप वा चरणपद्म कहा जाता है। इसमें तीन या पांच सिकलियां, इसमें नाना प्रकारके रत्न जड़े और सन्धिस्थानमें कील लगा रहती हैं।

किङ्किणी—आजकल इसे घुंघुलू कहते हैं। यह

सोनेकी बनाई जाती है। इसके भीतर उड़द रहता, इसीसे चलनेके समय बजती है।

मुद्रिका—यह रत्नकी बनी, चौड़ी और लाल रहती है। चलनेके समय यह भी बजती है।

नूपुर—यह सोनेका बनता, और इसमें नाना प्रकारके रत्न जड़े रहते हैं। एड़ीके पोछेसे उंगलोकौ जड़तक घेरे रहता है। इसके भीतर भी उड़द रहता, इसीसे चलनेके वक्त इससे भी शब्द निकलता है। आजकल गृहस्थकी स्त्रियां नूपुर नहीं पहनतीं। नाचनेवाली ही नाचनेके समय इसे पहन लेती हैं।

मनुष्यकी आदिम अवस्थामें सोना चांदी या मणिमुक्ता नहीं थे। यदि कहीं किसीके यहां ये सब रत्न रहते भी, तो उस समय लोग इनका व्यवहार और आदर न करते थे। इसीसे प्रथमावस्थामें मनुष्य अस्थि प्रभृतिके अलङ्कार प्रसूत करते थे। धातुओंमें लोहा ही पहले मनुष्यके व्यवहारमें आया है। अब भी देखा जाता है, कि पर्वतके असभ्य और अशिक्षित आदमी चाहे और कुछ भी न जानें, पर खानिसे लोहा निकालकर अस्त्र आदि बना लेते हैं। इसीसे मालूम होता है, हमारे देशके आदमी सबसे पहले शङ्ख और लोहेके गहने बना सके थे। इसीलिये इन दोनों गहनोंकी अबतक इतनी मर्यादा है। स्त्रियां चाहे जितना बहुमूल्य अलङ्कार क्यों न पहने हों, परन्तु हाथमें लोहा अवश्य रहना चाहिये। लोहा न रहनेसे पतिके लिये बहुत अमङ्गल समझा जाता है। शङ्ख पहननेकी प्रथा दिन दिन उठती जाती है। परन्तु इस अलङ्कारको इस समय भी जो स्त्रियां पहनतीं, वे इसका विशेष आदर करती हैं। शङ्खकी चूड़ी पहननेके समय उसपर सिन्दूर, दूब और धान चढ़ाकर सन्मान करना पड़ता है। इसके सिवा चूड़ि हारिनको एकबार खिला भी देती हैं। इससे साफ, ही मालूम होता है, कि लोहा और शङ्ख ही हम लोगके देशका प्रथम अलङ्कार था।

अब वज्र, विहार, संयुक्तप्रान्तादि स्थानमें नाना प्रकारके अलङ्कारका चलन हो गया है। ४०१५ वर्ष

पहले इस देशकी स्त्रियोंका शिरोभूषण कुछ भी न था। केवल बालक, बालिका और युवतियां चूड़ा बांधकर उसमें बड़ी बड़ी घुण्डी लगा देती थी। घुण्डीका आकार मल्लिका फूलकी कलौके समान रहता, परन्तु वह उससे भी कुछ मोटी और बड़ी होती, अवस्थानुसार घुण्डी सोने और चांदीकी बनायी जाती थी। अब भी हिन्दुस्थानके नाना स्थानोंमें घुण्डीका चलन है और कितनी ही स्त्रियां केशविन्यास करके उसके शेषभागमें फूल जैसी एक बड़ी सी घुण्डी बांध देती हैं।

अब बङ्गाल और संयुक्तप्रान्तकी स्त्रियोंके शिरके कितने ही प्रकारके अलङ्कार हो गये हैं। बालिका और युवतियां मांगमें कोयौ गहना पहनती हैं। इसका आकार ठीक सीमन्तकी तरह होता है। यह कानके ऊपरसे शिरके मध्यस्थल तक वक्र होकर आता है। इसकी जमीन सोनेकी होती है। बीच बीचमें रत्न जड़े रहते हैं। नीचेकी ओर किनारे-किनारे मोतीकी भालर लगती है। बीचमें लगे हुई धुक्-धुक् कपालपर आ लटकती है। ऊपरकी ओर एक पेट्टी चूड़ेसे बंधी रहती है।

लटमें बांधनेके लिये चांदी वा सोनेकी जञ्जीर रहती है। जूड़ेमें लगानेके लिये घुण्डीदार नाना-प्रकारके फूल, तितलियां, जरीका गोटा और फोता होता है। इनके सिवा शिरके और अधिक अलङ्कार नहीं देखे जाते।

मालूम होता है, प्राचीन काल भारतवर्षमें नाकका अलङ्कार न था। अमरादिकी पुस्तकोंमें इसका उल्लेख नहीं है। नथ, वेसर, बुलाक, बुन्दा प्रभृति नाकके अलङ्कार कबसे चले हैं—यह कहा नहीं जा सकता। नथ सोनेके गोलाकार तारका बनता है। इसको एक ओर बंसीकी तरह एक प्रकारका टेढ़ा कांटा रहता और दूसरी ओर इस कांटिको फंसानेके लिये एक छेद रखकर तारके कुछ अंशको नथमें लपेट देना पड़ता है। इसीसे छेदकी तरफ दूसरी ओरसे मोटी हो जाती है। इस मोटी ओर लोग अपनी अवस्थाके अनुसार मूंगा या मोती लगा देते हैं। उसके बाद नथके बीचमें

एक लटकन लगा रहता है। नाकको बाईं ओर नथ पहना जाता है। हिन्दुस्थानका नथ बहुत बड़ा और भारी होता है। उसे नाकमें पहने रहना कठिन है।

नकबेसरका गढ़न अति सामान्य है। यह पतले तारकी बनाई जाती है। इसकी एक ओर लपेटकर एक छेद रखना पड़ता; दूसरी ओर कुछ सटो रहती; उसीमें यह बांध दी जाती है। लड़कियां नाककी बाईं ओर या नाकके दोनों छेदके बीचवाले अंशमें इसे पहनती हैं। बेसर और बुलाक दोनों नाकके छेदोंके बीचवाले अंशमें पहनी जाती हैं। बेसरकी बनावट कई तरहकी होती है। सचराचर सोनेके तारमें अर्द्धचन्द्राकार पेटोके नीचे छोटी छोटी झालर लगा रहती है। बुलाकके बीचमें कुन्दकलौकी तरह गोल और एक सुख पतले मोतीके भीतर सोनेका तार पिरोया जाता है। इस तारका नीचेवाला मूँह सटा और ऊपरवाले भागसे अटा रहता, वही नाकमें लगाया जाता है।

सूतवत्सा स्त्रीके सन्तान उत्पन्न होनेपर कितनी ही स्त्रियां सूतिकागृहमें ही उस सद्यःप्रसूत शिशुकी नाक दाहिनी ओर छेदकर लोहे, चांदी या सोनेकी बेसर पहना देती हैं। प्रवाद है, उससे शिशुकी जीवनरक्षा होती है।

कानके अलङ्कारोंमें बाला, सुरकी, पात, भूमका, कर्णफल, बाली, बिजली प्रभृति अलङ्कार अधिक प्रसिद्ध हैं। इन सबमें आजकल सम्पन्न घरकी स्त्रियां नाना प्रकारके कर्णफल, भूमके और बाले ही अधिक व्यवहार करती हैं। कर्णफल प्रभृति गहनोंके पहननेके लिये कानके नीचेके भागमें बड़ा छेद करना पड़ता है, इसलिये भले घरकी स्त्रियां प्रायः उन्हें नहीं पहनतीं। इन सब अलङ्कारोंमें कर्णवेधके बाद लड़के कुछ दिनोंतक सुरकी और बाली पहनते हैं, परन्तु यह प्रथा दिन दिन उठती जाती है।

कण्ठमाला, पचलड़ी, सतलड़ी, हार, गोप, चम्पाकली, सुतिया, हंसुली, बाइठूड़ी, यंत्र पदक, मुक्तामाला प्रभृति गलेके अलङ्कार हैं। इनमें बाइ-

ठूंडी सीसेका बनता है। यह छोटा और गोल होता है। सूत या रेशमके तागिमें गूँथकर इसे बच्चोंको पहनाते हैं। प्रवाद है, कि बाइठूंडी गलेमें रहने और बीच बोच उसे चूस लेनेसे बच्चोंको कोई रोग नहीं पकड़ता। आजकल इस अलङ्कारकी चलन प्रायः उठ गया है।

बंगला, पछेला, पडुंची, छल्ला, चूड़ी, कड़ा, पैचे, बाजू, बन्द, ताबीज़, जोशन, कंगन, रत्नचूड़, अंगूठी, हथफल, कवच, अनन्त, करपन्न प्रभृति हाथके अलङ्कार हैं। इन सब अलङ्कारोंमें लड़के लड़कियां ताड़, बाजूबन्द और बाला पहनती हैं। स्त्रीपुरुष सभी अंगूठी पहनते हैं। अनन्त और कवच पुरुषोंको भी पहनते देखा जाता है।

चन्द्रहार, सूर्यहार, करधनी, जञ्जीर, विचे, कमरपेटी, नीमफल ये सब कमरके अलङ्कार हैं। इनमें वङ्गदेशकी इतर जातिके पुरुष भी करधनी पहनते हैं।

बिछिया, अनवट, छल्ला, तोडा, कड़ा, पाजी, ब, छड़ा, चरणपन्न, घुंघरू—ये सब पैरके अलङ्कार हैं। हिन्दुस्थानकी सम्प्रान्त स्त्रियां बिछिया-अनवट पहनती हैं। हिन्दू प्रायः पैरमें सोनेके गहने नहीं पहनते। आर्य, मणि, हीरक प्रभृति शब्द देखो।

३ वाक्यका गुण विशेष।

मुकुट, केयूर, हार प्रभृति अलङ्कार जिस तरह अङ्गोंकी शोभा बढ़ाते और देखनेसे नेत्रोंको आनन्द देते हैं, उसी तरह वाक्यके भी अलङ्कार हैं। अलङ्कार सुशोभित वाक्योंको सुनने या पढ़नेसे कान और मनको आनन्द होता है। वनवासी असभ्य लोगोंके अच्छे अलङ्कार नहीं हैं। अच्छे अच्छे गहने बना वे लोग अङ्गोंको सजाना नहीं जानते। पहले लोग अच्छे अच्छे अलङ्कारसे भाषाको सजाना भी न जानते थे। सबसे पहले सामान्य पद्यमें मिलाकर बात कहनेसे ही लोगोंको प्रिय लगता था। यदि कोई हंसी दिखगी या आनन्दकी बात कहना चाहता, तो वह उसे पद्य ही में कहता था। अक्षर संख्याका निर्दिष्ट परिमाण और वर्णका मेल रहनेसे वाक्य

अलङ्कामिन् (सं० त्रि०) अलं पर्याप्तं गच्छति, अलम्-गम्-णिनि। १ प्रचुर गमनशील, खूब चलने-वाला, जो हमेशा चलता हो। २ शत्रु के प्रति गमन-शील, दुश्मनको तर्फ बढनेवाला।

अलङ्कन (सं० स्त्री०) अनतिक्रम, अनत्यय, अभङ्ग, गैरसुतजाविज्ञी, न लाघनेकी हालत।

अलङ्कनीय, अलङ्क्य देखो।

अलङ्कनीयता, अलङ्क्यता देखो।

अलङ्क्य (सं० त्रि०) न लङ्क्यम्, लङ्क-ण्यत्। अनतिक्रम्य, जो लाघने लायक, न हो।

अलङ्क्यता (सं० स्त्री०) १ अनतिक्रम्यता, जिस हालतमें लाघ न सकें। २ गौरवान्वितता, इज्जत-दारी। ३ अधिकारयुक्त नियम, फर्द कायदा। ४ श्रेष्ठता, बड़ाई।

अलच्छ (हिं०) अलचा देखो।

अलज (सं० पु०) १ पक्षिविशेष, कोई चिड़िया। (हिं० वि०) २ निर्लज्ज, वैशर्म।

अलजो (सं० स्त्री०) अला पर्याप्ता सती जायते, जन-ड गौरा० डोष्। १ प्रमेहपिटिकारोग, जिरियान्की फुन्सीका आजार। यह रक्त, सित, स्फोट-वती और दारुण होती है। (सङ्गत) २ नेत्रसन्धिज रोग, आंखके जोड़की बीमारी। ३ शूकदोष विशेष। जो बीमारी लिङ्ग बढानेकी दवा लगानेसे पैदा हो।

अलज्ज (सं० त्रि०) निर्लज्ज, बेहया, जिसे शर्म न लगे।

अलङ्कार (सं० पु०) अलं पर्याप्तं जृणाति, जृ-अच्। भूमभर, पानी रखनेको मट्टीका बरतन।

अलङ्घीविक (सं० त्रि०) अलं पर्याप्तं जीविकायै। जीविकानिर्वाहको यथेष्ट, जो गुजर करनेको काफी हो। यह शब्द धनादिका विशेषण है।

अलङ्घुश (सं० त्रि०) अलं पर्याप्तं लुष्यते, अलम्-लुष बाहु० कर्मणि क। भक्षण करनेको पर्याप्त, खानेके लिये काफी।

अलति (सं० पु०) अल बाहु० अतिच्। गीत विशेष, कोई नगमह।

अलदासी—बङ्गालके तांतियों और मुरशिदाबादके कैवर्तोंकी एक शाखा।

अलदेमौ—अवधके सुलतानपुर जिलेका परगना। कहते हैं, पहले यह परगना भारोंके अधिकारमें रहा, जिनके अलदे नामक नरेशने गोमतीके वामतटपर किला बनाया था, उसीसे परगनेका यह नाम पड़ा। कितने ही पुराने किले और टूटे-फटे शहर भार अधिकारके चिन्हस्वरूप विद्यमान हैं। राजकुमारोंका प्रभाव यहां फैला, जिनका देरे, मेवापुर, नानामौ और पारसपत्तीमें राज्य है। इस परगनेका क्षेत्रफल ३४८ वर्गमौल है। इसमें कितने ही पुश्तैनी चोर रहते हैं।

अलन्तम (सं० त्रि०) योग्य पर्याप्त, शक्तिशाली, लायक, काफी, ताकतवर।

अलन्तराम (सं० अव्य०) अलम्—तरप् आसु। अति-शय, ज्यादातर, बहुत।

अलन्दी—बम्बईके पूना जिलेका शहर। प्रत्येक वर्ष कार्तिक कृष्ण एकादशीको यहां ज्ञानेश्वरके मन्दिरमें बड़ा मेला लगता और सिर-कर (Poll tose) से बहुत रुपया आता है। मन्दिरका प्रबन्ध छः व्यक्तियोंके हाथमें रहता, जिन्हें अधिवासियोंकी अनुमतिसे कलकटर चुन लेता है। मन्दिरमें तीन द्वार लगा—चन्दूलाल, सेंधिये और गायकवाड़का दूसरा द्वार प्रधान और बाजारके सामने है। मन्दिरकी चारो ओर जो मेहराबदार परिक्रमा खिंचा उसे अब लोगोंने अपने निवासका स्थान बना लिया है। मण्डप भी बड़ा और मेहराबदार है। ज्ञानेश्वरके समाधिपर लाल कपड़ेवाले साधुकी मूर्ति बैठी और उसके पीछे विठोवा तथा सखमायी देवताकी प्रतिमा प्रतिष्ठित है। ज्ञानेश्वर विष्णुका अवतार समझा जाता और अहर्निश दीपक जला करता है। कहते हैं, तीन सौ वर्ष पहले मन्दिर अम्बेकर देशपांडे, सवा सौ वर्ष पहले मण्डप सेंधियाके दौवान रामचन्द्रराव शिन्वे, परिक्रमा एवं पश्चिम भित्ति पेशवा और बरामदां निजामके दौवान चन्दूलालने बनवाया। कोई छः सौ वर्ष हुए ज्ञानेश्वर साधुने इस नगरमें जन्म लिया था। इनके भाईका निवृत्ति तथा सोपान और बह-नका नाम सुन्ना बायी रहा। पिता चैतन्यके सन्धासौ

होनेसे यह लोग वर्षसङ्कर समझे जाते थे। किन्तु इन्होंने गोदावरी तटस्थ पैठान तीर्थ जाकर ब्राह्मणोंसे अपना संस्कार कराना और कलङ्क छोड़ाना चाहा। पहले उन्होंने इनकी बात बिलकुल सुनी न थी। अन्तको ज्ञानेश्वरने जब भैसेसे वेद पढ़ाये और आहमें पितर ढुलाये, तब चमत्कार देख वह संस्कार करनेपर सम्यत हुए। ज्ञानेश्वरके अलन्दी वापस आते राहमें पढ़नेवाला भैंसा मरा और उन्होंने उसे समाधि दे भसोबा नाम रखा था। जुन्नार तालूके कोलवाड़ी गांवमें भैसेका समाधि बना, जिसका पूजन चैत्र शुक्ल एकादशीको बड़े समारोहसे होता है। चङ्गदेव साधु जब आकाश मार्गसे सिंहपर चढ़ सांपका चाबुक फटकारते पड़चे, तब ज्ञानेश्वर किमी दीवार पर बैठ और उसे उड़ा बहुत ऊंचे उनसे जा मिले थे।

अलम्बन (सं० त्रि०) अलं प्रभृतं धनमस्तस्य, अर्श आदित्वात् अच्। समृद्धिशाली, काफी दौलत रखनेवाला।

अलम्भूम (सं० पु०) अलं पर्याप्तः धूमः। धूमसमूह, काफी धुवां।

अलप (हिं० वि०) १ अल्प, थोड़ा। (स्त्री०) २ मरणसमय, मौतका वक्त।

अलपत् (सं० त्रि०) भाषण न करते हुआ, खमोश, जो बोलता न हो।

अलपतिगौन्—बुखारिके प्रधान शिष्टजन। यह सामान शाहके समय खुरासानमें शासक-पदपर प्रतिष्ठित रहे। सन् ८३२ ई० को इन्होंने पद छोड़ अपने अनुयायियोंके साथ गजनीकी यात्रा की। अमीर मन्सूर सामानोंके सिंहासनारुढ़ होनेका विरोध बढ़ाना ही इनके वापस जानेका प्रधान कारण था। इन्होंने अपना छोटा राज्य स्थापित कर गजनीको राजधानी बनाया। सन् ८७३ ई० में इनके मरनेपर राज्यका अधिकार अबू इसहाक नामक पुत्रको मिला था।

अलपाका (अ० पु०) अमेरिकाका ऊंट। (Alpaca) यह दक्षिण-अमेरिकाके पेरू प्रान्तमें होता है। इसका बाल लम्बा और मुलायम रहता है। २ अलपाकाका

ऊन। ३ वस्त्रविशेष, कोई कपड़ा। यह अलपाका ऊनके साथ रेशम या सूत मिलानेसे बनता और प्रायः काले रङ्गका होता है।

अलफ (अ० पु०) आगिके दोनों पैर उठा पिछले पैरोंके बल घोड़ेका खड़ा होना।

अलफखान्—दिल्लीके तुर्की बादशाह अलाउद्दीन खिलजीके सेनापति या सिपहसालार। सन् १२८७ ई० में इन्होंने गुजराती राजपूतोंको राजधानी पाटनको विध्वंस किया था।

अलफा (अ० पु०) परिच्छेदविशेष, किसी किछका कुरता। यह बहुत घेरेदार और लम्बा रहता है। बाँड़ लगायो नहीं जातों। मुसलमान फकीर इसे अकसर पहना करता है।

अलबट्टी (हिं० स्त्री०) कमर, टेंट, गांठ।

अलबत्ता (अ० अर्थ०) १ निःसन्देह, वेशक। २ हां, ठीक ठीक, समसुच। ३ परन्तु, लेकिन।

अलबम (फ़ा० Album) चित्र रखनेका पुस्तक, जिस किताबमें तस्वीरें रहें।

अलवेला (हिं० वि०) १ बांकातिरछा, कैलछवीला। २ अनुपम, बेजोड़। ३ निहन्द, बेपरवा, भ्रमता हुआ। (स्त्री०) अलवेली।

अलवेलापन (हिं० पु०) १ ठाटबाट, चिकनपट। २ खूबसूरती, सुघरायो। ३ निर्वन्धता बेपरवायो, टाल-मटोल।

अलब्ध (सं० त्रि०) अप्राप्त, हाथ न आया हुआ, जो मिला न हो।

अलब्धनाथ (वै० त्रि०) मित्ररहित, वेदोस्त, जिसके कोई सहायक न रहे।

अलब्धभूमिकत्व (सं० क्तो०) समाधिको अप्राप्ति, जिस हालतमें समाधि न पायें।

अलब्धाभौषित (सं० त्रि०) हताश, नाउत्साह, जिसका हौसला मारे पड़े।

अलभमान (सं० त्रि०) लाभ न उठाते हुआ, जिसे फायदा न पहुँचे।

अलम्ब्य (सं० त्रि०) प्राप्तिके अयोग्य, जिसे पा न सकें।

अलम (सं० अर्थ०) अलम बाहु० अमु। १ भूषित रूपसे, सजावटमें। २ पर्याप्त प्रकारमें, काफी तौरपर। ३ वारण करके, रोकते हुए। ४ निरर्थक, बेफायदे। ५ शक्तिसे, जबरन। ६ अतिशय, निहायत। ७ सम्पूर्ण रूपमें, पूरा-पूरा। ८ प्रचुर, खूब। ९ नहीं, बस। १० शाबाश।

अलम (अ० पु०) १ पखात्ताप, अफसोस। २ पताका, झण्डा।

अलमनक (अ० Almanac) जन्मी, पचा।

अलमर (हिं० पु०) हल्ल विशेष, कोई पौधा।

अलमसूदी—प्राचीन मुसलमान ऐतिहासिक। इन्होंने जमर बादशाहके भारतसे घृणा करनेका कारण यह लिखा है, किसे भविष्यवक्ताने उनसे भारतकी प्रति दूरस्थ देश और बलवायियोंका घर बता दिया था।

अलमस्त (फा० वि०) १ मंदोक्त, मतवाला। १ निर्द्वन्द्व, बेपरवा।

अलमारी (पोर्तगोज् Ulmaria शब्दका अपभ्रंश) किसी किस्मका सन्दूक या आला। यह लकड़ीकी बनती है। चीज रखनेके लिये इसमें कोई दर रहते और इसे किवाड़से बन्द करते हैं। अक्सर दीवारमें भी तख्ता लगाकर यह बना दी जाती है।

अलमास (फा० पु०) हीरक, हीरा।

अल-मुकतमी-बि-अमरिस्लाह—अब्बास वंशके ३१ वें खलीफा और अल-मुस्तजहरके लड़के। सन् ११३८ ई०को यह अपने भतीजे अल-रशीदकी जंगह गद्दीपर बैठे और कोई २४ वत्सर राज्यकर सन् ११६० ई०को मरे थे। इनके लड़के अल-मुस्तजदने पीछे बगदादकी खलाफत पायी।

अलमुतवकिल-अल-अस्लाह—अब्बास वंशके १०वें खलीफा और अलमोनसिम-बिस्लाहके लड़के। इनका पहला नाम अबुलफजल जफर रहा। इन्होंने सन् ८४७ ई०को अपने भाई अलवासिकका उत्तराधिकार पा बगदादमें जुल्मकी धूम उठा दी। भूतपूर्व खलीफाके वजीरने इनके सिंहासनारुढ़ होनेपर पहले भगड़ा आगोया था, जिससे इन्होंने उन्हें क्रोध करा और पीछे गर्म कांटोंसे भरती लोहेकी भट्टीमें फेंकवा बुरे तौरपर

जलाकर मरवा डाला। इनके शासनकाल ईरानियोंने यूनानियोंके विरुद्ध कई बार विजय पाया था। यह यज्ञदियों और ईसायियोंको बहुत घृणित समझते और फटकार देते रहे। किन्तु उतनेसे ही इन्हें शान्ति न मिली, इन्होंने लोगोंका करबलां जाना बन्द और हंसन बगैरह शहीदोंकी खाक जिन कब्रोंमें रखी थी, उनको बरबाद किया। यह १४ वर्ष ८ मास और ८ दिन राज्य चलाते रहे। सन् ८६१ ई०को २४ वीं दिसम्बरको इनके लड़के अल-मुस्तनसरने इन्हें मरवा खिलाफतका उत्तराधिकार अपने हाथ लिया। शत्रुने इनका शरीर काट सात टुकड़े कर दिया था।

अल मुतौय बिस्लाह—अब्बास जातिके २३ वें खलीफा और मुकतदिर बिस्लाहके लड़के। सन् ८४६ ई० को अलमुस्तकफीके मरने बाद बगदादके तख्तापर बैठ यह २७ वत्सर ४ मास राजा रहे और सन् ८७४ ई० को मर गये। इनके लड़के अलतयने पीछे बगदादकी गद्दी पायी थी।

अलमुत्तकी बिस्लाह—अब्बास वंशके २५ वें खलीफा और अल मुकतदिरके लड़के। सन् ८४१ ई० को यह अपने भाई अलराजोकी जगह बगदादके तख्तापर बैठे और तीन वर्ष ११ मास ८ दिन राज्य कर सन् ८४५ ई० को मर गये। पीछे इनके भतीजे और अलमुकतफीके लड़के अलमुस्तकफीको राज्यका उत्तराधिकार मिला था।

अल मुवफिफ बिस्लाह—बगदादवाली खलीफा मुतवकिल-बिस्लाहके लड़के और अल-मातमिद-खलीफाके भाई। अलमातमिद खलीफाको इन्होंने शत्रुसे लड़ते समय बड़ी मदद पहुंचायी थी। सन् ८८१ ई० को यह कुछ रोगसे पीड़ित हो मर गये। मरते समय इन्होंने कहा था,—मैं एक लाख सिपाहियोंका सेनापति हूं, किन्तु उनमें अपने-जैसा हतभाग्य किसीकी नहीं पाता। सन् ८८२ ई० को अलमोतमिदके मरनेपर इनका लड़का बगदादमें सिंहासनारुढ़ हुआ। अल मुस्ताली बिस्लाह—फातिमा वंशके १६ वें खलीफा। यह अपने बाप अलमुस्तनसर बिस्लाहकी जगह मिश्र

और सिरियाके खलीफा बने थे। इनके समय फातिमा वंशका अधिकार घट और राजनीतिक प्रभाव मिट गया। एक और तुर्कों और दूसरी और फ़ड़ोंने सिरियाका कितना ही प्रान्त छोन लिया था। सन् १०८७ ई० के अक्तोबर मास उन्होंने सिरिया पहुँच अन्तिमोक्तके सामने डेरा डाला और सन् १०८८ ई० को २० वीं जूनको उसे अधिकार किया। दूसरे वर्ष वह मारतून-नोमान और जुलायी मास ४० दिन अव-रोध बाद जेरुसलमके मालिक बन बैठे थे। जेरुस-लम शुक्रवारको सवेरे छूटा। सत्तर हजारसे ज्यादा मुसलमान अल अक्सा मसजिदमें मारा गया। इन्होंने सन् १०७६ ई० को २४ वीं अगस्तको कायरो नगरमें जन्म लिया था। सन् १०८४ ई० की २८ वीं दिसम्बरको यह खलीफा बने और सन् ११०१ ई० को १० वीं दिसम्बरको मर गये। इनके पुत्र अमर बि अहकाम-उल्लाहने खलाफ़तका उत्तराधिकार पाया था।

अलमुस्तौन बिस्लाह—अब्बास वंशके १२ वें खलीफा, मुहम्मदके लड़के और मौतसिम बिस्लाहके पोते। सन् ८६२ ई० को बग़दादमें यह अपने चचेरे भाई अल-मुस्तनसिर बिस्लाहके मरनेपर गद्दी बैठे थे, किन्तु इनके भाई अल-मौतिज बिस्लाहने सन् ८६६ ई० को जबरन इन्हें तख़्तसे उतारा और पीछे चुपके चुपके मरवा डाला।

अलमुस्तासिम बिस्लाह—अब्बास वंशके ३७ वें और अन्तिम खलीफा। इनका उपनाम अबू अहमद अब-दुल्लाह रहा। सन् ११४२ ई० को यह अपने बापकी जगह बग़दादमें तख़्तनशीन हुए थे। इनके समय मुग़ल बादशाह और चङ्गीज़ खानके पोते हलाकू खान दो महीने बग़दादकी घेरे पड़े रहे। उन्होंने इन्हें और इनके चार लड़कोंको आठ लाख अधिवासियोंके साथ पकड़ बहुत बुरे तौरपर मरवा डाला। इन्होंने १५ चान्द्र वत्सर और ७ मास राज्य किया था।

अलमुस्तफ़ी बिस्लाह—अब्बास वंशके २२ वें खलीफे, अलमुक्तदीकी लड़के और अल मौतजिद बिस्लाहके पोते। सन् ८४५ ई० को इन्होंने अपने चाचा अल-

मुस्तफ़ीका उत्तराधिकार पाया था। किन्तु बग़दादमें १ वर्ष और ४ मास राज्य करने बाद सन् ८४६ ई० को इनके वज़ीरने इन्हें तख़्तसे उतार अलमुतौय बिस्लाहको खलीफा बनाया।

अलमुस्तनसिर बिस्लाह—फातिमा वंशवाले मिश्रके ५ वें खलीफे और ताहिरके लड़के। सन् १०३६ ई० को इन्हें अपने पिताका उत्तराधिकार मिला था। इन्होंने बसासिरो नामक किसी तुर्कके साहाय्यसे सन् १०५४ ई० को बग़दाद जीता और अलकायम बिस्लाहको कैद किया। डेढ़ वर्ष तक यह मुसलमानोंके एक-मात्र खलीफा समझी जाते रहे। ६० वर्ष राज्य करने बाद सन् १०८४ ई० को इनको मृत्यु हुई थी। इनके लड़के अल-मुस्ताली बिस्लाह अबुल कासिम पीछे तख़्तपर बैठे।

अल-मुस्तनसिर बिस्लाह प्रथम—अब्बास वंशके ११ वें खलीफा। सन् ८६१ ई० के दिसम्बर मास यह अपने पिता अलमुतवक्किलकी हत्या बाद बग़दादके तख़्तपर बैठे थे। छः महीने राज्य करने पीछे ही मृत्युने इन्हें धर दबाया। चचेरे भाई अलमुस्तौन बिस्लाहको इनका उत्तराधिकार मिला था।

अल-मुस्तनसिर बिस्लाह द्वितीय—अब्बास वंशके ३६ वें खलीफा। इनका उपनाम अबू जफ़र अलमन्सूर रहा। सन् १२२६ ई० को अपने पिता ताहिरके मरने बाद बग़दादमें यह सिंहासनारुढ़ हुए थे। कोई १७ वर्ष राज्यकर सन् १२४२ ई० को इन्होंने शरीर छोड़ा। इनके लड़के अल-मुस्तजौको राज्यका उत्तराधिकार मिला था।

अल-मुस्तफ़िर बिस्लाह—अब्बास वंशके २८ वें खलीफा और अलमुक्तदीकी पुत्र। सन् १०८४ ई० को ईरा-नके सुलतान बरक्यारक सलजूकीने इन्हें बग़दादकी गद्दीपर बैठाया था। सन् १११८ ई० को २५ वत्सर राज्य करने बाद यह मरे और इनके लड़के अलमुस्तारशौद ख़िलाफ़तके मालिक हुए।

अल-मुस्तजौ-बि अमर बिस्लाह—अब्बास वंशके ३३ वें खलीफा। सन् ११७१ ई० को यह अपने बाप अल-मुस्तनजदकी जगह बग़दादमें गद्दीपर बैठे थे।

इन्होंने कोई ७ वर्ष राज्य कर सन् ११७८ ई० की अपना शरीर छोड़ा। इनके लड़के अलनासिर बिल्लाहको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला था।

अलम्पट (सं० पु०) १ भवनका भीतरी भाग, मकानका अन्दरूनी हिस्सा। २ अन्तःपुर, जनान-खाना। (त्रि०) ३ जितेन्द्रिय, पाकदामन, जो परस्त्रीगामी न हो।

अलम्पशु (सं० पु०) अलं यज्ञे निरर्थकः पशुः। १ यज्ञके लिये अप्रशस्त पशु। (त्रि०) २ पशु पालने योग्य, जो मवेशी रख सकता हो।

अलम्पुरुषीण (सं० पु०) अलं समर्थः, पुरुषाय, अलम्पुरुष स्वार्थे ख। १ प्रतिमत्तादि पुरुष, जो शत्रुस दूसरेसे कुश्लो लड़ सकता हो। (त्रि०) २ पुरुषके योग्य, जो आदमी बन रहा हो। ३ पुरुषके अर्थ पर्याप्त, जो आदमीको काफी हो।

अलम्बमुष्कक (सं० पु०) मुष्कक वृक्ष, मोखेका पेड़, वनपलास।

अलम्बल (सं० पु०) १ पर्याप्तबलयुक्त, खूब ताकतवर। २ शिव।

अलम्बा (सं० स्त्री०) १ तिक्तालावू, कड़वी लौकी। २ स्थावर विषान्तर्गत पत्रविष, पत्तीका जूहर।

अलम्बुजा (सं० स्त्री०) गोरक्षमुण्डी, गोरखमुण्डी।

अलम्बुद (सं० स्त्री०) बालक, बच्चा।

अलम्बुद्धि (सं० स्त्री०) अलं व्यर्था पर्याप्ता वा बुद्धिः। १ निरर्थक बुद्धि, फजूल फहम, जो समझ किसी कामकी न हो। २ पर्याप्त बुद्धि, काफी फहम, जा समझ पूरी हो।

अलम्बुष (सं० पु०) अलं पुष्पाति, अलम्-पुष-क पृषो० प्रकारस्य बकारः। १ वान्तिरोग, कंकी बीमारी। २ प्रहस्त, फैली हुई मुट्ठी। ३ रावणके एक मन्त्री। ४ राक्षस विशेष। घटोत्कचने इसे मार डाला था। ५ भूकदम्बवृक्ष, अजवायनका पेड़।

अलम्बुषा (सं० स्त्री०) १ लज्जावती लता। यह मधुर, लघु और क्लमि, कफ तथा पित्त मिटानेवाली होती है। (भावप्रकाश) २ भूकदम्ब, अजवायन। ३ महाआवणी, गोरखमुण्डी। ४ गुग्गुलु। ५ तुरग-

णाय लौह। ५ लौहमल, लोहेका जङ्ग। ६ चूर्ण विशेष। यह आमवातको दूर करता है। (चक्रपाणिदत्त-कृत संग्रह) ७ अप्सरो विशेष, कोई परी। ८ गण्डीरी, घेरा, रोक। इस जलरेखाको कोई लाघ नहीं सकता। स्वर्णमृग मारनेको जाते समय रामचन्द्र सीताकी चारो ओर यही रेखा खींच गये थे, जिससे बाहर ही रावणने उन्हें हरण किया।

अलम्बुषाद्यचूर्ण (सं० स्त्री०) औषधविशेष। यह चूर्ण आमवातमें हित है। बनानेका प्रकार यों है—अलम्बुषा, गोक्षुर, गुड़ूची, वृद्धदारक, पीपल, त्रिवृत्ता, मुस्ता, वरुण, पुनर्णवा, त्रिफला, नागर, इन सब द्रव्योंको खूब महीन चूर्ण बना चूर्णके बराबर मण्डूर चूर्ण मिलाना चाहिये। इसका अनुपान दधि, मण्ड, काश्तिक, दूध, तक्र, मांसका रस प्रभृति है। इनमें समय पर जो मिल जाये, उसीके साथ सेवन करे। (चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

अन्यप्रकार—अलम्बुषा, गोक्षुर, वरुणमूल, गुड़ूची, इन सबका क्रमशः भाग बढ़ाकर सबके सम-भाग वृद्धदारकका चूर्ण मिलाना होता है।

(चक्रपाणिदत्तकृत संग्रह)

तीसरा—अलम्बुषा, गोक्षुर, वरुणका मूल, गुड़ूची, नागर यह सब बराबर एकत्र करके चूर्ण बनाना चाहिये। (भावप्रकाश)

अलम्बुसा, अलम्बुषा देखो।

अलम्बोधंस्तनी (सं० स्त्री०) जिस स्त्रीका स्तन लम्बा और उभरा न हो, छोटे और भुके हुए सीनेकी औरत।

अलम्बीष्ठो (सं० स्त्री०) जिस स्त्रीके लम्बा ओष्ठ न रहे, छोटे हीठवाली औरत।

अलम्बुष्णु (सं० त्रि०) अलम्-भू-गुष्णु। समर्थ, काबिल, पूरा।

अलय (सं० पु०) १ अविलयन, सनातनत्व, सवात, टिकाव। (त्रि०) २ भवनविहीन, लामकान्, जिसके घर न रहे।

अलर-बलर (हिं० वि०) खराब, बुरा।

अल-रशीद—अब्बास वंशके पूर्व खलीफा और मेहदीके

पुत्र। इन्हें लोग हारून-अल रशीद भी कहते थे। यह अलिफ़ लैलाके प्रधान नायक रहे और सन् १७० ई०को अपने बड़े भाई अलहादीकी जगह गद्दीपर बैठे। बग़दादमें ऐसा अच्छा और होशियार बादशाह दूसरा नहीं हुआ। यद्यपि इन्होंने अपना राज्य अधिक न बढ़ाया, तथापि जिस काममें हाथ लगाया, वही पूरा उतर गया। इनके समय मुसलमानों साम्राज्य अतिशय सम्पन्न रहा। इन्होंने अपना विशाल राज्य तीन लड़कोंमें नीचे लिखे तीनोंपर बांट दिया था, बड़ा लड़का अल्-अमीन सीरिया, इराक, तीनो अरब, मेसोपटेमिया, असीरिया, मिडिया, पैलेस्टिन, मिस्र, इथियोपिया, जिब्राल्टरका खलीफ़ा हुआ, मंभले अल्-मासून्को ईरान, किरमान, इण्डो-ज, खुरासान, तबरीस्तान, काबुलिस्तान, जवूलिस्तान, मावरन्नहर मिला; और छोटे अलकासिमने आरमेनिया, नतोलिया, जुरजान्, जारजिया, सरके-शिया और यूक्रेयिन देश पाया। उपद्रव उठानेपर इन्होंने प्रत्येक बार यूनानियोंको युद्धमें हराया था। सन् ८०३ ई० को यूनानसम्राट् नीसफोरसने इनके पास निम्नलिखित आशयका एक पत्र भेजा,—“आपने इरान सम्राज्ञीसे जितना धन छीना है, उसे शीघ्र वापस दीजिये; वरं हमारी फौज जाकर आपका राज्य विध्वंस कर डालेगी।” यह पत्र पाते ही इन्होंने अपनी फौजको बटोरा और हेरेकली पर धावा मारा था। राहमें जो नगर वा ग्राम पड़े, उनको यह आग या तलवारसे उड़ाते गये। कुछ दिन इनके हेरेकली नगर दृढ़ रूपसे घेरनेपर यूनानसम्राट् वार्षिक कर देनेको राजी हुए। सन् ८०४ ई० को फिर युद्ध बढ़ा और यूनान-सम्राट् नीसफोरसने बहुत बड़ी फौजके साथ इनपर धावा मारा। किन्तु वह ४० हजार सिपाही खो हार गये, जिसमें तीन ज़ख्म लगे और मुसलमान उनके मुस्कको बरबादकर लूटसे मालोमाल लौट पड़े। दूसरे वर्ष यह फ़िरीजिया पर चढ़े, यूनानकी शाही फौजके दांत तोड़े और शत्रुके देशको नाश कर बग़दाद वापस आये थे। सन् ८०६ ई० को इन्होंने ११५००० सिपाहियों और

कितने ही स्वेच्छासेवकोंके साथ फिर यूनानपर धावा मारा और हेरेकलीको ले १६००० यूनानियोंको बन्दी बनाया। सायिप्रस द्वीप इनकी लूटमारसे बिलकुल तबाह हो गया था। इस विजयसे नीसफोरसने भीतचकित हो वार्षिक कर उसी समय भेज दिया, जो युद्धका प्रधान कारण रहा। इन्होंने २३ वर्ष राज्य किया और सन् ८०८ ई०की २४ वीं मार्च शनिवारको सन्ध्या समय खुरासानमें शरीर छोड़ा था। इनके बड़े लड़के अल् अमीनको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला।

अल-रशीद बिस्लाह—अब्बास वंशके १३वें खलीफ़ा। इन्होंने अपने बाप अल्मुश्तरिशदके मरने बाद सन् ११३५ ई०को राज्यका उत्तराधिकार पाया था। सन् ११३६ ई०को यह मरे और अल्-मुस्तज़्ज़िहके लड़के अलमुक्तदफ़ी गद्दीपर बैठे।

अल राजी बिस्लाह—अब्बास वंशके २०वें खलीफ़ा और अलमुक्तदिरके पुत्र। सन् ८३४ ई०के अप्रैल मास वजौर इम्र मकूलने इनके चाचा अलकाहिर बिस्लाहको तख़्तसे उतार इन्हें खलीफ़ा बनाया था। सन् ८३६ ई०में इन्होंने अपनेको सूदखोरोसे घिरा पा और कोई लायक वजौर न देख अमीर-उल-उमराका नया पद निकाला। इस पदके अधिकारी इमाद-उद्-दौला अली बोयाको राजस्वका अखण्ड स्वत्व प्राप्त था। खलीफ़ा भी उनसे बेपुछे रुपया-पैसा ले-दे न सकते रहे। सन् ८३७ ई०को मुसलमानोंका विशाल साम्राज्य निम्नलिखित लोमोंमें बंट गया था,—

अली बरोदी नामक किसी बलवायीके छीन लेते और निकाले न निकलते भी वसत, बसरा, कूफ़ा और अरबी इराक अमीर-उल-उमराकी सम्पत्ति समझा गया। इमाद-उद्-दौला अली इबन् बोयाने फार और फारिस्तान (ईरान) पाया, जिनका निवास शीराजमें रहा। इमाद-उद्-दौलाके भाई रुक्त-उद्-दौलाको अल-जबल, ईरानो ईराक और पारथियोंका प्राचीन देश मिला। यह इस्फ़हानमें रहते थे। देशका दूसरा भाग वाशमकिनके हाथ लगा। हमोदिया वंशके शहजादे दयार रमिया, दयार बिक्र, दयार मोदर और मौसल

नगरके राजा हुए। मित्र और सिरीया मुहम्मद इब्न ताजके चङ्गुलमें पड़ा, जो पहले वहां शासक रहा। अफरीका और स्पेन बहुत दिन पहले ही स्वतन्त्र बन बैठा था। सिसिली और क्रीटमें स्थानीय नृपतिने राज्य चलाया। समानीय वंशके अल्-नस्-इब्न-अहमदने खुरासान और मालबख्तरको धर दबाया। दौलाम-तीय प्रथम वंशके नरेशोंने तबरीस्तान, जुरजन और माजिन्दरान पर कब्जा किया। कुछ समय पहले ही अबू अली मुहम्मद इब्न ईसेलियास अल्-सामानीने किरमान प्रान्त छीन लिया था। करमतीय अबू ताहिर इमाम, बहरीन और हज्ज जिलेके मालिक रहे। इसीतरह समय राज्य विखिन्न हो जानेपर खलीफाका अधिकार घटा और सारा काम बिगड़ गया। इन्होंने ७ वर्ष २ मास और ११ दिन राज्य किया था। सन् ८४१ ई०को इनके मरनेपर भ्राता अल्-मुत्तकीने सिंहासनका उत्तराधिकार पाया।

अलर्क (सं० पु०) अलम् अर्चते वा, अर्च-अर्च् अर्च-घञ् वा शकन्वादित्वात् टेलीपः। १ पागल कुत्ता। २ श्वेत मन्दार। ३ कृमिविशेष। महाभारतके शान्ति-पर्वमें इसका विवरण लिखा है। सत्ययुगमें अलर्क नामक एक असुर था, एकबार वह वलपूर्वक भृगुकी स्त्रीको हर ले गया। इसपर क्रुद्ध हो भृगुने उसे यह शाप दिया,—‘तू दुर्मति। तूने जो पाप किया, उसके लिये तू मूत्रस्त्रोतमोजी कीट होकर भूतलमें जन्मग्रहण करेगा। फिर जब मेरे वंशमें राम नामक एक पुरुष अवतार लेंगे, तब उनके शुभदर्शनसे तू पापमुक्त होगा।’

हापरयुगमें ब्राह्मणका कपट वेश धारणकर कर्ण परशुरामसे ब्रह्म अस्त्रादि सीखने गये थे। एक दिन परशुराम कर्णकी जाँघपर शिर रखकर सो रहे। उसी समय खून पीनेके लिये एक कीड़ा कर्णकी जङ्घामें काटने लगा। उस कीड़ेके आठ पैर, तेज दांत, सुई जैसे रोयें और सूअर जैसी सूरत थी। कदाचित् गुरुकी नींद टूट जाय, इस भयसे कर्ण चुपचाप ज्यों के त्यों बैठे रहे। आखिर उनकी जङ्घासे रुधिर बहकर परशुरामकी देहमें लगा और

उनकी नींद टूट गई। उठकर उन्होंने देखा, तो पासमें उस कीड़ेको पाया। रामकी दृष्टि पड़ते ही वह कीड़ा पापमुक्त हो गया।

४ महाराज शत्रुजित्तनय ऋतध्वजके पुत्र। कुमार ऋतध्वज महर्षि गालवप्रदत्त कुवलय नामक अश्व पा कुवलयाश्व नामसे विख्यात हुए थे। वह किसी समय एक पापकर्मा दैत्याधम द्वारा उठाये गये गालवाश्वमका विघ्न मिटाने उक्त अश्वपर चढ़ दुर्मति शूकररूपी दैत्य मारनेको उसके पीछे पातालपुर पहुँचे और वहां गन्धर्वराज विश्वावसुकी दुहिता मदालसाका पाणिग्रहण किया। उसके बाद प्रधान-प्रधान असुरोंको मार मदालसाके साथ-साथ घोड़ेपर चढ़ अपने घर वापस आ गये। कालक्रमसे मदालसाके गर्भमें ऋतध्वजके विक्रान्त, सुवाहु और शत्रु-मर्दन नामक तीन पुत्रोंने जन्म लिया था। पीछे चौथा पुत्र भूमिष्ठ होनेपर मदालसाने स्वामीके आज्ञानुसार इसका अलर्क नाम रख दिया। राज-कुमार अलर्कने कुमारकालमें क्षतोपनयन हो, विशिष्ट ज्ञान पा मातृसमीप राजधर्म, वर्णधर्म, आश्रमधर्म एवं नित्यनेमित्तिकादि भेदसे गार्हस्थ्यधर्म सीख यौवनमें पदार्पण करते हुए यथाविधान दार-परिग्रह किया। इसके बाद पिता ऋतध्वज चरम वयसमें उपनीत हो इन्हें राज्य दे तपस्वरण निमित्त वनको गये थे। राजकुमार अलर्क राज्य पा माताके उपदेशानुसार न्यायसे पुत्रकी तरह प्रजापालन करने लगे। इसीतरह कुछ समय राज्य करने बाद यह अपने दूसरे बड़े भाई सुवाहुके चक्रान्तसे काशिराज द्वारा निपीड़ित होनेपर महामति दत्तात्रयके शरणा-पन्न हुए। उक्त महाभागके उपदेशानुसार आत्म-विवेक लाभ कर इन्होंने सांसारिक बन्धनके छेदनकी वासनासे काशीपति और अग्रज सुवाहुको समुदाय राज्र देनेका प्रस्ताव उठाया था। किन्तु वह राज्र देनेका हेतु सुनकर वे कुछ लिये-दिये ही अपने स्थानको वापस गये। पीछे यह भी अपने ज्येष्ठपुत्रको राज्य सौंप आत्मसिद्धिके लिये वनको चल दिये। (माकण्डेयपुराण)

अलर्षिराति (वै० त्रि०) सम्प्रदानोत्सुक, हौसलेमन्द, जल्द देनेवाला ।

अललटपू (हिं० वि०) मनमाना, वाहियात ।

अललबछेड़ा (हिं० पु०) १ घोड़ेका बच्चा । जबतक घोड़ा दूध पीता और सवारी नहीं देता, तबतक अलल बछेड़ा कहलाता है । २ अनभिन्न बालक, नादान लड़का । (स्त्री०) अलल-बछेड़ी ।

अललाना (हिं० क्रि०) उच्चैःस्वरसे शब्द निकालना, जोर-जोर बोलना ।

अललाभवत् (वै० त्रि०) उत्तेजित होनेवाला, जो उत्साही बन रहा हो ।

अलले (सं० अव्य०) वाह-वाह, क्या खूब, शाबाश । नाटकमें जो पिशाचका अभिनय करता, उसका बोलीमें प्रायः यह शब्द काम आता है ।

अलवणा (सं० स्त्री०) १ ज्योतिष्मती, रतनजोत । २ हरीतकी, हर ।

अलवर—१ राजपूताना प्रान्तका राज्य । यह अक्षा० २७° ५' १५" एवं २८° ७' ५०" और द्रोधि० ७६° १०' तथा ७७° १५' पू०के मध्य अवस्थित है । इससे उत्तर गुड़गांव, नाभा राज्यका बावल एवं जयपुरका कोटकासम परगना, पूर्व भरतपुर तथा गुड़गांव और दक्षिण एवं पश्चिम जयपुर राज्य है । राज्यका क्षेत्रफल ३२४ वर्गमील है ।

यह स्थान प्रायः पर्वतमय है । प्रतापसिंह नामक व्यक्ति वर्तमान महाराव नृपतियोंके आदि पुरुष रहे । पहले दो ग्राम और मचारी नामक स्थानके अर्धांशपर ही प्रतापसिंहका अधिकार था । सन् १७७१ ई०को जाटों, मुगलों और महाराष्ट्रोंमें परस्पर विवाद बढ़ा, उस समय जयपुरके महाराज भी नाबालिग थे । सुविधा पाकर प्रतापसिंह स्वाधीन हुए और इसका समस्त दक्षिण अंश हड़प बैठे । प्रतापसिंह देखो । प्रतापके स्वर्गवास बाद उनके पोथ्यपुत्र बख्तावर सिंहको यह राज्य मिला था । सन् १८०३-६ ई०को महाराष्ट्रोंसे युद्ध होते समय बख्तावरने अंगरेजोंका पक्ष लिया । इस युद्धके बाद ही अंगरेज सरकारने इस राज्यका अवशिष्ट उत्तरांश

बख्तावरको सौंप दिया था । उससे सातवीं जगह राज्यका आय दश लाख हो गया ।

पहले अलवरनरेश अंगरेज-सरकारको कोई कर देते न थे । सन् १८१२ ई०को बख्तावरने जयपुर राज्यका अधिकृत घोषी और सिक्तावा दुर्ग छीन लिया । अंगरेज-सरकारके कहनेसे भी उन्होंने इन दोनों दुर्गको वापस देनेसे इनकार किया । उसपर अंगरेजी फौज अलवर जा पहुंची । बख्तावरने फिर निस्तार न देख दोनों दुर्ग छोड़ दिया था । बख्तावरके मरनेपर उनके पोथ्यपुत्र वाणीसिंह इस राज्यके महाराव बने ।

बख्तावरके बलवन्त सिंह नामक कोई जारज पुत्र था । उनके मरनेपर उसने भी उत्तराधिकार पानेकी चेष्टा लगायी । वाणी और बलवन्त सिंहमें विवाद बढ़ गया था । सरकारने बलवन्त सिंहके लिये जो सुव्यवस्था निकाली, वह वाणीसिंहने न मानी । उसीसे अंगरेजी फौज अलवर भेजी गयी थी । उस समय असुविधामें पड़ अलवरका उत्तर अर्धांश वाणी सिंहने बलवन्त सिंहको सौंप दिया । सन् १८५७ ई०को वाणीसिंह स्वर्गवासी हुए । उनके तेरह वर्ष वाले पुत्र शिवदान सिंह महाराव बने थे । सन् १८७० ई०को शिवदान सिंहने इहलोक परित्याग किया । उनका कोई भी उत्तराधिकारी न रहा । कितन ही अनुसन्धानके बाद नरूक वंशोद्भव ठाकुर मङ्गलसिंह अलवरके राजा बनाये गये ।

अलवर-नरेश अंगरेज सरकारकी ओरसे सम्मानार्थ पन्द्रह तोपोंकी सलामी पाते हैं । यह राज्य चौदह भागमें बंटा है—१ तिजार, २ बहरोर, ३ मन्दावर, ४ कल्याणगढ़, ५ गोविन्दगढ़, ६ रामगढ़, ७ अलवर, ८ वाणसुर, ९ कतुम्बर, १० लक्ष्मणगढ़, ११ राजगढ़, १२ यानागाजी, १३ बलदेवगढ़ और १४ प्रतापगढ़ ।

इस राज्यका आधेसे अधिक भाग कृषिकार्यमें लगता और सावां, ज्वार, बाजरा, धान्य, यव, चना, गेहूं, अफीम, तम्बाकू, रुई, इन्डु तथा धान्य उपजता है । पहले इस राज्यमें कितने ही लोहेके कारखाने रहे किन्तु अब एक भी नहीं देख पड़ता । तिजारा

नामक स्थानमें कागज बनता है। राजाके पास १८०० सवार, ८७५० पैदल, १० बड़ी और २८० छोटी तोप रहती है।

२ अलवर राज्यकी राजधानी—इस नगरका एक ओर पहाड़ और तीन ओर चहारदीवारी बनी है। लोग कहते हैं, कि निकुम्भ नामक राजपूतोंने चहारदीवारी उठावायी थी। नगरमें पांच फाटक लगे हैं। सड़कें भी खूब पोखूता बनी हैं। प्रधान भवन यह हैं,—१ महाराजका प्रासाद, २ महाराज बख्तावर सिंहकी छतरी, ३ जगन्नाथका मन्दिर, ४ कचहरी, तहसीलदारी और ५ त्रिपोलिया यानी फीरोज शाह बादशाहके भाई तरङ्ग सुलतानकी पुरानी कब्र। सुसलमानों इमारतमें भौकनकी सिज-दहगाह बहुत अच्छी बनी है। त्रिपोलियाके ठीक १००० फीट ऊपर किला खड़ा, जिसमें नरक-नरेशोंका प्रासाद और दूसरी इमारत उठी है। शहरकी चहारदीवारी पहाड़ी चोटीके साथ घाटी पार कर कोई दो मील तक चली गयी है। कहते हैं, कि उसे भी निकुम्भ राजपूतोंने ही उठाया था। जैनियों और सरावगियोंकी भी पांच बड़े-बड़े मन्दिर बने हैं। सीलीसेद भील आध कोससे ज्यादा लम्बा और औसतमें ४०० गज चौड़ा बैठता है। भीलसे इस नगरतक साढ़े चार कोस लम्बी नहर लगी, जिससे इधर-उधरकी शोभा बढ़ गयी है। मछली बहुत देख पड़ती है। भीलके आस-पास शिकारकी कोई कमी नहीं। लोग प्रायः उसके किनारे आनन्द करने जाते हैं। वाणीविलास प्रासाद और उद्यान नगरसे आध कोस दूर और अपनी विचित्र शोभाके लिये मशहूर है। रजौडण्टीके पासका तालाब बहुत अच्छा है। इस नगरसे चारो ओर पक्की सड़क गयी है।

अलवल (हिं० पु०) मान, नखरा, ठकोसला।

अलवांती (हिं० स्त्री०) प्रसूता, जन्मा, जो औरत बच्चा जन चुकी हो।

अलवासिक बिज्जाह—अब्बास वंशके ८वें खलीफा और अल मौतसिम बिज्जाहके पुत्र। सन् ८४२ ई०की ५वीं जनवरीको यह बग़दादकी गद्दीपर बैठे थे। दूसरे

ही वर्ष इन्होंने आक्रमण कर सिसिलीको जीत लिया। यह ५ वत्सर ७ मास ३ दिन खलीफा रहे और सन् ८४७ ई०को मर गये। इनके भाई अलमुत-वक्लिने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

अलवान् (अ० पु०) पश्मीने या उनकी चादर। यह अक् सर सादा रहता है, गोटा किनारी कुछ नहीं लगता। अलवायी, अलवांती देखो।

अलवाल (सं० स्त्री०) लव जलकणा न आलाति गृह्णाति रहिभूमिर्यस्मात्; लव-आ-ल-क, ततो नञ्-तत्। थलहा, पेड़की चारो ओर पानी रोकनेकी मट्टीका बना हुआ घेरा।

अलस् (सं० त्रि०) दीप्तिहीन, धुंधला, जो चमकता न हो।

अलस (सं० त्रि०) न लसति कस्मिंश्चित् कार्यं व्याप्रियते; लस अच् ततो नञ्-तत्। १ दीर्घसूत्री, क्रियामन्द, सुस्त, टालमटोल करनेवाला, जो जरूरी काम छोड़ बैठता या पड़ा रहता हो। 'मन्दस्लान् परिच्छज आलसः शीतकोऽगुणः।' (अमर) (पु०) २ पादरोग विशेष, खरवा। खराब कीचड़ लगनेसे पैरकी अंगुलीके बीचका सड़ना गलना अलस या खरवा कहाता है। (सुस्त) ३ विशूचिकाका अवस्थाभेद, किसी किस्मका हैजा। ४ क्षुद्रकुष्ठरोगभेद, किसी किस्मका कोढ़। ५ व्याल जाति ज्वर, कोई बुखार। ६ जिह्वारोग, ज़बान्का आजार। ७ वृक्षभेद, कोई पेड़। 'अलसः पादरोगे स्नात् क्रियामन्द इमान्तर।' (विश्व) ८ मुनि विशेष।

अलसक, अलस देखो।

अलसगमन (सं० स्त्री०) १ मन्दगमन, सुस्त चाल। (त्रि०) अलसं गमनं यस्य, बहुव्री०। २ मन्दगामी, धीरे-धीरे चलनेवाला।

अलसता (सं० स्त्री०) आलस्य, सुस्ती।

अलसत्व (सं० स्त्री०) अलसता देखो।

अलसा (सं० स्त्री०) न लसति व्याप्रियते; लस-अच् ततो नञ्-तत् टाप्। १ कार्य करनेमें अक्षम स्त्री, जो औरत काम करनेमें होशियार न हो। २ हंसपदीलता, लाजवन्ती। 'अलसा हंसपयात्र।' (विश्व)

अलसाना (हिं० क्ति०) अलस होना, सुस्त पड़ना, झुकना, झुककी लेना।

अलसी (हिं० स्त्री) अतसी, तीसी। इसका वृक्ष कोई गज-पौन-गज ऊपर उठता है। शाखा अधिक नहीं होती। छोटी पत्तीसे भरी दो-तीन टहनी आती, जो लम्बी, मुलायम और सीधी रहती है। फूल नीला और खूबसूरत लगता है। उसके टूट जानेपर छोटी गांठ पड़ती, जिसमें बीज बैठता है। इसका तेल जलाने, रंग चढ़ाने और स्याही बनानेका काम देता है। तेल निकलने बाद बीजका बचा हुआ अंश गाय-भैंसको खिलाते और खली कहते हैं। अलसीका बीज कूट और गर्मकर पुलटिस बनाया जाता, जो फोड़े-फुन्सीको बैठा या पकाकर अच्छा कर देता है। अतसी देखो।

अलसेक्षणा (सं० स्त्री०) मन्द दृष्टि डालनेवाली, जो औरत सुस्त नजर फेंक रही हो।

अलसेट (हिं० स्त्री०) १ विलम्ब, वक्फा, देर। २ धोकाधड़ी, हेरफेर। ३ विघ्न, दिक्कत।

अलसेटिया (हिं० वि०) १ मन्द, ढीला, सुस्त। २ बाधक, रोकनेवाला।

अलसेलुका (सं० स्त्री०) रक्त लज्जालु, लाल लाजवन्ती।

अलसीहां (हिं० वि०) अलस, सुस्त।

अलहदा (अ० वि०) पृथक्, जुदा, दूर।

अलहन (हिं० पु०) शामत, बुरा वक्त।

अलहिया (हिं० स्त्री०) रागिनी विशेष। यह हिण्डोल रागकी स्त्री और दीपककी पुत्रवधू है। इसमें समग्र स्वर कोमल रहता है। कण्ठा देखानेमें यह गायी जाती है।

अलहैरी (अ० पु०) उद्भविष्य, कोई अरबी ऊंट। इसके एक ही कूबड़ रहता है। चलनेमें यह बहुत तेज पड़ता है।

अलाई, अलायी देखो।

अलागर—मन्द्राज प्रान्तके मदुरा जिलेकी निम्न पर्वत-श्रेणी। यह पहाड़ लम्बाईमें छः कोस बैठता और औसतपर समुद्रतलसे १००० फीट ऊंचा पड़ता है। इसमें भुरभुरा पत्थर भरा, किन्तु आधारपर भूगर्भ-सम्बन्धीय वस्तु भी मिलता है। यह अक्षांश १०° १५' १६" उ० तथा द्राघि० ७८° १७' ५०" पू० पर अवस्थित है।

मदुरासे छः कोस उत्तर-पूर्व इसके नीचे कन्नौ या कन्नारोंका 'कन्नार अलागर कोविल' नामक प्राचीन मन्दिर बना है।

अलागलाग (हिं० स्त्री०) १ नृत्यविशेष, किसी किस्मका नाच। २ साफ़ खेल, अनोखा तमाशा।

अलाण्डी—बम्बईप्रान्तके पूना जिलेका एक हिन्दू तीर्थ-स्थान। यह अक्षांश १८° २७' उ० और द्राघि० ७५° ६' ३" पू० पर अवस्थित है।

अलाण्डु (सं० पु०) हिंस कौट वा जन्तु विशेष, कोई जहरीला कौड़ा या खूंखार जानवर।

अलात (सं० पु०-स्त्री०) न लयते आह्वयते; लत सौत्र० कर्मणि घञ्, पृषो० वा लौवत्वम्। १ अङ्गार, धूमरहित आगका ढेला। २ कोयला।

अलातचक्र (सं० स्त्री०) १ आगका फेरा। यह किसी जलती लकड़ीको जल्द-जल्द घुमानेसे आकाशमें खिंच जाता है। २ बनेठी। ३ नृत्यविशेष, किसी किस्मका नाच।

अलाटण (वे० वि०) अलम्-दद हिंसायां ण; दकारलोपो गुणाभावोऽलमो मकारस्य प्रकारस्य निपात्यते, अलं पर्याप्तमातर्दनं हिंसा यस्य। (देवराज) १ आतर्दनशील, पीड़नशील, हिंसक, तकलीफ़ देनेवाला, जिससे कोई फायदा न पहुँचे। (पु०) २ मेघ, बादल।

अलान (हिं०) आलान देखो।

अलाप (हिं०) आलाप देखो।

अलापना (हिं० क्रि०) १ विशुद्ध स्वरसे गान करना, ऊँची आवाज़में तान लड़ाना।

अलापी (हिं०) आलापिन् देखो।

अलापुर—१ विहार प्रान्तके दरभङ्गा राज्यका परगना। पहले यहां जङ्गली हाथी बहुत रहते, जिनकी लूट-खसोटसे उन्नतिके सब काम रुकते थे। अब यह परगना अतिशय समृद्ध बन गया है। इस परगनेका धान्य समग्र विहार प्रान्तमें प्रसिद्ध है।

२ युक्तप्रान्तके बदायूँ जिलेका नगर। यह अक्षांश २७° १७' ५०" उ० तथा द्राघि० ७८° १७' ५०" पू० पर अवस्थित है।

पर अवस्थित और बदावं नगरसे दक्षिण-पूर्व साढ़े पांच कोस दूर है। सन् १४५० ई० को दिल्लीकी बादशाही छोड़ बदावं आनेपर अलावुद्दीनने इसे अपने नामपर बसाया था। शहरकी जमीन सार-स्वत ब्राह्मणोंके अधिकारमें वर्षोंसे चली आती है। अलावुद्दीन् ही उन्हें यह दे गये थे।

अलाबु, अलाबू (सं० स्त्री०) न लम्बते शब्दायते लवि-
(नञि लब्धेर्नलोप्य। उष् १।१८७) इति उ वा ऊ न लोपः
णित्वाद्वृद्धिश्च। तुम्बी, तुम्बक, तुम्बा, पिण्डफला,
महाफला, लबुका, तुम्बिका, कद्दू, लौकी।

अलाबु (*Langenaria vulgaris*, Bottle gourd)
शब्दके अपभ्रंशमें हमलोग बराबर लौका या लौकी
कहते हैं। यह एक प्रकारकी लताका फल है।
इसके पत्ते गोल और डालीके पास कटे होते हैं।
पत्तेकी जड़में बड़े-बड़े रेशे होते हैं। ठाट और
वृक्षपर चढ़नेके समय यही रेशा पल्लव और शाखा
आदिमें लपट जाता है। वसन्त और शीत कालमें
कद्दू होता है। परन्तु यद्य करनेसे यह लता
दूसरी ऋतुमें भी लग सकती है।

प्रधानतः कद्दू दो तरहका होता है,—लम्बा और
गोल। इसके अलावा रङ्ग रूप भी कई तरहका
देखा जाता है। कोई कद्दू खूब हरा, कोई हलका
सफेद, और कोई पीलापन लिये सफेद होता है।
किसी-किसी कद्दूका ऊपरी हिस्सा गोल और नीचेका
चिपटा होता है। इसकी बीणा, तानपूरा और सितार
बनाया जाता है। कितने ही कद्दू गोल होते हैं,
परन्तु उनके नीचेका भाग चिपटा नहीं होता। किसी-
किसी कद्दूके नीचेका भाग गोल होता सहो, परन्तु
शिरके ऊपर गड्ढा रहता, जिस पर फिर कुछ अंश
उन्नत हो जाता है। उदासी लोग इसीकी जल
पीनेको तुम्बी बनाते हैं। जिस कद्दूके ऊपर ऐसा
गड्ढा नहीं होता, वैष्णव सम्प्रदाय उसीसे गोपीयन्त्र
प्रसृत करता है। कोई कोई कद्दू तीन चार हाथ
लम्बा होता है। फिर एक जातिकी तुम्बीको 'कड़वी
लौकी' कहते हैं। देखनेमें यह सज, या कुछ पोत-
मिश्रित खेतवर्ण होती और खानेमें कड़वी लगती है।

वैद्यशास्त्रके मतसे,—लौकी मिष्ट, हृद्य, रुचिकर,
भेदक और गुरुपाक है। इससे पित्त और कफ नष्ट
होता है। परन्तु राजवल्लभ कहते हैं, कि इससे कफ
बढ़ता है। युरोपीय चिकित्सकोंने भी परीक्षा करके
इसके गुणको देखा है। इसके बीजका तेल कपालमें
लगानेसे शिरका दर्द दूर हो जाता है। पेशाब बन्द
हो जानेपर लौकी, इसके पत्ते, डाली या रेशेका रस
सेवन करानेसे पेशाब उतर आता है। ज्वरमें रोगी
जब प्रलाप करता, उस समय इसका सत शिरमें
लगा देनेसे बहुत उपकार होता है। प्रवाद है,
कि अत्यन्त प्रसववेदनाके समय यदि घूरके ऊपरकी
लौकीका अखण्ड मूल गर्भिणीके बालमें बांध दिया
जाय, तो तुरत ही प्रसव हो जाता है।

लौकी लताकी डाली, अगले हिस्से, शाक और
फल सबकी तरकारी बनती है। नवमी तिथिको
अलाबु न खाना चाहिये। गोल कद्दू खानेका भी
शास्त्रमें निषेध है।

अलाबुक (सं० पु०) अश्वके मुखका रोग विशेष,
घोड़ेके मुँहका आजार। इसमें घोड़ेके मुँहसे
दुर्गन्ध निकलता, तालु सूज जाता और घास या दाना
खाने पर दर्द होने लगता है। (जयदत्त)

अलाबुका (सं० स्त्री०) १ कटुदुग्धालाबू, कड़वी
सफेद लौकी।

अलाबुनी (सं० स्त्री०) १ कटुदुग्धालाबू, कड़वी
सफेद लौकी। २ कटुतुम्बी, कड़वा कद्दू। ३ मिष्ट
तुम्बीलता, मीठी लौकीकी बेल।

अलाबुपात्र (सं० स्त्री०) तुम्बा, कद्दूका बरतन।
इसे प्रायः साधुसंन्यासी ही व्यवहार करते हैं।

अलाबुमय (सं० त्रि०) अलाबु-निर्मित, जो कद्दूसे
बना हो।

अलाबुविधि (सं० पु०) अलाबुसे रक्तमोक्षण,
लौकीसे खूनका निकालना।

अलाबुसुहृत् (सं० पु०) अश्ववेतस, अमलवेत।

अलाबु, अलाबु देखो।

अलाबूकट (सं० स्त्री०) अलाबूनां रजः, अलाबु
रजोऽर्थे कटच्। अलाबुका रजस, लौकीका रोयां।

अलावयन्त्र (सं० स्त्री०) यन्त्रविशेष, कोई आला।
अलाभ (सं० पु०) हानि, लाभका अभाव, नुक-
सान, फायदा न होनेकी हालत।

अलाम (हिं० वि०) अलामा, मक्कार, बातूनी,
भूठी बात बना धोका देनेवाला।

अलामत (अ० स्त्री०) लक्षण, निशान, देखावा।

अलायक (हिं० वि०) नालायक, अयोग्य, खराब।

अलायी (हिं० वि०) १ अलस, सुस्त, ठीला।
२ विहार प्रान्तके मुंगेर जिलेकी पहाड़ी नदी।
जमुयी ग्रामसे दो कोस दक्षिण यह क्यूँल नदमें
गिरती और ग्रीष्म ऋतुमें सूख जाती है।

अलायीपुर, (अलाइपुर)—बङ्गाल प्रान्तके खुलना
ज़िलेका गांव। यह भैरव एवं अठारहबङ्गा नदीके
सङ्गम और अक्षा० २२° ४८' उ० तथा द्रावि० ८६° ४१'
पू० पर बसा है। यहां प्रधानतः मट्टीके बहुत बढ़िया
बरतन बनते हैं।

अलाय्य (वै० त्रि०) ऋ बाहु० आय्य, रस्य लकारः।

१ गमनशील, आगे बढ़नेवाला। (पु०) २ इन्द्र।

अलार (सं० पु०) अरार्थते; ऋ-षञ् लुक् अच्,
रस्य लकारः। १ कपाट, किवाड़। २ द्वार, दर-
वाजा। (हिं०) ३ अलाव, धूनी, भट्ठी।

अलाल (हिं० वि०) १ अलस, अकर्मण्य, काहिल,
निकम्मा।

अलाव (हिं० पु०) अलात, कौड़ा। शीतकाल-
में अपने दरवाजेके सामने तापनेकी लोह जिस
गड्ढेमें घास-फस और लकड़ी-काठ डाल आग सुल-
गाते, उसे अलाव बताते हैं।

अलावज (हिं० पु०) वादित्त विशेष, कोई बाजा। पुराने
समय यह चमड़ेसे मढ़कर तैयार किया जाता था।

अलावनौ (हिं० स्त्री०) वादित्तविशेष, कोई बाजा।
पुराने समय इसे तारसे बजाते थे।

अलावलपुर—पञ्जाब प्रान्तके जालन्धर जिलेकी करतार-
पुर तहसीलका शहर। यह अक्षा० ३१° २६' उ०
और द्रावि० ७५° ४२' पू० पर अवस्थित है। इस
नगरमें तीसरे दरजेकी न्य निसपलिटी बैठती और
जुझौसे बड़ी आमदनी उठती है।

अलावा (अ० क्रि० वि०) सिवा, अतिरिक्त, भिन्न,
छोड़।

अलास (सं० पु०) न लस्यति अनेन, करणे घञ्।
१ जिह्वास्कोट, जीभका फोड़ा। २ जिह्वागत
मुखरोग, जीभमें होनेवाली मुंहकी कोई बीमारी।
इसमें दुष्ट कफशोणितसे जिह्वातलपर दारुण शोथ
उठता है। उसके बढ़ जानेसे जीभ जकड़ और जड़में
पक जाती है। (संश्रुत)

अलास्य (सं० त्रि०) अलस, काहिल।

अलाहाबाद—१ युक्तप्रान्तका डिविज़न या विभाग। यह
अक्षा० २४° ४७' एवं २६° ५७' ४५" उ० और द्रावि०
७६° १६' ३०" तथा ८३° ७' ४५" पू० के मध्य अव-
स्थित है। कमिशनर इस विभागको शासन करते
हैं। इसमें कानपुर, फतेहपुर, बांदा, अलाहाबाद,
हमौरपुर और जौनपुरका जिला लगता है। इसका
क्षेत्रफल १३७४५ वर्गमील है। इस विभागमें कोई
६० लाख आदमी वसते हैं।

२ युक्तप्रान्तका जिला। यह युक्तप्रान्तीय छोटे
लाटके नीचे अक्षा० २४° ४७' एवं २५° ४७' १५" उ०
और द्रावि० ८१° ११' ३०" तथा ८२° २१' पू० के मध्य
अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २८३३१ वर्गमील है।
इसके उत्तर प्रतापगढ़ जिला, पूर्व जौनपुर मिर्जापुर,
दक्षिण रेवा राज्य और दक्षिण पश्चिम तथा पश्चिम
बान्दा-फतेहपुर पड़ता है। यह जिला पूर्व-पश्चिम
कोई सैंतीस कोस लम्बा और दक्षिण-उत्तर कोई
बत्तीस कोस चौड़ा बैठता है।

भौतिक आकार—अलाहाबाद गङ्गा और यमुनाके
सङ्गमपर है। इसमें अच्छे-अच्छे लोग अधिक
रहते हैं। ऊसर बहुत कम है। खेत सींचनेकी
नहर-बम्बे वगैरहसे बड़ा सुभीता पड़ता है। अनाज
और गन्ना खूब उपजता है। गङ्गासे दो कोस दक्षिण
पहाड़ मिलता है। चीता, मेड़िया, हिरण और
जङ्गली सूँवर प्रायः देखनेमें आता है।

गङ्गा, यमुना, तीन और बेलन इस जिलेकी प्रधान
नदी है। वर्षामें गङ्गा ६०-७० फीट गहरी और
जहाज चलाने लायक हो जाती है। राजघाट और

फाफामीमें गङ्गापार उतरनेको नाव खड़ी रहती है। पश्चिमकी ओर अलवर भील पड़ता, जो ठायी मील लम्बा और दो मील चौड़ा है। प्रतापपुर, देवरिया और राजापुरमें पत्थर निकलता है। अकबर बाद-शाहने प्रतापपुर और देवरियासे ही पत्थर मंगा अलाहाबादका किला बनवाया था।

इतिहास—महाभारतमें अलाहाबादके इधर उधरकी भूमि 'वारणावत' बतायी गयी है। पांचों पाण्डवने अपने वनवासका समय इसी प्रान्तमें बिताया। राम-चन्द्रके वनवास समय भी चण्डाल-नृपति गुहकने सिङ्गरीमें उनका स्वागत किया था। सन् ई० से २४० वर्ष पहले बौद्ध नृपति अशोकका अलाहाबादके किलेमें जो शिला-स्तम्भ खड़ा, उसपर इस प्रान्तका सच्चा और पुराना हाल लिखा है। उसमें अशोकके नाम साथ सन् ४थी ई० वाले समुद्रगुप्तके विजयका भी विस्तारित विवरण मिलता है। सन् १६०५ ई० को मुगल बाद-शाह जहांगीरने फिर स्तम्भ खड़ा करवा फ़ारसीमें अपने सिंहासनारूढ़ होनेका वर्णन दिया है। सन् ४१४ ई० में चीनके बौद्ध-परिव्राजक फाहियानने इस प्रान्तको कोशल-नरेशके अधीन पाया था। दो शताब्द बाद उनके देशवासी यूनान्चुअङ्गने प्रयागमें आकर दो बाढ़ मठ और कितना ही हिन्दू मन्दिर देखा। फिर सन् ११८४ ई० तक कोई हाल न मिला, जब शहाबुद्दीन गोरौने इस प्रान्तपर आक्रमण किया था। उस समयसे अङ्गरेजी राज्य आरम्भ होनेतक यह प्रान्त मुसलमानोंके हाथ रहा। सन् ई० के १३ वें और १४ वें शताब्द अलाहाबाद कोड़ेका परगना समझा जाता, जहां शासक अधिष्ठित था। सन् १२८६ ई० को कोड़ेमें मुईजुद्दीन् और उनके पिताका सुप्रसिद्ध मिलन हुआ। पुत्रने उसी समय बलवनके स्थानमें दिल्लीके सिंहासनका अधिकार पाया और पिता उसका विरोध करने दौड़ा था। किन्तु अन्तमें दोनों मिल-जुलकर राजधानी पहुँचे। सन् ई० के १३ वें शताब्दान्त अलाहाबाद अला-वुद्दीनके अधीन रहा, जिन्होंने कोड़ेमें अपने बुढ़े चाचा सुलतान फ़ीरोज़ शाहको धोकेसे मरवा डाला था।

पीछे इस प्रान्तके शासकोंमें खूब मारकाट चली। सन् १५२८ ई० को बाबरने पठानोंसे इसे छीना था, अकबरने अलाहाबाद नाम रख दिया। अपने पिताके समय शाहजादे सलीम शासक बनकर अलाहाबादमें रहते थे। खुशरू बाग़का मकबरा सलीमके बल-वायी लड़केकी याद दिलाता है। सन् ई० के १८ वें शताब्द बंद्देलों और महाराष्ट्रोंने कई बार अलाहा-बादपर धावा मारा, जब बंद्देलखण्डके महाराज छत्रसालने मुगल शासकोंपर अपनी तलवार उठायी थी। पीछे अराजकता फैलनेपर किसी समय अवधके नवाबों और किसी समय महाराष्ट्रोंका इस प्रान्तपर अधिकार रहा, अन्तको सन् १७६५ ई० में अंगरेजोंने अलाहाबाद नगर दिल्लीके नामधारी सम्राट् शाह आलमको वापस दिया। कुछ वर्ष तक अलाहाबादमें शाही दरबार लगा था, किन्तु सन् १७७१ ई० को शाह आलम दिल्ली फिर पहुँचे और महाराष्ट्रोंके हाथ जा पड़े। अंगरेजोंने अलाहाबाद अवधके नवाबकी पचास लाख रुपये नक़्दमें दे डाला था। नवाबने खिराज अदा न कर सकनेपर गङ्गा और यमुनाके बीचका कितना ही देश अङ्गरेजोंको सौंपा, जिसे एकमें मिलाकर अलाहाबाद जिला बनाया गया। सन् १८५७ ई० की इठीं जूनको अलाहाबादके सिपा-हियोंने बलवा उठा अपने बहुतसे राजपुरुषोंको वध किया था। उसी बीच नगरवासियोंने भी उद्दण्ड हो जेलके कैदियोंको छोड़ा और जिसी युरोपीय या युरेशीयको पाया, उसीको मारपीट ठिकाने लगाया। किन्तु सिखोंके साहाय्यसे किला अंगरेजोंके हाथ रहा। फिर ११वीं जूनको कर्नल नीलने बलवायियोंको हटा नगर और स्टेशन ले लिया था। पीछे अलाहा-बादके प्रबन्धमें कोई भगड़ा न पड़ा।

अलाहाबाद जिलेमें कोई पन्द्रह लाख आदमी रहते, जिनमें ब्राह्मण बहुत मिलते हैं। अलाहाबाद ही इस जिलेमें ऐसा शहर है, जिसमें पांच हजारसे ज्यादा आदमी रहता है। किलेमें खासो युरोपीय फौज पड़ी है। यमुना किनारे कुछ टूटे-फूटे पुराने किलाका ध्वंसावशेष भी देख पड़ता है। व्यापारियों

और अमजीवियोंको अपनी अपनी पञ्चायतके अनुसार काम करना होता है।

इस जिलेमें पड़ती जमीन बहुत कम मिलेगी। खादका व्यवहार बढ़ा और नहर निकालनेसे खेत सींचनेका सुभीता बंध गया है। अलाहाबाद शहरके आसपास अमरुद, नारङ्गी, शरीफे, अनार, नीबू, केले, करोंदे, जामन वर्गेरहका बाग लगा, जिससे खूब फल उतरता है। ग्रामोंमें आम, महुवा, इमली और आंवला बहुत है।

अलाहाबाद जिलेका व्यवसाय-वाणिज्य ठाकुरों और बनियोंके ही हाथ है। सिवा कङ्कड़ और सच्ची मट्टीके दूसरा धातु यहां नहीं मिलता। माघमें किलेके सामने त्रिवेणी सङ्गमपर बड़ा मेला लगता है। ईष्ट इण्डियन रेलवेने इसे पूर्व-पश्चिम इस छोरसे उस छोरतक पार किया है। नैनीमें यमुनापर लोहेके शहतीरोंका जो पुल बंधा, वह १११० गज लम्बा और नदीसे १०६ फीट ऊंचा है। इस जिलेमें नहवायी, सिरसा रोड, करछाना, नैनी, अलाहाबाद, मनौरी, भारवारी, और सिराथू ईष्ट इण्डियन रेलवेके स्टेशन हैं। ग्रैण्ड ट्रंक रोड नामक पक्की सड़क अड़तीस कोसतक अलाहाबाद जिलेमें रेलवेके समानान्तर निकली है। यमुनाके उसपार वाले परगनोंमें बड़ी गर्मी पड़ती और खुश्की रहती है।

३ इस जिलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल ३१२ वर्गमील है।

४ इस प्रान्तकी राजधानी। इसका अक्षा० २५° २६' उ० और द्राधि० ८१° ५५' १५" पू० है। यह नगर यमुनाके वाम तटपर बसा है। यमुना और गङ्गा मिलनेसे जो त्रिकोण बना, उसी पर किला खड़ा है। सन् १५७५ ई० को अकबरने किला बनवाया था। किन्तु त्रिवेणी सङ्गमपर एक पुराना किला भी रहा। सन् ई० से पहले ३२ शताब्द सलूकसके दूत मेगास्थेनिस यह नगर देखने आये थे। सन् ई० के ७ वें शताब्द चीन-परिव्राजक यूचनत्सु गङ्, इस नगरको देख लिख गये हैं,—“प्रयाग गङ्गा-यमुनाके सङ्गमपर बड़े-रेतीले मैदानसे यह नगर बसा है। नगरके

मध्य ब्राह्मणोंका मन्दिर मिलता है। उसमें एक रुपया चढ़ानेसे दूसरी जगह हजार रुपये चढ़ानेका फल होता है। मन्दिरके प्रधान भवन सम्मुख एक वृक्ष देख पड़ता, जिसको शाखाप्रशाखा इधर-उधर खूब फैली है। लोग उसे नरभक्षक प्रेतका स्थान बताते हैं। वृक्षकी चारो ओर उन यात्रियोंके अस्थिका ढेर लगा, जिन्होंने मन्दिरके सम्मुख अपना प्राण विसर्जन किया है। शरीर छोड़नेकी प्रथा अनादि समयसे चली आती है।” फिर जनरल कनिङ्गमने कहा है,—“हमारी संसभमें चीन-परिव्राजकने जिस प्रसिद्ध वृक्षका वर्णन लिखा, वह निःसन्देह अक्षयवट है। आजकल यह वृक्ष जमीनके नीचे खम्भेदार दालानमें रखा, जो चीनपरिव्राजकके बताये मन्दिरका ध्वंसावशेष मालूम देता है।” रशीदुद्दीनने अक्षयवटको गङ्गा यमुनाके सङ्गमपर अवस्थित बताया है। उससे महमूद गजनवीकी तारीख आती है।

प्राचीन समय अलाहाबादकी कोई अंश मौलोंके हाथ रहा। सन् ११८४ ई० को पहली पहल मुसलमानोंने इसे शहाबुद्दीनको देखरेखमें जीता था। सन् १५२८ ई० को बाबरने यह नगर पठानोंसे जीता और १५७५ को अकबरने किला बनवा इसका नाम अलाहाबाद रखा। अकबरका शासन समाप्त होते शाहजादे सलीम अलाहाबादके किलेमें शासक बनकर रहे थे। सलीम जब दिल्लीके सिंहासनपर बैठे, तब उनके लड़के खुशरूने बलवा उठाया; किन्तु शीघ्र ही कैदकर अपने बड़े भाई खुरमको सौंपा गया। सन् १६१५ ई० को खुशरूके मरनेपर अरणार्थ अलाहाबादमें एक मकबरा बनवाया गया था। सन् ई० के १८ वें शताब्द मुगल शक्ति नष्ट होते समय अलाहाबादने बहुत बुरे दिन देखे। सन् १७३६ ई० को यह महाराष्ट्रोंके हाथ जा पड़ा, जिन्होंने सन् १७५३ ई० तक राज्य किया था। किन्तु पोछे फर्रुखाबादके पठानोंने शहर तोड़फोड़ दिया। सन् १७५३ ई० में अवधके नवाब सफ़्दर जङ्गने अलाहाबाद से १७६५ तक अपने हाथ रखा। सन् १७६४ ई० के अक्तोबर मास बक्सरमें जीत होनेपर अंगरेजोंने अलाहाबाद

बादशाह शाह आलमको सौंप दिया था। किन्तु सन् १७७१ ई० को शाह आलमके महाराष्ट्रोंसे जा मिलनेपर अंगरेजोंने धोका समझ पचास लाख रुपये पर इसे अवधके नवाबको दे दिया। किन्तु नवाबके कार न दे सकनेपर उनसे अलाहाबाद नगर और जिला अंगरेजोंने पाया था। सन् १८३३ से १८३५ ई० तक अलाहाबाद युक्तप्रदेशकी राजधानी रहा, पीछे सरकार आगरे चली गयी। सन् १८५८ ई० को सिपाहियोंका बलवा मिटनेपर यह नगर फिर अपने प्रान्तकी राजधानी बना है।

सन् १८५७ ई० के विद्रोह समय इस नगरमें बड़ी मारकाट हुई। मेरठमें बलवा उठनेकी खबर १२ वीं मईको अलाहाबाद पहुँची थी। ६ ठीं जूनको सन्ध्या समय सिपाहियोंने खुले तौरपर उपद्रव उठा कितने ही अंगरेजोंको मार डाला और खजाना लूट लिया। बलवेके वक्त, कितने ही जङ्गी और माली अंगरेज किलेमें रहे। लूटमारमें शहरके लोगोंने सिपाहियोंको साथ दिया, ईसायियोंका मकान जलाया और हरेक युरोपीयको पकड़ ठिकाने लगाया था। कैदखाना तोड़ा और कैदी छोड़ा गया। कोई मौलवी नगरके नरेश बने थे। ११वीं जूनको जनरल नीलके न पहुँचनेतक किलेकी फौज बलवा-यियोंका सामना पकड़ते रही। उन्होंने आते ही दारागञ्जके दलको मार भगाया। १५ वीं जूनको किलेकी तोपोंने गोले मार कौडगञ्ज और मूलगञ्ज पर कब्जा किया था। १८ वीं जूनको सबेरे अलाहाबाद बलवायियोंसे खाली हुआ।

जिला आज भी देखने योग्य बना और गङ्गा-यमुनाके सङ्गमपर मस्तक उठाये खड़ा है। इहातेमें अफसरोंका मकान, बारूदखाना और बारिक है। पुराने महलमें अस्त्रागार रखा गया है।

बड़ी-बड़ी इमारतोंमें सरकारी दफतर, कचहरी, युरोपीय बारिक, अजायबखाना और लाईब्रेरी है। अलाहाबादका म्यूर सेण्ट्रल कालेज युक्तप्रदेशकी शिक्षाका प्रधान स्थान है। सन् १८७४ ई० में लार्ड नोर्थ ब्रुकने इसकी नींव डाली थी। नैनीका अलाहा-

बाद सेण्ट्रल जेल जैसा बड़ा कदखाना भारतमें दूसरी जगह देख नहीं पड़ता।

यद्यपि इस नगरमें कोई बड़ा व्यापार नहीं होता, तथापि उत्तरभारतकी रेल खुल जानेसे कितना ही माल आया जाया करता है। प्रयाग शब्दमें अपरापर विवरण देखो।

अलिंश (वै० पु०) पिशाच, शैतान्।

अलि (सं० पु०) अलति दंशे, अल-इ। १ भ्रमर, भौरा। २ वृश्चिक, विच्छू। ३ काक, कौवा। ४ कोकिल, कोयल। ५ मदिरा, शराब। (हिं० स्त्री०) ६ सखी, सहेली।

अलिक (सं० स्त्री०) अल्यते भूयते, अल कपिलिका-दित्वात् इकन्। १ ललाट, मत्था। 'ललाटमलिकम्।' (अमर) २ कपोल, गाल।

अलिकमत्स्य (सं० पु०) १ अङ्गार। २ भिन्नतिल। ३ तैलभृष्टमांस। ४ पिष्टक।

अलिकसन्दर, अलिकसन्दर देखो।

अलिकुल (सं० स्त्री०) अलिकी पंक्ति, भौरिके झुण्ड।

अलिकुलप्रिया (सं० स्त्री०) काष्ठशेवती, चमेली।

अलिकुलसङ्कुल (सं० पु०) अलिकुलेन भ्रमरसमूह-हेन सङ्कुलः व्यासः। १ कुञ्जक वृक्ष, हरसिंघारका पेड़। (त्रि०) २ भ्रमरसमूह-व्यास, भौरिके झुण्डसे भरा हुआ।

अलिकुलसङ्कुला (सं० स्त्री०) १ कण्टकशेवती, कंटीली शेवती। २ कुञ्जक वृक्ष, हरसिंघारका पेड़।

अलिक्रव (वै० पु०) पक्षिविशेष, किसी किसमकी चिड़िया। यह सुर्दाखोर होता है।

अलिगर्द (सं० पु०) अलिरिव वृश्चिक इव गृध्यति दंष्ट्रमाकाङ्क्षति, अलि-गृध-अच्। जलसर्प, पनिहा सांप।

अलिगु (सं० पु०) अलेभ्रमरस्येव मधुरा गौर्वाणी कान्तिर्वा यस्य, बहुव्री०। गर्गादिके अन्तर्गत ऋषि-विशेष।

अलिङ्ग (सं० त्रि०) नास्ति लिङ्गं ज्ञापकहेतु चिह्नं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ अनुमान लगानेके हेतुसे शून्य, जिसे फर्ज करनेको कोई सबब न मिले। २ लिङ्ग-

रहित, जो कोई जिन्स न रखता हो। (पु०) ३ वेदान्त मतसे सिद्ध परमात्मा। नञ्-तत्। ४ लिङ्गभिन्न, जो कोई जिन्स न हो। ५ दुष्टचिह्न, बुरा निशान। अलिङ्गिन् (सं० त्रि०) न लिङ्गी वेशधारी, नञ्-तत्। धर्मध्वजी, सच्चा।

अलिजिह्वा (सं० स्त्री०) चुद्रजिह्विका, गलेका कौवा। (Uvula) यह मुखमें कठिन तालुके प्रान्तभागपर ऊपरसे नीचेको लटकती और मांसमय होती है। जुकाम या खांसी होनेसे अलिजिह्वा आकारमें कुछ बढ़ जोभकी जड़के नीचे और गलेके पास पड़च जाती; इसीसे खांसीका जोर ज्यादा पड़ता है। ज्यादा बढ़नेसे हमारे देशकी स्त्री सज्जी मट्टी और चना एकमें मिला इसके अग्रभागपर लगा देती हैं। एलोपेथी चिकित्साके मतसे इसपर काष्ठिक लोशन लगाना चाहिये। किन्तु बहुत ही बढ़ जानेसे इसके अग्रभागका कियत् अंश काट डालना आवश्यक है।

मुख देखो।

अलिजिह्विका, अलिजिह्वा देखो।

अलिञ्जर (सं० पु०) अलीन् मल्लिकादीन् जरति तुच्छयति तिरस्करोति वा; अलि-जृ-अच्, पृषो० मुम्। १ मृगमय जलाधार, पानौ रखनेको मट्टीका छोटा बरतन, भूभ्रंशर, सुराही। २ फल विशेष, किसी किस्मका खरबूजा। यह रुक्ष, शीतल, मेदक, तुवर, मधुर, चार, तिक्त, स्वादिष्ट, वातघ्न एवं पकने पर कटु निकलता और श्वास कास तथा श्लेष्माको दूर करता है। (वैद्यकनिषण्ड)

अलिता (सं० स्त्री०) अलक्तक, चपरा। यह उष्ण एवं तिक्त होती; व्यङ्ग, अरुचि, कण्ठरुज, व्रण-दोष, कफ तथा वातको दूर करती और दूसरे गुणमें लाक्षावत् रहती है। (वैद्यकनिषण्ड)

अलिदूर्वा (सं० स्त्री०) अलिरिव ग्रथिता दूर्वा, कर्मधा०। मालादूर्वा, किसी किस्मकी दूब।

मालादूर्वा देखो।

अलिन् (सं० पु०) अलं वृश्चिक पुच्छस्थकण्टकं तदाकारं कण्टकं वा विद्यतेऽस्य, अस्तार्थे इति। १ वृश्चिक, बिच्छू। २ भ्रमर, भौरा।

अलिन् (सं० त्रि०) अल बाहु० इन्। १ पर्याप्त, काफी। २ इष्ट, प्यारा। ३ यथेष्टित, मनमाना। ४ तपस्याद्वारा अति वृद्धि-प्राप्त। (वै० पु०) ५ जाति विशेष, कोई कौम।

अलिनो (सं० स्त्री०) भ्रमरसमूह, भौरिका भुण्ड।

अलिन्द (सं० पु०) अल्यते भूयते, अल कर्मणि बाहु० किन्दच्। १ द्वारप्रकोष्ठ, दरवाजेका कमरा। २ वहिर्द्वारस्थ चत्वर, बाहरी दरवाजेका चवूतरा। ३ द्वारदेश, बरामदा। ४ देश विशेष, कोई मुल्क। ५ तद्देशवासि, अलिन्दका वाशिन्दा। महाभारतके उद्योगपर्वमें अलिन्द-नृपतिका नाम लिखा है।

अलिपक (सं० पु०) न लिप्यते एकत्र सदाक्लप्यते; लिप कर्मणि क्नुन्, नञ् तत्। १ भ्रमर, भौरा। २ कोकिल, कोयल। ३ कुक्कुर, कुत्ता। ४ रथ-हिण्डक, गाड़ीवान्।

अलिपत्रा, अलिपत्रिका देखो।

अलिपत्रिका (सं० स्त्री०) अलिर्वाश्चिक इव पत्रं यस्याः, बहुव्री०। वृश्चिकपत्राख्य लता, विष्णुवाकी वेल।

अलिपर्णिका, अलिपर्णिका देखो।

अलिपर्णी, अलिपर्णिका देखो।

अलिप्रिय (सं० स्त्री०) अलेः भ्रमरस्य प्रियः, इ-तत्। १ रक्तोत्पल, लाल कमल। २ धाराकदम्ब वृक्ष। ३ आम्बहृच्च, आमका पेड़। ४ कदम्बहृच्च, कदमका दरखत।

अलिप्रिया (सं० स्त्री०) १ पाटलावृक्ष, पांडरीका पेड़। २ भूजम्बु वृक्ष, जङ्गली जामनका दरखत।

अलिप्सा (सं० स्त्री०) अनभिलाष, बेखाहिशो, लालचका न रहना।

अलिमक (सं० पु०) अलिरिव मन्यते विरहवर्धकत्वेन, अलि-मन् कर्मणि क्नुन्। १ मेक, मेड़क। २ कोकिल, कोयल। ३ भ्रमर, भौरा। ४ मधुक-वृक्ष, दोपहरियाका पेड़। ५ पद्मकेशर, कमलका रेशा। 'अलिमकःपिके मेके मधुके पद्मकेशरे।' (विच)

अलिमाला (सं० स्त्री०) भ्रमरसमूह, भौरिका भुण्ड।

अलिमोदा (सं० स्त्री०) अलीन् भ्रमरान् मोदयति
आह्लादयति; अलि-मुद-णिच्-अण्, उप० समा० ।
अणिकारी वृक्ष, अरनीका पेड़ ।

अलिमोहिनी (सं० स्त्री०) केविका पुष्पवृक्ष, केव
ड़ेके फूलका दरख्त ।

अलिम्पक, अलिमक देखो ।

अलिम्बक, अलिमक देखो ।

अलिया (हिं० स्त्री०) आलय, कोई चीज रखनेकी
जगह । यह अकसर दीवारमें बनायी जाती है ।

अलिल (सं० पु०) ऋच्छति सततं शून्ये परि-
आस्थति, ऋ-इलच् रस्य लः । वेदान्तप्रसिद्ध गगन-
विहारी पक्षी विशेष, कोई खयाली परिन्द ।

अलिवल्लभ (सं० पु०) अलीनां वल्लभः प्रियः,
क्ष-तत् । रक्तपाटला वृक्ष, लाल पाण्डरीका पेड़ ।
(स्त्री०) अलिवल्लभा ।

अलिवाहिनी (सं० स्त्री०) अलीन् वाहयति सौर-
भेन इतस्ततो भ्रमयति, अलि-वह-णिच्-णिनि डीप् ।
केविका वृक्ष, केवड़ेका पेड़ ।

अलिविशव (सं० पु०) भ्रमरसंगीत, भौरेकी
कनकार ।

अलिविरत (सं० स्त्री०) अलिविराव देखो ।

अलिसमाकुल (सं० पु०) पुष्पवृक्ष विशेष, किसी
किस्मकी सेवतीका पेड़ ।

अली (हिं० स्त्री०) १ सखी, सहेली । २ पंक्ति,
कतार । (पु०) ३ भौरा ।

अली अकबर—बम्बई प्रान्तवाले कस्बे और सूरत
जिलेके शासक । पहले यह घोड़ेके सौदागर रहे
और ईरानके इस्फ़हान प्रान्तसे सात असली अरबी
घोड़े आगरे बेचने लाये थे । शाहजहानने छः घोड़े
पचीस हजार रुपयेमें खरीदे और सातवेंसे अत्यन्त
प्रसन्न हो पन्द्रह हजार रुपये दिये । सन् १६४६
ई०को इनके किसी हिन्दू द्वारा मारे जानेपर
मुवज्जिज-उल्-मुल्कको शासनका उत्तराधिकार मिला
था ।

अली आबाद—युक्तप्रदेशके बाराबंकी जिलेका गांव ।
यह अक्षा० २६: ५१' उ० तथा द्राधि० ८१: ४१' पू०में

पड़ता और दरयाबादसे रदौला जानेवाली सड़कपर
बसता है । पहले अली-आबाद अपने करघों और
कपड़ेके कामोंके लिये मशहूर था । इसमें ज्योदातर
जुलाहे रहते हैं ।

अली इब्राहीम खान्—विहार प्रान्तीय मुंगेर जिलेवाले
हुसेनाबाद गांवके कोई सम्मान्त पुरुष । दिल्लीके
बादशाह शाह आलमने सरोपाव, शशहजारीकी जगह
और अमीन-उद्-दौला अजौज-उल-मुल्कका खिताब
दिया था । 'सैर-उल-मुतखरीन्' में इनकी बड़ी
तारीफ़ लिखी है । पहले अलीवर्दी खान्ने इन्हें
सुरगिदाबाद बुला बड़ी उपाधि दी पीछे यह
नवाब मीर कासिम अली खान्के एतबारी मुसा-
हब बन गये थे । इन्होंने उन्हें नेपालपर चढ़ने और
अंगरेजोंसे लड़नेको रोका । पटनेमें मीर-कासिमके
हार जानेपर भी यह स्वाभिमत बने रहे । बक्सरमें
हार मीर-कासिमके उत्तरकी ओर भागनेपर इन्होंने
सुरगिदाबाद वापस आ नवाब मुबारक-उद्-दौलाके
दीवानका पद पाया । अन्तको इन्होंने सुहम्नद रजा
खान्को कह-सुनकर कैदसे छोड़ा दिया था । नवाब,
मुनी बेगम और गवरनर-जनरलके ऊँचो जगह
देते भी यह उससे अलग रहे । फिर इन्होंने वरेन
हेष्टिङ्सके साथ जा चेतसिंहका उपद्रव शान्त होने-
पर सन् १७८१ ई० को बनारसकी जजी पायी
थी । भाईका नाम अलीकासिम रहा । इनके लड़के
नवाब अली खान्को सरकारने खान् बहादुरका खिताब
दिया था ।

अलीक (सं० स्त्री०) अल्यते भूयते अलति इष्टं
निवारयति वा, अल-कीकन् । अलीकादयश्च । उच० ४ । २५ ।
१ ललाट, मत्था । २ मिथ्या, नारास्ती, भूठ ।
'अलीकमप्रिये भावे वितथे ।' (इन) ३ स्वर्ग, बिहिश्त ।
(त्रि०) अलीकमस्तस्य । ४ अप्रिय, नागवार ।
५ मिथ्याविशिष्ट, नारास्त । (हिं० स्त्री०) ६ बेराही,
कुरीति । (वि०) ७ बेराह, मार्गसे विचलित ।

अलीकता (सं० स्त्री०) मिथ्या, नारास्ती,
भूठापन ।

अलीकमतस्य (सं० पु०) अलीकः भ्रष्टः मतस्य

इव। पिष्टक विशेष, तिल द्वारा अङ्गारपर भूना हुआ माषपिष्टक, तेलमें भुनी हुई उड़दकी पकोड़ो।
अलौकिन् (सं० त्रि०) १ अप्रिय, नागवार, जो भला मालूम न होता हो। २ असत्य, झूठ, धोका देनेवाला।

अलौक्य, अलौकिन् देखो।

अलीगञ्ज—१ युक्तप्रदेशके एटा जिलेकी तहसील। यह गङ्गा और कालीनदीके मध्य अवस्थित है। इसमें चार परगने लगते हैं,—आजमनगर, वरना, पटियाली और निधिपुर। इसका भूमिपरिमाण प्रायः ५२५ वर्गमील है। २ इसी तहसीलका नगर। यहां पक्की सड़क, बाजार और बड़ा-बड़ा मकान बना है। सबमें सन् १८८१ ई०को बनी याकूत खान्को मसजिद और मट्टीका किला प्रधान है।

अलीगढ़—युक्तप्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० २७° २८' ३०" तथा २८° १०' ७" और द्राघि० ७७° ३१' १५" एवं ७८° ४१' १५" पू० के मध्य अवस्थित है। क्षेत्रफल १८५५ वर्गमील है। इससे उत्तर बुलन्दशहर जिला, पूर्व एटा, दक्षिण मथुरा जिला और पूर्व मथुरा जिला तथा यमुना नदी पड़ती है।

भौतिक दृश्य—यह जिला गङ्गा और यमुनाके बीच उस बड़े कच्चारका प्रधान अंश होता, जो साधारणतः दोबाब कहलाता है। घरातल चौड़ा और पूरा मैदान है, जो समुद्रतलसे ६०० फीट ऊंचा पड़ता और दक्षिण-पूर्वकी कुछ ढलता है। दोनों ओर नदीकी घाटी मौजूद है। बीचसे गङ्गाकी नहर निकली, जो मैदानको सींच देती और अकराबादके पास दो शाखायें बंट कानपुर तथा इटावेकी चली जाती है। नहरसे खेत सदा हरे-भरे रहते, जिनके पास अच्छे-अच्छे गांव बसते हैं। अंगरेजी राज्य होनेसे इस जिलेका जङ्गल काट डाला गया है। कोई ५६७६ एकर भूमिमें आम वगैरहका बाग है। किसीको वृक्ष लगानेका शौक नहीं देखते। सरकारने अपनी ओरसे कितना ही बाग लगाया है। मट्टीमें जरखेज पिंडोल मिलता, जो पानी पानेसे कड़ा पड़ता, किन्तु इधर-उधर बालूदार जमीन भी मौजूद

है। दक्षिणकी ओर उपज सबसे अच्छी होती है। घरातलसे कुछ ही फीट नीचे प्रत्येक स्थानमें कड़ड़ निकलता है। वह मकान बनाने और सड़कपर बिछानेके काम आता है। ऊंची जगह जसर पड़ता, जिसमें कुछ उपज नहीं सकता। दिनको जसर बरफ-जैसा चमकता है। नहर निकलनेसे उसकी बढ़ती हुयी है। दक्षिण-पूर्व गङ्गा और पश्चिम यमुना नदी बहती है। नदी किनारे पशु चरते हैं। काली नदी इस जिलेमें उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण पूर्वकी बहते हुयी एटा जिले जा पहुँचती है। इसपर दो जगह पुल बंधा है। नौमनदो कालोनदोमें ही जाकर गिरती है। मलसायी और भोकमपुरमें पुल बंधा, और पानी खेत सींचनेके काम आता है। कर्णनदी, ईशान, सेमर और रिन्द गर्मीमें सूख जाती है। साधारणतः इस जिलेका मैदान बहुत उपजावू है।

इतिहास—इस जिलेके प्राचीन इतिहासमें कोयल नगरका कुछ वृत्तान्त मिला, जिसके पास किला और रेलवे-स्टेशन बना है। कहते हैं केशवराव किसी चन्द्रवंशीय नृपतिने उसे अपने नामपर बसाया, किन्तु बलरामने कोल दैत्यको मार वर्तमान नाम रखा था। फिर कोई इस जिलेको राजपूतोंकी सम्पत्ति बताता, जिनमें वेरनके राजाने सन् ई० के १२ वें शताब्दान्त-तक अपने अधीन रखा। सन् ११८४ ई० को कुतब-उद्दीन दिल्लीसे कोयलपर चढ़े थे। मुसलमान ऐतिहासिकका कहना है—‘उस समय जो लोग होशियार रहे, वह मुसलमान हो गये; किन्तु जिन्होंने अपनी पुरानी चाल न छोड़ी, वह तलवारसे मारे पड़े।’ फिर नगरमें मुसलमान शासकोंका प्रभाव बढ़ा, किन्तु हिन्दू राजावोंने भी अपना बल बनाये रखा था। सन् ई० के १४ वें शताब्द तेमूरके आक्रमणसे इसे बड़ी क्षति उठाना पड़ी। सन् १५२६ ई० को मुगलोंके दिल्ली लेने बाद बाबरने अपने साथी कचक अलीको कोयलका शासक बनाया था। अकबरके समय इस जिलेमें बड़ी ही धूमधाम रही। कितनी ही मसजिद आज भी खड़ी और मुगलोंके समयकी याद दिलाती है। किन्तु औरंगजेबके मरने बाद यह जिला बल-

वायियोंके हाथ जा पड़ा था। पहले महाराष्ट्रों और पौछे जाटोंका अधिकार रहा। सन् १७५७ ई० की सूरजमल नामक किसी जाट-नेताने कोयलपर कब्जा कर लड़ने-भिड़नेका खूब सामान जुटाया था। किन्तु सन् १७५८ ई० की अफगानोंने जाटोंको मार भगाया और बीस वर्ष तक दोनोंमें मारकाट चली। सन् १७८४ ई० को सेंधियाने अपना देखल जमाया था। सन् १८०३ ई० तक महाराष्ट्रोंका इसपर अधिकार रहा। किन्तु ४ थी सितम्बरकी अंगरेजोंने अलीगढ़का किला ले लिया। सन् १८५७ ई० की यहांके सिपाहियोंने भी बलवा किया था।

इस जिलेसे अनाज, रूखी और नील बाहर भेजा जाता है। हाथरस, कोयल, अतरोली, सिकन्दरा-राव और हरदुवागञ्जमें अनाजका बाजार लगता है। रेलवे लाइन भी चारो ओर फैली है।

२ इसी जिलेका नगर। यह अक्षा० २७° ५५' ४१" उ० और द्राधि० ७८° ६' ४५" पर अवस्थित है। पुराने 'डोर' किलेपर साबित खान्की मसजिद दूरसे देख पड़ती है। अलीगढ़-इनष्ट्रिक्ट नामक पुस्तकालयमें तीन सहस्रसे अधिक पुस्तक रखा है। ३ उक्त जिलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल १८७ वर्ग मील है। ४ अपनी तहसीलका गांव। इसका जल दूषित होनेसे लोगोंका स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। ५ छोटे किलेका स्थान। यह कलकत्तेसे ढायी कोस दक्षिण-पूर्व है। सन् १७५६ ई० की ३० वीं दिसम्बरकी लार्ड क्लाइवने इसे अधिकार किया था।

अलीगढ़, अलिगढ़ देखो।

अलीजा (हि० वि०) अलीजाह, ज्योदा, बहुत, अच्छा।

अलान (हि० पु०) १ द्वारकी दोनो ओरका बाजू। इसीमें किवाड़ लगता है। २ स्तम्भविशेष, कोई खम्भा। यह बरामदेके पास दीवारसे मिला रहता है। (वि०) ३ अनुचित, ग़ैरवाजिब, खुराब।

अलीनक (सं० स्त्री०) वज्र, शीषधातु, सीसा।

अलीपुर—१ बङ्गाल प्रदेशकी सीमा परागनेका प्रधान

विभाग। भूमिपरिमाण प्रायः ४२० वर्गमील है। २ उक्त विभागका नगर। यह कलकत्तेसे दक्षिण पड़ता है। छोटेलाटका प्राचीन प्रासाद और दूसरी कितनी ही अट्टालिका खड़ी है। यहांकी पशुशाला (चिड़ियाखाना) भारतमें प्रधान है। ३ जलपायी-गोड़ीका मध्यवर्ती भूभाग। यह कल्याणी नदी किनारे अवस्थित है। यहां लकड़ीके शहतीरोंकी आदत चलती है। ४ पञ्जाब प्रान्तके मुजफ्फरगढ़ जिलेका गांव। यहांसे सिन्धु और खुरासानकी गन्ना, एवं नील भेजते हैं। ५ बुंदेलखण्डका भूभाग। यह देशी राजाके अधिकारभुक्त है। पन्नाके राजा हिन्दूपतिने इसे अचलसिंहको दे डाला था। ६ इसी भूभागका प्रधान नगर। यहां देशके अधिपतिका बास और किला है।

अलीबाग—बम्बई प्रान्तके पूना जिलेका बन्दरगाह। सन् १६६२ ई०को शिवाजीने यहां अपना जहाजी वेड़ा तैयार किया था। सन् १६६४ ई०को इस वेड़ेने खम्भा-तकी खाड़ीमें पड़च मक्के जानेवाले दो मुगल जहाज पकड़ा और उन्हें अलग ले जाकर लूट लिया।

अलील (अ० वि०) पीड़ित, बीमार।

अलीवर्दी खान्—बङ्गालके एक नवाब। यह मिर्जा मुहम्मदके पुत्र और नवाब शीराज्-उद्-दौलाके मातामह रहे। अलीवर्दीका पूर्व नाम मुहम्मद अली था। इनके पिता एक तुर्क रहे, जो राजपुत्र आजम शाहके निकट नौकरी करते थे। अपने स्वामीका परलोक वास हो जानेपर ये दिल्लीसे कटक गये। वहां मुर्शिद-कुली खान्के जामाता शुजा-उद्-दीनने इनके पिताकी यथेष्ट मान मर्यादा की और उनके पुत्रको राजमहलकी फौजदारी दी। उन्होंने यत्र करके दिल्लीके बादशाहसे मुहम्मद अलीको 'अलीवर्दी खान्' उपाधि दिलवाया था। सन् १६२५ ई०को अलीवर्दी कटकके शासनकर्ता हुए। १७३० ई०को विहार-शासनकर्ताके किसी अपराध वश पदच्युत होने पर शासन-समितिके अनुरोधसे अलीवर्दी खान्ने ही उस पदको भी पाया। नूतन सम्मानसे सम्मानित हो यहां आकर उन्होंने

उस समय पटनेमें बड़ा विभ्राट् उपस्थित था। बञ्जारा नामक एक चोरोके दलने अन्न खरीदनेके छलसे नगरमें घुस और लूट-पाट लोगोंको व्यतिव्यस्त कर दिया। इस तरह उपद्रव मचा, कि सरकारी खाजानेका रुपया भी डाकू लूट लेते थे। अलीवर्दीने उन दुष्टों और कितने ही दुर्दान्त जमींदारोंको दमन करनेके लिये अनेक आफगान-सैन्य संग्रह की। अब्दुलकरीम खान् उसके अध्यक्ष रहे। बहुत परिश्रमसे चोरो और जमींदारोंको दमन कर, उनका सञ्चित धनरत्नादि इन्होंने ग्रहण किया। इनकी रणदक्षता एवं सुचतुर बुद्धि देख दिल्ली-सम्राट्ने 'महावतजङ्ग' उपाधिसे विभूषित किया था।

जो लोग बहुत चतुर होते, वे प्राय अधिक सन्दिग्ध रहते हैं। इन्होंने भी सन्देहके फन्देमें पड़ अपने प्रिय सैन्याध्यक्ष अब्दुल करीम खान्की हत्या कर डाली। सन् १७४० ई०को सम्राट् मुहम्मद शाहके प्रधान मन्त्री ऐजाक् खान्ने इनको बङ्गाल, विहार और उड़ीसाका शासनभार अर्पण किया। उक्त वर्षही अलीवर्दी खान्ने नवाब सरफ़राज खान्के विरुद्ध युद्धयात्रा की। उसी समय सरफ़राजकी मृत्यु हुई। अलीवर्दी सरफ़राजका सञ्चित बहुत द्रव्य प्राप्त किया, तथा मुहम्मद शाह और दिल्लीके प्रधान वजीरको प्रसन्न रखनेके लिये १ करोड़ ७० लाख रुपया नज़रानाके तौरपर पड़ुचा दिया। उस समय सम्राट्ने इनको बङ्गाल, विहार और उड़ीसाका सूबेदार एवं सात हजार सैन्यका नायक बना, शुजा अल-मुल्क और हिसाम-उद्-दौला प्रभृति कतिपय उपाधि प्रदान किये थे।

मनुष्यका मन सब समय समान नहीं रहता। अलीवर्दी एक समय सम्राट्की आंखमें खटक गये। १७४१ ई०को सम्राट्ने सुरीद खान्को सरफ़राजका समस्त मणिरत्नादि एवं दो वर्षकी आमदनी वसूल करनेके लिये बङ्गाल भेजा। किन्तु अलीवर्दी कौशलसे सुरीदको राजमहलमें रख स्वयं कई लक्ष रुपया नगद ले उनकी समीप उपस्थित हुये। इस घटनासे कुछ दिन बाद उड़ीसाके शासनकर्ता मुर्शिद-कुलीके विरुद्ध

युद्धयात्रा की। मुर्शिद-कुली पराजित हो जामाता सहित बालेश्वर भाग गये। अलीवर्दी अपने आत्पुत्र सैयद अहमदको उड़ीसाका भार दे मुर्शिदाबाद चले आये।

कुछ दिन बाद सैयदके अत्याचारसे प्रजा-विद्रोह उठा। लोगोंने सैयदको कैदकर बुकर खान्पर शासनभार डाला। यह समाचार सुनते ही अलीवर्दी ससैन्य महानदीके तीरपर उपस्थित हुए, और बुकर खान्को परास्त कर मुहम्मद मामून् खान्को शासन भार सौंपा। सन् १७४१ ई० को रघुजी भोंसलाने बङ्गालका चतुर्थींश कर लेने भास्करपण्डितको ससैन्य बङ्गाल भेजा।

वर्धमानमें महाराष्ट्रोंके साथ युद्ध हुआ था। उन्होंने प्रस्ताव किया, कि दश लाख रुपये पानेसे लौट जाते। अलीवर्दी पहले उनके प्रस्तावसे सन्मत हो गये थे। किन्तु लोभीकी आकाङ्क्षा शोध नहीं जाती, अर्थलोलुप महाराष्ट्र करोड़ रुपया मांगने लगे। असम्भव प्रार्थना सुन इन्होंने रुपया देना अस्वीकार किया था।

सन् १७४२ ई० को भास्कर पण्डितके सैन्यगणने हठात् जगत्सेठका धनागार लूट लिया और हुगली, वर्धमान, बीरभूम, राजशाही, राजमहल, मेदिनीपुर तथा बालेश्वर पर्यन्त अधिकार किया। उसी समय अलीवर्दीखान्ने कलकत्तास्थ अङ्गरजोंको कलकत्तेकी चारो तर्फ नाला खोदनेकी आज्ञा दी थी, उसे अब 'मरझा-डिच' कहते हैं। सन् १७४३ ई०को रघुजी भोंसले नवाबसे लड़ने आये थे। उसी समय पेशवा बालाजी राव भी सम्राट्से प्राप्त ग्यारह लाख रुपये लेने इनके पास पड़ुचे। पेशवासे रघुजीकी पुरानी शत्रुता रही। समय पाकर वह अलीवर्दीसे मिल गये, और रघुजीके पैर उखाड़ दिये। सन् १७४४ ई०को भास्कर पण्डितने फिर इनके विरुद्ध अस्त्र उठाया था। किन्तु अन्तको वह रणमें निहत हो वैकुण्ठधाम सिधारे।

सन् १७४५ ई०को सेनापति सुस्तफा खान्ने इनसे विवाद बढ़ा विहार पर आक्रमण मारा था। अलीवर्दी खान्के आदेशसे जब तथाकार शासनकर्ताने

नीचा देखाया, तब उन्होंने चुनारमें जा आश्रय लिया। सन् १७६४ ई० को रघुजी भोंसलेने फिर इनके विरुद्ध अस्त्र उठाया, किन्तु विहार और कटकके युद्धमें पराजय पाया था। उसी वत्सर अलीवर्दीके दोहित्र शीराज्-उद्-दौलाका महासमारोहसे विवाह हुआ। सन् १७४७ ई० को इन्होंने मीरजाफर खान्को कटकके महाराष्ट्रोंपर आक्रमण करनेको भेजा था।

उस समय शमशेर खान् विहारके शासनकर्ता रहे। उन्होंने जैन्-उद्-दीनको मार डाला और अलीके भाई हाजी अहमद एवं उनकी कन्याको बन्दी बना विहारपर अधिकार जमाया। विद्रोहीको दबानेके लिये यह स्वयं ससैन्य विहार आये और भागलपुरमें महाराष्ट्रोंसे लड़ पड़े थे। फिर जामोजी और मीर हबीबने चालीस हजार सवारोंके साथ विद्रोहियोंमें मिल जानेकी चेष्टा चलायी। किन्तु सुचतुर और विचक्षण अलीवर्दीके रण-नैपुण्यसे उनकी आशा पूरे न उतरो। घोरतर युद्ध हुआ। विद्रोहियोंके अधिनायक सरदार खान् और शमशेर खान् खेत आये थे।

सन् १७५० ई० को इन्होंने कटकसे महाराष्ट्रोंको मार भगाया। किन्तु उन्होंने फिर इस प्रदेशको जीत लिया था। महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे वङ्गदेशमें आबाल-वृद्ध-वनिता सभी व्यतिव्यस्त हुये। इतना उपद्रव बढ़ा, कि अन्तःपुरको रमणी बालकोंको महाराष्ट्रोंका डर देखा-देखा सुलाते रही।

उपद्रवसे प्रजा बचानेके लिये यह महाराष्ट्रोंको कटक प्रदेश और बङ्गालका चतुर्थांश करस्वरूप देनेपर सममत हुये। इसी पर महाराष्ट्रोंके उत्पातसे वङ्ग देश छूटा था। इन्होंने भयभीत प्रजाको फिर अपने अपने देश ला गृहादि बनानेका आदेश दिया और जमीनमें प्रचुर शस्य उत्पन्न होनेपर ध्यान लगाया। १६ वत्सरके राजत्व बाद सन् १७५६ ई० की ६ठीं अप्रैलको नवाब अलीवर्दी खान् ८० वर्षकी अवस्थापर उदरीरोगसे आक्रान्त हो मर गये।

अलीवर्दी ज्ञानी और कार्यकुशल रहे। यह बाल्यकालमें कभी वृथा अलस-आमोदसे समय विताते

न थे। प्रातःकाल होनेसे दो घण्टे पहले शय्यासे उठते और ईश्वरका भजनादि कर सवेरे राजकार्य देखने सभामें जा पहुँचते। इन्हें पद्य और इतिहास बहुत प्रिय था। कहते हैं, इन्होंने राजा कृष्णचन्द्रसे बारह लाख रुपया नजराना मांगा और रुपया न आनेसे उन्हें कैद किया। पीछे कृष्णचन्द्रकी वैषयिक बुद्धिसे सन्तुष्ट हो इन्होंने उन्हें अव्याहति दी और उनसे धर्मसम्बन्धीय नाना विषय पर सर्वदा बात की थी। कृष्णचन्द्र प्रायः प्रति रजनीके प्रथम भाग नवाबके पास रहते और मध्य-मध्य उर्दू भाषामें महा-भारत प्रभृतिको अनुवाद कर सुना देते। नवाब इससे बहुत आमोदित होते थे।

इनमें अर्थप्रयासका दोष रहा। किन्तु उससे यह प्रजाका सर्वनाश कर धन बटोरनेकी चेष्टा न चलाते थे। मरनेसे कुछ दिन पहले यह अपने उत्तराधिकारी शीराज्-उद्-दौलाको समझाने लगे,—“शीराज्! विदेशी लोगोंका विश्वास न करना। वह किसी तरह इस देशमें बढ़ने न पायें। सावधान! उन्हें इस देशमें कहीं किला बनाने न देना।”

अलीशाह—मूर जातिके वीर विशेष। सन् १५२८ ई० को अस्सी गुजराती नाव ले यह चौल नदीपर पहुँचे और अहमदनगरकी भूमि तथा पोर्तुगीज व्यवसायको बड़ी क्षति दी।

अलीष्ट (सं० पु०) तिलकवृक्ष, तिलका पेड़।

अलीह (हिं०) अलीक देखो।

अलु (सं० स्त्री०) १ छुद्र कलसी, छोटा घड़ा, गगरी। २ तुलसी वृक्ष। (स्त्री०) ३ मूल, जड़।

अलुक् समास (सं० पु०) नास्ति विभक्त्यलुङ् यत्, बहुव्री० अलुक् चासी समासश्चेति, कर्मधा०। अलुगुत्तरपदे। पा६।२।१। विभक्तिके लुक्से शुन्य समास, जिस समासमें विभक्ति बनी रहै। दो प्रभृति पदमें समास सजानेसे मध्य पदकी विभक्तिका लोप हो जाता है। जिस स्थलमें विभक्ति बनी रहती, वह अलुक् समास कहलाता है। ‘जले चरतीति जल-चर’ जैसा समास लगानेसे जल शब्दकी सप्तमी विभक्तिका लोप हो गया, किन्तु ‘जलेचर’ रूप रखनेसे वह

बनौ रहती ; सुतरां यह अलुक् समास ठहरा। इच्छाके अनुसार सकल स्थलमें अलुक् समास नहीं कर सकते। वैयाकरणने इसका विशेष नियम बना दिया है। अलुक् समास अवसरसे ही आता है।

अलुक् (सं० ली०) १ आलुक्साधारण, जमीकन्द। यह शीतल, आग्नेय, मलस्रम्भन, मधुर, जड़, रुच, वृष्य, दुर्जर, बलवर्धन, स्तन्यवर्धन, मल-मूत्र कफ-वात-वृद्धिकर और रक्तपित्तघ्न होता है। (वैद्यकनिघण्टु)
२ आलुबोखारा। ३ आमिष, मांस।

अलुभना, उलभना देखो।

अलुटना (हिं० क्रि०) आगे-पीछे पांव पड़ना, उग-मगाना।

अलुन्दा—बम्बई प्रान्तके सतारा जिलेका गांव। यह सतारसे उत्तर ढायौ कोस शिवगङ्गाके दक्षिण-तट पर बसा है। सतारमें जो प्राचीन ताम्रफलक निकला। उसमें लिखा है, कि अलुन्दा विष्णुवर्धन प्रथमने ब्राह्मणोंको जागीरमें दे डाला था।

अलुप्त (सं० त्रि०) अक्षत, जो गुप्त या कम न हुआ हो।
अलुप्तमहिमन् (सं० त्रि०) अक्षत कीर्तिविशिष्ट, जिसकी कीर्ति बिगड़ी न हो।

अलुब्ध (सं० त्रि०) न लुब्धम्, नञ्-तत्। लोभ-शून्य, जो लालची न हो।

अलुब्धत्व (सं० ली०) लोभशून्यता, लालची न होनेकी हालत।

अलुभ्यत् (वै०) अलुब्ध देखो।

अलूच (वै० त्रि०) न रुचम्, वेदे रस्य लः। अरुच, मृदु, चिकण, सुलायम, चिकना, जो रुखा न हो।

अलून (सं० त्रि०) अक्षत, सावित, जो कटा न हो।
अलूना—लवण भक्षण न करनेवाला शैवसम्प्रदाय विशेष, जो शैव साधु नमक न खाता हो।

अलूप (हिं० वि०) लुप्त, गुप्त, देख न पड़नेवाला।

अलूबारी—बङ्गाल प्रान्तके दारजिलिङ्ग जिलेका गांव। सन् १८५६ ई०की ईस गांवमें कारसियङ्ग और दार-जिलिङ्गकी चाह-कम्पनेने पहले-पहल चाहका बाग लगाया था।

अलूमिनियम (अ० पु०) अलुमिनीय, जिसकी

किस्मका फलज। (Aluminium) यह सफेद और कुछ-कुछ नीला होता है। धूप और पानीमें रखनेसे भी यह लांहे, तांवे या पोतलकी तरह ज्यादा नहीं बिगड़ता। इसके बरतनमें खानकी कोई चीज रखनेसे जैसीकी तैसी ही बनौ रहती है। इससे कच्चा लोहा और ईस्यात साफ किया जाता है। इससे रसोयोके बरतन भी बहुत बनते हैं। टारपीडो नाव, जहाज और मोटरमें यह खूब काम देता है। इससे तार भी तैयार होता है। इसके हलकेपनने लोगोंको मोहित कर लिया है।

अलूय—बम्बई प्रान्तवाले कनाड़ा जिलेके नृपति विशेष। ऐहोले ताम्रफलकमें लिखा, कि अलूय-तनय महाराज चित्रवाहके कहनेसे सन् ६०८ ई०को सालियोगे ग्राम उत्सर्ग किया गया था। पुलिकेशि द्वितीयने अलूयके वंशजोंको रणमें परास्तकर अपने अधीन बनाया।

अलूया—उड़ीसा प्रान्तके सम्बलपुर जिलेका ब्राह्मण समाज विशेष।

अलूर—१ महिसुर राज्यके हसन जिलेका गांव। यहां चावलका बड़ा बाजार लगता है। २ मन्द्राज प्रान्तके वेलारी जिलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल ६४६ वर्गमील है। काली जमीन् रूयीकी पैदावारके लिये बहुत अच्छी है। किन्तु खेत सींचनेका सुभीता नहीं पड़ता। उक्त तहसीलका शहर। यह द्रव-रोड़पर बसता और कोई प्रधानता नहीं रखता है।

अलूला (हिं० पु०) तरङ्ग, लहर।

अले, अरे देखो।

अलेक्सन्दर—जगद्विख्यात महावीर। सुसलमान लोग इन्हें सिकन्दर कहते हैं। सुप्राचीन शिलालेखमें 'अलिकसन्दर', 'अलिकसद्' और 'अलसद्' नाम मिलता है। मकदूनिया-नृपति फिलिपके औरस और ओलिम्पियाके गमसे इनका जन्म हुआ था।

एक समय वीरवर फिलिप ओलिम्पिक रणक्रीडामें जीते रहे। उनके सेनापति पार्मेनोन भी इलिरिय युद्धमें जीत और प्रभुके निकट पड़च मस्तक झुकाया—

अकालाव, एफिसस नगरकी डायना देवीका मन्दिर

गिर गया। उसी समय मकदूनिया-नृपतिने सुना, कि उनके लड़का हुआ था। फिलिपने जाकर पुत्रका मुंह देखा। देवज्ञ लोग कहने लगे,—यह पुत्र पृथिवीका राजा होगा। फिलिपने कुमारका नाम अलेक्सन्दर रख दिया।

अलेक्सन्दरने शैशवावस्था बिता डाली। प्रथम लिओनिदास् नामक व्यक्ति इनके प्रधान शिक्षक बने थे। १३ वर्षे वयःक्रमके समय फिलिपने प्रसिद्ध दार्शनिक अरिष्टलको पुत्रकी शिक्षामें लगा दिया। अरिष्टलके सुशिक्षागुणसे अलेक्सन्दरकी मनोवृत्ति खुल गयी थी। उसी शिक्षाके फलसे यह भविष्यत्में विस्तीर्ण साम्राज्यको शासन कर सके। समयानुसार अरिष्टलने राजनीतिके सम्बन्धपर कोई ग्रन्थ लिखा, जिसका प्रधान उद्देश्य अलेक्सन्दरको शिक्षा देना था। इनके भाग्यमें जैसा शिक्षक रहा, वैसा किसी दूसरे युरोपीय राजाको न मिला।

पढ़ते समय अलेक्सन्दरके हाथमें सर्वदा ही इलियद रहता और आकिलेशके वीरत्वकी कहानी सुनना बहुत अच्छा लगता था। जब आकिलेशका वीरत्व इनके स्मृतिपथमें उदय होता, तब वीरमद चढ़ आता; तलवार भनभनाना उठती। लोग कहते, अलेक्सन्दर ही पहले आकिलेश रहे। वस्तुतः द्रय-वीर आकिलेशके वंशमें इनकी माताने जन्म लिया था।

वीरत्वके परिचय देनेका समय आ पहुँचा। फिलिप इन्हें राज्य सौंप युद्धको चले गये। उस समय इनका वयस १६ वर्ष रहा। फिर कितने ही लोग विद्रोही भी बने थे। किन्तु इन्होंने उन्हें दबा दिया। उसी समयसे लोग इन्हें राजा और फिलिपको सेनापति कहने लगे। फिलिप इनका बड़ा प्यार करते और यह भी उन्हें बहुत चाहते थे।

वयस बढ़नेसे लोगोंकी मतिगति पलट जाती है। उसीसे ऐसा उपयुक्त पुत्र रहते भी फिलिपने क्लियोपेट्राको व्याह लिया था। विवाह करनेपर यह पितासे मन ही मन कुछ विरक्त हुए। थोड़े दिन बाद फिलिप गुप्त रूपसे मार डाले गये थे। लोग

कहने लगे, सिकन्दर उस हत्याकार्यमें लिप्त रहे। पीछे यह स्वाधीन भावसे मकदूनियाके अधिपति बने, किन्तु निरापद रह न सके।

अट्टालास नामक क्लियोपेट्राके छोटे मामाने क्लियोपेट्राके गर्भसे उत्पन्न फिलिपके दूसरे लड़केको राज्य दिलानेकी चेष्टा लगायी थी। उसी समय उत्तर और पश्चिमकी असभ्य जातिने भी स्वाधीन होनेको अस्खल उठाये रहे। डिमस्थिनिस् मकदूनियाके विपक्ष हुए, जिससे समस्त यूनान देशमें हल चल पड़ गयी। अलेक्सन्दरने देखा,—चारों ओर महा विपद् है; यदि हम इस महाविपद्से न छूटे, तो राज्य, धन, मान सब कुछ हाथसे निकल जायेगा। बुद्धिमान् महावीर अति सत्वर कोई निश्चिन्ता दूँडने लगे। इन्होंने हेकेटस् सेनापतिको आदेश दिया—आप फौजके साथ एशिया जायें और जैसे हो सके, दुर्वृत्ति अट्टालासको मार या पकड़ हमारे पास ले आयें। महावीरका आदेश प्रतिपालित हुआ, हेकेटस्ने अट्टालासको पराजित और निहत्त किया। इधर अलेक्सन्दर सेनापतिको आदेश सुना फौजके साथ यूनान जा पहुँचे थे। थोड़े ही दिनों हाथ आ गया। वहाँसे यह विओसियाकी ओर चल पड़े थे।

खिब्खिबे लोग स्वप्नमें देखते रहे,—हम फिर स्वाधीन होंगे, अधीनताका क्लेश अब उठाना न पड़ेगा। किन्तु उनका सुखस्वप्न टूट गया, सुननेमें आया, महावीर अलेक्सन्दर खिब्खिबे का डमिया दुर्गपर जा पहुँचे। अथेन्सके अधिवासी इन्हें पागल बता उपहास उड़ाते रहे, किन्तु अकस्मात् आगमन सुन सब डर गये। सभी अग्रस्तुत थे, उतना शीघ्र युद्धका आयांजन लगा न सके। उस समय उन्होंने विनीत भावसे इनके पास दूत भेजा, जिसने आकर कहा,—सभी अथेन्सवासी महावीरके आगमनसे आनन्दित हैं; दुःख केवल इसी बातका है, कि महावीरके पारस्य आक्रमणको उपयुक्त संन्य इकट्ठा कर नहीं सकते। इन्होंने दूतको समादर दिया था। यूनानके सभी लोग इनसे भुक्त गये, केवल स्पार्टानोंने इनके अधीन रहना न चाहा।

अलेक्सन्दर मकदूनिया वापस आये थे। फिर यह रीतिमत रणसज्जा लगा असभ्य लोगोंको दबाने उत्तरको ओर चल पड़े। दानियुब नदीके तीर सौर-मुस् नामक असभ्योंके अधिपति हार गये थे। उसी जगह अपरापर अनेक जातिने इनकी अधीनता स्वीकार की।

इधर स्वाधीनता-प्रिय यूनानी डिमस्थिनिसके उत्साहवाक्यसे प्रणोदित पड़ उत्तेजित हो गये थे। उन्होंने स्वदेशकी स्वाधीनताके उद्धारको जीवन उत्सर्ग करनेका सङ्कल्प किया। उसी समय यूनानमें गप उड़ी,—अलेक्सन्दर इलिरिय युद्धमें मारे गये हैं। थिब्सवासो मकदूनियावालोंको अपने देशसे भगाने और यूनानके अपरापर स्थानमें दूत भेज सबको भड़काने लगे। पीछे संवाद मिला,—अलेक्सन्दर मरे नहीं, आज भी जीते और थिब्समें आ पहुँचे हैं। पहले इन्होंने सन्धिका प्रस्ताव फेलाया, किन्तु लोगोंने उसे हंसी-दिल्लगीमें उड़ा दिया था। अलेक्सन्दरके सेनापति पारदिकास उन्हें समुचित शास्त्र देनेको आगे बढ़े। भोषण समर हुआ था। असंख्य यूनानी मरे और रक्तकी नदी बह चली। यूनानके इतिहासमें ऐसा भीषण काण्ड कभी हुआ न था। कोई छः हजार थिब्सके लोग मरे और साठ हजार उम्र भरके लिये गुलाम बने। यूनानके दूसरे लोग इस दृष्टान्तसे भुके और जन्मभूमिके स्वाधीन करनेकी आशा बिलकुल छोड़ बैठे थे।

अलेक्सन्दर मकदूनियाको लौट पड़े। इस बार यह गुस्तर व्रतके उद्बोधनमें यत्नवान् हुए। बालककालसे इनके मनमें इस बातकी आशा रही,—ईरान राज्य जीते और एशियाखण्डके अधीश्वर बनें। इनके पिताने बहुत दिनसे ईरान जीतनेको नानाप्रकार आयोजन लगाया था, किन्तु कृतकार्य हो न सके। फिर भी यह प्राण पर्यन्त सौंप ईरान जीतनेको आगे बढ़े थे। उसी समय इनके कतिपय बन्धुने विवाह कर लेनेको कहा, किन्तु इन्होंने उनको कोई बात न सुनो और अपना जो कुछ धनादि था, उवह बन्धुओंको दे डाला। इस महाकार्यमें जाने से

पारदिकामने इनसे कहा,—आपने सब सामान तो दूसरेको दे डाला, अपने लिये क्या उपाय सोचा है इन्होंने हंसकर उत्तर दिया,—आशा हमारे साथ है। इनकी अनुपस्थितिमें अन्तिपेतर मकदूनियाके शासनकर्ता हुए थे।

वसन्तके प्रारम्भमें अलेक्सन्दर एशियाभिमुख बढ़े, साथमें पाँच हजार सवार और तीस हजार पैदल थे। सब लोग आविडसमें जा पहुँचे। आविडसके पास ही आत्रिसरी नामक स्थान भी है, जहाँ इनका मृत देह मृत्तिकाके मध्य गाड़ा गया था। यह केवल हिफाष्टियानको साथ ले आकिलेशका समाधिस्थान देखने पहुँचे और उसे देखते हो वीरमदसे उत्तेजित हुए। पूर्वपुरुषके वीरत्वकी बात सोचते-सोचते इन्होंने वह स्थान छोड़ा और फौजमें मिल शीघ्र ईरान जीतनेको कदम बढ़ाया।

नानास्थान लांघ यह आनिकस नदी किनारे पहुँचे थे। उस नदीके पूर्वकूल ईरानके बादशाहकी फौज शत्रुकी राह देखते रहो। इन्होंने उसी वक्त्र ईरानकी फौजपर हमला मारा। मकदूनियावाले वीरोंके युद्धकौशलसे ईरानियोंके पैर उखड़ गये थे। अलेक्सन्दरकी ही तलवारसे ईरान-राज दरायुसके जामाता धराशायी हुए।

उसी समय रोडस द्वीपके शासनकर्ता मेमनन् नामक कोई यूनानी ईरानकी ओर मकदूनियासे बहुत लड़े थे। इन्होंने उन्हें भी नीचा देखाया। असंख्य यूनानी और ईरानी फौज काम आयी थी। कोई दो हजार सिपाही कैद हुए। पीछे इन्होंने एशिया-माइनर, लाइथिया, आइओनिया, करिया, पाम्फाइनिया और काप्पदोकिया नामक जनपद जीते थे। किड़ना नदी किनारे पहुँच यह बीमार पड़े। इस अवस्थामें इनके बन्धु पार्मेनिओने चिट्ठीमें लिखा था,—‘सावधान ! कोई चिकित्सक आपको विषाक्त औषध खिला मार न डाले।’ इन्होंने बन्धुका पत्र पाते ही अपने चिकित्सक फिलिपको बुला भेजा और उनसे दवा खानेको कहा। औषध खानेसे फिलिप मर गये। लोगोंने समझ लिया,

फिलिप दरायुससे उत्कोच पा अलेक्सन्दरका सव-
नाश करनेपर उद्यत हुए थे।

अलेक्सन्दर अच्छे होते ही ईरानके बादशाहसे लड़नेको चल पड़े। साईलिशिया नामक स्थानमें कोई पांच लाख फौज साथ ले ईरानके बादशाहने इनका सामना पकड़ा था। सन् ई० से ३३३ वर्ष पहले पर्वत और जलपर घोरतर युद्ध हुआ। दरायुस पीछे हट गये। उनका परिवारवर्ग और धन-रत्नादि विजेताके हाथ जा पड़ा था। विजयी मक-दूनिया-पतिने दरायुसके परिवारवर्ग प्रति यथेष्ट सम्मान देखाया।

दरायुसने यूफ्रेतिस किनारे भाग दो बार सन्धिका प्रस्ताव उठाया था। किन्तु इन्होंने उनकी बात न मान कहला भेजा,—‘यदि आप हमें समग्र एशियाका अधिपति स्वीकार करें, तो हम आपके प्रस्तावको रख सकते हैं। उसके बाद यह सिरीया और फिनिशियाकी ओर आगे बढ़े थे। राहमें दामास्कस और उसका राजकोषस्थ रत्नराशि इनके हाथ लगा। तायरमें पहुँचने पर वहाँके लोगोंने इनपर तलवार उठायी थी। सन् ई० से ३३२ वर्ष पहले सात महीने अवरोधके बाद इन्होंने तायरको धूलमें मिलाया। वहाँसे यह पालेष्टाइनको चले थे। भूमध्यस्थ सागरका तौरवर्ती स्थानसमूह इनके अधिकारभुक्त हुआ।

दूसरे वर्ष अलेक्सन्दर मिस्रमें जा पहुँचे। वहाँके लोग बहुत दिन ईरानके अधीन रह बिलकुल निर-
क्लाह हो गये थे। अलेक्सन्दरको देख और उच्चार-
कारी समझ सबने अधीनता स्वीकार की। उसी समय मिस्रमें इन्होंने अलेक्सेन्द्रिया नगर बसाया था।

मिस्रके लोग ईरानके अधिकारमें अपनी प्राचीन प्रथाका अनुयायी धर्म-कर्म कर न सकते थे, किन्तु अलेक्सन्दरने उनकी पूर्व प्रथाको मान लिया। इन्होंने मिस्रस्थ आमनदेवके मन्दिरमें जा पुरोहितोंका बड़ा आदर-सम्मान किया था। उन्होंने भी इन्हें देवपूत्र समझ लिया। उसी जगह देववाणी सुन पड़ी थी,—‘अलेक्सन्दर पृथिवीके राजा होंगे।’

देवादेश सुन महावीर अलेक्सन्दर और भा उत्-
साहित हुए और वहाँसे चल आसिरीया जा पहुँचे।

उधर ईरानके बादशाह दरायुस पांच लाख फौज जोड़ आरबेलाके रणक्षेत्रमें उतर पड़े थे। किन्तु जिसका अदृष्ट अच्छा होता, मनुष्य उसका क्या कर सकता है। इतनी ज्यादा फौज रहते भी दरायुस इनसे फिर हार गये। इन्होंने दरायुसको पकड़नेकी चेष्टा चलायी थी, किन्तु वह गुप्त भावसे धन-जन छोड़ भाग खड़े हुए।

उस समय बाबिलन और सूसा एशिया-खण्डका रत्न-भाण्डारस्वरूप रहा। इन्होंने अवाध दोनों स्थान ले लिया था। पीछे यह ईरानकी राजधानी पार्सि-पोलिस नगरकी ओर बढ़े। उसी जगह इनका चरित्र कुछ बदल गया था। जो महावीर युद्ध भिन्न दूसरा आमोद न समझते और देहके स्वास्थ्यविधान-को सर्वदा सचेष्ट रहते, वही व्यसनासक्त एवं रमणी-गणसे वेष्टित हो मद्य पीते पीते मतवाले बने। ऐसी अवस्थामें एक वैश्याका यह बड़ा आदर करने लगे थे। किसी दिन उसी वारविन्दासिनीने इनसे पार्सिपोलिस जला डालने कहा। इन्होंने वैश्याकी मनसुष्टिके लिये ईरानकी बहुजनाकीर्ण मनोहर राजधानीको जला खाकमें मिला दिया था।

पीछे जब इन्हें चैतन्य आया, तब दुष्ट कर्मके निमित्त अनेक दुःख देखाया। विलम्ब न लगा यह ईरानके बादशाहको ढूँढने निकले थे। राहमें सुना, बेसास नामक वालिहकके छत्रपतिने दरायुसको कैद कर रखा है। वीर ही वीरको सम्मान देना जानता है। अलेक्सन्दरने जब सुना कि बेसास नामक किसी सामान्य छत्रपतिने प्रबल पराक्रान्त ईरानके बाद-शाहको कैद कर रखा था, तब मनमें बहुत कष्ट पाया और दरायुसको छोड़ाने अविलम्ब वालिहमें जा पहुँचे। वहाँ जाकर देखा, दरायुस मृतप्राय रहे, बेसासने उन्हें दारुण रूपसे घायल किया था। अलेक्-सन्दर उन्हें बचा न सके। इन्होंने ईरानियोंके प्रथानुसार महासमारोहसे दरायुसका समाधिकार्य पूरे उतारा था। पीछे दुर्हत बेसासको समुचित

शान्ति देनेके निमित्त आगे बढ़े। उस समय वेसास हिर्कानिया, ईरान, बाल्हि और सगदियानाके अधिपति बन बैठे थे।

चारों ओर खबर फैल गयी,—‘अलेक्सन्दर वेसासको शास्त्र देने आते हैं। सगदिनियाके छत्रपतिने वेसासको पकड़ा दिया। वेसासने समुचित शास्त्र पायी थी। उसी समय पार्मेनिओके पुत्रने अलेक्सन्दरके विरुद्ध षड़यन्त्र लगाया। महावीर मकदूनियापतिको उसकी खबर मिल गयी थी। इन्होंने गुस्सेमें आ पितापुत्र दोनोंको मार डाला। सेनापति पार्मेनिओ निर्दोष रहे, उन्हें अपने पुत्रके षड़यन्त्रकी बात मालूम न थी। सब लोग इस बातपर अलेक्सन्दरसे नाराज़ हुए, कि विना दोष ही सेनापति मारे गये। प्रवाद रहा,—जिस व्यक्तिने किसी समय चिकित्सकके विषपात्रसे अलेक्सन्दरको बचाया, उसे क्या यही पुरस्कार मिलना था।

सन् ई०से ३२८ वर्ष पहले इन्होंने शक लोगोंको जीत लिया, दूसरे वर्ष सगदियाना जा पहुँचे। वह स्थान पर्वतमय रहा। शीतके समय युद्धकी विशेष सुविधा न मिलनेसे यह नौतक नामक स्थानमें ठहर गये थे। वसन्तकालमें पर्वत-पर्वत अविश्रान्त युद्धके बाद अलेक्सन्दरने सगदियानाको अधिकारमें लाया। इस युद्धमें बाल्हिकवंशीय कोई राजपुत्र और रक्षणा नामक उनकी कन्या बन्दी बनी थी। इन्होंने रक्षणाके अनुपम रूपसे सुग्ध हो विवाह कर लिया। कुछ दिन बाद हमेलिस कालोस्थेनिस नामक अरिष्टलके किसी शिष्यने इनके विपन्न तलवार उठायी थी। इस बार मकदूनियाकी कितनी ही फौज मारी गयी, किन्तु वीरकेशरी अलेक्सन्दरने उन्हें यथोचित शास्त्र दे दी।

सन् ई०से ३२७ वर्ष पहले यह भारतपर आक्रमण करनेकी आगे बढ़े थे। साथमें १,२०,००० फौज रही। अलेक्सन्दरने सेनापति टलेमी और डिफाट्रियान कितनी ही चुनिन्दा फौज ले सिन्धुकी ओर पहले ही दौड़ पड़े थे।

अलेक्सन्दर सैन्य काबुर नामक स्थानमें जा

पहुँचे। वहांइन्होंने कुलिशी (Choaspes) और गौरी नदी (Gyræus) पार हो वरणा (Aornos) को अधिकृत किया। पीछे यह सिन्धुनद पार अटक गये थे। सन् ई०से ३२६ वर्ष पहले इन्होंने पञ्जाबमें पैर रखा। राहमें सिन्धुनद-तीरवर्ती कितने ही पहाड़ी लोगोंसे लड़ना पड़ा था। उस समय तक्षिलाराज बहुमूल्य उपहार ले और इनके पास पहुँच पहाड़ियोंके विरुद्ध साहाय्य दिया। इन्होंने वितस्ता (Hydaspes) नदीतीर जा देखा, कि पुरुष (Porus) नामक कोई प्रबल पराक्रान्त हिन्दू नरपति असंख्य सैन्य ले युद्ध करने आगे बढ़ा था। अविश्रान्त ही रणवाद्य बजने लगा। हिन्दुओं और यवनोंमें घोर-तर संग्राम उपस्थित हुआ था। अवशिष्टमें पुरुषराज हार गये। अलेक्सन्दर हिन्दू राजाका वीरत्व देख अतिशय सन्तुष्ट हुए और उनके साथ मित्रता स्थापन की। युद्धसे पहले पुरुषराज वितस्ता और चन्द्रभागाके जनपद पर ही शासन चलाते थे, पीछे अलेक्सन्दरने दूसरे भी कितने ही जनपद जीत उनको सौंप दिये। इस कामसे पुरुषराज पर तक्षिला-नृपति बहुत नाराज हो गये थे।

एकमास यह वितस्ता किनारे रहे, उसके बाद बुकेफल और निकाया नामक दो नगर बसा चन्द्रभागाके पार जा पहुँचे। इरावती किनारे काथी नामक प्रबल जातिके साथ इन्हें कई बार लड़ना पड़ा था, किन्तु वह किसी तरह अधोन न हुई। इन्होंने काथी जातिका राज्यादि जीत उन लोगोंको बांट दिया, जो वशमें आ गये थे।

घघरा नदी किनारे आ इन्होंने सुना, कि उससे पूर्व ओर दूसरा भी रत्नाकर समृद्धिशाली जनपद है। यह खबर पा इन्हें लोभ लगा। किन्तु इनके किसी सैन्य सामन्तने आगे बढ़ना चाहा न था। सिपाही बहुत दिनसे जन्मभूमि छोड़ घूमते रहे, उस समय उन्हें घर वापस जानेकी उत्कण्ठा हुई। अलेक्सन्दरको वेमन लौटना पड़ा। इन्होंने अपने भारत-आक्रमणका स्मरणचिह्न बना रखनेको घघरा नदी किनारे बड़े-बड़े बारह बुर्ज बनवाये थे। जाते समय

यह घघरा नदी पर्यन्त अधिकृत सकल स्थान पुरुष-राजको सौंप चले।

इन्होंने वितस्ता नदी तीर वापस जा सिन्धुनदके मुहानेमें पहुँचनेको जहाजपर चढ़ दक्षिणाभिमुख यात्रा की थी। वर्तमान मूलतानके निकट मालव (Malli) नामक जातिसे भीषण युद्ध हुआ, जिसमें इनके गुरुतर आघात आया था। उस घटनासे सैन्यगण भी भग्नोत्साह हो गया था। किन्तु इन्होंने शीघ्र ही आरोग्य पाया। इनके आरोग्यका समाचार सुन अपरापर मालवगण बहुमूल्य उपद्रौकन भेज वशी भूत बना था।

इन्होंने वितस्ता और सिन्धु-नदके सङ्गमस्थानपर कई किले और जहाजी अड्डे निर्माण कराये। उस जगह मूषिक (Musicanus)-राज इनसे लड़ पड़े थे। किन्तु उत्थानमात्रसे ही वह खेत आये।

सिन्धु और कराचीके पासका समुद्रय स्थान जीत यह ईरान वापस पहुँचे थे। वहाँ इन्होंने दरायुसकी कन्या स्त्रातिरासे विवाह किया। उस समय कोई दश हजार मकदूनियाके सिपाही ईरानी लड़कियोंको व्याह प्रभुके अनुवर्ती हुए थे। इन्होंने उन्हें कितना ही यौतुक दे डाला।

ताइग्रस नदीतीर पहुँच इन्होंने बड़े सिपाहियोंको देश वापस जाने कहा था। उसी समय हिफाष्टियान नामक इनके बन्धु और प्रिय सेनापति मर गये। बन्धुके मरनेसे यह बहुत ही कातर पड़े, मानो उनके साथ इनका वीर्यसूर्य भी अस्तमित हुए। बादशाहोंक तरह बड़ी धूमधामसे हिफाष्टियानको मट्टी दी गयी थी।

अलेक्सन्दर बाबिलनकी ओर बढ़े। राहमें कितनी ही वृद्धाओंने इन्हें वहाँ जानेसे रोका था। किन्तु यह उनकी बात न मान बाबिलन जा पहुँचे। उस जगह यूनान, इटली, कार्थेज, स्किदीया, आइओनिया प्रभृति स्थानके राजदूतगणने इनकी सम्मान-रक्षाकी थी।

बाबिलन राजधानी बनाया गया। उसी जगह अलेक्सन्दर महाकार्यमें व्यापृत हुए थे। इन्हें इच्छा

रही,—समस्त जगत् जीते और सभ्यताके आलोकसे विश्वमण्डलको चमकायेंगे। किन्तु मनकी वासना मनमें ही रह गयी। फिर जयका उद्योग लगाते-लगाते पीड़ित हुए और १२ वर्ष ८ मास राजत्व कर जगत्पूज्य महावीर सिकन्दरने कालका आतिथ्य स्वीकार किया। महासमारोहसे इनका शवदेह सुवर्ण आधारमें रक्षित रह अलेक्सन्द्रिया नगरमें गाड़ा गया था।

इस बातपर बड़ा भगड़ा उठा,—‘अब राजा कौन होगा’। किसी समय कई बन्धुने इनसे पूछा था,—‘आपका उत्तराधिकारी कौन होगा’। औरवरने उत्तर दिया,—‘योग्य व्यक्ति’। लोग इनका पद देनेको योग्य व्यक्ति ढूँढने लगे। उस समय रक्षणा गभवती रहीं। मृत्युके समय यह अपनी राज-अङ्गुरी पारदिकासको सौंप गये थे। उससे सबने समझ लिया,—रक्षणाके पुत्रको शैशवावस्थामें पारदिकास रक्षकस्वरूप रह राजकार्य चलायेंगे। रक्षणाके पुत्र होनेपर वही बात आगे आयी।

ऐसा कहना ठीक नहीं पड़ता, कि अलेक्सन्दरने मनुष्यरक्तसे मेदिनी भर अपना आधिपत्य फैलाया था। इन्होंने पाश्चात्य सभ्यता, पाश्चात्य भाषा और पाश्चात्य-नीति अपने अधिकृत राजसमूहमें बाँट दी। पश्चिम श्वेतद्वीप और पूर्व चीनराज्यके प्रान्तदेश तक सकल स्थानके महाकाव्यमें मकदूनिया-वीरका नाम मिलता है। विशेषतः पारस्य (ईरान) प्रभृति स्थानमें इनके सम्बन्धपर कितनी ही अद्भुत-अद्भुत उपकथा निकली हैं। यहाँतक, कि प्राचीन कालके लोक इन्हें देवता माननेसे हिचकते न थे। वस्तुतः इन महावीरसे ही प्राचीन भूतत्त्व, प्राणितत्त्व, भूतत्त्वान्त प्रभृति अनेक आवश्यकीय विषय उद्घाटित हुए हैं। फिर इन्हीं महावीरका अनुसरण लगा युरोपीयगण रत्नप्रसू भारतवर्षका पथ ढूँढ सका था।

अलेख (हि० वि०) १ अननुमेय, अलक्ष्य, समझमें न आनेवाला। २ लिखनेके नाकाबिल, वेतादाद, लिखका हिसाब न लगे।

२ उड़ीसा प्रांतीय सम्बलपुर जिलेके कुम्भ-

पटियाकों धर्म । सन् १८६४ ई०को अलेखस्वामीने इसे कटकमें फँसाया था, जहाँसे शीघ्र सम्बलपुर जिलेमें आ पहुँचा । महिमाधर्म देखो ।

अलेखा, अलेख देखो ।

अलेखी (हिं० वि०) न्यायविहीन, जालिम, गैर-वाजिब काम करनेवाला ।

अलेख—वस्वईके काठिवाड़ राज्यका पर्वतविशेष । यह धाँकके खागसरीतक फैला और दक्षिण-पश्चिम आगे जा उँचाईमें बढ़ गया है ।

अलेपक (सं० त्रि०) नास्ति लेपः कुत्रापि क्लृप्तिर्यस्य, नञ्-बहुव्री० । १ निःसम्बन्ध, तात्तुक, न रखनेवाला । २ निर्लेप, वेदाग, जो फँसा न हो । लिप्युल्ल, नञ्-तत् । ३ लेपन न करनेवाला, जो लीपता न हो । (पु०) ४ परमात्मा ।

अलेले, अरे देखो ।

अलेश (सं० त्रि०) १ अधिक, ज्यादा, बहुत, जो कम न हो । (अव्य०) २ विलकुल नहीं ।

अलेशैज (सं० त्रि०) दृढ़, मजबूत, कायम, जो डिगता न हो ।

अलैया, अलहिया देखो ।

अलोक (सं० पु०) न लोक्यते प्राणिभिरोच्चारते; लोक कर्मणि घञ्, ततो नञ्-तत् । १ पातालादि, जमीनके भीतरका मुक्त । २ लोकका अभाव, दुनियाको अदम-मौजूदगी । ३ जगत्का अन्त, दुनियाका खातिमा । ४ अदृश्य लोक, गैरमुजस्मिम दुनिया । ५ जनका अभाव, लोगोंको अदम मौजूदगी । ६ अदृश्य वस्तु, देख न पड़नेवाली चीज़ । (हिं०) ७ मिथ्या कलङ्क, झूठी बदनामी । (त्रि०) नास्ति लोको यत्र, नञ्-बहुव्री० । ८ निर्जन, वीरान्, जहाँ लोग न रहें । ९ अज्ञातपुण्य, पुण्य न करनेवाला । १० न देखनेवाला । (अव्य०) लोकस्याभावः, अभावे अव्ययी० । ११ लोकाभावमें, लोगोंके न रहते, एकान्तमें ।

अलोकन (सं० क्ली०) अन्तर्धान, तिरोधान, अदर्शन, अदमरूपत, देख न पड़नेकी हालत ।

अलोकना (हिं० क्ति०) दृष्टि डालना, नज़र लड़ाना, देखना-भालना ।

अलोकनीय (सं० त्रि०) अदृश्य, गुप्त, देख न पड़नेवाला ।

अलोकसामान्य (सं० त्रि०) लोकसामान्य इतर-जनसाधारणं न भवति, अन्यार्थे नञ्-तत् । असाधारण, महत्, गैरमामूली, बड़ा, जो दूसरे लोगोंके बराबर न हो ।

अलोका (सं० स्त्री०) नास्ति लोको दृष्टिर्यत्र चूर्णं वालुकादिभिराच्छादनात्, स्त्रीत्वात् टाप् । १ इष्टक विशेष, किसी किस्मकी ईंट । २ भित्तिस्थ इष्टक, दीवारमें लगी हुई ईंट ।

अलोकित (सं० त्रि०) अदृष्ट, देखा न हुआ ।

अलोक्य (सं० त्रि०) लोकाय स्वर्गादि लोकभोगाय हितं तत्र साधु वा; हितार्थे साध्वर्थे वा यत्, ततो नञ्-तत् । १ असाधारण, अप्राप्त-आज्ञा, गैरमामूली, वैदुक्क । २ स्वर्गादि लोकको असाधन, जिसे करनेसे स्वर्ग न मिले ।

अलोक्यता (सं० स्त्री०) स्वर्गादि प्राप्तिर्लोको अयोग्यता, विहिंस्य पडुंचनेकी नाकाबिलियत, जिस हालतमें स्वर्ग न जा सके ।

अलोना (हिं० वि०) १ अलवण, बेनमक, नमक न पड़ा हुआ । २ फीका, बेजायका, स्वादरहित ।

अलोप (हिं०) लोप देखो ।

अलोपा (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोई दरख्त । यह हमेशा हरा-भरा रहता है । इसकी मकड़ी सुख मुलायम और मजबूत होती है । यह नाव, गाड़ी, घर बनानेमें काम आती है और पानीमें पड़ी रहनेसे भी नहीं बिगड़ती ।

अलोपाङ्ग (वै० त्रि०) दूषित अङ्ग न रखनेवाला, जो बेएव अजा रखता हो ।

अलोभ (सं० पु०) लोभो धनादिष्वतिस्मृत्वा तस्य अभावः, नञ्-तत् । १ धनादिकी अतिस्मृत्वाका अभाव, दीलत वगैरहके लालचकी अदममौजूदगी । (त्रि०) नास्ति लोभो यस्य, नञ्-बहुव्री० । २ लोभरहित, लालच न रखनेवाला, सन्तोषी ।

अलोभिन् (सं० त्रि०) लोभोऽस्त्राग्निन् इति ततो नञ्-तत् । लोभशून्य, लालचसे खाली ।

अलोपश (स० पु०) मत्स्य विशेष, किसी किष्ककी मछली। यह वितस्ति-परिमित, श्वेताङ्ग एवं सूक्ष्मशल्क होता है। इसका मांस बलवोर्य बढ़ाता और पुष्टिकर ठहरता है। (राजनिषण्ड)

अलोमशा (स० स्त्री०) वृक्षविशेष, कोई दरखूत।

अलोमहर्षण (स० स्त्री०) रोमरोममें आनन्द न भरनेवाला, जिसमें खुशीसे रोगटे न उठें।

अलोल (स० त्रि०) न लोलम् नञ्-तत् । १ अचञ्चल, ठहरा हुआ, जो डालता न हो। २ दृष्टान्तरहित, जो लालची न हो।

अलोला (स० स्त्री०) छन्दोविशेष, कोई बहर। इसके प्रत्येक चार पदमें चौदह चौदह अक्षर रहते हैं।

अलोलिक (हिं० पु०) अचञ्चलता कयाम। ठहराव।

अलोलु (सं० त्रि०) प्रत्यक्ष विषयसे निरपेक्ष, ज़ाहिर बातकी परवा न रखनेवाला।

अलोलुत्व (सं० क्ली०) प्रत्यक्ष विषयसे निरपेक्षता, ज़ाहिर बातकी बेपरवायी।

अलोलुप (स० त्रि०) नञ्-तत् । १ अनभिलाष, बेखुद्दिश, अच्छी चीज सामने पड़ते भी जिसका दिल न चले। २ लोभशून्य, लालच न करनेवाला।

अलोह (स० पु०) न लोहति ऐहिक-धनादि लब्धुमिच्छति लूह कर्तरि अच्, ततो नञ्-तत् । १ पाणिन्युक्त नड़ादिके अन्तर्गत ऋषि-विशेष। (क्ली०) नञ्-तत् । २ लौहमित्र वस्तु, जो चीज लोहा न हो।

अलोहित (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ रक्तशून्य, खूनसे खाली। २ अरक्त, जो लाल न हो। (पु०) ३ रक्तपद्म, लाल कमल।

अलौकिक—ब्रह्म-प्रदेशवाले पेगू जिलेके मोतसोकी ग्रामाधिप। सन् १७५३ ई० तेलैङ्गोंको बलवा मचाने इन्होंने हरा आवां राजधानीमें अपना राजवंश प्रतिष्ठित किया, १७५८ में पेगूको जीत अन्तिम तेलैङ्ग नृपति व्याहमैङ्गुतोरजांको कैदी बनाया। यह अपने वीरत्व गुणके कारण अधिक प्रशंसाभाजन हो गये हैं।

अलौकिक (स० त्रि०) लोकेषु विदितं ठक् । नञ्-तत् । लोकमें अविदित, जिसे लोकमें नहीं जानते। नैयायिक मतसिद्ध चक्षु प्रभृति इन्द्रियके निकटस्थ न होनेपर भी वस्तुके प्रत्यक्ष होता हैं। जैसे एक घटको सम्मुख देखनेसे पृथिवीके सब घटोंका ज्ञान होता है। नैयायिक लोग प्रत्यक्षको लौकिक और अलौकिक यही दो प्रकारका कहते हैं। उनमें निकटस्थ जो घट देखा जाता है, उसका नाम लौकिक प्रत्यक्ष है। और जो घट सम्मुख नहीं देखा जाता अथवा घटत्व रूप एक धर्माकान्तहेतु सभी हैं, ऐसा ज्ञान होता है, उसका नाम अलौकिक प्रत्यक्ष है।

अलौकिकत्व (सं० क्ली०) शब्दका अप्राप्य उपागम, जिस हालतमें लफ्ज अजीब लगे।

अलौकिकसन्निकर्ष (स० पु०) न लोकेषु विदितः सन्निकर्षः । नञ्-तत् । प्रत्यक्षसाधनसन्निकर्ष इन्द्रिय और विषय अर्थात् प्रत्यक्षकी विषयीभूत जो वस्तु हैं, इन दोनोंके सम्बन्धका नाम सन्निकर्ष है। सामान्य लक्षण, ज्ञान लक्षण एवं योगज, यही तीन प्रकारका अलौकिकसन्निकर्ष है। उनमें जिस किसी एक घटके नेत्रके निकटस्थ होनेसे घटत्व रूप सामान्यधर्मद्वारा सकल घटोंका जो ज्ञान होता है, वह सामान्य लक्षणके अधीन है। घट देखनेसे जो स्थान घटविशिष्ट समझा जाता है, वह ज्ञान लक्षणके अधीन है। एवं योगियोंके योगद्वारा जो सब घटपटादिका ज्ञान होता है, उसे योगज कहते हैं।

अल्ल (सं० पु०) १ वृक्षविशेष, कोई पेड़। २ शरीरका अवयव, जिस्मासी अङ्ग।

अल्ल-पल्ल—बम्बई प्रान्तके नासिक जिलेका स्थान-विशेष। सन् १६३५ ई०को शाहजहाँके सेनापति खान्खानान्ने अङ्ग्रेजी-तङ्कयों किलेके साथ इसे भी छीन लिया था।

अलुतमश—गुलाम खान्दानके सबसे बड़े पुत्र और ३२ पठान बादशाह। इन्होंने सन् १२११ से १२३६ ई० तक दिल्लीमें हुकूमत की। निम्नवर्ग और सिन्धुके शासकोंको खाधीन बननेसे इनके हाथों नौचा देखना पड़ा था। किन्तु मुगल आक्रमणसे यह मरते मरते बचे।

चङ्गीज खानकी फौज किसी अफगान शाहजादेको ढूँढने सिन्धु तक घुस आयो थी, परन्तु दिल्ली पहुँच न सकी। सन् १२३६ ई० में इनकी मृत्यु हुई और शाहजादी रजियाको दिल्लीकी गद्दी मिली थी।

अल्ता—बम्बई प्रान्तके कोल्हापुर राज्यकी तहसील। सन् १८६७-६८ ई०की इसकी पैमायश, बन्दोवस्त शुरू और १८६८-७० को खतूम हुआ था। इसमें इकतीस गांव बहुत अच्छे हैं।

अल्ताय बिस्लाह—बगदादके २५वें खलीफा और अल् सुतीय बिस्लाहके पुत्र। सन् ८७४ ई०की यह अपने बापकी जगह गद्दीपर बैठे थे। १७ वर्ष ८ मास राज्य करनेके बाद सन् ८८१ ई०को बहा-उद्-दौलाने इन्हें सिंहासनसे उतार कादिर बिस्लाहको खलीफा बनाया।

अल्ताहिर वि-अमर-बिस्लाह मुहम्मद—अब्बास दंशके ३५वें खलीफा और अल्-नासिर-बिस्लाहके पुत्र। सन् ६२२ ई०की यह अपने बापकी जगह बगदादको गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने ८ मास ११ दिन राज्यकर अपना प्राण छोड़ा और इनके लड़के २रे अल्मुस्तनसरको सिंहासनका उत्तराधिकार मिला।

अल्नावर—बम्बई प्रान्तके धारवाड़ जिलेका ग्राम। यह धारवाड़से दश कोस पश्चिम बेलगांव हलियाल तथा धारवाड़-गांव सड़कके नाके पर बसता है।

अल्प (सं० त्रि०) प्रथमचरमतयास्वार्थ कतिपयनेमाय। पा १।१।१३। १ छुद्र, छोटा। २ ईषत्, कम। ३ मरणार्ह, जो मरनेवाला हो। ४ अप्राप्य, नायाब, कम मिलनेवाला। ५ अचिरस्थायी, ज्यादा न टिकनेवाला। (अव्य०) ६ थोड़ा, कम।

अल्पक (सं० त्रि०) अल्प-स्वार्थ कन्। १ छुद्र, ईषत्, छोटा, कम। (अव्य०) २ न्यून रूपसे, थोड़ा-थोड़ा। (पु०) ३ पसाव, जवासा। ४ भूमिजम्बूवृक्ष, जङ्गली जामन।

अल्पकार्य (सं० क्ली०) छुद्र विषय, छोटा काम।

अल्पकेशिका, अल्पकेशी देखी।

अल्पकेशी (सं० स्त्री०) अल्पः छुद्रः केश इव पत्र-मस्याः, खाइलातु डीप। १ भूतकेशी, सफेद बूँद।

२ ईषत् केश-युक्त स्त्री, जिस औरतके बाल छोटे रहें।

अल्पक्रीत (सं० त्रि०) ईषत् धनसे क्रय किया हुआ, सस्ता, जिसकी खरीदमें थोड़ा रुपया लगे।

अल्पगन्ध (सं० क्ली०) अल्पो गन्धो यस्य, बहुव्री०। १ रक्तकैरव, लाल बघोला। २ रक्तकमल। ३ अल्प-गन्ध-युक्त वस्तु मात्र, जिस चीजमें ज्यादा खुशबू न रहे। (त्रि०) ४ अल्पगन्धि, अल्प-गन्ध-युक्त।

अल्पगोधूम (सं० पु०) दृणगोधूम, जङ्गली गेहूं।

अल्पघण्टिका (सं० स्त्री०) द्रव्यशणपुष्पी, सनयी।

अल्पचेष्टित (सं० त्रि०) जड़, अलस, सुवत्तल, सुस्त।

अल्पच्छद (सं० त्रि०) ईषत् संवीत, बकित्त-पोश, अच्छीतरह कपड़े न पहने हुए।

अल्पजीविन् (सं० त्रि०) अल्पायु, ज्यादा न जीने-वाला, जिसे मौत जल्द आयी।

अल्पज्ञ (सं० त्रि०) ईषत् ज्ञान-युक्त, कम समझ।

अल्पज्ञता (सं० स्त्री०) ईषत् ज्ञान होनेकी स्थिति, कम समझी, जिस हालतमें कम समझें।

अल्पतनु (सं० त्रि०) अल्पा क्षुद्रपरिमाणा तनुः शरीरं यस्य, बहुव्री०। १ खर्व, वामन, छोटे जिस्म-वाला। २ दुर्बल, अल्प अस्थियुक्त, दुबला।

अल्पता (सं० स्त्री०) १ न्यूनता, सूझता, छोटाई बारीकी। २ अधीनता, मातङ्गी।

अल्पत्व (सं० क्ली०) अल्पता देखी।

अल्पदक्षिण (सं० त्रि०) न्यून-दक्षिणा देनेवाला, जो ज्यादा भेंट चढ़ाता न हो।

अल्पदृष्टि (सं० त्रि०) परिमित ज्ञानयुक्त, सहदृढ़ इत्स रखनेवाला, जिसके निगाह बढ़ी न रहे।

अल्पधन (सं० त्रि०) ईषत् धनसम्पन्न, थोड़ी दौलत रखनेवाला, जिसके पास ज्यादा रुपया न रहे।

अल्पधी (सं० त्रि०) ईषत् बुद्धियुक्त, कमसमझ, जिसे ज्यादा अज्ञ न रहे।

अल्पनायिकाचूर्ण (सं० क्ली०) ग्रहणीमें हितकर औषध विग्रेह। पञ्चलवण १ शाण द्वावण (मिर्च,

सोठ, पोपल) प्रत्येक तीन शाण, पिचु ३ शाण, गन्धक ८ माष, पारा ४ माष, इन्द्राशन एक पल और तीन शाण, इस सबको चूर्ण करके एकत्र मिलाकर १ शाण परिमाण खाकरके पीछे काष्ठी पौना चाहिये।

(रसचिन्तामणि)

अल्पनिद्रता (सं० स्त्री०) पित्तजन्य निद्राल्पता-
रोग, नींद कम पड़नेकी बीमारी।

अल्पपत्र (सं० पु०) अल्पं पत्रं यस्य, बहुव्री०।
१ चूद्रपत्र तुलसी वृक्ष, तुलसीके जिस पौधेकी पत्ती छोटी रहे। २ रक्तपत्र, लालकमल। ३ अल्पपत्र-
युक्त वृक्ष मात्र, छोटी पत्तीका कोई भी पौधा।

अल्पपत्रक (सं० पु०) गिरिज मधक वृक्ष, पहाड़ी
दुपहरियेका पौधा।

अल्पपत्रिका (सं० स्त्री०) रक्त अपामार्ग क्षुप,
लाल लटजीरा।

अल्पपत्री (सं० स्त्री०) मिश्रया, सौंफका पौधा।
२ मुषली, मूसरका पेड़।

अल्पपद्म (सं० स्त्री०) अल्पं असम्पूर्णं पद्मम्,
कर्मधा०। रक्त कमल, लाल कमल।

अल्पपरीवार (सं० त्रि०) ईषत् अनुयायिवर्ग-विशिष्ट,
जिसके वन्धु प्रभृति कम रहे।

अल्पपर्णिका, अल्पपर्णी देखो।

अल्पपर्णी (सं० स्त्री०) सुन्नपर्णी, मसूर।

अल्पपशु (वै० त्रि०) न्यून पशुयुक्त, थोड़े मवेशी
रखनेवाला।

अल्पपुण्य (सं० त्रि०) क्षुद्र धर्मकार्यविशिष्ट, मज-
हबके छोटे काम करनेवाला।

अल्पपुष्पिका (सं० स्त्री०) पीत करवीर, पीला
कनेर।

अल्पप्रजस् (सं० त्रि०) ईषत् सन्तान वा प्रजायुक्त,
जिसके औलाद या रैयत कम रहे।

अल्पप्रभाव (सं० त्रि०) अगुरु, तुच्छ, बेवजन,
नाचीज।

अल्पप्रभावत्व (सं० स्त्री०) तुच्छता, हिकारत।

अल्पप्रमाण (सं० पु०) अल्पं प्रमाणं यस्य, बहुव्री०।

१ लतापनस, तरबूज। २ चेलानक, खरबूजा।

(त्रि०) अल्प गुरुतायुक्त, जिसके कम वजन रहे।
४ न्यून प्रमाणविशिष्ट, जिसमें ज्यादा सबूत न देखे।

अल्पप्रमाणक, अल्पप्रमाण देखो।

अल्पप्रयोग (सं० त्रि०) ईषत् नियुक्त, ज्यादा इस्ते-
मालमें न आनेवाला।

अल्पप्राण (सं० पु०) अल्पश्वासी प्राणः प्राण-
वायोः बाह्यप्रयत्नविशेषश्चेति, कर्मधा०। १ वर्ण
विशेषके उच्चारण-विषयमें मुखसे वहिर्गत प्राणवायुका
प्रयत्न विशेष, य, र, ल, व, क, ग, ङ, च, ज, झ, ट,
ड, ण, त, द, न, प, ब, और म इन अक्षरोंको मुंहसे
निकालनेकी कोशिश।

“बाह्यप्रयत्नस्त्वेकादशधा विचारः संवारः श्वासी नासी घोषो ऽघोषो-
ऽल्पप्राणो महाप्राण उदात्तोऽनुदात्तः स्वरितश्चेति।” (सिद्धान्तकौमुदी)

अल्पः प्राणः प्राणक्रिया यस्योच्चारणे, बहुव्री०।
२ वर्णविशेष, अल्पप्राणक्रियासे ही निकलनेवाला वर्ण,
जिस हफ्तेके बोलनेमें ज्यादा कोशिश करना न पड़े।
वर्णका प्रथम, तृतीय एवं पञ्चम वर्ण तथा य, र, ल, व,
और अटुग्म लघु वैयाकरण, वेदसिद्ध वर्णका यम-
नामक पञ्चम वर्ण संयुक्त द्विरुक्तके मध्यस्थित पूर्व सदृश
प्रथम और तृतीय लघु वर्णको अल्पप्राण कहते हैं।
(त्रि०) अल्पः प्राणः बलं वायु र्यस्य यत्र वा, बहुव्री०।
३ अल्प-बल-युक्त, कम ताकत।

अल्पबल (सं० त्रि०) निर्बल, कमजोर।

अल्पबाध (सं० त्रि०) अधिक बाधा न डालनेवाला,
जो कम दिक् करता हो।

अल्पबुद्धि (सं० त्रि०) मूर्ख, नादान, कम समझ।

अल्पभाग्य (सं० त्रि०) ईषत् ऐश्वर्ययुक्त, कम-
बखूत।

अल्पभाषिन् (सं० त्रि०) ईषत् सम्भाषण करने-
वाला, कमसखुन, जो ज्यादा न बोलता हो।

अल्पमध्यम (सं० त्रि०) क्षुद्र कटिविशिष्ट, पतली
कमरवाला।

अल्पमसृक (सं० पु०) चित्रकक्षुप, चीतका
पौधा।

अल्पमच्चिका (सं० स्त्री०) मच्चिकाविशेष, छोटी
माछी।

अल्पमात्र (सं० स्त्री०) १ न्यूनता, कमी। २ ईषत् समय, थोड़ी देर।

अल्पमारिष (सं० पु०) मारिषति न कमपि हिनस्ति, इगुपधात् क, अल्पः क्षुद्रकायश्चासौ मारिष-
श्चेति, कर्मधा०। क्षुद्रमारिष, छोटी चौलाई।
'तण्डुलीयोऽल्पमारिषः'। (अनर) इसका शाक लघु, शीत-
वीर्य, रुच, पित्तघ्न, कफनाशक, मल-मूत्र-निःसारक,
रुच्य, दीपन और विषघ्न होता है। (भावप्रकाश)

अल्पमूर्ति (सं० त्रि०) न्यून शरीर-विशिष्ट, छोटे
जिस्मवाला।

अल्पमूर्तिस (सं० स्त्री०) न्यून संख्यक पदार्थ,
कोई छोटी चीज।

अल्पमूल्य (सं० त्रि०) न्यून मूल्यविशिष्ट, कम-
कीमत, सस्ता।

अल्पमेधस् (सं० त्रि०) अल्पा ईषत् मेधा धारणा
शक्तिर्यस्य, असिजन्त बहुव्री०। अल्प धारणा-शक्ति-
युक्त, दुर्मेध, अधिक स्मरण न रखनेवाला, कमसमर्थ,
नावाक्किफ, पागल।

अल्पम्यच (सं० त्रि०) अल्पं अल्पपरिमाणं पचति,
अल्प-पच कर्तरि खश् सुम् च, उप०समा०। १ अल्प
परिमित पाक करनेवाला, क्षपण, लालची, जो पेट
काटता हो। (स्त्री०) २ अल्पपाकसाधन पात्र,
छोटी हांडी।

अल्परसा (सं० स्त्री०) हेमवती, सोनलुही।

अल्पवयस् (सं० त्रि०) न्यून अवस्थावाला, कम-
सिन, जो उम्रमें ज्य.ादा न हो।

अल्पवयस्क, अल्पवयस्।

अल्पवर्तक (सं० पु०) तित्तिरपची, तीतर।

अल्पवादिन् (सं० त्रि०) ईषत् भाषण करनेवाला,
कम सखुन, जो ज्य.ादा बोलता न हो।

अल्पविद्य (सं० त्रि०) न्यून ज्ञानविशिष्ट, मूर्ख,
कुशिक्षित, अशिक्षित, कम इलम, जो सीखा-पढ़ा
न हो।

अल्पविषय (सं० त्रि०) परिमित परिमाणवाला,
तुच्छ विषय-संलग्न, महद्दृष्ट गुञ्जायशका, जो छोटी
बातमें पड़ा हो।

अल्पशः, अल्पशस् देखो।

अल्पशःपंक्ति (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष, कोई बहर।

अल्पशक्ति (सं० त्रि०) न्यून बलविशिष्ट, कम
ताकत, कमजोर।

अल्पशमी (सं० स्त्री०) अल्पा चासौ शमी चेति,
कर्मधा०। क्षुद्र शमीवृक्ष।

अल्पशस् (सं० अव्य०) १ निम्न परिमाणमें, हल्के
दरजेपर, कुछ, कम। २ पृथक्-पृथक्, अलग-अलग,
दूरसे। ३ समय विशेषपर, कभी, जब, तब।

अल्पशुक्रता (सं० स्त्री०) पित्त-जन्य शुक्राल्पता
रोग, सफरा बिगड़नेसे पैदा हुई वीर्य कम पड़
जानेकी बीमारी।

अल्पशोफ (सं० पु०) सर्वाक्षिरोग, आंखकी कोई बीमारी।

अल्पसरस् (सं० स्त्री०) अल्प सरः, कर्मधा०।
क्षुद्र जलाशय, छोटा तालाब।

अल्पसरोवर—बड़ोदा राज्यस्थ काडो जिलेके सिद्धपुर
स्थानका पवित्र तालाब।

अल्पस्त्रायु (सं० त्रि०) ईषत् स्त्रायु-विशिष्ट, जिसके
नसे कम रहें।

अल्पाकाङ्क्षिन् (सं० त्रि०) ईषत् अभिलाष-
शाली, कमखाद्दिश, जो थोड़ेसे ही खुश हो।

अल्पाग्नि (वे० त्रि०) सूक्ष्म चिह्न विशिष्ट, जिसमें
बारीक धब्बे पड़ें।

अल्पायु (हिं०) अल्पायुस् देखो।

अल्पायुस् (सं० पु०) अल्पम् आयुजीवितकालो
ऽस्य। बहुव्री०। १ बकरी। मालम होता है, इस स्थल-
में चौपायोंमें ही आयुका परिमाण रखकर बकरीको
अल्पायु कहा गया है। बङ्गाली डाकपुरुषके मता-
नुसार—'नरा गजा विशे शय, तार अर्धेक वांशे हय। वायश् बद्धा
तेरो क्षागला, गुणे जे'थे बरा पागला।' बकरीकी परमायु तेरह
वर्ष होती है। पर कितने ही छोटे छोटे कीड़े एक
घण्टेसे अधिक नहीं बचते। अतएव उन जैसा अल्प-
जीवी और कोई नहीं है।

कर्मधा०। २ जिस प्राणीका जितने समय जीवित
रहना उचित है, उसकी अपेक्षा न्यून काल। मनु-
ष्यकी परमायु न्यूनधिक सौ वर्ष है। परन्तु पुराणदिनें

जो अधिक परमायुकी बात लिखी है, वह वर्णना वाङ्मय भिन्न और कुछ भी नहीं है।

हमारे देशके कितने ही आदमियोंकी धारणा है, विधाताने जितनी आयु निर्धारित कर दी है। उसका चयन नहीं होता। पर शास्त्रकारों और प्राचीन वैद्य-शास्त्रका वैसा मत नहीं है। याज्ञवल्क्य कहते हैं,—

“वर्णाधारश्चे हयोगाद् यथा दीपस्य संस्थितिः।

विक्रियापि च दृष्टे वमकाले प्राणसंचयः॥”

जैसे वत्ती, आधार और तेलके संयोगसे दीप जलता है, पर तेज हवा आदि लगनेसे तेल रहनेपर भी प्रदीप बुझ जाता है, उसी तरह क्रिया विकार होनेसे परमायु रहते भी प्राणीका जीवन नष्ट हो जाता है।

चरकमें भी लिखा है, कि नियति एवं परिमित आयुपर विश्वास करना असाधु है। जो लोग ऐसा विश्वास करते हैं, वे लोग भी मन्त्र, स्वस्त्रायन और व्यवहार करते देखे जाते हैं। तथा प्रचण्ड वा उन्मत्त जन्तुके निकटसे भाग जाते हैं। अतएव ऐसे आदमी मुहसे नियति एवं निर्दिष्ट परमायुकी बात कहते हैं, परन्तु वास्तवमें मन ही मन उसे स्वीकार नहीं करते।

आयुः बुद्धि एवं चयका विवरण आयुः शब्दमें देखो।

अल्पांश (सं० पु०) नियमित आरम्भ, कायदेका आग्राज, सिलसिलेवार शुरु।

अल्पाल्प (सं० त्रि०) अल्पः प्रकारः अल्पः विकृतिः।

१ अति अल्प, निहायत क्लील, बहुत थोड़ा। अल्पं पादः तस्मादल्पं अर्धं, ५-तत् वा। २ अर्ध, निस्त्र्य, आधा। (अव्य०) ३ थोड़ा-थोड़ा, धीरे-धीरे।

अल्पाल्पक, अल्पाल्प देखो।

अल्पास्थि (सं० स्त्री०) परुषक फल, फालसा।

अल्पाहार (सं० पु०) १ लघु भोजन, हलका खाना। २ पथाचरण, परहेज। (त्रि०) ३ पथसे रहने-वाला, परहेजगार।

अल्पाहारिन् (सं० त्रि०) लघुभोजन करनेवाला, परहेजगार, जो कम खाता हो।

अल्पिका (सं० स्त्री०) १ वनमक्षिका जाति, कोई चूल्ही माछी। २ मुहपणी, मसूर। ३ अल्पमात्रा, थोड़ी खराक।

अल्पित (सं० त्रि०) अल्पं क्रियते स्म, अल्प कृत्यं णिच् कर्मणि क्त। अल्पीकृत, कम किया हुआ, जो घट गया हो।

अल्पिष्ठ (सं० त्रि०) अतिशयेन अल्पम्, इठनोडिह-झावात् अल्पस्य टिलोपः। अतिशय अल्प, निहायत कम, बहुत थोड़ा।

अल्पिष्ठकीर्ति (सं० त्रि०) न्यून प्रशंसाविशिष्ट, कम शोहरत, जो ज्यादा मशहूर न हो।

अल्पीकृत (सं० त्रि०) १ चुद्र बनाया हुआ, जो छोटा किया गया हो। २ चूर्णीकृत, कुचला हुआ।

३ घटाया हुआ, जो अददमें कम किया गया हो।

अल्पीभूत (सं० त्रि०) १ न्यून पड़ा हुआ, जो छोटा पड़ गया हो। २ घटा हुआ, जो अददमें कम पड़ा हो।

अल्पीयस् (सं० त्रि०) इदमनयोः अतिशयेन अल्पम्। अल्पता, ज्यादा कम। जब दो द्रव्यमें एक ज्यादा कम पड़ता, तब यह शब्द आता है। (स्त्री०) अल्पीयसी।

अल्पेच्छु, अल्पाकाङ्क्षिन् देखो।

अल्पेतर (सं० त्रि०) वृहत्, बड़ा, जो छोटा न हो।

अल्पेशाख्य (सं० त्रि०) चुद्र शाखाविशिष्ट, कमीना खान्दान, जो अच्छे घरानेका न हो।

अल्पोन (सं० त्रि०) ईषत् न्यून, कुछ कम, जो बिलकुल पूरा या तैयार न हो।

अल्पोपाय (सं० पु०) चुद्र उद्योग, हकीर जरिया।

अल्फ़ खान्—व्यक्ति विशेष, सन् १३०० ई० को इन्होंने गुजरातका सोमनाथ मन्दिर तोड़ा था। पाटनवाले भद्रकाली मन्दिरकी दीवारमें जो टूटा-फूटा पत्थरीला शिला-लेख मिला, उसमें सोमनाथके मन्दिरका वृत्तान्त सविस्तर लिखा है। इसमें सन् ११६८ ई० या वल्लभी ८५० पग है। लेखमें देखेंगे,—सोमेश देवका मन्दिर पहले सोमने सोने, रावणने चांदी, कल्याणने लकड़ी और भीमदेवने पत्थरका बनाया था। कुमार-पालके अधीन गण्ड वृहस्पतिने फिर मन्दिरकी पूर्वा-वस्था स्थापन किया। गण्ड वृहस्पतिके लिये शिला

फलकमें निम्नलिखित विषय अङ्कित है,—‘वह पाश-पत पाठशालाके कान्यकुब्ज ब्राह्मण, मालव नरेशके शिष्य और सिद्धराज जयसिंहके मित्र रहे। सोमनाथमें उन्होंने कितने ही मन्दिरोंका जीर्णोद्धार कराया और नया देवालय बनवाया था। खासा नृपतिके हाथ न लगाते यह कुमारके केशरेश्वरका मन्दिर भी ठीक करा गये; कुमारपालका समय बीतनेपर गण्ड वृहस्पतिके सन्तान सोमनाथके, धार्मिक सञ्चालक रहे।’

अल्बोर्कनी—अरब देशके कोई ग्रन्थकार। सन् १०३०-३३ ई० को इनका मूलग्रन्थ ‘तारीख हिन्द’ भारतमें संग्रह किया गया था। अबू रैहान अल्बोर्कनी देखो।

अल्बूकार्क—पोर्तूगोज़ भारतके द्वितीय शासक। सन् १५०८ ई० को इन्होंने फ्रान्सिस्को डी अल्मोदासे पोर्तूगोज़ भारतका शासनभार मिला था। इन्होंने पोर्तूगोज़ प्रभाव भारतमें बहुत फैलाया और कालीकट जीत न सकनेपर सन् १५१० ई०में गोवाको धर दबाया। सिंहलकी चारो ओर जलयात्रा कर यह मलक्काके मालिक बने और श्याम तथा स्यायिस द्वीपके साथ व्यवसाय चलाने लगे थे। सन् १५१५ ई० को इन्होंने ईरानी खाड़ी और लोहित-सागरकी जलयात्रासे लौट गोवामें शरीर छोड़ा।

अल्मबाडे—मन्द्राज प्रान्तके कोयम्बटूर जिलेका नगर। यह कावेरीके वामतट औरङ्गपट्टनसे साढ़े बत्तीस कोस पूर्व, अक्षा० १२° ८' उ० और द्रावि० ७७° ४८' पू० पर अवस्थित है। सन् ई०के १७वें शताब्दीमें यह स्थान अतिशय प्रधान रहा। सन् १७६८ ई० को कुछ दिन इस नगरमें अंगरेजी फौज पड़ी, हैदर अलीका दल आते ही इसे छोड़ गयी थी।

अल्महदी—अब्बास वंशके ३रे खलीफा। सन् ७७५ ई० की ८वीं अक्तोबरको यह बगदादमें अपने बापकी जगह गद्दीपर बैठे थे। अल्मकनाका बलवा ही सबसे बड़ी बात हुआ। इनके सिंहासनारुढ़ होनेपर छः वर्ष तक यूनानियोंसे युद्ध चला, किन्तु किसीका पक्ष गिरा न था। मकनाका बलवा दब जानेसे इन्होंने अपने लड़के हारुन अल्-रशीदकी

हजार सिपाही ले यूनानी राज्यपर आक्रमण करनेको कहा। वह यूनानी फौजको हरा और देशको भाग और तलवारसे उड़ा कानष्ट्रिटिनोपल तक जा पहुँचे थे। यूनानी महारानीने भयभीत हो और ७०००० अशर्फी वार्षिक कर देनेको कह सन्धि कर ली। हारुन लूटसे मालोमाल बन बगदाद वापस गये थे। कहते हैं, सन् ७८१ ई० को किसी दिन सवेरे सूर्य अकस्मात् धुंधला पड़ा और दोपहर तक अंधेरा छाया रहा। इसना नामक किसी वैश्याने अज्ञान वश इन्हे विष दे दिया था। उसने अपनी प्रतिद्वन्द्वी वैश्याको जुहरसे भरौ नासपाती नजर को, जिसने उसे खलीफाको सौंपा। यह नासपाती खाते-खाते मर गये थे। इनके बड़े लड़के अल्हादी सिंहासनके उत्तराधिकारी हुए।

अल्मामून—अब्बास वंशके ७वें खलीफा और हारुन अल्-रशीदके द्वितीय पुत्र। इनका उपनाम अब्दुल्ला रहा। सन् ८१३ ई०की ६ठीं अक्तोबरको अपने भाई अल्-अमीनके मारे जानेपर यह बगदादके खलीफा बनाये गये। सन् ८२० ई०को इन्होंने अपने सेनापति ताहिर इब्न हुसैन और उनके सन्तानको खुरासान राज्यका समग्र अधिकार सौंप दिया था। दूसरा भगड़ा न उठते भी अफरीकाके मुसलमानोंने सिसिली पर हमला मार कितने ही स्थान छीन लिये। इन्होंने क्रीटका अंश विशेष जीता, अच्छे-अच्छे यूनानी पुस्तकका अरबीमें अनुवाद कराया और बहुमूल्य ग्रन्थका संग्रह लगाया था। इन्होंने बगदादमें ज्योतिषकी पाठशाला स्थापन करनेका भी यश मिला। खुरासानकी राजधानी तूसमें यह रहने लगे। इनके ही उत्साहसे खुरासान विद्वानोंका स्थान और तूस बगदादका प्रतिद्वन्द्वी हो गया। सन् ८३३ ई०की १८वीं अगस्तको एशिया माइनरमें २० वर्ष और कुछ मास राज्य करने बाद यह मरे और तरसूसमें गड़े थे। इनको पत्नी पीछे ५० वर्ष जीकर सन् ८८४ ई०की २२ वीं सितम्बरको चल बसी। राज्यका उत्तराधिकार इनके भाई मौतसिम-विज्ञाहको मिला था।

अल्मोदा—भारतके प्रथम पोर्तुगीज शासक। इनका पूरा नाम फ्रान्सिस्को डी अल्मोदा रहा। सन् १५०५ ई० में यह अपने साथ भारतको बीस जहाज और पन्द्रह हजार सिपाही लाये थे।

अल्मुकतदिर बिस्लाह—अब्बास वंशके १८वें खलीफा और अल मौतजिद बिस्लाहके पुत्र। सन् ८०८ ई० को यह अपने भाई अल्मुक्तफीकी जगह बगदादमें गद्दीपर बैठे थे। २४ वर्ष २ मास ७ दिन राज्य करने बाद सन् ८३२ ई० की २८वीं अक्तोबरको किसी खोजने इन्हें मार डाला। राज्यका उत्तराधिकार इनके भाई अलकाहिर बिस्लाहको मिला था।

अल्मुक्तफी बिस्लाह—अब्बास वंशके १७ वें खलीफा। यह सन् ८०२ ई० को अपने पिता अलमौतजिद बिस्लाहकी जगह बगदादमें गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने कर्मतियोंपर कई बार विजय पाया, किन्तु उन्हें दबा न सके। फिर भी मावन्नहर पर आक्रमण करनेसे तुर्कोंको कितनी ही फौज खो चारना पड़ा था। पीछे इन्होंने यूनानियोंसे लड़ साइप्रियाको छीन लिया। सन् ८०५ ई० को यह लड़ भिड़ अहमद इब्न तूलानके वंशसे सिरिया और मिस्र प्रान्त भी पा गये। उसके बाद फिर सफलताके साथ यूनानियों और कर्मतियोंसे लड़े थे। कोई साढ़े छः वर्ष राज्य चला, सन् ८०८ ई० को इन्होंने शरीर छोड़ा और युद्धके लिये खलीफोंमें बड़ा नाम पाया। इनके उत्तराधिकारी अल्मुकतदिर, अल्काहिर और अल्राजीसे कर्मतियों और सूदखोरोंने सिवा बगदाद नगरके सब कुछ छीन लिया था।

अल्मुहतादी—अब्बास वंशके १४ वें खलीफा। यह अलवासिक बिस्लाहकी कुबे नामक रण्डीसे पैदा हुए, जिसे लोग ईसाई कहते थे। सन् ८६८ ई० को अल्मुतैज बिस्लाहके सिंहासन-च्युत होनेपर इन्हें बगदादकी गद्दी मिली। इनके शासनके आरम्भकाल ही नूबिया, इथियोपिया और काफूरस्थानके जर्जीय अरबमें घुस बसने और कूफेतक जा पहुँचे थे। इन डाकुओंके गोलका सरदार अली इब्न मुहम्मद इब्न अबदुल रहमान रहा, जिसका नाम अल् हबौब भी

था। उसने भूठमूठ अपनेको अली इब्न अबु-तालिबका वंशज बता कर कितने ही शियाओंको इकट्ठा किया, बसरा और रमला नगर ले बहुत बड़ी फौजके साथ ताइग्रिसको पार किया। सन् ८७० ई० को तुर्कोंने इन्हें आधा मास राज्य करने बाद ही मार डाला था। इनका उत्तराधिकार अलमौतमिदको मिला।

अल्मेल—बम्बई प्रान्तके वीजापुर जिलेका प्राचीन ग्राम। कहते हैं, सन् ११५६-६७ ई०में कलचुरि-नृपति बिज्जलने इसे बसाया था। यह सिन्दगीसे छः कोस उत्तर पड़ता है। अल्मेलका अर्थ ऊपरकी खींचना है। प्रवाद है, किसीको हाथीके पैर नीचे दबानेका दण्ड दिया गया था। किन्तु वह अपने पुण्यबलसे हाथीको आकाशमें खींच ले गये; उसी दिनसे इस गांवका नाम अल्मेल हुआ। यहां राय-लिङ्गके मन्दिरमें तीन लिङ्ग प्रतिष्ठित हैं। एक लिङ्गमें चार मुख बने हैं। मन्दिर पर जो हाथी खिंचा, वह हौदेमें तीन आदिमियोंको चढ़ाये है। मण्डपके दशमें चार स्तम्भ कारकायसे शोभित और सशस्त्र द्वारपाल एवं छत्रधारी नाग चारो ओर दीवारोंपर बेल बूटेसे सजे हैं। मन्दिरके इधर-उधर कितनी टूटी-फूटी मूर्ति एवं नन्दीगण पड़ा और लक्ष्मीका एक छोटासा स्थान बना है। स्कूलके पास किसी पत्थरकी तख्ती पर एक ओर नागरी और तीन ओर कनाड़ी अक्षरोंमें शक १००७ (सन् १०८५ ई०) खोदा है। गांवसे बाहर हनुमानका टटा-फूटा मन्दिर पड़ा, उसपर एक हाथीकी मूर्ति बनी, जो दो आदिमियोंको रोके है। चारो ओर टूटी-फूटी मूर्ति मिलेगी। मन्दिरमें हनुमान, गणपति और दो लिङ्ग प्रतिष्ठित और दीवारोंपर द्वारपाल खचित हैं। इसके पास ईश्वरका नवीन मन्दिर और बावड़ी सङ्गमूसासे तैयार हुई है। सन् ११८४ फसलीके समय महाराष्ट्र-शासक रामाजी नरहरि बीनीवालेने यह मन्दिर बनवाया था। रामाजीने गणपतिका मन्दिर बनानेकी भी भूमि प्रदान की थी। सुनते हैं, गणपति देवने सामाजी नामक किसी व्यक्तिसे स्वप्नमें कहा,—

समीपवर्ती कूपमें हमारी शिलामूर्ति पड़ी है, तुम उसे निकाल प्रतिष्ठित करो। सन् १८०० ई० को जब वाजीराव पेशवाके नीचे मालोजी राव घोरपड़े शासक रहे, तब भी उपरोक्त प्रकारसे भवानीकी मूर्ति मिली थी। भवानीका मन्दिर साफ और सुथरा बना है। सन् १७८८ ई० के समय स्थानीय शेषगिरि राव देशपाण्डेने रामदेवका मन्दिर बनवाया था। उसमें राम, सीता और लक्ष्मण सङ्ग मरमरके बने हैं। मन्दिरके व्ययनिर्वाहार्थ वाजीराव पेशवाने जागीर लगा दी है। प्रति वर्ष चैत्रमासमें मेला लगता, जिसमें दश दिन तक ब्राह्मणभोज होता है। मन्दिरके समुख मारुतिका छोटा मन्दिर है। पावादि विश्वेश्वरका मन्दिर ठोस बना और हालमें संस्कार कराया गया है। उसमें एक खाली शृङ्ग एवं नौ कारुखजित् स्तम्भ विद्यमान और पास ही एक शिलालेख पड़ा है। गोविन्दराव मठवालेके पिछले इहतिमें देवप्पदिय साधुका समाधि बना है, जिसमें शिवलिङ्गका मठ, कूप और गूलरके पवित्र वृक्ष हैं। वृक्षके नीचे मारुतिकी मूर्ति बैठी है। चन्द्रसेन राव यादवने इस समाधिके व्ययनिर्वाहार्थ चौतीस रुपये नकद और इक्यानवे रुपयेकी सालाना जागीर लगा दी है। सन् १७७४ ई०में देवप्पदिय स्वर्गवासी हुए थे। वह अलमेलके देशपाण्डे रहे, तहसीलके कागज पत्र रखनेका काम करते थे। पीछे उन्हें अठनी ऐनापुरके माधवमुनिने अपना शिष्य कर साधु बना दिया। माधवमुनिके मरनेपर देवप्पदियने उनका समाधि निर्माण कराया और प्रतिवर्ष उत्सव मनाया। किसी वर्ष उत्सवके समय देवप्पदियके पास बिलकुल धन न रहा। एकायेक पचास सवार आये और हरिक दो रुपये नकद साधुको दे चलते बने। गांवसे ३०० हात फासलेपर गालिब साहबकी कब्र बनी, जो उसी जगह अपने गुरु अली उस्तादसे मिल गुम हुए थे। गालिब साहबकी कब्रपर प्रतिवर्ष मेला लगता है। कहते, कि मठसे उत्तर कितनी ही जैनमूर्ति गड़ी हैं। सन् १८७६ ई०में गांवसे पश्चिम बड़े तालाबकी मरम्मत होते समय एक

मन्दिर और कितनी ही मूर्तिका भग्नावशेष हाथ लगा। तालाबसे पूर्व लक्ष्मीका छोटासा मन्दिर बना है। पेशवाका बनवाया राजप्रासाद गिर गया है। थानेके पास टूटा-फटा किला पड़ा है। चम-डोघेमें कालेपत्थरका जो कुवां बना, वह 'भगिनी-कूप' कहाता है। प्रवाद है, दो बहनोंने कुवां बनवाया था। किन्तु उसमें पानी न निकला। अन्तमें किसी साधुने बताया,—'जब तक तुम दोनो बहन अपना प्राणसमर्पण न करोगी, तबतक कुवां खाली ही पड़ा रहेगा।' दोनो बहने ईश्वरका ध्यान और पूजन कर कूपमें जा लेटीं और वह रातों रात भर आया।

अलमोघ—१ मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़ा जिलेकी जागीर। यह महादेव पर्वतमें अक्षा० २२° १७' एवं २०° २५' उ० और द्राघि ७८° १८' तथा ७८° ३०' पू०के बीच अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल ५२ वर्गमील निकलता है। यह जागीर भोपाओं या शिवालयके कुलक्रमगत रक्षकोंके नाम लगी है। २ मध्यप्रदेशके छिन्दवाड़े जिलेका गांव। यह बहुत ऊंचे बसता और निहायत उमदा मालूम होता है। चारो ओर ऊपर चढ़नेमें बड़ी तकलीफ पड़ती है।

अलमोड़ा—युक्तप्रदेशके कुमायूँ जिलेका प्रधान नगर और हेडक्वार्टर। यह समुद्रपृष्ठसे ५४८४ फीट ऊपर अक्षा० २८° ३५' १६" उ० और द्राघि० २८° ४१' १६" पू०में अवस्थित है। इसको पहाड़की चोटी पर बसते और सेकड़ो वर्षसे अपने शासकोंका दुर्ग बनते देखते हैं। १७७४ ई०में पहले-पहल रोहिलाओंने कुमायूँपर चढ़ायी की थी। उन्होंने यह नगर लटा, किन्तु कुछ मास पीछे देशीय दरिद्रता और जल-वायुके काठिन्यसे मर गये। सन् १८१५ ई०को गोरखा-युद्धके समय भी यह नगर कौशलका केन्द्र बना और २६वीं अप्रैलको बड़ी गोलाबारीके बाद अंगरेजोंके हाथ लगा। यहां मजदूरीका काम खूब चलता है।

अलमौतजिद बिस्वाह—अब्बास वंशके १६वें खलीफा, सुवाफिकके पुत्र और अलमुतवकिल बिस्वाहके पौत्र। सन् ८८२ ई०को अपने चाचा अलमौतमिद बिस्वा-

इके मरनेपर इन्हें बगदादकी गद्दी मिली थी। सन् ८८५ ई०को मिस्रके खलीफा खमरावियाकी लड़कोसे बड़ी धूमधामके साथ इनका विवाह हुआ। इन्होंने कर्मतियोंसे युद्ध तो किया, किन्तु कितनी ही फौज मारी गयी और सेनापति अल्ल अन्वास कैद हुए थे। अपने विवाहके बाद ही इन्होंने खमरावियाके लड़के हारुनको सदाके लिये अवासम और किन्निस रीनका शासक बनाया, जिन्हें उसने ४५ हजार दीनार (अशफ़ी) वार्षिक कर देनेपर मिस्र और सिरौयामें मिला लिया। सन् ९०२ ई०को ८ वर्ष ८ मास और २५ दिन राज्यकर यह मर गये। इनके लड़के अल्ल मुक्तफी बिलाहको राज्यका उत्तराधिकार मिला था।

अल्ल (हि० पु०) वंशकी संज्ञा, खान्दानका नाम।
अल्लक (सं० पु०) १ कक़ोलविशेष, किसी किस्मकी शीतलचौनी। २ धान्यक, धनिया।

अल्लका (सं० स्त्री०) धान्यक, धनिया।

अल्लम-गल्लम (हि० पु०) १ कूड़ा करकट, अलर-बलर। २ वाही-तवाही, आय-बाय।

अल्लम प्रभुदेव—प्राचीन संस्कृत योगशिक्षक। स्वात्मारामने 'हठयोगप्रदीपिका'में इनका उल्लेख किया है।

अल्लहगञ्ज—युक्तप्रान्तके फर्रुखाबाद जिलेकी अलीगढ़ तहसीलका नगर। यह फतेहगढ़ शहरसे साढ़े छः कोस उत्तर-पूर्व अवस्थित है। इसमें धाना, डाकखाना, सराय और स्कूल बना है। सप्ताहमें दो बार बाज़ार लगता है।

अल्लहबन्द—बम्बई प्रान्तीय सिन्धु सीमाका मटिहा ढेर। यह अक्षा० २४°२१'०" और द्राघि० ६८° ११'०" पू०पर अवस्थित है। इसमें बालू और घोघेसे मिली खारी मट्टी भरी है। लम्बाईमें पचीस और कहीं-कहीं चौड़ाईमें यह आठ कोस बैठता है। सन् १८१८ ई०को भूकम्प होनेसे अल्लहबन्द ऊपर उठ आया था। सन् १८२५ ई०को सिन्धुनद बढ़नेपर यह बन्द टूटा और पानीने नीचे ढलकर एक भौल बना दिया।

अल्ला (सं० स्त्री०) १ माता, मा। २ धान्यक, धनिया। (फा० पु०) २ परमेश्वर, ब्रह्म। अल्लोपनिषद्में अल्लाके भजनकी बात लिखी है,—

‘‘ओं अल्ला इल्ले मिवावरुणो दिव्यानि धचे ।

इल्ले वरुणो राजा पुनर्ददुः ।

हयामि मित्रो इल्ला इल्ले वि ।

इल्लाज्ञां वरुणो मित्रो तेजकामाः ।

होतारमिन्द्रो होतारमिन्द्रो माहासुरिन्द्राः ।

अल्लो व्येष्ठं अेष्ठं परमं पूर्णं ब्राह्मणमज्ञां ।

अल्लो रसुर महमदरकवरस अल्लो ।

अल्लां आदल्लातुकमेककं ।

अल्लां वुकं निखातकम् ।

अल्लो यज्ञे न हुतहुलः अल्लां ।

सूर्यचन्द्रसर्वनचमाः अल्लो ऋषीणां ।

सविद्या इन्द्राय पूर्वः माथापरमन् ।

अन्तरिचाः अल्ला पृथिव्या अन्तरिचं ।

विश्वरूपं दिव्यानि धचे इल्ले ।

वरुणो राजा पुनर्ददुः ।

इल्लाकवर इल्लाकवर इल्लेति ।

इल्लाज्ञाः इल्ला इल्लाज्ञा अनादिस्वरूपा अथर्वणी शाखां दुः क्रीं जनान् पशन् सिद्धान् जलचरान् अदृष्टं कुरु कुरु फट् ।

असुरसंहारिणीं इं अलो रसुर महमदरकं वरस अलो अल्ला इल्लेति इल्लज्ञः’’ । अल्लोपनिषद् देखो।

अल्लाना (हि० क्रि०) चिल्लाना, गला फाड़-फाड़की आवाज़ निकालना, गुल मचाना, शोर करना।

अल्लामा (अ० स्त्री०) कलह करनेवाली स्त्री, लड़ाका औरत।

अल्लायी (हि० स्त्री०) पशुका कण्ठगत रोग, चौपायेके गलेकी बौमारी, घंटियार।

अल्लु (सं० स्त्री०) आलुक, आलूबोखारा।

अल्लूर—मन्द्राज प्रान्तके नेल्लूर जिलेका नगर। यह अक्षा० १४° ४१' ३०" उ० और द्राघि० ८०° ५' २१" पू०पर अवस्थित है। इसमें प्रधानतः धान बोनेवाले किसान रहते हैं। तीन उम्दा तालाबोंसे खेत सींचे जाते हैं। सब-मेजिस्ट्रेटकी कचहरी और डाकखाना मौजूद है।

अल्लेप्पी—मन्द्राज प्रान्तके त्रिवाङ्कोड़ राज्यका बड़ा बन्दरगाह और शहर। यह अक्षा० ८° २८' ४५" उ० और द्राघि० ७६° २२' ३१" पू०पर अवस्थित है। मन्द्राजसे ४६४ और कोचिनसे ३३ मील दक्षिण-समुद्रतट पर इसे पाते हैं। यह समुद्र और धानके

खेत बीच पड़ा तथा सामने बड़ासा भील भरा है। बारहो महीने लड़ड़ डालनेका सुभीता है। यहांसे लाखों रुपयेका अनाज, कहवा, इलायची, अदरक, मिर्च, नारियल, रस्सी और मछली बाहर भेजते हैं। इस नगरमें त्रिवाङ्गोड़ राज्यके जङ्गलका माल इकट्ठा होता और रस्सी बनानेका दो कारखाना चलता है। डेढ़ मील लम्बा जो मट्टीका द्वीप है, वह समुद्रके जोरको रोकता और जहाजोंकी हिफाजत करता है। २५ फीट ऊंचे बत्तीघरका आलोक समुद्रपर नौ कोससे देख पड़ता है। भीलसे नहर नगरमें आटी, जिसपर सात पुल बना है। महाराजका प्रासाद, कचहरी, मुनसिफो, अस्पताल, स्कूल वगैरह सब कुछ मौजूद है। सन् १८०८ ई०को इस नगरमें कुछ युगेपीय सिपाही नेयरोने मार डाले थे।

अल्पोपनिषत् (सं० स्त्री०) बादशाह अकबरके समयमें रचित एक उपनिषत्। अल्ला और अथर्ववेद शब्द १०६ प्रश्नों विवरणकी देखो।

अल्वा—गुजरात प्रान्तके रेवाकण्ठ राज्यकी जागीर। इसमें सात ग्राम लगते हैं। अल्वेकी उत्तर और दक्षिण बीरपुर, पांठलावडो; पूर्व गायकवाड़की गांव, पांठलावडी; और पश्चिम देवलिया ग्राम पड़ता है। क्षेत्रफल पांच वर्गमील है। इसके जागीरदार सड़सठ रुपये साल गायकवाड़की कर देते हैं। यहां मूल भील ही ज्यादा रहते हैं।

अल्हजा (हिं० पु०) अलहजल, बातका बतझड़, गुपशप, बेतुकी।

अल्हड़ (हिं० वि०) १ अल्पवयस्क, कमसिन। २ अनुभवरहित, बेतजर्बा। ३ अकुशल, बेचकूफ। ४ निर्द्वन्द्व, बेपरवा। (पु०) ५ छोटा बड़ड़ा।

अल्हड़पन (हिं० पु०) १ अल्पवयस्कता, कमसिनी। २ अनुभवरहित्य, लातजबेकारी। ३ अकुशलता, नादानो। ४ निर्द्वन्द्वता, बेपरवायी।

अल्हादी—अब्बास वंशके ४थे खलीफा और अल्मेहदीके पुत्र। सन् ७८५ ई०की ४थी अगस्तको यह अपने पिताकी जगह बगदादमें गद्दीपर बैठे थे। इन्होंने एकवर्ष और एक महीने राज्य किया। सन् ७८६

ई०के सितम्बर मास अपने छोटे भाई हारुन् अल्-रसीदको मार डालनेकी चेष्टा करनेपर वजीरने इन्हें जहर दिलाया था। इनके मरनेपर सुप्रसिद्ध हारुन् अल्-रसीदने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

अव (सं० अन्त्य०) अव-अच्। १ अवश्य, जरूर। २ नियोगसे, मेलमें। ३ तिरस्कारमें, झिड़ककर। ४ असम्पूर्ण रूपसे, अधूरे तौरपर। ५ शुद्ध होकर, सफायेसे। ६ परिभवमें, नीचेसे। ७ सादृश्य रूपसे, बराबर। 'अनालम्बनविज्ञानविशेषगत्यामिश्रितम्।

इषदधे परिभवेऽप्येवौपम्येऽवधारणे॥' (विश)

यह चादिगणौय अव्यय है। इसके बाद अन्य शब्दका समास पड़नेसे अकार विकल्पमें उठ जाता है। जैसे—अव-गाह—वगाह, अवगाह। (वे० त्रि०) ७ अभिलाषयुक्त, खादिशमन्द, प्यार करनेवाला। (हिं० अव्य०) ८ और।

अवंश (सं० पु०) १ नीच वंश, कमीना खान्दान्। (वे०) २ निराधार, बेसहारा, जो किसोपर टिका न हो।

अवकट (सं० स्त्री०) अवै, अव स्वार्थे कटच्। देरूप्य, सुखालिप्त, उलट पुलट।

अवकटिका (सं० स्त्री०) माया, छल, छद्म, धोका, फरेब। अवकम्पित (सं० त्रि०) अव-कपि चलने कर्तरि क्त। १ विचलित, परेशान, घबराया हुआ। (पु०) २ बुद्धविशेष।

अवकर (सं० पु०) अव-कृ भावे अप्। १ उप-हति, हनन, नाश, जवाल, कत्ल, मर्तियामेट। अवकीर्यते, अव-क्त कर्मणि अप्। २ सम्माननो प्रश्रुति द्वारा विक्षिप्त धूलि, जो कूड़ा-कंकट भाड़से निकाला गया हो।

अवकर्षण (सं० स्त्री०) अव-कर्ष-ल्युट्। बलपूर्वक आकर्षण, जोरकी कशिश।

अवकलन (सं० स्त्री०) १ संग्रहण, जोड़तोड़। २ दृष्टि, नजर। ३ ज्ञान, समझ।

अवकलना (हिं० क्ति०) बुद्धि आना, समझमें बैठना, ज्ञान मिलना।

अवकलित (सं० त्रि०) अव-कल-क्त। दृष्ट, ज्ञात, महीन, देखा सुना या लिया हुआ।

अवका (सं० स्त्री०) अव-क्नुन्, चिपकादित्वात् न इत्वम्। शैवाल, सेवार।

अवकाद (दे० त्रि०) अवका भोजन करनेवाला, जो सेवार खाता हो।

अवकाश (सं० पु०) अव-काश-घञ्। १ विश्राम लेनेका समय, आरामका वक्त। २ अवसर, मौका। ३ समय, वक्त। ४ स्थान, सुकाम। ५ अतिरिक्त समय, फुरसत। ६ दृष्टिपात, नजर। ७ छन्दो-विशेष, कोई बहर। इसे पढ़ते समय लक्ष्य विशेष-पर दृष्टि रखना पड़ती है।

अवकाशवत् (सं० त्रि०) विस्तृत, कुशादा, लम्बा-चौड़ा।

अवकाशय (सं० त्रि०) अवकाश छन्द पढ़ते समय प्रवेश पाया हुआ।

अवकिरण (सं० स्त्री०) फेलाव, बिखेरना।

अवकीर्ण (सं० त्रि०) अव-क्त कर्मणि क्त। १ व्याप्त। २ चूर्णीकृत, जो चूर्ण किया गया हो। ३ ध्वस्त। ४ नष्ट। भावे क्त। ५ नष्ट-ब्रह्मचर्य, जिस ब्रह्मचारीका ब्रह्मचर्य-व्रत भङ्ग हो गया हो।

अवकीर्णिन् (सं० पु०) अवकीर्णं ब्रह्मचर्यव्रत-विरोधिरतः चित्तमनेन (इत्यादिभ्यः। पा ३।१।८८) इति इनि। ब्रह्मचर्यव्रत-भङ्गकारी जन। जो ब्रह्मचारी स्त्रीसङ्गादि द्वारा व्रत भङ्ग करता है। 'अवकीर्णं चतव्रतः।' (अमर) स्त्रीसङ्गसे व्यतिरिक्त भी रेतः आव होने-पर व्रत भङ्ग होता है, परन्तु अवकीर्णत्व नहीं होता। अल्पप्रायश्चित्तसे ही यह दोष छूट जाता है। यदि ब्रह्मचारी इच्छावशतः स्त्रीगमन करें, तो उनको तज्जन्य दोषनिवृत्तिके लिये निम्नलिखितानुसार प्रायश्चित्त कर्तव्य है। वन या चतुष्पथमें जा लौकिक अग्निसे रक्षोदेवत गर्दभको मार किंवा नेत्रत देवत चक्र पाक करके, 'कामाय स्वाहा, कामकामाय स्वाहा, निऋत्य स्वाहा, रक्षो-देवताभ्यो स्वाहा' इस मन्त्र-द्वारा आहुति प्रदान करनेसे शुद्धि लाभ कर सकते हैं। अनिच्छावश अर्थात् स्वप्नादिमें यदि ब्रह्मचारीका शुक्र आव हो जावे, तो वह गन्धपुष्प द्वारा सूर्यकी पूजा कर फिर (पुनर्मात्रेण इन्द्रियम्) इस ऋचाको तीन बार जप

ले। यही उसका प्रायश्चित्त और इसीसे शुद्धि लाभ भी होता है। यथा—

“स्रग्ने सिक्ता ब्रह्मचारी विजः यक्रमकामतः।

स्वात्कार्कर्मयिला त्रिः पुनर्मात्रेण च जपेत्॥” (मनु ३।१८१)

अवकुञ्चन (सं० पु०) १ समेटना। २ बटोरना।

अवकुटार (सं० त्रि०) अव स्वार्थे कुटारच्। १ अत्यन्त-निम्न, बहुत नीचा। (क्ता०) २ वैरूप्य, विरूप्य, बद-सूरत, जिसको कान्ति अच्छी न हो।

अवकुष्ठ (सं० त्रि०) अव-कुष्ठ-क्त। १ दूरीकृत, दूर किया हुआ। २ निष्कासित, निकाला हुआ।

‘निष्कासितोऽवकुष्ठः स्वात्।’ (अमर) ३ निगलित, नीचे उतारा हुआ। ४ नीच, नीच जाति। अवकुष्ठं गृहमार्जना-दिना अवकर्षणमस्त्यस्य अर्श-आदि-अच्। (पु०)

५ घरमें भाड़ू लगानेवाला दास या नौकार।

अवकुष्ठय (सं० त्रि०) अव-कुष्ठ-कर्मणि क्यप्। १ आकर्षणीय, आकर्षण करने योग्य, जिसे खींचकर ले आवें। २ दूरीकरणीय, त्याज्य, जो छोड़ देने लायक हो। (अव्य) अव-कुष्ठ-ल्यप्। ३ आकर्षण करके।

अवकृप्ति (सं० त्रि०) अव-कृप्-क्तिन्। सम्भावना।

अवकेशिन् (सं० त्रि०) अव असम्पूर्णं केन सुखेन ईशते ऐश्वर्यवान् भवति पल्लवादि सत्त्वेपि फलराहित्यात् अवक-ईश-ईनि। १ बन्धु वृक्ष, जिस वृक्षमें फल लगता न हो। ‘बन्धोऽफलोऽवकेशो च।’ (अमर) अव असम्पर्णः केशा विद्यन्ते अस्य इति। अल्पकेशयुक्त, जिसके बाल थोड़ा रहे।

अवकोकिल (सं० त्रि०) अव-कृष्-कोकिलया प्रादि० सं०। १ कोकिलकी तरह बोलनेवाला। (पु०) २ कोकिलाका शब्द, कोयलकी बोली।

अवक्खन (हिं० पु०) देखना।

अवक्त्वय (सं० त्रि०) न वक्तव्यम्, न ज्ञातम्। १ बोलनेके अयोग्य, जो बोलने लायक न हो। २ अज्ञीय। ३ निषिद्ध। ४ मिथ्या।

अवक्ता (सं० त्रि०) नास्ति वक्तां मुखं यस्य। न ज्ञातव्यम्। व्रणविशेष, किसी किसका फोड़ा। जिस फोड़ेके मुंह न रहे।

अवक्र (सं० त्रि०) न वक्रं विरोधे नञ्-तत्। सरल,
सीधा, जो टेढ़ा न हो।

अवक्रन्द (सं० त्रि०) अवक्रन्दति अवक्रन्द कर्तरि
अच्। जो धीरे धीरे रोवे।

अवक्रन्दन (सं० क्ली०) अवक्रन्द-भावे ल्युट्। धीरे-
धीरे रोना।

अवक्रम (सं० पु०) अव-क्रम-भावे घञ्। अवगम,
निम्नगति। नीचे जाना।

अवक्रय (सं० पु०) अवक्रोषीते अनेन अव-क्रो-
अच्। १ कोई चीज दे दूसरी चीज लेना, बदला।
२ मूल्य, दाम। ३ भाड़ा, किराया। ४ कर। भावे
अच्। ५ मूल्यदानपूर्वक ग्रहण। जिसे दाम देकर
ले, खरीदा हुआ।

अवक्रान्ति (सं० स्त्री०) अव-क्रम-क्रान्तिन्। १ निम्न-
गमन, नीचे चलना। उतार, गिराव। २ भुकाव।

अवक्रामिन् (व० त्रि०) निकल जानेवाला, भगिन्।

अवक्रुष्ट (सं० त्रि०) अव-क्रुश-कर्मणि क्त।
जिसके ऊपर आक्रोश किया गया हो। “अवक्रुष्टः
क्रोशितः।” (सि० कौ०)

अवक्रोश (सं० पु०) कर्कश स्वर, कड़ो बोली,
कोसना, गाली, निन्दा।

अवक्लिन्न (सं० त्रि०) अव-क्लिद-क्त। १ आर्द्र,
ओढ़ा, तर। २ भीगा हुआ, सड़ा, गलित, गोत्रा।

अवक्लोद (सं० पु०) अव-क्लिद भावे घञ्। १ पाका-
न्तर पाचनशील वस्तु विशेष। जलादि संयोगसे कोई
द्रव्य गलित हो जाता है, जैसे मिट्टीका कच्चा घट-
प्रभृति। किसी वस्तुके पक जानेपर जो कुत्सित
जल बाहर निकलता, उसको भी क्लोद कहते हैं। जैसे
पूय। (क्लो०) अव-क्लिद भावे ल्युट्। अवक्लोदन।

अवक्लण (सं० पु०) वैसुरा गीत, जो गाना बिना
सूरतालके गाया जाये।

अवक्लाथ (सं० पु०) १ अधचूरा काढा। २ जो क्लाय
बना न हो।

अवचय (सं० पु०) अव-चि-अच्। वृद्धिके पर नाशके
पूर्वकी अवस्था, भावका विकार विशेष।

अवचयण (सं० क्ली०) अव-चि-णिच्-ल्युट्। नाश-

जनक व्यापार विशेष। नाश करनेवाला व्यापार
जिस व्यापारके करनेसे नाश हो।

अवचाम (वे० पु०) चतिपूरण, नुक्तसानदिही।

अवचित्त (सं० त्रि०) अव-चिप् कर्मणि क्त।
१ चित्तवस्तु, फेको हुई चोज। २ गच्छित धन, जो
धन व्यय शून्य बन्धु जनके निकट रचित हुआ हो।
३ जो बन्धक रखा जाय। ४ गिरा हुआ। ५ अव-
मानित।

अवचीण (सं० त्रि०) अव-चि कर्तरि क्त चेरिकार-
दोषः तकारस्य नकारः। १ चयप्राप्त, जो चय हो गया
हो। २ विनाशोन्मुख वस्तु, नाश होनेवाला चीज।
(क्ली०) भावे क्त। ३ अवचय। निष्ठाशानन्दर्प। पा ४।३।२०।
भाव और कर्मवाच्य भिन्न निष्ठा परे रहनेसे वि
धातुको दीर्घ होता है। सुधशोधके मतमें भाव
वाच्य क्त परे रहनेपर भी उक्त धातुका विकल्प दीर्घ हो
जाता है। चिगे दीर्घान्। पा ५।४।४२। इस सूत्रसे दीर्घ
ची धातुके परस्थित निष्ठा तके स्थानमें न होता है।

अवक्षुत्त (सं० त्रि०) अव-क्षु-क्त। जिस वस्तुपर
क्षीक पड़ गई हो। यह वस्तु अपवित्र हो जातो,
पुनः वैध कार्यमें निषिद्ध ठहरतो है।

अवक्षेप (सं० पु०) अव-क्षिप् भावे घञ्। १ अधा-
पतन, नीचे फेंकना। २ अपवाद, इन्जाम। ३ निन्दा।

अवक्षेपण (सं० क्ली०) अव-क्षिप् भावे ल्युट्।
१ नीचे फेंकना, गिराव। देशेषिक दर्शनमें यह
अवक्षेपण, आकुञ्चन आदि पांच कर्मों या क्रियाओंको
कहते हैं। आधुनिक विज्ञानके अनुसार प्रकाश, तेज
या शब्दकी गतिमें उसके किसी पदार्थसे होकर
जानेपर वक्रताका होना माना गया है। २ अपवाद,
निन्दा।

(स्त्रो०) करणे ल्युट् लोप्। अवक्षेपणी। १ वाग-
डोर, लगाम। २ बाला ओषधि।

अवखात (सं० क्ली०) अव-खन्-क्त। निम्न खात,
गभीर गर्त, गहिरा गड्ढा। जन-मन-खनो सञ्-मनोः। पा
५।३।२१। भृजादि सन् एवं भृजादि कित् डित् संज्ञक
प्रत्यय परे रहनेसे जन, सन, एवं खन धातुके अन्तमें
आकार आदेश होता है।

अवखाद (सं० पु०) अवज्ञातो निन्दितो खादो
खाद्यम्, प्रा० स० । निन्दित खाद्य ।

“नात्र अवखादो अस्ति वः ।” ऋक् ८ । ४१ । ४ ।

“अवसन्तव्यः खादो जुगुप्सितहविर्दिशेयः ।” (साधण)

अवगण (सं० त्रि०) गणभिन्न, अकेला ।

अवगणन (सं० स्त्री०) अव-गण भावे ल्यट् ।

१ अवज्ञा, निन्दा, तिरस्कार । २ पराभव, पराजय
हार । ३ अपमान । नीचा देखना । ४ गिनती ।

अवगणित (सं० त्रि०) अव गण्यते स्म अव-गण-
कर्मणि क्त । १ अनिश्चित । २ निन्दित, अपमानित,
अवज्ञात, तिरस्कृत । ३ पराजित, पराभूत । ४ नीचा
देखा हुआ । ५ गिना हुआ ।

अवगण्ड (सं० पु०) अव-गम-ड । जमनाड्ड । उष्-
रा० । इति ड नास्येत्वम् । गण्डः कपोलः अव-
निन्दितो गण्डो येन । प्रादि बहुव्री० । गण्डस्थ व्रण-
विशेष । गालपरका कोई फोड़ा, गरगण्ड नामक
रोग विशेष ।

अवगत (सं० त्रि०) अव-गम-क्त । १ निम्नगत,
नीचे गया हुआ । २ गत । ३ ज्ञात, मालूम, बुद्ध,
बुद्धित, विदित । ४ जाना, प्रतिपन्न । ५ अवसित ।
६ गिरा हुआ ।

अवगतना (हिं० क्रि०) सोचना, समझना, विचारना ।

अवगति (सं० स्त्री०) अव-गम भावे क्तिन् । १ निश्चय-
ज्ञान । २ बुद्धि, धारणा, समझ । ३ कुगति, नौचगति ।

अवगथ (सं० पु०) अव-श्रुद्धौ अगमत् अव-गम
(निशीथगोपेधावगथाः । उष् २८) इति थक् । प्रातः-
खात, जो प्रातःकाल स्नान करता हो । ‘अवगथः
प्रातःखातः ।’ (उज्ज्वलदश)

अवगदित (सं० त्रि०) अव-गद-कर्मणि क्त ।

अपवादयुक्त, जो निन्दायुक्त कहा गया हो ।

अवगम (सं० पु०) अव-गम-भावे अप् । निश्चय
ज्ञान ।

अवगमन (सं० स्त्री०) देख सुनकर किसी बातके
अभिप्रायको जान लेना, जानना, समझना ।

अवगहित (सं० त्रि०) निन्दित, जघन्य ।

अवगाढ़ (सं० त्रि०) अव-गाह-क्त । यहां अव-

शब्दके अकारका विकल्प लोप होनेपर ‘वगाढ़’ रूप
होता है । (अपि शब्द देखो) १ निविड़ । २ अन्तःप्रविष्ट ।
चिन्ता या जल प्रभृतिके मध्य प्रविष्ट । निमग्नो
जो फिन्न या जलमें डूबा हो । ३ कठिन, या घन
वस्तु विषयीभूत पदार्थ । जैसे घटज्ञानके विषय,
घट-घटत्व एवं घट और घटत्वका संसर्ग सम्बन्ध ।
‘घट लावो’ ऐसा बोलनेपर घटत्वविशिष्ट घट,
उसका सम्बन्ध जो समवाय—यह तीन वस्तु जाना
जाता है । अतः अवगाढ़ शब्दमें यह तीन ही मालूम
पड़ता है ।

अवगारना (हिं० क्रि०) समझाना, बुझाना, जताना,
चितावना ।

अवगाह (सं० पु०) अव-गाह घञ् । १ स्नान ।
जलमें मलमलकर स्नान करना । २ अन्तःप्रवेश, भीतर
प्रवेश । ३ अवगति । ३ ज्ञान द्वारा विषय करना, जो
ज्ञानसे जाना जाये । आधारे घञ् । ४ स्नानका स्थान,
तालाव प्रभृति । (अवगाह देखो) इसका विकल्पसे
आकार लोप होनेपर ‘वगाह’ रूप होता है
(अपिशब्द देखो)

अवगाहन (सं० पु०) अव-गाह-ल्युट् । १ पानीमें
घुसकर स्नान, निमज्जन । २ प्रवेश, पैठ । ३ मथन,
विलोडन । ४ चाहना, खोज, छान, बीन । ५ चित्त
धंसाना, लीन होकर विचार करना ।

अवगाहना (हिं० क्रि०) १ घुसकर स्नान करना,
नहाना, निमज्जन करना । २ डूबना, धंसना, पैठना,
मग्न होना । ३ थहाना, छानना, छान बीन करना ।
४ मथना, विचलित करना, हचचल डालना ।
५ चलाना, डुलाना, हिलाना । ६ सोचना, विचारना,
समझना । ७ धारण करना, ग्रहण करना ।

अवगाह्य (सं० त्रि०) अवगाहितुमर्हम् अव-गाह-
अर्हाय्ये ल्यप् । १ स्नानादि योग्य जलादि । २ अन्तः
प्रदेश्य । जिसका मर्म बुझा जाये । जिसमें प्रवेश
किया जाये । ३ विषयी कार्य घटादि । (अव्य) अव-
गाह-ल्यप् । अवगाहन करके ।

अवगाहित (सं० पु०) स्नान किया हुआ ।
नहाया हुआ, जो स्नान कर चुका हो ।

अवगौत (सं० त्रि०) अव-गै-क्त ऐकारस्य आत्वम्
आत ईत्वं । १ निर्वाद । २ विवादशून्य । ३ अपवाद-
ग्रस्त । ४ दुष्ट । ५ गर्हित, निन्दित । मुहुर्दृष्ट, जो
बारंवार देखा गया हो । (अवगौतनु निर्वादि मुहुर्दृष्टे
विगर्हिते । विव) (स्त्री०) भावे क्त । निन्दा । अपवाद ।

अवगुण (सं० पु०) अव-गुण-क । १ दोष, दूषण,
ऐव । २ अपराध, गुनाह, खोटार्ह ।

अवगुण्ठन (सं० स्त्री०) अव-गुण्ठ-ल्युट् । १ मुख
आवरण करना, मुख ढंकना । २ घूँघट डालना ।
करणे ल्युट् । मुखच्छादनका वस्त्र, जिस कपड़ेसे मुँह
ढाँका जाये, पर्दा, घूँघट, बुर्का ।

अवगुण्ठनमुद्रा (सं० स्त्री०) मुद्रा विशेष । तर्जनी
अङ्गुली दीर्घ और उसका अग्र भाग थोड़ा वक्र बना
बाहर रखकर वाम हाथकी मुट्ठी बांध इधर उधर
भ्रमित करने (घुमाने) को अवगुण्ठनमुद्रा कहते हैं ।

अवगुण्ठनवती (सं० स्त्री०) घूँघटवाली स्त्री, जो
स्त्री मुँहपर घूँघट डाले हो ।

अवगुण्ठिका (सं० स्त्री०) अवगुण्ठयति आच्छा-
दयति । अव-गुण्ठ-णिच्-ण्वल् णिच् लोपः स्त्रीत्वात्
टाप् अत इत्वम् । १ जो स्त्री मुख आवृत करे
(छिपावे) करणकी कर्तृत्व विवचामें वस्त्रको भी
अवगुण्ठिका कहते हैं । २ घूँघट । ३ जवनिका,
पर्दा, चिक ।

अवगुण्ठित (सं० त्रि०) अव-गुण्ठ-णिच्-क्त इट् णिच्-
लोपः । १ आच्छादित । २ आवृत । ३ चूर्णीकृत,
जो चूर्ण किया हो ।

अवगुण्ठय (सं० त्रि०) अवगुण्ठयते आच्छाद्यते
अव-गुण्ठ चुरादि णिच् कर्मणि यत् णिच् लोपः ।
१ आच्छाद्य, आच्छादन करने योग्य, जो छिपाने लायक
हो । (अव्य०) अव-गुण्ठ-ल्यप् णिच् लोपः । २ आच्छा-
दन कर, छिपाकर ।

अवगुम्फन (सं० पु०) गूँथन, गुहन, ग्रन्थन,
गुंथायी ।

अवगुम्फित (सं० त्रि०) अव-गुम्फ-कर्मणि क्त ।
ग्रन्थित, गूँथा हुआ, गुहा हुआ ।

अवगुर्थ (सं० त्रि०) अवगुर्थयते अनुसृत्य अव-गु-

थ्यत् । १ मारनेको उठाया जानेवाला । (अव्य०)
ल्यप् । २ मारनेको उठाकर । ३ उद्यम करके ।

अवगृह्य (सं० स्त्री०) अवगृह्यते सन्धिकार्ये निषिध्यते
अव-ग्रह-क्यप् । १ अवग्रह, विच्छेद, पद पाठ कालमें
किञ्चित् अवसान । अर्थात् जिस समय सन्धि न हो ।
अवगोरण (सं० स्त्री०) अव-गुर-ल्युट् । वध कर-
नेके निमित्त अस्त्रादि ग्रहण, मारनेके लिये हथियार-
का उठाना ।

अवग्रह (सं० पु०) अव-ग्रह-अप् । १ विच्छेद ।
दो पदके मध्य किञ्चित् अवसान अर्थात् सन्धिका
प्रतिबन्ध । जैसे 'विश्रौजा' यहाँ 'विडौजा' ऐसा रूप
नहीं होता है । २ वृष्टिरोध, अनावृष्टि, वर्षाका
अभाव । ३ प्रतिबन्धक । ४ हस्तिका ललाट,
हाथिका माथा । ५ गजसमूह, गजयूथ । ६ स्वभाव,
प्रकृति । ७ ज्ञान विशेष । ८ रुकावट, अटकाव,
अड़चन, बाधा । ९ बांध, बन्द । १० अनुग्रहका
उलटा । ११ शाप, कोसना ।

१२ जिनमतानुसार ज्ञानके मति, श्रुत, अवधि,
मनःपर्यय केवल ये पांच भेद हैं । पांच इन्द्रिय और
मनकी सहायतासे जो ज्ञान होता है उसे मतिज्ञान
कहते हैं । उसके मूलमें ४ भेद हैं—अवग्रह, ईहा,
अवाय, धारणा । इन्द्रिय और पदार्थके योग्यस्थानमें
(मौजूद जगहमें) रहनेपर सामान्य प्रतिभासरूप
दर्शनके पौछे अवान्तर सत्ता सहित वस्तुके विशेष
ज्ञानको अवग्रह कहते हैं । मतिज्ञानके पहिले होने-
वाले सामान्य अवलोकन (प्रतिभासमात्र) को दर्शन
कहते हैं, जैसे कि रास्तेमें चलते हुए किसी मनुष्यको
दृष्टका स्पर्श हुआ तो "कुछ पदार्थ लगा" इस प्रकारके
सामान्य प्रतिभासको तो दर्शन कहते हैं और कोमल
कठोर आदि विशेष जानना अवग्रह है इसके दो भेद
हैं । व्यञ्जनावग्रह, अर्थावग्रह । अव्यक्त पदार्थोंके
ज्ञानकी व्यञ्जनावग्रह कहते हैं जैसे—कोरा (नवोन)
सरावामें जल दो चार बिन्दु डालनेसे गोला नहीं
होता परन्तु बार बार सींचनेसे आर्द्र हो जाता है
अर्थात् उसमें जल व्यक्त होने लगता है । उसी प्रकार
आदि इन्द्रियोंके अवग्रहमें ग्रहण होनेयोग्य शब्दादि

रूप परिणत हुए पुत्रल परमाणुओंके स्तम्भ दो तीन समय पर्यन्त जबतक कि व्यक्त नहीं होते तबतक तो व्यञ्जनावग्रह है और बार बार ग्रहण करनेसे जब व्यक्त हो जाते हैं तब अर्थावग्रह होता है। व्यञ्जनावग्रह नेत्र और मनसे नहीं होता इनसे केवल अर्था- (व्यक्त) वग्रह ही होता है। इसके उत्तर भेद १२० हैं।

अवग्रहण (सं० क्ली०) अव-ग्रह भावे ल्युट्। १ प्रति-रोध। २ अनादर। ३ ज्ञान।

अवग्राह (सं० पु०) अव-ग्रह-घञ्। १ वृष्टि व्याघात, पानीका न वर्षना। २ सूका। ३ हस्तिका ललाट। ४ शाय, कोसना।

अवघट (सं० पु०) अव-घट आधारे घञ्। १ गर्त, गड्ढा। २ छिद्र। करणे घञ्। ३ पेषणयन्त्र, पीसनेका कल, जाता, चकरी प्रभृति। भावे घञ्। ४ चालन। ५ घोंटा वा घुरान। १ कुघट। २ अष्टपट। ३ अडबड़। ४ विकट। ५ दुर्गम। ६ कठिन। ७ दुर्घट। (क्ली०) भावे ल्युट्, अवघटन (अवघट देखी)। (स्त्री०) युच् टाप् अवघटना।

अवघटित (सं० त्रि०) अव-घट-कर्मणि क्त। चालित, चलाया हुआ, जी चलाया गया हो।

अवघर्षण (सं० क्ली०) अव-घृष्-ल्युट्। १ नीचे रख घिसना। २ घर्षण। ३ मार्जन।

अवघात (सं० पु०) अव-हन-घञ्। १ चोट, अवहनन। २ चाउल प्रभृति। ३ हनन। ४ ताड़नमात्र, सभी तरहका ताड़न। घन प्रहार।

अवघातिन् (सं० त्रि०) अवहन्ति अव-हन-णिनि उपधावृद्धिः हकारस्य घकारः। अवघातक, जो घात करता हो। (स्त्री०) डौप्। अवघातिनी। अवघातिका, घात करनेवाली स्त्री। जो स्त्री घात करती हो।

अवघुष्ट (सं० त्रि०) अव-घुष्-क्त। प्रचारित, जनाया हुआ, जो सबको जना दिया गया हो।

अवघूर्णन (सं० क्ली०) अव-घूर्ण-भावे ल्युट्। सब जगह घूम करके।

अवघोटित (सं० त्रि०) अव-घुट विनिमये क्त। १ परिवर्तित, उलट-पलट किया हुआ। २ बदली वस्तु, बदलीकी हुई चीज। परिवर्त विवाहमे वर

और कन्याको भी अवघोटित कहा जाता है। ३ सर्वदिग्वेष्टित, चारो तरफ घिरा हुआ। परिवृत्त, अनेक देश घूम प्रत्यागत। सबदेशसे घूमकर आया हुआ। ४ व्याहत, रुका हुआ।

अवघोषण (सं० क्ली०) अव-घुष्-भावे ल्युट्। इस तरह उच्च स्वरसे कहा हुआ, कि सब कोई जान गया हो। (स्त्री०) युच् टाप्—अवघोषणा, उच्च घोषणा। जोर-जोरसे कहना।

अवघ्राण (सं० त्रि०) अवघ्रायतेस्म अव-घ्रा-कर्मणि क्त, वा तकारस्य नकारः। जिसका घ्राण (गन्ध) ले लिया गया हो। जो वस्तु सूंघा हुआ हो। (क्ली०) भावे क्त। घ्राण लिया, सूंघा। नुदविन्दवाघ्राज्जीभोरन्-तरलाम्। पा ८१। २। नुद, विद, उन्द, त्रै, घ्रा, ज्ञी ये सब धातुके निष्ठाको विकल्पसे न होता है।

अवघ्रात (सं० त्रि०) अवघ्रायतेस्म अव-घ्रा-कर्मणि क्त। यहां निष्ठाके स्थानमें नकार न हुआ। जिसका घ्राण ले चुके। जो सूंघा हुआ हो। (क्ली०) भावे क्त। सूंघा हुआ। निष्ठाके न होनेका सूत्र अवघ्राण शब्दमें देखी।

अवचक्षण (सं० त्रि०) अव कुत्सितं च क्षणं चक्ष-कर्तरि ल्युट्। १ कुत्सिताख्यानकर्ता, खराब बात बोलनेवाला। २ निन्दाकारी, जो दूसरेकी निन्दा करता हो। ३ अपवादकारी, झूठा किसीका दोष लगानेवाला। चक्षिष्यत्वायां वाचि। अयं दर्शनेऽपि। इकारोऽनुदात्तो युजर्थः विचक्षण प्रथमः। (सिद्धान्तकौ०) कात्यायनने वार्तिकसूत्र किया है 'असनयोश्च प्रतिषेधो वक्तव्यः।' अस् एवं अन् प्रत्यय विधान करनेसे ख्या नही होता। तज्जन्य नृ-चक्ष-अस् नृचक्षा राजसः। एवं वि-चक्ष-अन विचक्षण, अव-चक्ष-अन अवचक्षण इत्यादि रूपसिद्ध हुआ है।

अवचट (हिं० पु०) अनजान। अचक्का। कठिनाई। अवघट। अंडस। चपकुलिस।

अवचन (सं० क्ली०) न वचनं कुत्सायां, नञ्-तत्। १ निन्दा। अभावे नञ्-तत्। २ वचनाभाव, वचनका न रहना। (त्रि०) नास्ति वचनं यस्य। नञ्-बहुव्री०। ३ वाक्यशून्य, जो बोलता न हो। ४ गुंगा।

अवचनीय (सं० त्रि०) वक्तुमर्हं वच्-अर्हार्थे अनौयर्

ततो नञ्-तत् । १ बोलनेके अयोग्य वाक्य, जो बात बोलने या कहने योग्य न हो । २ अश्लील वाक्य, फुहर या नीच बात । वचनीयं निन्द्यं ततो नञ्-तत् । अनिन्दनीय, प्रशंसनीय । जो प्रशंसाकरने योग्य हो । अवचय (सं० पु०) अव-चि-अच् । पुष्पादि चयन करना, चुनकर इकट्ठा करना । फल या फल तोड़कर बटोरना ।

अवचाय (सं० पु०) अव-चि-घञ् । १ हस्तद्वारा पुष्प फलादिका ग्रहण करना । यष्टि (लाठी) प्रभृति द्वारा या चौर्यादि द्वारा चयन होनेपर अच् प्रत्ययनिष्पन्न अवचय शब्द होता है । हस्तादाने चेरस्येवे । पा १।१।४० । यदि हस्त द्वारा ग्रहण करना अर्थ मालूम पर तब ही चिधातुके उत्तर घञ् प्रत्यय होता है । हस्तादाने किं, हस्ताग्रस्थानात् फलानां यष्ट्या ग्रहणं करोति । अस्ते ये किं पुष्पग्रहणं योर्व्येण । (उक्त सूत्रे सि० कौ०)

अवचित (सं० त्रि०) अवचीयते स्म अव-ची-कर्मणि क्त । १ सञ्चित, इकट्ठा किया हुआ । २ गृहीत पुष्पादि “अवचितवलिपुष्पा” (कुमारसम्भव १।२०) जो पूजाके लिये पुष्प चयन करते हैं ।

अवचितगढ़—बम्बई प्रान्तके कोङ्कण जिलेका किला । बाहरी दीवारकी जो कंटीली शहरपनाह बनी है, उससे साबित होता है, कि प्राचीन वीर किलेकी बहुत कदर करते थे ।

अवचूड़ (सं० स्त्री०) अवनतं चूड़ायाः । ५ प्रादि० सं० । १ ध्वजाका अधोमुख वस्त्र । ध्वजाका निम्न मुख अङ्ग चामरादि । (त्रि०) अवगता चूडा किरीटादि यस्य, प्रादि बहुव्री० । २ मस्तकका चूड़ा या किरीटादि शून्य, ध्वजाशून्य । ३ जिसका चूड़ा संस्कार हुआ न हो ।

अवचूरी (सं० स्त्री०) टिप्पणी । टोका ।

अवचूर्णन (सं० स्त्री०) अव-चूर्ण भावे लुप्त । १ पेषण, पीसना । चूर्ण करना । अव-चूर्-णिच्-लुट्, णिच् लोपः । २ चूर्ण करना, ध्वंस करना । ३ सुशुतोक्त व्रणविशेष ।

अवचूर्णित (सं० त्रि०) अव-चूर्ण पेषणे कर्मणि क्त जो चूर्ण किया हो । गुंठा किया द्रव्य । चूर्ण

रवध्वसते, अवचूर्णित इस नामधातुके उत्तर क्त । चूर्ण करके जिसका ध्वंस किया गया हो ।

अवचूल (सं० स्त्री०) अवनता चूड़ा अग्रं यस्य बहुव्री । यहां डकारके स्थानपर पचमें लकार हो गया है । ध्वजाके अग्रभागमें बंधा अधोमुख वस्त्र और चामरादि । ध्वजादिका अङ्गविशेष । ऋक्के अच् मध्ये डकार स्थाने ळ होता है एवं ढकारके स्थानमें ळहकार हो जाता है । सायणाचार्य “अग्निनीके पुरोहितम्” इत्यादि १।१।१ ऋचाके भाष्यमें लिखे हैं—ईळे (ईडलूती) डकारस्य ळकारो वङ्गचाध्ये ढसस्यदायप्राप्तः तथाच पठ्यते अङ्गमध्यस्य ळकारं वङ्गचा जगुः । अङ्गमध्यस्य डकारस्य लकारं वा यथा क्रमम् । इसी तरह वर्णव्यतिक्रम हो परिशिषमें ढकार मूढं न्य वर्ण रहनेसे ळहकार हो जाता है । इसका विशेष विवरण डकार वर्णमें देखो ।

अवचूलक (सं० स्त्री०) अवचूलमिव प्रकृति, इवार्थ संज्ञायां वा कन् प्रत्ययः । चामर ।

अवच्छेद (सं० पु०) टंकना । सरपोश ।

अवच्छिन्न (सं० त्रि०) अव-छिद-क्त । किसी विशेषण द्वारा जिसे विशेष रूपसे कहा गया है । जैसे—‘जटा-वच्छिन्न तापस’ ऐसा कहनेसे यह समझा जाता है, कि जटाद्वारा तापसको अन्यान्य व्यक्तियोंसे विशेष किया गया है । अर्थात् यहां जटा विशेषण स्वरूप है । जटा देखकर समझा जाता है, कि जटाधारी व्यक्ति एक तपस्वी हैं । विशेषण द्वारा विशेष करनेको एवं किसी वस्तु द्वारा सीमा निर्दिष्ट की जाय उसे भी अवच्छिन्न कहते हैं । जैसे, घटकी कारणता दण्डत्व-वच्छिन्न है, ऐसा कहनेसे घटकी कारणता सब दण्डोंमें हो है, दण्ड भिन्न और किसीमें नहीं है, यही समझा जाता है, सुतरां वहां दण्डत्व द्वारा घटकी कारणताकी सीमा निर्दिष्ट की गई है । जो एक वस्तुसे दूसरे वस्तुकी व्यवच्छेद अर्थात् विभिन्न कर देता है, उसका नाम अवच्छेदक है । अवच्छेदकके धर्मकी अवच्छेदकता कहते हैं । अवच्छेदकता-धर्ममें कहीं स्वरूप-सम्बन्ध विशेष और कहीं अनतिरिक्त कृतित्व देखा जाता है । जैसे, दण्डका दण्डत्व स्वरूप धर्म दण्ड ही में रहता है, दण्डभिन्न अन्य किसी

वस्तुमें दण्डत्व नहीं रह सकता। और भी दण्डमें जो सब धर्म है, उसके अतिरिक्त अन्य धर्मको वह विभिन्न कर देता है, इसलिये वह घटादिका कारणता-वच्छेदक होता है। इसके उसके द्वारा दण्डका निरूपण किया जाता है।

जिसका अभाव है वही उस अभावका प्रतियोगी है। जैसे, 'घटका अभाव,' ऐसा कहनेसे घट ही उस अभावका प्रतियोगी है। प्रतियोगीके धर्मका नाम है प्रतियोगिता। 'घटका अभाव' कहनेसे, वह प्रतियोगिता घटभिन्न अन्य किसी वस्तुमें रह नहीं सकती। सुतरां वह घटादिके अभावकी प्रतियोगिताको व्यवच्छेद कर देती है। इसलिये घटत्व उसका अवच्छेदक है। अतएव वह प्रतियोगिता ही घटत्वावच्छिन्न है।

परिमाणादिसे इयत्ता करनेको अवच्छिन्नत्व कहते हैं। जिस वस्तुकी इयत्ताकी जाती है, वही वस्तु उसका परिमाणावच्छिन्न है। जैसे, द्रोणव्रीहि, द्रोण परिमाणावच्छिन्न व्रीहि; अर्थात् द्रोणपरिमित व्रीहि।

विशिष्ट अर्थात् स्थित अर्थमें भी 'अवच्छिन्न' शब्द प्रयुक्त होता है। जैसे,—'गृहावच्छिन्न आकाश,' गृहविशिष्ट अर्थात् गृहमें स्थित आकाश।

वेदान्त-मतसे, अन्तःकरणावच्छिन्न चैतन्य जीव, अर्थात् अन्तःकरणविशिष्ट वा अन्तःकरणमें स्थित चैतन्यका नाम जीवात्मा है।

अवच्छिन्नवाद (सं० पु०) अवच्छिन्नस्य अन्तःकरणविशिष्टतया जीवस्य वादो व्यवस्थापनं यत्र। बडुव्री०। वेदान्तमें ऐसा मत स्वीकार किया गया है, कि अन्तःकरणमें चैतन्य रूप जीवात्मा है। अतएव उसके प्रतिपादक मतको 'अवच्छिन्नवाद' कहते हैं।

यह अवच्छिन्नवाद दो प्रकारका है। कोई कोई कहते हैं, कि अन्तःकरणमें प्रतिबिम्बविशिष्ट चैतन्यका नाम जीवात्मा है। और किसीके मतसे, अन्तःकरणविशिष्ट चैतन्यका ही नाम जीवात्मा है। इन दोनों पक्षोंमें अन्तःकरणावच्छिन्नवादी, अन्तःकरण प्रतिबिम्बावच्छिन्नवादीको यह कहकर दोष देते हैं, कि रूपविशिष्ट वस्तुका ही प्रतिबिम्ब होता है। किन्तु

चैतन्य-रूपशून्य निरवयव वस्तु है, सुतरां उसका प्रतिबिम्ब रहना असम्भव है। अधिकान्तु, प्रतिबिम्ब आप कुछ भी नहीं है, वह अन्य वस्तुकी छाया मात्र है, उसका अपना अस्तित्व कुछ भी नहीं है। सुतरां प्रतिबिम्बको जीवात्मा कहनेसे जीवात्माका भी कुछ भी अस्तित्व नहीं रहता। अतएव जो खुद कोई चीज नहीं है, उसका बन्धन और मोचन कैसे सम्भव हो सकता है।

नैयायिककी तरह वैदान्तिक भी स्वीकार करते हैं, कि आकाश एकके सिवा दो वा उससे अधिक नहीं है। पर उसी एक आकाशके स्थानभेदसे विभिन्न प्रकारके नाम होते हैं। उसी तरह चैतन्य भी एक ही है, केवल अन्तःकरण प्रभृति आधारविशिष्ट कहनेसे उसका भिन्न भिन्न नाम होता है। घटके चारो ओर आकाश वेष्टित रहता है, पर उस घटको स्थानान्तरित करनेसे उसके चारो ओरका आकाश उसके साथ साथ नहीं जाता। जीवात्माकी भी ठीक वही दशा है। इहलोक और परलोकमें उसकी अतिविधि नहीं है। केवल उपाधि भेदसे ही उसे 'इहलोक गमन' किंवा 'परलोकगमन' ऐसा नाम दिया जाता है। उसी कारणसे जीवात्माके बन्धन एवं मोचनमें कोई व्याघात नहीं लगता।

जो उपाधिद्वारा इस अज्ञानाधीन संसारमें प्रवृत्ति होती है, उसीका नाम जीव है। उस जीवका बन्धन होता है। जिस उपाधिसे परमात्मारूपसे संसारमें प्रवृत्ति नहीं होती, उसका बन्धन भी नहीं होता, सुतरां मोक्ष होता है।

अवच्छिन्नत्व (सं० स्त्री०) १ व्यापकत्व। यथा सरोवरमें वज्रिमत्ता (अग्निकी स्थिति) युक्त समुद्र निरूपित प्रतिबन्धकता रहनेपर, सरोवर वज्रिमान् नहीं है, ऐसा निश्चयोभूत विषयको अवच्छिन्नत्व कहते हैं।

(गदाधर)

२ सामानाधिकरण्य। जैसे वज्रिव्याप्य धूमवान् पर्वत, ऐसा परामर्शनिरूपित धूमनिष्ठ दो विषय (सम्बन्ध और रूप) का अवच्छेद्य तथा अवच्छेदक भाव। ३ स्वरूपसंबन्ध विशेष, जैसे आग्नि (ऊपर)

वृत्त कपिसंयोगी है मूलमें नहीं—इत्यादिमें कपि-संयोगका अग्रभाग अवच्छिन्नत्व है। ४ 'यह इसके युक्त रहनेपर ऐसा होता' ऐसा प्रतीतिसाक्षिक स्वरूप सम्बन्ध विशेष। (वह संसर्ग मर्यादासे प्रविष्ट रहता है) यथा "तद्विशिष्टविशेष्यकत्वावच्छिन्नतत्प्रकारकत्वं" (मथुरानाथ) इत्यादिमें रजत (चांदी) रहनेपर 'यह रजत' ऐसा ज्ञाननिष्ठ यह विशेष्यक, रजत प्रकारकका अवच्छेद्य अवच्छेदक भाव होता है। यहां पर यह नियम है, जिन दो विषयोंमें निरूप्य निरूपक भाव रहता, उन्हीं दो विषयोंमें अवच्छेद्य-अवच्छेदकभाव भी होता है। यह एतद्विशेष्यकत्व अंशमें एतदकारक होता, इस तरह प्रतीतिसाक्षिकस्वरूप सम्बन्धविशेष। यथा "तद्विशेष्यकत्वावच्छिन्नतत्प्रकारताभाव्यनुभवस्तत्प्रमेत्यादौ।" (सुल मथुरानाथ)

५ विशिष्टत्व, जैसे घटत्वावच्छिन्न घट इत्यादिमें घटका घटत्वावच्छिन्नत्व अर्थात् घटवृत्तित्व (घटमें रहनेवाला) सिद्ध होता है। ६ साहित्य, यथा—शरीरावच्छिन्न अर्थात् शरीरयुक्त आत्मा में भोग होता—इत्यादिमें आत्माका शरीरावच्छिन्नत्व है। ७ अनुकूलत्व या प्रयोजकत्व। जैसे फलावच्छिन्न व्यापारका धात्वर्थ—इसमें व्यापारका फलावच्छिन्नत्व है।

अवच्छुरित (सं० क्लौ०) अव-क्षुर-भावे क्त। १ उच्च-हास, जोरसे हंसना। स्वार्थे कन् अवच्छुरितक। अट्ट-हास। (त्रि०) कर्मणि क्त। २ मिश्रित।

अवच्छेद (सं० पु०) अव-च्छिद-भावे घञ्। १ छेदन। अलगवा, भेद। २ सीमा। ३ विशेष करना। ४ इयत्ता। ५ अवधारण, निश्चय, छानबीन। ६ व्याप्ति। अवच्छिद्यते अनेन करणे घञ्। ७ इयत्ता साधन, नापनेका यन्त्र (पात्र)। ८ संगीतसम्बन्धीय मृदङ्गके बारह प्रबन्धोंमें एक प्रबन्ध। ९ परिच्छेद, विभाग। जो वस्तु किसी आधारके एक देशमें रह, दूसरे किसी अवयवमें न हो, उसको अव्याप्य-वृत्ति कहते हैं। जैसे घट यहां है, वहां नहीं; तो इस जगह आधारके अवयव द्वारा निरूपण कर अवयव बोला जायगा—यही अव्याप्यवृत्तिका निरूपक है। जैसे वानर वृत्तके अग्रभाग पर रहता, तो वृत्तके अग्रभाग ही

के साथ वानरका संयोग होता, वृत्तके मूलके साथ संयोग नहीं रहता, इसलिये इस स्थलमें वानरका संयोग अव्याप्य वृत्ति ठहरता है। शास्त्रकार इसको कपिसंयोग कहते हैं। वृत्तके मूलमें वानरका संयोग नहीं होता, इस वास्ते वृत्त मूल अव्याप्यवृत्तिका नियामक, अतएव यही वृत्तमूल और अग्रभागको अवच्छेद कहा जाता है। अवच्छेद देशव्यापी और कालव्यापी होता है। उसमें देशव्यापी होते भी सर्वत्र कालव्यापी नहीं रह सकता। इसलिये काल ही अव्याप्यवृत्तिका निरूपक है। जैसे, जाग्रत आत्मा में ज्ञान होता; किन्तु सो जानेसे आत्मा रहते भी ज्ञान चला जाता है। इसलिये यहां निद्राकाल ही ज्ञानकी अव्याप्यवृत्तिका निरूपक है।

अवच्छेदक (सं० त्रि०) अवच्छिन्नन्ति स्वस्मात् अन्यतोऽवापृथक् करोति, अव-च्छिद-खुल्। छेदक, तोड़नेवाला, जो अलग कर देता हो। २ इयत्ता-कारक, सीमाकारक, हृद बांधनेवाला। ३ अवधारक, यकीन् रखनेवाला। ४ अवच्छिन्न शब्द द्वारा वतायी हुई अव्याप्यवृत्तिका विषय निरूपक।

विशेष विवरण अवच्छिन्न शब्दमें देखो।

अवच्छेदकता (सं० स्त्री०) १ अवच्छेद करनेकी स्थिति, अलग रखनेकी हालत। २ इयत्ता लगानेकी बात, हृद बांधनेका काम।

अवच्छेदकत्व (सं० क्लौ०) १ स्वरूपसम्बन्ध विशेष। यह कहीं प्रतियोग्यशंप्रकारौभूत धर्मवान् होता है। जैसे—प्रमेय धूमाभावप्रतियोगिताका अवच्छेदकत्व धूमत्वमें निश्चय किया गया अर्थात् "संभवतिलक्षो गुरौ तदभावात्" इस नियम द्वारा प्रमेयत्वविशिष्ट धूमत्वमें अवच्छेदकत्व न मान शुद्ध धूमत्वमें ही अवच्छेदकत्व स्वीकार किया गया, फिर किसी स्थलमें अनतिरिक्त वृत्तित्व रहता है। यह दो प्रकारका होता है। प्रथम—"तच्छून्यवृत्तित्वे सति तदधिकरणवृत्तभावाप्रतियोगित्वम्।" जैसे घटा-भाव प्रतियोगिताका अवच्छेदकत्व घटत्वमें है। दूसरा व्यावर्तकत्व—यथा घटकारणताका अवच्छेदकत्व दण्डत्वमें है। फिर किसी जगह—"तदधिकरणस्य तन्निष्ठधर्मावच्छेदकत्वम्।" यथा 'सूत्रे ह्येन कपिसंयोगः शास्त्राणाम्।'

अर्थात् कपिसंयोग मूलमें नहीं शाखामें होता, इत्यादि स्थलमें वृक्षाधिकरण मूलका वृक्षनिष्ठ कपिसंयोग भावावच्छेदकत्व, और वृक्षाधिकरण शाखादिका वृक्षनिष्ठ कपिसंयोगावच्छेदकत्व है। २ अवच्छेदकत्व नामक विषयतात्मक स्वरूप सम्बन्ध विशेष। यथा वज्रिसाधन पर्वतमें 'पर्वतो वज्रिमान्' यह अनुमित्यात्मक ज्ञानीय वज्रिनिष्ठ विधेयता निरूपितोद्देश्यतावच्छेदकत्व है। ३ स्वाश्रयजन्यत्व या स्वाश्रयविशेषणत्व। जैसे—धात्वर्थतावच्छेदक फल शालित्व कर्म होता है,—यहां पर फलमें धात्वर्थका अवच्छेदकत्व है। ४ व्यापकत्व। यथा—पर्वतत्वावच्छेदसे वज्रिमें पर्वतत्व व्यापक अग्निप्रतियोगिक संयोगत्वका अवगाहमान संसर्गतावच्छेदकत्व होता है। ५ व्याप्यत्व। जो विषय अनुमितिका प्रतिबन्धक हो। जैसे 'ज्जदो न वज्रिमान्' अर्थात् तालाव अग्नि युक्त नहीं—ऐसा निश्चय होनेपर 'ज्जदो वज्रिमान्' इस अनुमिति जन्य ज्ञानका प्रतिबन्ध होता; अतएव उसका अवच्छेदकत्व है। ६ तदधिकरण वृत्तिसे ज्ञायमानत्व। जैसे घट पट नहीं—इत्यादिसे घटत्वमें पटनिष्ठ (पटमें रहनेवाली) प्रतियोगिताको अवच्छेदक माना जाता है। ७ विशेषणत्व। ८ नियामक। कोई नियामक, कोई अवच्छेदकत्व कहते हैं। सामान्यतः अवच्छेद्य और अवच्छेदक भाव दो तरह का होता है। स्वरूप सम्बन्ध रूप और व्याप्य व्यापक भाव। उसमें प्रथम इस समय—गोष्ठमें गो नहीं—ऐसा कहनेपर एतत्काल गवाभावका अवच्छेद्यावच्छेदक भाव है। दूसरे—पृथिवी रूपवती हैं—इत्यादिमें रूप और पृथिवीत्वका अवच्छेद्य अवच्छेद्यक भाव है। (गदाधरी) अवच्छेदकत्वनिरुक्ति (सं० पु०) अवच्छेदकत्वे तत् पदार्थनिर्णयविषये निर्निश्चया उक्तिर्यस्मिन्, बहुव्री०। १ नवहोपनिवासी रघुनाथ शिरोमणि-कृत अवच्छेदकत्व पदार्थनिश्चायक न्यायशास्त्रके अनुमान-खण्डान्तर्गत ग्रन्थविशेष। (स्त्री०) अवच्छेदकत्वे तत् पदार्थनिश्चयविषय उक्तिः, ७-तत्। २ अवच्छेद-पदार्थकी निश्चायक वृत्ति।

अवच्छेदन (सं० स्त्री०) १ कटायी, तराशी।

२ विभाजन, तकसीम, बंटवारा। ३ पहंचान, शिनाख्त।

अवच्छेद्य (सं० त्रि०) अवच्छेत्तुं अर्हम्, अवच्छिद्य-अर्हार्थं ख्यत्। १ छेदनार्ह, काटनेके काविल। २ अवधारणीय, यकीन् लाने लायक। ३ विशेषणीय, तारीफ़के काविल। (पु०) ४ अवच्छेदार्ह पदार्थ, अलग रखने लायक चीज। जैसे घटनिष्ठ घटा भावको प्रतियोगिता घटत्व द्वारा ही अवच्छेद्य बनती अर्थात् उस जगह घटत्व ही अन्य प्रतियोगिता हटा घटप्रतियोगिताको अलग करता है।

अवच्छेद्यावच्छेद (सं० पु०) साधारण बनाने-वाला, जो विभेद न रखता हो।

अवच्छंग, उच्छंग देखो।

अवजनित (सं० त्रि०) उत्पन्न हुआ, पैदा हुआ।

अवजय (सं० पु०) अव-जि-अच्। पराजय, हार।

अवजित (सं० त्रि०) १ परास्त, जीता हुआ, जो हार गया हो। २ अनवधारित, दिलसे उतर जाने-वाला।

अवजुष्ट (सं० त्रि०) देखा-भाला, जाना-माना, समझा-बूझा।

अवज्ञा (सं० स्त्री०) अव-ज्ञा-अङ्-टाप्। १ अनादर, बेइज्जती। २ अवमानना, नाफ़रमान्बरदारी। ३ पराजय, हार। ४ काव्यालङ्कारविशेष। इसमें एक वस्तु दूसरेके दोष-गुण नहीं लेता।

अवज्ञान (सं० स्त्री०) अव-ज्ञा-भावे ल्यट्। १ अवमान, अनादर, तिरस्कार।

अवज्ञेय (सं० त्रि०) अव-ज्ञा-कर्मणि यत्। १ अनादरणीय, अपमानके योग्य। २ तिरस्कार्य, तिरस्कारके योग्य।

अवट (सं० पु०) अवः तलपर्यन्तमटति अव-अट-अच्। १ गतं, गड़ा। २ भूमिके मध्यस्थित रन्ध्र, कुण्ड। ३ छिद्र। ४ कूपः। "अन्तरमवटछिद्रं निव्यधनं रन्ध्रोक्तकुरदयाः।" (हलायुध) ५ देहस्थ निम्नस्थान, गलीके नीचे कंधे और कांख प्रभृतिका गड़ा। ६ हाथियोंका फंसानेके लिये गड़ा। इसे घाससे ढांक देते हैं।

७ नरक विशेष । (पुं०) नञ्-तत् । ८ वटवृक्ष भिन्न, वट छोड़ कर दूसरा कोई पेड़ ।

अवटना (हिं० क्रि०) १ मथना । २ किसी द्रव पदार्थको आगपर जला गाढ़ा करना ।

अवटनिरोधन (सं० पु०) अवटे गतं निरुध्यते अत्र अवट-निरुध-आधारे ल्युट् । नरक विशेष, जिस नरकमें गड्ढेके बीच पापी लोग कष्ट भोग करते हैं ।

अवटि (सं० स्त्री०) अवति रक्षति सर्पादिकं अव-अटि । १ गर्त, गड्ढा । २ कूप । (स्त्री०) वा डीप् अवटी ।

अवटीट (सं० त्रि०) चपटी नाकवाला, जिस व्यक्तिकी नाक चपटी हो ।

अवटु (सं० पु०) अव-टौक्-डु । १ गर्त, गड्ढा । २ वृक्षविशेष, कोई पेड़ । ३ कूप, कुवां । ४ ग्रीवाका पश्चात् भाग । ५ देहका निम्न स्थान । न वटुः ब्राह्मणः नञ्-तत् । ६ जो ब्राह्मण न हो ।

अवटुज (सं० पु०) अवटौ अवटोर्वा जायते अवट-जन-ड ७ वा ५ तत् । १ मस्तकका अन्तिम केश, चोटी । २ जुलफ ।

अवटोदा (सं० स्त्री०) अवटस्य कूपस्य उदकमिव उदकं यस्याः, ६ बहुव्री०, उदकस्य उदादेश ततः स्त्रीत्वात् टाप् । भारतवर्षीय नदी विशेष, भारत-वर्षकी कोई नदी ।

अवडङ्क (सं० पु०) अव अवगतः वृद्धिं गतः, शब्दो यस्मात् ५-वडुव्री० । हट्टस्थान, बाजार । मता-न्तरसे इस अर्थमें अवडङ्क शब्द व्यवहृत होता है ।

अवडीन (सं० स्त्री०) अव-ओडीन् विहायसागतौ भावे क्त, ओदित्वात्तस्य नकारः । अवरोहणरूप पक्षी की गति विशेष, आकाशके उपरसे पक्षियोंका नीचे आना । ओदितय । पा८।२।४५ । उकार इत्सञ्चक धातुके उत्तरस्थ निष्ठाके स्थानमें नकार होता है । “ओदिन्नाथो डोङ्कः पाठसामर्थ्यान्नेद” (सि० कौ० ।)

अवत (सं० पु०) अव-अत-अच् । कूप । निरुद्धमें कूपका यह कितना ही पर्याय है—कूप, कातु, कर्त, बन्न, काट, खात, अवत, क्रिवी, सूद, उत्स, ऋष्यदात्, कारोतरात्, कुशय, केवट, अवट । “कई तुमुदेव” ।

अक् १।८५।१० । ‘अवसात्तलो भवतीत्यवतः कूपः । कूपनामसुचावतीऽवट इति पठितम् ।’ (सायण)

अवतंस (सं० पु०-स्त्री०) अवतन्स्यते अलंक्रियते अनेन । अव-तन्स्-करणे घञ् । १ कर्णपूर, कर्णपुर, कर्णभूषण । २ शिरोभूषण, शिरका भूषण, मुकुट-किरीट प्रभृति । ‘अवतन्सो कर्णपूरोपि भूषणे ।’ (अमर) ३ टीका । ४ श्रेष्ठ । ५ माला, हार । ६ बाली सुरकी । ७ भाईका पुत्र, भतीजा । ८ दूल्हा । ९ गिरिमृङ्ग ।

अवतंसित (सं० त्रि०) अव-तंस-क्त । भूषित, अलङ्कृत । इसमें विकल्प अकारका लोप हो जाने-पर ‘वतंसित’ रूप रहता है । अपि शब्द देखो ।

अवतमस (सं० स्त्री०) अवततं व्याप्तं तमः अजन्त-प्रादिसं० । व्याप्त अन्धकार, भरा हुआ अन्धकार । अवसमन्वेभ्योत्तमसः । पा५।४।७८ । अव, सम, अन्ध इन सब शब्दसे परस्थित तमस् शब्दके उत्तर अच् प्रत्यय होता है ।

अवतरण (सं० स्त्री०) अव-ट-भावे ल्युट् । १ ऊप-रसे नीचे आना, उतरना । २ पार होना । ३ शरीर धारण करना, जन्म ग्रहण करना । ४ प्रतिष्ठाति, नकल । ५ प्रादुर्भाव । अवतीर्यते येन करणे लुगट् । ६ नद्यादिका सोपान, घाटको सिङ्घी । ७ सिङ्घी, जिससे उतरें । ८ तीर्थ, घाट ।

अवतरणिका (सं० स्त्री०) १ ग्रन्थकी प्रस्तावना, भूमिका, उपोद्घात, अवतरणी । २ परिपाटी, रीति ।

अवतरणौ (सं० स्त्री०) अवतराति ग्रन्थोऽनया अव-ट-करणे लुगट् । १ ग्रन्थके प्रस्ताव निमित्त मुख-बन्ध, ग्रन्थकी प्रस्तावनाके लिये जो भूमिका इस अभि-प्रायसे लिखी जाती है, कि विषयकी संगति मिल जाय, ग्रन्थारम्भ, उपोद्घात । २ परिपाटी, रीति ।

अवतरना (हिं० क्रि०) प्रकट होना, उपजना, जन्मना ।

अवतार (सं० पु०) अवतीर्यते अनेनास्मिन् वेति करणे अधिकरणे वा । अवे तृजोर्घञ् । पा१।१।२० । १ तीर्थ । २ वापी । ३ पुष्करिणी कूपादिका सोपान, तालाब कुवे बगेरहकी सिङ्घी । ४ प्रादुर्भाव, अवतरण । ५ देवताओंका अंशोद्भव अवतार ।

पुराणादिमें असंख्य अवतारोंकी बात लिखी है। उनमें ये कई प्रसिद्ध हैं,—ब्रह्मा, नारद कपिल, दत्तात्रेय, यज्ञ, ऋषभदेव, पृथु, मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, वेदव्यास, धन्वन्तरि, मोहिनी, राम, बलराम, कृष्ण, नरनारायण, बुद्ध एवं कल्की।

पृथिवी और वेदके उद्धार तथा दुष्टोंके दमनके लिये विष्णुने दश बार भूमण्डलमें अवतार ग्रहण किया था। विष्णुके दश अवतार यथा,—१ मत्स्यावतार, २ कूर्मवतार, ३ वराह अवतार, ४ नृसिंहोवतार, ५ वामन अवतार, ६ परशुराम अवतार, ७ रामावतार, ८ कृष्ण और बलराम अवतार, ९ बुद्ध अवतार, १० कल्की अवतार।

मुण्डमाला तन्त्रके मतानुसार प्रकृतिमें ही ये सब अवतार उत्पन्न हुए थे—कृष्णरूपा काली, रामरूपा तारिणी, कूर्मरूपा वगला, मीनरूपा धूमावती, नृसिंह-रूपा क्षिप्रमस्ता, वराहरूपा भैरवी, परशुरामरूपा सुन्दरी अर्थात् षोडशी, वामनरूपा भुवनेश्वरी, बुद्धरूपा कमला और कल्कीरूपा मातङ्गी। दशवतार देखो।

अवतारण (सं० स्त्री०) अव-ट-णिच्-ल्युट्। १ भूत की भाड़। २ वस्त्रके अञ्चलसे भूतका अर्चन। ३ ग्रन्थकी प्रस्तावना। (स्त्री०) करणे ल्युट् अवतारणी।

‘अवतारणभूतादि गृहे वस्त्राञ्चलाच्च’ने। (विश्व)

अवतारना (हिं० क्ति०) १ उत्पन्न करना, रचना। २ उतारना, जन्म देना।

अवतारित (सं० त्रि०) अव-ट-णिच्-क्त। १ अव-रोपित। २ रक्षित।

अवतारी (हिं० वि०) १ उतरनेवाला, अवतार ग्रहण करनेवाला। २ देवांशधारी।

अवतीर्ण- (सं० त्रि०) अव-ट-कर्तरि क्त। १ कृता-वगाहन, जो नदी प्रभृति संभा चुका हो। २ कृता-वरोहण, जो ऊपरसे नीचे आ गया हो। ३ अन्यरूप-विशिष्ट प्रादुर्भूत, जो दूसरा रूप धर आया हो।

अवतूलन (सं० स्त्री०) अव-तूल अवघट्टनार्थे णिच् भावे ल्युट् णिच् लोपः। तूलद्वारा अवघट्टन किया हुआ, जो रुईसे तोला गया हो।

अवतोका (सं० स्त्री०) अवपतितं गर्भस्थापत्यं यस्याः। प्रादि ६-बहुव्री०। जिस स्त्रीके गर्भ न रहे, स्वदुर्गर्भा, गर्भ गिरानेवाली स्त्री। ‘अवतोकातु स्वदुर्गर्भा’। (अमर)

अवत्त (सं० त्रि०) अव-दा-क्त। १ खण्डित। २ दत्त, दिया हुआ। ३ देकर पुनः गृहीत। अव उपसर्गांतः। पा ७। ४। ४१। कित्संज्ञक तकारादि प्रत्यय पर रहनेसे अजन्त उपसर्गसे पर घू संज्ञक दा स्थानमें तकार होता है।

अवतिन (सं० त्रि०) अवत्तमस्तप्रस्य अवत्त (अत इतिठनी। पा ५। २। ११५ इति इति)। जो खण्डित हो गया हो, जिसकी आशा नष्ट हो गयी हो।

अवत्सार (सं० पु०) न वत्सं सन्तानं ऋच्छति लभते वत्स-ऋ-घञ् ततो नञ्-तत्। ऋग्वेदोक्त ऋषि विशेष। ‘अवत्सारस्य स्यूण्वाम रणभिः’ (चक्र ५। ४४। १०) ‘अवत्सारस्य वैपासवीणाम्।’ (इति सायण)

अवदंश (सं० पु०) अवदृश्यते मद्यपानानन्तरं चर्यते अव-दंश-कर्मणि घञ्। मद्यपानके रुचिकर द्रव्य, मद्यपानके समय जो बड़े आदि खाए जाते हैं, गजक, चाट, शुद्धि।

अवज्ञात (सं० त्रि०) अव-ज्ञा-क्त। १ अनादृत, तिरस्कृत, विद्वज्जुत, जो झिड़का गया हो।

अवदत्त (सं० त्रि०) अवदातुं दत्त्वा पुनर्गृहीतुं दातुं वा आदि कर्मणि कर्तरि क्त दद् आदेशः।

१ खण्डित, जो देकर फिर ले लिया गया हो।

२ दत्त। आदि कर्मणि क्तः कर्तरि च। पा २। ४। ७१। आदि-कर्म अर्थात् कर्मके पूर्व क्रियाका उल्लेख रहने पर कर्त्तृ-वाच्य क्त प्रत्यय होता है। भाव एवं कर्मवाच्यमें

यथाविहित क्त प्रत्यय होता है। आदि कर्म कर्तरि प्रभृतिसे क्त विधान, यथा—प्रकृतः कटं देवदत्तः।

प्रकृतः कटो देवदत्तेन। प्रकृतं देवदत्तेन। दो ददवीः। पा ७। ४। ४६। कइत्संज्ञक तकारादि प्रत्यय पर रह-

नेसे घूसंज्ञक दाके स्थानमें दद् आदेश हो जाता है। (अन्य एवं अवत्त शब्दमें देखो)

(अन्य एवं अवत्त शब्दमें देखो)

अवदन्त (सं० पु०) बालक, बच्चा।

अवदरण (सं० स्त्री०) अव-ट-भावे ल्युट्। विदा-रण, मारकाट।

अवदलित (सं० त्रि०) भड़का, फटा, टूटा, चिटखा,
जो फट पड़ा हो।

अवदाघ (सं० पु०) अवदह्यते प्राणिनोऽस्मिन्;
अव दह आधारे घञ्, नङ्गादित्वात् हस्य घत्वम्।

१ निदाघ, धूप। २ ग्रीष्मकाल, गर्मीका मौसम।

अवदात (सं० पु०) अव-दैप् शोधे क्त। १ शुभ्र,
सफेद रङ्ग। (त्रि०) २ सफेद, उजला। ३ स्वच्छ,
साफ। ४ पीत, हरिद्राम, पीला, वसन्ती। ५ सुन्दर,
खूबसूरत।

‘अवदातं सिते पीते विशुद्धे प्रवरेऽपि च।’ (विश्व)

अवदान (सं० क्ली०) अव-दो दैप् वा ल्युट्।
१ प्रशस्त कर्म, अच्छा काम। २ खण्डन, तोड़ फोड़।
३ पराक्रम, ताकत। ४ अतिक्रम, सबकत। ५ शुद्धि-
करण, सफाईका काम। ६ उशीर, खस।

‘अवदानमविष्टचे खण्डने शुद्धकर्मणि।’ (हेम)

अवदान्त (सं० पु०) शिशुवृक्ष, पौधा।

अवदान्य (सं० त्रि०) १ कृपण, कछूस। २ परा-
क्रमशाली, ताकतवर। ३ उल्लङ्घनकारी, लांच
जानेवाला।

अवदारक (सं० त्रि०) अवदारयति, अव-ट्-णिच्-
कर्मणि क्त। १ विदारक, फोड़नेवाला। २ खन्ता,
बेलचा, कुदाल।

अवदारण (सं० क्ली०) अव-ट्-णिच्-भावे ल्युट्।
१ विदारण, अवयव-विभाग, तोड़-फोड़, टुकड़े-टुकड़े
उड़ाना। अवदार्यते खन्यते गर्ताद्यनेन, करणे ल्युट्।
२ खनित्र, खन्ता, बेलचा।

अवदारित (सं० त्रि०) अवदार्यते स्म, अव-ट्-
णिच्-कर्मणि क्त। १ विदारित, फटा हुआ।
२ विभाजित, तकसोम किया हुआ।

अवदावद (वे० त्रि०) असत् प्रशंसा न रखनेवाला,
जो बुरा नाम न रखता हो।

अवदाह (सं० पु०) अवगतो दाहो गात्रज्वाला
येन, प्रादि बहुव्री०। १ उशीर, खस। २ लामज्जक
दहन। अवदाह भावे घञ्। ३ ज्वरादि जन्य गात्र-
दाह, बुखार वगैरहसे पैदा हुई जल्लाकी जलन।

४ अग्नि द्वारा दहन, आगसे जल जलाना, जलना।

अवदाहेष्ट (सं० क्ली०) वीरणमूल, खस।

अवदाहेष्टकापथ (सं० क्ली०) उशीर, खस।

अवदीर्ण (सं० त्रि०) अव-ट्-क्त ईर दीर्घः
तकारस्य नकारः। १ विदीर्ण, फटा हुआ। २ द्रवी-
भूत, पिघला हुआ। ३ आश्चर्यान्वित, ताज्जुबमें पड़ा
हुआ। ४ विभक्त, बंटा हुआ।

अवदोह (सं० पु०) अवदुह्यते, दुह-कर्माण-घञ्
१ दुग्ध, दूध। भावे घञ्। २ दोहन, दुहाई।

अवद्य (सं० त्रि०) न वद गर्हार्थं यत् निपात्यते।
‘अवद्यं पापम्।’ (सिद्धान्तकौमुदी) १ अधम, पाजी। २ पापी,
गुनहगार। ३ निन्द्य, हिकारतकी काबिल।
४ कथना-योग्य, निरुद्ध। ५ प्रतिरुद्ध, बुरा। (क्ली०)
६ अर्वा, चन्द्रके दशमें एक घोड़ा। ७ रेफ।

अवद्यगोहन (वे० त्रि०) अभिलाष मिटा देनेवाला,
जो खाद्दिश दूर कर देता हो।

अवद्यभी (वे० स्त्री०) पापका भय, इजाबका
खौफ।

अवद्यवत् (वे० त्रि०) कुत्सित, पश्चात्तापकारी,
बदनुमां, अफसोसनाक।

अवद्योतन (सं० क्ली०) अव-द्युत-णिच्-भावे ल्युट्।
प्रकाशन, रोशनीदिही, उजालेका फैलाव।

अवद्योतिन् (सं० त्रि०) प्रकाश फैलानेवाला, जो
चमक रहा हो।

अवद्रङ्ग (सं० पु०) हाट, बाजार।

अवध (सं० पु०) १ वधका अभाव, कत्लकी अदम-
मौजूदगी। २ कोशल, अयोध्या। यह अक्षा०
२५° ३४' एवं २८° ४२' उ० और द्राघि० ७८° ४४'
तथा ८३° ८' पू० के मध्य अवस्थित है। युक्तप्रदेशके
छोटे लाट इसका प्रबन्ध करते हैं: क्षेत्रफल
२४२४६ वर्गमील है। इससे उत्तर नेपालका स्वतन्त्र
राज्य, उत्तर-पश्चिम रोहेलखण्ड विभाग, दक्षिण-पश्चिम
गङ्गा नदी, दक्षिण-पूर्व बनारस विभाग और पूर्व
बसती जिला पड़ता है। इसकी राजधानी लखनऊ
शहर है।

अवध खुला मैदान है। यह दक्षिण-पश्चिम
गङ्गा नदीसे हिमालयकी तराई तक फैला है।

उत्तर सीमापर कुछ जङ्गल रहते भी बाकी जगहमें खेती किसानों और बसतीकी भरमार है।

गङ्गा, गोमती, घाघरा और राप्ती प्रधान नदी हैं। गोमती पीलीभीत जिलेसे निकलती और लखनऊ, सुलतानपुर, जौनपुर जाते हुए सैयदपुरके पास गङ्गामें गिरती है। कथना, सरायन, सायी और नन्द गोमतीकी शाखा है। प्रतापगढ़में बहती और हरदोईमें साँदी बड़ी भील है। गोंडा और बहरा-ईच जिलेमें राप्ती बहती है। घाघराके दक्षिण तटपर फैजाबादका जिला आबाद है। खेरी, सीता-पुर और हरदोई जिला खेरागढ़ जङ्गलसे गङ्गा किनारे कन्नौज तक फैला है। लखनऊ, बाराबंकी और उनाव बीचका जिला है। रायबरेली, प्रतापगढ़ गङ्गाके वाम-तट और सुलतानपुर गोमतीकी दोनों ओर बसा है।

अवधकी ज़मीन् अधिक उपजाऊ है। कहीं-कहीं चिकनी मट्टी या बालू देखते हैं। साधारणतः पानी २५ फीट गहरे निकलता है। ऊसरमें सख्तसे सख्त घास जगती है। इस प्रान्तमें कोई मूल्यवान् धातु नहीं होता। पुराने समय नमक बहुत बनता था, जिसे अंगरेज सरकारने बन्द करा दिया। कड़ड़ ज्यादा होता और सड़क कूटनेके काम आता है। सालमें कितनी ही फसल होती और तालाब, आमका बाग़ या बांसकी कोठी भी जगह जगह मौजूद रहती है। गरीबोंके घरोंपर इमलीके पेड़ छाया किये हैं। केला, अमरुद, कटहल, नीबू और नारङ्गी गांवकी शोभा बढ़ाती है।

सरकारी जङ्गल बहुत अच्छा है। खेरागढ़में साखूके लठ्ठे कटते और बहराम घाटमें उनके तख्ते चिरते हैं। शीशम और दूसरी लकड़ी छत पाटनेके काम आती है। महुवेका फल-फूल और लकड़ी-काठ सब कुछ अच्छा होता है। भीलोंमें जङ्गली चावल, कमल गन्ध और सिंघाड़ा उपजता है।

पहले गोंडेके जङ्गलमें हाथी घूमता था, किन्तु अब कहीं भी देख नहीं पड़ता। इसी तरह जङ्गली भैंसा और चीता भी गुम हो गया है। किन्तु मेड़िया इधर-उधर घूमा करता है। नीलगाव बहुत होता और

फसलको चर जाता है। गङ्गा और गोमतीके ऊसरमें हिरण छलांगि भरा करता है। भीलोंमें सुरगाबी और बतख तैरती है। साँप काटनेसे कितने ही आदमी सालमें मरते हैं। घराऊ जानवरोंमें घोड़ा, मवेशी, भैंस, गधा, सूअर, भेड़, बकरा और मुर्गा प्रधान है।

इतिहास—फैजाबादके पास हिन्दुओंका पवित्र तीर्थ अयोध्यापुरी विद्यमान है। अयोध्या देखो। घाघरासे उत्तर थोड़ी दूर करनलगञ्जके पास अगस्त्य मुनिका समाधि बना है। आवस्तीमें शाक्य मुनिने कितने ही बौद्ध चले मूँडि थे। कश्मीरमें शकाधिपति कनिष्कके वैद्य सम्मेलन करनेपर आवस्तीसे दां पण्डित भेजे गये। आवस्तीका पतन होनेपर विक्रमादित्यने कश्मीर-के राजा मेघवाहनको हरा अवध स्वतन्त्र कर दिया। सन् ४०० ई०को चानपरिव्राजक फाहियानने आवस्ती नगरमें ऊंची दीवार और टूटा-फूटा मन्दिर तथा प्रासाद पाया, किन्तु बौद्ध महन्तोंका जोर घट गया था। सन् ई०के ७वें शताब्द युअङ्ग-चुअङ्गने आवस्तीको बिलकुल खाली देखा।

सन् ई० के ८-वें या ९-वें शताब्द ताहरोने जङ्गल साफ़ कराया था। कोई सौ वर्ष बाद किसी सोम-वंशीयने अपना प्रभाव जङ्गली अधिवासियोंपर डाल दिया। सन् ई० के ११ वें शताब्द कन्नौजके राठौर-नृपतिने अवधके जैनियोंको हराया था।

पीछे भारोंका राज्य फैल चला। किन्तु सन् १२४६ ई० को दिल्लीके बादशाह नसीर-उद्-दीन् मुहम्मदने उन्हें नीचा देखाया। सन् ११८४ ई० को कन्नौजके गिरनेपर शहाबुद्दीन गोरीने अवधको लूटा मारा था। सबसे पहले मुहम्मद बख्तियार खिलजीने अपना अड्डा यहां जमाया। कुतुबुद्दीनके मरनेपर उन्होंने अलतमशकी वंशता अस्वीकार की और उनके लड़के गियासुद्दीन् बङ्गालके पुश्तैनी शासक बन बैठे। पीछे हिन्दुओंने बलवा खड़ा कर १२०००० मुसलमान मार डाले थे। शाहजादे नसीरुद्दीन बलवा दबाने भेजे गये और सन् १२४२ ई० को कमरुद्दीन कैरो अयोध्याके शासक बने। जौनपुरके नवाब इब्राहीम

शाह शरकीनी नगर नगरमें मुसलमान शासक रख दिये थे। उनके समय बड़े-बड़े नृपति भाग खड़े हुये। किन्तु उनके मरनेपर राजा त्रैलोक्यचन्द्रने मुसलमानोंके विरुद्ध उपद्रव उठाया था। मुसलमानोंके पैर उखड़े और त्रैलोक्यचन्द्र राजा बन बैठे। बाबरने हमला मार अयोध्यामें मसजिद बनवायी थी।

महाराष्ट्रोंके अभ्युदय समय औरङ्गजेबको बादशाहत बियड़ी और अवध स्वतन्त्र हो गया। सन् १७३२ ई० को शहादत अली खान अवधके सुवेदार बने थे। सन् १७४३ ई० को उनकी मृत्यु हुई और दामाद सफ़्दर जङ्गने नवाबी पायी। किन्तु सन् १७५३ ई० को सफ़्दर जङ्गके लड़के शुजा-उद्-दौलाके समय एक नयी बात पड़ी थी। उन्होंने बङ्गालमें मीर कासिमको अंगरेजोंसे लड़ते देख विहार प्रान्त-पर अधिकार करना चाहा। इसलिये वह भगेड़ बादशाह शाह आलम और बङ्गालके निर्वासित नवाबको ले पटनेपर भपट पड़े। किन्तु उन्हें अक़्त-कार्य ही बक्सरको हटना हुआ। सन् १७६४ ई० के अक्तीबर मास मेजर मनरोने वहां उन्हें पूरे तौरपर हरा अवधपर अधिकार जमाया था। नवाब बरेलीको भागे और हतभाग्य बादशाह अंगरेजोंसे आ मिले। सन् १७६५ ई० को जो सन्धि हुई, उसके अनुसार अवध प्रान्तका कोड़ा, अलाहाबाद बादशाह और बाकी देश शुजाउद्दौलाको दिया गया। कोड़ा और अलाहाबाद बादशाहसे ले लेनेकी इच्छा देख सन् १७६८ ई०को नवाबकी फौज ३५००० रखी गयी और उसे रणकौशल सीखनेको आज्ञा न हुई।

सन् १७७५ ई० को शुजा-उद्-दौला मरे और उनके लड़के अशफ़्-उद्-दौला गद्दीपर बैठे थे। उसी समय अंगरेजोंने उनसे सन्धि की, जिसके अनुसार उन्हें कोड़ा, अलाहाबाद दिया और बनारस, जौनपुर, गाजीपुर, राजा चेतसिंहका राज्य लिया गया। किन्तु अशफ़्-उद्-दौलाने खर्चसे तज्ञ आ अपनी मा बहू वेगमका धन छीनना चाहा था। वेगमके प्रार्थना करनेपर अंगरेजोंने बीचमें पड़ भगड़ा मिटा दिया। पीछे अशफ़्-उद्-दौला फ़ैजाबादके लखनऊमें आकर

रहने लगे थे। सन् १७८१ ई० को चुनारमें नवाबसे मिल वारेन हेस्टिङ्सने फिर सन्धिकी, जिसके अनुसार एक ढगडको छोड़ सारी अंगरेजों फौज अवधसे हटा ली गयी। लखनऊ देखो।

सन् १७८८ ई० को अशफ़्-उद्-दौलाका उत्तराधिकार सौतेले भाई शहादत अली खानने पाया था। संधियाके दबानेसे उन्होंने अपना आधा राज्य अंगरेजोंको इस लिये सौंप दिया, कि वह संधियाके आक्रमणसे देशको बचायेंगे। शहादत अलीके उत्तराधिकारी गाजी उद्-दीन हैदरने पहले पहल सन् १८१४ ई०को राजाका उपाधि पाया था। पीछे सन् १८२७ ई० को नसीर-उद्-दीन हैदर, १८३७ को मुहम्मद अली शाह और १८४१ को अमजद अली शाह गद्दी पर बैठे। सन् १८४७ ई० को अवधके अन्तिम नवाब वाजिदअली शाह राजा हुये थे। सन् १८५६ ई० के फरवरी मास अंगरेजोंने अवधपर अधिकार किया और बारह लाख रुपया वार्षिक वाजिद अलीके व्ययनिर्वाहार्थ बांध दिया।

सन् १८५७ ई० के मार्च मास लखनऊमें बलवा फूटा और जूनके मध्यतक समय अवध बलवायियोंके हाथ जा पड़ा था। ४ थी जुलाईको सर हेनरी लारेन्स गोलीके घावसे मरे, किन्तु २५ वीं सितम्बरको भीतराम और हेवलकने लखनऊकी फौजको जाकर उधार किया, जो तीन महीने किलेमें घिरी रही थी। (त्रि०) ३ न मारने योग्य।

अवध बख्श—एक हिन्दुस्थानी कवि। प्रायः सन् १८४७ ई०को इन्होंने जन्म लिया था। इनके पदमें लालित्य भरा है। शिवसिंह सरोजमें इनका परिचय है।

अवधातव्य (सं० त्रि०) अव-धा-कर्मणि तव्य। १ मनोयोगका विषय। २ बोधका विषय, जिससे मनोयोग किया जाये।

अवधान (सं० क्ती०) अव-धा-ल्यट्। १ मनोयोग विशेष। २ मनका योग, चित्तका लगाव, चित्तकी वृत्तिको निरोधकर उसे एक ओर लगाना। ३ समाधि।

४ ध्यान। ५ सावधानी, चौकसी।

अवधार (सं० पु०) अव-धृ-णिच्-अच्। निश्चय।

अवधारण (सं० क्ली०) अव-धृ-णिच्-ल्युट्।

१ परिच्छेद। २ निरूपण। ३ संख्यादि द्वारा इयत्ता

करना। ४ परस्पर विभिन्न रूपमें व्यवस्थापन होना।

५ निश्चय, विचारपूर्वक निर्धारण करना।

अवधारणीय (सं० त्रि०) अव-धृ-णिच् कर्मणि

अनीयर्। निरूपण करने योग्य, निर्धारणके योग्य,

निश्चययोग्य।

अवधारना (हिं० क्ति०) धारण करना, ग्रहण करना।

अवधारित (सं० त्रि०) अव-धृ-णिच् कर्मणि क्त।

निर्धारित, निश्चित।

अवधार्य (सं० त्रि०) अव-धृ-णिच्-कर्मणि यत्।

१ निश्चय करने योग्य, अवधारणीय, अवधारण करने

योग्य। २ निर्णय, निर्णय करने लायक। (अव्य०)

अव-धृ-णिच् ल्यप्। ३ अवधारण कर।

अवधि (सं० पु०) अव-धा-कि। १ सीमा। २ काल,

३ चित्ताभिविवेश, अवधान, मनोयोग, अपादान,

जिससे सीमा की जाय। पूर्व और पर सीमा यही दो

प्रकारकी है। जैसे, कलकत्ता अवधिसे काशी अवधिका

गाड़ीभाड़ा इतना है। यहां कलकत्ता पूर्व अवधि

एवं काशी पर अवधि है।

प्रकारान्तरसे अवधि तीन प्रकारकी है—देशकृत,

कालकृत एवं बुद्धिकल्पित। देशकृत, कलकत्ता अव-

धिसे इत्यादि। चन्द्रके ग्रास अवधिसे मोक्ष अवधि

तक जप करना। यहां ग्रासकाल अवधिको कालकृत

पूर्व अवधि, एवं मोक्षकाल अवधिको कालकृत पर

अवधि कहते हैं। कुलकामिनी जो बात कहती

हैं, वह सखीकर्णावधि अर्थात् इतना धीरे धीरे कि

वह पासकी सखी ही सुन सकती, दूसरा कोई नहीं।

यहां कुलकामिनीके मुखको कविका बुद्धिकल्पित

पूर्व अवधि और जो सखी उसकी बात सुनती है, उस

सखीके कानको पर अवधि कहते हैं।

अवधिज्ञान (सं० क्ली०) जैन शास्त्रानुसार ज्ञान

विशेष। जिस ज्ञानके द्वारा इन्द्रियोंकी सहायताके

विना द्रव्य, चेतन, काल, भावकी अवधि (मर्यादा) को

लिये नुये पदार्थ प्रत्यक्ष (स्पष्ट) जाने जावें। वह

अवधिज्ञान देव और नारकियोंको तो जन्मसे ही

होता है। मनुष्य तथा तिर्यचोंको तपश्चरण व्रत नियम

द्वारा प्राप्त होता है। मनुष्य और तिर्यचोंको जो

अवधिज्ञान होता है, उसके ६ भेद हैं—अनुगामी,

अननुगामी, वर्द्धमान, हीयमान, अवस्थित, अनवस्थित।

जो अवधिज्ञान अन्य जन्ममें या क्षेत्रमें भी साथ जाय,

वह अनुगामी है, जो साथ न जाय, जिस जन्ममें या

जिस क्षेत्रमें उत्पन्न हुआ हो, उसी जन्म या क्षेत्रतक

रहे, सो अननुगामी है। जो परिणामांकी विशुद्धिसे

जितने द्रव्य, क्षेत्र, काल, भावकी मर्यादासे उत्पन्न

हुआ हो, उससे बढ़ता ही रहे घटे नहीं, सो वर्द्धमान,

और जो संक्लेश परिणामोंसे घटता ही रहे, सो हीय-

मान है। जो कभी न घटे और न बढ़े एकसा ही

रहे, सो अवस्थित और जो घटता बढ़ता भी रहे, सो

अनवस्थित है। (पृथिवी, जल, अग्नि, पवन,

अन्धकार और छाया आदिसे व्यवहित द्रव्योंका प्रत्यक्ष

तथा आत्माका भी ज्ञान हो।

अवधि दर्शन (सं० पु०) जनशास्त्रानुसार अवधिज्ञान

द्वारा पदार्थोंके जाननेसे पहिले सामान्य सत्ताका

प्रतिभास होना। अवधिज्ञान।

अवधिमत (सं० त्रि०) अवधि रस्तरस्थ मतुप्।

अवधि विशिष्ट। अर्थात् निर्धारित समय युक्त। नव्य

नैयायिक अवधिको ही पञ्चमीका अर्थ स्वीकार

करते हैं।

अवधिमान (हिं० पु०) समुद्र।

अवधी (सं० त्रि०) १ अवध-सम्बन्धी, अवधका।

२ अवधी बोली। अवधकी भाषा। विहारके

मुसलमान और कायस्थ यही भाषा बोलते

हैं। सभ्य सम्भाषणमें भी इसीका व्यवहार होता

है। गयामें इसके बोलनेवाले हजारों आदमी

मौजद हैं।

अवधीयमान (सं० त्रि०) अव-धा-कर्मणि शानच्

आकारस्थ इत्वम्। जो विषय मनोयोग करने

लायक हो।

अवधौर—अवधौयां अदन्तचुरादि प० सक० सेट्।

लट् अवधोरयति । लुङ् आवधोरत् लिट् अवधोर-
यामास । क्ता अवधोरयित्वा ।

अवधोरणा (सं० स्त्री०) अवधोर-णिच्-भावे युच् ।
अवज्ञा, तिरस्कार ।

अवधोरित (सं० त्रि०) अवधोर-णिच्-कर्मणि क्त ।
अवज्ञात, तिरस्कृत, अपमानित । जिसका तिरस्कार
किया गया हो । “अवधोरितसुहृत्कालः ।” (पञ्चतन्त्र)

अवधूत (सं० त्रि०) अव-धू-क्त । १ कम्पित । २ कृष्ण
यजुर्वेदान्तर्गत उपनिषद् विशेष । ३ अभिभूत, निव-
र्त्तित, अनादृत । (पु०) ४ संन्यासिविशेष ।

अवधूत संन्यासियोंमें कुछ शैव और कुछ वैष्णव रहते
हैं । महानिर्व्वाणतन्त्र एवं योगसारमें शैव अवधूतोंका
विवरण लिखा है । वृहत्-शङ्करविजयमें भी इसी
सम्प्रदायका विवरण देखा जाता है । महानिर्व्वाण-
तन्त्रमें प्रधानतः चार प्रकारके अवधूत संन्यासियोंकी
कथा पाई जाती है,—ब्रह्मावधूत, शैवावधूत, वाराव-
धूत एवं कुलावधूत । ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यका
ब्रह्मोपासक होनेसे यति वा ब्रह्मावधूत कहते हैं । इस
अवस्थामें वे लोग गृहस्थायाममें रह अथवा संसारधर्म
त्यागकर संन्यासी हो सकते हैं । विधिपूर्वक पूर्णाभि-
षिक्त होनेपर संन्यासी शैवावधूत कहा जाता है ।

वीरावधूतोंके शिरमें दीर्घ और असंस्कृत केश
रहते हैं । कोई रुद्राक्ष और कोई हाड़की माला
पहन रहता है । उनमें कोई विवस्त्र, कोई केवल
कौपीन धारण किये हुए, एवं किसीके अङ्गमें भस्म
और किसीके रक्तचन्दन लिप्त रहता है । उनके
हाथमें मनुष्यकी खोपड़ी, काष्ठदण्ड, मृगचर्म, परशु,
खट्वाङ्ग, डमरू एवं भभरू रहता है । उनमें कोई
कोई गेरुआ वस्त्र भी पहनते हैं । सभी वीरावधूत
गांजा और मद्य सेवन करते हैं ।

कुलाचारके अनुसार अभिषिक्त होकर जो साधक
गृहस्थायाममें रहता है, उसे कुलावधूत कहते हैं ।

शङ्करदिग्विजयमें दश प्रकारके अवधूतोंकी बात
लिखी है,—तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, गिरि, पर्वत,
सागर, सरस्वती, भारती एवं पुरी ।

जो संन्यासी त्रिवेणी प्रस्थित तीर्थ स्थानमें रह

स्नानादि करते, उन्हें तीर्थ जो आशाविवर्जित हैं
और साधनद्वारा पुनर्जन्मसे मुक्तिलाभ करते, वे
आश्रम कहे जाते हैं । जो वन एवं निर्भरमें वास
करते, उन योगियोंको वन कहते हैं । जो अरण्यमें
वास करते और सर्वदा आनन्दित रहते हैं, उनका
नाम अरण्य है । जो संन्यासी गिरिमें वास करते
और गीताभ्यासमें निरत रहते एवं जिनकी बुद्धि
गभीर और अचल होती है, उन्हें गिरि कहते हैं ।
जो पर्वतके मूलमें वास करते हैं, ध्यानमें प्रवीण
एवं सारात्सार परब्रह्मतत्त्वज्ञ हैं, वे पर्वत कहे
जाते हैं । जो संन्यासी सागरसदृश गभीर भावसे
बैठकर ईश्वरकी आराधना करते हैं, उनका नाम
सागर है । स्वरवादी एवं सुकवि संन्यासीको सरस्वती
कहते हैं । सद्बिद्वान् एवं दुःखविवर्जित संन्यासी भारती
कहे जाते हैं । तत्त्वज्ञ एवं परब्रह्मनिरत संन्यासीका
नाम पुरी है ।

अवधूत वैष्णव रामानन्दके शिष्य हैं । इस समय
भी वङ्गदेशके नाना स्थान एवं भारतवर्षके किसी किसी
प्रदेशमें इससंस्थेकी वैष्णव बहुत पाये जाते हैं । इनका
आचार व्यवहार अतिशय कुत्सित है । इस सम्प्रदाय-
वाले जातिभेद नहीं मानते और न उनके पान
भोजनका ही कोई नियम है । उनके शिरमें बड़े
बड़े बाल, गलेमें स्फटिक प्रभृतिकी माला, कमरमें
कौपीन, देहमें घञ्चियोंका कुरता और हाथमें नारि-
यलकी किशो रहती है । ये लोग सर्वदा अत्यन्त
अपरिष्कार भावसे रहते हैं । लोग इन्हें बावले भी
कहते हैं । वङ्ग देशके स्थान स्थानमें इनके अखाड़े
हैं । एक एक अखाड़ेमें दो तीन अवधूत और उनकी
कई दासियां रहती हैं । ये लोग रूप बदल सभी
जातिको अपने सम्प्रदायमें मिला लेते हैं । गोपीयन्त्र
और एकतारा प्रभृति इनके वाद्ययन्त्र हैं । भिचा
मांगनेके समय गृहस्थके द्वारपर जाकर पहिले ये लोग
'वीर अवधूत' का नाम स्मरण करते, फिर बाजा
बजाकर गीत गाते हैं । इनमें कितने ही गृहस्थोंकी
लड़कियोंको नष्ट करनेकी चेष्टा करते, इसीसे समाजके

५ एक प्राचीन संस्कृत कवि। सुभाषितावलीमें इनका उल्लेख है। ६ भगवद्भक्तिस्तोत्ररचयिता।

अवधूनन (सं० क्लो०) अव-ध-णिच्-नुक-ल्युट्।

१ चालन, भाड़। २ चिकित्सा विशेष।

अवधूलन (सं० क्लो०) धुलि करोति अव-धूलि-कृत्यर्थे णिच् भावे ल्युट्। अवचूर्णन, चूर्ण करना, बुकनी बनाना।

अवधृत (सं० त्रि०) अव-धृ-कर्मणि क्त। अवधारित, निश्चित, नियमित, व्यवस्थापित।

अवधृष्य (सं० त्रि०) अव-धृष् कर्मणि क्यप्। १ अवधर्षणीय, तिरस्कारयोग्य। २ पराभवनीय। (अव्य०) अव-धृष्-ल्यप्। ३ तिरस्कारकर, अपमानकर।

अवधेय (सं० त्रि०) अव-धा कर्मणि यत्। १ निश्चेतव्य, ध्यानदेने योग्य। २ निवेश्य, स्थापनीय। ३ अज्ञेय, अज्ञात योग्य। ४ ज्ञातव्य, जानने योग्य। (क्लो०) भावे यत्। ५ मनोयोग।

अवधेश—बुंदेलखण्डके प्रसिद्ध कवि। यह ब्राह्मण चरखारी राज्यके रहनेवाले थे। सन् १८४० ई०को इन्होंने इहलोक छोड़ा। कहते हैं, इनकी कविता रसीली रही। शिवसिंहने लिखा, कि उन्हें इनकी कविताका कोई पूर्ण पुस्तक मिला न था।

अवध्र (सं० त्रि०) अव-वध-रक् नञ्-तत्। अहिंसक। “अवध्रं श्रौतिरहितं क्षताद्योदिवस्।” (ऋक् ७८२।१०) ‘अवध्रम् अहिंसकम्।’ (सायण)

अवध्वंस (सं० पु०) अव-ध्वन्स-घञ्। १ परित्याग, छोड़ना। २ नाश। ३ चूर्णन, चूर चूर करना। ४ निन्दा, कलङ्क। “अवध्वंसं परित्यागे निन्दनेऽप्येव चूर्णने।” (विश्व)

अवध्वस्त (सं० त्रि०) अव-ध्वन्स-क्त। १ नष्ट। २ निन्दित। ३ चूर्णित। ४ त्यक्त। ‘अवध्वस्तश्च चूर्णितः, त्यक्तनिन्दितयोश्च।’ (हेम)

अवन (सं० क्लो०) अव-लुगट्। १ प्रीणन, प्रसन्न करना। २ रक्षण, रक्षा करना, बचाव। ३ प्रीति। ४ हर्ष। ‘अवनं रक्षणप्रीत्योः।’ (हेम)

अवनत (सं० त्रि०) अव-नम्-क्त। १ अधोमुख। २ आगत, नीचा, झुका हुआ। ३ पतित, गिरा हुआ। ४ कम। ५ कृतनमस्कार, प्रणाम किया हुआ।

अवनति (सं० स्त्री०) अव-नम-क्तिन्। १ औद्यत्यका अभाव, अगर्व, विनय, नम्रता। २ घटती, कमती, घाटा, न्यूनता, हानि। ३ अधोगति, हीनदशा, तनज्जली। ४ झुकाव, झुकना।

अवनद्ध (सं० त्रि०) अव-नद्ध-क्त। १ खचित, रोपित, वेष्टित, वद्ध। (क्लो०) २ सदृक्कादि वाद्य। नहोष पा २।३४। झल परे या पदान्तमें वर्तमान नह धातुका हकारके स्थानमें धकार होता है।

अवनम्र (सं० त्रि०) अव-नम-र। अतिशय नम्र। अजल शब्दमें सूत्र देखो।

अवनय (सं० पु०) अव-नौ भावे अच्। अधःपतन, नीचे गिरना।

अवनयन (सं० क्लो०) अव-नौ-लुगट्। अवस्थापन, गर्तमें प्रोक्षणका शेष जल डालना।

अवना (हिं०) आना।

अवनाट् (सं० त्रि०) नासिकायाः नतम्। अव-नतार्थे नासिकायाः नाटच् प्रत्ययः। चिपटी नाकवाला, जिसके नाक चिपटी रहे।

अवनाय (सं० पु०) अव-नौ घञ्। अधोनयन, अधोप्रापण, नीचे लेजाना। अवोदीर्णयः। पा ३।३।२६। अव और उत् यही दो उपसर्गसे पर नौ धातुके उत्तर घञ् प्रत्यय होता है। ‘अवनायोऽधोनयनम्।’ (सि० कौ०)

अवनाम (सं० पु०) अव-नम-घञ्। अवनति, मत्था नमाकर नमस्कार करना।

अवनि, अवनी (सं० स्त्री०) अवति रक्षति प्रजाः अव्यन्ते वा भूपेः अव-अनि (अतिष्ठधृषण्यस्विविभ्योऽनि। उष् २।१०।१। इति अनि) ‘क्षदिकारान्मत्तात् वा छीषि अवनीत्यपि।’ १ भूमि, महो, मेदिनी, पृथिवी, जमीन। २ त्रायमाणा लता। अवन्ति जगत् खोदकेन, अव्यन्ते प्राणिभिस्तिरादिनिर्माणेन अव-अनि। ३ नदी। (निरु०) वेदमें अवनीका अर्थ नदी होता और प्रायः बहुवचनान्त रूप देखा जाता है। “आसिञ्जन्तीरवनयः समुद्रम्।” ऋक् ५।६५।६। ‘अवनयो नद्यः’ (सायण)

अवन्ति कर्मणि। ४ अङ्गुलि। ‘दशानिभ्यो दशरचक्षेभ्यो’ ऋक् १०।६४।५। ‘कर्मण्यवनि गच्छन्त्यवनयः। दशवनयोऽङ्गुलयः।’ (सायण)

अवनित (सं० त्रि०) अव-निज्-क्त। चालित, धौत, शोधित, धोया हुआ (वस्त्र विशेष)।

अवनिनाथ (सं० पु०) ६-तत् । राजा, नृप ।

अवनिपति, अवनीपति (सं० पु०) ६-तत् । नृप, राजा ।

अवनि सिंह—मन्द्राजप्रान्तस्थ कनाड़ा जिलेके एक प्राचीन नृपति । काञ्चापुरके पास कूरममें जो ताम्रफलक मिला, उसमें लिखा है,—‘इन्हें सिंहविष्णु भी कहते थे । इन्होंने मलय, कालाभ, मालव, चोल, पाण्ड्य, सिंहल और केरल नरेशोंको नीचा दिखाया था । सन् ७८४ ई०वाले विनयादित्यके ताम्रफलकमें लिखा है,—सन् ४५४-५५ और ४६६ ई० को यह अपने राज्यपर अधिकृत रहे ।

अवनौपाल (सं० पु०) ६-वन् । नृप, राजा ।

अवनौश (सं० पु०) अवनीपाल देखो ।

अवनेजन (सं० लो०) अव-निज्-शुद्धी ल्युट् । १ प्रक्षालन, धोना । २ आहुतिमें पिण्डदानकी वेदीके विष्ठाए हुए कुशोंपर जल सींचनेका संस्कार विशेष । पार्वण आहुतिके अन्न दान प्रभृति अनेक कार्योंमें अर्थात् पित्रादि या मातामहादि तौनके उद्देश्यसे एक वाक्यमें तौनोंका नाम ले एकवार उत्सर्ग करनेकी विधि है । अर्घ्य, अर्घ्योदक, पिण्डदान, अवनेजन, स्त्रधावाचन इन कितने कार्योंमें प्रत्येकके निमित्त पृथक् पृथक् रूप मन्त्र पढ़ते हैं । यथा—

“अर्घ्योदको देवे पिण्डदानेऽवनेजनम् ।

तन्मता विनिवृत्तिः स्यात् स्त्रधावाचन एव च ॥” (अति)

अवन्ति (सं० पु०) अव-भित् । अवतेश । उष्ण ३५० । मालवदेश एवं उसकी प्रधान नगरीका नाम ।

यनकथा कीविद्यामहद्भाग ।

पूर्वोद्दिष्टानुसर पुरीं श्रीविशालां विशालाम् ।” (मेघदूत)

वत्सराजका इतिहास जाननेवाले वृद्ध लोग जिस अवन्ति प्रदेशके गांव-गांवमें रहते हैं वहां पहुंच पूर्व कथित महा औसम्पन्न विशाला नगरीमें जाओ ।

इस श्लोकमें कालिदासने अवन्ति प्रदेश और उसकी नगरीकी पृथक् रूपसे देखाया है । यहां अवन्ति शब्दसे अवन्तिप्रदेश समझा जाता, इसलिये वह बहुवचनान्त है । पूर्व मेघके २७ वें श्लोकमें कालिदासने लिखा है, “सीवोत्सवप्रणयिणी”

उज्जैनकी अट्टालिकाके ऊपरसे एकबार परिचय करके जानेमें विमुख न होना । अतएव कालिदासके समयमें अवन्ती, उज्जयिनी एवं विशाला ये तीनों ही नाम चलते थे ।

हेमचन्द्रने अवन्तीके ये कई पर्याय लिखे हैं,— उज्जयिनी, विशाला, अवन्ती एवं पुष्पकरण्डिनी । ‘उज्जयिनी साविशालाऽवन्ती पुष्पकरण्डिनी ।’ अवन्ती नगरीको किसने किस समयमें स्थापित किया और इसके दूसरे दूसरे नाम किस समयसे चले आते हैं, यह जाननेका कोई उपाय नहीं है ।

अवन्ती नगरी अवन्ती नदीके किनारे बसी है । अवन्ती नदीका दूसरा नाम शिप्रा है । उज्जयिनी नगरीके वर्णनमें कालिदासने इस नदीका नाम भी लिखा है, ‘शिप्रावतः प्रियतम इव’ इत्यादि । मत्स्य-पुराणमें लिखा है, कि अवन्तीमें मङ्गलग्रहका जन्म हुआ था । “अवन्त्याच्च कुजा जातो मागधे च हिमांशजः ।” पहले अवन्ती नगरीमें कालिका एवं महाकाल नामक महादेवका मन्दिर था । शक्तिसङ्गमतन्त्रमें लिखा है,—

“तामपथीं समासाद्य शैलार्द्धशिखरोत्ततः ।

अवन्तींश्चको देशो कालिका तव तिष्ठति ॥”

कालिदासके मेघदूतमें महाकालका विवरण पाया जाता है,—

“पुष्पं यायास्तमुवनगुरोर्षाम चण्डीवरस ।

अप्यन्यभिन् जलधरमहाकालमासाद्य” इत्यादि ।

अवन्ती नगरी महाराज विक्रमादित्यकी राजधाना थी । प्राचीन समयमें यह औसौन्दर्य एवं विद्याके लिये विशेष प्रसिद्ध थी । रामकृष्ण अवन्ती नगरीके सान्दीपन आचार्यके निकट अस्त्रविद्या सीखने गये थे । “ततः सान्दीपनिं काश्मलवन्तीपुरवासिनम् । अस्त्रार्थं जगन्तु वीरौ बलदेवजनाङ्गनौ ।” (विष्णु० २१।१।२) परन्तु यह कौन अवन्ती है, सो ठीक नहीं कहा जा सकता ।

अवन्तीका वर्तमान नाम उज्जैन है । यह उज्जयिनी शब्दका अपभ्रंश है, इस समय यह नगरी सेंधियाके अधिकारमें है । इसका परिधि प्रायः तीन कोस है । इस नगरीकी चारो ओर शहरपनाह बना हुआ है, बीच बीचमें उसके ऊपर गोल गुम्बज

हैं। इसमें एक मसजिद, हिन्दुओंके अनेक देव-मन्दिर एवं इस समयकी एक राज-अदालतिका देखनेमें आती है। ७५° ५६' पूर्व द्राविमा एवं २३° २६' उत्तर अक्षरेखामें अवन्ती अवस्थित है। हमारे देशके भूवेत्तागण कहते हैं, लङ्कासे सुमेरु पर्वततक रेखा खींचनेपर उससे १६ अंश दूर अवन्तीका स्थान निर्दिष्ट होता है। उज्जयिनी और मालव शब्द देखो।

अवन्ती नदी—इसका दूसरा नाम शिप्रा है। कितने ही अनुमान करते हैं, कि मालव देशमें पड़ले दो अवन्ती नदियां थीं। इनमें एक पारियात्र पर्वतसे निकली है। शिप्रा नदी चम्बल नदमें जा मिली है। दूसरी अवन्ती नदी सागरमतीको एक शाखा है। अवन्तिका (सं० स्त्री०) उज्जयिनी नगरी, उज्जैन। इस नगरीको मुनियोंने मोक्षदायिका बताया है,—

“अयोध्या सधरा माया काशी काशी अवन्तिका।

पुरो हारावती चैव समेता मोक्षदायिकाः” ॥ (स्कन्दपुराण)

अवन्ति देशकी भाषा भी अवन्तिका कहाती है। आलङ्कारिकोंने व्यवस्था बांधी है, नाटकादिमें धर्तोंकी भाषा अवन्तिका रहना चाहिये,—

“प्राच्य विदूषकादीनो धूर्तानो स्यादवन्तिकाः” (साहित्य दर्पण)

अवन्तिखण्ड—स्कन्दपुराणका अंशविशेष।

अवन्तिदेव—१ कश्मीरके प्राचीन नृपति विशेष। २ संस्कृत भाषाके कोई कवि।

अवन्तिपुर, अवन्तीपुर (सं० स्त्री०) अवन्तिः अवन्ती वा पूः। १ उज्जयिनी, उज्जैन। २ कश्मीर राज्यका नगर विशेष। राजा अवन्तिवर्मने विश्वीकःसार नामक स्थानमें इस नामकी पुरी बसायी थी। फिर इसमें उन्होंने अवन्तिस्वामी और अवन्तीश्वर नामक दो महादेव लिङ्गप्रतिष्ठित कराये। प्राचीन अवन्तिपुर बेहात नदके दक्षिण कूलपर रहा, अब उसका कोई पता नहीं। किन्तु इन दोनों मन्दिर और नगरको चारो ओर प्राचीरका भग्नावशेष आज भी देखते हैं।

अवन्तिवर्मा—कश्मीरके कोई राजा। यह सुखवर्माके पुत्र रहे। उस समयके मन्त्री शूरने उत्पलापीड़ राजाको सिंहासनसे उतार, अवन्तिवर्माको बैठा दिया।

या। इन्होंने सन् ८५५ ई० को राजा बन २८ वर्ष राजत्व किया।

अवन्तिब्रह्म, अवन्तीब्रह्म (सं० पु०) अवन्तिषु अवन्तीषु वा ब्रह्म-टजन्त। ७-तत्। अवन्ती देश-वासो ब्राह्मण।

अवन्तिभूपाल (सं० पु०) अवन्तीके नृपति, उज्जैनके राजा, राजा भोज।

अवन्तिसोम, अवन्तीसोम (सं० स्त्री०) अवन्तिषु अवन्तीषु वा जातः सोम इव। काञ्चिक, कांजौ। सौवीर, कुल्लाष, अभियुत, धान्यान्त, कुञ्जल।

‘आरनालकसौवीरकुल्लाषाभियुतानि च।

अवन्तिसोमधान्यान्तकुञ्जलानिच काञ्चिके ॥’ (अमर)

अवन्ती (सं० स्त्री०) १ उज्जैन। २ उज्जैनकी रानी। ३ नदी विशेष। अवन्ति देखो।

अवन्तीदेश (सं० पु०) उज्जैन प्रान्त।

अवन्तीश्वर (सं० पु०) कश्मीरके नृपति अवन्तिवर्माका बनवाया मन्दिर।

अवपतन (सं० स्त्री०) उतार, गिराव।

अवपन्न (सं० त्रि०) अव-पद्-क्त। १ संसृष्ट, निकला हुआ। २ सहपक्क, साथ ही पका हुआ। ३ नीचे पड़ा हुआ।

अवपाक (सं० पु०) अव अपकर्षे पच्-घञ्। १ अपक्वष्ट पाक, खराब भोजन। कर्मणि घञ्। २ अपक्वष्ट पक्ववस्तु, खराब तौरसे पका हुआ चीज। अपक्वष्टः पाको यस्य बहुव्री०। ३ मन्द पाककारक, खराब पकाने वाला।

अवपाटिका (सं० स्त्री०) छुद्र रोगान्तर्गत शूक-रोग, लिङ्गके घूँघटका चौरफाड़। जो मनुष्य हर्ष या बलसे अत्यधिकभयोनिवाली (रजस्वला-धर्मरहित, थोड़ी उमरकी) स्त्रीके साथ सम्भोग करता, हाथसे लिङ्गपर धक्का मारता या घूँघटको जबरदस्ती खोलता, उसकी यह रोग होता है। (भावप्रकाश)

अवपात (सं० पु०) अव-पत भावे घञ्। १ अधः पतन, गिराव। अव-पत-षिच्-अच्। २ अधःपातन, फैलाव। अव पतति अस्मिन् आधारे घञ्। ३ हाथी पकड़नेको बड़ा मट्ठा।

अवपात्र (सं० त्रि०) अव भोजनो निवृत्तत्वात्, त्याज्य पात्रं यस्य, बहुव्री०। पतित किंवा स्नेच्छ जातिका मनुष्य, जिस शस्त्रसके खानसे बरतन भठा हो जाये।

अवपात्रित (सं० त्रि०) अव-पात्र कृत्यर्थे णिच्-क्त इट्-णिच्-लोपः। अपात्रित, जिसको जातिवालोंने अपने साथ बैठाकर खिलाना छोड़ दिया हो।

अवपाद (सं० पु०) अव-पद-घञ्। अधःपतन, नीचेको गिराव।

अवपान (वे० क्ली०) अव-पा-ल्युट्। १ पिलाया। २ दूरस्थ पानीय द्रव्य, तालाब।

अवपालित (सं० त्रि०) अरक्षित, गौर-महफूज, जिसकी खवर न ली जाये।

अवपाशित (सं० त्रि०) अव समन्तात् पाशो जातोऽस्य तारकादि० इतच्। पाशबद्ध, जालमें फंसा हुआ, जो फन्देमें पड़ा हो।

अवपीड (सं० पु०) पांच प्रकारके नखमें दूसरा शिरोनख। यह शोधन और स्तम्भन भेदसे दो प्रकारका होता है। अवपीड्यते यस्मात् स अवपीडः, अर्थात् जिससे अवपीडित हो। अवपीडन करके देने कारण इसे अवपीड कहते हैं। खूब कूट-पीसके तीक्ष्ण द्रव्यको छान लेते हैं। गलरोगादिमें यह बड़ा उपकार करता है। (परिभाषाप्रदीप)

गलरोग, सन्निपात, निद्रा, विषमज्वर, मनो-विकार, कृमि प्रभृति रोगमें अवपीडन देना चाहिये। (वेद्यकनिघण्टु)

अवपीडन (सं० क्ली०) अव-पीड-णिच्-ल्युट्। १ निष्पीडन, सख्त तकलीफ़दिही। २ नखविशेष, किसी किस्मकी सुंघनी। (स्त्री०) अवपीडना।

अवपूर्ण (सं० त्रि०) भरा हुआ, लबरेज।

अवप्रज्जन (सं० पु०) बुनावटके तानेका खातिमा।

अवप्रुत (सं० त्रि०) अव-प्रु-क्त। १ सकल दिक् सिक्त, चारो ओर सींचा हुआ। २ आर्द्र, भौगा। ३ अवतीर्ण, उतरा हुआ। ४ उपस्थित, मौजूद।

अवप्रुत्य (सं० अर्थ०) नीचे कूद कर।

अवफ (सं० पु०) बादौ, तफ़स, पेटका फूटना।

अवफव (सं० पु०) कुत्सित समाचार, खराब खबर।

अवबधा (सं० स्त्री०) त्रिकोणके आधारका खण्ड, मुसल्लसके कायदेका टुकड़ा।

अवबन्ध (सं० पु०) अवबध्यते आब्रियते चक्षुस्तेजोऽनेन, अव-बन्ध करणे घञ्। १ दृष्टि-आवरक रोग विशेष, मांडा, फूली वगैरह। भावे घञ्। २ सम्यक् बन्धन, खासी जकड़।

अवबाधा (सं० स्त्री०) अव-बाध-अ स्त्रीत्वात् टाप्। १ सकल दिक् वा सकल प्रकार बाधा, सब तर्फ या सब तरहसे आप्त। २ प्रतिबन्धन, धरपकड़।

अवबाहुक (सं० पु०) अव वृद्धो बाहुय्येन, प्रादि बहुव्री०। १ वायुरोगविशेष, भुजस्तम्भ, तशब्जुज बाजू। (त्रि०) अवगतो बाहुय्येस्य, प्रादि-बहुव्री०। २ बाहुविहीन, बेबाजू, जिसके हाथ न रहे।

अवबुद्ध (सं० त्रि०) अव-बुध-कर्मणि क्त। १ ज्ञात, जाना हुआ। कर्तरि क्त। २ प्रबुद्ध, जागरित, जागा हुआ। अवबोध (सं० पु०) अव-बुध भावे-घञ्। १ जागरण, जागना। २ ज्ञान, बोध। ३ न्यायपरता, सुनिष्फी। ४ शिक्षा, तालीम।

अवबोधक (सं० पु०-क्ली०) अव बोधयति अव-बुध-णिच्-ल्युट्। १ सूर्य। सूर्योदयके पूर्व ही लोग जागते और उनको देखकर समय जानते हैं। इस लिये सूर्यका नाम अवबोधक है। २ आपक, जनाने-वाला, जो किसी बातको जना दे। ३ बन्दौ, चारण। ४ चौकीदार, पाइरू, जो रातको पहरा देता हो।

अवबोधकत्व (सं० क्ली०) शिक्षा, पथप्रदर्शन, वर्णन, तालीम, रहनुमायी, बयान्।

अवबोधन (सं० क्ली०) अव-बुध-णिच्-ल्युट्। आपन, जनाना, चितावनी, समझाना।

अवभज्य (सं० अर्थ०) तोड़ फाड़कर।

अवभज्जन (सं० क्ली०) तोड़-फाड़।

अवभर्जित (सं० त्रि०) अव-भ्रं-स-णिच् भर्जादेशः क्त। भूँजा वस्तु, भूँजो इई चोज।

अवभाषण (सं० क्ली०) अव-भाष-ल्युट्। १ कथन, बात। २ मन्द कथन, दुरी बात।

अवभास (सं० पु०) अव-भास भावे घञ् ।
 १ प्रकाश, रौशनी, चमक । २ ज्ञान, समझ ।
 ३ मिथ्या ज्ञान, झूठी समझ । ४ स्थान, जगह ।
 अवभासक (सं० त्रि०) अव-भासयति, अव-भास-
 णिच् ण्वल् । १ प्रकाशक, रौशनी देनेवाला । (स्त्री०)
 २ सर्व प्रकाशक कुटस्थ चेतन्य, परमात्मा ।
 अवभासकत्व (सं० स्त्री०) प्रकाश, रौशनी, चमक-
 दमक ।
 अवभासकर (सं० पु०) देव विशेष ।
 अवभासप्रभ (सं० पु०) देवयोनि विशेष ।
 अवभासप्राप्त (सं० स्त्री०) बौद्धमतसे जगत्विशेष,
 किसी दुनियाका नाम ।
 अवभासिका (सं० स्त्री०) शरीरके ऊपरका चर्म,
 ऊपरी खाल ।
 अवभासित (सं० त्रि०) अव-भास-णिच् क्त इट णिच्
 लोपः । १ प्रकाशित, रौशन । २ लक्षित, जाहिर ।
 अवभासिन् (सं० त्रि०) प्रकाशमान, चमकीला ।
 अवभासिनी, अवभासिका देखो ।
 अवभिन्न (सं० त्रि०) विभाजित, खण्डित, विच्छिन्न,
 तक्सीम किया हुआ, टूटा-फूटा, जो छिद गया हो ।
 अवभुज्ज (सं० त्रि०) सिमटा, सुकड़ा, दबा हुआ ।
 अवभृथ (सं० पु०) अव अवसाने विभर्ति पोषयति
 यज्ञम्, अव-भृज्-क्यन् । १ प्रधान यज्ञ समाप्त होने-
 पर दूसरे यज्ञका आरम्भ, दीक्षान्त यज्ञ । २ होम
 विशेष । कोई यज्ञ करनेपर न्यूनातिरेक दोष लग-
 नेसे यह होम होता है । ३ अन्तर दिवस, आखरी
 दिन । ४ यज्ञाङ्ग स्नान, यज्ञके समयका नहान ।
 ५ अष्टक । “अच्छावभृतमोजसा ।” ऋक् ८ । २३ । २७ ।
 अवभृथस्नान (सं० स्त्री०) यज्ञस्नान, यज्ञके बादका
 नहान ।
 अवमेदिन् (सं० त्रि०) छेदनकारी, विभाजक,
 तक्सीम करनेवाला, जो टुकड़े-टुकड़े उड़ा देता हो ।
 अवभ्र (सं० पु०) निकाल ले जाना, उड़ा देना ।
 अवभ्रट् (सं० त्रि०) अव भ्रशते भ्रशति वा, अव-
 भ्रन्थ भ्रश वा क्तिप् । अधःपतित, नीचे गिरा हुआ,
 जो ऊपरसे गिरकर नीचे आ गया हो ।

अवभ्रट् (सं० त्रि०) नासिकाया नतम्, प्रादि
 समास ; नतार्थे नासिकाका भटच् प्रत्ययः । १ चपटी
 नाकवाला, जिसके नाक नीचे बैठ रहे । (स्त्री०)
 २ चपटी नाक रखनेकी हालत ।
 अवम (सं० पु०) अवति सर्वकार्येषु नेकष्ट्यं धार-
 यति । १ अधम, निक्षष्ट, कमीना, खराब । २ दिन-
 चय, अहस्पर्श । एक बार दो तिथिका चय पड़नेसे
 जैसे तीन तिथिका, वैसे ही एक तिथिको तीन बारका
 स्पर्श होनेसे भी दिन चय, अहस्पर्श या अवम कहा
 जाता है । क्रमशः तिथिका स्थितिकाल कम पड़ने-
 पर वारघटित पूर्वोक्त अवम घट जाता है । फिर
 तिथि बढ़नेसे परोक्त अवम घटा करता है । जैसे—
 रविवारको ५८ दण्ड चतुर्थी और पोछे पञ्चमी हो, तो
 वह समस्त सोमवार भोग मङ्गलवारको भी दो दण्ड
 रह सकती है । ज्योतिषशास्त्रमें यह अवम तिथि
 यात्रादि अनेक कार्यमें निषिद्ध है । इसीसे इसको
 अवम अर्थात् निक्षष्ट समझते हैं ।

‘निक्षष्टप्रतिष्ठावर्तरेफयाप्यावसाधनाः ।’ (अमर)

अवति रक्षति सर्वापदः । ३ रक्षक, मुहाफिज, सब
 तकलीफसे बचानेवाला । ४ पितृगण विशेष । पितृ-
 गण तीन प्रकारका होता है, अवम, ऊर्व और काव्य ।
 अव्यते निन्यतेऽनेन करणे अम् । ५ पाप, इजाब ।
 अवमत (सं० त्रि०) अव-मन-क्त अनुनासिकलोपः ।
 १ अवज्ञात, नामालूम । २ तिरस्कृत, बेइज्जत ।
 ३ अवगणित, बेशुमार । ४ अवमानित, बेकद्र ।
 ५ परिभूत, नापसन्द ।

‘अवगणितमवमतावज्ञाऽवमानितश्च परिभूते ।’ (अमर)

अवमताङ्कुश (सं० पु०) अवतोऽवज्ञातोऽङ्कुशस्त-
 ताङ्गं येन, बहुव्री० । दुर्दान्त हस्ती, मतवाला
 हाथी, जिसे महावत अङ्कुश मार रोक न सके ।
 अवमति (सं० स्त्री०) अव-मन् भावे क्ति अनुना-
 सिक लोपः । १ अवज्ञा, नाफरमांजरदारी । २ अना-
 दर, बेइज्जती । ३ तिरस्कार । ४ घृणा, नफरत ।
 (पु०) ५ प्रभु, मालिक ।
 अवमतिथि (सं० स्त्री०) अवम सर्वमङ्गलकार्येषु
 अधमा चासी तिथिश्चेति, कर्मधा० । १ एकबार अष्ट

तीन तिथि । २ तीन बार लग्न एक तिथि ।
इसका विवरण अवम शब्दमें देखो ।

अवमत्य (सं० अव्य०) घृणासे, नफरतके साथ,
नाक-भौं चढ़ाकर ।

अवमदिन (सं० क्लो०) अवम मधमच्च तत् दिन-
च ति । १ एकवारगो ही लगी हुई तीन तिथि ।
२ तीन बार लगी हुई एक तिथि ।

अवमन्तव्य (सं० त्रि०) अव-मन्-तव्य । अवज्ञेय,
अनादरणीय, नफरत-अङ्गेज, लानतपिजीर, जो दूर
रखने लायक हो ।

अवमन्तृ (सं० त्रि०) अव-मन्-तृच् । १ घृणा
करनेवाला, जिसे नफरत रहे । २ घृणित, नफरत-
अङ्गेज, खराब । ३ अवज्ञा करनेवाला, गुस्ताख ।

अवमन्य (सं० पु०) अवमथनाति विलोडयति, अव-
मन्य-अच् । १ शूकरोग मेद । जिसका लिङ्ग छोटा
रहता और जो अवस्थाके विना ही वृद्धि करनेकी इच्छा
से लिङ्गके ऊपर किसी वस्तुका प्रलेपादि लगाता, उसके
सर्पिका प्रभृति १८ प्रकारका रोग उत्पन्न होता है ।
इस रोगमें लिङ्गपर बड़ी-बड़ी और घनी फुन्सियां पड़
जातीं एवं पीड़ा और रोमांच होने लगता है ।

२ कर्णपाली रोगभेद । (सुश्रुत)

अवमर्द (सं० पु०) अव-मृद-भावे घञ् ।
१ पीड़न । २ चूर्ण करण । ३ चूर्ण हुआ राज्याङ्ग
विशेष । ४ ग्रहण विशेष । इसमें राहु, सूर्य और
चन्द्रको बड़ी देर तक छिपाये रखता है ।

अवमर्दन (सं० क्लो०) १ पीड़न, जुबम । २ दलन,
मालिश । (त्रि०) ३ पीड़ा पड़चानेवाला, जालिम ।

अवमर्दित (सं० त्रि०) पिष्ट, पादाक्रान्त, पीसा,
मला या कुचला हुआ ।

अवमर्श (सं० पु०) स्पर्श, संयोग, कृपाकृत ।

अवमर्ष (सं० पु०) अव-मृष्-घञ् । १ आलोचना ।
२ नाटकका सम्प्रश विशेष । इस अर्थमें 'विमर्ष'
ऐसा पाठ भी प्रचलित है ।

अवमर्षण (सं० क्लो०) १ अधैर्य, असहनशीलता,
बेसब्री, बरदाश्त कर न सकनेकी हालत । २ विस्म-
रणशील ।

अवमान (सं० पु०) अव-मन् भावे घञ् । अवज्ञा,
तिरस्कार, अपमान, अनादर ।

अवमानन (सं० क्लो०) अवमानना देखो ।

अवमानना (सं० स्त्री०) अव-मन्-णिच्-युच् णिच्
लोपः नित्य स्त्रोत्वात् टाप् । अपमान करना ।

अवमाननीय (सं० त्रि०) घृणित, अनादरके योग्य,
वेइज्ज,तीके काबिल ।

अवमानित (सं० त्रि०) अव चुरा० मन-णिच्-क्त
इट् णिच् लोपः । १ अपमानित, जिसका अपमान
किया गया हो । २ अवज्ञात । ३ अवगणित ।
४ अवमत । ५ परिभूत ।

अवमानिता (सं० स्त्री०) अनादर, वेइज्ज,ती ।

अवमानिन् (सं० त्रि०) अवमन्यते अवमानयति
वा अव-मन-णिनि । १ अपमानकर्ता, अनादर करने-
वाला । अवमानमस्तप्रश्न अस्तप्रथे इनि । २ अस-
मानविशिष्ट, अनादरयुक्त, तिरस्कार पाये हुआ ।

अवमान्य, अवमाननीय देखो ।

अवमार्जन (सं० क्लो०) अव-मृज भावे ल्युट् ।
१ धौत करण, धोलायी । २ प्रक्षालन, छांट । अव-
मृज्यते अनेन करणे ल्युट् । ३ जिसके द्वारा मार्जित
(धोया) किया जाये, जल प्रभृति । ४ अङ्गसंशोधक ।

“वाजिन्नवमार्जनानोमा ।” ऋक् १।१८।३। ‘अवमार्जनानि अङ्गसंशो-
धकानि ।’ (सायण)

अवमूच्य (सं० अव्य०) खोल या साज उतार कर ।
अवमूत्रयत् (सं० त्रि०) ऊपर मूतनेवाला, जो
किसीपर पेशाब करता हो ।

अवमूर्धन् (सं० त्रि०) अवनतो मूर्धा यस्य ।
अधोमुख, नीचे मुंहवाला ।

अवमूर्धशय (सं० त्रि०) अवमूर्धा सन् श्येते, अव-
मूर्धनाशी अच् । अधोमुख शयन-करनेवाला, जो
सर लटकाकर सोता हो ।

अवमूर्धशायिन्, अवमूर्धशय देखो ।

अवमृज्य (सं० अव्य०) १ नोचखसोटकर । २ मार-
तोड़कर ।

अवमृश्य (सं० त्रि०) स्पर्श करने योग्य, जो छूनेको
हो ।

अवमोचन (सं० क्ली०) अव-मुच् भावे ल्युट्।
१ उन्मोचन, खोलखाल। २ स्वान्तन्त्रप्रदान, आजाद कर देनेकी हालत।

अवमोटन (सं० क्ली०) अव-मुट्-णिच्-ल्युट्।
मोच, बल।

अवयजन (सं० क्ली०) अव-यज गतौ करणे ल्युट्।
१ अपगमनसाधन, जल्द जानेका काम। २ पृथक् याग, निराला यज्ञ।

अवयव (सं० पु०) अवयुयते कार्यद्रवेण सम्बध्यते, अव-यु मिश्रणे कर्मणि अप्। १ अंश, भाग, जिस उपादानसे कोई द्रव्य बने, हिस्सा, टुकड़ा। यु अमिश्रणे अप्। २ अङ्ग, उपकरण, समुदायका एकदेश, अजो जह्दीरेका कोई हिस्सा। ३ वाक्य विशेष, किसी किस्मका जुमला।

न्यायमत-प्रसिद्ध परार्थके अनुमानसाधन वाक्यों भी अवयव कहते हैं। अनेकोंके मतसे वह पांच प्रकारका होता है। किन्तु कोई-कोई उसे तीन प्रकारका भी बताता है। पांच प्रकार यह हैं,—
१ प्रतिज्ञा, २ हेतु, ३ उदाहरण, ४ उपनय, ५ निगम। पर्वतको अग्निविशिष्ट बताना प्रतिज्ञा वाक्य है। धूमहेतु हेतुवाक्य होता है। भट्टीकी तरह किसी वस्तुमें धूम होनेसे अग्नि रहना उदाहरण कहाता है। धूमको वज्रिका व्याप्य बताना उपनय वाक्य है। किसी स्थानमें धूम रहनेसे अग्नि होनेका जो सिद्धान्त निकलता, वही निगम कहाता है।

अवयवशब्द (सं० अव्य०) अंश-अंश, टुकड़े-टुकड़े।
अवयवस्थान (सं० क्ली०) शरीर, जिस, अजा रहनेकी जगह।

अवयवार्थ (सं० पु०) शब्दके मिश्रित अर्थोंका अर्थ, लफ्जके मुरक़ब हिस्सोंका मानी।

अवयविन् (सं० त्रि०) अवयवः कारणत्वेनास्त्य-स्व इनि। १ अवयव रखनेवाला। जैसे, दो कपाल अवयवसे घड़ा बनता और अवयवी कहाता है। अन्य द्रव्यत्वका नाम अवयवित्व है। नैयायिक अवयवित्वको अवयवसे भिन्न और अतिरिक्त पदार्थ मानते हैं। मुक्तावलीमें अवयवीका प्रमाण देखाया गया

है। यथा,—बहु परमाणु, एकत्र होनेसे ही अवयवी-मानना पड़ता है। किन्तु आपत्ति आती, परमाणु इन्द्रियग्राह्य न रहनेसे घटादि कैसे प्रत्यक्ष हो सकता है। इसका उत्तर है,—एक परमाणुके प्रत्यक्ष न पड़ते भी परमाणु-समूहको साफ-साफ देखते हैं। जैसे, दूरसे एक केश दृष्टिगत नहीं होता; किन्तु अधिक केश किसी स्थानमें रहने पर दूरसे ही भल-कता है।

अवयवी (सं० पु०) पक्षी, चिड़िया। अवयविन् देखो।
अवया (वे० त्रि०) १ निकल जाने या बन्द होने-वाला। २ शत्रुके वर्जन निमित्त गमनकारी, जो दुश्मन्को रोकने जाता हो।

अवयाज् (सं० क्ली०) अवयुच्य पृथक्कृत्य इज्यते, अव-यज कर्मणि णि। १ अवयजन, पृथक् याग, अलगसे हविर्भाग स्थापन। (त्रि०) २ अपकृष्ट यागकारी, खराब यज्ञ करनेवाला।

अवयातहेलस् (वे० पु०) क्रोधको शान्त किये हुये व्यक्त, जो शत्रुस अपना गुस्सा ठण्डा कर चुका हो।

अवयाट् (सं० त्रि०) अव-या-ट्। १ पृथक्-कर्ता, अलग करनेवाला। २ शान्तिस्थापक, जो ठण्डा पड़ जाता हो।

अवयान (सं० क्ली०) अव-या-ल्युट्। १ अपगम, उतार, हटाव। २ शान्ति, सदका।

अवयुन (वे० त्रि०) नास्ति वयुनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ कान्तिशून्य, बेरीनक। २ प्रज्ञाशून्य, बेअकल। नञ्-तत्। ३ अप्रज्ञान, समझमें न आने-वाला।

अवर (सं० त्रि०) न वरम्, नञ्-तत्। १ देव-तासे श्रेष्ठ न होनेवाला, जो परिश्रमेसे अच्छा न हो। २ अल्पप्रिय न होनेवाला, जो कम प्यारा न हो। ३ चरम, बड़ा। ४ अधम, पाजी। ५ अर्वाचीन, नया। ६ पश्चाद्वर्ती, पीछे रहनेवाला। नास्ति वरः श्रेष्ठो यस्मात्, ५-बहुव्री०। ७ अतिश्रेष्ठ, बहुत बड़ा। (पु०) ८ पश्चाद्वर्ती देश, पीछेका मुल्क। ९ पश्चा-द्वर्ती राज, पीछेका वक्ता। न वरः, नञ्-तत्।

१० वर न होनेवाला व्यक्ति, जो शस्त्रस दृष्टा न हो।
(स्त्री०) ११ हस्तिजङ्घाका पश्चाद्भाग, हाथीकी
जांघका पिछला हिस्सा। (स्त्री०) १२ पश्चाद्वर्ती
दिक्, पीछेकी सिम्त।

अवरक्षक (सं० त्रि०) पालक, मुहाफिज, जो
देखभाल रखता हो।

अवरज (सं० पु०) अवरस्नि काले जायते अवर-
जन-ड। १ कनिष्ठ सहोदर भ्राता, छोटा भाई।
'जघन्यजे स्त्रुः कनिष्ठ यवीयोऽवरजानुजाः।' (अमर) २ शूद्र।
३ नीच कुलात्पन्न, अधम। (स्त्री०) टाप्। अ-
वरजा। कानिष्ठ सहोदर भगिनी, छोटी बहिन। ४ शूद्रा।
अवरस्या जायते जन-ड। पुम्बद्भावः। ५ छोटी
बहिनका लड़का, भागिनिय, भाञ्जा। (स्त्री०) टाप्।
भागिनयी।

अवरत (सं० त्रि०) अव-रम्-क्त अनुनासिकलोपः
१ विश्रान्त। २ विरत, प्रेम न रखनेवाला॥
३ अलग, पृथक्। ४ स्थिर, ठहरा हुआ। ५ अनवरत,
सतत, हरवक्त।

अवरतस् (सं० अव्य०) अवर-तसिल्। अवर,
अवरकां, अवरद्वारा, अवरके उद्देश्य, अवरसे, अवरका,
अवरमें इत्यादि। सम्पूर्ण विभक्तिके स्थानमें तसिलस्
प्रत्यय होता है।

अवरति (सं० स्त्री०) अव-रम् क्तिन्। १ विराम,
ठहराव। २ निवृत्ति, छुटकारा। 'आरम्भवति विरतोय
उपरसे।' (अमर)

अवरदारुक (सं० स्त्री०) स्थावर विषान्तर्गत पत्र-
विषविशेष, किसा पत्तीका जहर।

अवरपरम् (वै० अव्य०) एकके बाद दूसरा, एक-
एक।

अवरपुरुष (सं० पु०) सन्तान, औलाद, बालबच्चे।
अवरवर्ण (सं० पु०) अवरः श्रेष्ठीभूतो वर्णः।
कर्मधा०। शूद्र।

अवरवर्णक, अवरवर्ण देखो।

अवरवर्णज (सं० पु०) अवरवर्णे जायते अवर-
वर्ण-जन-ड। १ शूद्र। २ निक्षेपवर्णजात रङ्ग।

अवरव्रत (सं० पु०) नास्ति वर अथ यस्मात्

तद्वरं तथोक्तं व्रतं नियमो यस्य बहुव्री०। १ सूर्य।
सूर्यकी जगत्में प्रतिनियत किरण द्वारा पृथिवीका
जल खींचकर पुनर्वा र यथाकाल देना पड़ता है।
यह दोनो काम सूर्यके अति उत्कृष्ट व्रत बन गये हैं।
इसीसे सूर्यका नाम अवरव्रत है। २ अर्कवृक्ष,
अकोड़ेका पेड़। (त्रि०) अवरं अधमं व्रतमस्य।
३ हीनव्रत, मन्दनियमयुक्त, अधम।

अवरशौला (सं० स्त्री०) बौद्ध मठ विशेष।

अवरशैल (सं० पु०) अवरः पश्चाद्वर्ती शैलः
कर्मधा०। १ अस्ताचल। २ एक प्रसिद्ध बौद्धविहार।
अवरस्तात् (सं० अव्य०) अवर प्रमथाद्यर्थे अस्ताति।
पश्चात् देश, काल किंवा दिक्।

अवरस्मर (वै० त्रि०) १ सबसे पिछला अगला रखने-
वाला, जो औवलमें आखिरीका काबिज् हो।

अवरहस (सं० स्त्री०) अव अवततं रहः अजन्तप्रा०
स०। अति निर्जन, जहां कोई भी जीव न रहे।

अवराधक (हिं०) १ आराधना करनेवाला, जो पूजा
करता हो। २ दास, सेवक।

अवराधन (हिं० पु०) आराधन, उपासना,
पूजा, सेवा।

अवराधना (हिं० क्ति०) उपासना करना, पूजना,
सेवा करना।

अवराधी (सं० पु०) पूजक, उपासक, आराधक।

अवराधं (सं० स्त्री०) अवरक्ष तत् 'अध'च्चेति,
कर्मधा०। १ अपर भाग, ऊपरी हिस्सा। २ देहका
पश्चाद्भाग, जिसका पिछला हिस्सा। ३ नाभिसे
पाद पर्यन्त देहका निम्न भाग, तोंदीसे पैरतक जिसके
नीचेका हिस्सा। (अव्य०) ४ क्रमशः, धीरे-धीरे।

अवराधतस् (सं० अव्य०) निम्न भागसे, नीचे-नीचे।

अवराध्यं (सं० त्रि०) अवराधे भवं यत्। १ शेष
भाग जात, आखिरी हिस्सेसे निकला हुआ। २ न्यून,
कम। ३ अल्प, थोड़ा। ४ निम्न वा निकटस्थित,
नीचे या पास पड़ा हुआ। (स्त्री०) ५ अल्पतम भाग,
छोटेसे छोटा हिस्सा।

अवरावर (सं० त्रि०) अतिशय निम्न, निहायत

अवरिका (सं० स्त्री०) धन्याक, धनिया ।

अवरीण (सं० त्रि०) अव अपकृष्टं रीयतेस्म, अव-री कर्मणि क्त । तिरस्कृत, धिक्कृत, फटकारा हुआ, जो डांटा-डपटा गया हो ।

‘अवरीणोऽधिक्कृतश्च ।’ (अमर)

अवरीयस् (सं० त्रि०) न वरीयः, नञ्त्तत् । १ नीच, कमीना, जो अच्छा न हो । २ अति अल्प, बहुत थोड़ा । (पु०) ३ सावर्ण्य मनुके पुत्रविशेष । (स्त्री०) अवरीयसी ।

अवरुग्ण (सं० त्रि०) अव-रुज्-क्त ओदित्वात्तस्य नः । रुग्ण, मरीज़ ।

अवरुज्य (सं० अर्थ०) तोड़-फोड़ कर, टुकड़े-टुकड़े उड़ाके ।

अवरुध (सं० त्रि०) अव सर्वथा रुध्यतेस्म, अव-रुध कर्मणि क्त । १ प्रतिरुध, रुंधा हुआ । २ बद्ध, बंधा हुआ । ३ गुप्त, छिपा हुआ ।

अवरुद्धा (सं० स्त्री०) १ रखनी, नीचे बैठी हुई अपनी जातिकी स्त्री । २ उठरी, जो औरत नीचे बैठ गयी हो ।

अवरुद्धि (सं० स्त्री०) अव-रुध भावे क्तिन् । १ अवरोध, घेरा । २ लाभ, फ़ायदा ।

अवरुध्यमान (सं० त्रि०) अवरोधप्राप्त, घिरा हुआ ।

अवरुद्ध (सं० त्रि०) अव-रुद्ध-क्त । १ कृतावरोहण, उतरा हुआ । २ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ ।

अवरूप (सं० त्रि०) १ कुरूप, बदशकल । २ वर्ण-सङ्कर, कमीना ।

अवरखना (हिं० क्ति०) १ तख्तीर खोंचना, रेखा लगाना । २ टट्टि डालना, देखना-भालना । ३ अनुमान लगाना, अन्दाज़ बांधना । ४ स्त्रीकार करना, समझना-बूझना ।

अवरेण (सं० अ०) निम्न भागमें, नीचे ।

अवरेव (हिं० पु०) १ वक्र चलन, तिरछी रफ्तार । २ कपड़ेका तिरछा काट । ३ फन्दा । ४ मुश्किल, बुरायाँ । ५ बहस, तकरार । ६ बोलीठोली, ताना-जनी ।

अवरेवदार (हिं० वि०) १ तिरछे काटका । २ पेचौला ।

अवरेवी, अवरेवदार देखो ।

अवरोकिन् (वै० त्रि०) प्रकाशमान, रौशन, चमकीला ।

अवरोचक (सं० पु०) अव अनादरे रोचयति; अव-रुच्-णिच्-ण्वुल्, णिच्-लोपः । अरुचिकारक रोगविशेष, जिस बोमारीमें कोई चीज़ खानेसे अच्छी न लगे ।

अवरोध (सं० पु०) अव-रुध भावे घञ् । १ विरोध, मुखालफ़त, भगड़ा । २ कैद, घेरा । अव-रुध कर्मणि घञ् । ३ तिरोधान, गुप्त पड़नेकी हालत । ४ राजाके अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्री । अव-रुध आधारे घञ् । ५ राजाका अन्तःपुर, बादशाहका महल । ‘अवरोधतिरोधाने शुद्धान्ते राजवेश्मनि ।’ (विश्व) ६ ठकन । ७ बाड़ा । ८ चौकीदार । (वै०) ९ उतार, नीचेको आना । १० पौधेकी जड़से निकली हुई कापल ।

अवरोधक (सं० त्रि०) १ रोकनेवाला । (पु०) २ रक्षक, रहनुमां । (स्त्री०) ३ घेरा, बाड़ा ।

अवरोधन (सं० स्त्री०) अव-रुध भावे ल्युट् । निरोध, रोकटोक । २ कैद, फंसाव । अवरोध्यन्ते राजयोषितो यस्मिन्, अव-रुध आधारे ल्युट् । ३ राजाका अन्तःपुर । (वै०) ४ उतरनेकी हरकत, उतार ।

अवरोधना (हिं० क्ति०) १ वेड़ा बांधना । २ रोकटोक करना

अवरोधायन (सं० स्त्री०) अवरोधस्य प्रतिरोधस्य राजयोषितो वा अयनं गृहम्, इ-तत् । राजाका अन्तःपुर, बादशाहका हरम ।

अवरोधिक (सं० पु०) अवरोधे राजान्तःपुरस्य राजयोषितो वा रक्षणे नियुक्तः । रानीके प्रासादका रक्षक, मुहफिज़ हिरम ।

अवरोधिका (सं० स्त्री०) अन्तःपुरवासिनी राजाकी स्त्री, जो रानी महलमें रहती हो ।

अवरोधित (सं० त्रि०) घेरा हुआ, रोका गया ।

अवरोधिन् (सं० त्रि०) अवरोधति, अव-रुध-णिनि ।
१ रोधक, रोकनेवाला । २ आवरक, ढांकनेवाला ।
अवरोधी रक्षकत्वेनास्तस्य । ३ राजाके अन्तःपुरका
रक्षक, शाही महलका मुहाफिज ।

अवरोधिनी (सं० स्त्री०) अन्तःपुरवासिनी राजाकी
स्त्री, घरमें रहनेवाली बादशाहकी वेगम ।

अवरोधी, अवरोधिन् देखो ।

अवरोपण (सं० क्लौ०) अव-रुह-णिच् पः ल्युट्,
णिच् लोपः । १ उत्पाटन, उखाड़पछाड़ । २ धक्का,
उतार देनेकी हालत । ३ छीनछान । ४ उतार,
गिराव । ५ अस्त, गुरुत्व ।

अवरोपणीय (सं० त्रि०) अवरोपणके योग्य, उखाड़
डालने काविल ।

अवरोपित (सं० त्रि०) अव-रुह-णिच्-पः क्त इट्
णिच् लोपः । १ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ । २ उतारा
हुआ, जो नीचे गिरा दिया गया हो ।

अवरोप्य (सं० अव्य०) १ उतार कर, नीचे गिराके ।
२ उत्पाटन करते या उखाड़ते हुए ।

अवरोह (सं० पु०) अव-रुह घञ् । १ अवतरण,
उतार । अवरोहति वृक्षशाखातः अधोमुखे नावतरति,
कर्तरि संज्ञायां घः । २ शाखाशिफा, डालका अग्रभाग ।
'शाखाशिफावरोहः स्यात् ।' (अमर) अवरोहति तरोर्मूलतः
अग्रपर्यन्तमारोहति, कर्तरि घः । ३ गुलच्च प्रभृति
लता, गुडच वगैरहकी वेल, जो वेल पेड़की जड़से
ऊपरको चढ़ती हो । अवरोहति स्वपुण्यफलभोगात्
परं मनुष्यलोके अवतरत्यस्मात्, अपादाने घञ् ।
४ स्वर्गादि लोक, विहिंस वगैरह । शास्त्रकारोंका
कथन है, जिसका जैसा पुण्य होता, वह उसके
अनुसार स्वर्गादि लोकमें सुख उठा फिर पृथिवी
पर आ जन्म लेता है । ५ अलङ्कार विशेष ।
यह वस्तु विशेषके सौन्दर्य वा शीलको घटाते चला
जाता है ।

अवरोहक (सं० पु०) अश्वगन्धा, असगंध ।

अवरोहण (सं० क्लौ०) अव-रुह भावे ल्युट् ।
१ अवतरण, उतार । २ चढ़ाव ।

अवरोहना (हिं० क्लि०) १ अवतरण करना, उत

रना । २ आरोहण करना, चढ़ना । ३ उतारना,
खींचना, रङ्ग भरना । ४ रोकना, आड़ लगाना ।

अवरोहवत्, अवरोहशखिन् देखो ।

अवरोहशखिन् (सं० पु०) अवरोहति छिन्नोपि
पुनः प्ररोहति, अव-रुह-अच् । १ वट वृक्ष, वरगदका
पेड़ । वटकी डाल काट कर गाड़ देनेसे भी वृक्ष
उपजता, इसीसे वह अवरोहशखी कहाता है ।
(त्रि०) २ कटी हुई शाखासे उत्पन्न होनेवाला,
जो कलमसे पैदा होता हो ।

अवरोहशखी (सं० पु०) वृक्षवृक्ष, पाकरका
पेड़ ।

अवरोहिका (सं० स्त्री०) अवरोहति वृक्षशाखातः
अधोमुखेन गच्छति, अव-रुह-खुल्टाप् । अश्वगन्धा,
असगंध ।

अवरोहिणी (सं० स्त्री०) १ उच्च स्थानसे निम्न
देशमें आया हुआ स्त्री, जो औरत जंघेसे नीचे उतरी
हो । २ ज्योतिषोक्त दश विशेष ।

अवरोहिन् (सं० पु०) अवरोहः शाखाशिफा अस्त्य-
स्य, अवरोह-इनि । १ वट वृक्ष, वरगदका पेड़ ।
२ उतरता हुआ स्वर । (त्रि०) ३ उतरनेवाला ।

अवरोही, अवरोहिन् देखो ।

अवर्ग (सं० पु०) स्वरत्वेन अकारस्य सजातीयो
वर्गः शाक० तत् । १ सकल स्वरवर्ण, कुल हर्फ-
इत्यतः । (त्रि०) नास्ति वर्गः समूहो यस्य, नञ्-
बहुव्री० । २ वर्गशून्य, जिसके समूह न रहे ।

अवर्चस् (वै० त्रि०) ज्योतिःहोन, आकाशतिमें तुच्छ,
कुरुप, वैरीनक, सूरत-शकलमें हैच, बदनुमान् ।

अवर्जिस् (वै० त्रि०) रोकटोक न करते हुआ,
जो रोक न सकता हो ।

अवर्ण (सं० पु०) अकारस्यैकस्थानौयो वर्णः
अचरम्, शाक० तत् । १ ऋस्, दीर्घ, झुत, उदात्त,
अनुदात्त, स्वरित, अनुनासिक, और निरनुरासिक
भेदसे अष्टादश संज्ञक अवर्ण, हर्फ-इत्यतः । सुग्ध-
बोधके मतसे ऋस्, दीर्घ और झुत अकार ही अवर्ण
होता है । वर्ण्यते जनमनो रज्यनेतेन, वर्णं चुरा०

निष्-करणे च निष्-लोपः, वर्णः व्रतादि ततो नञ-

तत्। २ व्रतभिन्न, जिस दिन व्रत न रहे। ३ प्रशंसा-भिन्न, निन्दा, बदनामी।

‘अवर्णचिन्तनिर्वादापवादपदवत्।

उपक्रोशो लुगुसा च कृतसा निन्दा च गर्ह्यो ॥’ (अमर)

(त्रि०) ४ कुरूप, बदशक्त। ५ ब्राह्मणादि चार वर्णसे भिन्न, जो ब्राह्मण वर्गैरह चार वर्णमें न हो। ६ शुक्लादि वर्ण भिन्न, जो सफेद वर्गैरह रङ्ग न रखता हो। ७ स्वर्ण वा रौप्य भिन्न, जो सोना-चांदी न हो। ८ अक्षर भिन्न, जो हर्फ न हो। ९ गुण भिन्न, जो सिफत न हो। १० अतिक्रम भिन्न, जो मानके कायदेसे अलग हो। ११ चित्र भिन्न, जो तस्वीर न हो। १२ यशोभिन्न, जो नामवरी न हो। १३ ताल विशेष भिन्न, जो खास ताल न हो। १४ अङ्गराग भिन्न, जो तेल-फुलेल न हो। (क्ली०) कुङ्कुमभिन्न, जो चौड़ केसर न हो।

अवर्णवाद (सं० पु०) कटाक्ष, अपयश, आक्रोश, तानाजुनी, बदनामी, गाली।

अवर्ण्य (सं० त्रि०) वर्णनके अयोग्य, जो बयान्के लायक न हो। (पु०) २ प्रधान विषय, उपमान, बड़ी बात।

अवर्त्त (सं० पु०) १ प्रकाशशून्य वस्तु, जिस चीजके नजर पार न जा सके। २ भंवर, पानीका घेरदार फेरा। ३ घुमाव, चक्कर।

अवर्त्तन (सं० क्ली०) वृत्त-लुपट् अभावे नञ्-तत्। १ वर्तमानका अभाव। २ उपस्थितिका न रहना, अदममौजूदगी, अस्थिति, रहानगी। (त्रि०) वर्तते जीवति अनेन करणे-लुपट्। वर्तनं जीविका ततो नञ्-बहुव्री०। ३ जीविकाशून्य, जिसके काम न रहे।

अवर्तमान (सं० त्रि०) १ अनुपस्थित, अप्रसुत, असत्। २ भूत या भविष्य।

अवर्ति (सं० स्त्री०) प्राशस्तेन वर्तते अनया, वृत्त-करणे इन वर्तिः ततो नञ्-तत्। दरिद्रता, जीवन-राहित्य, जिसे जीनेकी कोई उम्मीद न रहे। “किमहं वा प्रत्यवर्तिः” (अक्ष० १।११८।३)

अवर्ती—गुजरातके काठियोंका एक समाज। यह

शाखावर्तीसे विवाहादि सम्बन्ध लगाता, किन्तु अपने बौच वैसा करना ठीक नहीं समझता है।

अवर्त्य (वै० त्रि०) वृत्त- (दादिभास्कन्दसि। उण् ४।१८६) न वत्य, नञ्-तत्। अवारणीय, जो रोकने लायक न हो।

अवर्द्धमान (सं० त्रि०) न वर्द्धमानं विरोधे नञ्-तत्। १ वृद्धिशून्य, जो बढ़ता न हो। २ क्षयशूल, नाश होनेवाला।

अवर्मन् (वै० त्रि०) कवचशून्य, बख्तर न पहने हुआ।

अवर्ष (सं० पु०) अवर्षण देखो।

अवर्षण (सं० क्ली०) न वर्षणम्, अभावे नञ्-तत्। १ वर्षणाभाव, अवग्रह, अनावृष्टि। (त्रि०) २ वर्षण-शून्य, बारिशसे खाली।

अवर्षुक (सं० त्रि०) न बरसनेवाला।

अवर्ष्य (वै० त्रि०) वर्षणशून्य ऋतुमें उत्साह-देखानेवाला, जो पानी न बरसनेवाले साफ मौसममें काम करता हो।

अवलक्ष (सं० पु०) अवलक्ष्यते अव-लक्ष-घञ्। श्वेत-वर्ण, सफेद रङ्ग। ‘अवलक्षो घवलोऽर्जुनः।’ (अमर) (त्रि०) अशं आदि-अच्। २ अलक्षविशिष्ट, सफेद, उजला।

अवलग्न (सं० पु०) अव-लग-क्त नि० इङ्भावः तस्य न। १ देहका मध्यभाग, जिसके बीचका हिस्सा। (त्रि०) २ संलग्न, संयुत, लगा हुआ। ३ लटकते हुआ।

अवलङ्घना (हिं० क्ति०) लांघना, फांदना, पार होना।

अवलत्तिका (सं० स्त्री०) अव अवगता लत्तिका ज्याघातोऽनया अवलतति ज्याघातान् निवारयति वा अवलतसौतं कतिमिदिलिख्यः कित्। उण् ३।१४३। इति तिकन्। किञ्च। गोधा, ज्याघातनिवारक वाहुपट्टिका आदि अस्त्र विशेष।

अवलम्ब (सं० पु०) अवलम्बतेऽस्मिन् अव-लब्-आधारे घञ्। १ आश्रय, ठिकाना। करणे घञ्। २ अवलम्बनके आश्रय दण्डादि। भावे-घञ्। ३ किसी वस्तुका आश्रय करना, सहारा पकड़ना।

अवलम्बक (सं० पु०) १ छन्दोविशेष, कोयी बहुरूपी छन्दोविशेष, किसी किस्मका जु. काम।

अवलम्बन (सं० क्लो०) अव-लवि भावे ल्युट् ।
१ आलम्बन, टेक । आधारे ल्युट् । २ आश्रय,
आधार । करणे ल्युट् । ३ आश्रयके योग्य दण्डादि,
सहारा लेने लायक लकड़ी वगैरह । ४ श्लेषविशेष,
किसौ किस्मका जुकाम ।

अवलम्बना (हिं० क्लि०) आश्रय लेना, सहारा पक-
ड़ना, ठहरना ।

अवलम्बित (सं० त्रि०) अव-लवि कर्मणि क्त ।
१ आश्रित, जिसका सहारा पकड़ा गया हो । २ शीघ्र,
जल्द । कर्तरि क्त । अवतीर्ण ।

अवलम्बितव्य (सं० त्रि०) १ अवलम्बन लेने योग्य,
सहारा पकड़ने काबिल । २ शीघ्रताविशिष्ट,
चालाक ।

अवलम्बिन् (सं० त्रि०) १ अवलम्बनकर्ता, अव-
लम्बन करनेवाला, सहायता लेनेवाला । २ अव-
तारक, जो उच्च स्थानसे निम्न स्थानमें उतरता हो ।
“भगवति मरीचिमालिनि असांचलचूड़ावलम्बिनि” (हितोपदेश)
३ सहारा देनेवाला, रक्षा करनेवाला ।

अवलम्बी, अवलम्बिन् देखो ।

अवलम्ब्य (सं० त्रि०) १ सहारा लेते हुये ।
२ विश्वास रखते हुये । ३ राह देखते हुये ।

अवला (सं० स्त्री०) नास्ति वलं यस्याः । नञ्-
बहुव्री० । १ स्त्री, योषित् । (स्त्रीयोषिदवला । अमर)
२ प्रियङ्गु ।

अवलिप्त (सं० त्रि०) अव-लिप्-क्त । १ गर्वित,
घमण्डी, जो घमण्ड रखता हो । “अवलिप्तासि देविलम्”
(चण्डो) २ लेपन किया हुआ, लगा हुआ, पोता हुआ,
जो सब तर्फ या सब प्रकार लेपनयुक्त हो । ३ आसक्त,
लिपटा हुआ ।

अवलिप्तता (सं० स्त्री०) गर्व, गुरुर, घमण्ड ।

अवलिप्तत्व (सं० क्लो०) अवलिप्तता देखो ।

अवली (हिं० स्त्री०) १ पंक्ति, कतार । २ समूह,
गुण्ड । ३ अन्नविशेष । यह पहले-पहल खेतसे
काटा जाता है । ४ जो जन गडरियां एकबार भेड़से
काटता हो ।

अवलीक (हिं० वि०) अपराध शून्य, अपराधरहित,

पापशून्य, जिसमें पाप न हो, निष्पाप, निष्कलङ्क,
शुद्ध ।

अवलीट (सं० त्रि०) अव लिङ्-क्त । १ भक्षित,
भोजन किया हुआ, जो वस्तु खाया गया हो । २ चाटा
हुआ, जो चीज जिह्वाके अग्रभाग द्वारा धीरे-धीरे
खाया गया हो । ३ व्याप्त ।

अवलीला (सं० स्त्री०) अवरालीलायाः प्रा० समा० ।
जो वस्तु क्रीड़ाके अपेक्षा सहज हो, अनायास,
अनादर, अपमान ।

अवलुच्चन (सं० क्लो०) अव-लुच्-ल्युट् । १ छेदन,
काटना । २ उत्पाटन, उखाड़ना, नोचना ।
३ बन्धन न करना । ४ अलग रखना । ५ छोड़ना,
खोलना । ६ अपनयन, दूरीकरण, हटाना । ७ ले
जाना । ८ सुगुणन । ९ कौटिल्य, सुसती ।

अवलुच्चित (सं० त्रि०) अवलुच्चा उत्पाटनं सा
संजातास्य । सञ्जातार्थे तारकादित्वात् इतच् ।
१ उत्पाटित, उखाड़ा हुआ नोचा हुआ । २ अप-
नीत, दूर किया हुआ, हटाया हुआ । ४ अकृत
बन्धन, बन्धन न किया हुआ, बेबांधा । ५ छेदित,
कटा हुआ । ६ खुला हुआ, मुक्त ।

अवलुण्ठन (सं० क्लो०) अव-लुठि भावे ल्युट् । १ भूमिमें
पड़ लोट पोट होना, परिवर्तन, मट्टीमें उलट पलट
करना, लोटना ।

अवलुण्ठित (सं० त्रि०) १ लेटा हुआ । २ लोटा हुआ ।

अवलुम्पन (सं० क्लो०) कूद फांद ।

अवलून (सं० त्रि०) कटा हुआ ।

अवलेख (सं० पु०) अव-लिख भेदने भावे घञ् ।
पृथक् किया हुआ पदार्थ, अलग लगायी हुई चीज ।
अवलेखन (सं० क्लो०) पृथक्करण, अलगवाव ।

अवलेखना (हिं० क्लि०) १ खोदना, खनना, खुर-
चना । २ चिह्न बनाना, लकीर खींचना ।

अवलेखा (सं० स्त्री०) १ लूटपाट । २ साजबाज ।

अवलेप (सं० पु०) अव-लिप्-भावे-घञ् । १ गर्व,
घमण्ड । २ लेपन, उवटन । ३ भूषण । ४ सम्बन्ध ।
५ दूषण, दोष देना (दोष लगाना) ।

अवलेपस्तु गर्वलाभेपने इवलेपि च । (विश्व)

अवलेपन (सं० क्ली०) अव-लिप्-भावे ल्युट् ।
१ विलेपन, लगाना, पोतना, छोपना । २ सम्बन्ध ।
३ गर्व, घमण्ड । ४ दूषण । करणे-ल्युट् । ५ चन्दनादि
वह चीज़ जो लगाई या छोपी जाये, उपटन वगैरह ।

अवलेह (सं० पु०) अव-लिह भावे घञ् । १ औषध-
विशेष, जो औषध जिह्वाके द्वारा चाटकर खाया
जाये । २ चटनी । ३ माजून । ४ जिह्वाग्रद्वारा आस्वा-
दन करने योग्य वस्तुमात्र । अर्थात् जो चीज़ न बहुत
गाढी और न अधिक पतली हो तथा चाटी जाये ।

अवलेहन (सं० पु०) १ चाट, जौभकी नोक लगा-
कर खाना । २ चटनी प्रभृति ।

अवलेह्य (सं० त्रि०) अव-लिह कर्मणि ण्यत् ।
जिह्वाग्रद्वारा आस्वादनीय, चाटने योग्य । जो वस्तु
चाट-चाटकर खाया जाता हो, जैसे शहद प्रभृति ।

अवलोक (सं० पु०) अव-लुक् लोक वा घञ् ।
दर्शन देखना, चान्चुष ज्ञान ।

अवलोकक (सं० त्रि०) देखनेवाला ।

अवलोकन (सं० क्ली०) अव-लुक्-लोक वा घञ् ।
१ दर्शन, देखना । २ अनुसन्धान करना । ३ विवे-
चना लगाना । करणे ल्युट् । ४ नेत्र । ५ देखभाल,
जांच पड़ताल, निरीक्षण ।

अवलोकना (हिं० क्ति०) देखना, जांचना, अनु-
सन्धान करना ।

अवलोकनि (हिं० स्त्री०) नेत्र, दृष्टि, आंख ।

अवलोकनीय (सं० त्रि०) देखने योग्य, दर्शनार्थ ।

अवलोकित (सं० त्रि०) अव-लोक कर्मणि-क्त ।

१ दृष्ट, देखा हुआ । (क्ली०) भावे क्त । २ दर्शन ।

(पु०) अवलोकित मस्तप्रस्य अच् । बुध विशेष ।

‘अवलोकितो बुधो प्रेक्षिते त्वज्जलोकितम् ।’ (विश्व)

अवलोकित—गुजरातके प्राचीन शिल्पकार । सन् ८२७
ई०की इनके लड़के योगेश्वरने राष्ट्रकूट-नृपति गोविन्द-
का कावी-ताम्रफलक लिखा था ।

अवलोकितेश्वर (सं० पु०) बोधिसत्त्व विशेष । महा-
यान और उसके परवर्ती विभिन्न बौद्ध सम्प्रदायका
उपास्य देवता भेद । किसी किसी प्रव्रतत्वविदुके
मतसे महायान सम्प्रदायके मध्य शैव प्राधान्यके

साथ इन अवलोकितेश्वर वा लोकेश्वरकी पूजा चली
थी । इसीसे विभिन्न अवलोकितेश्वर वा लोकेश्वरकी
मूर्तियोंमें शैवतन्त्रोक्त पञ्चानन या सदाशिवका
भाव देख पड़ता है । यहाँ तक, कि अनेक स्थानमें
अवलोकितेश्वर शिव मानकर भी पूजे गये । जो
देवता स्वर्गसे सुसुक्ष्मोंके उद्धारकी सर्वदा देखा करते
हैं, इसीसे उनका नाम अवलोकितेश्वर रखा गया ।
किसी-किसी बौद्ध तन्त्रके मतसे अवलोकितेश्वर ध्याना
बुद्ध अमिताभके पुत्र रहे । साधनमालातन्त्रमें अवलो-
कितेश्वर वा लोकेश्वरकी साधन विद्यमान है ।
यथा—

“पूर्ववत् क्रमयोगेन लोकनाथं शशिप्रभम् ।

ज्जीःकाराचरसम्भूतं जटामुकुटमण्डितम् ॥

वज्रधर्मजटान्तःस्थं अशेषरीगनाशनम् ।

वरदं दक्षिणे हस्ते वामे पद्मधरं तथा ॥

ललिताचे पदसंस्थं तु महासीमं प्रभाकरम् ।

वरदोत्पलका संस्था तारा दक्षिणतः स्थिता ॥

वन्दनादख्यहस्तसु हयग्रीवोऽथ वामतः ।

रक्तवर्णो महासीमो व्याघ्रचर्माम्बर प्रियः

एवं विधे समायुक्तं लोकनाथं प्रभावयेत् ।

सर्वज्ञो शमलाभीतो भवेत् पूर्वमनोरथः ॥

अत्र मन्त्र श्रीः स्वाहा ।” (साधनमालातन्त्र)

साधनमाला, साधनसमुच्चय प्रभृति बौद्ध-तन्त्रमें
तीस प्रकारके अवलोकितेश्वरकी मूर्ति बनाने और
पूजनेकी बात है । इसीसे प्रत्येक मूर्तिकी भिन्न रूप,
भिन्न ध्यान और भिन्न वीजमन्त्र देखनेमें आता है ।
इन सब विशेष-विशेष अवलोकितेश्वरकी मूर्तियोंके
बीच खसर्पण-लोकेश्वर, हलाहल-लोकेश्वर, सिंहनाद-
लोकेश्वर, हरि-हरि-हरि-वाहनोद्भव-लोकेश्वर,
त्रैलोक्यवशङ्कर-लोकेश्वर, रक्तलाकेश्वर, पद्मनर्तकेश्वर-
लोकेश्वर, नीलकण्ठावलोकितेश्वर, मायाजालक्रमार्या-
वलोकितेश्वर, यज्ञपिण्डी लोकनाथ, सहस्रभुज लोक-
नाथ, शील लोकनाथ, जयतुङ्ग लोकनाथ, महाविश्व-
लोकनाथ प्रभृति प्रधान हैं । नेपालसे आविष्कृत
तान्त्रिक बौद्ध ग्रन्थके प्राचीन पुस्तकमें भगवत्के कपोत-
पर्धत, नेपालके स्रयम्भुचेत्र, समतट, सिंहलद्वीप,
गान्धारान्तर्गत कूटपर्वत, सुवर्णद्वीपके विजयपुर, कटाह-

द्वीपान्तर्गत बलवतिपर्वत, दक्षिणापथका मूलवास, महाचीनके बुद्धरूपक ग्राम, राढ़के अन्तर्गत कन्याराम, धार्मराजिक चैत्य और वेत्तवन, कोङ्कणस्थ शिवपुर और श्रीखदिरवन, मगधके जारुह पर्वत, नालन्दा, बन्दीकोट, वरेन्द्रके तुलाक्षेत्र, वेदकोट वा वेदपुर, पोतलक इत्यादि प्राचीन स्थानमें अधिष्ठित अवलोकितेश्वरकी मूर्तिका सन्धान मिलता है। आजकल तिब्बतमें अवलोकितेश्वर अधिष्ठातृ-देवता मानकर पूजे जाते हैं। लोकेश्वर और बोधिसत्त्व देखो।

अवलोकित् (सं० त्रि०) अवलोक्यते पश्यति अवलुक् लोक् वा णिनि। १ दर्शक, देखनेवाला, जो देखे। २ अनुसन्धानकारी, खोज करने वाला। ३ विवेचनाकारी। (स्त्री०) डीप्। अवलोकिनी। जो स्त्री अवलोकनादि करे।

अवलोकना (हिं० क्ति०) दूर करना।

अवलोप (सं० पु०) अव-लुप-घञ्। १ खण्डन। २ नाशकरना, विलोप।

अवलोभन (सं० क्तौ०) मानसिक, अभिलाष, दिली, मुराद।

अवलोम (सं० पु०) अवनद्ध लोम-आनुकूल्यं अजन्त प्रा० तत्। अनुकूल।

अवलाजा (सं० स्त्री०) कृष्णा सोमराजी, काली बकची।

अवल्का (सं० पु०) मेघशृङ्गी, मेढ़ा सींगी।

अवलाज (सं० पु०) अवलोरशोभनात् जायते जन-ड। १ सोमराजी, बकची। २ कृष्णसोमराजी, काली बकची।

अवलाजवीज (सं० क्तौ०) सोमराजी बीज, बकचीका तुल्यम्।

अवलाली (सं० स्त्री०) विषाक्त कोट विशेष, कोई जड़रोला कीड़ा।

अववदित् (वै० पु०) विचारसे बोलने वाला, मुन्सिफ।

अववर्षण (सं० क्तौ०) कृष्ण वर्षण, सर्वत्र वर्षा होना, हर जगह पूरे पानीका बरसना।

अववाद (सं० पु०) अव-वद-घञ्। १ निन्दा। २ विश्वास। ३ आज्ञा। ४ अवलम्बन।

‘अववादस्तु निन्दायामाज्ञाविषययोरपि।’ (वि०)

५ निर्देश, शासन, शिष्टि।

‘अववादस्तु निर्देशो निर्देशः शासनञ्च सः। शिष्टिश्चाज्ञा च’ (अमर)

अवविद्ध (सं० त्रि०) फेंका हुआ, जो गिरा दिया गया हो।

अवव्रज (सं० पु०) टुकड़ा, किरच, फांस, रेशा, छिपती।

अवश (सं० पु०) न उच्यते अभिलष्यते वश घ, नञ्-तत्। पराधीन, विवश, परवश, लाचार, कामादिके वशीभूत, जो वशतापन्न अर्थात् वशमें न हो।

अवशकुथिका (सं० स्त्री०) जानुदेश, जाँघ।

अवशक्रथिका (सं० स्त्री०) वस्त्रविशेष, कपड़ा यह बैठनेमें पैर और पीठसे बंधता है।

अवशङ्कम (सं० त्रि०) दूसरेकी इच्छापर कार्य न करनेवाला, जो दूसरेकी न सुनता हो।

अवशस् (सं० त्रि०) अव-शन्स-क्तिप्। अववाद, अपवाद।

अवशसन् (वं० त्रि०) मिथ्याभिलाष, झूठी खाहिश।

अवशा (वं० स्त्री०) १ गोभिन्न, जो गाय न हो। २ अधम गौ, खराब गाय।

अवशातन (सं० क्तौ०) अव-शद-णिच्-ल्युट्। नाश पाना, शोषता करण। शदेरयती तः। पा अ३।४२।

अवशिरस् (सं० त्रि०) अवनतं शिरोऽस्य प्रादि-बहुव्री०। अवाङ्मस्तक, जिसका मत्था नीचे और पैर उपरकी हो।

अवशिष्ट (सं० त्रि०) अव-शिष्-क्त। १ अतिरिक्त, परिशिष्ट, अधिक, शेष, कोई कार्य सम्पन्न होकर बचा हुआ। अव अवगतं शिष्टं अतिक्रान्तं तत्। अव शस्-क्त। करनेपर भी यह पद सिद्ध होता, परन्तु उसका अर्थ शिष्टके प्राप्त होता है। २ अल्प शिष्ट, शेष नहीं।

अवशीन (सं० पु०) वृद्धिक, विच्छेद।

अवशीभूत (सं० त्रि०) न वशीभूतम् अभूततदभावे चि घत इत्वम्। अनायत्त, जो वशतापन्न न हो, जो अवज्ञा करके कथा अर्थात् बात न सुने, स्वतन्त्र।

अवशीर्ष (सं० त्रि०) अवनतं शीर्षं यस्य, प्रादि-

बहुत्रो० वा कप्। १ अवाङ्मस्तक, मुंह लटकाये हुआ। २ मुंडभर, जिसके सर नीचे और पैर ऊपर रहे। (पु०) ३ नेत्ररोग, आंखका आजार।

अवशेन्द्रियचित्त (सं० त्रि०) मन और इन्द्रियपर वश न रखनेवाला, जिसके दिल और अजो काबूमें न रहे।

अवशेष (सं० पु०-स्त्री०) अव-शेष भावे घञ्। १ कृत-कार्य वा कृतपदार्थका शेष, किये हुये कामका खातिमा। कर्मणि घञ्। २ अवशिष्ट, बची-बचायी चीज।

अवशेषित (सं० त्रि०) अवशिष्ट, बाकी, बचा हुआ।

अवशेष (सं० पु०) अव शेष भावे घञ्। अत्यन्त शुष्क होनेकी बात, निहायत खुश्की।

अवश्य (सं० त्रि०) न-वश-ख्यत्। १ अनायत्त, जो तावेमें न हो। २ अनधीन, आजाद रहनेवाला। (अव्य०) ३ निश्चय, जरूर, बिलाशक।

अवश्यक (सं० त्रि०) १ निश्चयात्मक, जरूरी। (पु०) २ तुषार, पाला। ३ अर्धावमेदक शिरोरोग, आधा-शीशी। ४ गुड़।

अवश्यकता (सं० स्त्री०) निश्चय, जरूरत।

अवश्यकरण (सं० स्त्री०) अवश्यं करणम्, मकार-लोपः। १ नियत करण, मुकरर करनेकी बात। २ अकरणकी निवृत्ति, न करनेका दूर होना।

अवश्यकार्य (सं० त्रि०) निःसन्देह कर्तव्य, जिसे करना जरूर रहे।

अवश्यकारिन् (सं० त्रि०) जरूरी काम करनेवाला।

अवश्यकपात्र (सं० त्रि०) निःसन्देह पाक किया जानेवाला, जिसके पकानेमें कोई शक न रहे।

अवश्यकपुत्र (सं० पु०) अवश्यकसाक्षी पुत्रश्चेति, कर्मधा०। किसी प्रकार शासन किया न जानेवाला पुत्र, खोटा बेटा, जो लड़का हाथसे बेहाथ निकल गया हो।

अवश्यम् (सं० अव्य०) अव-श्ये डसु। १ निश्चय, जरूर। २ नित्य, हमेशा। ३ प्रयत्न, तजवीजसे। 'अवश्यं नित्यप्रयत्नयोः।' (वि०) ४ अश, जोरसे। ५ बाद, बुझन्द, आवाजीस। ६ अतिशय, निहायत। 'अवश्यं अयोवाङ्म।' (हलायुष) (त्रि०) ७ अनायत्त, बेकाबू।

अवश्यमेव (सं० अव्य०) निःसन्देह; जरूर बिल-जरूर।

अवश्यभाविन् (सं० त्रि०) निःसन्देह होनेवाला, जो जरूर ही हो।

अवश्या (सं० स्त्री०) अवश्यायते शैत्यं प्राप्नोति, अव-श्ये-क टाप्। १ कुज्भटिका, कुहरा। २ अवशी-भूत स्त्री, जो औरत काबूमें न हो।

अवश्याय (सं० पु०) अव-श्ये-ण। १ कुज्भटिका, कुहरा। २ नौहार, ओस। 'अवश्यायस्तु नौहारः।' (अमर) ३ अभिमान, घमण्ड। ४ दर्प, शेखी। 'अवश्यायो हिने दप।' (हेम) ५ शिशिर, ठण्डक।

अवश्याया (सं० स्त्री०) कुज्भटिका, कुहरा।

अवश्ययण (सं० स्त्री०) अव-श्चि-लुगट्। चूल्हेसे उतार स्थानान्तरमें रखना।

अवश्यरुम (वे० अव्य०) उड़ जानेकी तरह, एक फूंकमें, सरासर।

अवष्कयणी, अवष्कयिणी (सं० स्त्री०) अवस् रक्षणां चिकेति जानाति दुग्धदानादिना अवस्-कि-लुगट्-डौप्। पक्षे मष्कगतौ अयन् पृषो० मकारस्य वकारः। मष्कय एकहायनो वत्सः सोऽस्तग्रस्याः इति डौप्, नज्-तत्। अचिरप्रसूता गौ, अल्प दिनकी ब्यायी गाय, जिस गौके थोड़े दिनका बच्चा हो। 'चिरप्रसूता वक्षरी।' (अमर) 'वत्से वक्ष्ये अघि।' ऋक् १।१८४। 'वक्ष्यो तामेकहायनी वत्सः।' (सायण)

अवष्टब्ध (सं० त्रि०) अव-स्तम्भ-क्त षत्वम्। १ आसन, नज्दीकी, लगा हुआ। २ आक्रान्त, नज्दीक आया हुआ। ३ आश्रित, मुहताज। ४ अवलम्बित, सहारा पकड़े हुआ। ५ प्रतिरुद्ध, रुका हुआ।

अवष्टब्ध (सं० अव्य०) १ सहारेसे, बलमें, पकड़ कर। २ रोकते हुये, गिरफ्तारीसे।

अवष्टम्भ (सं० पु०) अव-स्तम्भ-घञ् यत्वम्। १ प्रारम्भ, आगाज, शुरू। २ अनम्रता, कड़ापन। ३ आलम्बन, सहारा। कर्मणि घञ्। ४ स्तम्भ, खम्भा। ५ सुवर्ण, सोना। ६ सुकाम, ठहराव। ७ उत्तमता, उम्दगी। ८ रोक, अटकाव। ९ पक्षाघात, लकवा।

अवष्टम्भन (सं० स्त्री०) अवष्टम्भ देखी।

अवष्टम्भमय (सं० त्रि०) सोनेका, जो सोनेसे बना हो ।
अवष्वाण (सं० पु०) अव-स्वन-घञ् । आवाजसे
भोजन, सवाद ।

अवस् (सं० क्ली०) अव भावे असुन् । १ रक्षा,
हिफाजत । कर्मणि असुन् । २ यशः, नामवरी ।
३ धन, दौलत । ४ गमन, रवानगी । ५ दृष्टि, प्रस-
न्नता, आसूदगी, खुशी । ६ अभिलाष, खाद्दिश ।
(अव्य०) ७ निम्न देशमें, नीचे ।

अवस (सं० पु०) अवति रक्षति, अव-असच् ।
अव्यविचलितनि०० महिभ्योऽसच् । उष् १।१७ । १ राजा, बाद-
शाह । २ सूर्य । ३ अन्न, अनाज । ४ रक्षक, मुहा
फिज् । ५ पाथेय विशेष तोयह, रसद । ६ आकन्द
वृक्ष ।

अवसक्त (सं० त्रि०) अव-सक्त-क्त । १ संलग्न,
लगा हुआ । २ अभिलाषयुक्त, खाद्दिशमन्द । (क्ली०)
भावे क्त । ३ संसर्ग, लगाव ।

अवसक्तिका, अवसक्थिका देखो ।

अवसक्थिका (सं० स्त्री०) अवसक्ते अववच्चे सक्थि-
नी ऊरु यस्याम्, बहुव्री० कप् टाप् । १ पर्यङ्कबन्ध, अद-
वाइन । २ योग करनेका आसन विशेष । ३ लंगोटी,
चिट ।

अवसञ्जन, अवसञ्जन देखो ।

अवसञ्जन (सं० क्ली०) आलिङ्गन, हमागोशी,
सुहृद्व्यतमें छातीसे छातीका मिलाना ।

अवसण्डीन (सं० क्ली०) अव-सम्-डो-क्त ओदित्वा-
त्तस्य नः । पक्षियोंकी आकाशसे उतरनेको कोई गति,
जिस चालसे चिड़ियां नीचे उतरें ।

अवसथ (सं० पु०) १ जनपद, बसती । २ ग्राम,
गांव । ३ कालेज, स्कूल, मदरसा, पाठशाला ।
(क्ली०) गृह, मकान ।

अवसथ्य, अवसथ देखो ।

अवसन्न (सं० त्रि०) अव-सद् कर्तरि क्त । १ विषाद-
प्राप्त, नाखुश । २ विनाशोन्मुख, बरबाद जाने-
वाला । ३ निजके कार्यसाधनमें अक्षम, जो अपना
काम बना न सकता हो । ४ समाप्त, खत्म । ५ अनु-
पयुक्त, नाकाबिल ।

अवसन्नता (सं० स्त्री०) १ दुःख, रत्न । २ अनु-
त्साह, दिलगिरी । ३ समाप्ति, खातिमा ।

अवसन्नत्व (सं० क्ली०) अवसन्नता देखो ।

अवसभ (वै० त्रि०) सभासे पृथक्, जो महफिलसे
निकाल दिया गया हो ।

अवसर (सं० पु०) अव-सृ अधिकरणे च ।
१ प्रस्ताव, तख्तिलियेकी बात चीत । 'प्रस्तावः सादवसरः' ।
(अमर) २ सङ्गति विशेष, मौका । ३ वत्सर, काल ।
४ मन्त्र विशेष । ५ वर्षण, पानीका बरसना ।
६ वृष्टि, बारिश । ७ समयका अवकाश, पुरसत ।
८ काल, वक्त । ९ उतार, नीची जगह । १० अल-
ङ्कार विशेष । इसमें किसी विषयके सामयिक सङ्घ-
टनका वर्णन करते हैं ।

अवसरवाद (सं० पु०) दार्शनिक सिद्धान्त विशेष,
कोई मक्ती वसूल । यह वाद विलायतियोंका है ।
इसके अनुसार जीव नहीं, ईश्वर ही कर्ता और ज्ञाता
होता ; वह समग्र शारीरिक कार्य चलाता है ।

अवसरालय (सं० पु०) अवसराय आलयो यत्र,
बहुव्री० । अर्धरात्र, आधीरात ।

अवसरी बंदरख—बम्बई प्रान्तके पूना जिलेका नगर ।
यह खडसे साढ़े सात कोस दूर पड़ता है । पश्चिम
द्वारके पास भैरवका मन्दिर खड़ा है, जिसे शङ्करसेठ
नामक किसी बनियेने सौ वर्ष हुये बनवाया था ।
दालानमें हिन्दुओंके कितने ही पौराणिक चित्र खचित
हैं । द्वारके गणपति प्रतिवर्ष नाना प्रकारके वर्णसे
रञ्जित किये जाते हैं । दीपक रखनेको दो स्तम्भ भी
द्वारके समुख अति सुन्दर बने हैं नक्कारखानेपर पत्थ-
रका जो घोड़ा खड़ा, वह मानो हवासे बात कर
रहा है ।

अवसर्ग (सं० पु०) अव-सृज-घञ् । १ अप्रतिबन्ध,
रोक-टोककी अदममौजूदगी । २ स्वतन्त्रता, आ-
जादी । ३ स्वेच्छाचार, मनमाना ।

अवसर्जन (वै० क्ली०) मुक्ति, कुटकारा ।

अवसर्प (सं० पु०) अवसर्पेति पश्चादगच्छति स्ना-
मिनः, अव-सृप-अच् । १ चर, जासूस । २ भूत,
नौकर । ३ दास, गुलाम ।

अवसर्पण (सं० स्त्री०) उतार, नीचेको कदमका रखना ।

अवसर्पिणी (सं० स्त्री०) १ जैनियोंका युग विशेष ।

२ अधोगामिनी स्त्री, नीचे उतरनेवाली स्त्री ।

अवसर्पिन् (सं० त्रि०) अव-सृप-णिनि । अधो-गन्ता, निम्नगामी, नीचे जानेवाला ।

अवसर्पी, अवसर्पिन् देखो ।

अवसव्य (सं० त्रि०) अपसव्य, दक्षिण, दाहना, जो बायां न हो ।

अवसा (वै० स्त्री०) स्वातन्त्र्य, अप्रतिबन्धकत्व, कुट-कारा, आजादी ।

अवसाह (वै० पु०) मुक्तिदाता, कुटकारा देनेवाला, जो छोड़ देता हो ।

अवसाद (सं० पु०) अव-सद-घञ् । १ नाश, बरबादी । २ विषाद, रज्ज । ३ स्वकार्यमें अक्षमत्व, अपना काम कर न सकनेकी हालत । ४ अवसन्नता, पज़मुर्दगी । ५ कारणकी खराबी, सबकी बुराई । ६ समाप्ति, खातिमा ।

अवसादक (सं० त्रि०) अवसादयति, अव-सद-णिच् खुल्-णिच् लोपः । १ अवसन्नकारक, डुबानेवाला, जो काम बिगाड़ देता हो । २ कार्यमें अक्षमता-सम्पादक, थकानेवाला, जो सख्त हो । ३ समाप्त होनेवाला, जो खत्म हो । ४ खेदकारी, रज्जीदा करनेवाला ।

अवसादन (सं० स्त्री०) अव-सद-णिच् भावे ल्युट् । १ विनाशन, बरबादी । २ कार्यमें अक्षमता सम्पादन, थका डालनेकी बात । ३ सुश्रुतोक्त व्रणचिकित्सा, फूले हुये जख्मको घटाना ।

अवसादनी (सं० स्त्री०) महाकरज्ज, बड़ा करोंदा ।

अवसादित (सं० त्रि०) डुबाया, थकाया, सुर-भाया या सताया हुआ ।

अवसान (सं० स्त्री०) अव-सो-ल्युट् । 'विराजोऽवसानम् । पा१।४।११ । १ विराम, ठहराव । २ समाप्ति, अन्त । ३ सीमा, हद । ४ समापन, नतीजा । ५ शेष, अखीर । ६ मृत्यु, मौत । अवस्थिति तिष्ठति अस्मिन्, आधारे ल्युट् । ७ स्थान, जगह । ८ दहन स्थान, जलानेका सुकाम । ९ श्मशान, मरघट । 'अवसानं

दहनस्थानम् ।' (सायण) १० शब्दका अन्तिम भाग, लफजका आखिरी हिस्सा । ११ छन्दका अन्त, बह-रका खातिमा । (वै० त्रि०) १२ वस्त्र धारण न करते हुये, जो पोशाक पहन रहा न हो ।

अवसानक (सं० त्रि०) शेष होनेवाला, विनाशोन्मुख जो खत्म पड़ या मर रहा हो ।

अवसानदर्श (वै० त्रि०) किसीके वासस्थानपर दृष्टि डालता हुआ, जो किसीको मञ्जिल-मकसदको देख रहा हो ।

अवसान्य (सं० त्रि०) छन्दके अन्तसे सम्बन्ध रखने-वाला ।

अवसाम (सं० स्त्री०) अवरं साम अजन्त प्रादि-तत् । अधम साम, जो साम मरणकालमें गाय जाता हो ।

अवसाय (सं० पु०) अव-सो-ण । १ समाप्ति, खातिमा । २ शेष, बाकी । ३ निश्चय, पोख्तगी । (अव्य०) ल्यप् । ४ समापन करके, पूरे उतारके । ५ निश्चय करके, ठहराके । ६ विमोचन करके, छोड़के ।

अवसायक (सं० त्रि०) अव-सा-खुल् । १ निश्चय-कारक, ठीकठाक करनेवाला । २ समापक, पूरे उतारनेवाला ।

अवसायिता (हिं० स्त्री०) ऋद्धि ।

अवसायिन् (सं० त्रि०) अधिवासी, बाशिन्दा ।

अवसाय्य (सं० अव्य०) पूर्ण कराके, पूरे उतारके ।

अवसारण (सं० स्त्री०) हटाव, सरकाव ।

अवसि (हिं० क्ति० वि०) निश्चय, जरूर ।

'अवसि देखिये देखन योगू ।' (तुलसी)

अवसित्त (सं० त्रि०) अव-सिच्-क्त । १ कृतसेक, अजामें छोटें मारे हुआ । २ आभूत, सीचा हुआ । ३ स्नात, नहाया हुआ ।

अवसित (सं० त्रि०) अव-सो-क्त । १ समाप्त, खत्म । २ ऋद्ध, खुश-खुरम । ३ राशीकृत, ढेर किया हुआ । ४ स्नात, मालूम । ५ निश्चित, ठहराया हुआ । ६ सम्बद्ध, मिला हुआ । (स्त्री०) ७ पक्का और मंडा हुआ धान्य, जो चावल पक और मंड चुका हो । ८ आवासस्थान, रहनेका सुकाम ।

अवसितमति (सं० त्रि०) हताश, दिलगीर, जो अपना काम कर न सका हो।

अवसी (हिं० पु०) अपक्व दशमें काटा हुआ शस्य, जो अनाज कच्चा ही काट लिया गया हो, गहर।

अवसुप्त (सं० त्रि०) सोया हुआ, जो नींदमें हो।

अवसृष्ट (सं० त्रि०) अव-सृज-क्त। १ दत्त, दिया हुआ। २ त्यक्त, छोड़ा हुआ। ३ निःसृत, निकाला हुआ।

अवसे (सं० अव्य०) अव तुमर्थे असन्। रक्षा करनेके निमित्त, हिंसाजत रखनेके लिये।

अवसेक (सं० पु०) अव-सिच्-घञ्। १ सकल दिक्-सेकका काम, चारो ओर छिड़काव। २ नेत्रवस्ति रोग-विशेष, आंखका कोई आजार। ३ रक्तमोक्षण, खुरेजी।

अवसेकिम (सं० पु०) अवसेकेन निर्वृत्तः, अव-सेक-इमन्। वटकविशेष, बड़ा या सुगोड़ा।

अवसेख (हिं०) अवशेष देखो।

अवसेचन (सं० क्ली०) अव-सिच्-ल्युट्। १ सकल दिक्-सेचनका काम, चारो ओर सिंचाई। २ अधो-दिक् रक्तप्रसावक रोगविशेष, नीचेकी ओर खून बहाने वाला आजार। ३ रक्तमोक्षण, खुरेजी। अवसेचन जोंक या सींगी लगाने और नश्वर देनेसे होता है।

अवसेय (सं० त्रि०) अवसातुं शक्यं अर्हं वा, अव-सो शक्यार्थे अर्हार्थे वा यत्। १ निर्णयको शक्य, जो फैसल किया जा सकता हो। २ समाप्य, पूरे उतरने काबिल। ३ अवशेष्य, खतम होने लायक।

अवसेर (हिं० स्त्री०) १ बिलम्ब, वक्फा। २ चिन्ता, फिक्र। ३ दुःख, परेशानी।

अवसेरना (हिं० क्ति०) क्लेश पड़वाना, तकलीफ देना।

अवस्कन्द (सं० पु०) अवस्कन्द्यते शुद्धादनन्तरं विश्रामाय प्रतिगम्यतेऽस्मिन् आधारे घञ्। १ जयच्छुके सैन्यनिवेशका स्थान, जिस जगह लड़नेवालेकी फौज पड़े। २ शिविर, डेरा। ३ तम्बू। भावे घञ्। ४ अवतरसा उतार। ५ अवगाहन स्नान, पानीमें घुसकर की जानेवाली सलगु।

अवस्कन्दन (सं० क्ली०) अव-स्कन्द-ल्युट्। १ सकल अङ्ग डुब जाने वाला स्नान, जो गुप्तल सब अङ्ग डुबानेसे हो। २ अवगाहन, पानीका मंभाना। ३ अवतरण, उतार। ४ आक्रमण, हमला।

अवस्कन्दित (सं० त्रि०) १ आक्रमण किया गया, जो मारा गया हो। २ अधः पतित, नीचे पड़ा हुआ। ३ मिथ्याप्रमाणित, जो झूठा ठहरा हो। ४ स्नात, नहाया हुआ, जो नहा रहा हो।

अवस्कन्दिन् (सं० त्रि०) १ ऊपर छलांग मारता या ढाकता हुआ। २ आक्रमण करता हुआ, जो हमला मार रहा हो।

अवस्कयनी (सं० स्त्री०) बहुत दिनके अन्तर प्रसूता गौ, जो गाय बहुत दिन बाद व्यायी हो।

अवस्कार (सं० पु०) अवकीर्यते कोष्ठादधो विक्षिप्यते, अव-क्त कर्मणि अप् सुट्। १ उच्चार, तलफुफ्फुजा।

२ शमल, तकलीफ। ३ शक्त, गोबर। ४ पुरीष, मेला। ५ वर्चस्क, कूड़ाकर्कट। ६ विष्ठा, गू-गोबर। ७ विष, जहर। ८ मलमात्र। अपादाने अप्। ९ गुह्यदेश। “अवस्कारो सूयगुह्ययोः।” (विश)

अवस्कारक (सं० त्रि०) अवस्कारे जातः वुन्। १ विष्ठा-जात, गू-गोबरसे पैदा। २ गोपनीयस्थान जाइ, पोशीदा मुकामसे पैदा हुआ। (पु०) ३ कृमि-विशेष, कोई कीड़ा। ४ भङ्गी, मेहतर। ५ भाङ्गू।

अवस्कारमन्दिर (सं० पु०) १ टट्टी, पाखाना, नाली।

अवस्काव (सं० त्रि०) अव वैपरौल्ये स्कुनाति रकुनोति वा, अव रकु उद्धृती कर्तरि अच्। १ विपद्से उबार न करनेवाला, जो आफतसे बचाता न हो। २ हिंसक, कातिल। (पु०) ३ कृमिविशेष, कोई कीड़ा।

अवस्तरण (सं० क्ली०) अव-स्तृ भावे ल्युट्। विस्तार, आवरणके नीचे फैलाव।

अवस्तात् (सं० अव्य०) अवरस्मिन् अवरस्मात् अवरं इत्येतेषु अर्थेषु अस्ताति तस्मिन्वादेशः। नीचे निम्न भागमें।

अवस्तात्प्रपदन (सं० त्रि०) नीचेसे प्राप्त हुआ, जो नीचेसे मिला हो।

अवस्तार (सं० पु०) अवस्थित्यति, अव-स्तु कर्मणि घञ्। १ जवनिका, कनात, परदा, चिक। २ शय्या, पलंग।

अवस्तु (सं० क्ली०) न वस्तुः, अप्राशस्त्ये नञ्-तत्। १ अप्रशस्त वस्तु, नाकाबिल चीज। २ तुच्छ वस्तु, हकीर चीज। ३ वस्तुका अभाव, चीजकी अदम-मोज्दगी। ४ वेदान्तमतसे—अज्ञानादि जड़समूह, दुनियावी चीजकी वसवाती, नापायदारी।

अवस्तुत्व (सं० क्ली०) अवस्तुता देखो।

अवस्त (सं० त्रि०) १ वस्त्रविहीन, नग्न, कपड़ेसे खाली, नंगा।

अवस्तता (सं० स्त्री०) वस्त्र न होनेकी बात, कपड़ा न रखनेकी हालत, नङ्गापन।

अवस्था (सं० स्त्री०) अव-स्था-(वासरूपोऽस्थियाम्) इति क्तिन् वाधनात् अङ्ग। स्तोत्वात् टाप्। कालकृत देहादिकी दशा, आकार, अवस्थान, स्थिति, कालकृत भाव विकार विशेष। यास्कके मतानुसार यह छः प्रकारकी है। यथा—१ जन्मना। २ विद्यमान रहना। ३ वृद्धि होना। ४ विपरीत होना। ५ क्षीण होना। ६ नाश होना।

योगशास्त्रके मतसे अवस्था पांच प्रकारकी है।

यथा,—अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश।

“अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः।” पातञ्जल साधनपाद सू० ३।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश—इन्हींको क्लेश कहते हैं।

“अविद्या चैवमितरेषा प्रसृततनू विच्छिन्नोदराणाम्।” पात० सा० पा० सू० ४।

मोह अर्थात् अनात्माके प्रति आत्माभिमानको अविद्या कहते हैं। उक्त अविद्या,—प्रसृततनु, विच्छिन्न एवं उदर यह चार प्रकारसे विभक्त अस्मिताकी, प्रसृतादि चार प्रकारसे विभक्त राग, द्वेष, एवं अभिनिवेशकी जन्म भूमि है।

इस बातके कहनेका कारण यही है, कि मोह व उत्पन्न होनेसे अस्मितादिकी उत्पत्ति नहीं होती इसलिये अस्मितादिकी अपेक्षा अविद्या ही प्रधान है।

“अविद्याश्चिदुःखानात्मानित्यशुचिसुखात्मक्यातिरविद्या।”

अनित्य वस्तुमें नित्य अशुचिमें शुचि, दुःखमें सुख आत्मभिन्न वस्तुमें आत्मा ऐसे बोध करानेवाला मोहका नाम अविद्या है।

“दृग्दर्शनशक्तीरेकान्ततेवासिता।” पात० सा० पा० सू० ६।

दृग्शक्ति प्रकृति भिन्न पुरुष एवं जिस शक्तिसे देखा जाता है, इन दोनोंमें अभिन्न विश्वास करनेको अस्मिता कहते हैं। जैसे,—आत्मा और देह सम्पूर्ण विभिन्न होनेपर भी आत्मा एवं देहको अभिन्न सोच-कर हम लोग यह कहा करते हैं—“मैं हूँ।”

“सुखानुशयी रागः।” पात० सा० पा० सू० ७।

सुखकी आशा करनेको राग कहते हैं।

“दुःखानुशयी द्वेषः।” पात० सा० पा० सू० ७।

यो एकवार दुःख भोग चुका है, फिर जिसमें दुःख न आवे, इसलिये दुःखकर पदार्थको देखनेसे उसके मनमें जो क्रोध होता है, वह विद्वेष कहा जाता है।

“स्वरसवाही विद्वेषोऽपि तथाऋद्वोऽभिनिवेशः।” पात० सा० पा० सू० ८।

स्वरवाही अर्थात् पूर्व जन्ममें मृत्यु हुई थी, उसी दुःखको खयाल कर, लोगोंके मनमें अकारण ही ऐसा जो भय होता है कि, इस जन्ममें शरीर और विषयादि विनष्ट न हों, पुनः पुनः उसके संकल्पको अभिनिवेश कहते हैं।

सांख्यके मतसे अवस्था तीन प्रकारकी है। यथा,—अनागत, अभिव्यक्त, एवं तिरोभाव। कार्यके प्रकाश पानेके पहले वह सूक्ष्म भावसे कारणमें अवस्थिति करती है। वैसे प्रागभाव अवस्थाको अनागत अवस्था कहते हैं। उसके बाद कारणके कार्यद्वारा जो फल प्रकाश होता, उसे अभिव्यक्त अवस्था कहते हैं। शेषमें कारणके ध्वंसको तिरोभाव कहते हैं।

वैदान्तिकोंके मतसे—जीवहृदयमें जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति एवं मृत्युके बाद मोक्ष यही चार प्रकारकी अवस्था है। इस मतके अनुसार सुषुप्ति अवस्था अन्तर्गत है।

वयोभिदसे कुछ अवस्थाएँ होती हैं। स्मृतिशास्त्रमें उनका निरूपण किया गया है। यथा,—पांच वर्षकी उमर तक कीमारावस्था, दश वर्ष तक पौगण्डावस्था,

पन्द्रह वर्ष तक कौशरावस्था, उसके बाद यौवनावस्था ।
मतान्तरसे, सोलह वर्ष तक बाल्यावस्था । उसके बाद
तृणावस्था । सत्तरसे नब्बे वर्ष तक वृद्धावस्था ;
अन्तमें वर्षीयावस्था ।

वैद्यशास्त्रके मतसे पन्द्रह वर्षकी उम्र तक बाल्या-
वस्था, तीस वर्षतक कौमारावस्था, पचास वर्ष तक
यौवनावस्था, उसके बाद वृद्धावस्था ।

अलङ्कारिकोंके मतसे अवस्था दश प्रकारकी है ।
यथा—नायक नायिकाके सम्बन्धमें अभिलाष, चिन्ता,
स्मृति, गुणकथन, उद्देश, संलाप, उन्माद, व्याधि,
जड़ता एवं मरण । मतान्तरसे, आंखसे आंख और
मनसे मनका मिलन, संकल्प, जागरण, क्षयता,
रति, लज्जात्याग, कामोन्मत्तता, मूर्च्छा एवं मरण
यही कई कही गई हैं ।

अवस्था-चतुष्टय (सं० स्त्री०) अवस्थाके चार भेद,
उम्रकी चार हालतें । बचपन, लड़कपन, जवानी
और बुढ़ापाको अवस्थाचतुष्टय कहते हैं ।

अवस्थात्रय (सं० स्त्री०) अवस्थाके तीन भेद,
उम्रकी तीन हालतें । जागने, स्वप्न देखने और
सोनेका नाम अवस्थात्रय है ।

अवस्थाद्वय (सं० स्त्री०) अवस्थाके दो भेद, उम्रकी
दो हालतें । सुख और दुःख अवस्थाद्वय कहा
जाता है ।

अवस्थान (सं० स्त्री०) १ स्थिति, ठिकाण । २ गृह,
मकान । ३ स्थितिकाल, ठहरनेका वक्त । ४ स्थान-
विशेष, मुकाम ।

अवस्थापन (सं० स्त्री०) अवस्था-णिच्-ल्युट् पुक्
णिच् लोपः । १ निवेशन, लगाव । २ स्थापन, जमावट ।
३ रक्षण, हिफाजत ।

अवस्थापित (सं० त्रि०) अवस्था-णिच्-पुक्-क्त इट्
णिच् लोपः । १ निवेशित, लगाया हुआ । २ स्थापित,
रखा हुआ । ३ रक्षित, महफूज ।

अवस्थाप्य (सं० त्रि०) अवस्था-णिच्-पुक् यत् णिच्
लोपः । १ निवेशनीय, रखने लायक । (अव्य०)
३ स्थापन करके, लगा या जमाके ।

अवस्थाय (सं० अव्य०) ठहरा या रखा कर ।

अवस्थायिन् (सं० त्रि०) अवतिष्ठते, अवस्था कर्तरि
णिनि युक् । १ अवस्थानयुक्त, ठहरनेवाला । २ स्थापित,
रखा हुआ । (स्त्री०) अवस्थायिनी ।

अवस्थित (सं० त्रि०) अवस्था कर्तरि क्त भ्रात
इत्वम् । १ वर्तमान, हाजिर । २ स्थित, ठहरा हुआ ।
३ अवस्थितिविशिष्ट, लगा हुआ । ४ दृढ़, जमा
हुआ ।

अवस्थिति (सं० स्त्री०) अवस्था-क्तिन् भ्रात इत्वम् ।
अवस्थान, ठहराव, मुकाम ।

अवसर्त (वै० त्रि०) अवसा रक्षणेन आपन्नः पार-
यितः, अवस्-पृ-णिच् बाहु० तन् णिच् लोपः । आपद-
से रक्षा करनेवाला, जो आपत्तसे बचा लेता हो ।

“अवसर्तरेष्वित्कारमथपु ।” (ऋक् २।२१।८)

अवस्यन्दन (सं० स्त्री०) अव-स्यन्द-ल्युट् । १ चरण,
चुआव, गिराव । २ गमन, रवानगी । ३ गलेसे
गलेका मिलाना, गलबेहां ।

अवस्यन्दनीय (सं० त्रि०) चरणजात, चूने या टपक-
नेसे पैदा हुआ ।

अवस्यु (वै० त्रि०) अवस्-क्यच्-उ । रक्षणेच्छु, जो
हिफाजत चाहता हो । ‘लामवस्युः चके ।’ (ऋक् १।२५।१२)

अवस्यंसन (सं० स्त्री०) अव-स्यन्स्-ल्युट् । १ अधः-
पतन, नीचेकी गिराव । २ चरण, चुआव ।

अवसंसित (सं० त्रि०) अव-स्यन्स्-णिच्-क्त इट्
णिच् लोपः । ३ दलित, दला-मला । २ पातित,
गिरा-पड़ी ।

अवस्यस् (सं० त्रि०) अव-स्यन्स् क्तिप् (सम्प्रदादिभ्यः-
क्तिप् । पा १।१।२४ वार्तिक ।) १ भ्रंशनशील, गिरनेवाला ।
२ खण्डित, जो गिरा हो । ‘द्यामवस्यसः ।’ ऋक् १।१।२१ ।

अवस्यत् (सं० त्रि०) अवो रक्षणं तदस्त्यस्य मतुप्
मस्य वः । रक्षणयुक्त, महफूज ।

अवस्यन्थ (वै० त्रि०) घोर शब्द करता हुआ, जो
बुलन्द आवाज लगा रहा हो ।

अवह (सं० त्रि०) न वहति वह-अच्, नञ्-तत् ।
१ नद्यादि स्रोतःशून्य, जो नदी नालेसे खाली हो ।
(पु०) २ तृतीय स्कन्धस्थ वायु, आकाशके तृतीय
स्कन्धपर रहनेवाला वायु ।

अवहत (सं० त्रि०) अव-हन् कर्मणि क्त। अल्प
आघात द्वारा वितुषीकृत, अधकूटा।

अवहति (सं० स्त्री०) अव-हन-क्ति। १ अवघात,
चोट। २ अल्प आघातसे वितुषी करनेका व्यापार, नर्म-
कूटाई। ३ टेकी या ओखलीमें अल्प-अल्प आघात।

अवहनन (सं० स्त्री०) अव-हन भावे ल्युट्। १ अव-
घात, मारकूट। २ धान्यादिका वितुषीकरण व्यापार,
धानकी कूटाई। अवहन्यते रुधिरमनेन करणे
लुट्। देहस्थ रक्तवह स्थानविशेष, फेफड़ा।

अवहरण (सं० स्त्री०) अव-ह-लुट्। १ स्थाना-
न्तरका ले जाना, चोरी, ऐयारी। २ युद्धस्थानसे सैन्य-
गणका शिविरमें जाना, मोरचाबन्दोसे फौजकी
डिरेको रहनुमायी।

अवहलोड़—बम्बई प्रान्तके पञ्चमहल जिलेका ग्राम।
यहांसे आधकोस दूर जो मन्दिर बना उसमें संस्कृत
शिलालेख विद्यमान है।

अवहस्त (सं० पु०) अवरं हस्तस्य, एकदेशितत्।
हस्तपृष्ठ, हाथका ऊपरी हिस्सा।

अवहार (सं० पु०) अवहरति स्वामिनमज्ञापयित्वा
गृह्णाति वस्तुजातम्, अव-ह् कर्तरि ण। (अवहाराधारावा-
पानाहुपधंस्थानम्। पा ३।३।१२२ वार्तिक।) १ चौर, चोर।
२ निहङ्ग, घड़ियाल, नाकू। ३ जलमातङ्ग, सूंस।
४ निमन्त्रण, पुकार, बुलावा। ५ निमन्त्रित विप्र-
गणके उद्देश्यसे आने या ले जानेवाला द्रव्य, भेंट,
पूजा, सीधा। ६ युद्धस्थानसे सैन्यगणको विश्रामके
लिये शिविरमें गमन, मोर्चेबन्दोसे फौजको आरामके
लिये डिरेमें रहनुमायी। ७ युद्ध या पाशक्रीड़ाका
विराम, लड़ाई या खेलका ठहराव।

अवहारक (सं० पु०) अव-ह-ण्वुल्। १ ग्राह,
घड़ियाल। २ जलहस्ती, सूंस। (त्रि०) ३ युद्धसे
सैन्यगणको निवारण करनेवाला, जो लड़ाईसे फौज-
को हटा ले जाता हो। ४ स्थानान्तरको ले जाने-
वाला, जो दूसरी जगह पहुंचाता हो।

अवहार्य (सं० त्रि०) अव-ह-ण्यत्। १ दान
किया जानेवाला, जो वापस देना पड़ता हो।
२ स्थानान्तरमें ले जान योग्य, जो दूसरी जगह पहुंच-

चानेके काबिल हो। ३ समाप्य, पूरा करने लायक।
४ दण्ड्य, सजा पाने काबिल।

अवहालिका (सं० त्रि०) अवहलति-अधःस्थित्वा
ऊर्ध्वं स्पृशति, अव-हल विच्चेपे ण्वुल् ततो टाप् इत्वम्।
प्राचीर, दीवार।

अवहास (सं० पु०) अव-हस्-घञ्। १ उपहास,
मजाक, ठट्ठा। २ मृदुहास्य, मुसकराहट, मुसकी।

अवहास्य (सं० त्रि०) अव-हस्-कर्मणि ण्यत्।
उपहासके योग्य, मजाकके काबिल।

अवहित (सं० त्रि०) अव-धा-क्त। १ सावधान,
होशियार। २ विज्ञात, मशहूर। ३ नियत, नियुक्त,
लगाया, रखा हुआ।

अवहितकरणकलाप (सं० त्रि०) स्थिर, ठहरा
हुआ, जिसके हवास काम न करें।

अवहितता (सं० स्त्री०) १ विनय, अर्ज।
२ ध्यान, गौर।

अवहिताञ्जलि (सं० त्रि०) हाथ जोड़े हुये, दस्त-
बसता।

अवहित्या (सं० स्त्री०) न वहिस्तिष्ठति, अव-स्था-क
पृषो० साधु। १ बाहरके आकारका गोपन, ऊपरी
सूरतका छिपाव, जमानासाजी, फफरदलाही।
२ नायक और नायिकाका व्यभिचार भाव विशेष।
अवही (हिं० पु०) किसी किसीका बबूल। यह
पञ्जाबके कांगड़े जिलेमें उपजता और आठ फीटकी
लपेट रखता है। मैदानमें इसका आधिक्य रहता।
लोग इसकी लकड़ीसे हलमाची बनाते और तख्त
चौर छतको पाटते हैं।

अवहेल (सं० स्त्री०) अव-हेड हेल् वा, वज्र्यं क।
१ अनादर, बेईज्जती। २ अवज्ञा, नाफरमांवरदारी।
अवहेलन, अवहेल देखो।

अवहेलना (हिं० क्रि०) तिरस्कार करना, फटकार
देना, बात न मानना।

अवहेलाव (सं० स्त्री०) अवहेल देखो।

अवहेलित (सं० त्रि०) अव-हेल-इतच्। १ अव-
हेलाविशिष्ट, बेइज्जत। (स्त्री०) भावे क्त।
२ अनादर, बेइज्जती।

अवह्वर (सं० त्रि०) अव-ह्व-अच्। १ कुटिल, टेढ़ी। (पु०) २ वक्र पथ, टेढ़ी राह। ३ डुनर, पेच। ४ छल, धोका।

अवां, आवां देखो।

अवांसी (हिं० स्त्री०) फसलमें सबसे पहले कटने-वाला बोझ, ददरी। यह नवान्नमें काम आती है।

अवाई, आवायी देखो।

अवाक् (सं० त्रि०) १ मौन, खमोश। २ निस्तब्ध, चकराया या घबराया हुआ। (अव्य०) ३ निश्चिन्त, नीचेकी ओर। ४ दक्षिण ओर, जनूबकी तरफ।

अवाकर (सं० पु०) १ टकसालघर। २ खजाना।

अवाकिन् (सं० त्रि०) सम्भाषण न करता हुआ, जो बोल न रहा हो।

अवाक्क (वे० पु०) अवकाके साधनको बना हुआ शब्द। (त्रि०) २ मौन, खमोश।

अवाक्पुष्पी (सं० स्त्री०) अवाक् अधोमुखं पुष्प-मस्याः, बहुव्री०। १ हेमपुष्पी, सौंफ। २ शतपुष्पी, सतावर। ३ चौरपुष्पी, चौरायी।

अवाक्शाख (सं० पु०) अवाची शाखा यस्य, बहुव्री०। भगवद्गीतोक्त संसार वृक्ष।

अवाक्शिरो (सं० त्रि०) अवाक् शिरो यस्य, बहुव्री०। अधोमुख, सर लटकाये हुए।

अवाक्श्रुति (सं० त्रि०) नास्ति वाक् च श्रुतिश्च यस्य, बहुव्री०। वाक्शक्ति एवं श्रवणशक्ति न रखने-वाला, जो बोल और सुन न सकता हो।

अवाच्च (सं० त्रि०) रक्षक, पथप्रदर्शक, रहनुमान, सुहाफिज।

अवागी (हिं० वि०) मौन, खमोश, चुपका।

अवाग्र (सं० त्रि०) अवनतमग्नं यस्य। १ नख, मुलायम, झुका हुआ। २ अवनत अग्रभाग विशिष्ट, झुकौ हुई चोटो वाला।

अवाग्रभाग (सं० त्रि०) निम्नभाग, नीचेका हिस्सा।

अवाङ्ज्ञान (सं० स्त्री०) अपमान, बेइज्जती।

अवाङ्नरक (सं० स्त्री०) जिह्वा छेदनका दण्ड,

जुवान काट लेनेकी सजा।

अवाङ्मनसगोचर (सं० पु०) वाक् च मनश्च वाङ्मनसे तयोर्गोचरो न भवति। वाक् और मनसे अगोचर परमात्मा, जो परमेश्वर न तो वाक्से कहा और न मनसे समझा जा सकता हो।

अवाङ्मुख (सं० त्रि०) अवाङ्मुखं यस्य। १ अधोमुख, मुंह लटकाये हुए। (पु०) २ अस्त्र विशेष, कोई हथियार।

अवाच् (सं० त्रि०) अवाचति, अव-अच्-क्षिप्। १ अधोगत, नीचेको ओर पड़ंचा हुआ। २ मौन, खमोश। ३ निम्नकी ओर दृष्टि डालनेवाला, जो नीचे ताक रहा हो। नास्ति वाक् यस्य। (पु०) ४ दक्षिण, जनूब। ५ वाक्यरहित, जो औरत बोल न सकती हो। ६ वागीन्द्रियशून्य, बेजुवान औरत। ७ वृद्ध।

अवाची (सं० स्त्री०) १ दक्षिण दिक्, जनूब। २ अधोमुखी, नीचेको मुंह लटकायी हुई स्त्री। ३ भगवती।

अवाचीन (सं० त्रि०) १ विपर्यस्त, नीचेको निगाह डालता हुआ। २ दक्षिणीय, जनूबो। ३ अधःपतित, नीचे गिरा हुआ। (पु०) ४ नृपति विशेष, किसी राजाका नाम।

अवाच्छिद्य (सं० अव्य०) भ्रष्टके, छीनकर।

अवाच्य (सं० स्त्री०) वच-ण्यत् न कुत्वम्, नञ-तत्। १ मन्दवाक्य, गाली-गलौज। २ वचनके अयोग्य, जो बात कहने काबिल न हो। ३ निन्दा, हिकारत। ४ उपदेशसे कहा न जानेवाला, जो सिखानेके तौरपर न कहा जाता हो। ५ अभिधेय-भिन्न, नाम न लिया जाने वाला। (त्रि०) अवाच् भावार्थं यत्। ६ अवर कालादि जात, पिछले वक्त, पेदा हुआ। ७ अभिधा वृत्ति द्वारा समझाया न जा सकनेवाला, जिसे नाम लेकर न बता सके। ८ उद्देश्य करके बोला न जानेवाला, जो मतलबसे कहा जा न सकता हो। ९ दक्षिणीय, जनूबो।

अवाच्यता (सं० स्त्री०) १ अयोग्य काम, नाकाबिल काम। २ अशीलता, फुहस, गालीगुफ्ता।

अवाच्यदेश (सं० पु०) १ स्त्रीका अधोदेश, योनि।

अवाज, आवाज देखो।

अवाजिन् (वै० त्रि०) वाचामिनो वाजिनः, नञ्-तत्। १ मूर्ख, बेवकूफ। (पु०) २ अनुत्तम अश्व, खराब घोड़ा।

अवाजी (हिं० वि०) १ शब्दकारी, आवाज लगाने-वाला।

अवात (वै० त्रि०) नास्ति वातं हिंसनं यत्र। १ अहिंसित, जो मारा न गया हो। २ अशुष्क, जो सूखा न हो। ३ जीता न हुआ, जो फूटेह न हुआ हो। ४ वायुशून्य, बेहवा।

“वल्गववातः पुरुषत इन्द्रः।” (ऋक् ६।१८।१) ‘अवाता अशुष्कः।’ (सायण)

अवातित (सं० त्रि०) अधःपतित, नीचे गिरा हुआ।

अवातुल (सं० त्रि०) फूला न हुआ, जो बादीसे सूजा न हो।

अवादा, वादा देखो।

अवादिन् (सं० त्रि०) न वादो, वद-णिनि। १ अविरोधी, मुखालिफ्त न करनेवाला। २ अव-दनशील, शान्त, भगड़ा न लगानेवाला।

अवाध (सं० त्रि०) नास्ति वाधा यत्र। वाधा-शून्य, अनर्गल, आफतसे अलग।

अवाध्य (सं० त्रि०) नञ्-तत्। वाधाके अयोग्य, निषेध न सुनने या वाधा न माननेवाला, जो रोकनेसे न मानता हो।

अवान (सं० क्ली०) अव-अन-अच्। १ शुष्क फलादि, सूखा मेवा वगैरह। (पु०) २ खासप्रखास, सांस लेनेका काम।

अवान्तर (सं० त्रि०) अवगतमन्तरं मध्यम्, प्रादि-समा०। १ प्रधानके मध्यगत, बड़ेके बीचमें पड़ा हुआ। ३ प्रसङ्गक्रमसे उत्थापित, बातके सिलसिलेसे निकला हुआ।

अवान्तरदिग् (सं० स्त्री०) अवान्तरा द्वयोर्दिशो-र्मध्ये दिक्। दो दिक्के मध्यस्थित कोण वा दिक्, कम्पासका दरमियानी मुष्क।

अवान्तरदिशा, अवान्तरदिग् देखो।

अवान्तरदेश (सं० पु०) बीचके प्रान्तका स्थान, दरमियानी जगह।

अवान्तराम् (वै० अव्य०) मध्य, बीच, दरमियान्।
अवापित (सं० त्रि०) वप्-णिच्-क्त-पुक्, नञ्-तत्। १ आरोपित, जो बोया न गया हो। २ छेदन न किया हुआ, जो काटा न गया हो।

अवापितधान्य (सं० क्ली०) न वापितं धान्यम्, नञ्-तत्। रोपित धान्य, लगाया हुआ धान। राज-वल्गमके मतसे वापितकी अपेक्षा अवापित धान्यमें गुण अल्प होता है।

अवास (सं० त्रि०) अव-आप्-क्त। प्राप्त, दस्तयाव, जो हाथ आ गया हो।

अवासवत् (सं० त्रि०) १ ग्रहण करते या लेते हुये, जो पाया ले रहा हो। २ रखता हुआ, जो पाल रहा हो।

अवासव्य (सं० त्रि०) अव-आप्-तव्य। प्राप्तव्य, जो लाना या कमाना हो।

अवासि (सं० स्त्री०) अव-आप्-क्तिन्। प्राप्ति-हासिल।

अवाप्य (सं० त्रि०) अव-आप्-ल्यत्। १ प्राप्य, मिलनेवाला। न वाप्यम्, नञ्-तत्। २ वपनके अयोग्य, आरोप्य, जिसे बो न सके, जो लगाया जाता हो। (अव्य०) अव-आप्-ल्यप्। ३ पाकर, हासिल होनेसे।

अवाम (सं० क्ली०) न वामम्। १ दक्षिण, दाहिना। २ अनुकूल, राजी। ३ शोभन, खूब सूरत।

अवाय (सं० पु०) अव-इन्-घञ्। १ अवयव, अजो। “अनवायं किमीदिने।” ऋक् ७।१०।४। (त्रि०) २ अनुकूल, राजी। (हिं०) ३ अनिवार्य, कट्टर।

अवायी (हिं० स्त्री०) आगमन, आमद, पहुँच।

अवार (सं० पु० क्ली०) न वार्यते जलेन गमना-द्यत्र; वृ-आधारे घञ्, नञ्-तत्। १ नदी प्रभृतिकाः पूर्वपार, दरया वगैरहका नज्दीकी किनारा।

नास्ति वारो गमनस्य वारणमत्र। २ प्रार्थना भिन्न, जो बात अर्ज न हो। “व्रतनीरवारतः।” ऋक् १०।६।१।

अवारजा (फा० पु०) १ पत्रविशेष, कोई बही। इसमें असामौका जोत, जमाखर्च, याददाश्त, गोशवारा वगैरह लिखा जाता है।

अवारण (सं० स्त्री०) वृ-णिच्-ल्युट्, अभावे नञ्-तत् । १ निषेधका अभाव, सुमानियतकी अदममौ-जदगी । (त्रि०) नास्ति वारणं यत्र । २ निषेध-ग्रन्थ, जिसकी सुमानियत न रहे ।

अवारणीय (सं० त्रि०) न वारणीयम् । १ निषेध किया न जानेवाला, जिसे रोक न सके । २ दमन किया न जानेवाला, जिसे दवा न सके । (पु०) ३ असाध्य रोग, मर्ज-लादवा ।

अवारतस् (वै० अव्य०) इस तर्फ को, इस ओर ।
अवारपार (सं० पु०) अवारमर्वाक् तीरं पारचो-त्तरीरश्चते स्तोयस्य अर्श-आद्यच् । उभयकूलयुक्त समुद्र, बहर-आजम ।

अवारपारीण (सं० त्रि०) अवारपारं गामी ख । १ पारग, पार उतरनेवाला । २ सामुद्रिक, बहरी ।

अवारिका (सं० स्त्री०) नास्ति वारि यत्र, बहुव्री० कप् । धान्यक वृक्ष, धनियेका पौधा । 'अवरिका' पाठ भी देखनेमें आता है ।

अवारिजा, अवारजा देखो ।

अवारित (सं० त्रि०) न वारितम् । १ अनिषिद्ध, जिसकी सुमानियत न रहे । २ अनिवारित, जो दबाया न गया हो ।

अवारितद्वार (सं० त्रि०) द्वार खुला रखनेवाला, जिसके दरवाजा बन्द न रहे ।

अवारितव्य (सं० त्रि०) निषेध करनेके अयोग्य, जो रोका जा न सकता हो ।

अवारी (हिं० स्त्री०) १ लगाम, बागडोर । २ तट, किनारा, मोड़ । ३ आननविवर, सुंहका छेद ।

अवारीण (सं० त्रि०) अवारं गामी ख । पारग, पार उतरनेवाला ।

अवार्य (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ अनिवार्य, जिसे हटा न सके । २ अवारणीय, रोका जा न सकने-वाला ।

अवावट (सं० पु०) १ कुण्डगोलकादि । २ द्वितीय पिताकृष्टक स्वजातीय स्त्रीसे जात पुत्र, जो लड़का दूसरे बाप और अपनी जातिकी औरतसे पैदा हो ।

अवावन् (सं० पु०) ओण्ड्-वनिप् । अव-सारक, चोर ।

अवाश्य (सं० त्रि०) अनभिप्रेत, जिसकी चाहिय न रहे ।

अवास, आवास देखो ।

अवासस् (सं० त्रि०) नास्ति वासो यस्य । वस्त्रहीन, नग्न, दिगम्बर, नङ्गा, कपड़े न पहने हुआ ।

अवासिन् (सं० त्रि०) न वासो, नञ्-तत् । निवा-सशील भिन्न, जो बाशिन्दा न हो ।

अवास्तव (सं० स्त्री०) नञ्-तत् । १ मिथ्या, झूठ । २ अयथार्थ, उलट-सुलट ।

अवास्तु (वै० त्रि०) गृहविहीन, लामकान्, जिसके घर न रहे ।

अवाहन (वै० त्रि०) वाहनविहीन, वेसवारी ।

अवाह्य (सं० त्रि०) न वाह्यम्, वह-व्यत् । १ वहन करनेको अक्षम, जिसे ले जा न सके । २ भीतरी, जो बाहरी न हो ।

अवि (सं० पु०) अव-ङ् । १ मेष, भेड़ । २ सूर्य । ३ पर्वत । ४ नाथ । ५ मूषिक । ६ कम्बल । ७ आकन्द वृक्ष, आकका पेड़ । ८ वायु । ९ प्राचीर । (स्त्री०) १० लज्जा । ११ ऋतुमती स्त्री । १२ सोम छाननेकी साफी । (वै० त्रि०) १३ अच्छा ।

अविक (सं० पु०) अविरैव स्वार्थे क । अवेः कः॥ पा ५।३।१८ १ अविशब्दार्थ, अविशब्दका अर्थ । २ मेष, भेड़ । "गन्धारिणमिवविका ।" (ऋक् १।१९।२) (स्त्री०) ३ हीरक, हीरा ।

अविकट (पु०) अवीनां संघातः अवि-कटच् । संघाते कटच् वक्तव्यः (पा ५।२।१८ सूत्रे वार्तिक) १ मेष-समूह, भेड़का झुण्ड । (त्रि०) न विकटम् वि-कटच् । २ अविशाल, छोटा । ३ अविस्तार, जो फैला न हो । ४ अकराल, जो भयङ्कर न हो ।

अविकटोरण (सं० पु०) अविकटे मेषसंघाते देवः उरणः मेषः । राजाको मेष रूप करदान, राजाको भेड़ ही मालगुजारी देना ।

अविकत्यन (सं० त्रि०) आधाग्रन्थ, खेह न रखने वाला ।

अविकल (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ व्याकुल न रहनेवाला, जो वैचैन न हो । २ पूर्ण, भरा-भूरा । ३ निश्चल, चिन्ताशून्य, शान्त । ४ अविसम्बादी ।

अविकल्प (सं० स्त्री०) विकल्पताशून्य, निश्चित । असन्दिग्ध, सन्देहसे रहित, जिसे किसी तरहका सन्देह न रहे ।

अविकार (सं० पु०) नञ्-तत् । १ विकारका अभाव, दोषका न रहना । (त्रि०) नास्ति विकारो यस्य । २ विकारशून्य, विकाररहित, निर्दोष, जिसमें ऐव न हो ।

अविकारिन् (सं० त्रि०) नञ्-तत् । विकार न करनेवाला, जो विकारजनक न हो ।

अविकारी (सं० पु०) अविकारिन् देखो ।

अविकार्य (सं० त्रि०) नञ्-तत् । विकार्यशून्य, जिसके परिणाममें कोई विकार्य न रहे । विकार्य दो प्रकारका होता है । किसी वस्तुके पूर्व प्रकृतिका एक-दम विनष्ट हो जाना अर्थात् अवस्थान्तर प्राप्त कर लेना और गुणका कुछ परिवर्तन होना ।

अविकृत (सं० त्रि०) प्रकृतगुणयुक्त, जो अवस्थान्तरित न हुआ हो, जो बिगड़ा न हो । त्रिन् अविकृति (स्त्री०) विकारका अभाव ।

अविक्रान्त (सं० त्रि०) १ अतुलनीय, जो बराबरी करने लायक न हो, अनुपम । २ दुर्बल, कम-जोर ।

अविक्रिय (सं० त्रि०) नञ्-बहुव्री० । विकार-शून्य, जिसमें विकार न लगा हो, वेदाग ।

अविक्रीत (सं० त्रि०) नञ्-तत् । जो विक्रीत न हुआ हो । जो बेचा न गया हो ।

अविक्रोय (सं० त्रि०) नञ्-तत् । विक्रयके अयोग्य, जो बेचने लायक न हो ।

अविचल (सं० त्रि०) नञ्-तत् । अविनष्ट, जो चीज खराब न हुयी हो, शुद्ध, स्वच्छ ।

अविचलित (सं० त्रि०) नास्ति विशेषेण क्षितं चयो यस्य । विशेष रूप चयशून्य, जो अधिक बल न हुआ हो । अंतराधी अविचलित । अक्ष । २३१५

अविचिप (सं० त्रि०) विचिप न शक्यं विचिप

विचिप करनेमें अशक्त, जो पागल कर न सकता हो ।

अविचीष, अविचित देखो ।

अविगत (सं० पु०) १ जो विगत न हो । २ अज्ञात, जाननेके अयोग्य । ३ अनिर्वचनीय, जिसका वर्णन न ही सके । ४ नाश शून्य, जिसका नाश न होता हो, नित्य ।

अविगन्धा, अविगन्धिका (सं० स्त्री०) अजगन्धा वृक्ष, कोई पेड़ ।

अविगर्हित (सं० त्रि०) नञ्-तत् । अनिन्दित, जिसकी निन्दा न की जा सके, प्रशंसनीय ।

अविगीत (सं० त्रि०) नञ्-तत् । अनिन्दित, प्रशंसनीय ।

अविग्न (सं० पु०) विज-कृत, नञ्-तत् । १ कम-रख । २ करमर्दक वृक्ष । ३ पानी आंवाला । ४ जो उद्दिग्न न रहता हो ।

अविग्रह (सं० त्रि०) नास्ति विग्रहो समासवाक्यं यस्य । १ व्याकरणोक्त जिस पदमें नित्य समास रहे । नास्ति विशेषरूपेण ग्रहो यस्य । २ अज्ञात, जो विशेष रूपसे जाना न गया हो । नास्ति विग्रहो मूर्तिर्यस्य । ३ मूर्तिशून्य, निरवयव, निराकार, जिसके शरीर न हो । ४ मीमांसकोक्त विग्रहशून्य देवता, परमेश्वर ।

अविघ्न (सं० पु०) विहन्यतेऽस्मिन् वि-हन-घञार्थे-क विघ्नः, नञ्-तत् । १ विघ्नाभाव, विघ्नकी अदम मौजूदगी । नञ्-बहुव्री० । २ विघ्नशून्य, जिसे किसी तरहका विघ्न न हो । (अव्य०) ३ विघ्नाभावसे ।

अविघात (सं० पु०) विघातका अभाव, विघ्नका न होना ।

अविचक्षण (सं० त्रि०) वि-चक्ष-क्युट् विचक्षणम् । नञ्-तत् । अपटु, मन्द, मूर्ख, बेवकूफ, जो विचक्षण न हो ।

अविचल (सं० पु०) स्थिर, अचल, अटल, जो विचलित न हो ।

अविचलचलि (वै० त्रि०) चल-याङ्-लि किल वा; अतिशयेन अचलितः, ततो नञ्-तत् । अतिशय अचल

रहित, जो बहुत ज्यादा चलता न हो। 'धुवःसिद्धावि-
चाचलिः। (ऋक् १०। १७२। १।)

अविचार (सं० पु०) १ अन्याय, अत्याचार।
२ अज्ञान, अविवेक। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ विचार-
शून्य, जिसे विचार न रहे, मूर्ख, बेवकूफ। अवौनां
मेषाणां चारो यत्र बहुव्री०। ४ जहाँ में डूब चरता
हो। न विगतश्चारो दूतो यस्य। ५ दूतशुक्त, जिसके
श्रुत्यादि रहे।

अविचारित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अविवेचित,
बिना विचारा, जिसके विषयमें कुछ विचारा न
गया हो।

अविचारिन् अविचारी देखो।

अविचारी (सं० पु०) १ विचारहीन, अविवेकी,
बे समझ। २ अत्याचारी, अन्यायी। (स्त्री०)
अविचारिणी।

अविचार्य (सं० त्रि०) न विचार्यम् अन्यथाकार्यं
नञ्-तत्। स्थिर, ठहरा, टिका।

अविचेतन (त्रि०) विशेषेण चेतनो प्राप्ति तत् ततो
नञ्-बहुव्री०। १ संज्ञारहित, बद्धोद्य, बेहवास।
२ विज्ञानरहित। "वेदन्यविचेतनानि।" ऋक् ८। १००। १।

अविच्छिन्न (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। १ अविच्छेद,
जिसका विच्छेद न हुआ हो। २ सन्तत, जो बीचमें
खाली न हो। ३ अटूट, निरन्तर लगातार, जो टूटा
न हो।

अविच्छेद (सं० पु०) अभावे-नञ्-तत्। १ विच्छेदका
अभाव। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ विच्छेदशून्य।

अविज्ञ (सं० त्रि०) अनिपुण, जो प्रवीण न हो।
अविज्ञात (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अज्ञात, जो
अच्छी तरह जाना न हो, अनजाना, बेसमझ-
बुझा।

अविज्ञात (सं० त्रि०) विज्ञाता जीवस्यद्विजगणः।
परमेश्वर।

अविज्ञेय (सं० त्रि०) दुर्ज्ञेय, जाननेके अयोग्य, जो
ज्ञान न जा सके।

अविहीन (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। पत्नियोंका सुश्रुत
दिशामें गमन।

अवित (सं० त्रि०) अव-क्त। पालित, जो पाला
गया हो। रक्षित, रक्षा पाये हुये।

अवितत् (वि०) विरुद्ध, प्रतिकूल, उल्टा, जो
इच्छाके सुताविक न हो।

अवितत्करण (सं० पु०) १ पाशुपत दर्शनके अनु-
सार कर्म जो अन्य मतवालोंके विचारमें निन्दित
हो। २ जैनशास्त्रानुसार कार्याकार्यकी विवेचनामें
उद्दिष्ट पुरुषकी तरह लोकनिन्दित कर्म करना।
३ विरुद्धाचरण।

अवितथ्य (सं० वि०) असत्य, मिथ्या, झूठ।

अवितथ (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। १ सत्य। (त्रि०)
२ सत्यविशिष्ट, जिसमें सत्य रहे।

अवितझाषण (सं० पु०) व्याहत और निरर्थक
शब्दोंका उच्चारण, उल्टा-मुल्टा कहना, अण्ड-बण्ड
बकना।

अवितर्कित (सं० वि०) १ तर्कशून्य, जिसमें तर्क
न किया गया हो। २ निःसन्देह, बिना तर्कका।

अवितर्क (सं० स्त्री०) तर्कयितुमशक्यम्। नञ्-
तत्। तर्क करनेको अशक्य, जिससे तर्क हो न सके।

अवितारिन् (सं० त्रि०) वितारो वितरणं अस्तस्य
इति, नञ्-तत्। ठहरनेवाला, टिकाव, बियां डीप।
अनपायिनी। अवितारिणो द्युतेः। ऋक् ८। ११।

अवित (सं० त्रि०) अव-तृच। रचक, रक्षा करने-
वाला।

अवित्त (सं० त्रि०) विद्-क्त-नञ्-तत्। १ अविख्यात,
जो मशहूर न हो। नञ्-बहुव्री०। २ धनरहित, धन
हीन, निर्धन, जिसके धन न रहे।

अवित्ति (सं० स्त्री०) विद्-क्तिन् अभावे नञ्-तत्।
१ लाभका अभाव, अलाभ। २ ज्ञानाभाव, ज्ञानका न
होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ ज्ञानशून्य, जिसके
ज्ञान न हो। ४ लाभशून्य, जिसको लाभ न हो।

अवित्यज (सं० पु०) न विशेषेण त्यज्यते रसायना-
दिषु त्यज्-कर्मणि वाङ्० क, नञ्-तत्। पारद, पारा।

अविथुर (सं० त्रि०) व्यथ-उरच् सम्प्रसारणं किञ्च।
नञ्-तत्। अविशुक्त, वियोगशून्य, जिसे वियोग न
रहे।

अविद्या (सं० स्त्री०) अवयवे हिता अविध्यन् ।
युथिवृत्त, जूहीका पेड़ ।

अविद (सं० वि०) मूर्ख, अनजान ।

अविदग्ध (सं० वि०) कच्चा, जो जला या पका
न हो ।

अविदाहिन् (सं० त्रि०) न विदाही, नज्-तत् ।
१ असन्तापक, जो किसीको सन्ताप न दे । २ अदा-
हक, जो किसीको न जलावे ।

अविदित (सं० त्रि०) न विदितम्, नज्-तत् ।
अज्ञात, जो जाना न गया हो । १ परमेश्वर । २ अप्र-
कट, गुप्त ।

अविदुग्ध (सं० स्त्री०) दूध-तत् । मेघी दुग्ध, भेड़का
दूध ।

अविदूर (सं० स्त्री०) न विदूरम्, नज्-तत् ।
१ समीप, कुर्व । (त्रि०) २ निकटस्थ, नजदीकी ।

अविदूरतः (सं० अव्य०) निकट, पास, नजदीक ।

अविदूथ (सं० स्त्री०) मेघीदुग्ध, भेड़का दूध ।

अविदूस (सं० स्त्री०) अवेमेस्था दुग्धम्, अवि दुग्धे
दूसच् न षत्वम् । मेघीदुग्ध, भेड़का दूध ।

अविद्ध (सं० त्रि०) वेधान हुआ, जो छेदा न
गया हो ।

अविद्धकर्णी, अविद्धकर्णी देखो ।

अविद्धकर्णिका, अविद्धकर्णी देखो ।

अविद्धकर्णी (सं० स्त्री०) अविद्धः निम्बिद्धः पर्ण एव
कर्णी यस्याः बहुव्री० स्त्रीत्वात् ङीप् । पाठा नामक
लता, हरज्योरी ।

‘पाठान्धष्टाविद्धकर्णीं स्थापनौ श्रेयसी रसा ।

एकछोला पापवेखी प्राचीना वनतिक्ता ॥’ (अमर)

अविद्धदृश् (सं० त्रि०) सर्वदृष्टा, सबको देखनेवाला ।
अविद्धवर्चस् (सं० त्रि०) सुप्रसिद्ध, मशहूर, जिसके
नामपर दाग न चरे ।

अविद्धा (सं० स्त्री०) दुष्टशिराव्यधन ।

अविध्य (सं० त्रि०) १ मूर्ख, बेवकफ़ । २ वि-
द्यासे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो इलमसे सरोकार न
रखता हो ।

अविद्यमान (सं० त्रि०) विदितम्, नज्-तत् ।

ततो नज्-तत् । १ अनुपस्थित, गैरहाज़िर ।
२ असत्, नस्तनाबूद ।

अविद्या (सं० स्त्री०) न विद्या विरोधे नज्-तत् ।
विद्याविरोधिनी, अज्ञान, ज्ञानाभाव, अहम्यति, मैं ही
ऐसा ज्ञान । अथाज्ञानमविद्याहम्यतिः स्त्रियाम् । (अमर)
विशेष विवरण अवस्था शब्दमें देखो ।

न्यायके मतसे ज्ञानाभावको अविद्या कहते हैं ।
सांख्यादिके मतसे, यह ज्ञानका विषयीभूत प्रागभाव
ज्ञान अनागतावस्था है । यह अवस्था शब्दोक्त
अविद्या अस्मिता इत्यादि रूपसे पांच प्रकारकी है । इस
अविद्याकी नैयायिक लोग अष्टष्ट कह कर स्वीकार
करते हैं । क्षणिकविज्ञानवादी कहते हैं, कि वाह्य
वस्तु, नहीं है । केवल उसका क्षणिक ज्ञान होता है ।
वाह्य वस्तु न रहनेपर भी मिथ्याज्ञानरूप अविद्याद्वारा
सब वाह्य वस्तु ही कल्पित होती है । सांख्यवादी उसे
यह कहकर दोष देते हैं, जो कोई वस्तु ही नहीं
है, ऐसी अविद्या किसीका बन्धक नहीं हो सकती ।
इसीसे अद्वैतवादियोंमें अविद्या न रहनेपर वे लोग बन्ध
नहीं होते । जैसे स्वप्नमें देखी हुई रस्तीसे प्रकृत
बन्धन नहीं पड़ता । यहां भाष्यकारने एक आपत्ति
उठाई है ।

“न विरोधी न चोत्पत्तिर्न बन्धो न च साधकः ।

न सुसुप्तुर्नैव मुक्त इत्येषा परमार्थता ॥

बन्धनोच्ची सुखं दुःखं मोहापत्तिश्च मायया ।

सन्ने यथात्मनः स्यातिः संजृतिर्नतु वासवी ॥” (भाष्य)

उत्पत्ति नहीं, बन्धन नहीं एवं उसका साधक
नहीं, सुसुप्त नहीं, मुक्त भी नहीं । स्वप्नमें आत्मविष-
यक ज्ञान होता, फिर उसकी स्मृति मात्र रह जाती
है । परन्तु वह जिस तरह वास्तविक नहीं, उसी
तरह अविद्याद्वारा बन्धन, मोह, सुख, दुःख एवं मोह
की उत्पत्ति होती है । वास्तवमें यह सब कुछ भी
नहीं है ।

अतएव बन्धनादि विषयपर कोई विरोध न रह
गया । अन्तमें भाष्यकारने यही कहकर समाधान
किया, वैसा होनेसे विज्ञानद्वारा अद्वैत (जीव और
परमात्माका एकत्व) अवयवके बाध बन्ध निवृत्तिके

लिये योगाभ्यासका विरोध हो जाता है। कारण, पहले ही यदि, वन्ध मिथ्या ठहरनेका ज्ञान उत्पन्न हो, तो वन्ध मोचनके निमित्त लोग बहु आयाससाध्य योगादिका अनुष्ठान किस लिये करते हैं। वेदान्ती कहते हैं, कि अविद्या ज्ञानविरोधो अज्ञान-रूप अपर पर्याय-धारो पदार्थ विशेष है। यह अविद्या मूलाविद्या एवं तूलाविद्या भेदसे दो प्रकारकी है। उसमें हिरण्यगर्भ नामक मूलाविद्या एवं प्रतिजीवमें नाना माया नामक तूलाविद्या है। यह माया मूलाविद्याकाही काम है। इसीसे उसे अविद्या भी कहते हैं। अतएव 'अविद्यिको जीवः' अर्थात् जीव मायाविशिष्ट है, भाष्यमें ऐसा ही लिखा हुआ है। जिनके अन्तःकरणमें तत्त्वज्ञानकी उत्पत्ति होती है, उन्हींकी अविद्याविमुक्त होती है। इसलिये अविद्यानिवर्तनं व्यक्ति ही मुक्तिलाभ करते हैं। अतएव एककी मुक्ति होनेसे दूसरेकी नहीं होती। वेदान्तीमतसे वन्ध एवं मोचको ऐसी ही व्यवस्था निरूपित हुई है। वैशेषिक अविद्याको विपर्ययका संशयज्ञान कहते हैं। और वह इन्द्रियदोष एवं संस्कारदोषसे उत्पन्न होता है, यही उन लोगोंका विश्वास है। वे लोग ऐसी मीमांसा करते हैं, कि वातपित्तादि-जनित शरीरकी अपटुता ही इन्द्रियदोष है। संस्कार-दोष विशेष शास्त्रादिके अदर्शन इन्हीं दोनों दोषोंसे मिथ्याज्ञान उत्पन्न होता है।

अविद्रिय (वे० त्रि०) १ करशून्य, बेकिराया।
२ घनीभूत, ठोस, जो पोला न हो।

अविद्रिया (सं० स्त्री०) वि-द्रा कुत्सायागतो कि औष्णादिकः। विद्रिः निन्दा न विद्रिः अविद्रि अनिन्दा तां याति एति या-विच्। १ प्रशस्त। २ अनिन्दा-गामी, जो निन्दा न पाये। "अविद्रियामिहविमिः।"

अकृ ११४१२५

अविहता (सं० स्त्री०) मूर्खता, बेवकूफी, लाइली।
अविहान् (सं० पु०) मूर्ख, नाखांदा, जो इलम-दार न हो।

अविह्विष् (सं० त्रि०) घृणा न करनेवाला, जो नफरत न रखता हो।

अविह्वेष (सं० पु०) न विह्वेषः, अभावे विरोधे वा नञ्-तत्। १ विरोधका अभाव, अनुराग, हसदकी अदममौजूदगी, सुहृद्वत्। (त्रि०) नास्ति विह्वेषो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ विरोधशून्य, सुहृद्वत्।

अविध (सं० त्रि०) नास्ति विधा प्रकारो यस्य, नञ्-बहुव्री० गौणे क्त्वः। प्रकारशून्य, बेतरह, जिसमें कोई सिफत न पाये।

अविधवा (सं० स्त्री०) न विगतो धवः पतिर्यस्याः, नञ्-बहुव्री०। सधवा, सुहागन, जो रांड न हो।

अविधा (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। प्रकारका अभाव, तरहकी अदममौजूदगी।

अविधान (सं० स्त्री०) न विधानम्, अभावे नञ्-तत्। १ विधानका अभाव, तरीकेकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति विधानं यत्र यस्य वा। २ विधान-शून्य, बेतरीके।

अविधानतः (सं० अव्य०) विना विधान, बेतरीके।

अविधि (सं० पु०) न विधिः, अभावे नञ्-तत्। १ विधिका अभाव, कायदेकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ विधानशून्य, बेतरीके।

अविधिपूर्वक (सं० त्रि०) विधिविरुद्ध, बेफायदे, छटपटांग।

अविन (सं० पु०) अवति रक्षति यज्ञम् यथाविध्य-मुष्टानेन। अध्वर्यु, यजुर्वेदज्ञाता, यागकर्त्ता।

अविनय (सं० पु०) न विनयः, अभावे नञ्-तत्। १ विनयका अभाव, अर्जुकी अदममौजूदगी। विरोधे नञ्-तत्। २ दुर्नय, दुर्नीति, बदमाशी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ विनयशून्य, नाशायिस्ता।

अविनश्यत् (सं० त्रि०) नष्ट न होनेवाला, जो मर न रहा हो।

अविनश्वर (सं० त्रि०) विरोधे-नञ्-तत्। १ अविनाशी, चिरस्थायी, लाज्जवाल, मुदामी, जो कभी मिटता न हो। (पु०) २ कूटस्थ परमेश्वर।

अविनाभाव (सं० पु०) विना व्यापकमृतेन भावः स्थितिः, नञो भावेन सम्बन्धात् सूर्यं न पश्यति, असूर्य-मपश्यो इति यत् असमर्थ-समा०। व्यापकस्थितिकी अनु-रोधो सत्त्वरूप व्याप्ति, व्याप्य और व्यापक भावसम्बन्ध।

अविनाभाविन् (सं० त्रि०) व्यापकं विना न भवति, भू-णिनि अविनाभाववत् शाक् असमर्थ समा० । व्याप्य, जिसमें कोई चीज घुस जाये ।
 अविनाभूत (सं० द्वि०) व्यापकं विना न भूतम्, अविनाभाववत् शाक् असमर्थ-समा० । व्याप्त, मामूर, घुसा हुआ ।
 अविनाश (सं० पु०) रक्षा, विनाशका अभाव, हिफाजत, नेस्तनाबूदीकी अदम-मौजूदगी ।
 अविनाशिन् (सं० त्रि०) न विनश्यति, वि-नश-णिनि, नञ्-तत् । अविनश्यर, नित्य, लाज्जवाल, सुदामी ।
 अविनाशी, अविनाशिन् देखो ।
 अविनासी (हिं० वि०) १ अविनाशी, लाज्जवाल । (पु०) २ ईश्वर ।
 अविनिगम (सं० पु०) न्यायविरुद्ध सिद्धि, मन्ति-क्के खिलाफ नतीजा ।
 अविनिर्मोक (सं० त्रि०) कूटसे खाली, जिसमें कुछन कुछे ।
 अविनिवर्तिन् (सं० त्रि०) पश्चादुपद न होनेवाला, आगे बढ़नेवाला ।
 अविनीत (सं० त्रि०) न विनीतम्, नञ्-तत् । १ विनयशून्य, नाशायिस्त । २ अशिक्षित, मूर्ख, बेवकूफ । ३ कुक्रियासक्त, बुरे काममें लगा हुआ । ४ उद्यत, बखेड़िया । 'अविनीतः समुद्यतः ।' (अमर)
 अविनीता (सं० स्त्री०) कुलटा स्त्री, व्यभिचारिणी, जो औरत भली न हो ।
 अविनीय (सं० पु०) वि-नी-क्वप् निपातनात्; नञ्-तत् । १ कल्मभिन्न, जो औषधियोंका निचोरा रस न हो । २ पिष्ट औषध भिन्न, जो कूटी पीसी दवा न हो । ३ पापभिन्न, जो पाप न हो । (त्रि०) नास्ति विनीयो यस्य, नञ्- बहुव्री० । ४ चूर्ण औषध-शून्य, जिसमें कूटी-पीसी दवा न रहे । ५ पापशून्य, बेगुनाह । (अव्य०) ६ विनय न कर, बे अर्ज गुजारे ।
 अविनेय (सं० त्रि०) विनेतुमशक्यम्; वि-नो-शक्यार्थे यत् ततो नञ्-तत् । दुर्दमनीय, कष्टर ।
 अविन्ध्या (सं० पु०) राक्षस विशेष, कोई राक्षस । यह रावणका एक मन्त्री रहा ।

अविन्ध्या (सं० स्त्री०) विन्धपादनिःसृता नदां विशेष, कोई दरया ।

अविपत्तिकरचूर्ण (सं० स्त्री०) अन्धपित्ताधिकारका चूर्ण, शफूफ. यह मेदेकी तुर्शी पर दिया जाता है । त्रिकटु (सोठ, मिर्च, पीपल), त्रिफला (आंवला, हर, बहेरा), सुस्तक, बीज, विडङ्गज, एवं एला पत्र सबको बराबर-बराबर ले कूट-पीसके छान डाले । फिर सबके बराबर इसमें लवङ्ग डालना चाहिये । अन्तमें त्रिवृच्चूर्ण सबसे दूना डाल पीछे सबके बराबर चीनो छोड़े । इस चूर्णको चिकने बरतनमें रखते और अन्धपित्तपर भोजनके आदिमें मधु या घृत मिलाकर खाते हैं । (रसेन्द्रसारसंग्रह)

अविपक्व (सं० त्रि०) अपक्व, कच्चा, जो पका न हो ।
 अविपक्वबुद्धि (सं० त्रि०) अनुभवरहित, बेतजर्बा, जिसे वक्फियत न रहे ।

अविपक्ष (सं० त्रि०) शत्रुशून्य, बेदुश्मन् ।
 अविपट (सं० पु०) अवीनां विस्तारः, अवि विस्तारि पटच् । मेघका विस्तार, ऊर्णामय वस्त्र, ऊनी कपड़ा ।
 अविपत्तिकरचूर्ण, अविपत्तिकरचूर्ण देखो ।

अविपद् (सं० स्त्री०) ऐश्वर्य, आनन्द-मङ्गल, सुश-हाली, अमनचैन ।

अविपन्न (सं० त्रि०) १ अग्रताड़ित, जिसके चोट न लगे । २ विशुद्ध, खालिस, साफ़ ।

अविपर्यय (सं० पु०) विपर्ययका अभाव, सिल-सिलेबन्दी ।

अविपश्चित् (सं० त्रि०) न विपश्चित्, विरोधे नञ्-तत् । विचारशून्य, अविवेकी, नाखांदा, बेवकूफ ।

अविपाक (सं० पु०) विशेषेण पच्यते फलरूपेण, वि-पच-घञ् ततो नञ्-तत् । १ अपरिपाक, बदहजमी । २ फल रूपसे अपरिणत धर्म और अधर्म प्रभृति ।

अविपाल (सं० त्रि०) अवीन् पालयति, अवि-पा-णिच्-लः । मेघपालक, गड़रिया ।

अविपित्तक (सं० पु०) चूर्णविशेष । यह अन्ध-पित्त रोगको दूर करता है । अविपत्तिकरचूर्ण देखो ।

अविपुल (सं० त्रि०) न विपुलम्, विरोधे नञ्-तत् । बूझ, झोटा, नाचीज ।

अविप्र (वे० पु०) अमेधावी, जो पूजन न करता हो। “अविप्रो वा यदविप्रदिप्रः।” ऋक् ८।६१।८।

अविप्रकृष्ट (सं० चि०) न विप्रकृष्टम्, विरोधे नञ्-तत्। निकटस्थ, नजदीकी, जो दूर न हो।

अविप्रिय (सं० पु०) न विप्रियं अपकारः, नञ्-तत्। १ अनपकार, भलाई। २ आनुकूल्य, मेहरवानों। अवीन् मेघान् प्रीणाति, अवि-प्री-क। ३ श्यामाक दण, सावां घास। (त्रि०) नास्ति विप्रियं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ अपकारशून्य, बुरायी न करनेवाला, नेक।

अविप्रिया (सं० स्त्री०) १ श्यामालता, सावां। २ खेतालताक्षुप, सफेद बेल।

अविप्रुत (सं० त्रि०) न विप्रुतं नष्टम्, नञ्-तत्। अविनष्ट, जो विप्रवयुक्त न हो। राजशून्य शुद्धका नाम विप्रव है।

अविभक्त (सं० त्रि०) वि-भज-क्त, नञ्-तत्। १ विभागरहित, जो वंटा न हो। अविभक्त वस्तु के स्वामीको भी अविभक्त कहते हैं। “अविभक्ता विभक्ता वा सपिण्डाः स्वावरे समाः।” (बृ० ति) २ संसृष्ट, मिला हुआ, जो अलग न किया गया हो। ३ अभिन्न, एक। ४ भेद-रहित, एकभावापन्न। ५ अव्यावृत्त। ६ अनिरा-हृत, जो निकाला न गया हो।

अविभावित (सं० त्रि०) न विभावितम्, नञ्-तत्। १ अलक्षित, जो लक्ष्य किया जा न सके। २ अचिन्तित, विना विचारा।

अविमुक्त (सं० त्रि०) वि-मुच्-क्त, नञ्-तत्। १ जो मुक्त न हो अर्थात् मुक्तिलाभ न कर सके, बन्ध। २ कनपटी, जावाल उपनिषद्के अनुसार यह ब्रह्मका स्थान है। ३ काशीक्षेत्र। काशीखण्डमें लिखा है, “न विमुक्तं शिवायां यदविमुक्तं ततो विदुः।” अर्थात् शिव और शिवाके परित्याग न करनेसे काशीको अवि-मुक्त कहते हैं। ४ मूर्धा (ब्रह्मरन्ध्र) और चित्तुक (दाढ़ी)का मध्यवर्ती स्थान। कोई कोई काशीके निकटस्थ गङ्गातटसे पांच कोश पर्यन्त स्थानको अविमुक्त-क्षेत्र कहते हैं।

अवियोग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ वियो-

गका अभाव। विरोधे नञ्-तत्। २ संयोग, मिलाप। (त्रि०) नास्ति वियोगो यस्य नञ्-बहुव्री०। ३ वियोग-शून्य, संयुक्त।

अवियोगव्रत (सं० स्त्री०) स्वामिना अवियोगजनकं व्रतम्, शाक० तत्। कल्किपुराणके अनुसार एक व्रत, जिसके करनेसे स्वामीका वियोग नहीं होता है, अवेधव्रत। यह व्रत अग्रहायण शुक्ल-द्वितीयाको किया जाता, इसमें स्त्रियां स्नान और चन्द्र दर्शन करके दूध पीती हैं।

अविरण (वै० स्त्री०) विरमणं विनाशः, नञ्-तत् वेदे नस्य लुक्। १ अविनाश। २ अविगतरण। ३ संग्राम नाश। “न भोऽविरणाय पूर्वो।” ऋक् १।१।१८३।

अविरत (सं० स्त्री०) विरम् भावे क्त अनुनासिक लोपः विरामः नञ्-तत्। १ विरामका अभाव, सतत, निरन्तर, अनवरत, अश्रान्त, सन्तत, अनिश, नित्य, लगातार सततजनवरताशान्तसन्तताविरतानिशम्। (अमर) यह सब शब्द क्रियाविशेषणमें प्रयुक्त होता है। (त्रि०) कर्तरि क्त नञ्-तत्। २ विश्रामशून्य, सन्तत कार्यसे अनिष्ठत।

अविरति (सं० स्त्री०) विरामो विरतिः, वि-रम् भावे क्तिन् अभावे नञ्-तत्। १ निवृत्तिका अभाव, लौनता। २ विषयासक्ति, विषयादिमें स्थिरचित्तता, विषयमें दृष्टाका होना। ३ विरामका अभाव, अश्रान्ति। (त्रि०) नास्ति विरतिः यस्य नञ्-बहुव्री०। ४ विरामशून्य। जैनशास्त्रानुसार धर्म-शास्त्रको मर्यादासे रहित बर्ताव करना। यह बन्ध-नके चार हेतुओंमें एक और बारह प्रकारका होता है। पांच इन्द्रियाविरति, एक मनोविरति और छः काया विरति।

अविरथा, अथा देखो।

अविरल (सं० त्रि०) नञ्-तत्। घन, सघन, निविड़, मिना हुआ, मध्यविच्छेदरहित। अव्यवच्छिन्न।

अविराम (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ विरामका अभाव, पुरसतकी अदम मौजूदगी। २ अविच्छेद, लगाव। (त्रि०) नास्ति विरामो यस्य। नञ्-बहुव्री०। ३ विरामशून्य, सन्तत, निरन्तर।

अविरुद्ध (सं० त्रि०) न विरुद्धं । नञ्-तत् । १ विरोध शून्य, जो विरुद्ध न हो । २ अप्रतिकूल, अनुकूल, सुवाफिक । ३ एकत्र सहावस्थित । ४ बन्धनरहित ।

अविरोध (सं० पु०) न विरोधः, नञ्-तत् । अद्वैत, अविद्वेष, एकत्र अवस्थान, विवादका अभाव-अनुकूलता, मेल, अगति, सुवाफिकता, साधर्म्य, समानता अविरोधी । (त्रि०) जो विरोधी न हो, अनुकूल, मित्र, हित ।

अविलक्षण (सं० त्रि०) विलक्षणो विजातीयः, नञ्-तत् । अविजातीय, जो दूसरी जात न हो, भेदक धर्मशून्य ।

अविलक्षण (सं० त्रि०) नास्ति विशेषेण लक्षणं व्याजः उद्देश्यं शरव्यं वा यस्य, नञ्-बहुव्री० । १ व्याजशून्य, कपटसे रहित । २ उद्देश्यशून्य । ३ शरव्यशून्य, जो सिकार न हो । ४ प्रतिकारशून्य, जिसका प्रतिकार हो न सके । (अव्य०) ५ लक्षण न करके, निशाना न बैठाकर ।

अविलम्बित (सं० त्रि०) वि-लम्बित, नञ्-तत् । विलम्बशून्य, त्वरया युक्त । (अव्य०) शीघ्र, सत्वर, चपल, जल्द ।

अविला (सं० स्त्री०) अविं मेघं लाति पतित्वेन गृह्णाति अवि-ला-क-स्त्रीत्वात् टाप् । १ मेघी, भेड़ी । (त्रि०) नास्ति विलं यत्र नञ्-बहुव्री० । २ गर्त-शून्य, जहाँ गड्ढा न हो ।

अविलास (सं० पु०) न विलासः, नञ्-तत् । १ विलासका अभाव । २ अप्रकाश हावभाव आदि कलाका अभाव । ३ लीलाका अभाव । (त्रि०) ४ हाव-भाषादि रहित ।

अविलोकन, अवलोकन देखो ।

अविवक्षित (सं० त्रि०) नञ्-तत् । बोलनेमें अनि-प्सित, जो तात्पर्यके विषयीभूत न हो ।

अविवर (सं० स्त्री०) न विवरम्, नञ्-तत् । १ विवर न होनेवाला, जो छिद्र न हो । (त्रि०) नास्ति विवरं यत्र, नञ्-बहुव्री० । २ नीरन्ध्र । ३ धन । ४ गर्तशून्य ।

अविवाच्य (सं० स्त्री०) नास्ति विशेषेण वाच्यो

मन्त्रादिर्यत्र नञ्-बहुव्री० । अग्निष्टोम यज्ञका शेष दशम दिन, इस दिन यज्ञ करनेवाला कोई समन्व कर्मादि न करे, ऐसा श्रुति स्मृतिमें निषेध है ।

अविवाद (सं० पु०) विरुद्धो वादः वाक्यं व्यवहारविशेषश्च विवादः, अभावे नञ्-तत् । १ विरुद्ध वाक्यका अभाव, एक वाक्य । २ व्यवहार विशेषका अभाव । ३ विरोधका अभाव । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ४ विरुद्ध वादादि शून्य, विवादरहित, निर्विवाद ।

अविवाहित (सं० त्रि०) विवाहसञ्ज्ञातोऽस्य विवाहितम्, नञ्-तत् । अनूढ़, क्वारा, जो व्याह न हो । विवाहित पुरुष यदि किसीसे प्रसक्त हो, तो उस स्त्रीको भी अविवाहित कहा जायेगा ।

अविवाहिन् (सं० त्रि०) १ विवाह न करनेवाला, जो शादी न करता हो । २ विवाह सम्बन्धीय, शादीसे ताल्लुक रखनेवाला । ३ विवाहार्थ निषिद्ध, जो शादी-के लिये मना हो ।

अविविक्त (सं० त्रि०) न विवक्तम्, नञ्-तत् । १ असम्पृक्त न होनेवाला, जो अलग न हो । २ एकी-भूत, गंठा हुआ । ३ अपवित्र, नापाक । ४ जनानुल, आबाद, जो उजाड़ न हो । ५ अविवेकी, जो परहेज गार न हो ।

अविविक्तदृश् (सं० त्रि०) असम्पृक्त दृष्टिसे न देखने वाला, जो सबको बराबर देखता हो । जो पुरुष इस संसारमें सम्पूर्ण पदार्थको ईश्वरका रूप समझ भेद-भावसे नहीं देखता, वही अविविक्तदृश् कहाता है ।

अविवृत्त (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी ।

अविवेक (सं० पु०) विवेकः विशेषेण ज्ञानम्, अभावे नञ्-तत् । विशेष ज्ञानका अभाव, अविवेचना, अविमृश्यकारिता, वेवफ़् फ़ी, नादानी । अविवेक ही विषम आपद्का स्थान है अर्थात् अविवेचनासे ही अतिशय आपद् आती है । नैयायिकोंका मत है—अन्योन्य तादात्म्य आरोपके हेतु विशेष ज्ञानका अभाव अविवेक कहाता, जैसे शक्तिमें रजतका ज्ञान है । वास्तविक शक्ति रजत नहीं होती । ऐसे स्थान पर अतादात्म्यमें तादात्म्यज्ञान गंठता है । इसी हेतु विशेष ज्ञानका अभाव मिथ्याज्ञान होनेसे अविवेक

कहाता है। सांख्यवादी समझाता, अन्योन्य तादात्म्य ज्ञानरूप मिथ्याज्ञान ही अविवेक है। (त्रि०)
२ विवेकशून्य, बेवकूफ़, गंवार।

अविवेककृत (स० त्रि०) अविवेचनासे किया हुआ, जो बे-सोचे समझे हो।

अविवेकता (सं० स्त्री०) अविवेचना, बेवकूफी, नादानी।

अविवेकत्व (सं० ल्लो०) अविवेकता देखो।

अविवेकिन् (स० त्रि०) अविवेक देखो।

अविवेकी, अविवेक देखो।

अविवेचक (सं० त्रि०) नञ्-तत्। कर्तव्याकर्तव्य विवेचनारहित, जिसे भला-बुरा समझ न पड़े।

अविवेचना (सं० स्त्री०) अविवेकता, बेवकूफी, नादानी, भला-बुरा समझ न पड़नेकी हालत।

अविवेन (वै० त्रि०) वि-वेन पुंसि संज्ञायां घ, नञ्-तत्। १ इच्छाशील, अविगतकाम, यथाकाम, खादिशमन्द, चाह रखनेवाला। “पिबन्ति मनसाविवेनम्।” ऋक् ४। २५। ३। २ मेधावी न होनेवाला, जो अल-मन्द न हो। (अव्य०) ३ इच्छाशील होकर, खुशी-खुशी।

अविशङ्क (सं० त्रि०) निर्भय, बेखौफ़, निडर, जिसे शङ्का न रहे।

अविशङ्का (सं० स्त्री०) न विशेषण शङ्का, अभावे नञ्-तत्। विशेष शङ्काका अभाव, एतबार, भरोसा।

अविशङ्कित (सं० त्रि०) वि-शक्ति कर्तरि क्त; विशेषण शङ्का सञ्जातोऽस्येति तारकादित्वादितच् वा, ततो नञ्-तत्। विशेषरूप शङ्कारहित, जिसे खौफ़ न लगे।

अविशस्त (वै० त्रि०) नञ्-तत्। शमिता, विश-सनमें अकुशल, जो यज्ञमें भली भांति पशुवध कर न सकता हो।

अविशिर (सं० ल्लो०) सूर्यावर्तका फल, लटजैरेका बीज।

अविशुद्ध (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ विशुद्ध न होनेवाला, जो खालिस न हो। २ अपवित्र, नापाक।

अविशुद्धि (सं० स्त्री०) विरोधे नञ्-तत्। शुद्धिके

विपरीत, दोष, नापाकी, कुवाकृत। पञ्चशिखाचार्यका मत है, कि सोमादि यज्ञमें पशु एवं यवमुदगादि बीजके नाशका कारण होनेसे अविशुद्धि हिंसादोषकी साधिका ही कहौ जायेगी। ज्योतिष्टोमादिमें यज्ञके लिये कोयी प्रधान अपूर्व एवं पञ्चादि हिंसाजनित दुरदृष्ट निकलता है। किन्तु अल्प प्रायश्चित्तसे ही वह दुरदृष्ट मिट जाता है।

अविशेष (सं० पु०) न विशेषः, अभावे नञ्-तत्।

१ भेदक धर्मका अभाव, अभेद। २ ऐश्व, एका। (त्रि०) नास्ति विशेषो यत्र यस्य वा। ३ विशेष-शून्य, तुल्य, बराबर।

अविशेषज्ञ (सं० त्रि०) विशेषं न जानन्ति, विशेष-ज्ञा-क। विशेषानभिज्ञ, भेदक-धर्मानभिज्ञ, जो ज्योत्सादा जानता न हो।

अविशेषित (सं० त्रि०) न विशेषितम्, नञ्-तत्। जिसमें अन्य वस्तुसे विशेषरूप भेद न डालें, जो दूसरी चीजसे ज्योत्सादातर अलग की न गयी हो।

अविश्रान्त (सं० त्रि०) वि-श्रम-क्त दीर्घत्वं मस्य नत्वच्च, ततो नञ्-तत्। विरामरहित, सन्तत, जो रुकता या थकता न हो।

अविश्लिष्ट (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। विश्लिष्ट न होनेवाला, जो मिला न हो।

अविश्वभिन्न (वै० त्रि०) सब वस्तुमें व्याप्त न होने-वाला, जो सब चीजमें भरा न हो।

अविश्वविन्न (वै० त्रि०) प्रत्येक स्थानमें अज्ञात, जो हरिक जगह मालूम न पड़ता हो।

अविश्वसनोय (सं० त्रि०) वि-श्वस्-अनोयर्, नञ्-तत्। विश्वास करनेके अयोग्य, जो एतबार करने लायक न हो।

अविश्वस्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। विश्वासको योग्यतासे हीन, सन्दिग्ध, एतबारकी लियाकतसे खाली, जो एतबारी न हो।

अविश्वास (सं० पु०) न विश्वासः, अभावे नञ्-तत्। १ विश्वासका अभाव, सन्देह, एतबारकी अदम-मौजूदगी। (त्रि०) २ विश्वासशून्य, बेएतबार, जिसे कोयी एतबारी न समझे।

अविश्वासा (सं० स्त्री०) चिरप्रसूत गो, जो गाय बहुत दिनकी व्यायी हो।

अविश्वासिन् (सं० त्रि०) न विश्वसिति, विश्वस-
णिनि। विश्वास न करनेवाला, जिसे एतबार न
आये।

अविश्वासी, अविश्वासिन् देखो।

अविष (सं० पु०) अवति रत्नादीन् जनान् वा, अव
रक्षणे कर्तरि टिप्पण्। १ समुद्र। २ राजा। ३ आकाश।
(त्रि०) ४ रक्षक, रखवाला। ५ विषग्रन्थ, जहरसे
खाली।

अविषक्त (सं० त्रि०) न विषक्तं विश्लिष्टम्, नञ्-तत्।
असंलग्न, असंयुक्त, जो लगा या मिला न हो।

अविषम (सं० त्रि०) न विषमम्, विरोधे नञ्-
तत्। १ विषम न होनेवाला, सम, हमवार, जो नाह-
मवार न हो। २ संयुक्त, मिला हुआ। ३ सुगम,
सीधा, जिससे जाने-जानेमें कोई खटका न रहे।

अविषय (सं० पु०) न विषयः, नञ्-तत्।
१ अगोचर, गुप्त हो जानेकी हालत। २ अप्रतिपाद्य
माया, दुनियाकी भूठी चीज। ३ अनुपस्थिति, गैर
हाजिरी। (त्रि०) ४ अदृश्य, गुप्त। ५ इन्द्रिया-
तीत, मालूम न होनेवाला।

अविषयीकरण (सं० स्त्री०) वृथा चेष्टा, बेकामका
काम।

अविषह्य (सं० त्रि०) न विशेषेण सह्यम्, नञ्-
तत्। १ सह्य करनेकी अशक्य, जो सह्य न जाता
हो। (अव्य०) २ सह्य न करके, बे-बरदाश्त किये।

अविषा (सं० स्त्री०) १ अतिविषा। २ निर्विष-
दण, जहार। यह घास हिमालयपर उत्पन्न होती
है। इसमें सफेद कन्द निकलता है। कन्दको चतपर
घिसकर लगा देनेसे सांप-बिच्छूका जहर उतर जाता
है। अविषा सुस्तक जैसा आकार रखती है।

अविषाद (सं० पु०) १ प्रसन्नता, आनन्द-मङ्गल,
खुशी, चैन-चान। (त्रि०) २ प्रसन्न, खुश।

अविष्टम्भ (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ आल-
स्यभाव, आश्रयका अभाव, पनाहकी अदममौजूदगी।
(त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ आलस्यग्रन्थ, बेसहारा।

अविष्ठ (वै० त्रि०) अतिशयेन अविता रक्षिता,
अविष्ट-इष्टन् लणोलीपः। १ अतिशय रक्षक, बड़ा
सुहाफिज। २ अतिशय प्रसन्न, निहायत राजी।
३ अतिशय ध्यान देनेवाला, जो बहुत गौर करता हो।

“श्री अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठः।” ऋक्। ७। २८। ५।

अविष्ठा (वै० स्त्री०) अव-गतौ-इसुन्, अविगति-
मिच्छति क्यच् भावे अ स्त्रीत्वात् टाप्। १ अभिलाष,
खाहिश। २ गमनेच्छा, जानेकी तबीयत। “अविष्ठा-
मनु व्रतं।” ऋक्। २। ३८। ३।

अविष्णु (सं० त्रि०) अविष-क्यष्-उ। रक्षा कर-
नेकी इच्छा रखनेवाला, पालनकाम। “माला सूर्य
अविष्णवः।” ऋक्। ८। ४५। २३।

अविस् (सं० स्त्री०) अव-भावे-इसुन्। १ रक्षण, हिफा-
जत। २ गति, चाल।

अविसंवाद (सं० पु०) न विशेषेण संवादः अभावे
नञ्-तत्। १ प्रमाणके अनुसरणका अभाव, सुबूतके
सुवाफिक न चलना। न विसंवादः विरोधे नञ्-तत्।
२ प्रमाणका अनुसरण, सुबूतकी हमराही। ३ यथार्थ
विषयार्थक, वाजिब बातका मानना।

अविसंवादिन् (सं० त्रि०) न विसंवदति णिनि
विरोधे नञ्-तत्। १ प्रमाणानुयायी, सुबूतपर चलने-
वाला। २ यथार्थवादी, वाजिब बोलनेवाला। ३ सफल
पदार्थ, पता पाये हुआ।

अविसर्गिन् (सं० त्रि०) संलग्न, लगा हुआ, जो
छोड़ता न हो।

अविसोढ़ (सं० स्त्री०) अवेदुग्धम् अवि-सोढच् न
षत्वम्। मेघी दुग्ध, भेड़का दूध।

अविस्तर (सं० त्रि०) विस्तारशून्य, छोटे मिक्-
दार या दायरेवाला, जो फैला न हो।

अविस्तर (सं० पु०) विस्तारका अभाव, इस्ती-
मालकी अदममौजूदगी।

अविस्तीर्ण (सं० त्रि०) सङ्कुचित, अनियुक्त, वि-
स्ताररहित, छोटा, फैला न हुआ, सिकुड़ा हुआ, जो
काममें न लगा हो।

अविस्तृत (सं० त्रि०) चुद्र, संलग्न, मिला हुआ,
जो सटा हो।

अविस्थल (सं० स्त्री०) महाभारतोक्त ग्राम विशेष ।
उद्योग पर्वमें अविस्थल प्रभृति पांच ग्रामका उल्लेख
किया है ।
अविस्पष्ट (सं० त्रि०) न विशेषेण स्पष्टम्, नञ्-
तत् । अस्पष्ट वाक्य, जो साफ़ न बोला गया हो ।
अविस्मरण (सं० स्त्री०) न विस्मरणं अभावे नञ्-
तत् । १ विस्मरणका अभाव, याद न रहनेकी अदम-
मौजूदगी । २ स्मरण, याद ।
अविस्मृत (सं० त्रि०) न विस्मृतम् नञ्-तत् । भूला
न हुआ, जो विस्मृत न हो ।
अविस्त्र (सं० त्रि०) पूतिगन्ध रहित, जिससे साफ़
बू न निकले ।
अविहत (सं० त्रि०) अवरोधशून्य, जो रोक न
गया हो ।
अविहतमति (सं० त्रि०) गमनमें अवरोध न रखने-
वाला, जिसे जानेमें रोक न रहे ।
अविहर (हिं० वि०) १ विहड़ न होनेवाला, जो
टूटा न हो, अखण्ड, अनश्वर ।
अविहृत्यतक्रतु (सं० पु०) हृत्यति प्रेषाकर्म्मो
इति यास्कः । हृत्यगतिकान्तरोः कान्तिरभिलाषः ।
वि-हृत्य-अतच् विहृत्यतोऽभिलषितः । अविहृत्यतोऽन
भिलषित इत्यर्थः । तादृश क्रतु कर्म यस्य । १ अन-
भिलषितकर्मा, जो अभिलाषसे काम न करता हो ।
२ इन्द्र । “यिनाविहृत्यतक्रतो अमितान् ।” ऋक् १।६१।२ ।
‘हे अविहृत्यतक्रतो अग्ने स्थितकर्मणिन्द्र ।’ (सायण)
अविहित (सं० त्रि०) न वेदादि-शास्त्रेण विहि-
तम्, नञ्-तत् । १ निषिद्ध, जिसे शास्त्र न करने-
को कहे । २ अकृत, जो किया न हो । अवेर्हितम्
इ-तत् । ३ भेड़का हितकर । (पु०) ४ श्यामाक
घास ।
अविहृत (सं० त्रि०) वि-हृ-वा उत्तच् किञ्च तेन
न गुणः नञ्-तत् । अहिंस्य, हिंसाके अयोग्य, जो
मारने लायक न हो । “ताहि चलमाविहृतम् ।” ऋक् ५।८२।१
‘अविहृतमहिंसम् ।’ (सायण)
अविह्वरत् (द्वै० त्रि०) पतनशून्य, जो फिसलता या
गिरता न हो ।

अविह्वल (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत् । १ व्याकुल न
होनेवाला, जो वैचैन न हो । २ स्वस्थ, तनदुरुस्त ।
अवी (सं० स्त्री०) अवत्यात्मानमन्यस्पर्शात् । अव
रक्षणे अविदम् तंविष्णो ईः । उष् ४।१५८ । इति ई ।
१ ऋतुमती स्त्री, रजस्वला स्त्री । २ वनकुलस्थ, जङ्गली
कुल थी । ‘अवीनां रजस्वला ।’ (सिद्धान्तकौमुदी)
अवीकाश (सं० पु०) वि-काश-भावे-घञ् उप-
सर्गदीर्घः प्रकाशः ततो नञ्-तत् । १ प्रकाशका अभाव,
रोशनीकी अदममौजूदगी । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० ।
२ प्रकाशशून्य, अन्धेरा ।
अवीक्षण (सं० स्त्री०) न वीक्षणम् नञ्-तत् । १ दर्श-
नका अभाव, देख न पड़ना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० ।
२ दर्शनशून्य, जो देख न पड़ता हो । अवीनां ईक्षणं
इ-तत् । ३ मेषका दर्शन, भेड़का देखना ।
अवीक्षित (सं० त्रि०) न वीक्षितम् नञ्-तत् ।
अदृष्ट, जो देखा न गया हो । भावे क्त अभावे-नञ्-
तत् । (स्त्री०) २ वीक्षणाभाव, दर्शनाभाव । अविना
मेषेण ईक्षितम् । इ-तत् । ३ मेषदृष्ट, जो भेड़से देखा
गया हो ।
अवीची, अवीचि (सं० पु०-स्त्री०) वयति सततं
चलति वेच्-ईच् डिच् । न वीचिः वीची वा, नञ्-
तत् । १ जो वस्तु श्रेणो या कतार न हो । २ जो तरङ्ग
या लहर न हो । ३ अवकाश भिन्न, जो श्रे मौका
न हो । ४ सुखभिन्न, आराम न होनेवाली चीज ।
५ अनल्प, बड़ी चीज । ६ एक नरक । भागवतके पञ्चम
स्कन्धमें उक्त नरकका विशेष विवरण लिखा है ।
(त्रि०) ७ नास्ति वीचिस्तरङ्गो यत्र । तरङ्गशून्य
जलाशय, लहरसे खाली ।
अवीज (सं० त्रि०) नास्ति वीजमस्य, नञ्-
बहुव्री० । १ वीजशून्य फलादि, कदली, केरा प्रभृति,
वैतुष्म । (स्त्री) २ द्राक्षा, किशमिश । (त्रि०)
३ वीजका अनाधायक, जो वीज न रखता हो । नञ्-
तत् । ४ अग्रशस्त, खुराब । ५ अङ्गुरोत्पादनके अयोग्य,
तीन वर्षका वीज जिससे कोपल निकल न सके ।
(स्त्री०) वीजं शुक्रं तन्नास्ति यस्य नञ्-बहुव्री० ।
६ शुक्रहीन, स्त्रीवादि, नामर्द । ७ कारणशून्य,

निर्मूल, वेजड़। (पुं०) ८ योगशास्त्रोक्त निर्वीज चित्त वृत्तिका परिणाम निरोध, योग भिन्न अन्यत्र चित्त वृत्ति निवारण।

अवीजक (सं० त्रि०) १ वीजशून्य, तुख्मसे खाली। २ पवनरहित, जो बोया न गया हो।

अवीजधर्मी (सं० त्रि०) वीजका धर्म न रखने वाला, जो तुख्मकी खसलतसे खाली हो।

अवीजा (सं० स्त्री०) गोस्त्रीनसदृशगुण द्राक्षा, किशमिश।

अवीत (सं० स्त्री०) न वीतं चित्तादवगतम्, नञ्-तत्। अनुमान, फर्ज, अन्दाज।

अवीदुग्ध (सं० स्त्री०) मेघीदुग्ध, भेड़का दूध।

अवीमूत्र (सं० स्त्री०) मेघीमूत्र, भेड़का मूत्र।

अवीर (सं० त्रि०) न वीरम्। १ जो वीर न हो।

२ जो वलवान् न हो। वीरः पुत्रादि स नास्ति यस्य नञ्-बहुव्री०। ३ पुत्रादिशून्य, जिसके लड़का वगैरह न रहे।

अवीरघ्नी (वै० स्त्री०) अवीरहन् देखो।

अवीरता (वै० स्त्री०) पुत्रका अभाव, पिसरकी अदममौजूदगी, बालबच्चे का न होना।

अवीरहन् (वै० त्रि०) मुमुक्षुवध न करनेवाला, जो आदिमियोंको मारता न हो।

अवीरा (सं० स्त्री०) १ पुत्र और पतिसे रहित स्त्री, जिस औरतके लड़का और स्वाविन्द न रहे। २ स्वतन्त्र स्त्री, आजाद औरत।

अवीर्य (वै० त्रि०) निर्बल, प्रभावरहित, कमजोर, बेअसर।

अवीह (हिं० वि०) अभय, निडर, जो डरता न हो।

अवु (सं० त्रि०) अव-उ। जो हविर्द्वारा तर्पण करता हो।

“अवोवायिहस्तनुवधः प्रियासुयज्ञिया स्वर्ग।” ऋक् १०। १२२। ५।

“अवोर्वाग्निं सार्पयितुः। अवतेरौषादिक उग्रत्वः।” (सायण)

अबुक (सं० पुं०) छाग, बकरा।

अवृक (वै० त्रि०) वृणोति समन्तादव्याप्नोति, वृ-कक्-ततो नञ्-तत्। १ मृगभिन्न, जो हिरण्य न हो। नास्ति वृकः आवरकः मृगो वा यस्य यत्र वा, नञ्-बहुव्री०।

२ मृगशून्य, हिरण्यसे खाली। ३ हिंसक रहित, जहाँ खंखार जमनवर न रहे। ४ सच्चा, रास्त।

५ रक्षित, महफूज। (स्त्री०) ६ रक्षा, शान्ति, हिफाजत, मेल। ‘प्रणो यच्छतादवक’। ऋक् १। ४८। १५।

अवृक्ष (सं० त्रि०) वृक्षशून्य, दरखतसे खाली। अवृक्षक, अवृक्ष देखो।

अवृजिन (वै० त्रि०) छल न करनेवाला, सच्चा, जो अपने दोस्तकी वक्त पर छोड़ता न हो। यह शब्द आदित्यस्का विशषण है।

अवृत (वै० त्रि०) १ अप्रतिहत, जो रोकान गया हो। २ अधीन न बना हुआ, जो दबाया न गया हो। ३ अनिर्वाचित, जो चुना न गया हो। ४ अरक्षित, जो बचाया न गया हो।

अवृत्ति (सं० स्त्री०) वृत्तिर्वर्तनादिः, नञ्-तत्। १ स्थितिका अभाव, न ठहरने की हालत। २ जीविकाका अभाव, रोजीकी अदममौजूदगी। ३ विवरणका अभाव, तफ्सीलकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति वृत्तिः स्थित्यादिर्यस्य। ४ स्थितिहीन, बैठिकाना। ५ जीविकाशून्य, बेरोजगार। ६ विवरणरहित, बेतफ्सील।

अवृत्तित्व (सं० स्त्री०) अनस्थित्व, अदम-मौजूदगी।

अवृथा (सं० अव्य०) कृतकार्य होकर, सफलतासे, कामयाबीके साथ।

अवृथार्थ (सं० त्रि०) कृतकार्य, सफलमनोरथ, कामयाब।

अवृक्ष (सं० पुं०) पुष्पवृक्षभेद, किसी किसका फूलदार पेड़।

अवृद्धिक (सं० स्त्री०) नास्ति वृद्धिः लाभरूपः यस्मिन्, नञ्-बहुव्री०; शेषाद्विभाषेति वा क्वप्। वृद्धिहीन मूलधन, सूदसे खाली जमा। (त्रि०) २ वृद्धिरहित, न बढ़नेवाला। ३ व्याज न रखनेवाला, जिसपे सूद न लगे।

अवृध (वै० त्रि०) न वर्धते, वृध-कर्तरि-क। वृद्धि-शून्य, बेबाढ़। ‘प्रणोरयज्ञा अवृधं अवयज्ञान्।’ ऋक् ७। ६। १।

अवृष्टि (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ वृष्टिका अभाव, बारिशकी अदममौजूदगी। २ दुर्भिक्ष, कष्ट। (पुं०) नास्ति वृष्टिर्वर्षणं यस्मात्, नञ्-५-बहुव्री०। ३ वृष्टिशून्य मेघ, जो बादल बरसता न हो।

अष्टाष्टिसंरम्भ (सं० पु०) नास्ति वृष्टेर्वर्षणस्य संरम्भः संवेगो यस्मात्, नञ् ष-बहुव्री० । अति वेगसे न बरसनेवाला मेघ, निविड मेघ, वृष्टिसे पूर्वकालवर्ती गम्भीर मेघ, जो वादल ज्वादा बरसता न हो ।

अष्टह (सं० पु०) बौद्ध देव-विशेष; बौद्ध देव-तावीकी एक श्रेणी ।

अष्टहत् (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत् । वृहद्भिन्न, चूट, छोटा, जो बड़ा न हो ।

अवेक्षक (सं० त्रि०) अवेक्षते विशेषणालोकयति, अव-ईक्ष-ण्वल् । १ दर्शक, देखनेवाला । २ पर्यालोचक, सुवायिना करनेवाला । ३ आयव्ययादिका अध्यक्ष, आमद-खर्चका हिसाब रखनेवाला ।

अवेक्षण (सं० स्त्री०) अव-ईक्ष-ण्वल् । १ दर्शन, देखभाल । २ पर्यालोचन, सुवायिना । ३ अवधान, गौर । ४ प्रतिजागरण, चौकीदारी ।

अवेक्षणीय (सं० त्रि०) अवेक्ष्यते, अव-ईक्ष-अनी-यर् । १ दर्शनीय, देखने लायक । २ आलोचनीय, सुवायिनैके काबिल ।

अवेक्षा (सं० स्त्री०) अव-ईक्ष भावे-अ-टाप् । १ दर्शन, देखभाल । २ अवधान, गौर, खयाल । ३ पर्यालोचना, सुवायिना ।

अवेक्षित (सं० त्रि०) अव-ईक्ष कर्मणि क्त । १ दृष्ट, देखा-भाला । २ पर्यालोचित, सुवायिना किया हुआ ।

अवेक्षित (सं० त्रि०) अवेक्षते, अव-ईक्ष-टच् । १ दर्शक, देखनेवाला । २ पर्यालोचक, सुवायिना करनेवाला ।

अवेक्षिन्, अवेक्षित देखो ।

अवेक्ष्य (सं० त्रि०) अव-ईक्ष कर्मणि क्त । १ दृश्य, देखने लायक । २ पर्यालोचनीय, जांचने काबिल । (अव्य०) ल्यप् । ३ देख या विवेचना करके, गौरके साथ, सुवायिनैके सुवाफिक ।

अवेज (हिं० पु०) एवज, बदला ।

अवेणि (सं० त्रि०) १ गूँथा न हुआ, जो मोड़ मोड़के बनाया न गया हो । २ लहरदार न होनेवाला, जिसमें दरयाकी तरह लहरें न उठें । यह शब्द अलकका विशेषण है ।

अवेदनाञ्ज (सं० त्रि०) वेदनां न जानाति; अवे-दना-ज्ञा-क, असमर्थ-समा० । वेदनानभिज्ञ, जो दर्दको जानता न हो ।

अवेदयान (सं० त्रि०) अज्ञान, नादान, जो जानता न हो ।

अवेदविदु (सं० पु०) वेद न पढ़नेवाला ब्राह्मण ।

अवेदविहित (सं० त्रि०) वेदमें न मिलनेवाला, जो वेदमें पाया न जाता हो ।

अवेदि (सं० स्त्री०) वेदिर्वेदनम्, अभावे नञ्-तत् । १ ज्ञानाभाव, इल्लको अदम-मौजूदगी । वेदिः परिष्कृता भूमिः सा न भवति, नञ्-तत् । २ अपरिष्कृता भूमि, साफ न की हुई जमीन ।

अवेद्य (सं० त्रि०) विद्यते ज्ञायते, विद कर्मणि क्त ततो नञ्-तत् । १ अज्ञेय, जाना जा न सकनेवाला । विद लामे क्त, नञ्-तत् । २ अलभ्य, नायाब, जो मिल न सकता हो । ३ व्याहा न जानेवाला । (पु०) ४ गोवत्स, गायका बछड़ा ।

अवेद्या (सं० स्त्री०) अविवाह्या स्त्री, जिस औरतसे शादी हो न सके ।

अवेनत् (वे० त्रि०) अज्ञान, बेहोश, जिसे कुछ मालूम न पड़े ।

अवेला (सं० त्रि०) नास्ति वेला सीमा यस्य यत्र वा, नञ्-बहुव्री० । १ सीमारहित, बेहद । २ निर्मर्याद, बेइज्जत । (पु०) ३ अपलाप, झूठ, इल्लकी पोशीदगी ।

अवेला (सं० स्त्री०) १ गुवाकचूर्णं चर्वितपूग, सुपारीका दोहरा । 'अवेलापलापे सादवेला पूगचूर्णके ।' (विश्व) नवेला, नञ्-तत् । २ अप्रशस्त काल, बुरा वक्त । ३ अनुचित काल, नासुनासिब वक्त । चलित भाषामें शेष वेलाको ही अवेला कहते हैं ।

अवेश (हिं० पु०) १ आवेश, जोश, भड़क । २ चैतन्य, फुरतौ, होश । ३ भूतावेश, शैतान्का साया ।

अवेष्ट (सं० त्रि०) अव-यज-क्त अव-इष-क्त वा । १ नाशित, नेस्तनाबूद । नास्ति वेष्टा यत्र, नञ्-बहुव्री० । २ वेष्टनरहित, खुला, जो बंधा न हो ।

अवेष्टि (वै० स्त्री०) यज्ञ द्वारा प्रायश्चित्त, जो शान्ति यज्ञसे हो।

अवैतनिक (सं० त्रि०) वेतनशून्य, वेतनस्वाह, अनरैरी, जो बगैर उजरत काम करता हो।

अवेदिक (सं० त्रि०) वेदसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो वेदमें न हो।

अवैद्य (सं० त्रि०) वैद्य न होनेवाला, जो तबीब न हो।

अवैध (सं० त्रि०) विधेरागतं तत आगतमिति अण्, ततो नञ्-तत्। विधिमें न होनेवाला, निषिद्ध, बेकायदा।

अवैधव्य (सं० स्त्री०) विधवायाः विगतभर्त्राः भवः, भवार्थे थञ् अभावे नञ्-तत्। पतिराहित्याभाव, सधवावस्था, सोहाग, अह्वात।

अवैमल्य (सं० स्त्री०) वैमल्यं अनैकमल्यम्, अभावे नञ्-तत्। १ मतभेदाभाव, ऐकमल्य, रायमें फर्क का न पड़ना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ ऐकमल्ययुक्त, हमराय।

अवैयात्य (सं० स्त्री०) वियातो घृष्टः भावार्थे थञ् आद्यचो वृद्धिः ततो नञ्-तत्। १ घाष्टार्भाव, हेकड़ीका न होना। २ सलज्जत्व, शरमिन्दगी। (त्रि०) नास्ति वैयातं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ सलज्जत्व युक्त, लज्जा-विशिष्ट, शरमीला, जो ढीठ न हो।

अवेर (सं० स्त्री०) वेरं विरोधः, नञ्-तत्। १ विरोध-का अभाव, दुश्मनीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति वेरं यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ विरोधशून्य, दुश्मनी न रखनेवाला। (पु०) ३ युधिष्ठिर।

अवेरहत्य (वै० स्त्री०) मनुष्योंकी अहिंसा, वधसे रक्षा, आदमियोंका मारा न जाना, कत्लसे हिफाजत।

अवेराग्य (सं० स्त्री०) वैराग्यं विषयवैमुख्यं तेन नञ्-तत्। विषयामिलाष, दुनियावी चीजकी खाहिश। सांख्योक्त धर्माधर्म ज्ञानाज्ञान वैराग्यावैराग्य ऐश्वर्या-नैश्वर्य इस आठ प्रकार प्रकृति धर्मके अन्तर्गत यह भी एक धर्मविशेष है।

अवेलक्षण (सं० स्त्री०) वेलक्षणं भेदकधर्मः वैयात्य-वत् भावार्थे थञ् सिद्धम्; अभावे नञ्-तत्। १ भेदक-धर्मका अभाव, अभेद, फर्क का न पड़ना। (त्रि०)

नञ्-बहुव्री०। २ भेदक धर्माभावविशिष्ट, अभिन्न, बेफर्क, एक-जैसा।

अवोक्षण (वै० स्त्री०) अव-उच्च भावे-लुपट्। तिरछे हाथसे जलसेकरूप वैधकार्य। अभ्युक्षण देखो।

अवोद (सं० पु०) अव-उन्द भावे-घञ् निपा० न लोपः। १ अवल्लोदन, छिड़काव। 'अवोदोऽवल्लोदनम्।' (सिद्धान्तकौमुदी) २ आर्द्रक, अदरक। (त्रि०) ततः अस्तरार्थे अण् आदि अच्। ३ क्लिन्न, लोदयुक्त, तर, भौगा, छिड़का हुआ।

अवोदेव (वै० अव्य०) देवानामवस्तात् पश्चादर्थे अव्ययो०। देवतादिके पश्चाद् देशादिमें।

अवोष (सं० पु०) अव-उष कर्मणि-घञ्। १ उष्णाव, गर्म दाल भात या पूरौ-तरकारी।

अवोषीय (सं० त्रि०) तप्तान्नको हितकर, गर्म खानेमें डालने या मिलाने काबिल।

अवोष्य, अवोषीय देखो।

अव्द (सं० पु०) अवतौत्यव्दः; अव-रक्षणे-कर्तरि-द घृषो० इडभावः। १ वत्सर, साल। २ मेघ, बादल। ३ पदंतविशेष, काई पहाड़। ४ पुस्तक, किताब। ५ सुस्तक, मोथा। अव्द देखो।

“यमकादौ भवेद्देव्यं डलोर्ववोर्वरोल्लथा।” (साहित्यदर्पण)

“अव्दसं वत्सरे मेघे गिरिभेदे च पुस्तके।” (विश्व)

अव्दप (सं० त्रि०) अव्दं वत्सरं पाति, अव्द-पा-क; ज्योतिषोक्त वत्सराधिप, वर्षका राजा।

अव्य (वै० त्रि०) अवो भवं अवि दिगादि० यत्। मेषशरीरजात, भेड़के जिससे पैदा। “अव्यो वारेः परि-पूरितः।” ऋक् ८।२।२।

अव्यक्त (सं० पु०) वि-अञ्ज-क्त, नञ्-तत्। १ विष्णु। ‘विष्णावव्यजिताव्यक्ती।’ (अमर) २ कन्दर्प। ३ शिव। ४ सांख्यमतसे—सर्वकारण-प्रधान। ५ वेदान्तमें—अज्ञान। ६ सूक्ष्मशरीर। (स्त्री०) ७ निराकार परमेश्वर। ८ प्रकृति। ९ आत्मा। (त्रि०) १० अस्यष्ट, छिपा हुआ। ११ मूर्ख, बेवकूफ।

‘अव्यक्तं प्रकृतावात्मन्यव्यक्तोऽङ्गः तस्यैवोः।’ (हिन)

अव्यक्तक्रिया (सं० स्त्री०) वीजगणितकी क्रिया जिस तरीके से जन्मोत्पत्ति काबला लगी।

अव्यक्तगणित (सं० त्रि०) वीजगणित, जन्मो-
मुकाबला ।

अव्यक्तगति (सं० त्रि०) गुप्तरौतिसे गमन करने-
वाला, जो चुपके-चुपके जाता हो ।

अव्यक्तपद (सं० पु०) १ जिस पदका तात्त्वादि स्थानों
द्वारा स्पष्ट उच्चारण न हो सके, जैसे पशु पक्षियोंको
बोली । (त्रि०) २ उच्चारणशून्य, गेरमलफूजो ।

अव्यक्तमार्ग, अव्यक्तवर्त्मन देखो ।

अव्यक्तमूर्ति (सं० त्रि०) गुप्त रूप रखनेवाला,
जिसके शक्त देख न पड़े ।

अव्यक्तमूलप्रभव (सं० पु०) प्रभवत्यस्मात् प्रभू
अपादाने-अप् प्रभवः कारणं मूलञ्च तत् प्रभवश्चेति
कर्मधा० ततः अव्यक्तं प्रधानं अविद्या वा मूलप्रभवो
यस्य, बहुव्री० । संसार-वृत्त, दुनियाका दरखत ।

अव्यक्तराग (सं० पु०) न व्यक्तः स्पष्टप्रतीतः रागो
रक्तिमा, नञ्-तत् । १ ईषदुरक्तवर्ण, जो रङ्ग कुछ लाल
हो । २ अरुणवर्ण, लाल रङ्ग । 'अव्यक्तरागस्वरणः ।' (अमर)
(त्रि०) अव्यक्तः रागो यस्य, बहुव्री० । ३ अरुणवर्ण
विशिष्ट, सुर्ख, लाल ।

अव्यक्तराशि (सं० स्त्री०) वीजगणितमें—अज्ञात
अङ्क वा अलक्षित परिमाण, नामालूम अदद या
मिकदार ।

अव्यक्तलक्षण (सं० पु०) शिव, जिन महादेवकी
बात मालूम न पड़े ।

अव्यक्तलिङ्ग (सं० स्त्री०) अव्यक्तस्य लिङ्गमनुमापकम् ।
१ सांख्यमतसिद्ध महत्तत्त्वादि । (त्रि०) अव्यक्तं लिङ्गं
चिह्नं यस्य, बहुव्री० । २ अव्यक्तचिह्न, जिसके
कोई निशान् मालूम न पड़े, अर्थात् जो पहिचाना
न जाय । न व्यक्तं दार्शनिकत्वेन प्रकाशितं लिङ्गं यस्य,
बहुव्री० । गुप्ताश्रमयुक्त, पोशोदा डालतमें रहनेवाला ।

अव्यक्तवर्त्मन् (सं० त्रि०) गुप्तमार्गानुयायी,
जिसकी चाल समझ न पड़े ।

अव्यक्तवाक् (सं० त्रि०) स्पष्ट रीतिसे न बोलने-
वाला, जो साफ-साफ बात न कहता हो ।

अव्यक्तवपुः, अव्यक्तलक्षण देखो ।

अव्यक्तसाम्य (सं० स्त्री०) वीजगणितके अनुसार

अव्यक्त राशि या वर्णका समीकरण, जो मिलान
जन्मोमुकाबलासे छिपी अददका हो ।

अव्यक्ता (सं० स्त्री०) कृष्णा गोकर्णी, काली अप-
राजिता ।

अव्यक्तादि (सं० त्रि०) अलक्षित आरम्भविशिष्ट,
जिसका आगाज समझ न पड़े ।

अव्यक्तानुकरण (सं० पु०) शब्दका अस्फुट अनु-
करण, आवाजको गेरमलफूजो नकल । जैसे मनुष्य
पपीहेकी बोली साफ बोल नहीं सकता, परन्तु
उसकी नकल करके 'पिवु कहां' कहता है ।

अवयव (सं० त्रि०) १ ध्यानविशिष्ट, खयाल रखनेवाला,
जो इधर-उधर देखता न हो । २ स्थायी शान्त, सच्चोदा,
ठण्डा, जो डावांडोल न हो । ३ सन्तुष्ट, वेपरवा ।

अव्यङ्ग (सं० स्त्री०) अवरेङ्ग शृङ्गमिवाङ्गं यस्याः,
बहुव्री० । १ शूकशिखि, केवाच । (त्रि०) न विकलं
अङ्गं यस्य । नञ्-बहुव्री० । २ विकलाङ्गभिन्न, पूर्ण,
जो पूरे अङ्गोंसे युक्त हो । नञ्-तत् । ३ अव्यक्त,
छिपा हुआ । ४ शाकदीपीय सोर ब्राह्मणका धारणीय
पवित्रसूत्र भेद । २०० अङ्गुल उत्तम और १२०
अङ्गुलका अव्यङ्ग मध्यम होता है । इसे पहन सूर्यको
पूजा करनेसे अधिक पुण्य मिलता है । इसका सविशेष
वर्णन भविष्यपुराणके ब्राह्मणपर्वमें इस प्रकार लिखा है ।

“अव्यङ्गधारिणोमन्त्रां पूजयन्ते दिवस्यतिम् ।

दृष्ट्वा व्यङ्ग्यस्तेषां कौतूहलसमन्वितः ॥

सांवः प्राह नमस्कृत्य भूपः सत्यवतीसुतम् ।

कथं वरोऽयमव्यङ्गः कथितो मुनिसत्तम ॥

कुत एष समुत्पन्न कथाच स यचिः व्यृतः ।

वन्मनोय कदा चार्थ किमर्थं चैव धार्यते ॥

किं प्रमाणञ्च भगवन्व्यङ्ग्यार्थं किमुच्यते ॥

(भविष्यपु० ब्राह्मणपर्व १४१ अ०)

एक समय भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रजीके पौत्र साम्ब
अव्यङ्गधारण किये, सूर्य भगवान्की पूजा करते
हुए ब्राह्मणोंको देख, कौतूहलान्वित हों मुनिशादूल
श्रीव्यासजीके समीपमें जा प्रणाम कर बोले,—हे
मुनिसत्तम ! यह अव्यङ्ग अष्ट क्यों है ? इसकी उत्पत्ति
किससे हुई है ? क्यों यह एकान्त पवित्र ठहरता,
एवं कब और किस वास्ते धारण किया जाता

तथा किस परिमाणका होता और अव्यङ्ग क्यों कहाता है ? साम्बके इस प्रश्नको सुनकर महर्षि भगवान् व्यासने उत्तर दिया,—मैं अव्यङ्गका सविस्तर लक्षण कहता हूँ, सुनो। देवता, ऋषि, नाग, गन्धर्व, अप्सरस्, यक्ष, राक्षस प्रभृति यह सबही देवता ऋतुक्रमसे भगवान् सूर्यके शरीरमें वास करते हैं। उनमें वासुकिने जहाँ वर्षमें एकवार सूर्योदय होता है, ऐसे अपने स्थानपर आ शीघ्र दिवाकरको नमस्कार करके गांगीयसे भूषित इषत्प्रत्युत शुभ्र 'अव्यङ्ग' सूर्यके प्रीत्यर्थ समर्पण किया। भगवान् प्रभाकरने भी उनकी प्रसन्नताके लिये उक्त अव्यङ्गको अपने मध्य भागमें बांध लिया। यह नागराजके अङ्गसे उत्पन्न और भानु द्वारा धारण किया गया, अतएव सूर्यकी भक्ति रखनेवाले पुरुष सूर्यकी प्रसन्नताके लिये इसको धारण करते हैं। तत्त्वविधानसे भोजक शुचि होता है। इसके नित्य धारण करनेसे, सूर्य प्रसन्न होते हैं। सूर्योपासक जो भोजक इसे धारण नहीं करते, वे सौरहीन पूजाके अयोग्य एवं उच्छिष्ट समझे जाते और सूर्यको पूज नहीं सकते हैं। यदि हठात् वे सूर्य भगवान्को पूजते, तो रौरव नरकमें पड़ते हैं। यह जानकर अव्यङ्गके विना सूर्योपासक व्यक्ति न हंसे, न खड़ा हो, और न पूजा करे अर्थात् क्षणमात्रभी उसको अव्यङ्गहीन नहीं रहना चाहिये। यह एक वर्णका बनाया जाता है। २०० अङ्गुलका उत्तम, १२० अङ्गुलका मध्यम और १०८का द्रुत होता है, इससे अधिक द्रुत न रहना चाहिये। इसी आकृतिका 'अव्यङ्ग' विश्वकर्माने बनाया था। मध्यमावस्थामें भोजकोंके १०० अङ्गुलका भी हो सकता है। संस्कृत अर्थात् ज्ञान-संध्यादि शौचयुक्त भी इसके बिना पवित्र नहीं होता, फिर इसके धारणसे उसी समय पवित्र हो जाता है। एवं हविर्होमादि उसकी सब क्रियायें शुभ हो जाती हैं। हे राजन् अव्यङ्ग, पतिताङ्ग, खार, इन नामोंसे पहचाने जाते हैं।

जन्द् अवस्थामें अव्यङ्गको 'ऐव्यङ्गहनेम्' और पारसीमें 'कुशी' कहते हैं। यह एक प्रकारका सूत्र होता, जिससे पारसियोंके 'इजशन' नामक पूजनमें 'बारसम्'

या समिधा बांधना पड़ती है। इसे खजूरकी पत्तासे तैयार करते हैं। काटनेसे पहले पुजारौ खजूरकी पत्ती, पेड़ और अपनी कुरीपर सङ्कल्पका जल छिड़का देता है। 'अरवोसगाह' या यज्ञस्थलपर जलकुशमें डालकर लानेसे पत्ती लम्बी-लम्बी चौर कर धागे-जैसी धज्जी बनायी जाती है। फिर छः धज्जीको एक साथ तीन इस ओर और तीन उस ओर रख किसी सिरे पर गांठ लगा देते हैं। उसके बाद दाहनों ओरकी लच्छीसे एक त्रिपद और बायीं ओरकी लच्छीसे दूसरा त्रिपद जोरसे मरोड़ा जाता, जिसमें मिलाकर रखनेपर दोनों त्रिपद मुड़कर एक सूत्रक बनता और फिर दूसरे सिरेपर गांठ लगानेसे टूट ही जाता है। इस तरह तैयार होनेपर ऐव्यङ्गहनम्को कर्मकाण्डके लिये 'बरसमदान' पर रखते हैं।

भारतीय आर्य ब्राह्मण जिस प्रकार यज्ञोपवीत पहनते और विना उसके किसी कर्मकाण्डके अधिकारी नहीं होते, उसी प्रकार सौर ब्राह्मण सूर्यपूजा और पारसी भी अव्यङ्गके विना अग्निपूजा नहीं कर सकते। अव्यङ्गाङ्ग (सं० त्रि०) सुचारुरूपनिर्मित, पूर्ण, सुडौल, समूचा, जिसके अजो पूरा रहे।

अव्यङ्गाङ्गी (सं० स्त्री०) अव्यङ्गं सौष्ठवमङ्गं यस्याः, बहुव्री० अङ्गात् ङीप्। सर्वाङ्गसम्पन्न स्त्री, जिस स्त्रीके किसी अङ्गमें विकार न हो।

अव्यचस् (वै० त्रि०) अप्रशस्त, तङ्ग, जो लम्बा चौड़ा न हो।

अव्यञ्जन (सं० स्त्री०) नास्ति व्यञ्जनं शुभाशुभचिह्नं शृङ्गे यस्य नञ्-बहुव्री०। १ शृङ्गहीन पशु, सिंह व्याघ्रादि। (त्रि०) २ सुलक्षणशून्य, जिसके कोई शुभलक्षण न रहे। ३ चिह्नशून्य। ४ उपकरण शून्य।

अव्यण्डा (सं० स्त्री०) न विगतमण्डं वीजं यस्याः।

१ शूकशिखि, केवाच। २ भूम्यामलकी, भुयि आवला।

अव्यति (वै० स्त्री०) १ सन्तोष, आसुदगी, छका-छकौ। २ अभिलाष, चाहिश।

अव्यतिकार (सं० पु०) नञ्-तत्। १ संसर्गाभाव, संगतिका न रहना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ संसर्गशून्य, बेसिल।

अव्यतिकर्षण (स० त्रि०) वि-अति-कृ-क्त, नञ्-तत् । असङ्कीर्ण, भिन्न, जुदा, जो मिला न हो ।

अव्यती (वै० स्त्री०) सपत्नीभिः सह पर्यायेण पति-मागच्छति सावती वि-अत-ई औणादिकः । न तादृशीः अव्यती । जो स्त्री सपत्नी सहित पतिके पास जाती हो । ‘मै अव्यलै पृथालि ।’ ऋक् १०।८३।५ ।

अव्यथ (सं० पु०) न व्यथ्यते विभेति व्यथ कर्तरि अच् । १ सर्प । (स्त्री०) नास्ति व्यथा किमपि दुःखं यस्याः सेवनेन, नञ्-बहुव्री० । २ हरीतकी, हर । ३ सोंठ । ४ पद्मचारिणी वृक्ष । (त्रि०) ५ व्यथा-शून्य ।

‘अव्यथातु हरितकां पन्नगे निर्वर्धयेत् च ।’ (विश्व)

‘अव्यथाविचरा पद्मा चारटी पद्मचारिणी ।’ (अमर)

अव्यथमान (वै० त्रि०) अस्थायी भावसे गमन न करनेवाला, जो कांपता न हो ।

अव्यथय (सं० पु०) न व्यथयन्ति अभि संग्रामेषु व्यथ (सर्वधातुभ्यो इन् । उण् ४।११०) इन् । अथवा व्यथिरिति क्रोध नाम, आरोहण-ताडन-बन्धनादिभिर्न क्रुध्यन्तीत्यर्थः, नञ्-तत् । १ घोड़ा । यह शब्द बहु वचनान्त है । ‘असन्देहायमेतदादीनि बहुवचनान्तानि नामानि ।’ (निरुक्त)

अव्यथा (सं० स्त्री०) न व्यथा नञ्-तत् । १ व्याथाका अभाव, बीमारीका न होना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ सोंठ । ३ हरीतकी, हर । ४ पद्मचारिणी वृक्ष । ५ आवला । ६ गोरखमुण्डी ।

अव्यथि (द्वै० त्रि०) न व्यथ्यते क्लिश्यति व्यथ-इन् । १ व्याथाशून्य, जिसे पीड़ा न रहे । २ दुःखशून्य, जो दुःखी न हो । ३ दुःख न देनेवाला । (स्त्री०) ४ अश्व, घोड़ा । ‘समुद्रमव्यथिर्जगन्वान् ।’ ऋक् १।११।१५ ।

अव्यथिघी (सं० स्त्री०) १ पृथिवी, जमीन । २ रात्रि, रात ।

अव्यथिन् (सं० त्रि०) न व्यथ्यते व्यथ वा इन् । नञ्-तत् । १ निर्भय, वेखौफ । २ व्याथाशून्य, जिसे तकलीफ न रहे ।

अव्यथिष (सं० पु०-स्त्री०) न व्यथ्यते, व्यथ-टिषच् । १ सूर्य । २ समुद्र । ‘अव्यथिषोऽम्बिसमुद्रयोः ।’ (सिद्धान्तकौमुदी)

अव्यथिषी (सं० स्त्री०) १ पृथिवी, जमीन । २ अर्धरात्र, आधीरात । ‘अव्यथिषी अर्धरात्रौ ।’ (सिद्धान्तकौमुदी)

अव्यथी (सं० पु०) अश्व, घोड़ा ।

अव्यथ्य (सं० त्रि०) न व्यथ्यते, व्यथ कर्तरि यत् ततो नञ्-तत् । १ व्याथाशून्य, वेदर्द । २ दुःखित न होनेवाला, जो रक्षीदा न हो ।

अव्यथा (सं० स्त्री०) हरीतकी, हर ।

अव्यथा (सं० स्त्री०) दुष्टशिरावेधन, खुराब नसका चौरफाड़ ।

अव्यनत् (वै० त्रि०) श्वासप्रश्वासरहित, निर्जीव, सांस न लेनेवाला, बेदम ।

अव्यपदेश्य (सं० त्रि०) न व्यपदिश्यते विशेषेणादिश्यते, वि-अप-दिश कर्मणि ण्यत् ततो नञ्-तत् । १ सङ्कल्प-वाक्यमें प्रयोग किया न जानेवाला, जो ठहराया जा न सकता हो । २ आदेश किया न जानेवाला, जिसे छुका दिया जा न सके । ३ अनिर्वचनीय, कहा न जा सकनेवाला । (स्त्री०) ४ न्याय मतसिद्ध निर्विकल्प ज्ञान, जिस इत्थममें द्वितीयत्व न रहे । जाति गुण क्रियाका अन्य हेतुक निर्देश हो न सकनेसे परब्रह्मको भी अव्यपदेश्य कहते हैं ।

अव्यपेक्षा (सं० स्त्री०) विशेषेण अपेक्षा व्यपेक्षा, ततः अभावे नञ्-तत् । १ किसी पदमें दूसरे पदके विशेष रूप सम्बन्धका अभाव, एक लफ्जसे दूसरे लफ्जके मतलबका अलगव । जैसे, ‘राजाका गृह और परिच्छेद’—यहां गृह और परिच्छेदका राजासे सम्बन्ध है, किन्तु आपसमें दोनों अलग हैं । इसीसे गृह और परिच्छेदमें अव्यपेक्षा आती है । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ अपेक्षाशून्य, बेनिस्बत, जो लगाव रखता न हो ।

अव्यभिचरित (सं० त्रि०) नव्यभिचरितम्, नञ्-तत् । व्यभिचारशून्य, आवारगीसे खाली । साध्यके अभावविशिष्ट पदार्थमें रहनेवालेको व्यभिचरित और साध्यके अभावविशिष्ट पदार्थमें न रहनेवालेको अव्यभिचरित हेतु कहते हैं । जिसमें धूम उसीमें अग्नि रहता है । अतएव जिस हेतु पर्वतमें धूम देखे, उसी हेतु पर्वतको अग्निविशिष्ट भी मानेंगे । इस जगह पर्वत पक्ष, अग्नि साध्य और धूम हेतु है । साध्यविशिष्ट पर्वतमें ही धूम रहता है । साध्यका

अनधिकरण जल क्रदादि उसमें नहीं होता। इसीसे पर्वतमें अग्नि अनुमानके लिये धूमको अव्यभिचारित हेतु कहते हैं। प्राचीन नैयायिक इसीको व्यभिचारित हेतु बताते हैं। 'धूमवान् वज्जि' वज्जि हेतु धूम विशिष्ट, अर्थात् यह नहीं, जहां वज्जि वहीं धूम भी रहता है। क्योंकि अग्निदग्ध लौहपिण्डमें अग्नि तो होता, किन्तु धूम देख नहीं पड़ता। इसीसे उसे व्यभिचारित हेतु कहते हैं। इङ्गलण्डीय पदार्थवित् पण्डितोंका मत है,—जहां अग्नि हो, वहां अल्प वा अधिक और सहज दृश्य वा अदृश्य धूम अवश्य ही रहेगा। धूमसे वातिरेक अग्नि ठहर नहीं सकता। अव्यभिचार (सं० पु०) न व्यभिचारः, अभावे नञ्-तत्। व्यभिचारका अभाव, अन्यथाका अभाव, नैयत्य-रूप, पायदारी, हमेशगी।

अव्यभिचारिन् (सं० त्रि०) न व्यभिचरति; वि-अभि-चर-णिनि, नञ्-तत्। १ किसी भी प्रतिकूल हेतु द्वारा रोका न जा सकनेवाला, जो भूलता-भटकता न हो। २ किसी प्रकार असत् पथको अव-लम्बन न करनेवाला, जो किसी तरह बुरी राह जाता न हो। ३ न्यायमतसे—साध्य साधक व्राप्तिविशिष्ट हेतु। ४ किसी प्रकार बाधा न उठानेवाला, जो किसी तरह बिगड़ता न हो। ५ पुण्यात्मा, नेक, परहेजगार, भला।

अव्यभिचारौ, अव्यभिचारिन् देखो।

अवयय (सं० क्ली०) वि-इण् एरजित्यच् वययन्ततो नञ्-तत्। खरादि-निपातनमवययम्। पा १।१।३७। सकल विभक्ति और सकल वचनमें एकरूप शब्दवृत्ति धर्म, जो शब्द सब विभक्ति, वचन और लिङ्गमें एक ही तरह लगता हो। जैसे स्वर प्रातर इत्यादि।

“सदृशं त्रिषु लिङ्गेषु सर्वासु च विभक्तिषु।

वचनेषु च सर्वेषु यत्र व्येति तदवययम् ॥” (आयर्वण्य सुति)

(पु०) २ शिव। ३ विष्णु। ४ आद्यन्तरहित, परब्रह्म। (त्रि०) ५ विकारशून्य, जिसमें कोई फर्क न पड़े। ६ प्रवाहरूप सर्वत्र स्थित, सब जगह भरा रहनेवाला। ७ अवययफलदाता, सुराद पुरी करने-वाला। नञ्-बहुव्री०। ८ वायव्य, वैश्व, ९ पवि-

नश्वर, लाजवाल। (वै०) १० अविमय, भेड़से निकलने-वाला, जो भेड़के चमड़ेसे बना हो।

अवययत्व (सं० क्ली०) अनश्वरत्व, बरबाद न होनेकी हालत।

अवययवर्ग (सं० पु०) अवययका समूह, हमेशा एक जैसे रहनेवाले लफ्जोंका जखीरा।

अवयया (सं० स्त्री०) गोरखमुण्डी, गोरखमुंडी।

अवययात्मन् (सं० त्रि०) अवयय आत्मा स्वभावो यस्य, बहुव्री०। अविनश्वर, लाजवाल, जो बिगड़ता न हो।

अवययीभाव (सं० पु०) अनवययमवययं भवति भू कर्तरि णः तस्मिन् परे अवयय-च्। व्राकरणसिद्ध समास विशेष। जिस विभक्ति प्रभृतिके अर्थमें अवयय पदके समर्थके (आकाङ्क्षित पदके) सहित समास होता है, उसे ही अवययीभाव समास कहते हैं।

अवययीभावः। पा २।१।५। अधिजातोऽयम्। (सिद्धान्त कौ०) अवयय-मित्यादि। पा ३।१।६। विभक्ति, समीप, वृद्धि, अर्थाभाव, अत्यय, असंप्रति, शब्दप्रादुर्भाव, पश्चात्, यथानुपूर्व, योग-पद्य, सादृश्य, सम्पत्ति, साकल्य, अन्त, इन सब अर्थोंमें अवययीभाव समास होता है। ऊपर लिखे हुए अर्थोंके व्रतीत असादृस्यादि अर्थोंमें भी अवययीभाव समास आता है। यथा—अपदिशम् इत्यादि।

अवययीभावश्च। पा १।१।४९। अवययीभावोऽस्ति पद भी अवयय होता है। यथा,—‘अधिहरि’। अवययीभावमें क्लीवलिङ्गके कार्य साधनके लिये क्लीवलिङ्ग भी लगता है। निद्रा सम्प्रति न युज्यते इति अतिनिद्रम्। नपुंसकलिङ्ग स्त्रीकार करनेसे ब्रह्मो नपुंसके प्रातिपदिकस्य। पा १।१।४६। इस सूत्रद्वारा निद्राशब्दमें आकार क्लृप्ता है। एव ‘दिशोर्मेध्यमपदिशम्’ अयं नपुंसकं स्त्री। (सिद्धान्त कौ०) पा १।४।८४। क्लीववायन्वपदिशं दिशोर्मेध्ये। (अनर) अकारान्त भिन्न अन्य अवययीभावकी परस्थित विभक्ति-का लुक् होता है। अवययादापसुपः। पा १।४।८२। अवययके परस्थित आप् एवं सुप्का लुक् होता है। यहां आप् लुक्का विधान अनर्थक है। ‘वायं यद्वयं वयंमलिङ्गत्वात्’ (सिद्धान्तकौमुदी) नावायीभावादतोऽमलपचन्याः। पा २।४।८९। अकारान्त अवययीभावकी परस्थित पञ्चमी भिन्न

विभक्तिका लुक् नहीं होता। किन्तु उसके स्थानमें अम् आता है। यथा,—कृष्णस्य समीपम् उपकृष्णम्। यहाँ विभक्तिके स्थानमें अम् हो गया है। 'उपकृष्णात् नतः।' कृष्णके समीपसे चले गये हैं। यहाँ पञ्चमी विभक्तिका लुक् एवं उसके स्थानमें अम् भी नहीं हुआ। पञ्चम्यन्त अकारान्त शब्दका ही रूप हुआ है। तृतीयासप्तम्योर्बहुलम्। पा २।४।८२। अकारान्त अवयवोभावकी परस्थित तृतीया एवं सप्तमीका बहुलभाव अर्थात् तृतीया और सप्तमीके स्थानमें अम् होता, कभी तृतीयान्त अकारान्त शब्दका ही रूप धारण करता, और कभी नित्य अम् आता है। यथा—अपदिशम् अपदिशेन। अपदिशं अपदिशे। 'बहुलग्रहणात् सप्तम्यन्तग्रहणमित्यादी नित्यमभावः।' (सिद्धान्त कौमुदी)

अव्ययेत (सं० पु०) यमकानुप्रासभेद। इसमें यमकाक्षरोंके बीच दूसरा पद नहीं पड़ता।

अव्यर्थ (सं० पु०) नञ्-तत्। १ सफल, सुफ़ीद, जो वेफ़ायदे न हो। २ सार्थक, बामानी, पुर-असर।

अव्यलीक (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ प्रिय, प्यारा, खुशगवार। २ सत्य, रास्त, सच्चा।

अव्यवधान (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। १ व्यवधानका अभाव, फर्ककी अदममौजूदगी। २ नैक्य, कु.बं, पड़ोस। (त्रि०) नास्ति व्यवधानं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ व्यवधानशून्य, आड़से खाली। ४ निकटस्थ, पासका।

अव्यवसाय (सं० पु०) निश्चय उद्यमश्च व्यवसायः। अभावे नञ्-तत्। १ निश्चयका अभाव, यकौनका न होना। २ उद्यमका अभाव, व्यवसायका न रहना। (त्रि०) नास्ति व्यवसायो यस्य। नञ्-बहुव्री०। ३ निश्चयशून्य, उद्यम रहित, आलसी।

अव्यवसायिन् (सं० त्रि०) न व्यवस्यति वि-अव-सो णिनि एच आत्वं युक् च, नञ्-तत्। १ उद्यमशून्य, निरुद्यमी। २ अनुद्यत, आलसी, पुरुषार्थहीन। ३ निश्चयशून्य।

अव्यवसायी, अव्यवसायिन् देखो।

अव्यवस्था (सं० स्त्री०) वि-अव-स्था अङ्-टाप्, ततो नञ्-तत्। १ कर्तव्यव्यवस्थाके नियमका अभाव,

यह करना और यह न करना चाहिये जैसे विचारका न होना। २ शास्त्रादि-विरुद्ध व्यवस्था, अविधि। (त्रि०) नास्ति व्यवस्था यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ मर्यादाशून्य, बेकायदा। ४ अविहित। ५ स्थितिरहित, चञ्चल।

अव्यवस्थित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ शास्त्रादि मर्यादारहित, बेमर्याद। २ अनियतरूप, बेठिकानेका। ३ अस्थिर, चञ्चल।

अव्यवहार्य (सं० त्रि०) वि-अव-हृ-ण्यत्, नञ्-तत्। जो व्यवहारके योग्य न हो। ब्रह्महत्यादि महापातक द्वारा कोई मनुष्य पतित होनेसे जब तक प्रायश्चित्त नहीं करता, तबतक अव्यवहार्य रहता है। ऐसी अवस्थामें उसका याजन, उसके साथ वेदपाठ और भोजनादि करना न चाहिये। किन्तु उस पतित व्यक्ति के प्रायश्चित्त करनेपर सपिण्ड ज्ञातिवाले उसके साथ पवित्र जलाशयमें स्नान करके जलपूर्ण नवीन घट प्रक्षेप और कुटुम्बवाले उसे ग्रहण करेंगे। फिर उसका याजन, उसके साथ वेदपाठ और पहलेकी तरह भोजनादि सब लोग कर सकेंगे। कोई कभी उसकी निन्दा न करेंगे। परन्तु बिना प्रायश्चित्त किये उसके साथ व्यवहार करना उचित नहीं।

“प्रायश्चित्ते तु चरिते पूर्णकुम्भमपां नवम्।

तेनैव सार्द्धं प्राक्षेयुः क्षाला पुच्छे जलाशये।” मनु १।१।८०।

“एनक्षिभिरनिर्णिक्तेनार्थं किञ्चित् सहाचरेत्।

कृतनिर्णयज्ञानो व न जुगुप्सेत किञ्चित्॥” मनु १।१।८०।

प्रायश्चित्तके बाद व्यवहारके विषयमें याज्ञवल्क्य-संहितामें ऐसा प्रमाणवाक्य लिखा हुआ है,—

“प्रायश्चित्तेरप्येतेनो यदज्ञानकृतं भवेत्।

कामतो व्यवहार्येषु वचनादिह जायते।” याज्ञवल्क्य-संहिता ३।२२।

विज्ञानेश्वरने इस श्लोककी ऐसी व्याख्या की है,—प्रायश्चित्त करनेसे अज्ञानकृत पाप दूर होता है, फिर ज्ञानकृत तथा कामकृत पापका उपयुक्त प्रायश्चित्त करनेसे दोषी मनुष्य इस संसारमें व्यवहारके योग्य हो जाता सही, परन्तु उसका पाप दूर नहीं होता। प्रायश्चित्तविधायक श्रुतिवचन द्वारा यही निश्चित हुआ है।

परन्तु शूलपाणिने 'कामतो व्यवहार्यस्तु' यहां 'व्यवहार्यस्तु' के पहले एक अकार प्रक्षेप कर 'अवग्रहार्थ' पद ग्रहण किया है। इससे वे कहते हैं, कि प्रायश्चित्त करनेसे पाप चला जाता है, किन्तु अपराधी व्रक्ति समाजमें व्यवहारयोग्य नहीं होता। रघु-नन्दन एवं भवदेवने भी शूलपाणिका ही मत ग्रहण किया है।

'कामतो व्यवहार्यस्तु'—वास्तवमें यहां अकार है कि नहीं, इसमें विषम सन्देह है। काशीके स्वर्गीय बालशास्त्री अद्वितीय पण्डित थे। उन जैसे धर्मशास्त्रप्रवीण व्रक्ति आजकल प्रायः देखनेमें नहीं आते। उनका कहना है, कि धर्मशास्त्र काव्य नहीं है। काव्यमें दो तीन प्रकारका अर्थ होनेसे कविकौ गुणज्ञता प्रकट होती है। परन्तु धर्मशास्त्रमें दो अर्थ होनेसे महाविपद् है। अवतक किसी पुस्तकमें 'व्यवहार्यस्तु' के पूर्व लुप्त अकारका चिह्न नहीं देखा गया। अतएव 'अवग्रहार्थः' इस प्रकारका पद स्वीकार करना युक्तियुक्त नहीं है। इसके अतिरिक्त मनुसंहितामें महापातकादि जनित पतित व्रक्तिके प्रायश्चित्तके बाद व्यवहार्यके सम्बन्धमें जैसी व्यवस्था की गई है, उसके श्लोकोंको ठीक क्रमसे पढ़नेसे ऐसा निश्चित होता है,—किसी किसी पापमें प्रायश्चित्त करनेपर भी पतित व्रक्ति अवग्रहार्थ होता है। इसीसे महात्मा बालशास्त्रीने ऐसी व्यवस्था दी थी, कि कोई ब्राह्मण ज्ञानव्रत ब्रह्महत्या पापका अपराधी होनेसे (हमें स्मरण होता है, कि इन्दोर राज्यमें) वह प्रायश्चित्तके बाद समाजमें व्यवहार्य हो सकेगा। फलतः मिताचरा, मदनपारिजात, जिकन, नृसिंहप्रसाद, अपराक प्रभृति बहुमान्य प्राचीन मतानुसार महापातकादिके प्रायश्चित्तके बाद दोषी व्रक्ति समाजमें व्यवहार्य होता है। केवल जो मनुष्य बालक, स्त्री एवं शरणागतका प्राण नष्ट करता है, और उपकार करनेसे उपकारको नहीं मानता, वह प्रायश्चित्त करनेपर भी व्यवहार्य नहीं होता।

“गलघ्रांश्च कृतघ्रांश्च विग्रहानपि धर्मतः।

शरणागतहनश्च स्त्रीहन्तृश्च संश्रितः” मनुस्मृतिके।

हमने काशी, मिथिला, गवालियर, काश्मीर, महाराष्ट्र, तैलङ्ग प्रभृति नाना स्थानोंके प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डितोंके साथ परामर्श किया था; उन लोगोंने भी कहीं 'कामतो व्यवहार्यस्तु' इत्यादि वचनमें लुप्त अकार नहीं देखा। जयपुराधिपतिके पुस्तकालयमें चार सौ वर्षका हाथका लिखा हुआ एक पुराना पुस्तक है। उसमें भी 'व्यवहार्यः' पद ही देखनेमें आया। कलकत्तेमें स्वर्गीय तारानाथ तर्कवाचस्पति महाशयने जो धर्मशास्त्रसंग्रह पुस्तक छपवाया था, श्रीयुक्त भवानी-चरण-वन्द्योपाध्यायने जो धर्मशास्त्र प्रकाशित किया था एवं बम्बई नगरमें जो याज्ञवल्करसंहिता प्रकाशित हुई थी, उनमेंसे किसीमें भी 'अवग्रहार्थः' पद गृहीत नहीं हुआ। इसके अतिरिक्त याज्ञवल्करसंहिताकी चार पांच बहुमान्य टीकायें हैं। सभी टीकाकारोंने 'व्यवहार्य' पद ही रखकर वग्रास्था की है। अतएव इस स्थलमें अकार प्रक्षेप करना कदांतक विवेचनासङ्गत है, सो नहीं कहा जाता।

इससे पहले मिशनरी लोगोंने यहांके कितने ही मनुष्योंको खृष्टान कर डाला था। हमारे देशमें ऐसी प्रथा प्रचलित है, यदि कोई हिन्दू एक बार यवन हो जाय, तो वह फिर समाजमें ग्रहण नहीं किया जाता। इसलिये बिना समझे एकबार खृष्टानी धर्म अवलम्बन करनेसे फिर समाजमें नहीं आ सकते। इस अनिष्टकारी प्रथाको रहित करनेके लिये स्वर्गीय महात्मा राजा-राधाकान्त देव बहादुरने वङ्गदेशके समस्त पण्डितोंको इकट्ठा किया था। भाटपाड़ाके सिवा नवद्वीप प्रभृति सभी स्थानोंके उस समय प्रसिद्ध प्रसिद्ध पण्डित सभामें उपस्थित थे। बहुत कुछ विचार करनेके बाद उन लोगोंने यही स्वर किया, कोई हिन्दू खृष्टानी धर्म अवलम्बन करनेके बाद अभिचारभक्षणादि दोषसे दूषित होनेपर यदि फिर अपने धर्ममें लौट जाना चाहे, तो चतुर्विंशति वार्षिकव्रतानुकल्प दानादिरूप प्रायश्चित्तके बाद समाजमें व्यवहारके योग्य हो सकता है। इस पण्डित समाजने 'कामतो व्यवहार्यस्तु' में अकार प्रक्षेप नहीं किया। वस्तुतः विचार करनेसे

शूलपाणिका अकार प्रक्षेप करना असङ्गत जान पड़ता है।

अव्यवहित (सं० त्रि०) वि-अव-धा-क्त, नञ्-तत् । व्यवधान रहित, लगा हुआ । जिन दो द्रव्योंके बीच कोई वस्तु नहीं होता, उन्हें अव्यवहित कहा जाता है।

अव्यवहृत (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ व्यवहारसे बाहर, जो ईश्वरमालमें न आया हो । २ भोगादि द्वारा दूषित, जो काममें लगनेसे बिगड़ा हो । ३ बोल-चालसे बाहर, जो बोलनेमें न आता हो ।

अव्यवाय (सं० पु०) अवकाशका अभाव, संयोग, वक्-फेकी अदममौजूदगी, विसाल, फुरसतका न मिलना, लगे रहनेकी हालत ।

अवग्रसन (सं० स्त्री०) न व्रसनम्, नञ्-तत् । १ व्रसनाभाव, बुरी आदतकी अदममौजूदगी, अच्छी चाल । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ व्रसनरहित, बुरी आदत न रखनेवाला, परहेजगार, अच्छा, भला, जो बुरा काम करता न हो ।

अवग्रसनिन् (सं० त्रि०) नञ्-तत् । व्रसनशून्य, बे ऐब, भला । (स्त्री०) अवग्रसनिनी ।

अवग्रस्त (सं० त्रि०) न व्रस्तं विक्षिप्तं विपर्यस्तं पृथग्भूतं वा, नञ्-तत् । १ अविक्षिप्त, जो घबराया न हो । २ अविपर्यस्त, जो बिखरा न हो । ३ समस्त, समूचा, जो टूटा-फूटा, सड़ा-गला या बिगड़ा-बिगड़ाया न हो । ४ अपृथग्भूत, मिला हुआ, जो अलग न हो ।

अवग्राकुल (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ निराकुल, जो घबराया न हो । २ स्वच्छन्द, आजाद, जो बंधा न हो । ३ स्वस्थ, तन्दुरस्त ।

अवग्राकृत (सं० त्रि०) वि-आ-क्त-क्त, नञ्-तत् । १ अप्रकाशित, जो ज़ाहिर न हो । (स्त्री०) २ वेदान्त मतसे—अप्रकटीभूत एवं वीजरूप जगत्का कारण । ३ अज्ञान, नादानी । ४ सांख्यादि मतसे—प्रधान, मुख्य वस्तु ।

अवग्राख्या (सं० स्त्री०) ग्राख्याका अभाव, वर्णनकी स्वच्छताका अभाव, गोपन, बयान्की सफ़ायीका न होना, पोथीदगी ।

अवग्राख्यात (सं० त्रि०) ग्राख्यारहित, गुप्त, बे-बयान, पोथीदा, जो खोलकर बताया न गया हो ।

अवग्राख्यान् (सं० स्त्री०) अवग्राख्या देखो ।

अवग्राख्येय (सं० त्रि०) १ ग्राख्याके अयोग्य, बेबयान, जिसे कोई समझ न सके । २ ग्राख्याकी आवश्यकता न रखनेवाला, सरल, आसान, जिसके बयान करनेकी जरूरत न पड़े ।

अवग्राघात (सं० त्रि०) १ ग्राघातरहित, रोकानेवाला । २ समूचा, भरा हुआ, लगातार, जो टूटा-फूटा न हो ।

अवग्राज (सं० पु० स्त्री०) न ग्राजम्, अभावे नञ्-तत् । १ छलका अभाव, धोकेकी अदममौजूदगी । “इदं किलाग्राजमनोहरं वपुः ।” (शकुन्तला) २ शाब्दका अभाव, बदमाशीकी अदममौजूदगी ।

अवग्रापक (सं० त्रि०) ग्राप्नोति खलु, ततो नञ्-तत् । १ ग्रापक न होनेवाला, जो मामूर न हो । २ परिच्छिन्न, घिरा हुआ । ३ इयत्ता-विशिष्ट, महदूद ।

अवग्रापकता (सं० स्त्री०) अवग्रापकत्व देखो ।

अवग्रापकत्व (सं० स्त्री०) १ ग्रापक न होनेका विषय, मामूर न होनेकी बात ।

अवग्रापन्न (सं० त्रि०) जीवित, जिन्दा, जो मरा न हो ।

अवग्रापार (सं० पु०) न ग्रापारः, अभावे नञ्-तत् । १ ग्रापारका अभाव, कामकी अदममौजूदगी, बेकारी । २ अकार्य, जो अपना काम न हो । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ३ ग्रापारशून्य, बेकाम । ग्रापार देखो ।

अवग्रापारी (सं० पु०) १ उद्यमरहित, बेकाम । २ सांख्यमतमें—क्रियाजनक संयोगसे रहित, जो काम कर न सकता हो ।

अवग्रापिता (सं० स्त्री०) अवग्रापकत्व देखो ।

अवग्रापित्व (सं० स्त्री०) अवग्रापकत्व देखो ।

अवग्रापिन् (सं० त्रि०) न ग्राप्नोति, वि-आप-णिनि, नञ्-तत् । १ अवग्रापक, जो समाया न हो । २ परिच्छिन्न, घिरा हुआ । ३ इयत्ताविशिष्ट, झोटा मोटा ।

अव्यापी, अव्यापिन् देखो।

अव्याप्त (सं० त्रि०) न व्याप्तम्, नञ्-तत्। परि-
छिन्न, महदूद, जो समाया न हो।

अव्याप्ति (सं० स्त्री०) न व्याप्तिः, अभावे नञ्-तत्।

व्याप्तिका अभाव, मामूर न होनेकी बात। व्याप्ति-देखो।

अव्याप्य (सं० त्रि०) १ व्याप्य न होनेवाला,
जिसमें घुस न सके। २ संपूर्ण विषयसे पृथक्, जो
हर हालमें लग न सके। ३ अद्भुत, निराला, खास।

(अव्य०) ४ व्याप्त न होके, वैधुसे।

अव्याप्यवृत्ति (सं० त्रि०) अव्याप्य सर्वावच्छेद-
मव्याप्य वृत्तिः स्थितिर्यस्य, बहुव्री०। अव्याप्य वर्तते

इत्यव्याप्य वृत्तिः (न्यायभाष्य)। निज अधिकारणके अंश

विशेष वा काल विशेषमें अस्थित पदार्थ, जो पदार्थ
अधिकारणादिमें व्यापक न रहता हो। जैसे घट और
उसका संयोग गृहके सब स्थानमें वैसे ही आत्मामें
ज्ञान भी सर्वदा भरा नहीं रहता। अतएव स्वाधि-
करणमें अंशभेद और कालभेदसे ही संयोगादि रहते
हैं, इसीसे उसका नाम अव्याप्यवृत्ति है। एवं वृत्तिके
आगे कपिसंयोग है, किन्तु मूलमें नहीं,—इसे दैशिक
अव्याप्यवृत्ति कहते हैं। आत्मामें इस समय सुखादि
हैं, परन्तु दूसरे समय नहीं रहते—यह भी अव्याप्य-
वृत्ति कहा जाता है।

अतएव देश और काल व्याप्यवृत्तिके नियामक
हैं। उनमें देशमें रहनेसे देश, वा कभी काल भी
उसका अवच्छेदक होछा है, जैसे गोष्ठमें इस समय
गो हैं; यहाँ गोष्ठ और समय ये दोनों ही गो अव-
स्थिति संयोगके नियामक होते हैं। एवं इस समय
आत्मामें सुखादि हैं, यहाँ कालस्थित पदार्थ जो सुखादि
हैं, उनका नियामक आत्मारूप देश हुआ। इसीसे
संयोग विभागादिरूप जो अव्याप्यवृत्ति है, वह दैशिक
और कालिक है। उसी तरह आत्मामें सुख दुःख
इच्छा द्वेष यत्न धर्म अधर्म भावनाख्य संस्कार देहाव-
च्छेदमें रहनेपर भी घटावच्छेदमें नहीं रहते एवं
आत्मामें भी सर्वदा नहीं रहते, इसलिये वे अव्याप्य
वृत्ति हैं, एवं शब्द जिस देश और जिस कालमें रहता,
वही देश और वही काल उस शब्दका नियामक

होता है। गन्धादि भी कालिक अव्याप्यवृत्ति हैं,
वे स्वाधिकारणमें ही उत्पत्तिकालमें नहीं रहते।
नैयायिक लोग कहते हैं, कि घटादिके उत्पत्तिकालमें
गन्धादि नहीं रहता। उसके बाद उसकी उत्पत्ति
होती है। फिर वही गन्धादि प्रलयपर परमात्मामें भी
नहीं रहता। अतएव वह अव्याप्यवृत्ति है। संयोग
सम्बन्धसे घटादि भी उसीतरह दैशिक एवं कालिक
अव्याप्यवृत्ति है।

अव्यायत (सं० त्रि०) अनधिकृत, टिका हुआ, जो
छीना न गया हो।

अव्यायाम (सं० पु०) न व्यायामः, नञ्-तत्।

१ व्यायामका अभाव, कसरतकी अदममौजूदगी।

२ विशेषरूप विस्तारका अभाव, बड़े फैलावका
न रहना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ परि-
श्रमादि व्यापारशून्य, कसरत वगैरहके कामसे
खाली।

अव्यावर्तक (सं० त्रि०) न व्यावर्तयति इतरेभ्यो
निवारयति; वि-आ-वृत्-णिच्-ण्वुल्, णिच्, लोपः, ततो
नञ्-तत्। १ अकृतनिवारण, निवारण न करनेवाला,
जो रुकता न हो। २ अन्यसे भेद न करनेवाला, जो
सबको बराबर समझता हो।

अव्यावर्तन (सं० स्त्री०) वि-आ-वृत्-णिच्-ण्वुल्,
लोपः ततो नञ्-तत्। १ अन्यको निवारणका न करना,
दूसरेको न रोकना। २ प्रत्यावर्तनका अभाव, वापस
न आनेको हालत। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ व्या-
वृत्तिशून्य, अन्यके निवारणसे शून्य, वापस न आने-
वाला, जिसे कोई न रोके।

अव्यावृत (सं० त्रि०) १ संयुक्त, लगा हुआ।
२ जैसेका तैसा, जो उलटा-सुलटा न हो।

अव्याहत (सं० स्त्री०) न व्याहतम्, नञ्-तत्।
१ व्याघातका अभाव, रोकका न लगना। (त्रि०)
नञ्-बहुव्री०। २ व्याघातशून्य, बेरोक। व्याहतं
मिथ्यार्थकं तन्न भवति। ३ सत्यविशिष्ट, सच्चा, जो
भूठा न हो। ४ नूतन, नया। ५ हताश न होने-
वाला, जो नाउम्होद न रहे।

अव्याहतत्व (सं० स्त्री०) अव्याहतस्य भावः त्व।

१ व्याघातका अभाव, रोकका न पड़ना । २ वाग्गुण विशेष, किसी किस्मकी ज्वान्दानी ।

अव्याहारिन् (सं० त्रि०) उच्चारण न करनेवाला, जो बोलता न हो ।

अव्याहित (सं० त्रि०) निर्हन्त, निर्विवाद, वैभ-
गड़ा, जिसपे कोई भगड़ा न उठे ।

अव्युच्छिन्न (सं० द्वि०) अव्याहत, वैरोक ।

अव्युत्थिति (सं० स्त्री०) न विशेषेण उत्थितिः नञ्-
तत् । १ उत्थिका अभाव, न उठनेकी बात । २ वाक्य-
का गुण विशेष ।

अव्युत्पन्न (सं० त्रि०) न व्युत्पन्नम्, नञ्-तत् ।

१ अनभिज्ञ, अनुभवशून्य । २ शब्दके पदका अर्थ न

समझनेवाला, जिसे जुमलेका मतलब समझ न पड़े ।

३ अवैयाकरण, व्याकरणन जाननेवाला । ४ व्युत्पत्ति

वा सिद्धिशून्य, जो बन-चुन सकता न हो ।

अव्युष्ट (वै० त्रि०) प्रत्यूपके सदृश न चमकनेवाला,
जो तड़केकी तरह रौशन न हो ।

अव्यूहि (वै० स्त्री०) सफलता, कामयाबी, न
चूकनेकी हालत ।

अव्येथत् (वै० त्रि०) अन्तर्धान न होनेवाला, जो
गुम पड़ता न हो ।

अव्रण (सं० त्रि०) नास्ति व्रणो यस्य, नञ्-बहुव्री० ।

१ व्रणशून्य, वेदाग । २ क्षतादि रहित, वैजखूम ।

अव्रणशुक्ल (सं० पु०) नेत्रके कृष्णभागका रोग-
विशेष, जो बीमारी आंखकी स्याहीमें हो । यह अभि-
व्यन्दन, ज्वालायुक्त, शङ्खेन्दुकुन्दसदृश वर्ण, नमस्य तनु-
मेघाकृति और सुसाध्य होता है । (सुश्रुत)

अव्रत (सं० त्रि०) नास्ति व्रतं नियमो यस्य, नञ्-
बहुव्री० । १ शास्त्रविहित नियमशून्य, मजहबी काम

न करनेवाला । २ न्यायशून्य, उद्धत, पापी, वैकायदा,

नाफरमान्बरदार, बुरा । (पु०) ३ जैनमतसे

व्रतका त्याग । यह पांच प्रकारसे होता है,—हत्या,

असत्य भाषण, अदत्तदान, ब्रह्मचर्यत्याग और परिग्रह ।

अव्रत्य (वै० त्रि०) व्रताय हितं यत्, नञ्-तत् ।

१ व्रतकालमें अनाचरणीय, जो व्रतमें किया न जाता

हो । (स्त्री०) २ व्रतका दोष ।

अब्रह्मण्य (वै० स्त्री०) ब्रह्मणि वेदे साधु साध्वर्थे
यत् ब्रह्मण्यं वेदसिद्धं कर्म ना हिंसात् सर्वा भूतानोतिश्रुतेः
सर्वभूत हिंसाभावरूपं तत्सदृशम्, सादृश्ये नञ्-
तत् । नाव्यविषयकी अवध्योक्ति, तमाश्रमे न मारनेकी
बात । 'अब्रह्मण्यमवध्योक्ती ।' (अमर)

“अब्रह्मण्यमब्रह्मण्यम् ।” (शकुन्तला)

अब्राजिन् (सं० त्रि०) साधुवत् भ्रमण न करने-
वाला, जो फकीरकी तरह घूमता न हो ।

अब्रात्य (द्वे० पु०) ब्रात्य न होनेवाला पुरुष, जो
षोडशसंस्कारसे युक्त हो ।

अव्वल (अ० वि०) प्रथम, पहला, जो सबसे आगे
हो । २ श्रेष्ठ, बड़ा, सबसे अच्छा । (पु०)

३ प्रारम्भ, आगाज, शुरू ।

अव्वलन (अ० त्रि० वि०) प्रथमतः, पहले-पहल,
सबसे आगे ।

अशकुन (सं० स्त्री०-पु०) न शकुनम्, अप्राशस्त्ये
नञ्-तत् । दुर्निमित्त, अनिष्टसूचक काकादि दर्शन,
फाल-बद, बुरा शिगून् । यह दो प्रकारका होता है,
साधारण और असाधारण । इसमें उल्कापातादि
साधारण और काकादि दर्शन असाधारण है । हमारे
देशमें कहीं जाते या कोई कार्य आरम्भ करते समय
छींक होना, खाली घड़ेका देखना आदि अशकुन,
फिर भरे घड़े मिलना, बाजारसे सौदा लिये आद-
मीका आना आदि शकुन समझा जाता है ।

अशकुम्भी (सं० स्त्री०) अश्नाति आशु सर्वतो
व्याप्नोति, अश-अच्-टाप् अशा; कुम्भयति जलमाच्छा-
दयति, कुम्भ चुरा० णिच् अच् णिच् लोपः गौरादि०
ङीप् कुम्भी; अशा चासी कुम्भी चेति विशेषणयो
कर्मधा; पूर्वपदस्य पुंवद्भावः । पानीयोपरिज वृक्ष,
जलकुम्भी, ताकापाना ।

अशक्त (सं० त्रि०) अयोग्य, अक्षम, नाकाबिल,
नामुकबिल, ताकत न रखनेवाला ।

अशक्तता (सं० स्त्री०) अशक्तल देखो ।

अशक्तत्व (सं० स्त्री०) अयोग्यता, अक्षमता, निर्व-
लता, असमर्थता, कमजोरी नाकाबिलियत, ताकत न
रखनेकी हालत ।

अशक्ति (सं० स्त्री०) अयोग्यता, निर्बलता, नपुंसकता, नाकाबिलियत, कमजोरी, नामर्दी। सांख्यमतसे—बुद्धि एवं इन्द्रियके विपर्यय अर्थात् नाकाम हो जानेको भी अशक्ति कहते हैं। यह अशक्ति अष्टायास प्रकारकी होती है,—ग्यारह इन्द्रिय और सत्रह बुद्धिकी। बुद्धिकी सत्रह अशक्तिमें नव तुष्टि और आठ सिद्धिकी अशक्ति आती है।

अशक्य (सं० त्रि०) न शक्यम्, शक-यत्, नञ्-तत्।

१ असाध्य, असम्भव, गुरसुमकिन, जो बन न सकता हो। २ अकरणीय, किया न जानेवाला। (पु०) ३ काव्यालङ्कार विशेष। इसमें वाधा वश किसी कार्यके हो न सकनेका भाव देखाते हैं।

अशक्यार्थ (सं० त्रि०) निष्प्रयोजन, प्रभावशून्य, बेफायदा, बेतासीर, लाहासिल, जिससे काम न बने।

अशग—शान्तिपुराण रचयिता प्राचीन संस्कृत कवि।

अशङ्क (सं० त्रि०) १ निभय, निर्द्वन्द्व, बेखौफ, जिसे कोई डर न रहे। २ रक्षित, निश्चित, महफूज, पक्का।

“निपट निरङ्कुश अवध अशङ्कू।” (तुलसी)

अशङ्का (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ संशयका अभाव, शकको अदममौजूदगी। २ भयका अभाव, खौफकी अदममौजूदगी।

अशङ्कित (सं० त्रि०) शकि-क्त, नञ्-तत्। १ अभीत, खौफ न खाये हुआ। २ सन्देहरहित, बेशक, पक्का।

अशठ (सं० त्रि०) पुण्यात्मा, नेक, भला, जो बुरा न हो।

अशत्रु (सं० पु०) न शत्रुः कर्मणि, नञ्-तत्। १ चन्द्र। २ मित्र, दोस्त। ३ युधिष्ठिर। (त्रि०) नास्ति शत्रुर्यस्य, नञ्-बहुव्री०। शत्रुरहित, वैदुश्मन्, जिसे किसीसे दुश्मनी न रहे।

अशन (वै० पु०) १ फेंककर मारनेका पत्थर। २ मेघ, बादल।

अशन (सं० स्त्री०) अश्-ल्युट्। (पु०) अश्-ल्यू। १ पीतशाल वृक्ष। साधारण बोलचालमें इसे आसनका पेड़ कहते हैं। असन जैसा डल्ला, सक्काका भी प्रयोग

होता है। २ व्याप्ति। ३ भोजन। कमणि-ल्युट्। ४ भोज्य। (स्त्री०) ५ अन्न।

स्थान विशेषसे अनेक प्रकारके वृक्ष अशन वा आसन नामसे प्रसिद्ध हैं। यथा—(*Pterocarpus Marsupium*) इसका मारवाड़ी नाम आसन है। हिन्दीमें सज और उड़िया भाषामें इसे पियासाल कहते हैं। इसका पेड़ बहुत बड़ा होता है। संयुक्तप्रदेशमें बांदा प्रमृतिसे उत्तर यह बहुत पैदा होता है। ऊपरकी लकड़ी भूरी, काले दाग वाली, अत्यन्त कठिन और स्थायी होती है। पक्की आसनकी लकड़ीमें पालिश अच्छी लगती है। इसके भीतरकी लकड़ीमें लाल दूध रहता, लकड़ी भोग जाने वा कच्ची रहनेपर उसमें पीला दाग पड़ जाता है। इसकी लकड़ीके दरवाजे, खिड़कियां, कड़ियां, नौकायें, गाड़ियां आदि बनती हैं। रेलगाड़ीके स्लैपर बनानेमें यह बहुत काम आता है।

(*Terminalia tomentosa*) इसे हिन्दीमें आसन कहते हैं। इसका बंगला नाम भी आसन वा पियासाल है। पञ्जाब, दक्षिण भारतवर्ष और ब्रह्मदेशमें यह बहुत उत्पन्न होता है। इसके ऊपरकी लकड़ी कुछ सफेद और लाल होती एवं भीतरकी लकड़ी भूरी कृष्णवर्ण, कठिन, और लहरदार रेखा सहित रहती है। इसकी पकी हुई लकड़ीमें पालिश अच्छी मालूम देती है। सब लोग इसे ‘काला आसन’ कहते हैं।

(*Populus ciliata*) इसका पञ्जाबी नाम सफेदा, आसन इत्यादि है। शिमला पहाड़पर इसे बेलुन और नेपाली ‘वङ्गीकाठ’ कहते हैं। इसका पेड़ बड़ा होता है। लकड़ी धूसर वर्ण, उज्ज्वल और कोमल होती है।

(*Briedelia retusa*) इसका भी मारवाड़ी नाम आसन है। पञ्जाबमें इसे पाथर कहते हैं। अवध, बङ्गदेश, दक्षिण भारत एवं ब्रह्मदेशमें यह बहुत पैदा होता है। इसकी लकड़ी धूसर रंगकी होती और उसमें पालिश अच्छी लगती है।

अशनक, असनक (सं० पु०) असन पुष्पाकार दान्य विशेष, असनके फूल-जैसा धान।

अशनकृत (वै० त्रि०) भोजन बनाते हुआ, जो खाना पका रहा हो।

अशनपति (वै० पु०) भोजनका प्रभु, खुराकका मालिक।

अशनपर्णी (सं० स्त्री०) अशनस्य पीतसालस्य पर्णमिव पर्णमस्याः; बहुव्री० पर्णान्तजातित्वात् डीप्।
१ विजयसार। २ गोकर्णिलता, अपराजिता।

अशनपुष्प (सं० पु०) अशनपुष्पाकार शालि, असनाके फूल-जैसा धान।

अशनमल्लिका (सं० स्त्री०) आस्फोता, सामान्य अपराजिता।

अशनवत् (वै० त्रि०) भोजन रखनेवाला, जिसके पास खुराक रहे।

अशना (सं० स्त्री०) असनमिच्छति; अशन इच्छार्थे क्वच् पृषो० अशनायः, ततः क्लिपः सर्वाभावः अकार पकारयोलोपश्च। १ भोजनेच्छा, खानेकी खाहिश।
२ शुक्ल निष्ठावा, सफेद सेम।

अशनाया (सं० स्त्री०) अशनमिच्छति, अशन इच्छार्थे क्वच् पृषो० अशनाय; ततः अ-टाप्। १ भोजनेच्छा, खानेकी खाहिश। “अशनायः फलवद्विभूत्या।” (भट्टि) २ शुक्लनिष्ठावा, सफेद सेम।

अशनायित (सं० त्रि०) अशनमिच्छति; अशन-क्वच् पृषो० अशनाय, कर्तरि क्त इद् अतो लोपः।
१ भोजनेच्छायुक्त, खानेकी खाहिश रखनेवाला।
२ क्षुधित, भूखा। (क्लौ०) भावे क्त। ३ भोजनेच्छा, खानेकी खाहिश, भूख।

अशनायुक (सं० त्रि०) अशनां भोक्तुमिच्छां याति प्राप्नोति, अशनाया-कु अकारलोपः ततः स्वार्थे कन्। भोजनेच्छायुक्त, खानेका खाहिशमन्द।

अशनि (सं० पु० स्त्री०) अश्रुते व्याप्नोति तेजसा विश्वम्, अश्रु व्याप्तौ अशि। १ मेघोत्पन्न तेज, बादलसे निकली चमक। २ इन्द्र। ३ अनुयाज, अन्तिम यज्ञ। ४ इन्द्रका प्रसन्न। ५ उल्का-विशेष। ६ विद्युत्। ७ अग्नि। ८ विद्युदग्नि। ९ हीरक, हीरा

‘अशनिः क्षीपुःसयोः साश्चक्षलायां पवावपि।’ (मनोरत्ना)

भागवतके पञ्चस्कन्धमें लिखा है, अशनी कृता-

सुरको मारनेके लिये दधीचि मुनिका अस्थि लेकर विश्वकर्मसि अशनि बनवाया था।

अशनिप्रभ (सं० पु०) राक्षस विशेष, किसी आदमखोरका नाम।

अशनिमत् (वै० त्रि०) विद्युत् फेंकनेवाला, जो बिजलीसे भरा हो।

अशनौय (सं० त्रि०) अशनके योग्य, भोजनके उपयुक्त, खाने लायक।

अशपत् (वै० त्रि०) शाप न देते हुआ, जो कोस न रहा हो।

अशब्द (सं० पु०) नञ्-तत्। १ शब्दभिन्न अर्थ, लफ्जसे जुदा मानी। २ वाच्य, बोलो ठोली। (त्रि०) नास्ति शब्दो वेदादौ वाचकशब्दो वा यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ शब्दहीन, आवाजसे खाली।

अशम् (वै० अव्य०) अकुशलतासे, बेखैर, वाफियत, नुकसानमें।

अशम (सं० पु०) अदमन, अशान्ति, भड़क, जोश खुरोश, बेकरारी।

अशम्भु (सं० पु०) अशम, अमङ्गल, बुराई।

अशरण (सं० त्रि०) शरणशून्य, बेपनाह, जिसके कोई बचाव न रहे।

अशरफी (फा० स्त्री०) १ मोहर, सावरिन, गिनी। यह सिक्का सोनेका बनता था। २ पुष्पविशेष, गुल-अशरफी। यह पीला होता है।

अशराफ (अ० वि०) भद्र, भला, शरीफ, जो बदमाश न हो।

अशरीर (सं० त्रि०) नास्ति शरीरं तदभिमानो वा यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ देहशून्य, गैरसुजस्मिन्, जो जिसका न रखता हो। (पु०) २ परमात्मा।

३ शरीरका अभिमान न रखनेवाले जीवशुद्ध शक्त-नारदादि। ४ मीमांसोक्त देवमात्र। ५ कामदेव।

अशरीरत्व (सं० क्ली०) शरीरस्य भावः त्व। १ शरीर-सम्बन्ध-राहित्य, जिसके तात्त्विकका न रहना।
२ मोक्ष, जीने-मरनेसे छुटकारा।

अशरीरिन् (सं० त्रि०) देहशून्य, गैरसुजस्मिन्, जिसके जिसका न रहे।

अशर्म, अशर्मन् देखो।

अशर्मन् (सं० स्त्री०) विरोधे नञ्-तत्। १ असुख, दुःख, दर्द, तकलीफ। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०।

२ सुखशून्य, दुःखी, कमबख्त, तकलीफ पानेवाला। अशस् (वै० त्रि०) आशीर्वाद न देनेवाला, अशुभ-चिन्तक, प्रशंसा न करनेवाला, बदखाह, बददुवा देनेवाला, जो तारीफ करता न हो।

अशस्त (वै० त्रि०) अशुभ, खराब, जो अच्छा न हो।

अशस्तवार (वै० त्रि०) १ अवर्णनीय कोषसे सम्पन्न, जिसके पास बयानसे बाहर खजाना रहे।

२ स्वेच्छासे धन देनेवाला, जो बेमांगे दौलत बख्शता हो।

अशस्ति (वै० स्त्री०) १ शाप, बददुवा। २ शाप देनेवाली, जो बददुवा देती हो।

अशस्तिहन् (वै० त्रि०) शाप छोड़नेवाला, जो बददुवाको रद्द कर देता हो।

अशस्त (सं० त्रि०) शस्त्ररहित, बेहथियार, जो तलवार वगैरह न बांधे हो।

अशाका, अशाका देखो।

अशाखा (सं० स्त्री०) नास्ति शाखा यस्याः, नञ्-बहुव्री०। १ शूलौढण, सोला घास। २ शाखाशून्य लता, जिस बेलमें डाले न रहे। नारियल, ताड़ और खजूरको अशाखा कह सकते हैं।

अशान्त (सं० त्रि०) न शान्तम्, विरोधे नञ्-तत्। १ दुरन्त, असन्तुष्ट, वन्ध, भयङ्कर, नाखुश, खूखार, जङ्गली, खीफनाक, जो ठण्डा न हो। २ अविरत, सन्देहयुक्त, बेचैन, फिक्कमन्द, जो घबरा रहा हो। ३ अधार्मिक, बेमजहब, जो पवित्र न हो।

अशान्तता (सं० स्त्री०) शान्त न होनेका भाव, शमताराहित्य, जोश खरोश, भड़भड़ियापन।

अशान्ति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ शान्तिका अभाव, चञ्चलता। २ शमताका अभाव, अस्थिरता, हलचल। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ शमताशून्य, जल्दबाज।

अशालीन (सं० वि०) अशाली, लीठे, निर्मल।

अशालीनता (सं० स्त्री०) छुटता, ढिठाई।

अशाश्वत (सं० त्रि०) न शाश्वतं नञ्-तत्। १ अनित्य, उत्पत्तिविनाशशाली, पैदा और नाश होनेवाला। २ अस्थिर, हरवक्त न ठहरनेवाला।

अशासन (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ शासनका अभाव, हुक्मरानीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ शासनशून्य।

अशासविदनीय (सं० पु०) जैनशास्त्रानुसार कर्मविशेष। इसके प्रादुर्भावसे दुःखका अनुभव होता है।

अशास्य (सं० त्रि०) शास-बाहुल० ख्यत् नञ्-तत्। शासन करनेके अशक्य, जिसको किसी प्रकार शासन किया न जा सके।

अशिक्षित (सं० त्रि०) न शिक्षितम्, विरोधे नञ्-तत्।

१ शिक्षाशून्य, जो शिक्षा न पाया हो, बेपढ़ा-लिखा।

२ अविनीत, अभद्र, अनाड़ी, गंवार, मूर्ख, बेवकूफ।

३ गति नैपुण्यहीन, जो अच्छी चाल न चलता हो।

अशित (सं० त्रि०) अश-कर्मणि-क्त। १ भक्षित, खाया हुआ। कर्तरि-क्त। २ भोजनसे दृप्त, आसूदा। भावे क्तः (स्त्री०) ३ भक्षण, खाना।

अशित (सं० पु०) अश संहतौ (अशिवदिभ्य इतीमौ। उण् ११७२) इति इत्। चौर, चोर। अश्वते देवे भक्षते, अश भोजने कर्मणि इत्। देवभक्षचक्र, देवताके खाने योग्य खीर।

अशिक्षित (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। जो शिक्षित न हो, डढ़, फुरतौला।

अश्विपद (वै० त्रि०) न स्त्रीपदः पादरोगभेदः, वेदे पृषो० ल लोपः। नञ्-तत्। १ स्त्रीपदरोगका अभाव, फोलापावे बीमारीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नास्ति स्त्रीपदो रोगो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ स्त्रीपदरोगशून्य, जिसके फोलापावा न रहे। “अश्विपदाः भवन्तु” अक् १।५०।५।

अशिमिद (सं० त्रि०) शिमि वैधकर्मा शिमिं हिंसां ददाति, शिमि-दा-क्तः, ततो नञ्-तत्। अहिंसक, जो किसी जीवको मारता न हो। “अशिमिदाः भवन्तु” अक् १।५०।५।

अशिर-आशिर, (सं० पु०) अश्राति-सर्वं भुङ्क्ते,

अश्रु—(अश्रुति०। उण् १।५२) इति किरच् णित्पक्षे
 वृद्धिः। १ राक्षस। अश्रुति व्याप्नोति विश्वम्।
 २ सूर्य। ३ अग्नि। ४ हीरा। (अश्रुते राक्षसे वज्रावशिर-
 क्षपनेऽपि च। विच) (स्त्री०) टाप्। व्यापिका स्त्री, हर
 जगह जाने या रहनेवाली औरत।
 अशिरस् (सं० पु०) नास्ति शिरो मस्तकमस्य,
 नज्-बहुव्री०। १ कवन्ध, मस्तकहीन वीर। (त्रि०)
 २ अश्रुशून्य, जिसका अश्रुभाग न हो। वा कप्।
 अशिरस्त। कवन्ध, विसिरका धड़, जिसका माथा
 न हो।
 अशिरस्स्नान (सं० स्त्री०) शिरसा सह स्नानमव-
 गाहनम्, शाक० तत् ततो नज्-तत्। वेशिर डुबाये
 स्नान, गला पर्यन्त डूबा कर स्नान।
 अशिव (सं० स्त्री०) न शिवम् विरोधे नज्-तत्।
 १ मङ्गल न होनेवाला, अमङ्गल। (त्रि०) २ जो
 मङ्गलयुक्त न हो, उग्र। नास्ति शिवं कल्याणमस्मात्,
 नज्-५ बहुव्री०। अमङ्गलसूचक। अमङ्गल शब्द देखो।
 अशिशिषा (सं० स्त्री०) अशितुमिच्छा, अश्र-सन्
 द्विर्भाव इट् भावे अ-टाप्। भोजनेच्छा, खानेकी
 खादिश।
 अशिशु (सं० पु०) न शिशुः, विरोधे नज्-तत्। १ शिशु
 न होनेवाला, जो बच्चा न हो, युवा। कोई कोई
 कहते हैं, आठ वर्ष तक शिशु—फिर नवसे पन्द्रह वर्ष
 पर्यन्त अशिशु कहलाता है। (त्रि०) नास्ति शिशुः,
 यस्य, नज्-बहुव्री०। २ शिशुरहित, वैश्रीलाद, जिसके
 बाल-बच्चा न रहें। (स्त्री०) अशिश्वी, शिशु रहिता
 स्त्री। सख्यशिश्रीति भाषायां। पा ४।१।२१। इस सूत्रसे सखी
 और अशिश्वी यह दो डीप् प्रत्ययान्त शब्द निपातन
 द्वारा सिद्ध होता है। नास्याः शिशुरस्ति इति अशिश्वी।
 वेदमें “अशिशु” ही रूप बनता है।
 अशिष्ट (सं० त्रि०) न शिष्टम्, नज्-तत्। १ जो
 उपदेश पाये न हो। २ जो शासन किया न गया
 हो। शिष्टः साधु, विरोधे नज्-तत्। ३ असाधु,
 दुःशील, अविनीत, उजड़ड, बेहूदा। ४ नास्तिक।
 ३ वर्षसङ्करकारक व्यभिचारविशिष्ट, जो सब वर्षका
 अनादि भक्षण करता हो।

अशिष्टता (सं० स्त्री०) १ असाधुता, दुःशीलता,
 बेहूदगी, ठिठाई।
 अशिष्ठ (सं० त्रि०) अश्रुनाति अश्र-भोजने अच,
 अतिशयाने इष्टन्। १ अतिशय भोक्ता, बहुत खाने-
 वाला। (पु०) २ अग्नि। सबको भक्षण करने
 कारण अग्निको भी अशिष्ठ कहते हैं।
 अशिथ्य (सं० त्रि०) शिथ्यते, शास-कर्मणि क्वप्
 आत इत्वं पत्वच्च शिथ्यम्, ततो नज्-तत्। शासनका
 अविषय, जिसके प्रति या जिस विषयमें कोई नियम
 न हो। तदर्थि संज्ञा प्रमाणत्वात्। पा १।२।५३। युक्तवदव्यक्ति
 वचनं न कर्तव्यं संज्ञानां प्रमाणत्वात्। (सिद्धान्तकौमुदी) पाणिनि
 प्रथम सूत्र बनाया—लुपियुक्तवद व्यक्तिवचनं। पा १।२।५३।
 प्रत्ययके लुप् होनेपर प्रकृतिका लिङ्ग और वचन आता
 है। उसके बाद ‘तदशिषाम्’ इत्यादि सूत्र किया।
 इसका तात्पर्य यह है कि लुप् करने पर प्रकृतिके
 लिङ्ग और वचन होनेका शासन अर्थात् नियम नहीं
 रहता। कारण संज्ञा ही उसका प्रमाण है अर्थात्
 पूर्वाचार्यों ने प्रत्ययके लुप् करनेपर जिन सकल शब्दमें
 प्रकृतिका न्याय लिङ्ग और बहुवचन प्रयोग किया है,
 वे ही सब शब्द बहुवचनान्त होंगे एवं उसी प्रकार
 साधित पदके स्थलमें जहां एकवचनान्त प्रयोग किया
 है वहां एकवचनान्त ही प्रयोग होगा। ‘अवन्तीनां
 निवासो जनपद अवन्तयः’ यहाँ बहुवचनान्त और
 ‘ब्रह्मावर्तानां निवासो जनपदः ब्रह्मावर्तम्’ यहाँ
 एकवचनान्त ही प्रयोग हुआ है। कविकुल-
 चूड़ामणि कालिदासने मेघदूतमें उभय प्रकार प्रयोग
 ग्रहण किया है। जैसे—“प्राप्यावन्तीन्” (पु० मेघ० ३०।)
 यह बहुवचनान्त पदका निदर्शन है। “ब्रह्मावर्तं जनपद-
 मथ च्छायाया गाहमानः।” (पु० मेघ० ४८) यहाँ एकवचनान्त
 पदका निदर्शन है। इसीलिये विश्वकोषके अवन्ति-
 शब्दमें कई एक बहुवचनान्त जनपद शब्द दिखा करके
 अवशेषमें कहा है कि उससे अन्यथा भी होता है।
 अशिष्टिका (सं० स्त्री०) अनपत्या, जिस औरतके
 औलाद न रहे।
 अशीत (सं० स्त्री०) न शीतम्, विरोधे नज्-तत्।
 १ उष्णता, गर्मी। २ उष्णस्पर्श, गर्म चीज। (त्रि०)

कालभेदे नास्ति शीतं यस्य, नञ्-बहुव्री० । ३ शीत-
शून्य, सर्दीसे खाली, जिसे ठण्डक न मालूम पड़े ।
किसी प्राचीन कविने कहा है,—

“अशीतान्नरो माघे फाल्गुने पशुपक्षिणः ।

चेवे जलचराः सर्वे वैशाखे नरवानराः ॥”

माघ मासमें वृद्ध, फाल्गुनमें पशु-पक्षी, चैत्रमें
जलचर और वैशाखमें नर-वानरका शीत कूट जाता
है । ४ अस्मिवां, अस्मीका, जो गिननेसे अस्मीकी
जगह पड़ता हो ।

अशीतकर (सं० पु०) अशीतः उष्णः करः किरणो
यस्य । उष्णांशु, सूर्य, आफताब ।

अशीतकिरण, अशीतकर देखो ।

अशीतम (वै० पु०) अग्नाति, अश भोजने इन् ततः
मतुप् । भोक्तृप्रधान अग्नि, सबको खा जानेवाली
आग ।

अशीतरुच्, अशीतकर देखो ।

अशीतल (सं० त्रि०) उष्ण, गर्म, जो ठण्डा न हो ।

अशीता (सं० स्त्री०) भूमिकुष्माण्ड, भुईं कुम्हड़ा ।

अशीति (सं० स्त्री०) अष्टानां दशतां अशीभावः
ति प्रत्ययश्च, अष्टौ दशतः परिमाणमस्य । पङ्क्ति विंशति
विंशत्यलङ्घित् पञ्चाशत् षष्टिसप्तत्यशीति-नवतिशतम् । पा ५।१।५२ ।
१ अस्मी संख्या । २ अस्मी संख्याविशिष्ट, जो चीज
अस्मीकी अदत रखती हो । (त्रि०) ३ अस्मी संख्या
परिमित ।

अशीतिक (सं० त्रि०) अस्मी वर्षवाला, जो अस्मी
सालकी उम्रका हो ।

अशीतिभाग (सं० पु०) अस्मिवां भाग या हिस्सा,
अस्मीमें एक टुकड़ा ।

अशीर्ष (सं० त्रि०) शीर्षं न होनेवाला, सड़ा न
हुआ, जो कमजोर पड़ा न हो ।

अशीर्षन्, अशीर्षक देखो ।

अशीर्षिक (वै० त्रि०) नास्ति शीर्षं यस्य । १ मस्तक-
रहित, सर न रखनेवाला, जिसके मत्था न रहे ।
२ अश्वशून्य, हथियारसे खाली ।

अशील (सं० स्त्री०) न शीलम्, विरोधे नञ्-तत् ।

१ दुष्ट शील, बुरा मिजाज । २ दुष्टभाव, खराब

खसलत । (त्रि०) नास्ति शीलं यस्य, नञ्-बहुव्री० ।
३ शीलताशून्य, नाशायिस्ता । ४ दुष्टशील, बद्-
मिजाज ।

अशुक्लजा, अशुक्ला, अशीता देखो ।

अशुच् (सं० स्त्री०) न शुक् अभावे नञ्-तत् ।
१ शोकका अभाव, अफसोसकी अदममौजूदगी ।
(त्रि०) नास्ति शुगस्य, नञ्-बहुव्री० । २ शोकशून्य,
अफसोस न रखनेवाला, जो रस्तीदा न हो ।

अशुचि (सं० त्रि०) १ अग्नि न होनेवाला, जो
आग न हो । २ आषाढ़ मास न होनेवाला, जो
असाढ़ न हो । ३ कृष्णवर्ण, काला, जो शुक्ल या सफेद
न हो । ४ शृङ्गाररस न होनेवाला । ५ शीघ्रशून्य,
पाकीजगोसे खाली । ६ अपवित्र, नापाक, मैला
कुचैला ।

अशुचिता (सं० स्त्री०) अपवित्रता, नापाकीजगो-
गन्दगी ।

अशुचित्व, अशुचिता देखो ।

अशुद्ध (सं० त्रि०) न शुद्धम् विरोधे नञ्-तत् । शुद्ध
नहीं, दोषयुक्त, अपवित्र । कोई भी विषय नाना
प्रकारसे अशुद्ध हो सकता है । किसी पदको लिखनेके
समय व्याकरणादि लक्षणानुसार विहित कार्य न
करनेसे दुष्ट वा अशुद्ध कहते हैं ।

शास्त्रनिषिद्ध कर्मके अनुष्ठानका नाम दोष है ।
उक्त दोषसे दूषित व्यक्ति वा द्रव्यको दुष्ट वा अशुद्ध
कहते हैं । जिस द्रव्यके स्पर्श करनेसे बिना ज्ञान
किये शोचलाभ नहीं होता, उसका नाम दुष्ट और
उस द्रव्यके स्पर्श करनेवाले व्यक्तिको दुष्ट वा अशुद्ध
कहा जाता है । स्वास्थ्यके अभावसे शारीरिक जो
वातपित्तादिका दोष होता है, उस दोषयुक्त व्यक्तिको
भी दुष्ट वा अशुद्ध समझेंगे । रजस्वला होनेपर कहा
जाता, कि स्त्री अशुद्ध है । बृहस्पति एवं शुक्रके
वार्द्धक्य, प्लुत और वात्यादिसे काल अशुद्ध होता है ।
किसी शब्दके लिखनेमें लिपिकरप्रमाद वा खलनादि
दोष हो जानेसे वह भी अशुद्ध कहलाता है ।

अशुद्धवासक (सं० पु०) सन्दिग्ध आचरणवाला,
आचरण, जिसके कोई ठौर-ठिकाना न रहे ।

अशुद्धि (सं० स्त्री०) नञ्-तत् । १ शुद्धिका अभाव, पाकीजंगीकी अदममौजूदगी । २ दोष, ऐव । (त्रि०) नास्ति शुद्धिर्यस्य, नञ्-बहुव्री० । ३ शुद्धिहीन, पाकीजंगीसे बाहर । ४ दुष्ट, बदमाश । ५ अशुद्ध, नापाक ।

अशुन (हिं०) श्विनी देखो ।

अशुभ (सं० स्त्री०) नञ्-तत् । १ अमङ्गल, बद-बख्ती । २ अशुभसूचक मङ्गलादि पापग्रह । ३ पाप, इजाव । (त्रि०) नास्ति शुभं यस्मात् नञ्-५-बहुव्री० । ४ अशुभविशिष्ट, खराब, बुरा । यात्राकालमें काकादि-का बोलना और शून्य कलसी प्रभृतिका देख पड़ना-भी अशुभ समझा जाता है ।

अशुभोदय (सं० पु०) अपशकुन, बदशिशूनी ।

अशुभ्र (सं० पु०) नञ्-तत् । १ शुभ्र न होने-वाला वर्ण, जो रङ्ग सफेद न हो । २ कृष्ण, काला रङ्ग । (त्रि०) ३ कृष्णवर्ण, स्याह, काला ।

अशुशुषा (सं० स्त्री०) १ शुशुषाका अभाव, कम-तवज्जोही, नौकरी या अदब करनेमें चूकका पड़ना ।

अशुष (वे० त्रि०) न शुषति; इगुपधत्वात् कः, नञ्-तत् । १ भक्षण करता हुआ, जो खा रहा हो । २ अशोषक, जो सुखाता न हो । ३ शुष्क न होने-वाला, जो सूखता न हो ।

अशुष्क (सं० त्रि०) सरस, नव, हरित, तर, ताजा, हरा, जो सुखा न हो ।

अशूकज (सं० पु०) सुण्डशालि, शूकशून्य धान्य, किसी किसका चावल ।

अशूकजक, अशूकज देखो ।

अशूद्र (सं० पु०) शूद्र न होनेवाला व्यक्ति, जो शर्लू स शूद्र न हो ।

अशून्य (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ अहीन, जो खाली न हो । २ पूर्ण, भरा-पूरा ।

अशून्यशयन, अशून्यशयनव्रत देखो ।

अशून्यशयनद्वितीया, अशून्यशयनव्रत देखो ।

अशून्यशयनव्रत (सं० स्त्री०) न शून्यं शयनं शय्या येन यस्माद्वा, नञ्-बहुव्री० । व्रत विशेष । पुरुषके यह रखनेसे उसकी शय्या भार्याशून्य और स्त्रीके यह व्रत रखने उसकी भी शय्या पतिशून्य नहीं होती ।

भविष्यपुराणमें लिखा है,—वर्षाकालस्य चातुर्मास्यके मध्य आवणमासवाले कृष्णपक्षकी द्वितीयासे लगा प्रतिकृष्णद्वितीयाके कार्तिक मास पर्यन्त यह व्रत रखना पड़ता है । यह विष्णुव्रत चार वत्सरमें समापन होता है । नियतेन्द्रिय बन जो यह व्रत करता है, उसकी शय्या शून्य नहीं होती ।

अशूला (सं० स्त्री०) संभालू ।

अशृङ्ग (सं० त्रि०) शृङ्गशून्य, सींग या चोटी न रखनेवाला ।

अशृण्व (सं० पु०) अल्पवयस्क अश्वविशेष । (त्रि०) पालनके अयोग्य, नया, कट्टर, जिसे कोई पाल न सके या जिसके लगाम न लगे ।

अशृत (सं० त्रि०) न शृतं पक्कम्, नञ्-तत् । १ अपक्व, जो पका न हो । अविक्लित, जो मुलायम न हो ।

अशिव (वे० त्रि०) शीङ्खप्ने वन्, नञ्-तत् । असुखकर, तकलीफ़दिह । २ लेशकर, दर्द-अङ्गेज ।

“अेतु दिव्य विषामशेवा ।” चङ् ७३४।२३।

अशेष (सं० पु०) अभावे नञ्-तत् । १ शेषाभाव, बाकीकी अदममौजूदगी । (त्रि०) नास्ति शेषोऽन्तो यस्य, नञ्-बहुव्री० । २ शेषशून्य, गैरमहदूद, जिसके छोर न रहे । ३ शेषरहित, बाकी न रखनेवाला, पूरा, समूचा ।

अशेषतस् (सं० अव्य०) सम्पूर्ण रूपसे, पूरे तौर-पर ।

अशेषता (सं० स्त्री०) सम्पूर्णता, तमामी, कुलियत । अशेषम्, अशेषतस् देखो ।

अशेषस् (वे० त्रि०) सन्तानशून्य, वै-औलाद, जिसके बालबच्चे न रहे ।

अशेषसाम्राज्य (सं० पु०) शिव, जिन महादेवके राज्यका छोर न है ।

अशेषेण, अशेषस् देखो ।

अशैच (सं० पु०) अर्हत् विशेष, जैनियोंके कोई देवता ।

अशोक (सं० पु०) नास्ति शोको यस्मात् । नञ्-५-बहुव्री० । १ स्तनामख्यात वृक्षविशेष । कविलोम

वर्णन किया करते हैं, कि स्त्रियोंका पादाघात पानेसे अशोकवृक्ष फूल उठता है। 'पदाघातादशोकः, इत्यादि। परन्तु इस वर्णनका कारण क्या है, सो कुछ भी स्थिर नहीं किया जाता।

अशोक दुर्गोत्सवकी नवपत्रिकामें लगता है।

यथा,—

“कदली दाडिमी चान्नं हरिद्रा मानकं कपुः।

विलोऽशोको जयन्ती च विज्ञेया नवपत्रिकाः।”

अशोकका फूल लाल और पीला होता है, इसीसे उसके वृक्षका नाम भी रक्ताशोक एवं पीताशोक है। शास्त्रकारोंने लिखा है कि चैत्रमासकी शुक्लाष्टमीको अशोककी आठ कलियोंको खा लेनेसे फिर शोक नहीं रहता। अशोकपानका मंत्र—

“लामशोक हरामीष्ट मधुमाससमुद्भव।

पिवामि शोकसन्तपी मामशोकं सदा कुह।”

हे चैत्रमासजात शिवके इष्टसाधन अशोक मैं शोक-सन्तप्त होकर तुम्हें पान करता हूँ, तुम सर्वदा सुभे शोकरहित करो।

२ वकुलवृक्ष। (स्त्री०) ३ पारा। (स्त्री०)

४ कटुकवृक्ष। (त्रि०) नज्-बहुव्री। ५ शोकशून्य।

(पु०) ६ विष्णु

(*Saraca indica*) अशोकके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—शोकनाश, विशोक, वञ्जुलद्रुम, वञ्जल, मधु-पुष्प, अपशोक, कङ्कलि, केलिक, रक्तपञ्जव, चित्र, विचित्र, कर्णपूर, सुभग, देहली, ताम्रपञ्जव, रोगि-तरु, हेमपुष्प, रामावामाङ्घ्रिघातन, पिण्डीपुष्प, नय, पञ्जवद्रु।

अशोकका वृक्ष देखनेमें ठीक लीची या नागकेशरके पेड़ जैसा होता है। वसन्तऋतुमें यह फूलता है। फूल गुच्छेदार, हलका गुलाबी रंगका और देखनेमें बहुत कुछ रङ्गनके फूलके नाईं होता है। जब फूल खिलते हैं, उनके सौन्दर्यसे संसार आलोकित हो जाता है।

भावप्रकाशकी मतसे इसकी छाल शीतल, तिक्त एवं कषाय है। इससे दृष्णा, दाह, क्षमि, शोष एवं विषकम नाश होता है। वैद्य लोग स्त्रियोंके रजो-

दोषमें इसकी छाल व्यवहार करते हैं। २ प्रसिद्ध मौर्यसम्नाट्। [अशोक-प्रियदर्शी देखो।]

अशोककानन, अशोकवाटिका देखो।

अशोकवृक्ष (सं० स्त्री०) घृतभेद, कोई घी। यह प्रदराधिकारपर दिया जाता है। ४ शरावक गव्य-घृत और २ शरावक अशोकमूलका बकला १६ शरा-वक जलमें पकाये, ४ शरावक शेष रहनेपर नीचे उतार ले। फिर २ शरावक जौरक १६ शरावक जलमें गर्मकर ४ शरावक बाकी बचनेसे उतारे और ४ शरावक केशराजरस, ४ शरावक तण्डुलोदक एवं ४ शरावक छागदुग्ध उसमें मिलाये। अन्तको चार-चार तोले जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, काकोली, क्षीरकाकोली, सुदृगपर्णी, माषपर्णी, जीवन्ती, यष्टि-मधु, पियालवीज, परुषकफल, रसाञ्जन, यष्टिमधु, अशोकमूल, द्राक्षा, शतावरी और तण्डुलीयकमूलका चूर्ण डालते हैं। इन सब वस्तुओंके एकमें एक जाने-पर शर्करा देना चाहिये। (मेघनरदावली)

अशोकतरु (सं० पु०) अशोकवृक्ष, अशोकका पेड़।

अशोकतीर्थ (सं० स्त्री०) अशोकनामकं तीर्थं, शाक० तत्। काशीक्षेत्रके अन्तर्गत तीर्थविशेष।

अशोक-त्रिरात्र (सं० स्त्री०) त्रयो रात्रयः समाहृताः त्रयाणां रात्रीणां समाहारो वा अच् समा० ततः अशोकाख्यां त्रिरात्रं शाक० तत्। नास्ति शोकी येन तादृशं त्रिरात्रं वा। हेमाद्रिके व्रतखण्डसे उद्धृत विष्णु-धर्मोत्तरोक्तव्रताङ्गविशेष। यह व्रत अग्रहण, ज्येष्ठ, या भाद्र मासकी पूर्णिमासे आरम्भ करके एक वर्षके बाद उद्यापन किया जाता है। इसमें प्रत्येकदिन एक बार हौ भोजन करना पड़ता है। विधिपूर्वक इस व्रतको करनेसे शोकका भय नहीं रहता।

अशोकनग, अशोकतरु देखो।

अशोकनृपति, अशोक-प्रियदर्शी देखो।

अशोक-पुष्पमञ्जरी (सं० स्त्री०) दण्डक छन्दभेद। इस छन्दमें २८ अक्षर रहता और लघु गुरुका कोई नियम नहीं ठहरता है।

अशोकपूर्णिमा (सं० स्त्री०) नास्ति शोको यथा, नज्-बहुव्री। ततः तथेति, पूर्णिमाः कर्म० वा पूर्वपदस्य

पुम्बदभावः। फाल्गुण पूर्णिमासे लेकर एक वर्ष पर्यन्त करने योग्य हेमाद्रि-व्रतखण्डधृत विष्णुधर्मोत्तरोक्त व्रताङ्ग विशेष। यह व्रत फाल्गुण मांसकी पूर्णिमासे प्रारम्भ करके १ वर्ष तक किया जाता है। इसमें फाल्गुण, चैत्र, वेशाख, ज्येष्ठ यह ४ महीनाकी पूर्णिमाको उपवास करते और आषाढ़ादि ४ महीनाकी पूर्णिमाको केवल जल खाकर रहते हैं। फिर कार्तिकादि ४ मांसकी पूर्णिमाको केवल जल पान करना पड़ता है। इसतरह १ वर्ष पर्यन्त व्रत करके माघकी पूर्णिमाको उद्यापन कर देना चाहिये।

अशोक-प्रियदर्शी (पिअदशी) भारतके एक विख्यात मौर्य-सम्राट्; अशोक नामसे ही सर्वत्र परिचित है, किन्तु यह 'अशोक' नाम उनके किसी अनुशासन पत्र वा सामयिक ग्रन्थमें नहीं पाया जाता। इसीसे एक दिन अध्यापक विलसन साहबने प्रियदर्शी और अशोक दोनोंकी अभिन्नताके सम्बन्धमें सन्देह प्रकाश किया था। किन्तु सिंहलके 'हीपदंश' नामक प्राचीन पालिग्रन्थमें अशोकके 'पियदस्सि' एवं 'पियदस्सन' ये दो नामान्तर पाये जाते हैं और संप्रति मासकी अनुशासनमें अशोकनाम मिला।

दो विभिन्न ओरसे अशोक वा प्रियदर्शीको संचित्त जीवनी मिलती है। एक तो उनके राजत्वकालमें उन्हींकी आज्ञासे उत्कीर्ण बहुसंख्यक शिलालिपिसे एवं दूसरे बौद्ध और जैन धर्मग्रन्थोंसे। परन्तु दुःखका विषय है, कि ग्रन्थगत विवरणके साथ उनके अनुशासन लिपिसमूह की एकता नहीं है, इसीसे मालूम होता है, कि प्रियदर्शी और अशोकके अभिन्नत्व सम्बन्धमें किसी किसीने सन्देह प्रकाश किया है।

बौद्धग्रन्थमें अशोकका परिचय।

अशोकावदान और दिव्यावदानके मतसे शाक्य-बुद्धके समसामयिक मगधके राजा विम्बिसार थे। उनके पुत्र अजानशत्रु, उनके पुत्र उदायी वा उदायीश, उनके पुत्र मुण्ड, उनके पुत्र काकवर्णी, उनके पुत्र सहस्रि, उनके पुत्र तूलकूचि, उनके पुत्र महामण्डल, उनके पुत्र प्रसेनजित्, उनके पुत्र नन्द और उनके पुत्र विन्दुसार थे। इन्हीं विन्दुसारके पुत्र अशोक थे।

बड़े ही आश्चर्यकी बात है, कि अवदानग्रन्थमें अशोकके सुप्रसिद्ध पितामह चन्द्रगुप्तका नाम तक छोड़ दिया गया है। चन्द्रगुप्तका नाम न रहनेसे कोई कोई अनुमान करते हैं, कि चन्द्रगुप्तके साथ मौर्यवंशका आविर्भाव वा तिरोभाव होता है। अशोकके साथ चन्द्रगुप्तका कोई सम्बन्ध न था। इधर हिन्दू, जैन और पालिवौद्ध ग्रन्थोंमें चन्द्रगुप्तके अशोकके पितामह होनेका स्पष्ट उल्लेख रहनेपर भी प्रियदर्शीके निज अनुशासनसमूहमें कहीं भी उनके पिता वा पितामहका नाम नहीं पाया जाता।*

जन्मकथा।

पूर्वोक्त दोनों अवदानोंमें लिखा है,—चम्पा नगरीमें किसी ब्राह्मणके यहां एक परम सुन्दरी कन्या

(१) खुटानी तृतीय शताब्दीमें दिव्यावदानका अनुवाद चीनी भाषामें हुआ, (Beal's Chinese Tripitakas) सुतरां मूल ग्रन्थ उससे बहुत पहली अन्ततः ३० के पहली वा दूसरी शताब्दीमें किसी समय रचा गया होगा, इसमें सन्देह नहीं। इसलिये अशोककी वंशावलीके सम्बन्धमें प्राचीन प्रमाण समझ कर उल्लेख किया। बड़े आश्चर्यका विषय है, कि अवदान ग्रन्थके साथ हिन्दू, जैन, यहां तक कि बौद्धोंके पालि ग्रन्थोंका भी ऐक्य नहीं है। यह बात नीचेका सूचीपत्र देखनेसे ही मालूम हो जायगी,—

विष्णुपुराण।	परिशिष्टपत्रं।	पालि महावंश।
१ शिशुनाग।	(हेमचन्द्ररचित)	
२ काकवर्ण।		
३ क्षेमधर्म।		
४ चट्ठीजा।		१ विम्बिसार।
५ विम्बिसार।	१ त्रेणिक।	२ अजानशत्रु।
६ अजानशत्रु।	२ कुणिक।	३ उदायिमहक।
७ दर्शक।	३ उदायी।	४ अनुसुत्तक।
८ उदायश।	(निःसन्तान)।	५ मुण्ड।
९ नन्दिबर्हन्।	४ नन्द।	६ नागदासक।
१० महानन्दि।	५ वंशक्रमसे ९ नन्द।	७ सुसुनाग।
११ सुमाल्लप्रभृति ९ नन्द।	६ चन्द्रगुप्त।	८ कालाशोक।
१२ चन्द्रगुप्त।	७ विन्दुसार।	९ तथा १० पुत्र।
१३ विन्दुसार।	८ अशोक।	१० चन्द्रगुप्त।
१४ अशोक।	९ कुण्डल।	११ विन्दुसार।
	१० सत्यति।	१२ धर्माशोक।

हुई। एक ज्योतिषीने उस कन्याको देखकर कहा,— ‘यह कुमारी राजरानी और राजमाता होगी।’ धन-का लोभ बड़ा भारी लोभ है। ब्राह्मण लालचमें पड़ गये। कन्याको यौवनावस्थाप्राप्त देख वे उसे साथ लेकर पाटलीपुत्र आये और राजा विन्दुसारको प्रदान कर दिया। विन्दुसारने ब्राह्मणकन्याको अन्तःपुरमें भेज दिया। उसका सौन्दर्य देखकर राजमहिषियोंको टकटकी लग गई। उन लोगोंने सोचा, कि ऐसी सुन्दरी पाकर राजा क्या फिर हम लोगोंको पूछेंगे। इसलिये आपसमें सलाहकर उन लोगोंने उसे नाइन बनाकर रखा और चौर कर्म सिखाने लगीं। कुछ दिनोंके बाद यही ब्राह्मण-कुमारी राजा विन्दुसारका हजामत बनाने लगी। एक दिन परम प्रसन्न होकर राजाने कहा,—“मैं तुम-पर बहुत प्रसन्न हूँ, बोलो क्या मांगती हो। मैं तुम्हारी अभिलाष पूर्ण करूँगा।” यह सुन विप्र-कन्याने शिर झुकाकर धीरे धीरे कहा,—“मैं आपको चाहती हूँ।” इसपर राजाने कहा,—“सो क्या, मैं चतुर्विधभिक्षा और तुम नाइन, तुम्हें भला कैसे ग्रहण करूँ।” इसके उत्तरमें उस विप्रकुमारीने कहा, “मैं नाइन नहीं, ब्राह्मणकी कन्या हूँ। आपकी पत्नी होनेके लिये ही पिताजी टे गये हैं। पुरमहिषी-ओंने मुझे यह काम सिखाया है।” यह सुन राजाने उसकी कामना पूर्ण की। फिर वही दरिद्र-कन्या पटरानी हो गई। सहवाससे उसके दो पुत्र हुए—१म अशोक, २य विगतशोक वा वीतशोक।

अशोकसे पहले पटरानीके गर्भसे सुसीम नामक विन्दुसारका बड़ाका पैदा हुआ था।

तक्षशिलावासियोंने विन्दुसारके विरुद्ध अस्त्र धारण किया। विन्दुसारने अशोकको वही छोड़ दिया। मार्गमें दलबल संग्रहकर अशोक तक्षशिला आये।

* “अहं राजा चतुर्विध भिक्षाभिप्रेतः कथं मया साहं समागतो भविष्यति।” (द्विषावदान २६ अः)। यहाँ विन्दुसार अपनेकी चतुर्विध होनेका परिचय दे रहे हैं। पर चन्द्रगुप्त कहीं भी ‘चतुर्विध’ के नामसे परिचित नहीं हुए। सर्वत्र ही वे ‘अशोक’ के नामसे परिचित हैं। [चन्द्रगुप्त देखो]।

विना युद्ध ही नगरवासियोंने उनके लिये तक्षशिलाको छोड़ दिया और उनकी यथेष्ट अभ्यर्थना की।

उधर विन्दुसारके प्रधान मन्त्री खल्लाटकने ज्येष्ठ राजकुमार सुसीमके आचरणसे कुछ विरक्त होकर उन्हें ही तक्षशिला भेजनेका प्रबन्ध किया एवं अशोक-को राजा बनानेके लिये उन्हें राजधानीमें बुला लिया।

विन्दुसारकी आयु शेष हो आई। अमात्यगण खूब सजधजकर अशोककी राजाकी सम्मुख ले गये और अनुरोध किया, कि जबतक सुसीम लौटकर न आवें तबतक अशोक उनके पदपर विराजें। यह सुनकर विन्दुसार बहुत ही रुष्ट हुए। यह देख अशोकने कहा, कि यदि धर्म है, तो मैं ही राजा हूँगा। तुरत ही अशोकका पट्टवस्त्र हुआ। देखते देखते विन्दुसारने रक्त वमन कर प्राणत्याग दिया।

अब अशोक पाटलीपुत्रके राजसिंहासनपर विराजें। राधगुप्त उनके प्रधान मन्त्री हुए। यह समाचार तक्षशिला भेजा गया। सुसीमने पिताकी मृत्यु और अशोकके राजसिंहासन अधिकार करनेकी बात सुनी। इसके बाद तुरत ही उन्होंने ससैन्य पाटलि-पुत्रकी यात्रा की। इधर अशोक भी प्रसुत थे। शहरके सदर फाटकपर एक नग्न मनुष्य, तीसरेपर राधगुप्त, चौथेपर स्वयं अशोक उपस्थित थे। द्वारके सामने खाइ खोद और उसमें खदिर एवं अङ्गार भर-कर एक अशोकमूर्ति उसपर बैठा दी गई।

सुसीमने सोचा, कि अशोकको मार डालनेसे ही राजसिंहासन मिल जायगा। यह विचारकर अशोकसे युद्ध करनेके लिये पूर्वद्वारमें प्रवेश किया। प्रवेश करते ही अङ्गार भरी हुई खाईमें गिर पड़े। तुरत ही उनकी जान निकल गई।

अशोक प्रतिष्ठित हुए सही, परन्तु वे अमात्यगणकी और विशेष अवज्ञा प्रकाश करने लगे। एकदिन राजाने अमात्योंसे कहा,—‘तुम लोग फलफूलका पेड़ काटकर कांटेके पेड़को सींच रहे हो।’ अमात्यों-ने इसका उत्तर राजाके प्रतिकूल दिया। उत्तरसे अत्यन्त रुष्ट होकर अशोकने तुरत ही पांच मनुष्योंके शिर काट डाले।

धीरे धीरे अशोककी प्रवृत्ति भीषणसे भीषणतर हो उठी। उन्होंने एक रमणीय वधागार स्थापन किया और चण्डगिरिक नामके एक जुलाहेको उसका रक्षक बनाया। मनुष्यका प्राण हरण उसका परम-प्रिय कार्य था। सैकड़ों मनुष्य अनजानमें उस वधागारमें जाकर भूखसे सुखकर मर गये। कुछ दिनोंके बाद समुद्र नामक एक साधु भिक्षाकी इच्छासे उस वधागारमें गये। उस घरमें जो जाता था वह फिर बाहर न निकलता था। पर कई दिन बीत गये, उस साधुके प्राण न निकले। यह देख दुर्बल चण्डगिरिक अवाक हो गया। उसने उस साधुके प्राणनाश करनेकी यथेष्ट चेष्टा की, पर किसी तरह साधुके प्राण न निकले। अन्तमें चण्डगिरिकने इस बातकी खबर राजाको दी। राजा स्वयं साधुको देखने आये। आकर उन्होंने देखा, कि उस भिक्षुके आधे शरीरसे जल बह रहा और आधेमें आग धक रही है, तथा सारा शरीर शून्यमें लटक रहा है। यह देख राजाने विस्मयके साथ उस साधुका परिचय पूछा। भिक्षुने उत्तर दिया,—“मैं वही परम कारुणिक धर्मान्वय बुद्धपुत्र हूँ; संसारके महाभय भवबन्धनसे मुक्त हो गया हूँ। महाराज! सुनिये। भगवान् कह गये हैं, कि मेरे परिनिर्वाणके सौ वर्ष बाद पाटलिपुत्रमें अशोक नामक एक राजा होगा। वह चतुर्भाग चक्रवर्ती धर्मराज मेरा शरीर धातुविस्तार करेगा। ८४००० धर्मराजिका प्रतिष्ठा करेगा। अतएव हे नरेन्द्र! उस नाथको पूजा करके धर्म विस्तार करो।”

यह सुन राजा विचलित हुए। बुद्धके नामसे उनके हृदयमें चित्तप्रसाद उपस्थित हुआ। उन्होंने हाथ जोड़कर भिक्षुसे कहा,—“दशवलसुत! मुझे क्षमा कीजिये। मैंने बुद्धगण और धर्मको शरण ली।” इसके बाद राजाने सम्मानसहित भिक्षुको विदाय किया। अब अशोककी रुधिरपिपासा दूर हो गई। उस नरपिशाच चण्डगिरिक वा उस रमणीय वधागारका अस्तित्व लोप हो गया। अब वह चण्डाशोक धर्माशोकके नामसे गिना जाने लगा।

अज्ञातशत्रु ने जो द्रोणस्तूप निर्माण किया था, अशोकने उसे खुदवा डाला और उसमेंसे शरीरधातु निकालकर नागोंकी सहायतासे रामग्राममें एक बड़ा भारी स्तूप प्रतिष्ठित किया। इसके बाद नानास्थानोंमें नानाधातुगर्भ सुवर्ण, रजत, स्फटिक एवं वैदूर्यरचित चौरासी सहस्र करण्डकी स्थापना की।

अशोक धर्मान्वित हो उठे। एकदिन उन्होंने स्थविरयशको कहा, कि मैं एक दिनमें चौरासी हजार धर्मराजिका स्थापन करना चाहता हूँ। स्थविरयशने भी बुजुर्गी दिखाई। अशोकराजका मनोरथ पूर्ण हुआ। तबसे वे धर्माशोकके नामसे प्रसिद्ध हुए।

एक दिन अशोकने सुना, कि मथुरामें उपगुप्त नामका स्थविर है। उसके ऐसा न्यायशास्त्रज्ञ और बुद्धभक्त और कोई नहीं है। राजाने उसे देखनेकी इच्छा प्रकटकी मन्त्रियोंने उपगुप्तको लानेके लिये दूत भेजना चाहा। परन्तु यह बात राजाको अच्छी न लगी। उन्होंने स्वयं जाकर उपगुप्त शास्त्रीसे मिलनेकी इच्छा प्रकट की। उधर उपगुप्तने भी सुना, कि मौर्यसम्राट् मेरे निकट आना चाहते हैं। अशोकके धर्मातुरागसे सन्तुष्ट होकर उन्होंने तुरत ही नावपर बैठ मथुरासे पाटलिपुत्रकी यात्रा की। उपगुप्तके पड़ुंच जानपर राजपुरुषने अशोकको यह शुभ समाचार दिया। उपगुप्तके आगमनका समाचार घोषणा करनेके लिये मौर्यराजने घण्टा बजानेकी आज्ञा दी। राजाके आदेशसे पाटलिपुत्र-नगरी खूब सज दी गई। पिछली रातमें उठकर स्वयं राजा नगरसे आगे जाकर उन्हें ले आये। उपगुप्तके समागमसे अशोक कृतार्थ हुए। अशोकको साथ ले जाकर उपगुप्तने कपिलवासु, भार्गवाश्रम, वाराणसी प्रभृति बुद्धके लीलाक्षेत्रोंको दिखाया। उन सब पवित्र बुद्धक्षेत्रोंमें सम्राट्ने बुद्धकी अर्चना एवं स्मरणार्थ स्तूपदि निर्माण करा दिये। *

जिस समय अशोकने ८४००० धर्मराजिका प्रतिष्ठित की, उसी समय देवी पद्मावतीके गर्भसे ‘धर्मवर्द्धन’ नामक एक परम रूपवान् पुत्र उत्पन्न हुआ। उसके

* इक्षु-अशोकावदान एवं दिव्यावदानान्तर्गत अशोकावदान दृश्य है।

नेत्र ठीक कुणाल पक्षीके नेत्र थे। वही नेत्र कुणालके शत्रु हो उठे। कुणालने यौवनसीमापर पदार्पण किया। अशोककी प्रधान महिषी तिष्यरक्षिता उन नेत्रोंको देखकर उनपर आसक्त हो गई। एकदिन कुणालको एकान्तमें पा कर रानीने अपनी असदिच्छा प्रकट की। इसपर उन्होंने दोनों कानोंपर हाथ रखकर कहा,—“मा ! ऐसी धर्मविरुद्ध बात अब न कहियेगा। अधर्मकी अपेक्षा मेरी मृत्यु ही श्रेय है।” तिष्यरक्षिताकी मनस्सामना पूर्ण न हुई। उसी समयसे रानी कुणालका छिद्र खोजने लगी।

उधर तक्षशिलामें विद्रोह मच गया। वहां जानके लिये अशोक स्वयं प्रसृत थे, परन्तु मंत्रियोंके परामर्शसे महासमारोहके साथ कुणालको वहां भेज दिया।

कुछ दिनोंके बाद अशोकको दारुण व्याधिने ग्रसा। उनकी सुखसे विष्ठा निकलने लगी। इस रोगको चिकित्सा कोई भी न कर सका। यह देख राजाने कुणालको बुलाकर राजसिंहासनपर बैठानेकी इच्छा की। यह सुन तिष्यरक्षिताने सोचा, कि यदि ऐसा होगा, तो मेरी जान न बचेगी। यह विचार कर उन्होंने राजासे कहा, कि मैं आपका रोग अच्छा कर दूंगी, परन्तु किसी वैद्यको यहां न आने दूंगी। राजा इस बातपर राजी हो गये। अब रानीने वैद्यको बुलाकर कहा,—“देखिये, यदि ऐसा और कोई रोगी हो तो उसे मेरे पास ले आइये।” वैद्य खोज दूढ़कर एक ग्वालेको ले गये। उसकी भी अवस्था राजा ही जैसी थी। एक गुप्त स्थानमें ले जाकर रानीने उसका पेट फाड़कर पाकाशयकी परीक्षा की, तो देखा, कि उसको अंतर्द्धीमें असंख्य कौड़े किल्बिल्-किल्बिल् कर रहे थे। मरिच, पिप्पली, शृङ्गवेर आदिसे कौड़े न मरे। अन्तमें पियाजका रस देते ही कौड़े मर कर मलद्वारसे निकलने लगे। यह देख रानीने अशोकसे जाकर कहा, कि अब आप कोई चिन्ता न कीजिये। औषध मिल गई है। आपको पियाज खाना पड़ेगा। यह सुन राजाने कहा,—“यह क्या। मैं क्षत्रिय हूं। पियाज कैसे खाऊंगा।” इसपर तिष्यरक्षिताने कहा,—“प्राणरक्षके लिये औषधस्वरूप

पियाज खानेमें कोई दोष नहीं है।” पीछे पियाज खाकर राजा अच्छे हो गये। और परम प्रसन्न होकर उन्होंने तिष्यरक्षिताको सात दिनके लिये राज्यभार सौंप दिया।

दुष्ट तिष्यरक्षिताको अब वैर चुकानेका सुभौता हो गया। उसने अशोकके नामसे तक्षशिलावासियोंको आज्ञा दी, कि मौर्यकुलकलङ्क कुणालकी आंखें निकाल लो।

इस दारुण आदेशको पाकर तक्षशिलाके सभी आदमी नितान्त दुःखित हुए। कुणालका चरित्र अति विशुद्ध, शान्त और सबको प्रिय था। उनका अनिष्ट करनेसे सभी विमुख हुए। सभी राजाकी निन्दा करने लगे। पश्चात् कुणालने उस पत्रको पाया। उन्होंने अपने हाथसे अपनी आंखोंको निकालकर पिताकी आज्ञा पालन की। यह देख सभी हाहाकार कर उठे। पर उस शान्तमूर्ति दृढ़चेता कुणालका मन विचलित न हुआ।

तक्षशिला आनेके पहले काञ्चनमालाके साथ कुणालका विवाह हो गया था। प्राणवत्सलके उन चित्तविमोहन नेत्रोंको अपहृत होते देख वह मूर्च्छित हो गई। पीछे स्त्रीको शान्तकर कुणालने भिक्षारीका वेश धरा और पत्नीका हाथ पकड़कर तक्षशिला त्याग किया। अब कुणाल वीण बजाते हुए राह राह घूमने लगे। साथमें केवल काञ्चनमाला थी। भिक्षा ही दोनोंकी उपजीविका थी। इसी तरह कुणाल पाटलिपुत्र पहुँचे। उन्हें कोई पहचान न सका। यहांतक, कि द्वारपालोंने भी उन्हें राजप्रासादमें घुसने न दिया। एक दिन खूब सबेरे राजभवनके निकट बैठ कुणाल वीणा बजा, बजाकर गाने लगे,—“यदि भवमें दुःखसे पीड़ित हो, यदि इस संसारका दोषका जानते हो, यदि ध्रुवसुखपानेकी इच्छा रखते हो, तो शीघ्र इस आयतनको त्यागकरो—त्याग करो।”

यह सुनकर अशोकके कानमें पड़ा। उसी समय उन्हें निश्चय हो गया, कि यह स्वर तो मेरे प्रिय पुत्र कुणालका है। उन्होंने कुणालको लानेके लिये तुरंत ही आदमी भेज दिया। कुणाल सखीके पित्तके

पास आये। अशोक नयनरञ्जन पुत्रको नेत्रविहीन देखकर मृच्छित हो गये। कुछ देरके बाद जब मूर्च्छा टटी, तो कुणालको गादमें बैठाकर राजाने पूछा,—“बताओ वैठा! तुम्हारे ये दोनों सुन्दर नेत्र किस तरह नष्ट हुए।”

इसपर कुणालने कहा,—“बीती बातके लिये शोक मत कीजिये। सभी अपना अपना कर्मफल भोग करते हैं, मैं भी भोग करता हूँ। क्यों किसीको दोष दूँ।”

अन्तमें जब राजाको मालूम हो गया, कि यह काम तिथरक्षिताका ही है, तब उन्होंने उसे बुलाकर लाल लाल आंखे करके कहा,—“केवल तेरी आंखे ही नहीं, नाक, आंख, सुइ सब अङ्गोको काट डालूंगा, तब तुझे मालूम होगा, कि तूने मेरे हृदयको कैसा कष्ट दिया है।”

अब कुणालने हाथ जोड़कर पितासे कहा,—“राजन्! तिथरक्षिता अनार्यकर्म्या है, आप आर्य-कर्म्या होकर स्त्रीवध न कीजिये। मैत्री और क्षमाकी अपेक्षा और कोई धर्म नहीं है। मेरी आंखें निकलवाकर यदि माता सचमुच ही प्रसन्न हुई हों, तो उसी सत्यके गुणसे मेरी आंखें फिर हो जायंगी।” विश्वाससे क्या नहीं होता। भ्रुवविश्वासके प्रभावसे तुरत ही कुणालकी आंखें पहले की ही तरह हो गईं, पर अशोकने तिथरक्षिताको क्षमा नहीं किया। उस पापिष्ठाकी देह जन्तुगृहमें दग्धीभूत हुई।*

जिस समय राजा अशोकने ८४००० धर्मराजिकाकी प्रतिष्ठा और पञ्चवार्षिकव्रतका अनुष्ठान किया उसी समय उनके भाई वीतशोक तीर्थीकोंपर अनुरक्त हो गये। वे लोग उन्हें समझाते, कि अमण शाक्य-पुत्रोंका मोक्ष नहीं है। वीतशोक भी वही समझते, वरं अमणोके साथ कितनी ही बार उनका विरोध हो जाता था। अशोकको यह अच्छा न लगता था।

उन्होंने वीतशोकको बुद्धमतमें खानेका एक अपूर्व उपाय निकाला। अपने मन्त्री उपयज्ञको बुलाकर पूछा, कि किसी तरह वीतशोकको सिंहासनपर

वैठा सकते हो! एकदिन अमात्यगण अशोकका पट्टमीलो लेकर खानागारमें गये और वीतशोकसे कहा,—“राजाकी मृत्युके बाद आप ही राजा होंगे। इस समय सज्जक सिंहासन पर बैठिये, तो देखें, कि आप कैसा शोभते हैं।” वीतशोक मन्त्रियोंकी पट्टीमें आ गये और अशोकके राजवस्त्राभरणको पहनकर सिंहासनपर विराजे। ठीक उसी समय अशोक आ पहुँचे। ‘कोई है?’ अशोकके इतना कहते ही सशस्त्र घातकोंने आकर वीतशोकको चारो ओरसे घेर लिया। अब अशोकने गम्भीर स्वरसे कहा,—“देखो वीतशोक! मेरी उपेक्षा करके तुम सिंहासनपर बंठे हो। अच्छा सात दिनके लिये मैंने राज्य छोड़ दिया, इसके बाद घातकोंके हाथसे तुम्हारी मृत्यु होगी।”

सात दिनके लिये वीतशोक राजा हुए। नाच गान और आनन्दकी नदी वह चली। सातवें दिन घातकोंने आकर उनके अन्तिम दिनकी बात सुना दी। राजवेशमें वीतशोक अशोकके पास आये। अशोकने पूछा, “भाई! इन कई दिनोंमें कैसा सुख भोग किया। नाच गानमें कैसा आनन्द पाया।” इसपर वीतशोकने कहा,—“सुख कहाँ है। नाचगान देखा नहीं, सुना नहीं, गन्धमें आग्राण पाया नहीं, रसास्वादन किया नहीं। देखा है केवल यही, मानो नीलवस्त्रधारी घातकगण द्वारपर खड़े हैं।”

अशोकने कहा,—“भाई! यदि मृत्युसे इतना डरते हो, तो उसकी चिन्ता क्यों नहीं करते जिसमें मरण हो ही नहीं।” वीतशोकने कहा,—“मैंने उसी सम्यक्सम्बुद्धकी शरण ली। धर्म और भिक्षु-सङ्घकी शरण ली।” वीतशोकने उसी समय प्रव्रज्या ग्रहण की। धूली, चीवर और वृक्षमूल ही वीतशोकका आश्रयस्थान हुआ। वे भिक्षा मांगकर जो लाते उसीसे अपनी शरीर रक्षा करते। नानादेश, नाना नगरोंमें होते हुए वे प्रत्यन्त देशमें पहुँचे। यहां वे महाविधिग्रस्त हुए। यह समाचार पाते ही अशोकने उनकी चिकित्साके लिये औषधादि भेज दिये।

इसी समय पुण्ड्रवर्धन-नगरवासी निर्धन्य उपासकों ने अपने उपास्य जिनदेवके पादमूलमें बुद्धदेवकी मूर्ति आंक दी थी। बौद्धोंने जाकर यह समाचार अशोकको दिया। इसपर अत्यन्त क्रुद्ध होकर अशोकने पुण्ड्रवर्धनके सब आजीवकोंको मार डालनेकी आज्ञा दी। एक दिनमें अठारह हजार आजीवक मार डाले गये।

इसके बाद पाटलिपुत्रके निर्धन्योंने भी जिनदेवके पादमूलमें बुद्धप्रतिमाका चित्र अङ्कित किया था। उन लोगोंके लिये भी अशोकने वैसा ही दण्डविधान किया था। यहांतक, कि अन्तमें उन्होंने घोषणा कर दी थी, कि जो निर्धन्यका शिर काटकर लायेगा वह दौनार पायेगा।

इस समय वीतशोक महाव्याधिग्रस्त होकर एक आभीरके यहां रात काटते थे। उनके लम्बे नख और दाढ़ीको देख आभीरपत्नीने उन्हें निर्धन्य समझा और यह बात अपने स्वामीसे कही। खाला वीतशोकका शिर काटकर दौनार पानेकी आशासे अशोकके पास ले गया। उस शिरको देख अशोक मूर्च्छित हो गये। जब वे प्रकृतिस्थ हुए तब अमात्योंने कहा,—“वीतरागोंकी वृथा कष्ट हो रहा है। सबको अभय दे दीजिये।” उसी दिन राजाने घोषणा कर दी, कि अबसे मेरे राज्यमें कोई हिंसा न करे। इसके बाद अशोकने अपना सर्वस्व बौद्ध-सङ्घमें अर्पण कर दिया।* (अशोकावदान)

महावंशवर्णित अशोक।

सिंहलकी महावंशमें दो अशोकोंका परिचय पाया जाता है। प्रथम अशोक ‘कालाशोक’के नामसे ख्यात हैं। बुद्धनिर्वाणके सौ वर्ष बाद यही कालाशोक पुष्पपुरमें राज्य करते थे। इन्हीं प्रथम अशोकके समय सद्धर्मसङ्कीर्तिमें बुद्धके उपदेशमूलक शास्त्रसमूह संस्कृत हुए हैं।

इन कालाशोकके दश पुत्रोंने पहले २२ वर्ष, फिर

* अशोकावदानके अन्तमें लिखा है, कि अशोकने जो कीर्तिसाध प्रतिष्ठित किये थे, उन्हें उन्होंने वंशपर और्ववंशीय शेष रूपति पुष्पमित्र अर्पण कर गये। (पुष्पमित्र देखो)

८ पुत्रोंने २२ वर्षतक राज किया। उनके सबसे छोटे लड़केका नाम धननन्द था। चाणक्यके कौशलसे धननन्दने राज्य खो दिया और मोरियवंशसम्भूत चन्द्रगुप्तने राज्यलाभ किया। इन्होंने ३४ वर्ष राज किया था। उसके बाद उनके पुत्र विन्दुसारने २८ वर्ष राज्यभोग किया। उनकी सोलह रानियोंके गर्भसे १०१ पुत्र हुए थे। उनमें सबसे बढ़कर अशोक ही पुष्पतेजा और महासमृद्धिसम्पन्न थे। वे पिताकी अधीनतामें उज्जयिनीका शासन करते थे। जब उन्होंने पिताके मृत्युश्रव्यापर पड़े रहनेका समाचार सुना, तो तुरत ही पाटलिपुत्र आकर राजसिंहासन अधिकार कर लिया और ८८ भाईयोंको विनाशकर जम्बुद्वीपमें एकाधिपत्य करने लगे। बुद्धनिर्वाणके २१८ वर्ष बाद उनका अभिषेक हुआ। राज्यलाभके चौथे वर्ष महासमारोहके साथ उनका अभिषेक-कार्य सम्पन्न हुआ था। अभिषेकके समय उनकी छोटे भाई तिष्यको ‘उपराज’की पदवी दी गई थी।

अशोकके पिता ब्राह्मणभक्त थे। वे प्रतिदिन साठ हजार ब्राह्मणोंको भोजन कराते थे। अशोकने भी तीन वर्षतक ऐसा ही किया था। अभिषेक हो जानेके बाद उनकी मति गति फिर गई। वे अपनी सभामें सब सम्प्रदायोंके अमात्योंको लाकर शास्त्र-विचार करने लगे और सबको समभावसे भिन्ना-देन की व्यवस्था कर दी।

अमण-न्यग्रोधको देखकर बौद्धधर्मकी ओर उनका चित्त आकृष्ट हुआ। यह न्यग्रोध और कोई नहीं उनका भतीजा ही था। अशोकने जिस समय विन्दुसारके बड़े लड़के सुमनकी हत्या की थी, उस समय उनकी गर्भवती पत्नीने चण्डालके गृहमें आश्रय लिया था। उनके गर्भसे न्यग्रोधका जन्म हुआ और अपने पूर्व सुकृतके बलसे सम्मान लाभ किया।

अशोकके हृदयमें एक ओर ब्राह्मणधर्मके प्रति वीतराग और दूसरी ओर बौद्ध धर्मके प्रति अनुराग प्रवल होने लगा। अब वे प्रतिदिन साठ हजार अमणोंकी सेवा करने लगे।

इस चौथे वर्षमें ही उपराज तिष्य, अशोकके

अशोकके सम्बन्धमें जैनमत ।

भास्त्रे और सङ्गमित्राके स्वामी अग्निव्रजने संन्यास धर्म अवलम्बन किया। उनको देखादेखी हजारों मनुष्य बौद्धधर्ममें दीक्षित हुए थे। अशोककी धर्मोन्नतता क्रमसे प्रवल होने लगी।

उपराज तिष्यके संन्यासधर्म ग्रहण कर लेने पर अशोकने अपने प्रियपुत्र (महिन्दो) महेन्द्रको उपराज बनानेकी इच्छा की थी, पर कुछ ही दिनोंमें महेन्द्रने भी संन्यास ग्रहण कर लिया। स्वविर महादेवने महेन्द्रको दीक्षित किया। स्वविर माध्यन्तिकने उनके लिये कर्मवचन अनुष्ठान किया। इसी समय धर्मपति सङ्गमित्राके उपाध्याय एवं आयुपाली उनके आचार्य हुए। अशोकके षष्ठवर्षमें महेन्द्र और सङ्गमित्रा दोनोंने प्रव्रज्या ग्रहण किया।

कहावत प्रसिद्ध है, कि बहुत योगी मठ उजार। धीरे धीरे बौद्ध आचार्य और उपाध्यायोंकी संख्या इतनी बढ़ी एवं इतना मतभेद होने लगा, कि अन्तमें गोलमाल मच गया और भारतके सर्वत्रके बौद्धारामोंमें उपोषध एवं प्रावरण बन्द हो गया। इस तरह सात वर्ष बीत जानेपर इसकी खबर अशोकको लगी। उन्होंने कहला भेजा, कि मेरे अशोकाराममें जितने भिक्षु रहते हैं सभी उपोषधव्रत पालन करें। इसपर भिक्षुसङ्घने उत्तर दिया, कि तीर्थीकोंके साथ हम लोग उपोषधव्रत पालन न कर सकेंगे। राजाको यह समाचार मिला। धर्मपालन न करनेसे किसे अधर्म हुआ। राजाके मनमें सन्देह उत्पन्न हुआ। उन्होंने मोगलिपुत्त तिष्यके निकट जाकर अपने मनका कष्ट कहा। तिष्यने 'तित्तिरजातक' सुनाकर सम्राटको कहा,— 'प्रतीक्षा न रहनेसे पाप नहीं होता।' मोगलिपुत्तके उपदेशसे राजाको ज्ञान हुआ।

अब अशोकके अधीन राजगण एवं वन्सुगण सम्राट्के परामर्शसे स्तूपदि बनवाने लगे। सम्राट्ने भी बौद्धधर्मके प्रचारके लिये महेन्द्रक सिंहल भेज दिया।

सिंहलराज प्रियतिष्यने महेन्द्रसे बौद्धधर्मकी दीक्षा ली। उसके बाद धर्मप्रचारके उद्देश्यसे सङ्गमित्रा भी सिंहल गई थी और सिंहलराजमहिलाओंने उनसे दीक्षा ली थी।

हेमचन्द्ररचित त्रिषष्ठिशलाकापुरुषचरितके मतसे,—विन्दुसारसे अशोकजीने जन्मलाभ किया। विन्दुसारकी मृत्यु हो जानेपर उन्होंने राज्य मिला था। अशोकके कुणाल नामक एक पुत्र हुआ। अशोकने कुणालको उज्जयिनीपुरी दी। वे वहां जाकर रहने लगे। उनकी रक्षाके लिये कुछ शरीररक्षक नियुक्त हुए। इस तरह कई वर्ष बीत जानेपर एकदिन राजा अशोकने एक नौकरसे सुना, कि कुणालका अध्ययनकाल उपस्थित हुआ है, यह सुनकर राजा बहुत सन्तुष्ट हुए और तुरत ही उन्होंने अपने हाथसे कुणालको एक पत्र लिखा। सहज ही समझमें आ जानेके लिये यह पत्र प्राकृत भाषामें ही लिखा गया। उसमें एक जगह 'अध्ययन करो' के स्थानमें 'अधीउ' लिखा गया था।

जिस समय राजा पत्र लिख रहे थे, उस समय उनके पास कुणालकी एक विमाता बैठी हुई थी। पत्रको धीरे धीरे राजाके हाथसे लेकर उसने पढ़ा। पढ़नेपर उसके मनमें हिंसा उत्पन्न हुई। कुणालको राज्यसे वञ्चित कर अपने पुत्रको राजसिंहासनपर बैठानेके लिये वह मन ही मन कोई उपाय सोचने लगी। उसी समय राजा कुछ अनमने हो उठे। अवसर पाकर कुणालकी विमाताने अपनी कामना पूर्ण की। पत्रमें जहां 'अधीउ' लिखा था, उसमें अपनी आंखके काजलसे एक विन्दु बैठाकर 'अधीउ' को उसने 'अधीउ' बना दिया। राजाने भूलसे दूसरी बार पत्रको नहीं पढ़ा, अपने नामकी सुहर देकर चिड़ीको उज्जयिनी भेज दिया।

उधर कुणालने पिढनामाहित पत्रको पाकर पहले उसे माथे पर चढ़ाया, फिर एक वाचकसे उसे पढ़ाने लगे, पत्र पढ़कर एकदम विषय हो गया। उसे विषय देख कुणाल आप ही पत्र पढ़ने लगे। पत्रमें 'अधीउ' देख उन्होंने सोचा, कि हमारे मौर्यवंशमें कभी किसीने गुरुकी आज्ञा लङ्घन नहीं की। अतएव यदि मैं करूँ, तो सभी मेरे दृष्टान्तपर चलेंगे। सुतरां मैं गुरुकी आज्ञा लङ्घन न करूँगा। इतना कह उन्होंने

तप्तशलाकासे अपने हाथसे अपनी दोनों आंखें फोड़ डाली। उधर अशोक यह समाचार पाकर अपने कूटलेखके लिये आत्माको बार बार धिक्कारकर अत्यन्त दुःखित हुए। वे चिन्ता करने लगे,—“हाय! मेरी सब आशा भरोसा मट्टी हो गयी। मैंने जिसे युवराज बनाकर फिर राजा बनानेका इरादा कर लिया था, वह अब राज्य वा मण्डल किसीके उपयुक्त नहीं है। मेरी मनकी इच्छा मन ही में रह गयी।” इस तरह सोच विचारकर राजाने कुणालको एक समृद्धिशाली ग्राम दिया। कुणाल उसमें रहने लगे।

कुछ दिनोंके बाद उनकी शरत्पत्नी नास्ती स्त्रीके गर्भसे एक पुत्र हुआ। कुणाल विमाताका मनोरथ व्यर्थ करनेके इरादेसे राज्य लाभ करनेके लिये पाटलिपुत्र गये। वहां जाकर गाने बजानेसे सबका मन मोह लिया। सभी उन्हें प्यार करने लगे। धीरे धीरे यह बात राजाके कानमें पड़ी। वे अन्धे गायकको अपने प्रासादमें बुलाकर पर्देकी ओटसे उसका गाना सुनने लगे। अन्धेने गीतिच्छन्दमें अति मधुर स्वरसे इन बातोंको कहा,—“हाय! चन्द्रगुप्तका प्रपौत्र, विन्दुसारका पौत्र और अशोकश्रीका पुत्र यह अन्धा आज राह राह भीख मांगता फिरता है।” गाना सुनकर राजाने अन्धेसे पूछा,—“तुम कौन हो।” इसके उत्तरमें अन्धेने कहा,—“महाराज! मैं आपका पुत्र कुणाल हूं। आपहीके आदेशसे मैं अन्धा हुआ हूं।”

यह बात सुन राजाने सहसा पर्देको हटा दिया और डबडबाई हुई आंखोंके साथ पुत्रको आलिङ्गन करके पूछा,—“बल! तुम क्या चाहते हो।” इस पर कुणालने कहा,—“पिता! मेरे एक पुत्र हुआ है। आप उसीको राजतिलक दीजिये।” पुत्र कुणालकी बातसे तृप्त होकर राजाने उसकी बात स्वीकार की एवं महासमारोहके साथ पौत्रको राजभवनमें लाकर उसका नाम ‘सम्यति’ रखा।

पहले बचन दे देनेके कारण अशोकने दश ही दिनोंके बाद बहुत ही कम उम्रमें अपने पौत्रको राजसिंहासनपर बैठा दिया। राजसिंहासनपर बैठनेके समय सम्यति दुधपौते बच्चे थे। धीरे धीरे उनकी

साथ साथ उनकी बुद्धि, विक्रम और विद्या प्रभृति राजोचित समस्त गुण बढ़ने लगे। उन्होंने जैनधर्म ग्रहण किया।

उसी समय धर्मविप्लव उपस्थित हुआ, सुतरां सब जैन आकर पाटलिपुत्रमें इकट्ठे हुए। इकट्ठे होकर सबने उसी समय एक सङ्घ जोड़ा और उसका नाम त्रिसङ्घ रख दिया। इस सङ्घमें जैन धर्मशास्त्र संगृहीत हुआ। (परिशिष्ट पर्व)।

प्रियदर्शीके अनुशासनसे * परिचय।

बौद्ध एवं जैन ग्रन्थोंसे अशोकका जो विवरण लिखा गया है, उसमें प्रकृत बात रहनेपर भी अत्युक्ति और काव्यनिक बातें मिल गई हैं, इसमें सन्देह नहीं। इसलिये उनका प्रकृत परिचय जाननेके लिये उनके राज्यकालके उत्कीर्ण अनुशासनोंको ही अवलम्बन करना पड़ता है। इन अनुशासनोंसे प्रियदर्शीका अतिसंक्षिप्त परिचय मिलता है। वही अब कहा जाता है।

अनुशासनसे प्रियदर्शीके बालकपनका परिचय नहीं मिलता। उनकी गिरिलिपिसे प्रकट है, वे पहले अतिशय मृगयाप्रिय और युद्धप्रिय थे। राजा होकर ही वे बौद्धधर्मके अनुरागी नहीं हुए। पहले वे अतिशय मांसप्रिय थे। प्रथम गिरिलिपिसे प्रकट है, ‘सुपथ्यके लिये उनकी पाकशालामें प्रतिदिन बहुत जीववध होता था। उनके अभिषेकके आठवें वर्षके बाद उन्होंने कलिङ्ग जय किया। उसमें एक लाख पचास हजार आदमी कौद हुए थे। लाख आदमी (युद्धमें) निहत हुए और उससे कई गुना कालके कलेवा हो गये।’ इस संक्षिप्त विवरणसे मालूम पड़ता है, कि जिस समय वे राजपदपर अधिष्ठित हुए थे, उस समय वे समग्र भारतके एकच्छत्र अधिपति न हो सके थे, अथवा बौद्ध वा जैनधर्मपर भी उनका विशेष अस्था थी, ऐसा नहीं मालूम होता। उनकी दूसरी,

* प्रियदर्शीका अनुशासन दो श्रेणियोंमें विभक्त है। कुछ तो गिरि-मालाके ऊपर खुदे हुए हैं, वे गिरिलिपि (Rock edict) और बाकी कुछ स्तम्भों पर खुदे हुए हैं, वे स्तम्भलिपि (Columnar edict) के नामसे प्रसिद्ध हैं।

पांचवी और तेरहवीं गिरिलिपिसे मालूम होता है उनके राजत्वके चौदहवें वर्षके भीतर वर्तमान भारतका दश आनेसे भी अधिक उनके साम्राज्यभुक्त हो गया था। उस समय उत्तरमें हिमालयकी पाद-देशस्थ तराई (जङ्गल), दक्षिणमें मैसूर और गोदावरीका उत्तरांश, पूर्वमें वङ्गोपसागर और ब्रह्मपुत्रनद एवं पश्चिममें भारतकी वर्तमान पश्चिमसीमा—इस विस्तीर्ण भूभागमें उनका शासनदण्ड परिचालित हुआ था। सीमान्तवर्ती प्रदेशोंमें जो सब राजे राज्य करते थे और जो सब नगर अवस्थित थे, उनके सम्बन्धमें तेरहवीं लिपिमें इस तरह लिखा हुआ है,—

“विजयमें यही (विजय) देवगणके प्रिय (प्रिय-दर्शी) मुख्य विजय (समझते हैं) यथा—धर्मविजय, उन्होंने देवगणका प्रिय पाया है। यहां (उनके अधिकारमें) और सर्व अपरान्त देशमें छः सौ योजन दूरपर अन्तिशोक जहां राजा है, बादमें चार राजा तुरमय, अन्तिकिनि, मक और अलिकसुदर नामके (हैं), दक्षिणमें चोड़, पाण्डु (पाण्ड्य), ताम्रपनिय (ताम्रपर्णी) और हिड़ राजा भी (हैं)।” *

यवन, कम्बोज, पेटेनिक, गन्धार, रिष्टिक वा राष्टिक, विश और वृजि, नामक और नामस्मृति, भोज, अन्ध और पुलिन्दगणने भी उनकी अधीनता स्वीकार की थी।

दक्षिणसीमान्तवर्ती अविजित देशोंमें चोड़, पाण्ड्य, सत्यपुत्र, केरलपुत्र और ताम्रपर्णीका उल्लेख उनके अनुशासनमें है। ‡

शासनकी सुव्यवस्था करनेके लिये उन्होंने कुछ नियम बनाये थे। प्रत्येक प्रधान शहर ‘महामात्य’ नामक राजकर्मचारीके अधीन रहता था। समस्त साम्राज्य कई प्रदेशोंमें विभक्त किया गया था। प्रत्येक प्रदेशका शासन करनेके लिये एक-एक ‘प्रादेशिक’ नियुक्त थे। कई प्रदेशोंका एक-एक राज्य गठित था। एक एक राज्य ‘राजुक’ नामक एक

प्रधान कायस्थ-कर्मचारीके अधीन रहता था। राज्य कई प्रधान खण्डोंमें विभक्त थे। उनमें पाटलिपुत्र, उज्जयिनी, तक्षशिला और तोसलि प्रधान था। पाटलिपुत्रमें सम्राटकी राजधानी थी।* उज्जयिनी, तक्षशिला और तोसलिका शासनभार एक एक राजकुमारके हाथमें दे दिया गया था। सम्राटने स्वराज्य एवं परराज्यका समाचार जाननेके लिये ‘प्रतिवेदक’ नामक एक श्रेणोका कर्मचारी नियुक्त कर रखा था। वे लोग खासकर प्रजा और मंत्रियोंके गुप्त कार्यादिका समाचार सम्राटकी देते थे।

कलिङ्ग विजयके समय बहुतसे आदिमियोंके खूनसे उनके हृदयका भाव पलट गया। इसी समयसे उनके चित्तमें ममता और अहिंसा वृत्ति जाग उठी।

वयोवृद्धि और ज्ञानवृद्धिके साथ पहले उनका अनु-राग बौद्ध धर्मपर हुआ, फिर तो अन्तमें वे पक्के बौद्ध हो गये। और बौद्धधर्मके प्रचारके लिये कमर कसकर खड़े हो गये। असि वा वलप्रयोग द्वारा अथवा प्रलोभन दिखाकर अपना महदुईश्व साधन करनेके लिये अग्रसर नहीं हुए। सब जीवोंपर दया, दान, धर्म उपदेश और साधुसेवा ही उनके धर्मप्रचारका सहाय हो उठी।

उन्होंने दशवें वर्ष घोषणा की,—“पहले सुखस-भोगके लिये जो विहारयात्रा होती थी, वह अबसे धर्मयात्रा होगी।” अमण, ब्राह्मण, एवं वृद्धोंसे भेट मुलाकात, दौन दरिद्रोंको दान, धर्मप्रचार और धर्म-जिज्ञासाके लिये ही इस धर्मयात्राकी सृष्टि हुई।” बारहवें वर्ष सम्राटने धर्मप्रचारका यथोचित प्रबन्ध कर दिया। उसी वर्ष उनका धर्मानुशासन लिपिवद्ध हुआ। सर्वमपालनके लिये सब जीवोंके प्रति अहिंसा, ब्राह्मण, अमण, और कुटुम्बियोंके साथ सद्गवहार, पितामाता, गुरुजन तथा वृद्धोंकी श्रद्धा प्रभृति, आज्ञायें प्रचारित हुईं। राजुक और प्रादेशिकोंको आदेश दिया गया, कि उन लोगोंको राजकाज निर्वाह और धर्मप्रचार करनेके लिये प्रति पांचवें वर्ष अपने अपने इलाकेका दौरा करना होगा। पिता, माता, अनुवाचक, प्रति, ब्राह्मण और अमणोंकी श्रद्धा,

* Epigraphia Indica, Vol. II. P. 478-5.

‡ दूसरी और तेरहवीं लिपि द्रष्टव्य।

जीवोंका दान और पाखण्डियोंके ऊपर निन्दा-विमुखता इत्यादि चलते हैं, कि नहीं, इसपर लक्ष्य रखना होगा। प्रजाकी इच्छा, अमात्य वा पञ्चायतका विवाद वा ठगोंकी बात सुनानेके लिये प्रतिवेदकगण जब चाहें उनके पास जा सकेंगे। सब काम शीघ्र सुसम्पन्न हो जानेके लिये ही सम्राट्ने ऐसा आदेश किया था।

उस समय भी यज्ञयूपमें यथेष्ट पशुवध होता था, यज्ञके लिये पशुवध करना ब्राह्मणधर्ममें निन्दित नहीं वरं अनुष्ठेय है। सम्राट्ने घोषणा कर दी,—“आहारके लिये किसी जीवका वध करना अकर्त्तव्य है। यज्ञयूपमें भी जीवनाश करना उचित नहीं। राज-रत्नशालामें आहारके लिये किसी जीवकी हत्या न होगी।”*

प्रियदर्शीने निज राज्यमें और दूरदेशीय विभिन्न स्वाधीनराज्योंमें भी मनुष्य एवं साधारण पशुकी प्राण-रक्षाके लिये दो प्रकारके चिकित्सालय संस्थापन किये थे। जहां औषध न मिलती थी, वहां नवीन वीज रोपन कराया था। उनकी आज्ञासे सर्वसाधारणके लिये कुये खुदवाये गये थे।

उनके धर्मानुशासनका प्रचार होता है, कि नहीं और सर्वसाधारण उसके अनुसार काम करते हैं कि नहीं, यह देखनेके लिये प्रियदर्शीने अपने अभिषेकके तेरह वर्षके बाद ‘धर्मसंहामाल्य’ नामक कुछ अमा-त्योंको नियुक्त किया था।†

इस समय सर्वसाधारणके हितके लिये प्रियदर्शीका चित्त आपही आकृष्ट हुआ था, दूसरेके लिये उनका हृदय व्याकुल हो उठा था। इस समय उन्होंने जो सर्वम प्रचार किया, उसकी मूल नीति यही थी,—

१ जीवकी अहिंसा, २ पितामाताकी श्रद्धा, ३ वस्तु और ज्ञातिवर्गके साथ सद्ग्रहण, ४ ब्राह्मण एवं अमणोंको दान देना और उनकी श्रद्धा करना, ५ दीन और श्रुत्योके साथ सद्व्यवहार, ६ विधर्मियोंके

प्रति निन्दाविमुखता, ७ अम, भावशुद्धि, कृतज्ञता और दृढभक्ति।*

गिरिलिपिमालाकी आलोचना करनेसे ऐसा नहीं मालूम होता, कि वे राजत्वके चौदहवें वर्ष तक सम्पूर्णरूपसे बौद्ध हो गये थे। ब्राह्मणधर्ममें लालित पालित होनेके कारण ब्राह्मणधर्मपर भी उनका अनु-राग फ़ास न हुआ था। अशोकके पितामह चन्द्रगुप्त जैनधर्मानुरागी थे। अधिक सम्भव है, कि आजीवक और जैनसंसर्गसे उन्होंने पहले अहिंसाधर्म सीखा हो, और वयोवृद्धि एवं ज्ञानवृद्धिके साथ साथ बौद्धाचार्योंके प्रभावसे वे धीरे धीरे बौद्ध हो गये हों।

दाक्षिणात्यमें मैसूरके अन्तर्गत चित्तलदुर्गके अधीन सिद्धापुरसे आविष्कृत गिरिलिपिमें लिखा है,—

“देवगणके प्रिय (प्रियदर्शी) ने यह कहा है, कि ठाई वर्षसे अधिक मैं उपासक था, किन्तु (उस समय भी) कोई चेष्टा नहीं की। छः वर्ष क्यों, उससे भी अधिक समय तक मैं सङ्घमें उपगत था। उस समयमें (धर्म) की वृद्धिके लिये चेष्टा की थी। जो सब मनुष्य (ब्राह्मण) जम्बूद्वीपमें सत्य अनुमित थे, वे सब इस समय देवगणसहित असत्य प्रतिपन्न हुए।”‡

प्रियदर्शीने ठीक किस समय बौद्धधर्म ग्रहण किया, यह जाननेका उपाय नहीं। उनकी तेरहवीं गिरिलिपिसे प्रकट है, कि उन्होंने अभिषेकके आठवें वर्षके बाद (नववर्षमें) कलिङ्ग विजय किया। वहां बहुतसे प्राणियोंकी हत्या देखकर उनके मनमें अनुताप हुआ। उसी अनुतापसे उनका मन धर्मपथपर दौड़ा। ऐसे स्थलमें ऐसा मालूम पड़ता है, कि अभिषेकके दशवें वर्ष वे उपासक हुए।

पालिमहावंशके मतसे, राज्यलाभके चार वर्ष बाद अशोकका अभिषेक हुआ। यदि यही सच है, तो राज्यलाभके अन्ततः चौदह वर्ष बाद उन्होंने बौद्धधर्म-ग्रहण किया। निम्नीवके अनुशासनमें लिखा है, अभिषेकके चौदह वर्ष बाद प्रियदर्शीने कोणा-गमन नामक गतबुद्धके पूर्वस्थित स्तूपको बढ़ाया।‡

* ७ वीं गिरिलिपि।

† पञ्चम गिरिलिपि।

पदेरियाकी गिरिलिपिसे भी मालूम होता है, कि अभिषेकके बीस वर्ष बाद उन्होंने शाक्यबुद्धके जन्मस्थान लुम्बिनी ग्राममें जाकर बुद्धकी पूजा की और उस ग्रामको बुद्धके उद्देशमें कररक्षित कर दिया।

प्रियदर्शीने बौद्धशास्त्रके प्रचारके लिये भी विशेष चेष्टा की थी। जयपुरके अन्तर्गत भात्रासे आविष्कृत गिरिलिपिमें ऐसा ही लिखा है,—

‘राजा प्रियदर्शी मागधसङ्घको अभिवादन करके कहते हैं, निरापद समृद्धिकी इच्छा करते हैं। आप लोगोंको मालूम है, बुद्ध, धर्म और सङ्घका प्रसाद और शुभकामना करता हूँ। भगवान् बुद्धने जो कुछ कहा है, सभी सुभाषित है। जहांतक मैं आदेश कर सकता हूँ वहां तक मैं उसकी घोषणा करना इसलिये उत्तम समझता हूँ, कि उससे सद्धर्म चिरस्थायी होगा, धर्मपर्याय यही है—विनयसमुत्कर्ष, आर्य्यवस, अनागतभय, मुनिगाथा, मोनेयसूत्र, उपतिष्ठप्रश्न और लाघुलोवादमें सृष्टावाद, भगवान् बुद्ध कटंक परिभाषित हैं। मेरी इच्छा है, कि बहुतसे भिक्षु और भिक्षुणियां अविरत इन धर्मपर्यायोंको सुनें और ध्यान करें; उपासक और उपासिकायें भी ऐसा ही करें। इसी अभिप्रायसे यह लिखवाया, जिसमें सर्व साधारणको मेरी इच्छा मालूम हो जाय।’

उक्त धर्मपर्याय वा धर्मशास्त्रोंमें कुछका आभास पाया गया है। विनयसमुत्कर्ष—विनयपिटकका सारांश प्रातिमोक्ष (पातिमोक्ख), अनागतभय—सूत्रपिटकके अङ्गुत्तरनिकायशाखाका ‘आरण्यकानागतभयसूत्र,’ उपतिष्ठप्रश्न—विनयपिटकका महावग्ग ग्रन्थके ‘शारिपुत्र-प्रश्न,’ मुनिगाथा—सूत्रपिटकके सुत्तनिपातके अन्तर्गत ‘मुनिगाथा’ नामक १२वां सूत्र, लाघुलोवादमें सृष्टावाद—मज्झिमनिकायका अम्बलट्ठिका राड्डुलोवाद नामक ६१वां सूत्र।

सिंहलके दीपवंश और महावंशमें भी लिखा है, कि अशोकके समयमें दूसरी धर्मसङ्कीर्ति हुई थी और उसमें बुद्धकी उपदेशमूलक शास्त्रोंका संग्रह हुआ था।

केवल खराज्यमें ही नहीं, विदेशमें भी धर्मप्रचार करनेके लिये प्रियदर्शीने विशेष यत्न किया था।

जहां अन्तिओक (Antiochus), तुलमय (Ptolemy), अलिकसुंदर (Alexander) आदि यवनराज राज्य करते थे। मित्र, ग्रीस प्रभृति सुदूरदेशोंमें भी प्रियदर्शीने धर्मप्रचारक भेजे थे। ससेरामकी गिरिलिपिमें २५६ विबुध वा धर्मप्रचारकोंका उल्लेख है। सिंहलके दीपवंशमें दश प्रधान धर्मप्रचारकोंके नाम और उनमेंसे कौन किस देशमें भेजे गये थे, उसका उल्लेख है। यथा,—काश्मीर और गान्धारमें भज्जन्तिक (मध्यान्तिक), महिष (महिंसुर) में महादेव, वनवासी (वा उत्तर कानड़ा) में रक्षित, अपरान्त देशमें वाल्किदेशीय धर्मरक्षित, महाराष्ट्रमें महाधर्मरक्षित, योनदेश (सिरीय और अन्योन्य ग्रीकराज्यों) में महारक्षित, हिमवत्प्रदेशमें मज्जम (मध्यम), सुवर्णभूमि (ब्रह्म मलय आदि स्थानों) में सेन और उत्तर एवं सिंहलमें महेन्द्र (महिन्दो)।

वयोवृद्धि और राज्यवृद्धिके साथ साथ प्रियदर्शीकी दया भी विश्वव्यापिनी हो गई थी। उनके पञ्चम स्तम्भलिपिमें लिखा है,—

‘देवगणके प्रिय राजा प्रियदर्शी यह कहते हैं, अभिषेकके छब्बीस वर्ष बाद नीचे लिखे हुए जीवोंका वध बन्द कर दिया गया—शुक, सारिका, अलुन, चक्रवाक, हंस, नान्दीमुख, गिलाट, जतुका, अम्बाकपोलिका, ददी, अनठिकामत्स्य, वेदवेयक, गङ्गापुत्रक, संयुद्धमत्स्य, कफटशल्क, पन्नसस, रुमर, षण्डक, ओकपिण्ड, पलसत, श्वेतकपोत, ग्राम्यकपोत, और दूसरे दूसरे चौपाये, जो भोगमें नहीं आते और खाये नहीं जाते; अजका (बकरी), एड़का (मेड़ी), शूकरी, गर्भिणी वा दुग्धवती ये सभी अवध्य हैं। उनके छः महीनेसे कमके वध भी अवध्य है। वधिकुक्कुट न काटना, तुषमें जीव दग्ध न होगा। अनिष्टार्थ वा हिंसार्थ वनको न जलाना। जीवद्वारा अन्य जीवका पोषण न करना। तीन चातुर्मास्य, पौषपूर्णिमा, चतुर्दशी, पञ्चदशी एवं प्रतिपद् और प्रति उपवासके दिन मत्स्य अवध्य है। इन सब दिनोंमें मछलीकी बिक्री भी न होगी। उस दिन नाग-वन और केवटभोगमें जो और और जीव रहेंगे, वे

भी अवध्य हैं। अष्टमी, चतुर्दशी और पूर्णिमा, तिथि और पुनर्वसु नक्षत्रयुक्त दिन, तीन चातुर्मास्य, और पर्वदिनमें वृष, अज, मेष, शूकर और अन्यान्य जीव खासि न किये जायेंगे। तिथि और पुनर्वसु, चातुर्मास्य पूर्णिमा और चातुर्मास्य पक्षमें अश्व वा गोको लाञ्छित न करना।*

वे बौद्धधर्मावलम्बी और बौद्धोंपर अनुरक्त होनेपर भी ब्राह्मण और अमणपर समान भक्ति दिखाते थे। बौद्ध होनेके बाद उन्होंने यज्ञमें पशुवध होनेकी निन्दा की है और 'जो सब मनुष्य जम्बूद्वीपमें सत्य अनुमित होते अब देवगणसहित असत्य प्रतिपन्न हुए' इत्यादि उक्ति द्वारा ब्राह्मणधर्मपर कटाक्ष करनेपर भी वे विद्वान् ब्राह्मणका यथेष्ट समादर करते थे।

वे जीवनके अन्ततक बौद्ध रहे, कि नहीं, सो नहीं कहा जा सकता। वे अभिषेकके बीस वर्ष बाद आजीवक जैनियोंपर भी संदय हुए थे, यह बराबरकी लिपिसे प्रकट होता है। इसीसे कोई कोई अनुमान करते हैं, कि अशोकने अन्तमें आजीवकधर्म अवलम्बन किया था। जैन ग्रन्थोंसे भी मालूम होता है, कि अशोककी जीवह्मशामे राज्यकाल शेष हो आनेपर और उनके शिशुपौत्र सम्प्रतिके उनके द्वारा राजपद लाभ करनेपर पाटलिपुत्रमें श्रीसङ्घ हुआ था, और पहले बौद्धशास्त्र जिस तरह संगृहीत हुआ था, इस श्रीसङ्घमें उसी तरह जैनाचार्यों ने जैनशास्त्र संग्रह किया था।

अशोक प्रियदर्शीका कालनिर्णय।

'तीर्थगुलिय-पयन्न'* और 'तीर्थोद्धारप्रकीर्ण'†

* 'व' रयसिं सिद्धिगणो अरहं तिल्यं करो महावीरो।

तं रयसिमवतिराषमिसितो पालथो राया ॥

पालगरथो सङ्को पणपणसय वियाण नंदाथं।

मरुथायं अइसयं तीसपुण पुसमिसायं ॥

वलमिच-भानुमिच सङ्कीचचाय हीति नरसेवे।

गहमसयनेगं पुण पचिवथो तो सगीराया ॥

पंचयमासा पंचयमासा षष्ठे वहुंति वाससया।

परिनिब्बयय अरहतो उपग्नो सगी राया ॥" (तीर्थगुलियपयन्न)

† 'ज' रयसिं कालगणो अरिहा तिल्यं करो महावीरो।

तं रयसिं अवेति वरं अमिसितो पालथो राया ॥ १ ॥

नामक प्राचीन जैन-शास्त्रके मतसे जिस रातको तीर्थङ्कर महावीर स्वामीने सिद्धि पायी, उसी रातको पालक राजा अवन्तीके सिंहासनपर बैठे थे। पालकवंश ६०, उसके बाद नन्दवंश १५५, मौर्यवंश १०८, पुष्यमित्र ३०, बलमित्र एवं भानुमित्र ६०, नरसेन वा नरवाहन ४०, गर्दभिल्ल १३ और शकराजने ४ वर्ष राजत्व किया। महावीरस्वामीके परिनिर्वाणसे शकराजके अभ्युदयकाल पर्यन्त ४७० वर्ष बीते थे। इधर सरस्वती-गच्छकी पट्टावलीसे देखते, कि विक्रमजने उक्त शकराजको हराया सही, किन्तु सोलह वर्ष तक राज्याभिषिक्त न हुए। उक्त सरस्वती-गच्छकी गायामें स्पष्ट लिखा है,—“वीरात् ४८२, विक्रमजन्मान्त वर्ष २२, राज्यान्त वर्ष ४” अर्थात् शकराजके ४७० और विक्रमाभिषेकाब्दके ४८८ अर्थात् सन् ई०से ५४५-४ वर्ष पहले महावीरस्वामीको मोक्ष मिला था।

पूर्ववर्ती ऐतिहासिक वीरमोक्षके ४७० वर्ष बाद शकराजका पराजय और विक्रमका अभिषेक-मान सन् ई० से ५२७ वर्ष पहले वीरमोक्षाब्द ठहराते रहे। किन्तु अब हम सरस्वतीगच्छकी गायामें अच्छी तरह समझते हैं, कि वह भी १७ वर्ष बाद अर्थात् सन् ई० से ५४५ वर्ष पहले वीरमोक्ष हुआ था। आश्चर्यका विषय है, कि सिंहल, ब्रह्म, श्याम प्रभृति बौद्ध-समाजमें उक्त वीरमोक्षके दूसरे वर्ष ही बुद्धका निर्वाणाब्द निर्णीत किया गया। सिंहलवाले पाली महावंशके मतसे बुद्ध-निर्वाणके २१८ वर्ष बाद अशोकका राज्याभिषेक हुआ था।‡ इधर जैनाचार्य हेमचन्द्रके प्ररिशिष्टपर्वमें लिखा है,—वीरमोक्षाब्दके

सङ्की पालग रग्गो पणपणसयंतु होई नंदाथं।

अइसयं हरियाथं तीर्थचिच पुससमिसस ॥ २ ॥

वलमिच-भानुमिच सङ्की वरिसाणि चयं नरवाहणी।

तच्च गहमिह्वरग्गो तेरसवरिसा सगस्स चच ॥ ३ ॥”

(तीर्थोद्धारप्रकीर्ण)

‡ “जिननिब्बानतो पच्छा पुरे तस्समिसिक्तो।

पट्टावलीसंस्कृत (अश्वमेधव्रतमिव विज्ञानियं ॥”

(महावंश ५३ प्ररि०)

१५५ वर्ष बाद चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ। महा-
वंश और परिशिष्टपर्वके उक्त प्रमाणको मान हमने
किसी समय सन् ई०से ३७२ वर्ष पहले चन्द्रगुप्त
और ३२५ वर्ष पहले अशोकका राज्याभिषेक स्थिर
किया था। किन्तु आजकल तीत्युगालियपयत्र,
तीर्थोद्धारप्रकीर्ण एवं सरस्वती प्रभृति गच्छकी प्राचीन
गाथासे देखते, कि वीरमोक्षके दिन ही अर्थात् सन्
ई०से ५४५ वर्ष पहले पालक राजाका अभिषेक हुआ
और पालकवंशने ६० वर्ष राज्य किया। हेमचन्द्रके
अपने परिशिष्टपर्वमें पालकवंशका ६० वर्ष एक-
वारगी ही छोड़ देनेसे उनकी गणनामें भूल पड़ी।
हम ब्रह्मवत्-खरतरगच्छ एवं तपागच्छकी पट्टावलीसे
समझ सकते, कि नन्दवंशके उच्छेद और चन्द्रगुप्तके
अभिषेक-वर्ष ही पट्टधर स्थूलभद्रने मोक्ष पाया था।
वीरमोक्षके २१८ वर्ष बाद ही यह घटना हुई।
जैन शब्द देखो। ऐसे स्थलमें प्राचीन जैनसम्प्रदायके
मतसे (५४५-२१८) सन् ई०के ३२६-२५ वर्ष पहले
चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ था।

इधर सिंङ्गलके दीपवंशमें विनयाचार्य स्वविर-
गणका इसी तरह काल माना गया है। उपासी ७४,
दशक ५०, सोमक ४४, सिग्व ५५ और तिस्स
मोग्गलिपुत्तका ६८ वर्ष काल बताते हैं। सिंङ्गलके
महावंशमें लिखा है शाक्यबुद्धके परिनिर्वाण बाद
उपासी ही विनयाचार्य हुए थे। उधर दीपवंशमें
लिखा है,—अशोकाभिषेकके २७म वर्षमें मोग्गलि-
पुत्तने मोक्ष पाया। सुतरां दीपवंश और महावंशके
आचार्यपरम्परासे समझ सकते, कि बुद्धनिर्वाणके
(७४+५०+४४+५५+६८) २८१ वर्ष बाद अशो-
ककी बात है। इस गुरुपरम्पराके अनुसार बुद्ध-
निर्वाणके २१८ वर्ष बाद अशोकका अभिषेक हो नहीं
सकता। राजकीय विवरणोंकी अपेक्षा धर्माचार्यगण
गुरुपरम्परासे इतिहासकी प्रति सावधान हो रचा
करते थे। ऐसी दशमें गुरुपरम्परासे इतिहास सम-
धिक विश्वासयोग्य है। पूर्वमें जैनशास्त्रानुसार बता
दिया है, कि सन् ई०से ३२६-२५ वर्ष पहले चन्द्र-
गुप्तका अभिषेक हुआ था। ठीक उसी समय बुद्ध-

निर्वाणवत् २१८ वर्ष होता है। उत्कलकी खण्ड-
गिरिस्थ हाथी-गुफावाले खारवेल-भीखुराजके शिला-
लेखसे समझ सकते हैं, कि उक्त कलिङ्गराजके समय
पर्यन्त मौर्याव्द चलता रहा। कहनेसे क्या है—
चन्द्रगुप्तके अभिषेकसे ही मौर्याव्द चला था। सम्भ-
वतः महावंशकारने भ्रमक्रमसे चन्द्रगुप्तका अभि-
षेकाव्द वा मौर्याव्द ही अशोकका अभिषेकाव्द समझ
लिया होगा। जो हो, अब बौद्ध और जैन उभय
शास्त्रसे मालूम पड़ता, कि वीरमोक्ष २१८ एवं बुद्ध-
निर्वाणके २१८ वर्ष बाद चन्द्रगुप्तका अभिषेक हुआ
था। हिन्दू, बौद्ध और जैन—इन तीनों सम्प्रदायकी
विवरणी देखनेसे समझ पड़ता, कि चन्द्रगुप्त २४,
उनके पुत्र विन्दुसार २५ और उनके पुत्र अशोकने
३६ वर्ष (अभिषेकसे ४ वर्ष पूर्व) राजत्व किया।*
ऐसे स्थलमें सन् ई०से २७७-७६ वर्ष पहले अशो-
कने राज्य पाया और सन् ई०से २७३-२७२ वर्ष
पहले राज्याभिषेक हुआ था। [चन्द्रगुप्त और मौर्य शब्दमें
विलुप्त विवरण देखना चाहिये।]

अशोकके चरितकी समालोचना।

बौद्धके आविर्भावकालसे अबतक भारतमें जितने
राजा राज्य कर गये हैं, उनमें किसीके साथ प्रिय-
दर्शीकी तुलना नहीं होती। जीवनके प्रथमांशमें जो
उच्चत प्रकृति, नरशोणितलिप्सा एवं स्वगणविशेषके
कारण समाजको दृष्टिमें अतिदृष्ट और निन्दास्पद हो
उठा था, वही दुष्टप्रकृति सम्भोग और सम्बन्धकी गोदमें
लालितपालित होनेपर भी कैसा संशोभित एवं विशुद्ध
होकर अतुलनीय और आदर्शस्वरूप हो सकता है,
अशोकका चरित्र उसका प्रकट प्रमाण है। राज-
नीतिक कार्यकुशलता, युद्धनिपुणता एवं लोकचरित्र-
शिक्षामें उन्होंने भारतविश्रुत अकबरको भी पराजित
कर दिया था। वीर्यवत्ता और राज्यवृद्धिमें कोई
मोगल-सम्राट् उनके समकक्ष नहीं हैं। अकबर
जिस तरह विदेशियोंसे संस्पर्श रखते, देशी विदेशी
सभी पण्डितोंका आदर सम्मान करते और हिन्दू,

सुसलमान, खुष्टान, पार्शी प्रभृति सभी प्रजाको सम-
भावसे देखते थे, उसी तरह अशोक भी ग्रीस प्रभृति
दूरदेशोंके साथ सम्बन्ध रखते, ब्राह्मण वा अमण
सभी पण्डितोंकी यथेष्ट अज्ञाभक्ति करते एवं हिन्दू,
बौद्ध, जैन प्रभृति सभीके उपकारके लिये समान यत्न
करते थे। बुद्धदेवका प्रचार किया हुआ धर्म भारतके
केवल कुछ ही अंशमें आवद्ध था, किन्तु इन्हीं अशोकके
समयमें बुद्धके विमल उपदेश समस्त एशिया, यहाँ
तक, कि युरोपखण्डमें भी प्रचारित हो गये।
अशोकके समयमें भी बौद्धधर्ममें विशेष जटिलता एवं
सुंठिनाटीको स्थान न मिला था। उनके अनुशासनमें
सबजीवोंपर दया एवं साधारणकी प्रतिपाल्य साम्य-
नीति ही उपदिष्ट हुई है।

युरोपीय पुराविदगणने अशोकके साथ कन्ष्टण्डा-
इन, सोलोमन, लुई दी पायस् प्रभृति प्रातःस्मरणीय
धार्मिक राजगणकी तुलना की है।

अशोकमञ्जरी (सं० स्त्री०) छन्दोविशेष। यह
दण्डक छन्दके अन्तर्गत है। इसमें २८ अक्षर होते
हैं और लघुगुरुका कोई नियम नहीं रहता।

अशोकमञ्ज—प्राचीन संस्कृत कवि। इन्होंने नृत्या-
ध्याय नामक ग्रन्थ लिखा था।

अशोकमञ्ज राजन्—निघण्टुसार नामक ग्रन्थ-रचयिता
प्राचीन संस्कृत-कवि।

अशोकरोहिणी (सं० स्त्री०) अशोक इव रोहति
वा अशोक-रूढ़-णिनि। कटुका, कुटकी।

अशोकवन, अशोकवाटिका देखो।

अशोकवाटिका (सं० स्त्री०) १ अशोककी वाटिका,
जो फुलवारी अशोककी हो। २ रम्य उद्यान, जो
फुलवारी रक्ष मिटाती हो। ३ रावणका प्रसिद्ध
उद्यान। जगज्जननी सीता इसीमें रही थीं।

अशोकषष्ठी (सं० स्त्री०) नास्ति शोको यस्याः,
नञ् ५-बहुव्री० ततः कर्म० पूर्वपदस्य पुंवद्भावः।
चैत्रमासकी शुक्लषष्ठी। चैत्र मासकी कृष्ण और
शुक्ल दोनों षष्ठीकी पूजा की जाती है। इस
व्रतको करनेसे शोक नहीं होता। किन्तु इस
लोगोंके देशमें स्त्री ही चैत्र मासकी शुक्ल षष्ठीको

पूजन एवं छः अशोककी कली पान करती हैं, इसीको
अशोकषष्ठी कहते हैं। इस दिन स्त्रियां न तो खेतसे
पैदा कोई चीज खातीं और न जोती जमीन पर पैर
ही रखती हैं। कहावत, है,—‘जोतो खावों न जोतो रोदों।
भाज मेरे हरदों से दो दो।’

अशोका (सं० स्त्री०) नास्ति शोको दुःखसेवनेन
यस्याः, नञ् ६-बहुव्री०। कटुका, कुटकी। चैत्र
शुक्ला षष्ठी।

अशोकारि (सं० पु०) अशोको हर्षितेनेन क-इन्
गुणः ततः पञ्चमी-तत्। १ अशोकदायक, आराम
देनेवाला। २ कदम्बवृक्ष, कदम्बका पेड़।

अशोकाष्टमी (सं० स्त्री०) नास्ति शोको यस्याः,
नञ् ५-बहुव्री०। चैत्रमासकी शुक्लाष्टमी। हेमाद्रिके
व्रतखण्डमें लिङ्गपुराणका एक वचन गृहीत हुआ है,
उसका अर्थ यही है, कि पुनर्वसुनक्षत्रयुक्त चैत्र
मासकी शुक्ल अष्टमीमें जो अशोककी आठ कलिका
पान करेगा, वह शोक प्राप्त न होगा। इसमें अशोक
कलिकाद्वारा रुद्रकी अर्चनाका विधान है।

जिस दिन ठाई पहरके समय अष्टमी हो उसी
दिन अशोककलिका पान करनेकी विधि है। पुन-
र्वसुनक्षत्रमें फलाधिक्य मान है। पुनर्वसुनक्षत्रका
योग न हो, तो केवल अष्टमीमें ही अशोकपान करना।
पुनर्वसुनक्षत्रयुक्त चैत्रमासकी शुक्ल-अष्टमीके वृषलग्नमें
ब्रह्मपुत्रनदके जलमें स्नान करना आवश्यक है। पृथि-
वीमें जितने तीर्थ, नदी वा सागर हैं, सभी उस
तिथिमें ब्रह्मपुत्रनदमें आते हैं। इसीसे उसमें स्नान
करनेसे समस्त पाप दूर हो जाता है। स्नानका मन्त्र,
यथा—

ब्रह्मपुत्र महाभाग शान्तनोः कुलनन्दन।

अनोपागमसम्भूत पापं लौहित्य मे हर ॥

इस तिथिकी ब्रह्मपुत्रमें स्नान करनेके लिये बहुत
यात्री आते हैं। वहाँकी पुलिस विशेष यत्नके साथ
यात्रियोंकी हिफाजत करती है।

लोहित सरोवरसे ब्रह्मपुत्र निकला है, इसीसे
उसका नाम लौहित्य है। कालिकापुराणमें और
एक विधान यह है, कि नियतेन्द्रिय होकर चैत्रमास

भर लौहित्यके जलमें स्नान करनेसे ब्रह्मपद प्राप्त होता है। विष्णुके मतसे यदि बुधवारको पुनर्वसु नक्षत्र युक्त चैत्रमासकी शुक्ल अष्टमी हो, तो सब नदियोंमें स्नान करनेसे वाजपेय यज्ञका फल लाभ होता है।

अशौच (सं० पु०) शुच-अच् नञ्-तत्। शोकाभाव, रक्षकी अदममौजूदगी।

अशौच्य (सं० त्रि०) शुच-कर्मणि-ण्यत्, नञ्-तत्। १ शोकानर्ह, रक्ष न करने काबिल। २ आत्मघाती।

अशौथनेत्रपाक (सं० पु०) विना शौथ नेत्रपाकरोग, जिस आंखके फोड़ेमें सूजन न रहे।

अशोधन (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ शोधनाभाव, सफाईकी अदममौजूदगी, गन्दगी, मैलापन। २ भूलचक्र, गलती। (त्रि०) नास्ति शोधनं यस्य, नञ्-बहुव्री०। ३ शोधनशून्य, मैला-कुचैला, गन्दा। ४ अशुद्ध, गलत।

अशोधित (सं० त्रि०) शुध्-णिच्-क्त इट् गुणः णिच् लोपः, ततः नञ्-तत्। १ जलादि द्वारा धौत न किया हुआ, मैला, गन्दा, जो पानी वगैरहसे साफ़ किया न गया हो। २ परिशोधन किया हुआ, जो अदा न किया गया हो। ३ शुद्ध न किया हुआ, जो सही न किया गया हो।

अशोभन (सं० क्ली०) शुभ-भावे-ल्युट्, अभावे नञ्-तत्। १ मङ्गलका अभाव, खुशीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) कर्तरि ल्यु नञ्-तत्। २ कुरूप, जो खूबसूरत न हो। ३ कुलित, खराब, बुरा।

अशोरी (अशरी) बम्बई प्रान्तका थाना जिलेके महिमताक्षुक्का किला। यह पर्वतके शिखरपर अवस्थित है। इसके इधर उधर ऐसा उच्च स्थान नहीं पड़ता, जिसपर तोप लगाया जा सके। पर्वत काट कर एक सङ्कीर्ण मार्ग निकाला गया है। इस मार्गसे दो मनुष्यके साथ आ-जा नहीं सकते। थोड़े ही वीर इसकी रक्षाको यथेष्ट होते और पाषाण बुढ़काकर कितनी ही सेनाको नाश कर सकते हैं। अस्सी वर्ष तक महाराष्ट्रका इसपर अधिकार रहा था।

अशौषणीय, अशौष्य देखो।

अशौथ (सं० त्रि०) शुध्-णिच्-ण्यत् णिच् लोपः, नञ्-तत्। शोधण किये जानेको अशक्य, जिसे कोई सुखा न सके।

अशौच (सं० क्ली०) शुचेर्भावः शौचं ततो नञ्-तत्। शुद्धिका अभाव, शुचित्वका अभाव, स्मृतिशास्त्रप्रसिद्ध विहित कर्ममें अनधिकारसम्पादक अशुद्धावस्था।

निकटके ज्ञातिकुटुम्बमें किसीकी मृत्यु होजाने किम्बा किसीके पुत्र-कन्या उत्पन्न होनेसे शरीर कुछ दिन अशुद्ध रहता है। इसीको हम लोग सचराचर अशौच कहते हैं।

शास्त्रमें दो प्रकारका अशौच निर्दिष्ट हुआ है,— कालकृत एवं वसुका स्वाभाविक धर्मकृत। शरीरमें व्रण आदि हो जानेसे जबतक वे सब अच्छे न हो जायं तबतक देह अशुचि रहती है। निकट ज्ञातिके किसीके पुत्र कन्या जन्मने या किसीकी मृत्यु होनेसे कुछ दिनके लिये शरीर अशुचि हो जाता है; इसका नाम कालकृत अशौच है। मल-मूत्र, चाण्डालादि जाति स्वभावतः अशुद्ध हैं।

ज्ञातिके पुत्र कन्या उत्पन्न होनेसे जो अशौच होता, उसे शुभ अशौच कहते हैं। ज्ञातिकी मृत्यु होनेसे जो अशौच होता है, उसका नाम अशुभ अशौच है।

अतिप्राचीन कालसे सब देशोंमें सभी जाति गुरुजनकी मृत्युके बाद किसी न किसी तरहसे अशौच ग्रहण करती आती है। अशौचके समय शोक प्रकाश करनेके लिये कितने ही शोकसूचक वस्त्र धारण करते हैं। हमारे देशके हिन्दू मातापिताकी मृत्युके बाद गलेमें नये कपड़ेका टुकड़ा बांधते हैं। अशौचके समयमें वे लोग तेल नहीं लगाते, जूता नहीं पहनते, छाता नहीं लगाते और हजामत नहीं बनवाते। दिनमें केवल हविष्यान्न भोजन करते और रातमें थोड़ासा दूध आदि पी लेते हैं। ऐसे समयमें स्त्रीसर्ग-गादि सब तरहके सुख भोग निषिद्ध हैं।

प्राचीन यहूदियोंमें अशौचकाल केवल सात दिन था, कोई कोई तीस दिन अशौच मानते थे। अशौचके समय सभी हजामत बनवा डालते, वस्त्र फाड़

डालते, जूतान पहनते, तेल न लगाते और स्नान न करते थे। संयम सहित सभी भूमिपर सो रहते थे। ग्रीस देशवासी तीस दिन अशौच मानते थे। केवल स्पार्टावासीमें दश ही दिन अशौच माननेकी प्रथा थी। अशौचके समय वे लोग हजामत बनवाकर काला कपड़ा पहन लेते और किसीके सामने बाहर न होते थे। रोमदेशमें स्वामीके मरनेपर स्त्री एक वर्ष तक अशौच मानती थी, पर पुरुषोंका अशौच थोड़े ही दिन रहता था। अशौचके समय स्त्रियां सफेद और पुरुष काला कपड़ा पहनते थे। पहले स्पेनदेशवासी भी अशौचके समय सफेद कपड़ा ही पहनते थे। आजकल युरोपवासी अशौचके समय काला कपड़ा पहनते हैं; कोई कोई हाथपर काला कपड़ा लगा लेते हैं। पत्र लिखनेके समय जो कागज और लिफाफा व्यवहार करते, उसके चारो ओर काली लकीर छपी रहती है। तुर्क लोग अशौचके समय गहरे नीले रङ्गका कपड़ा पहनते हैं।

हिन्दूओंके जनन और मरण अशौचका नियम यों है,—सात पुरुषतक ब्राह्मणका १० दिन, क्षत्रियका १२ दिन, वैश्यका १५ दिन और शूद्रका एक महीना। चाण्डाल, मेहतर, मोची आदि नीच जातिवाले केवल दश ही दिन अशौच मानते हैं।

अशौचके कुछ दिन बीत जानेपर यदि ज्ञाति कुटुम्बियोंको वह समाचार मिले, तो उन्हें बाकी कई दिन ही अशौच मानना होता है। मरणका अशौच बीत जानेके बाद यदि एक वर्षके भीतर ज्ञातियोंको वह समाचार मिले, तो त्रिरात्र अशौच रहता है। एक वर्षके बाद मरणाशौच सुननेसे सपिण्डगण स्नान करके शुद्ध हो जाते हैं। किन्तु एक वर्षके बाद मातापिताका मृत्यु-समाचार पानेपर पुत्रके लिये एक दिन अशौच रहता है। एक वर्षके बाद पतिकी मृत्युका समाचार पानेसे स्त्रियोंको एक दिन अशौच होता है। दूसरे वर्ष सुननेसे सद्यः अशौचान्त हो जाता है। किन्तु शुभ अशौच वा खण्डाशौच बीत जानेके बाद उसको खबर मिलनेपर फिर अशौच नहीं मानना पड़ता।

दीक्षागुरुकी मृत्युके बाद त्रिरात्र अशौच होता है। जिससे वेदवेदाङ्गादि शास्त्र पढ़ा जाता है, उसकी मृत्युका अहोरात्र अशौच होता है।

सब वर्षोंके लिये दश पुरुषतक जनन और मरण अशौच त्रिरात्र होता है और चौदह पुरुषतक पक्षिणी अर्थात् दो दिन और एक रात। (पूर्व दिन एवं मध्यकी रात और उसके बादका दिन, इसीका नाम पक्षिणी है)।

जन्मनाम स्मरणतक अर्थात् उभय पूर्वपुरुषोंके नाम स्मरणतक सब वर्षोंका एक दिन अशौच होता है। उसके बाद स्नान करके ज्ञातिगण शुद्ध हो जाते हैं। मातामहकी मृत्युमें त्रिरात्र।

मौसेरा भाई, फुफेरा भाई, ममेरा भाई, भाञ्जा, पितामहीभगिनीपुत्र, पितामही-भ्रातृपुत्र, दौहित्र, भगिनी, मामी, मातुल, मौसी, फूफू, गुरुपत्नी, माता-मही एवं एक ग्रामवासी स्वसुर सासकी मृत्युमें पक्षिणी। मातामह भगिनी पुत्र, मातामहीभगिनौपुत्र, मातामहीभ्रातृपुत्र, और एक ग्रामवासी स्वगोत्र व्यक्तिके मरनेमें अहोरात्र। पितामाताकी मृत्युमें विवाहिता कन्याका त्रिरात्र अशौच। (विशेष विशेष कारणसे विशेष विशेष अशौचकालका विवरण शुद्धितत्त्वमें देखो)।

अशौचका समय वीतजानेपर सज्जाति हिन्दू भोजन बनानेको हांडी वगैरहको फेंक देते हैं। मरणाशौचके अन्तवाले दिन चौरकर्मदि करना पड़ता है। ज्ञातिगण घरसे कुछ दूर अथवा गांवके किनारे जाकर हजामत बनवाते; उसके बाद स्नान करके सब कोई घर आते हैं। मातापिताके मरणाशौचमें पुत्र इसी दिन पूरक पिण्डादि देते हैं। अन्तमें चौरकर्मके उपरान्त स्नानादि करके स्त्रियोंके साथ घर आते और पूर्णवट तथा अन्नव्यञ्जनादिका दर्शन करते हैं।

पूर्वकाल आर्योंमें अशौचान्तके दिन जो सब क्रियायें प्रचलित थी, अब उनमें एक भी नहीं है। तैत्तिरीय ब्राह्मणमें इसे 'शान्तिकर्म'के नामसे लिखा है। आश्वलायनने इस क्रियाको श्मशानमें सम्पन्न

करनेकी व्यवस्था दी है। ज्ञातियोंमें स्त्रीपुरुष सभी मिल कर रक्तवर्ण वृषचर्मपर बैठते थे। इस चर्मका शिर पूर्वकी ओर रखा जाता और बाल उत्तरकी ओर फिरा दिये जाते थे। वृषचर्मपर बैठनेका मन्त्र यह है—

“आरोहतायुर्जरसं गृह्णाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ठ।
इह लप्ता मुजनिमा सुरको दीर्घमायुः करोतु जीवसे वः ॥
यथाऽह्नायुपूर्वं भवन्ति यथर्त्तव ऋतुभिर्गन्ति क्लृप्तः।
यथा न पूर्वमपरो जहात्ये वा धातराये पि कल्पयेथां ॥”

तुम लोग दीर्घकालतक जीनेकी इच्छा करते हो, इस आयुष्कर चर्मपर आरोहण करो। इस कर्मकी सुजात एवं सुरक्षभूषित अग्नि तुम लोगोंको दीर्घायु दान करे। जिस तरह दिनके बाद दिन और ऋतुके बाद ऋतु आता है, जिस तरह ज्येष्ठ कनिष्ठकी नहीं परित्याग करते, हे धातः ! उसी तरह तुम भी इन लोगोंकी परमायु वृद्धि करो।

इसके बाद ऋतव्यक्तिका पुत्र आग जलाकर वरुण-काठके सुक्से चार बार आहुति देता था। फिर ज्ञातिगण अग्निसे उत्तर पूर्व मुख खड़े होकर रक्तवर्ण वृषचर्म स्पर्शपूर्वक एक मन्त्र पढ़ते थे। अन्तमें स्त्रियां ‘इमा नारीरविधवाः’ इत्यादि * मन्त्र पढ़कर आंखमें काजल देती थीं। यह काजल हिमालय पर्वतके त्रैककुदका बनाया जाता और कुशकी नोकसे आंखमें लगाया जाता था। †

स्त्रियोंके आंखमें काजल लगा लेनेके बाद सभी वृषको चलाते चलाते पूर्वकी ओर जाते। जानेके समय यह मन्त्र पढ़ना पड़ता था,—

“इमे जीवा वि चतैरावर्त्तिन्मसूदमद्रा देववृत्तिर्नो भय।
प्राचोऽगामा वृतये हसायद्राचीय आयुः प्रतरां दधानाः ॥” ‡

* बोधायनके मतसे शान्तकर्ममें आंखमें काजल लगानेके समय ‘इमा नारीरविधवाः’ इत्यादि मन्त्र प्रयुक्त होता था। अनुमरण एवं अनु-चता शब्द देखो।

† “यदाह्ननं त्रैककुदं जातं हिमवत्पथि।

तेनाष्टतस्र सूक्ष्मं नारातीर्जं अयामसि।” (तेत्तिरीय आरण्यक ४।१०।४)

‡ ऋग्वेदके १० वें मण्डल १८ वें सूक्तमें यह मंत्र है। यहां

उसका कुछ प्रमेद देखा जाता है।

ये लोग ऋतव्यक्तिको परित्यागकर लौटे जाते हैं। हम लोगोंके कल्याण, जय और आल्हादके निमित्त अपने देवताओंको आह्वान करते हैं। हम लोग दीर्घायु लाभकर पूर्वमुख जाते हैं।

इस तरह मन्त्र पढ़कर स्त्रियां सबके आगे आगे घर जातीं। ऋतव्यक्तिका पुत्र शमीशाखासे वृषके पदचिन्होंको मिटता जाता। उसके बाद अश्र्य मन्त्र पढ़ते हुए सबके पीछे लोष्टद्वारा वृत्त करते थे। परिधि बनाकर तुरत ही यह मन्त्र पढ़ना पड़ता था—

“इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मानोऽनुगादपरो अर्द्धं मेतं।
शतं जीवन्तु शरदः पुष्पक्षिरो चत्सु दग्धहे पथं न ॥”

‘जीवित मनुष्यांके लिये मैं यह परिधि देता हूं। अर्द्धवयसमें हम लोगोंको किम्बा और किसीकी जिसमें इसे अतिक्रम करना न पड़े। इस पर्वताकार लोष्ट-द्वारा ऋतुको ओरमें रखकर हम लोग जिसमें सौ शरत्काल (सौ वर्ष) जीते रहें।

अन्तमें घर आकर सभी यवागू और छागमांस खाते थे।

अशौचत्व (सं० क्ली०) अशुद्धता, नापाकी, गन्दगी, मैलापन, साफ न रहनेकी हालत।

अशौचसङ्कर (सं० पु०) अशुचि अवस्थामेद। जनन एवं मरण अशौचके मध्य पुनर्वार जनन एवं मरण अशौच आनेसे अशौचसङ्कर कहाता है। यहवित्तमं इसका विस्तारित विवरण बताया है।

अशौचान्त (सं० पु०) अशौचकालके कूटनेका दिन। दशम दिन ब्राह्मण और द्वादश दिन क्षत्रियका अशौचान्त होता है।

अशौच्य (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। १ वीर-त्वका अभाव, बहादुरीकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ पराक्रमशून्य, बेहिम्मत, जो बहा-दुर न हो।

अश्र (वे० त्रि०) अश्रुते व्याप्नोति अश्रनाति वा, अश-नन्। १ व्यापक, मासूर, समा जानेवाला। २ भोजनशील, खाज, पेटू। ३ व्याप्त, समाया हुआ। (पु०) ४ असुर विशेष। ५ सोमलता कूटनेका पथर। ६ मेघ, बादल।

“सदुद्भवैर्धनो नाश्वनो अति यच्च गुण्यात्” । (ऋक् १।१०१।२।)

अश्रया (वै० स्त्री०) क्षुधा, भूख ।

अश्रनीतपिबता (सं० स्त्री०) अश्रनीत पिबत इत्युच्यते यस्मात् निदेशक्रियायाम्, मयूरव्य० समा० । भोजन एवं पानका आदेश, खाने-पीनेको आज्ञा ।

अश्रम (सं० पु०) १ पर्वत, पहाड़ । २ स्वर्ण-माचिक, सोनामासी । (वै०) ३ मेघ, बादल ।

अश्रमक (सं० पु०) अश्रमेव स्थिरः निश्चलत्वात्, इवार्थे कन् । सत्त्वावयवप्रत्ययकलकुटाश्रमकादिच् । पा ४।१।१०३।

१ ऋषि विशेष । २ देश विशेष, कोई मुल्क । महाभारतमतसे यह देश भारतवर्षके दक्षिण अवस्थित । किन्तु वृहत्-संहितामें इसे उत्तर-पश्चिम माना है । किसी-किसीने इसे भारतके मध्यस्थलमें बताया है । अश्रक देखो ।

अश्रमकदलौ (सं० स्त्री०) अश्रमते अश-मनिन् कर्मधा० । काष्ठकदलौ, पहाड़ी केला ।

अश्रमकर (सं० स्त्री०) स्वर्ण, सोना ।

अश्रमकुट्ट (सं० पु०) अश्रमनि प्रस्तरे धान्यादिकं कुट्टयति, कुट्ट-अण्, उप०-समा । १ वानप्रस्थविशेष । इनके पास जखल प्रभृति नहीं रहता, प्रस्तारसे ही धान्यादि कुटते हैं । (त्रि०) २ पत्थरसे कूटने पीसनेवाला । ३ पत्थरसे कूटा-पीसा ।

अश्रमकुट्टक, अश्रमकुट्ट देखो ।

अश्रमकच्छुहा (सं० स्त्री०) वेलन्तरवृक्ष, कोई दरखत । यह कटीली होती है ।

अश्रमकेतु (सं० स्त्री०) अश्रमेव केतुरस्याः । क्षुद्र पाषाणभेद क्षुप, कोई खुशबूदार पेड़ ।

अश्रमगन्धा (सं० स्त्री०) अश्रमन इव गन्धो लेशोऽस्याः । पृश्निपर्णी लता, पथरचटा ।

अश्रमगर्भ (सं० पु०) अश्रमेव कृतो गर्भो यस्य । मरकत, हरितमणि, पन्ना ।

अश्रमगर्भक (सं० पु०) तिनिश वृक्ष, जरूलका पेड़ ।

अश्रमगर्भज, अश्रमगर्भ देखो ।

अश्रमगुड (सं० पु०) अश्रमनिर्मितो गुडः । १ पत्थरका गोला । २ पत्थरका बट्टा ।

अश्रमन्न (सं० पु०) अश्रमानं हन्ति, हन्-टक् । पाषाणभेदनवृक्ष, कोई पेड़ ।

अश्रमचक्र (वं० त्रि०) पाषाण-परिधि-वेष्टित, पत्थरके दायरेसे घिरा हुआ ।

अश्रमज (सं० स्त्री०) अश्रमनो जायते, जन-ङ । १ शिलाजतु । अश्रमेव जायते । २ लौह, लोहा । ३ गेरू ।

अश्रमजतु (सं० स्त्री०) अश्रमनो जायते, जन-तुन्-डिच्च । शिलाजतु ।

अश्रमजतुक, अश्रमजतु देखो ।

अश्रमजाति (सं० स्त्री०) अश्रमनो जातिः सामान्य-मस्य । मरकत मणि, पन्ना ।

अश्रमदारण (सं० पु०) अश्रमानं दारयति, दृ-णिच्-ल्यु । १ प्रस्तर तोड़नेका यन्त्र विशेष, टांकी, जिस बीजारसे पत्थर फोड़ें । २ प्रस्तर विशेष, जिस पत्थरसे धल्ली उड़े ।

अश्रमद्विद्यु (वै० त्रि०) अतिशयेन द्योतते, यङ्-लुक्-द्युतिगमिषुहोतीनां द्वे च । पा ३।२।१०८ स्वे नार्तिक, तथा, द्युतिस्त्रायो संप्रसारणम् । पा ७।४।६६ । इति सम्प्रसारणे बाहु० ङ् प्रत्ययः दिव्य आयुधं अश्रम व्यापकं अश्रममयं वा दिव्यु यस्य । १ व्याप्त आयुध, जो हथियार चला रहा हो । २ अश्रममय आयुध, बहुत कड़े हथियार रखनेवाला । “विद्युन्महसी नरो अश्रम दियवः ।” (ऋक् ३।५।३१)

अश्रमन् (सं० पु०) अश्र व्याप्तौ अश्र भोजने मनिन् । १ पाषाण, पत्थर । २ पर्वत, पहाड़ । ३ चकमक पत्थर । ४ चट्टान । ५ मेघ, बादल । ६ विद्युत्, बिजली । ७ आकाश । ८ ब्राह्मण विशेष । (त्रि०) ९ व्यापक, मामूर, समाया हुआ । (वै०) १० भोजन करता हुआ, जो खा रहा हो । अश्रमन् शब्द-उत्तरादि गणके मध्य पठित है ।

अश्रमन्त (सं० स्त्री०) अश्रमनोऽन्तोऽत्र, शाक० पर-रूपत्वम् । १ अश्रम, बुरा । २ मरण, मौत । ३ चूल्हा, भट्ठी । ४ अनवधि, गैरमहदूद वक्त । ५ क्षेत्र, मैदान, खेत ।

अश्रमन्तक (सं० स्त्री०) अश्रमानं अन्तयति, अन्त-णिच्-ल्युल् शकन्वादित्वात् पररूपत्वम् । १ चट्टा,

भट्टी। २ मल्लिका आच्छादन। ३ दौपाधार, दीवट।
(पु०) ४ अन्धोटवृक्ष, कोई पेड़। ५ दणविशेष,
कोई घास। ६ अक्षपत्र। ७ कोविदारक वृक्ष।
अश्मन्मय (वै० त्रि०) अश्मनो विकारः, मयट् वेदे
न नलोपः। पाषाणमय, पथरीला, पथरका बना
हुआ।

अश्मन्वत्, (वै० त्रि०) प्रस्तरका, पथरीला।
अश्मन्वती (वै० स्त्री०) ऋग्वेदोक्त नदीभट्ट। आर्यशब्दमें
विवरण देखो।

अश्मपुष्प (सं० स्त्री०) अश्मनः पुष्पमिव। शैलज,
शिलाजतु।

अश्मभाल (सं० स्त्री०) अश्मव भाजयति चूर्णितं
करोति, भज-णिच्-अण्, षष्ठी० जकारस्य लत्वम्।
लोहभाण्ड विशेष, इमामजिस्ता, खल।

अश्मभिद (सं० पु०) अश्मानमुद्भिद्य जायते।
१ पाषाणभेदी वृक्ष, जो दरखूत पथरके भेद कर
सकता हो। यह मूत्रक्षच्छ्र के लिये उपयोगी
होता है। पाषाणभेदी देखो।

अश्मभेद, अश्मभेदक, अश्मभिद देखो।

अश्ममय (सं० त्रि०) अश्मन्मय देखो।

अश्मयोनि (सं० पु०) अश्मा योनिरस्य। १ मर-
कत मणि, पन्ना। २ अश्मान्तक वृक्ष।

अश्मर (सं० त्रि०) अश्मन् चतुर्थ्यां र। प्रस्तर-
सम्बन्धीय, पथरीला।

अश्मरी (सं० स्त्री०) अश्मानं राति रा-क गौरादित्वात्
ङीष्। मूत्रक्षच्छ्र रोग विशेष, पथरी। यकृत, पैक्नि-
यस् एवं मूत्रयन्त्रमें पथरी हो सकती है। मनुष्य एवं
गोरू, घोड़ा, भेड़ा, शूकर, शशक प्रभृति और और
पशुओंके वृक्कमें भी पथरी होती है। फिर मूत्रा-
नुप्रणालीसे बह मूत्राशयमें आ जाती और धीरे धीरे
बढ़ती रहती है। कभी कभी कोई बड़ी पथरी
तौलमें आधसेर तक होती है।

वृक्कमें पथरी होनेसे ऐसा लक्षण दिखाई देता
है,—कटिमें पौड़ा, ऊपर दाबनेसे कुछ कोमल मालूम
होता है, पेशाबका रङ्ग खराब हो जाता है; मूत्र-
त्याग करनेके समय कभी कभी खून निकल आता

और शरीर क्षय एवं असुस्थ हो जाता है। कभी
कभी वृक्कमें भी पथरी बड़ी भारी हो जाती है।
ऐसी दशामें उरुसन्धिस्थानके निकट फूल और पाक
उठता है। तब नस्तर देकर पथरीको निकालना
पड़ता है।

वृक्कसे मूत्रप्रणाली होकर मूत्राशयमें पथरीको
आनेके समय रोगीको अत्यन्त कष्ट होता है। बार
बार पेशाब करनेकी इच्छा होती है। पेशाब थोड़ा
और खून सहित आता है। अण्डकोषमें दर्द होता
है और वह सिमटकर ऊपर उठता है। उसकी भीतर
भी बहुत पौड़ा होती है। ऐसी अवस्थामें रोगी कभी
कभी वमन भी करता है।

मूत्रानुप्रणालीसे मूत्राशयमें पथरीके आजानेपर
रोगीको बार बार पेशाब करनेकी इच्छा होती है।
मूत्रपथ, पुरुषाङ्ग एवं उरुसन्धिस्थलमें पौड़ा होती
है। कभी कभी पथरीके मूत्रपथके मुहपर आ जानेसे
हठात् पेशाब बन्द हो जाता है। पथरीकी उग्रतासे
कभी कभी पेशाबके साथ खून भी आता है। हृद-
यसे नीचे न आकर पथरी मूत्राशयमें ही पड़ले ही से
उत्पन्न होती है।

मूत्रयन्त्रकी पथरी अनेक प्रकारकी होती है।
उनमें छः प्रकारकी बहुत देखी जाती है। यथा,—

१। इउरेट् अव् एमोनिया। यह प्रायः शैशवा-
वस्थामें होती है। इस पथरीका रङ्ग कादे जैसा
होता है; ऊपर समतल, कभी कभी दानेदार भी
होती है। फुकानलमें कर्काश शब्द होता है; लिंकर-
पोटासीयम्के साथ एमोनिया निकलता है। कार्बोनेट
अव् पोटास वा सोडाके सहयोगसे गल जाती है।
इउरिक-एसिडकी पथरी उसे द्रव नहीं होती। इस
जातिकी पथरी बहुत कम देखनेमें आती है।

२। इउरिक एसिड वा लिथिक एसिडकी पथरी।
यह कटा रत्नवर्णकी होती है। ऊपरों भाग समतल
और कभी कभी दानेदार होता है। फुकानलसे
विक्षत हो जाती, तब उग्र गन्ध निकलता है,
अन्तमें दग्ध हो जानेपर थोड़ासा भस्म रह जाता है।
पोटास द्रवसे गल जाता है। इस द्रवमें सिकार

मिला देनेसे श्वेतवर्ण चूर्ण गिरता है। इस जातिकी पथरी सचराचर देखी जाती है।

३। अगजोलेट् अव् लाइम—यह कटा क्षण्य वर्णकी होती है। ऊपरी भाग ऊंचा नीचा होता है। फुकानलसे विक्षत हो जाती है। लवण-द्रावकसे द्रव होती है।

४। फस्फेट अव् लाइम—पांसुट कटावर्ण। समतल। फुकानलसे द्रव नहीं होती। लवणास्त्रसे द्रव हो जाती है।

५। एमोनिया मेगनेसियन फस्फेट—प्रायः श्वेत-वर्ण। उच्चनीच। फुकानलसे एमोनिया निकलता है। जलमिश्र द्रावकसे यह द्रव जाती है।

६। सिष्टिक् अक्साइड—इसका रङ्ग श्वेत होता है। ऊपरी भाग उच्चनीच। फुकानलसे धूम निकल जाता है। जलमिश्र लवणद्रावकसे द्रव हो जाती है।

मूत्राशयमें शलाकाखण्ड वा और कोई द्रव्य पड़ा रहनेसे उसके चारो तरफ भा नाना प्रकारके पदार्थ जम जाते हैं। उसका लक्षण भी पथरी ही जैसा है।

एलोपैथी चिकित्सा—इस रोगकी चिकित्सामें तीन उद्देश्य साधन करने पड़ते हैं। १—रोगीका बल बढ़ाना और कष्ट दूर करना। २—जिसमें नई पथरी पैदा न हो और पैदा हुई पथरी बढ़ने न पावे। ३—मूत्राशयसे पथरी निकालना।

प्रथम उद्देश्य साधनके लिये रोगीको पुष्टिकर लघु पथ्य देना। कमरमें दर्द रहनेसे वेलोडोनाके पल-स्तरसे बहुत कम पड़ जाता है, मूत्राशयसे खून निकलता हो तो टिस्टर छील दश बूंद जलके साथ अथवा पांच छः ग्रैन गेलिक एसिड सेवन कराना। हृदयसे मूत्रानुप्रणाली होकर पथरीके मूत्राशयमें उतरनेके समय अतिशय कष्ट होता है। ऐसी अवस्थामें गर्मजलसे स्नान, यवका मांड़, ७ बूंद अफीमका परिष्ठ सेवन प्रभृति व्यवस्थासे उपकार होता है।

द्वितीय उद्देश्य साधनके लिये पथरीके विधानो-पादानकी अवस्था समझकर चिकित्सा करनी पड़ती। उचित एसिड धातुसे निरामिष पथ्य प्रशस्त है। यवके

मांड़से विलक्षण उपकार होता है। ऐसा उपाय करना चाहिये जिसमें नित्य कोष्ठ परिष्कार हो। इस तरह पथरीमें चार औषध बहुत उपकार करती है। उसमें वाइकार्बोनेट अव् पोटाससे बहुत फायदा होता है। लिंकर पोटाससे भी विशेष लाभ होता है। फस्फेटाधिक्य धातुमें नाइट्रोमिडरटिक द्रावक सेवनसे रोगका प्रतीकार होता है। इसमें अधिक मानसिक चिन्ता करनी उचित नहीं। आग्जेलिक् एसिड आधिक्य धातुमें शर्करा सेवन करना मना है। इसमें भी नाइट्रो-मिडरटिक द्रावक उपकार करता है।

३—पथरीके मूत्राशयमें आ जानेपर अथवा मूत्राशयमें पथरी पैदा होनेपर पहली बहुत देरतक पेशाब न करना। उसके बाद जोरसे पेशाब करनेसे छोटे छोटे कण्डूर निकल सकते हैं। पथरी बड़ी हो तो नस्तर दिलाना चाहिये।

हमारे देशके वैद्य वरुण छालका काथ सेवन कराते हैं। इससे पथरी गल जाती है। सूत्रज्ञ देखो।

अश्मरौल्लच्छ (सं० पु०) मूत्रल्लच्छ, जिस बीमारीमें पेशाब न आये या कम उतरे।

अश्मरीन्न (सं० पु०) अश्मरीं हन्ति, हन्-टक्। वरुणवृक्ष, बिलासौ।

अश्मरीप्रिय (सं० पु०) सहाशालिधान्य, बड़ा धान। अश्मरीभेद (सं० पु०) पाषाणभेद वृक्ष, जो पेड़ पत्थर भेद कर सकता हो।

अश्मरीभेदन (सं० स्त्री०) पाषाणभेदक, अश्मरीन्न, जिससे पेशाब न उतरने या कम आनेकी बीमारी मिटे।

अश्मरीरिपु (सं० पु०) १ वृक्षचणक, बड़ा चना। २ ज्वार।

अश्मरीशर्करा (सं० स्त्री०) मूत्रल्लच्छ विशेष, पेशाबकी कोई बीमारी। इस रोगमें हृत्पीड़ा, सकथिसदन, कुचिशूल, कम्प, दृष्ट्या, ऊर्ध्वग अनिल, काष्ण्य, दीर्घत्व, पाण्डुता, अरोचक, पविपाक आदि लक्षण देख पड़ता है। (सुस्त)

अश्मरौहर (सं० पु०) अश्मरीं हरति, ह-पच्। १ देवधान्य, ज्वार। २ वरुण वृक्ष, बिलासौ।

अश्रमर्याहरणयन्त्र (सं० स्त्री०) अश्रमरी नामक मृत्तकच्छुके सञ्चय करनेका यन्त्र, जिस आलेसे बिगड़ा पेशाव इकट्ठा होवे।

अश्रमलाच (सं० स्त्री०) शिलाजित। (स्त्री०) अश्रमलाचा।

अश्रमवत् (सं० त्रि०) अश्रमा अस्थित मनुष्य मकारस्थ वकारः। १ पाषाणविशिष्ट, जिसमें पत्थर रहे। २ पाषाणकी तरह कठिन, जो पत्थर जैसा कड़ा हो।

अश्रमवर्म्न (वै० स्त्री०) पत्थरकी दीवार या ढाल।

अश्रमव्रज (सं० त्रि०) पाषाण-सम्बन्धीय, जो चटानमें शामिल हो।

अश्रमसम्भव (सं० स्त्री०) शिलाजतु।

अश्रमसार (सं० पु० स्त्री०) अश्रमनः सार इव। १ लौहादिधातु, लोहा। २ सारलौह, इस्पात।

अश्रमसारमय (सं० त्रि०) लौहनिर्मित, लोहेका बना हुआ।

अश्रमसारा (सं० स्त्री०) काष्ठकदली, पहाड़ी केला।

अश्रमसुता (सं० स्त्री०) पाठा, आकनादि, हरज्योरी।

अश्रमहन् (सं० पु०) पाषाणभेद, पत्थरचटा।

अश्रमहन्मन् (वै० स्त्री०) हन्यते अनेन हन्-मनिन् हन्म आयुधम्, अश्रमनिर्मितं हन्म शाक० तत्।

१ लौहनिर्मित अस्त्र, लोहेका बना हथियार।

“दिवस्यर्थाणि तन्ने भिर्युं वमश्रमहन्मसिः।” (अक् ७१०८१५ ।) २ विद्युताघात, बिजलीकी कड़क।

अश्रमहा, अश्रमहन् देखो।

अश्रमहत् (सं० पु० स्त्री०) १ कवाटवक्राचुप, किसी किस्मका दरखूत। २ शिलाजतु।

अश्रमादि—(अश्रमादिभोगे २ः । पा ४।१।८०) चातुर्थिक र प्रत्ययके निमित्त पाणिनि उक्त शब्दमणविशेष। अश्रमन्, यूथ, ऊष, मीन, नद, दर्भ, वृन्द, गुद, खण्ड, नग, शिखा, कोट, पाम, कन्द, कान्द, कुल, गह्व, गुड़, कुण्डल, पीन, गुह।

अश्रमार्म (सं० स्त्री०) अश्रमकारक सर्म, पथरी रोग।

अश्रमास्थ (वै० त्रि०) चटानसे बहनेवाला।

अश्रमरी (सं० पु० स्त्री०) अश्रमास्थस्य इरन्। पथरी रोग।

अश्रमोत्थ (सं० स्त्री०) अश्रमनः उत्तिष्ठति, उत्-स्था-क। शिलाजतु।

अश्रामा (सं० स्त्री०) श्वेतत्रिवृता, सफेद त्रिवृता।

अश्र (सं० स्त्री०) अश्रनुते नेत्रम्, अश्र-वाहु-रक्। १ चक्षुजल, आंखका पानी, आंसू। २ रुधिर, खून। ३ कोण, कोना।

अश्रव (सं० त्रि०) १ अश्वाहीन, एतवार न रखनेवाला।

अश्रवधान (सं० त्रि०) अश्र-धा-शानच्। अश्वाहीन, एतवार न रखनेवाला, जिसे अश्वा न रहे।

अश्रवडा (सं० स्त्री०) अश्र-धा-अड्। अश्रवरोपपन्न-वद्वतिः। पा ३।१।१०६। अश्वा। नञ-तत्। १ अभक्ति, ना एतवारी, दृढ़ विश्वास या प्रेमका न होना। २ अरोचक, भूख न लगनेकी बीमारी। (त्रि०) नञ-वहुव्री०। ३ अश्वाशून्य, बेएतवारी।

अश्रवेय (सं० त्रि०) अश्र-धा-यत्, नञ-तत्। आदरके अयोग्य, जो इज्जतकी काबिल न हो।

अश्रप (सं० पु०) राक्षस, आदमखोर, जो खून पीता हो।

अश्रम (सं० पु०) १ अश्रमनता, ताजगी। २ अश्रमका अभाव, मेहनतकी अदममौजूदगी, सुखी, काहिली। (वै० त्रि०) ३ अश्रमान्त, जो थका-मांदा न हो।

अश्रमण (वै० त्रि०) १ अश्रमान्त, बेतकान्, जो थका-मांदा न हो। (सं० पु) २ साधु वा बौद्ध महात्मा न होनेवाला व्यक्ति।

अश्रवण (सं० स्त्री०) श्रवणका अभाव, न सुनना, गुरानी-गोश, बहरापन।

अश्रातस् (वै० अव्य०) अपक्व रीतिसे, वे पकाये, कच्ची हालतमें।

अश्राव (सं० त्रि०) आह न करनेवाला, आहसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो आह कर न सकता हो।

अश्राद्धभोजिन् (सं० त्रि०) आह न सुद्धे, अश्र-णिनि असमर्थ ससा०। आहमें भोजन न करनेवाला, जो आहमें खाता न हो।

अश्राद्धिन् (सं० पु०) आश्रित भुक्तमनेन आश्रित इति ततो नञ्-तत्। अश्राद्धमोजिन् देखो।

अश्राद्धेय (सं० पु०) नञ्-तत्। आश्रितके अयोग्य, जो आश्रितके लायक न हो। पिताके घर अनूढ़ावस्थामें ऋतुमती होनेवाली कन्या साथ जो विवाह करता, वह ब्राह्मण अश्राद्धेय और अपांक्तोय ठहरता है।

अश्रान्त (सं० त्रि०) अम कर्तरि क्त, नञ्-तत्। १ अमरहित, बेतकान, जो थका-मांदा न हो। (अव्य०) २ अविश्राम, अनवरत, निरन्तर, लगातार, बराबर, हमेशा।

अश्राव्य (सं० त्रि०) श्रवण वा कथनके अयोग्य, जो सुनने या कहने लायक न हो।

अश्रि (सं० स्त्री०) आ-श्रि-इण् ङ्ङस्त्री डिङ्ङा-वश्च। १ गृहादिका कोण, मकान वगैरहका कोना। २ अस्त्रादिका अग्रभाग, हथियार वगैरहकी नोक।

अश्रित (वै० त्रि०) १ कठिन प्रवेश, जिसमें कोई पड़ूँच न सके। २ अनवरत, जो रुकता न हो।

अश्रिन् (सं० त्रि०) आश्रु बहानेवाला, जो रो रहा हो।

अश्रिमत् (सं० त्रि०) कोणविशिष्ट, नुकीला।

अश्री, अश्वि देखो।

अश्रीक (सं० त्रि०) नास्ति श्रौर्यस्य, बहुव्री० वा क्यप्। १ शोभाशून्य, बदनुमान, जो देखनेमें खूबसूरत न हो। २ हतभाग्य, कामबखूत, जो अच्छा न हो।

अश्रीमत् (सं० त्रि०) हतभाग्य, कान्तिशून्य, बदबखूत, बेरीनक, जो चमकीला न हो।

अश्रीर (वै० त्रि०) न श्री अश्री अस्त्यर्थे र। १ कुम्हिल, खराब। २ अमङ्गल, अशुभ, नागवार। बदनुमान, जो अच्छा लगता न हो। "अश्रीरं विव्रज्यताम्" अक्ष ६।२८६।

अश्रील (सं० त्रि०) असम्बद्ध, हतभाग्य, बदबखूत, जो बढ़ता न हो।

अश्रु (सं० स्त्री०) अश्रुते व्याप्नोति नेत्रमदर्शनाय अश्रु-र निपात्यते, अथवा अश्रु-डुन्-रट् च। नेत्रजल, अश्रु, आँसू, जो पानी आँखसे निकलता हो। काव्यके नव साहित्यिक अनुभावोंमें यह भी आता है।

अश्रुकणा (सं० स्त्री०) नेत्रजलका विन्दु, अश्रुका कतरा, आँसूका बूँद।

अश्रुत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ सुना न जानेवाला, जो सुन न पड़ता हो। २ वेदविरुद्ध, जो वेदसे मिलता न हो। (पु०) ३ कृष्णके पुत्र विशेष। ४ व्युत्तिमत्के पुत्र।

अश्रुतपूर्व (सं० त्रि०) पहले सुना न जानेवाला, जो पेश्वर सुन न पड़ा हो।

अश्रुतवत् (सं० अव्य०) न सुनेकी तरह, गोया सुन ही न पड़ा हो।

अश्रुति (सं० स्त्री०) १ श्रवणका अभाव, सुन न पड़नेकी हालत। २ वेद द्वारा अप्रतिपादित विषय, जो बात वेद बताता न हो।

अश्रुतिधर (सं० त्रि०) १ श्रवण पर आघात न लगाता हुआ, जो सुननेपर चीट मारता न हो। २ वेद न जाननेवाला।

अश्रुनाली (सं० स्त्री०) भगन्दर रोग।

अश्रुपरिपूर्णाक्ष (सं० त्रि०) नेत्रमें जल भरा हुआ, जिसके आँखमें आँसू भरे।

अश्रुपरिप्लुत (सं० त्रि०) नेत्रजलसे नहाया हुआ, जो आँसूसे तर पड़ गया हो।

अश्रुपात (सं० पु०) इ-तत्। क्रन्दन, नेत्र-जलका प्रवाह, रुलाई, आँसूका गिरना।

अश्रुपूर्ण (सं० त्रि०) नेत्रजलसे भरा हुआ, अश्रुसे लबालब, जो आँसूसे भरा हो।

अश्रुपूर्णाकुल (सं० त्रि०) रोते और दुःख उठाते हुए, जो रोते और झुब रहा हो।

अश्रुपूर्णाक्ष, अश्रुपरिपूर्णाक्ष देखो।

अश्रुसुख (सं० त्रि०) अश्रुपूर्ण सुखं यस्य। १ नेत्र-जलपूर्ण सुखयुक्त, जिसके सुँहमें आँसू भरा रहे। (पु०) २ गतिविशेष, कोई चाल। ज्योतिषमें—

मङ्गल जब अपने उदय-नक्षत्रसे दशवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्रपर टेढ़ा चलता, तब अश्रुसुख निकलता है।

अश्रुलोचन (सं० त्रि०) नेत्रमें अश्रु रखनेवाला, जो आँखमें आँसू भरे हो।

अश्वपूहत (सं० त्रि०) अश्व द्वारा ताड़ित, जो आंसू से सताया गया हो।

अश्वेयस् (सं० त्रि०) न श्रेयान्। १ हीनतर, बदतर, खराबसे खराब। २ अकल्याण, बुरा, नाकाम, जो फायदेमन्द न हो। (क्ली०) ३ हीनतर होनेकी अवस्था, बदतरी, खराबी, बुराई।

अश्वेष्ठ (सं० त्रि०) १ अनुत्तम, नीचतर, अवतर। २ कुत्सित, खराब, जो भला न हो।

अश्वोत्थिय (सं० पु०) १ वेद न पढ़नेवाला ब्राह्मण, जो ब्राह्मण वेद पढ़े न हो। २ ईश्वरका ज्ञान न रखनेवाला व्यक्ति, जो वेदान्तो न हो।

अश्वीत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। श्रुतिविरुद्ध, जो वेद से मिलता न हो।

अश्लाघनीय, अश्लाघ्य देखो।

अश्लाघा (सं० स्त्री०) श्लाघाका अभाव, शील, सौजन्य, खुदशिक्षासीकी अदममौजूदगी, शायस्तगी लियाकत।

अश्लाघ्य (सं० त्रि०) १ अप्रशंसनीय, निन्द्य, नाकाम, जो तारीफ़के लायक न हो। २ नीच, कमीना।

अश्लिष्ट (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ असङ्गत, नामुनासिब, जो ठीक न हो। २ असम्बन्ध, बेसिलसिला, जो मिला-जुला न हो। ३ श्लेषशून्य, भावरहित, जो पेचीदा न हो।

अश्लीक, अश्लीक देखो।

अश्लील (सं० स्त्री०) श्रियं लाति गृह्णाति, ला-क रेफस्य लकारः, श्रीरस्तस्य लच् वा, पूर्ववत् रेफस्य लत्वं नञ्-तत्। १ कुत्सित, कुरूप, नागवार, बदनुमान्। २ गालीगुफ़्ती वाला, खराब, फइड़। (क्ली०) ३ गालीगलौज, तूतड़ाका, अवे-तवे। ४ लज्जाजनक वाक्य, शर्मकी बात। ५ आश्लेषभाषा, गंवारू बोली। ६ काव्यका दोष विशेष।

अश्लीलता (सं० स्त्री०) गाली-गलौज, फइड़पन।

अश्लेषा (सं० स्त्री०) न श्लिथते, आलिङ्गते पित्रादिभि यत्रोत्पन्नः शिशुराषण्मासं, श्लिष-घञ्, नञ्-तत्। १ सत्ताईसके अन्तरगत नवमं नवत्रय। यह

चक्राकार और षड्-नक्षत्रात्मक है। सर्प इसका अधि-देवता है। अश्लेषा नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य दुष्ट और लोकोत्प्रेडक होता है। यदि इसी नक्षत्रमें पुत्रोत्पन्न हो, तो छः मासतक उसका सुंह देखना न चाहिये। उपरोक्त कारणसे ही इस नक्षत्रको अश्लेषा कहते हैं। २ अनेक, पृथक्त्व, जुदाई, सुफारकृत, अलाहदगी।

अश्लेषाज (सं० पु०) अश्लेषा नक्षत्रे जायते; जन-ड, ७-तत्। केतुग्रह, दुमदारसितारा।

अश्लेषाभव, अश्लेषाज देखो।

अश्लेषाभू, अश्लेषाज देखो।

अश्लेषाशान्ति (सं० स्त्री०) अश्लेषायां जनन-निमित्ता शान्तिः, शाक० तत्। अश्लेषा नक्षत्रमें जन्म-निमित्त शान्ति कर्म। गृहशान्ति देखो।

अश्लोन (दै० त्रि०) अपङ्गु, जो लंगड़ा न हो।

अश्व (सं० पु०) अश्वनुते व्याप्नोति अध्वानं अश्व- (सम्पत्ति लटिकनिष्ठाटशित्यः कन्। उण् १।१४८) इति क्वन्। घोटक। अश्व शब्दके ये कई पर्याय पाये जाते हैं,—पौति, पोती, वीति, घोट, घोटक, तुरग, तुरङ्ग, तुरङ्गम, बाजो, वाह, अर्वा, गन्धर्व्व, हय, सन्धव, सप्ति। निरुक्तमें अश्वके ये २६ नाम लिखे हैं—अत्यः, हयः, अर्वा, वाजी, सप्तिः, वज्रिः, दधिक्राः, दधिक्रावा, एतग्वा, एतशः, पेहः, दीर्गाहः, उच्चैःश्रवसः, तावर्गः, आशुः, व्रध्नः, अरुषः, मांघत्वः, अव्यथयः, श्वेनासः, सुपर्णाः, पतगाः, नरः, ह्यार्याणाम्, हंसासः, अश्वः।

कौन अश्व किस देवताका है, निरुक्तमें यह भी कहा गया है। १—हरी इन्द्रस्य। २—रोहितोऽग्नेः। ३—हरित आदित्यस्य। ४—रासभावश्चिनोः। ५—अजाः पूषः। ६—पृषत्यो मरुताम्। ७—अरुण्यो गाव उषसः। ८ श्यावाः सवितुः। ९—विश्वरूपा वृहस्पतेः। १० नियुतो वायोः।

१ इन्द्रके अश्वका नाम हरि है, २ अग्निका रोहित, ३ आदित्यका हरित, ४ अश्विनीकुमारका रासभ, ५ पूषाका अज, ६ मरुतका पृषतौगण, ७ उषस्का अरुणौ गो, ८ सविताका श्याम, ९ वृहस्पतिका विश्वरूप, १० वायुका नियुत।

अमृतादि सप्त स्थानसे घोड़ेकी उत्पत्ति हुई है। इसलिये अश्वोत्पत्तिस्थान कहनेसे सात संख्या समझी जाती है।

घोड़ा किस स्थानका आदि जन्तु है, इस विषयमें बहुत मतभेद है। वेदमें घोड़ेकी बात लिखी है। अतएव पहले ही एशियाके नाना स्थानोंमें घोड़े पाये जाते थे और आर्यगण घोड़ोंको रथमें जोतते थे, इसमें सन्देह नहीं। कोई कोई कहते हैं, कि अफ्रिका घोड़ाका आदि वासस्थान है और मिश्रके आदिमियोंने पहले पहल घोड़ा पोसना शुरू किया था। एशिया, अफ्रिका, युरोप और अमेरिकामें बहुत दिनोंके मरे हुए ममथ और गेड़ेकी हड्डियोंके साथ घोड़ोंकी हड्डियां भी पाई जाती हैं। कोलम्बसने जिस समय अमेरिका आविष्कार किया था, उस समय वहां घोड़े न थे। इसीसे हड्डी देखकर विश्वास होता है, कि पहले अमेरिकामें घोड़े थे, परन्तु कोलम्बसके समयमें वहांके घोड़ोंका नाश हो गया था। युरोपियोंके वहां घोड़ा छोड़ देनेसे अब फिर वहां बहुतसे जङ्गली घोड़े हो गये हैं।

स्थानभेदसे घोड़ोंकी आकृति और वर्ण नाना प्रकारका होता है। कोई घोड़ा बड़ा और कोई छोटा होता है। सचराचर अल्प रक्तवर्ण, श्वेत एवं कृष्ण वर्णके घोड़े देखनेमें आते हैं। अफ्रेलिया, अरब, और बरबरीके घोड़ेही अधिक प्रसिद्ध हैं। कच्छ देशका घोड़ा मझोले डोलका होता है। और ब्रह्मदेशका छोटा घोड़ा बलवान्, कष्टसहिष्णु, बुद्धिमान् और प्रभुभक्त होता है। अरबी घोड़े इन्हीं सब गुणोंके लिये अधिक विख्यात हैं।

पहले आर्यगण घोड़ा काटकर यज्ञ करते थे, उसका नाम अश्वमेध है। यज्ञ समाप्त हो जानेपर याज्ञिकगण उसके हृदयकी वसा और मांससे हाम करते और कुछ मांस खाते भी थे। आजकल किसी किसी देशके आदिमी घोड़ेका मांस खाते हैं। फ्रान्समें इसका बहुत चलन है। लण्डनमें कुत्ते और विज्ञियोंके खानेके लिये घोड़ेका मांस बिकता है। कितने ही जातियां घोड़ेका दूध पीती हैं। काष्ठाक लोग

घोड़ीकी दूधसे एक प्रकारकी मदिरा तय्यार करते हैं। घोड़ेके केशर और पूछके बालसे चिड़िया फसानेकी फन्दा, जाली, पापोष और एक प्रकारका कपड़ा बनाया जाता है। इसके चमड़ेसे भिज मढ़ी जाती है।

अस्तबलको साफ सुथरा और सूखा रखना और ऐसा बनाना चाहिये, जिसमें हवा खूब आती हो। चना, यव, गेहूं, यव और गेहूंकी भूसी, सूखी घास घोड़ेका खास खुराक है। हमारे देशके धनी घो, चीनी और गुड़ भी घोड़ेको खिलाते हैं। डाकपुरुषके वचनानुसार घोड़ा साठ वर्ष जीता है। पालतू घोड़ा तीस, पैंतौस और चालीस वर्ष तक जीता रहता है।

घोड़ा चौपाया है। शरीरके परिमाणानुसार गदहेसे इसके कान छोटे होते हैं। देह और पूंछमें बाल होते हैं। इसके खुर जुड़े रहते हैं। चारों पैरोंमें घुटनेके ऊपर भीतरका भार अस्थिमय चिन्ह होता है। इसीसे लोग कहते हैं, कि पहले घोड़े के पंख होते थे। वे पंख अब कट गये हैं, केवल उनके चिन्ह मात्र रह गये हैं। बड़े आदमी पक्षी-राज घोड़ेका किस्सा भी कहते हैं। पक्षीराज घोड़ेके पर होते हैं, उसीसे वह शून्यमें उड़ सकता है। घोड़ा खड़ा खड़ा साता है।

आइन्-इ-अकबरीमें घोड़ा सात श्रेणियोंमें विभक्त किया गया है,—अरबी, पारसी, मुजन्नसी, तुर्की, आबू, ताजो और जङ्गली। घोड़ेके पैर जंचा कर दीर्घभावसे चलनेको टाप कहते हैं। पैरको कर धीरे धीरे चलनेका नाम कदम है। पीठको हिलाकर दौड़नेको दुष्का कहते हैं। लोहेके त्रुससे घोड़ेका खरहरा किया जाता है। घोड़ेके टापमें लोहेकी नाल बांधी जाती है, इससे दौड़नेके समय पैरोंमें चोट नहीं लगती। घोड़ेकी पीठपर बैठनेके आसनका नाम जीन है। जीन चमड़े वा कपड़ेका बनता है। जीनके दोनों ओर पैर रखनेके लिये रिक्राब लटकती रहती है। घोड़ेके मुहके लगामको खीचकर इशारा करनेसे चाहे जिधर ले जा सकते हैं। पहले सूतजातिवाले ही घोड़का रथ चलाते थे। आजकल नल अश्वविद्यामें विशेष

दत्त थे। (महामारत वन०)। जयादित्यके 'अश्वत्रैद्यक' और नकुलके अश्वचिकित्सामें सर्वप्रकार अश्वके रोगकी चिकित्सा सविस्तार वर्णित हैं। घोटक देखो। रति-शास्त्रानुसार अश्वजातीय पुरुष। उसका लक्षण—काठके समान देह, घुट, निर्भय, मिथ्यावादी, दरिद्र और हादशाङ्गुल मीढयुक्त।

अश्वक (सं० त्रि०) १ अश्वक सदृश, अश्व-जैसा, घोड़े के मानिन्द, जो घोड़ेकी तरह काम करता हो। (पु०) २ टट्टू, छोटा घाड़ा। ३ खराब घोड़ा, जो घोड़ा अच्छा न हो। ४ आवारा घोड़ा, जिस घोड़े के मालिकका पता न मिले। ५ कोई घोड़ा। ६ कुलिङ्ग पक्षी, गरगैया। ७ कोई प्राचीन जनपद। भारतके उत्तरपश्चिमप्रान्तमें अवस्थित था। ग्रीक पुराविदोंने Assakani नाममें उल्लेख किया।

अश्वकन्दक (सं० पु०) अश्वगन्धा, असगंध।

अश्वकन्दा (सं० स्त्री०) अश्वस्य गन्धः इव गन्धः कन्दे यस्याः बहुव्री० वा क्यप्। १ अश्वगन्धा, असगंध। २ वनस्पति विशेष, कोई जड़ी बूटी।

अश्वकन्दिका, अश्वकन्दा देखो।

अश्वकर्ण (सं० पु०) अश्वस्य कर्ण इव पत्रं यस्य। १ अश्वका कर्ण, घोड़ेका कान। २ शालवृक्ष विशेष, किसी किस्मके शालका पेड़। ३ लताशाल। इसका अपर पर्याय जरणद्धम, तार्क्ष्यप्रसव, शस्यसम्बरण, धन्य, दीर्घपर्ण, कुशिक और कौशिक है। ४ पलाश भेद, किसी किस्मके ठाकका पेड़। ५ पर्वत विशेष, कोई पहाड़। (स्त्री०) ६ काण्डभग्ननामा अस्थिभङ्ग विशेष। हड्डियोंका खास किस्मसे टूट जाना।

अश्वकर्णक, अश्वकर्ण देखो।

अश्वकर्णिका (सं० स्त्री०) अश्वकर्ण देखो।

अश्वकातरा (सं० स्त्री०) हयकातरा, घोड़ाकाथर। यह तिक्त, वातघ्न और दीपन होती है। (राजनिषधु)

अश्वकातरिका, अश्वकातरा देखो।

अश्वकाथरिवा, अश्वकातरा देखो।

अश्वकिनी (सं० स्त्री०) अश्वस्य कं मुखं तत् सदृश-कारोड स्यस्य इति स्त्रीत्वात् ङीप्। अश्विनी नक्षत्र।

अश्वकुटी (सं० स्त्री०) तवेचा, अस्तबन, घोड़ोंके रहनेकी जगह।

अश्वकुशल (सं० त्रि०) घोड़ा पहचाननेवाला, जो घोड़ेपर खूब चढ़ता हो।

अश्वकीवद, अश्वकुशल देखो।

अश्वकन्द (सं० पु०) १ देवदेनापति विशेष। २ पक्षी, कोई चिड़िया।

अश्वकान्ता (सं० स्त्री०) १ सङ्गीतशास्त्रोक्त मूर्च्छना विशेष। इसका सरगम इस तरह बंधा है,—गमपधनि सरगमपधनि। २ तन्त्रोक्त जनपदभेद।

अश्वखरज (सं० पु०) अश्वस्य खरी च, अश्वस्य खरस्य वा ताभ्यां जायते पुंवद्भावः। अश्वतर, खच्चर।

अश्वखुर (सं० पु०) अश्वस्य खुरमिव आकृतिरस्य। १ नखीनामक गन्धद्रव्य, नख। २ घोटकखुर, घोड़ेका सुम।

अश्वखुरा (सं० स्त्री०) खेतापराजिता, कौवाठेंठी। अश्वखुरी, अश्वखुर देखो।

अश्वगति (सं० स्त्री०) १ घोटककी गति, घोड़ेकी चाल। २ छन्दोविशेष, कोई बहर। इसमें चार चरण और प्रत्येक चरणमें सोलह अक्षर रहता है।

अश्वगन्धा (सं० स्त्री०) अश्वस्य गन्ध इव गन्धो मूले यस्याः। वृक्षविशेष। (Withania Somnifera) अश्वगन्धाका अपर पर्याय यह है—हयगन्धा, वाजिगन्धा, अश्वगन्धिका, वल्गा, तुरगगन्धा, कम्बुका, अश्वारोहिका, कम्बुकाष्ठ, अवरोहिका, बाराहकर्णी, वातघ्नो, श्यामला, कामरूपिणी, काला, प्रियकरी, गन्धपत्री, हयप्रिया, वराहपत्री।

वेद्यशास्त्रके मतमें—यह कटु, उष्ण, तिक्त, वलहर और शुक्रवृद्धिकारी है। इससे वायु, काश, चय, व्रण, ज्वर प्रभृति अनेक रोग नष्ट होता है। यह पेड़ भारतवर्षके उष्ण एवं शुद्ध स्थानमें उत्पन्न होता है। यहां वङ्गालादि देशमें भी कहीं-कहीं देखा जाता है। अधिकतर यहां इसके परिवर्तनमें आड़शू (महुसा) वृक्ष व्यवहृत होता है। बहुत लोग कहते हैं कि अश्वगन्धा और आड़शू एक ही गाछ है।

अश्वगन्धाके मूल बलकर, धातुपरिवर्तक, शुक्रवृद्धि-
कर होता है। यह क्षय, काश, बालकोंका दीर्घ-
रोग एवं वातकी पीड़ामें विशेष उपकार करता है।
कोई-कोई कहते हैं, कि इससे प्रस्राव और निद्रा
होती है। पृष्ठाघात, पुरातन क्षत एवं किसी स्थान
फूल उठने पर इसके पत्ते और छानका लेप देनेसे
उपकार होता है। अस्थिभङ्ग (हड्डी टूट) हो जाने
पर या वातपीड़ा, ग्रन्थिपीड़ादिमें इसका लेप यन्त्रणा
निवारण करता है। इसका फल मूलकर होता है।
इससे अश्वगन्धाष्टत, अश्वगन्धातैल प्रभृति नानाप्रकार
औषध प्रसृत होता है।

अश्वगन्धाष्टत (सं० क्लो०) औषध विशेष ।
यह चार प्रकारका होता है। इसमें पहला बाल-
रोगाधिकारमें गुणद है। बनानेकी रीति यह है—
घृत ४ शराव, अश्वगन्धा कल्क १ श०, दूध ४ शराव,
जल १६ शराव। यह सब चीज एक साथ पचानेसे
तैयार होता है। मतान्तरसे इसमें दूध ४० शराव
मिलानेको भी लिखा है। (सारकौमुदी, मेघनगरवावली)

दूसरा वातव्याधिहितकारक। अश्वगन्धा १६
शराव ६४ शराव जलमें पाककरके शेष १६ शराव
कषाय तैयार करना चाहिये। पीछे घृत ४ शराव
और दूध १६ शराव मिलाकर विधिपूर्वक पचाया
जाता है। (चक्रदत्त—वातव्याधिचिकित्सा)

तृतीय और चतुर्थ प्रकार—वातव्याधि एवं वृष्यमें
उपकारक है। इसे प्रसृतकरनेकी विधि—अश्वगन्धा
१२॥० शराव जल ६४ शरावका पादशेष १६ शराव
सुपवित्र क्वाथ एवं छागमांस २५श० जल १२८ शरावमें
खूब पाक करके शेष रस ३२ श०, गव्य दूध १६ श०
तथा काकोली, चीरकाकोली, मधुक, मेदा, महामेदा,
जीवन्ती, जीवक, बला, इलायची, शतावरी, द्राक्षा,
विदारो, कृष्णजीरक, सुवर्णपर्णी, शुक्रशिव्वा, पोपलौ,
ऋषभक यह सब द्रव्य प्रत्येक १ कर्ष, एकत्र मिलाकर
पाक करना चाहिये। जब पाक सिद्ध हो जाय, तब
भागपरसे छतार शीतल होनेपर चीनी ४ पल और
मधु ८ पल मिलाना होता है। (प्रयोगदत्त)

अच्छी जगहमें उत्पन्न भया हुआ अश्वगन्धा १००

पल शुभदिनमें लाकर खूब महीन कूटकरके १ द्रोण
जलमें धीरे धीरे पाक करना, जब चतुर्थींश शेष रह
जायतो छतारकर कपड़ेसे छान लेना चाहिये। फिर
घृत १ प्रस्थ एवं गौका दूध ३ प्रस्थ तथा २०० पल-
मांसका पूर्वोक्त प्रकारसे निकाला हुआ कषाय।
काकोली, चीरकाकोली, मेदा, महामेदा जीरक,
कृष्णजीरक, स्वयंगुप्ता, ऋषभक, एला, मधुक, रुद्धीका,
शूर्पपर्णी, जीवन्ती, चपला, बाला, नारायणी, विदारो
यह सब औषधियोंका खूब महीन पीसा हुआ चूर्ण
डालकर एकत्र पाक करना चाहिये। पाकसिद्ध तथा
शीतल हो जानेपर मधु एवं चीनी मिलानी होती है।

(रसरत्नाकर, मेघनगरवावली)

अश्वगन्धातैल (सं० क्लो०) औषधभेद। यह दो प्रकारका
होता है। पहला वातव्याधिमें हितकर है। इसके
तैयार करनेकी रीति इस तरह है—तिलका तैल ४
शराव अश्वगन्धा १२॥० शराव और जल ६४ शरावका
शेष १६ शराव क्वाथ, मृणालादिका मिला हुआ कल्क
१ शराव एक साथ विधिपूर्वक पकाना चाहिये। (चक्रदत्त)

दूसरा रसायनाधिकारमें उपकारक। इसमें
कल्कके लिये अश्वगन्धा, कुष्ठ, मांसी, सिंहीफल यह
सब १ शराव, दूध १६ शराव, तिलका तैल ४ शराव।
एकत्र पचानेसे तैयार होता है। (चक्रदत्त)

अश्वगन्धाद्यचूर्ण (सं० क्लो०) औषधविशेष। यह
चूर्ण स्वरभङ्गनाशक है। अश्वगन्धा, अजमोदा, पाठा,
त्रिकटु (सोठ मिर्च पीपल) त्रिक, शतपुष्प, ब्रह्म-
वीज, सैन्धव यह सब सम भाग और इसके अर्ध
भाग वचको एक साथ पीस कर चूर्ण तैयार
करना चाहिये। फिर मधु और घीके साथ १ कर्ष-
मात्र प्रति दिन सेवन करनेसे बहुत फायदा दिख-
लाता है। (रसरत्नाकर)

अश्वघोष भदन्त—एक प्राचीन बौद्ध आचार्य। सुभाषिता-
वलीमें इनके कितने ही कविता उद्धृत हुआ हैं।

अश्वदेव—प्राचीन संस्कृत कवि। सुभाषितावलीमें इनका
उल्लेख है।

अश्वमोयुग (सं० क्लो०) अश्व द्वित्वे मोयुगम्।

अश्वगोष्ठ (सं० स्त्री०) अश्वानां स्थानम्, स्थानार्थं गोष्ठच्। अश्वशाला, अस्तबल, घोड़साल।

अश्वग्रीव (सं० पु०) अश्वस्य ग्रीवा इव ग्रीव यस्य। १ विष्णुहृष्टा असुर विशेष। यह कश्यपको दनु नाम्नी स्त्रीसे पैदा हुआ था। २ हयग्रीव नामक विष्णुका अवतार विशेष। हयग्रीव देखो।

अश्वघास (सं० पु०) अश्वका शहल, घोड़ेकी चरागाह, जिस मैदानमें घोड़े चरें।

अश्वघोष—एक सुप्रसिद्ध बौद्धाचार्य और दार्शनिक कवि। इन्होंने बुद्धचरित, चतुःशतिका प्रभृति बहुत संस्कृत ग्रन्थ और अनेक संस्कृत कविता लिखे हैं। दार्शनिक बौद्ध-समाजमें 'अश्वघोष-भदन्त' नामसे प्रसिद्ध हैं। यह सुप्रसिद्ध आचार्य पार्श्वके शिष्य थे। सुतरां माध्यमिकाचार्य नागार्जुनके पूर्व हुये थे। महायान-सम्प्रदाय उन्को पूर्वाचार्य बोलते हैं। ४०५ ईस्वीमें कुमारजीव चीनभाषामें अश्वघोष-चरितका अनुवाद किया था।

२ परवर्ती बौद्धाचार्य, यहांके आर्यशूर कहते हैं। इनकी रचो अनेक संस्कृत कविता प्रचलित है।

३ काश्मीरके कर्कोटक-राजवंशका प्रतिष्ठाता दुर्लभवर्धनके पूर्व पुरुष। ऐसीआटिक सोसाइटीसे प्रकाशित राजतरङ्गिणीमें 'अश्वघामकायस्थ', स्ट्रेइन साहबके प्रकाशित राजतरङ्गिणीमें 'अश्वघाम-कायस्थ' एवं काश्मीरके संगृहीत विश्वकोष-कार्यालयमें रचित ३०० वर्षका प्राचीन हस्तलिखित राजतरङ्गिणीकी पोथीमें अश्वघोष-कायस्थ नाम भी परिचित होता है।

अश्वघ्न (सं० पु०) अश्वं हन्ति, हन्-टक् उप० समा०। श्वेतकरवीर वृक्ष, सफेद कनेरका पेड़।

अश्वचक्र (सं० स्त्री०) १ जयाचार्योक्त चक्र विशेष। इसमें अश्वके चिह्नसे शुभाशुभ देखते हैं। २ घोड़ेका फेरा। शतरञ्जमें मात न दे घोड़ेकी चालसे बाद-शाहको सुमाते रहना भी अश्वचक्र कहाता है। ३ अश्वसमूह, घोड़ेका ज़खीरा। (पु०) ४ शम्बर दैत्यके सेनापति विशेष। जाम्बवतीपुत्र शम्बने इन्हें मार डाला था।

अश्वचलनशाला (सं० स्त्री०) घोड़दौड़का मैदान, जिस जगह घोड़े दौड़ाये जायें।

अश्वचिकित्सक (सं० पु०) अश्ववैद्य, सलोतरी, बेतार, घोड़ेकी दवा देनेवाला हकीम।

अश्वचिकित्सा (सं० स्त्री०) घोड़ेके रोग निवारणका उपाय, बेतारी, सलोतरीपन। शालिहोत्र, नकुल, जयादित्य प्रभृति रचित कई प्राचीन अश्वचिकित्सा ग्रन्थ विद्यमान हैं।

अश्वचेष्टित (सं० स्त्री०) अश्वस्य चेष्टितम्, इ-तत्।

१ अश्वका चेष्टित, घोड़ेका खड़। २ अश्वका काय-कृत व्यापार विशेष, जो काम घोड़ा करता हो। ३ दैव शुभ और अशुभसूचक चिह्न, घोड़ेके जिस निशांसे आगिका भलाबुरा जान पड़े। वृहत्-संहितामें इसका विवरण यों लिखा है,—घोड़ेका सर्वाङ्ग जल या अग्निकणायुक्त हो जानेसे दो वर्ष तक वृष्टि नहीं पड़ती। मेढ़ जलनेसे राजाका अन्तःपुर नष्ट होता है। उदर प्रदीप्त होनेसे धनागार शून्य पड़ता है। गुह्य और पुच्छमें आग लगनेसे डार होती, एवं सुख और शेष अङ्गजलनेसे जय मिलता है।

अश्वजघन (सं० पु०) नरघुड़, जिस शख्सके जिस्मका निचला हिस्सा घोड़े-जैसा रहे।

अश्वजित् (वै० त्रि०) १ विजय द्वारा अश्व पाने-वाला, जो जीतसे घोड़े लेता हो। (पु०) २ बौद्ध भिक्षु विशेष।

अश्वजौवन (सं० पु०) चणक, चना, जिसे खाकर घोड़ा जीता है।

अश्वतर (सं० पु०) अनुरश्ता, अश्व-तनुत्वे ष्टरच्।

१ अश्वखरज, खच्चर। इसका मांस बख्य, वृंहण और कफपित्तकर होता है। (मदनपात्र) २ सर्प-विशेष। यह भूतलवासी नागोंके प्रधान हैं। ३ गन्धर्व विशेष। ४ बछेड़ा। स्त्रियां ङीष्। अश्वतरो, यह अग्निकी वाहन। (ऐतरेयब्राह्मण ३।१५३)

अश्वतीर्थ (सं० स्त्री०) तीर्थविशेष। यह स्थान गङ्गा किनारे कान्यकुब्जके निकट अवस्थित है।

अश्वत्थ (सं० पु०) अश्वे पर्वतादिव्यासे प्रदेशे तिष्ठतीति स्था-क सुकारस्य तकारः। खनामख्यात वृक्ष-

विशेष। (Ficus religiosa) इसका हिन्दी नाम पीपर वा पीपल है। पीपल शब्द पिप्पल शब्दका अपभ्रंश है। अनेक स्थानोंमें यह पांकड़ नामसे प्रसिद्ध है, परन्तु पांकड़ स्वतन्त्र वृक्ष है।

अश्वत्थके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—बोधिद्रुम, चलदल, पिप्पल, कुचराशन, अच्युतावास, चलपत्र, पवित्रक, शुभद, बोधिपत्र, याज्ञिक, गजभक्षण, श्रीमान्, चौरद्रुम, विप्र, मङ्गल्य, शामल, गुह्यपुष्प, सेव्य, सत्य, शुचिद्रुम, धनुवृक्ष।

अश्वत्थवृक्ष कई प्रकारका होता है। यथा—गर्हभाण्ड, गजहण्ड, वेलिया पिप्पल, नन्दोवृक्ष इत्यादि। अश्वत्थका वृक्ष बहुत बड़ा होता है। चारों ओर इसकी शाखा प्रशाखाओं फैल जाती हैं, चैत्र वैशाखके महीनेमें जब नये पत्ते निकलते और वायुके झोकेसे भर भर हिलते हैं, तब इस वृक्षकी अपूर्व शोभा दिखाई देती है। किसी किसी पीपलके नये पत्ते हरित मिश्रित खेतवर्णके और किसीकी लाल होते हैं; इसीसे कवि लोग स्त्रियोंके करपल्लवके साथ इसकी तुलना करते हैं। पीपलके पेड़में आघात करनेसे सफेद दूध निकलता है। चिड़ीमार इसीसे चिड़िया फसाते हैं। इसके दूधसे गटापार्चा बन सकता है। यह वृक्ष डूमर जातिका है, इसीसे इसमें फूल नहीं लगते। यह एक वर्षमें दो बार फलता है। फल जब पकते हैं तो चिड़ियां उन्हें खाती हैं। हाथी, गोरू, भैंस, बकरी, भेड़ आदि जन्तु इसके पत्तेको खाना बहुत पसन्द करते हैं।

अश्वत्थ हमलोगोंके देशका पवित्र वृक्ष है। न इसका पत्ता तोड़ना चाहिये और न इसे काटकर लकड़ी बनानी चाहिये। पर इस नियमका प्रतिपालन सब कोई नहीं करते। वैशाख महीनेमें जो कितने इसका पत्ता नहीं तोड़ते और शुद्ध लोग प्रायः उस पेड़की काटना नहीं चाहते। अश्वत्थवृक्ष स्वयं विष्णुरूपी है। पद्मपुराण उत्तरखण्ड १६० अध्यायमें लिखा है, कि एकदिन गौरीशङ्कर एकान्तमें क्रीडा-कौतुक कर रहे थे, उसी समय देवताओंने अग्नि-को आश्वत्थके वेशमें वहाँ भेज दिया। अग्निने वहाँ आकर

पर सुखमें बाधा पड़नेके कारण पावतीने क्रुद्ध होकर देवताओंकी यह शपथ दिया,—‘तुमलोग वृक्षयोनि प्राप्त हो।’ उसी शपथसे ब्रह्मा पलाशवृक्ष, विष्णु अश्वत्थ-वृक्ष एवं रुद्र वटवृक्ष हुए। भगवद्गीतामें भी लिखा है, कि श्रीकृष्णने अर्जुनको कहा था,—“सर्व वृक्षानि सुभे अश्वत्थवृक्ष समभक्ता।”

अश्वत्थवृक्षके मूलमें थाला बनाकर वैशाख मासमें जल देनेसे महा फल होता है। पीपलके पेड़की देखकर प्रणाम करनेसे आयु और सम्पद बढ़ता है। अगर वांयां अङ्ग करके अथवा और कोई अशुभ लक्षण दिखाई पड़े, तो पीपलके मूलमें जल देनेसे कोई अनिष्ट नहीं होता। जल देनेका मन्त्र,—

“वृक्षः स्यन्दं मुजस्यन्दं तथा दुःखप्रदर्शनम्।

श्व पाच समुत्थानमश्वत्थ शमशाय मे ॥”

वैद्यशास्त्रके मतानुसार अश्वत्थ मधुर, कषाय और शीतल हैं। इससे कफ, पित्त और दाह नष्ट होता है। इसका फल शीतल और अतिशय हृद्य है। इससे रक्त, पित्त, विष, दाह, छर्दि, शोष, अरुचि एवं योनिदोष नष्ट होता है।

इसकी छाल सङ्कोचक है। कोमल छाल और पत्तेको कलौसे पुरातन प्रमेह रोगमें उपकार होता है। फलको चूर्ण कर खानेसे भूख बढ़ती और कोठा साफ होता है। इसका बीज शीतल एवं धातु-परिवर्तक है। चर्मरोगमें इसको छालका काथ सेवन करनेसे उपकार होता है। इसका नवोन पल्लवाङ्कुर विरेचक है, अवधूत लोग हरिताल भस्म करनेके समय अश्वत्थभस्म व्यवहार करते हैं। होमादि कार्यमें पीपलकी लकड़ी लगती है। श्राद्धवृक्षपर जो पीपल जन्मता है, ऋषिगण उसकी अरणि बनाते थे। पीपलका तख्ता बहुत दिन नहीं टिकता और न उसपर अच्छों पालिश हो होती है।

अश्वत्थक (सं० पु०) अश्वत्थस्य कूलं अश्वत्थः तद-युक्तः कालोप्यश्वत्थः, तस्मिन् देयमृणम् इत्यर्थे (कलाप-वलयवत्सुपात्तः। पा ३।१।४८) १ अश्वत्थका फल लगते समय देने योग्य ऋण। स्वार्थे कन्। २ अश्वत्थवृक्ष, पीपलका पेड़।

अश्वत्थकुण (सं० पु०) अश्वत्थस्य पाकः (पीलादि-कर्णादियः
कुणः । पा ३।२।२४) पके हुये पौपलका फल, पकुहा ।

अश्वत्थफलका (सं० स्त्री०) हबुषा ।

अश्वत्थफला, अश्वत्थफलका देखो ।

अश्वत्थभित्, अश्वत्थभेद देखो ।

अश्वत्थभेद (सं० पु०) अश्वत्थस्य भेदो विशेषो
यत्र । नन्दी वृक्ष, किसी किस्मका पौपर ।

अश्वत्थसन्निभा (सं० स्त्री०) अश्वत्थिका, किसी
किस्मका पौपर ।

अश्वत्था (सं० स्त्री०) १ पूर्णिमा तिथि । २ वृद्धा
श्वत्थवृक्ष, किसी किस्मका पौपर ।

अश्वत्थामन् (सं० पु०) अश्वत्थेव स्थाम शब्दो यस्य
पृ० सकारस्य तकारादेशः । १ कृपौके गर्भ और
द्रोणाचार्यके औरससे जात एक महावीर । इन्होंने
भूमिष्ठ होते ही उच्चैश्चवा अश्वकी तरह शब्द निकाला
था, इसीसे इनका नाम अश्वत्थामा पड़ा । “अश्वत्थे वास्य यत्
स्थान नदतः प्रदिशो गतम् । अश्वत्थामेव वालीऽयं तस्मान्नाम्ना भविष्यति ॥”
(महाभारत आदिपर्व-१३।१४०-४८) अश्वत्थामाने कुरुक्षेत्रके
युद्धमें महावीरत्व देखाया था । कहते हैं, इनकी
मृत्यु नहीं, यह अमर हैं । २ पाण्डवपक्षके मालव
राज इन्द्रवर्माका हाथी । कुरुक्षेत्रके युद्धमें द्रोणा-
चार्य महाविक्रमसे पाण्डवोंकी सैन्यको विनष्ट कर
रहे थे । इसलिये श्रीकृष्णचन्द्र अर्जुनसे बोले,
“द्रोणकी उन्नना करके विना मारे और कोई रक्षा
नहीं है । अतएव सब कोई उनके निकट यह सन्वाद
दीजिये, कि अश्वत्थामा हत हो गया ।” पाण्डव पक्षके
लोगोंने ऐसा ही किया, परन्तु द्रोणाचार्यने किसी को
बात न मानी । वे बोले—युधिष्ठिरके मुखसे यह
समाचार विना सुने इसको विश्वास नहीं हो सकता ।
युधिष्ठिर सत्यवादी रहे, मिथ्याबातमें उन्हें नरकवत्
दृष्टा थी । इधर अश्वत्थामा मारा गया यह विना
बोले युद्धमें पराजय होते रहा । उसी समय मालव-
राजके अश्वत्थामा नामक हस्तीकी मृत्यु हुई थी ।
इसीसे युधिष्ठिर कौशल करके ‘अश्वत्थामा हतः’ कुछ
उच्चैःस्वरसे कहके ‘इति गज’ यह बात अल्प धीरे
धीरे बोले । सुतरां द्रोणाचार्यके शेष कथा सुनाने

पानेसे समझे, कि सत्यही उनका पुत्र अश्वत्थामा
विनष्ट हो गया ।

अश्वत्थामा, अश्वत्थामन् देखो ।

अश्वत्थिक (सं० त्रि०) अश्वत्थेन चरति, अश्वत्थ-
ष्ठन् । (पा ४।४।१०) अश्वत्थ फल खानेवाला जन्तु, जो
जानवर पौपरका फल खाता हो ।

अश्वत्थिका, अश्वत्थी देखो ।

अश्वत्थी (सं० स्त्री०) पिप्पलादेराकृतिगणत्वात्
ङोष् । १ वृद्धपत्राश्वत्थवृक्ष, पाकर । यह मधुर,
कषाय, रक्तपित्तघ्न, विषघ्न, दाहघ्न और गर्भिणीके
लिये हितकर होती है । (राजनिषङ्ग) २ वृक्ष-
विशेष, कोई पौधा । यह वनमें उत्पन्न होती और
पौपलजैसे छोटे-छोटे पत्ते रखती है । इसका पर्याय—
लघुपत्री, पवित्रा, फलपत्रिका, पिप्पलिका, वनस्था,
अश्वत्थिका ।

अश्वद (सं० त्रि०) अश्वप्रदान करनेवाला, जो
घोड़ा बखूशता हो ।

अश्वदंष्ट्रक (सं० पु०) १ गोक्षुर वृक्ष, गीखुरूका
पेड़ । २ हिंस्रजन्तु विशेष, कोई खूखार जानवर ।

अश्वदंष्ट्रा (सं० स्त्री०) अश्वस्य दंष्ट्रा इव आकारेण
तत्सादृश्यात् । गोक्षुरवृक्ष, गीखुरूका पेड़ ।

अश्वदा (वै० पु०) अश्व प्रदान करनेवाला पुरुष,
जो शख्स घोड़ा बखूशता हो ।

अश्वदावन्, अश्वदा देखो ।

अश्वदूत (सं० पु०) घोड़सवार हरकारा, जो शख्स
घोड़ेपर चढ़कर खबर देता हो ।

अश्वनाय (सं० पु०) अश्वं नयति, अश्व-नौ-अण्
उप० समा०; यद्वा नयति, कर्तरि णः नायः; अश्वस्य
नायः. इ-तत् । अश्वपालक, सयीस, जो शख्स
घोड़ा पालता हो ।

अश्वनाश (सं० पु०) श्वेतकरवीर, सफेद कनैर ।

अश्वनिबन्धिका (सं० स्त्री०) अश्वपालिका, सयीस ।

अश्वनिषिञ् (वै० त्रि०) अश्वविभूषित, घोड़ोंसे
सजा हुआ ।

अश्वन्त (सं० त्रि०) अश्वस्य घोटकस्य वङ्गेऽप्यप-
श्वन्तः नाशो यत्र, शकनादि टेलियः

बहुव्री० । १ अश्वभ, बुरा । २ मृत, सुर्दा । (पु०)
३ क्षेत्र, मैदान । ४ चुल्ही, चूल्हा, भट्टी । ५ अनवधि,
सुदृढकी अदममौजूदगी । ६ मरण, मौत । ७ प्राणि-
हिंसाका स्थान, मकतल, जिस जगहमें जानवर मारे
जायें । अश्वमशुमे चेने पुष्पात्मवधौ वती । (हेम)

अश्वप (सं० पु०) अश्वं पाति रक्षति, अश्व-पा-
क । १ अश्वपालक, सयौस । २ अग्निपालक, आगकी
हिंसाजत करनेवाला । ३ साम्नि, जो आगके
साथ हो ।

अश्वपति (वै० पु०) इ-तत् । १ अश्वपालक,
सयौस । २ रामायणप्रसिद्ध कैकेय राजविशेष । यह
भरतके मातुल रहे । ३ असुरविशेष । ४ राजोपाधिभेद ।

अश्वपत्यादि (सं० पु०) अश्वपतिरिति शब्द आदि
येषाम्, बहुव्री० । अश्वपत्यादिग्रन्थ । पा ४।१।८४। प्राग्दी-
व्यतीय अर्थमें यण् प्रत्ययके निमित्त पाणिन्युक्त शब्द-
समूह । यथा,—अश्वपति, ज्ञानपति, शतपति, धन-
पति, गणपति, स्थानपति, यज्ञपति, राष्ट्रपति, कुल-
पति, गृहपति, धान्यपति, बन्धुपति, धर्मपति, सभा-
पति, प्राणपति, क्षेत्रपति, पशुपति, अधिपति ।

अश्वपर्ण (वै० त्रि०) अश्वानां पर्णं गमनं यत्र,
बहुव्री० । अश्वके पर्णवाला, जिसमें घोड़ेके बाजू
रहे । यह शब्द रथ एवं मेघका विशेषण है ।
“समथ पर्णावरणि ।” ऋक् ६।७७।१ ।

अश्वपर्णिका (सं० स्त्री०) भूतकीशीलता, भूतकेस ।
अश्वपर्णी, अश्वपर्णिका देखो ।

अश्वपस्त्य (वै० त्रि०) व्यासगृह । “ब्रह्म प्रजावद्रवि-
बन्धपस्त्य” ऋक् १।८६।७ । “अश्वपस्त्यं व्यासगृह” (सायण)

अश्वपाद (सं० त्रि०) अश्वस्य पाद इव पादो यस्य,
बहुव्री० । अश्वके पैरकी तरह पादयुक्त, जिसके
घोड़े-जैसा पैर रहे ।

अश्वपाल (सं० पु०) अश्वान् पालयति, पा-णिच्-
सुक्-अण् अच् वा, णिच् लोपः । घोटकरचक,
सयौस ।

अश्वपुच्छक (सं० पु०) खड्गलता, कांस, कुश ।

अश्वपुच्छा (सं० स्त्री०) १ पृश्निपर्णी, पटौनी ।

२ माषपर्णी, किसी किस्मके दालदार अनाजकी भाड़ी ।

अश्वपुच्छिका, अश्वपुच्छी देखो ।

अश्वपुच्छी (सं० स्त्री०) अश्वस्य पुच्छमिव पुच्छं
केशरो यस्याः, बहुव्री० । माषपर्णी वृक्ष, किसी
किस्मके दालदार अनाजका पेड़ ।

अश्वपुटभावना (सं० स्त्री०) हाविंशतुपलपरि-
मित द्रव्यकी भावना, दवाना बायीस मिनट तक
आब-जुलाल ।

अश्वपुत्रो (सं० स्त्री०) १ सल्लकी वृक्ष, कुंदरुका
पेड़ । २ द्रवन्ती ।

अश्वपृष्ठ (सं० स्त्री०) घोटकका पृष्ठ, घोड़ेकी पीठ ।

अश्वपेज (सं० पु०) ऋषिविशेष ।

अश्वपेजिन् (सं० त्रि०) अश्वपेज ऋषि-प्रणीत
ग्रन्थ पढ़नेवाले । यह शब्द बहुवचनान्त है ।

अश्वपेशस् (वै० त्रि०) अश्वन पेशस रूपं निरूपणीयं
यस्य । अश्व द्वारा निरूपणीय, जिसे घोड़ा देखे-भाले ।
“अश्वपेशसमग्रे ।” ऋक् २।१।१६ ।

अश्वबद्धव (सं० पु०) अश्वस्य बद्धवा च, बन्ध० ।
विभाषा वृक्ष-स्रग-वृक्ष-धान्य-व्यञ्जन-पशुशकुन्त्यश्वबद्धव-पूर्वापराधरोत्तराणाम् ।
पा २।४।१२ । अश्व एवं अशवा, घोड़ा-घोड़ी ।

अश्वबन्ध (सं० पु०) १ अश्वपालक, सायौस, घोड़ा
बांधनेवाला । २ पद्यविशेष, कोई बहुर । चित्र-
काव्यके अनुसार यह छन्द घोड़ेकी सूतिमें इसतरह
लिखा जाता, जिसमें अक्षरसे अङ्ग-प्रत्यङ्ग तथा आभू-
षणादिका नाम निकलता है ।

अश्वबन्धन (सं० स्त्री०) १ घोटकका बन्धन, घोड़ेकी
अगाड़ी-पिछाड़ी । (त्रि०) २ घोटकके बन्धनमें काम
आनेवाला । जो घोड़ा बांधनेमें काम आता हो ।

अश्वबला (सं० स्त्री०) १ मेथिका, मेथी । २ नारीकी
भाजी ।

अश्वबाल (सं० पु०) अश्वस्य बालः केशर इव तदा-
कारपुष्पत्वात् । काशटण, कांस ।

अश्वबाहु (सं० पु०) अश्वौ दीर्घौ बाह्व यस्य, बहुव्री० ।
यदुवंशीय चित्रकके पुत्र । हरिवंशमें इनका विशेष
विवरण है ।

अश्वबुध (वै० त्रि०) अश्वोंपर अवस्थित, घोड़ोंपर
टिका हुआ ।

अश्वबुद्ध (वै० त्रि०) अश्वोंपर अवस्थित, जो घोड़ेके रोजगारसे अपना काम चलाता हो।

अश्वभा (सं० स्त्री०) विद्युत्, बिजली।

अश्वमहिषिका (सं० स्त्री०) अश्वमहिषयोर्वैरम्, वुन्। अश्व और महिषका वैर, घोड़े और भैंसेको दुश्मनी।

अश्वमार (सं० पु०) अश्वं मारयति; अश्व-मृ-णिच्-अण्, उप० समा०। १ करवीर वृक्ष, कनैरका पेड़। २ श्वेतकरवीर, सफेद कनैर। ३ उपादिका, बड़ी पोय। ४ पालङ्ग शाक, पलाककी भाजी। ५ श्वेत-करवीरमूल, सफेद कनैरकी जड़।

अश्वमारक, अश्वमार देखो।

अश्वमाराख्य (सं० पु०) श्वेतकरवीरवृक्ष, सफेद कनैरका पेड़।

अश्वमाल (सं० पु०) सर्पविशेष, किसी किन्नका सांप।
अश्वमिष्टि (वै० त्रि०) १ अश्वामिलाषी; घोड़ेको तलाश करनेवाला। २ अग्निदेव।

अश्वमुख (सं० पु०) अश्वस्य मुखमिव मुखमस्य, बहुव्री०। किन्नर। कहते हैं, कि किन्नरका मुख घोड़े-जैसा और अन्य अङ्ग मनुष्यके समान होता है।

अश्वमुच् (सं० पु०) अश्वहरण करनेवाला, जो शस्त्र घोड़ा चोराता हो।

अश्वमूत्र (सं० स्त्री०) घोटकमूत्र, घोड़ेका पेशाब। यह तिक्त, उष्ण, तीक्ष्ण, विषघ्न, वात-कोप-शमन, पित्तकर और दीपन होता है। (राजनिघण्टु) अश्व-मूत्र भेदक एवं कफ, दद्रु और कृमिको दूर करनेवाला है। (मदनपाळ)

अश्वमूचिका (सं० स्त्री०) शङ्खकी वृक्ष, शलगमका पेड़।

अश्वमूत्री, अश्वमुचिका।

अश्वमेध (सं० पु०) अश्वो घोटकः प्राधान्येन मेध्यते हिंस्यतेऽत्र, मेध हिंसने आधारे घञ्। १ पूर्वकालका प्रधान यज्ञविशेष। इस यज्ञमें घोड़ेका बलि चढ़ता था। अश्वमेधके घोड़ेका वर्ण मेघ-जैसा कृष्ण, मुख सुवर्णके तुल्य, उभय पार्श्व अर्धचन्द्राकार चिह्नसे अङ्कित, पुच्छ विद्युत्-जैसा प्रभायुक्त, उदर कन्दके

फूल-जैसा श्वेतवर्ण, पैर हरा, कर्ण सिन्दूर-जैसा रक्तवर्ण, जिह्वा प्रज्वलित अग्निके सदृश, चक्षुः सूर्य-जैसा तेजस्कर एवं सर्वाङ्ग सुगन्धयुक्त रहता और वेगवान् होता था।

प्राचीन समय राजा ही अश्वमेध यज्ञ करते थे। पहले निन्यानवे यज्ञ करके शेषमें अश्व छोड़ना पड़ता था। घोड़ेके कपालमें जयपत्र बांधते और उसके साथ सेनासामन्त भेजते थे। कहते हैं, अश्वमेधका घोड़ा अपनी इच्छासे पृथिवी घूम आता था। किसी पराक्रान्त राजाके घोड़ा बांध रखनेपर रक्षक उससे लड़ते रहे।

इस यज्ञमें २१ यूप बनाना चाहिये,—६ बैल, ६ खदिर, ६ पलाश, २ देवदारु एवं एक श्लेषातक काष्ठका। इस यज्ञमें गो, ह्वाग और भेष सर्व समेत तीन सौ पशु यूपमें बांधे जाते थे। पीछे घोड़ा मारकर ब्राह्मण लोग उसके वक्षःस्थलका भेद अग्निमें संस्कार करते थे। देहके अवशिष्ट अङ्गद्वारा होम होता रहता था। कहा है कि उससमय याज्ञिक कदाचित् यज्ञके बाद अश्वका कुछ-कुछ मांस भी खाते थे।

अश्वमेध यज्ञ करनेसे मोक्ष और स्वर्ग मिलता एवं ब्रह्महत्यादि सकल पाप मिट जाता है।

“यथाश्वमेधः क्रतुराट् सर्वपापापनोदनः।

तथाधमर्षणं सूत्रं सर्वपापापनोदनम्॥” (मनु १।१।२६१)

अश्वमेध यज्ञके अनुकल्प पृथिवीके संपूर्ण तीर्थोंका भ्रमण है।

शाकद्दीप वा पूर्व स्काईथीया प्रभृति स्थानमें भी अश्वमेध यज्ञ प्रचलित था। स्काईथीय वा शक लोग अनेक प्रकार अनुष्ठान करनेके बाद यज्ञीय घोड़ा छोड़ देते थे। पीछे राजा प्रभृति किसी प्रधान व्यक्तिकी मृत्यु होनेपर उसी घोड़ेको मार यज्ञ करते रहे। कायरसुके समय गिदसरा भी कदाचित् अश्वमेध यज्ञ करते थे। स्कन्दनेभियामें भी पूर्व कदाचित् यह प्रथा प्रचलित रही।

महाराज दशरथने अश्वमेध यज्ञ किये थे। उसका सविस्तर विवरण रामायणके आदिकाण्डमें

इस प्रकार लिखा है—

वसन्त काल उपस्थित होनेपर वीर्यवान् राजा दशरथ पुत्रलाभार्थ अश्वमेध यज्ञ करनेकी अभिलाषसे ऋषि वशिष्ठजीके निकट गये। वशिष्ठ ऋषिने यज्ञकर्मकुशल वृद्ध ब्राह्मण, परमधार्मिक वृद्ध स्थापत्य-कर्म-कुशल व्यक्ति, कर्मकारक मृत्यु, चर्मकार प्रभृति शिल्पी, चित्रादि शिल्पकार, सूत्रधार, खनक, गणक, नट, नर्तक और बहुश्रुत शास्त्रज्ञ शुचि पुरुषोंको कहा, कि तुम लोग राजाकी आज्ञासे यज्ञोपयोगी समुदाय कार्य निर्वाह करो, तथा बहु सहस्र इंट लाकर अनेक गुणसमन्वित राजयोग्य अनेक गृह, ब्राह्मणोंके वासयोग्य बहुविध अन्नपानयुक्त सुदृढ़-उत्तम गृह और अनेक देशोंसे आनेवाले नृपति तथा अन्यान्य ग्रामवासी प्रभृतियोंके लिये यथायोग्य गृह निर्माण करो। * * * सब लोग मिल करके आये और वशिष्ठजीसे बोले, आपका अभिमत समस्त कार्य सुविहित हो गया, कोई एक कार्य भी अङ्गहीन न हुआ।

अनन्तर वशिष्ठ ऋषिने सुमन्त्रको बुलाकर यह बात कही, पृथिवीमें जितने धार्मिक नृपति एवं समस्त देशीय ब्राह्मण, चत्रिय, वैश्य, शूद्र, इन सबको आदर-सत्कारपूर्वक बोला लावो। सुमन्त्रने वशिष्ठजीकी बात सुनकर, राजाओंको अयोध्यानगरीमें आनयनार्थ कार्यदत्त पुरुषोंको आदेश किया। पीछे स्वयं भी शीघ्र ही गमन किया। अनन्तर कइ एक दिनमें मही-पाललोग राजा दशरथके निमित्त अनेक रत्न-लेकर अयोध्यानगरीमें समागत हुए। परे वशिष्ठ प्रधान द्विजोत्तमके साथ ऋष्यशृङ्गकी आगे करके यज्ञभूमि पर गये और यथाशास्त्र विधिसे यज्ञकर्म आरम्भ किये। श्रीमान् राजा दशरथ पत्नियोंके सहित दौचित्त हुए। अनन्तर सम्बत्सर पूर्ण होनेपर अश्व प्रत्यागत हुआ और सरयू नदीके उत्तरतीरपर यज्ञ आरम्भ किया गया। वेदपारग याजकोंने शास्त्रानुसार विधिपूर्वक अनुष्ठान करने लगे। प्रवर्ग्य और उपसद नामक दो कर्म यथाविधि करके, अन्यान्य कर्म सकल निर्वाह किया। पीछे सब देवताओंकी पूजा करके सन्तोषपूर्वक प्रातःसवन-प्रभृति कर्म निर्वही

किया। तदनन्तर प्रस्तरसे सोमलताको कूट करके रस निकाला। फिर मध्यदिनका सवन अनुष्ठित हुआ। अष्ट वही ब्राह्मण-महात्माने दशरथका तृतीय सवन भी शास्त्रानुसार यथावत् समाधान किये। उस समय सकलदिवसमें एक ब्राह्मण, या परिश्रान्त क्षुधित नहीं रहे। इस यज्ञके उपलक्षमें ब्राह्मण, चत्रिय, वैश्य, शूद्र, तापस, संन्यासी, वृद्ध, बालक, महिला, एवं व्याधित सभी व्यक्ति भोजन करते थे। अर्धक्षगण पुनः पुनः अन्न एवं विविध वस्त्र प्रदान करते थे। इस प्रकार सहस्र सोत्साह यज्ञ हुआ। यज्ञग्रूप उत्थापनके समय शिल्पशास्त्राभिज्ञ व्यक्तिगण विस्वकाष्ठ निर्मित ६, खदिर निर्मित ६, वैल्क्यूपके समीप स्थापनके लिये पलाशनिर्मित ६, श्लेषातक निर्मित १, अस्त्र बाहु परिमित देवदारु काष्ठका बनाया हुआ २। यह सब मिल करके २१ यूप विधिपूर्वक विन्यास किया गया। यह स्रक्ष्ण स्पर्शयुक्त रूपशाली अष्टकोणसमन्वित सुदृढ़ एक विंशति यूप काञ्चनसे भूषित प्रत्येक एक विंशति वस्त्रसे अलङ्कृत और गन्धपुष्पसे पूजित हो करके ऐसा शोभायमान हुआ, जैसे दीप्तिशाली सप्त-महर्षि स्वर्गमें विराजमान रहते हैं। इसके बाद शिल्पियोने इंटसे शास्त्रोक्त परिमाण चयनीय अग्नि-कुण्ड निर्माण किया, जो गरुड़की तरह त्रिकोणाकृति और स्वर्णनिर्मित पञ्चसमन्वित एवं अष्टादश हस्त परिमित हुआ था। अनन्तर इस यज्ञमें शामिल कर्म उपस्थित होनेपर ऋषियोंने, शास्त्रमें जौन जौन देवताको जो जो वलि विहित है, उन देवताओंके उद्देश्यसे वही वलि प्रोक्षण किये। उस समय बहुततर जलचर, भुजङ्ग, पशु, पक्षी और वही अश्व प्रभृति सकल वलि प्रोक्षण करके वे ही सब यूपोंमें तीन सो (३००) पशु और अष्ट अश्व रत्नके वस्त्रन किये। पीछे कौशल्यादेवीने परम प्रमोदके साथ सब भावसे उस अष्ट अश्वकी परिचर्या करके तीन खण्ड तलवारसे छेदन किये। उन्होंने धर्मकामनासे सुखिर चित्तसे उस अश्वके सहित एक रात्र व्यतीत की।

अनन्तर होता, उद्गाता, अध्वर्यु ऋत्विग् प्रभृतिने

शास्त्रमें अश्वका जो अङ्ग हवनायें विहित है उसको यथाविधि अग्निमें हवन किया। इसके बाद राजा दशरथने न्यायानुसार यज्ञ समापन होनेपर, होताके पूर्व देश, अध्वर्युके पश्चिम देश, ब्रह्माके दक्षिण देश एवं उदुगाताके उत्तरदेश, दक्षिणा प्रदान की। ऋत्विक् प्रभृति ब्राह्मणोंको समय पृथिवी दक्षिणा प्रदान करके अत्यन्त हर्षे हुये थे। अनन्तर सब कोई बोले, हे भूपते ! हम लोगको राज्यका प्रयोजन नहीं, सुतरां पृथिवी पालन कर नहीं सकते हैं। अतएव आप इसका मूल्य देकर ले लीजिये। मणि, रत्न, वसन, गौ इनमें जो उपस्थित हो, वही देकर पृथिवी ले लीजिये। उस समय प्रजापालक दशरथने वेदपारग ब्राह्मणको दश लाख गौ और दश कोटी सुवर्ण प्रदान किया और इसी तरह ऋत्विग् प्रभृतिको भी दिया। अनन्तर अश्वगतोको कोटी सुवर्ण प्रदान किया। उस समय ऐसा कोई याचक न रहा जो दान न पाया हो।

(रामायण आदिकाण्ड १३३ और १४३ सर्ग)

ऐतरेय-ब्राह्मणमें जनमेजय पारिचित, शर्यात मानव, शतानीक सात्राजित, आम्बष्ठ, युधांश्रुष्ठि औग्रसेन्य, विश्वकर्मा भौवन, सुदास् पैजवन, मरुत्त आविचित, अङ्गराज वैरोचन, भरत दोषन्ति, दुसुंख पाञ्चाल, अत्यराति जानन्तपि प्रभृति राजाओंका अश्वमेध यज्ञका प्रसङ्ग है। (ऐतरेय-ब्राह्मण ८ पं० ३८ अ० ३३

८ खण्ड देखिये) रामायणमें राजा दशरथ और रामका, महाभारतमें युधिष्ठिरका अश्वमेध यज्ञ सविस्तृत वर्णित है। हिन्दुराजगणमात्र ही किसी न किसी समय अश्वमेध यज्ञका अनुष्ठान अवश्य करते थे, इसका आभास पाया जाता है। बौद्ध और जैन प्रभावकाल मौर्यवंशके समय वेदिक क्रिया सहित अश्वमेध यज्ञ बन्द हो गया था। शुङ्गवंश-प्रतिष्ठाता पुष्यमित्रने फिर अश्वमेध यज्ञका प्रवर्तन किया, नाना पुराण और मालविकाग्निमित्र नाटकमें इसका परिचय मिलता है। इसके बाद शकाधिकार कालमें पुनः अश्वमेधयज्ञ बन्द हो गया, पीछे चतुर्थ शताब्दीसे गुप्त-सम्राट् समुद्रगुप्तने पुनः अश्वमेधयज्ञ प्रवर्तन किया। इस उपलक्षमें उनका अश्वमेध-मुद्रा प्रचलित है। गुप्त

वंशके बाद उत्तरभारतसे अश्वमेध यज्ञानुष्ठान एक प्रकार लोप हो जाने पर भी दक्षिणात्यमें चालुक्य, यादव प्रभृति वंश बराबर अश्वमेधयज्ञ करते रहे। नाना शिलालिपि और ताम्रलेखसे इसका आभास पाया जाता है।

प्रधान प्रधान राजपुत्र नरपतियोंने अश्वमेध यज्ञ करते हैं। वङ्गदेशीय स्मार्त रघुनन्दन कलिमें अश्वमेध यज्ञका निषेध किये, तथापि हिन्दुराजगण यज्ञ करनेसे विरत नहीं हुये। जयपुरका सुप्रसिद्ध नरपति सवाई जयसिंह ई०के १८३३ शताब्दीमें अश्वमेध यज्ञ किये थे। महानन्द-पाठक रचित 'अश्वमेध-पद्धति'में इसका परिचय पाया जाता है और उस अश्वमेध यज्ञके विषयमें कविकलानिधि कृष्ण भट्ट कर्तृक राजपुतानाका डिङ्गल भाषामें रचित प्राकृत गाथा भी गीत हुआ करती है। यह गाथा अश्वमेधपद्धतिसे उद्धृत हुई है। राजेन्द्रवर्मा नामक एक सामन्तराजाने अश्वमेधयज्ञ करनेकी अभिलाषसे याज्ञिक पण्डित महानन्दपाठकके द्वारा उक्त अश्वमेधपद्धति सङ्कलन कराये थे। यह पद्धति अति वृहत् है। इसमें अश्वमेध-यज्ञमें जो जो द्रव्यका प्रयोजन तथा जिस जिस अनुष्ठानका आवश्यक है सो सबका विस्तारपूर्वक वर्णन है। कलकत्ता एसोसिएटिक सोसाइटीमें इसकी हस्तलिखित एक पोथी है।

पूर्व कालमें साधारणतः सार्वभौम नरपति अश्वमेध यज्ञ करते थे। किन्तु इस समय जब हिन्दु समाजमें कोई सार्वभौम नृपति नहीं है तो किस तरह अश्वमेधयज्ञ हो सकता है ? इसके उत्तरमें पद्धतिकार महानन्द पाठक ऐसा प्राचीन प्रमाण उद्धृत किये है, "यथा कात्यायनसूत्रेणाश्वमेधः। राजयज्ञोऽश्वमेध सर्वकामस्य। चन्द्रिकादिगुणवान् चन्द्रियो राजेभ्युच्यते। आपलम्बसूत्रे राजा सार्वभौम अश्वमेधेन यजेत। सार्वभौम इत्याह माण्डूकिकापाधिकारः। इति मेधा चन्द्रियस्य इति मेतानसूत्रात् चन्द्रियमावस्थापाधिकारः। * * * विद्वान्मायेतु वयाणां वर्णानामधिकार उक्तः।" अर्थात् कात्यायन-श्रौतसूत्रके मतसे अश्वमेध राजयज्ञ है। अर्थात् सर्व फलकामनाके लिये राजा मात्र ही अश्वमेधयज्ञ कर सकते हैं, अधिक और गुणवान् चन्द्रियमात्र ही

‘राजा’ कहे जाते हैं। आपस्तम्बश्रौतसूत्रमें सार्व-
भौम राजा ही इस यज्ञको कर सकते हैं ऐसी उक्ति
है इससे विदित होता है कि माण्डलिकका भी
अधिकार है। विशेषतः वैतानसूत्रके मतसे क्षत्रिय
मात्रका एवं सिद्धान्तभाष्यके मतसे ब्राह्मण, क्षत्रिय,
और वैश्य यह तीन वर्णका अधिकार पाया जाता है।

ऋक्संहिता (१म मण्डल १६२ सूक्त), तैत्तिरीय-संहिता,
वाजसनेय-संहिता (२२ अ०) ऐतरेय-ब्राह्मण और शत-
पथ-ब्राह्मण (१३काण्ड)में अश्वमेध यज्ञका प्रसङ्ग है।
सकल वेदका सब श्रौतसूत्रमें भी अश्वमेधयज्ञका
विधान विस्तृत भावसे वर्णित है। आपस्तम्ब-श्रौत-
सूत्रमें अश्वमेधयज्ञका जो विधि वर्णित हुआ है यह
नीचे लिखा जाता है—

“राजा सार्वभौमो ऽश्वमेधेन यजेत। अथ सार्वभौमः। १ चित्रा नक्षत्रं
पुष्यनाम। २ देवयजनमध्यवसति यमापः पुरसात्पुत्राः सुपावगाहा अन-
पक्षरीः। ३ चत्वारो पौर्णमासां सायहृणोऽष्टा यजते। तस्मा योचरामा-
वासा तस्मां संज्ञान्ता। ४ वैशाखां पौर्णमासां प्राजापत्यवषमं तूपरं सर्व-
वर्षं सर्वेभ्यः कामेभ्य आलभते। ५ तस्मा योचरामावासा तस्मानपदातीन्व-
हर्त्तिज आवहन्ति। ६ अन्वहमितरानावहन्त्या सुवद्वान्प्रायाः। ७ अमा-
वास्यामिष्टा देवयजनमभिप्रयच्छते। ८ केशशश्व वपते। ९ नखानि निज्ज-
न्ते। १० दन्तो धावते। ११ खाति। १२ अहृतं वासः परिधत्ते। १३
वाचं यत्नोपवसति। १४ ये रातयस्ते जागरयन्ति। १५ वाग्यतस्मैतां रात्रि-
मपिहोवन् जुह्वति। १६ द्रष्टे नम उपद्रष्टे नमो शुद्रद्रष्टे नमः ख्याने नम
उपख्याने नमो शुख्याने नमः श्रुतते नम उपश्रुतते नमः सते नमो ऽसते
नमो जाताय नमो जगित्यमापाय नमो भूताय नमो भविष्यते नमश्चक्षुषे नमः
श्रोत्राय नमो मनसे नमो वाचे नमो ब्रह्मणे नमस्तपसे नमः शान्ताय नम
श्रुत्ये कथित्या नमस्तारैरुपन्तमादित्यमुपतिष्ठते। १७ (इति १मा कण्डिका)

नमो ऽग्रये प्रथिविचित इत्येतैश्च यथालिङ्गम्। १ ये ते पश्यान् सवि-
तरिति पूर्वया हारा प्रावर्गं प्रविश्याहवनीये वैतसमिधमभाषायेकादश
पूषाहुतीर्जुहोति। हिरण्यगर्भः समवर्तताय इत्यष्टौ। देवादेधे पुराक्रम-
न्मिति तिष्ठः। २ चतुष्टय आपो दिग्भ्यः समावृताः। ३ तासु ब्रह्मी-
दनं पचति। ४ पाव्या राजतं रुक्मं निधाय तस्मिन् ब्रह्मीदनमुद्धृत्य प्रसू-
तेन सर्पिर्धोपचिष्य सीवर्षं रुक्ममुपरिष्ठात्कृत्वा कर्षन्नुत्किन्द चतुर्भ्य आपो-
येभ्यो महर्त्विग्भ्य उपोहति। ५ प्राथितवज्रयतुरः साहस्रासौवर्षाग्निष्वा-
न्ददाति चतुरश्रयतरीरथावेतो च रुक्मी। ६ हादशारविष्ययः दशारविर्वा
दर्भमयो मीची वा रथना। ७ तां ब्रह्मीदनाच्छेदेषानज्जि। ८ अथस्य
रुपाणि समामनन्ति। कृष्णः श्वेतः पिशङ्गः सारङ्गो ऽरुणपिशङ्गो वा। ९
यस्य वा श्वेतस्वात् कृष्णं स्वात्सालमेत। मातमन्तं पिष्टमन्तं दृष्टे वष्टे च
दानं सीमपं सीमपयोः पुत्रम्। १० विश्वश्रुतः प्रथमः कौशिकः द्वितीयः

पुरा ढणाद्यालोभं पाथयन्ति। एतौ वै सीमपौ यौ शिष्य जातौ पुरा ढणाद्यात्-
सीमं पाथयन्तीति। ११ अश्वयुः राज्याय परिददाति। १२ (२या कण्डिका)

ब्राह्मणा राजानथायं वोऽश्वयुः राजा। या ममापचितिः सा व एतस्मिन्।
यह एष करोति तदः कृतमसदिति। १ यावद्यज्ञमश्वयुः राजा भवति। २
देवस्य त्वा सवितुः प्रसव इति रथनामादायेमामगृह्णन् रथनामृतस्यैव्यमिमन्त्रा
ब्रह्मन्मन्त्रं मेध्यं मन्त्रस्यामि देवेभ्यो मेधाय प्रजापतये तेन राध्यासमिति ब्रह्माण-
मामन्त्रयते। ३ तं वधान देवेभ्यो मेधाय प्रजापतये तेन राधुर्होति प्रत्याह। ४
अभिधा असौत्ययमभिदधाति। ५ आनयन्ति श्वानं चतुरर्षं विष्वग्बन्धेन
वद्धम्। ६ पितुरनुजायाः पुत्रः पुरसाजयति। मातुरनुजायाः पुत्रः पश्यात्। ७
सैध्रकं सुसलम्। ८ पौंश्लेयः पेशसा जानु वेष्टयित्वा पश्चाद-
न्वेति। ९ अपो ऽश्वमभाषगाहयन्ति श्वानं च। १० यव शुनोऽप्रतिष्ठा
तदश्वयुः प्रसीति जहोति। ११ यो अर्धन्मिति सैध्रकेण सुसलेन पौंश्ले-
यः शुनः ग्रहन्ति। १२ तमश्वस्यापत्यदसुपास्यति परो मर्तः परं जेति। १३
दक्षिणापद्माभ्यां च त्वं च हवहन्निति ब्रह्मा यजमानस्य हस्तं गृह्णाति। १४
अभि क्रत्वेन्द्रभूरध ऋन्त्रित्यश्वयुर्दंजमानं वाचयति। १५ आहरन्तो यौ-
कमुद्रं वरमया विवहम्। १६ तस्मिन्नाद्रां धेतसमाहोपसं वद्धा भवति। १७
तं हे श्वे दक्षिणतो धारयतः। इ उत्तरतः। १८ तेनाथं पुरसात्प्रत्यक्ष-
मभा दूहन्ति। १९ (३या कण्डिका)

श्वेतेन राजपुत्रैः सहाश्वयुः पुरसात् प्रत्यक्षं तिष्ठन् प्रोचत्यनेनाथेन मेध्ये ने-
ष्ट्रायं राजा हव वध्यादिति। १ श्वेतेन राजभिरुपैः सह ब्रह्मा दक्षिणतः
उदङ् तिष्ठन् प्रोचत्यनेनाथेन, मेध्ये नेष्ट्रायं राजाप्रतिष्ठयौ ऽस्त्विति। २
श्वेतेन सूतगालिभिः सह होता पथात्प्राङ् तिष्ठन् प्रोचत्यनेनाथेन मेध्ये नेष्ट्रायं
राजास्ये विशो वहुन्वे वद्वन्वाये वद्वजाविकाये वद्वज्रीह्रियवाये वद्वमापतिलाये
वद्वहिरण्याये वद्वहस्तिकाये वद्वदासपुरुषाये रथिमन्त्रे पुष्टिमन्त्रे वद्वरायस्योषाये
राजाक्षिति। ३ श्वेतेन चतुर्षु गृहीतभिः सहोदगातोत्तरतो दक्षिणा तिष्ठ-
न् प्रोचत्यनेनाथेन मेध्ये नेष्ट्रायं राजा सर्वमायुरेत्विति। ४ अत्रै तमेवौकम-
पश्यानुदकमश्वमाक्रमयान्तरा स्थानमाक्रमणं चेदं विष्णुः प्र तच्चिण्दिं वो वा
विष्णुवित्यश्वस पदे तिष्ठो वैष्णवोऽन्वाऽश्वस्य स्वीकाननुमन्त्रयतेऽग्रये स्वाहा
सोमाय स्वाहेति। ५ शतक्रत्व एतमनुवाकमावर्तयति दशदशसंपातम्।
अपरिमितक्रत्वो वा। ६ (४थी कण्डिका)

अथैनं प्रतिदिशं प्रोचति। १ प्रजापतये त्वा जुष्टं प्रोचामीति पुरसात्
प्रत्यक्षं तिष्ठन्। २ इन्द्राग्निभ्यां लेति दक्षिणत उदङ्। ३ वायवे
लेति पथात्प्राङ्। ४ विश्वेभ्यस्त देवेभ्य इत्युत्तरतो दक्षिणा। ५ देवेभ्य-
स्त्वेत्यधस्तात्। ६ सर्वेभ्यस्त देवेभ्य इत्युत्तरिष्ठात्। ७ पृथिव्ये त्वान्निचाय
त्वा दिवे लेति शेषम्। ८ विदुर्मान्वा प्रभुः पित्रे त्यश्वस दक्षिणे कर्णे यज-
मानमथनामानि वाचयित्वाऽग्रये स्वाहा स्वाहेन्द्राग्निभ्यामिति पूर्वहोमान् इत्वा
शूरसि शुवे त्वा भव्याय त्वा भविष्यते त्वेत्यश्वमुत्तुज्य देवा आशापात्वा इति
रविभ्यः परिददाति। ९ श्वेतं कवचिनो रचन्ति। १० अपर्यावर्तयन्तो
ऽश्वमनुचरन्ति। ११ चतुःशता इत्येकैवम्। १२ श्वेतं कल्या राजपुत्राः
संनदाः संनदसारथिनः श्वेतमुषा चराजानः संनदाः संनदसारथिनः श्वेतं
इत्यादि विधिः श्वेतं यद्वा वद्वयिनः। १३ ते ऽश्वस्य गोपारो भवन्ति। १४

यद्यद् ब्राह्मणजातमुपेयुक्तान् च्छेयुः कियद्युयमन्त्रमेधस्य विव्येति । १५ यो न विद्यात् तं जिला तस्य गृह्णात् खादं पानं चोपनिवपेयुः । १६ यद्ब्राह्मणानां कृतान्नं तदेषामन्नम् । १७ रथकारकुले वसतिर्भवति । १८ इह धृतिः खा-
हेति सायमन्त्रस्य चतुषु पन्सु चतस्रो धृतौजुं होति । १९ (५मो कण्डिका)

सवित्रे प्रातरष्टाकपालं निर्वपति । १ तस्य पुरस्तात्स्विष्टकृत आधनाय खाद्या-
प्रायणाय खाहेत्युद्वाञ्छा होति । २ ईंकाराय खाहे कृताय खाहेत्यश्चरि-
तानि । ३ अज्येताय खाद्या कृष्याय खाद्या ज्येताय खाहेत्यष्टाचत्वारिंशत्स-
श्चरुपाणि । एकमतिरिक्तम् । ४ अत्र ब्राह्मणो वीणागाथो गायतौल्यददा-
इत्ययजथा इत्यपच इति तिस्रः । ५ सवित्रे प्रसवित्र एकादशकपालं मध्य-
दिने । सवित्र आसवित्रे द्वादशकपालमपराह्णे । ६ दक्षिणेनाहवनीयं
होता हिरण्यकशिपादुपविशति पारिव्रजं भीवन्मयं चाचिख्रासनम् । ७ तं
दक्षिणेन हिरण्यकशिपेन्द्रं ह्ना यजमानस्य । ८ पुरस्तादध्वर्युर्हं रथे कूर्चे । ९
दक्षिणतो वीणागणक्किन उपोपविशति । १० उपविष्टे ध्वज्योर् इत्यध्वर्यु-
होतामन्वयते । ११ होश्चि होतरित्यध्वर्युः प्रतिगृह्णाति । ओं होतरिति
वा । १२ संस्थितयोरध्वर्युः संप्रेष्यति वीणागणक्किनः पूर्वैः सह सुहृद्भी राज-
भिरिमं यजमानं संगायतेति । १३ सार्धं धृतिषु ह्ययमानासु राजन्यो वीणागाथो
गायतौल्यजिना इत्युपध्याय इत्यसु संधाममहनि तिस्रः । १४ (६शो क०)

सायंप्रातर्रात्राण्यो वीणागाथिनौ गायेताम् । १ एवमेतानि सावित्रादीनि
संवत्सरं कर्माणि क्रियन्ते । २ स्रज्वाश्चरितानि जुहोति । ३ विशि-
मास एष संवत्सरो भवति । ४ अपह्नास्विष्टिषु वीणागाथिभ्यां शतमनोयुक्तं
च ददाति । ५ शते चानोमुक्ते चेल्येके । ६ उर्ध्वमेकादशान्नासादाशतय-
त्रजे इत्यं वध्नति । ७ तस्यै अन्नाय यवसमाहरति । ८ यद्यश्चमुपपत्तिन्दे-
दाद्यं यमष्टाकपालं निर्दपेत्तदीन्यं चरुं सावित्रमष्टाकपालम् । ९ पौष्णं चरुं
यदि श्लोणः । १० रीद्रं चरुं यदि मङ्गो देवताभिमन्वते । ११ वज्रानरं
द्वादशकपालं निर्दपेत्सुगाहरे यदि नागच्छेत् । १२ यद्यधीयादप्रवे इहोसुचे
ष्टाकपालः सौर्यं पयो वायव्य आन्ध्रभागः । १३ यदि वज्रवामधीयात्प्राजापत्यं
चरुं द्वादशकपालं वा । १४ यदि नख्ये हायव्यं चरुम् । १५ यदि सेभाभो-
लरी विन्दे तेन्द्राय जयत एकादशकपालम् । १६ यदि प्रासहा नयेयुरिन्द्राय
प्रसन्न एकादशकपालम् । १७ यद्यन्धः स्नात्सौर्यं चरुमेककपालं वा । १८
यदि अर्धे उपपतेत्तेषां चरुम् । १९ अथविज्ञातिन यच्छाणा स्विद्येत प्राजा-
पत्यं चरुं द्वादशकपालं वा । २० (७मो कण्डिका)

यदमिवा अथ विन्दे रन्ध्रं तास्य यज्ञः । १ अथान्यमानौय प्रोच्येयुः । २
एतस्य संवत्सरस्य योचनमावास्ता तस्मात्सुखां संभरति । ३ त्रेधातवीया
दीचवीया । ४ आज्ञत्ये प्रयुज्जे इत्ये खाहेति चत्वार्यदयह्णानि
जुहोति । ५ खाहादिमाधीताय खाहेति त्रीणि वैश्वदेवानि । ६ सोऽयं
दीचाहुतिकावो विरुद्धः । ७ सप्तमन्त्रमौदयह्णैर्वैश्वदेवोचरेः प्रच-
रतिः ८ षडुत्तमे इह्नौदयह्णानि जुहोति । सर्वस्य खाहेति पूर्णाहुति-
सुत्तमा । ९ षडह्माप्रावेष्येन प्रचरति । १० सप्तम्यामाग्निक्वा विहविषेति
वाजसनेयकम् । ११ भुवो देवानां कर्मण्येतुदीचाभिः कृष्णाजिनमारोहन्-
मभिमन्वयते । १२ आ ब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतां जज्ञि वीजमिति
जातमुखासुपतिष्ठते । १३ विष्टवाचि यजमाने संप्रेष्यति वीणागणक्कि-
देवैरिमं यजमानं संगायतेति । १४ एवं सदाभवत्सु । १५ प्रजापतिना

सुत्यास्ववश्वयोदयनीयानूबन्धोदवसानोयास्ति । १६ देवैरन्ततः । १७

(८मो कण्डिका)

वेदिक्वा विस्वावा वेदिः । विस्वावोऽग्निरेकविंशोवा । १ वैश्वानरेण
प्रचर्यप्रवे गायथायेति दशहविषं सर्वं पृष्टां निर्वपति । २ समिद्धिमागथा
न इति यथालिङ्गं यान्यानुवाक्काः । ३ कसला युनक्ति सत्वा युनक्ति
परिधीयुनक्ति । ४ अस्य यज्ञस्यै मङ्गं सन्त्या इति सर्वं वानुषजति । ५
रथवाहने हविर्धाने राज्ञ्दालमेकविंशत्यरविमभिष्टं मिनोति । ६ पौतु-
द्रवाभितः । नयो वेन्ना दक्षिणतः । त्रय उत्तरतः । त्रयः खादिरा दक्षि-
णतः । त्रयः उत्तरतः त्रयः पालाशा दक्षिणतः । त्रय उत्तरतः । ७ खादिराः
पालाशा वान्त इत्येके । ८ एकादशैकादशिनोः प्राचीः स मित्वन्तीति काल-
ववि ब्राह्मणं भवति । ९ चतुष्टय आपो दिग्भ्यः समाधत्ताः । १० तासां वसतौ-
वरीर्यं कृति । ११ यो भूते प्रतायते गीतमचतुष्टोमयोः पूर्वो रथं तर-
सामा । १२ पयकाल आधेयं सवनीयं पयमुपाकरोति एकादशान्ता । १३
दक्षिणाकावे यद्ब्राह्मणानां दिक्षु विषं तन्माहे समशः प्रतिविभज्यान्वहं
ददाति । १४ (९मो कण्डिका)

प्राचीं दिशमध्वर्यवे । दक्षिणां ब्रह्मणे । प्रतीचीं होत्रे । उदाची
मुदगात्रे । यदन्यदभूमः पुरुषेभ्यः अपि वा प्राचीं होत्रे । प्रतीचीम-
ध्वर्यवे । १ महिषीं ब्रह्मणे ददाति । वावातां होत्रे । परिहृक्तीमुदगात्रे ।
पालाकलीमध्वर्यवे इति विज्ञायते । २ पवीसं यजान्तमहः संतिष्ठते । ३
संस्थिते इह्यन्मत आहवनीयं षट्त्रिंशतमाश्वानुपतल्यान्मिन्वति । ४
अस्तमित आदित्ये षट्त्रिंशतमध्वर्यवे उपतल्यानधिरुह्य खादिरैः खूर्चैः सर्वां
रातिमन्त्रोमाह्नं कृति । आश्वं नष्ट तष्टुलागृह्युकांज्ञानाङ्कस्यान्माणाः
सक्तून्मसूत्यानि प्रियङ्गुतष्टुलानिति । ५ चतुष्टयेके समानमन्ति । आन्ध्रे न
जुहोति लाजैर्जुहोति धानाभिर्जुहोति सक्तुभिर्जुहोति । ६ एकस्य खाहे-
त्येतेषामनुत्राकानामयुज आजोऽन युजोऽनेन । आजोऽनान्ततः । ७ अत्र
प्रयुक्तानां प्रयाच्यामाणां च मन्त्राणां प्रयोगमेके समानमन्ति । ८ (१० क०)

विभुमावा प्रभुः पिबेत्यन्नमानानि । १ आयनाय खाद्या प्रायणाय
खाहेत्युद्वावान् । २ अग्रये खाद्या सोमाय खाहेति पूर्वदीमान् । ३ पृथिव्ये
खाहान्तरिचाय खाहेत्येतं इलाप्रये खाद्या सोमाय खाहेति पूर्वदीचाः । ४
पृथिव्ये खाहान्तरिचाय खाहेत्येकविंशिनो दीचाम् । ५ भुवो देवानां
कर्मण्येतुदीचाः । ६ अग्रये खाद्या वायवे खाहेत्येतं इला वाङ्मयज्ञः स-
क्रान्तित्यावीः । ७ सृतं मय्यं भविष्यदिति पर्यावीः । ८ आ मे गृहा
भवन्त्वित्याहुः । ९ अग्निना तपोऽन्वभवदित्यनुभूः । १० खाहादिमाधीताय
खाहेति षमन्तानि वैश्वदेवानि । ११ दक्षः खाहा हनूमां खाहेत्यहो-
मान् । १२ अजं तास्य खाद्या कृष्याय खाद्या ज्येताय खाहेत्यश्चरुपाणि । १३
वीषधीभ्यः खाहा सूक्ष्मः खाहेत्योषधिहोमान् । १४ वनस्यतिभ्यः खाहेति
वनस्यतिहोमान् । १५ मेघस्ता पचतेरवन्तित्याप्यानि । १६ कृष्णामः
खाहाह्नाः खाहेत्यपां होमान् । १७ अथोभ्यः खाद्या नमःभ्यः खाद्या महोभ्यः
खाहेत्यश्वासि नमोसि महोसि । १८ (११ कण्डिका)

नमो रात्रे नमो वरुणायेति यज्यानि । १ मयोयुवतो अमि वानुषा-
इति गव्यानि । २ प्राणाय खाद्या व्यानाय खाहेति सततिहोमान् । ३
सिताय खाहासिताय खाहेति प्रभुकोः । ४ श्रव्ये खाहान्तरिचाय खाहे-

त्ये तं हुत्वा दत्तते स्वाहादन्तकाय स्वाहेति शरीरहोमान् । ५ यः प्राणतो य
आत्मदा इति मन्त्रिमानौ । ६ आ ब्रह्मन्वाज्ञो ब्रह्मवर्चसो जायतामिति सम-
स्तानि ब्रह्मवर्चसानि । ७ अग्निं बीजमित्येतं हुत्वा प्रये समनमस्य धियै सम-
नमदिति सन्तिहोमान् । ८ ताव स्वाहा भविष्यते स्वाहेति भूतामस्यौ
होमौ । ९ यदक्रन्दः प्रथमं जायमान इत्यश्वतोमोथं हुत्वे कश्च स्वाहेत्येतान-
नुवाकान्पुनः पुनरभासं रात्रिशेषं हुत्वा वसे स्वाहेत्युवसि । व्यूच्यते स्वाहेति
व्यूच्यन्ताम् । व्युष्टौ स्वाहेति व्युष्टायाम् । उदयते स्वाहेत्युदयम् ।
उच्यते स्वाहेत्युचति । उदिताय स्वाहा सुवर्णाय स्वाहा लोकाय स्वाहेत्युदिते
हुत्वा प्रज्ञातान्नपरिशेषान्नि दधाति । १० (१२ कण्डिका) .

प्रतायत एकविंश उक्थो महानाम्नीसामा । १ अन्तरेणाथयथोक्थौ
प्राक्तं सोममभिपुत्य यः प्राणतो य आत्मदा इति मन्त्रिमानौ गृह्णाति । राजतेन
पूर्वं सोमर्षेणोत्तरम् । २ स्यंस्ते मन्त्रिमेति पूर्वं सादयति । चन्द्रमास्ते
मन्त्रिमेत्युत्तरम् । ३ आयुर्वंशस्य पवते मधु प्रियं पिता देवानां जनिता
विभावसुः । दधाति रवं स्वधरोरपीथीं मन्त्रिणो मत्तर इन्द्रियो रस इत्यश्वस्य
श्रीवासु सोमर्षेणिकं प्रतिमुष्वाप्रिस्ते वाजिन्मुडङ्गुत्वारम् इति वासुधावश्वम-
न्वारम् वह्नियवमानं सप्रेम्यप्रिस्ते धेति । ४ उदगातारमपवध्याश्वमुदगोथाय
हवीते । ५ तस्मै वडवा उपरुचति । ६ ता यदमिहिकुरीति स उदगोथः ।
यत्प्रत्यमिहिकुर्वन्ति स उपगोथः । ७ उदगासीदशो मेधो यज्ञिय इति शतेन
शतपत्नेन च मिथैषोदगातारमुपशिक्ष्ये मां देवतामुद्गायेति संप्रेष्यति । ८
तेन हिरण्येन सौवमुपाकरोति । ९ वडिः स्थाने भवति । १० नमो राज्ञे
नमो वरुणायेति वेतसशाखायाश्चतुरगोक्षगानप्रिष्ठ उपपाकरोति येषां
चानादिष्टो देशः । ११ ब्रचशाखाभिरितरान्पश्यन्त्ये पर्यङ्गान् । आप्रेथं
कृष्णवीवं पुरस्तात्तलटि । पीथमन्वचम् । ऐन्द्रावीणमुपरिष्ठाङ्गीवासु । आप्रेथी
कृष्णवीवो वाडवोः । त्वाष्ट्री लोमशसक्यौ सक्थ्यौः । शितिष्ठौ वाडस्पल्यौ
पृष्ठे । सौर्ध्यामो ज्वेतं कृष्णं च पार्श्वयोः । धावे प्रयोदरमधलात् ।
सौर्यं वलक्षं पुच्छे । १२ अन्ववाप्रिष्ठादष्टादिगः । १३ (१३ कण्डिका)

रोहितो धूधरोहित इति नवनव प्रतिविमलैर्न्द्राप्रदशमानेके समान-
नन्ति । १ एवमारण्यान् । २ तान्यूपान्तरावपु धारयन्ति । ३ इन्द्राय राज्ञे
सूकर इत्येकादश दशत आलभन्ते । ४ वसन्ताय कपिञ्जालालभते ।
श्रीषाय कलविडान् । वर्षाभ्यसिक्तीन् । शरदे वर्तिकाः । हेमन्ताय कक-
रान् । शिशिराय विकिरान् । ५ कृष्णा मोमाः । धूषा आन्तरिकाः ।
वृहन्नी देवाः । शबला वैद्युताः । सिंहासारका इति पञ्चदशिनः । ६
कृष्णवीवा आप्रेथाः । वडवः सौम्याः । उपपञ्जलाः सावित्राः । सारस्वत्यौ
वसन्तयः । शीपणाः श्लाभाः । प्रथ्यो मारुताः । बहुरुपा वैश्वदेवाः । वशा
यावापृथिव्याः । ७ कृष्णवीवा इत्युक्तम् । ८ एता ऐन्द्रायाः । प्रथ्यो
मारुताः । कृष्णा मारुताः । कात्यासूपराः । ९ अग्नये ऽनीकवते प्रथम-
जानालभते । मरुदभ्यः सातपनेभ्यः सवात्यान् । मरुदभ्यो गृह्णीधियो
वाक्पान् । मरुदभ्यः क्रीडिभ्यः संचटान् । मरुदभ्यः खतवद्भ्यो ऽगुष्ट-
टान् । १० कृष्णवीवा इत्युक्तम् । ११ एता ऐन्द्रायाः । प्राग्रङ्गा ऐन्द्राः ।
बहुरुपा वैश्वकर्माणाः । १२ पिठभाः सोमवद्भ्यो वधून्ध्यानुकाशान् । पिठ-
भगोवर्हिषद्भ्यो धूषान्धनून्काशान् । पिठभगो ऽग्निवातेभ्यो धूषान्पोहिता-
स्त्रैयम्बकान् । १३ कृष्णाः पूषन् इत्येके । १४ (१४ कण्डिका)

श्वेता आदित्याः । १ कृष्णवीवा इत्युक्तम् । २ एता ऐन्द्रायाः । बहुरुपा
वैश्वदेवाः । प्राग्रङ्गाः शुनासोरीयाः । श्वेता वायव्याः श्वेताः सौर्या इति चातु-
र्मास्याः पश्यवः । ३ इयानैकादशिनानालभन्ते । प्राकृतानाश्वमेधिकांश्च । ४
अग्नये ऽनीकवते इत्याश्वमेधिकान् । सोमाय स्तराज्ञ इति वर्धिनः । ५ उपा-
कृताय स्वाहेत्युपाकृते जुहोति । आलव्याय स्वाहेति नियुक्ते । हुताय स्वाहेति
हुते । ६ पवयो ऽश्वमलं कुर्वन्ति । मन्त्रिणी वावाता परिहृतीति । ७ शतंश-
तमेकैकस्याः सचिवाः राजपुत्रीदाराथोयाषामराज्ञां सूतशामण्यामिति । ८
सहस्रं सहस्रं मणयः सुवर्णरजतसामुद्राः । ९ वालेषु मण्योनावयन्ति ।
सूरितिसौवर्णान्मन्त्रिणी प्रावहन्त । भुव इति राजतान्वावाता प्रत्यम्बहन्तप्राक्
शोणेः । सुवरिति सामुद्रान्परिहृती प्रत्यक् शोणेः । १० वालेषु कुमार्धः
गङ्गमणीनुपपन्थन्यप्रचंसाय । न वा । ११ अयास्व खदेशानाश्वेनाभ्यञ्जनि ।
वसवस्ताञ्जन्तु गायत्रेण छन्दसेति गौक्षा लवेन मन्त्रिणी । रुद्रा इति कासाव-
वेन वावाता । आदित्या इति अक्रतेन परिहृती । १२ गौक्षलवेन सुर-
भिरशो मेधमुपाकृतः । देवां उपप्रेथ्यन्वाजिन्वर्चोदा लोकजिदभव ॥ कासा-
न्वदेन सुरभिरशो मेधमुपाकृतः । देवां उपप्रेथ्यन्वाजिन्वर्चोदा लोकजिदभव ॥
मौक्तकृतेन सुरभिरशो मेधमुपाकृतः । देवां उपप्रेथ्यन्वाजिन्वर्चोदा लोकजि
दवेत्येतेषां प्रतिमन्त्रम् । १३ (१५ कण्डिका)

युञ्जन्ति ब्रध्नमिति दक्षिणस्यां युगधृत्यैवमथ युनक्ति । १ युञ्जन्तास्य काम्ये
ति प्रष्टौ । २ कंतुं कृष्णव्रकैतव इति रथे ध्वजमवगृह्णति । ३ जोसूतस्त्रेवेति
कवचमधूहते । ४ धन्वना गा इति धनुरादत्ते । ५ वचाप्रीतिरिति ज्यामभि-
सृशति । ६ ते आचरन्तीति धनोरावो संसृशति । ७ बहोना पिता वधुरस्य
पुत्र इति पृष्ठ इपुषिं निनह्यति । ८ रथे तिष्ठन्नयति वाजिन इति सारथिम-
भिमन्त्रयते । ९ तोत्रान्धीवान् कृष्यते वषपाण्य इत्यन्वान् । १० स्वादुप-
सदः पितरो वयोधा इति तिष्ठन्भिः पितृनुपतिष्ठते । ११ च्छजीते परि वड्वि
न इत्यात्मानं प्रत्यभिव्यक्षा ब्रह्मन्वीत्यज्ञानिमादायादिरिव भोगैरिति हस्तप्रम-
भिमन्त्रयते । १२ वनस्यते वीडङ्गो हि भूया इति पञ्चमी रथम् । १३ आसू-
रज प्रत्यावर्तयेमाः केतुस इति दुन्दुभीन्संज्ञादयन्ति । १४ आक्रान्ताञ्जी क्रमे-
रत्यक्रमोवाजोत्तरदशदकान्तमभिप्राय ये ते पश्यान्ः सवितरित्यध्वर्युर्ध्वजमानं
वाचयति । १५ स्वयं वाजिन्नपो ऽवजिन्नैत्यो ऽश्वमवप्राप्य यहातो अपो अग-
मदिति प्रदक्षिणमावर्तयति । १६ यतः प्रयाति तदवतिष्ठते । १७ वि ते
मुक्षामीत्येतमथं विमुक्ष्य रथवाहनं हविरस्य नामेति रथवाहने रथमत्याधाय
दीप्तौ पृष्ठमित्यश्वस्य पृष्ठं स'माष्टि' । १८ लाजोऽन्वाचीऽन्वशी मनांश्च इति
पवयो ऽन्वायात्र परिशेषानुपवपन्ति । १९ यथोपयुग्ममति तस्मै प्रजा राष्ट्रं
भवति । २० (१६ कण्डिका)

आक्रान्ताञ्जी क्रमेरत्यक्रमोवाजो दीप्तौ पृष्ठमित्यश्वमभिप्राय यथोपाकृतं
नियुज्य प्रोच्योपपाययति । १ यथुपायमानो न पिथेदग्निः पशरासोदिह्यप-
पाययेत् । २ समिद्धो अञ्जन्कुदं सतानमित्यश्वस्याप्रियो भवन्ति । ३ मेपस्वा
पचतेरवतिष्ठति पर्येष्टौ क्रियमाणे ऽपाल्यानि जुहोति । ४ पर्येष्टिकृताना-
रणानुत्तजन्ति । ५ वडवे पुष्टयो च । ६ अजः पुरो नीयते ऽश्वस्य । ७
वेतसशाखायां तार्यं कृष्णवीवासं हिरण्यं कश्चिप चासौर्यं सोमर्षं रक्तमुप-
रिष्ठात्कुला तस्मिन्पश्यन्त्येकमुपशिक्ष्यन्ति । ब्रचशाखास्वितरान्पश्यन् । ८
श्लासूक्ष्मेन चोमैष वाचं संप्रपयन्ति । स्यन्वाभिरितरान्पश्यन् । ९ प्राणाथ

स्वाहा व्यानाय स्वाहेति संप्रथमाने पञ्चाङ्गोत्तरी जुहोति । संप्रथमे वा । १०
यानेन स्वाहा प्रसूतानूपतिष्ठते । ११ अन्वे अन्वाख्यम् इति प्रतिप्रस्थाता
पवीरुदानयति । १२ ता दक्षिणान्केशपुत्रानुदरस्य सव्यानुप्रस्य दक्षिण-
नूकनाम्नाः सिग्मिरभिधून्वत्यस्त्रिः प्रदक्षिणमथं परित्यज्यन्ती स्वेति । १३
सव्यानुदरपथा दक्षिणानुप्रस्य सव्यानुकनाम्ना अनभिधून्वत्यस्त्रिः प्रतिपरि-
यन्ति । १४ प्रदक्षिणमन्ततो यथा पुरस्तात् । १५ नवकुलः संपादयन्ति । १६
अन्वे अन्वाख्यम् इति महिष्यश्चतुर्ष्विष्य । १७ (१० कण्डिका)

गणानां त्वा गणपतिं हवामहे इत्यभिनन्त्याहं स्वां त्वं स्वाः सुरायाः कुलजः
स्वात्तवे मांयतुरः पदो व्यतिपजा शयावहा इति पदो व्यतिपजते । १ तौ सह
चतुरः पदः संप्रसारयवहा इति पदः संप्रसारयते । २ सुभगे कान्थोडवासि-
नीति चौरेण वाससाध्वर्युर्महिषीमथं च प्रच्छाद्य हवा वामिताभिनन्वयते । ३
उत्सृज्योर्ध्वं देहीति प्रजननेन प्रजननं संधायान्वे अन्वाख्यम् इति
महिष्यश्च गहते । ४ ऊर्ध्वामेनामृक्यतादिति पत्न्या अभिमेधन्ते । ५ विमं-
हिषी गहते । विः पत्रयो अभिमेधन्त उत्तरयोत्तरयर्षा । ६ दक्षिणाव्यो अका-
रिवमिति सर्वाः सुरभिमतीष्टचमनता जपित्वायोहिडीयाभिर्मांजयित्वा गायत्री
विष्टमिति द्वाभ्यां सौवर्षाभिः सूचीभिर्महिष्यश्चासिपथान्कल्ययति प्राङ्गो-
डात् । एवमुत्तराभ्यां राजतौभिर्वावाता प्रत्यक्कोटाप्राङ्गनामेः । एवमुत्त-
राभ्यां लौहीभिः सीसाभिर्वा परिहृत्तौ ऋषम् । ७ तूष्णीं तूपरगोश्वयोरसि-
पथान्कल्ययन्ति । ८ कक्षा व्यति कक्षा विद्यालोताश्वस्य लवमाच्छाति । ९
चन्द्रं नाम मेदः । तदुद्धरति । १० नाश्वस्य वपा विद्यते । ११
उद्धरतीतरेषाम् । १२ कर्णं क्षिप्त्वा वरुणोऽपसंनहति । १३ नाश्वस्य
गदो विद्यते । १४ श्रुतासुवपासूतत उपरिष्टादग्रे वेंतसशाखाधामशत-
परगोश्वगाणां वपाः सादयति । १५ (१८ कण्डिका)

दक्षिणतः प्रचशाखास्तिरेषां पश्याम् । १ पूर्वां परिवव्यमहिमानो
हुत्वाश्वतूपरगोश्वगाणां वपाः समवदाय संप्रेष्यति । २ प्रजापतये ऽश्वस्य
तूपरस्य गोश्वस्य वपानां मेदसामनुवृद्धिं । प्रजापतये ऽश्वस्य तूपरस्य
गोमृगस्य वपानां मेदसां प्रेषेति संप्रेषी । चन्द्रवपयोर्मेदसामनुवृद्धिं
चन्द्रवपयोर्मेदसां प्रेषेति वा । ३ समवदायितरेषां वपाः संप्रेषति । ४
विश्वेभ्यो देवेभ्य उक्षाणां क्षाणानां मेषाणां वपानां मेदसामनुवृद्धिं ।
विश्वेभ्यो देवेभ्य उक्षाणां क्षाणानां मेषाणां वपानां मेदसां प्रेषेति
संप्रेषी । ५ उत्तरी परिवव्यमहिमानो हुत्वा चालाखि मार्जयित्वाभितो ऽग्निं
ब्रह्माधाय पशुं पविशेति । दक्षिणो ब्रह्मा । उत्तरो हीता । ६ किं सिदासीत्-
पूर्वचित्तिरितरेषां तस्यानुवाकस्य पृष्टानि होतुः प्रतिज्ञातानि ब्रह्मणः । ७ ब्रह्मण
उदचं विजयं संप्रापयन्ति । ८ प्रजापतये ऽश्वस्य तूपरस्य गोश्वस्योऽसि लोम
च तिर्यगसंमिन्दन्तः सूकरविशसं विशसतेति संप्रेषवत्कुर्वन्ति । ९ अश्वस्य
लोहितं स्विष्टकृदर्थं निदधाति । १० शफं गोश्वकण्ठं च साहेन्दस्य लोमं
प्रत्यभिषिञ्चति । ११ हिरण्यगर्भः समवर्तताय इति षट् प्राजापत्याः पुर-
स्तादभिषेकस्य जुहोति । अयं पुरो भुव इति षट् च प्राणयतः । १२
व्याघ्रचर्मणि सिंहचर्मणि वामिषिष्यते । १३ (१९ कण्डिका)

अथभवनानिषिचमानसोपरि धारयन्ति । १ सहस्रशीर्षां पुरुष इति
पुरुषेण नारायणेन सौवर्णेन शतमानेन शतशरेण शतकृष्णेन यजमानस्य
शीर्षं ब्रधनिदधाति । २ प्रजापतेस्त्वा प्रसवे प्रथिष्या नामावकाशस्य

वाङ्मयां दिवो हस्ताभ्यां प्रजापतेस्त्वा परमेष्ठिनः स्वाराज्येनाभिषिञ्चामीति
महिष्योः संधावैषाभिषिञ्चति । ३ वायवारमिषिचतोत्तरीके । ४ मधुय माघ-
वथेति मासनामभिरमिषिचमानमभिजुहोति । ५ वसन्ताय स्वाहा योषाय
स्वाहेतुभ्याः षट् । ६ वि न इन्द्र सधो जहि नीचा यच्छ धृतयतः । यो
अस्यां अभिदासताधरं गमया तमः ॥ वि रचो वि मृषो नुद वि हवस्य हनु
रज । वि मनुमिन्द्र हवहन्नमिवस्याभिदासत इति वैमृधीभ्यां यजमानो मुखं
विमृष्टे । ७ ऊर्ध्वा अस्व समिधो भवन्तीति प्राजापत्याभिराप्रोभिरमिषिच-
मानस्य हस्तं गृह्णाति । ८ प्रजापतिश्चरति गर्भे अन्तः ॥ प्रजापतिं प्रथमं यज्ञि-
यानां देवानामथे यजतं यजन्तम् । स नो ददातु द्रविणं सुवीर्यं रायस्योयं
वि पातु नामिमये ॥ तवेमे लोकाः प्रदिशो दिश्य परावतो निवत उदतय ।
प्रजापते विश्वस्योवधन् इदं नो देव प्रति ह्यं हवामिति षट् प्राजापत्या उप-
रिष्टादभिषेकस्य जुहोति । ९ प्राची दिशमिति षट् चापानशतः । १० अथ
यजमानो जागतान्विषक्रमान्क्रामति । ११ (२० कण्डिका)

पशुकाल उत्तरत उपरिष्टादग्रे वै तसे कटे ऽश्वं प्राञ्च यथाहं चिनोति । १
एवं पुरस्तात्प्रवृत्तं तूपरम् । पश्याप्राचीनं गोमृगम् । २ दक्षिणतः प्रचशाखा-
स्तिरान् पश्यासादयति । ३ वपावद्वयां । ४ हविष इतान्ती नमति । ५
आक्रान्ताजी क्रमैरताक्रमीवाजी दौक्षे पृष्ठमिति दैतसेन कटेनाश्वतूपरगोश्वगान्
सर्दङ्गानुवृद्धं लुवदाय स्वाहा बलिवदाय स्वाहेत्यश्वमभिजुहोति । ६ अथ
कटमनुवृद्धरति । ७ ये ऽश्वस्य हुतस्य गन्धमाजिजन्ति सर्वे ते पुष्यलोका
भवन्तीति विज्ञायते । ८ हविषा प्रचयांशमदानं कृत्वा लोगाद्व्याधां मण्डू-
काश्चोभिरित्येत्यनुदंशभिरनुवाकैः प्रतिमन्त्रं शरीरहोमाञ्च जुहोति । ९
दिव्योऽप्यश्वस्य । अरयोनुवाकं षोडशम् । दौक्षे पृष्ठमिति तं सप्तदश-
माजिगैव । १० यदक्रन्द प्रथमं जायमान इति तैस्त्रिभिरनुवाकैः षट्त्रिंशत्-
मन्त्रोमोयाञ्च जुहोति । ११ क्रमैरताक्रमीदितेतां षट्त्रिंशीम् । १२ अष्टादश
जुहोतीत्येके । १३ इमा नु कं सुवना सोषधेमेति विपदाः । १४ अन्ततो
ऽश्वस्य लोहितेन श्तेन स्विष्टकृतं यजति । १५ (२१ कण्डिका)

गोमृगकण्ठेन प्रथमामाहुतिं जुहोति । अथशफेन द्वितीयाम् । अथअयेन
कमण्डलुना तृतीयाम् । १ पत्नीसंयान्तमहः सतिष्ठते । २ श्वो मृते प्रतायते
सर्वेस्तोमोऽतिरातो हहन्तासा । ३ पशुकाले गव्यान्नेकादशनालभन्त
प्राजापत्यान्वैश्वदेवात्वा । प्राजापत्यामृषमं तूपरं सर्वेषां सर्वेभ्यः कामेभ्यो
वादशमुपालभ्याम् । ४ समानमावधयात् । ५ अथअयेन प्रचयांशं शिषिषिष्टं
खलतिं विक्षिपं युक्तं पिङ्गाचं तिलकावलमवधयनमभवनीय तस्य सूर्य-
श्च होति मूलवे स्वाहा चूण्डल्यादी स्वाहा जुष्वकाय स्वाहेति तिस्रः । ६
तथै शतमनोयुक्तं च ददाति । ७ शते चानोयुक्तं चेत्येके । ८ सह पुष्यकृतः
पापकृतश्च हस्तसरंभ्या यानममुदायन्ति । सर्वे ते पुष्यलोका भवन्तीति
विज्ञायते । ९ सौरोर्गैव श्वेता वशा अनूवन्त्या भवन्ति । १० अथैकेवाम् ।
रोहिषीरैन्द्रोः सौरीः श्वेताः शितिषुष्टा वाहस्यत्याः । ११ अथ वा हविर्न
आलभते । १२ हवः कक्षायाः किक्विदोर्विर्दीगय इति ते वयमत्ताप्राः । १३
पात्नीवत आग्नेय ऐन्द्राय आग्निनसो विशालयूप आलभ्यते । १४ (२२ क०)

अथैकेवाम् । ब्रतानां प्रथमजं कालकायमग्निभ्यां मध्यमे विशालयूप
आलभते । तेषामेव मध्यमजमुजं दक्षिणे । उत्तमजं प्रथिष्या उत्तरी । १
तेषां पशुपुतानामनग्ने ऽहोमृषेऽष्टाकपाल इति दशहविषं स्वगरेऽहमनु-

निर्देपति । २ समानं तु स्विष्टकृदिङ्म । ३ अश्वमेधे प्रथमस्य प्रचेतस इति
यथाविज्ञं याज्ञानुवाक्याः । ४ वैधातवीययोदवस्यति । ५ तस्यां सङ्घम्
ददाति । ६ उदवसाय विशापदपुमे के समानमन्ति । ७ तदाहु द्वादश ब्रह्मौदनान्
संस्थिते निर्वपेद्द्वादशभिर्देष्टिभिर्देजेतेति । ८ तद् तथा न कुर्यात् । द्वादशैव
ब्रह्मौदनान् संस्थिते निर्वपेत् । तेनैव द्वादशानि शतानि ददाति । ९
पिण्डास्तु यो वासन्ता इत्युपपद्यते स वत्सरं यजते । १० अथैकेषाम् ।
आग्नेया वासन्ताः । ऐन्द्रा यैशाः । मातृताः पाज्या वा वार्षिकाः ।
ऐन्द्रा वासन्ताः शारदाः । ऐन्द्रा वासन्ताः कैमनिकाः । ऐन्द्रा वासन्ताः
शैशिराः । ११ स वत्सराय निवचस इति द्वयोर्वायोर्वासयोः पशुवन्नेन
यजते । १२ संतिष्ठते ऽश्वमेधः । १३ (२३ कण्डिका)
(आपस्तम्बश्रौतसूत्र २० प्रश्न)

अश्वमेधकाण्ड (सं० स्त्री०) शतपथब्राह्मणका माध्यं-
दिनशाखाके तेरहवां तथा काण्वशाखाके १५३ काण्ड ।
अश्वमेधदत्त—पौराणिक नृपतिभेद । (महाभारत आदि० और
विष्णुपुराण)

अश्वमेधिक (सं० स्त्री०) अश्वमेधमधिकृत्य कृतः
ग्रन्थः, ठक् ठन् वा । १ महाभारतके अन्तर्गत चतु-
दश पर्व । (पु०) २ अश्वमेध यज्ञके योग्य अश्व ।
(त्रि०) ३ अश्वमेध यज्ञसम्बन्धीय ।

अश्वमेधीय, अश्वमेधिक देखो ।

अश्वमोहक (सं० पु०) श्वेतकरवीर, सफेद कनेर ।
अश्वया (व० स्त्री०) अश्व प्राप्त करनेकी इच्छा,
घोड़ा लानेकी खाहिश ।

अश्वयान (सं० स्त्री०) अश्वभ्रमण, घोड़ेको सवारी ।
घोटकारोहण वात-पित्त, अग्नि एवं अम बढ़ाता,
मेद, वर्ण एवं कफ मिटाता और बली पुरुषकां
हितकर होता है । (दिनचर्या)

अश्वयु (व० त्रि०) अश्वमिच्छति, अश्व-क्यच्-उः ।
१ अश्वयुक्त, घोड़ा लिये हुआ । २ अश्वकी इच्छासे
युक्त, जिसे घोड़ेकी खाहिश रहे ।

अश्वयुज (सं० स्त्री०) अश्वेन अश्वमुखेन युज्यते,
युज्क्तिप् । यत्तुगालामिजिद्वययुक्तमिषजो वा । पा० ४।२।२६ ।
१ अश्विनी नक्षत्र । (त्रि०) २ अश्विनी नक्षत्रजात,
जो अश्विनी नक्षत्रमें पैदा हो । (व० त्रि०) ३ अश्व
लगानेवाला, जो घोड़ा कस या जोत रहा हो ।
(पु०) ४ अश्विनी नक्षत्रयुक्त काल । ५ चान्द्र
आश्विन मास । ६ अश्वयुक्त रथादि, घोड़ागाड़ी ।

अश्वयुज (सं० पु०) आश्विन मास, कारका महीना ।
अश्वयुप (व० पु०) यज्ञीय अश्व बांधनेका स्थान, जिस
जगह अश्वमेध यज्ञका घोड़ा बांधा जाये ।

अश्वयोग (व० त्रि०) अश्व जोतवातता हुआ, जो घोड़ा
जोतवा रहा हो ।

अश्वरत्न, अश्वरत्नक देखो ।

अश्वरत्नक (सं० पु०) अश्व रत्नति, रत्न-ण्वल् ।
घोटकपालक, घोड़ेका सायौस ।

अश्वरत्न (सं० स्त्री०) अश्वः रत्नमिव, उपमिति
समा० । १ घोटकश्रेष्ठ, बढ़िया घोड़ा । २ उच्चैः-
श्रवा, इन्द्रका घोड़ा : “उच्चैःश्रवस संज्ञोत्तमश्वरत्नम् ।” (चण्डी)

अश्वरथ (सं० पु०) अश्वयुक्तो रथः, शाक० तत् ।
घोटकयुक्त रथ, घोड़ागाड़ी, जिस गाड़ीमें घोड़े जुते ।

अश्वरथा (सं० स्त्री०) अश्व रथ इव यस्याम् ।
गन्धमादन पर्वतकी निकटकी नदी ।

अश्वराज (सं० पु०) अश्वानां अश्वेषु मध्ये वा राजा ।
उच्चैःश्रवा नामक घोटक, इन्द्रका घोड़ा ।

अश्वराधस् (व० त्रि०) घोड़े सजाता हुआ, जो
घोड़ेको साजसामानसे ठीक कर रहा हो ।

अश्वरिपु (सं० पु०) १ करवीर वृक्ष, कनेरका पेड़ ।
२ महिष, भैंसा ।

अश्वरोधक (सं० पु०) अश्वं रुणद्धि, रुध-ण्वल् ।
श्वेतकरवीर वृक्ष, सफेद कनेरका पेड़ ।

अश्वरोह (सं० पु०) अश्वं रोहति, रुह-अण् उप०
समा० । अश्वारोही, घोड़ेका सवार ।

अश्वरोहका (सं० स्त्री०) अश्वगन्धा, असगंध ।

अश्वरोहा, अश्वरोहका देखो ।

अश्वल (सं० पु०) अश्वं लाति, ला-क इ-तत् ।

१ अश्वशाहक ऋषि विशेष । २ इन ऋषिकी याज्ञ-
वल्क्यके प्रति प्रश्न एवं प्रत्युत्तर रूप आख्यायिकाका
प्रतिपादक ब्राह्मण (वेदांग) विशेष । ३ विदेहपति
राजा जनकके होतृपुरोहित । (स्त्री०) ३ हृद्रक्षण
विशेष, किसी किसीकी छोटी घास । यह क्षण बल्य,
रुच्य एवं पशुको हितकर होता है । (वैद्यकनिषध)

अश्वलक्ष्ण (सं० स्त्री०) लक्ष्यते ज्ञायते शुभाशुभ-
मनेन, लक्ष्ण-कृष्णि-लुट् इ-तत् । घोटकका शुभाशुभ-

सूचक चिह्न विशेष, जिस निशानसे घोड़ेका भला-बुरा समझ पड़े।

अश्वललित (सं० स्त्री०) वृत्तरत्नाकरोक्त तेईस अक्षरके पादका पूर्णवृत्त विशेष। जिस वृत्तमें यथा-क्रम न ज भ ज भ ज भ ल ग नामक गण रहता और जिसके आठ तथा बारह अक्षरमें यति पड़ता, उसका नाम अश्वललित है। छन्दोमञ्जरौकारने इसीको अद्वितनया कहा है।

अश्वलाला (सं० स्त्री०) अश्वस्य लालेव आकारेण। १ ब्रह्मसर्प। २ हलाहल सर्प, जहरीला सांप। अश्वलोमन् (सं० पु०) १ घोटकलोम, घोड़ेका रोयां। २ सर्पविशेष, किसी किस्मका जहरीला सांप। अश्वलोमा, अश्वलोमन् देखो।

अश्ववक्त्र (सं० पु०) अश्वस्य वक्त्रमिव वक्त्र-मस्य, शाक० बहुव्री०। १ किन्नर, किम्पुरुष, देव-योनि विशेष। २ हयग्रीव, विष्णुमूर्तिविशेष। तन्त्र-सारमें इनका ध्यान इस प्रकार है—

“शरच्छाङ्गप्रभमश्ववक्त्रं सुक्तामदेराभरणैः प्रदीप्तं।

रथाङ्गशङ्काचितवाङ्मुष्मं जानुद्वयव्यसकरं भजामः॥”

अश्ववत् (सं० त्रि०) अश्वा सन्तप्रस्य भूम्नि मतुप् मस्य व। १ अश्वयुक्त, जिसके पास घोड़ा रहे। (अव्य) अश्वे इव अस्य वा वति। २ घोड़ेकी तरह। अश्वमर्हति वति। अश्वपानेके योग्य, घोड़ा पाने लायक।

अश्ववदन (सं० पु०) किसी देशका प्राचीन नाम। हयमुख देखो।

अश्ववह (सं० पु०) अश्वेनोह्यते, अश्व-वह कर्मणि वा अच्। १ अश्वके वहनीय, घोड़ेके ले जाने लायक। २ अश्वारोही, घोड़ेपर चढ़नेवाला या घोड़ेपर चढ़े हुए।

अश्ववार (सं० पु०) अश्वं वारयति, अश्व-च्वा० वृ-णिच्-अण्। १ हयनिवारक, घोड़ेको रोकनेवाला। २ अश्वारोही, घोड़सवार। खुल्, अश्ववारक, घुड़-सवार। ल्यु, अश्ववारण, अश्वारोही।

अश्ववाल (सं० पु०) १ वैश्वजातिका खनामप्रसिद्ध अग्निभेद, ओसवाल। वणिक-देखो। २ घोड़ेका लोम। ३ गुल्मभेद। अशवाल देखो।

अश्ववाह (सं० पु०) अश्वं वहति उद्दिष्ट-यज्ञस्थानं प्रापयति, अश्व-वह-णिच् उपधा वृद्धिः। अश्वको यज्ञ-शालामें ले जानेवाला, जो अश्वमेधके घोड़ेको यज्ञ-स्थलमें ले जाता हो।

अश्ववाह (सं० पु०) अश्वं वाहयति चालयति, वह-णिच्-अण्-णिच् लोपः। घोड़सवार, जो घोड़ेपर चढ़ता हो। खुल्। अश्ववाहक, घोड़ा हांकने-वाला। ल्यु। अश्ववाहन, जिसकी घोड़ेपर सवारी रहे।

अश्वविक्रयिन् (सं० त्रि०) अश्वं विक्रेतुं शील-मस्य, वि-क्रि-शोलाथे णिनि। घोड़ा बेचकर जीविका करनेवाला, जो सौदागर घोड़े बेचता हो।

अश्वविद् (सं० पु०) अश्वं लक्षणया तन्मानसं वेत्ति विद्-क्तिप् ङ-तत्। १ नलराज। महाभारत—वन पर्वके ७२ अध्यायमें राजा नलकी अश्वतत्त्वज्ञताका विषय वर्णित है। (वे० त्रि०) २ अश्वलाभकर्ता, जो घोड़ा लाता हो।

अश्ववैद्य (सं० पु०) अश्वस्य अश्वानां वा वैद्यः चिकि-त्सकः ङ-तत्। अश्वचिकित्सक, जो घोड़ेकी चिकि-त्सा करता हो। नकुल, शालिहोत्र, जयदत्त प्रभृतिके बनाये अश्वशास्त्रमें अश्वचिकित्साका वर्णन है।

अश्वशङ्कु (सं० पु०) अश्वस्य शङ्कु, ङ-तत्। १ घोड़ा बांधनेका खूंट। अश्वस्य शङ्कुरिव। २ दनुके पुत्रविशेष। महाभारत आदिपर्व ६० अध्यायमें दनुके चालीस पुत्र मध्य अश्वशङ्कुका ही नाम परिगृहीत हुआ है।

अश्वशाला (सं० स्त्री०) अश्वस्य अश्वानां वा शाला गृहं, ङ-तत्। १ घोड़ेका घर, घुड़साल, अश्वबल। जयदत्तकृत अश्वशास्त्रमें घोड़ेका गृह निर्माण करनेके लिये ऐसा विधि लिखा है—अश्वबलको पूर्व और उत्तर तरफ, कुछ ढाल होना चाहिये। उसमें बाल, काष्ठ, किम्वा कोई दुष्ट कीट रहने न पाय। घरके भीतर पूर्ण रूप सूखा हो। अश्वबलको एक तरफ, बेरीके काष्ठकी आड़ रखी जाती है। घोड़ेके सम्मुख इहातेमें बाल पड़ता है। इच्छा होनेपर घोड़ा उसी जगह लोटपोट लेता है। अनेक लोग अश्वबलमें वानर बांध देते हैं। उन्हें विश्वास है, इससे घोड़ेकी किसी प्रकारकी पीड़ा नहीं होती।

अश्वशास्त्र (सं० स्त्री०) अश्वस्य लक्षणज्ञापकं शास्त्रं, शाक० तत् । शालिहोत्रकृत घोड़ाके लक्षणादिका ज्ञापक शास्त्र । नकुल और जयदत्तका बनाया भी कोई अश्वशास्त्र है ।

अश्वशिरस् (सं० स्त्री०) अश्वस्य शिरः इ-तत् । १ घोड़ेका मस्तक । अश्वस्य शिर इव शिरो यस्य, बहुव्री० । २ दानव विशेष, कोई देख । महाभारत मध्य दनुके चालीस पुत्रोंमें इसका नाम गृहीत हुआ है । ३ हयग्रीव नामक विष्णुकी मूर्ति ।

अश्वशृगालिका (सं० स्त्री०) अश्वशृगालयोर्वैरं हन्नात् वैर-वुन् टाप् अत इत्वम् । घोड़े और शृगालकी लड़ाई । अश्वसन्ध्रा (सं० त्रि०) अश्वैः चन्द्रति आल्हादयति, चदि-णिच्-रक्-णिच् लोपः टाप् । ३ तत् । वेदे पृषो० सुडागमः । घोड़ेसे आल्हाद लेनेवाली स्त्री, जो औरत घोड़ेसे मजा पाती हो ।

अश्वषड्गव (सं० स्त्री०) अश्वानां षट्कं, अश्व षट्के षड्-गवच् । (प्रकृत्यर्थस्य षट्के यङ्गवच् । वार्त्तिक, पा ३।१।२ स्तु) । छः घोड़ा ।

अश्वसनि (सं० त्रि०) अश्वं सनुते ददाति, सन् सर्वधातुभ्यो इन् । उण् ४।१।२ । इति इन् इ-तत् । अश्वदाता, जो घोड़ा देता हो ।

अश्वसा (सं० त्रि०) अश्वं सनुते अश्व-सन जन-सनखनक्रमणोविद् । पा ३।२।६० । इति विट् । विड्पनोरनुनासिकसात् । पा ६।४।४१ । इति आत्वम् । अश्वदाता, घोड़ा दान करनेवाला, जो घोड़ा देता हो ।

अश्वसाद (सं० पु०) अश्वं सादयति गमयति, अश्व-सद-णिच् उपधावृद्धिः अण्-णिच् लोपः उपस० । अश्वचालक, घोड़ा हांकनेवाला, घुड़सवार ।

अश्वसादिन् (सं० पु०) अश्वेन सौदति गच्छति, सद-णिनि इ-तत् । अश्वारोही, घोड़ेपर चढ़नेवाला, घोड़सवार ।

अश्वसूक्ता (सं० पु०) वेदका सूक्त विशेष । इसमें घोड़ेका बयान है ।

अश्वसेन (सं० पु०) अश्वानां सेना यस्य, बहुव्री० । १ जिनपितृविशेष । २ नृप विशेष, कोई राजा । इनके पुत्र सनत्कुमार थे । ३ तक्षकपुत्र सपैविशेष ।

अश्वसेननृपनन्दन (सं० पु०) इ-तत् । सनत्कुमार ।

अश्वस्तन (सं० त्रि०) श्वोभवः श्वस्-ल्यु तुट् च श्वस्तनः नञ्-तत् । केवल वर्तमान दिन जात, दूसरे दिन न रहनेवाला ।

अश्वस्तनिक (सं० त्रि०) श्वस्तमस्तस्य, मत्वर्थे ठन् नञ्-तत् । जो गृहस्थ केवल वर्तमान दिनके योग्य धन सञ्चय कर सकता हो, जिसके धन दूसरे दिन न रह सके ।

अश्वस्तोमीय (सं० स्त्री०) अश्वस्य स्तोमं स्तुतिरस्ति, अश्व मत्वर्थे छ । अश्वको स्तुतिसे युक्त सूक्त विशेष । ऋग्वेदके १ला मण्डलका १६२ सूक्तमें अश्वकी स्तुति है—

“मा नो मित्रो वरुणो अर्धमाधुरिन्द्र ऋभुचा मरुतः परि ख्यन् ।

अवाजिनो देवजातस्य सप्तैः प्रवचामो विदधे वीर्याणि ॥”

(ऋक् १।१६।१)

हम अश्वकी स्तुति करनेको प्रवृत्त हुए हैं । मित्र, वरुण, अर्धमा, आयु, इन्द्र, ऋभुचा, मरुत् प्रभृति देवता जिसमें निन्दा न करें । इस हेतु बहु अन्नवान् देवजात अश्वके यज्ञ विषयमें वीर्यकी कथा हम कहेंगे । इसी तरह २२ ऋक्में भी घोड़ेकी स्तुति की गई है ।

अश्वस्थान (सं० स्त्री०) इ-तत् । अश्वके रखनेका गृह, जहाँ घोड़े बांधे जायें, अस्तबल ।

अश्वहन्तृ (सं० पु०) अश्वं हन्ति, हन्-लृच् । इ-तत् । कारवीर फूलका वृक्ष, कनेरका पेड़ । (त्रि०) अश्वनाशक, घोड़ेको नाश करनेवाला ।

अश्वहय (वै० पु०) अश्वेन हिनोति गच्छति, हि-कर्तरि अच् । अश्वयुक्त रथ पर सर्वदा गमन करने वाला, जो घोड़ागाड़ीपर चलता हो । “प्रबर्हिर्वज्रानामश्वहयो रथानां ।” (ऋक् १०।२६।५)

अश्वहृदय (सं० स्त्री०) अश्वस्य हृदयं मनोगत भावादि । १ अश्वविद्याविशेष । २ अश्वामिलाष, घोड़ेकी खाहिश ।

अश्ववाच (सं० पु०) अश्वस्य अचीव अच्-समा० ।

देवसरिषपका वृक्ष, सरसोंका पेड़ ।

अश्वत्थ—गोत्रापत्य अर्थमें फञ् प्रत्यय होनेके लिये पाणिन्युक्त शब्दगणविशेष । अश्वत्थमाः फञ् । पा ४।१।११० ।
अश्व, अश्वन्, शब्द, विद, पुट, रोहिण, खर्जूर, खर्जुल, पिञ्जुर, भड़िल, भण्डिल, भड़ित, भण्डित, भण्डिक, प्रहृत, रामोद, चक्र, श्रीवा, काश, गोलाङ्क, अर्क, खन, धन, पाद, चक्र, कुल, पवित्र, गोमिन, श्याम, धूम, धूमन्, वाग्मिन, विश्वानर, कुट, वेश, आत्रेय, नक्त, तड, नड, श्रीष, अर्ह, विशम्भ, विशाला, गिरि, चपल, चुनम, दासक, वैद्य, धर्म, अनङ्गुह, पुंसिजात, अर्जुन, शूद्रक, सुमनस्, दुर्मनस्, चान्त, प्राच्य, कित, काण, सुम्भ, अविष्टा, वीक्ष्य, पविन्दा, आत्रेय भरद्वाज, भरद्वाज आत्रेय, कुत्स, आतव, कितव, शिव, खदिर, पथ, कन्द, श्रुव, स्रु, कर्कटक, रुक्ष, तरुक्ष, तलुक्ष, प्रसुल, विलम्ब, विष्णुज ।
यही शब्द अश्वत्थ हैं ।

अश्वामघ (वै० त्रि०) अश्वो मघं धनं यस्य, वेदे दीर्घः । १ अश्वरूप धन रखनेवाला, जिसके घोड़ा ही धन रहे । २ घोड़ा दानकरने वाला, जो घोड़े ही दान करता हो । “अश्वामघा गोमवावां दुवेम ।” ऋक् ७।७।१।

अश्वयुर्वेद (सं० पु०) अश्वस्य आयुर्विद्यते अनेन, विदु-णिच्-घञ् । घोड़ेकी आयु और चिकित्सा बताने वाला शास्त्र विशेष । पहले शालिहोत्रने अपने पुत्र सुश्रुतको यह विद्या सिखायी थी । पीछे जयदत्तने यह विद्या सङ्कलन की । गर्गऋषि नकुलगण प्रभृतिने अश्वयुर्वेद रचना किया ।

अश्वारि (सं० पु०) ६-तत् । १ घोड़ेका शत्रु । २ महिष, भैंसा ।

अश्वारूढ (सं० पु०) अश्व आरूढः अनेन, बहुव्री० । घोड़ेपर चढ़ा हुआ, घोड़ेसवार ।

अश्वारोह (सं० पु०) अश्वमारोहति आ-रुह-अण्, उप० समा० । १ अश्ववाहक, घोड़ेको हांकने वाला, घोड़ेसवार । (स्त्री०) अश्वगन्धा ।

अश्वारोहण (सं० पु०) घोड़ेकी सवारी ।

अश्वारोही (सं० पु०) घोड़ेका सवार, सवार ।

अश्ववतान (सं० पु०) अश्वस्य इव अवतानो यस्य । ऋषिविशेष, कोई मुनि ।

अश्ववतारी (सं० पु०) वृत्तविशेष, कोयी छन्द । इसमें इकतीस मात्रा होती और वीरछन्द पड़ता है ।

अश्विन (सं० पु०) द्विव० । अश्वः सन्ति ययोः इनि । अश्विन्यां नक्षत्रे भवौ (सन्धिवेलाद्युत्पन्नचवेभ्यो ऽण् । पा ४।१।१६) इति अण्, ततः स्त्रीप्रत्ययस्य लुक् । अश्व उत्पत्तिः स्थानत्वेन सन्तप्रस्य इनि वा । स्वर्गवैद्य अश्विनीकुमारद्वय ।

निरुक्तमें अश्विन शब्दका ऐसा विवरण मिलता है—
“अथातो द्युस्थाना देवता सासानश्विनी प्रथमगामिनी भवतीऽश्विनी यद्यश्ववाते सर्वे रसेनान्यो ज्ञातिषान्योऽश्वैरश्विनाविष्वीर्णवामलत् कावन्विनी । द्यावा-पृथिव्याविष्वेके ऽहोरात्रावितेके सूर्याचन्द्रमसावितेके । राजानो पुण्यकृताविति ऐतिहासिकालयोः कालः ऋतमहोरात्रात् प्रकाशीभावस्यानुविष्टमनुगतयो भागो हि मध्यमो ज्योतिर्भाग आदित्य लघोरपि भवति ।” (निरु० १।१।१२)

अनन्तर अन्तरीक्षके देवताओंका वर्णन करते हैं । उनमें अश्विन प्रथम हैं । उनमें एक रसद्वारा और दूसरे ज्योतिः द्वारा सर्वत्र व्याप्त हैं । इसीसे उन्हें अश्विन कहते हैं । और्णवाभके मतसे, अश्वयुक्त पुण्यवान् राज हयका नाम अश्विन है । किन्तु यह अश्विन कौन हैं—किसीके मतसे, पृथिवी एवं अन्तरीक्ष ठहरते हैं । कोई कोई कहते, वे दिन और रात हैं । किसी किसीका कहना है, कि वह सूर्य और चन्द्र हैं । ऐतिहासिक बताते हैं, कि वे पुण्यवान् राजा हैं । आलोकप्रकाशमें कुछ विलम्ब रहते अर्द्धरात्रके पूर्व उन लोगोंका समय निर्दिष्ट है । अन्धकार भाग मध्यम एवं ज्योतिर्भागको आदित्य कहते हैं । उन लोगोंका समय सूर्योदय तक ही है ।

महाभारतके अनुशासन पर्वमें लिखा है,—चवनने इन्द्रसे कहा, अन्यान्य देवताओंके साथ अश्विनको भी सोमरस पीनेको मिले । इन्द्र इस बातपर राजी न हुए । उन्होंने कहा,—अश्विन देवताओंके बराबर नहीं हैं, इसलिये हम लोग उनके साथ सोम पान नहीं कर सकते । इसपर चवनने फिर कहा,—अश्विन सूर्यके सन्तान हैं; अतएव वे देवता हैं, इसलिये उनके साथ सोमपान करनेमें हानि नहीं है । फिर भी इन्द्र राजी न हुए । इसके बाद चवनने एक यज्ञ आरम्भ किया । उसी यज्ञसे

देवता परास्त होते हैं। उस यज्ञका अनुष्ठान देख इन्द्र एक पहाड़ उखाड़कर अपने वज्र समेत च्यवनकी ओर दौड़े। परन्तु महर्षिका योगवल असामान्य था; उन्होंने तुरत ही जल छिड़ककर इन्द्रको पकड़ लिया। फिर उनके यज्ञकुण्डसे मद नामक एक राक्षस उत्पन्न हुआ। उसके स्वर्गसे मर्त्यतक सुँह पसारनेसे उसमें इन्द्रादि देवता चले गये। लाचार और कोई उपाय न देख देवताओंने अश्विनके साथ सोमपान किया।

इस उपाख्यानसे अनुमान होता है, कि आर्योंने प्रथमतः सहज ही अश्विनको देवता नहीं स्वीकार किया। इधर अनेक ऋषिग्रन्थोंमें (शुक्लः २; नन्दः ५; नन्दः १०-१०१) मिलता है, कि सोमपान करानेके लिये ऋषियोंने अश्विनको यज्ञस्थलमें बुलाया था।

ऋग्वेदमें अश्विनके जन्मका विवरण यों लिखा है;—‘त्वष्टाने अपनी कन्या सरण्युका विवाह करनेकी इच्छा की। यह समाचार पाकर जगतके देवतादि आ उपस्थित हुए। विवस्वानकी विवाहिता भार्या यमकी माता भाग गईं। उसके बाद मर्त्य-लोगोंसे अमरकन्या (सरण्यु) छिपा दी गईं। अन्तमें सरण्यु जैसी ही और एक कन्या उत्पन्न कर देवताओंने विवस्वानको समर्पण की। उसी अश्वरूपिणी सरण्युके गर्भ और विवस्वानके औरससे अश्विनका जन्म हुआ।’*

यहां सायणाचार्यने लिखा है, कि सरण्यु एवं विवस्वानने अश्विनो एवं अश्वरूपमें सम्भोग किया था, उसीसे अश्विनका जन्म हुआ। (‘यद्यदा तज्जायापतिम्यामश्व-रूपात्मना सम्भोगकाले रेतः पतितमासीत् तदाश्विनौ जनयामासेत्यर्थः’ इति सायणः)।

निरुक्तमें (१२।१।१०) इन दो ऋक्का ऐसा विवरण लिखा है,—‘तत्र इतिहासः समाचचते, लाष्ट्री सरण्युर्विवस्वत आदित्यः’।

* ‘त्वष्टा इष्टिने वस्तुं कृषोतीतीदं विष्टं भुवनं समेति।

यमस्य माता पर्युं ह्यमाना सञ्जी जाया विवस्वतो ननाय।

अपागृह्णन्मृतां मर्त्येभ्यः क्लीं सवर्णान्मददुर्विस्वते।

उताश्विनावमरयसदासीदजहादु वा निधुना सरण्युः :”

(ऋक् १०।१०।१-२)

यमी निधुनी जनयाश्चकार। सा सवर्णान्मन्त्रं प्रतिनिधायान् रूपं कृत्वा प्रदद्राव। स विवस्वानादित्योऽश्वमेव रूपं कृत्वा तामनुसृत्य सम्भूव। ततोऽश्विनौ जज्ञाते सवर्णायां मनुः।”

त्वष्टाकी कन्या सरण्युके गर्भ और आदित्य विवस्वानके औरससे यमज सन्तान उत्पन्न हुआ था। फिर वे अपने ही जैसी और एक स्त्रीको रख और खुद घोड़ीका रूप धर कर भाग गईं। विवस्वानने घोड़ेका रूप धर पीछे पीछे जाकर उनके साथ सम्भोग किया। उसीसे अश्विनका जन्म हुआ। सवर्णके गर्भ और सूर्यके औरससे मनुका जन्म हुआ था।

ऋग्वेदके ७ मण्डलके १२ सूक्तके २ ऋक्के भाष्यमें सायणाचार्यने अश्विनका जन्मवृत्तान्त यों लिखा है,—‘त्वष्टाके दो यमज सन्तान हुआ, उनमें सरण्यु कन्या और त्रिशिरा पुत्र सन्तान था। उन्होंने विवस्वानके साथ सरण्युका विवाह कर दिया। उनके गर्भ और विवस्वानके औरससे यम और यमी नामकी यमज पुत्रकन्या उत्पन्न हुई थी। सरण्युने स्वामीसे छिपाकर अपनी ही जैसी एक स्त्री उत्पन्न कर उसीके पास अपना यमज सन्तान रख दिया। फिर वह घोड़ीका रूप धरकर भाग गईं। विवस्वानने बिना जाने ही उस काव्यनिक सरण्युके साथ भोग किया, उसीसे मनुका जन्म हुआ। मनु अपने पिताकी ही भांति तेजस्वी राजर्षि हुए थे। किन्तु पीछे जब विवस्वानकी मालूम हुआ, त्वष्टाकी कन्या प्रकृत सरण्यु कहीं चली गई हैं, तब सरण्युकी तरह उन्होंने भी घोड़ेका रूप धरकर उनका पीछा किया। स्वामीको पहचानकर सरण्यु सम्भोगकी इच्छासे उनके पास गईं। अश्वरूपी विवस्वानने उनकी इच्छा पूर्ण की। उस समय अतिशय वेगसे भूमिपर शूक्रपात हुआ। अश्वरूपिणी सरण्युने गर्भकी कामनासे उस शूक्रको सूँघा। सूँघते ही दो पुत्र जन्मे। उनमें एकका नाम नासत्य और दूसरेका दस्र हुआ। अश्विनके नामसे उन्हीं दोनोंकी स्तुति की जाती है।†

† “अभवन्निधुनं त्वष्टः सरण्युं त्रिशिरा सह।

स वै सरण्युं प्रायच्छत् स्वयमेव विवस्वते॥

तैत्तिरीय-संहितामें “अश्विनी वै देवानामनुजावरौ” (७२।७।२) अश्विन् और और देवताओंसे छोटे कहे गये हैं। ऋक्के (५।११।१७) भाष्यमें सायणाचार्यने लिखा है, कि सविताकी कन्या सूर्याके साथ अश्विन्का विवाह हुआ था। ऐतरेय-ब्राह्मणमें (४।७) इस इतिहासका कुछ विवरण देखनेमें आता है।

अश्विनी (सं० स्त्री०) अश्वस्तदुत्तमाङ्गाकारोऽस्त्रस्य, इति ङीप्। १ सत्ताईस नक्षत्रके अन्तर्गत प्रथम नक्षत्र। २७ नक्षत्र दक्षकी कन्या हैं, इसलिये अश्विनीको दाचायणी कहते हैं। इनका दो पर्याय देखा जाता है—अश्वयुक् और दाचायणी। अश्विनी चन्द्रकी भार्या हैं। इनका आकार घोड़ेके मुखकी तरह और अधिष्ठात्री देवता अश्वारूढ पुरुष है। अश्विनी नक्षत्रमें उत्पन्न हुआ मनुष्य विनीत, सम्पत्तिशाली, सत्वान्वित एवं पुत्रवान् होता है। इनके मस्तकके ऊपर उदित होनेसे कर्कलग्नका १ दण्ड ३० पल गत हो जाता है। २ घोड़ी।

अश्विनीकुमार (सं० पुं० ह्रिव०) सूर्यके दो पुत्र। वड़वारूपधारिणी सूर्यपत्नी त्वाष्ट्री (त्वष्टाकी पुत्री) प्रभाके गर्भसे अन्तरीक्षमें अश्विनीकुमार द्वयने जन्म लिया था। यह स्वर्ग (देवताओं)के वैद्य हैं। उक्त अर्थमें अश्विनीपुत्र, अश्विनीसुत, स्ववैद्य, दस,

नासत्य, आश्विनेय, नासिक्य, गदागद, पुष्करस्त्रज् प्रभृति नाम व्यवहृत होते हैं।

अश्विय (सं० त्रि०) १ अश्वसम्बन्धीय। (पुं० बहुव०) २ अश्वारूढ सेन्य।

अश्वियुग (सं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त कालविशेष। यह पांच वर्षका होता है। इसमें यथाक्रम पिङ्गल, काल-युक्त, सिद्धार्थ, रौद्र और दुर्मति संधत्सर पड़ेगा।

अश्वोष्टत (सं० स्त्री०) घोटकी (घोड़ी)के दूधसे निकला घृत। इसका गुण कटु, मधुर, कषाय, ईषत् दौपन, गुरु, मूर्च्छाहर और वातालीकरण है।

(राजनिघण्टु)

अश्वीन (सं० स्त्री०) अश्वके एक दिन गमनयोग्य पथ; जो पथ अश्व एक दिनमें अतिवाहन कर सके।

अश्वीय (सं० स्त्री०) अश्वानां समूहः ऋ। १ अश्वका समूह, घोड़ेका झुण्ड। (त्रि०) हितार्थे अपृष० ऋ, यत् च। २ घोड़ेको हितकर, जो अश्वके लिये सुफीद हो।

अश्वोरस (सं० स्त्री०) अश्वानामुर इव मुख्यम्, अच् समा०। प्रधान घोड़ा, उत्तम अश्व।

अषड्क्षीण (सं० त्रि०) अविद्यमानानि षडक्षीण्यस्येति बहुव्री०। (बहुव्रीहौ सकथ्यन्तोः स्त्राङ्गात् षच्। पा ३।४।११२) इति षच् ततः ख प्रत्ययः। जो मन्त्रणा दो जनने की हो, जो मन्त्रणा करनेके समय छः चक्षु न रहे अर्थात् तीन जनने जिस मन्त्रणाको न किया हो।

अषाढ़, अषाढ (सं० पुं०) अषाढ़या नक्षत्रेण या युक्ता पौर्णमासी अषाढी सा यत्र मासे अण् वा ऋस्वः। १ मासविशेष, जिस महीनेकी पूर्णिमा पूर्वाषाढ नक्षत्रमें पड़े, अषाढ, असाढ़। अषाढी पूर्णिमा प्रयोजनमस्य, प्रयोजनार्थे अण्। २ ब्रह्मचारीका पलाशदण्ड।

अषाढक (सं० पुं०) स्वार्थे कन्। अषाढ़ देखो।

अषाढा, अषाढा (सं० स्त्री०) षाढ़ि साहनं सह-णिच्-त्तिन् ढत्वम् अशं० अच्, नञ्-तत् पृषो० वा शत्व् ङत्वञ्। अश्विनीसे पूर्व विंश एवं उत्तर एकविंश नक्षत्र।

अष्ट (सं० त्रि०) आठ संख्या, जो संख्यामें आठ हो।

अष्टक (सं० पुं०) अष्टौ अध्यायाः परिमाणमस्य सूत्रस्य, अष्टन् संज्ञायां स्वार्थे कन्। १ पाणिनिका

ततः सरण्यां जाते ते यमयन्वी विवस्वतः।
तावप्यभौ यमावेव ह्यास्तां यन्वा च वै यमः॥
सृष्टा भर्तुः परोक्षानु सरण्य सृष्टीं स्त्रियं।
निचिष्य मिथुनं तस्मान्वा भूत्वा प्रचक्रमे॥
अविज्ञानाद्विस्वांस्तु तस्मान्जनयन्मनु॥
राजर्षिरासीत् स मनुर्देवस्त्राजिव तेजसा॥
स विज्ञाय अपक्रान्तां सरण्यमात्मरूपिणीं।
त्वष्टीं प्रतिजगामाद्य वाजी भूत्वा सलक्षणः॥
सरण्यस्तु विवस्वतः विज्ञाय ह्यरूपिणं।
मेधु नाथोपचक्राम ताच्च तवाचरोह सः॥
ततस्तथोस्तु देशेन शक्रं तदपतङ्गवि।
उपाजिघ्रश्च सा त्वन्वा तच्छुक्रं गर्भकाभ्यया॥
आन्नाणमावाच्छुक्रं तत् कुमारौ सम्भवतुः।
नासत्यथैव दस्यव यौ स्तुतावचिनावपि॥

अष्टाध्यायी सूत्रग्रन्थ। २ अष्टाध्याययुक्त ऋग्वेदका अंशविशेष। ३ आठ चीजका एकत्र संग्रह। यथा—हिङ्गुवष्टक। ४ आठश्लोकवाला स्तोत्र वा काव्य। जैसे रुद्राष्टक, गङ्गाष्टक, भ्रमराष्टक। ५ मनुके अनुसार अवगुणविशेष। इसमें १ पैशून्य, २ साहस, ३ द्रोह, ४ ईर्ष्या, ५ असूया, ६ अर्थदूषण, ७ वाग्दण्ड, और ८ पारुष्य ये आठ अवगुण हैं। (त्रि०) ८ अष्ट संख्या-परिमित।

अष्टकटूरतैल (सं० स्त्री०) तैलविशेष। यह तैल वातरक्त और जरुस्तम्भमें हित है। तैल ४ शरावक, दही ४ शरावक, तक्र ३२ शरावक, पीपल एवं सोंठ प्रत्येक २ पल (मतान्तरसे मिला हुआ दो पल) यथा विधि पकाना चाहिये। (रसरत्नाकर)

अष्टकर्ण (सं० पु०) अष्टौ कर्णौ यस्य। चतुर्मुख ब्रह्मा। ब्रह्माके चार मुख और प्रत्येक मस्तकमें दो दो कर्ण हैं, अतएव उनकी अष्टकर्ण कहते हैं।

अष्टकर्मन् (सं० पु०) अष्टौ कर्माण्यस्य। आठ प्रकार कर्मयुक्त राजा। अष्टगतिक शब्दसे भी यह अर्थ मालूम पड़ता है। राजाका आठ प्रकार कर्म यह है—

“आदाने च विसर्गे च तथा प्रेषनिषेधयोः।

पक्षमे चार्थवचने व्यवहारस्य चेच्छे।

दण्डशब्धोः सदा रक्तसो नाष्टगतिको रूपः॥”

१ करादिका लेना, २ विसर्ग अर्थात् भृत्यादिको धन देना, ३ प्रेष यानी अमात्यादिका दृष्टादृष्ट अनुष्ठान, ४ निषेध—अर्थात् दृष्टादृष्टके विरुद्ध क्रिया, ५ अर्थवचन—कार्यमें सन्देह होनेके निमित्त उसका नियम करना, ६ व्यवहारका ईक्षण अर्थात् प्रजादिको ऋण देनेके प्रति दृष्टि। ७ दण्ड अर्थात् पराजित व्यक्तिसे अर्थग्रहणादि व्यापार, ८ शुद्धि अर्थात् पापादि करने पर उसका प्रायश्चित्त। मेघातिथिके मतमें—अक्ततारम्भ, अक्तानुष्ठान, अनुष्ठित विशेषण, कर्मफल-संग्रह, साम, दान, भेद, एवं दण्ड।

अष्टकमल (सं० पु०) हठयोगके अनुसार मूलाधारसे ललाट पर्यन्त ये आठ कमल भिन्न भिन्न स्थानोंमें माने गये हैं। मूलाधार, विशुद्ध, मणिपूरक,

स्वाधिष्ठान, अनाहत, आज्ञाचक्र, सहस्रारचक्र, और सुरतिकमल।

अष्टका (सं० स्त्री०) अश्नन्ति पितरोऽस्यां तिथौ अश् इत्यभिधान् तकन्। उष् ३।१४८। इति तकन्। १ आक्ष विशेष। २ तिथिविशेष, अष्टमी। ३ गौणचान्द्र, पौष, माघ एवं फाल्गुन मासकी कृष्णाष्टमी। ४ अष्टमीके दिनका कृत्य अष्टका याग। ५ अष्टकामें कृत्य आक्ष। अष्टका आक्ष तीन प्रकारका होता है—अपूर्णाष्टका, मांसाष्टका एवं शाकाष्टका, यह यथाक्रम गौणचान्द्र पौष, माघ एवं फाल्गुन मासकी कृष्णाष्टमीको किया जाता है।

अष्टकाङ्ग (सं० स्त्री०) अष्टमङ्गं यस्य। चौसर खेलनेका पासा। इसकी प्रत्येक पङ्क्तिमें आठ घर रहनेसे इसको अष्टाङ्ग कहते हैं।

अष्टकिक (सं० त्रि०) अष्टकाऽख्यस्य, ब्रीह्या० ठन्। अष्टकायुक्त। उक्त अर्थमें ‘अष्टकौ’ शब्द भी प्रयुक्त होता है।

अष्टकुल (सं० स्त्री०) कुलविशेष। पुराणके अनुसार सर्पोंके आठकुल हैं—शेष, वासुकि, कम्बल, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, और शङ्ख, तथा कुलिक तक्षक, महापद्म, शङ्ख, कुलिक, कम्बल, अश्वतर, धृतराष्ट्र और बलाहक।

अष्टकुली—अष्टकुल सम्बन्धीय, जो सर्पोंके आठ कुलमें उत्पन्न हो।

अष्टकृष्ण (सं० पु०) आठ प्रकारके कृष्ण। वल्लभ कुलके लोग आठ कृष्ण मानते हैं—१ श्रीनाथ, २ नवनीतप्रिय, ३ मथुरानाथ, ४ विट्ठलनाथ, ५ द्वारकानाथ, ६ गोकुलनाथ, ७ गोकुलचन्द्रमा और ८ मदनमोहन।

अष्टकत्वस् (सं० अव्य०) अष्टन् सखायाः क्रियाभ्यावृत्तिगणने कृतसुच्। पा ३।४।१०। इति कत्वसुच्। आठवार।

अष्टकोण (सं० स्त्री०) अष्टौ कोणा अस्य। १ अष्टकोणयुक्त क्षेत्र, जिस खेतमें आठ कोने रहें। २ यन्त्र विशेष, तन्त्रानुसार कोई यन्त्र। ३ कुण्डल विशेष, अठकोना कुण्डल। चलित भाषामें इसको अठकोना कहते हैं। (त्रि०) ४ आठ कोनेका।

अष्टकोन (सं० त्रि०) अष्टकोन क्रीतः, गवा० यत्।

आठ संख्यक द्रव्यसे क्रय किया हुआ, जो आठ संख्यक द्रव्यसे खरीदा गया हो।

अष्टखण्ड—ऋग्वेद आठ अष्टकमें ऋक्संहिता विभक्त है।

अष्टगन्ध (सं० पु०) आठ खुशबूदार चीजोंका मिलान।

अष्टगव (सं० स्त्री०) अष्टानां गवां समाहार; अच्। आठ गौ। आठ बैलगाड़ीके अर्थमें 'अष्टागव' रूप होगा।

अष्टगुण (सं० त्रि०) अष्टभिर्गुण्यते, गुण अभ्यासे कर्मणि क। आठगुण। ५×८ , ६×८ इत्यादि।

अष्टगुणमण्ड (सं० पु०) मण्डविशेष। मुने मूंग और चावलको दशगुण जलमें पाक करना चाहिये। पाक तैयार हो जानेपर उसमें नौचे लिखे द्रव्य मिलाना पड़ता है—हिङ्गु, सैन्धव, धान्य, सोंठ, मिर्च और पोपलका चूर्ण। इसका गुण क्षुधावर्धन, बलकर और वस्तिशोधन है। (वैद्यक-निघण्टु)

अष्टगृहीत (सं० त्रि०) अष्टकृत्वो गृहीतम्। आठ बार ग्रहण किया हुआ, जो आठबार लिया गया हो।

अष्टचत्वारिंशत्, अष्टाचत्वारिंशत् (सं० स्त्री०) अष्टाधिका चत्वारिंशत्। (विभाषाचत्वारिंशत् प्रथमौ सर्वे पाप्। पा ६।३।४६।) ४८, अड़तालीस संख्या।

अष्टतय (सं० त्रि०) अष्टावयवा अस्य, अष्टन्-तयप्। १ आठ अवयवयुक्त, जिसके आठ अवयव रहे। (स्त्री०) २ आठ संख्या।

अष्टतारिणी (सं० स्त्री० बहुव०) कर्मधा०। भगवतीकी आठमूर्ति—तारा, उग्रा, महोग्रा, वज्रा, काली, सरस्वती, कामेश्वरी, चामुण्डा।

“तारा चीया महोग्रा च वज्रा काली सरस्वती।

कामेश्वरी च चामुण्डा इत्यष्टौ तारिणी मता ॥” (तन्त्रसार)

अष्टताल (सं० पु०) आठ तरहकी ताल—१ आड़ २ दोज, ३ ज्योति, ४ चन्द्रशेखर, ५ गञ्जन, ६ पञ्चताल, ७ रूपल और ८ समताल।

अष्टत्रिक (सं० स्त्री०) अष्टावृत्तं त्रिकम्। ८×३ आठ गुणित तीन अर्थात् २४ चौबीस। (त्रि०) २ चौबीस संख्यायुक्त।

अष्टत्व (सं० स्त्री०) अष्टानां भावः त्व। आठ संख्या, ८।

अष्टदंष्ट्र (सं० पु०) ६-बहुव्री०। ऋग्वेदोक्त दानव-विशेष, कोई राक्षस।

अष्टदल (सं० पु०) अष्टौ दलानि यस्य। १ अष्टपत्र पद्म, आठ पत्तेका कमल। (त्रि०) २ आठदलका, अठकोना, अठपहलू।

अष्टदिक्करिणी (सं० स्त्री०) बहुव०। अष्ट दिक्षुस्थाः करिण्यः। आठ दिशाको इधिनी। अभ्रमु, कपिला, पिङ्गला, अनुपमा, ताम्रकर्णी, शुभ्रदन्ती, अङ्गना और अञ्जनावती यह आठ ऐरावतकी पत्नी।

अष्टदिक्पाल (सं० पु०) अष्टौ दिशः पालयति, पाणिच्-अण्, उप० समा०। दिक्के आठ रक्षक इन्द्र, अग्नि, यम, निऋति, वरुण, वायु, सोम, और इशान। यह अष्ट दिक्पाल हैं।

अष्टदिग्गज (सं० पु०) बहुव०। अष्टदिक्षुस्थाः गजाः। आठ हाथी—ऐरावत, पुण्डरीक, वामन, कुमुद, अञ्जन, पुष्पदन्त, सार्वभौम और सुप्रतीक। यह आठ दिग्गज हैं।

अष्टदिग् (सं० स्त्री०) बहु०। आठ ओर; पूर्व, अग्नि, दक्षिण, नेऋत, पश्चिम, वायु, उत्तर, और इशान, यही आठ दिशायें हैं।

अष्टद्रव्य (सं० स्त्री० बहुव०) आठ चीज; अश्वत्थ, उदुम्बर (गूलर), मूत्र (पाकर), न्यग्रोध (बट), तिल, सिद्धार्थ (सरसों), पायस (खीर) और आन्य (घी) यह आठ द्रव्य कहलाते और हवनमें काम आते हैं।

अष्टधा (सं० अव्य०) अष्टन्-प्रकारे धाच्। आठप्रकार, आठ तरह, आठ दफे।

अष्टधाती (द्वि० वि०) १ अष्टधातुसे प्रसृत, जो आठ धातुओंसे बना हो। २ दृढ़, मजबूत। ३ उत्पाती, उपद्रवी।

अष्टधातु (सं० पु० बहुव०) अष्टौ धातवः, कर्मधा०। आठधातु—सोना, चांदी, तांबा, रांगा, जसता, सीसा, पीतल, लोहा। कोई-कोई पारेको भी धातु मानता है।

अष्टनाग (सं० पु०) आठ सर्पराज १ अनन्त, २ वासुकी, ३ काम्बल, ४ कर्कोट, ५ पद्म, ६ महापद्म, ७ शङ्ख और ८ कुलिक।

अष्टपद (सं० पु०) अष्टपाद देखो।

अष्टपदी (स० स्त्री) १ आठ पदोंका समूह। २ गीति-विशेष, कोई गीत। इसमें आठ पद रहते हैं। ३ वेला पुष्पका गाछ। यह शीत, लघु एवं कफ, पित्त, और विषका नाशक है।

अष्टपर्दत—१ महेन्द्र, २ मलय, ३ सह्य, ४ शुक्तिमान्, ५ ऋक्षवान्, ६ विन्ध्य, ७ पारिपात्र और ८ हिमालय, यह अष्टकुलाचल है। पद्मपुराणमें केवल सात ही कुलाचल गृहीत हुआ है।

अष्टपाद—अष्टपात् (स० पु०) अष्टौ पादा यस्य, बहुव्री० वा अन्तर्गोपः। १ माकड़ी, लूता। २ शरभ, टिड्डीपक्षी। ३ शार्दूल।

अष्टपादिका (स० स्त्री०) लता विशेष। १ काष्ठ-मल्लिका। २ हापरमाली।

अष्टपुष्पी (सं० स्त्री०) अष्टानां पुष्पाणां समाहारः। पुष्पाष्टक। अष्टपुष्पी, भी रूप होता है।

अष्टभाव (सं० पु०) स्तम्भ, खेद, रोमाञ्च, स्वरभङ्ग, वैश्वर्य, कम्प, वैर्वण्य, और अश्रुपात। (वेद्यक निघण्टु)

अष्टभुजा (सं० स्त्री०) अष्टौ भुजाः अस्याः। देवीकी मूर्तिविशेष, दुर्गा।

अष्टभुजी (सं० स्त्री०) अष्टभुजा देखो।

अष्टम (सं० त्रि०) अष्टानां पूरणः उट् मयट् च। आठ संख्याका पूरण, आठवां।

अष्टमकालिक (सं० त्रि०) अष्टमः कालः भोजनेऽस्तस्य, ठन्। जो वानप्रस्थ तीन दिन उपवास करके चतुर्थदिनकी रात्रिमें भोजन करते हैं।

अष्टमङ्गल (सं० स्त्री०) अष्ट प्रकारं मङ्गलद्रव्यम्, शाक० तत्। आठ प्रकार मङ्गल द्रव्य वा पदार्थ—मृगराज (सिंह), हृष, नाग, कलश, चामर, वैजयन्ती, भैरौ और दीपक। किसी किसीके मतमें—ब्राह्मण, गौ, अग्नि, स्वर्ण, घृत, सूर्य, जल एवं राजा। दुर्गोत्सव और विवाहादि कर्ममें अष्टमङ्गल द्रव्य लगता है। (पु०) श्वेतवर्ण सुख वचः खुर केश पुच्छ-युक्त घोड़ा भी अष्टमङ्गलमें गृहीत है।

अष्टमङ्गलघृत (सं० स्त्री०) बाल-रोग-हरघृतौषध, बच्चोंकी बीमारी छुड़ानेवाला घी। वच, कुष्ठ, ब्राह्मी, सर्पप, शरिवा, सैन्धव और पिप्पलीके एक शरावक

कल्कमें ४ शरावक घृत डाले, फिर घृतपाकविधिसे एक आठक जलमें इन सब चीजोंको पका ले। यह घी बच्चोंके लिये बहुत अच्छा होता है। (भावप्रकाश)

अष्टमान (सं० स्त्री०) अष्टौ मुष्टयः; परिमाणमस्य। प्रसृतिद्वय, एक कुड़व, बत्तीस तोला।

अष्टमासिक (सं० त्रि०) प्रति अष्ट मासमें एक बार होनेवाला, अठमासी, दशमासी, जो आठ महीनेमें एक बार हो।

अष्टमिका (सं० स्त्री०) शुक्तिपरिमाण, तोलचतुष्टय, चार तोला।

अष्टमी (सं० स्त्री०) अष्टानां पूरणी। तिथि विशेष, चन्द्रकी सोलह कलाके मध्य प्रतिपत्से अष्टम कला, आठवीं। शुक्लाष्टमी एवं कृष्णाष्टमी दो अष्टमी होती है। पञ्चपर्वके मध्य रहनेसे अष्टमीको वेदपाठ, स्त्रीसङ्ग, तैलाभ्यङ्ग, मांसभोजन प्रभृति निषिद्ध है। इस तिथिको नारियल और अरहरकी दाल खाना न चाहिये। पहले अष्टमीको किसी अपराधीकी परीक्षा की न जाती थी। अष्टमीको प्रायश्चित्त करना भी मना है।

अशू-क्त, अष्टं संचातं व्याप्तिं वा माति; मा-क गौरा० ङीष्। २ चौर काकोली, एक जड़ी।

अष्टमुष्टि (सं० पु०) अष्टौ मुष्टयः परिमाणमस्य, अण् द्विगोर्लुक्। कूंची बराबर नाप।

अष्टमूत्र (सं० स्त्री०) गोच्छागमेषमहिषाश्च ह-स्तार्द्रगर्दभीमूत्र, गाय, बकरी, भेड़, भैंस, घोड़ी, हथिनी, उंटनी और गधोका पेशाब।

अष्टमूर्ति (सं० पु०) अष्टौ भूम्यादयो मूर्तयो यस्य, बहुव्री०। भूमि प्रभृति अष्टमूर्तिधर शिव। अष्टन् शब्दमें इन आठ मूर्तियोंका विवरण देखो।

(स्त्री०) कर्मधा०। २ आठ मूर्ति।

अष्टमूर्तिधर (सं० पु०) अष्टानां मूर्तीनां धरः। भूमि प्रभृति आठ प्रकार मूर्तिधारो शिव। अष्टन् शब्दमें अष्टमूर्तिका विवरण देखो।

अष्टमूल (सं० त्रि०) त्वग्मांसशिरास्त्राखस्थिसन्धि-कोष्ठामर्म-मूल; त्वग्, मांस, शिरा, स्नायु, अस्थि, सन्धि, कोष्ठ और मर्म मूल।

अष्टमौक्तिकस्थान (सं० स्त्री०) शङ्ख-हस्ति-सर्प-मन्त्र-
मेघ-वंश-शूकर-शुक्ति, मोती पैदा होनेकी आठ जगह,
घोंघा-हाथी-सांप-मच्छली-बादल वांस-सूअर सांप।

अष्टरत्नि (सं० त्रि०) अष्टौ रत्नयः ऊर्ध्वमानमस्य।

आठ सुण्डा हाथ बराबर (आठ फीट)।

अष्टरसाश्रय (सं० त्रि०) कविताके आठ रससे
भरा हुआ।

अष्टर्च (सं० पु०) आठ पदका भजन।

अष्टलोहक (सं० स्त्री०) बहुव०। अष्ट धातु
विशेष। यथा,—१ सुवर्ण, २ रजत, ३ ताम्र, ४ रङ्ग,
५ शीष, ६ पित्तल, ७ कान्तलौह, ८ सुण्डलौह; या
१ सोना, २ चांदी, ३ तांबा, ४ रांगा, ५ सीसा,
६ पीतल, ७ लोहा, ८ फौलाद।

अष्टवर्ग (सं० पु०) अष्टविधानामौषधिद्रव्यानां
वर्गो गणः। १ आठ प्रकार औषधि विशेषका गण।
यथा,—१ मेद, २ महामेद, ३ ऋद्धि, ४ वृद्धि, ५ जीवक
६ ऋषभक, ७ काकोली, ८ क्षीरकाकोली। अष्ट-
वर्गके मध्य समस्त द्रव्य अब नहीं मिलता और यह
भी कहा जा नहीं सकता, वह क्या पदार्थ है। अष्टवर्ग
शीतल, अति शुक्ल, वृंहण, दाह-पित्त-रक्तशोषघ्न,
स्तन्यक्तृ और गर्भदायक होता है। (मदनपाल) यह
रक्तपित्त, ब्रण वायु और पित्तको मिटाता है।
(राजनिषण्ड) मतान्तरसे यह हिम, स्नादु, वृंहण, गुरु,
भग्नसन्धानकृत् एवं कामविलास-बल-वर्धन होता
और तृष्ण, दाह, ज्वर, मेद तथा क्षयको दूर करता है।
(भावप्रकाश) अष्टवर्गप्रतिनिधि देखो।

अष्टादीनां राहुभिन्नरव्यादीनां वर्गो यत्र, बहुव्री०।
२ शुभाशुभ फलसूचक जन्मकालीन राहुभिन्न अष्टग्रह,
समुदायका चक्र। जैसे,—सूर्य सिंहसे २, ४, ७, ८, ९,
१०, ११ और कर्कटसे ३, ६, १०, ११ राशिपर रहनेसे
शुभ फल देता है। इसी तरह अन्यान्य ग्रहके फला-
फलकी कथा ज्योतिष शास्त्रमें लिखी है।

अष्टवर्गप्रतिनिधि (सं० पु०) अष्टवर्गका प्रतिनिधि, जो
चीज अष्टवर्गकी जगह काम आती हो। मेदामहा-
मेदाके अभावमें शतावरी, जीवक ऋषभकके स्थानमें
भूमिकुशाण्डका मूल, काकोली क्षीरका कोलीकी

जगह अश्वगन्धाका मूल और ऋद्धि-वृद्धिके स्थानमें
वाराहीकन्द पड़ता है। (भावप्रकाश) मतान्तरसे
मेदाकी जगह अश्वगन्धा, महामेदाके स्थानमें शारिवा,
जीवकके लिये गुडूची, ऋषभक न मिलनेसे वंशलोचन,
ऋद्धिके बदले बला और वृद्धिके अभावमें महाबला
डालना चाहिये।

अष्टविध (सं० त्रि०) आठ तरहका, आठ तरह-
वाला।

अष्टविधान (सं० स्त्री०) चर्व्य-चोष्य-लेह्य-पेय खाद्य,
भोज्य-भक्ष्य-निषेय-रूप भोजनद्रव्य।

अष्टशत (सं० स्त्री०) आठ सौ।

अष्टश्रवण (सं० पु०) अष्टौ श्रवणानि श्रवांसि वा
यस्य। ब्रह्मा। इनके चार मुख रहनेसे आठ श्रवण
होते हैं।

अष्टश्रवस्, अष्टश्रवण देखो।

अष्टसाहस्रिक (सं० त्रि०) अष्टसहस्र परिमित, आठ
हजारवाला।

अष्टसिद्धि (सं० स्त्री०) आठ प्रकार सिद्धि, अष्टसिद्धि
यथा—१ अणिमा, २ महिमा, ३ लघिमा, ४ प्राप्ति,
५ प्राकाम्य, ६ ईशित्व, ७ वशित्व, एवं ८ कामाव-
सायिता।

अष्टाकपाल (सं० त्रि०) अष्टासु कपालेषु संस्कृतम्,
अण् तस्य लुक्। १ अष्टकपालमें संस्कृत पुरोडा-
शादि, मन्त्रके आठ खप्परमें पका हुआ पुरोडाशादि।
२ यज्ञ विशेष। इस यज्ञके लिये आठ कपालमें
पुरोडाशादि पका देवताको बुलाते हैं।

अष्टाक्षर (सं० त्रि०) अष्टाक्षराणि यत्र पादे।
१ आठ अक्षरका, जो आठ हफ्ते रखता हो। (पु०)
२ ग्रन्थकार विशेष। ३ आठ अक्षरयुक्त अनुष्टुप्
जातीय वर्णवृत्त विशेष।

अष्टागव (सं० स्त्री०) आठ बैलकी गाड़ी, जिस
गाड़ीमें आठ बैल जुते।

अष्टाङ्ग (सं० पु०) अष्टौ अङ्गानि यस्य। १ यम-नियम-
आसन-प्राणायाम-प्रत्याहार-धारणा-ध्यान-समाधि
इत्यादि। अष्टाङ्ग योगविशेष। २ घुटना, पैर, हाथ,
हाथी, शिर इन सबको भूमिपर रख घोर प्रणम्य

व्यक्तिकी ओर देख सादर सम्भाषणपूर्वक प्रणाम करना ।

“पदभ्यां जानुभ्यामुत्तरसा शिरसा दृशा ।

वचसा मनसाचेति प्रणामोऽष्टाङ्ग ईरितः ।” (तन्त्रसार)

दोनों पांव, दोनों हाथ, दोनों घुटने, वक्षस्थल और मस्तककी भूमिमें टिकानेके बाद एक बार मस्तक उठाकर नमस्वकी भक्तिभावसे दर्शन करना, फिर प्रणामका मन्त्र कहते कहते गद्गद मनसे भूमिष्ठ होना । कोई कोई कहते हैं, वचनस्थ ‘दृशा’ पदसे ऐसा समझा जाता है, कि प्रणाम करनेके समय पहले दाहिनी आंख फिर बाईं आंखके कोनेकी भूमिमें डुवाये । ३ जल, दुग्ध, कुशाग्र, दधि, घृत, तण्डुल, यव, श्वेतसरसों—इन सबका अष्टाङ्ग अर्घ्य । सूर्यके अर्घ्यके द्रव्य ये हैं,—जल, दुग्ध, कुशाग्र, घृत, मधु, दधि, रक्तचन्दन और रक्तकरवीर ।

४ शारीफलक अर्थात् पाशा खेलनेका चौखट । इस चौखटकी प्रत्येक पंक्तिमें आठ घर रहते, इसीसे इसे अष्टाङ्ग कहते हैं । ५ अष्टाङ्ग चिकित्सा, यथा—१ शल्य, २ शालाक्य, ३ कायचिकित्सा, ४ भूतविद्या, ५ कौमार-भृत्य, ६ अगदतन्त्र, ७ रसायनतन्त्र, ८ वाजीकरण ।

१। शल्य—शरीरके किसी स्थानमें तीर आदि अस्त्र या और कोई चीज चुभ जानेपर उसका विधान ।

२। शालाक्य—ऊर्ध्वजत्रुप्रदेशस्थित (Supra-clavicular region) एवं नेत्र, कर्ण, मुख, नासिका प्रभृति स्थानोंकी चिकित्सा ।

३। कायचिकित्सा—सकल शरीरके कष्टों, यथा ज्वर, उदरामय, उन्माद आदि रोगोंकी चिकित्सा ।

४। भूतविद्या—भूत पिशाचादिकी चिकित्सा ।

५। कौमारभृत्य—शिशुपालनके लिये धात्री-विद्या एवं दुग्धादिका दोष संशोधन ।

६। अगदतन्त्र—सर्प कौटादिके डस लेनेपर भाड़फूंक और औषध प्रयोग ।

७। रसायनतन्त्र—ऐसा उपाय जिसमें शरीर शीघ्र ही वृद्ध जैसा न बने एवं षाड्य और बल बढ़े ।

८। वाजीकरण—शरीरकी चीज और शुष्क प्रभृति दुबलताके लक्षण प्रकाश होनेका प्रतिनिधान ।

अष्टाङ्गघृत (सं० क्ली०) वाजीकरणका घृत ।

अष्टाङ्गधूप (सं० पु०) कर्मधा० । धूपविशेष । गुग्गुलु, निम्बपत्र, वच, कुष्ठ, हरीतकी, यव, श्वेतसर्पप और घृत इन सब चीजोंको इकट्ठाकर कपड़ेमें मजबूतीसे बांधे । फिर रोगीके सारे शरीरको कपड़ेसे ढक और निर्धूम अङ्गारके ऊपर इस पोटलीको रखकर धूप दे । इससे विषमज्वर नष्ट होता है ।

अष्टाङ्गनय, अष्टाङ्ग देखो ।

अष्टाङ्गपात, अष्टाङ्गप्रणाम देखो ।

अष्टाङ्गप्रणाम (सं० पु०) अष्टाङ्गद्वारा प्रणाम, सिजदा, झुक-झुककी कौ जानिवाली बन्दगी ।

अष्टाङ्गमैथुन (सं० क्ली०) मैथुनके आठ अङ्ग विशेष । स्मरण, कीर्तन, कैलि, दर्शन, गोपनीय वार्ता-लाप, सङ्कल्प, अध्यवसाय, और क्रियानिष्पत्ति—यही मैथुनके आठ अङ्ग हैं ।

अष्टाङ्गयोग (सं० पु०) आठ अङ्गसे होनेवाला योग ।

१ यम २ नियम ३ आसन ४ प्राणायाम ५ प्रत्याहार ६ धारणा ७ ध्यान एवं ८ समाधि । यमादिका विवरण अपने-अपने शब्दमें देखो ।

अष्टाङ्गरस (सं० पु०) रसविशेष । यह अर्घ्यमें उपकारक है । लौहकिट्ट, मण्डूर, फलत्रय (त्रिफला) यह सब एकत्र मिलानेसे अष्टाङ्गरस तैयार होता है । (रसेन्द्रसार-संग्रह) गन्धक, रसेन्द्र (पारा), स्तलौहकिट्ट, तीन पल त्रूषण, वङ्गिष्टङ्क, इन सबको बराबर लेकर शास्त्राली और गुड़चूँके रसमें ३ पहर अच्छी तरह घोटनेसे यह बनता है । मात्रा निष्कमात्र है । (रसेन्द्रसार-संग्रह)

अष्टाङ्गलवण (सं० क्ली०) कफसे उत्पन्न मदात्यय-नाशक औषध विशेष । इसे बनानेका क्रम यह है । सोंचरलवण (सज्जीमाटी), क्षणजीरक, अश्ववेतस, अश्वलोणिका, इन सबका चूर्ण समभाग एवं दालचौनी, एलायची और मिर्चका चूर्ण प्रत्येक अर्धभाग तथा चीनी एक भाग यह सब चीज एकत्र मिलाना चाहिये । (चक्रपाणिदत्तसङ्ग्रह)

अष्टाङ्गवैद्यक (सं० क्ली०) वैद्यकके आठ अङ्ग, यथा,—शालाक्य, शल्य, कायचिकित्सा, भूतविद्या, कौमारभृत्य, अगदतन्त्र, रसायनतन्त्र, वाजीकरण ।

काय, भूत, अगद, बाल, विष, वाजी और रसायन ।
अष्टाङ्ग देखो ।

अष्टाङ्गाध्य (सं० पु०) आठ वस्तुसे दिया जानेवाला
अध्य । यथा—जल, दुग्ध, कुश, दधि, घृत, शालि, यव
एवं सर्षप । कहीं कहीं शालि, यव और सर्षपके
स्थानमें मधु, रक्तकरवीर पुष्प एवं चन्दन छोड़
देते हैं ।

अष्टाङ्गावलेह (सं० पु०) अष्टाङ्गावलेहिका देखो ।

अष्टाङ्गावलेहिका (सं० स्त्री०) अवलेहविशेष । कटफल,
कुष्ठ, ककड़ाशुद्धी, सोंठ, पीपल, मिर्च, दुरालभा,
कालाजीरा इन सब चीजोंको अच्छी तरह कूट-पीस
मधुके साथ अवलेह करनेसे अत्यन्त कठिन सन्नि-
पात ज्वर, हिका, खास, कास, कण्ठरोग दूर हो
जाता है । किन्तु जर्जर श्लेष्मामें उष्ण स्वेदादिकी
आवश्यकता होनेपर मधु न देकर अदरकके रससे
अवलेह तय्यार करना चाहिये ।

अष्टाङ्गी (सं० त्रि०) अष्ट अङ्गयुक्त, आठ अङ्गावाला,
जिसके आठ अङ्ग रहें ।

अष्टातय (सं० त्रि०) १ अष्ट अंश विशिष्ट, आठ
हिस्से रखनेवाला । (स्त्री०) २ अष्ट वस्तुका समुच्चय,
आठ चीजका जखीरा ।

अष्टादंष्ट्र, अष्टदंष्ट्र देखो ।

अष्टादश (सं० त्रि०) अष्टादशानां पूरणः षट् स्त्रियां
ङीप् । १ अष्टारह संख्याका पूरण, अष्टारहवां । अष्टौ च
दशच, अष्टाधिका दश वा, अष्टादशन् । २ संख्याविशेष,
अष्टारह । ३ अष्टारह संख्याविशिष्ट, जो अष्टारह हो ।
विद्या, पुराण, स्मृति एवं धान्य इनमें प्रत्येककी
संख्या अष्टारह है । इसलिये इन सकल शब्दसे अष्टारह
संख्या मालूम पड़ती है ।

विद्या—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्दः,
ज्योतिष, यह षडङ्ग, चतुर्वेद, मीमांसा, न्याय, धर्म-
शास्त्र, पुराण, आयुर्वेद, धनुर्वेद, गान्धर्ववेद, अर्थशास्त्र
यही अष्टारह प्रकार विद्या है ।

उपाय—१ ब्राह्म, २ पाद्म, ३ वैष्णव, ४ शैव, ५ भाग-
वत ६ नारदीय, ७ मार्कण्डेय, ८ आग्नेय, ९ भविष्य,
१० ब्रह्मवेवर्त, ११ लिङ्ग, १२ वाराह, १३ स्कान्द,

१४ वामन, १५ कौर्म, १६ मातृस्य १७ गरुड,
१८ ब्रह्माण्ड ।

अृतिकार—१ विष्णु, २ पराशर, ३ दत्त, ४ संवर्त,
५ व्यास, ६ हारीत, ७ शातातप, ८ वशिष्ठ, ९ यम,
१० आपस्तम्ब, ११ गौतम, १२ देवल, १३ शङ्ख,
१४ भरद्वाज, १५ उशना, १६ अत्रि, १७ शौनक,
१८ याज्ञवल्क्य । पुनश्च, १ मनु, २ अत्रि, ३ विष्णु,
४ हारित, ५ याज्ञवल्क्य, ७ अङ्गिरा, ८ यम, ९ आप-
स्तम्ब, १० सम्बर्त ११ कात्यायन, १२ बृहस्पति,
१३ पराशर, १४ व्यास, १५ शङ्ख और लिखित और
१६ दत्त, १७ गौतम, शातातप, १८ वशिष्ठ ।

धान्य—१ यव, २ गोधूम, ३ धान्य, ४ तिल,
५ कङ्क, ६ कुल्लिका, (कुलथो) ७ माष (उर्द),
८ मुद्ग (मूँग) ९ मसूर, १० निष्ठाव, ११ सर्षप
(सरसो), १२ गवेषुक, १३ नीवार, १४ आदक्य
(अरहर), १५ सतीनका, १६ चराक १७ अशिक,
१८ श्याम ।

अष्टादशधान्य (सं० स्त्री०) अष्टादश देखो ।

अष्टादशभुजा (सं० स्त्री०) अष्टादश भुजा यस्याः ।

देवी-माहात्म्योक्त महालक्ष्मी । महावक्त्रो देखो ।

अष्टादशमूल (सं० स्त्री०) विल्व, अग्निमन्य, श्लोणाक,
गाभारौ, पाठा, पुनर्णवा, वाव्या, अलक, माषपर्णी,
जीवक, एरण्ड, ऋषभक, जीवन्ती, शतावरी, शरेक्षुत्,
अर्भ, कास और शालिधान्यकी जड़ ।

अष्टादशविवादपद (सं० स्त्री०) बहुव्री० । ऋणदानादि
अष्टारह प्रकारके विवादका स्थल । (मनु ८१०) यथा,—
१ ऋणदान, २ निक्षेप, ३ अस्वामिविक्रय, ४ सम्भूय-
समुत्थान, ५ दत्ताप्रदानिक, ६ वेतनादान, ७ सम्बिद्-
व्यतिक्रम, ८ क्रयविक्रयानुशय, ९ स्वामिपाल,
१० सौमाविवाद, ११ वाक्पाक्य एवं दण्डपाक्य,
१२ स्तेय, १३ साहस, १४ स्त्रीसंग्रहण १५ स्त्रोपसर्गम,
१६ विभाग, १७ द्यूत, १८ आह्वय ।

१ ऋणदान—अर्थात् कर्ज देना लेना । शास्त्र-
कारोंने इसे सात प्रकारमें विभक्त किया है । किस
तरहका ऋण जुकाना उचित है और किस तरहके
ऋणके लिये पुत्रादि दायी नहीं, इन्हीं सब विषयों-

को लेकर सात विभाग किया गया है। जैसे,—
 १ पिताके ऋण लेनेपर पुत्र उसे चुकावेगा। २ परन्तु पिता सुरापानादि दोषमें आसक्त होकर कर्ज ले, तो पुत्र उसके लिये दायी नहीं। ३ जो पुत्र पिताके धनका अधिकारी न होगा, वह पिताका ऋण भी परिशोध न करेगा। ४ जो पुत्र पिताके धनका अधिकारी होगा, वही पिताके ऋणके लिये भी दायी ठहरेगा। ५ विदेशस्थ पिताका ऋण बीस वर्षके बाद और जो ऋण वृद्धिके साथ लिया जाता, उसे वृद्धिके साथ ही परिशोध करना आवश्यक है। ६ उत्तमर्णमें ऋणदान। ७ उत्तमर्णमें ऋण आदान। सब मिलाकर यही सात प्रकार हैं।

२ निक्षेप—अपना धन दूसरेके पास जमा रखनेको निक्षेप कहते हैं।

३ अस्वामिविक्रय—जिस धनमें जिसका स्वत्व नहीं होता, उसी धनको वह यदि बेच देता, तो अस्वामिविक्रय कहा जाता है।

४ सम्भूय-समुत्थान—अनेक आदमी मिलकर जो वाणिज्यादिका अनुष्ठान करें, तो उसका नाम सम्भूय समुत्थान है।

५ दत्ताप्रदानिक—जो वस्तु एकवार किसीको दे दी गई है, क्रीधादि करके यदि वह छीन ली जाय, तो उसे दत्ताप्रदानिक कहते हैं।

६ वेतनादान—मृत्यु प्रभृतिके वेतन न देनेका नाम वेतनादान है।

७ सम्बिद्व्यतिक्रम—सब लोग मिलकर कोयी कार्य करनेकी प्रतिज्ञाके बाद यदि उसके विरुद्ध चले, तो वह सम्बिद्व्यतिक्रम कहा जाता है।

८ क्रयविक्रयानुशय—किसी द्रव्यकी खरीदकर उसे बेचनेके बाद यदि अधिक लाभकी आशाकी अनुशोचना की जाय, तो उसे क्रयविक्रयानुशय कहते हैं।

९ स्वामिपाल—स्वामी और पशुपालकके साथ जो विवाद होता, उसका नाम स्वामिपाल है।

१० सीमाविवाद—भूमि प्रभृति सीमाके लिये प्रजामें जो झगड़ा होता है, उसे सीमाविवाद कहते हैं।

११ वाक्पारुष्य और दण्डपारुष्य—अर्थात् गाली-मुक्ता और मारपीट।

१२ स्तेय—दूसरेके वस्तु चुरानेको स्तेय कहते हैं।

१३ साहस—बलपूर्वक किसीकी चीजको छीन लेना साहस है।

१४ स्त्रीसंग्रहण—किसी स्त्रीके साथ परपुरुषका अनुराग होनेसे उसका नाम स्त्रीसंग्रहण है।

१५ स्त्रीपुंसधर्म—दम्पतीमें जैसा सझाव और नियम रहना आवश्यक है, वह स्त्रीपुंसधर्म कहा जाता है।

१६ विभागविवाद—पैढक धनके विभाग करनेमें जो विवाद उपस्थित होता, उसका नाम विभागविवाद है।

१७ द्यूत—बाजी लगाकर जूवा पाशा वगैरह खेलनेको द्यूत कहते हैं।

१८ आह्वय—बाजी लगाकर सेढ़ा वा चिड़िया लड़ानेका नाम आह्वय है।

अष्टादशशतिकमहाप्रसारणी-तैल (सं० लो०) तैलौषध विशेष। यह तैल वात व्याधिमें उपकारक होता है। प्रसृत करनेकी रीति यह है—तिलका तैल १६ सेर, काथके लिये मूल और पत्र सहित ३७॥ सेर, गन्ध-प्रसारणी १२॥ सेर, भिण्डीमूल १२॥ सेर, शतावर १२॥ सेर, अश्वगन्धा १२॥ सेर, दशमूल प्रत्येक १२॥ सेर, केतकी १२॥ सेर—इन सब द्रव्योंको प्रत्येकके ४ गुण जलमें पाक करके घृथक् घृथक् काथ प्रसृत करना चाहिये। फिर दहीकी काच्ची १६ सेर, छागके मांसका काथ १६ सेर, चूर्ण १६ सेर, दूध १६ सेर दही १६ सेर। कल्कार्थ तगर, मदनफल, कुष्ठ, नागेश्वर सुस्ता, गुड़त्वक् रास्ना, सैन्धव, पीपल, जटा-मांसी यष्टिमधु, मेद, महामेद, जीवक, ऋषभक, शुलफा, नखी, सोंठ, देवदारु, काकोली, चीरकाकोली, वच और भिलावेकी मींगी यह सब प्रत्येक ८ तोला एकत्र करके पका ले। (भैषज्यरत्नावली)

अष्टादशाङ्ग (सं० पु०) कषायविशेष। यह सन्निपात ज्वरमें हित और चार प्रकारका होता है—
 दशमूलादि, भूनिष्ठादि, द्राक्षादि, सुस्तादि। पङ्क-

लेमें दशमूल सोंठ, शृङ्गी, पौष्कर, दुरालभा, भार्गो, कुटजबीज, पटोल, कटुरोहिणी इतने द्रव्य रहते हैं। दूसरेमें—भूनिम्ब, देवदारु, दशमूल, महीषधाव, तिक्ता, इन्द्रवीज, धनियां, और इमकण (गजपीपल) यह सब द्रव्य पड़ता और यह कषाय तन्द्रा, प्रलाप, अरुचि, दाह, मोह, ज्वर प्रभृति रोगोंको शीघ्र नाश कर देता है।

तीसरेमें—द्राक्षा, अमृता, सोंठ, शृङ्गी, सुस्तक, रक्तचन्दन, नागर, धनिया, बालक, कण्टकारि, पुष्कर, और पिचुमर्द इतने द्रव्य पड़ते हैं।

चौथा—सुस्ता, पर्पट, खसू, देवदारु, महीषध, त्रिफला, धन्वयास (दुरालभा), नीली, कम्पिलक, त्रिवृत्, किराततिक्तक, पाठा, बला, कटुरोहिणी, मधुक, और पीपलीमूल, यह सर्वद्रव्योंसे बनाया जाता है।

(चक्रदत्त, मैथन्यरत्नावली)

अष्टादशाङ्गलौह (सं० लौ०) पाण्डुरोगाधिकारका लौहविशेष। इसको प्रसुत करनेकी रीति यह है—चौराइता, देवदारु, दारुहल्दी, मोथा, गुडूच, कुटकी, पटोल, दुरालभा (जवासा), पर्पटक (धनपापर), निम्ब, त्रिकटु (सोंठ पीपल मिर्च), वट्टिफलत्रिक, विडङ्गफल, जटामांसी, यह सब द्रव्य सम यानि बराबर ले अच्छीतरह चूर्ण बना घृत और मधु (सहद) के साथ वटिका बनानी चाहिये। तन्त्रके साथ इसे सेवन करनेसे सब प्रकारका पाण्डुरोग निमूल होता है। (भावप्रकाश—मं० २४०)

अष्टादशोपचार (सं० पु०) बहुव०। तन्त्रोक्त पूजाका अष्टारह प्रकार उपचार। यथा,—१ आसन, २ स्वागत, ३ पाद, ४ अर्घ, ५ आचमनीय, ६ स्नान, ७ वस्त्र, ८ उपवीत, ९ भूषण, १० गन्ध, ११ पुष्प, १२ धूप, १३ दीप, १४ अन्न, १५ तर्पण, १६ मात्स्यानुलेपन, १७ नमस्कार और १८ विसर्जन।

अष्टादिशाब्दिक (सं० पु०) शब्दं वेत्ति अधीते वा शाब्दिकः, आदिभूतः शाब्दिकः, शाक० तत्। ततः अष्टौ च ते आदिशाब्दिकाश्चेति, कर्मधा० संज्ञात्वान् द्विगुः। आठजन प्रसिद्ध शाब्दिक। यथा,—इन्द्र, चन्द्र, काशकृत्स्न, आपिशली, शाकटायन, पाणिनि,

अमर और जेनेन्द्र। इन आठ लोगोंने प्रथम शब्द-शास्त्रको प्रणयन किया था, इसीसे इनका यह नाम पड़ा।

अष्टाध्यायी (सं० स्त्री०) १ शतपथ-ब्राह्मणका एकादश काण्ड। इसमें आठ शासन सम्मिलित हैं। २ पाणिनि-व्याकरण।

अष्टानवत (सं० त्रि०) अष्टानवे संख्या-सम्बन्धीय, अष्टानवेवां।

अष्टापद (सं० पु०-स्त्री०) अष्टौ अष्टौ पदानि पंक्तौ विद्यन्ते अस्मिन्, संख्या शब्दस्य वीप्सायां आत्वं अर्ध-र्चादिः। १ चौपर खेलनेको कपड़ेका बना घर, बिसात। अष्टसु धातुषु पदं प्रतिष्ठा यस्य। २ स्वर्ण, सोना। ३ शरभ। यह आठ पैरका पक्षी होता और अपने चङ्गुलमें सिंहको भी दबाकर उड़ जाता है। ४ मकड़ी। ५ धतूरा। अष्टं यथा स्यात् तथा पद्यते। ६ कृमि, कीड़ा। ७ चन्द्रमक्षिका। अष्टसु दिक्षु आपद्यते। ८ कौल, कांटा। ९ कैलासपर्वत। अष्टाभिः सिद्धिभिरापद्यते। १० अणिमादि अष्टसिद्धि।

अष्टापदपत्र (सं० लौ०) सुवर्णपत्र, सोनेका वरक। अष्टापदी (सं० स्त्री०) चन्द्रमक्षिका, चांदनौका पेड़। अष्टापाद (सं० पु०) आठ पैर वाला, जिसमें आठ अदर रहें।

अष्टापाद (सं० त्रि०) आठसे बंटा हुआ, जिसके आठ जड़में रहे।

अष्टापाद्य (सं० त्रि०) अष्टाभिरापद्यते गुण्यते, आ-पद कर्मणि ण्यत्। अष्टगुण, अठगुणा, अठहरा, जिसमें आठ तह रहे।

अष्टाविंशति (सं० स्त्री०) अष्टाधिका विंशति, आत् अन्तादेशः। १ अष्टाईस संख्याविशिष्ट। पूरणे ङट्। अष्टाविंश। पूरणे तमप्। अष्टाविंशतितम।

अष्टाविंशतितत्त्व (सं० लौ०) अष्टाविंशतिस्थानेषु तत्त्वम्। रघुनन्दनभट्टाचार्य-प्रणीत मलमासादि अष्टाविंशति विषयक स्मृतिनिबन्ध विशेष। यथा,—मलमास, दायतत्त्व, संस्कार, शुद्धिनिर्णय, प्रायश्चित्त, विवाह, तिथि, जन्माष्टमीव्रत, दुर्गात्सव, व्यवहार, एकादशी प्रभृतिका निर्णय, तड़ागोत्सर्ग, गृहोत्सर्ग, वृषोत्स-

सर्ग, दौचा, सामवेदीका आद्य, यजुर्वेदीका आद्य, और शूद्रका कृत्यतत्त्व ।

अष्टार (सं० त्रि०) अष्टौ घरा इव कोणा यस्य ।

अष्टकोणयुक्त, अठकोना । इस प्रथमें 'अनाश' 'अष्ट-कोण' इत्यादि शब्द भी प्रयुक्त होते हैं ।

अष्टारचक्रवत् (सं० पु०) अष्टारं अष्टकोणं चक्र-मस्थस्य, मनुप् मस्य वः । जिन विशेष । हाथमें अठ-कोन चक्र रहनेसे इन्हें 'अष्टारचक्रवान्' कहते हैं । इनके अपर पर्याय यह हैं,—मञ्जुश्री, ज्ञानदर्पण, मञ्जुभद्र, मञ्जुघोष, कुमार, स्थिरचक्र, वज्रहर, प्रज्ञा-काय, वादिराट, नीलोत्पली, महाराज, नील, शार्दूल-वाहन, धियाम्पति, पूर्वजिन, खड्गी, दण्डी, विभूषण, बालव्रत, अङ्गुली, सिंहकेली, शिखधर, वागोश्वर । यह जैनसाधु और नृपति भी रहे ।

अष्टारथ—भीमरथके पुत्रविशेष ।

अष्टावक्र (सं० पु०) अष्टल्लो वक्रः वृत्तौ संख्या-सुजर्थ परा (अष्टनः संज्ञायाम् । पा ६।१।२२५) इति दौघः । ऋषिविशेष । सुमतिके गर्भ और कन्होड़के औरससे इनका जन्म हुआ था । उद्दालकसे कन्होड़ शास्त्रादि पढ़ते रहे । शिष्यकी सेवा शूश्रूषासे तुष्ट होकर उद्दालकने उनके साथ अपनी कन्या सुमतिका विवाह कर दिया । सुमतिका दूसरा नाम सुजाता है ।

कुछ दिनोंके बाद सुमति गर्भवती हुई । एकदिन पत्नीके समीप बैठकर कन्होड़ वेदपाठ कर रहे थे । पढ़नेमें स्थान स्थान पर कुछ भूल हो रहा था । सुमतिकी गर्भस्थ सन्तानने उन भूलोंकी बता दिया । इसपर कन्होड़ने क्रोध करके कहा,—“अभी तू भूमिष्ठ नहीं हुआ । गर्भ हीमें तेरा स्वभाव इतना वक्र है, अतएव तू अष्टावक्र होकर जन्म ग्रहण करेगा ।” उसी शापके प्रभावसे जन्म होनेपर उस शिशुका शरीर आठ जगहसे टेढ़ा हुआ था ।

अष्टावक्र जिस समय गर्भही में थे, उसी समय एकदिन सुमतिने कन्होड़से कहा,—“मेरा दशवां मास उपस्थित है । तुम्हारे पास धन नहीं, इसलिये राजा जनकसे जाकर धन मांगो ।” कन्होड़ जनकसे धन मांगने गये । वहां बन्दी नाम वरुणके एक पुत्र

थे । वेदमें उनकी दक्षता असाधारण थी । वेदविचारमें कन्होड़की परास्तकर उन्होंने समुद्रमें डाल दिया । समुद्रतलमें वरुणके निकट जाकर वे उनके यज्ञमें अभिषिक्त हो गये ।

इधर अष्टावक्रका जन्म हुआ । वारह वर्षकी अवस्थामें पिताकी दुरवस्था सुनकर वे जनकपुरी गये । उनके साथ उनके मामा खेतकेतु भी थे । वहां वेद-विचारमें बन्दीकी परास्तकर वे अपने पिताको उद्धार कर लाये । पुत्रसे सन्तुष्ट होकर कन्होड़ने उन्हें समझानदीमें स्नान करनेकी कहा । समझामें स्नान करनेसे अष्टावक्रकी वक्रता दूर हो गई, पर वक्र नाम न गया ।

अष्टावक्रने जनकराजको जो उपदेश दिया था, उसका नाम अष्टावक्रसंहिता है । इन्हींके आशीर्वादसे भगीरथने दिव्य गङ्गा लाभ किया और इन्हींके शापसे कण्यकी महिषियां डाकूके हाथमें पड़ीं । वक्रर देखो ।

अष्टावक्ररस—शोधित पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, स्वर्ण १ भाग, रौप्य १० भाग, सीसा, तामा, खर्पर, वज्र प्रत्येक १० भाग । इन सब वस्तुओंको बटकी भुरीके रसमें एक पहर और घतकुमारीके रसमें एक पहर घोटना । फिर समतल बोटलमें रखकर उसके मुहको चां-खड़ीके टुकड़ेसे बन्द कर बालूभरी हांडीमें इस बोटलको रख देना । बालू बोटलके गलेतक भरा रहे । फिर क्रमशः तीन दिन तक उसे आगपर रखना । जर्ब पातित होकर जो औषध बोटलके गलेमें लग जाये उसे निकाल लेना । इसकी मात्रा दो रत्ती है । पानके रसके साथ खाना होता है । इसके सेवनसे सम्पूर्णरूपसे वलवीर्यकी वृद्धि होती है ।

अष्टावक्राय (सं० क्ली०) अष्टावक्रमधिकृत्य कृतः ग्रन्थः छ । अष्टावक्रको अधिकार करके रचित ग्रन्थ, अर्थात् जिस ग्रन्थमें अष्टावक्रका उपाख्यान हो । महा-भारत वनपर्वके १३२से १३३ अध्याय । अष्टावक्रने विचारसे वरुणपुत्र बन्दीको परास्त करके अपने पिता कन्होड़को उद्धार किया था । इन कई अध्यायमें अष्टावक्रके शास्त्रार्थका विवरण है ।

अष्टाश्रि (सं० त्रि०) अष्टकोण-विशिष्ट, अठकोना ।

(क्री०) अष्टकोण सज्ज, अठकोना घर ।

अष्टास (सं० लो०) अष्टकोनाकृति, सुसम्पन्न, अठ-
पहलू।

अष्टास्रय (सं० त्रि०) अष्टकोण-विशिष्ट, अठकोना।
अष्टाह (सं० त्रि०) अष्ट दिवस पर्यन्त स्थायी, जो
आठदिन ठहरता हो।

अष्टि (सं० स्त्री०) अस्थिते भूमौ क्षिप्यते, अस्-क्तिन्
पृषो० षत्वम्। १ फलादिका वीज। २ आँठी, गुठ्ठी।
३ सोलह अक्षरका छन्दोविशेष। ४ सोलह संख्या।
अक्षव्याप्तौ क्तिन्। ५ व्याप्ति। अश-करणे क्तिन्। ६ भोग-
साधन देह। यह चञ्चला, चकिता, पञ्चमार आदि
भेदसे कई प्रकारकी होती है।

अष्ट्रिय, अष्ट्रिया, अष्ट्रोङ्गरी—(अष्ट्रिया एवं हंगरीका
साम्राज्य) मध्य युरोपका एक बड़ा साम्राज्य। इसका
क्षेत्रफल (१८०५ ई०में) २३८८७७ वर्गमील है। इसके
उत्तर जर्मन् और रूससाम्राज्य, पश्चिम सुजालन्द और
लीटेनष्टोन हङ्गरी, आस्ट्रियाटिक सागर एवं इटली।
दक्षिण रूमानिया, तुर्की और मोण्टेनेग्रो, और पूर्व
रूस और रूमानिया है। सन् १८०१ ई०की मर्दम-
शुमारीमें अष्ट्रियाकी लोकसंख्या ४५४०५२६७ है।

अष्ट्रियाके प्रदेश और नगर ये हैं—

प्रदेश।

नगर।

उपर अष्ट्रिया और
निम्न अष्ट्रिया। इनका
दूसरा नाम अष्ट्रियाकी
आर्कडची है

वियेना, लिन्ज़, आया।

साल्जबर्ग

साल्जबर्ग।

ट्रिरिया

आज़।

कारिन्थिया

क्लागनफुर, विन्नाच।

कारिन्थोला

लेबाच।

कुस्तेनलण्ड

त्रिष्टि, केपो-दि-इस्त्रिया।

तिरोल, वोराइलबर्ग

इन्सब्रुक, टेण्ट, बोतजेन।

बोहिमिया

प्रेग, रिचेनबर्ग, पिलसेन बूदवीस्।

मोरेविया

ब्रून, ओल्मूस्, अस्तारलिस।

सिलिसिया

ब्रोपाल, तेन्नेन।

गालिसिया

लेम्बर्ग, ब्रोदी, क्राकौ।

बकोविना

जार्नोविज़।

प्रदेश।

नगर।

दालमेशिया

जारा, रगुसा।

हङ्गरी

बुदापेस्त, प्रेस्वर्ग, कोमर्ण

एराद, तोके, देब्रेजेन।

त्रान्सिलवेनिया—क्लसेनबर्ग, हार्मान्स्ताद, क्रसताद।

सर्विया और तेमिस्का

तेमिस्कर।

वानाट

क्रोशिया एवं

अग्राम, एसेक।

स्लावोनिया

सैनिक सीमाप्रदेश

कार्ल्सताद, पितर्वर्दिन,

स्तेमलिन, वार्सेज।

पर्वत—कार्पेथियान पर्वत, सदेतिक श्रेणी और रिसि-

यान वा ताडरोलिश अल्पस् यहांके प्रधान पर्वत हैं।

अष्ट्रियाका प्रायः बारह भाग पर्वतसे भरा है। इसके

पूर्ण क्षेत्रफलका $\frac{8}{10}$ भाग समुद्रतलसे ६०० फीट

ऊंचा पड़ता है। अल्पस् पर्वत तीन भागोंमें विभक्त

है, पश्चिम और पूर्व अल्पस्। पूर्व अल्पस् बिलकुल

अष्ट्रियामें ही पड़ता और मध्य अल्पस् की भी कितनी

ही श्रेणी आ पड़ची है। दानूब नदी बोहेमियान

पर्वतसे अल्पस्को अलग करती है। कार्पेथियान

पर्वत इस देशके पूर्व और उत्तर पूर्व मेहराब-जैसा

लगता है। इसके समग्र क्षेत्रफलमें चतुर्थांशसे कुछ

ही अधिक भूमिसमतल मिलता। गालिशियामें सबसे

बड़ा समतलभूमि पड़ता है। दक्षिणमें आयिसोच्चोकी

और लम्बारडो-वेनेशियन समतलभूमिका कुछ अंश

अष्ट्रियामें आ गया है। दानूबके आस-पास कई छोटे-

छोटे समतलभूमि मौजूद हैं। दूसरी बड़ी नदियोंके पास

जो मैदान हैं, उनमें कुछकी भूमि बहुत ही उपजाऊ है।

भौल—अष्ट्रियामें बड़ी भौल न रहते भी अल्पस्की

कितनी ही पहाड़ी भौलें बहुत सुन्दर हैं। काष्ट

प्रदेशकी मौसमी भौल जिकर्निज़ सबसे बड़ी है।

गालिशिया और दालमेशियामें बड़े-बड़े दल-दल भरे,

किन्तु नदियोंसे नहरें निकलने और सफ़ायीके काम

होने कारण दूसरे प्रांतोंके दल-दल बहुत ही कम

पड़ गये हैं।

हङ्गरीमें नसिदुलार और प्लातेन भील ही अधिक प्रसिद्ध है। इनमें पहलीका परिमाण ४०० वर्गमील और दूसरीका १०० वर्गमील है। नसिदुलारके ऊपर वारहो महीने वाष्पीय जहाज चलते हैं। इन दोनों भीलोंके चारो ओर अङ्गरके वाग लगे हुए हैं।

नदनदी—अष्ट्रीयीयोंमें कितनी ही नदियां बहती हैं, किन्तु इट्रिया और कष्ट प्रान्तमें नाला भी ठूँडे नहीं मिलता। इसकी नदियोंकी धाराओं तीन ओरको जाती हैं,—उत्तर, दक्षिण और पूर्व। किसी प्रधान नदीका मुहाना इस देशमें नहीं पड़ता। दानूब नदीमें जहाजरानी खूब हो सकती है। लिच्छ और वियेनाके बीच इस नदीको शोभा देखते ही बनती है।

दानूब नदी प्रायः २३४ वर्गमील अष्ट्रीयीयोंके भीतर बहती हुई ओसोवा होकर चली गयी है। दक्षिण भागमें इन, त्रीन, एन्स, लिथा, राव, द्रो और सेव, तथा वामभागमें मार्च, ओवाग, निउत्रा, ग्रान, थिस और वेगाओथिमिस इसकी शाखाएँ हैं। विस्चुला नदी बालटिक सागरमें गिरती है। इसकी शाखाका नाम वग है। एल्ब नदीकी शाखाओंके नाम मेलदो और एजार, निस्तार एवं आदिज। राइन नदीका केवल सात कोस अंश कन्सन्स भीलके ऊपर होकर चला गया है। इसोच्चो, जार्माग्ना, कार्क और नारेन्ता नदी आद्रियाटिक समुद्रमें जाकर गिरी है।

खनिज प्रसवण—अष्ट्रीयीयोंकी तरह अधिक और मूल्यवान् खनिजप्रसवण युरोपके दूसरे प्रान्तमें देख नहीं पड़ते। विशेषतः यह बोहेमियामें मिलते, जहाँ कितने ही मनुष्य इन्हें देखने पहुँचा करते हैं। कार्ल्सबड, मेरीनबड, फ्रानजेन्सबड और बिलिनके चारस्वभाव प्रसवण सबसे बड़े हैं। गीसबलका चारस्वभाव और अक्सीकृत जल चौका-वर्तनके काम आता है। सब मिलाकर कोई १५०० प्रसवण अष्ट्रीयीयोंमें वर्तमान हैं।

सागरतट—अष्ट्रीयीयोंकी सम्पूर्ण सीमाकी दशमांश ही सागरतट है। आद्रियाटिक-तट १००० मील विस्तृत और अधिक दन्तुरित है। इट्रियाका प्रायोद्वीप, विष्ट और कारनेरो अखातके बीच पड़ता, जिनमें बहुत

सुरक्षित खाड़ी है। कारनेरोके अखातमें कारनेरो द्वीप भी मिलते, जिनमें चेरसो, वेगलिया और लूसिन प्रधान हैं। इसोच्चो मुहानेके पश्चिम तटपर कच्छोंकी भरमार है। किन्तु द्रोष्टके अखात और इट्रियन प्रायोद्वीपका तट ढाल होनेसे बहुतसे वङ्ग और पोताश्रय सुरक्षित हैं। अष्ट्रीयीयोंके प्रधान समुद्र पोताश्रय एवं आयुधागार द्रोष्ट, कपोडिष्टिया, पिरानो, परेच्चो, रोविन्न और पोला हैं। दालमेशिया-तट पर भी कितने ही सुरक्षित वङ्ग मिलते, जिनमें जूरा, कटारो और रगूसा मुख्य है। किन्तु कहीं-कहीं यह बहुत ही ढालू है, जहाँ कोई चढ़कर जा नहीं सकता। हाँ, तटके साथ द्वीपोंका समूह लगा, जहाँ शीत ऋतुके समय आद्रियाटिकमें तूफान चलनेपर जहाजोंको लङ्गर डालनेका सुगम स्थान मिल जाता है।

भूतल—अष्ट्रो-हङ्गरीय साम्राज्यमें अल्प्स और कार्पेथियान पर्वत प्रधान हैं। इन दोनोंके बीच हङ्गरीकी समभूमिका टरसियारी स्तर और बाहर उत्तरकी ओर दूसरा प्रदेश पड़ता है। कारपेथियान अल्प्स पर्वतके बीचके छिद्रने मिबोसीन समयसे इन दोनों प्रान्तोंको जोड़ा है। बाहरी ओर पहले गड्ढा रहा, किन्तु अब वह पूर गया है। गालिशियामें नौष्टरकी पुरानी चटानें निकल पड़ी हैं। सिलूरियान और दिवोनियान गर्भपर भुरभुरा पत्थर झलक मारता है। मालूम होता है, दिवोनियान समयकी बाद भूमि सूख गयी थी। किन्तु उपर क्रिटेशेउस समय आरम्भ होते ही किनोमिनियान समुद्र फूट पड़ा। १२।१५ कोसका उन्नतावनत देश नौष्टरकी कार्पेथियान उपकण्ठसे पृथक् करता है। प्रूथ उपत्यकामें मिबोसीन समयसे अधिक पुराना गर्भ देखनेमें नहीं आता। उपरोक्त उन्नतावनत देशमें और उत्तर-पश्चिम और पलेशोजिक स्तर क्रिटेशेउस गर्भके नीचे दब गया है। लेमबर्गमें १६५० फीट छेदनेपर भी सिनोनियान आधार मिला न था। क्राकोसे पश्चिम क्रिटेशेउस गर्भ चुरासिक और त्रियासिक स्तरसे विस्तृत आस्ट्रियीयोंमें पलेशोजिक गर्भ फिर धरातल-

पर निकल आया है। हङ्गरीके बीच पहाड़ मैदान-पर खड़ा और उत्तर-पूर्व ओर कार्पेथियानसे जा मिला है।

कृषिकार्यमें सुभीतेके लिये अष्ट्रीयीयोंमें जगह जगह-पर नहर खोदी गई है। परन्तु ये सब नहरें बहुत पुरानी नहीं हैं। निम्न अष्ट्रीयीयोंमें वियेनासे निउस्ताद तक जो नहर है, वह बीस कोस और हङ्गरीके अन्तर्गत दानूब एवं थिसके बीचमें जो वाक्मार नहर है, वह पैंतीस कोस लम्बी है। वेगा एवं तेमिसके बीचमें रोमकोंने जो नहर खुदवाई थी, उसे वेगा नहर कहते हैं। उसकी लम्बाई ४२ कोस है।

कृषि—अष्ट्रीयीयोंमें मेहनतका कितना ही काम खुला रहते भी कृषिकार्य लोगोंको बहुत लाभ पहुँचाता है। सन् १८०० ई०को इस देशके कोई आधे आदमी कृषिकार्यसे ही अपना निर्वाह करते थे। भूमि बहुत उपजाऊ है। ७४१०२००१ एकर भूमिमें खेती होती और बाकी दूसरे काम लगती है। बोहेमिया, गालिशिया, मोरेविया और निम्न अष्ट्रीयीयोंमें अधिक कृषिकार्य चलता है। निम्नलिखित द्रव्य खूब पैदा होते हैं,—गेहूँ, राई, यव, बाजरा, मकई-ज्वार और आलू। किन्तु जो द्रव्य खेत जोतनेसे उपजता, उससे इस देशका पेट नहीं भरता। हङ्गरीसे बहुतसा गेहूँ और मकई-ज्वार मंगा अष्ट्रीयीयोंके लोग अपना उदरपोषण करते हैं। अष्ट्रीयीयोंसे सिर्फ यव और बाजरा बाहर भेजा जाता है। टिरोल और साल्जबर्गमें खेती बहुत कम होती है। यहांसे कितना ही मेवा बाहर जाता है। टिरोलका सेब, बोहेमियाका वीर और दालमेशियाका अज्जीर तथा अनार बहुत प्रसिद्ध है। अज्जूर भी बहुत उत्पन्न होता है।

जङ्गल—अष्ट्रीयीयोंमें खेतीसे तिहाई जङ्गल पड़ता है। बुकोविनामें सबसे अधिक और गालिशियामें सबसे न्यून जङ्गल है। सिन्दूर, देवदारु, बीच, आश और बूकीज़ार-जैसे वृक्षोंसे राज्यको बड़ा आय होता है। जङ्गलका काम वैज्ञानिक रीतिसे चलाते हैं।

भूस्वामि—सैकड़ों पीछे राज्यका २५वां अंश जागीरमें लगा है। बुकोविना, साल्जबर्ग, गालिशिया, मोरेविया, टिरोल, टोल्लो, साल्जबर्ग एवं टिरोलिया और पूर्व

और बोहेमियामें कितने ही छोटे-छोटे राजा बसते हैं। जागीरकी जमीन ज्यादातर जङ्गली है।

रेलवे—अष्ट्रीयीयोंमें रेलका काम बड़ी धूमधामसे चलता है। देश पर्वतमय होनेसे रेल बनानेमें गवर्न-मेण्टको बहुत मस्या मारना और रुपया खर्च करना पड़ा है। सेमरिङ्ग रेलवे सन् १८५४ ई०को तैयार हुई थी। यह ऐसे पार्वत्य देशपर पड़ी, कि बनावटको देख लोगोंकी बुद्धि चकरा जाती है। आदिसे अन्त-तक रेलवेका अधिकार अष्ट्रीयीय सरकार अपने ही हाथ रखती है।

अष्ट्रीयीय-निच—एन्स नदीके निम्न प्रदेशको निम्न अष्ट्रीयीया कहते हैं। इससे पूर्व हङ्गरी, उत्तर बोहेमिया एवं मोरेविया, पश्चिम बोहेमिया तथा उपर-अष्ट्रीयीया और दक्षिण टिरोलिया पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ७६५४ वर्गमील है। दानूब नदी इसे दो भागमें विभक्त करती है। वाल्डवीरेलका पार्वत्य प्रदेश बोहेमिय और मोरेविय अधित्यकासे सम्बन्ध रखता है। दानूब, एन्स और मार्च नदीमें जहाज आता जाता है। बडेनमें गन्धकी, डिउस-अलटेनबर्गमें फौलादी, पयरा-वर्थमें लोहेका और बोसलौमें उष्ण प्रसवण प्रवाहित है। जल-वायु स्वास्थ्यकर होते भी प्रायः बदलते रहता है। भूमि अधिक उपजाऊ नहीं ठहरती और न उससे इसके अधिवासियोंका काम ही निकलता है। मवेशी तो अधिक नहीं देख पड़ता, किन्तु शिकार और मछलीका बाजार गर्म रहता है। अल्पस-पर्वतके नीचे कुछ कोयला और लोहा निकलता है। किन्तु इस प्रदेशमें काम-काज खूब होता है। वीनरकाल और सेमरिङ्ग प्रदेशमें कितने ही कारखाने खड़े हैं। धातु, चक्की, दवा, कागज़, चमड़े, रेशम, कपड़े औज़ार, चीनी और तम्बाकूका काम बहुत देख पड़ता है। वियेना बहुत बड़े व्यापारका केन्द्र है। अष्ट्रीयीया जैसा धन-जन सम्पन्न प्रदेश दूसरा नहीं निकलता। यहां सैकड़ों पीछे निन्यानवे मनुष्य पढ़े लिखे हैं।

अष्ट्रीयीय-ऊपर—एन्स नदीके ऊपरका प्रान्त ऊपर अष्ट्रीयीया कहाता है। इससे उत्तर बोहेमिया, पश्चिम

निम्न अष्ट्रीयीया पड़ता है। अल्पायिन प्रदेशमें भूरा कोयला बहुत है। सारकीनबर्गकी नहरसे दानूब और एल्बेके बीच जहाज आते-जाते हैं। यहांका जलवायु न तो बहुत अच्छा न खराब ही है। अधिवासी जर्मन जातिके और रोमान केथलिक हैं। कृषिकार्य ऐसी धमसे चलता, कि अब बहुत उपजता है। इस प्रदेश-जैसे चरागाह अष्ट्रीयीयोंमें दूसरी जगह नहीं मिलते। मवेशी पैदा और लकड़ी तैयार करनेसे इस प्रदेशको अधिक लाभ होता है। खनिज पदार्थमें लवण अधिक निकलता है। तीस खनिज निर्भरमें इसचालका सैन्धव और हालका फौलादी स्रोत प्रधान है। छीरमें लोहे और दूसरे धातुका काम बहुत बनता है। कल पुर्जा, नैनु, रुई और कागज भी तैयार होता है। यहांसे नमक, पत्थर, लकड़ी, जानवर, ऊनी और फौलादी चीज तथा कागज बाहर भेजा जाता है।

अष्ट्रीयी-हङ्गरी—इसका सरकारी नाम अष्ट्रो-हङ्गरीय-मनाकी है। इससे पूर्व रूस एवं रुमानिया, दक्षिण रुमानिया, सरविया, तुर्कस्थान, तथा मण्टेनीग्रो, पश्चिम आस्ट्रियाटिक सागर, इटली, सुजारलेण्ड, लीक-टनष्टीन एवं जर्मन साम्राज्य तथा रूस पड़ता है। इसका क्षेत्रफल ३२८८७७ वर्गमील है। सर्वसाधारण अपनी भाषामें इसे डुयेल मनाकी वा डैतराज्य कहते हैं। सन् १८७८ ई०को बर्लिनमें जो सन्धि हुई थी, उसके अनुसार बोसनिया और हरजेगोविना राज्योंका प्रबन्ध अष्ट्रीयी-हङ्गरीके हाथ लगा और सन् १८०८ को उन्हें अपने अधिकारभुक्त भी किया।

शासन—अष्ट्रीयीया और हङ्गरी दोनो राज्य पूरे तौरपर एक दूसरेसे सतन्त्र हैं। प्रत्येक अपना अपना पारलियामेण्ट और शासन रखता है। किन्तु दोनोका राजा एक ही होता, जो अष्ट्रीयीया-सम्राट् और हङ्गरीका ईश्वर-प्रेरित पति कहाता है। दोनो राज्योंसे घनिष्ठ सम्बन्ध रखनेवाले कुछ कार्योंका प्रबन्ध भी एक ही रीतिसे किया जाता है—जैसे परराष्ट्र विभाग, विदेशमें समर्थक एवं दूतविषयक निरूपण, सैन्य, रण-तरी और संयुक्त व्ययसे सम्बन्ध रखनेवाला राजस्व।

सम्राट्को सम्पूर्ण सेनाक्रा

है। क्राकौ, वियेना, ग्राज, बूदापेस्ट, प्रेसबर्ग, कसचौ, तमेश्वर, प्राग, जोजेपेट्ट, प्रिजमसल, लेमबर्ग, हरमनपेट्ट, अग्रम्, इन्सब्रक और सरजेवोमें सेना रहती है।

गालेशियाके क्राकौ और प्रिजमसल, हङ्गरीके, पीटर-वारड, वोवरद एवं तमेश्वर और बोसनिया-हरजगो-विनाके सराजवो स्थानमें किला बना है। अल्पस्की सीमा टिरोलमें भी कितना ही किला खड़ा, जिसका केन्द्र ड्रेण्ट और फ्राञ्जेनफेष्टसे बना है। करिन्थियाको जो सामरिक रथपथ आते, उनपर मलबरथ, प्रेडिल-पास आदिमें बहुतसे बचावके स्थान निर्मित हैं। वियेना और बूदापेस्ट राजधानियोंमें कोई किला नहीं। आस्ट्रियातिक तटपर पाला नौकाशयको रक्षा जल और स्थल दोनो आरसे की गयी है। द्रोष्ट, जारा और कटारोमें भी किलेबन्दी देख पड़ती है। पोला और द्रोष्टमें जहाजोंका बड़ा अड्डा है।

अष्ट्रीयीयोंमें नाना प्रकारके धातु एवं पार्थिव पदार्थकी खानि है। उससे प्रतिवर्ष प्रायः १८७५००,०००, रुपयेका खनिज वस्तु निकाला जाता है—पत्थरका कोयला ६०८८७१०५) लोहा १८००००००) नमक ८०००००००) और सोना चांदी प्रायः ६०००००००) रुपयेका। हङ्गरी, त्रान्सिलवेनिया, साल्जबर्ग और टिरोलमें सोना होता है। इन सब स्थानों और बोहिमियामें चांदीकी खानें हैं। इट्रिया, हङ्गरी, त्रान्सिलवेनिया, स्टाइरिया और करिन्थियामें पारा पाया जाता है। बोहिमियामें टोन, क्राकौ और करिन्थियामें जस्ता, करिन्थियामें सीसा और यहांके अनेक स्थानोंमें तांबा और लोहा मिलता है। हङ्गरीमें सुर्मा, साल्जबर्ग और बोहिमियामें शङ्खविष; हङ्गरी, छीरिया एवं बोहिमियामें कोवल, गालिसिया, बोहिमिया, हङ्गरी और साल्जबर्ग प्रभृति स्थानोंमें गन्धक, बोहिमिया, मोरेविया और करिन्थिया वगैरहमें ग्राफाइट पाया जाता है।

यहां प्रहालिका आदि बनानेकी प्रचुर सामग्री मिलती है। चीनके बरतनकी मट्टी, मार्बल, गिप्सम, खड़िया, गोदन्तमणि, गानेट नामक रत्नमणि, अकीक

यशव, फीरोजा, नीलम, जबरजुद पद्मराग, वैद्युत सफायर, पोखराज प्रभृति अनेक प्रकारके मणि यहांके आकरोंमें पाये जाते हैं।

अष्टीया और झङ्गरीके पर्वतोंमें यथेष्ट सेंधानमक होता है। प्रति वर्ष ८१००००० मन नमक निकाला जाता है। इसके सिवा समुद्र और खानिके जलको गर्म करके भी नमक तय्यार होता है। भारत-वर्ष की तरह अष्टीयाके लवणका व्यवसाय राजाके ही हाथमें है। यहां प्रायः १६०० खनिज कुण्ड हैं। उनमें निम्न अष्टीयाके गन्धककुण्ड एवं कार्ल्सबाद, मारिनबाद और ओफेनके लवणकुण्ड ही अधिक प्रसिद्ध हैं। इन कुण्डोंमें स्नान करनेके लिये रोगी लोग जाया करते हैं।

अष्टीयामें अनेक प्रकारके उद्भिद् एवं शस्यादि उत्पन्न होते हैं। गेहूं, धान, आलू, नारङ्गी, नीबू, पाट, सन, तम्बाकू, हौप, नील आदि यथेष्ट उपजता है। यहां शराब भी खूब तय्यार की जाती है। झङ्गरीकी तोके शराब सब जगह प्रसिद्ध है।

वन्य पशुओंमें भालू, भेड़िया, शृगाल, शिया-गोश, विवर, सार्मत, उद्भिडाल, बकरी, सांभर हरिण, सफेद खरहा वगैरह देखनेमें आते हैं। यहां रेशमके कोवोंकी खेती खूब होती है। पालतू पशुओंमें घोड़ा, गधा, भेड़, बकरा और सूवर ही प्रधान है। फलतः झङ्गलैण्डकी तरह यहां पालतू जानवरोंकी लोग उत्तनी देखभाल नहीं करते। गवर्न-मेण्ट घोड़ा और भेड़ पालती है। मोरेविया, बोहिमिया, सिलिशिया, निम्न अष्टीया, झङ्गरी और गालिशियामें कुछ अच्छा पशु पेटा होता, परन्तु विचारकर देखनेसे उसका अधिकांश निष्कृष्ट है। अष्टीयाके बारह आना आदमी खेती करते हैं।

यहां शिल्पकर्मकी आजतक वैसी उन्नति नहीं हुई। कपास, रेशम और पशुमके वस्त्रादि, कांचके काम, लोहे और ईस्पातकी चीजें ही अधिक बनती हैं। अष्टीया पहाड़ी देश है, सिवा आद्रियाटिक समुद्रके दूसरी राहसे देशान्तर जानेका अच्छा सुभीता नहीं पड़ता। इसीसे यहां वाणिज्यकी

उन्नति भी नहीं होती। आद्रियाटिक समुद्रमें वाणिज्यके प्रधान बन्दर ये हैं,—इस्त्रिया, त्रिष्ट, रोविग्न, पाइरेणो, सिला और निडवा।

अष्टीयाके निवासी एक जातिके नहीं हैं। उनका धर्म और भाषा भी एक प्रकारकी नहीं है। यहांके अधिवासियोंमें स्लाव, रोमक, लेटिन, यद्गदी, आर्मनी और गिप्सी ही अधिक हैं। अष्टीयाके विद्यालयोंको एक प्रकारसे दातव्य ही कहना चाहिये। प्रायः सर्वत्र ही कुछ कुछ मूलधन है। उसीके आधसे विद्यालयका खर्च चलता है, छात्रोंको प्रायः फीस नहीं देनी पड़ती। यदि कहीं फीस है, तो केवल नामके लिये थोड़ीसी। अष्टीयामें कुछ जातीय विद्यालय हैं। छः वर्षसे बारह वर्षतककी उम्रके लड़कोंको इन विद्यालयोंमें जाना पड़ता है। इनके सिवा हालमें कितनी ही ऐसी पाठशालायें खोली गई हैं, जिनमें लोग सभी कुछ लिखना पढ़ना सीख सकें। वियेना, प्रेग, ग्रेट, इन्सब्रक, प्रेस, क्लाकौ, कसेनवर्ग, लेम्बर्ग और जार्णोइच नगरमें विश्वविद्यालय हैं।

अष्टीयाका शासनभार सम्राट्के अधीन है। हाब्स-बर्ग-लोथिन्गेन परिवारके आदमी सम्राट् होते हैं। देवात् राजपरिवारमें कोई वंशधर न रहनेपर बोहिमिया एवं झङ्गरीके राजकीय मनुष्य नवीन राजा मनोनित करते हैं। किन्तु दूसरे विभागोंके शेष राजा अपना उत्तराधिकारी ठोक कर जाते हैं। यहांके सम्राट्की रोमन-काथलिक मतावलम्बी होना आवश्यक है। झङ्गलैण्डकी लार्ड एवं कमन्स सभाकी तरह यहां भी उच्च एवं निम्न सभा है। भूस्वामी, आर्कबिशप, बिशप एवं राजा लोग यहांकी उच्च सभाके सदस्य होते हैं। स्वयं सम्राट् इन सभासदोंको मनोनित करते हैं। निम्न सभामें ३५३ सभ्य रहते, उनमें बोहिमियाके ८२, दालमेशियाके ८, गालिशियाके ६३, उच्च अष्टीयाके १७, निम्न अष्टीयाके ३७, सालजबर्गके ५, स्लावरियाके २३, करिन्थियाके १०, कार्थिओलाके ८, बुकोविनाके ८, मोरेवियाके ३६, सिलिशियाके १०, ताइरोलके १७, बोरोलवर्गके ३, इस्त्रिया और त्रिस्तेके ४ मनुष्य मनोनित किये जाते हैं।

अष्टीयाका शासनभार सात मन्त्रिविभागोंके हाथमें अर्पित है। यथा,—१ साधारणशिक्षा एवं धर्मकार्यका विभाग, २ कृषिविभाग, ३ राजस्वविभाग, ४ राज्यके अन्तर्भूत विषयव्यापार, ५ जातीयरक्षा, ६ वाणिज्य-विभाग, ७ विचारविभाग।

यहाँके राजस्वकी अवस्था अतिशय शोचनीय है। उन्नीसवीं शताब्दीके प्रारम्भमें लगातार पन्द्रह वर्षतक युद्ध होता रहा, उसमें अष्टीयाका बहुत धन खर्च हो गया। इससे लोगोंका विश्वास बहुत घटा था। सैकड़ों पीछे २५) रुपये बड़ेपर भी कोई गवर्नमेण्टको कर्ज देनेपर राजी न हुआ। अन्तमें ५०) बड़ेपर सैकड़ों पीछे ५) सूदके हिसाबसे गवर्नमेण्टको कर्ज लेना पड़ा था। उसके बाद क्रिमिया, इटली और पुशियाके युद्धमें ऋण और भी बढ़ गया। सन् १८०५ ई०में समग्र अष्टीया साम्राज्यका आय १११०१८५०००) वार्षिक व्यय प्रायः ११११८५०००) और १८०३के अन्त समस्त साम्राज्यका ऋण २३५०८६००००) रुपये था। हमारे भारतवर्षके साथ तुलना करनेसे अष्टीयाका आय व्यय नितान्त अल्प है।

इतिहास—पहले अष्टीया इतना बड़ा साम्राज्य न था, एन्स नदके नीचे एक छोटासा स्थान रहा। सन् ८८० ई०को साल्मैनके समय इसके दक्षिण-पूर्वअष्टिचमें एक सीमा निर्देश की गई। ११५६ ई०में एन्सके ऊपरके देशोंके साथ यह स्थान मिला दिया गया था। उसके बाद १२८२ ई०में हाम्सवर्ग परिवारके साथ मिल जानेसे यह राज्य क्रमसे बलवान् हुआ। हाम्सवर्गके राजाओंको कहीं विवाहसूत्रसे नया स्थान मिला; कहीं घेर घेर नई जगह खोद ली थी। इस तरह अष्टीया साम्राज्य प्रबल बना। अन्तमें १४०८ ई०से यह लोग जर्मनीके भी अधिपति हो गये। १४२६—२७ ई०में बोहिमिया और हङ्गेरी राज्य हाथ आया। अब अष्टीया बड़ा भारी साम्राज्य हो गया है। १८०४ ई०में पुत्र-पौत्रादि वंशवलीके क्रमसे फ्रान्सिस यहाँके सम्राट् हुए थे। दो वर्ष बाद वे जर्मनी और इतालीके भी राजा माने गये।

इस समय जो स्थान अष्टीयाकी उच्च नामसे

प्रसिद्ध है, अति प्राचीन समयमें वहाँ तरिस्सिकस् नामकी केल्तिक जातिके आदमी वास करते थे। ईसा मसीहके जन्मसे चौदह वर्ष पहले रोमकोंने दान्यूब नदके उत्तर नोरिकमको जय किया। मार्को-मन्निरा उस समय इस प्रदेशके अधीश्वर थे। दान्यूबके दक्षिण रोमकोंका नोरिकम और पान्नोनिया प्रदेश उस समय ताइरोल रिशियाका एक विभाग मात्र था। ख्रिष्टीय ५ वीं और ६ ठीं शताब्दीमें वो-आइ, वन्दन, गथ, ह्न, लम्बार्ड, और अवरी प्रभृति जातियोंने इन सब स्थानोंको अधिकार कर लिया। अन्तमें हर्ड जातिवाले जाकर इतालीमें बसे। उस समय एन्स नदके एक ओर अवरी और दूसरी ओर एक जातिके जर्मनोंका अधिकार था। ७८८ ई०में अवरी-योंने वेरियापर आक्रमण किया, किन्तु शार्लेमिनने उन लोगोंको खदेड़ कर एन्स नदके किनारेके प्रदेशको जर्मनीमें मिला लिया। उसके बाद ८०१ ई०में हङ्गेरीके राजाने इस स्थानको जीता था। अन्तमें ८५५ ई०को प्रथम ओत्तोने उसे फिर जर्मनीके अन्तर्भूत किया।

८८३ ई०में सम्राट्ने बावेनबर्गके लिओपोल्डको इस स्थानका शासनकर्ता नियुक्त कर दिया था। ११४१—११७७ ई०में हेनरी जीसोमिर्गत्ने एन्स नदके ऊपर और नीचेके प्रदेशोंको भी मिला लिया। इस वंशसे छठे लिओपोल्डने कई बार हङ्गेरीके साथ युद्ध किया था। १२४६ ई०में उनके उत्तराधिकारी प्रोदारिक मगियारोंके साथ युद्ध करनेमें खेत आये। उनके सन्तान-सन्तति न थी, सुतरां बावेनबर्गका राजवंश यहींसे ध्वंस हो गया।

द्वितीय प्रोदारिकके समय अष्टीयामें बहुत उलट-पलट पड़ा, परन्तु अन्तमें हाप्सबर्ग परिवारके प्रथम आलब्रेस्के सम्राट् होनेपर अष्टीयाके अभ्युदयका सूत्रपात हुआ। उन्होंने हङ्गेरी और बावेरियाके साथ युद्ध किया था। अन्तमें सुजालैण्डके संग्राममें जन् खावियाने उन्हें विनष्ट कर दिया। उनके पांच सन्तान थे। उनमेंसे किसी किसीने प्रोदारिकको सम्राट् बनाना चाहा, परन्तु वेवेरियाके डिउकने इस प्रस्तावको

अस्वीकार कर उन्हें परास्त किया। अन्तमें उनके भाई द्वितीय आलब्रेस्, उनकी मृत्युके बाद द्वितीय आलब्रेस् एवं रुदल्फ और १३८५ ई०में ४थ आलब्रेस् डिउक हुए। तत्पुत्र पञ्चम आलब्रेस्ने सम्राट् सिगिस्मुन्डकी कन्याके साथ विवाह किया था। उसी सम्बन्धसे वे हङ्गेरी और बोहिमियाके राजा बनाये गये। इधर २य आलब्रेस्के नामसे वे जर्मनीके भी सम्राट् हुए। १४५७ ई०में उनके सन्तान लादिसलेकी मृत्युके बाद अष्टीयाका राज-वंश विलुप्त हो जानेपर टैरिया-राजपरिवारके हाथमें उनका स्वत्वाधिकार आ गया।

टैरिया-राजपरिवारके ३य फ्रेदरिक सम्राट् हुए। उनके पुत्रका नाम प्रथम मक्षमिलन था। १४७७ ई०में चार्ल्स-दि-बोल्डकी कन्या मेरियाका पाणिग्रहण करनेपर उन्हें नेदरलैंडका भी अधिकार मिला। फ्रेदरिककी मृत्युके बाद मक्षमिलनने अपने सन्तान फिलिपकी नेदरलैंडका राजा बना दिया। स्नेनकी जोहानाके साथ फिलिपका विवाह हुआ। उसी सम्बन्ध सूत्रसे हाप्सबर्ग-राज-परिवार स्नेनका अधीश्वर बना था। १५०६ ई०में फिलिप स्वर्ग सिधारे। १५१८ ई०में मक्षमिलन भी परलोक चले गये। उस समय उनके पौत्र प्रथम चार्ल्स स्नेनके राजा थे। जर्मनीका सिंहासन शून्य होनेसे वे पञ्चम चार्ल्सके नामसे वहाँके सिंहासनपर बैठे। इधर सन्धिपत्रकी शर्तके अनुसार उन्हें नेदरलैंडके सिवा जर्मनीके अन्यान्य समस्त स्थानोंको अपने भाई प्रथम फार्दिनान्डके हाथमें सौंप देना पड़ा। फार्दिनान्ड हङ्गेरीके राजा द्वितीय लूडके बहनीई थे। लूडकी मृत्यु होनेपर बहुत विवादके बाद फार्दिनान्डको निम्न हङ्गेरीका अधिकार मिला। अन्तमें पञ्चम चार्ल्सके परलोक गमन करनेपर फार्दिनान्ड ही जर्मनीके सम्राट् बनाये गये।

१५५६ ई०में सम्राट्की मृत्यु हुई। ज्येष्ठ पुत्र द्वितीय मक्षमिलन अष्टीया, हङ्गेरी और बोहिमियाके सम्राट् बने थे। ताइरोल और ऊपर अष्टीया २य पुत्र फार्दिनान्डके अंशमें पड़ा। छोटे लड़केका नाम कार्ल था।

उन्हें टैरिया और करिन्थिया आदि स्थान हिस्सेमें मिले। १५७६ ई०में मक्षमिलनकी मृत्यु हुई। उनके पांच पुत्रोंमेंसे द्वितीय रुदल्फको राज्य मिला। इनके समयमें साम्राज्यकी अवस्था वैसी अच्छी न थी। रूम और बोहिमियाके साथ विरोध उठ खड़ा हुआ। इधर जेसुटलोग बोहिमियाके प्रोतेस्तान्त मतावलम्बियोंको सताने लगे। यह देख उन्होंने प्रोतेस्तान्तोंको सम्पूर्ण स्वाधीनता दे दी। परन्तु साम्राज्य रुदल्फके हाथमें बहुत दिनोंतक न रहा। उन्होंने अपने छोटे भाई माथियासको साम्राज्यका भार सौंप दिया। इन्हींके समय रोमन काथलिक और प्रोतेस्तान्तोंमें घोर-तर विरोध शुरू हुआ था। वह विरोध लगातार तीस वर्ष तक चला। माथियासके बाद द्वितीय फार्दिनान्ड और उनके बाद द्वितीय फार्दिनान्डकी सिंहासन मिला। इसी समय अष्टीयामें बहुत दिनोंतक धर्मयुद्ध होता रहा। उसके बाद द्वितीय फार्दिनान्डके पुत्र प्रथम लिओपोल्ड सम्राट् हुए। इस समय स्नेनका राज-सिंहासन नृपतिशून्य था, सिंहासनके लिये लिओपोल्ड और फ्रान्सके सम्राट् चतुर्दश लुईसे भगड़ा हुआ। परन्तु युद्ध समाप्त होनेके पहले ही १७०५ ई०में लिओपोल्ड संसारसे चल बसे। उनके बड़े लड़के प्रथम जोसेफ सम्राट् हो युद्ध करने लगे। १७११ ई०में उनकी भी मृत्यु हुई। इसीसे उनके भाई षष्ठ कार्ल सम्राट् बने। इनके समयमें सब लड़ाई भगड़ा मिट गया। औत्रेचमें पीछे सन्धि हुई। उसी सन्धि-सूत्रसे नेदरलैंड, मिलन, माच्युया, नेपल्स और सिसिली अष्टीयाके अन्तर्गत हो गया। उस समय अष्टीयाका भूमिपरिमाण १८०००० वर्गमील, लोकसंख्या २८००००००, सैन्यसंख्या १३००००, और वार्षिक आय प्रायः २८०००००० रुपया था। किन्तु थोड़े ही दिनोंमें फ्रान्स और स्नेनसे युद्ध छिड़ गया। उसमें अष्टीयाके सम्राट् परास्त हुए। १७३७ ई०को वियेनामें सन्धिपत्र लिखा गया। उसकी शर्तके अनुसार अपने अधिकारसे उन्हें नेपल्स और सिसिली स्नेनके दन् कार्लको देना पड़ा। इधर सार्दिनियाके राजाको मिलानका कुछ अंश देनेसे उसके बदलेमें केवल पार्मा

और पाइसेच्चा मिला। १७३८ ई०को वेलग्रेडमें और एक सन्धि हुई। उसकी शर्तके मुताबिक रुमके सुलतानको वेलग्रेड, सर्विया, बल्गाचिया और बोस्नियाका कुछ अंश देना पड़ा।

१७४० ई०में सम्राट् की मृत्यु हुई। उनके पुत्र न था; केवल एकमात्र कन्या थी, जिसका नाम मेरियाथेरिसा था। लोवेनके डिउक फ्राञ्च-स्तेफानके साथ उसका विवाह हुआ। मेरियाने राज्यका भार अपने हाथमें लिया। परन्तु यह बात सबको पसन्द न आयी। चारो ओरसे आपत्ति उठने लगी और घोरतर युद्ध आरम्भ हो गया। केवल इङ्ग्लैण्डने मेरियाका पक्ष ग्रहण किया। इसी अवसरमें प्रुशियाके द्वितीय फ्रेदरिकने सिलिशियाको जय कर लिया और अष्ट्रीयाके इलेक्टरको सप्तम कारलके नामसे सम्राट बना दिया। किन्तु १७४५ ई०में कारलकी मृत्यु हो जानेपर मेरियाके स्वामी प्रथम फ्राञ्चके नामसे जर्मनीके सम्राट् हुए। सिलिशिया लौटा लेनेके लिये फ्रान्स, रूस, साच्चन् और स्विजरलैण्डके साथ परामर्श किया गया। लगातार सात वर्षतक युद्ध होता रहा; परन्तु सब निष्फल गया, अष्ट्रीयाको सिलिशिया न मिला। इसी समय राज्यका खर्च चलानेके लिये पहले पहल अष्ट्रीयामें ऋणका कार्यज प्रचलित हुआ।

फ्राञ्चकी मृत्युके बाद उनके पुत्र द्वितीय जोसेफ जर्मनीके सम्राट् हुए। जोसेफके बाद उनके भाई द्वितीय लिओपोल्डके नामसे जर्मनीके सिंहासनपर बैठे। लिओपोल्डके लड़केका नाम द्वितीय फ्राञ्च था। १८०४ ई०में ये पुत्रपौत्रादि वंशावलीक्रमसे अष्ट्रीयाके सम्राट् हुए। फ्राञ्च मेरिया-लुइसाके पिता और फ्रान्सके प्रसिद्ध सम्राट् नेपोलियानके श्वशुर थे। इन्होंने ही उद्योग लगा अपने दामादको एल्बा द्वीपमें निर्वासित कर दिया था। फ्राञ्चकी मृत्युके बाद उनके पुत्र प्रथम फार्दिनान्ड सम्राट् हुए। १८६५ ई०में प्रुशियासे युद्ध होनेके बाद सम्राट् फ्रान्सिस् जोसेफ जर्मनीके साथ सब प्रकारका सम्बन्ध त्याग देनेके लिये बाध्य हुए थे। उसको दूसरे वर्ष बड़ी धम-धामके साथ वे इङ्गरीके सिंहासनपर बैठे।

युरोपमें जो महासमरानल प्रज्वलित हुआ है, अष्ट्रीया ही उसका प्रवर्तक है। बोस्निया अष्ट्रीयाका भुक्त राज्य और सरजेवो उसकी राजधानी है। रूस-तुर्की युद्धके बाद १८७८ ई०में जयलब्ध भूखण्ड बांटेनेके समय अष्ट्रीयाने जर्मनीकी सहायतासे बोस्निया प्रदेशकी रक्षा करनेके लिये भार ग्रहण किया था। अष्ट्रीया सर्वभावसे बोस्नियाके उन्नति साधनके लिये यत्नवान् हुआ। किन्तु बोस्नियाके स्वाधीनताप्रिय स्लावगण अष्ट्रीयाकी अधीनतासे मुक्त होनेके लिये अति-शय व्यग्र हो उठा। संभ्रान्त मुसलमान अधिवासीको छोड़कर बोस्नियाके जन साधारण सब स्लाव हैं। १८०८ ई०में समस्त बोस्निया अष्ट्रीयाके सम्पूर्ण अधिकारभुक्त हो गया। स्वाधीनताप्रयासों स्लाव प्रजागण अष्ट्रीयाके विपक्ष अभ्युत्थानके लिये गुप्त समितिसे षड़-यन्त्र करने लगा। इधर अष्ट्रीयाने प्रजाशासन करनेके लिये अनेक उपाय अवलम्बन किये।

अष्ट्रीया-सम्राट् फ्रान्सिस् जोसेफके आद्यपुत्र युवराज फ्रान्सिस् फार्दिनान्ड और उनकी पत्नी डाचेस जैजस-बर्गने बोस्नियाके दर्शनार्थ सरजेवोको गमन किया। इतिहासमें सन् १८१४ ई०की २८ वीं जनका रविवार एक चिरस्मरणीय दिन है। उसी दिन सरजेवो नगरमें अष्ट्रीयासाम्राज्यके युवराज और उनकी पत्नी ग्रेभीलो-प्रिन्सेफ नामक सार्वजातीय एक स्लाव बालककी गोलीसे निहत हुईं। बलकानकी बलहृष्टि अष्ट्रीयाके प्रबल असन्तोषका कारण हुई। इसलिये अष्ट्रीया राज-पुत्रकी हत्या होते सार्वियाके ऊपर कितने ही अस्तिमेटम (चरमाभिसन्धिपत्र) भेजे गये। सार्वियाने उसमें सब शर्तोंको मान लिया, केवल उसकी स्वाधीनता विरोधी दो शर्तके सम्बन्धमें मीमांसाके लिये लोगोंको मध्यस्थ ठहरना चाहा। सार्वियाका प्रत्युत्तर हस्तगत होनेके बाद अष्ट्रीयाने सार्वियाके विरुद्ध युद्ध घोषणा की। अनन्तर रूसने सार्वियाका पक्ष ग्रहण किया। इधर जर्मनीने अष्ट्रीयाका पक्ष ले फ्रान्स-पर आक्रमण किया। ४थी अगस्तको वेलजियमकी स्वाधीनता भङ्ग होते देखकर निरपेक्ष इङ्ग्लैण्डने जर्मनीके विरुद्ध युद्धघोषणा की। फिर इटली कुछ

दिनके बाद अष्ट्रीयाके विरुद्ध युद्ध घोषणा कर उठा। उधर तुर्की और बल्गारियाने जर्मनी एवं अष्ट्रीयाका पक्षग्रहण किया। जिस सार्वियाके कारण महासमरानल प्रज्वलित हुआ, वही सार्विया राज्य इस समय अष्ट्रीया प्रभुति शक्तिके करतलगत है। सार्वियाके राजा राज्यभ्रष्ट होकर भी सार्वलोक अंगरेजों और फ्रान्सीसीयोंके साथ अष्ट्रीयाके विरुद्ध युद्ध कर रहे हैं। सन् १८१६ ई० की ४थी अगस्तको इस महासमरका तृतीय वर्ष आरम्भ हुआ है। इस महाकुरुक्षेत्रका परिणाम क्या होगा, यह कहा नहीं जा सकता। ऐसा विश्वव्यापी युद्ध किसी इतिहासमें देखा या सुना नहीं गया।

अष्ट्रेलिया, अस्त्रेलिया—पृथिवीके सब द्वीपोंसे बड़ा द्वीप। यह भारतवर्षके पूर्वदक्षिण प्रशान्त-महासागरमें १०° ४७' एवं १२° १५' दक्षिण अक्षांश तथा ११३° और १५३° ३०' पूर्व द्राविमाके मध्यमें अवस्थित है। पूर्वसे पश्चिम यह १२५० कोस लम्बा और उत्तरसे दक्षिण ८७५ कोस चौड़ा है। इसका भूमि-परिमाण प्राय ३०००००० वर्ग मील है। इसके उत्तरमें नवगिनि और पूर्व द्वीपपुञ्ज, दक्षिणमें तास्मानिया-द्वीप, पश्चिममें भारत-महासागर और पूर्वमें प्रशान्त महासागर है।

अष्ट्रेलियाके अधिवासियोंकी उत्पत्ति समझना क्या सीधी बात है? यह निकटवर्ती लोगोंसे आकार प्रकारमें बिलकुल भिन्न मालूम पड़ते हैं। फिर इनकी चाल-ढाल भी किसीसे न मिलेगी। खेती करना और घर बनाना इनके लिये स्वप्नका विषय है।

नहीं कह सकते, कब अष्ट्रेलियाका इन्होंने अधिकार किया था। इनके यहां पहुंचनेका ठीक-ठीक हाल किस्सा-कहानीमें भी नहीं सुन पड़ता। किन्तु आकार प्रकारमें सादृश्य रहनेसे इन्हें स्वतन्त्र जातिके मनुष्य मान सकते हैं। तीन-चारसे अधिक गणना यह नहीं जानते। यह बात साफ़ जाहिर है, अष्ट्रेलियाके अधिवासी पृथक् जातिके मनुष्य ठहरते, निकटवर्ती लोगोंमें किसीसे सम्बन्ध नहीं रखते और बहुत दिनसे इस देशमें रहते हैं।

पहले पहल जब युरोपीयोंने इस द्वीपको आधि-
 कृत किया था, तब यहांके असभ्य आदिमो देखनेमें

हबशियों जैसे मालम हुये। इसीसे अनेक आदिमियोंका विश्वास है, कि ये लोग अफ्रीकासे आकर यहां बसे होंगे। असभ्य लोग छोटी छोटी नावोंपर चढ़कर समुद्रके किनारे किनारे मछली पकड़ते फिरते हैं। एकाएक तूफान आ जानेसे नावे बहती बहती गहरे पानीमें चली जाती हैं। वैसी दशमें कोई तो डूब जाती और कोई किसी दूरके टापूमें जा लगती है। अष्ट्रेलियाके असभ्य लोग इसी तरह अफ्रीकासे आये होंगे। किन्तु ए० आर० क्लासके मतसे यह आर्य जातिके मनुष्य ठहरते और जापानियों तथा जूलुओंकी अपेक्षा हम लोगोंसे अधिक सम्बन्ध रखते हैं। डाक्टर क्लास (Dr Klatsch) इन्हें दक्षिण-अमेरिका, दक्षिण-अफ्रीका और अष्ट्रेलियाका आदिम अधिवासी बताते हैं। कोयी कोयी इन्हें मन्द्राज प्रान्तके द्राविडीयोंकी सन्तान-सन्तति कहता है। कारण, इनकी और द्राविडीयोंकी भाषा एवं रीति-नैति बहुत कुछ मिलती-जुलती है। किन्तु इस बातका ठोक उत्तर नहीं आता, इन्होंने भारतीय महासागरको कैसे पार किया था।

अष्ट्रेलियाके अधिवासी उंचाईमें युरोपीयकी बराबर निकलते, किन्तु शरीरके सङ्गठनमें नीचे पड़ते हैं। इनके हाथ-पैर बहुत पतले होते हैं। काले लोगोंके पिंडलियां नहीं देख पड़तीं। खोपड़ा अयोग्य रूपसे मोटा पड़ता, किन्तु मस्तिष्कशक्ति न्यून ही निकलती है। शिर लम्बा तथा कुछ सङ्कीर्ण बैठता, मत्था चौड़ा पोछेकी हटा रहता, भुजुटी लटक आती, आंख बड़ी, काली तथा डूबी हुयी होती और नथनोंके पास नाक मोटी एवं बहुत चौड़ी पड़ जाती है। सुंह बड़ा और होंठ मोटा रहता है, किन्तु आगेको वह उभर नहीं आता। दांत बड़े, सफेद और मजबूत होते हैं। नीचेका कला भारी बैठता, गालकी हड्डी कुछ ऊंची लगती और ठुड़ी छोटी रहती है। युरोपीयकी अपेक्षा गर्दन माटी और छोटी निकलेगी। चमड़ेका रङ्ग ताँबे-जैसा और बाल लम्बा तथा काला

पहले पहल जब युरोपीयोंने इस द्वीपको आधि-
 कृत किया था, तब यहांके असभ्य आदिमो देखनेमें

यहाँके मनुष्य साधारणतः मध्यमाकार और वलिष्ठ हैं। अष्ट्रेलियाके अन्तर्गत पापुयाके आदिमियोंके शिरके बाल पशुम जैसे होते, किन्तु अन्यान्य जातियोंके सीधे वा घूँघरवाले रहते हैं। अष्ट्रेलियाके प्रायः सभी पुरुष दाढ़ी मूँछ रखते हैं। इनकी बुद्धि नितान्त मन्द नहीं है। इनकी भाषामें अनेक



अष्ट्रेलियाके स्त्रीपुरुष ।

बातें हैं। किन्तु एक जातीय वस्तुमात्रको समझानेके लिये सामान्य कोई नाम नहीं है। जैसे,—पेड़ कहनेसे हम लोग जड़, धड़, शाखा, पत्तव, पत्र सहित द्रव्यको समझते, उसके बाद एक एक जातीय वृक्षको विशेषरूपसे समझानेके लिये अन्य अन्य शब्द रखते, परन्तु इनकी भाषामें वैसे शब्द नहीं हैं। इसीसे सब चीज़ोंके अलग अलग नाम हैं। संस्कृत भाषाकी तरह इनकी भाषामें भी धातुके अनेक प्रकार रूप होते हैं। क्रियापद, विशेष्य और विशेषणके एकवचन, द्विवचन और बहुवचन ये तीन वचन हैं।

तास्मानियामें अब पहलेके आदिमी नहीं हैं। यहाँकी आदिम असभ्य जाति निर्मूल हो गई है। समस्त अष्ट्रेलियाके आदिम निवासियोंकी संख्या इस समय १८००००से अधिक नहीं है।

अष्ट्रेलियावासियोंका सामाजिक काम पञ्चायत द्वारा चलाया जाता है। प्रवीण मनुष्य ही पञ्चायतके योग्य होते हैं। अन्दामानके आदिमी देहमें गुदना गुदवाते हैं। वही प्रथा यहाँ भी प्रचलित है। ये लोग यौवनावस्थामें गुदना गुदवाते हैं। गुदना गुदवानेके समय पञ्चायती सभा बैठती है। उसके सामने युवकयुवतियोंकी छाती और पीठमें गुदना गौदते हैं।

इन लोगमें ओम्मे रहते हैं। किसीकी मृत्यु होनेपर ओम्मे वहाँ इकट्ठे होते हैं। इकट्ठे होकर लाशसे पूछते हैं,—“तुम क्यों मरे!” मर जानेपर मनुष्य नहीं बोलता, तो भी बुद्धिबलसे ओम्मालोग सब समझ लेते हैं। अन्तमें यही निश्चित होता, कि निकटका कोई शत्रु जादू करके आदिमियोंको मार डालता है। रोगसे आदिमी मरता है, अष्ट्रेलियावाले ऐसा विश्वास नहीं करते। युद्धमें किसीकी मृत्यु हो जानेपर ये लोग उसका मांस खाते और वृक्षकके मेदसे यज्ञ करते हैं। ईश्वर वा देव देवी क्या हैं, सो अष्ट्रेलियावाले नहीं जानते। तब देवता ही कहो चाहे और कुछ कहो, इन लोगोंने इराना समझा, कि एक महाबली पराक्रान्त वृद्ध मनुष्य बहुत समयसे कहीं सो रहा है। उसका शरीर बड़ा भारी और नाम बुझाई है। वह एक हाथपर शिर रखकर सोता, इधर हाथकी कुछनी तक बाल जम गई है। एकदिन उसकी नींद टूटगी, परन्तु कब, सो कुछ ठीक नहीं है। जागकर वह इस समस्त चराचरको खा डालेगा।

अष्ट्रेलियावासी खेती करना नहीं जानते। इनका न तो कोई स्थायी वासस्थान और न पालतू पशु पक्षी ही है। केवल पाले हुए कुत्ते ये रखते हैं। कितने ही अनुमान करते हैं, कि ये लोग अपने पूर्वनिवाससे कुत्तोंको साथ लेते आये थे। अष्ट्रेलियाके कुत्ते भी भों करके भूँकना नहीं जानते। इनकी पूँछें लम्बी और उनमें गौड़दके से बाल होते हैं। कान छोटे और सीधे रहते हैं। इस जातिके कुत्ते यहाँके जङ्गलमें भी पाये जाते हैं। ये बड़े तेजस्वी होते हैं।

अष्ट्रेलियाके असभ्य आदिमियोंके घर नहीं हैं। फिर ये लोग एक जगह रहते भी नहीं। जब जहाँ जाते, तब वहीं पेड़ोंके डाल पत्तेसे भोपड़े बना लेते हैं। ये लोग कुछ भी शिल्पकर्म नहीं जानते। जानवरोंके चमड़े और पेड़ोंके बकले ही इनके परिधेय वस्त्र हैं। बल्लम और जाल शिकारकी चीज़ें हैं। बल्लमके सिरेपर लोहेकी गांसी नहीं रहती; उसकी जगह पत्थर या जानवरकी हड्डी लगती है। पेड़के रेशे और घासफूससे

ये लोग चटायीकी तरह एक प्रकारका कपड़ा बुन लेते हैं। पंख अथवा पशुकी पूंछे इनके शिरके आभूषण हैं। छोटे छोटे शङ्खों और घोंघोंकी ही यह माला है। इनमें किसी किसी जातिके आदमी तरुण होनेपर सामनेके ऊपरवाले दो दांतोंको तोड़ देते हैं। अङ्गकी और और शोभाओंके साथ इन दो दांतोंका न रहना भी एक बड़ी शोभा है। इनका और एक सम्प्रदाय है। उसमें सुन्नतकी रीति प्रचलित है।

बल्लमके सिवा ये लोग दांव और कुदालकी भी काममें लाते हैं। परन्तु ये सब लोहेके अस्त्र नहीं होते; वनैले पशुकी हड्डीसे बनाये जाते हैं। इन्हींसे युद्ध और शिकार होता है। इनके पास और एक विचित्र अस्त्र रहता है, उसका नाम है बुमेराङ्ग। वह एक टेढ़ी लकड़ीकी गांसी होता, परन्तु उसके बनाने का ढङ्ग बड़ा ही विचित्र है। सामने छोड़कर मारनेसे वह फिर पीछे लौट आता है। स्त्रियां मरे हुए जानवरोंके नखों और पेड़ोंके रेशोंसे जाल बुनती हैं। इन जालोंसे ये कङ्कर आदि वनैले पशु और मछलियां वगैरह पकड़ती हैं। समुद्रमें मछली पकड़नेके लिये छोटी नाव या डोंगी रहती है। आजकल असभ्य जातियोंकी संख्या धीरे धीरे कम होती जाती है।

यहांके आदिमियोंके विवाहका कुछ ठीक नहीं है। किसीके एक और किसीके अनेक स्त्री हैं। किन्तु विवाहिता स्त्रियां प्रायः सभी सता होती हैं; तब ऐसा भी नहीं है, कि इनमें कोई असती नहीं निकलती। यदि कभी किसीका चरित्र खराब होता, तो वह जानसे मार डाली जातो है। परन्तु कुमारियों और विधवाओंका चरित्र-दोष उतना गुरतर नहीं समझा जाता। युरोपीयों दुष्टोंने बहुतोंको व्यभिचारिणी बना डाला, इसके लिये बीच बीचमें लड़ाई हो जाती थी।

युरोपीयोंको अष्ट्रेलिया आविष्कार किये तीन सौ वर्षसे कम नहीं हुआ। इसका कुछ ठीक नहीं, पहले पहल यहां कौन आया था। उत्तमाशा अन्तरीप आविष्कृत हुआ, पश्चिममें अमेरिकाके ऊपर

भी सभ्य लोगोंकी दृष्टि पड़ी थी। नये देश, नये द्वीप, ढंढनेके लिये चारो ओर युरोपीयोंके जहाज, छूटे। ऐसा प्रवाद है, १६०६ ई०में तरेन नामक कोई स्पेनवासी पेरूसे अष्ट्रेलिया आया था। उसके बाद यवद्वीपसे डच लोग यहां पहुंचे। १६४२ ई०में तास्मान नामक एक डच अष्ट्रेलियाके नाना स्थानोंको देख गया। उसीके नामके अनुसार अष्ट्रेलियाके दक्षिणकूलवर्ती द्वीपका नाम तास्मानिया हुआ है। १६८६ ई०में अंगरेज लोग पहले पहल यहां आये थे। उसी वर्ष कप्तान विलियम दाम्पियार नामक एक समुद्री डाकू इसके उत्तरपश्चिम किनारे होकर लौट गया। दो वर्षके बाद अष्ट्रेलियाका विशेष अनुसन्धान करनेके लिये अंगरेजोंने दाम्पियारको यहां भेज दिया। १७६८ से १७७७ ई० तक विख्यात नाविक कप्तान कूकने अष्ट्रेलियाकी चारो ओर समुद्रतटको अच्छी तरह देखा था। १७८८ ई०में अंगरेज लोगोंने अष्ट्रेलियाके दक्षिण-पूर्व प्रदेश और निउ-साउथ-वेल्समें अपराधियोंको निर्वासित करना आरम्भ किया। अंगरेज अपराधी जहां आकर रहते थे, उस स्थानका नाम जाचन् बन्दर पड़ा। आजकल वही बन्दर प्रसिद्ध सिडनी नगर हो गया है। १८०३ ई०में वान-दि-मान द्वीपमें भी अपराधी भेजे जाने लगे। कालक्रमसे निर्वासितोंके पुत्रपौत्रादिक स्वाधीन हो गये। वे दुर्बल लोगोंकी सन्तान हैं, यह परिचय देनेमें उन्हें बड़ी छुणा होती थी; इसीसे उन लोगोंने वान-दि-मान द्वीपका नाम तास्मानिया रख दिया। १८२५ ई० तक तास्मानिया निउ-साउथ-वेल्सके अधीन था, उसके बाद पृथक् हो गया।

१८३५ ई०में तास्मानियाके कुछ आदिमियोंने समुद्रकी खाड़ी पार करके निउ-साउथ-वेल्सका दक्षिणी भूभाग अधिकार कर लिया। पहले इस स्थानका नाम फिलिप बन्दर था। अब यह विक्टोरिया नामका एक पृथक् प्रदेश हो गया है। इसके प्रधान नगरका नाम मेलबोरन है। १८२७ ई०में एक अंगरेज वणिक्सम्प्रदायने पश्चिम अष्ट्रेलिया प्रदेश संस्थापित किया था। इसके प्रधान नगरका नाम पार्थ है। दूसरे वणिक्

सम्प्रदायने दक्षिण अष्ट्रेलिया प्रदेश संस्थापित किया, उसके प्रधान नगरको आदिलेद कहते हैं। १८५६ ई० में नव दक्षिण अष्ट्रेलियाका उत्तर भाग पृथक् प्रदेश हो गया। वह अब क्वीन्सलैण्डके नामसे प्रसिद्ध है। त्रिसवेन् उसकी राजधानी है।

इस समय अष्ट्रेलियाके प्रदेश और प्रधान प्रधान नगर यह हैं,—

प्रदेश।	नगर।
क्वीन्सलैण्ड (पहला नाम मोर्तन)	त्रिसवेन, वोथामतन, मेरिबर्ग।
निड-साउथ-वेल्स	सिडनी, पारामित्ता और विन्डशर, लिवरपुल, वाथर्स्ट।
विक्टोरिया	मेलबोरन, गिलड्र, वाह्लारात।
दक्षिण अष्ट्रेलिया ...	आदिलेद।
पश्चिम अष्ट्रेलिया ...	पार्थ, प्रिमान्तल।

पर्वत—नीलपर्वत, लिवरपुल-श्रेणी, अष्ट्रेलियाका अल्प, इसका दूसरा नाम बरगङ्ग पर्वत है; ग्राम्पियन, पिरिनिस, फ़िन्दर्स, टुयाट्श्रेणी, सीलारश्रेणी, विक्टोरिया पर्वत, दार्लिङ्गश्रेणी।

नदयें—हौकेसवरी, हण्टर, डेष्टिङ्गस, त्रिसवेन; मरे और इसकी शाखा—माकोइरि, दार्लिङ्ग, लचलान, मरम्बिजी, टडममेरा, यरयर, सोयान, विक्टोरिया, आलवार्ट, फ़िन्दर्स, गिलवार्ट, मिचेल, ग्रेगरी, लिचहार्ट।

भौल—विक्टोरिया वा अलेक्सन्द्रिया, तोरेन्स, गेयार्दनार, एयार, द्वीप।

अन्तरीप—युक्, मेलबिल्ली, फ़ातारी, सन्दी, हाउ, विलसन, ओतवे, स्नेनसार, चाथाम, लिडविल, उत्तर-पश्चिम-अन्तरीप, देविक, लन्दनदारी, देल।

उपसागरादि—पूर्वमें शेलबोरन, प्रिन्सेस शार्लोतो, हालिफाक्ष, ब्रड साउण्ड, हार्वि, मोर्तन, माकोयारी बन्दर, ऐफेन्स बन्दर, जाचन बन्दर; दक्षिणमें पश्चिम बन्दर, फिलिप बन्दर, पोर्तलेण्ड, एनकाउण्डर, सेण्ट विन्सेण्ट, स्नेन्सार, वृहत् अष्ट्रेलियान बाइट, किङ्ग जार्जका साउण्ड; पश्चिममें—फ़िन्दर्स, जिओ-ग्राफी, फेसिन्तस बन्दर, शाक, एचमाउथ, किङ्ग

साउण्ड, कोलियार, आदमिरालटो, काम्ब्रिज, वान-दिमान, एसिण्टन बन्दर; उत्तरमें—कासलरियाग, आरन्हेम, लेविल्ली, कार्पेन्तारिया।

तात्मानिया प्रदेशके प्रधान नगर होवार्त और लसे-ण्टन हैं।

उपसागर—वृहत् सोयान् बन्दर, एरम, नरफोल्क, इस प्रदेशमें दालरिम्पल बन्दर, देवी बन्दर, माकोयार बन्दर।

अन्तरीप—पिनार, दक्षिण अन्तरीप, दक्षिण-पश्चिम अन्तरीप, सोरेल, पश्चिम पड्डण्ट, ग्रिम।

पर्वत—वेनलोमन्ड, वेलिण्टन, पश्चिमगिरि, काम्फेल श्रेणी, हम्बोल्ट।

नद—दार्विण्ड, तमर, जर्दान।

अष्ट्रेलियाके उत्तर अंशकी बहुतसी ज़मीन खाली पड़ी है, आज भा अच्छी तरह नहीं बसी। एक तो उत्तर अंश यों ही गर्म है, उसपर जलका अभाव, इसीसे युरोपीयोंने वहां उपनिवेश नहीं बनाया। इस द्वीपकी दक्षिण दिशा ही अधिक समृद्धिशालिनी है।

अष्ट्रेलियामें ज्य.आदा ऊँचे पहाड़ नहीं हैं। पश्चिम और पूर्व किनारे दो पर्वतश्रेणियां हैं, उनमें पूर्व ओरकी पर्वतश्रेणी ८५० कोस लम्बी और १५०० फुट ऊँची है। इसके पूर्व किनारेसे अनेक छोटी छोटी नदियां निकली हैं। वे पश्चिम ओर बहती हुई अष्ट्रेलियाके मध्य भौलों और चश्मोंमें जा गिरी हैं। अष्ट्रेलियाका ऐसा आकार देख भूतत्त्वविद् पण्डित अनुमान करते हैं, कि पहले यहां समुद्र था। पीछे समुद्रगर्भमें अग्न्युत्पात हुआ, इसीसे क्रमशः मट्टी उभर आयी है। परन्तु मध्यभागमें अभीतक अच्छी तरह मट्टी नहीं निकली, इसीसे वह स्थान नालों और भौलोंसे भरा हुआ है।

अष्ट्रेलियाका जलवायु शरीरके लिये गुणकर है। परन्तु द्वीप बहुत बड़ा होनेसे सब स्थानोंकी अवस्था एक सी नहीं है। उत्तर और मध्यभाग उष्ण, दक्षिण ओर न अतिशीत न उष्ण है। मध्यभागमें जलका प्रतिशत समान है। गर्मीके दिनोमें वहां ल चलती और भूमि तपकर तवा हो जाती है।

प्रशान्त-महासागरसे जलवाष्प उड़कर आता है, इसीसे उत्तर-पश्चिम ओर वर्षाकाल होता है। यहां वर्षाकाल अग्रहायणसे फाल्गुन तक रहता है। अष्ट्रेलियाकी दक्षिण ओरके समुद्रसे भी जलवाष्प उड़ कर आता है। परन्तु जंघे पहाड़ नहीं हैं, इसीसे वह किसी चीजमें अटक और जम जाता तथा जल नहीं होने पाता। हमारे देशके राजपूतानेमें जिस तरह कभी कभी थोड़ी वर्षा होती, यहां भी उसी तरह पानी बरसता है। दक्षिण अष्ट्रेलियाके आदिलेद नगरमें वृष्टिका परिमाण मैदानपर १५—२० इंचसे अधिक नहीं पड़ता। किन्तु विक्टोरिया और निउ-साउथ-वेल्समें पर्वत हैं, इसीसे वहांकी वृष्टिका परिमाण गढ़में ४४—४८ इंच पड़ता है। क्वीन्सलैण्डमें वृष्टि ५० इंच होती है। फिर उत्तरमें बड़े बड़े पहाड़ हैं, इसीसे वहांका वृष्टि परिमाण प्रायः ८० इंच है।

विक्टोरिया प्रभृति स्थानोंकी ऋतु यों है,—आधे भाद्रसे आधे अग्रहायण तक वसन्त, आधे अग्रहायणसे आधे फाल्गुन तक ग्रीष्म, आधे फाल्गुनसे आधे ज्यैष्ठ तक शरत्, आधे ज्यैष्ठसे आधे भाद्रो तक शीत।

हम लोगोंके देशकी तरह अष्ट्रेलियामें अधिक जीव जन्तु नहीं होते। वहांकी चौपायोंमें कङ्गारू ही प्रधान है। इसके आगेके पैर छोटे और पीछेके बड़े होते हैं। इसीसे दूसरे जन्तुओंकी तरह यह अच्छी तरह दौड़ नहीं सकता, किन्तु इसकी पूंछमें बहुत ताकत रहती है। दौड़नेकी आवश्यकता आ पड़नेपर यह पूंछपर जोर देकर एक एकवार १८।२० हाथ कूद सकता है। यदि कोई घोड़ेपर सवार होकर कङ्गारूका शिकार खेलता, तो वह घोड़ेको टपकर भाग जाता है।

कङ्गारूके पेटके निचले हिस्सेमें एक थैली होती है। छोटे छोटे बच्चे उसी थैलीमें छिपे रहते हैं। थैलीके ऊपर वक्षस्थलमें स्तन निकलता है। भूख लगनेपर बच्चे थैलीमें बैठे ही अनायास दूध पिया करते हैं। दूसरे चौपायोंके पेटमें बच्चे होनेके बाद बच्चेकी नाड़ीके साथ मादेके फूलका संयोग रहता है। उसी फूलका राह माताके शरीरका रस बच्चेके देहमें आता, जिससे वह दृष्टपुष्ट होता है। कङ्गारूमें वह

बात नहीं है। इसके गर्भाशयमें एक थैली रहती है, उसीसे बच्चेके भरण-पोषणका काम चलता है।

अष्ट्रेलियामें और एक प्रकारका जन्तु होता है। इसे एकगुह्य कहते हैं। गोमेषादिके मलमूत्र त्याग करनेके पथ भिन्न भिन्न हैं, परन्तु एकगुह्यमें ऐसा होता। यह पक्षियोंकी तरह एक ही राहसे मलमूत्र त्याग करता है। इसके स्तन नहीं होता। कङ्गारूकी तरह इसके पेटमें भी थैली रहती है। इस थैलीसे आप ही दूध टपक पड़ता है। उसे ही बच्चे पीते हैं। इस द्वीपमें प्रायः ६८० प्रकारके पक्षी हैं। काकातुआ और तोते अनेक रङ्गके हैं। एम्सू नामक एक बड़ा भारो पक्षी है। यह देखनेमें अफ्रीकाके उष्ट्रक पक्षी जैसा ही होता है। इस द्वीपमें ६३ किस्मके सांप हैं। उनमें ४२ किस्मके जहरीले हैं। पांच प्रकारके सांपोंका विष ठीक इस देशके काले जैसा ही मारामक है।

अष्ट्रेलियामें गाय भेड़ आदिके चरने लायक बहुत जमीन खाली पड़ी है। पशुओंके चरने लायक ऐसी भूमि संसारमें और कहीं नहीं है। अंगरेज लोग दूसरे देशोंके जानवरोंको इस द्वीपमें ले आये हैं। भेड़की पैदावार चारो ओर है। प्रति वर्ष यहांसे बहुत सा पशु दूसरे देशोंके भेजा जाता है। भेड़का मांस भी यथेष्ट है। पहले अष्ट्रेलियामें इतना मांस होता, कि खाये न चुकता, बहुतसा नष्ट हो जाता था। अब जहाजमें एक प्रकारको कल बना दी गई है। उसमें कितने ही कमरे उत्तर-मेरु प्रदेश जैसे बहुत ही ठण्डे रहते हैं। उनमें मांस रख देनेसे बहुत दिनोंतक नष्ट नहीं होता। इन्हीं सब कमरोंमें मांस भरकर रोजगारी लोग इङ्गलैण्ड भेज देते हैं, इससे प्रतिवर्ष बहुत लाभ होता है। अष्ट्रेलियाके घोड़ेकी पैदावार भी प्रसिद्ध है। पहले यहां घोड़े न थे। अंगरेजोंने यहां घोड़ा लाकर पैदा करने लगे। अब अष्ट्रेलियासे अनेक स्थानोंको घोड़े भेजे जाते हैं। यहांकी नद-नदियोंमें भी अनेक प्रकारकी मछलियां छोड़ दी गई हैं।

हवादिमें एकात्मितस्व ही प्रधान है। इसके

पत्तेसे काजपूत जैसा एक प्रकारका तेल बनता, जो वातरोगकी दवा है। इस पेड़का गोंद बहुत मंहगा बिकता है। यहां भाजकी पेड़की छालसे चमड़ेमें रङ्ग दिया जाता है। बबूलकी तरह दो किस्मकी पेड़ होते हैं। उनकी छालमें भी खूब रङ्ग रहता है। रङ्गके लिये हरसाल बहुत सी छाल इङ्ग्लैण्ड भेजी जाती है। अब इस द्वीपमें गेहूं, यव, मकई, सरसों, मटर, जख, आलू, नाना प्रकारकी शाकसब्जी और फल खूब पैदा होता है।

अष्ट्रेलियामें सोना, चांदी, तांबा, लोहा, सीसा, कोयला, टीन आदि नाना प्रकारका धातु मिलता है। सोनेके कारण ही यह स्थान इतना समृद्धिशाली है। १८५१ ई०में यहां सोनेकी खानि निकली थी। खानिके निकलते ही लोग अपना अपना काम काज छोड़ सोना लेनेके लिये दौड़े, जिससे कुछ दिनों तक अष्ट्रेलियामें बहुत खलबली रही। १८५१ से १८८० ई०तक सर्वसमेत २८६००००००० रुपयेका सोना निकला था।

अष्ट्रेलिया और नवजीलन्ड अंगरेजोंके उपनिवेश हैं। यहांके आदमी इस देशका शासन आपही करते हैं। इनकी पार्लीमेण्ट सभा है। सभाके सभ्योंको ये लोग आप ही मनोनीत करते हैं। अष्ट्रेलियाके प्रत्येक प्रदेशमें इङ्ग्लैण्डसे शासनकर्ता भेजे जाते हैं। शासनकर्ता महासभाके मत विरुद्ध कोयी काम नहीं कर सकते। राज्यशासनप्रणाली ठीक इङ्ग्लैण्ड ही जैसी है। यहांके प्रत्येक विभागकी सभा पृथक् पृथक् होती है। एक विभागके साथ दूसरे विभागका कोई सम्पर्क नहीं है। इङ्ग्लैण्डके साथ अष्ट्रेलियाका सम्बन्ध केवल नाममात्रका है। इङ्ग्लैण्ड यहांके शासनकर्ता नियुक्त करे, और यदि कोई जाति इस स्थानपर आक्रमण मारे, तो इङ्ग्लैण्ड बचानेको दौड़ेगा। सम्पर्क वस इतना ही है। अष्ट्रेलियाके प्रत्येक विभागमें अपनी सेना थोड़ी ही है। सिवा इसके यहांके सभी आदमी वीर और साहसी हैं। पहले अष्ट्रेलियाका आय कुछ भी न था, परन्तु अब यहांकी अवस्था ऐसी नहीं।

कहते हैं, अष्ट्रेलियाकी भूमि बहुत ही प्राचीन है। इसमें जहाज चलाने योग्य न तो कोई नदी और न भड़कनेवाला आग्नेयगिरि या बरफसे ढंका पर्वत ही विद्यमान है। जिस समय एशिया और युरोप जलमें मग्न था, उस समय भी यहां भूमि वर्तमान रही। यहां बहुत जंचे पर्वत नहीं, चारो ओर मदान-जैसा पड़ा है।

लोकसंख्या—अष्ट्रेलियामें प्रधानतः अंगरेज वंशके ही युरोपीय रहते हैं। अंगरेजोंको छोड़ दूसरे युरोपीय सैकड़े पीछे सवा तीनसे ज्यादा नहीं पड़ते। सन् १८०६ ई०में आदिम अधिवासियोंको छोड़ अष्ट्रेलियाकी लोकसंख्या ४१२०००० रही। सन् १८८१ ई०से दूसरे स्थानके अधिवासियोंका यहां आकर रहना रुक गया था, किन्तु अब कुछ-कुछ फिर जारी हो गया है।

रक्षा—पहले अष्ट्रेलियाकी रक्षा इङ्ग्लैण्ड पर ही निर्भर रही, किन्तु सन् १८८८-१८०२ ई०को बोअर-युद्धमें यहांसे ६३१० स्वेच्छासेवक अश्वारोही जानेपर इस बातकी ओर लोगोंका ध्यान खिंचा। सिडनीमें जहाजोंका बड़ा वेड़ा रहता, जो इस देशके इर्दगिर्द पहरा देता है। अब यहां लोग खूब फौजमें भरती होते हैं। आजकल जो विश्वव्यापी युद्ध चलता, उसमें अष्ट्रेलियाके योद्धाओंनि वीरताके अनोखे उदाहरण देखा जगत्को विस्मित कर दिया है।

शिक्षा—अष्ट्रेलियामें शिक्षाका अधिक प्रचार है। प्रत्येक राज्यके युवकको बलवती शिक्षा दी जाती है। सैकड़े पीछे ८ आदमी अपढ़ हैं। स्कूलमें छात्रको विना मूल्य या नाममात्र मूल्यपर शिक्षा मिलती है। सिडनी, मेलबोर्न, एडीलेड और होवर्टमें अच्छे-अच्छे विश्वविद्यालय वर्तमान हैं।

वाणिज्य-व्यवसाय—कोई सवा दो हजार जहाजोंसे चलता है। जन, चमड़ा, चरवी, मांस, मक्खन, लकड़ी, गेहूं, आटा, फल, सोना, चांदी, जस्ता, तांबा तथा टीन यहांसे बाहर भेजा और कपड़ा, बाफतनी, कल-पुर्जा, लोहा-लङ्गड़, शराब, भड़कनेवाली चीज, थैला, बोरा, किताब, कपड़ा, चाय एवं तेल मंगाया जाता है।

रेलवे—अष्ट्रेलियाकी समग्र रेलवे गवर्नमेण्टने ऋण लेकर बनाई है। कहीं छोटी और कहीं बड़ी रेल चलती है। ऋणपर जितना व्याज देना पड़ता, उससे कुछ अधिक लाभ हो जाता है। डाक और तारका भी खासा प्रबन्ध है।

भूमिका परिमाण	लोकसंख्या
वर्गमील	सन् १८०६ ई०
निच साउथ वेल्स	३१००० १५३००००
विक्टोरिया	७८८४ १२२३०००
दक्षिण-अष्ट्रेलिया	८०३६८० ३८१०००
क्वीन्सलैण्ड	६६८४८७ ५३४०००
पश्चिम-अष्ट्रेलिया	८७५८२० २७००००
तास्मानिया	२६२१५ १८००००
	१८७२८०६
नवगिनी	८००००
	३०६२८०६

अष्ट्रेलेशिया—यह कुछ द्वीपसुख है। नव-गिनी, अष्ट्रेलिया, तास्मानिया, नव-जिलान्द, नव-ब्रिटानिका, सोलेमान द्वीप, नव-हिन्नाइदिस्, नव-कालिदोनिया, लयालटी द्वीप प्रभृति इसके अन्तर्गत हैं। ये सब ५०° दक्षिण अक्षांश एवं ११०° से १८०° पूर्व द्राघि-मांशके मध्यमें अवस्थित हैं। अष्ट्रेलेशिया शब्दका अर्थ है—‘दक्षिण एशिया सम्बन्धी’ ऐसा नाम देनेका कारण यही है, ये सब द्वीप एशियाके दक्षिण प्रशान्त महासागरमें हैं।

अष्टि, अष्टि देखो।

अष्टिला, अष्टिला देखो।

अष्टिवत्, अष्टिवत् देखो।

अष्टीला (सं० स्त्री०) अष्टिसदृशं कठिनाश्मानं राति-र-क रस्य लकारः दीर्घः। १ गुल्मरोग विशेष, लरक अटथी, किसी किस्मका फोड़ा। अष्टीला प्रायः हथौड़ी-जैसी होती और नाभिसे नीचे निकलती है। इसकी गांठ कड़ी रहती है। यह कठिन पदार्थ किसी-किसीके पेटमें घूमता फिरता और किसीके पेटमें टिका रहता है। इसकी ऊपरी ओर लम्बी रहती और टेढ़ेपरसे किञ्चित् उन्नत हो जाती है। इसकी चिकित्सा गुल्मरोग जैसी ही है।

२ वायुरोग विशेष, बातकी कोई बीमारी। ३ वर्तुलाकार पाषाणखण्ड, गोल पत्थरका टुकड़ा। ४ फलवीजगर्भ, नाक, बीचका हिस्सा। ५ अंठली, गुठली। ६ आघात, जख्म।

अष्टीलिका, अष्टीला देखो।

अष्टीवत् (पु० स्त्री०) नास्ति अतिशयितमस्ति यस्मिन्, मतुप् पृथो० निपातनात् सिद्धः। १ जानु, घुटना।

२ शूकरोग विशेष, लिङ्ग बढ़ जानेकी बीमारी।

अष्टीवान्, अष्टीवत् देखो।

अस (हिं० सर्व०) ऐसा, यह।

“अस विचारि जिय जालहु ताता।

मिलहि न जगत सहोदर बाता ॥” (तुलसी)

(वि०) २ ऐसा, इस प्रकारका।

“अस विचार जिनके मन माहीं।

चाप समीप मझीप न जाहीं ॥” (तुलसी)

असंक्लिन्न (सं० त्रि०) सम्यक् आर्द्र न होनेवाला, जो अच्छीतरह भीगा न हो।

असंज्ञा (सं० स्त्री०) नञ्-तत्। १ संज्ञाका अभाव, होशकी अदममौजूदगी, बेहोशी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ संज्ञाशून्य, ज्ञानरहित, जो इशारा कर न सकता हो।

असंयत् (त्रे० त्रि०) हृदयमें न चुभनेवाला, जो अच्छा न लगता हो।

असंयत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अवद्ध, बन्धनशून्य, जो बंधा न हो।

असंयतात्मन् (सं० त्रि०) अवबद्धहृदय, जिसके काबूमें रह न रहे।

असंयत्त (वै० त्रि०) स्थिरभावापन्न, जो चबराया न हो।

असंयुक्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। वियुक्त, जुदा, जो मिला न हो।

असंयुत, असंयुक्त देखो।

असंयोग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ संयोगका अभाव, विलानकी अदममौजूदगी, मिलका न होना।

(त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ संयोगशून्य, जुदा, जो

असंरुद्ध (सं० त्रि०) बन्धनशून्य, बेरोक, जो घिरा न हो।

असंलग्न (सं० त्रि०) नञ्-तत्। विभक्त, असम्बद्ध, अलग, वेसिलसिला, जो ठीक न बैठे हो।

असंवत्सरभूत (वै० त्रि०) पूर्ण वत्सर न रखा हुआ, जो पूरे साल रहा न हो। यह शब्द पवित्र अग्निका विशेषण है।

असंवत्सरभृतिन् (वै० त्रि०) पूर्ण वत्सर (पवित्र अग्निको) न रखनेवाला, जो पूरे साल (आतिथ्य पाक) न रखता हो।

असंविदान (सं० त्रि०) अज्ञान, मूर्ख, नासमझ, गंवार। २ असंप्रज्ञ, जो होनहार न हो।

असंवृत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ अनावृत, जो ढंका न हो। २ ईषदावृत, जो अच्छीतरह ढंका न हो।

असंव्यवहित (सं० अव्य०) १ भटित्, फौरन्। २ अविलम्ब, समयपर।

असंशय (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सन्देहका अभाव, शकको अदममौजूदगी, खटकीका न रहना। (त्रि०) नास्ति संशयो यत्र, नञ्-बहुव्री०। २ सन्देह-शून्य, वैशक, जिसे खटका न रहे। (अव्य०) निःसन्देह, बिलांशक।

असंश्रव (सं० चि०) नास्ति संश्रवः सम्यक् श्रवणं यत्र, बहुव्री०। १ संश्रवसे हीन, जो सुन न पड़ता हो। (पु०) २ संश्रवहीन अस्तित्व, जिस हालतमें सुन न सके। ३ दूरदेश, जो बात सुन न पड़ती हो। (अव्य०) ४ वेसुने, कानमें न पड़नेसे।

असंश्राव्य (सं० अव्य०) वेसुने, सुनाई न देनेसे।

असंक्षिप्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ विभक्त, संश्लेष-शून्य, असङ्गत, छुदा, लगाव न रखनेवाला, जो वाजिव न हो। (पु०) २ सबसे पृथक् रहनेवाले महादेव।

असंसक्त (सं० त्रि०) पृथक्, असंयुत, विभक्त, निरीह, छुदा, लापरवा, जो अलग हो।

असंसर्ग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ संसर्गका अभाव, साथका न होना। (चि०) नञ्-बहुव्री०। २ सम्बन्धशून्य, मेलसे खाली।

असंसर्गाग्रह (सं० पु०) असंसर्गस्य परस्परसम्बन्धाभावस्य अग्रहः। मीमांसककी मतानुसार ज्ञानद्वयके परस्पर सम्बन्धाभावका बोध न होना। यथा,—यह रजत है।

असंसक्ति (सं० स्त्री०) संसर्गका अभाव, निरीहता, अलाहदगी, लापरवाई, लगाव न रहनेकी हालत।

असंसारो (सं० त्रि०) अलौकिक, अद्भुत, निरीह, निश्चिह्न, अनोखा, निराला, जो दुनियासे दूर रहता हो।

असंसिद्ध (सं० त्रि०) अपूर्ण, अक्षत, नातमाम, जो पूरे न पड़ा हो।

असंसृक्तगिल (वै० त्रि०) समूचा निगलजानेवाला, जो बेचबाये लील जाता हो। रुद्रकी श्वान्की स्तुति इस शब्दसे की जाती है।

असंसृति (सं० स्त्री०) जीवनकी नव मार्ग, प्रत्या-गमनका अभाव, परमात्मामें लय जिन्दगीकी नयी चालका न पकड़ना।

असंसृष्ट (सं० त्रि०) नञ्-तत्। संसर्गरहित, छुदा, जो किसौकी साथ न रहे।

असंस्कृत (सं० त्रि०) १ गर्भाधानादि संस्काररहित, जिसका गर्भाधानादि संस्कार न हुआ हो। २ अपरिष्कृत, जो साफ न किया गया हो। (पु०) ३ अप-शब्द, खराब बात।

असंस्तुत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ अपरिचित, जिससे परिचय अर्थात् जान पहचान न हो। ३ उत्तम रूपसे जिसकी स्तुति कौ न गयी हो।

असंस्थान (सं० स्त्री०) १ संस्थानका अभाव, इत्ति-सालती, अदममौजूदगी। २ विप्लव, बेतरतीबी। ३ राहित्य, न्यूनता, कमी।

असंस्थित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ परलोक न गया हुआ, जो इसी लोकमें हो। २ चञ्चल, चुलबुला।

असंस्थिति (सं० स्त्री०) १ विप्लव, बेतरतीबी। न्यूनता, कमी।

असंहत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ एकत्र न रहनेवाला, जो इकट्ठा न हो। २ असंलग्न, जो लगा न हो।

असंहार्य (सं० पु०) उहण्ड, प्रचण्ड, नाकाबिल-
मुकाबिला, जो मारा जा न सकता हो।

असंहित (सं० त्रि०) वेदकी संहितामें सम्मिलित
न होनेवाला, जो संहितामें न हो।

असक्ताना (हिं० क्रि०) ऐंड़ाना, जंभाई लेना,
जंघना, हिचकना, आलस्य या सुस्तीमें पड़ना।

असक्ताना (हिं० पु०) यन्त्रविशेष, एक औजार।
इसे अङ्गुलद्वय विस्तृत और यव परिमित घन लोहेसे
बनाते हैं। देखनेमें यह रीति-जैसा खुरखुरा होता
और तलवारकी म्यानकी भीतरी लकड़ी साफ करनेमें
काम आता है।

असकल (सं० त्रि०) असम्पूर्ण, अधूरा, जो पूरा
न हो।

असक्त (सं० अव्य०) नञ्-तत्। पौनःपुन्य, वार-
म्बार, अनेक बार।

असक्तससाधि (सं० पु०) आवृत्त ध्यान, आवर्तित
भावना, बारबार चित्तको ईश्वरमें लय करना।

असक्तदुर्गमवास (सं० पु०) आवृत्त जन्म, बारबार
की पैदायश।

असक्त (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ शक्तिशून्य, जिसे
ताकत न रहे। २ सङ्गशून्य, निराला, साथ न रहने-
वाला। ३ फलाभिलाषशून्य, लापरवा, जिसे किसीकी
चाह न रहे।

असक्त्य, असक्त्यि (सं० त्रि०) नास्ति सक्त्यि यस्य,
वा षच् समा०। बङ्गरीही सक्त्यन्तोः स्नातृत् षच्। पा ५।४।११३।
ऊरुशून्य, बेजानू, जिसकी जांच न रहे।

असक्त (वै० त्रि०) १ बराबर बहनेवाला, जो सूखता
न हो। २ दूसरी जगह न जानेवाला।

असक्ता (वै० स्त्री०) सम्-क्रम-विट् पृषो० समो
ऽन्तलोपः, नञ्-तत्। अप्राप्तपूर्वा, जो पहले न
मिली हो। 'विश्वं न इषं पितृमसकां।' ऋक् ६।६३.८। 'असक्ता ता
यावज्जीवमनपायिनीमसक्तं सजातेरप्राप्तपूर्वामित्यर्थः।' (देवराज) 'अस-
क्रामसंक्रमणौ।' निरु० ६।२८।

असखि (सं० पु०) न सखा, न टच् समा०।
वन्धु न होनेवाला, जो मित्र न हो, शत्रु।

असखिन, असखि देखो।

असगंध (हिं० पु०) अश्वगन्धा, एक पेड़। यह सीधी
भाड़ी-जैसा होता है। इसका फल छोटा और गोल
रहता है। इसको मोटी जड़ दवाके लिये बाजारमें
बिकती है। अश्वगन्धा देखो।

असगोत्र (सं० त्रि०) न समानं गोत्रमस्य, वा समा-
नस्य सः। भिन्नगोत्र, जो एकगोत्रका न हो।

असगुन, अशगुन देखो।

असङ्कल्प (सं० पु०) विरोधे नञ्-तत्। १ सङ्कल्पका
अभाव, पेशवन्दीकी अदममौजूदगी। नञ्-बहुव्री०।
२ सङ्कल्पशून्य, जो पेशवन्द न हो।

असङ्कल्पत् (सं० त्रि०) सङ्कल्प किया न हुआ, जो
पहलेसे ठीक न ठहरा हो।

असङ्कसुक (सं० त्रि०) नञ्-तत्। स्थिरमान, जो
ठहरा हो।

असङ्कीर्ण (सं० त्रि०) १ विशुद्ध, एकत्र न किया
हुआ, खालिस, वेमेल। परस्पर विरुद्ध।

असङ्कुल (त्रि०) एक दूसरेसे न मिलनेवाला, खुला।
(पु०) १ विस्तीर्ण पथ, खुली रहा।

असङ्केत (सं० त्रि०) स्थिर न किया हुआ, जो माना
न गया हो।

असङ्केतित (सं० त्रि०) अनिमन्त्रित, जो बुलाया न
गया हो।

असङ्क्रान्तमास (सं० पु०) नञ्-तत्। शुक्लप्रति-
पदादि दर्शान्त चान्द्रमासके मध्य सूर्यकी संक्रमण-
शून्य, मलमास, अधिकमास।

असङ्क्षेप (सं० पु०) नञ्-तत्। संक्षेप न होनेवाला,
जो घटा न हो।

असङ्ग्र (सं० त्रि०) न संख्यम्, नञ्-तत्। १ असंख्य-
नीय, अगणनीय, जिसे गिन न सकें। २ न विद्यते
संख्या यस्य, बहुव्री०। ३ इयत्ताशून्य, वैशुमार। (पु०)
४ विष्णु।

असङ्ग्रता (सं० स्त्री०) आनन्त्य, अमितता, वैदन्ति-
हार्द।

असंख्यात (सं० त्रि०) इयत्ताशून्य, अनेक, बहुत,
वैशुमार।

असंख्येय (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ जिसकी

संख्या की जा न सके, वैशुमार। (पु०) २ शिव।
(वै० स्त्री०) ३ अगणित संख्या, बहुत बड़ी अदत्त।

४ असंख्य समारोह, वैशुमार भीड़।

असंख्येयगुण (सं० त्रि०) अगणित, वैशुमार, जो गिना न जाये।

असंख्येयता (सं० स्त्री०) आनन्त्य, अपरिमाणत्व, वेदन्तिहार्द।

असङ्ग (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्बन्धका अभाव, लगावका न रहना। २ युयुधानके पुत्रविशेष। नञ्-बहुव्री०। ३ सम्बन्धशून्य, किसीसे वास्ता न रखनेवाला, न्यारा। पृथक्, जुदा, अलग।

असङ्ग—एक महायानी बौद्ध और बौद्ध तन्त्रपद्धतिके प्रतिष्ठाता। सङ्गभद्रके शिष्य पहले यह महीशासक और पेशावरके प्रसिद्ध तपस्वी थे। सन् ई०के ६ठे शताब्दमें इन्होंने अपने धर्मका मूलग्रन्थ 'योगाचारभूमिशास्त्र' लिखा। चौनपरिव्राजक यूअन चुअङ्गने ७वें शताब्दके आदिमें पेशावर जाके देखा, कि इनका मठ टूटा पड़ा था। असङ्गने भूतप्रेतोंको बुद्ध और अवलोकितेश्वरका पूजक बता अपने मतावलम्बियों और बौद्धोंकी भगड़ा मिटाया। किन्तु इनके अनुयायी बौद्ध धर्मसे कोई सम्बन्ध न रखते और दिन रात यन्त्र मन्त्र तन्त्र द्वारा सिद्धि ढंढनेमें लगे रहते थे। तन्त्रपद्धति प्रचलित होनेसे बौद्ध मतका ज्ञास हुआ और ध्यानी त्रिमूर्तियों एवं तान्त्रिक देवताओंकी प्रतिमा मठों तथा मन्दिरोंमें विराजने लगी। स्थिरमति, दिङ्नाग और धर्मकीर्ति असङ्गके शिष्य रहे। बुद्धकी मृत्युके ८०० वर्ष पीछे इनका जन्म हुआ था। सन् ई०के ६ठे शताब्द विक्रमादित्य शिलादित्यके समय असङ्ग और इसका कनिष्ठ सहोदर वसुबन्धुके आश्रयसे बौद्ध साहित्य फिर चमक उठा। असङ्ग योगाचारके प्रधान अध्यापक रहे। इन्होंने बहुत दिनतक अयोध्यामें रहे, अन्तमें मगधके राजगृहमें देह रक्षा किये थे।

असङ्गत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। असंयुक्त। असम्बन्ध। अन्याय, अनुचित, अयुक्त, बे ठीक। असङ्गत वाक्य, जिस वाक्यमें परस्पर बात न मिले। असङ्गत वाद्य, जिस वाद्यमें गानेके साथ वाद्य न मिले।

असङ्गति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। सङ्गतिका अभाव, साथका न होना।

असङ्गम (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सङ्गमका अभाव, मिलनका न होना। (त्रि०) नास्ति सङ्गमो यस्य, नञ्-बहुव्री०। सङ्गमशून्य, मिलनरहित, जो किसीसे मिलता न हो।

असङ्गवत् (सं० त्रि०) असंयुक्त, जो लगा न हो।

असङ्गिन् (सं० त्रि०) सञ्ज्ञ-घिनुण् यस्य गत्वम् नञ्-तत्। सम्बन्धशून्य, जो लगा न हो।

असचक्षिष् (वै० त्रि०) १ अपनी पूजा न करनेवालोंको अपराधी बनाता हुआ, जो अपने दुश्मनोंपर इलजाम लगाता हो। २ शत्रुशून्य, जिसके दुश्मन न रहे।

असच्छाखा (सं० स्त्री०) कल्पित शाखा, मसनयी शाख, जो डाल सच्ची न हो।

असच्छास्त्र (सं० स्त्री०) असत् असद्विषयकत्वेन अनिष्ट-प्रयोजकं शास्त्रम्, कर्मधा०। हिन्दुमतमें बौद्धशास्त्र। इससे केवल असदर्थ ही प्रतिपादित हुआ है। अतएव यह वैदिक कर्मके विरुद्ध है और इसीसे इसका नाम असच्छास्त्र हुआ है।

असज्जन (सं० पु०) विरोधे नञ्-तत्। सज्जन न होनेवाला, जो सज्जन न हो। दुर्जन, खराब आदमी।

असज्जितात्मन् (सं० त्रि०) निरीह आत्मा रखनेवाला, जिसके रूहमें लगाव न रहे।

असद्विया (हिं० पु०) सर्पविशेष, पनिका सांप। इसकी आकृति लम्बी और पीठ चित्तीदार होती है। यह विषाक्त नहीं ठहरता।

असण (हिं० पु०) गर्त, गड्ढा।

असत् (सं० त्रि०) अस्-शब्द अकारलोपः, ततो नञ्-तत्। १ सत् न होनेवाला, मसनूयी, जो सच्चा न हो। २ असाधु खराब। ३ निन्दित, बदनाम। ४ दुष्टाचार, बदमाश। ५ अविव्यमान, जो हाजिर न हो। ६ अकिञ्चित्कर, नाचीज। ७ अव्यक्त, पोथीदा। ८ अनित्य, जो टिकता न हो। ९ निरुपाख्य निःस्वरूप निषेधरूपसे प्रतीयमान अभावत्वा-य (अभाव)। १० ब्रह्मभिन्न। ११ जड़, बेहरकता।

१२ अश्वहासे किया जानेवाला, जो दिलसे न हो।
१३ निष्फल, बेफायदा। (पु०) न चिरं सन् विद्यमानः। १४ इन्द्र। एक इन्द्र चिरकाल नहीं रहते, इसीसे उन्हें असत् कहते हैं।

असत्कर्म (हिं०) असत्कर्मन् देखो।

असतायी (सं० स्त्री०) पापकर्म, दुराचार, इजाब, बदमाशी।

असतो (सं० स्त्री०) व्यभिचारणी, नापाकदामन, जो औरत बिगड़ गयी हो।

असतीसुत (सं० पु०) जारज, दासीपुत्र, नुफ्फे-राम, दोगला, जो बिगड़ी औरतका लड़का हो।

असत्कर्मन् (सं० स्त्री०) असत् तत् कर्म चेति, कर्मधा०। १ वेदादि निषिद्ध कर्म, बुरा काम। (त्रि०) नास्ति सत्कर्म यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ साधु आचार-शून्य, भला काम न करनेवाला।

असत्कर्मा (सं० स्त्री०) असत्कर्मन् टाप्। असाध्वी, कुलटा, नापाकदामन औरत।

असत्कल्पना (सं० स्त्री०) १ असत्यकर्म, झूठा काम, जो बात कभी न हो।

असत्कार (सं० पु०) १ अपमान, बेइज्जती। २ अपराध, जुर्म, जिस बातसे नुकसान पहुँचे।

असत्कृत (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अनादृत, आदर न पाये हुआ। २ बुरे तौरसे किया हुआ, जो अच्छी-तरह किया न गया हो।

असत्कृत्य (सं० त्रि०) पापकर्मा, बुरा काम करनेवाला।

असत्ख्याति (सं० स्त्री०) असतः सत्वशून्यस्य अनिर्वचनीयस्य ख्यातिर्ज्ञानम्, ६-तत्। अनिर्वचनीयरजत प्रपञ्चका ज्ञान। जैसे सीपमें रजतज्ञान अनिर्वचनीय रूपसे उत्पन्न होता है। एवं परमब्रह्ममें जैसे जगत् अनिर्वचनीय रूपसे प्रतीयमान है। यह वेदान्तियोंका मत है। 'यह रजत है' ऐसा ज्ञान सभी लोगोंमें प्रसिद्ध और सभी लोगोंको स्वीकार्य है। अथच वह प्रकृत ज्ञान नहीं है। यह चार तरहका होता है—१ अख्याति, २ अन्यथाख्याति, ३ आत्मख्याति, ४ असत्ख्याति।

असत्ता (सं० स्त्री०) असतो भावः भावे तल्-टाप्।

१ अविद्यमानता, न रहनेकी हालत, अनस्तित्व, नेस्ती। २ असाधुत्व, बदमाशी। ३ अव्यक्तता, नारास्ती, साफ् न मालूम पड़नेकी हालत।

असत्त्व (सं० स्त्री०) सतो भावः भावे त्व नञ्-तत्।

१ अविद्यमानत्व, नेस्ती। २ अव्यक्तत्व, नारास्ती। ३ असाधुत्व, बदमाशी। सत्त्वं द्रव्यं नञ्-तत्। ४ द्रव्य न होनेवाला, जो द्रव्य न हो, क्रिया। सत्त्वं प्रका-

शादि सम्पादकं प्रकृतेर्गुणभेदः ततो नञ्-तत्।

५ रजोगुण। ६ तमोगुण। सत्त्वं जन्तुमात्रं नञ्-तत्। ७ जो जन्तु न हो। (त्रि०) नास्ति सत्त्वं जन्तुर्यत्र,

नञ्-बहुव्री०। ८ जन्तुशून्य, जिस जगह जीव न हो। सत्त्वं सात्विकः गुणभेदः, नञ्-बहुव्री०। ९ सात्विक

गुणरहित, जिसमें सात्विक गुण न हो। १० तामसिक गुणादियुक्त, क्रोधी, तामसी। सत्त्वमर्थक्रिया-

कारित्वम्, नञ्-तत्। ११ प्रयोजनके अनुपयुक्त, कार्यके अयोग्य, जो कामके लायक न हो, बेकाम।

१२ निर्बल, कमजोर।

असत्पथ (सं० पु०) सन् पन्थाः ऋक् पूरवृषः पथामानवे।

पा ५।४।७४। इति अः सत्पथः ततो नञ्-तत्। १ शास्त्रादि निषिद्ध कार्यादि, जिस कार्यके लिये शास्त्रमें निषेध

रहे। २ मन्दपथ, खराब राह, कुपथ, कापथ, व्यध्व, दुरध्व, अपथ, कदध्वा, विपथ, कुत्सित्वर्त्म।

असत्परिग्रह (सं० पु०) परिग्रह्यते, परिग्रह—

(यद्वद्वदितिगमच। पा ३।३।५८) इति कर्मणि अप् परिग्रहः परिजनादिः, ततो नञ्-तत्। "परिग्रहः परिग्रहे पद्मां

स्वीकारमूल्ययोः।" (विच) १ असत् परिवार, दुष्टपत्नी, बुरे बाल-बच्चे। २ मन्दपक्षका अवलम्बन, बुरी राहका पकड़ना। ३ अनुचितमूल्य, गैरवाजिब कीमत।

(त्रि०) नास्ति सत् परिग्रहो यस्य, नञ्-बहुव्री०। ४ सत्परिवारशून्य, जिसके अच्छा परिवार न रहे।

५ सत्पत्नीरहित, जिसके भली औरत न रहे। ६ असत्पक्षाश्रित, जो बुरी राहपर हो। ७ अन्याय मूल्ययुक्त, जो गैरवाजिब दाम ले चुका हो।

असत्पुत्र (सं० पु०) १ निःसन्तान पुरुष, जिसके औलाद न रहे। २ दुष्ट पुत्र, बदमाश लड़का।

असत्प्रतिग्रह (सं० पु०) असतः निषिद्धस्य तिलादेः असदभ्योशुद्धादिभ्यो वा प्रतिग्रहः। १ निषिद्ध द्रव्य ग्रहण, न कूने लायक चीज लेना, शास्त्रमें लेनेको मना किया हुआ द्रव्य लेना। जैसे—तिल, उभयमुखी गौ, प्रेतान्न, चण्डालादिका अन्न। २ असत्पात्रसे ब्राह्मण द्वारा दान ग्रहण, जो दान ब्राह्मण बुरे लोगोंसे लेता हो।

असत्प्रतिग्राही (सं० पु०) असत्पात्रसे दान लेनेवाला, जो बुरे लोगोंसे बख्शिश पाता हो।

असत्य (सं० स्त्री०) न सत्यं विरोधे नञ्-तत्।

१ मिथ्या, झूठ, जो सत्य न हो। २ मिथ्यावाक्यादि, झूठ बात। (त्रि०) ३ मिथ्यावादी, झूठ बोलनेवाला। सौपमें रजत ज्ञान प्रभृति मिथ्याज्ञान है। त्रैकालिक बाधशून्य ही सत्य उससे खाली असत्य है। (स्त्री०) टापू, असत्या—संयु प्रजापतिकी एक भार्या।

असत्यता (सं० स्त्री०) मिथ्यात्व, नारास्ती, झूठापन।

असत्यवाद (सं० पु०) मिथ्यावाद, झूठ बात।

असत्यवादिन् (सं० त्रि०) झूठा, झूठ भाड़नेवाला।

असत्यवादी, असत्यवादिन् देखो।

असत्यसन्ध (सं० त्रि०) असत्ये मिथ्याभूते सन्धा अभिसन्धानं यस्य, गोस्त्रियो रूपसर्जनस्य इति ऋक्स, बहुव्री०। १ मिथ्या अभिसन्धियुक्त, झूठी प्रतिज्ञा करनेवाला। २ विश्वासघातक, दगाबाज। ३ नीच, कमीना। ४ अन्यरूपमें स्थित, बनावटी। ५ आत्माके अन्यरूप अभिमानसे युक्त, जो रूहको कुछ और समझता हो। जैसे—असत्यदेहादिमें आत्माभिमान असत्यसन्धा होता, तद्विशिष्ट ही असत्यसन्ध कहा जाता है। छान्दोग्य उपनिषद्में यही आत्माभिमान जिस अनर्थका हेतु होता, वह दृष्टान्तके सहित प्रकाशित किया गया है।

असत्संसर्ग (सं० पु०) दुष्टसङ्ग, बुरी सोहबत।

असत्सङ्ग (सं० त्रि०) कुसङ्गमें पड़ा हुआ, जो बुरेसे लगा हो।

असथन (हिं० पु०) जायफल। यह शब्द डिङ्गल भाषासे लिया गया है।

असद—(मिर्जा असद-उल्ला खां) एक विख्यात मुसल-

मान कवि। इनका जन्म आगरामें हुआ था। दिल्लीके शेष बादशाह बहादुर शाहने इन्हें नवाबकी उपाधि दी। यह फारसी और उर्दू भाषामें बहुत कविता कर गये हैं। मृत्युसे कुछ पहले इन्होंने भारतवर्षके मोगल बादशाहोंका इतिहास लिखना आरम्भ किया था। सन् १८५२ ई०की ६० वर्षकी उम्रमें इनकी मृत्यु हुई। इनके 'इन्षा' काव्यका मुसलमानोंमें बहुत आदर होता है। इनका साधारण नाम मिर्जा नौशा था।

असद खां—तुर्कीवंशीय एक सम्भ्रान्त व्यक्ति। इनके पिता ईरानराज शाह अब्बासके अत्याचारसे उकता जन्मस्थान छोड़कर भारतवर्ष चले आये थे। यहां नरजहांकी एक कुटुम्ब-कन्याके साथ उनका विवाह और उसीके गर्भसे असदका जन्म हुआ। सम्राट् जहांगीरने असदके पिताको जुलफिकार खांकी उपाधि प्रदान की। लड़कपनमें असदको लोग इब्राहीम कहकर पुकारते और शाहजहां बहुत प्यार करते थे। उन्होंने आसफ् खां नामक वज्जैरकी लड़कीसे व्याह इन्हें दूसरे बख्शोंके पदपर नियुक्त कर दिया। १६७१ ई०को असद खां चारहजारी मनसबदार हो गये और कुछ ही दिनोंके बाद सातहजारी वज्जैरका महासम्मान लाभ किया। बहादुरशाहके राजत्वकालमें वकील मुतलकका पद इन्हें मिला। उसी समय इनके पुत्रने भी अमीर-उल-उमरा जुलफिकार खांकी उपाधि पाई। फरख-सियारके बादशाह होनेपर असद पदच्युत एवं अपमानित हुए। इनका लड़का भी मारा गया था। उसी समयसे इन्होंने कैदखानेकी सामान्य अवस्थामें अपने दिन बिताये। १७७१ ई०को ८० वर्षकी उम्रमें असदकी मृत्यु हुई।

२ दूसरे भी एक असद खांका नाम पाया जाता है। इनका असल नाम खुशरू था। बङ्गालसे जा और विश्वासघात कर इन्होंने मल्लिकार्जुनपर आक्रमण किया और उनके १०४ मन्दिरोंको तोड़ फोड़कर उसी जगह मसजिद बनवा दी। आदिलशाहने इन्हें सासुरगाम और तेलगाम दो स्थान जागीर दिये थे।

असदध्येतृ (सं० पु०) असत् निन्दितं निषिद्धं वा अधीते, असत्-अधि-इङ्-टच्। निन्दित शास्त्र अध्ययनकर्ता, असदध्ययनशाली, वेदकी निज शाखा छोड़ अन्यशाखा पढ़नेमें अम उठानेवाला, जो खराब किताब पढ़ता हो। काखशाखाध्ययनकारी व्यक्ति कौथुमी शाखा पढ़नेसे असदध्येता या शाखारण्ड कहाता है।

असदाचार (सं० पु०) न सदाचारः, अभावे नञ्-तत्। १ सुन्दर आचारका अभाव, बदचलनी, बुरी चाल। (त्रि०) नास्ति सदाचारो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ सदाचारशून्य, बदचलन, जो अच्छी चाल चलता न हो।

असदाचारिन् (सं० त्रि०) सदाचारशून्य, बदचलन, बुरा, खराब। (स्त्री०) असदाचारिणी।

असदि तूसी—एक विख्यात मुसलमान कवि। यह गज़नीके सुलतान महमूदकी सभामें रहते और प्रसिद्ध कवि फ़िरदौसीके गुरु थे। सुलतान महमूदने इन्हें शाहनामा लिखनेके लिये कहा, परन्तु बुढ़ापेके कारण यह लिखनेपर राजी न हुए; तब फ़िरदौसीने शाहनामा लिखा और गज़नीसे जानेके समय उसका अवशिष्ट अंश लिखनेके लिये इनसे अनुरोध किया। अरब द्वारा ईरान जयसे लेकर असदिने शेषतक शाहनामा लिख दिया। इसके सिवा इन्होंने फ़ारसीमें और भी कई पुस्तक लिखे थे।

असदृश (सं० त्रि०) न सदृशम्, नञ्-तत्। अयुक्तरूप, अननुरूप, असमान, नाहमवार, वैमिसाल, जो मिलता न हो।

असदृशव्यवहारिन् (सं० त्रि०) अयुक्तरूपसे व्यवहार करनेवाला, जो ठीक तौरसे पेश न आता हो।

असदृग्रह (सं० पु०) असति अविद्यमाने वस्तुनि आग्रहः, ७-तत्। १ दुष्ट व्याज, बुरी चालाकी। २ चापल्य, मनोलील्य, तलव्वन मिजाजी, छिछोरापन। ३-तत्। ३ मिथ्याज्ञान, झूठी समझ। ४ शुक्तिमें रजतज्ञान, रस्सीको सांघ समझना।

असदृग्रहिन् (सं० त्रि०) दुष्ट व्याज बढ़ानेवाला, जो मरदूद फ़रेव फैलाता हो।

असदृग्राह, असदृग्रे देखो।

असदृग् (सं० त्रि०) विक्षत चक्षुर्विशिष्ट, बुरी आंखवाला।

असद्वेतु (सं० पु०) सन् व्यभिचारादि दोषरहितो हेतुः सद्वेतुः, विरोधे नञ्-तत्। न्यायशास्त्रप्रसिद्ध व्यभिचारादि दोषयुक्त हेतु, झूठा सबब, जो सुवृत्त सच्चा न हो। जैसे—धमवान् वक्त्रिः, वक्त्रिहेतुक धूमविशिष्ट अर्थात् जहां अग्नि वहां धम भौ रहता है। न्यायशास्त्रके मतसे यह असद्वेतु कारण है। क्योंकि तपाये हुये लोहेमें आग रहते भौ धुआं देख नहीं पड़ता। न्यायमतसे हेतुदोष पांच प्रकारका होता है। यथा,—१ अनैकान्त, २ विरुद्ध, ३ असिद्ध, ४ कालात्ययोपदिष्ट, ५ ह्यत्वाभास।

असद्यस् (वं० अव्य०) न उसो दिन, न फौरन्, दूसरे दिन, देरसे।

असद्ववाद (सं० पु०) अनुपयुक्त सम्भाषण, जटपटांग बातचीत। किसी प्रकारकी सत्ताको खीकार न करना असद्ववाद कहाता है।

असद्भाव (सं० पु०) सतो विद्यमानस्य भावः अभावे नञ्-तत्। १ अविद्यमान पदार्थमें विद्यमान अभिप्राय, न होनेवाली चीज़को मान लेना। विरोधे नञ्-तत्। २ दुष्ट अभिप्राय, बुरा मतलब। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ दुष्ट अभिप्राययुक्त, जो बुरा मतलब रखता हो। चलित भाषामें अप्रणयकी असद्भाव कहते हैं।

असद्वृत्ति (सं० स्त्री०) सती वेदादिरहिता वृत्तिः स्वभावः व्यवहारः वर्तनं विवरणं वा, अभावे नञ्-तत्। १ मन्दस्वभाव, बुरा मिजाज। २ सदाचारका अभाव, नेकचलनकी अदममौजूदगी। ३ सद्व्यवहारका अभाव, अच्छोतरह पेश न आनेकी हालत। ४ असज्जीविका, बुरी या झूठी रोज़ी। ५ मिथ्या विवरण, जो बयान् ठीक न हो। विरोधे नञ्-तत्। ६ निषिद्ध आचारादि, मरदूद काम। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ७ असत् स्वभावयुक्त, बदमिजाज। ८ मन्द व्यवहारयुक्त, जो बुरे तौरसे पेश आता हो। ९ मन्द वर्तन वा जीविकायुक्त, बदमाश। १० मन्द विवरणयुक्त, बुरे बयानसे भरा।

असद्व्यवहार (सं० पु०) सन् साधुः व्यवहारः, नञ्-तत् । १ मन्द व्यवहार, खराब राह-रस्स। नञ्-बहुव्री० । ३ दुष्ट व्यवहारविशिष्ट, बुरे तौरसे पेश आनेवाला ।

असद्व्यवहारिन् (सं० त्रि०) कुमार्गगामी, बुरी राह चलनेवाला ।

असन (सं० पु०) अस-क्षेपे ल्यु । १ पीतसाल वृक्ष, असनाका पेड़ । अशन देखो । यह कटु, उष्ण, सारक तथा तिक्त होता और बात, गलदोष एवं रक्तमण्डल-को मिटाता है । (राजनिषण्ड) यह कुष्ठ, वीसर्प, श्वित्र, प्रमेह, शुक्लक्षमि, कफ तथा रक्तपित्तको दूर करता और त्वच्य, केश्य एवं रसायन निकलता है । (भावप्रकाश) २ जीवकट्टम । ३ वकवृक्ष । ४ वीर । भावे ल्युट् । ५ क्षेपण, फेंक-फांक । ६ निशाना, गोली, धड़ाका ।

असनपर्णिका, असनपर्णी देखो ।

असनपर्णी (सं० स्त्री०) असनस्य पीतशालस्य पर्ण-मिव पर्णमस्याः, बहुव्री० गौरादि ङीप् । अपराजिता, गोधी ।

असनपुष्प (सं० पु०) षष्टिकधान्य जातिभेद, सठिया धान ।

असनपुष्पक, असनपुष्प देखो ।

असना (वै० स्त्री०) १ वाण, गोली, जो हथियार फेंककर मारा जाता हो । (हिं०) २ वृक्षविशेष, कोई पेड़ । इसका काष्ठ कठोर होता और गृह-निर्माणमें लगता है । पत्र माघ-फाल्गुनमें झड़ता है । अशन देखो ।

असनादिगण (सं० पु०) गणविशेष, कोई खास दवा । इसमें असन, तिनिश, भूज, श्वेतवाह, प्रकीर्य, खदिर, कदर, भण्डी, शिंशपा, मेघशृङ्गी, चन्दनवृक्ष, ताल, पलाश, जोड़शाक, शाल, क्रसुका, धव, कुलिङ्ग, छागकर्ण और अश्वकर्ण पड़ता है । इसके सेवनसे श्वित्र, कुष्ठ, क्षमि, कफ, पाण्डु, प्रमेह और मेदरोग दूर हो जाता है । (वाग्भट)

असनान (हिं० पु०) स्नान, गुच्छ, नहाना ।

असनायी (हिं० स्त्री०) प्रीति, मुहब्बत, लगौ ।

असनि (सं० त्रि०) अस-अनि । जेपक, फेंकनेवाला ।

कृथादि० चतुरर्थ्यां क । असनिक, क्षेपकके निक-टस्थ देशादि ।

असनी—युक्तप्रदेशके हरदोयी जिलेका गांव । यह स्थान बहुत पुराना और गङ्गाके तटपर बसता है । इसमें उच्च कोटिके अनेक कान्यकुल ब्राह्मण प्रतिष्ठित हैं ।

असन्तति (सं० स्त्री०) सन्ततिर्धारा, अभावे नञ्-तत् । १ धाराका अभाव, औलादकी अदममौजूदगी । (त्रि०) सन्ततिर्विशेष, नञ्-बहुव्री० । २ धारावरहित, वे-औलाद, जिसके बाल-बच्चा न रहे ।

असन्तान (सं० पु०) सन्तानः देवतकः, नञ्-तत् । १ देवतकभिन्न, देवदारकी छोड़ दूसरी चीज । सन्तानो विस्तारश्च अभावे नञ्-तत् । २ विस्तारका अभाव, तङ्गी । (त्रि०) नास्ति सन्तानो यत्र, नञ्-बहुव्री० । ३ देवतरुवरहित, देवदारसे खाली । ४ विस्तारशून्य, तङ्ग । ५ वंशरहित, लावलद, वे-औलाद, जिसके बाल-बच्चा न रहे ।

असन्ताप (सं० पु०) अभावे नञ्-तत् । १ सन्तापका अभाव, तकलीफकी अदममौजूदगी । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ सन्तापरहित, तकलीफ न पानेवाला । ३ सन्ताप न पहुँचानेवाला, जो तकलीफ देता न हो ।

असन्तुष्ट (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ सन्तोषशून्य, नाखुश, नाराज़ । २ अधिक धन पाते भी धनाभिलाष रखनेवाला, जो ज्य.ादा दौलत हासिल कर भी उसके लिये मरता हो ।

असन्तुष्टि (सं० स्त्री०) १ सन्तोषका अभाव, नाखुशी नाराज़ी । २ अदृष्टि, आसूदा न रहनेकी हालत । ३ धन रहते भी धनके लिये मरना, लालच ।

असन्तोष (सं० पु०) अभावे नञ्-तत् । १ सन्तोषका अभाव, कृनायतकी अदममौजूदगी । २ दृष्टिका अभाव, अधैर्य, बेकरारी । ३ अप्रसन्नता, नाखुशी । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ४ सन्तोषशून्य, जिसे कृनायत न रहे । ५ अधिक धनाभिलाषी, ज्य.ादा दौलत चाहनेवाला ।

असन्तोषी (सं० त्रि०) सन्तोष न रखनेवाला, जिसे कृनायत न रहे ।

असन्दिग्ध (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ सन्देहसे अविषय, जिस विषयमें कोई सन्देह न रहे । २ सन्देहशून्य,

शकसे खाली। ३ स्यष्ट, साफ। ४ प्रकाट, जाहिर।
 ५ विश्वासी, एतवारी। (अव्य०) निःसन्देह, वैशक।
 असन्दिह (वै० त्रि०) सम-दो अवखण्डने कर्मणि-क्त
 (यतिस्थिति इत्यादि। पा ७:४१४०) इति इत्वं, नञ्-तत्।
 १ बन्धनशून्य, जो बंधा न हो। २ अनिरुद्ध, जो रुका न
 हो। “पतङ्गानसन्दिहः” (चक्र ४:४१२) ‘असन्दिहः परैरनिरुद्धः।’ (सायण)
 असन्दिह (वै० त्रि०) सन्दा बन्धनमस्तरस्य, इति,
 नञ्-तत्। बन्धनशून्य, जो बंधा न हो। “वर्त्तिल्लखाव-
 सन्दिहः।” (चक्र ८:१०२।१४।)
 असन्दिष्ट (सं० त्रि०) समाचार न पाये हुआ,
 वैखबर, जिसको हाल न मिला हो।
 असन्धान (सं० स्त्री०) वियोग, विशेष, विमर्श, फर्क,
 अलाहदगी, सुफारकत, बिच्चा।
 असन्धि (सं० पु०) सन्धिका अभाव, पैवस्तगीकी
 अदममौजूदगी, सटासटी, गमचा।
 असन्धित (सं० त्रि०) बन्धनशून्य, स्वतन्त्र, आजाद,
 खुला हुआ।
 असन्धेय (सं० त्रि०) सन्धि करनेके अयोग्य, जो
 सुलह करनेके काबिल न हो।
 असन्न (वै० त्रि०) व्याकुल, वैचैन, जिसे आराम न मिले।
 असन्नह (सं० त्रि०) सन्नहः स्वकार्ये चमः, नञ्-तत्।
 १ अतत्पर, जो तैयार न हो। २ दृप्त, गर्वित, अह-
 ज्वारी, घमण्डी, जो अपनेको बहुत लगाता हो।
 ३ पण्डिताभिमानी, जो यशार्थ पण्डित न होते भी
 मन ही मन अपनेको पण्डित समझता हो। ४ निरस्त,
 वैधियार। ५ उत्पन्न, पैदा।
 असन्निकर्ष (सं० पु०) सन्निकर्षका अभाव, पृथक्त्व,
 दूरता, दूरी, फासिला।
 सन्निकृष्ट (सं० त्रि०) १ अनुभवमें न आया हुआ,
 नामालूम, जो जाहिर न हो। २ दूरस्थ, जो
 नजदोक न हो।
 असन्निकृष्ट (सं० त्रि०) दूरस्थ, जो पास न हो।
 असन्न्यस्त (सं० त्रि०) सन्न्यास ग्रहण न किये हुआ,
 जो दुनियाको तर्क कर न चुका हो।
 असन्नान (सं० पु०) अपमान, बे-इज्जती, बे-अदबी,
 गुस्ताखी, शोखी, ठिठायी।

असपन्न (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ शत्रु न
 होनेवाला, जो दुश्मन् न हो। २ मित्र, दोस्त। नञ्-
 बहुव्री०। ३ शत्रुशून्य, दुश्मन्से खाली। ४ आक्रमण
 किया न गया, जो हमलेसे बचा हो। (स्त्री०)
 ५ शान्ति, सुलह, जिस हालतमें झगड़े न पड़ें।
 असपिण्ड (सं० पु०-स्त्री०) साक्षात् भोक्तृत्वेन दाह-
 त्वेन समानः पिण्डः देहाराभकावयवमिदं येषां वा
 ते सपिण्डाः, नञ्-तत्। सप्तम पुरुष पर्यन्त पुरुष
 और स्त्री।
 असवन्धु (वै० त्रि०) असम्बन्धीय, रिश्ता न रखने-
 वाला।
 असवर्ग (फा० पु०) खोरासान सुल्तकी एक बड़ी
 घास। इसमें पीत वा स्वर्णम पुष्प आते हैं। पञ्जाबी
 इसके शुष्क पुष्प अफगानोंसे खरीद रेशमके रङ्गमें
 छोड़ते हैं।
 असवाव (अ० पु०) द्रव्य, चौज़, सामान, लवाजिमा,
 अटाला।
 असभयौ (हिं० स्त्री०) असभ्यता, नाशायस्तगी।
 असभ्य (सं० त्रि०) सभायां साधुः, साधु-य नञ्-तत्।
 सभाया यः। पा ४:४११०५। सभाके अनुपयुक्त, जो मह-
 फिलके काबिल न हो। २ असामाजिक, बैठकसे
 ताकत न रखनेवाला। ३ खल, दुष्ट, अशिष्ट, गंवार,
 उजड़, नाशायस्ता।
 असभ्यता (सं० स्त्री०) सभ्यताका अभाव, असामा-
 जिकता, खलता, नाशायस्तगी, वैद्दगी।
 असम (सं० त्रि०) नास्ति समो यस्य। १ अतुल्य,
 बेमिसाल, अपनी बरावरी न रखनेवाला। २ असदृश,
 नाहमवार, जो बरावर न हो। समः युग्मसङ्ग्रान्वितः
 तद्भिन्नम्। ३ विषम, ताक, बेजोड़। मेवादि हादश-
 राशिके मध्य मेघ, मिथुन, सिंह, तुला, धनुः और कुम्भ
 विषम है। (पु०) ४ बुद्धविशेष। ५ काव्यालङ्कार
 विशेष। इसमें उपमानकी अप्राप्ति देखायी जाती है।
 असमच्च (सं० स्त्री०) १ अप्रत्यक्ष, गैबत, जिस
 हालतमें देख न सकें। २ अनुमित्यादि ज्ञान, कयास,
 फर्ज। (त्रि०) अर्थ आदि अच्। ४ अप्रत्यक्षका
 विषयीभूत, गैर हाजिर, गायब, जो देख न पड़ता हो।

असमय (सं० त्रि०) नञ्-तत्। असम्पूर्ण, नातमाम, जो पूरा न हो।

असमञ्ज, असमञ्जस् देखो।

असमञ्जस्—इच्छाकुर्वंशके सगर राजाका ज्येष्ठपुत्र। इनकी माताका केशिनी और पुत्रका नाम अंशुमान् रहा। यह बाल्यकालमें अतिशय दुष्ट थे। पुर-वासियोंको सदा पीड़ित रखनेपर सगर राजाने इन्हें नगरसे निकाल दिया था।

असमञ्जस (सं० पु०) समञ्जसं युक्तियुक्तम्, नञ्-तत्। १ असङ्गत वा अनुपयुक्त विषय, खेचतान, सकुच, सोच-विचार। (त्रि०) २ असदृश, अतुल्य, गैरमुशाविह, नामुवाफ़िक, जो मिलता न हो। (अव्य०) ३ असङ्गत भावमें, नामुवाफ़िक तौरपर।

असमत (अ० स्त्री०) सतील, पाकदामानी।

असमद (दं० स्त्री०) सन्धि, सम्मेलन, सुलह, मेल, लड़ाई न रहनेकी हालत।

असमद (सं० त्रि०) सह मदेन गर्वेण वर्तते समदः स नास्ति यस्य यत्र वा। १ गर्वरहित, फखर न करनेवाला। २ कलहहीन, मिलनसार। ३ विरोध-शून्य, दुश्मनी न रखनेवाला।

असमन (सं० त्रि०) न समं सह नीयते भोजनादौ; सम-नी बाहु० कर्मणि ड, नञ्-तत्। १ विभिन्नवर्ण, गैरजात, जो साथ बैठकर खा न सकता हो। २ अतुल्य, नामुवाफ़िक। ३ विभिन्न दिक् गमनशाली, इधर-उधर भटकनेवाला।

असमनेत्र (सं० पु०) असमानि अयुग्मानि नेत्रा-ण्यस्य। १ त्रिनेत्र शिव। असमलोचनादि शब्द भी इस अर्थमें आ सञ्ज्ञता है। (स्त्री०) असमञ्च तत् नेत्रञ्चेति, कर्मधा०। २ कपालका छतरी नेत्र, मत्थेमें पोथीदा रहनेवाली तीसरी आंख। (त्रि०) ३ सम नेत्र न रखनेवाला, जिसके क्षुप्त चक्षु न रहे।

असमय (सं० पु०) अप्राशस्त्येन नञ्-तत्। १ अप्र-शस्तकाल, नादुरुस्त वक्तु। २ दुष्टकाल, बुरा वक्तु। ३ अनुपयुक्तता, नामाकूलियत, बे-अन्दाजगी।

असमरथ (वै० त्रि०) असदृश रथ रखनेवाला, जिसके लाजवाब गाड़ी न रहे।

असमर्थ (सं० त्रि०) समर्थं शक्तम्, नञ्-तत्। १ अशक्त, कमजोर। २ दुर्बल, लागर, जो मोटा न हो। ३ कार्यमें अक्षम, काम कर न सकनेवाला। समर्थः सङ्गतार्थः। ४ असङ्गतार्थ, वाजिब मानी न रखनेवाला। ५ अयोग्य, असम्पूर्ण, नाक़ाबिल, नातमाम, जो लायक, या पूरा न हो।

असमर्थसमास (सं० पु०) कर्मधा०। जिसके साथ जिसका अन्वय लग सके, उसे छोड़ दूसरे पदसे समासका होना। जैसे—आह्वं न भुङ्क्ते। यहां भुज धातुके साथ नञ्का अन्वय होना आवश्यक है; किन्तु समास करनेसे अआह्वभोजी रूप बनता, जिसमें नञ्का अन्वय आह्वके साथ लगता है।

असमर्पण (सं० स्त्री०) अमोक्षण, अवितरण, अदम-सुपुदंगी, नाहवालगी, दूसरेकी किसी चीज़का न सौंपना।

असमर्पित (सं० त्रि०) वितरण न किया हुआ, जो सौंपा न गया हो।

असमवाय (सं० पु०) असमा अयुग्मा (पञ्च) वाणा यस्य, बहुव्री०। कन्दर्प, पञ्चशर, कामदेव।

असमवायिकारण (सं० स्त्री०) समवेति सम्-अव-इण-णिनि, नञ्-तत्, असमवायि च यत् कारणञ्चेति कर्मधा०। आकस्मिक हेतु, नागहानी सञ्च। न्याय-मतसे द्रव्य समवायिकारण ठहरता, सिवा उसके द्रव्यस्थित गुणादि असमवायिकारण होता है। जैसे तन्तु वस्त्रका समवायी और उसका संयोग असमवायी कारण है। वैशेषिकमें कार्यसे नित्यसम्बन्ध न रखनेवाले को असमवायी-कारण कहते हैं। जैसे हवाके भोंकेसे फलका गिरना। ऐसे स्थलमें फल हवाके भोंकेसे ही नहीं, पत्थर मारनेसे भी गिर सकता है।

असमवायित्व (सं० स्त्री०) अनिरुद्ध वस्तुकी स्थिति, गैर बातिनी चीज़की हालत।

असमवायिन् (सं० पु०) समवेति, सम्-अव-इण-णिनि, ततो नञ्-तत्। १ असम्बन्ध, विसलसिला। २ अमिलित जो मिला न हो। ३ न्यायोक्त समवाय सम्बन्धशून्य, जिसमें मन्तिकके बातिनी तालुका न रहे।

असमवृत्त (सं० स्त्री०) न समानि भिन्नलक्षणकत्वात्
अतुल्यानि पदानि यत्र तदसमं तथोक्तञ्च तत् वृत्तञ्चेति,
कर्मधा० । छन्दःशास्त्रोक्त विषम वृत्त, जिस वृत्तके
पूर्वापर पादमें समान अक्षर न रहें ।

असमवेत (सं० त्रि०) असंयुक्त, असम्बद्ध, पृथक्,
अलाहदा, जुदा, अलग, जो इकट्ठा न हो ।

असमवेतरूप (सं० अव्य०) असङ्गत, अनन्वय,
वैसरोपा, वैठौरठिकाने ।

असमशर, असमवाण देखो ।

असमष्ट (सं० त्रि०) सम्-अक्ष-क्त कलोपः, नञ्-तत् ।
अव्याप्त, जो मामूर या समाया न हो ।

असमष्टकाव्य (वै० त्रि०) अप्राप्तव्य प्रज्ञाविशिष्ट,
जो हासिल न होने लायक, होशियारी रखता हो ।

असमसायक, असमवाण देखो ।

असमस्त (सं० त्रि०) सम्-अस्-क्त, नञ्-तत् । १ असं-
युक्त, पृथक्, भिन्न, अलग, जुदा, जो मिला न हो ।
२ एकात्र किया न हुआ, जो मिलाया न गया हो ।
३ असम्पूर्ण, अधूरा, नातमाम, जो पूरा न हो ।
४ व्याकरणोक्त समासशून्य । ५ विभक्त्यादि कार्ययुक्त ।

असमाप्ति (वै० त्रि०) समं साम्यमतति, अत-इन्,
नञ्-तत् । अतुल्य, वैमिसाल, जिसके बराबर कुछ न
रहे ।

असमान (सं० त्रि०) १ अतुल्य, नामुवाफिक, जो
बराबर न हो । २ विजातीय, गैरजात, जो स्वजातीय
या अपनी जातका न हो ।

असमानकारण (सं० त्रि०) विभिन्न हेतुयुक्त, जो
वही सबब न रखता हो ।

असमानयानकर्मन् (सं० पु०) न समानं तुल्यकालिकं
यानकर्म गतिक्रिया यत्र । सन्धिविशेष, आगे-पीछे
पहुँचनेकी बात । तुम आगे जावो, हम पीछे आते
हैं—ऐसा नियम करके पूर्वापर गमनेच्छुक दो व्यक्ति
जो गमन करें, उस गमनकर्मरूप सन्धिविशेषका
यह नाम पड़ा है ।

असमाप (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत् । १ असमाप्ति,
नातमामी, अधूरापन । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० ।

२ समाप्तिशून्य, नातमाम्, अधूरा ।

असमापित, असमाप्त देखो ।

असमाप्त (सं० त्रि०) नञ्-तत् । असम्पूर्ण, नातमाम,
अधूरा, जो पूरे पड़ा न हो । २ सम्यक् रूपसे अप्राप्त,
जो अच्छीदरसे मिला न हो ।

असमाप्ति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत् । १ समाप्तिका
अभाव, नातमामी, अधूरापन । २ सम्यक् रूप अप्राप्ति,
जो प्राप्ति अच्छीतरहसे न हो । ३ समाप्तिशून्य,
जो पूरा न हो ।

असमावर्तक, असमाहत देखो ।

असमावृत्त (सं० पु०) नञ्-तत् । गुरुगृहमें रहने-
वाला ब्रह्मचारी, पूर्वसमय उपनयनके बाद ब्रह्मचर्य
अवलम्बन कर गुरुके मकान पर वेद, वेदान्त, वेदाङ्ग
प्रभृति शास्त्र पढ़ना पड़ता था । पीछे कृतविद्य हो
गृहस्थ धर्म आश्रय करनेके लिये जो गुरुकी अनुमति
लेकर अपने घर आता, उसीका नाम समावृत्त था ।
फिर जिसका वह समय उपस्थित न होता, अथवा
जो यावज्जीवन गुरुके घर ही पर रहता, वह असमा-
वृत्त कहता था । स्वार्थे कन् । असमावृत्तक ।

असमाहार (सं० पु०) समाहारो मेलनं संघातः
सम्यगाहरणञ्च, अभावे नञ्-तत् । १ मेलनका अभाव,
फर्क, अलाहदगी । २ संघातका अभाव, निर्द्वन्द्वता,
सन्नाटा । ३ आहरणका अभाव, फिर हाथ न
आनेकी बात । (त्रि०) मिलनादिशून्य, अलाहदा,
जो लगा न हो ।

असमाहार्य (सं० त्रि०) पुनरलभ्य, नाकाबिल उसूल,
डूबा हुआ ।

असमाहित (सं० त्रि०) नञ्-तत् । समाधिशून्य,
चित्तकी एकाग्रतासे रहित, योगशून्य, असन्निवेशित,
जो रक्षित न हो ।

असमीक्ष्य (सं० अव्य०) एकायक, वेदेखेभाले, अन्धे-
पनसे ।

असमीक्ष्यकारिन् (सं० त्रि०) समीक्ष्य विविच्य न
करोति, असमीक्ष्य कृ-णिनि । विना विवेचना किये
कार्य करनेवाला, जो बेसोचे काम करता हो ।

असमीचीन (सं० त्रि०) अयुक्त, अनुचित, गैरवाजिब,
गलत ।

असमूचा (हिं० वि०) १ असम्पूर्ण, अधूरा।

२ किञ्चित्, थोड़ा, कुछ।

असमृद्ध (सं० त्रि०) १ अलक्ष्मीवत्, नाकामयाव, जो हराभरा न हो। २ हताश, दिलगीर, जो हार बैठा हो।

असमृद्धि (सं० स्त्री०) सम् सम्यक् ऋद्धिः समृद्धिः नञ्-तत्। १ समृद्धिका अभाव, अदम-इकबालमन्दी, बढ़तीका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ समृद्धि-शून्य, नाकामयाव, जो हराभरा न हो।

असम्पत्ति (सं० स्त्री०) सट्टशात्मलाभः लक्ष्मीश्च सम्पत्तिः नञ्-तत्। १ सट्टश आत्माका अभाव, नाकामयावी। ३ धनका अभाव, बदबख्ती। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ सम्पत्तिशून्य, बदबख्त, जिसके पास दौलत न रहे।

असम्पन्न (सं० वि०) सम्पन्नः सम्पदयुक्तः अनुरूपान्त-स्वरूप लाभश्च ततो नञ्-तत्। सम्पत्तिशून्य, जिसके पास रुपया न रहे।

असम्पर्क (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्बन्धका अभाव, सुफारकत, अलाहदगी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सम्बन्धशून्य, अलाहदा, जुदा।

असम्पर्कीय (सं० त्रि०) सम्बन्धरहित, जो तात्तुक् रखता न हो।

असम्पूर्ण (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अनिष्पन्न, साव-शेष, नातमाम, अधूरा।

असम्पृक्त (सं० त्रि०) असम्बन्ध, वेसिलसिला, जो लगा न हो। २ असंयुक्त, अलाहदा, जो मिला न हो।

असम्पन्नात (सं० त्रि०) न सम्यक् ज्ञातः ज्ञातव्यादि-भेदो यत्र, नञ्-बहुव्री०। भली भांति न समझा हुआ, जिसमें कुछ भी समझ न सकें। पातञ्जलोक्त निर्विकल्प समाधि दो प्रकारका होता है,—सम्पन्नात और असम्पन्नात। जिस समाधिमें ज्ञेय, ज्ञान एवं ज्ञाताका भेदज्ञान रहता, वह सम्पन्नात (सविकल्प), और जिसमें यह सब मिट जाता, वह असम्पन्नात (निर्विकल्प) समाधि कहाता है।

असम्प्रति (सं० अव्य०) तिष्ठदशु प्र० सम्य०।

तिष्ठदशु प्रथमौ च। पा २।१।२८। १ अयोग्यकाल, बुरे वक्त।

२ अनुपस्थितकाल, वैवक्त। ३ विपरीतकाल, दूसरे वक्त, बेमौके।

असम्प्राप्य (सं० अव्य०) विना प्राप्ति, वैपण्डच, वैपाये।

असम्बद्ध (सं० स्त्री०) सम्बन्धं परस्परमन्वितं न भवति सम्-बन्ध-क्त, नञ्-तत्। १ अर्थका अबोधक अनन्वितार्थ वाक्य। (त्रि०) २ सम्बन्धशून्य, केसिलसिला, जो मिला न हो। ३ अयथार्थ, गैरमुनासिब। ४ निरर्थक बोलनेवाला, जो फिजूल बक रहा हो।

असम्बद्धप्रलाप (सं० पु०) कर्मधा०। असङ्गत वाक्य, अप्रस्तुत वाक्य, निष्प्रयोजन कथन, बेझुदागोयी, लन्त-रानी, बक-बक। यह स्मृतिशास्त्रीक दश प्रकारके पापमें पापविशेष होता है।

असम्बन्ध (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्बन्ध-का अभाव, अलाहदगी। २ पदके परस्पर अन्वयका अभाव, जुमलोंकी सुफारकत। (त्रि०) ३ सम्बन्ध-शून्य, वेसिलसिला।

असम्बाध (सं० त्रि०) न सम्यग् बाधा परस्परं व्यथा प्रतिवन्धो वा यत्र। परस्पर सङ्घर्षरूप पीड़ा-रहित, वसौय, जो तङ्ग न हो। २ विरल, पृथक्, अलग, जो घना न हो। ३ बाधारहित, जिसे कोई तकलीफ न रहे। ४ असंघत, खुला। (वै० स्त्री०) ५ असंघतस्थान, कुशादा जगह।

असम्बाधा (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्यक् बाधाका अभाव, किसीतरहकी तकलीफका न रहना, दिक्कतकी अदममौजूदगी। २ चौदह अक्षरके पादसे युक्त वर्णवृत्तविशेष। इसका लक्षण यों लिखा है—जिस वृत्तमें क्रमसे मगण, तगण, नगण, सगण और दो गुरु रहता एवं पांच और नव अक्षरपर यति पड़ता, उसका नाम असम्बाधा है। (इत्तरवाकर)

असम्भव (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्भवका अभाव, अदमहस्ती, न होनेकी बात। २ न्यायोक्त लक्ष्यमात्रमें लक्षणकी अप्राप्ति। ३ काव्यालङ्कारविशेष। इसमें असम्भव विषयका होना प्रकट करते हैं। (त्रि०) न सम्भवति, अच् नञ्-तत्। ४ असङ्गत, विरुद्ध, खिलाफ, नासुमकिन। ५ असत्, अविद्यमान, नेस्त-नाबूद, जो कहीं न हो।

असम्भव (सं० त्रि०) भवत्यसौ भव्यमनेनेति वा ; सम्-भू कर्तरि निपातनात् वा यत् गुणः यकारस्य अज-वदभावो अच् च, नञ्-तत् । १ सम्भवशून्य, वेक्याम, जो गुजर न सकता हो । (क्ली०) भावे यत् । २ अस-भवमात्र, नासुमकिन् वात । (वै० अव्य०) ३ अस-भव रीतिसे, नासुमकिन तौरपर ।

असम्भावना (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत् । सम्भा-वनाका अभाव, अनहोनी, न होनेकी बात । उत्कट कोटिक संशय अर्थात्—यदि इस प्रकार हो—ऐसे तर्क एवं योग्यता प्रकाशकी अत्युक्तिको सम्भावना कहते हैं । सम्भावनाका अभाव ही असम्भावना है ।

असम्भावनीय (सं० त्रि०) सम् चुरा० भू अनियर, नञ्-तत् । सम्भावनाशून्य, असङ्गत, नासुमकिन, कटपटांग ।

असम्भावित (सं० त्रि०) सम्भव न समझा हुआ, जो सुमकिन खयाल किया न गया हो ।

असम्भाव्य (सं० त्रि०) असम्भावनीय देखो । (अव्य०) असम्भव रीतिसे, नासुमकिन तौरपर ।

असम्भाव्य (सं० त्रि०) १ सम्भावणके अयोग्य, जो बोलने काबिल न हो । २ दुष्ट, जिससे बोल न सकें । (क्ली०) ३ कुत्सित कथन, बुरी बात, जो बात कही जा न सकती हो ।

असम्भूत (सं० त्रि०) उत्पत्तिरहित, नापेद, जो पैदा न हो ।

असम्भूति (वै० स्त्री०) सम्-भू-क्तिन्, अभावे नञ्-तत् । १ सम्भवका अभाव, अनहोनी, न होनेकी बात । सम्भूतिः कार्योत्पत्तिः सा नास्ति यस्याः । २ अव्या-कृत नामक प्रकृतिरूप कारण ।

असम्भूत (सं० त्रि०) नञ्-तत् । १ अयत्न सिद्ध वे तदवीर बना हुआ । २ सुन्दररूपसे अपालित, जो अच्छी तरह पाला न गया हो ।

असम्भेद (सं० पु०) सम्भेदो मेलनं भेदश्च, अभावे नञ्-तत् । १ मेलनका अभाव, न मिलनेकी हालत । २ भेदका अभाव, फर्कका न पड़ना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ३ मेलनशून्य, भलाहदा । ४ भेदशून्य, जिसमें फर्क न रहे ।

असम्भोग (सं० पु०) सम्भोगका अभाव, अनियुक्ति, वरतरफ़ी, काममें न लानेकी हालत ।

असम्भ्रम (सं० पु०) सम्भ्रमः उत्सुकतया कार्य-व्यस्तता सम्यक् भ्रान्तिश्च, अभावे नञ्-तत् । १ स्थिरता, कयाम, ठिकाव । २ कार्यकी व्यस्तताका अभाव, फुरसत । ३ भ्रमका अभाव, शककी अदमसौजूदगी । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ५ सम्भ्रमशून्य, भूलसे खाली, सच्चीदा, ठण्डा । चलती बोलीमें असम्भ्रान वा अना-दरको असम्भ्रम कहते हैं ।

असम्भ्रत (सं० त्रि०) सम्-मन् क्त, अभावे नञ्-तत् । १ अस्वीकृत, नापसन्द, जो माना न गया हो । २ पृथक्, अलाहदा, सुफारक, जो मिलता न हो । ३ विरुद्ध, प्रतिद्वन्द्वी, खिलाफ, उलटा ।

असम्भ्रतादायिन् (सं० त्रि०) १ स्वामीकी इच्छाके बिना ही ग्रहण करनेवाला, जो मालिककी बिला मर्जी लेता हो । (पु०) २ तस्कर, चोर ।

असम्भ्रति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत् । १ सम्भ्रति-का अभाव, इच्छूतिलाफ़ राय, मशविरेका न मिलना । २ अस्वीकृति, नाराजी, नारजामन्दी, अनव्वन । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ३ सम्भ्रतिशून्य, सुफारक, राय न देने-वाला । ४ अस्वीकृत, नाराज ।

असम्भ्रर (हिं० पु०) खड्ड, छुरा ।

असम्भ्रान (सं० क्ली०) अपमान, निरादर, वेदज्जती, तौहीनी ।

असम्भ्रित (दे० त्रि०) सम्-मा-क्त, नञ्-तत् । अपरि-मित, वेहद, जो नपा न हो ।

असम्भ्रुग्ध (सं० त्रि०) सम्-सुह-क्त, नञ्-तत् । १ अकृत-सन्देह, शक न करनेवाला । २ पाण्डित्यके अभि-मानसे रहित, इल्मदारीका फख्र न रखनेवाला, जिसे पढ़ने-लिखनेका घमण्ड न रहे ।

असम्भ्रूद (सं० त्रि०) सम्-सुह-क्त, नञ्-तत् । स्थिर-निश्चय, ठीक समझनेवाला, सच्चीदा, जो भूलता न हो ।

असम्भ्रूष्ट (सं० त्रि०) सम्-सुह-क्त, नञ्-तत् । १ पर-स्पर सङ्घर्षशून्य, आपसमें न टकरानेवाला । २ वाधा-रहित, बेरोक, जिसमें भगड़ न लगे । सम्-सुह-क्त,

नञ्-तत् । ३ चमाका अविषय, जिसे माफ़ी न मिले ।
(वै०) ४ शुद्ध न किया हुआ, जो साफ़ न हो ।

असम्बोध (सं० पु०) किसी वस्तुका बचने न देना,
जिस हालतमें कोयी चीज छूटने न पाये, सकल-
समेत ।

असम्बोद्ध (सं० पु०) सम्-मुद्ध भावे घञ्, विरोधे
नञ्-तत् । यथार्थज्ञान, सही समझ । (त्रि०) नञ्-
बहुव्री० । २ भ्रमरहित, जिसमें शक न रहे । ३ स्थिर-
बुद्धि, सच्चीदा, जो डांवाडोल न हो ।

असम्बुक्कारिन् (सं० त्रि०) अकुशल, अपटु, गावदौ,
वैसलीका, नावाकिफ़, घामड़ । २ दुराचार, भ्रष्ट-
चरित्र, बदवजा, बदकार, लुच्चा ।

असम्बुच् (सं० त्रि०) समञ्चति सम्-अञ्च-क्किप्,
नञ्-तत् । १ कुटूप, बदसूरत । २ अनुचित, नासुना-
सिब, गैरवाजिब, जो ठीक न हो । ३ अपूर्ण, नात-
माम, अधूरा, जो पूरा न हो । (स्त्री०) डीप् ।
असमीची ।

असम्बुच्, असम्बुच् देखो ।

असयाना (हिं० वि०) १ मूर्ख, बेवकूफ़ । २ छद्म-
शून्य, सादालौह, जो चालाक न हो ।

असर (अ० पु०) १ प्रभाव, गुण, सिफ़त । २ दिवस-
का चतुर्थे प्रहर, दिनका चौथा पहर ।

असरन (हिं०) अशरण देखो ।

असरा (हिं० पु०) धानप्रविशेष, किसी किसका
चावल । यह आसामके कक्षारमें पैदा होता है ।

असरार (हिं० क्रि० वि०) अनवरत, सिलसिलेवार,
हरदम, हमेशा ।

असर (सं० पु०) स्रियते दुर्गन्धेन ज्ञायते, सू-उन्,
नञ्-तत् । भूकदम्ब, कुकुरमुत्ता, ककरोदा ।

असर्वज्ञ (सं० त्रि०) प्रत्येक विषय न जाननेवाला,
जो सब कुछ जानता न हो ।

असर्ववीर (वै० त्रि०) सम्पूर्ण वीरोंको एकत्र न
करनेवाला, जो सब बहादुरोंको इकट्ठा न किये हो ।

असल (सं० स्त्री०) अस्थति क्षिप्यते अनेन, अस-
कलच् । १ अस्त्रक्षेपके उपयुक्त अस्त्रविशेष, जो मनुष्य
इथियार चलानेमें पढ़ने काबिल हो । २ लौह,

लोहा । ३ आयुध, इथियार । (अ० वि०) ४ सत्य,
सच्चा । ५ अछ, उम्दा, बड़ा । ६ विशुद्ध, खालिस,
जो मिलावटी न हो ।

असलियत (अ० स्त्री०) तथ्य, सत्य, वास्तविकता,
विशुद्धता । २ जड़, मूल, बुनियाद, ठिकाना । ३ मूल-
तत्त्व, तत्व, सार, निचोड़ ।

असली (हिं० वि०) १ असल, मुख्य । २ सत्य,
सच्चा । ३ विशुद्ध, खालिस ।

असलील (हिं०) अलील देखो ।

असलोक (हिं०) श्लोक देखो ।

असवर्ण (सं० त्रि०) न समानो वर्णो यस्य, नञ्-
बहुव्री०, समानस्य सादेशः । असजातीय, विभिन्न
वर्ण, जो एक जाति या अपनी जातिका न हो ।
जैसे—ब्राह्मण और क्षत्रियादि । ब्राह्मणादिका क्षत्रिय
प्रभृतिको कनरासे विवाह असवर्ण कहता है ।

असवस् (सं० पु०) प्रधान वायु वा श्वास । यह शब्द
सदा बहुवचनान्त रहता है ।

असवार, सवार देखो ।

असवारो (हिं०) सवारी देखो ।

असञ्चत् (इ० त्रि०) सञ्चतिर्गतिकर्मा, सञ्चतिरस्यते-
वार्थे वर्तते सञ्च-शब्द शञ्चत् (निरुक्त) नञ्-तत् । १ पर-
स्पर आश्रित, आपसमें मिला हुआ । २ अगमनशील,
जो चलता न हो । ३ सङ्गतवर्जित, तनहा, जो साथसे
अलग हो । स्त्री० डीप् असञ्चन्ती । “ग्रहेऽसञ्चन्ती दिवे
दिवे ।” ऋक् ८३।१ । “मधु जिह्वा असञ्चतः ।” ऋक् १।७३—४ ।
“असञ्चतः सङ्गतवर्जिताः” (सायण)

असञ्चतस् (सं० स्त्री०) अनन्त धारा, अक्षय प्रवाह,
लाज्जवाल चश्मे, हमेशा बहनेवाले दरया । यह शब्द
सदा बहुवचनमें ही व्यवहृत होता है ।

असञ्चता (सं० अव्य०) अक्षय नियमानुसार, लाज्ज-
वाल तीरपर ।

असञ्चिवस् (वै० त्रि०) अक्षय, अनन्त, लाज्जवाल,
बन्द न होनेवाला, जो कभी सूखता न हो ।

असञ्चस् (वै० त्रि०) सञ्च-वा उस्-उन्, नञ्-तत् । अप्रति-
वद्ध, जो रुका न हो । (स्त्री०) डीप् असञ्चणी ।
“विरहव्रतचञ्चणी ।” ऋक् १।७५।१८ ।

अससत् (वे० त्रि०) सस स्वप्ने शब्द, नञ्-तत्। जागरूक, निजकार्यमें मनोयोगी, जो अपने काममें दिल लगाता हो (स्त्री०) डीप। अससती। रजले अससन्तो अजराः। ऋक् १।१४३।२।

असह (सं० त्रि०) न सहते सह-अच् नञ्-तत्। १ सहाकरनेमें अशक्त, अक्षम, नासुतहम्मिल, जो बरदाश न करता हो। (स्त्री०) २ वक्षस्थलका मध्यभाग, सीनेका दरमियान।

असहन (सं० पु०) न सहति सह-ल्यु नञ्-तत्। १ शत्रु, वैरो, दुश्मन्। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ क्षमाशून्य, असहिष्णु, नासुतहम्मिल, बरदाश न करनेवाला। (स्त्री०) भावेऽनुत्, अभावे नञ्-तत्। ३ क्षमाका अभाव, वैसत्री, इज्जतिराव, जिस हालतमें बरदाश न करे।

असहनशील (सं० त्रि०) असहिष्णु, सहन न करनेवाला, चिड़चिड़ा, तुनकमिजाज।

असहनशीलता (सं० स्त्री०) असहन, असहिष्णुता, तुनकमिजाजी इज्जतिराव, चिड़चिड़ापन।

असहनीय (सं० त्रि०) दुःसह, अक्षन्तव्य, असह्य, शदीद, गैरमुमकिन-उल्-तहम्मिल, जो बरदाश न हो।

असहमान (सं० त्रि०) अक्षम, नासुतहम्मिल, बरदाश न करनेवाला।

असहाय (सं० त्रि०) नास्ति सहायो यस्य, नञ्-बहुव्री०। सहचरशून्य, निःसहाय, निरवलम्ब, निराश्रय, अनाथ, बेकस, बेचारा। (स्त्री०) डीप। असहायी।

असहायता (सं० स्त्री०) १ सहचरशून्यता, निराश्रयता, बेकसी, लाचारी। २ निर्जनता, विजनता, तनहायी, गोशानशीली।

असहायत्व (सं० स्त्री०) असहायता देखो।

असहायवत्, असहाय देखो।

असहित (सं० त्रि०) निःसङ्ग, सहचरशून्य, तनहा, जिसके साथ कोयी न रहे।

असहितव्य, असहनीय देखो।

असहिष्णु (सं० त्रि०) न सहिष्णु नञ्-तत्। १ अक्षम, असहनशील, नासुतहम्मिल, जो सह न सकता हो।

२ कलहप्रिय, विवादशील, जूदरञ्ज, भगड़ालू, टण्टे-बाज।

असहिष्णुता, असहनशीलता देखो।

असही (हिं० वि०) अक्षम, ईर्षालु, जूदरञ्ज, जो किसीकी बढ़ती देख न सकता हो।

असह्य (सं० त्रि०) न सह्यम्। असहनीय देखो।

असह्यपीड (सं० त्रि०) दुःसह दुःख देनेवाला, जो शदीद दर्द पैदा करता हो।

असा (अ० पु०) सोंटा, डंडा। देखावके लिये यह चांदी या सोनेके पत्रसे मंद दिया जाता है। राजा-वोंकी सवारी या बरात निकलते समय सेवक असा लेकर आगे बढ़ते हैं।

असांच (हिं० वि०) असत्य, झूठ, नारास्त, जो सच्चा न हो।

असाक्षात् (सं० अव्य०) न साक्षात्। परोक्षमें, पीठ पीछे।

असाक्षात्कार (सं० पु०) न साक्षात्कारः, अभावे नञ्-तत्। १ प्रत्यक्षका अभाव, गैबत। विरोधे नञ्-तत्। २ परोक्ष ज्ञान, अदृश्य या इन्द्रियके अगोचर विषयका ज्ञान, पीठ पीछेकी बात, जो काम देखा-सुना न हो। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ प्रत्यक्षका अविषय, प्रत्यक्षशून्य, देखने-सुननेमें न आनेवाला।

असाक्षिक (सं० त्रि०) नास्ति साक्षी साक्षात् द्रष्टा अधिष्ठाता वा यस्य, शेषादिभाषेति कप्। साक्षिशून्य, बेगवाह, जो देखा-सुना न हो।

असाक्षिन् (सं० त्रि०) न साक्षि नञ्-तत्। वचन वा दोषादि हेतुसे साक्ष्य कर्ममें अग्राह्य, जो गवाही दे न सकता हो। श्रोत्रियादिको साक्षी करनेमें वाचनिक निषेध है। फिर जिसके साक्ष्यमें मिथ्यावाद प्रभृति दोष ठहरता, वह भी साक्षीमें परिगणित नहीं होता। पिता और भ्राता प्रभृति आत्मीय व्यक्ति साक्षी नहीं हो सकते। स्त्री, बालक, प्रवचक, उन्मत्त, परिवादग्रस्त, रङ्गावतारी (नाटक करनेवाला) पाषण्ड, झूटकारी और विकलेन्द्रिय व्यक्ति साक्षी होनेके अयोग्य हैं। किन्तु संग्रहण, चौर्य और पाषण्ड साक्ष्यमें निषिद्ध व्यक्ति भी साक्षी बन सकते हैं।

असाक्षी, असाक्षिन् देखो।

असाक्ष्य (सं० स्त्री०) साक्ष्यका अभाव, गवाहीका न होना, अदम शहादत।

असाढ़ (हिं० पु०) आषाढ़मास, सालका चौथा महीना।

असाढ़ा (हिं० पु०) ३ बड़े हुए रेशमका बारीक धागा। २ कच्ची शक्कर, साफ़ न की हुयी चीनी।

असाढ़ी (हिं० वि०) १ आषाढ़का, आषाढ़में होने-वाला। (स्त्री०) २ आषाढ़में बोया जानेवाला अन्न, खरीफ़, जो अनाज असाढ़में बोया जाता हो। ३ गुरु-पूर्णिमा, आषाढ़की पूर्णमासी। इस दिन हिन्दू अपने गुरुका पूजन करते हैं।

असाढ़ू (हिं० पु०) खूल शिला, मोटी चटान।

असात्म्य (सं० स्त्री०) १ सात्म्य दैपरीत्य, प्रकृति-विरोध, जिसकी खासियतकी मुखालफ़त। (त्रि०) २ प्रकृत्यसुखावह, नागवार, तन्दुरुस्ती खुराब करने-वाला।

असाद (वै० त्रि०) असनशून्य, नशिस्तगाह न रखनेवाला, जो बैठा न हो।

असाधन (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ सम्पादनका अभाव, अदमतकलीम, सुबूत न पहुँचनेकी हालत। साधनहेतुः नञ्-तत्। २ अकारण, सबबका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ कारणशून्य, बेसबब, जो ज़रिया, सामान या औज़ार रखता न हो।

असाधनीय, असाध्य देखो।

असाधारण (सं० त्रि०) साधारण सामान्य धर्मयुक्तम्, नञ्-तत्। विशेष, असामान्य, गैरसामूली, जो साधारण न हो। (पु०) २ न्याय मतमें, सपक्ष और विपक्ष दोनोंसे व्यावृत्त हेतु। जैसे वल्लिसाधनमें गगनादि हेतु है। यह हेतु पक्ष पर्वतादि एवं पक्ष भिन्न जलादिमें कहीं नहीं रहता, अतएव दोनोंसे व्यावृत्त (निराकृत) है। (स्त्री०) ३ प्रकार, भेद, जिनस, किस्म। (स्त्री०) असाधारणी।

असाधारणनैकान्तिक (सं० पु०) असाधारण तत् अनैकान्तिकश्चेति कर्मधा० असाधारणनैकान्तिक सर्व सपक्ष व्यावृत्त हेत्वाभास विशेष। यथा—‘शब्देनित्यः शब्द-

त्वात्।’ शब्दत्व विशिष्ट होनेसे शब्द नित्य पदार्थ है। शब्दत्व सकल नित्य पदार्थसे व्यावृत्त अथच शब्दमात्रमें स्थित है, इसीसे शब्दत्वका उक्त नाम पड़ा।

असाधित (सं० त्रि०) सम्पादनशून्य, नाकामिल, जो पूरे न पड़ा हो।

असाधु (सं० त्रि०) न साधु नञ्-तत्। असच्चरित, अविनीत, अशिष्ट, दुष्ट, खल, दुर्जन, असंस्कृत, बद-माश, गुस्ताख़, बुरा, बिगड़ा हुआ। (स्त्री०) असाध्वी, व्यभिचारिणी पत्नी।

असाधुता (सं० स्त्री०) दुष्टता, अशिष्टता, बदमाशी, गुस्ताखी, खोटायी।

असाधुत्व (सं० स्त्री०) असाधुता देखो।

असाधुवृत्ता (सं० स्त्री०) व्यभिचारिणी पत्नी, जो औरत पाक-साफ़ न हो।

असाध्य (सं० त्रि०) सध-णिच्-यत् साध-यत् वा नञ्-तत्। दुष्कर, कठिन, सिद्ध करनेके अयोग्य, जो सिद्ध हो न सकता हो। जैसे असाध्य रिपु एवं असाध्य रोग।

असान्तापिक (सं० त्रि०) सन्तापाय न भवति ठक्। सन्ताप पहुँचानेमें असमर्थ, तकलीफ़ न देनेवाला।

असान्द्र (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। अनिविड़, पृथक्, विरल, बुराक, कागज़ी, जो सटा न हो।

असाविध्य (सं० स्त्री०) अन्तर, विप्रकर्ष, दूरता, फ़ासला, बिच्चा।

असामञ्जस्य (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ सामञ्जस्यका अभाव, मीमांसाका अभाव, अयुक्तत्व, सन्निवेशका अभाव, अचरण, अस्थापन, नादुरुस्ती, नाकाबिलियत। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सामञ्जस्यके अभावसे युक्त, अमीमांसाविशिष्ट, असन्निवेशित, नाकाबिल, जो दुरुस्त न हो।

असामर्थ्य (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। सामर्थ्यका अभाव, पटुत्वका अभाव, अक्षमत्व, नाताक़ती, कमजोरी।

असामयिक (सं० त्रि०) असमयोचित, अकालिक, अकालोद्भव, ग़रवत, बेफ़सल।

असामान्य (सं० त्रि०) नास्ति सामान्यं तद्वत्ता

यस्य । १ असाधारण, गौरमामूली । इस अर्थमें असाम्य शब्दभी प्रयुक्त होता है ।

असामि (वे० त्रि०) १ सम्पूर्ण, समूचा, जो अधूरा न हो । (अव्य०) २ पूर्णरूपसे, पूरे तौरपर, बिलकुल, सब ।

असामि शवस् (वे० त्रि०) पूर्णशक्ति-सम्पन्न, पूरी ताकत रखनेवाला ।

असामी (हिं० पु०) १ पुरुष, नर, आदमी । २ व्यवहारो, लेने-देनेवाला । ३ कृषक, काश्तकार, लगान-पर खेत जोतनेवाला । ४ प्रतिवादी, ऋणी । ५ अपराधी, मुलजिम । ६ मित्र, दोस्त । ७ काम देनेवाला आदमी । ८ आसाम देशका अधिवासी, जो शखूस आसामका वाशिन्दा हो । (स्त्री०) ९ वेश्या, रण्डी । १० स्थान, नौकरो, जगह । (वि०) ११ आसामदेश सम्बन्धीय, जो आसामका हो ।

असाम्यत (सं० त्रि०) अयोग्य, अनुचित, नाकाबिल, गौरवाजिब, जो होनहार न हो ।

असाम्यतम् (सं० अव्य०) नञ्-तत् । अयुक्त, अयोग्य, अनुचित वा अन्याय्य रूपसे, नामुनासिब तौरपर ।

असाम्य (सं० स्त्री०) १ अन्तर, फर्क । २ अनुपयुक्तता, नाकाबिलियत । ३ अप्रियता, नाखुशी ।

असार (सं० पु०-स्त्री०) नास्ति सारो यस्य । १ एरण्ड वृक्ष, रेंडका पेड़ । (स्त्री०) नास्ति सारो यस्मात् ५ नञ्-बहुव्री० । २ अगुरुचन्दन । (त्रि०) नञ्-तत् । ३ सार-शून्य, खाली । ४ शक्तिरहित, नाताकृत । ५ व्यर्थ, बेफायदा । ६ निर्वल, कमजोर ।

असारता (सं० स्त्री०) १ निःसारता, निःसत्वता, बेभरकौ । २ अयोग्यता, नाकाबिलियत ।

असारदधि (सं० स्त्री०) गृह्योत-नवनीत-दधि, बलायी उतारा हुआ दही । यह संग्राही, शीतल, लघु, विष्टम्भि, दीपन एवं रुच होता और ग्रहणी रोगको नाश करता है । (भावप्रकाश)

असारा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेका पेड़ ।

असालत (अ० स्त्री०) १ कुलीनता, खान्दानीपन । २ तत्त्व, निचोड़ ।

असालतन् (अ० क्ति० वि०) स्वयं, खुद, अपने आप ।

असाला (हिं० स्त्री०) तरातेजक, हाली, हालिम, चंसुर ।

असावधान (सं० त्रि०) नञ्-तत् । अवधानहीन, प्रमत्त, बेपरवा, घामड़ ।

असावधानता (सं० स्त्री०) अनवधानता, लापरवायी ।

असावधानत्व (सं० स्त्री०) असावधानता देखो ।

असावधानी, असावधानता देखो ।

असावरी (हिं० स्त्री०) आसावरी, आशावरी, रागिणी विशेष । यह भैरव रागकी भार्या होती और प्रातः-काल सात बजेसे नौ बजेतक जमती है ।

असासा (अ० पु०) वस्तु, द्रव्य, माल, असबाब ।

असामुलबैत (अ० पु०) गृहद्रव्य, मकान्का सामान् ।

असाहस (सं० स्त्री०) साहसका अभाव, बेहिम्नती, नरमी ।

असाहसिक (सं० त्रि०) शान्त, ठण्डा, नम्र, जो हिम्मतो न हो ।

असाहाय्य (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत् । १ साहाय्य-का अभाव, मददका न मिलना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । साहाय्यशून्य, जिसे मदद न मिले ।

असि (सं० अव्य०) अस दीप्तौ इन् । १ भवान्, आप, तुम । विभक्तिका प्रतिरूपक होनेसे यह 'त्वं' अर्थमें लगता है । (पु० स्त्री०) अस्यते छेदनायं क्षियते, उत क्षेपणे (खनिकथ्यसि इत्यादि । उष् ४।२२८) इति इ । २ खड्ग, तलवार । असि शब्दके पर्याय यह हैं—निस्त्रिंश, चन्द्रहास, रिष्टि, कौक्षेरक, मण्डलाय, करपाल, कृपाण, प्रवालक, भद्रात्मज, रिष्ट, ऋष्टि, धाराविष, शौच्येय, तरवारि, तरवाज, कृपाणक, करवाल, कृपाणी, शास्त्र, विषसन । असिकी सुति इस प्रकार की जाती है—

“असिर्विषसनः खड्गस्तीक्ष्णधारो दुरासदः ।

श्रीगर्भो विजयर्थेव धर्मपालो नमस्तु ते ॥”

असिः प्रहरणमस्य । प्रहरणम् । पा ४।४।५१ । इति ठक् आसिक, खड्गधारी, तलवारबन्द । वा डीप् । ३ वाराणसीके दक्षिण चन्द्र नदीविशेष । असि नदी गङ्गाके सङ्ग जाकर मिल गयी है । वरणा और असि

इन्हों दोनो नदीके नामसे 'वाराणसी' शब्द बना है।
यथा—

“असिच वरणा यव चैव रचा कवी कृते।

वाराणसीति विख्याता तदारभ्य महाहने ॥” (काशीखण्ड)

अस्यते क्षिप्यते अस-इन्। ४ श्वांस, सांस।

असिक (सं० स्त्री०) असि-संज्ञायां कन्। १ अधर एवं चिबुकका मध्यभाग, होंठ और दाढ़ीके बीचकी जगह। २ एक देशका नाम, कोयी मुल्क।

असिक्रिका, असिक्री देखो।

असिक्री (सं० स्त्री०) सो-क्त सिता केशादौ शुभ्रा जरती तद्विन्ना डीप् न क्तादेशो वा। असितपलितयोः प्रविशेषः। असिता। कन्दसि क्लमिल्ये के। पा ४।१।३८ वार्तिक। १ अन्त-पुरचारिणी अष्टहा दासी, मकानके भीतर रहनेवाली जवान् दासी। २ नदीविशेष, Akosines, चन्द्रभागा, पञ्जाबकी चिनाब। ३ कन्याविशेष, वीरण प्रजापतिकी जो कन्या दत्तकी ब्याही थी। ४ रात्रि, रात।

असिगण्ड (सं० पु०) असिः क्षिप्तो गण्डो यत्र। छुद्रोपाधान, गलतक्रिया।

असिजीविन् (सं० पु०) असिना तद् व्यापारिण जीवति, असि-जीव-णिनि। खड़्गसे जीविका करनेवाला पुरुष, जो व्यक्ति अस्त्रद्वारा युद्धादि करके जीविका चलाता हो। यह ब्राह्मणके लिये अति निन्दनीय कार्य है।

असित (सं० पु०) सो-क्त सितः विरोधे नञ् तत्। १ कण्ठवर्ण, कालारङ्ग, २ कण्ठपद्म, अंधेरा पाख। ३ नीलवृक्ष, नीलका पेड़। (स्त्री०) ४ अगुरुकाष्ठ, अगुरुचन्दन। ५ शनिग्रह। ६ कालाराक्षस। ७ कश्यप वंशज व्यक्तिविशेष। ८ नीलगिरि पर्वत। ९ काला सांप। १० देवल ऋषि। हरिवंशके अष्टादश अध्यायमें इनका विवरण है। (त्रि०) ११ कण्ठ वर्णयुक्त, काला। असित शब्द अनुदात्तान्त एवं इसके उपधामें तकार है, इसलिये (वर्णादनुदात्तात्तोप-धातो नः। पा ४।१।३८।) इस सूत्रके अनुसार इसका स्त्री लिङ्गमें 'असिता' और 'असिती' दो प्रकार रूप होता है। परन्तु विशेष वार्तिक सूत्रद्वारा उसका निषेध

किया गया है। इस कारण इसका वेदमें 'असिता' एवं 'असिक्री' उभय प्रकार रूप होता है।

असितकार्चिस् (सं० पु०) असितयति असित-कृत्यर्थे णिच् खुल् णिच् लोपः तथोक्ता अचिः शिखा यस्य। अग्नि, आग। अग्निकी शिखा लगनेसे सभी वस्तु काले पड़ जाते, इसलिये अग्निको असितकार्चिः कहते हैं।

असितकी (सं० स्त्री०) वृक्षविशेष, कोयी पौधा।

असितकेशान्त (सं० त्रि०) कृष्ण-केशविशिष्ट, काली जुल्फोंवाला।

असितगिरि (सं० पु०) कर्मधा०। नीलगिरि, नील-पर्वत, काला पहाड़।

असितग्रीव (सं० पु०) असिता ग्रीवा यस्य। १ अग्नि, आग। २ नीलकण्ठ शिव। ३ मयूर, मोर।

असितजफल (सं० पु०) नारिकेलवृक्ष, नारियलका पेड़।

असितङ्गु (वै० त्रि०) कृष्णवर्ण जानुविशिष्ट, काले घुंटेनेवाला।

असिततिल (सं० पु०) कृष्णतिल, काला तिल।

असितद्रुम (सं० पु०) कृष्णताल, काला ताड़।

असितनयन (सं० त्रि०) कृष्णनेत्रयुक्त, काली आंखवाला।

असितपङ्कवा (सं० स्त्री०) १ भूमिजम्ब, भुयिंजामन। २ नदीजम्बवृक्ष, पनिहा जामुन।

असितफल (सं० पु०) असितं कृष्णवर्णं फलं यस्य। मधु नारिकेल, मोठा नारियल।

असितभ्रू (सं० त्रि०) कृष्णभ्रूविशिष्ट, काली पलकों-वाला।

असितभृग (सं० पु०) कर्मधा०। कृष्णसार भृग, काला हरिण।

असितवल्ली (सं० स्त्री०) नीलदूर्वा, काली दूब।

असितवेत्र (सं० स्त्री०) श्यामालता, काली बेल।

असितसार (सं० पु०) तिन्दुकवृक्ष, तेंदूका पेड़।

असितसारक, असितसार देखो।

असिता (सं० स्त्री०) १ यमुना नदी। २ कृष्णनीली वृक्ष। ३ कालास्तविषा। ४ हरिवंशघृत एक अप्सरा।

५ पिङ्गला नामकी नाड़ी । यमुना नदीका जल कृष्ण-
वर्ण होनेसे असिता नाम पड़ा है ।

असिताङ्ग (सं० पु०) १ मुनिविशेष, कोई मुनि ।
(त्रि०) २ कृष्णवर्ण-विशिष्ट, काला ।

असिताक्षनी (सं० स्त्री०) कृष्णकार्पासी, काली
कपास ।

असितानन (सं० त्रि०) कपि, लङ्कूर ।

असिताभ्रशेखर (सं० पु०) १ बुद्धविशेष । २ नीली-
वृक्ष ।

असिताम्बुज (सं० स्त्री०) कर्मधाः । नीलपद्म, काले
कमलका फूल ।

असिताम्बुज, असिताम्बुज देखो ।

असितार्चिस् (सं० पु०) असिता कृष्णा अर्चिः शिखा
यस्य । अग्नि, आग । अग्निको धुर्येकी कृष्णवर्ण शिखा
निकलनेसे असितार्चिः कहते हैं ।

असितालता (सं० स्त्री०) १ नीलदूर्वा, कालौदूव ।
२ श्यामालता, काली वेल ।

असितालु (सं० पु०) नीलालु, कोयी पौधा ।

असिताश्वन् (सं० पु०) कर्मधा० । अश्वनो जाति-
त्वेऽपि समानविधेरनित्यतया न समासान्त प्रत्ययः ।
मणि विशेष, इन्द्रनील मणि, नीलकान्तमणि, नीलम् ।

असिह (सं० त्रि०) अस-क्षेपे हृच् । क्षेपक, फेंकने-
वाला, जो अपनी चीज फेंक देता हो ।

असितोत्पल (सं० स्त्री०) कर्मधा० । नीलपद्म, काला
कमल ।

असितोत्पल, असिताश्वन् देखो ।

असिदंष्ट्र (सं० पु०) असिरिव तीक्ष्णा दंष्ट्रा यस्य ।
१ मकर, घड़ियाल । कामदेवकी ध्वजापर इनकी
मूर्ति विराजमान रहती है । २ जलजन्तु विशेष,
पानीका कोयी जानवर ।

असिदंष्ट्रक, असिदंष्ट्र देखो ।

असिदन्त (सं० पु०) १ मकर, घड़ियाल । २ कुम्भीर,
गोह ।

असिह (सं० त्रि०) सिद्धं निष्पन्नं पक्षश्च, नञ्-तत् ।
१ अनिष्पन्न, जो निकला न हो । २ अपक्व, बेपका,
कच्चा । ३ अपूर्ण, नासुकामिल । ४ निष्फल, बेफायदा ।

५ अप्रमाणित, साबित न होनेवाला । (पु०) ६ न्याय
मतमें आश्रयद्वारा असिद्धत्व प्रश्रुति दोषसे दूषित
कारण, जो सबव अन्दाजसे समझ न पड़ता हो ।

असिद्धि (सं० स्त्री०) सिद्धि त्तिन्, नञ्-तत् । १ अनि-
च्छति; निकास न होनेकी सूरत । २ पाकका अभाव,
न पकनेकी हालत, कच्चापन, कच्चायी । ३ अपूर्णता,
पूरा न पड़नेकी हालत । ४ योगशास्त्रोक्त सिद्धिका
अभाव, नाकामयाबी । ५ न्यायमतसे आश्रयासिद्धि
प्रश्रुति हेतुदोष । यह तीन प्रकारका होता है—
१ आश्रयासिद्धि । २ स्वरूपासिद्धि । ३ व्याप्यतासिद्धि ।
सिद्धिः साध्यवन्ता निश्चयः, अभावे नञ्-तत् । ६ साध्य-
विशिष्टके निश्चयका अभाव, अनिश्चय, यकीनका न
आना ।

असिधारा (सं० स्त्री०) ६-तत् । खड्गका तीक्ष्ण
अग्रभाग, तलवारकी बाढ़ ।

असिधारान्नत (सं० स्त्री०) नरके असिधारामुद्दिश्य
न्नतम्, शाक० तत् । न्नतविशेष, जिस न्नतसे खल-
नादि दोष होनेपर नरकमें असिधाराका आघात
लगता है । यादवने लिखा है, सुन्दर युवा युवतोंके
सङ्गमें पतिकी तरह आचरण रखें, किन्तु कामभाव
देखा या सङ्ग कर न सकेंगे । इसीको असिधारान्नत
कहते हैं ।

असिधाव (वे० पु०) असिं खड्गं धावयति माज-
यति धाव-अण् । खड्गमार्जनकारी, हथियार साफ
करनेवाला, जो हथियारपर सैकल चढ़ाता हो,
सैकलगर ।

असिधावक, असिधाव देखो ।

असिधेनु (सं० स्त्री०) असिधेनुकेव । उप० समा० ।
हुरिका, हुरी ।

असिधेनुका, असिधेनु देखो ।

असिन्व (वे० त्रि०) अतोषणीय, असूदा न होनेके
काबिल ।

असिन्वत, असिन्व देखो ।

असिन्वता (वे० स्त्री०) पिङ्ग-धन्वने, अनेकार्थत्वात्
धातूनामन्वसङ्ख्यादनार्थः, लटः शतरि श्रुः (उगितथ ।
भा० ३।१।६।) इति डीप्, पूर्वसवर्णदीर्घः । असङ्ग-
ग-

दन्त्यावित्यर्थः। अनुविशेष्यते (निरुक्त)। असङ्ग्राह, खु, य न होनेवाली। “असिपत्रो वपुसौ भूयतः।” (स्क० १०७८।१)

असिपत्र (सं० पु०) असिरिव तीक्ष्णधारं पत्रमस्य, बहुव्री०। १ इच्छुवृक्ष, ईखका पेड़। २ गुगु नामक वृक्ष। ३ सङ्गुष्ठ वृक्ष, संहुड़का पेड़। (स्त्री०) असेः पत्रमिव आच्छादकत्वात्। ४ खड्गकोष, तलवारका स्थान। ५ उभयदिग् धारयुक्त खड्ग या तलवार, दुधारा। ३ नरकविशेष। इस नरकके वृक्षोंमें तलवार जैसे पत्ते लगे हैं।

असिपत्रवृक्ष (सं० स्त्री०) गुण्डावृक्ष, छोटा कांस। यह शीत एवं मधुर होता और कफ वात, रक्तदोष, अतिसार तथा दाहको मिटाता है। दीर्घ और लघु भेदसे इसे दो प्रकार देखते हैं। दीर्घमें गुण अधिक रहता है।

असिपत्रक (सं० पु०) श्वेतदर्भ, सफेद कुश।

असिपत्रवन (सं० स्त्री०) असिरिव पत्रमस्य तथोक्तं वनं यस्मिन्। पुराणोक्त नरकविशेष। इस नरकमें चार हजार कोसतक आग जलती और उसके बीच तलवारकी धार जैसे पत्तेवाले पेड़ोंका वन है।

असिपत्रव्रत (सं० स्त्री०) अश्वमेध यज्ञके मध्य कर्तव्य व्रतविशेष, जो व्रत अश्वमेध यज्ञके बीचमें करना उचित हो।

असिपथ (वै० स्त्री०) यज्ञीय आयुधका मार्ग, वलिदानवाली तलवारकी राह।

असिपुच्छ (सं० पु०) असिरिव धारायुक्तः वक्रः सूक्ष्माग्रो वा पुच्छोऽस्य। शशक, सजुची मछली।

असिपुच्छक, असिपुच्छ देखो।

असिपुत्रिका (सं० स्त्री०) असेः पुत्राव स्वाथे कन् ईकार ड्रस्वः टाप्। कुरिका, कुरी।

असिपुत्री, असिपुत्रिका देखो।

असिमत (वै० त्रि०) कुरिकायुक्त, कुरी बांधे हुआ।

असिमेद (सं० पु०) असिः क्षिप्तो भेदो निर्यासरूपावसा यस्मात्। १ खदिर छुप, खैरका भाड़। २ विटखदिर, दुर्गन्ध खैर।

असिर (वै० त्रि०) अस-क्षेपे किरच। १ क्षेपक,

फेंकनेवाला। (पु०) २ किरण, शुवा। ३ वाण, तीर।

असिलोमन् (सं० पु०) असि इव तीक्ष्णानि लोमान्यस्य। दनुके पुत्रविशेष। महाभारत आदिपर्व ६५ अध्यायपर दनुके चालीस पुत्रोंमें इनका नाम लिखा है। हरिवंशके देवासुरयुद्धमें वायुके साथ इनका युद्ध वर्णित है। चण्डीमें भी इनका नाम देख पड़ता है।

असिष्टण्ट (अं० वि०) सहायक, मददगार, हाथ नीचे काम करनेवाला।

असिष्ठ (वै० त्रि०) शस्त्र प्रहारमें कुशल, जो हथियार खूब चलता हो।

असिहृत्य (सं० त्रि०) असिना हृत्यं घातं असि-हन-वाहु० क्वप्; ३-तत्। १ खड्गद्वारा वधके योग्य, तलवारसे मारने लायक। (स्त्री०) २ खड्गयुद्ध, तलवारकी लड़ायी।

असिहेति (सं० पु०) अन्ते हिंनोतेर्वा (कृति-यूति-जृति-साति-हेति-कीर्तय। पा २।३।८७।) इति निपा० क्तिन् हेतिः शस्त्रम्; असिरेव हेतिः शस्त्रं यस्य, बहुव्री०। खड्गद्वारा युद्धकारी, जो तलवारसे लड़ता हो। ‘नैक्षि’शिको-ऽसिहेतिः स्नात्।’ (अमर)

असी (सं० स्त्री०) नदीविशेष। असि देखो।

असीतक (वै० स्त्री०) अगुरु काष्ठ, अगुरुचन्दन।

असीतका (सं० स्त्री०) कृष्णापराजिता, काली अपराजिता।

असीतकादिचूर्ण (सं० स्त्री०) चूर्णविशेष, आमवात रोग पर दिया जानेवाला चूर्ण। असीतक, भागधिका, गुडूची, श्यामा, वराही, गजकर्ण एवं शुण्ठीको बराबर कूट-पीस चूर्ण बनाये और गर्म पानीके साथ सेवन करे। (माधवनिदान)

असीम (सं० त्रि०) १ सीमारहित, बेहद। २ अनन्त, बेशुमार। २ अपार, अगाध।

असील, असल देखो।

असीस (सं० स्त्री०) आशिस, देखो।

असीसना (हिं० क्ति०) आशीर्वाद देना, दुवा मांगना,

असु (सं० पु०) अस्यते क्षिप्यते अस चेपे उ। १ चित्त, दिल। कर्तरि उ। २ ताप, तकलीफ। अस्यन्ते क्षिप्यन्ते चास्यन्ते वा प्राणिनो एभिः, करणे बाहुलकात् उ। ३ प्राणवायु। 'पुंसि भूषणस्य प्राणाः।' (अमर) असुकर (सं० त्रि०) सुखेन क्रियते, सु-कृत-खलु, विरोधे नञ्-तत्। दुष्कर, दुश्गवार, सुशक्लिल, कठिन। असुक्षण, असुचण देखो।

असुख (सं० क्ली०) न सुखं विरोधे नञ्-तत्। दुःख, तकलीफ। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सुखशून्य, दुःखी, रज्जीदा।

असुखजीविका (सं० स्त्री०) सुखशून्य जीवन, जो जिन्दगी मजेदार न हो।

असुखपीडित (सं० त्रि०) दुःखसे ग्रसित, रज्जसे भरा हुआ।

असुखावह (सं० त्रि०) दुःख उत्पन्न करनेवाला, तकलीफदिह, जो रज्ज लाता हो।

असुखाविष्ट, असुखपीडित देखो।

असुखिन् (सं० त्रि०) सुखशून्य, कमबख्त, रज्जीदा।

असुखोदय (सं० त्रि०) दुःखमें समाप्त होनेवाला, जो तकलीफमें पूरा हो।

असुखोदक (सं० त्रि०) दुःखदायी, तकलीफ देनेवाला।

असुग, (हिं०) आशय देखो।

असुगम (सं० त्रि०) सुखेन गम्यते ज्ञायते बुध्यते वा, सु-गम-खलु, विरोधे नञ्-तत्। १ दुर्गम, जो हासिल न हो। २ दुर्बीध, जो समझ न पड़ता हो।

असुचि (हिं०) अशुचि देखो।

असुत (वै० त्रि०) १ दबाया न हुआ, जो निचोड़ा न गया हो। यह सोमरसादिका विशेषण है। (सं० त्रि०) २ सन्तानरहित, वैधौलाद, जिसके बालबच्चा न रहे।

असुतर (सं० त्रि०) दुर्गम, जो आसानीसे गुजर जानेवाला न हो।

असुहृत् (वै० त्रि०) हृत् न होनेवाला, जो आसुहा किया जा न सकता हो।

असुहृत् (सं० पु०) असुवः परकीयाः प्राणान्तरायेन सक्तः, जानबूझकर

हृष्यति, हृप् इगुपधात् क इति क प्रत्ययः, ३-तत्। यमदूतविशेष।

असुधारण (सं० क्ली०) असूनां प्राणादिपञ्चवायु-वृत्तीनां धारणम्, ३-तत्। १ जीवन धारण, जिन्दगी।

असुनिरस (सं० त्रि०) अप्रिय, उद्दण्ड, नागवार, तकलीफ देनेवाला।

असुनीत (वै० क्ली०) आत्मलोक, रुहानी दुनिया।

असुनीतस् (वै० पु०) आत्मप्रभु, रुहोंका मालिक।

असुनीति (वै० स्त्री०) असून् नयति। असु शब्दे उपपदे नीतिन्। (निबन्ध) १ प्राणवायु। न सुनीति, नञ्-तत्। २ अनीति, जो उत्तम नीति न हो।

असुन्दर (सं० त्रि०) साधारण, कुरूप, सादा, बद-शक्ल। २ अयोग्य, अनुचित, गैरवाजिब, नादुरस्त, जो ठोक न हो। (पु०) ३ व्यङ्ग्यविशेष। इसे देखते वाच्यार्थमें विशेष भाव रहता है। यह गुणीभूत व्यङ्ग्यका ही अङ्ग है।

असुन्व (सं० त्रि०) सुञ्-अभिषवे बाहु० शः (स्नादिभ्यः ऋः। पा ३।१।२३) इति सु उकारस्य वः नञ्-तत्। जो सोमलताको सींचता न हो।

असुपाद (सं० पु०) कालविशेष। देहधारियोंको एक श्वास खींच पुनः श्वास ग्रहण करनेमें जितना काल लगता, उसका चतुर्थांश असुपाद कहा जाता है।

असुप्त (सं० त्रि०) निद्राके वशीभूत न होनेवाला, जो सोता न हो।

असुप्तदृश् (सं० त्रि०) निद्रामें नेत्र न बन्द करनेवाला, जो हमेशा आंख खोले रहता हो।

असुविधा (सं० स्त्री०) १ कठिनता, अड़चन। २ दुःख, दिक्कत।

असुभ, (हिं०) अशुभ देखो।

असुभङ्ग (सं० पु०) १ जीवनका नाश, जिन्दगीका तोड़-फाड़। २ जीवनसम्बन्धीय भय, जिन्दगीके लिये खौफ। ३ जीवनका सन्देह, जिन्दगीका खतरा।

असुसृत् (सं० त्रि०) असून् प्राणान् विभर्ति, असु-सृ-क्षिप् तुगागमश्च, ३-तत्। प्राणधारी, प्राणी, मख-

असमत् (सं० त्रि०) असवः सन्तप्रस्य, मतुप् । प्राणी, जीवमात्र, जानवर ।

असुज्ज (वै० चि०) प्रतिकूल, खिलाफ, जो मिलता न हो ।

असुर (सं० पु०) अस्यति क्षिप्यति देवान् असु क्षेपणे (असेरन् । उप् १।४३) इति उरन् । १ सुरविरोधी दैत्य । 'असु क्षेपणे असादुरन् प्रत्ययः । असति इत्यसुरो दैत्यः ।' (उज्ज्वलदत्त) २ प्राचीन भारतियों और पारसियोंके प्रधान देवता । यह वरुणके प्रतिनिधि होते और पारसी इन्हें अशुर-मज्दके नामसे पूजते हैं । जन्द अवस्थामें असुरको अशुर कहते हैं । मेद इतना ही है, कि जरथुस्त्रीय धर्ममें असुरका अर्थ देवता और हमारे धर्ममें राक्षस है । किन्तु ऋग्वेदमें कितनी ही जगह असुर शब्द देवताओंके लिये भी व्यवहार किया गया है । असति दीप्यते, अस-दीप्तो उरन् । ३ सूर्य । ४ राहु । ५ हस्ती । ६ बादल । ७ प्रेत । 'असुरः सूर्यदैत्ययोः ।' (ह्रस्व) (वै० त्रि०) ८ आत्मवान्, जिन्दा । 'अनति गच्छति अनपीचे दीप्यते स्वयं आदत्ते वा जलं । यथा सुर ऐश्वर्यं सुरतीति सुर-का ईश्वरः स्वतन्त्र इत्यर्थः । असुर अनौचरः इन्द्रादिपरतन्त्र इत्यर्थः ।' (निरुक्त) ९ निराकार, ईश्वरीय, जो आदमीके काबूका न हो । (क्ली०) १० समुद्रलवण, समुद्रका नमक । ११ देवदासवृत्त । १२ उन्मादरोगविशेष, किसी किष्कका पागलपन । इस रोगमें पौडित व्यक्तिके खेद नहीं छुटता और वह देवी-देवता तथा गुरु-ब्राह्मणादि को खरो-खाटी कहते रहता है । कोई वस्तु उसे समुष्ट नहीं करती, वह बुरी राह पकड़ लेता है ।

१३ लोहारडांगे और पूर्व सरगुजाकी एक अनार्य जाति । असुर लोहा गलाके ही अपना निर्वाह करते हैं । कर्नल डाल्टन इन्हें उन्हीं असुरोंके वंशज बताते, जिन्हें प्राचीन काल मुण्डकोने मारपीट निकाल दिया था । किन्तु हारजेलिहोसका कहना है, कि असुर खानिका काम करने और मन्दिर बनानेवाले उन सभ्य शिल्पियोंके सन्तान ठहरते, जिनके चिह्न छोटा-नाग-पुरमें इस सिरेसे उस सिरेतक मिलते हैं । इनके तेरह गोत्र हैं । अपने गोत्रकी स्त्रीसे कोई पुरुष विवाह नहीं करता । अनेक पञ्जाबियोंके विधानमें

विवाहोच्छेदके लिये बड़ी अनुमति लेनी पड़ती है । इनकी स्त्रियां छोटेनागपुरके शहरों और बड़े-बड़े गांवोंमें नाचकूद अपना निर्वाह करती हैं । असुरोंके धर्मका वृत्तान्त अज्ञात है । डाल्टनके मतानुसार यह सिङ्गबोङ्ग नामक देवताको पूजते हैं ।

१४ असुरिया राज्य । यह शब्द हिन्दु भाषाका है । १५ प्राचीन नगर-विशेष । यह असुरिया राज्यको राजधानी रहा । इसीके नामपर असुरिया (Assyria) राज्य असुर कहाया है । मुख्य असुरियाके राज्यकी दक्षिण सीमापर इस नगरको बाबिलोनियाके सेमेटिकोंने पूर्वकालमें बसाया था । सन् ई०से २२५० वर्ष पहले बाबिलोनियाके नृपति खमूरबीकी स्मृति-प्रस्तावनामें असुर और निनेवी; दोनों नगरोंका नाम आया है । किन्तु प्रस्तावनामें जो असुरकी शब्द लिखा, उससे विदित होता, कि इस नामका कोई प्रान्त भी रहा ; क्योंकि 'की' का अर्थ 'भूमिसीमा' है । आजकल यह ताइग्रिस नदीके पश्चिमतट उच्च एवं निम्न जाब नदीके बीचोबीच काले-शेरघाट नामसे प्रसिद्ध है । सर ए० एच० लेयार्ड साहबने जो मट्टीका वस्तुल यहाँसे खोदकर निकाला, उसमें तिगलथ पिलेसर प्रथमका वृत्तान्त लिखा है । सन् १८०४ ई०में जो आविष्कार हुआ, उससे प्रमाणित होता है, कि असुर देवके पूजारी बाबिलोनियाके अधीन यहाँ शासन करते थे । बाबिलोनियाका राज्य घटनेसे पूजारी स्वतन्त्र नृपति बने और असुर अपने प्रान्तकी राजधानी हुआ । इस नगरकी चारो ओर पक्की दीवार रही । सन् ई०से १२७० वर्ष पहले तुकुलती-इनारिस्ती या तुकुलती मासूने नदीकी ओर इसकी रक्षा करनेको गहन परिखा खोदायी और भूमिकी ओर भित्ति बनवायी थी । सन् ई०से पहले १५ वें शताब्दमें भी यह दक्षिण की ओर बहुत बढ़ा रहा । नगरके उत्तरांशमें मन्दिरोंकी शोभा देख पड़ती थी । सिवा असुर देवके अनु और हदादका मन्दिर भी बहुत बड़ा था । दूसरे देवताओंके अनेक मठ रहे । निनेवीके राजधानी होते भी असुर देशका धार्मिक केन्द्र बना था । १६ असुरियाके प्रधान देव । प्रथमतः यह असुर

नगरके रक्षक देव रहे। इनके उड़नेवाले परिधिमें शरासन लगा है। दूसरे देवताओंके जो वर्णन मिलते, उनसे वह असुर देवके लघुरूप ही प्रमाणित होते हैं। असुरियाके वीर इन्हींका नाम लेकर युद्ध करनेको भागे बढ़ते रहे। सन् ई०से १२०० वर्ष पहले उस-पियाने इनके मन्दिरकी नींव डाली थी।

असुरकुमार (सं० पु०) भवनाघोष-सम्बन्धीय देवविशेष।

असुररक्ष (सं० त्रि०) सुखेन रक्षते; सु-रक्ष-खलु, नञ-तत्। स्वच्छन्दसे रक्षित किया न जानेवाला, जिसे आज्ञादीसे बचा न सके।

असुररक्षपण (वै० त्रि०) असुर-नाशकारी, असुरोंको मार डालनेवाला।

असुररक्ष्य (सं० त्रि०) कठिनतासे बचाने योग्य, जो मुश्किलसे रह सकता हो।

असुरगुरु (सं० पु०) असुरोंके गुरु शुक्राचार्य।

असुरग्रह (सं० पु०) भूतग्रहविशेष।

असुरत्व (वै० स्त्री०) अमूर्तता, परमार्थनिष्ठा, नफ-सानियत, रुहानियत।

असुर-बनी-पाल—असुरियाके बड़े राजा। ऐयरके १२वें दिन यह धूमधामसे असुरियाके राज्य-सिंहासन पर अपने पिता ईसरहहोन द्वारा बैठायें गये थे। सन् ई०से ६६८ वर्ष पहले पिताके मरनेपर इन्होंने मिश्रकी युद्धप्रवृत्ति समाप्त करना चाही। तिरहाकह इथि-वोपियाको भगे और असुरीय सेनाको नाइलपर चढ़नेमें ४० दिन लगे थे। तिरहाकहके साथ साजिश करनेपर सैसके मण्डलेश्वर नेको और दो दूसरे नृपति कैद कर निनेवी: भेजे गये। सन् ई०से ६६७ वर्ष पहले तिरहाकहके उत्तराधिकारी तन्दमन उच्च मिश्रमें पहुँचे और थेबेसने असुरियाके विरुद्ध विद्रोह उठाया। मेमफिसपर एकायक अधिकार कर विद्रोहियोंने असुरीय सेनाको वहाँसे निकाल बाहर किया था। उसी समय तायरमें भी विद्रोह उठ खड़ा हुआ। किन्तु असुर-बनी-पाल विद्रोही प्रान्तमें सेना भेजते ही रहे। अन्तको असुरीय सेनाने थेबेस छटा और दो सख्याकार सैन्योंको निनेवी: भेजा

चिह्नकी तरह भेज दिया। इसी बीच तायरने भी पानी न मिलनेसे आत्मसमर्पण किया था। असुरीय सेनाने फिर अरारतसे दक्षिणपूर्व मन्नाकी राजधानी दबा ली। इलामके व्यू मन् कैद कर निनेवी: भेजे और उनकी जगह उम्मनिगस सिंहासन पर बैठायें गये थे। सिलिसिया और तबलके नृपतियोंने अपनी कन्यायें असुर-बनीपालको व्याह दीं। किन्तु सन् ई०से ६६० वर्ष पहले लीडिया-नृपतिके साहाय्यसे सम्भेतिकसने असुरीय सेनाको मिश्रसे निकाल बाहर किया था। उधर बाबिलोनियामें भी असन्तोष बढ़ा और समसुम-युकिनने जातीय दलके नेता बन अपने भाईके विरुद्ध युद्धघोषणा की। किन्तु उन्हें अकृतकार्य हो पीछे हटना पड़ा था। सन् ई०से ६४८ वर्ष पहले बाबिलनने आत्मसमर्पण किया और समसुमयुकिनको आगमें जल मरना पड़ा। अन्तको असुरीय सेनाने अरबको भी पराजय किया, किन्तु वह सिमेरोय-सीदीय दलका सामना पकड़ न सकी। सन् ई०से ६२६ वर्ष पहले असुर-बनी-पालके मरनेपर असुरीय सम्म्राज्य विध्वंस हो गया। यह रसिक, दीर्घ-सूत्री और निर्दय रहे, किन्तु कला-कौशलका बड़ा आदर करते थे। निनेवी:का बड़ा पुस्तकालय इन्हीं की सम्पत्ति है।

असुरमाया (सं० त्रि०) पैशाचिक कुसृति, आसेबज्जद अफसुन, भूतोंका जादू।

असुररक्षस (वै० स्त्री०) १ असुर एवं राक्षस। २ पिशाच, भूत, आसेब, शैतान्।

असुरराज (सं० पु०) असुरेषु राजते; राज-क्रिय, ७ तत्। १ वलिराज। यह प्रजादके पौत्र थे। २ वकासुर। ३ असुरोंका अध्यक्ष, शैतानोंका बादशाह।

असुररिपु (सं० पु०) ६-तत्। १ असुरोंका शत्रु, आसेबोंका दुश्मन्। २ विष्णु। असुरारि प्रवृत्ति शब्दसे भी विष्णुका बोध होता है।

असुरसा (सं० स्त्री०) न सुष्ठु, रसो यस्याः, नञ-बहुव्री०। बबरी, तुलसी विशेष, बबयी।

असुरसूदन (सं० पु०) असुरोंको नाशकरनेवाले

असुरसेन (सं० पु०) दैत्य विशेष। इसके देहपर गया नामक नगर प्रतिष्ठित है।

असुरहन् (सं० त्रि०) असुरं हन्ति, असुर-हन्-क्तिप्। दैत्यनाशक, आसेबको बरबाद करनेवाला।

यह शब्द अग्नि, इन्द्र प्रभृति देवताओंका विशेषण है।

असुरा (सं० स्त्री०) अस्यति क्षिपति जनान् अन्ध-कारेण, असु क्षेपणे उरन् टाप्। १ रात्रि, रात।

२ राशि। ३ वेश्या, रण्डी। ४ हरिद्रा, हलदौ।

५ राई। 'चेरः सुधाभिजननोराजिका कृष्णिकासुरी।' (अमर)

असुराई, असुराही देखो।

असुराचार्य (सं० पु०) असुराणामाचार्यो गुरुः, ई-तत्। दैत्योंके गुरु शुक्राचार्य।

असुराधिप (सं० पु०) ई-तत्। १ प्रह्लादपौत्र वलि-दैत्य। २ असुरोंका अध्यक्ष, असेबोंका बादशाह।

असुरायी (हिं० स्त्री०) असुरता, दुष्टता, बुराई।

असुरारि (सं० पु०) देवता, असुरका शत्रु।

असुराह्न (सं० स्त्री०) असुरस्थाह्ना संज्ञा यस्य, शाक-बहुव्री०। कांस्य, कांसा।

असुराह्नपतङ्ग (सं० पु०) तैलपायिपतङ्ग, तिलचट्टा।

असुराह्नविट् (सं० पु०) कांस्यमल, कांसिका मैल।

असुराह्ना (सं० स्त्री०) असुराह्न देखो।

असुरिया, असुरीय देखो।

असुरी (सं० स्त्री०) १ राजिका, राई। २ असुर-पत्नी, असुरकी स्त्री।

असुरीय (Assyria) असुरिया और बाबिलोनियाका बड़ा साम्राज्य। यह टिगरिस और युफ्रेटिस नदीकी दोनों ओर बसा था। बाबिलोनिया देखो।

असुर्य (सं० त्रि०) असुराय हितम्, गवा० यत्।

१ असुरकी हितकर, आसेबकी फायदा पहुँचानेवाला।

२ अमूर्त, वेशक। ३ असुरसम्बन्धीय, आसेबसे

तात्त्विक रखनेवाला। (स्त्री०) ४ अमूर्तता, रुढ़ानियत।

५ असुरसमूह, शैतानोंका गिरोह। ६ मेघजल, बादलका पानी।

असुलभ (सं० त्रि०) सुखेन लभते, सु-लभ-खलु, विरोधे नञ्-तत्। दुष्प्राप्य, असाध्य, मुश्किलसे हासिल होनेवाला।

असुष्वि (वे० त्रि०) सु बाहु० कि द्विर्भावः, नञ्-तत्। सोमलताका पीड़क न होनेवाला, जो सोमलताको निचोड़ता न हो।

असुस् (सं० पु०) असुन् प्राणान् सुवति यमसदनं प्रेरयति, असु-स् प्रेरणे क्तिप्। वाण, जान मारनेवाला तीर।

असुस्थ (सं० त्रि०) सुखेन तिष्ठति, सु-स्था-क्, विरोधे नञ्-तत्। दुःस्थ, दुःखेस्थित, रोगयुक्त, बीमार, जो आराममें न हो।

असुहृद् (सं० पु०) शत्रु, दुश्मन्, जो शत्रुस दोस्त न हो।

असू (सं० स्त्री०) न सूते, सू-क्तिप्, नञ्-तत्। प्रसव न करनेवाली स्त्री, अकीमा, बांभ।

असूक्ष्ण (सं० स्त्री०) सूक्ष्मं सूक्ष्मं वा लुप्तं, नञ्-तत्। अनादर, अवज्ञा, अवहेला, बे-इज्जती, नाफरमांवर-दारी।

असूक्ष्म (सं० त्रि०) सूक्ष्म-स्मन् विरोधे नञ्-तत्। स्थूल, मोटा, जो बारीक न हो।

असूक्ष्म (हिं० वि०) सूक्ष्म या देख न पड़नेवाला, अदृश्य, पोथीदा, जो नजर न आता हो।

असूत (वे० त्रि०) सूयते स्म, सू-क्त-नञ्-तत्। १ अप्र-सूत, बांभ, प्रसव न करनेवाली। (सं०) नास्ति सूतो यस्य, नञ्-बहुव्री०। २ सारथिशून्य, जिसके गाड़ीवान् न रहे। 'असूत सा नागवधूपभोग्यम्।' (कुमार० १।१०) (पु०)

सूतः सारथिः, नञ्-तत्। ३ सारथि न होनेवाला व्यक्ति, जो शत्रुस गाड़ीवान् न हो। (हिं० वि०) ४ प्रतिकूल, सम्बन्धशून्य, खिलाफ, बेसिलसिला, जो मिला न हो।

असूति (वे० स्त्री०) १ उत्पत्तिका अभाव, पैदा न होनेकी बात। २ प्रतिबन्ध, रोक। ३ अप्रसूतता, बांभपन।

असूतिक (वे० त्रि०) असूत देखो।

असूयक (सं० त्रि०) असूय कण्डादि० यक् खलु। दोषारोपशील, नुक्ताचीन्, हासिद, भलाईमें बुराई लगानेवाला।

असूयन (सं० स्त्री०) परिवाद, पैशन्ध, मिथ्याभि-शाप, निन्द्याभियोग, दोहमत।

असूययित्वा (सं० अव्य०) मिथ्याभिशाप देकर, तोहमत लगाके ।

असूया (सं० स्त्री०) असू असूय वा यक् अ-टाप् ।
१ परगुणमें दोषारोप, दूसरेकी सिफ्तमें तोहमतका लगाना । मनुने असूयाकी पापमें गिना है । 'असूया तु दोषारोपोयुष्वपि ।' (अमर) २ विरोध, भगड़ा । ३ शत्रुता, दुश्मनी । ४ सञ्चारी भाव विशेष । काव्यमें यह रसके अन्तर्गत आती है । ५ अत्रिकी स्त्री ।

असूयित्वा (सं० क्ति०) असन्तुष्ट, जातामर्ष, कुपित, नाखुश, जो बखेड़ा कर रहा हो ।

असूयु (सं० क्ति०) असू असू वा कण्डादि० यक् उन् । १ असूयाशौल, तोहमत लगानेवाला । (पु०)
२ असूया, तोहमत ।

असूर (सं० क्ति०) सूरौ स्तम्भे धातूनामनेकार्थत्वात् सुतौ भावे घञ् नञ्-बहुव्री० । १ स्तोत्ररहित, स्तव-रहित, जिसे तारौफ न मिले । (वै० क्ली०) २ सोम-रस निकालनेवालेकी अनुपस्थिति । ३ स्तोत्ररहित स्थान, जिस जगहकी कोई तारौफ न करे ।

असूक्ष्ण, सूक्ष्म देखो ।

असूतं (वै० क्ति०) सूरौ स्तम्भे क्त बाहुल० न तस्य नत्वम् । १ अप्रेरित, जो भेजा न गया हो । २ दूरस्थ, जो नजदीक न हो ।

असूर्य (वै० क्ति०) सूर्यशून्य, आफ़ताबसे खाली ।
असूर्यम्यश्च (सं० क्ति०) सूर्यमपि न पश्यति, असूर्य-दृश-खश् सुम् च, असमर्थ-समा० । अत्यन्तगुप्त, सूर्यको भी न देखनेवाला, निहायत पोथोदा, जो आफ़ताबको भी देखता न हो ।

असूर्यम्यश्चा (सं० स्त्री०) १ नृपपत्नी विशेष, बाद-शाहकी औरत । २ अन्तःपुरमें रहनेवाली स्त्री मात्र, महलके भीतर रहनेवाली औरत । यह सुन्दर स्त्रीके विशेषणमें भी आती है । ३ सती-साध्वी स्त्री, पाकदामन औरत ।

असूल, उल्ल देखो ।

असृक् (सं० क्ली०) १ सृक्कानाम् गन्धद्रव्य, मेथी ।
२ कुङ्कुम, केसर । ३ रक्त, खून ।

असृक्कर (सं० पु०) असृक् रक्तं करोति असृज-क्-

ट, उप० सं० । शरीरस्थ रस धातु । वैद्यशास्त्रके मतसे अन्नादि भक्षण करनेपर पहले वह सब एक प्रकारके रसरूप (काइल)में परिणत होकर फिर रक्त हो जाता है । सुश्रुतमें लिखा है,—रससे रक्त, रक्तसे मांस, मांससे मेद, मेदसे अस्थि, अस्थिसे मज्जा एवं मज्जासे शुक्र उत्पन्न होता है । भावप्रकाशमें भी कहा है,—प्राणवायु भुक्तद्रव्यको पहले आमाशयमें ले जाता है । वहां भुक्तद्रव्य कषाय, मधुर, खवण, कटु, तिक्त, अम्ल—इन छः रसोंसे युक्त होकर फेनका आकार धारण करता, उसीका नाम रस है ।

असृक्प (सं० पु०) १ जलौका, जोंक । २ राक्षस-विशेष । यह रक्त पिया करता है ।

असृक्पात (सं० पु०) रक्तप्रवाह, खूनका गिरना ।
असृक्पावन् (वै० क्ति०) रक्तप, खून पीनेवाला ।
असृक्प्राव (सं० पु०) रक्तप्रवाह, खूनका गिरना या निकलना ।

असृक्प्राविन् (सं० क्ति०) रक्त निकालनेवाला, जो खून बहा रहा हो ।

असृग्गुल्य (सं० पु०-क्ली०) केसर, अयाल, घोड़े या शेरके गर्दनका बाल ।

असृग्गद (सं० पु०) कोष्ठ, मेदा, कोठा ।

असृग्दर (सं० पु०) असृग्दर्यते च्यते अनेनेति । रक्तप्रदर । यह रोग विरुद्ध मद्यादिके अशन, अजीर्ण, गर्भप्रपात, अति मेथुन, यानाध्वशोक, अतिकर्षण, भाराभिघात और दिनके अशनसे उत्पन्न होता है । इससे सवेदन साङ्गमर्द, दौर्बल्य, भ्रम, मूर्च्छा, मद, दृषा, दाह, प्रलाप, पाण्डुत्व और तन्द्रारोग नष्ट हो जाता है । (भावप्रकाश)

असृग्दरशैलेन्द्ररस (सर्वाङ्गसुन्दर) (सं० पु०) रक्त-प्रदरका रसविशेष । इसके बनानेकी रीति यह है—ईंटका चूर्ण, शोधित अभ्रक १ पल, साहागा २ तोला, दारुचिनी, एलायची, तेजपत्र, कर्पूर, नलद (खस), जाजत्री, बाला, मुस्ता (मोथा), नागेश्वर, खवण, कुष्ठ और त्रिफला प्रत्येक चार-चार आनाभर ले जलमें मर्दन करके २ रत्ती प्रमाण वटी बनानी चाहिये । इस औषधिकी सेवन करनेसे अङ्ग-

मर्द और वेदनायुक्त सर्वप्रकार प्रदर नष्ट होता है।

(प्रयोगावत)

असृग्दोह (सं० त्रि०) रक्त चूसनेवाला, जो खून बहाता हो।

असृग्धरा (सं० स्त्री०) असृक् रक्त धरति, असृज्-धृ-अच्-टाप्। चर्म, चमड़ा।

असृग्धारा (सं० स्त्री०) १ चर्म, चमड़ा। २ रक्त-प्रवाह, खूनका दरया।

असृग्वह (सं० स्त्री०) असृक् शोणितं वहति सर्वत्र सञ्चालयति, असृज्-वह-अच्। नाड़ी, नब्ज। नाड़ी, शरीरके सकल स्थानमें रक्तवहन करती, इसीसे उसका यह नाम पड़ा है।

असृग्विमोक्षण (सं० स्त्री०) असृजो रक्तस्य देहा-द्विमोक्षणं निःसारणम्, क्ष-तत्। रक्तका मोक्षण, खूनका निकास। देहमें यदि रक्त बढ़े या किसी-तरह बिगड़े, तो उसे देहसे निकाल डालना चाहिये। उसी निःसारणका नाम असृग्विमोक्षण है। पूर्वकालमें सकल देशके चिकित्सक ज्वर प्रभृति नाना प्रकार रोगमें रक्तमोक्षण करते थे। रग और कुहनीके ऊपरसे सचराचर रक्त निकाला जाता है। रक्त निकालनेसे पहले रोगीको शय्यापर बैठा देना चाहिये। क्यों कि मल्ला नीचा रहनेसे हठात् अधिक रक्त गिर सकता, जिससे रोगीके प्राण जानकी सम्भावना रहती है। रोगीको बैठाकर हाथपर पट्टी बांध देना चाहिये। उसके बाद शिराको फूल आनेपर ठ्ठाङ्गुष्ठसे दबाकर नष्टर लगाते हैं। फिर प्रयोजनानुसार रक्त निकाल या रोगीके मूर्च्छित हो जानेसे चत स्थानपर अङ्गुलि लगा पट्टी खोल डाले। परिशेषमें चतस्थानको दबाकर बांधनेसे फिर रक्त नहीं निकलता।

रगमें धमनीके मध्यस्थलमें तिरछा नष्टर लगानेसे भी रक्तमोक्षण किया जाता है। प्रयोजनानुरूप रक्त निकल जानेसे इस धमनीको बिलकुल काट डालना चाहिये। न काटनेसे उस जगह एन्डूरिजय नामक अर्बुद निकल सकता है। किन्तु काट देनेसे उसके उभय मुख जुड़कर सुख जाता है। कुहनीवाली

शिराको तरह पैरकी शिरासे भी रक्तमोक्षण करते हैं। नासारोग या ज्वरकालमें अत्यन्त मस्तकवेदना होने और मल्ला भारी पड़नेपर कितने ही लोग नासिकाके भीतरसे रक्त निकाल डालते हैं। सचराचर नाकका आन्तरिक पर्दा (Schneavian membrane) फार रक्तमोक्षण किया जाता है।

तीन प्रकारकी प्रणालीसे रक्तमोक्षण करते हैं। १म—अस्त्रप्रयोगसे इसकी बात पहली ही बतायी जा चुकी है। २य—कटोरी तथा सींगी और ३य—जोंक लगानेसे।

सींगी लगानेके लिये शीशेकी छोटी कटोरियां रहती हैं। सींगी लगाते समय शीशेकी कटोरी नष्टर, सुराका प्रदोष प्रभृति निकटमें प्रसृत रखे; फिर जिस स्थानसे रक्त निकालना हो, उसे पहले धोकर उष्ण वस्त्रसे अच्छी तरह रगड़े। उसके बाद कटोरीमें अल्प सुरा डाल आग लगा देना चाहिये। अग्निके तापसे जब कटोरी अल्प उष्ण होती और भीतरका वायु निकल जाता, तब धीत स्थानमें यह कटोरी उलटाकर लगानेसे चर्मपर चिपक बैठती है। यह सकल प्रक्रिया शीघ्र-शीघ्र करना चाहिये। चर्मपर कटोरी चिपक बैठनेसे धीरे-धीरे वह स्थान रक्तवर्ण हो जाता है। उस समय कटोरी निकाल रक्तवर्ण स्थानको तिरछा-तिरछा चीर दे और अतिशीघ्र पहले-की तरह फिर कटोरी लगाये। धीरे-धीरे कटोरीके भीतर रक्त निकल आता है। प्रयोजनमत रक्त निकल जानेसे कटोरीको हटा चतस्थानपर लिण्ट वस्त्र लपेट देना चाहिये। अधिक रक्त निकालना आवश्यक होनेसे दो-तीन कटोरियां लगानी पड़ती हैं।

पश्चिम-देशके कच्छड़ शीशेकी कटोरी नहीं, सींगी लगाते हैं। महिषके शृङ्गकी दोनो ओरसे छेद लेते हैं। शरीरके किसी स्थानपर अल्प चीरकर शृङ्गकी मोटी ओर लगा देते हैं। पीछे दूसरी ओर मुंहसे सांसको ऊपर खींच शरीरका रक्त निकाल लेते हैं। जोंक लगानेसे पहले शरीरका उपरिभाग अच्छीतरह परिष्कृत करे। फिर कपड़ेसे जोंकका अङ्ग पोछ डाले। शेषको किसी ग्लास या प्यालेमें रख चर्मपर

उलटकर लगानेसे जोक चिपक जाती है। चर्मको कुछ चीर डालनेसे भी उस स्थानपर जोक लगानेमें कष्ट नहीं पड़ता। जोक कूट जानेसे क्षतस्थानपर खेद या अलसीका प्रलेप चढ़ता, जिससे और भी किञ्चित् रक्त निकल आता है। किन्तु अधिक रक्तस्राव होनेसे क्षतस्थानपर मक्खड़ीका छोटा जाला रख या काष्ठिक लगा देना चाहिये। अन्तमें उस स्थानको वस्त्रसे बांध देते हैं।

दुर्बल व्यक्ति, बालक, गर्भवती स्त्री और पौड़ा विशेषसे सहज ही निर्वल हो जानेवाले रोगीका रक्त-मोक्षण करना न चाहिये। किन्तु विशेष आवश्यक आनेपर सावधानसे यत्सामान्य रक्त निकाल लेते हैं। असृज् (सं० स्त्री०) अस्यते क्षिप्यते इतस्ततो अन्य-नाड्योभिः, अस ऋजि—यद्वा न सृज्यते अन्यरङ्गवत् शरीरेण सममेव जातत्वात्, सृज्-क्विन् । १ रक्त, खून। अमरकोषमें असृज्को यह पर्याय लिखे हैं,—रुधिर, लोहित, अस्त्र, रक्त, क्षतज, शोणित। २ मङ्गलग्रह। रक्तवर्ण रहनेसे मङ्गलग्रह असृज् कहलाता है। ३ कुङ्कुम, केसर। ४ विष्णुभस्मे षोडश योग। असृज् योगमें जन्म लेनेसे मनुष्य धनी कुत्सित और दुरात्मा होता है। वह विदेश जाता और महाप्रलोभी बलवान् निकलता है।

असृण (सं० स्त्री०) स्वर्णगैरिक, सोनगीरु।

असृणि (सं० त्रि०) अप्रतिहत, वेरोक, जो रोका न गया हो।

असृत (सं० त्रि०) १ असिद्ध, जो तैयार न हो। २ अपक्व, कच्चा, जो पका न हो।

असृन्मिश्र (सं० त्रि०) रक्तसे आच्छादित वा मिश्रित, खून आलूदा, जो खूनसे भरा हो।

असृन्मुख (द्वे० त्रि०) नृशंस मुख-विशिष्ट, ऋनी दहनवाला, जिसके खूनी मुंह रहे।

असृपाट (सं० पु०) असृपाटी देखो।

असृपाटी (सं० स्त्री०) असृजो रक्तस्य पाटी गमन-मनया रीत्या पृथो० साधु। रक्तधारा, खूनका दरया।

असृष्ट (सं० त्रि०) १ अरचित, जो बनाया न गया

हो। २ अप्रदत्त, जो बंटा न हो। ३ प्रवाहित, जारो, जो रोका न गया हो।

असृष्टान्न (सं० त्रि०) अन्नको न बांटनेवाला, जो अनाज न देता हो।

असेग (हिं० वि०) असह्य, बरदाश्त न होनेवाला, जो सहा न जाता हो।

असेचन, असेचनक देखो।

असेचनक (सं० त्रि०) न सिञ्चति मनोऽस्मात्, सिञ्च अपादाने ल्युट् सञ्ज्ञायां कन्—यद्वा सिञ्चति मनस्तोषयति, सिञ्च कर्तरि ल्युट् स्वार्थे कन्; नास्ति सेचनकः मनस्तोषको यस्मात्, नञ् ५-बहुव्री०। १ अत्यन्त प्रियदर्शन, निहायत खूबसूरत, जिसे देखनेसे पेट न भरे। २ सेकशून्य, वेसींच। (स्त्री०) सेचनं सेकः, स्वार्थे कन् अभावे नञ्-तत्। ३ सेकका अभाव, सिंचायीका न होना।

असेन्य (वै० त्रि०) १ सैन्यके अयोग्य, फौजके नाकाबिल। २ आघात न करनेवाला, जो जख्म न देता हो।

असेरी—बम्बई प्रान्तके कोङ्कण जिलेका एक स्थान। यहां एक पहाड़ी किला बनी, जिसमें एक छोटी गुफा खुदी है।

असेवग (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। २ सेवाका अभाव, श्रमशून्यताका न होना, अदम-तावेदारी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। सेवाशून्य, तावेदारी न करनेवाला।

असेवित (सं० त्रि०) १ अनपेक्षित, विस्मरित, खयाल न किया हुआ, जो भूलमें पड़ गया हो। २ लुप्तव्यवहार, मतरुक, जो छूट गया हो।

असेवितेश्वरद्वार (सं० त्रि०) धनियोंके द्वारपर बैठके राह न देखनेवाला, जो बड़े आदमियोंके दरवाजेपर नौकरी या-याच्चाके लिये ठहरता न हो।

असेव्य (सं० त्रि०) १ सेवाके अयोग्य, जो तावेदारो किये जानेके लायक न हो। २ अभ्यासके अयोग्य, जो काममें लानेके लायक न हो।

असेसर (अं० पु०) सभ्य, सभासद, सालिस, आमिल, पञ्च। Assesor फौजदारीका मुकद्दमा फौसल करने में जजको राय देनेके लिये असेसर चुना जाता है।

असेना (हिं० पु०) वृक्षविशेष, कोई पेड़। इसकी लकड़ी बहुत मजबूत होती है।

असेला (हिं० वि०) शैलीपर न चलनेवाला, बेकायदा, जो राहसे जाता न हो।

असो, आसो (हिं० क्रि० वि०) वर्तमान वत्सर, इस साल।

असोक (हिं०) अशोक देखो।

असोकी (हिं० वि०) शोकशून्य, अफसोस न करनेवाला।

असोच (हिं० वि०) शोच न करनेवाला, जिसे फिक्र न रहे।

असोज (हिं० पु०) आश्विन मास, कारका महीना।

असोस (हिं० वि०) शुष्क न होनेवाला, जो सूखता न हो।

असोसियेशन (अं० स्त्री०) १ सङ्गम, संसर्ग, साहचर्य, हमनश्रीनी, साथ, मिलाप। २ सभा, समाज, पंक्ति, परिषद्, मजलिस, अजुमन, जमात। Association.

असौध (हिं० स्त्री०) दुर्गन्ध, बदबू।

असौच, अशौच देखो।

असौनामन् (ऐ० त्रि०) ऐसे-वैसे नामवाला, जिसके नामका ठिकाना न रहे।

असौन्दर्य (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ सौन्दर्यका अभाव, बदसूरती, भौड़ापन। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। २ सौन्दर्यशून्य, बदसूरत, भौड़ा।

असौम्य (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत्। १ सौन्दर्यशून्य, बदसूरत, भौड़ा। २ अप्रिय, नागवार, डरावना।

असौम्यस्वर (सं० त्रि०) असौम्यः कुत्सितः स्वरौ यस्य, बहुव्री०। काककी तरह मन्द स्वरयुक्त, कर्कश स्वरयुक्त, कांव-कांव करनेवाला, जो बड़बड़ाता हो।

असौष्ठव (सं० स्त्री०) सुष्ठु, भवम्, सुष्ठु-अण् नञ्-तत्। १ सौन्दर्यका अभाव, बदसूरती, भौड़ापन। २ अयोग्यता, नाकाबिलियत। ३ अलङ्कार शास्त्रमें अरदशा विशेष। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ४ सौष्ठवरहित, बैदसूरत।

अस्का (हिं० पुं०) १ बुलावा, नौकाओं में पहचानने का लट्

कन। नौनीतालकी ओर लटकनदार जो छोटीसी नथनी पहनी जाती, वही अस्क कहाती है।

२ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिलेकी एक जमीन्दारी। इसका क्षेत्रफल १६० वर्गमील है। पहले यह गुमसूर राज्यका एक अंश रही। २ मन्द्राज प्रान्तके गञ्जाम जिलेका एक नगर। यह अक्षा १८° ३६' ३५" उ० और द्राघि० ८४° ४२' ६" पू० पर अवस्थित है। गुमसूर यहांसे ५ कोस दक्षिण पड़ता है। ऋषिकुल्या और महानदीके सङ्गमपर इस नगरका दृश्य विद्यमान है। नगरके पास ही ऋषिकुल्या नदीपर १८ वित्ते लम्बा इमारती पुल बना है। अस्कमें जमीन्दारीका डेडक्वार्टर होनेसे उसके प्रभु निवास करते हैं। नगरमें छोटी कचहरी, कौदखाना, थाना और डाकघर बना है। सन् १७२५-३६ ई०को गुमसूर विद्रोह उठनेपर सरकारी सेनाने कुछ दिनके लिये इसे अधिकार कर लिया था। इसकी चारो तरफ उपजाऊ भूमि विद्यमान है। गन्नेकी खेती अधिक होती है। इसके निकट ही जो चीनोके कारखाने हैं, उनमें हजारों आदमी काम करते और लाखों रुपयेका माल बनाते हैं।

अस्कन्दगिरि—युक्तप्रदेश-बांदाके एक कवि। इनका जन्म सन् १८५८ ई०में हुआ था। यह गोसाईं नवाब हिम्मत बहादुरके वंशज रहे। शृङ्गाररसकी कविता इनका प्रधान लक्ष्य थी। 'अस्कन्दविनोद' नामक काव्यग्रन्थमें इन्होंने अपना चातुर्य प्रकट किया है।

अस्कन्दित (सं० त्रि०) अचरित, अप्रतिहत, जो गिरा न हो।

अस्कन्दितव्रत (सं० त्रि०) व्रतशील, अहदका सच्चा, बातका धनी।

अस्कन् (वे० त्रि०) स्कन्द-क्त, नञ्-तत्। १ अचरित, जो बिखरा न हो। २ अनाच्छादित, जो ढंका न हो। ३ स्थायी, पायदार।

अस्कम्भन (वे० त्रि०) स्कम्भ-लुपट्, नञ्-तत्। १ बोधका अभाव, नासमझी। २ स्तम्भ वा साहाय्यका अभाव, सहारेका न मिलना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०। ३ बोधशून्य, नासमझ।

अस्कुधोयु (वे० त्रि०) कृती च्छेदने बाहु० कु
तकारस्य धकारः। कधु ङ्खनाम। नञ् पूर्वं धातोः
अकारः उपजनः, धुशब्दस्य धो भावः—यद्वा नञ् पूर्वात्
करोतेर्निष्ठायां मङ्गतशब्दस्य अस्कुभावः। दधातेर्ध्रियते-
र्वा बाहुलकात् उप्ति प्रत्ययः, णित्वाद् युगागमः
धकारस्य धोभावः। (निरुक्त) अङ्गस्त्र, अनल्प, अवि-
च्छिन्न, बड़ा, भारी, बहुत, ज्यादा, जो कटा न हो।
“अस्ते धनं यदसदस्कुधोयु ययं।” (ऋक् ७५३।१)

अस्कुलित (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ खललनशून्य,
जो फिसल न पड़ता हो। २ अप्रमत्त, जो मतवाला
न हो। ३ स्थायी, मजबूत, जो हिला न हो।

अस्कुलितप्रयाण (सं० त्रि०) अग्रसर वननेमें खललित
न होनेवाला, जो मजबूतीसे कदम बढ़ा रहा हो।

अस्त (सं० पु०) अस्त्यन्ते सायं प्रातर्वा सूर्यस्य
चान्द्रस्य वा किरणा यत्र, अस्तु द्वेषणे आधारे क्त।
१ पश्चिमाचल, अस्तपर्वत। २ सूर्यास्त, गुरुव-आफ़ताब।
३ ज्योतिषोक्त लग्नसे सप्तमस्थान। समग्र ग्रह अपने
लग्नसे सप्तम स्थानपर पहुँचकर अस्त हो जाते हैं।
(क्ली०) ४ गृह, मकान्। ५ मृत्यु, मौत। ६ दर्शन-
का अयोग्यत्व, देख न पड़नेकी हालत। (त्रि०)
७ क्षिप्त, फेंका हुआ। ८ अवसित, निकाला हुआ।
९ अवसानप्राप्त, खतूम। १० निरस्त, हटाया हुआ।
११ प्रेरित, जो रवाना कर दिया गया हो। (अव्य०)
१२ गृहमें, मकान् पर।

अस्तक (सं० पु०) अस्तं अपुनरावृत्तिं अवसानं वा
करोति, अस्त-णिच्-खुल्। १ निर्वाणमोक्ष। (द्वे० क्ली०)
२ गृह, मकान्।

अस्तकोप (सं० त्रि०) विगतकोप, जो गुस्सा करके
ठण्डा पड़ गया हो।

अस्तग (सं० त्रि०) अस्तमदर्शनं पश्चिमाचलं वा
गच्छति, अस्त-गम-ङ् इ-तत्। अदृश्य, सूर्यकी किरणसे
आच्छन्न, पश्चिमाचलगत, डूबा हुआ, जो बैठ गया हो।

अस्तगत, अलग देखो।

अस्तगमन (सं० क्ली०) अस्तस्यादर्शनस्य गमनं
प्राप्तिः, इ-तत्। डूब जानेकी हालत, गुरुव। यह
सकलके पहले किसी राशिमें रह पीछे जसमें सप्तम

राशिपर उदय एवं अदृश्य होनेको अस्तगमन कहते
हैं। सूर्य चन्द्रादिके अस्तावल जानेको भी अस्तगमन
ही कहा जाता है।

अस्तगिरि (सं० पु०) पश्चिमाचल, मगरवी पहाड़।
इस पर्वतपर सूर्य जाकर डूबता है।

अस्तङ्गत (वे० त्रि०) १ डूबा हुआ, जो बैठ गया
हो। २ नष्ट, बरबाद। ३ अवनत, झुका हुआ।

अस्तधी (सं० त्रि०) निर्वृद्धि, अहमक।

अस्तन (हिं०) लन देखो।

अस्तबल (अ० क्ली०) अश्वशाला, तबेला, घोड़साल।
Stable.

अस्तव्य (सं० त्रि०) अस्थायी, विचलित, नापायदार,
जो ठहरा न हो।

अस्तव्यत्व (सं० क्ली०) अस्थायित्व, विचलित दशा,
नापायदारी, घबराहट।

अस्तमती (सं० स्त्री०) अस्तमतति, अत-अच् गौरादि०
डीप्। शालपर्णीवृक्ष, सलूनका पेड़।

अस्तमन (सं० क्ली०) अन बाहु० भावे अप् अस्तं
अदर्शनस्य अनः गतिः। १ भूगोलकक्षामें आच्छादन-
हेतु सूर्यादिकी अदर्शनप्राप्ति, ज़मीनकी दूसरी ओर
जानेसे आफ़ताब वगैरहका देख न पड़ना। अस्त
सूर्यादेरदर्शनस्य अनः प्राप्तिर्यस्मिन् काले, बहुव्री०।
२ सूर्यादिके अस्त होनेका समय, आफ़ताब वगैरहके
डूबनेका वक्त।

अस्तगमननक्षत्र (सं० क्ली०) अस्त होनेका नक्षत्र,
जिस नक्षत्रमें किसी ग्रहका अस्त रहे।

अस्तमनवेला (सं० स्त्री०) सूर्यास्तका समय, जिस
वक्त पे आफ़ताब डूबे।

अस्तमय (सं० पु०) अस्तं ईयते गम्यतेऽस्मिन्,
अस्तं इण परजिति अच्। १ प्रलय, कयामत।
२ सूर्यादिका अदर्शन, आफ़ताब वगैरहका देख न
पड़ना। ३ अन्य ग्रह सकलका सूर्यके साथ योग,
दूसरे सितारोंका आफ़ताबसे मिल जाना।

अस्तमयन (सं० क्ली०) अस्तमय देखो।

अस्तमित (सं० त्रि०) डूबा या बैठा हुआ, जो

अस्तमीके (वै० अव्य०) अस्तं मातेः कौकन् धातो-
र्लापस् निपात्यते, अस्त प्राप्यतेऽस्मिन्। अन्तिकमें,
घरपर, पास, नजदीक।

अस्तर (फा० पु०) १ भित्तवा, दोहरे कपड़ेके नीचे
की तरह। २ दोहरे चमड़ेके नीचेकी तरह। ३ जमीन्,
चन्दनका तेल। इससे अतर बनता है। ४ बारोक
साड़ीके नीचे लगनेवाला वस्त्र। ५ नीचेका रङ्ग। इसपर
दूसरा रङ्ग चढ़ता है। (हिं०) ६ अस्त्र, हथियार।
अस्तरकारी (फा० स्त्री०) १ चूनेका रगड़ रगड़ कर
चढ़ाया जाना। २ बनावट, साज।

अस्तरण (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। स्तरणका
अभाव, विस्तारका न होना, न फैलनेकी हालत।

अस्तवत् (सं० त्रि०) अवरोधित, निवारित, अटका
हुआ, जो रोका गया हो।

अस्तव्यस्त (सं० त्रि०) आकुल, अव्यवस्थित, अस-
म्बद्ध, खराब-खस्ता, घसर-पसर, जटपटांग।

अस्तसङ्ख्य (सं० त्रि०) अगणित, वैशुमार।

अस्ता (वै० स्त्री०) १ आयुध, वाण, हथितार, तीर।
(अव्य०) २ भवनमें, घरपर।

अस्ताग (सं० पु०) अर्हत् विशेष। यह उत्सर्पिणी
युगके पन्द्रहवें अर्हत् रहे।

अस्ताघ (सं० त्रि०) अस्तं नष्टं अघं आविल्ल
यत्न, बहुव्री०। अति गम्भीर, निहायत गहरा।

अस्ताचल (सं० पु०) कर्मधा०। पश्चिमाचल, अस्त-
पर्वत, जिस पहाड़पे आफताब डूबे।

अस्ताचलावलम्बिन् (सं० त्रि०) अस्ताचलका अव-
लम्ब लेनेवाला, जो अस्ताचलकी पकड़े हो। सन्ध्याकी
डूबते समय सूर्य अस्ताचलावलम्बी कहाता है।

अस्ताङ्गि, अस्ताचल देखो।

अस्तापुर—उड़ीसा प्रान्तके बालेश्वर जिलेका एक
नगर। यहां एक सरकारी स्कूलमें परीक्षोत्तीर्ण
विद्यार्थियोंको प्राथमिक अध्यापन कार्यकी शिक्षा
दी जाती है।

अस्तावलम्बन (सं० स्त्री०) चित्तिके पश्चिम भाग-
पर अहका उदय, उफ़क़के मग़रबी हिस्सेपे सितारिका
ठहराव।

अस्तावलम्बिन् (सं० त्रि०) अस्तका अवलम्ब लेने-
वाला, जो डूब रहा हो।

अस्ति (सं० अव्य०) अस्-श्-तिप्। अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः।
पा ४।४।६०। १ होके, ठहरकर। (स्त्री०) २ स्थिति,
विद्यमानता, हस्ती, हाजिरी।

अस्तिकाय (सं० पु०) अस्तिकायः स्वरूपं यस्य,
बहुव्री०। जैनमतसिद्ध विद्यमान-स्वरूप पदार्थ विशेष।
हालत, सूरत। अस्तिकाय पांच प्रकारका होता
है,—१ जीवास्तिकाय, २ पुद्गलास्तिकाय, ३ धर्मास्ति-
काय, ४ अधर्मास्तिकाय और ५ आकाशास्तिकाय।
शाङ्करभाष्यमें उपरोक्त जैन अस्तिकायका मत काट
दिया गया है।

अस्तिचौर (सं० त्रि०) दुग्धविशिष्ट, दूधसे लबरेज।

अस्तिचौरा (सं० स्त्री०) अस्ति चौरं यस्याः, बहुव्री०।

सुपुधिकारिः अस्तिचौरादीनां बहुव्रीहिर्वक्तव्यः। (काशिका) टाप्। बहु
दुग्धवतौ गो, खूब दूध देनेवाली गाय।

अस्तित्व (सं० स्त्री०) अस्ति भावः त्व। विद्यमानता,
मौजूदगी, हाजिरी।

अस्तिनास्ति (सं० अव्य०) कदाचित्, शायद।

अस्तिनास्तिता (सं० स्त्री०) अस्तिनास्ति देखो।

अस्तिनास्तित्व (सं० स्त्री०) सन्दिग्ध विद्यमानता,
मशकूक मौजूदगी।

अस्तिप्रवाद (सं० स्त्री०) जैन पूर्व विशेष, जैनियोंके
किसी पूर्वका नाम। जैनियोंके चौदह पूर्वों वा प्राचीन
लेखोंमें चौथेको अस्तिप्रवाद कहते हैं। पूर्व देखो।

अस्तिमत् (सं० त्रि०) अस्ति विद्यमानं धनमस्य,
मतुप्। धनी, दौलतमन्द, रुपयेवाला। (स्त्री०)
डीप्। अस्तिमती।

अस्तिस् (सं० स्त्री०) जरासन्धस्की कन्या, प्रासिकी
भगिनी और कंसकी पत्नी।

अस्तीन् (हिं०) आलोन देखो।

अस्तु (सं० अव्य०) अस भावे तुन्। १ ऐसा ही
हो, जो चाहे सो हो, खैर, भला, क्या मुजायका है।
२ फिर, आगे।

अस्तुङ्गार (सं० वि०) प्रबल, समर्थ, ताकतवर,
जोरदार, दवा-जसा।

अस्तुत (वै० त्रि०) १ अप्रशंसित, जो तारीफ़के काबिल न हो। २ स्तोत्रशून्य, जो भजनमें गाया न गया हो। (हिं०) ३ प्रशंसित, सुसतइसिन।

अस्तुति (सं० पु०) १ प्रशंसाका अभाव, अपकीर्ति, हिकारत, थुडू-थुडू। (हिं०) २ स्तुति, प्रशंसा तारीफ़।

अस्तुरा (फा० पु०) छुर, कुरा। इससे बाल बनाते हैं।

अस्तृत (वै० त्रि०) अप्रतिहत, ज्वरदस्त, अजीत।

अस्तृतयज्वन् (वै० त्रि०) अदम्य रूपसे यज्ञ करनेवाला, जो यज्ञ करनेमें थकता न हो।

अस्तेन (सं० त्रि०) नञ्-तत्। १ साधु, भला, अच्छा, जो चोर न हो। (क्ली०) २ स्तेयका अभाव, ईमान्दारी, चोरी न करनेकी हालत।

अस्तेय (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत्। स्तेय वा चौर्यका अभाव, ईमान्दारी, साह्मकारी। पातञ्जल-सूत्रमें लिखा, कि अहिंसा, सत्य, अस्तेय ब्रह्मचर्य और परिश्रम यम कहाता है।

अस्तोभ (सं० त्रि०) स्तुभ्यते येन, स्तुभ करणे घञ् नास्ति स्तोभः हुंफडादिः निरर्थकः शब्दो यत्र। अनर्थक शब्दशून्य, बेफायदा आवाज, न रखनेवाला।

अस्त्य (वै० क्ली०) गृह, घर, मकान।

अस्त्यान (सं० क्ली०) स्तौ भावे क्त, नञ्-तत्। १ निन्दा, हिकारत, बुराई। २ भर्त्सन, भाड़-फटकार। (त्रि०) ३ शसंहत, जो मिला न हो।

अस्त (सं० क्ली०) अस्त्यते चित्यते, अस्तु क्षेपणे ड्रन्। १ क्षेपणीय वाणादि, फेंककर मारा जानेवाला तीर वगैरह। २ आयुध, हथियार। करणे ड्रन्। ३ चाप, कमान्। ४ रिपु कट्टीक प्रहार-साधन खड्गादि, डाल वगैरह। ५ करवाल, तलवार। ६ व्याघ्रनख, शेरका नाखून। ८ चिकित्सास्त्र, नश्वर वगैरह।

अस्तकण्टक (सं० पु०) अस्त्रं कण्टक इव। वाण, तीर, कांटे-जैसा हथियार। अग्रभाग कण्टक-जैसा रहनेसे वाणका यह नाम पड़ा है।

अस्त्रकार (सं० त्रि०) अस्त्रं करोति निर्मिर्मते; अस्त्र-क-अण् उप० समा०। अस्त्रनिर्माणकर्ता, हथियार बनानेवाला।

अस्त्रकारक, अस्त्रकार देखो।

अस्त्रकारिन्, अस्त्रकार देखो।

अस्त्रक्षेपक (सं० त्रि०) वाण फेंकनेवाला, जो तीर चला रहा हो।

अस्त्रधला (हिं० वि०) अस्त्र फेंकनेवाला, जो तीर मार रहा हो।

अस्त्रचिकित्सक (सं० पु०) अस्त्रवेद्य, ज़राह, नश्वर लगानेवाला तबीब।

अस्त्रचिकित्सा (सं० स्त्री०) अस्त्रेण चिकित्सा, इ-तत्। अस्त्रादिसे क्षतव्रणादिका प्रतीकार, ज़राही, चीरफाड़। यह आठ भागमें विभक्त है,—१ छेदन चीरना, २ भेदन—फाड़ना, ३ लेखन—खुरचना, ४ वेधन-चुभाना, ५ मेघण-धुलाई, ६ आहरण-काट-छांट, ७ विश्रावण—क्षतके पूय आदिको बहा देना और ८ सिलायी-जखममें टांके लगाना।

अस्त्रजित् (सं० पु०) अस्त्रं तदाघातजं व्रणं जयति तन्निवारकत्वात्, अस्त्र-जि-क्षिप् तुक्। कवाटवक्रवृत्त, डेंटुवेका पेड़।

अस्त्रजीव, अस्त्रजीविन् देखो।

अस्त्रजीविन् (सं० पु०) अस्त्रेण तद्व्यापारेण जीवति, णिनि। अस्त्र द्वारा युद्धादिकर जीविका चलानेवाला, जो हथियारसे लड़ अपनी जिन्दगी बसर करता हो, योद्धा, सिपाही।

अस्त्रधारक, अस्त्रधारिन् देखो।

अस्त्रधारण (सं० क्ली०) अस्त्रका अवस्थान, हथियारका बांधना।

अस्त्रधारिन् (सं० त्रि०) अस्त्रं धरति धारयति वा, अस्त्र-धृ चुरा० धारि वा णिनि। अस्त्रधारक, हथियार बांधनेवाला।

अस्त्रनिवारण (सं० क्ली०) प्रहारसे रक्षाका उपाय, हथियारकी चोटका बचाव।

अस्त्रमन्त्र (सं० पु०) अस्त्राणां विप्रकर्षार्कषयोर्मन्त्रः, इ-तत्। तन्त्रोक्त फट् मन्त्र, अस्त्रप्रयोग एवं प्रक्षिप्त अस्त्रके आकर्षणका मन्त्र।

अस्त्रमार्ज (सं० पु०) अस्त्रं मार्जि, अस्त्र-मृज-अण् उप० समा०। शाणकर, सैकलगर, हथियार पर शान रखनेवाला, जो हथियार साफ़ करता हो।

अस्त्रमार्जक, अस्त्रमार्ज देखो।

अस्तु युद्ध (सं० स्त्री०) अस्त्रद्वारा युद्ध, हथियारकी लड़ाई।

अस्त्रलाघव (सं० स्त्री०) अस्त्रनेपुण्य, हथियार चलानेकी सफाई।

अस्त्रविदु (सं० पुं०) अस्त्रं तत्प्रयोगादि वेत्ति, अस्त्र-विदु-क्विप्, इ-तत्। अस्त्रप्रयोगादिमें अभिन्न, जो हथियार खूब चलाता हो।

अस्त्रविद्या (सं० स्त्री०) इ-तत्। अस्त्रचेपण एवं आकर्षणज्ञापक विद्या, अस्त्रचेपणादिका ज्ञान, जङ्गमा इत्थम्। २ अस्त्रविद्याबोधक शास्त्र, जिस किताबमें लड़ायी सिखानेकी बातें रहें।

अस्त्रविद्वत्, अस्त्रविदु देखो।

अस्त्रवृष्टि (सं० स्त्री०) वाणकी वर्षा, तीरोंकी बारिश।

अस्त्रवेद (सं० पुं०) विद्यते ज्ञायते येन, विदु करणे धनुः, अस्त्रस्य तत्चेपणादेः वेदः शास्त्रम्, इ-तत्। धनुर्वेद, जिस शास्त्रमें हथियार चलानेकी तरकीबें रहें।

अस्त्रवैद्य (सं० पुं०) अस्त्रचिकित्सक, जराह, नशतर लगानेवाला हकीम।

अस्त्रशस्त्र (सं० स्त्री०) सकल प्रकार आयुध, सब किस्मका हथियार, तलवार बन्दूक वगैरह।

अस्त्रशाला (सं० स्त्री०) अस्त्रागार, सिलहखाना, हथियार रखनेकी जगह।

अस्त्रशिक्षा (सं० स्त्री०) सामरिक व्यायाम, जङ्गी कसरत, हथियार चलानेकी तालीम।

अस्त्रसायक (सं० पुं०) अस्त्रं क्षेप्यं सायक इव। १ नाराचास्त्र। नाराचास्त्र वाणकी तरह चलनेसे अस्त्र-सायक कहाता है। अस्थते क्षिप्यते शत्रुरनेन, अस करणे द्रुन् ततः कर्मधा०। २ सकल लौहमय वाण, लोहेका तीर।

अस्त्रहीन (सं० स्त्री०) अस्त्रेण तत्प्रयोगेन वा हीनम्, इ-तत्। अस्तुशून्य, अस्तुव्यापारशून्य, बेहथियार, जो हथियार चलाना जानता न हो।

अस्त्रागार (सं० स्त्री०) इ-तत्। आयुधागार, अस्तुग्रह, सिलहखाना, हथियार-घर।

अस्त्राघात (सं० पुं०) इ-तत्। अस्तुका आघात, अस्तुका प्रहार, हथियारकी चोट।

अस्त्राहत (सं० स्त्री०) इ-तत् अस्तुद्वारा आहत, हथि-यारसे मारा गया।

अस्त्रि (वे० पुं०) वाण मारनेवाला, जो शस्त्र-स तीर चलाता हो।

अस्त्रिन् (सं० स्त्री०) अस्त्रं धनुरस्तस्य इति। धनुर्धर, शस्त्रधारी, तीर-कमानसे लड़नेवाला, जो हथियार बांधे हो।

अस्त्री (सं० स्त्री०) १ स्त्रीभिन्न, जो चीज औरत न हो। व्याकरणमें—स्त्रीलिङ्गको छोड़ पुंलिङ्ग और नपुंसक लिङ्ग।

अस्तौक (सं० स्त्री०) पत्नीरहित, स्त्रीशून्य, वै-औरत, जो औरत रखता न हो।

अस्त्रण (वे० स्त्री०) अस्त्रीक देखो।

अस्थन्वत् (वे० स्त्री०) अस्थिमय, हड्डीदार।

अस्थल (हिं०) स्थल देखो।

अस्थला (सं० स्त्री०) अप्सरस् विशेष, किसी परीका नाम।

अस्था (वे० स्त्री०) शनकोटि, झादिनी, सैका, बिजली, गाज।

अस्थाग (सं० स्त्री०) अस्थामस्थितिं गच्छति, अस्था-गम-ड। अगाध, अतलस्पर्श, निहायत गहरा।

अस्थान (सं० स्त्री०) अप्राशस्त्ये नञ्-तत्। १ अप-लष्ट स्थान, अयोग्य स्थान, खराब जगह। (स्त्री०) अतलस्पर्शी, निहायत गहरा। (अव्य०) ३ अयुक्त रूपसे, बेमौके। (हिं० पुं०) ४ स्थान, जगह।

अस्थाने (सं० अव्य०) स्थाने युक्तम्, नञ्-तत्। अयुक्तरूपसे, नाकाबिल तीरपर।

अस्थायिन् (सं० स्त्री०) न तिष्ठति स्था-णिनि-युक्, नञ्-तत्। चञ्चल, शिताब, जल्द गुजर जानेवाला। (स्त्री०) डीप्। अस्थायिनी।

अस्थायी (हिं०) स्थायी देखो।

अस्थायर (सं० स्त्री०) विरोधे नञ्-तत्। १ जङ्गम, मनकूला, जो चल-फिर सकता हो। (हिं०) २ स्थावर, गैर-मनकूला, जो चलता फिरता न हो।

अस्थि (सं० स्त्री०) अस्थते अस (असिचक्षिभ्यां कथिन् । उष् ३।१५४) इति कथिन् । हाड़, अस्थि शब्दके ये कई पर्याय देखे गये हैं,—कौकस, कुल्ह, मेदोज । फलके वीज गुठलीको भी अस्थि कहते हैं ।

भावप्रकाशके मतानुसार मेद शरीरके अग्निसे पकता है । उसके बाद वायुद्वारा शोषित होनेपर अस्थि पैदा होता है । हाड़ शरीरका सारभाग है । जैसे वृक्षका सारभाग वृक्षकी, उसी तरह शरीरका सारपदार्थ हाड़ देहकी रचा करता है । इसीसे शरीरका मांस आर चमड़ा नष्ट हो जानेपर भी अस्थि नष्ट नहीं होता ।

रासायनिक परीक्षा द्वारा मनुष्यके हाड़में सैकड़ें पीछे ये सब चीजें पाई जाती हैं,—

जान्तवपदार्थ (जिलेटिन) ...	३३-३० भाग ।
फस्फेटचूर्ण ...	५३-०४ ”
कार्बन चूर्ण ...	११-३० ”
फस्फेट अब मेग्नेशिया ...	१-१६ ”
सोडा और नमक ...	१-२० ”

प्रथम अवस्थामें हाड़की बनावट मांसपेशी जैसी रहती है । इसमें छोटे-छोटे छेद एक साथ मिले रहते हैं । परन्तु शिरको खोपड़ी और कन्धेके हाड़में वैसा नहीं रहता । क्रमसे इस मांसपेशीमें पार्थिव पदार्थ, फस्फेटचूर्ण और कार्बन चूर्णके जमनेसे वह सख्त हो जाता है । किसी प्रकारके जलमिश्र द्रावकमें हाड़ भिगाकर रखनेसे पार्थिव पदार्थ गल और वह फिर कोमल एवं स्थितिस्थापक हो जाता है । हाड़में अत्यन्त ताप लगानेसे जान्तव पदार्थ नहीं रहता, इसीसे जरासा हिला देनेपर वह चूर-चूर हो जाता है । अतएव दोनों प्रकारके पदार्थोंके न रहनेसे हाड़ कठिन होना कैसे सम्भव है ।

बचपनके हाड़में पार्थिव पदार्थ कम रहता है, इसासे खेलते-खेलते लड़कोंके इतना गिर पड़नेपर भी हड्डी नहीं टूटती । फिर परिपक्व वयसमें थोड़ी सी चोट लग जानेसे ही बहुत पौड़ा होती और सहज ही हाड़ टूट जाता है ।

शिशुओंको यथेष्ट दुग्ध द्वारा लालन

करनेसे उनके हाड़में पार्थिव पदार्थ कम पैदा होता, सुतरां वह कोमल हो जाता है । इसीसे कितने ही रोगी बच्चोंके उठकर चलने फिरनेपर शरीरके भारसे पैर टेढ़े पड़ते हैं । इसका नाम है रिकेट्स रोग । दरिद्रोंके घरमें ही यह अधिक देखा जाता है ।

अस्थि ही शरीर निर्माणका प्रधान उपादान है । देहकी प्रधान प्रधान इन्द्रियां रह सकेनेके लिये ही अस्थिमें गद्गर निर्मित होता और देह सुकोशलसे चालित होनेके लिये कोमलांश इसके साथ मिलता है । हाड़ श्वेतवर्ण, कठिन और स्थितिस्थापक है । हाड़का उपरीभाग कठिन, संयत और चिकना तथा भीतरी भाग ठोक मधुमचीके छत्ते जैसा छिद्र-युक्त है ।

शरीरके हाड़ चार अण्डियोंमें विभक्त हैं, यथा—दीर्घास्थि, क्षुद्रास्थि, प्रशस्तास्थि एवं विषमास्थि । शरीरकी जब एवं अधःशाखामें दीर्घास्थि है । ये सब हाड़ खोखले हैं । इनके भीतर मज्जा रहती है ।

सारे कङ्कालमें २८४ पृथक् पृथक् हाड़ हैं । यथा—मेरुदण्डमें २६, करोटी ८, कर्णास्थि ६, मुखास्थि १४, पञ्जर एवं वक्षोस्थि २६, ऊर्ध्वशाखा ६४, अधःशाखा ६० । इनके सिवा दांत, प्यातेज्ञा सेसामेद एवं अन्यान्य वामिनयन अस्थियां ८० हैं ।

हमारे देशके शल्यतन्त्र मतसे मनुष्यके शरीरमें सर्वसमेत ३०० अस्थि हैं । इनमें दो हाथों और दो पैरोंके १२०, दोनों पार्श्व, कटिदेश, वक्षःस्थल, पृष्ठ एवं उदरमें ११७, ग्रीवाके ऊपर ६३—यही ३०० अस्थि हैं ।

पैरकी प्रत्येक अंगुलीमें तीन-तीन करके १५, पदतलमें ६, कूर्ची (भूमध्य) में २, एड़ोंमें १, गुल्फमें २, जानुमें १, उरुदेशमें १, इसी तरह दूसरे पैरमें भी ३०, अस्थि रहते हैं सुतरां हाथ और पैरमें सब मिलाकर १६० हुये ।

प्रत्येक पार्श्वमें छत्तीस छत्तीस करके ७२, लिङ्ग वा योनिमें १, गुच्छमें १, दोनों नितम्बोंमें २, पृष्ठवंशमें १, वक्षःस्थलमें ८, पृष्ठमें ३० और नेत्रद्वयमें २ अस्थि हैं ।

ग्रीवादेशमें ८, कण्ठनालीमें ४, दोनों हनुओंमें २,

दन्तमें ३२, नासिकामें ३, तालुमें १, गण्डस्थलमें २, दोनों कानोंमें २, शङ्ख (ललाट)में २ और मस्तकमें ६ अस्थि हैं।

शब्दतन्त्रमें ये सब अस्थि पांच श्रेणियोंमें विभक्त हैं। यथा—१ तरुणास्थि, २ कपालास्थि, ३ रुचकास्थि, ४ वलयास्थि, ५ नलकास्थि।

अचिकोष, नासिका, कर्ण एवं श्रोत्रोंमें तरुणास्थि, मस्तक, शङ्ख, तालु, गण्डस्थल, स्कन्ध, जानु एवं नितम्बमें कपालास्थि, दन्तमें रुचकास्थि; हस्त, पद, पाश्र्व, पृष्ठ, वक्ष और उदरमें वलयास्थि; हस्तपदके अङ्गुलितल, कूर्चदेश, मणिवन्ध, वाहुद्वय एवं जङ्घामें नलकास्थि है।

शरीरके किस किस स्थानमें कितनी हड्डियां हैं और उनका गठन आदि कैसा है, इसका विस्तारित विवरण उस उस शब्दमें देखो।

मनुष्य प्रकृतिके कुछ हाडोंके भीतर मज्जा है। अनेक मछलियोंके कांटोंके अन्दर छेद नहीं होता। हाथी आदि, कुछ जानवरोंके शिरके हाडमें वायु रहता है। इच्छा करने ही से हमलोग निश्वास खींच फेफड़ेको वायुसे भर सकते हैं। फेफड़ा वायुसे परिपूर्ण रहनेपर जलमें डूब जाते भी शरीर ऊपर उतरा आता है। पक्षी भी इसीतरह निश्वास खींच कर हाडके भीतर वायु भर सकते हैं। इसीसे इच्छा करते ही वे सब जमीनपरसे अनायास ही ऊपर उड़ जाते हैं।

दुर्बल मनुष्यके लिये यदि मांसका शोरबा पकाया जाय, तो उसमें हाड रहना आवश्यक है। कारण, हाडका जिलेटिन शोरबेके साथ मिल जानेसे वह लघु पथ होता है। जिलेटिन पुष्टिकर है, कि नहीं इसमें मतभेद है। परन्तु यह स्पष्ट देखा जाता है, कि कुत्ते हाड खाकर दृष्टपुष्ट होते हैं। फिर यह भी सुननेमें आता है, कि दुग्धिके समय नरवे और खुडनके आदमी मछलीका कांटा और अनेक जन्तुओंका हाड खाकर प्राणधारण करते हैं।

सचराचर हाडकी कुरी, कड़ी आदि और नाना प्रकारके अस्त्रोंकी मूठ बनती है। असंख्य लोग

हाडसे तीर और वस्त्रमकी गांसी तय्यार करते हैं। दक्षिण अमेरिका और तातारकी कोई कोई जाति लकड़ीके अभावमें हाड जलाकर आग बनाती है। उसी आगसे उसको रसोई आदिका काम चलता है। भूमिमें अस्थिभस्म डालनेसे उसकी उर्वरताशक्ति बढ़ती है। हाडके कोयलेसे चीनों आदि कीतनी ही चीजें साफ की जाती हैं।

अस्थिक, अस्थि देखो।

अस्थिकुण्ड (सं० स्त्री०) नरकविशेष। इस नरकमें हड्डी ही हड्डी देखायी देती है। जो लोग गयामें विष्णुपदपर पिण्डदान नहीं करते, वह अस्थिकुण्ड-नरकमें डाले जाते हैं। (ब्रह्मवैवर्त)

अस्थिकृत् (सं० पु०) करोति, कृ-कृप् अस्थिः कृत्, कृ-तत्। अस्थिकारक मेदोधातुविशेष, मगज, हड्डीका गूदा। वैद्यशास्त्रमतमें मेदोधातुसे अस्थि बनता है।

अस्थिगतज्वर (सं० पु०) अस्थिमें पड़ुंवा हुआ ज्वर, हड्डीका बुखार। मेद एवं अस्थिका कूजन, श्वास, विरेक, छर्दि और गात्रोंका विक्षेपण अस्थिगतज्वरमें होता है। (वैद्यकनिघण्टु) इसका प्रतिकार वान्तिघ्न औषध, वस्तिकर्म और अभ्यङ्गोद्घर्णन है।

अस्थिग्रन्थि (सं० पु०-स्त्री०) ग्रन्थिरोग, गांठकी बीमारी।

अस्थिच्छलित (सं० स्त्री०) सुश्रुतोक्त काण्डभग्न नामक रोग विशेष, शिकस्तगी-उस्तुखान्, हड्डी-टूटन।

अस्थिज (सं० पु०) अस्थि जायते, अस्थि-जन-ड।

१ अस्थि-धातुजात मज्जा, मगज, गूदा। २ वज्र, बिजली, गाज। (वै० त्रि०) ३ अस्थिमें उत्पन्न, जो हड्डीसे पैदा हो।

अस्थिजननी (सं० स्त्री०) १ वसाधातु, चर्बी। २ मेदो-धातु, मगज, गूदा।

अस्थित (सं० त्रि०) चञ्चल, नापायदार, जो खमोश न खड़ा हो।

अस्थिति (सं० स्त्री०) अभावे नञ-तत्। १ स्थितिका अभाव, अस्थैर्य, जगह या हालतकी अदममौजदगी। २ मयोदाका अभाव, हृदका न होना। (त्रि०) नञ-

बहुव्री० । ३ मर्यादाशून्य, वेहद । ४ स्थैर्यरहित, डावांडोल ।

अस्थितुण्ड (सं० पु०) अस्थीव कठिनं तुण्डमस्य । पक्षिविशेष, कोई चिड़िया । इसके मुंहमें हड्डी ही हड्डी रहती है ।

अस्थितेजस्, अस्थित् देखो ।

अस्थितोद (सं० पु०) १ अस्थिकी सूचीविह्वत् वेदना, हड्डीमें सूई चुभने-जैसा दर्द । २ अस्थिपीड़ा, हड्डी की बीमारी ।

अस्थित्वच् (सं० स्त्री०) अस्थिकी त्वक्, हड्डीके ऊपरकी भिन्नी ।

अस्थिधन्वन् (सं० पु०) अस्थिमयं धनुरस्य, अनड् समा० । शिव, हड्डीकी कमान् बांधनेवाले शङ्कर । अस्थिनिर्मित धनुष रखनेसे शिवको अस्थिधन्वा कहते हैं ।

अस्थिपञ्चर (सं० पु०) अस्थिपञ्चर इव । १ शरीरस्थ अस्थिसमूह, जिसकी हड्डीका जखीरा । २ पञ्चराकार कङ्काल, ठठरौ । कङ्काल देखो ।

अस्थिप्रक्षेप (सं० पु०) मृतस्य अस्थ्यां गङ्गायां यथा-विधि प्रक्षेपः, क्ष-तत् । सत्कार बाद मृत व्यक्तिके अस्थिविधानका क्रमसे गङ्गामें समर्पण किया जाना, हड्डीका गङ्गामें सेराना ।

अस्थिफल (सं० पु०) पनसवृक्ष, कटहलका पेड़ ।

अस्थिभक्ष (सं० पु०) अस्थि भक्षयति, अस्थि चुरा० भक्ष-ण । १ कुक्कुट, कुत्ता । २ शृगाल, गौदड़ । ३ अस्थिखानेवाली पक्षी, जो चिड़िया हड्डी निगल जाती हो ।

अस्थिभक्षा (सं० स्त्री०) ओषधि विशेष, कोई जड़ी बूटी ।

अस्थिभङ्ग (सं० पु०) अस्थो भङ्गः, क्ष-तत् । १ अस्थि-भञ्जन, शिकस्तगी उस्तुखान्, हड्डीटूटन । २ इसी नामका रोगविशेष, हड्डीफूटन ।

अस्थिभुज्, अस्थिभच् देखो ।

अस्थिभूयस् (वै० त्रि०) अस्थिमय, सूखा हुआ, जिसमें सूखकर हड्डी ही हड्डी रहें ।

अस्थिभेद (सं० पु०) १ अस्थिभङ्ग, शिकस्तगी-उस्तु-खान् । २ अस्थिविशेष, किसी किसकी हड्डी ।

अस्थिभेदक (सं० त्रि०) अस्थि भङ्ग करनेवाला, जो हड्डी तोड़ता हो ।

अस्थिमत् (सं० त्रि०) अस्थीनि सन्तप्रस्य मतुप् । पृष्ठवंशविशिष्ट, जो हड्डी ही हड्डी रखता हो ।

अस्थिमय (सं० त्रि०) अस्थो विकारः मयट् । अस्थि-निर्मित, हड्डीका बना हुआ, जिसमें हड्डी ही हड्डी रहें ।

अस्थिमर्म (सं० क्ली०) क्ष-तत् । अस्थिका मर्म, हड्डीका नाजुक मुकाम । यह अष्टसंज्ञक होता है । कटिमें दो, नितम्बमें दो, अंशफलकमें दो और शङ्खमें दो अस्थिमर्म रहता है ।

अस्थिमाला (सं० स्त्री०) अस्थिनिर्मिता माला । १ अस्थिनिर्मित जपकी गुटिका, हड्डीसे बनी जप करनेकी माला । क्ष-तत् । २ अस्थिश्रेणी, हड्डीकी कृतार । ३ अस्थिसूत्र, हड्डीका हार ।

अस्थिमालिन् (सं० पु०) अस्थिमाला सूत्रयथितास्थि-समूहोऽस्तस्य, अस्थिमाला इनि । शिव, हड्डीका हार पहननेवाले महादेव ।

अस्थियुज् (सं० पु०) अस्थि युनक्ति, युज्-क्तिन् । हड़जोड़का पेड़ ।

अस्थियोग (सं० पु०) भग्न अस्थिका संश्लेष, टूटी हड्डीका मिलान ।

अस्थिर (सं० त्रि०) न स्थिरम्, नञ्-तत् । १ स्थिर न रहनेवाला, नापायदार, जो टिकता न हो । २ कम्पायमान, चञ्चल, चुलबुला, जो कांप रहा हो । ३ अनिश्चित, सुभ्रवा, नामालूम । ४ अविश्वसनीय, नाक्वबिल-एतवार, जो पक्का न हो । (हिं०) ५ स्थिर, टिका हुआ ।

अस्थिरता (सं० स्त्री०) १ स्थिरताका अभाव, चाञ्चल्य, अनिश्चितता, नापायदारी, चुलबुलाहट, तंगैयुर, डावांडोलपन । (हिं०) २ ठहराव, मजबूती ।

अस्थिरत्व (सं० क्ली०) अस्थिरता देखो ।

अस्थिराद्विक (सं० पु०) हिन्ताल वृक्ष, गोल-पट्टेका पेड़ ।

अस्थिवत् (सं० त्रि०) अस्थिमय, उस्तुखानी, हड्डीदार ।

अस्थिविग्रह (सं० पु०) अति-चीणत्वात् अस्थि

सारो विग्रहो देहो यस्य, बहुव्री० । १ शिवके अनुचर भृङ्गी । इनके सुखे शरीरमें हड्डी ही हड्डी देख पड़ती हैं । (त्रि०) २ अतिक्षीण शरीर-युक्त, जो सुखकर लकड़ी बन गया हो ।

अस्थिशृङ्खला (सं० स्त्री०) अस्थ्यां शृङ्खलेव योजनहेतुः ।

अस्थिसंहार, हड़जोड़ ।

अस्थिशृङ्खलिका, अस्थिशृङ्खला देखो ।

अस्थिशेष (सं० त्रि०) अस्थिमात्रं शेषो यस्य, शाक० बहुव्री० । मांसादिशून्य, अतिक्षीण, निहायत लाग्र, बहुत दुबला, जिसके निम्नपे हड्डी ही हड्डी देख पड़े ।

अस्थिशोष (सं० पु०) अस्थिका निर्जलत्व और चय, हड्डीकी खुरकी और घटती ।

अस्थिसंहार (सं० पु०) अस्थीनिःसंहतिं योजयति, अस्थि-सम्-ह-अण् । अन्विमान् वृक्ष, हड़जोड़का पेड़ ।

अस्थिसंहारक (सं० पु०) गहड़ पत्ती, हड़गोला ।

अस्थिसंहारिका (सं० स्त्री०) अस्थिसंहार देखो ।

अस्थिसङ्घात (सं० पु०) अस्थिमेलनस्थल, हड्डीके जोड़को जगह । अस्थिसङ्घात अष्टादश हाते हैं,— गुल्फमें पांच ; जानु, वङ्गण, कटिदेश एवं मस्तकमें एक-एक ।

अस्थिसञ्चय (सं० पु०) मृतस्य दाहानन्तरं अस्थ्यां सञ्चयः । शवदाहानन्तर चिताके अस्थिका संग्रह, मुर्दा जलाने बाद चिताकी हड्ड़ियोंका इकट्ठा करना । वैदिक समय अस्थि इकट्ठा कर ब्राह्मण मष्टीमें गाड़ देते थे । आज भी अग्निहोत्री ब्राह्मण और क्षत्रिय राजा ऐसा ही करते हैं । सुविधा पानेसे प्रायः सकल ही सञ्चित भस्म और अस्थिको गङ्गाजलमें छोड़ते हैं । संवर्तने लिखा है,—प्रथम, तृतीय, पञ्चम, सप्तम अथवा नवम दिन चातिके साथ चितासे अस्थिसञ्चय करना चाहिये । किसी स्थलमें द्वितीय दिन भी अस्थि-सञ्चयका विधान है । वैष्णव चतुर्थ दिवस अस्थिसञ्चय करते हैं । अन्वेष्टि शब्द देखो ।

अस्थिसन्धानकर (सं० पु०) लघुन, हड्डीमें घुस जानेवाला लहसुन ।

अस्थिसन्धानजनी (सं० स्त्री०) अस्थिसंहार देखो ।

अस्थिसन्धि (सं० स्त्री०) १ अस्थिसन्धिलनस्थान, हड्डी मिलनेकी जगह । २ अस्थियोग, टूटी हड्डीका मिलान ।

अस्थिसन्धिक, अस्थिसंहार देखो ।

अस्थिसमर्पण (सं० स्त्री०) मृत व्यक्तिके अस्थिका गङ्गामें फेंका जाना, हड्डीका सेराना ।

अस्थिसमुद्भव (सं० पु०) मज्जा, चर्बी ।

अस्थिसम्बन्धन (सं० पु०) राल, धूना ।

अस्थिसम्भव (सं० पु०) अस्थिः सम्भवः कारणं यस्य, बहुव्री० । १ अस्थिजात मज्जा धातु, हड्डीसे पैदा होनेवाली चर्बी । २ वज्र । इन्द्रने दधीची मुनिकी हड्ड़ियोंसे वज्र बनाया था । इसीसे वज्रकी अस्थि-सम्भव कहते हैं । ३ (त्रि०) अस्थिसे उत्पन्न, जो हड्डीसे पैदा हो ।

अस्थिसम्भवस्नेह (सं० पु०) मज्जा, चर्बी ।

अस्थिसार (सं० पु०) अस्थ्यां सारः पाकपरिणामः, ई-तत् । १ मज्जा धातु, चर्बी । (त्रि०) अस्थ्येव सारो यस्य, बहुव्री० । २ रक्तमांसशून्य, जिसमें गोशत और खून न रहे । चलित भाषामें अतिशीर्ण व्यक्तिको भी अस्थिसार कहते हैं ।

अस्थिसारस्थिता (सं० स्त्री०) मज्जा, चर्बी ।

अस्थिस्थण (सं० पु०) शरीर, निम्न, जिस चीजमें हड्डीके खम्भे रहें ।

अस्थिस्नेह (सं० पु०) मज्जा धातु, चर्बी ।

अस्थिस्नेहसंज्ञ, अस्थिस्नेह देखो ।

अस्थिसांस (वै० त्रि०) अस्थिको पृथक् पृथक् गिर-वानेवाला, जो हड्ड़ियोंको इधर-उधर बिखरवा देता हो ।

अस्थूरि (वै० पु०) न तिष्ठति, स्था बाहु० कूरि । १ बहुत अश्वयुक्त रथ, जिस गाड़ीमें बहुतसे घोड़े जुते । (त्रि०) २ बहुत अश्वयुक्त, जिसमें एकसे ज्यादा घोड़े रहें । ३ एक ही ओर न रखनेवाला, जो एकसे ज्यादा पहलू रखता हो । “अस्थूरि नो गार्हपत्यानि संहृता” (ऋक् ६।१५।२८)

अस्थूल (सं० त्रि०) १ लघु, विरल, सूक्ष्म, पतला, जो मोटा न हो । (हिं०) २ स्थूल, मोटा, भारी ।

अस्थैयस् (सं० त्रि०) चपल, अनवस्थित, अधीर,
नापायदार, विसबात, सुतगैयर, जो ठहरा न हो।
अस्थैय (सं० त्रि०) अभावे नञ्-तत्। १ चपलता,
अधैर्य, नापायदारी, विसबाती। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०।
२ स्थैर्यहीन, विसबात, जो ठहरा न हो।
अस्नाह (वै० त्रि०) स्नानसे प्रेम न रखनेवाला,
जो नहाता न हो।
अस्नान (हिं०) स्नान देखो।
अस्नाविर (वै० त्रि०) स्नानाः शिराः यस्मिन् न
विद्यन्ते, नञ्-बहुव्री०। शिरा-वर्जित, स्थूल शरीर-
शून्य, नसें न रखनेवाला।
अस्निग्ध (सं० त्रि०) १ कर्कश, परुष, कठिन, रुखा,
सख्त, जो चिकना न हो। २ निर्दय, नामेहरवान्।
अस्निग्धदारु (सं० त्रि०) अस्निग्धं चाक्चिकश्मृन्
दारु कर्मधा०। देवदारु।
अस्निग्धदारुक, अस्निग्धदारु देखो।
अस्नेह (सं० पु०) अभावे नञ्-तत्। १ स्नेहका
अभाव, मुहब्बतकी अदममौजूदगी। (त्रि०) नञ्-
बहुव्री०। २ स्नेहशून्य, मुहब्बतसे खाली।
अस्पताल (अं० त्रि०) Hospital, औषधालय, दवाखाना।
अस्पन्द (सं० पु०) अस्पन्दन देखो।
अस्पन्दन (सं० त्रि०) अभावे नञ्-तत्। १ चलन-
का अभाव, अदमहरकती। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०।
२ क्रियाशून्य, हरकत न करनेवाला।
अस्पर्श (सं० पु०) स्पृश भावे घञ्, अभावे नञ्-
तत्। १ स्पर्शका अभाव, जिस हालतमें छू न सके।
(हिं०) २ स्पर्श, कुवायी। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०।
३ स्पर्शशून्य, जो छूता न हो।
अस्पर्शन (सं० त्रि०) अशुद्ध वस्तुका न छूना, नापाक
चीज़से किनाराकशी।
अस्पर्शनीय (सं० त्रि०) स्पर्शके अयोग्य, अशुद्ध,
नापाक, जिसे छू न सके।
अस्पर्शयोग (सं० पु०) नास्ति स्पर्शः विषयसम्बन्धो
यत्र तादृशो योगः, कर्मधा०। १ विषयस्पृहाशून्य, जिस
बातमें किसी वस्तुका लालच न रहे। २ निर्विकल्पक
ज्ञान, निराली समझ।

अस्पर्शा (सं० स्त्री०) आकाशवल्ली, आसमानी वेल।
अस्पर्शित (सं० त्रि०) जो छूआ न गया हो।
अस्पष्ट (सं० त्रि०) नञ्-तत्। अव्यक्त, मखलुत,
नासाफ, नामालूम।
असृत (वै० त्रि०) अनिवार्य, दुर्घर, गेर-काबिल-
मुजाहिमत, नाकाबिल-मुकाबला, जो जीता न गया
हो।
असृश (सं० त्रि०) न स्पृष्टमर्हन्, अर्हार्थे क्ण्,
नञ्-तत्। स्पर्शागोचर, नाकाबिल-मस, जो छूने
लायक न हो।
अस्पृष्ट (सं० त्रि०) स्पर्श न किया हुआ, जो छूआ
न गया हो।
अस्पृष्टरजस्तमस्क (सं० त्रि०) अतिशय शुद्ध, निहायत
पाकीजा, जो बुराईसे छू न गया हो।
अस्पृष्टवक्त्रि (सं० त्रि०) अग्निका स्पर्श न किये
हुआ, जो आगसे छू न गया हो।
अस्पृष्टि (सं० स्त्री०) स्पर्शका अभाव, न छूनेकी
हालत, छूआहूतसे किनारा।
अस्पृह (सं० त्रि०) १ अनिच्छुक, सन्तुष्ट, खादिश न
रखनेवाला, खुरसन्द, जो लालची न हो। २ विरक्त,
लापरवा।
अस्पृहणीय (सं० त्रि०) अकाम्य, अनिष्ट, अप्रशस्त,
नामरगूब, नारवा, जो चाहने लायक न हो।
अस्पृहा (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ इच्छाका
अभाव, खादिशका न होना। (त्रि०) नञ्-बहुव्री०।
२ स्पृहारहित, निष्पृह, जो लालची न हो।
अस्फुट (सं० त्रि०) न स्फुटं प्रकाशम्, नञ्-तत्।
१ प्रकाशरहित, अव्यक्त, नासाफ, पोशीदा, देख न
पड़नेवाला। (त्रि०) २ अव्यक्त वाक्य, नासाफ
कलाम, जो बात समझ न पड़ती हो।
अस्फुटफल (सं० त्रि०) अव्यक्त परिणाम, नासाफ
नतीजा। २ त्रिकोणादिका बृहत् क्षेत्रफल, सुसप्तस
वर्गरेखका मोटा रक्बा।
अस्फुटवाक्, अस्फुटवाच् देखो।
अस्फुटवाच् (सं० त्रि०) अस्फुटा अव्यक्ता वाच् यस्य।
अस्फुटवाचक, अस्फुटवाचक देखो।

न बोलता हो। (स्त्री०) अस्फुटा चासौ वाक् चेति, कर्मधा०। २ अव्यक्त वाक्, नासाफ कलाम, तोतली बोलौ।

अस्फोट (सं० पु०) काश्चनवृत्त, कचनारका पेड़।

अस्मत्ता (सं० अव्य०) अस्मद् बाहु० त्राच्। हमारे साथ, हमलोगोंमें।

अस्मत्ताच्, अस्मद्वाच्, देखो।

अस्मद् (सं० त्रि०) अस्मते क्षिप्यते देहनाशात् पश्चात् असु क्षेपणे (युष्मिन्मन्दिक्। उण् १११३६) इति मदिक्। उत्तम पुरुष, मैं यंह अर्थ समझानेका सर्वनामविशेष, देहभिमानी जीव। अस्मद् शब्दका रूप तीनों लिङ्गोंमें एक ही सा रहता है।

युष्मद् और अस्मद् शब्दके उत्तर इदमर्थमें छ एवं अण् प्रत्यय होता है। आवयोः अस्माकं वा अयं अस्मदीयः। यह हम दोनों आदमियों वा बहुत आदमियोंका है। (तद्विग्रहि च युष्माकायाकौ। पा ४।३।२) खञ् और अण् प्रत्यय परे रहनेपर बहुवचनार्थमें युष्मद् शब्दके स्थानमें युष्माक, अस्मद् शब्दके स्थानमें अस्माक आदेश होता है। आस्माकीनः। आस्माकः। यह हम दो आदमियोंका है। (तवकनमकाविकवचने। पा ४।३।२) खञ् एवं अण् प्रत्यय परे रहनेसे एकवचनार्थमें युष्मद् शब्दके स्थानमें तवक एवं अस्मद् शब्दके स्थानमें ममक आदेश होता है। मामकीनः। मामकः। यह मेरा है। मम अयम् अस्मद् छ। मदीय। (प्रत्ययोत्तरपदयोश्च। पा ४।३।२८) प्रत्यय वा उत्तर पद परे रहनेसे म पर्यन्त एकार्थं युष्मद् शब्दके स्थानमें त्वद् एवं अस्मद् शब्दके स्थानमें मद आदेश होता है। मदीयः। उत्तरपद परे रहनेसे, मत्पुत्रः ऐसा रूप होगा, तसिल् अस्मत्तः। एकवचनमें मत्तः। मामिच्छति। (सुप आत्मनः क्वच्। पा ३।१।८। मद्यति। अस्मानिच्छति अस्माद्यति। मामाचष्टे मापयति। (सि० की०। पा ३।१।२१ सूत्रम्।) मादयतीति न्यायम्। (सि० की० उक्तं सूत्रम्)

अस्मदीय (सं० त्रि०) हमारा, हम लोगोंका।

अस्मद्वात (वे० त्रि०) हम लोगों द्वारा दिया हुआ।

अस्मद्गृह् (वे० त्रि०) अहित, विपन्न, अननुकूल, बद् अन्देश, मुखालिफ, जो हमसे या मुझसे दगा करता हो।

अस्मद्यक् (वे० अव्य०) हमारी ओर, हम लोगोंकी तर्फ।

अस्मद्यच् (वे० त्रि०) अस्मानश्चति, अस्मद्-अश्च-क्तिन् अद्यादेशः। १ अस्मदभिमुख, हमारे प्रति प्रसन्न, हमसे मुखातिब, जो हमारी ओर घूमा हो। (अव्य०) २ हमारी ओर, हम लोगोंकी तर्फ।

अस्मद्विध (सं० त्रि०) अस्माकमिव विधा धर्मोऽस्य, बहुव्री०। १ अस्मादृश, हमारे-जैसा, मेरी तरह। २ हम लोगोंमें एक।

अस्मन्त (सं० स्त्री०) चुस्ती, चूल्हा, भट्टी।

अस्मयु (दे० त्रि०) आत्मन अस्मान् इच्छति, अस्मद्-क्वच्-उ बाहु० दलोपः। हमें चाहनेवाला, जो हमारे लिये अच्छा हो।

अस्मरण (सं० स्त्री०) अनवधान, स्मृतिलोप, फरामोशी, बिसराहट, याद न रहनेकी हालत।

अस्मरणीय (सं० त्रि०) स्मरणके अयोग्य, जो याद आने काबिल न हो।

अस्माक (वे० त्रि०) अस्माकमिदम्, अस्मद्-अण् अस्मकादेशः पृष्ठा० वेदे वृद्धा-भावः। अस्मत् सम्बन्धी, हमारा, हमसे तालुक रखनेवाला।

अस्मादृश, अस्मादृश, अस्मद्विध देखो।

अस्मार्त (सं० त्रि०) १ स्मरणातिक्रान्त, अतिप्राचीन, कदीम, जमाने दराजका, पुराना। २ नियम-विरुद्ध, अविधि, खिलाफ-कानून, नाजायज़, हराम। ३ शास्त्र-विधानसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो हिन्दुओंके दस्तरमें न हो।

अस्मित (सं० त्रि०) विकसित, शिगुफूता, खिला या फूला हुआ।

अस्मिता (सं० स्त्री०) अस्मिभावः, तत्। आत्मज्ञाप्ता, ममता, खुदफरोशी, डींग। अस्मिताकी योगशास्त्र लेश, सांख्य मोह और वेदान्त हृदयग्रन्थि बताता है।

अस्मृति (सं० स्त्री०) अभावे नञ्-तत्। १ स्मृति-हानि, विस्मरणशैलता, फरामोशी, बिसराहट। २ अन्याय्यता, अव्यवस्था, नाजायज़ी, जो बात कानूनके खिलाफ हो। (वे० अव्य०) ३ सप्रमाद, असमीचीन, बेपरवायीसे।

अस्त्रेर (वै० त्रि०) विश्वासापन्न, विश्वस्त, एतवार
रखनेवाला, जो नाखुश न हो।

अस्त्रेहिति (वै० स्त्री०) हमारा सन्देश, हमलोगोंका
पैगाम, जो खबर हमारे लिये हो।

अस्यन्द्मान (वै० त्रि०) फिसल न पड़नेवाला, जो
गुजर न रहा हो।

अस्यवामीय (सं० स्त्री०) अस्यवामेति शब्दोऽस्यत्र
सूक्ते मत्पर्ये छ। अस्यवाम शब्दयुक्त सूक्त, जिस भजनमें
अस्यवाम शब्द पहले लगे।

अस्यहृत्य (सं० पु०) इन बाहु० क्यप्, नज्-तत्;
असिना अहृत्यः, ३-तत्। खड्गसे न मारा जानेवाला,
जो तलवारसे मारा न जाता हो।

अस्यहेति (सं० पु०) असिः खड्ग अहेतिर्यस्य, बहुव्री०।
खड्ग अस्त्र न रखनेवाला योद्धा, जो सिपाही तलवारका
हथियार न रखता हो।

अस्युद्यत (सं० त्रि०) असिरुद्यत उत्थापितो येन,
बाहु० परनिपातः, बहुव्री०। उद्धृतखड्ग, जो तलवार
उठाये हो।

अस्त्र (सं० पु०-स्त्री०) अस्त्रं क्षेपणे बाहु० रन्।
१ कोण, गोशा, काना। २ केश, बाल। ३ रक्त,
खून, लहड़। ४ चक्षुका जल, आंसू।

अस्त्रकण्ठ (सं० पु०) अस्त्रः कोण इव कण्ठो यस्य।
वाण, तीर। अग्रभाग नोकीला होने और युद्धकाल
कण्ठमें रक्त लग जानेसे वाणको अस्त्रकण्ठ कहते हैं।

अस्त्रखदिर (सं० पु०) अस्त्रवर्णः रक्तवर्णः खदिरः,
शाक कर्मधा०। रक्तखदिर वृक्ष, लाल खैरका पेड़।

अस्त्रघ्न (सं० पु०) तेजबल, किसी किस्मका पौधा।

अस्त्रज (सं० स्त्री०) मांस, गोशत।

अस्त्रजित् (सं० पु०) वनस्पति विशेष, कोई जड़ी बूटी।

अस्त्रप (सं० पु०) अस्त्रं रक्तं पिवति, अस्त्र-पा-क।
१ राक्षस, आदमखोर, खून पीनेवाला शख्स।
२ जलीका, जोक। ३ मत्कुण, खटमल। ४ मूल
नक्षत्र। 'राक्षसः कोणपः क्रव्यात् क्रव्यादोऽस्त्रप आश्रयः'। (अमर)

अस्त्रपत्र, अस्त्रपत्रक देखो।

अस्त्रपत्रक (सं० पु०) अस्त्रमिव लोहितं पत्रमस्य;
बहुव्री० संज्ञायां कन्। मेण्डावृक्ष, मजीठ।

अस्त्रपा (सं० स्त्री०) अस्त्रं रक्तं पिवति, अस्त्र-पा-
किप् क वा, कपचे स्त्रीत्वात् टावपि। जलीका, जोक।
२ डाकिनী, डायन।

अस्त्रपित्त (सं० स्त्री०) रक्तपित्त, इफरात खून।

अस्त्रफला (सं० स्त्री०) अस्त्रमिव रक्तं फलमस्याः।
शङ्खकीटवृक्ष, सलायीका पेड़।

अस्त्रफली, अस्त्रफला देखो।

अस्त्रमातृका (सं० स्त्री०) अस्त्रस्य रक्तस्य मातेव
उत्पादिका, संज्ञायां कन्। रसघातु, कैमूस, अन्न
खानेपर आमरससे मिल पाकयन्त्रमें प्रथम दुग्धवत्
उत्पन्न होनेवाला रस।

अस्त्ररेणु (सं० पु०) सिन्दूर, सेंदुर।

अस्त्ररोधिका (सं० स्त्री०) लज्जालुक्कालता, लाजवती।
अस्त्ररोधिनी, अस्त्ररोधिका देखो।

अस्त्रवत् (सं० त्रि०) न स्त्रवति चरति, स्त्रु गतौ शब्द,
नज्-तत्। १ प्रवाहरहित, जो बहता न हो। अस्त्र-
मुख्यस्य मतुप् मस्य वः। २ रक्तयुक्त, खून-भालूदा।
(वै० त्रि०) ३ छिद्ररहित, जिसमें छेदाक न रहे।
(अव्य०) अस्त्रस्येव तत्र तस्येवेति वति। ४ रक्तकी
भांति, खूनकी तरह।

अस्त्रविन्दुच्छदा (सं० स्त्री०) अस्त्रविन्दुः रक्तविन्दुरिव
छदः पर्णं यस्याः, बहुव्री०। लक्ष्णानामक वृक्ष,
कोई गांठदार पेड़।

अस्त्राग्निवी (सं० स्त्री०) रक्तअग्निवी, लाल सेम।

अस्त्रसुती (सं० स्त्री०) रक्तस्त्राव, खूनका बहाव,
फुसद।

अस्त्राम (वै० त्रि०) १ असंहत, अविकलगति, मुलायम,
जो नाकिस न हो।

अस्त्रार्जक (सं० पु०) अस्त्रं रक्तं अर्जयति सेवनया,
अस्त्रं तुरा०-अर्ज-ण्वल्। १ श्वेततुलसी वृक्ष। २ रक्तोत्-
पादक रस, खून पैदा करनेवाला अर्क। (त्रि०)
३ रक्तोत्पादक, खून पैदाकरनेवाला।

अस्त्राङ्ग (सं० पु०-स्त्री०) कुङ्कुम, केसर।

अस्त्रि (सं० स्त्री०) अस्त्र-जि। १ रक्त, खून। २ कोण,
गोशा। ३ कोटि, करोड़।

अस्त्रिध् (वै० त्रि०) न स्त्रेधते श्रोतति, स्त्रिध्-किप्,

नञ्-तत् । १ अक्षरण, जो थका-मांदा न हो । २ हानि न पहुँचानेवाला, जो नुकसान न करता हो ।
३ शान्तस्वभाव, पारसा, सुलहपसन्द, जो लड़ता-भिड़ता न हो ।

अस्तीवचस् (वै० त्रि०) क्षरण खाद्यविशिष्ट, जो टपक पड़नेवाला खाना रखता हो ।

असु (सं० स्त्री०) अस्वते क्षिप्यते, असु क्षेपणे क । चक्षुका जल, अशक, आसु । असुके निरोधसे पीन-सादि रोग उत्पन्न होते हैं ।

असुक (सं० पु०) अक्षीरवृक्ष, कोई पौधा ।

असुव (सं० स्त्री०) पोथकी, दाने-दानेकी साखत, बहनेवाली जखूममें दानेका पड़ना ।

असुवाहिनी (सं० स्त्री०) असुवाहक धमनीद्वय, आसु निकालनेवाली दोनो नाड़ी ।

अस्त्रेमन् (वै० त्रि०) स्त्रिव-मनिन्, गुणो वा लोपश्च ।

१ प्रशस्त, तारीफ़के काबिल । २ प्रशस्त, लाजवाल, जो सड़ता-गलता न हो ।

अस्त्र, अस्त्र देखो ।

अस्त्री, अस्त्री देखो ।

अस्त्रील, अस्त्रील देखो ।

अस्त्रोक, अस्त्रोक देखो ।

अस्त्र (सं० त्रि०) नास्ति स्वं धनमस्य, बहुव्री० ।

१ निर्धन, जिसके पास दौलत न रहे । स्त्रः आत्मौय, नञ्-तत् । २ अनात्मौय, जो अपना न हो ।

अस्त्रक, अस्त्र देखो ।

अस्त्रकीय, अस्त्र देखो ।

अस्त्रग (वै० त्रि०) निरालय, निराश्रय, लामकान्, जो खास अपने मकान् न जाता हो ।

अस्त्रगता (वै० स्त्री०) निराश्रयता, खामेबदोशी, ठिकाना न लगनेकी हालत ।

अस्त्रच्छ (सं० त्रि०) प्रकाशमेघ, कलुष, तारीक, कसीफ, धुंधला, जो साफ़ न हो ।

अस्त्रच्छन्द (सं० त्रि०) विरोधे नञ्-तत् । १ पराधीन, मातहत, जो मनमाना काम-कार न सकता हो ।

२ शिष्य, तरबियतपिजीर, सधने योग्य ।

अस्त्रजाति (सं० स्त्री०) नञ्-तत् ।

१ भिन्न वर्ण, अन्य कुल, सुखतलिफ़ जात, जुदा कौम, जो दूध अपना न हो । जैसे, चत्रियादि ब्राह्मणकी स्वजाति नहीं होता । (त्रि०) न स्वस्येव जातिर्यस्य, नञ्-बहुव्री० । २ भिन्न जाति, सुखतलिफ़ कौमका, जो अपने दूधका न हो ।

अस्त्रतन्त्र (सं० त्रि०) न स्वतन्त्रम्, विरोधे नञ्-तत् ।

१ पराधीन, मातहत, जो आजाद न हो । २ शिष्य, तरबियत-पिजीर, गरीब ।

अस्त्रता (सं० स्त्री०) स्वत्वका न पहुँचना, हक़का न होना ।

अस्त्रत्व (सं० स्त्री०) अस्त्रता देखो ।

अस्त्रन्त (सं० स्त्री०) अस्त्रनां चद्रजन्तुप्राणानां अन्तो नाशो यस्मात्, ५-बहुव्री० । १ चुन्नो, चुल्हा । (त्रि०) सुष्ठु न अन्तो यस्य, असमर्थ बहुव्री० । २ दुष्ट परिणाम, जिससे अच्छा नतीजा न निकले । (पु०) ३ मरण, मौत ।

अस्त्रप्र (सं० पु०) नास्ति स्वप्नी निद्रा अन्नता वा यस्य, नञ्-बहुव्री० । १ देवता, जो कभी सोता या भूलता न हो । २ निद्रानाश, निद्राभाव, वेदारी, बेकली, नींद न आनेकी हालत । (त्रि०) ३ निद्रारहित, वेदार, बेकल, जो सोता न हो । ४ कार्यदक्ष, होशियारीसे काम करनेवाला ।

अस्त्रप्रज् (वै० त्रि०) निद्रारहित, वेदार, जिसे नींद न आये ।

अस्त्रभाव (सं० पु०) असाधारण आचरण वा प्रकृति, गैरमामूली चाल या मिजाज । (त्रि०) २ भिन्न-प्रकृतिविशिष्ट, सुखतलिफ़-तबीयत ।

अस्त्रर (सं० पु०) अप्रशस्तः खरो यत्र । १ स्वर-वर्ण-रहित व्यञ्जनमात्र, हर्फ-सही । २ उदात्तादि स्वर-वर्जित लौकिक उच्चारण, जिस तलफ़-फुजमें जं'चे हर्फ़ इकत न रहें । 'सादसीयखरोस्त्ररः ।' (अमर) (त्रि०) ३ मन्दस्वरयुक्त, जिसके खराब आवाज रहे । ४ अवि-स्यष्ट, मखलूत, मिला जुला । (अव्य०) ५ अविष्यष्ट रूपसे, मखलूत तौरपर ।

अस्त्ररूप (सं० त्रि०) न स्वस्येव रूपं यस्य, नञ्-बहुव्री० । असमान स्वभाव, जो बिलकुल सुख-तलिफ़ हो ।

अस्वर्ग्य (सं० त्रि०) स्वर्गाय दितम्, स्वर्ग-यत्, नञ्-तत् । स्वर्गके अयोग्य, जिसे करनेसे स्वर्ग न मिले ।

अस्ववेश (वै० त्रि०) निजका गृह न रखनेवाला, जो घरसे निकाल दिया गया हो ।

अस्वस्थ (सं० त्रि०) न स्वस्मिन् स्वभावे तिष्ठति, स्व-स्था-क, नञ्-७-तत् । अप्रकृतिस्थ, रोगादिसे अभि-भूत, बीमार, जो तनदुरुस्त न हो ।

अस्वस्थता (सं० स्त्री०) १ स्वास्थ्यका अभाव, मज्ज-वृत न रहनेकी हालत । २ पीड़ा, व्यथा, निर्वलता, बीमारी, कमजोरी ।

अस्वातन्त्र्य (सं० क्ली०) न स्वातन्त्र्यम्, अभावे नञ्-तत् । १ स्वातन्त्र्यका अभाव, पराधीनता, मातहत्य, आजाद न रहनेकी हालत । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ पराधीन, मातहत, जो आजाद न हो ।

अस्वादु (सं० त्रि०) नीरस, विरस, वेलज्जत, वेमजा, सीठा, फीका ।

अस्वादुकण्ठक (सं० पु०) अस्वादुरमधुरः कण्ठको यस्य । गोखरू, जिसके मीठा कांटा न रहे ।

अस्वाध्याय (सं० त्रि०) नास्ति स्वाध्यायो वेदाध्या-यनमस्य । १ विधिपूर्वक वेदाध्ययन न करनेवाला, जो कायदेसे पढ़ता न हो । (पु०) २ अध्यायन-निषिद्ध काल, जिस वक्तमें पढ़ न सकें । जैसे अष्टमी प्रसूति तिथि या रविवार वगैरहकी छुट्टी । अधि-इङ् कर्मणि घञ्, स्वस्य अध्यायः, नञ्-तत् । ३ स्वीय अपाठ्य शास्त्रादि, अपने न पढ़नेकी किताब, जिसे पढ़ न सकें ।

अस्वाभाविक (सं० त्रि०) १ निसर्गविरुद्ध, सृष्टिक्रम-वाह्य, खिलाफ-तबा, साख्ता, जो जाती न हो । २ कृत्रिम, मसनूयो, बनावटी ।

अस्वामिक (सं० त्रि०) नास्ति स्वामी यस्य, बहुव्री० । शेषादिभाषेति कप् । स्वामिरहित, लावारिश, जिसके मालिक न रहे । पर्वत, पुष्प, नदी और तीर्थको शास्त्रकारोंने अस्वामिक बताया है । इन सकल स्थानोंमें प्रतिग्रह न करना चाहिये । दायभागकी टीकामें महारण्यके वृक्ष, नदीके जल और निधिको भी अस्वामिक कहा है ।

अस्वामिकृत (सं० त्रि०) स्वामिना कृतम्, नञ्-तत् । स्वामिभिन्न अन्य द्वारा किया हुआ, जो मालिकने न किया हो ।

अस्वामिन् (सं० त्रि०) १ स्वत्वरहित, जो हकदार न हो । २ स्वामिरहित, लावारिश, जिसके मालिक न रहे ।

अस्वामिविक्रय (सं० पु०) न स्वामिना कृतो विक्रयः शाक० नञ्-तत् । १ स्वामिभिन्न अन्य द्वारा विक्रय, मालिकको छोड़ दूसरेके जरिये की हुई फ़रोख्त । २ एतद्विषयक व्यवहार, इसी कामकी बात चीत । ३ इसका विचार, इसी बातका खयाल । अस्वामि-विक्रयका विचार याज्ञवल्कर-संहितामें अच्छीतरह लिखा है ।

अस्वाम्य (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत् । १ समताका अभाव, नाहमवारी, बराबरीका न मिलना । २ स्वामित्वका अभाव, हकदारीका न होना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ३ समताशून्य, नाहमवार, जो बराबर न हो । ४ स्वामित्वशून्य, मिलकियत न रखनेवाला, जो मालिक न हो ।

अस्वार्थ (सं० त्रि०) १ अपने लिये न होनेवाला, जो खास अपने वास्ते न हो । २ उचित पदार्थके अर्थ न होनेवाला, जो वाजिब बातके लिये न हो । ३ भिन्न अर्थ विशिष्ट, सुख-तलिफ़ मानी रखनेवाला । ४ निस्पृह, मुक्तसङ्ग, नाखु-दपरस्त, जो अपनी ग़रज न रखता हो ।

अस्वावेश (सं० त्रि०) स्वस्मिन् आत्मनि स्वस्थाने स्वभावे वा आविशति, स्व-आविश-अच्, ७-तत् । आत्मा, स्वभाव वा वासस्थानमें अस्थित, जो अपने आपे, मित्राज या सुकामपर न हो ।

अस्वास्थ्य (सं० क्ली०) अभावे नञ्-तत् । १ स्वास्थ्यका अभाव, उद्देग, बीमारी, तन्दुरुस्तीका न रहना । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ उद्दिग्ध, पीड़ित, बीमार, जो तन्दुरुस्त न हो ।

अस्वीकार (सं० पु०) न स्वीकारः, अभावे नञ्-तत् । १ स्वीकारका अभाव, नामच्छूरी, इनकार । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । २ स्वीकार, अस्वीकार एवं प्रतिग्रह इत्यादिसे रहित, नामच्छूर ।

अस्वीकृत (सं० त्रि०) न स्वीकृतम्, नञ्-तत् । अनस्वीकृत, अप्रतिगृहीत, नामञ्चूर, जो माना न गया हो । चलती बोलीमें इनकार करनेवालेको अस्वीकृत कहते हैं ।

अस्वेद (सं० पु०) १ दबा हुआ पसीना । (त्रि०) २ पसीनेसे खाली, जो पसीजता न हो ।

अस्वेरिन् (सं० पु०) खेरी स्वाधीनः, नञ्-तत् । पराधीन, मातहत, जो स्वाधीन या खुदमुखतार न हो । (स्त्री०) डीप । अस्वेरिणी ।

अस्सायी—निजाम राज्यके अन्तिम उत्तरपूर्व प्रान्तका एक ग्राम और रणक्षेत्र । यह अक्षा० २०° १५' १५" उ०, तथा द्रावि० ७५° ५६' १५" पूर्व पर अवस्थित और औरङ्गाबादसे उत्तर-पूर्व ४३ मील दूर है । सन् १८०३ ई०की २३वीं सितम्बरको सर अर्थर वेलेस्लिने देखा, कि सेंधिये और राघवजी भोंसलेके साथ कितनी ही महाराष्ट्र-सेनाका वामभाग इस ग्राममें पड़ा था । सेनामें १६००० शिष्टित पैदल—२०००० सवार और कितने ही आदमी रहे । १०० तोपें फ्रान्सीसी अफसरोंके हाथमें थीं । इधर जनरल वेलेस्लिके पास साढ़े चार हजारसे ज्यादा सिपाही और सवार न रहे । किन्तु उन्होंने साहसपूर्वक केलना नदी पार की और शत्रुको भीषण युद्धके बाद इस स्थानसे पीछे हटाया । इसी बीच जो महाराष्ट्र सुर्दका बहाना कर लेट गये थे, वह पीछेसे आगे बढ़नेवाली सरकारी सेनापर गोले फटकारने लगे । फिर भी जनरल वेलेस्लिने पीछे घूम उनपर धावा मारा और तोपोंको अधिकार किया । महाराष्ट्र-सेनाके १२००० आदमी काम आ और दांत खट्टे हो गये थे । इस ग्रामके अधिवासियोंने कितनी ही बन्दूकों, तोपके गोले और लड़ाई की दूसरी चीजें पायी हैं ।

अस्सो (हिं० वि०) संख्याविशेष, अशीति, दश और आठका गुणन-फल ।

अह (सं० अव्य०) अहि-घञ्, घृषो० न लोपः । १ निःसन्देह, अवश्य, वैशक, जरूर, हां, अच्छा । २ अर्थात्, यानी । ३ माना, समझलिया, दरहकी-कृत । ४ न्यूनसे न्यून, कससे कम । ५ जोड़-वाह,

शाबाश । ६ छी-छी, नफरत । (हिं०) अहन् देखो । अहंदू (हिं० वि०) प्रकाण्ड, बड़ा, भारी ।

अहंयु (सं० त्रि०) अहमहङ्कारोऽस्त्यस्य । १ गर्वयुक्त, अभिमानी, फखूर रखनेवाला, घमण्डी ।

‘अहङ्कारवानहंयुः स्यात् ।’ (अमर)

(पु०) २ योद्धा, सिपाही ।

अहंवाद (सं० पु०) साहसिकता, घृष्टता, गुस्ताखी, शेखी, डींग-भरा ।

अहंवादिन् (सं० त्रि०) साहसिक, घृष्ट, अत्यभिमानी, गुस्ताख, बहुत ज्यादा फखूर रखनेवाला, जो अपनी ही कहता हो ।

अहंश्रेयस् (सं० त्रि०) अहं अहमेव श्रेयान् यत्र, बहुव्री० । अपनेको ही बड़ा समझनेवाला, जो अपनेको ही आरामकी जगह मानता हो ।

अहंश्रेयस, अहंश्रेयस् देखो ।

अहंसन (वे० त्रि०) अपने ही निमित्त प्राप्त करने-वाला, जो अपने ही लिये हासिल करता हो ।

अहःकार, अहस्कार देखो ।

अहःपति, अहष्पति देखो ।

अहःशेष, अहश्शेष देखो ।

अहक (हिं० स्त्री०) अभिलाषा, खाद्दिश ।

अहकाम (अ० पु०) १ आज्ञायें, हुक्म । २ नियम, कायदे । यह शब्द ‘हुक्म’का बहुवचन है ।

अहङ्कर्तव्य (सं० वि०) १ अपने हीसे सम्बन्ध रखने-वाला, जो दूसरेसे तात्तुक न रखता हो । (स्त्री०) २ अहङ्कारका विषय, फखूरकी चीज ।

अहङ्कार (सं० पु०) अहमिति ज्ञानं क्रियतेऽनेन, अहं क्त-करणे-घञ् । १ आत्माभिमान, खुदी, डींग । २ आत्मामें उत्कर्षका अवलम्बन, गर्व, गुस्ताखी, घमण्ड । ३ गर्वका आश्रय अन्तःकरण विशेष, दिलमें फखूरके रहनेकी जगह । वेदान्त परिशिष्टमें मन, बुद्धि, अहङ्कार और चित्तको अन्तःकरण कहते हैं । ४ सांख्यमतसिद्ध महत्तत्त्वके अभिमानका कारण, पञ्च-

तन्मात्रका कारण तत्त्वविशेष । ५ वैद्यमतसे—चेतन-पुरुषका चेतन । इन्द्रियादि निखिल शरीरमें जो अहभाव समायी, उससे लगी प्रवृत्ति ही अहङ्कार

है। यह प्रवृत्ति वैकारिक, तेजस और भूत भेदसे त्रिविध रहती है।

अहङ्कारवत् (सं० त्रि०) स्वार्थपरायण, खुदगर्ज, घमण्डी।

अहङ्कारिन् (सं० त्रि०) अहमित्यभिमानं करोति, अहं-कृ-णिनि। अभिमानयुक्त, गर्वयुक्त, मगरूर, खुदबीन्, जो अपनेको बड़ा समझता हो।

अहङ्कारी, अहङ्कारिन् देखो।

अहङ्कारीपुर—अवध प्रान्तके फैजबाद जिलेका नगर। यह फैजाबाद शहरसे ग्यारह कोस पड़ता है। इसे बरवार सरदार अहङ्कारी रायने अपने नामपर बसाया था। यहांसे कलकत्तेको कितना ही कच्चा चमड़ा भेजा जाता है। अवध-रुहेलखण्ड रेलवेका यह एक बड़ा स्टेशन है। स्टेशनके पास बहुत बड़ा बाजार जमने लगा है।

अहङ्कार्य (सं० क्ली०) अपने करनेका काम, जो बात दूसरेसे बन न सकती हो।

अहङ्कृत (सं० त्रि०) अहमिति ज्ञानं कृतं येन, बहुव्री०। १ आत्माभिमानी, खुदफरोश, डोंग लेनेवाला। २ सगर्व, मगरूर, घमण्डी। ३ अभिन्न, माहिर, बाकिफकार।

अहङ्कृति (सं० स्त्री०) अहम्-कृ-क्तिन्। अहङ्कार, खुदसितायी, घमण्ड।

अहटाना (हिं० क्ति०) १ ढूँढना, खोजना, आहट लेना, पता लगाना। २ पीड़ा देना, दर्द करना।

अहत (सं० क्ली०) न हन्यते स्म, हन-क्त, नञ्-तत्। १ नूतन वस्त्र, नया कपड़ा, जो कपड़ा धुला न हो। (त्रि०) २ अप्रतिहत, जो मारा न गया हो। ३ नूतन, नया, जो धुला न हो। ३ शुद्ध, निष्कलङ्क, जो बिगड़ा न हो। ५ आशान्वित, जो नाउन्मोद न हो।

अहति (वे० स्त्री०) न हतिः, अभावे नञ्-तत्। १ हननका अभाव, न मारनेकी हालत। २ अविनाश, सलामती। (त्रि०) ३ अविनष्ट, जो बरबाद न गया हो।

अहद (अ० पु०) १ प्रतिज्ञा, वचन, इकरार, वादा,

वात। २ सङ्कल्प, विचार, इरादा, ३ समय, वक्त, जमाना।

अहददार (फा० पु०) प्रतिज्ञा करनेवाला, जो शब्द कोई काम अज्जाम देनेका इकरार करता हो। मुसलमानी बादशाहीमें करका ठेका लेनेवाला अहददार कहाता था। यह सैकड़ा पीछे तीन रुपया पाते और सारा कर चुकाते रहा।

अहदनामा (फा० पु०) १ प्रतिज्ञापत्र, इकरारनामा। इसके अनुसार दो या उससे ज्यादा लोग कोई काम करना ठहराते हैं। २ सन्धिपत्र, सुलहनामा, जिस पत्रके अनुसार झगड़ा-भक्कट मिट जाये।

अहदी (अ० पु०) १ योद्धा, सिपाही। यह अकबरके समय कठिन कार्य उपस्थित होनेसे कमर बांधते थे। साधारणतः पड़े-पड़े खाना ही इनका काम रहा। इसीसे सुस्त आदमीको भी लोग अहदी कहने लगे हैं। (त्रि०) ३ अलस, सुस्त, काम न करनेवाला।

अहदीखाना (फा० पु०) अलसके रखनेका स्थान, जहां काहिल रहें।

अहदेहुकूमत (फा० पु०) राजत्वकाल, शासनका समय, शाहीका जमाना।

अहन् (सं० स्त्री०) न जहाति त्यजति स्वकालं हा-आ-लोपः। दिवस। 'अहोरात्रः' 'अहङ्कारः' इत्यादि स्थलमें अहन् शब्दका अर्थ केवल दिन है। दशाह अशौच, अहन्यहनि इत्यादि स्थानमें अहन् शब्दका अर्थ दिन और रात दोनों ही है। एक लघु अक्षरके उच्चारण-कालको मात्रा वा निमेष कहते हैं। दो निमेषका नाम त्रुटि है। पांच त्रुटिका एक प्राण, छः प्राणकी एक विनाड़िका वा विपल, साठ विनाड़िकाकी एक नाड़िका वा दण्ड, और साठ नाड़िकाका एक अहोरात्र होता है। एक अहोरात्रमें तीस मुहूर्त होते हैं।

अहन (सं० त्रि०) १ प्रकाशक, रौशनी देनेवाला, जो उजला फैलाता हो। (क्ली०) २ प्रातःकाल, सबेरा।

अहननीय (सं० त्रि०) वधके अयोग्य, जो कुत्ल करने काबिल न हो।

अहना (सं० स्त्री०) अहरस्तस्य परवर्तित्वेन,
अहन् अर्श आदि अच् टाप् निपा० टिलोपाद्यभावः।
उषा, तड़का, सवेरा।

अहन्तव्य, अहननीय देखो।

अहन्ता (सं० स्त्री०) अहमित्यव्ययमस्मदर्थे तस्य
भावः तल्-टाप्। अस्मदर्थका भाव, 'मैं' की बात।

अहन्य (वै० त्रि०) अजय्य, दुर्जय, अविनाशी, लाज-
वाल, ज़बरदस्त।

अहन्य, अहन्य देखो।

अहन्युष्य (सं० पु०) दीपहरियाका फूल।

अहन्य, अहन्य देखो।

अहमक (अ० वि०) जड़, मूर्ख, नादान, बेसमझ।

अहमयिका (सं० स्त्री०) प्रतिवन्दिता, सङ्कर्ष, हम-
सरी, मुकाबला, लाग-डांट।

अहमद (मुत्ता)—एक विख्यात मुसलमान पण्डित।
इनके पूर्वज सिन्धुप्रदेशके टट्ट नामक स्थानमें वास करते
थे। वे सब हनीफा सम्प्रदायमें भुक्त थे, परन्तु अहमद
शिया थे। यह सन् १८८२ ई०को अकबर बादशाहकी
सभामें आये। इसके पहले इन्होंने 'खुलासात् उल्
हयात्' नामक एक धर्मग्रन्थ लिखा था। अकबरने इन्हें
'तारीख-अलफी'के सङ्कलन करनेका भार दिया।
शिया संप्रदाय प्रथम खलीफाकी निन्दा किया करता
है। इससे दूसरा सम्प्रदाय विरक्त होता है। मिर्जा
फूलाद विरलास् नामक एक मनुष्य शायद दूसरे
सम्प्रदायमें भुक्त था। उसने एक दिन आधीरातके
समय मुत्ताको बुलाया। अहमद निःशङ्कचित्त एवं
सरल प्रकृतिके आदमी थे। मिर्जा फूलादकी बातोंमें
यह भूल गये। उस दुष्टने लाहोरेके पथपर मुत्ताको
मार डाला। अकबरने इस घटनाको सुन हाथीके
पेर नीचे कुचलकर उसे मार डालनेका हुक्म
दिया। मुत्ता अहमदने 'तारीख-अलफी'को शुरूसे
चङ्गेज खांके समय तक दो भागोंमें लिखा था। आसफ्
खां जाफर वेग नामक एक मनुष्यने इस पुस्तकको
समाप्त किया।

अहमद अयाज—इनका उपाधि मलिक खाना जहान्
रहा। इन्होंने दिल्लीवाले सुल्तान मुहम्मद शाह बीन तुगलकके

अधीन प्रशंसनीय कार्य किया था। सन् १३५२ ई०को
तत्तेमें राजाके मरनेपर यह भूतपूर्व राजाके लड़केको
दिल्लीमें सिंहासन देने पर सचेष्ट हुये, किन्तु फीरोज
शाह तृतीय द्वारा फांसी चढ़ाये गये।

अहमदअली खान् (सैयद)—बङ्गालके नवाब नाजिम।
इन्हें अपने भायी अली जाहका उत्तराधिकार मिला
था। सन् १८२४ ई०की ३० वीं अक्तोबरको इनकी
मृत्यु हुयी।

अहमद-इल काजरुनी (जमरबीन)—बम्बयी प्रान्तस्थ
खाम्बायत स्थानके नवाब। इन्होंने खाम्बायतमें सन्
१३२५ ई०को मुहम्मद शाहबीन तुगलक शाहके समय
जुमा मसजिद बनवायी थी। मसजिद २०० फीट
चौड़ी और २१० फीट लम्बी है। खम्बे जैन मन्दिरोंसे
निकालकर लगाये गये हैं। मेहराबोंकी नक्काशी
बहुत खूबसूरत है। मसजिदके दक्षिण कोणपर
मरमरके दो कुब्र बने, जिनपर सुन्दर शिलालेख खुदे
हैं। एकमें अहमद इल काजरुनीके मसजिद बनाने
तथा प्राण छोड़ने और दूसरेमें हाजी हुसैन इल
गीलानीकी कन्या फातिमाका इनके साथ विवाह
देनेका वृत्तान्त लिखा है।

अहमद कबीर (सैयद)—एक मुसलमान फकीर। इनके
पिताका नाम सैयद जलाल था। मखदूम जहानियान्
जहान् गश्त् और राजकुत्ताल नामक इनके दो पुत्र
थे। वे दोनों ही सिद्ध थे। मुसलमान लोग तीनों
आदमीको विशेष भक्ति करते हैं। मुलतानके उच्च
नामक स्थानमें अहमद कबीरका समाधिमन्दिर है।

अहमद खान्—होलकरकी सेनाके प्रधान सेनापति।
सन् १८०३ ई०के समय यह आनन्दराव गायकवाड़के
भाई फतेहसिंहको सङ्गादके पास कैदकर ले गये थे।
उस समय सङ्गाद गायकवाड़ अफसर बालाजी
लक्ष्मणके हाथ रहा। उनके भाग खड़े होनेपर
गोविन्द राव मामा कमाविसदार बनें। किन्तु
होलकरके सिपाही किला छीन न सके। अन्तकी
फतेहसिंह कुछ पठान सेना ले गुजरात जा पहुँचे थे।
फतेहसिंहने बड़ोदा जाकर कहा, 'मैं अहमद खान्को
पचास हजार रुपये देनेकी शर्तपर छोड़ा गया हूँ।'

अहमद खां बङ्गश—फरुखावादके नवाब मुहम्मद खां बङ्गशके पुत्र। सन् १७४८ ई०के दिसम्बर मास इनके भाई कायमजङ्गकी मृत्यु होनेपर वजीर सफ्दरजङ्गने उनकी सम्पत्तिको हड़प जानेकी चेष्टा की थी। उसी समय कुछ अफगानसैन्य संग्रह कर अहमद, खाने वजीरके सहकारी राज्य नवलरायको पराजित और विनष्ट किया। इस घटनाके बाद यह फरुखावादके नवाब हो गये। (१७५१ ई०)।

१७७१ ई०को अहमद खांकी मृत्यु होनेपर इनके पुत्र दिलेर हिम्मत खां नवाब बने।

अहमद खां सूर—शेरशाहके भतीजे। यह सिकन्दरशाह सूर उपाधि धारणकर कुछ भले आदमियोंकी सहायतासे पञ्जाबके राजा हो गये। सन् १५५५ ई०के मई मास इन्होंने इब्राहीम खां सूरको युद्धमें परास्त कर दिल्लीका सिंहासन अधिकार किया था। परन्तु यह अधिक दिन राज्यभोग न कर सके। हुमायूँने इनकी सेनाको हरा दिया। अन्तको सरहिन्द नामक स्थानमें यह अकबरसे पराजित हुए और पहाड़ी प्रदेशमें भाग कर अपनी जान बचाई। वहांसे कई बार इन्होंने अकबरके विरुद्ध धावा किया, परन्तु किसी तरह सफलमनोरथ न हुए। अन्तमें यह बङ्गदेश गये और कुछ राज करनेके बाद परलोक सिधारे।

अहमद खान् सैयद—१ युक्तप्रान्तस्थ अलीगढ़ जिलेके मुसलमान संशोधक। इनका उपाधि सौ० एस० आई० रहा। इन्होंने मुहम्मद साहबके जीवन एवं कार्यपर एक ग्रन्थ लिखा और अलीगढ़ कालेज प्रतिष्ठित किया था।

२ दक्षिणप्रान्तस्थ अहमदाबाद-शासक मुजफ्फर शाहके लड़के। सन् १४१२ ई०को असावल ग्रामके पास इन्होंने अहमदाबाद नगर बसाया था। इनके समय अहमदाबादमें कितने ही सुन्दर भवन बनाये गये। सन् १४४३ ई०को मरने बाद इनके लड़के मुहम्मद शाहने राज्यका उत्तराधिकार पाया।

अहमदगढ़—बुलन्दशहरके अन्तर्गत एक गांव। इस गांवकी उत्तर ओर अनूपशहरके राजा अणिराजका बनवाया एक सुन्दर सरोवर विद्यमान है।

अहमद चलेबी—बम्बई प्रान्तस्थ सूरत जिलेके एक चालाक अरब व्यापारी। पहले यह अंगरेजोंके बड़े मित्र समझे जाते थे। किन्तु सन् १७३३ ई०को इन्होंने यथाशक्ति अंगरेजों और सूरतके शासनकर्ता नवाब तेगवख्तके बीच घोर वैमनस्य बढ़ा दिया। सन् १७३५ ई० तक यह नवाबके सहायक रहे, किन्तु अन्तको यहांतक विगड़े, कि उनसे लड़नेको भी तैयार हुये थे। सन् १७३६ ई०की १२ वीं जुलाईको अपने ही घरमें यह जानसे मारे गये।

अहमदनगर—बम्बई विभागके अन्तर्गत एक जिला और शहर। यह अक्षा० १८° १०' ०" एवं २०° ०' ०" उ० और द्राघि० ७०° ४२' ४०" तथा ७५° ४५' ५०" पू०के मध्य अवस्थित है। सच्चाद्वि पर्वत अहमदनगरके पश्चिम फैला हुआ है। इसकी कुछ शाखायें अहमदनगरके पूर्वतक चली आई हैं। यहां प्रवरा और मूला नामक दो नदियां बहती हैं। इस जिलेकी प्रधान नदी गोदावरी है। आबादी साढ़े सात लाखसे ज्यादा है। यहांकी रहनेवालोंमें महाराष्ट्रोंकी संख्या ही अधिक है।

इस जिलेके बड़े नगर यह हैं—१ अहमदनगर, २ सोणाई, ३ पथमर्द, ४ सङ्गमनेर, ५ खर्दा, ६ श्री-गोण्डा, ७ भीमनगर।

सन् १४८४ ई०को अहमद शाहने अहमदनगर वसाया था। यह शहर सीना नदीके बायें किनारेपर बसा है।

अहमदशाहकी मृत्यु होनेपर उनके लड़के बर्हान् निजाम शाह राजा हुए। उनके समयमें अहमदनगरकी बहुत श्रीवृद्धि हुई थी। सन् १५५३ ई०को वह परलोक सिधार गये। पोछे उनके पुत्र हुसेन निजाम शाह राजा हुए। हुसेनने अहमदनगरकी चारो तरफ बारह फीट ऊंची शहरपनाह बनवा दी। १५६२ ई०में बीजापुरराजने उन्हें पराजित किया, इससे उनके सौते अधिक हाथी और ६६० तोपें बीजापुरराजके हाथ लगीं। इनमें बड़ी भारी एक तोप पीतलकी बनी थी। शायद इतनी बड़ी तोप दुनियामें और कहीं नहीं है। यह तोप अभीतक बीजापुरमें

मौजूद है। १५६४ ई०को बीजापुर, गोलकुण्डा, बीदर आदिके राजाओंके साथ विजयनगरके रामराजका युद्ध हुआ था। इस युद्धमें हुसैनने रामराजके विपक्षमें अस्त्र धारण किया, परन्तु हिन्दूराजसे सभी पराजित होकर बन्दी बने।

१५८८ ई०में हुसैन शाह अपने लड़के मीरन हुसैन निजाम शाह द्वारा गुप्तभावसे मारे गये। मीरन भी अधिक दिन राज्यसुख भोग न कर सके। दश महीनेके अन्दर ही यमपुरीकी यात्रा कर गये। उनके बाद उनके भतीजे इस्माईल निजाम राजा हुए। इस्माईलके पिता पुत्रका राज्यभोग देख न सके। पुत्रको सिंहासनसे उतार एवं बुर्हान् निजाम शाह (२५) नाम धारण कर आप सिंहासनपर बैठ गये। उनके बाद उनके लड़के इब्राहीम निजामशाह राजा हुए। वह बीजापुरराजके साथ युद्ध करनेमें हार गये। इसके बाद अहमद नामक उनके एक ज्ञातिको अहमदनगरका सिंहासन मिला, परन्तु जब कुछ दिनोंके बाद यह मालूम हुआ, कि अहमद इब्राहीमके साक्षात् ज्ञाति नहीं, तब इब्राहीमके बालक पुत्रको उसकी मामी चांद बीबीने सिंहासनपर बैठा दिया। चांद बीबी देखी।

१५८८ ई०को सम्राट् अकबरके पुत्र दानियालने अहमदनगरपर चढ़ाई की। इस समयके बादसे अहमदनगरके राजा नाममात्रके राजा हुए। उनकी कोई विशेष क्षमता न थी। १६६३ ई०को सम्राट् शाहजहानने अहमदनगरको राजशून्य कर दिया। १७५८ ई०को यह नगर पेशवाको मिला, १७८७ ई०को दौलतराव सेंधियाके अधिकारमें आया और १८१७ ई०को ब्रिटिश गवर्नमेंण्टके अधिकारभुक्त हो गया।

अहमद निजाम शाह बहरी—दक्षिणापथवाले निजामशाही वंशके स्थापयिता। यह निजाम-उल्-मुल्क बहरीके पुत्र थे। सन् १४८६ ई०को इन्होंने दुन्द्राजपुरका दुर्ग अवरोध किया। इनके पिताने महमूद शाह बहसानीसे कुछ जागीर पायी थी। इस जागीरके निकटस्थ स्थानोंको अहमदने अधिकार किया और पितृको

मृत्युके बाद निजाम-उल्-मुल्कका उपाधि लिया। यह बड़े भारी योद्धा रहे। युद्धके समयमें प्रायः सेनापतिका भार ग्रहण करते थे। सुलतान महमूद शाहने अहमदका बल ज्ञास करनेका सङ्कल्प किया। परन्तु सुलतानकी सेना अहमदसे हार गई। इस घटनाके बाद ही अहमदने श्वेतछत्र धारण किया और स्वाधीन राजा हो गये। १४८४ ई०को इन्होंने ही अहमदनगर वसाया। अहमदनगर शब्दमें इनके उत्तराधिकारियोंका संक्षिप्त विवरण देखो।

अहमदपुर—१ पञ्जाब प्रान्तके भङ्ग जिलेकी शोरकोट तहसीलका नगर। २ बङ्गाल प्रान्तके वीरभूम जिलेका व्यवसायी ग्राम और ईष्ट इण्डियन रेलवेकी लुप लायिनका स्टेशन। रेलवे खुल जानेसे यहां चावलका व्यवसाय बढ़ गया है। ३ पञ्जाब प्रान्तके भावलपुरकी अपनी तहसीलका नगर। यह अक्षा० २८° ८' ३०" उ० और द्रावि० ७१° १८' पू० पर अवस्थित है। यहां प्रधानतः हथियार, रुई और रेशमका व्यवसाय होता है। ४ पञ्जाब प्रान्तके भावलपुर राज्यकी सादिकाबाद तहसीलका नगर।

अहमद बख्श खान्—पञ्जाब प्रान्तस्थ फीरोजपुर और लोहारूके जागीरदार नवाब। इन्होंने फखरुद्दीलाका उपाधि पाया था। मरने पौछे इनके पुत्र नवाब शमसुद्दीनको उत्तराधिकार मिला, जो सन् १८३५ ई०के अक्तोबर मास वधके कारण फांसी पर चढ़ाये गये।

अहमद बेग—बम्बई प्रान्तस्थ भडोचके नवाब। सन् ई०के १८ वें शताब्द कामाजी होमाजी नामक पारसी जुलाहेने एक मुसलमानको काफिर कहने पर इनके द्वारा मुसलमान होने या प्राण गंवानेका दण्ड पाया था। किन्तु उसने अपना धर्म न छोड़ हंसते-हंसते प्राण दे दिया।

अहमद बेग काबुली—मुसलमान कर्मचारी विशेष। इन्होंने पहले अकबर भ्राता सुहस्रद हकीम और पौछे अकबर तथा जहांगीरके अधीन काबुलमें काम किया था। कुछ समयतक यह कश्मीरके शासक रहे। सन् १६१४ ई०को इनकी मृत्यु हुई।

अहमद बेग खान्—नरजहान्के भ्राता सुहम्बद शरीफकी लड़की। इन्होंने बङ्गालमें जहांगीरकी अधीन कार्य किया और विद्रोह बढ़ते समय शाहजादे शाहजहान्को साहाय्य दिया था। अन्तको शाहजहान् इन्हें तत्ते, सीविस्थान और सुलतानका शासक बनाया। इन्होंने अवधमें जैसे तथा अमेठी जागीर पाया और वहीं अपना शरीर छोड़ा।

अहमद शाह—दिल्लीके बादशाह सुहम्बदशाहके लड़के। इनका उपाधि मुजाहिदुद्दीन सुहम्बद अबुन नस्र रहा। इनकी माताका नाम ऊधम बायी था। सन् १७२५ ई०की १४ वीं दिसम्बरको यह दिल्लीके किलेमें उत्पन्न हुये और सन् १७४८ ई०की १५ वीं अप्रैलको राजसिंहासनपर बैठे थे। ६ वर्ष ३ मास ८ दिन राज्य करने बाद सन् १७५४ ई०की २ रोजूनको प्रधान मन्त्री इमादुलमुल्क गाजीउद्दीन खान्ने इन्हें और इनकी माताको कैद कर आखें फोड़वा दीं। पीछे २१ वर्ष जीवित रह सन् १७७५ ई०की १ ली जगवरीको इन्होंने रोगग्रस्त हो शरीर छोड़ा था। दिल्लीमें खादिम शरीफकी मसजिदके सामने इनका शवदेह गाड़ा गया।

अहमद शाह—(१म) गुजरातके २य राजा। तातार खांकी पुत्र और मुजफ्फर शाहके पौत्र। मुजफ्फर शाह अपनी जिन्दगी हीमें अहमदको राज्यभार दे गये।

अहमद शाहने शायरमतौ नदीके किनारे अहमदा बाद नामक नगर वसाया था। अहमदाबाद देखो। ३३ वर्ष राज करनेके बाद सन् १४४८ ई०की ४ थी जुलाईको इनकी मृत्यु हुई।

२ गुजरातके नवाब अहमद शाह द्वितीय। यह अहमदाबाद शासक शाहजादे अहमद खान्के लड़के रहे। महमूद शाह तृतीयके मरनेसे राज्यका दूसरा उत्तराधिकारी न मिलने पर प्रधान मन्त्री इतमाद खान्ने इन्हें सन् १५५४ ई०की १८ वीं फरवरीको गुजरातका राज्यसिंहासन सौंपा था। इन्होंने सात वर्ष और कुछ मास राज्य किया। सन् १५६१ ई०की २१ वीं अप्रैलको राजप्रासादकी दीवारके नीचे इन्हें कोई मारकर डाल गया था।

इनका उत्तराधिकार मुजफ्फर शाह तृतीयके हाथ लगा।

अहमद शाह अबदाली—एक विख्यात आफगान वीर। लड़कपनमें नादिरशाह इन्हें पकड़ ले गये और अपना दास बनाकर रखा था। उनके पास रहकर इन्होंने सामान्य दासके कामसे लेकर सेनाध्यक्षका भारतक पाया। सन् १७४७ ई०की ११ वीं मईको नादिर विनष्ट हुए थे। यह खबर पाते ही अहमद शाहने ईरानी सेनापर आक्रमण किया, परन्तु इस युद्धमें कृतकार्य न हो ससैन्य कन्दहारमें जा पहुँचे। काबुल और कन्दहार इनके हाथ लगा, उसीके साथ साथ सिन्धु और काबुलसे भेजे हुए ईरानके बहुतसे रत्न भी इन्हें मिले। एकवारगो ही अतुल धन पाकर हिन्दुस्थान जय करनेकी वासना इनके मनमें जाग उठी थी। पेशावर और लाहोरको इन्होंने जीत भी लिया। १७४८ ई०को इन्होंने लाहोरसे दिल्लीपर चढ़ाये की। उस समय दिल्लीके सम्राट् सुहम्बद शाह बीमार थे। उन्होंने अपने पुत्र अहमदको अहमद शाह अबदालीसे लड़नेके लिये भेजा। सरहिन्दके पास दोनों सेनायें भिड़ गईं। शुकवारको वजोर कमर-उद्दीन अपने तख्ममें ईश्वरकी भजनमें निमग्न थे। उसी समय शत्रुके गोलीकी चोटसे घायल होकर वह मर गये। यह शोचनीय व्यापार देखकर मुगलसेना रणमदसे उन्मत्त हो गयी। उस दिनके युद्धमें हजारों आफगान खेत आये। रङ्ग खराब देखकर अहमद शाहने पीठ दिखाई और काबुल जाकर नई राह निकालनेकी चेष्टा करने लगे। १७५७ ई०को यह आगरे तथा दिल्लीतक आये और राहमें मथुराको लूटकर कन्दहार लौट गये। इसी समय महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे समस्त हिन्दुस्थान उत्पीड़ित हो गया था। रुहेलाधिप नाजिर-उद्दौला, अवधके नवाब शुजा उद्दौला तथा दूसरे भी कितने ही मुसलमानोंने महाराष्ट्रोंके अत्याचारसे कुटकारा पानेको आशापर अहमद शाह अबदालीको बुलाया और उनके लिये दिल्लीका तख्त तक छोड़ देना चाहा। अबदाली फिर सेना लेकर भारतवर्षमें आये। महाराष्ट्रोंसे इनकी कई लड़ाइयां हुईं। उनमें

पानी पतका युद्ध ही प्रधान है। १७६१ ई०में यह युद्ध हुआ था। इस युद्धमें महाराष्ट्रोंने पूर्णरूपसे पराजय स्वीकार कर लिया।

स्वदेश लौट जानेके समय अबदाली शाह आलम-को भारतवर्षका सम्राट बना शुजा उद्दौला आदि नवाबोंको उनकी अधिनता स्वीकार करनेका आदेश दे गये थे। २६ वर्ष राज करनेके बाद १७७३ ई०को अहमद शाह अबदालीने प्राणत्याग किया। कन्दहारके राजभवनके पास ही इनको मही दी गई थी। इनकी कब्रको लोग सिद्दाश्म समझते हैं। इनकी मृत्युके बाद इनके लड़के तैमूर शाह तख्मर बैठे। अहमद शाह अबदालीको शाह दुरानी भी कहते हैं।

अहमद शाह वली बहमानी—दक्षिणापथके एक सुलतान। यह बहमानवंशीय सुलतान दावूद शाहके पुत्र थे। पहले इनके बड़े भाई फीरोज शाहको राज्य मिला, परन्तु उन्होंने अपनी इच्छासे अपने छोटे भाई अहमदशाहको दे दिया। सन् १४२२ ई०को अहमद शाह राजसिंहासनपर बैठे थे।

एक दिन अहमद शाह शिकार खेलने गये। परन्तु आखेट करते करते एक मनोहर स्थानमें जा पहुँचे। वहाँ खच्छसलिला नदी बहती रही। फलसे लड़कें हुए वृक्ष बनकी शोभा बढ़ा और अनेक प्रकारके पक्षी कलरवसे कानन गुंजा रहे थे। यह दृश्य देख सुलतानका मन सुग्ध हो गया। इन्होंने उस स्थानमें अहमदाबाद बीदर नामक सुन्दर नगर और दुर्ग बनाया। यहीं दमयन्तीके पिताका राज्य था। १२ वर्ष राज करनेके बाद १४३६ ई०को अहमद शाह कालके कलेवा हो गये।

अहमदाबाद—१ बम्बई विभागके अन्तर्गत गुजरात-प्रदेशका एक जिला। यह अक्षा० २१° ५७' ३०" तथा २३° २४' ३०" उ० और द्राघि० ७१° २०' एवं ७२° २७' २०" पू०के मध्य अवस्थित है। इस जिलेकी उत्तर सीमामें बड़ोदा, उत्तर पूर्वमें महीकान्ता, पूर्वमें वालासिनोर एवं कैरा जिला, दक्षिणपूर्वमें कच्छ और पश्चिममें काठियावाड़ है।

अहमदाबादके भूतत्वकी पर्यालोचना करनेसे

अनायास ही स्वीकार करना पड़ता है, कि पहले यह स्थान समुद्रमें था और इसे वर्तमान भूमिके अकारमें परिणत हुए बहुत दिन नहीं बीते।

पहले अहमदाबाद अनहिलवाड़ राजाओंके अधिकारमें था। सन् ७४६ ई०में उन्होंने इस स्थानको किसानों करनेके लिये लोगोंको दे दिया। १२८७ ई० तक यह जगह उन्हींके हाथमें रही। उसके बाद भीलोंने इसे दखल कर लिया। फिर १५७२ ई०को अकबर शाहने इसे भीलोंसे छीना था। १७५३ ई०को पेशवाने इस जगहको दखल किया। १८१७ ई०को गायकवाड़ने अपना और पेशवाका हिसाब ब्रिटिश गवर्नमेण्टको दे दिया था।

अहमदाबाद खूब उपजाऊ है। बम्बई प्रदेशमें यह वाणिज्यका प्रधान स्थान है। यहाँके अधिकांश आदमी खेती-किसानी करके जीविका निर्वाह करते हैं। उनमें कुनबी, राजपूत और कोरी ही प्रधान हैं। कुनबी संचराचर तीन श्रेणियोंमें विभक्त हैं,—अच्छना, कदावा और लेवा। इस समय हिन्दुस्थानमें जिस तरह सामान्य गृहस्थके यहाँ कन्याका जन्म होनेसे वह अपनेको विपद्ग्रस्त समझता, कुनबीयो-को भी वही दशा है। इस विपद्से बचनेके लिये कुनबी जन्मते ही कन्याको मार डालते रहे। अहा! मा होकर भी सन्तानके ऊपर ऐसा अत्याचार करना पड़ता था। बिना बहुत खर्च किये कन्याका विवाह न होता था। किसीने बहुत कष्टसे कन्याको पाला पोसा। किन्तु वह जब बड़ी हुई, तो मन लायक पति न मिला। ऐसी हालतमें प्रायः पहले उसका विवाह फूलके गुलदस्तेसे होता था। फिर वह गुलदस्ता कुयेंमें फेंक देनेसे कन्या विधवा हो जाती रही। ऐसे स्थलमें वह कन्या पुनर्विवाह कर सकती थी। उसमें बहुत खर्च भी न लगते रहा। किसी स्थलमें विवाहित पुरुषके साथ कन्याका विवाह कर दिया जाता था। परन्तु शर्त यह ठहरा ली जाती थी, वर विवाह करनेके बाद ही कन्याको परित्याग कर देगा। वरके परित्याग कर देनेपर फिर जिसकी

कुनवियोंकी शिशुहत्या रोकनेके लिये सन् १८७० ई०में एक आर्डन जारी हुआ।

यहांके राजपूतोंमें दो श्रेणियां हैं। एक श्रेणीके आदिमियोंकी जमीन वगैरह है। वे प्रायः सभी आलसी हैं। फिर दूसरी श्रेणीके मनुष्योंका जीवनोपाय किसानी है। यहांके प्रायः सभी कोरी किसान हैं, और अति सामान्य अवस्थामें कालयापन करते हैं।

इस जिलेकी लोकसंख्या प्रायः साढ़े आठ लाख है। इसके प्रधान नगर हैं—अहमदाबाद, धोल्का, वरि-जाम, धोलेरा, धन्वक, गोधा, परान्तिज, मोराश और सानन्द।

यह स्थान रेशमी और जूनी कपड़ेके लिये प्रसिद्ध है। यहां आवक और ओसवाल जैन वास करते हैं। बम्बई गजेटियरके चौथे भागमें अहमदाबादका विस्तृत विवरण देखो।

२ अहमदाबादनगर। यह नगर गुजरातमें सर्व-श्रेष्ठ है। शाबरमती नदीके बायें किनारे बसा है। इसका दृश्य अति सुन्दर है। दूरसे देखनेपर नयन और मन शीतल हो जाता है। इस नगरके पूर्व और पश्चिम ओर ऊंची शहरपनाह बनी है। यह शहरपनाह प्रायः एक कोस लम्बी होगी। गुजरातके राजा अहमद शाहने इसे सन् १४१३ और १४४३ ई०के बीच बसाया था।

१५७३ ई०में यह स्थान अकबरके अधिकारभुक्त हुआ। सन् ३०की सोलहवीं और सत्रहवीं शताब्दीमें इस स्थानकी समृद्धि खूब बढ़ी थी। फिरिस्ता नामक पारसी इतिहास ग्रन्थमें लिखा है, कि उस समय गुजरातके ३६० नगरोंमें शहरपनाह रही। महाराष्ट्रोंके उत्थानसे वह सब कीर्ति विलुप्त हो गई। १७३८ ई०को दामाजी गायकवाड़ और सुनीब खां नामक एक मनुष्यके हाथमें यह शहर आया था। दोनोंने मिल जुलकर कुछ दिन इसका उपसत्त्व भोग किया।

१७५३ ई०में महाराष्ट्रोंने इस स्थानको दखल कर लिया। बीचमें सुनीब खांने कुछ दिनोंके लिये इसे अधिकार किया था, परन्तु फिर यह महाराष्ट्रोंके हाथमें चला गया। (१७५७ ई०)

१७८० ई०को ब्रिटिश सेनापति गर्डने इस स्थानपर चढ़ाई की और १८८१ ई०को यह बंगरेजोंके दखलमें आ गया। यहां जैनश्रावकोंके १२० मन्दिर हैं। स्थानीय हिन्दू तीन तीन वर्षपर एकवार नङ्गे पैर इस नगरकी परिक्रमा करते हैं।

इस नगरकी सोने और चांदीकी जरूरी प्रसिद्ध है। यहां जो कागज तय्यार होता, वह गुजरात प्रदेशमें काम आता है।

अहमदी—एक तुर्की कवि। इनका पूरा नाम खाजा अहमद जाफरी रहा। यह अमेसियामें रहते थे। किसी दिन विश्वविजयी तातार-नृपति तैमूरलङ्गने कण्ठोली जाते समय इनके ग्राममें विश्राम किया। इन्होंने अपनी बनायी गजल उन्हे जा सुनायी थी। तैमूरलङ्ग साहित्यप्रेमी रहे। उनमें और इनमें हार्दिक स्नेह बढ़ गया। किसी दिन दोनों खानागारमें बैठे थे। तैमूर इनसे कूट प्रश्न करते और उत्तर पर हंसते जाते थे। बादशाहने अनुचरोंकी ओर सङ्केतकर पूछा,—यदि आपसे कोयी इन तीन सुन्दर बालकोंका मूल्य पूछे, तो क्या बतायियेगा? अहमदीने बड़े शान्त भावसे उत्तर दिया, पहलेका एक ऊंट चांदी, दूसरेका १८२ सेर मोती और तीसरेका दाम सोनेका ४० खंटा है। तैमूरने कहा,—बहुत ठीक, अब मेरा भी मूल्य बता दीजिये। कविने कहा,—चौबीस अशरफ़ीसे कम न ल्यादा। तैमूरने हंसते-हसते फिर अहमदीसे पूछा,—क्या, चौबीस अशरफ़ीकी तो मैं सदरी ही पहने हूँ? कविने उत्तर दिया,—तभी तो, वरं आपका मूल्य कौड़ी भी नहीं आता। तैमूरने कविको इस चातुर्य और स्पष्ट कथनपर कितना ही पुरस्कार दिया था। इन्होंने 'कुलियात खाजा अहमद जाफरी', तुर्की-भाषाका 'सिकन्दरनामा' और तैमूरलङ्गकी वीरताका वर्णन बनाया है। सन् १४१२ ई०को इनकी मृत्यु हुयी।

अहमदमिका (सं० स्त्री०) अहमद शब्दोऽस्त्वन्न वीप्सायां द्विर्भावः ठन् निपातनात् न टेलीपः।
१ परस्पर अहङ्कार, आत्मझावा, खुदबीनी, सागडांट,

हमाहमो । २ युद्धविषयक दर्प, लड़नेकी चढ़ाऊपरी,
मारकाट, धरपकड़ ।

अहमिति, अहमिति देखो ।

अहमेव, अहमेव देखो ।

अहम्पूर्व (वे० त्रि०) अहं पूर्व करोमि अहं पूर्व
करोमि इत्यभिधानं यस्य । प्रथम होनेका अभिलाषी,
उत्साह हेतु मैं पहले करूंगा मैं पहले करूंगा कहने
वाला, जो मैं पहले मैं पहले कहता हो ।

अहम्पूर्विका (सं० स्त्री०) अहंपूर्व अहंपूर्व इत्यभि-
धानं यत्र । १ योद्धाओंका उत्साहसे मैं ही पहले
जाऊंगा मैं ही पहले जाऊंगा कहना, जयेच्छु आक्र
मण, हमसरीका हमला । २ गर्व, घमण्ड ।

अहम्यत्यय (सं० पु०) अहमेवं रूपप्रत्ययः विश्वासः,
रूप० कर्मधा० । मैं और मेरेका ज्ञान, अहं शब्दाभि-
लाषी आत्मा । चार्वाक कहता, कि अहम्यत्यय देहके
ही मध्य रहता है । बौद्ध इसे क्षणिक विज्ञान बताता
और आस्तिक दर्शनके अनुसार देहादिसे व्यतिरिक्त
समभ्रता है ।

अहम्ययमिका, अहम्पूर्विका देखो ।

अहम्भद्र (सं० त्रि०) अहमेव भद्र इति निर्णयो
यत्र । अपनेको ही भद्र समझनेवाला, जो अपने
हीको बड़ा मानता हो । (स्त्री०) २ आत्माभिमान,
खुदवीनी, अपनी बड़ाई ।

अहम्यति (सं० स्त्री०) अहमित्येवं मतिः ज्ञानम्,
रूप० कर्मधा० । अविद्या, अज्ञान, खुदवीनी, जोम,
अपनी बड़ाई ।

अहम्यान (सं० स्त्री०) अहमिति देखो ।

अहर (सं० त्रि०) न हरति, ह-अच्, नञ्-तत् ।
१ हारक न होनेवाला, जो छोन न लेता हो । नास्ति
हरो हारको यस्य, नञ्-बहुव्री० । ३ हारकशून्य,
वाहनहीन, जिसे खींचनेवाला न रहे । (पु०) गणित-
शास्त्रके मतसे—शुद्धराशि अर्थात् जो राशि फिर
बंटता न हो, तत्कसीम न होनेवाली अदद । ४ असुर-
विशेषः । ५ द्वादश मनु ।

अहरणीय (सं० त्रि०) हरण किया न जानेवाला,
जो चोराने या ले जाने लायक न हो ।

अहरदृक् (सं० पु०) गृध्र, उकाव, गीघ ।

अहरन (हिं० स्त्री०) शूर्मी, स्थूणा, सनदां, निहायी ।

अहरना (हिं० क्रि०) गढ़ना, बनाना, छील-छाल
करना ।

अहरनि, अहरन देखो ।

अहरा (हिं० पु०) १ सुलगाये जानेवाले कण्डोंका
ढेर । २ सुकाम, ठहरनेकी जगह । ३ पानी पीनेका
अड्डा । यह संस्कृतके आहरण शब्दका अपभ्रंश
है ।

अहरागम (सं० पु०) प्रातःकालकी उपस्थिति,
सवेरेकी आमद, तड़केकी पहुँच ।

अहरादि (सं० पु०) अह्नः आदिः, ६-तत् । अहरादीनाम्यत्या-
दिषु वा रेफः । (महाभाष्य) १ प्रातःकाल, सवेरा । २ गण-
विशेष । इसमें निम्नलिखित शब्द पठित हैं,—अहन्,
गिर् और धुर् ।

अहरित (वे० त्रि०) जो पीला न हो ।

अहरी (हिं० स्त्री०) १ चरही, पशुओंकी पानी
पीनेका हौज । २ हौज, पानी भरनेकी जगह ।
३ पानी पीनेका अड्डा ।

अहर्गण (सं० पु०) अह्नां गणः । मास, दिनसमूह,
महीना । इसके पर्याय यह हैं,—द्युवृन्द, दिनौम,
द्युगण, दिनपिण्ड ।

२ यहीमें भावादि ज्ञापक सृष्टि, श्वेतवराहकल्प
किम्बा कल्प आरम्भसे द्रष्ट दिन पर्यन्त बीतनेवाले
दिनोंका समूह । सृष्टिके एक हजार युगमें ब्रह्माका
एक दिन होता, जो मनुष्यका कल्प भी कहाता
है । ब्रह्माका रात्रिमान भी एक हजार युग है । इन्हीं
दो युग सहस्रको ३६० से गुणाकरनेपर ब्रह्माका
एक वर्ष होता है । ऐसे ही सौ वर्षसे ब्रह्माका
परमायु आता है । पूर्वोक्त कालसे आधा ब्रह्माका
अधंपरमायु है । ब्रह्माके इसी अर्धपरमायुमें सन्धि
सहित छः मनु बीत चुके हैं । वैवस्वतमनुवाले युगके
तीन घन गत हुये हैं । उनके २८ युगमें सत्ययुग बीता
था । सूर्यसिद्धान्तने निम्नलिखित नियमसे इसकी गणना
की है,—मनुष्यके ४३२००००००० वर्षका ब्रह्माका
एक दिन होता, और इतना ही समय रातमें भी लगता

है। इन दोनोंको जोड़ देनेसे ब्रह्म अहोरात्रमान ८६४०००००० वर्ष होता है। इसको ३६०से गुणा करनेपर ३११०४०००००००० आता, जो ब्रह्माका एक वर्ष है। ब्रह्माके वर्षको एक सौसे गुणा करनेपर ३११०४०००००००००० वर्ष निकलते हैं। यही ब्रह्माका परमायु है। इसका आधा १५५५२००००००००० वर्ष ब्रह्माका अर्ध परमायु ठहरता है। मन्वन्तर संख्या ३०६७२०००० वर्ष है। इसके छगुने— १८४०३२०००० वर्षोंमें छः मनु बीत चुके हैं।

अहर्जर (दे० पु०) अहोभिः परिवर्तमानो लोकान् जरयति, अहन्-जृ-करणे-अप्। संवत्सर, साल, दिनोंको बुझा बनानेवाला जमाना।

अहर्जात (वे० त्रि०) दिनमें उत्पन्न, रात्रिसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो दिनको पैदा हो।

अहर्दिव (द्वै० अव्य०) अहनि च दिवा च निपा० अजन्त समा० इन्द्र। १ दिन-दिन, प्रतिदिन, रोज बरोज, हररोज। (त्रि०) २ प्रतिदिन होनेवाला, जो हररोज हो।

अहर्दिवि (द्वै० अव्य०) दिन-दिन, प्रतिदिन, रोज-बरोज, हररोज, लगातार, बराबर।

अहर्दृश (वे० त्रि०) दिन देखनेवाला, जीवित, जिन्दा, जो दिन देखता हो।

अहर्नाथ (सं० पु०) अहो नाथः, ६-तत्। १ दिन-नाथ सूर्य, दिनका मल्लिक आफताब। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़।

अहर्निश (सं० स्त्री०) अहश्च निशा च समा० इन्द्र०। १ दिवारात्रि, रातदिन, तमाम दिन। (अव्य०) २ सदा, हमेशा, बराबर।

अहर्पण (सं० पु०) मांस, गोष्ठ।

अहर्पति (वै० पु०) अह्नः पतिः उदयेन प्रकाशक-त्वात्। १ सूर्य, आफताब। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़। ३ शिव।

अहर्बान्धव (सं० पु०) अह्नि बान्धव इव अन्धकार-दूरीकरणात्। १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहर्भाज (वै० स्त्री०) अहर्बहुदिवसं भजति तिष्ठति, अहन्-भज-णि। १ इष्टका विशेष, बहुत दिन टिकने-वाली ईंट। (त्रि०) २ दिवस-सम्बन्धीय, दिनी।

अहर्मेणि (सं० पु०) अह्नि अहो वा मणिरिव प्रकाशकत्वात्। १ दिनमें मणि-जैसा चमकनेवाला सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहर्मुख (सं० स्त्री०) प्रातःकाल, सबेरा, दिनका निकलना।

अहर्लोक (वे० पु०) अहर्बहुदिवसं लोच्यते दृश्यते अहन्-लोक कर्मणि घञ्। १ इष्टकाविशेष, बहुत दिन टिकनेवाली ईंट। (त्रि०) २ दिवसका स्थान ग्रहण करनेवाला, जिसे दिनकी जगह मिले।

अहर्विदु (द्वै० पु०) अहः एकाहसाध्यं अग्निष्टोमं वेत्ति, अहन्-विदु-क्तिप्। १ एकाहसाध्य अग्निष्टोम-वेत्ता, जो एक ही दिनमें किये जानेवाले अग्निष्टोमको जानता हो। (त्रि०) २ बहुकालस्थायी, बहुत दिन टिकनेवाला। ३ विदित, बहुत दिनसे समझा हुआ। ४ कालज्ञ, मौका देखनेवाला।

अहर्षन्द (सं० स्त्री०) अह्नः इन्द्रं समूहः, ६-तत्। दिनसमूह, दिनका जखीरा।

“मेषादीनामहर्षन्दं षण्णां सप्ताष्टचन्द्रकम्।

तुलादीनामष्टसप्तचन्द्रकानु लिखितं पृथक्॥” (मथनासतत्त्व)

मेषादि छः मासके १८७ और तुलादि छः मासके १७८ जोड़ ज्योतिषके नियमानुसार वत्सर ३६५ दिनका गिना जाता है।

अहर्ष (सं० त्रि०) मन्दभाग्य, कमबख्त, जो खरा न हो।

अहर्षित, अहर्ष देखो।

अहल (सं० त्रि०) अलष्ट, असीत्य, जो हससे जोता न गया हो।

अहलकार (फ़ा० पु०) कर्मचारी, कामकरनेवाला शख्स। यह शब्द प्रायः अदालतके नौकरीपर व्यवहार होता है।

अहलमद (फ़ा० पु०) न्यायालयका कर्मचारीविशेष, अदालतका एक मुलाजिम। अहलमद अदालतकी मिस्त्री रजिष्टरपर चढ़ाता, हुक्म निकालता और फौसलेके कागज़ हिफाजतसे रखता है।

अहला, अहिला और आह्ला देखो।

अहलाद (हिं०) आह्लाद देखो।

अहलादी (हिं०) आलसदिन् देखो।

अहल्य (सं० त्रि०) न हलेन कृष्यम्। १ हलद्वारा कृष्य, जो हलसे जोता न जाता हो। (पु०)
२ देशविशेष।

अहल्या (सं० स्त्री०) १ अप्सरोविशेष, एक परी।
२ गीतमपत्नी। पुराणमें कहा कि, अहल्याका नाम लेनेसे महापातक नाश होता है। यथा—

“अहल्या द्रौपदी कुन्ती तारा मन्दोदरी तथा।

पञ्चकन्याः संरेत्रित्य महापातकनाशनम् ॥”

यह वृद्धाश्वकी कन्या रहीं, इनके स्वामीका नाम गीतम था। इन्द्रने गीतमका रूप बना अहल्याका धर्म नष्ट किया। इसी अपराधके कारण गीतमके शापसे इन्द्रके शरीरमें सहस्र योनि हुई और अहल्या पाषाण बन गयी थीं। पौष्टि त्रेतायुगमें मर्यादापुरुषोत्तम रामचन्द्रजीके पादस्पर्शसे इनका शाप कूटा। (रामायण)

२ राजा इन्द्रधनुकी पत्नी। योगवाशिष्ठमें इनकी कथा लिखी है। यह गीतमपत्नी अहल्या एवं इन्द्रका वृत्तान्त सुन इन्द्रनामक किसी व्यक्तिके प्रणयमें आसक्त हुई थीं। इसीसे राजाने इनको नगरसे निकलवा दिया।

रामायणके उत्तरकाण्डमें (उ० अ० १८—२१) अहल्याका विवरण इस तरह लिखा है,—ब्रह्मा एक दिन इन्द्रसे कहने लगे, हे अमरेन्द्र! मैंने बुद्धिसे कल्पना कर प्रजागणकी सृष्टि रची है। उसमें सबका एक वर्ण, एक भाषा एवं एक विषय है। किसी लक्षण या आकृतिमें उसका कोशो अंतरविशेष नहीं पड़ा। इसके बाद मैंने एकाग्रचित्तसे प्रजाके विषयमें चिन्ता की थी। उसके मध्यमें विशेषता देखानेको मैंने एक स्त्री बनायी। जिस प्राणीका जो अङ्गप्रत्यङ्ग उत्तम रहा, मैंने उसीको उद्भूत किया था। इससे रूपगुणसम्पन्ना अहल्या कन्याका निर्माण हुआ। हल शब्दसे वैरूप्य समझते और हलसे जो प्रभूत हो, उसको हल्य कहते हैं। जिसके शरीरमें कुछ भी वैरूप्य नहीं होता, उसीको अहल्या कहा जाता है। “हलं नामिह वैरूप्यं हल्यं तत्प्रभवं भवेत्। यस्या न विद्यते हल्यं तेनाहल्येति विमुक्ता ॥” इसीसे मैंने उसका अहल्या

नाम रखा था। हे देवेन्द्र! कन्या निर्माण करके, मुझे यही चिन्ता होने लगी। यह कहाँ रहेगी और इसका विवाह किससे किया जायेगा? हे पुरन्दर! तुम स्वर्गके राजा हो, इस लिये तुमने मन ही मत स्थिर किया,—यह कन्या हमारी होगी। किन्तु मैंने उसको गीतमके तत्त्वावधानमें गच्छित रखा। बहुत वर्षतक गच्छित रखकर उसको उन्होंने प्रत्यर्पण कर दिया। उन महासुनिका स्थैर्य और तपःसिद्धि देख मैंने वह कन्या उन्हीं को सम्प्रदान की। महासुनि उसको लेकर रसभावसे सहवास करने लगे। गीतमको कन्यादान करनेसे देवता निराश हुये थे। तुमने कामातुर हो क्रुद्धमनसे सुनिके आश्रममें पहुँच उस दीप्त अग्निसदृश स्त्रीको देखा। उस समय वह कामार्त और क्रोधसे प्रज्वलित हुई और तुमने उसका धर्म नष्ट किया। महर्षिने तुमको आश्रममें देख लिया था। उस समय तेजस्वी ऋषिने यह शाप दिया,—तुम्हारे इस ऐश्वर्य और भाग्यका विपर्यय हो।

कुमारिलभट्ट कहते हैं,—अहल्या और इन्द्रका गल्प केवल रूपक वर्णना मात्र है। अहल्या शब्दसे रात्रि और इन्द्रसे सूर्यका बोध होता है। यही घटना अवलम्बन कर अहल्या और इन्द्रका वृत्तान्त कल्पन किया गया है,—दिनमें सूर्योदय होनेसे रात्रि नहीं रहती। (अहनि तीयमानतया)

सुदगलसे मौदगल गोत्रीय ब्राह्मणगण उत्पन्न हुआ है। वह क्षत्रियका अंश हैं। सुदगलके पुत्रका नाम वृद्धाश्व था। वृद्धाश्वसे यमज पुत्रकन्या दिवोदास एवं अहल्या और शरद्धानुके औरस तथा अहल्याके गर्भसे शतानन्दका जन्म हुआ। (विष्णुपुराण ४।१८।१८) इस स्थलकी टीकामें श्रीधरस्वामी लिखते,—शरद्धानु और गीतम एक ही व्यक्ति हैं। (शरद्वती गीतमात् क्लृप्तं खलितम्)

भागवतपुराणमें भी लिखा है, (४।२।१२)—सुदगलसे मौदगल गोत्रीय ब्राह्मण, भार्ग्य सुदगलसे यमज पुत्रकन्या दिवोदास एवं अहल्या और गीतमके औरस तथा अहल्याके गर्भसे शतानन्दका जन्म हुआ था।

अहल्यानन्दन (पु०) ६-तत्। यतानन्द ऋषि।
अहल्याबाई—मालवदेशके राजा खाण्डेरावकी पत्नी।
इनके एक पुत्र और एक कन्या थी। पुत्रका
नाम मालीराव रहा। खाण्डेरावकी मृत्युके बाद
मालीरावने अल्पकाल राजत्व चला सन् १७६६ ई०में
परलोकगमन किया। अहल्याकी कन्याका नाम
मुक्ताबाई था। उनका विवाह यशोवन्त रावसे हुआ।

मालीरावकी मृत्युके बाद अहल्याबाई स्वयं
राजेश्वरी हुईं। ये स्वभावसे अतिशय धर्मशेला और
बुद्धिमती थीं। परन्तु इनके अपने हाथमें राज्यभार
लेनेसे गङ्गाधर यशोवन्त नामक एक राजपुरोहित
विरोधी हो गये। उनकी इच्छा थी, कि रानी
एक दत्तक-पुत्र ग्रहण करतीं। दत्तक-पुत्र ग्रहण
करनेसे वह स्वयं राज्यके कर्ता हो सकते, किन्तु
अहल्याबाई इस प्रस्तावमें सन्मत न हुईं। पीछे
राघवदादा नामक महाराष्ट्रीय राजाके पितृव्य
गङ्गाधरके सपत्न बन अहल्याके विरुद्ध युद्धका
उद्योग करने लगे। यह बात सुनकर अहल्याबाईने
महाराष्ट्रदेशके राजा माधवरावकी विशेष अनुरोधसे एक
पत्र लिखा था। माधवरावने पत्र पाकर अपने भतीजे
राघवदादाको विरोधसे चान्त किया, इसीसे युद्ध न
हुआ। पीछे अहल्याबाईने गङ्गाधरको क्षमा कर
प्रधान मन्त्री बनाया था। फिर तुकाजी होलकर
नामक एक मनुष्य सेनापति नियुक्त हुये। तुकाजी
बहुत बुद्धिमान व्यक्ति थे। इसलिये उन्होंने शीघ्र ही
अन्य अन्य कार्यका भार भी पा लिया। अहल्याबाई
स्वयं महिसुरमें रह शातपुरा पर्वतके उत्तर सकल
देशका राजस्व इकट्ठा करती थीं। इधर मालव, निमाड़
और दक्षिणप्रान्तका कर भी इनके पास जा पहुँचता।
तुकाजी शातपुरा पर्वतके दक्षिण रह होलकरके
अधिकारस्थ सम्पूर्ण देशका राजस्व संग्रह करते थे।
अहल्याबाईके समय राज्यमें किसी प्रकारकी विमुहला
न रही। सब कर्मचारी नियमित रूपसे वेतन पाते थे।
कर्मचारियोंको वेतन देकर जो रुपया उद्धृत रहता,
युद्धादिके निमित्त वह संग्रह किया जाता था। दिन दिन
अहल्याबाईकी प्रतिपत्ति बढ़ने लगी। भारतवर्षीय

सब राज्योंके वकील और प्रतिनिधि इनकी सभामें
उपस्थित रहते थे। इधर अहल्या रानीके भी
प्रतिनिधि पूना, हैदराबाद, औरङ्गपत्तन, नागपुर,
लखनऊ एवं कलकत्ते नगरमें रह सकल कार्य
निर्वाह करते थे। फलतः राजकार्यकी ऐसी सुव्यवस्था
पहले कभी न हुयी थी। हिन्दूमहिलायें घरसे
बाहर नहीं निकलतीं, परन्तु अहल्याबाई राजसभामें
बैठ मन्त्रियों और पारिषदोंसे सम्पूर्ण राजकार्यका
परामर्श लेती थीं। यह प्रतिदिन सूर्योदयसे पूर्व
ही उठ स्नानादिके पीछे प्रातःकृत्य चलाते रहीं।
पूजा आदिके बाद कुछ काल धर्मग्रन्थ पुराण प्रभृ-
तिका पाठकर अपने हाथसे थोड़े ब्राह्मणोंको भोजन
करा अहल्या भोजन करती थीं। यह मतृस्य मांस
खाती न थीं। भोजनके बाद कुछ काल विश्राम कर
साढ़े बारह बजेके बाद राजवस्त्र पहन सभामें जाते
रहीं। संध्याकाल पर्यन्त दरबार होता था। सायंकृत्य
एवं रात्रिके भोजन बाद यह पुनः सभामें बैठती थीं।

पहले इन्दौर अति सामान्य ग्राम था, अहल्या-
बाईके यत्नसे क्रमशः समृद्धिशाली और प्रसिद्ध नगर
हो गया। यह कभी प्रजाके ऐश्वर्यपर लोभ
करती न थीं। इनको निज व्ययके लिये पाँच
लाख रुपये वार्षिक आयकी सम्पत्ति निर्दिष्ट रही।
इससे भिन्न होलकर राज्यसे दो करोड़ रुपया
इन्होंने पाया था। यह रुपया सत्कर्ममें ही व्यय
किया गया। पहले इन्होंने कयी दुर्ग बनवाये थे।
उसके बाद विन्ध्य पर्वतपर जाम नामक दुर्गमें एक
राह बनवायी। केदारनाथके यात्रियोंकी सुविधाके
लिये एक धर्मशाला और एक तालाब निर्माण
कराया। यह धर्मशाला मन्दर नामक स्थानसे
उत्तर आज भी विद्यमान है। महिसुर और मालव-
प्रान्तमें भी इनकी बनवायी अनेक धर्मशाला तथा
कूप हैं। इससे अतिरिक्त सेतुबन्धरामेश्वर, द्राविड़
और श्रीक्षेत्रमें एक एक कौर्त्ति खड़ी है। बड़ोदा-
राज्यस्थ काडी जिलेके सिद्धपुर नामक स्थानमें
छमलपुरी गोंसायियोंका जो बढ़िया धर्मशाला खड़ा,
यह अहल्याबाईकी ही बनवाया है। काठियावाड

जुनागढ़में इन्होंने सोमनाथका दूसरा-नया मन्दिर खड़ा करवाया, जो ३८ फीट लम्बा और ४२ फीट चौड़ा है। मन्दिरकी चारो ओर ८२ फीट चौड़ा अहाता खिंचा है। अहातेमें धर्मशाला और अन्न-पूर्णा एवं गणपतिका दो छोटा मन्दिर है। सोमनाथके मन्दिरपर तीन गुम्बज लगे हैं। शङ्खलेखर लिङ्गके नीचे १२ फीट लम्बी-चौड़ी कोठरी खुदी, जिसमें सोमनाथका लिङ्ग विराजमान है। गुम्बजोंमें ३२ खम्भे लगे हैं। परन्तु सकल स्थानकी अपेक्षा गयाधामवाली इनकी कति ही अधिक प्रशंसनीय है। गयामें इनके प्रतिष्ठित अनेक देवालय हैं, जिनके मध्यमें विष्णुपदमन्दिर और लाट-मन्दिर अतिशय आश्चर्यमय हैं। मन्दिरकी कारीगरी विश्वकर्माने मानो अपने हाथ निकाली है। ऊपरी मेहराब अति चमत्कार है, मानो शून्यपर आप ही लटकती है। फिर एक मन्दिरमें रामसीताकी प्रतिमूर्ति है, जिसके समीप अहल्याबाई बंठ भक्ति भावसे शिवपूजा करती हैं। इनके समस्त देवालयोंमें प्रतिवर्ष विस्तर अर्थ और खाद्यद्रव्यादि दान किया जाता था। इससे भिन्न यह नित्य दरिद्रोंको भोजन कराती थीं। शीतकाल आनेसे पक्षियोंके लिये अहलारा स्थान स्थान पर जलसत्र बैठा देते रहीं। शीतकालमें दरिद्रोंका यह वस्त्र वितरण करती थीं। पशु-पक्षियोंके लिये भी खाद्यद्रव्य निर्दिष्ट था। कृषक शस्यक्षेत्रमें पक्षियोंको बैठने न देते थे। असंख्य असंख्य पक्षी दल बांधकर ऊपर उड़ा करते, परन्तु कुछ भी खाने न पाते रहे। यह देखकर अहलारा रानी कृषकोंसे फसलों खेत खरीद कर पक्षियोंके निमित्त छोड़ देती थीं। इसीतरह सन् १७६५ से १७८५ ई० तक प्रायः तीस वर्ष सुखपूर्वक राजत्व चला साठ वर्षकी अवस्थामें इन्होंने स्वर्गगमन किया।

अहलाराज (सं० पु०) ३-तत्। इन्द्र।

अहल्यास्थान—विहारप्रान्त दरभङ्गा जिलेके अलियारी ग्रामका मन्दिर। प्रति मास इस मन्दिरमें धार्मिक मेला लगता और दिन रात ठहाता मचता है। दश सहस्र यात्री एकत्र होते हैं। पहले तिरसठ परगनेके

देवकली कुण्डमें स्नान कर पीछे लोग यहां सीताका पदचिह्न देखने आते हैं। पदचिह्न चपटे पत्थर पर उतरा है। कहते हैं, गौतम ऋषि यहीं रहते थे।

अहल्याऋद (सं० पु०) अहल्या कतो-ऋदः, शाक ३-तत्। गौतमके आश्रमका स्वनामख्यात तीर्थविशेष। अहलिक (सं० पु०) अहनि लौयते जनैर्न दृश्यते अहन् ली निपा० ड संज्ञायां ठन्। प्रेत, दिनका देख न पड़नेवाला प्रेतान्।

अहवन—अवधके राजपूतोंका एक वंश। कहते हैं, कि गुजरात अनहलवाड़ पाटनके छवार शासक आह-हय गोयी और सोयी अहवनोंके पूर्वपुरुष रहे। दोनों ही नेता सन् ई०का शताब्द आरम्भ होते समय अवध आये थे। इनमें कुछ हिन्दू और कुछ सुसलमान होते, किन्तु साथ ही बैठकर खाते हैं। हिन्दू हिन्दुओं और सुसलमान सुसलमानोंके साथ विवाह करते हैं। अहवनीय (सं० त्रि०) हवनके अयोग्य, जिसे आहुतिमें डाल न सकें।

अहवात (हिं० पु०) सोहाग, जिस हालतमें खाविन्द जिन्दा रहे।

अहवान (हिं०) आह्वान देखो।

अहवाल (अ० पु०) वृत्तान्त, बातें, खबरें। २ दशायें, हालतें। यह शब्द 'हाल'का बहुवचन है।

अहविस् (वे० त्रि०) हव्यरहित, बालिविहीन।

अहशशस् (वे० अव्य०) प्रतिदिन, रोज-रोज।

अहशशेष (सं० पु०) अङ्गः शेषः। १ दिवसका शेष, सम्या, शाम। अङ्गः शेषो यत्र, बहुव्री०। २ अशीच-व्रतादिके पूरे होनेका दिन।

अहसान (अ० पु०) १ उपकार, भलायी, सलूक, नेकी। २ अनुग्रह, मेहरबानी।

अहस्कर (सं० पु०) अहः करो अहन्-क-ट उप० समा०, अङ्गिकरो यस्य बहुव्री० वा, कस्कादित्वात् सः। १ सूर्य। २ अर्कवृक्ष।

अहस्त (सं० त्रि०) न स्तः हस्तौ यस्य नञ्-बहुव्री०। १ हस्तशून्य। जैसे छागादि प्राणो। २ क्षिप्तहस्त, हस्त-रहित, जिसके टूटा हाथ रहे। नास्ति हस्तः शुण्ठी यस्य। ३ शुण्डरहित, बेसूँड।

अहम्यति (सं० पु०) अहः पतिः तत् वा सत्वम् ।
१ सूर्य । २ अर्कवृक्ष ।

अहह (सं० अव्य०) अहम् अहङ्कारं जहाति, अहम्-
हा-क प्रयो० साधु । १ ओ, ए । २ अरे, क्या । ३ हाय
हाय, खेद । ४ लेश, तकलीफ । ५ प्रकर्ष, क्या खूब ।

अहहा (सं० अव्य०) अहम् आत्माभिमानं जहाति ।
अहम्-ह-डा । अहह देखो ।

अहा (हिं०) अहह देखो ।

अहाता (अ० पु०) १ अङ्गन, प्राङ्गण, घेरा । २ चत्वर,
चहारदीवारी ।

अहान (हिं०) आह्वान देखो ।

अहार (हिं०) आहार देखो ।

अहार—१ राजपूतानेकी उदयपुर राज्यका विभक्त नगर।
यह उदयपुर नगरसे ३ मील पूर्व पड़ता है। कहते
हैं, आशादित्यने पुरातन राजधानी तखा नगरोके
स्थानमें इसे प्रतिष्ठित किया था। उज्जैन हाथ आनेसे
पहले विक्रमादित्यके तुवार पूर्वपुरुष तखा नगरोमें
ही निवास करते रहे, जिसका नाम बिगड़ कर पहले
आनन्दपुर और पछे अहार हुआ। इस स्थानकी पूर्व
और कितने ही पुरतके निशान मिलते, जिन्हें 'धल-
कोट' कहते हैं। धलकोटमें पत्थरकी तराशी हुई
चीजें, मट्टीके बरतन और सिक्के हाथ लग जाते हैं।
कुछ बहुत पुराने जैनमन्दिरोंका आज भी पता
चलता, जिनका मसाला दूसरे अधिक पुराने गिरे
मन्दिरोंसे लिया गया है। भूमि चेत्यों और मन्दिरोंके
टूटे पत्थरसे भरी, जो रानावोंकी छतरी बनानेमें
लगा है।

२ युक्तप्रदेशके बुलन्दशहर जिलेका एक प्राचीन
नगर। यह गङ्गाके दाहने किनारे बुलन्दशहर नगरसे
२१ मील दूर बैठता है। यहां थाना, पोस्टाफिस और
स्कूल बना है। ज्येष्ठ मासमें गङ्गास्नानका बड़ा मेला
लगता है। नगरमें कितने ही साधारण मन्दिर बने
हैं। नगरकी अवस्था अब बिगड़ गयी है। शीत और
ग्रीष्म ऋतुमें गङ्गापर नावका पुल बांध दिया जाता है।
औरङ्गजेबके समय अहारके नागर ब्राह्मण सुसलमान
हो गये थे, जो सन् १८५७ ई० तक अपनी मिल-

कियतका हक पाते रहे। सिपाही विद्रोहके बाद
उनकी भूमि सुरादाबादके राजा गुदसहाय मल्लको
दी गयी थी।

अहारिन् (सं० त्रि०) ले न जानेवाला, जो लेता
न हो।

अहारो (हिं०) आहारी देखो।

अहार्य (सं० पु०) न ह्रियतेऽसौ, ह-अत्, नञ्-तत् ।
१ पर्वत, उठ न सकनेवाला पहाड़।

'अहार्यपर्यन्तः।' (अनर)

(त्रि०) २ हरण करनेको अशक्य, जिसे चोरा न
सके। ३ अमेद्य, जो टूट न सकता हो।

अहार्यता (सं० स्त्री०) रक्षा, गुप्ति, हिफाजत, जिस
हालतमें चीज उठाकर ले न जा सके।

अहाहा (हिं०) अहह देखो।

अहि (सं० पु०) आहन्ति आहन्यते वा, आ-हन्-
इण्, तस्य डित्वं डित्वात् टिलोपः आडाङ्गस्य । १ सर्प,
सांप । २ हवासुर, असमान्का सांप । ३ ऋग्वेदोक्त
असुरविशेष। यह इन्द्रका अतिग्रय शत्रु था। ४ सूर्य ।
५ राहु । ६ पथिक, राहगीर । ७ खल, खुराब
आदमौ । ८ वृक्षक, ठग । ९ सर्पस्त्रामिक अशेष
नक्षत्र । १० जल, पानी । ११ मेघ, बादल ।
१२ व्यावाष्टिवी, असमान् और जमीन् । १३ शीषक,
सीसा । १४ पृथिवी, जमीन् । १५ गो, गाय ।
१६ नाभि, तोंदी । १७ उत्तरावर्त । १८ वज्रीवृक्ष ।
(त्रि०) १९ व्यापक, सुशरह, मामूर । २० व्याप्त,
परागन्दा, फैला हुआ । २१ आघातकर्ता, चोट
चलानेवाला, जो मारता हो।

अहिंसक (सं० त्रि०) न हिनास्य, हिन्स-वुञ्, नञ्-
तत् । हिंसारहित, मासूम, जो मारता न हा।

अहिंसा (सं० स्त्री०) हिन्स-अ-टाप्, नञ्-तत् ।
१ अद्रोह, अनपकार, बेगुनाही, मासूमियत,
भोलापन । २ योगशास्त्रमें—मनोवाक्यकाय द्वारा
परपीड़ाका अभाव, दिल जबान या हाथ-पैरसे
किसीको तकलीफ न देना । ३ प्राणिपीडा-निवृत्ति,
जानवरोंको न मारना । ४ अशास्त्रीय प्राणिपीडाका
अभाव, जैसे शेरानुसार जानवरोंको कत्ल न करना ।

आसक्तारोने लिखा, कि वेदविहित हिंसा अहिंसा कहाती है। मनुने भी वैध हिंसामें कोयी दोष नहीं बताया। मीमांसक भी इसी मतको मानते हैं। किन्तु सांख्यमतसे वैध हिंसा पुरुषके लिये पापजनक होती है। बौद्ध और जैन अहिंसाको ही परमधर्म समझते हैं।

अहिंसान (सं० त्रि०) न हिंनस्ति, हिंन्स शीलायें शानच्, नज्-तत्। हिंसा न करनेवाला, जो मारता-पीटता न हो।

अहिंसानिरत, अहिंसान देखो।

अहिंसित (वै० त्रि०) पीड़ारहित, जो मारा न गया हो।

अहिंस्मान, अहिंसित देखो।

अहिंस्र (सं० त्रि०) १ अहिंस्रकः मासूम, जो मारता-काटता न हो। (क्तो०) २ हिंसाशून्य व्यवहार, जिस काममें मार-काट न रहे। (पु०) ३ कुलिक वृक्ष, काकरोलका पेड़।

अहिंसा (सं० स्त्री०) कण्टकपाली वृक्ष, काकरोलका पेड़। यह विष और शोथको दूर करता है।
(राजनिषण्ड)

अहिक (सं० पु०) अन्ध सर्प, अन्धा सांप। इसमें विष नहीं होता। २ शाखालीवृक्ष, सेमलका पेड़।

अहिका (सं० स्त्री०) शाखालीवृक्ष, सेमलका पेड़।

अहिकान्त (सं० पु०) अहिभिः कास्यते स्म, काम-क्त, इ-तत्। वायु, सांपोंकी प्यारी चीज हवा। कहते, कि सांप वायुको खाकर जीते हैं।

अहिकुटी (सं० पु०) भारद्वाजपत्नी, चक्रोर।

अहिकोष (सं० पु०) निर्भीक, खुरण्ड, सुरदारगोशत, कंचली।

अहिचक्र, अहिचक्र देखो।

अहिचेत्र (सं० पु०) अहिना शोभितं चैत्रम्, शाक० तत्। १ हस्तिनापुरके पूर्वदेशका चैत्र। अहिचक्र देखो। २ सर्पके रहनेकी भूमि, जिस जगहमें सांप रहें।

अहिगण (सं० पु०) १ वृत्तविशेष, एक बहर। इसके आदिमें एक गुरु और अन्तमें तीन लघु मात्रा रहती हैं। इ-तत्। २ सर्पसमूह, सांपोंका जखीरा।

अहिगन्धफला (सं० स्त्री०) सप्तकीवृक्ष, लुवानका पेड़।

अहिगन्धा (सं० स्त्री०) सर्पगन्धा, सांपगन्धा, एक पेड़।

अहिगोप (वै० त्रि०) सर्पसे रक्षित, जिसको सांप बचाता हो।

अहिघ्न (वै० स्त्री०) स्वर्गीय नदीकी राह रोकनेवाले वृत्तासुरका हनन।

अहिघ्नी (वै० पु०) सर्पविनाश, सांपोंका कत्तल।

अहिच्छत्र (सं० पु०) अहिः फणाकारः छत्रः छादकः, शाक० इ-तत्। १ मेघशृङ्गीवृक्ष, भेड़ासींगीका पेड़। २ देशविशेष। अर्जुनने यह देश जीत द्रोणाचार्यको दिया था। हेमचन्द्रकोषमें इसका नाम 'प्रत्यग्रय' लिखा है।

अहिच्छत्रका दूसरा नाम अहिचेत्र है। कहते हैं, कोयी अहीर मैदानमें सो रहा था। उसी समय एक सांप उसके मस्तकपर अपना फणा फैलाकर जा बैठा। वही अहीर पौछे राजा हो गया, लोग उसे आदिराज कहने लगे। इसीसे अहिचेत्रका नाम 'आदिकोट' भी है।

कोरवोंने द्रुपदराजको युद्धमें हरा पञ्चालदेश दो भागोंमें बांटा था। उसमें गङ्गातीरस्थ माकन्दी देशसे चर्मण्वती नदी पर्यन्त दक्षिण पाञ्चाल द्रुपदके अंशमें पड़ा। इसको राजधानीका नाम काम्पिल्य रहा। उत्तर पञ्चाल जनपदको अहिच्छत्र कहते थे। इसको राजधानी अहिच्छत्रा नामसे प्रसिद्ध रही। द्रोण यहांकी राजा बने थे।

चीनपरिव्राजक युअङ्गचुयाङ्गका कहना है, कि इस स्थानमें एक नागझर रहा। इसी झरके किनारे बुद्ध-देवने सात दिन तक अपना मत प्रकाश किया था। चीनपरिव्राजकके समय यहां बारह मठ रहे। उनमें कोई एक हजार सन्नासी निवास करते थे। सिवा इसके ब्राह्मणोंके भी नौ देवालय रहे। इनमें भी कोयी तीन सौ ब्राह्मण महादेवको पूजा करते थे।

अहिच्छत्रक (सं० स्त्री०) गोमयज, कुङ्कुमुत्ता, सांपकी टोपी।

अहिच्छदा (सं० स्त्री०) १ शताब्दाक्षुप, सौफका भाड़। २ शर्करा, चीनी। ३ अहिच्छद देशकी राजधानी। इसकी चारो ओर प्राचीर बना था। उसका परिधि कोयी तीन कोस रहा। यहां रामगङ्गा और गङ्गान नदीके मध्य एक किला था, जहां अली मुहम्मद खाने कितनी ही मसजिदें बनवायीं।

अहिजाहक (सं० पु०) ककलास, गिरगिट।

अहिजित् (सं० पु०) अहिं सपं असुरविशेषं वा जितवान्, अहि-जि-क्विप्-तुक्। १ कण्ठ। यमुना नदीमें कालीय अहि अर्थात् सर्प जीत लेनेसे कण्ठको अहिजित् कहते हैं। २ इन्द्र। ऋग्वेदमें लिखा, कि इन्द्रेण अहि नामक असुरको मारा था।

अहिजिन, अहिजित् देखो।

अहिजिह्वा (सं० स्त्री०) अहिजिह्वेव। नागजिह्वा नामक लता, नागफनी। इसका अग्रभाग सांपकी जीभ-जैसा होता है।

अहिजिह्विका (सं० स्त्री०) महाशतावरी, बड़ी शतावर।

अहिण्डुका (सं० स्त्री०) हिण्ड-उकच् टाप्, नञ्-तत्। सुश्रुतोक्त कीटविशेष, एक जहरीला छोटा कीड़ा।

अहित (सं० पु०) नञ्-तत्। १ शत्रु, दुश्मन्। (स्त्री०) २ क्षति, नुकसान। ३ कुपथ्य, बीमारीमें न खाने लायक चीज। (त्रि०) ४ अप्रतिष्ठित, जो रखा न गया हो। ५ अयोग्य, नाकाबिल। ६ हानिकारक, नुकसानदेह। ७ प्रतिद्वन्द्वी, हासिद। ८ प्रतिकूल, सुखालिफ।

अहितकारिन् (सं० त्रि०) प्रतिद्वन्द्वी, सुखालिफ, जो भलायी न करता हो।

अहितद्रव्य (सं० स्त्री०) अखाद्य द्रव्य, न खाने लायक चीज। शिम्बीधान्यमें माष कलाय, फलमें उडुक (बड़हल), दुग्धमें भेषीदुग्ध, तैलमें कुसुभतैल और इक्षुविकारमें फाणित अहितद्रव्य है। (भावप्रकाश)

अहितनामन् (वै० त्रि०) अद्यपर्यन्त नामसे रहित, जो अबतक वेनाम हो।

अहितपदार्थ (सं० पु०) १ वृद्ध रमणी, बुढ़ी औरन।

२ पूतिमांस, गन्दा गोश्त। ३ प्रभातनिद्रा, सुबेरकी नींद।

अहितमनस् (सं० त्रि०) विरोधी, सुखालिफ, बुरा चेतनेवाला।

अहितहितविचारशून्यबुद्धि (सं० त्रि०) भलाई-बुराई न समझनेवाला, जिसे अच्छा बुरा समझ न पड़े।

अहिताहार (सं० पु०) अहितकार द्रव्यका भक्षण, नुकसान पहुंचानेवाली चीजका खाना। अहिताहार पीड़ा उत्पन्न करता है। (वाग्भट)

अहितुण्डिक, (सं० पु०) अहेस्तुण्डं सुखं तेन दिव्यति, ठन् ठञ् वा। व्यालग्राही, सपेरा।

अहितेच्छु (सं० त्रि०) अशुभचिन्तक, बदखाह।

अहित्य (सं० पु०) वनमेधिका, जङ्गली मेथी।

अहिदत्, अहिदत्त देखो।

अहिदन्त (सं० त्रि०) सर्पदन्तविशिष्ट, सांपकी दांत रखनेवाला।

अहिदिष् (सं० पु०) अहिं सर्पं वृत्तासुरं वा दिष्टवान्, अहि-दिष् भूते क्तिप्। १ गरुड़। २ मयूर, मोर। ३ नकुल, नेवला। ४ इन्द्र।

अहिनकुल (सं० स्त्री०) अहिश्च नकुलश्च समाहार इन्द्रम्। सर्प एवं नकुल, नेवलासांप।

अहिनकुलता, अहिनकुलिका देखो।

अहिनकुलिका (सं० स्त्री०) अहिनकुलयोर्वैरम्, वुन्। १ सर्प एवं नकुलका स्वाभाविक विरोध, नेवले और सांपकी जाती दुश्मनी। २ नित्यविद्वेषभाव, हमेशा रहनेवाली दुश्मनी।

अहिनामभृत् (सं० पु०) बलदेव, कण्ठके बड़े भाई।

अहिनाह (हिं० पु०) शेषनाग, सर्पोंके राजा।

अहिनिर्मोक (सं० पु०) अहिना निर्मुच्य त्यज्यते, अहि-निर्-मुच् कर्मणि घञ् इ-तत्। सर्पका निर्मोक, सांपकी केंचुली।

अहिनिलयनी (सं० स्त्री०) अहिः निलीयते अस्याम्, अहि-नि-ली आधारे ल्युट् ङीप्। अहिनर्मोक देखो।

अहिपताक (सं० पु०) अहिषु मध्ये पताका तदा-कारोऽस्थस्य, अशं आदि० अच्। सर्पविशेष, कोई सांप। यह जहरीला नहीं होता।

अहिपति (सं० पु०) इ-तत्। १ शेषनाग। २ वासुकि।

३ बड़ा सांप।

अहिपुत्रक (सं० पु०) अहिः पुत्र इव कायति शोभते गतिकाले, अहिपुत्र-कै-क। नौकाविशेष, एक नाव। यह नाव तीन हाथसे ज्यादा प्रशस्त नहीं रहती, किन्तु दैर्घ्यमें ३० हाथ तक होती है।

अहिपुष्प (सं० स्त्री०) नागकेशर पुष्प, कबाब-चीनीका फूल।

अहिपूतन (सं० स्त्री०) बालरोगविशेष, शिशुका गुच्छत्त, बच्चोंके पिछले जिस्मका जखूम। Intertrigo स्थूलकाय शिशुओंके अधिक घर्षण निकलने अथवा घर्षण लगनेसे गाली प्रभृति स्थान रक्तवर्ण पड़ जाता किंवा मलद्वार अपरिष्कार रहनेसे कण्डु उत्पन्न होता है। इसकी चिकित्सामें धात्रीके स्तनदुग्धपर दृष्टि रखना चाहिये। चतस्थानकी त्रिफलाके जलसे धोते और उसमें नारियलका तेल लगाते हैं।

(स्त्री०) अहिपूतना।

अहिपूतना (सं० स्त्री०) बालरोगविशेष। इस रोगकी उत्पत्ति होनेका कारण यह है—अपान स्थान अच्छी तरह न धोने तथा विष्टा-मूत्रयुक्त रहनेपर, लड़कियोंके शरीरमें रक्त एवं कफसे कण्डू अर्थात् खुजलाहट पैदा होती है। खुजलानेसे बहुत शीघ्र स्फोट (फोड़ा) और स्राव निकलता है। पीछे सब फोड़े एकत्र मिलकर भयङ्कर व्रण हो जाता है। इसको अहिपूतन या अहिपूतना रोग कहते हैं।

(माधवनिदान—चन्द्ररोगचिकित्सा)

अहिफल (सं० पु०) दौर्घकर्कटिका, लम्बी ककड़ी।

(स्त्री०) अहिफला।

अहिफेन (सं० पु०) अहिः फेनं गरलमिव तैष्ण्यात्, इतत्-सं०। १ सांपकी लार। २ अफीम। यह पोस्तके फलसे भारतवर्ष, पारस, तुर्क, मिशर, जर्मनी, फ्रांस और इङ्ग्लैण्डमें पैदा होता है। इनमें सबसे अधिक भारतवर्ष ही अफीमका घर है। किन्तु तुर्ककी अफीम उत्तम होती है।

अफीमका पेड़ दो तरहका देखा जाता, एक का (Papaver somniferum) फूल लाल एवं बीज काला और दूसरेका (Papaver officinale) फूल तथा दाना सादा रहता है। भारतवर्षमें सीधे

ही पोस्त अधिक है। यह गङ्गातटकी भूमिमें बहुत पैदा होता है। पटना और बनारस विभागमें प्रायः ३०० कोस दीर्घ और १०० कोस प्रशस्त भूमिमें अफीमकी कृषि की जाती है। भारतवर्षकी अफीमका व्यवसाय गवरमेण्टके अधीन है। पटना और गाजीपुरमें इसका प्रधान कारखाना है। इससे अतिरिक्त मालव, खान्देश और कच्छ देशमें भी अफीम पैदा होती है।

ब्रह्मदेश और मलक्कामें भारतवर्षकी अफीम अधिक बिकती है। अफीमकी भूमि विलक्षण उर्वरा होना चाहिये। कृषक लोग वर्षा कालमें खेतको खाद डाल अच्छीतरह जोत देते हैं। इसके बाद कार्तिकमें खेतको पुनः जोत और मयी देकर बीज बोते हैं। बीज डालकर भी जोतना पड़ता है। अन्ततः ६-७ हाथ लम्बी क्यारी बनाते हैं। क्यारीके किनारे किनारे जल देनेके लिये नाली रहती है। १०।१५ दिनमें बीज अद्भुतित होता है। पौधा कुछ बढ़ जानेपर कृषक खेतको निरा घास और फस निकाल देते हैं। माघमासके शेषमें फूल आता है। झड़ जानेसे कृषककी स्त्री और बालक बालिका फूल खेतसे उठा लाती हैं। फिर उन्हें मट्टीके खप्परमें थोड़ा गरम करके रोटी बनाते हैं। इसी रोटीमें अफीमका गोला लपेटा जाता है।

फूल फूटनेसे प्राय एक मासके मध्य ही पोस्त की छोटी डालियोंमें टेहनी छोटे अनारकी तरह बढ़ने लगती है। उस समय कृषक बहुत सुबेरे उठकर चाकूसे टेहनोको दो तीन जगह लम्बा-लम्बा चोर देते हैं। उसीके द्वारा दूध बहकर बाहर निकलता है। सूर्योदयके बाद चौरनेसे अधिक दूध नहीं होता। वृष्टि होनेसे भी दूध धो जाता है, इसीसे उस दिन अफीम नहीं जमती। दूसरे दिन प्रातः काल कृषक उस दूधकी निकाल मट्टीके पात्रमें रखते हैं। समस्त वृक्षोंका दूध इकट्ठा होनेपर कृषक मकान पड़च किसी कांसेके बरतनमें छोड़ देते हैं। कुछ देर कांसेके बरतनमें रहनेसे दूधका पानी निकलता है। यह जल बाहर फेंक न

देनेसे अफीम नष्ट हो जाती है। शेषको यह दूध प्रतिदिन एकवार हिला देनेसे गाढ़ा होता है। उत्तमरूपसे गाढ़ा होनेमें कमविश एक महीना लगता है। फिर सब अफीम इकट्ठा कर मट्टीके बरतनमें रखते हैं। अफीम प्रस्तुत हो जानेपर कृषक गवरमेण्टके गुदाममें ले जाते हैं। वजन हो जानेसे कुली इसको एक चूहवच्चेकी भीतर जमा करते हैं।

उसके बाद कुली कटहरमें अफीमको तोड़कर गोला बनाते हैं। उसी गोलेपर अफीमके पत्तेकी रोटी लपेट लीयी लगा देते हैं। लीयी दूध जैसी होती और खुराब अफीमसे बनती है। पत्तेकी रोटी लगा देनेसे अफीमके गोलोंको टीनके बरतनमें रखते हैं। टीनका बरतन शिकञ्जेपर लटका करता है। उसी जगह बालकोंके हिलाने-डुलानेसे अफीम धीरे-धीरे सूख जाती है।

भारतवर्ष, चीन, ब्रह्मदेश तथा मलक्कामें कच्ची अफीम, पका चण्डू और मदक खानेको लोग इसे खरीदते हैं। युरोपमें अफीमसे औषध तय्यार किया जाता है। भारतवर्षके अनेक स्थानमें मनुष्य पोस्तके बीजका बड़ा बनाकर खाते हैं। अफीम बाहर करने पर बीड़ी सूख जाती है। उस समय पश्चिम देशके दरिद्र लड़के उसके बीज निकाल कच्चे ही खाते हैं। पोस्तकी बीड़ीको जलमें उबाल उसी जलसे वेदनाके स्थानपर स्नेह देनेसे पीड़ा कम होती है। देखनेमें अफीम लाल होती है। यह ग्रीष्ममें कठिन एवं वर्षाकालमें कुछ पतली पड़ती और चिपचिपाने लगती है। यह तिक्त और एकप्रकार विशेष गन्ध-युक्त रहती है। यह अग्निसे गल जाती है। जल, सुरा और जलमिश्र द्रावक द्वारा इसका धर्म (नशा वगैरह) गृहीत होता है। लिट्मस् कागजमें इसका जलीय द्रावक लगानेसे आरक्तम (थोड़ा लाल) वर्ण होता है।

अफीममें जो पदार्थ रहते, वह नीचे लिखे हैं,—

१। अफीममें मेकोनिक एसिड नामक एक प्रकार अम्ल रहता है। यह अम्ल पतला, दानेदार और

मोतीके सदृश शुभ्र स्वच्छवर्ण है। यह जलमें गल जाता है। लौहघटित पार्साल्टके सङ्ग मिश्रानेसे यह रक्तवर्ण निकलता है। चूना, बेराइट, लोहा और सीसा धातुके सङ्ग योग देनेसे एकप्रकार लवण बनता, जो जलमें गल जाता है।

२। अफीमके प्रधान वीर्यका नाम मर्फिया है। यह श्वेतवर्ण होता और इसीसे अफीम खानेपर नशा आता है।

३। दूसरे वीर्यका नाम कोडाइया है। यह चतुष्प्रदेश या अष्टप्रदेश दानायुक्त होता और सुरा, इथर तथा स्फुटित जलमें मिश्रानेसे गल जाता है।

४। तीसरे वीर्यका नाम पेपेवेरिन् है। इसमें सूयो-जैसे छोटे-छोटे दाने होते हैं। यह गन्धके अर्कसे मिलानेपर नौलवर्ण लगता है।

५। थिवाइया या ब्यारेमर्फिया चौथा वीर्य होता, जो चिप्टा, दानायुक्त और देखनेमें चांदी-जैसा उज्ज्वल रहता है।

६। नार्कोटिन् अफीमका समचारात्न लवण है। यह तीन प्रदेश युक्त एवं उज्ज्वल होता और सुरा, इथर तथा द्रावकमें गल जाता है। एतद्भिन्न, नार्सिया, मेकोनाइन प्रभृति दूसरे भी पदार्थ अफीममें रहते हैं।

उत्तम अफीममें सैकड़े पीछे ४—८ मेकोनिक एसिड, ४—१२ मर्फिया, १ अंशसे कम कोडिया, थिवाइया एवं पेपेवेरिन्, ६—१० नार्कोटिन्, ६—१३ नार्सिया, ४—६ कोचैक, २—४ गोंद और अन्यान्य पदार्थ, ४०—५० पर्यन्त होता है।

अफीम उत्तेजक, मादक, निद्राकारक, धारक, स्नेहजनक, पीड़ानिवारक, स्पर्शहारक और पर्याय-निवारक है। इसकी क्रिया मस्तिष्क ही में अधिक प्रकाश पाती है। और और औषधके अभावमें अन्य किसी द्रव्यकी व्यवस्था की जा सकती, किन्तु अफीम जैसी दूसरी चोक्क दुनियामें नहीं होती। शिशुओं और स्त्रियोंके लिये अफीम मित्रा औषध देना प्रशस्त नहीं है, किन्तु बहुत आवश्यकता होनेपर अत्यन्त सावधानतासे प्रयोग करना चाहिये।

बालकोंको कदापि अफीम न खिलाये। उनके कोमल शरीरमें अफीम मिला औषध मर्दन करनेसे भी विषक्रिया हो सकती है। अफीम खानेसे किस-किस यन्त्रमें कीन-कीन क्रिया प्रकाश पाती, उसका विवरण नीचे लिखा है—

सायुमण्डल—पूर्णमात्रामें अफीम खानेसे १०।१५ मिनिटके बाद पहले मत्था भारी पड़ता, उसके बाद शरीर सुख, सबल एवं प्रफुल्ल हो जाता है। मुख थोड़ा सूखने लगता है। क्रमशः मुखमण्डल कुछ उज्ज्वल और कनीनिका कुञ्चित होती है। कुछ देरके बाद जब इस तरहकी उत्तेजना कम हो जाती, तब खूब निद्रा आती है। ८—१० घण्टे बाद निद्रा टूटती है। फिर देह अवसन्न, मन उद्यमशून्य, एवं शरीर ग्लानियुक्त लगता और कोयी कार्य करनेकी इच्छा नहीं होती। मात्रा अधिक रहनेसे सर्वाङ्ग तपकता और शीघ्र निद्रा आना दुर्घट पड़ता है। अफीमकी मात्रा कम होनेसे भी उत्तम निद्रा नहीं लगती। जो नित्य अफीम सेवन करता, उसको नियमित समय पर मोताद न मिलनेसे बार-बार लंभायी आती, शरीर टूटता, नेत्रसे जल गिरता और अन्यान्य उपसर्ग भी उठता है। अफीम खानेसे स्पर्श-शक्ति कम पड़ जाती, जिससे वेदना निवारण होती है। परन्तु अधिक मात्रापर अफीम सेवनमें आसक्त न होनेसे ज्ञानका दैर्घ्य होना कठिन है।

रक्तसंचालन यन्त्र—अफीम खानेसे १०-१५ मिनिट बाद नाड़ी पुष्ट एवं चञ्चल, शरीर उष्ण और मुख उज्ज्वल लगता है। क्रमशः नशा कम होनेसे नाड़ी क्षीण तथा मृदुगामिनी हो जाती है।

श्वासयन्त्र—अफीम खानेके बाद नाड़ी चञ्चल होती और उसीके साथ निश्वास प्रश्वास भी कुछ जोर चलने लगता है। मुखमण्डल पहले उज्ज्वल रहता, पीछे श्वासक्रिया मृदु पड़नेसे मलिन हो जाता है। अफीम सेवन करनेसे श्वास यन्त्रवाली श्लेशिका भिल्लीकी भी स्पर्शशक्ति घटती है।

स्त्रावणक्रिया—अफीम सेवन करनेसे शरीरकी सम्पूर्ण स्त्रावणक्रिया कम पड़ जाती है।

रस न निकलने पर मुख सूखने लगता है। पाका-शयमें आमरस उत्तम रीतिसे नहीं टपकता, इसीसे क्षुधामान्य और अजीर्णरोग उत्पन्न होता है। पित्त प्रभृति कोई रस यथेष्ट मात्रामें बाहर न निकलनेसे कोष्ठ बद्ध और मल कठिन पड़ जाता है। अनेक स्थानमें पेशाब परिमाणसे अल्प होता, परन्तु कहीं कहीं अधिक मूत्र भी आता है। अफीम खानेसे सम्पूर्ण स्त्रावण क्रिया कम हो जाती, किन्तु उससे विलक्षण घर्म निकलता है। अफीम खानेसे पोषण-क्रिया भी घटती, किन्तु उससे शरीर क्लेश नहीं होता। कारण अफीम देहके पेशीसूत्रको क्षय होने नहीं देती। यौवन कालके बाद स्वभाव हीसे शरीरके विधानोपादानका क्षय होना आरम्भ हो जाता है। अफीम उसी क्षयको निवारण करती है। इसी लिये अनेक मनुष्य कहते हैं, चालीस वर्षके बाद सबको अफीम खाना चाहिये। उदरामय, काश, वात प्रभृति नाना प्रकार पीड़ाके उपलक्षमें अनेक आदमी अफीम खाने लगते हैं। पहले पहल इससे विलक्षण उपकार भी होता है, परन्तु क्रमशः मात्रा विना वृद्धि किये अफीम फिर उपकार नहीं करती। अनेक अफीमची प्रतिदिन एक तोलसे भी अधिक अफीम खाते हैं। विलायतमें कितने ही व्यक्ति पीड़ाको दवानेके लिये डेढ़ बोतल अफीमका अरिष्ट प्रत्यह सेवन करते हैं। क्रम-क्रमसे अभ्यास न करनेपर १५।२० ग्रेण अफीम खानेसे ही मनुष्यकी मृत्यु हो जाती है। अधिक मात्रामें अफीम खानेसे रोगी शीघ्र ही अज्ञान पड़ता, धीरे धीरे श्वास प्रश्वास निकलता, गला बजने लगता, मुख मलिन, नेत्र रक्तवर्ण एवं सुदित तथा कनीनिका कुञ्चित रहती, प्रथम अवस्थामें नाड़ी स्थूल होती एवं धीरे धीरे चलती, रोगी पुकारनेसे नेत्र खोलकर देखना चाहता, किन्तु चेष्टा करनेमें बहुत विरक्त हो जाता है। उसके बाद नाड़ी क्रमशः अधिक क्षीण लगती और बहुत देरके बाद कभी-कभी उसका स्पन्दन होता है। श्वासप्रश्वासमें अतिशय विमृद्बल आता है। शरीर शीतल और घमात्ता हो जाता है। अचेतन अवस्थामें

कितनीहीके मुखसे फेन निकलने लगता है। अफीम खानेपर ६ घण्टासे २० घण्टाके मध्य रोगीकी मृत्यु होती है। अफीम खाकर मरनेसे देहमें यह लक्षण देख पड़ता है,—मस्तिष्कमें रक्ताधिक्य, मस्तिष्कके उदरमें रस सञ्चय, फेफड़ेमें रक्ताधिक्य, रक्ताका पतला और मलिन होना एवं मस्तिष्कमध्यसे रक्त निकलना।

चिकित्सा।—अफीमसे विषाक्त होनेपर हमारे देशमें निसोथ और सुगुनिया शाकका रस, पुरातन कागजका भिजाया हुआ जल प्रभृति अनेक प्रकार द्रव्य खिलाया जाता है। परन्तु उससे कुछ भी उपकार नहीं होता। ऐसे औषधका प्रयोग करना चाहिये, जिससे प्रथम ही वमनके साथ अफीम बाहर निकल जाये। सल्फेट् अव जिङ्क ३० ग्रेण अथवा इपेकाकुराना एक ड्राम खिलाकर उष्ण जल पीलाये। वमन करते करते जब अफीमका गन्धहीन जल निकल आवे, तब जान ले कि पेटमें अफीम नहीं है। एमाक पम्प द्वारा भी उदर परिष्कार करना उचित है। वमनके बाद रोगीके शिरपर बराबर शीतल जल डालते रहना चाहिये। रोगीको हरगिज सोने या सुस्थिर भावसे रहने न दे। दो आदमी बांह पकड़के उसको ठडलावे, एक आदमी पीछेसे कपड़ेका कोड़ा बनाकर मारे, या कभी बालोंको नोचे। औषधोंमें विलेडोना और धतूरा उत्तम है। विलेडोनाका अरिष्ट ५-६ विन्दु जलमें एक एक घण्टे पर पिलाना चाहिये, उसकी क्रिया प्रकाश होनेसे फिर देनेकी कोयी जरूरत नहीं। हमारे देशके सत्र्यासी कहते कि, धतूरेका थोड़ा बीज खिला देनेसे, रोगीका प्राण बच जाता है। सिकी, नीबूका रस, माजूफलका काथ, कड़वा, चाय प्रभृति द्रव्य भी कुछ उपकार करता है। रोगीको अवसन्न होनेपर एमोनिया और ब्राण्डी दे तथा वक्षःस्थलपर सरसोंका उबटन लगाये। श्वासकच्छ होनेसे कृत्रिम श्वासक्रिया कराना चाहिये। इस अवस्थामें ताड़ित व्यवस्था करना भी उचित है। अधिक अफीम उदरस्थ होनेपर

यदि बाहर निर्गत न हो, तो रोगीके बचनेकी कोई सम्भावना नहीं है। कभी कभी रोगीको अधिक मात्रामें अफीम खिलानेसे शीघ्र कोई फल देख नहीं पड़ता, किन्तु हठात् एकदिन मृत्यु हो सकती है। डाक्टर पार्श्वभालने ऐसी ही एक घटनाका उल्लेख किया है। जो लोग नियमित रूपसे अफीम, मदक या चण्डू खाते, वे किसीतरह छोड़ नहीं सकते। पहले उनका शरीर वैसा विकृत नहीं होता। क्रमशः अधिक मात्रामें बहुत दिनतक अफीम वगैरह खानेसे क्षुधामान्द्य बढ़ता, शरीर क्षय एवं निश्चेज लगता, मुख मलिन तथा अल्प पाण्डुवर्ण दिखाता, देह क्रमशः टेढ़ा पड़ता, स्मरणशक्ति बिलकुल बिगड़ जाती, कभी अच्छी तरह कोठ नहीं खुलता, बीच बीच उदरामय उठता और इसी अवस्थामें कुछ दिन जी-जाग पौछे अफीमची अकालमृत्यु पाता है।

अहिफेनवटिका (सं० स्त्री०) अफीमकी गोली। यह पिण्ड खजूर जैसी बनती और रक्तातिसार पर चलती है। (रहेन्द्रसार-संग्रह)

अहिफेनबीज (सं० स्त्री०) अफीमका बीज, पोस्त, खसखस।

अहिफेनासव (सं० पु०) अफीमकी शराब। साढ़े बारह सेर महुवेकी शराबको ४ पल अहिफेन और एक-एक पल सुस्तक, जातौफल, इन्द्रियव एवं एला डाल किसी बरतनमें बन्दकर एक मास रख छोड़े। पौछे आधे मासेके हिसाब इसे अतीसार और विशूचिकापर देनेसे बड़ा उपकार होता है। (मैषन्यरनामाली)

अहिबुध्न (सं० पु०) अहेरिव बुध्नो ग्रीवा यस्य। १ रुद्रविशेष। २ रुद्राधिष्ठित उत्तरभाद्रपद नक्षत्र। ३ सुहृत्विशेष। ४ शिव।

अहिवेल (हिं०) अहिवल्ली देखो।

अहिब्रध्न, अहिबुध्न देखो।

अहिब्रध्नदेवता (सं० स्त्री०) उत्तरभाद्रपद नक्षत्र।

अहिभय (सं० स्त्री०) अहेरिव भयम्। १ राजाके स्वपक्षसे भय, बादशाहका डर। घरमें सर्प रहनेसे गृहस्थको जैसे हमेशा डर लगता, वैसे ही राजाकी ओरसे भी डर लगनेको अहिभय कहते हैं। २-तत्।

२ सर्पभय, सांपका डर। ३ विश्वासघातकी आशङ्का, दगाबाजीका दगदगा।

अहिभयदा (सं० स्त्री०) अहिभयं द्यति खण्डयति, अहि-भय-द्यो-क। सर्पका भय छोड़ानेवाली भूम्यामलकी, भुयिं आवला।

अहिभानु (सं० पु०) अहिव्याप्यः भानुः लक्षणया भानुगतिः यस्य। प्रवाहवायु, हवा। ज्योतिषमें लिखा, कि प्रवाह-वायु द्वारा ही सूर्यकी गति होती है।

अहिभुज् (सं० पु०) अहिं भुङ्क्ते, अहि-भुज-क्तिप्। १ सांपके खानेवाले गरुड़। २ मयूर, मोर। ३ नकुल, नेवला। ४ तार्क्ष्य, साल या साखूका पेड़। ५ नाकुली-नाम महाकन्द शाक, छोटा चांद। कहते हैं, इसके खानेसे सांपके लड़ते समय काटनेमें नेवलेपर विष नहीं चढ़ता।

अहिभृत् (सं० पु०) अहिं सर्पं विभर्ति भूषणरूपेण धारयति, अहि-भृ-क्तिप् तुक्। सर्पको आभूषणकी तरह पहननेवाले शिव।

अहिम (सं० स्त्री०) न हिमम्, विरोधे नञ्-तत्। १ उष्णस्पर्श, लम्स-गर्म। (त्रि०) २ उष्णस्पर्शयुक्त, जो कूनेमें गर्म हो।

अहिमकर, अहिमयुति देखो।

अहिमतेजस्, अहिमयुति देखो।

अहिमद्युति (सं० पु०) अहिमा उष्ण द्युतिरस्य। १ सूर्य, गर्म रोशनीवाला आफताब। २ अर्कवृक्ष, अकोड़ेका पेड़।

अहिमन्यु (वे० त्रि०) अहिरिव हिंस्रो मन्युः क्रोधो यस्य, बहुव्री०। १ हननशील, हिंस्र, खूंखार, सांपकी तरह झपटनेवाला। (पु०) ६-तत्। २ सर्पका क्रोध, सांपका गुस्सा। ३ वायु, हवा।

अहिमरुचि, अहिमयुति देखो।

अहिमर्दनी (सं० स्त्री०) अहिः सृद्यतेऽनया, अहि-मृद-करणे-लुगट्। १ गन्धनाकुली नामक कन्द विशेष, छोटा चांद। २ अहिलता विशेष।

अहिमांश, अहिमयुति देखो।

अहिमात (हिं० पु०) चाकका गड्ढा। इसीके सहारे चाक कौलपर चढ़ता है।

अहिमाय (वे० त्रि०) अहेरिव कुटिला माया यस्य। सर्पवत् कुटिल, सांप-जैसा टेढ़ा।

अहिमार (सं० पु०) अहिं मारयति, अहि-मृ-णिच् अण् णिच् लोपः, उप० समा०। १ विट्खदिर, गन्ध-खेर। २ गरुड़। ३ मयूर, मोर। ४ वृत्रासुरनाशक इन्द्र।

अहिमारक, अहिमार देखो।

अहिमाली (सं० पु०) सर्पका हार पहननेवाले शिव। अहिमेद, अहिमार देखो।

अहिमेदक, अहिमार देखो।

अहियारौ—विहार प्रान्तके दरभङ्गा राज्यका एक ग्राम। यह अक्षा० २६° १८' उ० और द्रावि० ८५° ५०' ४५" पू० पर अवस्थित है। अहल्यास्थान देखो।

अहिर, अहीर देखो।

अहिरानी—बम्बई प्रान्तके खान्देश जिलेकी भाषा। अहीरोंका प्रभाव अधिक रहनेसे खान्देशकी महाराष्ट्र भाषा अहिरानी कहाती है।

अहिरिपु (सं० पु०) ६-तत्। १ सर्पके शत्रु, गरुड़। २ मयूर, मोर। ३ नकुल, नेवला। ४ कृष्ण। ५ इन्द्र। ६ गन्धनाकुलीवृक्ष, छोटा चांद।

अहिर्बुध्न, अहिर्बुध्न देखो।

अहिर्बुध्न (वे० पु०) योऽहि स एव बुध्नश्चेति समानाधिकरणश्चाहिर्बुध्नराशब्दोऽसमस्तः, तथा च अहिना बुध्नेन श्रुती लिङ्गम्। अग्नि, आग। “नानोऽहिर्बुध्नोरिव धान्वा।” (ऋक् ७३।१८)

अहिर्बुध्नदेवता, अहिर्बुध्न देवता देखो।

अहिर्बुध्न, अहिर्बुध्न देखो।

अहिलता (सं० स्त्री०) अहिलोकस्य पातालस्य लता, शाक० तत्। १ गन्धनाकुली, छोटा चांद। २ ताम्बूलौ, पानकी बेल।

अहिलव (हिं० पु०) आधिक्य, बढ़ती, भरमार।

अहिला (हिं० पु०) १ अभिप्लव, सेलाब, बूड़ा। २ असामञ्जस्य, भगड़ा।

अहिलासरियार—विहारके शाकहीपीय ब्राह्मणोंका एक विभाग।

अहिलोकिका (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुयिं

अहिलोचन (सं० पु०) शिवके अनुचर विशेष।

अहिल्या (सं० स्त्री०) वनमेथिका, जङ्गली मेथी।

अहिवट (सं० पु०) छन्दोविशेष, एक दोहा। इसमें पांच गुरु और अड़तीस लघु लगते हैं।

अहिवत—बम्बई नासिक जिलेके चांदोर पर्वतकी घाटी। यह समुद्रसुथसे पश्चिम डिंडोरी और बानीके बाजारोंको अभोनासे मिलाती है। केवल स्थानीय क्रयविक्रय होता है।

अहिवल्ली (सं० स्त्री०) नागवल्ली, पान।

अहिवात, अहवात देखो।

अहिवातिन, अहिवाती (हिं० स्त्री०) सधवा, सौभाग्यवती, जो रांड न हो।

अहिवासी—युक्तप्रान्तके मथुरा और मेवात स्थानकी जमीन्दार, काश्तकार और मजदूर जाति। इसका अर्थ है—अहिवासका रहनेवाला अर्थात् सांपके रहनेकी जगहका बाशिन्दा। पुराणमें इस जातिकी सम्बन्ध सौभरि ऋषिसे यों देखाया गया है—

दृष्टवस्थामें सौभरि ऋषिकी सन्तान उत्पन्न करने की उत्कण्ठा हुयी और उन्होंने मान्धाता राजासे जाकर पचासमें एक कन्या मांगी। राजाने कहा, पचासमें आपको जो पसन्द करे, वही दे दी जायेगी। किन्तु मार्गमें ऋषिने ऐसा मनोहर रूप बना लिया था, कि देखते ही पचासो कन्या मोहित हो गयीं। अन्तमें वह पचासोको अपने घर व्याह लाये। उन्होंने विश्व-कर्माकी आज्ञा दे प्रत्येककी लिये सुन्दर प्रासाद बनवाया और पचास रूप रख सबके साथ आनन्दसे दिन काटा। ऋषिके डेढ़ सौ सन्तान हुये थे। किन्तु उन्होंने मायाका प्रभाव बढ़ते देख सबको छोड़ दिया और विष्णुके चरणकमलोंमें ध्यान लगाया। वह अपने सन्तान त्याग पत्नियोंके साथ वनको गये थे। ऋषिकी पत्नियोंपर बड़ा क्रोध चढ़ता, कारण वह मलमूत्रादि उनके आश्रमपर डाल देते रहे। इसीसे यदि कोयी पत्नी उनके आश्रमपर पहुँचता, तो वह उसे शाप दे भस्म कर देते थे। इसी बीच गरुड़ सर्पोंका सर्वनाश करनेमें लगे रहे। सर्पोंने गरुड़से प्रार्थना की,—यदि आप अधिक वध न करें, तो

हम आपके अर्थ एक सर्प नित्य भेज देंगे। गरुड़ इस बात पर सन्तुष्ट हो गये। किन्तु कालीय नामका एक बड़े अहिने गरुड़के भस्म सर्पोंको बचाया और उन्होंने उसका पीछा पकड़ा था। कहीं शरण न मिलनेपर उससे कहा गया,—तुम सौभरि ऋषिके आश्रममें जाकर बैठ रहो, वहाँ ऋषिके शापसे गरुड़की दाल न गलेगी। इसीसे मथुरा जिलेके जिस सुनरख ग्राममें ऋषिका आश्रम रहा और कालीयने जाकर शरण लिया था, उसका नाम 'अहिवास' अर्थात् सांपके रहनेकी जगह पड़ा। अहिवास ही अहिवासी जातिकी उत्पत्तिका स्थान है। इस जातिके लोग अपनेको सौभरिकी वंशज बताते और सुनरखको अपना प्रधान स्थान समझते हैं। वृन्दावनमें कालीमर्दन घाटके पास ही सुनरख ग्राम अवस्थित है। बलदेव मन्दिरके पण्डा अहिवासी ही हैं। इस जातिमें कोयी ७२ कुल होते, जिनमें डिघिया और बिजरावत प्रधान हैं। पञ्चायतमें चौधरी जातिका विवाद मिटाता और अपराधोंको अर्थ दण्ड देता या जातिच्युत करता है। विधवाविवाह, पतिके मरनेपर उसके भायीसे विवाह कर लेना, वैश्वासेवा, अनेक-भर्तृका आदि विषय बहुत निषिद्ध समझे जाते हैं। कृष्ण-बलदेव अहिवासियोंके उपास्य देव हैं। किन्तु सोमवती अमावस्याको गङ्गा और मङ्गल एवं शनिवारको हनुमान्का भी पूजन होता है। सौभरि ऋषिके आश्रमकी यात्रा की जाती है। गौड़, सनाढ्य और गुजराती ब्राह्मण अहिवासियोंके पुरोहित होते हैं। दीपमालिका, दशहरा और होलिका इनके बड़े त्योहार हैं। यह गङ्गा, यमुना और बलदेवका शपथ उठाते हैं। व्यवसाय ही इनकी प्रधान जीविका है। यह राजपूतानेसे नमक अपनी गाड़ियोंमें भर उत्तर-भारतमें जा कर बेचते और वहाँसे चीनी तथा दूसरी चीजें बंदलेमें लाद लाते हैं। पुरुषोंके व्यापार करनेको दूर देश चले जानेसे स्त्रियां खेतीका काम चलाती हैं। आगरा, फर्रुखाबाद, मैनपुरी, इटावा, एटा, बदायूँ, शाहजहांपुर, पौलौभीत, कानपुर, फतेहपुर, अलाहाबाद, भांसी और जालौनमें अहिवासी रहते हैं।

अहिविदष्ट (सं० त्रि०) सर्पसे डसा हुआ, जिसको सांपने काटा हो।

अहिविद्विष्, अहिरिपु देखो।

अहिविषापहा (सं० स्त्री०) अहिलता, छोटा चांद।

अहिशुष (द्वे० त्रि०) अक्रोति व्याप्नोति अह व्याप्तौ इन्, अहि व्यापिशुषं यस्य, बहुव्री०। व्यापकबल, बड़ा जोर।

अहिशुषसत्त्वन् (वे० पु०) इन्द्र।

अहिशतना (सं० स्त्री०) शिशुरोगविशेष, बच्चोंकी एक बीमारी। इसमें पानी-जैसा पतला दस्त उतरता और गुच्छदेशसे मल निकला करता है। गुच्छदेश रक्तवर्ण रहे, आवदस्त लेने या पोंछनेसे खुजलाये और फोड़ा पड़ जायेगा।

अहिसक्थ (सं० स्त्री०) अहिरिव दीर्घं सक्थि यस्य, यच् बहुव्री०। १ सर्पतुल्य दीर्घं सक्थियुक्त, सांप-जैसा लम्बा। (पु०) २ तदाकार देश, सांप-जैसा लम्बा मुल्ल।

अहिसाव (हिं० पु०) सांपका बच्चा, छोटा सांप। यह अहिशावक शब्दका अपभ्रंश है।

अहिस्कन्ध (सं० पु०) गुल्फ, झुटिका, टखना, काव।

अहिहत्य (सं० स्त्री०) अहेः हत्यम्, द्वे-तत्। १ वृत्रा-सुरका हनन। १ सर्पहनन, सांपका मारा जाना।

अहिहन् (वे० पु०) अहिहत्य देखो।

अहिहन (सं० पु०) अहिं सर्पं वृत्रासुरं वा हतवान्, अहि-हन भूते क्तिप्। १ गरुड़। २ इन्द्र।

अहिहयकुल (हैहयकुल) कार्तवीर्यका वंश। सन् १०५४-५५ ई०के समय कार्तवीर्य-वंशज महामण्डले-श्वर रेवारस निजाम राज्यके खेमभावी स्थानके समीप शासन करते थे। हैहयवंश देखो।

अही (सं० स्त्री०) गम्यते जनया चीरादिहविः, गम्यते दत्तया पुण्यम्, अंहति शृङ्गादिना मनुष्यान्, न हतव्या वा, अहि-ङीप्। १ गोरू, मवेशी। २ द्युलोक एवं पृथिवी, जमीन और आसमान्। (वे० पु०) ३ असुर-विशेष। इसे इन्द्रने जीता था।

अहीन (सं० पु०) अक्रां समूहः, अहर्गण-साध्यो वा ख। १ बहुदिन सम्यक् चिरात्प्रादि याग।

२ द्वादश दिवस साध्य याग, बारह दिनमें पूरा होने-वाला यज्ञ। अहीनामिनः स्वामी। ३ सर्पराज वासुकि। (त्रि०) न हीनम् नञ्-तत्। ४ समग्र, पूरा, जो कम न हो। ५ पूरित, भरा हुआ। ६ बहु दिवस स्थायी, बहुत दिन चलनेवाला। ७ अश्वरथ, जो महारूम किया न गया हो। ८ सम्पन्न, कब्जा हासिल किये हुआ। ९ अजघन्य, अनिहत्, जो हकीर न हो।

अहीनगु (सं० पु०) अहीना समग्रा गौ पृथिवी यस्य, पुं-वद्भाव गोस्त्रियोरुपसर्जनस्येति क्लृप्ः, बहुव्री०। सूर्यवंशीय राजविशेष। यह देवानौकके पुत्र थे।

अहीनर (सं० पु०) चन्द्रवंशीय उदयनके पुत्र। अहीनवादिन् (सं० त्रि०) न हीनः वादी, नञ्-तत्। अभियोगके अन्यथा प्रमाणावादीसे भिन्न, ठीक-ठीक गवाही देनेवाला।

अहीनवादी, अहीनवादिन् देखो।

अहीन्द्र (सं० पु०) १ शारिवा, अनन्तमूल। २ सांख्य-शास्त्र-रचयिता पतञ्जलि मुनि।

अहीमती (सं० स्त्री०) अहिरस्यस्याम्, अहि-मतुप् ङीप्, शरादित्वात् दीर्घः। नदीविशेष, कोयी दरया।

अहीर (सं० पु०) आभीर शब्दस्य निपा० साधु। आभीर, ग्वाला। यह गाय-भैंस पालते और दूध-दही बेचते हैं। (स्त्री) अहीरिनी। आभीर देखो।

अहीरगौर—उड़ीसा प्रान्तके बालेश्वर जिलेकी एक खेच्छाचारौ जाति। इस जातिके लोग खजूरकी पत्तियोंसे चटाई बना एक-एक आने बाजारमें बेचते हैं।

अहीरणादि (सं० पु०) गणविशेष, कुछ खास अलफाज्। अहीरणादि देखो।

अहीरणि (सं० पु०) अहीन् ईरयति दूरी-करोति, अहि-ईर-अनि। हिसुख सर्प, दुमुंहा सांप। कहते कि इसे देखते ही दूसरे सांप भाग जाते हैं।

अहीरणिन्, अहीरणि देखो।

अहीरी (सं० पु०) १ रागविशेष। इसमें सकल हीं खर कोमल रहते हैं। (हिं०) २ मध्यप्रदेशकी दक्षिण चांदा जिलेकी जमीनदारी। यह अच्छा०

१८° ५७' ३०" से २०° ५२' ३०" उ० और द्राघि ७८° ५७' से ८१° १' पू० तक अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २६७२ वर्गमील है। अहीरीके पूर्व और दक्षिण पहाड़ पड़ता, जिसका जङ्गल बहुत प्रसिद्ध है। कितने ही काट कर लाते भी साखूके सैकड़ों वृक्ष खड़े हैं। यहांके अधिवासी प्रायः पूर्णरूपसे गोंड ठहरते और गोंडी एवं तैलङ्गी भाषा बोलते हैं। इस जमीन्दारीके स्वत्वाधिकारी चांदावाले जमीन्दारोंमें सबसे श्रेष्ठ समझे जाते और गोंड राजवंशसे सम्बन्ध रखते हैं।

अहीरीगांव—बम्बई प्रान्तके नासिक जिलेका ग्राम। यह निफादसे उत्तर-पश्चिम पांच कोश दूर है। सन् १८१८ ई०में गङ्गाधर शास्त्रीके घातक ब्रह्मकजी डेंगलिया इसी गांवमें दो बार कैद हुये। गुप्त समाचार या खान्देशके पोलिटिकल एजेंट कप्तान ब्रिग्सने कुछ घुड़सवार कप्तान खानष्टनके अधीन अहीरगांव भेजे थे। उन्होंने एकायेक उस घरको जाकर घेरा, जिसमें ब्रह्मकजी छिपे रहे। किन्तु वह दूसरे मञ्जिलमें घासके नीचे दबकाकर जा बैठे। सवार ब्रह्मकजीको कैदकर चांदोर लाये थे, जहांसे वह जुनारगढ़ कैदीकी तरह भेजे गये। ब्रह्मकजी बाजीराव पेशावाके बड़े प्यारे रहे और सन् १८१६ ई०को थाना जेलसे निकल भागे थे।

अहीश (सं० पु०) १ सर्पराज, शेषनाग। २ लक्ष्मण। ३ बलराम।

अहीशुव (वै० त्रि०) अहीं शुवति, शु-क। असुर-विशेष। इसे इन्द्रने जीत लिया था।

“अव दीधेदीशुवः।” (ऋक् १०।१४४।३)

अहु (सं० त्रि०) अह व्याप्तौ उन्। व्यापक, भरा हुआ। (स्त्री०) डीप्। अह्नी, व्यापिका। अंहते, आधारे उन्। अंह। (लौ०) भग।

अहुटना (हिं० क्रि०) निवृत्त होना, निकलना, हटजाना, भागना।

अहुटाना (हिं० क्रि०) निकाल देना, भगाना, हटाना, दूर करना।

अहुठ (हिं० वि०) अधुष्ट, साढ़े तीन, साढ़े तीन फेरे खाये हुआ।

अहुत (सं० पु०) नास्ति हुतं हवनं यत्र, नज-बहुव्री०। १ होमशून्य वेदपाठ, ब्रह्मयज्ञ। (त्रि०) २ होम न किया गया, जो आगमें डाला न गया हो। ३ वलिरहित, जिसे वलि न मिला हो। ४ वलिद्वारा अप्राप्त, जो होम करनेसे हाथ न आया हो।

अहुनाद (वै० त्रि०) बलिदानके अयोग्य, जिसे बलि देनेकी आज्ञा न रहे।

अहुठन (हिं० पु०) स्थूण, ठोड़ा, पोढ़। यह लकड़ीका टुकड़ा होता है। कृषक पृथिवीमें गाड़ इसपर चारा काटते हैं।

अह्वणान (वै० त्रि०) ह्वणी रोषणो कण्डादि० तच्छिलैर शानच् वेदे निपा० साधु, नज्-तत्। अक्रोधन, अक्रोधी, सुशफिक, मेहरबान्, जो नाराज न हो।

“किं मे हव्यमह्वणानः।” (ऋक् ७।६।२)

अह्वणीयमान (वै० त्रि०) १ पापगत होनेपर अलज्जमान, जिसे बुरा काम करनेपर शर्म न आये। २ अक्रोधन, मेहरबान्। ३ सन्तुष्ट, राजी। ४ प्रसन्नतापूर्वक दिया जानेवाला, जो खुशीसे बखूशा गया हो।

“राजाना सवमह्वणीयमानः।” (ऋक् ५।६२।६)

अह्वति—सन्ताल परगनेकी मालपहाड़िया जातिकी एक गोत्र। यह लोग व्याध या शिकारी होते हैं।

अह्वय (सं० त्रि०) अनीप्सित, नागवार, जो चाहान गया हो

अहे (सं० अव्य०) १ छी-छी, धिक्कार, धत। २ प्रलग, दूर, हटावो। ३ ओ, देखो, इधर। यह चोप, वियोग और सम्बोधनमें लगता है। (हिं० पु०) ४ वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसका काष्ठ भूरा होता और गूढ़, हल, शकट प्रभृतिके निर्माणकार्यमें काम आता है।

अहेड़ (सं० त्रि०) हेड़ अनादरे अच्, नज्-तत्। अवज्ञाशून्य, अनादररहित, इज्जतदार, जो वै-इज्जत न हो।

अहेड़मान (सं० त्रि०) हेड़-शानच्, नज्-तत्। आद्रियमाण, अवज्ञाशून्य, इज्जतदार।

अहेतु (सं० पु०) नञ्-तत् । १ हेतुभिन्न, सबव-
की अदममौजूदगी । २ काव्यालङ्कार विशेष । इसमें
कारण उपस्थित रहते भी कार्यकी अनिश्चिति देखायी
जाती है । (त्रि०) नञ्-बहुव्री० । ३ हेतुशून्य, बे-सबब ।

अहेतुक (सं० त्रि०) अहेतु देखो ।

अहेतुता (सं० स्त्री०) हेतुका अभाव, बे-सबबी ।

अहेतुत्व (सं० लो०) अहेतुता देखो ।

अहेतुसम (सं० लो०) त्रेकालासिद्धे हेतोरहेतुसमः ।
तीनों कालमें असिद्धिहेतु यानि हेतुत्वके असम्भव
कथनको अहेतुसम कहते हैं । हेतु ही साधन है, अतः
इसे साध्यके पूर्व, पश्चात् वा सङ्ग रहना चाहिये ।
यदि साध्यके पूर्व साधन माना जाये, तो साध्यके
विद्यमान न रहनेपर यह किसका साधन और
साधनको पीछे रखें, तो किसका साध्य होगा ?
यदि साध्य और साधनकी एक ही समयमें विद्यमानता
मानौ जाय, तो कौन किसका साधन एवं कौन
किसका साध्य निकलेगा । यह हेतुसे अलग नहीं हो
सकता । अतएव इसीको अहेतुसम कहते हैं ।

अहेर (हिं० पु०) आखेट, शिकार ।

अहेरिया—मध्य दोवाबकी एक जाति । यह शिकारियों
और चोरीका काम करती है । कोई-कोई
अहेरियोंको एक प्रकारका धानुक बताता, किन्तु यह
उनको तरह मृतक शरीरको नहीं खाता । गोरखपुर
जिलेमें धानुकोंके जो अहेरिया वंशज रहते, वह
सांपको पकड़ कर खा जाते हैं । प्रधानतः अहेरिया
भोलों और बहेलियोंके वंशज मालूम होते हैं ।
किन्तु यह अपनेको किसी सूर्यवंशी राजाका वंशज
प्रमाणित करते हैं । इनका कहना है,—‘एक सूर्य-
वंशी राजकुमारको आखेटका बड़ा प्रेम था । वह
इसोसे चित्रकूटमें जाकर रहने लगे । आखेटमें राज-
कुमारकी बड़ौ चेष्टा देख लोग उन्हें ‘अहेरिया’ कह-
कर पुकारते थे । उन्होंने हमारा अहेरिया वंश
निकला है ।’ यह लोग चित्रकूट और अयोध्याकी
तीर्थयात्रा करते हैं । पञ्चायत जातिका विवाद
मिटानेकी है । सरपञ्च सर्वदा एक ही व्यक्ति रहता है ।
यदि सरपञ्च बीमार पड़ जाता या नाबालिग होता, तो

पञ्चायतका कोई सभ्य उसके स्थानमें काम करता है ।
किन्तु उसके अयोग्य प्रमाणित होनेपर सर्वसम्मतिसे
दूसरा सरपञ्च चुना जाता है । इनमें चार-चार
विवाह होते और कितने ही लोग दो बहनोंको
साथ ही व्याह लाते हैं । विधवा-विवाहकी प्रथा भी
प्रचलित है । धनी मृतकको जलाते और निर्धन
नदीमें बहा या भूमिमें गाड़ देते हैं । भूतप्रेतकी
पूजा बहुत होती है । अलीगढ़ जिलेकी अतरोला
तहसीलके गङ्गीरी गांवमें मेघासुरका मन्दिर बना है ।
रामायण-रचयिता वाल्मीकि मुनिको यह अपना
महात्मा समझते हैं । पतरी और टोकरी बना तथा
ढाकसे शहद और गोंद निकालकर नगरमें बेचना
इनका काम है । किन्तु सेंध लगाने और डाका
छालनेमें यह बड़े ही चाखाक होते हैं । सन् १८४५
ई०के समय इन्होंने बड़ी लूटमार उठायी थी ।

अहेरी (हिं० पु०) आखेटक, शिकारी, जो शिकार
मारता हो ।

अहेर (सं० स्त्री०) न हिनोति गच्छति, हि-र
नञ्-तत् । शतमूली, शतावर ।

अहेलत्, अहणन देखो ।

अहेलमान, अहणन देखो ।

अहेलयत्, अहणन देखो ।

अहेतुक (सं० त्रि०) हेतुत आगतं ठञ्, नञ्-तत् ।

१ हेतुसे अप्राप्य, जो सबबसे मिल न सकता हो ।

२ उपपत्तिशून्य, नापेद, जो पेदा न हो । ३ साहाय्य-
शून्य, बे-सहारा ।

अहो (सं० अव्य०) अह-डो । १ शोक, अफ-
सोस, आह ! हाय । २ धिक्कार, लानत, छौ-छौ ।
३ दया, रहम, हां । ४ ओ । ऐ, देखो । ५ आश्चर्य,
ताज्जुब, अरे । ६ धन्य, वाह्, वाह ! क्या खूब !
शाबाश ! ७ क्यों, कैसे, किसतरह ।

अहोद (वे० पु०) १ यज्ञ न करनेवाला पुरुष ।
२ यज्ञ करनेमें अक्षम ।

अहोपुरुषिका (सं० स्त्री०) १ स्वावलम्बन, खुद-
इतमीनानी, अपना भरोसा । २ आत्मज्ञाता, खुद-
सिताई, अपनी तारीफ़ ।

अहोम—आसाम उपत्यकामें रहनेवालो शानंशाय एक जाति। वर्तमान शताब्दीके आरम्भ समय और ब्रह्मवासियोंके आक्रमण करनेसे पहले आसाम उपत्यकामें अहोम जातिका बड़ा प्रभाव रहा। कहते हैं,—सन् ७७७ ई०को सुकम्पा नामक नृपतिके समय उनकी भाई समलोनफा सेनापति थे, जिन्होंने सदियासे कामरूप तक समग्र देश अपने अधीन किये। समलोनफासे ही अहोम राजवंश चला है। किन्तु सतमेदसे सन् १२२८ ई०को पोङ्ग राज्यके अधिकारी, चुकफाने शानसे निकाले जानेपर आसाम जीत अहोम नाम ग्रहण किया और प्रान्तका भी नाम आसाम रख दिया। सन् १६५४ ई०को अहोम-नृपति चतुमला हिन्दू बनाये गये थे। सन् १२२८ ई०से डेढ़ शताब्द तक अहोम-नृपति वेखटके दिहङ्गनदीके पास थोड़े देशपर राज्य करते रहे। किन्तु सन् १३७६ ई०को पहले-पहल लखीमपुर और शिवसागरके चूता राजाओंसे उन्हें लड़ना पड़ा था। यह युद्ध १२४ वर्ष चला। अन्तमें अहोमोंने सन् १५०० ई०के समय चूता नृपति-को हरा शिवसागर जिलेका गढ़गांव अपनी राजधानी बनाया। सन् १५६३ ई०को कोच-नृपतिने इनके नये देशपर आक्रमण कर गढ़गांव राजधानी छीन ली थी, किन्तु उसे अपने अधिकारमें रखनेकी चेष्टा न की। अहोमोंको फिर अपना अधिकार प्रतिष्ठित करनेमें नौगांव और पूर्व दरङ्गके कछारियोंसे लड़ना पड़ा था। फिर औरङ्गजेबके सेनापति मोर जुमलेने इनपर आक्रमण किया, किन्तु उन्हें अहोम राजधानी छीनने और उसके नृपतियोंपर कर लगाने वाद ग्वालपाड़ेको पीछे हटना पड़ा। उस समय ब्रह्मपुत्र-उपत्यकामें सदियासे ग्वालपाड़े और दक्षिण पर्वतसे भूटान सीमातक अहोमोंकी तूती बोलती थी। सन् १६८५ ई०के समय रुद्रसिंहने सिंहासनारुढ़ हो, इस राज्यको उन्नतिके शिखर पर चढ़ाया। उसके दूसरे शताब्द गृह विवाद और विदेशीय आक्रमणसे अहोम राज्य बिगड़ने लगा था। मोशामेरियोंके धार्मिक विद्रोह खड़ा करने पर अहोमोंको अपनी राजधानी गढ़गांवसे रङ्गपुर उठा ले जाना पड़ी।

किन्तु यहीं अन्त न हुआ, आपसमें झगड़ा बढ़ जानेसे धीरे-धीरे इनकी राजधानी कामरूपके गौहाटी स्थानमें जा पहुँची थी। सन् १८१० ई०में किसी प्रतिपक्षीने अपने साहाय्यके लिये ब्रह्मदेशवासियोंको बुलाया। किन्तु वह स्वयं राजा बन बैठे और निर्दय रूपसे समग्र उपत्यकामें शासन करने लगे। सन् १८२४-२५ ई०के समय अंगरेजोंने ब्रह्मदेशवासियोंको यहांसे निकाल बाहर किया। अहोम-नृपति टैक्सके स्थानमें लोगोंसे अपना काम लेते थे। दूसरे विषयमें बिलकुल उन्होंने हिन्दुओंका जैसा ही आचरण दिखाया।

अहोर—१ राजपूतानाके उदयपुर राज्यका प्राचीन नगर। यह उदयपुर नगरसे एक कोस दूर है। २ युक्तप्रदेशके रुहेलखण्डकी एक जाति। यह राम-गङ्गा नदीके किनारे रहती तथा क्षत्रिकर्मसे अपना काम चलाती है। इस जातिके लोग जाटों और गूजरोँके साथ खुले तौरपर शराब और डुक्का पीते, किन्तु अहोरोंको नोच समझते हैं। कहते हैं, पहले रुहेलखण्डमें अहोरोंका राज्य रहा। सम्भवतः तोमरोंके समय (सन् ७००-११५० ई०) इन्हें बहुत अधिकार प्राप्त था। अहोरोंमें सैकड़ों कुल होते हैं। मेरठ, बुलन्दशहर, एटा, बरेली, बिजनौर, बदायूँ, मुरादाबाद, पीलीभीत, कुमायूँ और तराईमें कितने ही अहोर निवास करते हैं।

अहोरथन्तर (सं० स्त्री०) अङ्गि गेयं रथन्तरं साम-मेदः न रोरः। दिवसमें गाने योग्य रथन्तर नामक साम, जो साम सिर्फ़ दिनमें गाया जाता हो।

अहोरात्र (सं० पु०) अहश्च रात्रिश्च, अजन्त समाहा० इन्द्र। १ दिवारात्र, दिनरात, एक दिन, सूर्य निकलनेसे दूसरे दिन सूर्य निकलने तक चौबीस घण्टे मनुष्यका दिन। मनुष्यके एक मासमें पैंत्र और एक वत्सरमें देव अहोरात्र होता है। (अथ०) २ सर्वदा, रातदिन, हमेशा।

अहोरा-बहोरा (हिं० पु०) विवाह विशेष, किसी किस्मकी शादी। इसमें नवबधू ससुराल पहुँच उसी दिन अपने घर वापस आ जाती है।

अहोरूप (सं० स्त्री०) अहो रूपम्। दिवस रूप, दिनकी शक्ति।

अहोरोरा—युक्तप्रान्तके मिर्जापुर जिलेका एक शहर। यह अक्षा० २५° १' १५" उ० तथा द्राधि० ८३° ४' २०" पू० पर अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल १२३ एकर है। अहोरोरा चुनारसे दक्षिण-पूर्व छः और बनारससे दक्षिण नौ कोस पड़ता है। अन्न, तिलहन, लाख तथा जङ्गली चीजका व्यापार यहां होता और चीनी, कांचकी चूड़ी, खिलौना एवं रेशम बनता है। नगरसे दश कोस उत्तर ई० आई० रेलवेका अहोरोरारोड नामक स्टेशन बना है।

अहोवत (सं० अव्य०) अहो च वत च इन्द्र। १ हाय, खेद, अफसोस। २ ओ, ऐ, देखिये। ३ राम राम, रहस्य।

अहोवल (सं० पु०) १ सङ्गीत-पारिजात-रचयिता। सङ्गीतरत्नाकरसे पीछे सङ्गीतपारिजात बना था। २ ईशानेन्द्र और नृसिंहेन्द्रके शिष्य एवं 'पुरस्करण-कोस्तुभ'-रचयिता। ३ 'सङ्गीत-पारिजात' एवं 'काव्य-माला'-रचयिता। ४ नृसिंहभट्टके पुत्र। इन्होंने 'महिम्न-स्तवटीका', 'रुद्रभाष्य' और 'सङ्कल्प-सूर्योदयटीका' नामक ग्रन्थ बनाये थे।

अहोवल शास्त्रिन्—मीमांसासूत्रप्रकाशिका-रचयिता रामकृष्णके गुरु। इनका दूसरा नाम बोधानन्दघन भी रहा।

अहोवलसूरि—'याज्ञिकसर्वस्व' एवं 'आपस्तम्बश्रौत-सूत्रभाष्य'-रचयिता। इन्होंने रुद्रदत्तका उल्लेख किया है।

अहोवलम्—मन्द्राज प्रान्तके करनूल जिलेका प्रसिद्ध ग्राम। यह अक्षा० १५° ८' ३" उ० और द्राधि० ७८° ४६' ५८" पू० पर अवस्थित है। निकटवर्ती पर्वतपर तीन देवालय बने, जिन्हें स्थानीय लोग बहुत पवित्र समझते हैं। इनमें जो पर्वतके आधार पर खड़ा, वह देखने योग्य है। भित्तियों और द्वारप्रकोष्ठोंपर रामायणके मनोहर दृश्य खिंचे हैं। चटान काटकर जो पथरके स्तम्भ निकले, वह मण्डलमें आठ फीट बैठते हैं।

अहोही (सं० अव्य०) आह्वयं रूपे, अनाहि तौरपर।

अहोवाद्य (वै० त्रि०) अहो वाहु० आह्वय, नञ्-तत् अपलाप न करनेवाला, जो बहाना न करता हो।

“सत्यं तत्पुंशे यदौ विदानी अहोवाद्यं।” (ऋक् ८४५।२७)

अहोय (सं० अव्य०) अहो-घञ्-वृद्धिः पृषो० रक्ता-रस्य यत्वम्, नञ्-तत्। १ शैथ्य, जल्द। २ पुरातन, पहले, पुराने वक्त। ३ सपदि फीरन्।

अहोर्षु (वै० त्रि०) अहोर्षि आहन्तारं शत्रुं ऋषति, अहि-ऋष-उ। १ शत्रुके अभिसुख गमन करनेवाला, जो दुश्मनके सामने जाता हो। २ सपर्वत गमनशील, जो सांपकी तरह चलता हो। “अहोर्षुणां चिन्तयां अवित्या-गण।” (ऋक् २।३।२३)

अहोष्ट (सं० पु०) दबी दूब।

अहोय (वै० त्रि०) न जिह्मेति, झी-अच्, नञ्-तत्। १ निर्लज्ज, वेशर्म। २ विषयासक्त, शहवतपरस्त, मजा उड़ानेवाला। “उपलतिं भोजः सुरिषो अहोयः।” (ऋक् ८।७०।१३)

अहोयाण (वै० त्रि०) झी बाहु० आनच्, नञ्-तत्। अहोय देखी।

अहो (वै० पु०) ह-झि, नञ्-तत्। १ कवि, शायर। २ शुक्र।

“शुक्रं दुदुहे अहोयः।” (ऋक् ६।५४।१)

(त्रि०) ३ निर्लज्ज, वेशर्म। ४ विषयासक्त, शहवतपरस्त।

अहित (सं० त्रि०) ह-त पृषो० साधु, नञ्-तत्। १ अवक्र, सीधा, जो टेढ़ा न हो।

अहीक (सं० पु०) नास्ति हीर्लज्जा यस्य, नञ्-बहुव्री०। १ चपणक, बौद्ध साधुविशेष। चपणक लज्जाहीन होनेसे विवस्त्र रहते थे।

अहीयमाण, अहोय देखी।

अहुत (वै० त्रि०) १ अलोल, जो हिलता न हो। २ सरल रेखामें जानेवाला, जो रास्त खतपर चल रहा हो। ३ सरल, सीधा, जो टेढ़ा न हो।

अहुतसु (वै० त्रि०) सरल आकृति-विशिष्ट, सीधी शक्तिवाला।

अहल (सं० पु०) न हलति, हल-अच्, नञ्-तत्। १ भस्मातक वृक्ष, मेलावेका पेड़। (वै० त्रि०) २ अलोल, जो कापता न हो। (स्त्री) अहला।

आ

आ—आकार, संस्कृत एवं हिन्दी भाषाकी वर्ण-मालाका दूसरा अक्षर। अकार और अकार (अ+अ) मिलकर आकार होता है। इसके दीर्घ और झुत दो भेद हैं। हिन्दी भाषाके चलित स्वर वर्णोंमें यह दूसरे स्थानपर लिखा जाता है। इसका संचित रूप ा है। अर्थात् अकार और समस्त हल् वर्णोंमें आकार योग करनेपर ा ऐसी आकृति बनाते हैं। जैसे, अ+आकार=आ, क+आकार=का इत्यादि। आकारका झल्ल अकार है। अकार अकार और आकार आकारमें मिल जानेसे आकार होता है। जैसे, नव+अङ्कुर=नवाङ्कुर; सुख+आलय=सुखालय; महा+आशय=महाशय। कामधेनु-तन्त्रमें लिखा, कि आकार शङ्खच्योतिर्मय वर्ण है। इसमें ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र विराजते हैं। यह पञ्च प्राणमय होता है। इसका उच्चारण-स्थान कण्ठ है।

(अव्य) आप्-क्षिप् पृषो० प-लोपः। १ वाक्य। २ स्मरण। ३ अनुकम्पा। ४ समुच्चय। ५ अङ्गीकार। ६ ईषदर्थ। ७ क्रियायोग। ८ सीमा। ९ व्याप्ति। १० कोप। ११ पीड़ा। “सविसर्गत्वा इति यो निपातः स योऽस्यां कोपे च वर्तते। आः अरण्योपाकरणे कोपसन्नापयो रपोति कोषान्तरम्।” (महेश्वर)

“ईषदर्थ क्रियायोगे मर्यादामिविधौ च यः।

एतन्मार्तडितं विद्यात् वाक्यस्मरणयोरङ्गम्॥” (भाष्य)

ईषदर्थ, क्रियायोग, मर्यादा (पूर्वसीमा) और अभिविधि (शेषसीमा)में आ-ङित् होता, अर्थात् इसके साथ ङ अनुबन्ध रहता है। जैसे,—आङ्। कार्य कालमें ङ इत् हो जानेसे केवल आकार रह जाता है। किन्तु वाक्य एवं स्मरणके अर्थमें ङ-अनुबन्ध नहीं रहता।

ईषदर्थ—आ-रक्त अर्थात् अल्प रक्तवर्ण। क्रियायोग—आ-हरति। मर्यादा—आसमुद्रं राजदण्डः, अर्थात् समुद्र तक राजदण्ड चलता है। अभिविधि—आ-गच्छति।

आसत्यलोकादापातालात्—अर्थात् सत्यलोक एवं पाताल व्यापकर। इन स्थानोंमें ङ-इत् आकार गृहीत हुआ है।

प्रगृह्य संज्ञक आ-निपात है। इसका ङ-इत् नहीं होता। स्मरण एवं वाक्यपूरणमें यह आता है। आकार प्रगृह्य होता, अर्थात् इसकी सन्धि नहीं लगती,—प्रकृत दशमें ही रहता है। निपात एकाजनाङ्। पा १।१।१४। आङ्-निपात भिन्न जो एकाच्-निपात होती, उन्हें प्रगृह्य कहते हैं।

वाक्य—आ एवं नु मन्यसे? क्या आप ऐसा नहीं सोचते? अरण्य—आ एवं किल तत्। हां सचमुच ही ऐसा होता है। इस स्थलमें वाक्य शब्दसे वाक्यार्थका प्रकाशकत्व और स्मरणसे अन्य प्रमाण द्वारा प्राप्त वाक्यका स्मरण समझा जाता है। फिर आकार एवं एकारकी सन्धि नहीं होती, परन्तु ङित् रहनेसे लगता है। जैसे ईषदर्थमें आङ्+रण्य=ओण्य।

आङ् मर्यादावचनने। पा १।४।८२। मर्यादा एवं अभिविधि अर्थमें आङ्की कर्मप्रवचनीय संज्ञा होती है। पञ्चमपाङ्परिमिः। पा २।१।१०। कर्मप्रवचनीय अप, आङ् एवं परि शब्दके योगमें पञ्चमी पड़ती है। आङ् मर्यादामिविधौः। पा २।१।१२। मर्यादा एवं अभिविधि अर्थमें आङ्के पञ्चम्यन्त समर्थके साथ विकल्पसे अव्ययीभाव समास होता है।

(पु०) १२ महेश्वर। १३ पितामह। १४ वाक्य। (स्त्री०) १५ लक्ष्मी।

हिन्दी भाषामें कुछ शब्द लिखते समय एक ही अक्षरके लिये कोई ‘आ’ कोई ‘या’ और कोई ‘वा’ लिखा करते हैं। जैसे—हुआ, हुवा; सुआ, सुया इत्यादि। किन्तु किसी लेखकने आजतक यह प्रमाणित नहीं किया, वास्तवमें ऐसे स्थलपर कौन अक्षर

आं (हिं० अघ्य०) १ आश्चर्य, ताज्जुब, क्या हुआ ।

(पु०) २ बालकके रोदनका शब्द ।

आंक (हिं० पु०) १ अङ्क, अदद । २ चिह्न, निशान् । ३ वर्ष, हफ्ता । ४ निश्चय, यकीन् । ५ भाग, हिस्सा । ६ कुल, खानदान । ७ जोड़, गोद । ८ पहि-
येकी धुरी डालनेका ढांचा । यह गाड़ियोंकी बलियोंके नीचे लगता और मजबूत लकड़ीका बनता है ।
९ छन्दोविशेष । इसमें नौ मात्रा रहती हैं ।

आंकड़ा (हिं० पु०) १ अङ्क, अदद । २ पेंच, फन्दा ।
३ पशुरोग विशेष, चौपायोंकी एक बीमारी । ४ मदार, आक । (स्त्री०) आंकड़ी ।

आंकन (हिं० पु०) दाना निकाला हुआ ज्वारका भुझ ।

आंकना (हिं० क्रि०) १ अङ्कित करना, निशान लगाना, दागना । २ कूतना, तख्मीना करना, ठहराना, दाम लगाना । ३ अनुमान बांधना, फर्ज करना । ४ लिखना ।

आंकनी (हिं० स्त्री०) लेखनी, कलम ।

आंकर (हिं० वि०) १ आकर जैसा, गहरा ।
जोतायी दो तरहकी होती है—आंकर खूब गहरी और स्याह वा सेव । २ महंगा, गरान् । ३ अत्यधिक, बहुत, ज्यादा ।

आंका (हिं० पु०) अङ्कित-वृषभ, दागा हुआ सांड ।

आंकुड़ा, अंकुश देखो ।

आंकुस (हिं०) अङ्गु देखो ।

आंकू (हिं० पु०) आंकनेवाला, कूतनेवाला, दाम-लगानेवाला ।

आंख (हिं० स्त्री०) १ अक्षि, देखनेका इन्द्रिय, चक्षु ।
इससे जीवोंको रूप, विस्तार और आकारका ज्ञान होता है । शरीरमें इस इन्द्रियपर आलोकके द्वारा वस्तुका विम्ब उत्तर आता है । जीव जितना उन्नत वा छुद्र होता, आंख भी उतनी ही जटिल एवं सरल रहती है । छुद्र जीवकी आंख बहुत सादी होती और कहीं विन्दु ही जैसी देख पड़ती है, रक्षाके लिये पलक या बरोनी नहीं लगती । बहुत छोटे जीवोंमें आंखको खली और संख्याका नियम नहीं है । शरीरके किसी अंगमें एक, दो या चार विन्दु निकलते, जो

आंखका काम देते हैं । मकड़के आठ आंखें होती हैं । रौढ़वाले कीड़ेकी आंख खोपड़ेके नीचे गड्ढेमें रहती, जिसपर पलक और बरोनी चढ़ती है । यह बाहरसे देखनेमें गोल और लम्बी तथा दोनो किनारे नोकदार निकलती है । सामनेकी सफेद भिस्तीके पीछे जो भिस्ती पड़ती, उसमें एक छिद्र रहता है । इसी छिद्रमें मोटे शीशे-जैसा एक द्रव्य होता, जो प्रकाशको भीतर पहुंचा ज्ञानतन्तुपर प्रभाव डालता है । आंखके पर्याय नीचे देखिये—लोचन, नयन, नेत्र, ईक्षण, अक्षि, दृक्, दृष्टि, अम्बक, विलोचन, वीक्षण, प्रेक्षण, चक्षु । २ ध्यान, इरादा । ३ विवेक, पहचान । ४ कृपा, मेहरबानी । ५ सन्तति, औलाद । ६ आलूके ऊपरका निशान् । ७ ईखकी ठोंठी । ८ अनन्नासका दाग । ९ सूईका सूराक ।

आंखड़ी, आंख देखो ।

आंखफोड़टिड्डा (हिं० पु०) १ हरे रङ्गका एक कीड़ा । यह मदारके वृक्ष पर रहता और उसीकी पत्तियां खाता है । २ कृतघ्न, एहसान-फरामोश ।

आंखमिचौली, आंखमीचली, (हिं० स्त्री०) एक खेल । एक लड़का किसी दूसरे लड़केकी आंख मूंद देता है । जब दूसरे लड़के छिप जाते, तब उस लड़केकी आंख खोली जाती और वह लड़कोंको छूनेके लिये ठूँढ़ते फिरता है । जिस लड़केको वह छू लेता, वही चोर ठहरता है । यदि वह किसीको छू नहीं पाता, तो फिर वही चोर बनाया जाता है । ७ बार इसी तरह चोर होनेपर सब लड़के उसकी पैर बांध और चारो ओर कुण्डल खींच देते हैं । दूसरे लड़के बारी-बारी कुण्डलमें पैर रखते और उसे बुढ़िया-बुढ़िया कह कर चिढ़ाते हैं । कुण्डलके भीतर किसीको छू लेनेपर चोर लड़केका दांव उतरता है ।

आंखी, आंख देखो ।

आंग (हिं० पु०) १ अङ्ग, अङ्गो । २ प्रति चौपाये पर ली जानेवाली चरायी ३ कुच, स्तन ।

आंगन (हिं० पु०) अङ्गन, अजिर, घरके भीतरका सदन, चौक ।

आंगी (हिं० स्त्री०) अङ्गिका, अंगिया, चोली,
छोटा कपड़ा।
आंगुर (हिं०) अङ्गुर देखो।
आंगुरी (हिं०) अङ्गुरी देखो।
आंगुल, अङ्गुल देखो।
आधी (हिं० स्त्री०) महीन कपड़ेसे मढ़ी हुई
चलनी। इससे मदा चालते हैं।
आंच (हिं० स्त्री०) १ अग्निशिखा, आगकी लपट। २ ताप,
गर्मी। ३ अग्नि, आतश। ४ तेज, प्रताप। ५ आघात,
चोट। ६ अहित, अनिष्ट, हानि। ७ विपत्ति,
सङ्कट, सन्ताप, आफ़त। ८ प्रेम, दाह। ९ कामताप।
आंचका (हिं० पु०) नावका लटकता हुआ रस्सा।
इसके छोरपर छल्लोंमें वह रस्सा लगता, जिसपर ठहर
ख़लासी जहाज़का पाल खोलता और लपेटता है।
आंचना (हिं० क्ति०) सुलगाना, आंच देना।
आंचर, आंचल देखो।
आंचल (हिं० पु०) १ अञ्चल, धोती या दुपट्टेका
छोर। २ स्त्रियोंकी साड़ीका छातीपर रहनेवाला
किनारा। ३ साधुका अंचला।
आंचू (हिं० पु०) एक कांटीली भाड़ी। इसमें
शरीफ़े जैसे छोटे छोटे फल लगते, और मीठे रससे
भरे दाने पड़ते हैं।
आंजन (हिं०) अञ्जन देखो।
आंजना (हिं० क्ति०) अञ्जन लगाना।
आंट (हिं० स्त्री०) १ हस्ततलमें तर्जनी एवं अङ्गुष्ठके
मध्यका स्थान। २ दांव, वश। ३ वैर, लाग डांट।
४ अन्धि, गांठ। ५ पूला, गड़ा, पेंच।
आंटना (हिं० क्ति०) १ समाना, अंटना, अमाना।
२ पूरे उतरना, काफ़ी निकलना। ३ आना, मिलना।
४ पड़चना।
आंट-सांट (हिं० स्त्री०) १ गुप्त अभिसन्धि, साजिश,
बन्दिश। २ मेलजोल।
आंटी (हिं० स्त्री०) १ लम्बी घासका छोटा गड़ा, पूला।
२ लड़कोंके खेलनेकी गाली। ३ कुश्तीका एक पेंच।
इसमें टांगसे टांग लगा और कमरपर खाद लड़ने-
वालेकी चित्त मारते हैं।

आंठी (हिं० स्त्री०) १ अष्टि, गांठ। २ वीज, गुठली।
३ दही, बालायी वगैरहका लच्छा। ४ नवोढ़ाका
उन्नत स्तन।
आंड (हिं० पु०) अण्डकोश।
आंडी (हिं० स्त्री०) १ अंटी, गांठ, कन्द।
२ कोल्हूकी जाटका गोला। ३ बैलगाड़ीके पहियेमें
जड़ी हुई लोहेकी सामो। ४ सूतकी पोनी।
आंडू (हिं० पु०) अण्डकोशयुक्त, जिसके कूचा
अण्डकोश न रहे। यह शब्द चौपायेका विशेषण है।
आंडेबांडे खाना (हिं० स्त्री०) इधर-उधर घमना,
चक्कर काटना।
आंत (हिं० स्त्री०) अन्त, प्राणियोंके पेटमें गुदातक
जानेवाली लम्बी नली। सुक्त पदार्थ पेटमें पचकर
इसी नलीमें जाता, जहांसे रस अङ्गप्रत्यङ्गमें पड़चता
और मल बाहर निकलता है। मनुष्यकी आंत
डीलडीलसे पांच-छः गुण दीर्घ होती है। मांस-
भक्षियोंकी अपेक्षा शाकाहारियोंकी आंत छोटी
बैठती है।
आंतकटू (हिं० पु०) पशुरोगविशेष। इस रोगमें
चौपायेकी दस्त बहुत आता है।
आंतर (हिं० पु०) १ अन्तर, दो वस्तुओंके बीचका
स्थान। २ एकवार जोतनेके लिये घेरा जानेवाला
खेतका हिस्सा। ३ पासा, पानकी क्यारियोंके बीच
आने-जानेकी जगह। ४ तानेमें दोनों सिरोंके बीच
खूंटियोंकी लकड़ी। यह सांथी अलग करनेको थोड़ी-
थोड़ी दूरपर गाड़ी जाती है।
आंदू (हिं० पु०) १ अन्दू, लोहेका कड़ा, वेड़ो।
२ बांधनेका सौकड़।
आंध (हिं० स्त्री०) १ अन्धकार, धुंध। २ रतौंधी।
३ कष्ट, तकलीफ़।
आंधना (हिं० क्ति०) वेगसे धावा मारना, टट
पड़ना।
आंधर (हिं० वि०) अन्ध, अन्धा। (स्त्री०) आंधरी।
आंधरा, आंधर देखो।
आंधारम्भ (हिं० पु०) अन्धेरखाता, मनमानो बात।
आंधी (हिं० स्त्री०) प्रचण्ड वायु, जोरसे चलनेवाली,

हवा। इससे इतनी धूलि उड़ती, कि चारो ओर
अन्धकार छा जाता है। भारतवर्षमें इसके आनेका
समय वसन्त और ग्रीष्म है।

आंव, आम देखो।

आंवा हलदी, आमा हलदी देखो।

आंयवांय (हिं० पु०) असम्बन्धप्रलाप, व्यर्थकी बात,
अंडबंड, अनापशनाप, ऊटपटांग।

आंव (हिं० पु०) अन्न, अन्न न पचनेसे उत्पन्न
होनेवाला एक प्रकारका चिकना सफेद लसदार मल।

अन्न देखो।

आंवठ (हिं० पु०) १ किनारा, बारी। २ कपड़ेका
कौर। ३ बरतनकी बारी।

आंवड़ना (हिं० क्रि०) उमड़ना, ऊपरको उठना।

आंवड़ा (हिं० वि०) गभीर, गहरा।

आंवन (हिं० पु०) १ लोहेकी सामी, सुंड़ड़ी।
यह पहियेके उस छेद पर लगती, जिसमें धुरीका
ढण्डा रहता है। २ एक औजार। इससे लोहेका
छेद बढ़ाते हैं।

आंवरा, आमलकी देखो।

आंवल (हिं० स्त्री०) साम, खेड़ी, जेरी, किसी
किस्मकी भिखी। इससे गर्भमें बच्चे लिपटे रहते हैं।

आंवल प्रायः बच्चा होनेके पीछे गिर जाती है।

आंवलगट्टा (हिं० पु०) आंवेलेका सूखा फल।
यह औषधमें पड़ता और शिर मलनेके काम
आता है।

आंवला (हिं० पु०) वृक्ष विशेष। इसकी पत्तियां
इमलीकी तरह छोटी छोटी होती हैं। आंवेलेकी
लकड़ी कुछ सफेदी लिये रहती और छाल प्रतिवर्ष
उतरा करती है। कार्तिकसे माघ तक इसका कागजी
नीबू-जैसा फल रहता है। छाल पतली होनेसे नसें
देख पड़ती हैं। खादमें यह कसैलापन लिये खड़ा
होता है। गुणमें इसे शीतल तथा लघु पाते और
दाह, पित्त एवं प्रमेहका नाशक बताते हैं। इसके
योगसे त्रिफला, अवनप्राश प्रभृति अनेक औषध प्रस्तुत
होते हैं। आंवेलेका सुरब्बा भी बहुत अच्छा बनता
है। इसकी पत्तियोंसे चमड़ा-0 सिखाते हैं। लकड़ी

पानीमें न सड़नेसे कुर्वोके नीमचक आदि उसीके
बनते हैं। आमलकी देखो।

२ कुशतीका पेंच। इससे विपत्तीको नीचे
लाते हैं।

आंवलपत्ती (हिं० स्त्री०) किसी किस्मकी सिलाई।
इसमें पत्तीकी तरह दोनों ओर तिरछे टांके लगते हैं।

आंवलासारगन्धक (हिं० पु०) अति शुद्ध एवं पार-
दर्शक गन्धक। यह बहुत साफ और खानेमें खटा
होता है।

आंवां (हिं० पु०) मट्टीके बर्तन पकानेका गट्टा।

आंशिक (सं० त्रि०) अंशसम्बन्धी, अंशविषयक,
हिस्सेका।

आंशुकजल (सं० स्त्री०) किरण दिखाया हुआ जल।
जलको एक ताँबेके पात्रमें रख दिनभर धूप और
रातभर चांदनी देखाते हैं। वैद्यकशास्त्र इस जलकी
बड़ी प्रशंसा करता है।

आंस (हिं० स्त्री०) १ पौड़ा, दर्द। २ पाश, सुतली,
डोरी। ३ रेशा।

आंसो (हिं० स्त्री०) भाजी, बेना, इष्टमित्रोंके यहां
बंटनेवाली मिठाई।

आंसू (हिं० पु०) अश्रु, अश्रक, आंखका पानी।
यह आंखमें नाककी ओर जानेवाली नलीके पास
जमा रहता है। इससे आंखकी भिखी तर रहती है
और डिलेपर तिनका तथा गर्द नहीं बैठती। थूककी
तरह यह भी पैदा होता और शारीरिक वा मानसिक
आघातसे बढ़ता है। पौड़ा, शोक, क्रोध और हर्षमें
आंसू आ जाता है। अधिक होनेसे यह गालोंपर
बहता और कभी-कभी भीतरी नलीकी राह नाकमें
दाखिल होता है।

आंसूटाल (हिं० पु०) पशुरोग विशेष, चौपायोंकी
एक बीमारी। इसमें जानवरकी आंखसे पानी निकला
करता है।

आंइड़ (हिं० पु०) भाण्ड, बरतन।

आंहां (हिं० अव्य०) नहीं।

आइ (हिं०) आइस देखो।

आइना (हिं०) आरना देखो।

आइन्दा (फा० वि०) १ भविष्यत्, सुश्रुतकविल, आगे आनेवाला। (पु०) २ भविष्यत्काल, इस्तिकबाल आनेवाला जमाना। (क्रि० वि०) ३ भविष्यत्में, आक्बतपर, आगे।

आइस, आइस, आइस देखो।

आई (हिं० स्त्री०) १ मृत्यु, मौत। २ आयुस्, जिन्दगी।

आईन (फा० पु०) १ व्यवस्था, सूत्र, दस्तूर, चलन। २ शासन, शरियत।

आईन-इ-अकबरी—ऐतिहासिक ग्रन्थविशेष। यह पुस्तक फारसी भाषाके प्रसिद्ध अकबरनामेका तृतीय खण्ड है। महाकवि शेख अबुल फजल इसकी रचयिता हैं। इसमें सम्राट् अकबरके राजत्वकालका समस्त विवरण लिखा है। यह पांच अध्यायमें सम्पूर्ण हुआ है। प्रथम अध्यायमें अकबरके परिवार और समाजका विवरण तथा स्वयं सम्राट्का वृत्तान्त प्रभृति अनेक विषय लिखा है। द्वितीय अध्यायमें सम्राट्के कर्मचारियोंका विवरण है। तृतीय अध्यायमें शासन एवं विचार विभागका वृत्तान्त तथा भूमिकी माप और राजस्व निरूपणका विषय दिया गया है। चतुर्थ अध्यायमें सामाजिक नियम, विद्या आलोचनाके उत्कर्ष साधन, विदेशी राजाओंके आक्रमण, परिव्राजक और मुसलमान-फकीर प्रभृतिकी बातें हैं। पञ्चम अध्यायमें नीतिवाक्य ग्रथित हुए हैं।

आईना (फा० पु०) आदर्श, शीशा, आरसी।

आईनादार (फा० पु०) नापित, हज्जाम, शीशा देखानेवाला नौकर।

आईनाबन्दी (फा० स्त्री०) १ शीशिका साज। २ फर्श-बन्दी, पत्थर या ईंटकी जुड़ाई। ३ टट्टीकी तैयारी। इस पर रोशनी करते हैं।

आईनासाज (फा० पु०) दर्पण या शीशा बनानेवाला।

आईनासाजी (फा० स्त्री०) १ आईनासाजका काम। २ कांच पर कलई चढ़ाना।

आईनी (फा० वि०) राजनियमके अनुकूल, कानूनी, कायदेसे चलनेवाला।

आउ (हिं०) आउस, देखो।

आउज (हिं० पु०) वाद्यविशेष, ताशा। यह गलेमें डालकर दो लकड़ियोंसे बजाया जाता है।

आउभ, आउज देखो।

आउट (अं० वि०) वहिर्भूत, खेलसे हारकर निकला हुआ। (Out) क्रिकेटके खेलमें यह शब्द प्रयुक्त होता है। गेंद विकेटमें लगने या बल्लेसे मारा हुआ गेंद हाथमें रुक जानेसे खेलाड़ी आउट होता है।

आउटराम—(Sir James Outram, Lieutenant-General G. C. B.) एक प्रसिद्ध अंगरेज वीर। ये भारतवर्षके एक प्रधान सेनापति रहे। सन् १८०३ ई०को डर्बीशायरके अन्तर्गत वटार्लीहालमें इनका जन्म हुआ था। इनके पिताका नाम वेस्लामिन आउटराम रहा। पहले इन्होंने ब्रिस्टोलके अन्तर्गत उदनी और पीछे मारिष्काल कालेजमें शिक्षा पायी। १८१८ ई०का निम्नश्रेणीके सेनापति होकर यह भारतवर्ष आये थे। उसके बाद १३०० बम्बई देशीय पदातिकके लेफ्टेनण्ट और आउटजूटाण्ट हुए। इन्होंने खानदेशके असभ्य भोलोंको युद्धकौशल सिखाया और अन्तमें भोलोंको सेना ही साथ ले जाकर दौड़ जातिको परास्त किया था। १८३५ से १८३८ ई० तक ये मही-कण्ठमें सुम्बुल्ला स्थापन करनेपर व्यापृत रहे। लार्ड किन्के सदस्य बनकर ये अफगानस्थानपर आक्रमण करने गये थे। ये गुजरातके पोलिटिकल एजेंट और सिन्धुदेशके कमिशनर भी हुए। उसी समय सिन्धु-देशके असौर विद्रोही बन बैठे थे। सर चार्ल्स नेपियरको मन्त्रणाके अनुसार सेनापति आउटरामने उन लोगोंको दमन किया। पीछे ये सितारे और बड़ोदे राज्यके रेसिडेण्टके पदपर सुशोभित हुये थे। उसी समय अवध अंगरेजीराज्यके अन्तर्गत हो गया। लार्ड डालहौसीने आउटरामको वहाँका रेसिडेण्ट और कमिशनर नियुक्त कर दिया था।

बहुत दिनोंतक भारतवर्षमें रहनेसे आउटराम बीमार पड़े और १८५३ ई०को इङ्ग्लैण्ड चले गये। परन्तु ईरानसे लड़ाई छिड़ जानेपर इन्हें कमिशनर बनकर सेनाके साथ ईरान उपसागरमें पहुँचना पड़ा

था। वहाँ कार्य सिद्ध करके यह भारतवर्ष लौट आये। उसी समय यहाँ सिपाही-विद्रोह उठा था। लार्ड कनिङ्गके परामर्शानुसार ये लखनऊ गये। पहले हावेलक साहबने विद्रोहियोंको कितना ही दमन कर दिया था, परन्तु फिर बड़ा गड़बड़ मच गया। आउटराम आलमबागमें ठहर सिपाहियोंसे युद्ध करने लगे। असंख्य असंख्य विद्रोही चारो ओर ओलेकी भांति गोले बरसाते थे। अन्तको इनकी मददपर लार्ड क्लाइड आ पहुँचे। उसी समय ये सेना सहित गोमतीकी पूर्ण ओर जा तुसुल संग्राम करने लगे। उससे विद्रोही परास्त हो कर भागे थे। इसके बाद ये अवधके चीफ कमिश्नर और १८५८ ई०को लेफ्टिनेण्ट जनरल बने। अन्तको भारतवर्षकी प्रधान मन्त्रिमहा (Supreme Council)के यह सदस्य हुए थे। १८६० ई०को यह बीमार होकर इङ्ग्लैण्ड चले गये। १८६१-६२ ई०का शीतकाल मिश्रमें बीता; फिर फ्रांसमें कुछ दिन रहने बाद १८६३ ई०की ११वीं मार्चको पेरिस नगरमें इन्होंने प्राण छोड़ा था। इनकी प्रतिमूर्ति कलकत्तेके मैदानमें विद्यमान है। नङ्गी तलवार लिये महावीर आउटराम घोड़ेकी पीठपरसे पीछे देख रहे हैं। उधर इनके घोड़ेकी लातसे एक तीप चूर चूर हो गयी है।

आउन्स (अ० Ounce) अंगरेजी मानविशेष, किसी किस्मकी तौलका मिकदार। यह दो प्रकारका होता है। एकसे कड़ी वस्तु तौलते और दूसरेसे द्रव पदार्थ नापते हैं। तौलनेका आउंस सवा दो तोलेके बराबर है। बारह आउन्ससे एक पाउंड बनता है। नापनेका आउंस सोलह ड्रामका है। एक ड्राममें साठ बूंद होते हैं।

आउबाउ, आध बाय देखो।

आउल, आउलिया—वेष्णव सम्प्रदाय विशेष। ये कर्त्ता-भजाकी शाखामात्र होते, इसीसे इन्हें सहज कर्त्ताभजा भी कहते हैं। ये प्रकृति ले कर साधन करते हैं। एक एक आउलके साथ अनेक प्रकृतियां रहती, उनमें कोई वेश्या और कोई कुलवती होती है। सब जातिके प्रकृति-प्ररूप एक साथ बैठकर खानपान

करते हैं, जिसमें कोई जातिविचार नहीं। मनुष्य-मात्रका स्वभाव है—यदि कोई किसीको स्त्रीके पास जाता, तो मनमें ईर्ष्या उत्पन्न होती है; परन्तु आउलोंका मन अत्यन्त उदार है। इनमें यदि किसीकी प्रकृतिके निकट दूसरा पुरुष चला जाये, तो मनमें विद्वेष नहीं होता। आउल दाढ़ी मूँछ नहीं रखते।

आउलियाचान्द (औलियाचांद)—एक सम्प्रदाय-प्रवर्तक, इन्होंने ही पहले पहल कर्त्ताभजाकी सृष्टि की थी। आउलियाचांदके प्रकृत इतिहास जाननेका कोई उपाय नहीं है। अनेक आदमी अनेक प्रकारकी बातें करते हैं। कोई कोई कहते हैं,—एक बार कहींसे एक संन्यासी आये थे। उनके पैरमें खड़ाऊं, देहमें कफनी और कमरमें कौपीन रहा। खड़ाऊं पहने ही वे एक बड़ेइमलीके पेड़पर चढ़ बैठा करते थे। इच्छा होनेसे कभी नीचे उतर आते, नहीं तो दिन रात वहीं बैठे रहते। एक दिन किसी गृहस्थका लड़का मर गया। उसकी माता पुत्रशोकसे रोते हुई लड़कीकी लाशको उसी इमलीके पेड़के तलेसे लिये जाती थी। दया करके संन्यासीने मरे लड़केको जिला दिया। उसी समयसे आउलियाको दैवशक्ति प्रकाश हो गई।

कोई कोई दूसरी ही बात कहते हैं। उला-ग्राममें शायद महादेव नामक एक तंबोली रहता था। एक दिन वह अपने भीटमें पान तोड़ने गया। पान तोड़ते तोड़ते उसने भीटमें एक आठ वर्षके लड़केको देखा। १६१८ शकमें फाल्गुन मासके प्रथम शुक्रवारको शायद वह लड़का मिला था। बालक कौन है, किसका लड़का है, नाम क्या है, निवास कहां है—यह सब कोई बता न सका। खुद लड़केने भी अपना कोई परिचय न दिया। महादेव उसे अपने घर लाकर लड़कीकी तरह पालने लगा और उसका नाम पूर्णचन्द्र रखा। कहते हैं, कि पूर्णचन्द्र बारह वर्षतक उसी तंबोलीके यहां रहे थे। उसके बाद वह एक गन्धर्वणिकके यहां जा कर दो वर्ष ठहरा। वहासे वह एक जमीन्दारके यहां पहुंच कर डेढ़ वर्ष रहे। उसकी बाद पूर्वबंगालमें

जाकर डेढ़ वर्ष बिताया। अन्तमें नाना देश घूम फिर कर सत्ताईस वर्षकी उम्रमें बैजरा ग्राम पहुँचे थे। वहाँ सबसे पहले हट्टघोष उनके शिष्य हुए। उसके बाद घोषपाड़ेके रामशरण पाल भी उनसे उपदेश पा कर कर्त्ताभजाका मत प्रचार करने लगे थे। आज भी होलीके दिन बड़ी धूम-धामसे वहाँ मेला लगता है।

कोई कोई कहते हैं, कि छिहत्तरवें मन्वन्तरके समय रामशरण पाल सुखसागरके बाजारमें चावल खरीदने गये थे। वहीं आउलियाचांदसे मुलाकात हुयी। आउलियाचांद रामशरणके मकान पर आकर उन्हें उपदेश देने लगे। एक बात और भी सुननेमें आती है। रामशरण पाल एक दिन अपना खेत जोत रहे थे। आउलियाचांद वहाँ जा पहुँचे पीछे उनके घर आकर उन्हें धर्मोपदेश देने लगे।

आउलियाचांद देहपर कफनी डाले रहते, कौपीन पहनते, हिन्दू सुसलमान दोनोंको समान समझते और सबके यहाँ भोजन करते थे। स्नेच्छ जातिसे इन्हें घृणा न रही। सुसलमान लोग भी इनसे उपदेश लेते थे। मालूम होता है, सुसलमानोंने ही इनका नाम 'आउलिया' रखा था। फारसी भाषामें ओलिया शब्दके माने बुजुर्ग हैं। प्रवाद है, कि आउलियाचांद खड़ाऊं पहनकर गङ्गाके ऊपर घूमते-फिरते थे। इन्होंने अनेक कोढ़ियोंको अच्छा कर और मरे हुए आदमियों को भी जिला दिया था। अनुमान होता है, इन्हीं शक्तियोंके कारण सुसलमान इन्हें ओलिया कहते थे।

आउलियाचांदके कई नाम सुननेमें आते हैं। आउलेचांद, प्रभु, आउलिया महाप्रभु, आउलिया फकीर, आउले ब्रह्मचारी, कङ्गालीप्रभु, फकीर ठाकुर, साई, गोसाई, इन कई नामोंसे ये जनसमाजमें प्रसिद्ध हैं। कर्त्ताभजा लोग कहते हैं, कि श्रीचेतन्य महाप्रभु औचित्यमें जाकर अन्तर्धान और पीछे वही आउलिया चांदके रूपमें आविर्भूत हुए थे।

सबसे पहले बाईस आदमी आउलियाचांदके शिष्य बने रहे। उनके नाम ये हैं,—१ हट्टघोष, २ बेचूघोष,

३ रामशरण पाल, ४ नयन, ५ लक्ष्मीकान्त, ६ नित्यानन्द दास, ७ खेलाराम उदासोन, ८ कृष्णदास, ९ हरिघोष, १० कन्हाई घोष, ११ शङ्कर, १२ नितानन्द घोष, १३ आनन्दराम, १४ मनोहर दास, १५ विष्णुदास, १६ किनु, १७ गोविन्द, १८ शामकांसारी, १९ भीमराय राजपूत, २० पांचू रुइदास, २१ निधिराम घोष, २२ शिशुराम।

इस तरहकी गण्य सुननेमें आता है, कि १६०१ शकको वोयाले ग्राममें आउलियाचांदकी मृत्यु हुई। प्रभुके परलोक गमन करनेपर शामवेरागौ, हरिघोष, हट्टघोष, कन्हाई घोष, रामशरण पाल, भीमराय राजपूत, सहस्रराम घोष और बेचूघोष—इन आठ शिष्यांने इनकी कफनीको वोयाले ग्राममें समाधिस्थ किया था। पीछे चाकदहसे तीन कास पूर्व परारि नामक ग्राममें इनका मृतदेह गाड़ा गया।

अब बङ्गालके अनेक भले आदमियोंने आउलियाचांदका मत ग्रहण किया है। उनमें सुवर्णवर्णिक ही अधिक हैं। कितनी ही वेश्यायें भी इसी मतानुसार चलता हैं। आउलियाचांदके सब शिष्योंका मन एक है, सभी मन मन प्राण प्राण आपसमें मिलते रहते, इसीसे इन मतावलम्बियोंको 'एकमन' भी कहते हैं। फिर ये लोग आउलियाचांदको 'जय कर्त्ता' कह सम्बोधन करते, इसीसे इस सम्प्रदायके आदमी 'कर्त्ताभजा' नामसे भी विख्यात हैं। कर्त्ताभजा देखो।

आउलिया सम्प्रदायके गुरुका नाम 'महाशय' और शिष्यका 'वरातौ' है। दीक्षा करनेके समय महाशय शिष्यको पहले यह उपदेश देते हैं,—“गुरु सत्य है”। गुरु शिष्यसे पूछते हैं,—“क्या तू यह धर्म ग्रहण कर सकेगा?” शिष्य उत्तर देता है,—“सकूंगा।” उसके बाद गुरु कहते हैं,—“तो भठ न बोलना और चोरी, परस्त्रीगमन तथा अपनी स्त्रीका सङ्ग भी अधिक न करना।” शिष्य अङ्गीकार करता है,—“न करूंगा।” अन्तमें गुरु कहते हैं,—“बोल, तुम सत्य और तुम्हारा वाक्य सत्य।” तब शिष्य यह कहकर—“तुम सत्य और तुम्हारा वाक्य सत्य।” मन्त्र देनेके बाद गुरु यह बात

कह देते हैं,—बिना मेरी आज्ञाके यह बात किसीसे न बताना।

क्रमसे शिष्यके मनमें प्रगाढ़ भक्ति उपजनेपर गुरु इस तरह उपदेश करते हैं,—“कर्त्ता आउले महाप्रभु। मैं तुम्हारे प्रतापसे चलता फिरता हूँ, तिलाई भी तुमसे अलग नहीं, मैं तुम्हारे सङ्ग हूँ, दुहाई महाप्रभु।”

आउलियाचांद महाप्रभु दश पापकर्म निषेध कर गये हैं। वे दशो पापकर्म ये हैं,—

तीन शारीरिक पापकर्म—परस्त्रीगमन, परद्रव्य अपहरण एवं जीवहत्या।

तीन मानसिक पाप—परस्त्रीगमनकी इच्छा, परद्रव्य ग्रहणकी इच्छा एवं दूसरेके प्राणनाश करनेकी इच्छा।

चार वाचनिक पाप—भूठ बोलना, कटु वाक्य कहना, अनर्थक बात बढ़ाना और प्रलाप उठाना।

देखनेमें आता है, कि पहले इस सम्प्रदायमें कुछ भी व्यभिचार दोष न था। इन लोगोंका एक प्रचलित वचन है,—“शौरत हिजड़ी मर्द खोजा, तब होवे कर्त्ताभजा।” इस नियमके अनुसार सभी पुरुष स्त्रियोंको बहन समझते और बहन ही कहकर पुकारते थे। इनमें जातिभेद नहीं, सभी एक साथ भोजन और शयन करते रहे। परन्तु इसी तरह स्त्रीपुरुषके एक साथ वास करते करते अब व्यभिचार दोष इस सम्प्रदायके साधनका एक अङ्ग हो गया है।

इस सम्प्रदायवालोंके मुंहसे सुननेमें आता, कि एकमात्र ईश्वरकी उपासना करना ही इनके साधनका बीजमन्त्र है। किन्तु आउलियाचांद खुद मनुष्य थे, इसीसे ये लोग कहते हैं, कि मनुष्य ही सत्य और मनुष्य गुरु ही परम पदार्थ है। चैतन्य सम्प्रदायके दैव्यव जिस तरह गद्गद होकर अश्रुपात करते और पुलकित होते, आउलिया सम्प्रदायके साधकोंमें भी ठीक वैसे ही नियम हैं। रातको गुरुशिष्यमें प्रेमालापन और गूढ़ साधनके समय अश्रुपात, रोमाञ्च और मोह बढ़ जाता है।

आउस (हिं० पु०) आशुधान्य, किसी किसीका धान, ओसहन। इसे मयी-जून मास बोते और अगस्त

सितम्बरमें काटते हैं। दैव्यशास्त्रके मतसे यह मधुर एवं पाकमें गुरु होता और अम्ल तथा पित्तको बढ़ाता है।

आक (हिं० पु०) अर्क, मन्दार, अकवन। अर्कवृक्ष (Calotropis gigantea. अंगरेजी Mudar)। यह अर्क शब्दका अपभ्रंश है। वंगालामें आकन्द। आकका पेड़ दो तरहका होता है,—सफेद और लाल। नदीके किनारे रेसोली जमीनमें यह पेड़ बहुत उपजता है। साधारण आकके ये कई पर्याय देखे जाते हैं,—चीरदल, पुच्छी, प्रताप, चीरकाण्डक, विचीर, चीरी, खजुंझ, शीतपुष्पक, जन्धन, चीरपर्णी, विकीरण, सदापुष्प, सूर्याह्न, आस्मोतक, तूलफल, शुकफल, वसुक, आस्मोत, गणरूप, मन्दार, अकपर्ण।

सफेद आकके ये कई पर्याय हैं,—अलर्क, राजाक, प्रतापस, गणरूपी। लाल आकके पर्याय हैं,—विश्वोर, सदापुष्पी, रूपिका, आदित्यपुष्पिका, दिव्यपुष्पिका, अर्क। आकके धूँवेको बुढ़िया कहते हैं।

आकका पेड़ दो हाथसे लेकर चार पांच हाथ तक ऊँचा होता है। इसका फल सफेद और लाल रहता है। सेमरकी तरह इसमें भी फल लगता है। फलसे पक जानेपर अच्छी रुई निकलती है। इसका फल, पत्ता और फूल तोड़नेपर डालीसे दूध निकलता है। आकके पेड़में प्रायः बारहो महीने फूल उतरता है। डालकी छालके नीचे रेशम जैसा चिकना सफेद सूत रहता है।

दैव्यशास्त्रके मतसे यह कटु, उष्ण और आग्नेय है। इससे वात, शय, व्रण, अर्श, कुष्ठ, क्लिप्ति प्रभृति नष्ट हो जाता है। युरोपीयचिकित्सकोंने परीक्षा करके देखा, कि इसका मूल, बकला और दूध वमनकर, घर्मकर, धातुपरिवर्तक और विरेचक है। इसके मूलकी छालका चूर्ण १५।२० ग्रैन सेवन करनेसे रक्त आमाशय रोग नष्ट होता है। इस रोगमें यह ठीक इपिकाक्युयानाकी तरह काम करता है। अधिक मात्रा सेवन करनेसे क्रमन होता है। २ ड्राम शुष्क मूलकी छालको आधसेर गर्म जलमें भिंगा आधी

छटाककी मात्रा सेवन करनेसे पुराना उपदंश और कुष्ठरोग अच्छा हो जाता है। इससे अंडीके कीड़े, खांसी, शोथ और उदरी रोग दूर होते हैं। इसके मूलकी छाल, डालकी छाल, पत्ता दूध और फूलको समभाग लेकर अच्छी तरह पौसना। फिर छोटे मटर जैसी गोलौ बनाकर सुखा लेना। प्रतिदिन सवेरे एक गोलौ खानेसे अनेक प्रकारके चर्मरोग नष्ट होते हैं। इसके फूलका दूर्ण २।३ रत्ती सेवन करनेसे भूख बढ़ती और हंफनी खांसी अच्छी हो जाती है। जखममें आकका दूध लगानेसे वह सूख जाता है। कण्डके राखमें आकका दूध गलाकर नस खेनेसे छीक आती है, इससे सर्दीका सिरका दर्द आराम हो जाता है। कहते हैं, कि श्वेत आकन्दके मूलको मिर्चके साथ पौसकर सेवन करानेसे सांपका विष उतर जाता है।

आकके दूधसे गाटापार्च तय्यार हो सकता है। तकियेमें इसकी रुई भरी जाती है। इसके सूतको कातकर कपड़ा बुननेसे ठीक फलालेन जैसा कपड़ा तय्यार होता है। इसकी रुईसे अच्छा कागज भी बनता है। आककी छालका सूत बहुत भारसह होता है। कितने ही आदमी इससे धनुषका गुण बनाते हैं। आकका तथा और और सूत कितना भारसह सकते हैं, चौथाई इंच माटी तीन तारकी रस्सीमें उसकी परीक्षा की गई थी—

आक	...	प्रायः	सेर	२७६
सन	...	"	"	२०५
मुगरा	...	"	"	१७१
कपास	...	"	"	१७३
सुर्वामूल	...	"	"	१५८
मेस्तापाट	...	"	"	१४५
नारियलकी छाल	...	"	"	११२

आकड़ा, आक देखा।

आकम्पन (सं० स्त्री०) आकम्पनाया। खुदवीनो, डोंग।
आकम्प (सं० स्त्री०) न कतः सख्छताकारो। नज्
तत्। तख भाव अच्। सख्छताकारित्व, गन्दगीका
पैदा करना।

आकन (सं० पु०) आ-कन्-अच्। ऋषिविशेष,
कोई मुनि। (हिं० पु०) २ जोते खेतसे निकाला
घास-फूस। ३ जोते खेतसे घासफूसका हटाना।

आकनादी—(Cissampelos Parreira) पाठालता।
इसके ये कई संस्कृत पर्याय देखे जाते हैं,—
अम्बष्ठा, अम्बष्ठिका, प्राचीना, पापचेलिका, यूथिका,
स्थापनी, थ्येयसी, विद्वकर्णिका, एकाष्ठोला, कुचेलो,
दोपनी, वनतिक्तिका, तिक्तपुष्पा, वृहत्तिक्ता, शिपिरा,
वृक्षी, मान्तो, वरा, देवी, वृत्तपर्णी।

आकनादी और निम्शा दोनों एकही लता हैं,
कि भिन्न भिन्न। इस विषयमें उल्लिखितत्वन्न बहुत
विराध करते हैं।

यह तिक्त, गुह और उष्ण है। इससे वात, पित्त,
ज्वर, दाह, अतिसार, शून प्रभृति रोग नष्ट होते हैं।
वैद्यलोग पुराने ज्वरमें पाठामूल व्यवहार करते हैं।
सांप काटनेने पर इसके मूलको मिर्चके साथ पौसकर
सेवन करने और जखमपर लगानेसे उपकार होता है।
आकवत (फा० स्त्री०) परलोक, यमसदन, मरनेके
बाद जानेको जगह।

आकवत अन्देश (फा० वि०) १ परलोकका विचार
रखनेवाला, धार्मिक, जो मरनेके डरसे बुग काम
करता न हो। २ दूरदर्शी, आगेका स्थान रखनेवाला।
आकवत अन्देशी (फा० स्त्री०) १ परलोकका विचार,
मरनेके बाद जानेवालो जगहका खयाल। २ धार्मि-
कता, सत्ताका काम। ३ दूरदर्शिता, दूरन्देशी।

आकवती लङ्गर (सं० पु०) अगले मसूलको रस्सी
या रिङ्गीनके पास बोकके टूटकमें रहनेवाला लङ्गर।
यह सङ्कटके समय पड़ता है।

आकवाक (हिं० पु०) वृथा वाक्य, वैद्ददा बात,
बकभक्त।

आकम्प (सं० पु०) आ ईषदर्थे कपि चलने घञ्।
अल्प कम्पन, कंपकंपो।

आकम्पन (सं० वि०) आ कम्पते आ ईषदर्थे कपि
चलने-युच्। अवनयन्दायाद अंकादयुच्। पा ३।१।३८। १ अल्प
कम्पनशील, थोड़ा कांपनेवाला। (स्त्री०) भावे
कुट्। अल्पकम्पन, थोड़ा कांपना। आ-कपि-षिच्-

भावे लुट् । ३ थोड़ा कंपाना । (त्रि०) ४ थोड़ा कंपानेवाला ।

आकम्पित (सं० त्रि०) आ-कपि कर्त्तरि क्त । १ ईषत् कम्पित, थोड़ा कांपाहुआ । (स्त्री०) भावे क्त ।

२ ईषत् कम्पन, थोड़ा कांपना । णिच् कर्त्तरि क्त ।

३ ईषत् चालित, जो थोड़ाही हिलाया गया हो ।

आकम्प (सं० त्रि०) आ-कपि-र । नमि कम्पि इत्यादि रः ।

पा १।२।६ । ईषत् कम्पनशील, थोड़ा कांपनेवाला ।

आकर (सं० पु०) - आकुर्वन्ति सम्भूयनिष्पादयति व्यवहारं यत्र, आ-क्त आधारे घ । १ समूह, ढेर ।

आकीर्त्यते धातुवोऽत्र, आ-क्त-आधारे अण् । २ धातु एवं

रत्नादिका उत्पत्तिस्थान, खानि । खानि देखो । ३ भाण्डार,

खजाना । ४ किसी द्रव्यके रहनेका स्थान मात्र ।

जैसे, पद्माकर सरोवर, गुणाकर व्यक्ति, रत्नाकर समुद्र । ५ अवन्तिके निकटवर्त्ती प्राचीन जनपद ।

६ महाभाष्य । ७ तलवार चलानेका एकमेद । (त्रि०)

८ गुणित, गुण । जैसे पांच आकर, दश आकर । ९ दक्ष,

कुशल, व्युत्पन्न, चतुर, होशियार । १० श्रेष्ठ, बढ़िया ।

आकरकढ़ा, (*Pyrethum indicum*) एकजड़ी

विशेष । गुलचीनी एवं आकरकड़े नामसे बाजारमें

प्रायः एकही वस्तु विक्री होती है । यह कश्मीर

और लाधकमें उत्पन्न होता है । इसका मूल कुछ

कड़वा होता एवं मुंहमें रखनेसे काशको निवारण

करता है । इससे अतिरिक्त यह मस्तकवेदना

(शिरके दर्द) और शूलरोग, वायुगुल्म, सान्निपातिक

ज्वरमें भी व्यवहृत होता है ।

आकरकरड़ा, आकरकड़ा देखो ।

आकरखना, आकर्षना देखो ।

आकरज (सं० स्त्री०) रत्न, खानिसे निकलनेवाला जवाहर ।

आकरण, आकारण देखो ।

आकरिक (सं० त्रि०) आकरे नियुक्तः ठञ् । खान खोदने-

वाला, रत्नादिके उत्पत्ति स्थानपर राजनियुक्त कर्मचारी ।

आकरिन् (सं० त्रि०) आकरः उत्पत्तिस्थानमस्यस्य,

आकर प्राशस्ये इति । प्रशस्त आकरजात, जो बड़ी

खानिसे निकला हो ।

आकरोट, अखरोट (*Aleurites moluccana*) । यह

संस्कृत आखोट शब्दका अपभ्रंश है । एक प्रकारके

फलका पेड़ । यह पञ्जाब, आसाम आदि स्थानोंमें

पहाड़ पर जन्मता है । फल देखनेमें बहेड़ा जैसा

होता है । ऊपर शिरा रहता और इसका झिलका

बादाम जैसा कड़ा रहता है । भीतरका गूदा तैलाक्त

और खानेमें प्रायः बादामकी तरह लगता है । भारत-

वर्षके दक्षिण और लङ्कामें इसका तेल निकाला जाता

है । उसका नाम 'केकुना तेल' है । तेल निकाल लेनेके

बाद खली गाय बेलको खिन्ना दी जाती है । पांसके

लिये बह खेतमें भी डाली जाती है । अखरोट देखो ।

आकर्ष (सं० अव्य०) आ-कर्ष कर्णपर्यन्तं । आ-

कर्षादभिविध्योः । पा २।१।२१ । इति अव्ययी० समास ।

कर्णपर्यन्त, कानतक । जैसे आकर्षसन्धान अर्थात्

कानतक खींचके तीर चलाना ।

आकर्षण (सं० स्त्री०) आ-कर्ष-ल्युट् । अत्रण,

सुनायी ।

आकर्षित (सं० त्रि०) सुनाहुआ, जो कानमें पड़

गया हो ।

आकर्ष्य (सं० अव्य०) अत्रण करके, सुनके ।

आकर्ष (सं० पु०) आकर्ष्यते अनेन, आ कष करणे-

घञ् । १ पाशक, पासेका खेल । २ विसात, चौपड़ ।

३ इन्द्रिय । ४ धनुर्धारोका विद्याका अभ्यास, तीर

मारनेका मगक । भावे घञ् । ५ आकर्षण, खिंचाव,

कशिय, एक जगहकी चीजको जोरसे दूसरी जगह

ले जाना । आधारे घञ् । ६ कष्टिप्रस्तर, कसीटी ।

वृक्षस्य फल पत्रादि आकर्ष्यते अनेन, करणे-घञ् ।

७ अङ्गुशाकार, अंगुसी, फल-फूल तोड़नेकी लम्बी ।

आकर्षः श्वे आकर्षः । पा ५।४।२ एवं वि० को० । आकर्षति

कर्त्तरि अच् । ८ आकर्षणकर्ता, खींचनेवाला । आकर्-

षण चरति ठल् । (त्रि०) आकर्षिक, आकर्षण-

कारी । (स्त्री०) आकर्षिकी, आकर्षणकारिणी स्त्री ।

'आकर्षः पासके धन्वाभ्यासात्' इति इन्द्रिये आकर्षो शरिफउल-

फि । (हिम)

आकर्षक (सं० पु०) आकर्षति सन्निकटं लोहं, आ-

कर्ष-खुल् । १ चुम्बक । (त्रि०) आकर्षादिभ्यः कर्-

पा ३१५६४। इति कन्। २ आकर्षणकर्ता, खींचनेवाला।
३ आकर्षणकुशल, जो अच्छीतरह खींचता हो।

आकर्षण (सं० त्रि०) आ-कृष-ल्युट्। १ किसी स्थानसे वस्तुको वलपूर्वक दूसरे स्थानपर खींच ले जाना। खिंचाव। आकृष्यते अनेन, करणे ल्युट्।
२ आकर्षण-साधन, तन्त्रशास्त्रोक्त ६ कर्मके अन्तर्गत प्रयोग विशेष। इस प्रयोग द्वारा स्त्री प्रभृतिका मन चञ्चल करके उनकी किसी अभीष्ट स्थान पर ले जाते हैं। त्रिपुरासारतन्त्रमें इसकी प्रक्रिया यों-लिखी है—‘ॐ श्रीं लीं, ह्रीं त्रिपुरा देवि! अमुकीं आकर्ष आकर्ष स्वाहा’। यह मन्त्र दश हजार बार जप किया जाता है। रक्तचन्दन और कुङ्कुमसे षड्कोण चक्र बना ह्रीं बीजसे पूजा करना चाहिये। त्रिपुराका ध्यान नीचे लिखा है—

“भावयेच्च तसा देवीं त्रिनेत्रां चन्द्रशेखरां।

वालाङ्गकिरणप्रख्यां सिन्दुरादणविवर्णां।

पद्मच दक्षिणे पाशौ जपमालाच वामके ॥” (त्रिपुरासारतन्त्र)

इसी तरह ध्यानपूर्वक षोडशोपचारसे देवीकी पूजा और उक्त मन्त्रका दश हजार जप करने पर सर्वश्री, रश्मा प्रभृति अस्त्रोगणको भी आकर्षण कर सकते हैं। फिर इसी प्रयोगसे दूरका कोई भी द्रव्य अपने साधकके पास आ पड़ुचता है।

आकर्षणशक्ति (सं० स्त्री०) कुवतकशिश, खींचनेकी ताकत। यह शक्ति (Gravitation) प्रायः प्रत्येक पदार्थ में होती, जिससे आपस खिंचतान चला करती है। समस्त जगत्को इसीने मिला-जुला रखा है। पृथिवीके द्रव्य दूसरी जगह जा न पड़नेका कारण आकर्षणशक्ति ही हैं। जब जल चन्द्रकी ओर खिंचता, तब समुद्रमें ज्वार चढ़ता है। आकाशमें नवग्रहादि इसी शक्तिके सहारे ठहरते और अपनी कक्षापर घूमते हैं। आकर्षणशक्तिने ही पृथिवीमें वायुमण्डलको पकड़ रखा है। यदि पृथिवीमें यह शक्ति न होती, तो वृक्षसे फल गिरनेपर न जाने कहाँ चला जाता। वैज्ञानिकोंने गुरुत्वाकर्षण, चुम्बकाकर्षण, संलग्नाकर्षण, केशाकर्षण, रासायनिकाकर्षण आदि कयी प्रभेदोंमें इसे बांटा है।
आकर्षणशक्तिका प्रभाव कहीं अधिक और न्यून

पड़ता है। भ्रमरको पद्म और चकोरको चन्द्र इसी शक्तिसे अपनी ओर खींच लेता है। भास्कराचार्य गोलाध्यायमें आकृष्टिशक्तिका नाम उल्लेख किया है।
आकर्षणो (सं० स्त्री०) आकृष्यते उच्चैस्त्वं फलादि निकटं नीयते अनया आ-कृष्य-करणे लुगट् टित्वात् डोप्। वृक्षसे फल तोड़नेको अङ्गुठा। तत्क्रान्त मुद्रा-विशेष। यथा तन्त्रसारमें,—

“मध्यमातर्ज्ज्वोभ्यामकनिष्ठानामिह समे।

षड्शुभाकारवप्या मध्यमे परमेष्ठरि ॥

अङ्गुष्ठमु नियुज्येत कनिष्ठानामिहोपरि।

इयमाकर्षणो मुद्रा वेलांश्चाकर्षिणो मता ॥”

अङ्गुशाकारतर्जनो और मध्यमा अंगुलीके साथ पहले कनिष्ठा और अनामिकाको समान ढंगसे रख हथेलीके बीचमें उन दोनों अंगुलियोंकी गुठाकर उस पर अंगूठा धरना। इसीका नाम आकर्षणोमुद्रा है। इस मुद्रा द्वारा स्वर्ग, मर्त्य एवं पाताल आकर्षण किया जाता है।

आकर्षण (हिं०) आकर्ष-इत्थो।

आकर्षणा (हिं० स्त्री०) आकर्षण]करना, खींचना।

आकर्षादि, आकर्षादि (सं० पु०) आ-कर्षः आ-कृषः वा आदिर्यस्, बहुव्री०। कन् प्रत्ययके निमित्त पाणि-न्युक्त शब्दगण विशेष। इस गणमें निम्नलिखित शब्द हैं,—आकर्ष, आकष, त्वरु पिशाच, पिचरु, अशनि, अश्वत्, त्रिचय, विजय, जय, चय, आचम, अप, नय, पाद, पीठ, ऊद, ऊाद, छाद, गदगद, शकुनि, निपाद, दीप। (पा ३१५६४)

आकर्षिक (सं० त्रि०) आकर्षण आचरति आ-कृष-ठल्। आकर्षात् ठल्। पा ३१५६४। आकर्षणकारी, खींचने-वाला, जो आकर्षण द्वारा आचरण करता हो। (स्त्री०) पित्वात् डोष् आकर्षिकी, आकर्षण करनेवाली।

आकर्षित (सं० त्रि०) आकृष्ट, खींचा हुआ।

आकर्षिन् (सं० त्रि०) आकर्षति आ-कृष-णिनि गुणः। आकर्षणकर्ता, खींचनेवाला। (स्त्री०) डोप् आकर्षिणी, खींचनेवाली। संपूर्ण आकर्षिन् शब्द द्वारा (सस्याकर्षिन्) दूरगामी गन्ध समझ पड़ता, कारण यह दूरस्थ व्यक्तिको आकर्षण करता है। ‘समाकर्षी गु निर्हारो’। (चनर)

आकलकोट—बम्बई प्रान्तके शोलापुर जिलेकी एक तहसील; यह नगर शोलापुरसे दक्षिण-पूर्व २३ मील पड़ता है। मेनदूरगो फाटकसे बाहर दक्षिणी नवाबोंके समयकी पुरानी मसजिद खड़ी है।

आकलन (सं० स्त्री०) आ-कल-ल्युट्। १ आशङ्का, शक। २ ग्रहण, लेना। ३ संग्रह, सञ्चय, इकट्ठा करना, बटोरना। ४ गणन, शुमार, गिनना। ५ अनुसन्धान, जांच, खोज। ६ अनुष्ठान, सम्पादन। ७ परिसंख्या। ८ बन्धन, जकड़। ९ आकाङ्क्षा, इच्छा।

आकलनीय (सं० त्रि०) १ आकलन करनेके योग्य, लेने लायक। २ एकत्र करने योग्य, इकट्ठा करने लायक। ३ गणना करने योग्य, शुमार लगाने लायक। ४ अनुष्ठान करने योग्य। ५ अनुसन्धान करने योग्य, जांचने या पता लगाने लायक।

आकलित (सं० त्रि०) आ-कल-क्त। १ अनुगत, लिया हुआ। २ अनुकृत, सम्पादित, किया हुआ। ३ परिगणित, गिना हुआ। ४ ग्रथित, गुंथा हुआ। ५ परोक्षित, जांचा हुआ।

आकली (सं० स्त्री०) १ चटका, गौरेया, गरगैया। (हिं०) २ आकुलता, वैकली।

आकल्य (सं० पु०) आकल्यते, आ-कल्य-घञ्। १ वैश्वरचना, सिंगार करना, भूषण, अलङ्करण। सज्जोभूत करना, सजावट, बनाव। २ चक्षति, उमार। ३ रोग, आजार। (अव्य०) ४ कल्प पर्यन्त। “आकल्य करके नष्ट” (कृति

आकल्यक (सं० पु०) आ-कल्य-कन्। १ तम, चंघेरा। २ मोड़, यादका न भूलना। ३ ग्रान्थ, गांठ। ४ उत्कण्ठा, हर्ष, खुशी। ५ मूर्च्छा, गूथ।

आकल्य (सं० स्त्री०) रोग, आजार।

आकल्य (सं० पु०) अकर्वरा, अकरकरहा।

आकल्यक, आकल्य देखो।

आकष (सं० पु०) आकष्यते यत्र आ-कष (लोचनचर इत्यादि। पा ३।३।१८ एवं अकारो अनु-क्त-वसुधयः। आतक्य इति हिं० स्त्री०) इति घ प्रत्ययः। निक्षुप्रस्तर, स्वर्णादि कसनेका पत्थर, कसोटौ।

आकषक (सं० त्रि०) आकषे कुशलः, आकष-कन्। कसनेवाला, कसोटौ लगानेवाला।

आकषक, आकषक देखो।

आकसमात् (हिं०) अकस्मात् देखो।

आकस्मात् (हिं०) अकस्मात् देखो।

आकस्मिक (सं० त्रि०) अकस्मादित्यथयम् कारण-भावार्थकं अकस्मात् कारणं विनैव भवः वा (विनयादिभ्यो षक्। पा ३।३।१४।) इति षक् टि-लोपः। अकस्मात् जात, विना किसी कारणके होनेवाला, छटात् उत्पन्न, सहसा होनेवाला, नागहान, वैखर। (स्त्री०) डोण्। आकस्मिकी। चार्वाक इस जगत्को आकस्मिक कहते हैं। क्यों कि उनके मतमें सकल पदार्थ अकस्मात् अर्थात् कारणव्यतिरेक ही उत्पन्न होते हैं। वह बताते हैं, कि वनमें कोई बीज नहीं बोता; उसमें जल नहीं देता, तथापि वह बीज जैसे स्वयं अङ्कुरित और वर्धित होता, वैसेही जगत्का कोई कारण नहीं, आपही एक भावसे चलता है। फिर अग्निमें उष्णता गुण और जलवायुमें शैत्य गुण स्वाभाविक होता, वैसेही अन्य सब वस्तुका गुणभी स्वाभाविक है अर्थात् उसका कोई कारण नहीं।

आकस्मिकत्व (सं० स्त्री०) लोभना, अस्थिरता, नागहानो, वैखरी।

आका (हिं० पु०) १ आकाश, अलाव। २ भट्टी, भाड़। ३ पजावा, आवां। (आसामीभा०) ४ आसामके उत्तर-सीमावर्ती पार्वतीय एक असभ्य जाति। इस जातिके लोगोंका सुंह गोल और चिपटा, नाक मोटी, आंख कुछ छोटी, गालकी हड्डी जंचो, तथा देह मध्यमाकार रहता है। देखनेमें यह न अधिक मलिन और न अधिक ताम्रवर्ण ही हैं। इनकी स्त्रिया सुश्री नहीं होती, उनके गठनमें भी लावण्यता नहीं रहती है। पर्वतपर भरणी नदीके जलोच्छासके ऊर्ध्व भागपर इस जातिकी वासस्थान है। यहांका पथ अत्यन्त दुर्गम पड़ता, तराईसे चढ़ने पर प्राणान्त परिच्छेद होता है। आका जाति दो प्रधान सम्प्रदायमें विभक्त है। एक सम्प्रदायका नाम हनुमी-कोयाद है। इस शब्दका अर्थ—हजार रत्नशालाका खादक लगता है।

द्वितीय सम्प्रदायका नाम—कुपचोर है। इस शब्दसे कार्पास-क्षेत्रके (रुईकी खेतके) चोरका बोध होता है। यह दोनो शब्द आसामी भाषाके अपभ्रंश हैं। पहले ये लोग पर्वतसे नीचे उतरकर जन-पदके मध्य महा उत्पात उठाते और ब्रह्मपुत्र नदमें नौका एवं तीर्थयात्रियोंकी द्रव्यसामग्री लूट लेते थे। क्षपकोंके खेतसे कपास और अन्नादि हरण करनेसे इनके दोनो सम्प्रदायोंका इस प्रकार नाम पड़ा है।

आकाओंके उत्तर मिशमी जाति है। वह भी असभ्य होते हैं। आकाओंके साथ मिशमी-कन्याका आदान-प्रदान चलता है। मिशमी लोग कभी पर्वतके नीचे नहीं उतरते, केवल आका ही विपद् पड़नेपर आत्मीय स्वजनको उद्धार करनेके लिये पर्वतसे नीचे आते हैं। आकाओंके सर्वसमेत २३० और मिशमी जातिके ४०० मकान बने हैं।

असभ्यावस्थापर सकल ही जातिको केवल बाह्य जगत्में ऐसी शक्ति देख पड़ती है। सृष्टिके मध्य जहां कुछ अद्भुत एवं भयङ्कर होता और विपद् आनेकी सम्भावना रहती, वहीं देवता तथा ईश्वर विद्यमान है। आकालोग पर्वतमें रहते हैं। पर्वतकी भयङ्कर एवं उच्च चूड़ा, कल्लोलिनी नदी, और वन्य पशुपूर्ण निविड़ जङ्गलको ही ये लोग देवता समझते हैं। फुल जङ्गल और जलके देवता हैं। युद्धकी अधिष्ठात्री-देवी फिरन् और सिमन् हैं। सतु क्षेत्र एवं गृहके देवता हैं। इनके पुरोहितका नाम देवरी है। देवरीको पूजादि कितनी ही दैवक्रिया करना पड़ती है। एक एक कुटीरमें जङ्गलादिकी देवमूर्ति स्थापित है। पुरोहित उन सकल देवताओंकी पूजा करते हैं। शस्य कटने पर वे देवतादिको उसका अग्रभाग उत्सर्ग कर देते हैं। विवाहके समय हमलोग हाथमें राखी बांधते हैं। आका असभ्य हैं, किन्तु इनमें भी यह मङ्गलाचरण प्रचलित है। विवाहके पूर्व पुरोहित जा कर वर एवं कन्याके हाथमें सूतकी ग्रन्थि बांध देता है। पीड़ा होनेपर कोई औषधका भरोसा नहीं करता। ओम्हा मन्त्र पढ़के रोगीको

भाड़ते एवं पुरोहित फुल देवताके समीप कुकुटादि बलि देकर स्वस्थयन करते हैं।

आकाओंका गृह प्रायः काष्ठ एवं प्रस्तरसे बना और भीतर तख्ता बिछा रहता है। ये प्रायः धनुः-शर लेकर सर्वदा श्रमण करते हैं। हस्ति-प्रभृति वृहत् जन्तुका शिकार करनेमें आका तीरकी गांसीपर काष्ठविष चढ़ा देते हैं।

ये पर्वतोत्पन्न अनेक प्रकारका द्रव्य संग्रह करके तिब्बत, भूटान एवं सिक्किममें और पहाड़के नीचे वाणिज्य करने आते; तन्निष्ठ अपने प्रयोजनानुसार तांबे और कांसेके पात्र तथा वस्त्रादि क्रय करके ले जाते हैं।

आका आसाम-निकटवर्ती जनपदके भीतर बीच बीच अतिशय अत्याचार करते हैं। सन् १८१८ ई०में इनके सर्दार टागीराजको अंगरेजोंने गिरफ्तार करके गौहाटीके जेलमें कैद किया था। उसी जगह वह एक हिन्दू गुरुको पा कर उनके निकट हरिभक्ति और हरिमन्त्रमें दीक्षित हुए। गुरु शिष्यको चाहते और शिष्य गुरुको मानते थे। क्रमशः दोनोंके मध्यमें विलक्षण अनुराग उत्पन्न हुआ। सन् १८३२ ई०में टागीराजने अपने गुरुको जामिन बना मुक्ति पायी। किन्तु जब फिर पर्वतका स्वाधीन वायु उनके अङ्गमें लगा, तब वह हरिभक्ति और गुरुके प्रति श्रद्धा कुछ भी न रही। पूर्वमें जिन लोगोंने षडयन्त्र करके उन्हें पकड़वा दिया था, टागीराजने प्रथम ही उन्हें नष्ट किया। निकटके अंगरेजोंकी चौकी भी लूटी। अंगरेजोंके जितने कर्मचारी उनके सम्मुख पड़े, उनमें अनेक हत एवं आहत हुए थे।

उपरोक्त अत्याचार निवारण करनेके लिये ब्रिटिश सैन्य प्रेरित हुआ। यह निश्चय करना दुर्घट पड़ गया, आकाराज कहां रहते और किस पर्वतसे किस पर्वत-पर भाग जाते थे। अंगरेज बहुत दिनतक उनके पीछे पीछे फिरे, किन्तु कोई सन्धान लगा न सके। अन्तमें टागीराजने सोचा, कि बहुत दिन उसतरह उद्दिग्ध रहनेकी अपेक्षा मृत्यु वा कारावास ही अच्छा था। युद्धका वैसा कोई उपकरण न रहा, जो अंग-

रेजोंकी गोलावृष्टिके सम्मुख खड़े रह सकते, सुतरां वे आप ही जा कर हाज़िर हुए। फिर सन्धिकी बात चली। वह जैसे राजा थे, उनके लिये वार्षिक तनखाहकी व्यवस्था भी वैसी ही हुई। अंगरेजोंने कहा,—“आप शान्त शिष्ट हो जावो, लोगोंके प्रति अब उत्पीड़न न करो; आपको प्रतिवर्ष ३६०) रुपया पेन्शन मिलेगा। किन्तु आपको किसीके ऊपर अत्याचार न करनेकी दृढ़ प्रतिज्ञा करना चाहिये।” टागौराज उसीमें सन्मत हो गये। उस समय अङ्गीकारके निमित्त पवित्र द्रव्यकी आवश्यकता पड़ी थी। कुक्कुट आया, भल्लूक और व्याघ्रचर्म आया। तुम्हारे हमारे समीप जो अपवित्र ठहरता, संसारमें दूसरी जगह वही पवित्र है। हिन्दू के लिये गोमय और आकाके लिये हस्तिविष्टा पवित्र है। ग्रन्थके लिये ढेरकी ढेर हस्तिविष्टा मंगायी गयी। प्रथम सत्यपाठमें सुगीका बलि चढ़ा था। उसके बाद आकाराज एक हाथमें भल्लूक-चर्म और दूसरे हाथमें व्याघ्रकृत्ति लेकर बोले—‘जो होना था हुआ, अब सावधान बना, फिर कभी मैं अङ्गरेजोंकी बात न टालूंगा।’ परिशेषमें अङ्गली भर हस्तीकी विष्टा उठाकर कहा,—‘अङ्गरेजोंके साथ विरोध इस जन्मके लिये मिट गया, जीवन रहते फिर कभी विवाद न करूंगा।’ अन्तमें एकबार हरिनामकीर्तन करके प्रतिज्ञा समाप्त हुई।



मिश्री-सर्दार

आका एवं मिश्री लोगोंकी आकृति-प्रकृति, वेश-भूषा, लोक-लौकता, आहार-व्यवहार, सब एक ही प्रकार है। यह मिला मिश्री-सर्दारकी प्रतिमूर्ति है। इस चित्रपटसे आका और मिश्री लोगोंके सभ्य वेशभूषा पहननेका प्रमाण मिलता है। विगत सन् १८८१ ई. को

कलकत्तेकी प्रदर्शनीमें अनेक असभ्य जातिकी प्रति-मूर्ति देखायी गई थी। प्रतिमूर्ति बनाते समय आका लोगोंकी भी आकृति देनेकी कल्पना हुई। इसलिये आसाम सरकारके कर्मचारियोंने नमूनेकी तरह किसी आकाको कलकत्ते भेजनेकी चेष्टा की थी। किन्तु उस प्रस्तावपर समस्त आका जाति एकबारगी ही चिंत हो गयी। इससे अधिक असङ्गत कथा दूसरी क्या हो सकती है, कि प्रतिमूर्ति बनवानेके लिये जीवित मनुष्यको कलकत्ते जाना पड़े। इस अपमानका प्रतिशोध लेनेके लिये आका ब्रिटिश प्रजाके कयी आदमी अपने पर्वतमें पकड़ ले गये। उसीसे अङ्गरेजोंके साथ एक सामान्य युद्ध हुआ था। अन्तको आका परास्त हो पर्वतके उपरिभागमें भाग गये।

आका-राजकी मूर्ति देखनेसे शिवदूतका स्मरण आता है। इनका सर्वाङ्ग गोदनेसे चित्रित, कण्ठमें पत्थर तथा हड्डीकी माला, मथ्येपर पत्तीका पुच्छ, और शरीर पर लत्ता लिपटा है। ये पार्वतीय वनके मध्य दिवानिशि जङ्गली फलोंकी माला पहनकर घूमते एवं धनुर्वाण लेकर भ्रमण करते हैं। तीरमें कौन विष चढ़ा रहता है, इसका ठीक निश्चय नहीं होता। कोई कोई अनुमान करते, कि तीरमें मीठा विष (Aconitum ferox) लगाते हैं। किन्तु दूसरे कहते, कि आसामी लोग जिसको विष (Coptis Teeta) बताते, आका वही तीरकी गांसी-पर चढ़ाते हैं। इस विषाक्त अस्त्र द्वारा शरीर पर आघात लगनेसे शीघ्र ही मृत्यु होती है। कहते, किसीको आघात लगनेसे आका चतस्थानपर इन्द्रयव (Sausseria Lappa) घसकर प्रलेप देते एवं उसीका द्राघ सेवन कराते हैं। इसकी परीक्षा करना उचित है, कि इन्द्रयवमें यथार्थ विषनाशक-शक्ति होती है या नहीं।

सन्धिके बाद देश आकर आकाराजने स्वजातिके मध्य हरिमत्तिका प्रचार किया। इस समय प्रायः समस्त ही आका वैष्णव हो गये हैं। प्रत्येक आका गृहस्थके घरमें बहुत गो रहती हैं। यह गोमांस खाते, किन्तु गीका दूध किसीतरह पवित्र नहीं सम-

भते। आका कण्ठागत प्राण होनेपर भी गोदुग्ध नहीं छूते। संसार विचित्र स्थान ठहरता, केवल कार्य वैपरीत्यसे ही इसका व्यापार चलता है। यह सुन हम हंसते, कि आका गोमांस खाते—किन्तु गोदुग्ध नहीं छूते। फिर अरण्यके आका यह देख हंसते, कि हम-लोग दुग्ध खाते हैं; किन्तु गोमांस स्पर्श नहीं करते। यह सूअर, सुर्गे एवं कबूतर पालते हैं। इन सकल जीवोंका मांस ही आकाओंका प्रधान खाद्य है। ये प्रायः सब जन्तुओंको खाते हैं। केवल सुर्गाबौ, राजहंस एवं कुत्ते वगैरह जिन पशुओंका मांस सचराचर मनुष्यका खाद्य नहीं, वही इनमें खानेको निषिद्ध है। मृत्युके बाद ये शव दाह नहीं करते, मट्टीमें गाड़ देते हैं। इस अन्त्येष्टिकाकी प्रणाली मिस्सी शब्दमें देखो।

आका (अ० पु०) स्वामी, मालिक, सरपरस्त। आकाखिल—सिन्धुनदके उत्तरपश्चिम पार कीहाट निकटवर्ती अफ़रोदी जातिके मध्य एक पठान-सम्प्रदाय। अन्यान्य पठानोंकी तरह आकाखिल भी अतिशय वीर्यवान् और दुर्दान्त होते हैं। दस्यु-वृत्ति, नरहत्या एवं युद्ध प्रवृत्ति आसुरिक कार्य ही इन लोगोंका व्यवसाय है। आकाखिलोंके मध्य अनेक भिन्न भिन्न सम्प्रदाय हैं। यथा—मारुफ़खेल, मरगब खेल, शेरखेल, सन्दलखेल, मुण्डाखेल, इत्यादि। पूर्वमें अङ्गरेजाधिकारके बीच पड़ूँच ये सर्वेदा ही उपद्रव करते थे। सन् १८५६ ई०को अंगरेजोंने इस जातिका भारतवर्षमें प्रवेश करना रोक दिया। इससे आकाखिलोंकी बहुत क्षति होने लगी थी। एकदिनकी नहीं, भारतवर्षमें आ वाणिज्य कर न सकनेसे चिरकालकी क्षति हुई। इसी कारण आकाखिलोंने २६७०) ६० अर्थदण्ड देकर हिन्दुस्थानमें प्रवेश करनेकी अनुमति ली। ब्रिटिश गवर्णमेण्ट केवल अर्थ पाकर ही सन्तुष्ट न हुई थी। उसने इनसे यह प्रतिज्ञा भी करायी—आका-खेलोंके मध्य कोई व्यक्ति अङ्गरेजी अधिकारमें रहकर अत्याचार न करेगा। उस दिनसे इस जातिका दौरात्म्य कितना ही कम पड़ा सही, किन्तु विलकुल चान्त नहीं हुआ।

आकाङ्क्ष (सं० त्रि०) १ इच्छुक, अभिलाषी, खाद्दिश-

मन्द, चाहनेवाला। २ व्याकरणमें—अर्थपूर्तिके लिये शब्दकी आवश्यकता रखनेवाला, जो माने पूरे करनेको लफ़्ज चाहता हो।

आकाङ्क्षक, आकाङ्क्ष देखो।

आकाङ्क्षणीय (सं० त्रि०) स्पृहणीय, काम्य, काबिल तमन्ना, पसन्दीदा, मनभाज।

आकाङ्क्षत् (सं० त्रि०) १ अभिलाष रखनेवाला, जिसे उम्मेद रहे। २ दृष्टि डालनेवाला, जो देखता हो।

आकाङ्क्षा (सं० स्त्री०) आ-काङ्क्ष-(गुरोय ह्यः।

पा ३।३।१०२) इति अ टाप्। १ अभिलाष, इच्छा,

खाद्दिश, पसन्द। २ जिज्ञासा, प्रश्न, सवाल, पूछताछ।

३ अभिप्राय, मतलब। “वाक्यं साद यो ग्यताकाङ्क्षासचियुक्त पदो-

चयः।” (साहित्यद०) ४ दृष्टिपात, नज़ारा। ५ व्याकरणमें—

अर्थपूर्तिके लिये शब्दपेक्षा, माने पूरे करनेको लफ़्जकी

जरूरत। योग्यता, आकाङ्क्षा एवं आसत्तियुक्त पद

समूहका नाम वाक्य है। “आकाङ्क्षाप्रतीति-पर्यवसान-विरहः।

स च श्रोतुर्जिज्ञासा खरूपः। निराकाङ्क्षस्य वाक्यत्वे गौरवः पुरुषो

हसोत्यादीनामपि वाक्यत्वं स्यात्” (साहित्यद०) ६ न्यायशास्त्रके

मतसे वाक्यार्थ ज्ञानका हेतु सम्बन्ध विशेष। यथा—

“स्वरूपयोग्यत्वे सत्यजितान्वयबोधजनकत्वम्।” (तर्का०)। ‘यन्-

पदं यत्पदेन सच्च यादृशानुभवजनकं भवेत्, तत्पदस्य तत्पदसममिव्याहार-

सादृशान्वयबोधे आकाङ्क्षा।’ (न्या० म०) ‘यस्य पदस्य येन

पदेन विनान्वयबोधजनकत्वं नास्ति तस्य पदस्य तेन पदेन सममिव्याहार

आकाङ्क्षा।’ (त० कौ०) अर्थात् जिस पदके व्यति-

रेकसे जौन पदका अन्वय नहीं होता, उसी

पदमें वही पदत्व रूप सम्बन्ध या एक पदके व्यतिरेक-

में अन्वयका अभाव आकाङ्क्षा कहता है। जैसे दास

भार्या कहनेपर ‘किस दासकी भार्या?’ ऐसी आकाङ्क्षा

रहनेसे अन्वयका अभाव होता है। पीछे ‘चैत्रस्य’

चैत्रकी—इस सम्बन्धिपदके उल्लेख करने पर, उसके

सहित अन्वय होता है। उस समय आकाङ्क्षा छूटती

है। वाक्यमें पदोंका परस्पर सम्बन्ध रहता और

उसी सम्बन्धसे वाक्यार्थका ज्ञान होता है। जब

वाक्यमें एक पदका अर्थ दूसरे पदके अर्थ ज्ञानपर

आश्रित रहता, तब आकाङ्क्षा रहती है। जैसे—

‘घडा लावो’—इसमें केवल ‘लावो’ कहनेपर श्रोताको

‘क्या लावे’ की आकाङ्क्षा होती है। कारण, ‘लावो’ पदका ज्ञान घटज्ञानके आश्रित है। ७ जैनमतानुसार अतिचार विशेष। यह एक प्रकारकी इच्छा होती, जो अन्य मतावलम्बियोंकी विभूति पर दीड़ती है।

आकाङ्क्षित (सं० त्रि०) आ-काङ्क्ष कर्मणि क्त।
१ इच्छित, ईप्सित, खाद्दिश किया हुआ। २ प्रश्न किया हुआ, पूछा गया। ३ ध्यान किया हुआ, ख्यालमें लाया गया। ४ अपेक्षित, जरूरी।

आकाङ्क्षितव्य, आकाङ्क्षणीय देखो।

आकाङ्क्षिन् (सं० त्रि०) आ-काङ्क्ष-णिनि।
१ इच्छाशुक्त, इच्छा करनेवाला, इच्छुक, चाहने-वाला। २ प्रत्याशी, पूछनेवाला। (स्त्री०) डीप्।
आकाङ्क्षिणी।

आकाङ्क्षी, आकाङ्क्षिन् देखो।

आकाङ्क्ष्य (सं० त्रि०) १ स्पृहणीय, काम्य, काविल-तमन्ना, पसन्दीदा। (स्त्री०) ३ अर्थपूर्तिके लिये शब्दापेक्षा, मानी पूरा करनेकी लफ्जकी जरूरत।
आकापर्वत—आका नामक एक पहाड़। इस पर्वतकी सचराचर आका ही कहते हैं। यह गिरि-माला आसामके ठीक उत्तरमें अवस्थित है। इससे दक्षिण दरङ्ग प्रदेश, पूर्व दफला पर्वत और पश्चिम भोटान राज्य है। आका पर्वतके रहनेवाले अति असभ्य जाति होते हैं। आका देखो।

आकाय (सं० पु०) आ-चि कर्मणि घञ्, चित्ती कुत्वम्। निवास चित्तिगरीरोपसमाधानेवादेश कः। पा ३।३।४१।
१ चीयमान अग्नि, सञ्चित अग्नि, यज्ञके लिये रखी हुई आग। २ चित्ता। ३ गृह, निवास, मकान्।

आकायाब (अक्वाब)—अंगरेजाधिकृत ब्रह्मदेशके अन्तर्गत आराकान विभागका एक जिला। कहते हैं, गौतमके जन्मसे पहले आराकानकी राजधानी राम-वन्दो वाराणसीके राजाको कर देती थी। प्रायः सन् ८०० ई०को मुसलमानोंने आराकानपर आक्रमण किया। नवीं शताब्दीमें आराकानके राजाने वङ्गदेश-पर चढ़ाई की थी। उन्होंने चटगांवमें सीतागङ्ग नामक एक जयस्तम्भ निर्माण कराया।

आकायाबमें महाती नदीका एक मन्दिर है।

गखयी नामक राजाने उसे बनवाया था। पहले आकायाब ब्रह्मदेशीय सैन्यका दुर्ग रहा। उसके बाद १८२५ ई०को अंगरेजी सेनाने आकर इसे देखल कर लिया। तेरहवीं शताब्दीको आराकानवासी पूर्ववङ्गमें आ पहुँचे थे। उस समय ढाका जिलेके अन्तर्गत सुवर्णग्राम प्रभृतिके राजाओंने उन्हें कर देकर छुटकारा पाया। इसीको हमलोग सचराचर मर्गोका दौरात्म्य कहते हैं। मर्गोने मेघना नदीके किनारे सब देशोंमें आकर बड़ा अत्याचार किया था। क्रमसे उन्होंने चटगांव अधिकार कर लिया और वहाँ पोर्तुगीजोंको आश्रय दिया। पोर्तुगीज भी अत्यन्त अत्याचार करने लगे। वे नावपर हमेशा मेघनामें घूमते फिरते और वणिक्, पथिक तथा तीर्थयात्रीका सर्वस्व लूट लेते थे। कविकङ्कणमें जो—‘हरामदके डरसे’ इत्यादि उल्लेख किया गया है, वे हरामद (Armada) यही जलडाकू रहे। ऐसा अत्याचार देखकर कुछ दिनोंके बाद आराकानवासियोंने सब पोर्तुगीजोंको चटगांवसे निकाल बाहर किया। यहाँसे भागकर वे लोग सान्तु-यिप द्वीपमें जाकर रहे। परन्तु उनके सेनापतिने क्रोधमें आकर आराकानपर आक्रमण किया था। आराकानके राजाने युद्धमें उनका प्राणविनाश कर सान्तुयिप द्वीप अधिकार और वहाँके सब आदिमियोंको कैद कर लिया।

१६६१ ई०को शाहशुजाने औरङ्गजेबके डरसे भागकर आराकानमें आश्रय लिया था। किन्तु वहाँके राजाने शाहशुजाकी कन्यासे रूपलावण्यपर मोहित होकर विवाह करना चाहा, परन्तु शाहशुजा उस बातपर राजी न हुए। इसलिये आराकानके राजाने शाहशुजा और उनके पुत्रादिको एक नदीमें डुबाकर मार डाला।

१७८४ ई०को आराकान ब्रह्मराज्यमें मिला लिया गया था। इससे आराकानवासियोंने चटगांव तथा अन्यान्य अंगरेजी राज्यके स्थानोंमें आकर आश्रय लिया। ब्रह्मवासियोंने उन्हें गिरफ्तार करा देनेके लिये अंगरेजोंसे अनुरोध किया, परन्तु किसीने उनकी

बात न सुनी। इसीसे १८२४ ई०को ब्रह्मदेशके साथ अंगरेजोंका युद्ध हुआ था। पीछे १८२६ ई०के सन्धि-सूत्रसे आराकान और तेनासारिम अंगरेजी राज्यमें मिला लिया गया।

आकायावमें जलपथसे ही वाणिज्य होता है। धान, सुपारी, पान, केला, सरसो, नारियल, नील और नाना-प्रकारकी सब्जी यहांसे दूसरी जगह भेजी जाती है।

आकाय (वे० त्रि०) स्थूलणीय, काय, पसन्दोदा।

आकार (सं० पु०) आ-क-घञ्। १ मूर्ति, सुरत। २ अवयव संस्थान विशेष, डीलडौल, बनावट। ३ हृदयगत भावज्ञापक मुखकी प्रसन्नता और विवर्णता, दिलका हाल बतानेवाले सुँहकी खुशी और बदरङ्गी। ४ रूप, हर्ष और दुःखसूचक देहकी चेष्टा, सुरत, खुशी और तकलीफ बतानेवाले जिस्मकी हालत। भावे घञ्। ५ हृदयगत भाव-ज्ञापन, मनोगत भाव प्रकाश, दिलके हालका ऊँह। ६ इङ्कित, निशान्। ७ सांख्यादि मतसिद्ध अमेद स्थानीय पदार्थ विशेष। सांख्यवादी कहता,—जैसे शरीरकी पुष्टिसे भोजन, मनुष्यकी भाषासे जन्मभूमि और संस्क्रमसे स्नेह, देसेही ज्ञानरूप आकारसे ज्ञेय वस्तुका अनुमान होता है। ८ आकार प्रचर, आ। आकारकरभ (सं० पु०) अकाराश्चक, अकरकरहा। (स्त्री०) आकारकरभा।

आकारगुप्ति (सं० स्त्री०) आकारस्य मनोमतभावस्य गुप्तिः गोपनम्, छिन्तत्। व्याज, मिथ्या हेतु, रत्यादि जनित मुखकी प्रसन्नता एवं भयजनित विषादादिका प्रकृत हेतु न बता अन्य हेतु द्वारा उसका गोपन, बहाना, सुरतका छिपाना।

आकारगोपन (सं० स्त्री०) आकारगुप्ति देखो।

आकारण (सं० स्त्री०) आ-क-णिच्-लुप्त णिच् लोपः। १ आह्वान, बुलावा। २ समराह्वान, ललकार। (अव्य०) ३ कारण पर्यन्त।

आकारणीय (सं० त्रि०) आह्वान किया जानेवाला, जो बोलाया जाता हो।

आकारिक (सं० त्रि०) आकारे कुशलम्, ठञ्। इङ्कितादिमें निपुण, इशारा करनेमें होशियार।

आकारित (सं० त्रि०) १ आहृत, बोलाया हुआ। २ प्रतिज्ञात, निरूपित। ३ याचा किया हुआ, मांगा गया। ४ ठहराया हुआ।

आकारी (हिं० वि०) आह्वान करने या बुलाने-वाला।

आकारीठ (हिं० पु०) संग्राम, युद्ध, लड़ायी।

आकाल (अव्य०) १ काल पर्यन्त (आङ्-सर्वांशमिबिधोः। पा ३।१।१२) इति अव्ययी०। २ पूर्वदिन निमित्तके जिस समयसे दूसरे दिनके उसी समयतक। जैसे, पूर्वदिन एक कालमें विद्युत्गर्जनके साथ साथ वर्षण और इधर उधर उल्कापात होनेसे दूसरे दिन उसी समयतक अनध्याय रहता है।

“निमित्तकालमारभ्य पर्युर्थावत् स एव कालसावदाकालम्।”

(आर्त)

जिस समयमें जिस कार्यका विधान है उसी समय तक। जैसे ब्राह्मणके उपनयनका काल सोलह वर्ष-तक है। यहां ‘आकालं ब्राह्मणं उपनयेत्’ प्रयोग किया जा सकता है। इतरभाषामें दुर्भिक्षकी भी अकाल कहते हैं।

आकालिक (सं० त्रि०) आकाले भव ठञ्। १ असा-मयिक। २ पूर्वदिन निमित्त पड़नेसे दूसरे दिन उसी समय तकका।

“निघांते भूमिचलने ज्योतिषाद्योपसर्जने।

एतानाकालिकान् विद्यदन्ध्यायावतावपि॥” (मनु ३।१०५)

‘निमित्तकालमारभ्य पर्युर्थावत् स एव कालसावदाकालं तव भवाः आकालिका।’ (आर्त) ३ असमय-जात, जो वेवक्त, पैदा हो। (स्त्री०) डीप, आकालिकी। ‘आकालिकी’ इष्टिमवेद्य गन्ता।’ (चूति) आशुविनाशिनी, जल्द मिट जानेवाली। विद्युत् शीघ्र ही विनाश हो जाती, इसलिये वह भी आकालिकी कहाती है।

आकालिकत्व (सं० स्त्री०) प्रस्तावसादृश्यका अभाव, चाञ्चल्य, वेफसली, वेमहली, नागहानी।

आकालिकप्रलय (सं० पु०) प्रलय विशेष, कपिलके शापसे असमयमें जगत्का धावन।

आकाश (सं०-पु०-स्त्री०) आ समन्तात् काशन्ते दीप्यन्ते सूर्योदयोऽत्र। आ-काश् दीप्तौ—(इति संज्ञा)

वः प्रविष्टः। पां ३।१।१८) इति घ प्रत्ययः। यथा न काशते
पृथिव्यादिवत् अपत्यत्वात् काश च न नान्दसी दीर्घः। (निघण्टु)

१ पञ्चभूतमें भूतविशेष, शून्य, आसमान्। साधारण
बोलचालमें हमलोग केवल ऊपरके शून्य स्थानको ही
आकाश कहते हैं। इसका अपभ्रंश 'आकास' शब्द
भी प्रचलित है। आकाश शब्दके पर्याय ये हैं,—
द्यौ, द्यौ, अन्न, अभ्र, व्योम, पुष्कर, अम्बर, नभः,
अन्तरीक्ष, गगन, अनन्त, सुरवर्त्म, ख, वियत्, विष्णु-
पद, विहाय, नाक, अनङ्ग, नभस, मेघवेश्म, महा-
विल, मरुद्वर्त्म, मेघवर्त्म, त्रिपिष्टप।

न्यायके मतसे यह नित्य, असोम, एवं अशरीरी
होता है। शब्द इसका विशेष गुण है। संख्या,
परिमाण, पृथक्त्व, संयोग एवं विभाग—ये पांच
आकाशके सामान्य गुण हैं। कर्ण इसका इन्द्रिय है।
आकाश एक होते भी उपाधि भेदसे नाना प्रकारका
है। जैसे घटाकाश, पटाकाश इत्यादि। वेदान्त-मतसे
आकाश जन्य पदार्थ है। २ परब्रह्म। ३ छिद्र। गणित-
शास्त्रमें आकाश शब्दसे शून्य समझा जाता है।

तैत्तिरीय-उपनिषत्के मतसे परब्रह्मसे पहले आकाश
उत्पन्न हुआ था। फिर आकाशसे वायुको उत्पत्ति
हुई। बादबिलमें भी लिखा, कि ईश्वरने पहले
आकाश बनाया था। आकाशका कर्म स्थान देना
है अर्थात् आकाशके अभावमें कुछ भी नहीं रह
सकता।

शब्दसमवायिकारणत्वको भी आकाश कहते
हैं। परन्तु इसपर प्रश्न हो सकता, अतीन्द्रिय
पदार्थ होनेसे इसकी सत्ताका क्या प्रमाण है? इस
सन्देहको दूर करनेके लिये शास्त्रकारोंने निम्न-
लिखित प्रमाणोंसे सत्ता बताई है—शब्द पृथिव्यादि
आठसे अतिरिक्त द्रव्यमें आश्रित है। क्योंकि आठ
द्रव्योंके आश्रित माननेपर समवायिकारणत्वसे जो
नहीं, वह नहीं हो रह जाता है। यद्यपि आकाश
अतीन्द्रिय होता, तथापि विलक्षण शब्दात्मक कार्य
अन्य किसी प्रकार उत्पन्न न हो सकनेसे इसे मानना
पड़ता है। "शब्दो गुणः चक्षुरप्यायौग्यवहिरिन्द्रियशक्त्यात्मिकत्वात्
अग्रतः" अर्थात् चक्षु इन्द्रियसे अघात एवं अशक्त समान

वहिरिन्द्रिय (त्वचादि)से आघात और जातिमत्त्व होनेसे
शब्दको गुण कहते हैं। गुण होनेसे संयोगकी तरह
शब्द द्रव्यसमवेत है। इस अनुमानसे शब्दका द्रव्य-
समवेतत्व सिद्ध होनेपर पृथिव्यादि आठ द्रव्यमें
शब्दाधिकरणत्वकी वाधासे शब्दाधिकरण गगनात्मक
नवम द्रव्य सिद्ध होता है। (न्यायसिद्धान्तसूत्रावली)

शाब्दिक 'नचनचक्रमव तिष्ठति' अर्थात् इसपर न चक्र
रहते हैं—कहकर निर्दिष्टवस्तुविषयमें पृथिव्यादिका
आधारत्व असम्भव होनेसे तदाधार यानी नचत्रादिके
आधारको ही आकाश बताते हैं। (लघुनञ्जुषा)

इसपर भर्तृहरिने भी कहा है—

"आधारशक्तिः प्रथमा सर्वसंयोगिनामयम्।

इदमवेति भावानामवाधानाच्च कल्पयते ॥ १ ॥

व्यपदेशकमाकाशनिमित्तं तु प्रचक्षते।

कालात् क्रिया विभज्यन्ते आकाशात् सर्वसूतयः ॥ २ ॥

एतावानेव भेदोऽयमभेदोपनिबन्धनः ॥" (वाक्यपदीय)

अर्थात् आकाश इसमें है था नहीं—इत्यादि भाव
एवं अभावादि संयोगियोंकी पहली आधारशक्ति तथा
व्यपदेशका निमित्त कहा जाता है। जैसे कालसे
क्रिया अलग की जाती, वैसे ही आकाशसे सब मूर्ति
विभक्त होती है।

सांख्य मतमें निष्क्रमणादि कर्मसे आकाश सिद्ध
होता है।

वेदान्ती भी इसीको समर्थन करते हैं—

"शब्दः श्रोत्रेन्द्रियं चापि हिद्राणि च विविक्तता।

विद्यतो दर्शिता एते गुणा गुणविचारिभिः ॥" (वाचस्पतिमिश्र)

यह शब्दगुणक, एक, विभु तथा नित्य है। लाघवसे
एक, सर्वत्र कार्योपलभ्यसे विभु और विभुसे नित्य
माना जाता है। आकाशमें ६ गुण रहते हैं—संख्या,
परममहत् परिमाण, एक पृथक्त्व, संयोग, विभाग,
शब्द।

आकाशकक्षा (सं० क्षी०) क्ष-तत्। (Horizon)
गगनान्तराल, क्षितिज, उष्क, आसमानसे लगा
हुआ जमीनका किनारा। ज्योतिःशास्त्रमें इसका
परिमाण १८७१२०६८२०६८२०००००००००० योजन
निश्चित किया गया है। चक्रवाल।

आकाशकल्प (सं० पु०) ईषदसमाप्तः आकाशः, आकाश (ईषदसमाप्तो कल्पदेशोयत्। पा ३।१।६०) इति कल्पप्रत्ययः। परब्रह्म। आकाशकी तरह निःसङ्ग, प्रधान एवं अविनश्यर होनेसे परब्रह्मको भी आकाशकल्प कहते हैं।

आकाशकुसुम (सं० स्त्री०) आकाशे उदितं कुसुमम्, शाक० तत्। १ खपुष्प, आसमानका फूल। २ असम्भव विषय, अनहोनी बात। आकाशमें फूल नहीं खिलता, अतएव “आकाशकुसुम” कहनेसे मिथ्या विषयका बोध होता है।

आकाशग (सं० त्रि०) आकाशमें चलनेवाला, जो आसमानमें घूमता हो।

आकाशगङ्गा (सं० स्त्री०) आकाशस्था गङ्गा, शाक० तत्। १ मन्दाकिनी, वियदगङ्गा, स्वर्णदौ, सुरदौर्घिका, आकाशनदौ प्रभृति शब्द भी इसी अर्थमें प्रयुक्त होते हैं। २ नक्षत्रमण्डल विशेष। यह आकाशमें उत्तर-दक्षिण विस्तृत है। इसमें अनेक छोटे-छोटे नक्षत्र रहते, जो आंखसे देख न पड़नेपर सफेद सड़क जैसे मालूम होते हैं। यह कहीं कम और कहीं ज्यादा चौड़ी है। आकाशगङ्गाकी शाखायें भी इधर-उधर फैल गयी हैं। ग्रामीण लोग इसे आकाश-जनेऊ, डहर या हाथीकी सूँड़ कहते हैं।

आकाशगर्भ (सं० पु०) बोधिसत्त्व विशेष।

आकाशगा (सं० स्त्री०) आकाशे गच्छति आकाश-गम-ङ-टाप्। स्वर्गगङ्गा।

आकाशगामिन् (त्रि०) आकाशे गन्तुं शीलमस्य, आकाश-गम शीलार्थे णिनि। आकाशगमनमें चम, शून्यचारी, आसमानमें फिरनेवाला।

आकाशचमस (सं० पु०) चन्द्र, चाँद।

आकाशचारिन्, आकाशगामिन् देखो।

आकाशचारी (सं० पु०) १ सूर्यादि ग्रह, आफताब वगैरह तारा। २ वायु, हवा। ३ पक्षी, चिड़िया।

४ देवता। ५ राक्षस। (त्रि०) आकाशगामिन् देखो।

आकाशचोटी (हिं० स्त्री०) आकाशकी शिखा, शीर्ष-विन्दु, बिलकुल शिरकी ऊपर पड़नेवाला कल्पित विन्दु।

आकाशज (सं० त्रि०) गगनजात, आसमानसे पैदा। आकाशजननिन् (सं० पु०) आकाशजननी देखो।

आकाशजननी (सं० स्त्री०) आकाशस्थां जननीव शुभप्रदानात्। छिद्रयुक्त प्रगण्डी, झरोका। दुर्गके भीतरी आदमियोंकी बाहरका काम देखाने और शत्रु-पर गोला प्रभृति मारनेके लिये दीवारमें छेद रहते हैं। ऐसे छेदवाली दीवारको प्रगण्डी कहते हैं। दुर्गसे बाहर शत्रुके आते स्वयं छिपे रहकर छेदोंसे आग्ने-यास्त्र आदि फेंकनेपर शत्रुका नाश होता, इसीसे इसका नाम आकाशजननी है। महाभारत शान्ति-पर्वके ६८वें अध्यायमें इसका विवरण लिखा है।

आकाशजल (सं० स्त्री०) १ वृष्टिका नीर, मेहका पानी। २ तुषार, ओस। मघा नक्षत्रमें जो पानी पड़ता, वह पात्रमें भरकर रख छोड़ा जाता और औषधमें व्यवहृत होता है।

आकाशदीप, आकाशप्रदीप देखो।

आकाशदीया (हिं०) आकाशप्रदीप देखो।

आकाशधुरी (हिं० स्त्री०) खगोलध्रुव, आसमानकी धुरी।

आकाशध्रुव (सं० पु०) आकाशधुरी देखो

आकाशनदौ, आकाशगङ्गा देखो।

आकाशनिद्रा (सं० स्त्री०) प्रशस्त स्थानका शयन, खुली जगहकी नींद।

आकाशनौम (हिं० स्त्री०) नौमके पेड़पर फेलने-वाली बेल, नौमका बाँदा।

आकाशपटल (सं० स्त्री०) अभ्रघातु, अबरक।

आकाशपुष्प, आकाशकुसुम देखो।

आकाशप्रतिष्ठित (सं० पु०) बुद्धविशेष, किसी बुद्धका नाम।

आकाशप्रदीप (सं० पु०) आकाशे सलक्ष्मीकविष्णो-स्तोषार्थं दीयमानः प्रदीपः शाक-तत्। आकाशदीया, आसमानो चिरायु। सौर कार्तिक मासमें प्रतिदिन उच्चस्थानपर जो प्रदीप जलावे, उसे आकाशप्रदीप कहते हैं।

हेमाद्रिधृत आदिपुराणमें आकाशप्रदीपका नियम इस तरह लिखा है,—गृहके निकट किसी प्रकार

की यज्ञीय लकड़ीका आदमीके बराबर एक स्तम्भ गाड़ें और उसमें यवाङ्गल तुल्य छेद करके दो हाथकी पट्टी लगाये। फिर चौकोन अष्टदलाकृति कर्णिकाके बीचमें दीप देना चाहिये।

आजकल आकाशप्रदीप देनेकी रीति दूसरी हो तरह प्रचलित है। गृहस्थ लोग घरके बाहर या भीतर एक बड़ा बांस गाड़, उसके सिरेपर लाल झण्डा उड़ा और अठपहलू लालटेनमें दीप जला देते हैं।

समस्त कार्तिक मास आकाशप्रदीप देनेका नियम है। कार्तिक मासके प्रथम दिनमें ब्राह्मण वृक्षकी पूजा करते हैं। इससे लक्ष्मीदामोदरकी ही पूजा होती है। पीछे सन्ध्या समय लालटेनको दीप रख और रखीसे खींचकर ऊपर चढ़ा देते हैं। प्रदीपमें तिलतैल अथवा घृतादि देनेका ही नियम है। आकाशप्रदीप देनेका मन्त्र यह है,—

“दामोदराय नमसि तुलायां लोलया सह।

प्रदीपं ते प्रयच्छामि नमोऽनन्ताय वेधसे ॥” (अपराकं)

कार्तिक मासमें लक्ष्मी सहित दामोदरको मैं आकाशमें यह प्रदीप देता हूँ। वेधा अनन्तको नमस्कार है।

इसका दूसरा मन्त्र भी देखनेमें आता है; यथा—

“निदेश धर्मोय इराय मूले दामोदरायाम्बुध धर्मराजे।

प्रजापतिमूल्य सत्पितृभ्यः प्रेतैभ्य एवाथ तमः स्थितेभ्यः ॥”

आकाशफल (सं० स्त्री०) सन्तान, औलाद, बाल-बच्चा।

आकाशबुद्बलघ (सं० पु०) नाव्य भाषामें—दर्शक-मण्डलीको देख न पड़नेवाले पदार्थपर टकटकीका बांधना।

आकाशवेल, अमरवेल्डिखी।

आकाशभाषित (सं० स्त्री०) भाष-भावे क्त, आकाशे भाषितम्, ७-तत्। १ देववाणी, जो बात देवता आकाशमें अदृश्य रूपसे रहकर कहता हो। २ नरादित, साक्षात् देववाणी सुन नहीं पड़ती। किन्तु कोई व्यक्ति अन्यको लक्ष्यकर जब किसी कामके होने या न होनेकी बात कहता, तब उसका फल मिल

जाता है। ३ अदृश्य भावसे कथन, प्रोशीदा तीरपर बोलना। नाव्यशालामें किसी देवताका वाक्य निकालते समय नट अदृश्य रहकर देववाणीकी तरह जो बात कहता, वही आकाशभाषित है। इसमें वक्ता वेपूछे आकाशकी ओर देख प्रश्नका उत्तर देने लगता, है। दर्शक यही समझता, मानो उससे कोई बात करता है।

आकाशमण्डल (सं० स्त्री०) आकाशो मण्डलमिव।

१ गगनमण्डल, हवाका कुरा। आकाशकी कोई आकृति वा इयत्ता नहीं, किन्तु मण्डलाकार वेष्टनके अभावमें भी गोल मालूम पड़ता है। इसीसे गगनको आकाशमण्डल कहते हैं। नभोमण्डल प्रभृति शब्द भी इस अर्थमें प्रयुक्त हो सकते हैं। २ तन्मोक्त भूतशक्तिके अन्तर्गत चिन्तनीय भ्रूमध्यसे परब्रह्म पर्यन्त अवस्थित वृत्ताकार स्वच्छ नभोमण्डल।

आकाशमय (सं० पु०) आकाश-मयत्। १ आकाश-तुल्य आत्मा, शतपथब्राह्मणमें लिखा,—आत्मा ही ब्रह्म एवं आत्मा ही विज्ञानमय, मनोमय, वाङ्मय, प्राणमय, चक्षुर्मय, श्रोत्रमय और पृथिवीमय हैं। फिर शतपथब्राह्मणके भाष्यकारने बताया, कि आत्मामें इस संसारका वह होना वास्तविक नहीं केवल उपाधि-विशिष्ट मात्र है।

आकाशमांसी (सं० स्त्री०) आकाशे जटा मांस इव यस्याः, शाक-बहुव्री०। जातित्वात् डीप्। सूक्ष्म जटामांसी, यह शीतल, शोफघ्न, व्रणनाड़ीघ्न, लूता-गर्दभजलादि रोगघ्न और वर्णकर होता है।

(राजानवष्ट्)

आकाशमुखी—शैव सम्प्रदाय विशेष। जो सन्न्यासी सदैव ऊर्ध्वमुख रहते उन्हें आकाशमुखी कहते हैं।

आकाशमूली (सं० स्त्री०) आकाशयते अभूमिवद्ध-तया प्रकाशयते, प्रकाश भावे घञ्-तश्चोक्तं मूलमस्याः, बहुव्री०। जलौषधि, कुम्भिका, पाना।

आकाशयान (सं० स्त्री०) आकाशे शून्ये जायते-इति, आकाश-या-लुपट्, ७-तत्। व्योमयान, हवायी जहाज, जे.पलिन।

आकाशरत्न (सं० पु०) आकाशे रत्नित, आकाश-

रक्ष-पिनि। दुर्गके वहिःस्थित प्राचीरपर खड़े हो रक्षा करनेवाला वीर, जो सिपाही किलेकी बाहरी दीवारपर डिफाजत रखता हो।

आकाशललित (सं० स्त्री०) आकाशस्य ललितम्।

आकाशसे पतितजल, आसमानसे गिरा हुआ पानी।

आकाशलोचन (सं० स्त्री०) मानमन्दिर, रसदगाह, अवजरवेटीरी। इस स्थानसे ग्रहोंकी स्थिति या गति देखते हैं।

आकाशवचन, आकाशभाषित देखो।

आकाशवत् (सं० त्रि०) आकाशः शून्यं अस्तरस्य गम्यत्वेन, आकाश-मत्तुप् मस्य वत्वम्। १ आकाश-गामी, आसमानमें चलनेवाला। २ विस्तृत, कुशादा, लम्बा-चौड़ा, आसमान-जैसा।

आकाशवर्त्मन् (सं० स्त्री०) आकाशे शून्यं वत्स पन्थाः, ७-तत्। शून्यमार्ग, आकाशपथ, आसमानी राह।

आकाशवल्ली, आकाशवल्ली देखो।

आकाशवस्त्रिका, आकाशवस्त्रिका देखो।

आकाशवल्ली (सं० स्त्री०) आकाशस्य वल्ली लतेव। आकाशवेल, अमरवेल। यह तिक्ता, पिच्छला, नेत्र-रोगघ्नी, अग्निवधनी, हृद्या और पित्तश्लेष्मासनाशिनी होती है। (भावप्रकाश) इसे मधुरा, कटु, पित्तघ्नी, शुक्रवृद्धिकरी, रसायनी और वल्या पाते हैं।

(राजनिघण्टु)

आकाशवाणी (सं० स्त्री०) आकाशभाषित देखो।

आकाशवायु (Atmosphere) वायुमण्डल, हवाका कुरा, जो वाष्पराशि पृथिवीको चारो ओरसे घेरे हुए है, उसे आकाशवायु कहते हैं। उद्भिद् एवं प्राणिके जीवन धारण करनेको आकाशवायु नितान्त आवश्यक है। इस वायु योगमें शब्द एक स्थानसे दूसरे स्थान जाता है। इसीसे सूर्यका उत्ताप लगता और रौद्रका रूपान्तर होता है। आकाशवायु रहनेसे गोधूलिके समय रोशनीके बाद धीरे-धीरे अन्धकार होता है। नहीं तो सूर्यास्त होनेके बाद एकदम अन्धकार छा जाता। इससे मरीचिका प्रकृति बहुत भौतिक दृश्य देखनेमें आते हैं।

मध्याकर्षणके निमित्त आकाशवायुका आकार ठीक अण्डे जैसा है। इसका सारा भार पृथिवीके ऊपर पड़ा है। अन्यान्य तरल वस्तुओंकी तरह इसमें भी भार डालनेकी क्रिया ठीक जलके तुल्य है। परन्तु इसकी भीतरी अवस्था और और तरल वस्तुओं जैसी नहीं है। आकाशवायुके परमाणु परस्पर प्रतिचिप्त हुआ करते हैं। सुतरां जिस परिमाणसे प्रतिचिपका जोर पड़चता, इसका भार भी उसी परिमाणसे अन्य अन्य तरल वस्तुओंसे पृथक् रहता है। इसलिये बाहरका जोर देखकर इसे और और तरल वस्तुओंके समान कहते हैं। अतएव समान आकारका जल और आकाशवायु लेनेसे बाहरके भारमें आकाश-वायुका ही अधिक परिवर्तन होता है, जलका नहीं। इसीसे ऊपरकी अपेक्षा पृथिवीके निकट वायुका जो तह रहता, वह अधिक घन है। कारण अधिक उंचाईपर चारो ओरसे अति अल्प परिमित वायुका भार पड़ता, इसीसे परमाणुका प्रतिचिप बल फैल जाता है।

तौलनेसे वायुका गुरुत्व स्पष्ट मालूम होता है। पहले वायुपूर्ण कांचका एक गोलपात्र तौल पीछे वायुनिष्काशन-यन्त्रसे उसकी हवा बाहर निकाल फिर तौलनेसे उतना भारी नहीं मालूम पड़ता। इसलिये जिस परिमाणसे भार कम पड़ जाता, वही वायुका गुरुत्व है। तापमान-यन्त्रमें ६०° और वायुमान-यन्त्रमें ३०° ताप होनेसे १०० घन इंच परिमित शुष्क वायुका वजन प्रायः ३१.०७४ ग्रैन होता है।

किसी चीजको डुबाकर रखनेसे उसकी चारो ओर जल दृष्ट जाता है। आर्किमिडिसने स्थिर किया, किसी चीजको डुबाकर रखनेसे उसकी चारो ओर जल जिस परिमाणसे दृष्टता, ठीक उसी जलके परिमाण चीजका वजन कम पड़ता है। वायुके सम्बन्धमें भी ठीक यही नियम देखा जाता है। इसकी परीक्षा अति सहज ही हो सकती है। किसी छोटी तराजू में डण्डीकी एक और वायुपूर्ण कांचके पात्रको मुंह बन्द करके लटका और दूसरी ओर

उतने ही वजनका बांट चढ़ा दे। फिर तराजू को वायुनिष्काशन-यन्त्रमें रखकर सब हवा बाहर निकाल देनेसे जिधर भारी चीज, रहेगी, अधिक भारके कारण तराजू की डण्डी भी उधर ही झुक जायगी।

आकाशवायुकी आकृति अण्डके समान होती है। केन्द्रके निकट पृथिवीके दोनों प्रान्त पतले और दबे हुए तथा मध्यस्थल ऊँचा है। यह भली भाँति निश्चित नहीं हुआ, शून्यमें कहाँतक आकाशवायु है। अनेकोंको अनुमान होता, कि ५० से १०० कोस तक यह वायु रह सकता है।

वायुमें भार होना इसका एक विशेष गुण है। जलकी कलमें यह गुण साफ़ मालूम पड़ता है। नलके भीतर डण्डी अच्छीतरह सटी रहनेपर बगलसे हवा आ जा नहीं सकती। डण्डीको खींच कर ऊपर उठा लेनेसे भीतर खाली हों जाता है। उस समय नलके बाहर जल उठ आनेसे उसपर वायु-स्तम्भका भार पड़ता, सुतरां वायुके गुरुत्वसे वह ऊपरकी ओर चढ़ता है। नलकी डण्डी प्रायः १४ फीट उठ आनेपर जल ऊपरकी ओर झपटकर दौड़ता है। इससे साफ़ ही मालूम पड़ता, किसी वायुस्तम्भका वजन ठीक वैसे ही चक्राकार और १४ फीट ऊँचे जलस्तम्भके समान है।

जलकी अपेक्षा पारा १३.६ गुण भारी है। पारद-स्तम्भकी एक ओर वायुका भार न पड़ने और दूसरी ओर लग जानेसे जलस्तम्भकी अपेक्षा इसकी उंचाई १३.६ गुण कम होती, अर्थात् प्रायः ३० इंच रहती है।

रासायनिक परीक्षा द्वारा निश्चित हुआ, कि १०० ग्रैन शुष्क वायुमें यह सकल पदार्थ विद्यमान है—यवचार ७६.८४, अक्सीजन २३.१० और चाराम्ब ०.०६ ग्रैन।

आकाशवृत्ति (सं० स्त्री०) सन्दिग्ध जीवनसाधन, गैरमुक्तर माश, जो कमायी बंधी न हो।

आकाशवृत्तिक (सं० त्रि०) १ सन्दिग्धप्राप्तिवाला, जो मुक्तर माश रखता न हो। २ आकाशके जलपर आश्रित, जिसे सिवा मेहके दूसरा पानी न मिले।

आकाशसलिल (सं० स्त्री०) आन्तरिक जल, वर्षा-दक, मेहका पानी। यह रुच्य, दीपन, पथ्यद, टण्णा-नाशक, अमघ्न और मेहघ्न होता है। किन्तु सद्य आकाशसलिल कलुष एवं दोषदायक है। (रात्रनिषिद्ध)

आकाशस्थ (सं० त्रि०) गगनस्थायी, हवायी, आस-मानमें रहनेवाला।

आकाशस्फटिक (सं० पु०) आकाशस्थ स्फटिक इव। स्फटिक विशेष, किसी किसका बिलोरी पत्थर। कहा जाता, कि यह आकाशमें उत्पन्न और सूर्यकान्त एवं चन्द्रकान्त भेदसे दो प्रकारका होता है।

आकाशानन्धायतन (सं० स्त्री०) १ असीमताका स्थान, ला-इन्तिहायीका मुकाम। २ बौद्ध जगत् विशेष।

आकाशास्तिकाय (सं० पु०) कमधा०। जैन-मतसिद्ध जीव एवं आवरणभिन्न पदार्थ विशेष, जैनोंके छः पदार्थोंमें एक। इसका कोयी रूप नहीं रहता। लोक तथा अलोक दोनो स्थानोंमें यह विद्यमान है। जीव एवं पुद्गल इसीके मध्य अवकाश पाता है।

आकाशी (हिं० स्त्री०) १ चांदनी। यह धूप वगै-रह बचानेके लिये तनती है। (वि०) २ आसमानो।

आकाशीय (सं० त्रि०) आकाशस्येदम्। आकाश-सम्बन्धी, हवायी।

आकाशीय (सं० पु०) १ आकाशके ईश, इन्द्र। २ धर्मशास्त्रानुसार—निराश्रय व्यक्ति, वैकस शख्स। बच्चे, औरत, गरीब और बीमारकी तरह सिवा हवाके दूसरी चीज पर कब्जा न रखनेवालेको आकाशीय कहते हैं।

आकाश्य, आकाश देखो।

आकिञ्चन, आकिञ्चन देखो।

आकिञ्चन्य (सं० स्त्री०) आकिञ्चनस्य भावः अञ्। दरिद्रता, गुरुवत, गरीबी।

आकिदन्ति (सं० पु०) १ देशविशेष, एक मुल्क।

२ एतद्देशवासी, इसी देशका रहनेवाला। (पा ३।१।१६)

आकिल (अ० वि०) अक्लमन्द, बुद्धिमान्, समझदार।

आकीर्ण (सं० त्रि०) व्याप्त, विक्षिप्त, मामूर, फैला

आकीम् (वै० अव्य०) आ-कन् बाहु० डोमि ।
 १ वर्जन, रोकटोक । २ वितर्क, मुवाहसा ।
 आकुञ्चन (सं० क्ली०) आ कुचि-लुगट् । १ सङ्कोचन,
 इनकिबाज, दबाव । २ सञ्चय, इकट्ठा करना । ३ वक्रता,
 टेढ़ापन । ४ वेरूप्य, मरोड । वैशेषिक इसे पांच
 प्रकारके कर्मोंमें एक कर्म मानते हैं ।
 आकुञ्चनीय (सं० त्रि०) आकुञ्चनशील, सिकुड़ने
 लायक, सिमट जानेवाला ।
 आकुञ्चित (सं० त्रि०) आ-कुचि-क्त । १ सङ्कुचित
 सिकुड़ा या सिमटा हुआ । २ अभुग्न, टेढ़ा ।
 आकुटीहिंसा (हिं० स्त्री०) हिंसित कर्म, जोशके
 साथ तकलीफ़ दिह कामका करना ।
 आकुण्ठन (सं० क्ली०) १ गुठला जानेकी हालत,
 कुन्द पड़नेकी बात । २ लज्जा, शर्म ।
 आकुण्ठित (सं० त्रि०) १ कुन्द, गुठला, जो चलता
 न हो । २ लज्जित, शर्मिन्दा ।
 आकुर्वती (सं० स्त्री०) पर्वत विशेष । (रामायण)
 आकुल (सं० त्रि०) आ-कुल-क । १ व्यथ, घबराया
 हुआ । २ अनियमित, बेतरतीब । ३ विह्वल, आपसे
 बाहर । ४ प्रतिकूल, सुखालिप्त । ५ व्याप्त, मामूर,
 भरा हुआ । उद्दिग्ग, निराकुल, पर्याकुल, व्याकुल
 और समाकुल शब्द भी उपरोक्त अर्थमें आ सकते हैं ।
 (क्ली०) ६ निवासित स्थान, जिस जगहमें लोग रहें ।
 (पु०) ७ अश्वमेद, किसी किन्नका घोड़ा ।
 आकुलकृत् (सं० स्त्री०) अककर्ता, अकरकरहा ।
 आकुलता (सं० स्त्री०) आकुल देखो ।
 आकुलत्व (सं० क्ली०) १ सञ्चय, समुदाय, सम्बार,
 ढेर । २ व्याकुलता, मोह, घबराहट ।
 आकुला (सं० स्त्री०) तप्तापक्व गोधूमादि, गर्म
 और कच्चा गेहूं वगैरह । तप्त एवं अपक्व गोधूमको
 आकुला कहते हैं । यह गुरु, वृथ, मधुर और बल-
 कारी होती है । (राजनिषध्) ।
 आकुलाकुल (सं० त्रि०) आकुल प्रकारे द्विर्भावः ।
 अत्यन्त आकुल, निहायत परेशान् ।
 आकुलि (सं० पु०) आ-कुल-इन् । १ असुर पुरो-
 हित विशेष । २ व्याकुलत्व, परेशानी ।

आकुलित (सं० त्रि०) आ-कुल-क्त । १ व्याकुली-
 भूत, घबराया हुआ । २ क्षुब्ध, परेशान् । ३ दुःखित,
 आपतजदा, सुसीबतमें पड़ा हुआ ।
 आकुलीकृत (सं० त्रि०) अनाकुलं आकुलं कृतं
 आकुलं अभूततद्भावे चि क्त कर्मणि क्त । व्याकुलता-
 प्रापित, जो परेशान् किया गया हो ।
 आकुलीभूत (सं० त्रि०) अनाकुलं स्वयमाकुलं भूतम्,
 आकुल-चि-भू-क्त । आप ही आकुल होनेवाला, जो
 खुद-ब-खुद घबरा गया हो ।
 आकुलेन्द्रिय (सं० त्रि०) क्लान्तचित्त, दिलमें घब-
 राया हुआ ।
 आकुष्ट (सं० त्रि०) निष्कासित, निकाला हुआ ।
 आकूणित (सं० त्रि०) आ-कूण-क्त । ईषत् सङ्कुचित,
 कुछ सिकुड़ा हुआ ।
 आकूत (सं० क्ली०) आ-कू भावे क्त । १ आश्रय,
 मानी, मतलब, इरादा । २ अभिप्राय, इच्छा,
 खाहिश ।
 आकूति (सं० स्त्री०) आ-कू-भावे-क्तिन् । १ अभिप्राय,
 मतलब । संज्ञायां क्तिन् । २ स्थायश्रुव मनुद्वारा निज
 शतरूपा नाम्नी पक्षीसे उत्पादित कन्याविशेष । भाग-
 वतके तृतीय स्कन्धमें आकूतिकी उत्पत्तिकी कथा यों
 लिखी है,—ब्रह्माका शरीर पहिले दो भागोंमें विभक्त
 हुआ था । उसका एक भाग पुरुष और दूसरा
 स्त्री बना । उसमें पुरुषका स्थायश्रुव मनु और स्त्रीका
 नाम शतरूपा पड़ा था । स्थायश्रुव मनुने शतरूपাকে
 गर्भसे पांच सन्तान उत्पन्न किये । उनमें दो पुत्र
 और तीन कन्या थीं । पुत्रोंके प्रियव्रत एवं उत्तानपाद
 और कन्यायोंके नाम आकूति, देवङ्गति, और प्रसूति
 रहे । पीछे स्थायश्रुव मनुने ही आकूतिका विवाह
 रुचिके साथ कर दिया ।
 आकूतिप्र (वै० त्रि०) अपनी इच्छा पूर्ण करनेवाला,
 जो अपनी खाहिशकी पूरा करता हो । (पद्मवं स० १२४२)
 आकूती (हिं०) आकूति देखो ।
 आकृत (वै० त्रि०) १ निकट आनीत, नज़दीक
 लाया हुआ । २ समीपस्थ, पास रहनेवाला ।
 आकृति (सं० स्त्री०) आ-कृति-व्यव्यते जातिरनय-

आ-कृ करणे क्तिन् । १ शरीर, जिम्मा । २ आकार, शक्त । ३ लक्षण, निशान । ४ व्यवहार, चालचलन । ५ जाति, कौम । ६ छन्दोविशेष । इसमें बायीस-बायीस अक्षरके चार पद होते हैं । ७ अवयव संस्थान विशेष, बनावट । तर्कशास्त्रके मतमें जातिलिङ्गको आकृति कहते हैं । जिससे जाति और जातिलिङ्ग जाना जाता, वही आकृति है । जैसे गौमे गोत्वादि जाति एवं शास्त्रादि संस्थानविशेष लिङ्ग है । यह जीव तथा उसके अवयवोंके नियत एवं व्यूह (तर्क)से अनेक प्रकारकी होती है । (वात्स्यायनभाष्य २।२।७०)

आकृतिगण (सं० पु०) आकृती आकारे प्रसिद्धो गणः, आकृ-तत् । आदर्शसूची, नमूनेकी फेरिस्त । यह व्याकरणके नियम विशेषसे सम्बन्ध रखता है । इसमें प्रत्येक शब्द नहीं, केवल आदर्श प्रकाशित होता है ।

आकृतिच्छत्रा (सं० स्त्री०) आकृतिं छादयति, छद स्त्रायै णिच्, ड्रन् ड्रस्त्रः णिच् लोपः टाप्, ३-तत् । १ जलौषधि, पाना । २ घोषातकी लता, लटजीरा ।

आकृतिमत् (सं० त्रि०) आकारयुक्त, स्मृतवाला ।

आकृष्ट (सं० त्रि०) आ-कृष-क्त । आकर्षणयुक्त, खींचा हुआ ।

आकृष्टमानस (सं० त्रि०) भ्रान्तचित्त, दिलमें घबराया हुआ ।

आकृष्टवत् (सं० त्रि०) १ आकर्षक, खींचनेवाला । २ सम्मोहक, फरेफता करनेवाला ।

आकृष्टि (सं० स्त्री०) आ-कृष-क्तिन् । आकर्षण, कशिश, खेंचतान ।

आकृष्टिमन्त्र (सं० पु०) आकर्षणका मन्त्र, दूसरे शब्दसको खींच लानेवाला अफसून् ।

आकृष्य (सं० अव्य०) आकर्षण करके, खींचके ।

आकृष्यमाण (सं० त्रि०) आकर्षण किया जानेवाला, जो खींचा जा रहा हो ।

आके (वै० त्रि०) आङ्, क्रामते, (बलाकादयश्च । एवं, ३।१४) आके प्रत्यये धातोर्लोपश्च निपात्यते । १ अर्वाकगन्ता, पीछे चलनेवाला । (अव्य०)

२ अन्तिक, निकट, नजदीक, पास, पड़ोसमें ।

आकेकरा (वै० स्त्री०) आके निकटे करो यस्याः । १ वक्राक्षि, कैंची आंख । २ निकटकी दृष्टि, पासकी नजर । नेत्रका विशेषण बननेसे यह शब्द स्त्रीवल्लिङ्ग होता है ।

आकेनिप (वै० त्रि०) आके निकटे निपतति, आ-के-नि-पत-ड । १ निकट पतित होनेवाला, निकट-गामी, पाससे गुजरनेवाला, जो नजदीक गिर रहा हो । के आत्मनि पन्ति अध्यात्मज्ञाने पतन्त इत्यर्थः । २ मेधावी, अक्लमन्द ।

आकौशल (सं० स्त्री०) अकुशलस्य भावः, अकुशल-अण्, द्विपदद्विः पूर्वस्य वा । अपाटव, अपटुता, नावाकिफ़ी, बेहज़मपन ।

आकृ (सं० त्रि०) आनमित, प्रवण, खमोदा, खमदार, मुड़ा हुआ ।

आक्रन्द (सं० पु०) आ-क्रन्द-घञ् । १ चीत्कार-पूर्वक रोदन, चिन्ताहटकी रलायी । २ आह्वान, पुकार, बुलावा । ३ शब्द, आवाज़ । आक्रन्द्यते आह्वयते, आ-क्रन्द कर्मणि घञ् । ४ मित्र, दोस्त । ५ भ्राता, भायी । आक्रन्द्यते परस्परं स्पर्धया आह्वयते यत्र, आधारे घञ् । ६ दारुण युद्ध, घमासान लड़ायी । ७ दुःखियोंका रोदनस्थान, अफसुर्दोंके रोनेकी जगह । आक्रन्दति अच् । ८ समीपस्थ राजाके पीछेका नरेश । ९ युद्धध्वनि, ललकार । १० राजा । ११ प्राबल्य, जोर । १२ बलापहारी, गासिब, दबा बैठनेवाला शख्स । १३ ग्रहबल । युद्धकी जिस अवस्थामें एक ग्रह दूसरेसे बलवान् निकलता, उसे आक्रन्द कहते हैं ।

आक्रन्दन (सं० स्त्री०) आ-क्रन्द-ल्युट् । १ चीत्कार-पूर्वक रोदन, चिन्ताहटकी रलायी । २ आह्वान, पुकार ।

आक्रन्दिक (सं० त्रि०) आक्रन्दे रोदनस्थाने गच्छति, आक्रन्द-टक् ठञ् वा । दुःखीके रोदनस्थानको जाने-वाला, जो अफसुर्दोंके रोनेकी जगहको जाता हो । (स्त्री०) आक्रन्दिका ; रोदनस्थानगन्त्री स्त्री ।

आक्रन्दित (सं० स्त्री०) आ-क्रन्द भावे क्त । १ क्रन्दन, चिन्ताहट । २ रोदन, रलायी । (त्रि०) ३ क्रन्दन-

करनेवाला, जो चिन्ता रहा हो। ४ आमन्त्रित, प्राथित, बुलाया हुआ।

आक्रान्तिन् (सं० त्रि०) आक्रन्दति, आ-क्रन्द-णिनि। १ रोदनपूर्वक आह्वानकर्ता, रो-रोके बुलानेवाला। २ कलकल करनेवाला, जो चीख या चिन्ता रहा हो।

आक्रम (सं० पु०) आ-क्रम-घञ् न वृद्धिः। १ समीप गमन, उपस्थिति, प्राप्ति, रसायी, हासिल, पहुँच। २ अवस्कन्द, आपात, हमला, धावा। ३ अतिभारारोपण, ज्यादा लादनेकी बात। ४ शक्ति, बल, ताकत, ज़ोम।

आक्रमण (सं० क्ली०) आ-क्रम-ल्युट्। १ अवस्कन्द, हमला। २ दमन, निग्रह, दबाव। ३ प्रसारण, फैलाव। ४ अग्रगमन, बढ़ाबढ़ी। आक्रम्यते पर-लोकोऽनेन करणे घञ्। ५ परलोकप्राप्तिसाधन विद्याकर्मादि। आक्रमति अभिभवति क्षुधाम्, आ-क्रम-अच्। ६ अन्न, अनाज। (वै० त्रि०) ७ निकट उपस्थित होनेवाला, जो नज़दीक आ रहा हो।

आक्रमणीय (सं० त्रि०) १ निकट उपस्थित होने योग्य, जिसके पास जायें। २ आपात पाने योग्य, जिसपर हमला पड़े। ३ आरोहण क्रिया जानेवाला, जो दबाने लायक हो।

आक्रमित (सं० त्रि०) आपात किया हुआ, जिस-पर हमला पड़ा हो।

आक्रमिता (सं० स्त्री०) प्रौढ़ा नायिकामेद। यह अपने नायकको सर्वप्रकार वश कर लेती है।

आक्रम्य (सं० अव्य०) आक्रमण करके, हमला मारकर। (त्रि०) आक्रमणीय देखो।

आक्रान्त (सं० त्रि०) आ-क्रम-क्त। १ अधिष्ठित, नज़दीक पहुँचा हुआ। २ पराभूत, हारा हुआ। ३ प्राप्त, पाया हुआ। ४ अधिस्तुत, जो कब्ज़ेमें आ चुका हो। ५ अवस्कन्दित, हमला खाये हुआ। ६ अधःस्तुत, जो नीचा देख चुका हो। ७ परि-वृत, घिरा हुआ। ८ विह्वल, घबराया हुआ। ९ पीड़ित, तकलीफ़ पाये हुआ। १० व्याप्त, भरा हुआ।

आक्रान्तमति (सं० त्रि०) १ मनसा पराभूत, दिलसे

हारा हुआ। २ अवगाढ़-हृदय, जो दिलपर धक्का खा चुका हो।

आक्रान्ति (सं० स्त्री०) आ-क्रम-क्तिन्। १ आक्रमण, हमला। २ उत्थान, चढ़ाई। ३ पराभव, हार। ४ बल, ताकत।

आक्राय (वै० पु०) आपणिक, दुकानदार।

आक्रामक (सं० त्रि०) उपप्लवी, गनीम, चढ़ आने-वाला। (स्त्री०) आक्रामिका।

आक्रोड़ (सं० पु०) आक्रोद्यतेऽत्र, आ-क्रोड़-घञ्। १ क्रोड़ास्थान, खेलकी जगह। २ उद्यानादि, बाग़ वगैरह। 'पुमानाक्रोड़ उद्यानं राज्ञः साधारणं वनम्।' (अमर) ३ क्रोड़ा, खेलकूद। ४ कल्याणके किसी पुत्रका नाम। (त्रि०) आक्रोड़ति, आ-क्रोड़ कर्तरि अच्। ५ विहारशील, खिलाड़ी।

आक्रोड़न (सं० क्ली०) विहार, विलास, खेल, दमनाश।

आक्रोड़िन् (सं० त्रि०) आ-क्रोड़-घिणुन्। क्रोड़ा-शील, खिलाड़ी। (स्त्री०) आक्रोड़िनी।

आक्रुष्ट (सं० त्रि०) आक्रुश्यते अ आ-क्रुश-क्त। १ निन्दित, तिरस्कृत, घुड़का हुआ। २ शब्दित, चिन्ताया हुआ। ३ अपवादित, गाली खाये हुआ। ४ शप्त, कोसा हुआ। (क्ली०) ५ आह्वान, पुकार।

आक्रोश (सं० पु०) आ-क्रुश-घञ्। १ शाप, बद-दुवा। २ निन्दा, हिकारत। ३ अपवाद, गाली। ४ आह्वान, पुकार।

आक्रोशक (सं० त्रि०) आक्रोशति, आ-क्रुश-बुञ्। आक्रोशकर्ता, कोसनेवाला।

आक्रोशन (सं० क्ली०) आक्रोश देखो।

आक्रोशनीय (सं० त्रि०) आक्रोश देने योग्य, कोसने काबिल।

आक्रोशपरिषद् (सं० पु०) आक्रोशका सहन, गालीकी बरदाश्त। जैन-मतमें २२ परिषद् (दुःखोंका सहन) मुनिके लिये धारणीय बतलाया है। उनमें १२ वां परिषद् आक्रोश-परिषद् है। तौत्र मोहनीय कर्मके उदयसे मिथ्यादृष्टि धार्य स्वेच्छ, दुष्ट, पापाचारी, उन्मत्त, गर्विष्ठ प्रभृति मनुष्यों द्वारा

कहे गये क्रोधरूपी अग्निको प्रज्वलित करने और हृदयमें शूलके समान लगनेवाले कठोर वचनोंको यद्यपि मुनिलोग सुनते हैं, तो भी परिणाममें कलुषित नहीं होते। वे यह सोचकर क्षमाभाव धारण करते हैं कि,—‘इनके अज्ञान है, हमारे देखनेसे इनके दुःख उपजा है। इसलिये ये विचारे ऐसे वचन कह रहे हैं। इनका कुछ भी अपराध नहीं, हमारे ही अशुभ-कर्मका उदय है।’

आक्रोशित (सं० त्रि०) शापित, कोसा हुआ।

आक्रोशितव्य, आक्रोशनीय देखो।

आक्रोश्य, आक्रोशनीय देखो।

आक्रोष्ट (सं० पु०) १ आक्रोशकर्ता, कोसनेवाला।

२ आक्षानकर्ता, पुकारनेवाला।

आक्षान्त (सं० त्रि०) लगा, भरा या लिपटा हुआ।

आक्षिप्त (सं० त्रि०) १ आर्द्र, तर, जो सूखा न हो। २ कोमल, मुलायम, जो सख्त न हो।

आक्षेद (सं० पु०) आ-क्षिद-घञ्। आर्द्रभाव, तरी, छिड़काव।

आक्षेदिभाव (सं० पु०) आर्द्रकारित्वके गुणका हेतु।

आक्षय्यतिक (सं० स्त्री०) अक्षय्यतेन निवृत्तम्, ठक्। द्यत खेलनेमें उत्पन्न हुआ वैर, जुवेका भगड़ा।

आक्षपण (सं० स्त्री०) उपवास, अनाहार, फाका-कशी।

आक्षपाटिक (सं० पु०) अक्षपाटे क्रीडास्थाने विचार-स्थाने वा नियुक्तः। १ अक्षक्रीडाध्यक्ष, जुवेके खेलका मालिक। २ विचाराध्यक्ष, मुनसिफ्। ३ प्राड्विवाक, राजाका प्रतिनिधि विचारक।

आक्षपाद (सं० त्रि०) अक्षपादस्य गौतमस्येदम्, अक्षपाद-अण्। १ गौतम मुनिका मत। अक्षपादे-नोक्तम्, अण्। २ गौतम मुनिका बनाया हुआ शास्त्र, गौतमसूत्र। यह शास्त्र पांच अध्यायमें समाप्त हुआ है। इसमें प्रमाण प्रमेय आदि षोडश तत्त्व वर्णित हैं। अक्षपाद प्रणीतं वेत्ति, अण्। ३ न्यायशास्त्रज्ञ, नैयायिक, मन्तिकी, मन्तिकदान्।

आक्षाण (वै० त्रि०) व्याप्यमान, फैला हुआ।

“आक्षाणे यर वलिवः।” अक् १०।२३।१।

आचार (सं० पु०) आ-चर-णिच्-घञ्, णिच् लोपः। पुरुषपर अगम्यागमन अथवा स्त्रीपर अगम्य गमनका दोषारोप, तोड़मत, इलजाम।

आचारण (सं० स्त्री०) आचार देखो।

(स्त्री०) आचारणा।

आचारित (सं० त्रि०) आ-चर-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ अगम्य स्त्री-पुरुष विषयक अपवाद द्वारा दूषित, छिनाला करनेका सुलजिम। २ कलङ्कित, भूठ-भूठका सुलजिम। ३ अपराधी, गुनहगार। ४ निन्दित, गाली खाये हुआ।

आचिक (सं० त्रि०) अचैः दीव्यति जयति जितं वा, अच-ठक्। १ द्यूतसम्बन्धीय, जुवेके मुताजिक। २ अच द्वारा जीतनेवाला, जो पासेसे जीत लेता हो। ३ अच द्वारा जित, पासेसे जीता हुआ। (स्त्री०) द्यूतकृष्ण, जुवेमें खोया हुआ रुपया। (पु०) ४ आच्छुक्कच, आलका पेड़।

आचिकपण (सं० पु०) ग्लह, बाजी, दाव, होड़।

आचिकशीघ्र (सं० पु०) विभीतक और गुड़से बना धातकीपुष्पका मद्य, किसी किस्मकी शराब। यह पाण्डुरोगघ्न, बल्य, संग्राहक, लघु, कषाय, मधुर, शीघ्र, पित्तघ्न और अमृक्प्रसादन होता है। (संस्कृत)

आचिकी (सं० स्त्री०) विभीतक-त्वक् और शालि-तण्डुलसे बनी हुई सुरा, किसी किस्मकी शराब। यह पाण्डु, शोफ, अर्श, पित्त, अम्ल, कफ तथा कुष्ठको दूर करती, रुच, दीपन, रेचन एवं लघु होती और कुछ वात बढ़ाती है। (मदनपाल) कोई-कोई तिनिशकी सुराको भी आचिकी कहते हैं।

आचित् (सं० त्रि०) आ-चि-क्षिप्-तुक्। आवर्तमान, वापिस आनेवाला।

आचिपत् (सं० त्रि०) १ फेंकने, मारने या उछालने-वाला। २ अपशब्द कहने या गाली देनेवाला। ३ लज्जित करने या शरमानेवाला। (स्त्री०) आचि-पती, आचिपन्ती।

आचिस (सं० त्रि०) आ-चिप्-क्त। १ फेंका या उछाला हुआ। २ गिराया या दूर किया हुआ।

आचिस (सं० त्रि०) आ-चिप्-क्त। १ फेंका या उछाला हुआ। २ गिराया या दूर किया हुआ। ३ आलस्य, लाया या पड़चाया

हुआ। ५ निन्दित, झिड़का हुआ। ७ सदृश, बराबर।

आक्षिप्तिका (सं० स्त्री०) गीत विशेष, किसी किस्मका गाना। इसे रङ्गमञ्चपर पङ्कचनेवाला पात्र गाकर सुनाता है।

आक्षिप्य (सं० अव्य०) अपमान करके, झिड़की देकर।

आक्षीव (सं० पु०) आ-क्षीव-णिच्-अच्, णिच् लोपः।

१ शोभनाञ्जन वृक्ष, सहिजन। (त्रि०) क्षीव-क्त, निपा० क्तस्य अ, क्षीवो मत्तः आ-ईषत् सम्यग्वा, प्रादि समा०। २ अल्प उन्नत, किसी कदर मतवाला। ३ सम्यक् उन्नत, खूब मतवाला।

आक्षेप (सं० पु०) आ-क्षिप-घञ्। १ भर्त्सन, झिड़की। २ अपवाद, गाली। ३ आकर्षण, कशिश। ४ धनादि अमानत रखना। ५ अर्थालङ्कार विशेष।

“वस्तुनो वक्तुमिष्टस्य विशेष प्रतिपत्तये।

निषेधाभास आक्षेपो वक्ष्यमाणोक्त गोविधा ॥”

(साहित्यदर्पण)

बोलनेके लिये ईप्सित विषयकी विशेष प्रतिपत्तिके निमित्त (वेलचक्ष्य देखानेके लिये) जो निषेधाभास होता, उसीका नाम आक्षेप है। वक्ष्यमाण विषयके किसी स्थलमें सामान्य प्रकारसे सब विषयोंकी निषेध-उक्ति रहती, फिर किसी अंशान्तरमें निषेध होता है। इससे पहले यही दो भेद किये गये हैं। इनके सिवा और भी दो भेद हैं, यथा,—उक्त विषयके किसी स्थलमें वस्तुरूप और किसी स्थलमें वस्तुकथनका निषेध। अतएव दोनोंमें दो दो करके आक्षेपके चार भेद होते हैं, यथा,

“अरशरशतविधुराया भणामि सख्याः कृते किमपि।

अणमिह क्षिप्रस्य सखे निर्दयहृदयस्य किं वदाम्यथा ॥”

हे सखे ! तुम यहां कुछ देरतक विश्राम करो ; कामके सैकड़ों वाणोंसे कातर सखीके लिये तुमसे कुछ कहना है। अथवा तुम निर्दयहृदय हो, तुमसे और क्या कहूं।

यह नायकके निकट विरहिणीकी प्रिय सखी कहती है। इस श्लोकमें ‘कामके सैकड़ों वाणोंसे कातर’

एवं ‘निर्दयहृदय’ वाक्य द्वारा सामान्यतः सूचित सखी विरहके वक्ष्यमाण विशेष विषयपर ‘ऐसे विरहमें मरणकी ही सम्भावना है’ कहनेको सोचकर पीछे बोली,—‘क्या कहूं’। यहां नहीं कहूंगी, यह वक्ष्यमाण विशेषका निषेध हो गया। उल्लिखित न होनेपर भी इस बातका भाव समझा जाता है। इसीका नाम निषेधाभास है।

“तव विरहे हरिणाची निरीचा नवमालिकां विदधितां।

हन्त नितान्तमिदानीमाः किं हतजल्पितैरथवा ॥”

यह किसी विरहिणीके नायकसे दूती कहती है। हरिणाची (तुम्हारी नायिका) तुम्हारे विरहमें नवमालिका पुष्पको विकसित देखकर इस समय नितान्त ही खेद और सन्तापका विषय हो गई है, अथवा जो बात कही नहीं जा सकती, उससे और प्रयोजन ही क्या।

इस श्लोकमें, “वह अब जीवित न रहेगी” यह छिपा अंश ही निषेधाभास है। अप्रिय वाक्य प्रयोगके निन्दाहेतु यह वाक्य सुझत्का अनिष्टजनक है। निकटमें कहा जा न सकनेसे यही वस्तुका विशय है।

बालकणाहं दूती तुषपिभोसिचिचणमहवावरो।

सामरदतुज्जम्भसोवधं धन्यकथरं भणितः ॥ (प्रा० क०)

बालक नाहं दूती तस्याः प्रियोऽसीतिनमस्यापारः।

सां वियते तवायथ एवं धर्माचरं भणामः ॥ (सं० क०)

नायिकाकी भेजो हुई दूती नायकसे कहती है,— हे बालक। मैं दूती नहीं हूं अर्थात् दूतियां जिस तरह नाना मिथ्या प्रवचन वाक्य कहती हैं, मैं वैसी नहीं हूं। नायिकाका प्रिय बना मेरा काम नहीं है। परन्तु उसका मरणान्त क्लेश उठाना तुम्हारे लिये अपयशकी बात है, इसीसे यह धर्मवाक्य तुमसे कहती हूं।

यहां—‘मैं दूती नहीं हूं’ इस उक्त वाक्यका ही निषेधाभास होता है।

विरहे तव तन्वङ्गी कथं चपयतु चपाम्।

दादणव्यवसायस्य पुरतो भणितेन क्षिप्तम् ॥

यह दूतीकी उक्ति है,—कशाङ्गी तुम्हारे विरहमें किसतरह रात काट सकती, तुम्हारा व्यवसाय

अतिशय भयङ्कर है। अतएव तुमसे कहकर और क्या होगा।

यहां कहनेका ही निषेधाभास हुआ। प्रथममें सबीका अवश्यआवा मरण, द्वितीयमें अशक्य वक्तव्यत्वादि, तृतीयमें यथार्थ कथन, और चतुर्थ उदाहरणमें दुःखातिशय ही विशेष है।

६ निवेशन, दाखिला। ७ उपस्थापन, नजदीकका रखना। ८ अनुमान, क्यास जातिशक्तिवादीके मतमें आक्षेप (अनुमान) से व्यक्तिका बोध होता है।

आक्षेपक (सं० त्रि०) आ-क्षिप्-णुल्। १ निन्दक, हिकारत करनेवाला। २ आकर्षक, खींचनेवाला। (पु०) ३ रोग, बीमारी। ४ वातरोग विशेष, तश्चुज। कुपित वायुके घमनीमें प्रवेश करने और बार-बार देह कंपानेको आक्षेपक कहते हैं। इसमें पट्टे और नसे अपने आप ऐंठ जाती हैं। कोई अङ्ग अपनी अवस्था पर नहीं रहता और शरीर टेढ़ा होने लगता है। आक्षेपक होनेसे घोड़ा आगे बढ़कर पीछे हटता, अङ्ग स्वस्थ पड़ जाता और वेदनार्त देखायी देता है। 'आक्षेपकोऽनिलव्याधौ व्याधे निन्दकारेऽपि च।' (विश्व)

आक्षेपण (सं० क्ली०) आ-क्षिप-ल्युट्। प्रासन, प्रेरण, फेंक, उछाल।

आक्षेपिन् (सं० त्रि०) आक्षिपति, आ-क्षिप-णिनि। १ आकर्षकारो, खींचनेवाला। आक्षेपः सूक्ष्मदृष्ट्या पर्यालोचनमस्त्यस्य, इति। २ सूक्ष्म दृष्टि द्वारा आलोचना कर आकर्षणकर्ता, बारीक बीनीसे देखभालकर खींचनेवाला।

आक्षेपी, आक्षेपिन् देखो।

आक्षेपज्ञ (सं० क्ली०) अभ्यात्ममोह, नवाकफियत-रुहानी।

आक्षोट (सं० पु०) आ-अक्ष-ओट। गिरिजाक्षोट वृक्ष, पहाड़ी अखरोटका पेड़। अक्षोट देखो। यह मधुर, बल्य क्षिग्धोष्ण, वातपित्तघ्न, रक्तदाघहर, शीतल और कफकोपन होता है। (राजनिचयुः)

अक्षोड़ (सं० पु०) आ-अक्ष-ओड़। अखरोटका पेड़।

अक्षोदन (सं० क्ली०) अगया, आखेट, शिकार।

अक्सायिड (अ० क्ली०) इत, लुप्त, लुप्त, और चोखनेवाला।

यह अक्सिजन और दूसरे धातुके योगसे बनता है। जिस धातुका जो आक्सायिड होता, वह उसीके नामसे युक्तारा भी जाता है।

आक्सिजन, अक्जिन देखो।

आख (सं० पु०) आखन्यतेऽनेन, आ-खन-ड। खनित्र, खन्ता, खुरपी।

आखण (सं० त्रि०) कठोर, सख्त, कड़ा।

आखण्डयित् (सं० पु०) भञ्जक, भेदक, गारतगर, मुखरिब, बिगाड़ू।

आखण्डल (सं० पु०) आखण्डयति परबलम्, आ-खण्ड-णिच् बाहु० अलच्, णिच् लोपः। १ दूसरेका बल तोड़नेवाले इन्द्र। २ हन्ता, कातिल। (त्रि०) ३ भेदक, बिगाड़ू। ४ शत्रुनाशक, दुश्मन्को बरबाद करनेवाला।

आखण्डि (सं० त्रि०) आ-खण्ड-इन्। भेदक, तोड़ डालनेवाला।

आखत (हिं० पु०) १ अच्छत, देवदेवीपर चढ़ाने या आशीर्वाद देनेका चावल। यह कभी सादा रहता और कभी कुङ्कुम आदिसे रंग लिया जाता है। २ नेगी परजोंको दिया जानेवाला अन्न। यह विवाहादिके समय कोई शुभ कार्य आरम्भ होनेसे पकली बंटता है।

अखता (फा० वि०) बधिया। जिस घोड़े, कुत्ते या बकरेके अण्डकोश चौरकर निकाल लिये जाते, उसे अखता कहते हैं।

आखन (सं० पु०) आखन्यतेऽनेन खन-घ। १ खनित्र, खन्ता। (हिं० क्ति० वि०) २ क्षण-क्षण, बार-बार। आखना (हिं० क्ति०) १ वर्णन करना, बताना। २ आकाङ्क्षा रखना, खादिश करना। २ अक्षि लगाना, नजर डालना।

आखनिक (सं० पु०) आखन्यतेऽनेन, खन करणे इकन्। १ खनित्र, खन्ता। २ खनक, सुरङ्ग लगाने या कान खोदनेवाला। आ सम्यक् खनति भित्तिं भूमिं वा, आ-खन कर्तरि इकन्। ३ चौर, चोर। ४ शूकर, सूअर। ५ मूषिक, चूहा। (त्रि०) ६ खननकर्ता, खोदनेवाला।

आखनिकवक (सं० पु०) आखन्यतेऽनेन, आ-खन करणे इकवक । १ खनित्र, खन्ता । आखनति भित्तिं चेतं वा, आ-खन कर्तरि इकवक । २ चोर, चोर । ३ शूकर, सूअर । ४ मूषिक, चूहा । ५ निर्बल व्यक्तिके प्रति वीरत्व प्रकाश करनेवाला पुरुष । (त्रि०) ६ खननकर्ता, खोदनेवाला ।

आखर (वे० पु०) आखन्यतेऽनेन, आ-खन करणे डर । १ खनित्र, खन्ता । २ मृगव्रज, जानवरका भाट । ३ तबेला, अस्तबल ।

“सुपर्णा वाचनकतोप यवाखरे ।” (अक्ष १०।८५।५)

(हिं० पु०) ४ अक्षर, हर्फ ।

आखरैष्ठ (वै० त्रि०) आखरमें स्थित, भाटमें रहनेवाला ।

आखा (हिं० पु०) १ आचरणका पात्र, किसी किस्मकी चलनी । यह बारीक कपड़ेसे मढ़ा रहता और मैदा छाननेके काम आता है । २ अधारी, गठरी । (वि०) ३ अक्षय, समूचा, जो टूटा-फूटा न हो ।

आखात, अखात देखो ।

आखातीज (हिं० स्त्री०) अक्षयद्वितीया । आखातीजको हिन्दू वट पूजते और ब्राह्मणको व्यजन, कलश आदि द्रव्य प्रदान करते हैं । अक्षयद्वितीया देखो ।

आखान, आख देखो ।

आखानवमी (हिं०) अक्षयवमी देखो ।

आखिर (फा० वि०) १ अन्त्य, पिछला । (पु०) २ अन्त, छोर । ३ फल, हासिल । (क्रि० वि०) ४ शेषमें, सबसे पीछे ।

आखिरकार (फा० क्रि०-वि०) शेषमें, सबसे पीछे ।

आखिरी (फा० वि०) अन्त्य, पिछला ।

आखिल्य (सं० स्त्री०) साकल्य, सामग्र्य, सबका सब, कुल ।

आखु (सं० पु०) आखनति, आ-खन-कु प्रत्ययस्य डिङ्भावश्च । १ मूषिक, चूहा । २ वन्यमूषिक, जङ्गली चूहा । ३ चोर, चोर । ४ शूकर, चोर । ५ खनित्र, खन्ता । कर्मणि कुङिति । ६ देवदार-हृष ।

आखु, आख देखो ।

आखुकरीष (वै० स्त्री०) आखोः करीषम्, ६-तत् । मूषिककी शृङ्ख विष्टा, चूहेका सूखा मैला ।

आखुकर्णपर्णिका (सं० स्त्री०) आखुकर्णविव पर्णमस्याः, बहुव्री० वा कप् । क्षुद्रमूषिककर्णी, छोटी मूसाकानी ।

आखुकर्णी (सं० स्त्री०) आखोः मूषिकस्य कर्ण इव पर्णमस्याः, डीप् । १ जलजमूषिककर्णी, पानीकी चूहाकानी । यह फल आर दीर्घ भेदसे दो तरहकी होती है । छोटी चूहाकानी कटु, उष्ण, कफपित्तहरी तथा आनाहज्वरशूलार्तिहरी रहती है । (राजनिघण्टु) २ द्रवन्तोक्षुप । ३ दन्तीभेद ।

आखुग (सं० पु०) आखुना मूषिकेन गच्छति, आखु-गम-ड । १ मूषिकवाहन गणेश । २ कार्तिकेय । आखुगन्धी (सं० स्त्री०) कर्पूरहरिद्रा, काफूरी हलदी ।

आखुघात (सं० पु०) आखुं हन्ति, आखु-हन बहुल-वचनात् अण् प्रत्ययः । शूद्रादि नीचजाति, चूहे-मारनेवाला कमीना ।

आखुजित् (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुयिं आवला ।

आखुपर्णा, आखुपर्णिका देखो ।

आखुपर्णिका (सं० स्त्री०) आखोः कर्णविव पर्णमस्याः, शाक० बहुव्री०, वा कप् टाप् अत इत्वम् । १ स्थूलमूषिककर्णी, बड़ी मूसाकानी । २ फलदन्ती । ३ कण्ठदन्ती । ४ वृहदन्ती । ५ मण्डूकपर्णी ।

आखुपाषाण (सं० पु०) आखुनामा पाषाणः, शाक० तत् । लौहचुम्बक, सङ्गमिकनातीस । यह स्निग्ध, पारदका नियामक, लौहभेदकर, वीर्य बढ़ानेवाला, कान्तिवर्धन, और त्रिदोष तथा सर्वश्याधिनाशक होता है । किन्तु अशुद्ध रह जानेसे सप्तधातुको बिगाड़ता, दाह उत्पन्न करता और चित्त भटकाता है । उस समय लान्तास्त्राव होने लगता, कितनी ही वेदना बढ़ती, बहुत सी व्याधि घेर लेती, तथा मृत्यु भी हो जाती है । द्रवा बहुत मालूम पड़ती है ।

(वैद्यनिघण्टु)

आखुफला (सं० स्त्री०) फलदन्ती ।

माखभुज (सं० पु०) माख भुज्जे, माख भुज-
क्षिप् । १ मूषिकभक्षक विडाल, चहे खानेवाला
बिलाव । २ रक्तापामार्ग, लाल लटजीरा ।

पाखुमांस (सं० स्त्री०) मूषकमांस, चूँइका गोष्ठ ।
पाखुरथ (सं० पु०) मूषिकवाहन, चूँइकौ गाड़ीपर
चढ़नेवाले गणेश ।

प्रासुविष (सं० पु०) दारुमोच, किसी किसका
जहर।

आखुविषजित् (सं० पु०) सप्तपर्णवृक्ष ।

आखुविषहा (सं० स्त्री०) आखो मूषिकस्य विषं
हन्ति, आखु-विष-हन्-ड-टाप् । १ देवदारुवृक्ष ।
२ पौतदेवदाली लता ।

आखुविषापहा, आखुविषहा देखो ।

प्राख्युत्ति (सं० स्त्री०) चूद-मूषिककर्णी, छोटी मृसाकानी ।

आखूत्कर (सं० पु०) आखुभिरुत्कीर्यते, आखु-उद्धा नृदोरविति कर्मणि अप् । मूषिककी निकासी इयी मद्ये ।

आखूत्य (स० त्रि०) आखूभ्य उत्तिष्ठति, आखू-उद-
 ष्या-क। १ आखूसे उत्थित, आखूद्भव, चूहेसे निकला
 हुआ। (पु०) २ आखूका उत्थान, चूहोंका
 निकलना।

आखेट (सं० पु०) आखेटन्ति विभेति प्राणिनो
 ऽस्मात्, आ-खिट प्रपादाने घञ् । १ मृगया, शिकार,
 घहर । २ भय, खौफ ।

आखेटक (सं० क्लो०) आखेट स्वार्थे कन् । १ मृगया,
शिकार । कर्तरि खल् । २ मृगया जन्तु, शिकारी
, जानवर । (त्रि०) ३ मृगयु, शिकारी । ४ भयङ्कर,
खंखार ।

प्राखेटशीर्षक (सं० क्लो०) प्राखेटते विभेति, प्रा-
खिट् कर्तरि अच्; प्राखेटं शीर्षे यत्र प्रा कप्। गङ्गार,
खानिक, कान, सुरङ्ग ।

प्राखेटिक (सं० पु०) प्राखेटे कुशलम्, ठक्।
१ मृगयाकुशल कुक्षुर, शिकारी कुत्ता। (त्रि०) २ मृगशु,
शिकारी। ३ भयङ्कर, डौलनाक।

माखेटा (सं. त्रि.) मृगयु, ०१/११/२०१९

आखोट (स० पु०) आखोटति खञ्जति गतिराहि-
त्यात्, आ-खुट-अच् । अचोटहञ्, अखसेटका पेड़ ।
अखरोट देखो ।

आखोड़, षष्ठरोट देखो ।

खाखोर (फा० पु०) १ उच्छिष्ट तृण, जो चारा
जानवर खाकर छोड़ देता हो । २ असार, मल,
रही, कूड़ा । ३ निष्प्रयोजन द्रव्य; निकम्मी चीज ।
(वि०) ४ निरर्थक, बेफायद । ५ असार, फोक ।
६ मलिन, गन्दा ।

आख्यस् (सं० पु०) प्रजापति, दुनियाका मालिक ।

आख्या (स० स्त्री०) आ-ख्या-अङ्, ख्या इत्याकार
लोपः टाप् । संज्ञा, रुढ़, वाचकशब्द, इत्थ, सकृन्,
तख्खस, नाम ।

आख्यात (सं० त्रि०) आख्यायते स्म, आ-ख्या कर्मणि
 क्त । १ कथित, कहा हुआ । 'ज्ञानं भाषितमिदं अखित-
 नाख्यातमभिहितं लिपितम् ।' (अमर) २ पठित, पढ़ा हुआ ।
 ३ प्रकाशित, खोला हुआ । ४ साधा हुआ, गरदाना
 गया । (कौ०) ५ क्रियापद, फेल ।

आख्यातव्य (सं० त्रि०) १ कथनयोग्य, कहा जाने-
वाला । २ प्रकाशनयोग्य, जाहिर करने लायक ।

आख्याता, पाख्यात देखो ।

प्राख्याति (सं० स्त्री०) प्राख्याभावेतिन् । १ कथन,
बात । कर्मणि तिन् । २ कीर्ति, शोहरत । ३ नाम,
इत्थ, लक्ष्य ।

आख्यात (सं० पु०) आ सम्यक् ख्याति, आ-ख्या-तृच्।
उपदेशक, बोलने या कहनेवाला।

आख्यान (सं० लो०) आख्या भावे ल्युट् । विभाषा-
 ख्यानपरिप्रशयोरिच् । पा ३।१।१० । १ कथन, वयान् ।
 २ वक्तृता, बोलौ । ३ कथा, किस्सा, कहानी ।
 ४ उपन्यास विशेष । इसमें आख्याता ही अपने सुखसे
 सब बात कहता है, पात्रके बोलनेका कोयी काम
 नहीं । ५ प्रसिद्ध आख्यान-संग्रह सर्गयुक्त आर्ष सौपर्व
 मैत्रावरुणदि ।

“स्वाध्यायं श्रावयेत् पितॄन् धर्मशास्त्राणि चैव हि ।

शास्त्रानामनीतिहासांश्च पुराणानि द्विषानि च ॥” (मनु-१.१.१२-)

पाष्यानामि सीपयमेवावदधादोनि ।' (कुल्ल ज)

आख्यानक (सं० क्लो०) कथा, छोटा किस्सा।

आख्यानकी (सं० स्त्री०) विषयवृत्त विशेष, दण्डकका एक भेद। यह इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्राके योगसे बनती है। इसके विषम चरणमें त, त, ज, ग एवं ग और सममें ज, त, ज, ग तथा ग रहता है।

आख्यापक (सं० त्रि०) कहला देनेवाला, जो जाहिर करा देता हो।

आख्यापन (सं० क्लो०) कहलाना, जाहिर कराना।

आख्यायक (सं० पु०) आख्यायते कथयति, आ-ख्या-युक्, ल्। १ वार्तावह, दूत, नामावर, कासिद, एलचो। (त्रि०) २ कथक, कहनेवाला।

आख्यायिका (सं० स्त्री०) आ-ख्या-युक्, ल्-टाप्-युक्। १ गल्प, किस्सा। २ गल्पकथा विशेष, सच्ची कहानी। इसमें कभी-कभी पात्र भी बोलने लगता है।

आख्यायिन् (सं० त्रि०) आख्याति कथयति, आ-ख्या-यिनि-युक्। कथक, कहनेवाला।

आख्येय (सं० त्रि०) १ कहा-या बयान् क्रिया जाने वाला। २ कथनोपयोगी, कहने लायक।

आग (हिं० स्त्री०) १ अग्नि, आतिश। २ दाह, जलन। ३ उष्णता, गरमी। ४ कामाग्नि, शहवतका जोश। ५ वत्सल्य प्रेम, बच्चेकी सुहृद्वत्। ६ ईर्ष्या, हसद। (वि०) ७ अत्युष्ण, निहायत गर्म। (पु०)

८ इच्छुका अग्रभाग, अगोरा। ९ हलका खुड्डा। यह हलकी नोकपर रहता, जिसमें रस्सीसे जुवा बंधता है। (सं० त्रि०) १० आकस्मिक, नागहानी। ११ अकस्मात् होनेवाला, जो एकायेक गुजरता हो।

आगड़ा (हिं० स्त्री०) मरी डुयी बाल। इसका दाना सूख जाता है।

आगण (हिं० पु०) अग्रहायण, अग्रहनका महीना।

आगत (सं० त्रि०) आ-गम-क्त। १ उपस्थित, आया-या पहुँचा हुआ। २ गुजरा हुआ। ३ निवास करने या रहनेवाला। ४ प्रत्यावर्तित, वापस आया हुआ। ५ अंशमें पड़ा हुआ, जो अपने हिस्सेमें आया हो। ६ गिरा हुआ, दो आ पड़ा हो। ७ प्राप्त, पाया हुआ। (क्लो०) भावे क्त। ८ आगमन, आमद।

आगतचोभ (सं० त्रि०) व्याकुल, परेशान, चबराया हुआ।

आगतपतिका (सं० स्त्री०) नायिका विशेष। जिस स्त्रीका पति परदेशसे वापस आता, उसीका नाम आगतपतिका है।

आगतसाध्वस (सं० त्रि०) भयातुर, खौफ़ज़दा, डरा हुआ।

आगत स्वागत (सं० क्लो०) आदर-सत्कार, मेह-मांदारी।

आगति (सं० स्त्री०) आ-गम-क्तिन्। १ आगमन, आमद, अवायी। २ प्राप्ति, हासिल। ३ प्रत्यावर्तन, वापसी। ४ मूल, जड़। ५ समापत्ति, इत्तेफाक।

आगत्य (सं० अच्य०) आ-गम-ल्यप्, वा मानोपे तुक्। आवार, पहुँचके।

आगत्य (सं० पु०) देवघटन, इत्तिफाक।

आगन्तव्य (सं० त्रि०) १ आगम्य, आनेवाला। २ प्राप्त, हासिल किया हुआ। (क्लो०) भावे क्त। ३ आगमन, आमद।

आगन्तु (सं० पु०) आ-गम-तुन्। १ अतिथि, पाहुना। २ देवघटन, इत्तेफाकिया चोट। (त्रि०) ३ आगमनशील, आनेवाला। ४ अवलम्बनशील, सट जानेवाला। ५ वाद्य, बैरूनौ, बाहरसे आनेवाला। ६ देवायत्त, इत्तिफाकी।

आगन्तुक, आगन्तु देखो।

आगन्तुकज्वर (सं० पु०) अभिघातसे उत्पन्न ज्वर, जो बुखार चोटके सबब आया हो।

आगन्तुज (सं० त्रि०) आगन्तोः हठादागताज्वायते, जन-ड। हठात् उत्पन्न, जो एकायेक पैदा हो। यह शब्द रोगादिका विशेषण है।

आगन्तुव्रण (सं० पु०) सद्योव्रण, ताजा जख्म, टटका घाव।

आगम (सं० पु० क्लो०) आ-गम-च। १ आगमन, आमद, अवायी।

“गुह्यसंवागम एव उच्यते।” (माघ १।१०)

“आगम आगमनमेव।” (मन्निनाथ)

२ प्राप्ति, आमदनी। ३ उत्पत्ति, पैदायश। आग-म्यते प्राप्यतेऽनेन, आ-गम करण्ये च। ४ समदाह-

भेदादि उपाय, कानूनी तहसील। ५ शास्त्रका परि-
श्रम, इत्यादिकी मेहनत। 'प्रश्नानुरूपशास्त्रपरिश्रमः।' (मल्लिनाथ)
व्यवहारमातृकाकार एवं वाचस्पति मिश्रने लिखा,
कि आगम शब्दका अर्थ क्रयादि है। ६ तत्त्व आवे-
दक शास्त्र, जड़ बतानेवाला इत्यादि। ७ शास्त्रमात्र,
मजहबी रिसाला। ८ वेद। ९ मन्त्र। १० तन्त्रशास्त्र।

“आगतं शिववक्त्रं तु गतम् निरिजामुखम्।

मत्तश्च वासुदेवस्य तस्यादागम उच्यते ॥”

पदार्थादेशे राघवमहाकृत (१२ अ.)।

११ व्याकरणोक्त प्रकृति वा प्रत्ययका अनुपघाती अट्
इट् इत्यादि शब्दविशेष। १२ उपस्थिति, पहुंच।
१३ योग, जोड़। १४ मार्ग, राह। १५ नदीमुख,
दरयाका मुँहाना। १६ सम्पत्तिकी वृद्धि, जायदादकी
बढ़ती। १७ नौतिशास्त्र। (त्रि०) १८ निकट जाने-
वाला, जो पास पहुँच रहा हो।

आगमजानी (हिं०) आगमजानी देखो।

आगमज्ञानी (सं० त्रि०) आगम जान लेनेवाला,
जो होनहारको समझ जाता हो।

आगमन (सं० क्ली०) आ-गम भावे लुगट्। १ आगति,
आमद, आयायी।

“अबोधय सकृचै कृतुद उदगम न्योति मलीन।

तिमि तुम्हार आगमन सुनि भये अपति वलहीन ॥” (तुलसी)

२ प्रत्यावर्तन, वापसी। ३ उत्पत्ति, विकास।

आगमनकारण (सं० क्ली०) आगमका हेतु, आनेका
सबब।

आगमनतस् (सं० अव्य०) आगमके कारण, आनेसे,
आ पहुँचनेके सबब।

आगमनिरपेक्ष (सं० त्रि०) प्रमाणपत्रका भरोसा
न रखनेवाला, जो सनदका मुहताज न हो।

आगमनीत (सं० त्रि०) पठित, परीक्षित, पढ़ा या
जाँचा हुआ।

आगमरहित (सं० त्रि०) १ प्रमाणपत्र न रखनेवाला,
जिसके पास सनद न रहे। २ शास्त्रशून्य, मजहबी
रसालेसे खाली।

आगमवक्ता (सं० पु०) १ शिव। २ ज्योतिषी, भविष्य
अनुमाननेवाला, जो होनहारको बता देता हो।

आगमवत् (सं० त्रि०) आगमोऽस्त्यस्य, आगम
अस्त्यर्थे मतुप्, मस्य वत्वम्। १ आगमशुक्त, आ-
पहुँचनेवाला। (अव्य०) २ वेदकी तरह।

आगमवाणी (सं० स्त्री०) भविष्यवाणी, पेशीन्गोयी।

आगमविद्या (सं० स्त्री०) वेदविद्या।

आगमवृद्ध (सं० त्रि०) आगमेन शास्त्रालोचनया
वृद्धः प्रवीणः, ३-तत्। शास्त्रालोचना द्वारा मार्जित-
बुद्धि, जो मजहबी रिसाले पढ़-पढ़के होशियार बन
गया हो।

आगमवेत्त (सं० त्रि०) आगमं वेत्ति, आगम-विद्-
त्वच्, ३-तत्। आगमज्ञ, होनहार जाननेवाला।
(स्त्री०) आगमवेत्त्री।

आगमवेदिन् (सं० त्रि०) आगमं वेत्ति, आगम-विद्-
णिनि, ३-तत्। १ आगम-वेत्ता, होनहार जाननेवाला।
(पु०) २ शङ्कराचार्यके परमगुरु गौड़पादाचार्य।

आगमसापेक्ष (सं० त्रि०) प्रमाणपत्रशुक्त, सनद-
याफ़ता।

आगमसोचो (हिं० वि०) आगमका ध्यान रखने-
वाला, जो होनहारका खयाल रखता हो।

आगमापायिन् (सं० त्रि०) आगमस्य अपायश्च
तौ स्तोऽस्य, इति। उत्पत्ति एवं विनाशशील, पैदा
होने और मर जानेवाला।

आगमापायी, आगमापायिन् देखो।

आगमावर्ता (सं० स्त्री०) आगम-मात्रेण प्राप्तमात्रेण
आवर्तते कण्डूयनमस्याः, आगम-आ-वृत्त अपादाने
घञ्। १ वृत्तिकाली चुप, बढ़न्ता। २ चुद्रमेष्टक्री,
छोटी भेदासींगी।

आगमिक (सं० त्रि०) आगमादागतम् ठक्।
आगमप्राप्त, आया हुआ, आ पहुँचनेवाला।

आगमित (सं० त्रि०) आ-गम स्तार्थे णिच्-क्लृ-इट्-
णिच् लोपः। १ अधीत, पठित, पढ़ा हुआ। २ ज्ञात,
समझा हुआ। ३ यापित, पहुँचाया हुआ।

आगमिन्, आगामिन् (सं० त्रि०) आ-गम-इनि-
णित्। १ भावी, आने या होनेवाला। २ सामुद्रिक
शास्त्रेत्ता, हाथकी रेखा देखनेवाला। ३ भविष्य-
अनुमाननेवाला, जो होनहारको बता देता हो।

आगमिष्ट (वै० त्रि०) इर्ष वा शीघ्रतासे उपस्थित होनेवाला, जो खुशीसे या जल्द-जल्द आ रहा हो।

आगमी, आगमिन् देखो।

आगम्य (सं० त्रि०) १ सुलभ, सुगम, सुमकिन्-उल्-दखल, पहुँचने काबिल। (अव्य०) २ उपस्थित होके, पहुँचकर।

आगर (सं० पु०) आगरति सिञ्चति जलं वर्षायां प्रायेणात्र, आ-गृ सेचने आधारे अप्। १ अमावस्या। वर्षाकालमें अमावस्याको प्रायः वृष्टि होनेसे 'आगर' कहते हैं। (हिं) २ आकर, कान, ढेर, खजाना। ३ नमक बनानेका गढ़। ४ अर्गल, व्योड़ा। ५ गृह, घर। ६ छप्पर। (वि०) ७ उत्तम, बढ़िया। ८ कुशल, होशियार।

आगरबध (हिं० पु०) कण्ठमाला, गलेकी एक बौमारी। इससे गलेमें छोटी-छोटी फुन्सी निकल आती हैं।

आगरा—१ युक्तप्रदेशका एक जिला। यह अथर्वण शब्दका अपभ्रंश होता और अक्षां २६° ४४' ३०" तथा २७° २४' ४०" एवं द्राघि० ७७° २८' तथा ७८° ५' ४५" पू०के मध्य पड़ता है। इससे उत्तर मथुरा एवं एटा, पूर्व मैनपुरी तथा इटावा, दक्षिण ढोलपुर एवं ग्वालियर और पश्चिम भरतपुर है। २ अपने जिलेकी तहसील। ३ अपने जिलेका शहर।

आगरा नगर यमुना नदीके दक्षिण तटपर अवस्थित है। यहां बहुत दिनतक सुसलमान राजाओंकी राजधानी रही। अकबरसे पूर्व प्रथम लोदी-वंशीय सुसलमान सम्राटोंने यहां अवस्थान किया था। इब्राहीम लोदी बाबरसे युद्धमें परास्त हुए। इसके एक वर्ष बाद फतेहपुर-सीकरीमें बाबरने राजपूत-सैन्यको पराभूत किया। इसके पीछेही आगरामें राजधानी संस्थापित हुई थी। बाबरके परलोक जानेपर उनके पुत्र हुमायूँ शेरशाह द्वारा परास्त एवं दूरीभूत किये गये। अन्तमें हुमायूँके पुत्र अकबरने शत्रुओंको युद्धमें हरा और दिल्लीसे राजधानी उठा आगरामें संस्थापित की। अकबरके राजत्वकाल इस नगरमें अनेक दुर्ग और मनोहर इम्में बने थे। सन् १६५८ ई०को

औरङ्गजेब दिल्लीमें अवस्थिति करने लगे। उसी समयसे आगरा नगरका पतन आरम्भ हुआ। १७८४ ई०को यह संधियाके हाथ लगा था। परिशेषमें १८०३ ई०को लाई लेकने यह स्थान अंगरेजोंके अधिकारभुक्त किया।

आगराकी अष्टालिका सर्वत्र प्रसिद्ध है। जहां-गीरने अपने खशुरके स्मरणार्थ जहांगीर-महल नामक एक कबर निर्माण करवायी थी। मोती मस्जिद, जामा मस्जिद, खास महल, ताजमहल प्रभृति अपूर्व स्थान ग्राह-जहांके समयमें बनाये गये। जामामस्जिद अर्थात् बृहत् मस्जिद, खेत और रक्तवर्ण प्रस्तरसे बनी है। ग्राह-जहांकी कन्या जहानाराके स्मरणार्थ यह निर्माण की गयी है। जहानारा औरङ्ग-जेबकी भगिनी रहीं। औरङ्गजेबने उनको कारागृह किया था। दिल्लीके निकट उनकी कबर स्फटिककी तरह परिष्कार (साफ सुथरे) खेत पत्थरसे बनी है।

आगराका प्रसिद्ध दुर्ग लाल पत्थरका है। इसकी चहारदीवारी ४६ हाथ जंचो और परिधि अन्यून डेढ़ मील है। किलेके भीतर अनेक मकान बने हैं। सबसे पहले दीवान-इ-आम है। इसे औरङ्ग-जेबने निर्माण कराया था। उसके बाद दीवान, खास, दीवान-खासके बाद खास-महल और खासमहलके दक्षिण जहांगीर-महल है। यह अष्टालिका सुन्दर खेत प्रस्तरसे बनी है। मोतीमस्जिद दीवान-आमके उत्तर है। प्रवाद है—एकबार सम्राट् मानसिंहके ऊपर रुष्ट हुये थे। इसलिये मानसिंह किलेके ऊपरसे घोड़ा फंदा नीचे कूद पड़े। नीचे जाकर घोड़ेने तत्क्षणात् प्राणत्याग किया था। मानसिंहके इस वीरत्वके स्मरणार्थ अब्यावधि किलेके पास पत्थरके घोड़ेका शिर जमीनमें गड़ा है। अब किलेके पास रेलका स्टेशन भी बन गया है।

युक्तप्रदेश या केवल भारतवर्ष ही नहीं, ताज-महल भुवन विख्यात है। पत्थरकी नक्काशी और मकान बनानेकी कारीगरीकी बात उठाते समय ताजमहलका नाम आगे लेना पड़ता है। विचित्र उद्यानके भीतर यह मनोहर कब्र खड़ी है। इससे नीचेसे ऊपरतक खेत पत्थर लगा है। कितना समय

व्यतीत हुआ। किन्तु यह आज भी नहीं देख पड़ती, मानो कलकी बनी है।

बाहरसे पहले कुछ ऊपर चढ़ने पर उद्यानका द्वार मिलता है। उसके बाद नीचे उतरनेपर बागकी जमीन है। सामने चौड़ी और पक्की राह निकली है। दोनों तरफ जलकी प्रणाली, बड़े बड़े पुरातन आमके पेड़ और फल-फलके नानाविध वृक्ष हैं। मन्दनवनके सट्टा यह स्थान यज्ञपूर्वक सजया गया है। सामने ही ताजमहल है। पहले अनेक प्रशस्त चतुष्कोण पीठ श्वेत प्रस्तरसे बंधे हैं। इसकी चारो ओर कलकत्तेके किलेवाली मैदानके मान्यमण्ड जैसे चार उच्च स्तम्भ हैं। उनके भीतर ऊपर चढ़नेकी पथ बना है। बीचमें ताजमहलका गुम्बज है। गुम्बजके नीचे दीवारमें बहुमुख्य रत्न जड़े एवं कितने ही वेलबूटे कटे हैं। गुम्बजके भीतर धीरे धीरे कोई बात कहनेसे उसी समय ऊपरकी ओर प्रतिध्वनि पर प्रतिध्वनि होती और सातबार वही बात सुन पड़ती है। मध्यस्थलमें उज्ज्वल श्वेत पत्थरकी कब्र बनी है। उसके किनारे-किनारे पत्थरका ही कटहरा है। ऊपरकी कब्र असली नहीं है। सम्मुख द्वारकी बगलसे नीचे उतरना पड़ता है। इसी जगह सम्राट् शाह-जहाँके पास प्रिय-महिषी मुमताज-महलका कब्र है। सम्राट् प्रेयसीके प्रणयसिन्धुमें डूब और प्राणके साथ प्राण दे मानो साथ ही सो रड़े हैं।

शाहजहाँकी प्रियतमा महिषी अर्जुनमन्द बानूके स्मरणार्थ ताजमहल निर्मित हुआ है। अर्जुनमन्दबानूका दूसरा नाम मुमताजमहल था। सन् १६२८ ई०को मुमताजकी मृत्यु हुई। उसके बाद ही यह मंजोहर कब्र लोग निर्माण करने लगे। कहते हैं, कि बीस हजार कारीगरोंने बीस वर्ष तक कार्य चला ताजमहलको समाप्त किया था। मृत्युके बाद शाह-जहान् भी मुमताज रानीके पांस ही गाड़े गये।

ताजमहल देखो।

तुला (रुई) और लवण आगरेका प्रधान वाणिज्य द्रव्य है। कहते हैं—यहां परशुराम अवतीर्ण हुये थे। अंत सिपाही विद्रोहके समय आगरेके आगरेजोंको

बहुत कष्ट भेलना पड़ा। उसके बाद करनेल-ब्रैस्वने विद्रोहियोंको दमन किया।

आगरो (हिं० पु०) लोनिया, नमक तैयार करनेवाला।

आगल (हिं० पु०) १ अगल, व्योड़ा। (वि०) २ अगला, आगे रहनेवाला। (क्रि० वि०) ३ आगे, सामने।

आगला, अगला देखो।

आगलित (सं० त्रि०) अवसन्न, स्नात, पशुमुर्दा, सुरभाया हुआ।

आगवन (हिं० पु०) आगमन, आना।

आगवाह (हिं० पु०) धूम, आगको उड़ा ले जाने-वाला धूआं।

आगविष्ट (वे० त्रि०) निकट आगमन करनेवाला, जो नजदीक आ रहा हो।

आगवीन (सं० त्रि०) गोः प्रत्यर्पण-पर्यन्तं यः कर्म करोति, आङ्पूर्वाज्ञोः कर्मकरेऽर्थे ख प्रत्ययो निपात्यते। आगवीनः। पा ३।२।१४। गृहस्थके घरसे छोड़ देनेपर प्रत्यर्पण पर्यन्त गोकाम काम करनेवाला, जो लोगोंके मकानसे चरागाहको रवाना करने पर मवेशीकी देख-भाल रखता हो।

आगस् (सं० क्ली०) एति गच्छति दण्डदानात्, इण-असुन् धातोरगादेशश्च। अपराध, दण्ड, पाप, जुर्म, कुसूर, इजाब, सज़ा। 'पापापराधयोरागः।' (अमर)

आगस्कृत (सं० त्रि०) आगस्-कृत-क्त। १ अपराधी, मुजरिम। २ वाधित, प्रतिद्वन्द्व, खिजाया हुआ।

आगस्तो (सं० स्त्री०) अगस्त्यस्येयम्, अगस्त्य-अण्-ङीप् यलोपः। अगस्त्यकी दक्षिण दिक्।

आगस्तीय (सं० त्रि०) अगस्ताय हितम्, छण्-य लोपः। अगस्त्यका हितकारक, अगस्त्यको फायदा पहुँचानेवाला।

आगस्त्य (सं० त्रि०) अगस्त्यस्येदम्, अगस्त्य-यञ्, य लोपः। १ अगस्त्य मुनि सम्बन्धीय। २ दक्षिण दिक्का। (पु०) अगस्त्येरपत्यम्, गर्गादि यञ्। ३ अगस्त्यका अपत्य। अगस्त्य कण्वादि० यञ्। ४ अगस्त्यका गोत्रापत्य। (क्ली०) ५ वक्रपुण्य। (स्त्री०) आगस्ती।

आगा (सं० त्रि०) १ निकट उपस्थित होनेवाला, जो अपनी ओर आ रहा हो। (हिं० पु०) २ अग्र-भाग, अगला हिस्सा। ३ वस्त्रःस्त्रल, सीना, छाती। ४ मुख, मुँह। ५ ललाट, मथा। ६ लिङ्ग। ७ अंगरखे या कुरतेके आगेका हिस्सा। ८ पगड़ीका छतान। ९ गृहके सम्मुखका भाग। १० सेनाका अग्रभाग। ११ नौका अग्रभाग, मांग। १२ गृहके सम्मुखको भूमि। १३ आगेका डेरा। १४ पड़नेके कपड़ेका पक्षा। यह आगे रहता है। १५ परिणाम, नतीजा।

आगा अबदुस्सलाम—ईरानके पोशीदा इमाम। इनका निवासस्थान केखूत रहा। सन् १५८४ ई०के समय गुजरातके कपूर लोहाना और दूसरे ख्वाजा हिन्दुस्थानी इस्मायिलियोंकी दशांश भोली इनके गांव लेकर पहुँचे। धर्मार्थ प्रेरित व्यक्तियोंका अभाव मिटाने और अपने भारतीय अनुयायियोंको राह देखानेके लिये इन्होंने 'पन्द्याद-जवांमर्दी' नामक पुस्तक लिखा था। उसका अनुवाद सिन्धी तथा गुजराती भाषामें हुआ और बड़े आदरकी दृष्टिसे देखा गया। ख्वाजा पीरोकी तालिकामें 'पन्द्याद-जवांमर्दी'ने २६ वां स्थान पाया है। इस पुस्तकमें ख्वाजाओंकी प्रार्थना तथा संस्कार करनेका विषय अच्छीतरह लिखा गया है।

आगा इसलाम शाह—वर्तमान हिज हायिनेस आगा खानकी पूर्वज। गुजरातके पीर सदरुद्दीनने इसमायिलिया धर्म सुदृढ बनानेके लिये इन्हें अलीका अवतार प्रसिद्ध कर दिया था।

आगाज (अ० पु०) आरम्भ, शुरू।

आगाह (सं० पु०) गान द्वारा प्राप्ति करनेवाला, जो गानसे हासिल करता हो।

आगाध (सं० त्रि०) अगाधः अतलस्पर्श एव, स्वार्थे अण् आद्यचोवृद्धिः। १ अतलस्पर्श, निहायत गहरा। २ सहजमें समझ न पड़नेवाला, जो आसानीसे समझमें आता न हो।

आगान (सं० स्त्री०) १ गानसे प्राप्ति करनेका कौशल, गानसे कमानेका हुनर। (हिं० पु०) २ वर्णन, बयान।

आगान्तु (सं० पु०) आ-गम-तुन्, निपा० वृद्धिः। अतिथि, मेहमान, पाहुना।

आगापीछा (हिं० पु०) १ सोच-विचार, खेचतान। २ आदि-अन्त, भलाई-बुराई। ३ देखकी अगाड़ी और पिछाड़ी।

आगामिक (सं० त्रि०) आगमयति भविष्यदसु बोधयति, आ-गम-णिच् वृद्धिः, वृषो० न ऋस्त्रः खुल् णिच् लोपः। भविष्यद्विषय आपक, आयिन्देकी बातके सुतात्तिक।

आगामिन् (सं० त्रि०) आगमिष्यति, आ-गम-इनि, णित्वाद् वृद्धिः। आगन्तुक होनहार, आगे आनेवाला। आगामी, आगामिन् देखो।

आगांमुक (सं० त्रि०) आ-गम-उकञ्, णित्वादुपधा-वृद्धिः। आगमनशोल, आ पहुँचनेवाला।

आगार (सं० स्त्री०) अग कुटिलायां गती घञ्, आगन्तुमृच्छति, ऋ-अण् उप० समा०। १ गृह, मकान, घर। २ कोष, खज़ाना। जैन मतमें वाधक नियम एवं व्रतमंजुकी आगार कहते हैं।

आगारगोधिका (सं० स्त्री०) १-तत्। गृहगोधिका, छिपकली।

आगारदाह (सं० पु०) गृहदाह, आतशजनो, आतशजदगो।

आगारदाहिन् (सं० त्रि०) गृहदाही, आतशजन, आगलग्नाज, घरजलाज।

आगारधूम (सं० पु०) आमारं गृहं धूमयति, आगार-धूम क्त्यर्थे णिच्-अण्, णिच् लोपः। १ दीपककी कालिमा, चिरागकी कालक। ७-तत्। गृहस्थित धूम, घरका धूआं।

आगारधमाद्यतैल (सं० स्त्री०) तैलभेद, धूवकी कालिकका तैल। गृहधूम एक तोले, हरिद्रा दो तोले और सुराकिट (शराबका मैल) तीन तोले तीन पल तैलमें पकानेसे यह औषध बनता है। इसे उपदंशपर लगानेसे बड़ा उपकार होता है।

(अक्रपाण्डित्यकृतसंयह)

आगारलोमिका (सं० स्त्री०) गृहलोमिका, आगार-यष्टिका।

आमाह (फा० वि०) १ विज्ञ, ज्ञानी, साहिर, जाननेवाला। (हिं० पु०) २ भविष्यद्विषय, आगे आनेवाला हाल।

आगाही (फा० स्त्री०) विज्ञता, इत्तिला, खबर। आगि, आग देखो।

आगिल (हिं० वि०) १ अगला, आगे रहनेवाला। २ भविष्यत्, होनहार, आगे आनेवाला। आगिला, आगिल देखो।

आगिवर्त (हिं० पु०) अग्निवर्त, आग बरसानेवाला बादल। आगी, आग देखो।

आगुर् (वै० स्त्री०) आ-गुर-क्लिप्। १ प्रतिज्ञा, अनुमति, रजामन्दो। २ प्रशंसा-सम्बन्धोय घोषणा, फर्याद-तहसौन्। पुरोहित इसे यज्ञीय संस्कारमें उच्चारण करता है।

आगुरण (सं० स्त्री०) आ-गुर-लुगट् पृषो० गुणाभावः। उद्यम, काम, काज।

आगुरव, आगुर देखो।

आगू (सं० स्त्री०) आ-सम्भृग्-गच्छति, आ-गम-क्लिप्, मलोपः। १ प्रतिज्ञा, कौल। 'सन्निदागूः प्रतिज्ञानम्।' (अमर)। (हिं०) आगे देखो।

आगूरण, आगुरण देखो।

आगूर्ण (सं० त्रि०) आ-गुर गूर वा क्त, रेफात् परतया तस्य नः। १ उद्यत, मुस्केद, काम करनेवाला। (स्त्री०) भावे क्त। २ उद्यम, कामकाज।

आगूर्त (वै०) आगूर्ण देखो।

आगूर्तिन् (वै० त्रि०) आगूर्त अनेन, इष्टादि० इनि। कृतोद्यम, कामकाजी।

आगे (हिं० क्रि० वि०) १ अग्रभागमें, ओड़ी दूर। २ सम्मुख, सामने। ३ जीवित अवस्थामें, हाजिर रहते। ४ इसके अनन्तर, फिर। ५ भविष्यत् समय, आधित्वा। ६ पीछे, बाद। ७ पूर्व, कबल, पहली। ८ अधिक, ज्यादा। ९ क्रोड़पर, गोदमें।

आगौन (हिं०) आगमन देखो।

आग्नापोष्य (वै० त्रि०) अग्निश्च पूषा च इन्द्र आनङ्, अग्नापूषाभौ तौ देवतेऽस्य अण्, द्विपद वृद्धिः वाङ्-नेत्। अग्नि एवं सूर्य देवसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आग्नावैष्णव (वै० त्रि०) अग्निश्च विष्णुश्च इन्द्र आनङ्, अग्नाविष्णु तौ देवतेऽस्य अण्, द्विपद वृद्धिः। अग्नि एवं विष्णु देव सम्बन्धीय।

आग्निक (सं० त्रि०) आग्नेरिदम्, वाङ्-ठक्। अग्नि-सम्बन्धी, आतशी।

आग्निदात्तेय (सं० त्रि०) अग्निदत्तस्येदम्, अग्नि-दत्त चातुरर्थ्यां सख्यादि ठक्, द्विपद वृद्धिः। अग्नि-दत्तके समीपस्थ, अग्निदत्तके पासका।

आग्निपद (सं० त्रि०) अग्निपदे दीयते कायं वा, व्युष्टादि० अण्। १ अग्निस्थानमें दीयमान। २ अग्नि-स्थानमें कर्तव्य।

आग्निमारुत (सं० त्रि०) अग्निश्च मरुतश्च इन्द्र आनङ्, अग्नामारुतौ तौ देवतेऽस्य, अण्, द्विपद वृद्धिः। इत्। १ अग्नि एवं मरुत देवसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पु०) २ अगस्त्य मुनि। (स्त्री०) ३ अग्नि एवं मरुत देवका स्तोत्र विशेष।

आग्निवारुण (सं० त्रि०) अग्निश्च वरुणश्च इन्द्र-इत्, अग्नीवारुणौ तौ देवते अस्य, अण्, द्विपद वृद्धिः। इत्। अग्नि एवं वरुण देव सम्बन्धीय।

आग्निवेश्य (सं० पु०) अग्निवेश्यस्य ऋषेरपत्यम्, अग्निवेश्य-यज्। अग्निवेश्यका अपत्य। (स्त्री०) डीप् यलोपः अग्निवेशी।

आग्निशर्मि (सं० पु०-स्त्री०) अग्निशर्मणोऽपत्यम्, इज् आद्यच् वृद्धिः। अग्निशर्माका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य।

आग्निष्टोमिक (सं० पु०) अग्निष्टोमं क्रतुं वेत्ति तत्प्रतिपादक-ग्रन्थमधीते वा, ठक्। अग्निष्टोमस्य व्याख्यान-सवभनो वा आग्निष्टोमिकः। (चिदान्नकौमुदी) १ अग्निष्टोम यज्ञजात व्यक्ति। २ अग्निष्टोम यज्ञ प्रतिपादक ग्रन्थ पढ़नेवाला। अग्निष्टोम यज्ञस्य व्याख्यानः ग्रन्थः, ठक्। ३ अग्निष्टोम यज्ञके व्याख्यानका ग्रन्थ। (त्रि०) ४ अग्निष्टोम यज्ञ सम्बन्धीय। ५ अग्निष्टोम यज्ञमें मन्त्र पढ़नेवाला।

आग्निष्टोमिकी (सं० स्त्री०) अग्निष्टोमस्य दक्षिणा, ठक् डीप्। अग्निष्टोम यज्ञकी दक्षिणा।

आग्निहोत्र (सं० त्रि०) अग्निहोत्रके उपयुक्त।

आग्नीध्र (सं० स्त्री०) अग्निमित्थे, अग्नि-इन्द्र-क्षिप्, अग्नीत् तस्य शरणं गृहम्, इण् प्रत्ययः। १ यजमान-का स्थान। यहाँ यज्ञीय अग्नि प्रज्वलित किया जाता है। २ यज्ञीय अग्नि जलानेवालीका कार्य। (पु०) ३ साग्निक द्विज, अग्नि प्रज्वलित करनेवाला पुरोहित। ४ स्वायम्भुव मनुके एक पुत्र। ५ प्रियव्रत-राजाके एक पुत्र। (वै० त्रि०) ६ अग्नीध्र द्विज सम्बन्धीय।

आग्नीध्रा (सं० स्त्री०) यज्ञीय अग्निकी रक्षा।

आग्नीध्रीय (सं० त्रि०) १ आग्नीध्र वा यज्ञीय अग्निस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला। (पु०) २ आग्नीध्र-का अग्नि। ३ आग्नीध्रका उद्धान।

आग्नीध्र (सं० त्रि०) आग्नीध्र पुरोहित सम्बन्धीय।
आग्नीध्रा (सं० स्त्री०) आग्नीध्रस्थानमर्हति, यत् टाप्। अग्निस्थितिके याग्य शाला।

आग्नेन्द्र (सं० त्रि०) अग्निश्च इन्द्रश्च इन्द्र० आनङ्, तौ देवते अस्म्य, अण् न परपदवृद्धिः वृद्धाभावान्न इत्। अग्नि एवं इन्द्र देव सम्बन्धीय। (स्त्री०) आग्नेन्द्री।

आग्नेय (सं० त्रि०) अग्नेरिदं अग्निदेवता वास्य, ठक्। १ अग्निस्त्वन्धी, आतिथी। २ अग्निदेवता-विषयक, अग्नि देवपर चढ़ाया जानेवाला। ३ अग्निसे आगत, आगसे निकला हुआ। अग्नौ अग्न्युद्घोषने साधु ठक्। ४ आग लगनेसे जल्द जल उठनेवाला। लाह, घी, लोबान प्रभृति द्रव्य आग्नेय होते हैं। पाण्डवोंको जलाकर मार डालनेके लिये वारणावतमें लाह वगैरहसे ही घर बनाया गया था। ५ पित्तो-द्दीपक, क्षुधाजनन, भूख बढ़ानेवाला। ६ अग्निके समान, आग-जैसा। (स्त्री०) ७ कृत्तिका नक्षत्र। कृत्तिका नक्षत्रके देवता अग्नि होते। इसीसे उसे आग्नेय कहते हैं। ८ स्वर्ण, सोना। अग्निके वीर्यसे उत्पन्न होनेपर स्वर्णका नाम आग्नेय पड़ा है। ९ रक्त, खून। रक्तको जठरानलसे निकलने या देहस्थ पित्तरूप अग्निका विकार होनेसे आग्नेय कहा जाता है। १० अग्निदृष्ट सामवेद। ११ स्नान विशेष। भस्म लगाकर नहानेका नाम आग्नेय है। १२ राजाका चरित्र विशेष।

१३ अस्त्रविशेष, किसी किसका हथियार। १४ बन्दूक वगैरह। जो हथियार आग लगनेसे चलते या जिनसे आतिथी टुकड़े निकलकर चोट मारते, उन्हें आग्नेय कहते हैं। अग्नेरागतम्, ठक्। १५ अग्निप्रकृतिका कीटविशेष। यह कीट चौबीस प्रकारका होता है,— १ कौण्डिल्यक, २ करभक, ३ बर, ४ पत्रवृक्षिक, ५ विना-शिका, ६ ब्रह्मणिका, ७ विन्दल, ८ भ्रमर, ९ वाह्यकी, १० पिच्छिट, ११ कुम्भ, १२ वर्चःकीट, १३ अरिसेदक, १४ पद्मकीट, १५ दुन्दुभि, १६ मकर, १७ शतपादक, १८ पाञ्चाल, १९ पाकमत्स्य, २० कृष्णतुण्ड, २१ गर्दभी, २२ क्रीत, २३ क्षमिसरारौ और २४ उत्कृष्टक। यह कीट जिसे काटता, उसको पित्तज रोग हो जाता है। आग्नायी देवता अस्म्य, ठक् पुं वद्भावः। १६ स्वाहा देवताका स्थालीपाक। १७ अग्निपुराण। १८ ब्राह्मण। १९ घृत। २० अग्निकोण। २१ बारूद वगैरह भड़क उठनेवाली चौज। २२ ज्वालामुखी पर्वत। २३ प्रतिपत् तिथि। २४ दीपन औषध। (पु०) २५ कार्तिकेय। महादेवका वीर्य अग्निमें गिरने और उससे उत्पन्न होनेके कारण कार्तिकेयका नाम आग्नेय पड़ा है। २६ देशविशेष। इसी देशमें स्वाभाविक अग्निकी उत्पत्ति हुयी थी। यह दक्षिणा-पथके निकट किष्किन्दा देश समीपस्थ माहिषतीपुरसे मिला है। यहाँ अग्निने नीलराजको कन्यासे सौन्दर्य-विमोहित हो विवाह किया था। पीछे उसको रक्षा करनेको अग्नि स्वयं इसी देशमें रहने लगे। इस विषयका विवरण महाभारतके सभापर्वमें लिखा है। २७ अगस्त्य। (स्त्री०) आग्नेयी।

आग्नेयकीट (सं० पु०) आगमें उड़नेवाला कीड़ा। सेंध लगा और चिराग बुझा देने कारण चोरको भी आग्नेयकीट कहते हैं।

आग्नेयपुराण (सं० स्त्री०) अग्निपुराण।

आग्नेयवायु (सं० पु०) अग्निकोणस्थ समीरण, दखिनहरा।

आग्नेयास्त्र (सं० स्त्री०) अस्त्रविशेष, एक हथियार। प्राचीन समय इस अस्त्रके प्रयोगसे अग्निवृष्टि होने लगती थी। अन्यत्र देखो।

आग्नेयी (सं० स्त्री०) अश्वकी शुभसूचक छाया।
 आग्न्याधानिकी (सं० स्त्री०) अग्न्याधानस्य दक्षिणा,
 ठक्। अग्न्याधान यज्ञकी दक्षिणा।
 आग्न्याधेयिक (सं० त्रि०) अग्न्याधेय सम्बन्धी।
 आग्रभोजनिक (सं० पु०) अग्रभोजनं नियतं दीयते-
 ऽस्मै, ठक्। १ नियत अग्रभोजनदानका सम्प्रदान।
 २ अग्रदानो ब्राह्मण, आहका अग्रभोजन द्रव्य लेने-
 वाला। (त्रि०) ३ सबसे पहले भोजन करनेवाला।
 आग्रमास (सं० पु०) चित्रक वृक्ष, चीतका पेड़।
 आग्रयण (सं० पु०) आग्रं अग्रं भोजनं शस्यादेर्येन,
 शकच्चादि० अकारलोपः। १ नूतन शस्य लानेके
 लिये साग्निक-कर्तव्य यज्ञविशेष, शस्यके पाकान्तमें
 समाधेय यागविशेष, नवशस्येष्टि, नवान्न-विधान।
 आखलायन-श्रौतसूत्रमें इसका विशेष विवरण लिखा
 है। वर्षा में सार्व, हेमन्त में व्रीहि और वसन्त में यवसे
 आग्रयण यज्ञ किया जाता है। २ अग्निविशेष।
 (स्त्री०) ३ वर्षा ऋतुके अन्तमें नव फलोंका हवन।
 (स्त्री०) आग्रयणी।
 आग्रस्त (सं० त्रि०) विद्ध, सच्छिद्र, छेदा हुआ,
 जिसमें छेद रहे।
 आग्रह (सं० पु०) आग्रह्य वशीभूयते मनो येन,
 आ-ग्रह-अप्। १ आवेश, हौसला। २ आसक्ति,
 खिंचाव। ३ अभिनिवेश, सुस्तेदी। ४ आश्रम,
 ठिकाना। ५ अनुग्रह, मेहरबानी। ६ ग्रहण,
 गिरफ्तारी, पकड़। ७ आक्रमण, हमला। ८ उत्-
 कर्षसाधन, सवकत ले जानेका काम, बढ़ावढ़ी।
 ९ संवर्धन, हिमायत। १० साहस, हिम्मत। ११ हठ,
 जिद।
 आग्रहायण (सं० त्रि०) अग्रहायण मास सम्बन्धी,
 अग्रहनवाला।
 आग्रहायण (सं० पु०) अग्रहायणी ऋगशिरो
 मन्त्रम्; ऋगशिरस्तस्मिन्नेवाग्रहायणी, तथा युक्ता
 पौर्णमासी। अग्रहायण मास, चान्द्रमार्गशीर्ष मास,
 अग्रहनका महीना।
 आग्रहायणक (सं० स्त्री०) आग्रहायणां देयं
 ऋणम्, आग्रहायणी-चातुर्वर्षिक-अग्रहायण मासकी

पूर्णिमाको दिया जानेवाला ऋण, जो कर्ज अग्रहन
 सुदी पूरनमासीको अदा हो। (त्रि०) २ अग्रहायण
 मासकी पूर्णमासीको दिया जानेवाला।
 आग्रहायणिक (सं० स्त्री०) आग्रहायणां देयं ऋणम्,
 आग्रहायणी-ठक्। अग्रहायण मासकी पूर्णिमाको
 दातव्य ऋण, अग्रहन सुदी पूरनमासीको चुकाया
 जानेवाला कर्ज। (पु०) २ आग्रहायणी पौर्णमासी-
 युक्त मास, अग्रहनका महीना। मतभेदसे यही
 वत्सरका प्रथम मास है। (त्रि०) ३ अग्रहायणकी
 पूर्णिमाको दिया जानेवाला।
 आग्रहायणी (सं० स्त्री०) अग्रे हायनमस्याः, प्रज्ञादि०
 अण्-ङीप्। संवत्सरग्रहायणीत्याह। पा ४।३।५०। १ अग्र-
 हायण मासकी पूर्णिमा, अग्रहन महीनेकी पूरनमासी।
 २ पाकयज्ञ विशेष। ३ ऋगशिरा मन्त्र।
 आग्रहारिक (सं० त्रि०) अग्रहारोऽग्रभागो नियतं
 दीयते ऽस्मै, ठक्। १ अग्रदानो। २ अग्रहार लेनेवाला।
 आग्रहिका (सं० स्त्री०) अनुग्रह, संवर्धन, साहाय्य,
 मेहरबानी, हिमायत, मदद।
 आग्रही (सं० त्रि०) आग्रह करनेवाला, जिद्दी,
 जो दूसरेकी बात मानता न हो।
 आग्रायण (सं० पु०) अग्रनाम्नः ऋषेः गोत्रापत्यम्,
 नडादि० फक्। १ अग्रनामक ऋषिके गोत्रापत्य।
 यह बड़े वैयाकरण रहे। अग्रे अग्रं शस्यस्य अस्त्यस्य,
 अण्। २ नवशस्येष्टि, नवान्न निमित्त साग्निक कर्तव्य
 यागविशेष।
 आग्रायणीष्टि (सं० स्त्री०) आग्रायण यज्ञका उत्सव,
 नवान्नका जलसा।
 आघ (हिं० पु०) अर्घ, मूल्य, दाम, कीमत।
 आघट्टक (सं० पु०) आघट्टयति रोगान्, आघट्ट-
 ण्वुल्। १ रक्त अपामार्गं क्षुप, लाल चिचड़ीका पेड़।
 २ घर्षक, रगड़नेवाला। ३ घर्षण उत्पन्न करनेवाला,
 जिससे रगड़ लग जाये।
 आघट्टन (सं० स्त्री०) घर्षण, मर्दन, रगड़, मालिश।
 (स्त्री०) आघट्टना।
 आघट्टित (सं० त्रि०) आ-घट्ट-क्त इट्। मार्जित,
 चर्चित, रगड़ा या हिलाया हुआ।

आघमर्षण (सं० स्त्री०) अघमर्षणो हितम्, अण्।
पापनाशके लिये हितकर सूक्त विशेष।

आघर्ष (सं० पु०) आ-घृष-घञ्। १ मर्दन, मालिश।
२ मन्थन, मथायी।

आघर्षण (सं० त्रि०) १ विदारक, खुरच लेनेवाला।
(स्त्री०) २ मर्दन, रगड़।

आघर्षणी (सं० स्त्री०) लोममयी मार्जनी, बालोंकी कूँची।

आघर्षित (सं० त्रि०) मार्जित, रगड़ा हुआ।

आघाट (सं० पु०) आ-हन कर्तरि संज्ञायां घञ्,
पृषो० तस्य टः। १ अपामार्ग, चिचड़ी। २ वाद्य-
विशेष, एक बाजा। यह नाचनेवालेके साथ ही
साथ बजाया जाता है। ३ भस्त्रक, जलाजल, भांभा,
मंजीरा, खड़ताल। ४ सीमा, हद। (त्रि०) ५ आघात-
कर्ता, चोटीला।

आघाटि (द्वे० पु०) भस्त्रक, भांभा, मंजीरा।

आघाटिन् (सं० त्रि०) आ-हन-णिनि, पृषो० तस्य टः।
आघातकर्ता, चोट करनेवाला।

आघात (सं० पु०) आ-हन-घञ्, नस्य तः हस्य घञ्।
१ वध, कत्ल। २ आहनन, ठोकर, धक्का। ३ चत,
जखम। ४ ताड़न, मारपीट। ५ ताड़ना देनेवाला,
जो मारता हो। ६ मूलसङ्ग, हवसुलबील, पेशाबकी
रोक। ७ अभाग्य, कमबख्तूती। आधारे घञ्।
८ वधस्थान, मकतल, बूचड़खाना।

आघातज्वर (सं० पु०) अभिघात-जन्य ज्वर, चोटसे
आनेवाला बोखार।

आघातन (सं० स्त्री०) आहन्यते ऽत्र, आ-हन स्वार्थे
णिच् आधारे ल्युट्, णिच् लोपः। १ वधस्थान,
कत्लगाह। भावे ल्युट्। २ हनन, मारपीट।

आघार (सं० पु०) आघ्रियते वङ्गी सिच्यते, आ-घृ-
कर्मणि घञ्। १ घृत, घी। भावे घञ्। १ ज्वालित
अग्निमें वायुकोणसे आरब्ध कर आग्नेयकोण और
नैऋत कोणसे आरब्ध कर ऐशानी दिक् पर्यन्त
अविच्छेद धाराक्रमपर घृत-सेचन। इसमें 'अग्नये
स्वाहा' एवं 'सोमाय स्वाहा' मन्त्र पढ़ा जाता है।
ऋग्वेदी उपरोक्त मन्त्र मन ही मन पढ़ते, किन्तु
यजुर्वेदी उच्चैःस्वरसे उच्चारण करते हैं।

आघी (हिं० स्त्री०) १ व्याजके स्थानमें दिया जाने-
वाला अन्न। खेतकी फसल तैयार होनेपर किसान
महाजनको यह सूद देता है। २ व्याजके स्थानमें
अन्नका लेनदेन।

आघु, आघ देखो।

आघूर्ण, आघूर्णित देखो।

आघूर्णन (सं० स्त्री०) १ लोठन, परिभ्रमण, गर्दिश,
चक्कर, घुमाव, लुढ़काव। २ चाञ्चल्य, आन्दोलन,
वैसबाती, तजलजुल, डांवाडोल।

आघूर्णित (सं० त्रि०) आ-घूर्ण-क्त इट्। १ चलित,
चक्कर काटनेवाला। २ भ्रान्त, भटका हुआ।

आघृणि (सं० पु०) १ क्रोध, गुस्सा। २ पूषा देव।
(त्रि०) ३ प्रज्वलित, आगकी तरह भभकनेवाला।
४ प्रदीप्त, चमकदार।

आघृणिवसु (द्वे० त्रि०) १ प्रज्वलित, आगसे भरा
हुआ। २ अधिक धनसम्पन्न, निहायत दौलतमन्द।
(पु०) ३ अग्नि।

आघोष (सं० पु०) अघोषण देखो।

आघोषण (सं० स्त्री०) आ-घुष-लुगट्। सकल स्थानमें
प्रचारके लिये उच्चैःस्वरसे शब्द करना, आह्वान, आम-
न्त्रण, मुनाजात, पुकार।

आघ्राण (सं० त्रि०) आ-ग्रा-क्त, तकारस्य नः, रेफात्
परतया णत्वम्। १ गृहीत-गन्ध, सूँघा हुआ। २ द्रव,
आसूदा, छका हुआ। (स्त्री०) भावे क्त। ३ गन्ध-
ग्रहण, सूँघाया। ४ द्रव, आसूदगो, छकाछकी।

आघ्रात (सं० त्रि०) आघ्रायते स्म, आघ्रा कर्मणि
क्त वा तस्य नत्वाभावः। १ गृहीतगन्ध, सूँघा हुआ।
२ द्रव, आसूदा। (पु०) ३ ग्रहण विशेष, किसी
किस्मका कुसुम्। इसमें चन्द्र या सूर्यमण्डल एक
ओर मलिन पड़ जाता है। आघ्रात-ग्रहण लगनेसे
सुवृष्टि होती है।

आघ्रेय (सं० त्रि०) आ-घ्रा-यत्। १ घ्राण द्वारा
आह्वान, सूँघा जा सकनेवाला। २ घ्राण करने योग्य,
सूँघने काबिल।

आङ् (सं० अव्य०) ऋ वाङ्० डाङ्, प्रयोगे तस्य
ङित्वम्। आ शब्दार्थः। इस अव्ययका विवरण आ शब्दमें देखो।

आङ्गशायन (सं० त्रि०) अङ्गशेन निवृत्तम्, अङ्गश पक्षादि० फक्। १ अङ्गश द्वारा निवृत्त वा निष्पादित, जो आङ्गसके जरिये पूरा पड़ा हो।

आङ्गशिक (सं० त्रि०) अङ्गश प्रहरणमस्य, ठक्। अङ्गश प्रहारयुक्त, आङ्गसकी मारवाला।

आङ्गी (सं० स्त्री०) अङ्ग, तम्बूर, तबला, ढोलक।

आङ्ग (सं० स्त्री०) अङ्ग स्वार्थे-अण्। कोमलाङ्ग, नाजुक अङ्गो। २ अङ्गदेशजात द्रव्य, अङ्ग मुल्लमें पैदा हुई चीज। ३ अङ्गदेशके नृपति। ४ व्याकरण प्रसिद्ध अङ्गके अधिकारसे विहित कार्य। (त्रि०) अङ्गे भवम्, अण्। ५ अङ्गदेशजात, अङ्ग मुल्लमें पैदा हुआ। ६ व्याकरणमें—अङ्गाधिकार सम्बन्धी। ७ शारीरिक, जिस्मानी। ८ नाटकके नौच व्यक्तियोंसे सम्बन्ध रखनेवाला, स्टांगके छोटे लोगसे मुतल्लिक।

आङ्गक (सं० त्रि०) अङ्गेषु जनपदेषु भवम्, व्युज्।

१ अङ्गदेश-जात, अङ्ग मुल्लमें पैदा हुआ। अङ्गाः अटियाः तद्देश नृपतयोः भक्तिरस्य, वुज्। २ अङ्गदेशके क्षत्रियोंका सेवक। (पु०) ३ अङ्गदेशके राजा। ४ अङ्गदेशका अधिवासी।

आङ्गदी (सं० स्त्री०) अङ्गदके राज्यकी राजधानी।

आङ्गविद्य (सं० त्रि०) अङ्गं अङ्गनाम विद्यां वेद, अङ्ग-विद्या-अण्। १ व्याकरणादि अङ्गविद्या जाननेवाला।

शिक्षा, वक्ष्य, व्याकरण, निरुक्त, ज्योतिष और छन्दःसमूह वेदका अङ्ग होनेसे अङ्गविद्या कहता है। उपरोक्त सकल विद्याके जाननेवालेको ही आङ्गविद्य कहते हैं।

अङ्गविद्यायां भवम्, अण्। २ अङ्गविद्यादि जात, अङ्ग-विद्या आदिसे पैदा। (स्त्री०) तद्व्याख्यानो ग्रन्थः, ऋगयनादि इण्। ३ अङ्गविद्याका व्याख्यान-ग्रन्थ।

आङ्गार (सं० स्त्री०) अङ्गाराणां समूहः, भिच्चादि० अण्। अङ्गारसमूह, अङ्गारका ढेर।

आङ्गिक (सं० पु०) अङ्गेन अङ्गचालनेन निवृत्तम्, ठक्। १ भावप्रकाशक अङ्गनिष्पन्न नटादिका भूविचे-पादि। आरङ्गाधिकोंके मतसे भावप्रकाशक भूविचेपादि आङ्गिक, वाचिक, आहार्य और सात्विक चार प्रकारका होता है। आङ्गिक अङ्ग, वाचिक वचन, आहार्य वेशभूषा और सात्विक स्वभावसे बनता है। २ स्थियों

का हाव, भाव, भूभङ्गि प्रभृति चेष्टाविशेष, औरतोंको चटक-मटक। अङ्गं अङ्गं तद्वाच्यं शिल्पमस्य, ठक्। ३ अङ्ग बजानेवाला, तबलची। ४ अङ्गशय्य, पोपलका पेड़। (त्रि०) ५ शारीरिक, सशरीर, जिस्मानी, बदनो। ६ सङ्केत-सूचित, नकल करके देखाया हुआ।

आङ्गिरस (सं० पु०) अङ्गिरसोऽपत्यम् अङ्गिरस्-अण्। अङ्गिरा ऋषिका सन्तान। अङ्गिराके तीन पुत्र रहे—वृहस्पति, उत्तम्य और संवर्त। अङ्गिरसा दृष्टं साम अण्। २ अथर्ववेदोक्त सूक्तविशेष। अथर्ववेद देखो। अङ्गिनां अङ्गानाञ्च रसः सारः, स्वार्थे अण्। ३ आत्मा, रह। (त्रि०) ४ अङ्गिरा ऋषिसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो अङ्गिरासे पैदा हो।

आङ्गिरसेश्वर (सं० पु०) आङ्गिरसेन प्रतिष्ठित ईश्वरः, शाक० ३-तत्। काशीस्थ शिवलिङ्ग विशेष। इसे आङ्गिरसने प्रतिष्ठित किया था।

आङ्गुरिक, आङ्गुलिक देखो।

आङ्गुलिक (सं० त्रि०) अङ्गुलि-ठक् वा रत्वम्। अङ्गुलि-सदृश, अङ्गुलित-जैसा।

आङ्गुष (वे० पु०) आङ्ग-पूर्वात् घुष् कर्मणि घञ्। स्तोत्र, स्तोम, आघोष।

“एनाङ्गुषेण वयमिन्द्रवक्ताः।” ऋक् १।१०।५।१८।

आङ्गुथ (वे० त्रि०) १ स्तोत्रविषयक, जोरसे तारीफ़ करनेवाला। २ प्रशंसाभाजन, तारीफ़ करने लायक।

आङ्गुर (सं० त्रि०) अङ्गे भवं आङ्गम्, चतुरर्थ्यां सङ्काशादि० ण्य। अङ्गजातके निकटस्थ।

आच (हिं० पु०) हस्त, हाथ।

आचक्षाण (सं० त्रि०) आचष्टे, आ-चक्ष-शानच्। व्याख्यानकर्ता, बयान देनेवाला।

आचक्षुस् (सं० पु०) आ-चक्ष बाहु० उत्ति। विद्वान् पुरुष, पण्डित, इत्थदार, देख भालके काम करनेवाला आदमी।

आचतुर (सं० अव्य०) चतुः पर्यन्तम्, अव्ययी टच्। चार पुरुष पर्यन्त, चार पीढ़ी तक।

आचतुर्य (सं० स्त्री०) अपाटव, वैशक्की।

आचम (सं० पु०) आ-चम-अच्। आचमन।

आचमन (सं० क्ली०) आ-चम भावे-ल्युट् । १ झोवेर, रुसा घास । २ भोजनान्त मुखचालन, भोजनके बाद मुंहका धोना । ३ पूजादिके पूर्व हाथको गोकर्णकार बना और उसमें जल रख तीन बार पान एवं ओष्ठ हथको दो बार मार्जन करके यथा स्थान हस्त प्रदान करना । ४ कर्त्तृसंस्कारक अङ्ग विशेष । ५ क्रिया विशेष । ६ आचमनका जल । भरद्वाज मुनिने आचमनका ऐसा नियम बताया है—दक्षिण हस्तकी अङ्गुलियोंके पर्व सरल और विस्तृत करके हाथ गोकर्णकार बनाये एवं अङ्गुलि परस्पर संलग्न रखे । इसी अवस्था पर एक मटर डूबने लायक जल उसमें ले तथा अङ्गुष्ठ एवं कनिष्ठा दो अङ्गुलि छोड़ ब्राह्मणको “ॐ विष्णु” मन्त्रद्वारा तीन बार जल पीना चाहिये ।

कात्यायनने लिखा है—तीन बार उपरोक्त प्रकारसे जलपान करके ओष्ठहथको दो बार मार्जनपूर्वक मुखके ऊपर हाथ रखे । पीछे एकवार हाथ धो डाले । फिर अङ्गुष्ठ एवं तर्जनी इन दोनों अङ्गुलिके अग्रभाग संलग्न करके नासिकाहथको स्पर्श करते हैं । उसके बाद अङ्गुष्ठ और अनामिकासे दोनों आंख एवं दोनों कान छू लेते हैं । तदनन्तर नाभि, वक्षःस्थल, मस्तक एवं स्कन्धहथपर हाथ लगाये ।

तान्त्रिक सन्ध्यामें—“आत्मतत्त्वाय स्वाहा, विद्यातत्त्वाय स्वाहा, शिवतत्त्वाय स्वाहा”, मन्त्रद्वारा तीन बार जलपान करना पड़ता है । काली, तारा एवं विष्णुपूजाके लिये पृथक् रूप आचमनका विधि है । देवल कहते हैं—चलते-फिरते, सोते-पड़ते, हंसते-बोलते, कांपते-वांपते या छाती देखते-भालते, आचमन करना न चाहिये । बाल, घोतीके नौचेका भाग या मृत्तिका स्पर्श करके भी आचमन करना मना है ।

आचमनक (सं० क्ली०) आचमनस्य कं जलमत्र । १ निष्ठीवनपात्र, पीकदान । आचम्यते ऽनेन, करणे ल्युट् स्वार्थे कन् । २ आचमनका जलादि, कुक्षी करनेका पानी ।

आचमनी (हिं० क्ली०) आचमन करनेका पात्र

जिस चीजसे पूजाके समय जल मुंहमें फेंका जाये । आचमनी छोटे चम्पच-जैसी पीतल या तांबेकी बनती है । यह पञ्चपात्रमें रहती और आचमन करने या चरणाभूत देनेके काम आती है ।

आचमनीय (सं० क्ली०) आचमनाय दीयते ऽद्वाच्च्, आ-चम-करणे बाहु० अनीयर् वा । १ आचमनके निमित्त देय जातिफलादि चूर्ण-मिश्रित छः पल परिमित जल, कुक्षी करनेको दिया जानेवाला पानी । कर्मणि अनीयर् । २ पेय जल, पीनेका पानी । (त्रि०) ३ आचमनार्थ व्यवहृत, कुक्षी करनेमें लगनेवाला ।

आचमित (सं० त्रि०) आचमन किया हुआ, जो पी लिया गया हो ।

आचम्य (सं० क्ली०) आ-चम-यत् । १ आचमनके योग्य जलादि, कुक्षी करने काबिल पानी । (अथ०) आ-चम-ल्यप् । २ आचमन करके, कुक्षी डालकर ।

आचय (सं० पु०) आ-चि-प्रच् । १ दूरस्थ पुष्पादिका चयन, दूरसे फूल वगैरहका तोड़ लाना । २ समूह, ढेर ।

आचयक (सं० त्रि०) आचये नियुक्तः, आचय आकर्षादि० कन् । चयनमें नियुक्त, फूल वगैरह तोड़नेका काम करनेवाला ।

आचरज (हिं०) आचर्य देखो ।

आचरजित (हिं०) आचरित देखो ।

आचरण (सं० क्ली०) आ-चर-ल्युट् । १ आचार, चाल-चलन । २ उपस्थिति, आमद पहुँच । ३ आचारका नियम, चलनका तरीक़ा । करणे ल्युट् । ४ रथ, शकट, गाड़ी ।

आचरणीय (सं० त्रि०) आ-चर-अनीयर् । १ अनुष्ठेय, करने काबिल । २ उपयुक्त, वाजिब ।

आचरन (हिं०) आचरण देखो ।

आचरना (हिं० त्रि०) आचरण करना, व्यवहार बांधना, चलन बनाना ।

आचरित (सं० क्ली०) आ-चर भावे क्त इट् । १ आचार, चलन । २ ऋणीसे अर्थ लेनेका उपाय विशेष, कर्ज-दारसे रुपया वसूल करनेकी तरकीब । (त्रि०) कर्मणि

क्त। ३ अनुष्ठित, दस्तूरके तौरपर किया हुआ।
४ साधारण, मामूली। ५ नियम द्वारा नियत, कायदेसे ठहराया हुआ।

आचरितव्य, आचरणीय देखो।

आचर्य (सं० क्ती०) आचर्यते यत्र, आ-चर आधारे यत्। १ गमनके योग्य स्थान, जाने लायक, जगह। कर्मणि यत्। २ आचरणीय कर्म, करने काबिल काम। ३ शुभकर्म, नेक काम। (वि०) ४ उपस्थित होने योग्य, पहुँचने लायक। ५ कर्तव्य, करने काबिल।

आचान, आचानक, अचान, अचानक देखो।

आचान्त (सं० त्रि०) आ-चम-क्त। १ आचमन-कर्ता, कुक्षी करनेवाला। २ कृताचमन, आचमन किया हुआ।

आचाम (सं० पु०) आ-चम भावे घञ् वृद्धिः।
१ आचमन, गरारा, कुक्षा। भक्तमण्ड, भातका माँड़।
३ भक्ष्य वस्तु, खानेकी चीज।

आचामक (सं० त्रि०) आचमनकर्ता, कुक्षी करनेवाला।

आचामनक, आचमनक देखो।

आचास्य (सं० क्ती०) १ आचमन-कार्य, कुक्षी करनेका काम। २ आचमनका जल, कुक्षी करनेका पानी। ३ आचमन, कुक्षा। (त्रि०) ४ आचमनमें काम आनेवाला, जो कुक्षी करनेमें लगता हो।

आचार (सं० पु०) आ-चर-भावे घञ्। १ आचरण, चालचलन। २ अनुष्ठान, काम। ३ नियम, तरीक। ४ पद्धति, रिवाज। ५ सदाचरण, भली चाल।

५ बम्बई प्रान्तके रत्नागिरि जिलेकी मालवन तहसीलका एक ग्राम। यह मालवनसे उत्तर दश मील लगता है। इसमें रामेश्वरका मन्दिर बना, जिसकी चारो ओर पत्थरकी दीवार और पोखता अहाता खिंचा है। विश्राम-गृह इतना लम्बा चौड़ा है, कि सब जातिकी हिन्दू उसमें रह सकते हैं। रामनवमीके अवसर पर निकटस्थ ग्रामोंसे हजारों आदमी वार्षिकोत्सव देखने आते हैं। सन् १६७४ ई०को कोल्हापुरके शम्भु महाराजने जो दानपत्र लिखा, उसके अनुसार इस ग्रामकी कोई ढाई हजार रुपये सालकी ग्रामदानी मन्दिरके ही खर्चमें लगती है।

आचारज (हिं०) आचार्य देखो।

आचारजी (हिं० स्त्री०) आचार्यका कार्य, पुरोहितायी।

आचारतन्त्र (सं० क्ती०) बौद्धोंके चार तन्त्रोंमें एक।

आचारदीप (सं० पु०) आचारार्थः नौराजनार्थो दीपः १ नौराजनके निमित्त दीप, सफायीका चिराग। २ आरतीका दीया। ३ राजावोंके वाजि-नौराजनका प्रदीप। ४ नागदेव भट्ट-प्रणीत आचारनिर्णय विषयक ग्रन्थ विशेष।

आचारभ्रष्ट (सं० त्रि०) स्वधर्मत्यागी, वदचलन।

आचारवत् (सं० त्रि०) आचारः शास्त्रविहितानु-करणीयत्वेन सोऽस्त्यस्य, मतुप् मस्य वत्वम्। शास्त्रोक्त अनुष्ठानयुक्त, नेकचलन। (स्त्री०) आचारवती।

आचारवर्जित (सं० त्रि०) आचारेण वेद-स्मृत्यादि सदानुष्ठानेन वर्जितम्, ३-तत्। १ शास्त्रोक्त आचार-हीन, खिलाफ-सरिश्ता। २ वहिष्कृत, अपांक्तेय, खारिज, निकम्मा।

आचारवान्, आचारवत् देखो।

आचार-विचार (सं० पु०) चाल-चलन, राह-रस्म, कामकाज।

आचारविरुद्ध (सं० त्रि०) पद्धतिके प्रतिकूल, खिलाफ-सरिश्ता।

आचारवेत्त (सं० त्रि०) आचार वेत्ति, विदु-वृत्। आचारज्ञ, राह-रस्म जाननेवाला। (स्त्री०) आचार-वेत्ती।

आचारवेदिन्, आचारवेद देखो।

आचारवेदी (सं० स्त्री०) आचारस्य वेदीव। १ पुण्य-भूमि, अच्छी जगह। २ आर्यावर्त देश।

आचारहीन, आचारभ्रष्ट देखो।

आचाराङ्ग (सं० क्ती०) आचारो ऽङ्गमिव। दृष्टिवाद, जैन-मतसे—द्वादश अङ्गोंके मध्य अङ्ग विशेष। द्वादशाङ्ग देखो।

आचारिक (सं० त्रि०) १ चिरकाल-भुक्त, अनादि-परम्पराप्राप्त, कदीमी, रिवाजी। (क्ती०) २ नियम विशेष, कोई कायदा। इससे भोजन, पथ्यापथ्य, प्राण-धारणके क्रम और स्वास्थ्यकी रक्षा रखते हैं।

आचारिन् (सं० त्रि०) आचरति यथाशास्त्रम्, आ-

आचारशब्दका परिशिष्ट

५ आचारके सम्बन्धमें शास्त्रोंमें कहा है—“धर्मोन्नायकाः सर्व एव शरीर-

व्यापाराः आचारपदप्रतिपाद्यतामापद्यन्ते । धर्मसाधनानां च शरीरैवेवासितिसन्निकृष्टो विद्यते सम्बन्ध इति शरीर शुभव्यापारलक्षणः सदाचारः प्रथमधर्मत्वेनोपवर्णितः ।”

अर्थात् धर्मकी उन्नति करनेवाले सब प्रकारके शारीरिक व्यापारोंको आचार कहते हैं । धर्मसाधनोंका शरीरके साथ अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है और इसीसे शरीरके शुभव्यापार लक्षणयुक्त आचार-को स्मृतिशास्त्रकारोंने प्रथम धर्मरूपसे वर्णन किया है । निम्न लिखित स्मृतिवाक्योंका सारांश यह है, कि स्मृति और श्रुतिके मतसे आचार ही परमधर्म है । क्योंकि आचारपालनसे मनुष्य सच्चरित्र होता है और महात्मा लोग आचारके बलपर ही साधु पदवीको प्राप्त हुए थे । आचार पालनसे ऐश्वर्य, कीर्ति, आयु, तप, धर्म, पुण्य आदिकी प्राप्ति होती है । विना आचार पालनके वेदोक्त फल नहीं मिलता, अतः सबसे श्रेष्ठ आचारका अवश्य पालन करना चाहिये ।

“आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च । तस्मादस्मिन् सदायुक्तो नित्यं स्मादात्मवानृद्धिजः ॥
आचाराद्विद्युतो विप्रो न वेदफलमयुते । आचारेण तु संयुक्तः संपूर्णं फलभागमवेत् ॥
एवमाचारतो दृष्टा धर्मस्य सुनयो गतिम् । सर्वस्य तपसो मूलमाचारं जगद्गुरुः परम् ॥

(मनु १।१०८—११०)

“आचारो स्मृतिजनन आचारः कीर्तिवर्धनः । आचारावधत्ते ह्यायुराचारो हन्यलक्षणम् ॥
आगमानां हि सर्वेषामाचारः श्रेष्ठ उच्यते । आचारः प्रभवो धर्मो धर्मादायुर्विवर्धते ॥
आचारात्मनो ह्यायुराचारात्मनो श्रियम् । आचारात्मनो कीर्तिं पुरुषः प्रेत्य चेह च ॥
दुराचारो हि पुरुषो नैहायुर्विन्दते मनु । यस्मादयस्य भूतानि तथा परिभवन्ति च ॥
तस्मात् कुर्याद्विद्याचारं यदीच्छेद् स्मृतिमात्मनः । अपि पापशरीरस्य आचारो हन्यलक्षणम् ॥
आचारलक्षणो धर्मः सन्त्यारित्रालक्षणः । साधूनाञ्च यथावत्समेतदाचारलक्षणम् ॥”

शरीरकी चेष्टाएं अनन्त होनेसे आचार भी अनन्त है । तभी कुछ ऐसे सर्व सामान्य आचार हैं जिनका संक्षेप रूप दिखाया जा सकता है ।

“मातापित्रोर्गुरुजनानांचाऽनुदिनं सायं प्रातर्थाविध्यभिवादनमाचरणीयम् । तत्सविधे सविनये स्थातव्यम् । उक्तानां शृङ्खलपादिना ह्यायुर्विवर्धते नियमाऽधिकनिद्रालसशरीर-सौन्दर्याद्यप्रयत्न भोजनाच्छादनासक्तिप्रवृत्तीनि निन्द्यकर्माणि सततमेव परिहर्तव्यानि बुद्धि-मग्निः श्रेयोऽर्थिभिः । ब्राह्मे सुहृते शयनं परिवर्जयेत् प्रत्यहं प्रतिमुहूर्तमात्मनो वर्णा-श्रमाऽनुगतधर्मसाधनानामनुसन्धानमुत्साहपुरुषार्थयोः सम्बर्धनं शौचशीलमितमाशयविनयाच्च-नित्यमनुष्ठेयाः श्रेयोऽस्तीशुभिः । गमनं चक्रमोत्यानोपवेशनाऽप्यवहरण-परिधानमाशया-दिभिः सकलाभिः शरीरं चेष्टाभिः समं सक्त्यते धर्माऽधर्मयोः सम्बन्धः तस्माद्विवेकि-मिर्यथा वेदशास्त्रासुपदिशतां मातृपितृ-गुरुजनानामुपदेशं सम्यगादाय हतं स्वकीयं संरक्षणीय मित्वेव सदाचारः ।”

अर्थात् माता, पिता, गुरु आदिको सुबह शाम बन्दन करना, उनके आगे विनौत भावसे रहना आयुवर्धक है । अतिरिक्त निद्रा, आलस्य, शरीर-सौन्दर्यके अर्थ विशेष प्रयत्न, भोजन प्राच्छादनम्

आसक्ति आदि निन्द्य आचार बुद्धिमानोंको छोड़ देने चाहिये । बड़े सबेरे उठना, प्रतिदिन वर्णाश्रमके अनुसार धर्मोंका पालन करना, उत्साहपूर्वक पुरुषार्थोंका विस्तार करना ; शौच, शील, मितभाषण, विनय आदि रखना कल्याणकारक है । इस प्रकारसे बैठने उठने, चलने फिरने आदि सभी शरीरकी चेष्टाओंके साथ धर्माधर्मका सम्बन्ध होनेके कारण विवेकी पुरुषोंको वेदशास्त्रानु-मोदित माता पिता गुरुजनोंके उपदेशानुसार आचारपालन द्वारा अपना धर्म रक्षण करना चाहिये । शास्त्रोंमें आचारके सम्बन्धमें लिखा है—

“पापेनापिहितं पापं पापमेवानुवर्तते । धर्मेणापिहितो धर्मो धर्ममेवानुवर्तते ॥
अक्षतं ब्राह्मणोच्छिष्टं जनन्याहृदयं कृतम् । तज्जनः पशुपासकं सत्यं सन्नः समासते ॥
अपूज्यस्त्वं पूजातः पूज्यानां चाप्यपूजनात् । दृष्टातकसमं पापं शब्दं प्राप्नोति पूरुषः ॥
उज्ज्याधोव्याय हि सदा दृष्टव्या इहसंभ्रताः । तेजयोगे परं मूलं तन्मूला सिद्धिरुच्यते ॥
इहानां वचनं श्रुत्वा योऽभ्युत्थानं प्रयोजयेत् । उत्थानस्य फलं सत्यं तदा स खमतेऽचिरात् ॥
ये दन्वात्राचरन्तिस्व येषां हसित्य संयता । विषयांश्च निवृत्तानि दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
प्रत्याङ्मूर्तिमाना ये न हिंसति च हिंसिताः । प्रयच्छन्ति न याचन्ते दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
मातापित्रोश्च ये हसिं वर्तन्ते धर्मकोविदः । वर्जयन्ति दिवा स्वप्नं दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
स्त्रेषु दारिद्र्यं वर्तन्ते न्यायहसितमहता । अपिहोवपरः सन्तो दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
ये तपस्य तपस्वन्ति कौमारब्रह्मचारिणः । विद्यावेदव्रतस्वाता दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
सर्वान् देवात्मसन्ति सर्वधर्मांश्च गृह्यते । ये श्रद्धाधानाः शान्ताश्च दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
मधु मांसश्च ये नित्यं वर्जयन्तीह मानवाः । जन्मप्रथमित्येव दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
यात्रार्थं भोजनं येषां सन्तानार्थं च मेयुनम् । वाक्सत्यवचनायांश्च दुर्गांश्चतितरन्ति ते ॥
कपिला क्षीरपानेन ब्राह्मणोगमनेन च । वेदाचारविचारेण युद्धशास्त्रालतां व्रजेत् ॥
राजात्रं तेज आदत्ते युद्धात्रं ब्रह्मवर्चसम् । आयुः सुवर्णकारात्मवीर्याय योपितः ॥
विद्यावाङ्मयितस्त्रात्रं गणिकात्रमथेन्द्रियम् । सख्यन्ति ये चोपपत्तिस्त्रीजितात्रश्च सर्वशः ॥
परदारामिहतांरः परदारामिमर्शिनः । परदारप्रयोक्तारो वै निरयगामिनः ॥
ये परस्वापहृतांरः परस्त्रानाञ्च नाशकाः । सूचकाश्च परेषां ये ते वै निरयगामिनः ॥
इत्युच्छेदं गृहच्छेदं दारच्छेदश्च भारत । निवच्छेदं तथाप्यायासो वै निरयगामिनः ॥
विषमव्यवहाराश्च विषमाश्चैव हृदिषु । क्षमिषु विषमाश्चैव ते वै निरयगामिनः ॥
पर्ययन्ति च ये दारानग्रिथत्वातिथीं सथा । उत्सन्नपितृदेवेज्याश्चैव निरयगामिनः ॥
वेदविक्रयिष्यश्चैव वेदानाश्चैव द्रुपकाः । वेदानां खेखकाश्चैव ते वै निरयगामिनः ॥
ब्राह्मणानां गवांश्चैव कन्यानाञ्च युधिष्ठिर । येऽन्तरं यान्ति कार्येषु ते वै निरयगामिनः ॥
शिलाभिः शङ्खभिर्वापि शस्त्रे वा मरतर्षभ । ये मार्गमवबन्धन्ति ते वै निरयगामिनः ॥
उपाध्यायांश्च ध्वजं च भक्तांश्च मरतर्षभ । ये त्यजन्त्यविकारांस्त्रीं ते वै निरयगामिनः ॥
मालानामय इहानां दासानां चैव ये नराः । अदत्ता मचयन्त्येव ते वै निरयगामिनः ॥
शुश्रूषामिक्षोभिश्च विद्यामादाय भारत । ये प्रतिशङ्गिन्ः खेहस्ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
दानेन तपसा चैव सत्येन च युधिष्ठिर । ये धर्ममनुवर्तन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
भयान् पापात्तथा बाधाहारिद्याह्याधिधर्षणात् । यत्कृते प्रतिमुच्यन्ते ते नराः स्वर्गगामिनः ॥
चमावन्त्य धीराश्च धर्मकाश्चैव चोत्थिताः । मङ्गलाचारसम्पन्नाः पुरुषाः स्वर्गगामिनः ॥
सर्वहंसानिहताश्च पराः सर्वसहाय ये । सर्वस्वाश्रयभूताश्च ते नराः स्वर्गगामिनः ॥

लोभमर्दी दण्डे दी नखखादी च यो नरः । निलोच्छिष्टः स'कुसुको नेहायुर्विन्दते मङ्गल ॥
 नही इक्षमनायुष्यं लोके किञ्चन विद्यते । यादृशं पुरुषस्येह परदारोपसेवनम् ॥
 यावन्तो रोमकूपाः स्मृः स्त्रीणां गाने पु निर्मिताः । तावत्सर्वं सङ्घाति नरकं पयुं पासते ॥
 पुरीषसूते मोदीचेन्नपिठिते कदाचन । नातिकथं नातिसायं न च मध्यन्दिने स्थिते ॥
 पत्न्या देयो ब्राह्मणाय गोभ्यो राजस्य एव च । हृदाय भारतमाय गभिर्गो दुर्बलाय च ॥
 प्रदक्षिणं कुर्वीत परिज्ञातान्वनस्पतीन् । चतुष्पथात् प्रकुर्वीत सर्वानेव प्रदक्षिणान् ॥
 उपानही च वस्त्रं धृतमन्यैर्नधारयेत् । ब्रह्मचारी च नित्यं स्नात् पादं पादेन नाङ्गमेत् ॥
 भमावसां पौर्णमासां चतुर्दश्यां सर्वशः । अष्टम्यां सर्वपाषाणां ब्रह्मचारी सदा भवेत् ॥
 हथा मांसं न खादेत् पृष्ठमांसं तथैव च । अक्रोशं परिवादश्च पैश्वर्यं विवर्जयेत् ॥

नारुनुदः स्नात्र वृषं सवादी न हीनतः परमभगाददीत ।

यथास्ववाचा पर उद्दिष्टं न तां वदद्गुतीं पापलोक्याम् ॥

वाक्सायका वदन्निपतन्ति यैराहन्तः शोचति राम्राह्मणि ।

परस्व वा भर्मेत्तु ये पतन्ति तान् पण्डितो नाऽवच्छेजेत् परेषु ॥

रोहते सायकैर्विश्वं वनं परप्रनाहृतम् । वाचा दुस्त्वया विश्वं न स'रोहति वाक् चतम् ॥

कर्षिणालीकनाराचाभिर्हरिण शरीरतः । वाक्शस्यन्तु न निर्गन्तुं शक्यो हृदि शरीरि सः ॥

नक्षिणं वेदनिन्दाश्च देवतानाञ्च कुतसनम् । हे षष्ठ्याभिमानञ्च तैश्चाञ्च परिवर्जयेत् ॥

न ब्राह्मणान् परिवदेन्नचवाणि न निर्दिशेत् । विधिपचस्य नो ब्रूयात्तथासायुर्न रिच्यते ॥

कला सूत्रपूरीषे तु रथ्यामात्रस्य वा पुनः । पादप्रचालनं कुर्यात् स्वाध्याये भोजने तथा ॥

संयाव' कसर' मास' शक्य' लो' पायस' तथा । आत्मार्थं न प्रकृत्यं देवार्थं नु प्रकल्पयेत् ॥

मन्थयेच्छास्त्रद्वयानि पर्वसपि विवर्जयेत् । उदस्य' खय' सततं शौचं कुर्यात् समाहितः ॥

उभे सूत्रपूरीषे तु दिवा कुर्यादुदह'खः । दक्षिणामिमुखो रात्रौ तथाह्नायुर्न रिच्यते ॥

अवलोक्यो न चादर्शो मलिनो वृद्धिमत्तरः । न चाज्ञातां स्त्रियं गच्छेद्भूमिणीं वा कदाचन ॥

उदकशिरा न स्तपेत् तथा प्रत्यकशिरा न च । प्राक्शिरासु स्तपेद्विज्ञानयवा दक्षिणा शिराः ॥

न भग्ने नाऽवदीर्घे च शयने प्रसृपीत च । नान्धर्मानेन संयुक्ते न च तिर्यक्शराचन ॥

न नम्रः कर्हचित् शयात्रनिशयां कदाचन । खाला च नाऽवच्छेजेत् गानाणि रुचिचक्षणः ॥

नोत्पृजेत् पुरीषश्च चेन्न शमस्य चात्किं । उभे सूत्रपूरीषे तु नाऽप्यु कुर्यात् कदाचन ॥

प्राङ्मुखो नित्यमश्रीवाहयतोऽन्नमङ्गलस्यन् । प्रकन्दयेच्च मनसा मुक्ता चाभिसुपस्येत् ॥

आयुष्यं प्राङ्मुखो मुङ्क्ते चतुर्भुङ्क्ते उदङ्मुखः । धन्यं पश्यान्मुखो मुङ्क्ते यशस्यं दक्षिणामुखः ॥

सूत्रं नोत्पृष्टता कार्यं न भक्ष्यं न गोमत्रे । प्राङ्पादस्य मुञ्जीत नाद्रं पादस्य स'विशेत् ॥

प्राङ्पादस्य मुञ्जानो वर्षाणां जीवते शतम् । त्रीणि तेजांसि नोच्छिष्ट आहरेत् कदाचन ॥

अग्निं गां ब्राह्मणश्चैव तथाह्नायुर्न रिच्यते । त्रीणि तेजांसि नोच्छिष्ट उदीचेत् कदाचन ॥

सूर्याचन्द्रमसौ चैव नचवाणि च सर्वशः । ऊर्ध्वं प्राणाश्रुतकामानि नूनः स्वविर श्रयति ॥

सत्यत्यागाभिवादयाभ्यां पुनस्तान् प्रतिपद्यते । अभिवादयैत हृदाश्च दयाचै' वासन' स्वयम् ॥

कृताञ्जलिहस्तादीन् गच्छन् पृष्ठतोऽन्वितात् । नचाहीनासने निम्ने निम्नकांस्यञ्च वज्रयेत् ॥

नैकवस्त्रेण भीक्ष्यं न नम्रः खातुमर्हति । खल्वयं नैव नम्रे न नोच्छिष्टोऽपि स'विशेत् ॥

उच्छिष्टो न स्य'श्चोष' सर्वे प्राणास्तदायथाः । कैशप' प्रहाराश्च शिरस्ते तानि वर्जयेत् ॥

न स'हताभ्यां पाणिभ्यां कण्ठवेदान्नमः शिरः । नचाभीक्ष' शिरःश्चायाचयासायुर्न रिच्यते ॥

शिरःखातस्य तैल्य नाह' किञ्चिदपि स्य'येत् । तिलसट' नचः श्रायाचयासायुर्न रिच्यते ॥

गुरुणा चैव निर्वन्तो न कृतव्यः कदाचन । अनुमान्यः प्रसादय गुरुः क्रुद्धो युधिष्ठिर ॥

सत्यमिष्ट्याप्रहतेऽपि वर्तितव्यं गुराविह' । गुरुनिन्दा दहत्यायुर्नगुणाणां न स'शयः ॥

दूरादावसथान्मूत्रं दूरात् पादावसीचनम् । उच्छिष्टोत्सर्जनश्चैव दूरे कार्यं हितैषिणा ॥
 रक्तमाख्यं न धार्यं स्वाच्छुक्लं धार्यन्तु पण्डितैः । वर्जयिष्या तु कमलं तथा कुवलयं प्रभो ॥
 पर्वकालेषु सर्वेषु ब्रह्मचारी सदा भवेत् । समानमेकपात्रे तु मुञ्जेन्नास्त्रं जनेश्वर ॥
 सायं प्रातश्च मुञ्जीत नान्तराले समाहितः । वालिनं तूपमुञ्जीत परयाज्ञं तथैव च ॥
 वाग्यतो नैकवस्त्रस्य नाऽस'विष्टः कदाचन । भूसौ सदैवनाश्रीयान्नानासीनो न शब्दतः ॥
 तोयपूर्वं प्रदायाऽन्नमतिविभगो विधापते । पथाङ्गुलीत मेधावी नचाप्यन्नमना नरः ॥
 समानमेकपङ्क्त्या तु भीक्ष्यमन्नं नरेश्वर । विष' हलाहल' मुङ्क्ते योऽप्रदाय सु'हृत्ते ॥
 पराऽपवाद' न ब्रूयान्नाऽप्रियञ्च कदाचन । न मन्युः कश्चिदत् पायः पुरुषेण भवादिना ॥
 न दिवा मेथुनं गच्छेन्नकान्यां न च वन्यकौम् । नचाज्ञातां स्त्रियं गच्छेत्तथायुर्विन्दते मङ्गल ॥
 हृत्तो ज्ञातिसाया निम्नं दरिद्रो यो भवेदपि । गृहे वासयितव्यस्तं धन्यमायुषमेव च ॥

(महाभारत)

भावाय—पापसे पाप और पुण्यसे धर्म उत्पन्न होता है । अपूज्य-
 की पूजा और पूज्यकी अपूजा करनेसे मनुष्य नरहत्याकी समान
 पापी ठहरता, इससे ऐसा न करना चाहिये । जो प्रतिदिन प्रातः-
 कालमें उठ तृतीसे सम्मति पूछता, किसीसे कुछ नहीं लेता, स्वयं
 दूसरेको देता, माता पिताका पालन करता, अपनी स्त्रीमें ही
 लक्ष रहता, सब देवतामें प्रेम, सब धर्मीमें श्रद्धा रखता, सब
 बोलता और किसीकी बुराई नहीं करता, वह सदा सुखी रह
 बड़ेसे बड़े दुर्गतिसे पार हो जाता है । दूसरेकी स्त्री वा धन हरण
 न करना, किसीकी निन्दा चुगली न करना, बालक, वृद्ध एवं
 दासको विना दिये स्वयं भोजन न करना, क्षमा रखना, दान, तप
 एवं सत्यमें रत रहना, पुरीष एवं मूलको न देखना एवं अधिक
 काल वहां पर ठहरना भी न चाहिये । दूसरेका जुता एवं वस्त्र
 न पहनना, भमावस्था, पौर्णमासी प्रभृति पुण्यकालमें सदा ब्रह्म-
 चर्यसे रहना, मांसादि अभक्ष्य पदार्थोंको न खाना, दिनमें उत्तर-
 मुख और रात्रिमें दक्षिणमुख हो मूल-पुरीष त्याग करना चाहिये ।
 उत्तरशिर करके तथा टुटी फटी शय्यापर नहीं सोना और नम
 हो भोजन न करना । प्रतिदिन पैर धोकर उत्तर या पूर्वमुख बैठ मौन
 हो भोजन करना, एकपङ्क्ति बैठे हुये कोई चीज, विना दूसरेकी दिवे
 आप नहीं खाना, क्योंकि वह हलाहल विषके समान हो जाती
 है । दूसरेकी निन्दा या अप्रिय वचन नहीं कहना, कभी अति-
 क्रोध न करना, दिनमें मेथुन न करना, एवं कन्या और वन्यकी
 साथ भी रमण न करना । उपरोक्त आचरणको शास्त्रकारोंने
 आचार बतलाया है । इसे सेवन करनेसे मनुष्य इस लोकमें धर्मात्मा,
 धनवान्, यशस्वी, एवं निरामय रहता और परलोकमें स्वर्गका
 सुखानुभव करता है ।

चर-णिनि । १ शास्त्रोक्त अनुष्ठाता, कदीम चाल चलनेवाला ।

आचारी (सं० स्त्री०) आ-सम्यक् चारः प्रसरणं यस्याः, गौरादि० जातिवाद्वा ङीप् । १ हिलमोचिका, कोई सब्जी । (पु०) २ रामानुज साम्प्रदायिक वैष्णव । (त्रि०) ३ शास्त्रोक्त अनुष्ठाता, कदीम चाल पकड़नेवाला ।

आचार्य (सं० पु०) आ-चर-ण्यत् । इन्द्रवरुणभयवर्षवर्द्ध-सहस्रिमारण्यवयवनमातुलाचार्याणामातुक् । पा ४।१।२८ । १ गुरु, सुरश्रद्ध, उस्ताद । मनु कहते हैं,—जो ब्राह्मण शिष्यको उपनयन पढ़ना सकल्य और सरहस्य वेद पढ़ाता, वही वेदाध्यापक आचार्य कहा जाता है । किन्तु आजकल वेदकी आलोचना नहीं होती, इसलिये बालकको जो उपनयन कर गायत्री सुनाता, वही आचार्य है । २ मत-संस्थापक शङ्कराचार्यादि । ३ यज्ञादिमें क्रमोपदेश । ४ पूज्यमात्र । ५ शिक्षकमात्र । ६ भट्टाचार्य । सचराचर हम गणक वा देवज्ञ ब्राह्मणको आचार्य अथवा ग्रहाचार्य कहा करते हैं । (स्त्री०) आचार्या । आचार्यकी पत्नी आचार्यानी कहलाती है ।

आचार्यक (सं० स्त्री०) आचार्यस्य कर्म भावो वा, वुक् । १ आचार्यका कर्म वा धर्म, सुरश्रद्ध पाकका काम । (त्रि०) २ आचार्यसे निकलनेवाला, जो सुरश्रद्ध पाकसे पैदा हो । (स्त्री०) आचार्यता ।

आचार्यता (सं० स्त्री०) गुरुका कर्म, उस्तादी ।

आचार्यत्व (सं० स्त्री०) आचार्यता देखो ।

आचार्यदेव (सं० पु०) अपने इष्टदेवको गुरु माननेवाला व्यक्ति, जो शख्स परमेश्वरको सुरश्रद्ध मानता हो ।

आचार्यभोगीन् (सं० त्रि०) आचार्यभोगाय हितम्, ख । आचार्यके भोग योग्य, सुरश्रद्धको खुश करनेवाला, जो उस्तादके काम लायक हो ।

आचार्यमित्र (सं० त्रि०) आचार्यो मित्रः । अति-शय पूज्य, बुजुर्गवार, काबिल ताजीम ।

आचार्यवान् (सं० त्रि०) आचार्य रखनेवाला, जिसके सुरश्रद्ध रहे । (स्त्री०) आचार्यवती ।

आचार्यानी (सं० स्त्री०) आचार्यपत्नी, सुरश्रद्धकी औरत ।

आचार्यी (सं० त्रि०) आचार्य-विषयक, सुरश्रद्धका । आचार्योपासन (सं० स्त्री०) आचार्यकी सेवाश्रद्धा, सुरश्रद्धको परमांबरदारो ।

आचिख्यासा (सं० स्त्री०) आख्यातुमिच्छा, आख्या-सन्-अ प्रत्ययादिति अ टाप् । आख्यानके निमित्त इच्छा, बोलनेकी खाहिश ।

आचिख्यासु (सं० त्रि०) आख्यातुमिच्छुः, आख्या-सन्-उ । आख्यानके निमित्त इच्छुक, बोलनेका खाहिशमन्द ।

आचिख्यासोपमा (सं० स्त्री०) अलङ्कार-शास्त्रको एक उपमा ।

आचित् (वे० त्रि०) ध्यानमें लानेवाला, जो खयाल करता हो ।

आचित (सं० त्रि०) आ-चि-क्त । १ व्याप्त, मामूर, भरा हुआ । २ गुम्फित, बंधा हुआ । ३ ग्रथित, गुंथा हुआ । ४ संग्रह किया हुआ, इकट्ठा । (स्त्री०) ५ द्विसहस्र पलका मानविशेष, पचीस मनकी तौल । (पु०) ६ शाकट भार, एक गाड़ी माल ।

‘आचित्’ दशभारालुः शकटोभार आचितः ।’ (अमर)

आचितादि (सं० पु०) आचित आदिर्यस्य । गण-विशेष । इसमें निम्नलिखित शब्द पठित हैं,—आचित, पर्याचित, अस्थापित, परिगृहीत, निरुक्त, प्रतिपन्न, अपस्मिष्ट, प्रस्मिष्ट, अपहत, उपस्थित, संहिता ।

आचितिक (सं० त्रि०) आचित मानके बराबर, जो पचीस मन चीज पका रहा हो ।

आचितीन, आचितिक देखो ।

आचिन्त्य (सं० त्रि०) १ सर्वप्रकार सोचने योग्य, सबतरह खयालमें लाने काबिल । (हिं० वि०) २ अचिन्त्य, खयालमें न आनेवाला ।

आचोर्ण (सं० त्रि०) भुक्त, आस्तादित, खाया हुआ ।

आचु (सं० पु०) आच्छुक वृक्ष, आलका पेड़ ।

आचूगिदेव—प्रथम परमर्दिदेवके पिता । बम्बई प्रान्तस्थ धारवाड़ जिलेकी रोन तहसीलके कोड़ीकोय गांवमें मूल ब्रह्मदेवके मन्दिरकी दीवारपर इनके समग्रका एक शिलालेख विद्यमान है ।

आचूषण (सं० लो०) आ-चूष-लुट्। १ ओष्ठादि संयोग विशेष द्वारा आकर्षण, चुसाव, दमकशी, जज्ब। करणे लुट्। २ शरीरस्थ रक्त चूसनेकी सींगी। ३ सींगीका लगाना।

आचेश्वर (सं० पु०) आच द्वारा प्रतिष्ठित मन्दिर।
आच्छक (सं० पु०) रञ्जनद्रुम, आलका पेड़। यह लाल रङ्ग तैयार करनेमें लगता है।

आच्छद (वे० स्त्री०) आच्छाद्यतेऽनेन, आ-छद-णिच्-क्लिप् ङ्रस्त्रः णिच् लोपः। १ आच्छादन, ढकान, ओहार। २ कोष, विधान, म्यान।

आच्छद (सं० पु०) अ-छद-घ। आच्छादनवस्त्र, ढांकनेका कपड़ा।

आच्छदविधान (वे० स्त्री०) रक्षा रखनेका प्रबन्ध, हिफाजत करनेका इन्तिजाम।

आच्छन्न (सं० त्रि०) आ-छद-क्त। १ आवृत, ढका, छिपा या लिपटा हुआ।

आच्छाक, आच्छक देखो।

आच्छाद (सं० पु०) आच्छाद्यतेऽनेन, आ-छद-णिच्-करणे घञ्, णिच् लोपः। आवरण, परदा।

आच्छादक (सं० त्रि०) आच्छादयति, आ-छद-णिच्-श्वल्, णिच् लोपः। आच्छादनकर्ता, ढाकने या छिपानेवाला।

आच्छादन (सं० लो०) आच्छाद्यतेऽनेन, आ-छद-णिच् करणे लुट्, णिच् लोपः। १ आवरण, परदा। २ अन्तर्धान, छिपाव। ३ कोष, म्यान। ४ वस्त्र। कपड़ा। ५ लवादा, भूल, ओहार। ६ छतका ढांचा। यह लकड़ीका वनता है। ७ कार्पास, कपास।

आच्छादनफला (सं० स्त्री०) रक्तकार्पास, लाल-कपास।

आच्छादनी (सं० स्त्री०) कार्पास, कपास।

आच्छादित (सं० त्रि०) आ-छद-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। १ आवृत, ढका हुआ। २ गुप्त, पोशीदा।

आच्छादिन् (सं० त्रि०) आच्छादयति, आ-छद-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। आच्छादनकारी, ढाकनेवाला। (स्त्री०) आच्छादिनी।

आच्छाद्य (सं० त्रि०) आच्छाद्यते, आ-छद-णिच्-

कर्मणि यत्। १ आच्छादनीय, ढाकने लायक। २ गोप्य, छिपाये जानेवाला। (अव्य०) आ-छद-णिच्-त्वप्, णिच् लोपः। आच्छादन करके, पहनकर, छिपाते हुये।

आच्छिद्य (सं० अव्य०) १ काटकर, फांककर। २ अलग करते हुये, खयाल न लाते हुये। ३ तथापि, फिर भी।

आच्छिन्न (सं० त्रि०) आ-छिद-क्त। १ बलद्वारा गृहीत, जोरसे लिया या छीना हुआ। २ सम्यक् रूप छिन्न, अच्छीतरह कटा हुआ।

आच्छुक (सं० पु०) आ-छो बाहु० डु संज्ञायां कन्। स्वनामख्यात वृक्ष, आलका पेड़।

आच्छुरित (सं० लो०) आ-चुर्-क्त-इट्। १ शब्दयुक्त हास्य, कृहकृहा, खिलखिलाहट। २ नखाघात, नाखूनकी रगड़। ३ नखद्वारा वाद्य, उंगलीके नाखून एक दूसरे पर रगड़ आवाजका निकालना। (चि०) ४ मिश्रित, मिलावटी। ५ उच्छेदित, नोचा, खुरचा या बकोटा हुआ। ६ उत्तेजित, खिजाया हुआ।

आच्छुरितक (सं० लो०) आच्छुरित एव, आच्छुरित-स्वार्थे कन्। १ शब्दयुक्त हास्य, खिलखिलाहट। २ नखाघात, खराश, चुकटा, चुहटा।

‘आदाच्छुरितकं हासनखाघातप्रभेदयोः।’ (विश्व)

आच्छेद (सं० पु०) आ-छिद-घञ्। १ समन्तात् छेदन, पूरी काट-छांट। २ ईषत् छेदन, थोड़ी कटायी।

आच्छेदन (सं० लो०) आच्छेद देखो।

आच्छोटन (सं० लो०) आ-स्फुट्-लुट्, पृषो० स्फस्त्र्यच्छ। १ चुटकीका बजाना। २ उंगलीका चिटकाना।

आच्छोटित (सं० त्रि०) आ-स्फुट्-क्त, पृषो० स्फस्त्र्यच्छ। १ फोड़ां हुयी, जो चिटकायी गयी हो। २ जो चुटकी बजानेके काम आयी हो। यह शब्द अङ्गुलि प्रभृतिका विशेषण है।

आच्छोदन (सं० लो०) आच्छिद्यतेऽत्र, आ-छिद-लुट्, पृषो० इतधोत्। मृगया, शिकार।

आच्युतदत्ति (सं० पु०) अच्युत-दत्तस्यापत्यम्, अच्युत-दत्त-इज्। आयुधजीवि-विशेष, कीयी लड़ाका कीम।

आच्युतदत्तीय (सं० पु०) दामन्यादि० स्त्रायें छ ।

एकत्रस्थित अनेक आयुधजीविविशेष ।

आच्युतन्ति (सं० पु०) अच्युतं तस्यापत्यम्, इज् ।

आयुधजीविविशेष, कोथी लड़ाका कौम ।

आच्युतिक (सं० पु०) अच्युतस्य छात्रः, काश्चादि०

ष्टज् जिठ् वा । अच्युतका छात्र । (स्त्री०)

आच्युतिकी ।

आछत (हिं० क्रि० वि०) रहते, होते, समच्च, सामने ।

आछना (हिं० क्रि०) १ रहना, ठहरना । २ होना,

मौजूद मिलना ।

आछा, अच्छा देखो ।

आछी (हिं० वि०) १ भक्षक, खानेवाला । २ भली,

जो बुरी न हो ।

आछिप (हिं०) आछिप देखो ।

आछी, अच्छा देखो ।

आछोटण (हिं०) आछोटन देखो ।

आज (सं० स्त्री०) आज्यतेऽनेनेति, आ-अञ्च् घञर्थे

क । १ घृत, घी । २ छागघृत, बकरीका घी ।

(पु०) ३ गृध्र, उक्ताव, गीध । (त्रि०) ४ छाग-

जात, बकरीसे पैदा हुआ । (हिं० क्रि० वि०) ५ अद्य,

इमरोज । (पु०) ६ विद्यमान दिवस, गुजरनेवाला

दिन ।

आजक (सं० स्त्री०) आजानां समूहः, बुज् । छाग-

समूह, बकरियोंका झुण्ड ।

आजकरीण (सं० त्रि०) आजकेनोपलक्षिता रोणी

नाम काचित् नदी तस्याः सन्निकृष्ट स्थानादि अण् ।

रोणी । या ४।२।७८ । छागसमूहयुक्त नदीके निकटस्थ,

बकरियोंके झुण्डसे भरे हुये नदी किनारेका । यह

शब्द देशादिका विशेषण है ।

आजकल (हिं० क्रि० वि०) सम्प्रति, अधुनातनकाल,

दरौंविता, इन दिनों ।

आजकार (सं० पु०) अजस्य विष्णोरयम्, अज्-

अण्, आकारः शकम्बादि । शिवका वृष । त्रिपुरा-

सुरके वधकाल वृषका आकार बनाने और काम

करनेसे विष्णुको आजकार कहते हैं । विष्णुके वृष-

रूप धारणका विषय हरिवंशमें लिखा है ।

आजकाल, आजकल देखो ।

आजकीर (सं० स्त्री०) छागदुग्ध, बकरीका दूध ।

यह गव्यगुण, घाही, दीपन, लघु और सर्वरोगघ्न होता

है । (मदनपाल)

आजगर (सं० त्रि०) वृहत् सर्प-सम्बन्धीय, अजगरी ।

महाभारतके एक अध्यायको आजगर कहते हैं ।

आजगव (सं० स्त्री०) अजगवमेव, प्रज्ञावण् ।

१ शिवका धनुष् । २ अजगवकी तरह अति कठिन

धनुष ।

आजघेनवि (सं० पु०-स्त्री०) अजेव घेनुरस्य, पृषो०

पुं-वङ्गावः, तस्यापत्यं वाह्वादेराकृतिगणत्वादिव् ।

छागीरूप घेनुयुक्त मुनिका अपत्य, बकरीसे गोका काम

लेनेवाले फकीरकी औलाद ।

आजनन (सं० स्त्री०) आ अभिव्याप्तौ जननम्, प्रादि

समा० । १ विख्यात जन्म, मशहूर पैदायश । (त्रि०)

आ विख्यातं जननं यस्य, बहुव्री० । २ विख्यात-

जन्मा, शोहरतके साथ पैदा होनेवाला । (अव्य०)

जननात् आ सीमार्थे, अव्ययी० । ३ जन्म पर्यन्त,

जीते जी ।

आजनवनीत (सं० स्त्री०) छाग-दुग्ध-जात नवनीत,

बकरीके दूधका मक्खन । यह मधुर, कषाय,

त्रिदोषघ्न, चक्षुष्य, दीपन और बल्य होता है ।

(राजनिघण्टु)

आजनि (वे० स्त्री०) हांकनेकी छड़ी ।

आजन्म (सं० अव्य०) जन्मनः आ पर्यन्तम्, सीमार्थे

अव्ययी० । जन्मपर्यन्त, उन्मभर ।

आजन्मन्, आजन्म देखो ।

आजन्मसुरभिपत्र (सं० पु०) आजन्मं जन्मपर्यन्तं

सुरभि सुगन्धि पत्रं यस्य, बहुव्री० । मरुवका वृक्ष,

नागद्यौना । (स्त्री०) आजन्मसुरभिपत्रा ।

आजमखां—खां-आजमके पुत्र । इन्हें लोग प्रायः

मिर्जा अजीज कोका कहते, क्योंकि इनकी माताने

धात्रीरूपसे पकवरको दूध पिलायी थी, यह भी उन्हें

खिलाते रहे । सर्वोत्तम सेनापति होनेसे सम्हाट्

पकवरने अपने शासनके १६वें वर्ष इनको आजमखां

उपाधि प्रदान किया । इन्होंने कितने ही वर्ष

गुजरातका शासन चलाया था। सन् १५८२ ई०को दरबारमें बहुत दिन उपस्थित हो न सकनेसे अकबरने इन्हें दिल्ली बुलाया। किन्तु इनके मनमें हज्र जानकी लगी थी। फिर इनके मित्रोंने यह भी कहा,— बादशाह जरूर नाराज मालूम पड़ते और आपको केवल कैद करनेका अवसर ढूँढ़ते हैं। उस पर यह जहाज़में अपने कुटुम्बको बैठा और खजाना लाद बिना कुछ कहे-सुने हजाज़को रवाना हो गये। किन्तु वहाँ रहनेमें अड़चन आनेसे इन्हें भारत लौटना और बादशाहके सामने हाज़िर होना पड़ा था। बादशाहने प्रार्थना सुनते ही इन्हें क्षमाकर पूर्वपदपर प्रतिष्ठित कर दिया। सन् १६२४ ई०को इन्होंने अहमदाबादमें प्राण छोड़ा था। इनका शवदेह दिल्ली मेजा और वहीं गाड़ा गया। इनकी कब्र मरमरकी बनी और ६४ खम्भे लगनेसे 'चौसठखम्भा' कहलाती है। इनका महल अहमदाबादमें सबसे बड़ी इमारत है। आजकल उसमें कंदी रखे जाते हैं।

आजमगढ़—१ युक्तप्रान्तके बनारस विभागका एक जिला। यह अक्षा० २५° ३८' एवं २६° २५' उ० और द्रवि० ८२° ४२' तथा ८३° ४८' पू०के मध्य अवस्थित है। इसका क्षेत्रफल २१४७ वर्गमील है। आजमगढ़से उत्तर फैजाबाद तथा गोरखपुर, पूर्व बलिया, दक्षिण गाजीपुर और पश्चिम जौनपुर एवं सुलतानपुर जिला है। यह गङ्गाके मैदानका एक अंश और आकार-प्रकारमें विषम चतुष्कोण-जैसा देख पड़ता है। इसकी भूमि समुद्रतलसे २५५ फीट ऊँची है। दक्षिण-पूर्वकी ओर घरातल ढालू रहनेसे नदियां भी उधरकी ही बहती हैं। दक्षिणमें कितने ही भील भरे हैं। इस जिलेमें रेह बहुत होता, किन्तु उससे नमक निकालनेपर व्यय भी कम नहीं पड़ता। जङ्गलमें ढाक और बबूलकी खूब बढ़ती है। घाघरा प्रधान नदी है। दूसरी नदियोंके नाम यह हैं,—तुनिस, छोटी सरयू, फरायी, बसनायी, गङ्गी, बेसु, कुंवार, उंगरी, माभूयो, सिलानी, कयार और सुखसोयी। गभीर वन, कोतल, जम्बावन, गुमाडीह, कोयल, सखोना, पकरीपेवा, नरजा और रतौयी सबसे

बड़े भील हैं। धातुमें केवल कच्चा ही पाया जाता है।

इतिहास—प्रवाद सुनते, कि आजमगढ़के आदिम निवासी राजभर, सूरिरी, सङ्गरिया और चेहू हैं। कहते हैं, किसी समय इस जिलेका प्रधान भाग राजभरोंके ही अधिकारमें रहा। आजमगढ़पर तीन बार घोर आक्रमण पड़ा है। पहले राजपूतोंने आकर राजभरोंसे भूमि छोन ली थी। पीछे भूमिहार ब्राह्मण पड़चे। सुसलमानोंके धावा मारनेपर यह जिला दिल्लीकी बादशाहतमें मिला लिया गया था। सन् ई०के १४वें शताब्दान्त जौनपुरने अपना स्वातन्त्र्य प्रतिष्ठित किया और उसके शरकी नृपतियोंने आजमगढ़पर भी अपना अधिकार जमाया। किन्तु उनके वंशका पतन होनेपर यह जिला फिर दिल्लीमें मिल गया था। सिकन्दरपुरका किला सिकन्दर-लोदीने अपने नामपर बनवाया रहा। किन्तु सन् ई०के १७ वें शताब्दान्त गौतम राजपूतोंने अस्त्रशस्त्रके बल आजमगढ़ अधिकार कर लिया। गौतम-वंशके अभिमानचन्द्रसेन सन् १६०० ई०के समय बड़े थे। अन्तकी वह सुसलमान हो गये और अकबरके अधीन रह इतना धन कमाया, कि इस जिलेमें दौलताबादकी जमौन्दारी खरीद सके। अभिमानचन्द्रसेन और उनके भाईके लड़कोंने अपने पड़ोसियोंको यहांतक लटा, कि सन् ई०के १८ वें शताब्दारभमें गोमती नदी तथा वर्तमान गाजीपुर जिलेके मध्यका देश उनके हाथ जा पड़ा था। फिर भी लखनऊके खान्खाना नवाब कोई नब्ब हजार रुपये वार्षिक आजमगढ़से कर पाते रहे। किन्तु सन् ई०के १८वें शताब्दारभमें इस नगरके नवाब महावत खाने कर देना न चाहा, अपनी राजधानीको सुरक्षित बनाया और तिलासरेमें आगे बढ़ जौनपुरकी फौजको युद्धमें बिलकुल हरा दिया। जौनपुरके साहाय्य मांगनेपर लखनऊके नवाब शहादत खाने महावत खांसे लड़नेको बहुत बड़ी सेना भेजी थी। महावत खां गोरखपुरको भागे, किन्तु पकड़ लिये गये। सन् १७५८ ई०को आजमगढ़ अवधका

चकला बना था। सिवा नादिर खां डाकूकी लूट-मारके सन् १८०१ ई० तक इस जिलेमें लखनवी वजीरोंके अधीन शान्ति प्रतिष्ठित रही। इसी वर्ष आजमगढ़ उस करके बदले ईष्ट इण्डिया कम्पनीको सौंपा गया, जो लखनऊके खजानेसे अंगरेजोंको सामरिक धनरूप साहाय्य और अन्य-अन्य व्ययके लिये मिलता था। नादिरखाने अपनी जमीन् छीन लेनेकी नालिश कम्पनीपर की, किन्तु कोई सुनायी न हुई; केवल राजाका उपाधि और पेन्शन उनके लड़कोंको दिया गया। फिर कोई बड़ी बात पड़ी न थी। किन्तु सन् १८५७ ई० की ३री जूनको १७ वीं रेजीमेण्टके देशी सिपाहियोंने बलवा उठा कुछ अफसर मार डाले और सरकारी खजाना फौजाबाद ले गये। युरोपीय गाजीपुरको भागे थे। किन्तु १६ वीं जूनको गाजीपुरसे फौजने आकर फिर इस नगरपर अधिकार जमा लिया। १८ वीं जुलाईके युद्धमें अंगरेजोंको पीछे हटना और २८वींके दिन दानापुरमें बलवा भड़क उठनेसे गाजीपुर वापस जाना पड़ा था। ८वींसे २५वीं अगस्ततक आजमगढ़ पलवारोंके अधीन रहा, किन्तु २६वींको राजभक्त गोरखोंने उन्हें निकाल बाहर किया। २० वीं सितम्बरको पलवारोंके प्रधान वेषीमाधवके हार जानेपर अंगरेजोंका फिर अधिकार प्रतिष्ठित हुआ था। नवम्बरमें बलवायी अतरोलियेसे निकाले गये। सन् १८५८ ई०के जनवरी मास गोरखे शमशेरजङ्गके अधीन गोरखपुरसे फौजाबादको आगे बढ़े, जिसपर बलवायी फिर इस नगर वाध्य हो वापस आये। फरवरी मासके मध्य कुंवरसिंह लखनऊसे भाग इस जिलेमें दाखिल हुये थे। अतरोलियेमें अंगरेजी फौजने उनपर आक्रमण किया, किन्तु हारकर आजमगढ़को पीछे हटना पड़ा। कुंवरसिंहने अप्रैल मासके मध्यतक इस नगरको घेर रखा था। अन्तको वह हार गये और गङ्गा पार करते अपना प्राण खो बैठे। किन्तु अक्तोबर मास तक बलवायी तहसील और थाने लूटते रहे थे। पीछे सेनापति कैलीने इस जिलेमें विद्रोहियोंको दबा शान्ति स्थापित की।

प्रबल—इस जिलेमें कितने ही दुर्गोंका ध्वंसावशेष पाया जाता है। कहते, यह किले भरोके समय बने थे। कितने ही किले बहुत बड़े देख पड़ते, किन्तु उनके बननेके दिनों और बनवानेवालोंके नामोंका पता हम नहीं पाते। घोसीका किला सबसे बड़ा है। कहा जाता, कि राजा घोषने पिशाचोंके साहाय्यसे उसे बनवाया था। यही बात कुंवारसे नङ्गायी तकके रन्ध्र और वृन्दावन किलेसे नर्ज तालतककी कुल्याके विषयमें भी प्रसिद्ध है। गोपाल परगनेके महाराजगञ्जमें भैरवका प्राचीन मन्दिर विद्यमान है। लोग कहते हैं,—किसी समय अयोध्या नगर इतना विस्तृत रहा, कि उसमें बयालीस बयालीस कोस दूर चार फाटक लगे थे; भैरव-मन्दिर पूर्व द्वारका ध्वंसावशेष है।

इस जिलेमें निम्नलिखित नगर बड़े हैं,—१ आजमगढ़, २ मज्ज, ३ सुवारकपुर, ४ मुहम्मदाबाद, ५ दुबरी, ६ कोयागञ्ज, ७ वालिदपुर और ८ सराफभौर।

कृषि—आजमगढ़की भूमि कहीं बांगर और कहीं कच्चार है। मट्टी तीन तरहकी होती है,—मट्टियारी, करायल और काबिस। अब जसरमें भी चावल पैदा करने लगे हैं। किन्तु इस जिलेकी कृषि प्रधानतः सुवृष्टिपर ही निर्भर है। खरीफमें चावल, अरहर, ज्वार और रबीमें गेहूं, यव, चना, मटर, वगैरह पैदा होता है। इस जिलेमें सरकारी नहर नहीं चलती। क्षत्रिय एवं वेश व्यापार करते और पटना, मिर्जापुर तथा कलकत्तेको पैदावार भेज देते हैं।

वाणिज्य-व्यवसाय—आजमगढ़का व्यापार जल तथा स्थल दोनों मार्गसे होता है। घाघरा नदी उत्तर तथा पश्चिमसे अन्न मंगाने और बङ्गाल एवं पूर्वको चीनी भेजनेके काम आती है। इस नगरसे गाजीपुर, जौनपुर, गोरखपुर, बलिया और फौजाबादको पक्की सड़क गयी है। चीनी, गुड़, नील, अफीम, मोटा कपड़ा तथा जलानेकी लकड़ी यहांसे बाहर भेजते और अन्न, विलायती कपड़ा एवं सूत, कपास, रेशम, तम्बाकू, नमक, लोहालङ्गड़, दवा, चमड़ेकी चीज, पत्थरकी चट्टी वगैरह दूसरीजगह से मंगाते हैं।

पहले आजमगढ़से कलकत्तेकी राह कितनी ही साफ, चीनी युरोप भेजी जाती थी। किन्तु अब वह बात नहीं रही।

साधारणतः इस जिलेका स्वास्थ्य अच्छा रहता, किन्तु वर्षा और शरत् ऋतुमें ज्वरका प्रकोप बढ़ जाता है। २ अपने जिलेकी तहसील। इसका क्षेत्रफल ४४२ वर्गमील है। ३ अपनी तहसीलका नगर। यह तोन्स नदीपर बनारससे ८१ मील उत्तर अक्षा० २६° ३' ७" और द्राघि० ८३° १३' २०" पू० अवस्थित है। आजमगढ़ नगरका क्षेत्रफल १३७४ एकर और लोक-संख्या प्रायः बीस हजार है। सन् १६६५ ई०को निकटके शक्तिशाली जमीन्दार आजमखाने यह नगर प्रतिष्ठित किया था।

आजमाना (हिं० क्रि०) आजमायश करना, परीक्षा लेना, जांचना।

आजमायश (फ्रा० स्त्री०) परीक्षा, जांच।

आजमार्य (सं० पु० स्त्री०) अजमारस्यापत्यम्, अजमार-स्थ, रेफात् परस्याकारस्य लोपः। कुर्वादिभ्यो षः। या ४। १। २। अजमारकी कन्या वा पुत्ररूप सन्तान, अजमारकी औलाद।

आजमीढ़ (सं० त्रि०) अजमीढ़ो नाम कश्चिद्देशः तत्र भवः, अण्। १ अजमीढ़-देश-जात, अजमीढ़ मुल्कका पैदा। (पु०) अजमीढ़स्य राजा अण्। २ अजमीढ़ देशका राजा। “तैः सत्कृतः सचतानाजमीढ़ो यथोचितं पाण्डुपुत्रान् समयात्।” (महाभारत)

आजमूत्र (सं० स्त्री०) छागमूत्र, बकरेका पेशाब।

आजमूदा (फ्रा० वि०) परीक्षित, जांचा या परखा हुआ।

आजयन (सं० स्त्री०) आ सम्यक् जायतेऽस्मिन्, आ-जि आधारे लुट्। युद्ध, लड़ायी।

आजरस (वै० अव्य०) जरापर्यन्तम्, सीमार्थे अजन्त अव्ययी०। १ जरा पर्यन्त, बुढ़ापे तक। (त्रि०)

आगता जरा यस्य, प्रादि० बहुव्री० अच् जरसादेशश्च।

२ जरामाप्त, बुढ़ा। “प्रजापति राजरसाय।” (ऋक् १०। ८५। ४३।)

(सं० पु०) ३ छागमांस-व्याध, बकरेकी गोश्तका खाड़ा।

आजवन (सं० स्त्री०) प्रपात, आक्रमण, युद्ध, धावा, हमला, लड़ायी।

आजवल्ल (सं० पु०) वनतुलसी, जङ्गली तुलसी।

यह कट, उष्ण, शीत, दाहकर, प्रिय, रुच, रुच्य, दीपक, लघु, पाकमें पित्तल, तिक्त, मधुर, सुख-प्रसव-एवं व्रण्य होता और वात, कफ, नेत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, अरुचि, विषकामला, कुम्भकामला, अनाहवात, शूल, अग्निमान्द्र, रक्तदोष, श्वास, कास, दंष्ट्र, हृत्-पार्श्व-वेदना, कण्ठ, कुष्ठ और वमनको दूर करता है। आजवल्लका सुगन्ध, कटु, उष्ण, दृढिकार, पित्तोत्पादक एवं निद्राजनक रहता और वमन, वात ग्रहवाधा, पार्श्वशूल, कास, श्वास, कफ, शोथ तथा अङ्गके दौर्गन्ध-को मिटाता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आजवस्तिक, आजवलेयः देखो। (स्त्री०) आजवस्तिका।

आजवस्त्येय (सं० स्त्री० पु०) अजवस्त्येः ऋषेरपत्यम्, शुभ्रादि० ढक्। अजवस्ति नामक ऋषिका पुत्र-कन्यारूप सन्तान। (स्त्री०) डीप्। आजवस्त्येयी।

आजवाह (सं० त्रि०) अजो वाह्यतेऽत्र, अज्-वह-णिच् आधारे घञ्, ३-तत्; अजवाहो नाम कश्चिद्देशः तत्र भवादि अण्। अजवाह देश जातादि, अजवाह मुल्कका पैदा वर्गैरह। बदरिकाश्रमसे उत्तरस्थ पर्वतमय उच्च स्थानका नाम अजवाह है। क्योंकि वहां लोग बकरेपर ही बोझ ढोते हैं।

आजवाहक, आजवाह देखो।

आजा (हिं० पु०) पितामह, जद, दादा, बापका बाप। (स्त्री०) आजी।

आजागुरु (हिं० पु०) गुरुका गुरु, उस्तादका उस्ताद।

अजातशत्रुव (सं० पु०) अजातशत्रोरपत्यम्, अजात-शत्रु-अण्। १ युद्धिष्ठिरके अपत्य, धर्मराजके लड़के। २ अजातशत्रु नामक राजाके अपत्य। ३ भद्रसेन नामक राजा।

आजाति (सं० स्त्री०) आ-जन्-क्तिन्। १ आजनन, जन्म, पैदायश। (अव्य०) जातिपर्यन्तम्, सीमार्थे अव्ययी०। २ जन्म पर्यन्त, उन्मथर। ३ जातिपर्यन्त, कौमितक।

आजाद (फा० वि०) १ मुक्त, जो बंधा न हो।
२ निश्चिन्त, बेपरवा। ३ स्वतन्त्र, जो मातहत न हो।
४ निर्भय, बेखौफ। ५ स्वतन्त्रभाषी, बेधड़क बोलने-
वाला। ६ उद्धत, अक्लड़। ७ अकिञ्चन, जो गरीब न
हो। ८ नामधाम-रहित, गुमनाम। (पु०) ९ साधु-
सम्रदाय विशेष, एक फकीर। यह मुसलमान होते
और दाढ़ी, मूँछ तथा भौं सुंड़ा डालते हैं। इनमें
न तो कोयी रोज़ा रखता और न नमाज हो पढ़ता
है। आजाद किसी किसीके सफ़ी और अद्वैतवादी
होते हैं।

आजादगी (फा० स्त्री०) आजादी, स्वतन्त्रता।

आजादाना (फा० वि०) आजाद, स्वतन्त्र, जो
मातहत न हो।

आजादी, आजादगी देखो।

आजाय (सं० त्रि०) अजं क्वागं अत्ति तस्य मुने-
रपत्यम्, अज-अद्-अण् गर्गादि० यञ्, उप० समा०।
अजभक्षक मुनिका अपत्य। (स्त्री०) डीप् य-लोपः।
आजादी। अजभक्षक मुनिकौ कन्या।

आजान (सं० अव्य०) जनो जननमेव, जन-अण्
सीमार्थे अव्ययी०। १ सृष्टिकाल पर्यन्त, दुनिया रहने
तक। (पु०) २ उत्पत्ति, पैदायश। ३ जन्मभूमि,
वतन।

आजानज (सं० त्रि०) आजानां जायते, आजान-
जन-ङ। सृष्टिकाल पर्यन्त जात, दुनियाके बननेतक
पैदा हुआ। वेद दो प्रकारके होते हैं, आजानवेद
और कर्मवेद। सृष्टिकाल-प्रकाशित आजान और
कर्मकाल प्रकाशित कर्मवेद कहते हैं।

आजानदेव (सं० पु०) आजानं सृष्टिकालात् प्रभृति
देवः देवत्वमाप्तः। चिरप्रसिद्ध वा कर्मद्वारा प्रकाशित
न होनेवाले देव।

आजानि (वै० स्त्री०) आ-जन अन्तर्भूतण्यर्थे इनि,
कृन्द्सीति दीर्घः। १ उत्पत्ति, पैदायश। २ अष्ट
कुल, शरीफ़ खान-दान्। ३ माता, मा।

“आजानोदवससे अग्रे।” (सूक् ३।१७३)

आजानिक्य (सं० स्त्री०) आजानौ भवम्, ठन् तस्य
भवाद्दो युरो० यक्। आजन्म-सिद्ध पदार्थका भाव

और कर्म, पैदायशसे साबित चोजका कयाम और
काम।

आजानु (सं० अव्य०) जांघ या घुटनेतक।

आजानुवाहु (सं० त्रि०) घुटनेतक लम्बे हाथवाला।

आजानेय (सं० पु०) आजि विपक्षमध्ये आनियो
युद्धार्थम्। १ कुलीन अश्व, सुठङ्गा घोड़ा। (त्रि०)
२ कुलीन, सुहज्जव, बढ़िया।

आजानेय्य (वै० त्रि०) कुलीन, सुहज्जव, बढ़िया।

आजायन (सं० पु०) अजस्थापत्यम्, नड़ादि० फक्।
१ अज नामक राजाके अपत्य। २ अज नामक ब्राह्मणके
लड़के।

आजार (फा० पु०) रोग, वेदना, दर्द, बीमारी।
२ कष्ट, मुसीबत।

आजि (सं० पु०-स्त्री०) अजत्यस्याम् इण् णित्वा-
दुपधावृद्धिः। अन्यतिव्याध। उण् ४।१२०। १ समरभूमि,
लड़ायीका मैदान्। २ संध्याम, लड़ायी।

‘आजिः संध्यामः।’ (उज्ज्वलदत्त)

३ समतल क्षेत्र, हमवार मैदान्।

‘आजिः स्वात् समभूमी च संध्यामि।’ (मेदिनी)

४ क्षण, लमहा। ५ मार्ग, राह। भावे इण्।
६ आच्छेप, फटकार। ७ दौड़का खेल।

आजिह्वत् (वै० त्रि०) १ पुरस्कारके लिये लड़नेवाला,
जो इनाम पानेको दौड़ रहा हो। २ युद्ध करनेवाला,
जो लड़ रहा हो।

आजिह्विया (सं० स्त्री०) युद्ध, लड़ायी, ठनाठनी।

आजिगीषु (सं० त्रि०) उत्साही, होसलेमन्द,
सबकुत ले जानेकी खाहिश रखनेवाला।

आजिग्रह (सं० त्रि०) लेने या पकड़नेवाला।

आजिज् (अ० वि०) १ हलीम, नम्र। २ परेशान्,
क्षुब्ध।

आजिजी (अ० स्त्री०) गरीबी, मुलायमियत, नम्रता,
दीनता।

आजिज्ञासेन्य (वै० त्रि०) १ अनुसन्धानके योग्य,
जांचने काबिल।

आजितुर् (वै० त्रि०) युद्धमें विजय पानेवाला, जो
लड़ायीमें जीतता हो।

आजिनीय (सं० त्रि०) अजिन चतुर्थ्यां कृशाश्वादि०
कृष्ण् । चर्मके निकटस्थ, चमड़ेके पासवाला । यह
शब्द देशादिका विशेषण है ।

आजिपति (वै० पु०) युद्धके स्वामी, लड़ायीके
मालिक ।

आजिरि (सं० त्रि०) अजिर चतुर्थ्यां सुतङ्गमादि०
इज् । १ अङ्गनके समीपस्थ, इहातेके पास होनेवाला ।
२ चबूतरके पासवाला । यह शब्द स्थानादिका
विशेषण है ।

आजिरिय (सं० त्रि०) अजिर शुभ्रादि० ढक् ।
अजिरसे उत्पन्न होनेवाला, जो आंगनसे पैदा हो ।

आजिहीर्षा (सं० स्त्री०) आहर्तुमिच्छा, आ-ह-सन्
भावे अ प्रत्ययादिति अ टाप् । आहरणकी इच्छा,
चोरी करनेका लालच ।

आजिहीर्षु (सं० त्रि०) आहरण करनेकी इच्छा
रखनेवाला, जो माल उड़ा देना चाहता हो ।

आजीकृण (सं० स्त्री०) आजीं कृणति आहृणोति
यस्मिन्, आजी-कृण आधारै क । मर्यादा रखनेवाला
देश, जो मुल्ल इज्जत बचाता हो ।

आजीगर्ति (सं० पु०-स्त्री०) अजीगर्तस्थापत्यम्,
अजीगर्त-वाह्नादि० इज् । अजीगर्तका पुत्र वा कन्या-
रूप सन्तान ।

आजीव (सं० पु०) आ-जीव्यते ऽनेन, आ-जीव करणे
घञ् । १ जीवनोपाय द्रव्यादि, जिन्दगी बखूशनेवाली
चीज वगैरह । २ उपाय, तद्वीर । प्राचीन शास्त्र-
कारोंने लिखा है,—अन्नप्राशनके दिन दाल-भात
खिलाने बाद लड़केके सम्मुख वस्त्र, अस्त्र, पुस्तक,
खेखनी, स्वर्ण, रौप्य प्रभृति रख देना चाहिये । बालक
सकल द्रव्यमें जिसे हाथसे पकड़े, वही उसका जीवनो-
पाय होगा । आ-जीव भावे घञ् । ३ जीवनके
निमित्तका अवलम्बन, माश, पेशा । आजीवति, कर्तरि
अच् । ४ जीवनोपायकारी, पेशाकश । आजीवति
कर्म नृपमाश्रित्य वा, आ-जीव-अण्, उप० समा० ।
५ किसी कर्मके अवलम्बनसे जीवित रहनेवाला ।
६ राजाके आश्रयसे जीनेवाला । ७ प्राचीन भिक्षु सम्प्र-
दाय विशेष ।

आजीवक—१ अति प्राचीन धर्मसम्प्रदाय । कोई कोई
इस सम्प्रदायको जैन सम्प्रदायकके ही अन्तर्गत बताते
हैं । किन्तु भगवतीसूत्र और आचाराङ्गसूत्र पाठ करनेसे
मालूम होता, कि आजीवक सम्प्रदाय जैन सम्प्रदायसे
भिन्न है । शेष तीर्थङ्कर महावीरस्वामीके समसामयिक
मङ्गलीपुत्र गोशाल इस सम्प्रदायके एक प्रधान आचार्य
थे । भगवतीसूत्रसे जाना जाता, कि मङ्गली नामक एक
भिक्षुके औरस और उनकी पत्नी भद्राके गर्भसे गोशाल-
का जन्म हुआ था । इसीसे उनका नाम मङ्गलिपुत्र-
गोशाल पड़ा । महावीरस्वामीने संसार छोड़ने और
भिक्षुकजीवन ग्रहण करनेके बाद दूसरे वर्ष जब
राजगृहके समीपवर्ती किसी तन्तुवायके घरमें उप-
वास किया, उसी समय वहां सामान्य भिक्षुक-
रूपसे गोशाल भी जा पहुँचे । गोशाल महावीर-
स्वामीका परिचय पाकर उनके शिष्य होनेको उद्यत
हुये थे । किन्तु महावीरस्वामीने यह बात न
सुनी । उसके बाद जब महावीरने कूलाग-ग्राममें
आकर बहुल नामक ब्राह्मणके घर अवस्थान
किया, तब गोशालने फिर भी वहां पहुँचकर
उनका पैर पकड़ लिया था । उस समय महा-
वीरने गोशालकी प्रार्थना पूर्ण की । फिर ६ वर्ष
गोशाल उनके सङ्ग शिष्य रूपसे रहे एवं उसी
समयसे क्रमशः सुख, दुःख, रति, विरति, मोक्ष
और बन्धन प्रभृति विषय समझने लगे । पीछे
कूर्मनामक ग्राममें महावीरके साथ गोशालका
मत भेद हुआ । राहमें फलपुष्पशोभित तिल वृक्षको
देखकर गोशालने महावीर स्वामीसे जिज्ञासा
की,—यह वृक्ष मरेगा या नहीं एवं मरनेके बाद
इसके सप्तजीवका क्या परिणाम होगा । महावीर
स्वामीने उत्तर दिया,—वृक्ष मर जायगा, किन्तु
इसी वृक्षके बीजसे पुनः सप्तजीव उत्पन्न होगा ।
गोशालने उनको बातपर विश्वास न कर वृक्षको
उखाड़ डाला था । कयी मास बाद दोनों जब उस
स्थानको वापस गये, तब यह देख दङ्ग रह गये, कि
पानी पड़नेसे उसी तिलका एक बीज पेड़ हो गया
महावीरस्वामीने गोशालसे कहा,—हमने

तुमसे पूर्वमें जो बताया, उसका प्रत्यक्ष प्रमाण देख लीजिये; पहला वृक्ष मर गया था, परन्तु उसीके वीजसे नूतन वृक्ष उत्पन्न हुआ। गोशाल फिर भी उनकी बातपर विश्वास कर न सके, और पेड़का एक वीज उठा उसकी छाल नोच-नोचकर देखने लगी, कि प्रकृत ही उसके मध्य अति सूक्ष्म सात दाने थे। इसीसे गोशालको धारणा हुई, केवल वृक्षत्व ही नहीं—सकल जीवका जन्मान्तर सम्भव है। फिर कठोर योगसाधन कर गोशालने अमानुषिक क्षमता प्राप्त किये एवं स्वयं एक जिनके नामसे परिचित हुये। किन्तु महावीरस्वामीने उनका कभी जिनत्व स्वीकार किया न था। निर्यन्त्र एवं आजीवक सम्प्रदायके मध्य बहुत दिनतक परस्पर द्वेषभाव रहा। आजीवकगणको विश्वास था,—परिणाममें मोक्ष या परममार्ग पानेपर सब जीवोंको चौरासी लाख कल्प सप्त देवयोनि, सप्त जड़योनि, सप्त जीवयोनि और सप्त जन्मान्तर अतिक्रमण करना पड़ता है।

बौद्ध सम्प्रदायका 'समनफलसूत्र' पढ़नेसे मालूम कर सके, कि महाराज अज्ञातशत्रुसे मङ्गलिपुत्र गोशाल मिले थे। अज्ञातशत्रुने बुद्धसे गोशालका मत इसतरह प्रकट किया,—

“महाराज। वितरण, दान, वलिविधान, पुण्य, पाप, पापपुण्यका फलाफल, वर्तमान जगत्, स्वर्ग-नरक, पिता, माता, देव, अस्मरा, जीवलोक, अमण, ब्राह्मण आदि कहीं कुछ भी नहीं होता और न उसकी विद्यमानताका कोई प्रमाण ही दे सकता है। जो लोग इन द्रव्योंका अस्तित्व बताते, वह झूठे हैं।”

‘भगवतसूत्र’में भी देखते हैं,—“जब मङ्गलिपुत्र गोशाल चौबीस वर्ष सन्न्यासमें बिता चुके, तब आवस्तीके कुंभार-बाजारमें हालाहला नाम्नी कुंभारिनके साथ रहने और आजीवक मत फलाने लगे। किसी समय निम्नलिखित छः दीक्षाचर उनके पास पड़चे थे,—साण, कलन्दु, कणियार, अत्येद, अग्नि-वेशायण और अज्जण गोमायुपुत्र। उन्होंने इन दश पुस्तकोंसे अपनी बुद्धिके अनुसार कुछ वाक्य उद्धृत

किये,—‘दिव्यं, शीत्पातं आन्तरिचं, भौम्यं, अङ्गं, स्वरं, लक्षणं, व्यञ्जनं, गीतमार्गलक्षणं और नृत्य-मार्गलक्षणं। उपरोक्त दश पुस्तकोंमें पहले आठ पूर्व और पिछले दो मार्गका अंश हैं। छहो दीक्षाचरोंने गोशालका ही मत माना था। गोशालने स्वयं महानिमित्त मतसे अपने लिये छः विषय चुने थे,—सुक्ति, वन्धन, सुख, दुःख, जीवन और मरण।”

उद्धृत प्रमाणको देखकर कहा जा सकता, कि शाक्यबुद्ध और शेष तीर्थंकर महावीर स्वामीके अभ्युदयसे पहले ही आजीवक सम्प्रदाय चल पड़ा था। सम्राट् अशोकके पौत्र दशरथके अनुशासनसे मालूम हुआ, कि उन्होंने आजीवक भिक्षुकोंकी सेवाके लिये कितना ही दान दिया।

आजीवन (सं० क्लो०) आ-जीव्यतेऽनेन, आ-जीव-करणे लुपट्। १ वृत्तिका उपाय, पेशेकी फिक्क। भावे लुपट्। २ जीवनके निमित्त उपायका ग्रहण, जिन्दगीके लिये पेशाकशी। ‘क्षीणमाजीवनार्थच।’ (वृत्ति) (अव्य०) ३ जीवन पर्यन्त, उन्म भर।

आजीवनाथं (सं० पु०-क्लो०) वृत्ति, पेशा, कामकाज। आजीविका (सं० स्त्री०) आजीवयति, आ-जीव-णिच् खुल, णिच् लोपः। जीविकावृत्ति, जीवनके धारणका उपाय, पेशा, माश, रोजी, रोजगार।

आजीविन् (सं० पु०) १ आजीविका-युक्त, पेशेकाश, रोजगारी। २ भिक्षु विशेष। आजीवक देखो।

आजीव्य (सं० क्लो०) आ-जीव्यतेऽनेन, बाहु० करणे खत्। १ जीवनोपाय वृत्तादि, रोजी, रोजगार। २ वृत्तिके निमित्त अवलम्बनीय नृपादि, रोजगारके लिये पकड़े जानेवाले बड़े आदमी। आजीव्यतेऽत्र, आधारे बाहु० खत्। ३ आजीवन देश, जिस मुल्कमें जीये। (त्रि०) ४ जीवनोपायके सङ्ग्रह अभ्यास किया जानेवाला, जो रोजगारकी तरह मशक् किया जा सकता हो। ५ वृत्तिके योग्य, जो रोजगार देता हो। ६ वासचम, रहने काबिल। ७ सफल, मेवसे लदा हुआ।

आजु, आज देखो।

आजुर् (सं० स्त्री०) आ-ज्वर-क्लिप्-उट्। १ अशो-

धित अम, वेगार । २ नरकके प्रति न्यसन, जहन्नुमके
तयौ सुपुदंगी ।

आज (सं० त्रि०) आजवति, आ-जु-क्षिप् दीर्घः।
वेतनरहित कर्मकारक, बेगारी।

आन्नस (सं० त्रि०) आ-ज्ञा-णिच् पुक् सः कृत ।
 वा दानशानपूर्वदभस्यष्टन्नशमाः । पा ७।२।१७ । आदिष्ट, जो
 हुक्म पा चुका हो ।

आज्ञप्ति (सं० स्त्री०) आ-ज्ञा-णिच्-पुक् क्तस्त्रः क्तिन् ।
आज्ञा, हुक्म, इत्तिला ।

आज्ञा (सं० स्त्री०) आ-ज्ञा-अङ्-टाप् । १ आदेश,
हुक्म । २ अनुमति, इजाजत ।

आज्ञाकर (सं० त्रि०) आज्ञां आदेशं करोति प्रति-
पालयति, आज्ञा-क-ट, उप० समा० ; अज्ञया करोति,
आज्ञा-क-अच्, ३-तत् वा । १ आदेशप्रति पालक, हुक्म
माननेवाला । (पु०) २ आज्ञानुसार कार्यकारी
श्रुत्यादि, हुक्मके सुतांमिक, काम करनेवाला नौकर ।
आज्ञाकरण (सं० लौ०) अनुवर्तन, वश्यता,
परमांशरदारी ।

आज्ञाकरत्व (सं० स्त्री०) भृत्यका धर्म, नौकरका काम ।
आज्ञाकारी, आज्ञाकर देखो । (स्त्री०) आज्ञाकारिणी ।

आज्ञागत (सं० द्वि०) आज्ञां आदेशं गतं प्राप्तम्,
२-तत् । १ आज्ञाप्राप्तं, हुक्मं पाथे हुआ । ३-तत् ।
२ आज्ञा द्वारा गत, जो हुक्मसे गया हो ।

आज्ञाचक्र (सं० ह्री०) आज्ञास्थं चक्रम्, शक्र० तत् ।
तन्त्रप्रसिद्ध देहस्थ, सुषुम्ना नाडीके मध्यगत, रू० मध्य-
स्थित, द्विदल एवं पञ्चाकार चक्र विशेष ।

“स्वाधार-स्वाधिष्ठान-मणिपुरकानाहत-विश्वज्ञाशाल्यानि यद्वक्त्राणि
मिता ।” (भूतपुष्टि)

षट्चक्रका आज्ञापद्म द्विदल होता, जिसके एक दलमें 'ह' और दूसरेमें 'म' वर्ण रहता है। यह श्वेत-वर्ण है। आज्ञाचक्रके मध्य शक्तवर्णा, षण्मुखी एवं ज्ञानसुद्रा-चिह्निता हाकिनी शक्ति वास करती है। आज्ञापद्मका ध्यान धरनेसे साधक अन्यके शरीरमें घुस और सुनिश्चेष्ट, सर्वदर्शी, सर्वज्ञ तथा सकलका हित-कारी हो सकता है।

आज्ञात (सं.वि.) - पाञ्चांग १ सव्यज्ञात

अच्छीतरह समझा हुआ । २ आश्राप्राप्त, हुक्म पाये
हुआ । (पु०) ३ शाक्य मुनिके पहले पांच शिष्योंमें
एकका नाम ।

आज्ञातीर्थ (स० ली०) ६-तत् । आज्ञा-चक्र ।
रुद्रयामल तन्त्रके आज्ञाचक्रमें मानस-ज्ञान करनेको
लिखनेसे उसका नाम आज्ञातीर्थ पड़ा है ।

आज्ञात (वै० पु०) आदेशकर्ता, हुक्म देनेवाला ।

आज्ञान (सं० क्लौ०) आ-ज्ञा-लुपट् । १ आज्ञाप्रदान,
हुक्मका देना । २ मानस वृत्ति विशेष । आज्ञान वा
प्रज्ञानके पर्याय यह हैं,—संज्ञान, विज्ञान, प्रज्ञान,
मेधा, दृष्टि, धृति, मति, मनौषा, जुति, स्मृति, सङ्कल्प,
क्रतु, असु, काम और वश । आज्ञान अन्तःकरण संज्ञक
सकल ज्ञानकी उपलब्धिका कर्ता है । अन्तःकरण
वृत्ति प्रज्ञानरूप ब्रह्मसे वाह्य और अन्तर्वर्ती विषयपर
आश्रित रहती है । शाङ्करभाष्यमें इसकी विवृति यों
बनी है,—संज्ञान संज्ञासि चेतनभाव, आज्ञान आज्ञासि
ईश्वरभाव, विज्ञान कलादि परिज्ञान, प्रज्ञान प्रज्ञासि
प्रज्ञता, मेधा ग्रन्थधारणका सामर्थ्य, दृष्टि इन्द्रिय द्वारा
सकल विषयकी आकाङ्क्षा और वश स्त्रीसङ्ग विषयक
अभिलाष ।

आज्ञानुग (सं० त्रि०) आज्ञां आदेशं अनुगच्छति,
आज्ञा-अनु-गम-ङ, ६-तत्। स्वामीके आज्ञानुसारं
गमनकारी, मालिकके हुक्म सुताबिक् चलनेवाला।

આજ્ઞાનુગત, આજ્ઞાનુગ દેખો ।

आन्नानुगामिन् (सं० त्रि०) आन्नानुगच्छति, आन्ना-
 अनु-गम-षिनि, ६-तत् । आन्नानुसारी, हुक्मके सुता-
 बिक्र जानेवाला । (स्त्री०) आन्नानुगामिनी ।

आज्ञानुयायिन् (सं० द्वि०) आज्ञामनुयाति, आज्ञा-
अनु-या-यिनि, ३-तत् । आज्ञानुसार गमनकारी, हुक्म-
के मुताबिक चलनेवाला ।

आज्ञानुवर्तिन् (सं० वि०) आज्ञां अनुवर्तते, आज्ञा-
अनुष्ठत-षिनि, ई-तत् । आज्ञानुसारं वर्तमान, हुक्मपर
हजिर होनेवाला ।

आज्ञानुसारिन् (सं० त्रि०) आज्ञामनुसरति, आज्ञा-
अनु-स-णिनि, इ-तत्। आज्ञानुसार कर्मकारौ, हुक्मके-
न, पुनर्विचारेण कर्म करतिवाला।

आज्ञापक (सं० त्रि०) आज्ञापयति आदिशति, आज्ञा-णिच्-पुक्-खल्, णिच् लोपः। आदिष्टा, अनुमतिकर्ता, हुक्म देनेवाला।

आज्ञापक (सं० क्ली०) आज्ञाज्ञापकं पत्रम्, शाक० तत्। आदेशज्ञापक पत्र, हुक्मनामा।

आज्ञापन (सं० क्ली०) आदेश, हुक्म, इत्तिला।

आज्ञापलक, आज्ञातुग देखो।

आज्ञापित (सं० त्रि०) आदेश किया हुआ, जो हुक्म पा चुका हो।

आज्ञाप्य (सं० त्रि०) आदेश पानेवाला, जिसे हुक्म मिले।

आज्ञाप्रतिघात, आज्ञाभङ्ग देखो।

आज्ञाभङ्ग (सं० पु०) आज्ञाया आदेशस्य भङ्गः खलनम्। आदेशका अन्यथाकरण, नाफरमानी, उदूल-हुक्मी।

आज्ञावह (सं० त्रि०) आज्ञां वहति, आज्ञा-वह-अच्। आज्ञानुसार, कार्यकारी, हुक्मके सुताविक काम करनेवाला।

आज्ञासम्पादिन् (सं० त्रि०) आज्ञां सम्पादयति, आज्ञा-सम्-पद-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। आदिष्ट विषय-सम्पादक, बताया हुआ काम करनेवाला।

आञ्च (सं० क्ली०) आ सम्यक् अञ्चते सञ्च्यते अनेन आ-अञ्च करणे बाहु० क्यप्, न लोपः। १ घृत, घी। २ हविः। ३ श्रीवास, तारपीनका तेल। ४ धार्मिक गीत विशेष।

आञ्चदोह (सं० पु०) सामवेदीय पाठ्य सूक्तविशेष। इसमें तीन ऋचा रहती और जप वा पाठ करनेसे पवित्रता आती है। सामग यह ग्रन्थ पढ़ते हैं,— वामदेव्य, वृहत्साम, ज्येष्ठसाम, रथन्तर, पुरुषसूक्त, रुद्रसूक्त, आञ्चदोह, साम, शान्तिक, भागुड़ और पश्चात् द्वारपालद्वय। इनमें तीन देवव्रतसंज्ञक हैं।

आञ्चप (सं० पु०) आञ्चं पिवति, आञ्च-पा-क, उप० समा०। १ पुलस्त्यके पुत्र और वैश्योंके पित्रदेव। आदिपर्वमें लिखा है,—

“सोमपा नाम विप्राणां चत्रियाणां हविर्भुजः।

वैश्यानामाश्वपा नाम यदाणान् सुकालिनः॥

सोमपासु कवेः पुत्राः हविर्भुजोऽग्निरःसुतः।

पुलस्त्यस्यान्यपाः पुत्रा वशिष्ठस्य सुकालिनः॥ (महाभारत)

अर्थात् ब्राह्मणोंके सोमप, क्षत्रियोंके हविर्भुज, वैश्योंके आञ्चप और शुद्रोंके पित्रदेव सुकालिन हैं। शुक्राचार्यके सोमप, अङ्गिराके हविर्भुज, पुलस्त्यके आञ्चप और वशिष्ठके पुत्र सुकालिन रहे। आदि पित्रदेव होनेसे इनके तर्पण करनेका विधान है।

आञ्चपा, आञ्चप देखो।

आञ्चपात्र (सं० क्ली०) घृतभाजन, घियांड़ा, घी रखनेका बरतन।

आञ्चभाग (सं० पु०) आञ्चस्य भागः, ६-तत्।

१ घृतका एक देश, घीका कोयी हिस्सा। २ घृतकी वैदिक आहुति। उत्तरकी ओर सुव द्वारा अग्निके उद्देश्य जो आहुति ऋग्वेदी देते, उसे आञ्चभाग कहते हैं। फिर अग्निकी दक्षिण ओर सोमके उद्देश्य दीयमान आहुति भी आञ्चभाग ही है। यजुर्वेदी अग्निके उत्तर-पूर्वार्धमें ‘अग्नये स्वाहा’ एवं ‘इदमग्नये’ और दक्षिण-पूर्वार्धमें ‘सोमाय स्वाहा’ तथा ‘इदं सोमाय’ कहकर जो आहुति डालते, उसे भी आञ्चभाग बताते हैं। ‘अग्नये स्वाहा’ और ‘सोमाय स्वाहा’ अग्निमें आहुति देनेके मन्त्र हैं। ‘इदमग्नये’ और ‘इदं सोमाय’ दोनों मन्त्र पात्रमें आञ्चभाग रखते समय पढ़े जाते हैं।

आञ्चभुक्, आञ्चभुज देखो।

आञ्चभुज (सं० पु०) आञ्चं मन्त्रेण विधिवदग्नौ दत्तं घृतं भुङ्क्ते, आञ्च-भुज-क्तिप्। देवता, अग्नि, इत घृत-खानेवाले।

आञ्चवारि (सं० पु०) घृतका समुद्र, घीका बहर।

आञ्चस्थाली (सं० क्ली०) आज्ञपात्र देखो।

आञ्चन (सं० क्ली०) शरीरसे कण्टकों या वाणोंका प्रांशिक निष्कर्षण, जिससे कांटों या तीरोंका कुछ-कुछ निकास।

आञ्चन (सं० क्ली०) अस्थि वा पादका सन्निवेश, हड्डी या पैरका बैठाना, यानी फैला, भुका या खोंचकर असली जगह फिर लाना।

आञ्चन (सं० क्ली०) पा-अञ्च-लुगट्। १ समन्ता-

दभ्यञ्जन, सकल दिक्में कज्जल, गहरी कालिक।
अञ्जनायां भवः, अण्। अञ्जनाके पुत्र हनूमान्। (त्रि०)
अञ्जनस्येदम्, अण्। ३ अञ्जन सम्बन्धी, सुरमयी।
(स्त्री०) आञ्जनी।

आञ्जनाभ्यञ्जनीय (सं० स्त्री०) उत्सवविशेष, एक
जलसा। (स्त्री०) आञ्जनाभ्यञ्जनीया।

आञ्जनिका (सं० स्त्री०) अञ्जनाय हितम्, अञ्जन-
ठन् ततः पुरो० भावे कर्मणि च यक्। प्रत्यक्षपुरोहितादिभ्यो
यक्। पा ४।१।१२८। अञ्जन साधनत्व, सुरमेका कमाल।
आञ्जनीकारी (सं० स्त्री०) अञ्जन लगाने या बनाने-
वाला स्त्री, जो औरत सुरमा लगाती या बनाती
हो।

आञ्जनेय (सं० पु०) अञ्जनाया अपत्यम्, ठक्।
स्त्रीभ्यो ठक्। पा ४।१।१२०। अञ्जनाके गर्भजात हनूमान्।

आञ्जलिक्य (सं० स्त्री०) अञ्जलिरेव, स्वार्थे कन् ततः
पुरो० भावे कर्मणि च यक्। अञ्जलिका बनाव, दोनो
हाथका एकत्र मिलान।

आञ्जिक (सं० पु०) दानव विशेष।

आञ्जिनेय (सं० पु०) अञ्जिन्यां भवः, ठक्। सरी-
सृप विशेष, किसी किस्मका गिरगिट।

आट (सं० पु०) सर्पविशेष, किसी सांपका नाम।

आटना (हिं० क्रि०) मूंदना, दबाना, छिपाना,
तोपना।

आटरूप, आटरूप देखो।

आटरूप (सं० पु०) अटरूप एव, स्वार्थे अण्। वासक
वृक्ष, अड़ूसेका पेड़। आटरूप देखो।

आटलाण्टिक महासमुद्र—आटलाण्टिक नामक महा-
सागर, आटलाण्टिक बहरे-भाजम्। (Atlantic
Ocean) यह यूरोपीय पश्चिम तट एवं अफ्रीका
और उत्तर तथा दक्षिण अमेरिकाके पूर्व तट बीच
अवस्थित है। भूमध्यरेखा इसे उत्तर तथा दक्षिण आट-
लाण्टिक नामक दो भोगमें विभक्त करती है। उत्तर
आटलाण्टिक अपनी लम्बी तटरेखाके लिये प्रसिद्ध
है। इससे कितने ही उपसागर मिले, जिनमें पश्चिम-
की ओर करीबियन सागर, मेक्सिकोका अखात, सेण्ट-
लारेंसका समुद्रवङ्ग एवं हडसन खाड़ी और पूर्वपर

भूमध्य, कृष्ण, उत्तर तथा बाल्टिक सागर प्रधान
हैं। किन्तु दक्षिण आटलाण्टिककी तटरेखा बहुत
छोटी है। इसमें भीतरी सागर देख नहीं पड़ते।

उत्तर आटलाण्टिकका क्षेत्रफल १३२६२००० और
दक्षिण आटलाण्टिकका १२६२७००० वर्गमील
लगता है। पृथिवीकी कितनी ही बड़ी-बड़ी नदियां
आटलाण्टिक महासमुद्रमें आकर गिरती हैं। कोयी
अक्षा० ५०° उ०से ४०° दक्षिण तक इसमें पानीके
नीचे जो पहाड़ पड़ता, उसकी गहराईका औसत
१०२०० फीट है। आटलाण्टिक महासमुद्रके प्रधान-
प्रधान द्वीप नीचे लिखे जाते हैं,—भूमध्यसागरस्थ
द्वीप, आयिसलेण्ड, ब्रिटिश आयिल्स, अजोरेस, मदिरा,
कनारीज, कीप वर्ड द्वीप, असेनसन, सेण्ट हेलेना,
ट्रिस्टन दा कुनहा और बोवेट द्वीप।

उत्तर आटलाण्टिककी ३४७८८ और दक्षिण
आटलाण्टिककी गहराई औसतमें ३५१३८ फीट
है। आटलाण्टिक महासमुद्रके तलमें मृदुमृत्तिका
भरी है। सकल महासमुद्रोंसे इसका जल खारी है।
मालूम होता, कि आटलास पर्वत अथवा काल्पनिक
आटलाण्टिस द्वीपसे यह नाम निकला है।

आटविक (सं० त्रि०) अटव्यां चरति भवो वा, ठक्।
१ अरण्यचारी, जङ्गलमें रहनेवाला। २ वन्य,
जङ्गली। (पु०) ३ लकड़हारा। ४ अरण्यचारी सैन्य
विशेष, जङ्गलमें लड़नेवाली फौज। सैन्य कः प्रकारका
होता है,—१ मौल, २ भृत्य, ३ सुद्वत, ४ अ्रेणी,
५ द्विषद् और ६ आटविक। (रघु० ४।२६)

आटवौ (सं० स्त्री०) अटव्याः सन्निकृष्टो पूः, अण्।
दक्षिण दिक्स्थ यवनपुरी विशेष। महाभारतमें इस
नगरीका वर्णन मिलता है।

आटव्य (सं० पु०) उपाध्याय विशेष, किसी उस्ताद-
का नाम। वायुपुराणमें इनका वर्णन है।

आटा (हिं० पु०) १ अन्नका दूर्ण, पिसान।
२ बुकनी।

आटि (सं० पु० स्त्री०) आ सम्यक् अटति, आ-अट्
बाहु० इण्। १ शरारिपच्ची, एक चिड़िया। २ मत्स्य
विशेष, कोई मछली।

आटिक (सं० त्रि०) आटाय गमनाय प्रवृत्तः, ठन् ।

गमनपर प्रवृत्त, जानिमें लगा हुआ ।

आटिकी (सं० स्त्री०) आट' गमनं अर्हति, अण्-
ङीष् । १ गृहसे बाहर जाने योग्य अज्ञातपयोधर स्त्री,
बालिका । २ उग्रस्त्रिकी स्त्रीका नाम ।

आटिक्य (सं० त्रि०) आटिक स्वार्थे ष्यच् । गमनमें
प्रवृत्त, जो जलयात्रामें हो ।

आटी (हिं० स्त्री०) अटक रहनेवाली चीज, डाट,
पच्चड़, टेक । (सं०) आटि देखो ।

आटीकन (सं० स्त्री०) आटीक्यते ईषद्गम्यते, आ-
टीक भावे ल्यट् । वस्त्रकी प्रथम-प्रथम अल्प गति,
बछड़ेका पहले-पहल धीरे-धीरे चलना ।

आटीकनक, आटीकन देखो ।

आटीकर (सं० पु०) वृष, बैल ।

आटीमुख (सं० स्त्री०) आध्याः शरारिपक्षिण्या
सुखमिव मुखं यस्य, शाक० बहुव्री० । व्रण विस्रावणका
अस्त्रविशेष, जख्म चीरनेका एक नश्वर । सुश्रुतमें
लिखा,—यह शरारि पक्षीके मुंह-जैसा होता है ।

आटीवदन, आटीमुख देखो ।

आटोप (सं० पु०) आ-तुप्-घञ्, षष्ठी० तस्य टत्वम् ।
१ दर्प, घमण्ड । २ संरम्भ, आगाज, किसी कामका
हाथमें लेना । ३ आडम्बर, तड़क-भड़क । ४ उदरके
मध्य सवेदन गुड़गुड़ा शब्द, दर्दके साथ पेटकी गुड़-
गुड़ाहट । यह जठरसे उत्पन्न होता है । (भावप्रकाश)
५ फलन, सूजन ।

आटस्थलक (सं० स्त्री०) आटस्थली देखो ।

आटोप (सं० पु०) रोगविशेष, किसी किस्मकी बीमारी ।
इसमें उदरके अन्त तन जाते हैं ।

आटणाट (वै० पु०) शतपथब्राह्मणके परका नाम ।
आट्लण्टिक, आटलाण्टिक देखो ।

आठ (हिं० वि०) अष्ट, दशत, दोसे चौगुना ।

आठक (हिं० वि०) आठके बराबर, आठसे कुछ
कम या ज्यादा ।

आठवां (हिं० वि०) अष्टम, दशतम, आठकी जगह
रहनेवाला ।

आठें (हिं० स्त्री०) अष्टमी तिथि ।

आठों, आठें देखो ।

आड़ (हिं० स्त्री०) १ यवनिका, परदा । २ ललाटके
तीरान्तर खींची हुई समरेखा, जो सीधी सतर मथेपर
आड़ी निकाली जाती हो । ३ वारण, रोक ।
४ रक्षा, हिफाजत । ५ रोड़ा, ईंट या पत्थरका
टुकड़ा । यह पहियेके नीचे गाड़ी एक जगह खंडी
रखनेको अटका दी जाती है । ६ अष्टताल मेद ।
७ थनी । ८ तिलसे भरी हुई बोंड़ी । ९ कलकूला ।
यह चीनीके कार्यालयमें व्यवहृत होती है । १० वृश्चिक
आदिका डङ्ग । ११ स्त्रियोंके मथेपर लगनेवाली
लम्बी टिकली । १२ आभूषण विशेष, टीका । स्त्रियां
इसे ललाटपर धारण करती हैं ।

आड़गौर (हिं० पु०) क्षेत्रके समीपका दृष्य, जो
घास खेतके पास जगती हो ।

आड़ण (हिं० स्त्री०) ठाल ।

आड़ना (हिं० क्ति०) १ रोक रखना, छेक लेना ।
२ आवद्ध करना, बांध देना । ३ वारण करना,
रोकना । ४ अटकाना, गड़ने रखना ।

आड़बन, आड़बन्द देखो ।

आड़बन्द (हिं० पु०) चिट, जांघियेपर बंधनेवाला
लंगोट ।

आडम्बर (सं० पु०) आ-डवि क्षेपणे अरण् । १ हर्ष,
खुशी । २ दर्प, गुरुर । ३ तूर्यस्वन, तुरहीकी आवाज ।
४ युद्धकालीन घोषणा, लड़ायीके वक्तकी ललकार ।
५ आरम्भ, शुरु । ७ चक्षुका लोम, बरौनी । ७ मेघका
शब्द, बादलकी गरज । ८ युद्ध, लड़ायी । ९ हस्तीका
गर्जन, हाथीकी चिंगार । 'आडम्बरसूर्येवो स'रन्ने गजगर्जिते ।'
(नेदनी) १० रणदुन्दुभि, डङ्गा । ११ क्रोध, गुस्सा ।
१२ नेत्रच्छद, पलक । (स्त्री०) १३ शरीरका मर्दन,
जिस्मकी मालिश ।

आडम्बराघात (वै० पु०) रणदुन्दुभि बजानेवाला,
जो लड़ायीके डङ्गेपर चोब मारता हो ।

आडम्बरिन् (सं० त्रि०) मत्वर्थे ङनि । अभिमानी,
मगरूर, घमण्डी । (स्त्री०) आडम्बरिणी ।

आडम्बरौ, आडम्बरिन् देखो ।

आड़ा (हिं० पु०) १ वस्त्रविशेष, एक कपड़ा । यह

धारीदार होता है। २ स्थूलकाष्ठ, ग्रहतीर। ३ दाब-फलक, लकड़ीका तख्ता। यह नाव या जहाजकी बगलमें लगता है। ४ लकड़ीका सामान। इस पर जुलाहे सूत फैलाते हैं। ५ नौ मात्राका ताल विशेष। इसका ठेका इसतरह बजाते और एक खाली तथा तीन ताल भरे लगाते हैं,—

+	+	१	+	०
धिधि	ताधि		धिता	तिति
। × १।	। ×			
ताधि	धिधा	:	:	:

(त्रि०) ६ धक्क, तिरछा। (स्त्री०) आड़ी।

आड़ाखेमटा (हिं० पु०) ताल विशेष। इसमें कोई बारह और कोई साढ़े तेरह ताल बताते, जिसमें एक खाली तथा तीन भरे रहते हैं। ठेकेका बोल यह है,—

+	।	।	१।	।
धागे	ब्रेकेटे	धेने	धागे	धागे
।	०।	।	।	१।
तेने	ताके	ब्रेकेटे	धेने	धागे
।	।			
धाग	धेने	:	:	:

आड़ाचीताला (हिं० पु०) सात मात्राका ताल विशेष। इसमें चार ताल भरे और तीन खाली पड़ते हैं। यह छोटा चीताला भी कहता है। रुदङ्गका हाथ इसतरह निकालते हैं,—

+	१।	०।	१।
धागे	धादा	धिता	कत्ति
०।	१।	०।	
नाधा	ब्रेकेट्धा	धिता	:

आड़ाठेका (हिं० पु०) ताल विशेष। आड़ा देखो।

आड़ाना, अड़ाना (हिं० पु०) जंगला राग विशेष। यह दो प्रकारका है। एकमें सुघरायी, कान्हरा एवं सारङ्ग और दूसरेमें सोरठ वा मलार तथा कान्हरा मिला रहता है। अड़ानेमें सारङ्गका ही भाग अधिक लगता है। खरगाम यह है,—

नि स ऋ ग म प ध

आड़ापञ्चताल (हिं० पु०) ताल विशेष। इसमें पांच आघात और नौ मात्रा देते हैं। ठेकेकी चाल यों है,—

+	१	१
धि	तिर	किंठ
	धिना	धि
		धि
		ना

ना तुना कत्ता धि धि ना धि धि ना।

आड़ारक (सं० पु०) अड़ उद्यमे ध्वज, तत आरक्। ऋषिविशेष।

आड़ालोट (हिं० पु०) चाञ्चल्य, तलव्यन-मिजाजी, कंपकंपी, सज्जुच।

आड़ि (सं० पु०-स्त्री०) अड़ उद्यमे दण्। १ खनाम-ख्यात मत्स्यविशेष, एक मछली। २ शरारि पत्नी, एक चिड़िया। यह गृध्र-जैसी होती है।

आड़िक, आड़ि देखो।

आड़िका, आड़ि देखो।

आड़ी (हिं० स्त्री०) १ ताल विशेष। किसी तालमें पूर्ण समयके तृतीय, षष्ठ वा द्वादश भागपर पूरा ताल लगानेका नाम आड़ी है। २ चर्मकारोंकी छुट्टी। ३ तर्क, और। ४ सहायक, मदद देनेवाली। ५ तिरछी। (सं०) आड़ि देखो।

आड़ीकी, आड़ि देखो।

आडु (सं० त्रि०) ईषदपि पानेके लिये चैष्टा करनेवाला, जो कोई चीज हासिल करनेमें लगा हो।

आडू (सं० पु०) अण दण्डकः ऊ णित्, णित्वा-दुपधावृद्धिः णस्य डश्च। अणो डश्च। उण् १। १ प्रव, बिड़ा, चौघड़ा। (हिं०) २ फल विशेष, एक मेवा। खादमें यह खटमिष्टा होता और देहरादूनकी ओर बहुत उपजता है। इसका फल चौड़ा और गोल दो तरहका होता है। इसे शफ़तालू भी कहते हैं। ३ आडूका पेड़।

आढ़ (हिं० पु०) १ आढ़क, चार सेरकी तौल। (स्त्री०) २ आड़, परदा। ३ आश्रय, सहारा। ४ अन्तर, फर्क। ५ आड़ि, एक मछली। ६ स्त्रियोंकी मस्तकका आभूषण, टीका। (वि०) ७ आख्य, भरा हुआ।

आढक (सं० पु०) आढीक्यते धान्यादेः परिमाणार्थं गम्यते, आढोक कर्मणि घञ्, पृषो० औकारस्य आत् । १ शमीधान्य विशेष, भरहर । २ अष्टशरावमित धान्य-मान-विशेष, अनाज नापनेको लकड़ीका बरतन । इसमें चार सेर अन्न आता है । ३ प्रस्थ चतुष्टय, चार सेरकी तौल । आठ मुष्टिका एक कुच्चि, आठ कुच्चिका एक पुष्कल और चार पुष्कलका एक आढक होता है । मतान्तरसे—१२ प्रस्थतिमें १ कुडव, ४ कुडवमें १ प्रस्थ और ४ प्रस्थमें १ आढक बैठता है । सुन्धुतमें लिखा, स्वर्णादि तौलनेका आढक २५६ पल होता है ।
आढकजम्बू (सं० पु०) आढकमिता जम्बु यस्मिन् देशे, बहुव्री० । स्थूल जम्बु-युक्त देश, जिस मुल्कमें बड़े-बड़े जामुन रहें ।

आढकजम्बुक (सं० त्रि०) स्थूलजम्बुयुक्त देशजात, जो बड़े-बड़े जामुनके मुल्कमें पैदा हो ।

आढकिका (सं० त्रि०) आढकं सम्भवति भरहरति पचति वा, ख-ठञ् वा । १ आढक परिमित, जिसमें एक आढक द्रव्य रख सकें । २ आढक परिमित बीज बोया हुआ, जिसमें एक आढक बीज डाल सकें । (स्त्री०) आढकिकी ।

आढकिका, आढकी देखो ।

आढकी (सं० स्त्री०) आढकीन मीयते, आढक-अण्, जातित्वात् ङीप् । १ भरहर । यह श्वेत, रक्त और पीत भेदसे तीन प्रकारकी होती है । साधारण आढकी कषाय, मधुर, कफ एवं पित्तको जीतनेवाली, ईषत् वातकर, रुच्य, गुरु और ग्राहिणी रहती है । (राजनिघण्टु) यह तुवर, रुच, मधुर, शीतल, लघु, ग्राहिणी, वात-जननी, वर्ष्य और पित्त कफ तथा रक्तको जीतनेवाली है । (भावप्रकाश) भरहर सृष्टु एवं कषाय होती और सरक्त पित्त, ऋत, कफ, मुखव्रण, गुल्म, ज्वर, शरोचक, कास, हर्दि तथा हृद्रोगको दूर करती है । (चक्रिचिन्ता) श्वेत दोषकारी; रक्त रुच्य, पित्त एवं ताप मिटानेवाली, और पीत आढकी दीपन तथा पित्त-दाहघ्न है । (राजनिघण्टु) २ परिमाणभेद, चार सेरकी तौल । ३ सौराष्ट्रसत्तिका, खुशबूदार मट्टी । ४ गोपीचन्दन । ५ गन्धद्रव्य विशेष ।

आढकीन, आढकिक देखो ।

आढकीयूष (सं० पु० स्त्री०) तुवरीयूष, भरहरका पानी । यह वक्ष्य होता है । (राजनिघण्टु) आढकीयूष मधुर, विशेषण, वातनिवारण, श्लेष्मापह और पित्तहर है । (चक्रिचिन्ता)

आढत (हिं० स्त्री०) व्यवसाय विशेष, एक रोज-गार । इसमें व्यापारीका माल अढतिया अपनी दुकान पर रखता और कुछ दलाली खा कर बेच देता है । २ आढती माल बिका देनेके बदलेका रुपया ।

आढतदार, अढतिया देखो ।

आढतिया, अढतिया देखो ।

आढती (हिं० वि०) आढतसे सरोकार रखनेवाला ।

आढीलक, आढी कन देखो ।

आढ्य (सं० त्रि०) आ-ध्यै-क, पृषो० साधु । १ धनो, दौलतमन्द । २ युक्त, मिला हुआ । ३ विशिष्ट, भरा हुआ । ४ सम्पन्न, कसीर । 'इय आढ्यो धनी ।' (चमर) (स्त्री०) आढ्या ।

आढ्यक (सं० स्त्री०) धन, बहुतायत, दौलत, कसरत ।

आढ्यकुलीन (सं० पु०-स्त्री०) आढ्यकुले भवः, ख । आढ्यकुल-जात, जो जन्मे खान्दानमें पैदा हो ।

आढ्यङ्करण (सं० स्त्री०) अनाढ्यमाढ्यङ्करोत्यनेन, आढ्य-क करणे खुरान् मुम्, उप० संसा० । आढ्यसुभगसुख-पलितनयान्धप्रियेयु चदेव्यौक्तवः करणे खुरान् । पा १।१।५६ । अभ्युदयका उपाय, बढ़नेका जरिया । (त्रि०) २ अभ्युदयकारी, दौलत देनेवाला । (स्त्री०) आढ्यङ्करणी ।

आढ्यचर (सं० त्रि०) भूतपूर्व आढ्यम्, आढ्य-चरद् । भूतपूर्व चरद् । पा ६।१।५० । पूर्वमें आढ्य, जो पहली दौलतमन्द रहा हो । (स्त्री०) आढ्यचरी ।

आढ्यतम (सं० त्रि०) अतिशयेन आढ्यम्, आढ्य तमप् । अतिशयने लनविठनी । पा १।१।५ । अतिशय आढ्य, निहायत दौलतमन्द ।

आढ्यता (सं० स्त्री०) विभव, ऐश्वर्य, तालेवरी, मालदारी ।

आढ्यपदि (सं० अव्य०) आढ्य पदं ग्रहणं यत्न, हिदण्डादि० इच्, इजन्तत्वादव्ययत्वम् । रदण्पा-द्विष्यत् । पा ३।४।१२८ । आढ्यपद ग्रहणयुक्त युवर्त्तम् ।

आव्यपवन (सं० पु०) जहस्तभ रोग, जांघका भोला ।

आव्यभवन (सं० पु०) अनाव्यं आव्यं भवत्यनेन, आट्य-भू करणे खुण् सुम्, उप-समा० । अनाव्यको आव्य बनानेवाला द्रव्य, जो चीज़ गरीबको अमीर कर देती हो ।

आव्यभविष्णु (सं० त्रि०) अनाव्यं आव्यं भवति, आट्य-भू कर्तरि विष्णुच् सुम्, उप० समा० । आट्यता-प्राप्त, जो अमीर बन रहा हो ।

आट्यभावुक (सं० त्रि०) अनाट्यं आट्यं भवति, आट्य-भू कर्तरि च्युर्थे खुकच् सुम्, उप० समा० । आवागमिण देखो ।

आट्यवात (सं० पु०) आट्यो वातो यत्र, बहुव्री० । वातरक्त, वातरोगमेद, फालिज । वैद्यशास्त्रके मतसे कफ-मेदो-द्वारा आवृत हो जरुदेशमें वायु पहुँचनेपर यह रोग होता है ।

आट्या (सं० स्त्री०) अजमोदा, अजमोद ।

आट्याड (सं० त्रि०) आट्य बननेकी चेष्टा करने-वाला, जो दीलत हासिल करनेमें लगा हो ।

आणक (सं० त्रि०) अणकमेव, स्वार्थे अण् । १ अधम, कमीना । २ कुत्सित, खराब । (स्त्री०) ३ समीपमें से मैथुनका करना । ४ भाना, रुपयेका सोलहवां हिस्सा । (स्त्री०) आणका ।

आणव (सं० स्त्री०) अणोर्भावः, पृथादि० वा अण् । १ अण्व, सूक्ष्मता, खुर्दी, बारीकी । (त्रि०) २ प्रतिशय सूक्ष्म, निहायत बारीक ।

आणवीन (सं० त्रि०) अण्वान्यानां सर्षपादीनां भवनं क्षेत्रं वा, अणु-खञ् । सरसों-जैसा छोटा अन्न उत्पन्न करनेवाला, जिसमें छोटा अनाज बोयें । यह शब्द क्षेत्रादिका विशेषण है । (स्त्री०) आणवीना ।

आणि (सं० पु०-स्त्री०) अण्-इण् । १ तन्नामक मर्मस्थान, आणि नामकी नाज़ुक जगह । यह स्नायुका मर्म होता और जानुके ऊर्ध्व भागमें दोनो पार्श्वपर तीन अङ्गुल बराबर रहता है । (सप्त) २ अचापकील, धुरिका कांटा । इससे पहिया बाहर निकल नहीं सकता । ३ गृहकोण, मकानका कोना । ४ सीमा,

हद । ५ असिधारा, तलवारकी बाड़ । (स्त्री०) आणी ।

आणीविय (सं० पु०-स्त्री०) अणिरस्यस्य वा दीर्घः आणीयः ऋषिविशेषः तस्यापत्यम्, शुभ्रादि० टक् । आणीव ऋषिका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य । (स्त्री०) आणीविया ।

आण्ड (सं० त्रि०) अण्डे भवः, अण् । १ अण्डसे जन्म लेनेवाला, जो अण्डेसे पैदा हो । यह शब्द पक्षी, सर्प प्रभृतिका विशेषण है । (पु०) २ हिरण्य-गर्भ ब्रह्मा । अण्डमेव, स्वार्थे अण् । ३ पुरुषका वृषण, अण्डकोष, फोता, बेज़ा, खाया, खुसया, पेलड़ । अण्डं वृषणमस्यस्य, अण् । ४ अण्डकोष-युक्त, जिसके फोता रहे । अण्डेन निर्वृत्तम्, अण्ड-अण् । ५ अण्डनिष्पन्न कपालरूप आकाश एवं भूलोक । दो कपालसे जैसे घट बनता, वैसे ही पर-ब्रह्म स्वप्नसुत अण्डके ही दो टुकड़े उतार आकाश एवं भूलोक तैयार करता ; इसीसे इन दोनो लोकका नाम आण्ड पड़ा है । ६ अण्ड, अण्डा । ७ समुत्पन्न श्रावकगण, भोल ।

आण्डज (सं० पु०) अण्डे जायते, अण्ड-जन-उ स्वार्थे अण् । १ अण्डजात पक्षा सर्पादि, अण्डेसे पैदा होने-वाले परिन्द सांप वगैरह । (स्त्री०) २ अण्डजात जीवका शरीर, अण्डेसे पैदा होनेवाले जानवरका जिस्म । (त्रि०) ३ अण्डजात, अण्डेसे पैदा । (स्त्री०) आण्डजा । आण्डवत् (सं० त्रि०) अण्ड वा वृषण-विशिष्ट, जिसके अण्डा या फोता रहे । (पु०) आण्डवान् । (स्त्री०) आण्डवती ।

आण्डाद (वे० पु०) १ अण्डभक्षक, अण्डाखोर । २ दानव विशेष ।

आण्डायन (सं० त्रि०) अण्डेन निर्वृत्तम्, अण्ड पक्षादि० फक् । अण्डनिर्वृत्त, अण्डनिष्पन्न, अण्डेसे निकला हुआ ।

आण्डी (वे० स्त्री०) वृषण, फोता ।

आण्डीक (वे० त्रि०) अण्डोत्पादक, अण्डे देने-वाला । जो पेड़ अण्डे-जैसे गोल-गोल फल रखता, वह आण्डीक कहलाता है । (स्त्री०) आण्डीका ।

आण्डीर (वै० त्रि०) आण्डमस्य, आण्ड-ईरच् ।

काण्डादीरजीरचौ । पा ५११११ । १ अण्डयुक्त, अण्डेदार ।

(पु०) २ पुरुष, नर । (स्त्री०) आण्डीरा ।

आण्डीवत (सं० पु०) राजाविशेष ।

आण्डीवतायनि (सं० त्रि०) आण्डीवतेन निर्वातम्, कण्ठादि० फिज् । अण्डीवत राजाकर्तृक निर्वात, अण्डीवत राजासे निकला हुआ ।

आत् (वै० अव्य०) १ अत-विण् । आद गुणः । पा ६।१।८५ ।

अनन्तर, बाद, पीछे । (सं० पु०) २ आकार, आ ।

आत (सं० त्रि०) आ-अत्-अच् । १ सतत-गत, प्रसृत, गुजरा हुआ । (वै० पु०) २ मच्च, पाड़ । ३ हारका आधार, दरवाजेका ठाट । ४ आकाशका चतुर्थींश, आसमानकी चौथायी । (हिं० पु०) ५ शरीफ ।

आतक (सं० त्रि०) अत-खुल् । १ सतत गमन-कारी, गुजर जानेवाला । (पु०) २ सर्पविशेष, किसी नागका नाम ।

आतङ्ग (सं० पु०) आ-तकि-घञ् । १ रोग, बीमारी । २ सन्ताप, तकलीफ । ३ सन्देह, शक । ४ सुरज वाद्यकी ध्वनि, सुरचङ्कका आवाज । ५ भय, खौफ । ६ ज्वर, बुखार ।

‘आतङ्गीरोग-सन्ताप-शङ्कासु सुरजध्वनौ ।’ (मेदिनी)

आतञ्चन (सं० स्त्री०) आ-तञ्च-लुट् । १ वेग, धावा । २ प्रायण, पहुँच । ३ आप्यायन, भराव । ४ दधि प्रसृत करनेको दुधमें अन्न द्रव्यका प्रचेप, दही बनानेके लिये दूधमें खटायीका डालना । ५ निचेप, फेंक-फाँक । ६ उपद्रव, गड़बड़ । ७ द्रव-द्रव्यके प्रचेपसे कठिन वस्तुका चूर्णन, पतली चीज डालकर सख्त शैका तोड़ना । ८ गलित स्वर्णादिका द्रव्यान्तरके संयोगसे जारण, सोनेका फूंकना ।

‘आतञ्चनं प्रतीवाय जवनाप्यायनार्थकम् ।’ (अमर)

करणे लुट् । ९ दधि प्रसृत करनेका अन्न, दही जमानेकी खटायी ।

आतत (सं० त्रि०) आ-तन-क्त । विस्तृत, कुशादा, फैला हुआ ।

आततज्य (सं० त्रि०) आतता आरोपिता ज्या यस्य । रोदा खींचे हुआ, चढ़ी कमानवाला ।

आततायिता (सं० स्त्री०) वध, कत्ल, चोरी ।

आततायित्व (सं० स्त्री०) आततायिता देखो ।

आततायिन् (सं० त्रि०) आततेन विस्तीर्णेन शस्त्रा-दिना अयितुं वधाव्यर्थं गन्तुं शीलमस्य, आतत-अय-णिनि । १ वध करनेको उद्यत, जो जान मारनेको तैयार हो । २ अधिज्य, कमान चढ़ाये हुआ । घरमें भाग लगाने, भय वस्तुमें विष मिलाने, अनिष्टके निमित्त शस्त्र उठाने, घन चोराने, भूमि छीनने और स्त्री निकाल ले जानेवालेको वशिष्ठने आततायी बताया है । किसी-किसी मतसे आततायीको मार डालनेमें कोयी पातक नहीं, किन्तु मतान्तरसे पाप पड़ता है । पाण्डवोंने शत्रुको मार इसी पाप-चयके निमित्त अश्वमेधयज्ञ किया था । (पु०) आत-तायी । (स्त्री०) आततायिनी ।

आतताविन् (वै० त्रि०) आततायिन् देखो । (पु०) आत-तावी । (स्त्री०) आतताविनी ।

आतन (सं० स्त्री०) १ दर्शन, नजारा, देखाव । २ विस्तृति, फैलाव ।

आतनि (वै० त्रि०) आ-तन-इन् । विस्तारक, फैलानेवाला ।

आतान (वै० त्रि०) विस्तृत रज्जु, फैली डुयी-रस्सी ।

आतायिनी (सं० पु०) खेनपची, बाज ।

आतप् (वै० त्रि०) आतपति, आ-तप-क्तिप् । १ ताप-दायक, गर्म । (पु०) २ ताप, गर्मी ।

आतप (सं० पु०) आतपति, आ-तप-घ । उंदि सञ्चार्यः वः प्रायेण । पा ५।३।१८ । १ रौद्र, धप । इसके सेवनसे खेद निकलता, मूर्च्छा आती, रक्त बढ़ता, दृष्टि लगती, दाह होता, अम बढ़ता, चित्त उभरता और वैवर्ण्य देख पड़ता है । (मदनमाल) आतप कटु, रुख और नेत्ररोगप्रकोपन है । (राजनिष्यु) (त्रि०) २ सन्तापदायक, तकलीफ पहुँचानेवाला । (स्त्री०) आतपा ।

आतपतण्डुल (सं० पु०) असिद्ध तण्डुल, अरवा चावल ।

आतपत्र (सं० स्त्री०) आतपात् रौद्रात् त्रायते, आ-तप-त्रै-क । रुद्र, धप बचानेवाला छाता । महाभारतीय

अनुशासन-पर्वके ८५ अध्यायमें बुधधिरने भीमसे पूछा था,—‘आह एव’ अन्य-अन्य पुण्यकर्ममें छाता और जूता उत्सर्ग करनेका क्या कारण है ? भीमने उत्तर दिया,—‘पूर्वकालमें भृगुवंशोद्भव जमदग्नि वाणप्रयोग सीखनेके लिये किसी स्थानको ताक पुनः पुनः शर छोड़ने लगे। जो शर छूटता, उनकी पत्नी रेणुका उसे उठा लाती थीं। क्रमसे मध्याह्नकाल उपस्थित हुआ और रौद्र प्रखर पड़ा। पथकी बालू तपकर आग बन गयी थी। रेणुका क्लान्त हो वृक्षकी छायामें बैठीं और वाण लानेमें अनेक विलम्ब लगाने लगीं। जमदग्निने क्रुद्ध हो उतने विलम्बका कारण पूछा था। रेणुकाने विनय-वाक्यमें स्वामीसे कहा,—‘मस्तकपर प्रखर सूर्यका ताप लगता और रौद्रसे पथ जला जाता है, अब मैं आ-जा नहीं सकती। यह बात सुन जमदग्नि सूर्यके प्रति वाण फेंकने लगे थे। सूर्यने ब्राह्मणके वेशमें उनके पास पहुँच और छाता तथा जूता देकर कहा,—‘आजसे जो छाता और जूता देगा, उसे महत् फल मिलेगा। उसी समयसे आह्लादि पुण्य-कार्यमें छाता और जूता दिया जाता है।’

आतपत्रक (सं० क्ली०) चूद्र छत्र, छोटा छाता। जो चट्टायी या टोकारी मत्थेपर छातेकी जगह रखते, उसे भी आतपत्रक कहते हैं।

आतपन, (सं० पु०) ताप उत्पन्न करनेवाले शिव।

आतपर्णिका, आतपर्णी देखो।

आतपर्णी (सं० स्त्री०) चीरिका, खिरनी।

आतपवत् (सं० त्रि०) आतपोख्यस्य, आतपः मतुप, मकारस्य वकारः। तापयुक्त, रौशन किया हुआ, जो आफताबकी रौशनगी पाता हो। (पु०) आतपवान्। (स्त्री०) आतपवती।

आतपवर्ष (वै० त्रि०) आतपे निमित्ते सति वर्षन्ति, बाहु० कर्तरि वत्। रौद्रके समय वृष्टिसे उत्पन्न, जो धूप रहते मेह बरसनेसे पैदा हो। यह शब्द जलादिका विशेषण है। (स्त्री०) आतपवर्षा।

आतपवारण (सं० क्ली०) आतपं रौद्रं वारयति, आतप-ठ-णिच्-लुग। छत्र, धूपको दूर रखनेवाला छाता।

आतपशुक्र (सं० त्रि०) रौद्रमें सूखा हुआ, जो धूप लगनेसे कड़ा पड़ गया हो।

आतपात्यय (सं० पु०) ६-तत्। १ रौद्रका अपगम, धूपकी खानगी। आतपस्य अत्ययो यत्र, बहुव्री०। २ वर्षाकाल, धूपको दूर करनेवाली बारिश।

आतपाभाव (सं० पु०) ६-तत्। १ रौद्रका अभाव, धूपका देख न पड़ना। आतपस्य अभावो यत्र, बहुव्री०। २ छाया, साया, परछाहीं। ३ छायायुक्त स्थान, सायेदार जगह।

आतपिन् (सं० त्रि०) १ रौद्रसम्बन्धीय, धूपसे तात्तुक, रखनेवाला। (पु०) आतपी। सूर्य।

आतपीय (सं० पु०) आतपस्य सन्निकृष्ट देशादि उत्करादि० छ। रौद्रके निकटस्थ स्थानादि, धूपके पासकी जगह। (स्त्री०) आतपीया।

आतपोदक (सं० क्ली०) आतपे रौद्रे लक्ष्यमाणं उदकमिव, शाक० तत्। १ मरीचिका, मृगतृणा, सुराव, धोका।

आतप्य (वै० त्रि०) रौद्रमें विद्यमान, धूपमें रहनेवाला।

आतम (हिं०) आत्मन् देखो।

आतमा (हिं०) आत्मन् देखो।

आतमाम् (सं० अत्र्य०) आ-तमप्-आमु। १ अति-शयः सान्मुख्य, बिलकुल सामने। २ समन्ताद्भाव, सकल दिक्, चारो ओर, सब जगह।

आतर (सं० पु०) आतार्यते अनेन, आ-त करणे अप्। पार जानेका भाड़ा, उतरायी, नावका मह-सूल। ‘आतरस्तरपण्यं स्यात्।’ (अमर)

आतर्दन (सं० क्ली०) उद्घाटन, उन्मीलन, शिगाफ, साल, फांक।

आतर्पण (सं० क्ली०) आ-तृप्-लुगट्। १ तृप्ति, आसृदगी, क्काहट। आ-तृप्-णिच्-लुगट्, णिच्-लोपः। २ तृप्तिका उत्पन्न करना, आसृदगीका लाना। ३ मङ्गलद्रव्यका आलेपन, पोतायी। आलेपनमें व्यवहृत होनेवाला वर्णक, ऐपन, पोतनेका रङ्ग।

आतव (सं० पु०) आ-तु-अप्। हिंसाका करना,

तकलीफ़का पड़ना। २ एक राजा । (त्रि०)
कर्तरि अच् । ३ हिंसक, तकलीफ़ देने या मारने-
वाला ।

आतवायन (सं० पु०) आतवस्थापत्यम्, आतव
अश्वादि० फक् । आतव राजाके पुत्र और कन्यारूप
अपत्य, आतवकी औलाद ।

आतश (फा० स्त्री०) अग्नि, आग ।

आतशक (फा० स्त्री०) उपदंश, मेद्वरोग, गर्मी,
फिरंगकी बीमारी । हस्तके अभिघात, नख एवं दन्तके
पात, आधावन, अति उपसेवन और योनिके प्रदोषसे
विविध अपचार पर पांच प्रकारका उपदंश शिश्नमें
होता है । सतोद भेद, स्फुरण, और सकृण स्फोट
निकलनेसे पवनोपदंश समझा जाता है । पीत, बहु-
क्लोदयुत और सदाह स्फोट पित्तोपदंशका लक्षण है ।
रक्तात्मक उपदंशमें सकृण स्फोट पड़ता और उससे
रुधिर टपका करता है । कफोपदंशका स्फोट सकण्डुर,
शोथयुत, महत्, शुक्ल, घन और स्त्रावयुत रहता है ।
त्रिमलोपदंश नानाविध स्त्रावरोगसे निकलता और
असाध्य होता है । (माधवनिदान) अतिमैथुन, अति
ब्रह्मचर्य तथा ब्रह्मचारिणी, चिरोत्सृष्टा, रजस्वला,
दीर्घरोमा, कर्कशरोमा, सङ्कीर्णरोमा, निगूढरोमा, अल्प-
हारा, महाहारा, अप्रिया, अकामा, अपरिष्कार सलिल-
प्रचालित-योनि, अचालितयोनि, योनिरोगोपसृष्टा,
दुष्टयोनि वा वियोनि नारीके अत्यर्थ उपसेवन और
हाथके नाखून तथा दांतकी नोकका विष लगने एवं
शूकके निपातन, अर्दन, हस्तके अभिघात, चतुष्पदी-
गमन, गन्दे सलिलके प्रचालन, अवपीड़न, मैथुनान्तमें
शुक्लमूत्रके वेगधारण एवं प्रचालनादिसे मेद्वमार्गका जो
प्रकुपित दोष क्षत वा अक्षतमें स्वयं उभर आता, वही
उपदंश कहाता है । छर्दि, विरेक, ध्वज, मध्य नाड़ीका
वेध, जलौका, परिपातन, सेक, प्रलेप, यव, शालि, जाङ्गल-
पशुमांस, मुहरस, घृत, कठिन्नक, शिशुफल, पटोल, वन-
मूलक, शालिशक, तिक्त कषाय, मधु, कूपवारि और
तल उपदंशको दूर करता है । दिवानिद्रा, मूत्रवेग,
गुरु अन्न, मैथुन, गुड़, आयास, अन्न और तक्र
उपदंशके रोगीको बचाना चाहिये । (सुश्रुत)

आतशखाना (फा० पु०) अग्न्यागार, आग रखनेकी
जगह । पारसी जिस स्थानमें अग्निस्थापन करते, उसे
भी आतशखाना कहते हैं ।

आतशखोर (फा० वि०) अग्निभक्षक, आग खाने-
वाला ।

आतशगाह, आतशखाना देखो ।

आतशजून (फा० वि०) गृहदाही, घरमें आग
लगानेवाला ।

आतशजूनी (फा० स्त्री०) गृहदाह, घर फूंक देनेका
काम ।

आतशदान (फा० पु०) अग्नि रखनेका पात्र, अंगीठी,
बोरसी ।

आतशपरस्त (फा० वि०) १ अग्निपूजक, आगकी
परस्तिश करनेवाला । (पु०) २ पारसी ।

आतशबाज़ (फा० पु०) हवायीगर, आतशबाज़ी
तैयार करनेवाला ।

आतशबाज़ी (फा० स्त्री०) १ आग्नेय चूर्णसे निर्मित
क्रीडनकके छूटनेका दृश्य, बारूदसे भरी खिलौनोंके
चलनेका नज़ारा । २ आग्नेय चूर्णसे निर्मित क्रीड-
नक, बारूदका खिलौना । यह कयी तरहकी होती
है,—अनार, फुलभङ्गी, महताबी, चकरी, वाण, छछू-
दर, हवायी, बमगोला, फटाका इत्यादि ।

आतशी (फा० वि०) १ आग्नेय, आगके सुता-
क्षिक । २ अग्न्युत्पादक, आग पैदा करनेवाला ।
३ अग्निमें डालनेसे न बिगड़नेवाला, जो आगमें पड़नेसे
जलता न हो ।

आता (सं० स्त्री०) आभिमुख्येन अत्यन्त गम्यते
प्राणिभिः, आ-अत-घञ् । अकर्तरि च कारके । पा ३।३।१८।
दिक्, जानिव, तर्फ, ओर ।

आतान (वै० पु०) आतन्यते, आ-तन्-घञ् । १ आभि-
मुख्यमें विस्तार, कुशादगी, फैलाव । २ खींचतान ।
कर्मणि घञ् । ३ विस्तार्य, फैलाया जानेवाला ।
४ कर्तव्यकार्य, फर्ज ।

आतानक (सं० त्रि०) आ-तन्-खुल् । विस्तारक,
फैलानेवाला ।

आतापि (सं० पु०) आ-तप्-इण् । १ एक असुर ।

आतापिके भाईका नाम वातापि रहा। दस्युवृत्ति ही इनकी प्रधान जीविकाका उपाय था। घरमें आनेपर वातापि अपने भाई आतापिका मांस काटकर अतिथि-को खिला देते रहा। शेषमें भोजनके बाद वातापिके पुकारनेसे यह जीवित हो और अतिथिका पेट फाड़कर बाहर निकल आता था। मृत्यु होनेपर दोनों असुर उसका सर्वस्व छीन लेते। एकदिन अगस्त्य मुनि भी आतापिके घर अतिथि हुये थे। आगत-स्वागतके अनन्तर वातापि बोला, भगवन् ! क्या आप मांस खाना चाहते हैं। ऋषिके सम्मत होनेपर उसने अपने भाई आतापिको गुप्त रीतिसे काटकर ऋषिके आगे ला रखा था। अगस्त्य उत्तम रूपसे वही मांस पकाकर खा गये। वातापि उन्हें सामान्य अतिथि जैसा समझ दूर जाके आतापिको पुकारने लगा, किन्तु ऋषिने जठरानलमें भस्मीभूत कर दिया था। इसीलिये यह उनका उदर विदीर्ण कर दूसरे दिनकी तरह बाहर निकल न सका। अगस्त्य और वातापि देखो। २ चिह्नपक्षी, चील।

आताविन् (सं० पु०) आतपति, आ-तप्-णिनि।

१ चिह्न, चील। २ एक असुर। आतापि देखो।

आतापी, आतापि देखो।

आतार (सं० पु०) आतीर्यतेऽनेन, आ-तृ करणे घञ्। नौकाका शस्त्र, नावका भाड़ा, नदीपार जानेका सह-सूल, उतराई, खेवा।

आतार्य (सं० त्रि०) १ पार किया जानेवाला, जिसके पार उतरा जाये। (वै०) २ पार जानेके सुतास्त्रिक, जो पार उतरनेसे सम्बन्ध रहता हो।

आताली (सं० अश्व०) आ-तल बाहु० इण्। कातर व्यक्तिको व्याकुल करके, खौफ़ जड़ा शस्त्रको बेचन बनाकर।

आति (सं० पु०) अत-इण्। १ शरारी पक्षी।

(त्रि०) २ सर्वदा गमनकारी, हर वकूत चलनेवाला।

आतिथिग्व (सं० पु०) अतिथिं गच्छति, अतिथि गम्-ङ्। १ दिवोदास नामक राजा। तस्यापत्यम्, अण्। २ दिवोदास राजाके पुत्र।

आतिथेय (सं० क्ली०) अतिथये इदम्, अतिथि-

ठक्। १ अतिथिसेवा, मेहमांदारी। २ अतिथिके निमित्त भोजनादि, मेहमानके लिये खाना वगैरह। (त्रि०) तत्र साधु ठक्। पथ्यतिथिवसति स्वपते ईञ्। पा ४।४।१०४। अतिथि सेवामें कुशल, मेहमांदारीमें होशियार। (स्त्री०) आतिथेयी।

आतिथ्य (सं० क्ली०) अतिथये इदम् अण्। अतिथे-यां। पा ५।४।२६। १ अतिथि-परिचर्या, पहुनाई, मेहमान्दारी। २ अतिथिको देने योग्य वस्तु। स्वार्थे षञ्। ३ अतिथि, पाहुना, मेहमान्।

‘आतिथ्योऽतिथौ तदयोग्यपि।’ (हेम)

(त्रि०) ४ अतिथिका सत्कार करनेवाला, मेहमांदार।

आतिथ्यरूप (वै० त्रि०) आतिथ्य नियमके स्थानापन्न, मेहमांदारीके चलनकी जगह रहनेवाला।

आतिथ्यसत्कार (सं० पु०) आतिथ्यका कल्प, मेहमांदारीका काम।

आतिदेशिक (सं० त्रि०) अतिदेशादागतः, ठक्। अन्यत्र आरोपित, अतिदेश-प्राप्त, दूसरी जगह रखा हुआ।

आतियात्रिक (सं० त्रि०) अतियात्रायां नियुक्तां ठक्। आतिवाहिक। आतिवाहिक देखो।

आतिरश्चीन (सं० त्रि०) ईषत् तिर्यक्, कुछ-कुछ टेढ़ा।

आतिरेक्य (सं० क्ली०) अतिरिच्यते, कर्मणि घञ् तस्य भाव षञ्। अतिशय वृद्धि, इफ़रात, बढ़ती।

आतिवाहिक (सं० पु०) अतिवाहे इहलोकात् परलोक-प्रापणे नियुक्तः, ठक्। इस लोकसे परलोक ले जानेवाला ईश्वर-नियुक्त अर्चिरादि अभिमानी देवगण, धूमादि अभिमानी देवगण। अतिवाहनमें नियुक्त देव दो रूप होते, प्रथम दक्षिण एवं द्वितीय उत्तर पथपर स्थित हैं। जो लोग इहलोकमें वापी कूप तड़ागादि बनाते और अग्निष्टोम याग प्रभृति वैदिक कर्मकाण्ड करते, वे परलोक जानेको दक्षिण द्वार पाते हैं। उसी स्थानपर ईश्वर नियुक्त धूमादिगण रहता, जो सकल व्यक्तिको परलोक ले जाता है। फिर जो लोग इहलोकमें ज्ञानी होते अर्थात् ज्ञान-

मात्र द्वारा परमात्माकी चिन्ता करते, वह परलोक जानिको उत्तरद्वार पर पहुँचते हैं। वहाँ ईश्वर-नियुक्त अभिमानी देवगण ज्ञानी मनुष्यका परलोक ले जाता है। इसीका नाम अचिरादि है। साङ्ख्यसूत्रके शाङ्करभाष्यमें इसका विशेष विवरण लिखा है। अतिवाहे अतिवाहकाले (लोकान्तरगतिकाले) भवः उज्ज्वलः २ मनुष्यके मृत्युका जात देह। विष्णुधर्मोत्तर पुराणमें लिखा, कि मनुष्य मरनेपर आतिवाहिक शरीर पाता है। उसी शरीरसे तेज, वायु एवं आकाश तीन भूत ऊपर चढ़ जाते हैं। आतिवाहिक शरीर केवल मनुष्यके ही होता है, अन्य प्राणीके नहीं। (प्रायश्चित्त-विवेक) आतिवाहिक शरीरको 'भोग-शरीर' भी कहते हैं। (चि०) ३ इहलोकसे परलोक जानीमें नियुक्त, इस दुनियासे दूसरी दुनियामें पहुँचानेके काम आनेवाला।

आतिविज्ञान्य (सं० त्रि०) ज्ञानको अतिक्रमण करनेवाला, जो समक्षसे सबकुत्त ले जाता हो।

आतिश, आतश देखो।

आतिशय्य (सं० लो०) अतिशय्य एव, स्वार्थे ष्यञ्। आधिक्य, प्राधान्य, कसरत, बहुतायत।

आतिश्यायन (सं० त्रि०) अतिक्रान्तं श्वानं कुक्कुरम्, पृषो० न समासान्तः अतिश्यादासः, अत्यधीनत्वात् फक्। पचादिभ्यः फक्। पा ४।२।८०। दासके निकटस्थ, नौकारके नजदीक। यह शब्द देशादिका विशेषण है।

आतिष्ठ (सं० लो०) अति-स्था-क षत्वम्, अतिष्ठस्य भावः अण्। उत्कर्ष, अन्यको अतिक्रम करनेवाली स्थिति, बढ़ती, जिस हालतमें दूसरेसे बढ़े रहें।

आतीपाती (हिं० स्त्री०) क्रीड़ा विशेष, पहाड़ी डिलो, एक खेल। इसमें कितने ही बालक एकत्र होते और एकको चोर बनाते हैं। फिर चोर लड़का यह कहकर किसी पेड़की पत्ती लाने भेजा जाता है,—'आती मार छाती, लावो नीमकी पाती।' इस वाक्यमें नीमकी जगह जिस पेड़की पत्ती मंगाना चाहते, उसीका नाम रखते हैं। चोर-लड़केके पत्ती तोड़ने जाते ही दूसरे इधर-उधर किसी गुप्तस्थानमें छिप जाते हैं। मंगायी हुई पत्ती आनेमें थोड़ा देर हो

जिस लड़केको छू लेता, उसे चोर बनना और दांव देना पड़ता है। योषकालकी चन्द्रयोत्सवमें ही यह क्रीड़ा प्रायः हुआ करती है।

आतु (सं० पु०) आइ देखो।

आतुच् (वै० स्त्री०) आधारे क्तिप्। सूर्यका अस्तगतिकाल, सन्ध्या, आफ़ताबके गुरुत्व होनेका वक्त, शाम। "यन्मध्यन्दिन आतुचि।" (ऋक् ८।२७।२१) 'आतुचिगमनार्थः' (सायण)

आतुज् (सं० पु०) शत्रुको नाश करनेवाला, धन देनेवाला, जो दुश्मनको बरबाद करता या दोस्तको दौलत देता हो।

आतुजि (वै० त्रि०) आ-तुज हिंसावलादान-निकेतनेषु इन् किञ्च। इयुपधात् कित्। उण् ४।१।२६। १ हिंसक, चोट देनेवाला। २ बलप्राप्तक, छीन लेनेवाला। ३ आक्रमणकारी, झपट पड़नेवाला।

आतुर (सं० त्रि०) अत सातत्य-गमने उरच्, पृषो० अकारदीर्घः। मद्गुरादयश्च। उण् १।४१। १ आहत, जख्मी। २ पीड़ित, तकलीफ़ उठानेवाला। ३ रोगी, बीमार। ४ कार्याक्षम, नाकाम। ५ व्याकुल, परेशान। 'आसवायी-विक्रतो व्योधितोऽपटुः। आतुरः।' (भरत) "आतुरे नियमो नास्ति।" (अ०) (क्रि० वि०) ६ शीघ्र, जल्द, फ़ौरन्। (स्त्री०) आतुरा।

आतुरता (सं० स्त्री०) १ पीड़ा, तकलीफ़। २ रोग, बीमारी। ३ कार्याक्षमता, निक्कामापन। ४ व्याकुलता, परेशानी। ५ शीघ्रता, फ़ुर्ती।

आतुरतायी (हिं०) आतुरता देखो।

आतुरसन्ध्यास (लो०) ६-तत्। सन्ध्यास विशेष, जो सन्ध्यास बीमार लेता हो। भारतवर्षके दक्षिण किसी-किसी स्थानमें मृत्युकाल आ पहुँचनेसे सुसुप्त व्यक्तिको सन्ध्यास दे निगुण उपासना सिखाते हैं। इसीका नाम आतुरसन्ध्यास है। आतुर-सन्ध्यास लेने बाद मृत्युसे बच जानेपर कोई घरमें घुसने नहीं पाता। तुलसीदास नामक एक ब्राह्मणकी ऐसी ही दशा हुई थी। सुसुप्तकाल पाकर आतुरसन्ध्यास धर्म दिया गया सही, किन्तु मृत्यु उनका कुछ देर नहीं रुक सकी। इसीसे वह काशीमें रहने और

वेदान्त पढ़ने लगे थे। तुलसीदासका तत्त्वज्ञान और नीतिवीरत्व अतिशय प्रसिद्ध है। तुलसीदास देखो।

आतुरी (हिं०) आतुरता देखो।

आतुरोपक्रमणीय (सं० पु०) आतुरं रोगिणमधि-
कृत्य रोगनिवारणाय उपक्रमणीयः, शाक० तत्।
१ पीड़ितकी चिकित्साके लिये उपक्रमणीय व्यापार
विशेष, बीमारकी शफाके लिये अमलमें लाया जाने-
वाला काम। इसमें आयु, व्याधि, ऋतु, अग्नि,
वयस; देह, बल, सत्वसाम्प्र, प्रकृति, भेषज और देश
पर ध्यान रखना पड़ता है। तदधिकृत्य कृतो ग्रन्थः,
छ। २ तत्प्रतिपादक ग्रन्थ, इसी मजमूनकी किताब।

आतुर्य (सं० स्त्री०) आतुरस्य भावः, घञ्। १ आतु-
रत्व, चबराहट। २ पीड़ा, तकलीफ़। ३ फलनाशक
ज्वरांशविशेष, किसी किस्मका बुखार। वस्तुभेदसे
ज्वरांश नानाविध होता है। इसका वर्णन हरिवंशके
१८३ अध्यायमें अच्छीतरह लिखा है।

आटण (सं० स्त्री०) आ-टट्-णत्। १ छिद्र, शिगाफ़,
छेद। २ सछिद्र क्षत, खुला जख्म। (त्रि०)
३ हिंसित, चोट खाये हुआ। ४ छिन्न, कटा-फटा।

आटप्य (सं० पु०) आटप्यतेऽनेन, आ-टप बाहु०
कृष्ण्। १ आतका पेड़, शरीफ़ेका दरख्त। (स्त्री०)
२ आतका फल, शरीफ़ेका मेवा। यह दसि-जनक,
रक्तवर्धक, खादु, शीतल, हृद्य, बल्य, मांसकर और दाह,
रक्त, पित्त एवं वातघ्न होता है। (राजनिघण्टु) (त्रि०)
३ दस होने योग्य, जो आसुदा किया जा सकता हो।

आतोदिन् (वै० त्रि०) वेधक, साहसी, मारनेवाला,
जो धक्का दे रहा हो। (पु०) आतोदी। (स्त्री०)
आतोदिनी।

आतोद्य (सं० स्त्री०) आ समन्तात् तुद्यते, आ-तुद्-
णत्। वीणादि चार वाद्य, बीन वगैरह चार बाजे।
इनमें वीणादि तत, मुरजादि अनह, वंशी प्रभृति
शुधिर और कांस्य तालादि वाद्य घन होता है।

आत्त (सं० त्रि०) आ-दा-त्त। १ गृहीत, मञ्जूर
किया हुआ। २ असन्दिग्ध, पक्का। ३ आकृष्ट, खींचा
हुआ।

आत्तगन्ध (सं० त्रि०) आत्तो गृहीतः शत्रुणा गन्धः

गर्वो यस्य, शाक० बहुव्री०। १ शत्रुकर्तृक अभिभूत,
दुश्मनसे दबा हुआ। २ गृहीत-गन्ध, सूँघा हुआ।

आत्तगर्व (सं० त्रि०) आत्तो गृहीतो गर्वो यस्य,
बहुव्री०। अभिभूत, पराजित, दबा या हारा हुआ।

आत्तमनस्क (सं० त्रि०) हर्षमें मन खो बैठनेवाला,
जो खुशीमें आपसे बाहर निकल जाता हो।

आत्तलक्ष्मी (सं० त्रि०) धन गंवा देनेवाला, जो
दौलत खो बैठा हो।

आत्तवचस् (वै० त्रि०) वचनशून्य, जो बोल न
सकता हो।

आत्म (हिं०) आत्मन् देखो।

आत्मक (सं० त्रि०) द्रव्यकी प्रकृतिसे सम्बन्ध रखने-
वाला, जो चीजकी कुदरतसे ताल्लुक रखता हो। यह
शब्द प्रायः पदके समासान्तमें आता है। जैसे—
सङ्ख्यात्मक, पञ्चात्मक, विषात्मक, ऋगात्मक इत्यादि।
(पु०) आत्मन् देखो। (स्त्री०) आत्मिका।

आत्मकर्मन् (सं० स्त्री०) आत्मना क्रियते, आत्मन्-
क-मणिन्। सर्वधातुभ्यामणिन्। उण् ४। १४४। स्वीय कर्तव्य
कर्म, अपने हाथका काम।

आत्मकल्याण (सं० स्त्री०) स्वीय मङ्गल, अपना भला।

आत्मकाम (सं० त्रि०) आत्मनं कामयते, आत्मन्-
काम-निङ्-अण्, उप० समा०। अपनी ही ओर देखने-
वाला, स्वार्थी, मतलबी। २ अन्य विषय परित्याग
कर केवल आत्माका अभिलाष रखनेवाला, जो दूसरी
बातें छोड़ रुहका ही हाल जानना चाहता हो।

आत्मकामिय (सं० त्रि०) आत्मकामाय इदम्, ढक्।
आत्मकामका सम्बन्धी, अपने या रुहके कामसे ताल्लुक
रखनेवाला।

आत्मकामियक (सं० त्रि०) आत्मकामिय स्वार्थे
राजन्यादि० वुज्। आत्मकामियाकीर्ण, आत्मकामियोंसे
आबाद।

आत्मकार्य (सं० स्त्री०) स्वीय कर्म, घराऊ काम।

आत्मकीय, आत्मीय देखो।

आत्मकृत (सं० त्रि०) १ स्वीय सम्पादित, अपने
हाथों किया हुआ। १ स्वीय प्रतिकूलाचरित, अपने
खिलाफ़ किया हुआ।

आत्मगत (सं० अव्य०) स्वगत, पार्श्वतः, जनान्तिक, अलग, किनारे। यह शब्द प्रायः नाव्य भाषामें आगामी वचन गुप्त रखनेको व्यवहृत होता है। पात्र जो कुछ कहता, मानो वह उसीके लिये रहता और सिवा दर्शकमण्डलीके दूसरा कोयी सुन नहीं सकता।
आत्मगति (सं० स्त्री०) १ जीवनके अस्तित्वकी वृत्ति, रुढ़की हस्तीका तरीफ़। २ स्वीय वृत्ति, अपनी चाल।

आत्मगत्या (सं० अव्य०) स्वीय कर्मसे, अपने हाथों।

आत्मगन्धक (सं० पु०) गन्धबोल। (वैद्यकनिघण्टु)

आत्मगन्धिहरिद्रा (सं० स्त्री०) कर्पूरहरिद्रा, आमा-हलदी।

आत्मगुप्त (सं० त्रि०) आत्मना गुप्तः रक्षितः। निज शक्ति द्वारा रक्षित, अपनी ताकतसे टिका हुआ।

आत्मगुप्ता (सं० स्त्री०) कपिकच्छु, केवांच। 'आत्म-गुप्ताकङ्कापण्डा।' (अमर) केवांच शुक्रवर्धक, मधुर-तिक्त, मांससंवर्धक, गुरु, वातघ्न, बल्य और कफ-पित्त-रक्तघ्न होता है। आत्मगुप्ताका बीज वातको मिटाता और शुक्रको बहुत बढ़ाता है। (भावप्रकाश) इसका फल स्त्रियोंको प्रसन्न कर देने कारण वाजीकरण है। (वाग्भट)

आत्मगुप्ति (सं० स्त्री०) गुहा, दर्री, खो, गोहा, जानवरको छिप रहनेकी जगह।

आत्मगौरव (सं० स्त्री०) स्वीय प्रभाव, अपना रुख।

आत्मग्राहिन् (सं० त्रि०) आत्मानं आत्मार्थमेव वा गृह्णाति, आत्मन्-ग्रह-णिनि। उदरभरि, स्वार्थपर, आत्मन्न, खुदगर्ज, लालची, मतलबी, पेटू, अपनी ही फ़िक्र रखनेवाला। (पु०) आत्मग्राही। (स्त्री०) आत्मग्राहिणी।

आत्मघात (सं० पु०) १ आत्महत्या, प्राणत्याग, कत्तलनफ़्स, खुदकुशी, आपघात। जब मनुष्य असह्य दुःखमें पड़ जाता और उससे कुटकारा पानेका उपाय नहीं देखता, तब अपने हाथों फांसी लगा, विष खा या अस्त्र मार प्राण दे देता है।

घात है। हमारे शास्त्रानुसार यह चार प्रकारका होता है,—वैध, अवैध, ज्ञानकृत एवं अज्ञानकृत। मनु एवं वृद्ध गगने लिखा, जब मनुष्य अत्यन्त वृद्ध बन शीघ्रवर्जित तथा लुप्तक्रिय होता, और चिकित्सा करते भी आरोग्यकी सम्भावना नहीं रहती, तब उच्च स्थानसे गिर, अग्निमें कूद, अनशन रह या जलमें डूब प्राण छोड़नेसे त्रिरात्र अशौच माना जाता है। उसके दूसरे दिन अस्थि सञ्चय करना आवश्यक है। तीसरे दिन उदक तथा पूरक पिण्डदान और चौथे दिन आह होता है। अवैध आत्मघातमें अशौच, उदकक्रिया और आहृदि कुछ भी करना न चाहिये।

२ पाषण्डमार्ग, नास्तिकता, इलहाद, बिदत।

आत्मघातक, आत्मघातिन् देखो।

आत्मघातिन् (सं० त्रि०) आत्मानं देहं हन्ति शास्त्र-विरुद्धेन उद्वन्धनादिना विनाशयति, आत्मन्-हन्-घिनुष्, ६-तत्। आत्मनाशी, स्वनाशवह, खुदकुशी करनेवाला, जो अपने हाथों अपनी जान लेता हो। (पु०) आत्मघाती। (स्त्री०) आत्मघातिनी।

आत्मघोष (सं० पु०) आत्मानं घोषयति क वा कु कू इत्यादि स्वशब्दैः लोके प्रचारयति, आत्मन्-घुष-घञ्। १ काक, कौवा। २ कुकुट, मुर्गा। कौवा कांव-कांव और मुर्गा कुकड़कूँ बोल अपना परिचय देनेसे आत्म-घोष कहाता है।

आत्मज (सं० पु०) आत्मनः देहात् मनसो वा जायते, आत्मन्-जन-ड। १ पुत्र, पिसर, बेटा। २ कन्दर्प, कामदेव। ३ रक्त, खून।

आत्मजन्यन् (सं० स्त्री०) आत्मना जन्म पुत्ररूपेण उत्पत्तिः, ६-तत्। १ आत्माकी पुत्ररूपमें उत्पत्ति, रुढ़का पिसरकी शक्तमें पैदा होना।

आत्मजन्मा, आत्मज देखो।

आत्मजय (सं० पु०) १ स्वीय विजय, अपनी जीत। २ आत्माका जय, रुढ़का जीता जाना।

आत्मजा (सं० स्त्री०) आत्मन्-जन-ड-टाप्। १ कन्या, दुखूतर, बेटौ। २ मनोजात बुद्धि प्रभृति, अक्ष, समझ-बूझ। ३ शुकाग्रिम्बी, केवांच।

आत्मजिज्ञासा (सं० स्त्री०) जीवनकी विचारणा, रुहकी तलाश।

आत्मजिज्ञासु (सं० त्रि०) जीवनकी विचारणा करने-वाला, जो रुहकी तलाशमें हो।

आत्मज्ञ (सं० पु०) सिद्ध, साधु, ब्रह्मज्ञ, आकिल, दानिशमन्द, दाना, अपनी और रुहकी कुदरत समझनेवाला।

आत्मज्ञान (सं० स्त्री०) आत्मनो ज्ञानम्, ई-तत्।
१ यथार्थ रूप आत्मका ज्ञान, रुहका इत्थम्। श्रुतिमें लिखा, कि यथार्थ ज्ञान ही मोक्षसाधन होता है।
२ स्वीय ज्ञान, सच्ची समझ। आत्मबोधादि शब्दोंका भी यही अर्थ है।

आत्मज्ञानी, आत्मज्ञ देखो।

आत्मतत्त्व (सं० स्त्री०) आत्मनस्तत्त्वम्, ई-तत्।
आत्माका यथार्थ स्वरूप, चैतन्य रूप, रुहकी सच्ची शक्त। मतभेदसे कर्तृत्वरूप वा आत्मरूप परमपदार्थ-को भी आत्मतत्त्व कहते हैं।

आत्मतत्त्वज्ञ (सं० पु०) आत्माका यथार्थरूप समझने-वाला वेदान्ती, जो शख्स रुहकी सच्ची शक्तको पहचानता हो।

आत्मता (सं० स्त्री०) अमूर्तता, असांसारिकता, नफ्सानियत, रुहानियत।

आत्मतुष्टि (सं० त्रि०) आत्मन्वेव तुष्टिर्यस्य, बहुव्री०।
आत्मज्ञान द्वारा तुष्टि पानेवाला, जो हमेशा सिर्फ रुहके इत्थसे खुश रहता और परब्रह्मको पहचानता हो। (स्त्री०) ई-तत्। आत्माका सन्तोष, रुहकी आसूदगी।

आत्मत्याग (सं० पु०) १ स्वार्थत्याग, दूसरेकी भलाईके लिये अपने नुकसानका किया जाना।
२ आत्मघात, खुदकुशी।

आत्मत्यागिन् (सं० त्रि०) आत्मानं देहं त्यजति, आत्मन्-त्यज सम्पृजादि० घिणुन्। १ स्वार्थत्यागी, दूसरेके लिये अपना नुकसान करनेवाला। २ आत्म-घाती, खुदकुशी करनेवाला।

आत्मत्राण (सं० स्त्री०) स्वीय रक्षण, अपनी हिफाजत।

आत्मदर्श (सं० पु०) आत्मा देहो दृश्यतेऽत्र, आत्मन्-दृश आधारे घञ्। १ दर्पण, आयीना। २ आदर्श, नमूना। भावे घञ्, ई-तत्। ३ आत्माका दर्शन, आत्मसाक्षात्कार, रुहका नजारा।

आत्मदर्शन (सं० स्त्री०) आत्मा दृश्यते साक्षात्क्रियते-ऽनेन, आत्मन्-दृश करणे ल्युट्। १ आत्मसाक्षात्-कारका साधन अवण, मनन और निदिध्यासन, रुहके नजारेका जरिया सुनना, सोचना और समझना। भावे ल्युट्। २ आत्मसाक्षात्कार, सकलभूतमें आत्म-ज्ञान, रुहका नजारा, सब चीजोंमें रुहका देखा जाना।
आत्मदा (वै० त्रि०) व्यक्तिगत अस्तित्व देनेवाला, जो नफ्सी जिन्दगी बख्शता हो।

आत्मदान (सं० स्त्री०) आत्माका दान, आत्मत्याग, प्रत्यादेश, रुहकी बख्शिश, खुदकुशी, इस्खोफ़ा।

आत्मदूषि (वै० त्रि०) आत्माको दूषित करनेवाला, जो रुहकी बरबाद कर देता हो।

आत्मदेवता (सं० स्त्री०) आत्मनो देवता। निजका इष्टदेवता।

आत्मद्रोहिन् (सं० त्रि०) आत्मनो द्रुह्यति, आत्मन्-द्रुह-णिनि। आत्मतापी, वक्रप्रकृति, चिड़चिड़ा, बखील, रुहसे दुश्मनी रखनेवाला। (पु०) आत्म-द्रोही। (स्त्री०) आत्मद्रोहिणी।

आत्मध्यान (सं० स्त्री०) आत्मनो ध्यानं चिन्ता-रूप-योग-विशेषः। आत्मसाक्षात्कारका साधन मनोवृत्ति-विशेष, रुहका खयाल। शङ्खस्मृतिमें इसका प्रकरण देख पड़ता है।

आत्मन् (सं० पु०) अत्यन्ते गम्यते ज्ञायते इति यावत्, अत-गतौ मनिण्। सातिष्ठा मनिन्मनिषौ। उष् ४।१५२।
१ पुरुष, आदमी। २ स्वभाव, कुदरत। ३ प्रयत्न, तदबीर। ४ मन, दिल। ५ धृति, इस्तक़लाल।
६ मनीषा, बुद्धि, प्रज्ञा। ७ शरीर, जिस्म। ८ ब्रह्म।

‘आत्मा पुंसि स्वभावे च प्रथममनसोरपि।

धृतावपि मनीषायां शरीरब्रह्मणोरपि॥’ (हेम)

‘आत्मा पुरुषः।’ (उज्ज्वलदत्त)

८ अर्क, सूर्य। १० अग्नि, आग। ११ बायु, हवा। १२ जीव, जान।

‘आत्मा चित्ते धृती यत्र धिषण्या कलेवरे ।

परमात्मनि जीवेऽके इताशनसमीरयोः । स्मरामि ।’ (हेम)

१३ पुत्र, वेटा ।

‘आत्मा वै पुत्रनामासि ।’ (श्रुति)

श्रुतिमें आत्माका अहं-प्रत्यय विषयत्व लिखा है—
अर्थात् पुरुष, ‘अहमस्मि’ समझ कर आत्मज्ञान पा सकता है। साङ्ख्यभाष्यमें अहं प्रत्यय विषयसे भी बहुवादी प्रतिपत्ति देखायी गयी है। यथा—प्राकृत एवं लौकायतिक लोग चेतन्यविशिष्ट देहमात्रको आत्मा कहते हैं। कोई चेतन इन्द्रिय और कोई मनही को आत्मा बतलाते हैं। फिर कोई आत्माको क्षणिक विज्ञानमात्र और कोई शून्यमय समझते हैं। कोई कहता, कि आत्मा संसारी कर्ता एवं भोक्ता देहादिसे व्यतिरिक्त है। फिर देहादिसे व्यतिरिक्त सर्वशक्ति सर्वज्ञ ईश्वर ही किसीके मतसे आत्मा है। किसीके मतमें भोगशील ही आत्मा होता है।

जीवात्मा और परमात्मा देखो ।

न्यायमतमें आत्मत्वजातियुक्त अर्थात् अमूर्तसमवेत-द्रव्यत्वापर जाति, समवायसे ज्ञानइच्छादि रखनेवाले और ज्ञानाधिकारणका नाम आत्मा है। जैसे—
‘आत्मा वाऽरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः ।’ (श्रुति)

आत्मा द्विविध होता है, जीवात्मा और परमात्मा ।

“इं ब्रह्मणी वेदितव्ये परस्वापरमेव च ।” (श्रुति)

“तमेव विदित्वाऽतिष्ठत्युमीति ।” (न्यायसिद्धान्तसञ्जरीप्रकाश)

उसमें आद्य (जीवात्मा) प्रतिशरीर भिन्न, विभु, नित्य, कर्ता एवं भोक्ता है। द्वितीय (परमात्मा) ईश्वर, सर्वज्ञ तथा केवल एक है। (तर्ककौमुदी)

वैशेषिक आत्माको अप्रत्यक्ष अर्थात् अनुमानगम्य कहते हैं। अनुमान यह है—करणव्यापार करण-व्यापारत्वसे छेदनादि क्रियामें वास्यादि शस्त्रादि व्यापार-वत् सकर्तृक होता है। करणव्यापारसे कर्ताका अनुमानगम्य होनेपर तत्सजातिमें ज्ञानक्रिया करण भी सकर्तृक है। अतएव चक्षुरादि ज्ञान साधनसे आत्माका अनुमान किया जाता है। परन्तु नैयायिक उसमें जीवात्माको मानस-प्रत्यक्ष-विषय मानते हैं। (भाषापरिच्छेद)

जेनमतमें नाना अपेक्षाओंसे आत्माके नाना भेद

किये गये हैं, जिनमें मुख्य दो हैं—संसारी आत्मा और मुक्तात्मा। संसारी आत्मा वह कहलाता, जो अनादि कालसे अपने द्वारा किये शुभ एवं अशुभ कर्मोंके प्रभावसे कभी मनुष्यका शरीर धारण करता और कभी जानवर (तिर्यञ्च) होता है। कभी नरकमें जाता तथा कभी देवता हो स्वर्गके सुख भोगता है। मुक्तात्मा वह है, जो तपश्चरणादिके द्वारा समस्त शुभ अशुभ कर्मोंका नाशकर अपना शुद्ध स्वभाव (अनन्तज्ञान दर्शन सुख आदि) पा सांसारिक दुःख सुखोंसे सर्वदाके लिये मुक्त हो गया है। जैनशास्त्रोंमें सामान्य आत्माका लक्षण “उपयोगो लक्षण” (तत्त्वाद्यैस्त्व) अर्थात् ज्ञान और दर्शन जिसके हो वह आत्मा है, यह बतला कर विशेष रीतिसे संसारी आत्माको पहिचाननेका उपाय इस प्रकार लिखा है—“तिष्ठाते चक्षुराणां इन्द्रिय वक्त्रमायु आणपायोय । वक्त्रमा सो जीवो षिष्यण्यदो दु वेदया जःय” (श्रीमन्नेमिचन्द्र सिद्धान्तवक्रवर्तो) अर्थात् संसारी जीवके अधिकसे अधिक १० प्राण तक होते हैं उनमेंसे जिसके कमसे कम चार प्राण तक हों अर्थात् पांचों इन्द्रियोंमेंसे एक तो स्पर्शन इन्द्रिय, मानसिक, वाचनिक और कायिक इन तीन बलोंमेंसे एक कायिक बल, आयु और आणप्राण (श्वासोच्छ्वास) हो वही जीव या आत्मा है। इसी लक्षणसे हम वनस्पति आदिमें भी जीव (आत्मा) समझते हैं। क्योंकि उसके उपर्युक्त चारो ही प्राण स्पष्टतया दृष्टिगोचर होते हैं। यह संसारी आत्मा ही कर्मोंका नाशकर परमात्मा हो जाता है। क्योंकि समस्त आत्माओंमें सर्वज्ञता आदि गुण तो समान ही हैं, यदि अन्तर है तो केवल व्यक्ति, अव्यक्तिका। जिन आत्माओंके स्वाभाविक गुण कर्मोंके अभावसे प्रकट-व्यक्त हो जाते हैं, वे परमात्मा कहलाते हैं और जिनमें वे गुण प्रकट नहीं होते वे आत्मा कहे जाते हैं।

यह प्रायः दूसरे शब्दके आदिमें आता और ‘अपना’ अर्थ रखता है। जैसे—आत्मबन्धु, अपना साथी और आत्मप्रीति अपनी खुशी।

आत्मनित्य (स० त्रि०) सर्वदा हृदयमें रहनेवाला, जो बहुत प्यारा लगता और दिलसे न उतरता हो।

आत्मनिन्दा (सं० स्त्री०) स्वीय तिरस्कार, अपनी मलामत।

आत्मनिवेदन (सं० स्त्री०) १ स्वीय समाचार, नियाज या पढ़ाया।

आत्मनिवेदनासक्ति (सं० स्त्री०) स्वीय विनियोगका अवलम्बन, अपने नियाजकी धुन।

आत्मनिष्ठ (सं० त्रि०) आत्मनि आत्मज्ञाने निष्ठा यस्य, बहुव्री०। १ आत्मज्ञानमें निष्ठा रखनेवाला, जो आत्मज्ञान लाभके लिये यत्न करता हो, ब्रह्मनिष्ठ, सुसुक्ष्म। आत्मनि तिष्ठति आत्मन्-नि-स्था-क षत्वम्। २ आत्मामें रहनेवाला, जो रुहमें मौजूद हो।

आत्मनीन (सं० त्रि०) आत्मने हितम् ख। आत्मन्विश्वजन-मोगान्तरपदान् खः। पा ५।१।२। १ आत्महितकर, अपनी भलाई करनेवाला। १ स्वीय सम्बन्धीय, अपना। ३ बलवान्, जोरावर। (पु०) ४ पुत्र, बेटा। ५ श्यालक, साला। ६ नाटकप्रसिद्ध विदूषक, मसखरा। ७ पथ, बीमारके खानेकी चीज। ८ प्राणधार, जानवर।

आत्मनेपद (सं० स्त्री०) आत्मने आत्मार्थफलबोधनायैव पदम्, अलुक् समा०। तडानामात्मनेपदम्। पा० १।१।१००। १ आत्मगामी फलबोधक व्याकरण-प्रसिद्ध तडादि, जिस पदके रहनेसे आत्मगामी ही फल समझ पड़े। तिङ् यङन्त धातुके अर्थका स्वार्थकाल्पबोधनके योग्य आख्यात आत्मनेपद कहा जाता है। जैसे चैत्रः पापच्यते, इत्यादिमें आत्मनेपद हुआ है। (श० प०) आत्मगामि-फल बोधक तिङादि, अर्थात् अपने फलको जनाने-वाला तिङ् प्रभृति प्रत्यय भी आत्मनेपद है यथा—इदमहं संप्रददे। आत्मनेपदार्थ कभी कर्मत्व और कभी कर्मका ही बोधक है। कहीं-कहीं इसमें काल्पत्व भी रहता है। यथा—ऋत्विग्यजतः।

धातु तीन प्रकारका होता है। परस्मै, आत्मने और उभयपद। इन तीन प्रकारके धातुओंमें जहां क्रियाफल काल्पनिष्ठ (कर्तामें) रहता वहां आत्मनेपद और दूसरे स्थानमें परस्मैपद होता है। “लृत्तिजितः कर्त्तृभिर्ग्राहि क्रियाफलः।” (पा १।१।७२) इसके ही अनुसार दानादि स्थलमें स्वगत फल रहनेसे ‘दे’

और परगत फल होनेसे ‘ददाति’ वाक्य प्रयोग वृद्ध लोग करते हैं।

चिन्तामणिकार (गङ्गेशोपाध्याय) क्रियाफलमें कर्ताकी अभिप्राय इच्छा रहनेसे ही आत्मनेपद मानते हैं। इसीसे याजकादि द्वारा दक्षिणादि लाभकी इच्छासे यागादि किये जानेपर ‘यजन्ति याजकाः’ परस्मैपद एवं परगत यागादिफल रहते भी इच्छासे किये जानेपर ‘यजन्ते याजकाः’ आत्मनेपद ही होता है।

आत्मनेपदिन् (सं० त्रि०) आत्मनेपदं विहितत्वे-नास्थस्य, आत्मने-पद-इनि। आत्मनेपद-सम्बन्धीय। पाणिनिने इसके विषयमें लिखा,—गणपाठमें हलन्त अनुदात्तेत् एवं स्वरान्त ङ इत् धातु आत्मनेपदी होते हैं। फिर कर्त्तृगामी क्रियाफल-विशिष्ट स्वरित एवं जित् धातु भी आत्मनेपदी ही हैं। सिवा इसके अर्थ विशेषमें उपसर्ग विशेषके योगसे कर्त्तृवाच्य धातु आत्मनेपदी बन जाता है। (पु०) आत्मनेपदी। (स्त्री०) आत्मनेपदिनी।

आत्मनेभाषा (सं० स्त्री०) आत्मने आत्मोद्देशेन भाषा परिभाषा, अलुक्-समा०। व्याकरण-प्रसिद्ध आत्मने-पदका अर्थ, संस्कृतकी दरमियानी फूसल।

आत्मन्वत् (वै० त्रि०) आत्मा अस्थस्य, मतुप्। आत्मविशिष्ट, जानदार, जिन्दा, जो मरा न हो। (पु०) आत्मन्वान्। (स्त्री०) आत्मन्वती।

आत्मन्विन् (वै० त्रि०) आत्मन् अस्त्यर्थे बाहु० विनि। मनस्वी, प्रशस्तमना, दिलदार। (पु०) आत्मन्वी। (स्त्री०) आत्मन्विनी।

आत्मपरित्याग (सं० पु०) स्वीय समर्पण, अपना नियाज।

आत्मपुराण (सं० पु०) आत्मनः पुराणां सृष्टादि कर्त्तृत्वादिरूप निमित्तमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, अण्। उपनिषत्के अर्थका पुस्तक विशेष। यह शङ्करानन्द-प्रणीत और अष्टारह अध्यायमें समाप्त है। इसके प्रथममें ऐतरेय, द्वितीयमें बृहदारण्यकके कौषीतकी ब्राह्मण, तृतीयमें अजातशत्रुसंवाद, चतुर्थमें बृहत् मधुकाण्ड, पञ्चममें बृहदयान्नवत्कार-काण्ड, षष्ठमें बृहदयान्नवत्कार-

जनकसंवाद, सप्तममें बृहदयान्नवल्का-मेत्रेयी-संवाद, अष्टममें श्वेताश्वतर, नवममें काठक, दशममें तैत्तिरीय, एकादशमें गर्भादि, द्वादशमें छान्दोग्यके श्वेतकेतु-संवाद, त्रयोदशमें छान्दोग्यके सनत्कुमार-नारद-संवाद, चतुर्दशमें छान्दोग्यका प्रजाके प्रति इन्द्रसंवाद, पञ्चदशमें तलवकार, षोडशमें मुण्डक, सप्तदशमें प्रश्न और अष्टादश अध्यायमें माण्डूक्य, इशा, जावालि प्रभृति प्रणीत उपनिषत्का अर्थ है। यह ग्रन्थ सुगम उपाय द्वारा वेदान्त समझनेके लिये अतिशय उपयोगी है। काकारामशास्त्रीने इसकी टीका बनायी है।

आत्मप्रकाश (सं० पु०) चैतन्यका प्रकाश, रहस्यकी रौशनी।

आत्मप्रबोध (सं० पु०) आत्माका ज्ञान, रहस्यकी पहचान।

आत्मप्रभ (सं० त्रि०) आत्मना स्वयमेव प्रभा यस्य, बहुव्री०। स्वयं प्रकाशमान, अपने आप चमकने-वाला। (पु०) २ परमात्मा। (स्त्री०) आत्मप्रभा। ३-तत्। स्वयंप्रभा, स्वयंप्रकाश, जो रौशनी अपने-आप निकली हो।

आत्मप्रभव (सं० पु०) प्रभवत्यस्मात्, प्र-भू अपादाने अप्, आत्मा देहः मनो वा प्रभवो यस्य। १ तनुज, पुत्र, बेटा। २ मनोभव, कन्दर्प। आत्मा परमात्मेव प्रभवः कारणं यस्य, बहुव्री०। ३ आकाश परमाणु प्रभृति, आसमान् वगैरह। (स्त्री०) आत्मप्रभवा। १ कन्या, बेटा। २ बुद्धि, समझ।

आत्मप्रवाद (सं० पु०) १ आत्मविषयक कथनोपकथन, रहस्यके बारेमें बातचीत। २ जैनोंके चौदह पूर्वोंमें सातवां पूर्व। पूर्व देखो।

आत्मप्रशंसा (सं० स्त्री०) स्वीय स्थावा, अपनी तारीफ़।

आत्मप्रीति (सं० स्त्री०) स्वीय आनन्द, अपना मजा।

आत्मबोध, आत्मघात देखो।

आत्मबन्धु (सं० पु०) आत्मनो बन्धुः ६-तत्। १ निजका मित्र, अपना साथी। मौसिरा, फुफ़ेरा तथा ममेरा भाई ही शास्त्र-सम्मत आत्मबन्धु है। आत्मैव बन्धुः कर्मधा०। २ अपना साथ देनेवाला आत्मा, रहस्य।

आत्मबुद्धि (सं० स्त्री०) स्वीय ज्ञान, अपने रहस्यका इत्त। आत्मबोध (सं० पु०) १ आत्मज्ञान, रहस्यका इत्त। २ स्वीय ज्ञान, अपने आपकी जानकारी। ३ शङ्कराचार्य-प्रणीत ग्रन्थविशेष। ४ अथर्ववेदका एक उपनिषत्। (त्रि०) ५ आत्मज्ञानी, रहस्यका इत्त रखने-वाला।

आत्मभव (सं० पु०) १ स्वीय अस्तित्व, अपना वजूद। (त्रि०) २ स्वयं जात, अपने आप निकला हुआ।

आत्मभाव (सं० पु०) १ आत्माका अस्तित्व, रहस्यका वजूद। २ स्वीय प्रकृति, अपनी कुदरत। ३ शरीर, जिस्म।

आत्मभू (सं० पु०) आत्मनो मनसः देहाद्वा भवति, आत्मन्-भू-क्षिप्, ३-तत्। १ मनसे उत्पन्न होनेवाला कन्दर्प। २ अपने देहसे उत्पन्न होनेवाला पुत्र, बेटा। आत्मनो स्वयमेव भवति। ३ स्वयं उत्पन्न होनेवाला ईश्वर। ४ शिव। ५ विष्णु। आत्मनः ब्रह्मणः भवति। ६ ब्रह्मसे उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मा। (त्रि०) ७ स्वीय मन वा देहसे उत्पन्न होनेवाला, जो अपने दिल या जिस्मसे पैदा हो। ८ स्वयं उत्पन्न, अपने-आप पैदा होनेवाला।

आत्मभूत (सं० त्रि०) आत्मनः देहात् मनसो वा भूतः। १ देह वा मनसे उत्पन्न, जिस्म या दिलसे पैदा। २ अनुकूल, वफ़ादार। (पु०) ३ तनुज, बेटा। ४ कन्दर्प। (स्त्री०) टाप्। आत्मभूता। १ कन्या, बेटा। २ बुद्धि, अहम्।

देहादि पहले आत्मसम्बन्धी नहीं रहता; पीछे जन्म लेनेमें आत्मासे सम्बन्ध हो जानेपर आत्मभूत कहाता है।

आत्मभूय (सं० स्त्री०) आत्मनो भावः, आत्मन्-भू-क्षप्, ६-तत्। भवः क्षप्। पा ३।१।१०७। आत्मत्व, ब्रह्मरूप, रहानियत।

आत्ममय (सं० त्रि०) आत्मात्मकः, आत्मन्-मयट्। आत्मस्वरूप प्राप्त, रहानी। (स्त्री०) डीप्। आत्ममयी।

आत्ममात्रा (सं० स्त्री०) परमात्माका चतुर्दाश।

आत्ममानिन् (सं० त्रि०) आत्मानमुत्कर्षेण मन्यते, मन-मानि, ६-तत्। १ गर्वित, अपने उत्कर्षका अभि-

मानो, मगूर, अपनी बड़ाईका फखूर रखनेवाला ।
२ सकल प्राणीको अपना-जैसा समझनेवाला, जो सब जानवरोंको अपनी बराबर जानता हो ।

आत्ममूर्ति (सं० पु०) आत्मनो मूर्तिरिव मूर्तिर्यस्य, बहुव्री० । स्वीय आकृति-जैसा भ्राता, अपनी शक्तके मानिन्द भाई । एक मातापिताके सन्तानकी आकृति प्रायः सदृश होनेसे भ्राताको आत्ममूर्ति कहते हैं । (स्त्री०) ६-तत् । २ वेदान्त मतसे आत्माका स्वरूप चैतन्यादि, जानूदारी । ३ न्यायमतसे कर्तृत्वादि, वसीला, जरिया ।

आत्ममूल (सं० त्रि०) १ आत्मभू, स्वयम्भू, अपने आप मौजूद रहनेवाला ।

(स्त्री०) आत्मा ब्रह्मैव मूलं कारणं यस्य, बहुव्री० ।

२ जगत्, दुनिया ।

याज्ञवल्क्य-संहितामें लिखा,—जैसे कुम्भकार मृत्तिका, दण्ड, चक्र, सलिल, सूत्र प्रभृति द्वारा घट ; गृहकर्ता मृत्तिका, ढण एवं काष्ठसे गृह ; स्वर्णकार स्वर्ण वा रौप्यसे अलङ्कार और रेशमका कीड़ा कपनी लारसे धागा बनाता, वैसे ही परमात्मा कारण तथा कारणसे योनि-योनिमें आत्माकी सृष्टि करता है ।

आत्ममूली (सं० स्त्री०) आत्मैव रक्षणे मूलं कारण-मस्या अन्य जन्तु कर्तृक व्याहतत्वात् जातित्वात् डीप । दुरालभा लता, धमासा ।

आत्मशरि (सं० त्रि०) आत्मानं विभर्ति, आत्मन्-मृ-इन्-मुमृच, उप० समा० । फषिष्ठिरात्मशरिष । पा ३।२।२६। कुक्षिशरि, उदरशरि, नफसपरस्त, पेटू । (स्त्री०) आत्मशरी ।

आत्मयाजिन् (सं० त्रि०) आत्मानं ब्रह्मरूपेण कर्म-करणादिकं भावयन् यजते, आत्मन्-यज-णिनि । १ कर्मयोगी, भला काम करनेवाला । २ अपने अर्थ यज्ञ करनेवाला । ३ स्वीय वलि चढ़ानेवाला । (स्त्री०) आत्मयाजिनी ।

आत्मयाजी (सं० पु०) बुद्धिमान् पुरुष, अक्ष, मन्द आदमी, अपनी और रुहकी कुदरत समझनेवाला शख्स ।

आत्मयोनि (सं० पु०) आत्मैव योनिरस्य, बहुव्री० ।

१ हिरण्यगर्भ । २ ब्रह्मा । ३ विष्णु । ४ शिव । ५ कामदेव । आप ही आप पैदा हो जानेवालेको आत्मयोनि कहते हैं ।

आत्मरक्षक (सं० त्रि०) स्वीय रक्षा रखनेवाला, जो अपनेको बचाता हो । (स्त्री०) आत्मरक्षिका ।

आत्मरक्षण (सं० स्त्री०) स्वीय परिव्राण, अपनी हिफाजत ।

आत्मरक्षा (सं० स्त्री०) आत्मन एव रक्षा यस्याः । महेन्द्रवारुणी लता, कुंदरू । ६-तत् । २ शास्त्रानुसार विघ्नकारियोंसे अस्त्र द्वारा अपनी रक्षाका करना ।

आत्मरत (सं० त्रि०) आत्मासे प्रेम रखनेवाला, जो रुहका मजा उड़ाता हो । (स्त्री०) आत्मरता ।

आत्मरति (सं० स्त्री०) आत्माका आनन्द, रुहका मजा ।

आत्मराम (सं० पु०) आत्मनि रमते, संज्ञायां कर्तरि घञ् । आत्मज्ञान मात्रसे दृप्त योगीन्द्र ।

आत्मलाभ (सं० पु०) आत्मनो लाभः, ६-तत् । यथा-स्वरूप ज्ञान द्वारा आत्माकी प्राप्ति, इत्थसे रुहका हासिल ।

आत्मलिङ्ग (सं० स्त्री०) आत्माके अस्तित्वका परिचायक सुख-दुःख प्रभृति, जो आराम तकलीफ वगैरह रुहका वजूद देखाता हो ।

“धर्माधर्मौ सुखदुःखनिच्छादौ यौ तदेव च ।

प्रयवज्ञानसंस्कारमात्मलिङ्गमुदाहृतम् ॥”

(कामन्दकीय नीतिसार)

आत्मलोक (सं० पु०) आत्मैव लोकः आत्मप्रकाशः । स्वप्रकाश, आत्मा, रुह ।

आत्मलोमन् (सं० स्त्री०) ६-तत् । १ शरीरस्थ लोम, जिह्मका बाल । २ श्मश्रु, दाढ़ी ।

आत्मवच्चक (सं० त्रि०) आत्मानं वच्चति, आत्मन्-वच्च-ण्वल् । कृपण, बखील, अपनेको ही धोका देनेवाला । (स्त्री०) आत्मवच्चका ।

आत्मवचना (सं० स्त्री०) स्वीय प्रतारणा, जाती सुराब, अपने आपको धोका देनेकी बात ।

आत्मवत् (सं० त्रि०) आत्मा मनः वशीभूतत्वेनाख्यस्य,

आत्मन्-मतुप, मस्य वः । १ वशीभूत-चित्त, दिलको काबूमें रखनेवाला । २ निर्विकारचित्त, साफदिल । (अव्य०) ३ आत्मैव, अपनीतरह । (पु०) आत्मवान् । (स्त्री०) आत्मवती ।

आत्मवत्ता (सं० स्त्री०) १ स्वीय भुक्ति, अपनी मदाखलत । २ स्वीय सादृश्य, अपनी मुशाबहत ।

आत्मवध, आत्मघात देखो ।

आत्मवध्या (सं० स्त्री०) आत्मघात देखो ।

आत्मवश (सं० त्रि०) आत्मनो वशमायत्ततात्र अस्य वा । १ स्वाधीन, खुदमुख्तार, अपनी ही मातहतोंमें रहनेवाला । (पु०) २ आत्मसंयम, इन्द्रियजय, जब्तजात, अपने ऊपर काबू । (स्त्री०) आत्मवशा ।

आत्मवश्य (सं० त्रि०) आत्मा मनो वश्यो यस्य, बहुव्री० । १ वशीभूत-चित्त, दिलको काबूमें रखनेवाला । २ कर्मचम-शरीर, अपने जिस्मपर कामका बोझ उठा लेनेवाला । आत्मनो वश्यम्, ६-तत् । ३ आत्माके वशनौय, रुहके काबूमें आ जानेवाला ।

आत्मविक्रय (सं० पु०) ६-तत् । स्वदेहविक्रय, खुदफरोशी, अपना जिस्म किसौके हाथ बेच गुलाम बननेका काम । यह उपपातकके मध्य गिना गया है,—

“गोवधोऽयान्य-संयान्य-पारदार्यात्मविक्रयः ।

गुरुमादपिद्व्यागः स्नाध्यावाधेः सुतस्य च ॥” (मनु ११।६०)

अर्थात् गोवध, अयान्ययाजन, परस्त्रीगमन, आत्मविक्रय, मातापिता प्रभृति गुरुजनकी सेवा न करना, पाठ होम आदि ब्रह्मयज्ञ एवं स्मार्ताग्निका त्याग और पुत्रका जातकर्मादि संस्कार न करना उपपातकके मध्य परिगणनीय है ।

आत्मविक्रयिन् (सं० त्रि०) स्वीय विक्रय करनेवाला, खुदफरोश, जो अपने आपको बेच डालता हो । (पु०) आत्मविक्रयी । (स्त्री०) आत्मविक्रयिणी ।

आत्मविज्ञान (सं० स्त्री०) योगाभ्यास-समाधिसे परमात्माके स्वरूपका विज्ञान ।

आत्मविद् (सं० पु०) आत्मानं याथार्थ्येन वेत्ति, आत्मन्-विद्-क्तिप्, ६-तत् । १ आत्मज्ञ, रुहको समझनेवाला । आत्मानं स्वपक्षं वेत्ति । २ स्वपक्षज्ञाता, अपनी तर्फका हाल जाननेवाला । ३ शिव ।

आत्मविद्या (सं० स्त्री०) आत्मनो विद्या, ६-तत् । ब्रह्मविद्या, योगशास्त्र, रुहका इत्तम ।

आत्मविद्वद्भि, आत्मविद् देखो ।

आत्मविस्मृति (सं० स्त्री०) स्वीय विस्मरण, अपने आपको याद न रखनेकी हालत ।

आत्मवीर (सं० त्रि०) आत्मा प्राणः वीर इव यस्य, बहुव्री० । १ अतिशय बलयुक्त, निहायत जोरावर । २ उपयुक्त, वाजिब । ३ विद्यमान, मौजूद । (पु०) आत्मनो वीरः आत्मोयत्वेन श्रेष्ठः, ६-तत् । ४ शालक, साला । ५ पुत्र, बेटा । ६ विदूषक, खांगका मसखरा । ७ बलवान् पुरुष, ताकतवर आदमी ।

आत्मवृत्तान्त (सं० पु०) स्वीय चरित-रचन, स्वीय उपाख्यान, तुजक, खास अपना तजकिरा ।

आत्मवृत्ति (सं० स्त्री०) आत्मनो वृत्तिः, ६-तत् । १ स्वीय जीवनोपाय, खास अपना पेशा । (त्रि०) आत्मनि स्वस्मिन् वृत्तिर्यस्य, शाक० बहुव्री० । २ अपनी-जैसी वृत्ति रखनेवाला, हमपेशा, जो अपना-जैसा काम करता हो ।

आत्मवृद्धि (सं० स्त्री०) स्वीय उत्कर्ष, अपनी बढ़ती । आत्मशक्ति (सं० स्त्री०) आत्मनः इव शक्तिः, ६-तत् । स्वीय चमता, अपनी ताकत । २ आत्मानुरूप चमता, रुहानी कुवत । ३ परमेश्वरके जगत् उत्पादन करनेकी माया । आत्मशब्दा (सं० स्त्री०) आत्मा स्वरूपं शब्दमिव यस्याः । शतावरी, सतावर ।

आत्मशुद्धि (सं० स्त्री०) आत्मनः देहस्य मनसो वा शुद्धिः, ६-तत् । देहशुद्धि, चित्तशुद्धि, अपने जिस्म या दिलको सफाई ।

आत्मज्ञाघा (सं० स्त्री०) आत्मनः स्नाघा, ६-तत् । १ स्वीय मिथ्या गुणका प्रकाश, अपने झूठे हुनरका इजहार । २ स्वीय प्रशंसा, अपनी तारीफ़ । ३ निज मुखसे स्वीय गर्वका प्रकाशन, अपने मुंह अपने गुरुरकी बघार ।

आत्मज्ञाघिन् (सं० त्रि०) स्वीय प्रशंसा करनेवाला, जो अपनी तारीफ़ करता हो । (पु०) आत्मज्ञाघी । (स्त्री०) आत्मज्ञाघिनी ।

आत्मसंयम (सं० पु०) आत्मनो मनसः संयमः

नियमनम्। मनोवशीकरण, सुखदुःखसमता, मनके विकारका त्याग, मसला-जवर, खुशी और गुमसे बेपरवायीका अकीदा।

आत्मसंवेदन (सं० स्त्री०) स्वीय ज्ञान, अपनी जानकारी।

आत्मसंस्कार (सं० पु०) स्वीय संस्कार, जाती इसलाह, अपना सुधार।

आत्मसद् (वे० त्रि०) आत्मवर्ती, जाती, जो अपने हीमें रहता हो।

आत्मसनि (वे० त्रि०) जीवनोद्धारदायक, जिन्दगीका नफूस बख्शनेवाला।

आत्मसन्देह (सं० पु०) आन्तरिक विकल्प, भीतरी शक।

आत्मसमुद्भव (सं० पु०) आत्मनः सर्व समुद्भवमस्य, बहुव्री०। १ अपनेसे उत्पन्न होनेवाला पुत्र, बेटा। २ मनसिज। ३ हिरण्यगर्भ, ब्रह्मा। आत्मना स्वयमेव समुद्भवति, आत्मन्-सम्-उत्-भू कर्तरि अच् अप् वा। ४ स्वयं उत्पन्न होनेवाले शिव। ५ विष्णु। ६ परमात्मा। (त्रि०) ७ स्वीय शरीरजात, अपने जिससे पैदा। ८ स्वयमुत्पन्न, अपने आप पैदा होनेवाला।

आत्मसमुद्भवा (सं० स्त्री०) १ अपने देहसे उत्पन्न होनेवाली कन्या, बेटो। २ बुद्धि, अल्ल।

आत्मसम्भव (सं० पु०) आत्मत्वेन सम्भवः, आत्मन्-सम्-भू कर्तरि अच्, शाक० इ-तत्। “आत्मा वै जायते पुनः।” (श्रुति) यद्वा आत्मासम्भवोऽस्य, अपादाने अप्, बहुव्री०। १ पुत्र, बेटा। २ हिरण्यगर्भ। ३ चतुर्मुख। ४ शिव। ५ विष्णु। ६ परमात्मा। (त्रि०) ७ मनमें उत्पन्न होनेवाला, जो दिलमें पैदा होता हो।

आत्मसम्भवा (सं० स्त्री०) १ कन्या, बेटो। २ भगवती, देवी। ३ बुद्धि, अल्ल।

आत्मसाक्षिन् (सं० त्रि०) आत्मनः बुद्धिबुक्तेः साक्षी प्रकाशकः। १ बुद्धिबुक्तिप्रकाशक, अल्लकी हालत चमका देनेवाला, जो दिलको राह देखाता हो। वेदान्तादिके मतसे चैतन्य आत्मसाक्षी सिद्ध हुआ है। (पु०) आत्मसाक्षी। (स्त्री०) आत्मसाक्षिणी।

आत्मसात् (सं० अव्य०) कात्स्निक आत्मनोऽधीनो भवति

सम्पद्यते अधीनं करोति वा, साति। सकल प्रकार अपने अधीन, सब तरह अपने तावेमें रहनेवाला।

आत्मसात्कृत (सं० त्रि०) विनियोगित, उपकल्पित, अखुज किया या अपनाया हुआ।

आत्मसिद्ध (सं० त्रि०) १ स्वयं निष्पन्न, अपने आप बना हुआ। २ आत्माको वशमें रखनेवाला, जो रुहको काबूमें रखता हो।

आत्मसिद्धि (सं० स्त्री०) आत्मरूपा सिद्धिः। आत्म-भाव-लाभ, मोक्ष, जाती अजमल।

आत्मसुख (सं० त्रि०) आत्मैव सुखमस्य। १ आत्म-लाभ मात्रसे सुखी, अपने आप खुश रहनेवाला। (स्त्री०) आत्मैव सुखं सच्चिदानन्दरूपत्वात्। २ आत्म-रूप परमानन्द, रुहानी खुशी।

(पु०) ३ हरिहराचार्यके शिष्य और उत्तमसुखके विद्यार्थी। इन्हींने योगवाशिष्ठटीका और योगवाशिष्ठ-संक्षेपटीका नामक दो ग्रन्थ बनाये हैं।

आत्मसुति (सं० स्त्री०) स्वीय प्रशंसा, अपनी तारीफ।

आत्मस्थ (सं० त्रि०) आत्मने आत्मज्ञानाय तिष्ठते यतते आत्मन्-स्था-क, इ-तत्। आत्मस्वरूप ससम्भनेको यत्नवान्, जो रुहके रङ्ग परखनेकी फिक्रमें हो। २ प्रकृतिस्थ, सच्चीदा। ३ मनोवृत्तिमय, दिली।

आत्महत्या (सं० स्त्री०) आत्मनो देहस्य हननम्, आत्मन्-हन्-क्यप्। हनल च। पा ३।१।१०८। आत्मघात, स्ववध, खुदकुशी। हन् धातुके पहले कोई उपपद न रहनेसे हत्या शब्दकी उपलब्धि असम्भव है। इसीसे ‘वहां हत्या हुई’ और ‘वही हत्याकाण्ड’ इत्यादि प्रयोग व्याकरणविरुद्ध ठहरता है।

आत्महन् (सं० त्रि०) आत्मानं हतवान्, आत्मन्-हन्-क्तिप्। १ यथार्थ आत्मज्ञान-रहित, ठीक रुहका इल्म न रखनेवाला। २ देहादिका अभिमानी, जिस वगैरहका गरूर रखनेवाला। ३ आत्मघाती, खुदकुश। (पु०) ४ पुजारी, धन लेकर प्रतिमापूजन करनेवाला पुरुष।

आत्महनन (सं० स्त्री०) स्ववध, खुदकुशी।

आत्महिंसा (सं० स्त्री०) आत्मघात देहो।

आत्महित (सं० त्रि०) १ स्वकार्योपयोगी, अपनेको फायदा देनेवाला। (स्त्री०) २ स्वीय लाभ, खास अपना फायदा।

आत्मा, आत्मन् देखो।

आत्मादिष्ट (सं० त्रि०) १ स्वतः विवेचित, अपने आप नसीहत किया हुआ। (पु०) २ सम्बन्धविशेष, किसी किस्मकी सुलझ। स्वतः चाहनेवाला पक्ष ही इसे सूचित करता है।

आत्माधीन (सं० पु०) आत्मनोऽधीनः। १ पुत्र, बेटा। २ श्यालक, साला। ३ विदूषक, मसखरा। (त्रि०) ४ बलयुक्त, स्वाधीन, जीरावर, आजाद। ५ वर्तमान, मौजूद।

आत्मानन्द (सं० पु०) आत्माका आनन्द, रुहका मजा। यह ध्यानकी एकत्र करनेसे हृदयमें मिलता है।

आत्मानुभव (सं० पु०) स्वीय अनुभव, अपना तजस्वा।

आत्मानुरूप (सं० त्रि०) आत्मनोऽनुरूपं सर्वप्रकारेण सदृशम्। जाति, गुण किंवा क्रियादि द्वारा अपने तुल्य, अपने-जैसा।

आत्मापहारक (सं० त्रि०) आत्मानं अपहरति निहृते, आत्मन्-अप्-हृ-णुल्। धूर्त, आत्माके यथास्वरूपका अपहृवकारी, आत्मपरिचय न देनेवाला, मक्कार, ठग, जो छोट्टेसे बड़ा बनता या अपना ठीक-ठीक पता न बताता हो।

आत्माभिमान (सं० पु०) स्वीय अहङ्कार, अपने आपका गुरुर।

आत्माभिमानिन् (सं० त्रि०) स्वीय अहङ्कार रखनेवाला, जिसे अपने आपका घमण्ड रहे। (पु०) आत्माभिमानी। (स्त्री०) आत्माभिमानिनी।

आत्माभिलाष (सं० पु०) जीवकी इच्छा, रुहकी चाहिश।

आत्माराम (सं० त्रि०) आत्मा आराम इव यस्य, बहुव्री०। १ आत्माको उपवन समझनेवाला, जो रुहकी बाग मानता हो। उपवन जैसा मनोज्ञ होता, वैसा ही आत्मा रखनेवाला आत्माराम कहा जाता है।

२ योगी विशेष। काशीखण्डमें लिखा,—जिसका आत्मा सर्वदा परित्यक्त रहता और जो समस्त विश्वको आत्मरूप समझता, वही आत्माराम योगीका स्वरूप होता है। हिन्दीमें आत्माराम तोतेको भी कहते हैं।

३ जयकृष्ण भट्टके पुत्र। कर्कके कात्यायन-श्रौतसूत्रभाष्यपर इन्होंने 'भावविशोधिनी' टीका लिखी है।

आत्मार्थ (सं० त्रि०) स्वीय निमित्त-साधक, अपना काम देनेवाला।

आत्मालम्ब (सं० पु०) हृदयस्पर्श।

आत्मावलम्बिन् (सं० त्रि०) स्वीय अवलम्बन रखनेवाला, जो अपना ही सहारा पकड़ता हो। (पु०) आत्मावलम्बी। (स्त्री०) आत्मावलम्बिनी।

आत्माशिन् (सं० पु०) आत्मानं संकुलमश्नाति, आत्मन्-अश्-णिनि, ६-तत्। संकुलमचक्र मीन, अपने अण्डे खानेवाली मछली। एक जब अपने अण्डे छोड़ चली जाती, तब दूसरी आकर उन्हें खा डालती; इसीसे मछली आत्माशी कहाती है। (पु०) आत्माशी। (स्त्री०) आत्माशिनी।

आत्माश्रय (सं० पु०) आत्मानं आश्रयति, आत्मन्-आ-श्रि-अच्, ६-तत्। १ निजका आश्रय, अपना सहारा। २ निज स्थापेक्षित्व हेतुक अनिष्ट प्रसङ्गरूप तर्कका दोष विशेष। न्यायमतसे जो प्रसङ्ग अपने आपकी अपेक्षा रखता, वह आत्माश्रय कहाता है।

“स्वस्य स्थापेक्षापादकः प्रसङ्गः।” (तर्कावत)

फिर अपने स्थापेक्षितत्वमें अनिष्ट प्रसङ्ग दोष भी आत्माश्रय ही है। यह उत्पत्ति, स्थिति और अस्ति भेदसे तीन प्रकारका है,—घटसे उत्पन्न होनेपर अनधिकरणका अक्षणोत्तरवर्ती, तथा घटमें रहनेसे अव्याप्य और घटज्ञानसे अभिन्न ठहरनेमें घटज्ञान सामयोजन्य है। (गीतमसूत्रवृत्ति)

आत्मिक (सं० त्रि०) १ आत्मासे सम्बन्ध रखनेवाला, रुहानी। २ स्वीय, अपना। ३ मानसिक। आत्मोक्त, आत्मसात्कृत देखो।

आत्मीभाव (सं० पु०) परमात्माका अंशविशेष बन जानेकी दशा।

आत्मीय (सं० त्रि०) आत्मन इदम्, आत्मन्-छ ।
१ आत्मसम्बन्धीय, रुहानी । २ स्वर्गीय, आसमानी ।
३ अन्तरङ्ग, दिली ।

आत्मीयता (सं० स्त्री०) १ आत्मसम्बन्ध, खास अपना
तात्त्विक । २ मित्रता, दोस्ती ।

आत्मेश्वर (सं० त्रि०) आत्मनो मनस ईश्वरः,
६-तत् । १ मनका संयमनशैल, दिलको कायदेपर
रखनेवाला । (पु०) २ अपने आपका स्वामी, अपने
दिलपर हुक्ममत रखनेवाला । ३ परमात्मा ।

आत्मोत्पत्ति (सं० स्त्री०) आत्मन उत्पत्तिः स्लोपा-
ध्वन्तःकरणवृत्तिकर्षणापूर्वदेहसंयोगः, ६-तत् । किसी
कारणवश अन्तःकरणवृत्तिके कर्मसे अपूर्व देह-
संयोगरूप आत्माका जन्म । प्राचीन शास्त्र कहता,
कि शरीर प्रतिक्षण नूतन होता है । उसके मध्य
किसी कारणवश मन ही मन कोई बात चाहनेपर
तत्कालीन अपूर्व देहसे आत्माका संयोग ही आत्मोत्-
पत्ति माना जाता है ।

आत्मोत्सर्ग (सं० पु०) स्वार्थत्याग, जाती इश्वराज,
अपनी भलायिका छोड़ना, दूसरेके लिये अपने
आपका निकास ।

आत्मोदय (सं० पु०) स्त्रीय उत्कर्ष, अपनी चमक ।

आत्मोद्धार (सं० पु०) १ आत्माका उद्धार, मुक्ति,
रुहका कुटकारा, निजात । सांसारिक विषयका
त्याग और पारमार्थिक पदार्थका ग्रहण आत्मोद्धार
कहाता है ।

आत्मोद्भव (सं० त्रि०) १ आत्मासे निकला हुआ,
जो रुहसे पैदा हो । २ स्वयं उत्पन्न, अपने आप पैदा
होनेवाला । (पु०) ३ पुत्र । ४ कन्दर्प ।

आत्मोद्भवा (सं० स्त्री०) आत्मनैव उद्भवति, आत्मन्-
उत्-भू-अच्-टाप् । माषपर्णी वृक्ष, रामकुरथी । २ वन-
मुद्ग, मोट । आत्मनः देहात् मनसो वा उद्भवो यस्याः ।
-३ कन्या, बेटा । ४ बुद्धि, अक्ष ।

आत्मोन्नति (सं० स्त्री०) १ स्त्रीय उन्नति, अपनी
तरकी ।

आत्मोपजीविन् (सं० त्रि०) आत्मना देहव्यापारेण
उपजीवति, आत्मन्-उप-जीव-णिनि, ३-तत् । १ अपने

देहके व्यापारसे जीवन चलानेवाला, जो अपने आप
मेहनतसे जिन्दगी बसर करता हो । २ अपनी पत्नी
द्वारा जीवन निर्वाह करनेवाला, जो अपनी औरनके
सहारे जीता हो । ३ मजदूर, दिनको काम करने-
वाला । (पु०) आत्मोपजीवी । (स्त्री०) आत्मोप-
जीविनी ।

आत्मोपनिषद् (सं० स्त्री०) परमात्मा-विषयक उप-
निषद्का उपाधि, एक किताब । इसमें परमात्माका
वर्णन विशद रीतिसे किया गया है ।

आत्मोपम (सं० त्रि०) आत्मा देह उपमा यस्य,
बहुव्री० । अपने सदृश, अपनी मानिन्द, जो अपनेसे
मिलता-जुलता हो । यह शब्द पुत्रादिका विशेषण है ।
(स्त्री०) आत्मोपमा ।

आत्मोपम्य (सं० स्त्री०) आत्मन औपम्यम्, आत्मन्-
उपमा-अच्, ६-तत् । १ अपना सादृश्य, अपनी
मिसाल । (त्रि०) आत्मनः स्वस्य औपम्यं यत्र यस्य
वा । २ आत्मसदृश, अपने-जैसा । (स्त्री०) आत्मो-
पम्या ।

आत्म्य (सं० त्रि०) आत्म सम्बन्धीय, जाती, अपने
आपसे तात्त्विक रखनेवाला । समासान्तमें यह शब्द
किसी द्रव्यकी प्रकृतिका बोधक है ।

आत्यन्तिक (सं० त्रि०) अत्यन्तं भवति, अत्यन्त
भावार्थे ठञ् । १ अतिशय, बहुत ज्यादा । २ अति-
रिक्त, काफीसे ज्यादा । ३ प्रधान, बड़ा ।

आत्यन्तिक-दुःख-निवृत्ति (सं० स्त्री०) आत्यन्तिकी
दुःखनिवृत्तिः, कर्मधा०, पूर्वपदस्य पुं-वद्भावः । अप-
वर्गमुक्ति, मुदामी तकलीफसे कुटकारा ।

आत्यन्तिक-प्रलय (सं० पु०) कर्मधा० । प्रलय-
विशेष, बड़ी क्यामत । वेदपरिशिष्टमें चार प्रकारका
प्रलय लिखा है,—नित्य, प्राकृत, नैमित्तिक और
आत्यन्तिक । इसमें मोक्षकी आत्यन्तिक प्रलय
कहते हैं ।

आत्ययिक (सं० त्रि०) अत्ययः नाशः प्रयोजनमस्य,
ठक् । १ चयकर, घातुक, मुजिर, उजाड़ू । २ अपरि-
हार्य, ताकीदी ।

आत्यूक (सं० पु०) वङ्ग, रांगा ।

आत्यह (सं० प्र०) दात्यह पत्नी, सुर्गावी।

आत्रेय (सं० पु०) अत्रेरपत्यम्, ठक्। १ अत्रिके सन्तान, अत्रिके लड़के। दत्त, दुर्वासा और चन्द्र अत्रिके पुत्र रहे। २ सदस्यसे सम्बन्ध रखनेवाले पुरोहित। ३ शरीरस्थ रसधातु, जिस्मका अर्क। ४ शिव। (त्रि०) ५ अत्रिसे उत्पन्न होनेवाला, जो अत्रिसे पैदा हुआ हो।

आत्रेय—१ प्राचीन दर्शनज्ञ, एक पुराने मुनि। ब्रह्मसूत्र और मीमांसासूत्रमें इनका नाम आया है। २ वैयाकरण विशेष, कोई पुराने कृषायाददान्। 'माधवीयधातुवृत्ति'में कई स्थानपर इनके वाक्य उद्धृत किये गये हैं। ३ अर्थि-प्रत्यर्थि-पक्षसमर्थक विशेष, एक पुराने धर्मशास्त्रकार। दानखण्डमें हेमाद्रिने इनके वाक्य उद्धृत किये हैं। ४ एक वैद्यक ग्रन्थ-कर्ता। इन्होंने उष्ट्रपयःकल्पमेद, नाडीज्ञान, हारीत-संहिता मेद, आत्रेयहारीतोत्तरार्ध और आत्रेयसंहिता नामक ग्रन्थ बनाये हैं।

आत्रेयभट्ट—नलोदयटीका-रचयिता।

आत्रेयिका (सं० स्त्री०) ऋतुमती, जो औरत हैजमें हो।

आत्रेयी (सं० स्त्री०) १ ऋतुमती, हैज रखनेवाली औरत। २ नदविशेष। यह बङ्गालके उत्तर राजसाही जिलेमें बहती है। ३ अत्रिवंशकी स्त्री।

आथना (हिं० स्त्री०) होना, रहना।

आथर्वण (सं० पु०) अथर्वणा मुनिना दृष्टी वेदः, अण्; आथर्वणमधीते वेत्ति वा, पुनः अण्। १ अथर्व-वेदज्ञ ब्राह्मण। २ पुरोहित। 'आथर्वणः पुरोहिते। आथर्व-ब्राह्मणे च।' (हेम) अथर्वणिकस्यायं धर्मः आन्वायो वा, अण् इक लोपश्च। आथर्वणिकस्वेकलोपश्च। पा ३।१।२२। ३ अथर्ववेदी धर्म। उपनिषद् देखो। ४ अथर्व ब्राह्मणके सन्तान। ५ अथर्ववेद। (स्त्री०) अथर्वानां समूहः, अण्। ६ अथर्ववेदका समूह। ७ निश्चतशाला, तख्तलियेका मकान्। यहां वलिदानके बाद पुरोहित यजमानको यज्ञके पूर्ण होनेका शुभ संवाद जाकर सुनाता है।

आथर्वणिक (सं० पु०) अथर्वणं वेदं वेत्ति अधीते वा, दण्डादि० निपा० ठक्। अथर्ववेद समझने या पढ़नेवाला ब्राह्मण।

आथर्वणिक-रुद्रोपनिषद् (सं० स्त्री०) उपनिषद्-विशेष।

आद (सं० त्रि०) ग्रहण करनेवाला, जो पा रहा हो। यह शब्द किसी-किसी समासान्तमें आता है। (स्त्री०) आदा।

आदंश (सं० पु०) आदन्श भावे घञ्। १ दंशन, बुरका, काटकूट। आदश्यतेऽन्न, आधारे घञ्। २ दंशन-स्थान, बुरकेकी जगह, जिस जगहपर कोई काट खाये। आदश्यतेऽनेन, करणे घञ्। ३ दन्त, डह, जिस चीजसे काटा जाये।

आदन्न (वै० त्रि०) सुख पर्यन्त पड़नेवाला, जो मुंहतक आ जाता हो। यह शब्द जलादिका विशेषण है।

आदत (अ० स्त्री०) १ मित्राज, खुशसियत, प्रकृति, स्वभाव। २ महारत, अभ्यास, चाल, टेव।

आदत्त (सं० त्रि०) १ गृहीत, पकड़ा हुआ। २ स्वीकृत, हाथमें लिया या शुरू किया हुआ।

आददान (सं० त्रि०) ग्रहण, स्वीकार वा भारश्च करनेवाला, जो लेता, मानता या शुरू करता हो।

आददि (वै० त्रि०) आ-दा-कि द्विर्भावः। आदयमहन-जनः किकिनौ लिट् च। पा ३।१।१०१। १ लाभवान्, हासिल करने या पानेवाला। २ ग्रहण करनेवाला, जो उठा ले जाता हो।

आदम (अ० पु०) यहूदियों और मुसलमानोंके धर्मानुसार आदि मानव। पुस्तकोंमें देखा और लोगोंसे सुना, कि परमेश्वरने अपने अनुरूप प्रथम आदमको बनाया था। यही पृथिवीके आदि पुरुष रहे। यहूदियोंके 'तालमूद' ग्रन्थमें इनका कितना ही अलौकिक विवरण लिखा है। वह कहते हैं,— 'प्रथम आदमकी विराट्मूर्ति रही, खड़े होनेपर उनकी शिखा आकाशसे जा लगती। सूर्यमण्डलकी अपेक्षा उनका मुख अधिक ज्योतिर्मय देख पड़ता था। उस समय देवता जाकर समझाम उनके पास खड़े हुये और समस्त प्राणी उनकी पूजा करने लगे। उसके बाद ईश्वरने अपनी महिमा देखानेकी उन्हें सुला दिया। नींद लेनेपर देवताओंने आदमके शरीरका एक-एक अस्थि निकाला, जिससे उनका

आकार खर्व हो गया। किन्तु उससे आदम अङ्गहीन न हुये थे। आदमकी प्रथम पत्नीका नाम लिलिख रहा। वही दैत्योंकी माता मानी जाती हैं। लिलिखके आदमको छोड़ जानेपर परमेश्वरने इवकी सृष्टि की थी। इवका दूसरा नाम हीवा रहा। हीवाके साथ आदमका विवाह हुआ। परिणयके उत्सवमें चन्द्रसूर्य नक्षत्र नाचने, कोई कोई देवता वाद्य बजाने और कोई नानाविध खाद्यसामग्री पहुँचाने लगे थे। पीछे आदम और हीवाकी सुखसम्पत्ति सामूएल दैत्य देख न सका। उसने हिंसावश उन्हें पापपथमें घुमा दिया।

कुरान्का मत दूसरी तरह है। समस्त देवता जाकर आदमको पूजने लगे, किन्तु इबलौस अलग बैठे रहे थे। इसी अपराधपर वह सुखोद्यानसे निकाले गये। इबलौसने उसका प्रतिशोध लेनेके लिये आदम और हीवाको कुपथमें डाल दिया था। उसके बाद दोनोंमें विच्छेद पड़ा। आदम अनुतप्त हृदयसे मक्केके मन्दिर पास किसी तख्ममें रहने लगे थे। उसी जगह जिवरीलने उन्हें ईश्वरका प्रत्यादेश सुना दिया। दो सौ वत्सर विच्छेदके बाद आदमको आराफ़त पर्वतपर पुनर्वा हीवाका साक्षात् मिला।

जेनिसिसके मतमें जगत् सृष्टिके षष्ठ दिवस परमेश्वरने कर्दमसे आदमको बनाया था। उसके बाद हीवाने जन्म लिया। यह दम्पती सुखोद्यानमें रहते थे। इनमें न तो जरा-मृत्यु और न प्रथम लज्जा, भय, शोक, ताप आदिका कोई ज्ञान ही रहा। परमेश्वरने इनसे उद्यानके सकल फलादि खानेको कहा, केवल एक वृक्षके फल छूनेको रोका था। पीछे शैतान्ने अनेक प्रलोभन देखा इन्हें उसी वृक्षका फल खिला दिया। खृष्टधर्मके मतसे उसी अपराधपर आदमके साथ मनुष्य जातिका पतन हुआ है।

२ विष्णुके प्रसिद्ध किये हुये एक अवतार। प्रायः सन् १४३० ई०के बाद कश्मीर, सिन्धु और पञ्जाबमें खाजाभीकी प्रधान बनने पर सदरहीनने आदमकी विष्णुका अवतार मशहूर कर दिया था। ३ गुजरातके एक प्रधान सुन्ना। इनके बेटेका इब्राहिम और नातीका नाम अली रहा। अलीने गुजरातमें सन्

१६२४ ई०को अपने नाम पर बोहरोंका एक सम्प्रदाय बनाया था। ५ गुजराती लोहाना वंशके राजपूत सुन्दरजी। सुसलमानधर्म ग्रहण करनेपर इनका नाम आदम पड़ा था। पीछे लोहाना वंश भी मोमिन कहलाया। इन्हें आदर-दृष्टिसे सरोया और नये सम्प्रदायका प्रधान पद दिया गया था।

आदमगिरि—सिंहलके एक पहाड़का नाम। इसे सोमगिरि वा सोमशैल भी कहते हैं। यह सिंहलके दक्षिण प्रायः ७४२० फीट ऊँचा है। इसी पर्वतपर मनुष्यके पैरका चिह्न मिलता है। सुसलमानोंके मतमें सुखोद्यानसे निकाले जानेपर आदमने यहीं हजार वर्षतक खड़े रह अनुताप किया था। इसीसे अद्यावधि उनका पदचिह्न चमक रहा है। बौद्ध इस चिह्नको आपाद बताते हैं। उनके मतमें बुद्ध सिंहलसे जाते समय इस शैलचूड़ पर अपना पदचिह्न छोड़ गये थे। हिन्दू इसे महादेवका पदचिह्न मानते हैं। इस पुण्यस्थानपर काष्ठका आच्छादन बना है। हिन्दू, बौद्ध और सुसलमान् यात्री पदचिह्नका दर्शन करने जाते हैं।

आदमचश्म (अ० पु०) मनुष्यके समान नेत्र रखनेवाला अश्व, जिस घोड़ेके आदमीकी तरह आंख रहे। आदमचश्म बड़ा कष्ट होता है।

आदमज़ाद (अ० पु०) १ आदमकी औलाद, आदमी, मनुष्य।

आदम-जो-तन्दो—बम्बई प्रान्तके सिन्धु-हैदराबाद जिलेकी हाला तहसीलका नगर। यह अक्षा० २५° ३६' उ० और द्रावि० ६८° ४१' १५" पूर्वपर अवस्थित है। यहां रेशम, रुई, अनाज, तेल, चीनी और घीका व्यापार होता है।

आदम जोहन—भारतके एक भूतपूर्व गवरनर जनरल या बड़े लाट। सन् १८२३ ई०को कुछ महीने इन्होंने भारतके बड़े लाट लार्ड आमहर्ट्ज़की जगह काम किया था।

आदमपुर—पञ्जाब प्रान्तके जलन्धर जिलेकी करतारपुर तहसीलका एक बड़ा ग्राम। इसमें तीसरे दरजेका म्युनिसिपलिटो बैठती है।

आदम विलियम पात्रिक—मन्द्राजके एक भूतपूर्व गवर-
नर। यह सन् १८७५ से १८८० ई० तक मन्द्राजके
गवरनर रहे।

आदम सर फेडरिक—मन्द्राज प्रान्तके एक भूतपूर्व
गवरनर। इनका समय १८२७-३२ रहा।

आदम-सेतु—बालुका तथा शिलाका एक धरण, रेत
और चटानकी एक पहाड़ी। यह अक्षा० ८° ५' से
८° १२' ३०" उ० और द्रावि० ७८° २२' ३०" से
८०° पू० तक अवस्थित है। इसकी लम्बाई १७ मील
है। यह उत्तर-पश्चिमसे दक्षिण-पूर्वको विस्तृत है।
भारतीय तटसे कुछ दूर रामेश्वरम् द्वीप इसके निक-
लनेकी जगह है। यह सिंहलके पास मनार द्वीप
तक चला गया है। इसीसे मनार खाड़ीकी उत्तर
सीमा प्रायः बन्द है। समुद्रमें लहर चढ़ते समय
इसपर कहीं-कहीं तीन-चार फीट पानी चढ़ जाता
है। रामायणमें लिखा है, कि लङ्कापर चढ़ते समय
रामने इसी सेतुको अपनी फौज उतारनेके लिये प्रधान
मार्ग बनाया था।

आदमियत (अ० स्त्री०) १ इन्सानियत, मनुष्यत्व,
आदमी होनेकी हालत। २ शायस्तीगी, सभ्यता।

आदमी (अ० पु०) १ इन्सान, मनुष्य। २ शत्रु,
नौकर। ३ स्वामी, खाविन्द।

आदर (सं० पु०) आ-दृ-अप् गुणः। १ मर्यादा,
इज्जत। २ अनुराग, प्यार। ३ सम्मान, खातिर।
४ आरम्भ, आगाज। ५ आसक्ति, लगाव। ५ यत्न,
तदवीर।

आदरण (सं० स्त्री०) सत्कार, तवज्जो, खयाल।

आदरणीय (सं० त्रि०) आ-दृ-अनौयर्। सम्माननीय,
इज्जत किये जाने काबिल। २ ध्यान देने योग्य, खयाल
करने काबिल। (स्त्री०) आदरणीया।

आदरना (हिं० क्ति०) आदर देना, इज्जत करना,
मानना।

आदरभाव (सं० पु०) आदर-सत्कार, खातिर-तवज्जो,
मानपान।

आदरस (हिं०) आदर्श देखो।

आदरतत्त्व (सं० त्रि०) आ-दृ-तत्त्व। आदरणीय देखो।

आदर्दरि (वै० त्रि०) कुचल डालने वा टुकड़े उड़ा
देनेवाला।

आदर्य, आदरणीय देखो।

आदर्श (सं० पु०) आदृश्यतेऽत्र, आ-दृश आधारे
धञ्। १ दर्पण, आयीना। २ प्रतिलिपि, किसी
किताबकी कापी। ३ आदि हस्तलिपि, असली
लिखावट। इसे देखकर नकूल उतारते हैं। ४ नमूना।
५ स्थानका चित्र, जगहका नक्शा। ६ टीका।
'आदर्शो दर्पणे टीका प्रतिपुस्तकयोरपि।' (मेदिनी)

आदर्शक (सं० त्रि०) भवादौ वुञ्। १ प्रदेशके
सीमासूचक स्थानसे उत्पन्न, जो मुल्की हद बतानेकी
जगहसे निकला हो। (पु०) २ दर्पण, आयीना।
आदर्शन (सं० स्त्री०) १ देखाव, नजारा। २ दर्पण,
आयीना।

आदर्शमण्डल (सं० पु०) आदर्श इव मण्डलस्य।
सर्प विशेष, एक सांप। इसके शरीरपर दर्पण-जैसे
चिह्न होते हैं। (स्त्री०) आदर्शो मण्डलमिव।
२ गोलाकार दर्पण, गोल आयीना।

आदर्शमन्दिर (सं० पु०) शीश मन्डल, आयीनाघर।
आदर्शित (सं० त्रि०) देखलाया या ज़ाहिर किया
हुआ।

आदहन (सं० स्त्री०) आ-दह भावे लुपट्। १ दाह,
जलन। २ हिंसा, मारकाट। ३ कुत्सन, निन्दा,
हिकारत। आदह्यतेऽत्र, आधारे लुपट्। ४ श्मशान,
सुर्दा फूंकनेकी जगह। ५ जलानेका स्थान, जला
डालनेकी जगह।

आदा (हिं० पु०) आदरक देखो।

आदातव्य (सं० त्रि०) लिया जानेवाला, लेने
काबिल।

आदाता आदातः देखो।

आदाढ (सं० पु०) आ-दा-ढच्। यहीता, लेने-
वाला।

आदादिक (सं० त्रि०) अदादिगणे पठितम्, ठक्।
अदादिगण पठित। यह शब्द धातुका विशेषण है।

आदान (सं० स्त्री०) आ-दा भावे लुपट्। १ ग्रहण,
पकड़। २ अश्वका अलङ्कार विशेष, घोड़ेका एक गहना।

‘आदानं ग्रहणेऽपि स्वादलहारे च वाजिनम् ।’ (मेदिनी) ३ प्राप्ति, स्वीकृति, पहुंच, मज्जरी। ४ निजका अर्थग्रहण, अपने आप लेनेका काम। ५ लक्षण, अलामत। ६ निदान, बीमारीको पहचान। ७ बन्धन, जकड़।

आदानवत् (सं० त्रि०) पानेवाला, जिसके कुछ हाथ लगे। (पु०) आदानवान्। (स्त्री०) आदानवती।
आदान-प्रदान (सं० क्ली०) लेन-देन।

आदाना, आदानी देखो।

आदानी (सं० स्त्री०) आदीयते, आ-दा कर्मणि लुगट् ङीप्। हस्तिबोधा, हाथी चिघार।

आदापन (सं० क्ली०) निमन्त्रण, न्योता।

आदाब (अ० पु०) १ संयम, तरीक। २ ध्यान, खयाल। ३ प्रणाम, सलाम। यह ‘अदब’ शब्दका बहुवचन है।

आदाय (सं० त्रि०) आददाति गृह्णाति, आ-दा-ण-युक्। १ गृहीता, लेनेवाला। (पु०) आ-दा भावे घञ् युक्। २ आदान, लेनेका काम। (अव्य०) आ-दा-ल्यप्। ३ ग्रहणपूर्वक, लेकर।

आदायचर (सं० त्रि०) आदाय चरति, चर-ट, उप० समा०। मिचालेनादयेषु च। पा ३।२।१७। ग्रहणपूर्वक गमनकारी, लेकर चल देनेवाला।

आदायमान (सं० त्रि०) आददान, ले लेनेवाला। यह शब्द पद्यमें आता है।

आदायिन् (सं० त्रि०) आददाति गृह्णाति, आ-दा-णिनि-युक्। गृहीता, लेनेवाला। (पु०) आदायी। (स्त्री०) आदायिनी।

आदार (वै० पु०) आ-ट वेदे बाहु० घञ्। १ आदर, इज्जत। २ प्रलोभन, आकर्षण, लालच, कथिथ। ३ प्रोत्साहक, मुफूसिद, विषकी गांठ। ४ वृक्ष विशेष, एक पौदा। सोमलता न मिलनेसे उसके स्थानमें यह व्यवहृत होता है।

आदारविम्बी (सं० स्त्री०) आदरिणी विम्बीव, पृषो० पुंवद्भावः। लताविशेष, एक बेल। इसमें अन्न-वेतसके तुल्य पुष्प खिलते हैं।

आदारिन् (वै० त्रि०) १ प्रलोभक, आकर्षक, लालच देनेवाला, जो अपनी आर खींच लेता हो। २ नाशक,

विगाड़ू। (पु०) आदारी। (स्त्री०) आदारिणी।

आदि (सं० पु०) आ-दा-कि। उपसर्गं चोः किः। पा ३।३।२२। १ आरम्भ, आगाज। २ प्राक्सक्ता, पहला फल। ३ प्रथम, पहला। ४ कारण, सबब। ५ सामौध्य, पड़ोस। ६ प्रकार, तरह। ७ अवयव, अङ्गी। (त्रि०) द आद्य, पहलेका। ८ पूर्व पौरुष, सामने खड़ा हुआ। ‘पुंस्त्वादिः पूर्वं पौरुषा प्रथमाद्याः।’ (अमर) इति शब्दसे मिले हुये आदि अर्थात् इत्यादि द्वारा गण समझा जाता है, जैसे—शाखा पञ्चव पत्र इत्यादि। यह प्रायः समासके अन्त या मध्यमें आरम्भसूचक रहता है, जैसे—गृहादियुक्त, अर्थात् मकान् वगैरह रखनेवाला। आदिक (सं० अव्य०) किसीसे लेकर, वगैरह। यह प्रायः समासान्तमें आदि शब्दकी तरह व्यवहृत होता है।

आदिकर (सं० पु०) आदिं करोति, अहेतादावपि ट। प्रथमकारक, अव्वल बनानेवाला।

आदिकर्ता, आदिकर्त देखो।

आदिकर्त (सं० पु०) आदिं करोति आदिः कर्ता वा। आदिकारक, परमेश्वर। ब्रह्मा, कृष्ण वा विष्णुको भी आदिकर्ता कहते हैं।

आदिकर्मन् (सं० क्ली०) कर्मधा०। आदिकर्मणि क्तः कर्तरि च। पा ३।४।७१। कर्मसे पहले क्रियापद लगा वाक्यारम्भ विशेष, मफूलसे पेस्तर फेंल रख जुमलेका आगाज। जैसे—मार डाला रावणको रामने। ‘मार डाला’ क्रियापद पहले रहनेसे उपरोक्त वाक्य व्याकरणानुसार आदिकर्मा है। २ प्रथम-जात कर्म-मात्र, पहले निकला हुआ काम। (त्रि०) आदि आदिभूतं कर्म यस्य, बहुव्री०। ३ आदि-कर्म युक्त, औवल काम करनेवाला।

आदिकवि (सं० पु०) आदिः आदिभूतः कविः। १ हिरण्यगर्भ ब्रह्मा। प्रथम उत्पन्न हो स्वयं वेद और कवित्व-प्रकाश करनेपर ब्रह्माका नाम आदिकवि पड़ा है। प्रवाद है—पहले पहल वाल्मीकिके मुखसे ‘मा निषाद’ इत्यादि अनुष्टुप् छन्द निकला था, इसीसे उनके भी आदिकवि उपाधि मिला। ० किन्तु-कोयी-

कोयी वाल्मीकिकी अपेक्षा व्यासको प्राचीन कवि बताता है।

आदिकारण (सं० स्त्री०) आदिभूत कारणम्, शाक० तत्। १ परमेश्वर, सकल कारणका मूलकारण, सबब-उल्-सबब। महर्षि कपिलने अस्तित्वका प्रमाण न पानेसे ईश्वरको नहीं माना है। उन्होंने विना ईश्वर जगत्की सृष्टिका प्रकार ठहरानेको कहा है, पहले कुछ उपादान न रहनेसे कोयी वस्तु कैसे उत्पन्न हो सकता है। प्रत्येक द्रव्य बनानेमें उपादान आवश्यक है। पहले दुग्ध रहनेसे ही पोछे दधि बन सकता है। दुग्ध न होनेसे दधि कैसे मिलेगा। इसीसे उन्होंने प्रकृति और पुरुष नामक दो नित्य पदार्थ माने हैं। प्रकृति जड़ पदार्थ है। इसीके विकारसे जगत् उत्पन्न हुआ है। यह प्रकृति ही उनके मतसे आदिकारण है। आदिकारण नित्य होता और अपनी उत्पत्तिके लिये अन्य कारणकी आवश्यकता नहीं रखता। कपिलने आदिकारणको बारबार 'अमूलमूल' कहा है। सांख्यवादियोंके मतसे इसका दूसरा नाम प्रधान भी है। नेयायिक प्रभृति आदि कारण शब्दसे निमित्त निकलनेपर ईश्वर और समवायिकारणार्थ आनेपर परमाणु समझते हैं। २ निदान, बीमारीकी पहचान। ३ व्यवच्छेद, बीजगणित, जबर-मुकाबला, जबर-मुकाबलेसे सवाल निकालनेका तरीका।

आदिकाल (सं० पु०) प्राचीन समय, जामिद जमाना। आदिकाव्य (सं० स्त्री०) आदिभूत काव्यम्, शाक० तत्। चार चरणयुक्त छन्दोबद्ध वाक्य, वाल्मीकिरचित रामायण।

आदिछात, आदिकर्त देखो।

आदिकेशव (सं० पु०) आदिभूतः केशवः शाक० तत्। १ काशीस्थ केशवमूर्तिविशेष। २ विष्णु भगवान्।

आदिगदाधर (सं० पु०) १ काशीस्थ विष्णुमूर्ति-विशेष। २ गया तीर्थस्थ विष्णुमूर्ति विशेष।

आदिग्ध (सं० द्वि०) लिप्त, अक्त, आलूदा, चुपड़ा या भरा हुआ।

आदिजिन (सं० पु०) आदिभूतः जिनः, शाक० तत्। ऋषभदेव, जैनोंके आदि देव। अयम देखो।

आदित (हिं०) आदित्य देखो।

आदितस् (सं० अव्य०) आदिसे, आरम्भमें, शुरूसे, पहले।

आदिता (सं० स्त्री०) पूर्वता, प्रथमता, कदामत, तकदीम।

आदिताल (सं० पु०) कर्मधा०। ताल विशेष, एक ठेका। इसमें एक लघु ताल लगता है।

“एक एव लघुयंत्र आदितालः स कथ्यते।

गुरुस्तत् पुरतो वाच्यः प्राथम्येतिदृशेनम्।” (सङ्गीतदा०)

आदित्य (सं० पु०) आदित्या अपत्यम्, ठक्। १ अदितिके सन्तान, अदितिके लड़के। २ देवता। ३ सूर्य।

आदित्य (सं० पु०) आदित्या अपत्यम् अथ। दिव्यदिव्यादित्य इत्यादि। पा ४।१।८५। १ अदितिके सन्तान, अदितिके लड़के। २ सकल देवता। ३ सूर्य। आठ, पूर्वात् दाते दीप्यते वा (अष्टादित्यात्) यत्। अकारकारणो-रिकारः, दाजसुक् दीप्यतेः प्रकारस्य तकारस्य निपात्यते। (निचष्टु) ४ सूर्य अधिष्ठित गगन, जिस आसमानमें सूरज रहें। ५ सूर्यका तेजोमण्डल। ६ आदित्यमण्डलान्तरगत हिरण्यवर्ण परमपुरुष विष्णु। ७ उपासक लोगोंके अतिवाहनको दक्षिण और उत्तर पथमें ईश्वर निवृत्त धूमादि एवं अर्चिरादि अभिमानी देवगण। ८ अर्क-वृक्ष, मदारका पेड़। ९ खेताकं छुप, सफेद अकोड़ेका पेड़। (त्रि०) आदित्यस्यापत्यम्, आदित्य-स्य यो-लोपः। १० सूर्यके पुत्र। ११ इन्द्र। १२ वामन। १३ वसु। १४ विश्वेदेवा। १५ बारहमासाका ऋतु। (त्रि०) १६ अदिति-सम्बन्धीय। ऋग्वेदकी (२।२७।१) ऋचामें आदित्यगणकी संख्या छः लिखी है—मित्र, अर्यमा, भग, वरुण, दक्ष और अंश। फिर (८।११४।३) ऋक्में इनकी संख्या सात है। किन्तु इस स्थलमें उनका नाम नहीं लिखा। (१०।७२।८८) ऋक्में अदितिके आठ सन्तान कहे हैं। इनमें सात पुत्र उन्होंने देवताओंके दे दिये, केवल मार्तण्ड रह गये थे। अथर्ववेदमें (८।८।२१) आठ आदित्यका उल्लेख है। किन्तु वज्रुधा द्वादश आदित्यका ही नाम देख पड़ता है—विवस्वान्, अर्यमा, पूषा, त्वष्टा, सविता, भग,

धाता, विधाता, वरुण, मित्र, शक्र एवं उपक्रम। ऋग्वेदके (२।२७।१) भाष्यमें सायणाचार्यने तैत्तिरीय संहिताकी एक ऋक् उद्धृत की है। उसमें मित्र, वरुण, धाता, अर्यमा, अंशु, भग, इन्द्र और विवस्वान् इन आठ आदित्यका ही नाम मिलता है।

तैत्तिरीय संहितामें (६।५।६।१) आदित्यका जन्म-विवरण इस प्रकार लिखा है—अदितिने पुत्रकी कामनासे देवताओंके निमित्त ब्रह्मौदन पाक किया था। उन्होंने अदितिको उच्छिष्ट दे दिया। वह इस प्रसादको खानेसे गर्भवती हुई थीं। उससे चार आदित्यने जन्म लिया। अदितिने द्वितीय वार भी पाक बनाया। किन्तु इस समय उन्होंने सोचा, कि उच्छिष्ट खानेसे जब ऐसे सन्तान उत्पन्न हुये, तब चरुका अग्रभाग लेनेसे और भी तेजस्वी सन्तान उत्पन्न हो सकते। ऐसा विचार वह चरुका अग्रभाग खाकर गर्भवती हुईं। पीछे उन्होंने एक अपक्व अण्ड प्रसव किया था। फिर अदितिने आदित्योंके लिये तृतीय वार यह मन्त्र पढ़कर चरु चढ़ाया,—
(“भोगाय मे इदं आन्तमसु”) अर्थात् यह आन्त (परिश्रम) मेरे भोगके लिये हो। इसपर आदित्योंने कहा,—
‘हम वर देते हैं। जो इससे जन्म लेगा, वह हमारा ही होगा और इस प्रजासे जो समृद्ध बनेगा, वह हमारे ही भोगमें लगे गा।’ उसीसे आदित्य विवस्वान्-का जन्म हुआ। तैत्तिरीय-ब्राह्मणमें भी विलकुल ऐसा ही एक विवरण मिलता है। उसमें लिखा, कि अदितिने प्रथम ब्रह्मौदन प्रसाद खा कर धाता तथा अर्यमा, द्वितीय वार मित्र एवं वरुण, तृतीय वार अंशु एवं भग और चतुर्थ वार इन्द्र तथा विवस्वान्को प्रसव किया। तैत्तिरीय-संहितामें यह भी देखा, कि प्रजापतिसे द्वादश आदित्यका जन्म हुआ था। इधर शतपथब्राह्मणमें द्वादश आदित्यको द्वादश मासके साथ मिला दिया है।

आदित्यकान्ता, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यकेतु (सं० पु०) आदित्यः केतुर्यस्य, बडुनी०।

१ आदित्य-ध्वज-रथ-युक्त धृतराष्ट्रके पुत्र। अपने भाई सुनाभके सारे जानेपर इन्होंने सहोदर प्रभृति

छः भ्राताओंके साथ भीमसे युद्ध किया था। पीछे यह भी निहत हुये। २ अरुण, सूर्यके सारथि। आदित्यकेशव (सं० पु०) ३ तत्। काशीस्थ केशव मूर्ति विशेष।

आदित्यगर्भ (सं० पु०) किसी बोधिसत्त्वका नाम। आदित्यतेजा, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यपत्र (सं० पु०) आदित्यस्य अर्कवृक्षस्य पत्र-मिव पत्रमस्य। १ लुपविशेष, एक पौदा। इसके कुछ पर्याय यह हैं,—अर्कपत्र, अर्कंदल, सूर्यपत्र, तपनच्छद, कुष्ठारि, विटप, सुपत्र, रविप्रिय, रश्मिपति और रुद्र। आदित्यपत्र कटु एवं उष्ण होता, कफ, वातरोग, गुल्म तथा अरोचकको हटाता और अग्निवृद्धि करता है।

(रात्रनिषण्डु)

२ आदित्यभक्ता भेद। (स्त्री०) ३-तत्। ३ अर्क-वृक्षका पत्र, मदारका पत्ता। (स्त्री०) आदित्यपत्रा। आदित्यपत्रक, आदित्यपत्र देखो।

आदित्यपर्णिका, आदित्यपर्णिनी देखो।

आदित्यपर्णिनी (सं० स्त्री०) आदित्यवर्णं पर्ण-मस्यस्या इति। १ आदित्यभक्ता, सूरजमुखी। २ ओषधि विशेष, एक बूटी। इसका मूलदेश सुन्दर रक्तवर्ण होता, सुनहला फूल आता और कोमल-कोमल पांच पत्ता लगता है।

आदित्यपर्णी, आदित्यपर्णिनी देखो।

आदित्यपाकतैल (सं० स्त्री०) तैलभेद, किसी किसका तैल। मज्जिष्ठा, लाक्षा, त्रिफला, हरिद्रा, मनःशिला, हरताल एवं गन्धकचूर्ण सम भाग लेकर सबके बराबर तैलमें पकाना चाहिये। किन्तु विना जलके पाक बन नहीं सकता, इसलिये तैलके तुल्य जल भी डालना पड़ता है। इसे धूपमें तयार करना अच्छा है। जब तक पानी न सूखे, तबतक धूप देखाता जाये। आदित्यपाकतैल कुष्ठरोगको दूर करता है।

(चक्रपाणिदशकृत संघ)

आदित्यपुराण (सं० स्त्री०) आदित्येनोक्तं पुराणम्, शक० तत्। उपपुराण विशेष। सौरपुराण, भास्कर-पुराण, सूर्यपुराण इत्यादि शब्दसे भी आदित्यपुराणका ही बोध होता है।

आदित्यपुष्पा (सं० स्त्री०) १ घातकीपुष्पचुप, धायके फूलका पेड़। २ चौरकाकोली।

आदित्यपुष्पिका (सं० स्त्री०) आदित्यवर्ण रक्त पुष्पमस्याः। १ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। २ लोहितार्क-चुप, लाल मदार।

आदित्यपुष्पी, आदित्यपुष्पिका देखो।

आदित्यभक्ता (सं० स्त्री०) आदित्ये विषये भक्ता, ७-तत्। डुरडुर, कनफटिया। यह खेत एवं पीत भेदसे दो प्रकार है। यह वृक्ष शीतल, कटु एवं तिक्त रहता और कफ, त्वग्दोष, कण्डू, व्रण, कुष्ठ, भूतग्रह तथा शीतज्वरको दूर कर देता है। (रात्रनिषण्ड) इसमें खादु पाकरसत्व, गुरुत्व, चाररसत्व, अपित्तवर्धकत्व, विष्टम्भित्व, वातहरत्व और कर्णशूल मिटानेका गुण पाते हैं। (चक्रपाणिदण्डवत् संघट)

यह वृक्ष शीतल, रुच, खादुपाक, सर, गुरु, कटु, अपित्तल, चार, विष्टम्भ और कफ-वात-घ्न होता है। फिर दूसरा तिक्त, कषाय, उष्ण, सर, रुच, लघु एवं कटु लगता और कफ, पित्त, रक्त, श्वास, कास, अरुचि, ज्वर, विस्फोटक, कुष्ठ, मेह, अस्त्रयोनिरोग, कृमि और पाण्डुको दूर करता है। (भावप्रकाश)

आदित्यमण्डल (सं० स्त्री०) सूर्यका वृत्त, आफताबका कुरा।

आदित्यवत् (सं० त्रि०) आदित्यसे आहत, आफताबसे घिरा हुआ। (पु०) आदित्यवान्। (स्त्री०) आदित्य-वती।

आदित्यवनि (वे० त्रि०) आदित्यकी कृपा प्राप्त करने-वाला, जो आदित्यको अपने ताबेमें ला रहा हो।

आदित्यवर्ण (सं० त्रि०) सूर्यके वर्ण-विशिष्ट, आफ-ताब-जैसा, जिसके सूरजकी तरह रङ्ग रहे।

आदित्यवर्मा—भारतीय दाक्षिणात्यके एक प्राचीन नृपति। यह पुलकेशी राजाके पुत्र रहे। कृष्णा और तुङ्गभद्राके समीपस्थ प्रान्तपर इनका अधिकार था। अपने शासनके पहले वर्ष इन्होंने जो ताम्रफलक प्रदान किया, वह करनूल जिलेमें मिला है।

२ सुमात्राके एक नृपति। सुमात्रामें आविष्कृत शिलालिपिसे मालूम करते, कि वहां सन् ई०के ७म

शताब्दान्त आदित्यवर्मा नामक प्रवल पराक्रान्त नृपति हुए थे। इनकी कार्तिका बहु ध्वंसावशेष आज भी सुमात्राद्वीपके नाना स्थानमें पड़ा है। ३ ब्रह्मदेशके एक राजा। अल्प दिन हुये ब्रह्मदेशसे जा राजकीय पुरातत्त्वविवरण छपे, उनके अनुसार सन् ई०के नवें शताब्द आदित्यवर्मा नामक सौरनृपति प्रवलप्रतापसे वहां राजत्व चलाते थे।

आदित्यवक्त्रभा, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यवक्षिका, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यवक्षी, आदित्यभक्ता देखो।

आदित्यवार (सं० पु०) रविवार, सूर्यका दिन, एतवार।

आदित्यव्रत (सं० स्त्री०) आदित्यस्य तदुपासनार्थं व्रतम्, ६-तत्। १ सूर्यकी उपासनाके निमित्त व्रत-विशेष। इसमें नमक नहीं खाते। (त्रि०) आदित्य-व्रतस्य ब्रह्मचर्यमस्य, ठक्। २ आदित्यव्रतिक, आदित्य-व्रतके निमित्त ब्रह्मचर्य-युक्त, रविवारका व्रत करने-वाला।

आदित्यशक्ति—बम्बई प्रान्तस्थ कनाड़ी जिलेके एक नृपति। ग्वालियर-राज्यस्थ नौसारी जिलेके बगुमरेसे जो दानपत्र दिया गया, उसमें निम्नलिखित वृत्तान्त मिला है,—इनके पिताका नाम भानुशक्ति और पुत्रका नाम पृथिवीवल्लभ निकुञ्जशक्ति रहा। इनका समय सन् ६५५ ई० बताते हैं।

आदित्यशूर—राढ़देशके कोई शूरवंशीय प्रसिद्ध नर-पति। इनका दूसरा नाम धरणाशूर रहा। सिंहेश्वर नामक स्थानमें आदित्यशूरकी राजधानी थी। प्रायः सन् ८७१ से ८०५ ई० तक इन्होंने राजत्व किया। इनके समय भी अनेक ब्राह्मण और कायस्थ उत्तर राढ़में प्रतिष्ठित हुए थे।

आदित्यसदृश (सं० त्रि०) सूर्यके संमान, आफताब-जैसा। (स्त्री०) आदित्यसदृशी।

आदित्यसुनु (सं० पु०) ६-तत्। १ सूर्यपुत्र सुयीव। २ कर्ण। ३ यम। ४ शनि। ५ सावर्णि मनु। ६ वैवस्वत मनु।

आदित्यसेन—मगधके गुप्तवंशीय एक सम्राट्। यह सम्राट्

हर्षवर्धनके प्रियसखा माधवगुप्तके पुत्र रहे। सम्राट् हर्षकी मृत्युके बाद उत्तराधिकारियों और मन्त्रियोंमें जब साम्राज्यके अधिकार पर झगड़ा चला, तब आदित्यसेनने धीरे-धीरे बल बढ़ा और परम भट्टारक महाराजाधिराज उपाधि ले समस्त प्राच्य भारतका अधिकार पाया था। गुप्तवंश शब्दमें विस्तृत विवरण देखो।

आदित्याचार्य (सं० पु०) ग्रन्थकार विशेष, एक सुसन्निध्।

आदित्य (सं० स्त्री०) आदिता देखो।

आदिता (सं० स्त्री०) ग्रहण करनेकी इच्छा, ले-लेनेकी चाहिश।

आदित्सु (सं० त्रि०) आदातु-मिच्छुः, आ-दा-सन्-उ। ग्रहणके निमित्त इच्छुक, लेनेका चाहिशमन्द।

आदिदेव (सं० पु०) आदिभूतो देवः, शाक० तत्।

१ नारायण। २ शिव। ३ सूर्य। 'आदिदेवो महानिजि-शिवलिङ्गतदोन्नवः।' (बृ०ति) आदौ दीव्यति, आदि-दिव-अच्, ७-तत्। ४ आदिकारण। ५ परमेश्वर।

आदिदैत्य (सं० पु०) आदिभूतो दैत्यः, शाक० तत्। हिरण्यकशिपु नामक दैत्य। दितिके प्रथम गर्भसे जन्म लेने कारण हिरण्यकशिपुको आदिदैत्य कहते हैं। भागवत आदिस्तम्बके ६५वें अध्यायमें इसका विवरण लिखा है।

आदिन् (सं० त्रि०) अत्ति, अद्-णिनि। भक्षक, खानेवाला। यह शब्द समासान्तमें व्यवहृत होता है। जैसे—अन्नादिन्, अनाज खानेवाला। (पु०) आदी। (स्त्री०) आदिनी।

आदिनव (वे० पु०) आदीनवस्यः पुषो० वेदे क्लृप्तः। दुर्भाग्य, बाधा, कमबख्तूती, बखेड़ा।

आदिनवदर्श (वे० त्रि०) साथमें पासा या काबतेन खेलनेवालोंसे चालाकी करनेवाला।

आदिनाथ (सं० पु०) १ ग्रन्थकार विशेष, एक सुसन्निध्। २ आदितीर्थंकर। गुजरातके श्रवस्त्रय नामक स्थानमें इनका मठ स्थापित है। कहते हैं, (सन् ११४३-११७४ ई०) अनहिलवाड़के वल्लभौराज कुमारपालके प्रधान मन्त्री किसी समय मन्दिरमें आदिनाथका पूजन करनेको पहुँचे, उसी समय पुत्र

दीपककी बत्ती बसीट ले गये। मन्दिर लकड़ीका रहा, इसीसे आग लगते ही भस्मीभूत हुआ। लकड़ीकी इमारतको विपद्जनक देख मन्त्रीने पक्का मन्दिर बनानेका विचार किया था। अष्टमन्दिर देखो।

आदिपर्वन् (सं० स्त्री०) आदिभूतं पर्व, शाक० तत्।

प्रथम अध्याय, पहला बाब। महाभारत अष्टादश पर्वके अन्तर्गत प्रथम पर्वको भी इसी नामसे पुकारते हैं।

आदिपुराण (सं० स्त्री०) आदिभूतं पुराणम्, शाक० तत्। १ पुराण विशेष, अष्टादश पुराणके अन्तर्गत प्रथम पुराण, चतुर्लक्षात्मक ब्रह्मनिर्मित पुराण विशेष, ब्रह्मपुराण। २ जिनसेनरचित ग्रन्थविशेष। इसमें दाक्षिणात्यके महाराज अमोघवर्ष और राष्ट्रकूट-नृपति अकलङ्क, प्रभाचन्द्र एवं पातकेशरीका उल्लेख विद्यमान है। जिनसेन देखो।

आदिपुरुष (सं० पु०) आदिभूतः पुरुषः, शाक० तत्।

१ मनुष्यके आदिवीजस्वरूप हिरण्यगर्भ। २ ब्रह्मा। ३ नारायण।

आदिपुरुष, आदिपुरुष देखो।

आदिवल (सं० स्त्री०) उत्पादक शक्ति, पैदा करने-वाली ताकत।

आदिवलप्रवृत्त (सं० त्रि०) शुक्रशोणितान्वयज, मनी और खूनके मेलसे पैदा हुआ। शुक्र और शोणितके योगसे उत्पन्न होनेवाले कुछ, अर्श प्रभृति रोग आदिवलप्रवृत्त कहाते हैं। यह दो प्रकारके होते हैं,—मातृज और पितृज। (चुम्बत) ऐसे रोगोंको आध्यात्मिक भी कहते हैं।

आदिवुद्ध (सं० त्रि०) १ आरम्भसे ही मालूम किया हुआ, जो शुरूमें ही समझ पड़ा हो। (पु०) २ प्रथम बुद्ध, उत्तरीय बौद्धोंके प्रधान देव।

आदिभञ्ज—भञ्जवंशके प्रथम नृपति। कहते, कि मयूर-भञ्जके अन्तर्गत आदिपुरमें यह राजत्व करते थे। भञ्जवंश देखो।

आदिभव (सं० पु०) आदौ भवतीति, आदि-भू-अच्।

१ हिरण्यगर्भ, परमेश्वर। २ ब्रह्मा। ३ विष्णु। (त्रि०) ४ अयन, शुरूमें पैदा हुआ।

आदिभूत, आदिभूत देखो।

आदिम (सं० त्रि०) आदि-डिमच् । अयादि पयाडिमच् ।
(वार्तिक—पा ३।३।२३) प्रथमजात, आदिमें उत्पन्न, पहला,
अगला, दुनियादी ।

आदिमत् (सं० त्रि०) आदिरस्यस्य, मतुप् । आदि-
युक्त, सकारण, आदि सीमायुक्त, इदतिदायी, आगाज
या सबब रखनेवाला । (पु०) आदिमान् । (स्त्री०)
आदिमती ।

आदिमल्ल—विष्णुपुर या मल्लभूमके मल्लवंशीय प्रथम
नृपति । इन्हींके समयसे मल्लाब्द चला है । मल्लभूम
या विष्णुपुर देखो ।

आदिमा (सं० स्त्री०) भूमि, जमीन् ।

आदिमूल (सं० स्त्री०) प्रथमजात आधार वा कारण,
पहली दुनियाद या सबब ।

आदियोगाचार्य (सं० पु०) योगके प्रथम गुरु । यह
शब्द शिवका उपाधि है ।

आदिरस (सं० पु०) प्रधान रस, पहला जज्बा ।
शृङ्गार रसका ही दूसरा नाम आदिरस है ।

आदिराज (सं० पु०) आदिभूतो राजा, शाक० टजन्त
तत् । राजाहः सखिभाष्टच् । पा ३।४।२१ । १ प्रथम नृपति,
पहले बादशाह । २ पृथु नामक नृपति । भागवतके
चतुर्थ स्कन्दमें आदिराज पृथुका विवरण लिखा है ।
३ कुरुके एक पुत्र । ४ मनु । कालिदासने रघु-
वंशमें वैवश्वत मनुको आदिराज कहा है ।

आदिल (फा० वि०) अदल या इन्साफ करनेवाला,
न्यायी ।

आदिल खान्—बम्बई प्रान्तस्थ खानदेशके नवाब ।
सन् १४५७ ई०को सुवारिक खान्के मरने पर यह
खान्देशके नवाब बने थे । इन्होंने १५०३ ई० तक
राज्य किया । इनके समय खानदेशकी बड़ी औद्योगिक
हुई थी । आदिलखान् गुजरातको कर देनेसे
असमर्थ रहे, किन्तु कोई १४८८ ई०के समय वैसा
करनेपर बाध्य किये गये । गोपालराय कविने
इनकी प्रशंसापर कुछ पद्य लिखा था ।

आदिलशाही—दक्षिणात्यके बहमानी राजवंशका
एक भाग । सन् १४४८ ई०को द्वितीय अमूरयके
किसी पुत्रने बीजापुरमें अपनी राजधानी प्रतिष्ठित की

थी । औरङ्गजेबने १६८६-८८ ई०को बीजापुर जीत
दिखीकी बादयाहृतमें मिला लिया ।

आदिवंश (सं० पु०) प्रथम कुल, दुनियादी खान-
दान् ।

आदिवराह (सं० पु०) आदिभूतो वराहः, शाक०
तत् । यज्ञवराह रूपमें अवतीर्ण विष्णुका एक अव-
तार । हरिवंशमें लिखा, पहली यह जगत् प्रजा-
पतिके मूर्तिधर हिरण्यमय अण्डमें परिणत हुआ था ।
हजार वर्षके बाद नारायणने उसी अण्डको ऊर्ध्वमुख
उठाके दो भागमें विभक्त किया । उसके जल भागसे
पर्वतकी सृष्टि हुई थी । सकल पर्वतोंके भारसे
व्यथित हो तथा नारायणात्मक जलराशिमें डूब जब
पृथिवी रसातलको जाने लगी, तब नारायणने यज्ञ-
वराह मूर्ति धारण कर ऊपर उठा ली । आदिवराहकी
मूर्ति दश योजन विस्तृत और शत योजन उन्नत रही ।
इनके देहकी कान्ति मेघकी तरह नील वर्ण एवं
गर्जन जलद जैसी गम्भीर थी । श्वेतवर्ण, दीप्तियुक्त एवं
उग्र दंष्ट्रासे पर्वत पर्यन्त विदीर्ण हो जाते रहे । चक्षु
विद्युत्-अग्नि या सूर्य-किरणकी तरह तीव्र था । स्कन्ध
स्थूल, विस्तृत और गोलाकार रहा । विक्रम व्याघ्रकी
तरह अति भयङ्कर और कटिदेश पीन एवं उन्नत था ।
शरीरमें देखनेसे बिलकुल वृषका लक्षण मिलता रहा ।
चतुर्वेद पेर, यूप दांत, क्रतु हाथ, चित्ती मुख, अग्नि
जिह्वा, दर्भ लोम, प्रणव मस्तक, दिवारात्र चक्षुर्द्वय,
वेदाङ्ग कर्णभूषण, आन्य नासिका, सुव तुण्ड, साम-
वेदध्वनि कण्ठनिखन, क्रियामय गोदानादि घोषा,
पशु जानु, मख आकृति, उद्गाता अन्त्र, होम लिङ्ग,
महाफल बीज तथा ओषधि, वायु अन्तरात्मा, सत्र
स्त्रिक, सोमरस शोषित, वेदि स्कन्ध, हविः गन्ध, हव्य-
कव्य वेग, प्राग्वंश शरीर, दक्षिणा हृदय, वेदोपकरण
ओष्ठका अलङ्कार, होमाग्नि नाभिभूषण, छन्दः गतिपथ,
गुह्य उपनिषत् भासन और छाया आदिवराहको
पत्नी थीं ।

“चापी वा इदमेव सलिलमासीत् तस्मिन् प्रजापतिर्वायुर्मुलाचरत् स
इमानपस्यत् । तां वराहो मूला हरत् ।” (तैत्तिरीयसंहिता ३।१।३।१)

अर्थात् प्रथम यह जगत् जलमय रहा, सब जगत्

जल ही जल देख पड़ता था। प्रजापति वायु वन उसमें घूमने लगे। उन्होंने इसे देख और वराह ही आहरण किया था।

“रात्रौ वैकार्णवे ब्रह्मा नष्टे स्थावरजङ्गमे ॥
सुम्बापाशसि यस्तस्मान् नारायण इति स्मृतः ।
शर्वैर्यन्ते प्रबुद्धो वै दृष्ट्वा शून्यं चराचरम् ॥
स्रष्टुं तदा मतिं चक्रे ब्रह्मा ब्रह्मविदांबरः ।
उत्केराप्लुतां चां तां समादाय सनातनः ॥
पूर्ववत् स्थापयामास वाराहं उपमाश्रितः॥”

(लिङ्गपुराण पूर्व भाग ४।५८ ६०)

लिङ्गपुराणमें लिखते,—रात्रिको एकार्णवमें स्थावर जङ्गम समस्त नष्ट हो जानेसे ब्रह्मा जलपर सोते, इसीसे नारायण कहते हैं। ब्रह्मविदोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माने रात्रि बीतनेपर जागरित हो और चराचरको शून्य पा सृष्टि रचनेकी इच्छा की। फिर उन्होंने आदि-वराहमूर्ति धारणकर जलप्लावित पृथिवीको उठा पूर्ववत् रख दिया।

ब्रह्माण्डपुराण (६।१-११)में भी लिखा कि, पहले सकल स्थान जलमें लय हो गया था। पीछे पृथिवी बनी और फिर देवताओंके साथ स्वयम्भ ब्रह्माने भी जन्म लिया। उन्होंने ही वराहमूर्ति धारणकर पृथिवीको जलमें डूबनेसे बचाया।

इस प्रकार मतभेद पड़नेका कारण है। आज भी विष्णुको ही नारायण कहा जाता, किन्तु वास्तविक देसा ठीक नहीं बैठता। मनुसंहितामें नारायण शब्दकी व्युत्पत्ति इसतरह लिखी,—‘नरनामक परमात्माके देहसे उत्पन्न होनेपर जलका नाम नारा पड़ा है। यही जल प्रलयकालमें परमात्माका अयन अर्थात् स्थान होता, इसीसे उन्हें नारायण कहते हैं। सृष्टिके समय जलमें रहनेसे ब्रह्मा ही प्रकृत नारायण ठहरते हैं। (मनुसंहिता १।८—१२)

आदिवाराह (सं० त्रि०). आदिवराह सम्बन्धीय। आदिविहस् (सं० पु०) आदिभूतो विद्वान् निखिल-सम्प्रदायप्रवर्तकात्। कपिल। सकल सम्प्रदायके प्रवर्तक होने और उपासना द्वारा जगत्कर्ताको सिद्ध करनेसे कपिल आदिविद्वान् कहे जाते हैं।

आदिविपुला (सं० स्त्री०) अन्धकारविशेष। यह एक

प्रकारकी आर्या होती और पहले दलके प्रथम तीन गणमें अपूर्ण पाद रखती है।

आदिविपुलाजघनचपला (सं० स्त्री०) छन्दो विशेष। यह एक प्रकारकी आर्या होती और प्रथम पादके तीन गणमें अपूर्ण पाद एवं द्वितीय दलमें दूसरा तथा चौथा गण जगण रखती है।

आदिवृक्ष (सं० पु०) अश्मन्तक वृक्ष, एक पेड़।

आदिश (वै० स्त्री०) १ अभिप्राय, इरादा। २ प्रयुक्ति, तद्वीर। ३ वर्णना, कैफियत। ४ प्रदेश, जगह। ५ वलि विशेष।

आदिशक्ति (सं० स्त्री०) आदिभूता शक्तिः। १ परमेश्वरकी मायारूप शक्ति। २ देवीमूर्ति विशेष।

आया देखो।

आदिशरीर (सं० स्त्री०) आदि आदिभूत शरीरम्, शक० तत्। १ भोगके निमित्त परमेश्वर-सृष्ट आद्य लिङ्गाख्य शरीर। आदिकारणात् परं जातं सूक्ष्म शरीरम्। २ अविद्याख्य सूक्ष्म शरीर। वेदान्तके मतमें कारण, सूक्ष्म एवं स्थूल भेदसे शरीर तीन प्रकारका होता है।

आदिशूर—गौड़ एवं वङ्गमें ब्राह्मण धर्मके प्रतिष्ठाता पराक्रान्त नृपति। बंगला कुलपञ्चिका नामक विभिन्न जातीय समाजके इतिहाससे आभास मिलता, कि बौद्धधर्मका प्रभाव उड़ा वैदिक धर्म चलानेके लिये जिस वंशने सर्वप्रथम उपयुक्त आयोजन लगाया, उसी वंशके प्रथम व्यक्तिका आदिशूर नाम प्रसिद्ध था। ६५४ शकाब्दको इन्होंने ही साग्निक ब्राह्मण बुला प्रथम अपने देशमें बसाये। तत्पर तद्देशीय आदित्य-शूर भी किसी किसी उत्तरराष्ट्रीय-कुलपञ्चिका में आदिशूर नामसे प्रसिद्ध हुए थे। पीछे गौड़ाधिप बल्लालसेनके पिता विजयसेन अपने गौड़ाधिकारमें वैदिक-धर्मकी प्रतिष्ठाकर आदिशूर कहाये। शूर और सेनवंश देखो।

आदिश्य (सं० अव्य०) आ-दिश्-ल्यप्। अनुशासन देके, हुक्म लगाकर।

आदिश्यमान्, आदिष्ट देखो।

आदिष्ट (सं० स्त्री०) आ-दिश्-भावे क्त। १ आदेश, हुक्म। २ उपदेश, नसीहत। ३ उच्छिष्ट भोजनका

चुड़ांग, खायी हुई चीज़का टुकड़ा। (त्रि०) कर्मणि क्त। ४ उपदिष्ट, नसीहत पाये हुआ। ५ व्याकरण-प्रसिद्ध स्थानी जात। जिस वर्णका किसीके स्थानमें आदेश होता, वह आदिष्ट कहाता है। जैसे इक्के स्थानमें आदेश होनेसे यण् (यवरल)को आदिष्ट कहते हैं। ६ आन्नस, हुक्म पाया हुआ।

आदिष्टिन् (सं० पु०) आदिष्ट आदेशो व्रतादेशोऽस्यस्य, इति। १ व्रतादेशयुक्त ब्रह्मचारी। २ अनुतापदग्ध पुरुष, पशेमान् शस्त्रसः। (त्रि०) आदिष्ट-मनेन, इष्टादि० इति। ३ आदेशकर्ता, हुक्म देनेवाला। (पु०) आदिष्टी। (स्त्री०) आदिष्टिनी। आदिसर्ग (सं० पु०) आदिः आदिभूतः सर्गः, शाक० तत् कर्मधा० वा। प्राकृत प्रलयके बाद प्रथम सृष्टि, कुदरती कयामतकी पीछे पहली पैदायश।

आदी (अ० वि०) १ आदत रखनेवाला, अभ्यस्त, जो किसी बातकी महारत रखता हो। (हिं० स्त्री०) २ अदरक।

आदीचक (हिं० पु०) आर्द्रक विशेष, किसी किस्मकी अदरक। इसकी तरकारी बनती है।

आदीनव (सं० पु०) आ-दी भावे क्त, आदीनस्य वानं प्राप्तिः, बाहु० क। १ दोष, बुराई। २ क्लेश, तकलीफ़। ३ वाधाजनक पुरुष, तकलीफ़ पहुँचानेवाला शस्त्रसः। (त्रि०) कर्मणि क्त। ओदितय। पा ८१/४५। ४ दुर्दम, ऐवी। ५ क्लेशयुक्त, तकलीफ़ उठानेवाला।

आदीपक (सं० त्रि०) आदीपयति अन्यस्य गृह-मग्निना, आ-दीप-णिच्-ण्वुल्, णिच् लोपः। १ अन्यके गृहमें अग्नि लगानेवाला, जो दूसरेका मकान् जला देता हो। २ उद्दीपक, जला डालनेवाला। ३ प्रकाशक, रोशनी देनेवाला।

आदीपन (सं० स्त्री०) आ-दीप-णिच्-ण्वुट्, णिच् लोपः। १ अन्यके गृहमें अग्नि लगानेका कर्म, आतिशयनी। २ द्रव्य विशेषसे उत्सवके समय गृहपोतनेका काम, लिपायी पोतायी।

आदीपित (सं० त्रि०) आ-दीप-णिच्-क्त इट्, णिच् लोपः। उद्दीपित, प्रकाशित, लीपा-पोता, चमकाया हुआ।

आदीप्त (सं० त्रि०) जलाया या जलता हुआ, जो भभंक रहा हो।

आदुरि (वे० त्रि०) आ-ट् अन्तर्भूतस्थे कि। १ विदारणकर्ता, कुचल डालनेवाला। २ सचेत, होशियार।

आदृत (सं० त्रि०) आ-ट् कर्मणि क्त। १ सम्मानित, पूजित, इज्जतदार। कर्तरि क्त। २ सोत्साह, अत्यासक्त, हौसलेमन्द, मेहनती। ३ आदर करनेवाला, खातिरदार। (स्त्री०) भावे क्त। ४ आदर, खातिर, इज्जत।

आदृत्य (सं० त्रि०) आदृत्यते, आ-ट्-क्यप्। एतिष्ठ-शास्त्रद्वयः क्यप्। पा ३/११०८। १ आदरणीय, खातिर किये जाने काबिल। (अव्य०) क्यप्। २ आदर करके, खातिरदारीके साथ।

आदृष्टि (सं० स्त्री०) आ ईषत् दृष्टिः, प्रादि० समा०। त्रिभाग-सङ्कुचित दृष्टि, उपान्त सम्योलितनेत्र, बारह आने मुँदी हुई नजर। चक्षुके दोनो कोण संलग्न और मध्यस्थल अल्प खुला रहनेको आदृष्टि कहते हैं। आदे—बम्बई प्रान्तके रत्नगिरि जिलेका एक ग्राम। यह केलसीसे दक्षिण डेढ़ कोस एक छोटी और गहरी खाड़ीपर बसा है। सन् १८१८ ई०को बन्दरगाह रहा, अन्नादिका थोड़ा व्यवसाय चलता था। इसमें परशुरामका मन्दिर बना है।

आदेय (सं० त्रि०) आदीयते, आ-दा-यत्। आहू, लेने काबिल।

आदेयकर्मन् (सं० स्त्री०) जैनमतसे—वाक्सिद्धि देनेवाला कर्म, जिस कामसे आदमीकी बात ठीक निकले।

जैनशास्त्रानुसार जीवोंको इस संसारमें भ्रमण करानेवाली ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनौय, अन्तराय, आयु, नाम, वेदनीय और गोत्र नामके आठ कर्म हैं उनके उत्तरोत्तर बहुतसे भेद हैं। उनमेंसे नाम कर्मकी जा गति आदि ४२ प्रकृतियां हैं उन्हींकी ३८वी प्रकृति आदेय नामकी प्रकृति है इसके उद्देशसे जीवका प्रभासहित शरीर होता।

आदेवक (सं० त्रि०) आदीव्यति, आ-दि-व-ण्वुल्। व्यतकारक, किमारबाज, जुवा खेलनेवाला, खेलाड़ी।

आदेवन (सं० स्त्री०) आ-दिव भावे लुट्। १ द्यूत, पासेका खेल, किमारबाजी, जुवा। करणे लुट्। २ द्यूतसाधन पासा, जुवा खेलनेकी कौड़ी। आधारे लुट्। ३ बिसात, जिस चीज पे पासा फेंका जाये। ४ द्यूत खेलनेका स्थान, जुवाड़खाना।

आदेश (सं० पु०) आ-दिश् भावे घञ्। १ उपदेश, नसीहत। २ आज्ञा, हुक्म। ३ लोप, तखरीब। 'लोपोप्यादेश उच्यते।' (व्याकरणकारिका) ३ व्याकरण-प्रसिद्ध किसी वर्णके स्थानमें अन्य वर्णकी उत्पत्ति। स्थानिवदादेशलक्षिकी। पा १।१।५६। आ-दिश् कर्मणि घञ्। ४ समाचार, खबर। ५ भविष्यत्वाणी, पेशीन्गोयी। ६ प्रणाम, बन्दगी।

“आगलोऽनुपधातौ यः प्रकृतिः प्रत्ययस्य वा।

तयोर्थे उपधातौ स आदेशः परिकीर्तितः।” (व्या० क०)

व्याकरणमें प्रकृति वा प्रत्यय इन दोनोंको जो नहीं उठाता, उसे आगम कहा जाता है। फिर इन्हीं दोनोंके नाश करनेवालेका नाम आदेश है।

आदेशक (सं० त्रि०) आदिशति, आ-दिश-ण्वुल्। आदेश देनेवाला, जो हुक्म लगाता हो।

आदेशकारिन् (सं० त्रि०) वचनशाहिन्, सुश्रूषु, तावेदार, हुक्म बजा लानेवाला।

आदेशन (सं० स्त्री०) आ-दिश भावे लुट्। आदेश-चेष्टित, हुक्मरानी, हुक्मत, हुक्म देनेका काम।

आदेशिन् (सं० त्रि०) आदिशति, आ-दिश-णिनि। शासक, हाकिम, हुक्म देनेवाला।

आदेशी (सं० पु०) १ आज्ञापक, हाकिम। २ ज्योतिषी, नज्मी।

आदेश्य (सं० त्रि०) आदिश्यते, आ-दिश कर्मणि श्यत्। उपदेश्य, आज्ञाप्य, कथनीय, समझाया वा सुनाया जानेवाला।

आदेष्टा, आदेष्टृ देखो।

आदेष्टृ (सं० पु०) आ-दिश-ट्। १ आज्ञापक, हुक्मरान्। २ यजमान, पुरोहितसे काम लेनेवाला।

आद्य (सं० त्रि०) आदौ भवम्, आदि-यत्।

दिवादिभ्यो यत्। पा ३।१।५४। आदिमें उत्पन्न हुआ,

जो शुरूसे हो। २ प्रधान, बड़ा। ३ आरम्भ हो जानेवाला। ४ पूर्वगामी, पहले आनेवाला। (पु०) ५ अङ्गुष्ठ, अंगूठा। (स्त्री०) ६ आरम्भ, आगाज। अद्यते अद कर्मणि यत्। ७ भक्षणीय द्रव्य, खानेको चीज। ८ धान्य, अनाज।

आद्यधातु (सं० पु०) शरीरस्थ रसधातु, कैल्म। यह भोजनसे पेटमें बनता और पित्तके सहारे रक्तमें परिणत होता है।

आद्यपुष्प (सं० स्त्री०) त्रिभागकुङ्कुमोपेत क्रीवरचन्दन।

आद्यमाषक (सं० पु०) आद्यः माषकः, कर्मधा०।

पञ्च गुञ्जा परिमित माषक माण, पांच रत्तीका मासा।

आद्यमाषा (सं० स्त्री०) माषपर्णीलता, रामकुरथी।

आद्यवैज (सं० पु०) कर्मधा०। १ मूलकारण,

बुनियादी सबब। २ ईश्वर। ३ सांख्यप्रसिद्ध प्रधान।

आद्यश्राद्ध (सं० स्त्री०) कर्मधा०। मृत्युके बाद,

अशौचान्तका पहला श्राद्ध। यह ब्राह्मणके मरनेके

ग्यारहवें, क्षत्रियके तेरहवें, वैश्यके षोडशहवें और

शूद्रके एकतिसवें दिन होता है। श्राद्ध देखो।

आद्या (सं० स्त्री०) आदौ भवा, आदि-यत्-टाप्।

१ तन्त्रोक्त दुर्गा। सत्ययुगमें सुन्दरौ, त्रेतामें भुवनेश्वरी,

हापरमें तारिणी और कलिमें काली आद्या कहाती

हैं। (तन्त्रशा०) २ भूमि, जमीन्।

आद्याकाली (सं० स्त्री०) नित्यसमा० संज्ञात्वात्

पुंवज्ञावः। तन्त्रोक्त प्रथमा प्रकृति। सकलका आदि-

रूप होने और कालको निगल जानेसे भगवतीका यह

नाम पड़ा है।

आद्यादि (सं० पु०) आदिरिति आदियंश्च, बहुव्री०।

तसि प्रकारणी आद्यादिभ्य उपस'स्थानम्। (काशिका) पञ्चमीके स्थानमें

तसि प्रभृति प्रत्ययके निमित्त काशिका और वार्तिकमें

कहा हुआ शब्द गणविशेष। इसमें आदि, मध्य, अन्त,

पृष्ठ, पार्श्व प्रभृति शब्द पठित है।

आद्युदात्त (सं० त्रि०) आदिः उदात्तो यस्य।

आदिमें उदात्त स्वर रखनेवाला। यह शब्द प्रत्ययादिका

विशेषण है।

आद्यून (सं० त्रि०) आ-दिव क्त-उट् नत्वञ्। शब्दोः

यङ्गुणादिके च। पा ३।१।२८। १ औदरिक, पेटू, काफ़ीसे

ज्यादा खा डालनेवाला । २ आरम्भशून्य, आगाज न रखनेवाला ।

आद्योत (सं० पु०) प्रकाश, चमत्कार, रौशनी, उजाला ।

आद्योपान्त (सं० पु०) आद्य-मवधीकृत्य अन्तः पर्यन्तः, शाक० तत् । १ प्रथमावधि शेषपर्यन्त, शुरूसे अखीरतक, सब, बिलकुल । यह शब्द हिन्दीमें क्रिया-विशेषणकी तरह व्यवहृत होता है ।

आद्रा (हिं०) आर्द्रा देखो ।

आद्रिसार (सं० त्रि०) लौहनिर्मित, आहनी, लोहेसे बना हुआ ।

आद्वादशम् (वै० अव्य०) द्वादश पर्यन्त, बारहतक ।

आध (हिं० वि०) अर्ध, आधा । यह प्रायः यौगिक शब्दोंके आदिमें आता है । जैसे—आधमन, आधसेर ।

आधमन (सं० क्ली०) आ-धा-कमनम् । १ बन्धक-दान, रेहन, अमानत, धरोहड़ । २ स्त्रीति, सृजन, मोटायी ।

आधमर्ण्य (सं० क्ली०) आधमर्णस्य भावः कर्म वा, धनम् । ऋणीका धर्म, कर्जदारो, मकरुजो ।

आधर्मिक (सं० त्रि०) अधर्मं चरति, ठक् । अधर्म-शील, फासिक, सिया-बानित्, वेईमान् ।

आधर्ष (सं० पु०) आ-धृष भावे घञ् । आधर्षण देखो ।

आधर्षण (सं० क्ली०) आ-धृष भावे लुट् । १ अपराध-स्थापन, जुर्म लगानेका काम । २ दण्ड, सजा । ३ तिरस्कार, बलहेतु पीड़न, भिड़की, छेड़-छाड़ ।

आधर्षित (सं० त्रि०) आ-धृष-क्त इट्, कित्वा भावः । निष्ठा शौङ्खिदिमिदिधिदिधुषः । पा १।२।१८ । १ अवमानित, सजायाफ्ता । २ तिरस्कृत, भिड़का हुआ । ३ बल-द्वारा पराजित, चोट खाया हुआ ।

आधर्ष्य (सं० त्रि०) आधृष्यते, आ-धृष-ण्यत् । १ अवमाननीय, भिड़का जाने काबिल । २ बलहेतु पीड़नीय, जोरसे पीटा जानेवाला । ३ दुर्बल, लागूर । (क्ली०) भावे ण्यत् । ४ दुर्बलता, कमजोरी ।

आधसिंह—नृपतिविशेष, एक राजा । यह बाणावन्शीय रावल भरतरीजीके पुत्र रहे । इनकी राजधानी बिन्दौर थी ।

आधा (हिं० वि०) अर्ध, निस्फ, नीम । (स्त्री०) आधी ।

आधाभारा (हिं० पु०) अपामार्ग, चिचड़ी ।

आधान (सं० क्ली०) १ संस्कार-पूर्वक अग्नि प्रभृतिका स्थापन, रखनेका काम । २ ग्रहण, पकड़ । ३ प्राप्ति, हासिल । ४ धारण, गुञ्जायश, समायी । ५ अग्न्याधान । ६ गर्भाधान । ७ बन्धकदान, निवेशन, रेहन, धरोहड़ । ८ प्रतिभू, जामिनी । ९ नियुक्ति, मन-सूचियत । १० आधार, किसी चीजके रहने या रखनेकी जगह । ११ पात्र, बरतन । १२ वृत्त, घेरा ।

आधानवती (सं० स्त्री०) गर्भवती, जिस औरतके हमल रहे ।

आधानिक (सं० पु०) आधानं गर्भाधानप्रयोजनमस्य, ठक् । गर्भाधानके निमित्त वेदविहित गर्भपात्रका संस्कार, गर्भधारणसंस्कार ।

आधाय (सं० त्रि०) आदधाति, आ-धा-ण । १ आधानकर्ता, रखनेवाला । (पु०) भावे घञ् । २ आधान, रखनेका काम । (अव्य०) लृप् । ३ आधान-पूर्वक, रखके ।

आधायक (सं० त्रि०) आधानकर्ता, रख देनेवाला । (स्त्री०) आधायिका ।

आधार (सं० पु०) आग्नियते परस्परया क्रिया यत्र, आ-धृ अधिकरणे घञ् । आधारोऽधिकरणम् । पा १।४।४५ ।

१ अधिकरण, सहारा । २ आश्रय, मदद । ३ शस्य सम्पादनार्थं जलरोधका बन्धन, पानीका बांध । ४ वृत्तके जल देनेका स्थान, थाला । ५ पात्र, बरतन । ६ नहर । ७ सम्बन्ध, रिश्ता । ८ व्याकरण-प्रसिद्ध कारक । व्याकरणमें आधार तीन प्रकारका माना गया है—श्रीपक्षेपिक, दैषयिक और अभिव्यापक । जैसे—चबूतरपर बैठा है । इस स्थानमें देवदत्तादि किसी कर्तृपदका अध्याहार होता और उसीसे 'बैठा है' क्रियाका आधार चबूतरा ठहरता है । इस लिये चबूतरा ही कर्तृद्वारा क्रियाका आश्रय-रूप श्रीपक्षेपिक (एकदेश सम्बन्धयुक्त) आधार है । 'लोटेमें डालता है' वाक्यमें दुग्धादि पदका अध्याहार और उससे 'डालता है' क्रियाका आश्रय लोटा होता है । अतएव यह कर्मद्वारा क्रियाव्य-

रूप औपस्थिक आधार है। 'मोक्षकी इच्छा होती है' कहनेसे मोक्ष विषयमें इच्छा रहनेका अर्थ निकलता, इसीसे यह वैषयिक आधार है। 'परमात्मा सकल स्थानमें है' बोलनेपर आत्मा कर्तासे 'है' क्रियाका आधार सकल स्थान होता है। इसलिये यह अभिव्यापक आधार है।

आधारक (सं० पु०) भित्तिमूल, नीव।

आधारण (सं० क्ली०) वहनकार्य, बारबरदारी, सहारा देनेका काम।

आधारशक्ति (सं० स्त्री०) आधारस्थ शक्तिः, इ-तत्, आधार एव शक्तिः, कर्मधा० वा। १ सकल आधारकी शक्तिका रूप, माया, प्रकृति, कुदरत। २ चन्द्रकी अमानाक्षी महाकला। 'आधारशक्तिरुपा अमानाक्षी महाकला शोक्ता।' (आतं रघुनन्दन) ३ तन्मोक्त मूलाधारस्थ कुण्डलिनी परमदेवता।

आधाराधेयभाव (सं० पु०) आधारश्च आधेयश्च तौ तयोर्भावः, इ-तत्। आधार और आधेयका सम्बन्ध-विशेष। जैसे घट और भूतल। यहां भूतल आधार और घट आधेय होनेसे दोनोंका सम्बन्ध आधाराधेय भाव कहता है।

आधारिन् (सं० त्रि०) आश्रयस्थित, सहारा पकड़नेवाला। (पु०) आधारी। (स्त्री०) आधारिणी। यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है—जैसे, दुग्धाधारी। आधारी (सं० पु०) १ आधारस्थित, सहारा पकड़नेवाला। (हिं० स्त्री०) २ सहारा लेनेकी लकड़ी। साधु प्रायः इसके सहारे बैठा-उठा करते हैं।

आधार्य (सं० त्रि०) स्थापनीय, रखा जानेवाला।

आधार्याधारसम्बन्ध, आधाराधेयभाव देखो।

आधावमान (सं० त्रि०) शीघ्रगामी, दौड़ या झपट पड़नेवाला।

आधासीसी (हिं० स्त्री०) अर्धकपाली, आधेसरका दर्द।

आधि (सं० पु०) आधीयते अधिक्रियते शोकादितो मनोऽनेन, आ-धा करणे कि। १ मानस दुःखकर व्याधिविशेष, दिली तकलीफ़। २ दुर्भाग्य, कमबख़ूती। ३ धर्म वा कर्तव्यका विचार, मजहब या फ़र्जकी फ़िक्र। ४ आशा, तमन्ना। ५ अपने कुलकी औपनिषदिक

निमित्त उत्सुक मनुष्य, अपने खान्दानकी रोज़ीके लिये हीसला रखनेवाला शख्स।

आ ईषत् धीयते अधिक्रियते उत्तमर्णत्वेनात्र असी वा, आ-धा अधिकरणे कर्म वा कि। ६ अधमर्ण-कट्टक उत्तमर्णके निकट रक्षित बन्धक द्रव्य, रेहन या अमानतकी चीज। ७ बन्धक, रेहन, अमानत। ८ अधिष्ठान, रखनेकी जगह। ९ आधान, जगहकी बन्दिश। १० लक्षण, निर्देश, सिफ़त, खासियत।

आधिक, अधिक देखो।

आधिकारणिक (सं० पु०) अधिकरणे विचारस्थाने नियुक्तः, ठक्। विचारस्थानमें नियुक्त प्राङ्गविवेकादि, अदालतमें इनसाफ़ करनेवाले मुन्सिफ़ वगैरह।

आधिकारण्य (सं० क्ली०) अधिकार, इख्तियार।

आधिकारिक (सं० त्रि०) १ प्रधान, श्रेष्ठ, आला, इख्तियारवाले हाकिम या शैके मुतासिफ़। २ पद-सम्बन्धी, हुजुरी, मनसबी, हाकिमाना।

आधिक्य (सं० क्ली०) अधिकस्थ भावः, व्यञ्ज्। १ अधिकता, बहुतायत, ज्यादाती। २ आतिशय्य, बढ़ाई।

आधिज (सं० त्रि०) पीड़ादिसे उत्पन्न, दर्द वगैरहसे पैदा होनेवाला।

आधिज्ञ (सं० त्रि०) आधिं मनःपीडां जानाति, अधि-ज्ञा-क। १ व्यथाका अनुभावक, मनोदुःखयुक्त, व्यथित, सुसीबतज़दा, दर्दसे तकलीफ़ उठानेवाला। २ वक्र, टेढ़ा।

आधित्व (सं० क्ली०) बन्धकका वृत्तान्त, रेहनका हाल-गहने रखनेकी बात।

आधित्वोपाधि (सं० पु०) बन्धक रखनेका प्रयोजन-रेहनकी शर्त।

आधिदैविक (सं० त्रि०) अधिदेवे भवः देवान् वाता-दीन् अधिकृत्य प्रवृत्तं वा, ठक्, अनुशतिकादिं द्विपद-वृद्धिः। १ देवताधिकृत, देवताधिकारमें प्रवृत्त। इस अर्थमें यह शब्द शास्त्रादिका विशेषण है। २ वायु-प्रभृतिजन्य, हवा वगैरहसे पैदा हुआ। यहां 'आधि-दैविक' दुःखादिका विशेषण है। वैद्यकमतसे दुःख सात प्रकारके होते, जिनमें काल, देव एवं स्वभावके आधिदैविक होते हैं। अधिक

श्रीत, श्रीष वा वृष्टि होनेको कालबलकृत, बिजली गिरने तथा भूतादि चढ़नेको देवबलकृत और बुभुक्षा-लक्षणादि लगनेको स्वभावबलकृत कहते हैं।

आधिपत्य (सं० स्त्री०) अधिपतेर्भावः कर्म वा, प्रत्यन्तात् यक्। स्वामित्व, सरदारो, अजमत।

आधिबन्ध (सं० पु०) आधिः प्रजानां कथं पालनं स्यादिति चिन्ता एव बन्धः। बहुप्रजारक्षणार्थं चिन्ता, बहुतसी रैयतकी हिफाजत रखनेका खयाल।

आधिभोग (सं० पु०) आधिर्बन्धकद्रव्यस्य भोगः, इ-तत्। बन्धक-द्रव्यका भोग, रेहनको चीजका काममें लाना। आधिर्मनोव्यथाया भोगः। २ मनो-व्यथाका अनुभवरूप भोग, दिली तक्रलीफका उठाना।

आधिभौति (सं० त्रि०) भूतानि व्याघ्रसर्पादीन्यधि-कृत्य जातम्, अधिभूत-ठञ् हिपदवृद्धिः। १ व्याघ्र-सर्पादिजनित, शेर और बगैरहसे मिला हुआ। २ क्षित्यादिसम्भूत, जमीन् वगैरहसे पैदा हुआ। ३ जीवसम्बन्धीय, जानवरके सुतात्मिक। वैद्यकमतमें रुधिर, वीर्य, भोजन एवं विहारके विकारसे उत्पन्न व्याधिको आधिभौतिक ही कहते हैं।

आधिभौतिक, (सं० त्रि०) आधिभौति एव स्वार्थं क। आधिभौति देखो।

आधिमन्यव (सं० पु०) अधिमन्यवे हितम्, अण्। ज्वरका सन्ताप, बुखारकी जलन।

आधिस्नान (सं० त्रि०) चिन्तासे विशेषीर्ण, फिक्रसे मुरझाया हुआ।

आधिरथि (सं० पु०) अधिरथः धृतराष्ट्र-सारथिः तस्यायम्, इञ्। सूतपुत्र कर्ण, धृतराष्ट्र-सारथि अधिरथके लड़के।

आधिराज्य (सं० स्त्री०) अधिराजस्य भावः कर्म वा थ्यञ्। आधिपत्य, सरदारो, ताजवरी।

आधिवेदनिक (सं० स्त्री०) अधिवेदनाय अधिक-विवाहाय हितम् ठक्, तत्र काले दत्तं ठञ् वा। द्वितीय विवाहके समय प्रथम स्त्रीके सन्तोषार्थं दिया जानेवाला धन, जो दोलत दूसरी शादीके वक्त पहली औरतको दी जाती हो।

आधिश्यमी (सं० स्त्री०) शमीमेद, किसी किच्छकी फली या छेमो।

आधिस्तेन (सं० पु०) आधिर्गुप्ताधेर्भोगात् स्तेन इव। गोपनमें गच्छित धन बलपूर्वक भोग करनेवाला, जो आदमी जोरावरीसे छिपाकर रेहन रखी हुई चीजको काममें लाता हो।

आधी (वै० स्त्री०) चिन्ता, अभिलाष, शोचना, खयाल, खाद्दिश, फिक्र। (हिं०) भाषा देखो।

आधीकरण (सं० स्त्री०) अनाधेः आधेः करणम्, आधि-चि-क-लुट्। १ ऋण लेनेको किसी वस्तुका बन्धक रखना, कर्ज पानेके लिये कोई चीज वगैरह रखनेका काम।

आधीकृत (सं० त्रि०) आधि-चि-क-कृत। बन्धक रखा हुआ, जो रेहन कर दिया गया हो।

आधीकृत्य (सं० अव्य०) बन्धक रखकर, रेहन करके।

आधीत (वै० त्रि०) १ विचारा हुआ, जो खयालमें लाया गया हो। (स्त्री०) २ विचारका प्रयोजन वा विषय, इरादा या उद्देश्य की हुई बात।

आधीन (हिं०) अधीन देखो।

आधीनता (हिं०) अधीनता देखो।

आधीयमान (सं० त्रि०) बन्धक रखा जानेवाला, जो रेहन किया जाता हो।

आधीयमानचित्त (सं० त्रि०) मनको लगा देनेवाला, जो दिलको किसी बातपर झुका देता हो।

आधीरात (हिं० स्त्री०) अधिरात्रि, रातके बारह बजनेका वक्त।

आधुत (सं० त्रि०) आ-धु-कृत। १ चालित, हटाया हुआ। २ ईषत् कम्पित, जो कुछ हिल गया हो।

आधुनिक (सं० त्रि०) अधुना भवम्, ठक्। सम्प्रति-जात, अर्वाचीन, अप्राचीन, नया, हालमें पैदा होनेवाला।

आधूत, आधूत देखो।

आधूर्य (सं० स्त्री०) निर्बलता, कमजोरी।

आधुत (सं० त्रि०) सम्मिलित, प्रोत्साहित, समाया हुआ, जो सहारा पा चुका हो।

आधुष्ट (सं० त्रि०) निवारित, विजित, जो रोक या जीत लिया गया हो।

आधृष्टि (सं० स्त्री०) आ-धृष भावे क्तिन् । १ परि-
भव, पराजय, शिकस्त, हार । २ आक्रमणकार्य,
हमला मारनेका काम ।

आधेक (हिं० वि०) अर्धके समान, आधेके बराबर,
जो आधेसे ज्यादा न हो ।

आधेनव (सं० स्त्री०) गोकुल अभाव, गायोंकी अदम-
मौजूदगी ।

आधेय (सं० स्त्री०) आधीयते, आ-धिङ् कर्मणि यत् ।
१ उत्पाद्य, बनाया या किया जानेवाला । २ बन्धक
रखा जानेवाला, जिसे रेहन किया जाये । ३ अमानत
रखा जानेवाला, जिसे धरोहड़के तौरपर रखा जाये ।
४ रखा हुआ, जो जगह पा चुका हो । ५ दिया
जानेवाला, जो दे डाला गया हो । (स्त्री०) भावे
यत् । ६ आधान, रखनेका काम । ७ गुणविशेष ।
इसका स्वभाव बदल और उसमें अन्य गुण लगा दिया
जाता है । ८ जलाकर रक्तवर्ण किया हुआ घटादि,
जो घड़ा जलाकर सुख बना दिया जाता हो ।

“आधेययाक्रियाजय सोऽसत्प्रकृतिगुणः ।” (व्याकरणकारिका)

(पु०) ८ विधिक्रमसे स्थापनीय वृद्धि । १० अधि-
करणमें अभिनिवेशनीय द्रव्य, सहारा पकड़नेवाली
चीज ।

आधोरण (सं० पु०) आ-धोर गतिचातुर्ये लुप । हस्ती
चलानेमें निपुण हस्तिपक, होशियार महावत ।

आधमात (सं० त्रि०) आ-धमा-क्त । १ शब्दित,
बजाया हुआ, जो आवाज दे रहा हो । २ दग्ध,
जला हुआ । ३ वातदोष-जात उदरस्फौतता-सम्पादक
रोगयुक्त, फूला हुआ । (स्त्री०) भावे क्त । ४ आध्मात,
सूजन । ५ शब्द, आवाज । ६ अग्निसंयोग, आगकी
चपेट । (पु०) ७ वायुरोगभेद, एक बीमारी ।
इसमें पेट फूलता और बोला करता है । ८ समर,
लड़ाई ।

आधमान (सं० पु०) आ-धमा आधारे ल्युट् । १ वात-
व्याधि विशेष, एक बीमारी । (स्त्री०) भावे लुट् ।
२ उदरस्फौतता, पेटका फूलना । साटोप एवं अति
उग्र रोगसे पेट फूलनेको आधमान कहते हैं । यह रोग
घोर घोर वातके निरोधसे उत्पन्न होता है । आधमानमें

पहले लङ्घन, पीछे दीपन एवं पाचन तथा फलवर्ति-
क्रिया, वस्तिकर्म और शोधन करना चाहिये । (सुश्रुत)
३ फूंक, हवाका भरना । ४ दर्प, विकल्यन, शेखी,
डोंग । ५ धौकनी ।

आध्मानो (सं० स्त्री०) आ-ध्मा करणे लुट् डीप् ।
नलिका नामक वणिग्द्रव्य, अम्बारी । यह खुशबूदार
होती है ।

आध्मापन (सं० स्त्री०) आ-ध्मा-णिच् करणे ल्युट्,
णिच् लोपः । १ शब्दनिष्पादन, आवाजका निकालना ।
२ शरीरमें विद्यमान वाणादिके उद्धारका उपाय विशेष,
जिसमें चुमे हुये तीर वगैरह निकालनेकी एक
तरकीब ।

आध्यक्ष्य (सं० स्त्री०) अध्यक्षस्य भावः, पञ्च ।
अध्यक्षता, एहतिमाम, निगहबानी ।

आध्यक्षि—स्थान विशेष, किसी जगहका नाम ।

आध्या (सं० स्त्री०) आ-ध्मै भावे घञ् । १ चिन्तन,
चिन्ता, फिक्रमन्दी, फिक्र । २ औत्सुक्यहेतु स्मरण,
अफसोसके साथ यादगारी ।

आध्यात्मिक (सं० त्रि०) आत्मानं मनः शरीरादि-
कमधिष्ठित्य भावः, ठञ् । १ स्त्रीय, अपना, खास अपने
मुतासिफ । २ ऐश्वरी, परमात्मासे सम्बन्ध रखनेवाला ।
३ आत्मसम्बन्धीय, रुहानी पाक-साफ । (स्त्री०)
आध्यात्मिकी ।

आध्यान (सं० स्त्री०) आ-ध्मै-लुपट् । १ चिन्ता,
फिक्र । २ उत्कण्ठापूर्वक स्मरण, अफसोसके साथ
यादगारी ।

आध्यापक (सं० पु०) अध्यापक एव, स्वर्ये अण् । अध्या-
पक, गुरु, उस्ताद, सुरशद, पढ़ाने या सिखानेवाला ।

आध्यायिक (सं० त्रि०) अधीयतेऽध्याया वेदस्तम-
धीते, ठञ् । १ अधीतवेद, जो वेद पढ़े हो । २ अध्या-
यनशील, पढ़ने-लिखनेवाला । (स्त्री०) आध्यायिकी ।

आध्यासिक (सं० त्रि०) अध्यासेन कल्पितम्, ठक् ।
अयथार्थ, झूठा, माना हुआ । वेदान्तमतसे अध्यास
द्वारा अयथार्थ वस्तुमें यथार्थज्ञान आध्यासिक कहाता
है, जैसे—शुक्तिमें रजतादिकी कल्पना और पर-
ब्रह्ममें जगत्का आरोप ।

आध्र (सं० पु०) आ-धृ-क। १ आधार, सहारा।
(त्रि०) २ निर्बल, कमजोर, गरीब।

आध्वनिक (सं० त्रि०) अध्वनि कुशलम्, ठक्। पथमें
कुशल, पथका विषय भली भांति समझनेवाला,
राहगीर, जो मुसाफिरीका हाल अच्छीतरह
जानता हो। (स्त्री०) आध्वनिकी।

आध्वरायण (सं० त्रि०) आध्वरो यज्ञाभिन्नस्तस्य
गोत्रापत्यम्, नडादि फक्। आध्वर वा अच्छीतरह
यज्ञविषय समझनेवालेका पुत्र या कन्यारूप अपत्य,
आध्वरके लड़के औलाद।

आध्वरिक (सं० पु०) अध्वरस्य व्याख्यानो ग्रन्थः,
ठक्। १ अध्वरके व्याख्यानका ग्रन्थ। अध्वरं यज्ञं
वेत्ति तत्प्रतिपादकग्रन्थमधीते वा। २ अध्वर-प्रति-
पादक ग्रन्थका अध्ययनकर्ता। (त्रि०) ३ सोमयज्ञ-
सम्बन्धीय।

आध्वर्यव (सं० त्रि०) अध्वर्युर्गैर्जुर्वेदविद इदम्, अध्वर्यु-
अज्। १ अध्वर्यु-सम्बन्धीय। (स्त्री०) २ अध्वर्यु पुरो-
हितका कर्मादि।

आन (सं० पु०) आनिति जीवत्यनेन, आ-अन करणे
क्लिप् आन् प्राणवायुः ततः अदूरभवादौ अण्।
सुवक्तादिभ्योऽण्। पा ४।१।७८। १ अन्तर्मुखश्वास, सुंहेके
भीतरकी सांस। २ जीवनसाधन शरीर मध्यस्थित
प्राणवायुका नासिका द्वारा वह्निर्निःसारण-रूप
उच्छ्वास। ३ वह्निर्मुखश्वास। ४ सुख, नासिका, सुंहे,
नाक। ५ श्वास, श्वसित, सांस लेनेका काम।

(हिं० स्त्री०) ६ सीमा, हृद। ७ शपथ, कस्म।
८ दोहायी। ९ अन्दाज़, तरीक, ठङ्ग। १० चण,
लमहा। ११ बनावट, ठसक। १२ लज्जा, शर्म।
१३ भय, खौफ़। १४ विचार, लिहाज़। १५ प्रतिज्ञा,
अहद। १६ हठ, जिद। (वि०) १७ अन्य, दूसरा।

आनक (सं० पु०) आनयति सोत्साहात् करोति,
अन्-णिच्-ण्वुल्। १ पटह, नक्कारा। २ भेरी, ढोल।
३ मृदङ्ग, ढोलक। ४ शब्दयुक्त मेघ, गरजनेवाला
बादल। 'आनकः पटहे मेघं ध्वनन्मेघवदङ्गयोः।' (हेम)
(त्रि०) ५ उत्साहक, हौसलेबखूश।

आनकदुन्दुभि (सं० पु०) आनकः उत्साहकः दुन्दुभिः

देववाद्यविशेषो यस्मै, बहुव्री०। १ वसुदेव। कृष्णके
जन्म होनेपर देवताओंके साधुवादपूर्वक वाद्य बजानेसे
वसुदेवका यह नाम पड़ा है। (हरिवंश)

आनकदुन्दुभी (सं० स्त्री०) वृहत् पटह, बड़ा
नक्कारा।

आनकस्थलक (सं० त्रि०) आनकस्थल्यं भवः, अदूर-
देशादौ वुज्। धूमादिभ्यः। पा ४।१।१९०। आनकस्थलीके
निकटस्थ, आनकस्थलीके पास।

आनकस्थली (सं० स्त्री०) आनकप्रधाना स्थली,
शाक० तत्। आनकस्थली नामक एक जनपद,
किसी मुल्कका नाम। (पा ४।१।१९०)

आनकामनि (सं० त्रि०) कर्णादि० फिज्। आनकके
निकटस्थ, जो आनकसे दूर न हो। यह शब्द जन-
पदादिका विशेषण है।

आनक्य, वाणक्य देखो।

आनडुह (सं० त्रि०) अनडुह इदम्, अण्। १ वृष-
सम्बन्धीय, बैलका। यह शब्द गोमय किंवा चर्म
मांसादिका विशेषण है। (स्त्री०) अनडुही।
(स्त्री०) २ तीर्थविशेष। अनडुहतीर्थ सद्यपर्वतके
निकट विद्यमान है। हरिवंशके ८५वें अध्यायमें इसका
नामोल्लेख मिलता है। कृष्ण और बलराम इस तीर्थमें
घूमने गये थे।

आनडुहक (सं० त्रि०) अनडुहा कृतम्, संज्ञायां कुला-
लादिभ्यो वुज्। (पा ४।१।१९८) वृषसम्बन्धीय, बैलका।
यह शब्द गोमय, चर्म, मांसादिका विशेषण है।

आनडुहायन (सं० त्रि०) अनडुहो गोत्रापत्यं अखादि०
फज्। आनडुह-जात, आनडुहसे पैदा होनेवाला।
आनडुहके पुत्र या कन्या रूप अपत्य।

आनडुह्य (सं० पु०) अनडुहो गोत्रापत्यम्, गर्गादि०
थज्। अनडुत् नामक मुनिके गोत्रापत्य।

आनडुह्यायनि (सं० त्रि०) चतुरर्थ्यां कर्णादि फिज्।
आनडुह्यके निकटस्थ देशादि।

आनत (सं० त्रि०) आ-नम-क्त। १ अधोमुख, विनय-
हेतु नञीभूत, पतित, खूब झुका हुआ। (पु०) २ जिन-
देव विशेष। कल्पभवनमें यह एक वैमानिक नामक
देवता माने गये हैं।

आन-तान (सं० स्त्री०) १ जटपटांग, अण्डबण्ड, इधर-उधर। २ मर्यादा, आबरू। ३ हठ, जिद।

आनति (सं० स्त्री०) आनमति नस्त्रीभवत्यनया, आनम करणे क्तिन्। आनुगत्य जन्य सन्तोष, अधो-मुखी भाव, नम्रता, झुकाव।

आनादयत् (सं० त्रि०) बजवानेवाला, जो आवाज निकला रहा हो।

आनद्व (सं० त्रि०) आनद्व-क्त। १ बद्ध, ग्रथित, बंधा या गुंथा हुआ। (स्त्री०) २ वेशभूषादि, पहनाव। ३ चमड़े द्वारा बद्धमुख वाद्यादि, चमड़ेसे मढ़े हुये मुँहका बाजा। इसके मध्य बायां, तबला, ढोलक, पखावज आदि नृत्यगीतमें काम देता है, सकीर्तनमें खुद बजता है। ठक्का, ढोल, नकारा, तासा, दमामा प्रभृति वाद्य अन्नप्राशन विवाहादिमें व्यवहृत होता है। युद्धकालमें भी डब्बा, ढोल, तासा और दमामा बजाया जाता है। खच्छली, डमरू, गोपीयन्त्र, तम्बूर, हुडक प्रभृति आनद्व यन्त्र आस्य हैं।

आनद्ववस्तिता (सं० स्त्री०) मूलसङ्ग, हवसुलबौल, पेशाबका बन्धेज।

आनन (सं० स्त्री०) अनित्यनेन भक्षणपानादि हेतु-त्वात्, अन्न करणे लुपट्। सुख, सुह। “तदानं चत्-सुरभिं चित्तिभरः।” (रघुवंश ३३) २ समस्त मस्तक, चेहरा। “कविद्विगिताननौ।” (रघुवंश १४१)

आनन-फानन (अ०-क्रि०-वि०) फौरन, जल्द, अति-शीघ्र, झटपट, बातकी बातमें।

आनना ((हिं० क्रि०) आनयन करना, लिवालाना।

आननाज (सं० स्त्री०) आनन-कमल, कमल-जैसा सुख।

आनन्तर्य (सं० स्त्री०) अनन्तरमेव, स्वार्थे ण्यच्।

१ अव्यवहित परिणाम, तसलसुल-नजदीक। अनन्तरस्य भावः। २ अव्यवधान, अनन्तरता, फुराबत, नजदीकी।

आनन्त्य (सं० त्रि०) नास्ति अन्तः शेषो यस्य स एव, स्वार्थे ण्य। १ अनन्त, असीम, अविनाशी, लाज्जवाल, वैदद। अनन्तस्य भावः, ण्यच्। २ सीमाशून्यत्व, बेपायानी, हदका न रहना। ३ नाशदिराहित्य, चिरावस्थाति, हयात-जाविदानी, बका, कभी मिट न सकनेवाली हालत।

आनन्द (सं० पुं०) आनन्द-घञ्। १ हर्ष, सुख, आह्लाद, खुशी, आराम। २ विष्णु। ३ विष्णुके एक गण। ४ शिव। ५ बलराम। ६ सूत्र-संग्रहीता-बुद्धशाक्यमुनिके उत्साही अनुचर, प्रियशिष्य और भतीजिका नाम। ७ साठ संवत्सरके मध्य आनन्द नामक वर्ष विशेष। ज्योतिषके अनुसार इस संवत्सरमें शस्यकी खूब उत्पत्ति होती, किन्तु मूल्य वृद्धिरहती है। घृत एवं तैलका मूल्य समान रहता है। इसमें प्रजा हंसी-खुशी अपने दिन काटता है। (स्त्री०) ८ मद्य, शराब। ९ सम्पद। १० राजजम्बुद्वीप।

आनन्दक (सं० त्रि०) हर्षित करनेवाला, जो खुश कर देता हो।

आनन्दकर, आनन्दक देखो।

आनन्दकानन (सं० स्त्री०) आनन्दानि आनन्दयुक्तानि काननानि गृहाणि यत्र, बहुव्री०; यद्वा आनन्दजनकं काननमिव। अविमुक्त काशीक्षेत्र। काशीके सकल ही गृह आनन्दयुक्त हैं। फिर काशीवासियोंके मनमें भी सर्वदा आनन्द बना रहता है, इसीसे काशीको आनन्दकानन कहते हैं। काशीखण्डके २६वें अध्यायमें आनन्दकाननका विवरण दिया है। काशी देखो।

आनन्दकृष्ण वसु—कलकत्तेके एक प्रधान विद्वान्। सन् १८२२ ई०को कलकत्तेमें अपने मातामह सर राजा राधाकान्तदेव बहादुरके घर इन्होंने जन्म लिया था। इनके पिता मदनमोहन वसु कायस्थोंमें सुख्य कुलीन रहे। कुछ दिन घरमें पढ़ने बाद इन्होंने भूतपूर्व हिन्दू-कालेजमें (वर्तमान प्रेसिडेन्सी कालेज) नाम लिखाया था। वहां क्रमागत सात वत्सर छात्रोंका शीर्षस्थान दबा यह प्रधान वृत्ति पाते रहे। शेष परीक्षामें आनन्दकृष्णको सिवा कानूनके अन्य सकल विषयपर सर्वोच्च पद मिला। भारतके बड़े लाट प्रथम लार्ड हार्डिजने टावुनहालमें जो पुरस्कार बांटा था, उसमें शारीरिक अस्वस्थताके कारण इनका जाना बन न पड़ा। इसीसे स्वस्थ होनेपर आनन्दकृष्णको उन्होंने हिन्दू कालेजमें सभा लगा प्राप्य पुरस्कार दिया था। दीर्घत्वकी योग्यतासे बड़े लाटने सर राजा राधाकान्तदेव बहादुरको भी अभिनन्दित किया।

आनन्दकृष्णने सुप्रसिद्ध विद्यासागरको अंगरेजी पढ़ायी थी। फिर अक्षयकुमारदत्त इनसे साहित्य और अक्षयशास्त्र सीखते रहे। इन्होंने अक्षयकुमारको अक्षयकीर्ति 'उपासक-सम्प्रदाय' बनानेमें भी यथेष्ट साहाय्य दिया। सुधी अयुक्त नगेन्द्रनाथ घोषने कहा है,—“इस देशमें साधारणतः जैसे होता, वैसे ही आनन्दकृष्ण द्वारा उपकार पहुँचते भी कोई मानता न था।”

राय हेमचन्द्रकर बहादुरके अनुरोधसे इन्होंने 'गंजिकी रिपोर्ट' लिखी रही। सरकारने उसी रिपोर्टपर हेमचन्द्रकी बड़ी प्रशंसा की। हेमचन्द्र कहा करते थे,—“आनन्दकृष्ण ही राजकार्यमें हमारे साफल्यके अन्यतम कारण हैं।”

इलवर्टविल वित्तकमें राजा राजेन्द्रनारायण देवके स्वाक्षरित सकल पत्र इन्होंने लिखे थे। वह पत्र पढ़ पार्लिमेंटके सभ्य केवल सर डो० एम० माकफरलेन ही नहीं, क्षणजन्मा मिष्टर ग्लाडस्टोन, बड़े लाट लार्ड रिपन और भारतवन्धु मिष्टर ब्राडलाने भी बड़ी प्रशंसा की। मिष्टर ब्राडलाने अपने पत्रमें इस रचनाकी सुदीर्घ समालोचना निकाली थी। कांग्रेस-बन्धु मिष्टर ह्यूम और सुप्रसिद्ध डाक्टर विभारिज दोनों आनन्दकृष्णसे घरमें आकर मिलते रहे। डाक्टर विभारिजने नन्दकुमारके मुकद्दमेपर अपना प्रसिद्ध पुस्तक बनाते समय इनसे कयी बार अनेक उपदेश लिये थे। आनन्दकृष्ण सिवा संस्कृत, बंगला, अंगरेजी, फारसी और उर्दूके श्रीक (यूनानी), लेटिन एवं हिब्रू (यहूदी) भाषाओंमें भी व्युत्पन्न रहे।

मातामहके 'शब्दकल्पद्रुम' की रचनामें इन्होंने यथेष्ट साहाय्य दिया। विदेशीय विद्वज्जनसमाजको राजा सर राधाकान्त देवकी ओरसे उस समय पत्रादि आनन्दकृष्ण ही लिखते थे। यह बङ्गालके एक विस्तृत इतिहास और बंगला वैज्ञानिक शब्दाभिधानका संशोधन हो गया है। हिन्दी विश्वकोषके प्रधान सम्पादक अयुक्त नगेन्द्रनाथ वसु जिस समय बंगला विश्वकोष खोलते, उस समय आनन्दकृष्ण 'कर्म', 'गीता' आदि शब्दोंके प्रमाण निबन्ध लिख

भाषा और भावका आदर्श देखाते थे। नगेन्द्र बाबू अपने मुँहसे इनकी शतशः प्रशंसा करते और गुरुके समान आदरणीय समझते हैं। सन् १८८७ ई० की १४वीं सितम्बरको सबेरे गीतापाठके उपरान्त रोगयातनाविहीन अवस्थामें सहसा आनन्दकृष्णका प्राणवियोग हुआ।

आनन्दगिरि—शङ्कराचार्यके अनुशिष्य। इन्होंने शङ्कर-दिग्विजय नामक पुस्तक बनाया, जिसमें शङ्कराचार्यका चरित उतारा है। सिवा इसके उपनिषद्भाष्य प्रभृतिकी टीका और वाक्यवृत्तिविवरण भी लिखा है। यह अति सुप्रसिद्ध व्यक्ति रहे। सन् ई०के ८म शताब्द इनका जन्म हुआ था।

आनन्दघन—दिल्लीके एक प्राचीन कवि। रागकल्पद्रुम और सुन्दरीतिलकमें इनकी कविता विद्यमान है। शिवसिंहने इनकी रचना सूर्य-जैसी प्रकाशमान बतायी है। इनका कोई पूर्ण पुस्तक न रहते भी पाँच सौ छोटी-छोटी पुस्तिकायें देखनेमें आती हैं। महादेव प्रसादके बनाये साहित्यभूषणको देखते हैं यह जातिके कायस्थ और (सन् १७१८—१७४८ ई०) मुहम्मदशाहके मुन्शी रहे। मरनेसे पहले तुन्दावनवास करने लगे थे। नादिरशाहके मथुरापर अधिकार करते ही इनकी मृत्यु हुई। सम्भवतः कोकसार इन्हींका बनाया है। कभी-कभी यह अपनेको घन-आनन्द भी लिख देते थे।

आनन्दज्ञान, आनन्दगिरि देखो।

आनन्दज्ञानगिरि, आनन्दगिरि देखो।

आनन्दचन्द्र—संस्कृत बालबोधक एवं प्रायश्चित्तोपसारके रचयिता।

आनन्दज (सं० त्रि०) आनन्दात् जायते, आनन्द-जन-ड, ५-तत्। आनन्दजात, खुशीसे निकला हुआ। यह शब्द अशुपातादिका विशेषण है।

आनन्दता (सं० स्त्री०) प्रसन्नता, खुशी, मजेदारी। आनन्दतौर्य—माण्डूकोपनिषद्भाष्य, गोताभाष्य, गोता-तात्पर्यनिर्णय, महाभारततात्पर्यनिर्णय, तैत्तिरीयोप-निषद्भाष्य आदिके रचयिता।

आनन्दतृतीया (सं० स्त्री०) व्रतविशेष। वेश्या,

आवण अथवा अग्रहायण मासके शुक्लपक्षकी छतीयाको यह होता है। सावित्रीके शापसे लक्ष्मीने गौरीको छोड़ दिया था। पौछे महादेवके उपदेशसे उन्होंने व्रतकर लक्ष्मी पायी। (भविष्योत्तरपु०)

आनन्दयु (सं० पु०) आ-टु नदि भावे अयुच्। द्वितोऽयुच्। पा ३३८२। प्रीति, हर्ष, प्रमोद, आनन्द, आह्लाद, खुशी।

आनन्दद, आनन्द देखी।

आनन्ददत्त (सं० पु०) आनन्दो दत्तो येन, बहुव्री०।

१ आनन्द देनेवाला उपस्थ। २ मित्र।

आनन्ददेव—१ वल्लभदेवके पिता। कुमारसम्भवकी टीका प्रभृति पुस्तक इन्होंने लिखे थे। २ अग्निप्रायश्चित्त-रचयिता।

आनन्दधर—विद्याधरके शिष्य। इन्होंने माधवानल-कामकन्दला कथा लिखी थी।

आनन्दन (सं० स्त्री०) आनन्दयत्यनेन, आ-नदि-णिच् करणे लुट्। १ गमनागमन कालमें बन्धुके आरोग्य स्वागतादिका प्रश्न, आने-जानेके वक्तु अजीजकी तन्दुरुस्ती और खुशामदी वगैरहका सवाल। २ गमना-गमनके समय आलिङ्गन, आनेजानेके वक्तुकी हमागोशी। भावे लुट्। ३ सुखजनन, आरामदिहो। ४ सभ्यता, शायस्तगी। ५ आनन्ददायक द्रव्य, खुश करनेवाली चीज।

आनन्दनाथ मल्लिकार्जुनयोगीन्द्र—नृसिंहके शिष्य और योगिनीहृदयदीपिका तथा श्रीविद्यापद्धति (सन् १५१४ ई०) नामक पुस्तकके रचयिता।

आनन्दपट (सं० पु०) आनन्दजनकं पटम्, शाक० तत्। नवोदावस्त्र, नूतन बालिकाके विवाहका हरिद्राक्त वस्त्र, दूधहनकी पोशाक।

आनन्दपुर—गुजरातके अन्तर्गत एक प्राचीन नगर। वर्तमान नाम वड़नगर है। नग्ननगर देखी।

आनन्दपूर्ण (सं० पु०) आनन्देन पूर्णस्तृप्तः। आनन्द-मय परमात्मा, परब्रह्म।

आनन्दपूर्ण सुनीन्द्र—अभयानन्दके शिष्य। इनका उपाधि विद्यासागर रहा। निम्नलिखित पुस्तक इनके बनायी हैं,—सुरेश्वरके त्रहदारण्यकवार्तिककी व्याख-

कल्पलतिका नाच्ची टीका, पञ्चपादिकाटीका, ब्रह्मसिद्धि-व्याख्यारत्न, वेदान्तविद्यासागर, महाभारतकी व्याख्या-रत्नावली और समन्वयसूत्रवृत्ति।

आनन्दप्रभव (सं० पु०) आनन्दः प्रभवः अपादानं यस्य, बहुव्री०। १ रेतः, तुत्फा। २ बौर्य, मनी। ३ भूतादिप्रपञ्च, जानवर। श्रुतिके मतमें आनन्द-रूप परब्रह्मसे जन्म लेने, आनन्दरूप परब्रह्मद्वारा जीते रहने और अन्तकाल आनन्दरूप परब्रह्ममें मिल जाने कारण प्राणिसमूहकी आनन्दप्रभव कहते हैं।

आनन्दबधायी (हिं० स्त्री०) सुखका वाद्य, खुशीका बाजा।

आनन्दबोधाचार्य—प्रमाणरत्नमाला-रचयिता।

आनन्दबोधेन्द्र—एक प्राचीन टीकाकार।

आनन्दभुज (सं० पु०) आनन्दं भुङ्क्ते, आनन्द-भुज-क्विप्। परब्रह्मके साक्षात्कारसे आनन्द लेनेवाला, प्राप्त, तत्त्वज्ञानविशारद।

आनन्दभैरव (सं० पु०) १ तन्त्रोक्त शिवस्मृतिविशेष। २ रसौषधविशेष। यह तीन प्रकारका होता है। प्रथम—हिङ्गुल, विष, व्योष, मरिच, टङ्गण एवं जाती-कोषको बराबर-बराबर चूर्ण कर जम्बीरके रसमें घोंट डाले और रत्ती-रत्तीकी गोली बना ले। इसके सेवनसे शीताङ्गसन्निपात शान्त हो जाता है। द्वितीय—हिङ्गुल, विष, व्योष, टङ्गण और गन्धकका चूर्ण बराबर-बराबर डाल जम्बीरके रसमें दो प्रहर घोंटने और रत्ती-रत्तीकी गोली बनानेसे तैयार होता है। यह ज्वरातिसारके लिये महीषध है। तृतीय—वङ्गभस्म, मृत स्वर्ण और रसको चौद्रमें घोंटनेसे बनता है। दो गुञ्जा नित्य खानेसे प्रमेह दूर होता है।

(रसेन्द्रसारसंग्रह)

आनन्दभैरवी (सं० स्त्री०) १ रागविशेष। इसमें शङ्कराभरण और भैरव दोनो राग मिले रहते हैं। २ आनन्दभैरव-देवकी पत्नी। रुद्रयामलमें इनकी प्रश्नका आनन्दभैरवने उत्तर दिया है। ३ वटी विशेष, दवाकी गोली। पिप्पली, जातीकोष (जावत्री), विष, त्रिकटुक (सींठ, मिर्च, पौपल), गन्धक, सोहागा, मृत-शुल्बक, घटूरका वीज एवं हिङ्गुल बराबर ले

दिनभर विजयाके द्रवमें घोंटे और चणकके समान
वटी बनाये। इसे खाकर अनुवरीके मूलका कषाय
पीनेसे शीताङ्ग सन्निपात दूर होता है। (रसेन्द्रसारसंग्रह)
आनन्दमत्ता, आनन्दसम्बोद्धिता देखो।

आनन्दमय (सं० पु०) आनन्दः प्रचुरोऽस्य, आनन्द
प्राप्त्यर्थं मयट्। १ प्रचुरानन्दस्वरूप परमात्मा। (त्रि०)
२ आनन्दसमूहसम्पन्न, खुशीसे भरा हुआ। (स्त्री०)
डोप। आनन्दमयी। तारामूर्तिविशेष।

आनन्दमयकोष (सं० पु०) आनन्दमयस्य परमात्मनः
कोष इवावरकः। १ वेदान्तमतसे—पञ्चकोषके मध्य
पञ्चम कोष, निहायत अन्दरूनी रूढ़। २ अविद्या-
स्वरूप कारणशरीर। ३ सुषुप्ति, गहरी नींद। ४ सत्त्व-
प्रधानज्ञान, सच्ची समझ।

आनन्दयितव्य (सं० स्त्री०) आनन्दका विषय, सुखका
इन्द्रियार्थ, मजेकी चीज।

आनन्दयिता (सं० पु०) आनन्द देनेवाला पुरुष,
जो आदमी खुश कर देता हो।

आनन्दराज गजपति—मन्द्राजप्रान्तस्थ विजयनगरके
राजा। सन् ई०के १८वें शताब्दान्त इन्होंने मन्द्राजका
समस्त प्रान्त बङ्गालकी अंगरेज-सरकारको सौंप
दिया था।

आनन्दराम बड़ुया—आसामके एक प्रसिद्ध विद्वान् और
राजकर्मचारी। सन् ई०के १८वें शताब्दीके मध्यभागमें
एक बृहत् संस्कृत-अंगरेजी अभिधान, बड़ु संस्कृत
कोषग्रन्थ और अलङ्कारग्रन्थ प्रकाश किया। अंगरेज-
सरकारने इन्हींको एक बृहत् प्रादेशिक अभिधान
बनानेका भार दिया था।

आनन्दराव पंवार—एक सुप्रसिद्ध सेनाध्यक्ष। सन्
१७४८ ई०को इन्होंने जागीरमें बाजीराव पेशवासे
घार प्रान्त पाया और वहां अपना वंश बढ़ाया था।
इनके स्वर्गवासी होनेपर संधिया और होलकरने कई
बार घारको लूटा-मारा, किन्तु आनन्दराव द्वितीयकी
पत्नी और रामचन्द्र पंवारकी धर्ममाता मोती बाईकी
होशियारीसे नष्टभ्रष्ट न हुआ।

आनन्दलहरी (सं० स्त्री०) १ शङ्कराचार्यका बनाया
हुआ स्तोत्र। इसमें पार्वती-अर्चनके आनन्दकी स्तुति

उठती है। २ वाद्ययन्त्र विशेष, एक बाजा। छोटी
ढोलक-जैसी खोखली लकड़ीका एक मुंह तड़ तथा
दूसरा बड़ा होता और चमड़ेसे मढ़ा रहता है। फिर
दूसरे छोटे बरतनके मुंह पर भी चमड़ा चढ़ाया जाता
है। इन दोनों यन्त्रोंके चमड़ेमें बीचो बीच छेद बना
तांत लगा देते हैं। ढोलकको बायीं कोखमें लटका
और बरतनको बायें हाथमें पकड़ छिपटीसे तांत
बजाते हैं। यह कितनी ही गोपीयन्त्र-जैसी होती है।

आनन्दवन—रामतापनी उपनिषत्की टीका 'श्रीराम-
काशिका'के रचयिता। यह एक प्रसिद्ध परमहंस परि-
व्राजक रहे। २ सुखोद्यानस्वरूप काशीक्षेत्र, बनारस।
आनन्दवर्धन (सं० त्रि०) १ आनन्दको बढ़ानेवाला,
जो खुशीको दोचन्द कर देता हो। (पु०) २ एक
संस्कृतवित् पण्डित, इनका बनाया 'धन्यालोचन'
नामक ग्रन्थ विद्यमान है।

आनन्दवल्ली (सं० स्त्री०) तैत्तिरीय उपनिषत्का द्वितीय
विभाग।

आनन्दव्रत (सं० पु०) व्रतविशेष। इसमें चैत्रादि
चार मास व्रत और पोछे वस्त्रयुक्त तिल किंवा हिरण्य
दान करना पड़ता है।

आनन्दशर्मा (सं० पु०) 'अवस्थादर्पण' नामक स्मार्त
ग्रन्थके रचयिता। इनके पिताका नाम रामशर्मा था।

आनन्दसम्भव (सं० पु०) आनन्दस्य ब्रह्मानन्दस्य
सम्भवः प्रकाशः, इत्यत्। १ तत्त्वज्ञान-द्वारा ब्रह्मा-
नन्दका प्रकाश। (त्रि०) आनन्दः सम्भवोऽस्य।
२ भूतादि, प्राणी, खुशी रखनेवाला।

आनन्दसम्बोद्धिता (सं० स्त्री०) नायिका विशेष।
आनन्दमें भली भांति मोहित हो जानेवाली प्रौढ़ा
नायिकाको आनन्दसम्बोद्धिता कहते हैं।

आनन्दा (सं० स्त्री०) आनन्दयति, आनन्द-विच्-
षच्, षिच् लोपः। १ विजया, भांग। २ वार्षिकी
पुण्यवृत्त, वेला। ३ आराम-शीतला। इसकी पत्नी
खुशबूदार होती है। ४ सुहृदार्थी, सुयानी।

आनन्दार्णव (सं० पु०) आनन्दः पर्यव इव असीम-
त्वात्। १ ब्रह्मानन्द। २ परमेश्वर। ३ ज्योतिष-
प्रसिद्ध योग विशेष।

आनन्दाश्रम (सं० पु०) एक प्राचीन टीकाकार।

आनन्दि (सं० पु०) आ-नन्द-इन्। १ हर्ष, खुशी।

२ कौतुक, तामाशा। ३ महन्त नृसिंहके एक शिष्य।

इन्होंने प्रबोधानन्द-सरस्वतीके विरचित चैतन्य-चरितामृत नामक ग्रन्थकी टीका लिखी है।

आनन्दि (सं० त्रि०) आ-नदि-क्त। १ हर्षयुक्त, खुश। २ हृष्ट, आसुदा। ३ सुखी, आराम लेनेवाला।

आ-नदि-णिच्-क्त। ४ अभिनन्दित, खुश किया हुआ।

आनन्दिन् (सं० त्रि०) आ-नदि-णिनि। १ आनन्द-युक्त, खुश। आ-नदि-णिच्-णिनि। २ आनन्दजनक, खुश कर देनेवाला। (पु०) आनन्दी। (स्त्री०) आनन्दिनी।

आनन्दी (सं० स्त्री०) आनन्दयति, आ-नदि-णिच्-अच्, गौरादि० डीप्। वृद्धविशेष, एक पेड़। आनन्दा देखो। (त्रि०) आनन्दिन् देखो।

आनन्दोदयरस (सं० पु०) रसभेद। पारद, गन्धक, लौह, अभ्रक एवं विष समांश, मरिच अष्ट और सोहागा चतुर्गुण डाल भृङ्गराजरस, अम्ल तथा दाड़िमकी सात भावना देनेसे यह बनता है। सन्ध्याको गुच्छाद्वय पर्णखण्डमें खानेसे पाण्डुरोगको दूर करता है।

(मेषज्यरावली)

आनपत्य (सं० स्त्री०) असन्तानता, लावब्दी, अपुत्रता।

आनवान (हिं० स्त्री०) चमक-दमक, सजधज, तड़क भड़क, रङ्गरूप, ठाटबाट, अदा-अन्दाज, तर्ज-तरीक।

आनभिन्नात (सं० पु०) अनभिन्नातके एक वंशजका नाम।

आनम (सं० पु०) नति, चापका प्रसारण, झुकाव, क्रमानुका फेलाव।

आनमन (सं० स्त्री०) आनम्यते आयत्तीक्रियते ऽनेन, आ-नम करणे लुगट्। १ सन्तोषके निमित्त पञ्चाङ्गमनादि नम्रता, दूसरेको खुश करनेके लिये पीछे चलने वगै-रहका झुकाव। भावे ल्युट्। २ सम्यक् नति, खासा झुकाव। आ-नम-णिच्-ल्युट्। ३ नम्रतासम्पादक व्यापार, नरमीका काम।

आनमित (सं० त्रि०) आ-नम-णिच्-क्त इट्, णिच् लोपः। आवर्जित, आनतीकृत, आकुलीकृत, झुका-हुआ, झुकाया गया।

आनम्य (सं० त्रि०) आ-नम-णिच्-यत्। १ नम्र बनाने योग्य, झुका देने काबिल। (अव्य०) आ-नम-ल्यप्। नत हो या नमस्कार करके, नरमीके साथ, अदब बजाकर। इसी अर्थमें 'आनत्य' शब्द भी आता है।

आनय (सं० पु०) आ-नी भावे अच्। १ देशसे देशान्तरको ले जानेका कार्य, लवायी, लेते आनेका काम। आनीयते वेदाध्ययनाय अन्न, आधारे ऽच्। २ उपनयनसंस्कार, जनेवू देनेका काम।

आनयन (सं० स्त्री०) आनय देखो।

आनयितव्य (सं० त्रि०) आनयनयोग्य, ले आने काबिल।

आनर (अं० स्त्री० = Honour.) आदर, अर्हण, इज्जत, अदब, आबरू।

आनरेबिल (अं० वि० = Honourable) आदरणीय, इज्जतदार। बड़े तथा छोटे लाटकी कौन्सिलके सेन्सर, हाईकोर्टके जज और कुछ निर्वाचित व्यक्ति ही आनरेबिल कहते हैं।

आनरेरी (अं० वि० = Honorary.) १ अवैतनिक, अलाभकर, इग्तियाजी, ताजीमी, मुफ्तमें काम करनेवाला। जो लोग आदरके लिये काम करते और वेतनादि कुछ नहीं लेते, वही आनरेरी कहते हैं—जैसे आनरेरी मजिस्ट्रेट, अवैतनिक विचारपति और आनरेरी सेक्रेटरी, अवैतनिक मन्त्री। २ विना लाभ किया जानेवाला, जो मुफ्तमें हो।

आनर्त (सं० पु०) आ-नृत्यते ऽत्र, आधारे घञ्। १ नृत्यशाला, नाचघर। २ युद्ध, लड़ायी। भावे घञ्। ३ नर्तन, नाच। ४ सूर्यवंशीय एक राजा। हरिवंशके १०वें अध्यायमें इनका विशेष विवरण दिया गया है। ४ आनर्तराजकृत जनपदविशेष। यह देश गुजरातमें अवस्थित है। वर्तमान नाम काठियावाड़ है। आनर्तकी राजधानी हारका या कुण्डली रही। काठियावाड़ देखो। ५ आनर्तदेशवासी जन, आनर्त

मुल्कका वाशिन्दा । ६ अनर्तदेशीय राजा ।
७ चन्द्रवंशीय एक राजा । हरिवंशके ३२वें अध्यायमें
लिखा है,—अनर्तके पितामहका वर्षकेतु, पिताका
विभुराज और पुत्रका नाम सुकुमार था ।
(क्ली०) कर्तारि अच् । ८ जल, पानी । तरङ्ग, नृत्य
जैसा देख पड़नेसे जलको अनर्त कहते हैं । (त्रि०)
९ नर्तक, रक्कासा, नचनिया, नचवैया, नाचनेवाला ।

अनर्तक (सं० त्रि०) आनृत्यति, आ-नृत्-ण्वल् ।
१ नर्तक, नचनिया । अनर्तदेशे भवम्, वुज् ।
२ अनर्तदेशजात, अनर्त मुल्कका पैदा ।
अनर्तनगरी (सं० स्त्री०) अनर्त देशकी राजधानी ।
अनर्तपुर (सं० क्ली०) अनर्त देशस्य प्रधान पुरम् ।
हारवती पुरी ।

अनर्तीय (सं० त्रि०) अनर्तदेशे भवः, वृद्धत्वाच् ।
१ अनर्त देशजात । (पु०) २ व्यक्तिविशेष, किसी
शखसका नाम ।

अनर्थक्य (सं० क्ली०) अनर्थकस्य भावः, अच् ।
दत्तताका अभाव, अयोग्यता, नाकादलियत, बद अस-
लूबी । २ निष्प्रयोजनत्व, बेमुनफातो, बेसुदो ।

अनलवि (सं० पु०) व्यक्ति विशेष, किसी आदमीका
नाम ।

अनव (सं० त्रि०) अनिति आनुः प्राणौ तस्येदम्,
अन-उण्-अण् । १ मानवीय, इन्सानो, मानखायो ।
२ दयालु, परोपकारशील, खैरखाह, भला चाहने-
वाला । (स्त्री०) आनवी ।

अनव्य (सं० क्ली०) आनोर्नरस्येदम्, यत् । नर-
सम्बन्धीय तन्त्रोक्त दो प्रकारका मल ।

अनस (वै० त्रि०) अनसः शकटस्य पितुर्वा इदम्,
अण् । १ शकटसम्बन्धीय, गाड़ीसे तालुक रखनेवाला ।
२ पिढसम्बन्धीय, पिदरी, बापसे सम्बन्ध रखनेवाला ।

आना (हिं० पु०) १ आणक, गण्डा, रुपयेका १६वां
हिस्सा । चार पैसे या बारह पाईका एक आना
होता है । २ किसी वस्तुका षोडशश, किसी चीजका
१६वां हिस्सा । ३ आगमन, आमद । (क्रि०)
४ आगमन करना, आगे बढ़ना, किसीकी ओर कदम
रखना । ५ गुजरना वाके, होना, जीतना । ६ प्रत्या

वर्तन करना, लौटना । ७ आरम्भ होना, लगना ।
८ फलपुष्प प्रदान करना, फलना-फूलना । ९ उत्पन्न
होना, निकलना । १० परिपक्व होना, पक जाना ।
११ खलित होना, ढीला पड़ना । १२ चढ़ना, छा
जाना । १३ देख पड़ना, नमूदार होना । १४ पड़-
जाना, दाखिल होना । १५ विकना, फ़रोख्त होना ।
१६ तैयार होना, कमर कसना । १७ मिलना, हाथ
लगना ।

आनाकानी (हिं० स्त्री०) १ अनाकर्णन, सुनी-
अनसुनी, कान न देनेका काम । २ बहानेबाजी, टाल
मटोल । ३ गुप्तवार्ता, कानाफूसी ।

आनाखु (सं० पु०) इच्छुतुल्या, कास ।

आनाथ (सं० क्ली०) अनाथस्य भावः, अच् । स्वामि-
शून्यत्व, पतिराहित्य, यतीमी, मालिक न रह की
हालत ।

आनानास (*Ananassa sativa*) अनन्नास, एक पेड़ ।
इसका पत्ता किनारे-किनारे तिरछे तौरपर कटा और
फलपर आंख-जैसा दाग रहता है । फलके ऊपरसे
डाल निकलती है । कच्चा अनन्नास हरा और पक्का
खूब पीला होता है । फलके भीतर छोटा-छोटा
बीज रहता है । पक्का अनन्नास बकला अच्छीतरह छील
डालनेसे खानेमें अच्छा लगता है । आजकल भारत-
वर्षके अनेक स्थानमें उम्दा अनन्नास उत्पन्न होता है ।
कोयी-कोयी कहता, कि यह दक्षिण अमेरिकाके ब्राजिल
प्रान्तका वृक्ष है । सन् १५८४ ई०को पोर्तुगीज इसे
दक्षिण-अमेरिकासे भारतवर्ष लाये थे । किन्तु अबुल-
फज़लने आईन-अकबरीमें अनन्नासका उल्लेख किया
है । इसका बड़ेसे बड़ा फल कोई १४ सेर तक वजनमें
बैठता है । शीहट्ट (सिलहट्ट)का अनन्नास अति
सुमिष्ट और सुखादु होता है । बङ्गालमें कितनी ही
जगह वृक्षके नीचे इसे लगाया करते हैं । किन्तु
अधिक छाया इसके लिये उपयोगी नहीं ठहरती ।
मट्टीको पहले अच्छीतरह बना—जुनाके तर जमीनमें
अनन्नास लगाना चाहिये । अधिक छायामें इसे लगाना
मना है । वर्षाकालमें इसका फल परिपक्व होता है ।
अनन्नासके सब्जोका रेशा बारीक, साफ़ और बोभको

बरदाश्त करनेवाला है। पत्ते को १८ दिन पानीमें डुबोकर रखनेसे बहुत सुन्दर रेशा उतरता है। हार पिरोनेके लिये भारतमें उसकी आवश्यकता रहती है। रेशा रेशमके स्थानमें व्यवहृत होता और जन या रुईमें भी मिलाया जाता है। वह सीने और पिरोनेके बड़े काम आता है। उससे चटाई और कागज बनाते हैं। फिलिपाईन द्वीपपुञ्जमें अनन्नासके रेशेसे कपड़ा तैयार किया जाता है। रङ्ग-पुरके चमार उससे जूता गांठते हैं। भारतवासो पत्ते के नये रसको कृमिनाशक और रक्तशोधक समझते हैं। उसे चूनेके पानीमें मिलाकर पिलानेसे अन्त्रका कृमि मर जाता है। परिपक्व फलका विशुद्ध रस पेटकी कुड़कुड़ी तथा पाण्डुरोगकी दूर करता, पेशाब लाता, पसीना बहाता और ठण्डा होता है। पत्तेका नया रस पीनेसे हिचकी नहीं आती। कच्चा अनन्नास खानेसे गर्भपात होता है। पत्तेके श्वेत अंशका ताजा रस चीनीके साथ मिलाकर पीनेसे रचक है। इसका फल भी रक्तशोधक है। मङ्गेके पास मलवर-तट और ब्रह्म-देशमें अनन्नास बहुत उत्पन्न होता है। इसका तेल मिठाईमें स्वाद बढ़ानेको डाल देते हैं। अनन्नास देखो।

आनाम्य (सं० त्रि०) आ-नम् कर्मणि ण्यत्, अनिट्-कत्वात् ङ्ङाभावः। नमस्कार्य, सलाम किये जाने काबिल, जिसके लिये भुकना पड़े।

आनाय (सं० पु०) आनीयते मत्स्याद्यनेन, आ-नी-करणे घञ्। जावनामयः। पा ३।३।२४। मत्स्यादि पकड़नेके निमित्त शणसूत्रादि निर्मित जाल, मछली मारनेका दाम।

आनायिन् (सं० त्रि०) आनायति, आ-नी-णिनि। १ एक स्थानसे किसीको स्थानान्तरमें ले जानेवाला, जो किसीको एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचा देता हो। (पु०) आनायी। (स्त्री०) आनायिनी।

आनायी (सं० पु०) आनायी जालस्यास्ति, आनाय-इनि। जालिक, मछुवा, धीवर, माहीगौर।

आनाय्य (सं० पु०) आनाय्यते गार्हपत्यादानीय-संक्रियतेऽसौ, आ-नी-ण्यत्, निपा० आयादेशः।

आनायीऽनिबे। पा ३।३।२०। १ वेदप्रसिद्ध दक्षिणाग्निविशेष,

यह गार्हपत्यसे लेकर दक्षिणकी ओर रखा जाता है। (त्रि०) २ समीप उपस्थित किया जानेवाला, जो नजदीक लाया जाता हो। (अव्य०) ३ मंगाकर, बुलवाके, इकट्ठाकरके।

आनाह (सं० पु०) आ-नह-घञ्। १ दैर्घ्य, लम्बाई। प्रधानतः वस्त्रके दैर्घ्यको ही आनाह कहते हैं। आन-ह्यते अपसरणप्रतिरोधेन वध्यते विष्मूत्राद्यनेन, आ-नह-करणे घञ्। २ विष्मूत्ररोधक व्याधि, कोष्ठबन्ध, पाखाना और पेशाब रोकनेवाली बीमारी। इसका लक्षण इस प्रकार है—जब आमाशयमें आम एकबार भर जाता या क्रमशः बार बार बढ़ता, तब वायु कुपित हो इसे उत्पन्न करता है। यह स्वयं पैदा नहीं होता। **आनाहिक** (सं० पु०) आनाहे आनाहरोगप्रतीकारे विहितः, ठक्। १ आनाह रोगके प्रतीकारका विधि, पाखाना और पेशाब बन्द होनेकी बीमारी दूर करनेका तरीका। (त्रि०) २ आनाह रोगमें व्यवहृत होनेवाला।

आनि, आन देखो।

आनिचेय (सं० त्रि०) आ समन्तान्निचीयते, आ-नि-चि-कर्मणि यत्। समन्तात् सञ्चनीय, चारो ओर इकट्ठा किया जानेवाला।

अनिरुद्ध (सं० त्रि०) अनिरुद्धस्यापत्यम्, वृष्टित्वात् अण्। अनिरुद्धसे उत्पन्न। उष्मापति अनिरुद्धके पुत्र या कन्यारूप सन्तानका यह शब्द विशेषण है।

आनिर्हंत (वै० त्रि०) अनिर्हंत एव, स्वार्थे अण्। १ पूर्ण रीतिमें संसारसे निकला हुआ, जो बिलकुल दुनियासे बाहर चला गया हो। (पु०) २ अविनश्यर प्रकृति, लाज्वाला कुंदरत। ३ देवहृदय तुल्य देवता विशेष। (स्त्री०) आनिर्हंती।

आनिल (सं० त्रि०) अनिलस्येदम्, अनिल-अण्। १ वायु सम्बन्धीय, हवायी। (पु०) अनिली देवताऽस्य। २ वायुदेवताके लिये हवनोप्युक्तादि। ३ हनूमान्। ४ भीम। वायुसे उत्पन्न होने कारण हनूमान् और भीमसेन आनिल कहते हैं।

आनिला (सं० पु०) जहाजकी लहरकी कुण्डी।

आनिलि (सं० पु०) अनिलस्यापत्यम्, अनिल-अण्,

आद्यत्रो वृद्धिः । १ भीम । २ हनूमान् । पाण्डुराजकी स्त्री कुन्ती और अञ्जनाके साथ इन्द्रके सहवास करनेसे हनूमान् और भीमको आनिलि कहते हैं ।

आनीजानी (हिं० वि०) आनिजानेवाली, उठलू, गमनागमनशील, जो आकर चली जाती हो । यह शब्द केवल स्त्रीलिङ्गमें ही लगता है ।

आनीत (सं० त्रि०) आ-नी कर्मणि क्त । गृहीत, लाया, मंगाया या पाया हुआ ।

आनीति (सं० स्त्री०) आ-नी-क्तिन् । आनयन, एक जगहसे दूसरी जगह किसीको ले जानेका काम ।

आनीय (सं० अर्थ०) ग्रहण करके, लाके ।

आनील (सं० पु०) आ ईषदर्थे नीलः, प्रादि० समा० । १ ईषत् नील वर्ण, हलका आसमानी रङ्ग । २ नील-वर्ण घोटक, आसमानी रङ्गका घोड़ा । (त्रि०) आ स-मन्तात् नीलम् । ३ नीलवर्णयुक्त, आसमानी । “तदीय-मानीलमुखलनदयम् ।” (रघुवंश ३८)

१० नीली घोड़ी ।

आनु (सं० त्रि०) अनिति जीवति, अन-उष्, णित्वा-दुपधावृद्धिः । प्राणी, जानदार, जो जीता हो ।

आनुकल्पिक (सं० त्रि०) अनुकल्पं वेत्ति तद्वोधक ग्रन्थमधीते वा, उक्थादि ठक् । १ अनुकल्पाभिज्ञ, अनुकल्पबोधक ग्रन्थ पढ़नेवाला । अनुकल्पेन प्राप्तम् । २ अनुकल्प द्वारा प्राप्त । अनुकल्पाय हितम् । ३ अनुकल्प-साधन, जिससे अनुकल्प बने ।

आनुकूलिक (सं० त्रि०) अनुकूलं वर्तते, ठक् । उपकारक, आनुकूल्य द्वारा वर्तमान, मेहरबान्, सुवाफिक । (स्त्री०) आनुकूलिकी ।

आनुकूल्य (सं० स्त्री०) अनुकूलस्य भावः कर्म वा, थञ् । १ अनुकूलाचरण, मेहरबानी । २ उपयोगिता, सुवाफकत ।

आनुकृष्ट, अनुकृष्ट देखो ।

आनुगङ्गा (सं० स्त्री०) अनुगङ्गं भवम्, परिमुखादि० अत्र । परिमुखादिभ्य एवेत्यते । (सिद्धान्तशौमुदी) गङ्गाका पश्चाद्भव ।

आनुगतिक (सं० त्रि०) अनु-गम भावे क्त तेन निर्वृत्तम्, अच्युतादि० ठक् । अनुगमन द्वारा निर्वृत्तम्, अच्युतादि० ठक् ।

निर्वृत्त, पश्चाद्गमन द्वारा जात, पैरीकारी या फरमांवर-दारीसे तालुक रखनेवाला ।

आनुगत्य (सं० स्त्री०) अनुगतस्य भावः कर्म वा, थञ् । १ अनुगमनरूप आचरण, पश्चाद्गतका धर्म, पैरीकारी, फरमांवरदारी । २ परिचय, परिज्ञान, आशनायी, जानपड़चान ।

आनुगादिक (सं० त्रि०) अनुगदति, अनु-गद-णिनि, स्तार्थे ठक् । पश्चात् कथक, पीछे बोलनेवाला ।

आनुगुणिक (सं० त्रि०) अनुगुणं अनुकूलं अनुरूपं वा अधीते वेद वा, अनुगुण-ठक् । वसनादिभाषक । पा ४।१।६३ । अनुकूलज्ञ, स्वरूपज्ञ, अनुकूलबोधक ग्रन्थ पढ़नेवाला ।

आनुगुण्य (सं० स्त्री०) अनुगुणस्य भावः कर्म वा, थञ् । अनुकूलाचरण, सहायता, मेहरबानी, मदद ।

आनुग्रामिक (सं० त्रि०) अनुग्रामं भवम्, ठक् । जानपद, ग्रामके पश्चात् जात, देहकानी, देहाती, जङ्गली । (स्त्री०) आनुग्रामिकी ।

आनुचारक (सं० स्त्री०) अनुचरति पश्चाद्गच्छति, अनु-चर-खुल्-अण् । अनुचारको मृत्युः तस्य धर्म्यम् । अण् नङिषादिभ्यः । पा ४।४।४८ । अनुचरका धर्मयुक्त आचरण, मृत्युका कर्तव्य कर्म, नौकरका फर्ज ।

आनुजावर (सं० त्रि०) मरणादनन्तर-प्रकाशित, मृत्युत्तर-जात, बापकी वफातके बाद पैदा हुआ, जो मरी हुयी माके पेटसे निकला हों । (स्त्री०) आनुजावरी ।

आनुति (सं० पु०-स्त्री०) आनुतस्यापत्यम्, इञ् । इजः प्राक् । पा २।४।६० । १ अनुत नामक सुनिका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य । (स्त्री०) आ-नु-क्तिन् । २ सस्यक् स्तवका कार्य, अच्छीतरह तारीफ करनेका काम ।

आनुतिल्य (सं० त्रि०) अनुतिलं भवम्, परिमुखादि० अत्र । तिलके पश्चात् जात, तिलसे पोछे पैदा हुआ ।

आनुदृष्टिनेय (सं० त्रि०) अनुदृष्टो भव अनु-दृष्टि-ठक् इड् च । शब्दादिभ्यः । पा ४।१।१२३ । कल्याणादीनामिज् च । पा ४।१।१२६ । अनुकूल दृष्टिजात, नेकचलरीसे निकला हुआ ।

आनुनाश (सं० त्रि०) अनुनाशं विनाशस्य पश्चाद्भवम्, सङ्गादि० ण्य । नाशके पश्चात् जात, बरबादीके बाद पैदा हुआ । (स्त्री०) आनुनाशी ।

आनुनासिक्य (सं० स्त्री०) अनुनासिकस्य भावः, घञ् । “प्रतिआनुनासिक्याः पाणिनीयाः ।” (परिभाष्यदुःखर) अनुनासिकका धर्म, नासिकाके साथ उच्चार्यत्व, हफ गुन्नाका काम, नाकके जरिये तलफ्फुज करनेकी हालत, गुन्नापन ।

आनुपथ्य (सं० त्रि०) अनुपथं भवम्, परिमुखादि० ञ्य । पथके पश्चात् होनेवाला, जो राहके पीछे पैदा हो ।

आनुपदिक (सं० त्रि०) अनुपदं धावति, अनुपद-ठक् । १ पश्चात् धावमान, पीछे दौड़नेवाला । पदस्य वेदपाठविशेषस्य पश्चात् अनुपदं तद्वेति तद्वोधक-अन्य-मधीते वा, उक्त्यादि० ठक् । २ पदग्रन्थ पढ़नेवाला । ३ पदाभिन्न, पदकी समझनेवाला ।

आनुपद्य (सं० त्रि०) अनुपदं भवम्, परिमुखादि० ञ्य । पदके पश्चात् जात, पदसे पीछे होनेवाला ।

आनुपूर्व (सं० स्त्री०) आनुपूर्वी देखो ।

आनुपूर्वी (सं० स्त्री०) पूर्वमनुक्रमस्य अनुपूर्वं तस्य भावः अञ् आनुपूर्व्यम्, ततो वा ङीप् यलोपः । १ परिपाटी, मूलावधिक्रम, तरतीब, सिलसिला, ठङ्ग । २ स्मृतिके अनुसार—जातिका सरल क्रम, कौमका सीधा सिलसिला । ३ न्यायमतसे—क्रमसे निकाला हुआ फल, जो नतीजा सिलसिलेसे हासिल हो । (हिं० वि०) ४ परिपाटीयुक्त, सिलसिलेवार ।

आनुपूर्वण, आनुपूर्वा देखो ।

आनुपूर्व्य (सं० स्त्री०) आनुपूर्वी देखो ।

आनुपूर्व्या (सं० अव्य०) क्रमानुसार, सिलसिलेसे, ठङ्गमें ।

आनुमत (सं० त्रि०) अनुज्ञासम्बन्धीय, रजामन्दीसे ताल्लुक रखनेवाला । (स्त्री०) आनुमती ।

आनुमानिक (सं० त्रि०) अनुमानादागतम्, ठक् ।

१ अनुमान-प्राप्त, युक्तिसिद्ध, हवालेसे साबित, सुन्तज ।

२ व्याप्तिविशिष्ट लिङ्गज्ञान हेतु अवगत, नतीजेसे ताल्लुक रखनेवाला । धूमदहन हेतु वाङ्मका अनुमान

होता है । अतएव स्वीय व्याप्तिविशिष्ट धूमहेतु अवगत होने कारण पर्वतादि-स्थित वज्रि आनुमानिक है । (स्त्री०) ३ अनुमान, अन्दाज, फर्ज, क्यास । ४ सांख्यमतसिद्ध प्रधान ।

आनुमानिकत्व (सं० स्त्री०) युक्तिसिद्ध होनेकी स्थिति, सुन्तजी ।

आनुमाष्य (सं० त्रि०) अनुमाषं भवम्, परिमुखादि० ञ्य । माषके पश्चात् जात, उड़दसे पीछे पैदा होनेवाला ।

आनुयव्य (सं० त्रि०) अनुयवं भवम्, परिमुखादि० ञ्य । यवके पश्चात् जात, यवसे पीछे उपजनेवाला ।

आनुय्य (सं० त्रि०) अनुयूपं भवम्, परिमुखादि० ञ्य । यूपके पश्चात् जात, यूपसे पीछे होनेवाला ।

आनुरक्ति (सं० स्त्री०) आ-नुर-रञ्ज-क्तिन् । १ अनु-राग, जोश, सुहृद्भवत । २ आनुगत्य, पैरौकारो, फर-मांबरदारो ।

आनुरोहतायन (सं० पु०) अनुरोहतका पुत्र किंवा पौत्र ।

आनुरोहति (सं० पु०-स्त्री०) अनुरोहतोऽपत्यम्, वाङ्मादि० इञ् । अनुरोहतका अपत्य ।

आनुरूप्य (सं० स्त्री०) अनुरूपस्य भावः, अञ् । १ सादृश्य, शबाहत, बराबरी । २ औचित्य, मुना-सिवत ।

आनुरोहतायन (सं० त्रि०) अनुरोहतसे उत्पन्न ।

आनुरोहति (सं० पु०-स्त्री०) अनुरोहतोऽपत्यम्, वाङ्मादि० इञ् । अनुरोहत मुनिके पुत्रपौत्रादि ।

आनुलेपिक (सं० त्रि०) अनुलेपिकायाः स्त्रिया धर्म्यम्, अण् । अनुलेपिकाके धर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो तेल लगानेवाली औरतके कामका हो ।

आनुलोमन (सं० त्रि०) अनुलोमकारी, अपनेसे छोटी जातिके साथ शादी करनेवाला

आनुलोमिक (सं० त्रि०) अनुलोमं वर्तते, अनुलोम-ठक् । १ यथाक्रम कार्यकारी, क्रमानुयायी, तरतीबके साथ काम करनेवाला, बाकायदा, इन्तिजामी । २ अनु-कुल, रजामन्द, मेहरबान ।

आनुलोम्य (सं० स्त्री०) अनुलोमस्य भावः कर्म वा,

अञ् । शुश्रूषणम्राज्ञादिभ्यः कर्त्तृषि च । पा ३।१।२४ । १ अनु-
क्रम, तरतीब । २ अनुकूलता, मेहरबानी । ३ सारथ्य,
सादगी, सिधायी । ४ नियमित परम्परा, कायदेकी
चाल । ५ किसीको ठीक जगह पहुँचा देनेका काम ।
(त्रि०) ६ प्रकृत रूपसे उत्पन्न, कुदरती कायदेसे
पैदा हुआ । (स्त्री०) आनुलोभ्यी ।

आनुवंश्य (सं० त्रि०) अनुवंशभवम्, परिसुखादि०
अत्र । बांसके पेड़से पीछे होनेवाला ।

आनुवासनिक (सं० स्त्री०) अनुवासन-वस्ति, पिचकारी
या नल । यह तैलादि स्नेहोपकरण अथवा क्वाथादि
भरकर लगाया और गोपुच्छाकार सुवर्णादि या हाथीके
दांतसे नेत्र-युक्त बनाया जाता है । इसकी लम्बाई
का परिमाण वयोभेदसे अनेक प्रकारका है—१ वर्षसे
६ वर्ष ६ अङ्गुल, ८ वर्ष ८ अङ्गुल और १६ वर्ष वालेके
लिये १२ अङ्गुल रहता है । इसका परिधि यथाक्रम
कनिष्ठिका, अनामिका और मध्यमाङ्गुलि-परिमित
होता है । इसमें प्रत्येक क्रमशः डेढ़, ठाई और
साढ़े तीन अङ्गुल वस्तिके मुखमें रखना चाहिये ।
वस्तिद्वारमें प्रवेशनीय नेत्र मुख यथाक्रम मथूर, कङ्क
एवं श्येन पुच्छकी मध्य नाड़ो-जैसा स्थूल बनाये,
जिससे द्रव्यका स्थापन और परिमाण पूर्वोक्त
वयोनुरूप यथाक्रम रोगीके दो चार तथा आठ
अञ्जलि दिया जा सके । इसीतरह उत्तरात्तर वयोनु-
रूप नेत्रका परिमाण बढ़ा लेते हैं ।

दूसरा प्रकार यह है—पचीस वर्षसे अधिक उम्रवाले
रोगीके लिये नेत्र दैर्घ्य द्वादश अङ्गुल और मूल
परिणाह अङ्गुष्ठोदर जैसा रखे । गृध्रिनी-पत्र-
नाडिकावत् अग्रभाग और बदरास्थिवत् वा कलाय
परिमित छिद्रवर्त्म बनता है । वस्तिके बन्धनार्थ नेत्र-
मूलमें कर्णिकाद्वय लगाते हैं । द्रव्यमान रोगीके
द्वादश अञ्जलि रहे । इस कल्पमें माधुक तैल
ग्राह्य है । (सुश्रुत) वलि देखो ।

आनुविधित्सा (सं० स्त्री०) अनु-वि-धा-सन्-अ-टाप्,
नञ्-तत् । कृतघ्नता, प्रत्युपकार करनेकी अनिच्छा,
एहसान-फ़रामोशी, नमकहरामी, नाशकगुजारी ।

आनुवेश (सं० त्रि०) अनुवेशं वसति, अत्र । पल्लो-

भावात् । पा ३।३।४२ । निजगृहके पार्श्वस्थित भवनमें रहने-
वाला, जो अपने घरके कोनेमें बसा हो । किसीके घरमें
हो रहनेवाले पड़ोसीको आनुवेश कहते हैं ।

आनुशान्तिः (सं० त्रि०) अनुशान्तिकस्येदम्, अनु-
शान्तिक-अञ्, शिपदवृत्तिः । अनुशान्तिपादि सम्बन्धीय ।
अनुशान्तिपादि देखो ।

आनुशासनिष्ठा (सं० त्रि०) अनुशासनाय हितम्,
अनुशासन-ठञ् । १ शासनके पक्षमें हितकर, शासन-
सम्बन्धीय, तात्सीमसे तात्तुक, रखनेवाला । (पु०)
२ महाभारतका एक पर्व । इस पर्वमें मनुष्यके कर्तव्य
कर्मपर कितना हो उपदेश लिखा है । (स्त्री०)
आनुशासिनी ।

आनुश्रविक (सं० स्त्री०) गुरुपाठादनुश्रूयते अनुश्रवो
वेदस्तत्र विहितम्, ठक् । वेदविहित, श्रुतिपर आश्रित,
बड़ोंके सुझये सुना जानेवाला । (स्त्री०) आनु-
श्रविकी ।

आनुश्रविक, आनुश्रविक देखो ।

आनुषक, आनुषक देखो ।

आनुषङ्गिक (सं० त्रि०) अनुषङ्गादागतम्, ठक् ।
१ सङ्गच्छित, हमराही, लागू । २ अनुरूप, हमनिस-
बत, बराबरका । ३ अपरिहार्य, नाशुजौर, आ जाने-
वाला । ४ व्याकरणानुसार—अप्रघात, अघ्राहार्य, अभूत-
हनीय, महज्रफ़, नाकिन्, जिसके एक हिस्सा न रहे ।
(स्त्री०) आनुषङ्गिकी । अनुषङ्ग देखो ।

आनुषज् (सं० अव्य०) आ-अनु-सञ्ज-घिप् । आनु-
पूर्वी, परिपाटीसे, बिसानागा, सुतवातिर, लगातार ।
आनुषण्ड (सं० त्रि०) अनुषण्डे देशे भवम्, कच्छादि०
अण् । अनुषण्ड देशजात, जो अनुषण्ड मुल्लमें पैदा
हो । (स्त्री०) आनुषण्ठी ।

आनुषण्डक, आनुषण्ड देखो ।

आनुषक (सं० त्रि०) प्रतिपत्तिशील, तरकी देने-
वाला । आनुषकके स्थानमें आनुशुक और आनुसुक
भी लिखते हैं ।

आनुष्टुभ् (सं० त्रि०) अनुष्टुप् छन्दोऽस्य, उत्-
सादि० अञ् । १ अनुष्टुप् छन्दोयुक्त । अनुष्टुभ् इदम्,
अञ् । २ अनुष्टुप्-सम्बन्धीय । (स्त्री०) आनुष्टुभ्य-

अनुष्टुभः । ३ अनुष्टुप् छन्दः । (स्त्री०)

आनुष्टुभी ।

आनुष्टुभ, अनुष्टुप् देखो ।

आनुसाय्य (सं० त्रि०) अनुसायं भवम्, परिसुखादि०
अयं । सन्ध्याके पश्चात् जात, शामके बाद पैदा होने-
वाला ।

आनुसीत्यं (सं० त्रि०) अनुसीतं भवम्, परिसुखादि०
अयं । लाङ्गलके पश्चात् जात, हलके पीछे पैदा होने-
वाला ।

आनुसीयं, आनुसील देखो ।

आनुसूय (सं० त्रि०) अनुसूयया अत्रिपत्न्या दत्तम्, अण् ।
अनुसूया-दत्त, अत्रिपत्नी अनुसूयाका दिया हुआ ।

आनुसूतिनेय (सं० त्रि०) अनुसूतौ भवम्, शुभ्रादि०
ठक् कल्याणादि० इनङ् च । अनुसरण-जात, पश्चाद्-
गमन-जात, पैरोकारीसे पैदा होनेवाला ।

आनुसृष्टिनेय (सं० त्रि०) अनुसृष्टौ भवम्, ठक् इनङ्
च । १ सृष्टिके पश्चाद्जात, खलूकसे पीछे पैदा होने-
वाला । २ दानके पश्चाद् जात, बखूशिग्रसे पीछे
निकलनेवाला ।

आनुहारति (सं० त्रि०) अनुहरति भवम्, वाच्चादि०
इञ् अनुश्रुतिकादित्वाद्विपदहृत्तिः । हरण करने-
वालेसे पश्चाद् उत्पन्न, जो चोरानेवालेसे पीछे पैदा हो ।

आनूक (वै० अर्थ०) विपुल, बहुशः, इफरातसे ।

आनूप (सं० त्रि०) अनूपदेशो भवम्, अनूप-अण् ।
१ अनूपदेश जात, तर सुक्कमें पैदा होनेवाला ।

२ जलबहुल, जलप्राय, शोरबोर, तरबतर, मरतूब,
भीगा । (पु०) ३ मद्भिष, मैस । ४ अनूपदेशवासी

प्राणीमात्र, सुक्क मरतूबका जानवर । ५ सागर
निकटवर्ती गुजरातका अंश, वर्तमान खोखमण्डल ।

६ द्विजलहृत्त, समुन्दर फल । ७ अनन्नासका पेड़ ।

८ भीम जलविशेष, सुक्क मरतूबका पानी । ९ जल,
पानी । (स्त्री०) आनूपी ।

आनूपक (सं० त्रि०) आनूपो जलप्रायदेशस्यो
अनुष्यस्तस्मिन् तत्स्थिते हसिते च वाच्ये वुक् । नृणां
तत्स्थितोऽयं । पा ४।१।२३ । जलप्राय देशमें रहनेवाला,
सुक्कमरतूबका बाशिन्दा ।

अनूपजल (सं० स्त्री०) अनूपदेशस्य जल, सुक्क-
मरतूबका पानी । यह खादु, क्षिग्ध, गुरु एवं पित्त-
हर होता और पामां, कण्डू, वात, कफ तथा ज्वर
उत्पन्न करता है । (राजनिघण्टु)

आनूपजाङ्गलसाधारणमांस (सं० स्त्री०) रुक्, हरिण,
मृग, क्रोड़ वा सारङ्गका मांस, किसी किसके आङ्गका
गोश । यह लघु, खादु, बल्य, वृथ्य और रुच्य
होता है ।

आनूपपक्षिमांस (सं० स्त्री०) सारस, हंस, चक्र-
वाकादिका मांस, पानीमें रहनेवाली चिड़ियाका
गोश । यह शीतल, क्षिग्ध, वात एवं कफको दूर
करनेवाला और गुरु होता है । (राजनिघण्टु)

आनूपभूमि (सं० स्त्री०) सजलभूमि, तरजमौन् ।

आनूपमांस (सं० स्त्री०) जलप्रिय जीवका मांस,
पानीसे सुहृन्वत रखनेवाले जानवरका गोशत । यह
मधुर, क्षिग्ध, गुरु, अग्निमान्द्यकर, कफकर, मांस-
पोषक, अभिष्यन्दि और हित है । (भावप्रकाश)

आनूपवर्ग (सं० पु०) अनूपदेशस्य प्राणीका वर्ग,
सुक्क-मरतूबके जानवरका जख्दीरा । यह पञ्चविध
होता है—कूलचर, झंवर, कोशस्थ, पाद्री और मतृस्थ ।
गंज, गो आदि कूलचर पशु ठहरता, जिसका
मांस वातहर, वृथ्य और मधुर होता है ।
हंस, सारस आदि झंवर बोला जाता, भक्ष्य मांस
रक्त पित्तादिको दूर करता है । शङ्ख आदि
कोशस्थ कहाता; उसका मांस खादु रस एवं पाक-
त्वादि गुणसे युक्त रहता है । कूर्म, कुम्भीरादिका
नाम पाद्री है । (सङ्गत)

आनुष्ट (सं० स्त्री०) आनुष्टयस्य भावः कर्म वा अर्थः ।
ऋणशून्यता, कर्जसे छुटकारा पानेका काम ।

आनुष्ट (सं० त्रि०) अन्तं शीलमस्य, अन्त-ण ।
अन्नादिभ्यो णः । पा ४।१।२२ । सर्वदा मिथ्याका अनुशीलन
करनेवाला, जो हमेशा नारास्तीका मंशक
बढ़ाता हो ।

आनुष्टक (सं० त्रि०) आनुष्टाकीर्ण, भूठीसे भरा
हुआ ।

आनुष्टास, आनुष्टास देखो ।

आन्तर्ग्रंथि (सं० पु०-स्त्री०) अन्तर्ग्रंथापत्यम्, इज्।
दयालुका अपत्य, रहीमकी श्रीलाद।

आन्तर्ग्रंसीय (सं० त्रि०) आन्तर्ग्रंसी भवम्, आन्तर्ग्रं-
सि-इ। गहादिभाष्य। पा ३।१।१२८। दयालुके अपत्यसे
उत्पन्न, जो दयालुकी श्रीलादसे पैदा हो।

आन्तर्ग्रंस्थ (सं० स्त्री०) अन्तर्ग्रंस्थ भावः कर्म वा,
अज्। १ अनिष्ठुरता, अनुकम्पा, नरमी, मेहरबानी,
रहम। (त्रि०) स्वार्थे अज्। २ कारुण्ययुक्त, मेहर-
वान्।

आनि—आनाका बहुवचन। आना देखो।

आनिगांव (हिं० पु०) अन्य ग्राम, दूसरे गांव।

आनेतव्य, आनेय देखो।

आनेता, आनेद देखो।

आनेद (सं० पु०) आ-नी-दच्। आनयनकर्त्ता,
लानेवाला, जो ले आता हो। (स्त्री०) आनेत्री।

आनेय (सं० त्रि०) आनीयते, आ-नी कर्मणि यत्।

“आनेयोऽन्यः चटादिः वैश्वकुलादेरानीतो दक्षिणाग्रियः।” (सिद्धान्तकौमुदी)

एक देशसे देशान्तरको लानेयोग्य, लाया जानेवाला।

आनेवाला (हिं० वि०) अन्य स्थानसे वक्ताके समीप
उपस्थित होनेवाला, जो दूसरी जगहसे बोलनेवालेके
पास जाकर पहुँचता हो।

आनेपुण्य (सं० स्त्री०) अनिपुण्यस्य भावः, अण् उत्तर
पदवृद्धिः। अचातुर्यं, अपाठव, बेसलीकगी, अनाड़ी-
पना।

आनेपुण्य, आनेपुण्य देखो।

आनेश्वर्य (सं० स्त्री०) अनीश्वरस्य भावः, अनीश्वर-
अज्, उत्तरपदवृद्धिः पूर्वपदस्य वा वृद्धिः। १ शक्ति-वा
आधिपत्यका अभाव, ताकत या फजौलतकी अदम-
मौजूदगी। २ ऐश्वर्य विरोधी सांख्यादि मतसिद्ध
बुद्धिका धर्म। धर्म, अधर्म, ज्ञान, अज्ञान, वैराग्य,
अवैराग्य, ऐश्वर्य, अनेश्वर्य, आठ प्रकार बुद्धिका-धर्म
भावरूप होता है। उसमें ज्ञानभिन्न सभी बन्धका
हेतु है।

आन्त (सं० त्रि०) अन-क्त, वा इङ्भावः, उपधा
दीर्घः। रंघामलरसंज्ञासनाम्। पा ३।१।१२८। १ पीड़ित,
सकलीफजदा। २ अमित, बेहद। “आन्तः अमितः।”

(सिद्धान्तकौमुदी ३ निर्गंत, गुजरा इत्यादि। ४ अन्तिम,
आखिरी। (अव्य०) ५ अन्ततक, पूरे तौरपर, बिलकुल।

आन्तर (सं० त्रि०) अन्तर्मध्ये भवम्, अण्। अत्यन्तर,
अभ्यन्तर-जात, बीचसे पैदा होनेवाला।

आन्तरतम्य (सं० स्त्री०) अन्तरतमस्य अत्यन्तसदृशस्य
भावः, अज्। सौसादृश्य, निहायत सुत्तसिल
नातेदारी।

आन्तरप्रपञ्च (सं० पु०) अन्तरस्यासौ प्रपञ्चः विस्तार-
चेति, कर्मधा०। अभ्यन्तरजात आध्यात्मिक हित-
विस्तार, दिलके अन्दर पैदा होनेवाला दुयीका
भगड़ा।

आन्तरागारिक (सं० त्रि०) अन्तरागारस्य धर्म्यम्,
ठक्। अन्तःपुरकी रक्षाके निमित्त नियुक्त पुरुषसे
सम्बन्ध रखनेवाला, जो जनानेकी हिफाजत करनेवाले
शस्त्रसके सुतात्मिक हो।

आन्तराल (सं० त्रि०) अन्तरालं मध्यस्थितिं वेत्ति,
अण्। शरीरके मध्य आत्माकी स्थिति जाननेवाला,
जो जिसके अन्दर रुहका कयाम समझता हो।

आन्तरिक (सं० त्रि०) अन्तरे भवम्, ठक्।
१ अन्तर्गत, अन्दरूनी, भीतरी। २ मानसिक, दिली,
दमागी।

आन्तरिक्ष (सं० त्रि०) अन्तरिक्षे भवम्, अण्।
आकाश-जात, आसमानसे पैदा होनेवाला। (स्त्री०)
२ आकाश, आसमान्।

आन्तरिक्षजल (सं० स्त्री०) आकाश-सलिलं, आस-
मान्का पानी। यह चतुर्विध होता है—धार, कार,
तौषार और हैम। वर्षाभवको धार, वर्षोपलोद्भवको
कार, नीहार-तोयको तौषार और प्रातर्हिमोद्भवको
हैम जल कहते हैं। फिर धार भी द्विविध रहता
है—सामुद्र और गाङ्ग। आखिरमें स्वाति एवं
विशाखापर रवि रहनेसे मेघ जो बारि छोड़ता,
वह गाङ्ग और मार्गशीर्षादि नक्षत्रमें पड़नेवाला
सामुद्र कहाता है। गाङ्ग गुणाब्ध, पदोष, सांडु,
शीतल, रुचिप्रद, कफपित्तघ्न, एवं पाचन; और
सामुद्र शीत, गुंठ तथा कफ-वातकर रहता, जिससे
दोनों प्रकारका जल रसानायके वश भूमिपर गिरनेसे

नाना रसत्वको प्राप्त हो जाता है। दधिलिप्त रौप्य पात्रमें शाब्दीदनपिण्ड डालकर वर्षामें रख देनेपर यदि एक सुद्धर्तमें नहीं बिगड़ता, तो धार जल गाङ्ग कहता है। (राजनिघण्टु)

आन्तरीक्ष, आन्तरि देखो।

आन्तरीपक (सं० त्रि०) अन्तरीपे भवम्, वुज्। अन्तरीप-जात, रासी, जमीनकी गर्दनमें पैदा होने-वाला।

आन्तर्गणिक (सं० त्रि०) अन्तर्गणं भवम्, ठक्। गणमध्य जात, एक गण वा जातिकी भिन्न श्रेणीसे उत्पन्न।

आन्तर्गोहिक (सं० त्रि०) अन्तर्गोहं भवम्, ठक्। गृह-मध्यजात, मकानके अन्दर होनेवाला।

आन्तर्वैश्विक, आन्तर्गोहिक देखो।

आन्तर्य (सं० स्त्री०) अन्तरस्य भावः, थज्। अन्त-वर्तित्व, निहायत सुत्तसिल नातेदारो।

आन्तिका (सं० स्त्री०) अन्तिकेव, अण् अजादि० टाप्। ज्येष्ठा भगिनी, अन्तिका, बड़ी बहन।

आन्ध (सं० स्त्री०) अमत्यनेन, अम-गतौ क्त, उपधा दीर्घः। अन्धिमिदि शसिभ्यः क्तः। उण् ४।१६३। अनुनासिकस्य क्तिष् भूलोकजिति। पा ६।४।१५। १ वायुवाहक नाडीविशेष, हवा निकालनेवाली एक आंत। (त्रि०) अन्धस्येदम्, अण्। २ अन्धसम्बन्धीय, आंतसे ताङ्गुक्, रखनेवाला। (स्त्री०) आन्धी।

आन्धिक (सं० त्रि०) अन्धसम्बन्धीय, आंतसे ताङ्गुक् रखनेवाला।

आन्द (सं० पु०) घृणित मनुष्योंकी एक श्रेणी, गन्दे लोगोंकी एक जात।

आन्दोल (सं० पु०) पुनः पुनः दोलन, झुलावा।

आन्दोलक (सं० पु०) आन्दोलयति, आन्दोल-ण्वल्। १ दोलनकर्ता, झुलानेवाला। २ किसी विषय-की चालना करनेवाला, जो कोई बात उठाता हो।

आन्दोलन (सं० स्त्री०) आन्दोल-भावे क्युट्। १ प्रेक्षण, भोका, पेंग। २ कम्प, कंपकंपी। ३ अनु-सन्धान, खोज। ४ विवैधना, परख।

आन्दोलित (सं० त्रि०) काचित, शिक्वित, भोका खाये हुआ।

आन्धस (सं० पु०) पक्व शाङ्गिका मण्ड, भातका माड़।

आन्धसिक (सं० पु०) अन्धो भक्तं शिल्पमस्य, ठक्। पाचक, नानवायी।

आन्धीगव (सं० स्त्री०) अन्धीगुना तन्नामक मुनिना दृष्टं साम, अण्। तृतीय सवनमें गीय आर्भवपवमान सूक्तगत सूक्त विशेष।

आन्ध्य (सं० स्त्री०) अन्धस्य भावः, थज्। अन्धता, नाबीनायी, अंधलायी।

आन्ध्र (सं० पु०) आ-अन्ध-रण्। १ जनपद विशेष, तामिल और तेलगु मुल्क। (त्रि०) २ आन्ध्रदेश-सम्बन्धीय, तेलगु और तामिल मुल्कसे ताङ्गुक् रखने-वाला। अन्ध्र और अन्ध्रराजवंश देखो।

आन्ध्रदेशपूग (सं० स्त्री०) आन्ध्रदेशका पूग, तेलगु और तामिल मुल्ककी सुपारी। यह पकनेपर मधुर, किञ्चित् अम्ल, तुवर, वातकफघ्न और मुखजाड्यकर होता है। (वैद्यकनिघण्टु)

आन्ध्र (सं० त्रि०) अन्नं लब्ध्वा, ण। अन्नाराणः। पा ४।४।८५। १ सन्तुष्ट, आसुदा, खा चुकनेवाला, जो खानेको पा गया हो। २ अन्न-सम्बन्धीय, अनाजसे ताङ्गुक् रखनेवाला। (स्त्री०) आन्धी।

आन्ध्रतरेय (सं० त्रि०) अन्यतरस्यापत्यम्, ठक्। अन्यतरसे उत्पन्न। (स्त्री०) आन्ध्रतरेयी।

आन्ध्रभाष्य (सं० स्त्री०) अन्धो भावो यस्य अन्यभावः तस्य भावः, थज्। अन्यरूपत्व, दूसरी बनावट।

आन्ध्रयिक (सं० त्रि०) अन्धये प्रशस्तकुले भवम्, ठज्। १ प्रशस्त-कुलजात, खान्दानी, अच्छे घरवाला। २ क्रमानुगत, बाकरीना, ठीक।

आन्ध्रक्य (सं० स्त्री०) अन्धक्येव, अन्धक्यका स्वार्थे थज्। अन्धक्यका शब्दार्थ। “अपरिहृतान्धक्यम्।” (आश्वलायनश्रुतसूत्र) अन्धक्य देखो।

आन्वाहिक (सं० त्रि०) अहनि अहनि अन्वहं तत्र भवम्, ठज्, अनुश्रुतिकादित्वात् द्विपदद्वयः। दैनिक, रोजाना, हर रोज होनेवाला।

आन्वीक्षिकी (सं० स्त्री०) श्रवणादणु ईचा पर्यालोचना सा प्रयोजनमस्याः, ठक्। १ तर्कविद्या, इल्लमन्तिक। 'आन्वीक्षिकी दृष्टनीतिलकविद्यायशास्त्रयोः।' (अमर) २ गौतम-प्रणीत आत्मविद्या। अक्षपादने इसे पांच अध्यायमें पूरा किया है। आदिम सूत्रमें प्रमाण, प्रमेय, संशय, प्रयोजन, दृष्टान्त, अवयव, तर्क, निरर्थक, वाद, जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास, छल, जाति और निग्रहका विषय है। इन्हीं सकल स्थानके तत्त्वज्ञान हेतु मोक्ष मिलता है। आन्वीक्षा शीलमस्याः तस्यै हितं वा, ठक्। ३ दुर्गा।

आन्वीप (सं० स्त्री०) अनुगता अपो यस्मिन्, अनु-अप-ईत्। चान्दस्यसर्गभोग्य ईत्। पा ६।३।८०। अनुकूलत्व, मेहरवानी।

आन्वीपक (सं० त्रि०) आन्वीपं वर्तते, ठक्। अनुकूल, मेहरवान्।

आप (सं० पु०) आप्यते, आप कर्मणि घञ्। १ अष्ट वसुके अन्तर्गत चतुर्थ वसु। आठो वसुके नाम यह हैं,—धव, ध्रुव, सोम, आप, अनिल, अनल, प्रत्यूष, प्रभास। अपां समूहः, अण्। २ जलसमूह, पानीका ढेर। आप्यते सर्वत्र व्याप्यते। ३ आकाश, सब जगह मौजूद रहनेवाला आसमान्। समासान्तमें इस शब्दका अर्थ 'पानेवाला' लगता है। जैसे—दुराप, मुष्किलसे मिलनेवाला। (हिं० सर्व०) ४ स्वयं, खुद। इस अर्थमें यह उत्तम, मध्यम और अन्य तीनों पुरुषके लिये आता है। जैसे—मैं आप कहता हूँ, तुम आप चले जावो, वह आप समझ लेगा। ५ तुम। ६ वह। उपरोक्त दोनों अर्थमें यह आदरसूचक है। ७ परमेश्वर।

आप-आप करना (हिं० त्रि०) आदर देना, इज्जत बढ़ाना, खुशामद देखाना।

आपक (सं० त्रि०) आप-व्याप्तौ खुल्। आपक, पहुँचानेवाला, जो किसीको कोई चीज़ या जगह वगैरह सुझाया करता हो।

आपकर (सं० त्रि०) अपकरे भवम्, अण् अजच्। अपकर-जात, नागवार, बुरा।

आपक (सं० स्त्री०) आ ईषत् पक्कम्, आप-पच्-क्त।

अल्प पक्क द्रव्य, कुछ पक्की ईँडी।

आपक्षिति (सं० पु०) अपक्षितस्यापत्यम्, इज्। अपक्षितका पुत्र। (स्त्री०) अज् टाप्। अपक्षित्या। कौशादिभ्यश्च। पा ४।१।८०। अपक्षितकी कन्या।

आपगा (सं० स्त्री०) अपां समूहः आपस्तेन तस्मिन् वा गच्छति, अप्-अण्-गम-ङ। नदी, दरया।

'नदी सरित् इत्यादि निवगापगाः।' (अमर) आपया देखो।

आपगाजल (सं० स्त्री०) नदीजल, दरयाका पानी। यह दीपन, रुच, वातल, लघु और लेखन होता है।

(मदनपाल)

आपगावारि, आपगाजल देखो।

आपगासलिल, आपगाजल देखो।

आपगीय (सं० पु०) आपगायां गङ्गायां भवः। गङ्गाके पुत्र भीष्म, गाङ्गेय।

आपक्षिक (सं० त्रि०) आपदं चिह्नति छिनत्ति, आपद-चिह्न-अण्, षष्ठी० कलोपः। आपत् उड़ा देनेवाला, जो मुसीबत छोड़ा देता हो।

आपटव (सं० स्त्री०) न सन्ति पटवोऽस्य तस्य भावः। अपाटव, भद्दापन।

आपण (सं० पु०) आपणायते विक्रयार्थं सम्यक् स्तूयते प्रशस्यते द्रव्यमत्र, आपण षष्ठीदरादित्वात् आधारे घ। क्रयविक्रयस्थान, हट्ट, बाजार, दुकान, बेचनेके लिये जिस जगह अपनी-अपनी चीज़की तारीफ़ की जाये।

आपणिक (सं० त्रि०) आपणान्निषद्याया भागतम्, ठक्। १ हट्टागत, बाजारसे आया हुआ, बाजार। आपणस्य धर्म्यम्। २ बाणिज्यसम्बन्धी, सौदागरी, तिजारती। (पु०) आपणस्य विक्रयः राजप्राप्तः। ३ हट्टका राजकर, बाजारकी बुझी। आपणायते विक्रयार्थं द्रव्यं स्तूयति, आप-ण-इकन्। आपिणि-रतिखनिभ्यः। उण् २।४५। ४ वणिक्, सौदागर।

'आपणिको वणिक्।' (उज्ज्वलदत्त)

आपत्, आपद देखो।

आपत (हिं०) आपद देखो।

आपतत् (सं० त्रि०) सन्निकट, आ पहुँचनेवाला, जो पास पहुँच रहा हो। (स्त्री०) आपतन्ती।

आपतन (सं० स्त्री०) आप-पत-भावे लुट्। १ आप-

मन, आमद। २ अवतरण, उतार, होनी। ३ प्राप्ति, पहुंच। ४ ज्ञान, समझ।

आपतायी (हिं० वि०) आपद् उठानेवाला, जो आप्त डाल देता हो।

आपतालिका (सं० स्त्री०) कन्दोविशेष।

आपति (सं० पु०) आ-पत-इत्। १ सततगामी वायु, टूट पड़नेवाली हवा। २ सदागति, चलफिर। (वै० त्रि०) ३ सन्निकष्ट, आ पड़नेवाला, जो झपटा चला आता हो।

आपतिक (सं० पु०) आपतति शीघ्रम्, आ-पत-इकन्। १ श्वेनपत्नी, बाज चिड़िया। (त्रि०) देवायत्त, इत्तिष्माकी, आपड़नेवाला। 'स्वेनदेवायत्तयोश्च सत आपतिकी वृषः।' (उष्णादिकोष)

आपतित (सं० त्रि०) आ-पत-क्त-इट्। १ हठात् आगत, इत्तिष्माकी, जो आ पड़ा हो। २ अवतरित, उतरा हुआ।

आपत्कल्प (सं० पु०) आपदि उचितः कल्पः विधिः, शाक० तत्। आपत्कालमें किया जानेवाला कर्म, जो काम आप्त पड़नेसे किया जाता हो।

आपत्काल (सं० पु०) आपद्युक्तः कालः। आपद्-युक्त काल, मुसीबतका वक्त।

आपत्कालिक (सं० त्रि०) आपत्काले भवम्, ठञ् चिठ् वा। कात्यादिप्रठञ्जिटी। पा ३।१।१६। आपत्काल-जात, मुसीबतके वक्त, होनेवाला। (स्त्री०) आपत्कालिका वा आपत्कालिकी।

आपत्ति (सं० स्त्री०) आपद-क्तिन्। १ आपद्, आप्त। २ जीवनोपायकी अप्राप्ति, रोजी रोजगारकी तकलीफ़। ३ प्राप्ति, हासिल। ४ रोगादि द्वारा अभिभूत अवस्था, बीमारी वगैरहसे जकड़ जानेकी हालत। ५ पर्यादिकी सिद्धि, दौलत वगैरहकी याफ़्त। ६ अनिष्ट प्रसङ्गकी अर्थापत्ति, बुरी बातका एतराज। ७ व्याप्यके आहार्य हेतु व्यापकमें उसका आरोप, किसीके साथ रिश्तेदारीक दाखिल।

आपत्य (सं० त्रि०) अपत्याधिकारे विहित अण्। आपत्यश्च च संहितेऽनाति। पा ३।१।११। सन्तानसम्बन्धीय, औलादी। व्याकरणमें पैतृक संज्ञाओंके विधानसे

सम्बन्ध रखनेवालीको आपत्य कहते हैं। (स्त्री०) आपत्यो।

आपथि (वै० त्रि०) अभिमुखं पन्थाः यस्य, वेदे निपातनात् इत् समा०। सम्मुखके पथसे सम्बन्ध रखनेवाला, जो राहमें हो।

आपथी (सं० पु०) यात्री, मुसाफ़िर, राह चलनेवाला आदमी।

आपथ्य, आपथी देखो।

आपद् (सं० स्त्री०) आ-पद-क्तिप्। सम्पदादिभ्यः क्तिप्। पा ३।३।८४। विपत्ति, दुर्घटना, आप्त, अड़झा।

आपद (हिं०) आपद देखो।

आपदकाल (सं० पु०) आपदा कृतोऽकालः, शाक० तत्। विपद् द्वारा पड़ा हुआ समय, जो वक्त आप्तके जरिये वाक़े हो।

आपदा, आपद देखो।

आपदेव (सं० पु०) आपस्य जलसमूहस्य देवः। १ जलाधिष्ठातृदेवता, वरुण, जलदेवता। २ ऐष्टिक-प्रायश्चित्त, खेटपौठमाला, गोत्रप्रवरनिर्णय, भक्तिकल्प-तरु और रुद्रपद्धति नामक ग्रन्थके रचयिता। ३ वेदान्त-सारदीपिका-रचयिता। ४ सापिण्ड्यकल्पलता-रचयिता। ५ स्फोटकनिरूपण-रचयिता। ६ अनन्त-देवके पुत्र, आपदेवके पोत्र, अनन्तदेवके पिता और गोविन्दके शिष्य। इन्होंने अधिकरणचन्द्रिका, मीमांसा-न्यायप्रकाशिका, वादकौतूहल, स्मृतिचन्द्रिका और आपदेवीय नामक स्मृतिग्रन्थ लिखा है।

आपदगत (सं० त्रि०) विपद्में पड़ा हुआ, जो तकलीफ़में आ गया हो।

आपदग्रस्त (सं० त्रि०) हतभाग्य, कमबख्त, तकलीफ़का मारा।

आपद्धर्म (सं० पु०) आपदि आपत्काले अनुष्ठेयो धर्मः, शाक० तत्। १ विपदकालका धर्मानुष्ठान, मुसीबतके वक्तका मजहब। आपद् आनेसे ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्यके लिये अपना धर्म निबाहना कठिन है। ऐसे समय शास्त्रने उनके लिये जो कर्तव्य कर्म ठहराया, उसीका नाम आपद्धर्म है। (स्त्री०) आपद्धर्मसंविज्ञत्य कृतो ग्रन्थः, अण्।

२ महाभारतका एक क्षुद्र पर्व। यह शान्तिपर्वके अन्तर्गत है।

आपधाप, आपाधापी देखो।

आपन (सं० स्त्री०) आप भावे ल्युट्। १ प्राप्ति, पहुँच। कर्मणि-ल्युट्। २ मरिच, मिर्च। (हिं० सर्व०) ३ अपना, स्व जाति।

“आपन चरित कहा मैं गाँवो।” (तुलसी)

आपनपी, अपनपी देखो।

आपनपी, अपनपी देखो।

आपना, अपना देखो।

आपनिक (सं० पु०) आपनाय्यते जनैः स्तूयन्ते, आपन-इकन्। १ इन्द्रनीलमणि, सफ़ीर, नीलम्। २ किरात, व्याध, सैयाद, बहेलिया।

‘आपनिकः इन्द्रनीलः किरातश्च।’ (उज्ज्वलदत्त)

आपनेय (सं० त्रि०) आ-अप-नी कर्मणि यत्। प्राप्त किये जाने योग्य, पाया जानेवाला।

आपनी, अपना देखो।

आपन्न (सं० त्रि०) आ-पद्-क्त। १ आपद्ग्रस्त, मुसीबतजदा, तकलीफ़में पड़ा हुआ। २ प्राप्त, पाया हुआ।

आपन्नसत्त्वा (सं० स्त्री०) आपन्नं प्राप्तं सत्त्वं गर्भरूपः प्राणी यया, बहुव्री०। गर्भिणी नारी, हामिला औरत।

‘आपन्नसत्त्वासाह गर्वीष्यन्तर्वन्तौ च गर्भिणी।’ (अमर)

आपन्नार्ति-प्रशमनफल (सं० त्रि०) दुःखियोंकी पीड़ा दूर करनेवाला, जो आफ़तजदोंका दर्द मिटा देता हो।

आपमित्यक (सं० त्रि०) आपमित्य परिवर्त्य निवृत्तम्, कक्। अपमित्य याचिताभ्यां कक्कनी। पा ४।४।२१। १ विनिमयसे क्रय किया हुआ, जो बदलेमें ख़रीदा गया हो। (स्त्री०) २ विनिमय द्वारा क्रय किया हुआ सम्पदादि, जो जायदाद वगैरह बदलेमें मिली हो। (स्त्री०) आपमित्यकी।

आपया (वै० स्त्री०) आपेन जलसमूहेन याति, आप-या-क। वेदोक्त नदी विशेष। यह कुरुक्षेत्रके मध्य सरस्वतीके समीप अवस्थित और पुराणमें आपगा नामसे प्रसिद्ध है।

आपयिता, आपयित देखो।

आपयित (सं० पु०) अप-णिच्-टच्। प्रापयकर्ता, सुझैया करने या पहुँचानेवाला।

आपराधय्य (सं० स्त्री०) अप-राध-णिच् बाहु० श अपराधयः तस्य भावः, थञ्। गुणवचनप्राप्तादियः कर्मणि च। पा ३।१।२२४। अपराधकृत्त्व, गुणहगारी।

आपराह्निक (सं० त्रि०) अपराह्णे भवम्, वुन्। पूर्वाह्णापराह्णाद्विंशत्युत्तराह्णव्याह्नयः। पा ४।३।१८। अपराह्न-जात, अपराह्न-व्यापक, दिनके तीसरे पहर होनेवाला। (स्त्री०) आपराह्निकी।

आपरूप (हिं० वि०) १ स्वरूपविशिष्ट, अपंणी सूरत-शकल रखनेवाला। (सर्व०) २ स्वयं आप, खुद वह, हुज़र, हज़रत।

आपर्तुक (सं० पु०) ऋतुमधिकृत्य अध्यायः तत्र विहितः कल्पः, अप-ऋतु संज्ञायां कन् स्वार्थे अण्। १ ऋतुविशेषमें यागादिके निमित्त निर्दिष्ट अध्याय-बोधक वेदका कल्पग्रन्थ। (त्रि०) २ नियमित समयसे सुक्त, जो मौसमखासमें अटका न हो। (स्त्री०) आपर्तुकी।

आपव (सं० पु०) आपुनाति स्पर्शमात्रेण आपु जलं तदधिष्ठाता वरुणोऽपि आपुः तस्यापत्यम्, अण्। कल्पभेदसे वरुणके अपत्य वशिष्ठ मुनि। महाभारतीय आदिपर्वके ८८वें अध्यायमें इनका विवरण लिखा है। वशिष्ठ देखो। आपं जलसमूहं वाति आश्रयतया प्राप्नोति, आप-वा-क। २ नारायण, परमपुरुष। सृष्टिसे प्रथम नारायणका आवासस्थान जल रहा। इसका विशेष विवरण हरिवंशके १।२ अध्यायमें विद्यमान है। आपवर्य (सं० त्रि०) अविकल्प मोक्ष देनेवाला, जो आखिरी निजात बख़्शता हो।

आपस् (सं० स्त्री०) आप्नोति व्याप्नोति प्रलये समस्तम्, आप-असुन्। आपः कर्माख्यायां ङङो गुट् च। उष् ४।२०७। १ जल, पानी। २ धार्मिक उत्सव, मजहबो जलसा। ३ पाप, इजाब।

आपस (हिं० स्त्री०) आत्मीयता, रिश्ता, मिलजोल, भैयाचारी।

आपसदारी (हिं० स्त्री०) रिश्तादारी, भाईबन्दी।

आपसी (हिं० वि०) आत्मीय, सम्बन्धी, रिश्तेदार, मेली।

आपसे आप (हिं० क्ति० वि०) स्वयं, स्वभावतः, खुदबखुद, अचानक, एकाएक।

आपस्कार (सं० क्ति०) शरीरका मूल वा शेष, जिस या तनेका सिरा।

आपस्तम्ब (सं० पु०) अप विपर्याय तस्मिन्भवः अण् आपः तस्य वारणे स्तम्ब इव। अष्टादश स्मृतिकारके मध्य एक ऋषि। तैत्तिरीय यजुर्वेदमें आपस्तम्ब नाम रहते भी ऋषिका विशेष विवरण नहीं मिलता। इन्होंने धर्मसूत्र, गृह्यसूत्र एवं कल्पसूत्र सङ्कलन किया है। आपस्तम्बस्मृति दश अध्यायमें सम्पूर्ण हुई, उसमें केवल प्रायश्चित्तका विधान है। आपस्तम्बका यज्ञपरिभाषामें लिखी है,—मन्त्र और ब्राह्मणको वेदके समान समझना चाहिये। “मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्।” (यज्ञपरिभाषा) किन्तु यह बात सब लोग नहीं मानते।

कितने ही कल्पसूत्रको भी वेदके समान बताते हैं। किन्तु गुरु प्रभाकरने उसे असङ्गत कहा है।

उनके मतमें कल्पसूत्रका वेदत्व प्रतिपन्न हो नहीं सकता।

“बौधायनापस्तम्बाश्वलायनकात्यायनादिनामाहिताः कल्पसूत्रादियन्त्राः निगम-निरुक्तपङ्क्त्यन्त्राः मानवादिस्मृतयश्च अपौरुषेयाः धर्मवृद्धिजनकत्वात् वेदवत्। न च मूलप्रमाणसाधनेन वेदवैषम्यमिति शङ्कनीयम्। उत्पन्नायाः वृद्धेः स्वतःप्रमाणाङ्गीकारेण निरपेक्षत्वात्। मैवं उत्तानुमानस्य कालात्ययो-पदिष्टत्वात्। बौधायनसूत्रापस्तम्बसूत्रमित्येवं पुरुषनाम्ना ते ग्रन्था उच्यन्ते।” (कैमिनीय न्यायमालाविकार)

बौधायन, आपस्तम्ब, आश्वलायन, कात्यायन प्रभृतिके नामपर चलित कल्पसूत्रादि ग्रन्थ बने; निगम, निरुक्त एवं षडङ्ग तथा मन्वादि प्रणीत स्मृतिशास्त्र अपौरुषेय हैं। उपरोक्त समस्त ग्रन्थोंको देवतुल्य आदर देना चाहिये। क्योंकि उनसे धर्मवृद्धि उत्पन्न होती है। मूलप्रमाणकी अपेक्षा रहनेपर उन्हें वेदसे विभिन्न समझना उचित नहीं ठहरता। इसलिये उनसे जो ज्ञान निकलता, वह निरपेक्ष रहता और स्वतःसिद्ध प्रमाण माना जाता है। किन्तु यह युक्ति असङ्गत है। क्योंकि बड़काल बीतनेपर उक्त अनुमान सिद्ध हुआ है। बौधायनसूत्र, आपस्तम्बसूत्र इत्यादि मनुष्योंके नामपर यह ग्रन्थ चलते हैं।

(पु०-स्त्री०) आपस्तम्बस्यापत्यम्, अण्। अष्टयानकधे-विदादिभ्योऽण्। पा ४।१।१०४। २ आपस्तम्बका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य, आपस्तम्बकी औलाद। (स्त्री०) आपस्तम्बी।

आपस्तम्बीय (सं० त्रि०) आपस्तम्बस्येदम्, आपस्तम्ब-छ, आपस्तम्बेन प्रोक्तमधीते वा, अण् बाहु० तस्य लुक्। १ आपस्तम्ब-सम्बन्धीय। २ आपस्तम्बका बनाया ग्रन्थ पढ़नेवाला।

आपस्तम्बेय (सं० त्रि०) आपस्तम्बग्रां भवः, टक्। आपस्तम्बकी कन्यासे उत्पन्न, जो आपस्तम्बकी लड़कीसे पैदा हो।

आपस्तम्भिनी (सं० स्त्री०) अपां विकारः अण् आपस्तं स्तम्भते निवारयति, आप-स्तम्भ-णिनि-ङीप्। लिङ्गिनी लता।

आपा (हिं० पु०) १ स्त्रीय भाव, अपना वजूद। २ स्त्रीय तत्त्व, अपनी बुनियाद। ३ दर्प, गुरूर। सुसलमान बड़ी बहन और महाराष्ट्र बड़े भाईको ‘आपा’ कहते हैं।

आपाक (सं० पु०) आ समन्तात् पच्यते घटादि-अन्न, आ-पच् आधारे घञ्। १ कुम्भकारका आवा, कुम्भारका पजावा। भावे घञ्। २ ईषत् पाक। ३ सम्यक् पाक। (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। ४ पाक पर्यन्त, पकनेतक।

आपाकेष्ट (वै० त्रि०) आवेमें खड़ा हुआ।

आपाणेश—गुजरातके प्रधान शासक। सन् १७६१ ई०को सदाशिव रामचन्द्रके स्थानमें पेशवाकी ओरसे यह गुजरातके प्रधान शासक बनाये गये थे। इन्होंने मोमिन खान्के साथ मित्रकी तरह व्यवहार किया और खम्बातपर धावा मार उस वर्षके लिये चौरासी हजार रुपया कर लगया। पीछे यह डाकोरकी राह अहमदाबाद बापस आये थे।

आपाङ्ग्य (सं० क्ता०) अपाङ्गे नेत्रप्रान्ते देयम्, जण्। अपाङ्गदेय अभ्यञ्जन, आंखके किनारे लगनेवाला सुरमा। आपाण्डु आपणुर देखो।

आपाण्डुर (सं० त्रि०) ईषत् विवर्ण, जर्दा-मायल, पीला सा।

आपात (सं० पु०) आ सम्यक् पातः पतनम् ।
१ पतन, पड़ाव, धावा, भपट, पडुंच । आ हठात्
पातः । २ अविवेचनापूर्वक आगमन, बेसोचेसमझी
आ पड़नेकी हालत । ३ वर्तमान काल, जमाना-हाल ।
४ उपक्रम, आगाज । ५ समीप आगमन, पासकी
पडुंच । आपतति यस्मिन्, आधारे घञ् । ६ पतन-
काल, गिरनेका वक्त । ७ फेंकफांक । ८ धक्का ।
९ घटना, सुरत । (त्रि०) १० आगमनशील, भपट
पड़नेवाला ।

आपाततः (सं० अव्य०) आपात-तसिल् । अकस्मात्,
प्रथम आक्रमणपर, शीघ्र, पहली वारमें, फौरन्,
बातकी बातमें ।

आपातलतिका (सं० स्त्री०) वृत्तरत्नाकरोक्त वैतालीय
वृत्त विशेष । जिस वृत्तमें भगणसे उत्तर दो गुरुवर्ण
लगता और अन्य समस्त वैतालीय-जैसा ही रहता,
वह आपातलतिका कहाता है । (वृत्तरत्नाकर)

वैतालीय देखो ।

आपातिन् (सं० त्रि०) आक्रमणकारी, अधोगामी,
वर्तमान, आ पड़नेवाला, उतारू, जो वाक् हो ।
(पु०) आपाती । (स्त्री०) आपातिनी ।

आपाद (सं० पु०) १ फललाभ, आगति, पलटा ।
आपादन (सं० स्त्री०) आ-पदि-णिच्-लुट् । १ आपत्ति-
विषयीकरण, सम्पादककी ज्ञानद्वारा सम्पाद्यका निश्चय,
रहनुमायी, पडुंचवानेकी हालत ।

आपादमस्तक (सं० अव्य०) आदिसे अन्ततक,
बिलकुल, सरसे पैरतक ।

आपाधापी (हिं० स्त्री०) १ स्व-स्व कार्यकी चिन्ता,
अपने-अपने कामकी फिक्र । २ लड़ायी-भिड़ायी,
मारकाट ।

आपान (सं० स्त्री०) आ सम्यक् पीयते सुरा अत्र,
आधारे लुट् । १ पानभूमि, शराबकी दुकान, साथमें
बैठकर शराब पीनेकी जगह । २ भैरवीचक्र, शराब
पीनेवालोंका जगह । 'आपानं पानगोष्ठिका ।' (अमर) भावे
लुट् । ३ मिलित होकर सुरापान, सोहबतकी
शराबखोरी ।

आपानक, आपान देखो ।

आपान्तमन्यु (वै० त्रि०) पान करनेसे उत्साह देने-
वाला, जो पीनेसे जोश बख्शता हो । यह शब्द सोम-
रसका विशेषण है ।

आपापन्यी (हिं० वि०) १ स्त्रीय मार्गका अवलम्बन
करनेवाला, जो मनमानी राह पकड़ता हो ।

२ सम्प्रदाय विशेष । इस सम्प्रदायको चले सौ
वर्षसे अधिक नहीं गुजरा । आपापन्यी एक प्रकारके
रामात् होते और साथ ही बाउलोंका कुछ आचार-
व्यवहार रखते हैं । इनमें सुसलमानी धर्मका
गन्ध भी लग गया है । किसी ज्ञानवान् व्यक्तिके
प्रथम यह सम्प्रदाय चलानेसे हम कह सकते,—
सिवा हिन्दुओं और सुसलमानोंका धर्म मिलानेकी
चेष्टाके इसमें दूसरी कोई बात नहीं । आपापन्यियों,
सत्नामियों और पलटूदासियोंका व्यवहार प्रायः
एक ही तरह रहता है ।

सौ वर्षसे कम ही की बात है, कि वङ्गदेशान्तर्गत
वीरभूम जिलेके मझारपुर ग्राममें मुन्नादास नामक
कोई स्वर्णकार रहते थे । अयोध्यासे पश्चिम माड़वा
ग्राममें उनकी गद्दी रही । मुन्नादासके शिष्यका गुरु-
दास और गुरुदासके चेलिका नाम भगवानदास था ।
प्रतिवर्ष अग्रहायण मासके मध्य माड़वा ग्राममें
मेला लगता है । उसी समय गुरुकुण्डमें नहानेकी
अनेक शिष्य जाते और गद्दीके महन्तकी प्रणाम
करते हैं ।

मुन्नादास किसीके शिष्य न रहे । वह अपने
मनको ही गुरु मानते थे । आपापन्यी कहा करते
हैं,—

रामानुजकी फौजमें बारा गाड़ी पोल ।

आपापन्यी मनमुखी किरता टोले टोल ॥

इस दोहेके 'मनमुखी' शब्दसे आपापन्यी सम्प्रदायके
गुरुका खासा परिचय मिलता है । जो अन्य किसी
को गुरु नहीं समझता और मनमाना काम करता,
वही मनमुखी होता है । मुन्नादासने प्रथम यही
किया था । उन्होंने अपने मनसे उपदेश लेने बाद
इस मतको चलाया । किन्तु आजकल आपापन्यियोंको
प्रथम समझने से रोक दिया जाता है । गद्दीके महन्त

और उदासीन गृहस्थोंके गुरु होते और शिष्योंको मन्त्रदीक्षा देते हैं।

आपापन्यियोंके मध्य गृही एवं उदासीन दो प्रकारके लोग हैं। उदासीन गेरुहा वस्त्रका कुरता, कौपीन और साफ़ा पहनते हैं। किसी-किसीके गलेमें तुलसीकी गुरिया और नाकसे कपालतक ऊर्ध्व गुण्ड भी देखते हैं। केश रखनेका नियम विभिन्न है। कोई मत्था सुंडवा डालता और कोई दाढ़ी मूख फटकारता है। महन्तोंके गलेमें जो ऊर्णामयी माला रहती, वह सेली कहती है। उन्हें दास या साहब कहते हैं। परस्पर मुलाकात होनेसे 'बन्दगी साहब' बोलकर अभिवादन देना पड़ता है। प्रवाद है,—पहले आपापन्यियोंके शायद किसी प्रकारका सम्प्रदायिक चिह्न न रहा।

उदासीन राममन्त्रके जपसे मनको दृढ़ बना सकनेपर गायत्री-साधन करते हैं। अपने शुक्रके पीनेका नाम गायत्री-क्रिया है। हाथमें रख मन्त्र-पाठपूर्वक साधक पहले अपने शुक्रसे कपालपर ऊर्ध्व गुण्ड देता, फिर नेत्रमें अञ्जनकी तरह किञ्चित् लगा अवशिष्ट पी जाता है। इसका विशेष विवरण सत्नामी शब्दमें देखो।

आपामर (सं० अव्य०) मर्यादायै अव्ययी०। पामर पर्यन्त, गरीबतक, सब।

आपायत (हिं० वि०) आप्यायित, आसूदा, छका हुआ।

आपायिन् (सं० त्रि०) आपिबति, आपा-पिनि। सुरापानकर्ता, मद्यपायी, शराबखोर, शराबी, शराब पीनेवाला, जिसे शराब पीनेका शौक रहे। (पु०) आपायी। (स्त्री०) आपायिनी।

आपालि (सं० पु०) आपाभावे क्षिप् आपः सम्यक् पानं शोषितादेः तदर्थमलति व्याप्नोति केशान्, अल-इन्। केशकौट, जूं, चिह्न।

आपि (सं० पु०) आप्-णिच्-इन्। १ धनादि प्रापक, दौलत वगैरह सुझैया करनेवाला। आप्यते, आप कर्मणि इन्। २ आसबन्धु, रफ़ीक, साथी।

आपिस्त्र (सं० स्त्री०) ईषत्-पिस्त्रम्, प्रादि समा०।

१ स्वर्ण, सोना। (पु०) २ ईषद्वक्तवर्ण, सुर्खी-मायल-रङ्ग। (त्रि०) ३ आरक्त, सुर्खी-मायल, लाल सा।

आपित्व (वे० स्त्री०) वस्तुत्व, दृढ्यता, इत्तिहाद, उलफत, रक्त।

आपिशलि (सं० त्रि०) १ आपिशलिसे उत्पन्न होने-वाला। (पु०) २ आपिशलिका शिष्य। (स्त्री०) आपिशलिना प्रोक्तम्, अण्। ३ आपिशलि-प्रणीत शास्त्र।

आपिशलि (सं० पु०) आपिशलस्य तन्नामक मुनि-भेदस्यापत्यम्, इज् आद्यचो वृद्धिः। एक आदिशाब्दिक मुनि, एक प्राचीन वैयाकरण।

आपी (सं० त्रि०) आपै-क्षिप्, पी सम्प्रसारणं दीर्घः। १ स्थूल, वृद्धियुक्त, मोटा, चढ़ा-बढ़ा। (स्त्री०) २ पूर्वाषाढा नचत्र। (हिं० सर्व०) ३ स्वयं, खुदबखुद, आपही।

आपीड़ (सं० पु०) आपीड़-अच्। १ शिरोभूषण, सेहरा, हार। 'शिखास्त्रापीडशेखरी' (अमर) २ गृहसे बाहर निर्गत काष्ठ, घरसे बाहर निकली हुई लकड़ी, मंगौरी। (त्रि०) ३ पीड़ा करनेवाला, जो दर्द लाता हो।

आपीड़न (सं० स्त्री०) १ सङ्कोचन, इनकिवाज, दबाव। २ उपगूहन, बगलगीरी, हमामोशी। ३ व्यथा, तकलीफदिही।

आपीड़ा (सं० स्त्री०) १ छन्दोविशेष। २ सम्यक् पीड़ा, खासा दर्द।

आपीड़ित (सं० त्रि०) आपीड़-क्त। १ निष्पीड़ित, दबाया हुआ। २ सम्यक् निबद्ध, मजबूतीसे बंधा हुआ। ३ हिंसित, नुकसान पहुंचाया गया। ४ शिरो-भूषण द्वारा अलङ्कृत, सेहरेसे आरास्ता-पैरास्ता।

आपीत (सं० स्त्री०) आप ईषत् पीतम्, प्रादि समा०। १ रौप्यमाक्षिक धातु, रुपामाखी। २ स्वर्णमाक्षिक, सोनामाखी। ३ पद्मकेसर, फूलकी धूल। (पु०) ४ तूषीवृक्ष, तुनका पेड़। ५ अल्पपीतवर्ण, जर्दी-मायल रङ्ग। (त्रि०) ६ अल्पपीतवर्णयुक्त, जर्दी-मायल, पीलासा। ७ अल्प पान किया हुआ, जो थोड़ा पीया गया हो।

आपीन (सं० स्त्री०) आ-प्याय-क्त, पो आदेशः तकारस्थाने नकारः। व्यासः पो। पा १।१।२८। १ जघस्, आयन, बाख। २ सुवर्णसुखी, सोनासुखी। (पु०) ३ कूप, कुवां।

आपीनवत् (वै० त्रि०) अभिवृद्धिवाचक। 'आपीनमभिवृद्धिः तदाचकस्य आप्यायस्य इति शब्दस्य विद्यमानत्वादियं सौम्यापीनवती' (ऐतरेय-ब्राह्मण १।३।६ भाष्ये सायण)

आपु, आप देखो।

आपुन, अपना देखो।

आपुप, आपूप देखो।

आपुस, आपस देखो।

आपूप (सं० पु०) १ पिष्टक, पपरो, टिकिया, रोटी। २ आनूपजन्तुमात्र, पानीका जानवर।

आपूपिक (सं० त्रि०) अपूपः शिल्पमस्य, ठक्। १ अच्छी रोटी बनानेवाला। अपूपे अपूपभक्षणं साधु ठक्। गुडादिभाष्टक्। पा ४।३।१०३। २ रोटीके साथ खाया जानेवाला। अपूपो भक्तिरस्य, अचित्तत्वात् ठक्। अचित्ताददेशकालात् ठक्। पा ४।३।२६। ३ अपूपभक्त, रोटीको पसन्द करनेवाला। अपूपः पण्यमस्य। ४ अपूप-विक्रेता, रोटी बेचनेवाला। अपूपस्तङ्गक्षणं शीलमस्य। ५ अपूपभक्षणशील, रोटी खानेवाला। अपूपस्तङ्गक्षणं हितमस्य। ६ रोटी खानेसे फायदा उठानेवाला। (स्त्री०) अपूपानां समूहः। ७ अपूपसमूह, रोटीका ढेर। (पु०) ८ कान्दविक, नानबायी। ९ भक्षङ्कार, मुरब्बासाज, हलवाई।

आपूप्य (सं० पु०) अपूपाय साधुः, वा जगः। चूर्ण, पिष्ट, आटा, पिसान, मैदा।

आपूर (सं० पु०) आपूर्यते अनेन, आ-पूर करणे घञ्। १ जलादिका प्रवाह, पानी वगैरहकी रविश। भावे घञ्। २ सम्यक् पूरण, खासा भराव। ३ अल्प पूरण, हलका भराव। ४ अभिव्याप्ति, इन्दिराज। (त्रि०) ५ व्याप्त होनेवाला, मामूर या भरा हुआ।

आपूरण (सं० स्त्री०) आ-पूर भावे लुट्। १ सम्यक् पूरण, खासा भराव। (पु०) २ किसी नागका नाम। (त्रि०) ३ व्याप्त होनेवाला, जो मामूर या भरा हो।

आपूरना (हिं० क्ति०) आपूरण करना, भर देना।

आपूरित (सं० त्रि०) आ-पूर-क्त-इट्। अभिव्याप्त, भरा हुआ।

आपूर्ति (सं० स्त्री०) आ-पूर-क्तिन्। १ ईषत् पूरण, हलकी भरायी। २ सम्यक् पूरण, खासी भरायी।

आपूर्य (सं० अव्य०) पूरण करके, भरकर, भरावसे।

आपूर्यमाण (सं० चि०) आ-पूर कर्मणि शानच्। १ सम्यक्पूर्यमाण, अच्छी तरह भरा जानेवाला। (पु०) २ शुकपक्ष।

आपूर्यमाणपक्ष (सं० पु०) शुकपक्ष, उजला पक्ष। चन्द्रके आपूरित रहनेसे शुकपक्षका यह नाम पड़ा है।

आपूष (सं० स्त्री०) आपूष्यति शरीरमनेन, आ-पूष वृद्धौ अच्। शरीरको पुष्ट (शुद्ध) करनेवाला रङ्ग, रांगा।

आपूक्, आपू देखो।

आपूच् (सं० त्रि०) आ-पूच्-क्तिप्। १ संसर्गयुक्त, उलझा हुआ। (अव्य०) २ सङ्कुल, उलझकर। आपूच्छा (सं० स्त्री०) आ-प्रच्छ-अङ्, सम्प्रसारणं टाप्। १ प्रश्न, पूछताछ, सवाल। २ आलाप, आभाषण, बातचीत। ३ यातायातके समयका शुभ-प्रश्न, विदा-विदायी।

आपूच्छ्य (वै० त्रि०) आ-प्रच्छ वेदे निपातनात् क्यप्। कृत्स्नि इत्यादि। पा ३।१।२२३। १ जिज्ञास्य, पूछा जाने काबिल। २ ज्ञाष्य, काबिल-तारीफ़। (अव्य०) आ-प्रच्छ-ल्यप्। ३ जिज्ञासापूर्वक, पूछकर।

आपेक्षिक (सं० त्रि०) अपेक्षातः आगतम्, ठक्। तुलना द्वारा प्राप्त, अन्यकी तुलनासे निर्धारित होने-वाला, जो इन्तजार रखता हो। (स्त्री०) आपेक्षिकी।

आपोक्तिम (सं० स्त्री०) ज्योतिषोक्त जन्मलग्नसे द्वातीय, षष्ठ, नवम एवं द्वादश स्थान।

आपोमय (सं० त्रि०) आपस् विकारे प्राचुर्ये वा मयट्। १ जलरूप, पानीसे मिल जानेवाला। २ जल-प्रचुर, पानीसे भरा हुआ।

आपोमात्रा (सं० स्त्री०) अतिसूक्ष्म भौतिक जलका सार, रकीक, इब्रतिदायी पानीका माहा।

आपोमूर्ति (सं० पु०) स्वारोचिष मनुके एक पुत्र।

दशम मन्वन्तरके सात ऋषिमें यह भी एक रहे। हरिवंशके ६ठे और ७वे अध्यायमें विस्तृत विवरण लिखा है।

आपोऽशान (सं० स्त्री०) अश व्याप्तौ-भावे बाहु० शानच्। आपसा जलेन अशानम्, ३-तत्। जल द्वारा ऊपर और नीचे आस्तरण-रूप अन्नाच्छादनकर्म। इसका मन्त्र भोजनसे पहले और पीछे पढ़ा जाता है।

आप्त (सं० त्रि०) आप्-क्त। १ प्राप्त, पाया या हासिल किया हुआ। २ विश्वस्त, एतवारी। तपो ज्ञानके बल जो रजस्तमसे निर्मुक्त रहते और त्रिकाल-को अपनी बुद्धिसे अमल रखते, वह विदुष आप्त एवं शिष्ट होते तथा संशयरहित वाक्य बोलते हैं। ३ युक्तियुक्त, ठीक। ४ कुशल, लायक। ५ सम्पूर्ण, पूरा। ६ सम्बन्धी, दिली, रिश्तादार। ७ सत्य, सच्चा। ८ सम, बराबर। ९ विस्तीर्ण, फैला हुआ। १० नियुक्त, रखा हुआ। ११ व्यवहृत, आम तौरपर इस्तेमाल किया जानेवाला। १२ अकृत्रिम, असली। १३ अभियुक्त, मुजरिम।

(पु०) १४ खनामख्यात नागराज। १५ भ्रम-प्रमादरहित ज्ञानयुक्त ऋषि। १६ योग्य पुरुष, लायक आदमी। १७ मित्र, दोस्त। १८ अर्हत् विशेष। १९ शब्दप्रमाण। (स्त्री०) २० लब्धि, हासिल, किस्मत। २१ अंशसाम्य, मसावात-मिकदार।

आप्तकाम (सं० त्रि०) आप्तः प्राप्तः कामो येन, बहुव्री०। १ दत्त, तुष्ट, राजी, जो अपनी सुराद पा चुका हो। २ ब्रह्म एवं आत्माको अभिन्न समझनेवाला।

आप्तकारिन् (सं० त्रि०) आप्तं युक्तं करोति, आप्त-कृ-णिनि, ६-तत्। १ युक्तकारक, वाजिव तौरपर इन्तकाम करनेवाला। (स्त्री०) आप्तकारिणी।

आप्तकारी (सं० पु०) आप्तस्यासौ कारी चेति, कर्मधा०। विश्वस्त श्रुत्य प्रवृत्ति, एतवारी नौकर वगैरह।

आप्तगर्भा (सं० स्त्री०) आप्तः प्राप्तः गर्भो यया, बहुव्री०। गर्भिणी स्त्री, हामिला औरत।

आप्तगर्व (सं० त्रि०) आप्तो गर्वः येन बहुव्री०। दत्त, सुतकव्विर, घमण्डी।

आप्तदक्षिण (सं० त्रि०) आप्ता दक्षिणा येन बहुव्री०। दक्षिणा पाये हुआ, जो नजराना ले चुका हो।

आप्तवचन (सं० स्त्री०) आप्तसूत्र, श्रुतिप्रकाश, हासिल किया हुआ अक्षत, इलहाम।

आप्तवज्रसूचि (सं० स्त्री०) उपनिषत् विशेष।

आप्तवाक् (सं० पु०) विश्वस्त साक्ष्य देनेवाला, जो ठीक बात कहता हो।

आप्तवाक्य (सं० स्त्री०) अभ्रान्त वचन, दुरुस्त कलाम।

आप्तवाच् (सं० स्त्री०) आप्ता युक्ता भ्रमप्रमादादि दोषरहिता वाक्, कर्मधा०। १ वेद। २ वेदमूलक स्मृति इतिहास पुराणादि। ३ विश्वस्त व्यक्तिका साक्ष्य, एतवारी शख्सकी बात। (त्रि०) आप्ता युक्ता वाग् यस्य, बहुव्री०। ४ भ्रमप्रमादादि वाक्य-रहित, ठीक बात बोलनेवाला।

आप्तव्य (सं० त्रि०) प्राप्त किया जानेवाला, जो हासिल किये जाने काबिल हो।

आप्तश्रुति (सं० स्त्री०) आप्ता चासौ श्रुतिर्चेति, कर्मधा०, पूर्वपदस्य पुं-वद्भावः। १ वेद। (त्रि०) २ वेद-सम्बन्धीय। इस अर्थमें यह शब्द स्मृतिपुराणादिका विशेषण है।

आप्ता (सं० स्त्री०) जटा, उलझे हुये बालोंका गुच्छा।

आप्ति (सं० स्त्री०) आप्-क्तिन्। १ प्राप्ति, आमद। २ संयोग, रिश्ता। ३ स्त्रीसंयोग, सुवाशरत। 'आप्तिः स्त्रीसंयोगसंप्राप्त्योः।' (मेदिनी) ४ सम्बन्ध, तालुक। ५ लाभ, फायदा। 'आप्तिः सम्बन्धलाभयोः।' (हेन) ६ समाप्ति, खातिमा। ७ सम्पद, दीलत। ८ हित, भलाई।

आप्तोक्ति (सं० स्त्री०) १ आगम, वृद्धि, लफ्जकी आखिर अलामत। २ स्वीकृत एवं केवल व्यवहार द्वारा प्रतिष्ठित वाक्य, मञ्जर और चलनसे ही कायम की हुई लफ्ज।

आप्तोर्याम (सं० स्त्री०) याग विशेष। यह ब्रह्माकी उत्तर-मुखसे उत्पन्न हुआ था।

आप्तव्य (सं० त्रि०) आप्त-तव्य वेदे पुषो० साधुः।

१ प्राप्तव्य, मिलनेयोग्य । (पु०) २ देव श्रेणीविशेष ।
आप्त देवता त्रितके समान होते हैं ।

आप्रवान (सं० पु०) अप्रवान एव, स्वार्थे अण् ।
वत्सगोत्रप्रवर ऋषि विशेष ।

आप्य (सं० त्रि०) अपामिदम्, अण् चतु० स्वार्थे
अज् । १ जलसम्बन्धीय, आदसे तालुक रखनेवाला ।
२ जलीय, आबी, पनिहा । ३ जलमय, पानी रखने-
वाला । ४ जलमें निवास करनेवाला, जो पानीमें
रहता हो । आप-यत् । ५ प्राप्य, हासिल किये जाने
काबिल । (क्ली०) ६ कुष्ठौषधि, कूट । (वै०) ७ सन्धान,
अह्द-पैमान् । (पु०) ८ चाक्षुषसम्बन्धीय देव-
विशेष । चाक्षुष-मनुके समय आप्य, प्रभूत, ऋषभ,
पृथुक और लेखा नामक पांच देवता रहे । (हरि०)
९ वेदोक्त एक वीरपुरुष । इनके सन्तानका नाम
त्रित रहा । इन्होंने अजगवसे युद्ध किया और तीन
मस्तक तथा सात लाङ्गलविशिष्ट असुर मार पशुवोंको
बचा लिया था ।

आप्यान (सं० क्ली०) आप्याय भावे क्त । १ प्रीति,
आसूदगी । २ वृद्धि, बढ़ती । (त्रि०) कर्तरि क्त ।
३ प्रीत, आसूदा । ४ वृद्ध, बढ़ा हुआ ।

आप्याय (सं० पु०) सम्पूर्ण वा स्थूल होनेका भाव,
भर जाने या मोटे पड़नेकी हालत ।

आप्यायक (सं० त्रि०) दत्तकारक, आसूदा करने-
वाला ।

आप्यायन (सं० क्ली०) आप्याय-लुट् । १ वृद्धि,
बढ़ती । २ प्रीति, आसूदगी । ३ दत्त करनेका भाव,
आसूदा बनानेकी हालत । ४ वृद्धि पानेका भाव, बढ़
जानेकी हालत । ५ अग्रगमन, अग्रवानी । ६ उत्तम
अवस्था उत्पन्न करनेवाला द्रव्य, जिस चीजसे अच्छी
हालत आये । ७ वलकारक औषध, ताकूतवर दवा ।
८ मोटायी । ९ दीक्षणीय मन्त्रका संस्कारविशेष ।
शिष्यको मन्त्रदीक्षा देते समय जनन, जीवन, ताड़न,
बोधन, अभिषेक, विमलीकरण, आप्यायन, तर्पण,
दीपन और गोपन दश प्रकार संस्कार होता है ।
मन्त्रके प्रत्येक वर्णको सौ, दश वा सात बार 'ॐ ह्रीं'
कहके प्रोक्षण करनेका नाम आप्यायन संस्कार है ।

आप्यायनशील (सं० त्रि०) दत्त करनेवाला, जो
राजी रखता हो ।

आप्यायित (सं० त्रि०) आप्याय णिच्-क्त-इट् णिच्
लोपः । १ प्रीणित, रजामन्द । २ पूरित, भरा हुआ ।
३ वर्धित, बढ़ा हुआ । ४ आनन्दित, खुश ।

आप्र (वै० त्रि०) आप-प्र-क । १ पूरक, पूरा कर देने-
वाला । २ कार्यरत, उत्सुक, मशगूल, हौसलेमन्द ।
३ पहुँचने योग्य, जो पहुँच जाता हो ।

आप्रच्छन् (सं० क्ली०) आप्र-च्छ-लुट् । १ गमना-
गमनके समय बन्धुगणका कुशलप्रश्न, आगत-स्वागत,
विदाविदायी, मुलाकातीसे मिलते या छूटते वक्त
खेरियतकी पूछताछ ।

आप्रच्छन्न (सं० त्रि०) आप्र-च्छ-त्, तकारस्य
नकारः । १ अत्यन्त गुप्त, निहायत पोशीदा । २ ईषद्-
गुप्त, कुछ पोशीदा ।

आप्रतिनिवृत्त (सं० त्रि०) निवारित, रोका या पीछे
फेरा हुआ ।

आप्रतिदिवं (वै० अव्य०) सर्वदा, दिन-ब-दिन,
हमेशा ।

आप्रपद (सं० अव्य०) प्रपदं पादाग्रं तत् पर्यन्तम्,
मर्यादायै अव्ययी० । १ पादाग्र पर्यन्त, पैरके सिरितक ।
(क्ली०) २ पादाग्र पर्यन्त पहुँचनेवाला परिच्छेद,
पैरकी उँगलियोंतक लटकनेवाली पोशाक ।

आप्रपदीन (सं० त्रि०) आप्रपदं पादाग्रपर्यन्तं
व्याप्नोति, ख । आप्रपदं प्राप्नोति । पा ३।२।६ । मस्तकसे
पादाग्रपर्यन्त लम्बमान, सरसे पैरके सिरितक फैला
हुआ । यह शब्द वस्त्रादिका विशेषण है ।

आप्रपदीनक (सं० क्ली०) मस्तकसे पादाग्र पर्यन्त
लम्बमान वस्त्र, सरसे पैरके सिरितक फैली हुई पोशाक
वगैरह ।

आप्रवण (सं० त्रि०) ईषत् प्रवणम् । अल्प नस्त्र,
कुछ-कुछ झुका हुआ । (क्ली०) आप्र-लुट् । २ ईषत्
द्रवण, थोड़ा बहाव । ३ अल्प चरण, हलकी टपक ।

आप्रावृष (सं० अव्य०) वर्षा ऋतु यावत्, मौसम-
बरसात तक ।

आप्रो (वै० क्ली०) आप्रीणात्यनया, आप्रोड गोरा-

दित्वात् डीष् । १ अनुरञ्जन, इस्तिर्जा, मेलमिलाप ।
 २ शान्तिकर पद, कफ़ाराबख़्श फ़र्द । ३ आमन्त्रण
 विशेष, कोई मुनाजात । यह प्रयाजा द्वारा यजनीय
 होती और क्रमागत देवत्वप्राप्त पदार्थों के अर्थ
 उच्चारणकी जाती है । इसे पशुमेधका आरम्भक
 कहते हैं । किन्तु दूसरे लोग इसको आप्री देवताओंकी
 शान्तिकरी ही बताते हैं । यह इसी कारण आप्री
 पद कहाती भी है । बारह पदमें निम्नलिखित
 बारह पदार्थोंका स्तव किया गया है,—१ सुसमिध,
 २ तनूनपात्, ३ नराशंस, ४ इड्ड, ५ वर्हिस्, ६ यज्ञ-
 शालाहार, ७ रजनी एवं प्रभात, ८ प्रचेतसस्, ९ इला,
 सरस्वती तथा मही, १० त्वष्टि, ११ वनस्पति और
 १२ स्वाहा । सायणने उपरोक्त बारहो पदार्थोंको
 अग्निके ही अन्तर्गत माना है ।

आप्रीत (सं० त्रि०) आ-प्री-क्त । १ सम्यक् प्रीत,
 खूब खुश । २ ईषत् तप्त, कुछ आसुदा ।

आप्रीतप (वै० पु०) आप्रीतं सम्यक् तप्तं पाति,
 आप्रीत-पा-क । विष्णु । विष्णु अपने क्राधिके शान्त
 करनेवालोंकी रक्षा रखते, इसीसे उपरोक्त नामपर
 पुकारे जाते हैं ।

आप्रीतपा, आप्रीतप देखो ।

आप्राव (सं० त्रि०) आ-प्रा-वज्, आपपचे ऋदोरविति
 अप् । १ जलप्रावन, सेलाब, बूड़ा । २ स्नान, गुसल ।

आप्रावन (सं० क्ली०) आ-प्रा-वण्ट् । आप्रव देखो ।

आप्रावव्रतिन्, आप्रवव्रती देखो ।

आप्रावव्रती (सं० पु०) आप्रावः समावर्तन स्नानमेव
 व्रतमस्यस्य, इति । स्नातक गृहस्थ विशेष । यह
 सकल वेद पढ़ दारपरिग्रहके निमित्त समावर्त स्नान
 और स्त्रीलाभसे पहले स्मृतिशास्त्रोक्त व्रतका आचरण
 करता है ।

आप्राव, आप्रव देखो ।

आप्रावित (सं० त्रि०) आ-प्रा-णिच्-क्त, णिच् लोपः ।

१ जलादिप्रवाह द्वारा अभिष्यास, पानीकी बाढ़से
 ग़रकाब किया हुआ । २ स्नात, नहाये हुआ ।

आप्राव्य (सं० त्रि०) आप्रावते, आ-प्रा कर्तरि ण्यत् ।

अव्ययीय प्रवचनोपपत्त्यानीय जन्माप्राव्यापात्ता वा । पा ३।३।५८ । १ जल-

प्रावनकर्ता, सेलाब जानेवाला । कर्मणि ण्यत् ।
 २ जलादि द्वारा प्रावितव्य, जो सेलाबमें डूबने काबिल
 हो । (क्ली०) ३ आप्रावन, सेलाब । (अव्य०)
 ४ भिगोके, छिड़ककर ।

आप्रात (सं० त्रि०) आ-प्रा-क्त । १ स्नात, नहाये
 हुआ, जो गुसल कर चुका हो । २ आद्रीभूत, भोगा
 हुआ । (पु०) ३ स्नातक गृहस्थ विशेष आप्रवव्रती देखो ।
 (क्ली०) आ-प्रा भावे क्त । ४ स्नान, गुसल ।

आप्रातव्रतिन्, आप्रवव्रती देखो ।

आप्रातव्रती, आप्रवव्रती देखो ।

आप्राताङ्ग (सं० त्रि०) सम्यक् स्नात, अच्छीतरह
 नहाये हुआ ।

आप्रात्य (सं० अव्य०) आ-प्रा-त्यप्-तुक् । १ स्नान
 करके, नहाके । २ उत्तम्पन करके, कूदकर ।

आप्राष्ट (सं० त्रि०) आ-प्रा-ष्ट-क्त । १ अल्पदग्ध,
 थलसा हुआ । २ सम्यक् दग्ध, अच्छीतरह जला
 हुआ ।

आप्रावन् (सं० पु०) आप्रीति व्याप्रीति, आप्-वन् ।
 शे वल्लयजिह्वा शीवापुमौराः । उष् १।१५२ । वायु, दुनियामें भरी
 हुई हवा ।

आप्रावा (सं० स्त्री०) शीवा, गर्दन । (पु०) आप्रव् देखो ।

आप्राव (सं० स्त्री०) मनुविशेष ।

आफ़त (अ० स्त्री०) १ शामत, तबाही, आपत्,
 भौड़ । ३ कबाहत, अनिष्ट, बुराई । ३ सुसीबतका
 वक्त, अनिष्टका समय, बुरा ज़माना ।

आफ़तका परकाला (हिं० पु०) १ अतिशय दुष्ट
 व्यक्ति, निहायत बदकार शख्स, जो आदमी बहुत
 बुरा काम करता हो । २ अतिशय निपुण व्यक्ति,
 निहायत चुस्त चालाक शख्स, जो आदमी बहुत
 होशियार और तेज़ हो ।

आफ़ताब (फ़ा० वि०) १ आदित्य, सूर्य । 'परत न ताब
 लखि मुख माहताब जब निकसी शिताब आफ़ताबके भभकसी ।' (पञ्चनेत्र)
 २ ताशके हुक़ या काले-पान रङ्गका इक्का । रङ्ग-मारमें
 यही सबसे पहले खेला जाता है ।

आफ़ताबपरस्त (फ़ा० पु०) सूर्योपासक, सूरजकी
 पूजा करनेवाला । पारसी आफ़ताब-परस्त होते हैं ।

आफ़तावपरस्ती (फा० स्त्री०) सूर्यापासना, सूरजकी पूजा।

आफ़ताबा (फा० पु०) पात्रविशेष, किसी किसमका गड़वा। इसकी पीठपर पकड़नेको मूठ और मुंहपर मूंदनेको ठकन लगाते हैं। हाथ-मुंह धुलानेमें इससे पानी छोड़नेपर बड़ा सुभीता रहता है।

आफ़ताबी (फा० वि०) १ आफ़ताबसे ताबुक रखनेवाला, सौर। २ वृत्ताकार, गोल। (स्त्री०) ३ किसी किसमकी आतशवाजी। ४ बीजन विशेष, किसी किसमकी पड़वी, छतरी। यह ताबूलवत् वर्तुल जरदोजीसे बनती और काष्ठयष्टिकाके अग्रभागपर लगती है। बीचमें आफ़ताबकी शकल कढ़ी रहनेसे ही इसे आफ़ताबी कहते और सवारी शिकारी या बरात वगैरहमें देखानेके लिये नौकर आगे लेकर निकलते हैं। ५ ओसारी, आड़। आतप निवारणके लिये इसे द्वारके ऊपर लगा देते हैं। ६ एक गुलकन्द। यह धूपमें तैयार होती है। ७ सुनहली ढाल। यह कछुवेकी पीठसे बनती है।

आफ़लोदयकर्म (सं० त्रि०) फ़लोदयपर्यन्त कर्म मस्य, बहुव्री०। फल न मिलनेतक काम करनेवाला, जो गुर्ज पूरी न होनेतक काम करता हो।

आफ़िज़ (सं० स्त्री०) अफ़ीम देखो।

आफ़ियत (अ० स्त्री०) ज़ेम-कुशल, खैरियत। यह प्रायः खैर शब्दके साथ व्यवहृत होता है, जैसे—खैर व आफ़ियत।

आफ़िस (अ० स्त्री० = Office) दफ़्तर, कचहरी, उद्योगस्थान, कारख़ाना।

आफ़ीन (सं० स्त्री०) अफ़ीम देखो।

आफ़ुक (सं० स्त्री०) अफ़ीम देखो।

आफू (हिं० स्त्री०) अफ़ीम देखो।

आफूक (सं० स्त्री०) अफ़ीम देखो।

आव (फा० पु०) १ अप, पानी। (स्त्री०) २ रत्नकी प्रभा, लोहादिकी समता, जवाहरकी भलक, फौलाद वगैरहकी खसलत। ३ द्युति, नूर, चमक। ४ इज्जत, सम्मान, चाल-चलन। किसी कविने दर्पणके उपलक्षसे निम्नलिखित प्रहेलिका कही है,—

“एक नार पोयाकी भानी।

तन वाकी सवरी न्यों पानी॥

आव रखे पर पानी नांइ।

पोया रखे हिरदे नांइ॥”

आवकार (फा० पु०) शराब बनानेवाला, कलवार, मद्यप्रस्तुतकर्ता, कलाल।

आवकारी (फा० स्त्री०) १ शराब बनानेका काम। २ गुण्डा, मैखाना, हौली, भट्टी, शराब तैयार होनेकी जगह। २ शराबकी चुट्टी, सुराका राजस्व।

आवखोरा (फा० पु०) पानपात्र, मटकैना।

आवखोरे भरना (हिं० क्रि०) दूध या शरबतसे आवखोरे भर कर किसी देवता पर चढ़ाना, धर्मार्थ दूध या शरबत पिलाना।

आवगीना (फा० पु०) १ स्फ़टिकका पानपात्र, मोनेका आवखोरा। २ दर्पण, शीशा। ३ हीरक, हीरा।

आवगीर (फा० पु०) पानी भाड़नेका कूँचा। इसे जुलाहे अपने काम लाते हैं।

आवजारी (फा० पु०) १ बहता पानी, नदी, नाला। २ बहते या चलते हुये आंस।

आवगोश (फा० पु०) १ किसी किसमका मुनका या दाख। २ शोरवा, यध, उवाले हुये गोशतका अक। उष्ण जलमें मांस पकानेसे यह बनता है।

आवताब (फा० स्त्री०) १ प्रभा, चमकदमक। २ उत्कर्ष, बड़ाई।

आवताबा (फा० पु०) गड़वा। आफ़ताबा देखो।

आवदस्त (फा० पु०) १ पुरीषत्यागके उपरान्त अपान प्रचालन, पाखाने होने पीछे मिकदकी धुलाई। २ अपानके प्रचालनका जल, मिकद धोनेका पानी। कहते हैं, उष्ण जलसे कभी आवदस्त न लेना चाहिये। इसके लिये शीतल जल उपयुक्त होता है। फिर दस्त आये या न आये, आवदस्त लेनेसे ही शरीरकी बड़ा लाभ पहुँचता है।

आवदस्त लेना (हिं० क्रि०) मिकद धोना, अपान प्रचालन करना, सौचना।

आवदाना (फा० पु०) १ अन्नजल, दाना-पानी,

खुराक। २ भाग्य, किस्मत। ३ व्यापार, रोजगार, कामकाज।

आबदार (फ़ा० वि०) १ परिष्कृत, मुजल्ला, मांभा हुआ। २ श्वेत, शुद्ध, साफ़। (पु०) ३ कहार, पानीकी देखरेख रखनेवाला नौकर।

आबदारखाना (फ़ा० पु०) पानीय जल रखनेका स्थान, परगना, जिस जगहपे पानीका पानी रहे।

आबदारी (फ़ा० स्त्री०) आबदारका काम। इस अर्थमें यह शब्द प्रायः व्यवहृत नहीं होता। २ कान्ति, चमक। ३ शुक्लता, सफेदी, सफ़ायी।

आबदीदा (फ़ा० वि०) नेत्रमें जल भरे हुआ, रोनेवाला।

आबदीदा होना (हिं० क्लि०) नेत्रमें अश्रु भर लेना, आँखें डबडबाना।

आबद (सं० स्त्री०) आ सम्यक् बहम्, आ-बन्ध भावे क्त। १ दृढबन्धन, मजबूत गांठ। २ प्रेम, स्नेह, मुहब्बत, प्यार। ३ अलङ्कार, जेवर, गहना। (त्रि०) कर्मणि क्त। ४ बद्ध, प्राप्त, प्रतिबद्ध, बंधा, मिला या रुका हुआ।

‘आबदी दृढबन्धे स्यात् प्रेमालङ्कारयोर्बन्धोः।’ (मेदिनी)

आबध (सं० पु०) बन्धन, बांध, जकड़।

आबनाथ (फ़ा० पु०) समुद्रसङ्घट, नाका।

आब-नुकरा (फ़ा० पु०) १ चांदीका पानी। २ पारा।

आब-बजूल (फ़ा० पु०) एक बीमारी। इससे अण्डकोष फूल जाता और पीड़ा देने लगता है।

आबनमक (फ़ा० पु०) १ जल एवं लवणका औचित्य, पानी और नमककी काफ़ी मिक्कदार। २ व्यञ्जन, मसाला। ३ आस्वादन, जायका। ४ अवष्टम्भ, संहारा।

आबनूस (फ़ा० पु०) कोविदार, तेंदू। यह वृक्ष लङ्का एवं दक्षिण भारतमें उत्पन्न होता और कहीं कहीं हिन्दूस्थानमें भी देख पड़ता है। अतिशय पुरातन होनेपर इसका काष्ठ श्यामवर्ण और भारवान् निकलता है। आबनूससे कितने ही प्रदर्शनीय वस्तु सज्जक, कलमदान, छड़ी, दीवारगौर वगैरह प्रसृत होते हैं।

आबनूसका कुन्दा (फ़ा० वि०) श्यामवर्ण, काला, बदशक्त। (पु०) २ हवशी। ३ काला-काला आदमी।

आबनूसी (फ़ा० वि०) १ आबनूससे बना हुआ। २ आबनूसकी रङ्गका, श्यामवर्ण, काला।

आबन्ध (सं० पु०) १ ग्रन्थि, गांठ। २ पुग वालाङ्गलकी ग्रन्थि, जुवे या हलकी गांठ। यही बैलको जुवे या हलसे अटका रखता है।

आबन्धन (सं० स्त्री०) गांठ लगानेका काम, बांध।

आबपाशी (फ़ा० स्त्री०) अभ्युक्षण, सिंचाई, खेत पटानेका काम।

आब-रवां (फ़ा० पु०) १ बहता पानी, नदी, नाला।

२ चलते हुये आंसू। ३ सूक्ष्मवस्त्र विशेष, किसी किस्मका निहायत उम्दा मल-मल।

आबरू (फ़ा० स्त्री०) आब-रू। १ आदर, इज्जत, बड़प्पन। “आबरू जगमें रहे तो जान जाना पश्य है।” (लोकान्ति) २ पद, दरजा। ३ आभास, देखावा। ४ अभिमान, घमण्ड।

आबरूरेजी (फ़ा० स्त्री०) आदरका नाश, बड़प्पनका बिगाड़।

आबर्ह (सं० पु०) आब्रह्मते उत्पाद्यते, आ-बर्ह-घञ्। १ उत्पाटन, उखाड़। २ हिंसा, मारकाट। (त्रि०) ३ उत्पाटक, उखाड़ डालनेवाला।

आबर्हण (सं० स्त्री०) आ-बर्ह-ल्युट्। उत्पाटन-कार्य, उखाड़ डालनेका काम।

आबर्हिन् (सं० त्रि०) आबर्होऽस्त्यस्य, इनि। उत्पाटनयुक्त, उखाड़ने काबिल।

आबला (फ़ा० पु०) व्रण, फोला, छाला, फफोला।

आबलाफरङ्ग (फ़ा० पु०) युरोपीय पिटिका, उपदंश-आतश। आतश देख।

आबल्य (सं० स्त्री०) निर्बलता, कमजोरी।

आबशिनास (फ़ा० पु०) जलपरीचक, पानी पढ़-चाननेवाला। जहाज़का जो कर्मचारी पानीकी गहराई नापकर राह बताता, वह आबशिनास कहलाता है।

आबशोर (फ़ा० पु०) समुद्रजल, खारा पानी।

आबशोरा (फा० पु०) यवचारसे शुद्ध किया हुआ जल, जो पानी शोरेसे छना हो। २ जम्बीरके रस और शर्करासे बना हुआ शर्बत, नीबूके अर्क और चीनीसे तैयार होनेवाला शर्बत।

आबहयात् (फा० पु०) १ अमृत, जिन्दगी वस्त्र-रानेवाला पानी। २ राजाके पीनेका पानी। ३ साफ ठण्डा मीठा पानी।

आबहराम (फा० पु०) १ अशुद्ध वा त्याज्य जल, नापाक पानी। २ आसव, शराब। ३ कपटाशु, कठरोना, फफड़ दलाली।

आबहवा (फा० स्त्री०) जलवायु, पानी और हवा।

आबहवा बदलना (हिं० क्रि०) रूग्णावस्थामें स्वास्थ्यके लाभार्थ एक स्थानसे दूसरे स्थानको जाना, बीमारीकी हालतमें सेहतके लिये अपने रहनेकी जगह छोड़ दूसरी जगहको रवाना होना। आज कल प्रायः डाक्टर रोगियोंको आबहवा बदलनेकी अनुमति दिया करते हैं। संक्रामक रोग होनेसे हिन्दुस्थानी भी घर छोड़ बागमें जाकर डेरा खत हैं। वास्तवमें बात ठीक है। आबहवा बदलनेसे प्रायः सभी रोग ग्रान्त हो जाते हैं। हमारे देशमें कार्तिक शुक्ला नवमीको आमलकी वृक्षके नीचे जाकर भोजन बनाने और खानेकी जो रीति चली आती, वह निःसन्देह आबहवा बदलनेसे ही सम्बन्ध रखती है।

आबाजाई—भारतकी उत्तर-पश्चिम सीमाप्रान्तका एक गांव और किला। यह पशावर नगरसे बारह कोस उत्तर स्वात-नदीके वामतटपर अवस्थित है। सामने नदी १५० गज चौड़ी पड़ती और घाट पार करनेके लिये नाव रहती है। सन् १८५२ ई०को अंगरेज-सरकारने आबाजायी ग्राम और पर्वतके बीच किला बनवाया था। इसके खड़े रहनेसे उत्तमानखेल और दूसरे पहाड़ी लोगोंका अंगरेजी भूमिपर धावा मारना रुक गया। किलेके तारेमें छः बुर्ज बना और बीचमें चौखुण्टा गढ़गज लगा है। सारा काम महीका ही है। चारो ओर ३० चौड़ी और ८ फीट गहरी खायी खिंची है। दीवार १६ फीट ऊंची खड़ी, जो पेटेपर १०, और चोटीपर ४ फीट

मोटी पड़ी है। डेढ़-दो सौ पैदल-सवारकी फौजमें एक १८ और एक १२ मनी तोप रहती है। आबाजायी ग्राम अत्यन्त रमणीय है। नदीके तटपर वनका दृश्य देखते ही बनता है।

आबाजी पुरन्दरे—बम्बई प्रान्तस्थ पूना जिलेकी सास-वाद तहसीलके मुनौव। सन् १७१४ ई०को सुप्रसिद्ध वीर शिवाजीके पौत्र शाहसे कितने ही जिनोंकी माल-गुजारी वसूल करनेका काम पानेपर धनाजी यादवने इन्हें सासवादका मुनौव बनाया था। आप बालाजी पेशवाके बड़े मित्र रहे।

आबाजी सोमदेव—सुप्रसिद्ध महाराष्ट्र-वीर शिवाजीके सेनापति। सन् १६४८ ई०को इन्होंने एकाएक आक्रमण कर बम्बईके थाना जिलेका कल्याणनगर मुसलमानोंके हाथसे छीन लिया था।

आबाद (फा० वि०) १ जनसम्बाध, गुलजार, बसा हुआ। २ कष्ट, जोता हुआ। ४ प्रसन्न, खुश। कानूनमें वह पुरो वा भूमि आबाद कहाती, जो आय दे सकती है।

आबादकार (फा० पु०) १ वनको उत्पाटनकर बसनेवाला कृषक, जो किसान जङ्गल काटकर खेती करता हो। २ कोई जमीन्दार। यह सीधे सरकारको कर देते हैं, और नम्बरदारसे कोई सम्बन्ध नहीं रखते।

आबादानी (हिं० स्त्री०) १ जनसम्बाध देश, आबाद जगह। “भूकेकी चन प्यारिको पानी।

जङ्गल जङ्गल आबादानी॥” (लोकोक्ति)

२ सभ्यता, शायस्तगी। ३ ऐश्वर्य, इकबालमन्दी, बढ़ती। “जिसका खारे चन पानी।

उसकी कीजे आबादानी॥” (लोकोक्ति)

४ प्रकाश, रोशन।

आबादी (फा० स्त्री०) १ कर्षण, कृष्ट स्थान, ज़रात, खेतीबाड़ी। २ विस्तारित वा उत्कृष्ट कर्षण, बढ़ायी या तरकीदी हुई ज़रात, बढ़िया जोत। ३ ग्राम्य भूमिका जनसम्बाध भाग, गांवकी जमीनका बसा हुआ हिस्सा। ४ लोकसंख्या, बसती। ५ करवृद्धि, इजाफा जमा, बढ़ोतरी लगान। ६ औचित्य, गनीमत। ७ प्रसन्नता, खुशी। ८ प्रकाश, रोशन।

आबाध (सं० पु०) आ-बाध-घञ्। आबाधे च। पा ८।१।०।
१ पौड़ा, दर्द। 'आबाधे पौड़ाशाम्।' (सिद्धान्तकौमुदी)
२ आक्रमण, धावा। (त्रि०) नास्ति बाधा यस्य,
बहुव्री०। ३ पौड़ाशून्य, बेदर्द। ४ विषम त्रिभुज
क्षेत्रकी मध्यस्थित लम्बरेखाके उभय पार्श्वपर
पड़नेवाला।

आबाधा (सं० स्त्री०) आ-बाध भावे अ, नित्य स्त्रीत्वात्
टाप्। १ पौड़ा, दर्द। आधिभौतिक, आधिदैविक
और आध्यात्मिक तीन प्रकारके तापको आबाधा कहते
हैं। २ त्रिभुजके आधारका खण्ड, किता-कायदा-
मुसल्लस।

आबाध (सं० स्त्री०) शैशवके सङ्ग समाप्त होनेवाली
अवस्था, जो उच्च वचनके साथ खतम हो।

आबि (सं० पु०) असुर विशेष, एक राक्षस। यह
अन्धक दैत्यका पुत्र रहा। महादेवके अन्धकको मार
डालनेसे आबि मनमें अत्यन्त क्रुद्ध हुआ था। यह
सोचने लगा, पिताके शत्रुको कैसे मारे। परि-
शेषमें ब्रह्माको तुष्ट बना इसने अपने रूपसे अन्यथा
न होनेपर सदा जीवित रहनेका वर मांग लिया।

महादेवने उमाको व्याह जब मन्दर पर्वतपर
वास किया, तब पार्वतीका रूप काला था। शिवने
किसी दिन परिहाससे उमाको कृष्णवर्णा कहकर
पुकारा। पार्वतीको उससे बड़ी लज्जा आई थी। वह
गौरवर्ण बननेकी हिमालयके उपकण्ठस्थ अरण्यमें
जा घुसी। चलते समय नन्दीसे कह गयी थीं,—
'देखो! जबतक हम वापस न आयें, तबतक अन्य
नारी यहाँ फटकने न पायें।'

पार्वती चलती बनीं। आबि दैत्य बहुकालसे
सुयोग दूढ़ता था। किसी दिन अवसर देख भुजङ्ग-
वेशसे महादेवके घरमें घुस पड़ा। नन्दी द्वारके रक्षक
रहे। उन्होंने भुजङ्गको शिवका अङ्गभूषण समझ
कुछ कहा न था। घरमें उमाकी मूर्ति बना असुर
महादेवको मारने लगा। किन्तु ब्रह्माने कह ही
दिया था,—रूप बदलनेसे आबि मरेगा। इसीसे
महादेवने अनायास इसे ठिकाने बैठा दिया। (पद्मपुराण)

आबियार—दक्षिणाल्प्र प्रदेशकी एक नदी।

महिला। भूतत्त्व और चिकित्सा शास्त्रमें इन्हें विलक्षण
व्युत्पत्ति रही। अनेकको विश्वास था, कि ब्रह्माकी
पत्नीने शापभ्रष्ट हो पृथिवीपर अवतार लिया। इनका
रचित नीतिशास्त्र तामिल विद्यालयमें पढ़ाया जाता है।
आबिल (सं० त्रि०) आ-बिल भेदने क। १ अस्वच्छ,
कलुष, गन्दा, जो साफ न हो। 'मङ्गिरामविलामपि। (नैषध १।३)
चलित कथामें विष्ठाट्टिसे परिपूर्ण स्थानका नाम
आबिल है। २ भेदक, तोड़ डालनेवाला। (वै० श्रुत्य०)
३ छिद्रपर्यन्त, छेदक।

आबिलकन्द (सं० पु०) आबिलो भूमेरामेदकः कन्दो
मूलमस्य, बहुव्री०। लताविशेष, एक बेल।

आबी (फ़ा० वि०) १ जलसम्बन्धीय, पानीसे तालुक्
रखनेवाला। २ वारिज, पानीसे पैदा होनेवाला।
३ जलचर, पानीमें रहनेवाला। ४ सिक्त, सींचा
हुआ। ५ नीलवर्ण, नीला। (पु०) ६ सांभर।
यह लवण समुद्रका जल आतपसे शुद्ध होनेपर बनता
है। ७ पक्षी विशेष, एक चिड़िया। यह जलके
समीप रहता है। पैर और मिनकार हरा होता है।
ऊपरका भूरा और नीचेका पर सफ़ेद है। ८ अङ्कुर।
(स्त्री०) ९ सिक्तभूमि, सींचकी जमीन।

आबीघोड़ा (हिं० पु०) करियाद, दरियायी घोड़ा।
आबी बनाना (हिं० क्ति०) चमकाना, रङ्ग चढ़ाना।
दूध, पानी और लाजवर्दके रङ्गमें वस्त्र भिगाना तथा
चमकाना आबी बनाना कहाता है।

आबीरोटी (हिं० स्त्री०) पानीके हाथकी रोटी,
पानी लगा-लगाकर बननेवाली चपाती।

आबुत्त (सं० पु०) आपनम् आप-क्षिप्, आपे प्राप्तेः
उत्ताम्यति, उद्-तम-ड। भगिनी-पति, बहुनीयी।
'आ सम्पक् बुध्यते आबुतो नावीतितः मनौषादिः।' (भरत) 'आबुतो-
ऽभ्युत्पन्नः।' (रघुनाथ) यह शब्द नाट्योक्तिमें आता और
वकारसे भी अनेक स्थलमें लिखा जाता है।

आबू (हिं० पु०) अर्बुद पर्वत, राजपूताने सिरोही
राज्यके अरावली पहाड़की चोटी। यह अक्षा०
२४° ३५' ३०" उ० और द्राघि० ७२° ४५' १६" पू० पर
अवस्थित है। अरावली पर्वतका शृङ्ग होते भी आबू
उससे कोई सम्बन्ध नहीं रखता। चारो ओर जो

मरुभूमि पड़ती, उसके बीच इसको आकृति ५००० फीट ऊँचे आबले-जैसी मालूम देती है। इसीसे संस्कृतमें अबुद कहते हैं। कोई-कोई 'अर'का पर्वत एवं 'बुध'का अर्थ ज्ञान लगाते और इस पर्वतको ज्ञानोदयका साधन होनेसे अबुद पुकारते हैं। डीसासे आबू प्रायः बाईस कोस दूर है। प्रधान चूड़ा गुरु-शेखर कहाती है। पहले यहां महुन्त रहते थे। इसमें रामकुण्ड, आमोददेवी, रुक्मा, देवली, विमली, अचलगढ़ और नागरताल नामक दूसरे भी कई उच्च शेखर हैं। तलदेश कोई साढ़े छः कोस दीर्घ तथा पांच प्रशस्त और परिधि प्रायः पचीस कोस परिमित है। चारो ओर घना जङ्गल है। शृङ्गके ऊपर चढ़नेमें बहुत कष्ट पड़ता है। उत्तर एवं पश्चिम दिक् निहायत ढालू है। दक्षिण तथा पूर्व ओर उच्च-नीच स्थानके मध्य प्रशस्त उपत्यका आ गयी है। उपत्यकासे ही आने-जानेमें सुभीता पड़ता है। पूर्वदिक् रुक्मिणीक्षणासे पत्थर काट पथ बना, जो प्रायः पांच कोस लगता है। इसी पथसे आदमी और बैल-गाड़ीका चढ़ना-उतरना होता है। ऊपरी भागमें प्रायः तीन दीर्घ और एक कोस प्रशस्त समतल भूमि है। जङ्गली गुलाब, सेवती और किस्म किस्मके पेड़ वर्षाका जल मिलनेसे हरे पड़ जाते हैं। विचित्र-वर्ण कालिका तथा दुर्गा लताके द्वार लहलहाने लगते हैं। चारो ओर पहाड़ी निर्भरका जल भरभराया करता है। किनारे-किनारे गो, भेष, छागल और महुष चरते फिरते हैं। ऊपर अच्छा सा नक्की तालाब है। कहते हैं, माहिक असुर ब्रह्माके वरसे अतिशय प्रबल बन गया था। देवताओंने उसके भयमें छिपनेको नखसे एक गर्त खोदा। उसी गर्तका नाम नक्की तालाब है। कारण, वह नखसे खोदा गया था। वह प्रायः आठ सौ हाथ लम्बा और बीस-पचीस हाथ गहरा है। जलमें स्थान-स्थानपर छुद्र-छुद्र द्वीप मनोहर तरु तथा लतावनसे सुशोभित हैं। पश्चिम दिक् तालाबपर बांध पड़ा है। पहले न तो कोई मछली और न चिड़ियाको ही मारने पाता था। किन्तु अब वह नियम उठ गया।

आबू पर्वतके निकट असभ्य जातिके लोग रहते हैं। वह भीलोंकी एक शाखा मालूम पड़ते और लोक कहाते हैं। लोक सम्पूर्ण स्वाधीन है, किसीको कर नहीं देते। राजा कोई नहीं होता; केवल एक-एक सरदार रहता, जिसका उपाधि रावत है। छुद्र-छुद्र कुटीर बनाकर रहते, धनुर्वाणसे मृगया मारते घूमते और पशुपालन एवं कृषिकार्य किया करते हैं।

आबू शृङ्गका जलवायु खूब स्वास्थ्यकर है। ग्रीष्ममें समुद्रसे मन्द-मन्द शीतल वायु आता और रुग्ण शरीरमें लगनेसे मानो नव जीवनका आविर्भाव देखाता है। शीतकालमें भी यहां शरीर स्वस्थ रहता है। किन्तु डाक्टर कुकके कथानुसार उपदंश, वातरोग, फेफड़ेकी पोड़ा किंवा अन्य यान्त्रिक व्याधिमें आबूपर टिकना न चाहिये।

गवरनर-जनरलके राजपूतानेमें ठहरनेवाले अजण्ट ग्रीष्मकाल लगनेसे यही आकर रहते हैं। राजपूताना स्टेट-रेलवेके आबूरोड-स्टेशनसे पर्वतपर चढ़नेको अच्छी राह निकली है। स्टेशनकी चारो ओर ऊँचा-ऊँचा पत्थर पड़ा; जिसमें कोई लटका, कोई विशाल शरीर फेला सोया और कोई नववधूकी तरह घुँघट काढ़ खड़ा है। अंगरेज इस खानिको नन कहते हैं। गिर्जा, बारोक, विद्यालय, हस्पताल—कहांतक बतायें—सभ्य अंगरेजोंके आकर रहनेसे जो आवश्यक पड़ता, वह सभी यहां विद्यमान है।

आबू पर्वत सिरोहोके सेठोंकी सम्पत्ति है। यहांका राजस्व देवालयके कार्यमें ही लगता है। आबूपर सेठोंके कामदार, नायब और खानेदार रहते हैं। दूसरे लोगोंमें कई मुसलमान दुकानदार हैं। चमार और भील कुलीका काम करते हैं। लोक जोतते-बोते हैं। ग्रीष्मकालमें आबूकी जनसंख्या बढ़ और अन्य समय घट जाती है।

आबू शृङ्ग बहुकालसे हिन्दुओंका प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। बोध होता, कि मार्कण्डेयपुराण, पद्मपुराण और भागवतमें इसी पर्वतकी कथा उल्लिखित है। पहले शायद आबूपर वशिष्ठ मुनिका आश्रम रहा। आज भी उनके नामका एक मन्दिर देख पड़ता है।

मन्दिरकी शिलापर लिखा है,—“वशिष्ठ मुनि हिमालयमें तपस्या करते थे। बहुकाल कठोर तपस्या करने बाद वह सिद्ध हुये और वहांसे चलते समय ब्रह्माकी अनुमतिसे हिमालयका एक शृङ्ग उखाड़ लाये। वही यह आबू पर्वत है।” वसुपालकी मन्दिरमें लिखा, अर्बुदशेखर गौरीपतिके श्वशुरका पुत्र और शशिभृत् गङ्गाधरका शालक है। उपरोक्त लेखमें भी आबू हिमालयका अंश बताया गया है।

अर्बुद पर्वतमें अग्निकुल राजपूतवंश उत्पन्न हुआ था। इसी वंशका अपर नाम परमार है। ‘पर’का शत्रु और ‘मार’का अर्थ नाशक है। पहले दैत्य वेदध्वंस करते थे। दैत्योंको मारनेके लिये वशिष्ठने यज्ञ आरम्भ किया। उसी यज्ञकुण्डसे कोई महावीर निकले थे। उन्होंने दैत्योंको मार डाला, जिससे उनका नाम परमार पड़ा।

अर्बुदाचल जैनसम्प्रदायका एक प्रधान तीर्थ हैं। यहां बड़ दूरदेशसे धार्मिक जैन तीर्थ दर्शन करनेकी आते हैं। आबूकी मन्दिरादिमें जो विवरण लिखा, उसमें एक कौतुक देख पड़ा है। जैनोंने भी अनेक स्थलमें शिव और भगवतीका नाम ले मङ्गलाचरण किया है। इसीसे जान पड़ा, कि उस समय हिन्दू धर्मके साथ जैन मतका सामञ्जस्य बढ़ गया था। आबूपर अनेक शिवालय और विष्णुमन्दिर भी रहे। किन्तु इस समय उनमें कितने ही टूट-फूट गये हैं। पहले अचलेश्वर नामक शिवालयमें अधोरपत्नी रहते थे।

आबूपर कुल पांच मन्दिर बने हैं। उनमें एक ऋषभनाथका है। वह जैनोके चौबीस तीर्थङ्करमें प्रथम रहे। अपने मन्दिरमें आप चतुर्भूर्तिसे मिले बैठे हैं। मन्दिर तितक्का है। पूर्व, पश्चिम, उत्तर एवं दक्षिण चार द्वार लगे हैं। मन्दिरसे पश्चिम ओर चार और तीन दिक् एक-एक मण्डप है। प्रत्येक मण्डपमें आठ खम्भे खड़े हैं। ऋषभनाथके उत्तर दूसरे बड़े मन्दिरमें वाष्ठा शाहका मण्डप है। फिर दक्षिण-पूर्व दिक् आदीश्वर एवं गोरक्षलाञ्छनका मन्दिर लगा है। ऋषभनाथसे

और उत्तर नेमीनाथका मन्दिर है। उपरोक्त दोनों मन्दिर साफ सफेद पत्थरके बने हैं। खम्भे, छत और मण्डपके भीतरकी खोदायीका काम बहुत अच्छा है। संवत् १०८८ को किसी सेठने आदिनाथका मन्दिर बनवाया था। पीछे संवत् १३७८ के ज्येष्ठमासकी शुक्ला नवमीको उसको मरम्मत हुई। आदिनाथके मन्दिरकी चारो ओर ५५ प्रकोष्ठ वेष्टित हैं। प्रत्येक प्रकोष्ठमें एक-एक तीर्थङ्करकी पाषाणमयी मूर्ति पैरपर पैर चढ़ा योगासनसे बैठी है। उत्तर-पश्चिम दिक्के किसी प्रकोष्ठमें अम्बाजीकी प्रतिमूर्ति है। द्वारके सम्मुख पत्थरके नौ हाथी खड़े हैं। अङ्ग-प्रत्यङ्ग ऐसी सफाईसे बना, कि नकली कहा जा नहीं सकता। शरीरमें केवल जीवन और चलत्शक्तिका अभाव है। हाथियोंपर रत्नभूषित हीरे रखे, सम्मुख महावत और पीछे विमलशाह सेठ बैठे हैं। दूसरी जगह द्वारपर विमलशाह देवताके दर्शन करनेको हाथीसे उतरते हैं। जगत्में ऐसी जीवन्त प्रतिमूर्ति और कहीं नहीं देखते।

संवत् १२८७ एवं १२८३ को वासुपाल तथा तेजोपालने नेमीनाथका मन्दिर निर्माण-कराया था। यह दोनों सहोदर रहे। अनहिलपत्तनमें इनका वासस्थान था। गुजराती राजा वीरधवलके समय दोनों भाई प्रधान मन्त्री रहे।

पहले आबू पर्वतपर ८०८ शिवलिङ्ग और अन्य देव देवीकी मूर्ति प्रतिष्ठित थी। प्रस्तरपर खुदा-कब किस महात्माने मन्दिर बनवाया और कब किस महात्माने सकल मन्दिरका संस्कार कराया। किन्तु अनेक दिन बीत जानेसे सकल अक्षर पढ़नेमें नहीं आते। यह ठहरना कठिन पड़ा, सकल मन्दिर बनवानेमें कितना रुपया लगा था। आबू पर्वतकी चारो ओर प्रायः डेढ़सौ कोसतक कहीं सफेद पत्थर नहीं निकलता। अतएव बहुत दूरसे जूटकी पौठपर लदकर यह पत्थर आया होगा। फिर पहाड़पर चढ़ानेमें भी कम खर्च नहीं पड़ा। किसने खोलकर कहा,—खम्भे, मेहराब, और खोदायीमें कितना काल बीता था।

आबू पर्वतपर जैन राजाओंका नगर न रहा। यदि होता, तो उसका कोई न कोई चिह्न अवश्य देख पड़ता। किन्तु इस शृङ्गसे दक्षिण चन्द्रावती नामक बड़े नगरका चिह्न आज भी चमकता है। गुजरात-नृपतिके मन्त्रियों और परमारोंने उसे बनवाया था। आजकल उसका भग्नावशेष रोज परिष्कार होता है। अहमदाबादके सुलतान, गिरनारके ठाकुर और सिरोहीके सेठ समस्त प्रस्तरादि उठा ले गये हैं।

यहां सफेद पत्थरकी दो खानि हैं। किन्तु उनका पत्थर अतिशय कठिन और उज्ज्वल है। इसीसे ऊपर काम होनेसे टूट जाता है। कहा जा न सका, जैनमन्दिर बनते समय कहांसे पत्थर मंगाया गया था।

आबूपर गेहूं, यव, ज्वार, मकई, धान, दाल, आलू और कयी तरहकी दूसरी फसल भी तैयार होती है। शिमला, नैनीताल प्रभृतिके पहाड़ी मधुकी भांति यहां भी उत्कृष्ट मधु मिलता है। वन्य पशुके मध्य शेर और स्याहगोश कभी-कभी पहाड़पर चढ़ता है। किन्तु चीता, भालू, सेह और खुरगोश प्रायः सर्वदा ही देख पड़ता है। गीदड़ और लोमड़ी यहां नहीं। सांभर हरिण दल बांधकर चरते-चरते पहाड़पर आता, किन्तु चित्रमृग नीचे ही घूमा करता है। आबू पर्वतपर सर्पका भय अधिक नहीं, कहीं-कहीं कोई अजगर कभी मिल जाता है।

मन्दिरके प्रस्तरखण्डमें इसका समस्त विवरण खुदा, आबूपर मन्दिर कब किस राजा वा धनाढ्यने बनवाया और कब किस महात्माने उसका संस्कार करवाया था। स्थान-स्थानमें उन महात्माका वंश-विवरण और मन्त्री तथा कारीगरका नाम देखायी देता है। हिन्दू विश्वकोषमें इस विषयका विस्तारित विवरण लिखना असम्भव है। हम कुछ प्रसिद्ध व्यक्तियों के नाम परिवार और समयके साथ नीचे लिखते हैं,—

अणहिलवाड़का चापोतुकटवंश—वनराज, योगराज, चेम-राज, भूयड़, वीरसिंह, रत्नादित्य, सामन्तसिंह।

अणहिलवाड़का चौहान-राजपरिवार—मूलराज, चासुण्ड सन् ८८६ ई०; वल्लभ, दुर्लभ १००८; भीम, कर्णदेव,

सिद्धराज १०८३; कुमारपाल ११४३; अजयपाल, मूलराज, भीमदेव ११७८ और तत्पुत्र त्रिभुवनपाल सन् १२४२ ई०।

अणहिलवाड़का वाघेला-परिवार—धवल, अर्णोराज, लवण-प्रसाद, वीरधवल सन् १२१८ ई०, वीसलदेव, अर्जुन-देव, सारङ्गदेव, कर्णदेव।

वीरधवलका मन्त्री—तेजःपाल, वस्तुपाल। (सन् १२१८ से १२३७ ई०)

चन्द्रावतीका चौहानराजवंश—तेजसिंह सन् १३३१ ई०; कान्हरदेव, सामन्तसिंह सन् १३३८ ई०।

मैदपाटपरिवार गुहिलवंश—बप्पक, गुहिल, भोज, शील, कालभोज, भर्तृभट, सिंह, महायिक, खुमान, अल्लट, नरवाहन, शक्तिकुमार, शुचिवर्मा, नरवर्मा, कीर्तिवर्मा, हंसपाल, वेरिसिंह, विजयसिंह, अरिसिंह, चोड़, विक्रमसिंह, चोत्रसिंह, सामन्तसिंह (विक्रम-संवत् १२८७); कुमारसिंह, मथनसिंह, पद्मसिंह, ज्यैत्र-सिंह, तेजःसिंह, समरसिंह (सन् १२७८ ई०)। रत्नसिंह, जयसिंह, लक्ष्मसिंह, अजयसिंह, हम्मीर, चोत्रसिंह, लक्षसिंह, मोकलदेव सन् १४२८ ई०, कुम्भकर्ण सन् १४३८ ई०।

शक्राभरी चौहान-वात्सल—सिन्धुपुत्र, लक्ष्मण, माणिक्य, अधिराज, महीन्दु, सिन्धुराज, कुलवर्धन, प्रभुराम, धुन्धन चौहान, समरसिंह, दशरथ, लावण्यकर्ण एवं लुधन सन् १३२१ ई०।

आबोधन (सं० स्त्री०) आ समन्तात् वोषयति आ-वुध णिच् ल्युट् णिच्लोपः। १ विद्या, बुद्धि, इत्य, समभ। २ शिक्षा, समाचार, तालीम, आगाही।

आब्द (सं० त्रि०) अब्दे मेवे भवं तस्येदं इति वा, अण्। १ मेघजात, बादलमें पैदा होनेवाला। २ मेघसम्बन्धीय, अबरी, बादलसे तासुक् रखनेवाला। आब्दिक (सं० त्रि०) वार्षिक, सालाना, साली। (स्त्री०) आब्दिकी।

आब्दिका (सं० स्त्री०) तिलिङ्गी, इमली।

आबोट लेफटिनेण्ट—लाहोर-सरकारके अधीनस्थ राज-कीय पदाधिकारी। पञ्जाबके हजारों जिलेमें इनके भूमिकर बांध देनेपर सन् १८४८ ई०को पूर्ण रीतिसे

शान्ति विराजने लगी थी। मूलतानमें उपद्रव उठनेपर किलेकी फौज आब्बोटसे बिगड़ पड़ी, किन्तु मुसलमानोंने कोई वाधा न डाली। उस समय यह अशिक्षित मुसलमानी सेनाके सहारे अपने स्थानपर डटे रहे। अन्तको गुजरातके समरमें आब्बोटने विजयी हो हजारों जिला अंगरेजी राज्यसे मिला दिया। यह सन् १८४७ से १८५३ ई० तक हजारों जिलेके डिपुटी कमिन्स थे।

आब्बोटाबाद (अबोटाबाद)—१ पञ्जाब प्रान्तके हजारों जिलेकी तहसील। यह अक्षा० ३४° उ० और द्राघि० ७३° १६' पू० पर अवस्थित है। क्षेत्रफल ७१४ वर्ग मील है। जिन पार्वत्य उपत्यकाओंमें डोढ़ और हरोह नदी बहती, उनकी भूमि कुछ इस तहसीलमें आ गयी है। पूर्वकी ओर भी पार्वत्य देश है। उत्तर एवं उत्तरपूर्व पहाड़की बगलमें जङ्गली पेड़ खड़े हैं। पूर्वमें प्रधानतः खराल तथा ढूँड, केन्द्रमें जटून और पश्चिममें अवानों एवं गूजरोँकी साथ तनावली लोग रहते हैं। २ आब्बोटाबाद तहसीलकी नगरी और छावनी। यह मेजर जेम्स आब्बोटके नामसे अभिहित और अक्षा० ३४° ८' १५" उ० तथा द्राघि० ७३° १५' ३०" पू० पर अवस्थित है। ओरास-मैदानके दक्षिण कोणमें पड़नेसे शोभा विचित्र देख पड़ती है। यह रावलपिण्डीसे ६३, मोरीसे ४०, और पेशावरसे ११७ मील दूर है। छावनीमें दो-तिहाई और नगरीमें एक-तिहाई लोग रहते हैं। किलेमें गुर्खा तथा पञ्जाबी फौज और पहाड़ी तोपखाना है। साल भर कुएँका पानी खूब मिलता, किन्तु गर्मीमें तीन महीने सूख जाता है। बाजार, कचहरी, खजाना, केदखाना, हस्पताल, डाकबंगला, पोष्टाफिस और तारघर सभी कुछ मौजूद है। दिसम्बरसे मार्च मास तक कभी-कभी बर्फ गिरती है। पानी बरसनेसे कोई मास खाली नहीं जाता। प्रधानतः सितम्बर और अक्टोबर मास ज्वरका प्रकोप होता है। आम (हिं० पु०), १ अम्र, आसमान्। २ आव, जल। (स्त्री०) ३ आभा, चमक।

आभग (सं० पु०) आ सम्यक् भगं साहाय्य यत्

बहुव्री०। अतिशय माहात्म्ययुक्त देवता। जो देवता यज्ञमें यथेष्ट भाग पाता, वही आभग कहाता है।

आभण्डन (सं० स्त्री०) आ-भण्ड-लुगट्। निरूपण, तशरीह।

आभयजात्य (सं० त्रि०) अभय जातस्यापत्यम्, यच्। गणादिभ्यो यच्। पा ४।१।१०५। अभयजातसे उत्पन्न होने-वाला, जो अभयजातसे निकला हो। (स्त्री०) डीप्, य लोपः। आभयजाती।

आभरण (सं० स्त्री०) आम्त्रियन्ते अङ्गेषु आध्रियन्ते शोभार्थम्, आ-भृ कर्मणि लुगट्। १ भूषण, अलङ्कार, जेवर, गहना। आभरण चार प्रकारका होता है,—आबोध्य, बन्धनीय, क्षेप्य और आरोप्य। अङ्गको छेदकर पहना जानेवाला आबोध्य, बंधनेवाला बन्धनीय, डाला जानेवाला क्षेप्य और लटकनेवाला आरोप्य कहता है। कुण्डलादि आबोध्य, कुसुमादि बन्धनीय, नूपुरादि क्षेप्य और हारादि आरोप्य है। अलङ्कार देखो। भावे-लुगट्। २ सम्यक् पोषण, परवरिश।

आभरत् (सं० त्रि०) लानेवाला। (स्त्री०) आभरन्ती।

आभरत्सु (वै० त्रि०) सम्पत्ति प्रभृति लानेवाला, जो माल-असबाब ला रहा हो।

आभरित (सं० त्रि०) आभरः आभरणं जातोऽस्य, आ-भृ तारकादित्वात् इतच् इट् च। धूरित, अलङ्कृत, भरा या जेवरसे सजा हुआ।

आभर्मन् (सं० स्त्री०) आ-भृ-मनिन्। गर्भादिका सम्यक् भरण, पोषण, परवरिश।

आभा (सं० स्त्री०) आ-भा-अङ् टाप्। १ दीप्ति, रौशनी। २ स्फुरण, चमक। ३ शोभा, खूब, वसूरती। ४ छाया, परछाहीं। ५ उपमान, इमकान्। ६ बबुर-वृक्ष, बबूल। ७ महाशतावरी, बड़ी सतावर। ८ वातरोग विशेष, बावकी बीमारी।

समासान्तमें 'आभा'का आभ हो जाता और सदृशका अर्थ लगता है। जैसे—हेमाभ, हेमसदृश।

आभागुगुल (सं० पु०) गुग्गुलुभेद। आभाफल, त्रिक तथा व्योषको समान भाग लेने एवं सबकी बराबर गुग्गुलु मिलानेसे यह औषध प्रस्तुत होता है। (चक्रपाणिहस्यत, संग्रह)

आभाणक (सं० पु०) १ नास्तिकविशेष, किसी किस्मका सुलहिद। २ लोकोक्ति, मसूल।

आभाति (सं० स्त्री०) आ-भा-क्तिन्। १ प्रतिविम्ब, अक्स। २ द्युति, दमक।

आभार (सं० पु०) आ-भृज्-घञ्। १ सम्यक् भार, भारी बोझ। २ गृहस्थीका भार, घरका बोझ। ३ उपकार, एहसान। वर्णवृत्त विशेष। इसमें आठ तगण रहते हैं। जैसे—गीऊण गीऊण गीऊण बोली न। संसार से पार हो जाव जो लो न॥

आभारिन् (सं० त्रि०) आभारयुक्त, एहसानमन्द। (पु०) आभारी। (स्त्री०) आभारिणी।

आभाष (सं० पु०) आ-भाष्-अच्। १ सम्बोधन, गुजारिश। २ भूमिका, तमहोद।

आभाषण (सं० स्त्री०) आ-भाष भावे लुगट्। परस्पर कथोपकथन, आलाप, सम्बोधन, बातचीत। 'स्वादाभाषणमालापः।' (अमर)

आभाष्य (सं० त्रि०) आ-भाष्-ल्यत्। १ आमन्त्रणीय, सम्बोधनीय, आलाप्य, बातचीत किये जाने का बिल, जिससे बात हो सके। (अव्य०) ल्यप्। २ सम्बोधन करके, बोलके।

आभास (सं० पु०) आभासते, आ-भास-अच्। १ उपाधिके तुल्यता हेतु प्रतिविम्ब, अक्स, परछाहीं। २ दुष्ट हेतु प्रभृति, झूठा देखावा। भावे घञ्। ३ तुल्य प्रकाश, औपम्य, शबाहत, मिलती-जुलती रौशनी। आभास्यतेऽनेन, आ-भास-णिच् करणे अच्, णिच् लोपः। ४ ग्रन्थावतरणके निमित्त अभिप्राय वर्णनरूप व्याख्यान विशेष, किताब बनानेके लिये मतलब बतानेकी बात। चलती बोलीमें इङ्कित वा सामान्य अभिप्रायको भी आभास कहते हैं।

आभासन (सं० स्त्री०) आ-भास्-लुगट्। द्योतन, प्रकाशन, दरखुशानी, सफाई।

आभासर (सं० त्रि०) आ-भास-धुरच्। भजभासमिदो धुरच्। पा ३।२।१६१। १ सम्यग्-दोषि-शील, खूब चमकनेवाला। (पु०) २ गणदेव विशेष। यह संख्यामें साठ होते हैं।

आभासर (सं० त्रि०) आ-भास-वरच्। खशभासविष-

कसो वरच्। पा ३।२।१७५। १ सम्यग्दोषिशील, खूब चमकनेवाला। (पु०) २ गणदेव विशेष। इनकी संख्या चौंसठ है। ३ द्वादश परिमित गणदेव विशेष।

आभिचरणिक (सं० त्रि०) अभिचरणं प्रयोजनमस्य, ठञ्। अथर्ववेदादि-प्रोक्त शत्रु प्रभृतिके मारण, उच्चाटन, वशीकरणादि अभिचारसे सम्बन्ध रखनेवाला, आक्रोशगर्भ, लानतों। (स्त्री०) आभिचरणिकी।

आभिचारिक (सं० त्रि०) अभिचारप्रयोजनार्थे ठञ्। १ आक्रोशगर्भ, लानतों, बददुवासे ताल्लुक रखनेवाला। (स्त्री०) २ अभिचार, जादू।

आभिजन (सं० त्रि०) अभिजनादागतं अभिजनस्येदं वा, अभि-जन-अण्। १ वंश-परम्परादागत, नसली। (स्त्री०) २ दंशका महत्व, नस्लकी बुलन्दी। (स्त्री०) आभिजनी।

आभिजात्य (सं० स्त्री०) अभिजातस्य भावः, अण्। १ कौलीन्य, शराफत। २ पाण्डित्य, सौन्दर्य, इत्सदादारी, ख बसूरती।

आभिजित (सं० त्रि०) अभिजिति नक्षत्रे जातम्, अण्। अभिजित् नक्षत्रजात, अभिजित्में पैदा होनेवाला। (स्त्री०) आभिजिती।

आभिजित्य, आभिजित देखो।

आभिधा (सं० स्त्री०) अभिधैव, स्वार्थे ऽण्।

अभिधा देखो।

आभिधातक (सं० स्त्री०) अभिधां तकति संहते, अच्। अभिधा देखो।

आभिधानिक (सं० त्रि०) अभिधानादागतम्, ठक्। १ अभिधान-सम्बन्धीय, फरहङ्गनवीसीसे ताल्लुक रखनेवाला, जो लुगात या कोषमें हो। (पु०) २ कोषकार, फरहङ्गनवीस, लुगात या डिक्शनरी बनानेवाला शख्स। (स्त्री०) अभिधानिकी।

आभिधानीयक (सं० स्त्री०) अभिधानीयस्य भावः, वुज्। शोषधगुणोत्तमाद् वुज्। पा ३।२।१२२। १ कथनीयत्व, इसका वस्फ, नामका गुण। (त्रि०) २ शब्दसम्बन्धीय, लफ्जसे ताल्लुक रखनेवाला। (स्त्री०) आभिधानीयकी।

आभिप्लविक (सं० त्रि०) अभिप्लवे विहितम्, ठक्।

१ अभिप्लवविहित, अभिप्लव नामक धार्मिक संस्कारसे सम्बन्ध रखनेवाला। यह शब्द सूक्त सामादिका विशेषण है। (पु०) अभिप्लवाय हितम्। २ गवामयन यागके अन्तर्गत षड्वि-विशेष।

आभिमानिक (सं० त्रि०) अभिमाने निर्वातम्, ठक्। सांख्यमत-सिद्ध अभिमानहेतु उत्पादित (उभय इन्द्रिय, शब्दादि पञ्चतन्मात्र)।

आभिमुख्य (सं० स्त्री०) अभिमुखस्य भावः, थज्। अभिमुखत्व, तर्फ, ओर। २ सम्मुखत्व, सामना। ३ प्रसन्नता, खुशी।

आभिरूपक (सं० स्त्री०) आभिरूपस्य भावः, वुज्। हनमनोत्रादिभ्यश्च। पा ३।१।१३३। सौन्दर्य, खूबसूरती।

आभिरूप्य (सं० स्त्री०) आभिरूपस्य भावः, थज्। १ सौन्दर्य, उत्कर्ष, पाण्डित्य, खूबसूरती, सरफराजी, इल्लादारी।

आभिषिक्त (सं० त्रि०) अभिषिक्तमभिषेकः तेन निर्वातम्, थज्। सङ्गलादिभ्यश्च। पा ३।१।७५। अभिषेक-निष्पन्न, अभिषेकसे निकला हुआ।

आभिषेचनिक (सं० त्रि०) अभिषेचनं राज्याभिषेकः सामान्याभिषेको वा प्रयोजनमस्य, ठज्। राज्याभिषेकके उपयुक्त। जिस द्रव्यसे राज्याभिषेक करनेका विधि होता, वह आभिषेचनिक कहाता है। मृत्तिका, सुवर्ण, विविध रत्न, नाना उपकरण-युक्त आभिषेचनिक भाण्ड, स्वर्णमय ताम्रमय रजतमय एवं त्रिकोणाकार पृथिवी, पूर्णकुम्भ, पुष्प, लाजा, घृत, दुग्ध, शमी, पिप्पल और पलासकी समित्, मधुयुक्त घृत, यज्ञ-दुग्धुरका स्रुव और स्वर्णभूषित सङ्ग राज्याभिषेकमें काम आनेसे आभिषेचनिक है।

आभिषेचनिकी (सं० स्त्री०) अभिषेचनमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः, ठक्-डीप्। १ राज्याभिषेकके अधिकारपर लिखित महाभारतका पर्व। अभिषेचनं स्नानं प्रयोजनमस्य, ठज्। २ स्नानार्थ विधान, गुसलका कायदा। ३ विहित स्नानका द्रव्य और मन्त्रादि। ४ तत्तत् कार्यमें अधिकार पानेको वैदिक, तान्त्रिक और पौराणिक मन्त्र। ५ तत्तत् द्रव्य-विशेष। ७ अभिषेकका विधान। ८ रुद्राभिषेक

द्रव्य। ९ रुद्राभिषेकका विधान। १० वेदाभिषेकादि साधन द्रव्य।

आभिहारिक (सं० त्रि०) अभिहारः प्रयोजनमस्य तत्र साधु वा, ठज्। १ अभिहारके उपयुक्त। २ उपट्टीकनसम्बन्धीय। ३ भेंटका, नजरानेसे ताल्लुक रखनेवाला।

आभीक (सं० स्त्री०) अभीकेन दृष्टं साम अण्। अभीक नामक ऋषिका दृष्ट साम विशेष। यह अत्यन्त मधुर होता है।

आभीक्ष्ण (सं० त्रि०) १ अधिक, नित्य, ज्यादा, सुदामी। (अव्य०) २ सदा, अल-अह्वाम।

आभीक्ष्ण्य (सं० स्त्री०) अभीक्ष्ण्यमित्यव्ययं तस्य भावः, थज्। अभीक्ष्ण्यणमुल् च। पा ३।४।२९। सर्वदा, सातत्य, पौनःपुन्य, अविच्छेदसे, रूप क्रियाका करना, एयादा, तकरार, दोहराव।

आभीय (सं० त्रि०) पाणिनिके 'भ'में समाप्त होने-वाले अध्यायसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आभीर (सं० पु०) आ सम्यक् भियं भीति राति दधाति, रा-क्। १ गोप, अहीर। २ सङ्कीर्ण जाति विशेष, भील। आभीर ब्राह्मणके औरस और अश्वषाके गर्भसे उत्पन्न हैं। विष्णुपुराणादिमें इन्हें क्लेच्छजाति कहा गया है। सिन्धुनदके कूलवर्ती आभीरोंने कृष्णकी रमणियोंको छीन लिया था। आजकल युक्तप्रदेशके ग्वाल्लोमें प्रायः सकल ही आभीर जातीय हैं। शकोंसे पहले आभीर जातिने सिन्धुप्रदेशमें दश पुरुष राजत्व किया था। अहीर देखो।

आभीरनट (सं० पु०) रागविशेष। इसमें आभीर और नट दोनो राग मिले रहते हैं।

आभीरपत्ति, आभीरपत्नी देखो।

आभीरपत्निका, आभीरपत्नी देखो।

आभीरपत्नी (सं० स्त्री०) ६-तत्, कृदिकारन्तात्वाद्वा डीप्। गोपप्रधान ग्राम, घोष, अहिराना, जिस गांवमें बहुतसे अहीर रहें।

'घोष आभीरपत्नी स्नात्।' (चमर)

आभीरी (सं० स्त्री०) आभीरस्य पत्नी आभीरजातिर्वा, स्त्रीत्वात् डीप्। १ गोप जातिकी स्त्री, गोपी, अहीरिन।

२ मङ्गाशुद्धी । 'आभीरो तु मङ्गाशुद्धी ।' (चमर) ३ आभीरोकी भाषा ।

आभील (सं० क्ली०) आ सम्यक् भियं लाति, आभी-
ला-क । १ कष्ट, तकलीफ़ । २ भय, खौफ़ ।

'स्वात् कष्टं कच्छमाभीलं त्रिषेष्वा भेद्यगमि यत् ।' (चमर)

(त्रि०) ३ कष्टयुक्त, तकलीफ़ उठानेवाला ।

'कामिनी विवलीयन्ते तस्या एव च लचणे ।

आभीलं त्रिषु कटेना नाभिगच्छेऽपि दृश्यते ॥' (व्याडि)

४ भयानक, खौफ़नाक ।

आभीशव (सं० क्ली०) अभीशुना दृष्टं साम अण् ।
साम विशेष, अभीशुका देखा हुआ साम ।

आभु (सं० त्रि०) आ समन्ताद् भवति, आ-भू-डु ।

१ विभु, व्यापक, मामूर, भरा या समाया हुआ ।

२ रिक्त, खाली । ३ बहुमुष्टि, बखील, कच्छूस ।

आभुग्न (सं० त्रि०) आ-भुज कर्तरि कर्मणि वा क्त,
तकारस्य नकारः । १ आकुञ्चित, मुड़ा हुआ ।

२ अल्पवक्त्र, कुछ टेढ़ा । ३ चारो ओर भग्न, हर
तर्फ़ टूटा हुआ ।

'आभुग्रे न विवर्तिता वलिमता मध्येन कसलनी ।' (शकुन्तला)

आभू (वै० त्रि०) आ-भू-क्तिप् । आभू देखो ।

आभूक (वै० त्रि०) रिक्त, शून्य, निर्बल, खाली,
नातवान् ।

आभूखन (हिं०) आभरण देखो ।

आभूति (सं० स्त्री०) आ-भू-क्तिन् । १ चमता,
सामर्थ्य, इस्तेदाद, काबिलियत । २ पराक्रान्त बल,
दबा देनेकी ताकत ।

आभूषण (सं० पु०) आभरण देखो ।

आभूषित, आभरित देखो ।

आभूषेण्य (वै० त्रि०) १ आज्ञा माने जाने योग्य,
हुक्म बजाये जाने काबिल । २ प्रशंसनीय, तारीफ़
लायक ।

आभीरी (सं० स्त्री०) राग विशेष, एक रागिणी ।

सचराचर इसे आभीरीकल्याण वा अहीरीकल्याण
कहते हैं । कल्याण, गुच्छरी, श्याम और देशकारकी
योगसे यह बनी है । स्वरयाम है,—स ऋ ग म प ध नि ।

आभोग (सं० पु०) आ-भुज आधारे घञ् । १ परि-
पूर्णता, तमामी, कुक्षियत ।

'आभोगः परिपूर्णता । (चमर)

२ वरुणका छत्र । ३ यत्न, तदवीर ।

'आभोगः परिपूर्णता वरुणहयवयोः ।' (विश्व-हेम)

"अयमाभोगस्तपोवनस्य ।" (शकुन्तला)

४ भणिता, सङ्गीतादिके शेषमें कविका नामकथन,
गाने वगैरहके अखीरमें शायरके नामका पड़ना ।

'यत्रैव कविनाम स्वात् स आभोग इतीरितः ।' (सङ्गीतदामोदर)

किन्तु आजकल जंचे स्वरमें आवाज लगानेको
भी आभोग कहते हैं । ५ सम्यक् सुखादिका अनुभव,
अच्छीतरह आराम वगैरहका उठाना ।

आभोग्य (वै० त्रि०) आभोगं याति, आभोग-या-
क । १ आस्वाद्य, मजा लिये जाने काबिल । यह
शब्द सोमरसादिका विशेषण है । (क्ली०) २ वृत्ति,
जीविका, रोजी, रोजगार ।

आभोगि (वै० स्त्री०) आभोगं विषयस्य सम्यक् सुखानुभव
करोति, आभोग कृत्यर्थे णिच्-इन् । विषयाभोग,
सम्यक् सुखानुभव, अच्छीतरह आरामका उठाना ।

आभोगिन् (सं० त्रि०) आभोगोऽस्त्यस्य, इनि ।
१ परिपूर्ण, भरा-पूरा । २ यत्नवान्, तदवीर लड़ाने-
वाला । ३ सम्यक् सुखादियुक्त, खूब आराम लेने-
वाला । (पु०) आभोगी । (स्त्री०) आभोगिनी ।

आभ्यन्तर (सं० त्रि०) अभ्यन्तरे भवम्, अण् ।
मध्यवर्ती, दरमियानी, अन्दरूनी, भीतरी, बीचवाला ।
(स्त्री०) आभ्यन्तरी ।

आभ्यन्तरतपस् (सं० क्ली०) मध्यवर्ती तपस्या, अन्दरूनी
तौबा । यह प्रायश्चित्त, वैयाकृति, स्वाध्याय, विनय,
व्यसर्ग एवं शुभ ध्यानसे छः प्रकारका होता है ।

आभ्यन्तरिक, आभ्यन्तर देखो ।

आभ्यवकाशिक (सं० त्रि०) असंवृत वायुमें रहनेवाला,
जो खुली हवामें रहता हो ।

आभ्यवहारिक (सं० त्रि०) अभ्यवहाराय हितम्,
ठक् । भोजनीय, खाने लायक । भोक्ष, भोज्य,
भोजनीय, अभ्यवहार्य, आभ्यवहारिक इत्यादि शब्दके
अर्थ प्रमेद पर मतान्तर मिलता है । पाणिनिने

(७।३।६८) 'भोज्यं भक्ष्यं' सूत्र कहा है। किन्तु कात्यायनके कथानुसार उपरोक्त सूत्रमें 'भक्ष्य'के स्थानपर 'अभ्यवहार्य' शब्द लिखना उचित था। उनके ऐसा कहनेका तात्पर्य यह होता—भक्ष्यसे कठिन द्रव्यका खाना समझा जाता है, तरल का नहीं। किन्तु पतञ्जलिनै यह बात न मान कात्यायनको दोषी ठहराया है।

आभ्यागारिक (सं० त्रि०) आगारस्य अभि अभ्यागारं तस्मिन् तत्स्यकुटुम्बाभरणे व्यापृतः ठक्। कुटुम्बके भरणमें व्यापृत, खान्दान्की परवरिशमें लगा हुआ। 'उपाधाभ्यागारिको तु कुटुम्बव्यापृते नरि।' (हेन)

आभ्यादायिक (सं० स्त्री०) अभिसुख्येनादायः आदानं यस्य तस्मिन् हितम्, ठक्। पिता किंवा माताके कुलसे प्राप्त, नेहर या ससुरालसे मिला हुआ।

आभ्याशिक (सं० त्रि०) समोपस्थ, पड़ोसी, नजदीकी। (स्त्री०) आभ्याशिकी।

आभ्यासिक (सं० त्रि०) अभ्यासे निकटे भवम्, ठक्। १ निकटस्थित, नजदीक रहनेवाला। अभ्यासात् आम्नेद्धितोच्चरणादागतम्। २ अभ्यास-प्राप्त, मशकसे हासिल। ३ पुनःपुनः उच्चारण-जात, बारबार कहनेसे पैदा। (स्त्री०) आभ्यासिकी।

आभ्युदयिक (सं० स्त्री०) अभ्युदयः पुत्रजननादिः स प्रयोजनं यस्य, ठक्। १ वृद्धि-निमित्तक आह विशेष, बढ़तीके लिये पिण्डका पारना। नान्दी देखी। अन्न-प्राशन और विवाहसे पूर्व जो नान्दी आह किया जाता, वह सुखसौभाग्य बढ़ानेके लिये होनेसे आभ्युदयिक कहाता है। "अल्पन्ददालाभ्युदयिकीपु" (सिद्धान्तकौमुदी)

(त्रि०) २ माङ्गलिक, इकबाल-बखूश। ३ उदय वा आरम्भ सम्बन्धीय, उरुज या आगाजकी सुतालिक। (स्त्री०) आभ्युदयिकी।

आभ्रिक (सं० त्रि०) अभ्रया खनति, ठक्। १ अव-दारण द्वारा खनन करनेवाला, जो कुदाल या फावड़ेसे खोदता हो। अभ्रात् मेघात् आगतम्। २ बादलसे निकला हुआ। यह शब्द जल प्रभृतिका विशेषण है।

आभ्रज (सं० त्रि०) अभ्रे आकाशे भ्रमं करोति, ठक्। १

वा, ख्य। कुर्वादिभ्यो ण्यः। १ आकाशजात, आसमानो। २ अभ्र नामक पुरुषसे पैदा होनेवाला।

आम् (सं० अव्य०) अम गत्यादौ णिच् बाहु० ऋत्वा-भावः क्तिप्, णिच् लोपः। हां, ठीक, जरूर, समझा। यह स्वीकृति वा स्मृतिका द्योतक है।

आम (सं० त्रि०) आ ईषत् अस्यते पच्यते, आ अम घञ्। १ अपक्व, जो पकाया न गया हो। २ जो परोसा न गया हो। ३ कच्चा, जो पका न हो। ४ न पचा हुआ, जो हज्म न हो। 'आनोऽपक्वो तु वाच्यवत्।' (विश्व) वैद्यमतसे तरुणज्वर और अपक्व स्फोट भी आम कहाता है। (स्त्री०) ५ अपाक, खामी, कच्चापन। ६ मलावरोध, कब्ज। ७ तुषरहित धान्य, भूषी निकाला हुआ दाना। यथा,—

"शस्यं चोत्तमतं प्राहुः सतुषं धान्यमुच्यते।

आमं वितुषमित्युक्तं खिन्नमन्नमुदाहृतम्।" (वशिष्ठ)

क्षेत्रमें रहनेवालेको शस्य, सतुषको धान्य, तुषरहितको आम और पकाये जानेवाले द्रव्यको अन्न कहते हैं। शूद्रजाति दुग्ध किंवा तण्डुलादि यदि कच्चा दे, तो पात्रान्तरसे ब्राह्मण ले ले। शूद्रका आम अन्न और अन्न उच्छिष्टके तुल्य होता, इसीसे पूजा-पार्वणमें आमसे शूद्रादिका कार्य करना पड़ता है। आपत्काल या अग्नि न मिलनेपर और तीर्थस्थानमें द्विजातिके लोग भी आमसे आह कर सकते हैं। चन्द्र-सूर्यके ग्रहणमें आमसे आह्लादि करनेकी व्यवस्था है। किन्तु शूद्रादिको सकल समय आमसे ही काम लेना चाहिये। (पु०) अस्यते पीद्यतेऽनेन अम करणे घञ्। ८ रोगमात्र, बीमारी। ९ मलवेषम्यरोग, दुर्दं बिगड़नेकी बीमारी। १० अपक्वानजरा, हज्म न हुआ खाना सड़नेकी बीमारी। आहारका रससार जो अग्निलाघवसे नहीं पचता, वही आम कहाता और बहुव्याधिका समाश्रय होता है। इसे कोई आम, कोई अन्नरस, कोई मलसञ्चय, कोई प्रथमा और कोई दोषदुष्टि कहता है। अल्परसत्वं एवं उष्णसे धातुमान्य, अपाचित, दुष्ट और आमाशयगत रसका नाम आम है। (विजयरचित) ११ षट्प्रकार अजीर्ण रोग, कः किमकी बद्धहज्मकी आजार। अजीर्ण देखो।

(हि० पु०) १२ आम्र, अम्बा । आमका फल दो तरहका होता है, पालका और टपकेका । भूसे, पैरे या पत्तेमें दबाकर पकाया जानेवाला पाल और आप ही आप पककर चूनेवाला टपकेका आम कहाता है । पालवालेका 'पालका लड्डुवा' और डालसे चूनेवालेका नाम 'टपका' है । इसके विषयमें अनेक लोकोक्ति सुनते, जिनमें कुछ नीचे लिखते हैं,—

१ आमके आम गुठलियोंके दाम । अर्थात् आम ऐसा उत्तम पदार्थ होता, कि उसका रस चूस लेते भी गुठलीका दाम खड़ा हो जाता है । यह कहावत उस चीज पर चलती, जो दुःखद फायदा पहुंचाती है ।

२ आम खाने या पेड़ गिनने । प्रयोजन यह, कि व्यर्थ प्रश्न करनेसे कोई लाभ नहीं निकलता ।

३ बाड़ीमें बारह आम सड़ीमें अठारह आम । यानी बागमें पैसेके बारह और बाजारमें अठारह आम बिकते हैं । इस लोकोक्तिसे किसी वस्तुका न्यून मूल्य लगाना प्रमाणित है ।

वैद्यशास्त्रके मतसे कच्चा आम वायु, रक्त तथा पित्तको बढ़ाता और कषाय, अम्ल एवं सुगन्धि होता है । यह कफ और आमामयको नष्ट करता है । आधा पक्का और आधा कच्चा पित्तकारी है । पक्का आम वर्ण, रुचि, मांस, शुक्र और बलको बढ़ाता है । यह पित्त तथा कफको नष्ट करनेवाला, खादु, तुष्टिकर, अधिक धातुकर, हृद्य, गुरु, तृप्तिजनक, कान्तिजनक और तृष्णा एवं अमको हटानेवाला है । मधु मिलाकर आमका रस पीनेसे ज्वररोग, प्लीहा, वात और श्लेष्माको लाभ पहुंचता है । आमका पत्ता रुचिकारी और कफ तथा पित्तको नाश करनेवाला है । फूल रुचि और अन्निको बढ़ाता है । बकला कषाय, अम्ल एवं मेदक होता और कफ तथा वातको नाश करता है । चूसकर खाया जानेवाला आम रुचिकर, बलवीर्यकारी, लघु, शीतल, सारक और वातपित्तनाशक है । यह शीघ्र परिपाक होता है । इसका छना हुआ रस गुरु, रुचिकर, हृद्य, तृप्तिजनक, कफकर और वात-पित्त-नाशकारी है । आमकी फांक

गुरु, पुष्टिकर, रोचक, मधुर, बलकारी और शीघ्र पाक होनेवाली है । गुठली कषाय, अम्ल, मेदक और कफ-वात-नाशक होती है । अधिक आम खानेसे मन्दाग्नि, रक्तामय, चक्षुरोग और विषमज्वर बढ़ता है ।

बीजसे उत्पन्न होनेवालेको बीज और कलमसे तैयार होनेवाले आमको कलमी कहते हैं । हिमालय-पर इसका पेड़ जङ्गलमें आप ही आप जगता है । पत्ता हरा और लम्बा होता है । माघ-फाल्गुन मास मौसम और चैत्र-वैशाखमें उसके झड़ जानेसे छोटा-छोटा फल लगता है । कच्चे फलको साधारणतः टिकोरा, केरी या अंबिया कहते हैं । कच्चेका सफेद और पके आमका गूदा पीला होता है । कलमी आमकी गुठली बहुत छोटी रहती और उसपर बेशे गूदेकी मोटी तह चढ़ती है । आमका कलम इसतरह तैयार किया जाता है,—

प्रथम किसी पात्रमें अच्छी मट्टी और हड्डोकी खाद डाल बीज बोते हैं । पौधा निकल आनेसे बढ़िया आमकी डालपर चढ़ा और बांध दिया जाता है । पीछे दोनोंके आपसमें मिल जानेसे पहला पौधा अलग निकाल लेते हैं । इससे कलममें साथवाले आमका गुण खिंच आता है । कलमी आम कई तरहका होता है । जैसे—बम्बेया, मालदहा, लंगड़ा, सफेदा, कृष्णभोग, पायरी, हापुस, फजली, तोतापरी इत्यादि ।

आमके रसको निकाल और किसी बर्तन या कपड़े पर सुखाकर जो रोट्टी बनाते, उसे अमावस या अमरस कहते हैं । अंबियाकी चटनी बहुत अच्छी होती और नमक, मिर्च, पुदीना तथा चीनी या गुड़ डाल कर बनती है । इसका अचार या सुरब्बा भी डालते हैं । हिन्दुस्थानी पके आमको सिरकेमें डुबो रखते और बहुत दिनतक खाया करते हैं । आमकी फांक सुखाकर रखनेसे चटनी बनाने और दालमें डालनेके काम आती है । हिन्दुस्थानमें प्रवाद है,—पहले आम पृथिवीपर न रहा । इन्द्रको जोत रावण इसे स्वर्गसे ले आया था ।

आमका काष्ठ अधिक दृढ़ न होते भी चौखट, बाजू, उत्तरंग, कपाट और तख्ता बनानेके काम आ जाता है। बकले और पत्तेसे पौला रङ्ग तैयार करते हैं। पशुको प्रथम आमका पत्ता खिलाया फिर उसके पेशाबसे ध्योरी रङ्ग बनाया जाता है।
अन्य विवरण अब शब्दमें देखी।

(अ० वि०) १३ सामान्य, सार्वत्रिक, मामूली, मशमूल।

आमङ्खलितयार (अ० पु०) सामान्य अधिकार, मामूली डुक।

आमक (सं० त्रि०) १ अपक्व, कच्चा। (पु०) २ कुआण्ड, कुम्हड़ा।

आमकुम्भ (सं० पु०) अपक्व मृत्तिकाका घट, कच्ची मट्टीका घड़ा।

आमखास (अ० पु०) प्रासादके भीतर नृपतिके बैठनेका स्थान, महलमें बादशाहकी नशिस्तका कमरा।

आमगन्धि (सं० त्रि०) आमस्यापक्वस्य गन्ध इव गन्धो यस्य, इत् समा०। १ विस्त्र-गन्धयुक्त, बिसायंध छोड़नेवाला। (स्त्री०) २ चिता-धूमादिका गन्ध, कच्चे गोशत या जलती लाशकी बू, बिसायंध।

आमगन्धिक, आमगन्धि देखी।

आमगन्धिहरिद्रा (सं० स्त्री०) आमाहलदी।

आमघ्नी (सं० स्त्री०) कटुका, कुटकी।

आमचणक (सं० पु०) अपक्व चणक, कच्चा चना। यह शीतल, रुच्य, सन्तर्पण, दृष्ट्या-दाह-हर, अश्मरी-शोष-घ्न, कषाय और ईषत्-कटु-वीर्य होता है। (राजनिचष्टु)

आमज्वर (सं० पु०) आमो अपक्वः ज्वरः, कर्मधा०। अपक्व ज्वर, ताजा बुखार। तरुण अवस्थाको न लांघनेवाले बुखारको आमज्वर कहते हैं। इसका लिङ्ग लाला-प्रसेक, हृत्तास, हृदयकी अशुद्धि, अरोचक, तन्द्रा, आलस्य, अविपाक, वैरस्य और गुरुगात्रता आदि है। (नाथनिदान)

आमड़ा (हिं० पु०) आम्रातक, एक पेड़ और फल।

यह हिन्दुस्थानमें कम, किन्तु बङ्गालमें बहुत उत्पन्न

होता है। वृक्ष बड़ा लगते भी आम-जैसा नहीं देख पड़ता। सचराचर आमड़ा दो प्रकारका होता है,—देशी और विलायती। देशी आमड़ेको पत्ती कुछ बड़ी लगती और शरीफकी पत्तीसे मिलती-जुलती है। फल छोटा होता, गुठली बड़ी निकलती और गूदेका नाम नहीं मिलता; केवल गुठलीपर बकला चिपका रहता है। पकनेपर आम्र-जैसा गन्ध उठता और स्वाद अम्ल-मधुर लगता है। इसका अचार भी डालते हैं। देखनेमें फल बैरके बराबर होता है।

विलायती आमड़ा यवहीपसे आया है। फल बड़ा और पत्ता ठालू होता है। सुपक्व फल खानेमें मीठा लगता है। मुकुल फूटनेसे पहले पके बैरके साथ अम्ल-व्यञ्जन बनाकर खानेपर मुखरोचक होता है। कच्चे आमड़ेका भी व्यञ्जन बनता है। देशी आमड़ेसे दूध निकलनेपर वृक्ष सूख जाता है, किन्तु विलायतीमें दूध नहीं होता। इसकी लकड़ी हलकी और सुलायम रहती है, कोई चीज बनानेके काम नहीं आती। वृक्षमें पक्का फल रहते-रहते पत्ता झड़ और मुकुल फूट पड़ता है। कोई-कोई वृक्ष वर्षमें दो बार फलता है। संस्कृतमें आमड़ेको आम्रातक, पीतन, कपीतन, वर्षपाकी, पीतनक, कपिचड़ा, अम्र-वाटिक, भृङ्गीफल, रसाढ्य, तनुचीर, कपिप्रिय, अम्बरातक, अम्बरीय, कपिचूड़ और अम्बावर्त कहते हैं।

वैद्यशास्त्रके मतसे इसका कच्चा फल कषाय, अम्ल और हृदय एवं कण्ठ खोलनेवाला है। पक्का फल मधुराम्ल एवं स्निग्ध रहता और पित्त तथा कफको मारता है। किन्तु आमड़ा गुरु होता और सर्वदा खानेसे दृप्ति, बल, अजीर्ण एवं विष्टम्भिको बढ़ाता है। सुननेमें आता, कि सर्वदा खानेसे ज्वर, कुष्ठ, कास और ग्रन्थिका वातरोग उत्पन्न होता है। सुतरां इसे कुपत्य समझना चाहिये। कोई अङ्ग कट जानेसे आमड़ेकी हरी पत्ती बांटकर प्रलेप देनेपर रक्त नहीं निकलता। कानमें दर्द होनेसे भी पत्तीका रस छोड़ते हैं। सामान्य रक्तमाशय रोगमें बकलेका काथ पिलानेसे पीड़ा दब जाती है। पित्तजनित

अजीर्ण रोगमें पके फलका गूदा खिलानेसे लुधा बढ़ती है। यह बीज और क्लम दोनोंसे तैयार होता है। उद्भिद्देश्योंके कथनानुसार देशी और विदेशी दोनों प्रकारका आमण्ड एक ही वृक्ष ठहरता, केवल स्थानविशेषमें मृत्तिका और जल-वायुके गुणसे रूपान्तर हो जाता है। इसके थालेको गोंड़ने और विशेष यत्न करनेसे जल्द कीड़ा पड़ने तथा वृक्ष सूखने लगता है।

आमण्ड (सं० पु०) १ एरण्डवृक्ष, रैड़का पेड़।
२ शुक्लैरण्ड, सफेद रैड़का पेड़।

आमण्डक, आमण्ड देखो।

आमण्डवास (सं० पु०) आसव, शराब।

आमता (सं० स्त्री०) अपाक, खामी, कचायी।

आमतिन्तिड़ि (सं० स्त्री०) अपक्व तिन्तिड़ी, कच्ची इमली।

आमतिन्तिड़ी, आमतिन्तिड़ि देखो।

आमत्वक् (सं० त्रि०) कोमल चर्मावृत, नर्म चमड़ेवाला।

आमद (फा० स्त्री०) १ आगमन, अवाई। २ आय, आमदनी। रिशावत वगैरहको बालायी आमद कहते हैं। (त्रि०) ३ प्रकृत, कुदरती। ४ विशुद्ध, साधारण, साफ, सादा।

आमद आमद (फा० स्त्री०) आगमन-समाचार, आनेकी खबर।

आमद-खर्च (फा० पु०) आयव्यय, नफा-नुकसान।

“बखीकी आमद बीरासीका खर्च।” (लोकोक्ति)

आमदनी (फा० स्त्री०) १ आय, आमद, नफा। २ अधिक लाभ, दस्तूरी। ३ कर, राजस्व, महसूल, जुझी। ४ देशान्तरसे आनीत द्रव्य, इदखालमाल, बाहरसे अपने मुल्कमें लायी हुई चीज़। ५ द्रव्यके आनयनका समय, माल आनेका मौसम।

आमद-मुलाहिजा कागजात (फा० पु०) पत्रका उप-सर्पण, दस्तावेजका गुजार।

आमद-रफूत (फा० स्त्री०) १ आवागमन, आवा-जायी। २ मार्ग, राह। ३ सङ्गति, राह-रस्म।

आमदवाला (फा० पु०) १ धनी पुरुष, दौलतमन्द आ-मदौ। २ बाहरसे थोक माल मंगानेवाला सौदागर।

आमन (वै० स्त्री०) १ प्रवाह, अभिलाष, रगवत, सुहृन्वत। (हिं० स्त्री०) २ वर्षमें एक ही फस उत्पन्न करनेवाली भूमि, जो जमीन् सालमें एक ही फस देती हो। ३ हेमन्तकालमें उत्पन्न होनेवाला धान्य। यह धान्य जुलाई-अगस्त मास बोया और दिसम्बरमें काटा जाता है।

आमनस् (सं० त्रि०) अनुकूल, दयालु, रहमदिल, मेहरबान्।

आमनस्य (सं० स्त्री०) अप्रशस्त मनो यस्य स आमनस्तस्य भावः, यज्। १ वैमनस्य, दुश्मनी। २ दुःख, पीड़ा, ददं, तकलीफ़।

आमना (हिं० त्रि०) आना, समाना, अमाना।

आमनाय (हिं०) आनाय देखो।

आमना-सामना (हिं० पु०) सम्मुखोन होनेका भाव, मुकाबला, मुलाकात, भेंट।

आमनी (हिं०) आमन देखो।

आमने-सामने (हिं० अव्य०) प्रत्यक्ष, सम्मुख, रूबरू, मुकाबिलेमें, मुंहपर। आमने-सामने घर कद और बीच कद मैदान। (लोकोक्ति) यह कहावत निर्लेज और घृषित स्त्रीपर चलती है।

आमन्त्र (सं० पु०) आमादजीर्णात् त्रायते, आम-त्रैक, पृषोदरादित्वात् सुमागमः। १ एरण्डवृक्ष, रैड़का पेड़। फलका तैल पीनेसे अजीर्ण मल गिर पड़ता, इसीसे एरण्डवृक्ष आमन्त्र कहाता है। आ-मन्त्र-अच्। २ आमन्त्रण।

आमन्त्रण (सं० स्त्री०) आ अदन्त जुरा० मन्त्र-णिच्-लुट्, णिच् लोपः। १ अभिनन्दन, खुल्क। २ सम्बो-धन, पुकार। ३ निमन्त्रण, नेवता। ४ विवेचन, विचारण, ताम्बुल, गौर। ५ सम्बोधन कारक, निदायिया। (स्त्री०) टाप्। आमन्त्रणा।

आमन्त्रणाय (वै० त्रि०) सम्बोधन किया जानेवाला, जो पूछा जाने काविल हो।

आमन्त्रयिता (सं० पु०) निमन्त्रण देनेवाला पुरुष, मेजबान्, जो ब्राह्मणोंको न्योता देता हो।

आमन्त्रयितृ (सं० त्रि०) आमन्त्रण देनेवाला, जो बुलाता हो। (पु०) आमन्त्रयिता। (स्त्री०) आमन्त्रयित्री।

आमन्त्रित (सं० त्रि०) आ अदन्त चुरा० मन्त्र-
णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। सामन्त्रितम्। पा २।३।२८।
१ आवश्यक कर्ममें नियोजित, न्योता पाये हुआ।
(क्ली०) २ व्याकरण-परिभाषित सम्बोधनार्थक प्रथमा
विभक्ति, निदायिया। ३ सम्बोधन, पुकार।

आमन्त्रितत्व (सं० क्ली०) १ स्व-कर्तव्यप्रकारक धौजनक
प्रत्याख्यानाई वाक्यका प्रतिपादित्व। वैयाकरण
आमन्त्रितत्वको स्वाभिलषित कामाचारसे प्रवृत्त इष्ट-
साधनताका बोधन समझते हैं। २ आज्ञादेनेवालेके
प्रवृत्त प्रयोजनका इतरप्रवृत्तिप्रतिबन्धनसे उस प्रवृत्ति
विषयमें इष्टसाधनताबोधन।

आमन्त्र (सं० त्रि०) आ अदन्त चुरा० मन्त्र-णिच्-
यत्, णिच् लोपः। १ आमन्त्रणीय, न्योता दिये जाने
काबिल। २ सम्बोधनीय, बुलाया जानेवाला।
३ आवश्यक कार्यमें नियोग्य, जरूरी काममें लगाया
जानेवाला। (अव्य०) लग्। ४ सम्बोधन करके, बुलाके।
(क्ली०) ५ सम्बोधनकारक शब्द, निदायियेका लफ्ज।

आमन्द (सं० पु०) आमं रोगं व्यति खण्डयति,
आम-दो-ड बाहुलकात् सुम्। वासुदेव, रोगको दूर
करनेवाले विष्णु भगवान्।

आमन्दा (सं० स्त्री०) आमन्दं ईषत् मन्दं
करोति, आ-मन्द कृत्यर्थे णिच्-अच्-टाप्, णिच् लोपः।
खट्वाविशेष, नेवारका पलंग।

आमन्द्र (सं० पु०) आ ईषत् मन्द्रः, प्रादि० समा०।
१ ईषत् गम्भीर शब्द, कुछ-कुछ भरी हुई आवाज।
(त्रि०) २ ईषत् गम्भीर शब्दयुक्त, कुछ-कुछ बड़बड़ा-
इट लिये हुये, जो थोड़ा घुनघुनासा हो।

आमपत्रिका (सं० स्त्री०) चिकीत्साक, किसी किस्मकी
सब्जी।

आमपाक (सं० पु०) आमस्य अजीर्णविशेषस्य
पाकः। वैद्यशास्त्रोक्त शोफरोगादिके अङ्ग आमका
पाक विशेष।

आमपात्र (सं० क्ली०) कर्मधा०। अपक्वपात्र, मट्टीका
कच्चा बरतन।

आमपीनस (सं० क्ली०) १ कफ। २ कफाक्रमण,
सु.काम।

आममांस (सं० पु०) अपक्व मांस, कच्चा गोश्त।

आममांसासी (सं० पु०) राक्षस, कच्चा गोश्त खाने-
वाला आदमी।

आममुख्तियार (फा० पु०) सम्पूर्ण समता रखने-
वाला कर्मचारी, जो नौकर मालिकका सब काम कर
सकता हो।

आमय (सं० पु०) आमौयते समग्रं वध्यतेऽनेन,
आ-मौज् हिंसायां करणे ऽच्। १ आघात, हानि,
चोट, लुकसान्। २ रोग, बीमारी। 'रोगव्याधिगदामयः'
(अमर) ३ अजीर्ण, बदहजमी। ४ उद्गर, जंटा। (क्ली०)

५ कृष्णागुरु, काला अमर। ६ कुष्ठ, वृक्षविशेष।

आमयव्याप्त, आमयाविन् देखो।

आमयावित्त्व (सं० क्ली०) अजीर्ण, बदहजमी।

आमयाविन् (सं० त्रि०) आमयोऽस्त्यस्य, विनि
दीर्घश्च। आमयस्त्रोपसं'व्यान' दीर्घश्च। (वार्तिक) रोगयुक्त,
बीमार। (पु०) आमयावी। (स्त्री०) आमयाविनी।

आमरक्त (सं० क्ली०) आममपक्वं रक्तम्, कर्मधा०।
रक्तामाशय रोग, लाल आंव गिरनेकी बीमारी।
अतिसार देखो।

आमरक्तातिसार, अतिसार देखो।

आमरख (हिं०) आमर्ष देखो।

आमरखना (हिं० क्ति०) आमर्ष आना, क्रोध चढ़ना,
गुस्सा देखाना।

आमरण, आमरणान्त देखो।

आमरणान्त (सं० त्रि०) मृत्यु पर्यन्त चलनेवाला,
जो जीते जी टिका रहता हो।

आमरणान्तिक (सं० त्रि०) आमरणान्तं मरणरूप-
सौमान्त पर्यन्तं व्याप्नोति, ठक्। मरणकाल पर्यन्त
व्यापक, मरनेके वक्त तक रहनेवाला।

आमरस (सं० पु०) अपक्व रस, कैमूस-खाम। यह
पाकस्थलीका कच्चा रस है। कोई द्रव्य खानेसे प्रथम
इसी रस द्वारा परिपाक आरम्भ होता है। पाकस्थली
की भीतर की ओर जो शैथिल्य भिन्नी रहती, वह
अत्यन्त पतली पड़ती है। छुद्र छुद्र विस्तर अन्धिका
मुख ऊपरको रहता है। कितने ही सरल और
कितने ही अन्ध जटिल होते हैं। भाराक्रान्त

मुखकी ओर शाखा प्रशाखामें विभक्त है। जटिलको पेप्टिक ग्रन्थि (Peptic glands) कहते हैं। कोई द्रव्य खानेपर सकल ग्रन्थिसे एक प्रकार जो रस निकलता, वही आमरस (Gastric juice) कहाता है।

क्षुधाके समय पाकस्थलीके ग्रन्थि पिङ्गलवर्ण देख पड़ते और ऊपरकी ओर प्रति सामान्यरूप सरस रहते हैं। सूक्ष्म शिरा कुचित होती है। उस अवस्थामें उनके भीतर यत्सामान्य रक्त यातायात करता है।

उसके बाद कोई द्रव्य खानेसे पाकस्थली उत्तेजित हो जाती है। फिर सीधी-सीधी शिरा फैलनेसे शैथिल्य भिन्नमें अधिक रक्त आ पड़चता, इसीसे उसका रूप लालवर्ण देख पड़ता है। उसी समय ग्रन्थिके मुखमें विन्दु-विन्दु रस जम क्रमसे बाहर निकल जाता है। इसी रसको आमरस कहते हैं।

आमरस जल-जैसा होता है। इसमें कई प्रकारका चार पदार्थ पाया जाता है। तन्निज हायिड्रोसायेनिक एसिड रहनेसे आमरस अम्ल लगता है। इसके एक प्रधान उपादानका नाम पेप्सिन (Pepsin) है।

खाद्यद्रव्य प्रथम उदरस्थ होनेपर पाकस्थली सिकुड़ जाती है। उसी समय भुक्तद्रव्य घूमने लगता, इसीसे उसमें आमरस अच्छीतरह मिलते रहता है। इसीप्रकार पुनः पुनः घूम-घूम कर आमरसके साथ मिल जानेपर भुक्तद्रव्य शेषको पिण्डाकार बनता है। उसे कायिम (chyme) कहते हैं। कायिमका कितना ही अंश हादशाङ्गुल अन्धमें प्रवेश करता और बहुतसा बहिर्वाह क्रिया द्वारा रक्तमें मिल जाता है। (हिं०) आमरस देखो।

आमरिता, आमरिठ देखो।

आमरिठ (वे० पु०) नाशक, हन्ता, शारतगर, सुखरिब, बरबाद करनेवाला।

आमर्द (सं० पु०) आ-मृद-घञ्। १ बलहेतु निष्पीडन, रौदन, टक्कर। २ सङ्कोचन, दबाव। ३ नगर विशेष, किसी शहरका नाम।

आमर्दकी (सं० स्त्री०) १ फाला न शुक्ता एकादशी। २ आमलकी, आंवला।

आमर्दन (सं० स्त्री०) आ-मृद भावे लुट्। आमर्द, बलहेतु निष्पीडन, रौदन।

आमर्दिन् (सं० त्रि०) आ-मृद-णिनि। १ बलहेतु निष्पीडनकर्ता, कुचल डालनेवाला। २ बाधक, दबानेवाला। आ-मृद-णिच्-णिनि, णिच् लोपः। अन्यसे मर्दन करवानेवाला, जो दूसरेसे दबवाता हो।

आमर्श (सं० पु०) आ-मृश स्यर्श, घञ्। १ सम्यक् स्यर्श, खास लम्स, अच्छीतरह छूनेका काम। २ अनुमति, मशवरा, सलाह।

आमर्शण (सं० स्त्री०) आ-मृश-ल्युट्। सम्यक् स्यर्शका कार्य, अच्छीतरह छूनेका काम।

आमर्ष (सं० पु०) मृष चान्तो घञ्, नञ्-तत् दीर्घः। अन्येषामपि दहते। पा ६।३।१३०। १ अचमा, कोष, असहन, इज्जतिराव, वेचने। २ रसका सञ्चारी भाव विशेष। इसमें अन्यका दर्प असह्य होता और उसे नष्ट कर देनेका भाव बढ़ता है।

आमर्षण (सं० स्त्री०) कोष, तंश, भूँजल।

आमल, आमलक देखो।

आमलक (सं० स्त्री०) आमलकाः फलम्। फले लृक्। पा ४।३।१६३। १ आंवलेका फल, अंवरा। (पु०) आ-मल-क्कुन्। बडलमन्वापि। उण् २।३०। २ आमलकी वृक्ष, आंवलेका पेड़। ३ पद्मकाष्ठ, एक खुशबूदार लकड़ी।

आमलका (सं० स्त्री०) खनामख्यात वृक्ष विशेष, आंवलेका पेड़। इसका गुण प्रायः हरीतकीके तुल्य है। विशेषमें यह रक्तपित्त एवं प्रमेहको शान्त करती, स्वास्थ्य सुधारती और रसायन होती है। इसका फल भी अम्लतासे वायु, मधुरतासे पित्त एवं रुचकषायत्वसे कफको नाश करता, इसलिये त्रिदोषघ्न कहाता है। इसकी मज्जा तुवर, मधुर एवं वमनकृत् होती और वात तथा पित्तको शमन करती है। २ भूम्यामलकी, भूयिं आंवला।

आमलकायस (सं० स्त्री०) रसायन विशेष, ब्रह्म-रसायन। विधिवत् सूखा निरखि आमलक ८ शराव तथा जीबनीयादिक मिलित ८ शराव दशगुण वारिमें उबाले और चौथाई रह जानेसे छान ले। फिर

यथाविहित अग्निपर उसका चूर्ण बनानेसे यह रसा-
यन तैयार होता है। (चरक)

आमलकी (सं० स्त्री०) आमलकात् अशुजलात्
जातम्, आमलकः ततः स्त्रीलिङ्गे गौरादि० ङीष्।
“ख्याता आमलकी नामा जाता कादमलात् यतः।” (हृदयनपुराण)
आमला नामक वृक्ष और फल, अंवरा। *Phyllan-
thus Emblica*. इसे संस्कृतमें तिथ्यफला, अमृता,
वयस्था, कायस्था, औफला, धात्रिका, शिवा, शान्ता,
धात्री, अमृतफला, वृथा, वृत्तफला, रोचनी, कर्षफला
तथा तिथा, और हिन्दीमें आंवला या अंवरा कहते
हैं। यह वृक्ष भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र ही उपजता
है। पेड़ बड़ा, पत्ता सीधा और फल बैर-जैसा देख
पड़ता है। फाल्गुन-चैत्र मास आंवला पकता है।

आमलकी वृक्षकी उत्पत्तिके विषयपर लिखा है,—
किसी पुण्यदिन भगवती एवं लक्ष्मी प्रभासतीर्थकी
गयी थीं। भगवतीने लक्ष्मीसे कहा,—‘देवि ! आज
हम स्वकल्पित किसी नूतन द्रव्यसे हरिको पूजना
चाहती हैं।’ लक्ष्मी भी उत्तरमें बोल उठीं, ‘शिवकी
भी किसी नूतन द्रव्यसे पूजनेकी हमारी इच्छा है।’
फिर दोनोंके चक्षुसे अमल अशुजल भूमिपर गिरा।
उसीसे माघ मासके शुक्ल पक्षकी एकादशी तिथिको
आमलकी वृक्ष उत्पन्न हुआ था। देवता एवं
ऋषि इस वृक्षको देख फूले न समाये। यह तुलसी
आर विष्णु वृक्षके तुल्य है। पत्रसे शिव और विष्णु
दोनोंकी पूजा होती है। आमलकी वृक्षको नमस्कार
करनेका मन्त्र यह है—,

“नमाम्यामलकीं देवीं पद्ममालायलङ्घिताम्।

शिवविष्णुप्रियां दिव्यां श्रीमतीं सुन्दरप्रभाम् ॥” (हृदयनपुराण)

कच्चा आंवला कषाय ; विरेचक, अम्लनाशक, चक्षु-
तथा चर्मरोग निवारक होता और चबानेसे मुखको
सुखादु बना देता है। इससे शुक बढ़ता और रक्त-
स्त्राव रोगमें उपकार पहुँचता है। उदरामय, रक्तामा-
शय तथा अम्लरोगमें सकल प्रकार आमलकी ही
प्रशस्त है। लवणरक्त रोगमें इसके द्वारा कितनी हीकी
लाभ हुआ है। आमलकीका रस शीतल, मृदुविरो-
चक एवं मूत्रकर होता और आंख आंखोंमें उपकार

करता है। शुष्क आमलकीका काथ क्षतस्थानपर
लगानेसे अधिक रस नहीं निकलता, जख्म साफ हो
और धीरे-धीरे सूख जाता है।

पका आंवला उबालकर चीनीकी कड़ी चाशनीमें
डालनेसे मुरब्बा बनता है। आंवलेका मुरब्बा चांदीके
वर्कमें लपेट कर खानेसे बलवीर्य बढ़ता और प्रमेह
रोग दूर होता है।

आमलकीपत्र (सं० स्त्री०) तालीशपत्र।

आमलक्यादि (सं० पु०) तदादिवर्ग, आंवला वगै-
रह। इसमें आमलकी, हरीतकी, पिप्पली और
विभीतक चार द्रव्य पड़ते हैं। यह सर्वज्वरापह,
चक्षुष्य, दीपन, वृथ और कफारोचक-नाशक होता
है। (सुश्रुत)

आमलक्यादिचूर्ण (सं० स्त्री०) औषधविशेष, यह
सर्वज्वर-हितकर एवं भेदी और दीपन होता है।
आमलक, चित्रक, हरीतकी, पिप्पल और सैन्धवकी
एकत्र चूर्णकर प्रातःकाल उष्ण या शीतल जलसे
सेवन करनेपर सर्वज्वर नाश होता है।

(भावप्रकाश, ज्वरचिकित्सा)

आमलच्छद (सं० पु०) तालीशपत्र।

आमला, आमलकी देखो।

आमलाद्यलीह (सं० स्त्री०) औषध विशेष। इसमें सर्व-
चूर्णके तुल्य लीह पड़ता है। आमलकी और पिप्पल-
का चूर्ण सिताके समान रहना चाहिये। यह लीह
योगराज कहाता और रक्तपित्तको मिटाता है

(रसैन्द्रसारसंग्रह)

आमली (सं० स्त्री०) भूम्यामलकी, भुयिं आंवला।

आमवात (सं० पु०) आमोऽपाक हेतुको वातः,
शाक० तत्। वातरोग विशेष, दर्द-कमर (Lumbago)
इसका लक्षण इस प्रकार है,—अङ्गमें पीड़ा, अरुचि,
दृष्ट्या, आलस्य, गुरुता, ज्वर, अन्नका अपरिपक्व
और शूल। विरुद्ध आहार तथा चेष्टासे अग्नि मन्द
होने अथवा भोजनोपरान्त व्यायाम करनेसे आम वायु
द्वारा प्रेरित हो कफस्थानको दौड़ता और अत्यर्थ
विदग्ध हो धमनीमें प्राप्त होता है। फिर वात,
पित्त एवं कफसे दूषित हो अन्न रस नानावर्ण तथा

अतिपिच्छल ओतमें बहता और बहुत शीघ्र दौर्वल्य, हृदय गौरवता आदि उत्पन्न करता है। यह सब व्याधियोंका आश्रय और अति दारुण आम नामक महारोग है। जब एकवार कफ और वात दोनों कुपित हो अन्तको त्रिक सन्धिमें प्रवेश करते, तब शरीरकी स्तब्ध कर देते हैं। (माधवनिदान) आमवात रोगका कारण मत्स्य मांसके सङ्ग दुग्ध-पान-जैसा विपरीत गुण करनेवाला विरुद्ध भोजन, भोजनके बाद ही व्यायाम, आलस्य और स्निग्ध अन्न ग्रहण है। अजीर्ण रोगमें धीरे-धीरे दुष्ट आमरस सञ्चित होता, पीछे मस्तक और गात्रमें पीड़ाका धावा लगता है। उपदंश, शीतल वायु-सेवन और आर्द्र स्थानका वास भी प्रधान कारण है।

इस रोगमें प्रथम पृष्ठवंशसे नीचे कमरके भीतर वेदना होने लगती है। इसीके साथ क्रमशः शरीरके अन्य-अन्य ग्रन्थि भी सूजते हैं। पहले पीड़ा अति अल्प मालूम पड़ती, पीछे त्रिक अस्थिमें सूई-जैसी चुभा करती और कमर अकड़ जाती है। रोगी शय्यामें करवट ले सो या उठकर बैठ नहीं सकता। साथही ज्वर, पिपासा, निद्राभाव प्रभृति लक्षण देख पड़ता है। प्रायः डेढ़ माससे कम समय उपशममें नहीं लगता।

एलोपाथीके मतसे वेदना-स्थानमें तारपीन तैल द्वारा कोयले या बालूका स्नेह लगाने, वेल्लेडोनाका पुलटिस चढ़ाने और पिचकारी द्वारा कमरके भीतर मरफिया पङ्कचानेपर उपकार होता है। मरफिया अफीम, आयोडिड अथ पोटाश प्रभृति औषध खिलाना चाहिये। वेदनास्थानको सर्वदा रुईसे बंधा रखते हैं।

वैद्यशास्त्रके मतसे आमवात रोगमें लङ्घन, स्नेह, तिक्त आग्नेय एवं कटु द्रव्य, वस्तिक्रिया, विरेचन तथा स्नेह पानकी व्यवस्था करना उचित है। बालूकी पोटली तप्तकर स्नेह लगानेसे उपकार होता है। पटसन या दूसरे पौदेकी साफकी हुयी डाली मसूर, तिल, यव, रक्त एरण्डका मूल, अलसी, पुनर्णवा

और सनका बीज कूट-पीसकर दो पोटली बनाये। फिर बहु छिद्रयुक्त ढक्कन लगा हण्डीमें कांजी पकाते और ढक्कनपर दोनो पोटली रख देते हैं। उष्ण होनेपर पोटलीसे वेदनास्थानमें स्नेह देता जाये। इसे सङ्गर स्नेह कहते हैं।

रास्नादि दशमूल, रास्नापञ्चक प्रभृतिका पाचन, आमगजसिंहमोदक, रसोनपिण्ड, वृहदुयोगराज-गुग्गुल इत्यादि औषध उपकार करता है।

पौतपर्णिका (आर्टिकेरिया) नामक व्याधिको भी चलती बोलतीमें आमवात कहते हैं। इससे शरीरमें स्थान स्थानपर रक्तवर्ण, अल्प उच्च और विषम कण्डू निकलता है। उसीके साथ सर्वाङ्ग अतिशय तपा करता है। किसी-किसी स्थानमें यह पीड़ा अल्पक्षण किंवा दो-तीन दिन रहती है। किन्तु पुरातन आम-वात (Rheumatism) रोग एक वत्सर पर्यन्त टिक सकता है।

कुकरमुत्ता, ककड़ी, अधिक अम्ल, उग्रद्रव्य, कुष्माण्ड, कांटेदार मछली और अन्य अन्य मन्द सामग्री खानेसे यह रोग उत्पन्न होता है। पित्ताधिक्य होने, पाकयन्त्रमें अधिक अम्ल जमने किंवा किसी कारण उदरकी उग्रता बढ़नेसे आमवात दौड़ पड़ती है। पुरातन वातरोग, रुग्ण देह, पुरातन व्याधि प्रभृति-स्थलमें भी यह निकल आता है।

अदरक, अजवायन और पुराना गुड़ मिश्रकर खानेसे सामान्य आमवात कूट जाता है। कोई-कोई गोमूत्र और नीमकी पत्ती पीसकर शरीरमें लगा लेते हैं। कण्डू निकल आनेपर कितने हो लोग पैसे और गायके नोवेकी रस्सीसे शरीरको खुजलाते हैं। किन्तु पाकस्थली किंवा अन्नमें क्रियाविकार पड़नेसे यह रोग बढ़ता है। इसीसे इपिकाक चूर्ण १५ किंवा २० ग्रेन खिला प्रथम वमन कराना चाहिये। पीछे पडोफिलम चौथायी ग्रेन, रेवाचीनीका चूर्ण ३ ग्रेन, सोंठकी बुरादा २ ग्रेन और सोडा वायिकाब २ ग्रेन एकत्र मिलाकर पुड़िया बांधे। ऐसी ही एक पुड़िया प्रत्यह रोगीको खिलाये। उदरमें उत्तेजना न रहनेसे लायिकर आसैनिक ३ विन्दु अदरकके रसमें

रोज दो बार देनेपर उपकार होता है। आनुषङ्गिक अनप पौड़ा उठनेसे उपयुक्त चिकित्सा कराना आवश्यक है। मद्य, कहवे, चाय, अधिक अन्न, अधिक मिष्ठ, कच्चे फल और कुपय्यसे बचना चाहिये। उदरमें अन्न रहनेसे प्रतिकार करते हैं। वातरोग देखो।

आमवातगजसिंहमोदक (सं० पु०) आमवात-हितकारक औषध विशेष। प्रस्तुत करनेकी रीति इस प्रकार है—शुण्ठी १ प्रस्थ, यमानी ८ पल, जीरा २ पल, धनिया २ पल, सौंफ १ पल, लवङ्ग १ पल, टङ्गण १ पल, मिर्च १ पल, त्रिवृता, त्रिफला, चार, और पिप्पली प्रत्येक १ पल, शठी, एला, तेजपत्र, चविका १ पल, अम्रक, लौह, वङ्गका चूर्ण एक एक पल और सबसे तीन गुण शर्करा मिला घृत और मधुके साथ कर्ष प्रमाण मोदक बनाना चाहिये। पहले शर्करा को थोड़े पानीमें घोल मृदु अग्निसे उषालते और पीछे उपरोक्त चूर्ण मिला तथा मोदक विधिसे पका घृत एवं मधु डालते हैं। (रसैन्द्रसारसंग्रह)

आमवातारिगुटिका, आमवातारिवाटिका देखो।

आमवातारिवाटिका (सं० स्त्री०) आमवात, हितकारक औषधविशेष। पारा, गन्धक, सोहागा, सेन्धव, लौह, ताम्र, शङ्खभस्म प्रत्येक १ तोला, गुग्गुल १४ तोला, त्रिफला चूर्ण ३॥ तोला और चित्रकचूर्ण ३॥ तोला घृतके साथ मर्दन कर बटी बनाना चाहिये। (रसरवाकर)

आमवातेश्वररस (सं० पु०) आमवातमें देने योग्य भेषजविशेष। शुद्ध गन्धक एवं शुद्ध ताम्र आध आध पल और पारद तथा मृत लौह पावपाव पल एरण्डमूलके रसमें सात बार घोटकर चूर्ण बनाना चाहिये। पीछे पञ्चकोलके काथमें २० और गुडूचिके रसमें १० बार मर्दन करके सब चूर्णके बराबर भूजा हुआ सोहागा मिलाना पड़ता है। सोहागसे आधा विड़ (असोचर), विड़की बराबर मरिच, तिन्तिडी एवं चार सट्टश तथा सूततुल्य दन्तिक और त्रिकट, (सोंट, मिर्च, पीपल), त्रिफला (अंवरा हरितकी, बहिर) लवङ्ग प्रत्येक अर्धभाग डालनेपर यह रस तैयार हो जाता है। (रसैन्द्रसारसंग्रह)

आमशूल (सं० पु०) आमजन्य शूलरोगमें, दद-शिकम, आंवकी मरोड़।

आमआह (सं० स्त्री०) आमाम्नेन आहम्, शाक० तत्। आमाम्नका आह, जो आह कच्चे अन्नसे किया जाता हो।

“आपद्यनग्री तौर्धे च चन्द्रसूर्यशहे तथा ॥

आमआहं द्विजैः कार्यं शूद्रेण च सदेव तु ॥” (प्रचेताः)

आपत्काल, अग्निके अभाव और चन्द्र-सूर्य-ग्रहणमें द्विजको आमआह करना उचित है। शूद्र सकल ही समय आमआह करे। निरग्नि आमआहमें चावल नहीं धोते। किन्तु वृद्धिआह, संक्रान्ति एवं ग्रहणके समय चावल धोकर आह करना पड़ता है।

आमहृष्ट (Amherst) भारतवर्षके एक गवरनर जनरल या बड़े लाट। इन्हें लार्ड हेष्टिङ्सका पर अधिकार मिला था। लार्ड हेष्टिङ्सके भारतवर्षसे चले जानेपर आर्ल आमहृष्टको इस देश पहुँचनेमें कुछ विलम्ब हुआ। किन्तु इतने बड़े देशके कर्ताका उचित समय अपने कामपर न पहुँचना बड़े दोषकी बात है। इसीसे उस समयकी कौन्सिलके प्रधान सभ्य आदम साहब गवरनर जनरलका काम चलाने लगे थे। किन्तु दो दिनके निमित्त इस विशाल साम्राज्यका कर्तृत्व पा वह एक कलङ्क छोड़ गये हैं। तत्काल मुद्रायन्त्र सम्पूर्ण स्वाधीन रहा। बकिमहाम नामक किसी क्षतविव्य व्यक्तिने एक संवादपत्र निकाला। सम्पादक स्पष्टवादी रहे, न्यायकी मर्यादा रख गवर्णमेण्टका दोषगुण खोलकर लिख देते थे। परन्तु गवर्णमेण्ट भली रहते भी सकल समय उसके कर्मचारी विचक्षण हो नहीं सकते। इसीसे संवादपत्रकी स्पष्ट कथा उन्हें कटु लगने लगी। सन् १८२३ ई०का आदम साहबने मुद्रायन्त्रकी स्वाधीनता छीननेके लिये एक कानून बनाया था। इधर बकिमहाम साहब भी भारतवर्षसे निकाल बाहर किये गये।

उसके बाद आदम साहबने अधिक दिन गवरनर जनरलका काम किया न था। आर्ल आमहृष्ट इस देशमें आ पहुँचे। इनके समय कम्पनीकी भरतपुर मिल गया था। सन् १८२६ ई०को ब्रह्मदेशमें प्रथम

युद्ध छिड़ा। यह भी उस समयकी प्रसिद्ध घटना है। युद्धमें अंगरेजोंका कोई तरह करोड़ रुपया लगा था। किन्तु तरह करोड़ रुपया बिगड़नेसे ब्रह्मदेशके अनेक प्रसिद्ध स्थान हाथ आये। मार्ताण्डान उप-कूल, आसाम, मणिपुर, अराकान प्रभृति स्थानोंपर अंगरेजोंका अधिकार जम गया था। सन् १८२८ ई०को लार्ड आमहट्टे अपना पद छोड़ विलायत वापस और १८५७ के मार्च मास मर गये।

आमहीय (सं० त्रि०) आमहाय सम्यक् पूजायै हितम्, छ। सम्यक् रूपसे पूजा करनेको उपयुक्त, जिससे अच्छीतरह पूजा बन पड़े। यह शब्द मन्त्र विशेषका विशेषण है।

आमहीयव (सं० स्त्री०) आमहीयुना ऋषिणा दृष्टं साम अण्। साम विशेष।

आमहीया (सं० स्त्री०) ऋक् विशेष, ऋग्वेदकी किसी मन्त्रका नाम।

आमां, आवां देखो।

आमाजीर्ण (सं० स्त्री०) आमरसाजीर्ण, आंवकी बदहजमी। इसमें भुक्त द्रव्य नहीं पचता, जैसेका तैसा मलद्वारसे बाहर निकल जाता है।

आमातिसार (सं० पु०) १ आमकृतोऽतिसारः, शाक० तत्। षड्विधातिसारान्यतम रोगविशेष, पेचिस, आंव लहका दस्त। कफ बिगड़ जानेसे यह जठरमें उत्पन्न होता है। २ विष्ठा, मैला। इसमें पूतिगन्धि और कठोर द्रव्य मिला रहता है। अतिसार देखो।

आमातीसार, आनातिसार देखो।

आमाल्य (सं० पु०) आमाल्य एव, स्वाथे अण्। १ मन्त्री, आमिल। २ नायक, सरदार। आमाल्य देखो।

आमाद् (सं० त्रि०) आममत्ति, आम-अद्-विट्। अदोऽनन्ते। पा ३।२।६८। अपक्व मांसादि खानेवाला, जो कच्चा गोश्त वगैरह खाता हो।

आमादगी (फा० स्त्री०) उपकल्पन, साधन, सज्जीकरण, तैयारी।

आमादगी-दङ्गा (फा० स्त्री०) शान्तिभङ्ग करनेका उपकल्पन, भगड़ेकी तैयारी।

आमादगी-शर-फ़िसाद, आमादगी-दङ्गा देखो।

आमादगी-हमला (फा० स्त्री०) अवस्कन्दका उप-कल्पन, धावेकी तैयारी।

आमादा (फा० वि०) सन्नद्ध, तैयार।

आमानस्य (सं० स्त्री०) अप्रशस्तं मानसमस्य अमानस-स्तस्य भावः, अञ्। दुःख, मुसीबत।

आमानाह (सं० पु०) आमका आनाह, आंवका कच्चा।

आमानुबन्ध (सं० पु०) १ आमसातत्य, आंवका लगाव। २ आम सच्चय, आंवका जोड़।

आमान्न (सं० स्त्री०) अपक्वान्न, कच्चा चावल।

आमास्त्र (सं० स्त्री०) बालास्त्र, कच्चा आम, अंबिया।

यह कषाय, अम्ल-रस, रुच्य और वात-पित्त-वर्धक होता है। हिन्दुस्थानमें हरे पुदीने, नमक, मिर्च और चीनीसे प्रायः अंबियाकी चटनी बनाकर लोग रोटो या पूड़ीके साथ खाते हैं। अंबिया छीलकर अरहरकी दालमें भी छोड़ी जाती है। कारलेकी तरकारीमें इसका पड़ना बहुत आवश्यक समझते हैं। अंबियासे अमचर बनता, जो सालभर चटनी बनाने और दाल-तरकारीमें डालनेके काम आता है। आमकी प्रायः सभी खटायी, फंकिया, फांका, अचारो वगैरह इसीसे तैयार की जाती है। वसन्तके दिन प्रथम अंबिया देवता पर चढ़ाते हैं। लूलगनेसे भूनकर इसका पना पिलाया जाता है। लड़के प्रायः नमकके साथ अंबिया खाते हैं। इसका दूसरा नाम केरी भी है।

आमाल (अ० पु०) १ आचार, इस्तेमाल। २ काम, काम। ३ मन्त्र, जादू। ४ मान, पैमायश। ५ अनुष्ठान, काररवायी। ६ परिणाम, असर। ७ प्रबन्ध, इन्तिज़ाम। ८ उग्मादक पान, नशीला शर्वत। ९ दिनका समय। १० बत्तियां, पिचकारियां। यह अमल शब्दका बहुवचन है।

आमालक (सं० पु०-स्त्री०) पर्वतके निकटकी भूमि, पहाड़के पासकी जमीन।

आमालनामा (अ० पु०) कर्मपत्र, कामका चिट्ठा। जिस तहजीबों की कृतियोंका काम-काज लिखते, उसे आमालनामा कहते हैं।

आमावस्था (सं० स्त्री०) अपक्व अवस्था, कच्ची हालत।

आमावास्थ (सं० त्रि०) अमावस्यायां भवम्, अण्।
सन्धिवेलायुतुनचवेभ्योऽण्। पा ४।१।१६। १ अमावस्या-जात,
अमावसको पैदा होनेवाला। २ अमावस्या वा उसके
उत्साहसे सम्बन्ध रखनेवाला। ३ अमावस्याको
पड़नेवाला। (स्त्री०) ४ अमावस्याका हवन।

आमाशय (सं० पु०) आमस्य अपक्वान्नस्य आशयः,
इ-तत्। १ जठर, कोष्ठ, देहके मध्य और नाभिके
ऊर्ध्व रहनेवाला भुक्त अपक्वान्नादिका स्थान, मेदा,
पचैनी, जिस्मके बीच और तोंदीके ऊपर खाये हुये
कच्चे अनाज वगैरकी जगह। सुश्रुतके मतसे देहमें
सात आशय होते हैं,—वाताशय, पित्ताशय, श्लेष्माशय,
रक्ताशय, आमाशय, पक्वाशय और मूत्राशय। इससे
अतिरिक्त स्त्रियोंके गर्भाशय भी रहता है। आमाशयका
स्थान नाभि और स्तनके मध्यभागमें है। इसका
प्रशस्त अंश नाभिके ऊपर वामदिक्को दौड़ा और
धीरे-धीरे सूक्ष्म बनते हुये दक्षिण ओरको घूम यकृतके
अधोभागमें जा पहुँचा है। आमाशय मांस और
सूक्ष्म चर्मसे गठित है। इसपर छुद्र-छुद्र विवर रहते,
जिनका व्यास $\frac{1}{200}$ से $\frac{1}{100}$ इञ्चतक देखते हैं। इन्हीं
विवरोंमें आमरस भर जाता है। आमरस देखो।

२ प्रवाहिका रोग, इयाल, दस्त लगनेकी बीमारी।
आमाहल्दी (हिं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा। Curcuma
Amada. यह बङ्गालमें तथा पहाड़पर होती और
आधी बरसात बीतनेपर फूलती है। वैद्यशास्त्रके
मतसे आमाहल्दी तिक्त, अम्ल, रुचिप्रद, लघु, अग्नि-
दीपन, उष्ण, तुवर, सर एवं मत रहती और कफ,
उपव्रण, कास, श्वास, हिक्का, ज्वर, मुखरोग तथा
रक्तदोषको दूर करती है। (वैद्यकनिघण्टु) इसका
कन्द शीतल होता, कण्डूमें उपकार पहुँचाता और
अग्निवर्धन एवं वायुनाशनके लिये भी व्यवहारमें
आता है। अम्लान अवस्थामें इससे हरे आम-जैसा
गन्ध निकलता है। किन्तु आमाहल्दीमें अदरकसे
अधिक गुण नहीं देखते। लोग अतः आम्रहरिद्रा को

घात पर इसे बांटकर लगाते हैं। आमाहल्दीकी जड़
कफनाशक, स्तम्भक और अतीसार तथा मेहविकारमें
उपकार करनेवाली है। यह मसाले और तरकारीकी
तरह भी काम आती है।

आमिच्चा (सं० स्त्री०) आ-मिच्छति सम्यक् सिच्यते,
आ-मिह मिष वा कर्मणि सक्-टाप्। उत्तम और
घनीभूत दुग्धका मिश्रद्रव्य, पच्छेका कुन्दा, खोलते
दूधमें दही डालकर बनायी हुई चीज।

‘आमिच्चा सा श्रुतीर्णं या चौरिस्त्राहधियोगतः।’ (अमर)

आमिच्चीण (सं० स्त्री०) आमिच्चायै हितम्, ख।
दधि, दही, जिस चीजसे पच्छेका कुन्दा बने।

आमिच्चीय (सं० त्रि०) आमिच्चायै हितम्, छ।
विभाषा हरिपूपादिभ्यः। पा ५।१।४। १ आमिच्चा बनानेके
लिये उपयुक्त, जिससे पच्छेका कुन्दा बन सके।
२ दधिसे प्रसृत किया हुआ, जो दहीसे बना हो।

आमिच्छ, आमिच्चीय देखो।

आमिख (हिं०) आमिष देखो।

आमितौजि (सं० पु०-स्त्री०) अमितौजस्-इज्। वाङ्मा-
दिभ्यश्च। पा ४।१।८६। अमितौजाका पुत्र वा कन्यारूप
अपत्य।

आमित (सं० त्रि०) अमित-अण्। १ शत्रुसम्बन्धीय,
दुश्मन्से ताल्लव् रखनेवाला। “नासामामितो व्यथिरा दधर्षति।”
(ऋक्संहिता ६।१८२) ‘आमितः अमितस्य शत्रोः सम्बन्धिः।’ (सायण)
२ अमितसे उत्पन्न। “तस्मादपामितौ रंगल नावा।” (शतपथ-
ब्राह्मण १३।१।६।१) ‘आमितौ अमितयोः पुत्रौ।’ (हरिस्वामी)

आमिन (हिं० स्त्री०) आम्रविशेष, किसी किसमका
छोटा आम। यह अवधमें उत्पन्न होती और खानेमें
खूब मीठी लगती है। वास्तवमें यह शब्द ‘आम’का
स्त्रीलिङ्ग है।

आमिल (अ० पु०) १ सम्पादक, निर्वाहक, मुरतकिब,
काम करनेवाला। २ अधिकारी, हाकिम। ३ आय-
संग्राहक, तहसीलदार। ४ मायी, ऐन्द्रजालिक, आभा,
मदारी, जादूगर।

आमिल-पुलिस (हिं० पु०) नगररक्षी, पुलिसका
अफसर। यह शब्द हिन्दीमें अरबी ‘आमिल’ और
अंगरेजी ‘पुलिस’के योगसे बना है।

आमिष (सं० त्रि०) संस्पृष्ट, मिला-जुला। निरुक्तके निघण्टु काण्डमें (१।१।२) देवराजने इसका प्रयोग किया है।

आमिष (वै० त्रि०) आमिषमुख्य-मिष, जरूद मिलाने-वाला, जो मिलाने बैठा हो। “स सोम आमिषतमः सुतोऽभूत्।” ऋक् ६।२।४। ‘आमिषतमः आमिषमुख्यमिति तन्मः।’ (सायण)

आमिष (सं० स्त्री०) अम् गती भोजने शब्दे सेवायाश्च टिषच्। अने दीर्घः। उष् १।४७। १ मांस धातु, उनसर-गोशत। २ भक्ष्यमांस, खानेका गोशत। ३ भोग्य-वस्तु, काममें लाने लायक चीज। ४ भोजन, गिजा। ५ सञ्योग, विषय, मजा, मजेदारी। ६ उत्कोच, रिशवत। ७ लाभ, फायदा। ८ कामगुण, खादिश। ९ मनोहररूप, दिलकश सूरत। १० दृष्ट्या, लालच।

आमिष शब्दसे मत्स्य एवं मांस उभयका बोध होता है। ‘देवदत्त आमिष नहीं खाता’ कहनेसे समझ पड़ता, कि वह मत्स्य एवं मांस दोनोंसे दूर रहता है। अण्ड आमिषमें ही गण्य है। किन्तु शरीरसे निकलते भी दुग्ध आमिष नहीं कहाता। शास्त्रकारोंने षष्ठी, अष्टमी, चतुर्दशी, अमावस्या तथा पूर्णिमा तिथि, रविवार और संक्रान्तिको आमिष खाना रोका है। इसका विस्तारित विवरण ‘मत्स्य’ और ‘मांस’ शब्दमें देखो। सज्जातीय विधवा और ब्रह्मचारी दोनों आमिष नहीं खाते। किन्तु तन्त्रके मतानुसार जो ब्रह्मचर्य रखता, वह आमिष खा सकता है।

आमिषकर (सं० स्त्री०) शोणित, खून, गोशत बनानेवाली चीज।

आमिषगन्धिनी (सं० स्त्री०) पूतनी, पुदीना, गोशतकी तरह महकनेवाली चीज।

आमिषप्रिय (सं० पु०) १ काकपक्षी, कौवा। (त्रि०) २ मांसभक्षक, गोशतखोर।

आमिषभुक् (सं० त्रि०) मत्स्य-मांस-भक्षक, मछली और गोशत खानेवाला।

आमिषभुज्, आमिषभुक् देखो।

आमिषाग्नि, आमिषभुक् देखो। (पु०) आमिषाशी।

(स्त्री०) आमिषाग्निनी।

आमिषरनेह (सं० पु०) वसा, चरबी, गोशतका रोगन।

आमिषी (सं० स्त्री०) आमिष-अच्-डीष्। अर्धं आदिभ्यो ऽच्। पा ५।२।२७। मिषी, जटामांसी, बालकड़।

आमिस् (वै० पु०) १ मांस, गोशत। “न वर्तन्त्यामिषि यमीवा।” (ऋक् ६।४।१४।) ‘आमिषि आमिषे मांसी।’ (सायण) २ शव, मुर्दा। इस शब्दका प्रयोग केवल वेदकी प्राचीन संहितामें मिलता है।

आमी (हिं० स्त्री०) १ छुद्र एवं अपक्व आम्र, छोटा और कच्चा आम, केरी, अंबिया। २ वृक्ष विशेष, एक पेड़। इसे तुझा या भान भी कहते हैं। परिमाणमें आमी छोटी होती और प्रतिवर्ष आश्विन-कार्तिक मास पत्ते झाड़ती है। आन्तरिक काष्ठ किञ्चित् श्यामता लिये पीत, दृढ़ और कठोर निकलता है। सज्जाके कितने ही वस्तु इससे बनते हैं। हिमालयके वेणव इसके नालसे पेटक प्रस्तुत करते हैं। शिमले, हजारे, कुमायूँ आदिके पर्वतपर आमी खूब उपजती है। ३ यव अथवा गोधूमकी दग्ध मञ्जरी।

आमीं (अ० अव्य०) १ ओम्, भवतु, एवमस्तु, तथास्तु, ऐसा ही हो, तेरे मुँह धी-खांड। २ ईश्वर बचाये।

आमीचा, आमिचा देखो।

आमीन्—यानेश्वरके दक्षिण-पूर्वका एक बड़ा जङ्गल। इसे अभिमन्युखेड़ा या चक्रशूङ्ग भी कहते हैं। यहीं जयद्रथने अभिमन्युको मार डाला था। इस जङ्गलमें आमीन् नामक ग्राम भी बसा, जिसमें अदिति और सूर्यदेवका मन्दिर खड़ा है। यहां सूर्यकुण्ड विद्यमान है। गौड़ ब्राह्मण अधिक रहते हैं। स्त्रियां पुत्र-प्राप्तिकी कामनासे अदितिको पूजतीं और सूर्यकुण्ड नहाती हैं। (अ० अव्य०) आमीं देखो।

आमीलन (सं० स्त्री०) नेत्रोंका विराम, आंखोंका बन्द करना।

आमीवत्, आमीवत्क देखो। (पु०) आमोवान्। (स्त्री०) आमीवन्ती।

आमीवत्क (वै० त्रि०) सम्मुख प्रापक, सामना पकड़नेवाला। (स्त्री०) आमीवत्का।

आमुक्त (सं० त्रि०) १ अवध, जो खोल दिया गया हो। २ विमुक्त, छूटा हुआ। ३ चित्त, फेंका हुआ।

४ धारण किया या पढ़ना हुआ। ५ प्रसाधित, जो कृतारमें हो।

आमुक्ति (सं० स्त्री०) १ निर्वृत्ति, कुटकारा। २ मोक्ष, निजात। (अव्य०) ३ जीवनके अन्त पर्यन्त, कयामके अखीरतक।

आमुख (सं० स्त्री०) १ आरम्भ, आगाज। २ प्रस्तावना, उनवान। (अव्य०) ३ मुख पर्यन्त, मुंहतक।

आमुप (सं० पु०) कण्टकयुक्त वंशविशेष, बौहड़ बांस। *Bambusa spinosa*. यह मन्द्राज प्रान्तके उत्तर-पूर्व विभाग, बङ्गाल, आसाम और ब्रह्मदेशमें स्वतः उत्पन्न होता है। युक्तप्रान्तमें इसे लगाया करते हैं। आमुपका रङ्ग पीला होता और सूक्ष्म सूत्रवत् रेखाका चिह्न पड़ जाता है। बकला चमड़े-जैसा कड़ा रहता है। फूल कम आता है। पत्ती छोटी तथा नीचेकी और बालदार होती और पेंदीमें उमरी हुई टहनी रहती है। बौहड़ बांस बहुत मोटा नहीं होता, किन्तु अपर जातिकी अपेक्षा दृढ़ ठहरता है। लम्बाई ३० से ५० फीटतक बैठती और लकड़ी साफ सुथरी निकलती है। यह दूसरे बांसकी तरह कितने ही काम देता है।

आमुर (वै० पु०) वाधक, बरवाद करनेवाला। “नहि या ते शतं च न राघो वरल आमुरः।” (चक्र ४।३।१६।) सायणाचार्यने ऋग्भाष्यमें इस शब्दका वाधक, राक्षस, अभिमारक और आमूढ़ प्रभृति अनेक अर्थ लगाया है।

आमुरा—वृक्षविशेष, एक पेड़। *Amoora cucullata*. इसे लतमी या नतमी भी कहते हैं। यह बङ्गाल, नेपाल, अन्दामान एवं ब्रह्मदेशमें उपजता, मध्यम मानका होता और सदा हराभरा रहता है। आमुरा घीरे-घीरे बढ़ता है। बकला खाकी होता है। पत्तियां नीचेकी ओर चिकनी, तिरछा लम्बी-चौड़ी, दोनो किनारे चपटी और नोकपर ठकी देख पड़ती हैं। फूल फाड़ीदार निकलता है, किन्तु कौल नहीं छोड़ता। लकड़ी लाल, दानेदार परन्तु चटख जानेवाली होती और वजनमें प्रति घनफुट २२।२३ सेर बैठती है। निम्न बङ्गालमें इससे खंटे, खम्बे वगैरह बनाते और सुन्दरवनमें जलानेका काम लेते हैं।

आमुरि (वै० पु०) मारयिता, नाशक, बरवाद-करनेवाला। “कला वरिष्ठं वर आमुरिमुत।” (साम १।४।२।४।१।) ‘आमुरिं श्वनुनाभामिमुखिन मारयितारमिन्द्रं।’ (सायण)

आमुष्यकुलक (सं० स्त्री०) पाणिनोक्त गण विशेष। आमुष्यपुत्रक, आमुष्यकुलक देखो।

आमुष्यायण (सं० पु०) अमुष्य-फक्। आमुष्यायणामुष्य-पुत्तिकासुष्यकुलिकेति च। पा ६।३।२१ वार्तिक। अमुष्यपुत्र, बड़े आदमीका बेटा।

आमूल (सं० अव्य०) मूल पर्यन्त, माहेतक, मस-दरसे, एक-कलम, तमाम।

आमृज्य (सं० अव्य०) प्रचालनपूर्वक, पोंछ या मीड़कर।

आमृण (सं० त्रि०) भेद्य, काबिल-मजरूही, जिसे तुकसान लग सके।

आमृत (सं० त्रि०) मर्त्य, काबिल-मौत, मरने-वाला।

आमृत्योस् (सं० अव्य०) मृत्यु पर्यन्त, मरनेतक।

आमृष्ट (सं० त्रि०) मर्दित, मला या मीड़ा हुआ।

आमिज्ज करना (हिं० क्रि०) मिलाना, भर देना। इसमें आमिज्ज शब्द फ़ारसीका पड़ता, जो मिलानेका अर्थ रखता और सदा दूसरे शब्दके साथ लगता है।

आमिज्जना, आमिज्ज करना देखो।

आमिज्जिश् (फ़ा० स्त्री०) मिश्रण, मिलौनी, मेल।

आमिन्ध (वै० त्रि०) वाण वा शक्तिद्वारा गम्य, सम्पूर्ण परिमिय, तीरसे हाथ आनेवाला, जो सब तर्फसे नापा जाता हो। “आमिन्धस्व रजसो यदध आ अपो वृणाना वितनोति।” (चक्र ५।३।२१) ‘आमिन्धस्व समन्तान्मातृस्व।’ (सायण)

आमिर—अम्बर नगर एक शहर। यह राजपूतानेमें जयपुरके समीप अवस्थित है। प्रथम जयपुर राज्यकी राजधानी यहीं रही। अम्बर देखो।

आमोक्षण (सं० स्त्री०) आ-मोक्ष भावे ल्युट्। धारण, परिधान, कसने या बांधनेका काम।

आमोखता (फ़ा० पु०) परिणत पाठ, पुराना सबक।

आमोखता पढ़ना (हिं० क्रि०) पुनर्दर्शन करना, पुराना सबक फेरना।

आमोख्ता फेरना, आमोख्ता पढ़ना देखो।

आमोचन (सं० स्त्री०) आ-मुच्-ल्युट्। १ शिथिलीकरण, छोड़ देनेका काम। २ परिधान, संयोग, लगाव, पहनाव।

आमोद (सं० पु०) आ-मुद्-लुपट्। १ प्रमोद, शादमाना, मौज। 'प्रमदोमुत्प्रीत्यामोदः।' (ह्रस्व) २ दूर-गामी गन्ध, तेज महक। 'आमोदो गन्धहर्षयोः।' (मेदिनी) ३ परिमल, इत्रियात। ४ शतावरी।

५ बम्बई प्रान्तके भडोच जिलेकी तहसील। अवि-रल प्रान्त बायीस लम्बा तथा तेरह मील चौड़ा है। उत्तर डाढर नदी, पूर्व बड़ोदा राज्य और दक्षिण तथा पश्चिम भडोच एवं वागरा तहसील अवस्थित है। क्षेत्रफल १७६ वर्गमील है। विस्मिष्ट ग्राम कहीं नहीं देख पड़ते। डाढर नदीके समीप जङ्गल है। पानीकी कमी रहती है। कूप थोड़े और तालाब छोटे हैं। भूमि काली होती भी पश्चिमकी ओर भूरी पड़ती है, जो जोती-बोयी जा नहीं सकती। पूर्वमें पैदावार अच्छी होती है। (त्रि०) ६ प्रीति-प्रद, मसरूर या खुश करनेवाला।

आमोदक (सं० पु०) यमानिका, अजवायन।

आमोदजननी (सं० स्त्री०) नागवल्ली, पान।

आमोदन (सं० स्त्री०) आ-मुद्-लुपट्। आमोद-करण, प्रहर्षजनन, महजूजी, मसरूरी, रिभानेका काम।

आमोद-प्रमोद (सं० पु०) हर्ष-सन्तोष, खुशी-खुरमी, राग रङ्ग।

आमोदा (सं० स्त्री०) १ शतावरी, सतावर। २ कैमूर-गिरि शिखरस्थ ग्राम विशेष, कैमूर पहाड़की चोटी-पर बसनेवाला गांव। यह बोरी बन्दरसे साढ़े तीन कोस दक्षिण-पूर्व है। गोंड़ राजत्व करते हैं। यहां स्वामीके मरनेसे पत्नी सहगामी होती है। सतीका बड़ा आदर सम्मान और स्मरणार्थ स्तम्भस्थापन किया जाता है। सन् १५६४ ई०को गोंड़राज प्रेम-नारायणके राजत्वकाल एक स्त्री सहस्रता हुई, जिसके स्मरणस्तम्भमें सब बात खुदी है। (Cun. Arch. Reports IX. 39)

आमोदित (सं० त्रि०) १ प्रीत, शादमान, खुश। २ सौरभित, सुवत्तर, सोंधा।

आमोदिन् (सं० त्रि०) आमोद-इनि। १ हर्षयुक्त, शादमान, खुश। २ गन्धयुक्त, सुवत्तर, सोंधा। समासान्तमें यह शब्द 'गन्धयुक्त'का अर्थ रखता है; जैसे—कदम्बामोदिन्, कदम्बके गन्धसे युक्त। (स्त्री०) आमोदिनी।

आमोदी (सं० पु०) १ सुखवासन, सुहको महकाने-वाला। २ कर्पूरदिवटिकाकृत सुखगन्ध, काफूरकी डलीसे बना हुआ सुह महकानेका मसाला। वर्तमान समयके ताम्बूल-विहारादिको आमोदी ही समझना चाहिये।

आमोष (सं० पु०) आ-मुष् भावे घञ्। हरण, सरका, चोरी। "यथा विभ्यदामोषमतौयादेवमेव योऽस्य खर्गे लोको जितो भवति।" (शतपथ-ब्राह्मण १२।५।२।८)

आमोषिन् (सं० त्रि०) हरणकर्त्ता, चोर, मूसने-वाला। (पु०) आमोषी। (स्त्री०) आमोषिणी। आमोहनिका (सं० स्त्री०) अपूर्व सुगन्ध, निराली महक।

आम्नात (सं० त्रि०) आ-न्ना-क्त। १ सुन्दर अभ्यस्त, सम्यगधीत, नाम लिया हुआ, जो भूला न हो। (स्त्री०) आ-न्ना भावे क्त। २ सम्यगभ्यास, अच्छी महारत।

आम्नातिन् (सं० त्रि०) आम्नातमनेन, इनि। अभ्यास रखनेवाला, जिसे महारत रहे। (पु०) आम्नाती। (स्त्री०) आम्नातिनी।

आम्नान (सं० स्त्री०) आ-न्ना-लुपट्। १ वेदादिपाठ, वेदादिका अभ्यास। 'आधानं पठनम्।' अथर्वप्रातिशाख्यभाष्य ४।१०१। २ आवेदन, नामग्रहण, तज्जिकिरा।

आम्नाय (सं० पु०) आम्नायते सम्यगभ्यस्यते, आम्ना कर्मणि घञ्। १ वेद, श्रुति। 'श्रुतिः स्त्री वेद आभा-यन्नवी।' (अमर) २ आगमप्रधान तर्कशास्त्र। भावे घञ्। ३ सम्यगभ्यास, सम्यक् पाठ, अच्छा महावरा, खासा सबक। ४ सम्प्रदाय। 'अथावायः सम्प्रदायः।' (अमर) ५ उपदेश, नसीहत। 'आवायो निगमेषि च उपदेशे।' (मेदिनी) ६ कुल, खान्दान। ७ कुलपरम्परा, खान्दान, रस।

८ शिक्षादान, तालीम देनेका काम । ९ तन्त्रशास्त्र ।
महादेवने स्वयं कहा है—

“नमः पञ्चमुखेभ्यश्च पञ्चाद्या विनिर्गताः ।

पूर्वश्च पश्चिमश्चैव दक्षिणश्चोत्तरलया ।

उष्णाम्नायश्च पश्चैते लोचनार्गाः प्रकीर्तिताः ।” (तन्त्र)

आम्नायसारिन् (सं० त्रि०) १ वेदानुयायी, धार्मिक,
पाक-साफ़ । २ वेदतत्त्वयुक्त । (पु०) आम्नायसारी ।
(स्त्री०) आम्नायसारिणी ।

आम्प्रत्यय (सं० त्रि०) आम्-प्रत्यययुक्त, लफ्जकी
आखिर अलामत आम्को रखनेवाला ।

आम्ब (सं० पु०) धान्य विशेष, आम्रन धान ।

“सम्भाषास्वां चरुं वरुणाय धर्मपतये ।” (तैत्तिरीयसंहिता १।८।१०)

‘आम्बाः धान्यविशेषाः’ (सायण) यह धान्य शीत कालमें

उपजता है । कृषक वैशाख मास खेतको मट्टी हलसे
बना रखते हैं । वर्षा आनेसे बीज पड़ता है । खेतको

तीन बार जोता करते हैं । शिखा कुछ बढ़नेपर अच्छा
आम्ब दूसरे खेतमें उखाड़ कर लगाया जाता है ।

पहले खेतको पानीसे भर कृषक पुनः पुनः हल
चलाते रहते हैं । उस समय खेतमें कौचड़ भरा

रहता है । फिर शिखायुक्त धान्य हाथ-डेढ़ हाथके
अन्तर जमा देते हैं । जमीन् ज्यादा नर्म रहनेसे

वर्षाके जलमें आम्ब बिगड़ सकता है । यह धान्य
बङ्गालमें अधिक उपजता और वङ्गवासियोंका जीवन-

स्वरूप होता है । राजनिघण्टु, भावप्रकाश और
मदनविनोदमें आम्बके निम्नलिखित पर्याय मिलते

हैं,—शालि, मधुर, रुच्य, व्रीहिश्रेष्ठ, नृपप्रिय, धान्योत्तम,
केदार, सुकुमारक, रक्तशालि, कलम, पाण्डक,

शकुनाहृत, सुगन्धक, कर्दमक, महाशालि, दूषक,
पुष्पाण्डक, पुण्डरीक, महिष-मस्तक, दीर्घशूक,

काश्चनक, हायन, लोध्रपुष्पक, कलामक, पुण्ड्र,
लोहित, गरुड, शकनीहत, सुगन्धिक, पूर्णचन्द्र,

प्रमादक, शीतभीरु, काश्चन, पाण्डुगौर, शारिवा,
रोध्रपुष्प, दीर्घलात और महादूषक ।

वैद्यशास्त्रके मतसे यह मधुर, स्निग्ध, बलकारक,
मलको कठिन एवं अल्प बनानेवाला, कषाय, लघुपाकी,

रुचिकार, कण्ठ-स्वर-परिष्कारक, पित्त-शूल-

अल्प वायु तथा कफकर, शीत, पित्तनाशक, और मूत्र-
कर होता है ।

खेतमें बीज पड़ने पीछे पौदा फूटता है । पौदा
उखाड़ कर दूसरे खेतमें न लगानेसे जो धान उपजता,
वह अल्प गुणविशिष्ट होता है । किन्तु पौदेको उखाड़
दूसरी जगह लगा देनेसे आम्ब धान्य नूतन अवस्थामें
शुक्रवर्धक और पुराना पड़ने पर परिपाक-लघु एवं
उपकारी है । इससे अधिक मल नहीं बढ़ता ।
वे-जोते खेतका धान्य अल्पतिल, मधुर, कषाय, पित्त-
तथा कफनाशक और वायु एवं अग्नियर्धक है ।
जोते खेतमें उपजनेसे यह बलकर, मेधाजनक, गुरु,
कफ तथा शुक्रवर्धक एवं कषाय होता, अल्प मल
लाता और वायु-पित्तको नाश करता है । खेत जल
जानेसे उपजनेवाला आम्ब कषाय, लघु, रुच्य, मल-
मूत्रकर और कफनाशक है ।

रक्तशालिको हिन्दीमें दावूदखानी या मिह्री
चावल कहते हैं । वैद्यशास्त्रके मतसे यह बलकर,
त्रिदोषनाशक, चक्षुके पक्षमें उपकारी, मूत्र-शुक्र-
अग्नि-वर्धक और पुष्टिकर है । इससे वर्ण एवं
स्वर परिष्कार पड़ता और पिपासा, ज्वर, विष,
व्रण, श्वास, कास तथा दाहका नाश होता है ।

(मदनविनोदनिघण्टु)

आजकल आम्ब धान्य पृथिवीपर प्रायः सकल
स्थानमें उपजा करता है । भारतवर्षके अतिरिक्त
जापान, चीन, सिंहल, भारत-महासागरके द्वीपसमूह,
ब्रह्म, श्याम, लोहितसागर-तीरस्थ स्थान, मिश्र-
(इजिप्ट), मादागास्कर, पूर्व अफ्रीका, दक्षिण-यूरोप,
अमेरिकान्तर्गत ब्रेजिल और जर्गुया पराना प्रभृति
प्रदेशमें इसकी खेती की जाती है । नेपाली बंगलेसे
नहीं मिलता, आकारमें कुछ प्रमेद पड़ता है । अमे-
रिकामें अब उत्कृष्ट आम्ब होने लगा है । किन्तु
सकल स्थानकी अपेक्षा बङ्गालमें ही वह अधिक उपजता
है । ब्रिटिश सरकार अमेरिकासे आम्ब मंगा मन्द्राज
प्रदेशके स्थान-स्थानमें खेती कराती है । हिमालय
प्रदेशका बीज आजकल अवध और बङ्गालमें खूब
बोधा जाता है ।

आम्बता—युक्तप्रान्तके सहारनपुर जिलेका एक नगर। यह अक्षा० २८° ५१' १५" उ० और द्राघि० ७७° २२' ३५" के मध्य अवस्थित है। पहले मुगल-फौजकी यहां चौकी रही। शाह अबुलमालीका सुन्दर समाधि-मन्दिर बना है। पौरजादे निष्कर भूमि भोगते हैं। इस नगरमें ईंटके बड़े-बड़े मकान खड़े हैं।

आम्बरीषपुत्रक (सं० पु०) अम्बरीषपुत्र चतुर्थ्यां वृज्। गोत्रोच इत्यादि। पा ४।१।३८। १ अम्बरीष ऋषिके पुत्र। २ देशविशेष।

आम्बष्ठ (सं० पु०) अम्बष्ठस्थापत्यम्, अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।१२। १ अम्बष्ठका पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य। २ अम्बष्ठ देशका रहनेवाला।

आम्बात-विहार प्रदेशके कषकोंकी एक श्रेणी। आम्बात दो प्रकारके होते हैं,—घरवायत और बह-रायत। घरवायत अनेक दिनसे प्रतिष्ठित और लरवार, नरहन्, पटवार तथा परवार श्रेणीमें विभक्त हैं। बहारायतोंमें खवास, चिबहार, रुवार आदि उपाधि प्रचलित है। पटने, तिहुँत, दरभङ्गे, मुजफ्फर-पुर, सारन, चम्पारन, मुङ्गेर, भागलपुर, राजशाही, दीनाजपुर, सन्याल परगने वगैरहमें यह देख पड़ते और प्रायः बड़े आदमियोंकी नौकरी करते हैं।

आम्बातोमें वाल्य-विवाहकी प्रथा है। शैशव अवस्थामें पुत्र वा कन्याका विवाह कर सकनेपर यह अपनेको मानी समझते हैं। पैसा कम रहनेसे विवाह होना कठिन है। बहु विवाहकी रीति भी देख पड़ती है। स्वामी मर जाने पर सिवा ज्येष्ठ-सहोदरके दूसरे देवरसे स्त्रीका पुनर्विवाह होता है। सतीका बड़ा आदर है। प्रायः सकल ही शाक्त हैं। कालीके निकट बकरेका वलिदान देते हैं। उपास्य देवता पांच है—भवानी, गोरेया, सोखा, बंदी और पेकूराम। पान, सुपारी, मीठे भात और केलेसे भवानीको पूजते हैं। गोरेयेपर सूअरका छौना चढ़ता है। सोखाको रोटी प्यारी है। बंदीके लिये मिठाई आती है। पेकूराम सर्वप्राचीन देवता हैं। बहुत दिनसे आम्बातोके पूर्वपुरुष उनको पूजा करते आये

हैं। आश्विन मास पितृपुरुषोंके उद्देश्यसे तर्पण होता है। ब्राह्मण इनके हाथका जल पी लेते हैं।

आम्बाद—दक्षिण हैदराबादका एक तालुक। इसका परिमाण ८६० वर्गमील है। २४१ ग्राम बसते हैं। महाराष्ट्रोंके अधीनता स्वीकार करनेपर आम्बादमें अंगरेजोंका अधिकार हुआ था। कुछ दिन बाद यह निजामके राज्यमें मिला और सन् १८६२ ई०को स्वतन्त्र जिला बना। उस समय पथरी, पुरभानी, जलनापुर, नरसी, पेंठन और आम्बादमें तहसीलदारी रही। चार वत्सर पौछे अनेक परिवर्तन पड़ा था। जिलेकी बड़ी अदालत औरझाबाद उठ जानेपर यह फिर तालुक हुआ। कषकोंका ही अधिक वास है।

आम्बिकेय (सं० पु०) अम्बिकाया अपत्यम्, ठक्। यवादिभ्यश्च। पा ४।१।२३। १ धृतराष्ट्र। विचित्रवीर्यकी अकालमृत्यु होनेपर सत्यवतीके आदेशसे व्यासदेवने अम्बिकागर्भमें धृतराष्ट्रको उत्पादन किया था। यह बात महाभारत-आदिपर्वके १०६ठें अध्यायमें विवृत है।

अम्बिकाया दुर्गाया अपत्यम्। २ कातिकेय। ३ पर्वत विशेष, एक पहाड़। यह शाकद्वीपके मध्य अवस्थित है। इसी पर्वतपर हिरण्यक्ष मारा गया था। (मत्स्यपुराण)

आम्बोली—रक्तकुरुण्टक भेद, किसी किस्मकी भाड़ी। यह प्राकृत शब्द ठहरता और कोङ्कण देशमें चलता है।

आम्बस (सं० त्रि०) जलात्मक, आबू, पानीला।

आम्बसिक (सं० पु०) अम्बसा वर्तते, ठक्। १ मत्स्य, मछली। (त्रि०) २ जल-सम्बन्धीय, दरयायी।

आम्भि (सं० त्रि०) अम्बसो जातादि, इञ् सलोपः। वाङ्मादिभ्यश्च। पा ४।१।२६। जलजात, आबू, पानीसे पैदा।

आम्भृणी (सं० स्त्री०) वाक्, अम्भृण ऋषिकी कन्या।

आम्ब (हिं० पु०) प्राणीविशेष, एक जानवर। यह नकुल सदृश होता है।

आम्ब (सं० पु०) अम्ब गत्यादिषु रन् दीर्घश्च।

अमितलोदीर्घः। उष्ण १।१६। १ स्वनामख्यात वृक्षविशेष,
आम्रका पेड़। 'आवयूतो रसालोऽसी।' (अमर) (क्री०)
आम्रस्य फलम्, अण्। २ आम्रफल, खानेका आम।
आम, अम, कोशम, महाराजाम्, रसालाम्, राजाम् और साधारणम्
शब्द देखो।

आम्रकवि—आदित्यनागके पुत्र। उदयपुरमें गुहिल
वाहनका जो टूटा-फूटा शिलालेख मिला, उसे इन्होंने
ही बनाया था।

आम्रकूट (सं० पु०) पर्वतविशेष, एक पहाड़।
हिन्दीमें इसे अमर-कण्टक कहते हैं। अमरकण्टक देखो।
आम्रगन्धक (सं० पु०) आम्रस्येव गन्धो यस्य,
बहुव्री० कप्। १ समष्टिलक्षुप, किसी किस्मका भाड़।
२ आम्राहल्दी। आम्राहल्दी देखो।

आम्रगन्धा (सं० स्त्री०) १ मूलकाण्डप्रसिद्ध वृक्ष-
विशेष, कपूरहल्दी।

आम्रगन्धि, आम्रगन्धा देखो।

आम्रगन्धिहरिद्रा (सं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा, आम्राहल्दी।
आम्रगुप्त (सं० पु०) गोत्रप्रवर्तक ऋषि-विशेष।
आम्रतैल (सं० स्त्री०) आम्रस्थित तैल, आमकी
तेल। यह ईषत् तिक्त, मधुर, नातिपित्तकृत्,
वातकफहर, रुच्य, सुगन्ध, और विशद होता है।

(मदनपाव) सहकार तैल ईषत् तिक्त, अतिसुगन्धि, कफ-
हर, सूक्ष्म, मधुर, कषाय और नाति-रक्त-पित्तकर है।

(अविर्चिता)

कच्चे आमको टुकड़े टुकड़े कर अथवा बीचसे फार
नमक, मिर्च मसाला भरते और सरसोंके तेलमें डाल
देते हैं। दो-चार दिन बाद तेलको धूप देखायी
जाती है। जब आम नमकके कारण पकता, तब
यह तेल बनता है।

आम्रत्वचा (सं० स्त्री०) आम्रवल्कल, आमकी
छाल। यह कषाय होती है। (राजनिघण्टु)

आम्रनिशा (सं० स्त्री०) आम्रहरिद्रा, आम्राहल्दी।

आम्रपल्लव (सं० पु०-स्त्री०) आम्रकिसलय, आमका
पत्ता। यह रुच्य और कफ-पित्तघ्न होता है।

(भावप्रकाश) आमका पत्ता अच्छीतरह चबाकर रगड़नेसे
दांत खूब मजबूत पड़ते और चमकने लगते हैं।

आम्रपाली (सं० स्त्री०) स्त्री विशेष, किसी मशहूर
औरतका नाम। यह एक बौद्धरमणी रहें। बुद्धके
वैशालीमें ठहरते समय इन्होंने विश्रामार्थ बाग भेंट
किया और स्मरणार्थ मन्दिर बनवाया था। फा-हियान
और हियोनसियाङ्ग ध्वंसावशेष देख गये। कहते,
कि वैशालीमें महानामन् नामक एक लिच्छवि नृपति
रहते थे। उनके उद्यानमें कदलिवृक्षसे इन्होंने जन्म
लिया। यह अत्यन्त सुन्दर और सुगठित रहें।
महानामन्ने आम्रपाली नाम रखा। किन्तु वंशाली-
की व्यवस्थाके अनुसार उत्कृष्ट स्त्री विवाह न करने
और लोकप्रीतिके लिये रक्षित रहनेको बाध्य थे।
इसीसे यह वेश्या बन गयीं। मगध नरेश विम्बिसार
गोपाल द्वारा समाचार पा वैशाली पहुँचे और लिच्छि-
विसे युद्ध चलते भी सात दिन इनके पास रहें थे।
आम्रपाली विम्बिसरके सहवाससे गर्भवती हुयीं।
इन्होंने पुत्रको बड़ा होनेपर पिताके पास भेज दिया
था। वह राजाके पास पहुँचते ही निर्भय भावमें
छातीसे जा चिपटा। उसपर राजाने निरूपण किया,
बालक भयका नाम भी जानता न था। इसीसे उसे
लोग अभय कहने लगे।

बुद्धके वैशाली पहुँचने पर आम्रपालीने जाकर
साक्षात् किया और दूसरे दिन अपने घरमें भोजन
करनेको निमन्त्रण दिया था। बुद्धने इनका निमन्त्रण
अङ्गीकार किया। किन्तु उसी दिन थोड़ी देर बाद
वैशाली नृपति लिच्छविस भी बुद्धसे मिलने गये।
बुद्धने राजाका निमन्त्रण इस लिये स्वीकार न किया,
कि आम्रपालीके पास जाना ठहर चुका था।

आम्रपुष्प (सं० स्त्री०) आम्रमुकुल, आमका बौर।
यह रुच्य और दीपन होता है। (राजनिघण्टु) इसमें
अतीसार, कफ, पित्त, प्रमेह एवं रक्तदुष्टि दूर करने
और शीत तथा वात बढ़ानेका गुण विद्यमान है।
(भावप्रकाश) आमका बौर पहले-पहल वसन्तमें विष्णु
भगवान्पर चढ़ता है। खुशबू बहुत मीठी होती है।
यह पञ्चवाणका एक अङ्ग है।

आम्रपेशिका, आम्रपेशी देखो।

आम्रपेशी (सं० स्त्री०) आम्रस्य पेशीव। शुष्काम्र-

खण्ड, अमचूर। यह अम्ल-मधुर, कषायरस, भेदक और वात-कफघ्न होती है। (भावप्रकाश) अमचूर अकसर लोग सुखाकर रख छोड़ते और दालमें डालते या चटनी बनाते हैं। अमचूरकी चटनी हरी धनिया मिला देनेसे बहुत अच्छी लगती है।

आमप्रसाद—नृपति विशेष। भावनगरके शिलालेखमें इनका उल्लेख है।

आमफल (सं० क्ली०) आम्र, आम। आम देखो। आमफलपानक (सं० क्ली०) आम्रफल-कृत पानक विशेष, आमका पना। कच्चे आमको पानीमें फुला हाथसे खूब मले और चीनी, कपूर, मिचं मिला दे। यह प्रपाणक श्रेष्ठ, सद्य रुचिकर, बल्य और शीघ्र इन्द्रिय तर्पण है। भौमसेनने अपने लिये इसे बनाया था। (भावप्रकाश)

आम्रमय (सं० त्रि०) आम्रस्य विकारः अवयवो वा, वृद्धित्वात् मयट्। आम्रकृत, आमसे बना हुआ।

आम्रमूल (सं० क्ली०) आम्रशिफा, आमकी जड़। यह सुगन्ध, रुच्य, संग्राहि और शीतल होता है। (राजनिघण्टु)

आम्रसाकृति (सं० पु०-स्त्री०) आम्रस्येवाकृतिः खादो यस्य, बहुव्री०। पीताख्य रसाल विशेष, किसी किस्मका आम।

आम्रलेह (सं० पु०) आम्रकृत लेह, आमकी चटनी। तरुण आम्रको भून गुड़ या चीनीके साथ मले और सेन्धव, मरिच, तथा भर्जित हिङ्गु मिला दे। यह रुचिकृत, मधुर, वसिकारक, हृद्य, स्निग्ध और गुरु होता है। (दैद्यकनिघण्टु)

आम्रवण (सं० क्ली०) आम्रस्य वनम्, इ-तत्, नित्यं णत्वम्। प्रनिरलः शरेच्छुभ्रचामृकार्यं छदिरपीयूचाभ्योऽसंज्ञायापि। पा ८४५। आम्रवृक्ष-समूहात्मक वन, आमका जङ्गल।

आम्रवन्द (सं० पु०) आम्रवन्दा, आमका बंदा। इसके पड़नेसे वृक्ष सूखने लगता है।

आम्रवट, आम्रातक देखो।

आम्रवाट, आम्रातक देखो।

आम्रबीज (सं० क्ली०) आम्रास्थि, आमकी गुठली। यह कषाय, छर्दि-अतीसार-घ्न, ईषत् अम्ल, मधुर और हृदय-दाहघ्न है। (भावप्रकाश)

आम्रवेतस (सं० पु०) आम्रवेतस, चूक।

आम्रहरिद्रा (सं० स्त्री०) आम्रनिशा, आम्राहल्दी।

आम्रात (सं० पु०) आम्रं आम्ररसं अतति, आम्र-अत-पचाद्यच्। १ खनाम-प्रसिद्ध वृक्ष विशेष, अमड़ेका पेड़। अमड़ा देखो। (क्ली०) आम्रातस्य फलम्, अण्। फले लुक्। पा ४।१।१३। २ अमड़ेका फल। यह अल्प

वातघ्न, गुरु, उष्ण एवं रुचिकृत होता, पकनेपर तुवर, स्वादुरसपाक, हिम, तर्पण, श्लेष्मल, स्निग्ध, वृथ, विष्टम्भि, वृंहण, गुरु तथा बल्य रहता और वात पित्त, क्षत, दाह, क्षय, अम्रको जीत लेता है। आम फल कषायाश्ल और पक्क मधुर-अम्ल, स्निग्ध एवं पित्त-कफघ्न है। (राजनिघण्टु) ३ आम्रावर्त, अमावट।

आम्रातक (सं० पु०) आम्र इव अतति, आम्र-अत-शिवल्। १ आम्रात, अमड़ेका पेड़। 'अथ हौ पीतनकपोतनी आमातके।' (अमर) आम्रातकस्य फलम्। २ अमड़ा। आम्रेण तत्फलरसेन तक्तते प्रकाशते तद्रसं महते वा, आम्र-आ-तक पचाद्यच्। ३ अमरस, अमावट। ४ पर्वतविशेष।

आम्रातकेश्वर (सं० पु०) आम्रातक इव ईश्वर-लिङ्गमत्र, शाक० बहुव्री०। तीर्थस्थान विशेष। यह नर्मदाके उत्तरकूलमें अवस्थित है। यहां महादेवका दर्शन होता और नहानेसे सहस्र गोदानका फल मिलता है। (नत्स्यपुराण)

आम्रावती (सं० स्त्री०) आम्र आम्ररसोऽस्थस्याम्, मतुप् मस्य वः दीर्घः। शरादोनाच। पा ६।१।१२०। १ नदी विशेष। इसका जल आम्ररस-जैसा मीठा होता है। २ नगर विशेष, एक पुराना मशहूर शहर।

आम्रावर्त (सं० पु०) आम्रवृक्ष इव आम्रस्य आवर्तते, आम्र-आ-वृत्त पचाद्यच्। १ आम्रातकवृक्ष, अमड़ेका पेड़। (क्ली०) २ अमड़ेका फल। आम्रेण आम्ररसेन आवर्त्यते निष्पाद्यते, आम्र-आ-वृत्त-णिच् कर्मणि घञ्। ३ अमावट। पके आमका रस कपड़े या किसी बरतन पर निचोड़ धूपमें सुखानेसे यह बनता; सारक, रुच्य तथा लघु होता और वृणा, छर्दि, वात एवं पित्तको मिटाता है। (भावप्रकाश)

आम्रास्थि (सं० क्ली०) आम्र-बीज-अस्य, आमकी

गुठलीका दाना। इसे हिन्दीमें बिजली कहते हैं। आम्रास्थि बहुत चिकना होता है। हिन्दुस्थानी बच्चे आपसमें बैठ इसे निकालते और दाहने हाथसे कनिष्ठा तथा अङ्गुष्ठके बीच दबा ऊपरकी सरका देते हैं। यह जिस ओर जाकर गिरता, उसी ओर निर्वाचित बालकका विवाह होना समझा जाता है।

आम्रिमन् (सं० स्त्री०) अम्बरसोऽस्थस्य, यन्नादित्वात् अण्; दृढादिगणे आम्र इति पाठसामर्थ्यात् रलयोरभेदत्वेन लस्य रत्वम्, तत आम्रस्य भावः इमनिच । १ अम्बत्व, खटाई । २ पाणिनोक्त गणविशेष । आम्रेडन (सं० स्त्री०) पौनरुक्त्य, तकरार-अलफाज् । आम्रेडित (सं० त्रि०) आ-म्रेड् उभ्यादे क्त-इट्, आङ् पूर्वोऽसमकृतभाषणे । १ पुनरुक्त, दोहराया या बार बार कहा हुआ । 'आम्रेडितं द्विरुक्तम्' (अमर) (स्त्री०) आम्रेडितं भर्तृचने । पा ८।१।८५ । २ पौनरुक्त्य, दोहराव, तकरार ।

आम्ब (सं० पु०) १ तिलिङ्गी, इमलीका पेड़ । २ अम्बवेतस, अमलवेत । ३ अम्बरस, खटाई । यह पाचन, रुच्य, लघु, पित्त-कफ-प्रद, लेखन, उष्ण, क्लेदन, वाह्य शीतलताकर एवं वात-नाशकर होता और अत्यन्त सेवनसे तिमिर, दाह, दृष्ट्या, भ्रम, ज्वर, कण्डू, पाण्डुरोग, विसर्प, स्फोट तथा कुष्ठ उपजाता है । (वैद्यकनिषण्ड)

आम्बका (सं० स्त्री०) नागरदेश-प्रसिद्ध पलाशी लता, एक वेल ।

आम्बटक (सं० पु०) चुक्रछुप, चूक, तुर्शका भाड़ ।

आम्बपञ्चक (सं० स्त्री०) अम्बरसयुक्त फलपञ्चक, पांच खट्टे फलोंका जखीरा । कोल, दाड़िम, वृक्षाम्ब, चुक्रिका एवं अम्बवेतस अथवा जखीर, नारङ्ग, अम्बवेतस, तिलिङ्गी तथा वीजपूरक नामक पांच खट्टे फलोंको आम्बपञ्चक कहते हैं । (राजनिषण्ड)

आम्बपत्रक (सं० पु०) चुक्रा, चूक, तुर्श ।

आम्बपत्री (सं० स्त्री०) पलाशी लता । यह नागरदेशमें पलाशी और काश्मीरमें शटी कहाती है ।

आम्बपित्त (सं० स्त्री०) खनामख्यात रोग विशेष, भेदेका खट्टापन । अम्बपित्त देखो

आम्बफल (सं० स्त्री०) कपित्थ फल, कैथा ।

आम्बलोटिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र चिन्वा, छोटा इमली ।

आम्बलोणिका (सं० स्त्री०) अम्बलोणिका, सेह, चलमोरी ।

आम्बवक्त्रत्व (सं० स्त्री०) पित्त-जन्य रोग-विशेष, जर्द-आवसे पैदा होनेवाली बीमारी । इससे मुँह खट्टा पड़ जाता है ।

आम्बवती (सं० स्त्री०) अम्बलोणिका, अमलोनिया । आम्बवर्ग, अम्बवर्ग देखो ।

आम्बवल्ली (सं० स्त्री०) लता विशेष, एक खट्टी वेल । महाराष्ट्रमें आंबटवेल नाम प्रसिद्ध है । यह दीपन, तीक्ष्णाम्ब एवं रुचिद होती और कफ, शूल, गुल्म, वात तथा प्लीहाको खो देती है । (वैद्यकनिषण्ड)

आम्बवासुक (सं० पु०) चुक्रिका, तुर्श, चूक ।

आम्बवेतस (सं० पु०) आम्बो अम्बरसयुक्ती वेतसः, शाक० तत् । १ अम्बवेतस वृक्ष, अमलवेतका पेड़ । अम्बवेतस और अमलवेत देखो ।

आम्बवेतसक (सं० पु०) स्वार्थे संज्ञायां वा कन् । तिलिङ्गीवृक्ष, इमलीका पेड़ ।

आम्बा (सं० स्त्री०) आ सम्यक् अम्बो रसो यस्याः । १ तिलिङ्गी वृक्ष, इमलीका पेड़ । २ लिङ्गिनी लता, एक वेल । ३ श्रीवल्ली, एक कंटीली वेल ।

आम्बातक (सं० पु०) आम्रातक, आमड़ा ।

आम्बातकी (सं० स्त्री०) पलाशी लता, किर्मदाना, किर्मिज-फुरङ्गी ।

आम्बानीक (सं० पु०) पीतभीण्डी छुप, पीले फलका भाड़ ।

आम्बिका (सं० स्त्री०) आम्बमनोज्ञादित्वाद्भावे वुञ् । १ अम्बोद्गार, भेदेकी खटाई । २ तिलिङ्गी वृक्ष, इमलीका पेड़ । 'तिलिङ्गी लाञ्जिका चिन्वा तिलिङ्गीका कपिप्रिया ।' (वाचस्पति)

आम्बी, अम्बिका देखो ।

आय (सं० पु०) आ-इण्-अच् वा अय-घञ् ।

१ लाभ, फायदा । २ धनागम, आमद । ३ ज्योतिषोक्त लग्न एवं राशिसे एकादश स्थान, ग्यारहों कमरी

मसकन । ४ वनितागार-पालक, जनानेका नाजिर ।
कर्मणि अच्-घञ् । ५ जमीन्दारीसे खामिप्राप्त
धनादि, जमीन्दारीकी आमदनी ।

“कृतरचः सदोल्याय पश्ये दायव्ययौ स्वयम् ।” (याज्ञवल्क्य)

‘यमेव खामिप्राप्तो भाग आयः ।’ (सिद्धान्तकौमुदी)

आयःशूलिक (सं० त्रि०) अयः शूलेनार्थान् अन्वि-
च्छतिः, अयः-शूल-ठक् । अयः शूलदण्डाजिनायां ठक्ठञौ ।
पा ५.२.७६ । ‘तीक्ष्ण उपाशोऽयःशूलं तेनान्विच्छति आयःशूलिकः सान्-
सिकः ।’ (सिद्धान्तकौमुदी) ‘आयःशूलिकः यो सदुनोपाशेनावेष्ट-
व्यानर्थान् भवेनान्विच्छति ।’ (महाभाष्य) १ तीक्ष्ण कर्म द्वारा
अर्थकर, लठके जोरसे रुपया लानेवाला । (पु०)
२ साहसिक पुरुष, रुपया पैदा करनेके लिये सर
फोड़नेवाला आदमी । (स्त्री०) आयःशूलिकी ।

आय जाना (हिं० क्ति०) आ जाना, पहुंचना ।

“आय गये वगमेल धरहु धरहु धावहु सुभट ।

यथा विलोकि चक्रेल, बाल रविहिं घेरत दनुज ॥” (तुलसी)

आयजि (दै० त्रि०) अभिसुखेन इज्यते, आ-यज
औषादिक इ प्रत्ययः । आयष्टव्य, सर्वतो यज्ञ-
साधन, चारो ओरसे यज्ञ करनेवाला । “आयजी वाजसतमा ।”
(ऋक् १।२८६)

आयजिष्ट (दै० त्रि०) देवताके सम्मुख यागका
विषयीभूत । “होदयानस्त्रायजिष्टः ।” (ऋक् १।२८७) ‘आयजिष्ट
अभिसुखेन देवानां यष्टुतमः ।’ (सायण)

आयज्य (दै० त्रि०) १ लाभ उठानेकी चेष्टा करने-
वाला, जो हासिल करनेमें लगा हो । २ यज्ञ करनेकी
तत्पर, जो यज्ञ करना चाहता हो ।

आयत् (सं० त्रि०) आगमन करनेवाला, जो आ
रहा हो । (स्त्री०) आयती ।

आयत (सं० त्रि०) आ-यम-क्त, अनुनासिक लोपः ।
१ विस्तृत, दीर्घ, तवील, दराज, लम्बा । आ-यम
कर्माणि क्त । २ आकृष्ट, खिंचा हुआ । ३ दृढ़, मजबूत ।
४ नियमित, बकायदा । (पु०) १ ज्यामितिका
दीर्घ-चतुरस्र आकार, तहशीर-उल्लेखकी शक्त
सुस्तोली । (अ० स्त्री०) ६ इञ्जील या कुरान्की
बात ।

आयतच्छदा (सं० स्त्री०) आयतो दीर्घच्छदः पत्रं
यस्याः, बहुव्री० । कदलीछप, केलीकी भाड़ी ।

आयतन (सं० क्ली०) आयतन्ते धर्मार्थं साधवोऽत्र,
आ-यत आधारे लुट् । १ अधिष्ठान, बुनियाद ।
२ आश्रय, सहारा । ३ हेतु, सबब । ४ विश्रामस्थान,
आरामगाह । ५ मठ, मन्दिर । ६ चबूतरा । ७ धान्य-
संग्रहस्थान, खिरमन, खलियान । ८ रोगनिदान,
बीमारीका सबब । ९ यज्ञस्थान । वेदमें आयतन दो
प्रकारका होता है,—पृथिवी और अन्तरीक्ष । शरत्-
अनुष्टुप्, एकविंशतिस्तोम एवं वैराजसाम, पृथिवी
और इमन्त, पंक्ति, त्रिणवस्तोम तथा शाकल-
साम अन्तरीक्षका आयतन है । १० अवच्छेदक,
मुहृदस । ११ प्रतिमा, शक्ति । १२ बौद्ध-मतोक्त
षड्हेन्द्रियस्थान, छः अन्दरूनी निशस्तगाह । चक्षु,
कर्ण, नासिका, जिह्वा, समस्त शरीर और मनकी
भोट देशके बौद्ध आयतन कहते हैं । किसी-किसीने
पांच ज्ञानेन्द्रिय, पांच कर्मेन्द्रिय, मन और बुद्धिको
मिलाकर द्वादश आयतन माने हैं,—

“अथांशुपाज्यं बहुशो द्वादशायतनानि वै ।

परितः पूजनोयानि किमन्यैरिह पूजितैः ॥

ज्ञानेन्द्रियाणि पञ्चैव तथा कर्मेन्द्रियाणि च ।

मनो बुद्धिरिति प्रोक्तं द्वादशायतनं बुधैः ॥” (बोधिचिचविवरण)

फिर दूसरे मतमें—

“दुःखं संसारिणः स्तम्भास्तै च पञ्च प्रकीर्तिताः ।

विज्ञानं वेदनासंज्ञा संस्कारो रूपमेव च ॥

पञ्चेन्द्रियाणि शब्दाद्या विषयाः पञ्चमानसम् ।

धर्मायतनमेतानि द्वादशायतनानि तु ॥” (विवेकविलास)

जैनशास्त्रानुसार—“सम्पत्तादिगुणानामायतनमष्टहमावास आश्रय
आधारकरणं निमित्तमायतनं भव्यते” (वृहद्ब्रह्मसंहिता) अर्थात्
आत्माको संसारसे मुक्त करनेवाले सम्यग्दर्शन
(वास्तविक पदार्थोंमें अज्ञान करना), सम्यग्ज्ञान
(समस्त पदार्थोंकी विपरीतता, अनध्यवसाय और
संशयरहित ज्ञान होना), सम्यक्चारित्र्य (संसारके
दुःखोंसे भयभीत हो सांसारिक कार्योंके परित्यागपूर्वक
सुतपका तपना) ये तीन कारण हैं । इनके आश्रयभूत
जो पदार्थ हैं, उन्हें आयतन कहते हैं । और ऐसे
आयतन छः हैं—सुदेव, सुशास्त्र, सुगुरु, सुदेवाराधक,
सुशास्त्राधक और सुगुरुसमाराधक । सर्वज्ञ, वीत-

राग, मोक्षमार्गोपदेष्टा निर्दोष देवको सच्चा देव, सच्चेदेव द्वारा उपदिष्ट वादियोंद्वारा अखंडनोय मोक्ष-मार्गके वतलानेवाले शास्त्रको सुशास्त्र, सुशास्त्रके अनुसार मोक्षमार्गके ऊपर चलानेवाले तपस्वीको सुगुरु और इन तीनोंके माननेवालेको आराधक कहते हैं।

आयतनत्व (सं० स्त्री०) वेदी वा संस्थान होनेका भाव, मज्जुबा या निशस्तगाह होनेका तौर।

आयतनवत् (सं० त्रि०) संस्थानयुक्त, निशस्तगाह रखनेवाला। (पु०) आयतनवान्। (स्त्री०) आयतनवती।

आयतनवान् (सं० पु०) ब्रह्माका चतुर्थ पाद।

आयतपत्रा (सं० स्त्री०) कदलीवृक्ष, केलेकी भाड़ी।

आयतपत्री, आयतपत्रा देखो।

आयतस्तू (सं० पु०) आयतं स्तौति, आयत-स्तु दीर्घः। क्विप्चिप्रच्छायतस्तू काटप्र० नृशोषा दीर्घोऽस्यसारणश्च। पा १।१।१७८ वार्तिक। आयतस्तावक, सनाखुान्, लम्बी-चौड़ी तारीफ़ करनेवाला शब्द।

आयताच्च (सं० त्रि०) विस्तृत नेत्र वा दीर्घ नयन-च्छद रखनेवाला, जिसके बड़ी आंख या लम्बा पपोटा रहे।

आयतापाङ्ग (सं० त्रि०) दीर्घ कोण-युक्त नयन रखने-वाला, जिसके लम्बे गोशेका चश्म रहे।

आयतायति (सं० स्त्री०) विस्तृत सातत्य, तवील सबात, दूर-दराज आखिरत।

आयतार्ध (सं० पु०) ज्यामितिके दीर्घ चतुरस्र आकारका अर्ध भाग, तहरीर उल्लेखकी शक्त-सुस्तौलका आधा हिस्सा।

आयति (सं० स्त्री०) आ-या-इति। १ उत्तरकाल, आयन्दा जमाना। २ आगमन, आमद। ३ प्रभाव, अजुमत। ४ फलदानकाल, नतीजा देनेका वक्त। ५ आयाम, तूल, पक्षा। ६ संयम, दिक्की इस्तिना। ७ सङ्गम, मुलाकात। 'आयतिस्तु स्त्रियां देव्यै प्रभाषात्मानिकावलीः।' (मेदिनी) ८ प्रापण, कुबुलियत। ९ मेरुकन्याभेद, मेरुकी एक बेटो। (निष्पुत्राय)

आयतिस्तु (सं० त्रि०) १ विस्तृत, तवील। २ प्रभाव

शाली, अजीम। ३ संयमशील, अपने दिलपर ज़ब्त रखनेवाला। (पु०) आयतिमान्। (स्त्री०) आयति-मती।

आयतो (वै० स्त्री०) आ-यती प्रयत्ने इन्। वाहु, बाजू।

आयतोगव (वै० अव्य०) आयन्ति गावोऽत्र, तिष्ठद्गु प्र० अव्ययो०। तिष्ठद्गु प्रष्टतौनि च। पा २।१।१७। गोष्ठसे गोके आगमनकाल, द्वारसे मवेशियोंके घर आते वक्त।

आयतीसम (सं० अव्य०) आयन्ति समा अत्र, तिष्ठद्गु प्र० अव्ययी०। वत्सके आगमनकाल, बछड़ेके आते वक्त।

आयत्त (सं० त्रि०) आ-यत-क्त। अधीन, वशीभूत, मातहत। 'अधीनो निम्न आयतोऽस्यच्छन्दो गृहकाऽव्ययी।' (धर्मर)

आयत्तता (सं० स्त्री०) अधीनता, इतायत।

आयत्तत्व (सं० स्त्री०) आयत्तता देखो।

आयत्ति (सं० स्त्री०) आ-यत-त्तिन्। १ स्नेह, मुहब्बत। २ वशित्व, इतायत। ३ सामर्थ्य, ताकत। ४ प्रभाव, अजुमत। ५ सोमा, हृद्। ६ शयन, खाव। ७ उपाय, तदवीर। ८ इन्द्र। 'आयत्तिस्तु स्त्रियां चोडे वशित्वे वासवे वली।' (मेदिनी) ९ दिन, रोज़। १० भविष्यत्-काल, आयन्दा जमाना। ११ सम्मार्गका सातत्य, चालचलनकी मजबूती।

आयथातथ्य (सं० स्त्री०) न यथातथं तस्य भावः, नजु-तत्, व्यज् वा पूर्वपदस्य वृद्धिः। अनौचित्य, नासु-नासिबत।

आयद (अ० वि०) १ अवतीर्ण, उतरा हुआ। २ योग्य, काबिल।

आयद होना (हिं० क्रि०) १ उतरना, आ बैठना, पड़ना। २ अधीन बनना, ताबेमें आना।

आयद्वस्तु (वै० त्रि०) वस्तु प्राप्त करनेवाला, जिसके पास सामान् पड़ुंचे।

आयन (वै० स्त्री०) अयनमेव, स्वार्थे अण्; आ अयनम्, प्रादि समा० वा। १ सम्यक् आगमन, खासी आमद। "आयने ते परायणे दूर्वा रोहन्तु पुष्पिणीः।" (सूक्त १०।१३।२८) "आयने आयमने।" (सायण) (त्रि०) अयनस्येदम्, अण्। २ अयनसम्बन्धी, खत-मोतदिलुलनहार और रासुल

सरतान्से तालुक रखनेवाला। (हिं० पु०) ३ गवा-
दिका स्तन, बाख।

आयनवलना (सं० स्त्री०) क्रान्तिमण्डलको साम-
यिक परिवृत्तिवलना, अयन-सम्बन्धो विचलन, खत-
मोतदिलुल-नहार और रासुल-सरतान्का टेढ़ापन।
वलना दो प्रकार है, आक्ष और आयन। ग्रहणगणनामें
दोनों प्रकारकी वलनाजांच लेना चाहिये। नतज्याको
अक्षज्या द्वारा गुणन और फलको त्रिज्यासे हरण कर-
नेपर जो अक्ष आता, वही आक्षवलनाज्या कहाता है।
इस ज्यासे सम्बन्ध रखनेवाले चाप भागके निकल आने-
पर आक्षवलनांश ठीक होता अर्थात् वही चापभाग
आक्षवलनांश ठहरता है। इसी प्रकार जिस ज्योतिष्क-
की ग्रहण-गणना आवश्यक आती, उसीके स्थानको जांच
हो आती है। फिर निर्णीत स्थानमें तीन राशि अर्थात्
८० अंश मिलाकर गिनी जानेवाली क्रान्ति ही आयन-
वलना है। (खगोलशास्त्र)

पाश्चात्य ज्योतिर्विद् कहता, कि ज्योतिष्कगणकी
क्रान्तिगणना द्वारा समानुक्रमणिका बनानेसे लम्बके
अनुसार कार्य करनेपर सुभीता बैठता; क्योंकि उसमें
उत्तर एवं दक्षिण भेदका प्रयोजन नहीं पड़ता।
वलना शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

आयन्ता, आयन्तु देखो।

आयन्ती-पायन्ती (हिं० स्त्री०) १ सरहाना-पाय-
ताना, जंघा-नीचा, ऐताना-पैताना। (क्रि० वि०)
२ ऊपर-नीचे, चढ़-उतरकर।

आयन्तू (वे० पु०) बांधने या उठानेवाला। सायणने
इसका अर्थ आनेवाला लगाया है।

आयमन (सं० स्त्री०) आ-यम-लुपट्। १ विस्तार,
फैलाव। णिच्-लुपट्। २ नियमन, पाबन्दी। ३ दृढ़
एवं सङ्कुचित वस्तुका आकर्षण-पूर्वक दीर्घीकरण,
खेंचतान। “यथा दृढस धनुष आयमनम्।” (छान्दोग्य उ० १।३।५)

आयमा (अ० स्त्री०) निष्करभूमि, माफ़ी जमीन्।
यह इमाम या मुल्लाको मिलती और मालगुजारीसे
बरी रहती है।

आयम्य (सं० त्रि०) १ विस्तार, फैलने का विभक्त

२ संयमयाग्य, रोक जानेवाला। (अव्य०) ३ विस्तार
वा संयमपूर्वक, फला या रोककर।

आयलैण्ड—एक युरोपीय द्वीप। यह अक्षा० ५१° २६' से
५५° २१' उ० और द्राघि० ५° २५' से १०° ३०' पू०
तक विस्तृत है। उत्तर, दक्षिण एवं पश्चिम आट-
लाण्टिक महासागर और पूर्वमें नाथ चानेल,
आयिरिस सागर तथा सेण्ट जार्ज चानेल है। क्षेत्रफल
३२५३१ वर्गमील पड़ता है। चार प्रदेश और बत्तीस
जिला है। बड़ा पहाड़ देखनेमें नहीं आता। प्रधान
नगर और बन्दरका नाम डबलिन है। मज्जकी सम-
तलभूमि उत्तर और पूर्वके पर्वतको विभाग करती
है। नदी पूर्व और पश्चिम बहती है। ज़रू
बहुत और जलवायु अच्छा है। भूमि अधिक उर्वरा
है। खनिज द्रव्य बहुत कम निकलता है। ज्वन,
नैनू, रेशम और रुईका काम बनता है। आयलैण्ड
ग्रेटब्रिटेनके संयुक्त राज्यका एक भाग है। भाषा
प्रधानतः अंगरेजी है। प्रायः सन् १४५० ई०के समय
लोगोंने ताँबेको काममें लाना सीखा था। पहले
अग्नि, सूर्य, क्रूप तथा वृक्षकी पूजा होती रही। अब
ईशई धर्म फैल गया है। कोई-कोई पाश्चात्यपण्डित
आयलैण्डको पुराणोक्त ‘खर्षप्रख’ ठहराता है। पहले
सोने और चांदीकी यहाँ खानि रही। *

इतिहास—आयलैण्डके आदिम अधिवासियोंका हाल
जानना कठिन है। ऐतिहासिकोंने जो कुछ लिखा,
वह कथा-कहानीके ही आधारपर खड़ा है।
कौन बता सका, सन् १८५३ ई०से पहले आय-
लैण्डका क्या भाव रहा। लोग कहते, सन् ई०से
पाँच-छः शताब्द पहले ब्रिडेल नामक आक्रमणकारी
आये थे। भाषा केल्टिक रही। वर्तमान समय कोनाटों
और मनष्टेरियोंमें केल्टिक भिन्न आकार मिलनेसे
ब्रिडेलोंका आदिम अधिवासियोंके साथ विवाहादि
सम्बन्ध रखना प्रमाणित होता है। आदिम अधि-
वासियोंकी भाषाका सन्धान नहीं लगता। सम्भवतः
ब्रिडेलोंने ही गलष्टर, लीन्ष्टर, कोनाट, पूर्व मन्ष्टर
और पश्चिम मनष्टर विभाग बनाया था। फिर सन्

ई०से तीन और पांच शताब्दीके बीच दक्षिण-पूर्व आयर्लेण्डमें ग्रेटब्रिटेनसे ब्रैलजिक लोगोंका आकर बसना जाना जाता है। ब्रैलजिक लोहेका काम बनाते तथा गाल-प्रान्ततक व्यापार चलाते थे। स्काट-लेण्डसे पिकटि लोगोंने भी धावा मार अन्तीम और दोन पर अधिकार जमा लिया। आक्रमणका समय निर्धारित नहीं होता। ग्रीक और रोमक लेखकोंने भी कथा-कहानीकी ही बात दोहरायी है। ट्रेबोके मतसे आयर्लेण्डके लोग जङ्गली और राक्षस रहे, विवाहादि सम्बन्ध समझते न थे। सोलिनस सुन्दर गोचरोंको सराहते, किन्तु अधिवासियोंको असभ्य और अरुणप्रिय बताते हैं। विजेता अपने शत्रुका रक्त पीकर सुंहमें लपेट लेते और भला बुरा जानते न थे। किन्तु टोलेमीने मनापी कासी, इवेरनी, वेल्सबोरी, गङ्गनी, औतिनी, नागनाती, अदिनी, वेनिनी, रोबोगदी, दारिनी, वोलन्ती, कोरोदी आदि सोलह प्रकारके लोगोंकी बात कही है। इवेरनी विदेशियोंके साथ व्यापार करते थे। उन्हींके इवेरियो नामसे आयर्लेण्ड शब्द बना है।

कथा-कहानियोंमें सन् ई०के ८वें शताब्दी कितने ही लोगोंका आयर्लेण्ड आना-जाना सुनते हैं। प्रथमतः मध्य यूनानसे पारथोलनके अधोन बहुतसे लोग आकर डबलिन प्रान्तमें बसे थे। किन्तु तीन सौ वर्ष बाद सबके सब महामारीमें मर मिटे। तत्पश्चात् स्थानमें पुरानी लाशें मिली हैं। पिछे सीदियाके नेमेद नौ सौ बीर ले आ पङ्च और फोमोरियन नामक समुद्रदस्युवोंसे खूब लड़े-भिड़े। टोरी द्वीपमें उनका किला बना था। बड़े कष्टके बाद नेमेदियोंने शत्रुको जीता और किला तोड़ा। किन्तु फोमोरिनोंको अफ्रीकासे सेनासामग्री मिल गयी। दूसरे युद्धमें दोनों दल प्रायः नष्ट हुये थे। तीस नेमेदीय भागकर बचे, जिनमें तीन नेमेदके अपत्य रहे। सिमनब्रेक नामक नेमेदके अपत्य यूनान जा पङ्च। वहां उनका वंश इतना बढ़ा, कि यूनानियोंने निर्भय हो सबको गुलाम बना डाला था। अधिक दशा विशदनेपर उन्हींने यूनान-

से भाग आयर्लेण्डमें आ आश्रय लिया। अतः पर वही इतिहासमें बोला कहाते हैं। उनमें पांच भ्राता नेता रहे, जिन्होंने अलग अलग पांचो प्रान्त अधिकार किये। कीटिङ्ग, माकफिरबिस प्रभृति अन्यकारोंने अपने समय बोलोंका रहना बताया, किन्तु जल्पक, कापटिक, पैशुन्य, सुखर, निन्द्य, तुच्छ, जघन्य, अधीर, कठोर और आतिथ्य-विमुख लिखा है। फिर बोलोंके बसते-बसते त्वाथ दे दानन नामक दूसरे आक्रामक आ पङ्च थे। उन्हें भी लोग नेमेदका ही वंशज बताते हैं। वह यूनानसे आये, प्रेतसिद्धिविद्यामें अभ्यास बढ़ाये और अपने साथ सुप्रसिद्ध प्रस्तर-मूर्ति लियाफायलके अतिरिक्त दगदेका मुकुट एवं लुगैद लाम्पादका कपाण तथा शूल लाये थे। लियाफायल तारामें प्रतिष्ठित किया गया। फिर—बोरग नृपति योच्छुदके राज्य सौंपनेसे इनकार करनेपर मोयतूरके मैदानमें घोर युद्ध हुआ था। बोला बहुत मरे और जो बचे, वह भागकर अरन, इसले, राथलिन तथा ईन्नायिडसमें जा छिपे। बीस वर्ष बाद त्वाथ देको फोमोरियनोंका सामना पकड़ना पड़ा था। किन्तु मोयतूरके युद्धमें वह बिलकुल हारे और मिलेसियनोंके आनेतक त्वाथ दे शान्ति-पूर्वक शासन करते रहे। अन्तको मिलेडके आठ पुत्र सीदियासे आयर्लेण्ड जीतने चले थे। त्वाथ देने बहुतोंको मारा-काटा। किन्तु दो बार युद्ध होने बाद मिलेसियन जीते और एवेरफिण्ड एवं एरेमोन नामक दो भाई आधे-आधे आयर्लेण्डके स्वामी बने।

मिलेडके भाई लुगैड दक्षिण-पश्चिम मनुष्टरमें राज्य करते थे। कहते, देशीय नृपति रोडेरिककी समयतक मिलेसिय शासन चलाते रहे। एवेरफिण्ड और एरेमोनमें युद्ध होनेसे एवेरफिण्ड मारे गये थे। एरेमोनके ही समय सीदियासे पिकट आ पङ्च। कैबर किनचेटने सन् ८० ई०को मिलेसियनोंको निकाल बाहर किया था। परन्तु त्वाथलके सिंहा-सनाई होनेपर उन्हें फिर अधिकार मिला। सन्

२५४-२६६ ई० समय कलाकौशल बढ़ानेवाले कोर-माकका राज्य रहा। अलष्टरके आदिम अधिवासियोंको उल्लिडियन कहते हैं। योचैद सुयिगमडोयिनके पुत्र नियल नोयिगियलाके शासन करते ताराका मिलेसिमन राज्य प्रतिष्ठित हुआ था। नियलने विदेशियोंपर चढ़ सेण्ट पाट्रिकको कंद किया। वेल्स, इंग्लैण्ड और आयिल-अव-मानमें मिले शिला-लेखोंसे उपरोक्त विषय प्रमाणित है।

किन्तु अब लोग नहीं मानते, कि आयर्लेण्डवासी प्रधानतः मिलेसीय हैं। मूर्तिपूजकोंका वृत्तान्त प्रायः अविदित है। हां, कितने ही महापुरुषोंके उपाख्यान सुननेमें आते हैं। किन्तु पवित्र वृक्ष-युक्त कूपों, प्रस्तर-स्तम्भों और अस्त्र-शस्त्रोंपर ऐसे बहुतसे चिह्न मिलते, जिनसे जीव पूजा प्रमाणित होती है। सूर्य और अग्नि भी पूजे जाते थे। अम्पराओंको आयर्लेण्डवासी बड़े आदरकी दृष्टिसे देखते रहे। आज भी उनकी कथा-वार्ता देहाती लोगोंमें हुआ करती है। कितने ही मनुष्य अम्पराओंके साथ व्याहे गये थे। वृजिट कला-कौशल और सौभाग्यकी देवी रहीं। किलडारमें उनके नामपर सदा अग्नि जलता और हेब्रायिडस तथा डोनेगालमें सुभिच्छ होनेके लिये पूजन किया जाता था। क्लिडना और ऐवेल अम्पराओंकी रानी हैं। आना, बोडव और माचा नामक तीन युद्धविषयक देवियोंकी बात प्रायः होती रहती है। क्रोम क्रौच देवकी मूर्ति सोने-चांदी की बनी थी। उनकी चारो ओर बारह मूर्तियां पीतलकी रहीं। किसी पुराणमें क्रोम क्रौच आयर्लेण्डीय दस्युमूर्ति कहे गये हैं। सेण्ट पाट्रिकने उक्त मूर्तिको उखाड़ कर फेंक दिया था। उनकी गदाका चिह्न आज भी मूर्तिपर अङ्कित है। लोग अधिक धान्य, मधु और दुग्ध पानेके लिये अपने लड़के क्रोम क्रौचके सामने वलि चढ़ाते थे। एक समय दुर्भिक्ष पड़ा। पाद-रियोंने कहा, किसी निरपराध दम्पतीके पुत्रको लाकर तारा देवीपर चढ़ाया और उसका रक्त मूर्तिकामें मिलाया जाता। डूयिड अदरियोंका बड़ा मान

रहा। वह अभिचारसे सुखपर दण मार लोगोंको विचित्र बना और अग्नि तथा रक्त आकाशसे बरसा सकते थे। उन्हें बादलोंको देख और पवित्र काष्ठ-खण्डको उठा आगामी विषय बता देनेका अभिमान रहा। मन्त्र मारनेसे लोग अदृश्य हो जाते थे। आयर्लेण्डवासियोंको वैकुण्ठ होनेका विश्वास था। कोण्डला कायम जीते-जी नावपर चढ़ ब्रान और फेबालके साथ वैकुण्ठ पहुँचे। दलरियादा नृपति मोनगनने मरनेके बाद भेड़िये, हिरण, हंस आदि कई जीवोंका आकार धारण किया था। बूड़ा आनेपर फिनतान भी कितने ही जीवोंके रूपमें बहुत दिन विद्यमान रहे और अन्तको सन् ई०के ६ठें शताब्द फिर त्वान-माक-कैरिलके रूपमें उत्पन्न हुये। किन्तु सन् ई०से ४०० वर्ष पहले आयर्लेण्डमें वेल्स प्रान्तके ईसायी धर्मकी चर्चा आ फैली थी। ४३१ ई०को पेलाज्यूसने ईसायी धर्मका झण्डा आ उड़ाया। उनके मरनेपर सेण्ट-पाट्रिक-विकलो पहुँचे थे। उन्होंने लोगोंको समझा-बुझा गिरजा बनवाये और ईसायी धर्म सिखानेको स्कूल खोलवाये। नृपति लोयिगायर और डूयिड पुरोहितने उनका बड़ा विरोध किया। अपना धर्म छोड़ना अस्वीकार करते भी, लोयिगायरके कितने ही सम्बन्धी ईसायी हो गये। आरमाचमें गिरजा सेण्ट-पाट्रिकने बनवा दिया। पहले आयर्लेण्डमें कोई शहर न था। सेण्ट पाट्रिकके मरनेपर ईसायी धर्म ठीला पड़ा और साधु समाजका प्रभाव बढ़ा। साधुगण आयर्लेण्डमें घूमा करते और बड़े आदमियोंके दरवाजे डेरा डालते थे।

सन् ७८५ ई०को नार्थमेनोने आक्रमण कर लामवेका गिरजा लूटा और जलाया। उस समय प्रान्तिक राज्य आपसमें लड़-झगड़ रहे थे। लोगोंको युद्धविद्या विदित न थी। संभवतः पहले पहल नारवीजियनोंने आक्रमण किया। उन्हें माल मारने और आदमियोंको गुलाम बनानेकी आवश्यकता रही। ८०१ ई०को वह नावपर चढ़ शानोन पहुँच गये थे। ई०के नवें शताब्द मध्य इस दीपके प्रत्येक स्थानपर आक्रमणकी घूम रही।

८२० ई०को समय आयर्लेण्डमें नारवीजियन पडुंच डबलिन, मीथ, किलडेर, विकलो, क्लान्सको, किलकेनौ और टिपेररी प्रान्तमें बस गये। ८३० ई०को टरगेसियस शाही जहाजोंका बेड़ा ले भपट पड़े थे। उन्होंने लाफरीमें किला बनाया और कोन्नाट तथा मीथको विध्वंस किया। अरमाघका मठ दश बार उठाया और गिराया गया था। महन्त और छात्र आक्रमणके भयसे बहुमूल्य ग्रन्थ बगलमें दाब भाग खड़े हुये। टरगेसियसने आयर्लेण्डमें कितने ही नगर बनवाये थे। ८४० ई०को डबलिन, वाटरफोर्ड तथा लायिमरिक तैयार हुआ और डब्लेण्ड, फ्रान्स एवं नारवेके साथ व्यापार चला। ८४४ ई०में टरगेसियसको मायलसेकलेनने कैद कर डूबा दिया और दो वर्ष बाद उनके साथी डोमरायरको भी वध किया था। ८३३से ८४५ ई०तक मन्ष्टरके नृपति तथा काशेलके पादरी फेडिलमिडने आयर्लेण्डका कितना ही भाग लूटा और कुछ दिन आरमाघके पादरीका अधिकार अपने हाथमें लिया। ८४८ ई०को दक्षिण डब्लेण्डसे एक डेनिश जहाजी बेड़ा डबलिनमें आ पहुँचा था। पहले तो नारवीजियनों और डेन्सोंमें मेल रहा, किन्तु दो वर्ष बाद डेन्सोंने डबलिनपर आक्रमण मारा। ८५१ ई०को कारलिङ्गफोर्ड लोफमें ३ दिन युद्ध होने बाद डेन्सोंको विकिङ्गसोंने डबलिनसे भगा दिया। ९ वें शताब्दके आरम्भसे मध्यतक अनेक स्त्री कैद हो जानेपर आयर्लेण्डके अधिवासियों और आक्रमणकारियोंमें विवाहादि सम्बन्ध बढ़ गया था। इससे वर्णसङ्कर जाति उत्पन्न हुई। इस जातिके लोग गालोवे कहते और समुद्रमें लूटमार किया करते थे। इन्होंने ईसायी धर्म छोड़ मूर्तिपूजाका आश्रय लिया। ठला हुआ सिक्का न रहनेसे विदेशीय व्यापार बढ़ न सका था। स्थान-स्थान पर सामयिक मेला होते और उसमें वस्त्र, आभूषणादि खरीदा जाते रहा। परन्तु शीघ्र ही स्लाण्डिनेविय नगरोंमें सिक्का चलने लगा, व्यापार बढ़ा और फेमिङ्ग, इटालीय आदि व्यवसायियोंका दल आ बसा। इन्हीं

स्लाण्डिनेविय व्यवसायियों द्वारा ११वें एवं १२वें शताब्द अवशिष्ट युरोपके साथ आयर्लेण्डका सम्बन्ध जुड़ गया था। उपरोक्त विषयका प्रमाण कितने ही नगर और स्वयं इस द्वीपके आयर्लेण्ड नाममें मिला, जो स्लाण्डिनेविय शब्दसे निकला है। आयरिश लोग स्लाण्डिनेविय फौजमें भरती होते थे।

मनष्टरकी बड़ी जाति एलिल औरलम, काशेल इवोगन और क्लेयरकी डालकेसिय कोरमाक-काससे उत्पन्न हुई है। १०१४ ई०के गुडफ्रायडिको क्लोण्डार्फका भोषण युद्ध बढ़ा था। कुछ देर घमासान होने बाद नार्स दलके पैर उखड़ गये। मायेलसेकलेन डबलिनको भागे थे। दोनों ओरके कितने ही सरदार काम आये। ब्रियन अपने मूरचद और मायेलमोर्दा पुत्रके साथ मर मिटे थे। हार कर भी नार्समनोंने अपने अधिकृत नगर न छोड़े और धीरे-धीरे आयर्लेण्डवासी बन गये। डालकेसिय फौजके अधिक निर्बल हो जानेसे मायेलसेकलेनको फिर आयर्लेण्डका सिंहासन मिला था।

सन् १०२२ ई०को मायेलसेकलेनकी मृत्यु हुई। १०६४ ई० समय ब्रियनके पुत्र डोनचदका प्रभाव बहुत बढ़ा था। उन्होंने आधे आयर्लेण्डको जीत अपने पिताका पद पाया। ११०२ ई०को मागनस बारेफूटने पश्चिमकी ओर इस द्वीपको जीतनेके लिये धावा मारा था। किन्तु म्यरचेरटाकने बड़ी फौजके साथ उनका विरोध किया। अन्तको सन्धि होनेपर मागनसका विवाह आयरिश-राजकुमारी बियाडम्यूनके साथ हुआ था।

लीनष्टर-नृपति डियारमायिटका जन्म-सम्बन्ध विदेशियोंसे बहुत मिलते रहा। सन् ११५२ ई०को टोरडेलवाक ओकोनोरने ब्रेयिकन नृपति टिगेरननको सिंहासनसे उतार ओरोरककी पत्नी डेरबफोरगायिलको पकड़ ले गये।

ईसायी धर्म प्रतिष्ठित होते भी विवाहादि सम्बन्धमें बढ़ा गड़बड़ रहा। लोग धन देकर स्त्री व्याह लेते थे। साधारण स्त्री भी लड़का होनेसे पत्नीके समान स्वामीपर खल रखते रही। वर्णसङ्कर पुत्र स्वजातीयोंसे अलग

समझा जाता न था। टिरोनके राजा हर्ग-ओनील उपरोक्त विषयका उदाहरण हैं।

सन् ११५५ ई०को सालिसबरीके जोह्न २य हेनरी नृपतिका सन्देश ले ४र्थ पोप एडियनके पास आयर्लेण्ड आये थे। पोपने उत्तरमें यहाँका पैट्रक अधिकार उन्हें सौंपने कड़ा और प्रतिष्ठापनका चिह्न-स्वरूप अङ्गुरीयक भी साथ ही भेज दिया। ११५६ ई०को डियारमायिट-माक-मुरछद प्रजापीड़नके कारण लीनश्टरसे सिंहासनच्युत हुये और अपना पद फिर पानेके लिये हेनरीके पास पहुँचे थे। फ्रान्सी-सियोंसे लड़ते भी राजाने अवसर पा डेरमोडको इङ्ग्लैण्डमें फौज तैयार करनेकी आज्ञा दी। इसी-तरह लीनश्टरमें सज धज और अपनी प्रजासे धन ले डेरमोड हष्टोल रिचार्ड-डी-क्लारसे साहाय्य मांगने गये। वेल्समें भी उन्होंने राबर्ट-फिटज-ट्रेफेन और मोरिस-फिटजजेराल्डसे आयर्लेण्डपर चढ़ाई करने-का वचन लिया। ११६८ ई०की १ली मईको फिटजट्रेफेन कुछ सेना ले वेक्सफोर्डमें आ उतरे और दूसरे दिन मोरिसडेप्रेनडेरगाष्ट भी सदलबल उसी जगह पहुँच गये। डेरमोडके उनके साथ रहने पर वेक्सफोर्डके डेन्सोंने शीघ्र ही वश्यताको स्वीकार किया। प्रायः एक वत्सर पीछे रेमोण्ड-ले-ग्रोसको अर्ल रिचार्ड ने अपनी अग्रगामी सेनाके साथ भेजा था। ११७० ई०की २३वीं अगस्तको स्वयं अर्ल रिचार्ड २०० वोर और १००० दूसरे सिपाही ले वाटरफोर्ड पहुँच गये। अन्त समय उन्होंने डैरिनमें डेरमोडके सिंहासनच्युत किये जानेका बदला लेनेको युद्ध ठाना और विजय पानेपर डेरमोडने अपनी कन्याका हाथ उन्हें पकड़ा दिया। नर्मन नेताओंमें अधिक सम्बन्ध-सूत्रसे ग्रथित थे। कितने ही दक्षिण वेल्स नृपति रिस-आय-टूडोरकी कन्या और १म हेनरीकी पत्नी नेष्टाके वंशज रहे। नेष्टाकी कन्या षड्वारिय विलियम-डे-बारीको व्याही थीं। उन्हींसे आयर्लेण्डके बारीस उत्पन्न हुये। रेमोण्ड-ले-ग्रोस, डैरवी-डे-मोण्डमोरेन्-सी और कोजान्स भी नेष्टाके वंशज रहे। वह उनके द्वितीय पति ट्रेफेन-दी-काष्टेलानके सहायक हुये थे।

सन् ११८५ ई०की प्रिंस जोह्न वाटरफोर्डमें जहाजसे आ उतरे और सरदार उनका सम्मान करनेको आगे आये। २य हेनरीने डुघ डेलासीको ८००००० एकर भूमि दे डाली थी। अपने भ्राता १म रिचार्डके समय जानके प्रधान कर्मचारी पेसब्रोक्-अधिपति विलियम मारशालाने अर्ल-रिचार्ड या ड्रोङ्गवोकी कन्याको व्याह लीनश्टर पर अपना स्वत्व जमाया। १२१० ई०को जोह्न नृपतिने कौनौटराज काथाल क्रोवडेग ओकोनोरके साथ वाटरफोर्डसे डबलिनकी राह कारिकफेरगुस पर धावा मारा, किन्तु ट्रिमसे आगे कदम न बढ़ाया। १२१३ ई०को उन्होंने अपना अधिकार पोपको सौंप दिया था।

सन् १२१७ ई०की १४वीं जनवरीको ३य हेनरीने ओक्सफोर्डसे अपने कर्मचारी जिवोफरे-डी-मारिसकोको लिख भेजा, कोई आयर्लेण्डवासी गिरजेमें रखा न जाता। किन्तु १२२४ ई०को ३य होनोरियसने उपरोक्त आज्ञा अनुचित बताकर उठा दी। फिर १३३३ ई०में अलश्टरके नव अधिपति विलियम-डे-बुर्थको माण्डेविलिस आदिने वध किया।

३य एडवार्डके विदेशीय युद्धमें लगे रहनेसे आयर्लेण्डवासी लिसाट ओमोरने लीक्सपर फिर अपना अधिकार जमा लिया था। मारिस फिटजजेराल्ड डिसमोण्डके अधिपति बने और उन्हींके तीन भाइयोंसे द्वाइट, ग्लिन और केरी नाइटोंके वंश चले।

६ठ हेनरीके प्रधान कर्मचारी सर जोह्न टालबोटने ट्रिमने पारलियामेण्ट बैठा आयर्लेण्डमें रहनेवाले सब अंगरेजोंको मूछ रखनेकी आज्ञा दी। इससे आयरिश जाति विभिन्न मालूम पड़ती थी।

सन् १४४८ ई०को योर्कराज रिचार्डके आयर्लेण्डमें प्रधान कर्मचारीका पद पाते समय आयर्लेण्डवासी जाक-काडने विद्रोह बढ़ाया। १४५० ई०को रिचार्ड इङ्ग्लैण्ड वापस और ओरमोण्ड तथा व्योफोर्टके अधिपति जेम्सको राज्य सौंप गये। जेम्स और किलडार कुलमें पीढ़ियों भगड़ा चला था। रिचार्डने फिर डबलिनमें आ स्नातन्त्र पाया, नया सिक्का ढाला और अंगरेजी पारलियामेण्टको अङ्गभङ्ग किया।

विलियम आवेरी रिचार्डको बन्दी करने आये थे। किन्तु वह स्वयं शत्रुके हाथ पड़ फांसी पर चढ़ाये गये। टोटोनके भीषण युद्धक्षेत्रमें ओरमोण्डको अंगरेजोंने बन्दी बना लिया था। उनका मस्तक बहुत दिनतक लण्डनके पुलपर लटकते रहा। डेसमोण्डने एलिजाबेथको प्रसन्न करनेके लिये उपद्रव उठानेपर प्राणदण्ड पाया था।

३५ रिचार्डके शासनकाल आयिरिश योरकिष्टोंके प्रधान किलडार-अधिपतिका प्रभाव बढ़ा। किन्तु श्रेष्ठके युद्धमें एङ्गलो-आयिरिश सिपाहियोंके सरदार खेत आये थे। ७म हेनरीके राजत्वकाल वाटरफोर्ड-वाले नागरिक क्लोनमेल, कालान, फेथार्ड और बुटलरके सम्बन्धियोंसे मिल हथियार बांधनेको तैयार हुये। डोगहेडाकी पारलियामेण्टसे अंगरेजी कौन्सिलने आयर्लेण्डके कानून बनानेका काम पाया था। ८म हेनरीने भोगविलास और विदेशीय साहसमें निमग्न रहनेसे आयर्लेण्डपर ध्यान न दिया। राजकीय प्रभाव पेल नामक प्रान्तमें ही सीमाबद्ध रहा। कौलडार-अधिपतिका राजासे भी अधिक बल बढ़ गया था। एङ्गलो-नारमन सरदार नीच-वर्णोंके राजा हुये। इन्हें लोग आयिरिश जातिके मनुष्य कहने लगे थे। सन् १५३४ ई०को हेनरीने राज्यका भार अपने हाथ उठाया और डबलिनको किलडारवालोंके आवेष्टनसे छोड़ाया। किन्तु उनका राज्य १० कोषसे अधिक विस्तृत न था। दूसरी जगह अंगरेज भी आयिरिश भाषा और रीतिनीतिका अवलम्बन करते रहे। माकमुरोघ कावानाघ वार्षिक-वृत्ति राजधानागरसे पाते, जिन्हें आयर्लेण्डवासी राजा डेरमोडका प्रतिनिधि बताते थे। किन्तु हेनरीने आयर्लेण्डके नृपतिकी चाल ढाल पकड़ी और पोपके लिये राज्य करनेकी बात उठ गयी। सैलरिक और विरोधी दोनो दलके लोग दरबार करने लगे थे। उस समय कितने ही साधारण लोग प्रधानपुरुष बन बैठे। इन्हींसे स्क्वेफिज़्टन, ब्रावाजोन, सेण्ट लेजर, फिटज विलियम, विङ्गफील्ड, वेलिनघाम कारू, विनघाम, लोफ्टस और

अन्यान्य आयर्लेण्डके वंश चले हैं। कैल्टोंमें ओनील और ओब्रीन क्रमागत टिरोन एवं थोमोण्डके अधिपति लण्डनसे जाकर बन आये थे। ओडोनोलके वंशज टिरोनेलके सरदार कहाये। मिथ्यावर्णवाले प्रधान माकविलियम, क्लानरीकार्डके नायक माने गये।

सन् १५६० ई०के आरम्भमें एक पारलियामेण्ट लगा था। उसने हेनरी और एडवर्डकी पौरोहित्य-सम्बन्धी आज्ञा बहाल कर दी। एलिजाबेथका राज्य रहा। उनके पिताने टिरोनका अधिपत्य अपने कल्पित पुत्र मेथूको सौंपा, जो डनगीनोनका वाली बना और कारीगरकी औरतका लड़का रहा। माता पतिके जीते उसे डनडाल्कसे कोन अपने-लड़के-जैसा लायी थी। किन्तु राजपुत्र शानने बालिग होनेपर यह प्रबन्ध अस्वीकार किया और पिताको उससे अनभिज्ञ बताया। टिरोनके मरनेपर डनगीनन अधिपति एवं मेथूपुत्र ब्रियान ओनीलने उनकी सम्पत्ति पानेका स्वत्व देखाया। परन्तु शान चुने गये थे। ओनील स्वजातियोंके बीच प्रधान एवं अधिपति और शानके धर्मपुत्र निर्वाचित हुये। लाडं लेफटीनेण्टने दो बार शानको वध करनेकी ठानी थी। १५६६ ई०को विप्लव बढ़नेपर रानीने वीर सिडनीको तलवार पकड़ायी और शानने पीछे हटते-हटते माकडोनेल्सोंके हाथ अपनी जान गंवायी थी। ग्रीष्म ही दक्षिणमें उपद्रव उठनेपर फिर हलचल पड़ गयी। डेसमोण्डके अधिपति बलवेका वीज बोनेसे छः वर्ष लण्डनमें नजरबन्द रहे। उन्होंने निकल भागनेकी चेष्टा लगायी थी। पकड़े जानेपर एलिजाबेथने उनकी भूमि स्वाधिकार-भुक्त की। अवसर देखकर अंगरेज-साहसिकोंने पश्चिम-मन्ष्टरके अर्धभागमें अंगरेजी जङ्गी अड्डा शेनोनसे कीर्क बन्दरतक लगाना चाहा। ओरमोण्डके भाइयोंको उखाड़ पखाड़ और उनकी सम्पूर्ण सम्पत्ति छीन सर पेटेरने बटलरोंको बलवा करनेपर भड़का दिया था। अन्तको बुटलर शान्त हुये, किन्तु कारलोके अंगरेजी नायक कारूका विरोध करते रहे। दोनो ओरसे बढ़ा अत्याचार चला। सर पेटेरको मन्ष्टरका भी अच्छीतरह स्वत्व प्राप्त न था,

कोर्कसे उनका अनुयायी दल भगाया गया। फिर सर जोह्न पेरोट मनष्टारके प्रेसिडेण्ट बने थे। उन्होंने जेम्स फिट्जगेराल्डको पर्वतोंपर हटाया, सब जगह किला तोड़ा और बलवायियोंको साहाय्य देनेवाली फौजका काम तमाम किया। अलष्टारमें भी इसीतरह विप्लव बढ़ा था। ऐसेक्स-अधिपति वालटेयार-डेवरे-उक्सने धोकेसे सर ह्युयान ओनौलको पकड़ लिया और उनके साथियोंको बध किया। राथलिनमें समग्र स्कच मार डाले गये थे। किन्तु ऐसेक्स अत्यन्त गह्रित भावसे मरे। तीन वर्ष लड़ने-भिड़ने बाद साथियोंने उन्हें छोड़ दिया था।

१५७५ ई०के अन्त सिड्नेर फिर प्रधान राज-प्रतिनिधि बने और धड़ाधड़ एक जगहसे दूसरी जगह पहुँचने लगे। मनष्टारमें एक वर्षके बीच सर विलियम-डुरीने ४०० आदमियोंको फाँसी दी थी। फिर सर निकोलास-मालबीयने कोनाट-बारकेसोंको मारते समय लड़के-बुढ़े किसीको न छोड़ा और सब मकान एवं सामान जला दिया। डेसमोण्डसोंने बड़ा उद्योग लगानेको विचारा था। धर्मयुद्धकी घोषणा हुई। फिट्जमरिस् थोड़े साथी ले कैरीमें आ उतरे थे। साथमें सुप्रसिद्ध निकोलास-सनडार्स भी रहे। उन्हें पोपने दूत बना और आशीर्वादात्मक ध्वज पकड़ा भेजा था। काष्टलेकोनेलके समीप युद्ध होनेपर फिट्ज-मरिस् खेत आये, किन्तु सनडार्स और डेसमोण्डसके भाई लड़ते रहे। अन्तको डेसमोण्डने तलवार उठायी थी। रातको उन्होंने अंगरेजी नगर यौघल पर आक्रमणकर लोगोंको मार डाला। सचेत होनेपर एलिजाविथने ओरमोण्डकी मनष्टारका सेनापति बना युद्ध करने भेजा था। वाटलर गेराल्डिनों और राजभक्त विप्लवकारियोंसे लड़ते रहे। १५८० ई०को विकलोमें लार्ड बालटिन्ग्लासने उपद्रव उठाया। ग्लेनमादूरमें लार्ड ग्रे-डा-विलटोन पूर्ण रीतिसे परास्त हुये थे। स्मेरविकमें इटालियों और स्पानियार्डोंका एक दल आ उतरा। ग्रे उधरको जा पड़े थे। युद्धमें विदेशियोंने आत्मसमर्पण किया, किन्तु सबको तलवारका पानी पीना पड़ा। स्मेयर और राहले

विद्यमान रहे। १५८१ ई०को सण्डार्स गुप्त रीतिसे विनष्ट हुये और १५८३ ई०को कैरी पर्वतके युद्धमें डेसमोण्ड भी मारे गये। इसके उपलक्षमें पाँच लाख एकर आयिरिश भूमि सरकारने सर्वस्वदण्ड की थी। युद्धकी भीषणताका वर्णन हो नहीं सकता। ओरमोण्डने कुछ ही मासमें ५००० मनुष्योंको प्राण-दण्ड दिया था। दुर्भिक्षने कृपाणसे अधिक काम किया। अतिजीवी चल न सकते थे। वह जङ्गलों और घाटियोंसे घिसट-घिसट कर बाहर निकले।

१५८४ ई०को डुघ-ओनौलने टिरोनके कुछ भागका आधिपत्य पाया था। १५८७ ई०को वह समग्र टिरोनके अधिपति और १५८३ ई०को सभी जातिके प्रधान बने। सरकारसे उनका झगड़ा किसी तरह रुक न सकता था। डुघ रो ओडोनेलके योग देनेपर अलष्टार सरकारके विपक्षमें खड़ा हो गया। १५८८ ई०को फिट्ज-टमास-फिट्जगेराल्डने डेस-मोण्डका उपाधि ग्रहण किया था। आयर्लेण्डके दोनो सिरे शीघ्र ही विप्लवसे भभकने लगे और डेसमोण्ड प्रान्तमें सेक्सनोंके मुँह देखनेको न मिले। एडमण्ड-स्नेन्सरने अपना सर्वस्व खोया और भागकर लण्डनकी दुर्गप्राकारमें प्राणपरित्याग किया। टिरोनने अपना अधिकार बढ़ाया, येलोफोर्डके युद्धमें सर हेनरी-बाग-लालको हराया, मनष्टारपर धावा लगाया और लार्ड बेरीमोरका प्रान्त जा ढहाया था। टिरोनके मित्र डुघ-रो-ओडोनेलने कोनोट-प्रेसिडेण्ट सर कोनयर्स क्लिफोर्डको जा उखाड़ा। १५८८ ई०को ऐसेक्स-अधिपति रबार्ट डेवरेउक्स बड़ी सेनाके साथ आये, किन्तु टिरोन उन्हें कर-बल-छलसे नीचे लाये थे। उन्होंने सेनापतिका पद छोड़ पागलकी चाल पकड़ी और अन्तको फाँसी पाये। १६०० ई०को सर जार्ज-केरुके मनष्टारका प्रेसिडेण्ट बननेपर बलवा शीघ्र दब गया था। चार्ल्स-ब्राउण्ट ऐसेक्सका उत्तराधिकार पाकर केरुके साथ हुये और किन-सेलमें उतरनेवाले स्पानियार्ड हारकर सरकारके हाथ लगे। सेना नष्ट-भष्ट होनेसे प्रजा भी दब गयी थी। इसीतरह एलिजाविथने आयर्लेण्ड जीत लिया।

महारानीने डबलिनमें जो विश्वविद्यालय प्रतिष्ठित कराया था, उससे लोगोंने अच्छा फल पाया।

१६०३ ई०को १म जेम्सके सिंहासनारुढ़ होनेपर लोगोंने सोचा था,—इनसे आयर्लेण्डका उपकार होगा। यह दोनो आयर्लेण्डवासी और स्कच हैं। किन्तु अधिपतियोंके उपद्रव उठानेसे केल्टोंकी बात बिगड़ गयी।

१६३५ ई०को १म चार्ल्सके राजत्वकाल लाड्ड डेपुटी ट्राफोर्ड लोगोंसे जबरदस्ती रुपया वसूल करने लगे। कोनाट और मनष्टरके जमीन्दार अधिक धन देनेपर बाध्य हुये। आयरिश जातिसे रुपया वसूल कर स्कच और इङ्गरेज लोगोंके दबानेको फौज रखनेमें खर्च किया जाता था। रोमन काथोलिकोंको दुःख वा सुख कुछ भी न मिला। प्रधान उसहरके साथ बारह पादरियोंने विपक्षमें आन्दोलन कर कहा था—दारिद्र्यका भार सहना महापाप है। स्ट्राफोर्डको फांसी दी और फौजकी तलवार छीन ली गयी। १६४१ ई०को काथोलिक राजद्रोहियोंने सारा देश अपने हाथ किया, केवल डबलिन बच गया। उनका विचार प्रोटेस्टाण्टोंको निर्वासित करनेका था। कितने ही प्रोटेस्टाण्ट बड़े निर्दय भावसे वध किये गये। १६४२ ई०को अंगरेजोंने जेनेराल रवार्ट मोनरोके अधीन अलष्टार फौज भेज इसका बदला लिया था। किन्तु मोनरोके हारते भी कोई फल न हुआ। १६४५ ई०को रेनुसिनी प्रोपकी ओरसे आयर्लेण्डके स्वत्वाधिकारी बनकर आये थे। उन्होंने केल्टोंको साथ दिया। १६४७ ई०के जुलाई मास पारलियामेण्टवालोंने आरमोण्डसे डबलिन छीन लिया था। १६४८ ई०को क्रोमवेल अपनी सेना ले रणक्षेत्रमें उतरे। उन्होंने हरे-भरे खेत काट छिपकर लड़नेवालोंको भूखों मार डाला था। ४० हजार लोग निर्वासित किये और शानोनमें कृषिकर्म करनेको जबरदस्ती आयरिश काथोलिक कृषक भेजे गये। लड़नेवाले सिपाहियोंकी लूटका कितना ही माल मिला। सिपाहियोंके अपनी जायदाद वेच डालनेसे अफसर राजा बने थे। आयरिश कमजोरी

उपनिवेशकोंके साथ रहे। शान्ति फिर प्रतिष्ठित हो गयी थी। १७७८ ई०को ग्राहानने आयर्लेण्डकी जातीयता मान ली।

१७८८ ई०को थिवोबाल्ड-ओल्फे-टोनने फिर विप्लव बढ़ाया था। उसके शान्त होते ही आयर्लेण्ड ग्रेटब्रिटेनमें मिलाया गया। १८०३ ई०को रवार्ट एमेटने शिर उठाया, किन्तु कोई फल पाया न था। इसके बाद काथोलिकोंके करसे निस्तार पानेका विवाद बढ़ा। रोमन काथोलिक बिशप होनेको लोगोंने आन्दोलन किया था। सबके स्वीकृत होनेपर भी डानोयेल-ओकोलने विरोध किया। अन्तको १८३८ ई०में करकी व्यवस्था पास हो गयी। कर उठा देनेका आन्दोलन भी चला न था।

१८५८ ई०को विदित हुआ,—जोह्न ओमा-हीनीने अमेरिकामें फीनिक्स-ट्रोह दहकाया था। इङ्गलेण्डमें इससे लोगोंपर अत्याचार होने लगे। १८६८ ई०को आयरिश चर्च तोड़ा और १८७० ई०को भूमिप्रश्न मरोड़ा गया। किन्तु इससे आयर्लेण्डका आन्दोलन दब न सका। १८७४ ई०को होम-रूलका पक्ष भी प्रबल पड़ा। १८८१ ई०को कृषिपर बहुतसे भौषण अत्याचार हुये थे। प्रायः मवेशियोंके निर्दय भावसे मारे जानेपर इङ्गलेण्डमें हाहाकार छा गया, परन्तु सरकारने ध्यान देना अनुचित समझा। सन्देशजनक लोगोंके कोयेसैन-कानूनसे पकड़े जानेपर कोई फल निकला न था। अमेरिकासे लगातार रुपया मिलनेपर अत्याचार चलते रहा। ग्लाडस्टोनने पूर्ण रूपसे नीति बदल देनेकी ठानी थी। १८८२ ई०की २री मईको आयरिश सरदारकी इच्छाके विरुद्ध पारलियामेण्टके पारनेल, डिलटोन और ओकेली नामक सभासद बन्धनसे मुक्त किये गये। बेदखली पीछा जिसब पानेसे छूटी थी। इसे किलमेनहाम-सन्धि कहते थे। लाड्ड कोयैर थार फोरष्टरने उसी समय पदत्याग किया। उनका उत्तराधिकार पा इठीं मईको लाड्ड सेनसर और लाड्ड फ्रेडरिक कावेण्डिश डबलिन पहुंचे थे। उसी सन्ध्याको फीनिक्स उद्यानमें

लाड फ्रेडरिक और उपमन्त्री टमास-हेनरी-ब्रके मार डाले गये। वधके लिये अङ्ग काटनेवाली कुरियां चली थीं। घातकोंकी छाया भी कोई देख न सका। फिर अभियोगमें साक्ष्य देनेका प्रपथ उठानेवाले फ्रीड नामक व्यवसायी पर भी उसी घातकदलने आक्रमण किया था। उनके कई आघात आये, किन्तु उन्होंने भागकर अपने प्राण बचाये। उन्होंने घातकोंकी गाड़ीवान्को पहचान लिया था। इसीसे राजद्रोहका पता लगा। डबलिन-कारपोरेशनके सभ्य और घातकदलके प्रधान उपायज्ञ जेम्स केरिने कहा,—‘फ्रीमान्स जार्नल’ नामक समाचारपत्रमें एक लेख निकलते ही ‘सुप्ति डबलिन किलेके अफसरोंको एक सिरसे वध करनेकी आज्ञा मिली थी। साक्ष्यसे विदित हुआ, कि फोरष्टरको वध करनेकी भी कई बार पहले चेष्टा चलौ रही। बीस अभियुक्तोंमें पांचको फांसी और बाकीको दीर्घ बन्धनका दण्ड मिला। जुलाई मास केरि जहाजपर चढ़ दक्षिण अफ्रीकाको रवाना हुये थे। किन्तु राहमें ही पाट्रिक ओडो-नेलने उन्हें मार डाला। घातक अभियुक्त बन लण्डन आया और सन् १८८३ ई०की १७वीं दिसम्बरको प्राणदण्ड पाया था।

राजनीतिसे काम निकलते न देख १८८६ ई०को फिर राजद्रोहका डङ्का बजा। लोगोंकी इच्छा थी, कि मालगुजारी क्लषकोंके अनुमति-अनुसार दी जाती। सन् १८८७ ई०की सर एम-हिल्स-बीचके पद-त्यागने और मिष्टर आर्थर बालफोरके प्रधान मन्त्री बननेपर ‘क्रायिम्स एक्ट’ अर्थात् अपराध करनेसे दण्ड मिलनेका कानून पास हुआ और उपद्रव उठाने-वालोंका कार्य ठीला पड़ा। अन्तको नाशनाल-लीग अर्थात् जातीय-दल तोड़ा गया था। धीरे-धीरे आयर्लैण्डमें शान्ति विराजने लगी। किन्तु सन् १८८७ ई०के सितम्बर मास फिर भिचेल्स टीनमें विप्लव बढ़ा था। पुलिसने गोलीसे दो मनुष्योंको मारा। मिष्टर हेनरी लाबीयर और मिष्टर वुनर पार्लियामेण्टके दोनों सदस्य पुलिसके विरुद्ध और

होमरूलके पक्षमें थे। सन् १८८३ ई०को ‘होमरूल-बिल’ कानून चला, जिससे इम्पीरियल पारलियामेण्टमें एकसौ तीनके स्थान आयिरिश सदस्यगण अच्छे हो रह गये। किन्तु ग्रेटब्रटेनके सम्बन्धमें किसीकी मत प्रकाश करनेका अधिकार मिला न था। जातीयदलने आक्षेपकर कहा,—यह कानून आयर्लैण्डको बन्धनमें रखना चाहता है। गत १८९६ ई०को सिनफीन दलने बड़े वेगसे विद्रोह बढ़ाया था। किन्तु अंगरेज-सरकार-की दूरदृष्टि और उद्योगितासे शीघ्र शान्त हो गया।

आयस्कार (सं० पु०) आ-या-शब्द आयत् तं आयन्तं आगच्छन्तं लाति गृह्णाति, आयत्-ला-क संज्ञायां कन्। उत्कण्ठा, इज्जतिराव, वेकली।

आयवन (वे० क्ली) चलानेका चमस, चमचा।

आयवस (वे० पु०) १ गोचरभूमि, चरागाह। २ वेदोक्त एक राजा। “भयोरान्न आयवसस्य जिषोः।” (ऋक् १।१२।१५) ‘आयवसस्य सर्वतः प्राप्तावस्य एतन्नामो राज्ञः।’ (सायण)

आयस (सं० त्रि०) अयसो विकारः, अण्। १ लौह-मय, आहनो। २ लौहमय अस्त्रशस्त्र वा कवचसे सज्जित, आहनो हथियार बांधने या लोहेका बख्तर पहननेवाला। “आयच्छा वाह्यैर्वज्रमायसमधारयो।” (ऋक् १।३।२८) ‘आयसः अयमयकवचयुक्तदेहः।’ (सायण) अय एव, स्वार्थे अण्। ३ तीक्ष्ण लौह, इस्पात। ४ सामान्य लौह, मामूली लोहा। ५ आयुध, हथियार। ६ लौह-निर्मित वस्तुमात्र, लोहेकी चीज़। ७ वायुयन्त्र, औजार-हवा।

आयसमल (सं० क्ली०) १ मण्डुर लोह, जङ्ग। २ लौहमल, लोहेका कौट।

आयसी (सं० स्त्री०) अङ्गरक्षिणी, बदनका बख्तर, छातीका तवा। ‘जालिका नङ्गरक्षिणी। जालप्रायायसी।’ (हेम)

आयसु (हिं० पु०) आज्ञा, इजाजत, हुक्म।

“आयसु दीनह सखो च्यानीं।

निज समाज ले गयो स्यानी॥” (मुल्की)

यह शब्द ‘आदेश’का अपभ्रंश मालम होता है।

आयस्कार (सं० पु०) अयस्कार एव, स्वार्थे अण्।

१ लौहकार, लाहार। २ हस्तीकी जङ्घका ऊर्ध्व भाग, हाथीकी रान्का ऊपरी हिस्सा।

आयस्त (सं० त्रि०) आ-यस्-क्त। १ क्षिप्त, फेंका हुआ। २ दुःखित, तकलीफ़ ज़दा। ३ प्रतिहत, चोट खाये हुआ। ३ तीक्ष्णीकृत, पेनाया हुआ। ५ आयास-युक्त, कोशिश करनेवाला। ६ क्रुद्ध, नाराज।
‘आयस्तः क्लेशिते तेजिते हते। क्रुद्धं चित्तेऽपि।’ (हेम)

आयस्थान (सं० स्त्री०) ६-तत्। लाभस्थान, राजाके शुल्क ग्रहणका स्थान, मणि प्रभृतिका आकरस्थान, आमदनीकी जगह।

आयस्थूण (सं० त्रि०) अयोमयी स्थूणा लौहप्रतिमा गृहस्थूणी वा यस्य स अयस्थूणः तस्यापत्यम्, अण्। शिवादिभ्योऽण्। पा ४।१।१२। अयस्थूणसे उत्पन्न, जो अयस्थूणसे पैदा हो। (स्त्री०) आयस्थूणी।
“अयस्थूणायांनेवासिन उक्तोवाचापि।” (हहदारण्यक-उ०)

आयस्यत् (सं० त्रि०) आ दिवा० घसु यत्ने शब्द। यत्न-विशिष्ट, तदबीर लड़ानेवाला। “अथायस्यन् कषायाचः।” (भट्टि)

आया (हिं० स्त्री०) १ उपस्थित हुआ, जो पहुँचा हो। यह शब्द ‘आना’ क्रियाका भूतकाल है। (पोर्तगीज स्त्री०) २ धात्री, धाय, बालकोंको दुग्ध पिलाने और खेलानेवाली स्त्री। (फ्रा० अव्य०) ३ वा, कोई, जौनसा, क्या।

आयाकोट—मलबार प्रदेशका एक नगर। यह अक्षा० १०° ३६' १५" उ० और द्रावि० ७६° ३१' १५" पू० पर अवस्थित है। यहां सेण्ट-टमास आकर उतरे थे। नगर अतिप्राचीन है।

आयाचित (सं० त्रि०) आशु निवेदित, ताकीदन् मांगा हुआ।

आयात (सं० त्रि०) १ आगत, आया हुआ। (स्त्री०) २ आधिक्य, बहुतायत।

आयाति (सं० पु०) आ-या-तिच्। १ हरिवंशोक्त नहुष राजाके चतुर्थ पुत्र, सुप्रसिद्ध ययातिके सहोदर। (स्त्री०) आ-या भावे तिन्। २ आगमन, आमद, पहुँच, आवायी।

आयान (सं० स्त्री०) आ-या-ल्युट्। १ आगमन, आमद।

“अधिनावाभायाने वाजिनीवसु।” ऋक् ८।२१।१८। ‘आयाने गृहं प्रति आगमने।’ (सायण) २ स्वभाव, आदत। जिसका जो स्वभाव होता, वह उससे आजीवन नहीं छूटता। इसीसे

स्वभावको आयान कहते हैं। (अव्य०) ३ यान-पर्यन्त, रवानगीतक। ४ वाहनपर्यन्त, सवारीतक।

आयापन (सं० स्त्री०) आमन्त्रण, तलब, बुलावा।

आयापन्यौ—सम्प्रदाय विशेष। इसका विशेष प्रमाण न पाया, किस व्यक्तिने आयापन्यौ सम्प्रदाय चलाया था। ब्राह्मणसे अति नीच जाति पर्यन्त इसमें मिले हैं। आयापन्यौ आया माताको पूजते हैं। पहले केवल राजपूतानेके असभ्य जाति ही आया माताकी पूजा करते थे। इसका कुछ ठौर-ठोक नहीं, कितने दिनसे आया माताकी पूजा होते आयी है। सन् ई०के १६वें शताब्द यह सम्प्रदाय बहुत बढ़ गया था। राजस्थानमें लिखा है,—१६३५ ई०को राणा उदयसिंह किसी आयापन्यौ ब्राह्मणकी कन्याके प्रति अनुरक्त हुये। ब्राह्मणने सुना, कि कन्याका धर्म बिगड़ा था। उस समय वह कन्याको मारनेके लिये यज्ञकुण्ड बना होम करने लगे। कन्याका देह खण्ड-खण्ड उड़ा अपने गात्रके मांस साथ आयामातापर चढ़ाया था। उन्होंने फिर अभिशाप दिया,—तीन प्रहर, तीन दिन या तीन वत्सरके मध्य उदयसिंह इस पापका प्रतिफल पायें। अन्तको ब्राह्मण ज्वलन्त अग्निमें कूद पड़े थे। अभिशाप विफल न हुआ, निर्धारित समय उदयसिंहका प्राण छूट गया। (Tod's Rajasthan, Vol. II. p. 31.) आयापन्यौ ब्राह्मण मद्यमांसादि ग्रहण करते हैं।

आयापाना—वृक्षविशेष, किसी किस्मका पेड़। Eupatorium ayapana. अमेरिकासे यह वृक्ष भारतवर्ष आया है। सूखा पत्ता और डण्ठल औषधमें पड़ता है। गुण घर्मजनक और बलकर है। मरिच शहरमें यह चायकी पत्तीके बदले काम देता और अमेरिकामें पुरातन ज्वरपर चलता है।

आयाम (सं० पु०) आ-यम-घञ्। १ दीर्घ, लम्बान। ‘दीर्घमायाम आरोहः।’ (अमर) “यदचतुर्दश्रुत्तायामविलारोत्रलि-शालिनी।” (शारदाति०) ऋख एवं दीर्घ महत्तत्त्वके अन्त-भूत रहनेसे सांख्यवादी अणु तथा महत् दो प्रकारका आयाम मानते हैं। वैशेषिकोंके मतमें चार आयाम हैं,—स्थूल, अणु, ऋक्ष और दीर्घ। यह अणु

महदादिकी तरह गुण एवं गुणी उभय वाची नहीं, केवल गुणमात्रवाची होते हैं। आ-यम-णिच्-अच्। यस् चायामः। पा २।१।१६। २ नियम, कायदा। “प्राणायामनव कला कल्पमुखाय वै विजः।” (शङ्ख) ३ वातरोगभेद, बावकी एक बीमारी। यह दो प्रकारका होता है,—अभ्यन्तरायाम और बाह्यान्तरायाम। ४ असङ्गुचिताग्र-देशं व्रणका दीर्घकरण, जखमके सुँहका बढ़ाया जाना।

आयामकाञ्चिक (सं० क्ली०) काञ्चिकभेद, किसी किसीका कांजी। निस्तुष दर-दलित यव ८ शरावक ६४ शरावक जलमें उबाल १६ शरावक रहनेसे मण्ड निकाल ले। फिर यह मण्ड, ८ शरावक यवशक्त और ६४ मध्यविध मूलक ६४ शरावक जलमें डाल एकत्र करे। उसे यवचारादिक प्रत्येक पलहय और पिप्पल्यादि प्रत्येक पलमित छोड़ विशुद्ध घटमें पञ्चदश दिन यावत् रखनेसे आयामकाञ्चिक बनता है। इसे ग्रहणी अधिकारपर देनेसे उपकार होता है।

(मेषन्यरत्नावली)

आयास (सं० पु०) आ-यस्-घञ्। १ अतियत्न, कोशिश, दौड़-धूप।

“आयासश्चतुर्लब्धस्य प्राणेशोऽपि गरीयसः।

एकैव गतिर्यस्य दानमन्या विपत्तयः॥” (सूति)

२ आन्ति, सुस्ती, मांदगी।

आयासक (सं० त्रि०) आ-यस्-ण्वल्। १ आयासयुक्त, कोशिश करनेवाला। आ-यस्-णिच्-ण्वल्। २ आयास-जनक, सुस्ती लानेवाला, जो थका डालता हो।

आयासिन् (सं० त्रि०) आयस्यति, आ-यस्-णिनि। १ यत्नवान्, मशक्कती। २ आन्ति, सुस्ति, थका-मांदा। (पु०) आयासी। (स्त्री०) आयासिनी।

आयिन् (सं० त्रि०) आ-योऽस्त्यस्य, इनि। लाभ-युक्त, आमदनीवाला। (पु०) आयी। (स्त्री०) आयिनी।

आयिन्दा (फ्रा० वि०) १ आगामी, आनेवाला। (क्रि० वि०) २ भविष्यत्में, आगे। फ़ारसीमें, भविष्यत्कालको जमाना-आयिन्दा कहते हैं।

आयिन्दा-रविन्दा (फ्रा० पु०) प्रात्य, अध्वनीन, मुसा-फ़िर, राही।

आयिये (हिं० क्रि०) पधारिये, तशरीफ़ लायिये। यह शब्द आना क्रियाकी आज्ञाका सम्मान-सूचक रूप है। साधारण रीतिसे कहनेमें ‘आवो’ होता है।

आयिसलेण्ड—अर्थात् तुषारद्वीप। आटलाण्टिक महासागरके उत्तरांशमें अवस्थित एक द्वीप। आय-तन ४०४३७ वर्ग मील है। सेकड़े पीछे ८३ अंश अधित्यका और अवशिष्ट निम्नभूमि है। यह द्वीप पश्चिम और दक्षिण भागमें ही विस्तृत है। उच्च भूमिका अधिकांश आग्नेय-गिरि और हिम-भूमिसे पूर्ण है। उद्भिदका चिह्नतक नहीं, जलका कहां ठिकाना है। किन्तु उसमें जो क्रद आदि पड़ा, वह मत्स्यसे भरा है। ५१७० वर्ग मील भूमि चिरतुषारसे मण्डित है। समुद्र जलपर १३०० से ४००० फीट चढ़नेमें बर्फ़ की सीमा मिलती है।

मरकर फ़ाज़ोट, अजरसा, आयलकुसा और छोटी-छोटी दूसरी नदीसे आयिसलेण्डका जल बहकर समुद्रमें पहुँचता है। निम्न भूमि और पर्वतमालाके मध्यवर्ती नीचे प्रदेशपर आंधीमें विकीर्ण बालुकाकणा एवं छुद्र-छुद्र प्रस्तरखण्डसे आकाश छा जाता है। उस समय अधिवासियोंको बड़ा कष्ट होता है। १०७ आग्नेयगिरि है। अशकजा आग्नेय-गिरि सर्वापेक्षा बृहत् है। १८७५ ई०को अग्न्युत्पातसे उसका भस्म दूरवर्ती एकहज़ार शहरतक पहुँचा था। यह भस्म शस्यादिके पक्षमें बहुत ही अनिष्टकर होता है। १७८३ ई०को स्केपटरलकी आग्नेयगिरिके प्रथम एवं श्रेष्ठ उत्पातसे सेकड़े पीछे ५३ गृहपालित पशु, ७७ घोड़े, ८२ भेड़ और २० आदमी मरे थे। १८४५ ई० तक हेकला आग्नेयगिरिके सर्वसमेत अठारह बार अग्न्युद्भिरणका समाचार मिला है। भूमिकम्प प्रायः हुआ करता है। उससे भी समय-समय अत्यन्त क्षति पहुँचती है। आयिसलेण्डकी प्रत्येकांशमें उष्ण जलके निर्भर वर्तमान हैं। किन्तु दक्षिण-पश्चिम भागमें उनकी संख्या अधिक है। फिर उसी स्थानपर विख्यात पैसार प्रस्तरवण है। गन्धक, रंग, मट्टी और कार्बोलिक एसिडके भरने आग्नेयगिरि-प्रदेशमें स्थान-स्थान पर देखे जाते हैं। मेक्सिको उपसागरका

उष्णप्रवाह आने और शीत कुछ कम पड़नेसे दक्षिण तथा पश्चिम प्रदेश वासयोग्य बना है।

समझ नहीं सकते, एकान्त दारुण शीत, बालुकावृष्टि, आग्नयगिरिके भौषण उत्पात और प्रचण्ड भूमिकम्पसे जो कष्ट पाते, वह लोग कैसे रहते हैं। भारतवर्षमें प्रकृतिकी दयाका श्रेष्ठ नहीं। हम जगन्माताकी साक्षात् अन्नपूर्णा मूर्ति मानो जन्मभूमिमें प्रत्यक्ष देखते हैं। हम माताके प्यारे बालक हैं। सुखमें पालन-पोषण होता है। दुःखमें पलनेसे आयिसलेण्डके लोगोंकी हड्डी कड़ी पड़ जाती है। वह उद्यमशील और शक्तिसम्पन्न हैं।

इतना विशाल द्वीप होते भी आयिसलेण्डकी लोकसंख्या केवल ८४००० अर्थात् मध्यमावस्थामें प्रति वर्ग मील दो आदमीके हिसाबसे पड़ती है। किन्तु पुरुषोंकी अपेक्षा स्त्रियां कुछ अधिक हैं। पहले अधिवासी प्रधानतः पशुपालन द्वारा ही जीविका चलाते थे। पीछे वह मत्स्यके व्यवसायसे उन्नत होने लगे। किन्तु शीतकालमें तूफान आनेसे अनेक घौवर नाव डूबनेपर मर जाते हैं। इस व्यवसायमें सैकड़ों पीछे तीस अधिवासी नियुक्त हैं। प्रत्येक वत्सर विदेशको लाखों मन मत्स्य-तैल, लवणाक्त मांस, ऊन और चमड़ा भेजा जाता है। भेड़ और घोड़ेकी भी खूब रफ्तानी होती है। १८८८ ई०के हिसाबमें यहां ७३५४४२ अर्थात् मध्यमावस्थामें आदमी पीछे ८ भेड़ रहे। १८८८ ई०को ४४००० अर्थात् दो आदमीमें १ घोड़ा निकला। वनमें बड़ा पेड़ नहीं होता। क्षेत्र अकष्ट हैं। जीवनधारणके लिये विदेशीय शस्यका मुंह देखना पड़ता है। आटा, चीनी, कहवा, शराब, तम्बाकू, नमक, लकड़ीका तखता, कोयला, लोहा और धातुकी दूसरी चीज वगैरह बाहरसे मंगते हैं। आजकल आलू और गाजरकी खेती कुछ-कुछ बढ़ी है। फलवृक्षके लिये नहीं ही कहना पड़ेगा। चार कृषिविद्यालय, एक कृषिसमिति और उसकी शाखासभासे खेतीकी उन्नति की जाती है। राजधानी रेकजिफिकमें कितने ही सामुद्रिक बीमा-आफिस और विशाल विमान-क्षेत्र हैं।

प्रचलित मुद्रा, वजन और नाप डेनमार्ककी तरह है। जातीय बाहु प्रतिष्ठित है। बड़ी सड़क, रेलपथ और वैद्युतिक आलोककी व्यवस्था कहीं नहीं। घोड़ेकी पीठपर ही माल-असबाब ढोया जाता और लोगोंका आना-जाना होता है। १८११ ई०के अक्तोबर मास एक जातीय विश्वविद्यालय खुला है।

आजकल अनेक विषयकी उन्नति होने लगी है। टेलिफोन द्वारा संवाद चलता है। कई पक्के मार्ग और सेतु बने हैं। खनिजका अनुसन्धान होता है। राजधानीमें कलके पानी और नालिका काम लगा है। दक्षिण एवं पश्चिम ३२° फारिन हीटसे ५०° पर्यन्त तापमानयन्त्रमें उत्ताप चढ़ता है। इसी अक्षरेखापर स्थित सायिवेरिया प्रदेशके मध्यवर्ती याकूटस्क नगरमें वायुका उत्ताप ५०° से ६८° तक चढ़ता अर्थात् ग्रीष्मके दिन और शीतकालकी रात्रिमें १०८° का पार्थक्य पड़ता है। किन्तु समुद्र-वेष्टित आयिसलेण्डमें १८° मात्र विभिन्नता देखते हैं। इसका प्रधान कारण पूर्वोक्त मेक्सिको-उपसागरके उष्ण जलस्रोतका आयिसलेण्डके किनारे आना है।

दक्षिण-पश्चिम प्रदेशमें प्रति वत्सर २४ से ४८" इंच पर्यन्त वृष्टि होती है। परन्तु सायिवेरियामें इसी अक्षरेखा पर ८ इंच मात्र पानी बरसता है। आयिसलेण्डमें सबसे छोटे दिनको ३ घण्टे ४८ मिनट सूर्यका प्रकाश रहता है।

आयिसलेण्डमें ४३५ प्रकारके पुष्प और बहुविध उद्भिदका अस्तित्व मिला है। अनेक स्थलमें वेत्रवन है। ३ से १० फीट पर्यन्त बेत बढ़ता है। मकोय जातिके दो प्रकार फल व्यतीत दूसरे फलका वृक्ष नहीं होता। सुभीतेकी जगह राई और उड़दकी खेती करते हैं। बारह सिंगा, लोमड़ी, चूहा, तरह-तरहका हंस, कोई सौ किस्मकी समुद्री चिड़िया और समीपवर्ती समुद्रमें सील नामका जानवर तथा काड, हवेल वगैरह मछली देख पड़ती है। उत्तरमेरुसे तुषारके साथ श्वेत भस्मक कभी कभी बहकर चला आता है। स्तन्यपायी जन्तुकी संख्या विरल है।

८५० ई०को स्काण्डिनेवियाके अधिवासियोंने आयिसलेण्ड आविष्कार किया था। उसी समय नरवेवासी कतिपय सम्भ्रान्त व्यक्ति एवं अनुचरण और आयर्लेण्डकी रानी आउडने आत्मीय स्त्रजन सहित स्वदेश छोड़ यहां आ उपनिवेश लगाया। उसके बाद जनसंख्या बढ़ने और साधारणतन्त्र चलने पर ८३० ई०को महासभा बनी थी। तदवधि ४०० वत्सर पर्यन्त आयिसलेण्डका अभ्युदयकाल ठहराया जाता है। उस समय यह द्वीप विभिन्न नायकोंके अधिकारमें विभक्त रहा। ईसायी धर्म ग्रहणकर लोग याजक-सम्प्रदाय द्वारा विभिन्न खण्डमें शिक्षा पाते थे। तथापि स्वायत्त-शासन और साधारण-तन्त्रमें सम्मिलित रहे। ई०के १३वें शताब्द जब गाडमण्ड नामक व्यक्तिने याजकोंके अधिकार-सम्बन्धपर विवाद बढ़ाया, तब गृहयुद्ध होने लगा और बड़े-बड़े सरदारोंका वंश बिलकुल मिट गया। क्रुस्केल-युद्धमें जातिविरोधपर महा वीर सकल और आत्मीय कुटुम्बगणके दंशनाशसे भारत दुर्बल बना था। सर्वत्र ऐसा ही व्यापार है। १२६७ ई०के मध्यभाग आयिसलेण्ड नरवेके अधीन हुआ। स्वायत्त-शासनकाल लोग कितने ही दुर्दान्त, अराजक और स्वेच्छाचार-परायण रहे सही, किन्तु मनुष्योचित कार्य और उन्नति की चेष्टामें किसी प्रकार न्यून न थे। गृहविवादसे शक्तिहीन बन वह परमुखापेक्षी एवं परप्रसादप्रत्याशी और पूर्वका सदगुण सकल निकल जानेसे शिल्प, वाणिज्य तथा युद्धकार्य भूल निरीह क्षणकदलमें परिणत हो गये। उद्यमहीन जनोंके पक्षमें अल्प परिश्रम ही जीवनका लक्ष्य बना। १२८० ई०को नरवे राज्य हाथ आनेसे आयिसलेण्ड भी डेनमार्कके अधीन हुआ था। तदवधि यह द्वीप अधिक पराधीन बन गया। डेनमार्कके लोग नरवेसे आयिसलेण्डकी सन्धिका नियम समस्त न मान नतन-नतन कर लगाने लगे। १६०२ ई०को राजा ४र्थ खुष्टियानने डेनमार्कमें व्ययके लिये धनका प्रयोजन पड़नेसे यहांका समग्र व्यवसाय राज्यके

एकाधिकारपर खींच लिया था। फिर उससे उत्पन्न राजस्व डेनमार्क जाने लगा। खाद्य और प्रयोजनीय द्रव्यजात अग्निमूल्य हो गया था। यदि उस समय लुष्टलके अंगरेजवाणिक नदियोंमें नावें न लटते और गन्धक, चमड़ा, मछली तथा जनके बदले खाद्यद्रव्य न देते, तो कितने ही लोग अनाहार मर जाते। क्रमशः अधिवासियोंकी अवस्था इतनी बिगड़ी, कि १७८७ ई०में डेनमार्कको सरकारको बाध्य हो डेनमार्क और आयिसलेण्डके मध्य वैमहसूल वाणिज्य होनेकी व्यवस्था करनी पड़ी थी।

१७८२ ई०को फरासी-राष्ट्रविप्लवमें फ्रान्स-नृपति १६श लूईका शिर काटा गया। फरासी पण्डितोंने उससे पहले ही लेखनी उठा युरोपमें मनुष्यमात्रके अधिकारपर तुमुल आन्दोलन उपस्थित किया था। आयिसलेण्डके वाणिज्य-नीति-परिवर्तनमें वह भी कुछ कार्यकारी हुआ।

१८४८ ई०को फरासी राष्ट्र-विप्लवसे फिर युरोपमें प्रजादिके अधिकार-सम्बन्धपर तीव्र आन्दोलन उठा था। फरासियोंने उससे राजा लूई फिलिपको भगा दिया। इङ्ग्लैण्डमें कार्नला सम्बन्धीय विद्रोहके बाद १८५६ ई०को मिष्टर कडडेनकी प्रेरचनासे स्वाधीन वाणिज्य-नीति बनी थी। किन्तु डेनमार्कमें उसका प्रचलन न रहा। अवस्थाका विशेषत्व देख १८५४ ई०को आयिसलेण्डमें समस्त देशोंसे विनाशुल्क वाणिज्य करनेकी व्यवस्था हुयी। व्यवस्थापत्रपर लिखा गया, प्रकृत पक्षसे जब आयिसलेण्डमें भेष घोटक एवं मत्स्यके अतिरिक्त अन्य वस्तु न उपजे, तब खान-पानके लिये सभी कुछ क्दिदेशसे आयेगा।

ई०के १६वें शताब्दान्त और १७वें शताब्दारम्भमें जलदस्युके अत्याचारसे अधिवासियोंकी अवस्था बहुत शोचनीय हुई थी। १७६५ और १७८३ ई०की शीतला, दुर्भिक्ष, भेषको मृत्यु एवं आग्नेय-गिरिके उत्पातसे अधिवासियोंकी दुर्दशा असीम रही। ई०के १८वें शताब्द आयिसलेण्डमें सर्वापेक्षा दुःसमय पड़ा। स्वाधीन व्यवसाय पाकर ही अधिवासी आत्मशासनाधिकारके लिये चीत्कार करन लगे थे।

१८०० ई० से आयिसलेण्डमें एथलिङ्गका अधिवेशन रोक दिया गया। १८४५ ई० को राजा दम खृष्टानने उसे केवल परामर्श करनेका अधिकार दे फिर जमाया था। नूतन आयिसलेण्डके जन्मदाता कहलानेवाले जोन सिगर्डसन स्वायत्तशासन-आन्दोलनके नेता रहे। १८७४ ई० को उपनिवेशके दशशत सांवत्सरिक उत्सव दिन ही उदारहृदय डेनमार्क-राजके आयिसलेण्डको महासभाको आईन-कानून बनानेकी क्षमता देनेसे स्वायत्तशासन पानेके लिये भी धूमधाम कर सके। उत्सवके बाद भी राजाके अधीनस्थ एकजन शासन-कर्ता कुछ दिन आयिसलेण्डपर शासन चलाते रहे। १८०४ ई० को आयिसलेण्डका विधिसमूह सम्पूर्ण सुधार, शासनकर्ता एक दायित्व-सम्पन्न मन्त्रीके अधीन बनाये गये। महासभा चालीस सभ्योसे गठित हुई। अभिजात्य-सम्पन्न अंशमें चौदह और निम्न-साधारण अंशमें छब्बीस लोग रहे।

नौकर-चाकरों और २५ वर्षसे कम उम्रवालोंको मत देनेकी क्षमता उस समय भी मिली न थी। महासभाके चौदह सभ्योमें आठ महासभा और छः राज-कर्तृक मनोनीत हुये। १८११ ई० को महासभा कर्तृक विधिसमूहका संशोधन होनेपर ठहराया गया, कि राजाको महासभाके सदस्य नियुक्त करनेका अधिकार न रहा। निम्नश्रेणीके व्यक्तियों और स्त्रियोंको भी मत देनेका स्वत्व मिला था। बिना रक्तपात केवल शिक्षाविस्तार, तथा देशकार्यके उद्यम और संयत आन्दोलनसे आयिसलेण्डने स्वाधीन व्यवसाय, स्वायत्त-शासन और स्त्री-स्वाधीनतादि प्राप्त किया। पराधीन जाति होते भी अधिवासी स्वाधीनताका पूर्ण सुख उठाने लगे। जो जिस अवस्थाके उपयुक्त रहता, भगवान् उसे उसी अवस्थापर पहुँचा देता है।

इस स्थलपर यह कहना आवश्यक है, कि आयिसलेण्डके लोग डेनमार्ककी पारलियामेण्टमें प्रतिनिधि भेज न सके थे। युरोपीय राजनैतिक क्षेत्रमें उनका स्वार्थ विजड़ित नहीं।

१८७४ ई० के प्रवर्तित विधि-अनुसार एलिथिङ्ग

वोट द्वारा आयिसलेण्डके आयव्ययका हिसाब बनाया जाता है। ८४ हजार लोगोंके राज्यमें काम च्य, दां नहीं होता। इसीसे दो वत्सरमें केवल एक बार अधिवेशन होनेपर दोनो वर्षका हिसाब साथ ही लगता है। जातीय धनागारमें प्रति वर्ष साढ़े चार लाख मुद्रा जमा होता है। देशपर किसी प्रकारका ऋण नहीं। सैनिक वा युद्धपोत-सम्बन्धोय कोई कर देना नहीं पड़ता। अधिवासी स्वेच्छासे आयपर सामान्य परिमाण शुल्क लगा धनियोंसे विलासके द्रव्यजात शराब, तम्बाकू, कहवा चीनी इत्यादिकके व्यवहारोपलब्ध्यमें कुछ राजस्व वसूल कर लिया करते हैं।

१८११ ई० को जोन सिगार्डसनने आयिसलेण्डके पश्चिम भाग प्राचीन वंशमें जन्म लिया था। सुशिक्षा पाकर १८३० ई० को वह आयिसलेण्ड-विशपकी मन्त्री हुये। १८३३ ई० को डेनमार्क पहुँच कोपनहेगन विश्वविद्यालयमें इस द्वीपके इतिहास और भाषाकी गवेषणा द्वारा शीघ्र युरोपीय शिक्षित समाजमें उन्होंने ख्याति पायी। प्राचीन आयिसलेण्डके इतिहास और व्यवस्था-संग्रहमें उन्होंने विस्तर परिश्रम किया था। उन जैसा विद्वान् और राजनीतिज्ञ व्यक्ति अद्यापि दूसरा व्यक्ति आयिसलेण्डमें उत्पन्न नहीं हुआ। उन्नतहृदय, दृढ़चरित्र, अध्यवसाय और स्वदेशानुरागके प्रभावसे समग्र अधिवासी उनके अनुगामी बने। डेनमार्क-सरकारके सर्वदा दृढ़ भावसे प्रतिबन्धकता-चरण करते भी लोगोंने स्वाधीन बाणिज्य और स्वायत्त-शासन पाया है। किसी एक मनुष्यके भी पृथिवी-विख्यात होनेपर देशका गौरव बढ़ जाता है। उन्होंने आयिसलेण्डको बिलकुल डेनमार्कसे मिला देनेके प्रस्तावका तीव्र प्रतिवाद किया था। एक संवादपत्रके सम्पादक रूपसे ही वे स्वदेशवासियोंकी सभ्यता और उन्नतिके प्रधान पोषक बने। १८७४ ई० को डेनमार्क-राज दम खृष्टियानके स्वयं आयिसलेण्ड जाकर स्वायत्तशासन देनेसे स्वदेशवासियोंने जोन सिगार्डसनको सर्वप्रकार सम्मान और उपाधि दिया था। वे जीवनके अधिकांश समय कोपनहेगनमें ही रहे।

वहाँ मरनेपर उनका शव रोजविक लाया और समग्र देशवासियोंके उद्योगसे ससम्मान गाड़ा गया था। समाधिके स्मारकपर लिखा, —The beloved son of Iceland, his honour sword & shield. आयिसलेण्डके प्रियपुत्र, इनका गौरव खड्ग और चर्म था।

१००० ई०को इस द्वीपमें ईसाईधर्म फैला रहा। आजकल आयिसलेण्डवासी मार्टिन-लूथर-प्रवर्तित प्रोटेस्टाण्ट मतके अवलम्बी हैं। धर्मकार्यकी सुविधाके लिये द्वीप २० उपाचार्याँके अधिकार और १४२ गिरजाँके उपचक्रमें विभक्त है। फिर गिरजासे सम्बन्ध रखनेवाले प्रत्येक पल्लीके धर्मकार्यकी व्यवस्था कमिटीसे सम्पन्न होती है। उपाचार्यगणका कार्यपरिदर्शन प्रादेशिक कमिटीके हाथ न्यस्त है। गिरजाका कोई पद खाली होनेपर गवरनर-जनरल बहादुर बिशपसे परामर्श ले तीन मनुष्य चुन देते हैं। धर्म-मण्डलीके तीनमें एकको मनोनीत करनेपर गवरनर-जनरल बहादुर उसे काम सौंपते हैं। साधारण राजकार्यका विशेष उच्चपद अधिकार-शून्य होनेपर आज भी डेनमार्कके राजा लोक-निर्वाचन करते हैं।

सन् १८४७ ई०को रेकजाविक नगरमें एक धर्म-शिक्षाका विद्यालय खुला था। वहाँ अधिकांश पुरोहित शिक्षा पाते हैं। उनमें कोपनहेगन-विश्व-विद्यालयके उपाधिवारी भी कोई-कोई रहते हैं।

जनसाधारणके स्वास्थ्यने अधिक उन्नति लाभ की है। विशेषतः बालक-बालिकाकी मृत्युसंख्या बहुत घट गयी है। परिच्छिन्नता, अपेक्षाकृत उत्कृष्ट आवास-भूमि, खाद्यद्रव्यकी उत्कर्षता और दैव्यों तथा धात्रियोंकी संख्या वृद्धि ही इस उन्नतिका कारण है। १८७६ ई०से एक मेडिकल-स्कूल (चिकित्सा-विद्याशिक्षालय) भी खुला है। इस समय द्वीपके प्रत्येक स्थानमें दो-चार डाक्टर और धात्री विद्यमान हैं। पहले समस्त द्वीप ढूंढनेसे भी एक डाक्टर वा धात्रीका पता लगना कठिन था। अब एक प्रधान चिकित्सकके हाथ द्वीपके स्वास्थ्य, मेडिकल-स्कूल और डाक्टरगणके तत्वावधानका भार न्यस्त है। १६ सहाकारी, २० प्रादेशिक अर्द्धचिकित्सक और

एक नेत्रवेद्य रहते हैं। ४ छोटे हस्पताल और ४ औषधालय प्रतिष्ठित हैं। धात्रियोंको मेडिकल-स्कूलमें कुछ दिन वक्तृता सुनना और रीतिमत् शिक्षा देना पड़ता है।

अधिक परिमाणसे उच्च शिक्षाके विद्यालयन खुलते भी मत्स्योपजीवियोंके ग्राम और लोकपूर्ण स्थानमें विद्याचर्चा उत्तम रूपसे फैल गयी है। अनेक समय बालक निज-निज आवासमें ही पढ़-लिख लेते हैं। किसी-किसी स्वल्पप्रज्ञ स्थलमें भ्रमणकारी शिक्षक विद्यादान देते हैं। धर्मयाजक सर्वदा संवाद रखनेको बाध्य होते, सकल बालक पढ़-लिख और हिसाब-किताब कर सकते हैं या नहीं। शिक्षा-विस्तारके लिये ही लोकसंख्याको देखते पुस्तक और सामयिक पत्रका प्रचार अत्यन्त अधिक है। मासिकपत्रोंको छोड़ १८ साप्ताहिक संवादपत्र निकलते हैं। रेकजाविकके जातीय पुस्तकागारमें ४०००० मुद्रित पुस्तिका और ३०० हस्तलिपि रचित हैं। राजधानीकी लोकसंख्या ६७०० मात्र है। प्राच्य शिल्प-विज्ञानकी कितनी ही बहुमूल्य सामग्री संग्रह हुई है। शिक्षित लोगोंकी समितियोंमें साहित्य, प्रजाबन्धु और प्राच्यविज्ञान-समितिका नाम विशेष उल्लेख-योग्य है। युरोप-विख्यात भास्कर थारवल्डसेनकी मूर्ति राजधानीमें शोभित है।

भाषाका नाम आयिसलेण्डिक है। किन्तु ८७४ ई०को नरवेसे आनेवाले उपनिवेशियोंके वंशधर अब्दापि अपनी प्राचीन भाषा ही बोलते हैं। वर्तमान काल नरवे देशमें भाषाका अनेक परिवर्तन और संशोधन हुआ है। विदेशमें रहनेसे लोगोंकी अपनी भाषा बहुत प्यारी लगती है। इसीसे उपनिवेशी पिढ-पितामहकी भाषाको अक्षुण्ण रख सके हैं। ऐसी अवस्थापर आयिसलेण्डकी भाषा और साहित्यचर्चा भाषातत्त्वविदोंके अनुसन्धानपक्षमें विशेष सहायक है। स्थानीय भाषा तथा साहित्यचर्चासे इस बातके समझनेको बड़ी सुविधा पड़ी, उत्तर-युरोपके दुर्दान्त योद्धाओंकी भाषा कैसे बनी और किस परिवर्तनसे वर्तमान स्थाण्डिनीविधाकी भाषा निकली थी।

यहां सङ्गीतचर्चाका प्राबल्य है। उत्कृष्ट गायक-गायिका बहुत हैं। किन्तु अच्छा कवि कहीं नहीं मिलता। आधिसलेण्डके गीतका स्वर कणमें गूँजा करता है। ओता अनेक क्षण पर्यन्त उसे भूल नहीं सकता। अन्यान्य देशमें जिस गुणके लिये कविताका आदर होता, वह सभी आधिसलेण्डके गद्य महाकाव्यमें देख पड़ता है। वाल्मीकिके रामायण, होमरके ट्रय वणन, एवं राजस्थानीय चारणोंके गीतकी तरह सभ्यताके प्रारम्भकाल (११४०-१२२० ई०) यहाँकी गाथामें अपने वीरवृन्दका वीरत्व और नरवे तथा डेनमार्कके नरपतिगणका साहसिक कार्य भाटों द्वारा रचित हो साधारणके आमाद-आह्लाद, समाज और नायकके प्रकोष्ठमें सुनाया जाता था। प्रथम कई एक पुरुष लोगोंके सुँह-सुँह चलने बाद वह लिखा गया। आजकल प्रायः तीन भाग नष्ट होनेसे सौमें चालीस गीत बाकी बचे हैं।

सम्प्रति आधिसलेण्डमें जलप्रपातसे तड़ित् निकाल रेलगाड़ी और कलकारखाना चलानेकी कल्पना लगा रहे हैं। लकड़ों और कोयला न मिलनेपर गैसको आगसे खाना पकाते और शहरमें रौशननी करते हैं।

साक्षात् सम्बन्धमें डेनमार्क भिन्न अन्य किसी देशको आधिसलेण्डसे ढाक नहीं जाती। निर्धारित समय डेनमार्कसे जहाज आ और हरिक बन्दरमें ठहर चिह्नी-पत्रों इकट्ठा करता है। डेनमार्कसे फिर उसे ढाक विभाग द्वारा पृथिवीमें अन्यत्र भेजते हैं।

आयी (हि० त्रि०) उपस्थित हुई, आ पड़चो। यह शब्द 'आना' क्रियाका एकवचन सामान्य-भूतका स्त्रीलिङ्ग है। (स्त्री०) पढ़ देखो।

आयी-गयो (हि० स्त्री०) हानि-लाभ, नफ़ा-नुकसान। आयु (वे० त्रि०) एति गच्छति, इण् गतौ इन्।

वन्दशीषः। उष् १।२। १ जीवित, गमनशील, जिन्दा, चलता-फिरता। (पु०) २ मनुष्य, आदमी। ३ अन्न, अनाज। ४ जीव, जानवर। ५ मनुष्यजाति, आदमीकी कौम। ६ प्रथम मनुष्य, पहला आदमी। ७ जीवित-काल, जिन्दगी। 'आयु जीवितकालो वा।' (चमर) ८ आयु, हवा। ९ प्रपत्य, औलाद। १० मनुष्यजाति।

(हरिवंश ३।७) ११ मण्डूकराज। (महाभारत—वनपर्व १८२।३८) १२ कृष्णके एक पुत्र। (भागवत १०।६१।१७) १३ उर्वशी और पुरुरवाके पुत्र। नहुषराज इन्हींके पुत्र थे। (रामायण ७।५६ अध्याय) १४ औषध, दवा। १५ घृत, घी। १६ वसा, चर्बी। आयुस् शब्द देखो।

आयुःशेष (सं० पु०) ६-तत्। जीवित कालकी समाप्ति, मृत्यु, मौत, जिन्दगीका खातिमा।

आयुःशेषता (सं० स्त्री०) जीवनके अतिरिक्त अन्य वस्तु न रहनेकी दशा, सिर्फ जिन्दगी बाकी बचनेकी हालत।

आयुक्त (सं० त्रि०) आ-युज् कर्मणि क्त। आयुक्त-कुशलाभ्यां चासेवायाम्। पा २।३।४०। १ सम्यग् व्यापारित, सुकरर। 'आयुक्तः व्यापारितः।' (सिद्धान्तकौमुदी) २ ईषदु-युक्त, मिला या लगा हुआ। 'आयुक्ता गौः शकटे ईषदयुक्तः।' (सिद्धान्तकौमुदी) (क्लो०) आ-युज् भावे क्त। ३ सम्यग् नियोजन, तकररो, तैनाती। (पु०) ४ सचिव, प्रतिनिधि वा नियोगी, वजीर, शुभाश्रिता या नायब। आयुक्तिन् (सं० त्रि०) आयुक्तमनेन, आ-युज्-क्त इष्टादि-त्वात् इनि। सम्यक्नियोगकर्ता, तैनात करनेवाला। आयुज् (वे० त्रि०) नियोग करनेवाला, जो जोड़ता या मिलाता हो।

आयुत (सं० त्रि०) आ-यु-क्त। १ आर्द्राभूत, गलित, पिघला हुआ, जो पसीजा हो। (क्लो०) भावे क्त। २ आर्द्राभूत घृत, पिघला हुआ घी।

आयुध (सं० पु०) आयुध्यतेऽनेन, आयुध करणे घञर्थे क। १ शस्त्रमात्र, कोयी हथियार। आयुध तोन प्रकार होता है,—प्रहरण, हस्तयुक्त और यन्त्र-युक्त। खड़्गकी तरह चलनेवाला प्रहरण—चक्रवत् छूटनेवाला हस्तयुक्त और वाण सहस्र यन्त्रसे निकलने-वाला यन्त्रयुक्त कहाता है।

शस्त्रकी भांति प्रहरण कार्य साधनेवाले वस्तुका भी नाम आयुध है। जैसे,—नखायुध, दण्डायुध इत्यादि। "नखदण्डायुधः खगः।" (महि ५।१०५) इसका प्रमाण नीचे लिखते, कि अति पूर्वकालसे भारतवासो आयुध-धारण करते हैं,—"स्त्रिया वः सल्लायुधा पराणदे वीषू उत प्रतिलोम।" चक १।१२। उस समय ऋषि यज्ञरचायें

आयुध रखते थे,—“ऋषीणामस्त्रायुधम् ।” अथर्व १।१३३।२।
वैदिक समयमें सूर्मो, इधु और धनुः कयी आयुध चलते
रहे । (ऋणयजुः १।५।६।७, ऐतरेयब्राह्मण ७।१८) सूर्मो लौहसे
बनता, अभ्यन्तरमें छेद रहता, और वर्तमान छोटी
तोप-जैसा देख पड़ता था । एकके छोड़नेसे सौ आदमी
मर जाते ।

अथर्ववेदके समय सौसकी गोली भरकर भी अस्त्र
चलाते थे,—

“सौसायाध्यहं वरुणः सौसायाग्रिहपावति ।

सौसं म इन्द्रः प्रायच्छन् तदङ्गं वातु चातनम् ॥

यदि नो गां हंसि ययश्च यदि पूरुषम् ।

लं ला सोसेन विध्यामो यथा नोऽघो अवीरहा ॥” (अथर्व १।१६।२, ४)

रामायण महाभारत और तत्परवर्ती समय
भारतवासी नानाप्रकार आयुध बनाते रहे । उनमें
कयी नाम नीचे लिखते हैं,—शक्ति, तोमर, नालिक,
दुघण, भिन्दिपाल, लंगुड़, पाश, चक्र, गदा, मुहर,
पिनाक, दन्तकण्टक, भूषण्डी, परशु, गोशीर्ष, लवित,
स्थूण, असि, प्रास, सौर, मुषल, पट्टिश, परिघ, मयूखी,
शतघ्नी, दण्ड, दण्डचक्र, धर्मचक्र, कालचक्र, ऐन्द्रचक्र,
शूल, ब्रह्मशिर, कौमोदकी, वरुणपाश, वायवास्त्र,
क्रौञ्चास्त्र, शोषण, वर्षण, नन्दन, गान्धर्व, अविद्या,
विद्या, हयशिर, गारुडास्त्र, नागास्त्र, विलापन,
सन्तापन, प्रशमन, प्रस्त्रापन, जुम्भण, नारच, वज्र,
तुलागुडा, हलो, खड्गपुत्रिका, लघित्र, आस्तर, कुम्भ,
मौष्टिक इत्यादि । प्रत्येक शब्दमें तत्त्वविवरण देखो ।

(वै०) २ पात्र, बरतन । (सं० क्ली०) ३ अल-
ङ्कारमें लगनेवाला सुवर्ण, जो सोना जेवर तैयार
करनेमें काम आता हो ।

आयुधजीविन् (सं० त्रि०) शस्त्र द्वारा जीविका
चलानेवाला ।

आयुधजीवी (सं० पु०) भट, योद्धा, मुजाहिद, सिपाही ।

आयुध-दीर्घघृष्ठ (सं० पु०) सर्प, सांप । तलवार-
जैसी लम्बी पीठ रखनेसे सांपका यह नाम पड़ा है ।

आयुधधर्मिणी (सं० स्त्री०) आयुधस्वेव धर्मोऽस्त्वस्या,
इति ङीप् । जयन्ती वृत्त, धनदेनका पेड़ ।

आयुधन्यास (सं० पु०) आयुधानी न्यास, आयुधपूजाका

अङ्गन्यासविशेष । इस न्यासमें चक्र, गदा प्रभृति
आयुधोंके नामपर अपने-अपने स्थान मन्त्र द्वारा हाथ
लगाना पड़ता है । वैष्णवपूजनसे पूर्व बाल्यशक्तिके
लिये आयुधन्यास करते हैं । तन्त्रसारके औविद्या-
पूजा-प्रकरणमें विवरण लिखा है ।

आयुधागार (सं० क्ली०) ६-तत् । शस्त्रगृह, सिला-
खाना, राजाके हथियार रखनेका घर ।

आयुधागारिक (सं० त्रि०) आयुधागारे नियुक्तम्,
ठन् । अगारान्ताठन् । पा ४।४।७० । राजाके अस्त्रागारमें
नियुक्त, सिलाखानेका मुहाफिज् । जो व्यक्ति प्रत्येक
अस्त्र रखने एवं पहंचाननेका तत्त्व समझता और सर्वदा
सतर्क रहता तथा कार्यदक्ष होता, वही राजाके आयुधा-
गारमें नियुक्त किया जा सकता है । (कौटिलीय अर्थशास्त्र)

आयुधिक (सं० पु०) आयुधेन तदव्यवहारेण
जीवति, ठन् । १ शस्त्राजीव, सिपाही । (त्रि०)

२ शस्त्रसम्बन्धीय, हथियारसे निश्चित रखनेवाला ।

आयुधिन् (सं० त्रि०) आयुधमस्यस्य, इति । शस्त्र-
धारो, हथियारबन्द । (स्त्री०) आयुधिनी ।

आयुधौ (सं० पु०) योद्धा, सिपाही ।

आयुधौय (सं० पु०) आयुध-ह् । आयुधाच्छ च । पा ४।४।१४ ।
आयुधिक देखो ।

आयुर्देद, आयुर्दा देखो ।

आयुर्दा (वे० त्रि०) आयुर्दाता, जिन्दगी बख्शनेवाला ।
‘आयुर्दा आयुषो दाता ।’ (शक्ययजुर्मांसे महीधर ३।१०)

आयुर्दाय (सं० पु०) आयुषो दायः दानम्, ६-तत् ।
बल विशेषमें स्थिति और योग प्रभृति द्वारा रव्यादि
कठंक आयुर्दान, आयुर्गणन, उम्भकी बख्शिश ।
ज्योतिषशास्त्रके अनुसार नवग्रहके बलाबलपर मनुष्य-
का जीवनकाल घटता-बढ़ता है । इसीसे उन्हें आयु
देनेवाले मानते हैं ।

आयुर्दायन्, आयुर्दा देखो ।

आयुद्रव्य (सं० क्ली०) आयुः साधनं द्रव्यम्, शाक०
तत् । १ औषध, दवा । २ घृत, घी । चार्वाकोनि आयु
बढ़ानेका गुण रहनेसे ऋण लेकर भी घृत पीनेको
उपदेश दिया है । “सर्वं ज्ञानं हृत् पितेत् ।”

आयुर्वेद (सं० पु०) आयुष्यका बल, उन्नतता और।
ज्योतिषमें नवग्रहके बलाबलपर आयुका घटना-बढ़ना
माना है।

आयुर्विधि (वे० त्रि०) आजीवन युद्धकर, उन्नत
लड़नेवाला। “ये पथां पथिरस एल हदा आयुर्विधिः।” वाजसनेय-
संहिता १६।६०। ‘आयुषा जीवनेन युध्यन्ते ते यावज्जीवयुद्धकराः यदा
आयुर्जीवनं पथीकृत्य युध्यन्ति ते आयुर्विधिः।’ (महीधर)

आयुर्योग (सं० पु०) उचितस्यायुषो ज्ञापको योगः,
ज्ञात-तत्। १ ज्योतिषोक्त ग्रहयोगविशेष। इससे
उचित आयु मिलता है। २ औषध, दवा।

आयुर्वृद्धि (सं० स्त्री०) आयुषो वृद्धिः, ६-तत्।
द्रव्य विशेषके सेवन द्वारा आयुको वृद्धि, किसी खास
चीजके इस्तेमालसे उन्नतता बढ़ना। शिवने दुर्गासे
कहा है, हे देवि! अन्नक तुम्हारा और पारद हमारा
बीज है। इसीसे जो दोनोंको मिलाकर सेवन करता,
वह मृत्यु और दारिद्र्यके भयसे छूट जाता है।

“अन्नं तव बीजम् मम बीजम् पारदः।

अनयोर्मेलनं देवि मृत्युदरिद्र्याशनम्॥”

(सर्वदर्शनसंग्रहपुस्तक तन्त्रवचन)

प्राणायामसे भी सर्वव्याधि छूटता और परमायु
बढ़ता है। पूर्वभुक्तवस्तु जीर्ण होनेपर भोजन करना
और मलमूत्रादिका वेग न रोकना परमायुवृद्धिका
एक उपाय है। सुश्रुतके मतमें ब्रह्मचर्य, अहिंसा,
दुःसाहस-परित्याग, सद्योमांस एवं अन्न भक्षण, बाला
स्त्री-सेवन और दुग्ध-घृत तथा उष्णजलपान आयुर्वृद्धि-
कर होता है।

आयुर्वेद (सं० पु०) आयुर्विद्यते ज्ञायते लभ्यते वा
अनेन, विद् करने घञ्। ऋग्वेदका उपवेदविशेष,
अथर्ववेदका उपाङ्ग, शल्यदि स्थानाष्टक-सम्पन्न
धन्वन्तर्यादि-प्रणीत चिकित्साशास्त्र, इहम-अदिव्या।
आयुका हिताहित और व्याधिका निदान तथा शमन
जिस शास्त्रमें रहता, वही आयुर्वेद कहा जाता है। (वैद्यशास्त्र)
हित, अहित, सुख, दुःख, और आयु तथा उसका
हिताहित एवं मान बतानेवाले शास्त्रका नाम
आयुर्वेद है। (चरक)

आयुर्वेदसे इन दुर्ज्ञेय विषयोंका ज्ञान मिलता—

आयुके लिये क्या हितकर एवं क्या अनिष्टकर होता
और उसका कितना परिमाण तथा कैसा स्वरूप रहता
है। महर्षि सुश्रुतके मतमें जिससे आयु बढ़ता किंवा
मालूम पड़ता, वह शास्त्र आयुर्वेद कहा जाता है।

“अनेन पुरुषो यथादायुर्विन्दति वेत्ति वा।

तस्मान्म निवरेरेष आयुर्वेद इति स्मृतः॥” (भावनिश्चय)

अर्थात् रोगान्त्रांत व्यक्तिका रोगनिवारण और सुस्थ
व्यक्तिकी स्वास्थ्यरक्षा ही आयुर्वेदका प्रयोजन है।

इस विषयमें कुछ मतभेद पड़ता, आयुर्वेद किस
वेदके अन्तर्गत आता और किस वेदका उपाङ्ग ठहरता
है,—“सर्वेषामेव वेदानामुपवेदा भवन्ति। ऋग्वेदस्यायुर्वेद उपवेदः।
अथर्ववेदस्य शस्त्रशास्त्राणि।” (चरणव्यूह)

सकल वेदका एक-एक उपवेद होता है।
ऋग्वेदका उपवेद आयुर्वेद है। अथर्ववेदके उपवेदको
शस्त्रशास्त्र अर्थात् शल्यतन्त्र कहते हैं।

किन्तु सुश्रुतके मतमें आयुर्वेद अथर्ववेदका उपाङ्ग है,

“इह खलवायुर्वेदो नाम यदुपाङ्गमथर्ववेदस्य।” (सुश्रुत सूत्र० १ अ०)

किसी-किसी पुराणमें लिखा, कि ब्रह्माने ऋक्,
यजुः, साम और अथर्ववेदका सार निकाल आयुर्वेद
बनाया था। असली बात यह, कि आयुर्वेदका बीज
सकल वेदमें ही मिलता है। उसके मध्य ऋग्वेदमें
कुछ अधिक है। किन्तु वैद्यकगणके अथर्ववेदपर ही
अधिक निर्भर करनेका क्या कारण है? “तत्र चैत प्रष्टव्यः
सु यतुर्णाष्टकसामयजुरथर्ववेदानां कं वेदमुपदिशन्त्यायुर्वेदविदः। तत्र
मिषजा वृष्टेनेवं चतुर्णां ऋक्सामयजुरथर्ववेदानामात्मनोऽथर्ववेदे भक्ति-
रादेश्वा। वेदोद्गाथवर्णः। स्वस्त्रायन-वलि-मङ्गल-होमप्रायश्चित्तोपवास-
मन्त्रादि-परिग्रहाचिकित्सां प्राह।” (चरक सूत्रस्थान ३० अध्याय)

यदि कोई पूछे—आयुर्वेदवेत्ता ऋक्-यजुः-साम-
अथर्व चारोंमें किस वेदके अवलम्बनसे उपदेश दे, तो
चिकित्सक ऋक्, यजुः, साम, अथर्व चारोंमें अथर्व-
वेदपर अपनी भक्ति देखाये। क्योंकि अथर्व-प्रोक्त वेद
ही स्वस्त्रायन, वलि, मङ्गल, होम, नियम, प्रायश्चित्त,
उपवास और मन्त्रादिको स्वीकारकर चिकित्सा-
तत्त्वका उपदेश देता है।

सुश्रुतमें लिखा, पहले ब्रह्माने सहस्र अध्याय और
ब्रह्मसंहिताका नाम आयुर्वेद प्रकाश किया था। ब्रह्मासे

प्रजापति, प्रजापतिसे अश्विनीकुमारद्वय, अश्विनी-कुमारद्वयसे इन्द्रदेव, इन्द्रदेवसे धन्वन्तरि और धन्वन्तरिसे सुश्रुतने आयुर्वेद पढ़ा। लोकींके मङ्गलार्थ सुश्रुत मुनिने आयुर्वेद रचा है। ब्रह्माने आयुर्वेद निम्नलिखित आठ भागमें बांटा था,—१ शल्यतन्त्र, २ शालाक्यतन्त्र, ३ कायचिकित्सातन्त्र, ४ भूतविद्यातन्त्र, ५ कौमारभृत्यतन्त्र, ६ अगदतन्त्र, ७ रसायनतन्त्र और ८ वाजीकरणतन्त्र

१। शल्यतन्त्र—जराही या चौर-फाड़को कहते हैं। ढण, काष्ठ, पाषाण, पांशु, धातु, इष्टक, अस्थि, केश, नख आदि कारणवश शरीरमें घुस और मल-मूत्रको रोक पीड़ादायक होते हैं। उन्हें निकालनेके लिये यन्त्र, चार एवं अग्नि बनाने तथा लगाने और नानाप्रकार रोगनिर्णय करनेका उपाय इस तन्त्रमें लिखा है।

२। शालाक्यतन्त्रमें स्कन्धसन्धिके उपरिस्थ चक्षु, कर्ण, मुख, नासिका, जिह्वा, दन्त, ओष्ठ, अधर, गण्ड, तालु, अलिजिह्वा प्रभृति स्थानके सकल रोग मिटानेकी बात है।

३। कायचिकित्सातन्त्रमें ज्वर, अतीसार, रक्तपित्त, शोष, उन्माद, अपस्मार, कुष्ठ, मेह इत्यादि सर्वाङ्गव्यापी रोगको शान्त करी है।

४। भूतविद्यातन्त्रमें देव, असुर, गन्धर्व, यक्ष, रक्ष, पिष्टलोक, पिगाच, नाग, अहादि द्वारा आक्रान्त व्यक्तिके आरोग्यपर उपायस्वरूप शान्तिकर्म और वलिदान विवृत है।

५। कौमारभृत्यमें बालकका प्रतिपालन, धात्रीके दुग्धका दोष-संशोधन और स्तन्यदोष एवं ग्रहदोषसे उत्पन्न रोगकी चिकित्सा है।

६। अगदतन्त्र सर्प, कीट, लृता, वृश्चिक, मूष-कादिके दंशजनित विषको दूर करनेका उपाय बताता है। सिवा इसके अपरापर विषका लक्षण भी उसमें विद्यमान है।

७। रसायनतन्त्रमें युवावत् बलिष्ठ बनने, परमायु, मेधा एवं बल प्रभृति बढ़ने और देहके रोगसे बचनेका विषय वर्णित है।

८। वाजीकरणतन्त्रमें अल्प अथवा शुष्कको बढ़ाने, विकृतको स्वाभाविक अवस्थापर लाने और क्षयप्राप्त शुक्रको उपजानेका विधान है। चीण शरीरको सबल करने और मनको सर्वदा प्रफुल्ल रखने का विषय भी वर्णित है।

इस अष्टाङ्गमें आजकलका देहतत्त्व (Physiology), शरीरविज्ञान (Anatomy), शस्त्रविद्या (Surgery), भैषज्य एवं द्रव्यगुणतत्त्व (Materia-medica), चिकित्सातत्त्व (Practice of medicine), रोगनिदान (Pathology) और धात्रीविद्या (Midwifery) प्रभृति विषय विद्यमान हैं। सिवा इसके सट्टश-चिकित्सा-प्रणाली (Homeopathy), विरोधि-चिकित्सा-प्रणाली (Allopathy) जल, चिकित्सा-प्रणाली (Hydropathy) और तन्त्रशास्त्रमें वर्णचिकित्सा (Chromopathy) भी मिलती है।

आयुर्वेदका चिकित्सा-तत्त्व वैदिककालसे प्रचलित है। इसमें किसी बातकी कमी देख नहीं पड़ती।

शरीर-विज्ञान और अस्त्रचिकित्सा प्रथम अङ्गके अन्तर्गत है। यजुर्वेदमें अस्त्रचिकित्साका आभास मिलता है— “हृदयास्थारेऽवयवस्य जिह्वाया षष्ठ वचसः।”

उपरोक्त मन्त्रद्वारा यज्ञार्थ निहत पशुका हृदय, वक्षः, यकृत, वृत्त (वृक्), वामहस्त, उभय पार्श्व, ओष्णि, गुदनाल-मध्य-भाग, अन्त्र-चर्म (वपा) और मेदः (वसा) प्रभृति अस्त्र-विशेषसे बाहर निकाल अग्निमें आहुति देनेकी विधि विद्यमान है। शस्त्र-विद्या ज्ञात न रहनेसे यह सकल कार्य होना कैसे सम्भव था? वेदमें शरीरतत्त्वग्रहणका विलक्षण प्रमाण मिला है,—

“यथा ह्येव वनस्पतिलक्ष्यैव पुरुषोऽस्यथा।

तस्य लोमानि पर्णानि लग्नोत्पाटिका वृद्धिः।

लघ एवास्त्र वधिरं प्रसन्दि लघ उत्पटः।

तस्मात् तदा दृष्टात् प्रैति रसो ह्यचादिवाहतात्।

मांसावस्थ शक्तराणि किनाटं चाव तत् स्थिरम्।

अस्थीन्वन्तरतो दाक्षि मञ्जा मञ्जोपमाहता।

यत् ह्येव ह्यक्षो रोहति सूलावतः पुनः।” (अद्वैतसूत्र १०२)

फिर अन्य स्थलमें शिरा-प्रशिरा नामादि भी है,—

“य एषोऽन्तर्दये लोहितपिण्डः । अदेनयोरितत् प्रावरणम् ।
यदेतदन्तर्दये कालकर्मिव । अदेनयोरिषा द्यतिः सन्वरणोरिषा ।
हृदयादूर्ध्वं नाडी उच्चरति यथा केशः सहस्रधा ।

मित्र एवेत्यस्य हिता नाम नाड्योऽन्तर्दये प्रतिष्ठिताः ।”

सिवा इसक अर्थवेदीय गम और शरीरोपनिषत्में
शरीरविज्ञान विशेष रूपसे कथित है । यजुर्वेदीय हृदया-
रखकका १म और ६४ अध्याय देखो ।

उद्भिद्बिद्या भी आयुर्वेदमें पायी जाती है । उद्भिद्-
तत्त्व न समझनेसे ओषधिका गुणागुण ठहराना
कठिन है । प्राचीन वैदिक ऋषि ओषधिका विषय
अच्छीतरह जानते थे । ऋग्वेदमें प्रमाण है,—

“सुचे ताक्षन्नन्नयंत सिन्धून्धन्वातिष्ठन्नीषधीर्निधमापः ।” (ऋक् ४३३७)

अर्थात् (वह) क्षेत्र सकल शस्यसम्पन्न और नदी
सकल प्रेरित करें । जलविहीन स्थान ओषधियुक्त
और निम्नस्थान जलमय हो । फिर देखिये,—

“मधुमतीरोषधीर्द्याध आपो” (ऋक् ४५७३)

प्रयोजन यह, कि ओषधि सकल द्युलोकसमूह और
जलसमूह मधुयुक्त बनें । ऋषियोंका ओषधि विषय
जानना निम्नलिखित वचन द्वारा भी प्रमाणित है,—

“या ओषधिः पूर्वा जाता देव्यास्त्युगं पुरा ।

मनै न वध, षामहं शतं धामानि सप्त च ॥” (ऋक् १०१८७१)

महाभारतमें रोगहर, विषहर, शल्यहर और
कृत्वाहर कयी प्रकारके आयुर्वेदवित् चिकित्सकोंका
नाम मिलता है । देहतत्त्व, शरीरविज्ञान, शल्यविद्या, चिकित्सा-
तत्त्व, रोगनिदान, धात्रीविद्या प्रभृति शब्दमें विलारित विवरण देखो ।

अश्वायुर्वेद, गजायुर्वेद और वृक्षायुर्वेद नामसे आयु-
र्वेदके कयी विभाग होते हैं । (अग्निपुराण २८१—२८१ अध्याय)

मधुसूदन-सरस्वतीने अपने बनाये ‘प्रस्थानभेद’
ग्रन्थमें कामशास्त्रको भी आयुर्वेदका अङ्ग माना है ।
आयुर्वेदकी चिकित्साप्रणाली यूनानी, ईरानी और
अरबी चिकित्साशास्त्र चलनेसे पह ले हीवनी रही ।
बहुकाल पूर्व भारतवर्षमें सर्वप्रथम मूल खुला था,
पीछे अपर जातिने सादर उसे अपना लिया ।

‘उयुन-उल्-अम्बा फितुल-कातुल-अतवा’ नामक
अरबी ग्रन्थमें लिखते, कि सन् ई०के ८म शताब्द भारत-
वर्षीय पण्डितोंके अधीन बगदादकी राजसभामें बैठे लोग

ज्योतिष और आयुर्वेद पढ़ते थे । सरक्, ससैद और
येदान नामक तीन आयुर्वेदिक ग्रन्थ भारतवर्षसे लोग
अरबदेश ले गये । तीनों ग्रन्थ चरक, सुश्रुत और निदान
नामके अपभ्रंश-जैसे हैं । इससे स्पष्ट समझमें आता,
कि पाश्चात्य चिकित्सकोंने भारतवासियोंसे आयुर्वेद
पाया था ।

आयुर्वेददृक्, आयुर्वेददृश् देखो ।

आयुर्वेददृश् (सं० पु०) वैद्य, चिकित्सक, तबीब,
हकीम ।

आयुर्वेदमय (सं० पु०) आयुर्वेद प्रचुर, आयुर्वेद
प्राप्त्यै मयट् । १ धन्वन्तरि । प्रचुर आयुर्वेद
जाननेसे धन्वन्तरिको यह उपाधि मिला है । (त्रि०)

२ आयुर्वेदाभिज्ञ, इलम-अदवियासे वाकिफ् ।

आयुर्वेदिक, आयुर्वेददृश् देखो ।

आयुर्वेदिन् (सं० त्रि०) आयुर्वेदी वेद्यतयास्वस्य,
इनि । १ ओषधीय, तिब्बो, दवादारुसे ताल्लुक रखने-
वाला । २ वैद्य, तबीब (स्त्री०) आयुर्वेदिनी ।

आयुर्वेदी (सं० पु०) वैद्य, हकीम, दवा-दारु
देनेवाला ।

आयुषक्, आयुषज् देखो ।

आयुषक्—जैनशास्त्रानुसार देह अथवा पुरुषका संयोग ।
आयुकी घोषणा करनेवाला ।

आयुषज् (वै० त्रि०) आयुना सजते, आयु-सञ्च-क्षिप्
धत्वम् । १ आयुःसम्बन्धी, उम्नसे सरोकार रखनेवाला ।
२ मानवयुक्त, मनुष्योंके योगका, आदमियोंका सहारा
पकड़नेवाला । (अव्य) ३ मनुष्योंके संयोगसे,
आदमियोंके मेलमें ।

आयुष्क (सं० त्रि०) आयुषा कायति, आयुष्-कै-क ।

आयु द्वारा प्रकाशमान, उम्नसे झलकनेवाला ।

आयुष्कर (सं० त्रि०) परमायुर्जनक, उम्न बढ़ानेवाला ।

आयुष्काम (सं० त्रि०) आयुः कामयते, आयुस्-
कम्-णिङ्-अण् । आयुरभिलाषुक, उम्नकी खादिश
रखनेवाला ।

आयुष्कृत् (सं० त्रि०) आयुः करोति, आयुस्-कृ-
क्षिप्-तृक् । आयुर्वेदिकर, उम्न बढ़ानेवाला । अम्न-
पारदादि आयुष्कृत् होता है । आयुर्वेदि देखो ।

आयुष्टोम (सं० पु०) आयुःसाधनं स्तोमः, शाकं तत् षत्वम् । १ आयुःसाधन ऋक्समुदाययुक्त स्तोम-विशेष । २ आयुष्टोम स्तोमयुक्त अतिरात्रविशेष । आयुष्टोमयज्ञ करनेसे उम्र बढ़ती है ।

आयुष्या (वै० त्रि०) आयुको रक्षा करनेवाला, जो उम्रकी हिफाजत रखता हो ।

आयुष्पतरण (वै०) आयुष्मत् देखो । (स्त्री०) आयुष्पतरणी ।

आयुष्मत् (सं० त्रि०) प्रशस्तायुष्यस्य, आयुस्-मतुप् षत्वम् । १ प्रशस्तायुष्क, उम्रवाला, तनदुरुस्त । २ जीवित, जिन्दा । ३ अन्नय, कायम, चाल । ४ ठह, उम्ररसोदा । (पु०) आयुष्मान् । (स्त्री०) आयुष्मती । आयुष्मान् (सं० पु०) १ प्रशस्तायुः व्यक्ति । २ ज्योतिषोक्त विष्कुम्भसे तृतीय योग विशेष । यथा—विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान् इत्यादि । आयुरिति शब्दोऽस्त्यस्य, मतुप् । ३ आयुस् शब्दयुक्त मन्त्रविशेष । ४ उत्तानपादके एक पुत्र । ५ संज्ञादके एक पुत्र । ६ जीवक महाह्वप, दोपहरिया ।

आयुष्य (सं० त्रि०) आयुःप्रयोजनमस्य, यत् । खगादिभ्यो यत् । (महाभाष्य) १ आयुर्हितकर, हयातबख्श । २ पथ्य, बीमारके खाने लायक । अन्न पारदादि द्रव्य और प्राणायामादि कर्म आयुष्य होता है । ‘पुनर्जातेऽरणि मथित्वा तन्मिनायुष्यं होमान् जुहोति ।’ (श्रुति) (स्त्री०) ३ आयुर्हितकर बल, हयातबख्श ताकत । ४ सजीवीकरण संस्कार । यह पुत्रजन्मके बाद किया जाता है ।

आयुष्यसूक्त (सं० स्त्री०) कर्मधा० । ‘आयुष्मानिति शान्त्यर्थे जप्त्वा तत्र समाहितः’ छान्दोगपरिशिष्टोक्त आभ्युदयिक आह्वादिमें पाठ्य सूक्त विशेष ।

आयुस् (सं० स्त्री०) एति गच्छति अहरहः, इण गती उप्ति, णित्वाङ्ङिः । एतेषिञ् । उण् २।११६ । १ जीवित काल, जीवत् । ‘अथायुर्जीवितावयी’ (उणादिकोष)

‘आयुर्जीवनम् ।’ (उज्जलदत्त)

सत्ययुगके लोग नीरोग रहते, इससे उनके सकल कार्य बन जाते थे । परमायु चार सौ वर्ष रहा । त्रेतादियुगमें पादक्रमसे परमायु घटता अर्थात् त्रेतामें तीन, द्वापरमें दो और कलिमें एक सौ वर्ष मनुष्य जीता है,—

“आरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षं श्रवायुषः ।

हन्ते त्रेतादियु ईषामायुर्जसति पादशः ॥” (मनु १।८२)

पुराणान्तरमें सत्यादि युगमें लक्ष वत्सर प्रभृति परमायु होनेकी बात लिखी है । प्राणी प्रत्यह २१६०० श्वास और उच्छ्वाससे प्राणक्रिया चलाता है । ३६०दिनसे २१६००संख्याको गुण करनेपर ७७७६००० आता, जो एक वत्सरका संख्यान होता है । श्रुत्यादिमें पुरुषका स्वाभाविक परमायु एकशत वत्सर निरूपित है । शत द्वारा ७७७६००० को गुण करनेपर ७७७६०००० निकलता है । अतएव मनुष्यके जीवन-कालमें ७७७६०००० संख्यक प्राणक्रिया हो सकती है । प्राणायामादि द्वारा वायुको रोकनेपर क्रियाकी अनुत्पत्तिके अनुसार परमायु बढ़ता है । पूर्वोक्त प्राणक्रिया सुस्थ व्यक्तिके लिये ही कही है । रोगादि उपसर्ग और शीघ्र यातायातमें अधिक प्राणक्रिया होनेसे परमायु घटता है । पुरुषका एकशत वत्सर परमायु स्वाभाविक ठहरता, किन्तु कर्म और कुपण्यादिवश न्यून भी निकल जाता है ।

वेदादिमें मनुष्यका परमायु शत वत्सर लिखित है,—“समिधा यत्न आहुतिं निगितिं नव्यो नशत् ।

वरारधं स पुष्यति चयमग्रे शतायुषं ॥” (ऋक्संहिता ६।२।५)

अर्थात् हे अग्नि ! जो मर्त्य समिध काष्ठ-द्वारा तुम्हें मन्त्र-संस्कृत आहुतिसे परिपुष्ट करता, वह पुत्रपौत्रादिसम्पन्न गृहमें शत वत्सर जीवित रहता है ।

२ यज्ञविशेष । प्रायः इसे आयुष्टोम कहते हैं । यह दीर्घजीवन प्राप्त होनेके लिये किया जाता है । फिर इसमें अभिप्लव यज्ञके ‘गो’ और ‘ज्योतिः’का भाग भी लगता है । ३ खाद्य, खुराक ।

आयुसुस् (सं० पु०) पुरुषा और उर्वशीके पुत्र । आयुस्कर, आयुष्कर देखो ।

आयुस्तेजस् (सं० पु०) बुद्ध विशेष ।

आये (सं० अव्य०) प्यार, भोजी । प्रीतिके साथ किसीको पुकारनेमें यह व्यवहृत होता है ।

आयेशा—इसलाम धर्मप्रचारक मुहम्मदकी शय पत्नी । यह आबू-बक्रकी कन्या थीं । सात वत्सर वयसमें मुहम्मदके साथ इनका विवाह हुआ था । सुननेमें आया,

कि वात्स्यायनात्मि विवाह होनेसे ही इनके बाप अब-
दुल्लाका नाम बदलकर अबू बक्र अर्थात् अन्नताके
पिता पड़ा था। कोई सन्तान न होते भी मुहम्मद इन्हें
बहुत चाहते थे। किसी अरबी लेखकने कहा है,—
अबूबक्र इतनी तरुण कन्या मुहम्मदको देनेके विरोधी
रहें। किन्तु मुहम्मदने विवाहके लिये ईश्वरीय आज्ञा
होनिका बहाना किया। इसपर उन्होंने अपनी कन्या
एक मञ्जषा खजूरके साथ भेज दी थी। आये-
शाकी एकान्तमें पा मुहम्मदने अमर्याद वस्त्र पकड़
लिया। उसपर यह सकोष बोल उठीं,—‘लोगोंके
विश्वस्य बताते भी आप व्यवहारसे मुझे वस्त्रक
मालूम पड़ते हैं।’ अपने पतिके मरनेपर इन्होंने
अल्लोके उत्तराधिकार पर आपत्ति डाली थी। कयी
बार इन्हें अल्लोके साथ घोर युद्ध करना पड़ा। साहसिक
होते भी इनके आचरणका बड़ा आदर रहा। अल्लोने
इन्हें कैद कर विना पीड़ा दिये छोड़ा था। आयेशा
भविष्यद्वादिनी और सत्यसन्धोकी माता कहाती रहीं।
सन् ५८ हि० या ६७ ई०को इनकी मृत्यु हुई। लोग
कहते हैं,—आयेशाने सनिश्चय और सावमान यजौदके
साथ अनुरक्त होना अस्वीकार किया था। इसपर
मुवावियाने उन्हें विनोदनके लिये बुला भेजा। आये-
शाके स्वागत गृहमें एक बड़ा गड्ढा खोद और मुंह
पक्षीसे ढांक दिया गया था। प्राणनाशक स्थानपर
कुरसी बिछी। यह उस पर बैठते ही गड्ढेमें जा
पड़ी थीं। उसी समय गड्ढेका मुंह पत्थरसे गरा
और चूर्नसे भरा गया।

आयोग (सं० पु०) आयुज्यते सर्वत्र मङ्गलादौ आ-
युज्-घञ्। १ गन्धमाख्यापहार, फूल फुलेल वगैरहकी
भेंट। २ व्यापार, हादसा। ३ रोध, रोक। ‘आयोगी
गन्धमाख्योपहारि व्याधितोषयोः।’ (हेम) ४ नियुक्ति, तैनाती।
५ तट, किनारा।

आयोगव (सं० पु०) आयोगं अप्रशस्तयोगं वाति
गच्छति, अयोग-वा-क स्वार्थ अण्। १ वैश्याके गर्भ
और शुद्रके औरसे उत्पन्न जाति विशेष। “यदा-
दायोगवः” (मनु १०।१२) काठका काम करते-करते अब
सुतार या बढ़ही नाम हो गया है। २ अयोगव-

वंशका मनुष्य। (स्त्री०) जातित्वात् डोपः।
आयोगवी।

आयोजन (सं० स्त्री०) आ सम्यक् युज्यते कर्म
येन, आ-युज-लुगट्। १ उद्योग, जाफिसानी। २ आह-
रण, भपटा-भपटी, धरपकड़। ३ संग्रहकार्य, जोड़-
तोड़। नैयायिक-मतमें कर्म और व्याख्यानको आयो-
जन कहते हैं।

आयोजित (सं० त्रि०) आ-युज-णिच्-क्त लोपः,
आयोजनमस्य जातम्, तारकादित्वादितच् वा। सम्यक्
सम्पादित, बना-बुना।

आयोद (सं० पु०) आयोदस्यापत्यम्, बाहुलकात्
अण्। धौम्यमुनि।

आयोधन (सं० स्त्री०) आ सम्यक् युध्यन्ति योद्धारो-
ऽस्मिन्, आ-युध आधारे लुगट्। १ रणक्षेत्र, लड़ाईका
मैदान। भावे लुगट्। २ युद्धक्रिया, जङ्ग-जदल,
लड़ाई-भिड़ाई। ३ संहार, खूँ-रेजो। ‘युधमायोधनं
जन्मं प्रधनं प्रविदारणम्।’ (अमर २।८।१०३)

आर (सं० पु०) आ सम्यक् ऋ गच्छति कालवशात्,
आ-ऋ कर्तरि घञ्। १ मङ्गलग्रह, मिररीख। यूनानि-
योंके होराशास्त्रमें भी मङ्गल ग्रहको आरस् कहते हैं।
२ शनिग्रह, जोहल, कौवान्। ३ मधुराम्नाष्टक, एक
पेड़। गौड़ देशमें इसे रेफल कहते हैं। ४ प्रान्तभाग,
कुर्ब, नजदीकी। भावे घञ्। ५ गमन, रविश, चाल।
आ अभिव्याप्ती अयंते गम्यते यत्र, आ-ऋ आधारे घञ्।
६ दूर, फासता। (स्त्री०) ७ मुण्डलीड, लोहेका
लुब्ब-लुलाब। ८ पित्तल, विरञ्ज। अरा-चक्रामिव,
स्वार्थ अण्। ९ कोण, जाविया। ‘आरः चित्तुतेऽर्कजे।’
(विह) ‘आरो रीतिः शनिर्मीनः।’ (हेम २।३८५) १० एक भील।
११ सकृथि, पहीयिका अरा। १२ हरिताल।

(हिं० पु०) १३ कलकुला। इससे इक्षुरस
निकालते हैं। १४ मट्टीका लोदा। यह पात्रनिर्माणमें
लगता है। १५ आग्रह, इसरार। (स्त्री०) १६ लोहेकी
कौल। यह पतली होती और सांटेमें लगती है।
गाड़ीका बेल या भैंसा जब नहीं चलता, तब हांकने-
वाला इसे उसके पीछे जुभो देता है। १७ पादकण्टक,
पञ्जका काटा। यह सुर्गेके होता और लड़नेमें चलता

है। १८ दंश, नेश, डङ्क। १९ चर्मप्रमेदिका, सुवा, सूजा, सुतारी। (अ० स्त्री०) २० झी, शर्म। (अ० स्त्री०) २१ अंगरिजी वर्णमालाका १८वां अक्षर। यह संस्कृतके रकार, हिंदीके 'र' और फ़ारसी या उर्दूके 'रे' से उच्चारणमें मिलता है।

आर आना (हिं० क्रि०) लज्जा लगना, शर्माना।

आरक (सं०) आर देखो।

आरकात् (वै० अव्य०) अतिदूर, अलग।

आरकूट (सं० पु०-स्त्री०) आरस्य पित्तलस्य कूट इव।

१ पित्तलाभरण, पीतलका गहना। आरमयः कूटोऽस्य।

२ पित्तल, बिरञ्ज। 'रीतिस्त्रियामारकूटो। न स्त्रियां।' (अमर २।२।९०)

आरक्त (सं० पु०) आ-ईषत् रक्तः, प्रादिसमासः।

१ ईषद् रक्तवर्णं, मायल ब-सुखी, लालसा रङ्ग।

(त्रि०) २ सम्यक् रक्त, अहमर, खूब लाल। ३ ईषद् रक्त, सुख सा। ४ सम्यक् अनुरक्त, खूब रंगा हुआ।

(स्त्री०) भावे क्त। ५ अनुराग, रङ्ग। ६ रक्तचन्दन।

आरक्तपुष्पी (सं० स्त्री०) बभ्रुजीवकवृक्ष, दो पह-

रियाका पेड़।

आरक्ष (सं० पु०) आ सम्यक् रक्षति, आ-रक्ष-अच्।

१ हस्तीके मस्तकस्थ कुम्भका अधःस्थल, हाथीकी

पेशानीके शिगाफ़का जोड़। २ हस्तीके मस्तकका चर्म,

हाथीकी पेशानीका चमड़ा। ३ सन्धि, वस्त्र, जोड़।

भावे घञ्। ४ रक्षोक्रिया, हिफाजत। 'आरक्षो रक्षके

हस्तिकुम्भाधय। अणेः।' (हेम ३।७२८) (त्रि०) आ सम्यक्

रक्ष्यते, आ-रक्ष कर्मणि घञ्। ५ रक्षणीय, हिफाजत

क्रिये जाने काबिल।

'आरक्षी रक्षणीये स्वाच्छीर्षमर्मणि दन्तिनाम्।' (विश्व)

आरक्षक (सं० त्रि०) १ रक्षा करनेवाला, जो हिफा-

जत रखता हो। (पु०) २ रक्षी, सुहाफ़िज, चौकीदार।

आरक्षा (सं० स्त्री०) आ-रक्ष भावे आ-टाप्। सम्यक्

रक्षा, हिफाजत।

आरक्षिक (सं० पु०) १ प्रहरी, सुहाफ़िज, चौकी-

दार। २ दण्डाधिकारी, पुलिसका हाकिम।

आरक्ष्य (सं० त्रि०) रक्षा क्रिये जाने योग्य, जो

हिफाजत रखे जानेके काबिल हो।

आरग्वध (सं० पु०) आ रगे शङ्काया कृप्, आरग-

रोगभयं हन्ति, आरग् हन्-अच् वधादेशश्च। १ राज-

वृक्ष, अमलतास। अमलतास देखो। २ सुवर्णालुपत्र।

३ सुवर्णालुफल। ४ अरग्वध पत्र। ५ अरग्वध फल।

आरग्वधपञ्चक (सं० स्त्री०) कषायविशेष, एक जौ

शांदा। आरग्वध, तिक्तकरोहिणी, हरीतकी, पिप्पलि-

मूल और मुस्तक पांच द्रव्य डालनेसे यह बनता और

वातकफज्वरमें लाभदायक होता है। (अतिर्विहिता २।२ अ०)

आरग्वधादि (सं० पु०) गण विशेष, अमलतास

वगैरह चीजोंका जखीरा। इसमें आरग्वध, इन्द्रियव,

पाटल, काक, तिक्ता, निम्बा, अमृता, मधुरसा, सुव,

वृक्ष, पाठा, भूनिम्ब, सैयंक, पटोल, करञ्जयुग्म, सप्त-

च्छद, अग्निमुषवीफल और वाणघोष्ठा द्रव्य पड़ता

है। यह छर्दि, कुष्ठ, विषमज्वर, कफ, कण्डू,

प्रमेह एवं दुष्टव्रणको दूर करता और विशेषतः बलासघ्न

होता है। (वाग्भट सूत्रस्थान १५ अ०)

आरग्वधाद्यतैल (सं० स्त्री०) १ योनिव्यापत्के अधि-

कारका तैल। चार शरावक सर्षप तैल, ४ शरावक

गर्दभमूत्र, ४ शरावक आरग्वध-मूल-त्वक्, १ पल

शङ्खचूर्ण और २ पल हरिताल एकत्र पकानेसे यह

बनता है। (चक्रपाणि-दत्तकृतसंग्रह) २ कुष्ठरोगका तैल।

आरग्वधत्वक्, वटत्वक्, कुष्ठ, हरिताल, मनःशिला,

हरिद्रा और दारुहरिद्राके मिलित पादिक-कल्कसे

४ सेर तैलको पकानेपर यह तैयार होता है।

(मेघनगरवावली)

आरङ्ग (अरङ्ग)—मध्यप्रदेशके रायपुर जिलेका एक

नगर। यह महानदीके तीरे अवस्थित है। सत्नामी,

कबीरपन्थी, हिन्दू, मुसलमान और असभ्य जातिके

लोग रहते हैं। पूर्वकाल इस नगरमें हैहयवंशी

राजपूतोंका राजत्व था। आजकल उनके बनवाये

आम्रवृक्ष-वेष्टित बड़े बड़े भवन, मन्दिर और तड़ाग

भग्नावस्थामें पड़े हैं। धातु-निर्मित पात्रादिका व्यव-

साय चलता है।

आरङ्गर (वै० पु०) मधुकर, नहल।

आरचित (सं० त्रि०) विन्यसित, मुरत्तब, सजा या

संवारा हुआ।

आरज (हिं०) आर देखो।

आरजा, आरिजा देखो।

आरजू (फा० स्त्री०) १ आकाङ्क्षा, चाह। २ पूजा, अरदास। ३ प्रत्याशा, उम्मीद। ४ अनुराग, प्यार।

आरजू करना (हिं० क्ति०) १ आकाङ्क्षा लगाना, चाहना। २ अधिक अभिलाष रखना, ललचाना। ३ प्रयोजन देखाना, मांगना। ४ प्रार्थना सुनाना, दरखास्त देना।

आरजू कराना (हिं० क्ति०) अधिक अभ्यर्थना चाहना, ज्यादा मिन्नतका खाद्दिशमन्द होना।
“बोझ देना, बहुत आर-जू कराना।” (लोकोक्ति)

आरजूमन्द (फा० वि०) १ निर्बन्धशील, सुतकाजी, लागू। २ वाञ्छी, मुशताक, चाह।

आरट (सं० त्रि०) आ सम्यक् रटति शब्दायते, आ-रट-अच्। १ सम्यक् शब्दकर्ता, अच्छीतरह आवाज लगानेवाला। (पु०) २ नट, बाजीगर। ३ मांस, गोश्त।
आरटो (सं० स्त्री०) गौरादित्वात् ङीष्। १ नटी, बाजीगरनी। २ शब्दकर्त्री, आवाज लगानेवाली।

आरट (सं० पु०) आ-रट्-टच्। १ ययाति-वंशीय सेतुपुत्र। इनके लड़कीका नाम गान्धार था। (सत्यपुराण) २ जनपद-विशेष, पञ्जाबसे आगीका देश। महाभारतमें लिखा है,—

“पद्मनयी वहन्नेता यव पीलुवनान्त।

शतद्रुव विपाशा च हवीथिरावती तथा॥

चन्द्रभागा वितस्ता च सिन्धुः पठा वहिर्गिरिः।

आरटो नाम ते देशा नटधर्मा न तान् व्रजेत्॥” (कर्णपर्व ४५ अ०)

अर्थात्—हिमालयसे बाहर जिस स्थानमें पीलुवन देखायी देता और शतद्रु, विपाशा, इरावती, चन्द्रभागा एवं वितस्ता नदीका प्रवाह पड़ता, वह आरट देश बहुत धर्महीन ठहरता है। वहां जाना उचित नहीं। आरट देशका आचार-व्यवहार बहुत जघन्य है। लोग मृगस्य पात्रमें उष्ट्र, गर्दभ एवं भेषका दुग्ध और तज्जान दधि प्रभृति खाते हैं। अन्यग्रहणमें किसी प्रकारका विचार नहीं रखते। पहले आरटदेशीय दस्युगणने चोरीसे किसी पतिव्रता रमणीका सतीत्व बिगाड़ डाला था। इसपर उसने अभिशप दिया,—
‘तुमने अधर्माचरणपूर्वक मेरा सतीत्व बिगाड़ा है। अच्छा! तुम्हारी कुलकामनी भी व्यभिचारिणी बन

जायेगी। फिर तुम कभी इस घोरतर पापसे न छूटोगे। इसीसे पुत्रके बदले भागिनेय धनाधिकारी होता है। इस देशके लोगोंको वाहीक कहते हैं। वह प्रायः सकल ही तस्कर, कामुक एवं मद्यपायी होते, पर-वस्तुके उपभोगको अपना धर्म समझते और संस्कार-हीन रहते हैं। स्त्रियां मनःशिला-जैसा उज्ज्वल अपाङ्ग देश रखती, ललाट, कपोल एवं चिकुरमें अञ्जन लगाती और गर्दभ, उष्ट्र तथा अश्वके शब्दतुल्य मृदङ्गादि उठा केलि-प्रसङ्ग करती हैं। सभी गुड़की सुरा पीती और कम्बलाजिन पहनती हैं। वह मद्य-पानसे निर्लज्ज बन और नग्न हो नगरके बाहर जा अपर पुरुषकी कामना करती हैं। (कर्णपर्व ४५—४६ अ०)

यनान ग्रीसके प्राचीन भूगोलवेत्ताओंने इस देशका नाम आड्रेष्टि (Adraistae), सुद्रकि (Sudrakæ) और आरेष्टी (Arestæ) लिखा है। वाहीकोंके समय तक्षशिला नगरमें राजधानी प्रतिष्ठित थी। वाहीक देखो।
आरटज (सं० त्रि०) आरट्देशे जायते, आरट्-जन-ड। १ आरट् देशोद्भव, आरट् मुल्लमें पैदा होनेवाला। (पु०) २ आरट्देशवासी, आरट्का वाशिन्दा। ३ आरट् देशीय घोटक, टट्ट।

आरड़ा—बङ्गालदेशान्तर्गत मेदिनीपुर जिलेका एक ब्राह्मणप्रधान स्थान। यहां बांजुड़ारायके समय कविकङ्कणने अपना चख्खी बनायी थी।

आरण (वै० स्त्री०) आड् पूर्वार्दन्त्ये ट्। १ गाम्भीर्य, उमक, गहरायी। २ अन्धकूपादि, अन्धा कूवां वगैरह।

“अनकं जसमानमारणे।” ऋक् १।११।६।

‘आरणमन्धकूपादि तत्रासुरैः।’ (सायण)

आरणज (सं० पु०) देवविशेष, एक देवता। यह कल्पभवका भाग पूरा करते हैं।

आरणाल (सं० स्त्री०) काञ्चिक, कांजी। निरुषी-कृत आम गोधूमसे बननेवाला काञ्चिक आरणाल कहाता है। (परिभाषाप्रदीप ३५ खण्ड)

आरणालक, आरणाल देखो।

आरणि (सं० पु०) आ-रट्-अनि। अतिच्छद्व्यवस्थितभो-
जिनः। उष् २।१०३। आवर्त, जलका घूर्णन, गिर्दाब, भंवर,
पानीका चक्कर।

आरण्य (सं० पु०) अरण्यां भवः, अरणी-ठक।
१ शुकदेव। अरणीसुत देखो। (स्त्री०) अरणिमरणि-
हरणमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। २ महाभारतके वन-
पर्वमें अरणिहरण-अधिकारपर व्यासकृत अवांतर
पर्व विशेष। वनपर्वमें ३११से ३१४ अध्याय पर्यन्त
आरण्यपर्व वर्णित है। (त्रि०) ३ अरणि-सम्बन्धीय।
अरणि देखो।

आरण्यपर्व (सं० स्त्री०) आरण्य देखो।

आरण्यपर्वन् (सं० स्त्री०) आरण्य देखो।

आरण्य (सं० त्रि०) अरण्ये भवः, ण। १ वनजात,
सहरायी, जङ्गली। (पु०) २ वनजात पशु प्रभृति,
जङ्गली जानवर। पैठीनसिने वनज पशु सात प्रकारके
कहे हैं,—महिष, वानर, भल्लूक, सर्प, रुरु, पृषत
और मृग। ३ अकृष्टपच्य धान्यविशेष, जङ्गली धान।
इसका पर्याय ढण-धान्य वा नीवार है। ४ ज्योतिषोक्त
मकर राशिसे प्रथम अर्ध-दिवसीय सिंहराशि। ५ मेष-
राशि। ६ वृषराशि। ७ अरण्यजात गोमय। अरण्यं
अरण्यवासमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः। ८ युधिष्ठिरादिके
वनवास अधिकारपर व्यासकृत भारतान्तर्गत पर्व-
विशेष। प्रायः इसे वनपर्व कहते हैं। ९ रामके
वनवास अधिकारपर वाल्मीकि-कृत आरण्यकाण्ड।

आरण्यक (सं० त्रि०) अरण्ये भवः, वुञ्। अरण्यान्तर्गते।
पा ४।१।२८। १ वनजात, सहरायी, जङ्गली। २ अरण्य
गीय, जङ्गलमें गाने लायक। (स्त्री०) ३ वेदका
अंश विशेष। संसार छोड़ अरण्यमें जा अभ्यास
करनेसे वेदके इस अंशको आरण्यक कहते हैं। वेदके
प्रत्येक ब्राह्मणका स्वतन्त्र आरण्यक रहता है। ऐत-
रेयका ऐतरेय, तैत्तिरीयका तैत्तिरीय, शतपथका शतपथ
और कौषीतकी-ब्राह्मणका कौषीतकी आरण्यक है।
यह उपनिषत्का मूल होता है। उपनिषत्में जो
ब्रह्मतत्त्व विशेष रूपसे कहते, आरण्यकमें उसका मूल-
सूत्र देखते हैं। समस्त विषय खोलकर लिखते—
वानप्रस्थ लेनेसे मानव किस प्रकार आचार-सम्पन्न
होते, कौन पथ पकड़नेसे ब्रह्मज्ञान लाभ करते और
कैसे ब्रह्मको पहचानते हैं। वेदकी संहिता शेष
करने पर आरण्यक पढ़ना पड़ता है।

“वेदस्वाधीत्य वाच्यन्तमारण्यकमधीत्य च।” (मनु ४।१२४)

योगाभिलाषी पुरुषको योगशास्त्र और आरण्यक
अध्ययन करना चाहिये,—

“जेयं चारण्यकमहं यदादित्यादवाप्तवान्।

योगशास्त्रं च मत्प्रोक्तं जेयं योगमसौसृता ॥” (याज्ञवल्क्य)

४ भारतान्तर्गत वनपर्व। ५ रामायणके अन्तर्गत
आरण्यकाण्ड।

आरण्यकाण्ड (सं० स्त्री०) १ रामायणका ३५ काण्ड।

२ शतपथब्राह्मणका १४४ भाग।

आरण्यकुक्कुट (सं० पु०) अरण्ये भवः आरण्यवासी
कुक्कुटश्चेति, कर्मधा०। वनकुक्कुट, जङ्गली सुर्गा।
मांस स्निग्ध, पुष्टिकर, श्लेष्मवर्धक, गुरु और वात, पित्त,
क्षय, वमि एवं विषम ज्वरको मिटानेवाला है।
(स्त्री०) जातित्वात् ङीप्। आरण्यकुक्कुटी।

आरण्यगान (सं० स्त्री०) आरण्यं वनगीयं गानम्, शाक०
तत्। सामवेदात्मक गानग्रन्थ विशेष। सामगान
चार प्रकारका होता है,—गीय, आरण्य, जह और
उह्य। छन्दोगब्रह्मचारियोंको कयी वत्सर यह गान
सीखना और भिन्न भिन्न अवस्थामें रहना पड़ता था।
अरण्यमें ठहर एक वत्सरके मध्य वह आरण्यगान
अभ्यास करते रहे। इसीसे आरण्यगान नाम हुआ है।

यह प्रथम तीन पर्वमें विभक्त है,—अर्क, इन्द्र और
व्रतपर्व। अर्कमें दो, इन्द्रमें एक और व्रतपर्वमें तीन
प्रपाठक पड़ता है। सब मिलाकर आरण्यगानमें
छः प्रपाठक हैं। प्रत्येक प्रपाठक दो भागमें विभक्त
है। एक-एक भागमें १०से ३४ पर्यन्त गान होते हैं।
अन्यान्य गानकी तरह आरण्यगान भी ऋक्ष लक है।
किन्तु कयी गानका न तो ऋक्षलक्ष मिलता और न
सायणाचार्यकी व्याख्याका ही ठिकाना लगता है।
कोई-कोई आरण्यगानको गीयगानका अन्त्यभाग सम-
झता, किन्तु यह विषय सम्प्रदायसिद्ध नहीं है।

आरण्यकसंहिता (सं० स्त्री०) छन्द आर्चिकका षष्ठ-
प्रपाठक। इसे अरण्यमें पढ़ना पड़ता है।

आरण्यकार्चिक (सं० स्त्री०) आरण्यसंहिता देखो।

आरण्यगोमय (सं० पु०) वन्य गोमय, जङ्गली गोबर,

आरण्यपर्व, आरण्य देखो।

आरण्यपर्वन्, आरण्य देखो।

आरण्यःशु (सं० पु०) कर्मधा०। कृत्युक्त महिषादि
सप्तप्रकार पशु। आरणा शब्दमें विहित देखो।

आरण्यमक्षिका (सं० स्त्री०) टंयक, मच्छर, डांस।

आरण्यमुह (सं० पु०) वनमुह, जङ्गली मूग।

आरण्यमुहा (सं० स्त्री०) आरण्यमुहस्येवाकारे
पर्योऽस्त्वस्याः, अर्थ आदित्वात् अच्-टाप्। मुहपर्यो,
मुगानी।

आरण्यराशि (सं० पु०) निपातनात् कर्मधा०।

१ प्रथमार्ध दिवसीय सिंह लग्न। २ प्रथमार्ध दिवसीय
मकर लग्न। ३ मेषराशि। ४ वृषराशि।

आरण्यविम्बिका (सं० स्त्री०) तुण्डिका, तरीयो।

आरण्योपचमन (सं० स्त्री०) वनकरीषमन, जङ्गली
गोबरकी स्नान।

आरत (सं० त्रि०) शान्त, बेहरकत, सीधा। (हिं०)
भर्त देखो।

आरति (सं० स्त्री०) आरत्न-क्रिन्। १ उपरात,
निवृत्ति, सवङ्गु, ठहराव। २ नौराजन, आर-
त्निक, आरती। देवताकी प्रतिमाके समीप ब्राह्मण
पूजान्तमें बहु प्रकार आरति उतारते हैं। एकाङ्क
आरति ही अधिक रहती, जो पहले दीपमाला,
दूधरे वारिपूर्ण शङ्ख, तीसरे धौतवस्त्र, चौथे आत्म
अथवा विल्वादि पत्र और पाँचवें अर्घ्यपातले
होती है। किसी-किसी स्थलमें दीपमालाके बाद
अञ्जलित कपूर द्वारा भी आरति करते हैं। साधारणतः
एक व्रतिकाविशिष्ट रहनेसे आरति उतार-
नेकी दीपमालाको पञ्चप्रदीप कहते हैं। कभी-
कभी एक, सात या उससे भी अधिक शिखाविशिष्ट
अदीपसे आरति होती है। घृत, कपूर, अशुक्-चन्दन
अर्घ्य उन्नत उन्नत द्रव्य द्वारा ही दीपकी व्रतिका
बनाना प्रशस्त है। तैलसे आरति करना निज्जट समझा
जाता है। आरति उतारते समय प्रतिमाके पदतलपर
चार, नाभिदेशपर दो, मुखमण्डलपर एक और समस्त
शङ्खपर सात बार दीपमाला घुमाना पड़ती है।
घण्टा, शङ्ख और वाद्यादि हलाने तक है।

साधारणके मनमें अभिनव उत्साह और भक्तिभावका
आविर्भाव होनेपर अनिर्वचनीय आनन्द आता है।

पहले हिन्दुस्थानमें पत्नी प्रतिदिन पतिकी आरती
करती थी। आजकल केवल विवाहमें वरकी आरती
उतारते हैं। कहीं-कहीं पूजादिमें आचार्यकी भी
आरती होती है। ३ आरति उतारनेका पात्र।
४ आरतिका स्तोत्र।

आरती (हिं०) आरति देखो।

आरय (सं० पु०) ईषद्रयः, प्रादि० समा०। एक
अश्वद्वारा गमन-साधन रथ, एका।

आरय (सं० त्रि०) आरय-ज्ञ। १ संसिद्ध, दुस्त।
(पु०) तिकादित्वात् फिज्। २ सेतुपुत्र। (ब्रह्मपुत्रः)
मत्स्यपुराणमें आरय और विश्वपुराणमें इनका
नाम आरयत् लिखा है। आरय देखो।

आरदायति (सं० पु०-स्त्री०) आरयका पुत्र वा कन्या-
रूप अपत्य।

आरन (हिं०) आरण्य देखो।

आरनाल (सं० स्त्री०) आर्हन्ति आ-कृ-अच् आर,
नल गन्ते षच् नालः; आरं दूरगामी नालो गन्ता
यस्व, बहुव्री०। काञ्चित्, कांजी। कांजी देखो।

आरनालक (सं० स्त्री०) आरनाल स्थाने कन्। काञ्चित्,
कांजी। 'आरनालकसौवीरकुमारानि युयानि च।

अयनिकोलयन्तककुञ्जानि च काञ्चिके।' (भारत)

आरपार (हिं०-क्रि०-वि०) तीरान्तर, पार, वारपार-
इस कितारेसे उस कितारे तक। यह शब्द संस्कृतके
'पार'में तदनुयायी 'आर' लिखानेसे बना है।

आरपार करना (हिं० क्रि०) देखना, साबना।

आरबल (हिं०) आरुष्य देखो।

आरव्य (सं० त्रि०) आरभ-ज्ञ। १ कृतारक्षण,
प्रस्तावित, शुरू किया हुआ। (स्त्री०) भावे ज्ञ।
२ आरव्य, इष्टिदा, उठान।

"अथयजुर्विद्याहेतु आर्ह होमेऽर्चने अये।

आरव्ये एतयो नसादनारव्ये शु सतकम्।" (विथितसप्तम विष्णु)

'आरव्य परिसमाप्तिक्रियावाली वर्तमानः।' (दुर्गा)

आरव्यकर्म (सं० स्त्री०) न्यायसतमें—१ कर्मसामग्री
सम्पादन। जिन जिन वस्तुओंसे कार्य सम्पादन होता,

उनका संग्रह करना आरब्धकर्म कहाता है। जैसे घटादि प्रस्तुत करनेको दण्ड, चक्र (चाक) प्रभृति सामग्रीका एकत्र किया जाना और ग्रन्थस्थलमें मङ्गलाचरण लगाना। वेदान्ती, फल देनेके लिये सम्युखीन पुण्यपापान्यतरात्मक अष्टष्ट विशेष समझते हैं।

आरब्धि (सं० स्त्री०) आरम्भ, इवृत्तिदा, शुरु।

आरभट (सं० पु०) शूर, वीर, दिलावर शरूस, बहादुर आदमी। २ शौर्य, बहादुरी।

आरभटी (सं० स्त्री०) आरम्भते ऽनया, आ-रभ-अटि-डोपू। १ अर्थविशेषयुक्त नाट्यरचना, अखाड़ेमें अजीब और मुहीब कौपियतका इज्जहार। माया, इन्द्रजाल, युद्ध, क्रोध, उद्विग्नान्ति, वध, बन्धन, नानाप्रकार छलना, प्रवचन, दम्भ, मिथ्यावाक्य आदिसे युक्त वृत्तिको आरभटी कहते हैं। परित्याग, अधःपतन, वस्तु उत्थापन और सम्फोट चार अङ्ग हैं। २ सरस्वतीकण्ठाभरणोक्त शब्दालङ्काररूप वृत्तिविशेष। ३ धृष्टता, दिलावरी।

आरभमाण (सं० त्रि०) आरम्भ करनेवाला, जो पूरे उतारनेकी इरादेसे शुरु करता हो।

आरभ्य (सं० त्रि०) आरम्भते, आ-रभ कर्मणि क्यप्। १ आरम्भणाहं, शुरु होने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आरम्भ करके, उठाकर।

“आरभ्य कुतपे आहं कुर्यादारीर्षिर्षं वुधः।” (अ० ति)

बौद्ध इस शब्दका अर्थ ‘सम्बन्धीय’ लगाते हैं। आरभ्यमाण (सं० त्रि०) आरम्भ होनेवाला, जो शुरु किया जाता हो।

आरमण (सं० स्त्री०) आ-रम भावे लुगट्। १ आराम, विश्राम, अमन, इतमीनान्। आरम्भतेऽनेन, करणे लुगट्। २ आरति-साधन, आरामगाह। ३ आल्हाद-ग्रहण, अखुज्-खुरमी।

आरमेनिया—काकेशस पर्वत और कण्ठासागरका उत्तर-वर्ती एक देश। यह अक्षा० ३७° ३०' से ४१° ३०' उ० और द्राधि० ३७° से ४८° पूर्व तक विस्तृत है। आरमे-नियामें ईरान्, रूस और तुर्कस्थानका अधिकार है।

भूगोलको देखते आरमेनिया ईरान्की बड़ी अधित्यकासे पश्चिम एकखण्ड है। अनादित पर्वत-

श्रेणी उत्तर-पूर्वसे दक्षिण-पश्चिमकी दौड़ी और आरा-रातमें धरातलसे १७००० फीट ऊपर चढ़ी है। शैलमालाके बीच दीर्घ एवं उन्नत दरी पड़ती, जिसमें निम्न भूमिको जल ले जानेवाले विषम गिरिकन्दर मिलनेसे पहली नदी बहती है। आरमेनिया कहीं आर्कैयिक और कहीं पालेओजोयिक शिलात्मक है। दक्षिणकी ओर वान-ऊदको बढ़नेवाले आग्नेय-गिरिके भड़कनेसे शिला विच्छिन्न हो गयी है। अराससे उत्तर अलगेउज-दाघ और अरजरूमसे दक्षिण विङ्गूल-दाघ बहुत उच्च पर्वत है। यूफ्रेतिस, तिग्रिस, अरास, उरुकस और कैलकिट-इर्माक नदी प्रधान है। वान ५१०० और उरमिया ४००० फीट दीर्घ चार ऊद है। सेवान (५८७० फीट) तथा चलदौर ऊद क्रमशः अरास एवं कार्सचाई नदीमें गिरता है। अधित्यकाका आकार निर्जन और एकरूप देख पड़ता है। दरीमें प्रशस्त क्षपियोग्य भूमि विद्यमान है। पर्वतपर दृष्ट तो बहुत है, किन्तु वृक्षका नाम नहीं। यफ्रेतिस और तिग्रिसका गिरिकन्दर वन्यता तथा श्रेष्ठतामें अद्वितीय है। जलवायुमें भेद रहता है। उच्च स्थानमें हेमन्त-काल दीर्घ लगता, अधिक शीत पड़ता और शीघ्र अल्प, शुष्क एवं उष्ण ठहरता है। अरजरूममें कभी-कभी जून मास बर्फ गिरता है। अरास दरी और पश्चिम तथा दक्षिण प्रान्तका जलवायु अधिक संयत है। अधिकांश नगर ४००० से ६००० फीट ऊँचे बसा है। साधारणतः गिरिनितम्बपर ग्राम बसाते और शीतातपकी तीव्रतासे बचनेके लिये पर्वतगात्र कुछ कुछ खोदकर भवन बनाते हैं। अधिकांश प्राचीन नगर अरक्सेसके निकट प्रतिष्ठित थे। आरमेनिया खनिज द्रव्यसे सम्पन्न है। अनेक उष्ण एवं शीतल निर्भर विद्यमान है। स्थानानुसार उद्भिदमें परिवर्तन पड़ता है। धान्य तथा कठिन फल उच्च भूमि-पर उपजता और अरक्सेसकी उष्ण एवं जलसिक्त उपत्यकामें चावल बोया जाता है। शीतमें उष्णताका अधिक प्रावल्य रहनेसे अङ्गूर बहुत ऊँचे पर्वतपर जगता और कार्पास तथा दक्षिणके अन्य फलका वृक्ष अधिक गर्मीर दरीमें लगता है। कुर्द-समुदायका

पालन करनेवाले गोप्रचरमें प्राचीन सुप्रसिद्ध चोटक और अश्वतर चराया जाता था। नदीमें घंटो और वान ज़रमें एक किसकी छोटी मछली मिलती है। इस देशमें आश्चर्यभूत कृत्रिमरचनाका आधिक्य है। आरारातके दृश्यकी प्रशंसा कोरेनेके मूसा और फाबके लाजिरस-जैसे स्वदेशानुरागी ऐतिहासिकने बहुत लिखी है।

आरमेनियामें ग्रीगोरीय, रोमनकाथोलिक, प्रोटे-स्टाण्ट अरमनी, अन्य ईसायी, यज़्दी, जिप्सी और मुसलमान लोग रहते हैं। अरज़रूम, वान, बिटलिस, खरपुट, दयारबकर, सिवास, अलेपो, अदान और द्रेविजाण्ड नामक सात तुर्की विलायतमें प्रायः ६००००० मनुष्योंका निवास है। पृथिवीपर कुल २८००००० अरमनियोंका होना अनुमान किया जाता है। किन्तु वर्तमान युरोपीय युद्ध बढ़नेपर तुर्कीने अपनी विलायतके कितने ही अरमनी मार डाले हैं।

इतिहास—विषम पर्वतमें कठोर पार्वत्यजाति रहती है, जो किसीकी अधीनता स्वीकार नहीं करती। आक्रमण होते समय निम्नभूमिके रहनेवाले पर्वतों-पर भाग जाते थे। यह देश पश्चिम और पूर्वके बीच उद्घाटित द्वारमार्ग सदृश विद्यमान है। बहुत प्राचीन समयसे ईरानी अधित्यकाको एशिया-मायिनरके उर्वर स्थान तथा रक्षित पोताश्रयसे मिलानेवाला मार्ग अधिकार करनेके लिये लोग लड़ते-भगड़ते आये हैं।

आरमेनियाके आदिम अधिवासी अज्ञात हैं। किन्तु ई०के ८वें शताब्द मध्य यहाँ वह लोग बसते, जो सामान्य रूपसे अनार्य भाषा बोलते थे। इन पूर्व अरमनियोंमें असीरीय और यज़्दी जातिके कुछ सेमेटिक आ मिले। ६४० और ६०० ई०के पहले आर्योंने आरमेनियाको अधिकार किया था। उन्होंने अपनी भाषाका प्रचार बढ़ाया। ईरान और पारथियाके लोग फौजमें भरती किये जाते थे। राज-नैतिक दृष्टिसे जीता और विजिता मिलकर एक हो गये। किन्तु नगरके अतिरिक्त अन्य स्थानमें विवाह-सम्बन्ध चला न था। अरबों और सैलजुकोंके आक्रमण

करने बाद कुखुनतुनिये तथा सिलसियेमें अनेक आर्य एवं सेमेटिक अरमनी जा बसे। मुगलों और तातारियोंने अभिजात राज्य बिगाड़ डाला था। इसीसे समझा जा सकता, वर्तमान अरमनियोंके आकार प्रकार और आचार-व्यवहारमें क्यों विभेद पड़ता है। टारस पर्वतके निम्नतस्थानवासी क्षत्रक दीर्घकार्य एवं सुन्दर निकलते, यद्यपि किञ्चित् तीक्ष्ण वदनाकृति-युक्त, चपल और वलिष्ठ लगते हैं। आरमेनिया और एशिया-मायिनरके लोग मांसल, संघत एवं स्थूल आकृतिविशिष्ट हैं। केश सरल एवं कृष्णवर्ण और घ्राण विशाल तथा वक्र रहता है। वह भूमि-कर्षण भली भाँति करते, किन्तु निर्धन, मूढ़, अनभिज्ञ एवं निरुत्साह होते और ई०से ८०० वर्ष पहलेके अपने पूर्व-पुरुषोंकी तरह आधी-सुरङ्गके घरमें बसते हैं। नगरवासियोंकी आकृति ईरानी आदर्श-जैसी देख पड़ती है। वह शिल्प, धनागारपतित्व तथा व्यसय करते और अपने अम, सूक्ष्मज्ञान, कार्य एवं धीर चित्तके लिये बड़ी योग्यता रखते हैं। रोमक समयमें स्कीदिया, चीन और भारतके साथ उनके पूर्व-पुरुष भली भाँति व्यापार चलाते थे। उत्तम श्रेणीके पुरुष सम्यक् परिष्कृत, शिक्षित तथा तुर्कस्थान, रूस, ईरान और मिश्रमें उच्च पदपर प्रतिष्ठित हैं। मूलतः अरमनी पूर्वके लोग होते और यज़्दियोंकी तरह जिस दशमें पड़ जाते, उसीके अनुसार अपना कार्य चला लेते हैं। वह मितव्ययी, गम्भीर, उद्यमशील और मेधावी हैं। आचरणकी दृढ़तासे उन्होंने कठिनसे कठिन परीक्षामें अपने धर्म और स्वदेशाभिमानको बचाया है। प्राचीन रीति-नीतिके पूरे पक्षपाती होते भी उन्नति करनेका अभिलाष रखते हैं। किन्तु उन्हें लाभके लिये बड़ी लिप्सा रहती है। तुच्छ विषयपर विवाद बढ़ाते, स्वार्थपर और अस्थिरचित्त होते हैं। अति-श्रयोक्ति और कूटप्रबन्धकी प्रवृत्तिसे अरमनियोंके इतिहासपर अभद्र प्रभाव पड़ा है। धार्मिक संधांसे उनमें गभीर पार्थक्य आ गया है। अनियत दम्भ, और बुद्धिचापल्य जातीय उन्नतिमें बाधा डाल रहा है। निर्दय शासनके अधीन बहुत दिन रहनेसे लोगोंमें

निःसन्देह साहस, स्वावलम्बन, सत्य और आर्जवका अभाव बढ़ा है।

आरमेनियाका आदि इतिहास काल्पनिक और बियायिनीय नृपतियोंके पारम्पर्यपर आश्रित है। असीरीय और बाबिलोनीय सम्राटोंने जिन यद्दियोंको कैद कर यहां बसाया था, उन्होंने ही अनेक वृत्तान्त बताया। सेमिरामिस और आरा नरेशकी कथा वेनस (Venus) तथा आदोनिस्की कल्पनासे मिलती है। टिघ्रेसका गुण बहुत गाया और उनके शत्रु लुकुल्लुस्का भी वैभव देखाया गया है। सम्भवतः बियायिनीय राज्यको कायचरेसने उखाड़ा था। उसके बाद ही आर्य और अरमनियोंके पूर्वपुरुष इस देशमें आबसे। किन्तु उनके फेलनेमें विलम्ब हुआ था। ई०से ४०१ वत्सर पूर्व जब दश हजार आर्य अधिव्यका पार कर ट्रेबिजाण्ड गये, तब उन्हें कहीं अरमनी न मिले। मेद और ईरानियोंने आरमेनियाको मण्डल-राज्य बनाया था। ई०से ३३१ वर्ष पहले अरवेलाका युद्ध समाप्त होनेपर अलेक्सन्दर और उनके उत्तराधिकारी, शासक नियुक्त कर इस देशका राज्य चलाते रहे। ई०से ३१७-२८४ वर्ष पहले अर्दवतेस्ने सेलौकीवंशकी अधीनतासे अपनेको छोड़ाया और ई०से १८० वत्सर पूर्व जब रोमकोंने अन्तिओकस्को हराया, तब बड़ी आरमेनिया तथा छोटी आरमेनियाके शासक अर्तक्स्यास् एवं जदुरिया-देस्ने रोमकी अनुमतिसे अपनेको स्वतन्त्र नृपति बनाया। ई०से ८४-५६ वर्ष पहले अर्तक्स्यास्ने अरक्सेसपर अर्तक्क्षता नगरको राजधानी किया और उनका सुप्रसिद्ध उत्तराधिकारी पञ्चम मिथ्रदातेसका जामाता तिग्रनेस हुआ। तिग्रनेसने उत्तर मेसोपोटेमियामें तिग्रनोसर्ता नामक नवीन राजधानी निनेवेह तथा बाबिलनके आदर्शपर प्रतिष्ठित कर यूनानी और दूसरे कैदी बसाये थे। अपने स्वसुरकी राज्य न सौंपनेसे तिग्रनेसको रोमके साथ लड़ना पड़ा। ई०से ६८ वर्ष पहले लुकुल्लुसने तिग्रनेसको तिग्रनोसर्ताके द्वारपर ही जीत लिया था। ई०से ६६ वर्ष पहले तिग्रनेसने अपना राज्य पोम्पेयी

सौंप दिया। पोम्पेयेने मिथ्रदातेसको फोसिसके पार खदेर भगाया था। उन्हें रोमके करद राज्यकी भांति आरमेनियापर शासन करनेकी आज्ञा मिली।

लुकुल्लुस और पोम्पेयेमें युद्ध होनेसे पार्थियाके साथ रोमका सम्बन्ध विरल पड़ गया था। रोमके अधीन रहते भी आरमेनिया भौगोलिक स्थिति, सामान्य भाषा, धर्म, विवाहव्यवहार और अस्त्रशस्त्र एवं परिच्छेदादिकी समतामें पार्थियासे पृथक् न रहा। फिर एशिया-मायिनरकी तरह रोमका प्रभाव भी इस देश-पर अधिक बढ़ा न था। बहुत दिनतक पूर्व और पश्चिमके नृपति अपना अधिकार जमानेको लड़े-भगड़े। ३८७ ई०को रोम और ईरानने आरमेनिया आपसमें बांट लिया था। रोमका विभाग शौघ्र ही दिवोसेसिस-पोण्टिकामें मिलाया गया। ईरानी हिस्सेपर ४२८ ई०तक एक अर्सेकिवंशीय नृपति करद राज्यकी तरह शासन चलाते रहे। पीछे सम्राट्के निर्वाचनानुसार ईरानी और अरमनी शिष्टजनोंको इस प्रान्तका अधिकार सौंपा गया। विभाग होनेसे पहले सेण्ट-ग्रिगोरीने तिरिदातसको ईसायी धर्मकी दीक्षा दी थी। उन्होंने ईसायी धर्मको राज्यका धर्म बनाया, जिसे कनस्तन्ताइनने आदर्शकी भांति व्यवहार किया। वंटवारेके बाद अरमनी वर्णमालाका आविष्कार हुआ था। ४१० ई०को बायिबिलका अनुवाद देशभाषामें बना। इससे अरमनी परस्पर मिल गये और यूनानियोंका धर्माधिकार रुकनेपर कुसुन्तुनियाका पौरोहित्य-सम्बन्धी आश्रय छोड़ बैठे। ४८१ ई०को पाट्रियार्कने चालसेदोनकी मन्त्रणासभाका आदेश बिलकुल सुना न था। निर्वाचित शासकोंके समय ईसायियोंपर अनेक अभियोग आया। वह बलपूर्वक मगो धर्म ग्रहण करनेपर बाध्य हुये थे। अराजकताका प्रभाव भी बहुत बढ़ा। असीरीयों पार्थियों, इरानियों, सीरीयों एवं यद्दियों और कहीं कहीं अर्सेकीवंशके अधीनस्थ शासकोंके वंशका अभ्युदय हुआ था। निर्वाचित शासकोंमें यद्ददी बग्यतिद और ईरानी मसेगोनीय रहे। ई०से १७१-१०८ ई०को ईरानी मसेगोनीयोंके प्रधान

वर्तान बैजन्तायिन्की सहायतासे स्वतन्त्र बन बैठे। ६३२ ई०को हेराक्लियसके विजयसे आरमेनिया फिर बैजन्तायिन्की हाथ पड़ गया था। किन्तु ६३६ ई०की अरबी आक्रमणके बाद जो युद्ध हुआ, उससे खलीफाओंको इस देशका अधिकार मिला। उन्होंने अरबी और अरमनी शासक नियुक्त किये थे। १म बग़तिद-अशोद नामक शासकको ८८५ ई० समय खलीफा मोतमिदने आरमेनियाके सिंहासनपर बैठाया। उन्होंने जो वंश प्रतिष्ठित किया, वह १०७८ ई०को २य कगीगके साथ समाप्त हो गया था। ८०८ ई०को खलीफा मोकतदिरने वानके शासक अर्जूनियन-कगीगको उसी प्रान्तका राजा बना दिया। वान और सिवास प्रान्तमें १०८० ई०तक उनके वंशजोंने राजत्व चलाया था। ८६२से १०८० ई०तक कार्स और जार्जियामें बग़तिदोंने अपना वंश बढ़ाया। उपरोक्त प्रान्तमें इस वंशके लोग १८०१ ई०तक राज्य करते रहे, पीछे रूसके पेर जमे। ८८४ से १०८५ ई०तक दियारबक्र एवं मिलासगेर्दके बीचका देश अरबों, बैजन्तायिनों तथा सेलजुकों और मिरवानीवंशके अधीन रहा। अरबोंका आक्रमण होनेसे कितने ही सभ्य अरमनी कुस्तुनियु भाग गये थे। वहां उन्होंने प्राचीन रोमकोंके साथ विवाह-व्यवहार बढ़ाया और सिपाही बन बहुतसा धन कमाया। अर्थात् वंशज अर्त-वासदेसने बलपूर्वक दो वर्षतक बैजन्तायिन सिंहासनको अपने अधिकारमें रखा था। आर्देज्जूरिय ५म लिवो और जोहन जिमीसेस् सम्राट् बने। मेमे-गोनीय मानुयेल और दूसरे लोग साम्राज्यके सर्वोत्तम सेनापति रहे। ८८१ और १०२१ ई०को २य बासिलने आरमेनियापर आक्रमण किया था। अन्तको वासपुरागान नृपति सेनकहेरिमने अपना राज्य सिवास और उसकी सीमाके साथ उन्हें सौंप दिया। वह कितने ही अरमनियोंके साथ फिर सिवासमें जाकर रहने लगे। बासिल आरमेनियामें बड़े बड़े दुर्ग बनाना और उनमें सेना रख पूर्व सीमाप्रदेशकी रक्षा करना चाहते थे। किन्तु उनके स्वतन्त्रतावादी

कारण यह बात हो न सकी। उन्होंने प्रान्त रक्षाको न देख नास्तिक लोगोंको धार्मिक बनानेपर ध्यान दिया था। अनी-नृपति कगिग २य कप्पादोकियाके बदले अपना राज्य छोड़नेपर बाध्य हुये। सेलजुकोंके आक्रमण और बैजन्तायिन सिपाहियोंके उपप्लावनसे लोक त्राहि त्राहि पुकारने लगे थे। सन् १०७१ ई०को आल्प-अर्सलान द्वारा ४थं रोमनसके हारने और पकड़े जाने बाद आरमेनिया सेलजुक साम्राज्यका एक अंग हो गया। किन्तु सन् ११५७ ई०को इस देशमें फिर अरबों, कुर्दों और सेलजुकोंके छोटे-छोटे राज्य प्रतिष्ठित हुये। अन्तको सन् १२३५ ई०के समय मुगलोंने आक्रमणकर सबको मार भगाया था।

सेलजुकोंके आनेसे तीन शताब्द बाद आरमेनियामें पशुचारणोपजीवी लोग घूमते रहे। उनका प्रधान उद्देश्य एशिया-माथिनरको जाते समय राहमें पशुवोंके लिये गोचरभूमि ढूँढ़ना था। किन्तु तैमूरने इस देशको बहुत नष्ट किया। क्षयक समभूमिसे भगाये और क्षेत्र मट्टीमें मिलाये गये थे। अनेक अरमनी पर्वतमें जा छिपे। उन्होंने मुसलमानी धर्म ग्रहण और कुर्दोंके साथ विवाह व्यवहार स्थापन किया था। कितनों हीने कुर्द सरदारोंको चौथ दे अपना प्राण बचाया और कितनों हीने कप्पादोकिया या सिलिशियामें जा घर बनाया। उस स्थानमें १०८० ई०को बग़तिड रूपेनने एक राज्य जमाया, जो छोटी आरमेनियाकी राजधानी कहाया था। तीन शताब्दतक इस राज्यमें उपद्रव होते रहा। चारो ओर मुसलमान बसते और ईसाइयोंकी धूमधामसे इटालीके साथ व्यापार करते देख जलते थे। १३७५ ई०को मिश्रने इसे अधिकार किया। क्योंकि गृहविवाद बढ़ा और लूसीगन नरेशोंका प्रजामें रोमन-चर्चकी प्रतिष्ठा करनेको दांत लगा था। सिलिशियाकी प्रशंसा सार्वजनिक गीतोंमें सुन पड़ती है। टारसपर्वतके जीटन प्रान्तमें अरमनियोंकी एक छोटी श्रेणी अपनी स्वतन्त्रता आज्ञातक अक्षुण्ण रख सकी है। तैमूरके मरनेपर आक तथा काराकुयुन-लीका आधिपत्य मिला और कोमल शासनके कारण

केथोलिकस्का अधिष्ठान १४४१ ई०को एच्मियाड-जिनमें फिर प्रतिष्ठित हुआ। पहले वह सेलजुक आक्रमणके समय सिवास और वहांसे छोटे आरमेनियामें उठ गया था।

१५१४ ई०को १म सलीमके ईरानी अभियानसे यह देश उस्मानी तुर्कोंके हाथ लगा। इदरिस नामक बिटलिसके कुदं ऐतिहासिकपर बन्दोवस्तुका भार पड़ा। उन्होंने देखा, कि कृषियोग्य स्थान प्रायः शून्य पड़ा और पर्वतमें स्वाधीन कुर्दों, अरब, तथा अरमनी दुर्गाधिपोंका परस्पर विग्रह बढ़ा था। रिक्त स्थानमें कुछ बसाये और आरमेनियाके छोटे-छोटे विभाग बनाये गये। समतलभूमिमें तुर्की अफसर और पर्वतपर स्थानीय नृपति शासन करते थे। इस नीतिसे देशकी अशान्ति मिटी, किन्तु कुर्दोंकी उन्नति अधिक हुई। १५३४ ई०के समय पश्चिमकी ओर अज़ोरातक कुदं फैल पड़े थे। १५७५ और १६०४ ई०को ईरानियोंने आक्रमण किया। शाह अब्बास कयी हजार अरमनी जुल्फेसे अपनी नवीन राजधानी इस्फ़हान ले गये थे। १६३८ ई०की सन्धिके अनुसार एरिवान प्रान्त ईरानको मिला। १८२८-२९ ई०को रूस और तुर्कस्थानमें युद्ध होने तथा आपा-चायीतक रूसी सीमा बढ़ आनेपर अनेक अरमनी तुर्की राज्य छोड़ रूसी प्रान्तमें जा बसे थे। १८७७-७८ ई०के युद्धमें भी कुछ लोगोंने वैसे ही काम किया। १८३४ ई०की कुर्दोंका स्वातन्त्र्य शिथिल पड़ा और १८४३ को वेदरखान् वे तथा १८८० को शेख् आबिदुल्लाका भड़काया बलवा अच्छी तरह दबाया गया था।

१४५३ ई०को २य मुहम्मदने कुस्तुनियानिया अधि-कार कर मुसलमान-भिन्न प्रजाको मुस्ला या प्रधान धर्मयाजकोंकी साधारण दीवानी, फौजदारी और धर्म-सम्बन्धीय यावतीय शासनकी पूर्ण चमता दी। इस नियमानुसार ब्रूसाके अरमनी मुस्लाको कुस्तुनियामें प्रधान आचार्यका और मन्त्रीका पद मिला। अरमनी अपना धर्म स्वतन्त्रतापूर्वक निर्वाह और सन्तानको धार्मिक शिक्षा दे सकते थे। किन्तु पादरीका प्रभाव घट गया। १८६२ ई०की नवीन व्यवस्था

बननेसे प्रधान धर्माचार्य तो अपने पदपर प्रतिष्ठित रहे, किन्तु उनके प्रकृत अधिकार १४० सभ्योंकी समितिके हाथ जा पड़े। यह लोग ग्रिगोरीय अरमनी कहते थे।

१३३५ ई०को छोटे आरमेनियाका पाश्चात्य शक्ति-योंके साथ सम्बन्ध बढ़नेपर एक अरमनी समाज बना, जिसने रोमक-चर्चका मत ग्रहण किया। १४३८ ई०को फोरिन्सकी मन्त्रि-सभामें इस समाजको 'संयुक्त अरमनी चर्च' उपाधि मिला था। किन्तु प्रधान धर्माचार्य प्रायः इस समाजके लोगोंपर अभियोग लगा बैठते थे। १८३० ई०को फ्रान्सके हस्तक्षेप करने-पर अरमनियाने स्वतन्त्र समाज बनाया और अपना धर्माचार्य नियुक्त कर लिया। इन्होंने शिक्षा और साहित्यमें बड़ी उन्नति की थी। कुस्तुनियानिया, अज़ोरा और स्मिरनामें अनेक रोमन-काथलिक अरमनी विद्यमान हैं।

१८३१ ई०को कुस्तुनियामें अमेरिकाकी धर्म-प्रचारक पादरियोंने प्रोटेस्टाण्ट प्रथाकी नींव डाली थी। किन्तु प्रधान धर्माचार्य और रूसने बड़ा विरोध किया। १८४६ ई०को प्रधान धर्माचार्यने प्रोटेस्टाण्ट धर्म माननेवाले अरमनियोंको जातिसे निकाल दिया था। इस कार्यसे उन्होंने अपना चर्च फ्रान्स और रूसके आपत्ति उठाते भी अलग बना लिया। धर्म-प्रचारक व्यक्तियोंने खरपुत, मार्सिवान और एण्टाबमें कालेज और स्कूल खोले थे। लोग सुन्दर साहित्य पढ़ने लगे। उन्नति और धार्मिक स्वतन्त्रता फूट पड़ी थी।

१८७६ ई०की अब्दुल हमीदके तुर्की सिंहासनारुढ़ होनेपर अरमनियोंकी दशा पहलेसे सुधर गयी। किन्तु १८७७-७८ ई०को युद्ध बन्द होनेपर अरमनी प्रश्न उठ खड़ा हुआ। सान्स्टेफ़ानोंकी सन्धिके अनुसार तुर्कस्थानने रूसको अरमनियोंका सुधार करने और कुर्दों तथा सरकेसीयोंका उपद्रव रोकनेका वचन दिया था। १८७८ ई०की १३वीं जुलाईको बरलिनके सन्धिपत्रानुसार भी रूस ही अरमनियोंका साधक रहा। १८७५ ई०की ४थी जूनको सुलतानने

अंगरेजोंका पोर्टके ईसायियों और दूसरे लोगोंकी रक्षा रखनेका वचन दिया था। अङ्गरेजोंने सुधार होनेसे पहले रुससे अधिकृत स्थान छोड़ देनेका कहा। १८८० ई०की यूरोपीय शक्तियोंने मिलजुलकर जो आवेदनपत्र पोर्टको भेजा, उसका कोई फल न हुआ। किन्तु अंगरेज सुलतानका ध्यान बरलिनके सन्धिपत्रकी और खींचते ही रहे।

१८०१ ई०में जर्जिया अधिकार करनेपर रुसको अरमनियोंकी चिन्ता लगी थी। १८२८-२९ ई०को अनेक अरमनी रुसी राज्यकी प्रजा बने। उसने अरमनियोंको अपने नये देशका उत्तम साधन समझ स्वधीनता दी थी। बहुतसे लोग सरकारी नौकरी पाने और काम-काज बढ़ानेसे धनी बन बैठे। किन्तु १८८१ ई०को २५ अलेक्सेन्दरका वध होनेपर रुस अरमनियोंसे बिगड़ पड़ा था। स्कूल बन्द किये गये। अरमनी भाषाका प्रभाव घटा। रुसने अपने चर्चमें उन्हें मिलाना चाहा। किन्तु रुसके अधीन खराब पानेकी आशा न रहनेसे अरमनियोंका ध्यान तुर्की आरमेनियाकी ओर खिंचा था। १८०० ई०को रुसने तुर्की आरमेनियामें रेलवे बनानेका अधिकार पाया।

बरलिनका सन्धिपत्र देख ग्रीगोरीय अरमनी हताश हुये थे। उन्हें अभिलाष रहा, कि ईसायियोंके अधीन आरमेनिया और सिलिशिया मिलकर स्वाधीन प्रान्त बन जाता। वह साम्राज्यमें इधर-उधर फैले थे। अधिक-संख्या कहीं न रही। दक्षिणके तुर्की बोलनेवाले उत्तरके अरमनी भाषा बरतनेवालोंसे कष्टपूर्वक सम्भाषण कर सकते और पूर्वके अन्न पर्वत-वासी कुसुन्तुनिया तथा स्मिरनाके सुशिक्षित नागरिकोंसे धर्म भिन्न विषयमें मिलते-जुलते न थे। किन्तु सुधार होते न देख यूरोपमें शिक्षा-पाये लोग विद्रोह बढ़ा अपना अभिप्राय सिद्ध करनेको उद्यत हुए। टिफलिस और अनेक यूरोपीय नगरमें राजद्रोहके पुस्तक तथा पत्र फैलानेकी गुप्त सभा (Huntchagist) बनी थी। तुर्की आरमेनियासे दूत अस्त्रशस्त्र और विदारणशील पदार्थ पहुँचाते रहे। अनेक युवकोंने प्रजासत्ता

सम्पादन करनेकी समिति बनायी थी। किन्तु पादरी और अमेरिकाके धर्मप्रचारक व्यक्ति उक्त कार्यको न तो उचित समझते और न उससे साफल्य होते देखते थे। अधिकांश लोग विद्रोहके विरोधी रहे। १८८३ ई०की पूर्वी जनवरीको अपने वैफल्यसे संतुष्ट हो दूतोंने भयप्रद पत्र लिखे और युजगात तथा मासि-वानके अमेरिकन कालेजकी भित्तिपर विद्रोह-त्मक घोषणापत्र लगाये। विद्रोही अमेरिकाके धर्म-प्रचारकोंको अपने दलमें मिलाना चाहते थे। और इस कार्यमें वह सफलमनोरथ भी हुये। अमेरिकनोंपर घोषणापत्र निकालनेका अभियोग उपस्थित हुआ था। दो अरमनी शिक्षक बन्दी बने। वालिका-विद्यालय जला डाला गया था। विद्रोह सरलतापूर्वक दबते भी कैसारिये और दूसरे स्थानमें भड़क उठा।

विद्रोही पुरातन डारोनको नवोन आरमेनियाका केन्द्र बनाना चाहते थे। किन्तु सुश और सासुनके धनी लोगोंने इस आन्दोलनको उत्साह न दिया। १८८३ ई०के ग्रीष्मकाल सुशके समीप एक दूत पकड़ा गया था। शासकने कुर्दे सवारोंको पार्वत्य प्रान्तपर आक्रमण करनेकी आज्ञा दी। किन्तु अरमनियोंने कुर्दोंको मार भगाया और १८८४ ई०को भी युद्ध होनेपर अपना स्थान न छोड़ा। इसके बाद शासकने सुशिक्षित सेनाको बुलाया और सुलतानने विद्रोह दबानेके लिये राजभक्त प्रजा एकत्र होनेका आदेश निकाला था। निर्दय भावसे अनेक लोगोंका वध होनेपर यूरोपमें हलचल पड़ गया। सुलतानने विद्रोहकी दशा जांचनेके लिये कितने ही व्यक्ति नियुक्त किये। १८८४-८५ ई०को अंगरेजोंने फान्स एवं रुसके सहारे अरजरूम, वान, बिटलिस, सिवास, खरपुत और दियारबकरमें प्रबन्ध करनेपर दबाव डाला था। किन्तु तुर्कीने एक न सुनी। सासुनमें हत्याकाण्ड करनेवालोंको उपहार और उपाधि मिला था। १८८५ ई०की ११वीं मईकी हटेन, फ्रान्स और रुसने मिलकर एक शोधन-व्यवस्था सुलतानके समक्ष रखी। सुलतानने उत्तर देनेमें

विलम्ब लगाया था। हटेन नियन्त्रणके पक्ष और फ्रान्स तथा रूस विपक्षमें रहा। अगस्त मास अंग-रेजीने फिर सन्धिक्रम चलाया। टारसुसमें उपद्रव उठा। जातोय ग्रान्दोलनका समर्थन न करनेवाले अरमनियोंका वध किया गया। प्रधान धर्माचार्यके प्राण जानेका भी संशय था। लोगोंने कहा, कि अंगरेजी राजदूत अरमनियोंका वध करा जहाजी वेड़ा कुस्तुन-निया ले जाना चाहता था। १ली अक्तोबरको कुछ सशस्त्र अरमनी आवेदनपत्र ले तुर्की सरकारके पास पहुँचे, किन्तु पुलिस द्वारा हटाये गये। गोली चलनेसे बहुतसे अरमनी और थोड़े सुसलमान मरे थे। उसके बाद अंगरेजी राजदूतकी प्रेरणासे १७वीं अक्तोबरको सुलतानने संस्कार-व्यवस्था स्वीकार की। और ८वीं अक्तोबरको कुस्तुननियासे सशस्त्र व्यक्ति-योंने ट्रेबिजाण्ड पहुँच अरमनियोंका संहार किया था। सुलतान संस्कार-व्यवस्थाको प्रकाश न किया और १८८६ ई०के जनवरी मास तक संहार पर संहार होते गया। यूरोपीय शक्तियां चुपचाप तमाशा देखती रहीं। १४वीं से २२वीं जूनतक फिर वान, एगिन और निकसरमें बहुतसे अरमनियोंका संहार हुआ। २६वीं अगस्तको राजद्रोहियोंने कुस्तुननियाका सरकारी बङ्ग छीन लिया था। सुल-तान्को अभिप्राय विदित रहा। शीघ्र ही पहलेसे समझाये और शस्त्र बंधाये हुये नीचजन सड़कोंपर छोड़े गये। उन्होंने छः-सात हजार ग्रीगोरीय अरमनियोंको मार डाला था। जिस प्रान्तके लिये संस्कार व्यवस्था बनी, उसीपर आपत्ति अधिक पड़ी थी। विदेशियोंकी रक्षा रही। राजादेश न माननेसे खरपुतमें अमेरिकन भवनोंको क्षति पहुँची थी। एकाएक लेन देन समय बजारपर आक्रमण हुआ। पुरुष पण्यशालमें रहे। स्त्रियां घरपर बैठी थीं। शिक्षित, धनी आर मानी अरमनी मारे गये। सम्पत्ति नष्ट होनेसे उनके वंश मट्टीमें मिले थे। जहां रक्षाका उद्योग किया गया, वहां संहार बहुत अधिक हुआ। केवल जीटनमें तीन मास लड़ लोगोंने अपना मान बचाया था। कुछ नगरोंपर पुलिस और पसदवने

भी संहारमें उत्साहके साथ योग दिया। खरपुत-पर तोप चली थी। कहीं-कहीं भेरी बजती संहार आरम्भ और समाप्त हुआ। कुछ अरमनी निरस्त्र करके भी मारे गये थे। शासकों और पदाधि-कारियोंने जहां हत्याकाण्डमें वाधा डाली, वहां शान्ति रही। स्थानीय सुसलमानोंने लाजियों, कुर्दों और सरकासीयोंने हत्याकाण्डमें योग दिया। किन्तु अनेक सुसलमानोंने अपने मित्र अरमनियोंको बचा लिया था। किसीको दण्ड न मिला। अनेकोंने हत्याकाण्डमें योग देनेसे उपहार पाया था। कारागृहों और गिरजाघरोंमें स्त्री-पुरुष निर्दय भावसे मारे गये। गिरजाघर, मठ, स्कूल तथा भवन लुटे और मट्टीमें मिले। पचास हजारसे अधिक अरमनी मरे थे। अनेकोंको सुसलमान बनना और अनेकोंको दारिद्र्यका दुःख भोगना पड़ा। सम्पत्ति अधिक विनष्ट हुई। गृहस्वामियोंके मारे जानेसे स्त्री-पुत्र निराश्रय हो गये थे। ग्रेटब्रटेन और अमेरिकाने दुःख-निर्वा-पणका उद्योग लगाया। पदाधिकारियोंके विरोध बढ़ते भी कुल सफलता मिली थी। १८०४ को सुय और १८०८ ई०को वानमें फिर हत्याकाण्ड हुआ। १८०८ ई०की अरमनियोंका अभाव दूर करनेके लिये सुलतानने नवीन व्यवस्था प्रदान की।

भाषा एवं साहित्य—मूल अरमनी भाषामें अनेक ईरानी शब्द आ मिले हैं। अश्व, आखेट, युद्ध, सेना, परि-च्छेद, व्यवसाय, मुद्रा, पञ्चिका, मान, न्यायालय, सङ्केत, औषध, पाठशाला, शिक्षा, साहित्य और कलाकौशल सम्बन्धीय शब्द प्रायः ईरानी हैं। विशुद्ध अरमनी शब्दोंमें त्रिलिङ्गवाचो ईरानी प्रत्यय लगाते हैं।

मूल अरमनी भाषाके खरशास्त्रमें आर्यप्रणाली नहीं चलती। संज्ञा, सर्वनाम, प्रथम एवं द्वितीय पुरुष और क्रियाका बहुवचन 'क' लगानेसे बनता है। ई०से ७०० और ८०० वर्ष पहले आरमेनि-यामें सम्भवतः यिनयेलिय और जर्जिय भाषाका अधिक प्रचार रहा। सेमेटिकका भी खासा प्रभाव

आजकल अरमनी दो प्रकारकी देख पड़ती, एक आरारात एवं टिफलिस और दूसरी स्तम्बूल तथा एशिया-मायिनरके प्रादेशिक नगरमें चलती है। पिछली तुर्की शब्दोंसे भरी है। किन्तु अष्ट भाषा पश्चिम आरमेनियाकी अपेक्षा वानके नवीन वाग्व्यवहारसे अधिक मिलती है। ई०के ५वें शताब्द पीछे भाषान्तर करनेवालोंने केवल शब्द अनुवाद बना यूनानीका नियम सुरक्षित रखा है। ऐसा ही शब्दार्थ सिरीयकके अनुवादमें भी देख पड़ता है।

अरमनियोंका देवालय-सम्बन्धी साहित्य स्वतन्त्र रहा। किन्तु ४थे और ५वें शताब्द ईसायी धर्माध्यापकवर्गने उसे समूल नष्टकर डाला। खोरिनवासी मूसाके इतिहासमें उसकी केवल बीस पंक्ति अवशिष्ट है। ४०० ई०के समय मेसरोप नामक ईसायीने अरमनी वर्णमाला निकाली थी। सम्भवतः वह अधिक प्राचीन थी। मेसरोपने केवल उसमें स्वर अपनी ओरसे मिलाये। किन्तु यूनानी धर्माध्यापक और सम्राट् थियोडोसियस्को प्रसन्न करनेके लिये अरमनियोंने आख्यान उठाया, कि दिव्यरूपसे उसका प्रकाशन हुआ था। वर्णमालाके पूर्ण होनेपर अरमनी चर्चके प्रधान धर्माध्यापक साहाकने एडेस्सा, आथेन्स, कुस्तुनिया, अलेक्सन्द्रिया, अन्तिओक, कायसेरिया और दूसरे स्थान कितने ही लोगोंको यूनानी तथा सिरीय धर्मशास्त्र अनुवाद करनेको भेजा था। नवटेष्टामेण्ट, यूसेवियस-इतिहासका पाठभेद आदि उससे प्रस्तुत हुआ। ५वें शताब्द मोलिक यूनानीसे भी अनेक ग्रन्थ अनुवाद किये गये। ६ठें तथा ७वें शताब्दके पुस्तक बहुत अल्प अवशिष्ट हैं। पाठान्तरपर किसीका नाम नहीं मिलता। ८वें शताब्द साहित्यसम्बन्धी उद्योगकी बड़ी धूम रही। १०वें तथा ११वें शताब्द भी अनेक ऐतिहासिक ग्रन्थोंका अनुवाद हुआ था। १२वें, १३वें, १४वें और १५वें शताब्द सुप्रसिद्ध ग्रन्थकारोंने लेखनी उठायी। १६वें शताब्द प्रथमतः अरमनी भाषामें पुस्तक छपे। १५६५ ई०को वेनिसमें मुद्रायन्त्र खुला था। १७वें शताब्द लेम्बर्ग, मिलन, पारि, इरफुजान, लेगोर्न,

आमष्टेरडाम, मार्सेयिलेस, कुस्तुनिया, लिपजिग और पादुवानेंमें मुद्रणकार्य आरम्भ हुआ।

वैद्यक, ज्योतिष, भाषाविज्ञान, कोष, इतिहास आदि विद्यासम्बन्धीय ग्रन्थोंका अनुवाद अरमनीमें हुआ है। अब स्थान-स्थानपर अरमनी मुद्रायन्त्र चलते और नये-पुराने ग्रन्थ छपते हैं। अंगरेजी, फ्रांसीसी, रूसी और जर्मन ग्रन्थोंका पाठान्तर किया जाता है। वालार्शापाट, स्तम्बूल, वेनिस, वीयन्ना, पारि, रीलाण्डस, पेट्रोआड, मोस्को और जोयुस्फाके पुस्तकागारमें अरमनी भाषाके पुरातनग्रन्थ रखे हैं।

पाश्चात्य पण्डितोंके कथनानुसार आरमेनिया ही आर्यजातिका आदिम वासस्थान है। जर्मन जातिके पूर्वपुरुष यहींसे जाकर यूरोपमें रहे थे। यज्ञदियोंके धर्मशास्त्रमें इस देशका नाम मिलता है। भूतत्त्व देख समझा गया, कि हमारे पुराणशास्त्रमें आरमेनियाका नाम हिरण्मयवर्ष लिखा है। अध्यापक विलसन संस्कृत संज्ञा पारक्षेत्र बताते हैं। (Ariana Antiqua, p. 147.) पेरिक्लापर्वत पतङ्गगिरि है। (ब्रह्माण्डपुराण ४२ अध्याय) किसी-किसीके मतमें अरक्षस् नदीको पुराणोक्त अरुणोदा समझना चाहिये।

पुरातन गृहादिका ध्वंसावशेष, कोणाकार शिलालेख और मन्दिर प्रभृति देख समझते, कि अति पूर्वकाल आरमेनियामें नानाजातिके लोग आकर रहते थे। भारतवासी हिन्दुओंके पङ्चनेका भी प्रमाण मिला है। सिरीय देशके किसी पादरीने लिखा,—“हिन्दुओंका एक दल यहां आ बसा है। वह देमिटर और किसनली नामक देवताओंको पूजते थे। सिवा इसके दूसरी भी अनेक देवमूर्ति स्थापन की। आष्टिषट नगरमें वह देवतापर वलि चढ़ाते रहे।” (Journal of the Asiatic Society of Bengal, Vol. V. 331) प्राचीन अरमनी आर्यजाति-सम्भूत हैं। अपरापर जातिकी भांति लोग नाना प्रकार उपासक और सम्प्रदायभुक्त थे। आजकाल अधिकांश ईसायी धर्म फैल गया है।

आरम्बण (वै० ली०) आ-लवि-लुगट, वेदे लख्य, आलम्बन, इसदाद, सहारा।

आरम्भ (सं० पु०) आ-रभ-वञ्-नुम्। रभेरशब्दोः।
पा ७।१।६२। १ उद्यम, मुहूर्त। २ त्वरा, तुन्दी, तेजो।
३ गृहादि सम्पादन व्यापार, मकान् वगैरह बनानेका
काम। ४ उपक्रम, उनवान, शुरू। ५ प्रथमकाव्य,
औवल मसनवी। ६ प्रस्तावना, तमहीद। ७ वध,
मकातला। ८ दर्प, खुदबीनी। 'आरम्भस्तु वधदर्पयोः। त्वराया-
मुद्यमे च।' (हेम) क्रियासमूहात्मक पाकादिमें प्रथम
उपक्रमको आरम्भ कहते हैं। औत वा स्मार्त कायके
आरम्भ होने बाद अशौच लगनेसे कोई बाधा नहीं
पड़ती। यज्ञके आदिमें 'साधुभवान् आस्ताम्' प्रभृति
वाक्य द्वारा वरण, व्रत एवं जपका सङ्कल्प, संस्कारका
नान्दीआह, साग्निक आहका पाक और निरग्नि
आहमें भोक्ता ब्राह्मणका निमन्त्रण भी आरम्भ है।
द्रव्यान्तरसे द्रव्य और गुणान्तरसे गुणके उत्पादन-
व्यापारको वैशेषिक आरम्भ मानते हैं। 'प्रक्रमः सादुपक्रमः।
सादभ्यदानमुदघात आरम्भः।' (अमर ३।२।२६)

८ आद्यप्रवृत्ति, पहला काम, शुरू। जैसे यह
आरम्भ करता हूँ। १० अप्रवृत्तकी आद्यप्रवृत्ति,
जिसका उलट फेर न हो उसका पहला आरम्भ। जैसे
सृष्ट्यारम्भ। ११ कर्तव्य कर्मकी इच्छा मीमांसक
तथा नाटकालङ्कारज्ञ इसे औत्सुक्यारम्भ कहते हैं।

आरम्भक (सं० त्रि०) आ-रभ-ण्वल्-नुम्।
आरम्भकारक, मुवत्तदी, शुरू करनेवाला। वैशेषिकमत-
सिद्ध महत्त्वादिकजनक अवयव सकलका विजातीय
संयोग आरम्भक होता है। (स्त्री०) आरम्भकी।

आरम्भण (सं० स्त्री०) आ-रभ-ण्वट्-नुम्। १ ग्रहण,
धारण, अमल, मशक्। कर्मणि ण्वट्। २ सुष्टि,
गिरिफूत, पकड़। आरम्भते णेन, करणे ण्वट्।
३ उपादान कारण, तक्रोबी बानी।

आरम्भणीय (सं० त्रि०) आ-रभ श्कार्थे अनीयर्-
नुम्। आरम्भ कियेजाने योग्य, शुरू हो सकनेवाला।

आरम्भता (सं० स्त्री०) उपक्रम, इवृत्तिदा, उठान।

आरम्भना (हिं० क्ति०) आरम्भ होना, उठना।

आरम्भवाद (सं० पु०) आरम्भस्य वादः परीक्षापूर्वक
कथाविशेषः। वैशेषिकादिके अभिमत परमाणुसे जगत्-
की उत्पत्तिका वाद, जरसे दुनिया बननेकी बात।

“द्रव्याणि द्रव्यान्तरमारम्भने गुणाय गुणान्तरम्।” (वैशेषिकसूत्र)

अर्थात् द्रव्य द्रव्यान्तर और गुण गुणान्तरको
आरम्भ करता है। कुलाल, दण्ड, चक्र, सलिल एवं
सूत्र जैसे घटका, वैसे ही आत्माकाश तथा परमाणु
ब्रह्माण्डका कारण है। फिर घटकी तरह ब्रह्माण्ड भी
बनता-बिगड़ता है। पृथिवी, जल, अग्नि और
वायुके कर्मसे संयोजित परमाणु दोके क्रमपर महत्
ब्रह्माण्डको आरम्भ करता है।

आरव (सं० पु०) आ-र-अप्। १ सम्यक् शब्द,
नारा, शोर, पुकार। २ देशवासी विशेष। अरव देखो।

आरष, आरषो (हिं०) आर्ष देखो।

आरस (हिं०) आलस और आदर्श शब्द देखो।

“आरस सिंहा और जम्हावी।

यह तीनों हैं कालके भावी॥” (लोकोक्ति)

आरसा (हिं० पु०) रज्जु, रस्सा।

आरसी (हिं० स्त्री०) १ दर्पण, शीशा।

“फारसी बोली पायी-ना। तुर्की डूँढी पायी ना॥

हिन्दी बोवू आरसी पाये। खुशरो कहे को न बताये॥” (कूटप्रश्न)

इस प्रश्नके दो अर्थ हैं,—१, जिस चीजकी फारसी
नहीं आती, जो तुर्कीमें ढूँढे नहीं मिलती और
जिसकी हिन्दी बोलते शर्म लगती है, उसका नाम
खुशरो-कहता, लेकिन कीयी नहीं समझता। २, जो
फारसीमें आयीना, तुर्कीमें पायीना और हिन्दीमें
आरसी कहाता, उसका नाम खुशरो बताता है,
लेकिन कोई नहीं समझता। पहलेमें प्रश्न और दूसरे
अर्थमें उत्तर विद्यमान है।

२ कर्मिका, अङ्गुशरी, छत्ता। इसे स्त्रियां अपने
दाहने हाथके अंगूठेमें छोटासा शीशा जड़ाकर
पहनती हैं।

“हाथ कड़नकी आरसी क्या है।” (लोकोक्ति)

आरस्य (सं० स्त्री०) न रस, नञ्-तत्; अरसस्य
भावः, अचतुरादित्वात् थञ्। १ रसभित्तल, लज्जतका
फर्क। नास्ति रसो यस्य, बाहुलकात् तु त्वतलौ न
थञ्। २ अरसत्व, वेलज्जती, फीकापन।

आरा (सं० स्त्री०) अ-र-अच्-टाप्। १ चर्मप्रमेदक
अस्त्रविशेष, चमड़ा छेदनेकी सुतारी। 'आरा चर्ममेदिका।

(अमर २१०१२५) २ प्रतीद, कोड़ा, पेना। ३ आरासुखी जलपत्ती। (हिं० पु०) ४ ककच, करौत। यह लोहेकी पटरीसे बनता और चार-पांच हाथ लम्बा तथा छः-सात अङ्गुल चौड़ा रहता है। आकार चाप-जैसा वक्र होता है। पटरीमें सामनेकी ओर दांत काटते और दोनो सिरोंपर पकड़नेकी मूँठ लगाते हैं। इससे लकड़ी चीरनेका काम निकलता है। पहले लड़ेकी दो कड़ियोंके सहारे एक सिरा जमीनसे मिला और दूसरा ऊपरकी उठा खड़ा करते हैं। फिर आरा उसपर रख दो आदमी नीचे-ऊपर खींचने लगते हैं। दांतके जोरसे लकड़ीका बुरादा उड़-उड़कर इधर-उधर गिरता और तख्ता उतरते चला जाता है। ५ आर, पहियेका फेरा। ६ आड़ा, दासा। यह लकड़ी या पत्थरसे बनता और घोड़िया रखनेके काम लगता है। इससे घोड़िया ठीक बैठ जाती और नापजोख बराबर उतरती है।

७ विहार प्रान्तके शाहाबाद जिलेकी आरा तहसील। यह अक्षा० २५° १०' १५" एवं २५° ४७' उ० और द्रावि० ८४° १२' तथा ८४° ५४' पू० पर अवस्थित है। क्षेत्रफल ८१५ वर्गमील है। हिन्दू, मुसलमान और ईसायी बहुतसे लोग रहते हैं। इसमें आरा, बैलौती और पीरुका थाना लगता है।

८ शाहाबाद जिलेका प्रधान नगर। यह अक्षा० २५° ३३' ४६" उ० और द्रावि० ८४° ४२' ४२" पू० पर अवस्थित है। म्यूनिसिपलिटिको हजारों रुपये सालकी आमदनी है। नगर बहुत अच्छा बना है। जेल, अस्पताल और ईष्ट-इण्डिया-रेलवेका स्टेशन है।

१८५७ ई०को बलवा होनेपर आरा प्रसिद्ध हुआ। बलवायी सिपाही दानापुरसे नदी पार कर आरे पर झपटे थे। उन्होंने राजकोष लूट जेलके कैदियोंको छोड़ दिया। कुछ युरोपीय और सिख घिर गये थे। उद्धारके लिये जो अंगरेजी फौज आयी, उसने घातकी जगह हार खायी। फिर भी कोई बारह अंगरेज, तीन-चार ईसायी और पचास सिख एक मकानसे लड़ते रहे। खान-पानका सामान और

गोलाबारूद सब कुछ इकट्ठा था। २७वीं जुलाईको सिपाहियोंने जोरसे धावा मारा, किन्तु भीषण अग्नि-वृष्टि होनेसे उनका दल टूट गया। भकसे उड़ जाने-वाली चीजें जलाकर मिर्चेका धूँवाँ देने, आदमियों तथा घोड़ोंकी लाशें इकट्ठाकर बदबू फैलाने और मकानतक सुरङ्ग लगानेसे भी रक्षकोंके पैर छुड़े न थे। इसी प्रकार एक सप्ताह बीतनेपर मेजर-विनसेण्ट ईयर ४ तोप लेकर आ पहुँचे। राहमें उन्हें भी कयी जगह लड़ना पड़ा था। ईयरके तोप चलानेपर बलवायी जङ्गलमें जा छिपे और दनादन गोली बरसाने लगे। अंगरेजी फौजके सङ्गीन निकाल आगे बढ़नेसे लोग प्राण छोड़कर भागे थे। इस युद्धमें कुंवरसिंह प्रधान रहे।

शोन नदीकी बड़ी नहरसे एक छोटी शाखा आरेको आयी है। यह देहरीमें शोनभद्रसे निकल गङ्गा नदीमें जा गिरी है। सरकार व्यापारके जहाज चलाती और खेतोंमें पानी पहुँचाती है।

आराकश (हिं० पु०) क्वाकचिक, करौतिया, आरा खींचनेवाला। यह शब्द हिन्दी 'आरा' और फारसी 'कश' मिलाकर बना है।

आराकान—ब्रह्मदेशका एक विभाग। ग्रामीण नाम रखेङ्ग्य है। संस्कृत भाषामें रसाङ्ग और रभाङ्ग भी कहते हैं। आराकानके इतिहासमें देखा—जिन प्रथम नृपतिने बनारसमें राज्य चलाया उन्हींके पुत्रने यह देश अपने भागमें पाया। दूसरोंके कथनानुसार एक वन्धु ऋगीने कुलदान नदीके प्रान्तमें ऋष्यशृङ्ग जैसा मानवीय शिशु उत्पन्न किया था। मेरु या मू नृपति आखेट करने निकले। नवजात शिशुकी वनमें देख वह घर उठा लाये थे। लोगोंके मध्य उसका पालन-पोषण हुआ और मारयो (मौर्य) नाम पड़ा। बड़े होनेपर बालकने एक मू-सरदारकी कन्यासे विवाह किया और अन्तको आराकानका राज्य लिया था। इसी बालकसे आराकानी वंश चला।

मारयोके राज्य-पानेका समय ई०से २६६६ वर्ष पूर्व बताते हैं। मारयोके वंशजोंने १८३३ वत्सर राज्य किया था। उसके बाद विप्लव बढ़ा। अन्तिम

नृपतिकी रानीने अपनी दो कन्याओंके साथ पर्वतमें जाकर आश्रय लिया था। छोटे भाईको टागौङ्गका राज्य सौंपनेपर बाध्य होनेवाले कान-राजगयी नामक एक क्षत्रिय उत्तर आराकान आ पड़ूँचै और अपने साथियोंके साथ क्यौकपानडौङ्ग पर्वतपर जम बैठे। मारयोवंशकी अन्तिम रानीके मिल जानेसे उन्होंने उनकी दोनों कन्या ब्याह ली थीं। कुछ वर्ष पीछे कानराजगयी पर्वतसे उत्तर निम्नभूमिमें वसे तथा प्रधान नगरके अधिपति बने। आराकानी ऐतिहासिकोंके कथनानुसार १७८२ वर्ष उनके वंशजोंने राजत्व चलाया। १४६ ई०को चन्द्रसूर्य नामक नृपति सिंहासनपर बैठे थे। उन्हींके समय बुद्धकी धातुमय एक प्रतिमा बनी, जो बहुत प्रसिद्ध हुई। उसकी अलौकिक शक्तिका उपाख्यान पीछे वर्षों चला था। १७८४ ई०को आराकान जीतनेपर ब्रह्मदेशवासी प्रतिमा उठा ले गये। अमरपुरसे उत्तर एक मठमें आज भी उसकी पूजा धूमधामसे होती है। ई०के दसवें शताब्दतक इस प्रान्तमें बौद्धधर्मका प्राबल्य रहा। कानराजगयी-वंशज ५३वें नृपतिके राज्यसमय पुरातन राजधानी गुप्तभावसे नष्ट होनेपर विप्लव बढ़ा। ज्योतिषियोंने स्थानपरिवर्तनकी आवश्यकता देखायी थी। इसीसे महातेज्जचन्द्र नृपति सदलबल अपना प्रासाद छोड़ नयी राजधानी वेथालीमें जाकर रहने लगे। चन्द्रकुलनामधारी नौ नरेशोंने उस नगरमें उत्तरोत्तर राज्य किया। इन राजावोंके सिक्के देखनेसे विदित होता, कि उस समय सश्रवतः हिन्दूधर्म चलता था। किन्तु आराकानी इतिहासमें उक्त नरेशोंका आदि स्थान नहीं लिखा।

इस वंशके बाद नवो जातीय एक नृपति और उनके भ्रातृगणने ३६ वत्सर राजत्व किया था। एक चन्द्रवंशज नरेशके फिर सिंहासनारूढ़ होनेपर राजधानी बदली, किन्तु शीघ्र ही उपद्रव उठनेसे छोड़ दी गयी।

उसके बाद उच्च इरावदीके शानोंने आराकानपर आक्रमण कर १८ वर्ष राज्य चलाया था। उन्होंने निर्दय भावसे लोगोंकी सताया और मठोंकी

लुटाया। ८८५ ई०में उनके चले जानेसे पुगान नरेश आनर्त्त या अनोयरहत बुद्धकी सुप्रसिद्ध मूर्ति पानेकी आराकानपर भ्रमपटे। किन्तु देवी व्यवधानसे विना मूर्ति पाये ही उन्हें पीछे पैरों हटना पड़ा था। कुछ वर्ष बाद अनोयरहतके साहाय्यसे चन्द्रवंशीय एक नृपति फिर सिंहासनपर बैठे। पिङ्गतसामें राजधानी प्रतिष्ठित हुई थी। आराकान पुगान नृपतिके अधीन ६० वर्षतक करद राज्य रहा। पीछे एक उत्कृष्ट-पदस्थ, मेङ्गबिलू नामक नरेशको मार स्वयं राजा बना। सिंहासनके उत्तराधिकारी मेङ्गरीबय अपनी रानीको ले पुगान भाग गये थे। वहां क्वनसित्या नृपतिने उनका स्वागत किया। २५ वर्षतक राजकीय परिवार निर्वासित रहा। मेङ्गरीबयके पुत्रका नाम लेत्यमेङ्गनान था। पिताके मरनेपर पुगानके वर्तमान नृपति अलौङ्गसीथुने उसे आराकानके सिंहासनपर बैठाना चाहा। वर्षा ऋतुके अन्त भूमि और समुद्रमार्गसे उन्होंने एक-एक लाख प्यूस तथा तालेङ्ग सेना भेजी। घोर युद्ध होने बाद दूसरे वर्ष उनकी प्रतिज्ञा पूरी हुई। बुद्धगयामें ब्रह्मदेशकी भाषाका जो शिलालेख मिला, उसमें लिखा,—एक लाख प्यूसोंके अधीश्वर लेत्यामेङ्गनाने पुगान नरेशके प्रति अपनी प्रतिज्ञाके अनुसार इस मन्दिरका जीर्णोद्धार कराया है। आराकान देखो।

आराग (सं० पु०) प्रलयान्तके सातमें एक सूर्य।

आराय (सं० लो०) आराया अग्रम्, ६-तत्। १ चर्मभेदिकाका अग्रभाग, सुतारीकी नोक। १ लोहेका तस्मा। यह चाबुकके सिरेपर लगता है। ३ अर्धचन्द्राद्यस्त्रमुख, चक्ररदार तौरकी नोकका किनारा। (त्रि०) ४ तीक्ष्णीकृत, तेज किया या पैनाया हुआ, सुतारीकी तरह जो सिरेपर पैना और पेंदेमें चौड़ा हो।

आराजी (अ० स्त्री०) भूमि, क्षेत्र, जमीन, खेत, सुतफररिक जमीनके हिस्से। यह शब्द 'अरज'का बहुवचन है।

आराजौ (सं० स्त्री०) सम्यक् राजते, आ-राज-कणिङ्-डोप्। अर्थ विशेष, एक मुक्त। यनानी

इतिहास-वेत्तावीने इसका नाम आरेष्टी (Arestae) और आड्रेष्टी (Adraistae) लिखा है। आरड देखो।

आराड (सं० पु०) शाक्य मुनिके एक शिष्यक।

आराडि (सं० पु०) सौजात नामक एक ऋषि, आराडके पुत्र। ऐतरेय-ब्राह्मणमें इनका उल्लेख विद्यमान है। (१४१४)

आरात् (सं० अव्य०) आ-रा-बाहुलकात् आति।

१ अन्तर्वर्त्ती स्थानसे, जुदा जगहसे। २ असन्निष्ठ, दूर, फर्कसे। ३ विप्रकृष्ट देशके प्रति, बायद सुकामको।

४ बाह्य प्रदेशपर, बाहर। ५ समीप, नजदीक।

‘आराद्-रसनीपयोः।’ (अमर) ६ शीघ्र, अव्यवहितकाल।

आराति (सं० पु०) आ-रा-क्तिच्। शत्रु, अद्, दुश्मन।

‘परातिप्रत्यर्थि परपत्न्यः।’ (अमर)

आरातीय (सं० त्रि०) आराइवः जातः आगतो वा,

इ आराच्छब्दवर्जनात् नाव्ययस्य टिलोपः। इडाच्छः।

पा ३।१।१४। १ दूरस्थ, दूर-दराज। २ आसन्न, तकरीबी,

लगा हुआ।

आरात्तात् (वै० अव्य०) दूरस्थ देशसे, दूर-दराज

सुकामसे।

आरात्रिक (सं० स्त्री०) आ रात्रि रात्रेः पूर्वसीमा

तत्र निवृत्तम्, ठञ् मर्यादार्थेऽव्ययीभावः। आङ् मर्यादाभि-

विधौः। पा २।१।१३। १ नीराजनकर्म, आरति। आरति

देखो। २ संस्कार विशेष, एक रस्म।

आराधक (सं० त्रि०) अर्चक, आबिद, पूजा-पाठ

करनेवाला।

आराधन (सं० स्त्री०) आ-राध-लुण्ट्। १ साधन,

फूजीलत, काम। २ प्राप्ति, याफूत, पडुंच। ३ तोषण,

रजाजोयी, मनीनी। ४ पचन, तब्बाखी, रसोईका

काम। ५ अर्चन, इबादत, पूजा-पाठ।

‘आराधनञ् पचने प्राप्ते सम्प्राप्तेऽपि च।’ (मेदिनी)

आराधना (सं० स्त्री०) आ-राध-णिच्-युच्-टाप्।

१ सेवा, खिदमत, नौकरी। ‘अद्रूपापराधनोपासि।’ (हेम ३।६१)

(हिं० त्रि०) २ आराधन करना, इबादत देना,

पूजना।

आराधनी (सं० स्त्री०) पूजा, इबादत, बन्दगी।

आराधनीय (सं० त्रि०) आराधयितुं शक्यम्, आ-

राध-णिच् शक्यर्थे अनीयर्, णिच् लोपः। आराधन किये जाने योग्य, जिसे कोई पूजे।

आराधय (सं० पु०) आ-राध-णिच् बाहुलकात् श।

आराधनकारक, इबादत करनेवाला, जो पूजता हो।

आराधयित (सं० त्रि०) आ-राध-णिच्-ट्। परि-

चारक, रजाजोईकी कोशिश करनेवाला, जो मनानेमें

लगा हो। (पु०) आराधयिता। (स्त्री०) आरा-

धयित्री।

आराधयिष्णु (सं० त्रि०) १ आराधनशील, कफाराबखूश,

मन्नतका। २ परिचारक, रजाजो, मनानेवाला।

आराधय्य (सं० स्त्री०) आ-राध-य्यञ्। गुणवचनब्राह्मणा-

दिभ्यः कर्त्तृणि च। पा ३।१।२४। आराधनकर्त्तृत्व, आबिदका

काम, पुजारीपन।

आराधित (सं० त्रि०) आ-राध-णिच्-इट्, णिच्

लोपः। १ सेवित, मनाया हुआ। २ सिद्ध, सम्पन्न,

कामिल, पूरा। ३ अर्चित, इबादत पाये हुआ, जो

पूजा गया हो। ‘आराधितो यदि हरिस्तपसा ततः किम्।’ (उद्भट)

आराध्य, आराधनीय देखो।

आराध्यमान (सं० त्रि०) १ पूर्ण होनेवाला, जो पूरा

किया जाता हो। २ पूजा जानेवाला।

आराम (सं० पु०) आरम्यतेऽन्न, आ-रम-घञ्।

१ उपवन, रौजा, फुलवाड़ी। ‘आरामः स्नादुपवनं क्वचित् वन-

मिव यत्।’ (अमर) २ पञ्चदश रगणयुक्त दण्डक वृत्त-

विशेष।

‘यदिह नयुगलं ततः सप्त रेफास्तदा चण्डवृष्टिप्रयातो भवेदृष्टकः।

प्रतिचरणविष्टिरेफाः दुरणार्थव्यालजीमूतलीलाकरीहामशङ्कादयः॥”

(हचरवाकर)

प्रथम दो नगण और तत्पर सात रगण रहनेसे

दण्डक चण्डवृष्टिप्रयात कहाता है। फिर प्रथम दो

नगण और तत्पर क्रमशः आठसे रगण बढ़नेपर अर्ण

आदि नाम होता है। अर्थात् दो नगणके बाद आठसे

अर्ण, नौसे अर्णव, दशसे व्याल, ग्यारहसे जीमूत, बारहसे

लीलाकर, तेरहसे उहाम, चौदहसे शङ्ख, पन्द्रहसे

आराम, सोलहसे संग्राम, सत्रहसे सुरामवेकुण्ड,

अठारहसे सार, उन्नीससे कासार, बीससे विसार,

इकौससे संहार, बाईससे नौहार, तीससे मन्दर-

चौबीससे केदार, पच्चीससे आसार, छब्बीससे सत्कार, सत्ताईससे संस्कार, अष्टाईससे माकन्द, उन्तीससे गोविन्द, तीससे सानन्द, इकतीससे सन्दोह और बत्तीस रगण लगनेसे दण्डकको आनन्द कहते हैं।

(फा० पु०) ३ विश्राम, करार। ४ निर्वापण, फरागत, सुबीता। ५ उच्चार, छुटकारा। ६ सामर्थ्य, इच्छातिथार। गृहसुखको 'रोटो टुकड़ेका आराम' कहते हैं।

आराम करना (हिं० क्रि०) १ विश्राम लेना, सुसताना। २ निद्रागत होना, सोना। ३ ऐंड़ना, खाली बंठना। ४ सुखसे निर्वाह करना, मजेमें रहना। ५ स्वस्थ बनाना, अच्छा कर देना। यह शब्द फ़ारसीका 'आराम' और हिन्दीका 'करना' मिलाकर बना है। आरामगाह (फा० स्त्री०) विश्रामस्थली, सुसताने या सोनेकी जगह।

आरामघोलि, आरामघोलिका देखो।

आरामघोलिका (सं० स्त्री०) पत्रशाक विशेष, एक सब्जी। यह अम्ल, रुच, रुच्य, अनिलापह और पित्त-श्लेष्मकर होती है। छोटी आरामघोलिका जीर्णज्वरकी दूर करती है। (राजनिषण्ड)

आरामचाहना (हिं० क्रि०) विश्राम अथवा निद्राका अभिलाषी होना, सुसताने या सोनेकी खाद्विष रखना।

आरामतलब (फा० वि०) १ विलासासक्त, नफूस-परस्त, आनन्दी। २ आलस्यशील, सुस्त, कामचोर।

आरामदान (हिं० पु०) १ ताम्बूलपिटक, पानका डब्बा। २ शृङ्गारसम्पुट, साजका सन्दूक।

आराम देना (हिं० क्रि०) १ शान्तिप्रदान करना, तसल्ली बख्शना। २ रोगोपशम करना, भला-चक्का बनाना। ३ सन्तोषण करना, आसू पोछना।

आराम पहुँचाना, आराम देना देखो।

आरामपायी (हिं० स्त्री०) पादुका विशेष, किसी किस्मकी जूती। इससे पैरको बहुत आराम मिलता है।

आराम पाना, आराम करना देखो।

आराम लेना, आरामकरना देखो।

आरामवल्लिका (सं० स्त्री०) मल्लिका विशेष, किसी किस्मकी चमेली।

आरामवाला, आरामतलब देखो।

आरामवाली (हिं० स्त्री०) १ वल्लभा, बीवी, जोड़। २ आलस्यशील स्त्री, निकम्मी औरत।

आरामशाह—सुलतान् कुतबुद्दीन् ऐबकके पुत्र और दिल्लीके सम्राट्। १२१० ई०की यह पिढसिंहासन पर बैठे थे। कुछ दिन बाद बदायूँके शासनकर्ता अलतमास इन्हें राज्यच्युत कर स्वयं सम्राट् बने।

आरामशीतला (सं० स्त्री०) आरामे उद्याने शीतला, ७-तत्। सुगन्धिपत्रयुक्त शाकविशेष, एक खुशबूदार सब्जी। वर्णर्यादि गणमें इसका पाठ है। आराम-शीतला तिक्त, शीतल, पित्तघ्न, दाह-शोषहर और व्रण-विस्फोटघ्न होती है। (राजनिषण्ड) यह कटु लगती और पित्त, कफ तथा अग्निको दूर करती है। (मदनपाल)

आरामसे (हिं० क्रि०-वि०) यथा सुख, खुशीसे।

आराम होना (हिं० क्रि०) १ स्वास्थ्यलाभ करना, बहाली पाना। २ सुखप्राप्ति करना, आसूदगी आना, खुश रहना। ३ लक्षणानुसार—प्राणत्याग करना, मरना।

आरामिक (सं० त्रि०) आरामे उद्यानरक्षणे नियुक्त, ठक्क। उद्यानपाल, बागवान्, माली।

आरामुख (सं० पु०) व्यधनार्थ शस्त्र विशेष, छेदनेका एक औज़ार।

आरायश (फा० स्त्री०) १ अलङ्कार, अलङ्किया, आरास्तगी, संवार। २ शोभाकर वृक्ष और पुष्प, खुशनुमा पेड़ और फूल। यह भौंडल तथा म्लि-मिलसे बनती और बारातके जुलूसमें निकलती है।

आरायश करना (हिं० क्रि०) अलङ्कार पहनाना, सजाना।

आसारात—पार्वतीय आरमेनियाका भूभाग। यह ३८° ४२' उ० और द्राधि० ४४° ३५' पू०पर अवस्थित है। प्राचीन अरमनो इसे 'पेराट' (आर्याट) अर्थात् आर्योंका क्षेत्र कहते थे। इसका कुछ तुर्कों और कुछ अंग्र रूसियोंके अधिकारमें है। प्राचीन बाबिलके मतसे इसी प्रदेशमें आसारात गिरिमाला है। जलप्रापनके बाद यहां नूहका पोत आ गया था (Genesis ११)। अरमनो पोतके पड़चनेका

स्थान मासिस-सूसर बताते हैं। तुर्क इस पर्वत शृङ्गको आघिदाघ (आर्तगिरि) और ईरानी कोह-नूह (नूहका पर्वत) कहते हैं। आरारात आग्नेय-शैलसम्भूत और समुद्रतलसे प्रायः १७२६० फीट ऊंचा है। स्थानीय लोग आज भी गिरिशृङ्गपर नूहके पोतका रहना मानते हैं। उनके विश्वासानुसार पड़ले वन था, अब पहाड़ हो गया। अरमनियोंके कथनानुसार एरिवान नामक स्थानमें नूहने द्राक्षालता लगायी और पोतसे उतर नखजोवन नगर (अवतरण-भूमि)में प्रथम रहनेकी कुटी बनायी थी। पाश्चात्य पण्डित हमारे मनुके साथ नूहका ऐक्य ठहराते हैं। किन्तु हिन्दुओंके शास्त्रमें कहे हुये मनु इस जगह नहीं, हिमालयके निकट नौवन्धन नामक स्थानपर उतरे थे। मनु और नौवन्धन शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

आराल (सं० त्रि०) ईषदरालम्, प्रादि-समा०। अल्यकुटिल, किसी कदर टेढ़ा।

आरालिक (सं० त्रि०) अरालं कुटिलं चरति, ठक्। पाचक, बावरची, नानवायी। पाचक देखो। धनलोभसे शत्रु-प्रेरित पाचक भोजनमें विषादि मिला देता, इसीसे कुटिल आचरणकारी समझा और इस नामसे पुकारा जाता है। 'मत्तकारः रूपकारः सुदारालिकवत्तवाः।' (हेम १।३८०)

आराव, आरव देखो।

आरावली (सं० स्त्री०) विन्ध्यनख, विन्ध्याचल पहाड़की एक शाखा। आरावली देखो।

आराविन् (सं० त्रि०) आरौति, आ-रु-णिनि। १ सम्यक्-शब्दकारक, जंची आवाज देनेवाला। (पु०) आरावी। जयसेनका उपाधि। (स्त्री०) डीप्। आराविनी।

आरास्ता (फ़ा० वि०) १ निष्पन्न, तैयार। २ अलङ्कृत, सजा हुआ।

आरास्ता-करना (हिं० क्ति०) १ विधान करना, तरतीब देना। २ नियत करना, ठीकठाक लगाना। ३ संग्रह करना, बटोरना। ४ निष्पन्न करना, तैयारी-पर लाना। ५ अलङ्कृत करना, सजाना।

आरास्ता-पैरास्ता (फ़ा० वि०) १ समलङ्कृत, सजा-बजा। २ सज्जीकृत, सुसज्ज, हथियारबन्द।

आरि (सं० पु०) १ कण्टकवृक्ष, एक पेड़। २ खदिर-सार, कत्या, खैर। (हिं०) आर देखो।

आरिजा (अ० पु०) १ वृत्तान्त, वाक्या, माजरा। २ आकुलत्व, बीमारी।

आरिजा कानूनी (आ० पु०) न्याय्य विकार, शरयी नुक़्स।

आरिजा जिस्मानी (अ० पु०) तनू-दौर्बल्य, काठीका बोदापन।

आरिजा दमागी (अ० पु०) बोधव्याधि, दिलकी बीमारी।

आरित्रिक (सं० त्रि०) अरित्रं नौकादण्डः तत्र भवः, ठञ् जिठ् वा। काश्यादिभ्यश्चञ्जिठौ। पा ४।३।११५। अरित्रभव, नावके डण्डमें होनेवाला। (स्त्री०) छजि डीष्। आरित्रिकी। जिठि-टाप्। आरित्रिका।

आरिन्दम (सं० पु०) सनश्रुत राजाके पिता। (ऐतरेयब्राह्मण ७।३४)

आरिन्दमिक (सं० त्रि०) अरिन्दमे भवादिः, काश्यां छञ् जिठ् वा। अरिन्दमसे होनेवाला, जो दुश्मनके मारनेवालेसे हो।

आरिया (हिं० स्त्री०) एक पतली ककड़ी। यह वितस्त्रि-परिमित बढ़ती और अत्यन्त शीतल लगती है।

आरिश्मीय (सं० त्रि०) रिशति, रिश हिंसे मनिन् अरिश्मः तस्य सन्निष्ठदेशादिः, क्त्वादित्वात् छन्। अरिश्मके निकटस्थ, अरिश्मके पास होनेवाला।

आरी (हिं० स्त्री०) १ छुद्र ककच, छोटा आरा। इसमें एक ही ओर पकड़ रहती है। बढ़यी दोनो पैर अड़ा और बायें हाथ पकड़ लकड़ी आरीसे चीरते हैं। २ लोहेकी कील। यह गाड़ी हांकनेके पेनेमें लगती है। ३ चमड़ा छेदनेकी सुतारी। ४ किनारा, छोर। (अ० वि०) ५ परिश्रान्त, थका-सांदा। ६ निराश्रय, बेचारा।

आरी आना (हिं० क्ति०) परिश्रान्त होना, थक जाना।

आरीहणक (सं० त्रि०) अरीहणेन निर्वृत्तम्, अरी-हणादित्वात् जुञ्। शत्रुघातक द्वारा सम्पन्न, दुश्मनके मारनेवालेका तैयार किया हुआ।

आरौ होना, आरौ भाग देखो।

आरु (सं० पु०) ऋ-उण् । १ वृक्षविशेष, अरुलका पेड़। यह वङ्गदेशके उत्तर-पूर्वाञ्चलस्थ पर्वत, जयन्ती-गिरि, कोयम्बातूर, कनाड़े, सुन्दे, सिंहल, पेगू और तेनेसेरिम प्रभृति स्थानमें होता है। वृक्ष बहुत बड़ा है। बङ्गालमें इसकी लकड़ीके तख्ते और सिंहलमें पीपे तथा बरंगे बनते हैं। बम्बईका आरु बहुत अच्छा होता और नावका पेंदा तैयार करनेमें लगता है। किन्तु सिलहट, कछाड़ और चटगांवकी लकड़ी सबसे बढ़िया और कीमती निकलती है। आजकल बङ्गालमें इससे कितनी ही चोज बनायी जाती है।

२ कर्कट, सरतान्, केकड़ा। ३ शूकर, सूअर।

‘आरुः पुंसि तरोर्भेदे तथा कर्कटर्दष्टिभ्योः।’ (मेदिनी)

४ कुष्माण्डलता, कुम्हड़ेकी वेल।

आरुक, आरुज और आरु देखो।

आरुक (सं० स्त्री०) १ वृक्ष विशेष। यह हिमालय-पर्वतपर होता और गुणमें शीतल रहता है। हिन्दीमें इसे आड़ कहते हैं। पत्रपुष्पादि भेदसे चातुर्जात्य है। सभी गुण समान रहते हैं। आरुक जारक होता और वात, मेह, अर्श तथा कफको मिटाता है। (मदनपाल) यह मधुर एवं हिम होता और अर्श, प्रमेह, गुल्म तथा रक्तदोषको दूर करता है। (राजनिघण्टु) (पु०) २ आल-बोखारा। यह आड़ी, तुवर, ह्वय, शीतल, मलावष्टम्भक, उष्ण, मधुर, सुखप्रिय, पाचक, अम्ल एवं सुखस्वच्छकर होता और कफ, पित्त, मेह, गुल्म, अर्श एवं रक्तवात-रोगको मिटाता है। आरुक पकनेपर मधुर, गुरु, कफपित्तकर, उष्ण, रुच्य और धातुविवर्धक निकलता है। (वैद्यकभिषय)

आरुज (सं० त्रि०) भञ्जन करनेवाला, जो तोड़ डालता हो।

आरुज (वै० त्रि०) अरुजति, आ-रुज-क। १ सम्यक् पीड़क, तोड़ डालनेवाला। “विहा हिला धनञ्जयमिन्द्रहटा विदारज।” ऋक् ८४५।१३। ‘आरुज’ आभिसुख्ये न भङ्गात्।’ (सायण) (सं० पु०) २ रावणपक्षीय राक्षसविशेष। (महाभारत वनपर्व)

आरुजन्तु (वै० त्रि०) रुजो भङ्गे इत्यौणादिक-कन्तुच् प्रत्ययः, कित्वाहु णाभावः। भञ्जक, भेदकारी, तोड़

डालनेवाला। “वीरु विदारजनुभिः।” ऋक् १।६।५। ‘आरुजनुभिः भञ्जतिः।’ (सायण)

आरुणक (सं० त्रि०) अरुण-वुज्। अरुण देशभव, अरुण मुल्लकमें पैदा होनेवाला।

आरुणडांगी—मन्द्राज प्रदेशके तञ्जोर जिलेका एक भूभाग। पहले यहां चोल राजाओंका राजत्व रहा। ई०के १५वें शताब्द पाण्ड्यराजके सेनाध्यक्ष सेतुपतिने इसे अधिकार किया था। १७वें शताब्द आरुणडांगी तञ्जोर राज्यमें मिलायी गयी। १८वें शताब्द रामनादका एक व्यक्ति किलावनके शासनमें पड़चा था। १७४८ ई०को फिर तञ्जोरके राजाने इसपर अपना अधिकार जमाया।

आरुणपराजिन् (सं० पु०) प्राचीन कल्पग्रन्थ विशेष। इसमें ब्राह्मणोंका क्रियासंस्कार वर्णित है।

आरुणपराजी, आरुणपराजिन् देखो।

आरुणि (सं० पु०) अरुणस्यापत्यम्, इज्। अत इज्। पा ४।१।२४। १ उद्दालक गोतम मुनि। यह वैशम्पायनके नौमें एक शिष्य रहे। दूसरोंके नाम हैं,—आलम्ब, लता, कमल, रुचाभ, ताण्ड, श्यामायन, कठ और कलापी। २ औद्दालकि, अरुण उपवेशीके पुत्र और श्वेतकेतुके पिता। (शतपथ तथा ऐतरेय-ब्राह्मण ८७) ३ प्रजापतिके पुत्र सुपर्ण्येय। (तैत्तिरीय आरण्यक १०।७८) ४ पन्द्रहवें द्वापरके व्यास। (देवी भागवत १।१।२८) ५ विनताके पुत्र वैनतेय। ६ आयोदधौम्यशिष्य मुनिविशेष। ७ सूर्य-तनय। ८ सामवेदका एक ब्राह्मण। (पु० स्त्री०) ९ गरुडाग्रजके पुत्र वा कन्यारूप अपत्य। (स्त्री०) डीप्। आरुणी।

आरुणिन् (सं० पु०) आरुणिना वैशम्पायनान्ते-वासिना प्रोक्तमधीयते, णिनि। वैशम्पायनशिष्य आरुणि-प्रोक्त ग्रन्थ अध्ययनकारी छात्र सकल।

आरुणी (वै० स्त्री०) अरुणवर्णा बड़वा, लाल रङ्गवाली घोड़ी। “यदारुणीड, तविषोरयुगलम्।” ऋक् १।६।७। ‘आरुणोड अरुणवर्णाड वड़वाड।’ (सायण) वायु देवकी घोड़ियां लाल होनेसे आरुणी कहाती हैं।

आरुण्येय (सं० पु०) आरुण्येऽद्दालकस्यापत्यम्, ढक्। उद्दालकके पुत्र श्वेतकेतु।

आरुख्य (सं० स्त्री०) राग, सुखी। (भागवते श्रीधर १०।२।१।१०)
आरुत (सं० स्त्री०) आ-रु भावे क्त। १ आराव, शोर-
गुल, हुल्लड़। (त्रि०) आ-रु कर्तरि क्त। २ आराव-
युक्त, पुरशोर, आवाजसे भरा हुआ।

आरुध (सं० त्रि०) आरुध्यतेऽस्य, आ-रुध कर्मणि
क्त। प्रतिरुद्ध, बल, मसदूद, रुका हुआ।

आरुह्य (सं० त्रि०) आरोह्यमिच्छुः, आ-रुह-सन्-
उ। आरोहण करनेका इच्छुक, चढ़ने या बढ़नेकी
खाहिश रखनेवाला।

आरुह्यमाण (सं० त्रि०) आरोहणकी इच्छा करता
हुआ, जो चढ़नेकी खाहिश कर रहा हो।

आरुषाय (सं० त्रि०) अरुषः सन्निकृष्टदेशादिः,
क्षत्रादित्वात् कृष्ण। अरुषसन्निकृष्ट, अरुषसे नजदीक।

आरुषी (सं० स्त्री०) मनुकी एक कन्या। यह
चवनकी पत्नी रहीं। चवनोत्पादित पुत्र और
इनका उरुदेश फाड़कर भूमिष्ठ हुये थे।

(महाभारत वादिपर्व ६६ अध्याय)

आरुष्कर (सं० स्त्री०) भस्मातक, मिलावां।

आरुह् (वै० त्रि०) १ आरोहण करनेवाला, जो चढ़
रहा हो। (स्त्री०) आरुक्। वृक्षप्ररोह, कुरा,
टेहनी।

आरुह (सं० त्रि०) आरोहति, आ-रुह-क। १ आरो-
हणकर्ता, सोपानादि पर चढ़नेवाला। (पु०) २ आरो-
हण, उभार, चढ़ाव।

आरुह्य (सं० अव्य०) आरोहण करके, चढ़कर।

आरु (सं० पु०) ऋच्छति, ऋ-ज-णित्। पितृवशि-
पयर्षेः। उष् १।६०। १ पिङ्गलवर्ण, भूरा रङ्ग। (त्रि०)
२ पिङ्गलवर्णयुक्त, भूरा।

आरुक्, आरु देखो।

आरुषक (सं० पु०) वसा, चरबी।

आरुढ़ (सं० त्रि०) आ-रुह कर्तरि क्त। १ आरो-
हणकर्ता, चढ़नेवाला, चढ़ा हुआ। “प्रफुल्लकमलारुढ़म्।”
(जगन्नीयान) यह शब्द प्रायः समासमें लगता है,
जैसे—अश्वारुढ़ादि। कर्मणि क्त। २ आरोहण
किया जानेवाला, जो चढ़नेके काम आता हो।
(स्त्री०) भावे क्त। ३ आरोहण, उभार।

आरुढ़यौवना (सं० स्त्री०) नायिका विशेष। यह एक
प्रकारकी मध्या नायिका होती और स्वामिसंहराससे
प्रसन्न रहती है।

आरुढ़वत् (सं० त्रि०) आरोहणमें प्रवृत्त, जो चढ़
रहा हो। (पु०) आरुढ़वान्। (स्त्री०) आरुढ़-
वती।

आरुढ़ि (सं० स्त्री०) आ-रुह-क्तिन्। आरोहण,
चढ़ायी।

आरे (वै० अव्य०) १ दूर, दूर-दराज। २ समीप,
अनकरीव। “आरे-स्नान इरितस्न भूरे।” ऋक् ३।२५। हिन्दीमें
यह शब्द ‘आरा’ का बहुवचन है।

आरेअघ (वै० त्रि०) निष्पाप, इजाबकी दूर किये
हुआ। ‘आरे दूरे अघं पापं यस्य तादृशी।’ (सायण)

आरेअवय (वै० त्रि०) निष्कलङ्क, हिकारतकी दूर
किये हुआ।

आरेक (सं० पु०) आ-रिच्-घञ्। सन्देह, एहति-
माल, गुमान्।

‘सन्देहवापरारेकाविचिकित्सा तु संशयः।’ (हेन ६।११)

आरेचित (सं० त्रि०) आ-रिच्-णिच्-क्त-इट्, णिच्-
लोपः। ईषत् आकुञ्चित, सन्देहयुक्त, गंरमुतमैया,
गोल।

आरेवत (सं० पु०) आ सम्यक् रेवयति अधो गम-
यति मलम्, आ-रेव-णिच्-अतच्। १ स्थूलारम्बधवृक्ष,
बड़े अमलतासका पेड़। मलको अच्छीतरह निकाल
डालनेका गुण रखनेसे अमलतास ‘आरेवत’
कहाता है।

आरेहण (वै० स्त्री०) लेहन, चुम्बन, चूमचाट।

आरो (हिं०) आरव और आरा देखो।

आरोक (सं० पु०) १ रुचिरता, चमाचमी, भला-
मली। २ जालसूत्र मध्य प्रकाशका चुद्र बिन्दु,
वाफ्तके धागेमें रौशनीका छोटा तुकता। ३ शिखा,
चोट।

आरोग (सं० पु०) सूर्य विशेष। (हिं०) आरोग्य देखो।

आरोगना (हिं० क्ति०) भक्षण करना, नोश फर-
माना, जीमना। भोजन करनेसे शरीर आरोग्य रहता,
इसीसे खाना आरोगना कहाता है।

आरोग्य (सं० स्त्री०) अरोगस्य भावः, अन्। रोग-
शून्यत्व, आराम, तन्दुरुस्ती। हिन्दीमें यह शब्द
विशेषणकी तरह भी व्यवहृत होता है।

“ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् चतुर्विधमनामयम्।

दैर्घ्यं चेन्मं समागम्य शूद्रमारोग्यमेव च॥” (मनु २।१२०)

परस्पर साक्षात् होनेपर ब्राह्मणसे कुशल, क्षत्रियसे
अनामय, वैश्यसे क्षेम अर्थात् धन-धान्य-निरापद् और
शूद्रसे आरोग्य पूछना चाहिये।

आरोग्यता (हिं० स्त्री०) आरोग्य देखो।

आरोग्यपञ्चक (सं० स्त्री०) स्वास्थ्यका पञ्च द्रव्य,
तन्दुरुस्तीकी पांच चीज। इसमें पथ्या, आरग्वध, तिक्ता,
त्रिवृत् और आमलक डालते हैं। आरोग्यपञ्चकका
क्वाथ पीनेसे साम जीर्णज्वर छूट जाता है। (भावप्रकाश)

आरोग्यव्रत (सं० स्त्री०) आरोग्यार्थं व्रतम्, शाक०
तत्। व्रत विशेष। यह व्रत सूर्यका होता और
माघ मासकी शुक्लसप्तमीसे लगाकर प्रति शुक्लसप्तमीको
एक वत्सर पर्यन्त किया जाता है। षष्ठीको संयम
रखते और सप्तमीके दिन उपवासकर यथाविधि भोजन
करते हैं। (बराहपुराण)

आरोग्यशाला (सं० स्त्री०) आरोग्यार्था शाला, शाक०
तत्। चिकित्सालय, दारुल-शफा, अस्पताल।
चिकित्साके निमित्त राजादि इसे उपयुक्त स्थानपर
बनवा देते हैं। वैद्यकशास्त्रमें लिखते—आरोग्य दान
करनेसे चतुर्वर्ग देनेका फल पाते, क्योंकि उसे धर्म,
अर्थ, काम, और मोक्ष सकलका साधन ठहराते हैं।
आरोग्यशालामें महोषध और उत्तम उपकरणकी
सामग्री रहना आवश्यक है। रोगीके आहारोप-
शान्न, सरस व्यञ्जन और दुग्धादि रखनेकी भी व्यवस्था
होना चाहिये। शास्त्रज्ञ, प्राज्ञ, औषध-सकलका
बलवीर्यदर्शी, ओषधि एवं मूलका यथार्थ गुणज्ञ और
आहरणकालवित् वैद्य नियुक्त करे। जो व्यक्ति शालि,
मांस एवं औषधका बलवीर्य नहीं जानता, प्रियम्बद
नहीं होता और सरे-गले द्रव्यके परित्यागका कारण
नहीं समझता, वह वृथा ही वैद्य कहता है।

आरोग्यशालाका क्रम एवं वैद्यका लक्षण देखनेसे
समझते, पहले भी हिन्दू राजाओंकी अधिकार-समय

दातव्य औषधालय और राजनियुक्त प्रवीण चिकित्सक
रहते थे। यूरोपमें सर्वप्रथम ई०के ४थे शताब्द
आरोग्यशाला (Hospital) खुली थी। आजकल
वहां जितने अस्पताल देखते, उनमें सेण्ट-वार्थलम्यूरको
सर्वाप्राचीन पाते हैं। वह ११२२ई०में बनाया गया था।
आरोग्यशिखी (सं० स्त्री०) आरग्वधवृक्ष, अम-
लतासका पेड़।

आरोग्यस्नान (सं० स्त्री०) आरोग्ये रोगराहित्ये सति
तन्निमित्तकं स्नानम्, शाक० तत्। रोगसे छूटनेका
स्नान, बीमारी रफा होनेपर किया जानेवाला गुच्छ।

आरोग्याम्बु (सं० स्त्री०) पादशेषोष्ण जल, गर्म
करनेसे चौथाई बचा हुआ पानी। जो तोय पादशेष
होता, वह आरोग्याम्बु कहलाता है। (भावप्रकाश)
इसे सेवन करनेसे सर्वरोग दूर होता है।

आरोचन (सं० त्रि०) तेजस्वी, रौशन, चमकीला।
(वै०) अरुषी। (निरुक्त १।२।०)

आरोढव्य (सं० त्रि०) आरोहणका काम देनेवाला,
जिसपर चढ़ा जाये।

आरोढृ (सं० त्रि०) आरोहण करनेवाला, जो
चढ़ता हो। (पु०) आरोढ़। (स्त्री०) आरोढ़ी।
आरोधक (सं० त्रि०) आ-रुध् कर्तरि वुच्। आवरक,
रोकनेवाला।

आरोधन (वै० स्त्री०) आ-रुध भावे लुगट्। १ अव-
रोधन, निरोध, रोक। २ गुप्तस्थान, पोशीदा जगह।
“नञ्जे आरोधने दिवः।” अक् १।१०।१। ‘आरोधने सर्वस्वावरणे।’
(सायण)

आरोधना (हिं० क्ति०) अवरोधन करना, रोकना।
आरोधनीय (सं० त्रि०) आरुध्यते, कर्मणि ल्युट्।
१ अवरोधन किया जानेवाला, जिसे रोका जाये।
करणे ल्युट्। २ आरोधन साधन, रोक देनेवाला।

आरोप (सं० पु०) आ-रुह-णिच्-लुगट्, ह्य प
णिच् लोपः। रुहः पोष्यवरणम्। पा ०।३।४३। १ न्यास,
स्थापन, निवेशन, तक्करी, लगाव, जोड़। २ प्रदेश,
सूत। ३ अन्य पदार्थमें अन्य धर्मका अवभासरूप
मिथ्याज्ञान। जिसमें जो धर्म नहीं रहता, उसमें
उसी धर्मकी लगा देनेसे दुबिका नाम आरोप-ज्ञान

पड़ता है। जैसे शक्तिमें रजतज्ञान। वेदान्तिक इसे अध्यास कहते हैं।

आरोप आहार्य और अनाहार्य भेदसे दो प्रकारका होता है। जहां बोध निश्चय रहते भी न्यास करनेको जी चाहता, वहां आहार्य आरोप आता है। जैसे, न होनेका निश्चय रहते भी मुखको चन्द्र कहते हैं। अपरोक्ष ज्ञानका नाम अनाहार्य आरोप है। वेदान्त-मतसे वस्तुमें अवस्तुका भ्रम दौड़ना अध्यारोप ठहरता है। अध्यारोप देखो।

आरोपक (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-खुल्। आरोपणकर्ता, लगानेवाला।

आरोपण (सं० स्त्री०) आ-रुह-णिच्-ल्युट्। १ न्यास, तकरी, लगाव। २ ऊपर उठा देनेका काम। ३ पेड़का लगाना। ४ विश्वास, सुपुर्दगी। ५ तन्त्रप्रयोग, तार चढ़ाये।

आरोपणीय (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-अनीयर्। १ चढ़ाया जानेवाला, जिसे ऊपरको उठाया जाये। २ स्थापनीय, रखा जानेवाला।

आरोपना (दि० क्रि०) १ निवेशन करना, लगाना, बैठाना। २ चढ़ाना, ऊपरको उठाना।

आरोपित (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-क्त-इट्। १ आरोहण कराया हुआ, जो चढ़ाया गया हो। २ स्थापन किया हुआ, जो लगाया गया हो। ३ आकस्मिक, इत्तिफाकिया।

आरोप्य (सं० त्रि०) आ-रुह-णिच्-यत्। १ आरोपणीय, लगाया जानेवाला। (अव्य०) २ आरोपकरके, लगाकर।

आरोप्यमाण (सं० त्रि०) चढ़ाया जाता हुआ, जो खिंच रहा हो।

आरोह (सं० पु०) आ-रुह-घञ्। १ आक्रमण, हमली। २ नीच स्थलसे ऊर्ध्व स्थानको गमन, नीचेसे ऊपरको उठान। ३ अङ्गुरादिका प्रादुर्भाव, कोंपल वगैरहका फूटना। ४ हस्ती या घोटकके ऊपरकी बैठक, हाथी या घोड़ेकी सवारी। ५ दीर्घत्व, लम्बान। ६ उच्चत्व, बुलन्दी। ७ नितम्ब, चूतड़। ८ मान, पैमायश। 'आरोहो दीर्घ' मान्योः। आरोहणे निमित्तं। (वि०)

८ आरोहणकर्ता, सवार। १० दर्प, गुरूर। ११ अवतरण, उतार। १२ आकर, खान।

आरोहक (सं० त्रि०) आ-रुह-खुल्। १ आरोहणकर्ता, चढ़नेवाला। २ उन्नतशील, उठनेवाला। ३ उठा देनेवाला। (पु०) ४ अश्वारूढ़, सवार। ५ वृक्ष, दरखूत।

आरोहण (सं० स्त्री०) आ-रुह-ल्युट्। १ नीच-स्थलसे ऊर्ध्व स्थानको गमन, नीचेसे ऊपरका जाना। २ अङ्गुरादिका प्रादुर्भाव, कोंपल वगैरहका फूटना। आरुह्यतेऽनेन, करणे ल्युट्। ३ सोपान, सिङ्घी। ४ अभिक्रम, हमला। 'आरोहणं लभिकमः।' (हम) 'आरोहणं स्नात् सोपाने समारोहे प्ररोहणे।' (मिदिनी) (वै०) ५ शकट, गाड़ी। ६ नृत्यस्थली, नाचनेकी जगह।

आरोहणिक (सं० त्रि०) आरोहणसम्बन्धीय, चढ़नेके सुतात्तिक। (स्त्री०) आरोहणिकी।

आरोहणीय (सं० त्रि०) आरुह्यते, आ-रुह कर्मणि अनीयर्। १ आरोहणके योग्य, चढ़ा जानेवाला। आरोहणं प्रयोजनमस्य, छ। अणुप्रवचनादिभ्याम्। पा ५।१।१११। २ आरोहण-साधन, चढ़नेमें काम देनेवाला।

आरोहवत् (सं० त्रि०) आरोहः प्रशस्त-नितम्ब-स्थानमस्य, मतुप् मस्य व पक्षे इनि। प्रशस्त नितम्ब-युक्त, चौड़े चूतड़ रखनेवाला। (स्त्री०) डीप्। आरोहवती, आरोहिणी। (पु०) आरोहवान्।

आरोहिणी (सं० स्त्री०) ग्रहके नक्षत्रकी एक दशा। ज्योतिषमें ग्रहविशेषकी आरोहिणी दशाका फल इसतरह लिखा है,—

सूर्यकी आरोहिणी दशा आनेपर नर महत्व, सुख, परोपकारित्व, स्त्री, पुत्र, भूमि, गो, अश्व, हस्ती और कृषिकार्यसे सम्पन्न रहता है।

चन्द्रकी आरोहिणी दशामें स्त्री, पुत्र, धन, वस्त्र, सुख, कान्ति, राज्य, सुखभोग, देवार्चन और ब्राह्मण-दक्षि सभी हाथ आ जाता है।

बुधकी आरोहिणी दशा सुख, राजपूजा, प्राधान्य, धैर्य, मनोभिलाष, सौभाग्य, गो, हस्ती और अश्व प्रदान करती है।

शुक्रकी आरोहिणी दशा लगनेसे यज्ञोत्सव, गो,

वृष, अश्वसमूह, भूषण, वस्त्र, पान, वाणिज्य, भूमि, अर्थ और परोपकार बढ़ता है।

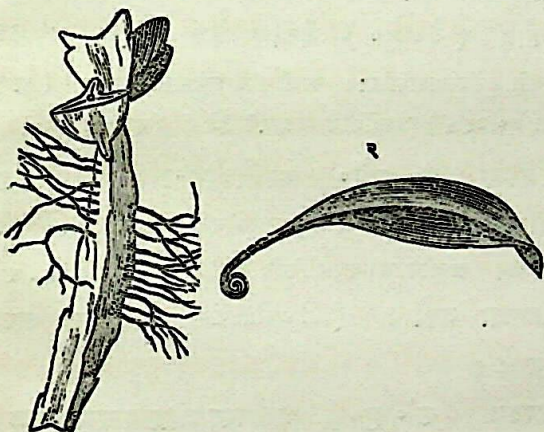
वृहस्पतिकी आरोहिणी दशाका फल महत्त्व, अर्थ, भूमि, गानक्रिया, स्त्री, पुत्र, राजपूजा और स्ववीर्यहेतु यशःप्रतापकी वृद्धि है।

शुक्रकी आरोहिणी दशाको प्रताप, वस्त्र, अलङ्कार, कान्ति, पूजा, प्रवृत्तिसिद्धि, स्वजनके साथ विरोध, मातृविनाश और परस्त्रीप्रसङ्ग देनेवाली समझना चाहिये।

शनिकी आरोहिणी दशासे विपाक अवस्थामें नृपलब्ध भाग्य, वाणिज्य, कृषि, भूमि, गो, अश्व और पुत्र पाते हैं।

आरोहिन् (सं० त्रि०) आरोहति, आ-रुह-णिनि। आरोहणकर्ता, चढ़नेवाला। (पु०) आरोही। (स्त्री०) आरोहिणी।

आरोही (सं० पु०) उल्लिङ्गका जातिभेद, किसी किस्मका पौदा। आरोही अपना भार संभाल नहीं सकता। यह कभी-कभी अपने-आप टहनियोंमें लिपट जाया करता, जैसे गुड़ची आदि है।



१

किसी-किसीमें केवल मूल निकलता, जो काण्डको पकड़ लेता है। १ चित्र देखो। कोई काण्ड अपने पत्तेके आगे दूसरे वस्तुसे मिल बैठता है। जैसे, करिहारी। २ चित्र देखो। अपर वस्तु पकड़नेके लिये आरोही जातिके वृक्षकाण्डसे धागे-जैसा अङ्गुर फूटता, जो कलिका वा पत्रका रूपान्तरमात्र होता है।

आर्क (सं० त्रि०) अर्क-अभि-व्याप्य, आफ़ताबी।

आर्कलूष (सं० पु०) अर्कलूषस्य ऋषिभेदस्यापत्यम्, अर्ज्। अष्टयाननये विदादिभ्योऽञ्। पा ४।१।१०८। अर्कलूषके पुत्र। (स्त्री०) लीप्। आर्कलूषी।

आर्कलूषायण (सं० पु०) अर्कलूषस्यापत्यम्, यूनि अपत्ये फक्। अर्कलूषके युवापत्य।

आर्कलूषि (सं० पु०-स्त्री०) अर्कलूषस्यापत्यम्, वाङ्मा-देराकृतिगणत्वात् इज्। अर्कलूषके पुत्र वा कन्या-रूप अपत्य।

आर्कायण (सं० त्रि०) अर्कस्य गोत्रम्, हरितादित्वात् अज्। अर्कके गोत्रसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आर्कायणि (सं० त्रि०) अर्कं कर्णादित्वात् फिज्।

१ अर्कके निकटस्थ, अर्कके पासवाला। आर्कायणि देश द्विनि-कथित 'आराकोटस्' मालूम पड़ता है। उनके मतसे रानी सेमिरामिसने इस देशमें एक नगर बसाया था। (Pliny VI. 25) अर्कास्याय-नाय सूर्यलोकस्य प्राप्तये हितम्, अण्। २ सूर्यलोक-साधन, सूर्यलोकको पहुँचा देनेवाला।

आर्कायन (सं० पु०) यज्ञविशेष। भगीरथने सोलह बार यह यज्ञ किया था। (महाभारत—वनपर्व १०३ अष्टाध्याय)

आर्कि (सं० पु०) अर्कस्यापत्यम्, इज्। सूर्यपुत्र। यम, शनि, वैवस्वत मनु, सुग्रीव और कर्ण आर्कि कहते हैं।

आर्च (सं० त्रि०) ऋचस्येदम्, अण्। १ नक्षत्र-सम्बन्धीय, कवाकिबदार, तारोंसे भरा हुआ। २ भल्लूक-सम्बन्धीय, भालूके मुताल्लिक। (पु०) ३ ऋचके अपत्य। यह शब्द अश्वमेध, श्रुतर्वन् और संवरणका विशेषण है। आर्चवर्ष (सं० त्रि०) तारकित वत्सर वा राशिक्रम, कवाकिबदार साल या दौर।

आर्चोद (सं० पु०) ऋचोदः पर्वतोऽभिजनोऽस्य, अण्। अभिजनश्च। पा ४।१।२०। ऋचोद पर्वतपर पित्रादि क्रमसे वासकारी द्विज विशेष, ऋचोद पहाड़का पुष्टतैनी बाशिन्दा।

आर्च्य (सं० पु०) ऋचे भवम्, यज्। गर्गादिभ्यो यज्। पा ४।१।१०५। नक्षत्रभव, तारोंसे पैदा।

आर्गयण, आर्गयन देखो।

आर्गयन (सं० त्रि०) ऋगयनस्य कृतो अन्यः तत्र भवः

वा अण्। ऋगयनके व्याख्यानग्रन्थसे निकला हुआ।
आर्गल (सं० पु०) अर्गलमेव, स्वार्थे अण्। द्वार-
रोधक काष्ठविशेष, आगल, चटखनी।

आर्ग्वध, चारवध देखो।

आर्घा (सं० स्त्री०) आ-अर्घ-अच्। पीतवर्ण, दीर्घमुख
और भ्रमरवत् मधुमक्षिका विशेष, नहल। मालव
देशमें यह देख पड़ती है।

आर्घ्य (सं० स्त्री०) आर्घ्या निर्वृत्तं यत्। १ आर्घ्याख्य
मक्षिका द्वारा निष्पादित मधु, आर्घ्याका शब्द।
जरत्काराश्रममें मधुक वृक्षसे निकलनेवाला श्वेतवर्ण
निर्यास आर्घ्य कहाता है। आर्घ्या नामक मक्षिकाका
आर्घ्य हो श्रेष्ठ और सेवनसे चाक्षुष, अक्षदोषघ्न तथा
कफ एवं पित्तको नाश करनेवाला है। इसका
रस कषाय एवं कटु होता और पक जानेपर तिक्त,
बलवर्धक तथा पुष्टिकर निकलता है। (भावप्रकाश)
(त्रि०) २ आर्घा-सम्बन्धीय, नहलके सुताजिक।

आर्घ्यशर्करा (सं० स्त्री०) आर्घ्य मधु कृत शर्करा,
आर्घ्य शब्द की शर्करा। यह गुणमें आर्घ्य मधु-जैसी
ही होती है। (राजनिघण्टु)

आर्घ्या (सं० स्त्री०) मधुमक्षिका विशेष, एक नहल।
यह पीततुण्ड और भ्रमर-सदृश होती है। (राजनिघण्टु)
आर्च (सं० त्रि०) अर्चा अस्त्यस्य, ण। प्रज्ञाश्रद्धार्चो णः।
पा ३।१०२। १ अर्चायुक्त, पूजा जानेवाला। २ अर्चक,
परस्तिथ करनेवाला। ३ ऋक-सम्बन्धीय, ऋग्वेदसे
सम्बन्ध रखनेवाला।

आर्चत्क (सं० पु०) ऋचत्कके पुत्र। (ऋक् १।११।१२)
आर्चभिन् (सं० पु०) बहुवचनम्, ऋचाभेन वैश-
म्पायनस्य शिष्यविशेषेण प्रोक्तमधीते, णिनि। ऋचाभके
शिष्यका बनाया ग्रन्थ पढ़नेवाला।

आर्चिक (सं० स्त्री०) ऋचि भवं ऋचो व्याख्याने
ग्रन्थो वा, ठञ्। सामवेदीय ग्रन्थविशेष। ऋक्षूलक
होनेसे सामको आर्चिक कहते हैं।

आर्चीक (सं० त्रि०) ऋचोके पर्वते भवम्, अण्।
१ ऋचोके पर्वतसे उत्पन्न। (पु०) स्वार्थे अण्।
२ ऋचोके पर्वत। यह पर्वत पुष्कर तीर्थके निकट
अवस्थित है। (महाभारत, वनपर्व २५ अध्याय)

आर्जव (सं० स्त्री०) ऋजोर्भावः, अण्। १ सारल्य,
रास्ती, सीधापन। २ सदाचार, रास्ते किरदारो,
सचायी। आर्जव दैहिक और मानसिक दो प्रकारका
होता है। देहमें जो अंश वक्र नहीं, वही सरल है।
इसीतरह व्यवहार्य वस्तु यष्टि प्रभृतिमें भी आर्जव
और वक्रत्व रहता है। मानसिक सारल्यमें वाङ्मय
और आन्तरिक दोनोंका प्रकाश भावसे भलकता है।
कौटिल्यपूर्वक जो आर्जव बाहर देखाते हैं, उसे
मानसिक कह नहीं सकते।

३ भावशुद्धि, ईमानदारी। ४ निष्कापव्य, रास्तेवाजी।
आर्जीक (वे० पु०) ऋजीकस्येदम्, अण्। ऋजीक
देश-सम्बन्धी।

“सुषोमे शर्यणावत्यार्जीके पक्ष्मावति।” (ऋक् ५।२२।)

‘आर्जीके ऋजीकानामदेशः तत्सम्बन्धिः’ (सायण)

मूलतः कदाचित् दुग्धपात्रको आर्जीक कहते हैं।
सम्भवतः यह शब्द देवी पात्रका द्योतक होता, जिसमें
सोमरस परिष्कार किया जाता, अथवा उससे बनी
आकाशनदीको बताता है। सायण आर्जीकका अर्थ
ऋजीक देशका क्रद लगाते हैं।

आर्जीकीय (वे० पु०) वेदोक्त देश विशेष। “अथ ते
शर्यणावति सुषोमायामधिप्रियः। आर्जीकीये शृणुग्रामदिन्तमः।” (ऋक्
संहिता १०।७५।५) ‘आर्जीकीये एतन्नामके देशे।’ (सायण)

आर्जीकीया (वे० स्त्री०) आर्जीकीय-टाप्। १ वेदोक्त
नदीविशेष। “आर्जीकीये शृणुग्राम सुषोमया।” (ऋक्) ‘आर्जीकीयां
विपाङ्गित्याः ऋजीकप्रभववज्जुगामिनी वा।’ (याज्ञ २।३।५)
२ विपाशा नदी। (Hyphasis), वर्तमान नाम
वियस है।

आर्जुनायन (सं० पु०) अर्जुनस्य गोत्रापत्यम्, फञ्।
अशदिभ्यः फञ्। पा ४।१।१२०। १ अर्जुनके गोत्रापत्य।
२ भारतका उत्तरपश्चिम-सीमास्थित एक जनपद।

वराहमिहिरने पांच-ऋकः बार यह शब्द देशविशेष
और तद्देशवासीके लिये लिखा है। काबुल और
पेशावरका मध्यवर्तीस्थान पुरा ‘अर्जून’ नामसे अभि-
हित था, संप्रति ‘नगरहार’ नामसे प्रसिद्ध है। (स्त्री०)
टाप्। आर्जुनायना।

आर्जुनायनक (सं० त्रि०) आर्जुनायनस्य विषयो देशः-

वुज् । राज्यादित्यो वुज् । पा ४।१।५३ । आर्जुनायनाकीर्ण,
आर्जुनायनसे भरा हुआ ।

आर्जुनावक (सं० त्रि०) अर्जुनावदेशे भवम्, वुज् ।
धूमादिभ्यश्च । पा ४।१।२० । अर्जुनाव नामक देशभव,
अर्जुनाव सुल्काका पैदा ।

आर्जुनि (सं० पु०) अर्जुनस्यापत्यम्, इज् । वाङ्मादिभ्यश्च ।
पा ४।१।४५ । १ अर्जुनके पुत्र अभिमन्यु । २ अर्जुनके
औरस और द्रौपदीके गर्भसे उत्पन्न श्रुतकर्मा ।

“पाश्चात्त्यपि तु पञ्चभागः पतिभागः शुभलक्षणा ।

लेभे पञ्चतान् वीरान् अथैवान् पञ्चाचलामिव ॥ ६५

युधिष्ठिरान् प्रतिवन्धं सुतसोमं हकीदरात् ।

अर्जुनादक्षुतकर्माणं शतानोकश्च नाकुलिम् ॥ ७६

सहदेवाच्च सुतसम् ।” (महाभारत—आदिपर्व २२२ अध्याय)

आर्जुनेय (सं० पु०) अर्जुन्या गाभ्या अपत्यम् ।
अर्जुनीके अपत्य कौत्स ऋषि । कुत्स ऋषिकी गाभी
अर्जुनी द्वारा प्रतिपालित होनेसे कुत्सके पुत्रका यह
नाम पड़ा है ।

आर्ट (अ० स्त्री० Art.) १ कला, शिल्प, कारीगरी ।
२ विद्या, हुनर । ३ युक्ति, हिमत । ४ कपट, ऐयारी,
चालाकी । जिस पाठशालामें शिल्प सिखाते, उसे
‘आर्ट स्कूल’ कहते हैं ।

आर्टिकल (अ० स्त्री० Article) १ द्रव्य, जिन्य,
चीज । २ लेख, मज्मून् । ३ पद, दफा ।

आर्टिक्युलेटा (अ० स्त्री० Articulata) जन्तुविशेष,
किसी किस्मके जानवर । इसका शरीर और अङ्ग
ग्रथित रहता है । किन्तु अन्तर्गत कङ्काल अस्थिमय
नहीं और प्रधान मज्जातन्तुगत सूत्र उन्मुख होता है ।
इनमें स्थलचर एवं जलचर सम्बन्धीय दो विभेद और
क्रमि, जालिक, बहुपाद, कवची तथा कीटक पांच
गण हैं । क्रमि, जालिक तथा बहुपाद स्थल और
कवची एवं कीटक जलमें रहते हैं । स्थलचर देहमें
शाखा-प्रतिशाखा-रूपसे विस्तीर्ण वायुनाड़ी और
जलचर अधोगच्छ द्वारा श्वास लेते हैं ।

क्रमिका शरीर तीन भागमें विभक्त है । शीर्ष
एवं वक्षःस्थल उदरसे पृथक् रहता है । पाद छः होते
और प्रायः दो या चार पक्ष निकलते हैं ।

जालिकका शीर्ष एवं वक्षःस्थल एक ही खण्डमें
मिला और उदरसे जुदा होता है । पादसंख्या
आठ है ।

बहुपाद उदरसे पृथक् वक्षःस्थल नहीं रखते और
कीटक-जैसे देख पड़ते हैं । पाद बहुत होते हैं ।
शतपदी इन्हींमें परिगृहीत है ।

कवचीके देहमें दो भाग होते हैं । शीर्ष एवं
वक्षःस्थल एकहीमें मिला और उदरसे जुदा रहता
है । पाद प्रधानतः दश या चौदह, कभी कभी अधिक
और क्वचित् न्यून भी होते हैं । केकड़ा और भोंगा
मछली वगैरह इन्हीं जानवरोंमें शामिल है ।

कीटकका वक्षःस्थल उदरसे भिन्न नहीं होता और
पावका अभाव रहता है । कभी-कभी पादके स्थानमें
फूलीहुई गांठें निकल आती हैं । केकड़ा, जोंक,
चक्रदार और अन्तर्दियोंका कौड़ा कीटक होता है ।
आर्डर (अ० स्त्री० Order) १ आदेश, इर्शाद, हुक्म ।
२ विधान, दस्तूर, ठङ्ग । ३ आनुपूर्व्य, दस्तूर ।
४ आचार, जाविता । ५ वर्ग, मतंवा । ६ आश्रम,
हलका । ७ अवस्था, दुरुस्ती । ८ धैर्य, अमन ।
९ उपचार, तदवीर । १० पत्र, रुक्का, मांग । ११ समा-
हार, दरजा ।

आर्डिनेरी (अ० वि० Ordinary) १ आचारिक,
मामूली । २ सामान्य, आम दरजेवाला । ३ निर्भूषण,
बेरीनक । ४ प्रसिद्ध, बाजारी । ५ अप्रधान, अदना,
कम-कदर ।

आर्त (सं० त्रि०) आ-ऋ-क्त । १ पीड़ित, बेजार,
दिक् । २ दुःखित, मुसीबतज्जदा । ३ आहत,
मज्झह ।

आर्तगल (सं० पु०) आर्तः पीड़ा गलति चरति,
आ-ऋ भावे क्त गल अच् । १ नीलभिण्डो, कटसरेया ।
(Barleria Cærulea) यह उष्ण, तिक्त एवं कटु
होता है और वातकफ, श्लेष्म, कण्डू, शूल, कुष्ठ तथा
व्रणपर चलता है । (वैद्यकनिघण्टु,)

आर्ततर (सं० त्रि०) अत्यन्त पीड़ित, निहायत
बेजार, घबराया हुआ ।

आर्तता (सं० स्त्री०) पीड़ा, दर्द, तकलोफ ।

आर्तना (वै० स्त्री०) १ क्षयकर समर, मुजिर जङ्ग, उजाड़ू भगड़ा। २ अक्षय वन्य भूमि, गैर-मजरूवा, जङ्गली जमीन।

आर्तनाद (सं० पु०) करुणस्वन, दर्दनाक आवाज।
आर्तपणि (सं० पु०) ऋतपर्णस्यापत्यम्, इज्।
ऋतपर्ण राजाके पुत्र सुदास।

आर्तबन्धु (सं० पु०) दुःखित व्यक्तिका मित्र, गरीबोंका दोस्त।

आर्तभाग (सं० पु०) ऋतभागस्य ऋषेर्गोत्रापत्यम्, अज्।
आनृथानन्वये विदादिभ्योऽज्। पा ४।१।१०४। ऋतभाग ऋषिके पुत्र जरत्कार।

आर्तव (सं० स्त्री०) ऋतुरस्य प्राप्तः, अण्। १ ऋतु-भव पुष्पादि, मौसमी फूल। २ ऋतु, हैज। ३ ऋतु-मती स्त्रीका रक्त, हैजी आलायश।

‘आर्तवनृतुसभूते स्त्रीरजः पुण्योरपि।’ (विश)

सुख अवस्थामें नियमित समयपर युवती स्त्रीके जरायुसे जो शोणित बहता, वह आर्तव कहलाता है। अंगरेज़ीमें इसका नाम काटामेनिया (Catamenia) या मेनसेस (Menses) है। सचराचर भारतवर्षमें बारहसे पचास वर्षतक मास-मास आर्तव निकलता है,—

“बादशाहतसरादूर्ध्वं मापचायत्समं स्त्रियः।

मासि मासि भगद्वारा प्रवृत्तैवातवं खवेत् ॥” (भावप्रकाश)

इङ्ग्लैण्ड देशकी स्त्रियां सोलह वर्षसे ऋतुमती होने लगती हैं। प्रायः ४५।५० वर्ष वीतनेपर उनका आर्तव रुक जाता है। लाप्लैण्डमें २०।२५ वर्षतक स्त्रीका आर्तव प्रायः बन्द रहता और उसके बाद ६० वत्सर पर्यन्त यथारीति निकला करता है। उपरोक्त प्रमाण द्वारा जान पड़ता, कि शीत-प्रधानकी अपेक्षा ग्रीष्म-प्रधान देशमें शीघ्र-शीघ्र आर्तव आता है। कभी-कभी आठ या नौ वत्तर वयसमें भी स्त्री ऋतुमती हो जाती है।

आर्तव निकलनेसे पहले अथवा उसके साथ-साथ शरीरमें अवसन्नता, आयास, दौर्बल्य, चक्षुकी चारो ओर विवर्णता और ईषत् असित रेखा, घृष्ठदेश एवं ग्रीवाके छद्दत् ग्रन्थिमें व्यथा, कटि, उरुद्वय तथा वक्षिके अधोभागमें यातना और भार-बोध, सामान्य स्वर

प्रभृति लक्षण देख पड़ता है। शोणित गिर जानेसे फिर उतना कष्ट नहीं रहता। केवल शरीर दुर्बल और सुखका भाव कुछ मलिन हो जाता है। रजः निकलते समय स्त्रीके देहमें एक प्रकारका गन्ध आता है। किसी-किसीके पूर्व लक्षण देख पड़नेपर शुद्ध जल-जैसा कुछ तरल पदार्थ निकलता है। ऐसी अवस्थामें पुष्टिकर आहार और औषध खिलानेसे स्वाभाविक आर्तव आने लगता है। फिर स्तनमें वेदना बोध या दुग्ध सञ्चार होता है। ऋतुमती स्त्रीके शारीरिक और मानसिक परिवर्तन पड़ता है। देह पुष्ट एवं लावण्ययुक्त, गठन सुगोल, स्तनद्वय वर्धित और नितम्ब प्रसारित होता है। स्वभाव लज्जा तथा विनोत भावसे दब जाता और स्त्रीजातिका कार्य एवं आचरण चलने लगता है।

दैहिक और आर्तव शोणितमें अनेक प्रभेद है। आर्तव शोणितमें सूक्ष्म अंश (Fibrine) रहते भी साधारण रीतिसे रक्त निकलकर जमता या गलता नहीं।

अण्डाधार ही आर्तव निःसृत करनेका प्रधान उद्दी-पक है। उसके अभावमें ऋतु नहीं होता। अण्डाधार रहनेसे जरायुके अभावमें भी ऋतुका सकल लक्षण देख पड़ता है। अण्डाधारसे अण्ड निकलना ही ऋतुका प्रधान कारण है। प्रत्येक ऋतुकाल अण्डाधारका (Graafian vesicles) कोष फटता और अण्ड आगे बढ़कर अण्डप्रणालीके बीचसे जरायुमें घुसता तथा आर्तवके साथ निकल पड़ता है। अण्ड गिरनेपर जो स्थान चक्रदण्डवत् पीतवर्ण और शुष्क हो जाता, वह कर्पोरा-लूटिया (Corpora Lutea) कहाता है। स्त्रीके मरनेपर अण्डाधारका समुदय कर्पोरा-लूटिया गिरनेसे उत्पन्न हुये सन्तानकी संख्या बतायी जा सकती है। अन्तःसला देखो।

ऋतुके समय रक्ताधिक्यसे जरायुकी धमनी तथा शिरा फूल जाती और अल्प अरुण बननेपर क्लेदोत्पादक (Mucus membrane) भित्तीमें विन्दु-विन्दु रक्तकी उत्पत्ति होती है। पीछे जरायुकोटर आर्तवसे बह चलता है।

गर्भावस्थामें ऋतुका होना और ऋतु आनेसे पहले या सन्तानको स्वस्थ पिलाते समय गर्भ धारण करना आदि सकल लक्षण अस्वाभाविक है।

आर्तववाहिनी नाड़ीका मुख गर्भसे रुक जाने पर आर्तव देख नहीं पड़ता। उस समय यह अधो-भागसे निकल न सकनेपर उर्ध्व दिक्को गमन करता है। आर्तव आग्नेय है। इसके आधिक्यसे कन्या उत्पन्न होती है। (सुश्रुत शरीर ३ अध्याय)

शशक-शोणित अथवा लाक्षा-रस जैसा होने और वस्त्र रञ्जित कर न सकनेसे आर्तवको निर्दोष समझना चाहिये.—

“शशकप्रतिमं यच्च यथा लाचारसोपमम्।

तदार्तं वैप्रशंसन्ति यदासौ न विरञ्जयेत्।”

(सुश्रुत शरीर २ अध्याय)

वात, पित्त, कफ और शोणित चारो अलग-अलग या मिल-जुलकर आर्तवको बिगाड़ देते हैं। इसमें दूषण आनेसे भी सन्तान उत्पन्न नहीं होता। आर्तवका दोष वर्ण और वेदना द्वारा समझ पड़ता है। विगलित वास आने और पूय वा मल-जैसा बन जानेसे इसका दोष नहीं छूटता, दूसरा लक्षण रहनेसे चिकित्सा-साध्य होता है। आर्तव बिगड़नेसे नाना-प्रकारकी पीड़ा उठती है।

डेनमान, हामिलटन, चार्चिल प्रभृति पाश्चात्य-चिकित्सकोंके मतसे आर्तव रोग तीन प्रकारका होता है,—१ आर्तवरोध वा आर्तवामाव (Amenorrhoea), २ आर्तवक्लेश (Dysmenorrhoea) और ३ अस्रग्दर अथवा अधिक शोणित-स्त्राव (Menorrhagia)।

आर्तवरोध—कौमारावस्था वीतते ऋतुका न होना है। महर्षि सुश्रुतने इस रोगका नाम आर्तवविनाश लिखा है। दो अण्डाधार पड़ने, अण्डाधारको उपरिस्थ कोषसमूह तथा जरायु न होने अथवा पीड़ा उठने, जरायुमुखका निम्न वृद्धिभाग (Os Uteri) बंद रहने, योनिका अभाव आने, उभयपार्श्व मिल जाने, द्वार रुकने किंवा सतीदेवी (Hymen) न चुभनेसे आर्तव रोध होता है। अण्डाधार और जरायुके अभावमें यह रोग नहीं छूटता, किन्तु योनिद्वार रुकनेपर औषध

वा अस्त्रचिकित्सा द्वारा आरोग्यलाभ हो सकता है। पुनर्वार रुक न जानेके लिये मुक्त स्थानको तैलयुक्त चोमबन्ध (Lint), वस्त्र अथवा स्पञ्जसे दबा देते हैं। जननेन्द्रिय स्वाभाविक अवस्थापर रहते भी किसीके आर्तवरोध पड़ता है। उसमें कोई अत्यन्त हृष्टपुष्ट और कोई क्षीण, कोमलाङ्ग वा विवर्ण बन जाती है। ऋतुका सकल लक्षण भूलकते भी आर्तव नहीं निकलता। कहीं-कहीं मासान्तरमें ऋतुशोणितके बदले कितना ही शुक्लवर्ण तरल पदार्थ टपकता है।

रोगकी अवस्था और ऋतुका कालाकाल भेद देख भिन्न भिन्न उपायसे चिकित्सा करना चाहिये। हृष्टपुष्ट स्त्रीको विरेचक औषध खिला आहार घटा देते हैं, पुष्टिकर खाद्यादि बिलकुल व्यवहारमें नहीं लाते। ऋतुके चार दिन पूर्वसे सात दिन तक उष्ण जलमें नाभि पर्यन्त डुबोया रखे और प्रत्यह तीन बार पांच-पांच ग्रेन पिलरियार्डको खिलाया करे। दुर्बल स्त्रीको पुष्टिकर आहार देना आवश्यक है। एलोस, गेहूँका मांड, हींग तथा उलटकम्बलकी जड़का बकला एक-एक ग्रेन एवं सलफेट-अव-आयरन आधा ग्रेन मिलाकर गोली बनाते और दिनमें तीन बार खिलाते हैं।

२ आर्तवक्लेश—दुर्बल अवस्थामें हठात् स्नायुसम्बन्धीय वा मानसिक पीड़ा किंवा यातना होनेसे उपजता है। अधिक वा नियमित आर्तव निकलते भी जरायुमें व्यथा उठती और दो-तीन मास किंवा अधिककाल तक रहती है। यह रोग स्नायुसम्बन्धीय (Neuralgic), प्रदाहयुक्त (Inflammatory) और रोधक (Mechanical) भेदसे तीनप्रकार है।

स्नायुसम्बन्धीय आर्तवक्लेश प्रायः तीस वत्सर वयसके बाद होता है। इस अवस्थामें १५।२० ग्रेन ब्रोमायिड-अफ्-पोटासियम और १०।१२ बूंद क्लोरोफार्म आध छटांक पानीके साथ देनेसे व्यथा मिट जाती है।

प्रदाहयुक्त आर्तवक्लेशमें प्रथमतः ज्वर तथा शिरः-पीड़ाका सञ्चार होता, मुखमण्डल तथा चक्षुद्वय रक्तवर्ण पड़ता और नाड़ीका वेग बढ़ता है। ऋतु आनेपर ज्वर और रक्तवर्ण ठीकाना नहीं लगता। इस रोगमें रेचक और ऋतुनिःसारक औषध देना चाहिये।

ऋतुके साथ अधिक यातना उठनेपर रक्तमोक्षणादिकी चिकित्सा चलाये। कोई-कोई जरायु-मुखके निम्न वहिर्भागमें जोक लगाते हैं। टिङ्गचर एकोनायिट एवं टिङ्गचर बेल्लेडोना पांच पांच बूंद, वायिनम एण्टिमनी दश बूंद और जल आध छटांक एकमें मिलाकर दो-तीन घण्टेके अन्तर पिलानेसे भी उपकार होता है।

जन्मावधि हो या प्रदाहरोगके पीछे रोधक आर्तव-क्लेश जरायुके निम्नमुखका (Cervix Uteri) कोटर अप्रशस्त पड़नेसे उपजता है। जरायुके निम्नमुखमें एक पतली बुजि प्रवेश करे। अन्य-वेदना होनेसे दो-तीन दिनके अन्तर बुजि चलाते हैं। इस उपायसे रोधक दब जाता है।

२ अष्टगदर—शोणितमें भिन्न प्रकारका लक्षण लाता और अङ्गमर्द एवं वेदना बढ़ाता है। अतिशय शोणित निकलनेसे दौर्बल्य, भ्रम, मूर्च्छा, तिमिरदृष्टि, दृष्ट्या, दाह, प्रलाप, पाण्डु, तन्द्रा और वायुजन्य अन्यान्य उपद्रव की उत्पत्ति होती है। दो-तीन घेन मात्रामें अफीमकी गोली बनाकर खिलाना चाहिये। इससे उपकार न होनेपर पांच घेन आर्गट-अफ्-रायोको ५ घन सोहागके साथ मिलाकर देते हैं। कोई चिकित्सक उदरके अधोभाग एवं योनि-हारमें ठण्डा पानी या बरफ रखने और कोई शूगर-अफ्-लेड तथा लडेनम जलमें मिला योनिके मध्य पिचकारी लगानेकी कहता है। किसी तरह रक्त न रुकनेसे योनिके मध्य अक्ष भर देना चाहिये।

होमियोपैथिक—डाक्टर अल्पवयस्क युवतीके आर्तव-रोधमें सुख रक्तवर्ण, मस्तिष्क भार वा मस्तिष्क व्यथा प्रभृति लक्षण देख पड़नेपर एकोनायिट, सुख-विवर्णता अधिक दृष्ट्या, आशङ्का आदिकी अवस्थामें आर्सेनिक, ऋतुकाल नासिकासे रक्त गिरते ब्रायिओनिया और उदर फूलने तथा दुर्बल होनेसे चायना वगैरह व्यवहार करते हैं। आर्तवक्लेशमें असित रक्त-जैसा स्त्राव होनेसे आस्काब; अल्प स्त्राव पड़नेसे एपिन मेल; दृष्टिविभ्रम, मस्तिष्क-घर्णन एवं व्यथाके साथ शोणित-स्त्राव होनेसे बेल्लेडोना और खोके जौत्कारपूर्वक

रोने तथा शोणितके अल्प आने या रुक जानेसे क्वाक-टास प्रभृति दिया जाता है। अष्टगदरपर सचराचर एकोनायिट, बेल्लेडोना, ब्रायिओनिया वगैरह चलता है। शोणितस्त्राव न रुकने तथा अधिकक्षण होते रहनेसे सलफर या झाटिना और अल्प समयके मध्य अधिक स्त्राव आनेसे नक्सवोमिका, फसफरस आदि प्रयोग किया जाता है।

अतिरिक्त स्त्राव होनेसे जरायुका सङ्कोचन-शक्ति खोलने और रक्त रोकनेके लिये निम्नलिखित औषध तथा उद्भिद व्यवहारमें आते हैं,—अशोकत्वक्, कङ्गोल (कबाबचीनौ), केशराज, रक्तोत्पलमूल, आयापाना, तण्डुलीयमूल (चौलायी), दूर्वा, दाडिमपुष्प, अलक्त, कांजड़ाशाक, नन्दोवृक्ष, शाल्मलीपुष्प, अश्वत्थ का बल्कल एवं फल, त्रिसन्ध्या, ओड्रपत्र, वज्रदन्ती (कुलेखाड़ा), रक्तचन्दन, पद्मकाष्ठ, पीत अगुरु, लक्षणाभूल, कमलोत्तरपुष्प, नागदमनौमूल, वीरतरु, लज्जालु, राजयोग, नागपुष्पी, कारवल्लीलतामूल, सुरसुरिया, आउकगाक, रक्तकाञ्चनपुष्प, स्थलपद्म, वट, प्लव, कङ्क, शालवृक्ष और पाषाणभेदी।

आर्तव निकालनेके द्रव्य यह हैं,—अग्निशिखा, रसशोधन, सहा, विटकरञ्ज, रेणुक, उलटकम्बल, स्त्राविका, ऋतुपर्णी, गोरोचना, निशादल, सिद्धि, शिशुवृक्ष, और दारुगन्ध-तैल।

ऋतुमती शब्दमें अपर विवरण देखो।

२ मासिकधर्म, माहवारी ऐयाम। ३ मद्के समय पशुकी योषा द्वारा निकाला हुआ रस, जो रतूवत् जुफ्तीके वक्त जानवरकी मादा निकालती हो। ४ पुष्प, तुरा। (त्रि०) ५ समयोचित, बरवक्त। ६ ऋतुज, मासिक, माहवारी, हैजके मुताबिक।

आर्तवी (सं० स्त्री०) घाटकी, मादियान, चाड़ी। आर्तवेयी (सं० स्त्री०) ऋतुमती स्त्री, हैजी जून, जो औरत कपड़ोंसे हो।

आर्तस्त्र, आर्तनाद देखो।

आर्ति (सं० स्त्री०) आ-ऋ-क्तिन्। १ पीड़ा, बीमारी।

२ मनोव्यथा, अजीयत। ३ धनुष्कोटि, कमानुका-पक्षी। आतिः पीडा धनुष्कोट्याः। (भा०दी०)

आर्तिमत् (सं० त्रि०) पीड़ित, बीमार, आजुर्दा ।
(पु०) आर्तिमान् । (स्त्री०) आर्तिमती ।

आर्तिहन् (सं० त्रि०) पीड़ानिवारक, ददं दूर करनेवाला । (पु०) आर्तिहा ।

आर्तिहर, आर्तिहन् देखो ।

आर्ति, आर्ति देखो ।

आर्ति (द्वै० स्त्री०) आ-ऋ बाहुलकात् नि, क्तिदि कारान्ताद्वा डीप् । १ गतिकर्त्री, चलनेवाली स्त्री । २ धनुष्कोटि, कमान्का अखीर ।

आर्तिज (सं० त्रि०) ऋत्विज इदम्, अण् । ऋत्विज-सम्बन्धी, पुरोहितसे सरोकार रखनेवाला ।

आर्तिजीन (सं० पु०) ऋत्विजं तत्कर्म अर्हति खञ् । यञ्जलिभ्यां घञ् । पा ३।१।७१ । ऋत्विक्, पुरो-हित । (स्त्री०) आर्तिजीनी ।

आर्तिज्य (सं० स्त्री०) ऋत्विजो भावः कर्म वा, थञ् । ऋत्विक्कर्म, याजन ।

आर्तियी (सं० स्त्री०) आर्तिवयुक्त स्त्री, जो औरत कपड़ोंसे हो ।

आर्ति (सं० पु०) अथर्ववेदोक्त हिमूर्धा नामक असुरके पिता । (अथर्ववेदोक्त पृ० १०१२२)

आर्थ (सं० त्रि०) अर्थादागतम्, अण् । १ वस्तु-सम्बन्धी, शयके मुतालिक । २ वाक्यार्थकी मर्यादा द्वारा प्राप्त, माही, पुरमतलब । यह पद 'शब्द'के विरुद्ध है ।

आर्थपत्य (सं० स्त्री०) द्रव्यका अधिकार, चीजपर कब्जा ।

आर्थी (सं० स्त्री०) आर्थ-डीप् । अलङ्कार शास्त्रोक्त अर्थ-सम्भव व्यञ्जना, उपमालङ्कार विशेष । 'आर्थी तुल्यसमानाया-स्तुल्याय यत् वा वतिः ।' (साहित्यदर्पण) तुल्य एवं समानादि शब्द रहने और सट्टशार्थमें वति प्रत्यय लगनेसे आर्थी उपमा होती है । भट्ट मतसे भावनाविशेष अर्थात् भाव-यिताके किसी व्यापारका नाम आर्थी है ।

आर्थिक (सं० त्रि०) अर्थं गृह्णाति, ठक् । १ अर्थग्राहक, पुरमानी । २ धनसम्बन्धी, जरदार । ३ ससार, माही ।

आर्द्र (सं० त्रि०) आ-अर्द-अच् । सम्यक् पीड़क, पुरददं, दुःखदायी ।

आर्द्रकंसिक (सं० त्रि०) कंसः परिमाणभेदः, अर्द्ध-

यासौ कंसश्चेति तेन क्रीतम्, ठक् । अर्द्ध कंस परि-मित वस्तु द्वारा क्रीत, एक मनमें खरीदा । दो मनका एक कंस होता है । इसीप्रकार आर्द्धप्रत्यय, आर्द्ध-कौडविक और आर्द्धद्रौणिक शब्द भी बनता है ।

आर्द्धधातुक (सं० स्त्री०) आर्द्धधातुकं शेषः । पा ३।४।११४ । सूत्रविशेष-परिभाषित तिङ् एवं शित् भिन्न धातुके उत्तर विहित प्रत्यय विशेष ।

आर्द्धपुर (सं० स्त्री०) अर्द्ध पुरस्य, एकदेशि-तत् ततः स्वार्थे अण् । पुरका समानार्ध ।

आर्द्धरात्रिक (सं० त्रि०) अर्द्धरात्रे भवम्, ठक् । १ अर्द्धरात्र-प्रभव, आधीरातका पैदा । (पु०) २ ज्योतिष-शास्त्रका शाखाभेद ।

आर्द्धवाहनिक (सं० त्रि०) अर्द्धवाहनेन जीवति, ठक् । वेतनादिभ्यो । पा ४।४।१२ । अर्द्ध वेतनसे जीनेवाला, जो आधी तनखाहसे जिन्दगी काटता हो ।

आर्द्धिक (सं० त्रि०) १ ब्राह्मणविवाहित वैश्यकन्योत्पन्न जातिविशेष ।

“वैश्यकन्यासमुत्पन्नी ब्राह्मणेन तु संज्ञतः ।

आर्द्धिकं स तु विज्ञेयो भान्यो विप्रै न संशयः ॥” (पराशर)

(पु०) अर्द्धं क्षेत्रशस्याधमर्हति, ठक् । खामीके निकट क्षेत्रजात-शस्यका वेतनरूप अर्द्धग्रहोत कृषक-विशेष, जो किसान मालिकसे उजरतके तौरपर खेतमें पैदा होनेवाले अनाजका आधा हिस्सा पाता हो ।

“आर्द्धिकं कुलामिव गोपाद्यो दासनापितो ।

एते यद्रेषु भोग्यान्ना यथाकामं निवेदयेत् ॥” (मनु)

अर्थात् कृषि चलाने, पुरुषानुक्रमसे अपने वंशके मित्र रहने, गो पालने, दास बनने और चौरकर्म एवं आत्मसमर्पण करनेवाले शूद्रका अन्न खा सकते हैं ।

आर्द्र (सं० त्रि०) अर्दं गतो रक् दीर्घश्च धातोः ।

अर्द्ध दीर्घश्च । उण् ४।१८ १ क्तिन्न, तर-व-तर, भीगा ।

‘आर्द्रं सार्द्रं क्तिन्नं निमित्तं क्षिमितं समुद्रमुत्तच ।’ (चरक) २ नूतन,

सरसब्ज, हरा । ३ काठिन्यशून्य, नर्म । ४ आनुगुह्य-

युक्त, आज्ञाद, खुला । (स्त्री०) ५ अश्विनीसे षष्ठ नक्षत्र ।

आर्द्रा देखो । (पु०) ६ पृथुके एक पौत्र ।

आर्द्रक (सं० स्त्री०) अर्दयति रोगान्, अर्दं अन्तर्भूत-

खण्डय रक् दीर्घश्च सञ्ज्ञायां कन्, आर्द्रायां सरसभूमौ

जातं वा वुन्. आर्दयति जिह्वाम्, आर्द्रं कृत्यर्थं णिच्
क्लोन् वा। बहुलमन्यत्रापि। उण् २।१०। १ शृङ्गवेर, अदरक।
'आर्द्रकं शृङ्गवेरं खात्।' (अमर) यह शृङ्गलीके समान गुण
रखनेवाला एवं कटु होता और पकनेसे मधुर पड़
जाता है। भोजनसे पहले लवणके साथ खानेपर
आर्द्रक अग्निदीपन, रुचिकर और जिह्वा-कण्ठ-शोधन
है। इसे शोष और शरत् ऋतुमें खाना न चाहिये।
(भावप्रकाश) आर्द्रक नागरगुण, भेदन, दीपन और
गुरु है (मदनपाल) अदरक देखो।

(पु०) २ शृङ्गवंशोय वसुमित्र नृपतिके पुत्र।
(विष्णुपुराण ४२।४।१०) पुराणान्तरमें अन्द्रक, अम्भक और
भद्रक नाम भी लिखा है।

(त्रि०) ३ आर्द्रानक्षत्रजात।

आर्द्रकखरस (सं० पु०) आर्द्रकका खरस, अदरकका
अर्क।

आर्द्रकाष्ठ (सं० क्लो०) हरिद्वर्ण दारु, सबज हेजम,
हरी लकड़ी।

आर्द्रचिकण (सं० क्लो०) आम-चिकण-गुवाक, कच्ची
चिकनी सुपारी।

आर्द्रज (सं० क्लो०) शृङ्गली, सोंठ।

आर्द्रता (सं० स्त्री०) १ क्लेद, तरौ, सील। वैद्यक-
मतमें सरस और नीरस भेदसे आर्द्रता दो प्रकारकी
होती है। वास्तूक एवं सधंप शाक, निर्गुण्डी,
एरण्ड, धत्तूरादिमें सरस और वट, अश्वत्थ,
करीर प्रभृतिमें नीरस आर्द्रता रहती है। नीरस
आर्द्रता भी सदुग्ध और गुप्तरस भेदसे दो प्रकारकी
है। फिर सदुग्ध पदार्थमें कोई मृदु और कोई
तीक्ष्ण होता है। शतला, (पीला सेड्ड) वज्र,
शोड्ड, आदि तीक्ष्ण और दुग्धिका, अर्क, क्षीरिका
प्रभृति मृदुदुग्ध है। (परिभाषाप्रदीप)

२ नवीनता, ताजगी। ३ कोमलता, नमी।

आर्द्रत्व (सं० क्लो०) आर्द्रता देखो।

आर्द्रदाडिमनिर्यास (सं० पु०) आर्द्र दाडिमका खरस,
ताजे अनारका अर्क।

आर्द्रदानु (वै० त्रि०) क्लेद देनेवाला, जो तरौ
बखूशता हो।

आर्द्रनयन (सं० त्रि०) अश्रुलोचन, अश्रकवार, आंखें
डबडबाये हुआ।

आर्द्रपदी (सं० स्त्री०) आर्द्रों पादों यस्याः, निपा-
तनात् पादस्यान्तलोप डीप् पदादेशः। कुम्भपदीषु च। पा
५।४।१२८। आर्द्रचरण स्त्री, भोगी पैरवाली औरत।

आर्द्रापवि (वै० त्रि०) क्लिन्नप्रान्तयुक्त, बाहरी किनारा
तर रखनेवाली। यह शब्द शकटादिका विशेषण है।

आर्द्रापवित्र (वै० त्रि०) १ क्लिन्नशोधनी, तरसाफ़ी-
वाली। (पु०) २ सोम। शोधनी सदा क्लिन्न रहनेसे
सामका यह नाम पड़ा है।

आर्द्रामरिच (सं० क्लो०) आममरिच, कच्चा मिर्च।
यह किञ्चित् उष्ण, पाक एवं रसमें लघु, अपिच्छल,
कटुक, गुरु, अग्निप्रदीपन, तिक्त, रुचक, स्वादु, स्तम्भ-
कर, कफ-वात-हर और हृद्रोग तथा क्षमिका दूर
करनेवाला है। (वैद्यकानघट्ट)

आर्द्रमासा (सं० स्त्री०) नित्यकर्म-धा०। वनमुह,
मसवन।

आर्द्रवटक (सं० पु०) प्रसिद्ध भोज्यद्रव्य, मशहर
खानेको चाज। लाग इसे आदा बड़ा कहते हैं।
माषपिष्टका वटक बना तेलमें पकाये और हाथसे चूर
कर डाले। फिर मृष्टहिङ्ग, मरिच, आर्द्रक एवं
जीरकचूर्ण, निम्बूरस तथा यवानो मिला, गोल-गोल
बना, और तेलसे तल वटकको कथिता जलमें डुबो
देते हैं। यह पाचक होता है। (भावप्रकाश)

आर्द्रवृक्ष (सं० पु०) कर्मधा०। सरस वृक्ष, तर दरखत।

आर्द्रवृक्षीय (सं० त्रि०) सरस वृक्ष-सम्बन्धी, ताजे
पेड़के मुताल्लिक।

आर्द्रशाक (सं० क्लो०) आर्द्रशाकमस्य। सरस
आर्द्रक, ताजा अदरक।

आर्द्रहस्त (वै० त्रि०) क्लिन्नपाणि, तर दस्त रखने-
वाला, जिसके भोगा हाथ रहे।

आर्द्रा (सं० स्त्री०) नक्षत्रविशेष। पूर्ण चक्रमें २८ या
२७ नक्षत्र होते हैं। मूला वा ज्येष्ठा नक्षत्रको प्रथम
रखनेपर उभय मतसे आर्द्रा षोडश स्थानीय है। इसी
प्रकार अविष्ठा नक्षत्रको प्रथम-स्थानीय माननेसे आर्द्रा
स्थान एकादश आता है। फिर मेषराशिगत अश्विनी

नक्षत्रको प्रथमस्थ ठहरानेसे आर्द्रा षष्ठस्थानीय है। यही मत आजकल प्रचलित है। आर्द्राका पतकीय (Tabular Celestial latitude) ११° एवं स्फुट विक्षेप $१०^{\circ} ५०'$ उत्तर और पतकीय ध्रुवक (Tabular Celestial longitude) ६७° तथा स्फुट (True Celestial longitude) $६५^{\circ} ५''$ है। पाश्चात्य ज्योतिर्विदोंमें किसी-किसीके अनुमानसे एतद् नक्षत्र-स्थानीय १३३ संख्यक तारा (Tauri) है। २०० वत्सर पूर्व युरोपीय पतकमें इस नक्षत्रके उक्त योग ताराका ध्रुवक $८२^{\circ} ३८' ४४''$ रहा। सूर्य-सिद्धान्तके मतसे विक्षेप ८° और ध्रुवक $६७^{\circ} २०'$ कला निकलता है। इसमें पाश्चात्य ज्योतिर्विदोंके अनुमानसे १३७ योगतारा (Tauri) है।

आर्द्रा नक्षत्रमें जन्म लेनेसे मनुष्य अधिक क्षुधायुक्त, रुक्मशरीर, कलिप्रिय, क्रोधी, अशान्त और शरणागतके प्रति निर्दय होता है। (कोटोप्रदीप)

इसी नक्षत्रपर सूर्य आनेसे वर्षा होने लगती है। कृषक आर्द्रा में धान्य बोते हैं।

२ कृष्णातिविषा, काली सिङ्गिया, तेलियाविष।

३ आर्द्रक, अदरक।

आर्द्रालुब्धक (सं० पु०) केतुग्रह, तुक्ता-रास-जम्ब।

आर्द्रावैर (सं० पु०) शक्तिकी उपासना करनेवाला, वाममार्गी।

आर्द्राशनि (सं० स्त्री०) १ तड़ित्, सैका, गाज।

२ अस्त्रविशेष, एक हथियार।

आर्द्रास्थ (सं० स्त्री०) आर्द्रक, अदरक।

आर्द्रिका (सं० स्त्री०) १ क्षुद्रार्द्रक, छोटी अदरक।

२ आर्द्रधनिका, हरी धनियां। यह तिक्त, मधुर, मूत्रल, पित्तको न बढ़ानेवाली, भेदी, गुरु, तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, कटु, पाकमें रुच और वात-कफापह होती है। (वाग्भट)

आर्ध (सं० त्रि०) सामि, नौम, आधा। यह शब्द समासान्त पदके आदिमें आता है।

आर्धद्रोणिक (सं० त्रि०) सामि-द्रोण-क्रीत, आर्ध द्रोणमें खरीदा हुआ, जो चार मन रखता हो। (स्त्री०) आर्धद्रोणिकी।

आर्धधातुक, आर्धधातुक देखो।

आर्धप्रस्थिक (सं० त्रि०) सामि-प्रस्थ-क्रीत, दश सेरसे खरीदा हुआ। (स्त्री०) आर्धप्रस्थिकी।

आर्धमासिक (सं० त्रि०) १ अर्धमास टिकनेवाला, जो आधमहीने रहता हो। २ एक पक्ष अभ्यास करनेवाला, जो पन्द्रह दिन गौर करता हो।

आर्धरात्रिक, आर्धरात्रिक देखो।

आर्धिक, आर्धिक देखो।

आर्धुक (वे० त्रि०) हितकर, कारामद, फायदेमन्द। (स्त्री०) आर्धुकी।

आपयिता आर्पयित देखो।

आपयित (व० पु०) हानिकारक व्यक्ति, तुक्सान् पङ्चाने या चोट देनेवाला शख्स।

आर्भवं (सं० पु०) ऋभुणा दृष्टं साम ऋभुर्देवतास्य वा, अण्। १ तृतीय सावनमें गेय पञ्चसूत्रात्मक सप्त-सामात्मक पवमान विशेष। (त्रि०) २ ऋभु-सम्बन्धीय। (स्त्री०) आर्भवी।

आर्य (सं० पु०) आर्यते गम्यते पूजा, ऋ-ण्यत्। १ महाकुल, कुलीन, सभ्य, सज्जन, साधु, फरमावरदार या वफादार शख्स। 'महाकुलकुलीनार्यसभ्यसज्जनसाधवः।' (भर) २ पूज्य, श्रेष्ठ, सङ्गत, नाव्योक्तिमें मान्य, उदार-चरित, शान्तचित्त, इज्जतदार शख्स। ३ स्वामी, हकदार, वारिस। ४ मित्र, यार। ५ वैश्य, बनिया। ६ बुद्ध, बौद्धमतके चार सिद्धान्त समझने और उनके अनुसार चलनेवाला। ७ मनु सावर्णके एक पुत्र। ८ अपने देशके देवताका भक्त, मुल्ककी उलूहियतका पावन्द। ९ वेदोक्त प्राचीन जाति विशेष।

पाश्चात्य पण्डित 'अर्' धातुसे अर्य शब्द बनाते हैं। अर् धातुका अर्थ भूमिकर्षण है। लेटिन, ग्रीक (यूनानी), एङ्गलो-सेल्शन, अंगरेजी, रूसी, आयरिश, कर्णिश, वेल्सी, प्राचीन णर्स, लिथुयेनिक प्रभृति अनेक युरोपीय भाषामें हल वा कृषिवाचक शब्द इसी अर् धातुसे निकलते हैं। उनके मतानुसार कृषिकार्य करनेसे ही इस जातिका नाम आर्य पड़ा है। उक्त युरोपीय जाति भी आर्यवंशसे समुद्भूत हैं। रैमरेण्ड कृष्णसोहन वन्द्यापाध्यायके मतसे असौरियाकी ग्रिष्-

लिपिका 'अरि' शब्द हलवाचक ठहरता, जो आर्यका प्रतिरूप हो सकता है। अतएव पाश्चात्य पण्डितोंके मतसे आर्य नामको प्राचीन क्षत्रक जातिका द्योतक मानना पड़ता है।

क्या आर्य क्षत्रक थे? प्राचीन जातिके मध्य क्षत्रिकार्य प्रधान जीवनोपाय रहनेसे क्या आर्य शब्द क्षत्रिपद-वाच्य हो सकता है? वैदिक और लौकिक उभय विध प्रयोगमें आर्य शब्द शत शत बार आया है। किन्तु आर्य शब्द अथवा इसके मूल धातु ऋसे कहीं भूमिकर्षणका अर्थ नहीं निकलता। जहां आर्य शब्द पड़ा, वहाँ 'अष्ट' और 'विज्ज' प्रभृति अर्थसे जड़ा है। इसीसे सायणका 'अरणीय' अर्थ ही आर्य शब्दका मूल अर्थ है। हम समझते, कि वैदिक समय इस जातिके लोग नाना स्थानोंमें जाकर रहते थे। इसीसे आर्य नाम निकला होगा।

पारसियोंके अवस्ता, नामक प्राचीन धर्मशास्त्रमें 'ऐर्य' शब्द अष्टासद और साधारण दोनों अर्थपर लगा है। कावशजी एदलजी कांगेने बन्द्रीदादका अनुवाद जो गुजरातीमें किया, उसके शेष अभिधानमें ऐर्य शब्दका प्रकृत अर्थ अर्य और आर्य लिया है। अरमनी भाषामें 'अरि' ईरानी और साहसिककी कहते हैं। अतएव वेद व्यतीत एशियाखण्डकी अपर भाषाओंमें भी जब विकृताकारप्राप्त आर्य शब्दका अर्थ हल वा भूमिकर्षण लगाना कठिन पड़ता, तब समझपर नहीं चढ़ता, पाश्चात्य पण्डितों द्वारा कथित आर्य शब्दके मूल अथवा अर् धातुके अर्थसे कहांतक हल अथवा भूमिकर्षणका भाव कड़ता है।

सायणाचार्यने ऋग्भाष्यमें आर्य शब्दका अर्थ नाना-प्रकार लगाया है,—१ विदुषोऽनुष्ठानीन् (१।५।१८), २ विवांसः स्तोतारः (१।१०।१३), ३ विदुषे (१।११।१९), ४ अरणीयं सर्वे-गन्तव्यम् (१।२३।१८), ५ उत्तमं वर्षं त्रैवर्षिकम् (१।२३।८), ६ मनवे (३।२६।१२), ७ कर्मयुक्तानि (६।२५।१०), ८ कर्मागुणानि अत्रानि (६।२५।१०)।

अर्थात् १ विज्ज यज्ञानुष्ठाना, २ विज्ज स्तोता, ३ विज्ज, ४ अरणीय वा सर्वगन्तव्य, ५ उत्तम वर्षं त्रैवर्षिक, ६ मनु, ७ कर्मयुक्त और ८ कर्मानुष्ठानसे अष्ट।

शुक्लयजुःसंहिता (१४।३०)के भाष्यमें महीधरने आर्य शब्दका अर्थ 'स्वामी' और 'वैश्य' लिखा है। किन्तु वेदके प्रयोग एवं यास्कके अर्थसे आर्य शब्द मानवका द्योतक है। सायणके भाष्यसे भी यज्ञादि कर्मानुष्ठान द्वारा मानवजातिका अष्ट बनना प्रमाणित होता है।

इस प्रकार आर्य शब्दसे मानवजातिका भाव निकलता है। किन्तु आर्य नाम पड़नेका कारण क्या है! वर्तमान पण्डितोंके मतमें 'ऋ' और 'खत्' से आर्य शब्द बनता है। ऋ धातुका अर्थ चलना और फेलना है। अतएव आर्य शब्दका मूल अर्थ सायणोक्त 'अरणीय वा गन्तव्य' ठहरता है। इस जातिने सर्वत्र गमन करनेसे आर्य नाम पाया होगा। आर्य शब्दका दूसरा रूप 'अर्य' है। महीधरकी मतसे वैश्यकी आर्य कहते हैं। इस मतको माननेपर वैश्य होने या सर्वत्र व्यवसाय करनेको जानेसे यह जाति आर्य कहायी है। वेदमें आर्य जातिका परिचय जो पाते, उसको विस्तृत भावसे नीचे देखाते हैं,—

आर्यजातिका उद्भव, पुरातत्त्व, इतिहास और सम्बन्ध-निर्णय अत्यन्त प्रयोजनीय है। क्योंकि उसीपर सभ्य जगत्का प्राचीन सम्पूर्ण इतिवृत्त निर्भर है। पहले देखना चाहिये—अति प्राचीनकाल आर्य शब्द कैसे व्यवहृत होता था। जगत्के आदिग्रन्थ ऋक्-संहितादिमें आर्यशब्द बहुधा स्थान-स्थानपर मिलता है। इससे प्रतीति हुयी, कि उस समय पृथिवीपर अष्ट जाति ही आर्य नामसे प्रसिद्ध रही। यथा,—

“विजानौ ह्यान् ये च दस्यवो बर्हिषते रन्ध्या शसदन्नान्।”

(ऋक्संहिता १।५।१८)

‘हे इन्द्र! पहंचानो, कौन आर्य और कौन दस्यु है। कुशयज्ञके हिंसाकारियोंको शासन कर अपने वशमें लावो।’

“विजान् वजिन्दसवे हेतिमस्यार्यं सद्यो वर्षया युषमिन्द्र।”

(ऋक् १।१०।१३)

‘हे वजिन्! हमारी प्रार्थना समझ दस्युओंके प्रति अस्त्र निक्षेप करो और हे इन्द्र! आर्यगणका सामर्थ्य तथा धन बढ़ावो।’

“अभि दस्युं वकुरेषां वनमोर ज्योतिषमधुरायां।” (ऋक् १।११०।२२)
हे अश्विद्वय! वज्रसे दस्युको मार आर्यके प्रति
ज्योतिःप्रकाश करो।

“इन्द्रः समत्सु यजमानमायं।” (ऋक् १।११०।८)

इन्द्र युद्धके समय आर्य यजमानको बचावें।

“हिरण्यसुत भोगं समान ह्यो दस्युन् मायं वरंभावत्।”
(ऋक् ३।३८८)

इन्द्रने हिरण्यसुत धन दिया और दस्यु मार
आर्यवर्णको बचा लिया है।

“अहं भूमिमुददामायांयाहं हृष्टिं दायये मर्त्याय।” (ऋक् ३।२६।१२)

मैं (इन्द्र)-ने आर्यको भूमि दी है। मैंने मर्त्य
(हव्यदाता)को हृष्टि पहुँचायी है।

“यथा दासान्यायाणि उवा करो बन्धिनस्तुतुका नाहुषाणि।”
(ऋक् ६।१२१।१०)

“साहस्राम दास मायं लया युजा सहस्रतेन सहसा सहस्रता।”
(ऋक् १०।८३।१२)

“नवदशभिरस्तुवन् शुद्रायां वस्येताम्।” (यजुर्वेदः १।४।१०)

“तथाहं सर्वं पश्चामि यय शुद्र उराहं।” (ऋग्वेदः १०।४२।०।४)

“शुद्राथो चर्मणि व्यायच्छंते।” (ताम्रज ब्रा० ५।५।१४)

तैत्तिरीयसंहितामें आर्य और शुद्रका चर्मनिमित्त
कलह लिखा है। (७।५।८) ऐतरेय-ब्राह्मणमें भी
आर्यशब्द आजात है। “अशुव मार्दव्य राष्ट्रं भवति। (८।५।२)

निरुक्तकार यास्कने जातिवचनमें एकत्र आर्य शब्द
व्यवहार किया है। “विकारमस्मादेषु।” (२।१।४)

उन्हींने अन्यत्र आर्य-शब्दके व्याख्यानमें लिखा
है,—“आर्यः ईश्वरपुत्रः।” (६।५।२)

अर्थात् ईश्वरके पुत्रका नाम आर्य है।

निघण्टु (२।२२) में ईश्वरनामपर ‘अर्य’ शब्द परि-
पठित है। उसीसे अपत्यार्थ प्रत्ययमें आर्य शब्द बनता
है। जैसे सुसलमानोंके धर्मप्रवर्तक मुहम्मद साचात्
ईश्वरदूत और ईसायियोंके ईसा ईश्वरात्मज, वैसे ही
पहले हमारे भी पूर्वपुरुष रूपवत्त्व, बलवत्त्व,
विद्वत्त्व, सत्यवादिता आदि बहु सद्गुण एवं पवित्र
आचारोंसे ईश्वरपुत्र माने गये हैं। इसीसे ईश्वरपुत्र
इनका व्यपदेश हुआ और यही हमारे आर्य-
नामका निदान है।

महामुनि पाणिनिने भी एक स्थानपर आर्यशब्दका
उल्लेख किया है,—आर्योन्नाद्यन्तुमारयोः। (६।२।५८)

आर्य जाति अति प्राचीन है। पूर्व समय यह
आदर्श-विज्ञानादि ब्रह्मविज्ञानान्तर्वित्तम और अति-
सभ्य रहे। ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य भेदसे आर्य
द्विविध होते हैं। दस्यु और दास द्विविध शुद्रोंसे
भिन्न ठहरनेपर इन्हें ईश्वरपुत्र कहा है। किन्तु
अथ कालचक्रके परिभ्रमण-नियमसे, वेदविज्ञान,
एक्यबल और अन्तर्वाणिज्य तथा वहिर्वाणिज्य खो
सुमृष्ट दशमें पड़े बारबार खास-लेते, इसीसे जीवित
समझे जाते हैं। आर्यवर्त शब्दमें प्राचीन आर्यावासका परिचय देवो।

जातिनिर्णय—जगत्के आदिग्रन्थ ऋक्संहितासे विज्ञप्ति
होती—अति पूर्वकाल आर्यजाति स्वतन्त्र समझी
जातो थी। उस समय वर्तमान कालकी तरह जाति-
भेद वा वर्णविभागकी प्रथा प्रचलित न रही। इस
जातिके ऋषि, राजा और गृहस्थ साधारण आर्य
नामसे ही परिचित थे। विजित अनाय दस्युसे पृथक्
रखनेके लिये ‘आर्यवर्ण’ शब्द द्वारा अपना परि-
चय देते रहे। प्राचीन ऋक्संहितामें उस समय
आर्य और शुद्र केवल दो ही वर्णविभागका प्रसङ्ग
पड़ता था। शुद्र कहनेसे प्रधानतः दस्यु वा दास
जातिका बोध होते रहा। क्रम-क्रम आर्योंकी संख्या
जितनी बढ़ी, नाना विषयमें उतनी ही उन्नति देख
पड़ी। उसी समय विशेष-विशेष व्यक्ति को निर्धारित
कार्यमें लगानेके लिये वर्णविभागकी आवश्यकता
आयी थी। ऋक्संहितामें वर्णविभाग-सम्बन्धपर
निर्दिष्ट है,—

“ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीदङ्गु राजन्यः कृतः।

ऊरु तदस्य बह्व्यं पदभ्यां यदौ च जायत ॥” (ऋक् १०।८०।१२)

‘इस (पुरुष)के मुखसे ब्राह्मण, वाहुसे राजन्य,
ऊरुसे वैश्य और पदसे शुद्र निकला है।’ सिवा
इसके यजुर्वेद (वाजसनेयसं० ६।८।४८, तैत्तिरीय
५।१।१०।३, अथर्ववेद (५।१७।८) और ऐतरेय-ब्राह्मण
(७।१।८) प्रकृति प्राचीन ग्रन्थमें भी वर्णविभागकी कथा
लिखी है। वेदिकयुगके आर्योंमें ऋत्विज वा पुरोहित,
राजपुरुष और साधारण व्यवसायी वा अमजीवी तीन

अथी भिन्न भिन्न रही। उस समय तीनों अथीके मध्य आहारादि वा विवाहादि कार्य निषिद्ध न था।

ब्राह्मण, अथर्व और वेदों में विस्तारित विवरण देखो।

धर्मविश्वास और उपास्य देवगण—यज्ञानुष्ठान ही वैदिक आर्यों का अष्ट धर्म परिगणित रहा। प्राचीन ऋषि समधिक प्रभाव-सम्पन्न भिन्न भिन्न प्राकृतिक पदार्थ-समुदायको पूजते थे। भगवान्‌की सत्ता समायी समभक्त अग्नि, वायु, ज्योतिष्क प्रभृति नैसर्गिक वस्तुके उपासक रहे। मानसिक स्फूर्तिका पूर्ण विकास हुआ था। ऋक्संहितामें आर्याराध्य देवताओंके नाम यह लिखे हैं,—अंश, अग्नि, अदिति, अनुमति, अरण्यानी, अर्यमन्, अश्विन्, आग्नेयी, इन्द्र, इन्द्राणी, इला, उच्छिष्ट, उषस्, ऋतु, ऋभु, काम, काल, गुह्य, जुह, त्रित, त्रैतन, त्वष्ट, दक्ष, दक्षिणा, दिति, द्यौस, धिषणा, नक्त, निष्टिग्री, पित्र-पुरुष, पूषा, पृथ्वि, पृथिवी, प्रजापति, प्राण, ब्रह्मा, ब्रह्मचारी, ब्रह्मणस्पति, भग, भारती, भरद्वाज, मही, मित्र, राका, रुद्रगण, रोदसी, रोहित, लक्ष्मी, वनस्पति, वरुण, वरुणानी, वरुणी, वायु, विश्वकर्मन्, वृहस्पति, अग्ने, अद्वा, सरस्वत्, सरस्वती प्रभृति नदी, सिनिवाली, सूर्य, सूर्या, सोम, स्कन्ध, हिरण्यगर्भ, होत्रा।

पाश्चात्य पण्डितोंने शब्दशास्त्रके प्रभावसे प्राचीन पारसिका (ईरानियों) और आर्यों का एकत्र रहना ठहराया है। सगर राजाने प्राचीन पारसिकोंको वेद और देवकी उपासनका अनधिकारी बनाया और श्मश्रु सुण्डन न करानेका आदेश सुनाया था। (विष्णुपुराण १७) जबतक पारसिक आर्योंसे मिलित थे, तबतक वैदिक देवताओंके उपासक भी रहे। तत्कालीन वैदिक देवताओं और ऋषियोंके नाम अवस्ता ग्रन्थमें लिखे हैं,—

वैदिक नाम

अश्विना

अर्यमन्

अनुमति

अर्यमन्

इन्द्राणी

पारसिक नाम

अश्व

आयवम्

अस्यिति

अयिर्वमन्

वेरिथ

वैदिक नाम

काव्य उग्रनस्

त्रित

त्रैतन

नराशंस

नासत्य

मित्र

यम

वरुण (असुर)

वायु

सोम

पारसिक नाम

कव उस

थित

थ्रैतन

नरियेसंह

नावोहयिथ

मिथ

यिम

अहुर मज्द

वयु

होम

वेदसंहिताके अनेक स्थल (ऋक् ७२३, ६१, १३१, ३०३, ३६२, ६६२, ८८५)में देवताओंको असुर शब्दसे सम्बोधन किया है। अवस्ता-शास्त्रमें भी देवता अहुर कहे गये हैं। पारसिक शब्दमें अपर विवरण देखो।

फिर पाश्चात्य पण्डितोंने ग्रीक (यूनानी) प्रभृति यूरोपीय प्राचीन सभ्य जातिको आर्य-सम्भूत माना है। उक्त मतसे प्राचीन आर्योंके साथ एकत्र बसते यूनानियोंका विश्वास और धर्म जो रहा, उसे उन्होंने पृथक् होते भी न छोड़ा। मध्यमूलर प्रभृति पाश्चात्य शाब्दिकोंको कुछ वेदोक्त देवताओंके नाम ग्रीक शास्त्रमें मिले हैं,—

वैदिक नाम

अश्विना

अरुषा

अहना

गन्धर्व

पणि

हव

सरण्यु

सरमा

हरित्

प्राचीन आर्य तैत्तिरीय देवताओंकी उपासना करते थे,—

ग्रीक नाम

इक्सिवोन्

ईरस्

डाफ्नी

केण्टौरस्

पारिस

अरथ्रस्

ऐरिन्, स्

हेलना

खारिट्

“ना नासत्या मिमिरेकादयेरिह देवेभिर्यातं मनुषियमविना।

ग्राह्यकारिणी रसादि वचतः।” (अथ १।१७।११)

हे नासत्य अश्विह्वय ! यहां तैंतीस देवताओंके साथ मधु पीने आवो, हमारा आयुः बढ़ावो और पाप छोड़ावो । २।२१।४ ऋक् देवो ।

ऋक्संहितामें इन तैंतीस उपास्य देवताओंके नाम नहीं दिये । अन्यत्र कहते हैं,—

“ये देवा दिव्येकादशस्य पृथिव्यामध्येकादश

स्थासु सद्यो महिनेकादशस्य ।” (ऋषयजु०००० सं० १।४।१०)

आकाश, पृथिवी और अन्तरिक्षमें ग्यारह-ग्यारह देवता रहते हैं । याज, अनुयाज और उप-याज ग्यारह-ग्यारह रहनेसे तैंतीस देवता होते हैं । (ऐतरेयब्रा० २।१८) अष्टवसु, एकादश रुद्र और द्वादश आदित्यसे तैंतीस देवता गिने जाते हैं । (शतपथब्रा० ४।५।७।२)

उस समय आर्यऋषि अधिक देवताओंका अस्तित्व भी मानते थे,—

“कोषि शतावीसहस्राण्यधि विंशच्च देवा नव चासपर्यन् ।”

(ऋक् १०।५।२।६)

तीन हजार तीन सौ उन्तालीस (३३३८) देवताओंने अग्निकी उपासना की है । किन्तु अति प्राचीन कालसे आर्य एक ईश्वरकी स्तुति करते आये हैं,—

“अचिकित्साचिकित्सुषयिदम कवीनृपृच्छामि विप्रमे न विद्वान् ।

विषस सन्धय दक्षिमा रजांसजस्य रूपे किमपि सिद्धेकं ।”

(ऋक् १।१।४।६)

हम ज्ञानहीन हैं । कुछ न जानकर जानियोंसे समझनेके लिये पूछते—जो कुछो लोक स्तम्भन करते, वह क्या एक अजरूपमें रहते हैं ?

सिवा इसके २।१२।१, ३।५।२।१-२२, ५।८।५।३-५ इत्यादि ऋक् पदनेसे एक ईश्वरकी बात आपही मनमें उठ आती है । निम्नलिखित मन्त्रमें इसका आभास है, कि आर्योंके हृदयमें कैसे ईश्वरवाद प्रवेश हुआ,—

“प्र सु सोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति ।

नेन्द्रो षक्नोति रेम उ त्व पाच क ई ददमं कमभि द्वाभाम् ॥”

(ऋक् ८।१००।१)

हे युवाभिलाषिन् ! इन्द्रका रहना यदि सत्य हो, तो तুম उनके उद्देश्यसे सत्य बोलो । नेम (ऋषि) कहते, इन्द्र नामकी कोई नहीं । किसने उन्हें देखा है ? किसकी स्तुति करेंगे ?

उसी अति प्राचीनकाल यज्ञकार्य सुसम्पन्न करनेके लिये विभिन्न ऋत्विक् नियुक्त होते थे, यथा—देव-गणकी आह्वान करनेके लिये ‘होता’, इव्यदान करनेके लिये ‘आव या’, अग्नि सज्जलित करनेके लिये ‘अग्निमित्र’, पत्थरसे सोमको कूट रस निकालनेके लिये ‘आवग्राम’, नियमानुसार कर्मका अनुष्ठान करनेके लिये ‘आस्था’ वा ‘प्रशास्ता’ और समस्त यज्ञ सम्पादन करने लिये ‘मेधावो’ वा ‘ब्रह्मा’ । (१।१६२।५)

आर्य ऋषिगणने ठहराया, कि भिन्न-भिन्न देवता परमात्माका नाम मात्र है । १०।११४।५ ऋक्, सायणकृत उसके भाष्य और ७।४ निरुक्तमें उक्त विषय वर्णित है ।

आर्योंकी रीति और चरखा—आर्य पुत्रपौत्रादिके साथ एकत्र रहते तथा खाते (ऋक् १।११४।६), और तत्कालमें सकल पुत्र पितृधनके अधिकारी होते थे (१।७३।८) । पितृगृहमें अवस्थित अविवाहित कन्या पितृकुलसे धन पाते रखी (ऋक् २।१७।७) । पुत्र तथा कन्या उभयके वर्तमान रहते, पुत्र पिताकी क्रियाका अधिकार पाता और कन्याका सम्मान किया जाता था (ऋक् ३।५।१२) । पुत्र न रहनेसे दौहित्रको अपना पुत्र बना लेते रहे (ऋक् ३।३१।१) । स्त्रियां पतिके साथ यज्ञ करती (ऋक् १।३१।३) और रथपर बैठ अपर स्थान घूमती फिरती थीं । इसी प्रकार अविवाहित अवस्थामें अधिक वयसतक रहनेसे पिता किंवा गुरुजन कोई आपत्ति उठाते न थे । विवाहके समय वर सुवर्णालङ्कारसे भूषित होते रहे (ऋक् ५।६।१४) । वधू वस्त्रावृत रहती थी (ऋक् ८।२६।१२) । यौवन आनेसे स्त्रियोंका विवाह होते रहा (ऋक् १०।८५।२२) । सुन्दरी भद्र स्त्रियोंके मनोमत पतिको वरण करती थीं (ऋक् १०।२७।१२) । विवाहके बाद स्त्रियोंको पतिगृह जाते समय उपढौकन मिलते रहा (ऋक् १०।८५।२०) । पतिके गृह पहुंच पत्नी कर्वा बनती (ऋक् १०।८५।२७) और श्वशुरपर प्रभुत्व, श्वशुर वशित्व एवं ननान्दा तथा देवरपर अद्वैत रहती थी । पुर (नगरादि) और ग्राम स्वतन्त्र रहे (१।४४।२०, —४८।४,—११४।१ ; १०।१४६।१) । जोहमय नगर

(७।३।७, १५।१४); प्रस्तरमय शतसंख्यक पुरी (४।३।२१) और सहस्रद्वार तथा सहस्र स्तम्भ-विशिष्ट अट्टालिका बनाते थे (१।११३।४, २।४।५, ७।८।५)। उत्कृष्ट गृह तथा सामान्य कुटीर (१।१०।१८) और शतद्वार-विशिष्ट यन्त्रगृह प्रभृतिका निर्माणकार्य अवगत रहा (१।५।१३)। इष्टकादि द्वारा गृह प्रभृति (वाजसनेय १३।३१) तथा यातायातका सुन्दर मार्ग (ऋक् १।५।८) एवं दुर्गम पार्वत्य-देशमें सुगम पथ बनाते (१।११६।२०) और विश्रामस्थानमें खाद्यद्रव्यका प्रबन्ध लगाते थे (१।१६६।८)। शकट (१।३०।१५) खदिर वा शिशुकाष्ठसे (४।५३।१८) बनता और सारथिके बैठनेको स्थान रहता था। अश्वद्वय योजित रथ (१।८४।१०) भी तैयार होता था। त्रिवन्धयुक्त तथा त्रिकोण रथमें (१।४७।२) बैठनेको तीन स्थान और तीन चक्र रहते थे। धातुवय-विशिष्ट (१।१८३।१) और युद्धार्थ सुवर्णमण्डित रथ (५।६३।५) प्रभृति भी व्यवहृत होता था। युद्धकाल योद्धा सुवर्णमय कवच तथा उष्णोष (१।२५।१३, ५।५४।११), लोहवर्म (१।५६।३), तनुव्राण, वर्म, अंसव्रा, द्रापि, सुवर्ण वचाच्छादन (४।५३।४) प्रभृति पहनते रहे। युद्ध-यात्रामें ध्वज उड़ता (१।१०३।११), दुन्दुभि बजता (१।२८।५) और सेनापति संश्रुत सैन्य ले आगे बढ़ता था (१।३३।३)। युद्धका सन्देशवह भी रहता था (५।८३।३)। युद्धजय होनेपर शत्रुका द्रव्य जो लुटता, वह सकल योद्धाओंको बंटते रहा।

आदि वैदिक युगमें रमणियोंको अलङ्कार पहनना बहुत अच्छा लगता था (१।८५।१)। निष्क (२।३३।१०), पद्मि, वासी, स्रक्, रुक्म, खादि (५।५३।४), हिरण्य-कर्ण, मणि प्रभृति अलङ्कारका नाम सुनते हैं (१।१२१।१४)। सुक्तादिका व्यवहार भी चलता था (१०।६४।११)। निष्ककारी (सोनार) अलङ्कार बनाते थे (८।४७।१५)। वाण (१।८५।१०), चोषी (२।३४।१३) कर्करि प्रभृति वीणा-जैसे वाद्ययन्त्र थे। नर्तकी नृत्य-गीत करते रही (१।८२।४)। रङ्गमञ्चपर पुत्रिका (पुतली) का नृत्य भी होता था (४।३२।२३)। आर्य जर्ण, मेषलोम, चर्म और वस्त्र पहनते

रहे। स्त्रियां वस्त्र बुनती थीं (२।३८।४)। वयन-कार्य रात्रिको होते और ताना-बाना दो स्त्रियोंके द्वारा चलते रहा (२।३।६)।

रमणी रन्धनकार्यमें नियुक्त थीं। आर्य—दधि-मिश्रित सक्तु, भृष्टयव, पिष्टक (३।५२।६), घृत, दुग्ध, दधि, मधु, अपूप, पक्कफल, शाकादि और चौरपक्क अन्न खाते रहे। समय-समय मांसका भोजन भी होता था (५।२८।७, ८।७७।१०, १०।७८।६, १०।८६।१४)। अतिथियोंको सुख देनेके लिये पशुवलिको प्रथमी रहीं (१।३१।५)।

शीत-प्रधान देशमें रहनेसे कुछ लोग सुराप्रिय भी थे (१।११६।७)। सोमरस-प्रसृत आर्योंके धर्म-कर्ममें परिगणित है।

वाणिज्यके लिये देशभ्रमण और समुद्र गमन करते रहे (४।५५।६)। क्रयविक्रयका नियम जो ठहरता, वह टूटता न था (४।२४।८)। सुद्राका प्रचलन रहा (५।२७।२)। पण देखो।

आजकलकी तरह उस समय भी पक्षिग्राममें कृषिकार्य होता था। कृषक खेती करते रहे (१०।११ सूक्त)। कुशून (खत्ती) में यव रखते थे (१०।६८।३)। पशुके मध्य अश्व, बड़वा, हस्ती, उष्ट्र, मेष और बहन-कारी कुकुरको प्राचीन आर्य पालते रहे।

वैदिक युगके आर्योंको सूर्यकी दैनिक गति (१।१२३।४), सौर द्वादश अर (राशि), उत्तरायण तथा दक्षिणायन, प्राचीन मास और ऋतुका विषय अवगत था (१।१६४ सूक्त)। आकर्षण-शक्तिका विषय भी समझते थे (८।८५।१—१८)।

ज्योतिष शब्दमें विस्तारित विवरण देखो।

ओषधिका गुणागुण जानते और रोगादिकी चिकित्सा चलाते रहे। आयुर्वेद देखो।

ऋक्संहितामें युगादिका नाम नहीं निकलता। यजुःसंहितामें कृत, त्रेता और द्वापर शब्द आया है। वाजसनेयसंहिता (३।०।१८) में यह विषय विद्यमान है। ऋक्संहितामें नरकका नाम अविदित रहा। अथर्वसंहितामें (१२।४।३६) में 'नारक' शब्द मिलता है।

पृथिवीके सर्वप्राचीन ग्रन्थ ऋक्संहितासे हम आर्यों-
की रीति और अवस्थाका वर्णन पहले ही लिख चुके
हैं। अपर वेद और ब्राह्मणमें आर्योंकी रीतिनीति-पद्ध-
तिका वृत्तान्त जो दिया, वह नीचे प्रकाशित किया है,—

ब्राह्मणोंमें प्रतिग्रहादिसे जीविका चलाना,
दानादिसे धनादिको त्यागना, विद्याबलसे सर्वतत्त्व
ठहराना और राज्यरक्षणार्थ युद्धके लिये राजाज्ञासे
प्रसन्नतापूर्वक आगिको पेर बढ़ाना चार धर्म
विशेषतः देख पड़ते थे (ऐतरेयब्रा० ७।५।३)। क्षत्रिय
बलवान्, प्रतिष्ठित, आश्रित-रक्षक, सर्वोपकारी,
तेजस्वी और यशस्वी रहे। वैश्य अन्यको कर देते
और अन्यका धान्यादि तथा यथाकाम जेयत्त्व रखते थे।
शूद्रोंमें धावकत्व, कर्मकारत्व और प्रसन्नतापूर्वक शरीर
प्रदत्त विद्यमान रहा। (ऐतरेयब्रा० ७।५।५-६)

ब्राह्मणोंका बलकर भक्ष्य सोम, क्षत्रियोंका न्यग्रोध,
उदुम्बर, अश्वत्थ तथा प्लक्ष फल, वैश्योंका दधि और
शूद्रोंका पानीय था (७।५।३-६, ७।४।१)।

ब्राह्मणोंके आयुध यज्ञ रहा। अग्निसे ओदन
चलाते, कपालसे पुरोडास चढ़ाते, अग्निहोत्र-हवनोसे
देवताको उदक पिलाते, शूर्पसे धान्य उड़ाते, कृष्णा-
जिनपर आसन जमाते, शम्यामें हविः बनाते, उलू-
खलमें मुशलसे अन्न कुटाते और दृषद् एवं उपलमें
उपस्कार पिसाते थे। (तैत्तिरीयसं० १।६।८।२-३)
क्षत्रिय अश्व तथा रथपर चढ़ते और द्रुप एवं धनुःसे
लड़ते थे।

ब्राह्मणोंकी पंक्तिमें शूद्रोंका उपवेशन भी दोषावह
रहा (ऐतरेयब्रा० २।३।१)। यज्ञकाण्ड और गो-
दोहनादिमें उन्हें कोई अधिकार न था (तैत्तिरीयब्रा०
१।२।३)। यज्ञदीक्षित और देवभावापन्न यजमान
अर्थात्त्रय शूद्रोंसे बोल न सकते रहे। (शतपथब्रा०
३।१।१।१०) मूर्खोंका सामीप्य भी क्लेशकर समझा
जाता था (ऐतरेयब्रा० ३।३।६)। किन्तु उनसे
दुर्व्यवहार करनेवालेके लिये प्रायश्चित्त शासन विहित
था (शुक्लयजुःसं० २०।१७।१)। उन्नतिके अर्थ शूद्रोंको
यथायोग्य उपदेश देना पड़ता था (ऐतरेयब्रा०
२६।२।१)।

चारो वर्णोंके हितप्रार्थनमें साम्य (यजुः-
संहिता १८।४।८।१), किन्तु आह्वानप्रयोगमें पार्थक्य
रहा। ब्राह्मणको 'एहि', क्षत्रियको 'आगहि',
वैश्यको 'आद्रव' और शूद्रको 'आधाव' कहकर बोलाते
थे (शतपथब्रा० १।१।४।१२)।

वाग्व्यवहारपर भी बहुत उपदेश दिया गया
है। वाक् सरस्वती है (ऐतरेयब्रा० ३।१।१, ३।१।२,
३।३।१३)। वाक्के सत्य और अनृत दो स्तन होते
हैं (४।१।१)। कौन मनुष्य पूर्ण रीतिसे सत्य कह
सकता है! देव सत्य और मनुष्य अनृत बोलते हैं
(१।१।६)। विद्वानोंको सत्य ही बोलना चाहिये
(५।२।८)। मनुष्योंमें सत्य निहत रहता है।
आंखको देखी कहना उचित है। मूर्ख वेदेखी कहते
और सुनते हैं (१।१।६)। सत्य नहीं—अनृत लोगोंको
भार डालता है (४।१।१)। सच बोलना उचित है
(१।१।६)। इतर वाक्य असुर्य होता है (३।५।५)।
मनसे वाक् निकलती और अन्यमना होनेपर असुर्य
लगती है (२।१।५, ४।४)। दृप्त और उन्मत्तकी कही
वाक् राक्षसी ठहरती है (२।१।७)। वाक् और मनः
दोनों वर्तनी हैं। वाक् और मनसे ही यज्ञ होता
है (५।५।८)। अद्वा पत्नी और सत्य यजमान है।
अद्वा और सत्यका अत्युत्तम मिथुन बना है। अद्वा
और सत्यके मिथुनसे सत्र लोक जीते जाते हैं
(७।२।८)। झूठ बोलनेवाले पापी होते हैं। सच
कहनेवालोंको परमेश्वर आशीर्वाद देता है (५।१।१)।

आर्योंका विवाह हितके लिये होता था। विना
पुत्रके संसार शून्य रहता है। पिता ही अपनी पत्नीके
गर्भमें प्रवेशकर पुत्ररूपसे पुनः प्रकाशित होता है
(७।३।१)। उत्पादित पुत्र वंशपरम्परासे पिताके
लिये अमृतरूप उपहार है। ब्राह्मण, वैश्य या शूद्रके
स्वभावका पुत्र क्षत्रिय नहीं चाहते (७।५।३)। एक
वा तदधिक जायाके जीते भी जायान्तर-परिग्रहण
दोषावह न रहा। किन्तु जीवत्पत्नीक पुरुषका क्रमशः
युगपत् वा बहुविवाह समाजमें अमान्य होता था
(३।५।३)। जीवत्पतिका पत्यन्तर-ग्रहण कर न सकते
रहते। मृतपतिका वा त्यक्तपतिकाका पत्यन्तर-ग्रहण

आचारविरुद्ध न था। किन्तु पुराण-इतिहासादिके आख्यानसे विदित होता, कि पत्यन्तर-ग्रहण नीच-जातिमें ही चलता था। स्वयम्बर-सभाके समागत पाणिग्रहणाधिकारियोंमें पणजयकारीको कन्या दी जाती रही (४।२।१)। स्त्रियां भी साधारण पण्डित होती थीं (५।५।४)।

स्रुषा (बह्म) श्वशुरसे लज्जा रखते रही (३।२।११)। सोदर्य भगनी भ्रातृजायाके अनुगत थीं (३।३।१३)। सोदर्य भगिनीका अनात्मियत्व और अन्यकुलसे लब्ध जायाका आत्मियत्व पारम्पर्यागत है।

अपत्नीक भी अग्निहोत्र कर सकता था (७।२।८)। अग्निहोत्रका दृष्ट और अदृष्ट फल मिल जानेसे अग्निहोत्रियोंको अपने अपने गृहमें अग्निरक्षण कर्तव्य है (ऋक् १०।१११।१)। हिममें रहनेवाले प्राचीन आर्योंको हिमपातका क्लेश छोड़ानेके लिये स्व-स्व गृहमें अग्निरक्षणसे सुख मिलता था (वाजसनेय-सं० २।३।१०)। अग्निमें विविध सुगन्ध्यादि द्रव्य डालनेका विधान रहा (ऐतरेयब्रा० १।५।२)। सुगन्ध्यादि द्रव्यसे गृहजात वायुदोष दब जाता है। अग्निमें आन्य, अशिरपयः, अन्न, पुरोडास, सोमादिका आहुति छोड़नेसे तद्वाष्प-प्रसृत धारा गुणयुक्त हो जाती है। स्वर्गादि अदृष्ट श्रुति-गम्य है। इससे स्फुट प्रतीत हुआ, कि आर्योंका नित्य अग्निहोत्रानुष्ठान दृष्टादृष्ट फलकी सिद्धिके लिये ही चला रहा। अग्निहोत्रानुष्ठानमें प्रातःस्नान कर्तव्य है (७।२।८)। आग्रयणसे विना यज्ञ किये नवाचप्राशन होने, पाकपात्र टूटने, पवित्र बिगड़ने, हिरण्य खो या चोरा जाने, किसी जीते-जागते आत्मियके मरनेका समाचार झूठ-झूठ सुनने और जाया वा स्वगोत्रके यम-सन्तान उपजने पर प्रायश्चित्त करना चाहिये। सूतक और अन्नप्राशन करनेवालोंकी भी प्रायश्चित्त विहित है। होमादिरूप प्रायश्चित्तसे ही तथाविध पाप छूट जाते हैं। अग्निहोत्रादि अनुष्ठानमें प्राक्स्नान विहित होते भी किञ्चित् भोजन निषिद्ध नहीं, प्रत्युत कुछ खाकर ही काम करना चाहिये (४।२।१)।

मृत देह न मिलनेसे प्रपञ्चरीके दाहकी व्यवस्था

रही। क्योंकि उसके अभावमें निन्दाभाजनत्व अवश्य-आवी था (७।२।८)। देवों, पितरों और मनुष्योंकी अर्चना न करनेसे पुरुष अनङ्गा वा असत्य समझा जाता रहा। अजाके गलस्थानको तरह उसका जन्म निरर्थक जाता है। इसीसे तादृश पुरुषकी निन्दा होती है।

आर्यका उपास्य देव—निघण्टुमें द्युस्थानके भाजनपर षड्विंश पद है। प्रधानतः उनका स्थान द्युलोक है। देवराजने भाष्यमें रश्मिको देव कहा है (१।३।१।१२)। ऋक् (१।८।१२), निघण्टु (५।६।२६) और निरुक्त (१२।४।५, १३।१।११)में उक्त विषय स्पष्ट रूपसे बताया है। रश्मि जन्म-जनक भावमें पार्थिव अग्नि, विद्युत् और सूर्यसे अभिन्न है (निरुक्त १२.३।६, ७८)। यास्काचार्य व्यक्तरूपसे कहते, कि पार्थिव अग्नि, विद्युत् और सूर्यके भक्तिसाहचर्यसे अनेक देवोंकी अर्चना करते हैं (७।२।१, ३।१०)।

पितर—निघण्टुमें अन्तरिक्ष-स्थानके भाजनपर द्वादश पद है। प्रधानतः अन्तरिक्ष लोक ही उनका स्थान है (४।३।५)। पितर तीन प्रकारके होते हैं,—अवर, परास और मध्यम। परास दुःस्थ अन्तरिक्षचारी हुये और देवयान मार्गसे स्वर्ग गये हैं (छान्दोग्य उप० ५।१।२)। मध्यम द्यावापृथिवीके अन्तर ठहरे और पित्रयान मार्गसे चन्द्रलोक पहुँचे हैं (छान्दोग्य ५।१०।३-६)। अवर भूपृष्ठस्थ अन्तरिक्षमें रहते और निरन्तर पृथिवीपर ही चला-फिरा करते हैं (५।१०।८)। त्रिविध पितरोंमें अवर अप्राप्तमार्ग हैं। असक्तत्वावर्तित्वमें कहीं दीर्घकाल ठहर न सकनेसे उनका पित्रलोकमें रहना असम्भव है। फिर परासोंकी अवस्था भी ऐसी ही है। चन्द्रलोक वा पित्रलोक जा पहुँचनेसे मध्यम ही प्रधान कहे हैं। अतएव अन्तरिक्ष स्थानमें ही पितर पद पठित है। यास्क सुनिने भी उक्त विषयको ही पुष्ट किया है (११।२।५५) यम पितरोंके राजा हैं (ऋक् १०।१४।१५)।

तत्त्वतः अन्नरसके साहाय्य स्वजनक देहपर प्रविष्ट जीव रेतःके अन्तःस्थ प्रथम गर्भमें पहुँचता और रेतःके योनिमें स्थित होनेपर प्रथम जन्म पाता है।

फिर वही रेतः माद्वयोनिमें द्वितीय गर्भाकारसे परिणत होता और गर्भके भूमिपर गिरनेसे पुरुष द्वितीय बार उपजता है। मरनेपर पित्रादि अन्यतम शरीर पाना ही द्वितीय जन्म है (ऐतरेय-आ० २।५।१)। शतपथब्राह्मणमें भी मृतपुरुषका पित्रादि देह पाना कहा है (१।४।७।२।१-५)। पित्रा एवं गान्धर्व गुणकर्मादिसे परस्पर किञ्चित् भेदयुक्त अन्तरिक्षलोकग रूप है। इसीप्रकार ब्राह्म तथा प्राजापत्य द्युलोकग और देव एवं मानुष ऐहिक रूप है।

मनुष्य—मनुष्य शब्द ऐतरेयमें निर्वचन कहा है (३।३।८)। यास्क मनुके अपत्योंको मनुष्य समझते हैं (निरुक्त ३।२।१)। शतपथब्राह्मणमें देवों, पितरों और मनुष्योंका एकत्र ही विशेष परिचय तथा उपासना-प्रकार दिया है (२।४।२।१-२-३)। ऐतरेय देवों, पितरों तथा मनुष्योंका अर्चन कर्तव्य समझता है। अग्निहोत्रादि श्रौत तथा विश्वदेवादि गृह्यसे देवों, अन्ना एवं अन्न-जलादि-प्रदानात्मक आह्वादिसे पितरों और निष्कपट भाव-प्रदर्शन, आज्ञापालन, समादर, पक्वापक अन्नादि आहार प्रदानसे मनुष्योंका अर्चन होता है।

अतिथिसत्कार न करनेवाला बड़ा पापी समझा जाता था (ऐतरेयब्रा० ५।५।५)। अतिथिसत्कारमें पशुघात प्रचलित रहा (१।३।४)। मांसभक्षणका विधि भी अन्यत्र निकलता है (२।१।३)। अमेध्य मांसके भक्षणमें दोष और मेध्यमांस भक्षणमें अदोष था (२।१।८)। पुरुष, किम्पुरुष, गौर, गवय, उष्ट्र तथा शरभ छः अमेध्य और अश्व, गो, मेषादि एवं पृथिवीभव पांच मेध्य हैं। पृथिवीभवसे ब्रीह्यादिका ग्रहण होता है (२।१।८)। अजके मांसका प्रचलन बहुत रहा। वृथा पशुघातकी निन्दा है (७।१।१)।

अतिथि-सत्कारकी भांति अन्य-अन्य उपदेश भी मिलता है। स्थान-विशेषमें द्रव्यविशेषकी दानक्षिप्रता विहित है (६।२।५)। सर्व विचार्य कर्ममें शुर्वादि वा स्वामीकी अनुज्ञा ग्रहणीय है (२।५।६)।

ऋत्विज्यका प्राग्रस्य और अग्रान्य याजनका निषेध रहा (६।४।८)। पाप पुरुषके याजनका निषेध

अन्यत्र भी मिलता है (४।४।३)। जैसे पाप-पुरुषका अग्रान्यत्व विहित, वैसे ही आर्त्विज्यके लिये पापपुरुषका वरण निषिद्ध है (७।५।१)। फिर आर्त्विज्यके लिये लोभादिसे आहतचित्त, तेजःशून्य, मात्सर्य-पूर्ण, तमःप्रकृति, पापानुष्ठाता और दुर्मति-को भी वरण करना न चाहिये (३।५।२)। मूर्खका आर्त्विज्य दूषण कहा है (८।२।७)। धनके लोभसे जो आर्त्विज्य करता और यजमानको चाटु कमसे रिक्ता आर्त्विज्य पाता उसका कृतकर्म भक्षित अर्थात् सुखमध्यमें प्रविष्ट-जंसा दूषित ठहरता है। जो समाजके आधिपत्य, ग्रामके प्रभुत्व अथवा किसी दूसरे हेतुसे यजमानको डरा आर्त्विज्य लेता, उसका कृतकर्म गौण अर्थात् गलाधःकृत जंसा दूषित होता है। फिर पापकर्मा विद्वान्का कृतकर्म वान्त अर्थात् छर्दित-जैसा देवताओंके लिये घृण्य है। ऐसे त्रिविध ऋत्विज्यकी वरण करनेकी आशा भी यजमान न रखे। ८।२।७

राजाको पुरोहितकी आवश्यकता बहुत पड़ती थी। केवल ब्राह्मण ही पुरोहित हो सकते रहे (८।५।१)। क्षत्रिय और वैश्यको पुरोहित ही दीक्षा देता था (७।४।७)। बुद्धिमान् आर्योंमें पुरोहित रहनेका विषय कहाँ, पृथिव्यादि जडोंके भी पुरोहित थे (८।५।४)। वेदविद् ब्राह्मणोंका ही पुरोहित्य व्यवस्थापित है (८।५।३)। पुरोहित यजमानका मङ्गल मनाते थे (४।५।७, ८, ९)। वायादि देवोंके वृहस्पति पुरोहित-जैसे राजपुरोहित भी पुरःस्थित, प्राधान्यभाक् और उपकारी रहे। पुरोहितोंका कोपनत्व संवरण कर यजमानोंको उसके उपशमनका यत्न लगाना पड़ता था (४।५।७, ८।५।१)। राजपुरोहित असाधारण सम्मान पाते, राजगृहमें प्रबल रहते और विशेष शक्ति रखते थे।

कर्मकारयिताओंको दक्षिणा देनेकी अतिकर्तव्यता रही (६।५।८)। किसी हेतु परित्यक्त होनेपर फिर दक्षिणा ली न जाती थी। यशोनिष्ठा भी अति प्रबल रही (५।४।४)। किसी दानादि कर्ममें अपनी अशुभताका अभिमान रखनेसे पाप लगता था (१।३।२)।

हस्ती, अश्व, गवादि धनके दानकी प्रशंसा होती रही (८।४।८)। आत्रेय और अङ्गराजकी गायामें दासी-दानकी बात भी लिखी है (८।४।८)। हरिश्चन्द्रके पुत्र रोहितने शतमुद्रात्मक धन दे शुनःशेपको मोल लिया था (७।३।३)। पुत्रोंका पित्रदायभाक्त्व भी सूचित है (५।२।८)।

वाणिज्यार्थ समुद्रयानपर चढ़ महासमुद्रमें परि-भ्रमण भी प्रचलित था (६।४।५)। वनदस्यु उपद्रव उठाते रहे (८।२।७)। नागरिक ग्रन्थिछेदकोंका विषय दृष्टान्त-विधिसे कहा है (८।२।७)। चोरोंकी निन्दा होती थी (५।५।५)।

एकराट् सार्वभौम संविज्ञात रहा (८।४।१)। सार्व-भौम नरपति सर्व मित्रराज्योंसे उपढौकन लेते थे (७।५।८)। महाराजकी प्रियतम भार्यासे प्रजा आवेदन करते रही (३।२।११)। राजभ्राताओंका राज-सह-चरत्व व्यवहार था (१।३।२)। राजधानीके परिरक्षणको प्राकारनिर्माणकी प्रथा रही (१।४।६)। असुरोंके उपद्रवसे यज्ञ बचानेको देवीने अग्निप्राकार बनाया था (२।२।१)। प्रबलतर शत्रु वोंके राज्यपर आक्रमण करनेसे प्रजा परस्पर मन्त्रणा लगाती, स्वतः लड़नेको तैयार हो जाती, एकमतसे प्रतिज्ञा करती और राज-रक्षि-रक्षित गृहमें पुत्रकलत्रादि रख युद्धमें आगे बढ़ती थी (१।४।७)। प्रियवसुके दानादिरूप साम कौशलसे रक्तपात बचा स्वकार्यके उद्धारकी चेष्टा भी चलते रही (१।५।१)। परस्पर एकमत्य रहनेको आज्य छू लोग प्रतिज्ञा करते थे (ऐतरेयब्रा० १।४।७, शतपथब्रा० २।४।२, तैत्तिरीयसं० १।२।११, ६।२।२-६)।

सेनापतिके भागसे शत्रुकी सेनापर आक्रमण करनेका उपाय निकालते रहे (३।४।१)। युद्धकालमें राजसाहाय्यकारी प्रजा और सामन्तको प्रसादलाभ होता था (३।२।८)। युद्धमें जय होनेपर राजाकी मर्यादा बढ़ते रही (३।२।१०)। पराजितका बहुमूल्य-रत्नादि धन समुद्रतीर प्रोथित होता था (५।२।६)। इससे स्फुट प्रतीत हुआ, कि वैदिक समय बहु-मूल्य हीरकादिका व्यवहार रहा।

सर्व सभ्यदेशोंमें विद्यमान उपविमोक व्यवहार

भी प्रचलित था (४।४।५)। दूराध्वगमनमें उपवि-मोककी आवश्यकता पड़ती रही (६।४।७)।

स्कन्धसे भारवहनको वीवर्ध (बंहगी)का व्यवहार था (८।१।१)। वीवर्धका दण्ड प्रायः बांससे बनते रहा (१।२।५)। सिया हुआ सभ्यजनोचित अङ्गरक्षा-दिका (अंगरखा कुरता वगैरह का) व्यवहार चलता था (३।२।७)। कर्मठ, अमकारी तथा उद्योगीकी प्रशंसा और अलस, अमकातर एवं उद्योग-हीनकी निन्दा सुनते हैं (७।३।३)।

पृथिवी, द्यावापृथिवी, वृष्टि, उदकके अतिज्ञास-वृद्धिका-अभाव और द्यावापृथिवी उभयके प्रतिष्ठाके सम्बन्धमें विज्ञान था (४।४।५)। विवाह-सम्बन्ध-युक्त स्त्री-पुरुषकी भांति द्यावापृथिवी उभय लोक परस्पर सम्बद्ध रहे। सूर्य ही वृष्टि और तापका हेतु समझा जाता था (४।४।५)। पृथिवीके अमरण, सूर्यके उदयास्त और अहोरात्रके विज्ञानकी बात भी सुन पड़ती है (३।४।६)। सूर्य पृथिवीको घूमानेवाला माने जाते रहे (२।४।१०)। सूर्यको अचल समझते थे (५।१।११-३)। छःवो लोकके मध्य ईश्वरने सूर्यको ताप देनेके लिये रखा है। चन्द्र पृथिवीका उपग्रह होनेसे पृथक् माना नहीं गया। सर्व लोकोंपर रहनेसे सूर्यका उत्तरत्व विदित होता है (४।३।४)। ऋक् और यजुःमें सूर्यको पृथिवीका धारण करने-वाला कहा है (ऋक् ७।८।१३, शुक्लयजुः ५।१।६)। ताप देनेसे सूर्य जीवनका हेतु है (शतपथब्रा० ८।७।२।११)। चन्द्रको देवसोम कहते-थे (ऐतरेयब्रा० ७।२।१०)। कारण सूर्य अपने किरणसे उसका अमृत पीता है। चन्द्रमें मर्त्यलोककी छायासे कलङ्क देख पड़ता है (४।४।५)।

वायु ही प्राण है (३।२।१)। वह सूर्यसे उत्पन्न है (१।२।१)। अग्नि देवोंका अवम है (१।१।१)। उसीको विज्ञानपर समझना चाहिये (३।१।४)। अग्निही ओषधि है (१।२।१)। जलसे अभिषेक और दीक्षा दोनोंका काम चलता है (१।१।३) इस लोकमें जल ही अमृत है (८।४।६)। सोम और अग्निके भागसे जल बना है (ऋक् १।२।३।२०)। जलमें

ज्योतिः प्रतिष्ठित है (तैत्तिरीय आरण्यक ८।८)। विष्णु परम होते हैं। उनका त्रिविक्रमणादिक अष्ट आम्नात है (अथर्ववेद १।८।३।७-१२)। विष्णु सूर्यको कहते हैं (तैत्तिरीयसं० १।२।१३।२)।

आर्योंको गर्भादिका विज्ञान भी अच्छा रहा। मृत जन्तुका आतिवाहिक देहधारण और पुनर्जन्म आम्नात है (१४।७।२।४)। ब्राह्मणको भेषज्यका निषेध है (तैत्तिरीयसं० ६।४।८।२)। भेषजकरण कालमें ब्राह्मणको बैठे रहना चाहिये। (ऋक् १०।८५।४६)। ब्राह्मणैतर साधारण जातिकी स्त्रियां देवरसे कामना करती रहीं (ऋक् १०।४०।२)। उस समय बहु विवाह प्रचलित रहते (१।१०।५।८) भी प्रायः पुरुष एक ही बार व्याहे जाते थे (ऋक् १।१०।५।२)।

ऋग्वेदके समय आर्य राजा (१।४।०।८, १।१६।१ इत्यादि), पूरपति (१।१७।३।१०), ग्रामणी (१०।६२।११) भिन्न भिन्न उच्चपदपर प्रतिष्ठित थे। राजा साधारण-पर कर लगाते (१।७०।५), शासनप्रणाली सुनियमसे चलाते (१।१७।३।२) और गमन करते समय अमात्य-वेष्टित हो गजस्कन्धपर आसन जमाते रहे (४।४।१)। सुवर्ण सज्जाविशिष्ट अश्व (४।२।८) और युद्धमें युद्धाश्व, अश्वारोही सेन्य प्रभृतिका व्यवहार भी था (४।३।८।५)। प्रधान व्यक्तियोंको सुति सुनना अच्छा लगता रहा (१।२७।१२)। युद्धकालमें राजा एकत्र होते थे (१०।८७।६)। शान्ति रहते ऋषि संसारी, किन्तु युद्ध-काल योद्धा रहे (१।२०।१)। राजकन्याओंसे ऋषियोंके विवाह होते थे (५।६।१।८)। वीर पुरुषका आदर बहुत रहा (१।३।१।६)।

राजकालकी भांति उस समय भी उत्कृष्ट, निष्कृष्ट और मध्यवित्त तीन श्रेणीके लोग रहे (४।२।५।८)। कोई धनके गौरवमें मत्त रहता और कोई पेटके लिये अन्न मांगते फिरता था (१०।११७ सूक्त)। मध्य-वित् मनुष्य वाणिज्य-व्यवसाय द्वारा सुखसे जीविका चलाते रहे (१।७८।१)। लोग नानाप्रकार कर्म करते—कोई पुरोहित, कोई खोता (कवि), कोई वैश्य, कोई तक्षक (बढ़यी), कोई लोहकार, कोई

नापित, कोई काष्ठिक (लकड़ी काटनेवाले), कोई रथप्रस्तुतकारी, कोई धातु वा अस्त्रादि निर्माणकारी, कोई नौकाकारी, कोई मांसिक और कोई अश्वके गात्रघीतकारी थे (१।१३।५।५, ४।२।१४, —१६।२०, ५।१०।२।८)।

प्राचीन ऋषियोंसे परवर्ती आर्योंके आचार, व्यवहार, और धर्मकी प्रणाली—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, वेद, उपनिषद, जाति, सभाया प्रभृतिमें द्रष्टव्य है।

निश्चित रूपसे कहा जा नहीं सकता, कितने दिनसे आर्य नामके बदले 'हिन्दू' शब्द इस देशमें चलता है। किन्तु ब्रिसम नदी प्रवाहित सिन्धु-प्रदेशमें वैदिक आर्योंका रहना प्रथम ही प्रमाणित हो चुका है। वही सुप्राचीन आर्यवास रहा। आर्योंके देहो। पारसियोंके 'अवस्ता' ग्रन्थमें उसीको 'इफ्त हिन्दु' लिखा है। इसलिये प्राचीन पारसियोंके 'हिन्दु' शब्दसे वर्तमान 'हिन्दू' नाम निकला मालूम होता है। हिन्दू देखो।

(पु०) २ खशुर, जोड़ूका बाप। ३ खामी, मालिक। षष्ठ परिच्छेदमें लिखते, किसे-किसे आर्य कह सकते हैं,—

“राजनिष्ठविभिर्वाचः सोऽपत्यप्रत्ययान्तं च।

लोच्छया नामभिर्विप्रैर्विप्र आर्येति चेतरे ॥

वयस्येत्यथवा नात्वा वाचो राज्ञा विदूषकः।

वाचो नटोऽस्त्रधारवाद्यानात्वा परस्परम् ॥” (साहित्यदर्पण)

ऋषि राजासे राजन् अथवा अपत्य प्रत्ययान्त दाशरथे, पौरव, पाण्डव प्रभृति-जैसे शब्द द्वारा सम्भाषण करें। विप्र विप्रसे नाम अथवा अपत्य प्रत्ययान्त कौशिक, कुशिकनन्दन सदृश पदद्वारा बोले। दूसरे लोग ब्राह्मणको आर्य कहें। राजा विदूषकको वयस्य वा विदूषक पुकारें। नट वा अस्त्रधार नटोसे आर्य और नटी, नट वा अस्त्रधारसे आर्य वाक्य द्वारा बताये।

कर्मधारय समासमें 'ब्राह्मण' और 'पुत्र' आगे आनेसे आर्य शब्द प्रकृतिस्वर होता है। “आर्यो ब्राह्मण-कुमारयोः। पा ६।२।५।८। “आर्यब्राह्मणः। आर्यकुमारः।” (सिद्धान्तको०) आर्यक (सं० त्रि०) आर्य एव, स्वार्थे कन्। १ पूज्य, रत्नतद्धार (पु०) संभ्रायां कन्। २ पितामह, ऋद्ध,

दादा। ३ नागविशेष। ४ नृपति विशेष। यह गङ्गरियेसे राजा बन गये थे। (स्त्री०) ५ पिण्डपात्रादि पितृकार्य। (स्त्री०) आर्यका, आर्यिका। आर्यगृह्य (सं० त्रि०) आर्यगृह् पञ्चार्थे क्वप्, ६-तत्। पदाख्येतिवाद्यापचेड च। पा ३।१।१२। “पचे भवः पचाः दिगादिभ्यो यत्, आर्यगृह्य तत्पचाश्रित इत्यर्थः।” (सिद्धान्तकौमुदी) १ आर्यपचाश्रित, जिसे इज्जतदार आदमी खातिरके साथ ले। २ विनीत, खुश-असलूब, लायक। आर्यता (सं० स्त्री०) माननीय आचरण, खुश-असलूबी, भला बरताव।

आर्यतारादेवी (सं० स्त्री०) बौद्धतन्त्रोक्त शक्तिविशेष। महायान सम्प्रदाय इन्हें सर्वप्रथम और श्रेष्ठ शक्ति बताते हैं। बुद्धगया, नासिक, अजण्टा, औरङ्गाबाद, नेपाल और कांडेरीमें आर्यतारादेवीकी मूर्ति प्रस्तरमय विद्यमान है। नेपाल और कांडेरीके गुहामन्दिरमें यह अवलोकितेश्वरके पाखंडपर प्रतिष्ठित हैं। दक्षिण हस्तमें पुष्प और वाम हस्तमें मुकुल है। बौद्ध इन्हें मानवकी मुक्तिविधायिनी मानते हैं।

(Vassilief Bouddhisme, p. 125)

आर्यत्व (सं० स्त्री०) आर्यता देखो। आर्यदेव (सं० पु०) नागार्जुनके एक शिष्य। ई०के १म शताब्द इन्होंने दक्षिणात्यमें किसी ब्राह्मणके घर जन्म लिया था। शतसमाधि एवं चतुःशती गाथा नामक ग्रन्थ इन्होंने बनाया। किसी तीर्थिकने पेट फाड़कर आर्यदेवको मार डाला। दूसरा नाम कानादेव था।

आर्यदेश (सं० पु०) आर्यभूमि, आर्योंके रहनेका मुल्क। आर्यदेश (सं० त्रि०) आर्यदेश-जात, जो आर्योंके मुल्कसे निकला हो।

आर्यधर्म (सं० पु०) आर्याणां धर्मः, ६-तत्। सदाचार, दुरुस्त अतवार, अच्छा चलन। सरस्वती और दृशद्वतीनदीके बीच लोग जिस आचारपर चलते, उसे आर्यधर्म कहते हैं। (सं० ३।१८)

आर्यपथ (सं० पु०) आर्याणां पन्थाः, अजन्त ६-तत्। अकपूरधूः पथालानचे। पा ३।४।७४। सदाचार, अच्छा चलन।

आर्यमार्गादि शब्द भी इस अर्थमें प्रयुक्त होता है।

आर्यपुत्र (सं० पु०) आर्यस्य पुत्रः, ६-तत्। १ उपाध्यायका पुत्र, मुर्षदका पिसर। नाव्यभाषामें खामीको आर्यपुत्र कहते हैं। सम्मानार्थे ज्येष्ठभ्राताके तथा अपने पुत्र और साधारणतः युवराजको इस नामसे सम्बोधन करते हैं।

आर्यभट (सं० पु०) १ प्रसिद्ध ज्योतिष-ग्रन्थ-रचयिता। इन्होंने कुसुमपुरमें अपने वासस्थानको निर्देश किया है,—

“ब्रह्मकुशशिशुधन्वगुरविकुशगुरुकोणभगणान्नमस्तव्य।

आर्यभटकुिह निगदति कुसुमपुरेऽभ्यर्चितं ज्ञानम्॥” (गणितपाद १)

अपने बनाये आर्यसिद्धान्त ग्रन्थमें लिखा है,—

“षट्पद्मानां यष्टिर्येदा व्यतीतास्त्रयश्च युगपादाः।

त्रयधिका विंशतिरब्दास्तदिह मम जन्मनोऽतीताः॥”

(कालक्रियापाद १०)

अर्थात् तीन युगके बाद ६० × ६० = ३६०० वर्ष बीतनेपर हमारे जन्मके २३ वत्सर हुये थे।

उक्त वचनानुसार (३६००-२३) कलिके ३५७७ वत्सर बीतनेपर आर्यभटका जन्म हुआ था। ऐसी अवस्थामें इनका जन्मकाल ४७५ ई० आता है।

आर्यभट इस प्रकार संख्या गणना करते थे,—

क=१, ख=२, लं=५, अ=१०, ट=११, न=२०, प=२१, म=२५। य=न+म। सिवा इसके अपर व्यञ्जनवर्ण प्रत्येक १० अर्थात् र कहनेसे य+१०=८० होते रहा। इसी प्रकार च=७०, ष=८०, स=९० और ह=१००के ठहरता था। प्रत्येक ऋस्वस्वर दशगुणके हिसाबसे बढ़ता है। जैसे—ह=१००, गि=३००, चि=६००, ड=१००००, गु=३०००० इत्यादि। इसी प्रकार ४४ लिखनेसे घर वा ब्र होता है। बीजगणितको आर्यभटने ही आविष्कार किया है।

ज्योतिष-गणना ऐसी रही,—रविका ४३२००००, चन्द्रका ५७७५३३३६, पृथिवीका १५८२२३७५००, शनिका १४६५६४, गुरुका ३६४२२४ और कुजका भगण २२८६८२४ है। अशु और बुधका भगण रविके समान लगता है।

चन्द्रोच्च ४८८२१८, अशुका १७८३७०२० और बुधका ७०२२३८८ है। चन्द्रका पात २३२२३६ है।

२ ग्रन्थकारविशेष। यह द्वादश ई० शताब्दीमें वर्तमान रहे। पूर्वोक्त आर्यभट्ट प्रभृतिका मत पकड़ ग्रन्थ बनाये हैं। विस्तारित विवरण Journal of Royal Asiatic Society of Great Britain and Ireland, N. S. Vol. I में देखो।

आर्यभाव, आर्यधर्म देखो।

आर्यमहावीर—जैन-शास्त्रोक्त सिद्धपुरुष विशेष। यह शत वत्सर जिये और जैन संवत् २४८ के बाद मर गये।

आर्यमार्ग, आर्यपथ देखो।

आर्यमिश्र (सं० पु०) १ साधुजन, महानुभाव, अश्वराफ, भलामानस। (त्रि०) २ प्रसिद्ध, सर-फराज, मशहूर। बहुवचनमें यह शब्द साधुजन-मण्डलीका द्योतक है।

आर्ययुवन्, आर्ययुवा देखो।

आर्ययुवा (सं० पु०) आर्यकुमार, आर्य कौमका गुरु या पट्टा।

आर्यराज (सं० पु०) नृपतिविशेष।

आर्यरूप (सं० त्रि०) १ केवल आर्यका आकार रखनेवाला। २ दम्भी, कपटी, रियाकार, मक्कार।

आर्यलिङ्गिन् (सं० त्रि०) दम्भी, कपटी, दगाबाज, जो भले आदमीकी सूरत बनाये हो। (पु०) आर्य-लिङ्गी। (स्त्री०) आर्यलिङ्गिनी।

आर्यदर्शन, आर्यदर्मा (सं० पु०) नृपतिविशेष।

आर्यवृत्त (सं० स्त्री०) १ सदाचार, भला चलन। (त्रि०) २ साधुजनकी भांति व्यवहार करनेवाला, जो भलेमानसकी तरह पेश आता हो। ३ धार्मिक, नेक, पारसा।

आर्यवेश (सं० त्रि०) सुन्दर वस्त्र धारण किये हुआ, जो अच्छे कपड़े पहने हो।

आर्यव्रत (सं० स्त्री०) आर्याणां व्रतम्, १-तत्। १ साधुका कर्तव्य नियम, भले आदमीका काम। (त्रि०) आर्यस्वेष व्रतमस्य। २ साधुके नियमपर चलनेवाला, जो भले आदमीकी चाल पकड़ता हो। आर्यश्चेत (सं० पु०) आर्ये श्रेष्ठं श्रेष्ठं चरितं यस्य। श्रेष्ठचरित, नेकचलन।

आर्यसङ्ग (सं० पु०) १ आर्योंका अखण्ड समूह, भलेमानसोंकी पूरी जमात। २ सुप्रसिद्ध दर्शनज्ञ, एक मशहूर मुहकिक। इन्होंने योगाकार सम्प्रदाय प्रतिष्ठित किया था।

आर्यसत्य (सं० स्त्री०) अभिजात तथ्य, हकीकत-शरीफ। ऐसे ही चार तथ्योंसे बौद्धधर्मके चार प्रधान अङ्ग बने हैं।

आर्यसमाज—सम्प्रदायविशेष। आर्यसमाज, जैसा कि उसके नामसे ही प्रकट है, आर्यों (वैदिकधर्मियों)का समाज है। इसे श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीने १८७५ ई०में वैदिकधर्मके प्रचारार्थ स्थापित किया था। आर्यसमाजके दश नियम इस प्रकार हैं—

१ सब सत्यविद्या और विद्यासे समझे जानेवाले पदार्थ सबका आदि मूल परमेश्वर है। २ ईश्वर सच्चिदानन्दस्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान्, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामी, अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसीकी उपासना करना योग्य है। ३ वेद सत्य विद्याओंका पुस्तक है, वेदका पढ़ना, पढ़ाना सुनना और सुनाना आर्योंका परम धर्म है। ४ सत्य ग्रहण करने और असत्यको छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। ५ सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्यको विचार करना चाहिये। ६ संसारका उपकार अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना इस समाजका मुख्य उद्देश्य है। ७ सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिये। ८ अविद्याका नाश और विद्याका वर्धन करना चाहिये। ९ प्रत्येकको अपनी ही उन्नतिसे सन्तुष्ट न रहना, किन्तु सबकी उन्नतिमें अपनी उन्नति समझना चाहिये। १० सब मनुष्योंको सामाजिक सर्व हितकारी नियम पालनेमें परतन्त्र और प्रत्येक हितकारी नियममें स्वतन्त्र रहना चाहिये।

आर्यसमाजके संस्थापक श्रीस्वामी दयानन्द सरस्वतीका जन्म विक्रमीय संवत् १८२४को गुजरात देशके

मोरवी राज्यके अवदीच ब्राह्मणकुलमें हुआ था। उनके पिता शैव थे। दयानन्द आरम्भसे ही बड़े तीव्रबुद्धि थे। बाल्यकालमें ही उन्होंने यजुर्वेदका रुद्राध्याय और अनेक अन्यभाग कण्ठस्थ कर लिया था। किसी शिवरात्रिको वह अपने पिताके साथ नगरके बाहर एक शिवालयमें शिवकी उपासना करने गये। वहां एक घटनाको देखकर उन्हें मूर्ति-पूजाके विषयमें शङ्का उत्पन्न और मूर्तिपूजा न करनेकी बात उनके हृदयपर अङ्कित हुयी। वे अपने चचे तथा बहनकी मृत्युसे विरक्त हो और अपनेको विवाह जालमें फँसता देखकर १८४५ ई०को योगविद्या सीखनेके अभिप्राय घरसे निकल खड़े हुये। विचरण तथा विद्याध्ययन करनेके उपरान्त १८४७ ई०को महात्मा पूर्णानन्द नामक एक संन्यासीसे संन्यास ग्रहण किया। तत्पश्चात् स्वामीजी योगियोंकी तलाशमें वर्षों पर्वतों और जङ्गलोंमें घूमते रहे। १८१७ को वे मथुरा आकर श्रीस्वामी विरजानन्दजी प्रज्ञा-चक्षुके शिष्य बने और चार वर्ष तक उनसे वैदिक शिक्षा प्राप्त करते रहे। तदुपरान्त स्वामी जी अपने पूजनीय गुरुके समक्ष आर्यवर्तकी बिगड़ी दशा सुधार-नेकी प्रतिज्ञा कर गुरुकुलसे बिदा ले उपदेशार्थ भ्रमण करने लगे। संवत् १८२०से १८२४ तक यत्रतत्र एक ईश्वरकी उपासनाका उपदेश करते हुये हरिद्वार कुम्भके भिलेपर जा पहुँचे। वहाँपर प्रबल रूपसे वैदिकधर्मका मण्डन और अवैदिक बातोंका खण्डन करते रहे। काशी आदि बड़े बड़े नगरोंमें पण्डितोंसे शास्त्रार्थ किये। वेद भाष्यादि अनेक उपयोगी ग्रन्थोंकी संस्कृत तथा आर्यभाषामें रचना की। सत्यार्थप्रकाश नामक पुस्तक बनाया, जिसमें संसार भरके मतोंका समीक्षण और वेदोक्त धर्मका प्रतिपादन बड़ी युक्ति तथा उत्तमतासे किया। स्वामी जी रजवाड़ोंमें उपदेश करते करते उदयपुर पहुँचे। वहाँके राणा सज्जनसिंहजी पर स्वामीजीकी वक्तृता और विद्वत्ताका ऐसा प्रभाव पड़ा, कि वे उनके शिष्य बन गये। स्वामीजीने वेदोंके प्रचार तथा

अपने ग्रन्थोंको सुरक्षित रखने और छपानेके उद्देश्यसे 'परोपकारिणी सभा' स्थापन की। उक्त महाराणा जीने सभाके प्रधान बन अपने राज्यमें सभाकी प्रथम रजिष्टरी करायी। कुछकाल पीछे जोधपुराधीश श्रीमहाराज यशवन्तसिंहके आग्रहपर, श्रीस्वामी जी जोधपुर पधारे और निर्भयतापूर्वक वैदिक धर्मका प्रचार करने लगे। स्वामीजीके सदुपदेशोंसे भयभीत होकर जोधपुर नरेशकी एक यवन वैज्ञानि स्वामीजीको विष दिलवा दिया। इससे वे बीमार होकर अजमेर आ गये और संवत् १८४१ की दीपावलीको ईश्वरोपासना करते करते हमसे सर्वदाकी बिदा हुये।

आर्यसमाज, ईश्वर, जीव और प्रकृतिको अनादि मानता है। उसके सिद्धान्तानुसार सृष्टि प्रवाहरूपसे अनादि है। अर्थात् प्रथम सृष्टिका रचा जाना, फिर प्रलय होना सदैवसे चला आता है।

आर्यसमाज एक ईश्वरको मानता, जो अनादि, अनन्त, सत्, चित् और आनन्द स्वरूप है। सदैव एक रस रहता है। उसके गुण आर्यसमाजके नियम संख्या २में वर्णित हैं। आर्यसमाज केवल इसी एक ईश्वरकी उपासना करनेका उपदेश देता और मूर्तिपूजा, आहुत, मृत पितरोंके आहुत, यज्ञमें पशुओंके बलि को अवैदिक मानता है।

वेद ईश्वरीय ज्ञान होता, जिसे ईश्वर सृष्टिके आदिमें अपनी अपार दयासे मनुष्योंको प्रदान करता है। उसीके द्वारा लोग सब कुछ समझनेके लिये समर्थ होते हैं। वेद समस्त सत् विद्यावाका पुस्तक है। वेद चार हैं—ऋक्, यजुः, साम, अथर्व। स्वामी दयानन्दसे पूर्व आर्यवर्तमें वेदोंका लोप सा हो गया था। संहितायें भी कहीं कहीं मिलती थीं। उस समय यदि किसीको वेदका कुछ भाग कण्ठस्थ भी था, तो वह उसका अर्थ न जानता था। महर्षि दयानन्दका सबसे महान् कार्य वेदोंको सच्चा गौरव प्रकट कर प्रतिष्ठाके उच्च आसनपर विराजमान करा देना है। स्वामीजीके मतमें वेदोंके पढ़नेका अधिकार सबको है।

स्वामीजीने अपने वेदभाष्यकी एक अत्युत्तम भूमिका संस्कृतमें लिखी है। उसमें वेदोंका गौरव वा महत्त्व बड़ी उत्तमतासे दर्शाया है। ऋग्वेदका ६ तथा यजुर्वेदका सम्पूर्ण भाष्य रचते ही उनका देहपात हो गया। स्वामीजी केवल संहिता भागकी वेद मानते और उसका स्वतः प्रमाण होना स्वीकार करते थे। वेद केवल एक निराकार, निर्विकार सर्वव्यापक, सर्वज्ञ सच्चिदानन्द स्वरूप सृष्टिकर्ता परमात्माकी उपासनाका उपदेश देते हैं। श्रीपण्डित तुलसीदास स्वामीने सामवेदका उत्तम भाष्य श्रीस्वामीजीकी शैलीपर किया है। पद्यागनिवामी श्री० प० क्षेमकर्ण त्रिवेदी भी अथर्ववेदका भाष्य उमो शैलीपर करनेका प्रयत्न कर रहे हैं।

पञ्च यज्ञ अर्थात् १ सागं, प्रातः दोनोंकाल सन्ध्या, २ अग्निहोत्र, ३ जोवित माता पितादिका श्रद्धा-पूर्वक सत्कार, ४ अतिथि सत्कार और ५ बलि-वैश्वदेव करना आर्योंका प्रधान कर्तव्य है।

गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नाम करण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्तन, विवाह, वानप्रस्थ, संन्यास और अन्तेष्टि संस्कार भी कर्तव्य है।

आर्यसमाजकी दृढ़ विश्वास है, जो कर्म मन, वचन अथवा कर्मद्वारा किया जाता है, वह अपना प्रभाव पैदा किये बिना नहीं रहता। कर्ताको अवश्य फल भोगना पड़ता है। स्वर्ग और नरक कोई विशेष स्थान नहीं, किन्तु इसी संसारमें दोनो मौजूद हैं। सुखका नाम स्वर्ग और दुःखका नाम नरक है।

आर्यसमाज सृष्टिका आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष मानता है। वर्तमान सृष्टिकी रचना हुये लग भग ८ अरब ८६ करोड़ वर्ष बीत चुके हैं। निवर्त अवधि के शेष समय तक वह अभी और स्थित रहे गो। चन्द्र तथा तारालोक पृथिवी की तरह गोलाकार हैं। इन लोकोंमें भी प्राणी बसते हैं।

मनुष्यजातिमें गुणकर्मानुसार संसारका कार्य

विभक्त करनेके लिये आर्यसमाज वर्णोंका आवश्यक होना मानता है। जो विद्वान लोभ तथा मोहको त्यागकर परोपकारमें अपना जीवन बिताते, वे ब्राह्मण कहाते हैं। जो वीर दुष्टोंसे जातिकी रक्षा करते तथा यज्ञानुष्ठानका क्रम जारी रखते, वे क्षत्रिय हैं। जो लोग धर्मश्रृंखल शिल्प वाणिज्यकी उन्नतिमें लगे रहते, वे वैश्य हैं। मस्तिष्क सम्बन्धी कार्योंमें असमर्थ हो सेवा करनेवालोंकी संज्ञा शूद्र है। वदिक धर्मानुसार चारो वर्ण पारस्परिक सहायक हैं। आर्यसमाज यह भी मानता, कि गुण कर्मानुसार एक वर्णका मनुष्य अपनेसे ऊपरके वर्णका अधिकारी बन सकता है। शूद्र उन्नति और सदगुण धारण करनेसे ब्राह्मण बन और निष्कृष्ट कर्म करनेसे ब्राह्मण पतित हो जाता है। आर्यसमाज आजकलकी जातिपांतिका, जिसका आधार केवल जन्म पर रहता, विरोधी है।

मनुष्यका कार्य-भार बांटने तथा उसके जीवनको अधिक उपयोगी एवं उत्तम बनानेके लिये वेद-भगवान् चार आश्रमोंका विधान करते हैं। वेदाध्ययनकाल शरीरको पुष्ट तथा विद्याकी उपलब्ध करनेके लिये न्यूनसे न्यून २५ वर्ष पर्यन्त अविवाहित रहना, 'ब्रह्मचर्य' कहाता है। तत्पश्चात् धर्मानुसार विवाह तथा सन्तान उत्पन्न करके पिछ-ऋणसे उच्छिन्न होना 'गृहस्थाश्रम' है। पचास वर्षका आयु होनेपर ब्रह्मकी प्राप्ति तथा संसारका उपकार करनेके लिये योग्यता बढ़ानेका नाम 'वानप्रस्थ' है। फिर शेष जीवनको सर्वथा जगत्की भलाईमें लगा देना 'संन्यास' कहाता है।

आर्यसमाज विद्वान् पुरुषों, वेदों और शास्त्रोंकी तीर्थ समझता है। क्योंकि 'तीर्थ'का अर्थ ही तारनेवाला है। जिसके द्वारा मनुष्य भवसागरसे तर जाता, वही तीर्थ है। नदी नाले पर्वतादिको तीर्थ मानना आर्यसमाज वैदिक नहीं समझता।

अपने इन्द्रियोंको वशमें रखते हुये अग्नि-होवादि अनुष्ठान और विद्वानोंका सत्सङ्ग करना आदि यज्ञ कहाता है। जो लोग पशुवोंके बलि-

दानका नाम यज्ञ समझे हुये हैं, वे आर्यसमाजके मतमें सरासर वेद भगवान्‌की आज्ञाका विरोध कर रहे हैं।

आर्यसमाज विद्वानोंको देवता मानता है। व्यक्ति-विशेष तथा ग्रह विशेषके सकाशसे किमी फल विशेषको प्राप्ति तथा फलित ज्योतिषकी ख्यातिपर उसको विश्वास नहीं।

धर्म वही, जो वेद विहित है। सूक्ष्मतया आर्य-समाज धर्मके दश लक्षण मानता है। तदनुसार ही अपना जीवन बनाना मनुष्य मात्रका परम कर्तव्य है।

“वृत्तिः चमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।

धीर्वीर्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम् ॥” (मनु ६।८९)

अर्थात् १ वृत्तिः—सदा धैर्य रखना, २ चमा—माना-पमान, तथा सुखदुःखमें सहन शीलता, ३ दम—मनको धर्ममें प्रवृत्त कर अधर्मसे रोकना आदि, ४ अस्तेय—चोरीका त्याग, ५ शौच—रागद्वेष पक्षपातशून्य शारीरिक वा मानसिक पवित्रता, ६ इन्द्रियनिग्रह—इन्द्रियोंको अधर्माचरणसे रोककर धर्माचरणमें लगाना, ७ धीः—बुद्धि बढ़ाना, ८ वीर्य—पृथिवीसे लेकर परमात्मा पर्यन्त की ज्ञानोपलब्धि करना, ९ सत्य—जैसे पदार्थ को तैसा ही समझना तथा कहना, १० अक्रोध—क्रोध त्यागना।

आर्यसमाजका संकठन।

प्रत्येक मनुष्य वैदिक धर्मके शरण आकर आर्य-समाजके दश नियमोंको मानता हुआ समाजका सभासद बन सकता है। प्रविष्ट होनेकी तिथिसे एक वर्षतक सदाचार रखने तथा अपने आयका अंश देनपर वह आर्यसभासद कहानेके योग्य होता है। आर्य सभासद प्रतिवर्ष अपनेमेंसे प्रधानादि अधिकारिवर्ग तथा एक प्रबन्ध-कारिणी-समितिका निर्वाचन करते हैं। यह समिति अन्तरङ्गसभा कहाती है। एक वर्ष पर्यन्त समस्त सामाजिक कार्योंका यथोचित प्रबन्ध करना इसका कर्तव्य होता है। गत मनुष्य गणनाके अनुसार भारत भरके समस्त आर्योंकी संख्या ढाई लक्षके लगभग थी। इसमेंसे संयुक्त प्रान्तीय

आर्योंकी संख्या एक लाख बीस सहस्रके इधर उधर है।

प्रत्येक समाज अपने सामाजिक अधिवेशन करता है। ये अधिकतर रविवारको होते हैं। इन अधिवेशनोंमें हवन, ईश्वर-प्राथना, वेदपाठ, और भजन-गानके अतिरिक्त अन्य उपयोगी पुस्तक पढ़े जाते हैं। कभी कभी धार्मिक और सामाजिक विषयोंपर व्याख्यान तथा संवाद भी चलते हैं।

एकप्रान्तके समाज मिलकर अपनी सङ्गशक्ति द्वारा ‘आर्यप्रतिनिधिसभा’की स्थापना करते हैं। वह विविध समाजोंकी प्रतिनिधि-सभाओं द्वारा संगठित होती और अपने प्रान्तमें उपदेशों तथा अन्य धार्मिक कार्योंका प्रबन्ध रखती है।

उपरोक्त समस्त प्रतिनिधि-सभाओं द्वारा आर्य-वर्तीय सार्वदेशिक सभाकी स्थापना हुई। इसके वर्तमान प्रधान कांगड़ी गुरुकुलके सुखाधिष्ठाता श्रीमान् महात्मा मुन्शी रामजी तथा मन्त्री वृन्दावन गुरुकुलके सुखाधिष्ठाता श्रीमान् मुन्शी नारायण-प्रसादजी हैं।

उपरोक्त सभा-समाजके अतिरिक्त परोपकारिणी सभा स्वामी दयानन्दने अपने ग्रन्थोंको सुरक्षित रखने, वेदोंको प्रचलित करने आदि कार्योंके विचार-से संस्थापित की थी। इस समय उसके प्रधान पदपर आयभूषण श्रीमहाराज जनरल सर प्रतापसिंह जी महोदय तथा मन्त्रीपद पर शाहपुराधीश राजा-धिराज श्रीनाहर सिंहजी वर्मा सुशोभित हैं। परोपकारिणीसभा स्वामीजीके वैदिक प्रेसका प्रबन्ध रखती तथा उनके रचे समस्त पुस्तकोंको छपाकर प्रकाशित करती है।

अछूत भाइयोंको हिन्दुओंसे अलग रहते देखकर आर्यसमाजको दया आयी थी। उसने उनके संस्कारके लिये प्रबल प्रयत्न किया। स्थालकोट (पञ्जाब)में विशेषतः श्रीलाला गङ्गारामजीके पुरुषार्थसे लगभग २६००० अछूतोंका उद्धार हुआ है।

आर्यसमाजने गुरुकुलोंकी स्थापना द्वारा ब्रह्म-चर्यासमाजका पुनर्जागरण कर वास्तवमें बड़े महत्वका

कायं किया है। उसने लोगोंका ध्यान वीर्य रक्षाकी ओर खींच कर बतलाया, कि विवाहका अभिप्राय विषय भोग नहीं—बलिष्ठ उत्तम सन्तानकी उत्पत्ति करना है। आर्यसमाजके सिद्धान्तानुसार प्रत्येक पुरुष ऋतुगामी होते ही पुष्ट और बलिष्ठ सन्तान प्राप्त कर सकता है। बालविवाहके विरोधमें समाजने घोर आन्दोलन किया नव युवकोंमें स्वदेशी और विदेशी खेल चलाने, सदाचार बढ़ाने, सेवाभाव उपजाने और वैदिक धर्म फैलानेके लिये आय-कुमार सभाओंकी स्थापना हुई। वह इस सम्बन्धमें उत्तम और सराहनीय कार्य कर रही हैं।

आर्यसमाजने बतलाया, कि भारतवर्ष जैसे कृषि-प्रधान देशमें—जहाँके निवासी घी दूधके सेवनसे ही स्वस्थ और बलिष्ठ हो सकते हैं, और आजकल जिसके न मिलनेसे ही उनकी शारीरिक और मानसिक दुर्दशा हो रही है—गो की रक्षा करना प्रत्येक भारतवासीका परम कर्तव्य होना चाहिये। मांसाहार न केवल वेदविरुद्ध पापमय है, प्रत्युत स्वास्थ्यके लिये अत्यन्त हानिकारक भी है। यदि मांस-भक्षण करनेवाले हिन्दू मांसाहार त्याग दें तो गो रक्षामें बहुत बड़ी सहायता दे सकते हैं। क्योंकि उनके मांसाहार छोड़ देनेपर अन्य पशुओंके न मिलनेसे गोघात करनेवाले लोग गोहत्या से रुक जायेंगे।

आर्यसमाज तो यह भी नहीं चाहता, कोई मनुष्य अपने उदर-पोषणार्थ किसी पशुका बध करे। परन्तु आशा नहीं होती, कि मांस-भक्षणको पाप न समझनेवाले अन्य मतावलम्बी उसे सर्वदा छोड़ देंगे।

अनाथोंकी रक्षाके लिये आर्यसमाजने बड़ा काम किया है। समाजसे पूर्व इस देशमें ईसाइयोंके सिवा दूसरे लोगोंके अनाथालय न थे। परन्तु आर्यसमाजने अजमेर, आगरा, फीरोजपुर, बरेली आदि बड़े बड़े नगरोंमें अपने अनाथालयोंकी स्थापना करके इस अभावकी बहुत कुछ पूर्ति कर दी है। इन आर्य अनाथालयोंमें सैकड़ों अनाथोंका पालन पोषण और

शिक्षण हाता है। समाजके अनाथालयोंके पश्चात् हिन्दूओंके अन्य अनाथालयोंकी स्थापना हुई। संवत् १८५६ के दशकमें तथा उसके पश्चात् आर्यसमाजके भूषण स्वनामधन्य लाला लाजपतरायजीने अनाथोंकी रक्षाके लिये बड़ा उद्योग किया था।

आर्यसमाजने वैदिक विवाहकी प्रथा प्रचलित की। न्यूनसे न्यून २५ वर्षका वर तथा १६ वर्षकी वधू होना आवश्यकीय एवम् अनिवार्य है। जाति-पातके बखेड़ोंमें न पड़ गुणकर्मानुसार विवाह करनेका उपदेश आर्यसमाजने दिया है।

स्वर्गीय पण्डित ईश्वरचन्द्र विद्यासागरने १८५६ ई०को सरकारसे हिन्दूविधवाओंके पुनर्विवाहका कानून पास कराया था। परन्तु आर्यसमाजके प्रादुर्भावतक उसका उपयुक्त प्रचार न हुआ। आर्यसमाजने अक्षतयोनि विधवाके विवाहको वेदानुकूल मानकर प्रचार किया है।

आर्यसमाजने विधवाओंके लिये आश्रम खोले, जिनमें उपयोगी कार्योंकी सौख्यकर वे अपने आयुको भले प्रकार विता सकें। ये आश्रम आगरा और जालन्धरमें अच्छा कार्य कर रहे हैं।

नाचकी दुष्ट और सदाचार नष्ट करनेवाली प्रथाको दूर करनेके लिये भी आर्यसमाजने बड़ा प्रयत्न लगाया है। इसमें उसे बड़ी सफलता हुई। जो जातियां इस दुर्व्यसनमें फसीं थीं, उन्होंने सर्वथा त्याग दिया। इस कार्यमें अन्य सुधारकोंसे भी आर्यसमाजकी बड़ी सहायता पड़ चुकी है।

आर्यसमाजने बतलाया, कि जीवनको शुद्ध, उच्च और मस्तिष्ककी शक्तिसम्पन्न बनानेके लिये मांस मदिरा तथा अन्य मादक द्रव्योंका सेवन सदैव वर्जित है। आर्यसमाजके उपदेशसे सहस्रों मनुष्योंने मांस भक्षण आदि दुर्व्यसनोंसे छुटकारा पाया है।

सुवेसाधारणमें शिक्षा फैलानेके महत्व पूर्ण कार्यको आर्यसमाजने अपने हाथमें लिया है। इसकी ऐसी सफलतासे सम्पादित किया, कि विदेशी लोग भी मुक्त कण्ठसे सराहना करते हैं।

आर्यसमाज द्वारा आर्यभाषाका जितना अधिक

प्रचार हुआ, उतना किसी अन्य सभा वा संस्थासे नहीं। आर्यसमाजके उपनियमोंने प्रत्येक आर्यको हिन्दीभाषा सीखनेके लिये बाध्य किया। पञ्जाबमें वहाँ कोई उर्दूके सिवा हिन्दीभाषाका नामतक न जानता था, आर्यसमाजने आर्यभाषाका भरपूर प्रचार किया। अकेला 'दयानन्द कालेज' २५००से अधिक विद्यार्थियोंको प्रतिवर्ष हिन्दीभाषाकी शिक्षा देता है। इसके अतिरिक्त पुत्र पुत्रियोंको अन्य स्कूल-पाठशालाओंमें हिन्दीभाषाकी शिक्षा अनिवार्य है।

आर्यसमाजके गुरुकुलोंमें हिन्दीभाषाका जो प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है, वह अन्यत्र कहीं नहीं। क्योंकि इन विद्यालयोंमें संस्कृत और अंगरेजीके साहित्यको छोड़कर शेष सब शिक्षाओंका माध्यम (medium of Instruction) हिन्दीभाषा ही है। आर्यसमाजके मुख्य गुरुकुल कांगड़ी तथा वृन्दावनमें हिन्दीभाषा द्वारा ही भूगोल, इतिहास, गणित, विज्ञान आदि विषयोंकी शिक्षा दी जाती है। आर्यसमाजने आर्यभाषाके अनेक साप्ताहिक एवं मासिक पत्र जारी किये, जिनमें वैदिक धर्म और हिन्दी भाषाका बड़ा प्रचार हुआ है।

कन्याओंके लिये आर्यसमाजने अथवा आर्य-सामाजिकोंने जालन्धर, प्रयाग, देहरादून आदि नगरोंमें बड़े बड़े विद्यालय स्थापित किये। छोटी छोटी पुत्री पाठशालाएँ तो प्रायः प्रत्येक नगरमें आर्य-समाजने स्थापित की हैं।

मोक्षपद प्राप्त करनेके पश्चात् स्वामी दयानन्दकी स्मृतिमें १८८६ ई०को "दयानन्द एङ्ग्लो वैदिक कालेज" लाहौरमें स्थापित किया गया। श्रीमहात्मा ईश्वरजीने एतदर्थ अपना जीवन अर्पण किया, और २५ वर्ष पर्यन्त हेडमास्टर तथा प्रिंसिपल रहकर उसकी अमूल्य सेवाएँ करते रहे। आप ही ने अपने प्रशंसनीय पुरुषार्थसे एक साधारण स्कूलको इतना बड़ा विद्यालय कर दिखाया। अब दयानन्द कालेजमें अनुमानसे उत्तरभारतके सब विद्यालयोंकी अपेक्षा अधिक विद्यार्थी शिक्षा पाते हैं। अकेले कालेज विभागमें पढ़नेवाले विद्यार्थियोंकी

संख्या ८५०से अधिक है। अन्य सामाजिक स्कूल भी बड़ा कार्य कर रहे हैं। संयुक्तप्रान्तमें भी देहरादून, अजमेर, अलीगढ़, काशी आदि स्थानोंके दयानन्द स्कूल शिक्षा प्रचारमें अच्छी सहायता देते हैं।

वैदिक शिक्षाका पुनरुद्धार तथा ब्रह्मचर्याश्रम फिर स्थापन करनेके अभिप्रायसे आर्यसमाजने ऋषि दयानन्द निर्धारित प्राचीन शिक्षापद्धतिका प्रचार आरम्भ किया है।

पञ्जाबकी आर्यप्रतिनिधि सभाने संयुक्तप्रान्तमें हरिद्वारके समीप एक गुरुकुल स्थापित किया है। वहाँ ३००के लगभग ब्रह्मचारी पढ़ते हैं। इसके संस्थापक और संचालक महात्मा मुन्शी रामजीने अपना जीवन अर्पण करके इसे इस अवस्थाको पहुँचा दिया है, कि स्नातक्य (Graduate) निकलना आरम्भ हो गये हैं।

संयुक्तप्रान्तकी आर्यप्रतिनिधिसभाने भी वृन्दावनमें एक गुरुकुल स्थापित किया है। ब्रह्मचारियोंकी संख्या १२०के लगभग है। यह 'कुल' श्रीमान् मुन्शी नारायणप्रसादजी महोदयके सुप्रबन्धमें प्रतिष्ठा प्राप्त कर रहा है।

आर्यसिंह—बौद्ध धर्माचार्य। यह सिंहालाके पुत्र और मध्यप्रदेशके अधिवासी रहे। काबुलमें बौद्धधर्म फैलाने गये थे। किन्तु अमीरने प्राणवधका आदेश दिया। (Indian Antiquary, Vol. ix. p. 316.)

आर्यसुस्थित—आर्यसुहृदिके प्रधान शिष्य। यह व्याघ्र-पद्मगोत्रीय रहे। इन्हीं व्यक्तिसे जैनोका कोटिकगच्छ-दंश चला है। वीरनिर्वाणके ३१३ वत्सर बाद ८६ वर्षकी अवस्थामें इनकी मृत्यु हुई।

आर्यसुहृदिके—जैनोके एक सिद्धपुरुष। यह वशिष्ठ-गोत्रीय रहे। अपने समयके राजाको इन्होंने जैन-धर्मको दीक्षा दी थी।

आर्यहलं (सं० अव्य०) आर्य हलन्ति विदीर्यन्ति, अनुस्वारादि पाठादस्याव्ययत्वम्। बलात्कार, जुबर-दस्ती, जोरसे।

आर्यहृदय (सं० त्रि०) साधु-प्रिय, जो अशराफको अपराधी

आर्या (सं० स्त्री०) १ दुर्गा, पार्वती। २ श्वश्रू, सास। ३ श्रेष्ठस्त्री, वज्रुर्ग औरत। ४ पितामही, दादी। ५ मात्रावृत्तविशेष। 'आर्यामात्रवृत्तभेदयोः।' (विश्व) इसका लक्षण यों लिखा है,—

“लक्ष्मैतत् सप्तगण्यगोपिता भवति नेह विषमे लः।

षष्ठोजय न लघुर्वा प्रथमेऽर्धे नियतमाध्यायाः।

षष्ठे द्वितीयलातपरकैज्ञो मुखलाच्च सयति पदनियमः।

चरमेऽर्धे पञ्चमके तच्चादिह भवति षष्ठो लः।” (वृत्तरत्नाकर)

इस वृत्तमें दो पंक्ति रहती हैं। प्रत्येक पंक्तिमें साढ़े सात चरण पड़ते हैं। चरण-चरणमें चार मात्रा लगती हैं। किन्तु दूसरी पंक्तिके षष्ठ चरणमें एक ही मात्रा रहती है। इसप्रकार पहलीमें तीस और दूसरी पंक्तिमें सत्ताईस मात्रा आती हैं।

आर्या नौ प्रकार होती है,—१ पथ्या, २ विपुला, ३ चपला, ४ मुखचपला, ५ जघनचपला, ६ गीति, ७ उपगीति, ८ उदगीति, ९ आर्यगीति।

आर्यागीति (सं० स्त्री०) आर्या गीतिरिव। वृत्तरत्नाकरोक्त मात्रावृत्तविशेष। यह वृत्त दो पंक्तिका होता है। प्रत्येक पंक्तिमें आठ समान चरण अथवा बत्तीस मात्रा एक अक्षरकी लगाते हैं।

आर्याणक—देश विशेष। यह तुषार-देशके निकट अवस्थित है।

“तुषारवर्षे वैहले क्षमकाण्डनिपातिभिः।

आर्याणकामिधे देशे विपन्न केचिद्विचरे॥” (राजतरङ्गिणी ४।१६७)

यह देश यूनानी (ग्रीक) ऐतिहासिकोंका कहा आरियाना (Ariana) मालूम होता है। उनकी वर्णनाके अनुसार इसे भारतवर्षका उत्तर-पश्चिम प्रान्त, वर्तमान अफ़ग़ानस्थानका अधिकांश और ईरानका कुछ भाग समझना चाहिये।

आर्यावर्त (सं० पुं०) आर्याः श्रेष्ठा आवर्तन्ते पुण्यभूमित्वेन वसन्त्यत्र, आ-वृत्त आधारे घञ्। आर्यावास, भारतवर्षका एक विभाग, हिन्दुस्थानका एक हिस्सा।

ऋक्संहिताके ‘अनुप्रब्रस्योक्तसो हुवे’ (१।३०।९) प्रमाणपर युरोपीय पुरातत्त्वविद् सारस्वत आर्योंके आदिपुरुषोंका पूर्ववास एशियाखण्डके मध्यभागस्थित बेसुर्तांग और मुशतागकी पश्चिम पार्श्वगत अधित्यका भूमि

बताते हैं। किन्तु वस्तुतः पहले आर्यावास सप्तसिन्धु प्रदेशमें रहा। फिर क्या ‘अनुप्रब्रस्योक्तसो हुवे’ ऋक्के श्रवणमात्रसे सर्व आर्योंका आदिवास अन्यत्र क्वचित् अनुमान करना सङ्गत है।

“पुराण मौक्तः सख्यं शिषं वां युवोर्नैरा द्रविषं जज्ञाव्याम्।

पुनः कृष्णानाः सख्या शिवानि मध्या मदेन सह नू समानाः।”

(ऋक् १।५८।६)

उक्त मन्त्रसे शुनःशेषका पुराणशोक वा पूर्ववास जज्ञावीके मूल, जङ्गुवोंके आधिपत्य और जङ्ग मुनिके आश्रम कान्तारमें बताया है। (ऐतरेयब्रा० ७।३।६) हरिश्चन्द्रपुत्र रोहित वहींसे उन्हें खुरोद सारस्वत प्रदेशको ले गये थे। जङ्गुका वह आश्रमारण्य गङ्गा-प्रभव हिमवत्पृष्ठमें आज भी प्रसिद्ध है। जाङ्गव* प्रदेशसे प्रकाश देख पड़नेपर ही गङ्गाका अपर नाम जाङ्गवी हुआ है। अथवा हिमवत्पृष्ठस्थ ओको नाम नदीतीरकी भूमि ही ‘प्रब्रौकस्’ है। वहां आर्योंका पहले वास रहना भी ठीक ठहरता है।

आर्यावर्तका प्रकृत अवस्थान।

मनुटीकामें कुल्लूकभट्टने लिखा है—

‘आर्याः अवावर्तन्ते पुनः पुनरुद्भवन्तीत्यार्यावर्तः।’ (१।२२)

अर्थात् जिस स्थानमें आर्योंका पुनः पुनः जन्म होता, वही आर्यावर्त कहाता है। किन्तु हमारे मतमें जन्मान्तर मानते भी आर्य अर्थात् ईश्वरपुत्र-व्यपदिष्ट मनुष्योंके प्रधान रूपसे रहनेका स्थान आर्यावर्त है। पहले हिमवत्पृष्ठके पश्चिम भाग सुवास्तु प्रदेशमें आर्यावर्तकी स्थिति रही।

“सुवास्ता अधि तुम्बनि।” (ऋक् ८।२०।३७)

यास्कने उपरोक्त ऋगंशकी व्याख्या इस प्रकार की है,—

“सुवास्तुर्नदी तुम्ब तीर्थे भवति तूर्णमेतदायन्ति।” (४।२।७)

* जज्ञावी वा जाङ्गवदेश—मार्कण्डेयपुराणमतसे (५।७।४०) लम्पक और औरस जनपदके मध्य रहा। लम्पकका वर्तमान नाम लम्पकन है। टलमोने लम्बटे (Lambatai) कहकर पुकारा है। औरस टलमोका Arsa (अर्सा) वा Barsa (बर्सा) है। आजकल ‘रस’ कहते हैं। वह काश्मीरके चन्दवारमें अवस्थित है। सुतरां काश्मीरसे सुदूर उत्तर जज्ञावी वा जाङ्गव समाप्त पड़ता है।

जिसके तीर सुष्ठु आर्यकी वासभूमि रहती, वह नदी सुवास्तु बजती है। सुवास्तु नदीतीरके जनपदका नाम भी सुवास्तु* ही है। 'सुवास्तादिभ्योऽण्' सूत्र देखनेसे समझ पड़ता, कि पाणिनिको भी उक्त प्रदेश विदित रहा। कनिङ्गहाम महोदयके मतसे आजकल सुप्रसिद्ध 'स्वात' (सुवात) नदी प्रवाहित स्वात उपत्यका ही प्राचीन सुवास्तु है।

"मावो रसानितभा कुभा क्रु सुमां वः सिन्धुर्निरीरमत्।

मावः परिष्ठात् सरयूः पुरीषिण्यो इव सुव मसु वः।"

(ऋक् ५।३३।८)

हे मरुङ्गण ! रसा, अनितभा तथा कुभा † और क्रमुः‡ नदी एवं सर्वत्र गमनशील सिन्धुनद तुम्हें विलम्ब उत्पादन न करे और न जलमयी सरयू एवं पुरीषिणी (परुष्णी)** तुम्हें रोक रखे, जिससे हमें तुम्हारा दर्शनसुख मिले।

उपरोक्त ऋक्मन्त्रसे पूर्वतन आर्यवासकी चतुःसीमा भी निकलती है। सुवास्तु नदीतीरस्थ जनपदसे बहु उत्तरस्थ अतिप्रभावा रसा नदी उत्तर, आजकल 'काबुल' कहलानेवाली हीनप्रभावा कुभा पश्चिम, भारतप्रसिद्ध सरयू पूर्व और कुभासे नीचे क्रमु-सिन्धु-सङ्गम दक्षिण सीमा है।

"यथोप नामिरपरस्यायोः प्र पूर्वाभिलिखिते राष्ट्रि शूरः।

अञ्जसी कुलिशी वीरपत्नी पथो हिन्वाणा उदभिर्भरन्ते।"

(ऋक् १।१०४।४)

उपल पर्वतको जो प्रधान नगर है, उसकी रक्षा विक्रान्त मनुष्यराज करता है। अभिप्राय—वह नगर कभी-कभी प्राग्वाहिनी नदियोंमें बाढ़ आनेसे डूब जाता और राजा उसे बचाता था। सुवास्तुसे ईशान और दक्षिणाभिमुख बहनेवाली अञ्जसी, सुवास्तुसे

वायव्यकी ओर दक्षिणाभिमुख बहनेवाली कुलिशी और सुवास्तुसे आग्नेयकी ओर दक्षिणाभिमुख बहनेवाली वीरपत्नी नदी है।

ऋक्संहितामें 'गौरी' शब्द दो बार आया है,—

"गौरीर्मिमाय सलिलानि तच्छब्दे कपदी द्विपदी सा चतुष्पदी।

अष्टापदी नवपदी वसुधुवी सहस्राक्षरा परमे व्योमन्।" (१।१६४।४१)

अर्थात् गौरी सलिलसृष्टि करती हैं। वह एकपदी, द्विपदी, चतुष्पदी, अष्टापदी तथा कभी नवपदी बन जाती और कभी व्योममें (आकाशमें) सहस्राक्षर परिमित शब्द निकालती हैं।

उपरोक्त मन्त्रमें सायणने 'गौरी' अर्थात् मेघगर्जन-रूप वाक् वा शब्द लिखा है। किन्तु कुछ मनोयोग-पूर्वक यह ऋक् पढ़नेपर सहज ही किसी नदीकी वर्णना समझ पड़ती है। 'व्योममें सहस्राक्षर परिमित शब्द' नदीकी कल-कल ध्वनिका वर्णन मात्र है। विशेषतः इसके आगे ऋक्में 'समुद्र' शब्दका प्रयोग पढ़नेसे गौरीका नदी होना स्पष्ट है।

"मदच्च्त् वेति सादने सिन्धोरुर्माविपथित्।

सोनो गौरी अविप्रितः॥" (ऋक् १।१२।३)

मदस्त्रावी सोम सिन्धुतरङ्ग स्थानमें वास करते हैं।

विद्वान् सोम गौरीका आश्रय लेते हैं।

अथर्ववेदादि और महाभारतमें भी गौरी नदीकी बात लिखी है। ब्रह्माण्डपुराणमें कैलाससे उत्तर 'गौर' पर्वत बताया है और पर्वतका स्थाननिर्णय करनेसे गौरी* नदीका गौरपर्वतसे निकलना स्पष्ट ही समझ पड़ता है। गौरीसे ही पूर्व सुअस्तिन् नदी है।

* गौरी—Arrian कथित Guraeus है। इस नदीके प्रवाहित भूभागका नाम मार्कण्डेयपुराणमें गौरगौव लिखा है। (५।८८) टलमीके ग्रन्थमें Goryaia मिला एवं आरियनने Guraoia कहा है। वर्तमान स्वात प्रदेशका उत्तराञ्चल लख्खर नदीका तीरवर्ती स्थान है। लख्खर नदी अरबद और महाभारतमें गौरी बतायी गयी है। ब्रह्माण्डपुराणमें कैलाश पर्वतसे उत्तर किसी गौरगिरिका उल्लेख है। अध्यापक लासेनहान टलमीके मतानुयायी प्राचीन भारत (Das Alt Indian) नामक भाष्यमें भी सुअस्तिन्से दक्षिण गौरीयद्वय (Goryaia) देशका उल्लेख है।

* सुवास्तु—Suastos of Arrian तथा Suastene of Ptolemy

हीला और आजकल 'सुवात' कहाता है।

† कुभा—आरियन-कथित Kophes होती और आजकल काबुल-नदी बजती है।

‡ क्रमु—वर्तमान क्रम, काबुल नदीमें मिलित हुयी है।

** पुरीषिणी वा परुष्णी—हरावती है। वर्तमान समय रावी कहाती है।

गीरी और सुवास्तु या सुप्रस्तिन् दोनों मिलकर काबुल नदीमें जा गिरी है।

आर्यावास सुवास्तुसे प्राक्दक्षिण बहुदूरस्थ, श्रीकण्ठ-शैल-सम्भूत और जङ्गुमुनिके आश्रम-तल-वाही जङ्गावी नदीतक फैला था।

“पुराणमोकः सख्यं शिवं वां युवोर्नरा द्रविणं जङ्गाव्यां।

पुनः कृष्णानाः सख्या शिवानि मध्या मदेन सहनू समानाः॥”

(ऋक् ३।५८६)

हे अश्विद्वय! तुम्हारा पुरातन सख्य वाञ्छनीय और मङ्गलकर है। हे नेतृद्वय! जङ्गावीमें तुम्हारा धन रहता है। भवदीय सुखकर सख्य पुनः-पुनः पाकर हम तुम्हारे समान बने हैं। हम हर्षकर सोम द्वारा तुम्हें शीघ्र और युगपत् हृष्ट करेंगे।

जङ्गावी नदी भागीरथीकी शाखा ठहरती, जो आज भी उत्तराखण्डमें बहती है। इससे समझ पड़ा, कि आर्यावास सारस्वत प्रदेशमें फैला है। यहीं बहुतेसे ऋक्, यजुः, सामगान और आथर्वण मन्त्र प्रकाशित हुये। यागविधि यहीं समुद्भूत एवं परिपुष्ट पड़ा और आर्य-साम्राज्य भी यहीं प्रथम विस्तृत था।

सर्ववैदिक ग्रन्थोंमें सरस्वती नामका आख्यानादि बहुतसे स्थानोंपर विद्यमान है। यागभूमि होनेसे सारस्वत प्रदेशकी प्रशंसा अनेकत्र सुननेमें आती है।

“नि त्वा दधे वर आ प्रथिव्या इलायास्तदे सुदिनले अजाम्।

दृषद्व्यां मानुष आपयायां सरस्वत्या देवदग्ने दिदौहि॥” (शर ३।४)

शश्ववहुल और उत्कृष्ट प्रदेशमें हे अग्नि! हम तुम्हें स्थापन करते हैं। दृषद्वती तीरसे आपया सरस्वतीतक फैले इस प्रदेशमें तुम लोगोंपर अपनी प्रभा डालो।

“सरस्वतीदृषद्वतीदे वनद्योयंदनरम्।

तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते॥” (मनु ३।१०)

सरस्वती और दृषद्वती देवनदीके अन्तर्गत देव-निर्मित देशको ब्रह्मावर्त कहते हैं।

“इमे मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि सोमं वचता पशुण्या।

असिक्ता मरुद् धे वितस्तायार्जोकीये अयोध्या सुषोमया।” (ऋक् १।०३।५)

गङ्गा, यमुना, सरस्वती, शुतुद्रि (शतद्रु), परुष्णी (इरावती), असिक्ती (चन्द्रभागा) एवं वितस्ता, इन्हींमें

इरावती, चन्द्रभागा और वितस्ता इन तीनोंके सम्मिलनसे सम्भूत मरुद् धा, शतद्रुके पश्चिम पार्श्वसे सङ्गत प्राचीनतम आर्जोकीया (उहञ्जिरा वा विपाद् जो इस समय विपाशा नामसे ख्यात है) और तक्षशिला नामक प्रदेशसे निम्नगामी सिन्धु-सङ्गत सुषोमा—सात नदी जिस भूभागमें बहती, उसकी संज्ञा सप्तनद वा सप्तसिन्धु है। गङ्गा-यमुनाको छोड़ जिस भूभागमें उपरोक्त पञ्च नदीका प्रवाह चलता, वही पञ्चनद वा सारस्वतप्रदेश बजता है।

वर्णित सप्तनद प्रदेश सिन्धुके पूर्वपार पड़ता है। सिन्धुके पश्चिम-पार भी अपर सप्तनद-प्रदेश विद्यमान है। आजकल वह आर्यावर्तसे अलग होते भी पहले उसके अन्तर्गत रहा।

“दृष्टामया प्रथमं यातवे सजुः सुसर्त्ता रसया खेत्वा त्वा।

त्वं सिन्धो कुमया गोमतीं क्रमुं मेहत्नुत्वा सरथं यमिरीयसे।”

(१।०३।६)

हे सिन्धु! प्रथम तुम दृष्टामा नदीसे मिलकर चले थे। पीछे सुसर्त्त, रसा और खेतीसे मिले। तुम्हींने क्रमु तथा गोमतीको कुमा और मेहत्नुसे मिलाया। इन सकल नदीके साथ तुम एक रथ अर्थात् एकत्र चला करते हो।

इस मन्त्रमें दृष्टामा प्रथम, सुसर्त्त द्वितीय, रसा* तृतीय, खेती चतुर्थ, कुमा पञ्चम, गोमती षष्ठ और मेहत्नुयुता क्रमु नदी सप्तम है। सातो नदी पश्चिम-हिमालयसे उत्पन्न पूर्वपश्चिमाभिमुखगामी पश्चात् दक्षिणप्रवाही समुद्रगामी सिन्धुनदके पश्चिम पूर्वदक्षिणाभिमुख बहती और अन्य नामसे पुकारी जाती हैं। आजकल चित्रलदेशसे प्राग् बहमान पञ्च-कोरप्रदेशीय त्रयवयवा ‘दृष्टामा’, डेराइस्माइल खां प्रदेश-तल-वाही अर्जुनी ‘सुसर्त्त’, ‘रसा*’, खेती वा सेवेत, काबुल ‘कुमा’, वर्ण-प्रदेश-वाही कुरम ‘क्रमु’ और गोमल प्रसिद्ध नदी ‘गोमती’ है। दृष्टामा आदि सातो नदी साक्षात् वा परम्परासे सिन्धु-सङ्गत है।

चित्रल देशसे प्राक् और बलूचिस्थानादिसे ऊर्ध्व

* रसा—जन्म अवस्थामें रंझा नामसे वर्णित है। यह खराखानमें बहती है।

तक पश्चिमोत्तर सुविस्तीर्ण पुरातन जो आर्यावर्तांश पड़ता, वह पश्चिम-सप्तनद प्रदेश कहा सकता है। किन्तु पूर्व-सप्तनदके अन्तर्गत पञ्चनद-प्रदेशकी तरह पश्चिम-सप्तनदमें पञ्चकोर प्रदेश (अफगानस्थान) भी लगता है। अतः गान्धारका* आर्यावर्तान्तर्गतत्व सम्भव होता, जिसका प्रमाण वेद, ब्राह्मण और परवर्ती शास्त्रमें मिलता है,—“गन्धारीणा निवायिका।” (ऋक् १।१२६।७) “नमजिते गान्धाराय” (ऐतरेयब्राह्मण ७।५।८) “सत्ययगान्धारिण्या” (पा ४।१।१६८)

कुरुराज धृतराष्ट्रकी पत्नी दुर्योधनादि बहुपुत्र-प्रसविनी गान्धारी भारत-प्रसिद्ध ही हैं। वर्ष प्रभृतिके आयुध-जीवित्वका वर्णन पाणिनिने लिख दिया है। पूर्व एवं पर सप्तनद प्रदेशके बीच हिमवत्-समुद्रव अधःप्रवण ससुद्रान्त प्राचीन आर्यावर्तकी द्विधा करनेवाला सीमादण्ड-जंसा सिन्धु नामक नद आज भी वर्तमान है। इस सिन्धुसे उत्तर दूसरी सात नदीकी विद्यमानता भी सुन पड़ती है।

“ऋजीत्ये नौ रुशती महिला परि चयांसि भरते रजांसि।
अद्वया सिन्धुर पमपसमाद्या न चित्रा वपुषीव दर्शता ॥ ७
सुखा सिन्धुः सुरधा सुवासा हिरण्ययी सुकृता वाजिनौवती।
कर्णावती युवतिः सीलमावत्यु ताधि वसे सुभगा सधुवध ॥”

(ऋक् १।७।५।८)

इसमें कैलाश निम्नस्थ कर्णाप्रदेशीय कर्णावती और हिरण्ययी, वाजिनौवती एवं सीलमावती* उत्तरस्थ है। निम्न बलुचिस्थानमें ‘एनी’ नदीको कौन नहीं जानता! चित्रा वा चिचलनदी चित्रल देशसे निकल कुभामें मिली और ऋजीती सम्भवतः उसीके समीप बहती है। उक्त त्रि-सप्तनदीकी अपेक्षा सिन्धु नदका प्राधान्य वर्णित है,—

“प्र सप्त-सप्त वे धा हि चक्रयुः प्र सप्तरीणा मति सिन्धुरीजसा।” (१।७।५।१)

* गन्धारी—Gandaraioi of Periplus, हिन्दूकुशका दक्षिण भाग वर्तमान अफगान-स्थान है। इसी गन्धारसे अफगानराजधानी गन्धारका नामकरण हुआ है।

† सीलमावती—यौक ऐतिहासिकग्रन्थके निकट Silis नामसे कथित है। (Ukert, Geographic der Griechen und Romer, Vol. III, 2, p. 288) ऋग्वेदमें सीरा (१।१७।४।८) और सीता (४।५।७।७) नाम भी मिलता है।

नदी सप्त-सप्त होकर तीन श्रेणीसे आर्यावर्तमें बहती हैं। सिन्धुसे पूर्व, पश्चिम और उत्तर सात-सात नदी विद्यमान हैं। इसीसे नदीके बलसे अतिशयित सिन्धुनद बना, जिसे उनका पुत्र वा राजा कहा है,—

“अभि त्वा सिन्धो शिशु मित्रमातरो वाग्धा अर्षन्ति पयसेव धे नवः।

राजिव शुधा नयसि त्व मित् सिचौ यदासा मध प्रवता मिनचसि।”

(१।७।५।५)

हे सिन्धो! पयःसे युक्त धेनुकी भांति यह नदी आपको शिशु समझ दुग्ध पिलाने चली आती है। आप इन्हीं राजाकी तरह युद्धमें हांकते हैं। क्योंकि आप इन बहनेवाली नदीसे आगे बढ़ रहे हैं।

अन्यत्र भी त्रि-सप्त-नदीका विषय विद्यमान है,—

“त्रि सप्त सप्ता नद्याः।” (ऋक् १।७।५।८)

वस्तुतः इन त्रि-सप्त-नदीसे परिष्ठित सिन्धुके मध्य ही पूर्वकालिक आर्यावर्त देश है। ऐतरेयब्राह्मणमें—

“यस्यैको ब्रह्मवर्चस मिच्छेत्—० प्राङ् स इयात्, योऽप्राद्य मिच्छेत्—० दक्षिणा स इयात्, स सोमपीथ मिच्छेत्—० उदङ् स इयात्।” (ऐतरेयक १।१।२)

प्रागादि दिक् शब्द किसी अवधिकी अपेक्षा रखता है। क्योंकि प्राक् इत्यादि आकाङ्क्षासे सर्वत्र उपजायमानत्व आता है। यहाँ आर्यावर्तीय सिन्धुका मध्य ही अवधि है। सिन्धुसे प्राक् इत्यादि मानते ही तेजस्तु प्रभृतिकी सिद्धि निकलती है। फिर सिन्धुके प्राग् सरस्वती आदिकी तीरभूमिमें यज्ञानुष्ठानके बाहुल्यसे तेजस्तु तथा ब्रह्मवर्चस्तु मिलता, शतद्रु-सङ्गमके दक्षिण हिम-प्राचुर्यके अभाव तथा तापके प्राबल्यसे प्रचुर शस्य उपजता, पश्चिम अरण्यके प्राचुर्यसे पशु बहुत होता, शतद्रु-सिन्धु-सङ्गमके उत्तर अति शैत्यसे वस्त्रोष्णम लगता और शारीर-सोम बढ़ता है। अतिप्राक्तन आर्यावर्तका यह सिन्धु-मेरुदण्ड रहा। पाश्चात्य लोग सिन्धुस्थानको ‘सि’ की जगह ‘हि’ रख हिन्दुस्थान कहते हैं। सप्तसिन्धु-प्रदेश अवस्थामें ‘हफ्तहिन्द’ हो गया।

रसा नदी सिन्धु-सङ्गत और अति विक्रान्त रही। द्वितीय तथा तृतीय नदी-सप्तकमें वर्णन विद्यमान है। तदानीन्तन आर्यावासकी उत्तर-सीमा वही विदित होती है।

सुवासु प्रदेशकी जो उत्तर-सीमा कही, वही प्रचुरोदक एवं प्रभूतवेग नदी पहले आर्य और अनार्य देशकी सीमा थी।

रसाका वर्णन भी बहुत मिलता है,—

“गिरिर्व प्रसा अस्मि पिबिरे दवाणि पुरुभोजसः।” (ऋक् ८८१२)

वह सगर्व चलती, शत सेनापति-जैसी देख पड़ती और हव्यदायीके लिये वृत्रवध करती हैं। वह बहु-लोकको पालक हैं। उनके उद्देश्यसे प्रदत्त रस पर्वतके रसकी तरह प्रीत करता है।

गिरिकी रसा नदीके न्याय पुरुभोजका धन भी वर्धित हुआ। इससे समझ पड़ता, कि रसाका समुद्भव किसी गिरिसे हुआ था। जिस प्रकार सिन्धुको पूर्व-देशीय सप्त-नदीमें गङ्गा एक रहते भी दूसरी सरितोंकी गङ्गाही प्रसिद्धि है। तथा सरस्वती भी एक ही अनेक नदियोंकी वाचिका है। उसी प्रकार रसा एक होती भी अन्य निम्नगाओंकी वाचिका है। जैसे गङ्गा यमुना प्रभृति नदियोंका साधारण नाम है वैसे ही रसा भी। गङ्गाकी गमन करने, सरस्वतीकी उदक रखने और रसाकी शब्द कर्मसे कोलाहल उठाने-वाली वृत्त्यन्तार्थ है। समुद्रमें मिलनेवाली रसा आजकल आर्यावर्तसे बाहर खुरासान राज्यके अन्तर्गत है। ‘अवस्ता’ ग्रन्थमें ‘रहा’ नाम लिखा है। पहले रसा ही तदानौत्तन आर्यावासकी पश्चिम सीमा थी।

अंशुमती आदि नदीका आर्यावर्तमें रहना दम मण्डल ८६ सूक्तके १३, १४ और १५ ऋक्में लिखा है। यह यमुना-मिली और दृषद्वती पूर्वस्थित थी। अश्वत्थीका वर्णन १०।५३।८ ऋक्में विद्यमान है। यह घर्घरासे प्रत्यक्, शतद्रुसे बहुपूर्व, उत्तर नीचे बहती विनशनप्रदेशमें रही।

१ले, २रे और ३रे ऋक्में वर्णित शिफा नाम नदी निषद-देशीय ही विदित होती है। क्योंकि प्रथम निषद* नामका उल्लेख विद्यमान है। “यो निषद निषदे चकारि” (१।१०४।१) ६।२७के ६ठें और ७वें ऋक्की

हरियूपीया और यव्यावती नदी सम्भवतः अफगान-स्थानमें रही। कोई-कोई हजारा प्रदेशकी हरिरुद्र या हिरातकी नदीको वैदिक हरियूपीया कहता है।

“प्रीवानं मेव मपचल वीरा नृपा अचा अगु दीव आसन्।

वा अगुं वृहती मपूस्त्रं न्तः पवित्रवन्ता चरतः पुनन्ता।”

(ऋक् १०।२७।१०)

इस मन्त्रमें और अन्यत्र भी जो ‘अचा’* शब्द आता, वह अफगानस्थानके उत्तर प्रवहमान ‘अक्स’ (Oxus) नदीको बताता है।

पहले ही खेती नदीका वर्तमान नाम सेवेत बता चुके हैं। खेतपर्वतसे निकलनेपर ही यह नाम पड़ा है। दूसरे प्रमाणोंसे भी उपरोक्त विषय प्रमाणित होता है।

“प्राचीऽन्या नद्यः सन्दिने श्वेतैः पर्वतैः प्रतीचीऽन्याः।”

(शतपथ १४।६।८)

“श्वेत्या न्या।” (ऋक् १०।७५।६)

खेतयावरी† नदी भी खेतगिरिप्रभव है।

“उत स्या खेतयावरी।” (ऋक् ८।२६।१८)

वाजसनेयसंहिता (२३।१८)में ‘काम्पिल्यवासिनी’का नाम लिखा है। पाञ्चालमें आज भी कमिला ही कहते हैं। वृहदारण्यकोक्त (३।३।१, ७।१।६) कपिप्रदेश भी निरुक्तोक्त (४।१४) कपिष्ठल‡ है। शर्याणावत्सर निश्चय आर्यावर्तीय था।

‘शर्याणावत् वे नाम कुरुचे वस्य जघनाघे सरः सन्दिने।’ (सायण)

शर्याणावत्सरके समीप ही पाणिनि-सूत्र-प्रथित कापिशनगर** विद्यमान रहा। कपिशायन मधु और द्राक्षा प्रसिद्ध है।

* अचा (Oxus) ऋक्संहितामें यद्य (७।१८।१८) नाम भी लिखा एवं पुराणमें द्रुघ, वंघ प्रभृति पाठान्तर देख पड़ा है। इस नदीको आजकल अक्स-दरया कहते हैं।

† खेतयावरी वा खेती—वर्तमान सफेदको पर्वतनिःसृत सेवेत नदी है।

‡ कपिष्ठल—वर्तमान पञ्जाबप्रदेशके कुरुचेनका मध्यवर्ती प्रसिद्ध तीर्थ है। आजकल कैथल कहते हैं।

** कापिश—टलसीने Capissa, पाणिनिने (४।१।२८) कापिशी एवं चीनपरिनाजक पुषपपुषपने कि-ए-पि-सि नाम लिखा है। यह वर्तमान कोहिस्थानका उचराचल है।

* निषद—प्राचीन ग्रीक ऐतिहासिकोंने Paropamisadai वा Paropamisus नामसे इस पार्वत्य जनपदको उल्लेख किया है। वर्तमान पाञ्चाल पश्चिमगङ्गके उत्तरी इले आजकल ककेसर कहते हैं।

“प्रावेपा मा वृक्षतो मादयन्ति प्रवतिष्ठा इरिषे वर्धतानाः ।

सोमस्येव भोजवतस्य भवो विभीदको जागृषि मंष्ट्रा मच्छान् ॥”

(ऋक् १०।२४।१)

सतत कम्पनशील पत्रवान् अपर वनस्पत्यादिशून्ध बहुवायुयुक्त प्रदेशमें उत्पन्न होनेवाला तथा इरिष्य देशमें वर्तमान विभीतक वृक्ष, मूजवान् नामक पर्वत-पर उत्पन्न होनेवाली सोमलताका रस पीनेसे जैसे हर्ष बढ़ता, वैसे ही हमारे पक्षमें प्रीतिकार और उत्साह देनेवाला ठहरता है ।

मूजवान्* पर्वत आज भी कैलाश गिरिसे उत्तर-पश्चिम विद्यमान है । इसीसे वैदिक युगमें इरिष्य वा ईरान नामक जनपदका आर्यावर्तीयत्व मानना पड़ेगा ।

अथर्वसंहिता ५।१४।२२ सूक्तके ३५ मन्त्रमें पुरुषा जनपद, ४४में शकभर और महावृष, ५५ एवं ७५में मूजवान् तथा बल्लिकः ८५में पुनः महावृष और मूजवान्, ८५में फिर भी बल्लीक और

* मूजवान्—पुराणमतमें कैलाश पर्वतसे भी उत्तर मूजवान् वा मूजवान् पर्वत है ।

“मूजवान् सूमहादिव्यो कर्षश्चैलो हिमाचलितः ।

तस्मिन् गिरी निवसति गिरिशो धूलोद्धितः ॥

तस्य प्रादान् प्रभवति शैलोदं नाम तत् सरः ।

तस्मात् प्रभवते पुष्पा नदी शैलोदका शुभा ।

सा बहु शीतवीर्येण प्रविष्टा पथिमोदधिम् ॥”

(मत्स्य १२०।१८-२०)

अर्थात् मूजवान् समझान्, दिव्य, कर्षश्चैल और हिम-मण्डित है । उस गिरिमें धूलोद्धित महादेव वास करते हैं । उनके पाददेशमें शैलोद नामक झर है । उसी झरसे शैलोदका (शैलोद) नामो एक नदी निकली है । यह नदी बड़ु (Oxus) और सीता (Jaxartes) नदीके मध्य मिलित हो पथिम सागरमें जा गिरी है ।

उद्धृत प्रमाणसे समझ पड़ता, कि मूजवान् कैलाशसे उत्तर वर्तमान तुर्कस्थान वा ईरानके मध्य और बलखसे उत्तर है । महाभाष्यके प्रमाणसे कहा जाता, कि आर्येणातिके संस्कारका प्रधान चिह्न मौक्षीद्रव्य इसी मूजवान् पर्वतसे प्रथमतः उत्पन्न होता था । पतञ्जलि-महाभाष्यमें लिखा हुआ—
“मौक्षी नाम बाहोकेषु शामस्यिन् भवो मौक्षीयः ।” (४।२।२)

† पर्वत—पुराणमें पर्वतक कहा गया है । (ब्रह्माण्डपुराण ४२५०)
चीनपरित्राजकने यो-लु-यो-ली नाम लिखा है । इसका वर्तमान नाम देशावर है ।

‡ बल्लीक—वर्तमान नाम बलख है ।

अन्तको १४५ मन्त्रमें अङ्ग, मगध, मूजवान् और गन्धारीका वर्णन है । किन्तु आर्यावर्तान्तर्गत रहने-पर भी उक्त स्थान में बहुत अनार्य रहते थे ।

“गान्धारिभ्यो मूजवद्भ्यो मगधे भगः ।

प्रेथ्यं जनमिव श्रेयधिं तक्मानं परिदक्षसि ।” (अथर्व ५।२२।१४)

अथर्वसंहितामें गन्धारी और मूजवान्के साथ जिस अङ्ग और मगधका उल्लेख मिलता, वह पूर्वभारतका प्रसिद्ध अङ्ग और मगध राज्य नहीं । वैदिक काल उक्त दोनो स्थान आर्यावर्तसे अलग रहे । मगधका वैदिक नाम कीकट है । अनार्यवसतिसे कीकटकी निन्दा सुनते हैं ।

“किं कृषन्ति कीकटेषु गावो नाशिरं दुक्ते न तपन्ति चर्मम् ।”

(ऋक् ३।५१।१४)

“कीकटो नाम देशो अनार्यनिवासः ।” (निरुक्त ६।६।४)

कीकट वर्तमान मगध देशको कहते, जिसमें अनार्य रहते थे । मगध और गया-देखो ।

किन्तु अथर्वसंहितामें गन्धारी और मूजवान् दोनो जब आर्यावर्तके अन्तर्गत आते, तब दोनोके पास अवस्थित अङ्ग और मगध भी आर्यावर्तमें ही पड़ते हैं । उभय स्थान मूजवान् वा कैलाश पर्वतसे उत्तर पौराणिक शाकद्वीपके दक्षिणांश और प्राचीन ग्रीक-वर्णित स्कीदिया राज्यके मध्य रहे । भविष्यपुराणमें उक्त स्थानके वासी मगब्राह्मण ‘आर्यदेशसमुद्भव’ कहे गये हैं । (भविष्य ब्राह्मण १२६।५८) मगब्राह्मण परवर्ति-काल वर्तमान विहार प्रदेशके जिस अंशमें आकर रहा, उसी स्थानका नाम मगध हुआ । पाश्चात्य ग्रीक भौगोलिकों और ऐतिहासिकोंका विवरण पढ़नेसे समझ पड़ा, कि वर्तमान तुर्कस्थान और उसके उत्तरवर्ती तुखारस्थानसे उत्तर-पश्चिम Massagetae नामक शाकराज्य रहा । उसमें Augasii और Sogdiana भूभाग था । कहनेसे क्या, उक्त दोनो जनपदवासी Anguttari और Magdi वा Meki नामसे प्रसिद्ध थे ।* दोनो ही जनपद अथर्ववेदमें अङ्ग (उत्तर) और मगध नामसे परिचित हैं । उक्त Massagetae-वासी भविष्य, मत्स्य प्रभृति

पुराणमें शाकद्वीपीय मशग-क्षत्रिय कहाये हैं। पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकगणने उक्त स्थानको Cimbri नामक जिस जातिका उल्लेख किया, अथर्वसंहितामें (५।२२।४) वह शकश्वर नामसे महावृष, वल्होक, मूजवत् प्रभृतिके साथ उक्त है। सुतरां पौराणिक शाकद्वीपीयगणकी उक्त अधिष्ठानभूमिके बहुपूर्वकाल आर्यदेशमें गण्य होनेका प्रमाण मिलता है।

ऋक्संहिता (१०।३४।१)में मूजवान् नाम मिलता है सही, किन्तु उसमें होनेवाले सोमका औत्कर्ष लिखा है।

“उदङ् जातो हिमवतः स प्राच्यां नीयसे जनम्।” (अथर्व ५।४।८)

उपरोक्त मन्त्रसे तत्रत्य कुष्ठका औत्कर्षमात्र विदित होता है।

“वल्होकः प्रातिपीयः शृग्याव।” (शतपथब्राह्मण १२।३।१।२)

उक्त मन्त्रमें श्वतपर्वतसे प्रतीच्य और वल्होकका जो आर्यवासत्व झलकता है, कालभेदसे उसकी भी व्यवस्था ही स्वीकार्य है। अथवा उसके आर्याभिजनत्वमें कोई बाधा नहीं देख पड़ती।

तत्त्वतः हिमवत्पृष्ठके उत्तर-पश्चिमस्थ मूजवान् नामक पर्वत ही आर्यवास और अनायेवास या आर्यावर्तकी उत्तर सीमा मानना उचित है।

“एतत् ते रुद्रावसम् तेन परो मूजवतोऽतौहि।” (वाजसनेयसं २।६।१)

इसी यजुःका व्याख्यान अन्यत्र भी वर्णित है।

“अवसेन वा अध्वानं यन्ति तदेन ओं सावस सेवान्वार्जति यव यवास्-चरणं तदन्वव इवा अस्य पुरो मूजवतोऽतौहि।” (शतपथब्राह्मण २।६।२।७)

उपरोक्त मन्त्रमें रुद्रनाम मृत्यु देवतासे मूजवान्के परपार अर्थात् आर्यावर्तसे दूर जानेकी प्रार्थना की गयी है। इससे विदित होता, कि अद्यतन पारसिक राज्यकी पश्चिमोत्तरस्थ एशिया-मायिनरसे पूर्व, अनुगङ्ग प्रदेशसे पश्चिम, सिन्धु-सागर-सङ्गमसे उत्तर तथा मूजवान्से दक्षिण संहिताकालीन आर्यावर्त है। किन्तु आर्यसाम्राज्य और अधिक विस्तृत था।

“बावदिन्द्रं यमुना दत्तसवय प्रात मेदं सर्वताता सुषायत्।

अजासः शिवो यचवय वलिं शीर्षाणि कधुरश्यानि।” (सूक् ७।१८।२८)

इस युद्धमें इन्द्रने मेदकी मार डाला था। यमुनाने उन्हें समुष्ट किया। दत्तसगणने भी उन्हें सन्तोष

दिया। अज, शिव और यक्ष तीन जनपद इन्द्रके उद्देश्यसे अश्वके मस्तकने उपहार दिये थे।

जो इन्द्र सम्राट् इस राज्यमें सर्वकर्मका भेद लेते, उन्हें यामुनप्रदेशवासी सामन्त यमुन, दत्तसव, अजास, शिव और यक्षव वलि देते हैं।

फिर ऐतरेयब्राह्मण-कालमें आर्यावर्तका दृगायतन होना भी अन्यसे ही सभक्त पड़ता है। अभिषेक-प्रकरणमें लिखा है,—

“प्राच्यां दिशि ये के च प्राच्यानां राजानः ०—०

प्रतीच्यां दिशि ये के च नीच्यानां राजानो येऽप्राच्यानां ०—०

उदीच्यां दिशि ये के च परेण हिमवन् जनपदा उत्तरकुर्व उत्तरमद्राः ०—०

ध्रुवायां मध्यमायां प्रतिष्ठायां दिशि ये के च कुर्वपञ्चालानां राजानः

सवशीशीनराणां राजाधैव तेऽभिषिच्यन्ते।” (ऐतरेयब्रा० ८।३।१)

उपरोक्त मन्त्रमें ‘प्राच्यानां राजानः’से प्राच्यके किसी प्रबल नरपतिका नहीं, प्रत्युत क्षुद्र राजाका बोध होता है। इसीसे अन्यत्र कहा है,—

“प्राच्यो शमता बहुलाविष्टाः।” (ऐतरेयब्रा० १।४।६)

उस समय प्राग्देशीय जनपद तथा संहिताकालीन किरातनगरादिक प्रसिद्ध रहा। वहीं सोमवल्लीका क्रय होता था,—

“प्राच्या वै दिशि देवाः सोमं राजान मकीषन्।” (ऐतरेयब्रा० १।३।१)

पाणिनिके आगममें कान्यकुब्जादिच्छत्रादिकी विद्यमानता प्राच्यभूमिमें विदित होती है। ऐतरेय-कालमें उन नगरोंके होने या न होनेमें सन्देह है।

दक्षिणमें उस समय एक सत्वत् राज्य ही बलवत्तम रहा। आजकल उसे छत्रपुर कहते हैं।

“बादत्त यत्रं काशीनां भरतः सत्वता निव।” (शतपथब्राह्मण १।३।५।२१)

गाथाके वचनश्रुतिमें ऐतरेयसे भी छत्रपुर बहु प्राचीनतर भरतका अधिकृत विदित होता है। उसे दौष्मन्ति-भरतने बसाया था। उनके वंशज चिरकालसे भरत कहाते हैं।

“तव्याहाय्ये तर्हि भरताः सत्वनां विभिं प्रयन्ति।” (ऐतरेयब्रा० २।४।१)

“तव्याहेदं भरतानां पयवः सायङ्गः सन्नो मध्यन्दिने सङ्गविनी

मायन्ति।” (१।३।६)

उक्त दोनो श्रुतिवचनमें ‘प्रयन्ति’ और ‘प्रयन्ति’ वर्तमान कालिक प्रयोगसे विदित हुआ, कि ऐतरेयने

भरतवंशीय शासनाश्रित राज्य स्वयं देखा था । दीपन्त
भरत नरेशकी कीर्तिकथा बहुप्राचीन है,—

“हिरण्ये न परीहतान् कृष्णान्कृद्दतो मृगान् ।

मण्यारि भरतोऽददाच्छतं वनानि सम च ।

भरतस्यैव दीपन्ते रयिः साचोगुणे चितः ।

यस्मिन्सहस्रं ब्राह्मणा बहुशो गा विभेजिरे ।

अष्टासप्ततिं भरतो दीपन्तिर्यमुना मनु ।

गङ्गाया इव नद्योऽनघात् पञ्चपञ्चाशतं ह्यान् ।

वयस्त्रिंशच्छतं राजाशान् बभूव मेध्यात् ।

दीपन्तिर्यगाद्रात्रो मायां मायवचनः ।

महाकर्म भरतस्य न पूर्वं नापरे जनाः ।

दिवं मयं इव हस्ताभ्यां नोदायुः पञ्चमानवाः ।” (ऐतरेयब्रा० ८४।८)

शतपथ-ब्राह्मणमें भी प्रायः यही लिखा है । आर्या-
वर्तवृद्धिभूत प्रतीची दिक् कोई सुसमृद्ध राज्य न रहा ।
उत्तरभागके पर्वत-पादस्थ कितने ही अप्रसिद्ध नरेश
रहे । दक्षिण-भागमें भी अनेक छोटे छोटे राजा थे ।
मध्यभागकी अरण्यभूमि इन्हीं नीच अपाच्योंके अधि-
कारमें रही ।

“प्रत्यक्षि दीर्घारण्यानि भवन्ति ।” (ऐतरेय १।४।६)

“प्रतीचोऽप्यासौ वज्राः सन्दन्ते ।” (ऐतरेय १।२।१)

उदीचीमें हिमवत्पृष्ठ-दण्डके उत्तर-भाग आर्या-
वर्तसे वहिर्विद्यमान रहते भी उत्तरमद्र और उत्तर-
कुरुको आर्यमित्रका जनपद सुनते हैं । हिमवान्के
दक्षिण-भूभाग आर्यावर्तकी तरह पहले उसका उत्तर-
भूभाग भी मद्रदेश और कुरुदेशमें विभक्त था । आर्या-
वर्तीय मद्रदेशसे उत्तर उत्तरमद्र और आर्यावर्तीय
कुरुदेशसे उत्तर उत्तरकुरु रहा । आर्यावर्तीय प्रत्यन्त
देशसे आगे जो देश वा महादेश था, उसे मन्वादिने
आर्य वा अनार्य नहीं कहा । फिर तद्देशवासीका
आर्यत्व वा अनार्यत्व भी विचार्य नहीं । परन्तु उत्तर-
कुरुदेश नैसर्गिक सौन्दर्य, स्वास्थ्यकरत्व और अपने
देशवासीके शान्तिप्रियत्व तथा तपःपरायणत्व आदि देव-
स्वभावसे पुण्यमय एवं अजेय देवक्षेत्र समझा गया—

“देवक्षेत्रं वै तत्र वेतस्यलो जेतुं शक्येति ।” (ऐतरेयब्रा० ८४।८)

सोगोंका शान्तिप्रियत्व आदि स्वभाव ही अजेयत्वमें
प्रबल हेतु है,—

“तांस्तु सान्त्वये न निजित्य मानसं सर उत्तमम् ।

अधिकल्यांसया सर्वान् ददर्श कुरुनन्दनः ॥ * *

तत एवं महावीर्यं महाकाया महाबला ।

हारपालाः समासाद्य दृष्टावचनमनुवन् ॥

पार्थ नेदं त्वया शक्यं पुरं जेतुं कथञ्चन ।

उपावर्तस्व कल्याण पर्याप्तमिदमनुजत ॥ * *

न चापि किञ्चिज्जेतव्यमनुनाम प्रदृश्यते ।

उत्तराः कुरुवो ह्येते नाम युद्धं प्रवर्तते ॥”

(महाभारत समापर्व २८५०)

उत्तरकुरु वा कुरुवर्ष अवश्य मेरुके समीप ‘शान्त-
पिष्टवर्ग’ प्रभृति ‘सुवीर्य’ देशान्तमें था । आजकल
वह सायिबेरियाके दक्षिणांश हैं । उसके स्वर्गत्वका
वर्णन अनेक ग्रन्थमें मिलता है,—

“बहो सह शरीरेण प्रातोऽपि परमां गतिम् ।

उत्तरान् वा कुरुन् पुण्यानथवायसरारवीम् ॥” (अथशासनपर्व ५४।१६)

फिर लिखा है,—

“नेवेशिकं सर्वगुणोपपन्नं ददाति वै यस्तु नरो विज्ञाय ।

स्वाध्यायचारित्र्यगुणान्विताय तस्यापि लोकाः कुरुषू चरेयुः ॥”

(महाभारत अथशासनपर्व ७५।३५)

प्राचीन ग्रीक भौगोलिकों और ऐतिहासिकोंने
Aria वा Ariana नामक जनपदका उल्लेख किया है ।
इसकी पूर्वसीमा सिन्धुनद, दक्षिणसीमा भारत-महा-
सागर अर्थात् सिन्धुमुखसे पारसिक उपसागर पर्यन्त
जलभाग, पश्चिमसीमा कासीयसागरसे कार्मेनिय
अर्थात् फार भिन्न समस्त येज्द और किरमानप्रदेश,
उत्तरसीमा परोपनीशस पर्वत अर्थात् भारतकी उत्तर-
सीमा स्थित हिमालय-संलग्न ककेसस् गिरिमाला
पर्यन्त है ।*

सुप्रसिद्ध फरासीपण्डित मूसों बुर्नीफके मतानुसार
ग्रीक Aria वा Ariana और पारसी ईरान संस्कृत
आर्य शब्दका ही रूपान्तर है । अवस्थामें ऐर्जन्बैजो
अर्थात् आर्यावास संस्कृत आर्यदेश नामसे परिचित
है । सुतरां पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिकगणका मत
मानते भी कहना पड़ा, किसी समय दक्षिणमें सिन्धु-
नदके पश्चिमकूलसे उत्तर कासीयसागर पर्यन्त आर्य

देश फैला था। ग्रीक-अभ्युदयकाल इसके अन्तर्गत बक्ट्रियाप्रदेश प्रधान जनपद और बलिहक वा बलख उसकी राजधानी रहा। पतञ्जलिके महाभाष्यमें भी बलिहकका विशेष उल्लेख मिलता है।

ईरान वा बक्ट्रिया व्यतीत प्राचीन पाश्चात्य ऐतिहासिकगणने उक्त आरियाना देशके मध्य कतिपय जनपदका उल्लेख किया, वह सबका नाम और संस्कृतरूप निम्न उद्धृत है—

Paropamisadae = वैदिक निषद और पौराणिक निषध, Drangæ = धूम्रानीक, Zarangai = शारङ्ग, Comedi = कुमुद वा कुसुमोद, Metharici = मौदाकि, Angutturi = अङ्गोत्तर वा उत्तर-अङ्ग, Urui वा Urni = ऊर्णावती, Daritis = दारद, Comari = कुमार, Gedrusi = कद्रु, Arachoti = आर्चोद, Sogdiani = शाकहीपी।

राजतरङ्गिणीमें काश्मीरके सुदूर उत्तर शीतप्रधान आर्याणक नामक किसी जनपदका उल्लेख है। (४।३६७) पाश्चात्य पण्डित लामेन और राजतरङ्गिणीके फरासी अनुवादक ड्रयारके मतसे पाश्चात्य ग्रीक ऐतिहासिक-वर्णित Ariana प्रदेश ही राजतरङ्गिणीमें आर्याणक नामसे उक्त है। राजतरङ्गिणीके अंगरेजी अनुवादक एड्विन साहब दूसरे स्थानपर वैसे शब्दके उल्लेखाभावसे उक्त पाश्चात्य पण्डितके मतमें आस्थावान् नहीं हैं। किन्तु हिमप्रधान आर्याणक प्रदेशका ईरान होना क्या कुछ विचित्र है! राजतरङ्गिणीमें आर्यावर्त-भिन्न आर्यदेश नामक किसी ब्राह्मण-प्रदेशका उल्लेख है। (६।८७) मिहिर-कुलके हस्त यहांके जनगणका निग्रह (१।३१२) एवं काश्मीरपति गोपादित्य कर्तृक आर्यदेशसे ब्राह्मण बुला काश्मीरमें प्रतिष्ठा करनेका प्रमाण भी मिलता है (१।३४१)। राजतरङ्गिणीमें जैसे आर्यदेशके ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठताका आभास मिलता, हमारे भविष्यपुराणमें भी वैसे ही आर्यदेशसमुद्भव शाकहीपी ब्राह्मणोंकी श्रेष्ठताका वर्णन है (ब्राह्मपर्व १३६।५८)। भविष्यपुराणसे समझ पड़ा, कि उक्त आर्यदेश शाकहीपका ही एकांश रहा। कहनेसे क्या,

स्ताका ऐर्यनवैजो और भविष्यपुराणोक्त आर्यदेश अभिन्न है।

आर्यावर्तके मध्य-भूभागमें कुरु, पाञ्चाल आदि चार प्रदेश रहे। दक्षिण वङ्ग, अङ्ग एवं प्राच्य मगधको कण्ठसार मृग न मिलने और अयज्ञियत्वसे स्नेच्छदेश कहते हैं।

पाणिनीय 'शुद्राणामनिरवसितानाम्' (२।४।१०) सूत्र— व्याख्यानपर पतञ्जलिके महाभाष्यमें लिखा है—

'निरवसितानामित्युच्यते। कुतोऽनिरवसितानाम्। आर्यावर्तादनिरवसितानाम्। कः पुनरार्यावर्तः। प्रागोदशात् प्रत्यक्षात्कवनान्निचिणेन हिमवन्तमुत्तरेण पारिपावम्। यद्येवं किष्किन्धगन्धिकशकयवनं शौर्यकौचमिति न सिध्यति। एवं तद्व्याप्यनिवासादनिरवसितानाम्। कः पुनरायनिवासः। यानो घोषो नगरं संवाह इति। एवमपि य एते महान्तः संक्षालयान्तेष्वन्तरायच्छाला सतपाय वसन्ति तत्र चक्षालसतपा इति न सिध्यति। एवं तर्हि याशात्कर्षणोऽनिरवसितानाम्। एवमपि तचायस्कारं रजकतनुवायमिति न सिध्यति। एवं तर्हि पातादनिरवसितानाम्। यैमुक्ते पातं संस्कारिण्युध्यति तेऽनिरवसिताः। ये भुङ्क्ते पातं संस्कारिणापि न युध्यति ते निरवसिता इति ॥'

उक्त महाभाष्यकी टीकामें कौयटने कहा है,—

'निरवसिता वहिष्कृता उच्यते। * * आदर्शदयः पर्वतविशेषाः। * * एतत्पर्वतचतुष्टयमध्य आर्यावर्तो देश इत्यर्थः। यद्येवमिति एतेषामार्यावर्ताद् बाह्यत्वादिति भावः। गाम इति एतेषार्या निवसन्तीति भावः।'

महाभाष्यप्रदीपोद्योतमें नागेशभट्टजीने विवृत किया है—'शुद्रशब्दोऽत्र त्रैवर्णिकेतरः न तु शुद्रत्वजातिपरः। अनिरवसितानामिति प्रतिषेधात्।'

महाभाष्य और तत्तत् टीकाकारगणकी उक्तिसे आता, कि आदर्श पर्वतसे पूर्व, कालकवनसे पश्चिम, हिमवत्से दक्षिण और पारिपात्र पर्वतसे उत्तर, घोष, नगर तथा संवाह वा बणिक्प्रधान स्थानमें जहां आर्य अर्थात् त्रैवर्णिक और अवाह्य त्रैवर्णिकेतर शुद्रभावापन्न जनगण रहता, वहीं आर्यावर्त पड़ता है। किष्किन्ध-गन्धिक, शक, यवन, शौर्य और कौच प्रभृति जनपद उक्त आर्यावर्तकी सीमासे बाहर है।

वराहमिहिरकी बृहत्संहितामें भारतवर्षकी उत्तर-सीमाके कैकय, आजुनायन प्रभृति जनपदके साथ आदर्शका* उल्लेख मिलता है। शतद्रु नदीका उत्तरतटस्थ प्रदेश कैकय वा कैकय और काबुल तथा

* 'कैकयवसतिशामुन-मीयप्रसज्जं नायनामीश्रीः।

आदर्शक-दीपि-विगर्त-नुरगाननायमुखाः ॥' (१।४।२५)

पेशावरका मध्यवर्ती स्थान आर्जुनायन नामसे पूर्व-कालमें प्रसिद्ध रहा। वहांके लोग नगरहार नामक पार्वत्य नगरका प्राचीन नाम 'अजुन' बताया करते हैं। उक्त आर्जुनायन प्रदेशके अतिरिक्त ककेसस पर्वतके निकट माकिदनवीर अलेक्सन्दरके ऐतिहासिक आरियानने 'आद्रेप्सा' (Adrepsa) नामक किसी पार्वत्य भूभागकी बात भी कही है। यह आदर्शक शब्दका विकृत पाठ समझ पड़ता है। आजकल इस स्थानको अन्द्राव कहते हैं। महाभाष्योक्त कालकवन महाभारत और पुराणादिमें कालतोयक नामसे आभीर तथा अपरान्तादि देशके साथ एवं वराह-मिहिरकी बृहत्संहितामें भारतवर्षके नेत्रत कोणपर रैवतक, सुराष्ट्रादिके साथ कालकजनपद लिखा है। पाश्चात्य भौगोलिक टलमीने कोलक (Kolaka) एवं आरियनने क्रोकल (Krokala) नामसे भारतके दक्षिण-पश्चिम प्रान्तमें कोई जनपद बताया है। कराची उपसागरके कूलमें कालकल नामक एक जिला विद्यमान है। यही स्थान प्राचीन भारतीय पुराण-वर्णित कालक वा कालतोयक एवं प्राचीन पाश्चात्य भूगोल-वर्णित कोलक या क्रोकल मालूम देता है।

पारिपात्र ख्रिष्टीय ७म शताब्दीय चीनपरिव्राजक-को पो-ली-ये-तो-लो नामसे परिचित रहा। यह शलमाला विन्ध्यके पश्चिम और उत्तरांशमें राज-पूतानाके निकट पथर नामसे आजकल पुकारी जाती है। काश्मीरसे नेपालतक हिमालयकी अंश ही स्कन्दपुराणमें हिमवत्खण्ड नामसे अभिहित है। सुतरां महाभाष्यके मतसे आर्यावर्त उत्तरमें काकेसस पर्वतसे नेपालकी पश्चिम सीमा तथा दक्षिणमें सिन्धुप्रदेशके दक्षिणांश-स्थित कराची उप-कूलसे विन्ध्य पर्वतकी उत्तर-पश्चिम सीमा पर्यन्त विस्तृत रहा। ऋक्संहिताके प्रमाणसे त्रिसप्त नदी-प्रवाहित सप्त सिन्धुप्रदेश एवं सारस्वत तथा अनुगाङ्ग प्रदेशका जो परिचय उद्धृत हुआ, वह महा-भाष्यके प्रमाणसे प्राचीन आर्यावर्तका वर्णन मालूम पड़ता है। इधर मनुसंहितामें आर्यावर्तकी सीमा इसप्रकार निर्धारित है,—

“आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।

तथोरिवान्तरं गिर्योरावर्तं विदुर्बुधाः ॥” (२।२२)

पूर्वसमुद्र पर्यन्त एवं पश्चिम भी समुद्र-पर्यन्त विस्तृत देशके अन्तराल प्रदेशमें (उत्तर-दक्षिण) गिरिके मध्यवर्ती स्थानको पण्डितोंने आर्यावर्त निर्देश किया है। मनु-भाष्यकार मेधातिथिने उक्त श्लोकके व्याख्यानमें लिखा है,—‘आपूर्वसमुद्रादापश्चिमसमुद्राद्योऽन्तरालवर्तो देशस्तथा । तथोरिव पूर्वोक्तोऽपदिष्टगिर्याः पर्वतयोर्हिमवद्विन्ध्ययोर्बदन्तरं मध्यं च आर्यावर्तो देशो बुधैः शिष्टै रचयते ।’

मेधातिथिकी तरह अमरसिंह और कुल्लूकभट्ट दोनोने ही हिमालय तथा विन्ध्यके मध्यवर्ती स्थानको आर्यावर्त कहा है।

“आर्यावर्तः पुष्कभूमिर्मध्यं विन्ध्यहिमालयोः ।” (अमर २।१।८)

‘शरावत्यास्तु योऽवधेः ।

देशः प्राग्दक्षिणः प्राचा उदीचाः पश्चिमोत्तरः ।

प्रत्यन्तो ज्येष्ठदेशः खान् मध्यदेशस्तु मध्यमः ।’ (अमर २।१।६-७)

प्राग्-सहित दक्षिण देशकी ‘प्राग्-दक्षिण’, पश्चिम-सहित उत्तर देशकी ‘पश्चिमोत्तर’ और अन्तर्गत प्रति-गतकी ‘प्रत्यन्त’ अर्थात् सीमान्तप्रदेश कहते हैं।

किन्तु पूर्वोद्धृत महाभाष्य और मूल मनुसंहिताका वचन पढ़नेसे आर्यावर्त इतना सङ्कीर्ण सीमाबद्ध मालूम नहीं पड़ता। मूल मनुसंहितामें लिखा है,

“हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्यं यत्प्राग्विजग्नादपि ।

प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः ॥” (२।२१)

उक्त मनुवचनके अनुसार उत्तरमें हिमालय, दक्षिणमें विन्ध्य, पूर्वमें विनशन और पश्चिममें प्रयाग चतुःसीमावच्छिन्न स्थान मध्यदेश होता है। सुतरां मेधातिथि, कुल्लूकभट्ट और अमरसिंहने हिमवत् और विन्ध्यके मध्य जिस स्थानको आर्यावर्त बताया, भगवान् मनुके मतसे वही मध्यदेश ठहरा है। मनुके मतसे ब्रह्मावर्त ब्रह्मर्षि देश और मध्यदेश आर्यावर्तके ही अन्तर्गत प्रधान स्थान है। इन कयी प्रधान भूभागोंके व्यतीत पूर्वमें समुद्र और पश्चिममें भी समुद्र पर्यन्त आर्यवास आर्यावर्तके अन्तर्गत पड़ता था। भूतत्त्वविदोंने आलोचनासे प्रमाण दिया, कि अति पूर्वकाल यूसिन युगमें सागरतरङ्ग हिमालयतट पर्यन्त पड़ता था। वही आभासिक नियमसे हिमाचल-

पृष्ठ छोड़ सिंहाल द्वीपकी ओर सरक गया। उस समय प्राकृतिक नियम तथा जलप्रवाहकी परिवर्तन-गतिसे पृथिवीके विभिन्न अंशमें जनपद और द्वीप फिर बने। इसीके फलसे निम्नवङ्गकी क्रमशः उत्पत्ति होती रही। भूतत्त्वविदोंने यह भी प्रमाणित किया, कि प्लिउसिन और परवर्ती युगमें राजमहलके निकट पर्यन्त समुद्रतरङ्ग आया था। महाभारतका वनपर्व पढ़नेसे समझ पड़ा, कि युधिष्ठिरके तीर्थयात्रा-काल कौशिकीतीर्थसे कुछ दूर पञ्चशत नदी-युक्त गङ्गासागर-सङ्गम रहा। वर्तमान वङ्गालके हुगली जिलेमें तार-केश्वरके निकट कौशिकीका प्राचीन गर्भ देखनेमें आता है। खृष्टपूर्व तृतीय शताब्द ग्रीक-राजदूत मेगस्थेनिसने पढ़नेसे ३०३ मील दूर गङ्गासागर-सङ्गमकी बात कही है। उक्त प्रमाणसे समझ पड़ता, कि उत्तर-राष्ट्रके निकट पर्यन्त किसी-किसी स्थानमें समुद्रतरङ्ग आता, तब इसमें सन्देह नहीं, कि उससे बहुत पहले वैदिक युगमें और भी सौ मील उत्तर समुद्र-तरङ्ग पहुँचता था। इसीप्रकार भूतत्त्वविदोंने यह भी प्रमाणित किया, कि भारतके पश्चिम-प्रान्त स्थित वर्तमान बलूचिस्थानसे सिन्धुप्रदेशतक कराचीका अधिकांश समुद्र-गर्भमें रहा। सुतरां मनुवर्णित आर्या-वर्तकी पूर्व और पश्चिम सीमा समुद्र ही ठहरती है।

स्मृतिमें देखते हैं,—

“चातुर्वर्ण्यव्यवस्थान् यस्मिन्देसे न विद्यते ।

क्वेच्छदेश स विज्ञेयः आर्यावर्तस्ततः परम् ॥”

अर्थात् जिस देशमें चारो वर्णोंके वर्णगत आश्रम-धर्मकी व्यवस्था नहीं, वही स्थान क्वेच्छदेश होता है। आर्यावर्त उससे भिन्न है। मनुसंहितामें निदिष्ट हुआ है,—

“चरति कृष्णसारस्तु यगी यत्र स्वभावतः ।

स ज्ञेयो यज्ञियो देशो क्वेच्छदेशस्ततः परम् ॥” (१।२१)

अर्थात् जिस देशमें कृष्णसार ऋग स्वभावतः घमता, वही यज्ञिय देश ठहरता; उससे भिन्न अपर स्थान क्वेच्छ देश होता है।

उद्धृत उभय वचनसे आर्यावर्त यज्ञिय देश प्रमाणित है। इसका आभास मिलता, कि शतयज्ञवर्दीय

शतपथब्राह्मणमें वैदिक काल भारतके पूर्वापर कितने ही स्थान पर्यन्त यज्ञिय देश कहाता था। शतपथ-ब्राह्मणमें इस बातपर एक गल्प लिखा है,—‘विदेघ माथवने मुखमें अग्निको रखा था। गोतम-राष्ट्रगण नामक उनके एक पुरोहित रहे। गोतमने माथवको पुकारा, किन्तु उन्होंने मुखसे अग्नि निकल पड़नेके भयसे कोई उत्तर न दिया। पुरोहितके ‘वैति होत्र’ (५।२६।३) इत्यादि ऋद्धमन्त्र पढ़कर प्रथम बुलानेपर माथव कुछ न बोले। उन्होंने फिर ‘उदग्ने’ (८।४४।१७) इत्यादि ऋद्धमन्त्रसे सम्बोधन किया, किन्तु फिर भी कोई उत्तर न मिला। अन्तको ‘तं त्वा घृतस्त्रवीमहे’ (५।२६।२) इत्यादि पढ़नेपर अग्नि ‘घृत’ शब्द सुनते ही मुखसे बाहर निकले और जलने लगे थे। माथव अग्निको मुखमें रोक न सके। अग्नि माथवके मुखसे निकल पृथिवीपर अवतीर्ण हुये। उस समय विदेघमाथव सरस्वतीके तीर रहते थे। फिर अग्नि दहन करते-करते पूर्वाभिमुख पृथिवीपर घूमने लगे। गोतम राष्ट्रगण और विदेघमाथव दोनोंने दाहवान् अग्निका अनुगमन किया। वैश्वानरने समु-दय नदी जला डाली थी। केवल उत्तर-गिरिसे विनिर्गत सदानीरा नदीका परपार बच गया। इसीसे वह ग्रीष्मान्तमें भी शीतल रहती है। पूर्वकाल ब्राह्मण उस नदीके पार उतरते न थे। अब अनेक ब्राह्मण पूर्वदिक् रहते हैं। अग्नि वैश्वानरके स्वाद न लेनेसे वह वासके अयोग्य और जल-सिक्त है। अब ब्राह्मणोंके यज्ञानुष्ठान करनेसे वास-योग्य बनी है। विदेघमाथवने पूछा,—‘हम कहाँ रहेंगे?’ अग्निने कहा,—‘इस नदीका पूर्व-प्रदेश तुम्हारी वासभूमि होगा।’ उसी समयसे वह नदी कोशल और विदेहके मध्य अवस्थित है। वहाँके लोग माथवसन्तान हैं।” (शतपथब्रा० १।४।१।१०—१७)

शतपथब्राह्मणसे अच्छी तरह समझ पड़ता, पूर्व-काल सदानीराके पश्चिम उपकूल अर्थात् कोशलराज्य पर्यन्त यज्ञिय देश लगता था। उसके बाद सदानीराका पूर्वतटस्थ प्रदेश अधिकार करनेपर आर्य-उत्पत्ति विदेघमाथवके नामानुसार यह स्थान विदेह

वा मिथिला कहाया। इसी प्रकार उनके गौतम-गोत्रीय पुरोहितसे यहां यज्ञकाण्ड चला। ब्राह्मण-युगमें मिथिला यज्ञिय देशके अन्तर्गत रहते भी मगध, अङ्ग और मिथिलासे पूर्व अवस्थित समस्त देश अयज्ञिय गिना जाता था। इसीसे ऐतरेय आरण्यकमें यह अयज्ञिय और निन्दित देश कहा गया। ब्राह्मण और आरण्यकमें मगध तथा अङ्ग पर्यन्त ऋच्छ देश माना जाते भी उसके बहुत पीछे महाभारतके प्रचारकाल वह सकल स्थान आर्यावास एवं बहु आर्यतीर्थ-समाच्छन्न हुआ था। वनपर्व तीर्थयात्राके पर्वाध्यायसे आभास मिलता, कि उस समय उन सकल स्थानोंसे सुदूर दक्षिणमें अवस्थित वैतरणी नदीतीरस्थ कलिङ्ग (वर्तमान उड़ीसा) यज्ञिय देश कहाता था,—

“एते कलिङ्गाः कोनेय यव वैतरणी नदी।

यवाऽयजत धर्मोऽपि देवान्छरणमेत्य वै ॥

ऋषिभिः समुपायुक्तं यज्ञियं गिरिशोमितम्।

उत्तरं तीरमेतद्धि सततं क्षिणसेवितम् ॥” (महाभारत वनपर्व ११५७ः)

आजकल आर्यावर्त भूमि पश्चिम एवं उत्तरसे सिकुड़ी, दक्षिणमें प्रायः पूर्ववत् पड़ी और पूर्वपर बढ़ी है। पञ्जाबके पश्चिमप्रान्त आजकल आर्यावर्तसे बाहर गिना जाता, क्योंकि उत्कल, राद, गौड़, वङ्ग और प्रागज्योतिष (कामरूप) प्रदेश आर्यावर्तके अन्तर्गत पुण्यभूमि लगता है।

आर्यावर्तीय (सं० त्रि०) आर्यावर्त-सम्बन्धीय, आर्यावर्तके सुतात्मिक।

आर्वाक् (सं० अथ०) पश्चात्, अनन्तर, बाद, तात्पुर्वमें, पीछे।

आर्ष (वै० त्रि०) कुरङ्ग-सम्बन्धीय, छल्लेदार सींग वाले आड़के सुतात्मिक।

आर्ष (सं० त्रि०) ऋषेरिदम्, अण्। १ ऋषिसम्बन्धी, पुराना। २ ऋषिकृत, ऋषियोंका बनाया हुआ। (पु०) ३ ऋषि-सेवित वेद।

“आर्षं त्रिर्नोपदेशश्च वेदशास्त्रावितोचिनः।

यद्येकैषानुसन्धते स धर्मं वेद नेतरः।” (मनु ११२०६)

संस्कारहीनत्वेऽपि ऋषिणा प्रयुक्तः। ४ व्याकरणोक्त

अनुशासनकों उल्लङ्घनकर ऋषियोंका कहा हुआ असाधु प्रयोग। (क्ली०) ऋषीणां समूहः प्रवरगण-भेदः। ५ प्रवर ऋषि-समूह। ६ विवाहविशेष।

“यज्ञस्थायत्विजे दैव आदायार्षं नु गोद्वयम्।” (याज्ञवल्क्य)

यज्ञस्थ ऋत्विक्से कन्याके विवाह होनेको दैव कहते हैं। वरके पक्षसे दो गो लेकर कन्या-व्याह देना आर्ष कहाता है।

“एकं गो मिथुनं द्वे वा वरादादाय धर्मतः।

कन्याप्रदानं विधिवदार्षो धर्मः स उच्यते ॥” (मनु ३।२८)

अर्थात् वरपक्षसे धर्मतः एक गाय और एक बैल अथवा गोमिथुनद्वय ले विधानक्रमसे कन्याप्रदान आर्ष कहाता, जो धर्मजनक होता है। इस स्थलपर धर्म पद रहनेसे गोद्वयका ग्रहण शुल्कके मध्य परिगणित नहीं।

“धर्मतः धर्मार्थं यागादिसिद्धये कन्यावै वा दातुं न तु शुल्कवध्या।”

(छल्लूकभट्टः)

आर्षक्रम (सं० पु०) आर्ष परिपाटी, ऋषियोंकी चाल।

आर्षधर्म (सं० पु०) कर्मधा०। १ मन्वादि-प्रोक्त धर्म, मनु आदि स्मृतिकारोंका कहा हुआ धर्म। २ आर्ष विवाह, पुरानी चालकी शादी। आर्ष देखो।

आर्षप्रयोग (सं० पु०) ऋषिसम्बन्धि सन्धि, पुराना महावरा। वाक्यमें व्याकरणके नियमसे विरुद्ध पड़ने-वाला शब्द आर्षप्रयोग कहाता है। ऋषियोंने व्याकरणपर विशेष दृष्टि न रख अनेक स्थलमें उलट-पलट किया है। किन्तु उसे अशुद्ध मान नहीं सकते। छन्दमें भी व्याकरणका नियम चलना कठिन है। इसीसे जो शब्द योजना मनमानों रहती, वह आर्ष-प्रयोग वजती है। यह विषय संस्कृतसे ही सम्बन्ध रखता है।

आर्षभ (सं० त्रि०) ऋषभस्य वृषस्येदम्, अण्। १ वृषसम्बन्धी, नर-गावकी सुतात्मिक। (क्ली०) २ ऋषभ-देव-चरित।

आर्षभि (सं० पु०) ऋषभस्यापत्यम्, इज्। १ प्रथम तीर्थकृत् ऋषभके पुत्र। २ भारतवर्षके प्रथम चक्रवर्ती

आर्षभौ (सं० स्त्री०) ऋषभस्येयं प्रिया, अण्-डोप् ।

१ कपिकच्छुलता, केवांचकी वेल । ऋषभस्येयम्, तुल्याकारत्वात् अण्-डोप् । २ मध्य-पथस्य वीथि-त्रयके मध्य वीथिविशेष, राहके बीचकी तीनमें एक गली ।

आर्षभ्य (सं० पु०) ऋषभस्य प्रकृतिः, अण् । षण्डोप-युक्त वृष, बधिया बनाने लायक, वेल । 'आर्षभः षण्डता-योग्यः ।' (अमर)

आर्षविवाह (सं० पु०) विवाह-विशेष, किसी किसीकी शादी । आर्ष देखो ।

आर्षिक्य (सं० स्त्री०) ऋषिरेव ऋषिकः, ऋषिकस्य भावः, पुरो० यक् । ऋषिधर्म ।

आर्षिषेण (सं० पु०) ऋषिषेणस्य गोत्रापत्यम्, अच् । १ ऋषिषेण मुनिके गोत्रापत्य, देवापिका गोत्रनाम । (त्रि०) २ ऋषिषेण मुनिसे सम्बन्ध रखनेवाला । (स्त्री०) डोप् । आर्षिषेणी ।

आर्षेय (सं० स्त्री०) ऋषीणां समूहः, ढक् । १ ऋषि-गणरूप प्रवर-विशेष । २ मन्त्रदर्शी ऋषिविशेष । (स्त्री०) डोप् । आर्षेयी ।

आर्षिषेण (सं० पु०) ऋषिषेणस्यापत्यम्, अच् । चन्द्रवंशीय शल नृपतिके एक पुत्र । यह प्रथम राजा रहे । पर ऋषि हुआ । (हरिवंश २०१ अ०) २ गोत्र-प्रवर विशेष ।

आर्षिषेणाश्रम (सं० स्त्री०) तीर्थ विशेष ।

आर्हत (सं० त्रि०) अर्हत इदम्, अण् । १ जैन-सम्बन्धी, जिन मज्झबके मुताब्बिक । (पु०) २ जैन, जिन मज्झबको माननेवाला शख्स । 'स्नाहादवाचर्तः ।' (हेम १।५२५) जैन देखो । (स्त्री०) आर्हती ।

आर्हत्य (सं० स्त्री०) अर्हत् वा जैन साधुका साधन । आर्हन्तो (सं० स्त्री०) अर्हन्तो भावः, थञ् नुमच्, षित्वात् डोप् यलोपः । योग्यता, काबिलियत ।

आर्हन्त्य (सं० स्त्री०) आर्हन्ती देखो ।

आर्हायण (सं० पु०) आर्हस्यापत्यम्, फञ् । अर्ह-नामक ऋषिके गोत्रापत्य । (स्त्री०) डोप् । आर्हायणी ।

आर्हीय (सं० पु०) अर्हमभिव्याप्य अण् आर्हम् तत्र विहितः तस्येदं वा, वृद्धाच् । १ पाणिनिके

(५।१।८) 'आर्हादगोपुच्छसंख्यापरिमाणाट्ठक्'से (५।१।६३) 'तदर्हति' सूत्र पर्यन्त विहित प्रत्ययविशेष । २ उपरोक्त सकल-सूत्र-विहित अर्थ । 'आर्हीयन्ते ।' (विज्ञानकौमुदी)

आल (सं० स्त्री०) आलति भूषयति, आ-अल भूषादौ अच् । १ हरिताल, जरनौख । हरिताल जिस स्थानमें रहता, उसे भूषित करता है । इसीसे आल कहते हैं ।

'पिन्नरं पितकं तालमालञ्च हरितालके ।' (अमर २।८।१०४)

२ अण्ड, मोनाण्ड, भेकाण्ड आदि, मछली या मेंड़काका अण्ड । (त्रि०) आ-अल पर्याप्तो अच् । ३ अनल्प, अधिक, ज्यादा । ४ अष्ट, बड़ा ।

(हिं० स्त्री०) ५ अच्युत वृक्ष, एक पौधा । (Morinda citrifolia) यह भारतवर्षके नाना स्थानमें उपजती है । बुंदेलखण्ड, कोटे, बुंदी प्रभृति स्थानमें इसको खेती होती है । महिसुरकी आल सर्वोत्कृष्ट निकलती है । दूसरे-दूसरे वर्ष इसे बोते हैं । पौदा दो फीट जंचा होता है । डण्डलसे लाल रङ्ग बनता है । छाल और जड़को काट हीजमें सड़ानेसे कुछ दिनमें रङ्ग उतरता, जो कपड़े रंगनेके काम आता है । रङ्ग पक्का होता और शीघ्र नहीं उड़ता । आलके रङ्गसे दोमक भौ दूर रहती है । ६ आलका रङ्ग । ७ माही, सरसोंके पेड़में लगनेवाला कीड़ा । ८ पण्डा-लुका, हरित नाल । ९ लौकी, कद्दू । (पु०) १० उप-द्रव, भगड़ा । ११ आर्द्राभाव, सील । १२ अन्ध-आँसू । १३ प्रान्तभाग, गांवका हिस्सा । भगड़ा-बखेड़ा आल-जञ्जाल कहाता है ।

(अ० स्त्री०) १४ कन्याको सन्तति, बेटोकी औलाद । बालबच्चोंको आल-औलाद कहते हैं ।

आलंग (हिं० पु०) आतप, कामानल, सरगर्मी, भल, चुल, मस्ती ।

आलंगपर आना (हिं० क्रि०) घोड़ीका सरगर्मा होना या मस्त पड़ना ।

आलंगपर होना, आलंगपर आना देखो ।

आलक (सं० स्त्री०) हरिताल, पीली सड़िया ।

आलकस (हिं० पु०) आलस्य, सुस्ती ।

आलकसी (हिं० वि०) अलस, सुस्त, काहिल ।
 आलक्ष्य (सं० क्ली०) अलक्षण, मन्दभाग्य, पातक,
 ज्वाल, गुनाह ।
 आलक्षि (सं० त्रि०) आलक्षते, आ-लक्ष-इन् ।
 ज्ञाता, जानकार, समझदार । (स्त्री०) डीप ।
 आलक्षी ।
 आलक्षित (सं० त्रि०) आलक्ष-क्त-इट् । सम्यक्
 ज्ञात, चिह्न द्वारा प्रदर्शित, अच्छीतरह समझा हुआ,
 जो भलक पड़ा हो ।
 आलक्ष्य (सं० त्रि०) आलक्ष्यते, आलक्ष-यत् ।
 १ सम्यक् ज्ञेय, लक्षण द्वारा ज्ञातव्य, ज़ाहिर, आश-
 कारा, भलकनेवाला । २ दुर्ज्ञेय, ब-मुश्किल नमूदार,
 जो ज्य.दा ज़ाहिर न हो । (अव्य०) ल्यप् । ३ सम्यक्
 समझकर, देख-भालके साथ ।
 आलगर्द (सं० पु०) अलगर्द एव, स्वार्थे अण् ।
 जलसर्प, पानीमें रहनेवाला सांप ।
 आलजि (सं० त्रि०) आ-लज-इन् । आभाषक,
 बोलनेवाला ।
 आलजिह्वा, अलिजिह्वा देखो ।
 आलथी पालथी (हिं० स्त्री०) आसनभेद, एक बैठक ।
 दाहने पैरकी एंडो बायीं और बायें पैरकी एंडी
 दाहनी जांचपर रखनेसे यह आसन जमता है ।
 आलद्रूषक (सं० पु०) प्रतुद पक्षी विशेष, ठोंग
 मारनेवाली एक चिड़िया ।
 आलन (हिं० पु०) १ पलाल, नाल, भूषा, बिचाली ।
 यह मकान बनानेके लिये मट्टीमें मिलाया जाता है ।
 २ व्यञ्जनमें पड़नेवाला पिष्टक, जो खमीर तरकारीमें
 पड़ता हो ।
 आलना (हिं० पु०) पक्षिस्थान, आशयाना, घोंसला ।
 आलपाका, अलपाका देखो ।
 आलपीन (हिं० स्त्री०) शलाका, घुण्डीदार सूयी ।
 यह शब्द पोतंगीज 'आलफिनेट'का अपभ्रंश है ।
 इससे प्रायः कागजको नली करते हैं ।
 आलभ्य (सं० त्रि०) आ-लभ-क्त । १ संसृष्ट, संयुक्त,
 स्मृष्ट, लगा या मिला हुआ । २ हिंसित, चोट खाये
 हुआ ।

आलब्धि (सं० स्त्री०) १ स्पर्श, छूत, लगाव ।
 २ हिंसा, चोट, नुकसान ।
 आलभन (सं० क्ली०) आ-लभ-ल्युट् । १ हिंसा,
 नुकसान । २ स्पर्श, पकड़ ।
 आलभनीय (सं० त्रि०) आ-लभ-अनीयर् । १ स्पर्श,
 पकड़ने काबिल । २ हिंसनीय, नुकसान पहुँचाये
 जाने लायक ।
 आलभ्य (सं० त्रि०) आ-लभ-यत् । पोरदुपधात् । पा
 १।१।२८ । १ स्पर्श, छूवा जाने काबिल । २ हिंस्य,
 मारा जाने लायक । जो नुकसान भेल सकता हो ।
 (अव्य०) ल्यप् । ३ स्पर्शपूर्वक, छूकर ।
 आलम (अ० पु०) १ लोक, दुनिया । २ प्रजा,
 जन, खल्क, लोग । ३ आलोक, नकल, तमाशा ।
 ४ काल, बेला, ज़माना । ५ अवस्था, हालत ।
 आलम कवि—एक प्रसिद्ध कवि । पहले यह सनाढ्य
 ब्राह्मण रहे । किन्तु किसी सुसलमान-रमणोके
 प्रणयमें पड़नेसे इन्हें इसलामकी दीक्षा दी गयी ।
 दिल्ली-सम्राट् औरङ्गजेबके पुत्र सुवल्जिम शाहके निकट
 आलम काम करते थे । इनकी कविता अति उत्कृष्ट
 समझी जाती है ।
 आलमगौर (अ० पु०) १ देशपति, दुनियाको
 जीतनेवाला शख्स । २ बादशाह औरङ्गजेब ।
 औरङ्गजेब देखो ।
 आलमगौर प्रथम, औरङ्गजेब देखो ।
 आलमगौर द्वितीय—दिल्लीके एक सम्राट् । इनका नाम
 आजिजुद्दीन् रहा । सम्राट् जहांदार शाहके औरस
 और अनप बार्देके गर्भसे इन्होंने १६८८ ई०को जन्म
 लिया था । १७५४ ई०की २री जूनको वज़ीर इमा-
 दुल्मुल्क ग़ाज़ी-उद्दीन् खांके सहारे यह सिंहासनपर
 बैठे । मुहम्मद शाहके लड़के अहमद कंद कर लिये
 गये थे । इन्होंने पांच वर्षसे भी कम राज्य चलाया ।
 १७५८ ई०की २८वीं नवम्बरको वज़ीर इमादुल्मुल्क
 ग़ाज़ी उद्दीन् खांने इन्हें मार डाला था । सम्राट्
 हुमायूँके रोज़ेके सामने आलमगौर गाड़े गये । इनके
 पुत्रका अलीगौहर (शाह आलम) और पौत्रका नाम
 मिर्जा जवाहरख्त था ।

आलम-गैब (अ० पु०) परलोक, देख न पड़नेवाली दुनिया ।

आलमजानी (अ० पु०) इहलोक, मौजूदा दुनिया ।

आलम जिन्नात (अ० पु०) पेशाच लोक, भूतोंके रहनेकी दुनिया ।

आलमडांगा—बङ्गाल प्रान्तके नदिया जिलेका एक गांव । यह पङ्गासी नदीके तीर अवस्थित है । यहां चावलका व्यवसाय अधिक होता है ।

आलमनक, अलमनक देखो ।

आलमनगर—१ अवध प्रान्तके सीतापुर जिलेका एक नगर । आजकल इसे टमसनगञ्ज भी कहते हैं । प्रायः आठ हजार लोगोंका वास है । २ अवध प्रान्तके शाहाबादका एक परगना । पौराणिक समय यह स्थान कारुष राजाओंके अधिकारमें रहा । कान्यकुब्जका अधःपतन होनेपर निकुम्भगणने आकर इसपर अपना अधिकार जमाया था । अकबर बादशाहके राजत्वकाल वह विद्रोही हुआ, किन्तु नवाब सदर-जहां द्वारा ताड़ित किया गया । धन-सम्पत्ति सेयदोंके हाथ लगी थी । प्रथम आलमगौर औरङ्गजेब बादशाहके राजत्वकाल सेयदोंने आलमनगर नाम रखा । नवाब आसफ़-उद्-दौलाके समयसे निकुम्भ फिर यहां रहने लगे थे । लोकसंख्या प्रायः अठारह हजार है । ३ विहार प्रान्तके भागलपुर जिलेका एक ग्राम । यह कृष्णगञ्जसे सात मील दक्षिण-पश्चिम पड़ता है । पहले यहां चंदेल राजाओंका अधिकार रहा । स्थान-स्थानमें अट्टालिकाओंका ध्वंसावशेष देखनेसे प्राचीन समृद्धि समझ पड़ती है । आजकल राजपूत और ब्राह्मण अधिक रहते हैं ।

आलमपरै—मन्द्राज प्रान्तके चेङ्गलपट्ट जिलेका एक ग्राम । यह पुंदिचैरी और चेङ्गलपट्ट नगरके बीचोबीच सागरकूलपर अवस्थित है । १७५० ई०को मुजफ्फरजङ्गने यह स्थान फ्रान्सीसी सेनाके नायक दुम्रेको दे दिया था । अनेक बार यहां अंगरेजों और फ्रान्सीसियोंमें युद्ध हुआ । १७५८ ई०को इस ग्रामके निकट भीषण जलयुद्ध चला था । १७६० ई०को सर आर्थर क्लाइने इसे

अधिकार किया । पहले यहां कस्तूरी बहुत मिलता था ।

आलमपुर—१ मध्य भारतके इन्दोर राज्यका एक परगना । इसका प्रधान नगर आलमपुर ही है । प्रायः सत्रह हजार लोग रहते हैं । २ बम्बई प्रदेशके काठिवाड़का एक ग्राम ।

आलमफ़ानी (अ० पु०) नश्वर जगत्, मिट जानेवाली दुनिया ।

आलमवाला (अ० पु०) वेकुण्ड, बिहिश्त, जं'ची दुनिया ।

आलममस्ती (प० पु०) इन्द्रिय-निरति, ऐयाशौ, रङ्गरस ।

आलम-सिफ़ली (अ० पु०) मही, मेदिनी, जमीन, जहान् ।

आलमारी, अलमारी देखो ।

आलम्या—ब्रह्मदेशके नृपति विशेष । ब्रह्मदेश और फायरे देखो ।

आलम्ब (सं० त्रि०) १ नौचेकी ओर लटकनेवाला, जो नौचेको झुका हो । (पु०) २ टेक, सहारा लेनेकी चौड़ा । ३ आश्रय, सहारा । ४ आधार, मसकन, जगह । ५ अवलम्ब, धनी, अम्बेकी लकड़ी । ६ आश्रम, दारुल-अमान् । ७ निबन्धन, फरमांबर-दारी । ८ लम्ब, उमूद, सीधे खड़ी लकीर ।

आलम्बन (सं० क्ली०) आलम्बते, आ-लवि कर्मणि ल्यट् । १ निबन्धन, अधीनता । २ आश्रय, सहारा । ३ आधार, बुनियाद । ४ कारण, सबब । ५ अलङ्कार-शास्त्रके अनुसार उपादान कारणसे मनोवृत्तिका प्रकृत तथा आवश्यक सम्बन्ध, बढ़ानेवाले सबबसे रिक्तता कुदरती और ज़रूरी तात्त्विक । “आलम्बनं नायकादिसमाख्य रसोद्भवात् ।” (साहित्यदर्पण) रस विशेषमें आलम्बन विशेष कहा है । शृङ्गार रसमें अनुरागिणी परविवाहिता वेश्या-छोड़ अन्य नायिकाको अवलम्बन करना पड़ता है । हास्यरसमें जो विक्षत आकार, वाक्य, चेष्टा प्रकृति देख लोगोंकी हंसी आ सकती, वही आलम्बन है । करुणरसमें शोचनीय कार्य आलम्बन होता है । रौद्ररसमें अरि ही आलम्बन है । मोहुरसमें विजितव्यादिको आलम्बन

कहते हैं। वीभत्सरसमें दुर्गन्ध, मांस, रक्त और मेद आलम्बन है। अद्भुतरसमें अलौकिक वस्तु आलम्बन होता है। शान्तरसमें अनित्यत्वादि द्वारा अशेष वस्तुका जो असारत्व रहता, वही आलम्बन बजता है। भयानक रसमें जिससे भय उपजता, वही आलम्बन आता है। ६ अनुष्ठान, अमल। निर्वाणप्राप्तिके लिये योगियोंद्वारा किये जानेवाले मानसिक साधनको आलम्बन कहते हैं। ७ स्तोत्रकी मूक आवृत्ति, दुवाका खमोश एयादा। ८ बौद्धमतानुसार—पञ्च ज्ञानेन्द्रिय सदृश द्रव्यके पांच गुण, पांचो हिंसके मुताब्बिक शैकी पांच सिफतें।

आलम्बा (सं० स्त्री०) विषाक्त पत्रयुक्त वृक्षविशेष, जहरीली पत्तियोंकी एक भाड़ी।

आलम्बायन (सं० पु०) आलम्ब इजन्तात् फञ्। उपदेष्टा विशेष, एक सुवक्त्रिम। यह आलम्बके युवापत्य रहे। (स्त्री०) डीप्। आलम्बायनी।

आलम्बायनिपुत्र, आलम्बायन देखो।

आलम्बि (सं० पु०) आलम्बस्थापत्यम्, इज्। वेश-म्पायनके शिष्य और आलम्बके पुत्र। (स्त्री०) डीप्। आलम्बी।

आलम्बित (सं० त्रि०) आ-लवि-क्त-इट्। १ धृत, गृहीत, पकड़ा हुआ। २ रक्षित, बचाया हुआ। ३ आश्रित, भुका या लटका हुआ।

आलम्बितविन्दु (सं० पु०) आश्रित चिह्न, सहारेका नुक्ता। सेतुकी दोनो ओर जिस जगह जञ्जीर स्तम्भसे लगती, वह आलम्बित-विन्दु बजती है।

आलम्बिन् (सं० त्रि०) आलम्बते, आ-लवि-णिनि। १ आश्रयी, सहारा पकड़नेवाला। २ अधीन, मातहत। ३ आश्रय देनेवाला, जो टेक लगाता हो। ४ धारण करनेवाला, जा चढ़ाता हो।

आलम्ब्य (सं० अव्य०) १ आश्रय देकर, सहारा लगाके। २ हस्त द्वारा ग्रहणकर, हाथसे पकड़के।

आलम्भ (सं० पु०) आ-लभ-घञ्-नुम्। १ संस्पर्श, आलिङ्गन, इमागोशौ।

“लौणाक्ष प्रेक्षणात्ममुपघातं परस्व च।” (मनु २।१।२)

२ हिंसन, मारकाट।

“आलम्भपिञ्चविशरधातीत्यवधा अपि।” (अमर)

आलम्भ (सं० त्रि०) आलम्ब्यते, आ-लभ-यत्-नुम्। आली धि। पा ७।१।६५। हिंस्य, मारा जाने काबिल।

“आलम्भो गौ।” (सिद्धान्तकौमुदी)

आलय (सं० पु०) आलीयतेऽस्मिन्, आ-ली आधारे अच्। १ गृह, हवेली, घर। इस अर्थसे यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है, जैसे—हिमालय, कार्यालय, औषधालय।

“गृहाः पुंसि च मून्वे व निकार्थनिलयाः।” (अमर)

२ आधार, टेक। भावे अच्। ३ संश्लेष, बगल-गौरी, अंकवारी। (अव्य०) मर्यादार्ये अव्ययी०। ४ लय पर्यन्त, क्यामतक। बौद्ध मतमें आत्माको आलय कहते हैं।

आलयविज्ञान (सं० स्त्री०) आलयं लयपर्यन्तव्यापि-विज्ञानम्, कर्मधा०। बौद्धमत-सिद्ध अहमास्यद विज्ञान विशेष। विज्ञानसे अतिरिक्त बाह्यवस्तुको बौद्ध नहीं मानते।

आलायश (फा० स्त्री०) १ मालिन्य, मल, नजासत, आलूदगी, गन्दापन। २ पूय, दूष्य, पौष, मवाद।

आलर्क (सं० स्त्री०) अलर्कस्येदम्, अल्। १ चित्त कुकुर विष, पागल कुत्तेका जहर। (त्रि०) २ चित्त-कुकुर-सम्बन्धीय, पागल कुत्तेके मुताब्बिक।

आलवण्य (सं० स्त्री०) न लवणम्, नञ्-तत्; अलवणस्य भावः, अज्। लवणरस-भिन्नत्व, बेनमकी, बेलज्जूती, फीकापन।

आलवाल (सं० स्त्री०) अरं शीघ्रं वलते वर्धते तरुनेन, षष्ठीदरादित्वात् घञ्; यद्वा आ समन्तात् लवं जललवं आलाति गृह्णाति, आलव-आ-ला-कं। वृक्षमूलमें जलसेकके निमित्त खनित और मृत्तिका द्वारा निर्मित जलाधार, थाला।

“सादालवालमावालमावापः।” (अमर)

आलविष (सं० पु०) आलमें विष रखनेवाला जीव, जहरीले कांटेका जानवर। वृश्चिक, विश्वम्भर, राजीव, मतस्य, उच्छिष्टि और समुद्र-वृश्चिकके आलमें विष रहता है। (मनुव)

आलविषा (सं० स्त्री०) कच्छ-साध्य लूताभेद, सुप्रकलसे अच्छी होनेवाली मकड़ीकी बीमारी।

आलस (सं० त्रि०) आलसति ईषद् व्याप्रियते, अच्। १ अलस, काहिल, सुस्त, जो काम करना चाहता न हो। (हिं० पु०) २ आलस्य, सुस्ती।

आलसायन (सं० पु०) आलस-यूनि-फक्। आलसका युवापत्य, काहिलका नौजवान् बेटा।

आलसी (हिं० वि०) अलस, सुस्त, काहिल।

आलस्य (सं० स्त्री०) न लसति, अच् नञ्-तत्; अलसः तस्य भावः, अञ्। न नञ् पूर्वात्तत्पुरुषादचतुरस्र-तलवणवटयुधकतरसलसिभ्यः। पा ५।१।२१। १ विहित क्रिया-करणमें अनुत्साह, काहिली, सुस्ती। (त्रि०) आल-स्योऽस्यस्य, अश् आदि अच्। २ आलस्ययुक्त, काहिल। 'मन्दस्तुन्दपरिधज आलसः शीतकोऽलसीऽनुष्णः।' (अमर)

आला (हिं० वि०) १ आर्द्र, क्षिन्न, तर, गीला।

“आला ईंधन जंचा चल्हा तवा निपुत्ती माती रे।

सूलन भगिया जलती नाहीं फूंकत फूंकत हारी रे॥” (शालगीत)

२ सपूय, पूयस्त्रावी, जख्मी, पीप देनेवाला।

(पु०) ३ विविक्त स्थान, ताक, मोखा, सूराख।

“दीवाल खोयी आलोंने।

घर खोया आलोंने॥” (लोकोक्ति)

४ आलात, कुम्हारका आंवा। ५ आलहा देखो।

(अ० वि०) ६ आली, जंचा, औवल। (पु०)

७ यन्त्र, हथियार।

आलात्ता (वै० त्रि०) विषाक्त, जहर-बुझा। “आलात्ता या रुच्योष्णं ग्रहो यथा अयोमुखः” (ऋक् ६।७५।१५) “आलात्ता आलिन विषेणात्ता।” (सायण)

आलाव्य (वै० त्रि०) समुद्रकी लहरोंमें रहनेवाला।

आलात (सं० स्त्री०) अलातमेव, स्वार्थे अण्। अलात, अङ्गार, कोयला। २ पजावा, कुम्हारका आंवा।

आलातचक्र (सं० स्त्री०) लुकका चक्रर। किसी जलती चीजको घुमानेसे आगका चक्रर जो बंधता, वही आलातचक्र बजता है।

आलान (सं० स्त्री०) आ-लीयतेऽन्न, आ-ली आधारे ल्युट्। १ गजबन्धनस्तम्भ, हाथीके बांधनेका खूंट। २ करणे लुगट्। ३ बन्धनरज्जु, बांधनेका रस्सा। ३ आन्व,

गांठ। ४ रज्जु, रस्सा। भावे लुगट्। ५ बन्धन, बांध, जकड़। (पु०) ६ शिवके एक मन्त्री।

“आलानं करिणां बन्धनस्तम्भे रज्जौच न स्त्रियाम्।” (मेदिनी)

आलानिक (सं० त्रि०) आलानं बन्धनं प्रयोजन-मस्तीति, ठक्। विनयादिभ्यश्चक्। पा ५।४।३। १ आलान-सम्बन्धीय, हाथी बांधनेके खूंटका काम देनेवाला। (स्त्री०) स्वार्थे ठक्। २ आलान, हाथीके बांधनेका खूंट।

“सोढुं न तत् पूर्वमवर्णनीये आलानिकं स्थाणुमिव हिदेन्द्रः।” (रघु १४।३८)

आलाप (सं० पु०) आ-लप भावे घञ्। १ कथन, परस्परकथन, कलाम, गुफ्तार, बोलो। २ अङ्गगणित वा बीजगणितके प्रश्नका निर्देश, इल्महिन्दसा य जव-रुल मुकाबिलेके सवालका तख्मीन। ३ प्रश्न, सवाल।

“आलाप इव श्रूयते।” (शकुन्तला)

४ स्वरसाधनाक्षर सा-न्त-गम इत्यादि। अनुलोम, विलोम, गमक, मूर्च्छना, तान, लय और प्रकृत स्वर आदिके संयोग रागादिको प्रकष्ट रूपसे देखाना आलाप कहाता है। आलाप शब्दका अर्थ रागके साथ बोलना अर्थात् किसी रागको यथा-निर्दिष्ट स्तरादि द्वारा प्रतिपन्न करना है। इसमें तालके विशेष समावेशका प्रयोजन नहीं पड़ता। आलाप कण्ठ और वीणादि यन्त्र दोनोमें देखाया जा सकता है। किन्तु वर्णसंयोगसे बनने कारण गान, कण्ठ-भिन्न यन्त्रमें नहीं उतरता।

“रागापनमालसिः प्रकटोकरणं मतम्।” (सङ्गीतदर्पण)

आलापक, आलापवत् देखो।

आलापचारो (सं० पु०) स्वरसाधन, तान लड़ानेका काम।

आलापन (सं० स्त्री०) आ-लप्-णिच्-लुगट्। १ पर-स्परकथन, स्वस्तिवाचन, बातचीत, बालवाल। (त्रि०) २ आलाप करानेवाला, जो बात कराता हो।

आलापना (हिं० त्रि०) आलाप छोड़ना, तान लड़ाना, स्वर खींचकर गाना।

आलापनीय, आलाप देखो।

आलापवत् (सं० त्रि०) परस्पर कथन करनेवाला, जो आपसमें बातचीत करता हो। (पु०) आलापवान्।

(स्त्री०) आलापवती।

आलापित (सं० त्रि०) १ परस्पर कथित, आपसमें कहा हुआ। २ स्वरसाधन-पूर्वक उच्चारित, गाय हुआ।

आलापिन् (सं० त्रि०) परस्पर कथन करनेवाला, जो आपसमें बातचीत करता हो। (पु०) आलापी।

आलापिनी (सं० स्त्री०) अलावु-निर्मित सुरली, घीयेकी वंशी, मौहर। इसे प्रायः सपेरे बजाया करते हैं। सर्प इसका शब्द सुनकर मोहित हो जाता है।

आलापुर—युक्तप्रान्तके बदायूँ जिलेका एक नगर। सेयदवंशीय सुलतान् अलाउद्दीनके अनुसार इसका नाम आलापुर पड़ा है। यह स्थान बदायूँ नगरसे ११ मील दक्षिणपूर्व अवस्थित है। सारस्वत ब्राह्मणोंका वास अधिक है। उनके कथनानुसार अला-उद्दीनने यह स्थान उन्हे दिया था।

आलाप्य (सं० त्रि०) आ-लप्यते, आ-लप्-ण्यत्। कथनीय, कहने लायक।

आलावाला (हिं० पु०) १ छल, कपट, टालमटोल। २ आरोप, धोका। ३ आलस्य, सुस्ती, काहिली।

“दिन खोया आलेवाले।

कातन बँटो दिया उजाले ॥” (लोकोक्ति)

आलावु (सं० स्त्री०) पूर्वपदः दीर्घः वा ऊङ्। अलावु, कह, लौकी।

आलावू, आलावु देखो।

आलारासी, आलारेसी देखो।

आलारेसी (हिं० स्त्री०) १ प्रमत्तता, अनवधानता, बेपरवायी। (वि०) २ प्रमत्त, अनवधान, बेपरवा।

आलावर्त (सं० स्त्री०) आलं पर्याप्तं आवर्त्यते, आल-आ-वृत्-णिच् कर्मणि अच्। वस्त्र-निर्मित व्यजन, कपड़ेका पट्टा।

“आलावर्तं तु वस्त्रं (व्यजनम्)।” (हेम ४।४।५)

आलास्य (सं० पु०) आलं पर्याप्तं आस्यं सुखं यस्य, बहुव्री०। १ कुम्भोर, चड़ियाल, निहङ्ग, मगरमच्छ।

“नरः कुम्भोर आलस्यः।” (हेम ४।४।५)

(स्त्री०) आ सम्यक् लास्यम्, प्रादि समा०।

२ सम्यक् नृत्य, खासा नाच।

आलि (सं० पु०) आ-अल पर्याप्तो अलि १ हाथिक,

बिच्छू। २ भ्रमर, भौरा। (स्त्री०) ३ सखी, वयस्यां, सहेली। ४ आवली, कतार, सतर। ५ अल्पकाल स्थायी क्षेत्रस्थ जलका निवारक सेतु, बांध। ६ कूलक, नाला। ७ सन्तति, अश्ली, खान्दान, जात।

‘आलिः पंक्तौ च संख्यायां सेतौ च परिकीर्तिते।’ (विश्व)

(त्रि०) ८ अनर्थ, बेफायदा, जो किसी मसरफका न हो। ९ शुद्धान्तःकरण, साफ-दिल, ईमान्दार, सच्चा।

आलिखत् (सं० पु०) १ उल्लेखन, विदारण, खराश, खोंच। २ राक्षसविशेष, किसी हमजादका नाम।

आलिख्य (सं० अव्य०) पाण्डुचित्र उतारते हुये, नक्शा खींचकर।

आलिगां (वै० स्त्री०) सर्पविशेष, किसी नागनका नाम।

आलिगव्य (सं० त्रि०) अलिगोरपत्यम्, यज्। गगादिभ्यो यज्। पा ४।१।१०५। अलिगु मुनिसे उत्पन्न,

अलिगुसे पैदा। (स्त्री०) यजतन्वात् षः षित्वात् ङीप्। प्राचास्त्रलङ्घितः। पा ४।१।१७। आलिगव्यायनी।

आलिङ्ग (सं० पु०) १ आलिङ्गन, हमागोशी, बगल-गौरी, अंकवारी। २ दुन्दुभि-विशेष, किसी किष्कका ढोल।

आलिङ्गन (सं० स्त्री०) आ-लिङ्गि-लुगट्। आश्लेषण, बगलगौरी, हमागोशी, अंकवारौ, गल-बहियां।

आलिङ्गन सात प्रकारका होता है,—१ आमोदालिङ्गन, २ मुदितालिङ्गन, ३ प्रेमालिङ्गन, ४ मदनालिङ्गन, ५ मानसालिङ्गन, ६ रुच्यालिङ्गन और ७ विनोदालिङ्गन।

आलिङ्गना (हिं० क्रि०) आलिङ्गन करना, बगल-गौर या हमकिनार होना, गले लगाना, गलबहियां डालना, चिमटना, लिपटना, आगोशमें लेना, कौली भरना।

आलिङ्गित (सं० त्रि०) आ-लिङ्गि-कर्मणि क्त-इट्। १ आश्लिष्ट, बगलगौर, हमकिनार, गले लगा हुआ।

(स्त्री०) २ आलिङ्गन, बगलगौरी, चिमट, लपट।

(पु०) ३ तन्त्रसारोक्त विंशति अवधि त्रिंशत् अक्षर पर्यन्त मन्त्र विशेष।

आलिङ्गितवत् (सं० त्रि०) आलिङ्गन करनेवाला, जो

किसीको गले लगा चुका हो। (पु०) आलिङ्गित-
वान्। (स्त्री०) आलिङ्गितवती।

आलिङ्गिन् (सं० त्रि०) आलिङ्गति, आ-लिङ्गि-णिनि।

आलिङ्गनकर्ता, गले लगानेवाला। (स्त्री०) आलिङ्गिनो।

आलिङ्गी (सं० पु०) १ आलिङ्गनकर्ता, गले लगाने-
वाला। २ क्षुद्र दुन्दुभि विशेष, छोटे ढोलकी एक
किस्म। यह यवाकार बनाया और छातीपर रखकर
बजाया जाता है।

आलिङ्ग्य (सं० त्रि०) आलिङ्ग्यते, आ-लिङ्गि कर्मणि
ल्यत्। १ आलिङ्गनीय, गले लगाने लायक। (पु०)

२ वादनीय सृदङ्ग विशेष, किसी किस्मका ढोल।

‘अङ्गालिङ्गीर्धं कास्त्रयः।’ (अमर)

(अव्य०) आ-लिङ्गि-ल्यप्। ३ आलिङ्गन करके,
गले लगाकर।

आलिङ्ग्यायन (सं० पु०) आलिङ्गस्य सृदङ्गभेदस्यायनं
यत्र, बहुव्री०। १ ग्रामविशेष, जिस गांवमें ढोल बनें।
तस्यादूरभवं नगरम्, अण् वरणादित्वात् तस्य लुपप्।
लुपियुक्तवद्व्यक्तिवचने। पा १।२।५। आलिङ्ग्यायन ग्रामसे
अदूरभव नगर, जो शहर आलिङ्ग्यायन गांवसे
नजदीक हो।

आलिङ्ग्य (सं० पु०) अलिङ्ग्य एव, स्वार्थे अण्।
सृण्मय वृहत् पात्र, पानी भरनेको मट्टीका बड़ा
बरतन।

आलिन् (सं० पु०) वृश्चिक, बिच्छू।

आलिनी, आलिन् देखो।

आलिन्द (सं० पु०) अलिन्द एव, स्वार्थे अण्।
वह्निर्दारका प्रकोष्ठ, मकान्को सामनेका चबूतरा।

‘प्रघाणप्रघणालिन्दावह्निर्दारप्रकोष्ठके।’ (अमर)

आलिन्दक, आलिन्द देखो।

आलिप (सं० त्रि०) आ-लिप-क। आलिपनकारी,
तिला करनेवाला, जो चुपड़ता हो।

आलिप्त (सं० त्रि०) आ-लिप-क्त। कृतालेपन,
लीपा-पोता।

आलिप्त (अ० पु०) विद्वान् पुरुष, पढ़ा-लिखा
आदमी।

‘आलिप्त’का बहुवचन ‘उल्लमा’ है।

आलिप्त-उल्-गंवा (अ० वि०) सर्वज्ञ, अन्तर्यामी,
हमादान, छिपा हाल जान लेनेवाला।

आलिप्ताना (अ० वि०) ज्ञानवान्, पढ़ा-लिखा,
समझदार।

आलिप्ताना गुफ्तगू (अ० स्त्री०) विद्या-सम्पन्न वार्ता-
लाप वा विवाद, इलमियतकी बातचीत या बहस।

आलिप्त्यन (सं० स्त्री०) आ-लिप्-लुपट्, पृषोदरा-
दित्वात् लुप्। उत्सवके समय लीप-पोत।

आलिप्त्यना (सं० स्त्री०) दक्षि, आसूदगी, छकाहट।

आलिप्त्यना (सं० स्त्री०) हालिम। गुजरातमें इसे
आशालबीज कहते हैं।

आलिसपायिस (Allspice)—वृक्षविशेष, एक दरख्त।
(Pimenta vulgaris) यह वृक्ष अमेरिकासे भारतवर्ष

आया है। पत्र हरित और मुकुल श्वेत रहता है।
मुकुल निकलते समय प्रकृतिकी शोभा फूट पड़ती है।

सौरभसे चारो दिक् गन्धमय हो जाती है। प्रत्येक पत्र
तथा प्रत्येक कोष परिमल प्रदान करता है। फलमें

दालचीनी, जायफल और लवङ्गका गन्ध रहता है।
पत्रसे सुगन्धि तैल खींचते हैं। यह तैल कभी-कभी

बाजारमें लवङ्गतैलके नामसे भी बिक जाता है।
व्यवसायी अपक्व फलको तोड़ धूपमें सुखाते और
व्यवहारमें लाते हैं।

आली (सं० स्त्री०) १ सखी, सहेली। २ पंक्ति,
कतार।

(हिं० स्त्री०) ३ आर्द्र, भोगी, गीली। ४ चार
विश्वेकी नाप।

(अ० वि०) ५ वरेख, बुलन्द, बड़ा।

बङ्गाल और उड़ीसेमें एक मछलीको भी आली
कहते हैं।

आलीकदर (अ० स्त्री०) उच्च पद, जंचा दरजा।

आलीखान्दान (अ० वि०) कुलीन, जो अच्छे बड़े
घरका हो।

आलीजनाब (अ० पु०) महाशय, हुजूर, सरकार।

आलीजर्फ (अ० वि०) योग्य, लायक।

आलीजाह, आलीजनाब देखो।

„आलिप्त वह क्या अमल न हो जिसका किताब पर।” (लोकोक्ति)

आलीड़ (सं० त्रि०) आ-लिङ्-क्त। १ आखादित, चाटा या खाया हुआ। २ चत, चौथा हुआ। (क्ली०) ३ युद्धार्थ स्थिति विशेष, लड़ायीकी एक बैठक। दक्षिण चरण अग्रसर और वाम चरण पीछेको कुछ टेढ़ाकर बैठनेको आलीड़ कहते हैं। यह स्थिति वाण मारने या गोली चलानेमें रहती है। ४ लेहन, चाट। ५ अशित, भोजन। (पु०) ६ पुरुषविशेष, किसी आदमीका नाम।

आलीड़क (सं० क्ली०) आलीड़ संज्ञायां कन्। वत्सका विहार, बहड़ेका खेल।

आलीदिमाग (अ० पु०) विशाल बुद्धि, बड़ी समझ। आलीन (सं० त्रि०) आ-ली कर्तरि क्त ओदित्वात् तस्य न। १ आश्लिष्ट, पिगला या गला हुआ।

आलीनक (सं० क्ली०) आलीन संज्ञायां कन्। रङ्ग, रांगा। अन्य धातुके साथ संश्लिष्ट हो जानेसे रङ्ग को आलीनक कहते हैं।

आलीमर्तवा (अ० पु०) आलीकदर देखो।

आलीशान् (अ० वि०) १ उज्ज्वल, अतिशोभन, नुमायशी। २ उत्तम, प्रधान, उम्दा, बड़ा।

आलीहिम्मत (अ० वि०) आकाङ्क्षी, अभिलाषी, बलन्द-नङ्गर, आरज या तमन्ना रखनेवाला, जो बहुत चाहता हो।

“आलीहिम्मत सदा मुफलिस।” (लोकोक्ति)

आलीहिम्मती (अ० स्त्री०) १ महामनस्कता, मिजाज-दारी। २ अहंता, आकाङ्क्षा, गुराख-हौसलगी।

आलु (सं० पु०) १ पेचक, चुगद, बूम, चक्कू, घुमू। २ जमीकन्द, सूरण। ३ कोविदार, आवनूस। (क्ली०)

आ-लु-डु। ४ मेलक, बेड़ा, चौघड़ा। ५ मूल, जड़।

(स्त्री०) आ-ला-डु। ६ गलन्तिका, मट्टीका छोटा घड़ा। इसके पेटमें छिद रहता, जिससे शिवलिङ्ग या तुलसी वृक्षपर जल टपकता है। ‘आलुगलन्तिकायां स्त्री क्रीधं मूषे च मेलके।’ (मेदिनी) आलु देखो।

आलुक (सं० क्ली०) आलु स्त्रायें कन्। १ कन्दविशेष, काष्ठालु, शङ्खालु, हस्त्यालु, पिण्डालु, मध्वालु और रक्तालु भेदसे यह बहुत प्रकारका होता है। काष्ठालु काष्ठसदृश कठिन, शङ्खालु श्वेततारुण्य, हस्त्यालु दार्ढ्य

तथा महाशरीर, रक्तालु रक्तवर्ण, पिण्डालु गोल और मध्वालु मधु-जैसा मिष्ट रहता है। आलुक मल-मूत्र-निःसारक, रुच, दुर्जर, रक्त-पित्तघ्न, वात-कफघ्न, बल्य, वृष्य और स्तन्य-वर्धन है। (भावप्रकाश)

(पु०) २ कोविदार, आवनूस। ३ शेषनाग। ४ जमीकन्द।

‘शेषो नागाधिपोऽनन्तो द्विसहस्राच आलुकः।’ (हेम)

आलुकी (सं० स्त्री०) रक्तालुभेद, घुगिया। यह बलकारी, स्निग्ध, गुरु, हृदय-कफघ्न तथा विष्टम्भी होती और तैलमें तलकर खानेसे अत्यन्त रुचिकर निकलती है। (भावप्रकाश)

आलुचन (सं० क्ली०) आ-लुचि-ल्युट्। उत्पाटन, नोच-खसोट, चीर-फाड़।

आलुचिन्त (सं० त्रि०) आ-लुचि-क्त। उत्पाटित, नोचा-खसोटा, जो चीर या फाड़ डाला गया हो।

आलुण्टन (सं० क्ली०) आ-लुटि-ल्युट्। बलहेतु अपहरण, लट-पाट, छीना-छीनी।

आलुल (सं० त्रि०) आ-लुल-क। १ उन्मुक्त, चञ्चली-भूत, छूटा हुआ।

आलुलायित (सं० त्रि०) आ-लुल भृशदित्वात् क्यङ्-क्त। असंयत, हिलने-डुलनेवाला, जो रुका न हो।

आलू (हिं० पु०) आलु, कन्दशाकविशेष। (Solanum tuberosum) पहले भारतवर्षमें आलू न रहा, १७८२ ई०को विलायतसे आया था। महाराष्ट्र और मारवाड़ी इसे बटाटा कहते, जिसे अंगरेजी ‘पोटेटो’ (Potato) शब्दका अपभ्रंश समझते हैं।

वास्तवमें आलू दक्षिण-अमेरिकाका पौदा है। आज भी चिली प्रान्तमें आप ही आप उपजता है। लिमा और नव ग्रेनाडामें भी वन्य अवस्थापर मिला है। अमेरिकाके आविष्कारकाल यह चिलीसे नव ग्रेनाडातक बोया जाता था। किन्तु दक्षिण-अमेरिकाके पूर्व प्रान्त और मेक्सिकोमें इसे कोई जानते न रहा। १५३५ और १५८५ ई०के बीच युरोपीय, आलुको खेन ले गये थे। वहाँसे इसकी खेती पोर्तुगाल, इटली, फ्रांस, बेनजियम और जमनेमें फैल पड़ी। १५८६ ई०को सर वास्टर

रालेने कारोलिनासे स्वतन्त्र भावमें आलू आयल्लेख पडुंचाया था। पहले इङ्ग्लेण्ड, स्कॉटलैण्ड और फ्रान्सके लोग कुसंस्कारसे आलू बोते न रहे। इसके साथ उन्हें विषहृच्च उत्पन्न होनेका ध्यान था। १७२८ ई०को स्कॉटलैण्ड-निवासी टमास् प्रेण्टिस नामक किसी व्यक्तिने पहले-पहल आलू बोया। उसके बाद क्रम-क्रम यह अफ्रीका, एशिया और अष्ट्रेलियामें चल निकला।

आजकल भारतवर्षमें सब जगह आलू बोते हैं। बङ्गालमें हुगली और वर्धमान जिला इसकी कृषिका प्रधान स्थान है। प्रायः जहां नदीका पानी सूखा, वहां आलू बो दिया जाता है। मट्टी रेतिली रहनेसे यह बहुत उपजता है। कंकड़दार जमीन् ठीक नहीं पड़ती। सींचनेकी भी अधिक आवश्यकता रहती है। बीजके लिये प्रायः छोटा-छोटा आलू चुनकर निकालते और मचानपर फैलाकर छायामें सुखाते हैं। किन्तु सफेदी आ जानेसे यह बिगड़ जाता और बीजके योग्य नहीं रहता। एक ही खेतमें प्रति वर्ष लोग आलू लगाया करते हैं। किन्तु पानीकी भड़ पड़नेसे फसल सड़ जाती है। देशोको पहले और पहाड़ीको पीछे बोते हैं। खेतको अच्छी तरह जोत जात ४० फीटके अन्तर दो बड़ी और १७ फीटके अन्तर छोटी-छोटी सींचनेको नाली रहती हैं। खलीकी खाद पड़ती है। फिर कुदालसे भूमिको गहरे खोद आलू जमाते हैं। कोपल २१ इंच बढ़ आनेसे पौदेको उखाड़ कर दूसरे स्थानमें सात-सात इंच दूर लगा देते हैं। देशी आलूमें कोपल शीघ्र आता, किन्तु बम्बेयामें देरसे निकलता है। जगनेमें विलम्ब लगनेसे सींचना पड़ता है। पौदा छः-सात इंच बढ़नेपर सात या दश दिनके बाद पानी दिया जाता है। बीघे पीछे २० मन गोबर और दश मन खलीकी खाद लगती है। पौदा सूखनेसे आलू खोदते हैं। अधिक वृष्टि होनेसे सड़नेकी बीमारी दीड़ती और फसल मार पड़ती है। पत्ती टेढ़ी हो जानेसे भी पौदा सूखता है। आलूमें दीमक लगनेसे बड़ी हानि पड़चती है।

आसामकी खासी पहाड़पर यह बहुत उपजता

है। किन्तु कृषिकार्य सुचारुरूपसे न चलनेपर सात-आठ दिनमें आलू सड़ जाता है।

युक्तप्रान्तके नैनीताल, अलमोड़े, पावरी, लोहघाट और समतल स्थानमें यह बहुत होता है। पहाड़ी आलू आकारमें बड़ा और स्वादमें अच्छा निकलता है। १८४३ ई०को मेजर वेल्स मेन इसे युक्तप्रान्तमें लाये थे। बीजके लिये आलू समय-समयपर विलायतसे मंगाया जाता है। पौष मास फसल होती है। एक पौदेमें कोई पाव भर आलू बैठता है।

पञ्जाबमें बड़े-बड़े नगरोंके पास इसकी कृषि होती है। मध्यप्रदेशका आलू कुछ बिगड़ गया है। प्रायः अक्तोबरमें बोते और फरवरी या मार्चमें खोदते हैं।

बम्बई प्रान्तमें पूना, अहमदनगर, सतारा, अहमदाबाद और कौड़ा इसके बोनकी खास जगह है। महाबालेश्वरका आलू सुप्रसिद्ध है। खानेदेशका पाचोरा स्थान आलूकी मण्डी है।

मन्द्राज प्रान्तके नीलगिरि पर्वतपर अच्छा आलू उपजता है। किन्तु प्रतिवर्ष एक ही खेतमें कृषि होनेसे आलूमें अब रोग लग गया है।

ब्रह्मदेशमें आलू कम होता है। कितनी ही चेष्टा लगाते भी लोग इसकी कृषिसे लाभ उठा न सके।

औषधमें आलूको सुखाकर सालब मिसरीकी जगह व्यवहार करते हैं। प्रायः समग्र भारतवासो इसे खाते हैं। किन्तु लोग इसे अजीर्ण और बात बढ़ाने-वाला समझते हैं। व्रतके दिन अन्न न खानेसे प्रायः आलू व्यवहृत होता है। पहले हिन्दू इसे अशुद्ध मानते थे। किन्तु अब यह प्रथम अंग्रेजीके शाकमें परिगणित है।

(स्त्री०) २ लुद्रजलपात्र, पानी पीनेको छोटा वरतन।

आलूक (सं० स्त्री०) आलूनाति, आलू-कृष्ण स्वार्थे कन्। १ एलबालुक, एक खुशबूदार चीज। २ आलुक, किसी किस्मकी गठीली जड़।

आलूका सालन (हिं० पु०) आलुकयूष, आलूका भोर।

आलूचा (फा० पु०) फेनिलविशेष, किसी किस्मका

बेर। पीले रङ्गका आलूचा युरोप, सिलिशिया, और आरमेनियामें तथा काकिसस पर्वतसे उत्तर एवं हिमालयपर गढ़वालसे काश्मीरतक वन्यस्थानपर मिलता है। अलमोड़ेके समीप जो वृक्ष लगता, उसमें गहरे हरे और नारङ्गी जैसे रङ्गका फल उतरता है। समतल भूमिकी अपेक्षा पर्वत-प्रान्त ही इसकी वृद्धिके लिये उपयुक्त है। आलूचेका गोंद कुछ-कुछ अरबी-जैसा होता है। गुठलीके तेलसे रौशनी करते हैं। किन्तु वह किसी कामका नहीं होता और शीघ्र दुर्गन्ध देने लगता है।

लकड़ी कुछ-कुछ लाल तथा भूरी और दानेदार निकलती, किन्तु थोड़े हीमें मुड़ और फट जाती है। काश्मीरमें इसके सन्दूक तैयार होते हैं।

फल पकनेपर बड़ा, पीला, मीठा और रसीला होता है। लोग प्रसन्नतापूर्वक खाया करते हैं। अफगानस्थानसे सूखा फल बहुत आता और आलू-बोखारिके नामसे बाजारमें विक्रता है। नर्म आगसे पकाकर लोग इसे बहुत खाते हैं। आलूबोखारेकी चटनी खादु और लाभदायक होती है। यह कुछ-कुछ खट्टा, ठण्डा और तर रहता है। खाली पेट खानेसे पाचक और रैचक निकलता है। पित्त बढ़ने और दाह उठने पर यह बहुत उपकार करता है। मूल सङ्कोचक होता है।

आलूदा (फ्रा० वि०) दूषित, गन्दा, लिथड़ा हुआ।

आलून (सं० त्रि०) आ-लू-क्त तस्य न। १ ईषत् छिन्न, कुछ कुछ कटा हुआ। २ सम्यक् छिन्न, खूब कटा हुआ।

आलू-वालू (हिं० पु०) फेनिल विशेष, किसी किस्मका आलूचा। आलूचा देखो।

आलूबुखारा (फ्रा० पु०) शुष्क फेनिल विशेष, बुखारे प्रान्तका सूखा आलूचा। आलूचा देखो।

आलूशफतालू (हिं० पु०) क्रीड़ा विशेष, एक खेल। तीन लड़के मिलकर यह खेल करते हैं। एक लड़का दूसरेकी पीठपर चढ़ अपने हाथसे उसकी आंखें मूंद देता और तीसरा उंगली देखाकर घोड़े बने लड़केसे उनकी संख्या पूछता है। संख्या ठीक बता देते

उसका दांव उतरता और वह उंगली देखानेवाले लड़केपर चढ़ता है।

आलेख (सं० पु०) आ-लिख-घञ्। १ सम्यक् लेखन, खासी लिखावट। आधारे घञ्। २ लेखन-पत्र, लिखनेका कागज़।

आलेखन (सं० क्ली०) आ-लिख भावे ल्युट्। १ सम्यक् लिखन, खासो लिखावट। (पु०) २ आचार्य, जन्मपत्रादि प्रभृति लिखनेवाला। कारणे ल्युट्। ३ लिखन-साधन पत्र प्रभृति, लिखनेका कागज़ वगैरह। (त्रि०) ४ लेखनकर्ता, लिखनेवाला। आलिखन प्रयोग भी होता है।

आलेखनी (सं० स्त्री०) आघर्षणा, वर्तिका, बालोंका क्लम, सीसे या सुरमेका क्लम।

आलेख्य (सं० क्ली०) आ लिख्यते, आ-लिख्य कर्मणि ख्यत्। १ पटख्य चित्र, तस्वीर, नक्शा। 'चित्तमालेख्यम्।' (हेम ३।५८३) २ लेख्य देवादिका प्रतिविम्ब। (त्रि०) ३ लेखनीय, लिखने या उतारने काबिल। आधारे ख्यत्। ४ चित्रसम्बन्धीय, तस्वीरके सुताक्षिक।

आलेख्यलेखा (सं० स्त्री०) चित्रविद्या, रङ्गसाजी, नक्काशी।

आलेख्यशेष (सं० त्रि०) आलेख्यं चित्रमेव शेषो यस्य, बहुव्री०। श्रुत, मरा हुआ। प्रतिविम्बमात्र चित्रपर शेष रहनेसे श्रुत व्यक्तिको आलेख्य-शेष कहते हैं।

“वाप्यायमानो वलिसन्निवृत्तमालेख्यशेषस्य पितृविशेषः।”

(रघु १४।१५)

आलेप (सं० पु०) १ आ-लिप-घञ्। उपलेप, तिला, मरहम, तेल। शरीरमें उत्पन्न होनेवाले शोथव्रणपर जो यथोक्त औषध चुपड़ा जाता, वह आलेप कहाता है। २ बौद्धशास्त्रके मतानुसार—अंश, खण्ड, टुकड़ा।

आलेपन (सं० क्ली०) कर्मणि ल्युट्। आलेप देखो।

आलेय (सं० क्ली०) पद्मकाष्ठ, एक खुशबूदार लकड़ी।

आलेया (सं० स्त्री०) १ रागिणी विशेष। २ श्मशान वा पङ्क्युक्त स्थानसे उल्लिखित वाष्प विशेष, मरघट या दलदलकी हवा। पक्षिग्रामके लोग इसे भूत समझते हैं। यह वायुकी अपेक्षा हलकी होती है।

आलेश (सं० पु०) अश्व-मुख-रोग, घोड़ेके मुंहकी बीमारी। हनुदेश (जन्डे)के अभ्यन्तर आश्रयपर दन्त निकलनेसे अश्वको आलेश रोग होता है। यह श्लेष्म और रक्तसे उपजता है। अश्व दुर्मन तथा जर्जर पड़ जाता, धीरे-धीरे खाता-पीता, खांसते रहता और बलको गंवा देता है। (जयदत्त)

आलोक (सं० पु०) आलोकितेऽनेन, आ-लोक करणे घञ्। १ सूर्यादि जन्म प्रकाश, रौशनो, उजाला। नैयायिक आलोकको द्यौ द्रव्यके चाक्षुष प्रत्यक्षका कारण बताते हैं। भावे ल्यट्। २ दर्शन, दीद, नजारा। ३ जयशब्द, सना, तारोफ़।

“आलोकशब्दः वयसां विराट्।” (रघु ३।६)

“आलोको जयशब्दः स्नात्।” (विश्व)

४ उल्लास, फल्ल। ५ दीप, कन्दील, चिराग़।

आलोकन (सं० क्ली०) आ-लोक भावे ल्यट्। १ दर्शन, नजारा। २ दीप, कन्दील, चिराग़।

आलोकनीय (सं० त्रि०) आ-लोक कर्मणि अनौयर्। १ दर्शनीय, नमूदार, देखने काबिल। २ ध्यान दिया जानेवाला, जो खयाल किये जायिको हो।

आलोकनीयता (सं० स्त्री०) दर्शनीयता, नमूदारो, जिस हालतमें देख सकें।

आलोकित (सं० त्रि०) आलोक कर्मणि क्त। १ दृष्ट, नजरमें पड़ा हुआ, जो देखा गया हो। भावे क्त। २ दर्शन, नजारा।

आलोकित् (सं० त्रि०) आलोकते, आ-लोक-णिनि। द्रष्टा, देखनेवाला। (पु०) आलोकौ। (स्त्री०) लोप्। आलोकिनी।

आलोक्य (सं० त्रि०) आलोक्यते, आ-लोक कर्मणि ण्यत्। १ दर्शनीय, देखने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आलोकन करके, देखकर।

आलोच (हिं० पु०) शीला, काटनेसे खेतमें गिरी हुई बाल।

आलोचक (सं० त्रि०) आलोचते, आ-लोच-ण्वल्। १ आलोचनकारी, देखनेवाला। २ विवेचक, देखाने-वाला। (क्ली०) ३ दृष्टिका गुण वा दृश्यका कारण, नजरकी सिफ़त या नजारेका सबब।

प्रकारका अग्नि होता और नेत्रमें रहता है। इसीसे रूपादिका दर्शन पाते हैं। ४ तन्नामक पित्त, किसी किस्मका जड़-आव।

आलोचन (सं० क्ली०) आलोच भावे ल्यट्। १ विशेष धर्मद्वारा विवेचनाका करना, खयालका लड़ाना। २ दर्शन, नजारा। ३ अन्तःकरणकी एक वृत्ति। सांख्य मतसे यह सामान्य, विशेषशून्य, इन्द्रियजन्य और निर्विकल्प-स्थानीय है। (अव्य०) मर्यादायै अव्ययी०। ४ लोचनपर्यन्त, नजरतक। (स्त्री०) णिच्-मुच्-टाप्। आलोचना।

आलोचनीय, आलोच देखी।

आलोचित (सं० त्रि०) आ-लोच-क्त-इट्। आलोचनाके विषयीभूत, देखा या समझा हुआ।

आलोच्य (सं० त्रि०) आ-लोच-ण्यत्। १ आलोचना करने योग्य, जो देखे या समझी जाने काबिल हो। (अव्य०) ल्यप्। २ आलोचना करके, देखभाल या समझ-बूझकर।

आलोड़न (सं० क्ली०) आ-लुड़ मन्थे भावे लुगट्। १ विलोड़न, मथायी। २ मिश्रण, मिलावट।

आलोड़ना (हिं० क्ति०) मथन करना, मथना।

आलोड़ित (सं० त्रि०) आ-लुड़-क्त-इट्। १ मथित, मर्दित, मथा या मला हुआ। (क्ली०) भावे क्त। २ मथन, मथायी।

आलोल (सं० त्रि०) ईषत् लोलः, प्रादि-समा०। १ ईषत् चञ्चल, चुलबुला सा। २ विचलित, कम्पित, हिला या सरका हुआ।

“क्लीडालोलाः श्रवणपरुषैर्गर्जितैर्माषयन्ताः।”

(मेघदूत ६२)

३ लम्बमान, बढ़ा हुआ। (पु०) ४ चाञ्चल्य, कम्प, कंपकंपी, वेकली।

आलोलित (सं० त्रि०) आ-लुल-क्त-इट्। वा किला-भावद्वयः। पा १।२।२। १ ईषत् चञ्चलीकृत, हिलाया या घबराया हुआ। भावे क्त। २ ईषत् चञ्चल, चुलबुलासा।

आलोष्टी (सं० अव्य०) ईषत् लोष्ठमिव करोत्यनेन, आलोष्ट करोत्यर्थे णिच् बाहुलकात् ई। हिंसासे।

आलोहायन (सं० त्रि०) अलोहि भवः, फक् ।
अलोहभव, लोहिसे न निकलनेवाला ।

आलूक (सं० स्त्री०) आलूक, आलूबोखारा ।

आल्हा (हिं० पु०) १ छन्दोविशेष, एक बहर ।
इसमें ३१ मात्रा लगती हैं । १६ मात्रापर विराम पड़ता है । जैसे—राम समुन्दरकी मधि डारो चौदह रतन लीन्ह निकसाय । आल्हा पिरथिवीको मधि डारो घर घर यूर लीन्ह बंधवाय ।

२ एक विख्यात वीर । पृथ्वीराजकी समय यह महो-
र्वमें विद्यमान रहे । इनकी माताका देवला, पिताका
दस्मराज, आताका उदयचन्द्र (ऊदल) और पुत्रका
नाम ईंदल रहा । सुना, कि आल्हाने देवीका अर्चन
बहुत किया था । भगवतीने एक दिन प्रसन्न हो
वरदान दिया,—तुम अजर-अमर रहो और कृपाण
खींचते ही जगत्को नाश करोगे । महोर्वमें यह
परमाल नृपतिकी सेनाके नायक रहे । बावन युद्ध
करते भी आल्हाने कभी कृपाण न खींचा । क्योंकि
उससे देवीके वचनानुसार जगत् नाश होनेका डर था ।
लोग इन्हें बनाफर जातिके ठाकुर बताते हैं । कहते,
आज भी आल्हा कजरी वनमें रहते हैं । इनकी
माता देवलाके वीरत्वका वर्णन इस प्रकार सुनते हैं,—

दस्मराज किसी वनमें आखेट मारने गये थे ।
उन्होंने दो जङ्गली भैंसे लड़ते देखे । कितनी ही चेष्टा
करते भी वह उन्हें लड़नेसे छोड़ा न सके । अन्तको
एक स्त्री आ पहुँची थी । उसने हाथसे भैंसोंको
पकड़ अलग-अलग कर दिया । दस्मराज स्त्रीकी
सुन्दरता और वीरता देख मोह गये थे । अन्तको
घर ला उससे विवाह किया । उसी स्त्रीका नाम
देवला था ।

आल्हा और ऊदल दोनों भाई बड़े वीर रहे ।
इन्होंने कयी बार पृथ्वीराजका संह मोड़ दिया था ।

आव (हिं० पु०) आयुः, हयात, जिन्दगी ।

आव-आदर (हिं० पु०) आदर-सत्कार, खातिर-
तवाजा, मान-पान ।

आवक (सं० त्रि०) अवतीति, अव रक्षणे खुल् ।
रक्षक, मुहाफिज, बचानेवाला ।

आवज (हिं० पु०) प्राचीन वाद्य-विशेष, एक पुराना

बाजा । यह ताशे-जैसा होता और चमारोंमें खूब
चलता है ।

आवभ, आवज देखी ।

आवटना (हिं० पु०) आवर्तन, अदल-बदल, चल-
फिर, धूमधाम । (क्रि०) २ औटना, आगपर चढ़ा
गाढ़ा करना ।

आवट्टज (सं० पु०) १ उत्तम अश्व, बढ़िया घोड़ा ।
२ पारसिक अश्व, अरबी घोड़ा ।

आवट्ट्य (सं० पु०) अवट्टस्य ऋषिविशेषस्य गोत्रापत्यम्,
गर्गादि० यञ् । अवट्ट ऋषिका अपत्य ।

आवट्ट्या (सं० स्त्री०) आवट्ट्य-चाप् । आवट्ट्या । पा ४।१।७५ ।
आवट्ट्यकी स्त्री ।

आवत् (वै० स्त्री०) सामीप्य, पड़ोस ।

आवन (हिं० पु०) आगमन, आमद, आवायी ।

आवनि (हिं० स्त्री०) आवन देखी ।

आवनेय (सं० पु०) अवन्या अपत्यम्, ठक् ।
स्त्रीत्थो ठक् । पा ४।१।१२० । अवनीसुत, मङ्गलग्रह । कहते,
पूर्वकाल शिव दाक्षायणीके वियोगमें तपस्या करते थे ।
उसी समय ललाटसे एक बिन्दु घर्म गिरा और उससे
लोहिताङ्ग एक कुमार उत्पन्न हुआ । पृथिवीको
दर्शनसे स्नेह लगा था । उसने कुमारका पालन-पोषण
किया । इसीसे मङ्गलग्रहको माहेय, आवनेय आदि
नामसे पुकारते हैं ।

आवन्त (सं० पु०) अवन्तेरयं राजा, अवन्ती-अण् ।
अवन्ती देशके अधिप चन्द्रवंशीय नृपति-विशेष ।
कुन्तीके किसी रण-विशारद-पुत्रका नाम धृष्ट रहा ।
धृष्टके आवन्त, दशार्ह और विषहर नामक तीन वीर
पुत्र हुये थे । (हरिवंश ३६ अ०)

आवन्तिक (सं० त्रि०) अवन्ति देश-जात, उज्जैनके
मुताल्लिक ।

आवन्त्य (सं० त्रि०) अवन्तिषु भवः तस्या राजा वा,
जगद् । १ अवन्तिदेशभव, उज्जैनका पैदा । २ अवन्ति
देशका राजा, उज्जैनका मालिक । ३ ब्राह्म ब्राह्मणकी
सवर्ण स्त्रीसे उत्पन्न एक जाति ।

“ब्राह्मणं तु जायते विप्रस्य पापात्मा भूजकण्ठकः ।

आवन्त्यवाटधानी च पुण्यः श्रेष्ठ एव च ॥” (मनु-१।०।११)

ब्राह्म ब्राह्मणकी सवर्ण स्त्रीसे उत्पन्न सन्तानका नाम भूर्जकण्टक होता है। किन्तु देश विशेषमें उसीको आवन्त्य, वाटधान और पुण्यध भी कहते हैं। ब्राह्म देखो। आवपन (सं० स्त्री०) ओष्यते स्थाप्यते धानाद्यन्न, आ-वप आधारे ल्युट्। १ पात्र, जर्फ, जगह। “जोणे आवपनचेत्” (सिद्धान्तकौमुदी) भावे लुट्। २ भूमिमें बीजादिका निधान, बोना। अन्तर्भूतण्यर्थे लुट्। ३ केशादि सर्वमुण्डन, बाल वगैरह सबका मुंडा डालना। (त्रि०) करणे ल्युट्। ४ वपनसाधन, बीनीमें लगनेवाला।

आवपनिष्किरा (सं० स्त्री०) आवपनिष्किर इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यंसं समा०। बीजवपनादि क्रिया, बीज बोने वगैरहका काम।

आवपनी (वै० स्त्री०) आवपन-ङीप्। पात्र, जर्फ, जगह। आवपन्तिक (वै० त्रि०) विकीर्ण, विच्छिन्न, फैलाया या डाला जानेवाला।

आव-भगत, आव-आदर देखो।

आव-भाव, आव-आदर देखो।

आवय (सं० पु०) आ-अज-अच् बीभावः। १ आगमन, आमद, आवायी। कर्तरि अच्। २ आगमनकर्ता, आनेवाला। ३ देशविशेष, एक मुल्ल। ४ जल, आब, पानी। (वै० स्त्री०) ५ वैयर्थ्य, शुष्कता, लाहासिली। आवया (सं० स्त्री०) जल, आब, पानी।

आवयाज् (वै० त्रि०) अवयाज्, यज्ञानुष्ठान द्वारा प्रायश्चित्त करनेवाला।

आवरक (सं० स्त्री०) आवृणाति अनेन, आ-वृ-करणे अप् ततः संज्ञायां कन्। १ आच्छादन वस्त्रादि, ढांकनेका कपड़ा वगैरह। (त्रि०) २ आच्छादक, ढांकनेवाला।

आवरण (सं० स्त्री०) आव्रियते देहः चैतन्यं वा अनेन, आ-वृ करणे ल्युट्। १ चर्मफलक, ढाल। २ वेदान्त-मत-सिद्ध चैतन्यका आवरक अज्ञान। आवरणशक्ति देखो।

३ आच्छादन-साधनमात्र, ढांकनेकी हरेक चीज। ४ प्राचीरादि, चहारदौवारी वगैरह। ५ वेष्टन, बेड़ा। भावे लुट्। ६ आवृति, लपेट।

आवरण-पत्र (सं० स्त्री०) आच्छादनपत्र, लपेटका कागज।

आवरणशक्ति (सं० स्त्री०) आवरणे शक्तिः, ७-तत्, आवृणोति, आ-वृ कर्तरि लुट्, आवरणं शक्तिः कर्मधा० वा०। वेदान्त-मतसिद्ध अज्ञान-शक्ति, आत्मा या चैतन्यको छिपानेवाली ताकत। वेदान्तमतमें जैसे अल्प होते भी मेघ बहुयोजन विस्तृत सूर्यमण्डलको दर्शकोंके नयनपथसे अन्तर्भूत करता, वैसे ही तुच्छ अज्ञान अपरिमित असंसारो आत्माको बुद्धि-विपर्ययसे छिपा रखता है। इस शक्तिसे आवृत व्यक्तिको वृथा अभिमान आता और प्रमत्तादि अवस्थामें रज्जु देखनेसे सर्प समझनेकी तरह वह अपनेको कर्ता, भोक्ता, सुखी और दुःखी माना करता है।

आवरसमक (सं० स्त्री०) अवरं समानम्, एकदेशी समा०, निपातनात् ङस्त्वः। ग्रीष्मावरसमात् वृज्। पा ४.३.५.८। १ अवरसम वर्षका आद्यकाल। तत्र देयं ऋणम् वृज्। २ वर्षके आद्य समय दत्त ऋण। (त्रि०) ३ आगामी वर्ष दिया जानेवाला।

आवर्जित (सं० त्रि०) आ चुरा० वृज्-णिच्-क्त। दत्त, त्यक्त, निष्क्रोक्त, आहृत, संयमित, दिया, छोड़ा, झुकाया या बहाया हुआ।

आवर्ज्य (सं० अव्य०) तिर्यक्, तिरछे तौरपर।

आवर्त (सं० पु०) आ-वृत्त भावे घञ्। १ घूर्णायमान जल, गिर्दात्र, भंवर। ‘स्नादावर्तोऽभ्रसां वनः।’ (भनर) २ रोमसंस्थान विशेष, बालकी भंवरी। कितने ही मनुष्योंके बाल फेरदार होते हैं। अश्वका रोमावर्त शुभाशुभ फल-सूचक है। यह छानवे प्रकारका होता है। बीस प्रकारका शुभ और छिहत्तर प्रकारका आवर्त अशुभ है। उत्तर ओष्ठ प्रपाण पड़नेसे यह शुभावह और सृक्कण सर्वकाम-फलप्रद ठहरता है। ललाटमें दो, तीन या चार आवर्त आनेसे अश्व घन्यतम निकलता है। ललाटके ऊर्ध्व आनुपूर्वस्थित तीन आवर्तका नाम निःश्रेणी पड़ता, जिससे स्वामीका सर्वार्थ सधता है। शिरःके केशान्तमध्य अवपर आवर्त उठनेसे अश्वके स्वामीका जय होता है। घण्टावन्धके समीप निगालमें लगनेवाला देवमणि शुभकृत् है। कर्णमूल, बाहु, केशान्त और मस्तकका आवर्त पूजित होता है। जिस अश्वके वक्षःपर चार आवर्त पड़ता

और कण्ठमें एक देखायी देता, वह धन्य तथा सर्व-
कामद रहता है। रन्ध्रका खामीकी ईप्सित अर्थप्रद
और उपरन्ध्रका आवर्त अतिपूजित है। शुभदेशका
आवर्त शङ्ख, चक्र, गदा, वज्र, शक्ति और पद्म जैसा
निकलनेसे अत्यन्त शुभ कहाता है। किन्तु दूसरा
आवर्त अति निन्दित, खामीको क्लेशावह और धन
तथा प्राणका अपहारक है। नासिकापुटके मध्य प्रोथ
प्रदेशपर उठनेवाला आवर्त खामीको नाश करता है।
नासिकाके छिद्रसे ऊर्ध्वका आवर्त क्लेशकारक है।
अश्वके गण्डका आवर्त दुरासद होनेसे खामीको मार
डालता है। चक्षुःसे नीचे अश्रुपातके समुद्दिष्ट प्रदेशपर
पड़नेवाला आवर्त खामीके कुलको नाश करता है।
अपाङ्गसे दो अङ्गुल शङ्खप्रदेशका आवर्त खामीके लिये
विनाशक है। भ्रूप्रदेशसे समुद्भूत आवर्त पूजित नहीं,
वह सुहृत्का वियोग लाता और खामीके अर्थका
अवसादक होता है। मन्या, ग्रीवा और शिरःका
आवर्त कुत्सित है। कक्षका आवर्त भी संग्राममें
खामीको शीघ्र मार डालता है। वाम-दक्षिण भागसे
चिवुकके समीपस्थ हनुका आवर्त दारुण है। अध-
रौष्ठके नीचे चिवुकके प्रसिद्ध तथा कर्णका आवर्त
खामीको पापका भागी बनाता है। कण्ठ और
निगालके मध्य गलका आवर्त स्कन्धकी सन्धिमें
होनेसे पाप है। जङ्घासे नीचे कूर्च ग्रन्थिपर आनेवाला
आवर्त संग्राममें खामीका जीवन ले लेता है। कूर्चसे
अष्ट अङ्गुल ऊर्ध्व पार्श्वकी कलापर आवर्त पड़नेसे
खामीका प्राण शराघातसे जाता है। अश्वके
ककुदका आवर्त खामीको नाश करता है। ककुद
पुरोभागके समीप बांहका आवर्त खामीको सुत समेत
मार डालता है। कीकस आवर्त दारुण और रणमें
खामीका घातक होता है। क्रीड, आसन, हृदय और
जानुका आवर्त भी खामीका नाशक है। पार्श्वपर
आवर्त रखनेवाला अश्व खामीको वैसे ही चय करता,
जैसे रवि नौहाराब्द को सुखा देता है। कूर्चके अधः
प्रदेश कुष्ठिक जङ्घा और जानुपर पड़नेवाला आवर्त
अधन्य होता है। नाभि, मुष्क, त्रिक और पुच्छमूलका
आवर्त भी धन्य नहीं। कुक्षिका आवर्त आधिपत्य

है। पाशु और सीवनिके मध्यका आवर्त अधन्य है।
स्फिकपिण्ड और स्थूरकमें वाजिके जो आवर्त आता,
वह लिङ्गावर्त कहाता और खामीका सर्वार्थ मिटाता
है। अपर आवर्तका नाम शतपदी, मुकुल, सङ्घात,
पादुक, अर्धपादुक, शक्ति और अवलीढ पड़ता और
वाकिके देहमें आनेसे शुभाशुभ बताता है। शतपदी-
जैसा शतपदी, जातीमुकुल जैसा मुकुल, भ्रमितकेश-
जैसा सङ्घात, शक्तिसंस्थानका शक्ति, वत्सके अवलीढक-
जैसा अवलीढ, पादुकाकार पादुक और अर्धपादुका-
जैसा अर्धपादुक कहाता है। मतिमान् भिषक् को बालके
विशेष संस्थानसे विचक्षणोंके प्रोक्त शास्त्रमार्गानुसार
आवर्तका निर्देश करना चाहिये। तपोधनोंने वाजि-
लक्षण समझकर आवर्तको रोमज बताया है। जहां
शुभ और अशुभ दो आवर्त आता, वहां एक भौ फलप्रद
नहीं होता। काकुदो आवर्त खुराब है। श्रीवृक्ष,
रोचमान, अङ्गदी, और सुषली राज्य तथा रत्नप्रद होता
है। अश्वके प्रपाणमें मारुत, ललाटमें हुताशन, उरःका
अश्विद्वय, मूर्धाका चन्द्रसूर्य, रन्ध्रका स्कन्दविशाख और
उपरन्ध्रका आवर्त हर तथा हरिकी तरह पूजित है।
किन्तु इनमें एकके भी न रहनेसे सब आवर्त अशुभ
ठहरता है। (अथवेद्यक)

३ राजावर्त नामक मणि, लाजवर्द। ४ मेघके
अधिप विशेष। 'आवर्तो मेघनायकः।' (पक्षिका) ५ मासिक
धातु, सोनामाखो। ६ सोम। ७ आवर्त नामक
मर्मस्थान विशेष, भौंहोंके ऊपरका गड्ढा। ८ वेकल्य-
कार मर्मद्वय। यह दोनो भौंहोंके ऊपर रहता है।
णिच् भावे अच्। ९ पुनः-पुनश्चालन, चक्र, गर्दिश,
घुमाव। १० परिघट्टन, घोंटायी। ११ धातुका द्रावण,
गलायी। १२ चिन्ता, फिक्क। बारम्बार चित्त चलनेसे
चिन्ताको आवर्त कहते हैं। आवर्त्यते समन्तात् अनेक
कोटिषु, आ-वृत्त-णिच् कर्मणि अच्। १३ बहुविषयक
संशय, बहुत सी बातोंका शक। १४ स्त्री जातिकी
योनि। शङ्खकी नाभि जैसी होनेसे स्त्री-योनि आवर्त
कहाती और उसके द्वितीय आवर्तमें गर्भशय्या रहती
है। स्त्रीदेहके मध्यस्थित आवर्तकाकार नाड़ी सन्निवेश
विशेषका नाम भी आवर्त है। (सुहृत्)

आवर्तक (सं० पु०) आवर्त एव, स्वार्थे कन् । १ मेघाधिप विशेष । २ कीटाविशेष, एक जहरीला कीड़ा । इसके काटनेसे वायुजन्य रोग बढ़ता है । (संस्कृत) ३ राजावर्त मणि, लाजवर् । आवर्त इव कायति, आवर्त-कै-क । ४ अश्वादिका रोमचिह्न विशेष, बालकी भंवरी । आवर्त देखो । ५ भ्रूहयोपरिके निम्नदेशका मर्मस्थान विशेष, भौंहोंके ऊपर गढा । ६ घूर्णयमान जल, गिराव, भंवर । ७ घूर्णन, घुमाव । ८ चिन्ता, फिक्र । (त्रि०) आवर्तयति, आवृत-णिच्-खल् । ९ पुनः पुनः आवृष्टक, बार-बार घोंटने, औटने या चलानेवाला । (स्त्री०) १० स्थलपद्म, गुलाब । ११ रौप्यमाचिक, रूपामाखी ।

आवर्तकी (सं० स्त्री०) आवर्तते वायुना ऊर्ध्वाधश्चलति, आवृत-खल् । १ भगवतवल्ली नामक लता विशेष । यह कषाय, उष्ण, सर, तिक्त, रसायन एवं वृश्च होती और वात, आमवात, रक्तशोथ तथा प्रमेहका नाश करती है । (मदनपाल) आवर्तकी कषाय, अम्ल, शीतल और पित्तघ्न है । (राजनिघण्टु) २ भद्रदन्ती, वृहदन्ती ।

आवर्तन (सं० स्त्री०) आवर्तते गृहादेः पश्चिमदिगर्वास्थितच्छाया पूर्वदिशं प्रत्यावर्तते यस्मिन्, आवृत आधारे ल्युट् । १ गृहादिसे पश्चिमदिक् अवस्थित छायाका पूर्वदिक् गमनारम्भरूप मध्याह्नकाल, आफ्रतावके मशरिककी ओर साया डालनेका वक्त, दोपहर लौटनेका समय । “आवर्तने यदा सन्धिः पर्वप्रतिपदोः भवेत् ।” (गोमिल) “आवर्तनात्तु पूर्वाह्नः ।” (अग्निपुराण) भावे लुट् । २ आलोड़न, चलाव, मथायी । ३ गुणन, जर्ब । ४ धातुका द्रावण, गलायी । कर्तरि लुट् । ५ विष्णु भगवान् । ६ जम्बुद्वीपका उपद्वीप विशेष । ७ वेष्टन, घेरा । ८ प्राचीरादि, चहार दीवारी । ९ अभ्यास, महारत । १० पुनः विधान, दोहराव । ११ घूर्णन, घुमाव । (वै० त्रि०) १२ घूर्णयमान, घूमनेवाला ।

आवर्तनमणि, आवर्तमणि देखो ।

आवर्तनी (सं० स्त्री०) आवर्तते अनया, आवृत-णिच् करणे ल्युट् गौरादित्वात् ङीप् । १ मूषो, कलकुली । आधारे ल्युट् । २ धातु गलानेका प्रवृत्त, धरिया ।

कर्मणि ल्युट् । ३ मूषा, सान् । ४ द्रव्यविशेष, मोर-फलो, जोंकफल, भेंदू ।

आवर्तनीय (सं० त्रि०) आवृत-णिच् कर्मणि अनौ-यर् । १ द्रवणीय, गलने काबिल । २ आलोड़नीय, मथने लायक । ३ गुण्य, जबें दिये जाने काबिल । ४ पुनः पुनः पाठ्य, बार-बार पढ़ने लायक ।

आवर्तपूलिका (सं० स्त्री०) पूलिका भेद, किसी किस्मीकी कचौड़ी या मठरी ।

आवर्तमणि (सं० पु०) आवर्तकारो मणिः, शाक० तत् । राजावर्तमणि, लाजवर्द ।

आवर्तमान (सं० त्रि०) १ घूर्णयमान, चक्कर देनेवाला । २ अग्रगामी, जो आगे बढ़ रहा हो ।

आवर्तिक (सं० त्रि०) आवर्तः प्रयोजनमस्य, ठक् । आवर्तकार धूम-साधन, चक्करदार धूवां छोड़नेवाला ।

आवर्तित (सं० त्रि०) आवृत-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः । १ कृतावर्तन, औटा या मथा हुआ । २ द्रावित, गलाया हुआ । ३ गुणित, जबें दिया हुआ । ४ अभ्यस्त, फेरा या पड़ा हुआ । आवर्तः सञ्जातोऽस्य, तारका दित्वात् इतच् । ५ जातावर्त, भंवर पड़ा हुआ, जो चक्कर खा गया हो ।

आवर्तिन् (सं० त्रि०) आवृत-कर्तरि णिनि । १ वर्तनशील, घूम पड़नेवाला । णिच्-णिनि । २ प्रत्यावर्तन करनेवाला, जो वापस आ रहा हो ।

आवर्तिनी (सं० स्त्री०) आवर्तते अनया, आवृत-णिच् करणे ल्युट्-ङीप् । १ आवर्तमान स्त्री, वापस आनेवाली औरत । २ मुषा, कुठाली । आवर्तः मेष-शृङ्गाकारफलमस्यस्याः, इनि-ङीप् । ३ अजशृङ्गी वृक्ष, अमलायी ।

आवर्ती (सं० पु०) रोमसंस्थान-विशेषयुक्त अश्व, जिस घोड़ेके भंवरो रहे ।

आवर्दा (फा० वि०) १ आनीत, अनुगृहीत, मकबूल, रियायती, लाया या दस्तगौरी किया हुआ । (हिं० स्त्री०) २ आयुः, उम्र ।

आवर्हित (सं० त्रि०) आवृत उद्यमे णिच्-क्त, आवर्हं हिंसायां क्त वा । उत्पाटित, उन्मूलित, उखाड़ा हुआ, जो जड़से तोड़ कर फेंक दिया गया हो ।

आवलदाभी—एक प्रसिद्ध डाकू। इसके नामानुसार मन्द्राज प्रान्तके कड़प्पा जिलेमें एक ग्राम स्थापित है। आवलदाभीके डाकेका हाल दक्षिणापथसे बनास नदी तीर पर्यन्त सकल स्थानमें सुन पड़ता है।

आवलि, आवली देखो।

आवलित (सं० त्रि०) आ-वल चलने क्त-इट्। १ ईषच्चलित, कुछ सरका हुआ। २ सम्यक् चलित, जो खूब बढ़ा हो।

आवली (सं० स्त्री०) आ-वल-इन्, कृदिकारान्ताद्वा डीप्। १ श्रेणी, कतार। २ एक जातीय वस्तुद्वारा कृत पंक्ति। 'वीथ्यालियावली पंक्तिः।' (अमर) ३ परम्परा, पुरानी चाल। ४ विधि विशेष, एक कायदा। इससे चेतोत्पन्न शस्यका अनुमान बंधता है। एक बिस्त्रेमें जितने सेर माल उतरता और उसका अङ्क जो आधा आता, उतने ही मन बीघे पीछे बैठता है।

आवलौकन्द (सं० पु०) मालाकन्द।

आवल्य (सं० स्त्री०) अवलस्य भावः, अवल-अञ्। दुर्बलता, लागरी, कमजोरी।

आवशीर (सं० पु०) जनपद विशेष। महावीर कर्णने मगध, कर्कखण्ड प्रभृति जनपद जीत इस स्थानको अधिकार किया था। (महाभारत वनप० २५२ अ०)

आवश्य (सं० स्त्री०) अनन्यगतित्व, नियतत्व, आवश्य-कत्व, वज्रब, फ़र्ज।

आवश्यक (सं० स्त्री०) अवश्यभावः, मनोज्ञादित्वात् वुञ्। १ अनन्यगतित्व, वज्रब, फ़र्ज। (त्रि०) २ नियत, वाजिब, जरूरी।

आवश्यकता (सं० स्त्री०) अवश्यभाविता, जरूरत।

आवश्यकौय (सं० त्रि०) आवश्यक, जरूरी।

आवसति (सं० स्त्री०) वसत्यत्र गृहे वसतिः रात्रिः, आ सम्यक् वसतिः, प्रादि-समा०। निशीथ, अर्धरात्र, सोनिका समय, आधीरात, आरामका वक्त।

आवसथ (सं० पु०) आ वसत्यत्र, आ-वस-अथच्। उपसर्गे वसेः। उण् ३।११४। १ गृह, हवेली। 'गृहमावसथ-स्था।' (उणादिको०) २ विश्रामस्थान, आरामगाह। ३ ग्राम, गांव। ४ व्रतविशेष। ५ आर्याछन्दोरचित कोषविशेष। ६ होमस्थान।

आवसथिक (सं० त्रि०) आवसथे गृहे वसति, ठण्। आवसथात् ठण्। पा ४।४।७३। १ गृहस्थ, खानानशीन्।

२ गृहमें होमाग्नि रखनेवाला। (स्त्री०) आवसथिकी।

आवसथ्य (सं० पु०) आवसथस्यायम्, जण्। १ गृह-सम्बन्धीय लौकिक अग्नि, घरमें रहनेवाली पाक आग। (स्त्री०) २ विश्राम-स्थान, आरामगाह, चेलों और साधुवोंके रहनेकी जगह। ३ गृहमें होमाग्निकी प्रतिष्ठा। (त्रि०) ४ गृहस्थ, घरकी सुतास्तिक।

आवसान (सं० त्रि०) अवसानमभिजनोऽस्य, अण्। अभिजनश्च। पा ४।३।६०। ग्रामकी सीमापर वास करने-वाला, जो गांवकी हदपर रहता हो। (स्त्री०) डीप्। आवसानी।

आवसानिक (सं० त्रि०) अवसाने अन्ते भवम्, ठञ्। शेषकाल भव, आखरी वक्त, होनेवाला। (स्त्री०) डीप्। आवसानिकी।

आवसायिन् (वे० त्रि०) १ जीविकाके पीछे दौड़नेवाला, जो रोजगारके पीछे लगा हो। (पु०) आवसायी।

आवसित (स्त्री०) आ-अव-सो-क्त, इकारोऽन्तादेशः।

यत्किञ्चित्मास्थामितिकिति। पा ७।४।४०। १ पक्कधान्य, पक्का अनाज। २ निर्तुषीकृत धान्य, साफ़ किया हुआ अनाज। (त्रि०) ३ निर्णीत, ठहराया हुआ। ४ समाप्त, जो खतम् हो। ५ निष्तुषीकृत, साफ़ किया हुआ, जिसके भूसी निकाल डाली जाये। ५ पक्क, पक्का।

आवस्थिक (सं० त्रि०) अवस्थायां भवम्, ठञ्। कालकृत, अवस्था-भव, समय-सम्भव, वक्तके सुवाफ़िक, दुरुस्त। (स्त्री०) आवस्थिकी।

आवह (सं० पु०) आवहति, आ-वह-अच्। १ सप्त-स्कन्धयुक्त वायुका प्रथम स्कन्ध, भूवायु, जमीनकी हवा। आवह, प्रवह, विवह, परावह, संवह, उदह और परिवह वायुका स्कन्ध है। (हरिवंश)

आवह भूर्लोक और स्वर्लोकके बीच रहता है। २ अग्निकी सातमें एक जिह्वा। (त्रि०) आवहति प्रापयति उद्देश्यस्थानम्। ३ प्रापक, ले जाने-वाला। ४ उत्पादक, निकालने या पैदा करनेवाला।

आवहत् (सं० त्रि०) आनयन करनेवाला, जो लाता या पाता हो।

आवहन (सं० स्त्री०) आनयन, पेशी, लवायी।
 आवहमान (सं० चि०) आ-वह-शानच्। क्रमागत,
 धारावाही, उठा लेने या पहुँचा देनेवाला।
 आवा (हिं० पु०) कुम्हारका आपाक, कुम्हारका
 पजावा। “माका पेट कुम्हारका आवा कोथी काला कोथी गोरा रे।”
 (लोकोक्ति)
 आवां (हिं० पु०) १ आवाहन, पुकार, बुलावा।
 अति तप्त एवं रक्तवर्ण लोहको कूटने-पीटनेके लिये
 अन्य कर्मकारका बोलाया जाना ‘आवां’ है।
 २ आवा।
 आवागमन (सं० स्त्री०) आगमन एवं गमन, आस-
 रफ्त, आना-जाना। जन्ममरणको भी आवागमन
 कहते हैं। क्योंकि जन्म लेनेसे जीव इहलोक आता
 और मरण होनेसे परलोक जाता है।
 आवागवन (हिं०) आवागमन देखो।
 आवागौन (हिं०) आवागमन देखो।
 आवाज, (फा० स्त्री०) १ शब्द, सदा। २ आह्वान,
 पुकार। ३ चीत्कार, चीख। ४ स्वर, तान। ५ कोला-
 हल, शोर। ६ ख्याति, शोहरत।
 आवाज कयी तरहको होती है, इकहरी (सादी),
 बुलन्द (ऊँची), धीमी (नीची), बंधी (एक-जैसी),
 भारी (बैठी), महीन (बारीक) और मीठी (अच्छी
 लगनेवाली)।
 आवाज आना (हिं० क्रि०) कर्णगोचर होना, सुन
 पड़ना।
 आवाज उठाना (हिं० क्रि०) ऊँचे शब्दसे बोलना,
 चिह्नाना।
 आवाज ऊँची करना, आवाज उठाना देखो।
 आवाज करना (हिं० क्रि०) १ आह्वान करना,
 पुकारना। २ शब्द निकालना, बोल सुनाना।
 आवाजका कड़ी चीजमें चलना (हिं० पु०) घनमें
 शब्दका वेग, सुझमिद श्रे में सदाकी रफ्तार।
 आवाजका घूमना (हिं० पु०) शब्दका आवर्जन,
 सदाकी कजी।
 आवाजका टप्पा (हिं० पु०) शब्दका गोचर, सदाकी
 पहुँच।

आवाजका पतली चीजमें चलना (हिं० पु०) द्रव-
 वस्तुमें शब्दका वेग, रकीकमें सदाकी रफ्तार।
 आवाजका पल्ला, आवाजका टप्पा देखो।
 आवाजका लड़ मिटना (हिं० पु०) शब्दका परस्पर
 सङ्गड़, सदाका मुकाबिला।
 आवाजका लौटना (हिं० पु०) प्रतिशब्द, बाजगश्च,
 गूँज।
 आवाजका हवासी चीजमें चलना (हिं० पु०) वायुमें
 शब्दका वेग, बादमें सदाकी रफ्तार।
 आवाजको गमक (हिं० स्त्री०) शब्दकी पराकाष्ठा,
 सदाकी तुन्दो।
 आवाजको चाल (हिं० स्त्री०) शब्दवेग, सदाकी
 रफ्तार।
 आवाजदिहन्द (फा० पु०) शब्द सुनानेवाला, जो
 सदा लगाता हो।
 आवाज देना (हिं० क्रि०) १ आह्वान करना, पुकारना।
 २ शब्द करना, सदा निकालना।
 आवाज निकालना (हिं० क्रि०) शब्द करना, बोलना।
 आवाजपर कान लगाना, श्रवण करना, सुनना।
 आवाजपे लगना (हिं० क्रि०) आह्वानका उत्तर देना
 या आज्ञा मानना।
 आवाज बँठना (हिं० क्रि०) शब्दक्षय होना, सदाका
 मारे पड़ना।
 आवाज भरराना (हिं० क्रि०) शब्द कर्कश एवं रुख
 निकलना, सदा भारी और रुखी पड़ना।
 आवाजमें आवाज मिलाना (हिं० क्रि०) एकतालसे
 गान करना, मिलसे गाना।
 आवाज लहर (हिं० स्त्री०) शब्दका तरङ्ग, सदाकी
 मौज।
 आवाजा (फा० पु०) कोलाहल, शोर। सोल्ल-
 ग्ठनोक्ति (बोलौठीला) को आवाजा-तवाजा कहते
 हैं।
 आवाजा कसना (हिं० क्रि०) सोल्लग्नोक्ति करना,
 ताना मारना। इसी अर्थमें ‘आवाजा फेंकना’ और
 ‘आवाजा मारना’ क्रिया भी आती है।
 आवाजाही (हिं०) आवागमन देखो।

आवात् (सं० त्रि०) वहन करते हुआ, जो बह रहा हो। (पु०) आवान्। (स्त्री०) आवती, आवान्ती।
आवादानौ, आवादानो देखो।

आवाधा (हिं० स्त्री०) आ सम्यक् वाधा। १ दुःख, पीड़ा, दर्द, तकलीफ। २ भूमिखण्ड, त्रिकोणके आधारका विच्छेद, मुसलसके कायदेका टुकड़ा।

आवाप (सं० पु०) आ-वप आधारे घञ्। १ आल-वाल, थाला। 'खादालवालमावापः।' (अमर) २ धान्यादि रखनेका पात्र विशेष, बर्तन। भावे घञ्। ३ सकल दिक् बपन, चारो ओरकी बौनी। ४ धान्यादिका स्थापन, अनाज वगैरहकी रखायी। ५ शत्रुचिन्ता, दुश्मनकी फ़िक्र। ६ परराज्यचिन्ता, दूसरेकी रियासतका खयाल। ७ प्रधान होम। "श्राक्सिद्धितेरावापः।" (गोमिब) ८ आक्षेप, फेंकफांक। कर्मणि घञ्। ९ वलय, चूड़ी। १० निम्नोन्नत भूमि, नीची ऊंची जमीन्। ११ कल्क, दवाका मसाला। १२ मिश्रण, मिलावट। १३ पानीय द्रव्यविशेष, किसी किस्मका शर्बत। (त्रि०) १४ आवप-नीय, प्रक्षेपणीय, फेलाया या चलाया जानेवाला।

आवापक (सं० पु०) आ उप्प्यते, आ-वप कर्मणि घञ् संज्ञायां कन्। प्रकोष्ठाभरण वलयादि, सोनेकी चूड़ी वगैरह। खुल्। २ आवपनकर्ता, अच्छौतरह बोनेवाला।

आवापन (सं० स्त्री०) आ-वप-णिच् करणे लुगट्। १ सूत्रयन्त्र, तांतका चरखा। २ सूत्रसम्पुटीकरणका कोश, धागा लपेटनेका ढांचा। भावे ल्युट्। ३ केशादिका सम्यक् मुण्डन, बाल वगैरहकी खासी सुंढायी।

आवापिक (सं० स्त्री०) आवापाय साधुः, ठक्। अधिक, निवेशित, जियादा, शामिल।

आवारगो (फ़ा० स्त्री०) १ परिभ्रमण, घूमफिर। २ स्नेच्छाचार, बदमाशी।

आवारा (फ़ा० वि०) १ परिभ्रमणशील, भटकते फिरनेवाला। २ भ्रष्टचरित, बेइया, बदमाश।

आवारा करना (हिं० क्रि०) स्नेच्छाचारी बनाना, बदमाशी सिखाना, खराबीमें डालना।

आवारागर्द, आवारा देखो।

आवारागर्दी, आवारो देखो।

आवारा फिरना (हिं० क्रि०) परिभ्रमण करना, कूंचागर्दी करना, बेमतलब घूमना।

आवारा होना (हिं० क्रि०) परिभ्रमणशील बनना, भटकते फिरना, बेइयायी लादना।

आवारि (सं० स्त्री०) आ-त्रियते आच्छाद्यते, आ-व बाहुलकात् इन्। १ हट्टहट्ट, बाजारू मकान्। (त्रि०) आ सम्यक् वारि यत्, बहुव्री०। २ सम्यक् जलयुक्त, पानीसे खूब भरा हुआ।

आवाल (सं० स्त्री०) आवाह्यते सञ्चार्यते जलमनेन, आ-वल-णिच् करणे अच्। १ आलवाल, पानी देनेकी पौदेकी चारो ओर मट्टोका घेरा। भावे घञ्। २ सञ्चार, चलाव। (अव्य०) मर्यादार्ये अव्ययी०। ३ वालक पर्यन्त, लड़केतक।

आवाह्य (सं० अव्य०) वाह्यात् आ, पर्यन्तार्थे अव्ययी०। वाह्यावस्था पर्यन्त, लड़कपनतक।

आवास (सं० पु०) आ सम्यक् वसत्यत्र, आ-वस आधारे घञ्। १ वासस्थान, गृहादि, मकान्, घर। भावे घञ्। २ सम्यक्-वास, बूदबाश, रहास।

आवासी (हिं० स्त्री०) समय-समयपर खानेके लिये तोड़ी जानेवाली कच्चे अनाजकी बाल।

आवाहन (सं० स्त्री०) आ-वह-णिच्-लुगट्। निकट आनेके लिये देवताका आह्वान, निमन्त्रण, पुकार, बुलावा।

आवाहनी (सं० स्त्री०) आवाह्यतेऽनया, आ-वह-णिच् करणे ल्युट् ङीप् वा। देवताके आह्वानार्थ सुद्रा विशेष। दोनो हाथ अञ्जलिबद्धकर दोनो अनामिकाके मूलपर्वपर दोनो अङ्गुष्ठ लगानेसे आवाहनी सुद्रा बनती है।

आवि (सं० पु०) पची, चिड़िया।

आविक (सं० स्त्री०) अविना तप्तोन्मा निर्मितम्, ठक्। १ कम्बल, गुदमा, लोयी। (त्रि०) २ मेषसम्बन्धी, भेड़के मुतालिक। ३ ऊर्णामय, पशमी, जनी।

आविकचौर (सं० स्त्री०) मेषोदुग्ध, भेड़का दूध। यह खादु, अम्लपाक, स्निग्धोष्ण, गुरु, पित्तकफोद्धरण एवं वृंहण होता और हिका, खास तथा अनिलकी मारता है। (गणपट्टीकाकार चौरपाणि) आविकचौर

लोमश, गुरु, कफपित्तहर, स्थूलघ्न, मेहनाशन, वात-
प्रकोपमें पथ्य और अनिलज कासमें हित है। (राजनिघण्टु)
आविकघृत (सं० क्लो०) मेघोनवनोत-जात घृत,
भेड़का घी। यह लघु-पाक, पित्त-कोपन और योनि-
दोष, कफ, वात, शोफ एवं कम्पके लिये हित होता है।
(राजनिघण्टु) आविकसर्पिं सर्वरोगका विष, कफवात,
कु तथा गुल्मोदर दूर करता और दोषन रहता है।
(अत्रिचिन्ता)

आविकदधि (अ० क्लो०) मेघो-दुग्ध-कृत दधि,
भेड़का दही। यह गुरु, सुस्निग्ध, कफ-पित्तकर,
रक्तवात तथा वातमें पथ्य और शोफ-व्रणघ्न है।
(राजनिघण्टु) आविकदधि मुखरोगके लिये परम हित
और दृष्टफल होता है। इससे पित्त बढ़ता, वात घटता
और कफ चढ़ता है। किन्तु गुल्म, अशं, कुष्ठरोग
और रक्तपित्तमें यह ठीक नहीं लगता। (अत्रिचिन्ता)

आविक-नवनोत (सं० क्लो०) मेघो-दुग्ध-जात नवनोत,
भेड़का मसका या नोनी घी। यह पाकमें हिम, लघु
तथा सारक और कफ, वात एवं अशंके लिये सदा
हित है। किन्तु ऐड़क-नवनोत क्लिष्ट-गन्ध, शोतल,
मेधाहृत, गुरु और पुष्टि-स्थौल्य-मन्दाग्निदीपन होता
है। (राजनिघण्टु)

आविकमांस (सं० क्लो०) मेषमांस, भेड़का गोश्त।
यह मधुर, ईषद्गुरु तथा वलकर होता, अजामांससे
विपरीतगुण पड़ता और अत्युष्ण, स्निग्ध, गुरु, सदोष
एवं अभिष्यन्दि रहता है। (वाग्भट)

आविकमूत्र (सं० क्लो०) मेघोमूत्र, भेड़का पेशाब।
यह तिक्त, कटु एवं उष्ण होता और कुष्ठ, अशं,
शूलोदर, रक्तशोफ तथा मेहका विष दूर कर देता है।
(राजनिघण्टु)

आविकसौत्रिक (सं० त्रि०) सूत्रमेव, स्वार्थेऽण् सौत्रम्;
आविकञ्च तत् सौत्रञ्चेति, कर्मधा०; तेन निर्मितम्,
ठक्। मेषसूत्रनिर्मित, भेड़के सूतसे तैयार, जो जनी
घागेसे बना हो।

आविकी (सं० स्त्री०) १ कम्बल, गुदमा। २ शल्लकी,
खारपुश्त, सेह।

आविक्य (सं० क्लो०) आविकानां भावः, यक्।

पल्यन्तपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ३।१।२२८। आविकसम्बन्धित,
भेड़का लगाव।

आविचित (सं० पु०) अविचित, मरुत्तका गोत्र-
नाम।

आविग्ग (सं० पु०) आ-विज कर्तरि क्त, तस्य न।
करमदं वृत्त, करौदेका पेड़।

आविज्ञान्य (वै० त्रि०) अविज्ञानमेव, चातुरर्थ्यां
स्वार्थे थञ्। अपरिस्फुट, नामुमकिन-तमोज, पटंचान
न पड़नेवाला।

आविद् (वै० स्त्री०) १ विद्या, इलम, समझ, जान-
कारो। २ आविस् और आवित्तसे आरम्भ होनेवाली
वैदिक व्यवस्था।

आविदूर्य (सं० क्लो०) अवि-दूरस्थ भावः, थञ्।
सन्निकर्ष, नैकत्य, कुर्व, पड़ोस।

आविद्ध (सं० त्रि०) आ-व्यध-क्त। १ ताड़ित, मारा
हुआ। २ विद्ध, भेदा हुआ। ३ छिद्रोक्त, छेदा
हुआ। ४ क्षित, फेंका हुआ। (पु०) ५ असिप्रहार
विशेष, तलवारका एक हाथ। असिप्रहार बत्तीस
प्रकार करते हैं। असिको घुमाकर शत्रुका आघात
वचाना 'आविद्ध' कहाता है।

आविद्धकर्णी (सं० स्त्री०) अविद्धो कर्णाविव पत्रमस्याः,
डोप्। पाठा, हरज्यौरी। 'पाठाऽन्वडाविद्धकर्णी।' (अमर)

आविध (सं० पु०) आविध्यते काष्ठादनेन, आ-व्यध
घञर्थे क। १ काष्ठादि वेधनसाधन सूच्याकाराय अस्त्र
विशेष, साल, बरमा। २ भ्रमर, भौरा।

आविर (सं० पु०) प्रसववेदना, हैजका दर्द।

आविर्भाव (सं० पु०) आविस्-भू-घञ्। १ प्रकाश,
जह्जर, रोशनो। २ सांख्यमतसे—उत्पत्ति-स्थानीय
अभिव्यक्ति-स्वरूप भावधर्म विशेष। जैसे—आत्मा में
क्रियानिरोध बुद्धिके व्यपदेशसे क्रियाका व्यवस्थाभेद
नियतभेद साधनमें शक्त नहीं पड़ता। क्योंकि एकमें
उस उस विषयके प्रकाश और अनुदयसे विरोध बढ़ता
है। जैसे—कूर्मशरीरमें निविशमान हस्त शृङ्गादिका
कभी प्रकाश और कभी लय होना आविर्भाव वा तिरो-
भाव नहीं कहाता। कारण, कूर्मसे वह सकल नहीं
निकलता। वस्तुतः कूर्म भी उससे अभिन्न ठहरता

है। सुतरां सत् वस्तुका तिरोभाव वा आविर्भाव नहीं होता। फिर भी किसी अवस्थाभेदकी ही आविर्भाव और तिरोभाव कहते हैं। ३ मनुष्यादि रूप बना अवतार रूपसे देवताकी उत्पत्ति।

आविर्भूत (सं० त्रि०) आविस्-भू कर्तरि क्त।
१ प्रकाटित, जाहिर। २ अभिव्यक्त, पैदा।

आविल (सं० त्रि०) आविलति दृष्टिं वारयति,
आ-विल स्तौ क। १ कलुष, अपरिष्कृत, गन्दा, मैला।

“कलुषोऽनच्छ आविलः।” (अमर)

“दिग्दारणमदाविलः।” (कुमार २।४४)

(क्ली०) २ काविल-देशीय फलविशेष, सेब।

आविलकन्द (सं० पु०) मालाकन्द, किसी किस्मकी जड़।

आविलमत्स्य (सं० पु०) मत्स्यविशेष, एक मछली।
यह शुभ्र तथा स्थूल होता और पक्ष ताम्रवर्ण रहता है। आविलमत्स्य अतिरुच्य, मधुर, बल्य, वीर्य-पुष्टि-वर्धन और गुणाढ्य है। (राजनिघण्टु)

आविला (सं० स्त्री०) १ मत्स्य, मछली। २ चाङ्गेरो, चौपतिया, अमलोनिया।

आविह्व (सं० पु०) मेषशृङ्गी, मेढ़ासींगी।

आविशत् (सं० त्रि०) उपस्थित होनेवाला, जो दाखिल हो।

आविष्करण (सं० क्ली०) आ-विस-क्त भावे ल्युट् षत्वम्।
१ प्रकाश, जह्जर, देखाव। “अस्या गुणेषु दोषाविष्करणम्।” (सिद्धान्तकौमुदी) कारणे ल्युट्। २ प्रकाशसाधन।

आविष्कर्ता, आविष्कर्तृ देखो।

आविष्कर्तृ (सं० त्रि०) आविस्-क्त-टच्। प्रकाशक,
जह्जरमें खानेवाला, जो ईजाद करता हो।

आविष्कार (सं० पु०) आविस्-क्त-घञ्। आविष्करण देखो।

आविष्कारक, आविष्कर्तृ देखो।

आविष्कृत (सं० त्रि०) आविस्-क्त कर्मणि क्त।

प्रकाशित, जाहिर, जो ईजाद किया या ढंढा गया हो।

आविष्कृत्या (सं० स्त्री०) आविष्करण देखो।

आविष्ट (सं० त्रि०) आ-विष-क्त। भूतादिग्रस्त, शेतान् वगैरहकी फन्दमें फंसा हुआ।

आविष्टा (वै० त्रि०) प्रकाशित, जाहिर, जिसे देख सकें।

आविस् (सं० अव्य०) आ-अव-इसि। ‘बाहुलकादवतेरप्याङ् पूर्वोदिसिः आ-अव-इसि। (उज्ज्वलदत्त) प्रकाश्य, प्रस्फुटत्व, खुले तौरपर आंखके सामने। क, भू और अस् धातुके साथ इसकी प्रतिसंज्ञा होती है।

आविस्तराम् (सं० अव्य०) आविस् तरप्-आम्।
अतिशय प्रकाश, खूब खुले तौरपर।

आवी (सं० स्त्री०) अविरिव, स्वार्थे अण्-ङीप्।
१ प्रसववेदना, जापेका दर्द, व्यांतकी तकलीफ।
२ रजस्त्रला, जो औरत कपड़ोंसे हो। ३ गर्भवती, जिस औरतकी पेटमें बच्चा रहे। ४ प्रसवलिङ्गका मूलकफप्रसेकादि, जापेसे पेशाब वगैरहका बह्नाव।

आवीत (सं० त्रि०) आ-व्ये-क्त। १ सकलप्रकार ग्रथित, सब तरहसे गूँथा हुआ। २ उत्क्षेपणपूर्वक धृत, उठाकर लगाया या लटकाया हुआ। (क्ली०)
३ सम्यक् ग्रन्थन, खासी गूँथगांथ। ४ उत्क्षेपणपूर्वक धारण, लटकाव। (पु०) ५ दक्षिण स्कन्धपर धारण किया जानेवाला यज्ञोपवीत।

आवीतिन् (सं० पु०) आवीतमस्यस्य, इनि। अत इनि-ठनी। पा ५।२।१५। दक्षिण स्कन्धके ऊपर यज्ञोपवीत रखनेवाला ब्राह्मण।

उद्धृते दक्षिणे पाशाङ्गपवीत्युच्यते द्विजः।

सव्ये प्राचीन आवीती निवीती कण्डसज्जने॥” (मनु २।६७)

आवीती, आवीतिन् देखो।

आवृक् (सं० पु०) अवति रक्षति पालयति वा, अव रक्षपालनयोः ङण्-कन्। जनक, पिता, बाप। ‘अथावृकः जनकः।’ (अमर) यह शब्द नाव्योक्तिमें चलता है।

आवृत् (वै० स्त्री०) आवृत्त सम्पदादित्वात् क्तिप्।

१ आवरण, लपेट। “मासा वःश्च विमुचं नावृत्तम्।” (ऋक् ५।४६।१) ‘आवृत्तं आवरणं धारणम्।’ (सायण) २ आवर्तन, फेर।

३ पुनःपुनश्चालन, बार बारकी गर्दिश। ‘सर्वस्यावृत्तमन्वावर्ते।’ (यजुसंज्ञा २।१६) ‘आवृत्तमावर्तनम्।’ (महोदर)

४ वारम्बार एक जातीय क्रियाकरण, बार-बार एक ही-जैसे कामका करना। ५ परिपाटी, रिवाज।

६ अनुक्रम, चाला। ७ तूष्णीभाव, खमोशी। ८ जात-कर्मादि संस्कार। (त्रि०) कर्तरि अच्। ९ आवत-

मान, घूम पड़नेवाला।

आवृत्त (सं० त्रि०) आ-वृ-क्त। १ कृतावरण, अप्रकाशित, आच्छादित, ढंका हुआ, जो लपेट लिया गया हो। २ परिवृत्त, घिरा हुआ। ३ संस्पृष्ट, लगा हुआ। ४ विस्तृत, फैला हुआ। ५ व्याप्त, भरा हुआ। (पु०) ब्राह्मणके औरस और उग्र जातिकी स्त्रीके गर्भसे उत्पन्न मनुष्य। “ब्राह्मणोदयकन्यायामावृत्तो नाम जायते।” (मनु १०।१५)

आवृत्ति (सं० स्त्री०) आ-वृ-क्तिन्। आवरण, पर्दा, घेर। आवृत्त (सं० त्रि०) आ-वृ-क्त। १ पुनःपुनरभ्यस्त, बारबार मन्हावरा डाला हुआ। २ आवर्तमान, घूमा या वापस आया हुआ। ३ पलायित, भागा हुआ। आवृत्ति (सं० स्त्री०) आ-वृ-क्तिन्। १ प्रत्यावृत्ति, वापसी। २ वारम्बार अभ्यास, पुनःपुनः एक जातीय क्रियाकरण, फिर फिर एक ही कामका करना। ३ पुनरावृत्ति, दोहराव। ४ मार्गपरिवर्तन, मोड़। ५ वृत्तान्त, वाक्या। ६ परिवर्तन, हुमाव। ७ सांसारिक स्थिति, पैदायशका चक्र। ८ नियुक्ति, इस्तेमाल, लगाव।

आवृत्तिदीपक (सं० स्त्री०) आवृत्त्या दीपकम्, ३-तत्। १ दीपकावृत्तिरूप अर्थालङ्कारविशेष। इसमें दोहराकर किसी शब्दपर जोर देते हैं। २ मस्तिष्क, दमाग।

आवृत्त्य (सं० अव्य०) प्रत्यावर्तनपूर्वक, घूमकर। आवृष्टि (सं० स्त्री०) आ-वृ-क्तिन्। १ सम्यक् वर्षण, खार्सा बारिश। “आवृष्टेः प्राणधारकैः।” (चण्डी) (अव्य०) मर्यादार्थे अव्ययी०। २ वृष्टिपर्यन्त, बारिशतक।

आवेग (सं० पु०) आ-विज-घञ्। १ उत्कण्ठाजनक वा त्वरान्वित मानसिक वेग, इज्जतिराबी, शिताबी, हड़बड़ी। २ व्यभिचारी भावविशेष, हाल, डुलाव। यथा,—निवेद, आवेग, दैन्य, अम, मद, जड़ता, औम्य, मोह इत्यादि।

आवेगी (सं० स्त्री०) आ-वेगोऽस्त्यस्याः अर्श आदित्वात् अच् गौरादित्वात् ङीष्। वृद्धदारकलता, बंधारकी बेल। “आवृद्धगता वृद्धलान्नावेगी वृद्धदारकः।” (भरर)

आवेजा (फा० पु०) कुण्डल, बाला, बाली, सुरकी, गोखरू, भूमका।

आवेणिक (सं० त्रि०) १ स्वाधीन, आजाद। २ अपर

अन्य द्रव्यसे सम्बन्ध न रखनेवाला, जो किसी दूसरी चीजसे लगा न हो। “बुद्धयर्मा आवेणिकादयः।” (अभिधर्मकोष-व्याख्या १।२)

आवेदक (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-ण्वल्। १ विज्ञापक, आवेदनकारी, जाहिर करनेवाला, जो हाल बता रहा हो। (पु०) २ प्रार्थक, उम्मेदवार, मुराफा करनेवाला। ३ सूचक, पिशुन, मुखबिर।

आवेदन (सं० स्त्री०) आ-विद-चुरादित्वात् णिच्-लुगट्। १ विज्ञापन, व्यवहारोत्थापन, नालिश-फर्याद। करणे ल्यट्। व्यवहारोत्थापक भाषापत्र, अर्जी।

आवेदनीय (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-अनीयर्। विज्ञापनीय, खबर देने या नालिश करने काबिल।

आवेदित (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-क्त-इट्, णिच् लोपः। विज्ञापित, जाहिर किया या खबर दिया हुआ।

आवेदिन् (सं० त्रि०) आवेदयति, आ चुरादित्वात् विद-णिच्-णिनि। १ विज्ञापक, नालिश करनेवाला। २ आज्ञाकारी, फरमांवरदार। (पु०) आवेदी। (स्त्री०) आवेदिनी।

आवेद्य (सं० त्रि०) आ-विद-णिच्-यत्। १ विज्ञाप्य, बताने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ आवेदन करके, बताकर।

आवेद्यमान (सं० त्रि०) प्रकाशित किया जानेवाला, जो जाहिर किया जाता तो।

आवेद्य (सं० त्रि०) आ-विध-ण्यत्। विद किया जानेवाला, जो छेदने लायक हो।

आवेल तेल (हिं० पु०) नारिकेल तेल, नारियलक तेल। यह ताजी गरीसे निकाला जाता है। सूखी गरीसे निकलनेवाला नारियलका तेल मुठेल कहाता है।

आवेश (सं० पु०) आ-विश-घञ्। १ अहङ्कार-विशेष, फुखर, घमण्ड। २ संरम्भ, क्रोध, गुस्सा। ३ अभिनिवेश, दाखिला, दखल। ४ आसङ्ग, बांध। ५ अणुप्रवेश, पड़ुंच। ६ अहभय, भूतसञ्चार, शैतान्का दौर। ७ अपस्मार रोग, मृगीका आजार। ८ अधिष्ठान, दौर। ९ गर्व, गुरुर। १० मनोभाव आपत्तीकरण, दिलकी हालतका जमाव। ११ आन्तरिक यत्न, भीतरी तदवीर।

आवेशन (सं० स्त्री०) आ विश्वते यत्, आ-विश
आधारे लुट्। १ शिल्पशाला, कारखाना। 'आवेशन
शिल्पशाला।' (अमर) भूतादि वाधा, शैतान्का साया।
३ सूर्य एवं चन्द्रका परिधि, आफताब और चांदका
चक्र। ४ क्रोधादि, गुस्सा। आधारे लुट्। ५ प्रवेश
सम्पादन-व्यापार, रसायी, पैठ। ६ मन्त्रसे भूतको बुला
शिरःमें सन्निवेशन, शैतान्को सरपर चढ़ा देनेका काम।
आवेशनमन्त्र (सं० पु०) मन्त्रविशेष, एक जादू।
आवेशनमन्त्र पढ़नेसे दूसरेके शरीरपर भूत चढ़
जाता है।

आवेशिक (सं० पु०) आवेशो-गृहे भवं तत आगतः
वा, ठञ्। १ अतिथि, मेहमान्। (स्त्री०) २ प्रवेश,
पहुँच। ३ अतिथि, मेहमांदारी। (त्रि०) असाधा-
रण, खास। ५ स्वभावज, पैदायशी।

आवेशित (सं० त्रि०) आ-विश-णिच्-त्-इट्, णिच्
लोपः। निवेशित, आवेशयुक्त, मनोयोगयुक्त, पहुँचा
हुआ, जो दाखिल हो।

आवेष्ट (सं० पु०) परिवेष्टन, संवलन, घेर, अहाता।
आवेष्टक (सं० पु०) आविष्टयति, आ-विष्ट-णिच्-
खुल्। आवरणकारक प्राचीरादि, वेष्टक, दीवार,
खन्दक, अहाता।

आवेष्टन (सं० स्त्री०) आ-वेष्ट-भावे लुट्। १ आव-
रण, लपेट। करणे लुट्। २ आवरणसाधन प्राची-
रादि, चारदीवारी। ३ प्रावार, कोष, लिफाफा,
बस्ता, बुक्का, बंधना।

आवेष्टित (सं० त्रि०) आवरणयुक्त, घिरा हुआ, जो
लिपटा या बंधा हो।

आव्य (वै० त्रि०) अवर्मेणस्य विकारः, व्यञ्। १ मेष-
सम्बन्धीय, मेड़के सुताक्षिक। २ और्ण, पशुमी, जनी।

आव्याधिन् (वै० त्रि०) आ-व्यध-णिनि। आघात वा
आक्रमण करते हुये, जख्म पहुँचाने या हमला
मारनेवाला। (पु०) आव्याधी।

आव्याधिनी (वै० स्त्री०) आव्याधिन्-ङीप्। १ पौड़ा-
दायक स्त्री। २ तस्कारयन्त्री, रहजनोंकी जमात।

“या सेना अभिलरीरा व्याधिनीरगणा उत।” (युद्धयजुर्वेद ११००)

“आव्याधिनी आ समनास्थिनि ताः सर्वतोऽर्थासाङ्गिकाः।” (भट्टहर)

आव्युष (वै० अव्य०) उषः पर्यन्त, सवेरेतक।

आव्रश्चन (वै० स्त्री०) ईषद्व्रश्चनं छेदनम्, प्रादि-समा०।

१ ईषच्छेदन, थोड़ी काट-छांट। आधारे लुट्।

२ छेद्य वृक्षप्रदेश, दरखतका काटा जानेवाला हिस्सा।

यह पूपादि बनानेके लिये वृक्षसे काटा जाता है।

आव्रस्क (वै० पु०) आ-व्रश्च-घञ्; चस्य कत्वम्,
शस्य सत्वम्। यजोः कृ चिराच्छतो। पा अ३५२। १ ईषच्छेदन,
थोड़ी काटछांट। २ ठूपादि बनानेके लिये काटा
जानेवाला वृक्षका स्थानविशेष, दरखतकी शाख।

आव्रीडक (सं० पु०) आव्रीडानां निर्लज्जानां विषयो
देशः, वुञ्। निर्लज्जदेश, वेशर्म सुक्त।

आश (सं० पु०) अश भोजने घञ्। १ भोजन, खाना।
कर्मण्यपस्थिति अण्, उप० समा०। २ भोजन करने-
वाला, जो खाता हो। इस अर्थमें आश शब्द प्रायः
समासान्तमें आता है। यथा,—हुताश, आशपाश,
मांसाश, पलाश, हविष्याश इत्यादि।

(हिं० स्त्री०) २ आशा, उम्मेद।

आशंसन (सं० स्त्री०) १ उदीक्षण, प्रतीक्षण, इन्ति-
जार, शौक। २ वर्णन, कहावत।

आशंसा (सं० स्त्री०) आ-शन्स्-अङ्-टाप्। आ संशया
सूतवश्च। पा ३३१२२। आशंसा वयनेलिङ्। पा ३३१२३।
१ अप्राप्त वस्तुकी प्राप्तिके लिये इच्छा, आरजू, उम्मेद-
वारी। २ भाषा, वर्णना, बोली, कौफियत।

आशंसित (सं० त्रि०) आ-शन्स्-त्-इट्। १ कथित,
इसरार किया हुआ। २ इच्छा-विषयीभूत, सुतरस्सिद्ध,
खाहिश-किया हुआ। (स्त्री०) भावे क्त। ३ मनो-
रथ, इश्रितयाक, आसरा, भरोसा।

आशंसित्व (सं० त्रि०) आशंसति, आ-शन्स्-त्-वच्।
१ आशंसायुक्त, मुन्तजिर, उम्मेदवार, उम्मेद रखने-
वाला। २ कथन करनेवाला, जो इसरार करता या
कहता हो। (पु०) आशंसिता। (स्त्री०) डीप्।
आशंसित्री। ‘आशंसराशंसितरि।’ (अमर)

आशंसिन् (सं० त्रि०) आ-शन्स्-णिनि। आशं-
साकारी, मुन्तजिर, उम्मेद रखनेवाला। २ ज्ञापक,
निवेदक; बोलने, कहने या इजहार करनेवाला।

आशंसु (सं० त्रि०) आ-शन्स्-उ। सनायसमिच उः।

या ३१५१७८। इच्छाकारक, भाविशुभाकाङ्क्षी, मुन्तजिर, खाहिशमन्द, जो चाहना रखता हो।

आशक (सं० त्रि०) अश्राति, अश-खुल्। १ भक्षक, खानेवाला। २ भोगयुक्त, खानेकी चीजसे भरा हुआ। आश्रति, आश-णिच्-खल्। ३ भोगसाधन, खानेके काम आनेवाला। ४ भोजनकारक, खाना बनानेवाला। आशक्त (सं० त्रि०) आ सम्यक् शक्तम्; आ-शक्-क्त, प्रादि-समा०। सम्यक् शक्तियुक्त, ताकतवर, गहजोर, जवरदस्त।

आशक्ति (सं० स्त्री०) सम्यक् शक्ति, ताकत, कुव्वत, इच्छितियार, इस्तेदाद।

आशङ्कनीय (सं० त्रि०) आ-शक्ति-अनीयर्। शङ्का किये जाने योग्य, जो शक किये जाने काबिल हो। २ अहणीय, मानने काबिल। ३ विचार्य, समझने लायक।

आशङ्कमान (सं० त्रि०) शङ्कित, सम्य, डरा हुआ, जिसे शक रहे।

आशङ्का (सं० स्त्री०) आ-शक्ति-अङ्-टाप्। १ भय, दास, खौफ, डर। २ सन्देह, शक। ३ अविश्वास, नायेतबारी।

आशङ्कान्वित (सं० त्रि०) १ भयभीत, खौफजदा, डरा हुआ। २ सन्देह रखनेवाला, जिसे शक रहे।

आशङ्कित (सं० त्रि०) आ-शक्ति कर्तरि क्त-इट्। १ भीत, खौफजदा, डरा हुआ। २ सन्देहयुक्त, जिसे शक आ चुके।

आशङ्किन् (सं० त्रि०) आशङ्कते, आ-शकि-णिनि। आशङ्कायुक्त, शक करनेवाला। (पु०) आशङ्की। (स्त्री०) डीप्। आशङ्किनी।

आशङ्क्य (सं० त्रि०) आ शङ्कते, आ शकि कर्मणि ण्यत्। १ आशङ्काके योग्य, शक किये जाने काबिल, जिससे डर लगे। (अव्य०) ल्यप्। २ सन्देह करके, शक लाते हुये।

आशन (सं० पु०) अशन एव, स्थाय्ये ऽण्। १ अशन वृक्ष, पीतशालका पेड़। अशन देखो। २ वज्र। ३ इन्द्र। (त्रि०) अश भोजने णिच्-लुप्। ४ भोजन करानेवाला, जो खिलाता हो।

आशना (फा० पु-स्त्री०) १ मित्र, सुहृद्, दोस्त। २ प्राणेश, आशिक। “रखेके लाखों आशना।” (लोकोक्ति) ३ वेष्टा, रण्डी, रखो हुयो औरत। “जिनकी आशना उनकी बगलमें। (लोकोक्ति) (वि०) ४ परिचित, जान-पहचानवाला। ५ आसक्त, प्यार करनेवाला। विद्यारम्भ करनेवालेको ‘हर्फ-आशना’, मित्रको ‘दोस्त-आशना’ या ‘यार-आशना’ और परिचित व्यक्तिको ‘सुरत-आशना’ कहते हैं।

आशनायी (फा० स्त्री०) १ मित्रता, दोस्ती। २ विवाह-सम्बन्ध, रिश्तेदारी। ३ अधर्म्य स्नेह, नाजयज प्यार। आशनायी करना (हिं० क्ति०) १ मित्र बनाना, दोस्ती लगाना। “आशनायी करना आसान निमाना मुश्किल।” (लोकोक्ति) २ अधर्म्य स्नेह या नाजायज प्यार बढ़ाना।

आशनायी जोड़ना, आशनायी करना देखो।

आशनायी लगना (हिं० क्ति०) मैत्री बढ़ना, दोस्ती होना।

आशनायी लगाना, आशनायी करना देखो।

आशनायी होना, आशनायी लगना देखो।

आशफल (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक पेड़। यह बङ्गाल, विहार और मन्द्राज प्रान्तमें अधिक उपजता है। काष्ठ सुदृढ़ होता और सज्जाद्रव्य प्रस्तुत करनेमें लगता है।

आशय (सं० पु०) आ-शी-अच्। एरच्। या ३१५१९। १ अभिप्राय, मकसद, मन्शा, गुरज्। २ आधार, मसकन्, जगह। ३ विभव, असबाब। ४ पनसवृक्ष, कटहलका पेड़। ५ वेद्यशास्त्रोक्त स्थानविशेष, जिसका जफ़। आशय सात होते हैं,—वाताशय, पित्ताशय, कफाशय, रक्ताशय, पक्काशय, मूत्राशय, और आमाशय। स्त्रियोंके आठवां गर्भाशय अतिरिक्त रहता है। (सुहृत्) उरःमें रक्ताशय, उससे नीचे स्नेहाशय, स्नेहाशयसे नीचे आमाशय और उससे नीचे पक्काशय है। पक्काशयसे ऊपर ग्रहणी नाम्नी जो कला होती, वही पाचकाशय कहाती है। नाभिसे ऊपर अग्न्याशय मध्यभागमें स्थित है। उसपर तिल पड़ता, जिससे नीचे वाताशय आता है। वाताशयसे नीचे पक्काशयको मलाशय भी कहते हैं। मलाशयसे नीचे वस्ति वा मूत्राशय है। (भावप्रकाश)

‘आशयः सादमिषाये मानसाधारयोरपि।’ (विच)

आ फलविपाकात् चित्तमूमी शैते, कर्तरि अच्।
६ कर्मजन्य वासनारूप संस्कार, भलायी-बुरायी।
७ धर्माधर्मरूप अल्लष्ट, मशीयत, होनी। आधारि अच्।
८ आशय-विशिष्ट चित्त, इदराक, पाददायत, दिल।
भावे अच्। ९ शयन, नींद। १० स्थान, जगह।
११ कोछागार, आरामगाह। १२ विचारकी रीति,
खयालका तरीक। १३ इच्छा, खाहिश, खुशी।
१४ कृपण, बखील। १५ बौद्धमत-सिद्ध आलय-विज्ञान-
रूप विज्ञानसमूह। १६ आश्रय, टेक। १७ किंपाचन
नामक पशुधारणार्थ मर्तविशेष। १८ खात विशेष,
गड्ढा।

आशयफल (सं० क्लो०) पनस, कटहल।

आशयाश (सं० पु०) आशयं आश्रयमश्नाति; आशय-
अश-अण्, उप० समा०। १ अग्नि, आग। अपने
आश्रय काछादिकी भक्ष्यरूपसे खानेपर अग्निको आश-
याश कहते हैं। २ वायु, हवा।

आशर (सं० पु०) आश्रयति, आ-शृ-अच्। १ अग्नि,
आग। २ राक्षस, आसेब, भूत।

“क्रयार्थोऽप्य आशरः।” (अमर)

आशरीक (वे० पु०) रोग विशेष, अज़ामें सख्त और
शदीद दर्द पैदा करनेवाला आज़ार।

“आशरीकं विशरीकं बलासः प्रष्टालयम्।” (अथर्वसंहिता)

आशरल (सं० पु०) जीवकवृक्ष, एक पेड़।

आशरव (सं० क्लो०) आशोर्भावं, अज्। प्रशस्ति इम-
निष्ठा। पा३।१।२२५। शिताबी, उतावली। २ गुड़मद्य,
गुड़की शराब।

आशस् (वे० त्रि०) आश्रन्स्-क्लिप्। १ भावि शुभे-
च्छाकारी, आगेके लिये अच्छी उम्मेद रखनेवाला।
(क्लो०) भावे क्लिप्। २ भाविशुभेच्छा, भली खाहिश।
३ कथन, सुतिसाधन, कहावत।

“शुक्लमानसवायसा जातवेदो यदीदम्।” (ऋक् ४।५।६)

‘नवायसा तत् सुखा साधनेन।’ (सायण)

आशसन (दे० क्लो०) तुषाधान, वध किये हुये यज्ञोय
पशुकी अङ्गिका छेदन। “आशसनं विशसनयो अधिविर्तनम्।”
(ऋक् १०।८५।३५) ‘आशसनं तुषाधानम्।’ (सायण)

आशस्त (वे० त्रि०) आ-शन्स-क्त। सुत, तारीफ़
किया गया।

आशा (सं० स्त्री०) आ समन्तात् अश्रूते व्याप्नोति,
आ-अशू व्याप्नो अच्। १ दिक्, फ़ासिला। २ प्रत्याशा,
इश्रितयाक, उम्मेद। ३ वसुकी भार्या। ४ न्यायमतसे—
संख्यापरिमित पृथक्त्व-संयोग-विभागश्च द्रव्य-
विशेष। दैशिक परत्व और अपरत्वके असमवायि-
कारणका संयोगाश्रय होनेसे ही नैयायिक इसको
स्वीकार करते हैं। ५ सांख्यतत्त्व-कौमुदीके मतसे—
पूर्वापरत्वके व्यवहारका उपाधि। इसी उपाधिको
दिक् कहते हैं। इसके आश्रयसे अतिरिक्त दिक्-
कल्पना करना ठीक नहीं पड़ता। ६ दृष्ट्या, लालच,
न मिलनेवाली चीज़ हासिल करनेकी खाहिश।

आशाकृत (सं० त्रि०) प्रत्याशा-परिवृत, उम्मेदसे
लगा हुआ।

आशागज (सं० पु०) दिक्हस्त्री, दौरके नुकतेका
हाथी। यह पृथिवीके एक विभागको साधे है।

आशाढ़ (सं० पु०) १ आषाढ़, एक महीना। २ व्रतीका
पलाशदण्ड, व्रत करनेवालेकी छड़ी।

आशाड़ा, आशाड़ा (सं० स्त्री०) १ आषाढ़ा नक्षत्र।
आशाड़ा प्रयोजनमस्य, अण्। २ ब्रह्मचारीका पलाश-
दण्ड।

आशाढी (सं० स्त्री०) आषाढ़ा नक्षत्रेणा युक्तः कालः,
अण्-ङीप्। १ चन्द्राषाढ़ पौर्णमासी।

आशादामन् (सं० क्लो०) आशा दामेव, उपमिति
समा०। १ आशा रूप बन्धनसाधन रज्जु, उम्मेदका
जाल। (पु०) २ नृपतिविशेष, एक पुराने राजा।

आशादामा, आशादामन् देखो।

आशादित्य, आशाक देखो।

आशाधर—एकजन प्रसिद्ध जैनग्रन्थकार। निजकृत
‘धर्माश्रित’ ग्रन्थमें इन्होंने शाकशरीके निकट अपना
जन्मस्थान लिखा है। वस्तुतः जयपुरके निकट किसी
दुर्गमें यह उत्पन्न हुये थे। औरजी और सरस्वती
नाम्नी दो पत्नी रहीं। सरस्वतीके गर्भसे बाहल नामक
पुत्र हुआ था। शहाबुद्दीनके आक्रमण मारनेपर यह
मालव राज्यको भागे और पीछे धारामें विन्ध्यराज-

“आशिक चूड़ा मेंस पन्निनी मेंडक ताल लगावे ।

चोली पहरि गदहा नावे ऊंठे विष्टनपद गावे ॥” (कबीर)

२ आवेदक, प्रार्थक, खाहां, सायल, उम्मेदवार ।

३ अनवधान साहसी पुरुष, जो शखूस बेपरवा और बेफिक्र हो ।

आशिक-भाशूक (अ० पु०) १ नायक-नायिका, प्यार करने और किया जानेवाला । २ भुजगमेखला, मार या सांपका पट्टा ।

आशिकमिजाज (अ० वि०) क्रीड़ाशील, खुशदिल ।

आशिक होना (हिं० क्रि०) कामुक बनना, चाहना, प्यार करना ।

आशिकाना (अ० वि०) रसिक, रसीला, आशिक जैसा ।

आशिकाना अशार (अ० पु०) प्रीतिकार्य, प्यारकी कविता ।

आशिकाना खत (अ० पु०) प्रीतिपत्र, प्यारकी चिट्ठी ।

आशिकाना गीत (हिं० पु०) शृङ्गारगात, प्यारका गाना ।

आशिकी (अ० स्त्री०) प्रीति, प्यार, चाह ।

आशिका (वै० स्त्री०) आ शिच-अङ्-लुट् । शिचा-भिलाष, तालोम हासिल करनेकी खाहिश ।

आशिक्षित (सं० त्रि०) क्षणित; सनसनाने, ठन-ठनाने, झनझनाने या छनकारनेवाला ।

आशित (सं० त्रि०) आ-अश-क्त । १ भुक्त, खाया हुआ । २ भोजन द्वारा तृप्तियुक्त, आसूदा, छका हुआ ।

(स्त्री०) भावे क्त । ३ समग्र भोजन, खासा खाना । आशितमस्त्यस्य, अश आदित्वात् अच् । ४ तृप्ति, आसूदगी, छकाया । “नातिशये नातिसायं न सायं प्रातराशितः ।” (मनु)

आशितङ्गवीन (सं० त्रि०) आशिता अशनेन तृप्ता गावो यत्र, निपातनात् सुम् । गो द्वारा भक्षण किया हुआ, जो गायने पहले ही खाया हो ।

‘निष्ठाशितङ्गवीननादगावो यवाशिताः पुरा ।’ (अमर)

आशितम्भव (सं० त्रि०) आशितोऽशनेन तृप्तो भवत्यनेन; आशित-भू-खच्-सुम् उप० समा० । आशिते सुवः करणभावयोः । पा २।१।४५ । १ तृप्तिकारक, आसूदा करनेवाला । (स्त्री०) भावे अच् । २ अनादि, अनाज वगैरह । ३ तृप्ति, आसूदगी ।

आशित (सं० त्रि०) आ-अश-लट्-इट् । अतिशय भोक्ता, हृदसे ज्यादा खानेवाला । (पु०) आशिता । (स्त्री०) डीप् । आशित्री ।

आशिन् (सं० त्रि०) अश-णिनि । भोक्ता, खानेवाला । (पु०) आशी । स्त्री० डीप् । आशिनी ।

आशिन (वै० त्रि०) आशिन् स्वार्थे अण्, वेदे निपातनात् न टिलोपः । १ भक्षक, अतिशय भोक्ता, पैटू, बहुत खानेवाला । २ वृद्ध, बुढ़ा, जो बहुत वर्षका हो ।

आशिमन् (सं० पु०) आशोर्भावः इमनिच्-डिह-ज्ञावः । शीघ्रत्व, जल्दी ।

आशिषां (फा० पु०) आशय, पक्षिस्थान, खोता, घोंसला ।

आशियाना, आशिषां देखो ।

आशिर् (वै० त्रि०) आशीयते पच्यते, आ-शी-क्विप् निपातनात् साधु । १ पाकके योग्य, पकाने काबिल । (स्त्री०) २ विशुद्ध करनेके लिये सोमरसमें मिला हुआ दुग्ध ।

आशिर (सं० त्रि०) आशीरेव, स्वार्थे ण् । १ पाकके योग्य, पकाने लायक । (पु०) आ-अश व्याप्तौ भोजने वा किरच्, णित्वादुपधावृद्धिः । २ अग्नि, आग । ३ सूर्य, आफताब । ४ राक्षस ।

‘आशिरो वज्रिरचसोः ।’ (उज्ज्वलदत्त)

आशिरःपाद (सं० अव्य०) शिरःसे पाद पर्यन्त, सरसे पैर तक ।

आशीर्वाद, आशीर्वाद देखो ।

आशीर्विष, आशीर्विष देखो ।

आशीष् (सं० स्त्री०) १ आशीर्वाद, दुवा । २ काव्यालङ्कार विशेष । इसमें न मिली चीज पानेके लिये प्रार्थना करते हैं ।

आशीषाक्षेप (सं० पु०) काव्यालङ्कारविशेष । इसमें अन्यके उपकारपर ऐसा कार्य करनेका उपदेश देते, जिससे अपना क्लेश छोड़ते हैं ।

आशीषिक (सं० त्रि०) आशीषा चरति, ठक् । आशीर्वादक, दुवा देनेवाला ।

आशीष्ट (सं० त्रि०) आ-शास-क्त । आशीर्वाद दिया गया, जिसके लिये दुवा मांगी जा चुके ।

आशिष्ट (सं० त्रि०) अतिशयेन आशु, इष्टन् डिङ्ङावः ।
अतिशयने तमविष्टनौ । पा ५।३।५५ । अत्यन्त शीघ्र, निहायत
जल्दवाज ।

आशिस (सं० स्त्री०) आ-शास-क्विप्, उपधाया इत्वम् ।
शास इङ्ङ् हलोः । पा ६।३।३४ । इष्टार्थाविष्करण, मतलबकी
बातका ज़हूर । २ प्रार्थना, दुवा । ३ आशीर्वाद,
दुवागोयी । ४ सर्पका दन्त, सांपका ज़हरीला दांत ।

‘आशीर्दाने मरुद्गुजाम् । हितसाधने स्त्री सात् ।’ (नेदिनी)

आशी (सं० स्त्री०) आ शीयंतेऽनया, आ-शृ-क्विप्
पृषोदरादित्वात् । १ सर्पदंष्ट्रा, सांपका ज़हरीला दांत ।
“आशी तालुगता दंष्ट्रा तथा विष्टो न जीवति ।” (विषविद्या) २ सर्प-
विष, सांपका ज़हूर । ३ आशीर्वाद, दुवागोयी ।
४ वृद्धि नामक औषध । यह जड़ी दवामें पड़ती है ।

आशीत (सं० पु०) पुष्पवृक्ष-विशेष, किसी किसमकी
फूलका दरख्त । इसे अहिलक कहते हैं ।

आशीतक, आशीत देखो ।

आशीय (सं० त्रि०) अतिशयेनाशु, ईयसुन् डिङ्ङत् ।
दिवचनविस्मयोपपदेतरवीयसुनौ । पा ५।३।५७ । अत्यन्त शीघ्र,
निहायत जल्दवाज ।

आशीर्गय (सं० स्त्री०) ३-तत् । नान्दीपाठ, स्तुतिवाद,
दुवागोयीके साथ गाया जानेवाला गीत ।

आशीर्त (वै० त्रि०) आ-श्री-क्त वेदे निपातनात् । पक्व
दुग्धादि, पक्का दूध वगैरह ।

आशीर्दा (वै० स्त्री०) आशिस-दा-क-आप् । १ देवता,
पूज्य व्यक्ति । २ स्तुतिवाद ।

आशीर्वचन (सं० स्त्री०) आशीर्वाद देखो ।

आशीर्वत् (वै० त्रि०) दूग्धयुक्त, दुधसे मिला हुआ ।
(पु०) आशीर्वान् । (स्त्री०) आशीर्वती ।

आशीर्वाद (सं० पु०) आशिषो वादः, ६-तत् । इष्टार्थ
आविष्करण वाक्य, दुवागोयी ।

आशीर्विष (सं० पु०) आशीः सर्पदंष्ट्रा तत्र विषमस्य,
पृषोदरादित्वात् सलोपः ; यद्वा आश्यां विषमस्य ।
१ सर्प, सांप । ‘आशीर्विषो विषधरश्चक्री व्यालः सरीसृपः ।’ (अमर)
२ दर्वीकर सर्प, बड़े फनका सांप ।

आशु (सं० त्रि०) अशू व्याप्ता उष्, णित्वादुपधावृद्धिः ।
‘क वा पांजि नि खदि साध्यस्य उष् । उष् १।१ । १ शीघ्र, सत्वर,

तेज, जल्दवाज, जो फुरतीसे चलता हो । ‘सत्वरं चपलं
तूर्णमविलम्बितमाशु च ।’ (अमर) (अव्य०) २ शीघ्रतासे,
तेजीके साथ, फौरन् । (सं० क्लो०) ३ वर्षाभव धान्य
विशेष, आवुस । ‘आशुर्वीहो च सत्वरः ।’ (विश्व) अन्य धान्यकी
अपेक्षा शीघ्र पकनेसे आशु नाम पड़ा है । यह मधुर,
पाकमें अन्न, पित्तकर और गुरु होता है । (राजनिषण्ड)
आशुकवु—शीघ्र उत्पन्न होनेवाला घुगिया । (Colo-
casia Antiquorum) यह वृक्ष ब्रह्मदेश और भारत-
वर्षमें उत्पन्न होता है । सात मासके बाद मूलको
निकाल लेते हैं । यह भरवो उत्कृष्ट और हितकर
है । घुगियेका रस रक्तस्त्रावरोधी होता और क्षतको
लाभ पड़चाता है । पत्तीको भी अच्छी तरह उबाल
कर खा सकते हैं । जड़की प्रायः तरकारो बनती है ।
त्रिवाङ्गोड़के लोग इसे बहुत खाते और मलयवाले
खादको सराहते हैं । घुगिया बहुत पुष्ट होती और
ल्योखरकी मिठायीमें पड़ती है ।

आशुकवि (सं० पु०) शीघ्र कविता बनानेवाला
व्यक्ति, जो शब्द सजल्द शायरी तैयार करता हो ।

आशुकारिन् (सं० त्रि०) आशु शीघ्रं करोति, आशु-
कृ-णिनि । शीघ्र कार्यकारी, जल्द काम करनेवाला ।

आशुकारी (सं० पु०) पित्तोत्पन्न सन्निपातज्वर । इसमें
अतिसार, भ्रम, मूर्च्छा, मुखपाक तथा दाह प्रभृति
होता और गात्रमें रक्तविन्दु पड़ जाता है । (भाष्यप्रकाश)

आशुकोपित (सं० पु०) मध्यदेश-जात वृक्षक शालि,
किसी किसमका चावल ।

आशुकोपिन् (सं० त्रि०) चण्डखभाव, जू-दरञ्ज,
तुनकमिजाज, जिसे जल्द गुस्सा आ जाये । (पु०)
आशुकोपी । (स्त्री०) आशुकोपिनी ।

आशुक्रिया (सं० स्त्री०) आशु यथा तथा क्रिया, कर्मधा० ।
अविलम्बित व्यवहार, फुरतीका काम ।

आशुग (सं० पु०) आशु शीघ्रं गच्छति, आशु-ग-म-
ङ् । १ वायु, हवा । २ वाण, तीर । ३ सूर्य, आफ-
ताव । ‘आशुगोऽर्को गरे वायो ।’ (हम) भागवतकी पञ्चम
स्कन्धवाले २१वें अध्यायमें लिखते, कि सूर्य पन्द्रह
दण्डमें २३७७५००० योजन चलते हैं । उपरोक्त
अङ्कको चारसे गुण करनेपर ९५१००००० आता है ।

अतएव षष्टिदण्डात्मक अहोरात्रमें ८५१००००० योजन चलनेसे सूर्यका नाम आशुग पड़ा है। किन्तु भास्कराचार्य पृथिवीकी यह गति बताते हैं। पृथिवीके चलनेसे सूर्य चलते बोध होता है। ४ शाक्य मुनिके पांचमें एक शिष्य। (त्रि०) ५ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

आशुगामिन् (सं० त्रि०) आशु गच्छति, आशु-गम-णिनि। १ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (पु०) आशुगामी। २ सूर्य। ३ वायु। ४ शर। (स्त्री०) आशुगामिनी।

आशुङ्ग (वे० पु०) आशु गच्छति, आशु-गम वेदे निपातनात् खच् सुम्। १ पक्षिविशेष, एक चिड़िया। (त्रि०) २ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला।

आशुतीक्ष्णक (सं० स्त्री०) ताम्र, तांबा।

आशुतोष (सं० पु०) आशु शीघ्र तोषस्तुष्टिर्यस्य, बहुव्री०। १ शिव। स्वल्पकाल अर्चना करनेसे ही तृप्त होनेपर शिवका नाम आशुतोष पड़ा है। (त्रि०) २ शीघ्रतोषी, जल्द खुश होनेवाला।

आशुतोष मुखोपाध्याय, Sir—कलकत्ता-भवानीपुर-निवासी खर्गीय डाक्टर गङ्गाप्रसाद मुखोपाध्यायके पुत्र। १८६५ ई०को इनका जन्म हुआ था। १८८५ ई०को यह गणितकी एम० ए० परीक्षामें उत्तीर्ण हुये। दूसरे वर्ष रायचन्द-प्रेमचन्द वृत्ति पायी। १८८८ ई०को हाईकोर्टमें वकालत करना आरम्भ किया। पर वत्सर कलकत्ता जनिवासिटीके अन्यतम सदस्य मनोनीत हुये। १८८८ और १८०१ ई०को कलकत्ता विश्वविद्यालयके प्रतिनिधि बन वङ्गीय व्यवस्थापक सभामें इन्होंने प्रवेश किया। फिर १८०३ ई०को उक्त सभाके प्रतिनिधिस्वरूपसे बड़ेलाटकी व्यवस्थापकसभामें प्रवेशका अधिकार पाया। १८८४ ई०को इन्हें डि० एल० उपाधि मिला था। १८०४ ई०को यह कलकत्ता हाईकोर्टके विचारपति पदपर अधिष्ठित हुये। आज भी उसी पदपर प्रतिष्ठाके साथ आप काम करते हैं। १८०५ ई०से १८१४ ई० आठ वर्ष तक कलकत्ता विश्वविद्यालयके वाईस चांसलर (Vice-Chancellor) पदपर बैठ इन्होंने शिक्षा-संस्कार

सम्बन्धमें अनेक कार्य किये। १८०८ ई०को यह एशियाटिक सोसायिटीके सभापति रहे। इनकी प्रतिभा सर्वतोमुखी है। नवहोपके पण्डितोंने इन्हें 'सरस्वती' उपाधि एवं सरकारने संस्कृत-परीक्षा बोर्डके सभापतिका आसन दिया है। भारत-सम्राटने भी इन्हें 'सर' (Sir) उपाधि प्रदानकर सम्मानित किया है। वङ्गीय साहित्यपर इन्हें विशेष अनुराग रहता है। एक वर्षतक यह कलकत्ता साहित्य-सभाके सभापति और वङ्गीय-साहित्यपरिषत्के अन्यतम सहकारी सभापतिके पदपर अधिष्ठित थे। १८०५ ई०को यह उत्तरवङ्ग साहित्य-सम्मेलनके सभापति और १८१६ ई०को वङ्गीय साहित्य-सम्मेलनके सभापति बने। वर्तमान १८१७ ई०को सिंहलकी महास्यविरमण्डलीने इन्हें 'सम्बुद्भागमचक्रवर्ती' उपाधि प्रदान किया है।

आशुत्व (सं० स्त्री०) शीघ्रता, जल्दी, फुरती, तेजी।

आशुप (सं० पु०) वंशविशेष, किसी-किसका बांस।

आशुपत्नी (सं० स्त्री०) आशु पत्रं यस्याः, बहुव्री० गौरादित्वात् ङीष्। शलकी लता, कुंदरुकी बेल।

आशुपत्न, आशुपत्न देखो।

आशुपत्न (वे० पु०) आशु पतति, आशु-पत्-वनिप्। शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (स्त्री०) ङीप्। आशुपत्नरी।

आशुफल (सं० पु०) १ शाक प्रभृति, सब्जी वगैरह। २ हठयोग। ३ अस्त्र विशेष, किसी किसका हथियार।

आशुमण्ड (सं० पु०) आशु-भक्तमण्ड, आशुस चावलका मांड। यह आही, मधुर, कफकर, तर्पण, चयदोषघ्न और शुक्रवर्धन होता है। (अविसंहिता)

आशुमत् (वे० त्रि०) आशु शीघ्रं विद्यतेऽस्य, आशु-मतुप्। १ शीघ्रतायुक्त, जल्दबाज। (अव्य०) २ शीघ्रतापूर्वक, जल्द। (पु०) आशुमान्।

आशुया (वे० त्रि०) १ शीघ्रगामी, जल्द चलनेवाला। (अव्य०) २ शीघ्रतापूर्वक, जल्द।

आशुरथ (वे० त्रि०) शीघ्रगामी रथ रखनेवाला, जिसके पास जल्द चलनेवाली गाड़ी रहे।

आशुब्रीहि (सं० पु०) कर्मधा०। आशुधान्य, आवुस, बरसातमें पैदा होनेवाला चावल।
 आशुशुचि (वै० पु०) आ-शुष-सन्-अनि। १ अग्नि। 'रोहिताशो वायुसखा शिखावानाशुशुचिः।' (अमर) २ वायु। (त्रि०) ३ दौसिमान्, चमकदार।
 आशुषाण (सं० त्रि०) आ-शुष वाहुलकात् कानच्। सम्यक् शुष्क होनेवाला, जो अच्छीतरह सूख जाता हो।
 आशुषेण (वै० त्रि०) शीघ्रगामी वाण रखनेवाला, जिसके पास जल्द चलनेवाला तीर रहे।
 आशुहेमन् (वै० पु०) शीघ्रगामी अग्नि।
 आशुहेमा, आशुहेमन् देखो।
 आशुहेषस् (वै० त्रि०) आशु हेषते, आशु-हेष-असुन्। सर्वधातुभ्योऽसुन्। उण् ४।१८८। १ शीघ्र शब्दायमान, जल्द आवाज देनेवाला। २ शब्दकारो अश्वयुक्त, जिसके हिनहिनानेवाला घोड़ा रहे।
 आशु (वै० त्रि०) आशु वेदे पृषोदरादित्वात् दीर्घः। शीघ्र, जल्दवाज, तेज।
 आशेकुटिन् (सं० पु०) आशेतेऽस्मिन्, आ-शी-विच् स इव कुटति णिनि। पर्वत, पहाड़।
 आशेकुटी, आशेकुटिन् देखो।
 आशोकेय (सं० त्रि०) अशोक संख्यादित्वात् ठञ्। १ अशोक वृक्षके निकटस्थ, अशोक पेड़के पास होनेवाला। अशोकाया अपत्यम्, ठक्। २ शोकरहित स्त्रीसे उत्पन्न। (स्त्री०) डीन्। शाङ्गरवायजी डीन्। पा ४।१।७३। आशोकेयी।
 आशोब (फ्रा० पु०) नेत्रपीड़ा, आंखका दर्द।
 आशोषण (सं० क्ली०) शोषणकार्य, सुखनेका काम, सुखायी।
 आशौच (सं० क्ली०) अशुचेर्भावः, अण्। नञः शुचीत्यादि। पा ७।३।३०। अमेध्यता, कालुष्य, नापाकी, गन्दगी।
 आश्वर्य (सं० क्ली०) आ-चर-यत्-सुट्। आश्चर्यमन्त्ये। पा ६।१।१४०। १ अद्भुत, ताज्जुब। २ विस्मयरस, तस्-रूप, परच। ३ अद्भुत रूप, अनोखी सूरत। 'विस्मयोद्भुत साश्चर्यम्।' (अमर) (त्रि०) ४ आश्चर्यान्वित, ताज्जुब-अद्भुत, अनोखा। (अव्य०) ५ अद्भुत, अजीब तरहसे, निराले ढङ्गपर।

आश्चर्यता (सं० स्त्री०) विस्मय, ताज्जुब, अनोखापन।
 आश्चर्यत्व (सं० क्ली०) आश्चर्यता देखो।
 आश्चर्यभूत (सं० त्रि०) अद्भुत, अजीब, अनोखा।
 आश्चर्यमय, आश्चर्यभूत देखो।
 आश्चर्यित (सं० त्रि०) विस्मयाकुल, मुताज्जिब।
 आश्चोतन, आश्चोतन देखो।
 आश्चोतन (सं० त्रि०) सम्यक् श्रोतति, श्रुत्योतति वा, आ-श्रुत श्रुत वा लुट्। १ सम्यक् चरणशील, खूब टपकनेवाला। (क्लो०) भावे लुट्। २ सम्यक् चरण, खासा छींटा। ३ नेत्रसेचन, आंखकी पलकपर घी वगैरहका लगाव। ४ चक्षुःपूरण, आंखमें दवा वगैरहका डालना। आश्चोतन कार्य कभी निशामें नहीं होता। नेत्रमें काथ, चौद्र, आसव और स्नेहके विन्दुका डाला जाना आश्चोतन कहाता है। लेखनमें आठ, स्नेहनमें दश और रोपणमें बारह विन्दु मात्रा पड़ती है। (वेद्यकनिषण्ड्)।
 आश्म (सं० पु०) अश्मनो विकारः, अण् वा टिलोपः। १ प्रस्तरविकार, पत्थरका बर्तन, खिलौना वगैरह। (त्रि०) २ प्रस्तरमय, सङ्कीर्ण, पत्थरीला।
 आश्मक (सं० पु०) अश्मना कायति, अश्मन्-कै-क। साल्त्व देशका ग्राम विशेष।
 आश्मकि (सं० त्रि०) आश्मके भवम्, इञ्। साल्त्वयव-प्रत्ययकलङ्कटाश्मकादिञ्। पा ४।१।१७३। आश्मक ग्रामजात, आश्मक गांवका पैदा।
 आश्मन (सं० पु०) अश्मनः सूर्यसारथीरपत्यम्, अण्। १ सूर्यसारथिके पुत्र। अश्मनो विकारः, अण् वा टिलोपाभावः। २ प्रस्तरविकार, पत्थरकी चीज। (त्रि०) ३ प्रस्तरमय, सङ्कीर्ण, पथरीला।
 आश्मन्य (सं० क्ली०) प्रस्तरके निकटस्थ देशादि, पहाड़ी मुल्क।
 आश्मभारिक (सं० त्रि०) अश्मभारं हरति वहति आवहति वा, ठञ्। तद्वरति वहत्यावहति मारादृशादिभ्यः। पा ४।१।५०। प्रस्तरहारक, प्रस्तरवाहक, पत्थरका ढेर रखनेवाला।
 आश्मरथ (सं० पु०) अश्मरथस्य सुनेरपत्यम्, यञ्। आश्मरथस्य सुनेरपत्यम् (स्त्री०) डीप्। आश्मरथी।

आश्रमिक (सं० पु०) अश्रमेव, स्वार्थे बाहुलकात्
ठञ्। अश्रमरीरोग, सङ्गमसाना, पथरी। अश्रमी देखो।

आश्रमायन (सं० पु०) अश्रमनो गोत्रापत्यम्, फञ्।
अश्रादिभ्यः फञ्। पा ४।१।११०। अश्रमन् नामक ऋषिके
गोत्रापत्य। (स्त्री०) डीप्। आश्रमायनी।

आश्रमिक (सं० त्रि०) भारतभूतमश्रमानं हरति वहति
आवयति वा, ठन्। प्रस्तरका, भारहारक, वाहक वा
आवाहक; सङ्गीन, पथरीला।

आश्रमेय (सं० पु०) अश्रमनोऽपत्यम्, ठक्। अश्रमन्
नामक ऋषिके अपत्य।

आश्रान (सं० त्रि०) आ-श्रै-क्त। १ घनीभूत, जो
गढ़ा पड़ गया हो। २ शुष्कप्राय, जो कुछ कुछ
सूखा हो।

आश्र (सं० स्त्री०) अश्रमेव, स्वार्थेऽण्। चक्षुःका
जल, आंसू, आंखका पानी।

आश्रपण (सं० स्त्री०) आ-श्रा-णिच्-पुक् ङ्रस्वे लुट्।
पाककरण, वेपरवायीसे खाना पकानेका काम।

आश्रम (सं०-पु-स्त्री०) आ सम्यक् अमो यत्र, आ-अम
आधारे घञ्। १ सुनिमणका वासस्थान। २ मठ।
‘आश्रमो व्रतानां मठे। ब्रह्मचर्यादिचतुर्विंशतिः।’ (हैन) ३ तपोवन।
४ मुक्त व्यक्ति। परमेश्वरमें लीन होनेपर अम न
रहनेसे मुक्त व्यक्तिको भी आश्रम कहते हैं। ५ परम-
ेश्वर। ६ पाठशाला, मदरसा। ७ ब्रह्मचारी प्रभृतिका
शास्त्रीकृत चार प्रकार धर्मविशेष।

‘ब्रह्मचारी गृही वानप्रस्थो भिन्नचतुष्टये। आश्रमोऽस्त्री।’ (अमर)

‘अनाश्रमो न तिष्ठेत्, चणमावमपि विजः।

आश्रमेण विना तिष्ठन् प्रायश्चित्तीयते लसी॥’ (दच)

‘गार्हस्थो मेचुलार्थेव आश्रमी हो कलौ युगे।’ (महानिर्वाणतन्त्र)

‘चत्वार्यब्दसहस्राणि चत्वार्यब्दशतानि च।

कलैवेदा गमिष्यन्ति तदा वेतापरिग्रहः।’ (व्यास)

महानिर्वाणतन्त्रके कथनानुसार कलिमें गार्हस्थ और
भिच्छु दो भिन्न अन्व आश्रम नहीं होता। व्यासके
मतमें ४४०० वर्ष कलियुग बीतनेपर तीन ही आश्रम
रह जायेंगे। अवशेषको लोग क्षीणबल एवं अल्पायु
तथा अशेष रोगसे आक्रान्त होनेपर वानप्रस्थ किंवा
सत्यास आश्रम रख न सकेंगे। हिजको एकक्षण भी
आश्रमहीन न रहना चाहिये। आश्रम न रखनेसे

प्रायश्चित्त करना पड़ता है। ब्रह्मचर्य, गार्हस्थ, वान-
प्रस्थ और सत्यास चार आश्रम होते हैं।

आश्रमगुरु (सं० पु०) आश्रमाणां ब्रह्मचर्यादीनां
गुरुर्नियन्ता, इ-तत्। १ आश्रमनियन्ता, राजा। आश्र-
मस्य मठस्य तपोवनस्य वा गुरुः स्वामी तत्रस्थ छात्राणा-
मुपदेष्टा वा, इ-तत्। २ तपोवनस्वामी। ३ मठस्थ
किंवा तपोवनस्थ छात्रगणका उपदेष्टा।

आश्रमधर्म (सं० पु०) आश्रमविहितो धर्मः, शाक०-
तत्। ब्रह्मचर्यादि विहित धर्म। धर्म छः प्रकारका
होता है,—१ वर्णधर्म, २ आश्रमधर्म, २ वर्णाश्रमधर्म,
४ गुणधर्म, ५ निमित्तधर्म और ६ साधारणधर्म।
ब्राह्मणका कभी मद्यपान न करना इत्यादि वर्णधर्म;
यज्ञके अग्निकी रक्षा, तज्जन्य काष्ठाहरण तथा भिक्षान्न
द्वारा जीवनधारण ब्रह्मचर्यादि आश्रमधर्म; ब्राह्मणी
प्रभृतिका भी पलाशदण्ड ग्रहण वर्णाश्रम धर्म;
विहित कार्यके अकरण एवं निषिद्ध कार्यके आच-
रणको प्रायश्चित्तादि निमित्त-धर्म और अहिंसादि
साधारण-धर्म है।

आश्रमपद (सं० स्त्री०) आश्रम एव पदं स्थान-
रूपम्, कर्मधा०। १ सुनिगणका आश्रमरूप स्थान।

‘परिक्रम्यावलोक्य च। इदमाश्रमपदं तावत् प्रविशामि।’ (शकुन्तला)

२ ब्राह्मणके धार्मिक जीवनका समयविशेष।

आश्रमपर्वन् (सं० स्त्री०) महाभारतके पन्द्रहवें पर्वका
प्रथमांश।

आश्रमभ्रष्ट (सं० त्रि०) आश्रमसे गिरा हुआ, जो
अपने आश्रमको छोड़ बैठा हो।

आश्रममण्डल (सं० स्त्री०) सुनिगणके वासस्थानका
वृत्त, साधुसन्तके रहनेकी जगह।

आश्रमवास (सं० पु०) आश्रमे वासः, ७-तत्।

१ सुनिका तपोवनादिमें वास। आश्रमवासमधिकृत्य
कृतो ग्रन्थः, अण्। २ धृतराष्ट्रादिके आश्रमवास अधि-
कारपर व्यास-रचित भारतान्तर्गत पर्वविशेष।

आश्रमवासिक (सं० स्त्री०) आश्रमवासः प्रतिपाद्यतया-
स्थस्य, ठन्। १ भारतान्तर्गत व्यासरचित धृतराष्ट्रा-
दिके वनवासका प्रतिपादक पर्वविशेष। (त्रि०)

२ सुनिगणके वासस्थानसे सम्बन्ध रखनेवाला।

आश्रमवासिन्, आश्रमवासी आश्रमसद देखो।
 आश्रमसद (सं० त्रि०) आश्रमे सीदति तद्वासित्वेन
 तमेवाश्रयति, आश्रम-सद-क्लिप्। आश्रमवासी, तपो-
 वनवास-रत वानप्रस्थादि।
 आश्रमस्थान (सं० स्त्री०) मुनिगणका वासस्थान,
 साधुसन्तके रहनेको जगह।
 आश्रमालय (सं० पु०) तपोवनवासी, साधु।
 आश्रमिक (सं० त्रि०) आश्रमे नियुक्तः साधुः
 अस्तस्य वा, ठन्। आश्रमयुक्त, तपोवन-सम्बन्धीय।
 (स्त्री०) आश्रमिकी।
 आश्रमिन् (सं० त्रि०) आश्रमोऽस्य अस्ति, इति।
 आश्रमयुक्त। (पु०) आश्रमी। (स्त्री०) आश्रमिणी।
 आश्रमोपनिषत् (सं० स्त्री०) आश्रमोपनिषद् विशेष।
 आश्रय (सं० पु०) आश्रीयते इति, आ-श्रि कर्मणि
 अच्। १ आश्रयणीय द्रव्य, सहारा लेने लायक चौज।
 २ अवलम्बन, सहारा। ३ रक्षाकर्ता, हिफाजत रखने-
 वाला। आश्रीयतेऽस्मिन्, आधारे अच्। ४ आधार,
 जफ़ बरतन। ५ गृह, मकान। ६ विषय, मामला।
 ७ शत्रु से पीड़ित होनेपर बलवानके आश्रयरूप
 कः प्रकारमें राजाका गुणविशेष। भावे अच्।
 ८ शरण, पनाह। ९ अधिकार, इच्छित्यार।
 १० आयत्ति, बहाना। ११ सम्पर्क, लगाव। १२ ग्रहण,
 लेनेका काम। १३ संयोग, मेल। १४ सम्बन्ध,
 ताल्लुक। १५ उचित कार्य, सुनासिब काम।
 १६ व्याकरणानुसार क्रियाका कर्ता, फेलका फायल।
 १७ मूल, जड़। १८ बौद्ध मतानुसार पञ्च ज्ञानेन्द्रिय।
 समासान्तमें यह शब्द आधारका बोधक है। यथा—
 अष्टगुणाश्रय, आठ गुणपर टिका हुवा।
 आश्रयण (सं० स्त्री०) आ-श्रु-ल्युट्। १ सम्यक् सेवा,
 खासी खिदमत। २ अवलम्बन, सहारा। (त्रि०)
 कर्तरि ल्युट्। आश्रयकर्ता, सहारा पकड़नेवाला।
 (स्त्री०) लीप्। आश्रयणा।
 आश्रयणीय (सं० त्रि०) आश्रीयते, आ-श्रि कर्मणि
 अनोयर्। आश्रय लेने योग्य, जिसके सहारे रहना
 सुनासिब ठहरे।
 आश्रयतः (सं० अर्थ०) आश्रयसे, सहारा पकड़के

आश्रयत्व (सं० स्त्री०) आश्रयता, आधारत्व, सहारा
 लेनेका काम।
 आश्रयभुज्, आश्रय देखो।
 आश्रयभूत (सं० त्रि०) आश्रयदाता, सहारा देने-
 वाला।
 आश्रयलिङ्ग (सं० त्रि०) अपने सम्बन्धी शब्दसे
 लिङ्गमें समान रहनेवाला, जो अपने हवालेके लफ़्जसे
 जिनमें मिलता हो।
 आश्रयवत् (सं० त्रि०) आश्रयोऽस्तस्य, मतुप् मस्य
 वत्वम्। आश्रययुक्त, सहारेपर टिका हुवा। (पु०)
 आश्रयवान्। (स्त्री०) लीप्। आश्रयवती।
 आश्रयाश (सं० पु०) आश्रयं काष्ठादिकं अश्राति ;
 आश्रय-अश-अण्, उप० समा०। १ अग्नि, आग, अपने
 आश्रय काष्ठादिको दहनरूपसे खानेपर अग्निका नाम
 आश्रयाश पड़ा है।
 'आश्रयाशो ब्रह्मज्ञानः कथानुः पावकोऽनलः।' (अमर)
 २ चित्रकवच, चौतका पेड़। ३ कृत्तिकानक्षत्र। (त्रि०)
 ४ आश्रयनाशक, सहारेको तोड़नेवाला।
 आश्रयासिद्ध (सं० पु०) आश्रयोऽसिद्धो यस्य। न्यायोक्त
 हेत्वाभास, सुगलता, झूठी दलील।
 आश्रयासिद्धि (सं० स्त्री०) आश्रयस्यासिद्धिः, इ-तत्।
 न्यायोक्त हेतुका दोषविशेष, दलीलका ऐत्र।
 आश्रयिन् (सं० त्रि०) आश्रयति, आ-श्रि-इति।
 आश्रय लेनेवाला, जो सहारा पकड़ता हो। (पु०)
 आश्रव (सं० त्रि०) आश्रणोति वाक्, आ-श्रु-अच्।
 १ आज्ञानुवर्ती, फरमांवरदार, बातको माननेवाला।
 (स्त्री०) भावे अप्। २ अङ्गोकार, इकरार, वादा।
 ३ क्लेश, आफ़त, थकाहट। 'आश्रवो वचनस्थिते। प्रतिज्ञायाश्च
 क्लेशे च।' (हेम) ४ नदी, धारा, दरया, बहाव।
 ५ दोष, कुसूर। ६ जैनमतसे पुण्याश्रव और पापाश्रव
 नामक संस्कार विशेष। इससे जीव वृद्ध हो जाता
 है। ७ बौद्धमतानुसार कायाश्रव, भवाश्रव, दृष्टाश्रव
 और अविद्याश्रव नामक विषय विशेष। इसमें पढ़नेसे
 मनुष्य मुक्ति नहीं पाता।
 आश्राव (सं० पु०) आ-श्रु-णिच्-अच्। १ श्रावण,
 सुनानेका काम। २ अङ्गोकार, इकरार, वादा।

आश्रावण (सं० क्लौ०) आश्राव देखो ।

आश्रि (सं० स्त्री०) आ-सम्यक् अश्रिः, प्रादि० समा० ।

१ सम्यक् कोण, खासा कोना । २ धारा, तलवारका किनारा ।

आश्रित (सं० त्रि०) आश्रीयते, आ-श्रि-क्त । आश्रय-प्राप्त, टिका हुआ । २ अवलम्बित, पकड़े हुआ । ३ अनु-सृत, इस्तेमाल करनेवाला । ४ शरणागत, पनाह पाये हुआ । ५ वशीभूत, अधीन, तावेदार, मातहत ।

आश्रितत्व (सं० क्लौ०) वश्यता, अधीनता, मातहतता ।

आश्रित्य (सं० अव्य०) आ-श्रि-ल्यप् । आश्रय लेकर, सहारा पकड़के ।

आश्रिन् (सं० त्रि०) अश्रं नेत्रजलमस्तपस्य, इनि । सुखादिभ्यः । पा ४।१।११ । नेत्रजलयुक्त, आँसू भरे हुआ । (स्त्री०) डीप् । आश्रिणी ।

आश्रुत् (सं० चि०) आश्रु भावे क्तिप् । १ अङ्गीकार, इकारार । (त्रि०) कर्तरि क्तिप् । २ अङ्गीकारकर्ता, इकारार करनेवाला ।

आश्रुत (सं० त्रि०) आ-श्रु-क्त । १ अङ्गीकृत, माना हुआ । २ सम्यक् श्रुत, खूब सुना हुआ । (क्लौ०) ३ सुनानेकी पुकार ।

आश्रुति (वै० स्त्री०) आ-श्रु-क्तिन् । १ श्रवण, सुनायी । २ अङ्गीकार, इकारार ।

आश्रुत्कर्ण (वै० त्रि०) चारो ओर कान लगाने-वाला, जो हर तर्फ कान देता हो ।

आश्रेय (सं० त्रि०) आ-श्रि-यत् । आश्रितव्य, सहारा दिये जाने काबिल ।

आश्लेष (वै० पु०) आलिङ्गन करनेवाला व्यक्ति, जो शख्स गले लगाता हो । २ प्रेत, शैतान् । ३ अश्लेषा नक्षत्र ।

आश्लिष्ठ (सं० त्रि०) आ-श्लिष्-क्त । १ आलिङ्गित, हमागीश, गलेसे लगा हुआ । २ सम्बद्ध, मिला हुआ । ३ आलिङ्गन करनेवाला, जो गले लगाता हो । ४ संस्कृत, फैला हुआ । ५ प्रतिपादित, साबित किया हुआ ।

आश्लेष (सं० पु०) आ-श्लिष्-ञच्, आ सम्यक् श्लेषः सम्बन्धः, प्रादिसमा० । १ हार्दिक सम्बन्ध, दिली लगाव । “शान्तिप्राप्तेः पवित्रवैभवाप्राप्त्यनुविधः ।” (मुग्धबोध)

२ आलिङ्गन, हमागीशी, सीनेसे सीना लगाकर मिलनेकी हालत । ३ दृश्यविशेष, किसी समासेका नजारा । वेदमें ‘आश्लेष’ बोलते हैं । ४ अश्लेषा नक्षत्र । आश्लेषण (सं० क्लौ०) आश्लेषैव स्वार्थेऽण् । अश्लेषा नक्षत्र ।

आश्व (सं० क्लौ०) अश्वानां समूहः, अण् । १ अश्व-समूह, घोड़ोंका झुण्ड । २ अश्वत्व, घोड़ेका काम या हाल । (त्रि०) अश्वैरुह्यते शेषिकः, अण् । अश्वस्येदं वाह्यम् अञ् वा । ३ अश्वके वहनीय, जिसे घोड़ा ले जा सके । ४ अश्वसम्बन्धी, घोड़ेके सुताक्षिक । अश्व-सूत्रसे श्लेषा, छमि और ददु नष्ट होता है ।

आश्वतर (सं० पु०) १ बुड़िलका गोत्रनाम । २ अश्वतरका अपत्य, अश्वका लड़का ।

आश्वतराश्वि (सं० पु०) अश्वतरस्यापत्यम्, इच् । बुड़िल सुनि ।

आश्वत्य (सं० क्लौ०) अश्वत्यस्य फलम्, अण् । श्वादिभ्योऽण् । पा ४।१।२६४ । १ अश्वत्यफल, पीपलका मेवा । (त्रि०) अश्वत्यस्येदम् । २ अश्वत्य सम्बन्धी, पीपलके सुताक्षिक ।

आश्वत्यिक (सं० पु०) अश्वत्येन युक्ता पौर्णमासी, अण् निपातनात् तस्य ठक् । १ चान्द्र आश्विनमास । (त्रि०) २ अश्वत्यसम्बन्धीय, पीपलके सुताक्षिक ।

आश्वत्यी (सं० स्त्री०) आश्वत्य-डीप् । १ शाखा विशेष । अश्व इव तिष्ठति, अश्व-स्था-क पृषोदरादित्वात्, अश्वत्यी अश्विनीनक्षत्रः तस्य अश्वमस्तकाकारत्वात् तेन युक्तः कालः । २ अश्विनी नक्षत्रयुक्त रात्रि ।

आश्वत्यीय (सं० त्रि०) अश्व-स्था-क् । गहादिभ्यः । पा ४।१।२६१ । अश्वत्यसम्बन्धीय, पीपलके सुताक्षिक ।

आश्वपत (सं० त्रि०) अश्वपतेरिदम्, अण् । अश्वपत्या-दिभ्यः । पा ४।१।२६४ । अश्वपति-सम्बन्धीय, घोड़ेके मालिक-से तालुक रखनेवाला ।

आश्वपस् (वै० द्वि०) शीघ्र कर्मचारौ, जल्द काम करनेवाला । “विभगा चिदाश्वपतरिभ्यः ।” (ऋक् १०।७६।५)

आश्वपालिक (सं० पु०) अश्वपालस्यापत्यम्, ठक् । रिवत्यादिभ्यः । पा ४।१।२६६ । अश्वपालीका पुत्र ।

आश्वपेजिन् (सं० त्रि०) अश्वपेजिन्, प्रोक्तमधीते, णिनि ।

शौनकादिभ्यश्चन्द्रि । पा ४।१।०६ । १ अश्वपेज ऋषिप्रोक्त
ग्रन्थाध्यायी, अश्वपेजकी बनायी किताब पढ़नेवाला ।
(पु०) २ अश्वपेज ऋषिके शिष्य ।

आश्वबल (सं० त्रि०) अश्वबला द्वारा उत्पादित,
जिसे अश्वबला पैदा करे । (स्त्री०) आश्वबली ।

आश्ववाल (सं० त्रि०) अश्ववालाया औषधेयम्,
अश्ववाला-अण् । अश्ववाल निर्मित, अश्ववाल बेंतका
बना हुआ ।

आश्वभारिक (सं० त्रि०) अश्ववाह्यं भारमश्वभूतं
भारं वा हरति वहति आवहति वा, वंशादित्वात् ठञ् ।
अश्ववाह्य वा अश्वरूप भारका हरणकर्ता ।

आश्वमेधिक (सं० त्रि०) अश्वमेधाय हितम्, अश्व-
मेध-ठन् । १ अश्वमेधयज्ञ-साधन, अश्वमेध यज्ञमें
लगनेवाला । (स्त्री०) अश्वमेधमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः,
ठञ् । २ शतपथब्राह्मणान्तर्गत तृतीय प्रपाठक पञ्चा-
ध्यायिरूप ग्रन्थविशेष । इस ग्रन्थके पांच अध्यायमें
अश्वमेधका उत्पत्तिफल, धर्मविषय, अध्वर्यु, उद्-
गाता, ब्रह्मा और यजमानकी बात कही है । तीन
अध्यायमें मन्त्रव्याख्याके साथ विशेष धर्म और शेष
दो अध्यायमें धर्मान्तरके साथ पूर्वोक्त विषय सकल
सन्निवेशित है । ३ युधिष्ठिरके अश्वमेध अधिकारपर
व्यासकृत भारतान्तर्गत पर्वविशेष ।

आश्वयुज् (सं० पु०) आश्वयुजी अश्विनयुक्ता पौर्ण-
मासी यस्मिन् अण् । १ शुक्लप्रतिपदादि अमावस्या
पर्यन्त चान्द्र आश्विनमास । (त्रि०) २ अश्वयुज्
नक्षत्रमें उत्पन्न ।

आश्वयुज, आश्वयुज्-देखो ।

आश्वयुजक (सं० पु०) आश्वयुज्यामुक्ता मासः, वुञ् ।
आश्वयुज्या वुञ् । पा ४।१।४५ । १ चान्द्र आश्विन पूर्णिमाको
उस मास । कहा जाता, कि चान्द्र आश्विन पूर्णिमा-
को बौनेसे उड़द खूब जगता है । (त्रि०) २ चान्द्र
आश्विन पूर्णिमाको बोया जानेवाला । (स्त्री०)
आश्वयुजकी ।

आश्वयुजी (सं० स्त्री०) अश्वयुजा अश्विनीनक्षत्रेण
युक्ता पौर्णमासी, अण्-डोप् । तत्रैव युक्तः कालः । पा ४।२।४
आश्विनमासकी पौर्णमासी ।

आश्वरथ (सं० त्रि०) अश्वेन युक्तो रथः अश्वरथ-
स्तस्येदम्, पत्रपूर्वकत्वाद्च् । अश्वके रथसे सम्बन्ध
रखनेवाला, जो घोड़ागाड़ीमें लगता हो ।

आश्वलक्षणिक (सं० त्रि०) अश्वलक्षणं वेत्ति तज्-
ज्ञापकशास्त्रमधीते वा, ठक् । १ अश्वलक्षणाभिज्ञ,
घोड़ेके भलेबुरे निशान् पहचाननेवाला । २ अश्व-
लक्षणबोधक शास्त्र अध्ययनकारी, जो घोड़ेके भले-
बुरे निशान् बतानेवाली किताब पढ़ता हो । (पु०)
३ अश्वपाल, सायीस ।

आश्वलायन (सं० पु०) अश्वं लाति गृह्णाति, अश्व-
ला-क ; अश्वलो मुनिभेदः तस्यापत्यम्, फक् ।
१ ऋग्वेदीय श्रौत और गृह्यसूत्रकारक एक ऋषि ।
यह शौनकके शिष्य रहे । शौनक इन्हें बहुत चाहते
थे । इसीसे उन्होंने अपना बनाया सहस्रकाण्डात्मक
ब्राह्मण-सन्निभ योगसूत्र आश्वलायनके नामसे ही चला
दिथा । उसी समयसे ग्रन्थका नाम आश्वलायन पड़ा
है । (त्रि०) २ आश्वलायन सम्बन्धी । (स्त्री०)
आश्वलायनी ।

आश्वश्व (वै० त्रि०) आशु-अश्व । शीघ्रगामी अश्व-
युक्त, जिसमें जरद दौड़नेवाले घोड़े लगे । “य आश्वश्च
अमवद्वहन् उते शिते ।” (ऋक् ५।३४।१) ‘आश्वश्चः शीघ्रगाल-
शोपेताः’ । (सायण)

आश्वश्व्य (वै० स्त्री०) शीघ्रगामी अश्ववात्मक बल,
जरद जानेवाले घोड़ोंकी ताकत ।

“उतत्वदाश्वश्च यदिन्द्र ।” (ऋक् ८।६।२४)

‘आश्वश्च शीघ्रगाल्यश्वसंघात्मकं बलम् ।’ (सायण)

आश्वसत् (सं० त्रि०) १ श्वास ग्रहण करनेवाला,
जो सांस लेता हो । २ प्रद्वह, जो उठनेवाला ।
३ आरोग्य पानेवाला, जो आराम हो रहा हो ।

आश्वसित (सं० त्रि०) प्रोत्साहित, हौसलेमन्द, जिसे
भरोसा दिया जा चुके ।

आश्वायन (सं० पु०) अश्वस्य गोत्रापत्यम्, फक् ।
अश्वनामक ऋषिके गोत्रापत्य । (स्त्री०) डोप् ।
आश्वायनी ।

आश्ववतान (सं० पु०) अश्ववताननामधेयपत्यम्,
अण् । अश्ववताननामधेयपत्यम् । पा ४।१।०४ । अश्ववतान

नामक ऋषिके पुत्र। (स्त्री०) डीप्। आश्वा-
तानी।

आश्वास (सं० पु०) आ-श्वास-घञ्। १ निर्वृति
और आश्रयदान, तसल्लीदिही। २ सान्त्वना, दिलासा।
३ आख्यायिका, किस्सा। ४ परिच्छेद, बाव। 'आश्वासः
स्वाप्तु निर्वृति। आख्यायिका परिच्छेदे।' (हेन)

आश्वासक (सं० त्रि०) आश्वासयति, आ-श्वास-णिच्-
शुल्। १ आश्वासकारक, सान्त्वनाकारी, तसल्ली देने-
वाला। (पु०) २ वस्त्र, पोशाक।

आश्वासन (सं० क्ली०) आ-श्वास-णिच्-लुट्।
सान्त्वना, भरोसा। (त्रि०) कर्तरि लुट्। २ आश्वास-
कारक, तसल्ली देनेवाला।

आश्वासनीय (सं० त्रि०) सान्त्वना देनेयोग्य, जिसे
तसल्ली दी जा सके।

आश्वासयत् (सं० त्रि०) सान्त्वनाकारक, तसल्ली
देनेवाला।

आश्वासित (सं० त्रि०) सान्त्वना पाये हुआ,
जिसे तसल्ली दी जा चुके।

आश्वासिन् (सं० त्रि०) आ-श्वास-णिन्। १ प्रत्याशा-
युक्त, तसल्ली रखनेवाला। २ प्रसन्न करनेवाला,
जो खुश करता हो। (पु०) आश्वासी। (स्त्री०)
आश्वासिनी।

आश्वास्य (सं० त्रि०) आ-श्वास-णिच्-यत्। १ सान्त्व-
नीय, तसल्ली दिये जाने काबिल। (अव्य०) ल्यप्।
२ सान्त्वना देकर, तसल्लीके साथ।

आश्विक (सं० त्रि०) अश्वान् भारभूतान् हरति
वहति आवहति वा, ठक्। १ अश्वको हरण वा वहन
करनेवाला, जो घोड़ा चुराता या ले जाता हो। (पु०)
अश्वनिमित्तं संयोगः उत्पातो वा, ठक्। १ अश्वलाभ-
सूचक संयोग, घोड़ेका फायदा देखानेवाला मौका।

आश्विन (वै० त्रि०) आशू व्यासौ औषादिको विनि,
ततो अण्। १ व्यास, माम्भूर, भरा हुआ।

“प्रत आश्विनीः पवमानः।” (सूक् १८.४४)

“आश्विनीव्यासाः।” (सायण)

२ अश्विदेवता-सम्बन्धीय। “अश्विनास आश्विनाः
श्रोतः।” (वाजसनेयसं १४।१) “आश्विनाः अश्विदेवताः।” (मत्स्यपुर)

(पु०) ३ चान्द्र आश्विनमास, कारका महीना।
इस मासकी अमावस्याको हिन्दू पिटलोकके उद्देश्यसे
आह्व करते हैं। शुक्लपक्षमें देवीपूजा और विजया-
दशमी होती है, जिसकी अपेक्षा दूसरा पर्व नहीं।
नृत्य, गीत और वाद्यके उद्यमसे भारत आसो-
दित रहता है। आबाल-वृद्ध-वनिता सकलके
मनमें जो आनन्द आता है, वह कहा जा नहीं
सकता। पूर्णिमाको कांजागर लक्ष्मी जगाते हैं।
४ यज्ञोय कपाल, एक बरतन। ५ अश्विनीकुमार
देवता-सम्बन्धीय यज्ञघृतादि द्रव्य विशेष। ६ अश्व,
हथियार।

आश्विनी (सं० स्त्री०) अश्विनी अश्वकारवता नक्ष-
त्रेण युक्ता पूर्णिमा, अण्-डीप्। १ आश्विन
मासकी पूर्णिमा। २ इष्टकाविशेष। ३ चिता।

आश्विनेय (सं० पु०) अश्विन्याः घोटकाकारवत्याः
संज्ञायाः अपत्यम्, ठक्। स्त्रीभोदक्। पा ४।१।२०।
१ अश्विनीकुमारद्वय। तयोरैकैकस्यापत्यम्, अण्।
२ नकुल। ३ सहदेव। अश्विनके पाण्डुराजपत्नी
माद्रीसे उत्पादन करनेपर दोनों पुत्रोंका नाम आश्वि-
नेय पड़ा है। अश्वस्यैकाऽगमः पत्याः। ४ अश्वके
जाने योग्य पथ, जिस राहसे घोड़ा निकल सके।

आश्वीन (सं० पु०) अश्वस्यैकाऽगमः पत्याः, खज्।
अश्वस्यैकाऽगमः। पा ४।२।१६। अश्वके एक दिनमें जाने योग्य
पथ, जिस राहसे घोड़ा एक रोजमें निकल सके।

आश्वीय (सं० क्ली०) अश्वसमूह, घोड़ोंका झुण्ड।
आश्वेय (सं० पु०) अश्वी देवता अस्य, ठक्। १ अश्वी
देवता सम्बन्धीय घृतादि। २ अश्वीके अपत्य।

आषाढ़ (सं० पु०) आषाढ़ा-नक्षत्रयुक्ता पौर्णमासी
आषाढी सा अस्मिन् मासे, अण्। साऽस्मिन् पौर्णमासीति
संज्ञायाम्। पा ४।२।११। १ खनामस्थान चान्द्रमास विशेष।
कृषिशास्त्रमें ठहराया जाता, कि आषाढ़ मासमें किस
समय धान्य बोनेसे शस्यका शुभाशुभ आता है। कृषि-
पराशरके मतानुसार आषाढ़ मासकी पूर्णिमाकी
पूर्व दिक्से वायु चलनेपर अधिक वृष्टि होती है।
किन्तु उसके अग्निकोणको सरक जानेसे शस्य मारे
पड़ता है। दक्षिण दिक्से वायु वहनेपर वृष्टि नहीं

आती। फिर नैऋत कोणमें वायु जानेसे भी धान्यादि शस्यकी हानि होती है। पश्चिम दिक्से वायुचलने-पर जल पड़ता है। वायुकोणमें वायुके आनेसे झड़ लगती है। यदि उत्तरकी ओरसे वायु चलता, तो सकल पृथिवीमें धान्यादि शस्य भर जाता है। ईशान कोणमें भी वायुके आनेसे प्रचुर शस्य उपजता है। आषाढ मासकी शुद्ध नवमीको वायुवर्षण (तूफान) बढ़नेसे पानी पड़ता है और वायु बन्द रहनेसे बूंद नहीं टपकता। इस नवमीको उदयाचल निमैल रहनेसे सूर्यदेव अपना समय विधान करते हैं। ऐसे समय सूर्यका मण्डल देखते हैं। सूर्य यदि मेघसे आवृत रहता, तो तुला राशिमें अस्त होनेतक मेघ गरजता है। 'अचिन्त्य' आषाढे ।' (अमर)

आषाढी पूर्णिमा प्रयोजनमस्य, अण् । २ व्रतियों-के लेने योग्य पलाशदण्ड । 'पलाशो दण्ड आषाढी व्रते ।' (अमर) ३ मलयपर्वत । आषाढी मलयगिरी व्रतिदण्डे च मासि च ।' (हेम) आषाढक (सं० पु०) आषाढ एव, स्वार्थे कन् । १ आषाढमास । २ पलाश वीज । आषाढभव (सं० पु०) आषाढायां नक्षत्रे भवति, आषाढा-भू-अच् । १ मङ्गलग्रह, मिरीख, जल्लाद-फलक । २ आषाढमासजात और आषाढाभू शब्द भी इसी अर्थमें आता है ।

आषाढा (सं० स्त्री०) १ राशिचक्रस्थित विंशतितम नक्षत्र, पूर्वाषाढा । २ एकविंशतितम नक्षत्र, उत्तरा-षाढा । उत्तराषाढा नक्षत्रमें जन्म होनेसे मनुष्य दाता, दयावान्, सत्कर्मी और पुत्रभार्यादि सुखसम्पन्न रहता है ।

आषाढाभू (सं० पु०) आषाढायां भवतीति, आषाढा-भू-क्लिप् । मङ्गलग्रह । 'मङ्गलोऽङ्गारकः कुजः । आषाढाभूर्नवार्चिश्च ।' (हेम) (त्रि) २ आषाढानक्षत्र जात ।

आषाढि (सं० स्त्री०) आ-सह-क्तिन् ; पृषोदरादि-त्वात् षत्वम्, ओकारत्वाभावश्च । १ सम्यक् सहन, खासी बरदाश्त । २ रतिदेवी ।

आषाढिका (सं० स्त्री०) राक्षसी विशेष ।

आषाढी (सं० स्त्री०) आषाढया नक्षत्रेण युक्ता पूर्णिमा, अण् ठिङ्ढाणित्वादिना ङीप् । १ आषाढ

मासकी पूर्णिमा । आषाढीको कुछ धान्य तेलकर वायुमें स्थापन करते हैं । वायुकी आर्द्रतासे धान्यका परिमाण किञ्चित् बढ़नेपर सुवृष्टि होने और सुभिन्न पड़नेका योग समझा जाता है । २ यज्ञोप इष्टका-विशेष ।

आषाढीय (सं० त्रि०) आषाढायां भवं तस्येदं वृष्टत्वाद्वा, छ । १ आषाढानक्षत्रमें उत्पन्न । २ आषाढ-सम्बन्धीय ।

आष्टम (सं० पु०) अष्टमां भागः, ज । षडष्टनामां ज च । पा ३।१।२८ । अष्टमभाग, आठवां हिस्सा ।

आष्टमातुर (सं० त्रि०) अष्टानां मातृणां अपत्यम्; अष्टन् मातृ-अण्, मातृशब्दस्य उकारान्तादेशः । मातृ-वत्संस्थानमद्रपूर्वायाः । पा ३।१।२५ । आठ माताका लड़का ।

आष्टा (सं० स्त्री०) आ तिष्ठतेः घञ्-क षत्वम् । सुषामादित्वात् । पा ८।१।२८ । दिक्, जानिव, तर्फ ।

आष्टि (सं० पु०) अष्टानामपत्यम्, अष्टन्-इज् । बाह्यादिभाष्येति । पा ३।१।२५ । आठजनका अपत्य विशेष ।

आष्ट्र (सं० स्त्री०) अश्रुते व्याप्नोति, अश्रू व्याप्नो इन् वृद्धिश्च । अश्रु-जि-गमि-नति-इनिविश्यां वृद्धिश्च । उण् ३।१।२८ ।

आकाश, आसमान् । 'आष्ट्रमाकाशम् ।' (उज्ज्वलदत्त)

आष्ट्री (वै० स्त्री०) १ सुदीर्घवन, लम्बा जङ्गल । "इतिः पवित्री न ददात्यकादनाष्ट्राम् ।" (चक्र १०।१।२५।२) 'आष्ट्रां व्यासायामरण्यान्वा ।' (सायण) २ भोजनगृह, बावरची-खाना ।

आष्टा (सं० स्त्री०) देश, प्रान्त, मुल्क ।

आस् (सं० अव्य०) आ-अस-क्लिप्, आस्-क्लिप् वा । १ स्मरणसे, याद करके । २ आपेक्षापूर्वक, अनिच्छित । ३ समन्तात्, चारो ओर । ४ कोप, गुस्सेसे । 'आः वन-नात् प्रकोपयोः ।' (हेम) ५ पीड़ासे गर्वके साथ गरजके, दर्दसे गुरुरके साथ जोरमें चिन्ताकर । ६ खेद, अफ-सोस । (वै० पु०) मुख, मुंह, चेहरा ।

आस (सं० पु०) आस्-घञ् । १ आसन, बिछोना । २ स्थिति, हालत । ३ उपवेशन, बैठक । अस्थते चिप्यते अनेन, अस करणे घञ् । ४ धनुः, कमान् । अस सेवे भावे घञ् । ५ निक्षेप, फेंकफांक । ६ बैठनेका स्थान । ७ धलि, खाक । (हिं० स्त्री०) ८ आशा, उम्मेद ।

८ कामना, चाह। १० आधार, टेक। ११ दिक्, तर्फ।

आसंसार (सं० त्रि०) १ नित्य परिवर्तनशील, बराबर बदलते रहनेवाला। (अव्य०) २ संसारके नाश-तक, जबतक दुनिया रहे।

आसक्त (हिं० पु०) आलस्य, सुस्ती, ताकतका न रहना। आसक्तौ (हिं० वि०) अलस, सुस्त, ताकत न रहनेवाला।

आसक्त (सं० त्रि०) आ-सन्ज-क्त। १ आसङ्गयुक्त, लगा हुआ। २ अन्य विषय परित्यागकर एक ही नियममें निविष्ट, मुग्धाक, चाहनेवाला। (अव्य०) ३ अनवरत, लगातार, हमेशा। (स्त्री०) ४ सम्यक् सम्बन्ध, खासा लगाव। 'तत्परि प्रसिवासक्तौ।' (अमर)

आसक्तचित्त (सं० त्रि०) अनुरक्त, मुग्धाक दिलकी लगाये हुआ।

आसक्तचेतस् (सं० त्रि०) किसी विषयपर हृदयको लगाये हुआ, जिसका दिल किसी बातपर अटका रहे।

आसक्तमनस्, आसक्तचेतस् देखी।

आसक्ति (सं० स्त्री०) आ-सन्ज-क्तिन्। १ अन्य विषयको छोड़ एक ही विषयका अवलम्बन, लगाव। (वै० स्त्री०) २ पथस्थापन, राह डालनेका काम। (अव्य०) ३ अभिप्रायपूर्वक, मतलबसे।

आसङ्ग (सं० पु०) आ-सन्ज-घञ्। १ अभिनिवेश, लगाव। २ प्राप्त वा उपस्थित विनाशि-वस्तुका रक्षणाभिलाष, मिट जानेवाली मिली या हाजिर चीजके बचानेका इरादा। ३ भोगाभिलाष, ऐशकी खाहिश। ४ कर्तृत्वाभिमान, कारगुजारीका घमण्ड। ५ अन्य विषयको छोड़ एक ही विषयपर चित्तका अभिनिवेश, दूसरी बातको हटा एक ही बातपर दिलका जमाव। ६ सम्यक् सम्बन्ध, खासा तात्तुक्। ७ लगाने योग्य सौराष्ट्रमूर्त्तिका। (वै० पु०) ८ पथस्थापन, राह-बन्दी। (त्रि०) ९ अनवरत, सुदामी। (अव्य०) १० सदा, हमेशा, लगातार।

आसङ्गत्व (सं० स्त्री०) न सङ्गतं असङ्गतम् तस्य भावः, अन् नोत्तरपदवृद्धिश्च। सङ्गताभाव, असम्बन्ध, सुफारकत, सुदायी।

आसङ्गा (सं० स्त्री०) सौराष्ट्रमूर्त्तिका, सौराष्ट्र देशकी मट्टी।

आसङ्गिनी (सं० स्त्री०) आसङ्गः सातत्यमस्या अस्ति, वनि-डीप्। वात्स्यासमूह, चक्रवायु, गर्दबाद, बगूला, डोंडा।

आसङ्गिम (सं० पु०) आसङ्गे भवः, डिमच्। कर्ण-बन्धनाकृति विशेष, किसी किस्मकी पट्टी। कर्णबन्धन-की आकृति पन्द्रह प्रकार होती है। उसमें जिसका मध्यभाग लम्बा और एक कोणयुक्त रहता, वह आस-ङ्गिम बजता है। (संस्कृत)

आसञ्जन (सं० स्त्री०) आ-सन्ज-लुण्ट्। १ आसङ्ग, सोहबत। २ सम्यक् सम्बन्ध, खासा लगाव। ३ योजना, जोड़।

आसञ्जित (सं० त्रि०) आ-सन्ज-णिच्-क्त-इट्। संयोजित, लगा हुआ।

आसङ्—एक प्रसिद्ध जैन ग्रन्थकार। बालचन्द्रकृत विवेकमञ्जरीकी टीकामें लिखा है,—

आसङ् प्रसिद्धः जनाचार्य अभयदेव सूरिके शिष्यने भिक्षुमालवर्णश्रीय कटुकराजके औरस और अनलदेवीके गर्भसे जन्म लिया था। इन्हें लोग कविशोभाशृङ्गार कहते थे। इनके पृथिवीदेवी और जैतूनदेवी दो स्त्री रहीं। इन्होंने मेघदूतकी टीका, कितने ही जिनस्तोत्र तथा स्तुति, धर्मग्रन्थ उपदेशकुण्डली और विवेकमञ्जरी बनायी है।

आसते (हिं० क्ति० वि०) १ आहिस्ता, आहिस्ता, धीरे-धीरे, जोर न देकर। २ होकर।

आसत्ति (सं० स्त्री०) आ-सद्-क्तिन्। १ सङ्गम, मेल। २ लाभ, फायदा। 'आसत्तिः सङ्गमें लाभे।' (हेन) ३ नैकत्व सम्बन्ध, पासका मेल। ४ न्यायमतसे प्रत्यक्ष-जनक सन्निकर्ष, दो लफ्ज और उनके मानके बीचका तात्तुक्।

“वाक्यं स्याद योग्यताकाङ्क्षासत्तियुक्तः पदोचयः।” (साहित्यदर्पण)

योग्यता, आकाङ्क्षा और आसत्तियुक्तः पदसमूहको वाक्य कहते हैं। बुद्धिका विच्छेद न पड़ना ही आसत्ति है। “आसत्तिर्विच्छेदः।” (साहित्यदर्पण)

आसत्ति, योग्यता और आकाङ्क्षासे तात्पर्य समझ

पड़ता है। सन्निधान कारणको पदकी आसत्ति कहते हैं। “आसत्तिर्गोच्यताकाङ्क्षा तात्पर्यज्ञानमिष्यते।

कारणं सन्निधानं पदस्यासत्तिरुच्यते ॥” (भाषापरिच्छेद)

जिस पदार्थके साथ जिस पदार्थका अन्वय आवश्यक आता, उन्हीं दोनोंके अव्यवधानकी उपस्थिति का नाम कारण पड़ता है। इसीसे ‘देवदत्तने आग-वाले पर्वतो खाया’ इत्यादि स्थानमें शब्दबोध नहीं होता। क्योंकि पर्वत, आगवाले और खाया शब्दके साथ ‘देवदत्तने’ पदके अव्यवधानसे अन्वय कैसे लगेगा! जिस पदार्थके साथ जिस पदार्थका अन्वय लगता, उसी पदार्थका अव्यवधानकी उपस्थितिका बोध होना आसत्ति कहाता है।

आसथा (हिं०) आस्था देखो।

आसथान, आस्थान देखो।

आसदन (सं० क्लौ०) आ-सद-लुगट्। १ प्राप्ति, याफ्त। २ नेकव्य सम्बन्ध, पासका तात्तुक्। ३ स्थान, बैठक। ४ उपवेशनकार्य, बैठ जानेकी बात।

आसन (सं० क्लौ०) आस भावे लुगट्। १ स्थिति, बैठक। २ स्वस्थानमें स्थितिरूप राजाके छः प्रकार गुणके अन्तर्गत गुण-विशेष, ठहराव। उभय पक्षके सैन्यका सामर्थ्य घटनेपर आसन (अपने-अपने शिविरमें विश्रामके निमित्त स्थिति) आवश्यक आता है। ३ जयच्छु राजाका यात्रानिवर्तक व्यापार विशेष, दुश्मन्से किसी जगहका बचाव। मन्त्रीको परपक्ष और स्वस्वामिके सैन्यकी शक्ति तथा संख्या समान देख अपने राजासे आसन (एकत्रावस्थान) लेनेको बोलना चाहिये। क्योंकि पीछे सैन्यसंख्या बढ़ा सकनेसे ही जयकी सम्भावना होती है। आस्यते उपविश्यतेऽत्र, आस आधारे लुगट्। ४ उपवेशनका आधार कम्बलादि, बैठनेकी चीज़, कुरसी, मोढ़ा, कम्बल वगैरह। “सदासनं गोविन्दाश्चवात्सीत्।” (मडि) ५ देवपूजाका उपचार विशेष। “आसनं स्नातं पादमर्च्यमाचमनीयकम्।” (तन्त्र) ६ जीवकद्रुम। ७ गजस्कन्ध, हाथीका कन्धा। ८ योगाङ्ग विशेष।

घेरण्डसंहिताके मतसे जीवजन्तुकी संख्या जितनी होती, आसनकी गणना भी उतनी ही निकलती है।

पहले शिवने ८४ लक्ष आसन कहे थे। उनमें ८४ प्रकारके आसन प्रधान हैं। किन्तु मर्त्यलोकके लिये बत्तीस ही आसन शुभप्रद होते हैं।

“सिंहं पद्मं तथा भद्रं सुक्तं वज्रं स्वस्तिकम्।

सिंहं च गोमुखं वीरं धनुरासनमेव च ॥

सूतं गुप्तं तथा मानसं मत्स्येन्द्रासनमेव च।

गोरक्षं पश्चिमोत्तानमुत्कटं सङ्कटं तथा ॥

मयूरं कुक्कुटं कूर्मं तथा चोत्तानकूर्मकम्।

उत्तानमण्डूकं वृक्षं मण्डूकं गरुडं वृषम् ॥

शलभं मकरचोष्ट्रं भुजङ्गं च योगासनम्।

हस्तिं श्वासनानि * * मर्त्यलोके च सिद्धिदम् ॥”

१ सिंह, २ पद्म, ३ भद्र, ४ सुक्त, ५ वज्र, ६ स्वस्तिक, ७ सिंह, ८ गोमुख, ९ वीर, १० धनु, ११ सूत, १२ गुप्त, १३ मत्स्य, १४ मत्स्येन्द्र, १५ गोरक्ष, १६ पश्चिमोत्तान, १७ उत्कट, १८ सङ्कट, १९ मयूर, कुक्कुट, २० कूर्म, २१ उत्तानकूर्म, २२ उत्तानमण्डूक, २३ वृक्ष, २४ मण्डूक, २५ गरुड, २६ वृष, २७ शलभ, २८ मकर, २९ उष्ट्र, ३० भुजङ्ग और ३१ योग आसन होता है।

शिवसंहिताके मतमें ८४ प्रकार आसन हैं। उनमें १ सिंह, २ पद्म, ३ उग्र और ४ स्वस्तिक ही प्रधान पड़ता है। घेरण्डसंहितामें बत्तीसो आसन लगानेका विधि लिखा है,—

१ सिद्धासन।

स्थिरमति योगिगणके एक गुल्फ द्वारा योनिस्थानको दबाने, दूसरेको लिङ्गपर जमाने, छातीमें चिबुक अड़ाने और भ्रूके मध्यस्थानपर स्थिरदृष्टि लड़ानेसे सिद्धासन बनता है। इस आसनसे स्थिरमति योगिगण मोक्ष पाता है। शिवसंहिताके मतानुसार एक पैरकी एड़ी लिङ्गपर लगाने, उसीपर दूसरे पैरकी भी एड़ी जमाने और निश्चल, सरल एवं निरुद्धिग्न बन ऊर्ध्व दृष्टि उभय भ्रूके मध्यपर लड़ानेसे सिद्धासन सधता है। इस आसनको लगानेसे योगीको अभीष्ट-लाभ होता है। अन्य सकल आसनको अपेक्षा सिद्धासन ही श्रेष्ठ है।

२ पद्मासन।

वाम ऊरुपर दक्षिण तथा दक्षिण ऊरुपर वाम

चरण रख पीठकी ओर घुमाकर दक्षिण हाथसे दक्षिण एवं वाम हाथसे वाम पैरका वृद्धाङ्गल (अंगूठा) जोरसे पकड़ छातीपर ठुड्डी अड़ाने और नाककी नोकपर दृष्टि लगानेसे पद्मासन गंठता है। इससे समस्त रोग मिटता और पेटका अग्नि बढ़ता है। यह आसन वह और मुक्त भेदसे दो प्रकारका होता है। जो ऊपर कहा, वह वह है। केवल वाम ऊपर दक्षिण और दक्षिण ऊपर वाम चरण रख दोनो चरण पर दोनो हाथका तालु लगानेसे सुक्त पद्मासन पड़ता है। शिवसंहिताके मतानुसार दोनो पैर चितकर दोनो ऊपर लगाने, दोनो हाथ चितकर दक्षिण ऊपर वाम तथा वाम ऊपर दक्षिण हाथ बैठाने, नाककी नोकपर दृष्टि जमाने, दन्तमूलपर जिह्वा अड़ाने, चिबुक तथा वक्षः उठा क्रमशः साध्यमत नाकसे वायु खींच पेटमें ठहराने और पीछे धीरे-धीरे वायुको नाकसे ही निकालनेपर पद्मासन सजता है। इससे रोग हूट जाता है। फिर दोनो ऊपर लिङ्गके नीचेसे दोनो पादतल मिलानेपर भी पद्मासन लगता है। पद्मासनसे योगीका समस्त कार्य सिद्ध होता और बन्धन छूटता है।

१ भद्रासन।

अण्डकोषके नीचे दोनो पैरकी एड़ी उलटी लगाने, दोनो पैरके अंगूठे पीछेसे पकड़ जालन्धर बांधने और नाककी नोकपर दृष्टि जमानेसे भद्रासन बैठता है। इससे भी सकल रोग नष्ट होता है।

२ सुक्तासन।

मलहारपर वामपदकी एड़ी रख उसपर दक्षिण पदकी एड़ी जमाने और मत्स्या तथा धड़ बिलकुल सीधा लगानेसे सुक्तासन बनता है। इससे कार्यसिद्धि होती है।

३ वत्सासन।

दोनो जङ्घा वक्ष-जैसी बनाने और दोनो पैर मलहारकी दोनो ओर लगानेसे वत्सासन होता है। यह योगियोंको सिद्धि देता है।

४ स्तिकासन।

उभय जानु तथा उसके मध्य उभयपदका तल रख

त्रिकोणाकार आसन बांधने और सीधे तौरपर खच्छन्द बैठनेसे स्तिका सजता है। शिवसंहिताके मतानुसार जानु तथा उसके मध्य दोनो पदतल भली भांति रख समान भावमें सुखसे बैठनेपर भी यह आसन लग जाता है। स्तिकासनसे योगीका प्राणायामादि सकल कार्य सिद्ध होता है।

५ सिंहासन।

पैरकी दोनो एड़ी अण्डकोषके नीचे परस्पर विपरीत भावमें पीछली ओर ऊर्ध्वमुख निकालने, दोनो घुटने मट्टीपर रख उनपर व्यक्त भावसे मुख उठाने और जालन्धरबन्ध बना नाककी नोकपर दृष्टि जमानेसे सिंहासन लगता है। यह आसन रोगनाशन है।

६ गोमुखासन।

दोनो पैर मट्टीपर रख पीठकी दोनो ओर मिलाने और शरीर सीधा जमा गोमुख जैसा ऊपरको मुख उठानेसे गोमुखासन गंठता है।

७ वीरासन।

एक पैरको ऊपर और दूसरे पैरको पीछेकी ओर रखनेके वीरासन बनता है।

१० धनु आसन।

दोनो पैर लट-जैसे सीधे फैलाने और दोनो हाथसे पीठकी ओर दोनो पैर पकड़ समस्त शरीर धनुकी तरह टेढ़ा बनानेसे धनु आसन होता है।

११ शवासन।

सुर्देकी तरह चित हो मट्टीपर लोटनेसे ही शवासन बन जाता है। इससे अम मिटता और मन शान्त होता है। अन्य नाम मृतासन है।

१२ गुप्तासन।

दोनो घुटनोंके मध्य दोनो पैर खूब छिपा दोनो पैर ऊपर रखनेसे गुप्तासन गंठता है।

१३ मत्स्यासन।

सुक्त पद्मासन लगा दोनो कुहनीसे मत्स्या दबाने और चित हो पड़ जानेपर मत्स्यासन लगता है।

१४ पथिनोत्तानासन।

मट्टीपर दण्डाकार सीधे फैला दोनो पैर दोनो हाथसे पकड़ने और दोनो पैरपर घुटनेके नीचे

भाग मध्य मत्था रखनेसे पश्चिमोत्तानासन पड़ता है।
दोनों पैर परस्पर असंलग्न रूपसे फैला और हस्तद्वय
द्वारा अच्छीतरह पकड़ दोनों घुटनोंपर मत्था रखनेसे
भी यह आसन जम जाता है। अपर नाम उयासन है।

१५ गोरचासन।

उभय जानु और उरुके मध्य दोनों पैर चित कर
अप्रकाशित रूपसे जमाने, दोनों हाथ चितकर दोनों
गुल्फ छिपाने और कण्ठको सिकोड़ नाककी नोकपर
दृष्टि लड़ानेसे गोरचासन बनता है। इससे समस्त
कार्य सिद्ध होता है।

१६ मत्स्येन्द्रासन।

उदरको पीठकी तरह सीधा कर वाम पद झुका
दाहने घुटनेपर जमाने, उसपर दाहनी कुहनी लगाने
और दाहने हाथपर सुख रख दोनों भूके मध्यभाग
पर दृष्टि बँटानेसे मत्स्येन्द्रासन ठहरता है।

१७ उत्कटासन।

दोनों पादकी वृद्धाङ्गुली द्वारा मृत्तिका पकड़ते
हुये दोनों गुल्फ शून्यमें ठहराने और दोनों गुल्फपर
गुह्यदेश जमानेसे उत्कटासन लगता है।

१८ सङ्कासन।

वाम पद तथा वाम घुटना मट्टीपर रख और वाम
पदकी दक्षिण पदसे लपेट दोनों घुटनोंपर हाथ
बैठानेसे यह आसन जमता है।

१९ मयूरासन।

दोनों हाथके तालुसे भूमिको पकड़, दोनों कुहनी
पर नाभिका पार्श्व लगा और मुक्तपद्मासनके न्याय
पादद्वय पीछेकी ओर उठा शून्यमें दण्डाकार सम-
भावसे खड़े होनेपर मयूरासन बंधता है।

२० कुकुटासन।

किसी मध्यपर मुक्तपद्मासन लगा दोनों घुटने और
उरुके मध्य दोनों हाथ रख दोनों कुहनीपर टिकनेसे
यह आसन सिद्ध होता है।

२१ कूर्मासन।

अण्डकोषके नीचे दोनों गुल्फ परस्पर विपरीत
भावमें रख गर्दन, मत्था और देह सीधाकर बैठनेसे
कूर्मासन कहाता है।

२२ उत्तानकूर्मासन।

कुकुटासन लगा और दोनों हाथसे गर्दनकी
पिछाड़ी पकड़ कच्छपकी तरह चित हो जानेपर यह
आसन जमता है।

२३ मण्डूकासन।

पदतलहयसे पीठके पर दोनों पदकी वृद्धाङ्गुलि
परस्पर मिलाने और दोनों घुटने सम्मुख जमानेपर
मण्डूकासन लगता है।

२४ उत्तानमण्डूकासन।

मण्डूकासन लगा और दोनों कुहनीसे मत्था
पकड़ मेंड़ककी तरह चित हो पड़नेपर यह आसन
निकलता है।

२५ वृचासन।

वाम उरुपर दक्षिण पद रख पेड़की तरह भूमि-
पर सीधे तौरसे खड़े होनेपर वृचासन बंधता है।

२६ गरुडासन।

उभय जङ्घा तथा उरुद्वारा भूमि स्पर्शपूर्वक सुस्थिर
हो दोनों घुटनोंपर दोनों हाथ रखनेसे गरुडासन
गंठता है।

२७ वृषासन।

दक्षिण गुल्फपर गुह्यदेश लगा और उसकी वाम
और वामपद उलटे तौरपर रख भूमि छूनेसे वृषासन
बैठता है।

२८ शलभासन।

अधोमुख लेट तथा हस्तद्वय छातीपर रख उभय
हस्तके तालु द्वारा भूमि छूने और दोनों पद शून्यमें
आध हात ऊपर उठानेसे शलभासन सजता है।

२९ मकरासन।

अधोमुख लेट मट्टीपर छाती रख और पदद्वय फैला
दोनों हाथसे मत्था पकड़नेपर मकरासन पड़ता है।
इससे अग्नि वृद्धि होती है।

३० उष्ट्रासन।

अधोमुख लेट दोनों पैर पीठपर ले जाने तथा दोनों
हाथसे पकड़ने और उदर एवं मुख गाढ़ रूपसे
आकुञ्चित करनेपर उष्ट्रासन जमता है।

३१ भुजङ्गासन।

पैरके अंगूठेसे नाभि पर्यन्त भूमिपर रख दोनों

हाथके तालु द्वारा भूमि अंशपूर्वक सर्पके न्याय ऊपर की ओर मत्था उठानेसे भुजङ्गासन लगता है। इससे भूख बढ़ती और बीमारी घटती है। कुण्डलिनी शक्ति भी भुजङ्गासन मारनेसे प्रसन्न होती है।

३२ योगासन।

दोनों पैर चितकर घुटने तथा दोनों हाथ चितकर इस आसन पर रखने और पूरक द्वारा वायु खेंच कुम्भक करते हुये नाककी नोक देखनेसे योगासन बनता है। इससे अच्छीतरह योगसाधन होता है।

शास्त्रोक्त आसन दान करनेके मन्त्र यह है,—

“पुरुष एवेदं सर्वं यज्जुतं यच्च मायम्। उतास्तैस्सशानो यदग्ने नातिरोहति। (श्रुति) (पहले हाथमें पानी ले) “आसनमन्त्रस्य मंत्रपृष्ठश्रुतिः सुतलं इन्द्रः कुर्मो देवता आसनपरिग्रहे विनियोगः।”

(पात्रमें हाथका पानी डाल और कृताञ्जलि हो)

“शुद्धिं लया धृता लोका देवि त्वं विष्णुना धृता।

लक्ष धारय मां नित्यं पवित्रं कुरु चासनम्॥” (तन्त्र)

“शिवमन्त्रं महादिव्यं फणामणिसहस्रकम्।

कोटिस्तुतप्रतीकाश्च गृह्याणासननीचर॥” (पुराण)

आसनपणी (सं० स्त्री०) अपराजिता, किसी किस्मकी जड़ी।

आसनसोल—बङ्गाल प्रान्तके वर्धमान जिलेका ग्राम। यह अक्षा० २३° ४२' ७" और द्राघि० ८७° १' ५०" पर अवस्थित है। यहां ईष्ट-इण्डियन-रेलवेका बड़ा स्टेशन बना है। आसनसोलसे कितना ही कोयला रानीगञ्ज जाता है।

आसना (सं० स्त्री०) आस-युच् अण्-टाप्। आस-अन्तो युच्। पा ३।३।१००। १ स्थिति, उपवेशन, कयाम, रहास, बैठक। (हिं० क्रि०) २ उपस्थित रहना, होना। (पु०) ३ जीवकद्रुम, दोपहरियाका पेड़।

आसनादि (सं० पु०) आसनमादिर्गस्थ, बहुव्री०। तन्त्रोक्त पूजाङ्ग उपचार। यथा,—१ आसन, २ स्वागत, ३ पाद, ४ अर्घ्य ५ आचमनीय, ६ मधुपर्क ७ आचमन, ८ स्नान, ९ वंचन, १० आभरण, ११ गन्ध, १२ पुष्प, १३ धूप, १४ दीप, १५ नैवेद्य और १६ वन्दन।

आसनी (सं० स्त्री०) आस आधारे लुण्ट-डीप्। १ विपणि, दुकान। २ स्थिति, कयाम, रहास।

‘आसनी विपणी स्थित्याम्।’ (नेदिनो) ३ छोटा आसन, दुलीची, तिपायी वगैरह।

आसन्द (सं० पु०) आसौदत्यस्मिन्, आ-सद आधारे घञ्। १ वासुदेव, परब्रह्म। २ खट्वाभेद, किसी किस्मका पलंग। ‘आसन्दो वासुदेवे स्थात् खट्वाभेदे च बोधिति।’ (नेदिनो)

आसन्दिका (सं० स्त्री०) क्षुद्र खट्वा, पलंगड़ी।

आसन्दी (सं० स्त्री०) आसद्यतेऽस्याम्, आ-सद निपातनात् गारादित्वात् डीप्। १ लघुखट्टिका, छोटा पलंग। २ कुर्सी, आराम कुर्सी।

आसन्दीवत् (सं० त्रि०) आसन्दौ अस्यर्थं मतुप्, मस्य वत्वम्। १ आसन्दौयुक्त, जिसके पलंग रहे। (पु०) आसन्दौमान्। ग्रामविशेष। (स्त्री०) डीप्। आसन्दौवती।

आसन्न (सं० त्रि०) आ-सद-क्त। १ निकटस्थ, नजदीक, लगा हुआ। ‘समीपे निकटासन्नसन्निकृष्टसमीपवत्।’ (अमर)। (पु०) २ अस्तगत सूर्य, गुरुब होनेवाला आफ़ताब।

आसन्नकाल (सं० पु०) आ सम्यक् सीदति यत्र; आ-सद-क्त, प्रादिसमा०। १ मृत्युकाल, मौतका वक्त। (त्रि०) २ प्राप्त-समय, जिसके आखिरी वक्त आये।

आसन्नतरता (सं० स्त्री०) अधिकतर नैक्य, ज्यादा नजदीकी।

आसन्नता (सं० स्त्री०) सामीप्य, नजदीकी।

आसन्नप्रसवा (सं० स्त्री०) प्राप्त-प्रसव-वेदना, बच्चा देने या जननेवाली औरत।

आसन्नभूत (सं० पु०) वर्तमान भूतकाल, माजी-करीब, हालका गुजरा हुआ जमाना। जैसे,—मैंने कविता बनायी है, आपने लेखनी उठायी है, उसने बात चलायी है। सामान्य भूतकी क्रियाके आगे हैं, हो, है वा हैं लगानेसे आसन्नभूत बनता है।

आसन्न्य (वे० त्रि०) आस्ये भवः यत्। सुखभव, सुंहमें रहनेवाला।

आसन्न्यत् (दे० त्रि०) उपस्थित, मौजूद, हाज़िर। (पु०) आसन्न्यान्। (स्त्री०) आसन्न्यती।

आसपास (हिं० क्रि० वि०) १ समीप नजदीक, इधर-उधर, “आसपास आसपास वगैरह।” (श्रीपति)

(वि०) २ निकटस्थ, करीब, लगा हुआ। (पु०)
३ प्रतिवेश हमसाया, प्रड़ोसी। “आप गये और आसपास।”
(लोकोक्ति)

आसफ़ उद्-दौला—१ अवध-नवाब शुजा-उद्-दौलाके ज्येष्ठ पुत्र। १७७५ ई०के जनवरी मास इन्होंने अपने पिताका उत्तराधिकार पाया और फेजाबादके बदले लखनऊको अपने राज्यकी राजधानी बनाया। १७८८ ई०की सन्धिके अनुसार यह पांच लाख रुपये ईश्ट-इण्डिया कम्पनीको प्रतिवत्सर देनेपर राजी हुये थे। उपरोक्त प्रबन्धके बाद अयोध्या प्रदेश शान्त पड़ा और राज्य दिन-दिन बढ़ने लगा। कुछ समयके उपरान्त सर जोन शोर गवरनर हुये थे। उन्होंने छल-बलमें नवाबसे अधिक धन पानेकी चेष्टा की। सहज रीतिसे कुछ मिलते न देख सर जोन शोर साहबने नवाबकी विना अनुमति मन्त्री महाराज भावूलालको पकड़ लिया। भावूलाल की अर्थलाभके पथमें कण्टक समझे गये थे। आसफ़ुद्दौला रङ्ग-वेरङ्ग देख साढ़े पांच लाख रुपये नकद अधिक प्रति वर्ष देनेपर राजी हुये। कुछ दिन बाद किसी कारण वश यह विशेष रूपसे आहत किये गये थे। १७८७ ई०की २१वीं सितम्बरको आसफ़ुद्दौला मरे और अपने बनाये लखनऊके इमाम-बाड़ेमें गड़े। इन्होंने उर्दू और फारसी भाषामें एक दीवान् बनाया है। आसफ़ुद्दौला बड़े दानी रहे। अभीतक लोग कहते हैं,—“जिसे न दे मौला, उसे दे आसफ़ुद्दौला।” (लोकोक्ति)

२ नवाब असद खान्। सिवा आसफ़ुद्दौलाके इनका दूसरा उपाधि जुमुलतुलमुल्क रहा। तुर्कोंमें इनका वंश प्रसिद्ध है। असद खान्के पिता ईरान-सम्राट् शाह अब्बासके अत्याचारसे भारत भाग आये थे। जहांगीर बादशाहने उन्हें जं'चे पदपर बैठाया, जुल-फिकार खान्का उपाधि प्रदान किया और अपनी बेगम नूरजहान्के सम्बन्धीकी किसी लड़कीसे व्याह दिया। असद खान्को पहले इब्राहीम कहते थे। शाहजहान्ने शीघ्र ही ध्यान दे अपने वजीर आसफ़ खान्की लड़कीसे इनका विवाह करा दिया। १६७१ ई० अर्थात् आलमगीरके १५ वें वर्षतक यह बख्शीके

पदपर प्रतिष्ठित रहे। फिर इनका अधिक सम्मान बढ़ा था। पहले ४००० और पीछे ७००० सवार असद खान्की खिदमतमें रहने लगे। मन्त्री तथा जं'चे दरजेके अमीरका पद भी मिल गया था। बहादुर शाहके समय यह वकील-मुतलक और इनके लड़के इस्माईल अमीर-उल्-उमरा जुलफिकार उपाधिके साथ मीर बख्शी बने। किन्तु फरुखसियारके सिंहासनारूढ़ होनेपर असदखान् अपमानित हुये थे। इनकी जायदाद जब्त कर ली गयी। इस्माईल-का वध हुआ था। उस समयसे असदखान् नज़रबन्दकी तरह थोड़े भत्तेपर अपना जीवन बिताने लगे। १७१५ ई०को इनकी मृत्यु हो गयी।

आसफ़ खान्—१ अकबरके समयवाले एक सम्मान्त व्यक्ति। इनका उपाधि अबदुल मजीद रहा। १५६५ ई०को इन्होंने बुंदेलखण्डके प्रान्तभागमें नर्मदा-तीर गढकोटपर आक्रमण मारा था। उस समय रानी दुर्गावती गढकोटकी अधीश्वरी रहीं। उन्होंने सैन्य आसफ़खान्के विरुद्ध अस्त्र उठाया। किन्तु इनकी गूढ़ नीतिसे वह हार गयी थीं। आसफ़खान्ने उन्हें पकड़नेकी चेष्टा चलायी। दुर्गावतीने सम्मान बना रखनेको खड्गाघातसे अपना शिर काट डाला था। इन्हें दुर्गावतीकी अतुल सम्पत्ति मिल गयी। सम्पत्तिके अधिकांशको आत्मसात् करनेके लिये चेष्टा चली। किन्तु गुप्तकाण्ड पकड़ जानेसे यह विद्रोही बन गये थे। फिर भी चित्तोर जीतनेपर वहां इन्हें जागीर मिली।

२ मिर्जा बदी उज्जमान्के पुत्र। लोग इन्हें मिर्जा जाफ़र बेग कहते थे। काजवीन् नामक स्थानमें इन्होंने जन्म लिया। १५७७ ई०को आसफ़खान् भारत आये थे। इनके मामा अकबर बादशाहके अमात्य रहे। उन्हींके अनुरोधसे यह बख्शीगौरीके कार्यमें नियुक्त हुये थे। इनके मामाका उपाधि भी आसफ़खान् रहा। उनके मरनेपर इन्हें वही उपाधि मिल गया। पहले इन्हें अलिफ़खान् कहते थे। यह कवि और सुपण्डित रहे। सुल्ता अहमदके मरनेपर इन्होंने अकबरके आदेशसे ‘तारीख-अलफ़ौ’ नामक ऐतिहासिक ग्रन्थ लिखा। १५८८ ई०को अकबरने इन्हें प्रधान मन्त्री

बनाया था। जहांगीर बादशाहके राजत्वकाल आसफखानको महासम्मान मिला। इनका बनाया 'शरीरुन् या खुशरो' नामक एक उत्कृष्ट काव्य विद्यमान है। १६१२ ई०को आसफखान मर गये।

३ नरजहान बेगमके भाई और सुप्रसिद्ध मन्त्री एतमाद-उद्-दौलाके बेटे। नाम अबदुल हसन रहा। सिवा आसफखानके एतमाद खान, एमीनुद्दौला प्रभृति इन्हें कई उपाधि मिले थे। १६२१ ई०को एतमाद-उद्दौलाके मरनेपर बादशाह जहांगीरने इन्हें मन्त्री बनाया। इनकी कन्या अर्जुमन्द बानो बेगम या सुमताज महल शाहजहांगीरको व्याही थीं। सिवा सुमताज महलके शायस्ता खान, मिर्जा मसीह, मिर्जा हुसेन और शाहनवाजखान चार लड़के रहे। १६४१ ई०की १०वीं नवम्बरको आसफखान मरे और लाहौर नगरके सम्मुख रावी किनारे गड़े।

४ आसफखान जाफर बेगके चचे और आका मुल्तादके बेटे। अकबर बादशाहके समय यह बख्शी रहे। १५७३ ई०को गुजरातसे जीतकर आनेपर आसफने अब्बास खान उपाधि पाया था। १५८१ ई०को गुजरातमें इन्होंने शरीर छोड़ा।

आसबन्द (हिं० पु०) सूत्रविशेष, एक धागा। पटवे ठूनमें बांध इसके सहारे आभूषण गूँथते हैं।

आसमान् (फ़ा० पु०) १ आकाश, फलक। २ वैकुण्ठ, विद्भिष्ट। "लंगड़ी कही आसमान् पे चोसला।" (लोकोक्ति)

आसमान्की तारे तोड़ना, आसमानमें थेंगलो लगाना देखो।

आसमान्-खोँचा (हिं० पु०) उत्कृष्ट पदार्थविशेष, कीयी बहुत जंची चीज़। लम्बे लम्गे या धरहर, जंचे आदमी और बहुत बड़ी नैवाली इक्केको आसमान्-खोँचा कहते हैं।

आसमान् ताकना (हिं० क्रि०) आकाशकी ओर देखना, फलकपर निगाह लड़ाना।

आसमान् पर चढ़ाना (हिं० क्रि०) १ उत्कर्ष देना, बढ़ाना। २ व्याजस्तुति करना, चापलूसी देखाना, फुसलाना।

आसमानपर थूकना (हिं० क्रि०) अनुचित कार्य करना, बेजा काम चलाना।

"आसमान्का थूका मुँहपर आवे।" (लोकोक्ति)

आसमान् पे कदम रखना (हिं० क्रि०) अभिमान देखाना, अपनी बड़ाईका डङ्गा बजाना।

आसमान् पे खँचना, आसमान् पे कदम रखना देखो।

आसमान् पे दिमाग़ होना (हिं० क्रि०) अभिमानमें चूर रखना, मनमानी करना।

"नये नवाब आसमान् पे दिमाग़।" (लोकोक्ति)

आसमान्में छेद होना (हिं० क्रि०) अतिवृष्टि पड़ना, शदीद बारिश आना, खूब जोरसे बरसना।

आसमान्में थेंगली लगाना (हिं० क्रि०) अपने कार्यको अति निपुणतासे करना, बादल फाड़ना।

आसमान्से गिरना (हिं० क्रि०) १ आकाशसे आना, फलकसे टूट पड़ना। २ विना अम प्राप्त होना, अचानक पा जाना। ३ तुच्छ समझना, कद्र न करना।

आसमान्से टकर खाना (हिं० क्रि०) अत्यन्त विशाल होना, तुलन्दीमें सबकुत्त ले जाना, आकाशको चूमना।

आसमान्से बातें करना, आसमान्से टकर खाना देखो।

आसमानी (फ़ा० वि०) १ आकाशीय, फलकी।

२ आकाशवर्ण, नीलगूँ, आबी। ३ आकस्मिक, नागहं, अचानक। (स्त्री०) ४ छनी हुयी भांग या ताड़ी।

५ कार्पासभेद, मिश्रकी एक कपास।

आसमानी गूज़ब (फ़ा० पु०) देवी अनर्थ, फलकसे टूटी हुयी बला।

आसमानी गोला, आसमानी गूज़ब देखो।

आसमानी तौर (फ़ा० पु०) १ व्यर्थ कार्य, बेफ़ायदा काम। २ आपद्, नागहं गूज़ब।

आसमानी थपेड़ा, आसमानी गूज़ब देखो।

आसमानी पिलाना (हिं० क्रि०) ताड़ी या छनी भांग पिलाकर मत्त बनाना, सब्जीके नशेसे चूर कर देना।

आसमानी फरमानी (फ़ा० स्त्री०) १ अतिवृष्टि अथवा अनावृष्टिके कारण आयी हुयी आपद्, जो मुसीबत ज्यादा बारिश होने या पानी न बरसनेसे पड़ी हो। २ लेखप्रमाण और पट्टका एक पद, दस्तावेज़ और पट्टेमें लिखा जानेवाला एक लफ्ज़। पहले मौसम बिगड़ने और सरकारके नाजायज़ तौरपर मालगुजारी

वसूल करनेसे जमीन्दारोंको जो नुकसान उठाना पड़ता, उसे काश्तकारोंसे वसूल करनेके लिये यह लफ्ज दस्तावेजों और पट्टोंमें लिखा जाता था।
३ भूमि करके अंश-जैसा निरूपित अर्थदण्ड तथा अपहार, तख्तीना किया हुआ जुर्माना और जब्ती।
यह गढ़वालमें चलती है।

आसमुद्र, आसमुद्रात् देखो।

आसमुद्रात् (सं० अव्य०) समुद्र पर्यन्त, बहरके फैलाव तक।

आसम्बाध (सं० त्रि०) आ समन्तात् सम्बाधा अत्र।
निरुद्ध, घिरा हुआ।

आसय (हिं०) आशय देखो।

आसया (दै० अव्य०) सङ्गतिमें, निकट, उपस्थित होकर, साथ-साथ, मिल-जुलके।

आसर (हिं० पु०) १ आशर, राक्षस, आदमखोर।
२ दशमुद्रा, अशर, दश रुपये। उक्त अर्थमें प्रायः कसाई इस शब्दको व्यवहार करते हैं।

आसरना (हिं० क्ति०) आश्रय ग्रहण करना, सहारा ढकड़ना।

आसरा (हिं० क्ति०) १ विश्वास, एतबार, भरोसा।
२ आशा, उम्मेद। “अपने पास पैसा तो पराया आसरा कैसा।” (लोकोक्ति)
३ रक्षा, हिफाजत। ४ शरण, पनाह।
५ आश्रयदाता, सहारा देनेवाला। ६ साहाय्य, मदद।
७ काष्ठका हरित् तथा मृदुस्तर, हीर। यह संस्कृतके आश्रय शब्दका अपभ्रंश है।

आसरा तकना (हिं० क्ति०) प्रतीक्षा करना, राह देखना। “सिज फूलोंकी मैं विद्या रखूँ।”

जोर पड़ी उसका आसरा तख्ती” (विरह)

आसव (सं० पु०) आसूयते, आ-सू कर्मणि अण्।
१ अभिषव, अर्ककशी, चुवाव। ‘आसवोऽभिषवः।’ (इन)
२ अभिषवणोय मद्य, चीनी या गुड़की ताजी शराब।

‘नैरेयमासवः सीधुर्मंदको जगलः समौ।’ (चमर)

‘यच्चरचःपिशत्तात्र मयं नांसं सुरासवम्।’

तद्भ्रातृयोन नात्तव्यं देवानामन्नता इति ॥” (मनु ११।२६)

३ अरिष्ट, जीशांदा, औटी। अरिष्ट देखो। (वै०)

४ उत्तेजन, जोश।

आसवद्द (सं० पु०) १ असनवृक्ष, असनेका पेड़।
२ तालवृक्ष।

आसवद्दुम, आसवद्द देखो।

आसवी (सं० त्रि०) आसवपान करनेवाला, शराब-खोर।

आसा (सं० स्त्री०) आ-सो-अङ्। १ अन्तिका, निकट, कु.बं, नजदीकी। (हिं०) २ आशा, उम्मेद।
३ असा, सौटा, डण्डा।

आसा अहीर—दाक्षिणात्यके एक ग्वाला-सरदार। सन् ई०के १४वें शताब्द इन्होंने दाक्षिणात्यमें असीरगढ़ नामक एक दुर्ग बनाया था। प्रायः दो सहस्र अनुचर आसाके साथ रहे। असीरगढ़ भारतीयोंके हाथका बना सबसे अच्छा और मजबूत किला है। पश्चुरक्षाके लिये पर्वत सुदृढ भित्तिसे वेष्टित है। खान्देशके मुसलमान-सरदार मालिक नसीरने इन्हें धोकेसे मार असीरगढ़को अधिकार किया और किलेका बाकी काम तमान बनाया। दो शताब्द बाद अकबरने असीरगढ़ और कुल नौमारको जोत लिया था। १८१७ ई०को यह स्थान अंगरेजोंके हाथ लगा।

आसाढ़ (हिं०) आषाढ़ देखो।

आसात् (सं० अव्य०) निकट, समीप, नजदीक, पास।

आसाद (वै० पु०) पीठोपधान, मसनद, गद्दी।

आसादन (सं० स्त्री०) आ-सद्-णिच्-लुगट्। १ सन्निधापन, स्थापन, रखायी। २ आसनता-सम्पादन, मिल-मिलाप। ३ मर्दन, हमला। ४ प्राप्ति, हासिल।
५ पूरणकरण, कमालियत।

आसादयितव्य (सं० त्रि०) १ आक्रमण किये जाने योग्य, जिसपे हमला पड़े।

आसादित (सं० त्रि०) आ-सद्-णिच्-लुगट्। १ निकटोक्त, नजदीक लाया हुआ। २ प्राप्त, हासिल किया हुआ। ३ आयोजित, लगाया हुआ। ४ सन्निधापित, रखा हुआ। ५ सम्पादित, पूरे तौरपर किया हुआ।
६ कामकेलि आसक्त, जो ऐशो-इश्वरतमें डूबा हो।

‘लब्धं प्राप्तं विन्नं भावितमासादितव्यं सूतच।’ (चमर)

आसाद्य (सं० त्रि०) आ-सद्-णिच्-यत्। १ प्राप्य,

हासिल होने काबिल। (अव्य०) ल्यप्। २ प्राप्त करके, पाकर। “समुद्रमासाय भवत्वपेया।” (रघु)

आसाधन (सं० लौ०) प्राप्ति, पूर्णता, हासिल, कमाल।

आसान (फा० वि०) १ सरल, सीधा। “नियत सावित मञ्जिल आसान।” (लोकोक्ति) २ अबाधित, अप्रतिबद्ध, बेमुवाखजा, बेमुतालबा, जो रोकान गया हो।

आसान सरना (हिं० क्रि०) १ सरल बनाना, चिकनाना, पुल बांध देना। २ स्वतन्त्रता देना, आजादी बख्शना। ३ छोड़ाना, बोझ उतारना।

आसान होना (हिं० क्रि०) सरल लगना, सुशकल न देख पड़ना। २ बहना, धारके साथ तैरना।

आसानी (फा० स्त्री०) १ सरलता, सुशकल न पड़नेकी हालत, बच्चोंका खेल। २ साध्यता, उप-पाद्यता, उ० कूपिजीरी, इमकान्। ३ स्वतन्त्रता, आजादी, चिकनापन। ४ सुख, आराम, चैन।

आसापाला (हिं० पु०) वृक्षविशेष, एक दरखत।
आसाम—भारतवर्षका एक सीमान्त प्रदेश। यह बङ्गालसे उत्तर-पूर्व, अक्षा० २४° ०' एवं २७° १७' उ० और द्रावि० ८८° ४५' तथा ९३° ५' पू० के बीच अव-स्थित है। क्षेत्रफल कोई ४६३४१ वर्गमील लगता है। खासी पहाड़के शिलांग नगरमें चीफ-कमिशनर रहते हैं। यहांके अधिवासी आहोम कहते हैं। उन्हींके नामसे इस प्रान्तका नाम आसाम पड़ा है।

आसामसे उत्तर हिमालय, उत्तरपूर्व मिशमी पहाड़, पूर्व ब्रह्मदेशका पर्वत, दक्षिण लुशाई पहाड़ तथा बङ्गालका टिपरा जिला और पश्चिम मैमनसिंह, रङ्गपुर, कोचविहारराज्य और जलपाईगुड़ी जिला है।

मुख्य आसाम अथवा ब्रह्मपुत्रकी अधित्यका ४५० मील लम्बी और ५० मील चौड़ी समतलभूमि है। सिवा पश्चिमके बाकी तीनो ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़ खड़े हैं। ब्रह्मपुत्रनद पूर्वसे पश्चिमको बहता है। जापसी पर्वतकी शिखा १२००० फीट ऊँची है।

आसामके पर्वतोंमें कोयला, लोहा और चूनेका कड़ड़ा खूब होता है। पहले पहल १८८४ ई०को रेल चली थी। माकूममें मट्टीका तेल भी निकलता है।

कितनी ही पहाड़ी नदियोंमें सोना प्राया जाता है।

वन्य पशुओंमें हाथी, गैंडा, चीता, बवेरा, भालू, हरिण, भैंसा और गो प्रधान है। आसामकी भैंस बहुत अच्छी होती है। हाथी पकड़नेका ठेका सर-कार उठाती है।

आसाममें आहोम, चूटिया, नागा, खासी, गारो, मिकिर, कछाड़ी, लालुङ्ग, राभा, चाजोङ्ग, खामती, मीरी, डफला, अबर, मणिपुरी, मदही और कुकी लोग रहते हैं। तत्तत् शब्दमें विवरण देखो। वर्तमान आसाम भाषा मैथिल और बंगलासे बनी है। पहाड़ियोंमें रहनेवाली जातियां अपनी ही बोली बोलती और चाल चलती हैं। विभिन्न जातियोंके साथ विवाह-प्रथा प्रचलित है।

सबसे पहले ब्रह्मपुत्र अधित्यकापर ब्राह्मणों, क्षत्रियों तथा कायस्थोंका वास हुआ। ई०के १३ वें और १४वें शताब्द कमतापुरके राजाओंने गौड़से ब्राह्मणों और कायस्थोंके ले जाकर कामरूपमें बसाया था। कमतापुर तथा कोचविहार देखो। १६वें शताब्दके प्रारम्भकाल कोच-नृपति विश्वसिंह और तत्पुत्र नरनारायण द्वारा प्रतिष्ठित ब्राह्मण कामरूपी कहते हैं। ऊपरी आसामके ब्राह्मणादि उच्चजाति विष्णुपूजक और महापुरुष शङ्करदेव, दामोदरदेव तथा हरिदेव प्रवर्तित सम्प्रदायभुक्त हैं। शङ्करदेव और दामोदरदेव देखो।

१७वें शताब्द आहोम भी गोविन्द ठाकुरको पूजते थे। निम्नप्रान्तमें शिवपूजक तान्त्रिक रहते, जो अपनेको नदीयके ब्राह्मणोंका वंशज कहते हैं। १७वें शताब्दके समय आहोम-नृपति रुद्रसिंहने उन्हें लाकर बसाया था। सुरमा अधित्यका और सिलहटमें मुसलमान बहुत हैं।

आसाम-प्रान्त कृषिप्रधान स्थान है, वाणिज्यव्यव-सायका अधिक प्रसार नहीं। मारवाड़ी यहांका माल बाहर भेजते और बाहरका माल यहां मंगते हैं।

आसाममें चावल और सरिसों अधिक उपजता है। सिलहट तथा ग्वालपाड़ेमें सन और पहाड़ी प्रान्तमें रूयीकी खेती होती है। खासी एवं जयन्तिया पहाड़ी-के नीचे भालू, नारङ्गी और तेजपात लगाते हैं। युरो-पीय वायका काम करते हैं। १८२३ ई०को मिथर

राबर्ट ब्रूसने-ऊपरी आसामके वनमें चायके पेड़ पाये थे। अन्तको लाट अकलेण्डने चीनसे कृषकादि बोला चायकी खेती कराना आरम्भ किया। १८३८ ई०की पहले पहल लखीमपुरमें चायका बाग लगा था। चाय देखो।

गौहाटीसे शिलंग और ब्रह्मपुत्रके दक्षिण किनारे किनारे पक्की सड़क गयी है। १८७२ ई०को शिलंगसे चेरापूँजीको नयी सड़क निकली। १८८३ ई०को जोरहाट और कोकिलामुखके बीच ट्रामवे चली थी। १८८४ ई०को डिबरूगढ़ और दमदमेके बीच रेलवे निकली। इसकी शाखा माकुमको गयी थी। किन्तु आसामका प्रधान मार्ग ब्रह्मपुत्रनद ही है। प्रति सप्ताह कलकत्तेसे डिबरूगढ़ जहाज जाता-आता है।

आसामका जलवायु आर्द्र है। आधे मयी माससे अक्तोबर तक वृष्टि होती है। जाड़ेमें दिसम्बर और जनवरी मास सवेरे कुहरा बहुत पड़ता है। वायु प्रायः उत्तर-पूर्वसे चलता है। भूकम्प अधिक आता है। चेरापूँजीमें जितनी वृष्टि होती, उतनी पृथिवी-पर दूसरे स्थान नहीं पड़ती। स्वास्थ्यकी दशा असन्तोषजनक है। ब्रह्मपुत्र अधित्यकामें मलेरियेका प्रकोप रहता है।

१८७४ ई०को आसाम बङ्गालसे निकाल चीफ कमिशनरके अधीन नया प्रान्त बनाया गया था। ब्रह्मपुत्र एवं सुरमा अधित्यका और मध्यस्थ पार्वत्य प्रान्त तीन प्रधान विभाग हैं। बीचमें पूर्ववङ्ग और आसाम बङ्गालसे पृथक् और एक छोटे लाटके अधीन ही गया था। किन्तु दो वर्ष बाद फिर पूर्ववङ्ग पहलेकी तरह बङ्गालमें मिला और सिलहट शहरके साथ आसाम चीफ कमिशनरके अधीन पड़ा। प्राचीन काल कामरूपमें भगदत्तवंश, वाणवंश तथा अपरापर हिन्दुओंका राज्य रहा। प्रागज्योतिषपुर वा गौहाटी राजधानी थी। योगिनीतन्त्रमें इसका विशेष विवरण लिखा है। कोचविहार, कालरूप तथा प्रागज्योतिष शब्दमें विस्तृत विवरण द्रष्टव्य है। गौहाटीसे तेजपुरतक प्रासादों और मन्दिरोंका जो ध्वंसावशेष देखनेमें आता, वही प्राचीन हिन्दू राज्यकी विशा-

लताका सुदृढ़ प्रमाण है। ई०के १२वें शताब्द तक भगदत्तवंशीय वर्मराजका प्रताप अक्षुण्ण था। ई०के १५वें शताब्दमें मेचवंशका अभ्युदय हुआ। कोचविहार तथा बिजनी और सिदलीके राजा मेचवंशज मालूम पड़ते हैं। कोचविहार शब्दमें इतिहास देखो।

पौछे पूर्वसे आहोम और पश्चिमसे मुसलमान कामरूपपर झपटे थे। आहोम सम्पूर्ण अधित्यकाके बाहर भीतर अपना राज्य प्रतिष्ठित करनेमें सफल हुये। सम्भवतः वह ब्रह्मदेशके मोमियट स्थानसे ई०के ७म शतकमें आये थे। ई०के १३वें शताब्द पहले पहल आहोम अधित्यकामें अधिकार जमाया। यह बड़े वीर रहे। १२२८ ई०को उन्होंने आसाम आक्रमण किया। १४८७ ई०को चुनहुमफा नृपतिने सिंहासन पर बैठ हिन्दूधर्मकी दीक्षा ली। उनके बाद चुचेङ्गफाने १६११से-१६४८ ई०तक राज्य किया। उन्होंने शिवसागरमें शिवमन्दिर बनवा हिन्दुधर्मको अपने राज्यमें फैला दिया था। १६५० ई०को राजा चुतुमलेके सिंहासनारुढ़ होनेपर औरङ्गजेबके चतुर सेनापति मीर-जुमलेने आसामको आक्रमण किया। किन्तु आहोम मुसलमानोंको मारते-मारते ग्वालपाड़े तक खदेर लाये थे। आहोम राजावोंमें सबसे बड़े रुद्रसिंह रहे, जो १६८५ ई०को गद्दीपर बैठे। दरङ्गके मेच-नृपतियों और मोवामारियोंने जब गौरीनाथ सिंहको गद्दीसे उतारा, तब १७८२ ई०को कुछ सिपाहियोंके साथ कप्तान वेल्शका यहां आगमन हुआ। तब ब्रह्मदेशवासी कठोर शासन करते थे। अन्तको १७८४ ई०के समय अंगरेजों तथा ब्रह्मदेशवासियोंके बीच युद्ध चला और १८२६ ई०की २४वीं फरवरीको यन्दबूकी सन्धिके अनुसार आसाम अंगरेजोंके हाथ पड़ा। निम्न विभागमें अंगरेजी प्रबन्ध किया, किन्तु अधित्यकाका ऊपरी अंश १८३२ ई०में पुरन्दर सिंहको सौंपा गया था। आहोम शब्दमें आहोमराजवंशका परिचय द्रष्टव्य है। पुरन्दर सिंहके राज्यका प्रबन्ध ठीक तौरसे कर न सकनेपर १८३८ ई०को वह अंश भी अंगरेजोंने अपने राज्यमें मिला लिया। १८६५ ई०को हो ईष्ट इण्डिया कम्पनीने बङ्गालके साथ सिलहट और ग्वालपाड़ा

दीवानो बख्शिशके सुताबिक पाया था। १८३० ई०-को राजा गोविन्दचन्द्रके मरने और कोई उत्तराधिकारी न रहनेसे कछाड़का समतल भाग भी अंगरेजोंके हाथ लगा। १८५४ ई०को तुलाराम सेनापतिके देश-पर अंगरेजी अधिकार जमा। १८६६ ई०को समा-गुटिङ्ग नागा पर्वतका हिंड क्वार्टर बनाया गया था। १८७९-८० ई०को सामरिक अभियान भेजने और कादिमा अधिकार करनेपर अङ्गामी प्रान्तके मध्य हिंड क्वार्टर प्रतिष्ठित किया और उत्तर कछाड़ तथा नवगाम्पर दुर्दान्त लोगोंका आक्रमण करना रोका गया। १८८२ ई०को सीमा निर्धारित कर अंगरेजोंने सदाके लिये नागा पर्वत अपने राज्यमें मिलाया।

आसामी (हिं० वि०) १ आसामदेशसे सम्बन्ध रखने-वाला, जो आसामसे तात्तुक रखता हो। (पु०) २ आसामका अधिवासी, आसाममें रहनेवाला शख्स। (स्त्री०) ३ आसाम प्रान्तकी भाषा, आसामकी बोली। आसाम तथा असामी देखो।

आसायश (फ्रा० स्त्री०) सुख, आराम, सुबीता।
आसार (सं० पु०) आ-सृ-घञ्। १ धारासम्पात, गहरी बारिश। 'धारास्यत आसारः।' (अमर) २ प्रसरण, दौड़। ३ सैन्यकी सकल दिक् व्याप्ति, फौजका चारो ओर जमाव। आश्रित्यतेऽनेन, करणे घञ्। ४ सुहृद्-वल, दोस्तकी फौज। ५ हादश राजमण्डलके मध्यस्थ राजविशेष। 'आसारो वेगवधे' सुहृद्वलप्रसारयोः। (हेन) हादशमण्डलमें युद्धके समय आत्ममण्डल, रिपुमण्डल, सुहृदमण्डल, शत्रु मित्रमण्डल, मित्रमित्रमण्डल तथा मित्ररिपुमण्डल आगे और पार्श्वग्राह, आक्रन्द, आसार, आक्रन्दासार, निग्रहशक्तमध्यस्थ, अनुग्रहशक्त-मध्यस्थ एवं निग्रहानुग्रहशक्त उदासीन पौछे रहता है। ६ षड्विंशति रगण द्वारा रचित दण्डक छन्दो-विशेष। आप देखो। ७ भोजन, खाना, रसद। (घ० पु०) ८ चिह्न, निशान्। ९ आयाम, चौड़ायी।

आसारण (सं० पु०) वृक्षभेद, एक दरखूत।

आसारित (सं० स्त्री०) वैदिक गान विशेष।

आसाव (वै० पु०) स्त्रीता, तारीफ़ करनेवाला शख्स। (लक्षण)

आसावरी (हिं० स्त्री०) १ कपोत विशेष, किसी किस्मकी कबूतरी। २ रागिणी विशेष। आसावरी देखो। ३ वस्त्रविशेष, किसी किस्मका रेशमी कपड़ा। इसपर चांदीके तारका काम रहता है।

आसाव्य (वै० त्रि०) अभिषवणीय, दबाने काबिल।
आसिक (सं० पु०) असिः प्रहरणमस्य, ठक्। १ खड्ग द्वारा युद्धकारक, बरकन्दाज, तलवारया। (हिं० पु०) २ आशिक, चाहनेवाला।

आसिका (सं० स्त्री०) पर्यायिण आसनम्, आस पर्याये खुच्-टाप्। पर्यायार्थोत्पत्तिषु खुच्। पा ३।३।११। १ पर्याय-क्रमका उपवेशन, बैठनेकी बारो। २ उपवेशन, बैठक।
आसिक्त (सं० त्रि०) ईषत् सम्यग्वा सिक्तम्, आ-सिच्-क्त। १ ईषदसिक्त, कुह-कुह सींचा हुवा। २ सम्यक् सिक्त, अच्छीतरह सींचा हुवा।

आसिख (हिं०) आशिख् देखो।

आसिच् (वै० स्त्री०) १ आहुति, होम। २ पात्र, बरतन। ३ स्नानविशेष।

आसित (सं० स्त्री०) आस् भावे क्त। तौऽधिकरणे च भौत्यगतिप्रत्यवसानार्थेऽभ्यः। पा ३।४।७६। १ उपवेशन, बैठक। आधारि क्त। २ उपवेशनका आधार, बैठनेकी जगह। (पु० स्त्री०) असितस्य मुनेरपत्यम्, शिवादिगणस्या-कतिगणत्वात् अण्। ३ असित मुनिका पुत्र वा कन्यारूप अपत्य। असित मुनिके अपत्य शाण्डिल्यगोत्रका प्रवर रखते हैं।

आसिद्ध (सं० त्रि०) आ-सिध्-क्त। राजाज्ञासे वादी द्वारा वह किया हुवा, जिसे सरकारी हुकमसे सुद्दयी कैद कराये। २ सम्पन्न, पूरा किया हुवा।

आसिधार (सं० स्त्री०) असिधारा इवास्त्यत्र, अण्। कामुक भाव परित्याग-पूर्वक आचरण, जो बरताव इशक मजाजीसे अलग हो। यदि युवा कामुकभाव छोड़ युवतीके साथ सुन्दर भर्ताकी तरह व्यवहार करता, तो वह आचरण आसिधारव्रत कहाता है।

आसिन (हिं० पु०) आश्विनमास, कारका महीना।

आसिनासि (सं० पु०) असिः खड्गः स इव तीक्ष्णाया आसायस्य सीऽसि नासः मुनिभेदस्यपत्यम्, इञ्।

असिनास मुनिके अपत्य । असिनास मुनिके पौत्रको
आसिनासायन कहते हैं ।

आसीन (सं० त्रि०) आस-शानच् ईत्वम् । ईदासः ।

पा ७१८३ । शानच् । उपविष्ट, बैठा हुआ ।

आसीन-प्रचलायिन (सं० स्त्री०) आसीनेन उपविष्टे-
नैव प्रचलवत् आचरितम्, आसीन-प्रचल-क्वच् भावे
क्त । निद्राके आवेशसे उपवेशनकर दोलन, नींदमें बैठ
झोका लेनेका काम ।

आसीस (हिं० पु०) १ मसनद, तकिया, उसीसे
रखनेकी चीज । २ आशीर्वाद ।

आसु (हिं० सर्व०) १ इसका, इससे सम्बन्ध रखने-
वाला । (क्रि० वि०) २ शीघ्र, जल्द ।

आसुग (हिं०) आशुग देखो ।

आसुत् (सं० त्रि०) आ-सु-क्लिप्-तुक् । कृता-
भिषव, कृतज्ञान, नहाया-धोया ।

आसुत (सं० स्त्री०) चिरकालस्थित तथा कन्दादि-
युक्त अन्त, बहुत दिनकी रखी और जड़ी वगैरहसे
मिली हुयी खटायी ।

आसुति (वै० स्त्री०) आ-सु-क्तिन् । १ सोमलतादि
निष्पीडन । २ अभिषव, मद्यनिष्पादन, भभकेसे
शराबका चुवाना । “हेयमासुतिश्चाहमादाय ।” (ऋक् ८१।२६)
३ चौरादि पिय । “शो नाविन्द्रचुध्यहो वय आसुतिं
दाः ।” (ऋक् १।१०४।१) ‘आसुतिं पयं चौरादिकम् ।’
(सायण) आ-सु प्रसवे क्लिप् । ४ प्रसव, बच्चेका पैदा
करना ।

आसुतिमत् (सं० त्रि०) आसुतेः सन्निष्कृष्टदेशादिः,
चतुर्थ्यां मतुप् । मज्जादिभ्यश्च । पा ४।१।८६ । १ आसु-
तिके निकटस्थ । २ आसुतिविशिष्ट ।

आसुतीय (सं० त्रि०) आसुत् तस्येदम्, छ । गहादिभ्यश्च ।
पा ४।१।१३८ । स्नानकारी वा मद्यकारी सम्बन्धीय, नहाने
या शराब बनानेवालेके मुताल्लिक ।

आसुतीवल (सं० पु०) आसुतिरस्तस्य, वलच् दीर्घः ।
रजः कृष्णासुतिपरिषदी वलच् । पा ३।२।११२ । १ शौण्डिक, कल-
वार, शराब बनानेवाला शख्स । २ सोमलताका रस
निकाल सकनेवाला यांत्रिक ।

आसुतोख (हिं०) आसुतोष देखो ।

आसुर (सं० त्रि०) असुरस्येदम्, अण् । १ असुर-
सम्बन्धी, शैतानके मुताल्लिक ।

“कुलालचक्रनिष्पन्नमासुरं सण्मयं अतम् ।

तदेव हस्तचटितं स्थाव्यादि वैदिकं भवेत् ।” (काव्यायन)

(पु०) २ असुरके न्याय आचारयुक्त व्यक्ति, जो
शख्स शैतानकी चाल पकड़े हो । आसुर शीघ्र,
आचार तथा सत्यको प्रतिपालन नहीं करता और
कामचारी, दान्धिक एवं मदयुक्त होता है । यह
ईश्वरको नहीं मानता । मनमें सोचा करता है,—
मैं ही ईश्वर, योगी, सिद्ध, सुखी, बलवान्, धनाढ्य
और अभिजनशाली हूँ ; मेरी बराबर अन्य नहीं ।
३ असुरके न्याय कर्तव्य विवाह विशेष ।

“ब्राह्मी देवस्तथे वार्षः प्राजापत्यस्तथासुरः ।

गान्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाधमोऽधमः ॥” (मनु ३।२१)

मनुने आठ प्रकारका विवाह वर्णन किया है ।
कन्या और उसके पित्रादिको यथाशक्ति शुल्क देनेसे
वरके इच्छानुसार होनेवाला विवाह आसुर कहाता
है । ४ कर्मविघ्नकारी असुरहन्ता । (सायण) स्तार्थे
अण् । ५ असुर । (स्त्री०) ६ विड्त्वण । ७ समुद्रत्वण ।
आसुरस्व (सं० स्त्री०) नञ् इ-तत् । यजनहीन व्यक्तिका
धन, शैतानको दौलत । “अपज्वनानु यदद्रव्यमासुरस्व
तदुच्यते ।” (मनु)

आसुरायण (सं० पु०) आसुरेऽपत्यं युवा, फक् ।
गोत्रादयन्त्रियाम् । पा ४।१।२४ । असुरका युवा गोत्रापत्य ।
(स्त्री०) डीप् । आसुरायणी ।

आसुरि (सं० पु०) अस्यति क्षिपति पापानि तत्त्व-
ज्ञानेन, असु क्षिपणे उरण् ; असुरः कपिलस्तस्य छात्रः,
इज् न तुक् । असेवरण् । उण् १।४१ । कपिल मुनिके छात्र,
सांख्यमतप्रवर्तक जनैक मुनि ।

आसुरिक (सं० त्रि०) असुर-ठञ् । असुर-सम्बन्धीय,
शैतानके मुताल्लिक ।

आसुरिवासिन् (सं० पु०) आसुरौ आसुर मुनिसमीपे
वसति णिनि । आसुरि मुनिके समीप रहनेवाले शिष्य
प्रश्नोपुत्र । आसुरिवासी यजुर्वेदी एक ऋषि रहे ।

आसुरी (सं० स्त्री०) आसुर-डोप् । १ राजसर्वप, सफेद
सरसों । ‘वरः सुषामिजननो राजिका कृषिकासुरी ।’ (अमर)

२ आयामकाञ्चिक, किसी किस्मकी कांजी। ३ रक्त-
रुषप, राई। ४ छेदभेदात्मक चिकित्साविशेष,
चौर-फाड़। चिकित्सा आसुरी, मानुषी और दैवी
त्रिविध होती है।

आसुरीय (सं० पु०) असुरेण प्रोक्तम्, असुर-छ। १ असुर-
कथित कल्पशास्त्र। (त्रि०) २ आसुरिसम्बन्धीय।
आसूत्रित (सं० त्रि०) प्रतिबद्ध, बंधा हुआ, जो हार
डाले हो।

आसूदगी (फा० स्त्री०) १ शान्ति, अमन, खमोशी।
२ सुख, चैन, खुशी। ३ दृष्टि, छकाइट।

आसूदा (फा० वि०) १ सुखी, स्वतन्त्र, खुश।
२ दृष्ट, छका हुआ। (क्रि० वि०) ३ सुखपूर्वक,
आरामसे, छककर।

आसेक (सं० पु०) आ-सिच-घञ्। १ जलादि द्वारा
वृक्षादिका अल्प सेचन, हलकी सिंचायी। २ सम्यक्
सेचन, खासी सींच।

आसेक्य (सं० पु०) आसेकमर्हति, आ-सेक-यत्,
आ-सिच्-ण्वद्वा। नपुंसक विशेष, किसी किस्मका
नामर्द। पिताके स्वल्प वीर्यसे पुरुष आसेक्य होता,
किन्तु सुशुक्र पीनेसे असंशय ध्वजोन्नति पाता है। (संस्कृत)

आसेचन (सं० त्रि०) न सिच्यते दृष्यति मनोऽस्मात्,
अपादाने लुपट् स्वार्थे अण्। १ प्रिय, दिलफूरेब,
प्यारा। (स्त्री०) २ सम्यक् सेचन, खासी सींच।
(वै०) ३ सेचनसाधन पात्र, सींचनेका बरतन।

आसेचनक, आसेचन देखो।

आसेचनवत् (सं० त्रि०) उदराकार, उत्तान, मुजब्बफ,
खोकला, गहरा। (पु०) आसेचनवान्। (स्त्री०)
आसेचनवती।

आसेदिवस् (सं० त्रि०) आ-सद-क्लसु। १ निकटागत,
नजदीक आया हुआ। २ प्राप्त, मिला हुआ।

आसेदुषी (सं० स्त्री०) आ-सद-क्लसु डीप् वस्योत्वं
इटो निवृत्तिश्च। १ आगता, आयी हुयी औरत।
२ उपस्थिता, जो औरत हाजिर हो।

आसेद्व (सं० पु०) आ-सिध-द्वच्। विवाद विषयमें
राजाज्ञासे प्रतिवादीकी गति प्रशस्तिका रोधकर्ता वादी,
कैद करानेवाला शख्स।

आसेध (सं० पु०) आ-सिध भावे घञ्। विवाद विषयमें
राजाज्ञासे वादिकर्तृक प्रतिवादीका स्थानान्तरको गमन-
निवारण, हिरासत, हवालात, नजरबन्दी, कैद।
आसेध चार प्रकारका होता है,—कालासेध, स्थाना-
सेध, प्रवेशासेध और कर्मासेध। समयकी मर्यादाके
निरूपणको कालासेध, किसी स्थानके प्रति निरोधको
स्थानासेध, अपसरणके प्रतिकूल निषेधको प्रवेशासेध
और कार्योद्योगके निबन्धको कर्मासेध कहते हैं।

आसेधक (सं० त्रि०) नियन्ता, नियंत्रीता, कैद-
करने या हिरासतमें रखनेवाला।

आसेधनीय (सं० त्रि०) नियन्त्रके योग्य, जो हिरा-
सतमें रखे जाने काबिल हो।

आसेध्य, आसेधनीय देखो।

आसेब (फा० पु०) १ प्रेतवाधा, दोष, फितना,
बिगाड़। २ नुकसान, हानि। ३ भय, खौफ, डर।

आसेब उतारना (हिं० क्रि०) १ प्रेतवाधा कुड़ाना,
शैतानके साया पड़नेसे पैदा हुयी बीमारीको दूर
करना। २ भूतापसरण करना, शैतानको निकाल देना।

आसेब दूर करना, आसेब उतारना देखो।

आसेब पडुंचना (हिं० क्रि०) आघात आना, चोट
लगना।

आसेब पडुंचाना (हिं० क्रि०) आघात देना, चोट-
मारना।

आसेर (हिं० पु०) आश्रय, पनाह, किला।

आसेवन (सं० स्त्री०) सम्यक् सेवनम्, प्रादिसमा०।
निसक्तपतावनासेवने। पा ८३। १०२। कार्यविशेषका प्रसक्त
अभ्यास, किसी कामका मेहनती महावरा। २ पौनः-
पुन्य, बार-बारका करना।

‘आसेवन’ पौनःपुन्यम्। (सिद्धान्तकौमुदी)

आसेवा (सं० स्त्री०) आ-सेव-अङ्-टाप्। १ सम्यक्
सेवा, खासी खिदमत। २ राक्षसी।

आसेवित (सं० त्रि०) आ-सेव-क्त-इट्। १ सम्यक्
सेवित, अच्छीतरह खिदमत किया गया। २ पुनः
पुनः सेवित, बार-बार खिदमत किया गया। (स्त्री०)
भावे क्त। ३ सम्यक् सेवा, खासी खिदमत।

आसेविन, आसेवित देखो।

आसेवितिन् (सं० त्रि०) आसेवित-इति। सुन्दर सेवाकारी, खासी खिदमत करनेवाला। (पु०) आसेवितो। (स्त्री०) डीप्। आसेवितिनो।

आसोज (हिं० पु०=संस्कृत आश्वयुज् शब्दका अप-भ्रंश) आश्विनमास, कार।

आसौ (हिं० क्रि० वि०) इस वत्सर, इस साल।

आस्कन्द (सं० पु०) आ-स्कन्द-घञ्। १ उत्प्लवन, उछाल, चढ़ाव। २ आक्रमण, हमला। ३ तिरस्कार, झिड़की। ४ अश्व प्रभृतिकी आस्कन्दित नामक गति-विशेष, घोड़ेका उड़ान। ५ आक्रामक, हमला मारने-वाला शख्स।

आस्कन्दन (सं० क्लो०) आस्कन्दतेऽन्न, आ-स्कन्द-आधारे लुट्। १ युद्ध, जङ्ग, लड़ाई। भावे लुट्। २ तिरस्कार, बेइज्जती। ३ आक्रमण, हमला, धावा। ४ उत्प्लवन, उछाल। ५ अश्वकी गति विशेष, घोड़ेका उड़ान। ६ संशोषण, खासी सुखायो। ७ विनाश, बरबादी।

आस्कन्दित (सं० क्लो०) आ-स्कन्द-णिच्-क्त-इट्। १ अश्वकी गतिविशेष, घोड़ेकी कुदौटी। 'आस्कन्दितं धीरितकं रेचितं वलितं भुतम्।' (अमर) आस्कन्दित अश्वकी गतिका पञ्चम भेद है। हेमचन्द्रने तिर्यक् काण्डमें लिखा है,—अश्वकी गति धोरित, वलित, भुत, उत्तेजित और उत्तेरित पांच प्रकार होती है। गाड़ीमें जोतनेसे घोड़ा जो चाल चलता, उसका नाम धोरितक, धौर्य, धोरण वा धोरित पड़ता है। लगाम खींचनेपर क्रोड़की ओर धीरे-धीरे आगेके पैर उठाने, अग्निशिखा अथवा कङ्कपच्चीके न्याय शिखाधारी हो अर्थात् चोटीका अग्रभाग ऊपरको निकाल उल्लाससे गला चढ़ाने और मुँहको नीचेकी तर्फ सिकोड़नेसे वलित बनता है। पच्ची वा मृगकी गतिके न्याय उछल-उछल कुछ स्थान लांघते-लांघते जानेकी भुति अथवा भूत कहते हैं। वेगसे दौड़ना ही उत्तेजित वा रेचित है। कभी-कभी कोपसे चारो पैर उठा ऊपर-एकाधिक उछलने और उसीतरह आगे बढ़नेसे उत्तेरित, उपकण्ठ, आस्कन्दित अथवा आस्कन्दितक आता है।

आस्कन्दिन् (सं० त्रि०) आस्कन्दति द्विन्स्ति, आ-स्कन्द-इन्। १ हिंसक, हमलावर, भपट पड़नेवाला। २ बहानेवाला। ३ दाता, बख्शनेवाला। (पु०) आस्कन्दी। (स्त्री०) आस्कन्दिनी।

आस्क (वै० त्रि०) आ-क्रम-ड वेदे पृषोदरादित्वात् सुट्। १ आक्रामक, हमलावर। भावे ड। २ आक्रमण, हमला।

आस्त (सं० पु०) आ-अस विक्षेपे क्त। १ सम्यक् चित्त, अच्छीतरह फेंका हुआ।

“अथौ प्राप्ताहुतिः सन्यगादित्यसुपतिष्ठते।” (मनु ३।७६)

आस्तर (सं० पु०) आ-स्तृ-अप्। १ हस्तीके पृष्ठका कम्बल, भूल। २ बिछौना, चटाई। भावे अप्। ३ सुविस्तार, खासा फैलाव। ४ अस्त्रविशेष, एक हथियार। वैशम्पायनोक्त धनुर्वेदमें लिखा है,—आस्तर नामक अस्त्रका पाददेश ग्रन्थियुक्त, मस्तक दीर्घ, हाथ बड़ा, उदर तथा मत्था टेढ़ा और वर्ण काला होता है। परिमाण दो हाथ रहता है। इसके द्वारा घुमायी, सिंचायी और कटायी कयी क्रियायें सम्पन्न की जाती हैं। युद्धकालमें आस्तर शत्रुओंको मार डालता है। अश्वारोही और पदाति इसे धारण करते हैं। ५ कुर्ते वगैरहकी भीतरका कापड़ा।

आस्तरण (सं० क्लो०) आस्तोर्यते यत्, कर्मणि लुट्। १ आस्तोर्यमान कटादि, फैलाकर बिछाया जानेवाला कालीन वगैरह। भावे ल्युट्। २ विस्तार, फैलाव। ३ पलंग, बिछौना। ४ यज्ञमें कुशका फलक। ५ हस्ति-पृष्ठस्थ-विचित्र कम्बल, हाथीकी पीठपर पड़नेवाली भूल।

आस्तरणवत् (सं० त्रि०) वस्त्रसे आच्छादित, कालीन या कपड़ेसे ढका हुआ। (पु०) आस्तरणवान्। (स्त्री०) आस्तरणवती।

आस्तरणिक (सं० त्रि०) आस्तरणं प्रयोजनमस्य, आस्तरण-ठक्। १ कटादिपर विश्राम लेनेवाला, जो कालीन वगैरहपर आराम करता हो। २ आस्तरण-साधन, बिछौनेके काम आनेवाला।

आस्तरणी (सं० स्त्री०) आस्तरण-डीप्। आस्तरणपट, कालीन वगैरह।

आस्तरणीय (सं० त्रि०) आस्तरणस्येदम्, वृद्धत्वात्
छ। आस्तरण-सम्बन्धी, बिछौनेके सुतास्तिक।

आस्तायन (सं० त्रि०) अस्ति इति अव्ययम् अस्ति
विद्यमानस्य सन्निष्कष्टदेशादि; पक्षादित्वात् फक्,
अव्ययस्य टिलोपः। वर्तमान निकटवर्ती देशादि।

आस्तार (सं० पु०) अ-स्तृ-घञ्। विस्तार, फैलाव।

आस्तारपंक्ति (सं० स्त्री०) आस्तारो नाम पंक्तिः,
शाक० तत्। वैदिक छन्दोविशेष। इसमें दो पंक्ति
होती हैं। पहली पंक्तिके दोनो पादमें आठ-
आठ और दूसरीके दोनो पादमें बारह-बारह वर्ण
रहते हैं।

आस्ताव (वै० पु०) आ-स्तुवस्त्यत्र, आ-स्तु आधारे
घञ्। १ यज्ञमें स्तोत्रगणके स्तुव करनेका स्थान।
भावे घञ्। २ सम्यक् स्तुव, खासी तारीफ़।

आस्तिक (सं० त्रि०) अस्ति परलोक इति मति-
र्यस्य, ठक्। अस्तिनास्तिदिष्टं मतिः। पा ४।४।६०। १ ईश्वर और
परलोकका अस्तित्ववादी, कयामतकी माननेवाला।
२ पुराणादि पर विश्वास रखनेवाला। ३ धार्मिक,
पारसा। (पु०) ४ जरत्कारु मुनिके पुत्र निरुक्त।
परलोक होनेकी बात प्रथम कहनेसे उक्त मुनिका
नाम आस्तिक पड़ा है। आस्तिक देखो।

आस्तिकजननी (सं० स्त्री०) आस्तिकस्य जननी ६-तत्।
वासुकिकी भगिनी और जरत्कारुकी पत्नी मनसा।

आस्तिकता (सं० स्त्री०) ईश्वरमें विश्वास।

आस्तिकत्व (सं० स्त्री०) आस्तिकता देखो।

आस्तिकपन (हिं० पु०) आस्तिकता देखो।

आस्तिकमति (सं० पु०) उत्तमवैद्य, बढ़िया तबीब।

आस्तिकार्थद (सं० पु०) आस्तिकाय अर्थ ददाति,
आस्तिक-अर्थ-दा-क। जनमेजय। इन्होंने आस्तिक
मुनिके कहनेसे तक्षकको विनाशसे बचाया था।

आस्तिक्य (सं० स्त्री०) आस्तिकस्य भावः, यक्।
पल्लवपुरोहितादिभ्यो यक्। पा ३।१।१२८। आस्तिकता, परलोक
स्वीकार, उबूदियत, पारसायी।

आस्तीक (सं० पु०) वासुकिकी भगिनी मनसाके
गर्भसे उत्पन्न जरत्कारु मुनिके पुत्र। वासुकिका
प्रातिवर्ग मादृशापसे अभिभूत हुआ था। उन्होंने

उक्त शाप छोड़नेके लिये महातपा जरत्कारुको
अपनी भगिनी प्रदान की। सम्प्रदानसे पूर्व ही जरत्-
कारु मुनिने कहा था,—दे दीजिये, किन्तु उनके
भरण-पोषणका भार हम उठा नहीं सकते; फिर
तुम्हारी भगिनी यदि हमारे अमृत कार्य करेंगी, तो
उसी समय छोड़ दी जायेंगी। वासुकिने सब बात
मानकर भगिनीको मुनिके साथ व्याह्र दिया। अन-
न्तर मुनिके सहवाससे उनके गर्भ रह गया। एकदा
महर्षि निद्रित थे। नागभगिनीने देखा, कि सूर्य अस्त
होता और स्वामौकी सायं क्रियाका समय बीता जाता
था। ऋषि भयानक रागी रहे। जगानेसे कहें छोड़
कर चले जानेका डर था। किन्तु उन्होंने धर्मलोपकी
अपेक्षा अन्य दुःखको तुच्छ समझ जरत्कारुको जगा
दिया। ऋषिने उठकर कहा था,—भद्रे! तुमने
अप्रिय कार्य किया है, सुतरां यहां मेरा रहना अब
किसी प्रकार हो नहीं सकता; तुम्हें और तुम्हारी
भाईको मेरे जानेसे दुःखित न होना चाहिये।
जरत्कारु मुनि यह कहकर चलते बने। वासुकिकी
भगिनीने जाते समय पूछा था—आप तो चल दिये,
वासुकिने जिसके लिये मुझे आपको सौंपा था, उसका
व्याह्र हुआ। मुनिने उत्तर दिया,—अस्ति अथात् हमारे
औरससे तुमने गर्भधारण किया है। कुछ दिनके
बाद उनके पुत्र उत्पन्न हुआ। यह पुत्र सर्पभवनमें
सर्पकलंक प्रतिपातित किया और अपने बुद्धि बलसे
शृगुपुत्र अयनके निकट समस्त शास्त्र पढ़ गया। गर्भमें
रहते ही पिताके 'अस्ति' कहकर चले जानेसे आस्तीक
नाम पड़ा है। इन्होंने जनमेजयके सर्पध्वंसयज्ञसे सर्प-
गणको बचा लिया था। आस्तीकमधिकृत्य कृतो ग्रन्थः,
अण्। २ आस्तीक मुनिके जीवनचरित पर महाभार-
तान्तर्गत पर्व विशेष।

आस्तीक्य, आस्तिक्य देखो।

आस्तीन् (फा० स्त्री०) परिच्छदका पिप्पल, पौशाक-
का खुरीता, बांह।

आस्तीन्का सांप (हिं० पु०) गृहशत्रु, भीतरी दुश्मन्।

आस्तीन् चढ़ाना (हिं० क्रि०) १ भय देखाना, धम-
काना। २ उपस्थित होना, तैयारी करना।

आस्तौर्ण (सं० त्रि०) आ-स्तृ-क्त। विस्तौर्ण, विस्तारित, फैला हुआ।

आस्तृत, आस्तौर्ण देखो।

आस्तेय (सं० त्रि०) अस्तीत्यव्ययं तत्र विद्यमाने भवम्, ठञ्। दत्तकुम्भिकलशिवसालाहटंज्। पा ४।३।१६।
१ विद्यमान पदार्थजात, मौजूदा चीजसे पैदा। (स्त्री०)
अस्तेय मस्तेयं तस्य भावः, अण्। २ अचौर्य, साह-कारो, चोरी न करनेकी बात।

आस्त्र (सं० त्रि०) अस्त्रस्येदम्, अण्। अस्त्रसम्बन्धी, हथियारके सुताक्षिक।

आस्त्रावुध्न (वै० पु०) अस्त्रवुध्नके पुत्र।

“लं नानिन्द्रमर्त्यमास्त्रवुध्नाय।” (ऋक् १०।१७।१३)

आस्था (सं० स्त्री०) आ-स्था-अङ्-टाप्। १ आलम्बन, सहारा। २ अपेक्षा, निश्चय। ३ अज्ञा, एतकाद।
४ स्थिति, हालत। ५ यत्न, तदवीर। ६ आदर, इज्जत। आस्थीयतेऽत्र, आधारे अङ्-टाप्। ७ सभा, मजलिस। ‘आस्था यत्रालम्बनयोरास्थानापेक्षयोरपि।’ (हेन)

आस्थागम (सं० पु०) जल, पानी।

आस्थात (वै० त्रि०) स्थितिकारी, खड़ा रहने या चढ़ जानेवाला। “आस्थाता ते जयतु जेतानि।” (ऋक् ६।४७।२६)
‘आस्थाता अवस्थितो रथी।’ (सायण)

आस्थान (सं० स्त्री०) आस्थीयतेऽत्र, आ-स्था आधारे लुगट्। १ सभा, मजलिस। २ विश्रामस्थान, आराम-गाह, बैठनेकी जगह। भावे लुगट्। ३ आस्था, एत-काद। ४ अज्ञा, इष्टियाक।

आस्थानगृह (सं० स्त्री०) सभाभवन, मजलिसका मकान्।

आस्थानसिंह—कन्नौजस्थ सुप्रसिद्ध नरेश जयचन्द्र वंशज शिवाजीके पुत्र। यह अपने भाई सोनिङ्गजी और अजयदेवजीके साथ अन्हलवाड़े पाटनकी ओर कुछ राज्य पानेके लिये कन्नौजसे निकल पड़े थे। पालीमें जाकर पक्षीवाल ब्राह्मणोंका राज्य देखा। किन्तु अरवली पर्वतके भील उन्हें बहुत सताया करते थे। लोगोंके प्रार्थना करनेपर इन्होंने रक्षा करनेका वचन दिया। आस्थानसिंहने भीलोंके राजा कान्हाको मार चला देनेका विचार किया था। किन्तु लोगोंने कहा,

आप यहीं रहें, आपके चले जानेसे भील हमें फिर सतायेंगे। इन्हें दुर्ग बनानेको बहुत भूमि मिली थी। पक्षीवालोंको निर्बल देख आस्थानसिंहने राज्य अपने हाथ लेना चाहा। एक दिन होलोको कितने हो पक्षी-वाल बधकर इन्होंने राज्यपर अपना आधिपत्य जमाया था। फिर थोड़े दिन बाद आस्थानसिंहजी खेड़े विवाह करने गये। वहां गोहिल वंशज विचित्रसेन नृपति और डाबी जातिके भगवन्तराय नामक राजपूत मन्त्री रहे। मन्त्रीने राज्य अधिकार करनेके लिये आस्थान-सिंहजीसे साहाय्य मांगा और आधा भाग देनेको वादा किया। आस्थानसिंहका विवाह होते समय गोहिलों और डाबियों दोनोंको राठोरोंने अधिक मदिरा पिलायी थी। जब लोग अचेतन हुये, तब सबके मस्तक काटे गये। खेड़का राज्य पाने पोछे इन्होंने कोडण-राज्यके भी १४० ग्राम छीन लिये थे। अन्तको इनकी मृत्यु हो गयी।

आस्थानी (सं० स्त्री०) आ-स्था-लुगट्, आस्थान-ङीप्। सभा, मजलिस। ‘आस्थानी क्षीवमास्थानम्।’ (अनर)

आस्थापन (सं० स्त्री०) आ-स्था-णिच्-पुक्-लुगट्। १ सम्यक् स्थापन, खासी रखायी। करणे लुगट्। २ सुश्रु-तोक्त व्रणोपप्लमणीय निरुहवस्ति, घी तेल वगैरहकी पिचकारी। निरुह देखो।

आस्थापनोपवर्ग (सं० पु०) आस्थापनयोग्य पञ्च-विंश महाकषायका वर्ग, पिचकारी देने लायक पचीस कसैली चीजोंका जूखोरा। त्रिष्टुत्, विल्व, पिप्पली, कुष्ठ, सर्षप, वचा, इन्द्रयव, शतपुष्पा, यष्टिमधु और मदनफल आस्थापनोपवर्गमें गिना जाता है। (चरक)

आस्थापित (सं० त्रि०) आ-स्था-णिच्-युक्-क्त-इट्। सम्यक् स्थापित, अच्छीतरह रखा हुआ।

आस्थाय (सं० अव्य०) १ आश्रयपूर्वक, सहारेसे। २ आरोहण करके, चढ़कर। ३ खड़े होते।

आस्थायिका (सं० स्त्री०) आ-स्था धात्वर्थनिर्देशे खल्, स्त्रीत्वात् टाप् अतः इत्वम्। आस्थान, सभा, मजलिस।

आस्थायी—सङ्गीतमें किसी रागालाप किंवा गीतका प्रथम चरण वा मुखवन्ध, मुखड़ा, टेक। आस्थायी,

अन्तरा, सञ्चारी और आभोग चार चरण रहनेसे आलाप वा गीत सम्पूर्ण समझा जाता है।

आस्थित (सं० चि०) आ-स्था-क्त, इकारोऽन्तादेशः।

यतिस्ततिमास्थानि ति किति। पा ७३३०। १ अवस्थित, ठहरा हुआ। २ प्राप्त, हासिल किया हुआ। ३ आरुढ़, चढ़ा हुआ। ४ आश्रित, चिपटा या लिपटा हुआ। ५ विस्तृत, फैला हुआ। ६ अभ्यास डालनेवाला, जो महारत बढा रहा हो।

आस्थिति (सं० स्त्री०) आ-स्था-क्तिन्। १ सम्यक् स्थिति, खासा ठहराव। २ निवास, रहास।

आस्थेय (सं० त्रि०) आ-स्था-कर्मणि यत्। आश्रयणीय, सहारा लिये जाने काबिल, जो काम दे सकता हो।

आस्नात (वै० त्रि०) आ-स्ना-क्त। कृतस्नान, गुसल किये हुआ, जो नहा चुका हो।

आस्नान (सं० स्त्री०) आ-स्ना-ल्युट्। १ प्रक्षालन द्वारा शुद्धि, धोनेसे होनेवाली सफाई। २ सम्यक् स्नान, खासा गुसल। ३ स्नानगृह, हस्नाम, नहानेका घर।

आस्यद (सं० स्त्री०) आ-पद-अच्-सुट्। आस्यदप्रतिष्ठायात्। पा ६।१।१४६। १ प्रतिष्ठा, इज्जत। २ पद, दरजा। २ स्थान, जगह। ४ कृत्य, काम। ५ प्रभुत्व, मलकयी। ६ अवलम्बन, सहारा। ७ विषय, बात। ८ अवस्थान, ठहराव। ९ लग्नसे दशम स्थान। यह शब्द प्रायः समासान्तमें आता है, जैसे—अहङ्कारास्यद। 'आस्यदन् पदे कृत्ये।' (विग्रह)

आस्यन्दन (सं० स्त्री०) आ-स्यन्द-ल्युट्। १ ईषत्-कम्पन, थोड़ी कंपकंपी। २ अतिकम्प, गहरी कंपकंपी। आस्यर्धा (सं० स्त्री०) अहमहमिका, विजिगीषा, हिंस, हौंस।

आस्यर्धिन् (सं० त्रि०) विजिगीषु, प्रतिस्पर्धी, हम-सरी-जो, होड़ लगानेवाला।

आस्यर्थ (सं० पु०) सम्पर्क, संयोग, लग्न, लगाव।

आस्यशतः (सं० अव्य०) सम्पर्क द्वारा, संयोग वश, लगावसे।

आस्यात्र (वै० स्त्री०) आस्यरूपं पाचम्। सुखरूप पात्र, मुंह-जैसा बरतन।

आस्फाल (सं० पु०) आ, स्फाल चाले णिच्-ल्युट्, सफा

वज्-स्फालादेशो वा। १ आघात, प्रहार, फटकार, रगड़। २ उत्क्षेपण, फड़फड़ाहट। ३ करिकर्णा-स्फालन, हाथीके कानकी फड़फड़ाहट।

आस्फालन (सं० स्त्री०) आ-स्फाल चाले णिच्-ल्युट्।

१ ताड़न, मार, फटकार। २ चालन, फड़फड़ाहट। ३ आटोप, सृजन। ४ दम्भ, गुस्ताखी, घमण्ड।

आस्फालित (सं० त्रि०) आ-स्फाल-णिच्-क्त। १ चालित, फड़फड़ाया हुआ। २ आघटित, रगड़ा हुआ।

३ ताड़ित, भाड़ा या फटकारा हुआ।

आस्फुजित् (सं० पु०) आस्फुलति, आ-स्फुल-ङु; तं जयति, जि-क्विप्-तुक्। शुक्राचार्य, जोहरा, नाहीद, लोली-फलक।

आस्फोट (सं० पु०) आ-स्फुट-णिच् कर्तरि अच्। १ अर्कवृक्ष, मदारका पेड़। २ गिरिज पीलु, किसी किसका अखरोट। ३ मल्लका बाहुशब्द, पहलवानोंके ताल ठोंकनेकी आवाज। ४ संघर्षजात शब्द सकल, रगड़की आवाज।

आस्फोटक (सं० स्त्री०) आ-स्फुट-णिच्-ल्युट्। १ पर्वतका पीलु विशेष, जङ्गली अखरोट। (त्रि०) २ बाहु शब्दकारी, ताल ठोंकनेवाला।

आस्फोटन (सं० स्त्री०) आ-स्फुट-णिच् भावे लुप्त। १ प्रकाश, शिगुफ्तगी, फैलाव। २ बाहुशब्द, ताल ठोंकनेकी आवाज। ३ शूर्पादि द्वारा धान्यादिका वितुषीकरण, फटकार, भाड़। ४ चालन, फड़फड़ाहट।

५ कम्पन, कंपकंपी। ६ नियमकरण, मोहरबन्दी।

आस्फोटनी (सं० स्त्री०) आस्फोट्यते छिद्रीक्रियते अनया, करणे ल्युट्-ङीप्। वेधनिका, मसकब, बरसी।

आस्फोटा (सं० स्त्री०) नवमल्लिका, नेवारका फूल।

आस्फोटित (सं० त्रि०) आ-स्फुट-णिच् कर्मणि क्त। १ विदलित, रगड़ा हुआ। भावे क्त। २ बाहु प्रभृतिके ताल ठोंकनेका शब्द प्रकाश, जो आवाज ताल बजानेसे आतौ हो।

आस्फोट (सं० पु०) आ-स्फुट-अच्, वृषोदरादित्वात् टस्य तत्वम्। १ रत्नाकवृक्ष, लाल मदारका पेड़। २ कोविदार वृक्ष, कचनारका दरखत। ३ भूपलाश

आस्फोटकं, आस्फोत देखो।

आस्फोटका, आस्फोता देखो।

आस्फोता (सं० स्त्री०) आ-स्फुट्-अच्, प्रषोदरादित्वात् टाप्। १ अपराजिता कालीजीर। 'आस्फोता गिरिकर्णो विष्णुत्तान्ताऽपराजिता।' (भावप्रकाश) २ लताविशेष, हापरमाली बेल। ३ शारिवा, अनन्तमूल। ४ काष्ठमल्लिका, जङ्गली चमेली। ५ श्वेत शारिवा, सफेद अनन्तमूल। ६ नवमल्लिका, नेवार।

आस्माक (सं० त्रि०) अस्माकमिदम्; अस्मद्-अण् अस्माकादेशः, णित्वादाद्यचो वृद्धिः। तन्निघण्टि च युष्माकास्माकौ। पा ३।३।२। अस्मात् सम्बन्धी, हमारा।

आस्माकोन (सं० त्रि०) अस्माकमिदम्, खञ्; अस्माकादेशः, जित्वादाद्यचो वृद्धिः। युष्मद्व्यदोरन्तरस्यां खञ्। पा ३।३।१। अस्मात् सम्बन्धी, हमारा।

आस्य (सं० स्त्री०) अस्यते क्षिप्यते भक्ष्यां यत्र अनेन वा, अस आधारे वा करणे ण्यत्। १ मुख, मुंह। 'वक्त्रास्त्रे वदनं तुष्टमाननं लपनं मुखम्।' (अमर) २ आकृति, चेहरा। ३ मुखांशविशेष, मुंहका एक हिस्सा। इससे अक्षरोच्चारण होता है। ४ छिद्र, दराज। (त्रि०) आस्ये भवम्। ५ मुखसम्बन्धी, मुंहके मुताल्लिक।

आस्यदेश (सं० पु०) मुखमध्य, मुंहका बिच्छड़।

आस्यन्दन (सं० स्त्री०) आ-स्यन्द भावे ल्युट्। १ ईषत् चरण, थोड़ा बहाव। २ अल्प गलन, हलकी गलायी।

आस्यन्दनवत् (सं० त्रि०) वह चलनेवाला, जो गलते जा रहा हो। (पु०) आस्यन्दनवान्। (स्त्री०) आस्यन्दनवती।

आस्यन्धय (सं० त्रि०) मुखामृतास्त्रादक, मुखचुम्बक, चुम्बनकारी, बोसा मिट्टी या बब्बी लेनेवाला, जो किसीका मुंह चूमता हो।

आस्यपत्र (सं० स्त्री०) आस्यत्वेनोपमितं पत्रमस्य, बहुव्री०। पद्म, मुंह-जैसे पत्ते रखनेवाला कमल।

आस्यपुष्प (सं० पु०) श्वेतकिण्विही वृक्ष, सफेद लट्जोरा।

आस्यफल (सं० पु०) श्वेतधूसूरवृक्ष, सफेद धतूरा।

आस्यलाङ्गल (सं० पु०) आस्यं मुखं लाङ्गलमिव

भूविदारकं यस्य, बहुव्री०। १ शूकर, सूवर। २ वन्य शूकर, जङ्गली सूवर।

आस्यलोम, आस्यलोमन् देखो।

आस्यलोमन् (सं० स्त्री०) आस्यभवं लोम, शाक० तत्। श्मश्रु, दाढ़ी-मूँछ।

आस्यवैरस्य (सं० स्त्री०) मुखविस्त्राद, मुंहका फौकापन।

आस्यशाखोट (सं० पु०) गुल्मविशेष, किसी किस्मका भाड़। यह वातको बढ़ाता और पित्त, कफ, क्षमि, पाण्डुता, ज्वर तथा कामलको घटाता है। (चरिचंजिवा)

आस्या (सं० स्त्री०) आस भावे क्यप्-टाप्। १ स्थिति, गतिराहित्य, सुकूनत, रहास। २ विलक्षण, हालत-अवतर। ३ उपवेशन, बैठक। ४ निरुद्योगोपवेशन, वेकाम-बैठनेकी हालत।

आस्यासव (सं० पु०) आस्यासव इव। लाला, लुबाब-दहन, तुफ, राख, थूक।

आस्र (सं० स्त्री०) अस्त्रमेव, स्वार्थे अण्। रुधिर, रक्त, खून, लहड़।

आस्रप (सं० पु०) आस्रं रुधिरं पिवति, उपसमा०। १ राक्षस, खून पीनेवाला शखूस। मूलानक्षत्रका देवता भी राक्षस होता है। २ जोंक।

आस्रव (सं० पु०) आस्रवति मनोऽनेन, करणे अण्।

१ क्षेश, आफत, तकलीफ़। २ प्रस्त्राव, बहाव।

३ पचत् तण्डुलका फेन, गर्म चावलका उबाल।

४ जैन मतसिद्ध पदार्थ विशेष। इससे जीव मुक्तिलाभ करता है। इन्द्रियको संयमसे रखना और सत्कर्ममें लगाना शुभास्रव कहाता है। आश्रव देखो।

आस्रस्त (सं० त्रि०) पतित, गिरा-पड़ा, जो छूट गया हो।

आस्राय (सं० त्रि०) आस्रं वेदयति, आस्र-क्यङ्-

क्लिप्। सुखादिभ्यः कटं वेदनायाम्। पा ३।१।२८। आस्रज्ञापक,

खून बहनेका हाल बता देनेवाला।

आस्रायण (सं० पु०) आस्राय-फक्। आस्रज्ञापकका

पुत्र वा कन्यारूप अपत्य।

आस्राव (सं० पु०) आ-स्रवति रुधिरमस्त्रात्, आ-स्र-

अपादाने घञ्। १ चत, जखूम। भावे घञ्

२ सम्यक् चरण, खासा बहाव। ३ मुखलाला, लुबाब

दहन, राल, यूक। ४ क्लेश, तकलीफ। (त्रि०)
आस्त्रावोऽस्थस्य, अर्श आदित्वात् अच्। ५ सम्यक्
चरणयुक्त, खूब बहनेवाला।

आस्त्राविन् (सं० त्रि०) आस्त्रवति, आ-सु-णिनि।
१ मदादि चरणशील, जिससे शराब वगैरह टपके।
आस्त्रावोऽस्यास्तीति, अस्थर्थे इनि। २ चरणयुक्त, बहने-
वाला। (स्त्री०) आस्त्राविनी।

आस्त्रावी (सं० पु०) १ अश्वके पादरोगका भेद, घोड़ेके
पैरकी एक बीमारी। क्लेशवतल अर्थात् पैरके
तलवेमें जख्म रखनेवाले अश्वको आस्त्रावी समझना
चाहिये। (जयदत्त) २ हस्तो, मस्त हाथी।

आस्त्रनित (सं० त्रि०) आ-स्त्रन-क्त इट्। रथमलर-
संघासनात्। पा अ३२८। शब्दित, पुरशोर, आवाज
देनेवाला।

आस्त्राद (सं० पु०) आ-स्त्रद कर्मणि घञ्। १ मधुरादि
रस, मीठा वगैरह जायका। २ शृङ्गारादि रस, इशक
वगैरहका मजा। भावे घञ्। ३ रसका अनुभव,
जायकेका लेना। शृङ्गारादिसे मनमें आनन्द वा
दुःख उपजनेको आस्त्राद कहते हैं। (त्रि०) ४ रस
लेनेवाला, जिसे जायका आये।

आस्त्रादक (सं० त्रि०) आ-स्त्रद-खुल्। आस्त्रादन-
कर्ता, जायका लेनेवाला। (स्त्री०) आस्त्रादिका।

आस्त्रादन (सं० क्लो०) आ-स्त्रद भावे लुट्। आस्त्राद,
जायकेका लेना।

आस्त्रादनीय (सं० त्रि०) आस्त्राद्य, चखने काबिल।

आस्त्रादवत् (सं० त्रि०) आस्त्राद चातुरर्थिको मतुप्।

आस्त्रादयुक्त, रसीला, जायकेदार।

आस्त्रादित (सं० त्रि०) आ-स्त्रद-णिच्-क्त-इट्। गृहीत-
आस्त्रादन, जायका लिया गया। २ भुक्त, खाया गया।

आस्त्राद्य (सं० त्रि०) आ-स्त्रद-णिच्-यत्। १ आस्त्राद-
योग्य, चख जाने लायक। (अव्य०) ल्यप्। २ आस्त्रा-
दन करके, जायका लेकर।

आस्त्रान्त (सं० त्रि०) आ-स्त्रन-क्त दीर्घश्च। शब्दित,
पुरशोर, जिससे आवाज निकले।

आह (सं० अव्य०) आ-हन-ड। १ क्षेपपूर्वक,
फेंककर। २ नियोग द्वारा, लगावसे। ३ दृढ सत्त्वा-

वनामें, पक्की उम्मीदपर। ४ विषादपर, रस्त्रके
साथ।

‘आह क्षेपे नियोगे च दृढसत्त्वावनेऽव्ययम्।’ (शब्दादि)

(हिं० अव्य०) ५ हाय, अफसोस। (स्त्री०)
६ दीर्घश्वास, ठण्डी सांस।

“तुलसी आह गरीबकी हरिसों नही सहाय।

मुयी खालकी फूँक सो सार मसम हो जाय।” (तुलसी)

७ साहस, हिम्मत।

आहक (सं० पु०) आहन्ति; आ-हन-ड, ततः
संज्ञायां कन्। नासाज्वर, नाक सूजनेसे आनेवाला
बुखार।

आह करना (हिं० क्लि०) दीर्घश्वास लेना, उसास
छोड़ना, गुमगीन होना।

आह खेचना, आह करना देखो।

आहङ्कार्य, अहङ्कार देखो।

आहट (हिं० स्त्री०) पादन्यासका शब्द, पैरकी
खटक।

आहट लेना (हिं० क्लि०) सचेत रहना, खबरगोरा
रखना।

आहत (सं० त्रि०) आ-हन-क्त। १ ताड़ित, मार
खाये हुवा। २ हत, जख्मी, जो मार डाला गया
हो। ३ गुणित, ज़रब दिया हुवा। ४ ज्ञात, जाना
हुवा। ५ सृषार्थक, झूठ कहा हुवा। (पु०) ६ टक्का,
ढोल। (क्ली०) ७ वस्त्रविशेष, नया कपड़ा। वशिष्ठके
मतसे अल्प प्रचालित, नूतन और न पहने हुये
वस्त्रको आहत कहते हैं। यह वस्त्र सकल कार्यमें
लग सकता है। ८ पुरातन वस्त्र, पुराना कपड़ा।
वारम्बार रजकका आघात प्राप्त होनेसे पुरातन वस्त्रका
नाम आहत पड़ा है।

‘आहतं गुणितं चापि ताड़ितं च सषार्थकं।

स्नातं पुरातनवस्त्रेऽपि नववस्त्रे च नाहते॥” (मेदिनी)

आहतलक्षण (सं० त्रि०) आहतमभ्यस्तं लक्षणं
यस्य, बहुव्री०। शौर्यादि गुण द्वारा प्रसिद्ध, अच्छी
सिफतके लिये मशहूर।

आहति (सं० स्त्री०) आ-हन-क्तिन्। १ शब्दहेतु

आघात, चोट । २ ताड़न, मारपीट । ३ आगमन, आमद । ४ गुणन, जूरव । ५ मर्दन, मलायी ।
आहन (फा० पु०) १ आयस, लोहा । (हिं० पु०)
२ भित्तिनिर्माणार्थं मृत्तिका तथा टणका सम्मिलित द्रव्य, दीवार उठानेको पैरा और मट्टी मिलाकर बनायी हुयी चीज ।

आहनन (सं० स्त्री०) आ-हन्यतेऽनेन, आ-हन करणे लुगट् । १ ताड़न, मारपीट । २ पशुवध, जानवरका कत्ल । ३ ताड़न-साधन दण्डादि, मारने-पीटनेको डण्डा वगैरह ।

आहननवत् (वै० त्रि०) आहनन-मतुप् । वचन-वत्, मकार, दगाबाज ।

आहनन्य (वै० त्रि०) ठक्का वजाकर अपनी ख्याति करनेवाला, जो अपनी तारीफ़ ढोल बजाकर सुनाता हो ।

आहनस् (वै० त्रि०) आहन्यते, आ-हन-असुन् ।
१ आहननीय, मारा जाने काबिल । २ निष्पीड्य, निचोड़ा जाने लायक । ३ स्कीत, आध्मात, सृजा या फूला हुआ ।

आहनस्य (वै० स्त्री०) आहनसे साधुः, यत् । १ हनन साधन द्रव्यादि, मारकाटमें काम देनेवाली चीज ।
२ स्कीतता, सृजन, मोठायी ।

आहनस्यवादिन् (वै० त्रि०) कामुक शब्द निकालने-वाला, जो मस्ताना बात करता हो ।

आह निकालना, आह करना देखो ।

आहनी (फा० वि०) अयोमय, लोहेसे बना हुआ ।

आह पड़ना (हिं० क्ति०) १ अन्यके दीर्घश्वास-निकालनेसे मारे जाना, दूसरेके अफ़सोस करनेसे तकलीफ़में आना । २ साहस होना, हिम्मत बढ़ना ।

आह भरना, आह करना देखो ।

आह मारना, आह करना देखो ।

आहर (सं० पु०) आ-ह-अच् । १ उच्छ्वास, आह-सदं, ठण्डी सांस । २ अन्तर्मुखनिश्वास, मुँहके भीतर भीतर चलनेवाली सांस । (त्रि०) ३ सञ्चयकारक, इकट्ठा करनेवाला, जो जोड़ता हो । ४ निष्कृष्ट जाति विशेष । इस जातिके लोग शम्भल, राजपुर, अहमद-पुर, उभाली, महेश्वान तथा रामगढ़ाके तीर रहते

और रुहेलखण्डके भी किसी-किसी स्थानमें देख पड़ते हैं । यह अपनेको यदुवंशीय और क्षत्रसे उत्पन्न बताते हैं । किन्तु आहीर अपनेको ही क्षत्रवंशीय कहते और इनकी उत्पत्ति गोपसे मानते हैं । आहर मतस्य, गोमांस प्रभृति खाते हैं । युक्तप्रदेशमें नगावत, भट्टि, नौगरी, रुकर, वासोपरा, बकियायिन, भूसायिन, दिशवार प्रभृति कयी खेतीके आहर रहते हैं । (हिं० पु०) ५ समय, वक्त । ६ युद्ध, जङ्ग । ७ जल-स्थान, झील । यह तालाबसे छोटा और मारुसे बड़ा पड़ता है ।

आहरकरटा (सं० स्त्री०) आहरकरट इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं । करटको आहरण करनेका उपदेश देनेकी बात, कौवेसे उठा ले जानेकी सिखानेकी बोली ।

आहरचेटा (सं० स्त्री०) आहर चेट इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं । चेटके प्रति आहरणार्थं निदेश-क्रिया, नौकरसे उठा ले जानेकी हुक्म देनेकी बात ।

आहरण (सं० स्त्री०) आ-ह भावे लुगट् । १ आनयन, लवायी । २ आयोजन, जुगाड़ । कर्मणि लुगट् । ३ आह्वयमाण द्रव्य, इकट्ठा की या लायी हुयी चीज । ४ विवाहादिका उपढोकन द्रव्य, शादीमें दिया जाने-वाला सामान । ५ ग्रहण, लेवायी । ५ अपहरण, छीन-छान ।

आहरणीय (सं० त्रि०) आ-ह-अनीयर् । १ आयोजनीय, आनयनके योग्य, इकट्ठा करने काबिल, जो लाने लायक हो । २ उपढोकनके योग्य, दिये जाने काबिल । ३ अपहरणयोग्य, छीन लिये जाने काबिल ।

आहरन (हिं० स्त्री०) स्थूणी, निहायी ।

आहरनिवपा (सं० स्त्री०) आहरनिवप इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं । 'आहरण करो और बोवो' कहनेकी आदेश क्रिया, जिस हुक्मो काममें ले पाने और वौज डालनेकी बात सुने ।

आहरनिष्करा (सं० स्त्री०) आहरनिष्कर इत्युच्यते यस्यां क्रियायाम्, मयूरव्यं । 'आहरणकर डालो' कहनेकी आदेश क्रिया, 'लाकर छोड़ दो' हुक्म देनेकी बात । इसी प्रकार आहरवितावा, आहरवसना और

आहरसेना शब्दसे भी तत्तद्वस्तुके आहरणार्थ आदेश आता है।

आहरी (हिं० स्त्री०) १ लघु तड़ाग, छोटा तालाव।

२ आलबाल, थाला। ३ कूपके समीपका जलाशय, कुयेके पासका हौज। इसमें पशु पानी पीते हैं।

आहर्त (सं० त्रि०) आ-हृ-टच्। १ उपार्जक, पैदा करनेवाला। २ आयोजक, इकट्ठा करनेवाला। ३ आनयनकर्ता, लानेवाला। ४ अनुष्ठानकर्ता, काम शुरू करनेवाला। ५ हरण करनेवाला, जो छीन लेता हो। (पु०) आहर्ता। (स्त्री०) आहर्त्री।

आहलक् (वै० अव्य०) आस्फोटन शब्दके साथ, फट-कारकर।

आहला (हिं० पु०) जलप्लावन, सैलाव, पानीकी बाढ़।

आहलीव (सं० स्त्री०) द्रव्यविशेष, एक चीज। गुजरातमें इसे आसालवीज कहते हैं। आहलीव उष्ण एवं तिक्त होता और त्वग्दोष, वात तथा गुल्मको नाश करता है। (वैद्यक निघण्टु)

आहव (सं० पु०) आह्वयन्ते परस्परं युद्धार्थमरयो यत्र, आ-ह्वे आधारे अप् सम्प्रसारणं गुणश्च। आङि वुङे। मा.श.श.३२। १ युद्ध, लड़ाई। २ समराजान, ललकार। आह्वयन्ते यज्ञद्रव्याख्यत्र, आ-हु आधारे अप्। २ यज्ञ, नियाज। 'आहवः समदे यज्ञे।' (ऐन)

आहवन (सं० स्त्री०) आह्वयते हवनीयं घृताख्यत्र, आ-हु आधारे लुगट्। १ यज्ञ, कुरबानी। भावे लुगट्। २ सम्यक् होम, अच्छीतरह नयाज देनेका काम।

आहवनीय (सं० पु०) आह्वयते प्रक्षिप्यते हविरत्र, आ-हु आधारे अनीयर्; आहवन-मर्हति छ वा। १ यज्ञका अग्निविशेष, नयाजकी आग। यह गार्हपत्य अग्निसे लिया और होमादिके निमित्त प्रसृत किया जाता है। २ यज्ञमें जलनेवालोंसे पूर्वीय अग्नि। 'हविषाग्निर्गार्हपत्याहवनीयो नयोऽग्नयः।' (अमर) (त्रि०) कर्मणि अनीयर्। ३ होतव्य, नयाजमें लगने लायक।

आहवनीयक, आहवनीय देखो।

आहसर्द (फ्रा० स्त्री०) ठण्डी सांस, अफसोसके साथ सांसका लेना।

आहा (सं० स्त्री०) वणिक द्रव्यमैद, एक चीज।

(हिं०-अव्य०) २ आश्चर्य, ताज्जुब, अरे। ३ हर्ष-क्या खूब !

आहार (सं० पु०) आ-हृ-घञ्। १ आहरण, लेवायी। २ नियुक्ति, लगायी। ३ द्रव्यगलाघःकरण, खवायी। "आहारनिद्रा भयनैर्दुःख सामान्यमेतत् पशुभिर्निराणाम्।"

(हितोपदेश) ४ भोजनद्रव्य, खानेकी चीज। भोजन-द्रव्य द्रव और अद्रवभेदसे द्विविध होता है। फिर इसमें भी प्रत्येक स्वभावगुरु, मात्रागुरु और संस्कारगुरु भेदसे त्रिविध है। प्राणियोंका मूल आहार ही ठहरता है। क्योंकि इससे बल, वर्ण और ओजकी वृद्धि होती है। आहार षट् रसमें आयत्त रहता है।

स्थिति, उत्पत्ति और विनाशसे ब्रह्मादि भी आहार करते हैं। इससे ही अतिवृद्धि, बल, आरोग्य, वर्ण और इन्द्रिय-प्रसादादि मिलता है। फिर आहारके वैषम्यसे अस्वास्थ्य आता है। (ससुव) आहार बलकृत्, सद्यः प्रीतिप्रद तथा देहधारक होता और ओजः, तेजः, स्वरोत्साह, धृति, स्मृति एवं मतिको बढ़ाता है।

(मदनपाल) प्राणानिलसे ईरित हो आहार पहले आमाशयमें पहुँचता और माधुर्य, फेनभार तथा षट् रसको प्राप्त करता है। पाचक पित्तसे विदग्ध होनेपर यह अन्न पड़ जाता और पीछे समान मरुत् द्वारा ग्रहणीमें पहुँचता है। ग्रहणीमें आहार पकता और कोष्ठवज्रिसे कट पड़ता है। सम्पक्क रहनेसे रस और अपक्क रहनेसे यह आम बनता है। फिर वज्रिबलसे आहारमें माधुर्य और स्निग्धतादि गुण आता है। सम्यक् पक्क होनेसे आहार अखिल धातुको परिष्कार करता और अमृतोपम ठहरता है। किन्तु रस मन्द-वज्रिसे विदग्ध, कटु तथा अन्न होनेसे विषभावको पहुँचता और रोगसङ्कर उपजाता है। (शङ्कर)

५ अन्न, अनाज। ६ अर्धाहार, आधा खाना। ७ शब्दादि विषयक ज्ञान, आवाज वगैरहका इत्थ।

८ आहरणकारी, उठा ले जानेवाला। ९ राजपूतानेका एक प्राचीन नगर। पहले आहार नगरमें बड़ी समृद्धि रही। किन्तु अब उसका भ्रंसावशेष मात्र अवशिष्ट है। जैनोंके प्रति प्राचीन मन्दिर आज भी पड़े हैं।

१० गुप्तप्रान्तके बुलन्दशहर जिलेकी एक पुरानी बस्ती।

यहां अनेक देवालय विद्यमान हैं। पास ही गङ्गानदी बहती है। कितने ही लोग स्नान करने आते हैं। औरङ्गजेबके समय आहारके नागर-ब्राह्मणोंने वाध्य हो इसलाम धर्मको ग्रहण किया था।

आहारक (सं० त्रि०) आहरणकारी, लानेवाला।

आहारपाक (सं० पु०) आहारस्य भुक्तद्रव्यस्य पाकः रसादिभावेन परिणामः। वैद्यशास्त्रोक्त भुक्त अन्नादिका रसादिके रूपमें परिणामसे पाकविशेष, खानेका हाजिमा। आहार देखो।

आहारविरह (सं० पु०) भोजनको न्यूनता, खानेकी तकलीफ, रोटीका लाला।

आहार-विहार (सं० पु०) भोजन-भाव, खाना-खेलना। आहार-विहार बिगड़नेसे कोष्ठान्नि बुझ जाता और ज्वर उत्पन्न होता है।

आहारशुद्धि (सं० स्त्री०) आहारस्य भक्ष्यान्नादेः शुद्धिः, ई-तत्। १ भक्ष्य अन्नादिका स्मृत्युक्त शोधन, खानेकी सफाई। २ दुष्ट-आहार-जन्य दोषनिवारणार्थं शुद्धि-रूप प्रायश्चित्त, बुरे खानेसे पैदा हुये ऐबको मिटानेके लिये किया जानेवाला प्रायश्चित्त।

आहारशोषण (सं० पु०) कृष्णजीरक, काला जीरा।

आहारसम्भव (सं० पु०) आहारात् भुक्तान्नादेः सम्भवति, आहार-सं-भू-अच्। आहार-पाकज रस-धातु, खानेके हाजमेसे बना हुवा जिस्मका कैलूस।

आहारस्थान (सं० स्त्री०) निर्जनादि देश, सन्नाटेकी जगह। भले आदमीको आहार, निर्हार और विहार-योग विजनमें करना चाहिये। (भावप्रकाश)

आहारार्थिन् (सं० त्रि०) आहारार्थं भिक्षाटन वा अन्वेषण करनेवाला, जो खानेकी अर्ज या तलाशमें हो। (पु०) आहारार्थी। (स्त्री०) आहारार्थिनी।

आहारिक—जेनमतानुसार जोवके पांचमें एक शरीर। इसका रूप अति सूक्ष्म है। आहारिक समाधिस्थ साधुके शिरःसे निकलता, त्रिकालत्र सिद्धसे व्यवस्था लेने जाता और अभीष्ट समाचार पा लौट पड़ता है।

आहारिन् (सं० त्रि०) आहार करनेवाला, जो खाता पीता हो। (पु०) आहारौ। (स्त्री०) आहारिणी।

आहार्य (सं० त्रि०) आ-हृ-ख्यत्। १ आहरणीय,

लेने या छीनने लायक। २ व्याप्य, इत्तिफाकी।

३ कृत्रिम, मसनूयी। ४ भक्ष्य, खाया जानेवाला।

५ आनयनयोग्य, लाने काविल। ६ ज्ञेय, समझा जाने लायक। (पु०) ७ बन्धनभेद, किसी किस्मकी पट्टे। ८ लौकिकान्नि, दुनियावी भाग। ९ औपा-

सनिक अग्नि, घरमें पूजा जानेवाली भाग। (स्त्री०)

१० निष्कर्षण द्वारा चिकित्सा किया जानेवाला रोग, जो बीमारी निकाससे अच्छी हो। ११ निष्कर्षण, निकास। १२ पात्र, बरतन। १३ नाटकका सुन्दर अभिनय, तमाशेका बढ़िया हिस्सा।

आहार्यशोभा (सं० स्त्री०) कृत्रिम कान्ति, मसनूयी खूबसूरती।

आहार्यभिनय (सं० पु०) अभिनय विशेष, किसी किस्मका खेल। इसमें पात्र न कुछ कहता-सुनता और न अङ्गचालन ही करता है। एकमात्र वेशभूषासे ही उसका काम निकल जाता है।

आहाव (सं० पु०) आ-ह्वे-घञ्, सम्यसारणं वृद्धिश्च। निपानमाहारः। पा ३।१।७४। १ निपानजलाशय, हीज। कूप निकट गो प्रभृतिके जल पौनेको प्रस्तरादि द्वारा निर्मित क्षुद्र जलाशय आहाव कहाता है। 'आहावश्च निपानं स्यादुपकूपजलाशये।' (अमर) २ पात्र, बरतन। आह्व-

यन्ते परस्परं युद्धार्थं मरयो यत्र, आधारे घञ्, पृषो-

दरादित्वात् साधुः। ३ युद्ध, जङ्ग। भावे घञ्।

४ आह्वान, ललकार। आ-ह्व आधारे घञ्। ५ अग्नि, भाग। आ-ह्वे भावे आधारे वा घञ्। ६ मन्त्रविशेष

द्वारा आह्वान, आह्वान-साधन मन्त्रविशेष।

आहि (हिं० क्रि०) है। यह आसना क्रियाका वर्तमानकाल और अन्य पुरुषका एकवचन है।

आहिंसि (सं० पु०-स्त्री०) अहिंसस्यापत्यम्, इज्। अहिंसका अपत्य, हिंसारहित व्यक्तिका पुत्र वा कन्या-

रूप अपत्य। अहिंसके गोत्रापत्यको आहिंसायन कहते हैं।

आहिक (सं० पु०) अहिरिव, इवार्थे कन् ततः स्तार्थे अण्। १ केतुग्रह, नुकता रास-जम्ब। 'आहिकः षष्ठेशासुः शिखी केतुः।' (हल) सप-जैसा होनेसे केतुग्रहका

नाम आहिक पड़ा है। २ पाणिनि मुनि।

आहिच्छत्र (सं० त्रि०) अहिच्छत्रदेशे भवम्, अण् ।

अहिच्छत्रदेशभव, अहिच्छत्र मुल्लका पैदा ।

आहिण्डिक (सं० पु०) निषादके औरस और वैदेहीके गर्भसे उत्पन्न अन्धज सङ्कर जाति ।

“आहिण्डिको निषादेन वैदेह्यामिव जायते ।” (मनु १०।३७)

पहले आहिण्डिक कारावाससे बाहर चौकीदारी करते थे ।

आहित (सं० त्रि०) आ-धा-क्त ह्यादेशः । १ न्यस्त, चित्त, रखा हुआ, डाला गया । २ स्थापित, रचित, बैठाया या महफूज किया हुआ । ३ अर्पित, नजर किया हुआ । ४ कृत, किया हुआ । ५ आधान-संस्कार-कृत । ६ जनित, पैदा किया हुआ । अपने स्वामीसे एक साथ अधिक धन लेकर कार्य सम्पादन करनेवाला मूल्य आहित कहाता है ।

आहितकाम (सं० त्रि०) आन्त, थका-मांदा ।

आहितलक्षण (सं० त्रि०) आहितं लक्षणं यस्य ।

१ गुणादि द्वारा विख्यात, अच्छे औसाफके लिये मशहूर । २ न्यस्तचिह्न, दागदार, निशान रखनेवाला ।

आहितव्यथ (सं० त्रि०) दुःखित, तकलीफ़ज़दा, दर्दके आसार रखनेवाला ।

आहितस्वन (सं० त्रि०) कोलाहलकारी, पुरशोर, गुल मचानेवाला ।

आहिताग्नि (सं० पु०) आहितः आधानीकृतोऽग्निर्येन, बहुव्री० । १ साग्निक, वेदमन्त्रादि द्वारा कृत संस्काराग्नियुक्त । जन्मसे मरण पर्यन्त उत्पन्न होनेवाले गृहमें अग्निको बनाये रखनेवाला ब्राह्मण आहिताग्नि कहाता है । आज भी काशी प्रभृति तीर्थमें साग्निक ब्राह्मण मिलते हैं । २ याज्ञिक, वेदीपर यज्ञका अग्नि रखनेवाला पुरुष ।

आहिताग्निगण—पाणिन्युक्त परनिपातार्थे शब्दसमूह । यथा,—आहिताग्नि, जातपुत्र, जातदण्ड, जातश्मश्रु, तैलपीत, हुतपीत, मणपीत, ऊदभार्य, गतार्थ ।

“आहितगणः सेनायेपि ।” (सिद्धान्तकौमुदी)

आहिताह (सं० त्रि०) चिह्नित, दागदार, धब्बे रखनेवाला ।

आहिति (सं० स्त्री०) आ-स्था-क्तिन्, ह्यादेशः ।

१ स्थापन, रखायी । २ आधान, संस्कारपूर्वक प्रतिष्ठा ।

३ मन्त्रद्वारा अग्न्यादिकी संस्काररूप आहुति ।

आहितुण्डिक (सं० पु०) अहितुण्डेन दीव्यति, ठक् ।

तेन दीव्यति खनति जयति जितम् । पा ४।४।२ । व्यालगाही, सपेरा, सांपकी पकड़नेवाला ।

आहिमत (सं० त्रि०) अहिमतो दूरभवम्, अण् । सर्पविशिष्ट देशके निकट उत्पन्न, जो सांपोंसे भरे मुल्लमें पैदा हो ।

आहिस्तागी (फ़ा० स्त्री०) १ मन्दता, दीर्घसूत्रता, धीमापन ।

आहिस्ता (फ़ा० वि०) १ मन्द, धीमा । २ अलस, काहिल, सुस्त । ३ मृदु, नर्म । (क्ति० वि०) ४ अशीघ्र, धीरे-धीरे । ५ शनैः शनैः, बारी-बारी, थोड़ा-थोड़ा । ६ सुखपूर्वक, आरामसे, फुरसतमें ।

अहीर—गोपजाति विशेष, अहीर । महाभारतादि प्राचीन ग्रन्थमें आभीर नाम लिखा है । मनुके मतमें ब्राह्मणके औरस और अश्वष्ठ स्त्रीके गर्भसे अहीरका जन्म हुआ है । किन्तु ब्रह्मपुराण क्षत्रियके औरस और वंश्य स्त्रीके गर्भसे इसकी उत्पत्ति बताता है । अहीर अपनेको यदुवंशीय कहते हैं । पूर्वकाल यह जाति भारतवर्षके पश्चिम रहती थी । उस समय अहीरोंके रहनेका स्थान भी आभीर ही कहाया । पाश्चात्य ऐतिहासिक टलेमिने आबिरिया (Abiria) नाम दिया है । ई०के प्रथम शताब्द अहीरोंको नेपालका आधिपत्य मिल गया था । नेपालके ‘पार्व-तीय वंशावली’ नामक ग्रन्थमें इस जातिके तीन राजा-वोंका नाम विद्यमान है । ई०के अष्टम शताब्द गुजरात पड़चनेपर काठी लोगोंने अधिकांश अहीरोंका राज्य देखा था । आजकल युक्तप्रदेश और मध्यप्रदेशके नानास्थानमें यह जाति बसती है । प्रधानतः नन्द-वंश, यदुवंश और गोपालवंश (ग्वाला) तीन भागमें अहीर विभक्त हैं । गङ्गाकी अन्तर्वेदीसे उत्तर नन्द-वंश, अन्तर्वेदीके मध्य यदुवंश और काशी, विहार प्रभृति स्थानमें गोपालवंश रहता है ।

आहीरणी (सं० पु०) दो शिरःका सर्प, दुसुंहा सांप ।

आहुक (सं० पु०) यदुवंशीय क्षत्रियविशेष, वसु-

देव । महाभारतीय सभापर्वके २२ और हरिवंशके ३८वें अध्यायमें वसुदेवको आहुक कहा है ।

आहुको (सं० स्त्री०) आहुककी भगिनी ।

आहुङ (हिं० पु०) आहव, जङ्ग, लड़ाया ।

आहुत (सं० स्त्री०) उद्देश्यस्याभिमुख्येन साक्षादेव हुतं दत्तम्, आ-हु-क्त । १ गृहस्थद्वारा कर्तव्य पञ्च महा-यज्ञके अन्तर्गत मनुष्ययज्ञ । २ आतिथ्य, मेहमांदारी । ३ सम्मुख हुत देवादि । ४ सम्यक् यज्ञ ।

आहुति (सं० स्त्री०) आ-हु-क्तिन् । १ मन्त्रद्वारा देवोद्देश्यसे अग्निमें घृतादिका निक्षेप, देवताके लिये आगमें घी वगैरहका डालना ।

“अग्नौ प्राप्ताहुतिः सम्यगादित्यसुपतिष्ठते ।” (मनु ३।३६)

आहुयते, कर्मणि क्त । २ अग्नि, आग । ३ होमका द्रव्य घृतादि ।

आहुती (हिं०) आहुति देखो ।

आहुली (सं० स्त्री०) आहुल्य देखो ।

आहुल्य (सं० स्त्री०) आह्वल वाहुलकात् क्यप् सम्प्रसारणञ्च । कश्मीरादि देशमें उत्पन्न होनेवाला तरवट नामक काञ्चनवर्ण पुष्पविशेष, किसी भाड़का पीला फूल । यह तिक्त, शीत तथा चक्षुष्य होता और पित्तदाह, मुखरोग, कुष्ठ, कण्ड एवं शूलव्रणको दूर करता है । (राजनिषध्)

आहुव (वे० त्रि०) आ-ह्वे घञर्थे कर्मणि क सम्प्रसारणं उवञ्च । आह्वानके योग्य, बोलाये जाने लायक ।

आह्व (सं० त्रि०) आह्वयाति, आ-ह्वे-क्तिप् सम्प्रसारणम् । १ आह्वयक, बोलानेवाला । २ आह्वयमान, जो बोलाया गया हो । (फा० पु०) ३ हरिण, मृग, हिरना ।

आह्वत (सं० त्रि०) आ-ह्वे-क्त । १ बोलाया या पुकारा हुवा । (अव्य०) ३ आभूत, प्रलय पर्यन्त, कयामत तक ।

आह्वतप्रपलायिन् (सं० त्रि०) आह्वतः विवादनिर्णयाय राज्ञा कृताह्वानोऽपि प्रपलायते, प्र-परा-अय-णिनि, रस्य लत्वम् । व्यवहारमें हीनवादी विशेष; बोलाये जाते भी भाग खड़ा होनेवाला मुद्दयी या गवाह ।

हीनवादी पांच प्रकारका होता है—कुछका कुछ

उत्तर देने, प्रतिवादीके साक्षी प्रभृतिसे डेष रखने, विचारके समय न पहुँचने, पूछनेपर चुप रह जाने और बोलानेसे भी भाग खड़ा होनेवाला ।

आह्वतसंज्ञव (सं० पु०) आह्वतस्य संज्ञवः, ६-तत् पृषोदरादित्वात् तस्य हः । १ पृथिवी पर्यन्तका जलमें डूब जाना । आह्वतस्य तत्तन्नाम्ना कृतसङ्केतस्य विश्वस्य संज्ञवो यत्र, बहुव्री० । २ प्रलयकाल, कयामत । प्रलयके समय तत्तन्नामसे कृतसङ्केत विश्वका आह्वान-रूप व्यवहार नहीं चलता ।

आह्वति (सं० स्त्री) आ-ह्वे-क्तिन् । आह्वानकार्य, पुकार, बुलाहट । घृत, समिध, तिल प्रभृति द्वारा जो होम होता, वह आह्वति कहाता है । आह्वति पानेसे देवता उपस्थित हो जाते हैं । सुतरां इसे भी पुकार कहना पड़ता है ।

आह्वय (सं० अव्य०) आ-ह्वे-ल्यप् । आह्वान करके, बुलाकर, पुकारनेपर ।

“आह्वय दानं कन्याया नान्नो धर्मः प्रकीर्तितः ।” (मनु ३।२०)

आह्वरफेन (सं० स्त्री०) अहिफेन, अफीम ।

आह्वयं (वे० त्रि०) १ नोचे झुकाया या नजदीक लाया जानेवाला । २ अनुकूल बनाया जानेवाला, जिससे झुकना पड़े । ३ पुकारा जानेवाला, जिसे बुलाना पड़े ।

आह्वत (सं० त्रि०) आ-ह्वे-क्त । आनीत, आहरण किया हुवा, जो लाया गया हो ।

आह्वतयज्ञक्रतु (वे० त्रि०) निष्यन्न यज्ञ करनेका अभिलाषी ।

आह्वति (सं० स्त्री०) आ-ह्वे-क्तिन् । आहरण, आनयन, लवायी ।

आह्वत्य (सं० अव्य०) आ-ह्वे-ल्यप् तुगागमः । आहरण करके, लाकर ।

आह्वेय (सं० त्रि०) अहेरिदम्, ढक् । १ संपैसम्बन्धी, सांपसे ताझुक् रखनेवाला । (स्त्री०) २ विष, सांपका जूहर ।

आह्वे (हिं० क्रि०) आह्वि, है । यह ‘आसना’ क्रियाका वर्तमान काल है ।

आह्वो (सं० अव्य०) हु, उत, आहोस्वित्, अहोस्वित्,

अथवा, नोचेत्, वरना, खाह, या, ना, कि, नहीं तो ।

इस शब्दसे प्रश्न, विकल्प और विचार प्रकट होता है ।

‘आहो उताहो शक्तेती परि प्रत्रविचारयोः ।’ (विभ्र)

आहोपुराणिका (सं० स्त्री०) अहो अहमेव पुरुषः

पुरुषपदवाच्यः शूर इत्यर्थः, मयूरव्यं०; निपातनात्

अहो पुरुषः तस्य भावः, वुज् स्त्रीत्वात् टाप् ।

१ आत्मज्ञाघा, खुदसितायी, अपनी बड़ायीकी बात ।

२ अपने बलका गर्व, अपनी ताकतकी शेखी ।

‘आहोपुराणिका दर्पाया सात् सभावनात्मनि ।’ (अमर)

आहोम—आसामका एक प्राचीन राजवंश । ई०के १३वें शताब्द ब्रह्मापुत्र उपत्यकाकी पूर्वसीमापर आहोम वंशके पूर्वज इधर-उधर घूमते फिरते थे । यह ताई अथवा शान जातिके लोग रहे । आहोम अपनेको ईश्वरसे उत्पन्न बताते हैं । ५६४ ई०को खुनलङ्ग और खुनलाई सुवर्णशृङ्गलाके सहारे वैकुण्ठसे मुङ्गरी-मुङ्गराम देशपर आ उतरे थे । वहाँके ताई या शान राष्ट्रविहीन रहे । इनके साथी लङ्गो भूलसे छूटे हुये शकुनसूचक कुकुट और दूसरे सुसिद्ध द्रव्य लानेको वैकुण्ठ वापस पहुँचे । इसके उपहारमें चीन तथा हेङ्गडानका राज्य उन्हें मिला था । खुनलङ्ग और खुनलाईने मुङ्गरी-मुङ्गराममें एक नगर बनाया । खुनलाईने अपने बड़े भाई खुनलङ्गको इतना दबाया, कि उन्होंने ‘सोमदेव’को उठा मङ्गखु-मुङ्गजाउमें अपना राज्य प्रतिष्ठित किया था । खुनलङ्गके सात पुत्र रहे । कनिष्ठ पुत्र खुचूको सिंहासन प्राप्त हुआ था । दूसरे भाई अन्य राज्योंके करद नृपति बने । मुङ्गकाङ्ग-नरेश ज्यष्ठ पुत्रके पास ‘सोमदेव’ रहे । खुनलाईने सत्तर और उनके पुत्र त्याउआई-जेपत्याफाने चालीस वर्ष मुङ्गरीमुङ्गराममें राजत्व किया । उन्होंने नारावों और ब्रह्मदेशवासियोंमें आज भी चलनेवाला एजियी संवत् निकाला था । खुनलाईके कीथी उत्तराधिकारी न रहनेसे खुनलङ्ग और खुचू दंशके त्याउखुचनने अपने एक पुत्रको सिंहासनपर बैठाया, जिन्होंने पच्चीस वर्षतक राज्य किया । उनके मरनेपर पुत्रोंने राज्यको बांट अलग अलग मुङ्गरीमुङ्गराम और मौलङ्गपर अधि-कार जमाया था । मुङ्गरीमुङ्गरामका राजवंश १२४० वर्ष

राज्य चला नष्ट हुआ और खुचूका एक वंशज राजा बना । उन्हींके एक पौत्रका नाम सुकाफा रहा, जिन्होंने आसाममें आहोम राज्य प्रतिष्ठित किया ।

किन्तु योगिनौतन्त्रके प्रमाणमें आहोम वंशका परिचय अन्य प्रकार देते हैं । उसके लेखानुसार सौशारपीठसे पूर्व किसी पहाड़ीपर वशिष्ठ मुनिका आश्रम रहा । एक दिन मुनिने अपने उद्यानमें सचीके साथ इन्द्रको क्रोड़ा करते देखा था । उन्होंने क्रोधमें आकर शाप दिया,—इन्द्र ! तुम्हें किसी नीच जातिकी स्त्रीके प्रेममें फंसना पड़ेगा । मुनिका वाक्य सच्चा निकला । विद्याधरीने किसी नीचके घर अव-तार लिया था । इन्द्रसे उनका प्रेम बढ़ा और एक पुत्र उत्पन्न हुआ । इन्द्र उस लड़केको बहुत प्यार करते थे । उसके कितने ही पुत्र हुये, जिनमें खुनलङ्ग एवं खुनलाई बड़े और मुङ्गरीमुङ्गरामके राजा थे ।

आहोम वुराजि देखने और दूसरे प्रमाण पानेसे सुकाफा ही आसाममें आहोम राज्यके प्रतिष्ठाता मालूम पड़ते हैं । वह शानके मौलङ्ग राज्यसे आसाम आये थे । सम्भवतः आहोमोंका आदिवास पोङ्गमें रहा । आहोम आकार-प्रकार और भाषाभावमें प्रकृत शान हैं । शानोंके बौद्धधर्म ग्रहण करनेसे पहले ही आहोम आसाम आ गये थे ।

लोगोंके कथनानुसार १२१५ ई०को आठ सभ्यों और ८०० मनुष्यों, स्त्रियों और बच्चोंके साथ सुकाफाने मौलङ्ग छोड़ा । सवारीके लिये दो हाथी और ३०० घोड़े भी रहे । तेरह वर्ष तक वह पाटकाईके पावंत्य प्रदेशपर घूमते घूमते और नागा ग्रामपर आक्रमण मारते मारते १२२८ ई०को खाम-जाङ्ग पहुँचे । नाङ्गन्याङ्ग ऋदपर आनेसे पहले सकाफाने बरंगोंके सहारे खामनामजाङ्ग नदी पार की थी । नागावोंको मारकाट और अपने एक सभ्यको राजा बना वह उङ्काओरङ्ग, खामपाङ्गपुङ्ग और नामरूपकी और रवाना हुये । सुकाफा सेसा नदीपर पुल बांध डिहिङ्गपर चढ़े, किन्तु उस स्थानको उपयुक्त न देख टिपाम लौट पड़े । १२३६ ई०को मुङ्गकाङ्ग नदीके (अमरपुर)में जा वह कयी वर्ष रहे थे । १२४०

ई०को जलप्लावन होनेसे सुकाफा हाबुङ्ग आये और दो वर्षतक वहाँ ठहरे। १२४४ ई०को हाबुङ्गमें भी जलप्लावन पड़नेसे उन्हें दीखूके सुंहानेपर जाकर ठहरना पड़ा। वहाँसे सुकाफा लिगिरीगांव गये थे। १२४६ ई०को वह सिमलुगुड़ी पहुँचे। १२५३ ई०को सुकाफाने सिमलुगुड़ी छोड़ चराईदेवमें आकर एक नगर बनाया था। उपरोक्त उत्सवके उपलक्षमें भगवान्‌के प्रीत्यर्थ दो भस्त्रका वलि दिया और ब्रह्म-दारुके नीचे देवाधारिका शान्तिपाठ किया गया।

प्रकृत प्रस्तावसे सुकाफा ही आसाममें ब्रह्म वा आहोम-राजवंशके प्रतिष्ठाता रहे। आहोम वंशके जिन-जिन राजावोंने आसाममें शासन किया, उनका नाम नीचे दिया है,—

१। सुकाफा	१२२८ ई०से १२६८ ई०तक
२। सुतेचफा (१लेका बेटा)	१२६८ १२८१
३। सुविन्फा (२रे ,,)	१२८१ १२८३
४। सुखांफा (३रे ,,)	१२८३ १३३२
५। सुख्रांफा	१३३२ १३६४
६। सुतुफा	१३६४ १४०६
(राजहोम—बड़गोंडाई और बूढागोंडाईका शासन ४ वर्ष)	
७। त्याओखाम्ति (सुखांफाका ३रा बेटा)	१३८० २३८८
(राजहोम—८ वर्ष)	
८। सुदांफा वा ब्रह्मराज (७मका बेटा)	१३८७ १४०७
९। सुजांफा	१४०७ १४२२
१०। सुफाक्फा	१४२२ १४३८
११। सुसेन्फा	१४३८ १४८८
१२। सुहेन्फा	१४८८ १४८९
१३। सुनिम्फा	१४८९ १४८७
१४। सुङ्गु'सु' वा स्वर्गनारायण	१४८७ १५३८
१५। सुक्के नुसु' वा गढ़गांवा राजा	१५३८ १५५२
१६। सुकाम्फा वा खोड़ा राजा	१५५२ १६०३
१७। सुसेंफा वा बुद्धे राजा प्रतापसिंह	१६०३ १६४१
१८। सुराम्फा वा भगा राजा	१६४१ १६४४
१९। सुखिन्फा वा नरिया राजा	१६४४ १६४८
२०। सुताम्ला वा जयध्वजसिंह	१६४८ १६६३
२१। सुपु'सु' वा चक्रध्वज सिंह	१६६३ १६७०
२२। सुन्धातुफा वा उदयादित्य सिंह	१६७० १६७३
२३। सुक्लाम्फा वा रामध्वज सिंह	१६७३ १६७५
२४। सुङ्गु'	१६७५
२५। गोवर	१६७५
२६। सुजिन्फा	१६७५ १६७७
२७। सुदेफा	१६७७ १६७८
२८। सुखिक्फा वा लड़ा राजा	१६७८ १६८१
२९। सुपातुफा वा गदाधरसिंह	१६८१ १६८६
३०। सुक्ब'फा वा बद्रसिंह	१६८६ १७१४
३१। सुतान्फा वा शिवसिंह	१७१४ १७४४
३२। सुनेन्फा वा प्रमत्तसिंह	१७४४ १७५१
३३। सुराम्फा वा राजेश्वरसिंह	१७५१ १७६८

३४। सुन्धेओफा वा लज्जोसिंह	१७६८ई०से १७८०
३५। सुहिन्पांफा वा गौरीनाथसिंह	१७८० १७८५
३६। सुक्लिंफा वा कमलेश्वरसिंह	१७८५ १८१०
३७। सुदिन्फा वा चन्द्रकान्त सिंह	१८१० १८१८
३८। पुरन्दर सिंह	१८१८ १८२८
३९। योगेश्वर सिंह	१८२८
(ब्रह्मदेशीयका शासन)	१८२८ १८२४)
(ठटीय-अधिकार)	१८२४)
पुरन्दर सिंह (उपर आसाममें)	१८२२ १८३८

उपरोक्त राजावोंमें जिनके समय विशेष-विशेष

घटना हुयी, अति संक्षेपसे उनको बात लिखी है—

४थे नृपति सुखांफा आसपासके राजावोंको हरा समग्र ब्रह्मपुत्र उपत्यकाके अधीश्वर बने। कामताके राजाने युद्ध की भीषणतासे घबरा अपनी कन्या रजनी आहोमराजको व्याह दी थी। ५म राजा त्याओ-खामतिको अमात्योंने मारवा डाला था। खामतिको छोटा रानो हाबुङ्ग पलायनके एक पुत्र हुवा, जिसका नाम सुदांफा पड़ा। बुढ़ा गोंडाईने यह समाचार पा सुदांफा बालकको बोलाया और १३८८ ई०को सिंहासनपर बैठाया। ब्राह्मणके घर लालन-पालन होनेसे लोग प्रायः उन्हें 'ब्रह्मराज' कहते थे। उन्होंने धोलामें एक नगर बनाया। किन्तु पीछे अपनी राजधानी दिहिङ्ग नदीके समीप चारगुयाको ले गये थे। उन्हींके समय सबसे पहले आहोमोंमें ब्राह्मणोंका प्रभाव फैला। राजाने अपने पालनवाले ब्राह्मण और उसके पुत्रादिको साथ ला अच्छे-अच्छे पदोंपर प्रतिष्ठित किया था। १४०७ ई०को राजा सुङ्गु'सु' चारगुयामें बड़ी धूमधामसे गद्दीपर बैठे। ब्राह्मणोंने राजाका नाम 'स्वर्गनारायण' रख दिया था। दिहिङ्गमें अपनी राजधानी बकटा बनाने और कितने ही आहोम वसानेसे अधिकतर लोग उन्हें 'दिहिङ्गिया' कहते रहे। अतःपर आहोमराज स्वर्गदेव नामसे भी ख्यात हुवे। १५२७ ई०को सुसलमान् भी आसामपर चढ़े थे। किन्तु आहोमोंने उन्हें हराया और ४० घोड़ों तथा २०से ४० तक तोपोंको छीना। १५२१ ई०को तेमाईमें सुसलमानोंसे पुनः युद्ध हुवा। सुसलमान-सेनापति अपने जहाज छोड़ भाग गये थे। १५३२ ई०को सुसलमानोंने फिर बड़े समारोहसे आक्रमण किया। कितने ही दिन समर होने बाद

१५३२ ई०को जो जलयुद्ध हुआ, उसमें आहोमोंने धूम-धामसे विजय पाया था। इस विजयके उपलक्ष्यमें उक्त नदीपर आहोम-सेनापतिने एक मन्दिर और तड़ाग बनवाया। १५३८ को सुक्लेन्सुंने अपने पिता आहोमराज सुङ्गुंको मरवा डाला था। उक्त नृपतिके समय आहोमोंने 'ताओसिङ्गा' वा प्रष्टि संवत्सरके बदले हिन्दुओंका शक चलाया और शङ्करदेवके सहारे वैष्णवमार्गका प्रभाव बढ़ाया। अपने पिताको मार सुक्लेन्सुं राजा बने थे। उन्होंने अपनी राजधानी गढ़गांवमें प्रतिष्ठित की। १५६३ ई०को ठेकेरीराजने भी चढ़ाये की थी। सुराभगाके युद्धमें आहोमोंने उन्हें भगाया और हाथियों तथा हथियारोंको लूट लिया। सन् १६१५ ई०को मुसलमानोंने कोचनरेश वलितनारायणको परास्त किया और उन्होंने आकर आहोमनृपति प्रतापसिंहके निकट आश्रय लिया। इसपर मुसलमानोंने आहोम राज्यपर आक्रमण मारा था। भरलीमें जो युद्ध हुआ, उसमें पहले तो मुसलमानोंने विजय पाया; किन्तु पीछे पराजय हाथ लगा। १६१७ ई०को प्रतापसिंह हाजोकी ओर भागे बड़े थे। उन्होंने मुसलमानोंपर आक्रमणकर पाण्डु जीता। किन्तु हाजोका आक्रमण सफल न हुआ, और आहोमोंको पीछे हटना पड़ा था। १६१८ ई०को मुसलमानोंने धर्मनारायणको ब्रह्मपुत्रके दक्षिण किनारे घेर लिया। आहोमोंने वहां पहुँच मुसलमानोंको हराया था। १६१५ ई०को भरली नदीकी लड़ाईमें भी आहोम जीते। १६३८ ई०को अन्ततः मुसलमानके साथ सन्धि हुई और ब्रह्मपुत्रके उत्तर किनारे बड़-नदी और दक्षिण किनारे असुरारअली मुसलमानों और आहोमोंके राज्यकी सीमा ठहरी। १६५८ ई०को आहोमोंने कोचोंको भी दो बार सङ्कोश-नदीके पास खदेर मारा था। कहते, कि उस समय आहोमोंने ठाके तक लूट-मार मचायी। १६६२ ई०को मीर-जुमला आहोम राज्यपर चढ़े थे। आहोम जोगीगोफाका किला छोड़ श्रीघाट और पाण्डुको भाग गये। ४थी फरवरीको मुसलमानोंने गौहाटी नगर छीना था। अन्तको शिमलागढ़का किला भी

आहोमोंने छोड़ दिया। कोलियाबरके युद्धमें आहोमोंके तीन सौ जहाज मुसलमानोंके हाथ लगे थे। १६६३ ई०को सन्धि हुई और मीर-जुमलाकी फौज बङ्गाल वापस गयी। अपर विलुप्त घटनावली आसाम, कोच-विहार, खगदेव, रुद्रसिंह, नागा, कुटिया, कछाड़ी प्रभृति शब्दमें द्रष्टव्य है।

आहोस्वित् (सं० अव्य०) आहोच स्विच्च, इन्द्रम्।
१ विकल्प ! शक ! २ प्रश्न ! सवाल ! क्या !

आङ्ग (सं० क्लौ०) अङ्गां समूहः, अच्। १ दिन-समूह, नहारका जखीरा। (त्रि०) २ दिनमें कर्तव्य, नहारमें होनेवाला।

आङ्गिक (सं० त्रि०) अङ्गिभवं अङ्गा निर्वृत्तं साध्यं वा ठक्। १ दिनमें उत्पन्न, नहारका पैदा। २ दिन-साध्य, नहारमें हो जानेवाला, रोजाना। ३ सात्विक हिन्दुओंका दिनकर्तव्य कार्य सकल। स्मृतिमें इस तरह लिखा है,—ब्राह्ममुहूर्तमें जाग ब्रह्मा, विष्णु, शिव एवं नवग्रहके स्मरणपूर्वक गुरुकी प्रणाम करे। फिर आत्माको ब्रह्मरूप भावना कर दिनके कर्तव्य धर्मकर्म और अर्थोपार्जनकी चिन्ता लगाना चाहिये। उसके अनन्तर सज्जासे उठ रात्रिवास छोड़ पृथिवीको नमस्कार कर और दक्षिण चरण भूमिपर रख कर्कोटकनाग, दमयन्ती, नल, ऋतुपर्ण तथा कार्तवीर्यार्जुन राजाका स्मरण कर चक्षुः एवं मुख धो दो बार आचमन लेना उचित है। फिर नैऋत कोण वा दक्षिण दिक् मलमूत्र छोड़ और जलमृत्तिकासे शौच एवं दो बार आचमन कर हरिस्मरण-पूर्वक दिनको सूर्य तथा रात्रिको चन्द्र-तारा देखे। सूर्य और चन्द्रताराके अभावमें अग्निका दर्शन विहित है। पीछे दन्तधावन करे। दन्तकाष्ठ न मिलने वा निषिद्ध दिन पड़नेसे द्वादश गण्डूष जल वा पत्र द्वारा मुख शोध दो बार आचमन करना चाहिये। उसके बाद प्रातःस्नान, तिलक, सन्ध्या, तर्पण कर सूर्योदय पर्यन्त गायत्री जपे। स्नान करनेमें असमर्थ होनेसे आर्द्रवस्त्र द्वारा मात्र मार्जन-कर मन्त्रस्नानपूर्वक सन्ध्यापासनादि करे। द्वितीय यामार्द्धमें वेदविद्यादिका अभ्यास और समिध् तथा पुण्यादिका आहरण होता है। तृतीय यामार्द्धमें

गुरु, देवता, धार्मिक, और कुटुम्ब भरणार्थ ईश्वर-
की उपासना करते हैं। चतुर्थ यामार्धमें मध्याह्न-
स्नान किया जाता है। उसके बाद स्नानके वस्त्र
और हस्त भिन्न दूसरी चीजसे गात्र पोंछ तिलक और
तर्पण करना उचित है। फिर अष्टम मुहूर्तमें मध्याह्न-
सन्ध्या समापन, ब्रह्मयज्ञ और देवपूजाकर यथा-
काल पादोदक तथा नैवेद्य ले। पञ्चम यामार्धमें
वलि, वैश्वदेव, काम्यवलिकर्म और वामदेवगान करना
चाहिये। गानमें असमर्थ होनेसे तीन बार वामदेवका
मन्त्र पढ़ते हैं। पार्वण आद्यादिके दिन पार्वण आद्यके
बाद वलि वैश्वदेव करना उचित है। वलिकर्मके बाद
अतिथि लाभार्थ भोजन न कर राह देखना चाहिये।
अतिथिभोजन करा न सकनेसे भिक्षा देना योग्य है।
अतिथि न मिलनेसे ब्राह्मणको दान देते हैं। ब्राह्मण-
को कुछ दे न सकनेपर अग्नि वा जलमें किञ्चित्
अन्न छोड़ें। उसके बाद नित्य आद्य करे। नित्य आद्य
करनेमें असमर्थ होनेसे वलि और तर्पणानुष्ठान द्वारा
ही पितृयज्ञ बन जाता है। उसके बाद गोश्रास दान
और गोप्रणाम करे। फिर यथाविध भोजन करते हैं।
पीछे स्थानान्तर न जा सृत्तिकाधर्षण द्वारा मुख एवं
हस्त परिष्कार कर ढणादिसे दन्तलग्न रसद्रव्य
निकाल जलगण्डूषसे मुखका मध्यभाग प्रक्षालनपूर्वक
हाथपैर धोते हैं। फिर आसनपर बैठ भूमिपर पद-
द्वय रख दो बार आचमन ले तुलसीपत्रसे मुखशोधन
कर मन्त्रपाठपूर्वक दक्षिण हस्तसे जल देना चाहिये।
अन्नकी जोरताकी निमित्त मन्त्रपाठपूर्वक वामहस्त
उदरपर फेर शतपद चलकर वामपार्श्व किञ्चित्काल
विश्राम करे। षष्ठ और सप्तम यामार्धका कृत्य
इतिहास-पुराणादि श्रवण है। अष्टम यामार्धमें
लौकिकचिन्ता, सायंसन्ध्याउपासना और इष्टदेवताका
स्मरण आदि होता है। रात्रिको सन्ध्याके अनन्तर
इष्टदेवताका स्मरण, मन्त्रजप, त्रिकालपाठस्तव और
नारायणका स्मरण करना चाहिये। फिर भुक्त द्रव्यादि
पचनेपर पूर्ववत् वलिवैश्वदेव कर्मकर अतिथिको
अन्नादि दे अवश्य भरणार्थोंके साथ साध्वंशहर रात्रिके
मध्य अनतिवृत्त भावसे भोजन करे। अन्न भोजन

न करते भी ताम्बूलादि खा लेना चाहिये। प्रथम
प्रहरके मध्य विद्याभ्यास करते हैं। उसके बाद
सोना चाहिये। परिष्कृत स्थानमें खड़ापर सज्जा
लगा मस्तककी ओर एक जनपूर्ण कुम्भ रख रात्रिवास
पहन हाथ-पैर धो दो बार आचमन ले पूर्व वा दक्षिण
शिरा हो पद्मनाभका स्मरण कर द्विप्रहरके मध्य
शयन करते हैं। फिर दारोपगमन होता है।
दारोपगमनके अनन्तर एक सज्जापर दम्पती नहीं
सोते। सङ्वास देखो।

तन्त्रमें प्रतिदिनका कर्तव्य कर्म इस प्रकार लिखा
है,—ब्राह्ममुहूर्तमें उठ भूतशुद्धि तथा इष्टदेवताका
ध्यानादि कर गुरुका स्मरण रखते हुये पञ्चभूतात्मक
पञ्चोपचार द्वारा गुरुको मानस पूजा करना चाहिये।
उसके अनन्तर सद्गुरुका ध्यान लगा कुलवृक्षकी
प्रणाम करे। फिर पादुका और सम्प्रदायक्रमसे
गुरुका मन्त्र अष्टोत्तर शत वा अष्टोत्तर सहस्र जप,
गुरुस्तोत्र-कवच पढ़ते हुये गुरुप्रणाम, सद्गुरु-
नमस्कार और ब्राह्मणादि प्रणाम करना चाहिये।
पीछे श्रीगुरुध्यान, पूजा, स्तव, कवच और गोतापाठ
करे। उसके बाद कुण्डलिनी ध्यान धर, कुण्डलिनी
स्तोत्रकवच पढ़ गौरगणेश मन्त्र जप और अजपा
मन्त्र समर्पण एवं अजपा जप कर हंस स्मरण
और त्रैलोक्य चेतन्यमयाधिदेव इत्यादि प्रार्थना करना
चाहिये। पीछे उठ भूमिको प्रणामकर वामपद
पुरःसर गृहसे निकल मूत्रपुरौषोत्सग एवं दन्त-
धावनकर मुख, नासा तथा नासारम्भद्वय धो डाले।
फिर स्मृत्युक्त विधानसे शौचादि और देहशुद्धिकर
रात्रिवास उतार अन्य वस्त्र पहन मन्त्रस्नान कर देव-
गृहमें पहुँच सन्मार्जनोय लेपनादि लगा देवतानिर्माळ
निकाल पूर्वदिनावशिष्ट पत्रादिसे अभ्यर्चनाकर क्रम-
स्तोत्र पढ़े। उसके बाद यथोक्त विधानसे नहा तर्पण
करना उचित है। फिर वस्त्र बदल यज्ञोपवीत धो
तिलक त्रिपुण्ड्रकादि लगाये। पीछे वेदोक्त सन्ध्याकर
तान्त्रिको सन्ध्या करना चाहिये। फिर यथोक्तकालमें
अन्नादि शोध इष्टदेवताको निवेदनकर खाते हैं।
शाकान्तरक्षिणोंमें चपरापर विषय द्रव्य है स्मार्त रघुनन्दनव्रत

आङ्गिकतत्त्व एवं आङ्गिककृत्यप्रदीपमें स्मार्त और तन्त्रसारमें तान्त्रिक दिनकृत्य विस्तृतरूपसे वर्णित है। दिनकृत्य देखो। (स्त्री०) ३ धार्मिक संस्कारविशेष। यह प्रतिदिन नियत समय पर किया जाता है। ४ एक दिनका कार्य, रोजाना काम। ५ सूत्रात्मक शास्त्रभाष्यके पदांशकी व्याख्या। यह एक दिनमें होती है। ६ एक दिनमें अध्यापकके निकट अध्ययन किया हुआ पाठ, रोजाना सबक। ७ एक दिन वेतनसे क्रीत दासादि, एक रोजकी मजदूरीसे खरीदा हुआ नौकर वगैरह। ८ स्वसत्तासे एक दिन व्याप्त ज्वर प्रभृति, एकातरा, रोज-रोज आनेवाला बुखार। ९ एक दिनका भोजन, रोजाना खुराक।

आङ्गिकाचार (सं० पु०) दैनिक व्यवहार, रोजाना दस्तूर। दिनकृत्य देखो।

आङ्गेय (सं० पु०) सौचके गोत्रापत्य।

आङ्गुत (सं० त्रि०) आहत, जख्मी, चोट खाये हुआ।

आङ्गुतमेषज (वै० त्रि०) आहतको अच्छा करनेवाला पदार्थ, जो चौंज जख्मीको आराम कर देती हो।

आह्लाद (सं० पु०) आ-ल्हाद-ल्यट्। आनन्द, शादी, खुशी।

आह्लादक, आह्लाददुष देखो।

आह्लाददुष (सं० त्रि०) आनन्दप्रद, खुशी बख्शनेवाला।

आह्लादन (सं० स्त्री०) आ-ल्हाद-ल्यट्। १ आनन्द-सम्पादन, खुशीकी बख्शिश। (त्रि०) कर्तरि ल्युट्। २ आनन्द-सम्पादक, खुशी बख्शनेवाला। करणे ल्युट्। ३ आनन्दसाधन, जिससे मजा मिले।

आह्लादि (सं० पु०) बभ्रुके एक पुत्र।

आह्लादित (सं० त्रि०) आ-ह्लाद-णिच्-इट्, णिच् लोपः। आनन्दयुक्त, मसरूर, खुश होनेवाला।

आह्लादिन् (सं० त्रि०) आ-ह्लाद-णिनि। १ आनन्द-युक्त, मसरूर, खुश। २ आनन्दकारी, खुश करनेवाला।

आह्व (सं० त्रि०) आह्वयति, आ-ह्वे-ड। आह्वान-कारी, पुकारने या बोलानेवाला।

आह्वय (सं० त्रि०) आह्वयते स्वसमीपमानयनाथ-सुचैः सभाष्यतेऽनेन, बाहुलकात् करणे शः। १ नाम, इस्म। पुकारनेमें काम आनेसे नामको आह्वय कहते हैं। २ मेषादि प्राणी द्वारा पणपूर्वक क्रीड़ा विशेष, मनुने इसे अष्टादश विवादके मध्य गिना है।

आह्वयत् (सं० त्रि०) आह्वानकारी, पुकारनेवाला, जो ललकार रहा हो।

आह्वयन (सं० स्त्री०) आह्वयं करोत्यनेन, आ-ह्वय-णिच् करणे ल्युट्। नामादेश-साधन शब्दविशेष।

आह्वयितव्य (सं० त्रि०) आह्वयं करोति, आह्वय-णिच् कर्मणि तव्य। आह्वयनीय, पुकारा या बुलाया जानेवाला।

आह्वर (सं० त्रि०) आह्वरति, आ-ह्व-अच्। १ कुटिल, टेढ़ा। २ उशीनरदेशोत्पन्न। (पु०) ३ उशीनरका दुर्ग।

आह्वरक (सं० त्रि०) आह्वर स्वार्थे कन्। १ निन्दनीय, हिकारत किये जाने काबिल। (पु०) २ पितरोंको पिण्डदान दे स्वयं उसे खा जानेवाला नीच व्यक्ति।

आह्वा (सं० स्त्री०) आ-ह्वे-अङ्-टाप्। १ आह्वान, पुकार। करणे अङ्। २ संज्ञा, इस्म, नाम।

आह्वान (सं० स्त्री०) आ-ह्वे-ल्युट्। १ निमन्त्रण, तलबी, पुकार, बुलावा। आह्वयते येन, करणे ल्युट्।

२ संज्ञा, इस्म, नाम। ३ आज्ञासाधन राजकीय पत्र,

तलबनामा, समन, वारण्ट। भावे ल्युट्। ४ विचारमें विवाद-निर्णयके निमित्त राजाकर्तृक बुलावा।

५ देवताका निमन्त्रण। ६ अभियुद्ध, ललकार।

आह्वाय (सं० पु०) संज्ञा, नाम, तलबनामा, पुकार।

आह्वायक (सं० त्रि०) आ-ह्वे-खुल्-युक्। आह्वान-कारक, बोलानेवाला। (पु०) २ दूत, हरकारा।

आह्वारक (सं० त्रि०) आ-ह्व-खुल्। १ कुटिल, टेढ़ा।

(पु० बहुव०) २ कृष्णयजुर्वेदका एक संस्करण।

आह्वति (सं० स्त्री०) आ-ह्व-क्तिन्। १ कौटिल्य। (पु०)

२ जाकथी नगरके अधिपति। (महाभारत वन० १३६।२०)

